संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ

सम्पादक

स्वर्गीय चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा

एम० आर० ए० एस०

तथा

पण्डित तारिणीश झा

व्याकरणवेदान्ताचार्य



रामनारायणलाल बेनीप्रसाद

प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता

इलाहाबाद

चतुर्थ संस्करण] १९७१ [मूल्य १८ रुपये

प्रकाशक
रामनारायणलाल बेनीप्रसाद
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
इलाहाबाद-२

६ म ६७

मुद्रक
रामबाबू अग्रवाल
ज्ञानोदय प्रेस, कटरा
इलाहाबाद-२

तृतीय संस्करण की भूमिका

'संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ' का दूसरा संस्करण जिस प्रकार संस्कृत-प्रेमी अध्येताओं एवं विद्यार्थियों को प्रिय हुआ और उसकी प्रतियाँ थोड़े ही वर्षों में समाप्त हो गयीं, उससे मुझे अपने श्रम के प्रति सन्तोष हुआ है। उसी उत्साह से प्रेरित होकर हमने प्रस्तुत तीसरे संस्करण को और भी अधिक उपयोगी बनाने का प्रयास किया है। फलतः इस नये संस्करण में पुराने संस्करण की अपेक्षा नये शब्द बढ़े हैं। शब्दों के कुछ नये अर्थ भी जुड़े हैं। विशिष्ट अर्थों के निदर्शन के लिए प्राचीन कवियों के प्रयोग उदाहृत किये गये हैं। इससे अर्थ को अवगत करने में अत्यन्त सरलता हो जाएगी।

परिशिष्ट में संस्कृत ग्रन्थकारों की सूची में कुछ और प्रमुख नामों का परिचय बढ़ा दिया गया है। कोश को अधिक से अधिक उपयोगी एवं प्रामाणिक बनाने का श्रम हमने अपनी ओर से किया है। हमारा यह श्रम सार्थक होगा यदि संस्कृत-अनुरागियों के सन्तोष में इससे वृद्धि हुई।

रामनवमी २०२[illegible] वि०
प्रयाग

तारिणीश झा

महर्षियों की महान् शब्द-साधना एवं परम्परा को जीवित रखने का एक लघु प्रयास है जिसमें संस्कृत का शब्द एवं अर्थ-विज्ञान समझाया गया है।

आज से तीस वर्ष पूर्व स्वनामधन्य पण्डित द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी जी ने 'संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ' का संपादन किया था। संस्कृत के विशाल शब्दसमूह को संक्षिप्त सीमा में हिन्दी के माध्यम से उपस्थित कर उन्होंने एक बड़े अभाव की पूर्ति की थी। अतः संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ का प्रथम संस्करण एक पीढ़ी से अधिक काल तक विद्वानों के लिए प्रामाणिक ग्रंथ रहा है।

'संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ' के संशोधित एवं परिवर्द्धित द्वितीय संस्करण में मैंने महर्षियों के शब्द-विज्ञान को व्यक्त करने की चेष्टा करते हुए देश की भाषा-विषयक जिज्ञासा एवं आवश्यकता को ध्यान में रख कर संस्कृत भाषा के विशाल शब्द-भाण्डार को एक समन्वित रूप दिया है जिससे शब्दों और अर्थों की संगति और उनके उचित प्रयोग का निर्धारण हो। सुविधा के लिये पाणिनि के सभी धातुओं के पूर्ण अर्थ एवम् गण आदि निर्देशपूर्वक उनके लट्, लृट् और लुङ् लकार के प्रथम पुरुष एकवचन के रूप दे दिये गये हैं। धातु, प्रकृति, प्रत्यय और समास के स्पष्टीकरण से संस्कृत के शब्दार्थ-विज्ञान को समझने में पूर्ण सहायता मिलेगी। शब्दों के मूल रूप को जानने की जो जिज्ञासा बढ़ती जा रही है और प्रादेशिक भाषाओं को लेकर शब्द-विज्ञान के आधार पर उनके अध्ययन का जो क्रम आचार्यों एवं स्नातकों द्वारा आगे बढ़ाया जा रहा है उसमें यह कोष सहायक होगा। प्रस्तुत संस्करण में शब्दों की संख्या भी बहुत बढ़ गयी है और साठ हजार से अधिक शब्द आ गये हैं। किन्तु केवल मात्र परिवर्द्धन करने के नाम पर ही इसका आकार नहीं बढ़ाया गया है; प्रत्युत उपयोगिता और अल्प मूल्य ही को मानदंड मानकर प्रस्तुत संस्करण का यह आकार रखा गया है।

ग्रंथ के अंत में तीन उपयोगी परिशिष्ट दिये गये हैं। प्रथम परिशिष्ट में शास्त्रीय न्याय और उक्तियाँ हैं जिनका स्वच्छन्द प्रयोग साहित्य में हुआ है। द्वितीय परिशिष्ट में संस्कृत के कवियों और ग्रंथकारों का परिचय है। इस परिशिष्ट में महर्षि वाल्मीकि तथा द्वैपायन व्यास के बाद होने वाले प्रमुख कवियों एवम् आचार्यों का सामान्य परिचय है। तृतीय परिशिष्ट में संस्कृत साहित्य में प्रचलित भौगोलिक नामों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

कोष के संकलन में इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत जितनी अन्तःकथायें हैं और उनसे सम्बन्धित जो प्रमुख पात्र हैं उनका परिचय दे दिया जाय।

इस कोष को परिसंस्कृत रूप देने में मुझे संस्कृत के सिद्धान्त ग्रन्थों के अतिरिक्त वाचस्पत्यम् कोष, संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी (वामन शिवराम आप्टे), संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी (मोनियर विलियम्स) और बृहत्० आदि कोशों से विशेष सहायता मिली है। अतः मैं इन कोशों के विद्वान् सम्पादकों के प्रति आभारी हूँ। पुस्तक के प्रकाशक मेसर्स रामनारायण लाल बेनी प्रसाद के प्रबन्धकों ने जितनी लगन और शीघ्रता से इस पुस्तक का पुनः मुद्रण किया उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। मैं कविवर श्री जयशंकर त्रिपाठी

को धन्यवाद दिये विना नहीं रह सकता, जिन्होंने मुझे इस कोश-कार्य में निःस्वार्थ सहायता प्रदान की है।

श्रद्धेय पं० श्रीनारायण जी चतुर्वेदी की कृपा भी मुझे विस्मृत नहीं होगी जिन्होंने आरम्भ में मेरा कार्य देखकर प्रोत्साहन दिया है। चतुर्वेदी जी की यह सदैव इच्छा रही है कि पूज्य पिता स्वर्गीय द्वारकाप्रसाद जी चतुर्वेदी की निःस्वार्थ साहित्य-सेवा हिन्दी जगत् के लिए सदैव उपलब्ध हो। मैंने उनकी इस इच्छा को सफल करने का जो प्रयास किया है, उसकी मुझे प्रसन्नता है।

अन्त में 'करकृतमपराधं क्षन्तुमर्हन्ति सन्तः' इस अभ्यर्थना के साथ मेरा निवेदन है कि पाठक-गण अपने सुझाव देकर मुझे अनुगृहीत करेंगे।

रामनवमी, २०१४ वि०
प्रयाग

तारिणीश झा

PREFACE TO THE FIRST EDITION

OF late years great efforts have been made to raise the standard of education in our schools and universities, and the study of no subject has attracted so much attention as that of the Indian Vernaculars. The educated Public, as well as those responsible for our educational institutions, have been taking progressive interest in their teaching and development. Not long ago an academy has been instituted for the purpose of improving the Vernaculars with the moral and material blessings of the Government.

The classics, however, have not been so fortunate. Their studies are in comparative neglect. They have to yield their place to more utilitarian and modern subjects. The present-daytendency in education to subordinate what is purely or mostly cultural, to what is primarily utilitarian has thrown classics in shade.

Of all the classical languages *Sanskrit* has suffered most. Persian and Arabic are still popular with their admirers, for they (the admirers) have not yet decided to break off more or less completely from their past culture or ancient literature. They would not be satisfied with a second-hand and scrappy knowledge of their old literature through the translations by foreigners in foreign languages.

With the former champion of *Sanskrit* it is otherwise. A great many of those, who wield influence in the spheres of politics, education or social matters, even hesitate to do lip-service to that language in which the glories of their past are recorded. To them all old things of their country are only fit to be forgotten. Their neglect of *Sanskrit* has almost verged on hatred. They object even to that style of *Hindi*, which uses *Sanskrit* or words derived from it. And these very persons would gladly support the infusion of foreign words and derivatives into Hindi which might sound *Hebrew* and *Greek* to an average *Hindi*-speaking person !

Yet *Sanskrit* occupies a unique position—not only in the history and culture of *Aryavarta*—but also among the languages of the world.

Dr. Ogilvie and Wilson did not over-estimate the importance of *Sanskrit* when they said:

"*Sanskrit*, the ancient language of the Hindoos, has been termed the language of the languages and is even regarded as the key to all those termed 'Indo-European' including the Teutonic family, French, Italian, Spanish, Slavonian, Lithuanian, Greek, Latin and Celtic. It is found to bear such a striking resemblance both in its more important words and its grammatical forms to the Indo-European languages, as to lead to the conclusion that all must have sprung from a common source—some primitive language, now lost, of which they are all to be regarded as mere varieties."

It is very painful for these reasons to find that *Sanskrit* does not possess an Etymological and Explanatory dictionary worthy of its importance and status. And when we consider the circumstances prevailing among our intelligentsia, it is idle to hope that the study of *Sanskrit* would receive any very serious impetus for some time to come at any rate in these *Provinces.* However, it is our sacred duty to help the praiseworthy efforts of those who are still inclined to study *Sanskrit.* With this object in view, the present work was undertaken and his very simple compilation is placed before the public. There are two other valuable works on the subject—one by Dr. A. A. Macdonell and the other by the late Principal Vaman Shivaram Apte. But they could be of use to those only who know English.

The great work known as the great *Vachaspatya* is a standard work and is very useful for scholars. But until a well edited edition of the work comes out, it could not be of much help to even an average *Sanskrit* student.

There are three other works, *viz.*, the *Padmachandra Kosha*, the *Chaturvedi Kosha* and the *Yugal Kosha*, which can help a *Sanskrit* reader, but they are too small for much practical use.

It is, therefore, hoped that the present work will answer the needs of those *Hindi* and *Sanskrit*-knowing students who are studying *Sanskrit* in a college or school or privately. It is designed to be an adequate guide to a knowledge of *Sanskrit* words. It contains as many explanations and details as were permitted by the limited space at the disposal of the compiler.

No doubt the work could be improved and enlarged, but there was a danger of defeating the very object of the compilation by such improvement. For an enlarged volume should have increased the price and thus it should have been out of reach of the *Sanskrit* students, who are the poorest students in this poor country. The compiler is doubtful the cost and price of the book—low as they are—are not already high for the *Sanskrit* students.

The compiler acknowledges with thanks the many works he has consulted in preparing this work. They are too numerous to be enumerated in a short preface. He must, however, acknowledge his special gratitude to the late Principal Pandit V. S. Apte for the help he has obtained from his monumental work.

If the work reaches those for whom it is meant, and if it helps them in their study of *Sanskrit*, the compiler would feel his labours amply repaid. In case the first edition is exhausted in a reasonable time, thus showing a real demand for the work, the compiler proposes to enlarge and improve the work.

DARAGANJ,
Allahabad, 23*rd July*, 1928.

C. D. P. S.

उपयोगी सूचनाएँ

संस्कृत शब्दार्थ-कौस्तुभ के प्रस्तुत संस्करण में जो क्रम रखा गया है उसका उल्लेख नीचे किया जा रहा है—

१—शब्दों की व्युत्पत्ति बड़े कोष्ठकों के अन्तर्गत है। कहीं-कहीं स्त्रीलिंग के रूप भी बड़े कोष्ठकों में रखे गये हैं।

२—समस्त या यौगिक शब्दों को उनके मूल शब्दों के साथ रखा गया है। पर कहीं-कहीं ऐसे शब्द मूल शब्दों के साथ नहीं भी आ सके हैं। वे शब्द वर्णक्रम से यथास्थान मिल जायेंगे।

३—√ यह धातु का चिह्न है। अतः व्युत्पत्ति में इस चिह्नयुक्त शब्द के आगे जो प्रत्यय आये हैं उन्हें धातु में लगने वाले और इनसे भिन्न को संज्ञा में लगने वाले प्रत्यय समझना चाहिये।

४—सिद्धान्तकौमुदी में सभी धातु स्वरान्त दिये गये हैं। परन्तु उन स्वरवर्णों की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है, फलस्वरूप धातु हलन्त बच जाते हैं। अतः इस कोष में धातु हलन्त करके ही रखे गये हैं।

५—इकारान्त धातु में इत्संज्ञा-लोप होने पर 'नुम्' हो जाता है जिससे उस धातु के अन्तिम वर्ण सदृश उसी वर्ग का पञ्चमाक्षर उसमें जुट जाता है, जैसे 'अकि' के स्थान में 'अङ्क्' और 'अचि' के स्थान में 'अञ्च्' आदि। प्रस्तुत कोष में 'अङ्क्', 'अञ्च्' आदि इसी रूप में इकारान्त धातु रखे गये हैं।

६—षकारादि धातु के 'ष' को 'स' आदेश हो जाता है। फलतः ऐसे धातु सकारादि हो जाते हैं, जैसे 'षो'—'सो', 'ष्टक्'—'स्तक्', 'ष्ठा',–'स्था' आदि। इस कोश में ऐसे धातु सकारादि करके रखे गये हैं। इसी तरह णकारादि धातुओं में 'ण' को 'न' हो जाता है, जैसे 'णी'—'नी', 'णु'—'नु' आदि। अतः ऐसे धातुओं को 'न' अक्षर में देखना चाहिये।

७—'ब', 'व' और 'श' 'स' अक्षरों के कुछ शब्द भिन्न-भिन्न कोशों में दोनों अक्षरों में मिलते हैं। अथवा 'ब' के शब्द 'व' में और 'व' के शब्द 'ब' में एवम् 'श' के शब्द 'स' में और 'स' के शब्द 'श' में देखे जाते हैं। प्रस्तुत कोष में ऐसे शब्द उसी प्रकार रखे गये हैं। जिनका जो रूप अधिक प्रयोग में आता है उसी रूप में उनको दिया गया है। ऐसे शब्दों की शुद्धता का निर्णय व्युत्पत्ति के आधार पर करना चाहिये। यदि व्युत्पत्ति में धातु का आदि अक्षर 'व' है तो उस शब्द का आदि अक्षर 'व' ही रहेगा, भले ही वह शब्द 'ब' अक्षर में मिलता हो।

८—'पृषो०', 'नि०' और 'बा०' ये तीनों पाणिनीय व्याकरण के संकेत हैं। इनके अर्थ हैं 'पृषोदर' आदि शब्दों की भाँति, 'निपात' (बिना किसी सूत्र-सिद्धान्त) से और 'बाहुलक' (जहाँ जैसी प्रवृत्ति देखी जाय वहाँ उस प्रकार से)। पाणिनि ने जिन शब्दों की सिद्धि अपने सूत्रों से नहीं देखी, उनके लिये उपयुक्त तीन मार्ग बना डाले। इन संकेतों से किसी शब्द को सिद्ध करने के लिये वर्णों का आगम, व्यत्यय, लोप आदि आवश्यकतानुसार किये जाते हैं।

९—हिंदी में पञ्चमाक्षरों के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग चल पड़ा है, परन्तु संस्कृत भाषा की यह शैली नहीं है। अतः कोष में मूल शब्द पञ्चमान्त ही दिये गये हैं।

प्रत्यय और आदेश

नीचे प्रत्ययों और आदेशों की सूची दी जा रही है जिसमें (१) 'डैश' चिह्न के आगे के शब्द आदेश हैं और शेष प्रत्यय। ये आदेश जिन प्रत्ययों के आगे दिखाये गये हैं उनके कतिपय वर्णों को नष्ट करके उनके स्थान में ये हो जाते हैं। व्युत्पत्ति में अधिकतर ऐसे प्रत्यय मात्र उल्लिखित हैं, आदेश नहीं। किन्तु उनके स्थान में ये आदेश अवश्य होंगे, यह पाठकों को ऊह कर लेना चाहिए। (२) बराबर चिह्न के बाद जो अक्षर या शब्द हैं, वही उन प्रत्ययों में से बच जाते हैं अर्थात् इत्संज्ञा-लोप होने के बाद उतना ही अंश उस प्रत्यय का बच जाता है। निम्नलिखित प्रत्ययों के अतिरिक्त भी कुछ प्रत्यय कोश में मिलेंगे। उनका भी इसी प्रकार अनुगम करना चाहिये।

टाप्=, डाप्= } आ
ङीप्=, ङीष्= } ई
ऊङ्= ऊ
फक्—, ष्फ—, फिञ्— } आयन्
ढक्—, ढञ्— } एय्
ख—ईन्
छ—ईय्
घ—इय्
ष्यञ् =, यक् =, यत् =, यञ् =, ण्य =, ण्यत् =, क्यप् =, ल्यप् } य
कन् =, कप् = } क
ठन् —, ठक् —, ठञ् — } इक
क्त =त
क्तवतु=तवत्
क्त्वा=त्वा

क्तिन्=, क्तिच्= } ति
णमुल्=अम्
क्वुन्—, ण्वुच्—, ण्वुल्—, ष्वुन्—, वुञ् —, वुन् — } अक
ल्यु —, ल्युट् —, युच् — } अन
णिङ =, णिच् = } इ
अच् =, अण् =, अप् =, क =, खच् =, खश् =, खल् =, खञ् =, ट =, टक् =, ड =, ण =, श = } अ
षाकन्=आक

इनि =, घिनुण् =, णिनि = } इन्
इष्णुच् =, खिष्णुच्= } इष्णु
उण् =, डु = } उ
उकञ् =उक
नङ्, नन् } =न
क्वनिप्=वन्
क्वरप्=वर
झच्—, झिच्— } अन्त्
क्विप् =, क्विन् =, ञि =, विच् = } इन चारों प्रत्ययों का सर्वापहार-लोप हो जाता है; अर्थात् ये चारों बिलकुल उड़ जाते हैं।

संकेताक्षरों का विवरण

अ०=अदादिगणीय
अक०=अकर्मक
अत्या० स०=अत्यादि तत्पुरुष समास (प्रा० स० के अन्तर्गत)
अव्य०=अव्यय
अव्य० स०=अव्ययीभाव समास
आत्म०=आत्मनेपदी
उ०=उत्तररामचरितम्
उप० स०=उपपद समास
उपमि० स०=उपमित समास
उभ०=उभयपदी
क०=कण्ड्वादिगणीय
कर्म० स०=कर्मधारय समास
का०=कादम्बरी
कि०=किरातार्जुनीयम्
कु०=कुमारसम्भवम्
क्र्या०=क्र्यादिगणीय
गी०=गीतगोविन्दम्
च० त०=चतुर्थीतत्पुरुष समास
चु०=चुरादिगणीय
जु०=जुहोत्यादिगणीय
त०=तनादिगणीय
तु०=तुदादिगणीय
तृ० त०=तृतीयातत्पुरुष समास
द०=दशकुमारचरितम्
दि०=दिवादिगणीय
दे०=देखिये
द्व० स०=द्वन्द्व समास
द्विक०=द्विकर्मक
द्विगु०=द्विगु समास
द्वि० त०=द्वितीयातत्पुरुष समास
न०=नपुंसकलिंग
न० त०=नञ्तत्पुरुष समास
न० ब०=नञ्बहुव्रीहि समास
नि०=निपातनात्
पर०=परस्मैपदी
पं०=पञ्चतन्त्रम्
पं० त०=पञ्चमीतत्पुरुष समास
पुं०=पुंलिंग
पृषो०=पृषोदरादित्वात्
प्र०=प्रतिमानाटकम्
प्रा० ब०=प्रादिबहुव्रीहि समास
प्रा० स०=प्रादितत्पुरुष समास
ब० स०=बहुव्रीहि समास
बा०=बाहुलकात्
भ्वा०=भ्वादिगणीय
मयू० स०=मयूरव्यंसकादि समास
मा०=मालविकाग्निमित्रम्
मे०=मेघदूतम्
र०=रघुवंशम्
रु०=रुधादिगणीय
वि०=विक्रमोर्वशीयम्
वि०=विशेषण
वे०=वेणीसंहारनाटकम्
श०=शकुन्तलानाटकम्
शक०=शकन्ध्वादित्वात्
ष० त०=षष्ठीतत्पुरुष समास
सक०=सकर्मक
स० त०=सप्तमीतत्पुरुष समास
सु०=सुभाषितरत्नावली
स्त्री०=स्त्रीलिंग
स्व०=स्वप्नवासवदत्तम्
स्वा०=स्वादिगणीय

❀ श्री: ❀

संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ

अ

अ—(पुं०) [√अव्+ड] विष्णु। शिव। ब्रह्मा। वायु। वैश्वानर। विश्व। अमृत। देवनागरी और संस्कृत-परिवार की अन्य वर्णमालाओं का पहला अक्षर और स्वरवर्ण। (इसका उच्चारण-स्थान कंठ है। इसके १८ भेद होते हैं। प्रथम—ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत। तदुपर्यन्त—ह्रस्व-उदात्त, ह्रस्व-अनुदात्त, ह्रस्व-स्वरित, दीर्घ-उदात्त, दीर्घ-अनुदात्त, दीर्घ-स्वरित, प्लुत-उदात्त, प्लुत-अनुदात्त, प्लुत-स्वरित। ये ९ प्रकार हुए। फिर अनुनासिक और अननुनासिक भेद से—इन ९ के दुगुने ९×२=१८ भेद हुए।) (अव्य०) 'अ' अक्षर निषेधार्थक 'नञ्' का प्रतिनिधि है। स्वर से आरंभ होने वाले शब्दों के पहले आने पर इसका रूप 'अन्' हो जाता है और व्यञ्जन के पहले आने पर 'अ' ही रहता है। नञ्—के अर्थ ६ हैं:—तत्सादृश्यमभावश्च, तदन्यत्वं तदल्पता। अप्राशस्त्यं विरोधश्च, नञर्थाः षट् प्रकीर्तिताः॥ (उदाहरण क्रम से) सादृश्य—अब्राह्मणः (यज्ञोपवीत आदि होने से) [ब्राह्मण के सदृश अर्थात् क्षत्रिय आदि] अभाव।—अपापम् (पापाभाव)। भिन्नता।—अघटः (घट से भिन्न पट आदि)। अल्पता—अनुदरा (पतली या छोटी कमर वाली)। अप्राशस्त्य भाव—अकालः (अप्रशस्त अर्थात् अशुभ या अनुचित काल)। विरोध—अनादरः (आदर का विरोधी अर्थात् तिरस्कार या अपमान)।

अऋणिन्—(वि०) [नास्ति ऋणं यस्य न० ब०] जिसने किसी से ऋण न लिया हो या जिसके ऊपर किसी का ऋण न हो, बे-कर्ज (यहाँ 'ऋ' को व्यञ्जन मानने के कारण 'अन्' नहीं हुआ। स्वर मानने पर 'अनृणी' प्रयोग होता है।)

अंश्—चुरा० पर० सक० विभाजित करना, बाँटना, भाग करके बाँटना। पृथक् करना। अंशयति, अंशापयति।

अंश—(पुं०) [√अंश्+अच्] भाग, हिस्सा बाँट। भाज्य। अङ्क। भिन्न की लकीर के ऊपर की संख्या। चौथा भाग। कला। सोलहवाँ हिस्सा। वृत्त की परिधि का ३६० वाँ हिस्सा। जिसे इकाई मान कर कोण या चाप का परिमाण बतलाया जाता है। कंधा। बारह आदित्यों में से एक।—**अंश (अंशांश)** (पुं०) अंशावतार, एक हिस्से का हिस्सा।—**अंशि (अंशांशि)** (क्रि० वि०) भागशः, हिस्सेवार।—**अवतरण (अंशावतरण)**—(न० दे०) 'अंशावतार', किसी भाग का उद्धरण, महाभारत के आदि पर्व के ६४—६७ अध्यायों का नाम।—**अवतार (अंशावतार)**—(पुं०) वह अवतार जिसमें ईश्वर या देव-विशेष की पूरी कला अवतीर्ण न हुई हो।

—कल्पना (स्त्री०)—प्रकल्पना—(स्त्री०) —प्रदान—(न०) किसी भाग का बँटवारा या देना ।—भाज—हर—हारिन्—हिस्सा लेने या पाने वाला, उत्तराधिकारी, यथा—'पिण्डदोऽशहरश्चैषां पूर्वाभावे परः परः' । (याज्ञ०)—सवर्णन—(न०) अङ्कशास्त्र की एक क्रिया-विशेष ।—स्वर—(संगीत में) प्रधान स्वर ।

अंशक—(वि०) [√अंश्+ण्वुल्] विभाजक, बाँटने वाला । हिस्सेदार । (पु०) दायाद । (न०) दिन । [अंश+कन् (स्वार्थे)] (पुं०) हिस्सा । टुकड़ा । मेष आदि राशि का तीसवाँ भाग ।

अंशन—(न०) [√अंश्+ल्युट्] भाग देने की क्रिया ।

अंशयितृ—(वि०) [√अंश्+णिच्+तृच्] विभाजक, बाँटने वाला । (पुं०) हिस्सेदार पाँतीवाला ।

अंशल—(वि०) [अंश+लच्] बलवान्, दृढ़ शरीर वाला ।

अंशिता—(स्त्री०) [अंशिन्+तल्] साझीदारी, हिस्सेदारी ।

अंशिन्—(वि०) [√अंश्+णिनि] साझीदार, भाग पाने वाला । यथा—सर्वे वा स्युः समांशिनः । (याज्ञ०)

अंशु—(पुं०) [√अंश+कु] किरण, रश्मि । चमक, दमक । नोक । (डोरे का) छोर । पोशाक । सजावट । रफ्तार, गति । परमाणु । —जाल—(न०) रश्मिसमुदाय ।—धर,—पति, —बाण,—भृत, —भर्तृ, —स्वामिन्,—हस्त—(पुं०) सूर्य । आदित्य ।—पट्ट—(न०) एक प्रकार का रेशमी वस्त्र । —मत्—(वि०) [अंशु+मतुप्] चमकदार, चमकीला । नुकीला, नोकदार । (पुं०) सूर्य । एक सूर्यवंशी राजा जो असमञ्जस का पुत्र और महाराज सगर का पौत्र था ।—मती—(स्त्री०) [अंशुमत्—ङीप्] सालपर्णी या सरिवन नामक ओषधि । पूर्णमासी, पूर्णिमा । एक नदी (प्रायः यमुना) ।—मत्फला—(स्त्री०) [अंशुमत् फलं यस्याः, ब०स०] केले का वृक्ष ।—माला—(स्त्री०) प्रकाश की माला सूर्य या चन्द्र का मण्डल ।—मालिन्—(पुं०) सूर्य ।

अंशुक—(न०) [अंशु+क] वस्त्र । महीन कपड़ा । महीन रेशमी मलमल ! महीन सफेद वस्त्र । वह सिला कपड़ा जो सबके ऊपर या सबके नीचे पहना जाता है । तेजपात । आँच या रोशनी की मंद लौ या ज्योति ।

अंशुल—(वि०) [अंशु√ला+क] चमकीला, दमकीला ।—(पुं०) चाणक्य का दूसरा नाम ।

अंस्—(दे०)√अंश् ।

अंस—(पुं०) [√अम्+स] टुकड़ा । हिस्सा । कंधा । कंधे की हड्डी । अंसफलक ।—कूट—(पुं०) साँड़ के कंधों के बीच का ऊपर को उठा हुआ भाग । कूबड़, कुब्ब ।—त्र—(न०) कंधों का कवच-विशेष ।—फलक—(पुं०) मेरुदण्ड का ऊपरी भाग ।—भार—(पुं०) कंधे पर का बोझ या जुआ ।—भारिक, —भारिन्—(वि०) कंधे पर रख कर बोझ उठाये हुए अथवा कंधे पर जुआ रखे हुए ।—विवर्तिन् —(वि०) कंधों की ओर मुड़ा हुआ ।

अंसल—(वि० दे०) 'अंशल' ।

अंस्य—(वि०) [अंस+यत्] कंधे का, अंस सम्बन्धी ।

अंह्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । समीप जाना । आरंभ करना । अंहते । चुरा० पर० सक० भेजना । बोलना । अक० चमकना । अंहयति ।

अंहति—ती—(स्त्री०) [√अंह्+अति] [अंहति—ङीष्] भेंट उपहार । दान, खैरात । बीमारी ।

अंहस्—(न०) [√अंह+असि] पाप । कष्ट । चिन्ता ।—पति, अंहस्पति—(पं०)

चिन्ता या पाप का स्वामी। मलमास।—**पत्य** –(न०) चिन्ता या कष्ट के ऊपर विजय पाना।

अंह्रि—(पुं०)[√अंह्+क्रि] पैर। पेड़ की जड़। चार की संख्या।—**प**–(पुं०) पादप, जड़ से जल पीने वाला अर्थात् वृक्ष।—**स्कन्ध** –(पुं०) एड़ी और घुटने के बीच का भाग।

अक्—भ्वा० पर० अक० घूमघुमौआ चाल चलना, सर्पाकार चलना। अकति।

अक—(न०) [न कम् न० त०] हर्ष का अभाव। पीड़ा। कष्ट। पाप।

अकच—(वि०) [नास्ति कचो यस्य] गंजा, जिसके सिर पर बाल न हों।—(पुं०) केतु ग्रह का नाम।

अकच्छ—(वि०) [नास्ति कच्छो यस्य न० ब०] नंगा। लंपट।

अकटुक—(वि०) [न कटुकः न० त०] जो कड़वा न हो। जो थका न हो, अक्लांत।

अकण्टक—(वि०) [न० विद्यते कण्टको यत्र न० ब०] बिना काँटे का। निर्विघ्न। शत्रु-रहित।

अकण्ठ—(वि०) [नास्ति कण्ठो यस्य न० ब०] जिसके कण्ठ न हो। स्वरहीन। कर्कश।

अकत्थन—(वि०) [नास्ति कत्थनम् यस्मिन् न० ब०] दर्पहीन, जो घमंड न करे।

अकथित—(वि०) [न कथितं न० त०] जो न कहा गया हो। अनुक्त, गौण कर्म (व्या०)।

अकनिष्ठ—(वि०) [न कनिष्ठो यस्मात् न० ब०] जिससे कोई छोटा न हो अर्थात् जो सबसे छोटा हो। [न कनिष्ठः न० त०] जो सबसे छोटा न हो। [अके=वेदनिन्दारूपे पापे निष्ठा यस्य ब० स०]—(पुं०) गौतम बुद्ध का नाम।

अकन्या—(स्त्री०)[न कन्या न० त०] जिसका क्वाँरपन उतर चुका हो।

अकम्पन—(न०) [न कम्पनम् न० त०] न काँपना। [न विद्यते कम्पनम् यत्र न० ब०] (वि०) कंपरहित, स्थिर।—(पुं०) रावण के दल का एक राक्षस।

अकम्पित—(वि०) [न कम्पितः न० त०] जो काँपा न हो। स्थिर।—(पुं०) महावीर (अंतिम तीर्थंकर) के ग्यारह शिष्यों में से एक।

अकर—(वि०) [न विद्यते करो यस्य न० ब० लुंजा, जिसके हाथ न हो। अकर्मण्य, जो कुछ न करे। वह माल जिस पर चुंगी न लगे या वह व्यक्ति जिस पर कर न हो।

अकरण—न० [न करणम् न० त०] कुछ न करना, क्रिया का अभाव।

अकरणि—(स्त्री०) [न√कृ+अनि] असफलता। नैराश्य। अपूर्णता। इसका प्रयोग प्रायः किसी को शाप देने या किसी की अमंगल कामना करने में होता है।

अकरा—(स्त्री०) [न√कृ+अच्] आँवले का वृक्ष, आमलकी।

अकराल—(वि०) [न करालः न० त०] जो भयावह न हो। सौम्य। सुन्दर।

अकरुण—(वि०) [नास्ति करुणा यस्य न० ब०] दयारहित। निठुर।

अकर्कश—(वि०) [न कर्कशः न० त०] जो कर्कश या कठोर न हो। नरम।

अकर्ण—(वि०) [नास्ति कर्णौ यस्य न० ब०] कर्णरहित, जिसके कान न हो। बहरा। (पुं०) सर्प।

अकर्ण्य—(वि०) [न—कर्ण+यत्] जो कानों के योग्य न हो।

अकर्तन—(वि०) [√कृत्+युच्, न० त०] बौना, वामन। [√कृत्+ल्युट्, न० ब०] जो न काटे।

अकर्तृ—(वि०) [न कर्ता न० त०] जो कर्ता न हो, कर्म न करने वाला।—(पुं०) कर्मों से निर्लिप्त पुरुष (सांख्य०)।

अकर्मक—(वि०) [नास्ति कर्म यस्य न० ब० कप्] (वह क्रिया) जिसके लिये कर्म की अपेक्षा न हो (व्या०) —(पुं०) परमात्मा

अकर्मण्य—(वि०) [कर्मन्+यत् न० त०] कर्म के अयोग्य, निकम्मा। न करने योग्य, अनुचित।

अकर्मन्—(वि०) [न विद्यते कर्म यस्य न० ब०] सुस्त। जिसके पास करने को कुछ काम न हो अथवा जो कुछ भी काम न करता हो। अयोग्य। पतित। दुष्ट। न० [न कर्म न० त०] कार्याभाव। अनुचित कार्य, बुरा कर्म, पाप।—**अन्वित** (**अकर्मान्वित**)-(वि०) बेकाम, खाली, निठल्लू। अपराधी।—**कृत्**-(वि०) क्रिया से रहित। अनुचित काम करने वाला।—**भोग**-(पुं०)-कर्मफल से मुक्त होने की स्वतंत्रता का सुखानुभव।

अकल—(वि०) [नास्ति कला=अवयवः यस्य न० ब०] जो भागों में विभक्त न हो। (पुं०) परमात्मा।

अकल्क—(वि०) [नास्ति कल्को यस्य न० ब०] विशुद्ध, पवित्र। पापशून्य। (स्त्री०) चन्द्रमा की चाँदनी।—**ता**-(स्त्री०) ईमानदारी, शुद्धता।

अकल्प—(वि०) [नास्ति कल्पो यस्य न० ब०] अनियंत्रित, असंयत। निर्बल, अयोग्य। तुलनाशून्य, जिसकी तुलना न हो सके।

अकल्य—(वि०) [कलासु साधुः कला+यत् न० त०] अस्वस्थ, भला चंगा नहीं।

अकल्याण—(वि०) [नास्ति कल्याणम् यस्य न० ब०] मंगलरहित, अशुभ। (न०) [न कल्याणम् न० त०] अमंगल, अहित।

अकव-वा—(वि०) [न कव्यते=वर्ण्यते √कव+अच्—आ न० त०] जिसका वर्णन न किया जा सके, वर्णनातीत।

अकवारि—(वि०) [न कुत्सिता अरयो यस्य न० ब०] जिसके घृणित शत्रु न हों।

अकस्मात्—(अव्य०) [न कस्मात्] संयोगवश, सहसा, अचानक, हठात्, आपसे आप, अकारण।

अकाण्ड—(वि०) [नास्ति काण्डो यस्मिन्, न० ब०] बिना धड़ या तने का, अचानक या असमय होनेवाला। (क्रि० वि०) अकारण ही, अचानक।—**जात**-(वि०) सहसा उत्पन्न हुआ अथवा उत्पन्न किया हुआ।—**पातजात**-(वि०) जन्मते ही मर जाने वाला।—**शूल**-(न०) वायुगोले का सहसा उठने वाला दर्द।

अकाम—(वि०) [नास्ति कामो यस्य न० ब०] बिना कामना का, कामनारहित। इच्छाशून्य। निःस्पृह। अबोध। अतर्कित। (पुं०) [न कामः न० त०] कामना का अभाव।

अकामतः—(क्रि० वि०) [न—काम+तसिल्] बिना इरादा या इच्छा के, विवश होकर।

अकाय—(वि०) [न विद्यते कायो यस्य न० ब०] बिना शरीर का, पाञ्चभौतिक शरीर से रहित। (पुं०) राहु का नाम। परमात्मा की एक उपाधि।

अकार—(पुं०) [अ+कार] 'अ' अक्षर।

अकारण—(वि०) [नास्ति कारणम् यस्य न० ब०] निष्प्रयोजन, निरुद्देश्य, हेतुरहित, स्वेच्छाप्रसूत, अपने आप उत्पन्न। (क्रि० वि०) बिना कारण, बेमतलब।

अकार्य—(वि०) [न√कृ+ण्यत्] न करने योग्य, अनुचित। न० बुरा कर्म, अपराध, जुर्म।—**कारिन्**-(वि०) बुरा काम करने वाला, जो कर्तव्य न करे।

अकाल—(वि०) [नास्ति कालो यस्य न० ब०] जिसका समय नहीं हुआ है, असामयिक। (पुं०) [न कालः न० त०] अनुपयुक्त समय, कुसमय।—**कुसुम**,—**पुष्प**-(न०) कुसमय का फूला हुआ फूल।—**कूष्मांड**-(पुं०) कुसमय में फला हुआ कुम्हड़ा। ज,—**जात**-

(वि०) कुसमय में उत्पन्न, कच्चा। —**जलदोदय** —**मेघोदय**—(पुं०) कुसमय आकाश में बादलों का उमड़ना। पाला या कुहरा।—**मृत्यु**-(पुं०) बेसमय की मौत, असामयिक मृत्यु।—**वेला**—(स्त्री०) कुसमय।—**सह**-(वि०) जो विलम्ब अथवा समय का नाश न सह सके, बेसब्र।

अकिञ्चन—(वि०) [नास्ति किंचन यस्य मयू० त० स०] जिसके पास कुछ न हो, निपट निर्धन, कंगाल, दरिद्र।

अकिञ्चिज्ज्ञ—(वि०) [न-किञ्चित्√ज्ञा+क] कुछ भी न जानने वाला, निपट अज्ञान।

अकिञ्चित्कर—(वि०) [न-किञ्चित्√कृ+अच्] असमर्थ, जिसका किया कुछ भी न हो सके, तुच्छ।

अकीर्ति—(स्त्री०) [न-√कृत्+क्तिन्] अपयश, बदनामी।

अकुण्ठ—(वि०) [नास्ति कुण्ठा यस्य न० ब०] जो कुंठित या भोथरा न हो, तीक्ष्ण, चोखा, तीव्र, खरा, तेज। बिना रोका-टोका हुआ। निर्दिष्ट। अत्यधिक।

अकुतस्—(क्रि० वि०) [न—किम्+तसिल्] यह अकेला कहीं नहीं प्रयुक्त होता। इसका अर्थ है जो कहीं से न हो।

अकुतोभय—(वि०) [नास्ति कुतोऽपि भयं यस्य मयू० त० स०] निर्भय, जिसे किसी का भय न हो।

अकुप्य—(न०) [न—√गुप्+क्यप् न० त०] सुवर्ण। चाँदी। कम कीमती धातु नहीं।

अकुल—(वि०)[नास्ति कुलं यस्य न० ब०] कुलरहित, अकुलीन। (पुं०) शिव।

अकुशल—(वि०) [न कुशलः न० त०] जो निपुण न हो, अनाड़ी। अशुभ, अभागा। (न०) विपत्ति, बुराई, अहित।

अकुह,—क (पुं०) [नास्ति कुहः,—कः यस्मिन् न० ब०] जो ठग नहीं है, ईमानदार आदमी।

अकूपार—(पुं०) [न—कूप√ऋ+अण्] समुद्र। सूर्य। बड़ा कछुआ, वह विशाल कछुआ जिसकी पीठ पर पृथ्वी टिकी हुई मानी जाती है। पत्थर, चट्टान।

अकूर्च—(वि०) [नास्ति कूर्चम् यस्य न० ब०] कपटशून्य, जिसके दाढ़ी न हो। (पुं०) बुद्ध।

अकृच्छ्र—(वि०) [नास्ति कृच्छ्रं यस्य न० ब०] बिना क्लेश का, आसान। (न०) [न० त०] क्लेश या कठिनाई का अभाव।

अकृत—(वि०) [न√कृ+क्त] जो न किया गया हो। जिसके करने में भूल की गयी हो। अपूर्ण, अधूरा। जो रचा न गया हो। जिसने कोई काम न किया हो। अपक्व, कच्चा।—(स्त्री०) बेटी होने पर भी जो बेटी न मानी जाय और जो पुत्रों के समकक्ष मानी जाय। (न०) किसी कार्य को न करना। अश्रुतपूर्व कर्म। **अभ्यागम** (**अकृताभ्यागम**)—(पुं०) अकृत कर्म के फल की प्राप्ति।—**अर्थ** (**अकृतार्थ**)-(वि०) असफल, अनुत्तीर्ण।—**अस्त्र** (**अकृतास्त्र**)-(वि०) जिसको हथियार चलाने का अभ्यास न हो। —**आत्मन्** (**अकृतात्मन्**)-(वि०) अज्ञानी, मूर्ख, परब्रह्म या परमात्मा के ज्ञान से रहित—**उद्वाह** (**अकृतोद्वाह**)-(वि०) अविवाहित। —**ज्ञ**-(वि०) जो कृतज्ञ न हो, जो किये हुए उपकार को न माने, कृतघ्न। अधम, नीच। —**धी**,—**बुद्धि**-(वि०) अज्ञ, अबोध, मूर्ख।

अकृतिन्—(वि०) [न—कृत+इनि] अकुशल, अनाड़ी। निकम्मा।

अकृष्ट—(वि०) [न√कृष+क्त] अनजुता, जो न जोता गया हो।—**पच्य**,—**रोहिन्**—(न०) जो अनजुती जमीन में उत्पन्न हुआ हो।

अकृष्णकर्मन्--(वि०) [न कृष्णं कर्म यस्य न० ब०] जिसके कर्म बुरे नहीं हैं, निर्दोष, निर्मल।

अकेतन--(वि०) [न केतनं यस्य न० ब०] गृह-हीन, बे घर-बार का।

अकोट--(पुं०) [न कोटः=कुटिलता यस्मिन् न० ब०] सुपाड़ी का वृक्ष।

अकोप--(पुं०) [न कोपः न० त०] कोप का अभाव। [न० ब०] राजा दशरथ का एक मंत्री।

अकोविद--(वि०) [न कोविदः न० त०] जो जानकार न हो, मूढ़, अपण्डित।

अकौशल--(न०) [कुशलस्य भावः, कुशल +अण् न० त०] कुशलता का अभाव, अदक्षता।

अक्का--(स्त्री०) [√अक्+कन्] माता।

अक्त--(वि०) [√अञ्ज्+क्त] जोड़ा हुआ। गया हुआ। बाहर तक फैला हुआ। तैलादि की मालिश किया हुआ, अंजन लगा हुआ।

अक्ता--(स्त्री०)- [√ अञ्ज्+क्त] रात्रि।

अक्त्र--(न० [√अञ्ज्+त्र] वर्म, कवच।

अक्रम--(वि०) [नास्ति क्रमो यस्य न० ब०] क्रमरहित, बेसिलसिला। (पुं०) [न क्रमः न० त०] क्रम का अभाव, गड़बड़ी। **--संन्यास**-(पुं०) संन्यास का एक प्रकार (जो आश्रम-व्यवस्था के अनुसार धारण न किया गया हो)।

अक्रिय--(वि०) [नास्ति क्रिया यस्मिन् न० ब०] जिसमें क्रिया न हो, क्रियाशून्य।

अक्रूर--(वि०) [न क्रूरः न० त०] जो क्रूर या कठोर न हो, जो संगदिल न हो। (पुं०) एक यादव का नाम, जो कृष्ण के चचा और हितैषी थे।

अक्रोध--(वि०) [नास्ति क्रोधो यस्य न० ब०] क्रोधशून्य, शान्त। (पुं०) [न क्रोधः न० त०] क्रोध का न होना।

अक्लम--(वि०) [नास्ति क्लमो यस्य न० ब०] श्रम या थकावट से रहित [(पुं०) [न क्लमः न० त०] श्रम या थकावट का न होना।

अक्लिका--(स्त्री०) नील का पौधा।

अक्लिन्न--(वि०) [न√क्लिद्+क्त] जो आर्द्र या गीला न हो।**--वर्त्मन्**-(पुं०) आँख का एक रोग जिसमें पलकें चिपकती हैं।

अक्लिष्ट--(वि०) [न√क्लिश्+क्त] कष्ट-रहित, बिना क्लेश का। सुगम, सहज, आसान।

अक्ष्--भ्वा० पर० अक० पहुँचना। व्याप्त होना। घुसना। सक० एकत्र करना, जमा करना। अक्षति, अक्ष्णोति।

अक्ष--(पुं०) [√अक्ष्+अच्] धुरी, किसी गोल वस्तु के बीचोंबीच पिरोयी हुई वह लोहे की छड़ या लकड़ी जिस पर वह गोल वस्तु घूमती है। गाड़ी, छकड़ा। पहिया। तराजू की डाँड़ी। एक कल्पित स्थिर रेखा जो पृथ्वी के भीतरी केन्द्र से होती हुई उसके आर-पार दोनों ध्रुवों पर निकली है और जिस पर पृथिवी घूमती हुई मानी जाती है। चौसर का पासा, चौसर। रुद्राक्ष। तौल-विशेष जो १६ माशे की होती है और जिसे कर्ष भी कहते हैं। बहेड़ा। सर्प। गरुड़। आत्मा। ज्ञान। मुकदमा, व्यवहार, मामला। जन्मान्ध। इन्द्रिय। तूतिया। सोहागा।**--अंश**,-भाग। (पुं०) भूमध्यरेखा से उत्तर या दक्षिण का अंतर।**--अग्रकील**-(पुं०) गाड़ी के पहिये में लगायी जाने वाली खूँटी। **--आवपन**-(न०) चौसर की बिछाँत या बोर्ड।**--आवाप**-पुं०) जुआरी।**--कर्ण**--(पुं०) समकोण त्रिभुज के सामने की बाहु। **--कुशल**,**--शौंड**-(वि०) जुआ खेलने में प्रवीण।**--कूट**-(पुं०) आँख की पुतली। **--कोविद**,**--ज्ञ**।-(वि०) पासे या चौसर के खेल में निपुण या उसका ज्ञाता।**--ग्लह** (पुं०) जुआ, पासे का खेल।**--ज**-(न०) ज्ञान, अवनति। वज्र। हीरा। (पुं०)

विष्णु का नाम-विशेष ।—**तत्त्व**–(न०), —**विद्या**–(स्त्री०) जुआ खेलने की कला या विद्या ।—**दर्शक**,—**दृश्**–(पुं०) जुए का निर्णायक। जुए का व्यवस्थापक ।—**देविन्**–(पुं०) जुआरी ।—**द्यूत**–(न०) जुआ, चौसर, पासे का खेल । —**धूर्त**–(पुं०) जुआरी ।—**धूर्तिल**–(पुं०) गाड़ी के जुए में जुता हुआ साँड़ या बैल ।—**पटल**–(न०) न्यायालय । वह स्थान या कमरा, जहाँ अदालती कागजात रखे जाते हों ।—**पाट**–(पुं०) अखाड़ा ।—**पाटक**–(पुं०) आईन के ज्ञान में निपुण, न्यायाधीश ।—**पात**–(पुं०) पासे का फिकाव ।—**पाद**–(पुं०) सोलह पदार्थवादी न्यायशास्त्र के रचयिता गौतम ऋषि अथवा न्यायवादी ।—**भार**–(पुं०) गाड़ी भर बोझा ।—**माला** (स्त्री०) रुद्राक्ष की माला, वर्णमाला, वशिष्ठ की पत्नी, अरुंधती ।—**मालिन्**–(पुं०) रुद्राक्ष की माला धारण करने वाला, शिव का एक नाम ।—**राज**–(पुं०) वह जिसे जुआ खेलने का व्यसन हो अथवा पासों में प्रधान ।—**रेखा**–(स्त्री०) धुरी की रेखा ।—**वती**–(स्त्री०) चौसर या पासे का खेल ।—**वाट**–(पुं०) वह घर जिसमें जुआ होता हो, जुआड़खाना ।—**वाम**–(पुं०) जुए में कपट करने वाला ।—**वृत्त**–(पुं०) अक्षांशदर्शक वृत्त । (वि०) जुए का आदी, जुआ खेलते समय घटित होने वाला ।—**सूत्र**–(पुं०) रुद्राक्ष की माला; जनेऊ ।—**हृदय**–(न०) जुआ के खेल में पूर्ण निपुणता ।

अक्षणिक—(वि०) [न क्षणिकः न० त०] जो क्षणिक या अस्थायी न हो, दृढ़, स्थिर ।

अक्षत—(वि०) [न √क्षण्+क्त] जो चोटिल न हो। जो टूटा न हो। सम्पूर्ण । अविभक्त । (पुं०) शिव । कूटे हुए या पछोरे हुए चावल, जो धूप में सुखाये गये हों । (बहु०); सम्पूर्ण, अनाज । चावल जो जल से धोये हुए हों और पूजन में किसी देवता पर चढ़ाने को रखे जायँ। यव। (न०) अनाज किसी भी प्रकार का । हिजड़ा नपुंसक (यह पुंल्लिंग भी है) ।—**ता**–(स्त्री) [अक्षत—टाप्] क्वारी । धर्मशास्त्रानुसार वह पुनर्भू स्त्री जिसने पुनर्विवाह तक पुरुष से संसर्ग न किया हो । काँकड़ासिंगी ।—**योनि**–(स्त्री०) वह कन्या जिसका पुरुष से संसर्ग न हुआ हो, वह कन्या जिसका विवाह तो हो गया हो, परन्तु पुरुष के साथ संसर्ग न हुआ हो ।

अक्षम—(वि०) [√क्षम्+अच् न० त०] क्षमतारहित, असमर्थ । [नास्ति क्षमा यस्य न० व०] क्षमारहित । असहिष्णु ।

अक्षमा—(स्त्री०) [√क्षम्+अङ न० त०] न सहना, ईर्ष्या । अधैर्य । क्रोध, रोष ।

अक्षय—(वि०) [√क्षि+अच् न० व०] जिसका नाश न हो, अविनाशी । कल्पान्त-स्थायी, कल्प के अन्त तक रहने वाला ।—**तृतीया**–(स्त्री०) वैशाख शुक्ल तृतीया । आखातीज । सतयुग का आरम्भ दिवस ।

अक्षया—(स्त्री०) [नास्ति क्षयः यस्याम् न० व०] बहुत पुण्य बढ़ाने वाली तिथि—सोमवती अमावस्या, रविवार की सप्तमी, बुधवार की चतुर्थी; वैशाख-शुक्ल तृतीया ।

अक्षय्य—(वि०) [√क्षि+यत् न० त०] कभी न चुकने वाला, अविनाशी, सदा बना रहने वाला । (न०) श्राद्ध के अंत में दिया जाने वाला घृत-मधु सहित जल; अक्षय धर्म ।
—**नवमी** (स्त्री०) कार्तिक-शुक्ला नवमी ।

अक्षर—(वि०) [√क्षर्+अच् न० त०] अच्युत, स्थिर, नित्य, अविनाशी ।—(पुं०) शिव, विष्णु ।—(न०) अकारादिवर्ण, मनुष्य के मुख से निकली हुई ध्वनि को सूचित करने वाले सङ्केत । दस्तावेज, अविनाशी, आत्मा, ब्रह्म । जल । आकाश । परमानन्द, मोक्ष ।—**अर्थ** (**अक्षरार्थ**)–(पुं०) शब्दार्थ, संकुचित

अर्थ । —चञ्चु,—चुञ्चु,—चण,—चन—(पुं०) लेखक (क्लर्क), नकलनवीस, प्रतिलिपि करने वाला। यही अर्थ **अक्षरजीविन्** अथवा **अक्षर-जीवक** अथवा **अक्षर-जीविक** का भी है।—**च्युतक**—(न०) किसी अक्षर के जोड़ देने से किसी शब्द का भिन्न अर्थ करना, एक प्रकार का खेल।—**छंदस्**,—**वृत्त**—(न०) किसी पद्य का एक पाद।—**जननी**—**तूलिका**—(स्त्री०) नरकुल या सैंटे की कलम।—**न्यास**—(वि०) लेख। अकारादि वर्ण। धर्म-ग्रन्थ। तंत्र की एक क्रिया जिसमें मंत्र के एक-एक अक्षर पढ़ कर हृदय, अँगुलि, कण्ठ आदि अंग स्पर्श किये जाते हैं।—**भूमिका**—(स्त्री०) पट्टी या काठ का तख्ता जिस पर लिखा जाय।—**मुख**—(पुं०) विद्यार्थी। विद्वान्। 'अ' अक्षर। (वि०) अक्षर सीखने वाला।—**मुष्टिका**—(स्त्री०) उँगलियों के संकेत द्वारा बोलना।—**वर्जित**,—**शत्रु**—(पुं०) अपढ़, निरक्षर।—**विन्यास**—(पुं०) वर्णविन्यास, हिज्जे, लिपि।—**शिक्षा**—(स्त्री०) तांत्रिक-अक्षर-शिक्षा-विशेष।—**संस्थान**—(न०) लेख। वर्णमाला।—**समाम्नाय**—(पुं०) वर्णमाला।

अक्षरक—(न०) [अक्षर+कन्] एक स्वर। कोई अक्षर।

अक्षरशस्—(क्रि० वि०) [अक्षरम् अक्षरम् इति वीप्सायाम् अक्षर+शस्] अक्षर-अक्षर, शब्द व शब्द, बिल्कुल, सम्पूर्णतया।

अक्षान्ति—(स्त्री०) [√क्षम्+क्तिन् न० त०] असहिष्णुता, ईर्ष्या, डाह।

अक्षार—(वि०) [नास्ति क्षारं यत्र न० ब०] जिसमें बनावटी नमकीनपन न हो। (पुं०) असली नमक।

अक्षि—(न०) [√अक्ष्+क्सि] नेत्र। दो की संख्या।—**कम्प**—(पुं०) आँख झपकना।—**कूट**,—**कूटक** —**गोल**—(पुं०)—**तारा**—(स्त्री०) आँख की पुतली।—**गत**—(वि०) दृष्टिगोचर। उपस्थिति वर्तमान, आँख में पड़ी हुई (किरकिरी), घृणित। द्वेष्य—**तर**(न०) आँख के समान निर्मल जल, परिष्कृत जल।—**पक्ष्मन्**,—**लोमन्**—(न०) बरौनी, पलकों के किनारों के ऊपर के बाल।—**पटल**—(न०) आँख के कोए पर की झिल्ली, इसी झिल्ली का रोग-विशेष।—**विकूणित**,—**विकूशित** (न०) तिरछी चितवन, कटाक्ष।

अक्षिक,—**अक्षीक**—(पुं०) [अक्षाय हितम् इत्यर्थे अक्ष+ठन्] रंजन वृक्ष, आल का पेड़।

अक्षिब,—(व) (न०) [अक्षि√वा+क] समुद्री नमक (पुं०) सहिजन का वृक्ष।

अक्षीब—(व) (वि०) [√क्षीव+क्त न० त०] जो मतवाला न हो। (पुं०) सहिजन का पेड़। (न०) समुद्र-लवण।

अक्षुण्ण— (वि०) [√क्षुद्+क्त न० त०] अभग्न; अनटूटा। अनाड़ी, अकुशल। जो परास्त न हुआ हो, जो जीता न गया हो, जो कुचला या कटा या पीटा न गया हो। असाधारण, गैरमामूली।

अक्षुद्र—(वि०) [न क्षुद्रः न० त०] जो छोटा या तुच्छ न हो। (पुं०) शिव का एक नाम।

अक्षेत्र—(वि०) [नास्ति क्षेत्रं यस्य न० ब०] बिना खेत वाला, बिना जोता बोया हुआ। (न०) [न क्षेत्रम् न० त०] बुरा या खराब खेत, ज्यामिति का अशुद्ध या खराब चित्र, मंदबुद्धि छात्र।

अक्षोट—(पुं०) [√अक्ष+ओट] अखरोट।

अक्षोभ—(पुं०) [√क्षुभ्+घञ् न० त०] क्षोभ का अभाव, शांति, हाथी बाँधने का खूँटा। (वि०) [न० ब०] जो क्षुब्ध या घबड़ाया न हो।

अक्षोभ्य—(वि०) [नभ+यत्, न० त०]

जिसमें क्षोभ न हो, अनुद्वेगी, शान्त। (पुं०) वृद्ध, एक बड़ी संख्या।

अक्षौहिणी—(स्त्री०) [अक्ष√ऊह्+णिनि, ङीप्] पूरी चतुरंगिनी सेना, सेना का एक परिमाण; एक अक्षौहिणी में १०९३५० पैदल सिपाही, ६५६१० घोड़े, २१८७० रथ और २१८७० हाथी होते हैं।

अखण्ड—(वि०) [नास्ति खंडो यस्य न० व०] जो टूटा न हो, सम्पूर्ण। अभग्न, अविच्छिन्न। —**द्वादशी**–(स्त्री०) मार्गशीर्ष शुक्ला द्वादशी

अखण्डन—(न०) [न खंडनम् न० त०] खंडन न करना, न काटना, स्वीकार। (पुं०) काल, समय, परमात्मा।

अखण्डित—(वि०) [न खंडितः न० त०= न+खंड्+क्त] जिसके टुकड़े न हुए हों। विभाग-रहित, स्वीकृत।—**ऋतु**–(वि०) [न खंडितः ऋतुः यस्मिन् न० व०] जिसमें ऋतु =मौसम का खंडन न हुआ हो। मौसमी फल-पुष्प उत्पन्न करने वाला।

अखर्व—(वि०) [न खर्वः न० त०] जो बौना न हो। जो छोटा न हो, बड़ा।

अखात—(वि०) [√खन्+क्त न० त०] बिना खोदा हुआ। (पुं०) (न०) बिना खोदा हुआ या स्वाभाविक जलाशय या झील या खाड़ी। किसी मन्दिर के सामने की पुष्करिणी।

अखाद्य—(वि०) [√खाद्+ण्यत् न० त०] न खाने योग्य, अभक्ष्य।

अखिल—(वि०) [√खिल+क न० त०] एक-एक कण करके न लिया जाने वाला, समग्र, समूचा। जोती जाने वाली जमीन, जो भूमि मरु या बेकार न हो। (क्रि० वि०) सम्पूर्णतः, पूर्ण रूप से।

अखेटिक—(पुं०) [√खिट+पिकन्, न० त०] साधारणतः वृक्ष। कुत्ता जिसको शिकार खेलना सिखलाया गया हो।

अखेदिन्—(वि०) [खेद+इनि, न० त०] शोक-रहित, जो थका न हो।

अख्याति—(स्त्री०) [√ख्या+क्तिन्, न० त०] बदनामी, अपकीर्ति। (वि०) [न ख्यातिः यस्य न० व०] निन्द्य, बदनाम।

अग्—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा-मेढ़ा या सर्प की तरह चलना। अगति।

अग—(पुं०) [√गम्+ड, न० त०] वृक्ष। पहाड़, सर्प, सूर्य, सात की संख्या। (वि०) चलने में असमर्थ, जिसके पास कोई न पहुँच सके।—**आत्मजा** (**अगात्मजा**)–(स्त्री०) पर्वत की कन्या, पार्वती देवी।—**ओकस्** (**अगौकस्**)–(पुं०) पर्वत पर बसने वाला। (वृक्षवासी पक्षी)। शरभ जन्तु जिसके आठ टाँगें बतलायी जाती हैं। शेर। सिंह।—**ज**–(न०) शिलाजीत।

अगच्छ—(वि०) [√गम+श, न० त०] अचल, जो चल न सके। (पुं०) वृक्ष।

अगणित—(वि०) [√गण्+क्त, न० त०] अनगिनत, बेहिसाब।—**प्रतियात**–(वि०) ध्यान न दिये जाने के कारण लौटा हुआ।—**लज्ज**–(वि०) लज्जा का खयाल न करने वाला।

अगति—(वि०) [नास्ति गतिः यस्य, न० व०] उपाय-रहित, बिना उपाय का, अनवबोध, [न गतिः, न० त०] गति का अभाव, पहुँच का न होना, उपाय का अभाव, बुरी गति।

अगतिक—(वि०)–[नास्ति गतिः यस्य, न० व० कप्] जिसकी कहीं गति न हो, जिसका कहीं ठिकाना न हो, निराश्रित।—**गति**–(स्त्री०) आश्रयविहीन का आश्रय, अंतिम आश्रय (ईश्वर)।

अगद—(वि०) [नास्ति गदो यस्य, न० व०] नीरोग, रोगरहित। (पुं०) [नास्ति गदो यस्मात् न० व०] औषध। स्वास्थ्य। विषनाश करने का विज्ञान।—**तन्त्र**–(न०) आयुर्वेद का एक अंग-विशेष। इसमें साँप, बिच्छू

आदि के विष उतारने की दवाइयाँ लिखी हैं।—वेद–(पुं०) चिकित्सा-शास्त्र, आयुर्वेद।

अगदङ्कार—(पुं०) [अगद√कृ+अण्, मुम्] वैद्य, चिकित्सक।

अगम—(वि०)–(पुं०) [√गम्+अच्, न० त०] दे० 'अग'।

अगम्य—(वि०) [√गम्+यत्, न० त०] गमन के अयोग्य, जहाँ कोई न पहुँच सके। अज्ञेय, जानने के अयोग्य। विकट, कठिन। अपार, बहुत, अत्यन्त। अथाह, बहुत गहरा।

अगम्या—(स्त्री०) [√गम्+यत्—टाप्, न० त०] न गमन करने योग्य, मैथुन करने के अयोग्य स्त्री। चाण्डाली आदि।—**गमन**–(न०) न गमन करने योग्य स्त्री के साथ गमन करना।—**गामिन्**–(वि०) मैथुन न करने योग्य स्त्री के साथ गमन करने वाला।

अगरी—(स्त्री०) [नास्ति गरः यस्याः, न० ब०] देवताड़ वृक्ष। विषनाशक कोई भी वस्तु।

अगरु—(न०) [√गॄ+उ, न० त०] अगर का पेड़ या लकड़ी।

अगस्ति—(पुं०) [अग√अस+ति] कुम्भज, एक ऋषि का नाम। एक नक्षत्र का नाम। एक वृक्ष का नाम।

अगस्त्य—(पुं०)–[अग√स्त्यै+क] दे० 'अगस्ति'।—**कूट** (पुं०) दक्षिण भारत के मदरास प्रान्त के एक पर्वत का नाम, जिससे ताम्रपर्णी नदी निकलती है।

अगाध—(वि०)–[√गाध्+घञ्, न० ब०] अथाह, बहुत गहरा। असीम, अपार, बहुत, अधिक। बोधागम्य, दुर्बोध। (पुं०) छेद, गड्ढा, स्वाहाकार की पाँच अग्नियों में से एक।—**जल**–(पुं०) ह्रद, तालाब। (वि०) अथाह जल वाला। (न०) अथाह जल।

अगार—(न०) [अगम् ऋच्छति इत्यर्थे अग √ऋ+अण्] घर, मकान।

अगिर—(पुं०) [√गॄ+क, न० त०] स्वर्ग, सूर्य, अग्नि, एक राक्षस।—**ओकस्** (अगिरौकस्)–(वि०) स्वर्ग में आवास करने वाला।

अगु—(वि०) [नास्ति गौः यस्य, न० ब०] गौ या किरण से रहित, निर्धन। (पुं०) अंधकार, राहु।

अगुण—(वि०) [नास्ति गुणः यस्य, न० ब०] निर्गुण, जिसमें कोई सद्गुण न हो। (पुं०) अपराध, बुराई।

अगुरु—(वि०) [न गुरुः, न० त०; नास्ति गुरुः यस्य, न० ब०] हलका, जो भारी न हो। (छन्दःशास्त्र में) छोटा। निगुरा। जिसका कोई गुरु न हो। (न०) (पुं०) अगर, सुगन्धित काष्ठ-विशेष।

अगूढ़—(वि०) [√गुह्+क्त, न० त०] जो छिपा न हो, प्रकट।—**गन्ध**–(न०) हींग।—**भाव**–(वि०) जिसका भाव=अर्थ गूढ़=छिपा हुआ न हो, सरल चित्त वाला।

अगृभीत—(वि०) [न गृभीतः=गृहीतः, न० त०] न पकड़ा हुआ, न जीता हुआ।

अगृह—(वि०) [नास्ति गृहं यस्य, न० ब०] गृहहीन, बे घरबार का। (पुं०) वानप्रस्थ, यति आदि, बिना घर वाला। (नट, बनजारा)।

अगोचर—(वि०) [नास्ति गोचरो यस्य, न० ब०, न गोचरः न० त०] इन्द्रियों के प्रत्यक्ष का अविषय, जिसका अनुभव इन्द्रियों को न हो, अप्रत्यक्ष, अप्रकट। (न०) ब्रह्म।

अग्नायी—(स्त्री०) [अग्नि+ऐङ्, ङीष्] अग्निदेव की स्त्री, स्वाहा। त्रेतायुग।

अग्नि—(पुं०) [√अङ्ग्+नि, नलोप] आग, हवन की आग, यह तीन प्रकार की मानी गई है।—**गार्हपत्य**, **आहवनीय** और **दक्षिण**। उदर के भीतर जो शक्ति खाद्य पदार्थों को पचाती है, उसको भी अग्नि कहते हैं और उसका नाम-विशेष है, 'जठराग्नि' या 'वैश्वानर'। पाँच तत्त्वों में से एक, जिसे 'तेज' कहते हैं। कफ, वात, पित्त में 'पित्त' को अग्नि माना है। सुवर्ण। तीन की संख्या। वैदिक

तीन प्रधान देवताओं (अग्नि, वायु और सूर्य) में एक अग्नि भी है। चित्रक, चीता (औषध-विशेष)। भिलावाँ, नीबू।—**अ (आ) गार** (**अग्न्यगार, अग्न्यागार**)–(न०)—**आलय** (**अग्न्यालय**)–(पुं०)—**गृह**–(न०) अग्निदेव का मन्दिर, यज्ञाग्नि रखने का स्थान। —**अस्त्र** (**अग्न्यस्त्र**)–(न०) वह अस्त्र-विशेष जो मंत्र द्वारा चलाये जाने पर आग की वर्षा करता है। अग्नि-चालित अस्त्र (बंदूक, तमंचा आदि)।—**आधान** (**अग्न्याधान**)–(न०) अग्नि की यथा-विधि स्थापना। अग्निहोत्र।—**आहित** (**अग्न्याहित**)–(पुं०) जो अपने घर में सदा विधानपूर्वक अग्नि को रखता है, अग्निहोत्री।—**उत्पात** (**अग्न्युत्पात**)–(पुं०) अग्नि-सम्बन्धी उपद्रव, अग्नि-कांड, अग्नि द्वारा सूचित अशुभ चिह्न-विशेष, उल्कापात आदि।—**उत्सादिन्** (**अग्न्युत्सादिन्**)–(वि०) यज्ञाग्नि को बुझने देने वाला।—**उद्धार** (**अग्न्युद्धार**–(पुं०) दो अरणिकाष्ठों को रगड़ कर आग उत्पन्न करना।—**उपस्थान** (**अग्न्युपस्थान**)–(न०) अग्नि का पूजन या आराधन। वे मंत्र-विशेष जिनसे अग्नि का पूजन किया जाता है।—**कण,—स्तोक**–(पुं०) अँगारी, चिनगारी। —**कर्मन्**–(न०) अग्निहोत्र, होम, गरम लोहे से दागना, अग्नि का पूजन।—**कला**–(स्त्री०) अग्नि के दशविध अवयवों (वर्ण या मूर्ति) में से कोई।—**कारिका**–(स्त्री०) ऋग्वेद का 'अग्निदूत पुरोदधे' आदि मंत्र जिससे अग्न्याधान किया जाता है।—**कार्य**–(न०) अग्नि में आहुति आदि देना।—**काष्ठ**–(न०) अगर की लकड़ी, अरणी की लकड़ी।—**कीट**–(पुं०) समंदर नाम का कीड़ा।—**कुक्कुट**–(पुं०) जलता हुआ पयाल का पूला, लूक, लुकारी।—**कुण्ड**–(न०) एक विशेष प्रकार का गढ़ा जिसमें अग्नि प्रज्ज्वलित करके हवन किया जाता है, वेदी

—**कुमार,—तनय,—सुत**–(पुं०) कार्त्तिकेय। आयुर्वेद के मतानुसार एक रस-विशेष। —**कुल**–(न०) क्षत्रियों का एक वंश जिसकी उत्पत्ति अग्निकुंड से मानी जाती है, प्रमार, परिहार, चालुक्य या सोलंकी और चौहान। —**केतु**–(पुं०) धूम, धुआँ। शिव का नाम। रावण की सेना का एक राक्षस।—**कोण** (पुं०),—**दिश**–(स्त्री०) पूर्व और दक्षिण का कोना जिसके देवता अग्नि हैं।—**क्रिया**–(स्त्री०) शव का अग्निदाह, मुर्दा जलाना, दागना।—**क्रीडा**–(स्त्री०) आतिशबाजी, रोशनी, दीपमालिका।—**गर्भ**–(वि०) जिसके भीतर आग हो। (पुं०) सूर्यकान्त मणि, सूर्यमुखी, शीशा।(–र्भा, स्त्री०) शमीवृक्ष। पृथ्वी का नाम।—**चक्र**–(न०) शरीर के भीतर के छः चक्रों में से एक (योग०)।—**चय**–(पुं०), —**चयन**–(न०), —**चिति**, —**चित्या**–(स्त्री०) दे० 'अग्न्याधान'।—**चित्**–(पुं०) अग्निहोत्री।—**ज,—जात**–(वि०) अग्नि से उत्पन्न। (पुं०) कार्त्तिकेय, विष्णु। (न०) सुवर्ण।—**जार,—जाल**–(पुं०) गजपिप्पली का पेड़, समुद्रफल का पेड़।—**जिह्वा**–(स्त्री०) आग की लौ, अग्नि की जिह्वा जो सात मानी गयी हैं। उन सातों के भिन्न-भिन्न नाम हैं। (यथा कराली, धूमिनी, श्वेता, लोहिता, नील-लोहिता, सुवर्णा, पद्मरागा)। —**तपस**–(वि०)–चमकता हुआ या जलता हुआ।—**त्रय**–(न०),—**त्रेता**–(स्त्री०) तीन प्रकार की आग जिनका वर्णन अग्नि के अर्थ के अन्तर्गत किया जा चुका है।—**द**–(वि०) आग देने वाला, आग लगाने वाला, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला। —**दातृ**–(पुं०) अन्तिम संस्कार अर्थात् दाहकर्म करने वाला।—**दीपन**–(वि०) जठराग्नि-प्रदीप्तिकारी, पाचन-शक्ति बढ़ाने वाला।—**दीप्ति, —वृद्धि**–(स्त्री०) पाचन-शक्ति की वृद्धि, अच्छी भूख।—**देवा**–(स्त्री०) कृत्तिका

नक्षत्र ।—धान–(न०) वह स्थान या पात्र जिसमें पवित्र आग रखी जाय । अग्निहोत्री का गृह ।—धारण–(न०) अग्नि को घर में सदा रखना ।—परिक्रिया,—परिष्क्रिया–(स्त्री०) अग्नि का पूजन, अग्निचर्या, होमादि करना ।—परिग्रह–(पुं०) शास्त्रोक्त अग्नि को अखंड करने का व्रत ।—परिच्छेद–(पुं०) हवन के श्रुवा, आज्यस्थाली आदि पात्र ।—परिधान–(न०) यज्ञाग्नि को परदे से घेरना । —परीक्षा–(स्त्री०) जलती हुई आग द्वारा परीक्षा या जाँच जैसी कि जानकी जी की लंका में हुई थी ।—पर्वत–(पुं०) ज्वालामुखी पहाड़ ।—पुराण–(न०) १८ पुराणों में से एक । इसको सर्वप्रथम अग्निदेव ने वशिष्ठ जी को सुनाया था; अतः वक्ता के नाम पर इसका नाम अग्निपुराण पड़ा ।—प्रणयन –(पुं०) अग्निहोत्र की अग्नि का मंत्रपूर्वक संस्कार करना ।—प्रतिष्ठा–(स्त्री०) अग्नि की विधानपूर्वक वेदी पर या कुण्ड में स्थापना, विशेषकर विवाह के समय ।—प्रवेश–(पुं०) —प्रवेशन–(न०) आग में प्रवेश, किसी पतिव्रता का अपने पति के साथ चिता में बैठ कर सती होना—प्रस्तर–(पुं०) चकमक पत्थर, जिसको टकराने से आग उत्पन्न होती है ।—बाण–(पुं०) वह बाण जिससे आग की लपट निकले ।—बाहु–(पुं०) धुआँ— स्वायंभुव मनु का एक पुत्र ।—बीज–(न०) सोना, 'र' अक्षर ।—भ–(न०) कृत्तिका नक्षत्र का नाम, सुवर्ण ।—भु–(न०) जल । सुवर्ण ।—भू–(पुं०) अग्नि से उत्पन्न, कार्त्तिकेय का नाम ।—मणि–(पुं०) सूर्यकान्त मणि, चकमक पत्थर ।—मंथ (मन्थ)–(पुं०) —मंथन (मन्थन)–(न०) अरणी से रगड़ कर आग उत्पन्न करना, इस कार्य में प्रयुक्त मंत्र । गनियारी का पेड़ ।—मान्द्य–(न०) कब्जियत, हाजमे की खराबी ।—मारुति–(पुं०) अगस्त्य ऋषि ।—मित्र–(पुं०) शुंग-वंश का एक राजा, पुष्यमित्र का बेटा ।—मुख–(पुं०) देवता, साधारणतया ब्राह्मण, प्रेत, अग्निहोत्री, चीते का पेड़, भिलावाँ, एक अग्निवर्धक चूर्ण, खटमल ।—मुखी–(स्त्री०) रसोईघर, गायत्री, भिलावाँ ।—युग–(न०) ज्योतिषशास्त्र के अनुसार पाँच-पाँच वर्ष के १२ युगों में से एक युग का नाम ।—रक्षण–(न०) अग्नि को घर में बनाये रखना, बुझने न देना, राक्षस आदि से अग्नि की रक्षा करने का एक मंत्र । —रज—रजस्–(पुं०) इन्द्रगोप नामक कीड़ा, वीरबहूटी । अग्नि की शक्ति । सुवर्ण । —रोहिणी–(स्त्री०) रोगविशेष । इसमें अग्नि के समान झलकते हुए फफोले पड़ जाते हैं । —लिङ्ग–(पुं०) आग की लौ की रंगत और उसके झुकाव को देख शुभाशुभ बतलाने की विद्या ।—लोक–(पुं०) वह लोक जिसमें अग्नि वास करते हैं । यह लोक मेरुपर्वत के शिखर के नीचे है ।—वंश–(पुं०) दे० 'अग्निकुल' ।—वधू–(स्त्री०) स्वाहा, जो दक्ष की पुत्री और अग्नि की स्त्री है ।—वर्ण–(पुं०) इक्ष्वाकुवंशी एक राजा का नाम जो रघु का पौत्र था । (वि०) आग के रंग वाला ।—वर्धक–(वि०) जठराग्नि को बढ़ाने वाला ।—वल्लभ–(पुं०) साखू का पेड़ । साल का गोंद । राल, धूप ।—वाह–(पुं०) धुआँ, बकरा ।—वाहन–(न०) बकरा ।—विद्–(वि०) अग्निहोत्र जानने वाला । (पुं०) अग्निहोत्री ।—विद्या–(स्त्री०) अग्निहोत्र, अग्नि की उपासना की विधि ।—विश्वरूप–(न०) केतुतारों का एक भेद ।—विसर्प–(पुं०) अर्बुद नामक रोग की जलन ।—वीर्य–(न०) अग्नि की शक्ति या पराक्रम, सुवर्ण । (वि०) अग्नि जैसे तेज वाला ।—वेश–(पुं०) आयुर्वेद के एक आचार्य ।—व्रत–(पुं०) वेद की एक ऋचा का नाम ।—शरण–(न०)—शाला–(स्त्री०) —शाल–(न०)

वह स्थान या गृह जहाँ पवित्र अग्नि रखी जाय।—शर्मन-(पुं०) एक ऋषि। (वि०) बहुत क्रोधी (व्यंग्य०)।—शिख-(पुं०) दीपक। अग्निवाण। कुसुम वा बर्रे का फूल। केसर। (न०) केसर। सोना। (स्त्री०) आग की ज्वाला या लपट। कलियारी पौधा।—शेखर-(पुं०) केसर, कुसुम, सोना।—ष्टुत्-(पुं०) एक प्रकार का यज्ञ जो एक दिन में पूरा होता है। यह अग्निष्टोम यज्ञ का ही संक्षेप है।—ष्टुभ-(पुं०) एक प्रकार का यज्ञ। नकुला के गर्भ से उत्पन्न प्रजापति वैराज का पुत्र।—ष्टोम-(पुं०) एक यज्ञ जो ज्योतिष्टोम नामक यज्ञ का रूपान्तर है और स्वर्ग की कामना से किया जाता है। यह यज्ञ पाँच दिन में समाप्त होता है।—ष्वात्त-(पुं०) पितरों का एक गण या वर्ग, मरीचि के वंशज पितर, देवता और ब्राह्मणों के पितर।—संभव-(वि०) आग से उत्पन्न। (पुं०) अरण्यकुसुम, सोना, भोजन का रस।—संस्कार-(पुं०) तपाना। जलाना। शुद्धि के लिये अग्निस्पर्श-संस्कार का विधान। मृतक के शव को भस्म करने के लिये चिता पर अग्नि रखने की क्रिया, दाहकर्म। श्राद्ध में पिण्डवेदी पर आग की चिनगारी फिराने की रीति।—सख-सहाय-(पुं०) पवन। जंगली कबूतर, धुआँ।—साक्षिक-(वि०) या (क्रि० वि०) अग्नि देवता के सामने संपादित, अग्नि को साक्षी करके किया हुआ।—सात् (क्रि० वि०) आग में जलाया हुआ, भस्म किया हुआ।—सेवन-(न०) आग तापना।—स्तोम-(पुं०) दे० 'अग्निष्टोम'।—होत्र-(न०) एक यज्ञ, मंत्रपूर्वक अग्नि-स्थापन करके सायं प्रातः नियम से किया जाने वाला होम।—होत्रिन्-(वि०) अग्निहोत्र करने वाला।

अग्नीध्र—(पुं०) [अग्नि √ इन्ध + रक्] ऋत्विक्-विशेष। इसका कार्य यज्ञ में अग्नि की रक्षा करना है। ब्रह्मा, स्वायंभुव मनु का एक पुत्र। [अग्नि√धृ+क] यज्ञ, होम।

अग्नीषोमीय—(न०) [अग्नीषोमौ देवते यस्य इत्यर्थेछ—ईय] अग्निसोम नामक यज्ञ की हवि, यज्ञ-विशेष। इस यज्ञ के देवता अग्नि और सोम माने गये हैं।

अग्र—(न०) [√अङ्ग+रक्, ङ-लोप] आगे का भाग, ऊपर का भाग, सिरा, समूह, स्मृत्यनुसार भिक्षा का परिमाण, जो मोर के ४८ अंडों या सोलह माशे के बराबर होता है। (वि०) प्रथम। श्रेष्ठ। प्रधान।—**अनीक,**—**अणीक** (**अग्रानीक, अग्राणीक**)-(न०) सेना के आगे-आगे चलने वाली घुड़सवार सैनिकों की टोली।—**अशन** (**अग्राशन**)-(न०) भोजन का वह अंश जो देवता, गौ आदि के लिये पहले निकाल दिया जाय।—**आसन** (**अग्रासन**)—(न०) प्रधान बैठकी, सम्मान का आसन।—**कर**-(पुं०) हाथ का अगला भाग, हाथी की सूँड़ की नोक, दाहिना हाथ, हाथ की अँगुली, पहली किरण।—**ग**-(पुं०) नेता, मार्ग-दर्शक।—**गण्य**-(वि०) प्रधान, मुखिया, जिसकी गिनती प्रथम की जाय।—**ज**-(वि०) प्रथम उत्पन्न। (पुं०) बड़ा भाई, ब्राह्मण।—**जा**-(स्त्री०) बड़ी बहन।—**जन्मन्**-(पुं०) बड़ा भाई। ब्राह्मण। ब्रह्मा।—**जात,**—**जातक**-(पुं०) प्रथम जन्मा हुआ, बड़ा भाई, ब्राह्मण।—**जाति**-(पुं०) ब्राह्मण।—**जिह्वा**-(स्त्री०) जीभ की नोक।—**णी**-(वि०) आगे चलने वाला, श्रेष्ठ। (पुं०) नेता, अगुआ। एक अग्नि।—**दानिन्**-(पुं) पतित ब्राह्मण जो मृतक-कर्म में दान लेता है।—**दूत**-(पुं०) आगे जाने वाला दूत, हल्कारा।—**निरूपण**-(न०) भविष्य-कथन।—**पर्णी**-(स्त्री०) शतावर, केवाँच।—**पाणि**-(पुं०) हाथ का अगला भाग, दाहिना हाथ।—**पाद**-(पुं०) पैर का अगला

भाग या अँगुली।—पूजा–(स्त्री०) सर्वप्रथम पूजा, सर्वोत्कृष्ट सम्मान।—पेय–(न०) पान करने में पूर्ववर्तिता, किसी पेय वस्तु को पीने में सर्वप्रथमता या प्रधानत्व।—भाग–(पुं०) प्रथम या श्रेष्ठ भाग। शेष भाग, नोक, छोर। —भागिन्–(वि०) प्रथम पाने वाला।—भूमि–(स्त्री०) आगे की भूमि, उद्देश्य, लक्ष्य।—महिषी–(स्त्री०) पटरानी।—मांस–(न०) हृदय के मध्य में स्थिर पद्माकार मांस, फेफड़ा। एक प्रकार का रोग जिसमें पेट के ऊपर का मांस बढ़ जाता है। —यायिन्–(वि०) आगे चलने वाला, नेतृत्व करने वाला।—योधिन्-(पुं०) सबसे आगे बढ़ कर लड़ने वाला, प्रमुख योद्धा।—लेख–(पुं०) समाचार-पत्र का मुख्य (संपादकीय) लेख।—शाला–(स्त्री०) ओसारा। —सन्धानी–(स्त्री०) यमराज के दफ्तर का वह खाता जिसमें प्राणियों के पाप-पुण्य लिखे जाते हैं।—सन्ध्या–(स्त्री०) प्रातः सन्ध्या, प्रातःकाल।—सर–(वि०) आगे चलने वाला।—ञारा–(स्त्री०) पौधे का फलरहित सिरा।—हर–(वि०) प्रथम देय (वस्तु)।—हस्त (पुं०) अँगुली, हाथी की सूँड़ की नोक।—हायण–(पुं०) वर्ष के आरम्भ का मास, अगहन का महीना।—हार-(पुं०) राजा की ब्राह्मणों को दी हुई भूमि, ब्राह्मण को देने के लिये खेत की उपज से निकाला हुआ अन्न।

अग्रतस्—(क्रि० वि०) [अग्र+तस्] सामने, आगे, उपस्थिति में, प्रथम।—सर–(पुं०) नेता। (वि०) आगे जाने वाला।

अग्रह—(वि०) [न ग्रहो यस्य, न० ब०] अविवाहित। (पुं०) [न ग्रहः=विवाहः न० त०] स्त्री का न होना, विवाह का अभाव।

अग्रिम—(वि०) [अग्र+डिमच्] अगाऊ। पेशगी। श्रेष्ठ, उत्तम। (पुं०) ज्येष्ठभ्राता।

अग्रिय—(वि०) [अग्र+घ] सबसे आगे वाला, श्रेष्ठ। (पुं०) ज्येष्ठभ्राता, पहला फल।

अग्रीय—(वि०) [अग्र+छ] दे० 'अग्रिय'।

अग्रु—(स्त्री०) [√अग्+क्रु] उँगली, नदी।

अग्रे—(क्रि० वि०) सामने। आगे (समय और स्थान सम्बन्धी)। उपस्थिति में। पीछे से। यथा 'एवमग्रे कथयति,' 'एवमग्रेऽपि श्रोतव्यम्,' सर्वप्रथम (अन्य की अपेक्षा) प्रथम।—ग–[अग्रे√गम्+ड] (वि०) आगे चलने वाला। (पुं०) नेता। गा—[अग्रे √गम्+विट्] दे० 'अग्रेग'। —गू–(वि०) [अग्रे√गम्+क्विप्+ऊङ] दे० 'अग्रेग'।—दिधिषु–(पुं०) [अग्रे-दिधि √सो+कु—उकार आने से स को ष] ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य जाति का वह मनुष्य जो किसी विवाहिता स्त्री के साथ विवाह करता है।—दिधिषू–(स्त्री०) [अग्रे-दिधिषु—ऊङ] वह स्त्री जिसका स्वयं तो विवाह हो गया हो, किन्तु उसकी बड़ी बहन अविवाहिता हो।—वण–(न०) वन की सीमा, वन का प्रान्त।—सर–(वि०) अग्रगामी, आगे चलने वाला।

अग्र्य—(वि०) [अग्र+यत्] सबसे आगे का, सर्वोत्कृष्ट, सर्वप्रथम। (पुं०) बड़ा भाई।

अघ्—चुरा० परस्मै० अक० भूल करना, पाप करना, अनुचित करना। अघयति।

अघ—(न०) [√अघ्+अच्] पाप। दुष्कर्ष, अपराध। व्यसन। अशौच, सूतक। दुःख, दुर्घटना, निन्दा। (पुं०) बकासुर और पूतना का भाई जो कंस का प्रधान सेनाध्यक्ष था।—अह (अघाह)–(पुं०) अशौचदिन, अपवित्र दिन।—आयुस् (अघायुस्)–(वि०) पापमय जीवन वाला।—नाशक,—नाशन–(वि०) पाप दूर करने वाला।—भोजिन्–(वि०) जो देव, पितर, अतिथि आदि के लिये खाना न बनाकर केवल अपने लिये बनाये और खाये।—मर्षण–

(वि०) पापनाशक। (न०) अश्वमेध-यज्ञ का अवभृथ-स्नान-मन्त्र। वैदिक संध्या के अन्तर्गत जलप्रक्षेप-रूप एक पापनाशिनी क्रिया। उस क्रिया में पढ़ा जाने वाला एक मंत्र। (पुं०) उस मंत्र के ऋषि।—**विष**-(पुं०) सर्प।—**शंस**-(पुं०) दुष्ट-मनुष्य, यथा चोर आदि। —**शंसिन्**-(वि०) मुखबिर, दूसरे के पाप कर्म या जुर्म की (अधिकारीवर्ग को) सूचना देने वाला।

अघायु—(वि०) [अघ+क्यच+उ] पाप करने की इच्छा रखने वाला। पापकारी, हिंसानिरत।

अघृण—(वि०)-[नास्ति घृणा यस्य, न० ब०] दयारहित।

अघोर—(वि०)-[न घोरः, न० त०] जो भयानक न हो, सौम्य।—**र**-(पुं०) शिव। —**पथ**—**मार्ग**-(पुं०) शैव, शिवपंथी।—**प्रमाण**-(न०) भयङ्कर शपथ या परीक्षा।

अघोरा—(स्त्री०) भाद्रमास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी; इस तिथि को शिव जी की पूजा की जाती है। इसी से इसका नाम 'अघोरा' पड़ा है।

अघोष—(वि०) [नास्ति घोषः यस्य यत्र वा न० ब०] शब्दरहित। अल्प ध्वनि वाला। (पुं०) एक वर्णसमूह (प्रत्येक वर्ग के प्रथम दो अक्षर और श, ष, स)।

अघोस्—(अव्य०) संबोधन का शब्द, यह दूर से पुकारने के समय नाम के पहले लगाया जाता है।

अघ्न्य—(पुं०)-[√हन्+यक्, न० त०] (वि०) न मारने योग्य। (पुं०) ब्रह्मा, बैल, पर्वत।—**घ्न्या**-(स्त्री०) गाय, घटा।

अघ्रेय—(न०) [√घ्रा+यत् न० त०] सूंघने के अयोग्य। (न०) मदिरा, शराब।

अङ्क्—भ्वा० आत्म० **अङ्कते**। चुरा० पर० **अङ्कयति**,-अक० सक०। टेढ़ामेढ़ा चलना, चलना, चिह्नित करना, निशान लगाना। गणना करना। कलङ्कित करना।

अङ्क—(पुं०) [√अङ्क्+घञ् या अच्] गोद, क्रोड। चिह्न, निशान। संख्या। पार्श्व, बगल। सामीप्य, पास। नाटक का एक भाग। काँटा या काँटेदार औजार। दस प्रकार के रुपकों में से एक। टेढ़ी रेखा, स्थान, अपराध, पर्वत, युद्ध का आभूषण। देह, दुःख, दफा, वार, लिखावट, कलंक, डिठौना, झुकाव, चित्रयुद्ध, नकली लड़ाई।—**अवतार**-(पुं०) नाटक के किसी अंक के अन्त में अगले दूसरे अंक के अभिनय की सूचना या आभास। —**कार**-(पुं०) बाजी आदि का निर्णायक। वह योद्धा जिसके हारने या जीतने से हार या जीत मान ली जाती थी। —**गणित**-(न०) संख्याओं का हिसाब, संख्याओं को जोड़ने - घटाने, गुणा-भाग आदि करने की विद्या।—**तंत्र**-(न०) अंकगणित या बीजगणित विद्या।—**धारण**-(न०) देह पर छाप लगवाना, गोदवाना। —**परिवर्तन**-(न०) करवट बदलना, बच्चे का गोद में इधर से उधर होना।—**पालि**, —**पाली**-(स्त्री०) आलिङ्गन। दाई, धाय। —**पाश**-(पुं०) अङ्कगणित की एक विधि, अंकबंधन।—**बन्ध**-(पुं०) झुक कर गोद का आकार बनाना। मस्तकहीन मनुष्य का चित्र अंकित करना।—**भाज्**-(वि०) गोद में बैठा हुआ। सहज में प्राप्त, बहुत निकट। —**मुख** या—**आस्य**-(न०) किसी नाटक का वह स्थल जिसमें उस नाटक के सब दृश्यों का सार दिया गया हो।—**लोप**-(पुं०) संख्या का व्यवकलन=घटाना।—**विद्या**-(स्त्री०) गणितशास्त्र।

अङ्कति—(पुं०) [√अञ्च्+अति] पवन। अग्नि। ब्रह्मा, अग्निहोत्री ब्राह्मण।

अङ्कन-(न०) [√अङ्क्+ल्युट्] चिह्न करना, गोदना, चिह्न बनाने का साधन, गिनती, लेख।

अङ्कूट—(पुं०) ताली, कुंजी।

अङ्कुर—(पुं०) [√अङ्क्+उरच्] अँखुआ नवोद्भिद्, डाभ, कनखा, नुकीले चौघड़े दाँत। (आलं०) प्रशाखा, पल्लव, जल। रक्त, केश, सूजन, घाव का भराव।

अङ्कुरित—(वि०) [अङ्कुर+इतच्] अँखुआ निकला हुआ, जमा हुआ।

अङ्कुश—(पुं०) (न०) [√अङ्क्+उशच्] लोहे का काँटा, जिससे हाथी हाँका जाता है। रोक, थाम। —**ग्रह**—(पुं०) महावत, हाथी चलाने वाला।—**दुर्धर**—(पुं०) मतवाला हाथी।—**धारिन्**—(पुं०) हाथी रखने वाला अथवा जिसके पास हाथी हो।—**मुद्रा**—(स्त्री०) अंगुलियों की अंकुशाकार मुद्रा।

अङ्कुशित—(वि०) [अङ्कुश+इतच्] अंकुश द्वारा बढ़ाया हुआ।

अङ्कुष—(दे०) 'अङ्कुश'।

अङ्कोट—अङ्कोठ—अङ्कोल—(पुं०) [√अङ्क्+ओट, ठ, ल] पिश्ते का पेड़।

अङ्कोलिका—(स्त्री०) [अङ्क्+उल+क—टाप्] आलिङ्गन।

अङ्क्य (वि०) [√अङ्क्+ण्यत्] चिह्न करने योग्य। दागने योग्य। (पुं०) [अङ्क+यत्] एक प्रकार का ढोल या मृदङ्ग। आदि।

अङ्ख्—चुरा० पर० अक० रेंगना, घुटनों के बल चलना। चिपटना। अङ्खयति।

अङ्ग्—भ्वा० पर० सक० अक० जाना। चारों ओर घूमना-फिरना। चिह्नित करना, दागना। गिनना, अङ्गति।

अङ्ग—[√अङ्ग्०+अच्] सम्बोधनवाची अव्यय शब्द, जिसका अर्थ है—'बहुत अच्छा', 'श्रीमन्! बहुत ठीक', 'अवश्य' 'सत्य है', 'अङ्गीकार है'। किन्तु जब इसके पूर्व 'कि' जुड़ता है, तब इसका अर्थ होता है—'कितना कम'? या 'कितना अधिक', शीघ्रता, पुनः, सङ्गम, असूया, हर्ष। (न०) गात्र, अवयव। प्रतीक। उपाय। मन। छः की संख्या का वाचक। (पुं०) एक देश तथा वहाँ के निवासियों का नाम। यह देश विहार के भागलपुर नगर के आसपास है। वैद्यनाथ-देवघर से लेकर उड़ीसा स्थित भुवनेश्वर तक इसकी सीमा मानी गई है।—**अङ्गिभाव** (**अङ्गाङ्गिभाव**)—(पुं०) किसी भी शरीरावयव का जो सम्बन्ध शरीर के साथ होता है, वह अङ्गअङ्गी भाव कहलाता है, गौणमुख्य भाव, उपकार्योपकारकभाव।—**अधिप**,—**अधीश** (**अङ्गाधिप**), (**अङ्गाधीश**)—(पुं०) अङ्ग-देश का राजा या अधीश्वर कर्ण। लग्न का स्वामी ग्रह।—**कर्मन्**—(न०),—**क्रिया**—(स्त्री०) शरीर में उबटन आदि मलना, देह-संस्कार।—**ग्रह**—(पुं०) शरीर की पीड़ा, अंगों का अकड़ जाना।—**ज**—**जनुस**,—**जात**—(वि०) शरीर से उत्पन्न या शरीर पर उत्पन्न, सुन्दर, विभूषित (पुं०) पुत्र, लोभ। कामदेव। नशे का व्यसन मद्यपान, व्याधि। सात्त्विक विकारों में से तीन—हाव, भाव और हेला (सं०)।—**जा**—(स्त्री०) पुत्री।—**ज**—(न०) रक्त, लोहू।—**त्राण**—(न०) कवच, अंगरखा आदि।—**दा**—(स्त्री०) दक्षिण दिशा के हस्ती की भार्या।—**दान**—(न०) युद्ध में आत्मसमर्पण, (स्त्री का) देहसमर्पण।—**द्वीप**—(पुं०) छः द्वीपों में से एक।—**न्यास**—(पुं०) उपयुक्त मंत्रोच्चारण-पूर्वक हाथ से शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों का स्पर्श।—**पालि**—(स्त्री०) आलिङ्गन।—**पालिका**—(स्त्री०) धाय।—**प्रत्यङ्ग**—(न०) शरीर के छोटे-बड़े सब अङ्ग।—**प्रायश्चित्त**—(न०) अशौच में देहशुद्धि के लिये किया जाने वाला दानरूप प्रायश्चित्त।—**भङ्ग**—(पुं०) किसी शरीरावयव का नाश,

लकवा का रोग । अंगों का ऐंठना ।—भंगिमन्–(पुं०) अंग द्वारा भाव-प्रकाश । —भंगी–(स्त्री०) मोहक अंग-संचालन, अदा ।—भू–(पं०) पुत्र । कामदेव ।—मन्त्र (पुं०) अंगन्यास का मंत्र ।—मर्द–(पुं०) शरीर दबानेवाला नौकर । शरीर दबाने की क्रिया ।—मर्दक—मर्दिन्–(पुं०) शरीर दबाने या मालिश करने वाला नौकर ।—मर्ष–(पुं०) गठिया रोग ।—यज्ञ—याग–(पुं०) किसी मुख्य यज्ञ के अन्तर्गत कोई गौण अप्रधान यज्ञ ।—यष्टि–(स्त्री०) पतली आकृति ।—रक्त–(पुं०) (न०) काम्पिल्य देश में पाया जाने वाला गुण्डारोचनी नामक एक वृक्ष । इसका लाल चूर्ण होता है । (वि०) रक्ताक्त, लालोलाल ।—रक्षक–(पुं०) शरीर की रक्षा करने वाला भृत्य (वाडीगार्ड) ।—रक्षणी–(स्त्री०) अँगरखी, अंगा, कवच ।—रस–(प०) पत्ती, फल आदि का कूट कर निचोड़ा हुआ रस ।—राग–(पुं०) चन्दन आदि लेप, उबटन । उबटन लगाने की क्रिया ।—विकल–(वि०) अङ्ग-भङ्ग । लकवा मारा हुआ ।—विकृति–(स्त्री०) सूरत बदल जाना । देह में कोई विकार होना । मिरगी रोग ।—विक्षेप–(पुं०) शारीरिक अवयव का सिकोड़ना-फैलाना या उनको हिलाना-डुलाना, अंगों का मटकाना ।—विद्या –(स्त्री०) शरीर के चिह्नों को देखकर जीवन की शुभाशुभ घटनाओं को बतलाने की विद्या, सामुद्रिक विद्या । व्याकरण शास्त्र, जिससे ज्ञान की वृद्धि हो । वृहत्संहिता का ५१ वाँ अध्याय जिसमें इस विद्या का विस्तारपूर्वक वर्णन है ।—विभ्रम–(पुं०) एक रोग जिसमें रोगी अपने अंग को नहीं पहचानता ।—वीर–(पुं०) मुख्य या प्रधान शूर ।—वैकृत–(न०) अंगों की चेष्टा से हृदय का भाव बतलाने की क्रिया । सिर हिला कर स्वीकृति बतलाने की क्रिया । आँख मारना । शरीर की बदली हुई सूरत ।—वैगुण्य–(न०) किसी कार्य की अंगहीनता, श्राद्ध आदि में कर्म की न्यूनता या कुछ उलटा-सुलटा हो जाना ।—शोष–(पुं०) एक रोग जिसमें शरीर सूख जाता है, सूखा या सुखंडी ।—संस्कार–(पुं०)—संस्क्रिया –(स्त्री०) अङ्गों की शोभा बढ़ाने वाली क्रिया । देह को सँवारना-सजाना ।—संहति–(स्त्री०) सुन्दर अङ्ग संस्थान या अङ्ग-विन्यास । अङ्गसौष्ठव,अङ्ग-प्रत्यङ्ग की श्रेष्ठता या परस्पर ऐक्य । शरीर, शरीर की दृढ़ता ।—सङ्ग–(पुं०) शारीरिक स्पर्श, संभोग ।—सेवक–(पुं०) निजी सेवा-टहल करने वाला नौकर। —हानि–(स्त्री०) अंगविशेष की हानि । मुख्य कर्म के सहायक कर्म को न करना या ठीक तौर से न करना ।—हार–(पं०) नृत्य । अंगों की मटकौअल ।—हारि–(पं०) मटकौअल । रंगभूमि । नाचने का कमरा । नाचघर ।—हीन–(वि०) किसी अंग से रहित, विकलांग, लुंजा । साधनरहित (पूजन आदि) । (पुं०) कामदेव ।

अङ्गक—(न०) [अङ्ग+कन्] शरीर का अवयव । शरीर ।

अङ्गण—(न०)[√अङ्ग+ल्युट्, णत्व] दे० 'अङ्गन' ।

अङ्गति—(पुं०) [√अञ्ज्+अति, कुत्व] सवारी, गाड़ी । अग्नि । ब्रह्मा । अग्निहोत्री ब्राह्मण ।

अङ्गद—(न०) [अङ्ग√दै+क] वाहुभूषण, वाजूबंद । (पुं०) वालि के पुत्र का नाम । उर्मिला की कोख से उत्पन्न लक्ष्मण के एक पुत्र का नाम ।

अङ्गन—(न०) [√अङ्ग+ल्युट्] आँगन, चौक । सवारी । चलना, टहलना । टहलने का स्थान ।

अङ्गना—(स्त्री०) [प्रशस्तम् अङ्गम् अस्ति यस्याः इत्यर्थे अङ्ग+न, टाप्] अच्छे अंगों

वाली स्त्री। स्त्रीमात्र। कलहप्रिया स्त्री। सार्वभौम नामक दिग्गज की हथिनी। (ज्योतिष में) कन्याराशि।—**जन**–(पुं०) स्त्रीजाति।—**प्रिय**–(वि०) स्त्रियों का प्रेमी। (पुं०) अशोक वृक्ष।

अङ्गस्—(पुं०) [√अङ्ग्+असुन्] पक्षी।

अङ्गार—(पुं०) (न०) [√अङ्ग+आरन्] जलता हुआ या ठंडा कोयला। (पुं०) मङ्गल ग्रह। हितावली नामक पौधा। एक राजकुमार। (न०) लाल रंग। (वि०) लाल।—**कारिन्**–(पुं०) बिक्री के लिये कोयला तैयार करने वाला।—**धानिका,** **धानी,—पात्री,—शकटी**–(स्त्री०) अँगीठी, बोरसी।—**पर्ण**–(पुं०) गंधर्वपति चित्ररथ।—**पुष्प**–(पुं०) हिंगोट का पेड़, इंगुदी।—**मञ्जरी,—मञ्जी**–(स्त्री०) लाल करंज का वृक्ष।—**मणि**–(पुं०) मूंगा।—**वल्लरी-वल्ली**–(स्त्री०) कितने ही पौधों का नाम है—गुञ्जा या घुंघची। करंज। भार्गी।

अङ्गारक—(पुं०) [अङ्गार+कन्] अंगारा। मङ्गलग्रह, भौमवार। चिनगारी। कुरंटक। भृंगराज। एक सौवीर-नरेश। एक असुर। एक रुद्र। (न०) ओषधियों के मेल से बना हुआ एक तापहारक तेल।—**मणि**–(पुं०) मूंगा।

अङ्गारकित—(वि०) [अङ्गारक इव आचरति, अङ्गार+क्विप+ततः कर्तरि क्तः] जलाया हुआ। भूना हुआ। तला हुआ।

अङ्गारिका—(स्त्री०) [अङ्गारो विद्यतेऽस्याः इत्यर्थे अङ्गार+ठन्, टाप्] अँगीठी। गन्ने का डंठल। किंशुक की कली।

अङ्गारिणी—(स्त्री०) [अङ्गार+इनि—ङीप्] छोटी अँगीठी। लता। अस्त सूर्य की लालिमा से रंजित दिशा।

अङ्गारित—(वि०) [अङ्गार इव आचरति, अङ्गार+क्विप्+ततः कर्तरि क्तः] जलाया हुआ। भूना हुआ। अधजल। (न०) (पुं०) पलाश की कली। (स्त्री०) अँगीठी। कलिका। एक लता। एक नदी।

अङ्गारीय—(वि०) [अङ्गार+छ—ईय] कोयला तैयार करने के काम में आने योग्य।

अङ्गिका—(स्त्री०) [√अङ्ग्+इनि+क, टाप्] चोली, अँगिया।

अङ्गिन्—(वि०) [अङ्ग+इनि] देहयुक्त, शरीरधारी। मुख्य। प्रधान। जिसमें उपभाग हो, अवयव-विशिष्ट।

अङ्गिर्—(पुं०) एक ऋषि जिन्होंने अथर्वा से विद्या प्राप्त कर सत्यवाह को दी।

अङ्गिर, अङ्गिरस्—(पुं०) [√अङ्ग्+असि, इरागम] एक प्रजापति का नाम जिनकी गणना दस प्रजापतियों में है। एक वैदिक ऋषि। बहुवचन में अंगिरा के सन्तान। बृहस्पति का नाम। आठ संवत्सरों में से छठवें का नाम। कतीला (गोंद विशेष)। **अङ्गिरसामयन** (न०) [अङ्गिरसाम्—अयन, अलुक्समास] सत्रयाग जहाँ सदा अन्न मिलता है।

अङ्गीकरण (न०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+ल्युट्] दे० 'अङ्गीकार'।

अङ्गीकार—(पुं०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+घञ्] स्वीकृति। प्रतिज्ञा।

अङ्गीकृत—(वि०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+क्त] अङ्गीकार किया हुआ।

अङ्गीकृति—(स्त्री०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+क्तिन्] दे० 'अङ्गीकार'।

अङ्गीय—(वि०) [अङ्ग+छ—ईय] अंग-देश-संबंधी, शरीर-संबंधी।

अङ्गु—(पुं०) [√अङ्ग्+उन्] हाथ।

अङ्गुरि-री—(स्त्री०) [√अङ्ग्+उलि, रलयोरेकत्वस्मरणात् रत्वम्।] उँगली।

अङ्गुरीय—(न०) [अङ्गुरि+छ—ईय] उँगली का एक गहना, अँगूठी

अङ्गुरीयक—(न०) [अङ्गुरि+छ—ईय+ क] अँगूठी, मुँदरी।

अङ्गुल—(पुं०) [√अङ्ग्+उल] उँगली, अँगूठा। वात्स्यायन मुनि। (न०) अंगुल भर का नाम, जो आठ यव के बराबर माना जाता है।

अङ्गुलि—(स्त्री०) [√अङ्ग्+उलि] उँगली जिनके नाम यथाक्रम अँगूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठिका हैं। हाथी की सूँड की नोक। नाप-विशेष।—**तोरण**—(न०) माथे पर चंदन का अर्ध-चन्द्राकार पुण्ड्र (तिलक)।—**त्र-त्राण**—(न०) दस्ताना जो धनुष चलाने वाले उँगलियों में पहना करते थे।—**निर्देश**—(पुं०) किसी की ओर उँगली उठाना, निंदा।—**पर्वन्**—(न०) उँगली की पोर या गाँठ।—**मुख**—(न०) उँगली की नोक।—**मुद्रा**,—**मुद्रिका**—(स्त्री०) नाम खुदी हुई या सील मोहर सहित अँगूठी।—**मोटन**,—**स्फोटन**—(न०) अँगुली चटकाना, चुटकी।—**संज्ञा**—(स्त्री०) उँगली का इशारा या सङ्केत।—**संदेश**—उँगलियों के इशारे से मनोगत भावों को प्रदर्शित करना।—**सम्भूत**—(पुं०) नख।

अङ्गुलिका—(स्त्री०) [अङ्गुलि+कन्, टाप्] (दे०) 'अङ्गुलि'। एक तरह की चींटी।

अङ्गुलीय,—**क** (न०) (दे०) 'अङ्गुरीय,—क।'

अङ्गुष्ठ—(पुं०) [अङ्गु√स्था+क] अँगूठा।

अङ्गुष्ठमात्र—(वि०) [अङ्गुष्ठ+मात्रच्] अँगूठे के बराबर (नाप में)।

अङ्गुष्ठ्य—(पुं०)[अङ्गुष्ठ+यत्] अँगूठे का नाखून या नख।

अङ्गूष—(पुं०) [√अङ्ग्+ऊष] न्योला। तीर।

अङ्घ्—भ्वा० आत्म० सक० चलना। आरम्भ करना। शीघ्रता करना। डाटना, डपटना। अङ्घते।

अङ्घस्—(न०) [√अङ्घ्+असि] पाप।

अङ्घ्रि (**अंह्रि**)—[√अङ्घ्+क्रिन्] पैर। पेड़ की जड़। किसी श्लोक का चौथा चरण, चतुर्थ पाद।—**नामक**—(पुं०) —**नामन्**—(न०) वृक्ष की जड़।—**प**—(पुं०) वृक्ष।—**पर्णी**,—**वल्लिका**,—**वल्ली**—(स्त्री०) सिंहपुच्छी नामक पौधा।—**पान**—(वि०) पैर या पैर की उँगली (लड़कों की तरह) चूसने वाला।—**स्कन्ध**—(पुं०) एड़ी।

अच्—भ्वा० उभ० सक० जाना। हिलना-डुलना। सम्मान करना। प्रार्थना करना, माँगना। अचति—ते।

अच्—(पुं०) व्याकरण शास्त्र में 'अच्' स्वर की संज्ञा है।

अचक्र—(वि०) [नास्ति चक्रम् यस्य न० ब०] बिना पहिये का। व्यापाररहित। मंत्री तथा सेनापति रहित (राजा)।

अचक्षुस्—(वि०) [√चक्ष्+उसि, न० ब०] अंधा, नेत्रहीन। (न०) (न० त०) बुरी आँख, रोगिल नेत्र।

अचण्ड—(वि०) [न चण्डः न० त०] शान्त, जो क्रोधी स्वभाव का न हो।

अचण्डी—(वि०) (स्त्री०) [न० त०] सीधी गौ। शान्त स्त्री।

अचतुर—(वि०) [अविद्यमानानि चत्वारि यस्य न० ब०] चार संख्या से शून्य। [न चतुरः न० त०] अनिपुण, अनाड़ी।

अचर—(वि०) [√चर्+अच्, न० त०] अचल, स्थिर। (पुं०) स्थावर प्राणी या पदार्थ। स्थिर राशि (वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ)।

अचरम—(वि०) [न० त०] जो अंतिम न हो।

अचल—(वि०) [√चल्+अच्, न० त०] जिसमें गति न हो, स्थिर। सदा रहने वाला, ध्रुव। गमन या शक्ति-हीन। स्थावर, स्थायी।—(पुं०) पहाड़, चट्टान। कील, काँटा। सात सूचक संख्या। (न०) ब्रह्म।—**कन्यका,—जा,—जाता,—तनया,—दुहितृ,—सुता**—(स्त्री०) हिमालय की पुत्री, पार्वती।—**कीला**—(स्त्री०) पृथिवी।—**ज,—जात**—(वि०) पर्वत से उत्पन्न।—**त्विष्**—(पुं०) कोयल।—**द्विष्**—(पुं०) पर्वतशत्रु, इन्द्र का नाम जिन्होंने पर्वतों के पंख काट डाले थे।—**धृति**—(स्त्री०) गीत्यार्या नामक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में सोलह अक्षर होते हैं।—**पति,—राज**—(पुं०) हिमालय पर्वत का नाम, पर्वतों का स्वामी।

अचला—(स्त्री०) [√चल+अच्, टाप्] पृथिवी।—**सप्तमी**—(स्त्री०) माघ-शुक्ला-सप्तमी।

अचापल,-ल्य—(वि०) [नास्ति चापलं-ल्यं यस्य न० ब०] चञ्चलतारहित, स्थिर। (न०) [न० त०] चंचलता का अभाव, स्थिरता।

अचित्—(वि०) [√चित्+क्विप् न० त०] (वैदिक) जिसमें समझदारी न हो। धर्म-विचार-शून्य, जड़।

अचित—(वि०) [न चित=न० त०] (वैदिक) गया हुआ। अविचारित। एकत्र न किया हुआ, बिखरा हुआ।

अचित्त—(वि०) [नास्ति चित्तम् यस्य न० ब०] विचार से परे, जो समझ ही में न आवे। निर्बुद्धि, अज्ञान। जिसकी ओर ध्यान न दिया गया हो। न सोचा हुआ।

अचिन्तित—(वि०) [√चिन्त्+क्त, न० त०] जिसका चिंतन न किया गया हो। जो सोचा न गया हो। आकस्मिक, अप्रत्याशित। उपेक्षित।

अचिन्तनीय,-अचिन्त्य—(वि०) [√चिन्त्+अनीयर् न० त०,—√चिन्त्+यत् न० त०] जिसका चिंतन न हो सके। मन और बुद्धि के परे, कल्पनातीत। अकूत। आशा से अधिक। (पुं०) शिव।

अचिर—(अव्य०) [√चि+रक् न० त०] शीघ्र। हाल में। कुछ ही पहले। (वि०) क्षणस्थायी। हाल का।—**अंशु** (**अचिरांशु**)—**आभा** (**अचिराभा**),—**द्युतिः**—**प्रभा**—**भास्-रोचिस्**—(स्त्री०) चपल बिजली।

अचिरात्—[अचिरम् अतति इति विग्रह अचिर√अत्+क्विप्] तुरन्त, शीघ्रता से [**अचिरेण, अचिरस्य** भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।]

अचिष्णु—(वि०) [√अच्+इष्णु] सर्व जाने वाला, सर्वव्यापी।

अचेतन—(वि०) [चित्+ल्यु न० त०] चेतनारहित, जड़। संज्ञा-शून्य, मूर्च्छित ज्ञानहीन।

अचेतान—(वि०) [√चित्+शानच् न० त०] (दे०) 'अचेतन'।

अचेष्ट—(वि०) [नास्ति चेष्टा यस्य न० ब०] चेष्टा से रहित, बेहोश। प्रयत्नहीन।

अचैतन्य—(वि०) [चेतनस्य भावः इत्य चेतन+ष्यञ् न० ब०] चेतनारहित। ज्ञान शून्य, जड़। (न०) [न० त०] चेतना का अभाव।

अच्छ—(वि०) [√छो+क न० त० स्वच्छ, निर्मल।—(पुं०) स्फटिक। रीछ भालू। (अव्य०) ओर, तरफ, सामने।—**उदक** (=**अच्छोद**)। (वि०) [अच्छम् उदकम् यस्य ब० स० उदकस्य उदभावः] साफ जल वाला। (न०) कादम्बरी में वर्णित हिमालय-पर्वत-स्थित एक झील का नाम।—**भल्ल**—(पुं०) रीछ, भालू।

अच्छन्दस्—(वि०) [नास्ति छन्दो यस्य न० ब०] वह जिसने वेदाध्ययन न किया हो अथवा वेदाध्ययन का अनधिकारी। जो पद्यमय न हो।

च्छावाक—(पुं०) [अच्छ√वच्+घञ् पातस्य चेति दीर्घः] सोमयज्ञ कराने वालों से एक ऋत्विज जो होता का सहवर्ती हता है।

च्छिद्र—(वि०) [√छिद्+रक् न० व०] द्र-रहित। अभङ्ग, जो टूटा न हो। र्दोष। त्रुटिरहित। (न०) निर्दोष कार्य। क्षुण्ण अवस्था।

च्छिन्न—(वि०) [√छिद्+क्त न० त०] ो कटा न हो, अखंडित। अविभक्त, लगातार लने वाला।

च्छेदिक—(वि०) [न छेदम् अर्हति इत्यर्थे द+ठन् न० त०] जो काटने या छेदने ोग्य न हो।

च्छोटन—(न०) शिकार, आखेट।

च्युत—(वि०) [√च्यु+क्त न० त०] जो पने स्वरूप, सामर्थ्य, स्थान से गिरा न हो, थर, अविचल। (पुं०) भगवान् विष्णु का ाम।—अग्रज (अच्युताग्रज)-(पुं०) वल- ाम तथा इन्द्र का नाम।—अङ्गज, (अच्यु- ाङ्गज) —पुत्र,—आत्मज (अच्युता- त्मज)-(पुं०) कामदेव, कृष्ण और रुक्मिणी ; पुत्र का नाम।—आवास, (अच्युता- वास)—वास-(पुं०) वटवृक्ष, पीपल का क्ष।

ज्—भ्वा० पर० सक० जाना। हाँकना। ेंकना। अजति।

ज—(वि०) [न जायते इति√जन्+ड न० ०] जन्मरहित, अनन्त काल से वर्तमान। —(पुं०) यह ब्रह्मा की उपाधि है। विष्णु या शिव का नाम। जीव। मेढ़ा। वकरा। पराशि। अन्न-विशेष। चन्द्रमा अथवा काम- व का नाम।—अदनी (अजादनी)- (स्त्री०) एक कटीली वनस्पति, वमासा।— विक (अजाविक)-(न०) वकरे और ेड़े। छोटा पशु।—अश्व (अजाश्व)- (न०) वकरे और घोड़े।—एडक (अजै- डक)-(न०) वकरे और मेढ़े।—गर-(पुं०) एक वड़ा भारी सर्प जो वकरी, हिरन आदि को निगल जाता है। एक असुर।—गरी- (स्त्री०) एक पौधे का नाम। अजगरी वृत्ति, निरुद्यम या भगवान् के भरोसे रहने की वृत्ति। —गल्लिका-(स्त्री०) वकरे के गाल की भाँति एक रोग।—जीव,-जीविक -(पुं०) बकरे पाल और वेचकर जीविका चलाने वाला।— देवता-(स्त्री०) अग्नि, पूर्वा-भाद्रपदा नक्षत्र। —भक्ष-(पुं०) ववूर।—पात्-(पुं०) ग्यारह रुद्रों में से एक। पूर्वा-भाद्रपद नक्षत्र।—मार -(पुं०) कसाई, वूचड़। एक प्रदेश का नाम जो इन दिनों अजमेर के नाम से प्रसिद्ध है। —मीढ-(पुं०) अजमेर का दूसरा नाम। युधिष्ठिर की उपाधि।—मुख-(पुं०) दक्ष- प्रजापति।—मुखी-(स्त्री०) एक राक्षसी जो अशोकवाटिका में सीताजी की निगरानी करती थी।—मोदा-मोदिका-(स्त्री०) यह एक अत्यन्त गुणकारी दवाई के पौधे का नाम है, अजवायन।—लोमन्-(पुं०) अग्रपर्णी नामक पौधा, केवाँच।—वीथी-(स्त्री०) सूर्य, चंद्रादि के गमन के तीन मार्गों में से एक, छायापथ।—शृङ्गी-(स्त्री०) मेढ़ा- सिंगी।—हा-(स्त्री०) केवाँच।

अजकव—(पुं०, न०) [वाति शरत्वेनात्र इति √वा+अधिकरणे कः; अजो विष्णुः, को ब्रह्मा, तयोः वः प० त०] शिव जी के धनुप का नाम।

अजकाव—(पुं० न०) [अजकौ=विष्णु- ब्रह्माणौ अवति इत्यर्थे अजक √अव+ अण्] शिव-धनुप।

अजगव—(पुं० न०) [√वा + कः, अजगः विष्णुः, तस्य वः प० त०] शिव का धनुप।

अजगाव—(न० पुं०) [अजगम् अवति इत्यर्थे अजग√अव+अण्] पिनाक, शिव जी का धनुप।

अजड—(वि०) [न जडः न० त०] जो जड अर्थात् मूर्ख न हो, चेतन।

अजथ्या—(स्त्री०) [अजानां समूहः इत्यर्थे अज+थ्यन्, टाप्] बकरों का समूह। पीली जूही।

अजन—(वि०) [न विद्यते जनो यत्र न० ब०] निर्जन (बियावान), जहाँ एक भी जन न हो। (पुं०) [जननम् जनः,सः नास्ति यस्य न० ब०] ब्रह्मा।—**योनिज**—(पुं०) दक्ष-प्रजापति।

अजनि—(स्त्री०) [√अज+अनि] रास्ता, सड़क।

अजन्मन्—(वि०) [नास्ति जन्म यस्य न० ब०] जन्म-रहित, अनुत्पन्न। (पुं०) मोक्ष। जीव की उपाधि।

अजन्य—(वि०) [√जन्+णिच्+यत् न० त०] उत्पन्न किये जाने या होने के अयोग्य। मनुष्य जाति के प्रतिकूल।—(न०) दैवी उत्पात, दैवी उपद्रव, भूचाल आदि।

अजप—(पुं०) [√जप+अच् न० त०] वह ब्राह्मण जो सन्ध्योपासन यथाविधि नहीं करता या उचित रूप से पाठ नहीं करता या धर्म-विरोधी ग्रन्थ पढ़ता है। कुपाठक। (वि०) [अज√पा+कः] बकरे पालने वाला।

अजपा—(स्त्री०) [√जप्+अच्, टाप् न० त०] गायत्री। हंसनामक मन्त्र जिसका जप श्वास-प्रश्वास के साथ स्वयं होता जाता है।

अजम्भ—(वि०) [नास्ति जम्भः=दन्तः अस्य न० ब०] दन्तरहित। (पुं०) मेढक। सूर्य। बालक की वह अवस्था जब उसके दाँत नहीं निकले होते।

अजय—(वि०) [√जि+अच् न० ब०] जो जीता या सर न किया जा सके।—(पुं०) [न० त०] पराजय, हार। [न० ब०] विष्णु, एक नद। (स्त्री०) भाँग।

अजय्य—(वि०) [√जि+यत् न० त०] अजेय, जो जीता न जा सके।

अजर—(वि० [नास्ति जरा यस्य न० ब०] जो बूढ़ा न हो, सदैव युवा। अविनाशी, जिसका कभी नाश न हो। (पुं०) देवता। (न०) परब्रह्म।

अजर्य—(न०) [√जॄ+यत् न० त०] मैत्री, दोस्ती।

अजस्र—(वि०) [√जस+र न० त०] सदा रहने वाला, अविच्छिन्न। (अव्य०) निरंतर, सतत।

अजहत्स्वार्था—(स्त्री०) [न जहत् स्वार्थो याम्, [न√हा+शतृ, द्वि ब० स०] लक्षणा-विशेष, इसमें लक्षक शब्द अपने वाच्यार्थ को न छोड़कर कुछ भिन्न अथवा अतिरिक्त अर्थ प्रकट करता है। इसका उपादान लक्षणा भी नाम है।

अजहल्लिङ्ग—(पुं०) [न जहत् लिङ्गम् यम्, न√हा+शतृ, द्वि० ब० स०] संज्ञाविशेष जो विशेषण की तरह व्यवहृत होने पर भी अपना लिङ्ग न बदले।

अजा—(स्त्री०) [√जन्+ड न० त०, टाप्] सांख्यदर्शनानुसार प्रकृति या माया। बकरी।—**गलस्तन**—(पुं०) बकरी के गले के थन, इनकी उपमा किसी वस्तु की निरर्थकता सूचित करने में दी जाती है।—**जीव**,—**पालक**—(पुं०) जिसकी जीविका बकरे-बकरियों से हो।

अजागर—(पुं०) [√जागृ+णिच्+अच् न जागरो यस्मात् पं० ब० स०] भृंगराज नामक ओषधि। (वि०) [न जागरो यस्य न० ब०] न जागने वाला।

अजाजि-आजाजी—(स्त्री०) [अजेन आजः =त्यागः यस्याः ब० स०] काला या सफेद जीरा।

अजात—(वि०) [√जन्+क्त, न० त०] अनुत्पन्न, जो अभी तक उत्पन्न न हुआ हो।—**अरि** (अजातारि,),—**शत्रु**—(वि०) जिसका कोई शत्रु न हो।(पुं०) युधिष्ठिर की

उपाधि। शिवजी तथा अनेक की उपाधि। —ककुद्–(पुं०) छोटी उमर का बैल, जिसके कुब्ब न निकला हो, बछड़ा, बच्छा।—व्यञ्जन–(वि०) जिसके स्पष्ट चिह्न (दाढ़ी-मूँछ आदि) पहिचान के लिये न हों।—व्यवहार–(पं०) नाबालिग, वह व्यक्ति जो अभी लोक-व्यवहार का अधिकारी या वयस्क न हुआ हो।

अजानि—(पुं०) [नास्ति जाया यस्य न० ब०, जायाया निङादेशः] जिसकी स्त्री न हो, विधुर, रँडुआ।

अजानिक—(पुं०) [अजविक्रयादिना आनो जीवनम् अस्ति यस्य, अजान+ठन्] बकरे का व्यापारी।

अजानेय—(वि०) [अजेऽपि=विक्षेपेऽपि आनेयः=यथास्थान प्रापणीयः आरोहः येन, √अज् + अप्, आ√नी + यत्, ब० स०] कुलीन, उत्तम या उच्च कुल का। (पुं०) अच्छी जाति का घोड़ा।

अजि—(वि०) [√अज् + इन्] तेज चलने वाला।

अजित—(वि०) [√जि+क्त न० त०] जिसे कोई जीत न सका हो, अजेय। (पुं०) विष्णु, शिव तथा बुध की उपाधि।

अजिन—(न०) [√अज्+इनति] चीता, शेर, हाथी आदि का और विशेष कर काले हिरन का रोएँदार चमड़ा, जो आसन अथवा तपस्वियों के पहिनने के काम आता था। एक प्रकार का चमड़े का थैला या धौंकनी।—पत्रा-त्रिका-त्री–(पुं०) चमगादड़।—योनि–(पुं०) हिरन या बारहसिंहा।—वासिन्–(वि०) मृगचर्म धारण करने वाला।—सन्ध–(पुं०) मृगचर्म या लोम-निर्मित वस्त्र का व्यवसाय करने वाला।

अजिर—(वि०) [√अज् +किरन्] तेज, फुर्तीला। (न०) आँगन, चौक। शरीर। इन्द्रियगम्य कोई पदार्थ। पवन। मेढक।—अधिराज (अजिराधिराज)– (पुं०) (वैदिक) वेगवान् राजा। यमराज।—शोचिस्–(वि०) तेज रोशनी वाला।

अजिरा—(स्त्री०) [√अज+किरन्, स्त्रियां टाप्] एक नदी का नाम। दुर्गा का नाम।

अजिरीय—(वि०) [अजिर+छ—ईय] आँगन-संबंधी।

अजिह्म—(वि०) [√हा+मन् द्वित्वादि नि०, न० त०] सीधा। ईमानदार। (पुं०) मेढक। मछली।—ग–(वि०) सीधा जाने वाला। (पुं०) तीर, बाण।

अजिह्व—(वि०) [नास्ति जिह्वा यस्य, न० ब०] जीभ-रहित। (पुं०) मेढक।

अजीकव—(न०) [अज्या=शरक्षेपेण कम् =ब्रह्माणम् वाति=प्रीणाति, √वा+क] शिव जी का धनुष।

अजीगर्त—(पुं०) [अज्यै=गमनाय गर्तः अस्य, ब० स०] सर्प। उपनिषद् तथा पुराणों में वर्णित शुनःशेफ के पिता का नाम।

अजीर्ण—(वि०) [√जॄ+क्त, न० त०] न पचा हुआ। जो पुराना न हो।

अजीर्णि–(स्त्री०) [न√ जॄ+क्तिन् न० त०] अपच, मन्दाग्नि, बदहजमी। वीर्य, पराक्रम। पुरानेपन का अभाव।

अजीव—(वि०) [√जीव्+घञ् न० ब०] बिना जीवन का, मरा हुआ। (पुं०) [न० त०] मृत्यु, मौत।

अजीवनि—(स्त्री०) [√ जीव्+अनि न० त०] मृत्यु, (इसका व्यवहार प्रायः कोसने में होता है। यथा :—'अजीवनिस्ते शठ भूयात्।'—सिद्धान्त कौमुदी।

अजेय—(वि०) [√जी+यत् न० त०] जो जीता न जा सके, जीतने के अयोग्य।

अजैकपाद्,—द–(पुं०) [अजस्य एकः पाद

इव पादो यस्य उपमा व०] पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र । रुद्र-विशेष की उपाधि ।

अजोष--(पुं०) [√जुष+घञ् न० त०] प्रीति या प्रसन्नता का अभाव। (वि०) [न० व०] जो प्रसन्न या संतुष्ट न हो।

अज्जुका, अज्जूका--(स्त्री०) [अर्जयति या सा√अर्जि+अक, रकास्य जत्वम्] (नाटकोक्ति में) वेश्या। वड़ी वहिन।

अज्झल--(न०) ढाल। दहकता हुआ अंगारा।

अज्ञ--(वि०) [√ज्ञा+क न० त०] जड़। अनपढ़। ज्ञानशून्य। अनुभवशून्य।

अज्ञात--(वि०)[√ज्ञा+क्तन० त०] अविदित, न जाना हुआ। अप्रकट। अप्रत्याशित।

अज्ञान--(वि०) नास्ति ज्ञानम् यस्य न० व०] ज्ञानशून्य, गँवार, मूर्ख। (न०) [न० त०] ज्ञान का अभाव। मिथ्या ज्ञान, अविद्या।--**प्रभव**-(वि०) अज्ञान से उत्पन्न।

अज्ञेय--(वि०)[√ज्ञा+यत् न० त०] जो जाना न जा सके, वोधागम्य।

अज्मन्--(न०) [√अज्+मनिन्] मार्ग। युद्ध। (स्त्री०) गौ।

अज्र--(वि०) [√अज्+र] (वैदिक) शीघ्रगामी। (पुं०) क्षेत्र, मैदान।

अञ्च्--भ्वा० उभ० सक० मोड़ना, झुकाना, यथा 'शिरोऽञ्चित्वा' (भट्टिकाव्य)। जाना। पूजन करना, सम्मान करना। याचना करना। भुनभुनाना, अस्पष्ट शब्द कहना, गुनगुनाना। प्रकाशित करना, खोलना। अञ्चति-ते।

अञ्चति--(पुं०) [√अञ्च्+अति] वायु।

अञ्चल--(पुं०, न०) [√अञ्च्+अलच्] किनारा, छोर।

अञ्चित--(वि०)[अञ्च्+क्त]झुका या मुड़ा हुआ। टेढ़ा। घुँघराले (वाल)। सुंदर। गया हुआ। सिकोड़ा हुआ। गूँथा हुआ। सिला हुआ। व्यवस्थित। पूजित।--**पत्र**-(न०) एक प्रकार का कमल जिसकी पत्तियाँ टेढ़ी या मुड़ी होती हैं।--**भ्रू**-(स्त्री०) टेढ़ी, कमानसी भौं वाली स्त्री।

अञ्ज्--रुधा० पर० सक० मिलाना। जाना। प्रकाशित करना। अनक्ति। **अञ्जन**--(न०) [√अञ्ज्+ल्युट्] काजल। सुरमा। स्याही। माया। रात्रि। पश्चिम दिशा। (पुं०) पश्चिम दिशा का हस्ती। एक नाग। एक मिथिलानरेश। नील पर्वत। अग्नि। छिपकली। एक प्रकार का वगला। (न०) आँजना, लेपन, मिलाना, व्यक्त करना।--**केश**-(वि०) जिसके वाल (अंजन के समान) वहुत काले हों। (पुं०) दीपक।--**केशी**-(स्त्री०) एक सुगन्ध-द्रव्य, जिसे स्त्रियाँ वालों में लगाती हैं। इसे हट्टविलासिनी कहते हैं।--**शलाका**-(स्त्री०) आँजन या सुरमा लगाने की सलाई।

अञ्जना--(स्त्री०) [√अञ्ज+णिच्+युच्] हनुमान जी की माता का नाम। व्यंजना वृत्ति।

अञ्जनाधिका--(स्त्री०) [√अञ्जनात् अधिका पं० त०] काजल से भी वढ़कर काला एक कीट-विशेष।

अञ्जनावती--(स्त्री०) [अञ्जन+मतुप्, वत्वम् दीर्घश्च] सुप्रतीक नामक दिग्गज की हथिनी। इसका रंग वहुत काला है।

अञ्जनी--(स्त्री०) [√अञ्ज्+ल्युट्, ङीप्] चंदन, कुंकुम आदि से अनुलिप्त स्त्री। हनुमान जी की माता। विल्ली। माया। कटुका वृक्ष। कालांजन वृक्ष।

अञ्जलि--(पुं०) [√अञ्ज+अलि] जुड़े हुए दोनों हाथ, दोनों हथेलियों को जोड़कर या मिलाकर जो वीच में गड्ढा सा वनता है, उसे अंजलि कहते हैं। इस अंजलि में जितना आवे उतना एक नाप।--**कर्मन्**-(न०) प्रणाम, सम्मानसूचक मुद्रा।--**कारिका**-(स्त्री०) मिट्टी की गुड़िया जो नमस्कार करने की मुद्रा में वनाई गई हो। लाजवंती लता।--**पुट**-(पुं०, न०) दोनों हथेलियों को मिलाने से वना हुआ संपुट या गड्ढा।

अञ्जलिका—(स्त्री०) [अञ्जलि+कन् टाप्] मूषिका, चुहिया। अर्जुन के एक वाण का नाम।

अञ्जस—(वि०)[√अञ्ज+असच्] जो टेढ़ा न हो, सीधा। ईमानदार, सच्चा।

अञ्जसा—(क्रि० वि०) [√अञ्ज+अच् (भावे) अञ्जम् गतिम् विलम्बम् वा स्यति, √सो+क्विप्] सिधाई से। सच्चाई से। उचित रीति से, ठीक तौर पर। शीघ्रता से। —**कृत** (वि०) शीघ्रता से किया हुआ। उचित रीति से या न्याय-पूर्वक किया हुआ।

अञ्जसीन—(वि० [अञ्जस+ख] सीधा जाने वाला।

अञ्जि—(वि० [√अञ्ज+इन्] चमकदार। लेप लगाया हुआ। भेजने वाला। (पुं०) चंदन आदि का चिह्न, तिलक।

अञ्जिष्ठ, अञ्जिष्णु—(पं०) [√अञ्ज्+इष्ठच्—इष्णुच्] सूर्य।

अट्—भ्वा०पर० सक० जाना, घूमना-फिरना। अटति।

अटक—(वि०) [√अट्+ण्वुल्] भ्रमण करने वाला, भ्रमणशील।

अटन—(न०) [√अट+ल्युट] घूमना, भ्रमण। गमन।

अटनि, अटनी—(स्त्री०) [√अट्+अनि, वा ङीष्] धनुष का अग्रभाग जहाँ डोरी बाँधने के लिये गड्ढा वना होता है।

अटरुष—(पुं०) [अट√रुष+क] अडूसा, वासक वृक्ष।

अटल—(वि०) [न० त०] न टलने वाला, अचल। नित्य। स्थिर। दृढ़।

अटवि, अटवी—(स्त्री०) [√अट+अवि वा ङीष्] वन, जंगल।

अटविक—(पुं०) [अटवि+ठन्] वनरखा, वन में काम करने वाला।

अटा—(स्त्री०) [√अट+अङ टाप्] भ्रमण करने का अभ्यास (जैसा परिव्राजक किया करते हैं) भ्रमण, पर्यटन।

अटाट्या—(स्त्री०) [√अट+यङ+भावे अ, टाप्] बहुत घूमना, पर्यटन।

अट्ट—(पुं०) भ्वा० आत्म० सक०। मारना। लाँघना। अट्टते। चुरा० उभ० सक० अनादर करना। घटाना। अट्टयति-ते।

अट्ट—(वि०) [√अट्ट+अच्] उच्चस्वर-युक्त। निरंतर। ऊँचा। सूखा-रूखा। (पुं०) [अट्ट+घञ्] अटा, अटारी। क्षुद्र वुर्ज। आश्रय, आधार। आधार के लिये वनाया हुआ प्राकार, गुम्बज। हाट, वाजार, मंडी। प्रासाद, महल। (न०) भोज्य पदार्थ। भात। ['अट्टशूला जनपदाः' महाभारत।—'अट्टम् अन्नम् शूलम् विक्रेयं येषां ते' नीलकण्ठः।)] —**स्थली**-(स्त्री०) महलों से भरा हुआ नगर या देश।—**हसित**-(न०),—**हास**-(पुं०) जोर की हँसी, कहकहा, खिलखिलाना।—**हासक**-(पुं०) कुन्द पुष्प। (वि०) अट्टहास करने वाला।—**हासिन्**-(प०) शिव जी का नाम। (वि०) अट्टहास करने वाला।

अट्टाल, अट्टालक—(पुं०) [अट्ट√अल्+अच्, अट्ट√अल+ण्वुल्—अक] अटा, कोठा। दूसरी मंजिल। महल, प्रासाद।

अट्टालिका—(स्त्री०) [अट्टाल+क, टाप्—इत्व] प्रासाद, ऊँचा भवन।—**कार**-(पुं०) राज, थवई।

√अठ्—भ्वा० पर० सक० जाना। अठति।

√अड्—भ्वा० पर० सक० उद्यम करना। अडति। स्वा० पर० सक० (वैदिक) फैलाना। अड्णोति।

अड्ड्—भ्वा० पर० सक० आक्रमण करना। समाधान करना। अनुमान करना। अड्डति।

अड्डन—(न०) [अड्ड+ल्युट्] ढाल।

√अण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना।

साँस लेना । अणति । दिवा० आत्म० अक० जीना । अण्यते ।

अणक, अनक––(वि०) [√अण्+अच्, ततः कुत्सायां कः] बहुत छोटा । तुच्छ । तिरस्करणीय ।

अणव्य––(न०) [अणु+यत्] चीना आदि जैसे छोटे धान्य उत्पन्न करने वाला खेत ।

अणि, अणी––(पुं०) (स्त्री०) [√अण+इन्] [अणि––ङीष्] सुई की नोक । पहिये की चावी । सीमा । घर का कोना ।

अणिमन्––(पुं०) [अणोर्भावः इत्यर्थे अणु+इमनिच्] सूक्ष्मता । आठ सिद्धियों में से एक जिससे योगी अणुरूप ग्रहण करके अदृश्य हो सकता है ।

अणीयस्––(वि०) [अणु+ईयसुन्] बहुत थोड़ा । बहुत छोटा ।

अणु––(वि०) [अण्+उन्] [स्त्री०––अण्वी] लेश, सूक्ष्म । परमाणु सम्बन्धी । (पुं०) पदार्थ का सबसे छोटा इंद्रिय-ग्राह्य विभाग या मात्रा । ६० परमाणुओं का संघात । परमाणु, कण, जर्रा । मात्रा का चतुर्थांश (छंद) । एक मुहूर्त (४८ मिनट) का ५, ४६, ७५,०००वाँ भाग । संगीत में तीन ताल के काल का चतुर्थांश । सरसों, कंगनी जैसे धान्य । विष्णु का नाम । शिव का नाम ।––**अन्त** (**अण्वन्त**)––(पुं०) वाल की खाल निकालने वाला प्रश्न ।––**भा**––(स्त्री०) विद्युत्, विजली । –**मात्रिक**–(वि०) अतिक्षुद्र, अत्यन्त छोटा । जीव की संज्ञा––**रेणु**-(पुं०) त्रसरेणु, धूल-कण ।––**वाद**–(पुं०) सिद्धान्त विशेष जिसमें जीव या आत्मा अणु माना गया है । यह वल्लभाचार्य का सिद्धान्त है । शास्त्रविशेष जिसमें पदार्थों के अणु नित्य माने गये हैं, वैशेषिक-दर्शन ।––**वीक्षण**–(न०) सूक्ष्म-दर्शक यंत्र, खुर्दवीन ।

अणुक––(वि०) [अणु+कन्] बहुत छोटा या सूक्ष्म ।

अणिष्ठ––(वि०) [अतिशयेन अणुः इत्यर्थे अणु+इष्ठन्] सूक्ष्मतर । सूक्ष्मतम । अति सूक्ष्म ।

अण्ड––(न०) [√अम्+ड] अंडकोश । ब्रह्मांड । वीर्य । कस्तूरी । अंडा । (पुं०) शिव ।––**कटाह**–(पुं०) (न०) ब्रह्मांड ।––**कोटरपुष्पी**–(स्त्री०) नीलवुह्ला या अजांत्री नामक पौधा ।––**कोश––ष––षक**– (पुं०) फोता, खुसिया ।––**ज**–(पुं०) पक्षी या अंडे से उत्पन्न होने वाले जीव यथा मछली, सर्प, छिपकली आदि । ब्रह्मा ।––**जा**–(स्त्री०) कस्तूरी ।––**धर**–(पुं०) शिव ।––**वर्धन** (न०) ––**वृद्धि**–(स्त्री०) फोता बढ़ने की बीमारी ।

अण्डाकार––कृति–(वि०) [ब० स०] अंडे की शक्ल का । **अण्डालुः**––(पुं०) [अण्ड+आलुच्] मछली ।

अण्डीरः––(पुं०) [अण्ड+ईरन्] जवान पुरुष । (वि०) बलवान् ।

√अत्–भ्वा० पर० सक० जाना । चलना । घूमना । सदैव चलना । (वैदिक) प्राप्त करना । बाँधना । अतति ।

अतट––(वि०) [नास्ति तटो यस्य न० ब०] तट या किनारे से रहित । खड़ी ढाल वाला । (पुं०) खड़ी ढाल वाला पहाड़ या चट्टान । पहाड़ की चोटी । जमीन का निचला भाग, अतल ।––**प्रपात**–(पुं०) सीधा गिरने वाला झरना ।

अतथा––(अव्य०) [न तथा न० त०] वैसा नहीं ।

अतथ्य––(वि०) [न तथ्यम् न० त०] जो तथ्य न हो, असत्य, अयथार्थ ।

अतदर्हम्––(अव्य०) [न तदर्हम् न० त०] अयोग्यता से । अनुचित रीति से । अवाञ्छित रूप से ।

अतद्गुण––(पुं०) [न० ब०] अलङ्कार विशेष, किसी वर्णनीय पदार्थ के गुण ग्रहण करने की सम्भावना रहने पर भी जिसमें गुण ग्रहण नहीं

किया जा सकता, उसे अतद्गुण अलङ्कार कहते हैं।—संविज्ञान-(पुं०) बहुव्रीहि समास का वह भेद, जहाँ विशेष्य के अधीन होकर विशेषण का ज्ञान न हो।

अतन—(न०) [√अत्+ल्युट्] जाना। घूमना। (पुं०) [√अत्+ल्यु] भ्रमण करने वाला, राहचलतू।

अतन्त्र—(वि०) [न० व०] बिना डोरी का। बिना तारों का (वाजा) असंयत। जो नियम के अधीन न हो। जो किसी के अधीन न हो।

अतन्द्र, अतन्द्रित, अतन्द्रिन्, अतन्द्रिल—(वि०) [न० व०, न० त०, न० त०, न० त०] सतर्क, सावधान, जागरूक।

अतप—(वि० [न० व०] जो तपा हुआ न हो, ठंढा।

अतपस्-अतपस्क—(वि०) [न० व०] वह व्यक्ति जो अपना धार्मिक कृत्य नहीं करता या जो अपने धार्मिक कर्त्तव्यों से विमुख रहता है।

अतप्त—(वि० [न० त०] जो तपा या गरम न हो।—तनु-(वि०) जिसने तप्त मुद्रा न धारण की हो। बिना छाप का।

अतमस्—(वि०) [न० तमः यत्र न० व०] अंधकार-रहित।

अतर्क—(वि०) [नास्ति तर्कः यस्मिन् न० व०] युक्तिशून्य, तर्क के नियमों के विरुद्ध। (पुं०) जो तर्क के नियमों से अनभिज्ञ हो। [न० त०] तर्क का अभाव।

अतर्कित—(वि०) [न० त०] आकस्मिक। वे-सोचा-समझा, जो विचार में न आया हो। (क्रि० वि०) आकस्मिक रूप से।

अतर्क्य—(वि०) [√तर्क+यत्, न० त०] जिसके विषय में किसी प्रकार की विवेचना न हो सके। अचिन्त्य। अनिर्वचनीय।

अतल—(वि०) [न० व०] जिसमें तरी या पेंदी न हो। (न०) [अस्य=भूखंडस्य तलम् ष० त०] सात अधोलोकों अर्थात् पातालों में से दूसरा पाताल। (पुं०) [न० व०] शिव जी का नाम।—स्पृश्,-स्पर्श-(वि०) तल-रहित, बहुत गहरा, जिसकी थाह न मिले।

अतस्—(अव्य०) [इदम्+तसिल्] इसकी अपेक्षा। इससे, या इस कारण से। ऐसा या इसलिये। इस शब्द के समानार्थवाची 'यत्', 'यस्मात्' और 'हि' हैं। इस स्थान से। इसके आगे। (समय और स्थान सम्बन्धी।) इसके समानार्थवाची हैं 'अतःपरं' या 'अत ऊर्ध्वं'। **—अर्थं (अतोऽर्थम्)—निमित्तं (अतोनिमित्तम्)**-इस कारण, अतएव, इस कारण से **—एव (अतएव)**-इसी कारण से।**—ऊर्ध्वं (अतऊर्ध्वम्)**-इसके आगे। पीछे से। **—परं (अतःपरम्)**-आगे। और आगे। इसके पीछे। इसके परे। इससे भी आगे।

अतस—(पुं०) [√अत्+असच्] पवन, हवा। आत्मा, जीव। पटसन का बना हुआ वस्त्र।

अतसी—(स्त्री०) [√अत्+असिच् ङीष्] अलसी। सन, पटसन।—तैल-(न०) अलसी का तेल।

अति—(अव्य०) [√अत्+इन्] यह एक उपसर्ग है जो विशेषणों और क्रियाविशेषणों के पहले लगाया जाता है। इसका अर्थ है—बहुत। बहुत अधिक। परिमाण से बहुत अधिक। उत्कर्ष, प्रकर्ष। प्रशंसा। क्रिया में जुड़ने पर यह उपसर्ग—ऊपर, परे का अर्थ बतलाता है। जब यह संज्ञा या सर्वनाम में जुड़ता है, तब इसका अर्थ होता है—परे। बढ़ कर, श्रेष्ठतर। प्रसिद्ध। प्रतिपन्न। उच्चतर। ऊपर।

अतिकथ—(वि०) [अतिक्रान्तः कथाम् अत्या० स०] अतिरंजित। अविश्वसनीय। कहने के अयोग्य। मृत, नष्ट। समाज के नियमों को न मानने वाला।

अतिकथा—स्त्री०) [अतिरंजिता कथा प्रा०

स०] बहुत बढ़ाकर कहा हुआ वृत्तान्त। व्यर्थ की या बेमतलब की बातचीत।

अतिकन्दक--(पुं०) [अतिरिक्तः कन्दः यस्य ब० स०] हस्तिकंद नामक पौधा।

अतिकर्षण--(न०) [अत्यन्त कर्षणम् प्रा० स०] अत्यधिक परिश्रम।

अतिकश--(वि०) अतिक्रान्तः कशाम् अत्या० स०] कोड़े को न मानने वाला। घोड़े की तरह हाथ में न आने वाला।

अतिकाय--(वि०)[अत्युत्कटः कायः यस्य ब० स०] दीर्घकाय। असाधारण डीलडौल का।

अतिकृच्छ्र--(वि०) [अत्युत्कटः कृच्छ्रः प्रा० स०] बहुत कठिन, बड़ा मुश्किल। (न०) (पुं०) असाधारण कठिनता। एक प्रायश्चित्त, जो १२ रात में पूर्ण होता है।

अतिकेशर--(पु०) [अतिरिक्तानि केशराणि यस्य ब० स०] कुब्जक नामक पौधा।

अतिक्रम--(पुं०) [अति √क्रम्+घञ् ह्रस्वः] नियम या मर्यादा का उल्लंघन, विरुद्ध व्यवहार। अप्रतिष्ठा, असम्मान। चोट। विरोध। (काल का) व्यतीत हो जाना, बीत जाना। दमन करना। पराजित करना। छोड़ जाना, उपेक्षा करना। भूल जाना। जोर-शोर का आक्रमण। आधिक्य। दुष्प्रयोग। निर्धारण। स्थापना। आदेश। करसंस्थापन।

अतिक्रमण--(न०) [अति√क्रम्+ल्युट्] उल्लंघन, पार करना। बढ़ जाना। सीमा के बाहर जाना। समय को व्यतीत करना। आधिक्य। दोष, अपराध।

अतिक्रमणीय--(वि०) [अति√क्रम्+ अनीयर्] अतिक्रमण करने योग्य, उल्लंघन करने योग्य। बचा देने के योग्य। छोड़ देने के योग्य।

अतिक्रान्त--(वि०) [अति√क्रम्+क्त] सीमा या मर्यादा का उल्लंघन किया हुआ। बढ़ा हुआ। बीता हुआ।

अतिक्रुद्ध--(वि०) [अत्यन्तः क्रुद्धः प्रा० स०] जो अत्यन्त क्रोध में आ गया हो, बहुत नाराज। (पुं०) तंत्रशास्त्र का एक मंत्र।

अतिक्रूर--(वि०) [अत्यन्तः क्रूरः प्रा० स०] बहुत निष्ठुर। (पुं०) तीस या तैंतीस अक्षरों का एक तंत्रोक्त मंत्र।

अतिक्षिप्त--(वि०) [प्रा० स०] अत्यंत दूर या सीमा से पार फेंका हुआ। (न०) नस आदि की मोच, मुरकन।

अतिखट्व--(वि०) [अतिक्रान्तः खट्वाम् अत्या० स०] शय्यारहित। शय्या की आवश्यकता को दूर कर देने योग्य।

अतिग--(वि०) [अति√गम्+ड] अत्यधिक। अपेक्षा कृत उत्कृष्ट।

अतिगण्ड--(वि०) [अति शयितः गण्डो यस्य ब० स०] जिसके कपोल (गाल) बड़े हों। (पुं०) एक तार। एक योग। [प्रादि त० स०] बड़ा कपोल।

अतिगन्ध--(वि०)[अतिशयितो गन्धो यस्य ब० स०] बहुत या अत्युत्कट गंध वाला। (पुं०) गन्धक। भूतृण। चंपा का पेड़।

अतिगन्धालु--(पुं०) [प्रा० स०] पुत्रदात्री नामक लता।

अतिगव-(वि०) [अतिक्रान्तः गाम्=वाचम्, अत्या० स०] बड़ा भारी मूर्ख। अवर्णनीय, अकथनीय।

अतिगहन-गह्वर--(वि०) [प्रा० स०] बहुत गहरा। जिसमें प्रवेश करना बहुत कठिन हो।

अतिगुण--(वि०) [अत्युत्तमो गुणो यस्मिन् ब० स०] वह जिसमें सर्वोत्कृष्ट अथवा श्रेष्ठतर गुण हों। [गुणम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] गणशून्य, निकम्मा। (पुं०) (प्रा० स०] श्रेष्ठ गुण।

अतिगुरु--(वि०) [प्रा० स०] बहुत भारी। (पुं०) बहुत आदरणीय व्यक्ति, पिता आदि।

अतिगो—(स्त्री०) [प्रा० स०] श्रेष्ठ गौ, उत्तम गाय।

अतिग्रह—(वि०) [अतिक्रान्तः ग्रहम् अत्या० स०] जो बोधगम्य न हो। [अति√ग्रह्+अच्] बहुत ग्रहण करने वाला या दूर तक पकड़ने वाला। (पुं० दे०) 'अतिग्राह'।

अतिग्राह—(पुं०) [अत्यन्तः ग्राहो यस्य ब० स०] इन्द्रियों के विषय स्पर्श रस आदि। सत्य-ज्ञान। श्रेष्ठ होने के लिये किया जाने वाला कर्म या क्रिया।

अतिग्राह्य—(वि०) [प्रा० स०] नियंत्रण में रखने योग्य। (पुं०) ज्योतिष्टोम यज्ञ में लगातार तीन बार किया जाने वाला तर्पण।

अतिघ—(पुं०) [अति √हन्+क] एक हथियार। क्रोध।

अतिघ्नी—(स्त्री०) [अति√हन्+टक् ङीप्] ऐसी गहरी निद्रा या विस्मृति जिसमें अतीत की सारी अप्रिय बातें भूल जायँ।

अतिचमू—(वि०) [चमूम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] सेनाओं पर विजय-प्राप्त या विजयी।

अतिचर—(वि०) [अति√चर+अच्] बड़ा परिवर्तनशील। क्षणिक। रा-(स्त्री०) स्थल-पद्मिनी। पद्मिनी। पद्मचारिणीलता।

अतिचरण—(न०) [अति√चर्+ल्युट्] अत्यधिक अभ्यास, अधिक काम करना।

अतिचार—(पुं०) [अतिशयेन चारः अति-क्रम्य वा चारः, अति√चर्+घञ्) उल्लं-घन। सद्गुण में अतिक्रमण करना। ग्रहों की शीघ्र गति, ग्रहों का भोगकाल समाप्त हुए विना एक राशि से दूसरी राशि पर जाना।

अतिचारिन्—(वि०) [अति√चर+णिनि] अतिक्रमण करने वाला, आगे निकल जाने वाला। (पुं०) एक राशि का भोगकाल समाप्त हुए विना दूसरी राशि में जाने वाले मंगल आदि पाँच ग्रह।

अतिच्छत्र—(पुं०), **अतिच्छत्रा**, **अति-च्छत्रका**—(स्त्री०) छाती नाम से प्रसिद्ध एक तृण। तालमखाना। सुल्फा।

अतिच्छन्द-दस्—(वि०) [अतिक्रान्तः छन्दः छन्दम् वा अत्या० स०) सांसारिक इच्छाओं से रहित। वैदिक आचार को तोड़ने वाला।

अतिजगती—(स्त्री०) [अतिक्रान्ता जगतीम् अत्या० स०] एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में १३ अक्षर होते हैं।

अतिजन—(वि०) [अतिक्रान्तो जनम् अत्या० स०] जो आबाद न हो, निर्जन।

अतिजव—(वि०) [अतिशयितो जवो यस्य ब० स०] बड़े वेग से चलने वाला।

अतिजागर—(पुं०) [अतिशयितो जागरो यस्य ब० स०] नीला बगला या नीलक पक्षी—जो सदा जागता रहता है। (वि०) जिसको नींद न आवे।

अतिजात—(वि०) [अतिक्रान्तो जातम्= जातिम् जनकम् वा अत्या० स०] जो अपनी जाति या पिता से भी बढ़ा हुआ हो।

अतिडीन—(न०) [प्रा० स०] पक्षियों की एक असाधारण उड़ान।

अतितराम्, अतितमाम्—(अव्य०) [अति +तरप्, ततः आम्। अति+तमप्, ततः आम्] अधिक उच्चतर। बहुत अधिक।

अतितीक्ष्ण—(वि०) [अतिशयेन तीक्ष्णः प्रा० स०] अत्यन्त कड़वा। बहुत तेज। (पुं०) सहिजन का वृक्ष। मिर्चा।

अतितीव्रा—(स्त्री०) [प्रा० स०] गाँड़दूब।

अतिथि—(पुं०) [अतति गच्छति न तिष्ठति इति√अत्+इथिन्] अभ्यागत, मेहमान। वह संन्यासी जो कहीं एक रात से अधिक न ठहरे। कुश के पुत्र, सुहोत्र। अग्नि। यज्ञ में सोम-सम्बन्धी कार्य करने वाला अनुचर। —क्रिया-(स्त्री०) आतिथ्य, मेहमानदारी। —देव-(वि०) जिसके लिये अतिथि देवता के समान हो, देव-बुद्धि से अतिथि का पूजन

करने वाला ।—**धर्म**–(पुं०) अतिथि का सत्कार ।—**यज्ञ**–(पुं०) पञ्चमहायज्ञों में से एक, नृयज्ञ, मेहमानदारी ।—**सत्कार**–(पुं०)—**सत्क्रिया**, —**सपर्या**,—**सेवा**—(स्त्री०) मेहमान की आवभगत, अतिथि का आदर-सत्कार ।

अतिदान—(न०) [प्रा० स०] अत्यधिक दान । बड़ी उदारता ।

अतिदिष्ट—(वि०) [अति√दिश्+क्त] प्रभावित । आकृष्ट । मीमांसा-शास्त्र के अनुसार एक का धर्म दूसरे में आरोपित ।

अतिदीप्य—(पुं०) [अतिशयेन दीप्यते इति अति√दीप्+यत्] रक्तचित्रक वृक्ष, लाल चीता का पेड़ ।

अतिदेश—(पं०) [अति√दिश+घञ्] अन्य वस्तु के धर्म का अन्य पर आरोपण । वह नियम जो अपने निर्दिष्ट विषय के अतिरिक्त और विषयों में भी काम दे । सादृश्य, उपमा । निष्कर्ष । आत्मसात् करना ।

अतिद्वय—(वि०) [द्वयम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] अद्वितीय, जिसके समान दूसरा न हो । जो दो से बढ़कर हो ।

[illegible]—(पुं०) [अतिरिक्तं धनुर्यस्य ब० स०] बेजोड़ तीरंदाज या योद्धा । एक वैदिक आचार्य । (वि०) [अत्या० स०] वह जो मरुभूमि का अतिक्रमण कर गया हो ।

अतिधृति—(स्त्री०) [अतिक्रान्ता धृतिम्= अष्टादशाक्षरपादिकां वृत्तिम् अत्या० स०] एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में १९ अक्षर होते हैं ।

अतिनिद्र—(वि०) [अतिशयिता निद्रा यस्य ब० स०] अत्यधिक निद्रालु, अत्यधिक सोने वाला । [निद्राम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] बिना निद्रा का, निद्रा-रहित । (स्त्री०) अत्यधिक नींद ।

अतिनु-नौ—(वि०) [अतिक्रान्तो नावम् अत्या० स०] नाव से उतरा हुआ । नदी या समुद्र के तट पर उतरा हुआ ।

अतिपञ्चा—(स्त्री०) [पञ्च (वर्षाणि) अतिक्रान्ता अत्या० स०] पाँच वर्ष के ऊपर की लड़की ।

अतिपतन—(न०) [अति√पत्+ल्युट्] निर्दिष्ट सीमा के आगे उड़ जाना या निकल जाना । चूक जाना । छोड़ जाना । उल्लंघन करना, मर्यादा के बाहर जाना ।

अतिपत्ति—(स्त्री०) [अति√पद्+क्तिन्] असिद्धि, असफलता । सीमा के बाहर जाना ।

अतिपत्र—(पुं०) [अत्या० स० या ब० स०] सागौन का वृक्ष ।

अतिपर—(वि०) [अतिक्रान्तः परान् अत्या० स०] वह व्यक्ति जिसने अपने शत्रुओं का नाश कर डाला हो । (पुं०) [प्रा० स०] बड़ा या श्रेष्ठ शत्रु ।

अतिपरिचय—(पुं०) [प्रा० स०] अत्यधिक मेल-मिलाप ।

अतिपात—(पुं०) [अति√पत्+घञ्] गुजर जाना (समय का) । नष्ट हो जाना । चूक, भूल । उल्लंघन । घटना का घटित होना । दुर्व्यवहार । विरोध । विघ्न ।

अतिपातक—(न०) [अतिक्रान्तः अत्यन्तदुष्टत्वेन अन्यत् पातकम् अत्या० स०] नौ तरह के पापों में से तीन बड़े पाप जैसे—मातृगमन, कन्यागमन, पुत्रवधूगमन ।

अतिपातिन्—(वि०) [अति√पत्+णिच्+णिनि] चाल में बढ़ा हुआ, अपेक्षाकृत वेगवान् । भूल करने वाला ।

अतिपात्य—(वि०) [अति√पत्+णिच्+यत्] विलम्ब करने योग्य, स्थगित करने योग्य ।

अतिप्रबन्ध—(पुं०) [अतिशयितः प्रबन्धः प्रा० स०] अत्यन्त, निरवच्छिन्नता, बिलकुल लगा होना ।

अतिप्रगे--(अव्य०) [अति प्रगीयतेऽस्मिन् काले इति अति--प्र√गै+के] बड़े तड़के, बड़े भोर।

अतिप्रश्न--(पुं०) [अति√प्रच्छ्+नङ्] ऐसा प्रश्न जिसको सुन उद्रेक उत्पन्न हो, खिझाने वाला प्रश्न।

अतिप्रसङ्ग--(पुं०) [प्रा० स०] प्रगाढ़ प्रेम।

अतिप्रसक्ति--[प्रा० स०] प्रगाढ़ प्रेम। किसी काम में वहुत लग जाना। अत्यन्त उद्दण्डता। अतिव्याप्ति अर्थात् लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य में भी लक्षण की प्रवृत्ति। घनिष्ठ संपर्क।

अतिप्रौढा--(स्त्री०) [प्रा० स०] सयानी लड़की, जो विवाह योग्य हो गयी हो।

अतिवल--(वि०) [अतिशयितं वलं यस्य व० स०] वड़ा वलवान् या दृढ़। (पुं०) एक विख्यात योद्धा।

अतिवला--(स्त्री) [व० स०] एक अस्त्र-विद्या जिसे विश्वामित्र जी ने श्री रामचन्द्र जी को वतलाया था। एक औषध, पीतवला, कंगही।

अतिवाला--(स्त्री०) [अतिक्रान्ता वालाम्= वाल्यावस्थाम् अत्या० स०] दो वर्ष की गौ।

अतिब्रह्मचर्य--(न०) [अतिशयितम् ब्रह्मचर्यम् प्रा० स०] ब्रह्मचर्य व्रत का वहुत अधिक पालन, वहुत काल तक ब्रह्मचारी रहना। (वि०) [अत्या० स०] जिसने ब्रह्मचर्य तोड़ डाला हो।

अतिभर, अतिभार--(पुं०) [प्रा० स०] वहुत अधिक वोझ। (पुं०) खच्चर।

अतिभव--(पुं०) [अति√भू+अप्] वढ़ जाना, पराजित करना।

अतिभाव--(पुं०) [अति√भू+णिच्+अच्] श्रेष्ठता, उत्कृष्टता।

अतिभी--(स्त्री०) [अति√भी+क्विप्] विद्युत्, विजली, इन्द्र के वज्र की कड़क या चमक।

अतिभूमि--(स्त्री०) [प्रा० स०] आधिक्य। चरम सीमा पर पहुँचना, अत्युच्च स्थान पर आरोहण। विस्तृत भूमि।

अतिमङ्गल्य--(वि०) [अतिमङ्गलाय हितम् इत्यर्थे अतिमङ्गल+यत्] मंगल या शुभ करने वाला। (पुं०) विल्व वृक्ष।

अतिमति--(स्त्री०)--**मान**--(पुं०) [प्रा० स०] अत्यन्त गर्व या अभिमान।

अतिमर्त्य-मानुष--(वि०) [अत्या० स०] मनुष्य की शक्ति से परे। अमानुषिक, अलौकिक।

अतिमात्र--(वि०) [अत्या० स०] मात्रा से अधिक, अत्यधिक।

अतिमाय--(वि०) [अत्या० स०] सांसारिक माया से मुक्त, पूर्णमुक्त।

अतिमुक्त--(वि०) [अतिशयेन मुक्तः प्रा० स०] जिसे मुक्ति मिल गई हो, निर्वाण-प्राप्त। निर्वीज, ऊसर।

अतिमुक्त, अतिमुक्तक--(पुं०) माधवीलता। तिनिश वृक्ष। तिंदुक वृक्ष। ताल वृक्ष।

अतिमुक्ति--(स्त्री०) [प्रा० स०] मोक्ष, आवागमन से सदा के लिये छुटकारा।

अतिमोदा--(स्त्री०) [अतिशयितो मोदो यस्याः व० स०] नवमल्लिका, नेवारी।

अतिरंहस्--(वि०) [अतिशयितं रंहो यस्मिन् व० स०] अत्यन्त फुर्तीला, वहुत तेज।

अतिरथ--(पुं०) [अतिक्रान्तो रथं रथिनं वा अत्या० स०] ऐसा योद्धा जिसका कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो और जो रथ में वैठकर लड़े।

अतिरभस--(पुं०) [प्रा० स०] वड़ी रफ्तार, उद्दाम वेग। हठ, जिद्द।

अतिरसा--(स्त्री०) [अतिशयितो रसो यस्याः व० स०] मूर्वा लता।

अतिराजन्--(पुं०) [अत्या० स०] असाधारण या उत्तम राजा। वह व्यक्ति जो राजा से आगे वढ़ जाय।

अतिरात्र—(पुं०) [अतिक्रान्तो रात्रिम् अत्या० स०, अच् समासान्तः] ज्योतिष्टोम यज्ञ का एक ऐच्छिक भाग। इस यज्ञ से संबद्ध एक मंत्र। चाक्षुष मनु का एक पुत्र।

अतिरिक्त—(वि०) [अति√रिच्+क्त] बढ़ा हुआ, नियत परिमाण से अधिक, फाजिल। भिन्न। सिवाय, अलावा।

अतिरुक—(स्त्री०) [ब० स०] अत्यन्त सुन्दरी स्त्री।

अतिरुच्—(पुं०) [रुक=स्त्रीणाम् ऊरु-देशः। अतिक्रान्तः रुचम्, अत्या० स०] घुटना, टहना।

अतिरेक, अतीरेक—(पुं०) [अति√रिच् +घञ्] अतिशयता। सर्वोत्कृष्टता, सर्व-श्रेष्ठत्व। प्रसिद्धि। अन्तर, भेद।

अतिरोमश, अतिलोमश—(वि०) [अति-शयितं रोम, अतिरोमन्+श] बहुत रोंगटों वाला, बहुत बालों वाला। (पुं०) जंगली बकरा। बृहत्-काय बंदर।

अतिलङ्घन—(न०) [प्रा० स०] बहुत अधिक उपवास या लंघन। उल्लंघन, अति-क्रमण।

अतिलङ्घिन्—(वि०) [अति√लंघ+णिनि] भूल करने वाला, गलती करने वाला।

अतिवयस्—(वि०) [अतिशयितं वयः यस्य ब० स०] बहुत बूढ़ा, बड़ी उमर का।

अतिवर्णाश्रमिन्—(वि०) [अतिक्रान्तो वर्णान् आश्रमिणश्च अत्या० स०] जो ब्राह्मण आदि चारों वर्णों और ब्रह्मचर्य आदि चारों आश्रमों से परे हो, पञ्चमाश्रमी। वेदान्त-महा-वाक्य के श्रवणमात्र से आत्मा को ईश्वर समझने वाला।

अतिवर्तन—[√अति√वृत्+ल्युट्] क्षम्य अपराध, क्षमा करने योग्य क्षुद्र अपराध। दण्डवर्जित होना।

अतिवर्तिन्—(वि०) [अति√वृत्+णिनि] अतिक्रम करने वाला, नियम तोड़ कर चलने वाला।

अतिवाद—(वि०) [अति√वद्+घञ्] कुवाच्य-युक्त भाषा, गाली, भर्त्सना। अति-रंजना, डींग।

अतिवाह—(पुं०) [अति√वह+घञ्] सूक्ष्म शरीर का अन्य देह में जाना या ले जाना।

अतिवाहक—(पुं०) [अति√वह्+ण्वुल्] सूक्ष्म शरीर की देहान्तर-प्राप्ति में सहायक देवता।

अतिवाहन—(न०) [अति√वह्+णिच् +ल्युट्] बिताना। भेजना। बहुत अधिक परिश्रम करना।

अतिवाहिक—(वि०) [अतिवह+ ठन्] वायु से भी तेज। (न०) लिंगशरीर या सूक्ष्म शरीर। (पुं०) पाताललोक-निवासी।

अतिवाहित—(वि०) [अति√वह्+णिच् +क्त] बिताया हुआ। दे० 'अतिवाहिक'।

अतिविकट—(वि०) [अतिशयेन विकटः प्रा० स०] बड़ा भयङ्कर (पुं०) दुष्ट हाथी।

अतिविषा—(स्त्री०) [अत्या० स०] अतीस नामक एक ओषधि जो जहरीली होती है।

अतिविस्तर—(पुं०) [प्रा० स०] बहुत अधिक फैलाव। दीर्घसूत्रता। प्रपंच। बहुत बकझक।

अतिवृत्ति—(स्त्री०) [अति√वृत्+क्तिन्] अतिक्रमण। उल्लंघन। अतिशयोक्ति। तेजी से निकलना (रक्त)।

अतिवृष्टि—(स्त्री०) [प्रा० स०] मूसलाधार वर्षा। (खेती को नुकसान पहुँचाने वाली) छः प्रकार की ईतियों में से एक।

अतिवेध—(पु०) [प्रा० स०] अत्यन्त मेल या संपर्क। दशमी और एकादशी का परस्पर-संयोग।

अतिवेल—(वि०) [अतिक्रान्तो वेलाम्= मर्यादाम् कूलं वा अत्या० स०] किनारे के ऊपर उठा हुआ । मर्यादा का अतिक्रमण करने वाला । अत्यधिक । असीम ।

अतिवेलम्—(क्रि० वि०) [अव्यय० स०), अत्यधिकतया । बे-समय से । अनृतु से ।

अतिव्याप्ति—(स्त्री०) [अति+वि०+√आप+क्तिन्] किसी नियम या सिद्धान्त का अनुचित विस्तार । किसी कथन के अन्तर्गत उद्देश्य या लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य विषय के आ जाने का दोष । नैयायिकों का एक दोष-विशेष । यदि किसी का लक्षण अथवा किसी शब्द को या वस्तु की परिभाषा की जाय और वह लक्षण या परिभाषा अपने मुख्य वाच्य को छोड़ कर दूसरे की बोधक हो तो वहाँ अतिव्याप्ति दोष माना जाता है ।

अतिशय—(पुं०) (वि०) [अति√शी+अच्]बहुत ज्यादा । श्रेष्ठ । (पुं०) अधिकता । अतिरेक । श्रेष्ठता । किसी बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहना, अतिरंजना । एक अर्थालङ्कार जिसमें किसी वस्तु का अतिरंजित वर्णन होता है ।

अतिशयन—(वि०) [अति√शी+ल्यु] बड़ा । मुख्य । प्रचुर, बहुतसा (न०) [अति√शी+ल्युट्] । अधिकता । प्राचुर्य ।

अतिशयालु—(वि०) [अति+√शी+आलुच्] बढ़ जाने की प्रवृत्ति रखने वाला ।

अतिशायन—(न०) [अति√शी+ल्युट् नि० दीर्घ] अधिक होना । श्रेष्ठता ।

अतिशायिन्—(वि०) [अति√शी+णिनि] आगे बढ़ जाने वाला । श्रेष्ठ । अत्यधिक ।

अतिशेष—(पुं०) [प्रा० स०] बचत, स्वल्प बचा हुआ अंश ।

अतिश्रेयसि—(पुं०) [श्रेयसीम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] वह पुरुष जो सर्वोत्तम स्त्री से श्रेष्ठ हो ।

अतिश्व—(वि०) [श्वानम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] कुत्ते से बढ़ा हुआ । कुत्ते से निकृष्ट । —श्वा–(स्त्री०) दासत्व । सेवा ।

अतिश्वन्—(पुं०) [प्रा० स०] सर्वोत्तम कुत्ता ।

अतिसक्ति—(स्त्री०)[अति√सञ्ज+क्तिन्] घनिष्ठता । अत्यधिक अनुराग ।

अतिसन्धान—(न०) [अति-सम्√धा+ल्युट्] धोखा, दगा । जाल, कपट ।

अतिसन्ध्या—(स्त्री०) [अत्यासन्ना सन्ध्या प्रा० स०] सूर्योदय के ठीक पहले और सूर्यास्त के ठीक बाद के समय का समीपवर्ती समय ।

अतिसर—(वि०) [अति√सृ+अप्] आगे बढ़ा हुआ । नेता ।

अतिसर्ग—(पुं०) [अति√सृज+घञ्] देना (पुरस्कार रूप से) । अनुमति देना, आज्ञा देना । पृथक् करना, छुड़ाना (नौकरी से) ।

अतिसर्जन—(न०) [अति√सृज्+ल्युट्] देना । मुक्ति, छुटकारा । वदान्यता, दान-शीलता । वध । धोखा । वियोग ।

अतिसर्पण—(न०) [अति√सृप्+ल्युट्] तीव्र गति । गर्भाशय में बच्चे का सरकना ।

अतिसर्व—(वि०) [सर्वम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] सर्वोपरि, सब के ऊपर । (पुं०) परमात्मा, परब्रह्म ।

अति (ती) सार—(पुं०) [अति√सृ+णिच्+अच्] दस्तों की बीमारी । अतीसार रोग जिसमें मल बढ़ कर रोगी के उदराग्नि को मन्द कर देता है और शरीर के रसों के साथ बराबर निकलता है ।

अति (ती) सारकिन्—(वि०) [अतिसार+इनि, कुक्] अतिसार रोग से पीड़ित ।

अति (ती) सारिन्—[अतिसार+इनि] अतिसार रोग वाला ।

अतिसौरभ—(वि०) [ब० स०] अत्यधिक सुगंध वाला । (पुं०) आम ।

अतिसौहित्य--(न०) [प्रा० स०] अत्यन्त तृप्ति। कस कर खाना।

अतिस्नेह--(पुं०) [प्रा० स०] अत्यधिक अनुराग।

अतिस्पर्श--(पुं०) [प्रा० स०] अर्द्धस्वर और स्वर की एक संज्ञा। उच्चारण में जीभ और तालु का अल्प स्पर्श (व्या०)। (वि०) कंजूस। कमीना।

अतीत--(वि०) [अति√इण्+क्त] गत। बीता हुआ। मरा हुआ। निर्लेप। पृथक्। परे, पार गया हुआ।

अतीन्द्रिय--(वि०) [अत्या० स०] जो इन्द्रियों के ज्ञान के बाहर हो, अप्रत्यक्ष, अगोचर। (पुं०) (सांख्यशास्त्र में) जीव या पुरुष। परमात्मा। (न०) (सांख्य-मतानुसार प्रधान या प्रकृति। (वेदान्त में) मन।

अतीव--(अव्य०) [अत्येव--इव अवधारणे प्रा० स०)] अधिक, अतिशय, बहुत।

अतुल--(वि०) [नास्ति तुला यस्य न० ब० असमान, अनुपम, उपमान-रहित। (पुं०) तिलक वृक्ष।

अतुल्य--(वि०) [न तुलाम् अर्हति इत्यर्थे तुला+यत् न० त०] जिसकी तुलना या समता न हो। बेजोड़, अद्वितीय।

अतुषार--(वि०) [न० त०] जो ठंडा न हो।--**कर**-(पुं०) सूर्य।

अतूतुजि--(वि०) [न√तुज्+कि द्वित्व-दीर्घ] न देने वाला। जो उदार न हो।

अतूर्त--(वि०) [न√तुर्+क्त] जो रोका न गया हो। जो मारा न गया हो। (न०) आकाश।

अतृणाद--(पुं०) [तृण√अद्+अण् न० त०] जो घास नहीं खाता है, हाल का जन्मा हुआ बछड़ा।

अतृण्या--(स्त्री०) [न० त०] थोड़ी सी घास।

अतृदिल--(वि०) [√तृद्+किलच न० त०] स्थिर। कठोर।

अतेजस्--(वि०) [नास्ति तेजो यस्मिन् न० ब०] धुँधला, जो चमकदार न हो। निर्बल, कमजोर। तुच्छ।

अत्क--(पुं०) [√अत्+कन्)] पथिक। मुसाफिर। शरीर का अंग। जल। बिजली। पोशाक। कवच।

अत्ता--(स्त्री०) [अतति=संवघ्नाति√अत् +तक्] माता। बड़ी बहिन। सास।

अत्ति, अत्तिका--(स्त्री०) [√अत्+क्तिन् --अत्ति, अत्ता+क इत्व--अत्तिका] बड़ी बहन आदि।

अत्न, अत्नु--(पुं०) [√अत्+न--अत्न, √अत्+नु--अत्नु] हवा। सूर्य। पथिक।

अत्यग्नि--(पुं०) [अत्या० स०] विकार उत्पन्न करने वाली तीक्ष्ण पाचन-शक्ति।

अत्यग्निष्टोम--(पुं०) [अतिक्रान्तः अग्निष्टोमम् अत्या० स०] ज्योतिष्टोम यज्ञ का ऐच्छिक दूसरा भाग।

अत्यङ्कुश--(वि०) [अत्या० स०] जो वश में न रह सके, बेकाबू (हाथी)।

अत्यन्त--(वि०) [अतिक्रान्तः अन्तम् अत्या० स०) बेहद। बहुत अधिक। सम्पूर्ण, नितान्त। अनन्त। सदा रहने वाला।--**अभाव** (**अत्यन्ताभाव**)-(पुं०) किसी वस्तु का बिल्कुल न होना, सत्ता की नितान्त शून्यता। --**गत**-(वि०) सदैव के लिये गया हुआ, जो लौटकर न आवे।--**गामिन्**-(वि०) बहुत चलने-फिरने वाला। बहुत तेज चलने वाला।--**वासिन्**-(पुं०) वह जो सदा अपने शिक्षक के साथ छात्रावस्था में रहे।--**संयोग**-(पुं०) अतिसामीप्य, अविच्छेद।

अत्यन्तिक--(वि०) [अत्यन्तं गच्छति इत्यर्थे अत्यन्त+ठन्-इक] बहुत या बहुत तेज चलने वाला। बहुत समीपी। (न०) अति सामीप्य, बिल्कुल पास।

अत्यन्तीन--(वि०) [अत्यन्त+ख--ईन]

वहुत अधिक चलने-फिरने वाला । वड़ी तेजी से चलने वाला ।

अत्यय—(पुं०) [अति√इ+अच्] बीत जाना । निकल जाना । अन्त । उपसंहार, समाप्ति । अनुपस्थिति । अदर्शन, लोप । मृत्यु नाश । खतरा । दुःख । अपराध, दोष । अतिक्रमण । आक्रमण । श्रेणी ।

अत्ययित—(वि०) [अत्यय+इतच्] वढ़ा हुआ, आगे निकला हुआ । उल्लंघन किया हुआ । अत्याचार किया हुआ ।

अत्ययिन्—(वि०) [अत्यय+इनि] वढ़ा हुआ, आगे निकला हुआ ।

अत्यर्थ—(वि०) [अत्या० स०] अत्यधिक वहुत ज्यादा । (क्रि० वि०) वहुत अधिकता से ।

अत्यष्टि—(स्त्री०) [अत्या० स०] एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में सत्रह अक्षर होते हैं ।

अत्यह्न—(वि०) [अत्या० स०] स्थितिकाल में एक दिन से अधिक ।

अत्याकार—(पुं०) [प्रा० स०] तिरस्कार । भर्त्सना, धिक्कार । वड़े डील-डौल वाला शरीर ।

अत्याचार—(पुं०) [प्रा० स०] अन्याय । दुराचार । आचार का अतिक्रमण । कोई ऐसा कार्य जो प्रथा से समर्थित न हो । उपद्रव । जुल्म, उत्पीडन ।

अत्यादित्य—(वि०) [अत्या० स०] सूर्य की चमक को अपनी चमक से दवा देने वाला ।

अत्याधान—(न०) [अति—आ√धा+ल्युट्] रखने की क्रिया (किसी पर) । धोखा । अतिक्रमण । होमाग्नि को सुरक्षित न रखना ।

अत्यानन्दा—(स्त्री०) [प्रा० स०] वैद्यक के अनुसार योनि का एक भेद, वह योनि जो अत्यन्त मैथुन से भी संतुष्ट न हो । इसका दूसरा नाम 'रतिप्रीता' भी है । स्त्री-सहवास-सम्बन्धी आनन्दों के प्रति अस्वस्थ अनास्था ।

अत्याय—(पुं०) [अति√इ अथवा√अय +घञ्] अतिक्रमण, उल्लंघन । आधिक्य, ज्यादती । वहुत अधिक लाभ ।

अत्यारूढ—(वि०) [अति-आ√रुह्+क्त] वहुत अधिक वढ़ा हुआ । (न०) दे० 'अत्यारूढ़ि' ।

अत्यारूढि—(स्त्री०) [अति-आ√रुह्+क्तिन्] अत्युच्च पद । अत्यधिक उन्नति या उत्कर्ष ।

अत्याल—(पुं०) [अति+आ√ अल+अच्] रक्त चित्रक वृक्ष, लाल चिता ।

अत्याश्रम—(पुं०) [प्रा० स०] संन्यासाश्रम । (वि०) [अत्या० स०] संन्यासी । परमहंस । व्रह्मचर्यादि आश्रम-धर्मों का पालन न करने वाला ।

अत्याहित—(न०) [अति+आ√धा+क्त] वड़ी भारी विपत्ति । दुर्घटना । दुस्साहस या जोखों का काम । अरुचि ।

अत्युक्ति—(स्त्री०) [अति√वच्+क्तिन् वहुत वढ़ा कर कहा हुआ कथन । वढ़ा-चढ़ा कर कहने की शैली । एक अलंकार ।

अत्युक्था—(स्त्री०) [उक्थ एकाक्षरपादिका वृत्तिः ताम् अतिक्रान्ता [अत्या० स०] एक छंद जिसके प्रत्येक पाद में दो-दो अक्षर होते हैं ।

अत्यूपध—(वि०) [उपधाम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] विश्वस्त । परीक्षित ।

अत्यूर्मि—(वि०) [व० स०] जिसमें वड़ी लहरें उठती हों ।

अत्यूह—(पुं०) [अति√ऊह्+अच्] गम्भीर विचार या ध्यान । ठीक अथवा सच्चा तर्क-वितर्क । जलकुक्कुट, एक प्रकार का जल-पक्षी । मोर ।

अत्र—(अव्य०) [इदम् या एतद्+त्रल्] यहाँ, इसमें ।—**अन्तरे** (अत्रान्तरे)–[क्रि० वि०] इस वीच में, इस अर्से में ।—**भवत्**–(वि०) श्लाघ्य । पूज्य । प्रशंसा करने योग्य । स्त्री के लिये 'अत्रभवती' का व्यवहार होता है ।

अत्रत्य—(वि०) [अत्र भवः जातः, एतत्-स्थानसंबद्धो वा इत्यर्थे अत्र+त्यप्] यहाँ सम्बन्धी। इस स्थल से सम्बद्ध। यहाँ उत्पन्न हुआ। यहाँ प्राप्त। इस स्थान का, स्थानीय।

अत्रप—(वि०) [नास्ति त्रपा यस्य न० व०] निर्लज्ज। दुश्शील। प्रगल्भ, उद्धत।

अत्रपु—(वि०) [न० व०] जिसमें राँगा न हो। [न० त०] राँगे का अभाव।

अत्रस्नु—(वि०) [न० त०] निर्भीक, निडर।

अत्रि—(पुं०) [√अद्+त्रिन्] एक ऋषि का नाम।—**ज**,—**जात**,—**दृग्ज**,—**नेत्र-प्रसूत**,—**प्रभव**,—**भव**—(पुं०) चन्द्रमा।

अथ—(अव्य०) [√अर्थ्+ड पृषो० रलोप] मंगल। आरम्भ। अधिकार। तदनन्तर, पीछे से। यदि और इसका प्रयोग किसी विषय की जिज्ञासा करने में तथा कोई प्रश्न आरम्भ करने में होता है। सम्पूर्णता नितान्तता। सन्देह, संशय। यथा "शब्दो नित्योऽथानित्यः।"—**अपि** (**अथापि**)—अपरञ्च। किञ्च। अपिच। पुनः।—**किं**—और क्या? हाँ, ठीक यही, ठीक ऐसा ही, निस्सन्देह।—**च**—अपिच। किञ्च। इसी प्रकार, ऐसे ही।—**वा**—या। अधिकतर। या क्यों। या कदाचित्। प्रथम कथन का संशोधन करते हुए।

अथर्वन्—(पुं०) [अथ√ऋ+वनिप्] यज्ञकर्त्ता-विशेष, जो अग्नि और सोम का पूजन करता है। ब्राह्मण (बहुवचन में)। अथर्वन् ऋषि के सन्तान। अथर्ववेद की ऋचाएँ। (पुं० न०) अथर्ववेद।—**निधि**,—**विद्**—(पुं०) अथर्ववेद पढ़ने का पात्र या अधिकारी। अथर्ववेद का ज्ञाता।—**भूत**—(पुं०) बारह महर्षियों का नाम जो अथर्वा हो गये हैं।—**वत्**-(अव्य०) अथर्वा या उनके वंशजों की भाँति।—**वेद**—(पुं०) चौथे या अन्तिम वेद का नाम।—**शिखा**—(स्त्री०) एक उपनिषद्।—**शिरस्**—(न०) एक प्रकार की ईंट। (पुं०) महापुरुष का नाम।

अथर्वण—(पुं०) [अथर्वन्+अच्, पृषो०] शिव का नाम।

अथर्वणि—(पुं०) [अथर्वन्+इस्] अथर्व-वेद में निष्णात ब्राह्मण। अथवा अथर्ववेद में वर्णित कार्यों के कराने में निपुण व्यक्ति।

अथर्वाण—(न०) [अथर्वन्+अच्, पृषो० दीर्घ] अथर्ववेद की अनुष्ठानपद्धति।

अथर्वी—(स्त्री०) (वि०) [√थर्व्+अच्, पृषो० ङीष्, न० त०] न चलने वाली। भाले से छिदी हुई। आग से घिरी हुई। हिंसा न करने वाली।

अथवा—(अव्य०) [अथ√वा+क्विप्] पक्षान्तर-बोधक अव्यय, या, वा, किंवा।

अथो—(अव्य०) [√अर्थ्+डो पृषो० रलोप] दे० 'अथ'।

अद्—अदा० पर० सक० खाना, भक्षण करना। नष्ट करना। अत्ति।

अदंष्ट्र—(वि०) [नास्ति दंष्ट्रा यस्य न० ब०) दन्तरहित। (पुं०) सर्प जिसका विषदन्त उखाड़ लिया गया हो।

अदक्षिण—(वि०) [न० त०] बाँया। [नास्ति दक्षिणा यस्मिन् न० ब०] वह कर्म जिसमें कर्म कराने वाले को दक्षिणा न मिले। बिना दक्षिणा का। [न० त०]निर्बल मन का, निर्बोध, मूढ़। सौष्ठवशून्य। नैपुण्य-रहित, चातुर्यविवर्जित। भद्दा। प्रतिकूल।

अदक्षिणीय—(वि०) [न दक्षिणाम् अर्हति इत्यर्थे दक्षिणा+छ—ईय, न० त०] जो दक्षिणा का अधिकारी न हो।

अदक्षिण्य—(वि०) [न दक्षिणाम् अर्हति इत्यर्थे दक्षिणा+यत्, न० त०] दे० 'अदक्षिणीय'।

अदग्ध—(वि०) [न० त०] न जला हुआ।

अदण्ड—(वि०) [न० ब०) दंड से मुक्त। [न० त०] दंड का अभाव।

अदण्डनीय—(वि०) (दे०) 'अदण्ड्य' ।

अदण्ड्य—(वि०) [न० त०] दण्ड देने के अयोग्य । दण्ड से मुक्त, सजा से वरी ।

अदत्—(वि०) [न० व०] दन्तरहित, विना दाँतों का ।

अदत्त—(वि०) [न० त०] विना दिया हुआ । अन्याय-पूर्वक या अनुचित रीति से दिया हुआ । विवाह में न दिया हुआ । **त्ता**—(स्त्री०) अविवाहित लड़की । (न०) निष्फल दान ।—**आदायिन्** (अदत्तादायिन्)—(पुं०) निष्फल दान का ग्रहण करने वाला । वह पुरुष जो विना दी हुई वस्तु को उठा ले जाय, उठाईगीर, चोर ।—**दान**—(न०) चोरी । डकैती (जन०) ।—**पूर्वा**—(स्त्री०) जिसकी सगाई पहले न हुई हो । "अदत्तपूर्वेत्याशंक्यते" मालतीमाधव । अ० ४ ।

अदत्र—(वि०) [√अद्+अत्रन्] खाने योग्य ।

अदन्त—[नास्ति दन्तो यस्य न० व०] विना दाँतों वाला । जोंक । ['अत्' अन्ते यस्य व० स०] जिसके अन्त में अत् अर्थात् अ हो ।

अदन्त्य—(वि०) [दन्त+यत्, न० त०] दाँत-सम्बन्धी नहीं, दाँतों के योग्य नहीं । दाँतों के लिये हानिकारक ।

अदभ्र—(वि०) [√दम्भ+रक् न० त०] कम नहीं, वहुत, अधिक, विपुल ।

अदम्य—(वि०) [√दम्+यत् न० त०] जो दवाया न जा सके । प्रवल ।

अदर्शन—(वि०) [√दृश+ल्युट् (भावे) न० व०) अदृश्य, अनुपस्थित । (न०) [न० त०] दर्शन का अभाव । दिखाई न देना । (व्याकरण में) वर्णलोप ।

अदल—(वि०) [न० त०] विना पत्ते का । विना सेना का । (पुं०) एक पौधा, हिज्जल । (स्त्री०) घृतकुमारी नामक ओषधि ।

अदस—(वि०) [न दस्यते=उत्क्षिप्यते अङ्गुलिर्यत्र, न√दस+क्विप्] दूर की वस्तु । 'तत्' । दूसरा, अन्य ।

अदातृ—(वि०) [न० त०] न देने वाला । अनुदार, कृपण । विवाह के लिये (कन्या) न देने वाला । जिसे चुकाना न हो ।

अदादि—(वि०) ['अद्' आदौ यस्य व० स०] जिसके आरम्भ में अद् धातु हो, व्याकरण की रूढ़ि-विशेष ।

अदान—(वि०) [नास्ति दानं यस्य न० व०] न देने वाला, कंजूस । (पुं०) विना मद-जल का हाथी । (न०) [न० त०] दान का अभाव ।

अदाय—(वि०) [नास्ति दायः यस्य न० व०] जो भाग पाने का अधिकारी न हो ।

अदायाद—(वि०) [न० त०] जो उत्तराधिकारी होने का अधिकारी न हो । [न० व०] उत्तराधिकारी-रहित । लावारिस ।

अदायिक—(वि०)— **अदायिकी**—(स्त्री०) [दायम् अर्हति इत्यर्थे दाय+ठक्—इक, न० व०] वह वस्तु या सम्पत्ति जिसके पाने के उत्तराधिकारी ने अपना स्वत्व प्रदर्शित न किया हो, लावारिसी, जिसका कोई वारिस न हो । जो पुश्तैनी न हो ।

अदाह्य—(वि०) [√दह्+ण्यत् न० त०] न जलने वाला । जो चिता पर जलाने योग्य न हो । (पुं०) परमात्मा ।

अदिति—**ती**—(स्त्री०) [न√दा+डिति, वा ङीप्] पृथिवी । अदिति देवी जो आदित्यों की माता है; पुराणों में देवताओं की उत्पत्ति अदिति ही से वतलायी गयी है । वाणी । गौ । पुनर्वसु नक्षत्र । निर्धनता । गाय । (वि०) [√दो+क्तिन् न० व०] विना विभाग का, पूर्ण ।—**ज**,—**नन्दन**—(पुं०) देवता ।

अदीन—(वि०) [√दी+क्त, न० त०] दीनतारहित । जो कायर न हो । न दवने वाला । तेजस्वी । उदार ।

अदीर्घ—(वि०) [न० त०] लंबा नहीं ।—**सूत्र,—सूत्रिन्**-(वि०) तेज, स्फूर्ति वाला । काम करने में विलम्ब न करने वाला ।

अदुर्ग—(वि०) [न० त०] जिसमें प्रवेश किया जा सके। [न० व०] विना किले-बंदी का, दुर्गरहित ।—**विषय**-(पुं०) ऐसा देश जिसमें रक्षा के लिये दुर्ग न हो, अरक्षित देश या राज्य ।

अदूर—(वि०) [न० त०) जो बहुत दूर न हो। समीपी (समय और स्थान सम्बन्धी) । (न०) सामीप्य । पड़ोस ।—**दर्शिन्**-(वि०) दूर तक न सोचने वाला, अविचारी ।—**भव**-(वि०) पास में ही स्थित ।

अदूरतः, अदूरम्, अदूरात्, अदूरे, अदूरेण—(अव्य०) [न० त०] (किसी स्थान या समय से) बहुत दूर नहीं ।

अदृश्—(वि०) [न० व०] दृष्टिहीन, नेत्र-हीन, अंधा ।

अदृश्य—(वि०) [न० त०] जो दिखाई न दे, जो देखा न जा सके, अगोचर । लुप्त, गायब । (पुं०) परमेश्वर ।

अदृष्ट—(वि०) [√दृश्+क्त न० त०] जो देखा न जाय, अनदेखा हुआ । जो जाना न गया हो । न देखा या न सोचा हुआ । अज्ञात । अविचारित । अस्वीकृत । आईन के विरुद्ध । (न०) प्रारब्ध, भाग्य, नसीब । पूर्व-जन्मार्जित पाप या पुण्य जो दुःख या सुख का कारण है। ऐसी विपत्ति या खतरा जिसका पहले कभी ध्यान भी न रहा हो (जैसे अग्नि-काण्ड, जलप्लावन) ।—**अर्थ (अदृष्टार्थ)** (वि०) जिसका विषय इंद्रियगोचर न हो । आध्यात्मिक या गूढ़ अर्थ रखने वाला ।—**कर्मन्**-(वि०) अक्रियात्मक । अनुभवशून्य । —**नर,—पुरुष**-(पुं०) ऐसी संधि जो विना मध्यस्थ के दोनों दल आपस में मिल कर कर लें ।—**नर-संधि**-(पुं०) ऐसी संधि या प्रतिज्ञा जो किसी के साथ इसलिये की जाय कि वह किसी अन्य व्यक्ति से कोई कार्य सिद्ध करा देगा ।—**फल**-(वि०) जिसका परिणाम दृष्टिगत न हो । (न०) अच्छे-बुरे कर्मों का भावी फल या परिणाम ।

अदृष्टि—(स्त्री०) [न० त०] बुरी दृष्टि । (वि०) [न० व०] अंधा ।

अदेय—(वि०) [न√दा+यत्] जो देने योग्य न हो या जो दिया न जा सके। (न०) वह जिसका दिया जाना या देना ठीक नहीं या आवश्यक नहीं; इस श्रेणी की वस्तु में स्त्री, पुत्र आदि हैं ।

अदेव—(वि०) [न० त०] देव के समान नहीं। अपवित्र । (पुं०) जो देवता न हो । राक्षस, दैत्य, असुर ।—**मातृक**-(वि०) जहाँ पर्याप्त वर्षा न होती हो, वर्षा के अभाव में तालाव आदि के जल से सींचा हुआ ।

अदेश—(पुं०) [न० त०] अनुपयुक्त स्थान। कुदेश, वर्जित देश ।—**काल**-(पुं०) कुदेश और कुसमय ।—**स्थ**-(वि०) कुठौर का ।

अदेश्य—(वि०) [न० त०] जो आज्ञा देने के योग्य न हो। न सूचित करने योग्य । न वताने योग्य ।

अदैन्य—(वि०) [न० व०] दीनता या हीनता से रहित । (न०) [न० त०] दीनता का अभाव ।

अदैव—(वि०) [न० त०] देवताओं या उनके कार्यों से असंबद्ध । जो भाग्य या देवताओं द्वारा पूर्व-निर्धारित न हो ।

अदोष—(वि०) [नास्ति दोषो यस्मिन् न० व०] निर्दोष, दोषरहित, त्रुटिरहित, निरप-राध । रचना सम्बन्धी दोषों से वर्जित, (रचना के दोष जैसे अश्लीलता, ग्राम्यता आदि) ।

अदोह—(पुं०) [न० व०] वह समय जिसमें गौ का दुहना सम्भव नहीं । [न त०] न दुहना ।

अद्ग—(पुं०) [√अद्+गन्] यज्ञ की वलि, पुरोडाश ।

अद्धा—(अव्य०) [अत्यते अत्=सन्ततगमनम् ज्ञानम् वा दधाति इति√धा+क्विप्] सचमुच, वेशक, निस्सन्देह, दरहकीकत। प्रत्यक्ष रूप से, स्पष्टतया।

अद्भुत—(वि०) [अतति इति अत् भाँति इति√भा+डुतच्] विलक्षण, विचित्र। आश्चर्य-जनक, विस्मयकारक। अनोखा, अनूठा, अपूर्व, अलौकिक। (न०) काव्य के नौ रसों में से एक।—**आलय (अद्भुतालय)**-(पुं०) जहाँ अदभुत वस्तुओं का संग्रह हो, अजायवघर।—**धर्म**-(पुं०) वौद्धों के नौ अंगों में से एक।—**सार**-(पुं०) अद्भुत राल, सर्जरस; यक्ष-धूप।—**स्वन**–(पुं०) आश्चर्यशब्द। महादेव का नाम।

अद्मनि—(पुं०) [अत्ति सर्वान् इति विग्रहे √अद्+मनिन्] आग, अग्नि।

अद्मर—(वि०) [अत्तुम् शीलमस्य इति विग्रहे √अद्+क्मरच्] वहुत खाने वाला, भक्षण-शील।

अद्य—(वि०) [√अद्+यत्] खाने योग्य। (न०) भोज्य पदार्थ। (अव्य०) ['अस्मिन् अहनि' इत्यर्थे इदम् शव्दस्य निपातः सप्तम्यर्थे] आज, आज का दिन, वर्तमान दिवस।—**अपि (अद्यापि)**–(अव्य०) आज भी, आज तक। अव भी, अव तक।—**अवधि (अद्यावधि)** (अव्य०)–आज से। आज तक।—**पूर्व**-(न०) आज के पहिले। इससे पूर्व। आज से आगे।—**श्वीना**–(स्त्री०) [अद्य-श्वः परदिने वा प्रसोष्यते इति अद्य श्वस+ख, टिलोपः] वह गर्भिणी स्त्री जो एक ही दो दिन में वच्चा जनने वाली हो, आसन्नप्रसवा।

अद्यतन—(वि०) [अद्य भवः इत्यर्थे अद्य+ट्यु, तुट् च]आज सम्वन्धी, आज का। आधुनिक।

अद्यत्वे—(अव्यय) [इदम् शव्दस्य इदानीमित्यर्थे निपातः] आज-कल। इस समय।

अद्रव्य—(न०) [न० त०] वह वस्तु जो किसी भी काम की न हो, निकम्मी वस्तु। कुशिष्य। कुपात्र।

अद्रि—(पुं०) [√अद्+क्रिन्] पर्वत। पत्थर। वज्र। वृक्ष। सूर्य। वादलों की घटा। वादल। मापविशेष। सात की संख्या। पृथु का एक पौत्र।—**ईश, (अद्रीश)**,—**पति**,—**नाथ**–(पुं०) पहाड़ों का राजा, हिमालय। कैलासपति महादेव।—**कन्या**–(स्त्री०) पार्वती।—**कर्णी**-(स्त्री०) अपराजिता नामक लता।—**कीला**–(स्त्री०) पृथिवी।—**तनया**,—**सुता**–(स्त्री०) पार्वती।—**ज**-(न०) गेरू मिट्टी, शिलाजीत।—**द्रोणि**,—**द्रोणी**–(स्त्री०) पहाड़ की घाटी। नदी जो पहाड़ से निकलती है।—**द्विष्**, —**भिद्**–(पु०) पर्वत-शत्रु या पर्वत को विदीर्ण करने वाला; यह इन्द्र की उपाधि है।—**पति**,—**राज**-(पुं०) पहाड़ों का स्वामी, हिमालय।—**शय्य**–(पुं०) शिव।—**शृङ्ग**–(न०)—**सानु**-(पुं०, न०) पर्वत का शिखर, पहाड़ की चोटी।—**सार**–(पुं०) पर्वत का सारांश, लोहा।

अद्रोह—(पुं०) [न० त०] विद्वेषशून्यता। विनम्रता।—**वृत्ति**–(स्त्री०) द्वेषरहित आचरण।

अद्वय—(वि०) [न० व०] दो नहीं। वेजोड़, अद्वितीय, एकमात्र। (पुं०) वुद्धदेव का नाम। (न०) [न० त०] अद्वितीयता। विजातीय और स्वगतभेद-शून्यता। सर्वोत्कृष्ट सत्य, व्रह्म। व्रह्म और विश्व की एकता। जीव और वाह्य पदार्थों की एकता।—**वादिन्**–(वि०) वेदान्ती। वौद्ध।

अद्वयाविन्—(वि०) [अद्वयम् अस्ति इत्यर्थे अद्वय+विनि, दीर्घ] दो (देव और पितृयान) मार्गो से रहित।

अद्वयु—(वि०) [न द्वयं द्विप्रकारः अस्ति अस्य इत्यर्थे द्वय+उ, न० त०] दो प्रकार से रहित। जो भीतर और वाहर से एकरूप हो।

अद्वार—(न०) [न० त०] द्वार नहीं, कोई भी निकलने का रास्ता जो नियमित रूप से दरवाजा न हो।

अद्वितीय—(वि०) [न द्वितीयः सदृशो यस्य न० ब०] बेजोड़, केवल, एकमात्र, जिसके समान दूसरा न हो। (न०) परमात्मा, ब्रह्म।

अद्विषेण्य—(वि०) [√द्विष + एण्य न० त०] विरोध न करने योग्य।

अद्वेषस—(वि०) [√द्विष्+असुन् न० ब०] द्वेषरहित।

अद्वेष्टृ—(वि०) [न० त०] जो द्वेषी या शत्रु न हो, मित्र।

अद्वैत—(वि०) [द्विधा इतम्=भेदं गतम् द्वीतम्, तस्य भावः द्वैतम्; तन्नास्ति यस्य न० ब०] द्वितीय-शून्य। अपरिवर्तनशील। अनुपम, बेजोड़। एकाकी। (न०) [न० त०] ऐक्य (विशेष कर ब्रह्म और जीव का अथवा ब्रह्म और संसार का अथवा जीव और बाह्य पदार्थों का)। सर्वोत्कृष्ट या सर्वोपरि सत्य, ब्रह्म। **—वादिन्**-(वि०) वेदान्ती, ब्रह्म और जीव को एक मानने वाला।

अधन—(वि०) [न० त०] धनहीन। स्वतंत्र। धन-संपत्ति का अनधिकारी।

अधन्य—(वि०) [न० त०] अभागा, दुःखी। निंद्य। जो धान्यादि से भरा-पूरा न हो। जो उन्नति न कर रहा हो।

अधम—(वि०) [√अव्+अम धादेशः, अधोभवः अधस्+मः अन्त्यलोपो वा] क्षुद्र, नीच। दुष्टातिदुष्ट, बहुत बुरा। **—अङ्ग** (**अधमाङ्ग**)-(न०) पैर, पाद। **—अर्ध** (**अधमार्ध**)-(न०) शरीर के नीचे का आधा अंग, नाभि के नीचे का अंग। **—ऋण**, (**अधमर्ण**), **—ऋणिक** (**अधमर्णिक**)-(पुं०) कर्जदार, कढ़ुआ (उत्तमर्ण का उलटा)। **—भृत, भृतक**-(पुं०) कुली, मजदूर, साईस। (पुं०) जार। ग्रहों का एक अनिष्ट योग। परनिंदक कवि। **मा**—(स्त्री०) दुष्टा मलकिन, दुष्टा स्वामिनी।

अधर—(वि०) [न ध्रियते इति√धृङ्+अच् न० त०] नीचे का, निचला, तले का। नीच, अधम, दुष्ट, गुण में कम, अश्रेष्ठ। परास्त किया हुआ, पराभूत, चुप किया हुआ। (पुं०) नीचे का ओठ। ओठ। (न०) शरीर का निचला भाग। धरती और आकाश के बीच का स्थान। पाताल। भाषण। उत्तर। **—उत्तर** (**अधरोत्तर**)-(वि०) निचला और ऊपर का। अच्छा-बुरा। उल्टा, पल्टा, अंडबंड, अस्तव्यस्त। समीप-दूर। **—ओष्ठ** (**अधरो (रौ) ष्ठ**-(पुं०) नीचे का होठ। **—कण्ठ**-(पुं०) गरदन के नीचे का भाग। **—पान**-(न०) होठ चूमना, अधर-चुम्बन। **—मधु**-(न०)**—रस**-(पुं०)**—सुधा**- (स्त्री०) ओठ का अमृत, अधर-रस रूपी अमृत। **—सपत्न**-(वि०) जिसके शत्रु हार कर मौन हो गये हों। **—स्वस्तिक**-(न०) अधोविन्दु।

अधरतस्—(अव्य०) [अधर+तसिल्] नीचे से।

अधरात्—(अव्य०) [अधर+ आति] नीचे। नीचे से। नीचे में। (दिशा, देश और काल के साथ इसका प्रयोग होता है।)

अधरेण—(अव्य०) [अधर+एनप्] नीचे। नीचे में। (यह भी दिशा, देश और काल के साथ प्रयुक्त होता है।)

अधरी√कृ—आगे निकल जाना, हरा देना, पराजित कर देना। अधरीकरोति।

अधरीण—(वि०) [अधर+ख—ईन] निचला। निन्दित, बदनाम।

अधरेद्युस्—(अव्य०) [अधर+एद्युस्] किसी पूर्व दिवस में, परसों, (बीता हुआ)।

अधर्म—(पुं०) [न० त०] पाप। अन्याय। दुष्टता। अन्याय्य कर्म, निषिद्ध कर्म। न्याय में वर्णित २४ गुणों में से एक। एक प्रजापति का नाम। सूर्य के एक अनुचर का नाम।

(न०) उपाधिशून्य, ब्रह्म की उपाधि-विशेष। —आत्मन्, (अधर्मात्मन्), —चारिन्- (वि०) दुष्ट, पापी।—मंत्रयुद्ध-(न०) वह युद्ध जो दोनों पक्षों का पूर्ण नाश करने के लिये ही प्रारंभ किया गया हो।

अधर्मा—(स्त्री०) मूर्त्तिमती दुष्टता।

अधवा—(स्त्री०)[नास्ति धवः=पतिः यस्याः, न० व०] राँड़, बेवा, जिसका पति मर गया हो।

अधस्—(अव्य०) [अधर+असि] नीचे। नीचे के लोक में। पाताल या नरक में।—अंशुक (अधोंऽशुक)-(न०) निचला कपड़ा यथा बनियाइन, नीमास्तीन आदि। धोती। कटिवस्त्र।—अक्षज (अधोऽक्षज)।—(पुं०) विष्णु का नाम।—कर-(पुं०) हाथ का निचला हिस्सा।—करण-(न०) पराभव, अधःपात।—खनन-(न०) गाड़ना, तोपना। —गति-(स्त्री०)— गमन-(न०)—पात- (पुं०) नीचे जाना, नीचे गिरना, नीचे उतरना। अवनति, ह्रास, दुर्गति।—मन्तृ-(पुं०) चूहा, मूसा।— चर- (पुं०) चोर।— जिह्विका-(स्त्री०) अलि-जिह्वा, सुधाश्रवा, तालु-जिह्वा, घण्टिका, छोटी जीभ जो तालु के नीचे रहती है।—दिश्-(स्त्री०) अधो-बिन्दु। दक्षिण दिशा।—दृष्टि-(स्त्री०) नीचे को निगाह।—प्रस्तर-(पुं०) वह चटाई जिस पर वे लोग, जो मातमपुर्सी करने आते हैं, बिठाये जाते हैं।—भाग-(पुं०) नीचे का भाग।—भुवन-(न०)—लोक- (पुं०) पृथिवी के नीचे के लोक पातालादि। —मुख,—वदन-(वि०) नीचे की ओर मुख किये हुए।—लम्ब-(पुं०) सीसे का गोला, लम्बितरेखा, सीधी खड़ी रेखा।— वायु-(पुं०)—अपानवायु, उदराध्मान, पेट का फूलना। बिन्दु-(पुं०) पैर के नीचे का बिन्दु।—स्वस्तिक-(न०) अधोबिन्दु।

अधस्तन—(वि०) [अधस्+ट्यु, तुट् च] जो नीचे हो, निचला।

अधस्तमाम्, अधस्तराम्—(अव्य०) [अति-शयेन अधः इत्यर्थे अधस्+तमप्, तरप्—आमु] अत्यन्त अधोभाग में, बहुत नीचे।

अधस्तात्—(क्रि० वि०) [अधर+अस्ताति] नीचे की ओर। अंदर, भीतर।

अधामार्गव—(पुं०) [न धीयते इति अधाः, तादृशं मार्गम् वातीति अधा—मार्ग—√वा+क] अपामार्ग, चिड़चिड़ा।

अधारणक—(वि०) [न० व०, स्वार्थे कन्] जो लाभदायक न हो।

अधि—(अव्य०) [न√धा+कि] यह क्रियाओं के साथ उपसर्ग की तरह आता है; ऊपर, ऊर्ध्व, अतीत, अधिक। प्रधान, मुख्य, विशेष।

अधिक—(वि०) [अधि+क] बहुत, ज्यादा, विशेष। अतिरिक्त, सिवा, फालतू, बचा हुआ, शेष। (न०) अलङ्कार-विशेष, जिसमें आधेय को आधार से अधिक वर्णन करते हैं।— अङ्ग,—(अधिकाङ्ग), अङ्गिन् (अधि-काङ्गिन्)-(वि०) नियत संख्या से अधिक अंगों वाला।—अर्थ (अधिकार्थ)-(वि०) अत्युक्त, अतिरंजित।—ऋद्धि, (अधि-कर्द्धि)-(वि०) बहुल, प्रचुर। शुभ। सम्पन्न। सौभाग्यशाली।—तर-(वि० [अधिक+तरप्] और अधिक, किसी की तुलना में अधिक बड़ा।—तिथि-(स्त्री०)— दिन-(न०)—दिवस-(पुं०) बढ़ी हुई तिथि।—मास-(पुं०) लौंद का महीना, मलमास।—वाक्योक्ति-(स्त्री०) अतिरंजना, किसी बात को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर कहना।

अधिकता—(स्त्री०) [अधिक+तल्] बहु-तायत, बढ़ती। विशेषता।

अधिकरण—(न०) [अधि√कृ+ल्युट्] आधार, आसरा, सहारा। सम्बन्ध। (व्याकरण में) कर्त्ता और कर्म द्वारा क्रिया का आधार,

व्याकरण विषयक सम्बन्ध। (दर्शन में) आधार-विषय, अधिष्ठान, मीमांसा और वेदान्त के अनुसार वह प्रकरण जिसमें किसी सिद्धान्त-विशेष की विवेचना की जाय और उसमें निम्न पाँच अवयव हों—विषय, संशय, पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष, निर्णय। यथा:—'विषयो संशयश्चव पूर्वपक्षस्तथोत्तरम्। निर्णयश्चेति सिद्धान्तः शास्त्रऽधिकरणं स्मृतम्॥' —**भोजक**–(पुं०) न्यायाधीश, निर्णायक, न्यायकर्त्ता।—**मण्डप**–(पुं०) अदालत, न्यायालय।—**विचाल**–(पुं०) किसी वस्तु के गुण में ह्रास या वृद्धि करते जाना।—**सिद्धान्त**–(पुं०) वह सिद्धान्त जिसके सिद्ध होने से अन्य सिद्धान्त भी स्वयं सिद्ध हो जायँ।

अधिकरणिक—(पुं०) [अधिकरणम् आश्रयतया अस्ति अस्य इत्यर्थे अधिकरण+ठन्] न्यायाधीश। न्यायकर्त्ता। पर्यवेक्षक, वह जिसको देखरेख और प्रबन्ध का काम सौंपा गया हो।

अधिकरणिन्—(वि०) [अधिकरण+इनि] निरीक्षक। अध्यक्ष।

अधिकरण्य—(न०) [अधिकरण+यत्] अधिकार।

अधिकर्मन्—(न०) [प्रा० स०] निगरानी, निरीक्षण।—**कर,—कृत्**–(पुं०) मजदूर आदि के काम की देख-भाल करने वाला, मेठ।

अधिकर्मिक—(पुं०) [अधिकृत्य हट्टम् कर्मणे अलम् इति अधिकर्मन्+ठ] किसी बाजार का दरोगा, जिसका काम व्यापारियों से कर उगाहने का हो।

अधिकाम—(वि०) [अधिकः कामो यस्य ब० स०] उग्र आकांक्षाओं वाला, अतिप्रचण्ड। कामासक्त। कामोद्दीप्तिजनक।

अधिकार—(पुं०) [अधि√कृ+घञ्] कार्यभार, आधिपत्य, प्रभुत्व, इख्तियार। अधिकार-युक्त पद। शासन। प्रकरण, शीर्षक। कब्जा। योग्यता। ज्ञान। कर्म-विशेष की पात्रता। नाटक के प्रधान फल का प्रभुत्व या उसको प्राप्त करने की योग्यता। वह मुख्य नियम जिसका प्रभाव और नियमों पर भी हो (व्या०)।—**विधि**–(स्त्री०) मीमांसा की वह विधि या आज्ञा जिससे यह बोध हो कि किस फल के लिये कौन सा यज्ञानुष्ठान करना चाहिये।

अधिकारिन्—(वि०) [अधिकार+इनि] अधिकारयुक्त, अधिकार-प्राप्त। पाने का हक़दार, प्राप्त करने का अधिकारी। योग्य, योग्यता या क्षमता रखने वाला। उपयुक्त पात्र। (पुं०) अफ़सर, पदाधिकारी, दरोगा। स्वामी, मालिक, स्वत्वाधिकारी।

अधिकृत—(वि०) [अधि√कृ+क्त] अधिकार या कब्जे में आया हुआ, हाथ में आया हुआ। (पुं०) अधिकारी, अध्यक्ष।

अधिकृति—(स्त्री०) [अधि√कृ+क्तिन्] स्वत्व, हक़, मालकाना।

अधिकृत्य—(अव्य०) [अधि√कृ+क्त्वा—ल्यप्] प्रधान विषय बनाकर। विषय में, बावत। प्रमाण से, हवाले पर।

अधिक्रम—(पुं०), **अधिक्रमण**—(न०) [अधि√क्रम्+घञ्, अधि√क्रम्+ल्युट्] चढ़ाई, आरोहण, चढ़ाव।

अधिक्षिप्त—(वि०) [अधि√क्षिप्+क्त] अपमानित, तिरस्कृत। फेंका हुआ। नियत किया हुआ। भेजा हुआ।

अधिक्षेप—(पुं०) [अधि√क्षिप्+घञ्] कुवाच्य, गाली। आक्षेप। अपमान। व्यंग्य। बरखास्तगी, विसर्जन।

अधिगत—(वि०) [अधि√गम्+क्त] प्राप्त, पाया हुआ। जाना हुआ, ज्ञात। पढ़ा हुआ।

अधिगन्तृ—(वि०) [अधि√गम्+तृच्] प्राप्त करने वाला। सीखने वाला।

अधिगम—(पुं०) **अधिगमन**—(न०) [अधि√गम्+घञ्, अधि√गम्। ल्युट्] प्राप्ति, पाना। ज्ञान। अध्ययन। लाभ, सम्पत्ति की

प्राप्ति। व्यापारिक सारिणी। स्वीकृति। संगम। संसर्ग। आलाप।

अधिगवम्—(क्रि० वि०) [गवि इति अधिगवम् विभक्त्यर्थे अव्य० स०] गाय में या गाय से प्राप्त।

अधिगुण—(वि०) [अधिका गुणा यस्य व० स०] योग्य, उत्कृष्टगुण-विशिष्ट, गुणवान्। [अध्यारूढो गुणो यस्मिन् व० स०] (कमान पर) भली भाँति रोदा चढ़ाया हुआ (धनुष)।

अधिचरण—(न०)[प्रा० स०] किसी वस्तु के ऊपर टहलना या चलना।

अधिजनन—(न०) [प्रा० स०] उत्पत्ति।

अधिजिह्व—(पुं०) [अधिका जिह्वा यस्य व० स०] सर्प।

अधिजिह्वा, अधिजिह्विका—[प्रा० स०] गले का कौआ। जिह्वा पर एक प्रकार की सूजन।

अधिज्य—(वि०) [अध्यारूढा ज्या यस्मिन्, अधिगतं ज्यां वा] (धनुष) जिसका चिल्ला चढ़ा हुआ हो, धनुष का रोदा ताने हुए।

अधित्यका—(स्त्री०) [अधि+त्यकन्] पहाड़ के ऊपर की समतल भूमि, ऊँचा पथरीला मैदान। उसका उल्टा 'उपत्यका' है।

अधिदन्त—(पुं०) [अध्यारूढः दन्तः प्रा० स०] दाँत के ऊपर निकलने वाला दाँत।

अधिदेव (पुं०) **अधिदेवता**—(स्त्री०) [अधिकः देवः, अधिका देवता प्रा० स०] इष्टदेव, कुल-देव। पदार्थों के अधिष्ठाता देवता, रक्षक देवता।

अधिदैव, अधिदैवत—(न०) किसी वस्तु का अधिष्ठाता देवता। (पुं०) अन्तर्यामी पुरुष।

अधिदैविक—(वि०) [देव+ठक् दैविक ततः प्रा० स०] आध्यात्मिक।

अधिनाथ—(पुं०) [अधिकः नाथः प्रा० स०] परब्रह्म, परमात्मा, सर्वेश्वर।

अधिनाय—(पुं०) [अधि+√नी+घञ्, अधि नीयते वायुना प्रा० स०] गन्ध, महक।

अधिनायक—(पुं०)[प्रा०स०]मुखिया, नेता। सर्वाधिकार-सम्पन्न शासक या अधिकारी।—**तन्त्र**—(न०) अधिनायक के अधीन चलने वाला शासन-प्रबंध। अधिनायक-शासित राज्य।

अधिनियम—(पुं०) [प्रा० स०] विधान-मंडल (अथवा राजा या प्रधान शासक द्वारा पारित या स्वीकृत विधि। [ऐक्ट]

अधिनिष्कासन—(न०) [प्रा० स०] विधि-विहित कार्यवाही द्वारा किसी को भूमि, मकान आदि से बाहर निकाल देना। [इविक्शन]

अधिप, अधिपति—(पुं०) [अधि√पा+क, अधि√पा+डति] मालिक, स्वामी। राजा, प्रभु, शासक। प्रधान।

अधिपत्नी—(स्त्री०)[प्रा० स०] (वैदिक) स्वामिनी, शासन करने वाली।

अधिपत्र—(न०) [प्रा० स०] वह पत्र जिसमें किसी को कोई काम करने का अधिकार, अनुमति या आज्ञा दी जाय। लिखित आदेश-पत्र। किसी को पकड़ने या उसका माल जब्त करने की न्यायालय की लिखित आज्ञा।

अधिपुरुष, अधिपूरुष—(पुं०) [प्रा० स०] परमात्मा, परब्रह्म। किसी संस्था आदि का प्रमुख अधिकारी। अधिकार-प्राप्त व्यक्ति।

अधिप्रज—(वि०) [अधिका प्रजा यस्य व० स०) बहु सन्तति वाला।

अधिभार—(पुं०) [प्रा० स०] कर या शुल्क आदि का वह अतिरिक्त भार जो विशेष परिस्थिति में या विशेष कार्य के लिये किसी पर डाला जाय। निर्धारित परिमाण से अधिक कर, शुल्क आदि। [सरचार्ज]

अधिभूत—(न०) [भूतम्=प्राणिमात्रम् अधिकृत्य वर्तमानम् प्रा० स०] परमात्मा, परब्रह्म।

अधिमात्र—(वि०)[अधिका मात्रा यस्य व० स०] नाप से अधिक, अत्यधिक, अपरिमित।

अधिमान—(पुं०) [प्रा० स०] किसी वस्तु,

देश, व्यक्ति आदि को औरों से अधिक महत्त्व या मान देना, तरजीह। [प्रैफरेंस]

अधिमांसक—(पुं०) [अधिको मांसो यत्र ब० स०, कप्] मसूड़ों के पृष्ठ भाग में होने वाला एक प्रकार का रोग।

अधिमास—(पुं०) [प्रा० स०]हर तीसरे वर्ष बढ़ने वाला चांद्र मास, मलमास।

अधियज्ञ—(पुं०) [अधिकृत: स्वामितया यज्ञो यस्य ब० स०] प्रधान यज्ञ, परमेश्वर।—'अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर।' गीता।

अधियाचन—(न०) [प्रा० स०]किसी विशेष कार्य के लिये किसी से कोई चीज अधिकारपूर्वक माँगना या कोई काम करने की (लिखित) माँग करना। किसी सभा के सदस्यों द्वारा सभा का अधिवेशन करने की लिखित माँग किया जाना। [रिक्विजिशन]

अधियोग—(पुं०) [अधि√युज्+घञ्] ग्रहों का एक योग जो यात्रा के लिये शुभ माना जाता है।

अधिरथ—(वि०) [अध्यारूढ: रथम् रथिनम् वा] रथ पर सवार। (पुं०) सारथी, रथ हाँकने वाला। कर्ण के पिता का नाम।

अधिराज्, अधिराज—(पुं०) [अधि√राज्+क्विप्; अधि—राजन्+टच्] चक्रवर्ती, बादशाह, सम्राट्।

अधिराज्य, अधिराष्ट्र—(न०) [अधिकृतम् राज्यम् राष्ट्रम् वा यत्र] साम्राज्य, चक्रवर्ती राज्य। राष्ट्र, सम्राट् का ऐश्वर्य। एक देश का नाम।

अधिरूढ—(वि०) [अधि√रुह्+क्त]सवार, चढ़ा हुआ। बढ़ा हुआ, उन्नत।

अधिरोह—(पुं०) [अधि√रुह्+घञ्] चढ़ना, चढ़ाव।

अधिरोहण—(न०) [अधि√रुह्+ल्युट्] चढ़ना, सवार होना। ऊपर उठना।

अधिरोहणी—(स्त्री०) [अधिरुह्यते अनया इति अधि√रुह्+ल्युट् ङीप्] नसैनी, सीढ़ी, जीना।

अधिरोहिन्—(वि०) [अधि√रुह्+णिनि] चढ़ा हुआ। सवार। ऊपर उठा हुआ।

अधिलोक—(अव्य०) [अव्य० स०]संसार में या संसार के विषय में। [अत्या० स०] सांसारिक, दुनियावी।

अधिवक्तृ—(पुं०) [प्रा० स०]किसी पक्ष का समर्थन करने वाला, वकील।

अधिवचन—(न०) [प्रा० स०]किसी के पक्ष में बोलना, वकालत। नाम, उपाधि।

अधिवास—(पुं०) [अधि√वस्+घञ्, अधि√वस्+णिच्+घञ्] निवासस्थल, रहने की जगह। हठ-पूर्वक तकादा, धरना। किसी यज्ञानुष्ठान के आरम्भ में किसी प्रतिमा की प्रतिष्ठा। क्रिया। चोगा, अंगा। अतर फुलेल या उबटन लगाना महासुगन्ध, खुशब। मनु के अनुसार स्त्रियों के ६ दोषों में से एक। दूसरे के घर जाकर रहना, परगृहवास। अधिक ठहरना, अधिक देर तक रहना। एक देश, प्रान्त या राज्य से हट कर किसी दूसरे देश, प्रान्तादि में स्थायी रूप से बस जाना। (डोमिसाइल]

अधिवासन—(न०) [अधि√वस्+णिच्+ल्युट्] सुगन्धित पदार्थ से सुवासित करना। मूर्ति की आरम्भिक प्रतिष्ठा, देवता की किसी मूर्ति में उसकी प्रतिष्ठा करना।

अधिविन्ना—(स्त्री०) [अधि=उपरि विन्नम् =विवाह: अस्या:] पति-परित्यक्ता स्त्री, वह स्त्री जिसके पतिने दूसरा विवाह कर लिया हो।

अधिवेत्तृ—(पुं०) [अधि√विद् + तृच्] जिसने अपनी पहली पत्नी छोड़ दी हो, एक स्त्री के रहते दूसरा विवाह करने वाला।

अधिवेद—(पुं०) [अधि√विद् + घञ्] एक अतिरिक्त पत्नी करना।

अधिवेदन—(न०) [अधि√विद्+ल्युट्]

एक विवाहित स्त्री के रहते दूसरी स्त्री के साथ विवाह करना।

अधिवेशन—(न०) [अधि√विश्+ल्युट्] बैठक। जलसा।

अधिशय—(पुं०) [अधि√शी+अच्] योग, मिलाना।

अधिशस्त—(वि०) [अधि√शंस्+क्त] ख्यात (बुरे अर्थ में)।

अधिश्रय—(पुं०) [अधि√श्रि+अच्] आधार, पात्र। उबालना, गर्माना (आग पर रख कर)।

अधिश्रयण—(न०) [अधि√श्रि+ल्युट्] उबालना, गर्माना।

अधिश्रयणी—[अधि√श्रि+ल्युट्, ङीप्] तंदूर, अग्निकुण्ड, चूल्हा, अँगीठी।

अधिश्री—(वि०) [अधिका श्रीः यस्य ब० स०] अत्यधिक धनवान्। सर्वोत्कृष्ट, सर्वोपरि प्रभु या स्वामी।

अधिषवण—(न०) [अधि√सु+ल्युट] सोमरस निकालना या निचोड़ना। सोमरस निकालने का पात्र या साधन।

अधिष्ठातृ—(पुं०) [अधि√स्था+तृच्] देखभाल करने वाला। नियामक। अध्यक्ष। मुखिया। ईश्वर।

अधिष्ठान—(न०) [अधि√स्था+ ल्युट्] समीप में होना, सन्निधि। आधार। कसबा, बस्ती, आवासस्थान। अधिकार। राजसत्ता, राज्याधिकार। भोक्ता और भोग (आत्मा-देह, इंद्रिय-विषय) का संयोग (सांख्य०) पहिया, चक्र। पूर्वदृष्टान्त, नजीर। निर्दिष्ट नियम। आशीर्वाद, मंगल कामना। भ्रान्ति या अध्यास का आधार (वेदान्त में)।

अधिष्ठित—[अधि√स्था+क्त] ठहरा हुआ। स्थापित। बसा हुआ। नियुक्त। निर्वाचित। रक्षित। अधिकार में किया हुआ। प्रभावान्वित। आतङ्कित।

अधिसूचना—(स्त्री०) [प्रा० सं०] सरकार द्वारा प्रकाशित या सरकारी गजट में छपी हुई सूचना, अधिकृत सूचना। (नोटिफिकेशन)

अधीकार—दे० "**अधिकार**"।

अधीक्षक—(पुं०) [अधि√ईक्ष+ण्वुल्] किसी कार्यालय या विभाग का वह प्रधान अधिकारी जो अपने अधीन काम करने वाले समस्त कर्मचारियों की निगरानी करे। (सुपरिंटेंडेंट)।

अधीक्षण—(न०) [अधि√ईक्ष+ल्युट्] मातहत कर्मचारियों के कामकाज की देख-रेख करना। (सुपरिंटेंडेंस)।

अधीत—(वि०) [अधि√इङ+क्त] पढ़ा हुआ। (न०)–अध्ययन।—**विद्य**–(वि०) जिसने अध्ययन पूरा कर लिया हो।

अधीति—(स्त्री०) [अधि√इङ+क्तिन्] अध्ययन, पाठ। [अधि√इक+क्तिन्] स्मृति।

अधीतिन्—(वि०) [अधीत+इनि] भली भाँति पढ़ा हुआ।

अधीन—(वि०) [अधिगतम् इनम्=प्रभुम् अत्या० स०] आश्रित, मातहत, वशीभूत। —**अधिकारिन्** (**अधीनाधिकारिन्**)–(पुं०) किसी बड़े या मुख्य अधिकारी के नीचे काम करने वाला अफसर, मातहत अफसर। (सबॉरडिनेट आफिसर)।—**न्यायालय**-(पुं०) वह छोटी अदालत जो किसी बड़ी अदालत (उच्च न्यायालय आदि) के मातहत या अधीन हो। (सबॉरडिनेट कोर्ट)

अधीयान—(वि०) [अधि√इङ+शानच्] छात्र, विद्यार्थी।

अधीर—(वि०) [न० त०] भीरु, डरपोक, कायर। घबड़ाया हुआ। उत्तेजित। चंचल, अस्थिर। बेसब्र, उतावला।

अधीरा—(स्त्री०) [न० त०] बिजली। मध्या और प्रौढ़ा नायिकाओं का एक भेद।

अधोवास—(पुं०) [अधि√वस+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] चोगा, लवादा ।

अधीश—(पुं०) [अधिकः ईशः प्रा० स०] स्वामी, मालिक । सरदार । राजा ।

अधीश्वर—(पुं०) [अधिकः ईश्वरः प्रा० स०] मालिक, स्वामी । भूपति, राजा । सार्वभौम नरेश ।

अधीष्ट—(वि०) [अधि√इष्+क्त] अवतनिक, सत्कारपूर्वक किसी पद पर नियुक्त, सविनय प्रार्थित । (न०) अवैतनिक पद या कार्य ।

अधुना—(अव्य०) [अस्मिन् काले इत्यर्थे 'इदम्' शब्दस्य नि०] सम्प्रति, इस समय, अब, आजकल ।

अधुनातन—(वि०) [अधुना+ट्युल्] आजकल का । आधुनिक, अर्वाचीन ।

अधूमक—(पुं०) [नास्ति धूमो यस्मिन् न० ब० कप्] जलती हुई आग जिसमें धुआँ न हो ।

अधृति—(स्त्री०) [न० त०] धृति का अभाव, अधीरता । असुख । चंचलता, दृढ़ता का अभाव । घबड़ाहट, आतुरता ।

अधृष्य—(वि०) [√धृष्+यत् (अर्हार्थे) न० त०] दुर्जय । जिसके समीप कोई न पहुँच सके । शर्मीला ? अभिमानी, गर्वीला ।

अध्यक्ष—(वि०) [अधिगतम् मूलतया अक्षम्=इन्द्रियम् अत्या० स०] प्रत्यक्ष ज्ञान । [अर्श आदित्वात् अच्] प्रत्यक्ष ज्ञान का विषय, दृश्य, इन्द्रियगोचर, [अध्यक्ष्णोति=व्याप्नोति इति अधि√अक्ष+अच्] व्यापक विस्तृत । (पुं०) [अधिगतः अक्षम्=व्यवहारम् अत्या० स०] देखरेख करने वाला । किसी विषय का अधिकारी । व्यवस्थापक । किसी सभा, समिति या संस्था का प्रधान । लोकसभा (केंद्रीय) या राज्य की विधान-सभा का स्थायी सभापति (प्रेसीडेंट, स्पीकर) ।—पीठ—(न०) अध्यक्ष या प्रमुख के बैठने की कुरसी या आसन । (चेयर)

अध्यक्षर—(न०) [प्रा० स०] ओङ्कार ।

अध्यग्नि—(अव्य०) अग्नौ अग्नेः समीपे वा इतिविग्रहे अव्य० स०] विवाह के समय हवन करने के अग्नि के समीप या ऊपर । (न०) स्त्रीधन, वह धन जो वर को अग्नि की साक्षी में वधू के माता-पिता देते हैं ।

अध्यधि—(अव्य०) [अव्यय० स०] ऊपर, ऊँचे पर ।

अध्यधिक्षेप—(पुं०) [प्रा० स०] बुरी-बुरी गालियाँ, अत्यन्त कुत्सित कुवाच्य, उग्र भर्त्सना ।

अध्यधीन—(वि०) [अधिकोऽधीनः प्रा० स०] नितान्त अधीन, निपट वशवर्ती । (पुं०) बिका हुआ दास, जन्म का दास ।

अध्यय—(पुं०) [अधि√इङ+अच्] विद्या, अध्ययन । [अधि√इक्+अच्] स्मरणशक्ति ।

अध्ययन—(न०) [अधि√इङ+ल्युट्] पढ़ना (विशेष कर वेदों का) । अर्थ-सहित अक्षरों को ग्रहण करना । ब्राह्मणों के शास्त्रविहित षट् कर्मों में से एक ।

अध्यर्ध—(वि०)[अधिकम् अर्धम् यस्य ब० स०] वह जिसके पास अतिरिक्त आधा हो । डेढ़ ।

अध्यवसान—(न०) [अधि+अव√सो+ल्युट्] उद्योग । निश्चय । (प्रकृत और अप्रकृत की) इस प्रकार की पहचान जिससे यह बोध हो जाय कि एक दूसरे में सम्पूर्णतः लीन हो गया ।

अध्यवसाय—(पुं०) [अधि+अव√सो+घञ्] उद्योग । दृढ़ विचार, सङ्कल्प । बुद्धिसम्बन्धी व्यापार । किसी पदार्थ का ज्ञान होने के समय रजोगुण और तमोगुण की न्यूनता होने पर जो सत्वगुण का प्रादुर्भाव होता है, उसे अध्यवसाय कहते हैं । लगातार उद्योग,

अविश्रान्त परिश्रम । उत्साह । निश्चय । प्रतीति ।

अध्यवसायिन्—(न०) [अध्यवसाय+इनि] लगातार उद्योग करने वाला । परिश्रमी । उत्साही ।

अध्यशन—(न०) [प्रा० स०] अधिक भोजन । एक बार भर पेट खा लेने पर, उसके न पचते पचते पुनः खा लेना, अजीर्ण, अनपच ।

अध्यात्म—(वि०) [आत्मनि देहे मनसि वा इति विभक्त्यर्थे अव्य० स०] आत्मा । देह । मन । "स्वभावोऽध्यात्म उच्यते" गीता के इस वाक्यानुसार स्वभाव को अध्यात्म कहते हैं । श्रीधर के मतानुसार प्रत्येक शरीर में परब्रह्म की जो सत्ता या अंश वर्तमान रहता है, वही अध्यात्म कहलाता है । (वि०) आत्मा-सम्बन्धी । —**ज्ञान**-(न०) आत्मा-अनात्मा का विवेक । —**विद्या**-(स्त्री०) अध्यात्मतत्त्व, जीव और ब्रह्म का स्वरूप वतलाने वाली विद्या ।

अध्यादेश—(पुं०) [अधि+आ√दिश+घञ्] राज्य के अधिपति द्वारा जारी किया गया वह आधिकारिक आदेश जो किसी आकस्मिक या विशेष स्थिति में थोड़े समय तक लागू हो और जो उक्त स्थिति के न रहने पर वापस ले लिया जाय या आवश्यकता बनी रहने पर संसद् या विधान-सभा द्वारा अधिनियम के रूप में स्वीकृत कर लिया जाय । (आर्डिनेंस)

अध्यापक—(पुं०) [अधि√इङ+णिच्+ण्वुल्] शिक्षक, गुरु, उपाध्याय, पढ़ाने वाला । (विष्णुस्मृति के अनुसार अध्यापक के दो भेद हैं । एक आचार्य जो द्विज-बालक का उपनयन संस्कार कर उसे वेद पढ़ने का अधिकारी बनाता है और दूसरा उपाध्याय जो अपने छात्र को वृत्त्यर्थ कोई विद्या पढ़ा देता है ।)

अध्यापन—(न०) [अधि√इङ+णिच्+ल्युट्] पढ़ाना, शिक्षा देना । ब्राह्मणों के षट् कर्त्तव्यों में से एक । (स्मृतिकारों के मतानुसार अध्यापन तीन प्रकार का है, धर्मार्थ पढ़ाना, शुल्क लेकर पढ़ाना, सेवा के बदले पढ़ाना ।)

अध्यापना—(स्त्री०) [अधि√इङ+णिच्+युच्, टाप्] दे० 'अध्यापन' ।

अध्यापयितृ—(पुं०) [अधि√इङ+णिच्+तृच्] शिक्षक, पढ़ाने वाला ।

अध्याय—(पुं०) [अधि√इङ+घञ्] पाठ, अध्ययन । अध्ययन का उपयुक्त काल । प्रकरण, किसी ग्रन्थ का एक भाग । संस्कृत-कोशकारों ने 'अध्याय' के पर्यायवाची ये शब्द बतलाये हैं:—सर्गो वर्गः परिच्छेदोद्घाताध्यायाङ्कसंग्रहाः । उच्छ्वासः परिवर्तश्च पटलः काण्डमाननम् ।। स्थानं प्रकरणं चैव पर्वोल्लासाह्निकानि च । स्कन्धांशौ तु पुराणादौ प्रायशः परिकीर्तितौ ।।

अध्यायिन्—(वि०) [अधि√इङ+णिनि] पढ़ने वाला, अध्ययनशील ।

अध्यारूढ—(वि०) [अधि—आ√रुह्+क्त] चढ़ा हुआ, सवार । ऊपर उठा हुआ, उन्नति पर पहुँचा हुआ । ऊँचा, श्रेष्ठ । नीचा, अनुत्तम ।

अध्यारोप—(पुं०) [अधि—आ√रुह्+णिच्—पुक्+घञ्] उठाना, ऊँचा करना । (वेदान्त मतानुसार) भ्रमवश एक वस्तु को दूसरी वस्तु समझना, यथा रस्सी को साँप समझना, मिथ्याज्ञान ।

अध्यारोपण—(न०) [अधि+आ√रुह्+णिच्—पुक+ल्युट्] उठाना । बोना (बीजों का) ।

अध्यावाप—(पुं०) [अधि—आ√वप+घञ्] (बीजों को) बोने या बोने के लिए छितराने की क्रिया ।

अध्यावाहनिक—(न०) [अधि—आ√वह्+ल्युट्, ततः लब्धार्थे ठन्—इक] छः प्रकार के उन स्त्री-धनों में से एक जिसे स्त्री ससुराल जाते समय अपने माता-पिता से पाती है ।

"गत् पुनर्लभते नारी नीयमाना तु पैतृकात्। (गृहात्) अध्यावाहनिकम् नाम स्त्रीधनं परिकीर्तितम्"।

अध्यास—(पुं०) [अधि√आस्+घञ्] किसी पर बैठना। (किसी स्थान को) रोकना या छेकना। अध्यक्ष का काम करना। बैठकी, स्थान। आसन। (पुं०) [अधि√अस्+घञ्] मिथ्या ज्ञान, भ्रांत ज्ञान या प्रतीति (रस्सी में साँप, सीप में चाँदी का भ्रम)।

अध्यासन—(न०) [अधि√आस्+ल्युट्] बैठना। अध्यक्षता करना। आसन। स्थान।

अध्याहरण—(न०) [अधि—आ√हृ+ल्युट्] दे० 'अध्याहार'।

अध्याहार—(पुं०) [अधि—आ√हृ+घञ्] किसी वाक्य को पूरा करने के लिए उसमें छूटी हुई बात को मिला कर उस वाक्य को पूरा करना, वाक्य को पूरा करने के लिए उसमें ऊपर से कोई शब्द मिलाना या जोड़ना। तर्क-वितर्क, ऊहापोह, विचार, बहस।

अध्युषित—(वि०) [अधि√वस्+क्त] निवसित, बसा हुआ।

अध्युष्ट—(त्रि०) (अधि√उष+क्त) साढ़े तीन।

अध्युष्ट्र—(पुं०) [अधियुक्तः उष्ट्रः यस्मिन् ब० स०] गाड़ी जिसमें ऊँट जुते हों, चौपहिया।

अध्यूढ—(वि०) [अधि√वह्+क्त] ऊपर को उठा हुआ, उभरा हुआ। (पुं०) शिव।

अध्यूढा—(स्त्री०) [अधि√वह्+क्त, टाप्] दे० 'अधिविन्ना'।

अध्यूहन—(न०) [अधि√ऊह्+ल्युट्] (राख आदि की) परत डालना।

अध्येषण—(न०) [अधि√इष्+ल्युट्] प्रार्थना, कोई कार्य कराने की प्रार्थना।

अध्येषणा—(स्त्री०) [अधि√इष+युच्, टाप्] प्रार्थना, याचना।

अध्रुव—(वि०) [न० त०] सन्दिग्ध, संशयपूर्ण। अस्थायी, विनश्वर। अदृढ़। अलग किये जाने वाला।

अध्वन्—(पुं०) [√अद्+क्वनिप् दकारस्य धकारः] मार्ग, रास्ता, सड़क। नक्षत्रों के घूमने का मार्ग। अन्तर, बीच, फासला। समय, काल, मूर्तिमान् काल। आकाश। वातावरण। विधि, उपाय, प्रक्रिया। आक्रमण। वायु।—**ग**-(पुं०) पथिक, राहगीर, मुसाफिर। ऊँट। खच्चर। सूर्य।—**भोग्य**-(पुं०) आम्रातक वृक्ष आमड़ा।—**गत्यन्त**-(पुं०) लम्बाई का एक मान।—**गा**-(स्त्री०) गङ्गा।—**जा**-(स्त्री०) स्वर्णपुष्पी वृक्ष, पीली चमेली।—**निवेश**-(पुं०) पड़ाव।—**पति**-(पुं०) सूर्य।—**रथ**-(पुं०) पालकी। गाड़ी। हलकारा। दूत।

अध्वनीन,—अध्वन्य-(वि०) [अध्वानम् अलं गच्छति इति अध्वन्+खईन, अध्वन्+यत्] तेज चलने वाला। यात्रा करने योग्य। (पुं०) यात्री, पथिक।

अध्वर—(पुं०) [अध्वानं सत्पथं राति इति अध्वन्√रा+क] यज्ञ। सोमयाग। एक वसु। (न०) आकाश या अन्तरिक्ष। (वि०) [न ध्वरति कुटिलो न भवति इत्यर्थे√ध्वर+अच् न० त०] अकुटिल। सावधान। व्यतिक्रम-रहित। टिकाऊ।—**कल्पा**-(स्त्री०) काम्येष्टि यज्ञ।—**काण्ड**-(पुं०) शतपथ ब्राह्मण का एक खण्ड।—**ग**-(वि०) अध्वर के काम में आने वाला।—**मीमांसा**-(स्त्री०) जैमिनि-प्रणीत पूर्वमीमांसा का नाम।

अध्वर्यु—(पुं०) [अध्वर+क्यच्+डु] यज्ञ कराने वाला, ऋत्विक्। यजुर्वेद का जानने वाला, पुरोहित। यजुर्वेद।—**वेद**-(पुं०) यजुर्वेद।

अध्वान्त—(न०) [न० त०] ईषत् अंधकार। प्रदोषकाल, गोधूलिवेला। उषा काल।

अन्—अदा० पर० अक० अनिति। दिवा० आत्म० अक० श्वास लेना, प्राण धारण करना, जीना, अन्यते।

अन—(पुं०) [√अन्+अच्] स्वांस ।
अनंश—(वि०) [नास्ति अंशो यस्य न० व०] जिसका कोई भाग न हो । पैतृक सम्पत्ति में भाग न पाने वाला ।
अनंशुमत्फला—(स्त्री०) [न अंशुमत्फलं यस्याः न० व०] कदलीवृक्ष, केले का पेड़ ।
अनकदुन्दुभ—(पुं०) श्रीकृष्ण के पितामह का नाम ।
अनकदुन्दुभि—(दे०) 'आनकदुन्दुभि ।'
अनक्ष—(वि०) [नास्ति अक्षम्=चक्रम् नेत्रादिकम् वा यस्य न० व०] नेत्रहीन, दृष्टिरहित, अंधा । बिना चक्र आदि का ।
अनक्षर—(वि०) [न सन्ति अक्षराणि यस्य न० व०] गूंगा, अनपढ़; उच्चारण करने के अयोग्य । (न०) गाली, कुवाच्य, भर्त्सना, डाट-डपट ।
अनक्षि—(न०) [अप्रशस्तम् मन्दम् अक्षि न० त०] मन्द नेत्र, खराब आँख ।
अनगार—(वि०) [न० व०] गृह-रहित, बे-घर । (पुं०) भ्रमणकारी संन्यासी ।
अनग्नि—(वि०) [नास्ति अग्निः श्रौतः स्मार्तोऽग्न वा अन्यो वा अस्य न० व०] श्रौतस्मार्त-कर्महीन । अग्निहोत्ररहित । अधार्मिक । अपवित्र । वह जो अनपच रोग से पीड़ित हो, कब्जियत रोग वाला । अविवाहित, जिसका व्याह न हुआ हो ।
अनग्निदग्ध—(वि०) [न अग्निना दग्धः न० त०] जो आग से जलाया गया न हो ।
अनघ—(वि०)[नास्ति अघम् यस्य न० व०] पापरहित । निर्दोष । त्रुटि-रहित । सुन्दर, खूबसूरत । सुरक्षित । अनचोटिल, जिसके चोट न लगी हो, विशुद्ध, कलङ्क-रहित । (पुं०) सफेद सरसों या राई । विष्णु का नाम । शिव का नाम ।
अनङ्कुश—(वि०) [न० व०] जो दबाव में न रहे, उद्दण्ड । कविस्वातंत्र्य का उपभोग करने वाला ।
अनङ्ग—(वि०) [नास्ति अङ्गम् यस्य न० व०] शरीररहित, अशरीरी । (न०) आकाश । मन । एक प्रकार का अति सूक्ष्म वायवीय पदार्थ (ईथर) । (पुं०) कामदेव ।—**क्रीड़ा**-(स्त्री०) प्रेमालापमयी क्रीड़ा, विहार, प्रेमी और प्रेयसी का पारस्परिक प्रेमालापपूर्वक क्रीडन । मुक्तक वृत्त के दो भेदों में से एक ।—**रंग**-(पुं०) कोकशास्त्र का एक प्रसिद्ध ग्रंथ ।—**लेख**-(पुं०) प्रेमपत्र ।—**वती**-(वि० स्त्री०) कामिनी ।—**शत्रु**,—**असुहृत्**-(पुं०) शिवजी का नाम ।—**शेखर**-(पुं०) दंडक छंद का एक भेद ।
अनञ्जन—(वि०) [न० व०] विना सुर्मा का । बेदाग । निर्दोष । निर्विकार । निःसंबंध । (न०) आकाश, परब्रह्म । (पुं०) नारायण या विष्णु ।
अनडुह्—(पुं०) (अनड्वान्) [अनः शकटम् वहति, नि०] बैल, साँड़, वृषराशि, सूर्य (उपनि०) ।
अनडुही—**अनड्वाही**-(स्त्री०) [स्त्रियाम् ङीप्] गौ, गाय ।
अनणु—(वि०) [न० त०]जो सूक्ष्म न हो । (न०) मोटा अन्न ।
अनति—(अव्य) [न अति न० त०] बहुत अधिक नहीं ।
अनतिरेक—(पुं०) [न० त०] अभेद ।
अनतिविलम्बिता—(स्त्री०) [न० त०] बहुत विलम्ब का अभाव, वक्ता का एक गुण, ३५ वाग्गुण हैं, उनमें से एक ।
अनद्धा—(अव्य०) [न० त०] सत्य नहीं । स्वच्छ नहीं । निश्चित नहीं।—**पुरुष**-(पुं०) जो सच्चा आदमी न हो । जो देव, पितर, मनुष्यों का कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं करता ।
अनद्य—(पुं०) [न० त०] सफेद सरसों । (वि०) न खाने योग्य ।
अनद्यतन—(वि०) [न० त०] आज के दिन

से संबंध न रखने वाला। आज से पहले या पीछे का। (पु०) अद्यतन से भिन्न काल।

अनधिक—(वि०) [न० त०] अधिक या अत्यधिक नहीं, असीम, पूर्ण।

अनधिकार—(पुं०) [न० त०] अधिकार, शक्ति, योग्यता, पात्रता आदि का अभाव। (वि०) [न० ब०] अधिकार-रहित।—**चर्चा**-(स्त्री०) बिना जाने-समझे या योग्यता के बाहर किसी विषय में बोलना, दखल देना। —**चेष्टा**-(स्त्री०) जिस बात या कार्य का अधिकार न हो वह करना।

अनधीन—(पुं०) [न० त०] बढ़ई जो रोजनदारी पर काम न कर स्वतंत्र अपने लिये ही काम करे। (वि०) स्वाधीन, स्वतंत्र कार्य करने वाला।

अनध्यक्ष—(वि०) [न० त०] जो देख न पड़े, अगोचर, अदृश। [न० ब०] अध्यक्ष या नियन्ता वर्जित।

अनध्याय—(पुं०) [न० त०] अध्ययन के लिये अनुपयुक्त समय या दिन, पढ़ने के लिये निषिद्ध काल या दिन, छुट्टी का दिन।

अनन—(न०) [√अन्+ल्युट्] श्वास लेना, प्राण धारण करना।

अननुभावुक—(वि०) [न० त०] धारण करने के अयोग्य, न समझने लायक।

अनन्त—(वि०) [नास्ति अन्तो यस्य न० ब०] अन्तरहित। निस्सीम। कभी समाप्त न होने वाला। (पुं०) विष्णु। विष्णु का शंख। कृष्ण। शिव। शेषनाग। लक्ष्मण। बलराम। वासुकि। बादल। अबरक। सिंदुवार नामक वृक्ष। श्रवण नक्षत्र। जैनों के एक तीर्थंकर। बाँह पर पहनने का एक गहना। अनंता—जो एक रेशम का डोरा होता है और जिसमें १४ गाँठें लगाकर अनंतचतुर्दशी के दिन दाहिनी बाँह पर बाँधा जाता है। (न०) आकाश। परब्रह्म।—**कर**-(वि०) बढ़ाकर असीम करने वाला, बहुत अधिक कर देने वाला।—**कार्य**-(पुं०) वे वनस्पतियाँ जिनके खाने का जैन धर्म में निषेध है।—**चतुर्दशी**-(स्त्री०) भाद्र-शुक्ला चतुर्दशी।—**जित्**-(पुं०) वासुदेव। चौदहवें जैन अर्हत्।—**टङ्क**-(पुं०) एक राग जो मेघराग का पुत्र माना जाता है।—**तृतीया**-(स्त्री०) भाद्रपद शुक्ला तृतीया, मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया और वैशाख शुक्ला तृतीया। —**दृष्टि**-(पुं०) इन्द्र या शिव का नाम।—**देव**-(पुं०) शेषनाग, शेषशायी नारायण का नाम।—**पार**-(वि०) निस्सीम।—**मूल**-(पुं०) एक रक्तशोधक औषधि, सारिवा। —**रूप**-(वि०) संख्यातीत आकार प्रकार का, विष्णु भगवान् की उपाधि।—**विजय**-(पुं०) युधिष्ठिर के शङ्ख का नाम।—**व्रत**-(न०) अनंत चतुर्दशी व्रत।—**शीर्षा**-(स्त्री०) वासुकि नाग की पत्नी।

अनन्तर—(वि०) [नास्ति अन्तरम् व्यवधानम् यस्य न० ब०] अंतर-रहित। सटा या लगा हुआ। पास या पड़ोस का। अपने वर्ण से ठीक नीचे के वर्ण का। (न०) सामीप्य, लगा हुआ होना। ब्रह्म। (अव्य०) तुरंत बाद। पीछे, पश्चात्।—**ज**—(पुं०)—**जा**—(स्त्री०) क्षत्रिय या वैश्य माता के गर्भ तथा ब्राह्मण वा क्षत्रिय पिता के वीर्य से उत्पन्न, छोटा या बड़ा भाई या बहिन, 'तरपरिया' भाई-बहिन।

अनन्तरीय—(वि०) [अनन्तर+छ—ईय] क्रम से एक के बाद दूसरा।

अनन्ता—(स्त्री०) [नास्ति अन्तोऽस्याः न० ब०] पृथिवी, एक की संख्या, पार्वती का नाम, कई पौधों के नाम जैसे दूर्वा, अनन्तमूल आदि।

अनन्य—(वि०) [न० ब०, न० त०] अन्य से सम्बन्ध न रखने वाला, एकनिष्ठ, एक ही में लीन, एकरूप, अमिल, एकमात्र, अद्वितीय, अविभक्त।—**गति**-(स्त्री०) एकमात्र सहारा। (वि०) दे० 'अनन्यगतिक'।—**गतिक**-(वि०) जिसको दूसरा उपाय या सहारा न हो।—

गुरु-(वि०) जिससे कोई बड़ा न हो ।—**चित्त, —चिन्त, —चेतस् , —मनस्, —मनस्क,—मानस,—हृदय**-(वि०) एक ही ओर मन या ध्यान लगाने वाला ।—**ज, —जन्मन्**-(पुं०) कामदेव ।—**दृष्टि**-(स्त्री०) एकटक देखते रहना ।—**देव**-(वि०) जिसके और कोई देवता न हो । परमेश्वर का एक विशेषण ।—**परता**-(स्त्री०) एकनिष्ठता, एक की भक्ति ।—**परायण**-(वि०) जिसका और किसी के प्रति प्रेम न हो ।—**पूर्व**-(पुं०) जिसकी दूसरी स्त्री न हो ।—**पूर्वा**-(स्त्री०) क्वारी, अविवाहिता ।—**भाज्**-(वि०) जो अन्य किसी में अनुराग न रखती हो ।—**भाव**-(पुं०) एकनिष्ठ भक्ति या साधना ।—**विषय**-(पुं०) वह विषय जिसका किसी से सम्बन्ध न हो या जिस पर किसी अन्य की सत्ता न हो ।—**वृत्ति**-(वि०) एक ही स्वभाव का, जिसकी आजीविका का अन्य कोई द्वार न हो, एकाग्रचित्त ।—**शासन**-(वि०) जिस पर दूसरे की आज्ञा नहीं चलती, स्वतन्त्र ।—**सदृश**-(वि०) जिसके समान दूसरा न हो, निरुपम ।—**साधारण,—सामान्य**-(वि०) असाधारण, दूसरे में न मिलने वाला, जो एक ही में अनुरागवान् हो, एक ही से सम्बन्ध रखने वाला ।

अनन्वय—(पुं०) [नास्ति अन्वयो यत्र न० ब०] अन्वयशून्य । सम्बन्धरहित । अर्थालङ्कार विशेष जिसमें एक ही उपमान और एक ही उपमेय हो ।

अनप—(वि०) [न सन्ति आधिक्येन आपः यत्र न० ब०] जिसमें अधिक जल न हो ।

अनपकरण (न०), **अनपकर्मन्** (न०), **अनपक्रिया** (स्त्री०), [न० त०] नुकसान न पहुँचाना । रुपये न अदा करना (कानून)

अनपकार—(पुं०) [न० त०] बुराई नहीं, भलाई । हित ।

अनपकारिन्-(वि०) [न० त०] निर्दोष । अहित-शून्य ।

अनपत्य—(वि०) [नास्ति अपत्यम् यस्य न० ब०] सन्तानहीन । जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो ।—**दोष**-(पुं०) बाँझपन ।

अनपत्रप—(वि०) [नास्ति अपत्रपा=लज्जा यस्य न० ब०] निर्लज्ज । बेहया । बेशर्म ।

अनपभ्रंश—(पुं०) [न० त०] ठीक-ठीक बना हुआ शब्द । शब्द जो विकृत रूप में न हो, अपने शुद्ध रूप में हो ।

अनपर—(वि०) [नास्ति अपरः यस्य न० ब०] दूसरे से रहित । जिसका कोई अनुयायी न हो । अकेला । एकमात्र (ब्रह्म) ।

अनपसर—(वि०) [नास्ति अपसरो यस्मिन् न० ब०] जिसमें से निकलने का कोई मार्ग न हो । अक्षम्य । अन्याय । (पुं०) (न० त०] बलपूर्वक अधिकार करने वाला । जबरदस्ती कब्जा करने वाला । बरजोरी दखल करने वाला ।

अनपाय—(वि०) [नास्ति अपायः नाशः यस्य न० ब०] अनश्वर । अविनाशी । (पुं०) [न० त०] अनश्वरता । नित्यता । [न० ब०] शिव ।

अनपायिन्—(वि०) [अनपाय+इनि] अविनाशी । दृढ़ । मजबूत । स्थायी । क्षणभङ्गुर नहीं । अविकारी ।—**पद**-(न०) स्थिर पद । मोक्ष ।

अनपेक्ष—(वि०) [नास्ति अपेक्षा यस्य न० ब०] चाह या परवाह न रखने वाला । उदासीन । स्वतंत्र । पक्षपात-रहित । असङ्गत । (क्रि० वि०) स्वतन्त्रता से । मनमुखतारी । यथेच्छ । अनवधानता से ।

अनपेक्षा—(स्त्री०) [न० त०] अपेक्षा का अभाव । निःस्पृहता । उपेक्षा ।

अनपेक्षिन्—(वि०) [न० त०] दे० 'अनपेक्ष' ।

अनपेत--(वि०) [न अपेतः न० त०] दूर न निकला हुआ। जो व्यतीत न हुआ हो। जो विपथगामी न हो। जो पृथक् न हो। जो विहीन न हो। जो वर्जित न हो।

अनप्नस्--(वि०) [नास्ति अप्नः यस्य न० व०] (वैदिक) रूपरहित। कर्महीन।

अनभिज्ञ--(वि०) [न अभिज्ञः न० त०] अज्ञ। अनजान। अपरिचित। अनभ्यस्त।

अनभिम्लान--(वि०) [न० त०] न कुँभ-लाया हुआ।

अनभिशस्त--(वि०) [न० त०] (वैदिक) निरपराध।

अनभिसन्धान--(न०) [न० त०] संकल्प या इच्छा का अभाव।

अनभ्यावृत्ति--(स्त्री०) [न० त०] न दुह-राना। वारबार आवृत्ति न करना।

अनभ्याश,--अनभ्यास--(वि०) [नास्ति अभ्यासः=नैकट्यम् यस्य न० व०] समीप नहीं। दूर।

अनभ्र--(वि०) [न अभ्रो यत्र न० व०] मेघविवर्जित।--**वृष्टि**-(स्त्री०) ऐसा लाभ या प्राप्ति जिसकी आशा या अनुमान पहले से न किया गया हो।

अनमं--(पुं०) [न नमति अन्यान् न√नम् +अच्] ब्राह्मण (जो दूसरों को नमस्कार न करे)।

अनमितंपच--(वि०) [न० त०] विना तौले न पकाने वाला। कृपण।

अनमित्र--(वि०) [नास्ति अमित्रम् यस्य न० व०] जिसका कोई शत्रु न हो। (पुं०) एक अवध-नरेश।

अनमीव--(वि०) [नास्ति अमीवः =रोगः यस्य न० व०] रोग-रहित। स्वस्थ।

अनम्बर--(वि०) [नास्ति अम्वरम् यस्य न० व०] नंगा। जो कपड़े पहिने न हो। (पुं०) बौद्ध भिक्षुक।

अनम्र--(वि०) [न० त०] जो नम्र न हो। अविनीत। उजड्ड।

अनय--(पुं०) [नयो=नीतिः√नी +अच् न० त०] दुर्व्यवस्था। असदाचरण। अन्याय। दुर्नीति। [अयः =शुभावहो विधिः तदन्यः न० त०] विपत्ति। दुःख। दुर्भाग्य। जुआ खेलने वालों के दाहिनी ओर जाना।

अनरण्य--(पुं०) [अनम् जीवनपर्यन्तम् रणे साधुः इत्यर्थे यत्] एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा।

अनर्गल--(वि०) [नास्ति अर्गलम् यत्र न० व०] अनियंत्रित। यथेच्छाचारी। बिना तालेकुंजी का। खुला हुआ।

अनर्घ--(वि०) [नास्ति अर्घो=मूल्यम् यस्य न० व०] अमूल्य। वेशकीमती। (पुं०) [न० त०] अनुचित मूल्य। अयथार्थ मूल्य।

अनर्घ्य--(वि०) [न० त०)] अमूल्य। वड़ा प्रतिष्ठित।

अनर्थ--(वि०) [न० व०] निकम्मा। किसी काम का नहीं। अभागा। दुःखी। हानिकारक। वाहियात। वेमतलव का। (पुं०) [न० त०] उलटा अर्थ। अर्थ का अभाव। अर्थ की हानि। मूल्य का न होना। नैराश्य-जनक घटना। विष्णु। अनिष्ट। खरावी। निकम्मी चीज। भय की प्राप्ति।--**कर**-(वि०)--**करी**-(स्त्री०) उपद्रवी। हानि-कारी।--**दर्शिन्**-(वि०) अहित सोचने या चाहने वाला। अनुपयोगी या निकम्मी चीजों पर ध्यान देने वाला।--**नाशिन्**-(पुं०) शिव।--**निरनुबन्ध**-(पुं०) किसी कमजोर राजा को लड़ने के लिये उभाड़कर स्वयं अलग हो जाना।--**वुद्धि**-(वि०) जिसकी समझ बिल-कुल गई-वीती हो।--**संशय**-(पुं०) वह कार्य जिसमें वहुत वड़े अनिष्ट की आशंका हो। वह संपत्ति जिसके लिये कोई खतरा न हो।

अनर्थक--(वि०) [न० व० कप् समासान्तः] अनुपयोगी। अर्थ-रहित। तुच्छ। वाहियात।

जो लाभदायक नहीं है। अभागा। (न०) अर्थ-हीन या असंबद्ध वचन।

अनर्घ्य—(वि०) [अर्थ+यत् न० त०] दे० 'अनर्थक'।

अनर्ह—(वि०) [न० त०] अयोग्य। अनुपयुक्त। अनधिकारी। दंड या पुरस्कार के अयोग्य।

अनर्हता—(स्त्री०) [अर्ह+तल् न० त०] किसी कार्य, पद आदि के योग्य न होने का भाव। अयोग्यता। [(डिसक्वालिफिकेशन)।

अनर्हीकरण—(न०) [अर्ह√कृ+च्वि+ल्युट् न० त०] किसी को किसी कार्य, पद आदि के अयोग्य ठहराना। (डिसक्वालिफाई)।

अनल—(पुं०) [नास्ति अलम्=पर्याप्तिः यस्य बहुदाह्यदहनेऽपि तृप्तेरभावात् न० व०] अग्नि। अग्निदेव। भोजन पचाने की शक्ति। पित्त। आठ वसुओं में से पंचम वसु। जीव। विष्णु। कृत्तिका नक्षत्र। पचासवाँ संवत्सर। चित्रक वृक्ष। भिलावाँ।—**द**—(वि०) गर्मी या अग्नि-नाशक या दूर करने वाला। दीपन। पाचन शक्ति बढ़ाने वाला। —**प्रभा**—(स्त्री०) ज्योतिष्मती लता।—**प्रिया**—(स्त्री०) अग्नि की पत्नी स्वाहा।—**साद**—(पुं०) भूख का न लगना। कुपच रोग।

अनलस—(वि०)[न० त०] आलस्य-विवर्जित। फुर्तीला। अयोग्य। अनुपयुक्त।

अनलि—(पुं०) [अनति इति√अन्+क्विप् अन् अलिर्यत्र व० स०] बक नामक वृक्ष (इसके पुष्परसों से भौंरे जीवन धारण करते हैं)।

अनल्प—(वि०) [न० त०] थोड़ा नहीं। बहुत। उदार।

अनवकाश—(पुं०) [न० त०] अवकाश का अभाव। फुरसत का न होना। [न० व०] जिसके लिये कोई गुंजाइश या मौका न हो। अप्रयोज्य।

अनवग्रह—(वि०)[न० व०]अप्रतिरोधनीय। अनिवार्य। अति प्रबल। स्वच्छन्द।

अनवच्छिन्न—(वि०) [न० त०] निस्सीम। अमर्यादित। अचिह्नित। जो काटा गया न हो। जो अलहदा न किया गया हो। अत्यधिक। असंशोधित। जिसकी परिभाषा न दी हो। अखण्डित। लगातार।

अनवद्य—(वि०) [न० त०] निर्दोष। निष्कलङ्क। अभर्त्सनीय—**अङ्ग**—**रूप**—(वि०) सुन्दर।—**अङ्गी**—(स्त्री०) वह स्त्री, जिसके शरीर की सुन्दरता में कोई त्रुटि या दोष न हो।

अनवधान—(वि०) [नास्ति अवधानम् यस्य न० व०] असावधान। अमनस्क।

अनवधानता—(स्त्री०) [अनवधान+तल्] असावधानी। अमनस्कता।

अनवधि—(वि०) [न० व०] निस्सीम। अवधि-रहित। अनन्त।

अनवनामित—(वि०) [अव√नम्+णिच् +क्त न० त०] जो झुकाया न गया हो।

अनवब्रव—(वि०) [अवब्रू√+अच् न० त०] अपवाद या कलंक से रहित।

अनवम्—(वि०) [न अवमः न० त०] जो नीच या अश्रेष्ठ न हो। श्रेष्ठ। उन्नत।

अनवरत—(वि०)[अव√रम्+क्त न० व०] निरन्तर। लगातार।

अनवरार्ध्य—(वि०) [अवरस्मिन् अर्धे भवः इत्यर्थे अवरार्ध+यत् न० व०] मुख्य। श्रेष्ठ। सर्वोत्तम। समीचीन।

अनवलम्ब—(वि०) [न० व०] निराश्रित। जिसका सहारा न हो। (पुं०) [न० त०] स्वतन्त्रता।

अनवलम्बन—(वि०) [न० व०] अवलंबहीन। बे-सहारा। (न०)[न० त०]स्वतंत्रता।

अनवलोभन—(न०)सीमन्तोन्नयन के पीछे तीसरे मास में गर्भ का किया जाने वाला एक संस्कार।

अनवसर––(वि०) [न० ब०] बेमौका। असामयिक। जिसको काम काज से फुरसत न मिले। (पुं०) [न० त०] फुरसत का अभाव। कुसमय।

अनवसान––(वि०) [न० ब०] अंत-रहित। मृत्यु-रहित। जिसकी समाप्ति न हो।

अनवसित––(वि०) (न० त०] जो समाप्त न हुआ हो। अनिश्चित। जो अस्त न हुआ हो।

अनवस्कर––(वि०) [न० ब०] मैल से रहित। साफ़सुथरा।

अनवस्थ––(वि०) [न० त०] अदृढ़। अस्थिर।

अनवस्था––(स्त्री०) [न० त०] अस्थिरता। अस्थिर दशा। बुरा चाल-चलन। तर्कशैली का एक दोष। तर्क या कार्य-कारण की ऐसी परम्परा जिसका अंत न हो, न किसी निर्णय पर पहुँचे।

अनवस्थान––(वि०) [न० ब०] चंचल। अस्थायी। (पुं०) पवन। (न०) [न० त०] नश्वरता। चरित्र सम्बन्धी निर्बलता।

अनवस्थित––(वि०) [न० त०] अस्थिर। परिवर्तित। असंयत। अनियंत्रित।

अनवान––(अव्य०) [अवान=श्वासोच्छ्वास स यथा न स्यात् तथा न० त०] एक ही साँस में।

अनवाय––(वि०) [नास्ति अवायः=अवयवः यस्य न० ब०] बिना अवयव या भाग का।

अनवेक्षक––(वि०) [न० त०] असावधान। लापरवाह। निरपेक्ष।

अनवेक्षण––(न०) [न० त०] असावधानी। लापरवाही। [निरपेक्षता।]

अनशन––(न०) [न० त०] उपवास। न खाना। किसी विशेष संकल्प के साथ भोजन त्याग। उपवास।

अनश्वर––(वि०) [न० त०]––**अनश्वरी**––(स्त्री०)––अविनाशी। जो नष्ट न हो। जो नाश को प्राप्त न हो।

अनस्––(न०) [अनिति=शब्दायते इत्यर्थे √अन्+असुन्] गाड़ी। भोजन। भात। जन्म। उत्पत्ति। प्राणधारी। रसोईघर। जल। शोक।

अनसूय, अनसूयक––(वि०) [नास्ति असूया यस्य न० ब०] डाह या ईर्ष्या से रहित। (वि०) [न असूयकः न० त०] ईर्ष्या या द्वेष से रहित।

अनसूया––(स्त्री०) [न० त०] ईर्ष्या का अभाव। अत्रिमुनि की पत्नी का नाम। शकुंतला की एक सखी।

अनहन्––(न०) [अप्रशस्तम् अहः न० त०] बुरा दिन। अभागा दिन।

अनाकाल––(पुं०) [न० त०] कुसमय। वेवक्त। अकाल। कहत।––**भृत**–(पुं०) अन्न विना प्राण जाने पर, अन्न के लिये अपने को दूसरे का दास बनाने वाला।

अनाकुल–(वि०) [न० त०] न घबड़ाया हुआ। शान्त। आत्मसंयत। स्थिर।

अनागत––(वि०) [न० त०] नहीं आया हुआ। अप्राप्त, भविष्यत्। अनजान। अज्ञान।––**अवेक्षण**–(न०) आगम देखना। आगे का ज्ञान।––**आबाध**–(पुं०) आने वाली विपत्ति।––**आर्तवा**–(स्त्री०) वह कन्या जिसका मासिक स्राव आरंभ न हुआ हो। अरजस्का।––**विधातृ**–(पुं०) वह जो भविष्य के लिये तैयारी करे। परिणामदर्शी, पंचतंत्र की कहानी के एक मत्स्य का नाम।

अनागन्धित––(वि०) [आगन्ध+इतच्, न० त०] न सूँघा हुआ, अस्पृष्ट।

अनागम––(पुं०) [आगमः न० त०] न पहुँचना। न आना, अप्राप्ति।

अनागस––(वि०) [नास्ति आगः यस्य न० ब०] निर्दोष। निरपराध, निष्कलङ्क।

अनाचार—(पुं०) [अप्रशस्तः आचारः न० त०] निन्दित आचार, शास्त्र-विहित आचारों के विरुद्ध आचरण, दुराचरण। बुराई।

अनातप—(वि०) [नास्ति आतपो यत्र न० ब०] धूप-रहित। छायादार, जो उष्ण न हो। ठंडा। (पुं०) [न० त०]।

अनातुर—(वि०) [न आतुरः न० त०] जो आतुर न हो। जो उद्विग्न न हो। अपरिश्रान्त। जो थका न हो।

अनात्मक—(वि०)[नास्ति आत्मा स्थिरो यत्र न० ब०] अयथार्थ, क्षणिक, संसार का विशेषण (बौद्ध)।

अनात्मन्—(वि०) [न० ब०] आत्मा-रहित, जो आत्मा से सम्बन्ध न रखे, वह जो संयमी न हो। जिसने अपने को वश में न किया हो। (पुं०) [अप्राशंस्त्ये भेदार्थे च न० त०] आत्मा से भिन्न। जड़ पदार्थ। देहादि। —**ज्ञ**,—**वेदिन्**–(पुं०) अपने आपको न पहचानने वाला। मूर्ख।—**सम्पन्न**–(वि०) मूर्ख।

अनात्मनीन—(वि०) [आत्मन्+ख न० त०] जो अपने लिये हितकर न हो। निःस्वार्थ। स्वार्थ-रहित।

अनात्मवत्—(वि०) [आत्मा वश्यत्वेन अस्ति अस्य इत्यर्थे आत्मन्+वतुप् न० त०] असंयत। अजितेन्द्रिय।

अनात्म्य—(वि०) [आत्मनः इदम् आत्म्यम् =शरीरम् न० ब०] शरीर-रहित। (न०) (न० त०] अपने परिवार के प्रति स्नेह का अभाव।

अनात्यन्तिक—(वि०) [न आत्यन्तिकः= नित्यः न० त०] अनित्य, अंतिम नहीं, सविराम।

अनाथ—(वि०) [नास्ति नाथः यस्य न० ब०] नाथरहित। रक्षकवर्जित, गरीब, मातृपितृरहित। यतीम।—**सभा**–(स्त्री०) मोहताजखाना। अनाथालय।

अनादर—वि०) [न० ब०] निरपेक्ष, विचार-शून्य। (पुं०)[विरोधार्थे न० त०]अप्रतिष्ठा। घृणा। असम्मान।

अनादि—(वि०) [न० ब०] जिसका शुरू न हो, जिसका आरम्भ-काल अज्ञात हो, आदि-रहित, सनातन।—**अनन्त**,—**अन्त**–(वि०) अथ और इति रहित। आरम्भ और समाप्ति-विवर्जित। सनातन। (पुं०) भगवान् विष्णु का नाम।—**निधन**–(वि०) जिसका न आदि (आरम्भ) हो और न अन्त (समाप्ति)। सतत। सनातन।—**मध्यान्त**–(वि०)जिसका न तो आरम्भ हो, न मध्य हो और न अन्त हो। सनातन।—**सिद्ध**–(वि०) अनादिकाल से चला आने वाला।

अनादीनव—(वि०) निर्दोष। निरपराध।

अनाद्य—(वि०) [आदौ भवः इत्यर्थे आदि +यत् न० त०] अनादि। [√अद् (भक्षणे)+ण्यत् न० त०] अभक्ष्य। वह वस्तु जो खाने योग्य न हो।

अनानुपूर्व्य—(न०) [न आनुपूर्व्यम् न० त०] नियत क्रम में न आना।

अनापि—(वि०) [आप्यते इत्यर्थे√आप्+ इन् आपि=आप्तः बन्धुश्च न० ब०] मित्र या बंधु से रहित।

अनाप्त—(वि०) [न आप्तः न० त०]अप्राप्त, अयोग्य। अनिपुण। (पुं०) अनजान। अजनबी।

अनाभयिन्—(वि०) [आबिभेति इत्यर्थे आ √भी+इनि आभयिन् न० त०] निर्भय। जिसे बिलकुल डर न हो। (वैदिक)

अनाभू—(वि०) [आभिमुख्येन भवति इत्यर्थे आ√भू+क्विप् न० त०] जो स्तुति न करे। जो सम्मुख न हो। (वैदिक)

अनामक—(वि०) [नास्ति नाम यस्य न० ब०] दे० 'अनामन्'।

अनामन्—(वि०) [न० ब०] नामरहित। गुमनाम। अपकीर्ति। बदनाम। (पुं०)

लोंद मास, अधिक मास, हाथ की वह उँगली जिसमें अँगूठी पहनी जाती है। छिगुलिया के पास की अँगुली। (न०) [√अन्+अच् अनम्=जीवनम् अमयति=रुजति√अम् +अनि] अर्शरोग। बवासीर।

अनामा, अनामिका--(स्त्री०) [ब्रह्मणः शिरश्छेदनसाधनतया ग्रहणायोग्यत्वात् नास्ति नाम ग्रहणयोग्यं यस्या न० ब०] कानी और बिचली उँगलियों के बीच की उँगली। छिगुनिया के पास वाली उँगली।

अनामय--(वि०) [नास्ति आमयो यस्य न० ब०] तंदुरुस्त। स्वस्थ। (न०) (न० त०] तंदुरुस्ती। स्वास्थ्य। (पुं०) [न० ब०] विष्णु का नाम।

अनायत्त--(वि०) [न आयत्तः न० त०] जो परतंत्र न हो। स्वतंत्र।

अनायास--[न० त०] आयास--श्रम, कठिनाई का अभाव, आलस्य, लापरवाही। (वि०) [न० ब०] सरल। सहज। (अव्य०) आसानी से।

अनारत--(वि०) [न० त०]अनवरत, नित्य, स्थायी। (न०)[न० त०] सतत। लगातार।

अनारम्भ--(पुं०) [न० त०] अननुष्ठान। आरम्भ का अभाव।

अनार्जव--(वि०) [न० त०] कुटिल, बेईमान, अधार्मिक। (न०) (न० त०] कुटिलता। जाल। फरेब। रोग।

अनार्तव--(वि०) [ऋतौ भवः आर्तवः न० त०] असामयिक। बे-मौसम।

अनार्तवा--(स्त्री०) [न० ब०] वह लड़की जिसको मासिक धर्म न होता हो।

अनार्य--(वि०) [न० त०] दुर्जन, दुश्शील, अधम, असभ्य। (पुं०) जो आर्य न हो, वह देश जिसमें आर्य न बसते हों, शूद्र, म्लेच्छ।

अनार्यक--(न०) [अनार्ये देशे भवम् इत्यर्थे अनार्य+क] अगुरु काठ। अगर की लकड़ी।

अनार्ष--(वि०) [न आर्षः न० त०] जो ऋषियों का प्रोक्त न हो। अवैदिक।

अनालम्ब--(वि०) [नास्ति आलम्बो यस्य न० ब०] निराश्रित। बिना सहारे का।--(पुं०) [न० त०]सहारे का अभाव। आधारशून्यता।

अनालम्बी--(स्त्री०) [आ√लम्ब+टच् टित्वात् ङीप् न० त०] शिवजी की वीणा या सारंगी।

अनालम्बुका, अनालम्भुका--(स्त्री०) [आ √लम्ब्,√लम्भ्+उकञ् न० त०] रजस्वला स्त्री।

अनावर्तिन्--(वि०) [आ√वृत्+णिनि न० त०] फिर न होने वाला, फिर न लौटने वाला। जो एक ही बार दिया जाय या किया जाय (अनुदान, व्यय आदि)। (नानरेकरिंग)।

अनाविद्ध--(वि०) [न० त०] जो छेदा न गया हो। जो छिदा न हो।

अनावृत्ति--(स्त्री०) [न० त०] फिर जन्म न होना। मोक्ष, अपरावर्तन। न लौटना।

अनावृष्टि--(स्त्री०) [न० त०] सूखा। वर्षा का अभाव। खेती को नष्ट करने वाला एक उपद्रव ईति।

अनाश--(वि०) [नास्ति आशा यस्य न० ब०) निराश। आशा-रहित।

अनाशक--(पुं०) [आ सम्यक् यथेच्छम् आशः अशनम् आ√अश+घञ् न० त०] यथेच्छ भोग का अभाव। अपनी इच्छा के अनुसार भोग का न होना। 'तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन दानेन तपसाऽनाशकेनेति' श्रुतिः।

अनाशकायन--(न०) [न नश्यति अनाशकः आत्मा तस्य अयनम् प्राप्त्युपायः] आत्मा की प्राप्ति का उपाय। ब्रह्मचर्य।

अनाश्रमिन्--(पुं०) [न० त०] वह जो चार

आश्रमों में से किसी भी आश्रम में न हो। जो आश्रमी न हो।

अनाश्रव—(वि०) [आ√श्रु+अच् न० त०] जो किसी का कहना न सुने या कहने पर कान न दे।

अनाश्वस्—(वि०) [न√अश+क्वसु नि०] न खाया हुआ।

अनास्था—(स्त्री०) [न आस्था न० त०] निरपेक्षता, अश्रद्धा, अनादर।

अनास्राव—(वि०) [नास्ति आस्रावो यस्य न० व०] क्लेश-रहित।

अनाहत—(न०) [आ√हन्+क्त (भावे) न० व०] नया (कपड़ा)। कोरा कपड़ा तन्त्र-शास्त्रानुसार हृदयस्थित द्वादशदल कमल। मध्यमा वाक्। (वि०) [न आहतः न० त०] आघातरहित वस्तु।

अनाहार—(वि०) [न० व०] भोजन-रहित। (पुं०) [न० त०] उपवास। लंघन।

अनाहुति—(स्त्री०) [न० त०] हवन का अभाव, कोई हवन, जो हवन के नाम से कहलाने के अयोग्य हो, अनुचित वलि या अर्घ्य।

अनाहूत—(वि०) [न आहूतः न० त०] अनिमंत्रित। विना वुलाया हुआ।—**उपजल्पिन्**—विना कहे वोलने वाला या शेखी वघारने वाला।—**उपविष्ट**—(वि०) अनिमंत्रित आकर वैठा हुआ।

अनिकेत—(वि०) [नास्ति निकेतः नियमेन वासो यस्य न० व०] गृह-हीन आवारा। जिसके घर न हो और वेमतलव इधर-उधर घूमा करे। (पुं०) संन्यासी।

अनिगीर्ण—(वि०) [नि√गृ+क्त न० त०] जो निगला हुआ न हो। अभुक्त, अकथित, जो छिपा न हो। प्रकट। प्रत्यक्ष।

अनिच्छ, अनिच्छत्, अनिच्छु, अनिच्छुक—(वि०) [नास्ति इच्छा यस्य न० व०—अनिच्छ, अनिच्छत् इत्यादौ न० त०] इच्छा न रखने वाला। अनभिलाषी। निराकांक्षी। जिसे चाह न हो।

अनित्य—(वि०) [न० त०] जो सनातन न हो, विनश्वर। विनाशी। नाशवान्, अस्थायी, अधव, असाधारण, अस्थिर। चञ्चल, सन्दिग्ध। संशयात्मक।—**दत्त**,—**दत्तक**,—**दत्रिम**—(पुं०) पुत्र जो किसी दूसरे को कुछ दिनों के लिये दे दिया जाय।—**भाव**—(पुं०) क्षणभंगुरता।—**सम**—(पुं०) जाति या असत् उत्तर के २४ भेदों में से एक (न्याय)।

अनिद्र—(वि०) [नास्ति निद्रा यस्य न० व०] निद्रारहित, जागता हुआ (आलं०) जागरूक, सावधान। सतर्क।

अनिन्द्रिय—(न०) [न० त०] कारण, इन्द्रियों में से कोई इन्द्रिय नहीं, मन।

अनिभृत—(वि०) [न निभृतः न० त०] सार्वजनिक। खुल्लमखुल्ला। अनछिपा हुआ, लज्जाहीन। वेहया, अस्थिर। जो दृढ़ न हो। चपल।—**सन्धि**—(पुं०) किसी राजा की अत्यन्त उर्वरा भूमि को खरीद लेने के इच्छुक राजा को वह भूमि देकर की हुई संधि।

अनिमक—(पुं०) [√अन्+इमन्-अनिमः =जीवनम् तेन कायति=शब्दायते प्रकाशते वा,√कै+क] मेढक, कोयल, मधुमक्षिका, भ्रमर, महुए का पेड़।

अनिमित्त—(वि०) [नास्ति निमित्तं यस्य न० व०] अकारण। आधाररहित (न०) [न० त०] किसी उपयुक्त कारण या अवसर का अभाव, अपशकुन। वुरा शकुन।—**निराक्रिया**—(स्त्री०) वुरे शकुनों को पलट देने की क्रिया।

अनिमिष, अनिमेष—(वि०) [नास्ति निमिषः निमेषो वा यस्य न० व०] जिसकी पलक न गिरे। स्थिर-दृष्टि, जागरूक, खुला हुआ। विकसित। (पुं०) देवता, मछली [नि√मिष+क न० त०] महाकाल—

अाचार्य–(पुं०) देवताअों के गुरु । बृहस्पति । **—दृष्टि,—लोचन**–(वि०) बिना पलक झपकाये देखने वाला ।

अनियत—(वि०) [न० त०] अनिश्चित, सन्दिग्ध, अनियमित, कारणशून्य, नश्वर । **—आत्मन्**–(वि०) जिसका मन वश में न हो ।**—पुंस्का**–(वि०) (स्त्री०) दुश्चारिणी स्त्री ।**—वृत्ति**–(वि०) वह जिसकी अामदनी या जीविका बँधी हुई न हो । अनियमित आय वाला ।

अनियन्त्रण—(वि०) [नास्ति नियन्त्रणम् यस्य न० ब०] असंयत । जो नियंत्रण में न रहे । उच्छृङ्खल ।

अनियन्त्रित—(पुं०) [न० त०] उच्छृङ्खल । नियमविरुद्ध, स्वच्छंद ।**—शासन**–(न०) एकतंत्र या निरंकुश राज्य ।

अनियम—(पुं०) [न० त०] नियम का अभाव, नियत आज्ञा का अभाव, सन्देह । अनुचित आचरण । अव्यवस्था ।

अनिर—(वि०) [ईरयितुम् शक्यते इति√ईर+क पृषो० ह्रस्व न० त०] न चलाया जा सकने वाला ।

अनिरुक्त–(वि०) [न निरुक्तः न० त०] जो स्पष्ट न कहा गया हो । भली भाँति व्याख्या न किया हुआ । भली भाँति न समझाया हुआ ।

अनिरुद्ध—(वि०) [न निरुद्धः न० त०] अबाधित, मुक्त, अनियंत्रित, स्वेच्छाचारी, जो वश में न आ सके । (पुं०) भेदिया । जासूस । प्रद्युम्न के पुत्र का नाम जो श्री कृष्ण जी का पौत्र और ऊषा का पति था । पशु आदि के बाँधने की रस्सी । मन का अधिष्ठाता ।**—पथ**–(न०), बिना रुकावट का मार्ग, आकाश ।**—भाविनी**–(स्त्री०) अनिरुद्ध की स्त्री । ऊषा ।

अनिर्णय—(पुं०) [न० त०] अनिश्चितता । निर्णय का अभाव ।

अनिर्दश, अनिर्दशाह—(वि०) [न० ब०] मृत्यु अथवा जन्म के १० दिन के अशौच के भीतर का ।

अनिर्देश—(पुं०) [न० त०] किसी निश्चित नियम या आज्ञा का अभाव ।

अनिर्देश्य—(वि०) [निर्√दिश्+ण्यत् (शक्यार्थे) न० त०] वह जिसकी परिभाषा का वर्णन न हो सके । अवर्णनीय (न०) परब्रह्म ।

अनिर्धारित—(वि०) [न० त०] अनिश्चित ।

अनिर्भर—(वि०) [न० त०] अधिक नहीं । थोड़ा, हलका ।

अनिर्भेद—(पुं०) [न० त०] भेद न खोलना ।

अनिर्माल्या—(स्त्री०) [निर्√मल+ण्यत् टाप् न० त०] पृक्का नामक अोषधि ।

अनिर्लोडित–(वि०) [न० त०] जो भली भाँति सोचा गया न हो । बुरी तरह निर्णीत ।

अनिर्वचनीय—(वि०) [निर्√वच्+अनीयर् न० त०] निर्वचन के अयोग्य । जिसके लक्षण आदि न बताये जा सकें । वर्णन के अयोग्य । (न०) संसार ।

अनिर्वाण—(वि०) [न० त०] न बुझा हुआ । अनधुला । अप्रक्षालित ।

अनिर्विण्ण—(वि०) [न० त०] क्लेश-रहित । न थका हुआ । जो उत्साह-रहित न हुआ हो ।

अनिर्वृत–(वि०)[न० त०] बेचैन । दुखी । अनिर्वृति, अनिर्वृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] बेचैनी । विकलता । चिन्ता । गरीबी । निर्धनता ।

अनिर्वेद—(पुं०) [न० त०], क्षोभ या विषाद का अभाव, स्वावलंबन, उत्साह । साहस ।

अनिर्वेश—(वि०) नास्ति निर्वेशो यस्य [न० ब०] बे-रोजगार, दुःखित । (पुं०) [न० त०] रोजी या भृत्यता का अभाव ।

अनिल—(पुं०) [अनिति अनेन इत्यर्थे √अन्+इलच्] वायु, पवन देव । एक उपदेवता । शरीरस्थ पवन । मानसिक भावों में से एक । आठ वसुओं में से पाँचवाँ वसु । स्वाती नक्षत्र । विष्णु । ४९ की संख्या । सागौन का वृक्ष । गठिया रोग या वातजन्य कोई रोग ।—**अयन**–(न०) पवनमार्ग ।—**अशन्**—**आशिन्**–(पुं०) साँप । (वि०) हवा पीकर रहने वाला ।—**आत्मज**–(पुं०) पवनपुत्र । भीम और हनुमान ।—**आमय**–(पुं०) वातरोग । अफरा ।—**कुमार**–(पुं०) हनुमान । भीम । देवताओं का एक वर्ग (जैन०) ।—**घ्नक**-(पुं०) बहेड़े का पेड़ ।—**पर्यय,**—**पर्याय**-(पुं०) आँख का एक रोग जिसमें पलकें सूख जाती हैं ।—**प्रकृति**–(वि०) वात की प्रकृति वाला । (पुं०) शनिग्रह ।—**सख,**—**सारथि**-(पुं०) अग्नि ।

अनिवर्तन—(वि०) [नास्ति निवर्तनम् यस्य न० ब०)] न लौटने वाला । स्थिर । न त्यागने योग्य ।

अनिवार—(वि०) [नास्ति निवारः=निवारणम् यस्य न० ब०] दे० 'अनिवार्य' ।

अनिवार्य–(वि०) [न० त०] जिसका निवारण न हो सके । न हटाने योग्य, अटल, अत्यावश्यक ।

अनिविशमान—(वि०) [निविशन्ते तिष्ठन्ति इति नि√विश्+शानच् न० त०] कभी न ठहरने वाला, विश्राम न लेने वाला, सदा चलने वाला ।

अनिश–(न०) [नास्ति निशा—चेष्टान्याघातः अस्मिन् न० ब०] सतत । लगातार ।

अनिष्ट—(वि०), [√इष+क्त, विरोध न० त०] जो इष्ट न हो । अवांछित । अशुभ, बुरा, अभागा, यज्ञद्वारा असम्मानित । (न०) अशुभ, अभाग्य । दुर्भाग्य । विपत्ति । असुविधा । हानि ।—**आपादन**–(न०) —**आप्ति**–(स्त्री०) अवांछित वस्तु की प्राप्ति । अवांछित घटना ।—**ग्रह**-(पुं०) पापग्रह । बुरेग्रह ।—**प्रसङ्ग**–(पुं०) दुर्घटना । अशुभ घटना । किसी बुरी वस्तु, युक्ति अथवा नियम का सम्बन्ध ।—**फल**–(न०) बुरा परिणाम ।—**शङ्का**–(स्त्री०) अशुभ का भय ।—**हेतु**–(पुं०) अपशकुन । बुरा शकुन ।

अनिष्पत्रम्—(अव्य०) [निःसृतम् पत्रम् =पक्षः यत्र तादृशम् न भवति] तीर का वह भाग जिसमें पर लगे रहते हैं, जिससे वह दूसरी ओर न निकले ।

अनिस्तीर्ण—(वि०) [न० त०] जिससे पिण्ड या पीछा न छुटा हो, अनुत्तरित । अखण्डित । जिसका खण्डन न हुआ हो ।—**अभियोग**–(पुं०) वह अभियुक्त या प्रतिवादी जिसने आरोप को असत्य प्रमाणित कर उससे छुटकारा नहीं पाया है ।

अनीक—(पुं० न०) [अनिति अनेन इति√अन्+ईकन्] सेना, समूह, पंक्ति, सैन्यपंक्ति, युद्ध, शकल, किनारा, —**स्थ**–(पुं०) सैनिक । योद्धा, पहरेदार, सन्तरी । महावत । हाथी का शिक्षक । मारूबाजा । ढोल या बिगुल, सङ्केत । चिह्न । निशानी ।

अनुक्रमणिका—(स्त्री०) [अनुक्रम्यते यथोत्तरम् परिपाट्या आरभ्यतेऽनया, अनु√क्रम्+ल्युट् स्त्रीत्वात् ङीप् स्वार्थे क प्रत्ययः] विषयसूची, परिपाटी बतलाने वाली । जिसमें किसी ग्रंथ में वर्णित विषयों का संक्षेप में पतेवार वर्णन हो । सूची, तालिका, कात्यायन के एक ग्रन्थ का नाम । इसमें मंत्रों के ऋषि, छन्द, देवता, और मंत्रों के विनियोगों का वर्णन है ।

अनुक्रमणी—(स्त्री०) [अनु√क्रम्+ल्युट् ङीप] दे० 'अनुक्रमणिका' ।

अनुक्रिया—(स्त्री०) [अनु√कृ+श टाप्] दे० 'अनुकरण' ।

अनुक्रोश—(पुं०) [अनु√क्रुश्+घञ्]

दया, रहम, कृपा। (वि०) [अनुगतः क्रोशम् गति० स०] जो एक कोस पर पहुँचा हो।

अनुक्षणम्—(अव्य०) [क्षणम् प्रति, अव्य० स०] प्रत्येक क्षण, सतत, बराबर।

अनुक्षत्तृ—(पुं०) [अनुगतः क्षत्तारम् अत्या० स०] दरवान या सारथी का टहलुआ।

अनुक्षेत्र—(पुं०) [क्षेत्रस्य अनुकूलम्, अव्य० स०] पुजारियों को दी जाने वाली वृत्ति या बंधान। (उड़ीसा के मंदिरों में यह बंधान बँधा हुआ है)।

अनुख्याति—(स्त्री०) [अनु√ख्या+क्तिन्] किसी गुप्त बात की सूचना देना या उसको प्रकट करना।

अनुग—(वि०) [अनु√गम्+ड] अनुगत, पीछे जाने वाला। (पं०) अनुयायी, पिछलगुआ, आज्ञाकारी नौकर, साथी।

अनुगति—(स्त्री०) [अनु√गम्+क्तिन्] अनुगमन, पीछे चलना, नकल करना, अनुकरण करना।

अनुगम, अनुगमन—(पुं०) (न०) [अनु√गम्+अप्] [अनु√गम्+ल्युट्] पीछे चलना, अधीन होना, सहायक होना, सहमरण, किसी स्त्री का अपने पति के पीछे मरना, अनुकरण करना, समीप जाना, अर्थबोध।

अनुगर्जित—(न०) [अनु√गर्ज+क्त] प्रतिगर्जन्, प्रतिध्वनि।

अनुगवीन—(पुं०) [अनुगु—गोः पश्चात् पर्याप्तं यथा गच्छति सोऽनुगवीनः—अनुगु+ख—ईन] गोपाल, ग्वाला।

अनुगामिन्—[अनु√गम्+णिनि] अनुयायी, पीछे चलने वाला। (पुं०) नौकर, साथी।

अनुगिरम्—(अव्य०) [गिरेः समीपम् इति अव्य० स० टच्] पर्वत के पास।

अनुगुण—(वि०) [अनुकूलो गुणो यस्य ब० स०] समान गुण वाला, अनुकूल, अनुगत। (अव्य०) [अव्य० स०] गुण के अनुसार। (पुं०) [प्रा० स०] अर्थालंकार का एक भेद, स्वाभाविक विशेषता।

अनुग्रह, अनुग्रहण—(पुं०) (न०) [अनु√ग्रह्+अप्] [अनु√ग्रह्+ल्युट्] कृपा, दया, अनुकंपा, स्वीकारोक्ति, स्वीकृति, प्रधान सैन्यदल का पश्चात् भाग। रक्षक सैन्यदल। राज्य की कृपा से प्राप्त सहायता या सुभीता।

अनुग्रासक—(पुं०) [प्रा० स०] कौर, निवाला।

अनुग्राह्य—(वि०) [अनु√ग्रह्+ण्यत्] कृपा करने योग्य, अनुग्रह का पात्र।

अनुचर—(पुं०) [अनु√चर+ट) दास, सेवक, टहलुआ। (वि०) पीछे चलने वाला।

अनुचरी—(स्त्री०) [अनु√चर्+ट, टित्वात् ङीप्] टहलुनी, दासी।

अनुचारक—(पुं०) [अनु√चर्+ण्वुल्] अनुचर, सेवक।

अनुचारिका—(स्त्री०) [अनु√चर+ण्वुल् टाप्] अनुचरी, दासी।

अनुचित—(वि०) [न उचितः न० त०] अयुक्त, नामुनासिब, असाधारण, अयोग्य।

अनुचिन्तन—(न०) [अनु√चिन्त्+ल्युट्] दे० 'अनुचिन्ता'।

अनुचिन्ता—(स्त्री०) [अनु√चिन्त्+अ, टाप्] विचार, ध्यान, अनुध्यान, उत्कण्ठापूर्वक स्मरण।

अनुच्छाद—(पुं०) [अनु√छद्+णिच्+घञ्] अंगे के नीचे पहिना जाने वाला कपड़ा, नीमा।

अनुच्छित्ति, अनुच्छेद—(स्त्री०) (पुं०) [अनु√छिद्+क्तिन्] [अनु√छिद्+घञ्] कटकर अलग न होना, नाश न होना, किसी अधिनियम, विधान, नियमावली, संविदा आदि का वह विशिष्ट अंग या अंश जिसमें एक विषय और उसके प्रतिबंध आदि का उल्लेख हो [आर्टिकिल]। लेख आदि का वह अंश जिसमें कोई एक बात कही गई हो और

जिसकी पहली पंक्ति आरंभ में कुछ छोड़ कर लिखी गई हो [पराग्राफ] । अनाशकत्व, अनष्टत्व ।

अनुज, अनुजात—(वि०) [अनु=पश्चात् जायते इति विग्रहे अनु√जन्+ड] [अनु =पश्चात् जातः इति अनु√जन्+क्त] पीछे जन्मा हुआ, पिछला, छोटा । (पुं०) छोटा भाई ।

अनुजन्मन्—(पुं०) [अनु जन्म यस्य ब० स०] छोटा भाई ।

अनुजीविन्—(वि०) [अनुजीवितुम्=आश्रयितुम् शीलमस्य इति विग्रहे अनु√जीव्+णिनि] परावलम्बी, दूसरे पर (आजीविका के लिये) निर्भर । (पुं०) नौकर, चाकर ।

अनुज्ञा, अनुज्ञान—(स्त्री०) (न०) [अनु√ज्ञा+अङ] [अनु√ज्ञा+ल्युट्] अनुमति, आज्ञा, हुक्म ।

अनुज्ञापक—(पुं०) [अनु√ज्ञा+णिच्+ण्वुल्] आज्ञा देने वाला, हुक्म देने वाला । [स्त्री० अनुज्ञापिका] ।

अनुज्ञापन—(न०) [अनु√ज्ञा+णिच्+ल्युट्] आज्ञा, हुक्म, अनुमति ।

अनुज्येष्ठम्—(अव्य०) [अव्य० स०] (वयः क्रम से) ज्येष्ठता या बड़ाई, बड़े-छोटे के लिहाज से ।

अनुतर्ष—(पुं०) [अनु√तृष्+घञ्] प्यास, इच्छा, कामना, पानपात्र, मद्य ।

अनुतर्षण—(न०) [अनु√तृप+ल्युट्] दे० 'अनुतर्ष' ।

अनुताप—(पुं०) [अनु√तप्+घञ्] पश्चात्ताप, कर्म करने के अनन्तर दुःख ।

अनुतिल—(अव्य०) [अव्य० स०] अति सूक्ष्मता से, तिल-तिल करके, तिल के बराबर ।

अनुत्क—(वि०) [न उत्कः न० त०]जो अत्यधिक उत्कण्ठित न हो, जो पश्चात्ताप न करे ।

अनुत्तम—(वि०)[न उत्तमो यस्मात् न० ब०] सर्वोत्कृष्ट, सर्वश्रेष्ठ, सबसे बढ़कर । (न० त०) जो उत्तम या उत्कृष्ट न हो ।

अनुत्तर—(वि०) [न उत्तर=उत्तमः यस्मात् न० ब०] बहुत अच्छा, सर्वोत्तम, प्रधान, दृढ़ । [न० त०] नीच, कमीना । [न० ब०] विना उत्तर का, निरुत्तर ।

अनुत्तरङ्ग—(वि०)[न उद्गताः तरङ्गाः यस्मिन् न० ब०] जिसमें तरंगें लहराती नहीं, निश्चल ।

अनुत्तरा—(स्त्री०)[न० त०]दक्षिण दिशा ।

अनुत्थान—(न०) [न० त०] उत्थान या प्रयत्न का अभाव ।

अनुत्सूत्र—(वि०) [न उत्क्रान्तम् सूत्रम् यस्मिन् न० ब०] सूत्र के विरुद्ध नहीं ।

अनुत्सेक—(पुं०) [न० त०] क्रोध या अभिमान का अभाव ।

अनुत्सेकिन्—(वि०) [अनुत्सेक+इनि] जो अभिमान से फूल कर कुप्पा न हो गया हो ।

अनुदक—(वि०) [नास्ति उदकम् यस्मिन् न० ब०] जलहीन, अल्प जल वाला, जिसे कोई पानी देने वाला न हो ।

अनुदर—(वि०) [नास्ति उदरम् यस्य न० ब०) जिसका मध्य भाग या कमर पतली हो । पतला-दुबला ।

अनुदर्शन—(न०) [प्रा० स०] पर्यवेक्षण, मुआयना ।

अनुदात्त—(वि०) [उच्चैरात्तः उच्चारितः उदात्तः न० त०] जो उदात्त स्वर से उच्चारणीय न हो । उदात्त स्वर से भिन्न स्वर ।

अनुदार—(वि० [न उदारः न० त०] जो उदार न हो, जो कुलीन न हो, जिसके उपयुक्त पत्नी हो ।

अनुदित—(पुं०) [उत्√इण+क्त ईषदर्थे न० त०] वह समय जिसमें थोड़ा-सा सूर्य उदय हो और कहीं-कहीं तारे भी दिखाई पड़ें । (वि०)[वद्√क्त+न० त०] न कहा हुआ, निंद्य ।

अनुदिनम्, अनुदिवसम्—[अव्य० स०] (अव्य०) नित्य, हररोज, दिनों दिन ।

अनुदेश—(पुं०) [अनु√दिश्+घञ्] पीछे की ओर इशारा करना, एक नियम जो पहले नियम की सूचना देता है । क्रम-संख्या, कोई काम करने के लिये विशेष रूप से समझाना या आदेश देना । हिदायत । (इन्स्ट्रक्शन) ।

अनुद्धत—(वि०) [न० त०] जो उद्दण्ड या अभिमानी न हो ।

अनुद्भट—(वि०) [न० त०] जो वीर या साहसी न हो, कोमल स्वभाव वाला, जो उन्नत या वहुत ऊँचा न हो ।

अनुद्रुत—(वि०) [अनु√द्रु+क्त] पिछियाया हुआ, लौटाया हुआ, वापिस लाया हुआ, अनुगामी । (न०) (संगीत में) एक ताल मात्रा का चौथा भाग ।

अनुद्वाह—(पुं०) [न० त०] अविवाहावस्था, अनूढावस्था, चिरकौमार्य ।

अनुद्विग्न—(न० त०] न घबड़ाया हुआ, आशंका, चिन्ता आदि से मुक्त ।

अनुधावन—(न०) [अनु√धाव+ल्युट्] पीछे दौड़ना, पीछा करना, पछियाना, किसी पदार्थ के विलकुल समीप-समीप दौड़ना, अनुसन्धान करना, पता लगाना, तहकीकात करना, अप्राप्त होने पर भी किसी मालकिन या स्वामिनी का पता लगाना । साफ करना, पवित्र करना ।

अनुध्या, अनुध्यान—(स्त्री०) (न०) [अनु √ध्यै+अङ] [अनु√ध्यै+ल्युट्] अनुचिन्तन, वार-वार सोचना, किसी विषय में तत्पर रहना, आसक्ति, कृपा करना, मङ्गलकामना ।

अनुनय—(पुं०) [अनु√नी+अच्] विनय, सान्त्वना, प्रार्थना ।

अनुनाद—(पुं०) [अनु√नद्+घञ्] शब्द, होहल्ला, शोर, गुलगपाड़ा, प्रतिध्वनि, झाईं ।

अनुनायक—(वि०) [अनु√नी+ण्वुल] नायिका के साथ रहने वाली स्त्री—विनम्र, विनयशील, आज्ञाकारी ।

अनुनायिका—(स्त्री०) जैसे धात्री, दासी आदि । अनुनायिका ये होती हैं :—**सखी प्रव्रजिता दासी प्रेष्या धात्रेयिका तथा । अन्याश्च शिल्पकारिण्यो विज्ञेया ह्यनुनायिकाः ।।**

अनुनासिक—(पुं०) [अनुगता नासाम् अत्या० स० तत्र उच्चार्यमाणार्थे ठ—इक] वर्गों के अंतिम अक्षर जिनका उच्चारण मुँह और नाक से होता है (ङ ञ ण न म) ।

अनुनिर्देश—(पुं०) [अनुगतः निर्देशः प्रा० स०]किसी पूर्ववर्ती वचन या आज्ञा का संबंध-सूचक दूसरा वचन या आज्ञा ।

अनुनीति—(स्त्री०) [अनु√नी+क्तिन्] दे० 'अनुनय' ।

अनुपकारिन्—(वि०) [न उपकारिन् न० त०]उपकार न करने वाला, कृतघ्न, निकम्मा ।

अनुपघात—(पुं०) [न उपघातः न० त०] किसी जोखिम या बाधा का अभाव ।

अनुपतन—अनुपात—(न०) (पुं०) [अनु √पत्+ल्युट्] [अनु√पत्+घञ्] गणित की त्रैराशिक क्रिया, त्रैराशिक गणित, पीछे गिरना, पीछा करना, एक अङ्क के साथ दूसरे अङ्क का सम्वन्ध ।

अनुपथ—(वि०) [पन्थानम् अनुगतः अत्या० स०] मार्ग का अनुसरण करने वाला, (क्रि० वि०) सड़क के साथ-साथ ।

अनुपद—(अव्य०) [पदस्य पश्चात् अव्य० स०] कदम-वकदम, शब्द-प्रतिशब्द । (वि०) [पदम् अनुगतः अत्या० स०] (किसी के) पीछे पीछे चलने वाला, प्रत्येक शब्द की व्याख्या करने वाला ।(भाष्य)(जैसे—अनुपदसूत्र ।

अनुपदवी—(स्त्री०) [अनुगता पदवी प्रा० स०] वह मार्ग जिसका अनुसरण एक के वाद दूसरे ने किया हो, मार्ग, सड़क ।

अनुपदिन्—(वि०) [अनुपदम् अन्वेष्टा

इत्यर्थे अनुपद+इनि] खोजने वाला, तलाश करने वाला, जिज्ञासु ।

अनुपदीना—(स्त्री०) [अनुपदस्य आयाम-तुल्यायामः आयामे अव्य० स० अनुपदं कद्ध्वा इत्यर्थे ख—ईन, टाप्] जूता, मोजा, खड़ाऊँ ।

अनुपध—(पुं०) [नास्ति उपधा यस्मिन् न० ब०] जिसमें उपधा या उपान्त्य शब्दांश का अभाव हो ।

अनुपधि—(वि०) [नास्ति उपधिः =छलम् यस्य न० ब०] प्रवञ्चना-रहित, छलवर्जित, बिना जालसाजी का ।

अनुपन्यास—(पुं०) [न उपन्यासः न० त०] वर्णन न करना, बयान न देना, सन्देह, प्रमाण या निश्चय का अभाव, असिद्धि ।

अनुपपत्ति—(स्त्री०) [न उपपत्तिः न० त०] उपपत्ति का अभाव, असङ्गति, असिद्धि, असम्पन्नता, असमर्थता ।

अनुपम—(वि०) [नास्ति उपमा यस्य न० ब०] उपमारहित, बेजोड़, सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट ।

अनुपमा—(स्त्री०) [नास्ति उपमा यस्याः न० ब०] नैऋत्य कोण के कुमुद गज की हथिनी ।

अनुपमित, अनुपमेय—(वि०) [उप√मा+क्त न० त०] [उप√मा+यत् न० त०] बेजोड़, जिसकी तुलना न हो सके ।

अनुपयोग—(वि०) [नास्ति उपयोगः यस्य न० ब०] बे मसरफ, बेकार । (पुं०) [न० त०] निरर्थकता, उपयोग में न आना (आहार आदि) ।

अनुपरत—(वि०) [उप√रम्+क्त न० त०] न हटा हुआ, जिसकी इच्छा-निवृत्ति न हुई हो, अबाधित, मृत नहीं ।

अनुपलब्धि—(स्त्री०) [उप√लभ+क्तिन् न० त०] अप्राप्ति, न मिलना, अस्वीकृति, जानकारी न होना ।—सम-(पुं०) जाति के चौबीस भेदों में से एक ।

अनुपलम्भ—(पुं०) [उप√लभ्+घञ् न० त०] बोध या प्रत्यय का अभाव ।

अनुपवीतिन्—(पुं०) [उपवीत+इनि न० त०] जो द्विज यज्ञोपवीत धारण न करे ।

अनुपशय—(पुं०) [न उपशयः न० त०] कोई वस्तु या अवस्था जो रोग की वृद्धि करे, रोगज्ञान के पाँच विधानों में से एक । इससे आहार-विहार के बुरे परिणाम से रोगी के रोग का ज्ञान प्राप्त किया जाता है ।

अनुपसंहारिन्—(पुं०) [उप—सम्√हृ+णिच्+णिनि न० त०] न्याय में एक प्रकार का हेत्वाभास (दुष्ट हेतु । ऐसा हेतु कि जिसमें अन्वय एवं व्यतिरेक का कोई दृष्टान्त न मिल सके ।)

अनुपसर्ग—(वि०) [नास्ति उपसर्गो यस्मिन् न० ब०] शब्दांश जिसमें उपसर्ग न हो, उपसर्ग-रहित ।

अनुपसेचन—(वि०) [नास्ति उपसेचनम् यस्य न० ब०] जिसके पास कोई चटनी, दही, अचार आदि न हो ।

अनुपस्कृत—(वि०) [न उपस्कृतः न० त०] जिसका संस्कार या परिष्कार न किया गया हो, जो सिझाया न गया हो ।

अनुपस्थानम्—(न०) गैरहाजिरी, अनुपस्थिति, समीप न होना, अविद्यमानता ।

अनुपस्थित—(वि०) [न० त०] गैरहाजिर, मौजूद नहीं, अविद्यमान ।

अनुपस्थिति—(स्त्री०) [न० त०] गैरहाजिरी, अविद्यमानता ।

अनुपहत—(वि०) [न० त०] चोटिल नहीं, अव्यवहृत, काम में न लाया हुआ, कोरा (जैसा कपड़ा) ।

अनुपाकृत—(वि०) [उप—आ√कृ+क्त न० त०] यज्ञ में मन्त्रों से पशु का पूजन आदि संस्कार उपाकरण कहलाता है उससे रहित ।

अनुपाख्य—(वि०) [नास्ति उपाख्या यस्य

न० त०] जो साफ-साफ देखा या पहचाना न जा सके।

अनुपातक——(न०) [अनुपातयति स्वानुरूपं नरकं गमयति इति अनु√पत्+णिच्+ण्वुल्] महापातक के समान पाप——जैसे चोरी, हत्या, व्यभिचार आदि। विष्णुस्मृति में इस श्रेणी में ३५ और मनुस्मृति में ३० प्रकार के पातकों को शामिल किया है।

अनुपान——(न०) [अनु भेषजेन सह पश्चात् वा पीयते इति अनु√पा+ल्युट्] वह पदार्थ जो किसी औषध के साथ या ऊपर से लिया जाय।

अनुपालन——(न०) [अनु√पाल्+ल्युट्] रखवाली, रक्षण, आज्ञापालन।

अनुपुरुष——(पुं०) [अनुगतः अन्यम् पुरुषम् अव्या० स०] अनुयायी, पूर्वोक्त व्यक्ति।

अनुपूरक——(वि०) [अनु√पूर्+ण्वुल्] किसी के साथ मिलकर उसकी कमी पूरी करने वाला, छूट या कमी आदि पूरी करने के लिये बाद में बढ़ाया हुआ। (सप्लेमेंटरी)

अनुपूर्व——(वि०) [अनुगतः पूर्वम् अत्या० स०] यथाक्रम, सिलसिलेवार, सुविभक्त, समपरिमित।——**ज**–(वि०) पीढ़ी दर पीढ़ी, साख ब साख।——**वत्सा**–(वि०) गौ जो नियमित रूप से बच्चे दे।——**शस्**–(क्रि० वि०) क्रमागत रीति से।

अनुपेत——(वि०) [न उपेतः न० त०] जो अभी गुरुकुल में प्रविष्ट न हुआ हो, जिसका उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार न हुआ हो।

अनुप्त——(वि०) [√वप्+क्त न० त०] जो बोया न गया हो।

अनुप्रयोग——(पुं०) [प्रा० स०] बार-बार दुहराना, अतिरिक्त प्रयोग।

अनुप्रवेश——(पुं०) [प्रा० स०] दरवाजे के भीतर जाना, किसी के मन के भीतर घुसना, मन में स्थान करना।

अनुप्रसक्ति——(स्त्री०) [प्रा० स०] घनिष्ठ प्रेम, प्रगाढ़ अनुराग, (शब्दों का) अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध।

अनुप्रसादन——(न०) [अनु–प्र√सद्+णिच्+ल्युट्] दूसरे को सन्तुष्ट या प्रसन्न करने की क्रिया।

अनुप्राप्ति——(स्त्री०) [अनु–प्र√आप+क्तिन्] लाभ, पहुँच।

अनुप्रास——(पुं०) [अनु–प्र√अस्+घञ्] एक अलङ्कार। इसमें किसी पद में एक ही अक्षर बार-बार प्रयुक्त होकर उस पद को अलङ्कृत करता है। वर्णवृत्ति, वर्णमैत्री, वर्णसाम्य।

अनुप्लव——(पुं०) [अनु√प्लु+अच्] अनुयायी, नौकर, सहायक।

अनुबद्ध——[अनु√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ, गसा हुआ, जकड़ा हुआ, यथा-क्रम अनुगमन करने वाला, सम्बन्धयुक्त, सतत, लगातार।

अनुबन्ध——(पुं०) [अनु√बन्ध+घञ्] बन्धान, सम्बन्ध, सिलसिला, परिणाम, फल, इरादा, उद्देश्य, कारण, व्याकरण में प्रकृति, प्रत्यय, आगम, आदेश आदि में कार्य के लिये जो वर्ण लगा दिये जाते हैं, वे भी अनुबन्ध कहे जाते हैं। माता-पिता का अनुवर्तन करने वाला पुत्र, भावी अशुभ परिणाम, वेदान्त में एक-एक विषय का अधिकरण, वात, कफ, पित्त में जो अप्रधान हो, लगाव, होने वाला शुभ या अशुभ, प्रकृति, प्यास, आरंभ, मार्ग, संतान।——**चतुष्टय**–(पुं०) विषय, प्रयोजन, अधिकारी और सम्बन्ध——इन चार का समुदाय।

अनुबन्धन——(न०) [अनु√बन्ध+ल्युट्] लगाव, सम्बन्ध, क्रम।

अनुबन्धिन्——(वि०) [अनु√बन्ध+णिनि] लगाव रखने वाला, सम्बन्धी, परिणामस्वरूप, समृद्धिशाली, अबाधित।

अनुबन्धी——(स्त्री०) [अनुबध्यते अनया इति अनु√बन्ध्+घञ्, गौरा० ङीप्] हिचकी प्यास।

अनुबन्ध्य—(वि०) [अनु√बन्ध्+ण्यत्] मुख्य, प्रधान। मार डालने के लिये। बाँधने योग्य।

अनुबल—(न०) [अनु=पश्चात् स्थितम् बलम् प्रा० स०] मुख्य सेना की रक्षा के लिये उसके पीछे स्थित सैन्यदल, सहायक सैन्यदल।

अनुबोध—(पुं०) [अनु√बुध+णिच्+घञ्] स्मरण या बोध जो पीछे हो। गन्धोद्दीपन।

अनुबोधन—(न०) [अनु√बुध+णिच्+ल्युट्] प्रबोधन। स्मरण। स्मरणशक्ति।

अनुब्राह्मण—(न०) [सादृश्ये अव्य० स०] ब्राह्मण ग्रन्थ के सदृश ग्रन्थ।

अनुभव—(पुं०) [अनु√भू+अप्] साक्षात् करने से या परीक्षा द्वारा प्राप्त ज्ञान, तजरबा। परिणाम। फल।—**सिद्ध**-(वि०) अनुभव या तजरबा करके देखा हुआ, परीक्षा-सिद्ध।

अनुभाव—(पुं०) [अनु√भू+णिच्+घञ्] राजसी चमकदमक। महिमा, बड़ाई, अधिकार। प्रभाव। सामर्थ्य। निश्चय। [अनु √भू+णिच्+अच्] हृदयस्थित भाव को प्रकाशित करने वाली कटाक्ष रोमाञ्चादि चेष्टा। काव्य में रस के चार अंगों में से एक, वे गुण और क्रियाएँ जिनसे रस का बोध हो सके। (अनुभाव के सात्त्विक, कायिक, मानसिक और आहार्य चार भेद माने जाते हैं। हाव भी इसी के अन्तर्गत है।)

अनुभावक—(वि०) [अनु√भू+णिच्+ण्वुल्] अनुभव कराने वाला। बतलाने या समझाने वाला, निर्देशक।

अनुभावन—(न०) [अनु√भू+णिच्+ल्युट्] चेष्टाओं द्वारा मानसिक भावों का निर्देश करना अर्थात् बतलाना।

अनुभाषण—(न०) [अनु√भाष्+ल्युट्] किसी दावे या कथन को दुहरा कर खण्डन करना। खण्डन करने के लिये किसी दावे या कथन को दुहराना।

अनुभूति—(स्त्री०) [अनु√भू+क्तिन्] अनुभव। परिज्ञान, पहचान। न्याय के अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शब्दबोध द्वारा प्राप्त ज्ञान।

अनुभोग—(पुं०) [अनु+भुज्+घञ्] वह भूमि जो किसी को किसी काम के बदले माफी में दी जाय, खिदमती, सुखभोग, विलास।

अनुभ्रातृ—(पुं०) [अनुगतो भ्रातरम् अत्या० स०] छोटा भाई।

अनुमत—(वि०) [अनु√मन्+क्त] सम्मत। स्वीकृत। प्रिय। कृपापात्र। (पुं०) अनुरागी, आशिक। (न०) स्वीकृति, रजामंदी। अनुमति, अनुज्ञा।

अनुमति—(स्त्री०) [अनु√मन्+क्तिन्] आज्ञा, अनुज्ञा, हुक्म। स्वीकृति। पूर्णिमा जिसमें एक कला कम हो, चतुर्दशीयुक्त पूर्णिमा।—**पत्र** (न०) प्रमाणपत्र जिसमें किसी काम की मंजूरी दी गई हो।

अनुमत्त—(वि०) [अनु√मद्+क्त] हर्ष से उन्मत्त, खुशी के मारे आपे से बाहर।

अनुमनन—(न०) [अनु√मन्+ल्युट्] स्वीकृति। अनुमति, आज्ञा, इजाजत। स्वतन्त्रता।

अनुमन्त्रण—(न०) [अनु√मन्त्र+णिच्+ल्युट्] मंत्रों द्वारा आवाहन या प्रतिष्ठा।

अनुमरण—(न०) [अनु√मृ+ल्युट्] पीछे मरना, किसी पहले मरे हुए के पीछे मरना। किसी विधवा का पीछे सती होना।

अनुमा—(स्त्री०) [अनु√मा+अङ्] अनुमिति, अनुमान।

अनुमातृ—(वि०) [अनु√मा+तृच्] अनुमान करने वाला।

अनुमान—(न०) [अनु√मि या √मा+ल्युट्] अटकल, अंदाजा। भावना, विचार। परिणाम, नतीजा। न्यायशास्त्रानुसार प्रमाण के चार भेदों में से एक। इससे प्रत्यक्ष साधनों द्वारा अप्रत्यक्ष साध्य का ज्ञान होता है।

अनुमापक—(वि०) [अनु√मा+णिच्+ण्वुल्] अनुमान कराने वाला। अनुमान का आधार।

अनुमास—(पुं०) [मासम् अनुगतः अत्या० स०] आगे का महीना।

अनुमासम्—(अव्य०) [अव्य० स०] प्रत्येक मास।

अनुमित—(वि०) [अनु√मा या√मि+क्त] अनुमान किया हुआ।

अनुमिति—(स्त्री०) [अनु√मा या√मि+क्तिन्] अनुमान, नव्य न्याय के अनुसार अनुभूमि के चार भेदों में से एक। परामर्श से उत्पन्न ज्ञान, हेतु या तर्क से किसी वस्तु को जान लेना।

अनुमित्सा—(स्त्री०) [अनुमातुम् इच्छा इति अनु√मा+सन्+अङ] अनुमान करने की इच्छा।

अनुमृता—(स्त्री०) [अनु√मृ+क्त, टाप्] वह स्त्री जो सती हुई हो।

अनुमेय—[अनु√मा+यत्] अनुमान के योग्य।

अनुमोद—(पुं०) [अनु√मुद्+घञ्] सहानुभूतिजन्य प्रसन्नता, [अनु√मुद्+णिच्+घञ्] समर्थन। स्वीकृति।

अनुमोदक—(वि०) [अनु√मुद्+णिच्+ण्वुल्] समर्थन करने वाला।

अनुमोदन—(न०) [अनु√मुद्+णिच+ल्युट्] समर्थन, ताईद। स्वीकृति।

अनुयाज—(पुं०) [अनु √यज्+घञ्, कुत्वाभाव] अमावस्या और पौर्णमासी के अंग प्रयाज आदि पाँच याग।

अनुयातृ—(वि०) [अनु√या+तृच्] (दे०) 'अनुयायिन्'।

अनुयात्रम्—(अव्य०) [यात्रायाः पश्चात् इति अव्य० स०] यात्रा के पश्चात्। [यात्रायाम् इति अव्य० स०] यात्रा में।

अनुयात्रिक—(पुं०) [अनुयात्रा=अनुगमनम् अस्ति अस्य इत्यर्थे अनुयात्रा+ठन्—इक] अनुचर, नौकर।

अनुयान—(वि०) [अनु√या+ल्युट्] अनुगमन, पीछे चलना।

अनुयायिन्—(वि०) [अनु √या+णिनि] पीछे गमन करने वाला, अनुवर्ती। (पुं०) अनुचर, नौकर। परिवर्ती घटना।

अनुयुक्त—(वि०) [अनु√युज्+क्त] जिससे पूछ-ताछ की गई हो। परीक्षित। निंदित।

अनुयोक्तृ—(पुं०) [अनु√युज्+तृच्] जिज्ञासु। परीक्षक। शिक्षक।

अनुयोग—(पुं०) [अनु √युज्+घञ्] प्रश्न।। खोज परीक्षा। भर्त्सना, डाँट-डपट, धिक्कार। याचना। उद्योग। ध्यान। टीका-टिप्पणी। —**कृत्**–(पुं०) प्रश्नकर्त्ता। उपदेशक, शिक्षक, गुरु।

अनुयोजन—(न०) [अनु√युज्+ल्युट्] प्रश्न। खोज।

अनुयोज्य—(वि०) [अनु√युज्+ण्यत्] जिससे प्रश्न किया जा सके। जिससे डाँट-फटकार के साथ पूछताछ की जा सके। (पुं०) सेवक।

अनुरक्त—(वि०) [अनु√रञ्ज्+क्त] लाल, रंगीन। प्रसन्न। सन्तुष्ट। अनुरागवान्, प्रेमी।

अनुरक्ति—(स्त्री०) [अनु√रञ्ज्+क्तिन्] प्रेम, अनुराग। भक्ति।

अनुरञ्जक—(वि०) [अनु√रञ्ज्+ण्वुल्] प्रसन्न या संतुष्ट करने वाला, आह्लादकर।

अनुरञ्जन—(न०) [अनु√रञ्ज्+ल्युट्] प्रसन्न या संतुष्ट करना।

अनुरति—(स्त्री०) [अनु √रम्+क्तिन्] प्रेम, अनुराग।

अनुरथ्या—(स्त्री०) [रथ्याम् अन्वायतं स्थिता इति अत्या० स०] पगडंडी, उपमार्ग।

अनुरस—(पुं०) [प्रा० स०] गौण रस (काव्य)। गौण स्वाद। प्रतिध्वनि।

अनुरसित—(न०) [अनु√रस+क्त (भावे)] प्रतिध्वनि।

अनुरहस—(वि०) [अनुगतं रहः अत्या० स० अच्] निर्जन स्थान में गया हुआ। (अव्य०) [अव्य० स०] एकान्त में।

अनुराग—(पुं०) [अनु √रञ्ज्+घञ्] ललाई। भक्ति। प्रेम। स्वामिभक्ति।

अनुरागिन्,—अनुरागवत्—(वि०) [अनुराग+इनि] [अनुराग+मतुप्] प्रेमपूर्ण।

अनुरात्रम्—(अव्य) [अव्य० स०] रात्रि में। प्रत्येक रात्रि। एक रात के बाद दूसरी रात।

अनुराधा—(स्त्री०) [अनुगता राधाम्=विशाखाम् अत्या० स०] २७ नक्षत्रों में से १७वाँ, यह सात तारों के मिलने से सर्पाकार है।

अनुरूप—(वि०) [रूपस्य सादृश्ये योग्यत्वे वा अव्य० स०] अनुहार, तुल्य, सदृश, समान, सरीखा। योग्य, अनुकूल, उपयुक्त।

अनुरूपतस्,—अनुरूपशस्— (क्रि० वि०) [अनुरूप+तस्] [अनुरूप+शस्] सादृश्य से, अनुहार से, अनुसार।

अनुरोध—(पुं०)—**अनुरोधन**-(न०) [अनु√रुध्+घञ्] [अनु√रुध्+ल्युट्] अनुसरण। लिहाज। विचार। रुकावट, बाधा। आग्रह, दबाव। विनयपूर्वक किसी बात के लिये आग्रह। प्रार्थना।

अनुरोधिन्,—अनुरोधक—(वि०) [अनु √रुध्+णिनि] [अनु√रुध्+ण्वुल्] अनुसरण करने वाला। अपेक्षा रखने वाला। विनयी, विनम्र।

अनुलम्बन—(न०) [अनु√लम्ब+णिच्+ल्युट्] किसी कर्मचारी के अपराधी या दोषी होने का संदेह उत्पन्न होने पर उसे तब तक के लिये अपने पद से हटा देना जब तक उस सम्बन्ध में यथोचित छानबीन या जाँच न हो ले (सस्पेंशन)।

अनुलाप—(पुं०) [अनु वारं वारम् लप्यते इति विग्रहे अनु√लप+घञ्] वारवार कथन, पुनरुक्ति, द्विरुक्ति। (न्याय०) पुनर्वाद, आम्रेडन।

अनुलास,—अनुलास्य-(पुं०) मोर, मयूर।

अनुलेप—(पुं०)—**अनुलेपन**-(न०) [अनु √लिप्+घञ्] [अनु√लिप्+ल्युट्] किसी तरल वस्तु की तह चढ़ाना, सुगन्धित वस्तुओं को शरीर में लगाना, उबटन करना। उबटन, लेप।

अनुलोम—(वि०) [अत्या० स०] केश-सहित। क्रमबद्ध। नियमित। अनुकूल। (पुं०) वर्णसंकर जाति के वंशज। संगीत में स्वरों का उतार, अवरोह। (अव्य०) [अव्य० स०] क्रमानुसार। नियमित रूप से।—**अर्थ**-(वि०) अनुकूल कथनवाला।—**ज,—जन्मन्**-(वि०) यथाक्रम उत्पत्ति वाला, पिता की अपेक्षा हीनवर्णा माता की सन्तान, वर्णसङ्कर।

अनुलोमा—(स्त्री०) [अत्या० स०] पति से हीन वर्ण की स्त्री।

अनुल्बण—(वि०) [न उल्वणः न० त०] अत्यधिक नहीं। न अधिक न कम। अस्पष्ट, अव्यक्त।

अनुवंश—(पुं०) [वंशम् अनुगतः अत्या० स०] परंपरागत वृत्तान्त। वंशावलीपत्र या वंशवृक्ष, वंशावलीपत्र।

अनुवक्र—(वि०) [प्रा० स०] कुछ टेढ़ा।

अनुवचन—(न०) [प्रा० स०] दुहराना। पाठ। शिक्षण। भाषण। अध्याय।

अनुवत्सर—(पुं०) [प्रा० स०] ज्योतिष के अनुसार पाँच वर्षों के युग का चौथा वर्ष। (अव्य०) [अव्य० स०] प्रति वर्ष, हर साल।

अनुवर्तन—(न०) [अनु √वृत्+ल्युट्] अनुगमन। आज्ञापालन। समर्थन। प्रसन्नता। कृतज्ञता। पसंदगी। परिणाम, फल। किसी पूर्ववर्ती सूत्र से पदों को ले आना।

अनुवश—(वि०) [अत्या० स०] दूसरे का

वशवर्ती, दूसरे की इच्छा पर निर्भर, परवश। आज्ञाकारी।

अनुवाक––(पुं०) [अनु उच्यते इति विग्रहे अनु√वच् घञ्] गानशून्य ऋचाओं का भेद। ऋग् और यजुस् का समूह। वेद का भाग। दुहराना।

अनुवाक्या––(स्त्री०) [अनु√वच्+ण्यत्] वह मंत्र जिसे प्रशास्ता नाम से प्रसिद्ध ऋत्विक् देवता को बुलाने के लिये पढ़ता है। वैदिक स्तोत्र। वैदिक विधि।

अनुवाचन––(न०) [अनु√वच्+णिच्+ल्युट्] अध्वर्यु के आदेशानुसार होता द्वारा ऋग्वेद के मंत्रों का पाठ। पढ़वाना, पाठ कराना। स्वयं बांचना या पढ़ना।

अनुवाते––(अव्य०) [अव्य० स०] हवा का रुख, जिस ओर की हवा हो उस ओर। (पुं०) [अनुकूलो वातः प्रा० स०] वह वायु जो जाने वाले की ओर बह रही हो। शिष्य की ओर से गुरु की ओर बहने वाली वायु।

अनुवाद––(पुं०) [अनु√वद्+घञ्] पुनरुक्ति। व्याख्या करने के लिये या उदाहरण देने के लिये अथवा पुष्ट करने के लिये किसी अंश का बार-बार पढ़ना। किसी ऐसे विषय का जिसका निरूपण हो चुका हो, व्याख्या रूप में या प्रमाण रूप में पुनः पुनः कथन, समर्थन। सूचना। अफवाह। भाषान्तर, उल्था, तर्जुमा।

अनुवादक,––अनुवादिन्–(वि०) [अनु√वद्+ण्वुल्] [अनु√वद्+णिनि] उल्था करने वाला, भाषान्तर करने वाला। व्याख्या के साथ दुहराने वाला। समर्थन करने वाला। (पुं०) संगीत में स्वर का एक भेद।

अनुवाद्य––(वि०) [अनु√वद्+ण्यत्] अनुवाद करने योग्य। व्याख्या करने योग्य। उदाहरणीय।

अनुवारम्––(अव्य०)[अव्य० स०]वार-वार। समय-समय पर। अक्सर।

अनुवास––(पुं०)–**अनुवासन**–(न०) [अनु√वस+णिच्+घञ्] [अनु√वस+णिच्+ल्युट् (भावे)] धूप आदि सुगंधित द्रव्यों से सुगंधित करना, बसाना। स्नेहवस्ति––तैल पदार्थों का एनिमा करना, स्नेहयुक्त करना। (पुं०) [करणे ल्युट्] पिचकारी।

अनुवासित––(वि०) [अनु√वस+णिच्+क्त] बसाया हुआ, सुवासित, सुगन्धित।

अनुवित्ति––(स्त्री०) [अनु√विद्+क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि।

अनुविद्ध––[अनु√व्यध्+क्त] छिदा हुआ, सुराख किया हुआ। फैला हुआ। छापा हुआ। ओतप्रोत, परिपूर्ण, व्याप्त। संमिश्रित, सम्बन्धयुक्त। जड़ा हुआ।

अनुविधान––(न०) [अनु––वि√धा+ल्युट्] आज्ञापालन। आज्ञानुसार कार्य करना।

अनुविधायिन्––(वि०) [अनु––वि√धा+णिनि)] आज्ञाकारी।

अनुविनाश––(पुं०) [प्रा० स०] पीछे से विनाश।

अनुविष्टम्भ––(पुं०) [प्रा० स०] परिणामस्वरूप बाधा में पड़ा हुआ। अन्त में रुद्ध।

अनुवृत्त––[अनु√वृत्+क्त] आज्ञापालन या अनुवर्तन करने वाला। अबाधित, विना रोका टोका हुआ। सतत। प्रविष्ट। व्याप्त। पालित।

अनुवृत्ति––(स्त्री०) [अनु√वृत्+क्तिन्] स्वीकृति। आज्ञापालन। समर्थन। अनुसरण। सातत्य। निरवच्छिन्नता। आवृत्ति। वाक्यार्थ स्पष्ट करने के लिये पूर्ववर्ती वाक्य का कुछ अंश लेना।

अनुवेलम्––(अव्य०) [अव्य० स०] कभी-कभी, समय-समय। सदैव।

अनुवेश––(पुं०) **अनुवेशन**–(न०) [अनु विश्√ +घञ्] [अनु√विश्+ल्युट्] अनुसरण। पीछे प्रवेश करना। ज्येष्ठ के अविवाहित रहते कनिष्ठ भाई का विवाह।

अनुव्यञ्जन--(न०) [प्रा० स०] गौण लक्षण या चिह्न ।

अनुव्याध--**अनुवेध**-(पुं०) [अनु√व्यध्+घञ्] [अनु√विध+घञ्] चोट । छेदन, वेधन । संभोग । मिलन । रोक ।

अनुव्याहरण--(न०)--**अनुव्याहार**-(पुं०) [अनु--वि०--आ√हृ+ल्युट्] [अनु--वि--आ√हृ+घञ्] पुनरुक्ति, पुनः पुनः उच्चारण । शाप ।

अनुव्रजन--(न०) --**अनुव्रज्या** --(स्त्री०) [अनु√व्रज्+ल्युट्] [अनु√व्रज्+क्यप्] घर आये हुए शिष्ट पुरुषों के जाने के समय कुछ दूर तक उनको पहुँचाने के लिये जाना, अनुगमन । पीछे जाना ।

अनुव्रत--(वि०) [अनुकूलं व्रतम्=कर्म यस्य ब० स०] निर्धारित कर्त्तव्य का समुचित रूप से पालन करने वाला । भक्त । अनुरक्त ।

अनुशतिक--(वि०) [शतेन क्रीतः इत्यर्थे शत+ठन्--इक] सौ के साथ या सौ में खरीदा हुआ ।

अनुशय--(पुं०) [अनु√शी+अच्] पश्चात्ताप । दुःख । क्षोभ । भारी वैर, घोर शत्रुता । महाक्रोध । घृणा । घनिष्ठ सम्बन्ध । घनिष्ठ अनुराग । किसी वस्तु के खरीदने के बाद का क्षोभ । दुष्कर्मों का परिणाम । दान संबंधी विवादों का निर्णय ।

अनुशयान--(वि०) [अनु√शी+शानच्] पश्चात्ताप करने वाला । क्षुब्ध । दुःखी ।

अनुशयाना--(स्त्री०) [अनु√शी+शानच् टाप्] परकीया नायिका का एक भेद । वह जो अपने प्रिय के मिलने के स्थान के नष्ट होने पर दुःखी हो ।

अनुशयिन्--(पुं०) [अनु√शी+इनि] वह जीव जो चंद्रलोक का भोग समाप्त होने पर पश्चात्ताप करता है और भूलोक में आने के लिये इच्छुक रहता है । (वि०) अनुरक्त । पश्चात्ताप करने वाला । अत्यधिक घृणोत्पादक । वैर या द्वेष रखने वाला ।

अनुशर--(पुं०) [अनु√शृ+अच्] राक्षस ।

अनुशासक,-- **अनुशासिन्,**-- **अनुशास्तृ**--(वि०) [अनु√शास+ण्वुल्] [अनु√शास्+णिनि] [अनु√शास+तृच्] शासन करने वाला । आज्ञा देने वाला । देश या राज्य का प्रबन्ध करने वाला । उपदेष्टा, शिक्षक ।

अनुशासन--(न०) [अनु√शास+ल्युट्] उपदेश, शिक्षा । आज्ञा, आदेश । व्याख्यान, विवरण । महाभारत का एक पर्व ।

अनुशिष्टि--(स्त्री०) [अनु√शास+क्तिन्] आदेश । शिक्षण । आज्ञा । विचारपूर्वक कर्तव्याकर्तव्य का निरूपण ।

अनुशीलन--(न०) [अनु√शील+ल्युट्] बार-बार देखना या विचारना या अभ्यास करना । नियमित अध्ययन ।

अनुशोक--(पुं०)--**अनुशोचन**--(न०) [अनु√शुच्+घञ्] [अनु√शुच्+ल्युट्] शोक, पछतावा । दुःख, खेद ।

अनुश्रव--(पुं०) [अनुश्रूयते गुरुपरम्परया उच्चारणात् अनु अभ्यस्यते, श्रूयते एव न तु केनापि क्रियते वा इति अनु√श्रु+अप्] गुरु-परम्परा से उच्चारित, जो केवल सुना जाय, वेद ।

अनुषक्त--[अनु√सञ्ज्+क्त] सम्बन्धित । चिपका हुआ, सटा हुआ ।

अनुषङ्ग--(पुं०) [अनु√सञ्ज्+घञ्] अति निकट सम्बन्ध या विद्यमानता । सम्बन्ध, मेल । एकी भाव, संहति । एक शब्द का दूसरे शब्द से सम्बन्ध । निश्चित परिणाम । दया, करुणा । प्रसङ्ग से एक वाक्य के आगे और वाक्य लगा लेना । (न्याय में) उपनयन के अर्थ को निगमन में ले जाकर घटाना । उत्कट इच्छा ।

अनुषङ्गिन्—(वि०) [अनु√सञ्ज्+णिनि] सम्बन्धयुक्त, सम्बन्धी। सटा हुआ, चिपका हुआ। व्याप्त।

अनुषेक—(पुं०) [अनु√सिच्+घञ्] पानी से बार-बार तर करना। सींचना।

अनुषेचन—(न०) [अनु√सिच्+ल्युट्] दे० 'अनुषेक'।

अनुष्टुति—(स्त्री०) [अनु√स्तु+क्तिन्] स्तुति। प्रशंसा। (यथाक्रम)।

अनुष्टुभ—(स्त्री०) [अनु√स्तुम्भ्+क्विप्-षत्व] प्रशंसा से पूर्ण वाणी। सरस्वती। चार पाद का एक छन्द। इसके प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं।

अनुष्ठातृ—**अनुष्ठायिन्**—(वि०) [अनु√स्था+तृच्] [अनु√स्था+णिनि] अनुष्ठान करने वाला। कार्य आरंभ करने वाला।

अनुष्ठान—(न०) [अनु√स्था+ल्युट् षत्व] किसी क्रिया का प्रारम्भ। शास्त्रविहित किसी कर्म को नियमपूर्वक करना। पुरश्चरण।

अनुष्ठापन—(न०) [अनु√स्था+ णिच् ल्युट्] कोई काम करवाना।

अनुष्ठेय—(वि०' [अनु√स्था+यत्] अनुष्ठान के योग्य। करणीय।

अनुष्ण—(वि०) [न उष्णः न० त०] जो गर्म न हो, ठंडा। सुस्त, काहिल। (न०) नीलकमल।—**अशीत** (अणुष्णाशीत)—(वि०) जो न ठंडा हो और न गरम।—**गु**-(पुं०) चंद्रमा।—**वल्लिका**-(स्त्री०) नील दूर्वा।

अनुष्यन्द—(पुं०) [अनु√स्यन्द्+घञ्] पिछला पहिया।

अनुष्वध—(वि०) [स्वधाम् अनु, स्वधया सहितः] अन्न या भोजन सहित। (क्रि० वि०) भोजन के पश्चात्। किसी की इच्छा के अनुसार।

अनुसन्धान—(न०) [अनु√सम्√धा+ ल्युट्] खोज, तहकीकात, सूक्ष्म निरीक्षण या पर्यवेक्षण। परीक्षा, जाँच। चेष्टा, प्रयत्न। उपयुक्त सम्बन्ध।

अनुसन्धि—(पुं०) [अनु√सम्√धा+ कि] गुप्त मंत्रणा। गुप्त योजना।

अनुसंहित—[अनु—सम्√धा+क्त] तहकीकात किया हुआ। खोज किया हुआ। जाँचा हुआ।

अनुसंहितम्—(अव्य०) [अव्य० स०] (वेद में) संहिता के अनुसार।

अनुसमय—(पुं०) [अनु—सम्√इ+अच्] नियमित या उपयुक्त सम्बन्ध जैसा कि शब्दों का।

अनुसमापन—(न०) [अनु—सम्√आप् +ल्युट्] नियमित समाप्ति।

अनुसम्बन्ध—(वि०) [अनुगतः सम्बन्धम् अत्या० स०] सम्बन्धयुक्त।

अनुसर—(पुं०) [अनु√सृ+अच्] अनुचर, नौकर। सहचर, साथी।

अनुसरण—(न०) [अनु√सृ+ल्युट्] पीछे-पीछे चलना। पीछा करना। समर्थन। अनुकूल आचरण। अनुकरण।

अनुसर्प—(पुं०) [अनु√सृप्+अच्] पेट के बल रेंगने वाले जन्तु। छिपकली, सर्प आदि।

अनुसवनम्—(अव्य०) [अव्य० स०] यज्ञानन्तर। प्रत्येक यज्ञ में। प्रतिक्षण।

अनुसाम—(वि०) [अत्या० स०] अनुकूल। संतुष्ट किया हुआ।

अनुसायम्—(न०) [अव्य० स०] प्रतिसन्ध्या, हर शाम।

अनुसार—(पुं०) [अनु√सृ+घञ् (भावे)] अनुसरण, अनुक्रम। पद्धति, रीति-रस्म। निश्चित परिपाटी। प्राप्त या प्रतिष्ठित अधिकार। (वि०) [कर्तरि घञ्] अनुकूल। अनुरूप, मुताबिक।

अनुसारक—**अनुसारिन्**—(वि०) [अनु√

सृ+ण्वुल्] [अनु√सृ+णिनि] अनुसरण करने वाला। खोज करने वाला। अनुरूप।

अनुसारणा—(स्त्री०) [अनु√सृ+णिच्+युच्] पीछे-पीछे जाना। पीछा करना।

अनुसूचक—(वि०) [अनु√सूच्+णिच्+ण्वुल] बतलाने वाला, निर्देश करने वाला।

अनुसूचन—(न०) [अनु√सूच्+णिच्+ल्युट्] निर्देश, बतलाना। प्रकट करना।

अनुसूची—(स्त्री०) [अनु√सूच्+णिच्+इन्, ङीप्] खानापूरी। कोष्ठक या व्यवस्थित सूची के रूप में दी गयी वह नामावली जो प्राय: किसी विवरण, नियमावली आदि के परिशिष्ट की तरह दी जाय। (शेड्यूल)।

अनुसृति—(स्त्री०) [अनु√सृ+क्तिन्] पीछे, पीछे जाना, पीछे चलना। समर्थन।

अनुसेविन्—(वि०) [अनु√सेव+णिनि] सेवा करने वाला।

अनुसैन्य—(न०) [सैन्यम् अनुगतम् अत्या० स०] किसी सेना का पिछला भाग। मुख्य सेना का सहायक सैन्य दल।

अनुस्कन्दम्—(अव्य०) [अव्य० स०] यथा-क्रम से उत्तराधिकारी होना। क्रम से किसी वस्तु का मालिक होना, 'गेहं गेहमनुस्कन्दम्।' सिद्धान्तकौमुदी।

अनुस्तरण—(न०) [अनु√स्तृ+ल्युट्] चारों ओर से सीना या गाँठना। चारों ओर फैलाना या बिछाना।

अनुस्तरणी—(स्त्री०) [अनु√स्तृ+ल्युट्, ङीप्] गौ। वह गौ जो किसी के मृतक कर्म में उत्सर्ग की जाय।

अनुस्मरण—(न०) [अनु√स्मृ+ल्युट्] स्मरण, याददाश्त। बार-बार का स्मरण।

अनुस्मारक—(वि०) [अनु√स्मृ+णिच्+ण्वुल्] स्मरण दिलाने वाला (पत्र या व्यक्ति आदि)। (रिमाइंडर)।

अनुस्मृति—(स्त्री०) [अनु√स्मृ+क्तिन्] वह स्मृति या स्मरण जो प्रिय हो। अन्य वस्तुओं को त्याग कर एक ही वस्तु का ध्यान या चिंतन।

अनुस्यूत—(वि०) [अनु√सिव+क्त, ऊठ्] ग्रथित। बुना हुआ। खूब मिला हुआ। सिला हुआ। बँधा हुआ।

अनुस्वान—(पुं०) [अनु√स्वन्+घञ्] झांई, प्रतिध्वनि, एक स्वर के समान दूसरा स्वर।

अनुस्वार—(पुं०) [अनु√स्वृ+घञ्] स्वर के बाद उच्चारण किया जाने वाला एक अनुनासिक वर्ण। इसका चिह्न [ं] है, स्वर के ऊपर की बिंदी।

अनुहरण—(न०) **अनुहार**—(पुं०) [अनु√हृ+ल्युट्] [अनु√हृ+घञ्] नकल। समानता।

अनूक—(पुं०) (न०) [अनु√उच्+क, कुत्वम् नि०] मेरुदंड, रीढ़। मेहराब के बीच की ईंट। वेदी का पिछला हिस्सा। एक यज्ञ-पात्र। पूर्वजन्म। वंश। कुटुम्ब। स्वभाव।

अनूचान—(वि०) [अनु√वच्+कान नि०] साङ्गोपाङ्ग वेद पढ़ा हुआ विद्वान्। वेदों का अर्थ करने वाला। विनय-युक्त, सुशील। —**मानी**-(वि०) अपने को वेदार्थ का ज्ञाता समझने वाला।

अनूढ—(वि०) [√वह्+क्त न० त०] न ढोया हुआ, न ले जाया हुआ। क्वारा। अविवाहित। —**मान**-(वि०) लज्जाशील, लजवन्त, लजीला। —**भ्रातृ**-(पुं०) अविवाहित पुरुष का भाई।

अनूढा—(स्त्री०) [√वह्+क्त, टाप् न० त०] क्वारी, अविवाहिता। —**भ्रातृ**-(पुं०) अविवाहिता स्त्री का भाई। राजा की रखैल का भाई।

अनूदक—(न०) [उदकस्याभाव: न० त०] जलाभाव। सूखा, अनावृष्टि।

अनूदित—(वि०) [अनु√वद्+क्त] पीछे कहा हुआ, उलथा किया हुआ, भाषांतरित।

अनूद्य--(वि०) [अनु√वद्+क्यप्] पीछे कहे जाने योग्य । अनुवाद करने योग्य ।

अनूद्देश--(पुं०) [अनु--उत्√दिश+घञ्] एक अलङ्कार ।

अनून--(वि०) [ऊन+क न० त०] जो हीन या घटिया न हो । अधिक । जिसे पूरा अधिकार हो । संपूर्ण, समग्र ।

अनूप--(वि०) [अनुगता आपो यत्र ब० स० अच् आत उत्वम्] जल के पास का या जल की अधिकता वाला । दलदल वाला । (पुं०) जलप्राय या अधिक जल वाला स्थान या देश । एक देश का नाम । दलदल । तालाव । (नदी आदि का) किनारा । मेढक । तीतर की जाति का एक पक्षी । **भैंसा** । हाथी ।**--ज**-(न०) नम, तर । अदरक, आदी ।**--प्राय**-(वि०) दलदल वाला ।

अनूरु--(वि०) [नास्ति ऊरू यस्य न० ब०] जंघारहित । (पुं०) सूर्य के सारथि अरुण देव । उषःकाल, भोर, तड़का ।**--सारथि**-(पुं०) सूर्य ।

अनूर्जित--(वि०) [न ऊर्जितः न० त०] अदृढ़ । निर्बल । सामर्थ्यहीन । गर्वरहित ।

अनूषर--(वि०) [न ऊषरः न० त०] जो लोना या ऊसर न हो ।

अनृच्, अनृच--(वि०) [नास्ति ऋक् यस्य न० ब०] [न० ब० अच्] बिना ऋचा का । जो ऋग्वेद न पढ़ा हो या न जानता हो । यज्ञोपवीत न होने के कारण जिसे वेदाध्ययन का अधिकार न हो ।

अनृचो माणवकः ।

मुग्धबोध ।

अनृज--(वि०) [न ऋजुः न० त०] जो सीधा न हो, टेढ़ा । दुष्ट, बेईमान, बुरा ।

अनृण--(वि०) [नास्ति ऋणम् यस्य न० ब०] जो कर्जदार न हो । जिसके ऊपर ऋषियों, देवों एवं पितरों का ऋण न हो ।

अनृत--(वि०) [न ऋतम् यस्य न० ब०] झूठा । (न०) खेती । व्यापार । [न० त०] असत्य, झूठा ।**--वदन,--भाषण,--आख्यान** (न०) झूठ बोलना, असत्य बोलना ।**--वादिन्--वाच्**-(वि०)झूठा ।**--व्रत**-(वि०) जो अपना व्रत झूठा सिद्ध करे । जो अपने वचन या प्रतिज्ञा का पालन न करे ।

अनृतु--(पुं०) [न ऋतुः न० त०) अनुचित समय, वेठीक वक्त ।**--कन्या**-(स्त्री०) लड़की जिसको रजस्वलाधर्म न हुआ हो ।

अनेक--(वि०) [न एकः न० त०] एक नहीं, एक से अधिक, कई । भिन्न-भिन्न । वियुक्त । विभाजित ।**--काम**-(वि०) बहुत सी इच्छाओं वाला ।**--कालावधि**-(अव्य०) चिरकाल से ।**--कृत्**-(पुं०) शिव ।**--चर**-(वि०) झुंड बनाकर रहने वाला, समूह में रहने वाला ।**--चित्त**-(वि०) जिसका मन चंचल हो ।**--त्र**-(अव्य०) कई जगह ।**--धा**-(अव्य०) कई प्रकार से ।**--प**-(पुं०) हाथी ।**--भार्य**-(वि०) जिसकी कई स्त्रियाँ हों ।**--रूप**-(वि०) कई रूपों वाला । अस्थिर । (पुं०) परमेश्वर ।**--लोचन**-(पुं०) शिव । इंद्र । विराट् पुरुष ।**--वर्ण**-(न०) अज्ञात राशियाँ (बीजगणित) ।**--विध**-(वि०) कई प्रकार का ।**--शः**-(अव्य०) कई वार, बहुधा । अनेक प्रकार से । बहुत बड़ी संख्या में, बड़ी तादाद में । बड़े परिमाण में ।

अनेकान्त--(वि०) [न एक एव अन्तः परिच्छेदो यस्य न० ब०]जो एक रूप से मापा या विचार किया नहीं जाता । अनिश्चित, जिसके विषय में कुछ निश्चय न हो । चञ्चल ।**--वाद**-(पुं०) स्यात्वाद, आर्हतदर्शन, जैनदर्शन ।**--वादिन्**-(पुं०) बौद्ध । जैन । सात पदार्थों को मानने वाले नास्तिकों का भेद ।

अनेड--(वि०) [न एडः न० त०] मूर्ख आदमी । अनाड़ी आदमी ।**--मूक**-(वि०) गूंगा वहरा । अंधा । बेईमान । दुष्ट ।

अनेनस्—(वि०) [नास्ति एनः यस्य न० व०] पापरहित । कलङ्कशून्य ।

अनेहस्—(हा) (पुं०) [न हन्यते इति विग्रहे √हन्+अस् 'एह' आदेश] समय, काल ।

अनैकान्त—(वि०) [एकान्त+अण् न० त०] अनिश्चित । चञ्चल, अस्थिर । परिवर्तनीय । नैमित्तिक ।

अनैकान्तिक—(वि०) [एकान्तं नियतं प्राप्नोति, एकान्त+ठक् न० त०] [स्त्री०—**अनैकान्तिकी**) चञ्चल, अस्थिर । न्याय में हेत्वाभास के पाँच प्रकारों में से एक, दुष्ट हेतु ।

अनैक्य—(न०) [एकस्य भावः इत्यर्थे एक+यत् न० त०] एकता का अभाव । वहुत्व । फूट, मतभेद । अव्यवस्था ।

अनैतिह्य—(न०) [न ऐतिह्यम् न० त०] परम्परा-प्राप्त उपदेश या प्रमाण का अभाव ।

अनो—(अव्य०) [न नो न० त०) कहीं, न ।

अनोकशायिन्—(पुं०) [अनोके=अगृहे शेते इति√शी+णिनि] घर में न सोने वाला, भिक्षुक ।

अनोकह—(पुं०) [अनसः=शकटस्य अकम्=गतिम् हन्ति इति√हन्+ड] वृक्ष ।

अनोंकृत—(वि०) [न ओंकृतः न० त०] ओं इस पवित्र अक्षर के साथ न किया हुआ ।

अनौचित्य—(न०) [उचित+ष्यञ् न० त०] अनुचित या नामुनासिब होना । अयोग्यता । अयुक्तता ।

अनौजस्य—(न०) [ओजस् ष्यञ् न० त०] साहस या वल का अभाव ।

अनौद्धत्य—(न०) [उद्धत+ष्यञ् न० त०] उच्छृंखलता या दर्प का अभाव । शील । विनम्रता । शान्ति ।

अनौरस—(वि०) [उरस+अण् न० त०] जो औरस—विवाहिता पत्नी से उत्पन्न—न हो, अवैध या गोद लिया हुआ (पुत्र) ।

√अन्त्—भ्वा० पर० सक० वांधना । अन्तति ।

अन्त—(वि०) [√अम्+तन्] समीप । अखीर । सुन्दर । प्यारा । सव से नीचा । सव से गयावीता । सव से छोटा (उम्र में)। (पुं०) [कभी कभी नपुंसक भी] छोर, सीमा, मर्यादा । किनारा । वस्त्र का आँचल । पड़ोस । सामीप्य । उपस्थिति समाप्ति । मृत्यु, नाश । (व्याकरण में) किसी शव्दका अन्तिम अक्षर या शव्दांश । समासान्त शव्द का अन्तिम शव्द, पिछला भाग या अवशेष भाग जैसे—निशान्त, वेदान्त । प्रकृति, अवस्था । प्रकार, जाति । स्वभाव, मिजाज । सारांश ।—**अवशायिन्**-(पुं०) चाण्डाल ।—**अवसायिन्**-(पुं०) नाई । चाण्डाल ।—**कर**, —**करण**, —**कारिन्**-(वि०) नाशक, मारक ।—**कर्मन्**-(न०) मृत्यु ।—**काल**-(पुं०)—**वेला**-(स्त्री०) मृत्यु का समय या मृत्यु की घड़ी ।—**ग**-(वि०) अन्त तक पहुँचा हुआ । भली भाँति परिचित । —**गति**,—**गामिन्**-(वि०) नष्ट होने वाला, नाशवान् ।—**गमन**-(न०) समाप्ति, पूर्णता । मृत्यु ।—**दीपक**-(न०) अलङ्कार-विशेष ।—**पाल**-(पुं०) आगे का सैन्यदल । द्वारपाल ।—**लीन**-(वि०) छिपा हुआ ।—**लोप**-(पुं०) शव्द के अन्तिम अक्षर का अभाव ।—**वासिन्**-(अन्तेवासिन्)-(वि०) सीमा पर रहने वाला या समीप रहने वाला ।(पुं०) शिष्य जो सदा अपने शिक्षक के समीप रहकर विद्याध्ययन करता है । चाण्डाल जो गाँव के निकास पर रहता है । —**शय्या**-(स्त्री०)भूमि पर का विछौना, मृत्यु-शय्या । कब्रगाह, श्मशान ।—**सत्क्रिया**-(स्त्री०)दाहकर्म ।—**सद्**-(पुं०) शिष्य, छात्र ।

अन्तक—(वि०) [अन्तं करोति इत्यर्थे अन्त+क्विप+ण्वुल्—अक] जिससे मौत हो, नाश करने वाला । (पुं०) काल । यमराज । ईश्वर । सन्निपात ज्वर का एक भेद । सीमा । मृत्यु ।

अन्ततः—(अव्य०) [अन्त+तस्] अन्त

से, अन्त में । सब से पीछे से । कुछ-कुछ, थोड़ा-थोड़ा । भीतर, अन्दर ।

अन्तर्—(अव्य०) [√अन्+अरन् लुडागम](धातु का एक उपसर्ग) बीचोबीच, मध्य में । अन्दर, में । —**अग्नि**–(अन्तरग्नि) (पुं०) जठराग्नि, पेट के अंदर की आग जो भोजन पचाती है ।—**अङ्ग**–(अन्तरङ्ग) (वि०) भीतरी, भीतर का । (न०) भीतरी अंग अर्थात् हृदय, मन । प्रगाढ़ मित्र । — **आकाश**–(अन्तराकाश) (पुं०) ब्रह्म जो हृदय में वास करता है ।—**आकूत**–(अन्तराकूत) (न०) गुप्त विचार, मन में छिपा हुआ इरादा ।—**आत्मन्**–(अन्तरात्मन्) (पुं०) आत्मा, जीव । हृदय । (बहुवचन में) आत्मा के भीतर रहने वाला परमात्मा । —**आराम**–(अन्तराराम) (वि०) मन में आनन्दानुभव करने वाला ।—**इन्द्रिय**–(अन्तरिन्द्रिय) (न०) भीतर की इन्द्रिय, मन ।—**करण**–(अन्तःकरण) (न०) हृदय । जीव । विचार और अनुभव का स्थान । विचार-शक्ति । मन, सत्यासत्य विवेक शक्ति । —**कलह**–(अन्तःकलह) (पुं०) आपसी लड़ाई, गृहयुद्ध ।—**कुटिल**–(अन्तःकुटिल) (वि०) मन का कपटी, कुटिल । (पुं०) शङ्ख । —**कोण**–(अन्तःकोण) (पुं०) भीतरी कोना । —**कोप**–(अन्तःकोप) (पुं०) अंदरूनी गुस्सा, भीतरी क्रोध ।—**गडु**–(अन्तर्गडु) (वि०) निकम्मा, व्यर्थ, अनुपयोगी ।—**गत**–(अन्तर्गत) (वि०) भीतर समाया हुआ । शामिल । गुप्त ।—**गति**-(अन्तर्गति) (स्त्री०) भावना, मन की वृत्ति ।—**गर्भ**–(अन्तर्गर्भ) (वि०) गर्भयुक्त ।—**गिरम्**,—**गिरि**-(अन्तर्गिरम्, अन्तर्गिरि) (अव्य०) पहाड़ों में ।—**गुडवलय**–(अन्तर्गुडवलय) (पुं०) अन्तर्गुदावलय, मलद्वार आदि स्वाभाविक छिद्रों को खोलने मूंदनेवाली गोलाकार पेशी ।—**गूढ**–(अन्तर्गूढ) (वि०) भीतर छिपा हुआ ।—०**विष**–(अन्तर्गूढविष) (पुं०) हृदय में छिपा हुआ विष ।—**गृह**,—**गेह**,—**भवन**–(अन्तर्गृह, अन्तर्गेह, अन्तर्भवन) (न०) घर के भीतर का कोठा या कमरा, तहखाना । —**ग्रस्त**–(अन्तर्ग्रस्त) (वि०) जो किसी विपत्ति, अपराध वा कठिनाई आदि में लिप्त या ग्रस्त हो गया हो । [इनवाल्व्ड] ।—**घण**–(अन्तर्घण) (पुं० न०), घर के द्वार के सामने का खुला हुआ स्थान ।—**चर**–(अन्तश्चर) (वि०) शरीर में व्याप्त ।—**जठर**–(अन्तर्जठर) (न०) पेट ।—**जानु**–(अन्तर्जानु) (वि०) हाथों को घुटनों के बीच रखे हुये ।—**ताप**-(अन्तस्ताप) (पुं०) भीतरी ज्वर ।—**दहन**-(न०)—**दाह**–(अन्तर्दहन, अन्तर्दाह) (पुं०) भीतरी गर्मी । सूजन ।—**देशीय**–(अन्तर्देशीय) (वि०) देश के भीतर होने या उसके भीतरी हिस्से से संबंध रखने वाला ।—०**जलपथ**–(न०) देश के भीतर के जलमार्ग ।—०**वाणिज्य**–(न० दे०) 'अन्तर्वाणिज्य' ।—**द्वार**–(अन्तर्द्वार) (न०) घर का चोर दरवाजा ।—**धान**–(अन्तर्धान) (न०) छिप जाना, लोप हो जाना । मुनि आदि का शरीर छोड़ना ।—**धि**–(अन्तर्धि) (पुं०) ढकना । छिपना । व्यवधान ।—**पट**–(अन्तःपट) (न०) पर्दा, चिक ।—**परिधान**–(अन्तःपरिधान) (न०) पोशाक के सबसे नीचे का वस्त्र ।—**पुर**–(अन्तःपुर) (न०) जनानखाना । महल के भीतर का कमरा । महल के भीतर रहने वाली स्त्रियाँ ।—**पुरिक**–(अन्तःपुरिक) (पुं०) जनानखाने का दरोगा ।—**भाव**–(अन्तर्भाव) (पुं०) अंतर्गत होना । अभाव । तिरोभाव । आशय । अष्टकर्म (जैन०) ।—**भेद**–(अन्तर्भेद) (पुं०) भीतरी झगड़े, आपसी झगड़ा, टंटा ।—**मनस्**–(अन्तर्मनस्) (वि०) उदास, उद्विग्न ।—**मातृका**–(अन्तर्मातृका) (स्त्री०) भीतर शरीर के छह चक्रों की अक्षरावली ।—**मुख**–(अन्तर्मुख) (वि०) भीतर की ओर मुख वाला । भीतर की ओर जाने वाला ।—**यामिन्**-(अन्तर्यामिन्) (वि०)

दिल की बात जानने वाला।(पुं०) अंतःकरण में स्थित जीव की प्रेरणा करने वाला ईश्वर, आत्मा।—**लापिका**–(अन्तर्लापिका) (स्त्री०) वह पहेली जिसका उत्तर उसी के अक्षरों से निकलता हो।—**लीन**–(अन्तर्लीन) (वि०) भीतर छिपा हुआ।—**वत्नी**–(अन्तर्वत्नी) (स्त्री०) गर्भिणी स्त्री।—**वस्त्र,—वासस्**–(अन्तर्वस्त्र, अन्तर्वासस्) (न०) भीतर पहनने का कपड़ा। अंगे आदि के नीचे पहिनने का वस्त्र, बनियाइन आदि।—**वाणि**–(अन्तर्वाणि) (वि०) प्रकाण्ड विद्वान्।—**वाणिज्य**–(अन्तर्वाणिज्य) (न०) देश के भीतरी भागों में होने वाला व्यापार, आभ्यंतर व्यापार (इंटरनल ट्रेड)।—**वेग**–(अन्तर्वेग) (पुं०) अंदरूनी बुखार। भीतर की बबड़ाहट, आन्तरिक चिन्ता।—**वेदि,—वेदी**–(अन्तर्वेदि, अन्तर्वेदी) (स्त्री०) अन्तर्वेद, वह प्रदेश जो गंगा और यमुनानदी के बीच में है।—**वेश्मन्**–(अन्तर्वेश्मन्) (न०) घर के भीतर का कोठा, भीतर का कोठा।—**वेश्मिक**–(अन्तर्वेश्मिक) (पुं०) रनवास का प्रबन्धक।—**शिला**–(अन्तःशिला) (स्त्री०) एक नदी का नाम जो विन्ध्याचल पर्वत से निकलती है।—**सत्त्वा**–(अन्तःसत्त्वा) (स्त्री०) गर्भिणी स्त्री।—**सन्ताप**–(अन्तःसन्ताप) (पुं०) अंदरूनी दुःख, क्षोभ, खेद।—**सलिल**–(अन्तःसलिल) (वि०) पृथिवी के नीचे जल वाला। (न०) वह जल जो जमीन के नीचे बहता है।—**सार**–(अन्तःसार) (वि०) भारी, दृढ़।—**स्वेद**–(अन्तःस्वेद) (पुं०) (मतवाला) हाथी।—**हास**–(अन्तर्हास) (पुं०) खुल कर न हँसी जाने वाली हँसी, गूढ़ हास्य।—**हित**–(अन्तर्हित) (वि०) छिपा हुआ, गूढ़। अदृश्य, गायब।—० **आत्मन्**–(पुं०) शिव।—**हृदय**–(अन्तर्हृदय) (न०) हृदय के भीतर का स्थान।

अन्तर—(वि०) [अन्त√रा+क] भीतरी, भीतर का। समीप का। आत्मीय। प्रिय। समान। भिन्न, दूसरा। बाहरी। बाहर पहना जाने वाला। (न०) भीतर का भाग। छिद्र, सूराख। आत्मा। हृदय। मन। परमात्मा कालसन्धि। बीच का समय या स्थान। अवकाश का समय। कमरा। द्वार, जाने का रास्ता। (समय की) अवधि। मौका, अवसर। (दो वस्तुओं के बीच) अन्तर, फर्क। (गणित में) भिन्नता। शेष। विशेषता। प्रकार, किस्म। निर्बलता। असफलता। त्रुटि। दोष। जमानत। दायित्व-स्वीकृति। सर्वश्रेष्ठता। परिधान, वस्त्र। अभिप्राय, मतलब। प्रतिनिधि। अभाव। (अव्य०) दूर। भीतर।—**अपत्या**–(अन्तरापत्या) (स्त्री०) गर्भवती स्त्री।—**चक्र**–(न०) शरीर के भीतर के छः चक्र (तंत्र)। स्वजन-समूह। चिड़ियों की बोली के आधार पर शुभाशुभ जानने की विद्या। दिशा-विदिशा के बीच के अंतर का चतुर्थांश।—**ज्ञ**–(वि०) भीतर का हाल जानने वाला। दूरदर्शी। परिणामदर्शी।—**दिशा** (स्त्री०) दो दिशाओं के बीच की दिशा, विदिशा।—**पुरुष,—पूरुष**–(पुं०) जीव। आत्मा, वह देवता जो पुरुष के भीतर वास करता और उसके शुभाशुभ कर्मों का साक्षी बना रहता है।—**प्रभव**–(पुं०) वर्णसङ्कर जाति वालों में से एक।—**स्थ,—स्थायिन्,—स्थित**–(वि०) भीतर रहने वाला। बीच में स्थित।

अन्तरतस्—(अव्य०) [अन्तर+तसि] भीतर से, बीच से।

अन्तरतम—(वि०) [अन्तर+तमप्] अत्यन्त निकट। भीतरी। अत्यन्त विश्वस्त।

अन्तरा—(अव्य०) [अन्तरेति√इण+डा] निकट। मध्य। रहित। विना।—**अंस**—(अन्तरांस) (पुं०) वक्षःस्थल, छाती।—**भवदेह**–(पुं०)—**भवसत्त्व**–(न०) जीव या जीव की

वह अवस्था जो मृत्यु और जन्म के बीच के काल में रहती है।—वेदि–(पुं०)—वेदी–(स्त्री०) बरंडा, दालान। द्वारमण्डप। दीवाल विशेष।—शृङ्गम्–(अव्य०) सींगों के बीच।

अन्तराय—(पुं०) [अन्तरम्=व्यवधानम् अयते इति अन्तर √अय्+अच्] विघ्न, अड़चन, ओट, मन की एकाग्रता में बाधक बातें (वेदांत), मुक्ति की प्राप्ति के प्रयत्न में लगे हुए व्यक्ति के मार्ग में बाधक होना।

अन्तराल—(न०) [अन्तरम्=मध्यसीमाम् आराति=गृह्णाति इति अन्तर–आ√रा+कः रस्य लत्वम्] मध्यवर्ती स्थान या काल, बीच।—राज्य–(न०) दो देशों की सीमाओं के बीच में पड़ने वाला वह स्वतंत्र राज्य जिसके कारण उन दोनों में प्रत्यक्ष संघर्ष की नौबत नहीं आने पाती।

अन्तरिक्ष,—अन्तरीक्ष–(न० [अन्तः स्वर्ग-पृथिव्योर्मध्ये ईक्ष्यते इति अन्तर्√ईक्ष्+घञ् पृषो० ह्रस्वः वा] पृथ्वी और स्वर्गलोक के बीच का स्थान, आकाश।—ग,—चर–(पुं०) पक्षी।—जल–(न०) ओस, हिम।

अन्तरित—(वि०) [अन्तर्√इ+क्त या अन्तर+णिच्+क्त] बीच में गया हुआ, बीच में पड़ा हुआ। अन्दर घुसा हुआ, छिपा हुआ। ढका हुआ। पर्दे के भीतर का। दृष्टि के ओझल। रुकावट डाला हुआ, रुद्ध, भिन्न किया हुआ, पृथक् किया हुआ। गायब, लुप्त। नष्ट। छूटा हुआ।

अन्तरीप—(पुं०) [अन्तर्मध्ये गता आपोऽस्य ब० स० अच् आत ईत्वम्] भूमि का एक टुकड़ा जो किसी समुद्र या खाड़ी के भीतर तक चला गया हो, द्वीप।

अन्तरीय—(न०) [अन्तर+छ–ईय] नीचे पहनने का कपड़ा, धोती आदि। अंदर पहनने का वस्त्र, बनियाइन आदि।

अन्तरेण—(अव्य) [अन्तर √इण्+ण] बिना, छोड़कर, सिवाय। मध्य में, बीच में। हृदय से, मन से।

अन्तर्य—(वि०) [अन्तर्+यत्] भीतरी, अंदरूनी।

अन्ति—(अव्य०) [√अन्त+इ] समीप में, (नाटकों में) बड़ी बहन।

अन्तिक—(वि०) [अन्त्यते=संबध्यते सामीप्येन इति √अन्त्+घञ् सोऽस्यास्तीति मत्वर्थीयः ठन्] नजदीकी, समीपी। अंत तक पहुँचने वाला। (न०) [स्वार्थे ठन्] सामीप्य, पड़ोस। उपस्थिति, मौजूदगी।

अन्तिका—(स्त्री०) [अन्त्यते=संबध्यते इति √अन्त् इ, स्वार्थे क, टाप्] बड़ी बहन। चूल्हा, अँगीठी। सातलाख्य या शातलाख्य नाम की ओषधि।

अन्तिम—(वि०) [अन्ते भवः इत्यर्थे अन्त+डिमच्] चरम, सबसे पीछे का, आखिरी।—अङ्क–(अन्तिमाङ्क) (पुं०) नव की संख्या।—अङ्गुलि–(अन्तिमांगुलि) (स्त्री०) कनिष्ठिका, छगुनिया।—इत्थम्–(अन्तिमेत्थम्) (अव्य०) अंतिम चेतावनी, अंतिम रूप से यह सूचित कर देना है कि निर्धारित अवधि के भीतर कोई बात न की गई तो भयानक परिणाम होगा

अन्ती—(स्त्री०) [√अन्त्+इ, ङीष्] चूल्हा, अँगीठी, अलाव।

अन्त्य—(वि०) [अन्त+यत्] अन्तिम, चरम। सबसे नीचा। सबसे बुरा। सबसे हल्का। दुष्ट। (पं०) मुस्ता नामक पौधा। चांडाल। शब्द का अंतिम अक्षर। अंतिम चांद्र मास, फाल्गुन। (न०) सौ नील की संख्या (१,००,००,००,००,००,००,०००)। मीन राशि। रेवती नक्षत्र।—अवसायिन्–(अन्त्यावसायिन्) (पुं०) नीच जाति का पुरुष, निम्न सात जातियाँ नीच मानी गयी हैं—'चाण्डालः श्वपचः क्षत्ता सूतो वैदेहकस्तथा। मागधायोगवौ चैव सप्तैतेऽन्त्यावसायिनः॥—आहुति,—इष्टि–(अन्त्याहुति, अन्त्येष्टि)—कर्मन्–(न०)—क्रिया–(स्त्री०) पूर्णाहुति,

मृतक का दाहादिरूप अंतिम संस्कार ।—ऋण –(अन्त्यर्ण) (न०) तीन ऋणों में से अन्तिम ऋण अर्थात् सन्तानोत्पत्ति ।—ज,—जन्मन् –(पुं०) शूद्र । सात नीच जातियों में से एक, चाण्डाल । —जाति,—जातीय–(वि०) किसी नीच जाति का । (पुं०) शूद्र । चाण्डाल । —पद,—मूल–(न०) वर्ग का सबसे बड़ा मूल (गणित) ।—भ–(न०) रेवती नक्षत्र । —युग–(न०) अन्तिम युग अर्थात् कलियुग । —योनि–(वि०) अत्यन्त नीच जाति का । —लोप–(पं०) किसी शब्द के अन्तिम अक्षर का लुप्त होना ।—वर्ण–(पं०)—वर्णा– (स्त्री०) नीच जाति का पुरुष या स्त्री ।

अन्त्यक—(पुं०) [अन्त्य एवेति स्वार्थे कन्] सब से नीची जाति का मनुष्य ।

अन्त्या—(स्त्री०) [अन्त+यत्, टाप्] नीच जाति की स्त्री ।

अन्त्र—(न०) [अन्त्यते देहो वध्यते अनेन इति√अन्त्+ष्ट्रन्] आँत ।—कूज–(पुं०) —कूजन—विकूजन–(न०) आँत का बोलना, पेट की गुड़गुड़ाहट ।—वृद्धि– (स्त्री०) आँत का उतरना ।—शिला–(स्त्री०) विन्ध्याचल से निकलने वाली एक नदी का नाम ।—स्रज्–(स्त्री०) आँतों की माला जिसे नृसिंह भगवान् ने पहिना था ।—

अन्त्रंधमि–(स्त्री०) अजीर्ण, वायु के कारण पेट का फूलना ।

अन्द्—भ्वा० पर० सक० बाँधना, अन्दति ।

अन्दु,—अन्दू–(स्त्री०) [अन्द्यते=वध्यते-ऽनेन इति√अन्द्+कु, पक्षे ऊङ्] हथकड़ी, बेड़ी, हाथी के पैर में बाँधने की जंजीर । नूपुर ।

अन्ध्—चुरा० उभ० अक० अंधा बनना, अंधा हो जाना, अन्धयति–ते ।

अन्ध—(वि०) [√अन्ध्+अच्] अंधा, दृष्टिहीन (न०) अंधकार । जल । गँदला जल । अज्ञान । (पुं०) संन्यासी । उल्लू । चमगादड़ । एक काव्य दोष । राशिभेद ।—कार–(पुं०) अँधियारा ।—कूप–(पुं०) कुआँ जिसका मुख घास-पात से ढका हो । एक नरक का नाम । अज्ञान ।—तमस—तामस–(न०) निविड़ या घोर अन्धकार ।—तामिस्र–(पुं०) निविड़ अन्धकार । अज्ञान । २१ नरकों में से एक ।—धी–(वि०) मानसिक अंधा, नासमझ ।—परम्परा—(स्त्री०) बिना सोचे-समझे पुरानी रीति का अनुसरण, भेड़ियाधँसान ।—पूतना–(स्त्री०) एक राक्षसी जो बालकों में रोग उत्पन्न करने वाली मानी जाती है ।—मूषिका–(स्त्री०) देवताड़ नामक पौधा ।—वर्त्मन्–(पुं०) वायु का सातवाँ परदा या लोक जहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं जाता ।

अन्धक—(वि०) [अन्ध+कन्] अंधा । (पुं०) एक असुर जो कश्यप और दिति का पुत्र था और जिसे शंकर ने मारा था । एक यदुवंशी जिससे यादवों की अंधक-शाखा चली ।—अरि–(अन्धकारि)—घातिन्—रिपु—शत्रु (पुं०) अन्धक दैत्य को मारने वाले शिव ।—वर्त–(पुं०) एक पहाड़ का नाम ।—वृष्णि–(पुं०) (बहु०) अन्धक और वृष्णि के वंशवाले ।

अन्धस्—(न०) [अद्यते इति√अद्+असुन् नुम् धश्च] अन्न, भात ।

अन्धिका— [√अन्ध्+ण्वुल –अक, इत्व, टाप्] रात्रि । एक खेल, आँखमिचौनी । जुआ । एक नेत्ररोग । सिद्धा नामक ओषधि ।

अन्धु—(पुं०) [√अन्ध्+कु] कुआँ, कूप ।

अन्धुल—(पुं०) [√अन्ध+उलच्] शिरीष का वृक्ष ।

अन्ध्र—(पुं०) [√अन्ध+र] एक जाति का तथा उस जाति के उस देश का नाम जिसमें वह बसती है । मगध का एक राजवंश । निम्न या वर्णसङ्कर जाति का मनुष्य ।—भृत्य–(पुं०) मगध का एक राजवंश जो अंध्रवंश के बाद चला ।

अन्न—(न०) [अनिति अनेन इति√अन+तन् या अद्यते इति√अद्+क्त] (साधारणतया) भोजन। भात। कच्चा धान्य, चना, जौ आदि। जल। पृथ्वी। विष्णु। सूर्य।—**अद्य**—(अन्नाद्य) (न०) उपयुक्त भोजन।—**आच्छादन**—(अन्नाच्छादन)—**वस्त्र**—(न०) भोजन और वस्त्र।—**काल**—(पुं०) भोजन करने का समय।—**कूट**—(पुं०) भात का एक बड़ा (पर्वतोपम) ढेर।—**कोष्ठक**—(पं०) भड़ेरी, कोठिला, बखार। पका खाद्य पदार्थ रखने की आलमारी। विष्णु। सूर्य।—**गन्धि**—(पुं०) दस्तों की बीमारी। अतीसार-संग्रहणी।—**जल**—(न०) रोटी-पानी। स्थान विशेष में रहने का संयोग।—**दास**—(पुं०) नौकर, चाकर। वह नौकर जो केवल भोजन पर काम करे।—**देवता**—(स्त्री०) अन्न के अधिष्ठातृ देवता।—**दोष**—(पुं०) निषिद्ध अन्न खाने से उत्पन्न पाप।—**द्वेष**—(पुं०) अन्न से अरुचि। अफरा रोग।—**पूर्णा**—(स्त्री०) दुर्गा का एक रूप।—**प्राश**—(पुं०)—**प्राशन**—(न०) १६ संस्कारों में से एक विशेष संस्कार। इसमें नवजात बालक को प्रथम बार अन्न खिलाने की विधिवत् क्रिया सम्पादन की जाती है, चटावन।—**भुज्**—(वि०) अन्न खाने वाला। शिव जी की उपाधि।—**मल**—(न०) विष्ठा, मल, पाखाना। मदिरा।—**विकार**—(पुं०) अन्न का रूपान्तर रस, रक्त, मांस आदि।—**व्यवहार**—(पुं०) खान-पान संबन्धी नियम या प्रथा।—**शेष**—(पुं०) जूठन। भूसी, चोकर आदि।—**संस्कार**—(पुं०) देवादि के लिये अन्न का उत्सर्ग।—**सत्र**—(न०) वह संस्थान जहाँ साधु-फकीरों, गरीबों-अपाहिजों को भोजन दिया जाता है।

अन्नमय—(वि०) [अन्नस्य विकारः इत्यर्थे अन्न+मयट्] [स्त्री०—**अन्नमयी**] अन्न की बनी हुई वस्तु। (न०) अन्न का बाहुल्य। भोज्य पदार्थों की बहुतायत।—**कोश**—**कोष**—(पुं०) स्थूल शरीर।

अन्य—(वि०) [√अन्+यः (अध्न्या०)] (अन्यत् न०) भिन्न, दूसरा। विलक्षण, असाधारण, यथा।—"अन्या जगद्धितमयी मनसः प्रवृत्तिः"—भामिनीविलास। साधारण, कोई। अतिरिक्त, नया।—**असाधारण**—(अन्यासाधारण) (वि०) जो दूसरों के लिये साधारण न हो, विचित्र, विलक्षण।—**उक्ति**—(अन्योक्ति) (स्त्री०) ऐसी उक्ति जो कथित वस्तु के अतिरिक्त औरों पर भी घटित हो सके। अर्थालंकार का एक भेद।—**उदर्य**—(अन्योदर्य) (वि०) सहोदर नहीं, दूसरे से उत्पन्न।—**ऊढा**—(अन्योढा) (स्त्री०) दूसरे को व्याही हुई। दूसरे की पत्नी।—**कारुका**—(स्त्री०) मल का कीड़ा।—**क्षेत्र**—(न०) दूसरा खेत। दूसरा राज्य, विदेशी राज्य। दूसरे की स्त्री।—**ग**—**गामिन्**—(वि०) दूसरे के पास जाने वाला। व्यभिचारी, छिनरा, जार।—**गोत्र**—(वि०) दूसरे वंश का।—**चित्त**—(वि०) अन्यमनस्क, जिसका मन अन्यत्र लगा हो।—**ज**—**जात**—(वि०) दूसरे से उत्पन्न, दूसरी जाति का।—**जन्मन्** (न०) जन्मान्तर।—**दुर्वह**—(वि०) दूसरों द्वारा न ढोने या गठाने योग्य।—**नाभि** (वि०) दूसरे वंश या कुल का।—**पर**—(वि०) दूसरों के प्रति भक्तिमान्। दूसरों से अनुरक्त। अन्यविषयक।—**पुरुष**—(पुं०) सर्वनाम का एक भेद, दूसरा आदमी।—**पुष्ट**—(पुं०) **पुष्टा**—(स्त्री०)—**भृत**—(पुं०)—**भृता**—(स्त्री०) दूसरों से पाली हुई, कोयल।—**पूर्वा**—(स्त्री०) कन्या जिसकी सगाई दूसरी जगह हो चुकी है।—**बीज**—०**समुद्भव**—०**समुत्पन्न**—(पुं०) गोद लिया हुआ पुत्र, दत्तक पुत्र।—**भृत्**—(पुं०) कौआ, काक।—**मनस्**—**मनस्क**—**मानस**—(वि०) जिसका चित्त कहीं और हो। असावधान।—**मातृज**—(पुं०) सौतेला भाई।—**रूप**—(वि०) परिवर्तित, बदला हुआ।—

लिङ्ग—लिङ्गक–(वि०) दूसरे शब्द के लिङ्गानुसार।—वाप–(पुं०) कोयल।—विवर्धित–(वि०) दूसरे के द्वारा पाला गया। (पुं०) कोयल।—शाख—शाखक– (पुं०) अपनी शाखा या वर्म का त्याग करने वाला ब्राह्मण।—संक्रान्त–(वि०) जिसने अन्य (स्त्री) से संबन्ध कर लिया है।—संभूयक्रय–(पुं०) पहले लगाये गये मूल्य पर थोक माल के न बिकने पर उस पर लगाया गया दूसरा मूल्य।—संभोगदुःखिता–(स्त्री०) वह नायिका जो अपने पति में दूसरी स्त्री के साथ संभोग करने के चिह्नों को देख कर दुःखित हो।

अन्यतम—(वि०) [अन्य+तमप्] बहुत में से एक।

अन्यतर—(वि०) [अन्य+तरप्] दो में से एक।

अन्यतरतस्—(अव्य०) दो तरह में से एक।

अन्यतरेद्युस्—(अव्य०) [अन्यतर+एद्युस्, निपातनात् सिद्धिः] दो में से किसी एक दिन, एक दिन या दूसरे दिन।

अन्यतस्—(अव्य०) [अन्य+तसिल्] दूसरे से। दूसरे आधार पर या दूसरे उद्देश्य से।

अन्यतस्त्य—(पुं०) [अन्यतस+त्यप्] शत्रु, प्रतिपक्षी।—अन्यत्र–(अव्य०) [अन्य+त्रल्] दूसरी जगह, और कहीं। व्यतिरेक, विना।

अन्यथा—(अव्य०) [अन्य+थाल्] प्रकारान्तर, नहीं तो। मिथ्यापन से, झुठपन से। अशुद्धता से, भूल से।—अनुपपत्ति–(अन्यथानुपपत्ति) (स्त्री०) किसी वस्तु के अभाव में दूसरे के अस्तित्व की असंभावना।—भाव–(पुं०) भिन्न रूप में होना। परिवर्तन, अदल-बदल।—वादिन्–(वि०) प्रकारान्तर से बोलने वाला। मिथ्यावादी।—वृत्ति–(वि०) परिवर्तित। उत्तेजित, उद्विग्न।—वाहिन्–(वि०) विना चुंगी या महसूल दिये माल ले जाने वाला।—सिद्धि–(स्त्री०) (न्याय में) एक दोष जिसमें यथार्थ नहीं, प्रत्युत अन्य कोई कारण दिखला कर किसी विषय की सिद्धि की जाय।—स्तोत्र–(न०) व्यंग।

अन्यदा—(अव्य०) [अन्य+दा] दूसरे समय। दूसरे अवसर पर। अन्य किसी दशा में। एक वार। कभी एक वार। कभी-कभी।

अन्यर्हि—(अव्य) [अन्य+र्हिल्] दूसरे समय।

अन्यादृक्ष, —**अन्यादृश्**, —**अन्यादृश** —(वि०) [अन्य√दृश्+क्स, आत्व] [अन्य √दृश+क्विन्, आत्व] [अन्य√दृश्+कञ्, आत्व] अन्य प्रकार का। परिवर्तित। असाधारण, विलक्षण।

अन्याय—(वि०) [न० ब०] विचार या औचित्य से रहित। अनुपयुक्त, बेठीक, (पुं०) [न० त०] कोई अनुचित या न्यायविरुद्ध कार्य, जुल्म, अत्याचार।

अन्यायिन्—(वि०) [अन्याय+इनि] अन्याय करने वाला। अनुचित, अयथार्थ।

अन्याय्य—(वि०) [न न्याय्यः न० त०] अयथार्थ। न्याय-विरुद्ध। अनुचित। अप्रामाणिक।

अन्यून—(वि०) [न न्यूनः न० त०] कम नहीं, अधिक। संपूर्ण, समूचा।—अङ्ग–(वि०) जिसका कोई अङ्ग कम ज्यादा न हो।

अन्येद्युस्—(अव्य) [अन्य+एद्युस् नि०] दूसरे दिन या अगले दिन। एक दिन। एक वार।

अन्योन्य—(वि०) [अन्य कर्मव्यतीहारे (एकजातीयक्रियाकरणे) द्वित्वम् पूर्वपदे सुश्च] परस्पर, एक दूसरे को या पर। (न०) अर्थालंकार का एक भेद। (अव्य०) आपस में।—अभाव–(अन्योन्याभाव) (पुं०) अभाव का एक भेद, किसी एक पदार्थ का अन्य पदार्थ न होना।—आश्रय–(अन्योन्याश्रय) (पुं०) एक का दूसरे पर अवलंबित होना, परस्पर

कार्य-कारण-संबंध ।—**भेद**–(पुं०) आपस का भेद, शत्रुता ।—**विभाग**–(पुं०) पैतृक संपत्ति का आपस में वँटवारा —**व्यतिकर**, —**संश्रय**–(पुं०) पारस्परिक संबंध (कारण और कार्य का) ।

अन्वक्ष—(वि०) [अनुगतम् अक्षम्=इन्द्रियम् अत्या० स०] दृश्य । प्रत्यक्ष । अनुभवगम्य । वाद का । (अव्य०) [अव्य० स०] सामने । पीछे ।

अन्वच्—[अनु √अञ्च +क्विन्] (वि०) पीछा करने वाला । (अव्य) तदनन्तर, पीछे । अनुकूलता से ।

अन्वय—(पुं०) [अनु√इण्+अच्]अनुगमन । सम्बन्ध, सङ्गति । व्याकरणानुसार वाक्य की शव्द-योजना । जाति, वंश । न्याय में कार्य और कारण का सम्बन्ध ।—**आगत**–(अन्वयागत) (वि०) वंशपरंपरा से चला आता हुआ ।—**ज्ञ**–(पुं०) वंशावली जानने वाला । —**व्यतिरेक**–(पुं०) निश्चयपूर्वक हाँ या ना सूचक कथित वाक्य । नियम और अपवाद ।—**व्याप्ति**–(स्त्री०) स्वीकारोक्ति । जहाँ धूम वहाँ अग्नि—इस प्रकार की व्याप्ति ।

अन्वर्थ—(वि०) [अनुगतः अर्थम् अत्या० स०] अर्थ के अनुसार । सार्थक, अथयुक्त ।

अन्ववसर्ग—(पुं०) [अनु—अव√सृज्+घञ्] कामचारानुज्ञा, यथेच्छा आचरण की अनुमति ।

अन्ववसित—(वि०) [अनु—अव√सो+क्त] सम्बन्धयुक्त, बँधा हुआ । जकड़ा हुआ ।

अन्ववाय—(पुं०) [अनु—अव√अय्+घञ्] जाति, वंश, कुल ।

अन्ववेक्षा—(स्त्री०) [अनु—अव√ईक्ष् + अङ—टाप्] सम्मान, आदर ।

अन्वष्टका—(स्त्री०) [अनुगता अष्टकाम् अत्या० स०] साग्निकों के लिये एक मातृक श्राद्ध, जो अष्टका के अनन्तर पूस, माघ, फागुन और आश्विन की कृष्णा नवमी को किया जाता है ।

अन्वष्टमदिशम्–; (अव्य०) [अव्य० स०] उत्तर पश्चिम के कोण की ओर ।

अन्वहम्—(अव्य०) [अव्य० स०] प्रति दिन, दिन दिन ।

अन्वाख्यान—(न०) [अनुगतम् आख्यानम् प्रा०स०] पूर्वकथित विषय की पीछे से व्याख्या।

अन्वाचय—(पुं०) [अनु—आ√चि+अच्] मुख्य कार्य की सिद्धि के साथ-साथ अप्रधान (गौण) की भी सिद्धि । जैसे एक काम के लिये जाते हुए को, एक दूसरा वैसा ही साधारण काम बतला देना ।

अन्वाजे—(अव्य०) [अनु—आ√जि+डे] दुर्बल की सहायता करना ।

अन्वादिष्ट— [अनु—आ√ दिश्+क्त] पीछे वर्णित । पुनर्नियुक्त । गौण ।

अन्वादेश—(पुं०) [अनु—आ√दिश् + घञ्] एक आज्ञा के बाद दूसरी आज्ञा । किसी कथन की द्विरुक्ति ।

अन्वाधान—(न०) [अनु—आ√धा+ ल्युट्] हवन की अग्नि पर समिधाओं को रखना ।

अन्वाधि—(पुं०) [अनु—आ √धा+कि] अमानत, जो किसी अन्य पुरुष को इसलिये सौंपी जाय कि अन्त में वह उसे उसके न्यायानुमोदित अधिकारी को दे दे । दूसरी अमानत । सतत परिताप, पश्चात्ताप या पछतावा ।

अन्वाधेय, अन्वाधेयक—(न०) [अनु—आ√धा+यत्] एक प्रकार का स्त्रीधन, जो स्त्री को विवाह के बाद पतिकुल या पितृकुल अथवा उसके अन्य कुटुम्बियों से प्राप्त होता है ।

अन्वारब्ध—(वि०) [अनु—आ रभ्+क्त] पीछे पृष्ठ की ओर स्पर्श किया हुआ ।

अन्वारम्भ (पुं०), **अन्वारम्भण**—(न०) अनु—आ√रभ्+घञ्, मुम्] [अनु—आ

√रभ्+ल्युट्] स्पर्श, किसी विशेष धर्म्मानुष्ठान के बाद यजमान का स्पर्श या पीठ ठोंकना यह जताने को कि, उसका कृत्य सुफल हुआ।

अन्वारोहण—(न०) [अनु—आ√रुह+ल्युट्] किसी सती स्त्री का पति के शव के साथ या पीछे भस्म होने के लिये चिता पर चढ़ना।

अन्वासन—(न०) [अनु√आस+ल्युट्] सेवा, पूजा। एक के बैठने के बाद दूसरे का बैठना। दुःख, शोक। शिल्पगृह।

अन्वाहार्यक—(पुं०) (न०) [अनु—आ√हृ+ण्यत्] यज्ञ में पुरोहित को दिया जाने वाला भोजन या दक्षिणा। मृत पुरुष के उद्देश्य से प्रति अमावस्या के दिन किया जाने वाला मासिक श्राद्ध।—**पचन**–(पुं०) दक्षिणाग्नि, ऋग्वेद की विधि से स्थापित अग्नि।

अन्वाहित—(न०) [अनु—आ√धा+क्त] दे० 'अन्वाधेय'।

अन्वित—[अनु√इण्+क्त] युक्त, सम्बन्धप्राप्त। किसी पद्य के शब्द जो वाक्यरचना के नियमानुसार यथास्थान रखे गये हों। साधर्म्य के अनुसार भिन्न-भिन्न वस्तु जो एक श्रेणी में रखी हुई हो।

अन्वीक्षण—(न०) [अनु√ईक्ष्+ल्युट्] ध्यान से देखना। खोज।

अन्वीक्षणा—(स्त्री०) [अनु√ईक्ष्+णिच्+युच्] अनुसन्धान, खोज।

अन्वीप—(वि०) [अनुगता आपो यत्र व० स०] जल के समीप का।

अन्वृचम्—(अव्य०) [अव्य० स०] एक ऋचा या मन्त्र के अनन्तर दूसरा।

अन्वेष, —अन्वेषण,—अन्वेषणा—(पुं०) (न०) (स्त्री०) [अनु√इष्+घञ्] [अनु√इष्+ल्युट्] [अनु √इष्+युच्] अनुसन्धान, खोज। 'त्वान्वेषणदक्षाणां द्विषां' र० १२.११.

अन्वेषक,—अन्वेषिन्, —अन्वेष्टृ–(वि०) [अनु√इष्+ण्वुल्] [अनु√इष्+णिनि] [अनु√इष्+तृच्] खोजने वाला, तलाश करने वाला।

अप्—(स्त्री०) [√आप+क्विप्, ह्रस्वः] [इसके बहुवचन ही में रूप होते हैं। आपः अपः, अद्भिः, अद्भ्यः, अपाम् और अप्सु; किन्तु वैदिक साहित्य में इसके रूप दोनों वचनों—एकवचन और बहुवचन में मिलते हैं।] जल, पानी।—**पति**–(पुं०) वरुण का नाम। समुद्र।

अप—(अव्य०) [न पातीति√पा+ड न० त०] जब यह किसी क्रिया में उपसर्ग के रूप में जोड़ा जाता है तब इसका अर्थ होता है—दूर, हट कर, विरोध, अस्वीकृति, खण्डन, वर्जन, कई स्थलों पर अप का अर्थ होता है—बुरा, अश्रेष्ठ, बिगड़ा हुआ, अशुद्ध, अयोग्य।

अपकरण—(न०) [अप√कृ+ल्युट्] अनुचित रीति से वर्तना। बुराई करना। अपमान करना। चिढ़ाना। दुर्व्यवहार करना। घायल करना।

अपकर्तृ—(वि०) [अप√कृ+तृच्] अपकार करने वाला, अनिष्टकर, अप्रीतिकर, (पुं०) शत्रु।

अपकर्मन्—(न०) [अपकृष्टम् कर्म प्रा० स०] दुष्कर्म, दुराचार, दुष्टाचरण। दुष्टता, अत्याचार, ज्यादती। कर्ज अदा करना, ऋण चुकाना, "दत्तस्यानपकर्म च।" (मनु०)

अपकर्ष—(पुं०) [अप√कृष+घञ्] नीचे को खींचना। घटाव, कमी, उतार। निरादर, अपमान।

अपकर्षक—(वि०) [अप√कृष्+ण्वुल्] घटाने वाला। छोटा करने वाला। नीचे खींचने वाला; 'रसापकर्षका दोषाः' सा० द० ७

अपकर्षण—(न०) [अप√कृष्+ल्युट्] हटाना। खींच कर नीचे ले जाना। खींचकर

निकालना। कम करना। किसी को किसी स्थान से हटाकर स्वयं उस पर बैठना।

अपकार—(पुं०) [अप√कृ+घञ्] अनिष्ट साधन। बुराई। नुकसान, हानि। अनभल, अहित। दुष्टता। अत्याचार। ओछा या नीच कर्म; 'उपकर्त्रारिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा' शि० व० २.३७—**अर्थिन्** (अपकरार्थिन्) (वि०) अपकार चाहने वाला। विद्वेषकारी। अनिष्टप्रिय, दुराशय।—**शब्द**- (पुं०) गालियाँ, कुवाच्य, अपमानकारक उक्ति।

अपकारक,—अपकारिन्-(वि०) [अप√कृ+ण्वुल्] [अप√कृ+णिनि] अपकार करने वाला। अनिष्टकर्त्ता, क्षति पहुँचाने वाला। विरोधी, द्वेषी।

अपकीर्ति—(स्त्री०) [अप√कृ+क्तिन्] अपयश, बदनामी।

अपकुश—(पुं०) दन्तरोग विशेष।

अपकृत—(वि०) [अप√कृ+क्त] जिसका अपकार किया गया हो।

अपकृति—(स्त्री०) [अप√कृ+क्तिन्] दे० 'अपकार'।

अपकृष्ट—(वि०) [अप√कृष्+क्त] हटाया हुआ, खींच कर ले जाया हुआ। नीच, दुष्ट, क्षुद्र। (पं०) कौआ।

अपक्ति—(स्त्री०) [√पच+क्तिन् न० त०] कच्चापन। अजीर्ण।

अपक्रम—(पुं०) [अप√क्रम्+घञ्, अवृद्धि] पलायन, भागना। (समय का) निकल जाना। (वि०) [अपगतः क्रमो यस्य ब० स०] अस्तव्यस्त, गड़बड़।

अपक्रमण,—अपक्राम-(न०) (पं०) [अप √क्रम+ल्युट्] [अप√क्रम्+घञ्] पलायन। (सेना का) पीछे हट जाना। निकल-भागना, बचकर निकल जाना।

अपक्रिया—(स्त्री०) [अप√कृ+श] हानि, क्षति। अहित। द्रोह। दुष्कर्म। ऋणपरिशोध।

अपक्रोश—(पुं०) [अप√क्रुश+घञ्] गाली, अपशब्द। निन्दा। तिरस्कार।

अपक्व—(वि०) [√पच्+क्त तस्य वः, न० त०] न पका हुआ, कच्चा। अनभ्यस्त। नहीं बढ़ा हुआ।

अपक्ष—(वि०) [नास्ति पक्षो यस्य न० ब०] बिना पंख का। उड़ने की शक्ति से हीन। जो किसी दल विशेष का न हो। जिसका कोई मित्र या अनुयायी न हो। विरुद्ध, उल्टा।—**पात**- (पुं०) पक्षपात का न होना, पक्षपातरहित। न्याय, खरापन।—**पातिन्**- (वि०) जो किसी की तरफदारी न करे। खरा, न्यायी।

अपक्षय—(पुं०) [अप√क्षि+अच्] नाश। अधःपात। ह्रास, क्षय।

अपक्षेप, अपक्षेपण—(पुं०) (न०) [अप√क्षिप्+घञ्] [अप√क्षिप्+ल्युट्] फेंकना, पल्टाना, गिराना, च्युत करना। प्रकाशादि का किसी पदार्थ से टकरा कर पलटना। (वैशेषिक दर्शनानुसार) आकुञ्चन, प्रसारण आदि पाँच प्रकार के कर्मों में से एक।

अपखंड—न० [प्रा० स०] किसी वस्तु का टूटा हुआ हिस्सा। अधूरा या अपूर्ण भाग। विनष्ट या लुप्त वस्तु का बचा हुआ अंश।

अपगत—(वि०) [अप√गम्+क्त] गया हुआ, बीता हुआ। भागा हुआ। तिरोहित। मृत।—**व्याधि**-(वि०) जिसे रोग से छुटकारा मिल गया हो।

अपगति—(स्त्री०) [अप√गम्+क्तिन्] अधोगति। दुर्गति। दुर्भाग्य।

अपगम, अपगमन—(पुं०) (न०) [अप√गम्+अप्] [अप√गम्+ल्युट्] जाना। हट जाना 'पुराणपत्रापगमादनन्तरं' र० ३.७ गायब हो जाना। मृत्यु।

अपगर—(पुं०) [अप√गॄ+अप् (भावे)] धिक्कार, डाँट-डपट। गाली-गलौज। (वि०) [अप√गॄ+अच् (कर्तरि)] गालियाँ देने-वाला या अप्रियवचन कहने वाला।

अपगर्जित—(वि०) [अप√गर्ज्+क्त] गर्जनाशून्य।

अपगुण—(पुं) [अपकृष्टो गुणः प्रा० स०] दोष, अवगुण ।

अपगोपुर—(वि०) [अपगतम् गोपुरम् यस्मात् व० स०] नगरद्वार से शून्य, जिसमें फाटक न हो ।

अपघन—(पुं०) [अप √हन् + अप्, घनादेश]देह, शरीर। अवयव, शरीरावयव। (वि०) [ब० स०] मेघरहित ।

अपघात—(पुं०) [अप√हन्+घञ्] हत्या, हिंसा । वञ्चना, धोखा । विश्वासघात ।

अपघातिन्—(वि०) [अप√हन्+णिनि] विश्वासघाती । हिंसक, हत्या करने वाला ।

अपच—(पुं०) [√पच्+अच् न० त०] रसोई बनाने के अयोग्य अथवा जो अपने लिये रसोई न बनावे । गँवार,रसोइया। एक प्रकार की गाली ।

अपचय—(पुं०) [अप√चि+अच्] अवनति, ह्रास । सड़न । नाश । ऐब । त्रुटि । दोष । असफलता ।

अपचरित—(न०) [अप√चर्+क्त (भावे) दुष्कर्म । अपराध । मृत्यु । अभाव । प्रस्थान । —**प्रकृति**-(पुं०) वह राजा जिसकी प्रजा अत्याचार से उद्विग्न हो ।

अपचायिन्—(वि०) [अप√चाय्+णिनि] बड़ों के प्रति सम्मान प्रकट न करने वाला ।

अपचार—(पुं०) [अप√चर्+घञ्] प्रस्थान । मृत्यु । अभाव । अपराध । दुष्कर्म । जुर्म ; 'राजन् प्रजासु ते कश्चिदपचारः प्रवर्तते' र० १५.४७ । अपथ्य ।

अपचारिन्—(वि०) [अप√चर्+णिनि] दुष्कर्मी । बुरा । नीच । पृथक् होने वाला । अविश्वासी ।

अपचित—(वि०) [अप√चाय्+क्त] सम्मानित, पूजित, [अप√चि+क्त] क्षीण । व्यय किया हुआ । दुबला-पतला ।

अपचिति—(स्त्री०) [अप√चि+क्तिन्] हानि । अधःपात । नाश । व्यय । पाप का प्रायश्चित्त । समन्वय । क्षति-पूरण । [अप√चाय्+क्तिन्] सम्मान, पूजन, प्रतिष्ठाप्रदर्शन; 'विहितापचितिर्महीभुजा' शि. १६.९

अपच्छत्र—(वि०) [अपगतम् छत्रम् यस्य व० स०] बिना छाते का, छाता रहित ।

अपच्छाय—(वि०) [अपगता छाया यस्य व० स०] जिसकी छाया न हो। चमक रहित, धुँधला, (पुं०) जिसकी छाया न हो, देवता ।

अपच्छेद, अपच्छेदन—(पुं०) (न०) [अप √छिद्+घञ्] [अप√छिद्+ल्युट्] काट डालना । हानि । बाधा ।

अपच्युत—(वि०) [अप√च्यु+क्त] गिरा हुआ । गया हुआ । मृत । पिघल कर बहा हुआ ।

अपजय—(पुं०) [अप√जि+अच्] हार, शिकस्त ।

अपजात—(पुं०) [अप√जन्+क्त] बुरी सन्तान, सन्तान जो अपने माता पिता के गुणों के समान न हो। 'अपजातोऽधमाधमः' सुभा० ।

अपज्ञान—(न०) [अप√ज्ञा+ल्युट्] अस्वीकृति । छिपाव, दुराव ।

अपञ्चीकृत—(न०) [अपञ्च पञ्च कृतम् न० त०] वह पदार्थ जो पाँच तत्त्वों से न बना हो या पाँच से पचीस न किया गया हो । पाँच सूचक शब्दादि ।

अपटान्तर—(वि०) [नास्ति पटेन अन्तरम् यत्र न० व०] जो (पर्दे के जरिये) अलग न किया गया हो ।

अपटी—(स्त्री०) [अल्पः पटः पटी न० त०) कनात, कपड़े का एक विशेष प्रकार का पर्दा । पर्दा ।

अपटु—(वि०) [न० त०] अनिपुण, भोंदू । वक्तृत्व शक्ति में जो निपुण न हो । बीमार, रोगी ।

अपठ—(वि०) [√पठ+अच् न० त०] जो पढ़ न सके, जो पढ़ा न हो, अधम पाठक ।

अपण्डित—(वि०) [न० त०] जो विद्वान् या वुद्धिमान् न हो, मूर्ख । जिसमें चातुर्य, रुचि और दूसरों की सराहना करने का अभाव हो; "विभूषणं मौनमपण्डितानाम्' भर्तृ० २.७ ।

अपण्य—(वि०) [√पण्+यत् न० त०] जो बिक न सके ।

अपतर्पण—(न०) [अप√तृप्+ल्युट्] (बीमारी में) कड़ाका, लंघन । असन्तोष ।

अपति (पुं०) [न० त०] जो पति या स्वामी न हो, (स्त्री०) [न० ब०] जिसका पति या स्वामी न हो ।

अपत्नीक—(वि०) [न० ब०] बिना स्त्री वाला, पत्नीरहित ।

अपत्य—(न०) [न पतन्ति पितरोऽनेन इति विग्रह √पत्+यत् न० त०] सन्तान, औलाद ।—**काम**–(वि०) पुत्र या पुत्री की इच्छा रखने वाला ।—**जीव**–(पुं०) एक पौधा । **दा**–(स्त्री०) एक वृक्ष, गर्भदात्री ।—**पथ**–(पुं०) योनि, भग ।—**विक्रयिन्**–(वि०) सन्तान बेचने वाला ।—**शत्रु**–(पुं०) केकड़ा । साँप ।

अपत्र—(वि०) [न० ब०] बिना पत्तों का । पंखहीन । (पुं०) बाँस का कल्ला । वह वृक्ष जिसके पत्ते गिर गये हों । वह पक्षी जिसे पंख न हों ।

अपत्रप—(वि०) [अपगता त्रपा यस्मात् ब० स०] निर्लज्ज, बेहया ।

अपत्रपण, अपत्रपा—(न०) (स्त्री०) [अप √त्रप्+ल्युट्] [अप√त्रप्+अङ] लज्जा, लाज । व्यग्रता ।

अपत्रपिष्णु—(वि०) [अप√त्रप्+इष्णुच्] शर्मीला, लजीला ।

अपत्रस्त—(वि०) [अप√त्रस्+क्त] भयभीत, डरा हुआ । भय से थमा हुआ, भय से रुका हुआ ।

अपथ—(वि०) [न० ब०] मार्गहीन, जहाँ अच्छे रास्ते न हों । (न०) [न० त०] कुपथ, गलत या बुरी राह । पथ का अभाव । प्रचलित धर्म या मत का विरोध । योनि ।—**गामिन्**–(वि०) बुरी राह पर चलने वाला, कुमार्गी; अपथे पदमर्पयन्ति श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः' र. ९.७४ । **प्रपन्न**—(वि०) कुमार्ग पर चलने वाला । दुरुपयोग में लाया हुआ ।

अपथ्य—(वि०) [पथि हितम् इत्यर्थे पथिन्+यत् न० त०] अयोग्य, अनुचित । हानिकारी । जहरीला । अहितकर । जो गुणकारी न हो । खराब । (न०) प्रतिकूल आहार-विहार ।—**कारिन्** (वि०) अपथ्य करने वाला । अपराधी ।

अपद—(वि०) [नास्ति पादः पदम् वा यस्य न० ब०] बिना पैर का । बिना ओहदे का । (पुं०) रेंगने वाला जन्तु, सर्प आदि । आकाश, [न० त०] बुरा स्थान ।—**अन्तर**–(अपदान्तर) (वि०) समीपस्थ । अति निकट । (न०) सामीप्य, निकटता ।—**रुहा–रोहिणी** (स्त्री०) अन्य वृक्ष के सहारे जीने वाला वायवीय पौधा-विशेष ।

अपदक्षिण—(अव्य०) [अव्य० स०] बाईं ओर ।

अपदम—(वि०) [अपगतः दमो यस्य ब० स०] असंयमी । आत्म-नियंत्रण-रहित । जिसकी स्थिति बदलती रहती हो ।

अपदश—(वि०) [ब० स०] दस की संख्या से दूर ।

अपदान, अपदानक—(न०) [अप√दैप्+ल्युट्] [अपदान+कन् (स्वार्थे)] सदाचरण, विशुद्ध आचरण । महान् या उत्तम काम, सर्वोत्तम कर्म । सम्यक् पूर्ण किया हुआ कार्य ।

अपदार्थ—(पुं०) [न पदार्थः न० त०] कुछ नहीं । वाक्य में जो शब्द प्रयुक्त हुए हों उनका अर्थ न होना, "अपदार्थोऽपि वाक्यार्थः समुल्लसति"

—काव्यप्रकाश ।

अपदिशम्—(अव्य०) [दिशयोर्मध्ये इति विग्रहे अव्य० स०] दो दिशाओं के बीच में ।

अपदेवता—(स्त्री०) [अपकृष्टा देवता प्रा० स०] दुष्ट देव । ब्रह्मपिशाच आदि ।

अपदेश—(पुं०) [अप√दिश्+घञ्] बयान, कथन, वर्णन । बहाना, व्याज, मिस; 'रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनोः' र० २.८ । लक्ष्य, उद्देश्य । अपने स्वरूप को छिपाना, भेष बदलना । स्थान । अस्वीकृति । कीर्ति, नामवरी । छल, धोखा, दगाबाजी ।

अपद्रव्य—(न०) [प्रा० स०] बुरी वस्तु ।

अपद्वार—(न०) [प्रा० स०] बगल का दरवाजा, बगली द्वार ।

अपधूम—(वि०) [अपगतः धूमो यस्य ब० स०] धूमरहित ।

अपध्यान—(न०) [अपकृष्टम् ध्यानम् प्रा० स०]बुरा विचार, अनिष्टचिन्तन, मन ही मन कोसना ।

अपध्वंस (प०) [प्रा० स०] अधःपतन । अपमान । नाश ।—**ज**-(पुं०)—**जा**-(स्त्री०) किसी वर्णसङ्कर, अधम और अछूत जाति का व्यक्ति ।

अपध्वस्त—(वि०) [अप√ध्वंस्+क्त] शापित, कोसा हुआ । घृणित । जो अच्छी तरह कूटा पीसा गया हो । व्यक्त, त्यागा हुआ । पराजित । (पुं०) दुष्ट । अभागा । जिसमें सदसद्विवेक शक्ति रह ही न गयी हो ।

अपनय—(पुं०) [अप√नी+अच्] हटाना, अलहदा करना । खण्ड करना । बुरी नीति, बुरा चालचलन । अपकार ।

अपनयन—(न०) [अप√नी+ल्युट्] हटाना, अलहदा करना । चंगा करना । उऋण करना । भगा ले जाना ।

अपनस—(वि०) [अपगता नासिका यस्य ब० स०] नकटा, नाक रहित ।

अपनुत्ति (स्त्री०)—**अपनोद** (पुं०),—**अपनोदन** (न०),—[अप√नुद्+क्तिन्] [अप√नुद्+घञ्] [अप√नुद्+ल्युट्] हटाना, अलगाना, अलहदा करना । नष्ट करना । प्रायश्चित्त करना; 'पापानापनुत्तये' मनु ११.२१५

अपपाठ—(पुं०) [अप√पठ्+घञ्] बुरी तरह पाठ करना । गलत पाठ करना पाठ में भूल करना ।

अपपात्र—(वि०) [अपगतम् पात्रम् यस्य ब० स०] जिसे सब लोगों के व्यवहार में आने वाला पात्र न दिया जाय । वर्णच्युत ।

अपपात्रित—(पुं०) [अपपात्र√क्षिप्+क्त] किसी बड़े दुष्कर्म करने के कारण जाति से च्युत मनुष्य जो अपने सम्बंधियों के साथ एक बरतन में खा-पी न सके ।

अपपान—(न०) [अप√पा+ल्युट्], अपेय, न पीने योग्य पीने की वस्तु ।

अपप्रजाता—(स्त्री०) [अपगतः प्रजातो यस्याः ब० स०] स्त्री, जिसका गर्भपात हो गया हो ।

अपप्रदान—(न०) [अपकृष्टम् प्रदानम् प्रा० स०] घूस, रिश्वत ।

अपभय, अपभी—(वि०) [अपगतम् भयम् यस्मात् ब० स०] [अपगता भीः यस्य ब० स०] डर से रहित, निर्भय । निःशङ्क ।

अपभरणी—(स्त्री०) [प्रा० स०] अन्तिम तारापुञ्ज या नक्षत्र ।

अपभाषण—(न०) [अप√भाष्+ल्युट्] निंदा । गाली ।

अपभ्रंश—(पुं०) [अप√भ्रंश्+घञ्] पतन, गिराव । बिगाड़, विकृति । शब्द का विकृत रूप । प्राकृत भाषाओं का परवर्ती रूप जिनसे उत्तर भारत की आधुनिक आर्य, भाषाओं की उत्पत्ति मानी जाती है ।

अपम—(वि०) (वैदिक) [अपकृष्टं मीयते इति अप√मा+क (बाहुलकात्)] बहुत दूर का या बहुत पुराना । (पुं०) ग्रहण या अयन-मण्डल सम्बन्धी । क्रान्ति ।

अपमर्द—(पुं०) [अप√मृद्+घञ्] धूल, गर्दा, जो बुहारा जाय ।

अपमर्श—(पुं०) [अप√मृश+घञ्] छूना। चरना।

अपमान—(पुं० न०) [अप√मन्+घञ् या अप√मा+ल्युट्] निरादर, वेइज्जती। बदनामी; 'लभते बह्ववज्ञानमपमानञ्च पुष्कलम्' पं० १.६७।

अपमार्ग—(पुं०) [अपकृष्टः मार्गः प्रा० स०] पगडंडी, वगली रास्ता। बुरी राह।

अपमार्जन—(न०) [अप√मार्ज्+ल्युट्] धो कर साफ करना। पवित्र करना। हजामत वनवाना।

अपमित्यक—(न०) [अपमितिः=अपमानः तेन अकम्=दुःखम् यत्र ब० स०] ऋण, कर्ज।

अपमुख—(वि०) [अपकृष्टम् मुखम् यस्य ब० स०] बदशक्ल, बदसूरत, कुरूप।

अपमूर्धन्—(वि०) [अपगतो मूर्धा यस्य ब० स०] जिसके सिर न हो, लापरवाह।

अपमृत्यु—(पुं०) [अपकृष्टो मृत्युः प्रा० स०] कुसमय की मौत, विजली गिरने से, विष खाने से, साँप आदि के काटने से मरना।

अपमृषित—(वि०) [अप√मृष्+क्त] जो वोधगम्य न हो, जो समझ न पड़े। अस्पष्ट। असह्य। नापसंद;

अपयशस्—(न०) [अपकृष्टम् यशः प्रा० स०] वदनामी, अपकीर्ति; 'अपयशो यद्यस्ति किम्मृत्युना' भट्टि० २.५५।

अपयान—(न०) [अप√या+ल्युट्] भाग जाना। पीछे लौट जाना।

अपर—(वि०) [न परः न० त० न परो यस्मात् ब० स०] जो पर या दूसरा न हो। पहले का, पूर्व का। पिछला। अन्य, दूसरा। जितना हो या हुआ हो, उससे और आगे या अधिक। अपकृष्ट, नीचा। (पुं०) हाथी का पिछला पैर। शत्रु। (न०) भविष्य। (अव्य०) पुनः। आगे।—**अग्नि, (अपराग्नि)**–(पुं०) दक्षिण और गार्हपत्याग्नि।—**अहन् (अपराह्ण)**–(पुं०) तीसरा पहर।—**इतरा, (अपरेतरा)**–(स्त्री०) पूर्व दिशा।—**काल**–(पुं०) पीछे का काल। पिछला समय।—**जन**–(पुं०) पाश्चात्त्य जन। पश्चिमी देशों के रहने वाले।—**दक्षिणम्**–(अव्य०) दक्षिण पश्चिम में।—**पक्ष**–(पुं०) कृष्णपक्ष। दूसरी ओर। उल्टी ओर। प्रतिवादी पक्ष।—**पर**–(वि०) कई एक। भिन्न-भिन्न, तरह-तरह के।—**पाणिनीय**–(पुं०) पाणिनि के शिष्य जो पश्चिम में रहते हैं।—**प्रणेय**–(वि०) सहज में दूसरे द्वारा प्रभावान्वित होने वाला।—**भाव**–(पुं०) भिन्न होने का भाव। भेद, अंतर।-**रात्रि (रात्र)**(पुं०) रात का पिछला पहर।—**परलोक**–(पुं०) स्वर्ग।—**वक्त्र** (न०) **वक्त्रा**–(स्त्री०) एक छंद।—**वश**–(वि०) परतंत्र।—**स्वस्तिक**–(न०) आकाश का पश्चिमी अन्तिम विन्दु।—**हैमन**–(वि०) शीतकाल का पिछला भाग।

अपरता, अपरत्व—(स्त्री०, न०) [अपर+तल्] [अपर+त्वल्] दूसरापन। २४ गुणों में से एक गुण (वैसेषिक) निकटता। दूरी।

अपरत्र—(अव्य०) [अपर+त्रल्] अन्यत्र। दूरी जगह।

अपरक्त—(वि०) [अप+रञ्ज्+क्त] विना रंग का। खून रहित। असन्तुष्ट। विरक्त। जो अनुकूल न हो।

अपरति—(स्त्री०) [अप√रम्+क्तिन्] विच्छेद। असन्तोष। विराग।

अपरव—(पुं०) [अपकृष्टो रवः प्रा० स०] झगड़ा, विवाद (किसी सम्पत्ति के उपभोग के सम्बन्ध में)। अपकीर्ति, वदनामी।

अपरस्पर—(वि०) [अपरं च परं च इति विग्रहे द्व० स० पूर्वपदे सुश्च] एक के वाद दूसरा। अवाधित। लगातार। जो आपस का न हो।

अपरा—(स्त्री०) [अपर+टाप्] अध्यात्मविद्या को छोड़ कर शेष संपूर्ण विद्या। लौकिक विद्या, वेद-वेदांगादि। पश्चिम दिशा। हाथी

के पीछे का धड़। गर्भाशय, झिल्ली। गर्भावस्था में रुका हुआ रजोधर्म।

अपराग–(वि०) [अपगतः रागो यस्मात् ब० स०] बिना रंग का। (पुं०) असन्तोष। शत्रुता; 'अपरागसमीरणेरितः' कि० २.५०।

अपराजित––(वि०) [न० त०] जो जीता न गया हो। जो हारा न हो। (पुं०) एक प्रकार का जहरीला कीड़ा। विष्णु। शिव।

अपराजिता––(स्त्री०) [न पराजिता न० त०] दुर्गा देवी जिनका पूजन दशहरा के दिन किया जाता है। शेफालिका, जयंती, विष्णुक्रांता, शंखिनी आदि पौधे। अयोध्या नगरी। एक वर्ण-वृत्त। उत्तर-पूर्व विदिशा। एक योगिनी।

अपराद्ध––(वि०) [अप√राध्+क्त] जिसने अपराध किया हो। जो निशाना चूक गया हो। दोषी। गलती करने वाला। अतिक्रांत, उल्लंघित।––**पृषत्क**–(पुं०) वह तीरंदाज जिसका तीर निशाने से गिर गया हो या निशाना चूक गया हो।

अपराद्धि––(स्त्री०) [अप√राध्+क्तिन्] अपराध, कसूर। पाप, दुष्कर्म।

अपराध––(पुं०) [अप√राध्+घञ् भावे] कसूर, जुर्म। पाप––**विज्ञान**–(न०) वह विज्ञान जिसमें अपराध करने के प्रेरक कारणों तथा निवारक उपायों का विवेचन हो। [क्रिमिनॉलॉजी]।––**स्वीकरण**–(न०) (पुरोहित इत्यादि के सामने) अपना अपराध या पाप स्वयं स्वीकार करना। वह कथन जिसमें अपना अपराध स्वीकार किया गया हो।

अपराधिन्––(वि०) [अपराध+इनि] अपराध करने वाला, दोषी।

अपरिग्रह––(वि०) [नास्ति परिग्रहो यस्य न० ब०] जिसके पास न तो कोई वस्तु हो और न कोई नौकर-चाकर। निपट मोहताज, निपट रंक। (पुं०) [न० त०] अस्वीकृति, नामंजूरी। अभाव, गरीबी।

अपरिच्छद––(वि०) [नास्ति परिच्छदो यस्य न० ब०] दरिद्र, गरीब, मोहताज।

अपरिच्छिन्न––(वि०) [परि√छिद्+क्त न० त०] सतत। अभेद्य। मिला हुआ। असीम, इयत्तारहित।

अपरिणय––(पुं०) [न० त०] अविवाहित अवस्था। चिर-कौमार्य।

अपरिणीता––(स्त्री०) [न० त०] अविवाहित लड़की।

अपरिपणितसन्धि––(पुं०) [न परिपणितः न० त० स चासौ सन्धिः कर्म० स०] केवल धोखे में रखने के लिये की जाने वाली एक प्रकार की कपट-संधि।

अपरिसंख्यान––(न०) [न० त०] अनंतता। असीमता। असंख्यत्व।

अपरीक्षित––(वि०) [न० त०] अनजाँचा हुआ। मूर्खतापूर्ण। अविचारित। जो सब प्रकार से सिद्ध या स्थापित न हुआ हो।

अपरुष्––[अप√रुष्+क्विप्] अक्रोधी; क्रोधशून्य 'अपरुषा परुषाक्षरमीरिता' र० ९.८।

अपरुष––(वि०) [न० त०] क्रोधशून्य। जो कठोर न हो।

अपरूप––(वि०) [अपकृष्टम् रूपम् यस्य ब० स०] बदशक्ल, कुरूप। बेढंग। अंगभंग।

अपरेद्युस्––(अव्य०) [अपर+एद्युस्] दूसरे दिन। अगले दिन।

अपरोक्ष––(वि०) [न० त०] जो परोक्ष न हो, प्रत्यक्ष। इंद्रियों द्वारा जाना जाने वाला। जो दूर न हो।

अपरोध––(पुं०) [अप√रुध्+घञ्] वर्जन, मनाई। रोक।

अपर्ण––(वि०) [नास्ति पर्णम् यस्मिन् न० ब०] पत्तारहित।

अपर्णा––(स्त्री०) [न पर्णान्यपि भोजनम् यस्याः न० ब०] पार्वती या दुर्गा देवी का एक नाम।

अपर्याप्त––(वि०) [परि√आप्+क्त न० त०] अयथेष्ट, जो काफी न हो। असीम, सीमारहित। अशक्त, असमर्थ, अयोग्य।

अपर्याप्ति—(स्त्री०) [परि√आप्+क्तिन्-न० त०] अपूर्णता, कमी, त्रुटि। अयोग्यता, अक्षमता।

अपर्याय—(वि०) [नास्ति पर्यायो यस्य न० ब०] क्रमरहित, बेसिलसिला। (पुं०) [परि-√इण्+घञ् न०त०] क्रम या विधि का अभाव।

अपर्युषित—(वि०) [परि√वस्+क्त न० त०] रात का रखा हुआ नहीं, वासी नहीं। ताजा, टटका।

अपर्वन्—(वि०) [नास्ति पर्व यस्मिन् न० ब०] जिसमें गाँठ न हो। बेजोड़ अथवा जिसमें जोड़ने की जगह न हो। बेसमय, अनऋतु। (न०) वह दिन जो पर्व वाला न हो।

अपल—(वि०) [नास्ति पलं यस्मिन् न० ब०] पलशून्य। बेमांस का। (न०) [अपक्रमं लाति=गृह्णाति येन यस्मिन् वा इति विग्रहे अप√ला+क] आलपीन या कील। चार तोला से न्यून परिमाण।

अपलपन, अपलाप—(न०, पुं०) [अप√लप्+ल्युट्] [अप्√लप्+घञ्] छिपाना। सत्य वात की जानकारी, विचार और भाव को छिपाना।—**दण्ड**–(पुं०) मिथ्याभाषण के लिये सज़ा।

अपलापिन्—(वि०) [अप√लप्+णिनि] इनकार करने वाला, मुकरने वाला। छिपाने वाला।

अपलाषिका, अपलासिका—(स्त्री०) [अप √लष् या√लस्+ण्वुल स्त्रियाम् टाप्, इत्वम्] बड़ी प्यास।

अपलाषिन्, अपलाषुक—(वि०) [अप√लष्+णिनि] [अप√लष्+उकञ्] प्यासा। प्यास या अभिलाषा से युक्त।

अपवन—(वि०) [नास्ति पवनम् यत्र न० ब०] विना आँधी-बतास के। पवन से रहित। (न०) [अपकृष्टम् वनम् प्रा० स०] नगर के समीप का वाग, उपवन। लताकुंज।

अपवरक, अपवरका (पुं० स्त्री०)—[अप √वृ+वुन्] भीतरी कमरा। रोशनदान, झरोखा; 'ततश्चैकस्मादपवरकात्' मु. १।

अपवरण—(न०) [अप√वृ+ल्युट्] पर्दा। चिक। कपड़ा।

अपवर्ग—(पुं०) [अप√वृज+घञ्] पूर्णता, किसी कार्य का पूर्ण होना या सुसम्पन्न होना। अपवाद, विशेष नियम। मोक्ष, निर्वाण। भेंट, पुरस्कार। दान। त्याग। फेंकना। छोड़ना (तीरों का)।

अपवर्जन—(न०) [अप√वृज्+ल्युट्] त्याग। (प्रतिज्ञा की) पूर्ति। उऋण होना। भेंट। दान। मोक्ष।

अपवर्तन—(न०) [अप√वृत्+ल्युट्] पलटाव, उलटफेर। वंचित करना। गणित में प्रसिद्ध भाज्य-भाजक दोनों को किसी एक तुल्यरूप अंक से बाँटना। संक्षिप्त करना।

अपवाद—(पुं०) [अप√वद्+घञ्] निन्दा, अपकीर्ति, कलङ्क। नियम विशेष जो व्यापक नियम के विरुद्ध हो। आज्ञा। निर्देश। खण्डन। प्रतिवाद। विश्वास। इतमीनान। प्रेम। सौहार्द। सद्भाव। आत्मीयता। वेदान्तशास्त्रानुसार अध्यारोप का निराकरण।

अपवादक—अपवादिन्—(वि०) [अप√वद्+ण्वुल्] [अप√वद्+णिनि] निन्दक। बदनाम करने वाला। 'मृगयापवादिना माण्डव्येन' अभि०शा० २। विरोधी। किसी आज्ञा को हटाने वाला। वाहर करने वाला।

अपवारण—(न०) [अप√वृ+णिच्+ल्युट्] छिपाव, ढकाव। अन्तर्धान। रोक, व्यवधान। वीच में पड़कर आघात से बचाने वाली वस्तु।

अपवारित—(वि०) [अप√वृ+णिच्+क्त] ढका हुआ, छिपा हुआ। दूर किया हुआ, हटाया हुआ। तिरोहित, अन्तर्हित।

अपवारितम्—अपवारितकम्–(क्रि० वि०) [अप√वृ+णिच्+क्त, सामान्ये नपुंसकम्]

[अपवारित+कन् न०] छिपे हुए या गुप्त तौर तरीके ।

अपवाह—(पुं०) **अपवाहन**—(न०) कम करना । घटाना । [अप√वह्+णिच्+घञ्] [अप√वह्+णिच् +ल्युट्] दूर करना । हटाना ।

अपविघ्न—(वि०) [अपगताः विघ्नाः यस्मिन् ब० स०] अबाधित । बिना रोक टोक का ।

अपविद्ध—[अप√व्यध्+क्त] ढलकाया हुआ या दूर फेंका हुआ । त्यक्त । अस्वीकृत किया हुआ । भूला हुआ । स्थानान्तर किया हुआ । छुड़ाया हुआ । रहित, हीन । नीच, क्षुद्र । (पुं०) हिन्दू धर्मशास्त्रानुसार बारह प्रकार के पुत्रों में से वह पुत्र जिसे उसके जनक-जननी ने त्याग दिया हो और अन्य किसी ने उसे गोद ले लिया हो; मनु. ९.१७१; या० २.१३२

अपविद्या—(स्त्री०) [अपकृष्टा विद्या प्रा० स०] अज्ञता । आध्यात्मिक अज्ञान, अविद्या, माया; 'तत्त्वस्य संवित्तिरिवापविद्यां' कि० १६.३२

अपवीण—(वि०) [अपकृष्टा वीणा वा अपगता वीणा यस्य ब० स०] बुरी वीणा रखने वाला या बिना वीणा का ।

अपवीणा—(स्त्री०) [अपकृष्टा वीणा प्रा० स०] बुरी वीणा ।

अपवृक्ति—(स्त्री०) [अप√वृज्+क्तिन्] समाप्ति, सम्पूर्णता ।

अपवृति—(स्त्री०) [अप√वृ+क्तिन्] दे० 'अपवरण' ।

अपवृत्ति—(स्त्री०) [अप√वृत्+क्तिन्] समाप्ति, अन्त ।

अपवेध—(पुं०) [अपकृष्टो वेधः प्रा० स०] गलत छेदना (मोती आदि का) । ठीक स्थान पर न वेधना ।

अपव्यय—(पुं०) [प्रा० स०] निरर्थक व्यय, फिजलखर्ची ।

अपशकुन—(न०)[प्रा० स०] बुरा सगुन, असगुन ।

अपशङ्क—(वि०) [अपगता शङ्का यस्य ब० स०] निडर, निर्भय । अपशङ्कम् निर्भयता ।

अपशब्द—(पुं०) [अपकृष्टःशब्दः प्रा० स०] अशुद्ध शब्द, दूषित शब्द । असंबद्ध प्रलाप । गाली, कुवाच्य । पाद, गोज, अपानवायु ।

अपशिरस्,— **अपशीर्ष,**— **अपशीर्षन्**—(वि०) [अपगतम् शिरः शीर्षम् वा यस्य ब० स०] सिर रहित । बेसिर का ।

अपशुच्—(वि०) [अपगता शुक् यस्य ब० स०] शोकरहित । (पुं०) जीवात्मा ।

अपशोक—(पुं०) [अपगतः शोको यस्मात् ब० स०] अशोकवृक्ष । (वि०) शोकरहित ।

अपश्चिम—(वि०) [नास्ति पश्चिमो यस्मात् न० ब० तथा न पश्चिमः न० त०] जिसके पीछे कोई न हो । प्रथम । पूर्व । उत्तम तथा अनुत्तम; 'प्रसीदतु महाराजो ममानेनापश्चिमेन प्रणयेन' वे० ६ । सब के आगे वाला । अति, अत्यन्त । 'अपश्चिमामिमां कष्टामापदं प्राप्तवत्यहम्' वा० ।

अपश्रय—(पुं०) [अपश्रीयते अस्मिन् इति अप√श्रि+अच्] तकिया, बालिश ।

अपश्री—(वि०) [अपगता श्रीर्यस्य ब० स०] गन्दी सांस सौन्दर्यरहित, बदसूरत ।

अपश्वास—(पुं०) [अप√श्वस+घञ्; अपकृष्टः श्वासः प्रा० स०]अपान वायु, गन्दीसाँस

अपष्ठ—(न०) [अप√स्था+क] अंकुश की नोक ।

अपष्ठु—(वि०) [अप√स्था+कु] विरुद्ध । प्रतिकूल । बाँया । (अव्य०) विरुद्ध । झुठाई से । निर्दोषता से । भली-भाँति, ठीक-ठीक ।

अपष्ठुर—**अपष्ठुल**—(वि०) [अप√ स्था +कुरच्, कुलच्] उल्टा, विरुद्ध ।

अपसद—(वि०) [अपकृष्ट एवं सीदति इति अप√सद्+अच्] जातिबहिष्कृत । अधम, नीच, अपकृष्ट, (पुं०) उच्च जाति के पुरुष

और नीच जाति की स्त्री से उत्पन्न संतान।
अपसर––(पुं०) [अप√सृ+अच्] अपसरण, हटना। पीछे लौटना। युक्तियुक्त कारण। उचित क्षमाप्रार्थना।
अपसरण––(न०) [अप√सृ+ल्युट्] चला जाना। लौट जाना (सेना का)। बच कर निकल जाना।
अपसर्जन––(न०) [अप√सृज+ल्युट्] त्याग। भेंट या दान। स्वर्गीय सुख, मोक्ष।
अपसर्प, अपसर्पक––(पुं०) [अप√सृप्+अप्] [अपसर्प+कन् (स्वार्थे)] जासूस, भेदिया; 'सोऽपसर्पैर्जजागार यथाकालं स्वपन्नपि' र० १७.५१।
अपसर्पण––(न०) [अप√सृप्+ल्युट्)] पीछे हटना या जाना। भेदिया की तरह भेद लेना, जासूसी करना।
अपसव्य––अपसव्यक––(वि०) [अपगतं सव्यं यत्र ब० स०] दाहिना। उल्टा, विरुद्ध। जिसका यज्ञोपवीत दाहिने कंधे पर हो। (न०) यज्ञोपवीत को बाएँ कंधे से दाहिने कंधे पर करना। पितृतीर्थ।
अपसार––(पुं०) [अप√सृ+घञ्] बाहर जाना। पीछे लौटना। निकास, निकलने का रास्ता।
अपसारण––(न०) **अपसारणा**––(स्त्री०) [अप√सृ+णिच्+ल्युट्] [अप√सृ+णिच्+युच्] दूर हटाना। हँका देना। निकाल देना रास्ता देना। किसी स्थान, सस्था आदि से बलपूर्वक या नियम-भंग आदि के कारण हटा दिया जाना। (एक्सपलशन)।
अपसिद्धान्त––(पुं०) [अपकृष्टः सिद्धान्तः प्रा० स०] गलत या भ्रमयुक्त निर्णय। एक निग्रह स्थान (न्या०)। विरुद्ध सिद्धांत(जैन)।
अपसृप्ति––(स्त्री०) [अप√सृप्+क्तिन्] दूर चला जाना।
अपस्कर––(पुं०) [अप√कृ+अप्, सुडागम] पहियों को छोड़ गाड़ी का अन्य भाग (न०) विष्ठा। योनि, भग। गुदा, मलद्वार।
अपस्कार––(पुं०) [अप√कृ+घञ्, सुडागम] घुटने के नीचे का भाग।
अपस्तम्ब,––स्तम्भ––(पुं०) [अप√स्तम्ब् वा√स्तम्भ्+अच्] सीने के पास का वह अंग जिसमें प्राणवायु रहती है।
अपस्नान––(न०) [अपकृष्टम् स्नानम् प्रा० स०] अशौचस्नान। अपवित्र स्नान। ऐसे जल में स्नान करना जिसमें कोई मनुष्य पहिले अपना शरीर धो चुका हो।
अपस्पश––(वि०) [अपगतः स्पशो यस्य ब० स०] जिसके पास जासूस न हो; 'शब्दविद्येव नो भाति राजनीतिरपस्पशा' शि० २.११२
अपस्पर्श––(वि०) [अपगतः स्पर्शो यस्य ब० स०] विचेतन, संज्ञाहीन। अनुभव-शक्तिहीन।
अपस्मार––(पुं०)**अपस्मृति**––(स्त्री०) मिरगी रोग। [अप√स्मृ√+घञ्] [अप√स्मृ+क्तिन्] स्मरण-शक्ति की हानि।
अपस्मारिन्––(वि०) [अप√स्मृ+णिनि] भुलक्कड़, भूल जाने वाला। मिर्गी के रोग वाला।
अपह––(वि०) [अप√हन्+ड] निवारण या नाश करने वाला (समासांत में––क्लेशापह)।
अपहत––(वि०) [अप√हन्+क्त] नष्ट या दूर किया हुआ। मारा हुआ।––**पाप्मन्** (वि०) जिसके समस्त पाप दूर हो गये हों। वेदान्त द्वारा जानने योग्य (आत्मा)
अपहति––(स्त्री०) [अप√हन्+क्तिन्] हटाना। नष्ट करना।
अपहनन––(न०) [अप√हन्+ल्युट्] निवारण करना। हटाना। प्रतिक्षेप करना। पीछे हटाना। मारना।
अपहरण––(न०) [अप√हृ+ल्युट्] छीन लेना। उठा ले जाना। चुराना। लूट लेना। छिपाना, गायब करना। महसूली माल को दूसरी चीजों में छिपा कर महसूल बचाना (कौ०)।

रुपया ऐंठने, स्वार्थ सिद्ध करने आदि के उद्देश्य से किसी बालक, बालिका या धनी व्यक्ति आदि को बलपूर्वक उठा कर ले जाना या गायब कर देना। (किडनैपिंग)।

अपहसित—(न०) **अपहास**—(पुं०) [अप हस्+क्त (भावे)] [अप हस्+घञ् (भावे)] अकारण हँसी। मूर्खतापूर्ण हास। निरर्थक हास्य।

अपहस्त—(वि०) [अपसारणार्थो हस्तो यस्मिन् ब० स०] गलहस्त (गले में हाथ) देकर हटाया जाने वाला (आदमी)। (न०) फेंकना। ले जाना। चुराना। लूटना।

अपहस्तित—(वि०) [अपहस्त+इतच्] निरस्त, हराया हुआ। गले में हाथ देकर निकाला हुआ। रद्दी किया हुआ। छोड़ा हुआ, त्यागा हुआ।

अपहानि—(स्त्री०) [अपकृष्टा हानिः प्रा० स०] त्याग, विच्छेद। अन्तर्धान। नाश।

अपहार—(पुं०) [अप√हृ+घञ्] लूट। चोरी। छिपाव। दूसरे की संपत्ति का दुरुपयोग। हानि। क्षति।

अपहारक—(वि०) [अप√हृ+ण्वुल्] अपहरण करने वाला। छीनने वाला, बलात् हरने वाला। (पुं०) चोर। डाकू।

अपहारिन्—(वि०) [अप√हृ+णिनि] दे० 'अपहारक'।

अपहृत—(वि०) [अप√हृ+क्त] छीना हुआ। लूटा हुआ। चुराया हुआ।

अपह्नव—(पुं०) [अप√ह्नु+अप् (भावे)] छिपाव, दुराव। वाग्जाल से सत्य को छिपाना। बहाना, टालमटूल। स्नेह, प्रेम।

अपह्नुति—(स्त्री०) [अप√ह्नु+क्तिन् (भावे)] मुकरना। सत्य को छिपाना। एक अर्थालंकार इसमें उपमेय का निषेध कर के उपमान स्थापित किया जाता है; 'नेदं नभो मण्डलम्' सा० द० १०.।

अपह्रास—(पुं०) [अप√ह्रस्+घञ्] घटाव, कमी।

अपांज्योतिस्—(न०) [ष० त० अलुक् स०] बिजली।

अपांनपात्—(पुं०) [ष० त० अलुक् स०] सावित्री और अग्नि की उपाधि।

अपांनाथ,—निधि—पति-(पुं०) [ष० त० अलुक् स०] जल के स्वामी, समुद्र। वरुण।

अपांपित्त—(न०) [ष० त० अलुक् स०] अग्नि। एक पौधा।

अपांयोनि—(पुं०) [ष० त० अलुक् स०] समुद्र।

अपाक—(पुं०) [√पच्+घञ् न० त०] अजीर्ण, अनपच। कच्चापन। अवयस्कता। —ज-(वि०) जो पक या पका कर तैयार न हो। प्राकृतिक।—**शाक**-(पुं०) अदरक।

अपाकरण—(न०) [अप—आ√कृ+ल्युट्] निराकरण, हटाना, दूर करना। अस्वीकृति, नामंजूरी। अदायगी, (कर्ज आदि) चुकता करना। व्यवसाय-उत्तोलन, किसी कारवार को समेटना या उठा देना।

अपाकर्मन्—(न०) [अप—आ√कृ+मनिन्] अदायगी, चुकाना, परिशोध। कारवार उठाना।

अपाकृति—(स्त्री०) [अप—आ√कृ+क्तिन्] दे० 'अपाकरण'। भय या क्रोध से उत्पन्न उच्छ्वास।

अपाक्ष—(वि०) [अक्ष्णः प्रति इति विग्रहे अव्य० स० अच् तदनन्तर पुनः अच्] विद्यमान, प्रत्यक्ष, इन्द्रियग्राह्य, [अपगतम् अपकृष्टम् वा अक्षि यस्य ब० स०] नेत्रहीन। बुरे नेत्रों वाला।

अपाङ्क्त, —अपाङ्क्तेय, —अपाङ्क्त्य—(वि०) [सद्भिः सह भोजने पङ्क्तिम् अर्हति इत्यर्थे पङ्क्ति√अण्, पङ्क्ति+ढक्—एय, पङ्क्ति+व्यञ् न० त०] जो सज्जनों या बिरादरी के साथ एक पंक्ति में बैठ कर न खा-पी सके, जातिबहिष्कृत।

अपाङ्ग,—अपाङ्गक-(पुं०) [अपाङ्गति तिर्यक् चलति नेत्रम् यत्र इति विग्रहे अप√अङ्ग्+

घञ् (आधारे)] [अपाङ्ग+कन्] आँख की कोर; 'चलापाङ्गां दृष्टिम्' अभि०शा० १.२४। सम्प्रदाय-सूचक तिलक। (वि०) [अपगतम् अङ्गम् यस्य ब० स०] जिसका कोई अंग टूटा हो या न हो। पंगु। अंगहीन। (पुं०) कामदेव।—**दर्शन**–(न०)—**दृष्टि**–(स्त्री०) -- **विलोकित**· (न०) - - **वीक्षण**—(न०) कनखियों से देखना, आँख मारना।

अपाची—(स्त्री०) [अप√अञ्च्+क्विन् स्त्रियाम् ङीप्] दक्षिण या पश्चिम दिशा।

अपाचीन—(वि०) [अपाच्याम् भवः इत्यर्थे अपाची+ख=ईन] पीछे को घूमा हुआ, पीछे को मुड़ा हुआ। अदृश्य, जो न देख पड़े। दक्षिण या पश्चिम का। सामने का। उल्टा।

अपाच्य—(वि०) [अपाची+यत्] दक्षिणी या पश्चिमी।

अपाटव—(न०) [पटु+अण् न० त०]। अपटुता, अनाड़ीपन। भद्दापन। रोग, अस्वस्थता। (वि०) [न० ब०] अकुशल, अनाड़ी। रोगी। भद्दा।

अपाणिनीय—(वि०) [न पाणिनीयः न० त०] पाणिनि के नियमों के विरुद्ध। वह ने पाणिनि का व्याकरण भली भाँति न ा हो।

अपात्र—(न०) [न० त०] कुपात्र, बुरा बरतन। अयोग्यपुरुष। दान देने के लिये अयोग्य व्यक्ति। निन्दित, दुराचारी।

अपात्रीकरण—(न०) [अपात्रम् श्राद्धभोजनाद्ययोग्यम् क्रियतेऽनेन इति अपात्र√कृ+च्विः, ईत्वम् तदन्तात्+ल्युट्] अयोग्य बनाना। निन्दित धन लेना, झूठ बोलना आदि। नौ प्रकार के पापों में से एक।

अपादान—(न०) [अप=आ√दा+ल्युट्] हटाना, अलगाव, विभाग। व्याकरण में पाँचवाँ कारक।

अपाध्वन्—(पुं०) [अपकृष्टः अध्वा प्रा० स०] बुरा मार्ग।

अपान—(पुं०) [अपानयति=अधोनयति मूत्रादिकम् इति अप=आ√नी+ड वा अपानिति=अधोगच्छति इति अप√अन्+अच्] शरीर में नीचे रहने वाला पवन। पाँच प्राण वायुओं में से एक, यह गुदा मार्ग से निकलता है, (न०) गुदा।

अपानृत—(वि०) [अपगतम् अनृतम् यस्मात् ब० स०] सत्य। असत्य से मुक्त।

अपाप,—अपापिन्–(वि०) [नास्ति पापम् यस्य न० ब०] [न पापम् न० त०, अपाप+इनि] पापरहित, विशुद्ध, पवित्र, धर्मात्मा।

अपामार्ग—(पुं०) [अपमृज्यते व्याधिरनेन इति अप√मृज्+घञ्, कुत्वदीर्घौ] चिचड़ा, अञ्जाझारा।

अपामार्जन--(न०) [अप√मार्ज्+ल्युट्] धोना, साफ करना। (रोग आदि को) दूर करना।

अपाय—(पुं०) [अप√इण्+अच् (भावे)] प्रस्थान। वियोग, अलगाव। अदृश्यता। अविद्यमानता। सर्वनाश। हानि। चोट।

अपार—(वि०) [उत्तरोऽवधिः पारः, न० ब०] पार-रहित। असीम, सीमारहित। जो कभी चुके ही नहीं, बहुत। पहुँच के बाहर। जिसके पार कठिनता से हुआ जाय। जिससे पार पाना कठिन हो। (न०) नदी का दूसरा तट। एक तरह का मानसिक संतोष या तटस्थता। असहमति। असीम सागर।

अपार्ण—(वि०) [अप√अर्द्+क्त] दूरवर्ती। समीप का।

अपार्थ—अपार्थक–(वि०) [अपगतः अर्थः =अभिधेयः प्रयोजनं वा यस्मात् ब० स०] [अपार्थ+कन्] निरर्थक, अर्थहीन। बिना प्रयोजन का।

अपार्थिव—(वि०) [न पार्थिवः न० त०] जो पृथ्वी या मिट्टी संबंधी न हो या उससे उत्पन्न न हुआ हो।

अपावरण—(न०)—, **अपावृति**—(स्त्री०) [अप—आ√वृ+ल्युट्] [अप—आ√वृ+क्तिन्] घेरा। छिपाव, दुराव।

अपावर्तन,—(न०), **अपावृत्ति**—(स्त्री०) [अप—आ√वृत्+ल्युट्] [अप—आ√वृत्+क्तिन्] लौट जाना, पीछे चला जाना। भाग जाना। क्रान्ति।

अपाश्रय—(वि०) [अपगतः आश्रयो यस्य व० स०] आश्रयहीन, निरवलम्ब। असहाय। (पुं०) [अप—आ√श्रि+अच्] आश्रय, आश्रय-स्थल। चँदोवा। शामियाना। सिरहाना।

अपासङ्ग—(पुं०) [अप—आ√सञ्ज्+घञ्] तरकस।

अपासन—(न०) [अप√अस्+ल्युट्] फेंक देना। त्याग देना। मार देना।

अपासरण—(न०) [अप—आ√सृ+ल्युट्]। दूर हटना। भागना।

अपासु—(वि०) [अपगताः असवः यस्य व० स०] निर्जीव, मृत।

अपास्त—(वि०) [अप√अस्+क्त] हटाया हुआ। तिरस्कृत। पराजित।

अपि—(अव्य०) [√पा+इण्, आकारलोप न० त०] सम्भावना। प्रश्न। शङ्का। गर्हा। समुच्चय। अनुज्ञा। अवधारण। भी। ही। निश्चय। ठीक।—**च**–(अव्य०)। और भी। —**तु**–(अव्य०) वल्कि। किंतु।

अपिगीर्ण—(वि०) [अपि√गृ+क्त] प्रशंसित। प्रसिद्ध। कथित, वर्णित।

अपिच्छिल—(वि०) [न पिच्छिलः न० त०] गँदला नहीं, स्वच्छ, साफ।

अपितृक—वि०) [नास्ति पिता यस्य न० व०] पितारहित। पैतृक या पुश्तनी नहीं, अपैतृक।

अपित्र्य—(वि०) [न पित्र्यम् न० त०] पैतृक नहीं।

अपिधान, पिधान–(न०) [अपि√धा+ल्युट्] ['वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः' इति कारिकया अकारस्य लोपः]। ढकना। छिपाना। ढक्कन। आच्छादन, आवरण।

अपिधि—(स्त्री०) [अपि√धा+कि] जबतक तृप्ति न हो तबतक देना। छिपाव, दुराव।

अपिनद्ध—(वि०) [अपि√नह्+क्त]। ढका हुआ। बँधा हुआ। पहना हुआ।

अपिव्रत—(वि०) [अपि संसृष्टं व्रतम् कर्म भोजनं नियमो वा यस्य व० स०] किसी धर्मानुष्ठान में भाग लेनेवाला रक्तसम्बन्ध से युक्त।

अपिहित,—पिहित–(वि०) [अपि√धा+क्त] [भागुरिमतेन अकारलोपः]। बंद, मुँदा हुआ। ढका हुआ, छिपा हुआ। [न पिहितः न० त०] जो छिपा या ढका न हो, स्पष्ट।

अपीच्य—(वि०) [अपि√च्यु+ड] अति सुन्दर। गुप्त, छिपा हुआ।

अपीति—(स्त्री०) [अपि√इण्+क्तिन्] प्रवेश। समीप-गमन। नाश, हानि। प्रलय।

अपीनस—(पुं०) [अपि निश्चितम् ईयते गम्यते नासिका येन अपि√ई+क्विप्, अपिनासिका व० स० नासिकायाःनसादेशः] नाक की शुष्कता। घ्राणशक्ति की हानि। जुकाम।

अपुंस्का—(स्त्री०) [नास्ति पुमान् यस्याः न० व०] विना पति की स्त्री; 'नापुंस्कासीति मे मतिः', भट्टि० ५.७०।

अपुच्छा—(स्त्री०) [नास्ति पुच्छम्=अग्रम् यस्याः न० व०] चोटी रहित। शीशम का पेड़।

अपुत्र, अपुत्रक—(वि०) [नास्ति पुत्रो यस्य न० व०] [न० व० कप्] पुत्र या उत्तराधिकारी से रहित।

अपुत्रिका—(स्त्री०) [नास्ति पुत्रो यस्याः न० व० कप्, टाप् इत्व] पुत्ररहित पिता की लड़की जिसके निज का भी कोई पुत्र न हो।

अपुनर्—(अव्य०) [न पुनः न० त०]। फिर नहीं। एक वार।—**अन्वय**–(वि०) (अपु-

नरन्वय) पुनः न लौटने वाला, मृत ।—**आदान**-(न०) (अपुनरादान) वापिस न लेना या पुनः न लेना ।—**आवृत्ति**-(स्त्री०) (अपुनरावृत्ति) । फिर न आना या लौटना, मोक्ष ।—**भव**-(पुं०) पुनः जन्म न लेना, मोक्ष ।

अपुष्ट—(वि०) [न पुष्टः न० त०] । दुबला-पतला । धीमा, अप्रखर । कोमल (स्वर) । एक अर्थदोष ।

अपुष्प—(वि०) [न० ब०] पुष्पहीन ।—**फल**,—**फलद**-(पुं०) बिना फूले फल देने वाला, गूलर आदि वृक्ष ।

अपूप—(पुं०) [न पूयते विशीर्यते इति√पूय्+प न० त०] पुआ, मालपुआ, अँदरसा ।

अपूरणी—(स्त्री०) [न पूर्यते सर्वतः कण्टकावृततया दुरारोहत्वात् इति√पूर्+ल्युट् ङीप् न० त०] शाल्मली वृक्ष, सेमर का पेड़ ।

अपूर्ण—(वि०) [न पूर्णः न० त०] जो पूरा या भरा न हो । अधूरा । कम । असमाप्त ।

अपूर्व—(वि०) [सुन्दरतया कुत्सिततया वा नास्ति पूर्वम्=पूर्वभूतम् यस्य यस्मात् वा न० ब०] । जो या जैसा पहले न हुआ हो । अद्भुत; 'अपूर्वो दृश्यते वह्निः कामिन्याः स्तनमण्डले । दूरतो दहतीवाङ्गं हृदि लग्नस्तु शीतलः' शृं०ति० १७ । बे-जोड़ । अज्ञात । अपरिचित । पहला नहीं । (पुं०) [नास्ति पूर्वम्—पूर्ववर्ती यस्य न० ब०] परमात्मा । न० [पूर्वम् न दृष्टम्] पाप-पुण्य, जिसके कारण पीछे सुख-दुःख की प्राप्ति होती है । पति-(स्त्री०) जिसके पहिले पति न रहा हो, क्वारी, अविवाहिता ।—**विधि**-(पुं०) अन्य प्रमाणों से अप्राप्त अर्थ का विधान करना ।

अपृक्त—(वि०) [न० त०] । असंयुक्त । असंबद्ध ।

अपृथक्—(अव्य०) [न० त०] अलहदा से नहीं । साथ साथ । समष्टि रूप से ।

अपेक्षण,—(न०)—**अपेक्षा**-(स्त्री०) [अप√ईक्ष्+ल्युट्] [अप√ईक्ष्+अ] । आकांक्षा, चाह । आवश्यकता । कार्य और कारण का परस्पर सम्बन्ध । परवाह । ध्यान । प्रतिष्ठा, सम्मान । आशा ।—**बुद्धि**-(स्त्री०) 'यह एक है' 'यह एक हैं' इस प्रकार की अनेकों में रहने वाली बुद्धि, भेदबुद्धि । 'अनेकैकत्वबुद्धिर्या सापेक्षा बुद्धिरुच्यते' इति भाषापरिच्छेदः ।

अपेक्षणीय, **अपेक्षितव्य**, **अपेक्ष्य**—(वि०) [अप√ईक्ष्+अनीयर्] [अप√ईक्ष्+तव्यत्] [अप√ईक्ष्+ण्यत्] अपेक्षा करने योग्य । वाञ्छनीय ।

अपेक्षित—(न०) [अप√ईक्ष्+क्त (भावे)] ख्वाहिश । इच्छा । सम्मान । सम्बन्ध । (वि०) [अप√ईक्ष्+क्त (कर्मणि)] जिसकी चाह, प्रतीक्षा या आवश्यकता हो ।

अपेत—[अप√इण्+क्त] तिरोहित । गया हुआ; 'अपेतयुद्धाभिनिवेशसौम्यः' शि० ३.१ । विरुद्ध । रहित । मुक्त ।—**कृत्य**-(वि०) कार्य या कर्म से रहित ।—**राक्षसी**-(स्त्री०) तुलसी का पौधा ।

अपोगण्ड—(पुं०) [पुनाति, पवते वा इति √पू+विच्, न पोगण्डः एकदेशोऽस्य न० ब०] किसी शरीरावयव की अधिकता अथवा स्वल्पता वाला । देह के किसी अङ्ग की कमी या बेशी वाला । सोलह वर्ष की अवस्था के नीचे नहीं अर्थात् ऊपर, बालिग, वयस्क । बालक, बच्चा । अत्यन्त भीरु, बड़ा डरपोक । (चेहरे की) सिकुड़न वाला ।

अपोढ—(त्रि०) [अप√वह्+क्त] । निरस्त, निकाला हुआ । बाधित ।

अपोदका—(स्त्री०) [अपगतम् उदकम् यस्याः ब० स०] पूति नामक शाक ।

अपोह—(पुं०) [अप√ऊह्+घञ्] स्थानान्तरित करना । भगा देना । शङ्का या तर्क का

निराकरण। तर्क-वितर्क करना, बहस करना। उन सब विषयों का निराकरण जो विचारणीय विषय के बाहर हों।

अपोहन—(न०) [अप√ऊह्+ल्युट्] दे० 'अपोह'।

अपोहनीय, अपोह्य—(वि०) [अप√ऊह्+अनीयर्] [अप√ऊह्+ण्यत्] हटाने योग्य, दूर करने योग्य।

अपौरुष, अपौरुषेय—(वि०) [नास्ति पौरुषम् यस्मिन् न० ब०] [न पौरुषेयः न० त०]। कायर, भीरु। अमानुषिक, अलौकिक। (न०) [न० त०] भीरुता, कायरता। अलौकिक या अमानुषिक शक्ति।

अप्तोर्याम—(पुं०) [अप्तोः शरीरस्य पावकत्वात् याम इव, अलुक् स०]। एक यज्ञ का नाम। सामवेद की एक ऋचा का नाम। जो उक्त यज्ञ की समाप्ति में पढ़ी जाती है। ज्योतिष्टोम यज्ञ का अन्तिम या सप्तम भाग।

अप्न्य—(वि०) [अप्नुनि=देहे भवः इत्यर्थे अप्नु+यत् वेष टिलोपः;]। किसी काम में लगा हुआ। शरीर के काम में स्थित।

अप्पति—(पु०) [अपाम् पतिः ष० त०] वरुण। समुद्र।

अप्यय—(पुं०) [अपि√इण्+अच्] समीपगमन, मिलन। (नदी में से) उड़ेलना, उलीचना। प्रवेश। अन्तर्धान, अदृष्ट होना। मोक्ष होना। नाश।

अप्रकरण—(न०) [न प्रकरणम् न० त०] मुख्य विषय नहीं, वाहियात विषय।

अप्रकाश—(वि०) [नास्ति प्रकाशो यस्मिन् न० ब०]। प्रकाश-रहित, चमक से शून्य। धुँधला। काला। स्वतःप्रकाशमान। तिरोहित, छिपा हुआ। (पुं०) [न० त०] प्रकाश का अभाव, अँधेरा।

अप्रकृत—(वि०) [न० त०] अयथार्थ। बनावटी। अप्रधान, गौण। आकस्मिक। विषय से असंबद्ध, अप्रासङ्गिक। (न०) उपमान।

अप्रकृष्ट—(वि०) [न० त०] नीच, बुरा। (पुं०) कौआ।

अप्रगम—(वि०) [नास्ति प्रगमो यस्मात् न० ब०] इतनी तेजी से जाने वाला कि अन्य लोग पीछे न चल सकें।

अप्रगल्भ—(वि०) [न० त०] असाहसी। शर्मीला, शीलवान्। (विलोम, धृष्ट), 'धृष्टः पार्श्वे वसित नियतं दूरतश्चाप्रगल्भः' हि० २.२६ अप्रौढ। निरुद्यम। ढीला, सुस्त।

अप्रगुण—(वि०) [न प्रकृष्टः गुणो यस्य न० ब०] व्याकुल। प्रकृष्ट गुण से हीन।

अप्रज—(वि०) [नास्ति प्रजा यस्य यस्मिन् वा न० ब०] सन्तान-रहित। जो (स्थान या-घर) बसा न हो, जहाँ बस्ती न हो।

अप्रजस्—(वि०) [नास्ति प्रजा यस्य न० ब० असिच् प्रत्ययः] सन्तति-हीन, जिसके कोई-औलाद न हो।

अप्रजाता—(स्त्री०) [नास्ति प्रजातो यस्याः न० ब०] वन्ध्या स्त्री।

अप्रतिकर—(वि०) [प्रति√कृ+अच् न० त०] जो विपरीत न करे, विश्वस्त। (पुं०) [प्रति√कृ+अप् (भावे) न० त०] विक्षेप का अभाव। घबड़ाहट का अभाव।

अप्रतिकर्मन्—(वि०) [नास्ति प्रतिकर्म यस्य न० ब०] ऐसे कर्म करने वाला, जिसकी बराबरी अन्य कोई न कर सके। अनिवार्य। अति प्रबल। अप्रतिरोधनीय।

अप्रतिकार,—अप्रतीकार-'(वि०) [नास्ति प्रतिकारो यस्य न० ब०] जिसका कोई उपाय या तदबीर न हो सके, लाइलाज, असाध्य। जिसका कोई बदला न दिया जा सके।

अप्रतिघ—(वि०) [न० ब०] अभेद्य। अजेय। जो नष्ट न किया जा सके। जो हटाया न जा सके, जो दूर न किया जा सके। अक्रोधी, शान्त।

अप्रतिद्वन्द्व—(वि०) [न० ब०] जिसका कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो। अजेय। बेजोड़।

अप्रतिपक्ष--(वि०) [न० ब०] अप्रतियोगी, विपक्षीशून्य, शत्रुरहित । असदृश ।

अप्रतिपण्य—(वि०) [न० ब०] जिसका विनिमय या विक्रय न हो सके ।

अप्रतिपत्ति—(स्त्री०) [प्रतिपत्तेः अभावः न० त०] अस्वीकृति । उपेक्षा । समझदारी का अभाव । दृढ़विचारशून्यता । विह्वलता; 'अप्रतिपत्तिर्जडता स्यादिष्टानिष्टदर्शन-श्रुतिभिः' काद० । असफलता ।

अप्रतिबन्ध--(वि०) [प्रतिबन्धस्य अभावः न० त०] रुकावट का न होना, स्वच्छन्दता । (वि०) [न० ब०] बे-रोक-टोक, स्वच्छंद । विवादरहित, बिना झगड़े का ।

अप्रतिबल--(वि०) [न० ब०] अजयशक्ति-युक्त, वह मनुष्य जिसके समान बली दूसरा न हो ।

अप्रतिभ--(वि०) [नास्ति प्रतिभा यस्य न० ब०] शीलवान् । प्रतिभाशून्य । उदास । स्फूर्ति रहित, सुस्त । मतिहीन, निर्बुद्धि ।

अप्रतिभट--(वि०) [न० ब०] जिसका सामना करने वाला कोई न हो, बेजोड़ । (पुं०) ऐसा योद्धा जिसके सामने कोई खड़ा न रह सके ।

अप्रतिभाव्य—(वि०) [प्रति√भू+णिच् +यत् न० त०] (वह अपराध) जिसमें किसी के जामिन बनने या जमानत देने को तैयार होने पर भी अपराधी के अस्थायी रूप से रिहा किये जाने की गुंजाइश न हो । [नॉन बेलेबिल] ।

अप्रतिम—(वि०) [न० ब०] जिसकी तुलना न हो सके, बेजोड़, असदृश ।

अप्रतिरथ--(वि०) [न प्रतिपक्षो रथो रथान्तरम् यस्य न० ब०] ऐसा वीर योद्धा जिसके समान दूसरा वीर योद्धा न हो । बेजोड़ वीर योद्धा; 'दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य अभि० शा० ४.१९ (पुं०) विष्णु । (न०) [न प्रतिकूलो रथो यत्र न० ब०] युद्ध की यात्रा । युद्धार्थ यात्रा के लिये किया गया मङ्गलाचार । सामवेद का एक भाग ।

अप्रतिरव--(वि०) [नास्ति प्रतिरवो यत्र न० ब०] विवादरहित, जिसके सम्बन्ध में कोई झगड़ा न हो ।

अप्रतिरूप--(वि०) [न० ब०] जिसके समान रूप वाला कोई न हो । अद्वितीय । अनुपम, जिसकी तुलना न हो सके ।--**कथा**-(स्त्री०) ऐसा वचन जिसका उत्तर न हो, उत्तरहीन वचन । ऐसा वचन जिसके विरुद्ध और न हो ।

अप्रतिवीर्य--(वि०) [न० ब०] वह जिसके समान शौर्य या पराक्रम किसी अन्य में न हो, अथवा जिसके शौर्य या पराक्रम की समानता अन्य न कर सके ।

अप्रतिशासन—(वि०) [न० ब०] जिसका शासन में दूसरा कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो । एक ही शासन में रहने वाला ।

अप्रतिष्ठ--(वि०) [नास्ति प्रतिष्ठा यस्य न० ब०] बे-इज्जत, बदनाम । अस्थायी, विनश्वर । जो लाभप्रद न हो, निकम्मा, व्यर्थ । अप-कीर्तिकर । (पुं०) एक नरक । परमात्मा ।

अप्रतिष्ठान—(न०) [न० त०] प्रौढ़ता या दृढ़ता का अभाव ।

अप्रतिहत--(वि०) [प्रति√हन्+क्त न० त०] जिसे कोई रोकने वाला न हो, अबाधित अजेय; 'जृम्भतामप्रतिहतप्रसरमार्यस्य क्रोध-ज्योतिः' वे० १ । आघातरहित । बलवान् । जो हतोत्साह न हो ।—**गति**-(वि०) जिसकी गति किसी प्रकार रोकी न जा सके ।—**नेत्र**-(वि०) जिसके नेत्र निर्बल न हों । (पुं०) एक बौद्ध देवता ।--**व्यूह**-(पुं०) वह अव्यवस्थित व्यूह जिसमें हाथी, घोड़े, रथ, सिपाही आदि एक दूसरे के पीछे हों (कौ०) ।

अप्रतीक—(वि०) [न० ब०] अंगहीन । ब्रह्म का एक विशेषण ।

प्रतीत—(वि०) [न० त०] जो प्रसन्न या र्पित न हो। अगम्य। विरोधरहित। अस्पष्ट अर्थ वाला—एक शब्द दोष)।

प्रत्ता—(स्त्री०) [प्र√दा+क्त न० त०] वारी लड़की, जिसका विवाह न हुआ हो या जसका दान न किया गया हो।

प्रत्यक्ष—(वि०) [न० त०] अदृष्ट, गोचर। अज्ञात। अविद्यमान, नुपस्थित।

अप्रत्यय—(वि०) [न० ब०] आत्मसन्दिग्ध, 'एतबार, जिसको किसी पर विश्वास न हो। ानशून्य। व्याकरण में प्रत्यय-रहित। (पुं०) न० त०] ज्ञान का अभाव। अविश्वास। ात्मसंशय। प्रत्यय नहीं।

अप्रत्याशित—(वि०) [न० त०] जिसकी ाशा न रही हो। अनसोचा, आकस्मिक।

अप्रधान—(वि०) [न० त०] अमुख्य, गौण, न्तर्वर्ती। (न०) मातहती की हालत, ताबे-ारी, अधीनता। गौणकर्म।

अप्रधृष्य—(वि०) [न० त०] अजेय, जो ीता न जा सके।

अप्रभु—(वि०) [न० त०] जो स्वामी न ो। जो बलवान् न हो। जिसमें शासन करने ी शक्ति न हो। असमर्थ।

अप्रमत्त—(वि०) [न० त०] जो प्रमादी या असावधान न हो। बुद्धिमान्। सतर्क।

अप्रमद—(वि०) [न० ब०] हर्ष या उत्सव से रहित। उदास।

अप्रमा—(स्त्री०) [न० त०] अयथार्थ ज्ञान, मिथ्या ज्ञान।

अप्रमाण—(वि०) [न० ब०] विना सबूत का। असीम, अपरिमित। अप्रामाणिक। जो प्रमाण न माना जाय। अविश्वस्त। (न०) [न० त०] (ऐसी आज्ञा या नियम) जो किसी कार्य में प्रमाण मानकर ग्रहण न किया जाय। असङ्गति। अप्रासङ्गिकता।

अप्रमाद—(वि०) [न० ब०] सतर्क, साव-धान। (पुं०) [न० त०] सावधानी, सतर्कता।

अप्रमेय—(वि०) [न० त०] जो नापा न जा सके, असीम। जो यथार्थ रूप से न जाना या समझा जा सके, जाँच के अयोग्य। (न०) ब्रह्म।

अप्रयाणि—(स्त्री०) [प्र√या+अनि न० त०] गमन न करना। उन्नति न करना। (इसका प्रयोग प्रायः किसी को शाप देने या अकोसने में होता है।); 'अप्रयाणिस्ते भूयात्'।

अप्रयुक्त—(वि०) [न० त०] अव्यवहृत, जिसका प्रयोग न किया गया हो या किया जा सके। गलत तरीके से काम में लाया गया। अप्रचलित (शब्द)।

अप्रवृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] प्रवृत्ति का अभाव। क्रियाशून्यता। निश्चेष्टता। उत्तेजना का अभाव। कोष्टबद्धता।

अप्रसङ्ग—(पुं०) [न० त०] अनुराग का अभाव। सम्बन्ध का अभाव। अनुपयुक्त समय या अवसर; 'अप्रसंगाभिधाने तु श्रोतुः श्रद्धा न जायते'।

अप्रसिद्ध—(वि०) [न० त०] जिसे अधिक लोग न जानते हों, अविख्यात। अज्ञात। असाधारण।

अप्रस्ताविक—(वि०) [न० त०] [स्त्री०—**अप्रस्ताविकी**] अप्रासङ्गिक, असङ्गत।

अप्रस्तुत—(वि०) [न० त०) असङ्गत, प्रसङ्ग-विरुद्ध। वाहियात, अर्थ-रहित। नैमित्तिक। विजातीय। वहिरङ्ग। अप्रधान। जो प्रस्तुत या विद्यमान न हो।—**प्रशंसा**-(स्त्री०) वह अर्थालङ्कार जिसमें अप्रस्तुत के कथन द्वारा प्रस्तुत का बोध कराया जाय।

अप्रहत—(वि०) [प्र√हन्+क्त न० त०] जो आहत न हो। अनजुती (भूमि)। कोरा (कपड़ा)।

अप्राकरणिक—(वि०) [न० त०] [स्त्री० —**अप्राकरणिकी**] जो प्रकरण या प्रसङ्ग के अनुसार न हो।

अप्राकृत—(वि०) [न० त०] जो प्राकृत या असंस्कृत न हो। जो असली न हो। अस्वाभाविक। असाधारण।

अप्राग्र्य—(वि०) [न० त०] जो प्रधान न हो, गौण। अधीन। निकृष्ट।

अप्राप्त—(वि०) [न० त०] जो मिला न हो। जो न पहुँचा हो। न आया हुआ। नियम जो लागू न हो।—**अवसर**–(अप्राप्तावसर), —**काल**–(वि०) अनवसर का, बेमौके का। अनऋतु का, कुसमय का।—**यौवन**–(वि०) जो युवा न हुआ हो।—**व्यवहार**,—**वयस्**–(वि०) नाबालिग, अल्पवयस्क।

अप्राप्ति—(स्त्री०) [न० त०] न मिलना, अलाभ। पूर्व नियम से प्रमाणित न होना। घटित न होना। अनुपपत्ति।—**सम**–(पुं०) जाति या असत् उत्तर के चौवीस भेदों में से एक (न्या०)।

अप्रामाणिक—(वि०) [न० त०] [स्त्री०—**अप्रामाणिकी**] जो प्रामाणिक न हो, ऊटपटाँग। अविश्वसनीय। न मानने योग्य।

अप्रिय—(वि०) [न० त०] अरुचिकर, नापसंद; 'अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः, वा०। जो प्यारा न हो, जो मित्र न हो, (पुं०) शत्रु (न०) अरुचिकर काम, नापसंद काम। (स्त्री०) सींगी मछली।

अप्रीति—(स्त्री०) [न० त०] अरुचि, नापसंदगी। घृणा। अभक्ति। पराङमुखता।

अप्रोषित—(वि०) [न० त०] न गया हुआ। जो अनुपस्थित न हो।

अप्रौढ़—(वि०) [न० त०] जो प्रौढ़ अर्थात् दृढ़ न हो। जो पूरा बढ़ा हुआ न हो। नम्र। भीरु। अधृष्ट। अशक्त।

अप्रौढ़ा—(स्त्री०) [न० त०] अविवाहित लड़की, वह लड़की जिसका हाल ही में विवाह हुआ हो, किन्तु रजस्वला न हुई हो।

अप्लव—(वि०) [न० ब०] जिसके पास नाव न हो। जो तैरता न हो।

अप्लुत—(वि०) [न० त०] प्लुत का उलटा। जो तीन मात्राओं वाला स्वर या वर्ण न हो।

अप्सरस्, अप्सरा—(स्त्री०) [अद्भ्यः सरन्ति इति विग्रहे अप्√सृ+असुन्=अप्सरस्। अप्√सृ+अच्, टाप्=अप्सरा।] इन्द्र की सभा में नाचने वाली देवाङ्गना, जो गन्धर्वों की स्त्रियाँ कही जाती हैं। स्वर्गवेश्या। ; "स्त्रियाँ बहुष्वप्सरसः" के अनुसार नित्य बहुवचनान्त 'अप्सरस्' शब्द है, किन्तु इसके अपवाद भी हैं:—नियमविघ्नकारिणी मेनकानाम अप्सराः प्रेषिता अभि० शा० १।—**पति**–(पुं०) इन्द्र।

अफल—(वि०) [न० ब०] फलरहित। जो उर्वर न हो। निरर्थक। बाँझ। (पुं०) झावुक या झाऊ नामक वृक्ष। **आकांक्षिन्**–(अफलाकांक्षिन्),—**प्रेप्सु**–(वि०) ऐसा पुरुष जो अपने परिश्रम का पुरस्कार या पारिश्रमिक न चाहे, निःस्वार्थी। "अफलाकांक्षिभिर्यज्ञः क्रियते ब्रह्मवादिभिः।" महाभारत।

अफेन—(वि०) [नास्ति फेनं यस्य अप्रशस्तं फेनं वा यस्य इति विग्रहे न० ब०] विना फेन का, फेनरहित। (न०) अफीम।

अबद्ध, अबद्धक—(वि०) [√बन्ध्+क्त, न० त०। अबद्धक 'स्वार्थे क'] विना बँधा हुआ। स्वतन्त्र। बिना अर्थ का, निरर्थक, वाहियात; 'यावज्जीवमहम्मौनी, ब्रह्मचारी च मे पिता। माता तु मम वन्ध्यासीदपुत्रश्च पितामहः'।—**मुख**–(वि०) जो मुँह का अपवित्र हो, जो गाली-गलौज बका करे।

अबन्धु, अबान्धव—(वि०) [न० ब०] इष्टमित्र से रहित, अकेला।

अबन्ध्य—(वि०) [बन्धे (फलप्रतिबन्धे) साधुः इति विग्रहे बन्ध+यत् न० त०] जिसका फल या परिणाम न रुके, सफल।

अबल—(वि०) [न० ब०] निर्बल। कमजोर। अरक्षित। (पुं०) [नास्ति बलं यस्मात्] वरुण नामक वृक्ष।

अबला—(स्त्री०) [नास्ति बलं यस्यां न० ब०] स्त्री, औरत।

अबाध—(वि०) [नास्ति बाधा यस्य न० ब०] बाधा-शून्य, अबाधित। पीड़ा रहित।—**व्यापार**-(पुं०) वह व्यापार जिसमें संरक्षक कर आदि लगाकर बाधा न डाली जाय (फ्री ट्रेड)।

अबाधा—(स्त्री०) [बाधाया: अभाव: न० त०] रोकटोक न होना। अखण्डन।

अबाल—(वि०) [न० बाल: न० त०] लड़का नहीं, जवान। छोटा नहीं, पूरा (जैसे-पूर्णिमा का चन्द्र)।

अबाह्य—(वि०) [न० त०] बाहरी नहीं, भीतरी। पूर्ण रूप से परिचित। जिसमें बहिर्भाग न हो।

अबिन्धन—(पुं०) [आप इन्धनं (दाह्या:) अस्य व० स०] समुद्र के भीतर रहने वाला अग्नि, वड़वानल।

अबुद्ध—(वि०) [न० त०] बुद्धू, मूर्ख, बेवकूफ।

अबुद्धि—(स्त्री०) [न० त०] बुद्धि का अभाव। निर्बुद्धिता। अज्ञान, मूर्खता।—**पूर्व**,—**पूर्वक**-(वि०) बेसमझा-बूझा, अनजाना हुआ। —**पूर्वं**—(अबुद्धिपूर्वं)—**वंकं**,—(**अबुद्धिपूर्वकम्**) (अव्य०) अज्ञातभाव से। अनजानेपन से।

अबुध, अबुध—(वि०) [न० त०] (√बुध्+क्विप्,—क, न० त०] निर्बोध, मूढ़। (पुं०) मूर्ख व्यक्ति।

अबोध—(वि०) [नास्ति बोधो यस्य न० ब०] अज्ञानी, मूर्ख, (पुं०) [बोधस्य अभाव: न० त०] ज्ञान का अभाव; 'निसर्गदुर्बोधमबोध-विक्लवा: क्व भूपतीनाञ्चरितं क्व जन्तव': कि० १·६।—**गम्य**-(वि०) जो समझ में न आवे।

अब्ज—(वि०) [अद्भ्य: जायते इति अप्√जन्+ड] जल में या जल से उत्पन्न। (न०) कमल। सौ करोड़, अरब। (पुं०) कपूर। शंख। चन्द्रमा। धन्वन्तरि।—**कर्णिका**-(स्त्री०) कमल का बीज-पुटक या छत्ता।—**ज**,—**भव**,—**भू**,—**योनि**- (पुं०) ब्रह्मा के नाम।—**बान्धव**-(पुं०) सूर्य।—**वाहन**-(पुं०) शिव का नाम।

अब्जा—(स्त्री०) [अप्√जन्+ड, टाप्] सीप।

अब्जिनी—(स्त्री०) [अब्जानि सन्ति अस्मिन् देशे अब्जानां समूह इति वा विग्रहे अब्ज+इनि] कमल-लता। कमलों का समूह।—**पति**-(पुं०) सूर्य।

अब्द—(पुं०) [अपो ददाति इति विग्रहे अप्√दा+क:] बादल। वर्ष। एक पर्वत का नाम। मोथा।—**अर्द्ध**-(न०) आधा वर्ष। छ: महीना।—**वाहन**-(पुं०) शिव का नाम।—**शत**-(न०) शताब्दी, सदी, १०० वर्ष।—**सार**-(पुं०) एक प्रकार का कपूर।

अब्धि—(पुं०) [आपो धीयन्ते अत्र इति विग्रहे अप्√धा+कि:] समुद्र। ताल, झील। सात और कभी दो चार की संख्या का सङ्केत।—**अग्नि**-(अब्ध्यग्नि) (पुं०) वड़वानल।—**कफ**—**फेन**-(पुं०) समुद्र का फेन।—**ज**-(पुं०) चन्द्रमा। शंख। अश्विनीकुमार।—**जा**-(स्त्री०) वारुणी, मद्य। लक्ष्मी देवी।—**द्वीपा**-(स्त्री०) पृथिवी।—**नगरी**-(स्त्री०) द्वारकापुरी।—**नवनीतक**-(पुं०) चन्द्रमा।—**मण्डूकी**-(स्त्री०) सीप।—**शयन**-(पुं०) विष्णु भगवान्।—**सार**-(पुं०) रत्न।

अब्रह्मचर्य—(वि०) [न० ब०] अपवित्र। जो ब्रह्मचारी न हो। (न०) [न० त०] ब्रह्मचर्य का अभाव। स्त्रीप्रसङ्ग।

अब्रह्मण्य—(वि०) [ब्रह्मन्+यत् न० ब०] ब्राह्मण के योग्य नहीं। ब्राह्मणों के प्रतिकूल। (न०) ब्राह्मण के अयोग्य कर्म।

अब्रह्मन्—(वि०) [न० ब०] ब्राह्मणों से भिन्न (न०) [न० त०] ब्रह्म नहीं।

अभक्ति—(स्त्री०) [न० त०] श्रद्धा या अनुराग का अभाव । अश्रद्धा ।

अभक्ष्य—(वि०) [न० त०] न खाने योग्य, जिसका खाना निषिद्ध हो । (न०) वर्जित खाद्य पदार्थ ।

अभग—(वि०) [न० ब०] अभागा । बदकिस्मत ।

अभद्र—(वि०) [न० त०] अशुभ, बुरा । दुष्ट । (न०) बुराई । पाप । दुष्टता । दुःख ।

अभय—(वि०) [न० ब०] भय से रहित, निडर । सुरक्षित । (न०) [न० त०] भय का अभाव; 'वैराग्यमेवाभयम्' (पुं०) [न० ब०] परमात्मा । शिव ।—**डिण्डिम**—(पुं०) सुरक्षा का ढिँढोरा । सैनिक ढोल । —**दक्षिणा**-(स्त्री०) —**दान**,—**प्रदान**—(न०) किसी को भय से मुक्तकर देने की प्रतिज्ञा या वचन देना ।

अभयङ्कर, अभयङ्कृत्—(वि०) [न० त०] भयङ्कर या भयावह नहीं, निर्भयप्रद । सुरक्षा करने वाला ।

अभया—(स्त्री०) [न० ब०] हरीतकी, हर्र । दुर्गा का एक रूप ।

अभव—(पुं०) [न० त०] अनस्तित्व । मोक्ष । नैसर्गिक सुख । समाप्ति या नाश ।

अभव्य—(वि०) [न० त०] न होने वाला । अनुचित । अशुभ । अभागा, प्रारब्धहीन ।

अभाग—(वि०) [न० ब०] जिसका (पैतृक) हिस्सा या पाँती न हो । । अविभक्त, विना बँटा हुआ ।

अभाव—(पुं०) [√भू+घञ्, न० त०] असत्ता । न होना, अनस्तित्व, नेस्ती । अविद्यमानता । नाश । मृत्यु । अदर्शन, यह पाँच प्रकार का होता है । (क) प्रागभाव, (ख) प्रध्वंसाभाव, (ग) अत्यन्ताभाव, (घ) अन्योन्याभाव, (ङ) संसर्गाभाव । त्रुटि, टोटा, घाटा ।

अभावना—(स्त्री०) [न० त०] निर्णय करने की शक्ति अथवा यथार्थ ज्ञान की अनुपस्थिति । ध्यान का अभाव ।

अभाषित—(वि०) [न० त०] अकथित, न कहा हुआ ।—**पुंस्क**—(पुं०) शब्द विशेष जो न तो कभी पुंलिङ्ग और न नपुंसक लिङ्ग बन सके, जो सदा स्त्रीलिङ्ग ही बना रहे ।

अभि—(अव्य०) [न भाति इति√भा+कि, न० त०] उपसर्ग विशेष जो संज्ञावाची और क्रियावाची शब्दों में लगाया जाता है । इसका अर्थ है—ओर, प्रति, तरफ । पक्ष में । पर, ऊपर (छिड़कना, बुरकना) । अधिक । अतिरिक्त । आरपार । जब यह उपसर्ग विशेषणों और ऐसे संज्ञावाची शब्दों में जो क्रिया से नहीं बने, लगाया जाता है, तब इसका अर्थ होता है—घनिष्ठता । अत्यन्तता । उत्कृष्टता । सामीप्य । सामने, प्रत्यक्ष । पृथक् पृथक् । एक के बाद एक ।

अभिक, अभीक—(वि०) [अभिकामयते इति अभि+कन्] कामुक; 'सोऽधिकारमभिकः कुलोचितं काश्चन स्वयमवर्तयत्समाः' र० १९.४ । प्रेमी ।

अभिकथन—(न०) [अभि√कथ्+ल्युट्] किसी के संबंध में ऐसी बात कहना या ऐसा आरोप लगाना जिसके लिये कोई निश्चित प्रमाण न हो । इस प्रकार कही गई बात या अप्रमाणित आरोप । (एलेगेशन)

अभिकरण—(न०) [अभि√कृ+ल्युट्] किसी की ओर से उसके प्रतिनिधि या अभिकर्ता के रूप में कार्य करना । अभिकर्ता (एजेंट) के कार्य करने का स्थान । (एजेंसी)

अभिकर्तृ—(पुं०) [अभि√कृ+तृच्] किसी व्यापारी, व्यापारिक संस्था या राज्य की ओर से प्रतिनिधि रूप में काम करने वाला या कमीशन पर माल बेचने वाला व्यक्ति (एजेंट) ।

अभिकांक्षा—(स्त्री०) [अभि√कांक्ष्√अङ्] अभिलाषा, आकांक्षा ।

अभिकांक्षिन्—(वि०) [अभि√कांक्ष+णिनि] अभिलाषी, ख्वाहिशमंद ।

अभिकाम—(वि०) [अभिवृद्धः कामो यस्य व० स०] प्यार करने वाला, अनुरागी। अत्यन्त कामी। (पुं०) [अभि√कम्+घञ्] स्नेह, प्रेम। ख्वाहिश, अभिलाषा।

अभिक्रतु—(वि०) [आभिमुख्येन क्रतुः युद्धकर्म यस्य व० स०] सामने होकर युद्ध करने वाला, बड़ा लड़ाकू।

अभिक्रन्द—(पुं०) [अभि√क्रन्द्+घञ्] चिल्लाहट।

अभिक्रम—(पुं०) [अभि√क्रम्+घञ्, अवृद्धि] आरम्भ। उद्योग, चढ़ाई, आक्रमण। चढ़ना। सवार होना।

अभिक्रमण—(न०), **अभिक्रान्ति**—(स्त्री०) [अभि√क्रम+ल्युट्] [अभि√क्रन्+क्तिन्] समीप गमन। चढ़ाई।

अभिक्रोश—(पुं०) [अभि√क्रुश+घञ्] चिल्लाहट। पुकार। गाली। भर्त्सना, फटकार।

अभिक्रोशक—(पुं०) [अभि√क्रुश्+ण्वुल्] पुकारने वाला। गाली देने वाला।

अभिख्या—(स्त्री०) [अभि√ख्या+अङ] चमक-दमक। सौन्दर्य। कान्ति; 'काप्यभिख्या तयोरासीत् व्रजतोः शुद्धवेषयोः' र० १.४६। कथन। घोषणा। हुंकार। सम्बोधन। नाम (उपाधि)। शब्द। समानार्थवाची शब्द। कीर्ति। गौरव। प्रसिद्धि। माहात्म्य।

अभिख्यान—(न०) [अभि√ख्या+ल्युट्] कीर्ति। गौरव।

अभिगम—(पुं०), अभिगमन—(न०) [अभि√गम्+अप्] [अभि√गम्+ल्युट्] पास जाना; 'तवार्हतो नाभिगमेन तृप्तं०,र० ५.११। संभोग।

अभिगम्य—(वि०) [अभि√गम्+यत्] जाने योग्य। प्राप्ति के योग्य। आश्रय योग्य आमन्त्रित करना।

अभिगर्जन, अभिगर्जित—(न०) [अभि√गर्ज्+ल्युट] [अभि√गर्ज्+क्त] भयानक दहाड़। भयङ्कर गर्जना।

अभिगामिन्—(वि०) [अभि√गम्+णिनि] पास जाने वाला। संभोग करने वाला।

अभिगुप्ति—(स्त्री०) [अभि√गुप्+क्तिन्] रक्षण। संरक्षण।

अभिगोप्तृ—(पुं०) [अभि√गुप्+तृच्] रक्षक। अभिभावक।

अभिगृहीत—(वि०) [अभि√ग्रह्+क्त] जिसका अभिग्रहण किया गया हो। [एडाप्टेड]

अभिग्रह—(पुं०) [अभि√ग्रह्+अच्] लूट खसोट। जबरदस्ती छीनना। आक्रमण, चढ़ाई। किसी काम के लिये किसी को ललकारना। शिकायत, फरियाद। अधिकार। शक्ति।

अभिग्रहण—(न०) [अभि√ग्रह्+ल्युट्] लूट लेना। छीन लेना। चुन कर लेना। (दूसरे के पुत्र, नियम, प्रथा आदि को) अपना बना लेना या अपना कहकर स्वीकार करना। [एडाप्शन]।

अभिघर्षण—(न०) [अभि√घृष्+ल्युट्] घिसन, रगड़। प्रेतावेश, सिर पर भूत का चढ़ना।

अभिघात—(पुं०) [अभि√हन्+घञ्] चोट देना। मार। प्रहार। ताड़ना। आक्रमण, हमला। सम्पूर्णतः नाश, सर्वनाश। पूर्ण रूप से स्थानान्तरित करने की क्रिया।

अभिघातक—(वि०) [अभि√हन्+ण्वुल्] [स्त्री०—**अभिघातिका**] अभिघात करने वाला।

अभिघातिन्—(पुं०) [अभि√हन्+णिनि] शत्रु, वैरी।

अभिघार—(पुं०) [अभि√घृ+णिच्+अच् (भावे)] घी। हवन में घी डालना। बघार।

अभिघारण—(न०) [अभि√घृ+णिच्+ल्युट्] घी छिड़कने की क्रिया।

अभिचर—(पुं०) [अभि√चर्+अच्] अनुचर। नौकर।

अभिचरण—(न०) [अभि√चर्+ल्युट्] किसी बुरे काम के लिये अनुष्ठान; जैसे शत्रु-नाश के लिये श्येन याग ।

अभिचार—(पुं०) [अभि√चर+घञ्] अनुष्ठान । मारण, उच्चारण, विद्वेषण आदि के लिये अनुष्ठान ।—**ज्वर**-(पुं०) ऐसे अनुष्ठान से उत्पन्न ज्वर ।—**मन्त्र** (पुं०) ऐसे अनुष्ठान का मंत्र ।—**यज्ञ**,—**होम** (पुं०) ऐसे अनुष्ठान की समाप्ति का हवन ।

अभिचारक [स्त्री०—**अभिचारिकी**], **अभिचारिन्** [स्त्री०—**अभिचारिणी**]—(वि०) [अभि√चर्+ण्वुल्] [अभि√चर्+णिनि] अभिचार करने वाला । अनुष्ठानकर्त्ता । जादूगर । तांत्रिक ।

अभिजन—(पुं०) [अभि√जन्+घञ्, अवृद्धि] कुटुम्ब, कुनबा । जाति, वंश । उत्पत्ति, निकास । कुलीनता; 'स्तुतं तन्माहात्म्यं यदभिजनतो यच्च गुणतः' माल:० २.१३ । जन्मस्थान, जन्मभूमि । कीर्ति प्रसिद्धि । खानदान का सरदार या मुखिया,-कुलभूषण । अनुचर, परिचारक ।

अभिजनवत्—(वि० [अभिजन+मतुप्] कुलीन वंश का, कुलीन ।

अभिजय—(पुं०) [अभि√जि+अच्] विजय । पूरी-पूरी जीत ।

अभिजात—(वि०) [अभि√जन्+क्त] अच्छे कुल में उत्पन्न, कुलीन । शिष्ट । विनम्र । मधुर । अनुकल । योग्य, उचित, उपयुक्त । उत्तम । गुणवान् । सत्पात्र । सुंदर, रूपवान् । विद्वान्, पण्डित । प्रसिद्ध ।

अभिजाति—(स्त्री०) [अभि√जन्+क्तिन्] कुलीन वंश में उत्पत्ति, कुलीनता ।

अभिजिघ्रण—(न०) [अभि√घ्रा+ल्युट्, जिघ्र आदेश] स्नेह प्रदर्शन करने को सिर सूंघना ।

अभिजित्—(पुं०) [अभि√जि+क्विप्] विष्णु का नाम । नक्षत्र विशेष, उत्तराषाढ़ा के अन्तिम १५ दण्ड तथा श्रवण के प्रथम चार दण्ड अभिजित् कहलाता है । दिन का आठवाँ मुहूर्त्त, दोपहर के पौने बारह बजे से लेकर साढ़े बारह बजे तक का समय । विजय मुहूर्त्त ।

अभिज्ञ—(वि०) [अभि√ज्ञा+क] जानकार, विज्ञ । निपुण, कुशल ।

अभिज्ञा—(स्त्री०) [अभि√ज्ञा+अङ] प्रत्यभिज्ञा, पुनर्ज्ञान । प्राथमिक ज्ञान । स्मृति, पहचान । अस्तित्व-स्वीकृति, मान्यता । [रिकागनीशन]

अभिज्ञान—(न०) [अभि√ज्ञा+ल्युट्] प्रत्यभिज्ञा, पुनर्ज्ञान । स्मृति, पहचान । निशानी; 'तदभिज्ञानहेतोर्हि दत्तं तेन महात्मना' वा० चन्द्रमण्डल का काला भाग । किसी को देखकर या पहचान कर बतलाना कि वह अमुक व्यक्ति ही है । [आइडेंटिफिकेशन] ।—**आभरण**-(न०) गहना जो किसी बात का स्मरण कराने के लिये उपस्थित किया जाय, परिचायक, सहदानी ।

अभिज्ञापक—(वि०) [अभि√ज्ञा+णिच्, पुक्+ण्वुल्] जताने वाला । सूचना देने या बताने वाला । रेडियो पर समाचार सुनाने या कार्यक्रम आदि बताने वाला । [एनाउंसर] ।

अभितस्—(अव्य०) [अभि+तसिल्] समीप, निकट, पास । दोनों ओर, तरफ । अत्यंत समीप । निकट में, पास में । समक्ष, सामने, प्रत्यक्ष में । आगे पीछे । सब ओर से, चारो ओर, चौतरफा; 'परिजनो यथाव्यापारं राजानमभितः स्थितः' माल० १.७ । नितान्त, निपट, पूर्णतः । फुर्ती से । तेजी से ।

अभिताप—(पुं०) [अभि√तप्+घञ्] प्रचण्ड गर्मी (चाहे यह शारीरिक हो चाहे मानसिक) । क्षोभ, उद्वेग । पीड़ा, दुःख ।

अभिताम्र—(वि०) [अभितः ताम्र प्रा० स०] बहुत लाल ।

अभिदक्षिण—(अव्य०) [अभितः दक्षिणम् अव्य० स०] दाहिनी ओर या तरफ ।

अभिदान—(न०) [अभि√दा+ल्युट्] किसी काम के लिये विभिन्न व्यक्तियों द्वारा दिया हुआ धन, चंदा। [सब्सक्रिप्शन]।

अभिद्रव (पुं०), **अभिद्रवण**—(न०) [अभि √द्रु+अप्] [अभि√द्रु+ल्युट्] आक्रमण, हमला।

अभिद्रोह—(पुं०) [अभि√द्रुह्+घञ्] बुराई। षड्यंत्र। हानि। निर्दयता। गाली, भर्त्सना।

अभिधर्षण—(न०) [अभि√धृष्+ल्युट्] भूतावेश, भूत का शरीर में आवेश होना। अत्याचार।

अभिधा—(स्त्री०) [अभि√धा+अङ, टाप्] नाम, उपाधि। वाचक शब्द। शब्दों के वाच्यार्थ का बोधन करने वाली शक्ति। (मीमांशा) शाब्दी भावना।

अभिधान—(न०) [अभि√धा+ल्युट्] कथन। निरूपण। नाम करण। भविष्यद्-कथन। निःसन्देह भाव से कथित वाक्य। नाम, उपाधि, पद। भाषण, संवाद। शब्दकोश। **—कोश** (पुं०)**—माला**–(स्त्री०) शब्दकोश

अभिधायक—(वि०) [अभि√धा+ ण्वुल्] (अर्थ-विशेष का) वाचक। (स्त्री०)—**अभिधायिका**] सूचक। परिचायक। नाम रखने वाला।

अभिधायिन्—(वि०) [अभि√धा+ णिनि] दे० 'अभिधायक'।

अभिधावन—(न०) [अभि√धाव्+ल्युट्] आक्रमण। पीछा करना।

अभिधेय—(वि०) [अभि√धा+यत्] वर्णन या निरूपण करने योग्य। नाम धरने योग्य, नाम वाला। (न०) अर्थ, भाव। तात्पर्य, अभिप्राय। निचोड़, निष्कर्ष। विवेच्य या आलोच्य विषय। प्रकरण। प्रसङ्ग। किसी शब्द का अविकल अर्थ।

अभिध्या—(स्त्री०) [अभि√ध्यै+अङ, टाप्] दूसरे की वस्तु पर मन डिगाना, पराई वस्तु की चाह। अभिलाषा, इच्छा। लालच। 'अभिध्योपदेशात्' ब्र०।

अभिध्यान—(न०) [अभि√ध्यै+ल्युट्] इच्छा करना। लोभ करना। अभिलाषा, इच्छा। ध्यान। गम्भीर विचार।

अभिनन्द—(पुं०) [अभि√नन्द्+घञ्] हर्ष, प्रसन्नता। प्रशंसा, श्लाघा। बधाई। अभिलाषा, इच्छा। प्रोत्साहन। अल्प सुख। परमात्मा का एक नाम।

अभिनन्दन—(न०) [अभि√नन्द्+ल्युट्] आनन्द। अभिवादन। बंदना। स्वागत। प्रशंसा। अनुमोदन। अभिलाषा, इच्छा। **—पत्र**–(न०) किसी बड़े आदमी के आगमन पर उसके सम्मान एवम् प्रशंसा में पढ़ा जाने वाला स्वागत-भाषण, मानपत्र। [एड्रेस ऑफ वेलकम]

अभिनन्दनीय, **अभिनन्द्य**—[अभि√नन्द् +अनीयर्] [अभि√नन्द्+ण्यत्] अभिनंदन करने योग्य।

अभिनम्र—(वि०) [प्रा० स०] झुका हुआ, नवा हुआ।

अभिनय—(पुं०) [अभि√नी+अच्] हृदय के भाव को प्रकट करने वाली क्रिया, स्वांग। नाटक का खेल।

अभिनव—(वि०) [प्रा० स०]कोरा, बिल्कुल नया। ताज़ा, टटका। अनुभवशून्य।—**यौवन**,—**वयस्क**–(वि०) (अवस्था में) बहुत छोटा, जवान।

अभिनहन—(न०) [अभि√नह्+ल्युट्] (आँखों के ऊपर बाँधने की) पट्टी।

अभिनिधन—(वि०) [अभिगतः निधनम् अत्या० स०] जिसका नाश निकट है। (न०) [प्रा० स०] सामवेद का एक मंत्र जिसका ऐसे अवसर पर जप करते हैं।

अभिनियुक्त—(वि०) [अभि=नि√युज्+ क्त] काम में लगा हुआ, मशगूल।

अभिनिर्मुक्त—(वि०) [अभि=निर√मुच् +क्त] छोड़ा हुआ, त्यागा हुआ। (न०)

सूर्यास्त के समय सोने के कारण छूटा हुआ काम ।

अभिनिर्याण—(न०) [अभि—निर्√या +ल्युट्] कूच, प्रस्थान । चढ़ाई, किसी शत्रुसैन्य पर धावा ।

अभिनिविष्ट—[अभि—नि√विश्+क्त] पैठा हुआ, धँसा हुआ, गड़ा हुआ । अनुप्रविष्ट; 'गुरुभिरभिनिविष्टं लोकपालानुभावैः' र० २.७५ । लिप्त, मग्न । कृतसङ्कल्प, दृढ़प्रतिज्ञ । हठी, ज़िद्दी, आग्रही । एक ही ओर लगा हुआ, अनन्य मन से अनुरक्त ।

अभिनिविष्टता—(स्त्री०) [अभिनिविष्ट + तल्] दृढ़ प्रतिज्ञा, सङ्कल्प । अपने स्वार्थ में (किसी बात की भी परवाह न कर) लिप्त हो जाना ।

अभिनिवृत्ति—(स्त्री०) [अभि+नि√वृत् +क्तिन्]सम्पादन, सिद्धि । समाप्ति, पूर्णता ।

अभिनिवेश—(पुं०) [अभि—नि√विश्+ घञ्] अनुरक्ति, लीनता, एकाग्रचिन्तन । उत्सुकतापूर्ण अभिलाषा । दृढ़प्रतिज्ञा । (योगदर्शन में) पाँच क्लेशों में से अन्तिम क्लेश । मृत्यु-शङ्का ।

अभिनिवेशिन्—(वि०) [अभि—नि√ विश्+णिनि] अनुरक्त, लिप्त, लीन । (मन को किसी ओर) लगाने या फेरने वाला । दृढ़प्रतिज्ञ, कृतसङ्कल्प ।

अभिनिष्क्रमण—(न०) [अभि—निस्√ क्रम्+ल्युट्] बाहर का निकास, अग्रसर होना ।

अभिनिष्टान—(पुं०) [अभि—नि√स्तन् +घञ्] विसर्ग । अक्षरमात्र ।

अभिनिष्पतन—(न०) [अभि—निस्√ पत् +ल्युट्] बाहर निकलना । युद्धार्थ द्रुतवेग से प्रयाण ।

अभिनिष्पत्ति—(स्त्री०) [अभि—निस्√पद् +क्तिन्] समाप्ति, अन्त । पूर्णता । सिद्धि ।

अभिनिह्नव—(पुं०) [अभि—नि√ह्नु+ अप्] अस्वीकृति । प्रत्याख्यान । दुराव, छिपाव ।

अभिनीत—(वि०)[अभि√नी+क्त]निकट लाया हुआ । अभिनय किया हुआ, (नाटक) खेला हुआ । पूर्णता को पहुँचाया हुआ, सर्वोत्कृष्ट । सुसज्जित । योग्य, उचित, उपयुक्त; 'अभिनीततरं वाक्यमित्युवाच युधिष्ठिरः' महा० । क्रुद्ध । दयालु, अनुकूल । प्रशान्त-चित्त, स्थिर-चित्त ।

अभिनीति—(स्त्री०) [अभि√नी+क्तिन्] भावभङ्गी, हावभाव । कृपा, दयालुता । मैत्री । सन्तोष ।

अभिनेतृ—(पुं०) [स्त्री०—**अभिनेत्री**] [अभि√नी+तृच्] अभिनय करने वाला 'ऐक्टर' । नाटक आदि का पात्र ।

अभिनेय,—अभिनेतव्य—(वि०) [अभि√ नी+यत् [अभि√नी+तव्यत्] अभिनय करने योग्य, खेलने योग्य, दृश्य काव्य ।

अभिन्न—(वि०) [√भिद्+क्त, न० त०] जो भिन्न या कटा न हो, अपृथक्, एकमय । अपरिवर्तित ।

अभिन्यास—(पुं०) [अभि—नि√अस्+ घञ्] किसी परिकल्पना (प्लैन) के अनुसार गृह, उद्यान आदि का निर्माण, विस्तार आदि करना (ले-आउट) ।

अभिपतन—(न०) [अभि√पत्+ल्युट्] समीप गमन । आक्रमण, चढ़ाई । प्रस्थान, कूच, रवानगी ।

अभिपत्ति—(स्त्री०) [अभि√पद्+क्तिन्] समीपगमन । समीप खींचना । समाप्ति ।

अभिपन्न—[अभि√पद्+क्त] समीप गया हुआ या आया हुआ । ओर या तरफ दौड़ा हुआ या गया हुआ । भागा हुआ, भगोड़ा । वश में किया हुआ, पकड़ा हुआ, गिरफ्तार किया हुआ । अभागा, बदकिस्मत, आपत्ति में फँसा हुआ । 'कालाभिपन्नाः सीदन्ति' वा० । स्वीकृत । अपराधी ।

अभिपरिप्लुत—(वि०) [अभि—परि√प्लु+क्त] निमज्जित, डूबा हुआ, बूड़ा हुआ। हिला हुआ।

अभिपुष्टि—(स्त्री०) [अभि√पुष्+क्तिन्] किसी कथन, बयान, संवाद आदि की सत्यता पुनः स्वीकार कर उसे अधिक दृढ़ एवं विश्वसनीय बनाना। किसी पद पर किसी की नियुक्ति का स्थायी और दृढ़ बना दिया जाना।

अभिपूरण—(न०) [अभि√पूर्+ल्युट्] अभ्यास के द्वारा परिपूर्ण करना।

अभिपूर्वम्—(अव्य०) [अव्य० स०] क्रमशः, अनुक्रम से।

अभिप्रणय—(पुं०) [अभि—प्र√नी+अच्] प्रेम। कृपा, अनुग्रह।

अभिप्रणयन—(न०) [अभि—प्र√नी+ल्युट्] पवित्र मंत्रों से संस्कार या प्रतिष्ठा करने की क्रिया।

अभिप्रणीत—(वि०) [अभि—प्र√नी+क्त] प्रतिष्ठा या संस्कार किया हुआ। लाया हुआ।

अभिप्रथन—(न०) [अभि√प्रथ्+ल्युट्] बिछाना, बखेरना या (आगे) बढ़ाना। ऊपर से डालना या ढकना।

अभिप्रदक्षिणम्—(अव्य०) [अव्य० स०] दाहिनी ओर।

अभिप्राय—(पुं०) [अभि—प्र√इण्+ अच्] आशय, मतलब, तात्पर्य। प्रयोजन, उद्देश्य। विचार। अभिलाषा, इच्छा। सम्मति, राय। विश्वास। सम्बन्ध। हवाला।

अभिप्रेत—[अभि—प्र√इण्+क्त] इष्ट, अभिलषित, ईप्सित, चाहा हुआ सम्मत, स्वीकृत। प्रिय, अनुकूल।

अभिप्रोक्षण—(न०) [अभि—प्र√उक्ष्+ल्युट्] छिड़काव, छिड़कना।

अभिप्लव—(पुं०) [अभि√प्लु+अप्] उपद्रव, उत्पात। उतरा कर बहना। बाढ़। गवामयन यज्ञ का अंग रूप कर्म विशेष।

अभिप्लुत—[अभि√प्लु+क्त] दमन किया हुआ, अभिभूत। मग्न। आकुलित।

अभिबुद्धि—(स्त्री०) [प्रा० स०] बुद्धीन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय। (यथा, आँख, जिह्वा, कान, नाक, त्वचा।)

अभिभव—(पुं०) [अभि√भू+अप्] हार। वश, काबू। तिरस्कार, अनादर। हीनता। दमन। आधिक्य। प्राबल्य। उभाड़। फैलाव, व्याप्ति, प्रसार; 'अधर्माभिभवात् कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः' भग० १.४१।

अभिभवन—(न०) [अभि√भू+ल्युट्] दमन। संयम।(स्वयं) वशवर्ती होना।

अभिभावन—(न०) [अभि√भू+णिच्+ल्युट्]दमन करना। वशवर्ती बनाना। हराना। तिरस्कार करना।

अभिभावक, अभिभाविन्, अभिभावुक—(वि०) [अभि√भू+ण्वुल्] [अभि√भू+णिनि] [अभि√भू+उकञ्] दमन करने वाला। हराने वाला, पराजित करने वाला। आक्रमण करने वाला। तिरस्कार करने वाला। संरक्षक, 'गार्जियन'। सर्वोत्तम।

अभिभाषण—(न०) [अभि√भाष्+ल्युट्] व्याख्यान, भाषण।

अभिभूत—(वि०) [अभि√भू+क्त] कर्तव्य और अकर्तव्य के विचार से शून्य। पराजित। वश में किया हुआ। आक्रांत। पीड़ित।

अभिभूति—(स्त्री०) [अभि√भू+क्तिन्] सर्वोत्तमता। प्राबल्य। आधिक्य। पराजय। अपमान।

अभिमत—(वि०) [अभि√मन्+क्त] अभीष्ट, प्रिय, प्यारा। अनुकूल। वाञ्छनीय। सम्मत। स्वीकृत, माना हुआ। (न०) ख्वाहिश, अभिलाषा। राय। मनचाही बात।

अभि√मन्—इच्छा करना। लालच करना। स्वीकार करना। अनुमति देना। खयाल करना।

अभिमनस्––(वि०) [अत्या० स०] अभिलाषी, इच्छुक । उत्सुक । आशावान् । उत्कण्ठितचित्त; 'भवतोऽभिमना: समीहते सरुष: कर्तुमुपेत्य माननाम्' शि० १६.२ ।

अभि√मन्त्र् –– (दे०) 'अभिमन्त्रण' ।

अभिमन्त्रण––(न०) [अभि√मन्त्र्+ल्युट्] मंत्र विशेषों को पढ़कर (किसी वस्तु को) पवित्र या संस्कारित करना। जादू-टोना करना। सम्बोधन करना । न्योता देना । उपदेश करना ।

अभिमन्थ––न्य––(पुं०) [अभि√मन्थ्+अच्, मन्य इति पक्षे√मन्+श] आँख का एक रोग ।

अभिमर––(पुं०) [अभि√मृ+घञ् (भावे)] नाश, हत्या । विश्वासघात (आपस ही के लोगों के साथ) । अपने ही लोगों से भय या शङ्का । बन्धन, कैद, बेड़ी । [अभि√मृ+अच् (आधारे)] युद्ध ।

अभिमर्द––(पुं०) [अभि√मृद्+घञ्] रगड़, कुचलन । उजाड़ किया जाना (शत्रु द्वारा किसी देश का) । युद्ध, लड़ाई । मदिरा, शराब ।

अभिमर्दन––(न०) [अभि√मृद्+ल्युट्] पीसना । चूर-चूर करना । निचोड़ना । युद्ध ।

अभिमर्श––(पुं०), **अभिमर्शन**––(न०),–**अभिमर्ष**–(पुं०), **अभिमर्षण**–(न०) [अभि√मृश् (ष्) +घञ्] [अभि+मृश् (ष्)+ल्युट्] स्पर्श, संसर्ग । आक्रमण । अत्याचार । मैथुन, सम्भोग । बलात्कार ।

अभिमर्शक, अभिमर्षक, अभिमर्शिन,––अभिमर्षिन्–(वि०) [अभि√मृश् (ष्) +ण्वुल्] [अभि√मृश् (ष्)+णिनि] अभिमर्श करने वाला ।

अभिमाद––(पुं०) [अभि√मद्+घञ्] नशा, मद ।

अभिमान––(पुं०) [अभि√मन्+घञ्] गर्व, घमण्ड, अहङ्कार, अपने को बड़ा भारी प्रतिष्ठित समझना, आत्मश्लाघा । व्यक्तित्व; 'सदाभिमानैकधना: हि मानिन:' शि० १.६७ । स्नेह, प्रेम । ख्वाहिश, इच्छा । घाव, चोट । ––**शालिन्**–(वि०) अभिमानी, अहङ्कारी ।––**शून्य**–(वि०) आत्माभिमान से रहित, विनम्र ।

अभिमानिन्(वि०) [अभि√मन्+ णिनि] अभिमानी, घमंडी, अपने को बहुत लगाने वाला ।

अभिमाय––(वि०) [अभिगत: मायाम् अत्या० स०] इतिकर्तव्यताविमूढ़, किसी काम का निर्णय न कर सकने वाला ।

अभिमुख––(वि०) [स्त्री०––**अभिमुखी**] । [अभिगतो मुखम् अत्या० स०] (किसी की) ओर मुख किये हुए । प्रवृत्त । उद्यत । (अव्य०) [अव्य० स०] ओर, सामने ।

अभि√मृद्––मल डालना, कुचलना । दबाना । किसी के विरुद्ध बोलना ।

अभियाचन––(न०) [अभि√याच्+ल्युट्] प्रार्थना, माँग ।

अभियाचना, अभियाञ्चा––(स्त्री०)–[अभि√याच्+युच्] [अभि√याच्+नङ्] प्रार्थना, माँगना । दृढ़ता के साथ या अधिकारपूर्वक याचना करना । (डिमांड) ।

अभियातृ, अभियायिन्–(वि०) [अभि√या+तृच्] [अभि√या+णिनि] निकट जाने वाला । आक्रमण करने वाला ।

अभियान––(न०) [अभि√या+ल्युट्] समीप जाना । (शत्रु पर) धावा बोलने की क्रिया, आक्रमण करने की क्रिया ।

अभियुक्त––[अभि√युज्+क्त] व्यस्त, किसी काम में नधा हुआ । भली भाँति अभिज्ञ, पारदर्शी, विशारद । विद्वान्, ज्ञानी । प्रतिवादी, जो किसी मुकदमे में फँसा हो । नियुक्त ।

अभि√युज्––नालिश करना । किसी काम के लिये प्रस्तुत या तैयार होना ।

अभियोक्तृ—(वि०) [स्त्री० अभियोक्त्री] अभि√युज्+तृच्] अभियोग उपस्थित करने वाला। (पुं०) वादी, फरियादी। शत्रु, वैरी। आक्रमणकारी। झूठा दावा करने वाला।

अभियोग—(पुं०) [अभि√युज्+घञ्] मनोनिवेश, लगन। उद्योग, अध्यवसाय; 'सन्तः स्वयं परहितेषु कृताभियोगः' भर्तृ० २.७३। किसी बात की जानकारी प्राप्त करने या उसे सीखने के लिये उसमें मनोनिवेश। अपराध की योजना, नालिश, अर्जीदावा। चढ़ाई, आक्रमण।

अभियोगिन्—(वि०) [अभि√युज्+णिनि] मनोनिवेशित, संलग्न। आक्रमण करने वाला। दोषी ठहराने वाला। (पुं०) मुद्दई, वादी।

अभियोजन—(न०) [अभि√युज+ल्युट्] किसी पर फौजदारी मामला चलाने का कार्य (विशेष पुलिस द्वारा)। (प्रासिक्यूशन)। **—कारिन्**–(पुं०) (पुलिस की ओर से) न्यायालय के सामने रखे गये फौजदारी मामले का संचालन करने वाला। (प्रासिक्यूटर)।

अभि√रक्ष्—रक्षा करना। बचाना। सहायता करना।

अभिरक्षण—(न०), **अभिरक्षा** (स्त्री०) [अभि√रक्ष्+ल्युट्] [अभि√रक्ष्+अ] पूरा-पूरा बचाव। (किसी वस्तु या व्यक्ति का) किसी के पास या किसी की देख-रेख में सुरक्षित रूप से रखा जाना। (कस्टोडी)।

अभिरक्षक—(वि०) [अभि√रक्ष्+ण्वुल्] पूर्ण रूप से बचाने वाला। सुरक्षा की दृष्टि से किसी वस्तु या व्यक्ति को अपने अधिकार या संरक्षण में रखने वाला। (कस्टोडियन)।

अभिरति—(स्त्री०) [अभि√रम्+क्तिन्] आनन्द। हर्ष। सन्तोष। अनुराग। भक्ति

अभि√रम्—प्रसन्न होना।

अभिराम—(वि०) [अभि√रम्+घञ् (आधारे)] हर्षपूर्ण। मधुर। अनुकल। सुंदर। मनोहर। रम्य। प्रिय; 'राम इत्यभिरामेण वपुषा तस्य चोदितः' २.१०.६७।

अभि√रुच्— चमकना। पसंद करना।

अभिरुचि—(स्त्री०) अभिलाषा, चाह, पसंदगी। प्रवृत्ति। यश की चाहना। उच्चाभिलाषा।

अभिरुचित—(पुं०) [अभि√रुच्+क्त] प्यार किया हुआ। चाहा हुआ। आनन्दित।

अभिरुत—(न०) [अभि√रु+क्त (भावे)] आवाज। पुकार। शोरगुल।

अभिरूप—(वि०) [अभि√रूप्+अच्] सदृश। अनुसार मनोहर। हर्षपूर्ण। प्रिय। प्रेमपात्र। पण्डित। बुद्धिमान्। (पुं०) चन्द्रमा। विष्णु। शिव। कामदेव। **—पति**–(पुं०) मनोनुकूल पति या स्वामी। एक व्रत का नाम, जो परलोक में अच्छा पति पाने के लिये स्त्रियों द्वारा किया जाता है।

अभिलंघन—(न०) [अभि√लंघ्+ल्युट्] कूदकर आरपार चले जाने की क्रिया। लाँघ जाना, कूद जाना।

अभि√लष्—चाहना। लोभ करना। किसी बात के पीछे पड़ना।

अभिलषण—(न०) [अभि√लष्+ल्युट्] चाहना, इच्छा करना। ललचना।

अभिलषित—(वि०) [अभि√लष्+क्त (कर्मणि)] चाहा हुआ। वाञ्छित। (न०) [अभि√लष्+ (भावे)] इच्छा, चाह। प्रवृत्ति।

अभिलाप—(पुं०) [अभि√लप्+घञ्] शब्द। भाषण, कथन। वर्णन। किसी व्रत या धर्म्मानुष्ठान का सङ्कल्प या प्रतिज्ञा।

अभिलाव—(पुं०) [अभि√लू+घञ्] निराई, (खेत की) कटाई।

अभिलाष, अभिलास (कभी-कभी)—(पुं०) [अभि√लष (स्)+घञ्] चाह, इच्छा लोभ। प्रिय से मिलने की इच्छा।

अभिलाषक, अभिलाषिन् अभिलाषुक—(वि०) [अभि√लष्+ण्वुल्] [अभि√लष्+णिनि] [अभि√लष+घञ्] इच्छुक, इच्छा करने वाला। लालची, लोभी; 'यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः' अभि० शा० १.२२।

अभिलिखित—(वि०) [अभि√लिख्+क्त] लिखा हुआ। खुदा हुआ। नियमित रूप से लिख कर सुरक्षित रखा हुआ। अभिलेख के रूप में लाया हुआ। (रेकार्डेड)।

अभिलेख—(पुं०) [अभि लिख्+घञ्] किसी तथ्य, विषय या कार्रवाई आदि के संबंध में नियमित रूप से लिखी हुई सब बातें। (रेकार्ड)। न्यायालय के कागज-पत्र, पंजी आदि में लिख कर सुरक्षित रूप से रखा गया गवाहों, वादी-प्रतिवादी आदि का वक्तव्य या न्यायाधीश का फैसला।—**न्यायालय**–(पुं०) राज्य के प्रधान अभिलेख-विभाग का वह न्यायालय जिसे लिपि संबंधी या ऐसी ही अन्य भूलें ठीक करने का अधिकार होता है। (कोर्ट ऑफ रिकार्ड)। —**पाल**–(पुं०) किसी न्यायालय, कार्यालय आदि के अभिलेखों की देख-भाल करने वाला कर्मचारी। (रिकार्डकीपर)।

अभिलीन—(वि०) [अभि√ली+क्त] संलग्न, चिपटा हुआ, सटा हुआ। आलिङ्गनबद्ध।

अभिलुलित—(वि०) [अभि√लुड्+क्त, डस्य लः] आन्दोलित, क्षुब्ध। खिलाड़ी। चञ्चल।

अभिलूता—(स्त्री)[प्रा० स०]मकड़ी विशेष।

अभिवदन—(न०) [अभि√वद्+ल्युट्] सम्बोधन। प्रणाम, सलाम।

अभिवन्दन—(न०) [अभि√वन्द्+ल्युट्] सम्मान पुरस्सर प्रणाम।

अभिवर्षण—(न०) [अभि√वृष्+ल्युट्] वर्षा, वृष्टि, जल की वर्षा।

अभिवाद (पुं०), **अभिवादन**—(न०) [अभि√वद्+घञ्=अप्रिय वचन। अभि√वद्+णिच्+अच्] [अभि√वद्+णिच्+ल्यूट्] सम्मान पुरस्सर प्रणाम। प्रणाम तीन प्रकार से होता है। प्रथम, प्रत्युत्थान। द्वितीय, पादोपसंग्रह। तृतीय, स्वगोत्र एवं स्वनाम का उच्चारण कर वंदना करना।

अभिवादक—(वि०) [स्त्री० **अभिवादिका**] [अभि√वद्+ण्वुल] प्रणाम करने वाला। विनम्र। सुशील। सम्मान सूचक।

अभिविधि—(पुं०) [अभि—वि√धा+कि] व्याप्ति, मर्यादा; वहाँ से या तक।

अभिविश्रुत—(वि०) [अभि—वि√श्रु+क्त] जगत्प्रसिद्ध, सर्वश्रेष्ठ।

अभि—वि√ईक्ष् देखना। निरीक्षण करना। पहचानना। खयाल करना।

अभिवृद्धि—(स्त्री०) [अभि√वृध+क्तिन्] उन्नति, बढ़ती। सफलता। समृद्धि।

अभिव्यक्त—(वि०) [अभि—वि√अञ्ज्+क्त] प्रत्यक्ष, प्रकट। स्पष्ट। स्वच्छ, साफ। कार्य रूप को प्राप्त।

अभिव्यक्ति—(स्त्री०) [अभि—वि√अञ्ज्+क्तिन्] व्यक्त, प्रकट होना। कारण का कार्य रूप में आविर्भाव। प्रकाशन।

अभिव्यञ्ज्—[अभि—वि√अञ्ज्,] प्रकाशित करना। स्पष्ट करना।

अभिव्यञ्जन—(न०) [अभि—वि√अञ्ज्+ल्युट्] दे० 'अभिव्यक्ति'।

अभिव्यादान—(न०) [अभि—वि—आ√दा+ल्युट्] शब्द की आवृत्ति, एक शब्द को बार-बार बोलना।

अभिव्याप—[अभि—वि√आप्] फैलाना। शामिल करना। मापना।

अभिव्यापक, अभिव्यापिन्—(वि०) [अभि—वि√आप्+ण्वुल्] [अभि—वि√आप्+णिन्] अच्छी तरह प्रचलित होने वाला। सम्मिलित, शामिल। सब ओर फैला हुआ।

अभिव्याप्ति—(स्त्री०) [अभि—वि√आप्+क्तिन्] सर्वव्यापकता। अन्तर्भुक्तता। सम्मिलित होगा।

अभिव्याहरण—(न०), **अभिव्याहार**—(पुं०) [अभि—वि—आ√हृ+ल्युट्] [अभि—वि—आ√हृ+घञ्] कथन । उच्चारण । नाम, संज्ञा ।

अभिव्याहृ—[अभि—वि—आ√हृ] उच्चारण करना । वर्णन करना ।

अभि√शंस्—उलहना देना । दोष लगाना । स्तुति करना । वर्णन करना ।

अभिशंसक, अभिशंसिन्—(वि०) [अभि √शंस्+ण्वुल्] [अभि√शंस्+णिनि] दोषी ठहराने वाला । अपमान करने वाला । बदनाम करने वाला ।

अभिशंसन—(न०) [अभि√शंस्+ल्युट्] आरोप, इलजाम । गाली । अपमान । उद्दण्डता ।

अभिशंसा—(स्त्री०) [अभि√शंस्+अ] अदालत या पंचों द्वारा किसी व्यक्ति का अपराधी घोषित किया जाना । यह प्रख्यापित करना कि उस पर जो आरोप लगाया गया था वह प्रमाणित हो गया है । [कनविक्शन] ।

अभिशंका—(स्त्री०)[प्रा० स०]सन्देह, शक । भय । चिन्ता ।

अभि√शप्—शाप देना ।

अभिशपन—(न०), **अभिशाप**—(पुं०) [अभि√शप्+ल्युट्] [अभि√शप्+घञ्] अकोसा । शाप । संगीन इलज़ाम, बड़ा भारी दोष । अपवाद, निन्दा ।—**ज्वर**–(पुं०) ऐसा ज्वर जो कि अकोसने या शापवश चढ़ आया हो ।

अभिशापन—(न०) [अभि√शप्+णिच् +ल्युट्] धिक्कारना, कोसना ।

अभिशब्दित—(वि०) [अभि√शब्द्+क्त] घोषित । वर्णित । कथित ।

अभिशस्त—[अभि√शंस्+क्त] बदनाम । तिरस्कृत; 'देवि केनाभिशस्तासि केन वासि विमानिता' वा० । गरियाया हुआ । चोटिल घायल । आक्रान्त । शापित । दुष्ट । पापी । न्यायालय में जिसका दोषी होना प्रमाणित हो गया हो । (कनविक्टेड) ।

अभिशस्तक—(वि०) [अभिशस्त+कन्] झूठमूठ दोषी ठहराया हुआ, बदनाम किया हुआ । बदनाम ।

अभिशस्ति—(स्त्री०) [अभि√शंस+क्तिन्] अकोसा । शाप । दुर्भाग्य, बदकिस्मती । बुराई । विपत्ति । भर्त्सना । बदनामी । अप्रतिष्ठा । याचना, माँग ।

अभिशीत—(वि०)[प्रा० स०]ठंडा, शीतल ।

अभिशोचन—(न०) [अभि√शुच्+ल्युट्] बड़ा भारी दुःख, पीड़ा या क्लेश ।

अभिश्रवण—(न०) [अभि√श्रु+ल्युट्] श्राद्ध के समय ऋचाओं की पुनरावृत्ति ।

अभिषङ्ग—(पुं०) [अभि√सञ्ज्+घञ्] मिलन । एकीभाव, ऐक्य । पराजय; 'जाताभिषङ्गः नृपतिः' र० २.३० । लगा हुआ। आघात । धक्का । दुःख । अकस्मात् आई हुई विपत्ति । भूतपीड़ा, प्रेतावेश । शपथ । आलिङ्गन । सम्भोग । अकोसा, शाप । गाली । झूठा दोष । झूठी बदनामी । तिरस्कार, असम्मान ।

अभि√षञ्ज्,— सञ्ज्—गले मिलना । साथ लगना । स्पर्श करना ।

अभिषञ्जन—(न०) [अभि√षञ्ज्+ल्युट्] (दे०) 'अभिषङ्ग'

अभिषद्—(स्त्री०) [अभि√सद्+क्विप्] किसी व्यापारिक वस्तु के उत्पादन या पूर्ति आदि का एकाधिकार प्राप्त करने या किसी अन्य सामान्य उद्देश्य की सिद्धि के लिये स्थापित व्यापारियों की संस्था । लेख, कहानियाँ आदि प्राप्त कर निर्धारित पुरस्कार की शर्त पर उन्हें एक साथ कई समाचार-पत्रों, मासिकों आदि में प्रकाशित कराने वाली संस्था ।

अभिषव—(पुं०) [अभि√सु+अप्] सोमलता को दबा कर, उससे सोमरस निकालने की क्रिया । शराब खींचना । धर्मानुष्ठान करने में प्रवृत्त होने के पूर्व स्नान-मार्जन आदि की

क्रिया। स्नान। प्रक्षालन। भूत-स्नान। बलि-कर्म। यज्ञ का अंग।

अभिषवण--(न०) [अभि√सु+ल्युट्] स्नान। सोमरस निकालना।

अभिषिक्त--(अभि√सिच्+क्त] अभिषेक किया हुआ। भींगा हुआ, तर। राजतिलक किया हुआ, राजसिंहासन पर बैठा हुआ।

अभिषेक--(पुं०) [अभि√सिच्+घञ्] जल से सिंचन। छिड़काव। ऊपर से जल छोड़कर स्नान; 'अत्राभिषेकाय तपोधनानां' र० १३.५१। राजतिलक, राजगद्दी राज्याभिषेक के लिये जल।

अभिषेचन--(न०) [अभि√सिच्+ल्युट्] छिड़काव। राज्याभिषेक।

अभिषेणन--(न०) [सेनया शत्रोः अभिमुखं यानम् इति अभि--सेना+णिच्+ल्युट्] सेना के साथ चढ़ाई करने को प्रस्थान करना। आक्रमण करना। शत्रु सैन्य से मुठभेड़ करना।

अभिष्टव--(पुं०) [अभि√स्तु+अप्] प्रशंसा, विरुदावली, तारीफ।

अभिष्यन्द--(पुं०) [अभि√स्यन्द्+घञ्] बहाव, स्राव। नेत्र रोग विशेष, आँख आना। ...िक बढ़ती।

अभिष्वङ्ग--(पुं०) [अभि√स्वञ्ज्+घञ्] संसर्ग। अत्यन्त अनुराग। प्रेम, स्नेह।

अभिसंश्रय--(पुं०) [अभि--सम्√श्रि+अच्] शरण, पनाह।

अभिसंस्तव--(पुं०) [अभि--सम्√स्तु+अप्] बड़ी भारी प्रशंसा या स्तुति।

अभिसंताप--(पुं०) [अभि--सम्√तप्+घञ् (आधारे) युद्ध, लड़ाई, विग्रह। [भावे घञ्] शाप देना। तपना।

अभिसन्देह--(पुं०) [अभि--सम्√दिह्+घञ्] जननेन्द्रिय। परिवर्तन, बदलौअल।

अभिसन्ध, अभिसन्धक--(पुं०) [अत्या० स०] अभिसन्ध+कन्] धोखा देने वाला, छलिया। निन्दक, दोषदर्शी।

अभिसन्धा--(स्त्री०) [अभि--सम्√धा+अङ] भाषण। घोषणा। शब्द। बयान। कथन। प्रतिज्ञा। धोखा। प्रवञ्चना।

अभिसन्धान--(न०) [अभि--सम्√धा+ल्युट्] भाषण। शब्द। विचारित घोषणा। प्रतिज्ञा। धोखा, दगाबाजी; 'पराभिसंधान-परं यद्यप्यस्य विचेष्टितं' र० १७.७६। लक्ष्य।

अभिसन्धि-- [अभि--सम्√धा+कि] भाषण। विचारित घोषणा। प्रतिज्ञा। उद्देश्य। अभिप्राय। लक्ष्य। राय, मत, सम्मति। विश्वास। खास इकरारनामा, विशेष प्रतिज्ञा-पत्र। षड्यंत्र।

अभिसमय--(पुं०) [अभि--सम्√इण् अच्] (कानवेंशन्) परस्पर संबंध रखने वाले (डाक, तार आदि) कतिपय विषयों के संबंध में किया गया विभिन्न राज्यों का समझौता। युद्ध लिप्त देशों के सैनिक अधिकारियों का युद्धस्थान आदि संबंधी वह समझौता जो दोनों ओर के प्रतिनिधियों की बातचीत द्वारा किया जाय और जिसका पालन दोनों के लिये पक्की संधि के सदृश ही आवश्यक हो। इस तरह का समझौता करने के लिये होने वाला उक्त राज्यों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन। कोई प्रथा या परिपाटी जो परंपरा से चल पड़ी हो और जो अलिखित होते हुए भी सब के लिये मान्य हो।

अभिसमवाय--(पुं०) [अभि--सम्--अव √इण्+अच्] ऐक्य।

अभिसम्पराय--(पुं०) [अभि--सम्--परा √इण्+अच्] भविष्यद्।

अभिसम्पात--(पुं०) [अभि--सम्√पत्+घञ्] एकत्रित होना। सङ्गम। युद्ध, लड़ाई। शाप, अकोसा। पतन।

अभिसम्बन्ध--(पुं०) [अभि--सम्√बन्ध्+घञ्] संसर्ग। मैथुन। सम्बन्ध, रिश्ता जोड़, सन्धि।

अभिसर--(पुं०) [अभि√सृ+अच्] अनुचर, अनुयायी। साथी, संगी। सहायक।

अभिसरण--(न०) [अभि√सृ+ल्युट्]

समीपगमन । प्रेमियों के मिलने के लिये सङ्केतस्थान पर जाना ।

अभिसर्ग—(पु०) [अभि√सृज्+घञ्] सृष्टि, संसार की रचना ।

अभिसर्जन—(न०) [अभि√सृज+ल्युट्] भेंट, दान । वध, हत्या ।

अभिसर्पण—(न०) [अभि√सृप्+ल्युट्] समीपगमन ।

अभिसान्त्व—(पुं०)—**अभिसान्त्वन**—(न०) [अभि√सान्त्व्+घञ्] [अभि√सान्त्व्+ल्युट्] सान्त्वना, प्रबोध, ढाढस ।

अभिसायम्—(अव्य०) [अव्य० स०] सूर्यास्त के समय, सन्ध्या के लगभग ।

अभिसार—(पुं०) [अभि√सृ+घञ्] प्रेमी-प्रेमिका का मिलने के लिये (सङ्केतस्थान पर) गमन । प्रेमी-प्रेमिका का सङ्केतस्थान या सङ्केत समय; 'रतिसुखसारे गतमभिसारे मदन-मनोहरवेशं' गीत० ५ । हमला, आक्रमण । शुद्धि-संस्कार ।

अभिसारिका—(स्त्री०) [अभि√सृ+ ण्वुल्] नायिका जो सङ्केतस्थान पर अपने प्यारे नायक से मिलने स्वयं जाय या उसे बुलावे । [संकेत स्थानानि:— क्षेत्रं वाटी भग्नदेवालयो दूतीगृहं वनं मालापं च श्मशानं च नद्यादीनान्तटी तथा]

अभिसारिन्—(वि०) [स्त्री० अभिसारिणी] [अभि√सृ+णिनि] भेंट करने को जाने वाला । आगे बढ़ने वाला । आक्रमणकारी । बड़े वेग से बाहर निकलने वाला ।

अभिसूचना—(स्त्री०) [प्रा० स०] कोई काम करने के लिये विशेष रूप से दी गई हिदायत या आदेश । (इंस्ट्रक्शन) ।

अभि√सृज्— बहा देना । खुला छोड़ना । बनाना । तैयार करना ।

अभिस्ताव—(पुं०) [अभि√स्तु+घञ्] किसी के पक्ष में अनुकूल प्रभाव डालने के लिये या किसी की प्रशंसा में कुछ कहना या लिखना । (रेकमेंडेशन) । कोई सुझाव या सलाह देते हुए उसके पक्ष में अपना भाव प्रकट करना ।

अभिस्नेह—(पु०) [प्रा० स०] अनुराग, स्नेह, प्रेम । अभिलाषा ।

अभिस्फुरित—(वि०) [प्रा० स०] पूर्णरूप से फैला हुआ या बढ़ा हुआ, पूर्ण वृद्धि को प्राप्त (यथा पुष्प) ।

अभिस्रावण—(न०) [अभि√स्रु+णिच् +ल्युट्] पातालयंत्र (भभके) की सहायता से मद्य या अर्क चुवाने की क्रिया (डिस्टि-लेशन) ।

अभिस्रावणी—(स्त्री०) [अभि√स्रु+ णिच् +ल्युट्—ङीप्] शराब या अर्क चुवाने का यंत्र या भट्ठी ।

अभिहत—(वि०) [अभि√हन्+क्त] ठोंका हुआ । पीटा हुआ । मारा हुआ । घायल किया हुआ । रोका हुआ, रुद्ध । (अङ्कगणित) गुणा किया हुआ ।

अभिहति—(स्त्री०) [अभि√हन्+क्तिन्] मार । चोट । गुणा, जरब ।

अभि√हन्—ताड़न करना । चपेट लगाना । कष्ट देना । मारना । बजाना ।

अभिहरण—(न०) [अभि√हृ+ल्युट्] समीप लाना । लूटना । ऋण, किराये आदि की वसूली के लिये न्यायालय के आदेश से किसी की जायदाद, जमीन आदि जब्त कर लेना या नीलाम कर देना (डिस्ट्रेस) ।

अभिहव—(पुं०) [अभि√ह्वे+अप्] आह्वान, आमंत्रण । वलिदान । यज्ञ ।

अभिहस्तांकन—(न०) [हस्तस्य अंकनम् ष० त० तस्य अभि इत्यनेन प्रा० स०] किसी भूमि, अधिकार आदि का लिख कर वैध रूप से हस्तान्तरण करना (असाइनमेंट) । किसी के लिये कोई हिस्सा, कार्य आदि निर्धारित करना ।

अभिहार—(पुं०) [अभि√हृ+घञ्] ले

जाना। लूट लेना। चुरा लेना। आक्रमण, हमला। हथियार लगाना। हथियार लेना।

अभिहास--(पुं०) [अभि√हस्+घञ्] हँसी दिल्लगी, मजाक। विनोद।

अभिहित--(वि०) [अभि√धा+क्त, हि आदेश] कथित, कहा हुआ। घोषित। वर्णित। सम्बोधित, बुलाया हुआ, पुकारा हुआ।

अभिहोम--(पुं०) [प्रा० स०] अग्नि में घी की आहुतियाँ देने की क्रिया।

अभी--(वि०) [नास्ति भीः यस्य न० ब०] निडर, निर्भय।

अभीक--(वि०) [अभि+कन् दीर्घ] (दे०) 'अभिक'। [न० ब०] निर्भय निडर।

अभीक्ष्ण--(वि०) [अभि√क्ष्णु+ड, पृषो० दीर्घ] दुहराया हुआ। सतत, निरन्तर। अत्यधिक।

अभीक्ष्णम्--(अव्य०) अक्सर, बहुधा, बारंबार। अविच्छिन्नता से। बहुत अधिक, अत्यन्त अधिकाई से।

अभीप्सित--(वि०) [अभि√आप्+सन् + क्त (कर्मणि) अभीष्ट, वाञ्छित, चाहा हुआ। मनोनीत। अभिप्रेत, आशय के अनुकूल। (न०) [भावे क्त] अभिलाषा, मनोरथ।

अभीरु--(वि०) [√भी+रुक् न० त०] भयरहित। (पुं०) शिव। भैरव।--**पत्री**--(स्त्री०) शतमूली, सतावर।

अभीषु--(पुं०) [अभि√इष्+कु] लगाम। प्रकाश की किरण; 'प्रफुल्लतापिच्छनिभैरभीषुभिः' शि० १.२२। अभिलाषा। अनुराग।

अभीष्ट--(वि०) [अभि√इष् + क्त (कर्मणि)[अभिलषित, चाहा हुआ। प्रिय। (न०) [भावे क्त] मनोरथ।

अभुग्न--(वि०) [√भुज्+क्त न० त०] जो टेढ़ा या मुड़ा या झुका हुआ न हो, सीधा, सतर। अच्छा, भला, रोगरहित।

अभुज--(वि०) [नास्ति भुजा यस्य न० ब०] भुजारहित, लुंजा।

अभुजिष्या--(स्त्री०) [न भुजिष्या न० त०] स्त्री, जो दासी या टहलनी न हो। स्वतंत्र स्त्री।

अभू--(पुं०) [√ भू+क्विप् न० त०] जो पैदा न हुआ हो, भगवान् विष्णु का नाम।

अभूत--(वि०) [√ भू+क्त न० त०] जो हुआ न हो। अविद्यमान। मिथ्या। असाधारण।--**पूर्व**-(वि०) जो पहले कभी नहीं था। बेजोड़। जो किसी पहले उदाहरण से समर्थित न हो।--**शत्रु**-(वि०) जिसका कोई शत्रु न हो।

अभूति--(स्त्री०) [√भू+क्तिन् न० त०] अनस्तित्व। अत्यन्ताभाव। निर्धनता

अभूमि--(स्त्री०) [न० त०]अनुपयुक्त स्थान या पदार्थ। पृथिवी को छोड़ कर अन्य कोई भी पदार्थ।

अभृत,--अभृत्रिम-(वि०) [√ भृ+क्त न० त०] [√ भृ+क्त्रिमप् च न० त०]जो भाड़े पर न हो, या जिसका भाड़ा न दिया गया हो। असमर्थित।

अभेद--(वि०) [नास्ति भेदो यस्य न० ब०] अविभक्त। समान, एकसा। (पुं०) [न० त०] अन्तर या फर्क का अभाव। अतिसमानता। अवियोग, संयोग; ''इच्छताम् सह वधूभिरभेदं' कि० ९.१३।

अभेद्य--(वि०) [√भिद्+ण्यत् न० त०] जो टुकड़े-टुकड़े न किया जा सके। जो वेधा न जा सके। (न०) हीरा।

अभोज्य--(वि०) [√भुज्+ण्यत् न० त०] न खाने योग्य, वर्जित भोज्यपदार्थ।

अभ्यग्र--(वि०) [अभिमुखम् अग्रं यस्य व० स०] समीप, निकट, पास। ताजा, टटका।

अभ्यङ्क--(वि०) [अत्या० स०] हाल ही में चिह्नित किया हुआ, नवीन चिह्नित।

अभ्यङ्ग--(पुं०) [अभि√अञ्ज्+घञ् कुत्व] लेपन। तेल-उवटन आदि की मालिश।

अभ्यञ्ज्, अभि√अञ्ज्—लेप करना । तेल आदि का मलना ।

अभ्यञ्जन—(न०) [अभि√अञ्ज्+ल्युट्] शरीर में मालिश करने का तेल या उबटन । आँख में लगाने का सुर्मा या अंजन । (दे०) 'अभ्यङ्ग' ।

अभ्यधिक—(वि०) [अभितः अधिकः इति प्रा० स०] अपेक्षाकृत अधिक, अत्यधिक । गुण या परिमाण में अपेक्षाकृत अधिक, उच्चतर । बड़ा, ऊँचा । असाधारण । मुख्य । अधिक; 'न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यः' भग० ११.४३ ।

अभि—अनु√ज्ञा—अनुमति देना । मान लेना । पसंद करना । स्वीकार करना ।

अभ्यनुज्ञा—(स्त्री०), **अभ्यनुज्ञान**—(न०) [अभि—अनु√ज्ञा+अङ] [अभि—अनु √ज्ञा+ल्युट्] अनुमति, दी हुई आज्ञा । किसी दलील की स्वीकृति ।

अभ्यन्तर—(वि०) [अत्या० स०] भीतरी, आंतरिक । अंतरंग । परिचित । अतिसमीपी । (न०) [प्रा० स०] बीच । बीच का स्थान । अंतःकरण ।

अभ्यन्तरक—(पुं०) [अभ्यन्तर+कन्] अन्तरङ्ग मित्र ।

अभ्यमन—(न०) [अभि√अम्+ल्युट्] आक्रमण । चोट । रोग ।

अभ्यमित, अभ्यान्त—(वि०) [अभि√अम्+क्त] रोगी, बीमार । घायल, चोटिल ।

अभ्यमित्र—(अव्य०) [अव्य० स०] शत्रु के विरुद्ध या शत्रु की ओर ।

अभ्यमित्रीण, अभ्यमित्रीय, अभ्यमित्र्य—(पुं०) [अभ्यमित्रम् अलंगामी इत्यर्थे अभ्यमित्र+ख=ईन] [अभ्यमित्र+छ—ईय] [अभ्यमित्र+यत्] योद्धा जो वीरता पूर्वक अपने शत्रु का सामना करता है ।

अभ्यय—(पुं०) [अभि√इण्+अच्] आगमन, पहुँच । (सूर्य के) अस्त होने की क्रिया ।

अभ्यर्चन—(न०), **अभ्यर्चा**—(स्त्री०) [अभि√अर्च्+ल्युट्] [अभि√अर्च्+अङ] पूजन । सजावट, शृङ्गार । सम्मान ।

अभ्यर्ण—(वि०) [अभि√ अर्द् +क्त (कर्मणि)] समीप, निकट । (न०) [भावे क्त] सामीप्य ।

अभ्यर्थ, अभि√अर्थ—प्रार्थना करना, अरज करना ।

अभ्यर्थन—(न०), **अभ्यर्थना**—(स्त्री०) [अभि√अर्थ+ल्युट्] [अभि√अर्थ+णिच्+युच्]विनय, विनती । प्रार्थना । सम्मानार्थ आगे बढ़कर लेना, अगवानी ।

अभ्यर्थिन्—(वि०) [अभि√अर्थ+णिनि] माँगने वाला, याचना करने वाला । किसी परीक्षा में बैठने या नौकरी आदि के लिये आवेदन-पत्र देने वाला । (कैंडिडेट) ।

अभ्यर्ह्, अभि √ अर्ह्—नमस्कार या प्रणाम करना । आदर करना । पूजा करना ।

अभ्यर्हणा—(स्त्री०) [अभि√अर्ह्+णिच्+युच्] पूजा । सम्मान, प्रतिष्ठा ।

अभ्यर्हित—(वि०) [अभि√अर्ह् +क्त] सम्मानित । पूजित । योग्य । उपयुक्त; 'अभ्यर्हिता बन्धुषु तुल्यरूपा वृत्तिर्विशेषेण तपोधनानाम्' कि० ३.११ । भव्य ।

अभ्यवकर्षण—(न०) [अभि—अव√कृष् +ल्युट्] खींच कर बाहर निकालना ।

अभ्यवकाश—(पुं०) [अभि—अव√काश् +घञ्] खुली हुई जगह ।

अभ्यवस्कन्द—(पुं०), **अभ्यवस्कन्दन**—(न०) [अभि—अव√स्कन्द्+घञ्] [अभि—अव√स्कन्द्+ल्युट्] वीरता पूर्वक शत्रु के सम्मुख होना । ऐसी चोट करना जिससे शत्रु बेकाम या निकम्मा हो जाय । आघात ।

अभ्यवहरण—(न०) [अभि—अव√हृ+ल्युट्] फेंक देना या गिरा देना । भोजन करना, खाना । गले के नीचे उतारना, निगलना ।

अभ्यवहार—(पुं०) [अभि—अव√हृ+घञ्] भोजन करना । भोजन ।
अभ्यवहार्य—[अभि—अव√हृ +ण्यत्] खाने योग्य । (न०) भोज्य पदार्थ ।
अभ्यवहृ, **अभि —अव√हृ**—फेंकना । इकट्ठा करना । खाना । लाभ करना ।
अभ्यस्, **अभि√अस्**—अभ्यास करना, आदत डालना । कसरत करना ।
अभ्यसन—(न०) [अभि√अस्+ल्युट्] दुहराना, पुनरावृत्ति । सतत-अध्ययन । किसी काम में तन्मयता ।
अभ्यसूयक—(वि०) [स्त्री०—**अभ्यसूयिका**] [अभि√असु+यक्+ण्वुल्] डाही, ईर्ष्यालु । निन्दक ।
अभ्यसूया—(स्त्री०) [अभि√असु+यक्+अ, टाप्] डाह, ईर्ष्या । क्रोध ।
अभ्यस्त—(वि०) [अभि√अस्+क्त] जिसका अभ्यास किया गया हो, बार-बार किया हुआ, मश्क किया हुआ; 'शैशवेऽभ्यस्तविद्यानाम्' र० १.८ । सीखा हुआ । पढ़ा हुआ । गुणा किया हुआ । अस्वीकृत ।
अभ्याकर्ष—(पुं०) [अभि—आ√कृष्+घञ्] (पहलवानों की तरह) हथेली से छाती ठोंक कर मानों कुश्ती लड़ने के लिये ललकारना ।
अभ्याकांक्षित—(न०) [अभि—आ√काङ्क्ष्+क्त] झूठा इलजाम, असत्य आरोप । मनोरथ, अभिलाषा ।
अभ्याख्यान—(न०) [अभि√आ—ख्या+ल्युट्] झूठा इलजाम, असत्य दोषारोपण, अपवाद । गर्व को खर्व करने की क्रिया ।
अभ्यागत—[अभि—आ√गम्+क्त] सामने आया हुआ । घर आया हुआ, अतिथि बना हुआ । (पुं०) मेहमान, अतिथि ।
अभ्यागम—(पुं०) [अभि—आ√गम् +घञ्] समीप आना या जाना । आगमन । मुलाकात, भेंट । सामीप्य, पड़ोस । भिड़ना, हमला करना । युद्ध, लड़ाई । शत्रुता, वैर ।
अभ्यागमन—(न०) [अभि- आ√गम्+ल्युट्] समीपागमन । आगमन । भेंट, मुलाकात ।
अभ्यागारिक—(पुं०) [अभ्यागारे तद्गतकर्मणि व्याप्तः इत्यर्थे अभ्यागार+ठन्] वह जो अपने कुटुम्ब के भरण-पोषण में यत्नशील या व्याकुल हो ।
अभ्याघात—(पुं० [अभि—आ√हन् +क्त] हमला, आक्रमण । बाधा ।
अभ्यादा, **अभि—आ√दा**—लेना । पकड़ना । पहनना । एक के बोल चुकने पर बोलना ।
अभ्यादान—(न०) [अभि—आ√दा+ल्युट्] सामने होकर लेना । आरंभ करना ।
अभ्याधान—(न०) [अभि—आ√धा+ल्युट्] रखना, डालना (जैसे आग में ईंधन)
अभ्यापात—(पुं०) [अभि—आ√पत्+घञ्] विपत्ति । सङ्कट । बुराई ।
अभ्यामर्द—(पुं०)—**अभ्यामर्दन**-(न०) [अभि—आ√मृद्+घञ्] [अभि—आ√मृद्+ल्युट्] युद्ध, लड़ाई । निचोड़ना ।
अभ्यारोह—(पुं०)—**अभ्यारोहण** - (न०) [अभि—आ√रुह्+घञ्] [अभि—आ√रुह्+ल्युट्]चढ़ना, सवार होना । ऊपर की ओर जाना ।
अभ्यावृत्ति—(स्त्री०) [अभि—आ√वृत्+क्तिन्] पुनरावृत्ति, बार-बार आवृत्ति ।
अभ्याश—(पुं०) [अभि√अश्+घञ्] समीप, नजदीक; 'वायसाभ्याशे समुपविष्ट' पं० (पुं०) आगमन । व्याप्ति । शीघ्र । लाभ । परिणाम । लाभ की आशा ।
अभ्यास—(पुं०) [अभि√अस् (क्षेपे) +घञ्] बार-बार किसी काम को करने की क्रिया । पूर्णता प्राप्त करने को बारंबार एक ही क्रिया का अवलम्बन । आदत, बान, टेव । रीति, पद्धति । कसरत, कवायद । पाठ, अध्य-

यन । समीप, पड़ोस । अभ्यस्त अंश (निरुक्त में) । (गणित में) गुणा । (संगीत में) एकतान सङ्गीत, अस्थाई या टेक ।—**योग** (पुं०) एक अवलम्ब में चित्त को स्थापित कर देना, अभ्यास सहित समाधि ।

अभ्यासादन—(न०) [अभि—आ√सद्+णिच्+ल्युट्] शत्रु का सामना करना । शत्रु पर आक्रमण करना ।

अभ्याहनन—(न०) [अभि—आ√हन्+ल्युट्] मारना, चोटिल करना । घात करना । रोकना । (रास्ते में) बाधा डालना ।

अभ्याहार—(पुं०) [अभि—आ√हृ+घञ्] समीप लाना या किसी ओर लाना । ढोना । लूटना ।

अभ्युक्षण—(न०) [अभि√उक्ष्+ल्युट्] (जल) छिड़कना, तर करना; 'परस्पराभ्युक्षणतत्पराणाम्' र० १६.५७ । प्रोक्षण, मार्जन ।

अभ्युचित—(वि०) [उचितम् अभिगतः इति विग्रहे अत्या० स०] प्रथा के अनुरूप, प्रचलित ।

अभ्युच्चय—(पुं०) [अभि—उद्√चि+अच्] उन्नति, बढ़ती । समृद्धिशालिता ।

अभ्युत्क्रोशन—(न०) [अभि—उत्√क्रुश्+ल्युट्] उच्चस्वर से चिल्लाना ।

अभ्युत्था, **अभि**—उद् √**स्था**—उठना । किसी के सम्मान में उठ कर खड़ा हो जाना ।

अभ्युत्थान—(न०) [अभि—उद्√स्था + ल्युट्] किसी के सम्मान के लिये आसन छोड़ कर खड़े होने की क्रिया । प्रस्थान, रवानगी । उदय । पदोन्नति । समृद्धि । शान ।

अभ्युत्पत्, **अभि**—**उत्√पत्**—किसी पर धावा बोलना । किसी पर कूदना ।

अभ्युत्पतन—(न०) [अभि—उत्√पत्+ल्युट्] उछाल, झपट । आक्रमण ।

अभ्युदय—(पुं०) [अभि—उद्√इण्+अच्] उन्नति, वृद्धि । उदय, (किसी नक्षत्र का) निकलना । उत्सव । आरम्भ । इष्टलाभ । चूड़ाकरण संस्कार आदि के अवसर पर किया जाने वाला श्राद्ध, वृद्धि-श्राद्ध ।

अभ्युदाहरण—(न०) [अभि—उद्—आ√हृ+ल्युट्] किसी वस्तु का (उल्टा) उदाहरण ।

अभ्युदित—(वि०) [अभि—उत्√इण्+क्त] उदय हुआ । पदोन्नत । घटित । उत्सव आदि के रूप में मनाया हुआ । (पुं०) वह ब्रह्मचारी जो सूर्योदय हो जाने के बाद भी सोया हो ।

अभ्युद्गम्, **अभि**—**उत्√ गम**—पहुँचना । मिलना ।

अभ्युद्गति—(स्त्री०)—**अभ्युद्गम**—(पुं०)—**अभ्युद्गमन**—(न०) [अभि—उत्√गम्+क्तिन्] [अभि—उत् √गम्+घञ्] [अभि—उत्√गम्+ल्युट्] किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति अथवा मेहमान का सम्मान करने को आगे जाकर उसे लेने की क्रिया, अगवानी । उदय । निकास, उत्पत्ति ।

अभ्युद्यत—[अभि—उद्√यम्+क्त] उठा हुआ, ऊपर उठाया हुआ । तैयार किया हुआ । तैयार । आगे गया हुआ । उदय हुआ; 'कुलमभ्युद्यतनूतनेश्वरम्' र० ८.१५ । अयाचित दिया हुआ या लाया हुआ ।

अभ्युन्नत—(वि०) [अभि—उत√नम्+क्त] उठा हुआ । ऊँचा किया हुआ । ऊपर को निकला हुआ । अत्युच्च ।

अभ्युन्नति—(स्त्री०) [अभि—उद्√नम्+क्तिन्] अत्यन्त पदोन्नति और समृद्धि । शालीनता ।

अभ्युपगम—(पुं०) [अभि—उप्√गम् + घञ्] समीप आगमन । आगमन । मंजूर करना, मान लेना । किसी बात को सत्य समझ कर मान लेना । (दोष को) अङ्गीकार करना । वचन, प्रतिज्ञा ।—**सिद्धान्त**—(पुं०) न्याय का एक सिद्धान्त, विना परीक्षा किये

किसी ऐसी बात को मान कर, जिसका खण्डन करना है, फिर उसकी परीक्षा करने को अभ्युपगम सिद्धान्त कहते हैं। स्वीकृत प्रस्ताव या सर्वजनगृहीत मूलनीति।

अभ्युपपत्ति—(स्त्री०) [अभि—उप√पद्+क्तिन्] सहायतार्थ समीप जाने की क्रिया। अनुग्रह, कृपा। सान्त्वना, ढाढ़स। बचाव, रक्षा। इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र। स्वीकृति। प्रतिज्ञा। स्त्री को गर्भवती करने की क्रिया।

अभ्युपाय—(पुं०) [अभि—उप√इण्+अच्] प्रतिज्ञा, इकरार। उपाय, इलाज।

अभ्युपायन—(न०) [अभि—उप√अय्+ल्युट्] घूस, रिशवत। सम्मानप्रदर्शक भेंट।

अभ्युपेत—(वि०) [अभि—उप√इण्+क्त] समीप आया हुआ। प्रतिज्ञात। स्वीकृत, अङ्गीकृत। **—अशुश्रूषा** (अभ्युपेताशुश्रूषा) हिन्दू कानून की १८ उपाधियों में से एक। स्वामी-सेवक की परस्परिक प्रतिज्ञा का भंग।

अभ्युष,—अभ्यूष,—अभ्योष—(पुं०) [अभि√उष्+क] [अभि√ऊष्+क] [अभि√उष्+घञ्] एक प्रकार की रोटी या चपाती।

अभ्यूह—(पुं०) [अभि√ऊह्+अच्] तर्क, दलील। अनुमान, कल्पना। त्रुटि की पूर्ति। बुद्धि, समझ।

अभ्र्—भ्वा० पर० सक० √जाना। इधर-उधर घूमना-फिरना। 'वनेष्वानभ्र निर्भयः' भट्टि० ४.११। अभ्रति, अभ्रिष्यति, आभ्रीत्।

अभ्र—(न०) [√अभ्र्+अच्] बादल। आकाश। अभ्रक। (गणित में) शून्य।

अभ्रंकष—(वि०) [अभ्र√कष्+खच्, मुमागम] बादलों को छूने वाला। बहुत ऊँचा। (पुं०) वायु। पर्वत।

अभ्रंलिह—(वि०) [अभ्र√लिह्+खश्, मुमागम] बादलों का स्पर्श करनेवाला। (अर्थात् बहुत ऊँचा)। (पुं०) पवन।

अभ्रक—(न०) [अभ्र+कन्] एक धातु, अबरक।

अभ्रमु—(स्त्री०) [अभ्र√मा+उ] पूर्व दिशा के दिग्गज की हथिनी, इन्द्र के ऐरावत हाथी की हथिनी। **—प्रिय,—वल्लभ**—(पुं०) ऐरावत हाथी।

अभ्रि,—अभ्री—(स्त्री०) [√अभ्र्+इन्] [अभ्रि+ङीष्] लकड़ी की बनी, फरही, जिससे नाव की सफाई की जाती है, काष्ठ कुदाल। कुदाली।

अभ्रित—(वि०) [अभ्र+इतच्] बादल छाये हुए। बादलों से आच्छादित।

अभ्रिय—(वि०) [अभ्र+घ—इय] बादल सम्बन्धी या बादलों से उत्पन्न।

अभ्रेष—(पुं०) [√भ्रेष्+घञ् न० त०] औचित्य, न्याय, न्यायानुमोदित होने का भाव।

√अम्—चु० उभ० अक० पीड़ा होना। सक० पीड़ा देना। आमयति-ते, आमयिष्यति-ते, आमिमत्-त। भ्वा० पर० सक० जाना। ओर या तरफ जाना। सेवा करना। सम्मान करना। खाना। (अक०) शब्द करना। अमति, अमिष्यति, आमीत्।

अम्—(अव्य०) [√अम्+क्विप्] जल्दी से, फुर्ती से। अल्प, थोड़ा।

अम—(वि०) [√अम्+घञ्, अवृद्धि] कच्चा (फल)। (पुं०) गमन। बीमारी। नौकर, अनुचर। दवाव, भार। बल। भय। प्राण वायु। अमित होने की अवस्था।

अमङ्गल—(वि०) [नास्ति मंगलं यस्मात् इति विग्रहे ब० स०] अशुभ। बुरा। भाग्यहीन, बदकिस्मत। (पुं०) [न० त०] अकल्याण। दुर्भाग्य। एरण्ड, वृक्ष, अंडी का पेड़।

अमङ्गल्य—(वि०) [मङ्गल+यत् न० त०] दे० 'अमङ्गल'।

अमण्ड—(वि०) [न० ब०] बिना सजावट या आभूषण का। बिना फेन या मांड़ का।

अमत—(वि०) [√मन्+क्त, न० त०] असम्मत। अविज्ञात। अतर्कित। नापसंद। (पुं०) समय। बीमारी। मृत्यु। धूलि-कण। (न०) मत का अभाव।

अमति—(वि०) [न० ब०] बुरे दिल का। दुष्ट। चरित्रभ्रष्ट। (पुं०) चन्द्रमा। समय। (स्त्री०) अज्ञानता। [न० त०] ज्ञान सङ्कल्प या दीर्घदर्शिता का अभाव।—**पूर्व**-(वि०) सत्यासत्यविवेक-शक्ति-हीन। अनिच्छाकृत। अनभिप्रेत।

अमत्त—(वि०) [न० त०] जो नशे में न हो। सही दिमाग का। सावधान। विचारशील।

अमत्र—(न०) [√अम्+अत्रन्] बरतन, बासन। ताकत, शक्ति।

अमत्सर—(वि०) [न० ब०] जो ईर्ष्यालु या डाही न हो। उदार।

अमनस्, अमनस्क—(वि०) [न० ब०] [न० ब० कप्] जिसका मन ठीक-ठिकाने न हो। विवेकशक्ति से हीन। अनाविष्ट। अमनोयोगी। जिसका मन काबू में न हो। स्नेहशून्य।

अमनाक्—(अव्य०) [न० त०] स्वल्प नहीं। अधिकता से। बहुत अधिक।

अमनुष्य—(वि०) [न० ब०] अमानुषिक। जहाँ मनुष्यों की बस्ती न हो। (पं०) [न० त०] मनुष्य नहीं। शैतान। राक्षस।

अमन्त्र, अमन्त्रक—(वि०) [न० ब०] [न० ब० कप्] वैदिक मंत्रों से रहित। वह कर्मानुष्ठान जिसमें वैदिक मंत्रों के पढ़ने की आवश्यकता न पड़े। वेद पढ़ने के अनधिकारी, (शूद्र, स्त्री आदि)। वेद को न जानने वाला। वह रोग-चिकित्सा जिसमें जादू टोना की क्रिया न हो।

अमन्द—(वि०) [न० त०] जो मंद या सुस्त न हो। क्रियाशील। प्रतिभावान्। उग्र। थोड़ा नहीं, बहुत। अत्यधिक। तीव्र। सुन्दर। कुशल।

अमम—(वि०) [न० ब०] ममतारहित। जिसमें स्वार्थ या सांसारिक वस्तुओं का अनुराग न हो; 'शरणेष्वममश्चैव वृक्षमूलनिकेतनः' मनु०।

अममता (स्त्री०), **अममत्व**—(न०) [मम+तल् न० त०] [मम+त्व न० त०] स्वार्थ-रहित, अनासक्ति, उदासीनता।

अमर—(वि०) [√मृ+अच् न० त०] जो कभी मरे नहीं। अविनाशी। (पुं०) देवता। पारा। सोना। तेंतीस की संख्या। देवदार का एक भेद। स्नुही वृक्ष, सेंहुड़। हड्डियों का ढेर।—**अङ्गना** (**अमराङ्गणा**)-(स्त्री०) अप्सरा।—**अद्रि** (**अमराद्रि**)-(पुं०) देवताओं का पर्वत, सुमेरु पर्वत।—**अधिप** (**अमराधिप**),—**इन्द्र**, (**अमरेन्द्र**),—**ईश**, (**अमरेश**),—**ईश्वर**, (**अमरेश्वर**)—**पति**,—**भर्तृ**,—**राज**-(पुं०) देवताओं के राजा। इन्द्र। विष्णु। शिव।—**आचार्य** (**अमराचार्य**),—**इज्य** (**अमरेज्य**),—**गुरु**-(पुं०) देवताओं के गुरु—अर्थात् बृहस्पति।—**आपगा**, (**अमरापगा**)—**तटिनी**,—**सरित्** (स्त्री०) स्वर्ग की नदी, गङ्गा।—**आलय**, (**अमरालय**)-(पुं०) स्वर्ग।—**कण्टक**-(न०) अमरकण्टक पहाड़ जिससे नर्मदा नदी निकलती है।—**कोश**,—**कोष**-(पुं०) संस्कृत भाषा के एक प्रसिद्ध शब्द-कोश का नाम, जो अमरसिंह-विरचित है।—**तरु**,—**दारु**(पुं०) स्वर्ग का एक वृक्ष, कल्पवृक्ष—**द्विज**—(पुं०) ब्राह्मण। जो किसी देवालय में पूजा करे अथवा देवालय का प्रबन्ध करे।—**पुर**-(न०) स्वर्ग।—**पुष्प**,—**पुष्पक**-(पुं०) कल्पवृक्ष। केतक। कास तृण।—**प्रख्य**, —**प्रभ**-(वि०) अमर के समान, अविनाशी के समान।—**रत्न**-(न०) स्फटिक पत्थर।—**लोक**-(पुं०) स्वर्ग।—**सिंह**-(पुं०) अमर कोश नामक प्रसिद्ध संस्कृत-कोश के रचयिता। यह जैन थे और कहा जाता है कि विक्रमादित्य के नौ रत्नों में से एक थे।

अमरता––(स्त्री०), **अमरत्व**––(न०) [अमर+तल्] [अमर+त्व] अविनश्वरता। देवत्व।

अमरा––(स्त्री०) [√मृ+अच् न० त० टाप्] अमरावती पुरी। नाभिसूत्र, नाभिनाल। गर्भाशय।

अमरावती––(स्त्री०) [अमर+मतुप्, दीर्घ] इन्द्र की पुरी का नाम।

अमरी––(स्त्री०) [अमर+ङीष्] देवता की स्त्री, देवी। इन्द्र की राजधानी। देवकन्या।

अमर्त्य––(वि०) [मृतिम् अर्हति इत्यर्थे मृति+यत् न० त०] अविनाशी, जो कभी मरे नहीं। (पुं०) देवता।––**आपगा (अमर्त्यापगा)**–(स्त्री०) गङ्गा का नाम।

अमर्मन्––(न०) [न० त०] शरीर का मर्मस्थल नहीं।––**वेधिन्**-(वि०) मर्मस्थल को ने वेधने वाला। कोमल, मुलायम।

अमर्याद––(वि०) [न० त०] सीमारहित। सीमा का उल्लंघन करने वाला। प्रतिष्ठारहित।

अमर्यादा––(स्त्री०) [न० त०] सीमा का उल्लंघन। आचरणहीनता। अप्रतिष्ठा।

अमर्ष––(वि० [√मृष्+घञ् न० ब०] दूसरे का उत्कर्ष न सहने वाला। (पुं०) [√मृष्+घञ् न० त०] असहनशीलता। ईर्ष्या। ईर्ष्या से उत्पन्न क्रोध। क्रोध; 'पुत्रवधामर्षोद्दीपितेन गाण्डीविना' वे० ४। एक संचारी भाव।

अमर्षण, अमर्षित, अमर्षवत्, अमर्षिन्–(वि०) [मृष्+ल्युट् न० ब०][√मृष्+क्त न० त०] [मर्ष+मतुप् न० त०] [मर्ष+इनि न० त०] अधैर्यवान्, असहनशील, जो क्षमा न करे। रूठा हुआ, रोषपरवश। प्रचण्ड, उग्र, दृढ़प्रतिज्ञ।

अमल––(वि०) [न० ब०] जिसमें मैल न हो, साफ-सुथरा। निष्कलंक, बेदाग। विशुद्ध, सच्चा। सफेद, चमकदार; 'कर्णावसक्तामलदन्तपत्रम्' कु० ७.२३।––(ला)–(स्त्री०) लक्ष्मी का नाम। नाला, नाभिसूत्र। आमला वृक्ष। (न०) अभ्रक। परब्रह्म। [न० त०] स्वच्छता।––**पतत्रिन्**–(पुं०) जंगली हंस।––**रत्न**–(न०) **मणि**–(पुं०)स्फटिक पत्थर।

अमलिन्––(वि०) [न० त०] स्वच्छ। बेदाग, निष्कलंक। पवित्र।

अमस––(पुं०) [√अम्+असच्] रोग। मूढ़ता। मूर्ख। समय।

अमा––(वि०) [√मा+क्विप् न० त०] माप-रहित, जो नापा न जा सके। (अव्य०) [न मा न० त०]साथ। समीप, पास। (स्त्री०) [√मा+क, टाप् न० त०] अमावास्या तिथि। चन्द्र की १६ वीं कला। (पुं०) [√मा+क्विप् न० त०] आत्मा, जीव।

अमांस––(वि०) [न० ब०] विना मांस का, जो मांसल न हो। दुबला, पतला। (न०) [न० त०] मांस को छोड़ अन्य कोई भी वस्तु।

अमात्य––(पुं०) [अमा=सह वसति इत्यर्थे अमा+त्यक्] दीवान, मंत्री।

अमात्र––(वि०) [न० ब०] मात्रारहित। जिसकी माप-तोल न हो। सम्पूर्ण या समूचा नहीं। अमौलिक। (पुं०) परमात्मा।

अमानन––(न०), **अमानना**––(स्त्री०) [√मान्+ल्युट् न० त०][√मान्+णिच्+युच् न० त०] तिरस्कार, अपमान, अवज्ञा।

अमानस्य––(न०) [मानसे साधु भवति इत्यर्थे मानस+यत् न० त०] पीड़ा, दर्द।

अमानिन्––(वि०) [मान+इनि न० त०] निरभिमान। विनयी, विनम्र।

अमानुष––(वि०) [स्त्री०––**अमानुषी**] [न० त०] मनुष्य सम्बन्धी नहीं, अमानवी। अलौकिक। पाशव। पैशाचिक।

अमानुष्य––(वि०) [न० त०] अमानुष, अलौकिक।

अमामसी, अमामासी––(स्त्री०) [अमा सह सूर्येण मा: मासो वा चन्द्रमा यस्या: गौरा० ङीप्] अमावास्या।

अमाय—(वि०) [नास्ति माया यस्य न० ब०] सच्चा। निष्कपट, निश्छल। [√मा+यत् न० त०] जो नापा न जा सके। (न०) ब्रह्म।

अमाया—(स्त्री०) [न० त०] छल या कपट का अभाव। सच्चाई, ईमानदारी। वेदान्त दर्शन में "अमाया" से भ्रम के अभाव का बोध होता है। परमात्मा का ज्ञान।

अमायिक, अमायिन्—(वि०) [माया+ठन्—इक न० त०] [माया+इनि न० त०] माया से रहित। निश्छल, निष्कपट। सच्चा, ईमानदार।

अमावस्या, अमावास्या, अमावसी, अमावासी—(स्त्री०) [अमा=सह वसतः चन्द्रार्को यत्र इति अमा√वस्+यत्] [अमा√वस् ण्यत्] [अमा√वस्+अप्] [अमा√वस्+घञ्] अमावस, कृष्णपक्ष की अन्तिम तिथि, अंधेरे पाख का अन्तिम दिन।

अमित (वि०) [√मा+क्त न० त०] अपरिमित, जिसका परिमाण न हो। बेहद, असीम 'अमितस्य हि दातारं भर्तारं का न पूजयेत्, रा०। अवज्ञा किया हुआ, तिरस्कृत। अज्ञात। अशिष्ट।—**आभ,** (**अमिताभ**)—अतिकांतियुक्त। (पुं०) बुद्ध का एक नाम।—**क्रतु**—(वि०) अपरिमित साहस या बुद्धि वाला।—**विक्रम**—(वि०) असीम शक्ति वाला। (पुं०) विष्णु का एक नाम।

अमित्र—(पुं०) [√अम्+इत्र] शत्रु, वैरी।

अमिन्—(वि०) [अम+इनि] बीमार, रोगी।

अमिष—(न०) [√अम्+इषन्] सांसारिक भोग पदार्थ, विलास की वस्तु। ईमानदारी, सच्चाई। मांस।

अमीव—(न०) [√अम्+वन् नि० ईडागम] कष्ट, क्लेश।

अमीवा—(स्त्री०) [अमीव+टाप्] रोग, बीमारी। तकलीफ, कष्ट। भय।

अमुक—(सर्वनामीय विशेषण [अदस+अकच् उत्व-मत्व] फलाँ; ऐसा-ऐसा, जब किसी वस्तु विशेष या व्यक्ति विशेष का नाम लेना अभीष्ट नहीं होता और उसको निर्दिष्ट किये बिना काम भी नहीं चलता, तब उस वस्तु या व्यक्ति का नाम न लेकर उसके बजाय इस शब्द का प्रयोग किया जाता है।

अमुक्त[—(वि०) [न० त०] जो मुक्त न हो, बंधन में पड़ा हुआ। जिसे मोक्ष न मिला हो। (न०) छुरा, कटारी आदि हथियार जो हाथ में रख कर काम में लाये जायँ।—**हस्त**—(वि०) कम-खर्च, कृपण।

अमुक्ति—(स्त्री०) [न० त०] स्वतंत्रता या मोक्ष का अभाव, मोक्ष का न मिलना।

अमुतः—(अव्य०) [अदस्+तसिल् उत्व-मत्व] वहाँ से। वहाँ। ऊपर से। परलोक में। अगले जन्म में।

अमुत्र—(अव्य०) [अदस्+त्रल् उत्व-मत्व] वहाँ, उस स्थान में। दूसरे लोक में, परलोक में। अगले जन्म में; 'यावज्जीवं च तत्कुर्याद्येनामुत्र सुखं वसेत्'।

अमुथा—(अव्य०) [अदस्+थाल् उत्व-मत्व] इस प्रकार, यों। उस प्रकार।

अमुष्य—(सम्बन्ध कारक **अदस्**)—**कुल**—(न०) [ष० त० नि० अलुक्] प्रसिद्ध कुल या वंश।—**पुत्र**—(पुं०)—**पुत्री**—(स्त्री०) अच्छे या प्रसिद्ध वंश में उत्पन्न पुत्र या पुत्री।

अमूदृश्, —**अमूदृश,** —**अमूदृक्ष**(वि०) [स्त्री०—**अमूदृशी, अमूदृक्षी**] [अदस् √दृश्+क्विन्] [अदस्√दृश+कञ्] [अदस् √दृश्+क्स] इस प्रकार का, इस जाति या प्रकार का।

अमूर्त—(वि०) [मूर्ति+अच् न० त०] आकारशून्य, अशरीरी, शरीर-रहित। (पुं०) वायु। आकाश। काल। दिशा। आत्मा। शिव।—**गुण**—(पुं०) वैशेषिकदर्शन में गुण को अशरीरी माना है, यथा धर्म-अधर्म।

अमूर्ति—(वि०) [न० ब०] आकाररहित, जिसकी कोई शक्ल न हो। (पुं०) विष्णु। (स्त्री०) [न० त०] शक्ल या आकार का न होना।

अमूल, अमूलक--(वि०) [न० त०] बेजड़, निर्मूल। असत्य, मिथ्या। प्रमाणशून्य, जिसका कोई प्रमाण या आधार न हो।

अमूल्य--(वि०) [न० ब०] अनमोल, बेशकीमती, बहुमूल्य।

अमृणाल--(न०) [सादृश्ये न० त०] एक सुगन्धित घास, उशीर, खस।

अमृत--(वि०) [न० त०] जो मृत न हो। अमर। अविनाशी। सुंदर। अभीष्ट, प्रिय। (पुं०) देवता। धन्वन्तरि। इंद्र। सूर्य। जीवात्मा। (न०) अमरत्व। वह वस्तु जिसके पीने से मुर्दा जी उठे और जीवित प्राणी अजर-अमर हो जाय, सुधा, आवेहयात। अति मधुर, हितकर वस्तु। जल। घी। सोमरस। दूध। यज्ञशेष। अन्न। भात। अयाचित भिक्षा; 'भैक्ष्यममृतं स्यादयाचितम्' मनु०। औषध। पारा। सोना। ब्रह्म। वाराही कंद। विष। वत्सनाभ नामक विष। वार-नक्षत्र के कुछ विशेष योग। चार की संख्या। कांति।—**अंशु** (अमृतांशु),—**कर**,—**दीधिति**,—**द्युति**,—**रश्मि**- (पुं०) चन्द्रमा।—**अन्धस्** (अमृतान्धस्),—**अशन** (अमृताशन),—**आशिन्** (अमृताशिन्)-(पुं०) जिसका भोजन अमृत हो, देवता।—**आहरण** (अमृताहरण)-पुं०) गरुड़ का नाम।—**उत्पन्न**, **उद्भव** (अमृतोत्पन्न) (अमृतोद्भव)-(न०) एक प्रकार का सुर्मा।—**कुण्ड**-(न०) पात्र जिसमें अमृत हो।—**गर्भ**-(पुं०) व्यक्तिगत आत्मा। परमात्मा।—**तरङ्गिणी**-(स्त्री०) चांदनी, जुन्हाई।—**द्रव**-(वि०) अमृत बहाने या चुआने वाला। (पुं०) अमृत की धार।—**धारा**-(स्त्री०) छन्दविशेष, इसमें चार चरण होते हैं और प्रथम पाद में २०, दूसरे में १२, तीसरे में १६ और चौथे में ८ अक्षर होते हैं। अमृत की धारा।—**प**-(पुं०) देवता। विष्णु का नाम। शराब पीने वाला।—**फला**—(स्त्री०) अंगूर, दाख। आंवला।—**बन्धु**-(पुं०) देवता। चन्द्रमा।—**भुज्**-(पुं०) अमर, देवता।—**भू**-(वि०) जन्म मरण से मुक्त।—**मन्थन**-(न०) अमृत निकालने के लिये समुद्र का मंथन।—**रस**-(पुं०) अमृत। ब्रह्म।—**लता**,—**लतिका**-(स्त्री०) गुडुच।—**सार**-(पुं०) घी।—**सू**,—**सूति**-(पुं०) चन्द्रमा।—**सोदर** (पुं०) उच्चैः श्रवा घोड़ा।

अमृतक--(न०) [अमृत+कन्] अमरत्व प्रदायक रस, अमृत।

अमृतता-- (स्त्री०) --**अमृतत्व**-- (न०) [अमृत+तल्] [अमृत+त्व] अमरता। मोक्ष।।

अमृता--(स्त्री०) [अमृत+टाप्] मदिरा। आमलकी। हरीतकी। गुडुच। तुलसी। इंद्रवारुणी। दूर्वा आदि। शरीर की एक नाड़ी। एक सूर्य-रश्मि।

अमृतेशय--(पुं०) [स० त० विभक्तेः अलुक्] विष्णु का नाम। (जल में सोने वाले)।

अमृषा--(अव्य०) [न० त०] झुठाई से नहीं, सच्चाई से।

अमृष्ट--(वि०) [√मृष+क्त न० त०] बिना मला हुआ। बिना साफ किया हुआ।

अमेदस्क--(वि०) [न० ब० कप्] जिसके चर्बी न हो, दुर्बल, लटा, पतला।

अमेधस्--(वि०) [न० ब० असिच्] मूर्ख, बुद्धिहीन।

अमेध्य--(वि०) [न० त०] जो यज्ञ या हवन करने योग्य न हो, यज्ञ के अयोग्य; 'नामेध्यम् प्रक्षिपेदग्नौ' मनु०'। अपवित्र, अशुद्ध। मैला, गंदा, अस्वच्छ। (न०) विष्ठा, मल। अशकुन।

अमेय--(वि०) [√मा+यत् न० त०] असीम, सीमारहित, अपार। अचिन्त्य, जो जाना न जा सके, अज्ञेय; 'अमेयोऽमितलोकस्त्वम्' र० १०.१८।—**आत्मन्** (अमेयात्मन्)-(पुं०) विष्णु का नाम।

अमोघ--(वि०) [न० त०] अचूक, निशाने पर ठीक पहुँचने वाला। अव्यर्थ। (पुं०) विष्णु। शिव।--**दण्ड**-(पुं०) जो दण्ड देने में कभी न चूके। शिव का नाम।

√**अम्ब्**--भ्वा० पर० सक० जाना। अम्बति, अम्बिष्यति, आम्बीत्। भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। अम्बते, अम्बिष्यते, आम्बिष्ट।

अम्ब--(अव्य०) अच्छा, हाँ।

अम्ब--(पुं०) [√अम्ब्+घञ् अच् वा] पिता। (न०) जल, पानी। नेत्र, आँख।

अम्बक--(न०) [अम्बति शीघ्रं नक्षत्रस्थान-पर्यन्तं गच्छति इति विग्रहे√अम्ब्+ण्वुल्] नेत्र। (पुं०) [√अम्ब्+घञ् ततः स्वार्थे कः] पिता।

अम्बर--(न०) [√अम्ब (शब्द करना)+घञ्=अम्बःशब्दः तं राति धत्ते इति अम्ब√रा+क] अन्तरिक्ष, आकाश। कपड़ा, वस्त्र। पोशाक, परिच्छद। केसर। अभ्रक। सुगन्धित पदार्थ विशेष, अम्बरी।--**ओकस्** (अम्बरौकस्)-(पुं०) स्वर्गवासी, देवता।--**द**-(न०) कपास, रुई।--**मणि**-(पुं०) सूर्य।--**लेखिन्**-(वि०) आकाशस्पर्शी।

अम्बरीष--(पुं०) (न०) [√अम्ब्+अरिष् नि० वा दीर्घः] कड़ाही। (पुं०) खेद, सन्ताप। युद्ध, लड़ाई। एक नरक। किसी जानवर का बच्चा, बछड़ा। सूर्य। विष्णु का नाम। शिव का नाम। एक राजा, यह महाराज मान्धाता के पुत्र और परम भागवत थे।

अम्बष्ठ--(पुं०) [अम्ब√स्था+क] ब्राह्मण पिता और वैश्या माता की संतान। महावत। एक प्राचीन जनपद (लाहौर और उसके आस-पास का प्रदेश) और उसके निवासी। वैद्य।

अम्बष्ठा--(स्त्री०) [अम्बष्ठ+टाप्] गणिका, यूथिका आदि कितने ही पौधों के नाम, (जुही, पाठा, पहाड़मूल, चुका अंबाड़ा आदि पौधे)

अम्बा--(स्त्री०) [अम्ब्यते स्नेहेन उपगम्यते इति विग्रहे√अम्ब् घञ् (कर्मणि), टाप्] (सम्बोधनकारक में 'अम्बे' वैदिक साहित्य में) माता। शिवपत्नी दुर्गा का नाम। राजा पाण्डु की माता का नाम।

अम्बाडा, अम्बाला--(स्त्री०) [अम्बेति शब्दं लाति धत्ते इति अम्बा√ला+क, टाप्, डलयोः अभेदात् अम्बाडा इत्यपि] माता, मा।

अम्बालिका--(स्त्री०) [अम्बाला+क, टाप्, इत्व] माता। पाढ़ा लता। राजा विचित्रवीर्य की रानी का नाम, जो काशिराज की सबसे छोटी कन्या थी।

अम्बिका--(स्त्री०) [अम्बा+कन्, टाप्, इत्व] माता। पार्वती का नाम। राजा विचित्र-वीर्य की पटरानी का नाम, यह काशिराज की मझली बेटी थी।--**पति,--भर्तृ**-(पुं०) शिव का नाम।--**पुत्र,--सुत**-(पुं०) धृत-राष्ट्र का नाम।

अम्बिकेय, अम्बिकेयक--(पुं०) [अम्बिका+ढ--एय] [अम्बिकेय+क] गणेश। कार्ति-केय। धृतराष्ट्र।

अम्बु--(न०) [√अम्ब् (शब्द करना)+उण्] पानी। जल का भाग जो रक्त में रहता है। एक छंद। जन्मकुंडली में चौथा स्थान। चार की संख्या। रास्ना लता।--**कण**-(पुं०) जल की बूंद।--**कण्टक**-(पुं०) ग्राह, घड़ि-याल, मगर।--**किरात**-(पुं०) घड़ियाल, मगर।--**कीश,--कूर्म**-(पुं०) सूंस, शिशु-मार।--**केशर**-(पुं०) नीबू का पेड़।--**क्रिया**-(स्त्री०) पितरों को जलदान, तर्पण।--**ग,--चर,--चारिन्**-(वि०) जल में रहने वाले जीवजन्तु।--**घन**-(पुं०) ओला।--**चत्वर**-(न०) झील।--**चामर,--ताल**-(पुं०) सिवार।--**ज**-(वि०) जल में उत्पन्न। (पुं०) चन्द्रमा। कपूर। सारस पक्षी। शंख। (न०) कमल। इन्द्र का वज्र।--**जन्मन्**-(न०) कमल। (पुं०) चन्द्रमा। शंख। सारस।--**तस्कर**-(पुं०) जल का चोर, सूर्य।--**द**-(वि०) जल देने वाला या जिससे

जल निकले। (पुं०) बादल।—धर—(पुं०) बादल, मेघ। अभ्रक।—धि—(पुं०) जल का कोई पात्र – जैसे घड़ा, कलसा आदि। समुद्र। चार की संख्या।—निधि—(पुं०) समुद्र।—प—(वि०) जल पीने वाला। (पुं०) समुद्र। वरुण।—पत्रा—(स्त्री०) नागरमोथा। —पात—(पुं०) धारा, जलप्रवाह। जलप्रपात। —प्रसाद—(पुं०) कतक, निर्मली का पेड़। (जिससे जल साफ होता है)।—भव—(न०) कमल।—भृत्—(पं०) जलवाहक, बादल। समुद्र। अभ्रक।—मात्रज—वि०) जो केवल जल ही में उत्पन्न हो।(पुं०) शंख।—मुच् —(पुं०) बादल; 'ध्वनितसूचितमम्बुमुचा-ञ्चय:' कि० ५.१२।—राज—(पुं०) समुद्र। वरुण।—राशि—(पुं०) समुद्र।—रुह—(न०) कमल। सारस।—रोहिणी—(स्त्री०) कमल।—वाची—(स्त्री०) आषाढ़ कृष्ण पक्ष के दशमी से त्रयोदशी तक के चार दिनों के लिये पृथ्वी के लिये प्रयुक्त होने वाला एक विशेषण (इस समय पृथिवी रजस्वला मानी जाती है और कृषि-कर्म बंद रहता है)।—वासिनी,—वासी—(स्त्री०) पाटला नामक पौधा।—वाह—(पुं०) बादल; भर्तुर्मित्रं प्रियमविधवे विद्धिमामम्बुवाहं' मे० ९९ झील। मोथा। १७ की संख्या।—वाहिन्—(वि०) पानी ढोने वाला। (पुं०) बादल। मोथा।—वाहिनी— (स्त्री०) कठेली या काठ का डोल, नाव का पानी उलीचने का बरतन। जल लाने वाली स्त्री।—विहार—(पुं०) जलक्रीड़ा।—वेतस—(पुं०) नरकुल जो जल में उत्पन्न होता है।—शायिन्—(पुं०) विष्णु, नारायण।—सरण— (न०) जल की धारा या जल का बहाव।—सर्पिणी—(स्त्री०) जोंक।—सेचनी—(स्त्री०) जल छिड़कने या उलीचने का पात्र।

अम्बुमत्—(वि०) [अम्बु+मतुप्] पनीला, जिसमें जल हो।

अम्बुमती—(स्त्री०) [अम्बुमत्+ङीप्] एक नदी का नाम।

अम्बूकृत—(वि०) [अनम्बु अम्बु कृतम् इति विग्रहे अम्बु+च्वि, ततः√कृ+क्त] ओंठ बंद करके गुनगुनाया हुआ। ऐसे बोला हुआ जिससे थूक उड़े।

√अम्भ्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। अम्भते, अम्भिष्यते, आम्भिष्ट।

अम्भस्—(न०) [√अम्भ्+असुन्] जल। आकाश। लग्न से चौथी राशि। तेज। चार की संख्या। एक छंद। पितृ लोक। आध्यात्मिक तुष्टि (यो०)।—ज, (अम्भोज)—(वि०) पानी का। (पुं०) चन्द्रमा। सारस-पक्षी। (न०) कमल।—जन्मन्, (अम्भोजन्मन्)—(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि। (न०) कमल।—द, (अम्भोद),—धर, (अम्भोधर)—(पुं०) बादल।—धि, (अम्भोधि) —निधि, (अम्भोनिधि),—राशि, (अम्भोराशि),—(पुं०) समुद्र।—रुह्, (अम्भोरुह्)—(न०)—रुह, (अम्भोरुह)—(न०) कमल। (पुं०) सारस।—सार, (अम्भःसार), मोती।—सू— (अम्भः सू)—(पुं०) धुआँ, भाप।

अम्भोजिनी—(स्त्री०) [अम्भोज (समूहार्थे तद्वति देशे वा)+इनि, ङीप्] कमलिनी। कमल के फूलों का समूह। स्थान जहाँ कमल के फूलों का बाहुल्य हो।

अम्मय—(वि०) [स्त्री०—**अम्मयी**] [अपां विकारः इत्यर्थे अप्+मयट्] जलीय या जल का बना हुआ।

अम्र—(पुं०) [अमति सौरभेण दूरं गच्छति इत्यर्थे √अम्+रन्] आम का फल या वृक्ष।

अम्ल—(वि०) [अम्+क्ल=अम्ल+अच्] खट्टा। (पुं०) [√अम्+क्ल] खट्टापन, खटाई। सिरका। तेजाब। अमलवेत। वमन। एक नीबू, चकोतरा। (न०) मट्ठा। —अक्त, (अम्लाक्त)—(वि०) खट्टा।—

उद्गार, (अम्लोद्गार)–(पुं०) खट्टी डकार। —केशर–(पुं०) चकोतरा या बीजपूरक का पेड़।—निम्बक–(पुं०) नीबू का पेड़।—पंचक–(न०) पाँच मुख्य खट्टे फल—जंबीरी नीबू, खट्टा अनार, इमली, नारंगी और अमलवेत।—फल–(पुं०) इमली का वृक्ष (न०) इमली फल।—वृक्ष–(पुं०) इमली का पेड़।—सार–(पुं०) नीबू। चूक। अमलवेत। हिंताल। काँजी। गंधक।—हरिद्रा–(स्त्री०) आँवाहल्दी।

अम्लक—(पुं०) [अल्पोऽम्लः इत्यर्थे अम्ल +कन्] लकुच वृक्ष, बड़हर।

अम्लान—(वि०) [√म्लै+क्त न० त०] जो कुम्हलाया न हो, जो मुरझाया न हो। साफ, स्वच्छ; 'परार्थन्यायवादेषु काणोऽप्यम्लान-दर्शनः'। विना बादलों का। प्रफुल्ल, प्रसन्न।

अम्लानि—(वि०) [√म्लै+क्तिन् न० ब०] सशक्त। मुरझाया नहीं। (स्त्री०) [न० त०] शक्ति। ताज़गी। हरियाली।

अम्लानिन्—(वि०) [म्लान+इनि न० त०] साफ, स्वच्छ।

अम्लिका, अम्लीका—(स्त्री०) [अम्ल+कन्, टाप्, इत्व] [अम्ल+ङीष्, ततः क, टाप्] मुँह का खट्टापन, खट्टी डकार। इमली का वृक्ष।

अम्लिमन्—(पुं०) [अम्ल + इमनिच्] खट्टापन।

√अय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। अयते, अयिष्यते, आयिष्ट। (कभी-कभी यह परस्मैपदी भी होती है, विशेष कर "उद्" के संयोग से); 'उदयति हि शशाङ्कः' मृ० १.५७।

अय—(पुं०) [एति सुखम् अनेन इति विग्रहे √इण्+अच्] गमन। पूर्वजन्म के शुभ कर्म। सौभाग्य। (खेलने का) पासा।—अन्वित, (अयान्वित)–(वि०) भाग्यवान्, खुशकिस्मत।

अयक्ष्म—(न०) [न० त०] सुस्वस्थता। रोग-मुक्त।

अयज्ञ—(पुं०) [न० स०] बुरा यज्ञ, यज्ञ नहीं।

अयज्ञिय—(वि०) [न० त०] यज्ञ के अयोग्य (जैसे उर्द)। यज्ञ करने के अयोग्य (जैसे अनुपवीत बालक)। अपवित्र। अधार्मिक।

अयत्न—(वि०) [न० ब०] जिसमें यत्न न करना पड़े। (पुं०) [न० त०] यत्न का अभाव।

अयथा—(अव्य०) [न० त०] जैसे होना चाहिये वैसे नहीं। अनुचित या गलत तरीके से।—वत्–(अव्य०) ग़लती से, अनुचित रीति से।—वृत्त–(वि०) बुरे या गलत ढंग से काम करने वाला।—स्थित–(वि०) बे-तरतीव। अव्यवस्थित।

अयथार्थानुभव—(पुं०) [अयथार्थ—अनुभव कर्म० स०] अनुचित या मिथ्या अनुभव, अन्य वस्तु में अन्य वस्तु का ज्ञान।

अयन—(न०) [√अय्+ल्युट्] गमन। मार्ग, रास्ता। (सूर्य की) गति। (यह गति उत्तर या दक्षिण होती है।) स्थान, आवास-स्थल। व्यूह का मार्ग या द्वार। कुछ विशेष यज्ञ (गवामयन)। अंश। थन का वह भाग जिसमें दूध रहता है।—अंश, (अयनांश)–(पुं०) अयन का भाग, विषुवत् रेखा से मेष राशि के आरंभ तक के अयन का भाग।—अन्त, (अयनान्त)–(पुं०) दो अयनों का संधिकाल।—वृत्त–(न०) ग्रहण रेखा।—संक्रम (पुं०) संक्रान्ति—(स्त्री०) मकर और कर्क की संक्रान्ति, राशिचक्र से होकर गुजरने का मार्ग।

अयन्त्रित—(वि०) [न० त०] बेकाबू, जो वश में न हो। मनमानी करने वाला।

अयमित—(वि०) [यम+क्विप् (ना० धा०) ततः+क्त न० त०] अनियंत्रित, बेकाबू। बिना सम्हाला हुआ। बिना सजाया हुआ।

अयशस्—(न०) [न० त०] बदनामी। लांछन। (वि०) [न० ब०] बदनाम। कलंकित।—**कर**- (वि०) अपकीर्तिकारी। बदनामी करने वाला।

अयशस्य—(वि०) [यशस्+यत् न० त०] दे० 'अयशस्कर'।

अयस्—(न०) [√इण्+असुन्] लोहा। ईस्पात। सुवर्ण; 'अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते' र० ८.४३। कोई भी धातु। अगर की लकड़ी। (पुं०) अग्नि, आग।—**अग्र**, (**अयोऽग्र**)—**अग्रक**, (**अयोऽग्रक**)-(न०) हथौड़ा। मूसल।—**काण्ड**-(पुं०) लोहे का तीर। उत्तम लोहा। लोहे का ढेर।—**कान्त**-(पुं०) चुम्बक पत्थर। मूल्यवान् पत्थर, मणि।—**कार**-(पुं०) लुहार।—**किट्ट**, (**अयःकिट्ट**)-(न०) लोहे का मोर्चा, जंग।—**मल**,(**अयोमल**)-(न०) लोहे का मल।—**मुख**, (**अयोमुख**)-(वि०) जिसके मुँह या सिरे पर लोहा लगा हो। (पुं०) लोहे की नोंक का तीर।—**शङ्कु**, (**अयःशङ्कु**)-(पुं०) भाला। कील। परेग।—**शूल**, (**अयःशूल**)-(न०) लोहे का भाला। तीक्ष्ण उपाय।—**हृदय**, (**अयोहृदय**)-(वि०) जिसका हृदय लोहे की तरह कठोर हो, निष्ठुर।

अयस्मय, अयोमय—(वि०) [स्त्री०—**अयोमयी**] [अयस्+मयट्] लोहे या अन्य किसी धातु का बना हुआ।

अयाचित—(वि०) [न० त०] न माँगा हुआ, अप्रार्थित। (न०) बिना माँगी, भीख, अमृत नामक आहार, 'अमृतं स्यादयाचितम्' इति मनुः।—**वृत्ति**-(स्त्री०)—**व्रत**-(न०) बिना माँगे मिलने वाली भीख पर गुजर करने का व्रत।

अयाज्य—(वि०) [√यज्+ण्यत् न० त०] व्रात्य, पतित, वह व्यक्ति जिसको यज्ञ नहीं कराया जा सकता।

अयात—(वि०) [√या+क्त न० त०] नहीं गया हुआ।—**याम**-(वि०) जो वस्तु रात की रखी या बासी न हो, ताजी, टटकी।

अयाथार्थिक—(वि०)[स्त्री०—**अयाथार्थिकी**]-[यथार्थ+ठक्—इक न० त०] असत्य, झूठा। अनुचित, ठीक नहीं। असली नहीं। असङ्गत। असंलग्न। युक्तिविरुद्ध।

अयाथार्थ्य—(न०) [यथार्थ+ष्यञ् न० त०] यथार्थता का अभाव। अवास्तविकता। असंगति।

अयान—(न०) [न० त०] न चलना, ठहरना। स्वभाव। [न० ब०]बिना सवारी का। पैदल।

अयानय—(न०) [अयश्च अनयश्च तयोः समाहारः] अच्छा और बुरा भाग्य।

अयि—(अव्य०) [√इण+इन्] (किसी से प्यार से बोलते समय सम्बोधन करने का शब्द।) ओह, हो, ए, अरी; 'अयि सम्प्रति देहि दर्शनम्' कु० ४.२८।

अयुक्त—(वि०) [न० त०] जो गाड़ी के जुए में जुता न हो या जिस पर जीन न कसी हो। जो मिला न हो, जुड़ा न हो। अभक्तिमान्। अधार्मिक। अमनस्क, असावधान। अनभ्यस्त। जो किसी काम में न लगा हो। अयोग्य। अनुपयुक्त। झूठा, असत्य। अविवाहित। आपद्ग्रस्त।

अयुग,—अयुगल-(वि०) [न० त०]अलग। अकेला। विषम।—**अर्चिस्** (**अयुगार्चिस्**) (**अयुगलार्चिस्**)-(पुं०) अग्नि।—**नेत्र**—**नयन**-(पुं०) शिव का नाम।—**शर**-(पुं०) कामदेव का नाम।—**सप्ति**-(पुं०) सात घोड़ों वाला, सूर्य।

अयुज्—(वि०) [न० त०] न मिला हुआ। विषम।—**इषु** (**अयुगिषु**), —**बाण** (**अयुग्बाण**),—**शर** (**अयुक्शर**)-(पुं०) कामदेव का नाम। (कामदेव के पास ५ बाण बतलाये जाते हैं)—**अक्ष** (**अयुगक्ष**),—**नेत्र** (**अयुङ्नेत्र**),—**लोचन** (**अयुग्लोचन**),—**शक्ति** (**अयुक्शक्ति**)-(पुं०) शिव का नाम।

अयुत—(वि०) [न० त०] जो मिला न हो; असंयुक्त, असंबद्ध। (न०) दस हजार की संख्या।—**अध्यापक**) (**अयुताध्यापक**)—(पुं०) एक अच्छा शिक्षक।—**सिद्धि** —(स्त्री०) कोई-कोई वस्तुएँ या विचार अभिन्न हैं—इस बात को प्रमाणित करने की क्रिया।

अये—(अव्य०) [√इण्+एच्] (यह क्रोध, आश्चर्य, विषाद द्योतक सम्बोधन वाची अव्यय है।); 'अये देवपादपद्मोपजीविनोऽवस्थेयम्' मु० २। (दे०) 'अयि'।

अयोग—(पुं०) [न० त०] अलगाव। अन्तराल, अवकाश। अयोग्यता। असंलग्नता। अनुचित मेल। विधुर, रँडुआ। हथौड़ा। अरुचि। नापसंदगी।

अयोगव—(पुं०) [स्त्री०—**अयोगवा, अयोगवी**] [अय इव कठिना गौर्वाणी यस्य ब० स० नि० अच्] शूद्र पिता और वैश्या माता से उत्पन्न वर्णसंकर संतान।

अयोग्य—(वि०) [न० त०]जो योग्य न हो। अनुपयुक्त। बेकार। निकम्मा। अपात्र।

अयोघन—(पुं०) [अयांसि हन्यन्ते अनेन इति विग्रहे अयस्√हन्+अप् घनादेशश्च नि०] हथौड़ा।

अयोध्य—(वि०) [√युध्+ण्यत् न० त०] जो युद्ध या आक्रमण करने योग्य न हो। अतिप्रबल; 'अद्यायोध्या महाबाहो अयोध्या प्रतिभाति नः' वा०।

अयोध्या—(स्त्री०) [अयोध्य+टाप्] सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी जो सरयू के तट पर बसी हुई है, साकेत।

अयोनि—(वि०) [न० ब०]अजन्मा। नित्य। मौलिक। कोख से उत्पन्न नहीं। अवैध रूप से उत्पन्न। (पुं०) ब्रह्मा। शिव। [न० त०] योनि नहीं।—**ज,**—**जन्मन्**—(वि०) जो गर्भ से उत्पन्न न हुआ।—**जा,**—**सम्भवा**—(स्त्री०) जनकदुहिता सीता।

अयौगपद्य—(न०) [न० त०] समकालीनता का अभाव।

अयौगिक—; (वि०) [स्त्री०—**अयौगिकी**] [न० त०] शब्दसाधनविधि से जिसकी उत्पत्ति न हो, रूढ़। जिसका योग से सम्बन्ध न हो।

अर—(पुं०) [√ऋ+अच्] पहिये की नाभि और नेमि के बीच की लकड़ी, आरा। कोण। सिवार। चक्रवाक पक्षी। पित्तपापड़ा। (वि०) तेज। घोड़ा।—**अन्तर** (**अरान्तर**)—(न०) (बहु०) आरों के बीच की खाली जगह।—**घट्ट,**—**घट्टक**—(पुं०) रहट, कुएँ से पानी निकालने का यंत्र। गहरा कूप।

अरज, अरजस्, अरजस्क—(वि०) [न० ब०] धूलगर्दा से रहित, साफ। वासना से रहित।

अरजस्का, अरजा —(स्त्री०) [न० ब०, कप्, टाप्] जिसको मासिक धर्म न हो। रजोधर्म होने के पूर्व की अवस्था की लड़की।

अरज्जु—(वि०) [न० ब०] जिसमें रस्सी न हो। (न०) कारागृह, जेल।

अरणि—(स्त्री० पुं०)—**अरणी**—(स्त्री०) [ऋ+अणि] [अरणि+ङीप्] छेकुर (गनियार, अँगेथू) की लकड़ी जिसको रगड़ने से अग्नि निकलती है। यज्ञ के लिये आग इसकी लकड़ियों को रगड़ कर ही निकाली जाती थी। (पुं०) सूर्य। अग्नि। चकमक पत्थर।

अरण्य—(न० कभी-कभी पुं० भी) [अर्यंते शेषे वयसि अत्र इत्यर्थे√ऋ+अन्य] जंगल, वन। कायफल। संन्यासियों का एक भेद। कट्फल नामक वृक्ष।—**अध्यक्ष** (**अरण्याध्यक्ष**)—(पुं०) वन का निगराँकार, वन की देखरेख करने वाला (फारेस्टरेंजर) :—**अयन** (**अरण्यायन**), —**यान**—(न०) वनगमन। तपस्वी बनना।— **ओकस्** (**अरण्यौकस्**),—**सद्**—(वि०) वनवासी; ; 'वैक्लव्यं ममतावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकसः' श० ४.५। वानप्रस्थी या संन्यासी।—**चन्द्रिका**—(स्त्री०) (अन्व०) वन में चाँदनी।(आलं०) वृथा का श्रृंगार।—**नृपति,** —**राज्,** —**राज**—(पुं०) सिंह।

—पण्डित—(पं०) वन का पण्डित। (आलं०) मूर्ख मनुष्य।—श्वन्—(पं०) भेड़िया।

अरण्यक—(न०) [अरण्य+कन्] वन, जंगल। एक पौधा।

अरण्यानि, अरण्यानी—(स्त्री०) [अरण्य+ङीष् आनुक् च] [ह्रस्वइकारान्तः प्रयोगः छान्दसः] बड़ा लम्बा-चौड़ा वन।

अरत—(वि०) [न० त०] विरक्त। अनासक्त। सुस्त, काहिल। असन्तुष्ट। विरुद्ध।—त्रप—(वि०) जो रमण करने में लजावे नहीं। (पुं०) कुत्ता (जो गली में कुतिया के साथ रमण करने में लज्जित नहीं होता।)

अरति—(वि०) [न० ब०] असन्तुष्ट। सुस्त। अशान्त। (स्त्री०) [न० त०] भोग-विलास का अभाव। कष्ट, पीड़ा। चिन्ता। शोक। विकलता, घबड़ाहट। असन्तोष। सुस्ती, काहिली। उदरव्याधि। क्रोध।

अरत्नि—(पुं० या० स्त्री०) [√ऋ+अत्नि—रत्नि=बद्धमुष्टिकरः स नास्ति यत्र] कुहनी। बाँह। कुहनी से कानी उँगली के छोर तक की माप।

अरत्निक—(पं०) [अरत्नि+कन्] (दे०) 'अरत्नि'।

अरम्—(अव्य०) [√अल्+अम्, रत्व] शीघ्रता। अत्यन्त। (दे०) 'अलम्'।

अरमण,—अरममाण—(वि०) [√रम्+णिच्+ल्यु] [√रम्+णिच्+शानच्] आनंद न देने वाला। अप्रसन्नताकारक। प्रतिकूल। नापसंद।

अरर—(न०)—**अररी**—(स्त्री०) [√ऋ+अरन्] [अरर+ङीप्] कपाट, किवाड़। गिलाफ। म्यान। ढक्कन। (पुं०) राँपी (चमार का एक औजार)।

अररे—(अव्य०) [अर√रा+के] अतिशीघ्रता अथवा घृणा व्यञ्जक सम्बोधनवाची अव्यय; 'अररे, महाराजम्प्रति कुतः क्षत्रियाः' उत्त०।

अरविन्द—(न०) [अरान् चक्राङ्गानीव पत्राग्राणि विन्दते इति अर√विद्+श नुम्] रक्तकमल या नीलकमल। (पुं०) सारस। ताँबा।—अक्ष (अरविन्दाक्ष)—(पुं०) कमलनयन, विष्णु का नाम।—दलप्रभ—(न०) ताँबा।—नाभ,—नाभि—(पुं०) विष्णु का नाम।—सद्(पुं०) ब्रह्मा का नाम।

अरविन्दिनी—(स्त्री०) [अरविन्द+इनि, ङीप्] कमलिनी या कमल-लता। कमल-पुष्पों का समूह। वह स्थान जहाँ कमलों का बाहुल्य हो।

अरस—(वि०) [न० ब०] रसहीन, नीरस, फीका। निस्तेज, मंद। निर्बल, बलहीन। अगुणकारी। (पुं०) [न० त०] रस का अभाव।

अरसिक—(वि०) [न० त०] रूखा, जो रसिक न हो। कविता के मर्म को न जानने वाला।

अराग, अरागिन्—(वि०) [न० ब०] [√रञ्ज्+घिनुण् न० त०] अनासक्त। उदासीन। स्थिर। पक्षपातशून्य।

अराजक—(वि०) [न० ब०] राजारहित, जहाँ राजा न हो।

अराजन्—(पुं०) [न० त०] राजा नहीं।—पत्रित—(वि०) (अधिकारी, कर्मचारी) जिसका नाम या जिसकी पदवृद्धि, स्थानांतरण, छुट्टी पर जाने आदि के सम्बन्ध में कोई सूचना सरकारी समाचार-पत्र में न छपती हो। (नॉन-गजेटेड)।—भोगीन—(वि०) राजा के काम लायक नहीं।—स्थापित—(वि०) जो राजा द्वारा प्रतिष्ठित न हो; आईन विरुद्ध।

अराति—(पुं०) [न राति ददाति सुखम् इत्यर्थे √रा+क्तिन् न० त०] शत्रु, वैरी। छः की संख्या। कुंडली में छठा स्थान। काम-क्रोधादि षड्रिपु।—भङ्ग—(पुं०) शत्रुओं का नाश।

अराल—[√ऋ+विच् =अर्, अरम् आलाति इति अर्—आ √ला+क] (पुं०)

राल । मतवाला हाथी । वक्र हस्त । एक समुद्र । (वि०) टेढ़ा, मुड़ा हुआ ।—**केशी**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके घुँघराले बाल हों ।—**पक्ष्मन्**–(वि०) टेढ़ी-मेढ़ी बरौनियों वाला ।

अराला—(स्त्री०) [अराल+टाप्] वेश्या, रंडी ।

अरि—(पुं०) [√ऋ+इन्] शत्रु, वैरी । मनुष्य जाति के छः शत्रु=काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि जो मनुष्य के मन को व्याकुल किया करते हैं ।—'कामः क्रोधस्तथा लोभो मदमोहौ च मत्सरः ।' छः की संख्या । गाड़ी का कोई भाग । पहिया । जन्मकुंडली में लग्न से छठा स्थान । वायु । एक तरह का खदिर । स्वामी । धार्मिक व्यक्ति ।—**कर्षण**–(वि०) शत्रुजयी या शत्रु को अपने वश में करने वाला ।—**कुल**–(न०) बहुत से शत्रु, शत्रु-समुदाय । शत्रु ।—**घ्न**–(वि०) शत्रु का नाश करने वाला ।—**चिन्तन**–(न०),—**चिन्ता**–(स्त्री०) शत्रु के नाश का उपाय सोचना । वैदेशिक शासन विभाग ।—**नन्दन**–(वि०) शत्रु को प्रसन्नता या विजय दिलाने वाला ।—**निपात**–(पुं०) शत्रु का आक्रमण ।—**नुत**–(वि०) जिसकी शत्रु भी प्रशंसा करे ।—**प्रकृति**–(स्त्री०) युद्धसंलग्न राजा के शत्रुओं की स्थिति ।—**भद्र**–(पुं०) सबसे बड़ा या मुख्य शत्रु ।—**षडष्टक**–(न०) विवाह में वर्जनीय योग—वर और कन्या की अपनी-अपनी राशि से छठा और आठवाँ घर यदि शत्रु हो तो अशुभ है ।—**षड्वर्ग**–(पुं०) काम, क्रोध आदि छः शत्रु ।—**सूदन**,—**हन्**,—**हिंसक**–(पं०) शत्रुहन्ता, शत्रु को मारने वाला ।

अरिक्थभाज्, अरिक्थीय—(वि०) [रिक्थ √भज्+ण्वि न० त०] [रिक्थ+छ—ईय न० त०] ऐसा व्यक्ति जो पैतृक सम्पत्ति पाने का अधिकारी न हो (हिजड़ा आदि होने के कारण) ।

अरित्र—(न०) [ऋच्छति अनेन इति√ऋ+इत्र] नाव का डाँड़ । वाहन ।

अरिन्दम—(वि०) [अरि√दम्+खच्, मुमागम] शत्रु को वश में करने वाला, विजयी ।

अरिष—(न०) [√रिष्+क न० त०] मूसलधार जल की वर्षा । [न० इर्यत्ति मलं यस्मात् इति√ऋ+किषन् न० त०] ववासीर, गुदा का रोग विशेष ।

अरिष्ट—(वि०) [√रिष् क्त न० त०] निरापद । अशुभ । (पुं०) गीध । कौवा । शत्रु । रीठा का वृक्ष । लहसुन । (न०) बुरी प्रारब्ध । बदकिस्मती । अनिष्टसूचक उत्पात । बुरे लक्षण या बुरे शकुन जो मौत आने के सूचक माने गये हैं । मरणकारक योग । सौभाग्य । हर्ष । सौरी, सूतिकाग्रह । मीठा । शराब ।—**गृह**–(न०) सौरी, सूतिकागृह ।—**मथन**–(पुं०) विष्णु या शिव का नाम ।—**शय्या**–(स्त्री०) पड़ा हुआ पलंग ।—**सूदन**,—**हन्**–(पुं०) अरिष्ट नामक दैत्य के मारने वाले विष्णु । (वि०) अशुभनाशक ।

अरिष्टताति—(पुं०) [अरिष्ट+तातिल्] शुभ बताना । (वि०) शुभ करने वाला ।

अरुचि—(स्त्री०) [न० ब०] अनिच्छा । घृणा, नफ़रत । सन्तोषजनक समाधान का अभाव । [न० त०] अग्निमान्द्य रोग ।

अरुचिर, अरुच्य—(वि०) [न० त०] जो मनोहर न हो । अशुभ, अमङ्गलक ।

अरुज्—(वि०) [√रुज्+क्विप् न० त०] रोगरहित । नीरोग ।

अरुज—(वि०) [√रुज्+क न० त०] दे० 'अरुज्' ।

अरुण—(पुं०) [स्त्री०—**अरुणा, अरुणी**] [√ऋ+उनन्] लाल रंग । उगते हुए सूर्य का रंग । सांध्य लालिमा । सूर्य । सूर्य का सारथि । माघ महीने का सूर्य । गुड़ । एक तरह का कुष्ठ रोग । एक छोटा विषैला जंतु । एक दैत्य । पुन्नाग वृक्ष । (न०) लाल रंग । सोना । केसर । सिंदूर । (स्त्री०) मजीठ ।

(वि०) [अरुण+अच्] लाल, रक्त । व्याकुल, घवड़ाया हुआ । गूंगा, मूक ।—**अनुज** (**अरुणानुज**),—**अवरज** (**अरुणावरज**)–(पुं०) अरुण देव के छोटे भाई गरुड़ का नाम ।—**अर्चिस्** (**अरुणार्चिस्**) –(पुं०) सूर्य ।—**आत्मज** (**अरुणात्मज**)–(पुं०) अरुण पुत्र—जटायु, शनि, सार्वणि मनु, कर्ण, सुग्रीव, यम और दोनों अश्विनीकुमारों के नाम ।—**आत्मजा** (**अरुणात्मजा**)—(स्त्री०) यमुना और तापती नदियों का नाम । —**ईक्षण** (**अरुणेक्षण**)–(वि०) लाल नेत्र वाला ।—**उदय** (**अरुणोदय**)–(पुं०) भोर, प्रातःकाल ।—**उपल** (**अरुणोपल**)– (पुं०) लाल नामक रत्न, चुन्नी रत्न ।—**कमल**–(न०) लाल रंग का कमल ।—**ज्योतिस्**–(पुं०) शिव का नाम ।—**प्रिय**–(पुं०) सूर्य का नाम ।—**प्रिया**–(स्त्री०) सूर्य की पत्नी– । छाया । संज्ञा ।—**लोचन**–(पुं०) कबूतर, परेवा ।—**सारथि**–(पुं०) सूर्य ।

अरुणित, अरुणीकृत—(वि०) [अरुण+क्विप् (ना० धा०) +क्त] [अरुण+च्वि, ततः√कृ+क्त; ईत्व] लाल रंग का, लाल रंगा हुआ 'स्तनाङ्गरागारुणिताच्च कन्दुकात्' कु० ५.११ ।

अरुन्तुद—(वि०) [अरूंषि मर्माणि तुदति इति अरुस्√तुद्+खश् मुम् च] मर्म स्थलों को छेदने वाला । मर्मपीडक । लगने वाला । दाहकारक । उग्र प्रकृति वाला, तीक्ष्ण स्वभाव युक्त ।

अरुन्धती—(स्त्री०) [अव्युत्पन्न शब्द] वशिष्ठ की पत्नी का नाम । इस नाम का एक तारा, सप्तर्षि मण्डल में सबसे छोटा आठवाँ एक तारा, जो वशिष्ठ के समीप रहता है । अरुन्धती तारा के नाम से प्रसिद्ध है । यह तारा उन लोगों को नहीं दिखलाई पड़ता जिनकी मृत्यु अतिनिकट होती है ।—**जानि, नाथ,**—**पति**–(पुं०) वसिष्ठ का नाम ।

अरुष, अरुष्ट—(वि०) [√रुष+क्विप् न० त०] [√रुष्+क्त न० त०] रूठा हुआ नहीं, शान्त ।

अरुष—(वि०) [√रुष्+क्विप् न० त०] क्रुद्ध नहीं, रूठा हुआ नहीं । चमकदार, चमकीला ।

अरुस्—[√ऋ+उसि] अकौआ, मदार । रक्त खदिर, लाल करथा । (न०) मर्मस्थल । घाव । कण्ठ ।—**कर**–(वि०) घायल या चोटिल करने वाला ।

अरूप—(वि०) [न० ब०] रूपरहित, आकार-शून्य । बदशक्ल, कुरूप । असमान, असदृश । (न०) सांख्यदर्शन का प्रधान और वेदान्त-दर्शन का ब्रह्म । [न० त०] भद्दी शक्ल ।—**हार्य**–(वि०) जो सौन्दर्य से आकर्षित या वश में न किया जा सके; 'अरूपहार्यम्मदनस्य निग्रहात्' कु० ५.५३ ।

अरूपक—(वि०) [न० ब०] विना रूपक का, अन्वर्थ, अविकल । (पुं०) बौद्ध दर्शनानुसार योगियों की एक भूमि अथवा अवस्था, निर्बीजसमाधि ।

अरे—(अव्य०) [√ऋ+ए] एक सम्बोधनार्थक अव्यय; ए, ओ । जब कोई बड़ा किसी छोटे को सम्बोधन करता है, तब इसको प्रयोग किया जाता है । क्रोधावेश में "अरे" कहा जाता है । "अरे महाराजं प्रति कुतः क्षत्रियाः ।" उत्तररामचरित्र । यह अव्यय ईर्ष्याबोधक भी है ।

अरेपस्—(वि०) [नास्ति रेपः=पापं यस्य न० ब०] निष्पाप; निष्कलङ्क । स्वच्छ, निर्मल, पवित्र ।

अरेऽरे—(अव्य०) [अरे-अरे इति वीप्सायां द्वित्वम्] एक सम्बोधनार्थक अव्यय । इसका प्रयोग क्रोध की दशा में या किसी का तिरस्कार करने के लिये किया जाता है; 'अरेऽरे दुर्योधनप्रमुखाः कुरुबलसेनाप्रभवः', वे० ३ ।

अरोक—(वि०) [√रुच्+घञ् नि० कुत्व] धुंधला, बेचमक ।

अरोग—(वि०) [न० ब०] नीरोग, स्वस्थ, तंदुरुस्त । (पुं०) [न० त०] रोग का अभाव ।

न्, अरोग्य—(वि०) [अरोग+इनि] +यत् न० त०] तंदुरुस्त, भला, चंगा। क—(वि०) [स्त्री०—अरोचिका] ा०] जो चमकदार या चमकीला न हो। ंद करने वाला। अरुचि पैदा करने । (पुं०) एक रोग जिसमें अन्न आदि ाद मुंह में नहीं मिलता।
—चु० उभ० सक० गर्म करना। करना। अर्कयति-ते अर्कयिष्यति-ते, कत्-त।
—(पुं०) [√अर्च्+घञ् कुत्व] प्रकाश करण। बिजली की चमक या कौंध। सूर्य। ा। स्फटिक। ताँबा। रविवार। अर्कवृक्ष, र, अकौआ। इन्द्र का नाम। बारह की ा।—अश्मन् (अर्काश्मन्)—उपल र्कोपल) (पुं०) सूर्यकान्त मणि।—इन्दु-म (अर्केन्दुसङ्गम)।—(पुं०) दर्श, वस्था। वह समय जब चन्द्र और सूर्य ते हैं।—कान्ता, (स्त्री०) सूर्यपत्नी। चन्दन (न०) लाल चंदन।—ज (पुं०) ।, सुग्रीव और यम की उपाधि।—जौ ताओं के चिकित्सक अश्विनीकुमार। तनय-(पुं०) सूर्यपुत्र—कर्ण, यम और न की उपाधि।—तनया-(स्त्री०) यमुना र तापती नदियों के नाम।—त्विष्- त्री०) सूर्य का प्रकाश।—दिन-(न०), सर-(पु०) रविवार।—नन्दन,—पुत्र, —सुत,—सूनु-(पुं०) शनि, कर्ण तथा यम नाम।—बन्धु,—बान्धव- (पुं०) कमल। —मण्डल-(न०) सूर्य का घेरा।—विवाह -(पुं०) मदार के पेड़ के साथ विवाह। तीसरा विवाह करने के पूर्व लोग अर्क के ड़ से विवाह करते हैं। यथाः—चतुर्थादि विवाहार्थं तृतीयेऽर्कं समुद्वहेत्। काश्यप।] —व्रत-(न०) सूर्य का एक व्रत। (यह माघ शुक्ला सप्तमी को किया जाता है)। राजा का प्रजा से कर लेने में सूर्य के नियम का अनु सरण करना (सूर्य ८ महीने अपनी किरणों से पानी सोखता और बरसात में उसे कई गुना करके बरसा देता है, अर्थात् लोक की वृद्धि के लिये ही रस ग्रहण करता है)।

अर्गल (पुं०) (न०) अर्गला, अर्गली (स्त्री०) —[√अर्ज+कलच्] ब्योंड़ा, अगड़ी, किल्ली, सिटकिनी ये किवाड़ बंद करने के काठ के यंत्र हैं। लहर, तरंग। (स्त्री०) दुर्गा- पाठ के अन्तर्गत एक स्तोत्र।

अर्गलिका—(स्त्री०) [अल्पा अर्गला इत्यर्थे अर्गला+कन्, टाप्, इत्व] छोटा ब्योंड़ा जो किवाड़ों को बंद करने के लिये उनमें अटकाया जाता है, चटखनी।

√अर्घ्—भ्वा० पर० अक० दाम या मोल के योग्य होना। अर्घति, अर्घिष्यति, आर्घीत्। परीक्षका यत्र न सन्ति देशे, नार्घन्ति रत्नानि समुद्रजानि। सुभाषित।

अर्घ—(पुं०) मूल्य, दाम। षोडशोपचारपूजन में से एक उपचार, इस उपचार में जल, दूध, कुशाग्र, दही, सरसों, चावल और यव मिला कर देवता को अर्पण करते हैं; 'कुटजकुसुमैः कल्पितार्घाय तस्मै' मे० ४ जलदान। हाथ धोने के लिये दिया गया जल। २५ मोतियों का समूह जिसका वजन एक धरण हो। अश्व। मधु।—अर्ह (अर्घार्ह)- (वि०) सम्मानसूचक भेंट करने योग्य।—ईश (अर्घेश)-(पुं०) शिव का नाम।—बला- बल-(न०) उचित मूल्य। मूल्य में तारतम्य या उतार-चढ़ाव या मूल्य का कमवेशी होना। —संख्यान,—संस्थापन-(न०) दाम कूतने की क्रिया, कीमत लगाना। व्यापारिक वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करना।

अर्घ्य—(वि०) [अर्घ+यत्] कीमती, मूल्य- वान्। [√अर्घ्+यत्] पूज्य। (न०) किसी देवता या प्रतिष्ठित व्यक्ति को सम्मान प्रदर्शक भेंट।

√अर्च्—भ्वा० उभ० सक० पूजा करना। शृङ्गार करना। प्रणाम करना। सम्मान पूर्वक स्वागत करना। (वैदिक साहित्य में) स्तुति

करना । अर्चति-ते अर्चिष्यति-ते आर्चीत्-आर्चिष्ट ।

अर्चक—(वि०) [√अर्च्+ण्वुल्] पूजा करने वाला । शृङ्गार करने वाला, सजाने वाला । (पुं०) पुजारी ।

अर्चन—(न०) [√अर्च् +ल्युट्] पूजा, वंदना । आदर, सत्कार ।

अर्चनीय, अर्च्य–[√अर्च्+अनीयर्] [√अर्च्+ण्यत्] पूचनीय । मान्य ।

अर्चा—(स्त्री०) [√अर्च्+अ,टाप्] पूजा। शृङ्गार । पूजन करने की मूर्ति या प्रतिमा ।

अर्चि—(स्त्री०) [√अर्च्+इन्] किरण । चमक ।

अर्चिष्मत्—(पुं०) [अर्चिस+मतुप्] सूर्य । अग्नि । एक उपदेव । विष्णु । (वि०)चमक वाला । लपट वाला ।

अर्चिस्—(न०) [√अर्च्+इस्] आग का शोला या अंगारा । दीप्ति, आभा । किरण । (पुं०) अग्नि ।

√अर्ज्—भ्वा० पर० सक० उपार्जन करना, कमाना । अर्जति, अर्जिष्यति, आर्जीत् ।

अर्जक—(न०)[स्त्री०—**अर्जिका**] [√अर्ज् +ण्वुल्] प्राप्त करने वाला, उपार्जन करने वाला । (पुं०) बाबुई वृक्ष, जिसके सूतों से रस्सी बटी जाती है ।

अर्जन— (नव०) [√अर्ज्+ल्युट्] प्राप्त करना, उपलब्धि, प्राप्ति; 'अर्थानामर्जने दुःखम्' पं० ।

अर्जुन—(वि०) [स्त्री०—**अर्जुना, अर्जुनी**] [अर्जु+उनन्=अर्जुनः सः अस्ति अस्येत्यर्थे अच्] सफेद, स्वच्छ । चमकीला, दिन के प्रकाश की तरह । यथा—'पिशंगमौञ्जीयुज-मर्जुनच्छविं ।)—शिशुपालवध । रुपहला । (पुं०) सफेद रंग । मोर, मयूर । वृक्ष विशेष जिसकी छाल बड़ी गुणदायक है । महाराज युधिष्ठिर के छोटे भाई, इनका वृत्तान्त महा-भारत में विस्तार से लिखा हुआ है । कार्तवीर्य राजा का नाम, जिसको परशुराम ने मारा था । इकलौता पुत्र । इंद्र । आँख का एक रोग । (न०) सोना । चाँदी । दूव ।—**उपम (अर्जुनोपम)**–(पुं०) साखू का वृक्ष ।—ध्वज–(पुं०) सफेद ध्वजा वाला, हनुमान का नाम ।

अर्जुनी—(स्त्री०) [अर्जुन+ङीष्] कुटनी । गौ । करतोया नदी का दूसरा नाम । अनिरुद्ध की पत्नी, उषा ।

अर्ण—(पुं०) [√ऋ+न] अकार आदि वर्ण । साखू का पेड़ । (न०) जल । (वि०) गतिशील ।

अर्णव—(पुं०) [अर्णांसि सन्ति अस्मिन् इति-विग्रहे अर्णस+व, सलोप] (फनों से युक्त) समुद्र । अंतरिक्ष । इंद्र । सूर्य । छंद । चार की संख्या । रत्न, मणि ।—**उद्भव (अर्णवोद्भव)**–(पुं०) चंद्रमा । अग्निजार नामक पौधा । (न०) अमृत ।—**उपद्भ (अर्णवोद्भव)**–(स्त्री०) लक्ष्मी ।—**मल**–(न०) समुद्र-फेन । —**नेमि**–(स्त्री०)पृथ्वी ।—**पोत**–(पुं०)**यान**–(न०) जहाज ।—**मन्दिर**–(पुं०) वरुण । समुद्रवासी, विष्णु ।

अर्णस्—(न०) [√ऋ+असुन् नुट् च] जल ।—**द (अर्णोद)**–(पुं०) बादल ।—**भव (अर्णोभव)**–(पुं०) शंख ।

अर्णस्वत्—(पुं०) [अर्णस्+मतुप्] समुद्र, सागर । (वि०) जिसमें बहुत जल हो ।

अर्तन—(न०) [√ऋत्+ल्युट्] धिक्कार, फटकार । निंदा ।

अर्ति—(स्त्री०) [√अर्द्+क्तिन्] पीड़ा, दुःख । धनुष का नोंक ।

अर्तिका—(स्त्री०) [√ऋत्+ण्वुल्] (नाट्य-साहित्य में) बड़ी बहिन ।

√अर्थ—चु० आत्म० द्विक० माँगना, याचना करना । प्रार्थना करना, विनती करना । अभि-लाषा करना । अर्थयते, अर्थयिष्यते, आर्ति-थत ।

अर्थ—(पुं०) [√अर्थ+अच्] शब्द का अभिप्राय, मानी। मतलब। प्रयोजन। काम। मामला : हेतु, निमित्त। इंद्रियों के विषय—शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध। धन; 'अर्थो हि कन्या परकीय एव' श० ४.२१। पैसा कमाना जो जीवन के चार पुरुषार्थों में से एक माना गया है। उपयोग। लाभ। दिलचस्पी। स्वार्थ। इच्छा। गरज। प्रार्थना। दावा। वस्तुस्थिति। तरीका। मूल्य। निवारण। फल, परिणाम। धर्मपुत्र का एक नाम। कुंडली में लग्न से दूसरा स्थान। विष्णु। —**अधिकार** (**अर्थाधिकार**)-(पुं०) खजानची का ओहदा।—**अधिकारिन्** (**अर्थाधिकारिन्**)-(पुं०) खजानची, कोषाध्यक्ष।—**अन्तर** (**अर्थान्तर**) (न०) भिन्न अर्थ या मानी। भिन्न उद्देश्य या हेतु। नया मामला, नयी परिस्थिति।—**न्यास**-(पुं०) (**अर्थान्तर-न्यास**) एक काव्यालङ्कार, जिसमें प्रकृत अर्थ की सिद्धि के लिये अन्य अर्थ लाना पड़ता है। अर्थालंकार का एक भेद। (न्याय दर्शन में) निग्रहस्थान।—**अन्वित** (**अर्थान्वित**)-(वि०) धनी, सम्पत्ति वाला। सारगर्भ। महत्त्वपूर्ण।—**अर्थिन्** (**अर्थार्थिन्**)-(वि०) वह जो धन प्राप्त करना चाहे या जो कोई अपना उद्देश्य सिद्ध करना चाहे।—**अलङ्कार**। (**अर्थालङ्कार**)-(पं०) वह अलंकार, जिसमें अर्थ का चमत्कार दिखाया जाय।—**आगम** (**अर्थागम**)-(पुं०) आय, आमदनी, धन की प्राप्ति। किसी शब्द के अभिप्राय को सूचित करना।—**आपत्ति** (**अर्थापत्ति**)-(स्त्री०) अर्थालङ्कार जिसमें एक बात के कहने से दूसरी बात की सिद्धि हो। मीमांसाशास्त्रानुसार एक प्रमाण, जिसमें एक बात कहने से दूसरी बात की सिद्धि अपने आप हो जाय।—**उत्पत्ति** (**अर्थोत्पत्ति**)-(स्त्री०) धनोपार्जन, धनप्राप्ति।—**उपक्षेपक** (**अर्थोपक्षेपक**)-(पं०) नाटक का आरम्भिक दृश्य विशेष। यथा—'अर्थोपक्षेपकाः पञ्च।'—साहित्यदर्पण।—**उपमा** (**अर्थोपमा**) (स्त्री०) एक उपमा, जिसका सम्बन्ध शब्दार्थ या शब्द के भाव से रहता है।—**उष्मन्** (**अर्थोष्मन्**)-(पुं०) धन की गर्मी।—'अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव।'—भागवत।—**ओघ** (**अर्थौघ**)-—**राशि** (=**अर्थराशि**)-(पुं०) खजाना या धन का ढेर।—**कर**; (वि०) [स्त्री० अर्थ-करी] जिससे पैसा मिले।—**कर्मन्**-(न०) मुख्य कार्य।—**काम**-(वि०) धनाकांक्षी। —**किल्विषिन्**- (वि०) रुपये-पैसे के मामले में बेईमानी करने वाला।—**कृच्छ्र**-(न०) कठिन विषय। धन सम्बन्धी सङ्कट।—**कृत**-(वि०) धनी बनाने वाला। उपयोगी, लाभकारी।—**कृत्य**-(न०) धन का लाभ कराने वाला कोई कारबार।—**गत**-(वि०) (शब्द के) अर्थ पर आश्रित।—**गृह**-(न०) खजाना।—**गौरव**-(न०) अर्थ की गम्भीरता। —**घ्न**-(वि०) फिजूल खर्च, अपव्ययी।—**जात**-(वि०) अर्थ से परिपूर्ण। (न०) वस्तुओं का संग्रह, धन की बड़ी भारी रकम, बड़ी सम्पत्ति।—**तत्त्व**-(न०) यथार्थ सत्य, असली बात। किसी वस्तु का यथार्थ कारण या स्वभाव।—**द**-(वि०) धनप्रद। उपयोगी लाभदायी।—**दण्ड**-(पं०) जुर्माने की सजा। —**दर्शक**-(पुं०) धन-सम्पत्ति-संबंधी मुकदमों का विचार करने वाला।—**दूषण**-(न०) फिजूलखर्ची, अपव्यय। अन्याय पूर्वक किसी की सम्पत्ति छीन लेना या किसी का पावना (रुपया या धन) न देना। (किसी पद या शब्द के) अर्थ में दोष निकालना।—**निबंधन**-(वि०) धन पर निर्भर।—**पति**-(पुं०) धन का अधिष्ठाता, राजा। कुबेर की उपाधि; 'किञ्चिद्विहस्यार्थपतिम् बभाषे' र०२.४६।—**पर**,—**लुब्ध**-(वि०) धन प्राप्ति के लिये तुला हुआ, लालची, लोभी। कृपण, व्ययकुण्ठ।—**प्रबन्ध**-(पं०) आय-व्यय की व्यवस्था (फिनान्स) —**प्रयोग**-(पं०) व्याज

या सूद पर धन देना ।—**बुद्धि**– (वि०) स्वार्थी ।—**लोभ**–(पुं०) लालच ।—**वाद** –(पुं०) किसी उद्देश्य या अभिप्राय की घोषणा । प्रशंसा, स्तुति ।—**विकरण**–(न०) मतलव वदलना ।—**विकल्प**–(पुं०) सत्य से डिगने की क्रिया, सत्य वात को वदलने की क्रिया, अपलाप ।—**वृद्धि**–(स्त्री०) धन को जोड़ना ।—**व्यय**–(पुं०) खर्च ।—**शास्त्र**–(न०) सम्पत्ति शास्त्र, धन सम्वन्धी नीति को वताने वाला शास्त्र ।—**शौच**–(न०) रुपये के देन-लेन के मामले में सफाई या ईमानदारी ।—**सम्बन्ध**–(पुं०) किसी शव्द से उसके अर्थ का सम्वन्ध ।—**सार**–(पुं०) वहुत सा धन ।—**सिद्धि**–(स्त्री०) सफलता, मनोरथ का पूरा होना ।—**हर**–(वि०) उत्तराधिकार में धन प्राप्त करने वाला ।—**हीन**–(वि०) निर्धन । असफल ।

अर्थतः—(अव्य०) [अर्थ+तस्] अर्थ गौरव । दरहकीकत, सचमुच, यथार्थतः । धन प्राप्ति लाभ या फायदे के लिये । इस कारण से ।

अर्थना—(स्त्री०) [√अर्थ+युच्] प्रार्थना, विनय । दावा ।

अर्थवत्—(वि०) [अर्थ+मतुप्] धनी । गूढार्थ-प्रकाशक । जिसका अर्थ हो । किसी प्रयोजन का । सफल । उपयोगी ।

अर्थवत्ता—(स्त्री०) [अर्थवत्+तल्, टाप्] धन-सम्पत्ति, धन-दौलत ।

अर्थात्–(अव्य०) या, अथवा ।

अर्थिक—(पुं०) [अर्थयते इत्यर्थी याचकः कुत्सितार्थे कन्] चौकीदार । वैतालिक भाट । भिक्षुक, भिखारी, मँगता ।

अर्थित—(वि०) [√अर्थ+क्त (कर्मणि)] प्रार्थना किया हुया, अभिलषित । (न०) [√अर्थ+क्त (भावे)] अभिलाषा, इच्छा । प्रार्थना ।

अर्थिता—(स्त्री०) **अर्थित्व**–(न०) [अर्थिन् +तल्, टाप्] [अर्थिन्+त्वल्] याचन, प्रार्थना । इच्छा, अभिलाषा ।

अर्थिन्—(वि०) [अर्थ+इनि (अस्त्यर्थे)] याचक, भिक्षुक, मँगता । सेवक । धनी । वादी । अभिलाषी, मनोरथ रखने वाला ।

अर्थ्य—(त्रि०) [√अर्थ+ण्यत् वा अर्थ+यत्] माँगने योग्य, प्रार्थनीय । योग्य, उचित । गूढार्थ प्रकाशक; "स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती" र० ४.६। धनी, धनवान् । पण्डित, वुद्धिमान् । (न०) लाल खड़िया, गेरू । शिलाजीत ।

अर्द्—भ्वा० पर० सक० जाना । माँगना । अर्दति, अर्दिष्यति, आर्दीत् । चु० उभ० सक० मारना, वध करना । अर्दयति-अर्दति-अर्दते, अर्दयिष्यति-अर्दिष्यति-ते, आर्दिदत्-आर्दीत्-आर्दिष्ट ।

अर्दन—(न०) [√अर्द्+ल्युट्] पीड़न । वध । याचना । जाना । (वि०) √अर्द+ल्यु] पीड़ा देने वाला । नष्ट करने वाला । वेचैनी से घूमने या चलने वाला ।

अर्दना—(स्त्री०) [√अर्द्+युच्] पीड़ा। वध ।

अर्ध,—अर्द्ध– (वि०) [√ ऋध् (बढ़ना)+घञ्] पूरे के दो वरावर भागों में से एक, आधा । जिसमें कुछ अंश अपना और कुछ दूसरों का हो, 'पूरा' का उलटा ।(पुं०) खंड, टुकड़ा । (न०) समानांश, एक जैसा भाग ।।
—**अंशिन्** (**अर्धांशिन्**)–वि०) आधे का भागीदार ।—**अर्ध** (**अर्धार्ध**)– (पुं०, न०) आधे का आधा, चौथाई ।—**अवभेदक** (**अर्धावभेदक**)–(पुं०) आधे सिर की पीड़ा, आधासीसी ।—**गङ्गा**–(स्त्री०) कावेरी नदी का नाम । (कावेरी के स्नान करने से गङ्गा-स्नान का आधा फल प्राप्त हो जाता है) ।—**उदय** (**अर्धोदय**)–पुं०) एक पर्व जिसमें स्नान सूर्य-ग्रहण-स्नान का पुण्य देने वाला माना जाता है । (यह माघ की अमावस्या को श्रवण नक्षत्र और व्यतीपात योग पड़ने से होता है) ।—**ऊरुक** (**अर्धोरुक**)– (न०)

स्त्रियों के पहनने का एक अन्तर्वस्त्र, साया।—चन्द्र–(पुं०) चन्द्रार्ध। अष्टमी का चन्द्रमा। आधे चन्द्रमा के आकार का नख का घाव। गरदनिया, गलहस्त। सानुनासिक चिह्न विशेष (ँ)। मोर के परों पर की चन्द्रिका। चन्द्राकार वाण।—**चोलक**–(पुं०) अँगिया, बाँहकटी।—**नारीश,—नारीश्वर**–(पुं०) महादेव का नाम, शिव पार्वती की मूर्ति विशेष, हरगौरी रूप शिव।—**पञ्चाशत्**; (स्त्री०) २५ पचीस।—**भाग**-(पुं०) आधा हिस्सा पाने का अधिकारी, साथी, साझीदार।—**मागधी**-(स्त्री०) प्राकृत का वह रूप जो पटना और मथुरा के बीच बोला जाता था।—**माणव,—माणवक**–(पुं०) १२ लड़ियों का हार।—**मात्रा**–(स्त्री०) आधी मात्रा। व्यंजन वर्ण।—**रथ**–(पुं०) किसी के साथ होकर लड़ने वाला रथारोही।—**वैनाशिक**–(पुं०) कणाद के अनुयायी।—**वैशस**–(पुं०) आधा वध, अधूरा वध (जैसे पति के नाश में पत्नी का भी आधा नाश हो जाता है)।—**सीरिन्**–(पुं०) बटाईदार, परिश्रम के बदले आधी फसल लेने वाला कृषक।—**हार**—(पुं०) ६४ (या ४०) लड़ियों का हार।

अर्धक—(वि०) [अर्ध+कन्] आधा।

अर्धिक—(वि०) [स्त्री०—**अर्धिकी**] [अर्धम् अर्हति इति विग्रहे अर्ध+ठन्] आधा नापने वाला। जो आधा हिस्सा पाने का हकदार हो। (पुं०) वर्णसङ्कर, जिसकी परिभाषा पाराशर स्मृति में इस प्रकार है :—वैश्यकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेन तु संस्कृतः। अर्धिकः स तु विज्ञेयो भोज्यो विप्रैर्न संशयः॥

अर्धिन्—(वि०) [अर्ध+इनि] आधे हिस्से का हकदार।

अर्पण—(न०) [√ऋ+णिच्+ल्युट् पुक् च] भेंट, नजर। त्याग। *यथा*—'स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण।'—रघुवंश। वापिसी। छेदना।—'तीक्ष्णतुण्डार्पणैर्ग्रीवा'।

अर्पिस—(पुं०) [√ऋ+णिच्+इसन् पुक् च] हृदय। हृदय का मांस।

अर्व्-र्व्—भ्वा० पर० सक० एक ओर् जाना। हनन करना, वध करना। अर्व (र्व) ति, अर्वि (र्वि) ष्यति। आर्वी (र्वी) त्।

अर्बुद,-अर्वुद—(पुं० न०) [√ अर्व् (र्व्) +विच्— उद् √इण्+ड] सूजन, गुमड़ा। दस करोड़ की संख्या। आबू पहाड़ का नाम। सर्प। बादल। एक दैत्य जिसे इन्द्र ने मारा था। मांस का ढेर।

अर्भ—(पुं०) [√ऋ+भ] (दे०) 'अर्भक'।

अर्भक—(त्रि०) [अर्भ एव इत्यर्थे अर्भ+कन्] छोटा, सूक्ष्म, निर्बल, दुबला। मूढ़, मूर्ख। सदृश। बच्चों जैसा। (पुं०) बच्चा। छौना। कृशा। मूर्ख आदमी।

अर्म—(पुं०, न०) [√ऋ+मन्] आँख का एक रोग। गंतव्य देश। पुराना या आधा उजड़ा हुआ गाँव।

अर्य—(वि०) [√ऋ+यत्] सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ। प्रतिष्ठित। कुलीन। सच्चा। प्रियदयालु। (पुं०) स्वामी। वैश्य।—**वर्य**–(पुं०) प्रतिष्ठित वैश्य।

अर्या—(स्त्री०) [√ऋ+यत् टाप्] मालकिन। वैश्य, जाति की स्त्री।

अर्यमन्—(पुं०) [अर्यं श्रेष्ठ मिमीते इति √मा +कनिन्] सूर्य। पितरों के मुखिया; 'पितृणामर्यमा चास्मि' भग० १.४६। मदार, आक, अकौआ। द्वादश आदित्यों में से एक। उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का स्वामी देवता। परम प्रियमित्र, साथ खेलने वाला।

अर्यम्य—(पुं०) [अर्यमन्+यत् (स्वार्थे) सूर्य। प्राणोपम मित्र।

अर्याणी—(स्त्री०) [अर्य+ङीष्, आनुक्] वैश्य जाति की स्त्री, वैश्या, वनीनी। स्वामिनी।

√अर्व्—भ्व० परा० सक० हिंसा करना। अर्वति, अर्विष्यति, आर्वीत्।

अर्वन्—(पु०) [√ऋ+वनिप्] घोड़ा। चन्द्रमा के १० घोड़ों में से एक। इन्द्र। माप विशेष जो गाय के कान के बराबर का होता है। ती-(स्त्री०) घोड़ी। कुटनी। विद्याधरी।

अर्वाच्—(वि०) [अवरे काले देशे वाअञ्चति इति√अञ्च्+क्विन् पृषो० अर्वादेश] इस ओर आते हुए। (किसी) ओर घूमा हुआ। इस ओर का। (समय या स्थान में) नीचे या पीछे का।—(अव्य०) इस ओर, इस तरफ। किसी बिन्दु विशेष से, किसी स्थान विशेष से। नीचे की ओर। पश्चात्, पीछे से। बीच में। समीप।—**कालिक**-(वि०) हाल का। आधुनिक।—**शत**-(वि०) सौ से नीचे का। —**स्रोतस्**-(वि०) व्यभिचारी, लम्पट।

अर्वाचीन-(वि०) [अर्वाक् काले भवः इत्यर्थे अर्वाच्+ख—ईन] जो पीछे उत्पन्न हुआ हो। इधर का। हाल का। आधुनिक। नया। कृपादृष्टि रखने वाला। उलटा।

अर्वुक—(पुं०) [√अर्व्+उकन्] महाभारत कालीन एक जाति, जो दक्षिण में रहती थी और जिसे सहदेव ने जीता था।

अर्शस्—(न०) [√ऋ+असुन् शुक् च] बवासीर रोग।—**घ्न (अर्शोघ्न)**-(वि०) बवासीर रोग नाशक।

अर्शस—(वि०) [अर्शस्+अच्(अस्त्यर्थे)] बवासीर रोग से पीड़ित।

√अर्ह्—(भ्वा० पर० सक०) पूजा करना। अक० (किसी के) योग्य होना। अर्हति, अर्हिष्यति, आर्हीत्। (आत्म०) आर्ष प्रयोग। यथा—'रावणो नार्हते पूजां'—रामायण।

अर्ह—(वि०) [√अर्ह्+अच् (कर्मणि)] पूजनीय। मान्य। योग्य; 'तस्मान्नार्हाः वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान् स्वबान्धवान्' भग० १.३७। उपयुक्त। मूल्यवान्। (पुं०) इन्द्र। विष्णु।

अर्हण—(न०)—**अर्हणा**-(स्त्री०) [√अर्ह् +ल्युट्] [√अर्ह्+युच्] पूजन। उपासना। सम्मान, प्रतिष्ठापूर्ण व्यवहार।

अर्हत्—(वि०) [√अर्ह्+शतृ] उपयुक्त। योग्य। आराधनीय, उपास्य। (पुं०) बुद्ध। जैनियों के पूज्य देवता, तीर्थंकर।

अर्हन्त—(पुं०) [√अर्ह्+झ (बा०), अन्त] जैन देवता। बौद्धभिक्षुक।

अर्ह्य—[√अर्ह् +ण्यत्] पूजनीय। माननीय। स्तुति योग्य। योग्य। अविकारी।

√अल्—(भ्वा० पर० सक०) सजाना। रोकना, बचाना। (अक०) योग्य होना। अलति, अलिष्यति, आलीत्।

अलक—(पुं०) [अल्+क्वुन्] घुँघराले बाल। जुल्फें। शरीर पर केसर का उबटन। उन्मत्त कुत्ता। (न०) व्यर्थ, निरर्थक।

अलका—(स्त्री०) [अलक+टाप्] ८ और १० बरस के भीतर की उम्र वाली लड़की। कुबेर की राजधानी का नाम।

अलक्त, अलक्तक-(पुं०) [न रक्तो यस्मात् ब० स० रस्य लत्वम्] [अलक्त+कन्] कतिपय वृक्षों की लाल छाल या बकला। लाक्षारस, लाख का रंग, महावर (जो स्त्रियाँ पैरों में लगाती हैं)।

अलक्षण—(वि०) [नास्ति लक्षणं यस्य न० ब०] जिसमें कोई चिह्न या निशान न हो। अप्रसिद्ध, जिसके लक्षण निर्दिष्ट न हों। अशुभ। (न०) [न० त०] अशुभ शकुन या चिह्न। बुरी परिभाषा।

अलक्षित—(वि०) [न० त०] अदृष्ट। अप्रकट। गुप्त; 'अलक्षिताभ्युत्पतनो नृपेण' र० २.२७।

अलक्ष्मी—(स्त्री०) [न० त०] दरिद्रता। अभागापन, दुर्दिष्ट।

अलक्ष्य—(वि०) [न० त०] अदृष्ट। अज्ञेय। चिह्नरहित। जिसका लक्षण न किया जा सके।—**गति**-(वि०) ऐसे चलना कि कोई देख न सके।—**लिङ्ग**-(वि०) वेश बदले हुए। नाम-पता छिपाये हुए।

अलगर्द—(पुं०) [लगति स्पृशति इति क्विप् लग् अर्दयति इति√अर्द्+अच्, स्पृशन् सन् अर्दो न भवति] पानी का साँप।

अलघु—(वि०) [स्त्री०—**अलघ्वी**] [न० त०], जो हल्का न हो । भारी । जो छोटा न हो, लंबा । संगीन, गम्भीर । अत्यन्त प्रचण्ड, प्रवल । —उपल–(**अलघूपल**) (पुं०) चट्टान ।

अलङ्करण—(न०) [अलम्√कृ+ल्युट्] सजावट, श्रृङ्गार । आभूषण, गहना ।— "पुरुषरत्नमलंकरणम् भुवः" ।—भर्त्तृहरिः ।

अलङ्करिष्णु—(वि०) [अलम्√ कृ+ इष्णुच्] गहनों का शौकीन । सजावटी, सजाने में निपुण ।

अलङ्कर्मीण—(वि०) [अलम् समर्थः कर्मणे इत्यर्थे अलङ्कर्मन्+ख=ईन] काम करने में चतुर । दक्ष ।

अलङ्कार—(पुं०) [अलम्√कृ+घञ्] सजावट, शृङ्गार । आभूषण, गहना । साहित्य शास्त्र का एक अंग । काव्य का गुण-दोष वताने वाला शास्त्र ।

अलङ्कारक—(पुं०) [अलम्√कृ+ण्वुल्] सजाने वाला ।

अलङ्कृति—(स्त्री० [अलम्√कृ+क्तिन्,] अलकार । सजावट ।

अलङ्क्रिया—(स्त्री०) [अलम् कृ+श, टाप्] दे० 'अलङ्कृति' ।

अलङ्घनीय—(वि०) [√लङ्घ+अनीयर् न० त] जो लाँघा या पार न किया जा सके । अटल ।

अलज—(पुं०) [अल√जन्+ड] एक तरह का पक्षी ।

अलञ्जर,—अलञ्जुर–(पुं०) [अलम्√ जृ+ अच्, पक्षे पृषो० उत्] घड़ा, मिट्टी का घड़ा ।

अलन्धन—(वि०) [अलं प्रभूतं धनम् अस्ति अस्य व० स०] जिसके पास वहुत धन हो, धनाढ्य ।

अलम्—(अव्य०) [√अल्+अमु (वा०)] पर्याप्त, काफी, पूरा । वस, वहुत हो चुका; 'अलम्महीपाल ! तव श्रमेण' र० '२.३४ । भूषण । निवारण । सामर्थ्य । निषेध । निरर्थकता । अवधारण ।

अलम्पट—(वि०) जो लंपट या विषयी न हो, शुद्ध चरित्र वाला । (पुं०) अंतःपुर, जनानखाना ।

अलम्पशु—(पुं०) [अलम् यज्ञे निरर्थः पशुः] यज्ञ के लिये अयोग्य पशु । (वि०) [अलम् पशुभ्यः, च० त०] गौ आदि पशु रखने में समर्थ ।

अलम्पुरुषीण—(वि०) [अलम् पुरुषाय इति अलम्पुरुष+ख=ईन (स्वार्थे)] पुरुष होने योग्य, योग्य पुरुष ।

अलम्बुष—(पुं०) [अलं पुष्णाति इति√ पुष्+क पृषो० पस्य वः] वमन, छर्दि, कै । खुले हुए हाथ की हथेली । रावण के एक राक्षस सैनिक का नाम । एक राक्षस जिसे महाभारत के युद्ध में घटोत्कच ने मारा था ।

अलम्बुषा—(स्त्री०) [अलम्बुष+टाप्] मुंडी, गोरखमुण्डी । स्वर्ग की एक अप्सरा । दूसरे का आना रोकने के लिये खींची गयी लकीर । छुई-मुई, लजालू पौधा ।

अलम्बुसा—(स्त्री०) [?] एक देश का नाम ।

अलय—(वि०) [नास्ति लयो यस्य न० व०] गृहहीन, आवारा । जो कभी नाश को प्राप्त न हो, अविनश्वर । (पुं०) [न० त०] नाश का अभाव, नित्यता । जन्म, उत्पत्ति ।

अलर्क—(पुं०) [अलम् अर्क्यते अर्च्यते वा इति√ अर्क्+अच् वा√अर्च्+घञ् शक० पररूपम्] पागल कुत्ता । सफेद मदार या अकौआ । एक राजा का नाम ।

अलले—(अव्य०) [दे० 'अररे' रस्य लः] पैशाची भाषा का शव्द जो नाटकों में वहुधा व्यवहृत होता है ।

अलवाल—(न०) [लवम् आलाति इति√ला +क न० त०] पेड़ की जड़ का खोड़ुआ या थाला, जिसमें जल भर दिया है ।

अलस्—(वि०) [√लस्+क्विप् न० त०] जो चमकीला न हो या जो चमके नहीं।

अलस—(वि०) [न लसति व्याप्रियते इति√लस्+अच् न० त०] अक्रियाशील, जिसके शरीर में फुर्ती न हो, सुस्त, काहिल। श्रान्त, थका हुआ। मृदु, कोमल। मन्द; "श्रोणी भारादलसगमना' उ० मे० ८२, चेष्टाहीन। (पुं०) पैर की उँगलियों के चमड़े का सड़ना। (स्त्री०) हंसपदी लता।

अलसक—(वि०) [अलस+कन्] अकर्मण्य, काहिल, सुस्त।

अलात—(पुं०) (न०) [√ला+क्त न० त०] अधजला काठ या लकड़ी, जलता हुआ काठ या लकड़ी।

अलाबु, अलाबू—(स्त्री०) [√लम्ब्+उ, णित् नलोप, वृद्धि] लौकी, तुम्बी, लावू, तुमड़िया। (न०) तुमड़ी का बना बरतन। तुमड़ी का फल।—**कट** (न०) तुमड़ी की रज।

अलार—(न०) [√ऋ+यङ् लुक्+अच् रस्य लः] दरवाजा।

अलि—(पुं०) [अलति देशे, कूजिते, शब्दिते वा समर्थो भवति इति√अल्+इन्] भौंरा। बिच्छू। काक, कौआ। कोयल। मदिरा।—**कुल**–(न०) भौंरों का झुंड।—**प्रिय**–(न०) कमल।।—**विराव**,–(पुं०)—**रुत**–(न०) भौंरों का गुञ्जार।

अलिक—(न०) [अल्यते भूष्यते इति√अल्+इकन्] मस्तक, माथा; 'अलिकेन च हेमकान्तिना,।

अलिन्—(पुं०) [अल+इनि वा√अल्+इनि] बिच्छू। शहद की मक्खी।

अलिनी—(स्त्री०) [अलिन्+ङीप्] शहद की मक्खियों का समुदाय।

अलिङ्ग—(वि०) [न० ब०] जिसके कोई विशिष्ट चिह्न न हो, जिसके कोई चिह्न न हो। बुरे चिह्नों वाला। (व्याकरण में) जिसका कोई लिङ्ग न हो।

अलिञ्जर—(पुं०) [अलनम् अलिः√अल्+इन् तं जरयति इति√जृ+अच् पृषो० मुम्] पानी का घड़ा।

अलिन्द—(पुं०) [अल्यते भूष्यते इति√अल्+किन्दच्] घर के द्वार के सामने का चबूतरा या चौतरा।

अलिपक—(पुं०) [√लिप्+वुन् (बा०) न० त०] कोयल। शहद की मक्खी। कुत्ता।

अलीक—(वि०) [√अल्+कीकन्] अप्रिय। मिथ्या, मनगढ़ंत। अल्प, थोड़ा। (न०) ललाट। अप्रिय विषय। झूठ। स्वर्ग।

अलीकिन्—(वि०) [अलीक+इनि] अरुचिकर, अप्रसन्नकर। झूठ।

अलु—(पुं०) [√अल्+उन्] एक छोटा जलपात्र।

अलूक्ष—(वि०) [न रूक्षः न० त० रस्य लः] रूखा नहीं। कोमल, नम्र।

अले, अलेले—(अव्य०) [अरे, अरेरे इत्येव रस्य लः] अर्थशून्य शब्द जो नाटकों के उस दृश्य में जहाँ पिशाचों का संवाद होता है, प्रयुक्त किया जाता है।

अलेपक—(वि०) [न० ब०, कप्] संबंध रहित (पुं०) परमात्मा। [√लिप्+ण्वुल् न० त०] लेपने वाला नहीं।

अलोक—(वि०) [न० ब०] अदृश्य, जो देख न पड़े। जिसमें कोई आदमी भी न हो। ऐसा जीव जो मरने के बाद अन्य किसी लोक में न जाय। (पुं०) [न० त०] लोक नहीं। लोक का नाश या मनुष्यों का अभाव; 'रक्ष सर्वानिमान् लोकान् नालोकं कर्त्तुमर्हसि'।—**सामान्य**–(वि०) असाधारण।

अलोकन—(न०) [√लोक्+ल्युट्, न० त०] न देखना।

अलोल—(वि०) [न० त०] स्थिर, टिका हुआ। दृढ़, मजबूत। अचञ्चल। जो प्यासा न हो। इच्छा से रहित, कामनाशून्य।

अलोलुप—(वि०) [न० त०] कामनाशून्य। जो लालची न हो।

अलोहित—(वि०) [न० त०] जो लाल न हो। रक्तशून्य। (न०) लाल कमल।

अलौकिक—(वि०) [स्त्री०—**अलौकिकी**] [न० त०] जो लोक में न मिलता हो, लोकोत्तर। अमानुषी। अतिप्रकृत। अद्भुत। विरल।

अल्प—(वि०) [√अल्+प] तुच्छ। थोड़ा, जरासा। विनाशी, थोड़े दिनों का। दुर्लभ। —**केशी**–(स्त्री०) भूतकेशी नामक पौधा। —**ज्ञ**–(वि०) थोड़ा जानने वाला। मूर्ख।—**तनु**–(वि०) ठिगना। दुर्बल, पतला। छोटी हड्डियों वाला।—**प्रसार**-(पुं०) छोटी-सी जांगलिक सेना या सहायता (कौ०)।—**प्राण**–(वि०) अल्पशक्ति वाला। श्वासरोगी। (पुं०) प्रत्येक व्यंजन वर्ग का पहला, तीसरा और पाँचवाँ अक्षर तथा य, र, ल, व (व्या०)।—**वयस्**, —**विराम**–(वि०) छोटी उम्र का, कमसिन।—**विराम**–(पुं०) अर्थ-बोध के लिये किसी शब्द के बाद थोड़ा ठहरना। इसका चिह्न। (,)।—**व्ययारंभ**–(वि०) थोड़े ही व्यय से बन जाने वाला (कौ०)।

अल्पक—(वि०) [स्त्री०—**अल्पिका**] [अल्प+कन्] कम, थोड़ा। क्षुद्र, घृणायोग्य।

अल्पम्पच—(पुं०) [अल्प√पच्+खश्, मुम्] कंजूस, लोभी, लालची।

अल्पशः—(अव्य०) [अल्प+शस्] थोड़े अंश में, थोड़ा-थोड़ा करके।

अल्पिष्ठ—(वि०) [अल्प+इष्ठन्] सब से छोटा या कम।

अल्पीकरण—(न०) [अल्प+च्वि, ततः√कृ+ल्युट् ईत्व] छोटा करना। घटाना, कम करना।

अल्पीयस्—(वि०) [अल्प+ईयसुन्] अपेक्षाकृत कम या छोटा, बहुत छोटा या कम।

अल्ला—(स्त्री०) [अल्यते इति√अल्+क्विप्, अले भूषार्थे लाति गृह्णाति इति√ला+क, च० त०] माता। [अलतीति अल्, पर्याप्तः सन् लाति सर्वान् अत्ति गृह्णाति जानाति वा √ला+क] पराशक्ति, परमात्मदेवता। (सम्बोधनकारक में "अल्ल")।

√अव्—भ्वा० पर० क्रमशः सक० अक० बचाना; प्रसन्न करना इच्छा करना। कृपा करना। जाना। सुनना। माँगना। मारना। करना। लेना। तृप्त होना। फैलना। प्रवेश करना। होना। बढ़ना। अवति, अविष्यति, आवीत्।

अव—(अव्य०) [√अव्+अच्] दूर, फ़ासले पर। नीचे। (जब यह किसी क्रिया में "उपसर्ग" होता है तब यह निम्न भाव प्रकट करता है:—सङ्कल्प, विचार। फैलाव, विस्तार। अवज्ञा, अवहेलना। स्वल्पता। अवलम्ब। शोधन, शुद्धता, निर्मलता।

अवकट—(वि०) [अव+कटच्] नीचे की ओर मुख वाला। (न०) रोक।

अवकथन—(न०) [प्रा० स०] [प्रशंसा

अवकर—(पुं०) [अवकीर्यते सम्मार्जन्यादिभिः इति अव√कॄ+अप्] धूल, बुहारन।

अवकर्त—(पुं०) [अव√कृत्+घञ्] टुकड़ा, धज्जी, कतरन।

अवकर्तन—(न०) [अव√कृत्+ल्युट्] काटन, कतरन।

अवकर्षण—(न०) [अव√कृष्+ल्युट्] बाहर निकलने या खींचकर बाहर निकालने की क्रिया। बहिष्करण।

अवकलित—(वि०) [अव√कल्+क्त] देखा हुआ, अवलोकन किया हुआ। जाना हुआ। लिया हुआ, ग्रहण किया हुआ, प्राप्त।

अवकाश—(पुं०) [अव√काश्+घञ्] अवसर, मौका। खाली वक्त, फुर्सत, छुट्टी। स्थान, जगह। शून्य जगह; 'अवकाशं किलोदन्वान् रामायाभ्यर्थितोददौ, र० ४.५८। दूरी, अन्तर, फासला।—ग्रहण–, (न०) नौकरी,

सक्रिय सेवा, सार्वजनिक जीवन आदि से विश्राम लेना, पृथक् हो जाना निवृत्ति, विश्राम-ग्रहण (रिटायरमेंट)।

अवकीर्ण—(वि०) [अव√कृ+क्त [बिखेरा हुआ। फैलाया हुआ। चूर किया हुआ। ध्वस्त। जिसका ब्रह्मचर्य व्रत भंग हो गया हो।—याग- (पुं०) ब्रह्मचर्यव्रत भंग होने के प्रायश्चित्त रूप किया जाने वाला एक यज्ञ।

अवकीर्णिन्—(वि०) [अवकीर्ण+इनि]। ब्रह्मचर्य व्रत से च्युत हो जाने वाला। धर्मभ्रष्ट।

अवकुञ्चन—(न०) [अव√कुञ्च्+ल्युट्] सिकोड़ना। समेटना। मोड़ना। एक रोग।

अवकुट्टन—(न०) [अव√कुट्ट्+ल्युट्—अन] ठोकना।

अवकुठार— (पुं०) [अव+कुठारच्] बदसूरत, असुन्दरता।

अवकुण्ठन—(न०) [अव√कुण्ठ्+ल्युट्] पाटना। छेकना। ढकना। परिवेष्टित करना। आकृष्ट करना।

अवकुण्ठित—(वि०) [अव√कुण्ठ्+क्त] छेका हुआ। घेरा हुआ। खिंचा हुआ।

अवकृष्ट—[अव√कृष+क्त] नीचे गिराया हुआ। स्थानान्तरित किया हुआ। निकाला हुआ। अपकृष्ट, नीच। जातिबहिष्कृत। (पुं०) नौकर जो नीच काम करता हो।

अवक्लृप्ति—(स्त्री०) [अव√क्लृप्+क्तिन्] सम्भावना। उपयुक्तता।

अवकेशिन्—(वि०) [अवसन्नाः केशाः इति प्रा० स०, अवकेशाः सन्ति अस्य इत्यर्थे इनिः] अल्प या छोटे बालों वाला। [अवच्युतं कं सुखं यस्मात् प्रा० ब०—अवकम्=फलशून्यताम् ईशितुं शीलमस्य इति अवक√ईश्+णिनि] बंजर। (वृक्ष) जिसमें कोई फल न लगे।

अवकोकिल—(वि०) [अवकृष्टः कोकिलया इति प्राव० स०] कोयल द्वारा तिरस्कृत या अवहेलित।

अवक्र—(वि०) [न० त०] जो टेढ़ा न हो। (आलं०) ईमानदार, सच्चा।

अवक्रन्द—(पुं०) [अव√क्रन्द्+घञ्] गर्जन। हिनहिनाना।

अवक्रन्दन—(न०) [अव√क्रन्द्+ल्युट्] जोर से रोने की क्रिया, चिल्लाकर रोना।

अवक्रम—(पुं०) [अव√क्रम्+क्रञ्] उतार। ढाल, निचान।

अवक्रय—(पुं०) [अव√क्री+अच्] मूल्य, कीमत। मजदूरी। भाड़ा, किराया। ठेका, इजारा, पट्टा। भाड़े पर उठाने की क्रिया। पट्टे पर देने की क्रिया। कर या राजस्व, राजग्राह्य द्रव्य।

अवक्रान्ति—(स्त्री० [अव√क्रम्+क्तिन्] उतार। समीप आगमन।

अवक्रिया—(स्त्री०) [अव√कृ+श, टाप्] छूट। चूक, भूल।

अवक्रोश—(पुं०) [अव√क्रुश्+घञ्] बेसुरा कोलाहल। अकोसा, शाप। गाली झिड़की, फटकार।

अवक्लेद—(पुं०) [अव√क्लिद्+घञ्] बूंद-बूंद टपकने की क्रिया। कचलोहू, घाव का पानी, पंछा।

अवक्लेश—(पुं०) [अव√क्लिश्+घञ्] बूंद-बूंद टपकना, रसना। नमी अथवा सील का ढाल।

अवक्षय—(पुं०) [अव√क्षि+अच्] नाश। सड़ाव, गलन। हानि।

अवक्षेप—पुं) [अव√क्षिप्+घञ्] दोषारोपण। आपत्ति।

अवक्षेपण—(न०) [अव√क्षिप्+ल्युट्] गिराव, अधःपात। तिरस्कार। घृणा। फटकार, भर्त्सना। दोषारोपण। वशवर्तीकरण।

अवक्षेपणी—(स्त्री०) [अवक्षेपण+ङीप्] लगाम, रास।

अवखण्डन—(न०) [अव√खण्ड्+ल्युट्] विभक्त करने की क्रिया। नष्ट करने की क्रिया।

अवखात—(न०) [प्रा० स०] गहरा गड्ढा या खाई।

अवगणन—(न०) [अव√गण्+ल्युट्] अवज्ञा, तिरस्कार, अवहेलना । फटकार । दोषारोपण ।

अवगण्ड—(पुं०) [अत्या० स०] मुहासा या फुंसी जो चेहरे पर या गाल पर होती है ।

अवगति—(स्त्री) [अव√गम्+क्तिन्] ज्ञान । बोध । निश्चयात्मक ज्ञान । बुरी गति ।

अवगम, (पुं०) **अवगमन**—(न०) [अव√गम्+घञ्] [अव√गम्+ल्युट्] समीप गमन । ऊपर से नीचे उतरने की क्रिया । समझ, धारणा, ज्ञान ।

अवगाढ—(अव√गाह्+क्त] बूड़ा हुआ घुसा हुआ, डूबा हुआ । ढीला । नीचा । गहरा । जमा हुआ । पक्का बना हुआ ।

अवगाह (पुं०) **अवगाहन**—(न०) [अव√गाह्+घञ्] [अव√ गाह्+ल्युट्] स्नान, निमज्जन । (आलं०) निष्णात होने की क्रिया, पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने की क्रिया ।

अवगीत—(वि०) [अव√ गा+क्त] बेसुरा गाया हुआ, बुरा गाया हुआ । अकोसा हुआ, धिक्कारा हुआ । दुष्ट, पापी । (न०) जनापवाद, निन्दा । अभिशाप ।

अवगुण—[प्रा० स०] गुण का विरोधी भाव । कोई खराब बात या बुरा गुण । दोष, ऐब, बुराई ।

अवगुण्ठन—(न०) [अव√ कुण्ठ्+ल्युट्] ढकने की क्रिया । छिपाने की क्रिया । पर्दा । घूंघट । बुर्का ।

अवगुण्ठनवत्—(वि०) [स्त्री०—**अवगुण्ठनवती**] [अवगुण्ठन+मतुप्] घूंघट से ढका हुआ ।

अवगुण्ठिका—(स्त्री०) [अव√ गुण्ठ्+ण्वुल्—अक] घूंघट । पर्दा ।

अवगुण्ठित—[अव√गुण्ठ्+क्त] ढका हुआ । घूंघट काढ़े हुए । छिपा हुआ ।

अवगूरण, अवगोरण—(न०) [अव√गूर्+ल्युट्] [अव√गुर्+ल्युट्] मार डालने के उद्देश्य से हमला करने की क्रिया । हथियार से आक्रमण करने की क्रिया ।

अवगूहन—(न०) [अव√ गूह्+ल्युट्] छिपाव दुराव । आलिङ्गन करने की क्रिया ।

अवग्रह—(पुं०) [अव√गूह्+अच्] (व्याकरण में) सन्धिविच्छेद । लुप्त अकार जिसका चिह्न (ऽ) है । अनावृष्टि, सूखा, 'नभोनभस्ययो ष्टित्रमवग्रह इवान्तरे' र० १२.२६ रुकावट । अड़चन, रोक, बाधा । गज समूह । हाथी का माथा । स्वभाव । प्रकृति । दण्ड, सजा । शाप, अकोसा ।

अवग्रहण—(न०) [अव√ग्रह+ल्युट्] रुकावट, अड़चन । अपमान, अवहेला ।

अवग्राह—(पुं०) [अव्√ग्रह्+घञ्] टूटना विलगाव, अलगाव । अड़चन, रुकावट, रोक । शाप ।

अवघट्ट—(पुं०) [अव√घट्ट्+घञ्] भूमि का बिल, गुफा, गुहा । अनाज पीसने की चक्की । गड्डबड्ड करने की क्रिया, हिलाकर गड्डबड्ड करने की क्रिया ।

अवघर्षण—(न०) [अव√घृष्+ल्युट्] रगड़ना । मालिश करना । पीसने की क्रिया । (सूखा रङ्ग आदि) मलकर झाड़ने की क्रिया । (लगे रंग को) मलकर छुड़ाना ।

अवघात—(पुं०) [अव√हन्+घञ्] धान आदि का ताड़न । चोट, प्रहार । वध, हत्या । अपमृत्यु ।

अवघूर्णन—[अव√घूर्ण्+ल्युट्] घुमरी, चक्कर ।

अवघोषण, (न०) **अवघोषणा**—(स्त्री०) [अव√घुष्+ल्युट्] [अव√घुष्+युच्] ढिंढोरा । राजसूचना ।

अवघ्राण—(न०) [अव√घ्रा+क्त (भावे)] सूंघने की क्रिया ।

अवचन—[न० व०] न बोलने वाला । चुप, खामोश, वाणी-रहित । (न०) [न० त०] वचन या कथन का अभाव । चुप्पी, मौन । फटकार, डाँट-डपट, झिड़की ।

अवचनीय—(वि०) [न० त०] जो कहा न जा सके। जो बोला न जा सके। अश्लील या भद्दी (बात या भाषा)। झिड़की के अयोग्य, भर्त्सना के योग्य नहीं।

अवचय, अवचाय—(पुं०) [अव√चि+अच्] [अव√चि+घञ्] सञ्चय। (जैसे फल, फूल आदि का)

अवचारण—(न०) [अव√चर्+णिच्+ल्युट्] किसी काम में लगाने की क्रिया। बरताव या जुगत का लगाना।

अव√चि—पूजा करना। आदर करना। इकट्ठा करना। चुनना। तोड़ना।

अवचूड़, अवचूल—(पुं०) [अवनता चूडा अग्रं यस्य ब० स०] रथ का उघार। किसी झंडे की सजावट के लिये लटकाये हुए चौरीनुमा गुच्छे।

अव√चूर्ण्—चूर-चूर करना। पीसना।

अवचूर्णन—(न०) [अव√चूर्ण्+ल्युट्] पीसना, कूटना, पीस कर चूर्ण कर डालना। चूर्ण बुरकाना। विशेष कर कोई सूखी दवा किसी घाव पर बुरकाना।

अवचूलक—(न०) [अवनता चूडा यस्य डस्य लत्वम्, संज्ञायां कन्] मोर के पंख या गाय की पूँछ का बना हुआ चँवर, चौरी (जिससे मक्खियाँ उड़ायी जाती हैं)।

अव√च्छद्—ऊपर से ढाँकना। छिपाना।

अवच्छद, अवच्छाद—(पुं०) [अव√छद्+क] [अव√छद्+घञ्] ढक्कन, कोई वस्तु जिससे दूसरी वस्तु ढकी जा सके।

अव√च्छिद्—काट डालना। जुदा करना। फाड़ना। तोड़ना। विचारना।

अवच्छिन्न—(वि०) [अव√छिद्+क्त] काट कर अलग किया हुआ। विभाजित, पृथक् किया हुआ। छुड़ाया हुआ। जिसका किसी अवच्छेदक पदार्थ से अवच्छेद किया गया हो। छेका हुआ, घेरा हुआ। सम्हाला या संशोधित किया हुआ। निश्चित किया हुआ।

अवच्छुरित—(वि०) [अव√छुर्+क्त] मिश्रित, मिला हुआ। (न०) खिलखिलाहट, अट्टहास, ठहाका।

अवच्छेद—(पुं०) [अव√छिद्+घञ्] टुकड़ा, भाग। सीमा, हद। वियोग। विशेषता। निश्चय, निर्णय। लक्षण (जिससे कोई वस्तु निर्भ्रान्त रूप से पहचानी जा सके)। सीमाबद्धकरण। परिभाषाकरण।

अवच्छेदक—(वि०) [अव√छिद् + ण्वुल्] भेदकारी, अलग करने वाला। विशेषण। गुण रूप शब्द। औरों से अलग करने वाला।

अवजय—(पुं०) [अव√जि+अच्] हार।

अवजिति—(स्त्री०) [अव√जि+क्तिन्] जय, विजय।

अवज्ञान—(न०) [अव√ज्ञा+ल्युट्] अवहेला, अपमान।

अवट—(पुं०) [√अव्+अटन्] छेद, रन्ध्र। गुफा। गड्ढा। कूप। खाल। शरीर का कोई भी नीचा या दबा हुआ अवयव या भाग। नाडीव्रण। बाजीगर। —**कच्छप**-(पुं०) गढ़े का कछुआ। (आलं०) अनुभव शून्य व्यक्ति। वह जिसने संसार का कुछ भी ज्ञान-सम्पादन नहीं किया।

अवटि, अवटी—(स्त्री०) [√अव्+अटि, पक्षे ङीष्] छेद, रन्ध्र। कूप। नाडीव्रण आदि।

अवटीट—(वि०) [अवनता नासिका प्रा० स० नतार्थे नासाया: टीटादेश:, अर्शआदित्वात् अच्] चपटी नाक वाला।

अवटु—(पुं०) [न० त०] ब्रह्मचारी या बालक नहीं। [अव√टीक्+डु] भूमि का बिल। कूप। गरदन के पीछे का भाग। शरीर का दबा हुआ भाग। (स्त्री०) गरदन का उठा हुआ भाग। (न०) सूराख, छेद। खोंप। दरार।

अवडीन—(न०) [अव√डी+क्त (भावे] । पक्षी की उड़ान। नीचे की ओर उड़ना।

अवतंस—(पुं० न०) [अव√तंस+घञ्] हार, गजरा, माला। कान की वाली, वाली-नुमा एक आभूषण। मस्तक पर पहिनने का गहना, मुकुट, ताज।

अवतंसक—(पुं०) [अव√तंस्+ण्वुल्] कान का आभूषण, कोई भी आभूषण।

अवतति—(स्त्री०) [अव√तन्+क्तिन्] फैलाव, पसार, वढ़ाव।

अवतप्त—[अव√तप्+क्त] गर्माया हुआ, गरम किया हुआ। प्रकाशित, उजागर।

अवतमस—(न०) [प्रा० स०] झुटपुटा, थोड़ा अन्धकार। अंधकार, अंधियाला।

अवतर—(पुं०) [अव√तृ+अप्] उतार, गिराव।

अवतरण—(न०) [अव√तृ+ल्युट्] स्नानार्थ पानी में उतरने की क्रिया। अवतार, प्रादुर्भाव, जन्म-ग्रहण। वारण। पार होना, उतरना। पवित्र स्थान जहाँ स्नान किया जा सके। अनुवाद। भूमिका। नकल। किसी के कहे हुए शब्दों, संदेह आदि को (उलटे विराम-चिह्नों के वीच) उद्धृत करना (कोटेशन)।—**चिह्न** (न०) अवतरित अंश के ठीक पहले तथा अंत में दिये जाने वाले उलटे विराम-चिह्न।—**पथ**-(पुं०) वायुयानों के लिये वना वह लंवा-सा पथ जिस पर उन्हें ऊपर उठने के पूर्व या नीचे उतरने के वाद कुछ दूर तक चलना पड़ता है (एअरस्ट्रिप, रनवे)।—**भूमि** (स्त्री०) हवाई जहाजों के लिये आकाश से नीचे उतरने का स्थान। (लैंडिंग-ग्राउंड)।

अवतरणिका—(स्त्री०) [अवतरणी+कन्, ह्रस्व, टाप्] ग्रन्थ की भूमिका, उपोद्‌घात।

अवतरणी—(स्त्री०) [अव√तृ+ल्युट्—ङीप्] दे० 'अवतरणिका'।

अवतर्पण—(न०) [अव√तृप्+ल्युट्] शान्त करने वाला उपाय।

अवताडन—(न०) [अव√तड्+णिच्+ल्युट्] कुचलना, रौंदना; 'नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्यसिद्धा मूर्ध्नि स्थितिर्न चरणैरवताडनानि' उत्त० १.१४। मारण, आघातकरण।

अवतान—(पुं०) [अव√तन्+घञ्] फैलाव। झुके हुए धनुष को सीधा करने की क्रिया। ढक्कन या पर्दा।

अवतार—(पुं०) [अव√तृ+घञ्] उतार। नीचे आना। किसी देवता का पृथिवी पर प्रादुर्भाव या जन्म लेना। घाट। स्नान करने का पवित्र स्थान। अनुवाद। तालाव। भूमिका। विष्णु के १० या २४ अवतारों में से कोई एक। किसी विषय को लक्ष्य वनाना। पार करना।

अवतारक—(वि०) [स्त्री०—**अवतारिका**] [अव√तृ+णिच्+ण्वुल] प्रादुर्भाव करने वाला।

अवतारण—(न०) [अव√तृ+णिच्+ल्युट्] उतरवाने की क्रिया। अनुवाद। किसी भूत-प्रेत का आवेश। पूजन। भूमिका, उपोद्‌घात।

अवतीर्ण—[अव√तृ+क्त] उतरा हुआ, नीचे आया हुआ। स्नान किया हुआ। पार किया हुआ, गुजरा हुआ। अनूदित। अवतार के रूप में उत्पन्न।

अवतोका—(स्त्री०) [अवपतितं तोकमस्याः इति प्रा० व०] स्त्री या गौ जिसका कारण वश गर्भस्राव हो गया हो।

अवदंश—(पुं०) [अव√दंश्+घञ्] ऐसा भोज्य पदार्थ जिसके खाने से प्यास वढ़े, गजक, चाट। वलवर्धक पदार्थ।

अवदाघ—(पुं०) [अव√दह्+घञ्, ह्रस्य घः] उष्णता। गर्मी की ऋतु।

अवदात—(वि०) [अव√दै+क्त] खूव सूरत, सुन्दर। साफ, स्वच्छ; 'कुन्दावदाताः कलहंसमालाः' भट्टि. २. १८। पुण्यात्मा। पीला। (पुं०) सफेद या पीला रंग।

अवदान—(न०) [अव√दो+ल्युट्] पवित्र या शास्त्रविहित वृत्ति। सम्पादित कार्य। शूरता या गौरवपूर्ण कोई कार्य। टुकड़-टुकड़े करने

को क्रिया। किसी अनोखी कहानी का कोई दृश्य। पराक्रम। वीरणमूल।

अवदारण—(न०) [अव√दृ+णिच+ल्युट्] चीरना, फाड़ना। विभाजित करना। खुदाई। टुकड़े-टुकड़े करने की क्रिया। कुदाल। खंती।

अवदाह—(पुं०) [अव√दह्+घञ्] गर्मी, उष्णता, जलन।

अवदीर्ण—[अव√दृ+क्त] टूटा हुआ, भग्न। पिघला हुआ। हड़बड़ाया हुआ। घटका हुआ।

अवदोह—(पुं०) [अव√दुह्+घञ्] दोहन, दुहना। दूध, पय।

अवद्य—(वि०) [√वद्+यत् न० त०] अधम, पापी। निन्द्य, गर्हित। त्याज्य। (न०) अपराध। दोष। पाप, दुष्टकर्म। कलंक। लज्जा।

अवद्योतन—(न०) [अव√द्युत्+ल्युट्] प्रकाश।

अवद्रंक—(पुं०) बाजार। मेला।

अवधातृ—(पुं०) [अव√धा+तृच्] वह व्यक्ति जो असली मालिक की अविद्यमानता में मकान आदि की निगरानी करे (केयरटेकर)।

अवधान—(न०) [अव√धा+ल्युट्) मनोयोग, ध्यान। किसी विषय में मन की एकाग्रता; 'शृणत जनाः अवधानात् क्रियामिमां कालिदासस्य' विक्र० १.२। चौकन्नापन। किसी व्यक्ति, वस्तु या कार्य की देखभाल करने या उस पर नजर रखने का कार्य।

अवधार—(पुं०) [अव√धृ+णिच्+घञ्] ठीक-ठीक निश्चय। सीमा, इयत्ता।

अवधारण—(न०) [अव√धृ+णिच्+ल्युट्] निश्चय करना। हद बाँधना। शब्दार्थ की सीमा बाँधना। (शब्द विशेष पर) जोर देना।

अवधारणा—(स्त्री०) [अव√धृ+णिच्+युच्] दे० 'अवधारण'। मन में किसी धारणा, कल्पना या विचार का उदय होना, बनना या स्थिर होना (कॉनसेप्शन)।

अवधि—(स्त्री०) [अव√धा+कि] सीमा, हद। पराकाष्ठा। निर्धारित समय, मियाद। नियुक्ति। किस्मत। पड़ोस। रन्ध्र। गढ़ा।

अव√धीर्—अवहेला करना, बेइज्जत करना।

अवधीरण—(न०) (अव√धीर्+णिच्+ल्युट्] अवज्ञापूर्वक वर्ताव करने की क्रिया।

अवधीरणा—(स्त्री०) [अव√धीर्+णिच्+युच्] बेइज्जती, असम्मान। हार।

अवधूक—(पुं०) अविवाहित पुरुष।

अवधूत—[अव√धू√क्त] हिलाया हुआ। खारिज किया हुआ, अस्वीकृत। घृणा किया हुआ। अपमानित किया हुआ, नीचा दिखलाया हुआ। (पुं०) त्यागी, संन्यासी।

अवधूनन—(न०) [अव√धू+ल्युट्] हिलाने की क्रिया। लहराने की क्रिया। घबड़ाहट। कँपकँपी।

अवध्य—(वि०) [न० त०] न मारने योग्य, मौत से बरी। पवित्र।

अवध्वंस—(पुं०) [प्रा० स०] त्याग, उत्सर्ग। चूर्ण। असम्मान, भर्त्सना। बुरकाने की क्रिया।

अवन—(न०) [√अव्+ल्युट्] रक्षण, बचाव। प्रसन्न करना। इच्छा, कामना। हर्ष। सन्तोष।

अवनत—[अव√नम्+क्त] झुका हुआ। गिरा हुआ। पिछड़ा हुआ। हीन। अस्त होता हुआ। विनीत।

अवनति—(स्त्री०) [अव√नम्+क्तिन्] झुकाव। अस्त होने की क्रिया। प्रणाम, (धनुष की तरह) झुकने की क्रिया। नम्रता, शील।

अवनद्ध—[अव√नह्+क्त] बना हुआ। गड़ा हुआ। बंधा हुआ। जुड़ा हुआ, (न०) ढोल, मृदंग।

अव√नम्—झुकना। प्रणाम करना। नीचे लटकना।

अवनम्र—(वि०) [प्रा० स०] झुका हुआ, नवा हुआ; 'पर्याप्तपुष्पस्तवकावनम्रा' कु० ३.५४।

अवनय, अवनाय—(पुं०) [अव√नी+अच्] [अव√नी+घञ्] नीचे को ले जाने की क्रिया। नीचे उतारने की क्रिया। अधः-पात करने की क्रिया।

अव√नह्—बाँधना। आवृत करना।

अवनाट—(वि०) [नतं नासिकायाः इत्यर्थे अव+नाटच् ततः अस्त्यर्थे अच्] चपटी नाक वाला।

अवनाम—(पुं०) [अव√नम्+घञ्] झुकाव। पैरों पर पड़ने की क्रिया।

अवनाह—(पुं०) [अव√नह्+घञ्] बाँधना। लपेटना। पहिनना।

अवनि, अवनी—(स्त्री०) [√अव्+अनि, पक्षे ङीप्] भूमि, पृथ्वी। नदी।—ईश—(अवनीश)— ईश्वर— (अवनीश्वर)—नाथ,—पति,—पाल–(पुं०) राजा, नरेश, भूपाल।—चर–(वि०) पृथिवी पर भ्रमण करने वाला। आवारा।—तल–(न०)जमीन की सतह, धरातल।—मण्डल–(न०) भूगोल।—रुह–(पुं०) वृक्ष, पेड़।

अवनेजन—(न०) [अव√निज्+ल्युट्] प्रक्षालन, मार्जन; 'न कुर्याद् गुरुपुत्रस्य पाद-योश्चावनेजनम्।' श्राद्ध की वेदी पर बिछे हुए कुशों पर जल सींचने का संस्कार। पाद्य, पैर धोने के लिये जल। धोने के लिये जल।

अवन्ति, अवन्ती-(स्त्री०) [√अव्+झि—अन्त पक्षे ङीप्] उज्जयिनी या उज्जैन का नामक। एक नदी का नाम। (पुं० और बहु-वचन में) मालवा प्रदेश तथा उस देश के निवासियों का नाम।

अवन्तिका—(स्त्री०) [अवन्तिषु कायति प्रकाशते]। उज्जैन। उज्जैन की भाषा।

अवन्ध्य—(वि०) [न० त०] उर्वर, उपजाऊ, जो ऊसर न हो।

अवपतन—(न०) [अव√पत्+ल्युट्] नीचे गिरने की क्रिया। उतरने की क्रिया।

अवपाक—(वि०) [अवकृष्टः पाको यस्य ब० स०] बुरी तरह पकाया हुआ।

अवपात—(पुं०) [अव√पत्+घञ्] नीचे गिरने की क्रिया, अधःपात। उतार। छिद्र। गढ़ा। विशेष कर वह गढ़ा जो हाथियों को पकड़ने के लिये खोदा जाता है।

अवपातन—(न०) [अव√पत्+णिच्+ल्युट्] ठोकर देकर गिराने की क्रिया, ठुक-राना। नीचे गिराना या फेंकना।

अवपात्र—(वि०) [अवरं भोजनायोग्यं पात्रं यस्य ब० स०] म्लेच्छ, किसी पात्र में जिसके खाने से वह पात्र दूसरों के उपयोग में आने योग्य न रह जाय।

अवपात्रित—(वि०) [अवपात्र+णिच्(ना० धा०)+क्त] अवपात्र किया हुआ। जातिभ्रष्ट, जाति-बिरादरी से खारिज।

अवपाशित—(वि०) [अवपाशः समन्तात् पाशः जातः अस्य इत्यर्थे तारकादित्वात् अव-पाश+इतच्] सब ओर से जाल में फँसा हुआ।

अवपीड—(पुं०) [अव√पीड्+णिच्+घञ्] दबाव। एक प्रकार की दवाई जिसे सूँघने से छींकें आती हैं।

अवपीडन—(न०) [अव√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाने की क्रिया। छींक लाने वाली वस्तु।

अवपीडना—(स्त्री०) [अव√पीड्+णिच्+युच्] उत्पात। खण्डन, भञ्जन।

अव√बुध्—जागना। पहचानना। जानना।

अवबोध—(पुं०) [अव√बुध्+घञ्] जागना, जाग उठना; यौ तु स्वप्नाववोधौ तौ भूतानाम्प्रलयोदयौ कु. २.८। ज्ञान। सूक्ष्म विवेचना। विवेक। उपदेश। जताना।

अवबोधक—(न०) [अव√बुध्+ण्वुल्] समझाने या जगाने वाला। (पुं०) सूर्य। भाट, वंदीजन। शिक्षक।

अवबोधन—[अव√बुध्+ल्युट्] बताना, जताना । ज्ञान । जगाना ।

अवभङ्ग—(पुं०) [अव√भञ्ज्+घञ्] नीचा दिखलाने की क्रिया । जीतने की क्रिया, परास्त करना ।

अवभान—(न०) फरेब ।

अवभास—(पुं०) [अव√भास्+घञ्] चमक-दमक, प्रकाश । ज्ञान, अवबोध । दर्शन, प्राकट्य । दैवज्ञान । स्थान । मिथ्या ज्ञान, भ्रम ।

अवभासक—(वि०) [अव√भास्+ण्वुल्] प्रकाशक । तेजोमय । (न०) परमात्मा, परब्रह्म ।

अवभुग्न—[अव√भुज्+क्त] झुका हुआ, मुड़ा हुआ, टेढ़ा ।

अवभृथ—(पुं०) [अव√भृ+क्थन्] यज्ञान्त स्नान । मार्जन के लिये जल । यज्ञानुष्ठान विशेष, जो प्रधान यज्ञ की त्रुटियों की शान्ति के अर्थ किया जाता है ।—**स्नान**-(न०) यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद किया जाने वाला स्नान ।

अवभ्र—(पुं०) [?] बलपूर्वक या चुरा छिपा कर (किसी मनुष्य का) हरण, भगा ले जाने की क्रिया ।

अवभ्रट—(वि०) [नासिकाया नतम् इत्यर्थे अव भ्रटच् ततः अस्त्यर्थे अच्] चपटी नाक वाला ।

अवम—(वि०) [√अव्+अमच्] पापी । तिरस्करणीय । कमीना, अपकृष्ट । अगला । परमघनिष्ठ । सम्पूर्ण । अन्तिम (उम्र में) सब से छोटा । पाप । चांद्र और सौर दिन का अंतर । (पुं०) पितरों का एक वर्ग ।—**तिथि**-(स्त्री०) वह तिथि जिसका क्षय हो गया हो ।

अवमत—[अव√मन्+क्त] असम्मानित किया हुआ, अवमानित । निन्दित ।—**अङ्कुश** (**अवमताङ्कुश**) (पुं०) मदमत्त हाथी जो अङ्कुश को कुछ भी न माने; 'अन्वेतुकामोऽवमताङ्कुशग्रहः' शि० १२.१६ ।

अवमति—(स्त्री०) [अव√मन्+क्तिन्] अवमानना, अवज्ञा, अवहेलना । घृणा । विरक्ति ।

अवमर्द—(पुं०) [अव√मृद्+घञ्] कुचलन । बर्बादी, नाश । जुल्म, अत्याचार ।

अवमर्श—(पुं०) [अव√मृश्+घञ्] स्पर्श । संसर्ग ।

अवमर्ष—(पुं०) [अव√मृष्+घञ्]विचार । अन्वेषण, खोज । किसी नाटक के ५ प्रधान भागों या सन्धियों (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, अवमर्ष और निर्वहण) में से एक, विमर्श । —'यत्र मुख्यफलोपाय उद्भिन्नो गर्भतोऽधिकः । शापाद्यैः सान्तरायश्च सोऽवमर्ष इति स्मृतः ।।' —साहित्यदर्पण ३६६ । आक्रमण करने की क्रिया ।

अवमर्षण—(न०) [अव√मृष्+ल्युट्] असहिष्णुता, असहनशीलता । मिटाने की क्रिया । स्मृति से नष्ट कर देने की क्रिया ।

अवमान—(पुं०) [अव√मन् +घञ्] असम्मान, तिरस्कार, अवहेलना ।

अवमानन—(न०)—**अवमानना**—(स्त्री०) [अव√मन्+णिच्+ल्युट्] [अव√मन् +णिच्+युच्] असम्मान, बेइज्जती ।

अवमानिन्—(वि०) [अव√मन्+णिच्+णिनि]अपमान या तिरस्कार करने वाला; 'अयि आत्मगुणावमानिनि' श० ३ ।

अवमार्जन—(न०) [अव√मृज्+ल्युट्] धोना, प्रक्षालन करना । पोंछना । साफ करना ।

अव√मुच्—खुला छोड़ देना, खोल देना (घोड़े आदि को) । उतार देना (पोशाक आदि ।

अवमूर्धन्—(वि०) [अवनतः मूर्धा यस्य ब० स०]सिर झुकाये हुये ।—**शय**-(वि०) औंधा मुँह कर लेटा हुआ ।

अव√मृज्—घिसना, रगड़ना ।

अव√मृद्—पीसना, मल डालना ।

अवमोचन—(न०) [अव√मुच्+ल्युट्] मुक्तकरण, रिहा करने की क्रिया । स्वतंत्र करने की क्रिया । छोड़ देने की क्रिया । ढीला कर देने की क्रिया ।

अवयव—(पुं०) [अव√यु+अच्] शरीर का कोई अंग । अंश, भाग, हिस्सा । न्याय-शास्त्रानुसार वाक्य का एक अंश, ऐसे अंश पाँच माने गये हैं [यथा प्रतिज्ञा । हेतु । उदाहरण । उपनय और निगमन ।] शरीर । —**रूपक**-(न०) एक तरह का रूपक जिसमें अंगों के गुणों का ही सारूप्य दिखलाया जाता है ।

अवयवशः—(अव्य०) [अवयव+शस्] हिस्सा-हिस्सा करके, अलग-अलग ।

अवयविन्—(वि०) [अवयव+इनि] जिसके अवयव या अंग या अंश हो । (पुं०) कई अवयवों—अंगों से मिलकर बनी हुई वस्तु । देह । उपनय, निगमन आदि का संयोग (न्या०) ।

अवर—(त्रि०) [अव√रा+क्त] (अवस्था या उम्र में) छोटा । (समय में) पिछला, बाद का, पिछाड़ी का । एक के बाद दूसरा । अपेक्षाकृत निचला, अपकृष्ट, हीन ; 'दूरेणह्यवरंकर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय' भग २.४९ । गया-बीता, अधमाधम । (प्रथम का उल्टा) अन्तिम । सब से कम (परिमाण में) । पाश्चात्त्य । (न०) हाथी की जाँघ का पिछला भाग ।—**अर्ध** (अवरार्ध)-(पं०) कम से कम भाग, कम से कम । दो समान भागों में से पिछला आधा भाग । शरीर का पिछला भाग ।—**अवर** (अवरावर)-(पुं०) सब से नीच, सब से अपकृष्ट ।—**आगार** (अवरागार) (न०) संसद् या विधान-मंडल का निम्न-सदन—लोकसभा, प्रतिनिधिसभा, विधानसभा आदि (लोअर हाउस) ।—**उक्त** (अवरोक्त)-(वि०) जिसका अंत में उल्लेख हुआ हो ।—**ज**-(वि०) (उम्र में) अपेक्षाकृत छोटा । (पुं०) छोटा भाई ।—**जा**-(स्त्री०) छोटी बहन ।—**वर्ण**-(वि०) हीन जाति वाला । (पुं०) शूद्र । चतुर्थ या अन्तिम वर्ण ।—**वर्णक**,—**वर्णज**- (पं०) शूद्र ।—**व्रत**—(पुं०) सूर्य ।—**शैल**- (पुं०) पश्चिम का पहाड़ जिसके पीछे सूर्य अस्त होता है, अस्ताचल ।

अवरतः—(अव्य०) [अवर+तसिल्] पीछे, पीछे की ओर, पीछे से ।

अवरति—(स्त्री०) [अव√रम्+क्तिन्] ठहराव, विश्राम । निवृत्ति ।

अवरिका—(स्त्री०) धनिया ।

अवरीण—(वि०) [अवर+ख=ईन] गिरा हुआ, अधःपतित । घृणित । निन्द्य ।

अवरुग्ण—(वि०) [अव√रुज्+क्त] टूटा हुआ । फटा हुआ । रोगी, बीमार ।

अवरुद्ध—(वि०) [अव√रुध्+क्त] रुका या रोका हुआ । प्रच्छन्न । घिरा हुआ । बंद ।

अवरुद्धा—(स्त्री०) (अवरुद्ध+टाप्] रखेली ।

अवरुद्धि—(स्त्री०) (अव√रुध्+क्तिन्] रोक, थाम । घेरा । उपलब्धि, प्राप्ति ।

अवरूढ—(वि०) [अव√रुह्+क्त] उतरा हुआ, आरूढ का उलटा । उखड़ा हुआ ।

अवरूप—(वि०) [ब० स०] बदशक्ल, बदसूरत, कुरूप । जिसका पतन हो गया हो ।

अवरोचक—(पं०) [अव√रुच्+ण्वुल्] एक प्रकार का रोग जिसमें भूख जाती रहती है ।

अवरोध—(पुं०) [अव√रुध्+घञ्] रुकावट । समय । अन्तःपुर, जनानखाना । समष्टि-रूप से किसी राजा की रानियाँ । यथा—'अवरोधे महत्यपि'—रामायण । घेरा, हाता । बंदीगृह, कटघरा । लेखनी, कलम । चौकीदार । नीचे आना । किसी पौधे के मूल आदि से तंतुओं का निकलना ।

अवरोधक—(वि०) [अव√रुध्+ण्वुल्] रोकने वाला। घेरा डालने वाला। (पुं०) पहरे वाला, प्रहरी। (न०) प्रतिबन्ध। घेरा, हाता।
अवरोधन—(न०) [अव√रुध्+ल्युट्] घेरा। रुकावट। अड़चन। अन्तःपुर, जनानखाना। किसी चीज का भीतरी भाग।
अवरोधिक—(वि०) [अवरोध+ठन्—इक] वाधा डालने वाला। रुकावट डालने वाला। (पुं०) जनानी ड्योढ़ी का दरवान ; 'ययुस्तुरङ्गाधिरूढोऽवरोधिकाः' शि० १२.२०।
अवरोधिका—(स्त्री०) [अवरोधिक+टाप्] अन्तःपुरवासिनी महिला।
अवरोधिन्—(वि०) [अवरोध+इनि] अड़चन डालने वाला। रुकावट डालने वाला। घेरा डालने वाला।
अवरोप—(पुं०) [अव√रुह्+णिच्, पुक् +घञ्] किसी आरोप या अभियोग से मुक्त करना या होना (डिसचार्ज)। (दे०) 'अवरोपण'।
अवरोपण—(न०) [अव√रुह्+णिच्, पुक्+ल्युट्] उखाड़ डालने की क्रिया। नीचे उतारने की क्रिया। ले जाने की क्रिया। वञ्चित करने की क्रिया। घटाना।
अवरोह—(पुं०) [अव√रुह्+घञ्] उतार, ऊपर से नीचे आना। संगीत में स्वरों के ऊपर से नीचे आने का क्रम। अर्थालंकार का एक भेद। किसी बेल का वृक्ष की जड़ से फुनगी तक लिपटना। मूल या शाखा से तंतुओं का निकलना। [अपादाने घञ्] स्वर्ग।
अवरोहण—(न०) [अव√रुह्+ल्युट्] उतार, गिराव, पतन। चढ़ाव।
अवर्ण—(वि०) [न० व०] रंग-रहित। बुरा, कमीना। (पुं०) [न० त०] बदनामी, कलङ्क, धब्बा। आरोप, इलजाम।
अवलक्ष—(वि०) [अव√लक्ष्+घञ्] सफेद रंग। (वि०) [अस्य अस्तीत्यर्थे अवलक्ष+अच्] सफेद, उज्ज्वल, इसी अर्थ में 'वलक्ष' भी आता है।
अवलग्न—वि०) [अव√लग्+क्त] चिपटा हुआ, सटा हुआ। छूता हुआ। (पुं०) कमर, कटि। देह का मध्य भाग।
अवलम्ब—(पुं०) [अव√लम्ब् +घञ्] सहारा, आश्रय। छड़ी। परिशिष्ट। लंब (रेखा)।
अवलम्बन—(न०) [अव√लम्ब्+ल्युट्] सहारा लेना। अपनाना। अवलंब। छड़ी।
अवलिप्त—(वि०) [अव√लिप्+क्त] अभिमानी, क्रोधी। पोता हुआ। सना हुआ।
अवलीढ—(वि०)[अव√लिह्+क्त]खाया हुआ। चाटा हुआ। आस्वादित; 'नवयौवनावलीढावयवाः' दश०।
अवलीला—(स्त्री०) [अवरा लीला प्रा० स०]खेल कूद। अवहेला, तिरस्कार। आसानी।
अवलुञ्चन—(न०) [अव√लुञ्च्+ल्युट्] काट डालने की क्रिया। उखाड़ डालने की क्रिया। नोंच डालने की क्रिया। जड़ से उखाड़ डालने की क्रिया।
अवलुण्ठन—(न०) [अव√लुण्ठ्+ल्युट्] जमीन पर लुढ़कने या लोटने की क्रिया। लूट।
अव√लुप्—(किसी चीज पर) अचानक टूट पड़ना। खाना। लूटना।
अवलुम्पन—(न०) [अव√लुप्+ल्युट्, मुम्] (किसी पर) अचानक टूट पड़ना, झपट्टा मारना।
अवलेख—(पुं०) [अव√ लिख्+घञ्] तोड़ना। खरोचना। छीलना।
अवलेखा—(स्त्री०) [अव√ लिख्+अ, टाप्] रगड़ना। किसी व्यक्ति को सुसज्जित करने की क्रिया। चित्रकारी।
अवलेप—(पुं०) [अव√लिप्+घञ्] अभिमान, क्रोध। जबरदस्ती। बरजोरी आक्रमण अपमान; 'ददृशे पवनावलेपजं सृजती बाष्पमिवाञ्जनाविलम्' र० ८.३५। पोतने की क्रिया। आभूषण। ऐक्य, सङ्ग।

अवलेपन—(न०) [अव√लिप्+ल्युट्] पोतने की क्रिया । सानना । तेल । उबटन । ऐक्य, मेल । अभिमान ।

अवलेह—(पुं०) [अव√लिह्+घञ्] चाटने की क्रिया । (सोम जैसा) अर्क । चटनी । माजून ।

अवलेहन—(न०) [अव√लिह्+ल्युट्—अन] चाटना ।

अवलोक—(पुं०) [अव√ लोक्+घञ्] देखना । नजर, दृष्टि ।

अवलोकन—(न०) [अव√लोक्+ल्युट् [देखने की क्रिया । जाँच-पड़ताल, निरीक्षण । दृष्टि, नेत्र । चितवन, दृष्टिपात ।

वलोकित—(वि०) [अव√लोक्+क्त] खा हुआ । अनुसंधान किया हुआ । निरी-ाण किया हुआ । (न०) चितवन ।

वलोप—(पुं०) [अव√लुप्+घञ्] काट र अलग करना । नष्ट करना । दाँत ाटना । चूमना ।

वलोम—(वि०) [अवनद्धं लोम आनुकूल्यं स्य व० स०] जो किसी के अनुकूल हो । पयुक्त ।

ववरक—(पुं०) [अव√वृ+अप्+ततः ंज्ञायां वुन्] छिद्र, रन्ध्र । खिड़की ।

ववाद—[अव√वद्+घञ्] भर्त्सना । वेश्वास, भरोसा । अवहेलना, अपमान । मर्थन । बदनामी । आज्ञा ।

वव्रश्च—(पुं०) [अव√व्रश्च्+अच्] माची, चिपटी, किरच ।

वश—(वि०) [न० त०] स्वतंत्र, मुक्त । ो पालतू न हो । अवज्ञाकारी । स्वेच्छाचारी । ो किसी का वशवर्ती न हो । [नास्ति वशम् ायत्तं यस्य न० व०] असंयमी, इंद्रियदास । रतंत्र, बेबस, लाचार; 'कार्यते ह्यवशः र्म,' भग० ।

वशंगम—(पुं०) [वश√गम्+खच् न० ०]जो दूसरे के कहने में न हो । स्वेच्छाचारी ।

अवशातन—(न०) [प्रा० स०] नाशकरण, काट गिराने की क्रिया । मुरझाने की क्रिया, सूख जाने की क्रिया ।

अवशिष्ट—(वि०) [अव√शिष्+क्त] शेष, बाकी ।

अवशीन—(पुं०) बिच्छू ।

अवशेष—(पुं०) [अव√शिष्+घञ्] बचा हुआ, शेष, बाकी । समाप्ति ।

अवश्य—(वि०) [न० त०] जो वश में होने योग्य न हो । अशासनीय । अनिवार्य । आवश्यक ।—**पुत्र**-(पुं०) ऐसा पुत्र जिसको पढ़ाना या अपने वश में रखना सम्भव न हो ।

अवश्यम्—(अव्य) [अव√श्यै+डमु] सर्वथा, जरूर, निस्सन्देह, निश्चय करके ।—**भाविन्**-(वि०) जरूर होने वाला, जो टल न सके ।

अवश्या—(स्त्री०) [अव√श्यै+क] कुहरा । पाला, ओस ।

अवश्याय—(पुं०) [अव√श्यै+ण] कुहरा । ओस, पाला । तुषार । अभिमान, घमंड ।

अवश्रयण—(न०) [अव√श्रि+ल्युट्] किसी वस्तु को आग पर से उतारने की क्रिया ।

अवष्कयणी—(स्त्री०) [न० त०] बहुत दिनों के अंतर से बच्चा देने वाली गाय ।

अवष्टब्ध—[अव√स्तम्भ्+क्त] अव-लम्बित । घिरा हुआ । ऊपर लटका हुआ । समीपवर्ती । रुका हुआ । झुका हुआ । बँधा हुआ । गसा हुआ ।

अवष्टम्भ—(पुं०) [अव√स्तम्भ+घञ्] झुकने की क्रिया । सहारा । क्रोध । घमंड । खंभा । सुवर्ण । आरम्भ । ठहरने की क्रिया, रुक जाने की क्रिया । साहस । दृढ़ सङ्कल्प । लकवा । मूर्च्छा, अचेतना ।

अवष्टम्भन—(न०) [अव√स्तम्भ्+ल्युट्] सहारा लेने की क्रिया । सहारा देने की क्रिया । खंभा । जड़ीभूत करना । रुकना ।

अवष्टम्भमय—(वि०) [स्त्री० **अवष्टम्भ-मयी**] [अवष्टम्भ+मयट्] सुनहला, सोने का बना अथवा खंभे के बराबर लंबा ।

अवस—(पुं०) [√ अव्+असच्] राजा। सूर्य। आक। आहार। उपाहार। रक्षण।

अवसक्त—[अव√सञ्ज्+क्त] संलग्न। (न०) सम्पर्क।

अवसक्थिका—(स्त्री०) [अवबद्धे सक्थिनी यस्मात् ब० स० कप्] बैठने की एक मुद्रा जिसमें पीठ और घुटनों को बाँधते हैं। इस प्रकार बाँधने का कपड़ा। उंचन।

अवसज्जन—(न०) [अव√सज्ज्+ल्युट्—अन] आलिंगन। प्रेमालाप।

अवसण्डीन—(न०) [अव—सम्√डी+क्त] पक्षियों का गिरोह बाँध कर ऊपर से एक साथ नीचे की ओर उड़ते हुए आना।

अवसथ—(पुं०) [अव√सो+कथन्] घर। गाँव। पाठशाला, विद्यालय।

अवसथ्य—(पुं०) [अवसथ+यत्] विद्यालय, पाठशाला।

अवसन्न—[अव√सद्+क्त]सुस्त। उदास। अपना कार्य करने में असमर्थ। समाप्त। हारा हुआ (कानून)। नाशोन्मुख।

अवसर—(पुं०) [अव√सृ+अच्] मौका, समय। अवकाश। फुरसत। वर्ष। वृष्टि। उतार। निजी रूप से परामर्श लेने की क्रिया। एक अर्थालंकार।—**प्राप्त**-(वि०)नौकरी की अवधि या सेवाकाल समाप्त हो जाने पर कार्य से पृथक् होने वाला। जिसने नौकरी आदि से अवकाश ग्रहण कर लिया हो (रिटायर्ड)। —**वाद**-(पुं०) प्रत्येक सुअवसर से लाभ उठाने की प्रवृत्ति या नीति (अपारच्यूनिज्म)। —**वादिन्**-(वि०) जो किसी स्थिर नीति पर दृढ़ न रह कर प्रत्येक उपयुक्त अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न करे (अपॉरच्यूनिस्ट)।

अवसर्ग—(पुं०) [अव√सृज्+घञ्] ढीलापन, छुड़ाव। स्वेच्छानुसार कार्य करने की अनुमति देने की क्रिया। स्वतंत्रता।

अवसर्प—(पुं०) [गव√सृप्+ अच्] जासूस, भेदिया, एलची।

अवसर्पण—(न०) [अव√सृप्+ल्युट्] नीचे उतरने की क्रिया। अधोगमन।

अवसाद—(पुं०) [अव√सद्+घञ्] सुस्ती, शिथिलता। उदासी; 'विपदेऽपि तावदवसादकरो' कि० १८.२३। नाश, हानि। समाप्ति। थकावट। हार।

अवसादक—(वि०) [अव√सद्+णिच्+ण्वुल्] मूर्च्छित करने वाला। असफल करने वाला। उदास करने वाला। थकाने वाला।

अवसादन—(न०) [अव√सद्+णिच्+ल्युट्] अवनति। नाश। कार्य करने की अक्षमता। उत्पीड़न। समाप्ति। मरहम-पट्टी करना।

अवसान—(न०) [अव√सो+ल्युट्] रुकावट। समाप्ति। उपसंहार। मृत्यु। रोग। सीमा। विराम, ठहराव। विश्रामस्थान, आवासस्थान।

अवसाय—(पुं०) [अव√सो+घञ्] अन्त। शेष। सम्पूर्णता। सङ्कल्प। निर्णय।

अवसित—(वि०)[अव√सो+क्त] समाप्त। पूर्ण। ज्ञात, जाना हुआ। निश्चित किया हुआ। एकत्र किया हुआ, जमा किया हुआ। नत्थी किया हुआ। बंधा हुआ।

अवसेक—(पुं०) [अव√सिच्+घञ्] छिड़काव, सिंचन। एक नेत्र-रोग।

अवसेचन—(न०) [अव√सिच्+ल्युट्] सींचने की क्रिया, पानी देने की क्रिया। रोगी के शरीर से पसीना निकालने की क्रिया। रक्त निकालने की क्रिया।

अवस्कन्द, (पुं०) **अवस्कन्दन**—(न०) [अव√स्कन्द्+घञ्] [अव√स्कन्द्+ल्युट्] आक्रमण, हमला। ऊपर से नीचे उतरने की क्रिया। शिविर, छावनी।

अवस्कन्दिन्—(वि०) [अव√स्कन्द्+णिनि] आक्रमण या बलात्कार करने वाला। गुंडा। उतरने वाला।

अवस्कर—(पुं०) (अव√कृ+अप्, सुट्] विष्ठा। गुह्याङ्ग। (यथा लिङ्ग, गुदा, योनि) बुहारन, बटोरन।

अवस्तरण——(न०) [अव√स्तृ+ल्युट्] बिछौना ।

अवस्तात्——(अव्य०) [अवरस्मिन् अवरस्मात् अवरम् इत्यर्थे अवर+अस्ताति, अव् आदेशः] नीचे, नीचे से, नीचे की ओर । तले ।

अवस्तार——(पुं०) [अव√स्तृ+घञ्] पर्दा । कनात । चटाई ।

अवस्तु——(न०) [न० त०] तुच्छ वस्तु । असलियत नहीं, सारहीनता ।

अवस्था——(स्त्री०) [अव√स्था+अङ] दशा, हालत । समय, काल । स्थिति । आयु । उम्र ।——**चतुष्टय**–(न०) मनुष्य जीवन की दशायें——[यथा——बाल्य, कौमार, यौवन, वार्धक्य ।]——**त्रय**–(न०) वेदान्तदर्शन के अनुसार मनुष्य की तीन दशाएँ [यथा——जागरित, स्वप्न, सुषुप्ति ।]——**दशक**–(न०) प्रेमी की दस अवस्थाएँ——[यथा——अभिलाष, चिंता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, संलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता, उन्माद ।]——**द्वय**–(न०) जीवन की दो दशाएँ (यथा——सुख और दुःख) ।——**षट्क**–(न०) यास्क के मत से कर्म की ६ अवस्थाएँ– [जन्म, स्थिति, वृद्धि, विपरिणमन (बदलना), अपक्षय, नाश ।]

अवस्थान——(न०) [अव√स्था+ल्युट्] ठहरना । रहना । रहने, ठहरने का स्थान । घर । मौका । ठहरने की अवधि । परिस्थिति ।

अवस्थायिन्——(वि०) [अव√स्था+णिनि] ठहरने वाला । बसने वाला । रहने वाला ।

अवस्थित——[अव√स्था+क्त] रहा हुआ । ठहरा हुआ । दृढ़ । अवलम्बित ।

अवस्थिति——(स्त्री०) [अव√स्था+क्तिन्] दे० 'अवस्थान' ।

अवस्पन्दन——(न०) [अव√स्पन्द्+णिच्+ल्युट्–अन] मारना ।

अवस्यन्दन——(न०) [अव√स्यन्द्+ल्युट्] रिसना, चूना, टपकना ।

अवस्यु——(वि०) [अवः रक्षणं तदिच्छति क्यच् उन्] रक्षण या अनुग्रह की इच्छा करने वाला ।

अवस्रंसन——(न०) [अव√स्रंस्+ल्युट्] नीचे गिरने की क्रिया, अधःपतन ।

अवहति——(स्त्री०) [अव√हन्+क्तिन्] कूटना । कुचलना ।

अवहनन——(न०) [अव√हन्+ल्युट्] छिलका निकालने के लिये धानों के कूटने की क्रिया । फेफड़े । 'वपा वसावहननम्' ।——याज्ञवल्क्य । अवहननम् = फुफ्फुस :——मिताक्षरा ।

अवहरण——(न०) [अव√हृ+ल्युट्] हरण या स्थानान्तरित करना । फेंक देने की क्रिया । चोरी, लूट । सपुर्दगी । कुछ काल के लिये युद्ध कार्य बंद कर देने की क्रिया । अस्थायी सन्धि ।

अवहस्त——(पुं०) [अवरं हस्तस्य इति एक–दे० त०] हथेली की पीठ ।

अवहानि——(स्त्री०) [प्रा० स०] हानि, घाटा, नुकसान ।

अवहार——(पुं०) [अव√हृ+ण] चोर । शार्क मछली या सूँस । अस्थायी सन्धि । आमंत्रण, बुलावा । स्वधर्मत्याग । फिर मोल ले लेने की क्रिया ।

अवहारक——(पुं०) [अव√हृ+ण्वुल्] शार्क मछली या सूँस । (वि०) अवहरण करने वाला । युद्ध बंद करने वाला ।

अवहार्य——[अव√हृ+ण्यत्] ले जाने या स्थानान्तरित किये जाने योग्य । अर्थदण्डनीय । दण्डनीय । फिर मोल लेने योग्य ।

अवहालिका——(स्त्री०) [अव√हल्+ण्वुल्, टाप्, इत्व] दीवाल ।

अवहास——(पुं०) [अव√हस्+घञ्] मुसक्यान । हँसी-दिल्लगी, उपहास; 'यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि' भग० ११·४२ ।

अवहित——(वि०) [अव√ धा+क्त] एकाग्रचित्त । सावधान ।

अव (ब) हित्थ——(न०), **अव (ब) हित्था**——(स्त्री०) [न वहिः तिष्ठति इति√स्था+क पृषो०] मानसिक भाव का दुराव या गोपन ।

इसकी गणना 'संचारी' या व्यभिचारी भाव में है । आकारगुप्ति ।

अवहेल, (पुं०) **अवहेला**--(स्त्री०) [अव√हेल्+क (घञर्थे)] [अव√हेल्+अ, टाप्] अवज्ञा, अपमान, तिरस्कार ।

अवहेलन, (न०) **अवहेलना**--(स्त्री०) [अव√हेल्+ल्युट्] [अव√हेल्+युच्] दे० 'अवहेल' ।

अवाक्--(अव्य०) [अव√अञ्च्+क्विन्] नीचे की ओर । दक्षिण की ओर ।--**ज्ञान**,-(न०)अपमान ।--**भव**-(वि०)दक्षिणी ।--**मुख**-(वि०) [स्त्री०--**मुखी**] नीचे की ओर देखते हुए । सिर के बल ।--**शिरस्**-(वि०) नीचे की ओर सिर लटकाये हुये ।

अवाक्ष--(वि०) [अवनतानि अक्षाणि यस्य ब० स०] देख-भाल करने वाला, अभिभावक ।

अवाग्र--(वि०) [अवमतम् अग्रम् यस्य ब० स०] झुका हुआ, प्रणाम करता हुआ ।

अवाच्--(वि०) [नास्ति वाक् यस्य न० ब०] गूंगा, मूक । (न०) ब्रह्म । (वि०) [अव√अञ्च्+क्विन्] नीचे की ओर झुका हुआ । अपेक्षाकृत नीचा । सिर के बल । दक्षिणी ।

अवाची--[अवाच्+ङीप्] दक्षिण दिशा । नीचे का लोक ।

अवाचीन--(वि०) [अवाच्+ख--ईन] अधोमुख । अधोगत । दक्षिणी ।

अवाच्य--(वि०) [√वच्+ण्यत्, न० त०] जो कहने योग्य न हो । बुरा । जो ठीक या स्पष्ट न हो । जो शब्दों द्वारा प्रकट न किया जा सके; 'अवाच्यं वदतो जिह्वा कथं न पतिता तव' वा ।--**देश**, (पुं०) भग, योनि ।

अवाञ्चित--(वि०) [अव√अञ्च्+क्त]झुका हुआ, नीचा ।

अवान--(वि०) [अव√अन्+अच्] सूखा हुआ ।

अवान्तर--(वि०) [अत्या० स०] मध्यवर्ती । अन्तर्गत, शामिल । गौण । फालतू ।

अवापित--(वि०) [√वप्+ णिच्+क्त, न० त०] न बोया हुआ ।

अवाप्ति--(स्त्री०) [अव√आप्+क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि ।

अवाप्य--[अव√आप्+ण्यत्] प्राप्त करने योग्य ।

अवार--(पुं० न०) [न वार्यते जलेन इति विग्रहे√वृ+ घञ्, न० त०] समीप का नदीतट, निकटवर्ती नदीतट । इस ओर ।--**पार**-(पुं०) समुद्र ।--**पारीण**- (वि०) [अवारपार+ख--ईन] समुद्र का या समुद्र से सम्बन्ध रखने वाला । नदी पार करने वाला ।

अवारीण--(वि०) [अवार+ख--ईन] नदी पार करने वाला ।

अवावट--(पुं०) किसी स्त्री का वह पुत्र जो उस स्त्री की जाति के किसी पुरुष के (पति को छोड़) वीर्य से उत्पन्न हुआ हो । द्वितीयेन तु यः पित्रा सवर्णायां प्रजायते । "अवावट" इति ख्यातः शूद्रधर्मा स जातितः ।।

अवावन्--(पुं०) [√ओण्+ङ्वनिप्] चोर, चुराकर ले जाने वाला ।

अवासस्--(वि०) [नास्ति वासो यस्य न० ब०] नंगा, जो कपड़े पहिने हुए न हो । (पुं०) दिगंबर जैन ।

अवास्तव--(वि०) [स्त्री०--**अवास्तवी**]--[न० त०] जो असली न हो । निराधार । अयौक्तिक ।

अवि--(पुं०) [√अव+इन्] स्वामी । मेष । बकरा । आक । सूर्य । पर्वत । वायु । कंबल । दीवाल । चूहा । (स्त्री०) भेड़ । रजस्वला स्त्री ।--**दुग्ध**--(न०) भेड़ी का दूध ।--**पट** (पुं०) भेड़ी का चाम । ऊनी वस्त्र ।--**पाल**-(पुं०) गड़ेरिया ।--**स्थल**-(न०) भेड़ों की जगह । एक नगर का नाम । "अविस्थलं वृकस्थलं माकन्दीं वारणावतम्"--महाभारत ।

अविक--(पुं०) [अवि+कन्] भेड़ा, (न०) हीरा ।

अविकट--(पुं०) [अवीनां संघातः इत्यर्थे अवि+कटच्] भेड़ों का गिरोह ।--**उरण**-(**अविकटोरण**) (पुं०) एक प्रकार का राजकर जिसमें भेड़ें दी जाती हैं ।

अविका—(स्त्री०) [अविक+टाप्] भेड़ी।
अविकत्थ—(वि०) [न० ब०] जो शेखी न मारता हो, जो अभिमान न करता हो।
अविकत्थन—(वि० [न० ब०] जो घमंडी न हो, जो अकड़बाज न हो।
अविकल—(वि०) [न० त०] समूचा, पूरा, सब, ज्यों का त्यों। व्यवस्थित। गड़बड़ नहीं। बे-चैन नहीं।
अविकल्प—(वि०) [न० ब०] विकल्प-रहित। निश्चित। अपरिवर्तनशील। (पुं०) [न० त०] सन्देह का अभाव।
अविकार—(वि०) [न० ब०] जिसमें विकार न हो, जो अपरिवर्तनशील हो। (पुं०) [न० त०] विकार का अभाव, अपरिवर्तनशीलता।
अविकृति—(स्त्री०) [न० त०] परिवर्तन का अभाव, विकार का अभाव। (सांख्य दर्शन में) प्रकृति जो इस संसार का कारण मानी जाती है; "मूलप्रकृतिरविकृतिः"।
अविक्रम—(वि०) [न० ब०] शक्तिहीन, निर्बल। (पुं०) [न० त०] भीरुता, कायरता।
अविक्रिय—(वि०) [नास्ति विक्रिया यस्मिन् न० ब०] अविकारी। (न०) ब्रह्म।
अविक्षत—(वि०) [न० त०] जिसकी क्षति न हुई हो। जो कम नहीं हुआ, समूचा।
अविगीत—(वि०) [न० त०] अनिन्दित।
अविगुण—(वि०) [न० त०] उपयुक्त।
अविग्न—(वि०) [√विज्+क्त, न० त०] फलदार वृक्ष।
अविग्रह—(वि०) [न० ब०] शरीर-रहित। (पुं०) (व्याकरण का) नित्य समास। परमात्मा।
अविघात—(वि०) [न० ब०] बाधारहित, बिना अड़चन का।
अविघ्न—(वि०) [न० ब०] बिना विघ्न-बाधा का। (न०) विघ्नबाधा का अभाव (यह शब्द नपुंसक है, हालाँ कि "विघ्न" पुँल्लिङ्ग है) "साधयाम्यहमविघ्नमस्तु ते"—रघुवंश। अविघ्न मस्तु ते स्थेयाः पितेव धुरि पुत्रिणां।—रघुवंश।
अविचार—(वि०) [न० ब०] विचार-शून्य, अविवेकी। (पुं०) [न० त०] अविवेक, ना-समझी। अन्याय, अनीति।
अविचारित—(वि०) [न० त०] बिना विचारा हुआ, जिसके विषय में विचार न किया गया हो।—**निर्णय** (पुं०) पक्षपात, पक्षपातपूर्ण सम्मति।
अविचारिन्—(वि०) [विचार+इनि, न० त०] उचित अनुचित का विचार न रखने वाला। लापरवाह, असावधान।
अविज्ञातृ—(वि०) [वि√ज्ञा+तृच्, न० त०] न जानने वाला, अज्ञ। (पुं०) परमात्मा।
अविडीन—(न०) [वि√डी+क्त, न० त०] पक्षियों की सीधी उड़ान।
अवितथ—(वि०) [न० त०] झूठा नहीं, सच्चा; 'अवितथमाह प्रियंवदा' श० ३। कार्य में परिणत किया हुआ, फलरहित नहीं। (न०) [न० त०] सचाई। (अव्य०) झुठाई से नहीं, सचाई के अनुसार।
अवित्यज—(पुं० न०) [वि√त्यज्+क (बा०) न० त०] पारा, पारद।
अविदूर—(वि०) [न० त०] दूर नहीं, समीप, निकट, पास। (न०) निकटता, सामीप्य। (अव्य०) (किसी स्थान से) दूर नहीं, (किसी स्थान के) निकट।
अविदूस, अविमरीस, अविसोढ—(न०) [अवि+दूसच्, मरीसच्, सोढच्] भेड़ी का दूध।
अविद्य—(वि०) [नास्ति विद्या यस्य न०-ब०] अशिक्षित, अपढ़, मूर्ख।
अविद्या—(स्त्री०) [√विद्+क्यप्, न० त०] अज्ञानता, मूर्खता, शिक्षा का अभाव। आध्यात्मिक अज्ञान। माया।—**मय** (वि०) [अविद्या+मयट्] अविद्या से पूर्ण, महा-अज्ञानी।
अविधवा—(स्त्री०) [न० त०] जो विधवा न हो, स्त्री जिसका पति जीवित हो।

अविघा--(अव्य०) [?] सम्बोधनात्मक होने पर "सहायता करो, सहायता करो" कहने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। [न० त०] प्रकार का अभाव ।

अविधेय--(वि०) [न० त०] जो अपने मान का या काबू का न हो। न करने योग्य। प्रतिकूल ।

अविनय--(वि०) [न० ब०] विनयहीन, धृष्ट, उद्दण्ड । (पुं०) विनय का अभाव, धृष्टता, ढिठाई, उद्दण्डता; 'अयमाचरत्यविनयं मुग्धासु तपस्विकन्यासु' श० १.२५ अपराध, जुर्म, दोष । अभिमान, अकड़ ।

अविनाभाव--(पुं०) [विना ऋते भावः स्थितिः न] अवियोग, अविछोह। ऐसा सम्बन्ध जो कभी छूट न सके (जैसे आग और धुएँ का)। सम्बन्ध, लगाव ।

अविनीत--(वि० [न० त०] जो नम्र न हो। दुर्दान्त । उद्दण्ड, गँवार ।

अविन्धन--(पुं०) वाडवाग्नि । बिजली ।

अविपट--(पुं०) [अवि+पटच्] भेड़ों का विस्तार ।

अविभक्त--(वि०) [न० त०] अविभाजित, सम्मिलित । अभङ्ग, समूचा ।

अविभाग--(वि०) [न० ब०] जो बँटा हुआ न हो, अविभक्त। (पुं०) [न० त०] विभाग या खंड का अभाव ।

अविभाज्य--(वि०) [न० त०] जो बँट न सके। (न०) वे चीजें जो बटवारे के समय बाँटी नहीं जातीं। यथा--'वस्त्रं पात्रमलङ्कारं कृतान्नमुदकं स्त्रियः। योगक्षेमं प्रचारं च न विभाज्यं प्रचक्षते ॥'--मनु अ० ९ श्लो० २१९ ।

अविमुक्त (न०) [वि√मुच्+क्त, न० त०] (पंचक्रोशी सहित) काशी। (वि०) अमुक्त, बद्ध ।

अविरत--(वि०) [न० त०] निरन्तर, विराम शून्य 'मन्दोऽप्यविरतोद्योगः सदैव विजयी भवेत्' नीतिवचन । अनिवृत्त, लगा हुआ ।

अविरति--(वि०) [न० ब०] निरन्तर, सतत। (स्त्री०) [न० त०] सातत्य, निरन्तरता । असंयतता ।

अविरल--(वि०) [न० त०] घना, सघन। संसक्त । अव्यवहित । स्थूल, मोटा । (अव्य०) ध्यान से । निरन्तरता से ।

अविरोध--(पुं०) [न० त०] विरोध का अभाव, अनुकूलता । सुसङ्गति ।

अविलम्ब--(वि०) [न० ब०] विलंब या देर से रहित । (पुं०) [न० त०] विलम्ब का अभाव, शीघ्रता । (अव्य०)शीघ्रता से ।

अविलम्बित--(वि०) [न० त०] विलम्ब से रहित, शीघ्र । (अव्य०) शीघ्रता से ।

अविला--(स्त्री०) [√अव्+इलच्] भेड़ ।

अविवक्षित--(वि०) [√वच्+सन्+क्त, न० त०] जिसके विषय में इरादा न किया गया हो या जो अपना उद्दिष्ट न हो । जो बोलने या कहे जाने को न हो ।

अविविक्त--(वि०) [न० त०] जो भली भाँति विचारा न गया हो, अविचारित । भेदरहित ।

अविवेक--(वि०) [न० न०] अविचारी, नादान, विचारहीन । (पुं०) विचार का अभाव, नादानी, अज्ञान । जल्दबाजी, उतावलापन ।

अविशङ्क--(वि०) [न० त०]शंकारहित । निर्भय, निडर (अव्य०) विना सन्देह या सङ्कोच के ।

अविशङ्का--(स्त्री०) [न० त०] भय का अभाव । सन्देह का अभाव । विश्वास, भरोसा ।

अविशङ्कित--(वि०) [न० त०] निःशङ्क। निडर । निस्संदेह ।

अवशेष--(वि०) [न० त०] विना किसी अन्तर या फर्क का, समान, बराबर, सदृश । (पुं०) [न० त०] अन्तर या भेद का अभाव,

समानता, सादृश्य । (न०) सूक्ष्म भूत (सांख्य) ।—सम-(०पुं) जाति के चौबीस भेदों में से एक (न्या०) ।
अविष—(वि०) [न० त०] विषहीन, जो जहरीला न हो। (पुं०) [√ अव्+टिषच्] समुद्र । राजा । (वि०) रक्षक ।
अविषी—(स्त्री०) [√अव्+टिषच्, ङीप्] नदी । पृथिवी । स्वर्ग ।
अविषय—(वि०) [न० व०] अगोचर । अप्रतिपाद्य, अनिर्वचनीय । विषयशून्य, (पुं०) [न० त०] अनुपस्थिति, अविद्यमानता । परे या पहुँच के बाहर होना ।
अवी—(स्त्री०) [अवति आत्मानं लज्जया इत्यर्थे√अव+ई] रजस्वला स्त्री । वनलथी ।
अवीचि—(वि०) [न० व०] लहरों से हित । (पुं०) नरक विशेष ।
अवीर—(वि०) [न० त०] जो वीर न हो, कायर । [न० व०] जिसके कोई पुत्र न हो ।
अवीरा—(स्त्री०) [न० व०, टाप्] वह स्त्री जिसके न कोई पुत्र हो और न पति ही हो ।
अवृत्ति—(वि०) [न० त०] जिसका अस्तित्व न हो, जो हो ही न । जिसकी कोई जीविका न हो । (स्त्री०) [न० त०] वृत्ति का अभाव, जीविका का कोई वसीला न होना । स्थिति का अभाव ।
अवृथा—(अव्य०) [न० त०] व्यर्थ नहीं, सफलतापूर्वक ।—**अर्थ** (**अवृथार्थ**)-(वि०) सफल ।
अवृष्टि—(स्त्री०) [न० त०] मेह का अभाव, अनावृष्टि, सूखा, अकाल ।
अवेक्षक—(वि०) [अव√ईक्ष्+ण्वुल्] अवेक्षण या निरीक्षण करने वाला ।
अवेक्षण—(न०) [अव√ईक्ष्+ल्युट्] किसी ओर देखना । पहरा देना, रखवाली करना । ध्यान, खबरदारी ।
अवेक्षणीय—[अव√ईक्ष्+अनीयर्] देखने योग्य । निरीक्षण के योग्य । जाँच के योग्य, परीक्षा के योग्य ।
अवेक्षा—(स्त्री०) [अव√ईक्ष्+अ, टाप्] दे० 'अवेक्षण' ।
अवेद्य—(वि०) [√विद्+ण्यत्, न० त०] जो जानने योग्य नहीं, योग्य । जो प्राप्त न हो सके । । (पुं०) बछड़ा ।
अवेल—(वि०) [नास्ति वेला यस्य न० व०] असीम, जिसकी सीमा न हो । कुसमय का । (पुं०) [√वेल्+घञ् न० त०] ज्ञान का दुराव ।
अवेला—(स्त्री०) [न० त०] प्रतिकूल समय
अवैध—(वि०) स्त्री०—**अवैधी**-[न० त०] अनियमित, नियम या आईन के विरुद्ध । शास्त्रविरुद्ध ।—**आचरण**—(**अवैधाचरण**) (न०) विधि या कानून के विरुद्ध किया जाने वाला व्यवहार या आचरण (इल्लीगल प्रैक्टिस) ।
अवैमत्य—(न०) [न० त०] ऐक्य, एकता ।
अवोक्षण—(न०) [अव√उक्ष्+ल्युट्] हाथ टेढ़ा कर पानी छिड़कना ।—'उत्तानेनैव हस्तेन प्रोक्षणं परिकीर्तितम् । न्यञ्चताभ्युक्षणं प्रोक्तं तिरश्चावोक्षणं स्मृतम् ॥'
अवोद—(पुं०) [अव√उन्द्+घञ् नि० नलोप] छिड़काव, नम करने की क्रिया ।
अव्य—(वि०) [अवि+यत् (भवार्थे)] भेड़ से उत्पन्न या भेड़ संबंधी ।
अव्यक्त—(वि०) [वि०√ अञ्ज्+क्त, न० त०] अस्पष्ट । जो प्रत्यक्ष न हो, अगोचर । अज्ञेय; 'अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयम्' भग० अचिन्त्य । अनुत्पन्न । (बीजगणित में) । अनवगत राशि (पुं०) विष्णु का नाम । शिव का नाम । कामदेव । प्रधान, प्रकृति । मूर्ख । (न०) (वेदान्त दर्शन में)। ब्रह्म । आध्यात्मिक अज्ञानता । (सांख्य) सर्वकारण । जीव । (अव्य०) अस्पष्टता से ।—**क्रिया**—(स्त्री०) बीजगणित की एक क्रिया ।—**पद**-(वि०) वह पद जो ताल्वादि प्रयत्नों से न बोला जा सके (जैसे-जीव जन्तुओं की बोली) ।—**राग**-(पुं०) थोड़ा लाल, गुलाबी ।—**राशि**-

(बीजगणित में) वह राशि जिसका मान निश्चित न हो।—लक्षण,—व्यक्त- (पुं०) शिव की उपाधि ।

अव्यग्र—(वि०) [न० त०] जो घबड़ाया हुआ न हो। शान्त। दृढ़। जो किसी व्यापार में संलग्न न हो ।

अव्यङ्ग—(वि०) [न० त०] जो टेढ़ा-मेढ़ा न हो, सीधा। जिसमें कुछ त्रुटि या कमी न हो, भली भाँति निर्मित । सम्पूर्ण ।

अव्यञ्जन—(वि०)[न० त०] चिह्न-रहित। अस्पष्ट। (पुं०) ऐसा पशु जिसकी उम्र के विचार से सींग होने चाहिये, किन्तु सींग हों न ।

अव्यथ—(वि०) [नास्ति व्यथा यस्य न० ब०] पीड़ा से मुक्त (पुं०) [न व्यथते (पद्भ्यां न चलति) इति√व्यथ्+अच्, न० त०] सर्प, साँप ।

अव्यथिन्—(पुं०) [बहुचलनेऽपि न व्यथते इति√व्यथ्+इनि न० त०] घोड़ा ।

अव्यथिष—(पुं०) [√व्यथ् +टिषच्, न० त०] सूर्य । समुद्र ।

अव्यथिषी—(स्त्री०) [अव्यथिष+ङीप्] पृथ्वी । अर्धरात्रि ।

अव्यभिचार—(पुं०) [न० त०] अविच्छेद, अविछोह, अपार्थक्य; 'अन्योन्यस्याव्यभिचारो भवेदामरणान्तिक।' वफादारी, नमक-हलाली।

अव्यभिचारिन्—(वि०) [न० त०] अनुकूल। सब प्रकार से सत्य। धर्मात्मा, पवित्र। स्थायी । वफादार ।

अव्यय—(वि०) [वि०√इण्+अच्, न० ब०] अपरिवर्तनशील, सदा एक रस रहने वाला। जो व्यय न किया गया हो। मितव्ययी या कंजूस। अक्षय; ; 'विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्त्तुमर्हति' भग० नित्य।(पुं०) विष्णु का नाम । शिव का नाम । (न०) ब्रह्म । व्याकरण का वह शब्द जिसका सब लिङ्गों, सब विभक्तियों और सब वचनों में समान रूप से प्रयोग हो ।

अव्ययीभाव—(पुं०) [अनव्ययम् अव्ययम् भवति अनेन इति विग्रहे अव्यय+च्वि√भू +घञ् (करणे)] समास विशेष, यह समास प्रायः पूर्वपदप्रधान होता है, यह या तो विशेषण या क्रियाविशेषण होता है। अनष्टता, अनश्वरता । व्यय या खर्च का अभाव । (धनहीनता वश)

अव्यलीक—(वि०) [न० त०] झूठा नहीं, सच्चा । अनुकूल, प्रिय ।

अव्यवधान—(वि०) [न० ब०] समीप का। अंतररहित । खुला हुआ । बेढका हुआ । असावधान। (न०) [न० त०]असावधानता, अमनोयोगिता । लगाव । सामीप्य ।

अव्यवस्थ—(वि०) [नास्ति व्यवस्था यस्य न० ब] जो (एक स्थान पर) नियत न हो, हिलने-डुलने वाला । अचिरस्थायी । अनियमित ।

अव्यवस्था—(स्त्री०) [न० त०] अनियमितता, निर्धारित नियम के विरुद्ध आचरण। किसी धार्मिक विषय पर या दीवानी मामले में दी हुई अनुचित सम्मति ।

अव्यवस्थित—(वि०)[न० त०] व्यवस्थाहीन । शास्त्र-मर्यादा के विरुद्ध । चञ्चल, अस्थिर । क्रम में नहीं, विधिपूर्वक नहीं ।

अव्यवहार्य—(वि०) [न० त०] व्यवहार के अयोग्य, जो काम में न लाया जा सके। जो अपनी जाति वालों के साथ खाने-पीने और उठने-बैठने का अधिकारी न हो, जातिबहिष्कृत । जिस पर मुकदमा न चलाया जा सके ।

अव्यवहित—(वि०) [न० त०] व्यवधानरहित, साथ, लगा हुआ ।

अव्याकृत—(वि०) [न० त०] अप्रकट । कारणरूप । (न०) वेदान्त में अप्रकट बीज रूप जगत्कारण अज्ञान । सांख्यदर्शन में प्रधान ।—धर्म-(पुं०) वह स्वभाव जिसमें शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के काम किये जा सकें (बौद्ध०) ।

अव्याज—(पुं०) [न० त०]छल-कपट का अभाव । ईमानदारी । सादगी । (वि०) [न० ब०]बिना छल-कपट का । प्राकृतिक; 'इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः' श० १.१८

अव्यापक—(वि०) [न० त०] जो व्यापी न हो, जो सब जगह न पाया जाय । परिच्छिन्न ।

अव्यापार—(वि०) [न० त०] जिसका कोई व्यापार न हो, बिना व्यवसाय-धंधे का, बेकाम, निठल्ला । (पुं०) [न० त०] कार्य से निवृत्ति । ऐसा व्यापार जो न तो किया जाय और न समझ में आवे । निज का धंधा नहीं ।

अव्याप्ति—(स्त्री०) [न० त०] व्याप्ति का अभाव । नव्य न्यायानुसार लक्ष्य पर लक्षण के न घटने का दोष । "लक्ष्यैकदेशे लक्षणस्यावर्तनमव्याप्तिः ।"

अव्याप्य—(वि०) [वि०√आप्+ण्यत् न० त०] व्याप्तिरहित, जो सारी स्थिति के लिये लागू न हो ।—वृत्ति-(स्त्री०) वह वृत्ति जो देश-काल की दृष्टि से सीमित हो, व्यापक न हो (जैसे-सुख-दुख, द्वेष-प्रीति आदि) ।

अव्याहत—(वि०) [न० त०] व्याघातरहित, बेरोकटोक का, अप्रतिरुद्ध । जो खण्डित न हो, अटूट ।

अव्युत्पन्न—(वि०) [वि०—उत्√पद्+क्त, न० त०] अनभिज्ञ, अनाड़ी, अकुशल । व्याकरण के मतानुसार वह शब्द जिसकी व्युत्पत्ति अथवा सिद्धि न हो सके । (पुं०) व्याकरणज्ञानशून्य व्यक्ति ।

अव्रत—(वि०) [न० ब०] जो निर्दिष्ट धर्म्मानुष्ठान या व्रतोपवास न करता हो ।

√अश्—स्वा० आत्म० अक० फैलना, व्याप्त होना । अश्नुते, अशिष्यते—अक्ष्यते, आशिष्ट—आष्ट । क्र्या० पर० सक० खाना । अश्नाति, अशिष्यति, आशीत ।

अशकुन—(न०) [न० त०] असगुन, बुरा शकुन ।

अशक्ति—(स्त्री०) [न० त०] कमजोरी, निर्बलता । असमर्थता । अयोग्यता, अपात्रता । बुद्धि का बे-काम होना ।

अशक्य—(वि०) [न० त०] जो न हो सके, असाध्य । जो काबू में न किया जा सके ।

अशङ्क, अशङ्कित-(वि०) [नास्ति शङ्का यस्य न० ब०] [न शङ्कितः न० त०] निडर, निर्भय । जिसको किसी प्रकार का सन्देह न हो । निरापद ।

अशन—(न०) [√अश्+ल्युट्] व्याप्ति, फैलाव । भोजन करने की क्रिया । चखना । भोजन । [√अश्+ल्यु] चित्रक वृक्ष । भिलावाँ ।—**पर्णी**-(स्त्री०) पटसन ।

अशना—(स्त्री०) [अशनम् इच्छति इत्यर्थे अशन+क्यच+क्विप्] भोजनेच्छा, भूख ।

अशनाया—(स्त्री०) [अशनम् इच्छति इति अशन+क्यच् (ना० धा०)+स्त्रियां भावे अ, टाप्] भूख ।

अशनायित, अशनायुक-(वि०) [अशन+क्यच्+क्त (कर्तरि) पक्षे उकञ्] भूखा ।

अशनि—(पुं० स्त्री०) [√अश्+अनि] इन्द्र का वज्र । बिजली की कौंधा । फेंक कर मारने का अस्त्र, भाला, बरछी आदि । ऐसे अस्त्र की नोक । (पुं०) इन्द्र । अग्नि । बिजली से उत्पन्न अग्नि ।

अशब्द—(वि०) [न० ब०] जो शब्दों में व्यक्त न हुआ है । मूक । शब्द रहित । अवैदिक । (न०) ब्रह्म । (सांख्य में) प्रधान ।

अशरण—(वि०) [न० ब०]अनाथ, निराश्रय, बेपनाह ।

अशरीर—(पुं०) [न० ब०] परमात्मा, ब्रह्म । कामदेव । संन्यासी । (वि०) शरीर रहित ।

अशरीरिन्—(वि०) [शरीर+इनि, न० त०] शरीर-हीन । अपार्थिव ।

अशास्त्र—(वि०) [न० ब०] धर्मशास्त्र के विरुद्ध । नास्तिक दर्शन वाला ।

अशास्त्रीय—(वि०) [शास्त्र+छ—ईय, न० त०] शास्त्रविरुद्ध ।

अशित—[√अश्+क्त] खाया हुआ । सन्तुष्ट । उपभुक्त ।

अशितङ्गवीन--(वि०) [अशितास्तृप्ताः गावो ऽत्र] पूर्व में मवेशियों या पशुओं द्वारा चरा हुआ। पशुओं के चरने का स्थान, चरागाह।

अशितंभव--(न०) खाने का पदार्थ।

अशित्र--(पुं०) [√अश्+इत्र] चोर। चावल की वलि।

अशिर--(पुं०) [न० व० ?] अग्नि। सूर्य। हवा। एक राक्षस। (न०) हीरा।

अशिरस्--(वि०)[न० व०]शिरहीन।(पुं०) वेसिर का धड़, कवन्ध।

अशिव--(वि०)[न० व०]अमङ्गल, अमङ्गलकारी, अशुभ। अभागा, वदकिस्मत। (न०) [न० त०] अभाग्य, वदकिस्मती। उपद्रव।

अशिश्विका, अशिश्वी-(स्त्री०) [नास्ति शिशुः यस्याः न० व० ङीष्, पक्षे स्वार्थे कः ह्रस्व, टाप्] निःसंतान स्त्री। विना वच्चे की गाय।

अशिष्ट--(वि०)[न० त०]असाधु, दुःशील, अविनीत, उजड्ड, वेहूदा। शास्त्रसम्मत नहीं। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में न पाया जाने वाला।

अशीत--(वि०[न० त०] जो ठंढा न हो, गर्म, उष्ण।--**कर,--रश्मि**-(पुं०) सूर्य।

अशीति--(स्त्री०)[दशानाम् अवयवः दशतिः, दशकम् अष्टगुणिता दशतिः नि०, अशीत्यादेशः] अस्सी, ८०।

अशीतिक--(वि०) [अशीति+कन्] अस्सी वर्ष का।

अशीर्षक--(वि०) [न० व० कप्] दे० 'अशिरस्'।

अशुचि--(वि०) [न० व०] जो साफ न हो, मैला, गंदा। अशुद्ध। काला। (स्त्री०) [न० त०] अपवित्रता। सूतक। अधःपात।

अशुद्ध--(वि०) [न० त०] अपवित्र, गलत।

अशुद्धि--(वि०) [न० व०] अपवित्र। गंदा। दुष्ट। (स्त्री) [न० त०] अपवित्रता, गंदगी। गलती।

अशुभ--(वि०) [न० व०] अमङ्गलकारी, अकल्याणकर। अपवित्र, गंदा। अभागा। (न०) [न० त०] अमङ्गल। पाप। अभाग्य, विपत्ति; 'नाथे कुतस्त्वय्यशुभम्प्रजानाम्' र० ५.१३।

अशून्य--(वि०) [न० त०] जो खाली या रीता न हो। परिपूर्ण, पूर्ण किया हुआ।

अशृत--(वि०) [न० त०]विना पकाया हुआ, कच्चा, अनपका।

अशेष--(वि०) [न० व०] जिसमें कुछ भी न वचे, पूर्ण, समूचा, समस्त, परिपूर्ण।

अशेषम्.--**अशेषतः**-(अव्य०) [क्रि० वि० सामान्ये नपुंसकम्] [अशेष+तसि] सम्पूर्ण रूप से।

अशोक--(वि०) [न० व०] शोकरहित। (पुं०) एक पेड़ जिसकी पत्तियाँ लहरदार और सुंदर होती हैं और विशेषकर वंदनवार वाँधने में काम आती हैं। मौर्य वंश का एक यशस्वी सम्राट्। विष्णु। (न०) अशोक वृक्ष का फूल जो कामदेव के पाँच शरों में से एक माना जाता है। पारा, पारद।--**अरि** (**अशोकारि**)-(पुं०) कदंव वृक्ष। --**अष्टमी** (**अशोकाष्टमी**)--(स्त्री०) चैत्र--कृष्णा अष्टमी। --**तरु**, --**नग**, --वृक्ष-(पुं०) अशोक का पेड़।--**त्रिरात्र**-(पुं० न०) तीन रात व्यापी व्रत या उत्सव-विशेष।--**पूर्णिमा**-(स्त्री०) फाल्गुन की पूर्णिमा। --**मञ्जरी**-(स्त्री०) एक छंद। अशोक का पुष्प।--**रोहिणी**--(स्त्री०) कटुकी। --**वाटिका**-(स्त्री०) अशोक की वाड़ी। वह वगीचा जहाँ रावण ने सीता को कैद कर रखा था।--**षष्ठी**-(स्त्री०) चैत्र-शुक्ला-षष्ठी।

अशोच्य--वि०) [न० त०] शोच करने या शोकान्वित होने के अयोग्य, जिसके लिए शोक करना उचित नहीं; 'अशोच्यानन्वशोचस्त्वम्' भग० २.११।

अशौच--(न०) [न० त०]अपवित्रता, गंदगी, मैलापन। जनन या मरण का सूतक।--

सङ्कर–(पुं०) दो या अधिक अशौचों का एक में मिल जाना।

अश्नीतपिबता—(स्त्री०) [अश्नीत पिबत इत्युच्यते यस्यां निर्देशक्रियायां मयू० स०] न्योता जिसमें आमंत्रित जन खिलाये-पिलाये जाते हैं।

अश्मक—(पुं०) [अश्म इव स्थिरः, इवार्थे कन्] एक ऋषि। एक प्राचीन जनपद, त्रिवांकुर। वहाँ के निवासी।

अश्मन्—(पुं०) [अश्नुते व्याप्नोति संहन्ति अनेन वा इति√अश्+मनिन् (कर्तरि करणे वा)]पत्थर। चकमक पत्थर। बादल। कुलिश, वज्र।—**उत्थ** (**अश्मोत्थ**)–(न०) शिलाजीत, राल।—**कुट्ट**,—**कुट्टक**–(वि०)पत्थर पर फोड़ी हुई (कोई भी चीज)।—**गर्भ**–,—**गर्भज**–(पुं०) (न०),—**योनि**–(पुं०) पन्ना।—ज–(पुं० न०) गेरू। लोहा।—**जतु**,—**जतुक**–(न०) राल।—**जाति**–(पुं०) पन्ना।—**दारण**–(पुं०) हथौड़ा जिससे पत्थर तोड़े जाते हैं।—**पुष्प**–(न०) राल।—**भाल**–(न०) पत्थर या लोहे का इमामदस्ता या खरल।—**सार**–(न० पुं०)लोहा। पुखराज, नीलमणि।

अश्मन्त—(न०)[अश्मनः अन्तः अत्र शक० पररूपम्] अलाव, वह स्थान जहाँ आग जलाकर रखी जाय। क्षेत्र, मैदान। मृत्यु।

अश्मन्तक—(पुं० न०) [अश्मानम् अन्तयति इति अश्मन्√अन्त् + णिच् +ण्वुल्] अलाव, अग्नि-कुण्ड।—(पुं०) एक पौधे का नाम जिसके रेशों से ब्राह्मणों का कटिसूत्र बनाया जाता है।

अश्मरी—(स्त्री०) [अश्मानं राति इति√रा +क, ङीष्] पथरी का रोग।—**घ्न**,—**भेदन**–(पुं०) वरुण वृक्ष।

अश्र—(न०) [अश्नुते नेत्रं कण्ठं वा इति√अश्+रक्] आँसू। रक्त।—**प**–(वि०) [अश्र√पा+क] खून पीने वाला। (पुं०) राक्षस।

अश्रवण—(वि०) [न० ब०] बहरा, जिसके कान न हों। (पुं०) सर्प, साँप।

अश्राद्धभोजिन्—(वि०) [श्राद्ध√भुज्+णिनि न० त०] जिसने श्राद्धान्न न खाने का व्रत धारण किया हो।

अश्रान्त—(वि०) [न० त०] जो थका हुआ न हो, अथक। लगातार, निरन्तर। (अव्य०) लगातार या निरन्तर रीति से।

अश्रि, अश्री–(स्त्री०) [√अश+क्रि पक्षे ङीष्] कोना, कोण। किसी हथियार का वह किनारा जो पैना होता है। किसी भी वस्तु का पैना किनारा; 'वृत्रस्य हन्तुः कुलिशं कुण्ठिताश्रीव लक्ष्यते' कु० २.२०।

अश्रीक, अश्रील–(वि०) [न० ब० कप्] [न श्रीः न० त० अस्त्यर्थे रः तस्य लः] जिसमें चमक या सौन्दर्य न हो। अभागा, जो समृद्धिशाली न हो।

अश्रु—(न०) [अश्नुते व्याप्नोति नेत्रम् अदर्शनाय इति√अश्+क्रुन्] आँसू।—**उपहत** (**अश्रूपहत**)–(वि०) आँसुओं से भरा हुआ।—**कला**–(स्त्री) आँसू की बूँद।—**परिलुप्त**–(वि०) आँसुओं से तर, आँसुओं से नहाया हुआ।—**पात**–(पुं०) आँसुओं का बहना।—**मुख**–(वि०) रुआँसा। एकाएक रो पड़ने वाला।—**लोचन**,—**नेत्र**–(वि०) आँखों में आँसू भरे हुए।

अश्रुत—(वि०)[√श्रु+क्त, न० त०] जो सुना न गया हो, जो सुनाई न पड़े। [न० ब०] मूर्ख, अशिक्षित।

अश्रेयस—(वि०) [न० त०] अपेक्षाकृत जो उत्कृष्ट न हो। अपकृष्टतर (न०) उपद्रव। दुःख। अकल्याण।

अश्रौत—(वि०) [न० त०] वेदविरुद्ध।

अश्लील—(वि०)[श्रियं लाति गृह्णाति इति √ला+क रस्य लत्वम्, न० त०] अप्रिय। कुरूप। गँवारू, फूहर, भद्दा। कुवाच्य। (न०) फूहर बोलचाल, बुरी गाली गलौज।

अश्लेषा—(स्त्री०)[यत्रोत्पन्नः शिशुः आषण्मासं पित्रादिभिः नः श्लिष्यते आलिङ्ग्यते इति√ श्लिष्+घञ् न० त०] नवाँ नक्षत्र। अनमिल, अनैक्य।—**ज**,—**भव**,—**भू**—(पुं०) केतुग्रह का नाम।

अश्व—(पुं०) [√अंश्+क्वन्] घोड़ा। सात की संख्या। मानवीय जाति विशेष। (जिसमें घोड़े जितना बल होता है)।—**अजनी**, (**अश्वाजनी**)–(स्त्री०) चाबुक, कोड़ा।—**अधिक**,(**अश्वाधिक**)—(वि०) जो घुड़सवारों की सेना में बढ़ा हो। जिसके पास घोड़े अधिक हों।—**अध्यक्ष**, (**अश्वाध्यक्ष**)–(पुं०) घुड़सवारों की सेना का नायक या (कमाण्डर)।—**अनीक**, (**अश्वानीक**) –(न०) घुड़सवारों की सेना।—**अरि**, (**अश्वारि**)–(पुं०) भैंसा।—**आयुर्वेद**, (**अश्वायुर्वेद**)–(पुं०) अश्व-चिकित्साशास्त्र, सालहोत्र।—**आरोह**, (**अश्वारोह**)–(पुं०) घुड़सवार।—**उरस्**, (**अश्वोरस्**)–(वि०) घोड़े की तरह चौड़ा छाती वाला।—**कर्ण**, —**कर्णक**–(पुं०) शालवृक्ष का भेद। घोड़े का कान।—**कुटी**–(स्त्री०) अस्तबल।—**कुशल**,—**कोविद**–(वि०) घोड़ों को वश में करने की कला में कुशल।—**खरज**–(पुं०) खच्चर।—**खुर**–(पुं०) घोड़े का खुर। एक सुगंधित द्रव्य, नखी।—**खुरा**,—**खुरी**– (स्त्री०) अश्वगंधा।—**गन्धा**–(स्त्री०) असगंध।—**गोष्ठ**–(न०) अस्तबल।—**घास**– (पुं०) घोड़े का चारा।—**घ्न**–(पुं०) करवीर का वृक्ष।—**चक्र**–(न०) घोड़ों का समूह। एक तरफ का पहिया। घोड़े के चिह्नों से शुभाशुभ का विचार।—**चलनशाला**— (स्त्री०)घोड़े घुमाने का स्थान।—**चिकित्सक**, —**वैद्य**–(पुं०), सालहोत्री।—**चिकित्सा**– सालहोत्र।—**जघन**–(पुं०) पौराणिक अर्धघोटकाकृति अद्भुत मनुष्य।—**नाय**–(पुं०) घोड़ों का समूह। घोड़ों को चराने वाला।—**निबंधिक**,—**पाल**,—**पालक**,—**रक्ष**—(पुं०) घोड़े का साईस।—**बन्ध**–(पुं०) साईस।—**भा**–(स्त्री०)बिजली।—**महिषिका**–(स्त्री०) घोड़े और भैंसों की स्वाभाविक शत्रुता।—**मुख**–(वि०) घोड़े जैसा मुख या सिर वाला। (पुं०)किन्नर।–[**मुखी**–(स्त्री०) किन्नरी।–**मेध**–(पुं०) एक प्रसिद्ध यज्ञ जिसमें घोड़े का बलिदान दिया जाता है।—**मेधिक**,—**मेधीय**–(वि०) [अश्वमेध+ठन्—इक] [अश्वमेध+छ—ईय] अश्वमेध यज्ञ के योग्य या उससे सम्बन्ध रखने वाला।—युज् –(स्त्री०) आश्विन की पूर्णिमा। अश्विनी नक्षत्र।—**योग**–(पुं०) घोड़े को रथ आदि में जोतना। घोड़े की तरह तेजी से पहुँचना। —रथा–(स्त्री०) गन्दमादन पर्वत के निकट बहने वाली एक नदी का नाम।—**रत्न**– (न०),—**राज**, (पुं०) सर्वोत्तम, घोड़ा, घोड़ों का राजा।—लाला–(स्त्री०) सर्प विशेष। —**वक्त्र**–(पुं०) किन्नर या गन्धर्व।—**वह**– (पुं०) घुड़सवार।—**वार**,—**वारक**–(पुं०) चाबुकसवार। साईस।—**वाह**,—**वाहक**– (पु०) घुड़सवार।—**विद्**–(वि०) घोड़ों को पालने और उनको चाल आदि सिखाने की कला में कुशल। (पुं०) घोड़ों का सौदागर। राजा नल की उपाधि।—**वृष**–(पुं०) बीज का घोड़ा, बिना बधिया किया हुआ घोड़ा। —**शक्ति**–(स्त्री०) उतनी शक्ति जितनी प्रति सेकंड ५५० पौंड (=६।।। मन) वजन को एक फुट ऊपर उठाने के लिये आवश्यक होती है (हार्स-पावर)।—**शाला**–(स्त्री०) अस्तबल, तबेला।—**शाव**–(पुं०) घोड़ी का बछेड़ा।—**शास्त्र**–(न०) सालहोत्र विद्या। —**शृगालिका**–(स्त्री०) स्यार और घोड़े की स्वाभाविक दुश्मनी।—**साद**, —**सादिन्**– (पुं०) घुड़सवार।—**सारथ्य**–(न०) रथबानी, सारथीपन।—**स्थान**–(वि०) अस्तबल में उत्पन्न। (न०) अस्तबल, तबेला।— **हृदय**–(न०) घोड़े की इच्छा या इरादा। घुड़सवारी। घोड़े का चिकित्सा-शास्त्र।

अश्वक—(पुं०) [अश्व+कन् (संज्ञायाम्)] टट्टू, भाड़े का टट्टू। बुरा घोड़ा। साधारण घोड़ा।

अश्वकिनी—(स्त्री०) [अश्वस्य कं मुखं तत्सदृशाकारोऽस्तीति, इनि, ङीप्] अश्विनी नक्षत्र।

अश्वतर—(पुं०) [स्त्री०—**अश्वतरी**] [तनुरश्वः इत्यर्थे अश्व+ष्टरच्] खच्चर।

अश्वत्थ—(पुं०) [न श्वः चिरं शाल्मलिवृक्षादिवत् तिष्ठति इति√स्था+क पृषो०] पीपल का पेड़।

अश्वत्थामन्—(पुं०) [अश्वस्य इव स्थाम बलम् अस्य पृषो० स०] यह द्रोण का पुत्र था। इसकी माता का नाम कृपी था। महाभारत के युद्ध में यह कौरवों की ओर से पाण्डवों से लड़ा था। महाभारत में निहत एक हाथी।

अश्वस्तन, अश्वस्तनिक—(वि०) [श्वोभवः इत्यर्थे श्वस्+ट्युल् तुट् च न० त०] [श्वस्तन+ठन्—इक न० त०] आने वाले कल का नहीं, आज का। केवल एक दिन के व्यवहार के लिये अन्नादि संग्रह करने वाला। जिसके पास दूसरे दिन के लिये अन्नादि न रहे।

अश्विक—(वि०) [अश्व+ठन्—इक] घोड़ों से खींचा जाने वाला।

अश्विन्—(पुं०) [अश्व+इनि (अस्त्यर्थे)] चाबुक, सवार।—(द्विवचन) देवताओं के वैद्यों का नाम।

अश्विनी—(स्त्री०) [अश्व इव उत्तमाङ्गाकारोऽस्त्यस्य इत्यर्थे अश्व+इनि, ङीप्] २७ नक्षत्रों में प्रथम। विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा जो सूर्य की पत्नी मानी गयी है और जिसने घोड़ी बनकर सूर्य के साथ संभोग किया था।—**कुमार**—पुत्र,—**सुत**—(द्विवचन) (पुं०) सूर्यपत्नी अश्विनी से उत्पन्न दो पुत्र जो स्वर्ग के वैद्य माने जाते हैं।

अश्वीय—(वि०) [अश्वानाम् इदम्, अश्वेभ्यः हितम्, अश्वानां समूहो वा इत्यर्थे अश्व+छ—ईय] घोड़ों का, घोड़ों से सम्बन्ध रखने वाला। घोड़ों के अनुकूल। (न०) अश्व-समूह।

√अष्—[भ्वा० उभ० सक०] जाना। लेना। (अक०) चमकना। अषति-ते, अषिष्यति-ते, आषीत्-आषिष्ट।

अषडक्षीण—(वि०) [न सन्ति षट् अक्षीणि यत्र न० ब० ततः+ख—ईन, णत्व] छः नेत्रों से न देखा हुआ। अर्थात् जिसे केवल दो पुरुषों ने जाना हो या जिस पर केवल दो पुरुषों ने विचार कर कुछ निश्चय किया हो। (न०) गुप्त भेद। दो आदमियों के बीच की मंत्रणा।

अषाढ—(पुं०) [अषाढ्या युक्ता पौर्णमासी आषाढी सा अस्ति यत्र मासे अण् वा ह्रस्वः] अषाढ मास।

अष्टक—(वि०) [अष्टन्+कन्] आठ भागों वाला। अठगुना। (न०) आठ भागों से बनी हुई समूची कोई वस्तु। पाणिनि के सूत्रों के आठ अध्याय। ऋग्वेद का भाग विशेष। किन्हीं आठ वस्तुओं का एक समुदाय। आठ की संख्या। (पुं०) विश्वामित्र का एक पुत्र।

अष्टका—(स्त्री०) [अश्नन्ति पितरोऽस्यां तिथौ इत्यर्थे√अश्+तकन्, टाप्] तीन तिथियों का समुदाय, ७मी, ८मी, ९मी। पौष, माघ और फागुन की। कृष्णाष्टमी। श्राद्ध जो उक्त तिथियों को किया जाता है।

अष्टन्—(वि०) [त्रि०√अश्+कनिन्, तुट् च] आठ की संख्या। (वि०) आठ की संख्या से युक्त।—**अङ्ग**, (**अष्टाङ्ग**)—(वि०) जिसके आठ अंग या भाग हों। (न०) शरीर के वे आठ अंग जिनसे साष्टांग प्रणाम किया जाता है—घुटना, हाथ, पाँव, छाती, सिर, वचन, दृष्टि और बुद्धि।—०**मार्ग**—(पुं०) बुद्ध द्वारा उपदिष्ट दुःखनिवृत्ति का आठ अंगों वाला मार्ग—सम्यग्दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सयग्वाक्, सम्यक्-कर्म, सम्यक्-आजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्-स्मृति और सम्यक्-समाधि।—०**योग**-(पुं०) योग के आठ अंग

—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ।—०**आयुर्वेद (अष्टाङ्गायुर्वेद)**—(पुं०) आयुर्वेद के आठ अंग या विभाग—शल्य, शालाक्य, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगदतंत्र रसायनतंत्र और वाजीकरण ।—**कर्ण**—(वि०) आठ कानों वाला। (पुं०) ब्रह्मा ।—**कर्मन्—गतिक**—(पुं०) राजा जिसे ८ प्रकार के कर्त्तव्यों का पालन करना पड़ता है। वे आठ कर्म यह हैं —आदानेचविसर्गे च तथा प्रैषनिषेधयोः । पञ्चमे चार्थवचने व्यवहारस्य चेक्षणे । दण्डशुद्धयोः सदा रक्तस्तेनाष्टगतिको नृपः ॥—**कोण**-(पुं०)आठ पहलू या आठ कोना ।—**गुण**-(वि०) अठगुना । (न०) आठ प्रकार के गुण ये हैं:—दया सर्वभूतेषु, क्षांतिः, अनसूया, शौचम्, अनायासः, मङ्गलम्, अकार्पण्यम्, अस्पृहा, चेति ॥—**गौतम** ।—**चत्वारिंशत्**—(स्त्री०) ४८, अड़तालीस ।—**त्रिंशत्**—(स्त्री०) ३८, अड़तीस ।—**त्रिक**-(न०) २४ की संख्या ।—**दल**—(न०) आठ दलों का कमल ।—**दिश्**-(स्त्री०) आठ दिशाएँ ।—०**पाल, (दिक्पाल)**—(पुं०) आठों दिशाओं के अधिष्ठाता । आठ दिक्पाल ये हैं:—इन्द्रो वह्निः पितृपतिः नैर्ऋतो वरुणो मरुत् । कुबेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात् ॥—**द्रव्य**—(न०) यज्ञ की सामग्री के आठ द्रव्य—पीपल, गूलर, पाकड़, बरगद, तिल, सरसों, पायस और घृत ।—**धातु**—(पुं०) सोना, चाँदी, ताँबा, राँगा, सीसा, जस्ता, लोहा और पारा ।—**पद**—(पुं०) मकड़ी । शरभ । कील, काँटा । कैलास पर्वत । (न०) सुवर्ण । वस्त्र विशेष ।—**प्रकृति**-(स्त्री०) राज्य के आठ प्रधान कर्मचारी—सुमंत्र, पंडित, मंत्री, प्रधान, सचिव, अमात्य, प्राड्विवाक और प्रतिनिधि । अथवा आठ अंग—राजा, राष्ट्र, अमात्य, दुर्ग, बल (सेना), कोष, सामंत और प्रजा ।—**प्रधान**-(पुं०) आठ प्रकार के मंत्री—प्रधान, अमात्य, सचिव, मंत्री, धर्माध्यक्ष, न्यायशास्त्री, वैद्य और सेनापति ।—**मङ्गल**—(पुं०) घोड़ा जिसका मुख, पूँछ, अयाल, छाती और खुर सफेद हों । (न०) आठ माङ्गलिक द्रव्यों का समुदाय । वे आठ ये हैं :—मृगराजो वृषो नागः कलशो व्यजनं तथा । वैजयन्ती तथा भेरी दीप इत्यष्टमङ्गलम् । स्थानान्तरे—लोकेऽस्मिन्मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः । हिरण्यं सर्पिरादित्य आपो राजा तथाष्टमः ॥—**मूर्ति**—(पुं०) शिव (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, सूर्य, चंद्र और ऋत्विज—इन आठ मूर्तियों वाले) ।—**रत्न** (न०) आठ रत्न ।—**रस**—(पुं०) नाट्य-शास्त्र के आठ रस । यथा —शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः । बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः॥—**वर्ग**—(पुं०) आयुर्वेदोक्त आठ ओषधियों का समूह—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि और वृद्धि । नीतिशास्त्रानुसार राज्य के अंगभूत कृषि, वस्ती, दुर्ग, सेतु, हस्तिबंधन, खान, करग्रहण और सैन्य-संस्थापन का समूह ।—**विध**—(वि०) आठ प्रकार का ।—**विंशति**—(स्त्री०) २८, अट्ठाइस ।—**श्रवण—श्रवस्**-(पुं०) चार मुख और आठ कानों वाले ब्रह्मा ।—**सिद्धि**-(स्त्री०) योग-सिद्धि से मिलने वाली आठ सिद्धियाँ या अलौकिक शक्तियाँ—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व ।

अष्टकृत्वस्—(अव्य०) [अष्टन्+कृत्वसुच्] आठ बार ।

अष्टतय—(वि०) [अष्टन्+तयप्] आठ भाग या आठ अवयव वाला । (न०) आठ का औसत ।

अष्टधा—(अव्य०) [अष्टन्+धा] आठ गुना । आठ बार । आठ प्रकार से । आठ भागों में; 'भिन्ना प्रकृतिरष्टधा' भग० ७.४।

अष्टम—(वि०) [अष्टानां पूरणः इत्यर्थे अष्टन्+डट् मट् च] आठवाँ । (पुं०) आठवाँ भाग ।

अष्टमक—(वि०) [अष्टम+कन्] आठवाँ। योंऽशमष्टमकं हरेत । याज्ञवल्क्य ॥

अष्टमी—(स्त्री०) [अष्टम+ङीप्] चान्द्र-मास का आठवाँ दिवस । पक्ष की आठवीं तिथि ।

अष्टमिका—(स्त्री०) [अष्टमी+कन्, ह्रस्व, टाप्] चार तोले की एक तौल ।

अष्टाकपाल—(पुं०) [अष्टसु कपालेषु (मृत्पात्रेषु) संस्कृतः पुरोडाशः इत्यर्थे अण् तस्य लुक्] आठ मृत्तिका-पात्रों में शुद्ध किया हुआ चरु (घी आदि) ।

अष्टादशन्—(त्रि०) [अष्टाधिका, दश, अष्टौ च दश चेति वा] अठारह ।—**उपपुराण**—(**अष्टादशोपपुराण**) (न०) अठारह उपपुराण जिनके नाम ये हैं—'आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतःपरम् । तृतीयं नारदं प्रोक्तं कुमारेण तु भाषितम् । चतुर्थं शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम् । दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं नारदोक्तमतः परम् । कापिलं मानवं चैव तथैवोशनसेरितम् । ब्रह्माण्डं वारुणं चाथ कालिकाह्वयमेव च । माहेश्वरं तथा शाम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम् । पराशरोक्तं प्रवरं तथा भागवतद्वयम् । इमष्टादशं प्रोक्तं पुराणं कौर्मसंज्ञितम् । चतुर्धा संस्थितं पुण्यं संहितानां प्रभेदतः ।'—हेमाद्री—**पुराण** (न०) १८ पुराण जिनके नाम ये हैं:—ब्राह्म । पाद्म । विष्णु । शिव । भागवत । नारदीय । मार्कण्डेय । अग्नि । भविष्य । ब्रह्मवैवर्त । लिङ्ग । वराह । स्कन्द । वामन । कौर्म । मत्स्य । गरुड़ । ब्रह्माण्ड ।—**विद्या** (स्त्री०) १८ प्रकार की विद्याएं या कलाएं । यथा—'अंगानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः । धर्मशास्त्रं पुराणं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश । आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चेति ते त्रयः । अर्थशास्त्रं चतुर्थं तु विद्या ह्यष्टादशैव तु ।'

अष्टावक्र—(पुं०) [अष्टकृत्वः अष्टसु भागेषु वा वक्रः] आठ अंगों में टेढ़ा, कहोड़ का पुत्र एक प्रसिद्ध ऋषि ।

अष्टि—(स्त्री०) [√अस् (क्षेपणे)+क्तिन्, पृषो० षत्व] खेल का पासा । सोलह की संख्या । बीज । छिलका, छाल ।

अष्ट्रा—(स्त्री०) [अक्ष्यते चाल्यते अनया इति √अक्ष्+ष्ट्रन् (करणे)] पशुओं के हाँकने की छड़ी या चाबुक या अंकुश ।

अष्ठीला—(स्त्री०) [अष्ठि√रा+कः रस्य लः दीर्घः] कोई गोल वस्तु । गोल पत्थर या स्फटिक । छिलका, छाल । बीज का अनाज ।

अष्ठीवत्—(पुं०) [नास्ति अतिशयितमस्थि यस्मिन् मतुप् पृषो० सिद्धि] घुटना ।

√अस्—अदा० पर० अक० होना । अस्ति, भविष्यति, अभूत् । दिवा० पर० सक० फेंकना । अस्यति, असिष्यति, आस्थत् । भ्वा० उभ० अक० चमकना सक० लेना । जाना । असति-ते, असिष्यति-ते, आसीत्-आसिष्ट ।

असंयत—(वि०) [न० त०] संयम-रहित । क्रमशून्य । जो नियम-बद्ध न हो ।

असंयम—(पु०) [न० त०] संयम का अभाव, रोक का न होना, (यह इन्द्रियों के विषय में प्रयुक्त होता है)

असंव्यवहित— (वि०) [संव्यव√धा+क्त, न० त०] व्यवधानरहित । अवकाश रहित ।

असंशय—(वि०) [न० ब०] संशयरहित । निश्चित ।

असंश्रव—(वि०) [न० ब०] जो सुनने के परे हो । जो सुनाई न पड़े ।

असंसृष्ट—(वि०) [न० त०] जो मिश्रित न हो । जो संलग्न न हो । बटवारा होने के बाद फिर जो शामिलात में न रहे ।

असंस्कृत—(वि०) [न० त०] बिना सुधारा हुआ, अपरिमार्जित । जिसका संस्कार न हुआ हो, व्रात्य । व्याकरण के संस्कार से शून्य । (पुं०) अपशब्द, बिगड़ा हुआ शब्द ।

असंस्तुत—(वि०) [न० त०] अज्ञात, अपरिचित; 'असंस्तुत इव परित्यक्तो बान्धवो जनः' काद०। असाधारण, विलक्षण ।

असंस्थान—(न०) [न० त०] संयोग का अभाव । गड़बड़ी । अभाव, कमी ।

असंस्थित—(वि०) [न० त०] जो व्यवस्थित न हो, अनियमित । एकत्रित नहीं ।

असंस्थिति—(स्त्री०) [न० त०] गड़बड़ी, घालमेल ।

असंहत—(वि०) [न० त०] जो जड़ा न हो, जो मिला न हो । बिखरा हुआ । (पं०) सांख्य दर्शन के अनुसार पुरुष या जीव ।

असकृत्—(अव्य०) [न० त०] एक बार नहीं, बारंबार, अक्सर ।—**समाधि** (पुं०) बारंबार की समाधि या ध्यान ।—**गर्भवास** (पुं०) बारंबार जन्म ।

असक्त—(वि०) [न० त०] जो किसी में फँसा न हो । फलाभिलाष से रहित । सांसारिक पदार्थों से विरक्त ।

असक्थ—(वि०) [नास्ति सक्थि यस्य न० ब०] जिसके जंघा न हो ।

असखि—(पं०) [न० त०] मित्रभिन्न, शत्रु ।

असगोत्र—(वि०) [न० त०] जो एक गोत्र ल का न ो

असङ्कुल—(वि०) [न० त०] जहाँ बहुत भीड़-भाड़ न हो । खुला हुआ । चौड़ा । (पुं०) चौड़ा भाग ।

असङ्क्रान्तिमास—(पुं०) [न० त०] वह महीना जिसमें संक्रांति न पड़े, अधिकमास, मलमास ।

असङ्ख्य—(वि०) [नास्ति संख्या यस्य न० ब०] गणना के परे । जिसकी गणना न हो सके ।

असङ्ख्यात—(वि०) [न० त०] अगणित, संख्यातीत । अनन्त संख्यावाला ।

असङ्ख्येय—(वि०) [न० त०] जिसकी संख्या या गणना न की जा सके । (पुं०) शिव का नाम ।

असङ्ग—(वि०) [न० ब०] अननुरक्त, सांसारिक या लौकिक धनों से ुक्त । अनवरुद्ध । अनमिल । अकेला । (पुं०) वैराग्य । पुरुष या जीव ।

असङ्गत—(वि०) [न० त०] अयुक्त । सङ्गविवर्जित । विषम । गँवार, अशिष्ट ।

असङ्गति—(स्त्री०) [न० त०] मेल का न होना । असंबंध । बेसिलसिलापन । अनुपयुक्तता । एक काव्यालङ्कार इसमें कार्य-कारण के बीच देश-काल संबंधी अयथार्थता दिखलाई जाती है ।

असङ्गम—(वि०) [न० ब०] जो मिला हुआ न हो । (पुं० [न० त०] मेल या संबंध का अभाव । पार्थक्य, विछोह । असंलग्नता । असामंजस्य ।

असङ्गिन्—(वि०) [न० त०]जो मिला हुआ न हो । संसार से विरक्त ।

असंज्ञ—(वि०) [नास्ति संज्ञा यस्य न० ब०] बिना नाम का । संज्ञाहीन, मूर्च्छित ।

असंज्ञा—(स्त्री०) [न० त०] संज्ञा का अभाव । असामंजस्य, विरोध, झगड़ा, टंटा ।

असत्—(वि०) [√अस+शतृ, न० त०] अविद्यमान, जिसका अस्तित्व न हो । बुरा, खराब । दुष्ट । तिरोहित । गलत । अनुचित । मिथ्या, झूठा; 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः' भग० । (न०)अनस्तित्व, असत्ता । मिथ्या, झूठ ।—**अध्ये** – (वि०) असदध्येतृ शाखारण्ड ब्राह्मण जो अपने वेद की शाखा को छोड़ अन्य वेद की शाखा पढ़े । —"स्वशाखां यः परित्यज्य अन्यत्र कुरुते श्रमम् । शाखारण्डः स विज्ञेयो वर्जयेत्तं क्रियासु च ।'—**आगम** (**असदागम**) (पुं०) धर्मविरुद्ध शास्त्र । बुरा साधन । बेईमानी से (धन को) हथियाना ।— **आचार, (असदाचार)**–(वि०) बुरे आचरण वाला, दुष्ट । (पुं०) धर्म, नीति के विरुद्ध आचरण । —**कर्मन्**, —**क्रिया**–(स्त्री०) बुरा काम । दुर्व्यवहार ।—**ग्रह**, —**ग्राह** (**असद्ग्रह-ग्राह**)–(पुं०) बुरी चालबाजी । बुरी राय, पक्षपात । बच्चों जैसी अभिलाषा ।

—दृश (असद्दृश)—(वि०) बुरे नेत्रों वाला, बुरी दृष्टि वाला ।—परिग्रह–(पुं०) बुरे मार्ग का ग्रहण ।—प्रतिग्रह (पं०) कुदान, बुरा दान, जैसे—तेल, तिल आदि का ।
—भाव (असद्भाव)–(पुं०) अविद्यमानता, असत्ता । दुष्ट सम्मति, दुष्ट स्वभाव ।—वृत्ति (असद्वृत्ति)–(स्त्री०) नीच कर्म या पेशा । दुष्टता ।—संसर्ग–(पुं०) बुरी संगत ।

असती—(स्त्री०) [सत्+ङीप् न० त०] जो सती या पतिव्रता न हो ।

असत्ता—(स्त्री०) [असत्+तल् टाप्] अनस्तित्व । असत्यता । दुष्टता, बुराई ।

असत्त्व—(वि०) [न० ब०] शक्तिहीन । सत्ता रहित । (न०) [न० त०] अनवस्थान । अवास्तविकता, असत्यता ।

असत्य—(वि०) [न० त०] झूठा । कल्पित, अवास्तविक ।—(पुं०) मिथ्यावादी, झूठ बोलने वाला ।—(न०) झूठ, मिथ्या ।—सन्ध–(वि०) अपने वचन को पूरा न करने वाला, झूठा, दग़ाबाज़, धोखेबाज़ ।

असदृश—(वि०) [स्त्री०—असदृशी] [न० त०]असमान, बेमेल । अयोग्य, अनुचित ।

असद्यस्—(अव्य०) [न० त०] तुरन्त नहीं, देर करके, देरी से ।

असन—[√अस् (क्षेपणे)+ल्युट्] फेंकना, छोड़ना, चलाना (बाण आदि) । (पुं०) पीतशाल नामक वृक्ष ।—पर्णी–(स्त्री०) सातल नामक वृक्ष ।

असन्दिग्ध—(वि०)[न० त०] सन्देहरहित, निस्संदेह । स्पष्ट, साफ़ । विश्वस्त ।

असन्धि—(वि०) [न० ब०] जो मिले या जुड़े (शब्द) न हों । जो बन्धन में न हो, स्वतंत्र । (पुं०) [न० त०]

असन्नद्ध—(वि०) [न० त०] जो हथियारों से सुसज्जित न हो । पण्डितम्मन्य ।

असन्निकर्ष—(पुं०) [न० त०] निकट न होना । दूरी । समझ के बाहर ।

असन्निवृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] न लौटने की क्रिया; 'असन्निवृत्त्यै वदतीतमेव' श० ६.९।

असपिण्ड—(वि०) [न० त०] जो सपिण्ड न हो, जो अपने वंश या कुल का न हो, जो अपने हाथ का दिया पिंड पाने का अधिकारी न हो ।

असभ्य—(वि०) [न० त०] गँवार, उजड्ड, नाशाइस्ता ।

असम—(वि०) [न० त०] विषम । असमान, बेजोड़ ।—सायक–(पं०) कामदेव की उपाधि, कामदेव के पास पाँच बाणों का होना माना गया है ।—नयन,—नेत्र,—लोचन- (वि०) विषम-संख्यक नेत्रों वाले । शिव की उपाधि ।

असमञ्जस—(वि०) [न० त०] अस्पष्ट । अबोधगम्य । अनुचित । असङ्गत । वाहियात, मूर्खतापूर्ण ।

असमर्थ—(वि०) [न० त०] अशक्त, दुर्बल । अपेक्षित शक्ति या योग्यता न रखने वाला । अभीष्ट अर्थ व्यक्त न कर सकने वाला ।—समास–(पुं०) अन्वय-दोष-युक्त समास ('अश्राद्धभोजी' और 'असूर्यम्पश्या' में 'अ' का अन्वय 'श्राद्ध' और 'सूर्य' के साथ न करके 'भोजी' और 'पश्या' के साथ करना होता है) ।

असमर्थता—(स्त्री०)[असमर्थ+तल्, टाप्] असमर्थ होने का भाव ।—निवृत्तिवेतन–(न०) रोग, दुर्घटना आदि के कारण किसी कर्मचारी के काम करने में स्थायी रूप से असमर्थ हो जाने पर भरण-पोषण के लिये मिलने वाली वृत्ति (इनवैलिडिटी पेंशन) ।

असमवायिन्—(वि०)[न० त०] जो सम्बन्ध युक्त या परंपरागत न हो, आकस्मिक, पृथक् होने योग्य ।—कारण–(न०) न्याय दर्शन के अनुसार वह कारण जो द्रव्य न हो, गुण वा कर्म हो ।

असमस्त—(वि०) [न० त०] असम्पूर्ण, थोड़ा सा, पूरा नहीं । (व्याकरण में) जो समा-

सान्त न हो। पृथक्, अलहदा, असम्बद्ध।

असमाप्त—(वि०) [न० त] जो समाप्त न हो, अपूर्ण, अधूरा।

असमीक्ष्य—(अव्य०) [सम्√ईक्ष्+क्त्वा—ल्यप् न० त०]—**कारिन्**—(वि०) बिना विचारे काम करने वाला।

असम्पत्ति—(वि०) [न० ब०] गरीब, धनहीन। (स्त्री०) [न० त०] धनहीनता, गरीबी। दुर्भाग्य, बदकिस्मती। असफलता। असम्पूर्णता।

असम्पूर्ण—(वि०) जो पूरा न हो, अधूरा। समूचा नहीं। थोड़ा-थोड़ा, कुछ-कुछ।

असम्प्रज्ञात—(वि०) [न० त०] भलीभाँति न जाना हुआ।—**समाधि**–(पुं०) वह समाधि जिसमें ज्ञाता, ज्ञेय, ज्ञान का भेद नहीं रह जाता, निर्विकल्प समाधि।

असम्बद्ध—(वि०) [न० त०] जो परस्पर सम्बन्ध-युक्त न हो, बेमेल। बेहूदा, वाहियात, जिसका कुछ अर्थ न हो। अनुचित, गलत।—**प्रलाप**–(पुं०) बेतुकी बकवास।

असम्बन्ध—(वि०) [न० ब०] बेमेल, संबंध-रहित। [न० त०] संबंध का अभाव।

असम्बाध—(वि०) [न० ब०] जो सङ्कीर्ण न हो, प्रशस्त, चौड़ा। जो मनुष्यों की भीड़-भाड़ से भरा न हो, एकान्त। खुला हुआ, जहाँ हरेक की पहुँच हो।

असम्भव—(वि०) [न० त०]जो सम्भव न हो, जो हो न सके, नामुमकिन।

असम्भव्य, असम्भाविन्–(वि०) [सम्√भू+यत् नि०, न० त०] [सम्√भू+णिनि न० त०] नामुमकिन, असम्भव। अबोधगम्य।

असम्भावना—(स्त्री०)[न० त०] सम्भावना का अभाव, अभवितव्यता, अनहोनापन।

असम्भृत—(वि०) [न० त०] जो बनावटी उपायों से न लाया गया हो। जो बनावटी न हो, नैसर्गिक, अकृत्रिम; 'असम्भृतम्मण्डनमङ्गयष्टेः" कु० १.३१। जो भलीभाँति पाला-पोसा न गया हो।

असम्मत—(वि०) [न० त०] जो पसंद न हो, नापसंद। अनभिमत, विरुद्ध। (पुं०) वैरी, विरोधी (ऋतुदोषैरसम्मतान्)—**आदायिन्** (**असम्मतादायिन्**)–(वि०) चोर।

असम्मति—(स्त्री०) [न० त०] सम्मति का अभाव, विरुद्ध मत या राय। नापसंदगी, अरुचि।

असम्मोह—(पुं०) [न० त०] मोह का या भ्रम का अभाव। दृढ़ता। शान्ति, चित्त की स्थिरता। वास्तविक ज्ञान॥

असम्यच्—(वि०) [स्त्री०—**असमीची**] [न० त०] खराब, कुत्सित। अनुचित। अशुद्ध। असम्पूर्ण, अधूरा।

असल—(न०) [√अस् (क्षेपणे)+कलच्] लोहा। किसी अस्त्र को छोड़ते समय पढ़ा जाने वाला मंत्र विशेष। हथियार।

असवर्ण—(वि०) [न० त०] भिन्न जाति या वर्ण का।

असह—(वि०)[न० ब०] असह्य, जो सहा न जाय, जो बरदाश्त न हो।

असहन—(वि०) [न० ब०] असहिष्णु। ईर्ष्यालु, डाही। (पुं०) शत्रु, बैरी। (न०) [न० त०] असहनशीलता। असन्तोष।

असहनीय,—असह्य–(वि०) [न० त०] जो सहन न किया जा सके।

असहाय—(वि०) [न० ब०] अकेला, बिना साथी-संगी या सहायक का।

असाक्षात्—(अव्य०) [न० त०]जो नेत्रों के सामने न हो, अप्रत्यक्ष, अगोचर।

असाक्षिक—(वि०)[स्त्री०—**असाक्षिकी**] [न० ब०] जिसका कोई गवाह न हो।

असाक्षिन्—(वि०) [न० त०] जो चश्मदीद गवाह न हो। जिसकी गवाही प्रमाण स्वरूप ग्रहण न की जाय। जो किसी प्रामाणिक पत्र को प्रामाणित करने का अधिकारी न हो।

असाधनीय, असाध्य–(वि०) [न० त०] जो साध्य न हो, जिस पर वश न चले; 'असाध्यः

कुरुते कोपं प्राप्ते कालेगदो यथा' शि० २.८४ सिद्ध न होने योग्य। जो ठीक न हो।

असाधारण—(वि०) [न० त०] जो साधारण या आम न हो। असामान्य। अपूर्व, विलक्षण। (पुं०) न्याय में सपक्ष और विपक्ष। दोनों में न रहने वाला दुष्ट हेतु।

असाधु—(वि०) [न० त०] जो साधु न हो। अप्रिय। दुष्ट। असच्चरित्र। अपभ्रंश। अशुद्ध।

असाध्य—(वि०) [न० त०] जिसका साधन या सिद्धि न हो सके। अच्छा न होने वाला, लाइलाज (रोगी)। अशक्य, अतिकठिन।

असामयिक—(वि०) [स्त्री०—**असामयिकी**,] [न० त०] बे अवसर का। बिना समय का, बेवक्त का।

असामान्य—(वि०) [न० त०] असाधारण, विलक्षण, अपूर्व। (न०) विलक्षण या विशेष सम्पत्ति।

असाम्प्रत—(वि०) [न० त०] अयोग्य। अनुचित। अयुक्त। कालान्तर का।

असाम्प्रतम्—(अव्य०) [न० त०] अनुचित रूप से। अयोग्यता से।

असार—(वि०) [न० ब०] सारहीन। व्यर्थ, निकम्मा। जो लाभदायक न हो। निर्बल, कमजोर। (पुं०) [न० त०] बेजरूरी हिस्सा, अनावश्यक अंश, रेंड़ी का पेड़। (न०) ऊद या अगर की लकड़ी।

असारता—(स्त्री०) [असार+तल्, टाप्] सारहीनता, निस्सारता, तत्त्वशून्यता। निरर्थकता, तुच्छता। मिथ्यात्व।

असाहस—(न०) [न० त०] वेग या प्रचण्डता का अभाव, सुशीलता।

असि—(पुं०) [√अस्+इन्] तलवार। छुरी जो जानवरों को हलाल करने के लिये इस्तेमाल की जाती है।—**गण्ड**—(पुं०) छोटा तकिया जो गालों के नीचे रखा जाता है।—**जीविन्**—(वि०) तलवार के कर्म से आजीविका करने वाला।—**दंष्ट्र**—**दंष्ट्रक**—(पुं०) मगर, घड़ियाल।—**दन्त**—(पुं०) मगर, घड़ियाल। नक्र।—**धारा**—(स्त्री०) तलवार की धार।—० **व्रत**—(न०) किसी के मतानुसार एक व्रत, जिसमें तलवार की धार पर खड़ा होना पड़ता है। अन्य मतानुसार युवती स्त्री के साथ सदैव रह कर भी उसके साथ मैथुन करने की इच्छा को रोकना।—(आल०) कोई भी असाध्य या असम्भव कार्य।—**धाव**, —**धावक**—(पुं०) सिकलीगर, हथियार साफ करने वाला।—**धेनु**,—**धेनुका**—(स्त्री०) छुरी, छुरा।—**पत्र**—(पुं०) ऊख, ईख, गन्ना। गुण्ड नामक तृण। (न०) तलवार की म्यान।—**पुच्छ**, —**पुच्छक**—(पुं०) सूंस। सकुची मछली।—**पुत्रिका**,—**पुत्री**—(स्त्री०) छुरी।—**मेद**—(पुं०) सड़ा हुआ खदिर।—**हत्य** (न०) छुरी या तलवार की लड़ाई।—**हेति**—(पुं०) तलवार चलाने वाला, तलवार-बहादुर।

असिक—(न०) [असि+कन्] निचले ओठ और ठुड्डी के बीच का भाग।

असिक्नी—(स्त्री०) [सिता केशादौ शुभ्रा जरती तद्भिन्ना अवृद्धा, का देशः ङीप् च] अन्तःपुर की युवती परिचारिका या दासी। पंजाब की एक नदी (चिनाब)। दक्ष की पत्नी, रात्रि।

असित—(वि०) [न० त०] जो सफेद न हो। काला, नीला। (पुं०) काला या नीला रंग। शनि। देवल ऋषि। कृष्णपक्ष। धव वृक्ष। काला साँप।—**अम्बुज** (**असिताम्बुज**). —**उत्पल** (**असितोत्पल**)—(न०) नील कमल।—**अर्चिस्** (**असितार्चिस्**)—(पुं०) अग्नि।—**अश्मन्** (**असिताश्मन्**),—**उपल** (**असितोपल**)—(पुं०) काला-नीला पत्थर।—**केशा**—(स्त्री०) काले बालों वाली —**गिरि**— **नग**— (पुं०) नीलपर्वत।—**ग्रीव**—(वि०) काली गर्दन वाला।

(पुं०) अग्नि ।—नयन–(वि०) काले नेत्रों वाला ।—पक्ष–(पुं०) अँधियारा पाख ।—फल—(न०)मीठा नारियल ।—मृग–(पुं०) काला हिरन, कृष्णमृग ।

असिता—(स्त्री०) [असित+टाप्] नील का पौधा। अंतःपुर की वह दासी जिसके बाल काले और अधिक हों । यमुना नदी ।

असिद्ध—(वि०) [न० त०] जो सिद्ध अर्थात् पूरा न हुआ हो । अधूरा, अपूर्ण । अप्रमाणित । कच्चा, अनपका । जिसका परिणाम कुछ न हो ।(पुं०) न्यायानुसार हेतु के तीन दोष, वे तीन दोष ये हैं—आश्रयासिद्ध, स्वरूपासिद्ध, व्याप्यतासिद्ध ।

असिद्धि—(स्त्री०) [न० त०] अपूर्णता। विफलता । सावित न होना। साधना की अपूर्णता । कच्चापन ।

असिर—(पुं०)[√अस्+किरच्] किरण। तीर । चटखनी ।

असु—(न०) [√ अस्+उन्] (पुं०) प्राण । प्राण वायु । आध्यात्मिक जीवन । मृतात्माओं का जीवन । पल का छठा भाग । (न०) शोक, दुःख ।—भङ्ग–(पुं०) जीवन का नाश । जीवन की आशङ्का या भय ।—भृत्–(पुं०) जीवधारी, प्राणी ।—मत् (वि०) जीवित । (पुं०) प्राणी ।—सम–(वि०) प्राणोपम । (पुं०) पति । प्रेमी ।

असुख—(वि०) [न० व०] दुःखी, शोकाकुल । (जिसका पाना) सहज नहीं, कठिन । (न०) [न० त०] दुःख, शोक, पीड़ा।

असुखिन्—(वि०) [न० त०] दुःखी, शोकाकुल ।

असुत—(वि०)[न० त०] बेऔलाद, जिसके कोई बाल-बच्चा न हो ।

असुर—(पुं०) [न सुरः न० त० तथा√अस् +उर] दैत्य, राक्षस, दानव । भूत, प्रेत । सूर्य । हाथी । राहु की उपाधि । बादल ।—अधिप (असुराधिप)–राज्, –राज– (पुं०) असुरों का राजा । प्रह्लाद के पौत्र राजा बलि की उपाधि ।—आचार्य—(असुराचार्य)–गुरु–(पुं०) शुक्राचार्य । शुक्रग्रह ।—आह्व–(असुराह्व)–(न०) टीन और ताँबे को मिला कर बनायी हुई धातु ।—द्विष्–(पुं०) असुरों के वैरी अर्थात् देवता ।—रिपु–सूदन–(पुं०) असुरों का नाश करने वाले. विष्णु भगवान् की उपाधि ।—हन्–(पुं०) (असुरों को मारने वाला) । अग्नि । इन्द्र । विष्णु ।

असुरा—(स्त्री०) [असुर+टाप्] रात्रि । राशिचक्र सम्बन्धी एक राशि । वेश्या ।

असुरी—(स्त्री०) [असुर+ङीष्] दानव, राक्षसी, असुर की स्त्री ।

असुर्य—(वि०) [असुर+यत्] असुरों का, आसुरी ।

असुरसा—(स्त्री०) [न सुष्ठु रसो यस्याः न० व०] पौधे का नाम, तुलसीवृक्ष की अनेक जातियाँ ।

असुलभ—(वि०) [न० त०] जो सहज में न मिल सके ।

असुसू—(पुं०) [असून् प्राणान् सुवति इति असु√सू +क्विप्] तीर, वाण ।

असुहृद्—(पुं०) [न० त०] शत्रु, वैरी ।

√असू०—कण्ड्वा । उभ० सक० । डाह करना, ईर्ष्या करना । तिरस्कार करना । अक० अप्रसन्न होना, नाराज होना । असूयति-ते, असूयिष्यति-ते, आसूयीत्-आसूयिष्ट ।

असूत, असूतिक–(वि०) [न० त०] [न० व० कप्] जिसमें कुछ भी न हो, बाँझ ।

असूति—(स्त्री०) [न० त०] बाँझपन, बंजरपन । अड़चन । स्थानान्तरितकरण ।

असूयक—(त्रि०) [√असू+यक्+ण्वुल्] ईर्ष्यालु, डाही । असन्तुष्ट, अप्रसन्न ।

असूयन—(न०) [√असू+यक्+ल्युट्] निन्दा, अपवाद । ईर्ष्या, डाह ।

असूया—(स्त्री०)[√असू+यक्+अ, टाप्] डाह, ईर्ष्या, असहिष्णुता । निन्दा, अपवाद । क्रोध, रोष ।

असूयु—(पं०) [√असू+यक् +उ] डाही, ईर्ष्यालु । अप्रसन्न ।

असूर्क्षण—(न०) [√सूर्क्ष्+ल्युट् न० त०] अनादर, अप्रतिष्ठा ।

असूर्य—(वि०) [न० ब०] सूर्यरहित । **असूर्यम्पश्य**—(वि०) [सूर्य√दृश+खश्, मुम्, पश्य आदेश, न० त०] जो सूर्य को भी न देखे ।

असूर्यम्पश्या—(स्त्री०) [असूर्यंपश्य+टाप्] सती पतिव्रता स्त्री । राजप्रासाद की स्त्रियाँ, रनवास की रानियाँ, जिन्हें सूर्य तक के दर्शन मिलना दुर्लभ है ।

असृज्—(न०) [√सृज्+क्विन्, न० त०] खून, रक्त, लोहू । मङ्गलग्रह । केसर ।—**कर** (**असृक्कर**) (पुं०) रस ।—**धरा** (**असृग्धरा**) (स्त्री०) चर्म, चमड़ा ।—**धारा** (**असृग्धारा**) (स्त्री०) लोहू की धार ।—**प, पा** (**असृक्प, पा**) (पुं०) राक्षस, रक्त पीने वाला ।—**वहा**—(**असृग्वहा**) (स्त्री०) रक्तधमनी, नाड़ी ।—**विमोक्षण**— (**असृग्विमोक्षण**) (न०) ।—**श्राव,—स्राव**—(**असृक्श्राव—स्राव**) (पुं०) रक्त का बहना ।

असेचन, असेचनक—(वि०) [न सिच्यते तृप्यते मनोऽत्र इति विग्रहे√सिच्+ल्युट् न० त०] [असेचन+कन्] अत्यन्त प्रिय जिसे देखते-देखते कभी जी न भरे ।

असौष्ठव—(वि०) [न० ब०] जिसमें सौंदर्य या मनोहरता का अभाव हो । बदसूरत विकलाङ्ग । (न०) [न० त०] निकम्मापन । गुणाभाव । विकलाङ्गता । बदसूरती ।

अस्खलित—(वि०) [न० त०] जो हिले नहीं । स्थिर, स्थायी । वेचुटीला । सावधान ।

अस्त—(वि) [√अस् (क्षेपणे)+क्त] फेंका हुआ । त्यागा हुआ । समाप्त । भेजा हुआ । डूबा हुआ । (न०) (सूर्य-चंद्र का) डूबना । अदृश्य होना । ह्रास । पतन । नाश । अंत । कुंडली में लग्न से सातवाँ स्थान ।—**करुण**—(वि०) दयाहीन, निठुर ।—**गमन**— (न०) डूबना । लोप । मृत्यु ।—**धी**-(वि०) मूर्ख ।—**व्यस्त**—(वि०) इधर-उधर, गड़बड़ ।—**संख्य**—(वि०) असंख्य ।

अस्तक—(पुं०) [अस्त+णिच्+ण्वुल्] मोक्ष ।

अस्तमन—(न०) [√अन्+अप् (वा०) अस्तम्=अदर्शनस्य अनम्=गतिः] (सूर्य का) डूबना ।

अस्तमय—(पुं०) [अस्तम् ईयते गम्यतेऽस्मिन् इति अस्तम् इण्+अच्] (सूर्य का) डूबना । नाश । अन्त । ह्रास । पतन । ग्रसित होना ।

अस्ति—(अव्य०) [√अस्+श्तिप्] है, स्थिति, विद्यमानता, रहना ।—**नास्ति**—(अव्य०) सन्दिग्ध, कुछ सही कुछ गलत ।

अस्तित्व—(न०) [अस्ति+त्व] विद्यमानता, सत्ता ।

अस्तिमत्—(वि०) [अस्ति+मतुप्] धनी ।

अस्तु—(अव्य०) [√अस्+तुन्] जो हो । ऐसा हो । पीड़ा । असूया । बदनामी ।

अस्तेय—(न०) [न० त०] चोरी न करना, अचौर्य ।

अस्त्यान—(न०) [न० त०] भर्त्सना । कलङ्क, अपवाद । निन्दा ।

अस्त्र—(न०) [√अस्+ष्ट्रन्] फेंककर चलाये जाने वाले हथियार, बरछी, भाला, बाण आदि ।—**अगार,—आगार**—(**अस्त्रागार**) (न०) सिलहखाना, हथियारों का भण्डार ।—**कण्टक**—(पुं०)तीर, बाण ।—**चिकित्सक**—(पु०) चीर-फाड़ या शल्यक्रिया करने वाला, जर्राह ।—**चिकित्सा**—(स्त्री०) चीर-फाड़ का काम, जर्राही —**जीव,—जीविन्—धारिन्**—(पुं०) सिपाही ।—**निवारण**—(न०) अस्त्र के वार को रोकना ।—**बन्ध**—(पुं०) बाणों की अविराम वर्षा ।—**मंत्र**—(पुं०) किसी अस्त्र के छोड़ने या लौटाने के समय पढ़ा जाने वाला मंत्र विशेष ।—**मार्ज,—मार्जक**—(पुं०) अस्त्र साफ करने वाला । सिकलीगर ।—**युद्ध**—(न०) हथि

यारों की लड़ाई ।—लाघव–(न०) अस्त्र चलाने का कौशल ।—विद्–(वि०) अस्त्र-विद्या का जानने वाला ।—विद्या–(स्त्री०) —शास्त्र– (न०)—वेद–(पुं०) अस्त्रविद्या, धनुर्वेद ।—वृष्टि–(स्त्री०) अस्त्रों की वर्षा । —शिक्षा– (स्त्री०) अस्त्र-संचालन की शिक्षा, सैनिक अभ्यास ।

अस्त्रिन्—(वि०) [अस्त्र+इनि] अस्त्रों से लड़ने वाला । धनुर्धर ।

अस्त्री—(स्त्री०) [न० त०] स्त्री नहीं । व्याकरण में पुंल्लिंग और नपुंसकलिङ्ग ।

अस्थान—(वि०) [न० ब०] अति गहरा । (न०) [न० त०] बुरी या गलत जगह । अनुचित स्थान । अनुचित वस्तु । अनुचित अवसर, बेमौका ।

अस्थावर—(वि०) [न० त०] चर, हिलने-डुलने वाला, जो अचर न हो, जङ्गम ।

अस्थि—(न०) [√अस्+क्थिन्] हड्डी । फल का छिलका या गुठली ।—कृत्,—तेजस् —सम्भव,—सार,—स्नेह–(पुं०) गूदा ।—ज–(पुं०) गूदा । वज्र ।—तुण्ड–(पुं०) पक्षी, चिड़िया ।—धन्वन्–(पुं०) शिव का नाम ।—पञ्जर–(पुं०) हड्डियों का पिंजरा, ठठरी, कंकाल ।—प्रक्षेप–(पुं०) हड्डियों को गङ्गा या अन्य किसी तीर्थ के जल में डालने की क्रिया ।—भक्ष, भुक् (पुं०) हड्डी खाने वाला, कुत्ता ।—भङ्ग–(पुं०) हड्डी का टूट जाना ।—माला (स्त्री०) हड्डियों की माला । हड्डियों की पंक्ति ।—मालिन्–(पुं०) शिव का नाम ।—शेष– (वि०) जिसके शरीर में हड्डियाँ भर रह गई हों । बहुत दुबला ।—सञ्चय–(पुं०) शवदाह के बाद जली हुई हड्डियों को बटोरना । हड्डियों का ढेर ।—सन्धि–(पुं०) जोड़, ग्रन्थि-संयोग, पर्व ।—समर्पण–(न०) हड्डियों का गङ्गा प्रवाह ।—स्थूण—(पुं०) शरीर ।

अस्थिति—(स्त्री०) [न० त०] स्थिति या दृढ़ता का अभाव । (आलं०) शिष्टता का अभाव, अच्छे चालचलन का अभाव ।

अस्थिर—(वि०) [न० त०] जो स्थायी या दृढ़ न हो, चञ्चल ।

अस्पर्शन—(न०) [न० त०] असंसर्ग, किसी वस्तु का स्पर्श बचाना ।

अस्पष्ट—(वि०) [न० त०] जो साफ (समझने या देखने योग्य) न हो; "अस्पष्ट-ब्रह्मलिङ्गानि वेदान्तवाक्यानि' सन्दिग्ध ।

अस्पृश्य—(वि०) [न० त०] जो छूने योग्य न हो, अछूत । अपवित्र ।

अस्फुट—(वि०) [न० त०] अस्पष्ट । सन्दिग्ध । (न०) सन्दिग्ध भाषण ।—फल–(न०) सन्दिग्ध या अस्पष्ट परिणाम ।

अस्मद्—(वि०) [√अस्+मदिक्] आत्म-वाची सर्वनाम, देहाभिमानी जीव, मैं, हम ।

अस्मदीय—(वि०) [अस्मद्+छ—ईय] हमारा, हम लोगों का ।

अस्मन्त— (न०) चूल्हा ।

अस्मार्त—(वि०) [न० त०] जो स्मरण के भीतर न हो, स्मरणातीत कालवाची । आईन विरुद्ध, धर्म शास्त्र अर्थात् स्मृतियों के विरुद्ध । जो स्मार्त्त-सम्प्रदाय का न हो ।

अस्मि—(अव्य०) [√ अस्+मिन्] मैं; 'आसंसृतेरस्मि जगत्सु जातः' कि० ३,६ ।

अस्मिता—(स्त्री०) [अस्मि इत्यस्य भावः तल्]अहङ्कार । योगशास्त्रानुसार पाँच प्रकार के क्लेशों में से एक । द्रष्टा और प्रदर्शनशक्ति को एक मानना अथवा पुरुष (आत्मा) और बुद्धि में अभेद मानना । सांख्य में इसे मोह और वेदान्त में इसे हृदय-ग्रन्थि कहते हैं ।

अस्मृति—(स्त्री०) [न० त०] स्मरण शक्ति का अभाव, विस्मृति, भुलक्कड़पन ।

अस्र—(पुं०) [√अस्+रन्] कोना, कोण । सिर के बाल (न०) आँसू । रक्त । खून । —कण्ठ–(पुं०) तीर ।—ज–(न०) मांस । —प–(पुं०) खून पीने वाला राक्षस ।—पा –(स्त्री०) जोंक ।—मातृका–(स्त्री०) अन्न-रस, अर्द्ध-जीर्ण भुक्तद्रव्य ।

अस्व--(वि०) [न० त०] जीवनोपाय विहीन, अकिञ्चन, निर्धन, गरीब। [न० त०] निज का नहीं।

अस्वतंत्र--(वि०) [न० त०] आश्रित, पराधीन। नम्र, वश्य।

अस्वप्न--(वि०) [न० ब०] जागता हुआ, अनिद्रित। (पु०) देवता।

अस्वर--(पुं०) [न० त०] मन्द स्वर, धीमी आवाज। व्यञ्जन।

अस्वरम--(अव्य०) जोर से नहीं धीमी आवाज में।

अस्वर्ग्य--(वि०) [न० त०] जिससे स्वर्ग की प्राप्ति न हो।

अस्वस्थ-[न० त०] बीमार, रोगी, भला चंगा नहीं।

अस्वाध्याय--(वि०) [न० ब०] जिसने वेदाध्ययन आरम्भ न किया हो। जिसका यज्ञोपवीत संस्कार न हुआ हो। (पु०) [न० त०] अध्ययन में पड़ने वाला व्यवधान या रुकावट या अवकाश।

अस्वामिन्--(पुं०) [न० त०] जो किसी वस्तु का स्वामी या मालिक न हो। (वि०) [न० व०] जिसका कोई स्वामी या दावागीर न हो।--**विक्रय**-(पुं०) बिना मालिक की विक्री।

अस्वैरिन्--(वि०)[न० त०]परतंत्र, पराधीन।

√अह्--स्वा० पर० अक० फैलना। अह्नोति, अहिष्यति, आहीत्।

अह--(अव्य०) [√अह्+घञ् पृषो० नलोप] प्रशंसा। वियोग। दृढ़ सङ्कल्प, अस्वीकृत। भेजना। पद्धति का त्याग। बोधक अव्यय।

अहंयु--(वि०) [अहंकारोऽस्त्यस्य इति अहम्+यु] अभिमानी। क्रोधी। स्वार्थी।

अहत--(वि०) [न० त०]जो हत या चोटिल न हो। विना धुला हुआ, नवीन। बेदाग। स्वच्छ। जो हताश न हो। (पुं०) कोरा या अनधुला वस्त्र।

अहन्--(न०)[न जहाति सर्वथा परिवर्तमानत्वात् इति √हा कनिन् न० त०] दिवस (जिसमें रात भी शामिल है)। दिवस-काल। (समास के अन्त में अहन् का अह या अह्न हो जाता है)।--**कर**, (**अहस्कर**)-(पुं०) सूर्य।--**गण**, (**अहर्गण**)-(पुं०) दिनों का समूह। तीस दिन का मास।--**दिवम्** (**अहर्दिवम्**)-(अव्य०) नित्य प्रति। प्रतिदिन, दिनों दिन।--**निशम्**, (**अहर्निशम्**)-(अव्य०) दिन-रात।--**पति**, (**अहःपति या अहर्पति**)-(पुं०) सूर्य।----**बान्धव** (**अहर्बान्धव**), **मणि**, (**अहर्मणि**)-(पुं०) सूर्य।--**मुख**, (**अहर्मुख**) (न०) दिन का आरम्भ सवेरा।--**रात्र**, (**अहोरात्र**)-(पुं०) दिन और रात। दो सूर्योदयों के बीच का समय।--**शेष**, (**अहःशेष**)-(पुं० न०)सायंकाल, साँझ, शाम।

अहम्--(अ०य०)[√अह+अम्] मैं। आत्म-सम्बन्धी अभिमान, घमंड, अहंकार।--**अग्रिका**, (**अहमग्रिका**)-(स्त्री०) श्रेष्ठता के लिये होड़, प्रतिद्वन्द्विता। --**अहमिका** (**अहमहमिका**)-(स्त्री०) [अहम् अहम शब्दोऽस्त्यत्र वीप्सायां दित्वम् ठन् न टिलोपः] प्रतिद्वन्द्विता, स्पर्द्धा, ईर्ष्या। अहङ्कार। सैनिक स्पर्द्धाकारिता; 'अहमहमिकया प्रणामलालसानाम्' का०। --**कार**-(पुं०) अहङ्कार। आत्मश्लाघा। अभिमान। अंतःकरण की पाँच वृत्तियों में से एक (वेदांत, सांख्य०)। --**कारिन्**, (**अहङ्कारिन्**)-(वि०) घमंडी, अभिमानी। आत्माभिमानी, आत्मश्लाघी। --**कृति** (**अहंकृति**)-(स्त्री०) अहङ्कार, गर्व। --**पूर्व**-(वि०) प्रथम होने की अभिलाषा वाला।--**पूर्विका**, --**प्रथमिका**-(स्त्री०) स्पर्द्धा, प्रतिद्वन्द्विता। आत्मश्लाघा।--**भद्र**-(न०) अपने व्यक्तित्व को बहुत बड़ा समझना। --**भाव**-(पुं०) अभिमान, अहङ्कार।--**मति**-(स्त्री०) अविद्या, अन्य में अन्य के धर्म को दिखाने वाला ज्ञान। श्लाघा, अभिमान।

की प्राकृतिक शक्ति, चुम्बक शक्ति

आकर्षणी--(स्त्री०) [आकर्षण+ङीप्] लग्गी, ऊँचाई से फलफूल-पत्ती तोड़ने की लंबी और नोक पर मुड़ी हुई लकड़ी विशेष। शरीर पर अंकित की जाने वाली एक तरह की मुद्रा। एक प्राचीन सिक्का।

आकर्षिक--(वि०) [स्त्री०--**आकर्षिकी**] [आकर्ष+ठन्--इक] चुम्बक या अयस्कान्त पत्थर।

आकर्षिन्--(वि०) [आ√कृष्+णिनि] खींचने वाला।

आकलन--(न०) [आ√कल्+ल्युट्] पकड़। गणना। गिनती। इच्छा। अभिलाषा। पूछ-ताछ। समझ-बूझ।

आकल्प--(पुं०) [आ√कृप्+णिच्+घञ्] आभूषण। शृङ्गार, सजावट; 'आकल्पसारो रूपाजीवाजनः' दश०। पोशाक, परिच्छद। रोग, बीमारी।

आकल्पक--(पुं०) [आ√कृप्+णिच्+ण्वुल्] खेद पूर्वक स्मरण। मूर्च्छा। हर्ष या प्रसन्नता। अन्धकार। गाँठ या जोड़। मोह।

आकष--(पुं०) [आ√कष्+अच्] कसौटी।

आकुषिक--(वि०) [आकष+ठन्--इक] (कसौटी पर) जाँच या परीक्षा करने वाला।

आकस्मिक--(वि०) [स्त्री०--**आकस्मिकी**] [अकस्मात् भवः इत्यर्थे+ठक्, टिलोप, आदिवृद्धि] अचानक होने वाला, आशातीत। कारणहीन।

आकस्मिकतानिधि--(स्त्री०) [आकस्मिक+तल् ततः ष त०] वह निधि या कोश जिसमें से अकस्मात् उपस्थित होने वाली आवश्यकता आदि के लिये रुपया व्यय किया जा सके (कंटिनजेंसी फंड)।

आकांक्षा--(स्त्री०) [आ√काङ्क्ष्+अ] वाक्य में अर्थपूर्ति के लिये पदविशेष की आवश्यकता। इच्छा, चाह। अभिप्राय, तात्पर्य। अनुसन्धान। अपेक्षा।

आकाय--(पुं०) [आचीयते यस्मिन् इति आ √चि+घञ् कुत्व] निवासस्थान। चिता की अग्नि। चिता।

आकार--(पुं०) [आ√कृ+घञ्] शक्ल, स्वरूप। डीलडौल, कद। बनावट, गठन। चेष्टा। संकेत।--**गुप्ति**-(स्त्री०) मन के भावों को छिपाना। बनावट।

आकारण, (न०) **आकारणा**-(स्त्री०) [आ √कृ+णिच्+ल्युट्] [आ√कृ+णिच्+युच्] बुलाना, आमंत्रण। ललकार, चुनौती।

आकाल--अव्य० [अव्य० स०] काल पर्यन्त। (पुं०) [प्रा० स०] ठीक समय।

आकालिक--(वि०) (स्त्री०--**आकालिकी**] [अकाल+ठञ्] क्षणिक, शीघ्र नष्ट होने वाला। असामयिक, बे-मौसम।

आकाश--(पुं० न०) [आकाशन्ते सूर्यादयोऽत्र इति आ√काश्+घञ्] पंच महाभूतों में से प्रथम जो शब्द गुण वाला माना जाता है, आसमान, गगन, व्योम। आकाश तत्त्व। शून्य स्थान। शून्य अवकाश। ब्रह्म। प्रकाश। छिद्र। अभ्रक।--**ईश** (**आकाशेश**)-(पुं०) इन्द्र। (वि०) अनाथ जिसके पास आकाश को छोड़ अन्य कोई सम्पत्ति ही न हो।--**कक्षा**-(स्त्री०) क्षितिज।--**कल्प**-(पुं०) ब्रह्म।--**कुसुम**,--**पुष्प**-(न०) आसमान का फूल, अनहोनी बात।--**ग**-(पुं०) पक्षी।--**गा**-(स्त्री०) आकाशगंगा।--**चमस**-(पुं०) चन्द्रमा।--**जननी**-(स्त्री०) बाण चलाने के लिये प्राचीर में बने हुए छिद्र।--**जल**-(न०) मेह। ओस।--**दीप**,--**प्रदीप**-(पुं०) ऊँची बल्ली पर लटका कर जो दीपक कार्तिक मास में भगवान् लक्ष्मीनारायण की प्रसन्नता सम्पादनार्थ जलाया जाता है उसे आकाशदीप कहते हैं।--**निद्रा**-(स्त्री०),--**शयन**-(न०) खुली जगह में सोना।--**पथिक**-(पुं०) सूर्य।--**भाषित**-(न०) किसी नाटक के अभिनय में कोई पात्र जब बिना किसी प्रश्नकर्त्ता के आकाश की ओर देखकर, आप ही आप प्रश्न करता

और आप ही उसका उत्तर देता है, तब ऐसे प्रश्नोत्तर को आकाशभाषित कहते हैं।—यान-(न०) व्योमयान, हवाई जहाज।—रक्षिन्-(पुं०) राजप्रासाद की चारदीवारी पर का चौकीदार।—वल्ली-(स्त्री०) अमरबेल।—वाणी-(स्त्री०) देववाणी, वह वाणी जिसका बोलने वाला न देख पड़े।—स्फटिक-(पुं०) ओला।

आकिञ्चन, आकिञ्चन्य-[अकिञ्चन+अण्] [अकिञ्चन+ष्यञ्] दरिद्रता, धनहीनता, गरीबी।

आकीर्ण—[आ√कॄ+क्त] बिखरा हुआ, फैला हुआ, व्याप्त; 'आकीर्णमृषिपत्नीनामुटजद्वाररोधिभि:' र० १.५०।

आकुञ्चन—(न०) [आ√कुञ्च्+ल्युट] सिकोड़ना। फैले हुए को एकत्र करने की क्रिया। टेढ़ा होना। वैज्ञानिक मत के अनुसार पाँच कर्मों में से एक।

आकुल—(वि०) [आ√कुल्+क] व्याप्त, सङ्कुल, भरा हुआ। व्यग्र, व्यस्त। उद्विग्न, क्षुब्ध। विह्वल, कातर, अस्वस्थ। (न०) आबाद जगह।

आकुलित—(वि०) [आ√कुल्+क्त] आकुल। जोता हुआ। पंकिल किया हुआ। दुःखी, व्यग्र, उद्विग्न, विह्वल।

आकुणित—(वि०) [आ√कुण्+क्त] कुछ-कुछ सिकुड़ा हुआ। कुछ-कुछ सिमटा हुआ।

आकूत—(न०) [आ√कू+क्त] आशय, अभिप्राय। भाव। आश्चर्य। इच्छा। प्रेरणा

आकृति—(स्त्री०) [आ√कृ+क्तिन्] बनावट, गठन। मूर्त्ति, रूप। चेहरा, मुख। चेष्टा। २२ अक्षरों का एक वर्णवृत्त।—च्छत्रा-(स्त्री०) घोसा नाम की एक लता, घोपातकी।

आकृष्टि—(स्त्री०) [आ√कृष्+क्तिन्] खिंचाव, आकर्षण। मध्याकर्षण। (धनुष को) तानना या झुकाना।

आकेकर—(वि०) [आके अन्तिके कीर्यते इति √कॄ+अप्, टाप् आकेकरा दृष्टि: सा अस्ति अस्येत्यर्थे] अधमुँदा; 'निमीलदाकेकरलोलचक्षुषाम्' र० ८.५४।

आकोकेर—(पुं०) [?] मकर राशि।

आक्रन्द—(पुं०) [आ√क्रन्द्+घञ्] रुदन, रोना, चीखना। बुलाना, आह्वान करना। शब्द। मित्र, त्राणकर्त्ता। भाई। घोर संग्राम। रोने का स्थान। कोई राजा जो अपने मित्र राजा को अन्य राजा की सहायता करने से रोके।

आक्रन्दन—(न०) [आ√क्रन्द+ल्युट्] विलाप, रुदन। बुलाहट।

आक्रन्दिक—(वि०) [आक्रन्द+ठञ् वा ठक्—इक] रोने का शब्द सुन रोने के स्थान पर जाने वाला।

आक्रन्दित—[आ√क्रन्द्+क्त] गर्जता हुआ। फूट-फूटकर रोता हुआ। आह्वान किया हुआ। (न०) चिल्लाहट। गर्जन, दहाड़, नाद।

आक्रम (पुं०), **आक्रमण**-(न०) [आ√क्रम्+घञ्] [आ√क्रम्+ल्युट्] समीप आगमन। आक्रमण। घेरना। कब्जा करना। प्राप्त करना। पकड़ लेना। छाप लेना। भारी बोझ से लाद देने की क्रिया।

आक्रान्त—[आ√क्रम्+क्त] जिस पर हमला किया गया हो। पकड़ा हुआ। अधिकार में लिया हुआ। पराजित, हराया हुआ। ग्रसा हुआ, ग्रसित। प्राप्त। अधिकारभुक्त।

आक्रान्ति—(स्त्री०) [आ√क्रम्+क्तिन्] कब्जा करना। चढ़ जाना। पराभूत करना। मार डालना। आरोहण। शक्ति, सामर्थ्य, बल।

आक्रामक—(पुं०) [आ√क्रम्+ण्वुल्] आक्रमण करने वाला, हल्ला करने वाला।

आक्रीड (पुं०), **आक्रीडन** (न०) [आ√क्रीड्+घञ्] [आ√क्रीड्+ल्युट्] खेल, दिलबहलाव। प्रमोद-कानन, क्रीडावन, लीलोद्यान।

आक्रुष्ट—[आ√क्रुश्+क्त] तिरस्कृत, डाँटा-डपटा हुआ। अकोसा हुआ, शापित।

चिल्लाया हुआ। गर्जना किया हुआ। (न०) बुलावा। बुलाहट। प्रखर शब्द, गाली-गलौज भरी हुई वक्तृता या कथन।

आक्रोश--(पुं०), **आक्रोशन**-(न०) [आ √क्रुश+घञ्] [आ√क्रुश्+ल्युट्] पुकार, चिल्लाहट। धिक्कार, भर्त्सना, गाली। शाप, अकोसा। शपथ, सौगंध।

आक्लेद--(पुं०) [आ√क्लिद्+घञ्] नमी, तरी, छिड़काव।

आक्षद्यूतिक--(वि०) [स्त्री०--**आक्षद्यूतिकी**] [अक्षद्यूतेन निर्वृत्तम् इत्यर्थे अक्षद्यूत ठक्--इक, वृद्धि] जुए से समाप्त किया हुआ। जुए से उत्पन्न (विरोध या वैर आदि)।

आक्षपण--(न०) [आ√क्षप्+ल्युट्] व्रत, उपवास।

आक्षपाटिक--(पुं०) [अक्षपटे नियुक्तः इत्यर्थे ठक्--इक] जुए खाने का प्रबन्ध-कर्त्ता, जुए की हार-जीत का निर्णायक। न्यायकर्ता, निर्णायक।

आक्षपाद--(वि०) [स्त्री०--**आक्षपादी**] [अक्षपाद+अण्] अक्षपाद या गौतम का अनुयायी। (पुं०) न्यायशास्त्रवादी, नैयायिक।

आक्षार--(पुं०) [आ√क्षर्+णिच्+घञ्] आरोप, अपवाद, दोषारोप। (विशेष कर व्यभिचार का)।

आक्षारण--(न०), **आक्षारणा**--(स्त्री०) [आ√क्षर्+णिच्+ल्युट्] [आ√ क्षर्+णिच्+युच्] (दे०) 'आक्षार'।

आक्षारित--[आ√क्षर्+णिच्+क्त] कलङ्कित, बदनाम किया हुआ। दोषी, अपराधी।

आक्षिक--(वि०) [स्त्री०--**आक्षिकी**] [अक्षेण दीव्यति जयति जितं वा इति अक्ष+ठक्] पासों से जुआ खेलने वाला। जुए से सम्बन्ध रखने वाला। (न०) जुए में प्राप्त धन। जुए में किया हुआ ऋण।

आ√क्षिप्--फेंकना। टुकड़े-टुकड़े कर डालना। बीच में रोक लेना।

आक्षिप्त--(वि०) [आ√ क्षिप्+ क्त] फेंका हुआ। गिराया हुआ। निन्दित। अपवादित।

आक्षिप्तिका--(स्त्री०) [आ√ क्षिप्+क्त, टाप्, क, इत्व] तान वा राग विशेष जो किसी अभिनयपात्र द्वारा उस समय गाया जाय, जिस समय वह रंगमञ्च के समीप पहुँचे।

आक्षीव--(वि०) [आ√क्षीव्+क्त, नि०] नशे में चूर, मत्त। (पुं०) [आ√क्षीव्+णिच्+अच्] सहिजन का पेड़।

आक्षेप--(पुं०) [आ√क्षिप्+घञ्] फेंकना। उछालना। खींचना; 'अंशुकाक्षेपविलज्जितानाम्' कु० १.१४। कटूक्ति, धिक्कार, गाली, ताना। चित्त विक्षेप। प्रलोभन, प्ररोचन। चढ़ाना (जैसे रंग)। किसी ओर सङ्केत करना। (किसी शब्द का अर्थ) मान लेना। परिणाम निकाल लेना। अमानत, जमा, धरोहर। आपत्ति। ध्वनि। एक अलंकार (सा०)। एक वातरोग।

आक्षेपक--(पुं०) [आ√क्षिप्+ण्वुल्] फेंकने वाला। चित्त विक्षेपकारक। दोषी ठहराने वाला। शिकारी। एक वातरोग।

आक्षेपण--(न०) [आ√क्षिप+ल्युट्] आक्षेप करना।

आक्षोट, आक्षोड-(पुं०) [आ√अक्ष्+ओट आ ओड ततः स्वार्थे अण्] अखरोट का वृक्ष।

आक्षोडन--(न०) [आ√क्षोड्+ल्युट्] शिकार।

आख, आखन-(पुं०) [आ√खन्+ड] [आ√खन्+घ] खंती। कुदाली।

आखण्डल--(पुं०) [आखण्डयति भेदयति पर्वतान् इति आ√खण्ड्+डलच्, डस्य नेत्वम्] इन्द्र; 'आखण्डलः काममिदम्बभाषे' कु० ३.११।

आखनिक--(पुं०) [आ√खन्+इकन्] बेलदार, खान खोदने वाला। चूहा। शूकर। चोर। कुदाल।

आखर--(पुं०) [आ√खन्+डर] कुदाल। वेलदार, खान खोदने वाला।

आखात--(पुं० न०) [आ√खन्+ णिच्+क्त] झील, ऐसा जलाशय जो किसी मनुष्य का वनाया हुआ न हो।

आखान--(पुं०) [आ√खन्+घञ्] वह जो चारों ओर खोदे। कुदाल। वेलदार।

आखु--(पुं०) [आ√खन्+ड] चूहा। छछूंदर। चोर। शूकर। कुदाल। कंजूस; 'विभवेसतिनैवात्ति न ददाति जुहोति न, तमाहुराखुः'। **--उत्कर** (**आखूत्कर**)-(पुं०) वल्मीक, मृत्तिकाकूट। **--उत्थ** (**आखूत्थ**) -(न०) चूहों का समुदाय। **--ग,--पत्र,--रथ,--वाहन**- (पुं०) श्रीगणेश की उपाधि जिनका वाहन चूहा है। **--घात**-(पुं०) मुसहर, चूहड़ा। **-- पाषाण**--(पुं०) चुम्वक पत्थर, संखिया-। **-- भुज्,--भुज**-(पुं०) विल्ला, विलार।

आखेट--(पुं०) [आखिट्यन्ते त्रास्यन्ते प्राणिनः अत्र इति आ√खिट्+घञ्] शिकार, अहेर। **--शीर्षक**-(न०) चिकना फर्श या जमीन। खान। विवर। गुफा।

आखेटक--(न०) [आखेट+कन्] शिकार, मृगया। (वि०) [आ√खिट्+ण्वुल्] शिकार खेलने वाला। (पुं०) शिकारी।

आखोट--(पुं०) [आखः खनित्रम् इव उटानि पर्णानि अस्य व० स०] अखरोट का वृक्ष।

आख्या--(स्त्री०) [आख्यायतेऽनया इति आ√ख्या+अङ] नाम, उपाधि।

आख्यात--[आ√ख्या+क्त] कथित, कहा हुआ। गिना हुआ। पढ़ा हुआ। जाना हुआ, ज्ञात। (व्याकरण में) साधन किया हुआ, धातुओं के रूप वनाये हुए। (न०) क्रिया। --'भावप्रधानमाख्यातम्।'--निरुक्त।

आख्याति--(स्त्री०) [आ√ख्या+क्तिन्] कथन। सूचना, विज्ञप्ति। नामवरी, नाम।

आख्यान--(न०) [आ√ख्या+ल्युट्] कथन। घोषणा। विज्ञप्ति, सूचना। पूर्ववृत्तोक्ति। कहानी, किस्सा। उत्तर ('प्रश्नाख्यानयोः' पाणिनि अष्टाध्यायी।)।

आख्यानक--(न०) [आख्यान+कन्] किस्सा, छोटी कहानी, कथानक, उपाख्यान।

आख्यायक--(वि०) [आ√ख्या+ण्वुल्] कहने वाला। (पुं०)हल्कारा। राजकीय घोषणा करने वाला या उत्सवादि की व्यवस्था करने वाला।

आख्यायिका--(स्त्री०) [आख्यायक+टाप्, इत्व] एक प्रकार की गद्यमयी रचना, कहानी। [साहित्यज्ञों ने गद्य-रचना के दो भेद वतलाये हैं, अर्थात् कथा और आख्यायिका, वतलाये हैं, अर्थात् कथा और आख्यायिका, वाण के 'हर्षचरित' को ऐसे लोग 'आख्यायिका' मानते हैं और कादम्वरी को कथा। यद्यपि दण्डिन् के मतानुसार इन दोनों में भेद कुछ भी नहीं है।--'तत्कथाख्यायिकेत्येका जातिः संज्ञाद्वयाङ्किता।'--काव्यादर्श।

आख्यायिन्--(वि०) [आ√ख्या+णिनि] कहने वाला, जताने वाला।

आख्येय--[आ√ख्या+यत्] कहने योग्य, वतलाने योग्य, जताने योग्य।

आगति--(स्त्री०) [आ√गम्+क्तिन्] आगमन। प्राप्ति, उपलव्धि। प्रत्यावर्तन। उत्पत्ति।

आगन्तु--(वि०) [आ√गम्+तुन्] आया हुआ, पहुँचा हुआ। वाहर से आया हुआ, वाहरी। आकस्मिक। भूला-भटका, पथभ्रान्त। (पुं०) नवागत, अपरिचित, मेहमान।

आगन्तुक--(वि०) [स्त्री०--**आगन्तुका,--आगन्तुकी**] [आगन्तु+कन्] अपनी इच्छा से आया हुआ, विना वुलाये आया हुआ। भूला-भटका या घूमता-फिरता आया हुआ। आकस्मिक। प्रक्षिप्त। (पुं०) अनाहूत या अनधिकार प्रवेश करने वाला व्यक्ति। अपरिचित, मेहमान, अतिथि।

आगम--(पुं०) [आ√गम्+घञ्] आना, आगमन। उपलव्धि, प्राप्ति। जन्म, उत्पत्ति।

(धन की) प्राप्ति। बहाव, धारा (पानी की)। लिखित प्रमाण। ज्ञान। आमदनी, आय। वैध उपाय से प्राप्त कोई वस्तु। सम्पत्ति की वृद्धि। परम्परागत सिद्धान्त या विधि, शास्त्र। पवित्रज्ञान। विज्ञान। वेद। (न्याय के) चार प्रकार के प्रमाणों में से अन्तिम प्रमाण। उपसर्ग, विभक्ति या प्रत्यय। किसी अक्षर का संयोग या मिलावट। साक्षिपत्र। सिद्धान्त। आने वाला समय। उपक्रम। शब्द-साधन में किसी वर्ण की वृद्धि।—**निरपेक्ष**–(वि०) साक्षिपत्र की अपेक्षा न रखने वाला।—**वृद्ध**–(त्रि०) प्रकाण्ड विद्वान्। यथा—'प्रतीप इत्यागमवृद्धसेवी।'—रघुवंश।

आगमन—(न०) [आ√गम्+ल्युट्] आना, अवाई। प्रत्यावर्तन। उपलब्धि, प्राप्ति। उत्पत्ति।

आगमिन्—(वि०) [आगम+इनि] आने वाला, भविष्य का। सामुद्रिक जानने वाला। शास्त्र-ज्ञाता।

आगवीन—(वि०) [गोः प्रत्यर्पण-पर्यन्तं यः कर्म करोति स आगवीनः आ—गो+ख—ईन] गौओं के लौटाने तक काम करने वाला।

आगस—(न०) [√इण्+असुन्, आगादेश] कसूर, अपराध। पाप।—**कृत्**–(वि०) अपराध करने वाला, अपराधी, दोषी।

आगस्ती—(स्त्री०) [अगस्त्यस्य इयम् इत्यर्थे अगस्त्य+अण्, यलोप, ङीप्] दक्षिण दिशा।

आगस्त्य—(वि०) [अगस्त्य+यञ्, यलोप] अगस्त-संबंधी। दक्षिणी।

आगन्तु—(पुं०) [आ√गम्+तुन्, नि० वृद्धि] अतिथि, मेहमान।

आगाध—(वि०) [अगाध+अण् (स्वार्थे)] अत्यन्त गहरा, अथाह।

आगामिक—(वि०) [स्त्री०—**आगामिकी**] [आगामिन्+कन् (वस्तुतः आगामिक—आगम+ठक्)] भविष्य काल सम्बन्धी। आने वाला (आसन्न)।

आगामिन्—(वि०) [आ√गम्+णिनि] आने वाला। भावी।

आगामुक—(वि०) [आ√गम्+उकञ्] आने वाला। भविष्य का।

आगार—(न०) [√अग् (तिरछे चलना) +घञ्, आगम् ऋच्छति इति√ऋ+अण्] घर। स्थान। भांडार।—**गोधिका**–(स्त्री०) छिपकली।

आगुर—(स्त्री०) [आ√गुर्+क्विप्] स्वीकारोक्ति, हामी, स्वीकृति, प्रतिज्ञा।

आगुरण,—आगूरण–(न०) [आ√गुर्+ल्युट्, पृषो० गुणाभाव] [आ√गूर्+ल्युट्] गुप्त प्रस्ताव या सूचना।

आगू—(स्त्री०) [आ√गम्+क्विप्, म लो ऊकारादेश] इकरार, प्रतिज्ञा।

आग्नापौष्ण—(वि०) अग्नापूषणौ देवते अस्य इति विग्रहे अण्] अग्नि और पूषा देवता की भेंट या चरु। इसी नाम का एक वैदिक अध्याय या अनुवाक।

आग्नावैष्णव—(वि०) [अग्नाविष्णु देवते अस्य इति विग्रहे अण्] अग्नि और विष्णु देवता की भेंट या चरु। इसी नाम का एक वैदिक अध्याय या अनुवाक।

आग्निक—(वि०) [स्त्री०—**आग्निकी**] अग्नि+ठक्—इक] आग सम्बन्धी। यज्ञीय अग्नि सम्बन्धी।

आग्निमारुत—'वि०) [अग्नामरुतौ देवते अस्य इति विग्रहे अण्] अग्नि और मरुत् देवता की भेंट या चरु।

आग्नीध्र—(पुं०) [अग्निम् इन्धे अग्नीत् तस्य शरणम् इत्यर्थे+रण् भत्वान्न जश्] हवन करने वाला। मनुवंशोद्भव महाराज प्रियव्रत का पुत्र। (न०) [अग्नीध्र—अण्] यज्ञाग्नि जलाने का स्थान।

आग्नेय—(वि०) [स्त्री०—**आग्नेयी**] अग्नि देवता अस्ति अस्य इत्यर्थे अग्नि)+ ढक्—एय] अग्नि सम्बन्धी, अगिया। अग्नि को चढ़ाया हुआ। (पुं०) कार्तिकेय या

स्कन्द की उपाधि । (न०) कृत्तिका नक्षत्र । सुवर्ण । खून, रक्त । घी । आग्नेयास्त्र ।

आग्नेयी—(स्त्री०) [आग्नेय+ङीप्] अग्नि की पत्नी । पूर्व और दक्षिण के बीच वाली दिशा ।

आग्न्याधानिकी—(स्त्री०) [अग्न्याधानस्य यज्ञस्य दक्षिणा इत्यर्थे अग्न्याधान+ठञ्—इक] यज्ञ की दक्षिणा जो ब्राह्मण को दी जाती है ।

आग्रभोजनिक—(पुं०) [अग्रभोजनं नियतं दीयते अस्मै इत्यर्थे अग्रभोजन+ठञ्—इक] ब्राह्मण जो प्रत्येक भोज में सब के आगे या प्रथम बैठने का अधिकारी है ।

आग्रयण—(न०) [अग्रे अयनं भोजनं शस्यादेः येन कर्मणा पृषो० ह्रस्वदीर्घ-व्यत्ययः] वर्षा, शरत् या वसंत में नये अन्न से किया जाने वाला श्रौत यज्ञ । अग्नि का एक रूप । (पं०) अग्निष्टोम में सोम की प्रथम आहुति ।

आग्रह—(पुं०) [आ√ग्रह्+अच्]पकड़, ग्रहण । आक्रमण । सङ्कल्प । प्रगाढ़ अनुराग । कृपा, अनुग्रह ।

आग्रहायण—(पुं०) [आग्रहायणी अस्ति अस्मिन् मासे इत्यर्थे अण्] मार्गशीर्ष मास ।

आग्रहायणक, आग्रहायणिक—(पुं०) [आग्रहायण+कन्] [आग्रहायणी पौर्णमासी यस्मिन् मासे इत्यर्थे ठक्—इक] मार्गशीर्ष या अगहन मास ।

आग्रहायणी—(स्त्री०) [अग्रे, हायनमस्याः इति विग्रहे अग्रहायन+अण्, ङीप्] मार्गशीर्ष मास की पूर्णिमा, अगहनी पूनो । मृगशिरा नक्षत्र का नाम ।

आग्रहारिक—(वि०) [स्त्री०— आग्रहारिकी] [अग्रहारोऽग्रभागो नियतं दीयतेऽस्मै इत्यर्थे ठक्—इक] नियमानुसार प्रथम भाग पाने वाला । (पुं०) प्रथम भाग पाने योग्य ब्राह्मण श्रेष्ठ ब्राह्मण ।

आघट्टना—(स्त्री०) [आ√घट्ट्+णिच्+युच्] हिलना या काँपना । रगड़ । संसर्ग । संघर्षण; 'रणद्भिराघट्ट नयानभस्वतः' शि० १.१० ।

आघर्ष—(पुं०), **आघर्षण**- (न०) [आ√घृष्+घञ्] [आ√घृष्+ल्युट्] रगड़ । मालिश । ताड़न ।

आघाट—(पुं०) [आ√हन्+घञ्, पृषो० तस्य टः] सीमा, हद्द ।

आघात—(पुं०) [आ√हन् +घञ्]ताड़न । चोट । प्रहार । घाव । दुर्भाग्य, बदकिस्मती । विपत्ति । कसाईखाना, वधस्थान ।—'आघातं नीयमानस्य ।'—हितोपदेश ।

आघार—(पुं०) [आ√घृ+घञ्] छिड़काव । विशेष कर हवन के समय अग्नि पर घी का छिड़काव । घी ।

आघूर्णन—(न०) [आ√घूर्ण +ल्युट्] लोटना । उछाल । चक्कर । तैरना ।

आघोष—(पुं०) [आ√घुष्+घञ्] बुलाहट, आमंत्रण, आह्वानकरण ।

आघोषण (न०), **आघोषणा**-(स्त्री०) [आ√ घुष्+ल्युट्][आ√ घुष्+णिच्+युच्] ढिंढोरा, राजाज्ञा की घोषणा ।

आघ्राण—(न०) [आ√घ्रा+क्त] सूँघना । अघाना, सन्तुष्ट होना ।

आङ्गार—(न०) [अङ्गाराणां समूहः इत्यर्थे अङ्गार अण्] अंगारों का ढेर ।

आङ्गिक—(वि०) [स्त्री०—**आङ्गिकी**] [अङ्गेन निर्वृत्तम् इत्यर्थे अङ्ग+ठक्]शारीरिक, दैहिक । हाव-भाव-युक्त । (पं०) तबलची या मृदंगची ।

आङ्गिरस—(पुं०) [अङ्गिरसः अपत्यम् इत्यर्थे अङ्गिरस् +अण्] वृहस्पति का नाम । अंगिरस का पुत्र ।

आङ्गूष—(पुं०)[अङ्गूष+अण् (स्वार्थे)], प्रशंसा । स्तुति । वैदिक गीत । गीत ।

आचक्षुस्—(पुं०) [आ√चक्ष्+उसि (वा०)] विद्वान्, पण्डित ।

आचम—(पुं०) [आ√चम्+घञ्] कुल्ला, आचमन ।

आचमन—(न०) [आ√चम्+ल्युट्] जल से मुख साफ करने की क्रिया । किसी धर्मानुष्ठान के आरम्भ में दाहिने हाथ की हथेली में जल रखकर पीने की क्रिया ।

आचमनक—(न०) [आचमनस्य कं जलम् अत्र ब० स०] पीकदान ।

आचय—(पुं०) [आ√चि+अच्] चुनना । इकट्ठा करना । जमाव, भीड़ । ढेर, समूह ।

आचरण—(न०) [आ√चर्+ल्युट्] अनुष्ठान; 'अधीतिबोधाचरण प्रचारणैः' नैप० १.४ । व्यवहार, बर्ताव । चाल-चलन । चलन, प्रचलन पद्धति । स्मृति ।—**पञ्जी**-स्त्री०,—**पुस्तक**(न०) वह पुस्तक (पंजी) जिसमें कर्मचारी के आचरण, व्यहार, कर्त्तव्य-पालन इत्यादि से सम्बन्ध रखने वाली बातें समय-समय पर लिखी जाती हैं (कांडक्टबुक) ।

आचान्त—(वि०) [आ√चम्+क्त] आचमन या कुल्ला किये हुए । आचमन करने योग्य (जल) ।

आचाम—(पुं०) [आ√चम्+घञ्] आचमन, कुल्ली । जल या गर्म जल का उफान ।

आचार—(पुं०) [आ√चर्+घञ्] चाल-चलन, चरित्र, चाल-ढाल । रीति-रिवाज, चलन, पद्धति । सदाचार । शील ।—**पतित**, **भ्रष्ट**—(वि०) दुराचारी, अशिष्ट ।—**पूत**—(वि०) सदाचार के अनुष्ठान से पवित्र ।—**लाज**—(पुं० बहु०) खीलें जो राजा या किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के ऊपर बरसायी जाती हैं—(उसके प्रति सम्मान-प्रदर्शनार्थ ।)—**वेदी**—(स्त्री०) आर्यावर्त देश का नाम ।

आचारिक—(वि०) [आचार+ठक्—इक] आचार सम्बन्धी । प्रामाणिक, पद्धति या नियम से समर्थित ।

आचारिन्—(वि०) [आचार+इनि] शुद्ध आचार वाला ।

आचार्य—(पुं०) [आ√चर्+ण्यत्] (साधारणतः) शिक्षक या गुरु । उपनयनसंस्कार के समय गायत्री मंत्र का उपदेश देने वाला । गुरु, वेद पढ़ाने वाला । जब यह किसी के नाम के पूर्व लगता है (यथा आचार्य वासुदेव) तब इसका अर्थ होता है, विद्वान्, पण्डित । अंगरेजी के "डाक्टर" शब्द का यह प्रायः समानार्थवाची शब्द भी है ।—**मिश्र**(वि०) माननीय, पूज्य ।

आचार्यक—(न०) [आचार्यस्य कर्म भावो वा इत्यर्थे आचार्य+वुञ्—अक] शिक्षा । पाठन, पढ़ाना । आध्यात्मिक गुरु का गुरुत्व । आचार्य का काम; 'लङ्कास्त्रीणाम् पुनश्चक्रे विलापाचार्यकं शरैः' र० १२.७८ ।

आचार्यानी—(स्त्री०) [आचार्य+ङीप्, आनुक्] आचार्य की पत्नी ।

आचित—[आ√चि+क्त] परिपूरित, भरा हुआ । लदा हुआ । ढका हुआ । बंधा हुआ । ओतप्रोत । सञ्चित, एकत्र किया हुआ । (पुं०) गाड़ी भर बोझ (न० भी है) । दस गाड़ी भर की तौल, अर्थात् ८० हजार तोला ।

आचूषण—(न०) [आ√चूष्+ल्युट्] चूसना । चूस कर उगल देना । सिंघी लगाना ।

आच्छाद—(पुं०) [आ√छद्+णिच्+घञ्] वस्त्र, पहनावा ।

आच्छादन—(न०) [आ√छद्+णिच्+ल्युट्] ढकना । छिपाना । ढक्कन, खोल, गिलाफ, वस्त्र, पहनावा । छाजन, ठाट । लोप

आच्छुरित—(वि०) [आ√छुर्+क्त] मिश्रित । खुरचा हुआ । जलन पैदा करता हुआ । (न०) नखों को एक दूसरे पर रगड़कर बाजे की तरह बजाने की क्रिया । अट्टहास ।

आच्छुरितक—(न०) [आच्छुरित+कन् नाखून का खरोंचा, नखक्षत । अट्टहास । सशब्द हास ।

आच्छेद (पुं०), **आच्छेदन**–(न०) [आ√छिद्+घञ्] [आ√छिद्+ल्युट्] काटना, नश्तर लगाना । जरा-सा काटना ।

आच्छोटन—(न०) [आ–स्फुट् +ल्युट्, पृषो०] उँगलियाँ चटकाना ।

आच्छोदन—(न०) [आ√छिद्+ल्युट्, पृषो० इत ओत्] शिकार, आखेट, मृगया ।

आजक—(न०) [अजानां समूहः इत्यर्थे अज +वुञ्] बकरों का झुंड ।

आजगव—(न०) [अजगव+अण् (स्वार्थे)] शिव का धनुष ।

आजनन—(न०) [आ√जन्+ल्युट्] कुलीनता, उच्चवंशोद्भवता । प्रसिद्ध कुल या वंश ।

आजान–(पुं०) [आ√जन्+घञ्] उत्पत्ति, जन्म । जन्मस्थान । वंश । (अव्य०) [जन+अण्–जान, आ जान अव्य० स०] सृष्टि-काल से ।

आजानेय– (वि०) [स्त्री०—**आजानेयी**] [आजे विक्षेपेऽपि आनेयः अश्ववाहो यथास्थानमस्य इति विग्रहे व० स०] अच्छी जाति का (जैसे घोड़ा) । निर्भीक, निर्भय ।—(पुं०) अच्छी जाति का घोड़ा ।

आजि—(पुं०) [√अज्+इण्] युद्ध, लड़ाई । रण-क्षेत्र; 'शस्त्राण्याजौ नयनसलिलं चापि तुल्यं मुमोच' वे० ३.६ ।

आजीव (पुं०), **आजीवन**–(न०) [आ√जीव्+घञ्] [आ√जीव्+ल्युट्] आजीविका, रोजी, पेशा । जीविका का उपाय । राजकर (कौ०) । उचित आय ।

आजीविका—[आ√जीव्+ अ +कन्, टाप्, अत इत्वम्] रोजी । रोजगार, धंधा ।

आजू, आजूर्—(स्त्री०) [आ√जू+क्विप्] [आ√ज्वर्+क्विप्, ऊठ्] बेगारी । नरकवास ।

आज्ञप्ति—(स्त्री०) [आ√ज्ञा+णिच्, पुक्, ह्रस्व+क्तिन्] आज्ञा, आदेश, हुक्म । दीवानी मुकदमे में न्यायालय द्वारा किसी के पक्ष में दिया गया निर्णय (डिक्री) । किसी उच्चाधिकारी या परिषद् आदि का वह आदेश जो किसी व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में हो तथा जिसका मानना आवश्यक हो ।

आज्ञा—(स्त्री०) [आ√ज्ञा+अङ्, टाप्] आदेश, हुक्म । अनुमति, इजाजत ।—**अनुग**, —**अनुगामिन्** ,—**अनुयायिन्**,—**अनुवर्तिन्**, —**अनुसारिन्**,—**सम्पादक**,—**वह**— (त्रि०) आज्ञाकारी, आज्ञा मानने वाला ।

आज्ञापन—(न०) [आ√ज्ञा+णिच्–पुक् ल्युट्] हुक्म देना । जताना ।

आज्य—(न०) [आ√ अञ्ज्+क्यप्, नलोप] घी ।—**पात्र**–(न०)—**स्थाली**– (स्त्री०) वर्तन जिसमें घी रखा जाय ।—**भुज्**–(पुं०) अग्नि का नाम । देवता ।

आञ्चन—(न०) [आ√अञ्च् +ल्युट्] शरीर से काँटे या तीर को थोड़ा-सा खींचकर निकालने की क्रिया ।

√आञ्छ् भ्वा० पर० सक० लंबा करना, चढ़ाना । ठीक करना, बैठाना, (जैसे हड्डी का) आञ्छति, आञ्छिष्यति, आञ्छीत् ।

आञ्छन—(न०) [√आञ्छ्–ल्युट्] (हड्डी या टाँग को) बराबर या ठीक करना या बैठाना ।

आञ्जन—(न०) [अञ्जनी+अण्] अंजन । (पुं०) हनुमान; 'दाशरथिबलैरिवाञ्जननीलनलपरिगतप्रान्तैः' का० ।

आञ्जनेय—(पुं०)[अञ्जनी+ढक्–एय] हनुमान का नाम ।

आटविक—(पुं०) [अटव्यां चरति भवो वा इत्यर्थे अटवी+ठक्–इक] वनरखा, वनवासी । अग्रगन्ता, सेना का एक भेद ।

आटि—(पुं० स्त्री०) [आ√अट्+इण्] शरारि पक्षी। एकप्रकार की मछली। [इसका "आटी" भी रूप होता है। आटि+ङीप्।]

आटीकन—(न०) [आ√टीक्+ल्युट्] बछड़े की उछल-कूद।

आटीकर—(पुं०) [?] बैल, साँड़।

आटोप—(पुं०) [आ√तुप्+घञ्, पृषो० टत्वम्] अभिमान। आडंबर। सूजन। फैलाव। पेट में गुड़गुड़ाहट होना।

आडम्बर—(पुं०) [आ√डम्ब्+अरन्] अभिमान, मद, औद्धत्य। दिखावट। बाह्य उपाङ्ग। बिगुल या तुरही की आवाज, जो आक्रमण की सूचक हो। आरम्भ, शुरुआत। रोष, क्रोध। हर्ष, आनन्द। बादलों की गर्जन। हाथियों की चिंघार। लड़ाई में बजाया जाने वाला ढोल। युद्ध का कोलाहल या गर्जन-तर्जन।

आडम्बरिन्—(वि०) [आडम्बर+इनि] आडंबर करने वाला।

आढक—(पुं० न०) [आ√ढौक्+घञ् पृषो०]चार सेर का वजन या माप। द्रोण नामक तौल का चतुर्थांश।

आढ्य—(वि०) [आ√ध्यै+क पृषो०] धनी, धनवान्। सम्पन्न। विपुल। —**चर**—(पुं०) जो एक बार धनी हो।

आढ्यंकरण—(वि०) [आढ्य√कृ+ख्युन्, मुम्] धनवान् करने या बनाने वाला।

आणक—(वि०) [अणक+अण् (स्वार्थे)] नीच, ओछा। दुष्ट। (न०) मैथुन करने का आसन विशेष।

आणव—(वि०) [स्त्री०—**आणवी**] (अणु+अण् (स्वार्थे)] बहुत ही छोटा। (न०) [अणु+अण् (भावे)] बहुत ही छोटापन या अत्यन्त सूक्ष्मता।

आणि—(पुं० स्त्री०) [√अण्+इण्] गाड़ी की धुरी की कील। घुटने के ऊपर का भाग। सीमा, हद्द। तलवार की धार। कोना।

आण्ड—(वि०) [अण्ड+अण्] अण्डज। वे जीव जो अंडे से उत्पन्न होते हैं। (पुं०) हिरण्यगर्भ या ब्रह्मा की उपाधि। (न०) अंडों का ढेर। अण्डकोश की थैली।

आण्डीर—(वि०) [आण्ड+ईरच्] बहुत से अंडों वाला। बढ़ा हुआ, पूर्णवय:प्राप्त। (जैसे साँड़)

आतङ्क—(पुं०) [आ√तङ्क्+घञ्] रोग। शारीरिक रोग। पीड़ा, मानसिक कष्ट। भय, डर। ढोल या तबले का शब्द। —**युद्ध**—(न०) प्रचारादि द्वारा ऐसा आतंक उत्पन्न करना जिसमें शत्रु-पक्ष का नैतिक साहस छिन्न-भिन्न हो जाय और बिना शस्त्रादि का प्रयोग किये ही उसे पराजित करने में आसानी हो। (वार ऑफ नर्व्ज)।

आतञ्चन—(न०) [आ√तञ्च्+ल्युट्] दूध को जमाने के लिये जामन देना। जामन। प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना। भय। खतरा रफ्तार, गति।

आतत—(वि०) [आ√तन्+क्त] फैला हुआ। बिछा हुआ। छाया हुआ। बढ़ा हुआ। ताना हुआ (जैसे धनुष की प्रत्यंचा)

आततायिन्—(पुं०) [आततेन विस्तीर्णेन शस्त्रादिना अयितुं शीलमस्य इत्यर्थे आतत√अय्+णिनि] शस्त्र उठा कर किसी का वध करने को उद्यत। हत्यारा। दारुण अपराध करने वाला। महापापी; 'आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्' मनु०। शुक्र नीति में छः प्रकार के आततायी बतलाये गये हैं। यथा—आग लगाने वाला, विष खिलाने वाला, शस्त्र हाथ में लिये किसी का वध करने को उद्यत, धन का चोर, खेत को हरने वाला और स्त्रीचोर। "अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रोन्मत्तो धनापहः। क्षेत्रदारहरश्चैतान् षड् विद्यादाततायिनः॥"

आतप—(पुं०) [आ√तप+घञ्] सूर्य अथवा आग की गर्मी, घाम । प्रकाश ।—उदक, (आतपोदक)–(न०) मृगतृष्णा ।—त्र,—त्रक–(न०) छाता, छत्र ।—लंघन–(न०) लपट का लगना, लू का लगना ।—वारण–(न०) छाता ।—शुष्क—(त्रि०) धूप में सूखा हुआ ।

आतपन—(पुं०) [आ√तप्+णिच्+ल्यु] शिव का नाम ।

आतर, आतार—(पुं०) [आ√तॄ+अप्] [आ√तॄ+घञ्] नाव की उतराई या पुल का महसूल, खेवा ।

आतर्पण—(न०) [आ√तृप्+ल्युट्] सन्तोष । प्रसन्नता । दीवाल पर सफेदी पोतना, फर्श लीपना ।

आतापि—(पुं०) [अ√तप्+इण्] एक असुर जिसे अगस्त्य ने चबा डाला था ।

आतापिन्, आतायिन्—(पुं०) [आ√तप्+णिनि] [आ√ताय्+णिनि] चील पक्षी ।

आतिथेय—(वि०) [स्त्री०–**आतिथेयी**] [अतिथि+ढञ्—एय] अतिथि के योग्य, अतिथि के लिये उपयुक्त; 'प्रत्युज्जगामातिथिमातिथेयः' र० ५.२ । (न०) मेहमानदारी, अतिथि का सत्कार, पहुनाई ।

आतिथ्य—(वि०) [अतिथि+ष्यम्] पहुनई के योग्य । (न०) पहुनई, मेहमानदारी ।

आतिदेशिक—(वि०) [स्त्री०—**आतिदेशिकी**] [अतिदेश+ठक्] (व्याकरण में) अतिदेश से सम्बन्ध रखने वाला ।

आतिरेक्य,, आतिरैक्य—(न०) [अतिरेक+ष्यञ्, पक्षे उभयपद-वृद्धि] विपुलता, अधिकाई । फालतूपन ।

आतिवाहिक—(वि०) [अतिवाह+ठक्] इस लोक से परलोक ले जाने का काम करने वाला । (पु०) मृतात्मा को नियत स्थान में ले जाने वाला देव विशेष ।

आतिशय्य—(न०) [अतिशय+ष्यञ् (स्वार्थे)] आधिक्य, बहुतायत, ज्यादती ।

आतु—(पुं०) [√अत्+उण्] लकड़ी या लट्ठों का बेड़ा, घरनई या चौघड़ा ।

आतुर—(वि०) [आ√अत्+उरच्] चोटिल, घायल । रोगी, दुःखी । पीड़ित । शरीर या मन का रोगी । उत्सुक । अधीर, बेचैन; 'रावणावरजा तत्र राघवं मदनातुरा' र० १२.३२ । निर्बल, कमजोर ।—**शाला**–(स्त्री०) अस्पताल ।

आतोद्य, आतोद्यक—(न०) [आ√तुद्+ण्यत्] [आतोद्य+कन्] एक प्रकार का बाजा । नारद की वीणा ।

आत्त—(वि०) [आ√दा+क्त] लिया हुआ, प्राप्त । स्वीकार किया हुआ, माना हुआ । इकरार किया हुआ । आकर्षण किया हुआ । निकाला हुआ । खींचकर बाहर निकाला हुआ ।—**गन्ध**–(वि०) शत्रु ने जिसके अहङ्कार को दूर कर डाला हो, शत्रु से पराजित । सूंघा हुआ ।—**गर्व**–(वि०) नीचा दिखलाया हुआ, तिरस्कृत ।

आत्मक—(वि०) [आत्मन्+कन्] बना हुआ । ढंग या स्वभाव का ।

आत्मकीय, आत्मीय—(वि०) [आत्मक+छ—ईय] [आत्मन्+छ—ईय] अपना, अपने से सम्बन्ध रखने वाला ।

आत्मन्—(पुं०) [√अत्+मनिण्] आत्मा, जीव । परमात्मा । मन । बुद्धि । मननशक्ति । स्फूर्त्ति । मूर्त्ति । शक्ल । पुत्र । "आत्मा वै पुत्रनामासि" । उद्योग । सूर्य । अग्नि । पवन । सार । विशेषता । स्वभाव । प्रकृति । पुरुष या समस्त शरीर ।—**अधीन**, (**आत्माधीन**)–(वि०) स्वावलम्बी, स्वतंत्र ।—**आधीन**, (**आत्माधीन**)–(पुं०) पुत्र । साला । विदूषक, मसखरा ।—**अनुगमन**, (**आत्मानुगमन**)–(न०) अपने पीछे चलना, स्वकीय अनुसरण ।—**अपहारक** (**आत्मापहारक**)–(पुं०)

पाखंडी। बहुरूपिया।--आराम, (आत्माराम)-(वि०) ज्ञान-प्राप्ति का प्रयासी, अध्यात्मविद्या का खोजी। अपने आत्मा में प्रसन्न रहने वाला।--आशिन्, (आत्माशिन्)-(पुं०) मछली जो अपने बच्चों को खा जाया करती है।--आश्रय, (आत्माश्रय)-(पुं०) आत्म-निर्भरता। सहज ज्ञान। (वि०) अपने ऊपर निर्भर रहने वाला।--उद्भव, (आत्मोद्भव)-(पुं०) पुत्र। कामदेव। --उद्भवा, (आत्मोद्भवा)-(स्त्री०) पुत्री। --उपजीविन्, (आत्मोपजीविन्)--(पुं०) अपने परिश्रम से उपार्जित आय पर रहने वाला व्यक्ति। दिन में काम करने वाला मजदूर। अपनी पत्नी की कमाई खाने वाला। नाटक का पात्र।--कथा-(स्त्री०) अपनी जीवन-कहानी। स्वलिखित जीवन-चरित। --काम-(वि०) आत्माभिमानी, अहङ्कारी। केवल ब्रह्म या परमात्मा की भक्ति करने वाला।--गुप्ति-(स्त्री०) गुफा। माँद।--ग्राहिन्-(वि०) स्वार्थी। लालची।--घात-(पुं०) आत्महत्या। धर्मविरोध।--घातिन्--घातक-(वि०) आत्महत्या करने वाला। धर्मविरोधी।--घोष-(पुं०) मुर्गा, कुक्कुट। काक, कौवा।--ज,--जन्मन्, --जात,--प्रभव,--सम्भव-(पुं०) पुत्र। कामदेव।--जा-(स्त्री०) पुत्री। तर्कशक्ति। समझने की शक्ति या समझ। बुद्धि। ‍...य - (पुं०) अपने आपको जीतना, जितेन्द्रियत्व।--ज्ञ,--विद्-(पुं०) आत्मज्ञानी। ऋषि।--ज्ञान-(न०) आत्मा और परमात्मा सम्बन्धी ज्ञान। सत्यज्ञान।--तत्त्व-(न०) जीव आत्मा अथवा परमात्मा का स्वरूप या रहस्य।--त्याग (पुं०) आत्मोत्सर्ग, दूसरे की भलाई के लिये अपनी हानि करना। आत्मनाश, आत्मघात।--त्यागिन्-(वि०) आत्महत्या करने वाला। स्वधर्मत्यागी।--त्राण-(न०) आत्मरक्षा।--दर्श-(पुं०) दर्पण, आईना; 'प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः र० ७.६८। --दर्शन-(न०) अपना दर्शन करना। आत्मज्ञान। सत्य ज्ञान।--द्रोहिन्-(वि०) अपने ऊपर अत्याचार करने वाला। आत्मघाती।--धारणभूमि-(स्त्री०) वह अधीन राज्य या भूमि जिसकी शासन-व्यवस्था वहीं की सेना और सम्पत्ति से हो जाय।--नित्य-(वि०) अत्यन्त प्रिय।--निरीक्षण --(न०) अपने को देखना-समझना व अपने भावों, वृत्तियों, त्रुटियों, दोषों को जानने-समझने का प्रयत्न।--निवेदन-(न०) अपने आप को समर्पण करना, आत्मसमर्पण। --निष्ठ-(वि०) आत्मा में निष्ठा रखने वाला। सदैव आत्मविद्या की खोज में रहने वाला।--प्रशंसा-(स्त्री०) अपने मुँह अपनी तारीफ करना।--बन्धु,--बान्धव-(पुं०) अपने नातेदार। [धर्मशास्त्र में नातेदारों के अन्तर्गत इतने लोगों की गणना है। आत्ममातुः स्वसुः पुत्रा आत्मपितुः स्वसुः सुताः। आत्ममातुलपुत्राश्च विज्ञेया ह्यात्मबान्धवाः॥ अर्थात् मौसी का पुत्र, बुआ का पुत्र और मामा का पुत्र।]--बोध-(पुं०) आत्मज्ञान। आध्यात्मिक ज्ञान। --भू, --योनि-(पुं०) ब्रह्मा का नाम। विष्णु का नाम। शिव का नाम। कामदेव। पुत्र।--भू-(स्त्री०) पुत्री। प्रतिभा। बुद्धि।--मात्रा-(स्त्री०) परमात्मा का एक अंश।--मानिन्-(वि०) आत्म-सम्मान रखने वाला। अभिमानी।--याजिन् (वि०) जो अपने लिये या अपने को बलि दे। सब में अपने को देखने वाला, आत्म-दर्शी।--लाभ-(पुं०) जन्म, उत्पत्ति।--वञ्चक-(वि०) अपने आपको धोखा देने वाला।--वध-(पुं०) अपने हाथों अपना वध, खुदकुशी, आत्मघात।--वश-(वि०) जिसका अपने आप पर शासन हो। आत्म-संयमी।--विद्-(पुं०) बुद्धिमान पुरुष, ज्ञानी।--विद्या-(स्त्री०) आध्यात्मिक विद्या। --विस्मृति-(स्त्री०) अपने को भूल जाना, सुध-बुध न रहना।--वीर-(पुं०) पुत्र। पत्नी

का भाई, साला। (नाट्यशास्त्र में) विदूषक। —वृत्ति-(स्त्री०) हृदय की परिस्थिति; 'विस्माययन् विस्मितमात्मवृत्तौ' र० २.३३। —शक्ति-(स्त्री०) अपनी सामर्थ्य।—श्लाघा,—स्तुति-(स्त्री०) अपनी बड़ाई, शेखी, डींग।—**संयम**-(पुं०) अपने मन, इंद्रियादि को वश में रखना, आत्मवशत्व।—**समर्पण** अपने को (पुलिस, शत्रुसेना आदि के हाथ) सौंप देना। हथियार डाल देना।—**समुद्भव, सम्भव**-(पुं०) पुत्र। कामदेव। ब्रह्मा। विष्णु। शिव की उपाधि।—**समुद्भवा—सम्भवा**-(स्त्री०) पुत्री। वुद्धि।—**सम्पन्न**-(वि०) स्वस्थ। धीरचेता। वुद्धिमान्। प्रतिभाशाली।—**हन्**-(त्रि०) आत्मघाती। अपना भला न देखने वाला। धर्मविरोधी।—**हनन**-(न०)—**हत्या**- (स्त्री०) आत्मघात, खुदकुशी।—**हित**—(वि०) अपना लाभ, अपना फ़ायदा।

आत्मना—(अव्य०) स्वयमर्थक रूप से उसका प्रयोग होता है। यथा—'अथ चास्तमिता त्वमात्मना।—रामायण।

आत्मनीन—(वि०) [आत्मन्+ख—ईन] निज से सम्बन्ध रखने वाला, निज का, अपना। आत्महितकर। (पुं०) पुत्र। साला। विदूषक।

आत्मनेपद—(न०) [आत्मने आत्मार्थफल-वोधनाय पदम् अलुक् सं०] संस्कृत व्याकरण में धातु में लगने वाले दो तरह के प्रत्ययों में से एक। आत्मनेपद प्रत्यय के लगने से बनी हुई क्रिया।

आत्मम्भरि—[आत्मानं बिभर्ति इति विग्रहे आत्मन्√भृ+इन् मुम् नि०] जो अकेला अपने को पाले। जो बिना देवता, पितर और अतिथि को निवेदन किये भोजन करे; 'आत्मम्भरिस्त्वम् पिशितैर्नराणाम्' भट्टि० २.३३। पेटू, स्वार्थी।

आत्मवत्—(वि०) [आत्मन्+मतुप्] धृतात्मा, संयत, धीरचेता। वुद्धिमान्।

आत्मवत्ता—(स्त्री०) [आत्मवत् +तल्, टाप्] धीरता, धृतात्मता, आत्म-संयम। वुद्धिमत्ता।

आत्मसात्—(अव्य०) [आत्मन्+साति] अपने अधिकार में, अपने वश में।

आत्यन्तिक—(वि०) [स्त्री०—**आत्यन्तिकी**] [अत्यन्त+ठक्—इक, वृद्धि] लगातार, अविरत। अनन्त। स्थायी, अविनाशी। बहुत, अतिशय, सर्वाधिक। प्रधान। महान्। सम्पूर्ण, बिल्कुल।

आत्ययिक—(वि०) [स्त्री०—**आत्ययिकी**] [अत्यय+ठक्—इक, वृद्धि] नाशकारी। पीड़ाकारी, दुःखद। अमाङ्गलिक, अशुभ। जरूरी, अत्यन्त आवश्यक।

आत्रेय—(वि०) [अत्रि+ढक्—एय, वृद्धि] अत्रि-संबंधी। अत्रि से या उनके गोत्र में उत्पन्न। (पुं०) अत्रि का पुत्र। अत्रि का वंशज।

आत्रेयिका—(स्त्री०) [आत्रेयी+कन्, टाप्, ह्रस्व] (दे०) 'आत्रेयी'।

आत्रेयी—(स्त्री०) [आत्रेय+ङीप्] अत्रि के वंश में उत्पन्न स्त्री। अत्रि की पत्नी। [न सन्ति त्रिदिनानि कर्मयोग्यानि यस्याः न० व० डच् ततः स्वार्थे ढञ्—एय, वृद्धि, ङीप्] रजस्वला स्त्री।

आथर्वण—(वि०) [स्त्री०—**आथर्वणी**] [अथर्वन्+अण्] अथर्ववेद से निकला हुआ या अथर्ववेद का। (पुं०) अथर्वण वेद को जानने वाला ब्राह्मण। अथर्वण वेद। अथर्व-वेदोक्त कर्म कराने वाला पुरोहित।

आथर्वणिक—(पु०) [अथर्वन्+ठक्] अथर्वण वेद पढ़ा हुआ ब्राह्मण।

आदंश—(पुं०) [आ√दंश्+घञ्] दाँत। काटने की क्रिया। काटने से पैदा हुआ घाव।

आदर—(पुं०) [आ√दृ+अप्] सम्मान, प्रतिष्ठा, मान, इज्जत; 'न जातहार्देन न

विद्विषा दरः' कि० १.३३ । ध्यान, मनोयोग, मनोनिवेश । उत्सुकता, अभिलाषा । उद्योग प्रयत्न । आरम्भ, शुरुआत । प्रेम, अनुराग ।

आदरण—(न०) [आ√दृ+ल्युट्] आदर-सत्कार करना ।

आदर्श—(पुं०) [आ√दृश्+घञ्] दर्पण, आईना । मूल ग्रन्थ जिससे नकल की जाय । नमूना, बानगी । प्रतिलिपि । टीका, भाष्य, व्याख्या ।

आदर्शक—(पुं०) [आदर्श+कन्] दर्पण, आईना, शीशा ।

आदर्शन—(न०) [आ√दृश्+णिच्+ल्युट्] दिखावट दिखाने के लिये सजावट । दर्पण ।

आदहन—(न०) [आ√दह्+ल्युट्] जलन । चोट । हनन । तिरस्कार । श्मशान ।

आदान—(न०) [आ√दा+ल्युट्] ग्रहण, लेना; 'कुशाङ्कुरादानपरिक्षताङ्गुलिः' कु० ५.११ । अर्जन, प्राप्ति । (रोग का) लक्षण । बाँधना । अश्वसज्जा ।

आदायिन्—(वि०)[आ√दा+णिनि] लेने, पाने वाला । लेने का इच्छुक ।

आदि—(वि०) [आ√दा+कि] प्रथम, प्रारम्भिक । मुख्य, प्रधान । आदिकाल का । (पुं०) आरम्भ । मूलकारण । परमेश्वर । सामीप्य । —**अन्त** (आद्यन्त)– (वि०) जिसका आरम्भ और समाप्ति हो, शुरू और आखीर वाला । (न०) आरम्भ और समाप्ति । —**कर**,—**कर्तृ**,—**कृत्**–(पुं०) सृष्टिकर्त्ता, ब्रह्मा की एक उपाधि ।—**कवि**–(पुं०)ब्रह्मा । वाल्मीकि ।—**काण्ड**–(न०) वाल्मीकि रामायण का प्रथम अर्थात् बालकाण्ड ।—**कारण**–(न०) सृष्टि का मूलकारण । (सांख्यवाले प्रकृति को और नैयायिक पुरुष को आदि कारण मानते हैं) ।—**काव्य**–(न०) वाल्मीकि रामायण ।—**देव**–(पुं०) नारायण या विष्णु । सूर्य । शिव ।—**दैत्य**– (पुं०) हिरण्यकशिपु की उपाधि ।—**पर्वन्**–(न०) महाभारत के प्रथमपर्व का नाम ।—**पुराण**–(न०) ब्रह्मपुराण ।—**पुरुष**, —**पूरुष**–(पुं०) विष्णु, नारायण ।—**बल**–(न०) जननशक्ति ।—**भव**—(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि । विष्णु का नाम । ज्येष्ठ भ्राता ।—**मूल**– (न०) आदिकारण ।—**रस**–(पुं०) शृंगार (सा०) । —**राज**–(पुं०) पृथु । मनु ।—**वराह**– (पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधि ।—**शक्ति** (स्त्री०) महामाया । दुर्गा ।—**सर्ग**–(पुं०) प्रथम सृष्टि ।

आदितः—(अव्य०) [आदि+तसि] प्रथमतः, अव्वलन ।

आदितेय—(पुं०) [अदित्याः अपत्यम् इत्यर्थे अदिति+ढक् एय, वृद्धि] अदिति का पुत्र । देवता ।

आदित्य—(पुं०) [अदिति+ण्य] अदिति का पुत्र । देवता । द्वादश आदित्य । (जो ये माने जाते हैं—धाता, मित्र, अर्यमा, रुद्र, वरुण, सूर्य, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता, त्वष्टा और विष्णु) । सूर्य । विष्णु का पाँचवाँ (वामन) अवतार ।—**मण्डल**–(न०) सूर्य का घेरा ।—**सूनु**–(पुं०) सूर्यपुत्र । सुग्रीव का नाम । यम । शनिग्रह । कर्ण का नाम । सावर्णि नाम के मनु । वैवस्वत मनु ।

आदित्सु—(वि०) [आ√दा+सन्+उ] ग्रहणेच्छुक, लेने की इच्छा वाला ।

आदिन्—(वि०) [√अद् णिनि] खाने वाला ।

आदिष्ट—(वि०) [आ√दिश्+क्त] आदेश पाया हुआ । जिसको आज्ञा दी गई हो, आज्ञप्त ।

आदिष्टिन्—(पुं०) [आदिष्ट+इनि] शिष्य । उत्तम ब्राह्मण ।

आदिम—(वि०) [आदि+डिमच्] प्रथम, आदिकालीन ।

आदीनव––(पु०) [आ√दी+क्त] आदीनस्य वानं प्राप्तिः इति विग्रहे आदीन√वा +क] दुर्भाग्य । क्लेश । अपराध ।

आदीपन––(न०) [आ√दीप्√ णिच्+ ल्युट्] आग में जलाना । भड़काना । किसी उत्सव के अवसर पर दीवाल की पुताई और फर्श की लिपाई ।

आदृत––[आ√दृ+क्त] सम्मानित, आदर किया हुआ ।

आदेय––(वि०) [आ√दा+यत्] ग्रहण करने योग्य । (पु०) वह लाभ जो विना कठिनाई के प्राप्त हो, अच्छी तरह रखा जाय और शत्रु जिसे छीन न सके ।

आदेवन––(न०) [आ√दिव्+ल्युट्] जुआ । पासा । पासा खेलने का स्थान या विसात ।

आदेश––(पुं०) [आ√दिश+घञ्] आज्ञा, हुक्म । निर्देश । विवरण । सलाह । भविष्यद्वाणी । व्याकरण में अक्षरपरिवर्तन; 'धातोः स्थान इवादेशः सुग्रीवं संन्यवेशयत् र० १२.५।

आदेशिन्––(वि०) [आ√दिश् +णिनि] आज्ञा देने वाला, हुक्म देने वाला । उभाड़ने वाला, उकसाने वाला । (पुं०) आज्ञा देने वाला, सेनापति । ज्योतिषी ।

आदेष्टृ––(वि०) [आ√ दिश्+तृच्] आज्ञा देने वाला । यज्ञ कराने वाला ।

आद्य––(वि०) [आदौ भवः इत्यर्थे आदि+ यत्] आदि का । प्रथम, पहला । प्रधान, मुख्य, अगुआ । (न०) आरम्भ । अनाज, भोज्य पदार्थ ।––**कवि**–(पुं०) वाल्मीकि ।

आद्या––(स्त्री०) [आद्य+टाप्] दुर्गा की उपाधि । मास की प्रथम तिथि, प्रतिपदा ।

आद्यून––(वि०) [आ√दिव्+क्त, ऊठ्, नत्व] पेटू, भूखा । [आदिना ऊनः तृ त०'] आदि से रहित ।

आद्योत––(पुं०) [आ√द्युत्+घञ्] प्रकाश चमक ।

आधमन––(न०) [आ√धा+कमनन्] अमानत, बंधक । बिक्री के माल की बनावटी चढ़ी हुई दर ।

आधमर्ण्य––(न०) [अधमर्ण+ष्यञ्] कर्जदारी ।

आधर्मिक––(वि०) [अधर्मं चरति इति विग्रहे अधर्म+ठञ्] बेईमान, अन्यायी ।

आधर्ष––(पुं०) [आ√धृष+घञ्]तिरस्कार। बरजोरी की हुई चोट ।

आधर्षण––(न०) [आ√धृष्+ल्युट्] सजा, दण्ड । खण्डन । चोटिल करना ।

आधर्षित––[आ√धृष्+क्त] चोटिल किया हुआ । बहस में हराया हुआ । सजायाफ्ता, दण्डित ।

आधान––(न०) [आ√धा+ल्युट्]रखना । ऊपर रखना । लेना, प्राप्त करना । फिर से लेना, वापिस लेना । हवन के अग्नि को स्थापित करना । बनाना । भीतर डालना । देना । पैदा करना । बंधक, धरोहर, अमानत ।

आधानिक––(पुं०) [आधान+ठञ्] गर्भाधान संस्कार ।

आधार––(पुं०) [आ√धृ+घञ्] आश्रय, आसरा, सहारा, अवलंब । व्याकरण में अधिकरण कारक । थाला, आलवाल । पात्र । नीव, बुनियाद, मूल । (योगशास्त्र में वर्णित) मूलाधार । बाँध । नहर ।

आधि––(पुं०) [आ√धा+कि] मन की पीड़ा । शाप, अकोसा । विपत्ति; 'यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः' श० ४.१७ । बंधक, धरोहर । स्थान । आवासस्थान । धर्मचिंता । आशा ।––**पाल**–(पुं०) धरोहर का रक्षा-प्रबंध करने वाला राजकर्मचारी ।––**भोग**– (पुं०) धरोहर की चीज का उपयोग ।––**मन्यु** (पुं०) ज्वर का ताप ।––**मोचन**–(न०)बंधक छुड़ाना ।––**व्याधि**–(पुं०) मन और शरीर की पीड़ा

।—स्तेन—(पुं०) बंधक धरी हुई वस्तु का, बिना वस्तु के मालिक की अनुमति के भोग करने वाला ।

आधिकरणिक—(पुं०) [अधिकरणे नियुक्तः इत्यर्थे अधिकरण+ठक्—इक, वृद्धि] न्यायाधीश (जज) ।

आधिकारिक—(वि०) [स्त्री०—**आधिकारिकी**] [अधिकार+ठञ्] सर्वप्रधान, सर्वोत्कृष्ट । सरकारी दफ्तर सम्बन्धी ।

आधिक्य—(न०) [अधिक+ष्यञ्] बहुतायत, अधिकता, ज्यादती । सर्वोत्कृष्टता, सर्वोपरिता ।

आधिदैविक—(वि०) [स्त्री०—**आधिदैविकी**] [देवान् अग्निवाय्वादीन् अधिकृत्य निर्वृत्तम् इत्यर्थे अधिदेव+ठञ्, द्विपदवृद्धि] देवताकृत । देवताओं द्वारा प्रेरित । यक्ष, देवता, भूत, प्रेत आदि द्वारा होने वाला । प्रारब्ध से उत्पन्न ।

आधिपत्य—(न०) [अधिपति+ष्यञ्]प्रभुत्व, स्वामित्व, अधिकार। राजा के कर्त्तव्य या राज्य, यथा—'पाण्डोः पुत्रं प्रकुरुष्वाधिपत्ये ।' —महाभारत ।

आधिभौतिक—(वि०) [स्त्री०—**आधिभौतिकी**] [अधिभूत+ठञ्, द्विपदवृद्धि] व्याघ्र, सर्पादि जीवों द्वारा कृत (पीड़ा), जीव अथवा शरीर-धारियों द्वारा प्राप्त । पंचभूतों से संबद्ध या उनसे उत्पन्न ।

आधिराज्य—(न०) [अधिराज+ष्यञ्] राजकीय आधिपत्य । सर्वोपरि प्रभुत्व; 'बभौ-भूयः कुमारत्वादाधिराज्यमवाप्य सः' र० १७.३० ।

आधिवेदनिक—(न०) [अधिवेदनाय विवाहोपरि विवाहाय हितम् इत्यर्थे अधिवेदन+ठक्—इक्, आदिवृद्धि] प्रथम स्त्री का धन जो पुरुष द्वारा दूसरी स्त्री से विवाह करने पर उसे दया जाय, विष्णु स्मृति में लिखा है—'यच्च द्वितीयविवाहार्थिना पूर्वस्त्रियै पारितोषिकं धनं दत्तं तदाधिवेदनिकम्' ।

आधुत—(वि०) [आ√धु+क्त] कँपाया हुआ, हिलाया हुआ । चालित । क्षुब्ध ।

आधुनिक—(वि०) [स्त्री०—**आधुनिकी**] [अधुना भवः इत्यर्थे अधुना+ठञ्] अब का, हाल का, आजकल का । साम्प्रतिक, वर्त्तमान काल का, इदानीन्तन ।

आधूत—(वि०)[आ√धू+क्त]दे० 'आधुत' ।

आधोरण—(पुं०) [आ√धोर्+ल्यु]हाथी-सवार अथवा महावत ।

आध्मान—(न०) [आ√ध्मा+ल्युट्]धौंकनी से धौंकना । फूँकना । (आलं०) बाढ़ । शेखी, डींग । पेट का फूलना । जलंधर रोग ।

आध्यात्मिक—(वि०) [स्त्री०—**आध्यात्मिकी**] [अध्यात्म+ठञ्] आत्मासम्बन्धी । मन से उत्पन्न (दुःख, शोक) ।

आध्यान—(न०) [आ√ध्यै+ल्युट्]चिन्ता, फिक्र । शोकमय स्मृति । ध्यान ।

आध्यापक—(पुं०) [अध्यापक + अण् (स्वार्थे)] शिक्षक । दीक्षागुरु ।

आध्यासिक—(वि०)[स्त्री०—**आध्यासिकी**] [अध्यासने कल्पितः इत्यर्थे अध्यास+ठक्] अध्यास से उत्पन्न ।

आध्वनिक—(वि०) [स्त्री०—**आध्वनिकी**] [अध्वनि व्यापृतः कुशलो वा इत्यर्थे अध्वन +ठक्] यात्री, यात्रा करने में चतुर । यात्रा करने वाला ।

आध्वर्यव—(वि०) [स्त्री०—**आध्वर्यवी**] [अध्वर्यु+अञ्] अध्वर्यु सम्बन्धी अथवा यजुर्वेद से सम्बन्ध रखने वाला । (न०)यज्ञ में अध्वर्यु का कार्य ।

आन—(पुं०) [आ√अन्+क्विप्, ततः अण्] स्वाँस लेना, वायु को भीतर खींचना । फूँकना ।

आनक—(पुं०) [√अन्+णिच्+ण्वुल्] नगाड़ा, बड़ा ढोल । गरजने वाला बादल ।

—दुन्दुभि–(पुं०)श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव की उपाधि ।—दुन्दुभि,—दुन्दुभी–(स्त्री०) बड़ा ढोल, नगाड़ा ।

आनति–(स्त्री०)[आ√नम्+क्तिन्] झुकना । प्रणाम । सम्मान । आतिथ्य, अतिथि-सत्कार ।

आनद्ध—(वि०) [आ√नह्+क्त] बँधा हुआ, गसा हुआ । कोष्ठबद्ध । (पुं०)ढोल । पोशाक । बनाव-सिंगार, सजावट ।

आनन—(न०) [आ√अन्+ल्युट्] मुँह, चेहरा । अध्याय । परिच्छेद ।

आनन्तर्य—(न०) [अनन्तर+ष्यञ् (भावे)] व्यवधान-रहित होने का भाव । [ष्यञ् (स्वार्थे)] अनन्तर, समीप ।

आनन्त्य—(न०)[अनन्त+ष्यञ् (भावे स्वार्थे वा)] असीमत्व । अनन्तत्व । अमरत्व । ऊर्ध्वलोक, स्वर्ग ।

आनन्द—(पुं०) [आ√नन्द्+घञ्] हर्ष, सुख, प्रसन्नता । ईश्वर । ब्रह्मा । शिव का नाम ।—**कानन,—वन**–(न०) काशीपुरी।—**पट**–(पुं०) नवोढ़ा का वस्त्र ।—**पूर्ण**–(वि०) परमानन्द से भरा हुआ ।(पुं०) परब्रह्म ।—**प्रभव**–(पुं०) वीर्य, धातु । विश्व ।

आनन्दथु—(वि०) [आ√नन्द्+अथुच्] प्रसन्न, हर्षपूर्ण ।(पुं०) प्रसन्नता, हर्ष ।

आनन्दन—(वि०) [आ√नन्द्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्न करने वाला, आनन्दित करने वाला । (न०)[आ√नन्द्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्न करना, आनन्दित करना । प्रणाम करना, नमस्कार करना । आते-जाते समय मित्रों का शिष्टोचित कुशल प्रश्नादि पूछ कर उपचार करना ।

आनन्दमय—(वि०) [आनन्द + मयट् (प्राचुर्ये)] आनंद से भरा हुआ, हर्षपूर्ण । (पुं०)परब्रह्म ।—**कोष**–(पुं०) शरीर के पाँच कोषों में से एक ।

आनन्दि—(पुं०) [आ √ नन्द् + इन्] प्रसन्नता, हर्ष । कौतूहल ।

आनन्दिन्—(वि०) [आनन्द+इनि] प्रसन्न हर्षित । [आ√नन्द्+णिच्+णिनि] प्रसन्न करने वाला ।

आनय—(पुं०) [आ√नी+अच्] उपनयन संस्कार । लाना ।

आनर्त—(पुं०) [आ√नृत्+घञ्]नाचघर, नृत्यशाला, रंगभूमि । युद्ध, लड़ाई । सौराष्ट्र देश का दूसरा नाम अर्थात् काठियावाड़ । सूर्यवंशी एक राजा का नाम, जो राजा शर्याति का पुत्र था । जल ।

आनर्थक्य—(न०) [अनर्थक + ष्यञ्] निरर्थकता, बेकारपन । अयोग्यता ।

आनाय—(पुं०) [आ √नी+घञ्] जाल ।

आनायिन्—(पुं०) [आनाय+इनि]मछुआ, धीवर, मल्लाह; 'आनायिभिस्तामपकृष्टनक्राम्' र० १६.५५ ।

आनाय्य—(पुं०) [आ√नी+ण्यत्, आयादेश नि०] दक्षिणाग्नि ।

आनाह—(पुं०)[आ√नह्+घञ्] बंधन । कोष्ठबद्धता, कब्जियत ।(वस्त्र की)चौड़ाई या अर्ज ।

आनिल—(वि०)[स्त्री०—**आनिली**][अनिल+अण्] वायु से उत्पन्न, वातल । (पुं०) हनुमान् । भीम । स्वाति नक्षत्र ।

आनिलि—(पुं०) [अनिल+इञ्]हनुमान् या भीम का नाम ।

आनील—(वि०) [प्रा० स०] कलौंहा, हल्का नीला । (पुं०) काला घोड़ा ।

आनुकूलिक—(वि०) [स्त्री०—**आनुकूलिकी**] [अनुकूल+ठक्] उपयुक्त । सुविधाजनक । एकसा ।

आनुकूल्य—(न०) [अनुकूल+ष्यञ्] अनुकूलता; 'यत्रानुकूल्यं दम्पत्योस्त्रिवर्गस्तत्र वर्धते' । अनुग्रह, कृपा ।

आनुगत्य—(न०) [अनुगत+ष्यञ्] अनुगत होना । परिचय, जानपहचान । हेलमेल ।

आनुगुण्य--(न०) [अनुगुण+ष्यञ्] अनुकूलता, उपयुक्तता। समानता, बराबरी।

आनुग्रामिक--(त्रि०) [स्त्री०-**आनुग्रामिकी**] [अनुग्राम+ठञ्] ग्राम संबंधी, देहाती, ग्रामीण।

आननासिक्य--(न०) [अनुनासिक+ष्यञ्] अनुनासिकता।

आनुपदिक--(वि०) [स्त्री०--**आनुपदिकी**] [अनुपद+ठक्] पीछा करने वाला, अनुगमन करने वाला। अध्ययन करने वाला।

आनुपातिक--(वि०) [अनुपात+ठक्]अनुपात संबंधी।--**प्रतिनिधित्व**-(न०) विधानसभा आदि के चुनाव की वह प्रणाली जिसके अनुसार सभी दलों को, उन्हें प्राप्त हुए कुल मतों के अनुपात से, प्रतिनिधित्व दिये जाने की व्यवस्था की जाती है (प्रपोरशनल रिप्रजेंटेशन)।

आनुपूर्व, **आनुपूर्व्य**--(न०),-**आनुपूर्वी**-(स्त्री०) [पूर्वमनुक्रम्य अनुपूर्वम् तस्य भावः इत्यर्थे अण्, ष्यञ्, ततो वा ङीप् यलोपः]। एक के बाद एक होना, सिलसिला। वर्णक्रम।

आनुपूर्वे--**आनुपूर्वेण**, --**आनुपूर्व्य**, --**आनुपूर्व्येण**--(अव्य०) एक के बाद दूसरा, यथाक्रम।

आनुमानिक--(वि०) [स्त्री०-**आनुमानिकी**] अनुमान+ठक्] अनुमान प्रमाण से सम्बन्ध रखने वाला। *अनुमानलभ्य* । अटकल-पच्चू (न०) सांख्य शास्त्र में कहा गया प्रधान।

आनुयात्रिक--(पुं०) [अनुयात्रा+ठक्] अनुयायी, चाकर।

आनुरक्ति--(स्त्री०) [आ-अनु√रञ्ज्+क्तिन्] प्रीति, अनुराग।

आनुलोमिक--(वि०) [स्त्री०--**आनुलोमिकी**] [अनुलोम+ठक्] क्रमानुयायी, क्रम से काम करने वाला। अनुकूल।

आनुलोम्य--(न०) [अनुलोम+ष्यञ्] स्वाभाविक क्रम, ठीक क्रम। क्रमानुगत क्रम। अनुकूलता।

आनुवेश्य--(पुं०) [अनुवेश+ष्यञ्] वह पड़ोसी जिसका घर अपने घर से दूसरा (प्रतिवेशी के बाद) हो, अपने घर के समीप ही रहने वाला पड़ोसी।

आनुश्रविक--(वि०) [गुरुपाठादनुश्रयते अनुश्रवो वेदः तत्र विहितः इत्यर्थे अनुश्रव+ठक्] जिसको परंपरा से सुनते चले आये हों। (पुं०) वेद में विधान किया हुआ कर्मानुष्ठान।

आनुषङ्गिक--(वि०) [स्त्री०-**आनुषङ्गिकी**] [अनुषङ्ग+ठक् (तस्मात् आगतः इत्यर्थे)] साथ-साथ होने वाला; 'ननु लक्ष्मीः फलमानुषङ्गिकम्' कि० २.१६। अनिवार्य, आवश्यक. गौण। अनुरक्त। विषयक, सम्बन्धी। यथोचित, सुव्यवस्थित। अंडाकार। अन्तर्मुक्त।

आनूप--(वि०) [स्त्री०--**आनूपी**] [अनूप+अण्] पानी वाला, दलदली, नम। दलदल में उत्पन्न हुआ। (पुं०) वह जीव जिसे दलदल या जल में रहना पसंद हो (जैसे भैंसा, भैंस)।

आनृण्य--(न०) [अनृण+ष्यञ्] अऋणता, कर्ज से बेबाक होना।

आनृशंस,--**आनृशंस्य**-(वि०) [अनृशंस+अण् (स्वार्थे] [अनृशंस+ष्यञ् (स्वार्थे)]जो क्रूर न हो। कृपालु, दयावान्, रहमदिल। [अनृशंस+अण् (भावे)] [अनृशंस+ष्यञ् (भावे)] रहमदिली, कृपालुता। कोमलता।

आनैपुण, **आनैपुण्य**--(न०) [अनिपुण+अण् (भावे)] [अनिपुण+ष्यञ् (भावे)] अकुशलता, मूढ़ता।

आन्त--(वि०) [स्त्री०--**आन्ती**] [अन्त+अण्] अन्तिम, अन्त का।

आन्तर--(वि०) [अन्तर्+अण्] भीतरी। गुप्त, छिपा हुआ। (न०) अभ्यन्तरीण स्वभाव।

आन्तरिक्ष, आन्तरीक्ष—(वि०) [अन्तरिक्ष+अण्] अंतरिक्ष संबंधी, आकाशीय । स्वर्गीय, नैसर्गिक । (न०) आकाश, आसमान । पृथिवी और आकाश के बीच का स्थान ।

आन्तर्गणिक—(वि०) [अन्तर्गण+ठक्—इक] शामिल, सम्मिलित ।

आन्तर्गेहिक—(वि०) [अन्तर्गेह+ठक्—इक] घर के भीतर होने वाला या उत्पन्न ।

आन्तिका—(स्त्री०) [अन्तिका+अण् (इवार्थे) टाप्] बड़ी बहन ।

√आन्दोल्—(चुरा० उभ० अक०) झूलना, इधर-उधर डोलना । हिलना, काँपना । आन्दोलयति-ते ।

आन्दोल—(पुं०) [आन्दोल्+णिच्+घञ्] झूलना, झूला । कँपकँपी ।

आन्दोलन—(न०) [आन्दोल्+णिच्+ल्युट्] झूलना । काँपना । प्रयत्न करना ।

आन्धस—(पुं०) [अन्धस्+अण्] भात का माँड़ या माँड़ी ।

आन्धसिक—(पुं०) [अन्धोऽन्नं शिल्पमस्य इत्यर्थे अन्धस्+ठक्] रसोइया, पाचक ।

आन्ध्य—(न०) [अन्ध+ष्यञ्] अंधापन ।

आन्ध्र—(वि०) [आ√अन्ध +रन्] आन्ध्र देशीय, तिलंगाना देश का । (पुं०) तिलंगाना देश ।

आन्वयिक—(वि०) [स्त्री०—**आन्वयिकी**] [अन्वये प्रशस्तकुले भवः इत्यर्थे अन्वय+ठञ्] कुलीन, अच्छे कुल में उत्पन्न, अच्छी जाति का । सुव्यवस्थित, नियमित ।

आन्वाहिक—(वि०) [स्त्री०—**आन्वाहिकी**] [अहनि अहनि इति अन्वहम् तत्र भवः इत्यर्थे अन्वह+ठञ्] नित्य होने वाला (कृत्य) । नित्य (कर्म) ।

आन्वीक्षिकी—(स्त्री०) [अनु वेदश्रवणानन्तरं ईक्षा परीक्षणम् अन्वीक्षा सा प्रयोजनम् अस्याः तत्र साधुः वा इत्यर्थे अन्वीक्षा—ठञ्, ङीप्] तर्कशास्त्र, न्याय दर्शन । आत्मविद्या ।

√आप्—(चु० स्वा० पर० सक०) प्राप्त करना, पाना । पहुँचना । (आगे गये हुए को पीछे जा कर) पकड़ लेना । व्याप्त होना, छेक लेना । आपयति—आप्नोति, आपयिष्यति—आप्स्यति, आपिपत्—आपत्]

आप—(पुं०) [√आप्+घञ्] आठ वस्तुओं में से एक । (न०) [अप्+अण्] जल समूह । जल-प्रवाह । जल ।—**गा**—(स्त्री०) नदी ।

आपकर—(वि०) [स्त्री०—**आपकरी**] [अपकर+अण् वा अञ्] अप्रीतिकर । उपद्रवकारी ।

आपक्व—(वि०) [आ√पच्+क्त] कम पका हुआ । (न०) कम पके हुए मटर आदि ।

आपगेय—(पुं०) [आपगा+ढक्—एय] नदीपुत्र, भीष्म की उपाधि ।

आपण—(पुं०) [आ√पण्+घञ् नि०] दूकान । हाट । बाजार ।

आपणिक—(वि०) [स्त्री०—**आपणिकी**] [आपण+ठक्] बाजार सम्बन्धी । व्यापार सम्बन्धी, वाणिज्य सम्बन्धी । (पुं०) दूकानदार, व्यापारी, व्यवसायी ।

आपतन—(न०) [आ√पत्+ल्युट्] आगमन । समीप आगमन । घटना । प्राप्ति । ज्ञान । स्वाभाविक परिणाम ।

आपतिक—(वि०) [स्त्री०—**आपतिकी**] [आ√पत्+इकन्] इत्तिफाकिया, अचानक दैवी । (पुं०) बाज पक्षी ।

आपत्ति—(स्त्री०) [आ√पद्+क्तिन्] परिवर्तन । प्राप्ति । सङ्कट, आफत, विपत्ति । (दर्शन में) अनिष्ट प्रसङ्ग ।

आपद्—(स्त्री०) [आ√पद्+क्विप्] विपत्ति, सङ्कट; 'अविवेकः परमापदाम्पदम्' कि० २.३० ।—**काल**—(पुं०) सङ्कट का समय, कष्ट का समय ।—**गत**,—**ग्रस्त**,—

प्राप्त–(वि०) विपत्ति में फँसा हुआ। अभागा, कमबख्त। —धर्म–(पुं०) वे कृत्य जो साधारण समय में शास्त्रविरुद्ध होने पर भी विपत्ति-काल में किये जा सकते हैं।

आपदा—(वो०) [आपद्+टाप्] विपत्ति, सङ्कट।

आपनिक—(पु०) [आ√पन्+इकन्] पन्ना, नीलम, पुखराज। किरात।

आपन्न—[आ√पद्+क्त] आपद्ग्रस्त। प्राप्त, उपलब्ध। गिरा हुआ। —**सत्त्वा**–(स्त्री०) गर्भवती स्त्री; 'सममापन्नसत्त्वास्ता रेजुरापाण्डुरत्विषः' र० १०.५६।

आपमित्यक—(वि०) [अपमित्य+कक् (निर्वृत्तम् इत्यर्थे)] बदले में पाया हुआ।

आपराह्णिक—(वि०) [स्त्री०—**आपराह्णिकी**] [अपराह्ण+ठञ्] दोपहर बाद का।

आपस्—(न०) [√आप+असुन्] जल। पाप। कन्याराशि।

आपस्तम्ब—(पुं०) एक शाखाप्रवर्तक ऋषि।

आपस्तम्भिनी—(स्त्री०) [आपस्√स्तम्भ्+णिनि] पानी को रोक लेने वाली लिंगिनी नामक लता।

आपाक–(पुं०) [समन्तात् परिवेष्ट्य पच्यतेऽत्र इति विग्रहे आ√पच्+घञ्] आँवाँ, भट्ठी।

आपात—(पुं०) [आ√पत्+घञ्] अर्राकर गिरना। आक्रमण। (सवारी से) उतरना। गिरना। पटकना। किसी घटना का अचानक होना। वर्तमान क्षण या काल। प्रथम दर्शन, पहली निगाह। अकस्मात् आयी हुई संकट की स्थिति, आकस्मिक आवश्यकता (इमर्जेंसी)। —**रमणीय**–(वि०) (केवल) तत्काल सुख देने वाला।

आपाततः—(अव्य०) [आपात+तसि] पहली निगाह में। तत्क्षण, तुरंत। अकस्मात्, अचानक। अन्त को, आखिरकार।

आपाद—(पुं०) [आ√पद्+घञ्] प्राप्ति, उपलब्धि। पुरस्कार, इनाम।

आपादन—(न०) [आ√पद्+णिच्+ल्युट्] पहुँचना। लाना।

आपान, आपानक—(न०) [आ√पा+ल्युट्] [आपान+कन्] मद्यपों की मण्डली। भैरवी चक्र। इकट्ठा होकर शराब पीने का स्थान।

आपालि—(पुं०) [आ√पा+क्विप् तदर्थम् अलति इति विग्रहे √अल+इन्] जूँ, चीलर।

आपीड—(पुं०) [आ√पीड्+घञ् वा अच्] तंग करना। घायल करना। दबाना, निचोड़ना। सिर पर पहनने की चीज—किरीट, माला आदि। एक विषम वृत्त।

आपीत—(वि०) [प्रा० स०] थोड़ा पीला। (पुं०) सोनामाखी।

आपीन—[आ—पीन प्रा० स०] मोटा। बलवान्। (पुं०) [आ√प्याय्+क्त, पीभावः तस्य नत्वम्] कूप, कुआँ। (न०) स्तन के ऊपर की घुंडी। थन, ऐन।

आपूपिक—(वि०) [स्त्री०—**आपूपिकी**] [अपूपः शिल्पम् अस्य इति विग्रहे अपूप+ठक्] अच्छे पुए बनाने वाला। पुआ खाने का आदी। (पुं०) रसोइया। नानबाई, हलवाई। (न०) पुओं का ढेर।

आपूप्य—(पुं०) [अपूप+ञ्य] आटा। मैदा। बेसन। सत्तू।

आपूर—(पुं०) [आ√पूर्+घञ्] बहाव, धार। बाढ़। पूर्ण करना, भरना।

आपूरण—(न०) [आ√पूर्+ल्युट्] पूर्ण करना, भरना।

आपूष—(न०) [आ√पूष्+घञ्] धातु विशेष, रांगा या टीन।

आपृच्छा–(स्त्री०) [आ√प्रच्छ्+अङ] वार्तालाप। बिदाई, अन्तिम रवानगी। कौतहल।

आपोक्लिम—(न०) लग्न से तीसरी, छठी, नवीं और बारहवीं राशि ।

आपोऽशान—(पुं०) [आपसा जलेन अशानम् इति√अश्+आनच्] मंत्र विशेष जो भोजन करने के पूर्व और पीछे पढ़े जाते हैं । [भोजन के आरम्भ में पढ़ा जाने वाला मंत्र—'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा'।—भोजनोपरान्त का मंत्र—अमृतापिधानमसि स्वाहा ।]

आप्त—(वि०) [√आप्+क्त] प्राप्त, पाया हुआ । पहुँचा हुआ । विश्वस्त । नियुक्त । प्रामाणिक । कुशल । पूर्ण । यथार्थ । घनिष्ठ । युक्ति-युक्त । यथार्थ ज्ञान रखने वाला । (पुं०) विश्वस्त पुरुष, इतमीनान का आदमी । संबंधी, रिश्तेदार । मित्र; 'निग्रहात्स्वसुराप्तानां वधाच्च धनदानुजः' र० १२.५२ । (न०) भाज्य फल, बाँट फल, लब्धि ।—**काम**—(वि०) पूर्णकाम, जिसकी सब कामनाएँ पूरी हो चुकी हों । —(पुं०) परमात्मा ।—**गर्भा**–(स्त्री०) गर्भवती स्त्री ।—**वचन**–(न०) विश्वस्त पुरुष के वचन ।—**वाच्**–(वि०) विश्वास करने योग्य, ऐसा पुरुष जिसके वचन प्रामाणिक माने जा सकें । (स्त्री०) प्रमाद आदि से शून्य वचन । वेद या श्रुति, स्मृति, इतिहास, पुराण ।—**श्रुति**–(स्त्री०) वेद, स्मृति आदि ।

आप्ति—(स्त्री०) [√आप+क्तिन्]प्राप्ति, उपलब्धि । पहुँच । योग्यता । सम्मान । समाप्ति, परिपूर्णता । संबंध । संयोग । भविष्यत् काल ।

आप्य—(वि०) [अप्+अण् ततः स्वार्थे ष्यञ्] जल सम्बन्धी । [√आप्+ण्यत्] प्राप्य ।

आप्यान—(आ √प्याय्+क्त] मोटा, तगड़ा । रोबीला । मजबूत । प्रसन्न, सन्तुष्ट । (न०) प्रीति । बाढ़, बढ़ती ।

आप्यायन—(न०), **आप्यायना**–(स्त्री०) [आ√प्याय्+ल्युट्] [आ√प्याय्+युच्] पूर्ण करने या मोटा करने की क्रिया । सन्तुष्ट करना, अघाना । आगे बढ़ना, उन्नति करना मुटाव, मोटापन । पौष्टिक दवाई ।

आप्रच्छन—(न०) [आ√प्रच्छ्+ल्युट्] विदा माँगना, गमन के समय जाने की अनुमति लेना । स्वागत करना । बधाई देना ।

आप्रपदीन—(वि०) [आप्रपदं पादाग्रान्तं प्राप्नोति इत्यर्थे आप्रपद+रव—इन] पैर तक लटकता हुआ (वस्त्र आदि) ।

आप्लव—(पुं०), **आप्लवन**–(न०) [आ√प्लु+अप्] [आ√प्लु+ल्युट्] स्नान, डुबकी, गोता । चारों ओर पानी का छिड़काव ।—**व्रतिन्** या **आप्लुतव्रतिन्**– (पुं०) वह जिसने ब्रह्मचर्याश्रम से निकल कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया हो । स्नातक ।

आप्लाव—(पुं० [आ√प्लु+घञ्] स्नान, मार्जन । जल की बाढ़ ।

आफूक—(न०) [ईषत् फूकार इव फेनोऽत्र पृषो०] अफीम ।

आबद्ध—[आ√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ, जकड़ा हुआ । गड़ा हुआ । बना हुआ । पाया हुआ । रुका हुआ । (न०) दृढ़ बंधन । प्रेम । आभूषण । (पुं०) जुवा ।

आबन्ध—(पुं०), **आबन्धन**–(न०) [आ+बन्ध्+घञ्] [आ√बन्ध्+ल्युट्] बंधन । बाँधने की रस्सी । जुए का बंधन । गहना । शृङ्गार । स्नेह, प्रेम ।

आबर्ह—(पुं०) [आ√बर्ह् +घञ्] चीर डालना या खींच लेना । मार डालना ।

आबाध—(पुं०) [आ√बाध्+घञ्] क्लेश कष्ट । छेड़छाड़ । हानि ।

आबाधा—(स्त्री०) [आ√बाध+अङ, टाप्] चोट । पीड़ा । मानसिक क्लेश या सन्तोष ।

आबिल—(वि०) [आ√बिल्+क] मटीला, गंदला । मैला, गंदा । अपवित्र । काले रंग का, कलौंहा । धुँधला ।

आवुत्त—(पुं०) [√आप्+क्विप्, आप-मुत्तनोति इति उद्√तन्+ड] नाट्योक्ति में भगिनीपति (बहनोई) की संज्ञा ।

आबोधन—(न०) [आ√बुध्+ल्युट् तथा +णिच्+ल्युट्] ज्ञान, समझ । शिक्षण ।

आब्द—(वि०) [अब्दे मेघे भवः तस्येदम् इति वा अर्थे अब्द+अण्] बादल सम्बन्धी या बादल का ।

आब्दिक—(वि०) [अब्द+ठञ्] वार्षिक, सालाना ।

आभरण—(न०) [आ√भृ+ल्युट्] गहना, जेवर । शृङ्गार । पालन-पोषण की क्रिया ।

आभा—(स्त्री०) (आ√भा+अङ] चमक-दमक, कान्ति; 'मरुत्सखाभम्' र० २.१० । रूप रंग, सौन्दर्य । सादृश्य, समानता । छाया, प्रतिबिम्ब ।

आभाणक—(पुं०) [आ√भण्+ण्वुल्] कहावत, लोकोक्ति ।

आभाव—(पुं०) [आ√भाष्+घञ्] सम्बोधन । उपोद्घात, भूमिका ।

आभाषण—(न०) [आ√भाष्+ल्युट्] परस्पर कथोपकथन, वातचीत । संबोधन ।

आभास—(पुं०) [आ√भास्+अच्] प्रतीति । परछाईं । ग्रन्थादि के आरम्भ में संगति दिखाने का प्रस्ताव, अवतरणिका, भूमिका । चमक । समानता, सादृश्य । झलक । मिथ्याज्ञान । तात्पर्य, अभिप्राय ।

आभासुर, आभास्वर— (वि०) [आ√भास् +घुरच्] [आ√भास्+वरच्] चमकीला, सुन्दर । (पुं०) चौंसठ देवगण का समूह ।

आभिचारिक—(वि०)[स्त्री०)—**आभिचारिकी**]– [अभिचार+ठक्] अभिचार-सम्बन्धी । ऐन्द्रजालिक । अमानुषिक । शापित, अकोसा हुआ ।

आभिजन (वि०) [(स्त्री०)— **आभिजनी**] [अभिजन+अण्] जन्म-सम्बन्धी । (न०) कुलीनता, सत्कुलोद्भवता ।

आभिजात्य—(न०) [अभिजात+ष्यञ्] कुलीनता । पद । विद्वत्ता । सौन्दर्य ।

आभिधा—(स्त्री०)[अभिधा+अण्(स्वार्थे)] शब्द, स्वर । नाम ।

आभिधानिक—(वि०) [अभिधान+ठक्] जो किसी कोष में हो । (पुं०) कोषकार ।

आभिमुख्य—(न०) [अभिमुख+ष्यञ्] (किसी की ओर) रुख होना । आमने-सामने होना । आनुकूल्य ।

आभिरूपक—(पुं०), **आभिरूप्य**–(न०) [अभिरूपस्य भावः इत्यर्थे अभिरूप+वुञ्] [अभिरूप+ष्यञ्] सौन्दर्य, सुन्दरता ।

आभिषेचनिक (वि०)—[स्त्री०—**आभिषेचनिकी**] [अभिषेचन+ठञ्] अभिषेक या राज-तिलक संबंधी; 'आभिषेचनिकं यत्ते रामार्थमुपकल्पितं' वा० ।

आभिहारिक—(वि०) [स्त्री०—**आभिहारिकी**]–[अभिहार+ठक्] भेंट करने योग्य, चढ़ाने योग्य । (न०) भेंट, चढ़ावा ।

आभीक्ष्ण्य—(न०) (अभीक्ष्ण+ष्यञ्]निरन्तर आवृत्ति, बार-बार होना ।

आभीर—(पुं०) [आ सम्यक् भियं राति इति विग्रहे आभी√रा+क] अहीर । एक देश का नाम तथा उस देश के निवासी ।—**पल्लि,–पल्लिका—पल्ली** (स्त्री०) अहीरों का गाँव ।

आभीरी—(स्त्री०) [आभीर+ङीष्] अहीरिन ।

आभील—(वि०) [आ समन्तात् भयं लाति इति विग्रहे आभी√ला+क] भयानक, भय-प्रद, डरानेवाला । (न०) चोट, शारीरिक पीड़ा ।

आभुग्न—(वि०) [आ√भुज्+क्त] जरासा मुड़ा हुआ, थोड़ा टेढ़ा ।

आभोग—(पुं०)[आ√भुज+घञ्]गोलाई, चक्कर । वृद्धि । सीमा, चौहद्दी । डीलडौल, आकार । लम्बाई-चौड़ाई । उद्योग । साँप का

फैला हुआ फन। भोगविलास। तृप्ति। भोजन। वरुण का छत्र। पद्य में कवि का नामोल्लेख। वस्तु के परिचायक चिह्नों की विद्यमानता।

आभ्यन्तर—(वि०) [स्त्री०—**आभ्यन्तरी**] [अभ्यन्तर+अण्] भीतरी, अन्दर का।—**कोप**–(पुं०) मंत्री, पुरोहित, सेनापति आदि का विद्रोह।—**प्रयत्न**–(पुं०) स्पष्ट उच्चारण के लिये किया जाने वाला आन्तरिक (मुख के भीतरी भाग का) प्रयत्न।

आभ्यवहारिक—(वि०) [स्त्री० **आभ्यवहारिकी**] [अभ्यवहार+ठक्] खानेयोग्य।

आभ्यासिक—(वि०) [अभ्यास+ठक्] अभ्यास से उत्पन्न या अभ्यास का फल। समीपी, पड़ोस का।

आभ्युदयिक—(वि०) [स्त्री० **आभ्युदयिकी**] [अभ्युदय+ठक्] अभ्युदय-सम्बन्धी। शुभ कर्मों की वृद्धि के लिये करने के योग्य। उन्नत। (वि०) किसी मङ्गल कार्य में पितरों के उद्देश्य से किया गया श्राद्ध-कर्म।

आम्—(अव्य०) [√अम्+णिच्, बा० ह्रस्वाभाव, ततः क्विप्] स्वीकारोक्तिवाची अव्यय।

आम—(वि०) [आ ईषत् अम्यते पच्यते इति आ√अम्+घञ्] कच्चा, अनपका। अनपचा।—(पुं०) अजीर्ण रोग, अनपच। डंठल या भूसी से अलग किया हुआ अन्न।—**अन्न** (**आमान्न**)—कच्चा अन्न।—**आशय** (**आमाशय**)–(पुं०) पेट की वह थैली जिसमें खाया हुआ अन्न रहता है, मेदा।—**कुम्भ**–(पुं०) कच्चा घड़ा।—**गन्धि**–(न०) कच्चे मांस की या मुर्दे के जलने की गंध।—**ज्वर**–(पुं०) एक प्रकार का ज्वर।—**त्वच्**–(वि०) कोमल चाम का।—**रक्त**–(न०) दस्तों की बीमारी जिसमें आँव गिरे।—**रस**–(पुं०) आहार के पचने पर उससे बनने वाला रस। अर्धजीर्ण भुक्तद्रव्य।—**वात**–(पुं०) अजीर्ण, अनपच। कब्ज।—**शूल**–(पुं०) वायुगोले का दर्द, आँव मरोड़ का रोग।

आमञ्जु—(वि०) [प्रा० स०] मनोहर। प्यारा।

आमण्ड—(पुं०) [प्रा० स०] एरण्डवृक्ष, रेंडी का पेड़।

आमनस्य, आमानस्य–(न०) [अप्रशस्तं मनः मानसं वा यस्य ब० स०—अमनस् वा अमानस+ष्यञ्] पीड़ा, शोक।

आमन्त्रण—(न०), **आमन्त्रणा**—(स्त्री०) [आ√मन्त्र् णिच्+ल्युट्][अ√मन्त्र् + णिच्+युच्] बुलावा, न्योता। बिदाई। बधाई। अनुमति। वार्तालाप। सम्बोधन कारक।

आमन्द्र—(वि०) [आ√मन्द्र्+अच्] गम्भीर स्वरवाला, गुड़गुड़ाहट का; 'आमन्द्राणाम्फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्' मे० ३४। (पुं०) [प्रा० स०] हल्का गम्भीर स्वर।

आमय—(पुं०) [आम√या+क वा आ√मी+अच्] रोग, बीमारी। क्षति, चोट। अजीर्ण। कुष्ठ नामक औषधि।

आमयाविन्—(वि०) [आमय+विनि, दीर्घ] बीमार। कब्जियत वाला, जिसको अनपच का रोग हो।

आमरणान्त, आमरणान्तिक–(वि०) [स्त्री० **आमरणान्तिकी**] [आ—मरण प्रा० स०, आमरणे अन्तो यस्य ब० स०] [आमरणे अन्तः, स० त०, आमरणान्तं व्याप्नोति इत्यर्थे ठञ्] मृत्यु तक रहने वाला, यावज्जीवन रहने वाला।

आमर्द—(वि०) [आ√मृद्+घञ्] कुचलना, पीस डालना, रगड़ डालना।

आमर्श—(पुं०) [आ√मृश्+घञ्] स्पर्श, छूना। परामर्श, सलाह।

आमर्ष—(पुं०) [आ√मृष+घञ्] क्रोध, कोप, गुस्सा। अधीरता।

आमलक—(पुं०), **आमलकी**—(स्त्री०) [आ √मल्+वुन्] [आमलक+ङीष्] आँवले का पेड़। (न०) आँवले का फल।

आमात्य—(पुं०) [अमात्य+अण् (स्वार्थे)] दीवान, वजीर, मुसाहिब।

आमिक्षा—(स्त्री०) [आमिष्यते सिच्यते इति विग्रहे आ√मिष+सक्] फटे दूध का ठोस भाग, छेना।

आमिष—(न०) [आ√मिष्+क] मांस 'उपानयत् पिण्डमिवामिषस्य' र० २.५९। (आलं०) शिकार, आखेट। भोग्य वस्तु। भोजन। चारा। उत्कोच, घूस। अभिलाषा कामेच्छा। भोगविलास। प्रिय या मनोहर वस्तु। पत्र। जँभीरी नीबू।

आमीलन—(न०) [आ—मील्+ल्युट्] नेत्रों का बंद करना या मूँदना।

आमुक्ति—(स्त्री०) [आ√मुच्+क्तिन्] मोक्ष। पहनना, धारण करना (पोशाक या कवच।

आमुख—(न०) [आ√मुख+णिच्+अच्] आरम्भ। (नाट्य साहित्य में) प्रस्तावना। (अव्य०) सामने, आगे।

आमुष्मिक—(वि०) [स्त्री०—**आमुष्मिकी**]-[अमुष्मिन् भवः इत्यर्थे ठक्, सप्तम्या अलुक्, टिलोप] परलोक से सम्बन्ध रखने वाला। परलोक का।

आमुष्यायण—(वि०) [स्त्री०—**आमुष्यायणी**] [अमुष्य ख्यातस्य अपत्यम् इत्यर्थे फक्—आयन, अलुक्] कुलीन् सत्कुलोद्भव। (पुं०) किसी प्रसिद्ध पुरुष का पुत्र।

आमोचन—(न०) [आ√मुच्+ल्युट्] खोल देना। छोड़ देना। गिराना। निकालना। उड़ेलना। बाँध रखना।

आमोटन—(न०) [आ√मुट्+ल्युट्] कुचलना, पीस डालना।

आमोद—(पुं०) [आ√मुद् +णिच् + अच्] हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता। सुगन्धि सुवास।

आमोदन—(वि० [आ√मुद्+णिच्+ल्यु] प्रसन्नकारक, हर्षप्रद। (न०) [आ√मुद्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्नता या हर्ष देना सुवासित करना, सौरभान्वित करना।

आमोदिन्—(वि०) [आ√मुद्+णिच्+णिनि] प्रसन्न करने वाला। सुवासित करने वाला।

आमोष—(पुं०) [आ√मुष्+घञ्] चोरी डाका।

आमोषिन्—(पुं०) [आ√मुष्+णिनि] चोर।

आम्नात—[आ√म्ना+क्त] विचारित अधीत। स्मरण किया हुआ। परंपरा से प्राप्त उल्लिखित।

आम्नान—(न०) [आ√म्ना+ल्युट्] अभ्यास। अध्ययन।

आम्नाय—(पुं०) [आ √ म्ना+घञ्] (ब्राह्मण, उपनिषद् और आरण्यकों सहित) वेद; 'अधीती चतुर्ष्वाम्नायेषु' दश०। वंश-परम्परागत परिपाटी। कुल की रीति। विश्वासमूलक उपदेश। परामर्श, मंत्रणा या उपदेश।

आम्बिकेय—(पुं०) [अम्बिका+ढक्—एय] धृतराष्ट्र और कार्तिकेय की उपाधि।

आम्भसिक—(वि०) [स्त्री०—**अम्भसिकी**] [अम्भस्+ठक्] पनीला, रसीला। (पुं०) मत्स्य।

आम्र—(पुं०) [√अम्+रन्, दीर्घ] आम का पेड़। (न०) आम का फल।—**कूट**—(पुं०) एक पर्वत का नाम।—**पेशी**—(स्त्री०) अमावट, आम्र का रस जो जमा कर सुखा लिया जाता है।—**वण**—(न०) आम का कुञ्जवन, आम की उद्यानवीथिका।

आम्रात—(पुं०) [आम्रं तद्रसम् आ ईषत् अतति याति इति विग्रहे आम्र—आ√अत्

+अच्] आमड़ा का पेड़ । (न०) आमड़ा का फल ।

आम्रातक—(पुं०) [आम्रात+कन्] आमड़ा का वृक्ष । अमावट ।

आम्रेडन—(न०) [आ√म्रेड् +ल्युट्] पुनरावृत्ति, दुहराना, फेरना, आमुख्ता करना।

आम्रेडित—(न०) [आ√म्रेड्+क्त(भावे)] किसी शब्द या स्वर का वार-वार दुहराया जाना । व्याकरण की एक संज्ञा ।

आम्ल—(पुं०), **आम्ला**—(स्त्री०) [आ सम्यक् अम्लो रसो यस्य व० स०] [आम्ल —टाप्] इमली का पेड़ । (न०) खटाई, तुर्शी ।

आम्लिका, आम्लीका—(स्त्री०) [आम्ला+ कन्, टाप्, इत्व, पक्षे पृषो० दीर्घ] इमली का वृक्ष ।

आय—(पुं०) [आ√इण्+अच् वा√अय् +घञ्] आगमन, आना । धनप्राप्ति, धनागम । आय, आमदनी, प्राप्ति । लाभ, फायदा, नफा । जनानखाने का रक्षक । जन्मकुंडली में ग्यारहवाँ स्थान ।—व्यय-(पुं०) (द्विवचन) आमदनी-खर्च ।

आयःशूलिक—(वि०) [स्त्री०—**आयःशूलिकी**] [अयःशूल+ठक्] चतुर । कार्यतत्पर । अध्यवसायी ।(पुं०) अपनी उद्देश्यसिद्धि के लिये जोरदार उपायों से काम लेने वाला पुरुष ।

आयत— (वि०) [आ√यम्+क्त] लंबा । विस्तृत । वड़ा । आकर्षित । मुड़ा हुआ । समकोण चतुर्भुज (ज्या०) ।—**अक्षि**, (आयताक्ष) —ईक्षण (**आयतेक्षण**)— नेत्र— लोचन-(वि०) वड़े नेत्रों वाला ।—**अपाङ्ग** (**आयतापाङ्ग**)-(वि०) जिसकी आँखों के कोने लंबे हों ।— **आयति** (**आयतायति**)- (स्त्री०)वहुत दिनों वाद आने वाला भविष्यत् काल ।—**च्छदा**-(स्त्री०) केले का पेड़, कदलीवृक्ष ।—**स्तू**-(पुं०)भाट, स्तुतिवादक।

आयतन—(न०) [आ√यत् +ल्युट्] स्थान । निवासस्थान, घर । अग्निकुंड । देवालय, मन्दिर । घर बनाने का स्थान । वुखार । रोग का कारण ।

आयति—(स्त्री०) [आ√या+डति]लंवाई। विस्तार । भविष्यत् काल । भावी फल । राजश्री । प्रताप । महिमा । हाथ वढ़ाना । स्वीकृति । प्राप्ति । कर्म ।

आयतीगवम्—(अव्य०) [आयान्ति गावः यस्मिन् काले इति विग्रहे अव्य० स०] गौओं का घर लौटने का समय ।

आयत्त—[आ√यत्+क्त] अवलम्वित । पराधीन, परतंत्र । वशीभूत ।

आयत्ति—(स्त्री०) [आ√यत्+क्तिन्] परवशता, वश्यता । स्नेह । सामर्थ्य । सीमा । उपाय । प्रताप । महिमा । चरित्र की दृढ़ता ।

आयथातथ्य—(न०) [अयथातथ+ष्यञ्] जैसा होना चाहिये वैसा न होना । अयथार्थता । अयोग्यता । अनुपयुक्तता । अनौचित्य ।

आयमन—(न०) [आ√यम्+ल्युट्] लंवाई । विस्तार । संयम । वंधन । (धनुष को) तानना ।

आयल्लक—(पुं०) [आयन्निव लीयते अत्र इति विग्रहे√ली+ड (वा०) ततः संज्ञायां कन्] अधैर्य, अधीरज, उतावलापन लालसा ।

आयस—(वि०) [अयस् +अण्] लोहे का वना, लोहा धातु का । (न ०) लोहा। लोहे की वनी कोई भी वस्तु । हथियार ।

आयसी—(स्त्री०) [आयस+ङीप्] कवच।

आयस्त—[आ√यस्+क्त] फेंका हुआ । पीड़ित । दुःखी । चोटिल । क्रुद्ध । तीक्ष्ण ।

आयात—(वि०) [आ√या+क्त] आया हुआ । देसावर से आया हुआ (माल) ।

आयान—(न०) [आ√या+ल्युट्] आगमन। स्वभाव, मिजाज।

आयाम—(पुं०) [आ√यम्+घञ्]लंबाई। विस्तार। फैलाव। पसारना। संयम। दमन। बंद करना।

आयामवत्—[आयाम+मतुप्] बढ़ा हुआ। लंबा।

आयास—(पुं०) [आ√यस्+घञ्] उद्योग थकावट।

आयासिन्—(वि०) [आयास+इनि] थका हुआ, श्रान्त। परिश्रम करने वाला। उद्योग करने वाला।

आयु—(पुं० न०) [√इण्+उण्] दे० 'आयुस्'।

आयुक्त—(वि०) [आ√युज्+क्त] नियुक्त। संयुक्त। (पुं०) मंत्री। किसी विशेष कार्य के लिये नियुक्त 'आयोग' का सदस्य जिसे विशेष अधिकार दिया गया हो (कमिश्नर)।

आयुध—(पुं० न०) [आ√युध्+घञ्] अस्त्र, हथियार। हथियार तीन प्रकार के होते हैं। एक 'प्रहरण' जैसे तलवार। दूसरा 'हस्तमुक्त' जैसे चक्र, भाला, बरछी आदि। तीसरा 'यंत्रमुक्त' यथा तीर, बंदूक, तोप।—**अगार**, (**आयुधागार**)—**आगार**, (**आयुधागार**) –(न०)हथियारों का भांडारगृह।—**जीविन्** –(वि०) हथियार से जीवन निर्वाह करने वाला। (पुं०) योद्धा, सिपाही।

आयुधिक—(वि०) [आयुध+ठञ्] आयुध सम्बन्धी। (पुं०) योद्धा, सिपाही।

आयुधिन्, आयुधीय—(वि०) [आयुध+इनि] [आयुध+छ—ईय] हथियार धारण करने वाला अथवा हथियार से काम लेने वाला।

आयुष्मत्—(वि०)[आयुस्+मतुप्]जीवित, जिन्दा। दीर्घजीवी। (पुं०) विष्कम्भ आदि योगों में से तीसरा योग।

आयुष्य—(वि० [आयुस्+यत्] आयु बढ़ाने वाला। जीवन की रक्षा करने वाला, जीवनरक्षक। (न०) जीवनी शक्ति।

आयुस्—(न०) [आ√इण्+उस्] जीवन। जीवन की अवधि; 'शतायुर्वै पुरुषः' वेद। जीवनी शक्ति। भोजन।—**कर**, (**आयुष्कर**) –(वि०) उम्र बढ़ाने वाला।—**द्रव्य**, (**आयुर्द्रव्य**)– (न०) घी।—**वेद**,(**आयुर्वेद**) –(पुं०)चिकित्सा शास्त्र।—**वेदिक**, (**आयुर्वेदिक**)—**वेदिन्**, (**आयुर्वेदिन्**)–(वि०) औषधि सम्बन्धी। (पुं०) वैद्य, चिकित्सक।—**शेष**, (**आयुःशेष**)–(पुं०) बचा हुआ जीवन। जीवन का अन्त। आयु का ह्रास।—**स्तोम**, (**आयुष्टोम**) –(पुं०) यज्ञ जो दीर्घजीवन की प्राप्ति के लिये किया जाता है।

आये—(अव्य०) [आ—अये, प्रा० स०] स्नेहव्यञ्जक सम्बोधनात्मक अव्यय।

आयोग—(पुं०)[आ√युज्+घञ्] नियुक्ति। पुष्पोपहार। समुद्रतट या किनारा। काम। कार्यसंपादन। संबंध। कोई विशेष कार्य सम्पन्न करने के लिये नियुक्त व्यक्तियों का मंडल (कमीशन)।

आयोगव—(पुं०) [स्त्री०—**आयोगवी**]–[अयोगव+अण्] वैश्या के गर्भ और शूद्र के वीर्य से उत्पन्न सन्तान, बढ़ई।

आयोजन—(न०) [आ√युज्+ल्युट्] जोड़ना। ग्रहण करना। लेना। उद्योग। प्रयत्न।

आयोधन—(न०) [आ√युध्+ल्युट्] युद्ध, लड़ाई। रणभूमि; 'आयोधनाग्रसरतां त्वयि वीर जाते' र० ५.७१।

आर—(पुं० न०) [√ऋ+घञ्] पीतल। लौह विशेष। कोण, कोना। (पुं०) मङ्गल ग्रह। शनिग्रह।—**कूट**–(पुं०न०) पीतल। पीतल का जेवर।

आरक्ष—(पुं०) [आ√रक्ष्+अच्] रक्षा। सेना। गजकुंभसंधि। इस संधि के नीचे का भाग। (त्रि०) रक्षित।

आरक्षक, आरक्षिक—(पुं०) [आ√रक्ष्+ण्वुल्] [आरक्ष+ठञ्] चौकीदार, संतरी। देहाती न्यायाधीश। सिपाही।

आरक्षा—(स्त्री०) [आ√रक्ष्+अङ] दे० 'आरक्ष'।

आरट—(पुं०) [आ√रट्+अच्] नट। अभिनेता, नाटक का पात्र।

आरणि—(पुं०) [आ√ऋ+अनि] ववंडर। उल्टा वहाव।

आरण्य—(वि०) [स्त्री०—**आरण्या, आरण्यी**] [अरण्य+अण्] जंगली, जंगल में उत्पन्न।

आरण्यक—(वि०) [अरण्य+वुञ्] जंगली जंगल में उत्पन्न। (पुं०) वनरखा, जंगली मनुष्य। (न०) वेद के ब्राह्मणों के अन्तर्गत एक भाग जो या तो वन में बैठ कर रचे गये थे या जिनको वन में जाकर पढ़ना चाहिये।—[अरण्येऽनूच्यमानत्वात् आरण्यकम्। अरण्येऽध्ययनादेव आरण्यकमुदाहृतम्]

आरति—(स्त्री०) [आ√रम्+क्तिन्] विराम, रोक।

आरथ—(पुं०) [प्रा० स०] छोटी गाड़ी एक बैल या घोड़े द्वारा चलाई जाने वाली गाड़ी।

आरनाल—(न०) [आ√ऋ+अच्,√नल्+घञ्, आरो नालो गंधो यस्य ब० स०] माँड़, चावल का पसाव।

आरब्धि—(स्त्री०) [आ√रम्भ्+क्तिन्] आरम्भ, प्रारम्भ।

आरभट—(पुं०) [आ√रभ्+अट] उद्योगी पुरुष। उत्साही पुरुष। (पुं०) साहस। विश्वास।

आरभटी—(स्त्री०) [आ√रभ+अटि+ङीप्] साहस। वह वृत्ति जो रौद्र, भयानक और वीर रसों के वर्णन में प्रयुक्त होती है। (न०) नृत्य की एक शैली।

आरम्भ—(पुं०) [आ√रभ्+घञ् मुम् च] आरम्भ, शुरुआत। भूमिका। कर्म, कार्य। शीघ्रता, तेजी। उद्योग, चेष्टा, प्रयत्न। दृश्य। वध, हनन।

आरम्भण—(न०) [आ√रभ्+ल्युट्, मुम् च] पकड़ना, काबू में करना। पकड़, दस्ता, बेंट।

आरव, आराव—(पुं०) [आ√रु+अप्] [आ√रु+घञ्] आवाज। चिल्लाहट। गुर्राहट। भौंक (कुत्ते, भेड़िये आदि की बोली)।

आरस्य—(न०) [अरस+ष्यञ्] अस्वादिष्टता, स्वाद या जायके का अभाव।

आरा—(स्त्री०) [आ√ऋ+अच्, टाप्] लकड़ी चीरने का एक दाँतीदार औजार। चमड़ा सीने का सूजा। पहिये की गड़ारी और पुट्ठी के बीच की पटरी। घोड़िया बैठाने के लिये दीवार पर रखी जाने वाली लकड़ी या पत्थर की पटरी।

आरात्—(अव्य०) [आ√रा+आति (वा०)] समीप, पड़ोस में। दूर, फासले पर। दूर से। दूरी से।

आराति—(पुं०) [आ√रा+क्तिच्] शत्रु, वैरी।

आरातीय—(वि०) [आरात्+छ—ईय] समीपवर्ती, नजदीकी। दूरस्थ।

आरात्रिक—(न०) [अरात्र्यापि निर्वृत्तम् इत्यर्थे ठञ्] (भगवान् के विग्रह की) आरती करना।

आराधन—(न०) [आ√राध्+ल्युट्] प्रसन्नता। सन्तोष; 'आराधनाय लोकानाम् मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा' उ० १.१२। पूजन। सेवा। शृङ्गार। प्रसन्न करने का उपाय। सम्मान, प्रतिष्ठा। पाचनक्रिया। सम्पन्नता। सफलता।

आराधना—(पुं०) [आ√राध्+णिच्+युच्] पूजन । सेवा ।

आराधनी—(स्त्री०) [आराधन+ङीप्] पूजन । शृङ्गार । तुष्टिसाधन । प्रसादन (देवता का) ।

आराधयितृ—(वि०)[आ√राध्+णिच्+तृच्] पुजारी, पूजन करने वाला । विनम्र सेवक ।

आराम—(पुं०) [आ√रम्+घञ्] हर्ष, प्रसन्नता । बाग, बगीचा ।

आरामिक—(पुं०) [आराम+ठक्] माली ।

आरालिक—(पुं०) [अरालं कुटिलं चरति इति विग्रहे अराल+ठक्] रसोइया ।

आरु—(पुं०) [√ऋ+उण्] सूअर । कर्कट, केकड़ा ।

आरुक—(वि०) हानिकारक । (पुं०) एक पौधा जो हिमालय पर उत्पन्न होता है और दवा के काम आता है ।

आरू—(वि०) [√ऋ+ऊ, णित्] भूरे या साँवले रंग का ।

आरूढ—(वि०) [आ√रुह्+क्त] सवार, चढ़ा हुआ । बैठा हुआ ।

आरूढि—(स्त्री०) [आ√रुह् + क्तिन्] चढ़ाव, आरोहण; 'अत्यारूढिर्भवति महतामप्यपभ्रंश निष्ठा' श० ४।

आरेक—(पुं०) [आ√रिच्+घञ्] खाली करना । कुञ्चन, सिकुड़न । संदेह ।

आरेचित—(वि०) [आ√रिच्+क्त] खाली किया हुआ । कुञ्चित, सिकुड़ा हुआ ।

आरोग्य—(न०) [अरोग+ष्यञ्] रोग का अभाव । स्वास्थ्य, तंदुरुस्ती ।

आरोप—(पुं०) [आ√रुह्+णिच् पुक्+घञ्] संस्थापन । कल्पना । एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ की कल्पना करना ।—पत्र,—फलक-(न०) (न्यायालय द्वारा तैयार किया हुआ) वह पत्र, जिसमें किसी व्यक्ति पर लगाये गये आरोपों का ब्यौरा दिया रहता है (चार्जशीट) ।

आरोपण—(न०) [आ√रुह्+णिच्, पुक्+ल्युट्] स्थापन । लगाना । मढ़ना । किसी पौधे को एक स्थान से हटाकर दूसरी जगह लगाना, रोपना । किसी वस्तु के गुण को दूसरी वस्तु में मान लेना । मिथ्या ज्ञान, भ्रम । धनुष पर रोदा चढ़ाना ।

आरोह—(पुं०) [आ√रुह्+घञ्] सवार । चढ़ाई । (घोड़े की) सवारी । उठी हुई जगह, उचान, ऊँचाई । अहंकार, अभिमान । पहाड़ । ढेर । नितंब, चूतर । माप विशेष । खान ।

आरोहक—(पुं०) [आ√रुह् + ण्वुल्] आरोहण करने वाला । (पुं०) सवार । सारथि । वृक्ष ।

आरोहण—(न०)[आ√रुह्+ल्युट्] सवार होने की या ऊपर चढ़ने की क्रिया । घोड़े पर चढ़ना । जीना, सीढ़ी ।

आर्कि—(पुं०) [अर्क+इञ्] अर्क का पुत्र अर्थात्—यम । शनिग्रह । राजा कर्ण ।सुग्रीव । वैवस्वत मनु ।

आर्क्ष—(वि०) [स्त्री०—**आर्क्षी**] [ऋक्ष+अण्] नाक्षत्रिक, तारका सम्बन्धी ।

आर्घा—(स्त्री०) [आ√अर्घ्+अच्, टाप्] पीले रंग की शहद की मक्खी ।

आर्घ्य—(न०)[आर्घा+यत्] जंगली शहद ।

आर्च—(वि०) [स्त्री०—**आर्ची**] [ऋच्+ अण्] ऋचा या ऋग्वेद संबंधी । [अर्चा+ अण्] अर्चा करने वाला, पूजा करने वाला पुजारी ।

आर्चिक—(वि०) [ऋच्+ठञ्] ऋग्वेद सम्बन्धी । (न०) सामवेद की उपाधि ।

आर्चीक—(वि०) [ऋचीक+अण्] ऋचीक पर्वत पर वास करने वाला ।

आर्जव—(न०) [ऋजु+अण्] सिधाई, सीधापन। स्पष्टवादिता। ईमानदारी, सचाई। कुटिलता का अभाव।

आर्जुनि—(पुं०) [अर्जुन+इञ्] अर्जुनपुत्र, अभिमन्यु।

आर्त—(वि०) [आ√ऋ+क्त] अस्वस्थ। पीड़ित, कष्टप्राप्त।

आर्तव—(वि०) [स्त्री०—**आर्तवा, आर्तवी**] [ऋतु+अण्] ऋतु सम्बन्धी। मौसमी। ऋतु में उत्पन्न; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं' र० ८.३६। स्त्री-धर्म या मासिक स्राव संबंधी। (पुं०) वर्ष। (न०) रज जो स्त्रियों की योनि से प्रतिमास निकलता है। रजस्वला होने के पीछे कतिपय दिवस, जो गर्भाधान के लिये श्रेष्ठ होते हैं। पुष्प।

आर्तवी—(स्त्री) [आर्तव+ङीप्] घोड़ी।

आर्तवेयी—(स्त्री०) रजस्वला स्त्री।

आर्ति—(स्त्री०) [आ√ऋ+क्तिन्] दुःख, क्लेश, पीड़ा (शारीरिक या मानसिक)। मानसिक चिन्ता। बीमारी, रोग। धनुष की नोक। नाश, विनाश।

आर्त्विजीन—(वि०) [ऋत्विजं तत्कर्म अर्हति इत्यर्थे ऋत्विज+खञ्] ऋत्विज।

आर्त्विज्य—(न०) [ऋत्विज+ष्यञ्] ऋत्विज का पद या कर्म।

आर्थ—(वि०) [स्त्री०—**आर्थी**] [अर्थ+अण्] किसी वस्तु या पदार्थ से संबंध युक्त।

आर्थिक—(वि०) [स्त्री०)—**आर्थिकी**] अर्थ+ठक्] अर्थ संबंधी। बुद्धिमान्। वास्तविक। धनी।

आर्द्र—(वि०) [√अर्द्+रक्, दीर्घ] नम, तर, भींगा हुआ। रसीला। ताजा, टटका, नया। कोमल, मुलायम।—**काष्ठ**–(न०) हरी लकड़ी।—**पत्रक**–(न०) बाँस।—**शाक**–(पुं०) अदरक, आदी।

आर्द्रक—(न०) [आर्द्रायां भूमौ जातम् इत्यर्थे आर्द्रा+वुन्—अक] अदरक, आदी।

आर्द्रा—(स्त्री०) [आर्द्र+टाप्] नक्षत्र विशेष, छठा नक्षत्र।

आर्ध—(वि०) [अर्ध+अण्] आधा।

आर्धिक—(वि०) [स्त्री०—**आर्धिकी**] [अर्ध+ठक्—इक] आधे से संबंध रखने वाला। आधा बँटवाने वाला। (पुं०) वह जोता, जो खेत की आधी पैदावार ले लेने की शर्त पर खेत जोतता-बोता है। वैश्या का पुत्र, जिसे ब्राह्मण ने पाला-पोसा हो।

आर्य—(वि०) [√ऋ+ण्यत्] आर्य के योग्य। प्रतिष्ठित। उत्तम, समीचीन। सर्वोत्कृष्ट;। —(पुं०) हिन्दुओं और ईरानियों का नाम। अपने धर्म और शास्त्र को मानने वाला व्यक्ति। प्रथम तीन वर्ण। [ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य।] प्रतिष्ठित व्यक्ति। सावर्ण मनु का एक पुत्र। कुलीनोचित आचरण का व्यक्ति। स्वामी, मालिक। गुरु, शिक्षक। मित्र। वैश्य। ससुर। बुद्धदेव।—**आवर्त** (**आर्यावर्त**)–(पुं०) आर्यों की निवास भूमि (मध्य और उत्तर भारत) जो पूर्व और पश्चिम में समुद्रों द्वारा और उत्तर दक्षिण में हिमालय और विन्ध्यगिरि द्वारा सीमाबद्ध है।—आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्राच्च पश्चिमात्। तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः॥—मनुस्मृति। —**गृह्य**–(वि०) श्रेष्ठों द्वारा सम्मानित। श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा उपगम्य। सम्मानित। ऋजु, सरल।—**देश**–(पुं०) आर्यों के रहने का देश।—**पुत्र**–(पुं०) प्रतिष्ठित जन का पुत्र, दीक्षा गुरु का पुत्र। बड़े भाई का पुत्र। सम्मान जनक संज्ञा, राजकुमार, पति आदि का संबोधन (ना०) ससुर का पुत्र (साला)। —**प्राय**–(वि०) आर्यों द्वारा आबाद, श्रेष्ठ जनों से परिपूर्ण।—**मिश्र**; (वि०) प्रतिष्ठित, सम्मानित, विख्यात; 'आर्यमिश्रान् विज्ञापयामि' विक्र० १। (पुं०) भद्रपुरुष। सम्मान-सम्बोधन।—**लिङ्गिन्**–(पुं०) धर्म-

भ्रष्ट, शठ, धूर्त, भण्ड ।—वृत्त- (वि) नेक, भला ।—वेश-(वि०) जो भली प्रकार परिच्छद (पोशाक) पहने हुए हो ।—सत्य-(न०) महान् सत्य, श्रेष्ठ सत्य ।—हृद्य-(वि०) श्रेष्ठों द्वारा पसंद किया हुआ ।

आर्यक—(पुं०) [आर्य+कन्] भद्रपुरुष । पितामह । मातामह ।

आर्यका, आर्यिका—(स्त्री०) [आर्या+कन्, ह्रस्वः, पक्षे इत्वम्] श्रेष्ठा स्त्री । एक नक्षत्र ।

आर्या—(स्त्री०) [आर्य+टाप्] पार्वती । एक छंद । सास । श्रेष्ठ स्त्री ।—**गीति**-(स्त्री०) आर्या छंद का एक भेद ।

आर्ष—(वि०) [स्त्री०—**आर्षी**] [ऋषि+अण्] केवल ऋषियों द्वारा प्रयुक्त होने वाला । ऋषियों का । वैदिक । पवित्र । (पुं०) ऋषिप्रोक्त आठ प्रकार के विवाहों में से एक, जिसमें कन्या के पिता को, वरपक्ष से एक या दो गौएँ दी जाती हैं । आदायार्षस्तु गोद्वयम् । याज्ञवल्क्य । (न०) ऋषिप्रणीतशास्त्र ।

आर्षभ्य—(पुं०) [ऋषभस्य प्रकृतिः इत्यर्थे ऋषभ+ञ्य] बछड़ा जो इतना बड़ा हो कि काम में लाया जा सके या साँड़ बना कर छोड़ा जा सके ।

आर्षेय—(वि०) [स्त्री०—**आर्षेयी**] [ऋषि+ढक्] ऋषि का, ऋषि संबंधी । योग्य । मान्य, प्रतिष्ठित ।

आर्हत—(वि०) [स्त्री०—**आर्हती**] [अर्हत्+अण्] जैन-सिद्धान्त-वादी । (पुं०) जैनी । (न०) जैनियों का सिद्धान्त ।

आर्हन्ती—(स्त्री०), **आर्हन्त्य** (न०) [अर्हत् +ष्यञ्, नुम्, ङीष्, यलोप] [अर्हत्+यञ्, नुम्] योग्यता ।

आल—(पुं० न०) [आ√अल्+अच्] मछली आदि के अंडे । पीतसंखिया । हरताल । छल । झंझट । गीलापन । आँसू । (वि०) बड़ा । विस्तृत । अधिक ।

आलगर्द—(पुं०) [अलगर्द+अण् (स्वार्थे)] पनिया साँप । ढोंढ़ ।

आलभन—(न०) [आ√लभ्+ल्युट्] पकड़ना । स्पर्श करना । मार डालना । पाना ।

आलम्ब—(पुं०) [आ√लम्ब्+घञ्] अवलम्ब, आश्रय । सहारा । लटकन ।

आलम्बन—(न०) [आ√लम्ब्+ल्युट्] अवलम्ब, आश्रय । सहारा । आधार । कारण, हेतु । रस का एक विभाग, जिसके अवलम्ब से रस की उत्पत्ति होती है । योगियों द्वारा किया जाने वाला एक प्रकार का मानसिक अभ्यास । पंचतन्मात्र (बौद्ध) ।

आलम्बिन्—(वि०) [आ√लम्ब्+णिनि] लटकता हुआ । सहारा लिये हुए । समर्थित । पहिने हुए, धारण किये हुए ।

आलम्भ—(पुं०), **आलम्भन**- (न०) [आ√लभ्+घञ् मुम् च] [आ√लभ्+ल्युट् मुम् च] पकड़ना । स्पर्श करना । चीरना, फाड़ना । यज्ञ में बलिदान के लिये पशु का वध करना । यथा "अश्वालम्भं गवालम्भम् ।"

आलय—(पुं० न०) [आ√ली+अच्] घर, गृह । आधार । स्थान, जगह । (अव्य०) [अव्य० स०] लयपर्यंत, मृत्यु तक । यथा—'पिबत भागवतं रसमालयम्' ।—**विज्ञान** -(न०) बौद्ध मत में लय पर्यंत रहने वाला विज्ञान, अहंकार का आधार ।

आलर्क—(वि०) [अलर्क+अण्] पागल कुत्ता सम्बन्धी या पागल कुत्ते के कारण होने वाला ।

आलवण्य—(न०) [अलवण+ष्यञ्] विरसता । स्वादहीनता । भद्दापन । कुरूपता ।

आलवाल—(न०) [आसमन्तात् जललवम् आलाति इति विग्रहे आ√ला+क] खोडुआ, थाला ।

आलस—(वि०) [स्त्री०)—**आलसी**] [आ√ लस्+अच्] सुस्त, काहिल ।

आलस्य--(वि०) [अलस+ष्यञ् (स्वार्थे)] आलसी, सामर्थ्य होने पर भी आवश्यक कर्त्तव्य का पालन न करने वाला। अकर्मण्य। उदासीन। (न०) [अलस+ष्यञ् (भावे)] सुस्ती, काहिली। अकर्मण्यता। उदासीनता।

आलात--(न०) [अलात+अण् (स्वार्थे)] लकड़ी जिसका एक छोर जलता हो, लुआठी, लुक।

आलान—(न०) [आ√ ली+ल्युट्] हाथी बाँधने का खंभा या खूँटा। हाथी के बाँधने का रस्सा। बेड़ी, जंजीर। बंधन।

आलानिक--(वि०) [आलान+ठञ्] हाथी बाँधने के खंभे का काम देने वाला।

आलाप—(पुं०) [आ√लप्+घञ्] वार्तालाप, बातचीत, कथोपकथन, सम्भाषण। वर्णन। तान। संगीत के सप्त स्वरों का साधन।

आलापन--(न०) [आ√लप्+णिच्+ल्युट्] वार्तालाप, कथोपकथन। स्वस्तिवाचन।

आलाबु, आलाबू--(स्त्री०) कुम्हड़ा, कोहँड़ा, कूष्माण्ड।

आलावर्त--(न०) [आलं पर्याप्तम् आवर्त्यते इति आल—आ √वृत्+णिच्+अच्] कपड़े का बना पंखा।

आलि--(वि०) [आ√अल्+इन्] निकम्मा, सुस्त। ईमानदार, सच्चा। (पुं०) विच्छू। भौंरा।

आलिङ्गन--(न०) [आ√लिङ्ग्+ल्युट्] चिपटना, गले लगाना, परिरम्भण।

आलिङ्गिन्—(वि०) [आ√लिङ्ग्+णिनि] आलिङ्गन करने वाला। (पुं०) एक प्रकार का बहुत छोटा ढोल।

आलिङ्ग्य—(वि०) [आ√लिङ्ग्+ण्यत्] आलिंगन करने योग्य। (पुं०) एक तरह का मृदंग।

आलिञ्जर—(पुं०) [अलिञ्जर+अण् (स्वार्थे) मिट्टी का मटका या बड़ा घड़ा।

आलिन्द, आलिन्दक—(पुं०) [अलिन्द+अण् (स्वार्थे)] [आलिन्द+कन् (स्वार्थे)] चबूतरा, चौतरा।

आलिम्पन--(न०) [आ√लिप्+ल्युट् मुम् च] पुताई, लिपाई।

आली--(स्त्री०) [अलि+ङीष्] सखी। सहेली। कतार, पंक्ति। लकीर, रेखा। पुल, सेतु। बाँध।

आलीढ—(न०) [आ√लिह्+क्त] दाहिना घुटना मोड़ कर बैठना, बैठने का आसन विशेष; 'अतिष्ठदालीढविशेषशोभिना, र० ३.५२।

आलु—(न०) [आ√लु+डु] घन्नौटी, बेड़ा। (पुं०) उल्लू, घुग्घू। आबनूस। काले आबनूस की लकड़ी। (स्त्री०) [आ√ला+डु] घड़ा।

आलुञ्चन—(न०) [आ√लुञ्च्+ल्युट्] नोंच कर उखाड़ना। चीर-फाड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर डालना।

आलुल—(वि०) [आ√लुल्+क] हिलने-डुलने वाला। निर्बल।

आलेखन—(न०) [आ√लिख्+ल्युट्] लेख। चित्रण। खरोंचन। खसोटन।

आलेखनी--(स्त्री०) [आलेखन+ङीष्] कूँची। कलम।

आलेख्य--(वि०) [आ√ लिख्+ण्यत्] लिखने, चित्रित करने योग्य। (न०) हाथ से बनायी हुई तसवीर। तसवीर, चित्र। लेख। —**शेष**–(वि०) सिवाय चित्र के जिसका कुछ भी न बचा हो अर्थात् मृत, मरा हुआ; 'आलेख्यशेषस्य पितुः' र० १४.१५।

आलेप—(पुं०) **आलेपन**–(न०) [आ√लिप् घञ्] [आ√लिप्+ल्युट्] उबटन, लेप। पलस्तर।

आलोक—(पुं०), **आलोकन**--(न०) [आ √लोक्+घञ्] [आ√लोक्+ल्युट्] चित-

वन, अवलोकन । दर्शन । प्रकाश । कान्ति । बधाई; 'ययावुदीरितालोकः' र० १७.२७। अध्याय ।—चित्रण-(न०) रासायनिक मसालों से तैयार किये गये विशेष पटल पर प्रकाश की प्रतिक्रिया होने से उतरने वाला चित्र ।

आलोचक—(वि०) [आ√लोच्+ण्वुल्] देखने वाला । जाँचने वाला । समीक्षक ।

आलोचन—(न०), **आलोचना**-(स्त्री०) [आ √ लोच+णिच्+ल्युट्] [आ√लोच् +णिच्+युच्] देखना । गुण-दोष का विवेचन, परख । समीक्षा ।

आलोडन—(न०), **आलोडना**-(स्त्री०) [आ√लोड्+णिच्+ल्युट्] [आ√ लोड् +णिच्+युच्] मथना, बिलोना । मर्दन । छान-बीन, ऊहापोह करना ।

आलोल—(वि०) [प्रा० स०] जरा-जरा हिलता हुआ । काँपता हुआ । घूमता हुआ । हिलता हुआ, आन्दोलित ।

आवण्टन—(न०) [आ√वण्ट्+णिच् + ल्युट्] भूमि, सम्पत्ति आदि का हिस्सों में बाँटना । विभाजन । किसी के लिये भूमि आदि का कोई हिस्सा निर्धारित करना (एलाटमेंट) ।

आवनेय—(पुं०) [अवनि+ढक्—एय] भूसुत, मङ्गलग्रह ।

आवन्त्य—(वि०) [अवन्ति+ञ्यङ] अवन्ती (उज्जैन) से आया हुआ या अवन्ती से संबंध युक्त। (पु०) अवन्ती का राजा या निवासी । पतित ब्राह्मण की सन्तान ।

आवपन—(न०) [आ√वप्+ल्युट्] बीज बोने बखेरने या फेंकनेकी क्रिया । बीज बोना । मुंडन, हजामत । पात्र । भाँड़ा ।

आवरक—(न०) [आ√वृ+अप् ततः संज्ञायां वुन्] ढक्कन । पर्दा । घूँघट ।

आवरण—(न०) [आ√वृ+ल्युट्] ढाँकना । छिपाना । मूँदना । बंद करना । घेरना; 'सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा' र० ५.१३ । ढक्कन । पर्दा । रोक । अड़चन । घेरा, हाता । चारदीवारी । वस्त्र, कपड़ा । ढाल ।—पत्र- (न०) पुस्तक की जिल्द के रक्षार्थ उस पर चढ़ाया हुआ कागज जिस पर उसका नाम-दाम भी रहता है (कवर) ।—शक्ति-(स्त्री) अज्ञान, आत्मा व चैतन्य की दृष्टि पर परदा डालने वाली शक्ति ।

आवर्त—(पुं०) [आ√वृत्+घञ्] घुमाव, चक्कर । बवंडदर । भँवर । विचार, विवेचन । घुँघराले बाल । घनी बस्ती । लाजवर्द । सोना-मक्खी । चिन्ता । बादल जो पानी न बरसावे ।

आवर्तक—(पुं०) [आवर्त+कन्] बादल विशेष । बवंडर । चक्कर, फेरा । घुँघराले बाल । चिंतन । योग के पाँच प्रकार के विघ्नों में से एक ।

आवर्तन—(न०) [आ√वृत्+ल्युट् वा णिजन्तात् ल्युट्] घुमाव, चक्कर । आवर्तन, घूर्णन । (धातुओं का) गलाना । आवृत्ति । दही या दूध का मंथन । दोपहर (इसके बाद पदार्थों की छाया पश्चिम के बदले पूर्व की ओर पड़ने लगती है) ।

आवर्तनी—(स्त्री०) [आवर्तन+ङीप्] घरिया जिसमें रख कर सुनार लोग सोना-चाँदी गलाते हैं ।

आवलि, आवली—(स्त्री०) [आ√वल्+ इन्, पक्षे ङीष्] रेखा, पंक्ति, श्रेणी, कतार ।

आवलित—(वि०) [आ√वल्+क्त] थोड़ा-सा मुड़ा हुआ ।

आवश्य—(न०) आवश्यकता । अनिवार्य कार्य या फल ।

आवश्यक—(वि०) [स्त्री०—**आवश्यकी**] [अवश्य+वुञ्] जरूरी, सापेक्ष । प्रयोजनीय जिसके बिना काम न चले । (न०) आवश्यकता । अनिवार्य परिणाम ।

आवसति—(स्त्री०) [प्रा० सं०] रात्रि-काल में विश्राम करने का स्थान। आधी रात।

आवसथ—(पुं०) [आ√वस्+ अथच्] घर। गाँव। छात्रालय। कुटी। एक व्रत।

आवसथ्य—(वि०) [आवसथ+ञ्य] घर वाला, घर के भीतर स्थित। (पुं०) अग्निहोत्र का अग्नि जो घर में रखा जाता है। (न०) छात्रावास। कुटी। मकान।

आवसित—(वि०) [आ—अव√सो+क्त] समाप्त, सम्पूर्ण। निर्णीत, निश्चित, निर्धारित। (न०) पका हुआ अनाज।

आवह—(वि०) [आ√वह्+अच्] वायु के सात स्कंधों में पहला, भूर्लोक और स्वर्लोक के मध्यवर्ती आकाश की वायु। अग्नि की ७ जीभों में से एक। (वि०) (समासांत में) जनक, उत्पादक (भयावह, क्लेशावह)।

आवाप—(पुं०) [आ√वप्+घञ्] बीज बोना। बखेरना। थाला। बरतन। अनाज। अनाज रखने का बर्तन। पेय पदार्थ विशेष। कंकण। ऊबड़-खावड़ जमीन। शत्रुता-पूर्ण अभिप्राय। एक विशेष अग्नियज्ञ।

आवापक—(पुं०) [आवाप+कन्] कंकण, पहुँची। असमान भूमि। ऊबड़-खाबड़ भूमि।

आवापन—(न०) [आ√वप्+णिच्+ल्युट्] करघा।

आवाल—(न०) [आ√वल्+णिच्+अच्] थाला, खोडुआ।

आवास—(पुं०) [आ√वस्+घञ्] घर, मकान। आवासस्थल।

आवाहन—(न०) [आ√वह्+णिच्+ल्युट्] बुलावा, न्योता, आमंत्रण। देवता का आह्वान। अग्नि में आहुति देना।

आविक—(वि०) [स्त्री०—**आविकी**] [अवि+ठक्] भेड़ सम्बन्धी। ऊनी। (न०) ऊनी कपड़ा।

आविग्न—(वि०) [आ√विज्+क्त] दुःखी। विपद्ग्रस्त, मुसीबतजदा।

आविद्ध—[आ√व्यध्+क्त] छिदा हुआ, बिधा हुआ। टेढ़ा, झुका हुआ। जोर से फेंका हुआ। हताश। मूर्ख।

आविर्भाव—(पुं०) [आविस्√भू+घञ्] प्रकाश। प्राकट्य। उत्पत्ति। अवतार।

आविल—(वि०) दे० 'आबिल'।

आविष्करण—(न०),—**आविष्कार**—(पुं०) [आविस√कृ+ल्युट्] [आविस्√कृ+घञ्] प्रकट करना, दिखाना। कोई अज्ञात बात खोज निकालना। नई चीज बनाना, ईजाद।

आविष्ट—(आ√विष्+क्त] प्रविष्ट, घुसा हुआ। ग्रस्त, भूत प्रेत द्वारा। मरा हुआ। वश में किया हुआ। सर्वग्रास किया हुआ। घेरा हुआ। रत

आविस्—(अव्य०) [आ√अव्+इसि] सामने, नेत्रों के आगे, खुल्लमखुल्ला, साफ तौर पर, स्पष्टतः।

आवी—(स्त्री०) [अवी+अण्+ङीप्] प्रसव-वेदना।

आवीत—(वि०) [आ√व्ये+क्त] पहना हुआ। प्रविष्ट। गया हुआ। ढका हुआ। उपनीत। (न०) अपसव्य, दाहिने कंधे पर जनेऊ रखने की क्रिया।

आवुक—(पुं०) [√अव् +उण्, ततः संज्ञायां कन्] (नाटक की भाषा में) पिता।

आवुत्त—(पुं०) दे० 'आबुत्त'।

आवृत—(स्त्री०) [आ√वृ+क्त] ढँका, छिपा, लपेटा हुआ। घेरा हुआ। बाधित। फैला हुआ। (पुं०) एक वर्णसंकर जाति।

आवृत्त—[आ√वृत्+क्त] घूमा हुआ, चक्कर खाया हुआ। लौटा हुआ। दुहराया हुआ। अभ्यस्त। पढ़ा हुआ, अधीत।

आवृत्ति—(स्त्री०) [आ√वृत्+क्तिन्] प्रत्यावर्तन, लौटना। पलटाव। (सेना का

पीछे) हटाव । परिक्रमा, चक्कर । घूमकर या चक्कर काट कर पुनः उसी स्थान पर आना जहाँ से रवाना हुआ हो । बारंबार जन्म और मरण, लौकिक जीवन । बार-बार किसी बात का अभ्यास। पुनरावृत्ति, दुहराना; 'आवृत्तिः सर्वशास्त्राणाम् बोधादपि गरीयसी'।

आवृष्टि—(स्त्री०) [आ√वृष्+क्तिन्]वर्षा, फुआर।

आवेग—(पुं०) [आ√विज्+घञ्] बेचैनी, चिन्ता, उद्विग्नता, घबराहट, चित्तचाञ्चल्य। उतावली । एक संचारी भाव ।

आवेदन—(न०) [आ√विद्+णिच्+ल्युट्] सूचना, इत्तिला । प्रतिस्मरण । अपनी दशा को सूचित करना, अर्जी । अर्जीदावा ।

आवेश—(पुं०)[आ√विश्+घञ्] व्याप्ति, सञ्चार, प्रवेश । अनुरक्ति । अभिमान, अहङ्कार । चित्तचाञ्चल्य । क्रोध, रोष । भूतावेश, किसी प्रेत का किसी के शरीर पर अधिकार होना, भूत-प्रेत-बाधा । मृगी की मूर्च्छा ।

आवेशन—(न०) [आ√विश्+ल्युट्] प्रवेश । भूत-प्रेत की बाधा । क्रोध, रोष । कारखाना । घर । सूर्य या चंद्रमा का परिवेश ।

आवेशक—(वि०) [स्त्री०—**आवेशिकी**] [आवेश + ठञ्] घर का । निज का । पुश्तैनी । (पुं०) मेहमान, अतिथि, अभ्यागत ।

आवेष्टक—(पुं०) [आ√वेष्ट्+णिच्+ण्वुल्] दीवाल, घेरा, हाता ।

आवेष्टन—(न०) [आ√वेष्ट्+णिच्+ल्युट्] लपेटना । ढकना । वेठन, खोल । लिफाफा । दीवाल, घेरा ।

आश—(वि०) [कर्मणि उपपदे कर्तरि√अश्+अण् उप० स० यथा—आश्रयाश] खानेवाला, भक्षक । (पुं०) [√अश्+घञ्] भोजन ।

आशंसन—(न०) [आ√शंस्+ल्युट्] प्रतीक्षा । अभिलाषा । कथन । घोषणा ।

आशंसा—(स्त्री०) [आ√शंस्+अ] अभिलाषा । आशा; 'निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे' र० १२.४४। भाषण । घोषणा ।

आशंसु—(वि०) [आ√शंस्+उ] अभिलाषी । आशावान् ।

आशङ्का—(स्त्री०) [आ√शङ्क्+अ] भय की संभावना । सन्देह, अनिश्चितता । अविश्वास ।

आशङ्कित—(वि०) [आशङ्का+इतच्]जिसकी आशंका हो । आशंकायुक्त । (न०) [आ√शङ्क्+क्त (भावे)] दे० 'आशङ्का' ।

आशय—(पुं०) [आ√शी+अच्] शयन-गृह, विश्रामस्थल । आश्रय । शयन । रहने की जगह । घर । जानवर फँसाने का गड्ढा । पाप और पुण्य—सुख-दुःख के कारणरूप कर्मजन्य संस्कार (यो०) । कृपण व्यक्ति । आधार । आमाशय, पेट । अभिप्राय, तात्पर्य । मन, हृदय; 'अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः' भग० १०.२० । समृद्धि । खत्ती, बखारी । इच्छा । प्रारब्ध, भाग्य ।—**आश** (**आशयाश**)—(पुं०) अग्नि ।

आशर—(पुं०) [आ√शॄ+अच्] अग्नि । राक्षस, दैत्य । हवा ।

आशव—(न०) [आशु+अण्] तेजी, फुर्ती । आसव, अर्क ।

आशा—(स्त्री०) [आ समन्तात् अश्नुते इति आ√अश्+अच्, टाप्] किसी अप्राप्त वस्तु के प्राप्त करने की अभिलाषा और उसकी प्राप्ति का कुछ-कुछ निश्चय । अभिलाषा, इच्छा । मिथ्या अभिलाषा । दिशा ।—**अन्वित**, (**आशान्वित**)—(वि०) आशा से युक्त ।—**जनन**—(वि०) आशाकारक । —**गज**—(पुं०) दिग्गज । —**तन्तु**—(पुं०) बहुत कम आशा ।—**पाल**—(पुं०) दिग्गज । —**पाश**—(पुं०) अपूरणीय आशा का बंधन या फंदा ।—**पिशाचिका**—(स्त्री०) आशा-

राक्षसी, झूठी आशा । —बन्ध–(पुं०) विश्वास । सान्त्वना, भरोसा । मकड़ी का जाला ।—भङ्ग–(पुं०) आशा का टूटना । —वसन–(वि०) दिगंबर, नग्न ।—वह–(पुं०) सूर्य । वृष्णि ।—हीन–(वि०) हतोत्साह, उदास ।

आशाढ—(पुं०) [=आषाढ पृषो०] आषाढ का महीना ।

आशास्य—[आ√शास्+ण्यत्] अभिलाषा करने योग्य । वर द्वारा प्राप्तव्य । (न०) आशा । इच्छा, अभिलाषा । आशीर्वाद । वरदान ।

आशिञ्जित—(न०) [आ√शिञ्ज्+क्त] गहनों की झनकार । (वि०) झनकारता हुआ ।

आशित—[आ√अश्+क्त] खाया हुआ । अघाया हुआ, तृप्त । (न०) भोजन ।

आशितङ्गवीन—(वि०) [आशिता अशनेन तृप्ता गावो यत्र इति विग्रहे ब० स० ततः ख—ईन नि० मुम्] पशुओं द्वारा पहले चरा हुआ ।

आशितम्भव—(वि०) [आशित√भू+खच्, मुम् उप० स०] अघाया, तृप्त हुआ । (न०) भोजन, भोज्य पदार्थ । तृप्ति । (पुं० भी होता है ।)

आशिर—(वि०) [आ√अश्+इरच्] पेटू, भोजनभट्ट । (पुं०) अग्नि । सूर्य । दैत्य । राक्षस ।

आशिस्—(स्त्री०) [आ√शास्+क्विप्, इत्व] आशीर्वाद, दुआ, मङ्गलकामना । प्रार्थना । अभिलाषा, कामना । सर्प का विषदन्त ।—वाद, (आशीर्वाद)–(पुं०)—वचन, (आशीर्वचन)–(न०) मङ्गल-कामना-सूचक वचन, दुआ, असीस । —विष, (आशीर्विष)–(पुं०) सर्प, साँप ।

आशी—(स्त्री०) [आ√शृ+क्विप्, पृषो०] सर्प का विषदन्त । विष, गरल । आशीर्वाद, दुआ ।—विष–(पुं०) सर्प । एक विशेष प्रकार का सर्प ।

आशु—(वि०) [√अश् उण्] तेज, फुर्तीला । (पुं० न०) चावल, जो वर्षाऋतु ही में पक जाते हैं, आउस धान ।—कारिन्, —कृत्–(वि०) कोई भी काम हो, शीघ्र करने वाला ।—कोपिन्–(वि०) चिड़चिड़ा, तुनुक मिजाज ।—ग–(वि०) शीघ्रगामी । तेज, फुर्तीला । (पुं०) हवा । सूर्य । तीर ।—तोष–(पुं०) शिव की उपाधि ।—पत्र–(न०) शीघ्रतापूर्वक भेजा जाने वाला पत्र, वह पत्र जो पत्रालय (डाकघर) में पहुँचते ही हरकारे द्वारा तुरंत पाने वाले के पास भेज दिया जाय (एक्सप्रेस लेटर) ।—व्रीहि–(पुं०) चावल जो बरसात ही में पक जाते हैं, आउस धान ।

आशुशुक्षणि—(पुं०) [आ√शुष्+सन्+अनि] हवा । आग ।

आशेकुटिन्—(पुं०) [आशेतेऽस्मिन् इति आ√शी+विच् स इव कुटति इति णिनि] पहाड़ ।

आशोषण—(न०) [प्रा० स०] सुखाना ।

आशौच—(न०) [अशौच+अण्] अपवित्रता । (जनन-मरण के समय होने वाला सूतक ।)

आश्चर्य—(वि०) [आ√चर्+ण्यत्, सुट्] अद्भुत, विस्मयकारी । असामान्य, अजीब । (न०) चमत्कार, जादू । विलक्षणता, विचित्रता । अद्भुत रस का स्थायी भाव ।

आश्चोतन,—आश्च्योतन—(न०) [आ√श्चु (श्च्यु) त्+ल्युट्] निन्दावाद, प्रोक्षण । पलकों पर घी आदि लगाना ।

आश्म—(वि०) [स्त्री०—**आश्मी**] [अश्मन्+अण्] पत्थर का बना हुआ, पथरीला ।

आश्मन—(वि०) [स्त्री०—**आश्मनी**] [अश्मन+अण्, टिलोपाभाव] पथरीला, पत्थर का बना हुआ । (पुं०) पत्थर की बनी कोई वस्तु । सूर्य के सारथी अरुण का नाम ।

आश्मिक—(वि०) [स्त्री०—**आश्मिकी**] [अश्मन्+ठण्] पत्थर का बना। पत्थर ढोनेवाला या ले जाने वाला।

आश्यान—(वि०) [आ√श्यै+क्त] कड़ा, जमा हुआ। कुछ-कुछ सूखा हुआ।

आश्र—(न०) [अश्र+अण् (स्वार्थे)]आँसू।

आश्रपण—(न०) [आ√श्रा+णिच्+ल्युट्] पाचन की या उबालने की क्रिया।

आश्रम—(पुं०) [आ√श्रम्+घञ्]साधुओं के रहने का स्थान, कुटी। गुफा। द्विज के जीवन की चार अवस्थाओं में से कोई एक। [चार अवस्थाएँ—**ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ, संन्यास**। क्षत्रिय और वैश्य को साधारणतः उक्त प्रथम तीन आश्रमों में प्रवेश करने का अधिकार है, किन्तु किसी-किसी धर्मशास्त्रकार के मतानुसार ये दोनों वर्ण चतुर्थ आश्रम में भी प्रवेश कर सकते हैं]। विद्यालय, पाठशाला। वन, उपवन।—**गुरु**—(पुं०) आचार्य, प्रधानाध्यापक।—**धर्म**—(पुं०) प्रत्येक आश्रम के कर्त्तव्य-कर्म। संन्यासाश्रम के कर्त्तव्य।—**पद, मण्डल**—(न०) तपोवन।—**भ्रष्ट**—(वि०) आश्रम-धर्म से पतित।—**वासिन्**, —**आलय**, —**सद्**—(पुं०) तपस्वी, संन्यासी।

आश्रमिक, आश्रमिन् (वि०) [आश्रम+ठन्—इक] [आश्रम+इनि] चार आश्रमों में से किसी एक आश्रम का।

आश्रय—(पुं०) [आ√श्रि+अच्] आसरा, सहारा। आधार; 'तमाश्रयं दुष्प्रसहस्य तेजसः' र० ३.५८। विश्रामस्थल। शरण, पनाह। भरोसा। घर। राजा के ६ गुणों में से एक। तरकस। अधिकार। स्वीकृति। सम्बन्ध। सङ्गति। अभ्यास। ग्रहण। पंच ज्ञानेन्द्रिय और मन (बौद्ध)। उद्देश्य (व्या०)।

आश्रयाश—(पुं०) [आश्रय√अश्+अण्] अग्नि।

आश्रयण—(न०) [आ√श्रि+ल्युट्]सहारा लेने की क्रिया। स्वीकृत करना, पसन्द करना। पनाह, आश्रय।

आश्रयिन्—(वि०) [आश्रय+इनि]आश्रय लेनेवाला। सम्बन्धयुक्त।

आश्रव—(वि०) [आ√श्रु+अच्] आज्ञाकारी, आज्ञानुवर्ती। (पुं०) सरिता, नदी। प्रतिज्ञा, वादा, प्रतिश्रुति। दोष, अपराध। अंगीकार। उबलते हुये चावल का फेन।

आश्रि—(स्त्री०) आ—अश्रि प्रा० स०] तलवार की धार।

आश्रित—[आ√श्रि+क्त]शरणागत। आसरे पर रहने वाला। (पुं०) चाकर, नौकर।

आश्रुत—[आ√श्रु+क्त] सुना हुआ। प्रतिज्ञात। स्वीकृत। (न०) इस प्रकार पुकारना जो सुन पड़े।

आश्रुति—(स्त्री०) [आ√श्रु++क्तिन्]सुनना, श्रवण। स्वीकृति।

आश्लेषा—(पुं०) [आ√श्लिष्+घञ्] आलिङ्गन; 'कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने' मे० ३ चिपटाना, लिपटाना, गले लगाना। घनिष्ठ सम्बन्ध। सम्बन्ध।

आश्लेषा—(स्त्री०) [आश्लेष+टाप्] नवाँ नक्षत्र।

आश्व—(वि०) [स्त्री० आश्वी] [अश्व+अण्] घोड़े का, घोड़ा सम्बन्धी। (न०)बहुत से घोड़े, घोड़ों का समुदाय।

आश्वत्थ—(वि०) [स्त्री० **आश्वत्थी**] [अश्वत्थ+अण्] पीपल का बना हुआ या पीपल का या पीपल सम्बन्धी। (न०) पीपल वृक्ष के फल।

आश्वयुज—(वि०) [स्त्री० **आश्वयुजी**] [अश्वयुज्+अण्] अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न। आश्विन मास से सम्बन्ध रखने वाला। (पुं०) आश्विन मास, क्वार का महीना।

आश्वयुजी—(स्त्री०) [आश्वयुज+ङीष्] आश्विन मास की पूर्णमासी या पूर्णिमा।

आश्वलक्षणिक—(पुं०) [अश्वलक्षण+ठक्] घोड़ों के नाल जड़ने वाला। अश्ववैद्य, सालहोत्री। साईस।

आश्वास—(पु०) [आ√श्वस्+घञ्]स्वतंत्र रीत्या साँस लेना। सान्त्वना। अभयदान। निवृत्ति, अवसान। किसी पुस्तक का परिच्छेद या काण्ड।

आश्वासन—(नं०) [आ√श्वस्+णिच्+ल्युट्] दिलासा, तसल्ली, ढाढस, धीरज, आशाप्रदान।

आश्विक—(पुं०) [अश्व+ठञ्—इक] घुड़सवार।

आश्विन—(पुं०) [√अश+विनि, ततः अण्] व्याप्त। अश्वि-देवता-संबन्धी। (पुं०) क्वार का महीना। यज्ञीय कपाल-पात्र। अस्त्र।

आश्विनेय—[अश्विनी+ढक्—एय] (द्विवचन) दो अश्विनी-कुमार, ये दोनों देवताओं के चिकित्सक कहे जाते हैं।

आषाढ—(पुं०) [आषाढी पूर्णिमा अस्मिन् मासे इत्यर्थे अण्] असाढ़ का महीना। पलास का दण्ड।

आषाढा—(स्त्री०) [आषाढ+टाप्] २० वाँ और २१वाँ नक्षत्र, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा।

आषाढी—(स्त्री०) [आषाढ+ङीप्]आषाढ मास की पूर्णिमा या पूरनमासी।

आष्टम—(पुं०) [अष्टम+अण्] आठवाँ भाग या अंश।

आस्, आः—(अव्य०) [आ√अस्+क्विप् वा√आस्+क्विप्] स्मृति, क्रोध, पीड़ा, अपाकरण, खेद, शोक का द्योतक अव्यय।

√आस्—अ० आत्म० अक० सक० वैठना। लेटना, विश्राम करना। रहना, वसना। चुपचाप वैठना, वेकार वैठना। होना। जीवित रहना। अन्तर्गत होना। जाने देना, छोड़ देना। एक ओर रख देना। आस्ते, आसिष्यते, आसिष्ट।

आस—(पुं०, न०) [√आस्+घञ्]वैठक। कमान।—"स सासिः सासुसूः सासः।"—किरातार्जुनीय।

आसक्त—[आ√सञ्ज्+क्त] अनुरक्त, लीन, लिप्त। लुब्ध, मुग्ध मोहित, आशिक़।

आसक्ति—(स्त्री०) [आ√सञ्ज्+क्तिन्] अनुरक्ति, लिप्तता। लगन। चाह, प्रेम, इश्क।

आसङ्ग—(पुं०) [आ√सञ्ज्+घञ्] अनुराग, अभिनिवेश। संगति, सोहवत, मिलन। वंधन।

आसङ्गिनी—(स्त्री०) [आसङ्ग+इनि—ङीप्] ववंडर, चक्रवात।

आसञ्जन—(न०) [आ√सञ्ज्+ल्युट्] वाँधना। लपेटना। (शरीर पर) धारण करना। फँस जाना। चिपट जाना। अनुराग। भक्ति।

आसत्ति—(स्त्री०) [आ√सद्+क्तिन्]संसर्ग, मेलमिलाप। घनिष्ठ ऐक्य। लाभ, फायदा। सामीप्य, निकटता। अर्थवोधार्थ विना व्यवधान के परस्पर सम्वन्ध युक्त दो पदों या शब्दों का समीप रहना।

आसन—(न०) [√आस्+ल्युट्] वैठ जाना। वैठक, वैठकी, तिपाई। वैठने का ढंग विशेष, आसन विशेष। वैठ जाना या रुक जाना। मैथुन करने की कोई भी विशेष विधि। छः प्रकार की राजनीति में से एक, वे ये हैं:—'सन्धिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः।'—अमरकोष।—शत्रु के सामना करने पर भी किसी स्थान पर डटे रहना। हाथी का कंधा।

आसना—(स्त्री०) [आस्+युच्] वैठक, तिपाई, टिकाव।

आसनी—(स्त्री०) [आसन+ङीप्] छोटी वैठकी।

आसन्दी—[आ√सद्+ट, नुम् नि० ङीप्] कोच, तकियादार लंवी वैंच जिस पर गद्दा मढ़ा हो।

आसन्न—[आ√सद्+क्त] समीपस्थ, निकट का। उपस्थित।—**काल**–(पं०) मृत्यु की घड़ी। (वि०) जिसकी मृत्यु समीप हो।—**परिचारक**–(पुं०) व्यक्तिगत चाकर। शरीर-रक्षक।—**प्रसवा**–(स्त्री०) जिसे आजकल में ही बच्चा होने वाला हो।

आसम्वाध—(वि०) [आ समन्तात् सम्वाधा यत्र व० स०] वंद किया हुआ। रोका हुआ। चारों ओर से घिरा हुआ।—'आसंबाधा भविष्यन्ति पन्थानः शरवृष्टिभिः'।–रामायण।

आसव—(पुं०) [आ√सू+अण्] अर्क। काढ़ा। हर प्रकार का मद्य।

आसादन—(न०) [आ√सद्+णिच्+ल्युट्] रखना। तेज चलकर पकड़ लेना। उपलब्धि, प्राप्ति। आक्रमण।

आसार—पुं०) [आ√सृ+घञ्] मूसलधार वृष्टि; 'आसारसिक्तक्षितिवाष्पयोगात्' र० १३.२९; शत्रु को घेरना। आक्रमण, हमला, चढ़ाई। मित्र राजा का सैन्य। रसद, भोज्य-पदार्थ।

आसिक—(पुं०) [असि+ठक्] तलवार-वहादुर, तलवारबंद सिपाही।

आसिधार–(न०) [असिधारा इव अस्ति अत्र इत्यर्थे अण्] तलवार की धार पर चलने की भाँति एक प्रकार का कठिन व्रत।

आसीन—[√आस्+शानच्, ईत्व] बैठा हुआ।—**पाट्य**–(न) नृत्य के दस अंगों में से एक (ना०)।

आसुति—(स्त्री०) [आ√सु+क्तिन्] निःसरण, क्षरण, टपकाव, चुआव। क्वाथ, काढ़ा। प्रसव।

आसुर—(वि०) [स्त्री०—**आसुरी**] [असुर+अण्] असुरों का। असुर-सम्बन्धी। यज्ञ न करने वाला। (पुं०) असुर। आठ प्रकार के विवा ों में से एक। इसमें वर अपने लिये वधू को, मूल्य देकर, वधू के पिता या अन्य किसी सम्बन्धी से खरीदता है।

आसुरी—(स्त्री०) [आसुर+ङीप्] शल्य चिकित्सा, जराही, चीर-फाड़ का इलाज। राक्षसी या असुर की स्त्री। राई।

आसूत्रित—(वि०) [आ√सूत्र्+क्त] पुष्प माला वनाने या पहनने वाला। ओत-प्रोत, गुथा हुआ।

आसेक—(पुं०) [आ√सिच्+घञ्] सिंचन, जल से सींचना, तर करना या भिगोना, उड़ेलना।

आसेचन—(न०) [आ√सिच्+ल्युट्] दे० 'आसेक'। (वि०) सुंदर। प्रिय।

आसेध—(पुं०) [आ√सित् + घञ्] गिरफ्तारी, हवालात, पकड़ रखना। गिरफ्तारी चार प्रकार की होती है यथा—'स्थानसेधः कालकृतः प्रवासात् कर्मणस्तथा।'—नारद।

आसेवन—(न०) **आसेवा**–(स्त्री०) [प्रा०-स०] सतत सेवन। उत्साह युक्त अभ्यास। उत्साह पूर्वक किसी कर्म को बार-वार करने की प्रवृत्ति। पुनरावृत्ति।

आस्कन्द–(पुं०) **आस्कन्दन**–(न०) [आ√स्कन्द्+घञ्] [आ√स्कन्द्+ल्युट्] आक्रमण, चढ़ाई, हमला। चढ़ना, सवार होना! धिक्कार, भर्त्सना। घोड़े की सरपट चाल। युद्ध, लड़ाई।

आस्कन्दित, आस्कन्दितक—(न०) [आ√स्कन्द्+क्त] [आस्कान्दित+कन्] घोड़े की सरपट चाल या तेज दुलकी।

आस्कन्दिन्—(वि०) [आ√स्कन्द्+णिनि] आक्रमण करने वाला। वहाने वाला। देने वाला। व्यय करने वाला। अपहरण करने वाला।

आस्तर—(पुं०) [आ√स्तृ+अप्] चादर, चद्दर। कालीन। गलीचा। विस्तर। चटाई। विछावन।

आस्तरण—(न०) [आ√+स्तृ+ल्युट्] विछौना। चादर। शय्या। गद्दा। गलीचा।

हाथी का झूल। दरी। यज्ञ में फैलाये हुए कुश।
आस्तार—(पुं०) [आ√स्तृ+घञ्] बिछाना। ढाँकना। बखेरना।
आस्तिक—(वि०) [स्त्री०—**आस्तिकी**] [अस्ति+ठक्] परलोक और ईश्वर में विश्वास रखने वाला। वेदों पर आस्था रखने वाला। (पुं०) पवित्र, सच्चा और विश्वासी व्यक्ति।
आस्तिकता—(स्त्री०) **आस्तिकत्व, आस्तिक्य**—(न०) [आस्तिक+तल्, टाप्] [आस्तिक+त्वल्] [आस्तिक+ष्यञ्] ईश्वर और परलोक में विश्वास। वेद में विश्वास। सच्चाई। विश्वास। श्रद्धा। ईश्वर-भक्ति। धर्मानुराग।
आस्तीक—(पुं०) [?] एक प्राचीन ऋषि का नाम। यह जरत्कारु के पुत्र थे। इन्हीं के बीच में पड़ने से महाराज जनमेजय ने सर्पयज्ञ बंद किया था।
आस्था—(स्त्री०) [आ√स्था+अङ्] श्रद्धा, पूज्यबुद्धि। स्वीकारोक्ति, प्रतिज्ञा। सहारा, आश्रय, आधार। आशा, भरोसा। उद्योग, प्रयत्न। दशा, हालत, परिस्थिति। समारोह।
आस्थान—(न०) [आ√+स्था+ल्युट्] स्थान, जगह। आधार, आधारस्थल। समारोह। श्रद्धा, पूज्यबुद्धि। सभा-भवन। दरबार। दर्शकों के बैठने के लिये विशाल भवन। विश्रामस्थान।
आस्थित—(आ√स्था+क्त) निवास किया हुआ। ठहरा हुआ। पहुँचा हुआ। माना हुआ। बड़े प्रयत्न से किसी काम में संलग्न। घिरा हुआ। फैला हुआ। लब्ध।
आस्पद—(न०) [आ√+पद्+घ, सुट्] स्थान, जगह। (अलं०) आवासस्थान। पद। मर्यादा। प्रताप। मामला। सहारा। लग्न से दसवाँ स्थान।
आस्पन्दन—(न०) [आ√स्पन्द्+ल्युट्] सिसकन। काँपना। थरथराहट। धड़कन।
आस्पर्धा—(स्त्री०) [प्रा० स०] स्पर्धा, बराबरी, होड़।
आस्फाल—(पुं०) [आ√स्फल् +णिच् +अच्] धीरे-धीरे चलाना या डुलाना। फटफटाना। विशेष कर हाथी के कानों का फटफटाना।
आस्फालन—(न०) [आ√स्फल्+णिच्+ल्युट्] रगड़ना। मलना। चलाना। दबाना। पछाड़ना। गर्व, अहङ्कार। फड़फड़ाना।
आस्फोट—(पुं०) [आ√स्फुट्+अच्] मदार का पौधा। ताल ठोंकना।
आस्फोटन—(न०) [आ√स्फुट्+ल्युट्] फटफटाना। थर-थर काँपना। फूंकना। फुलाना। सिकोड़ना। मूंदना। ताल ठोंकना।
आस्फोटा—(स्त्री०) [आस्फोट+टाप्] नवमल्लिका का पौधा। चमेली की भिन्न-भिन्न जातियाँ।
आस्माक, आस्माकीन—[स्त्री०—**आस्माकी**] [अस्मद्+अण्, अस्माक आदेश] [अस्मद्+खञ्, अस्माक आदेश] हमारा।
आस्मारक—(न०) [प्रा० स०] वह रचना, कार्य, भवन इत्यादि जिसका लक्ष्य किसी की याद बनाये रखना हो (मेमोरियल)। कही हुई बात आदि का स्मरण दिलाने के लिये किसी अधिकारी के पास भेजा गया पत्रक।
आस्य—(न०) [अस्यते ग्रासोऽत्र इति विग्रहे √अस्+ण्यत् (आधारे)] मुख, चेहरा। मुख का वह भाग जिससे वर्ण का उच्चारण किया जाता है। (वि०) मुख सम्बन्धी।—**आसव, (आस्यासव)**-(पुं०) थूक, खखार।—**पत्र**-(न०) कमल।—**लाङ्गल**-(पुं०) कुत्ता। शूकर।—**लोमन्**-(न०) दाढ़ी।
आस्यन्दन—(न०) [आ√स्यन्द्+ल्युट्] बहना, टपकना।
आस्या—(स्त्री०) [√आस्+क्यप्] बैठना। निवास। निवास-स्थान। विश्रामावस्था।
आस्र—(न०) [अस्र√अण् (स्वार्थे)] खून, लहू, रक्त।

आस्रप—(पुं०) [आस्र√पा+क] रक्त पीने वाला, राक्षस।

आस्रव—(पुं०) [आ√स्रु+अप्] पीड़ा, कष्ट, दुःख। बहाव। निकास। अपराध। चुरते हुए चावल का फेन।

आस्राव—(पुं०) [आ√स्रु+घञ्] घाव। बहाव। थूक। पीड़ा, कष्ट।

आस्वाद—(पुं०) [आ√स्वद्+घञ्] चखना। खाना। सुस्वाद। रस; 'ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः' मे० ४१।

आस्वादन—(न०) [आ√स्वद्+णिच्+ल्युट्] स्वाद लेना। चखना। खाना।

आह—(अव्य०) [आ√हन्+ड] भर्त्सना, उग्रता तथा प्रभुत्वसूचक अव्ययात्मक संबोधन।

आहत—[आ√हन्+क्त] पिटा हुआ, चोट खाया हुआ। कुचला हुआ। मरा हुआ। (अङ्कगणित में) गुणा किया हुआ। (पासा) फेंका हुआ। मिथ्या उच्चारित। (पुं०) ढोल। (न०) कोरा कपड़ा। बेहूदा कथन, असम्भव कथन।

आहक—(पुं०) नाक की बीमारी।

आहति—(स्त्री०) [आ√हन्+क्तिन्] आघात, प्रहार। वध। गुणन।

आहर—(वि०) [आ√हृ+अच्] इकट्ठा करनेवाला। लाने वाला। जाकर लाने वाला। लेने वाला। (पुं०) ग्रहण, पकड़। परिपूर्णता। बलिदान। निःश्वास।

आहरण—(न०) [आ√हृ+ल्युट्] छीनना, हर लेना। स्थानान्तरित करना, अपनयन। ग्रहण, लेना। विवाह में दिया जाने वाला दहेज। 'सत्वानुरूपाहरणी कृतश्रीः'। रघुवंश।

आहव—(पुं०) [आ√ह्वे+अप्] युद्ध, लड़ाई; 'हत्वा स्वजनमाहवे' भग० १.३१। ललकार, चुनौती। [आ√हु+अप्] यज्ञ। होम।

आहवन—(न०) [आ√हु+ल्युट्] यज्ञ। होम। हवि।

आहवनीय—[आ√हु+अनीयर्] हवन करने योग्य। (पुं०) गार्हपत्याग्नि से लिया हुआ अभिमंत्रित अग्नि, जो यज्ञ करने के लिये यज्ञ-मण्डप में पूर्व दिशा में स्थापित किया जाता है।

आहार—(पुं०) [आ√हृ+घञ्] लाना। हर लाना। भोजन करना। भोजन। —**पाक**—(पुं०) भोजन की पाचन-क्रिया। —**विज्ञान**—(न०) वह विज्ञान जिसमें खाद्य-पदार्थों के गुण-दोष, पोषण-तत्त्व, वर्गीकरण आदि का विचार किया गया हो। —**विरह**—(पुं०) फाँका, कड़ाका, लंघन। —**विहार**—(पुं०) भोजन, शयन, क्रीड़ा आदि। —**सम्भव**—(पुं०) खाये हुए पदार्थों का रस।

आहार्य—[आ√हृ+ण्यत्] ग्रहण करने, लेने, लाने, छीनने, खाने योग्य। कृत्रिम। ऊपरी। पूजा के योग्य। (न०) अनुभाव के चार प्रकारों में से एक, नायक-नायिका का एक दूसरे का भेष बनाना। अभिनय के चार प्रकारों में से एक। शस्त्रोपचार वाला रोग। (पुं०) एक तरह की पट्टी या बंध।

आहाव—(पुं०) [आ√ह्वे+घञ्] ढोरों को जल पिलाने के लिए कुएँ के पास का हौद। युद्ध, लड़ाई। आह्वान, आमंत्रण। आग।

आहिण्डन—(न०) [आ√हिण्ड्+ल्युट्] बेघर-द्वार के इधर-उधर भटकना, बेकार घूमना। आवारागर्दी।

आहिण्डिक—(पुं०) वर्णसङ्करविशेष, निषाद पिता और वैदेही माता से उत्पन्न।

आहित—(वि०) [आ√धा+क्त] स्थापित, रखा हुआ। जमा किया हुआ। अमानत रखा हुआ। टिकाया हुआ। किया हुआ। संस्कारित। —**अग्नि** (**आहिताग्नि**)—(पुं०) अग्निहोत्री। —**अंक** (**आहिताङ्क**)—(वि०) चिह्नित, धब्बादार। —**लक्षण**—(वि०) परिचायक चिह्न वाला। —**स्वन**—(वि०) शोर करने वाला।

आहितुण्डिक—(पुं०) [अहितुण्ड+ठक्] सँपेरा, मदारी; 'अहं खल्वाहितुण्डिको जीर्णविषो नाम' मु० २।

आहुति—(स्त्री०) [आ√हु+क्तिन्] होम, हवन। किसी देवता के उद्देश्य से उसका मन्त्र पढ़कर अग्नि में साकल्य डालना। साकल्य की वह मात्रा जो एक वार हवनकुण्ड में छोड़ी जाय। (स्त्री०) [आ√ह्वे+क्तिन्] आह्वान, आमंत्रण।

आहूत—(वि०) [आ√ह्वे+क्त] बुलाया हुआ।

आहेय—(वि०) [अहि+ढक्] सर्प सम्बन्धी। (न०) सर्प का विष।

आहो—(अव्य०) [आ√हन्+डो] सन्देह, विकल्प, प्रश्नव्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन। **—स्वित्**-(अव्य०) विकल्प। संदेह। जानने की अभिलाषा। प्रश्न।

आहोपुरुषिका—(स्त्री०) [अहमेव पुरुषः= शूरः—अहो-पुरुषः तस्य भावः कञ्, स्त्रीत्वात् टाप्] बड़ी भारी अहंमन्यता। शेखी, अपनी शक्ति का बखान।

आह्न—(न०) [अहन्+अण्] दिन-समूह, अनेक दिन। (वि०) दैनिक (कर्त्तव्य)।

आह्निक—(वि०) [स्त्री०—**आह्निकी**] [अह्ना साध्यम् इत्यर्थे अहन्+ठञ्] प्रति दिन का। दैनिक। (न०) नित्यकर्म।

आह्लाद-(पुं०) [आ√ह्लाद+घञ्] हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता।

आह्व—(वि०) [आ√ह्वे+ड] बुलानेवाला

आह्वा—(स्त्री०) [आ√ह्वे+अङ, टाप्] पुकार, चिल्लाहट। नाम, संज्ञा। यथा "अमृताह्वः, शताह्वः।"

आह्वय—(पुं०) [आ√ह्वे+श (वा०)] नाम, संज्ञा। जुआ। जानवरों की लड़ाई से उत्पन्न हुआ मामला, मुकदमा।

"पणपूर्वकं पक्षिमेषादियोधनम् आह्वयः।" —राघवानन्द।

आह्वयन—(न०) [आ√ह्वे+णिच्+ल्युट्] नाम, संज्ञा। नाम लेना।

आह्वान—(न०) [आ√ह्वे+ल्युट्) निमंत्रण, बुलावा, न्योता। अदालत की बुलाहट। किसी देवता का आह्वान। ललकार, चुनौती। नाम, संज्ञा।

आह्वाय—(पुं०) [आ√ह्वे+घञ्] अदालत का बुलावा। नाम, संज्ञा।

आह्वायक—(वि०) [आ√ह्वे+ण्वुल्] आह्वान करने वाला; 'आह्वायकान् भूमिपतेरयोध्याम्' भट्टि० २.४३। (पुं०) हलकारा, डाकिया।

इ

इ—संस्कृत अथवा देवनागरी वर्णमाला में स्वर के अन्तर्गत तीसरा वर्ण, इसका स्थान तालुदेश और प्रयत्न विवृत है। (पुं०) [अस्य विष्णोरपत्यम्, अ+इञ्] कामदेव का नाम। अव्य० [नञर्थकस्य इदम्, अ+इञ्] क्रोध, दया, भर्त्सना, आश्चर्य और सम्बोधनवाची अव्यय।

√इ—भ्वा० पर० सक० जाना। आना। पहुँचना। तेजी से या बारंबार जाना। अक० उपस्थित होना। दौड़ना। घूमना। अयति, एष्यति, ऐषीत्।

√इ (क्)—अ० पर० सक० स्मरण करना। (अधिपूर्वक एव कित्) अध्येति, अध्येष्यति, अध्यैषीत्।

इकटा—(स्त्री०) [√इ+कटच्—टाप्, गुणाभाव] घास-विशेष जिससे चटाई बुनी जाती है।

इकवाल—(पुं०) ज्योतिष में वर्षफल के सोलह योगों में से एक योग; सम्पत्ति।

इक्षव—(पुं०) गन्ना, ऊख।

इक्षु—(पुं०) [√इष्+क्सु] गन्ना, ऊख, पौंड़ा। कोकिला वृक्ष।—**काण्ड** (पुं०) ईख का डंठल। ईख। कास। मूँज।—**कुट्टक**-(पुं०) गन्ना एकत्रित करने वाला।—**गन्ध**-

(पुं०) छोटा गोखरू । कास ।—गन्धा—(स्त्री०) गोखरू । तालमखाना । कास । शुक्लभूमिकूष्मांड । —गन्धिका—(स्त्री०) भूमिकूष्मांड ।—दा—(स्त्री०) एक नदी का नाम ।—नेत्र— (न०) ईख की गाँठ पर की आँख । एक तरह की ईख ।—पत्र—(न०) ज्वार । बाजरा । —पाक—(पुं०) शीरा, गुड़, जूसी, चोटा, राव ।—भक्षिका-(स्त्री०) राव और चीनी का बना हुआ भोज्य पदार्थ। विशेष ।—**मती**, —**मालवी**,—**मालिनी**—(स्त्री०) पुराणोक्त नदी विशेष ।—**मेह**—(पुं०) प्रमेह विशेष; इसमें पेशाब के साथ मधु या शक्कर निकलती है, मधुमेह, इक्षु-प्रमेह ।—**रस**-(पुं०) गन्ने का रस या शीरा । —**वण**—(न०) गन्नों का वन या जंगल ।—**वल्लरी**,—**वल्ली**—(स्त्री०) पीले रंग की एक ईख । क्षीर-विदारी ।—**विकार**— (पुं०) चीनी । गुड़ । शीरा । राव ।—**शाकट**, —**शाकिन**—(न०) ईख बोने के योग्य खेत । —**समुद्र**—(पुं०) पुराणों के अनुसार वह समुद्र जो ईख के रस से भरा है ।—**सार** (पुं०) शीरा । चीनी । गुड़ ।

इक्षुर—(पुं०) [इक्षुम् इक्षुगन्धं राति इति इक्षु √ रा+क] गन्ना । गोखरू । तालमखाना ।

इक्ष्वाकु—(पुं०) [इक्षुम् इच्छाम् आकरोति इति इक्षु—आ√कृ+डु] सूर्यवंशी प्रथम राजा, इनके पिता का नाम वैवस्वत मनु था। महाराज इक्ष्वाकु का वंशज । कड़वी तूंबी, तितलौकी ।

इक्ष्वालिका—(स्त्री०) [इक्षुरिव अलति इति इक्षु√अल्+ण्वुल] काँस, काही ।

√इख√इङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । एखति, एखिष्यति, ऐखीत् । इंङ्खि, इंङ्खि-ष्यति ऐङ्खीत्]।

√इ (ङ) —अ० आत्म० सक० पढ़ना । (अधिपूर्वक एव ङित्) अधीते, अध्येष्यते अध्यैष्ट-अध्यगीष्ट ।

इङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । इङ्गति, इङ्गिष्यति, ऐङ्गीत् ।

इङ्ग—(वि०) [√इङ्ग+क) हिलने वाला। अद्भुत । (पुं०) [√इङ्ग्+घञ्] इशारा, संकेत । हावभाव द्वारा मानसिक भाव का द्योतन ।

इङ्गन—(न) [√इङ्ग+ ल्युट् वा णिज-न्तात् ल्युट्] चलना । हिलना । ज्ञान । इशारा करना । हिलाना, डोलाना ।

इङ्गित—(न०) [√ इङ्ग्+क्त) धड़कन, डोलन । मानसिक विचार । इशारा, संकेत, सैन ।—**कोविद**, —**ज्ञ**—(वि०) इशारेबाजी में कुशल । मनोभाव को प्रकाश करने वाला । हाव-भावों को जानने वाला ।

इङ्गुद—(पुं०), **इङ्गुदी**-(स्त्री०) [√ इङ्ग् +उ —इङ्गु: तं द्यति खण्डयति इति इङ्गु √दो+क] तापस-तरु । हिंगोट का वृक्ष । मालकँगनी ।

इङ्गुल—[√इङ्ग्+उलच्] दे० 'इङ्गुद' ।

इचिकिल—(पुं०) कच्चा तालाब । कीचड़ ।

इच्छल—(पुं०) एक छोटा पौधा जो जल के समीप उत्पन्न होता है, हिज्जल ।

इच्छा—(स्त्री०) [√इष्+श—टाप्] अभि-लाषा, वाञ्छा, चाह । (अंकगणित में) प्रश्न । कठिन प्रश्न । रुचि । माल की माँग (डिमांड) । —**दान**—(न०) मुहमाँगा दान ।—**निवृत्ति**—(स्त्री०) सांसारिक कामनाओं की ओर से उदासीनता, वासनाओं का त्याग ।—**पत्र**—(न०) मृत्यु के पहले लिखा गया वह पत्र या प्रलेख जिसमें कोई व्यक्ति यह इच्छा प्रकट करता है कि मेरी संपत्ति इस-इस प्रकार से इन-इन व्यक्तियों को दी जाय, मेरी दाह क्रिया इस स्थान पर इस ढंग से की जाय इत्यादि (विल) । —**फल**—(न०) किसी प्रश्न का उत्तरा—**रत**—(न०) मनचाहा खेल-कूद । —**वसु**—(पुं०) कुबेर का नाम ।—**संपद्** ; स्त्री०) मनकामना का पूरा होना ।

इज्य—(वि०) [√यज्+क्यप्] पूज्य। (पुं०) गुरु। देवगुरु वृहस्पति। नारायण, परमात्मा।

इज्या—(स्त्री०) [इज्य+टाप्] यज्ञ; 'जगत्प्रकाशं तदशेषमिज्यया' र० ३.४८ दान। पुरस्कार। मूर्ति, प्रतिमा। कुट्टिनी। गौ।—**शील**-(पुं०) सदा यज्ञ करने वाला।

इञ्चाक—(पुं०) [चञ्चा दीर्घा अस्ति अस्य इत्यर्थे आकन्, पषो० साधुः] जलवृश्चिक, पनवीछी।

√इट्—भ्वा० पर० सक० जाना। एटति, एटिष्यति, ऐटीत्।

इट—(पुं०) [√इट्+क] एक प्रकार की घास। चटाई।

इट्चर—(पुं०) [इष्+क्विप्, इट्√चर्+अच्] साँड़ या वारहसिंहा जो चरने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाय।

इड्—(स्त्री०) [√इल्+क्विप्, लस्य डः] [वैदिक प्रयोग]इल्। वलि। प्रार्थना। धारा-प्रवाह वक्तृता। पृथिवी। भोजन। सामग्री। वर्षाऋतु। पञ्चप्रयोगों में से तीसरा प्रयोग। [इडो यजति] ब्रह्म।

इड—(पुं०) [√इल+क, लस्य डः] अग्नि का नाम।

इडस्पति—(पुं०) [छान्दस प्रयोग] विष्णु का नाम।

इडा, इला—(स्त्री०) [√इल् + अच् वा लस्य डत्वम्]पृथिवी। वाणी। अन्न। गौ। (इला०) देवी का नाम, मनु की वेटी, यह वुध की स्त्री और राजा पुरूरवा की माता थी। स्वर्ग। एक नाडी जो रीढ़ की हड्डी से होकर मस्तक तक पहुँचती है। दुर्गा। अम्बिका। पार्वती। स्तुति। एक यज्ञपात्र। आहुति जो प्रयाजा और अनुयाजा के वीच दी जाती है। असोमपा नामक एक अप्रिय देवता। नय देवता। हवि।

इडाचिका—(स्त्री०) [इडा√अच्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] वर्र, वरैंया।

इडिका—(स्त्री०) [इडा+क, इत्व] धरती, पृथिवी।

इडिक्क-(पुं०) [इडिक् इति कायति शव्दायते, इडिक्√कै+ड] जंगली वकरा।

√इ(ण्)—अ० पर० सक० जाना। एति, एष्यति, अगात्।

इत—(वि०) [√इ+क्त] गत, गया हुआ। स्मरण किया हुआ। प्राप्त।

इतर—(सर्वनाम) (वि०) [स्त्री०—**इतरा**, **इतरत्**] [इना कामेन तरः, तॄ+अप्] दूसरा, अन्य, भिन्न। पामर। निम्न श्रेणी का।

इतरतः—(अव्य०) [इतर+तसिल्]अन्यथा, नहीं तो।

इतरत्र—(अव्य०) [इतर+त्रल्] अन्यत्र, भिन्न स्थान में।

इतरथा—(अव्य०) [इतर+थाल्] अन्य प्रकार से, और तरह से। प्रतिकूलरीत्या, अन्यथा। कुटिल भाव से। दूसरी ओर।

इतरेतर—(वि०) [इतरशव्दस्य द्वित्वम्] अन्योन्य, परस्पर, आपस में।

इतरेद्युः—(अव्य०)[इतर+एद्युस्]अन्य-दिवस, दूसरे दिन।

इतस्—(अव्य०) [इदम्+तसिल्] यहाँ से। यहाँ। इस ओर। इस संसार से। इस समय से।—**ततः**-(अव्य०) इधर-उधर, इसमें-उसमें। 'इतो निषीदेति विसृष्टभूमिः' कु० ३.२

इति—(अव्य०) [√इ+क्तिन्] समाप्ति। हेतु। निदर्शन। निकटता। प्रत्यक्ष। अव-धारण। व्यवस्था। मान। परामर्श। शव्द के पदार्थ रूप को प्रकट करने वाला। वाक्य का अर्थप्रकाशक। प्रातिपदिकार्थ का द्योतक (इसके योग में प्रथमा विभक्ति होती है। कभी-कभी द्वितीया के साथ भी यह प्रयुक्त होता है)।—**अर्थ**—(इत्यर्थ)-(पुं०) सारांश।—**आदि** (इत्यादि)—(अव्य०) इसी प्रकार और, वगैरह।—**कथा**-(स्त्री०) वाहियात वात-चीत।—**करणीय**-(वि०) किन्हीं नियमों के

अनुसार करने योग्य।—कर्त्तव्यता–(स्त्री०) अवश्य करने योग्य होना। काम करने का क्रम, जसके अनुसार एक काम के अनन्तर दूसरा काम किया जाय।–वृत्त–(न०) पुरावृत्त, पुरानी कथा, कहानी।

इतिमात्र—(वि०) [इति+मात्रच्]केवल, इतना।

इतिह—(अव्य०) [इति एवं ह किल, द्व० स०] उपदेशपरंपरा। देर से सुना जाने वाला उपदेश। सुना-सुनाया अच्छा वचन।

इतिहास—(पुं०) [इतिह पारम्पर्योपदेश आस्तेऽस्मिन् इति विग्रहे इतिह√आस्+घञ्] पुस्तक जिसमें बीते हुए काल की प्रसिद्ध घटनाओं और तत्कालीन प्रसिद्ध पुरुषों का वर्णन हो। वह ग्रन्थ जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का उपदेश प्राचीन कथानकों से युक्त हो, तवारीख। [संस्कृत साहित्य में इतिहास ग्रन्थों में दो ही ग्रन्थों की गणना है—यथा श्रीमद्वाल्मीकि रामायण और महाभारत।

इत्थम्—(अव्य०) [इदम्+थमु] इस प्रकार, इस तरह, ऐसे।—**कारम्**–(अव्य०) इस प्रकार से, इस ढंग से।—**भूत**–(वि०) ऐसी दशा में प्राप्त। सच्ची, ज्यों की त्यों (जैसे कथा-कहानी)।—**विध**–(वि०) इस प्रकार का। ऐसे गुणों वाला।—**शाल**–(पुं०) ज्योतिष में वर्षफल के तीसरे योग का नाम।

इत्य—(वि०) [√इण्+क्यप्, तुक्]प्राप्य, पहुँचने योग्य। जाने योग्य।

इत्या—(स्त्री०) [इत्य+टाप्]गमन। डोली, पालकी।

इत्वर—(वि०) [स्त्री०—**इत्वरी**][√इण्+क्वरप्] यात्री। निष्ठुर। पामर, नीच। तिरस्कृत। निर्धन। (पुं०) हिजड़ा, नपुंसक।

इत्वरी—(स्त्री०) [इत्वर+ङीप्]अभिसारिका। व्यभिचारिणी, कुलटा स्त्री।

इदम्—(सर्वनाम०—वि०) [पुं०—**अयम्**। स्त्री०—**इयम्**। न०—**इदम्**] [√इन्द्+कमिन्] जो बतलाने वाले के निकट हो, यह।

इदानीम्—(अव्य०) [इदम्+दानीम्, इश् आदेश, शकारलोप] सम्प्रति, अब, इस समय, अभी।

इदानींतन—(वि०) [इदानीम्+तनप्] इस समय का, अभी का, आधुनिक। नवीन, नया।

इद्ध—(वि०) [√इन्ध्+क्त] प्रज्वलित। चमकता हुआ। साफ, निर्मल। आश्चर्यित। पालित (आदेश)। (न०) धूप, घाम। गर्मी। दीप्ति, चमक। आश्चर्य।

इध्म—(पुं० न०) [√इन्ध्+मक्]ईंधन। समिधा जो हवन में जलायी जाती है।—**जिह्व**–(पुं०) आग, अग्नि।—**प्रव्रश्चन**–(पुं०) कुल्हाड़ी।

इध्या—(स्त्री०) [√इन्ध्+क्यप्—टाप्, नलोप] प्रज्वलन करना, जलाना; प्रकाश करना।

इन—(वि०) [√इण्+नक्] योग्य। शक्तिमान्। साहसी। (पुं०) प्रभु, स्वामी; 'न न महीनमहीनपराक्रमम्' र.९.५। राजा। सूर्य। हस्त नक्षत्र।

√इन्द्—भ्वा० पर० अक० ऐश्वर्य होना। इन्दति, इन्दिष्यति, ऐन्दीत्।

इन्दि (न्दी)—(स्त्री०) [√इन्द्+इन् वा ङीप्] लक्ष्मी।

इन्दिन्दिर—(पुं०) [√इन्द्+किरच् नि० साधुः] बड़ी मधुमक्षिका। भ्रमर, भौंरा।

इन्दिरा—(स्त्री०) [√इन्द्+ इर, टाप्] लक्ष्मी देवी, विष्णु-पत्नी।—**आलय(इन्दिरालय)**–(न०) लक्ष्मी का निवास-स्थल, नीलकमल।—**मन्दिर**–(पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधि। (न०) नीलकमल।

इन्दीवर—(न०) [इन्द्याः लक्ष्म्याः वरं वरणीयं प्रियम् ष० त०] नील कमल। साधारण कमल। पद्मलता।

इन्दीवरिणी—(स्त्री०) [इन्दीवराणां समूहः इत्यर्थे इन्दीवर+इनि–ङीप्] नीलकमलों का समूह ।

इन्दीवार—(पुं०) [इन्द्या वारो वरणम् अत्र, ब० स०] नील कमल ।

इन्दु—(पुं०) [उनत्ति चन्द्रिकया भुवं क्लिन्नां करोति इति विग्रहे√उन्द्+उ आदेरिच्च] चन्द्रमा । एक की संख्या । कपूर । मृगशिरा नक्षत्र ।—**कमल**–(नं०) सफेद कमल ।—**कला**–(स्त्री०) चन्द्रमा की कला । अमृता । गुडुची । सोमलता ।—**कलिका**–(स्त्री०) केतकी । चन्द्रकला ।—**कान्त**–(पुं०) चन्द्रकान्त मणि । (यह मणि चन्द्रमा के सामने रखने से पसीजती है ।]—**कान्ता**–(स्त्री०) रात । केतकी ।—**क्षय**–(पुं०) चन्द्रमा की क्षीणता । प्रतिपदा ।—**ज**,—**पुत्र**–(पुं०) बुधग्रह ।—**जनक**–(पुं०) समुद्र । अत्रि ऋषि ।—**जा**–(स्त्री) नर्मदा नदी ।—**दल**—(न०) कला, अर्धचन्द्र ।—**भा**–(स्त्री०) कुमुदिनी ।—**भृत्**,—**शेखर**, —**मौलि**–(पुं०) शिव की उपाधि ।—**मणि**–(पं०) चन्द्रकान्तमणि ।—**मण्डल**–(न०) चन्द्रमा का घेरा ।—**रत्न**–(न०) मोती ।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०)चन्द्रकला । अमृता । गुडुची । सोमलता ।—**लोहक**,—**लौह**–(न०)चाँदी ।—**वदना**–(स्त्री०) चन्द्रमुखी । एक छन्द ।—**वासर**–(पुं०) सोमवार ।—**व्रत**–(न०) चान्द्रायण व्रत ।

इन्दुमती—(स्त्री०) [इन्दु+मतुप् , ङीप्] पूर्णिमा । अज की पत्नी और भोज की भगिनी का नाम ।

इन्दूर—(पुं०) [√इन्दु+र, पृषो० ऊत्व] चूहा, मसा ।

इन्द्र—(वि०) [√इन्द्+र] ऐश्वर्यवान् , विभूतिसम्पन्न । श्रेष्ठ, बड़ा । (पुं०) देवताओं के राजा । मेघों के राजा, वृष्टि के राजा । स्वामी, प्रभु, शासक । वैदिक देवता विशेष, इसका वाहन ऐरावत हाथी और अस्त्र वज्र है । इसकी रानी का नाम शची और पुत्र का नाम जयन्त है । इसकी सभा का नाम 'सुधर्मा' है । इसकी राजधानी का नाम अमरावती है । वहीं 'नन्दन' नाम का उद्यान है, जिसमें पारिजात वृक्षों का प्राधान्य है और वहीं कल्प-वृक्ष । है इसके घोड़े का नाम उच्चैःश्रवा है और सारथी का नाम मातलि है । यह ज्येष्ठा नक्षत्र और पूर्व दिशा का स्वामी है । दाहिनी आँख की पुतली । रात्रि । एक योग । कुटज वृक्ष । एक वनस्पतिजन्य विष । छप्पय छंद का एक भेद । १४ की संख्या । आत्मा । जंबूद्वीप का एक भाग ।—**अनुज**, (**इन्द्रानुज**,—**अवरज** (**इन्द्रावरज**)–(पुं०) विष्णु या नारायण की उपाधि ।—**अरि** (**इन्द्रारि**)–(पुं०) दैत्य या दानव ।—**आयुध** (**इन्द्रायुध**)–(न०) इन्द्र का हथियार, इन्द्रधनुष ।—**कील**–(पुं०) मन्दराचल पर्वत का नाम । चट्टान । (न०) इन्द्र की ध्वजा ।—**कुञ्जर**–(पुं०) ऐरावत हाथी ।—**कूट**–(पुं०) पर्वत विशेष ।—**कोश**,—**कोष**,—**कोषक**–(पुं०) कोच, सोफा । चबूतरा । खूंटी जो दीवाल में गाड़ी जाती है, नागदन्त ।—**गिरि**–(पुं०) महेन्द्राचल ।—**गुरु**–(पुं०) बृहस्पति ।—**गोप**,—**गोपक**–(पुं०) वीरबहूटी नाम का एक कीड़ा ।—**चाप**,—**धनुस्**–(न०) सात रंगों का बना हुआ एक अर्धवृत्त जो वर्षाकाल में सूर्य के सामने की दिशा में कभी-कभी आकाश में देख पड़ता है ।—**छन्दस्**–(न०) एक हजार आठ लड़ियों का हार ।—**जाल**–(न०) एक अस्त्र जिसका प्रयोग अर्जुन ने किया था । माया-कर्म, जादूगरी, तिलस्म । —**जालिक**–(त्रि०) धोखेबाज, बनावटी, मायावी । (पुं०) जादूगर, इन्द्रजाल करने वाला ।—**जित्**–(पुं०) इन्द्र को जीतने वाला, मेघनाद (जो

रावण का पुत्र था और जिसे लक्ष्मण ने मारा था); 'तत्रेन्द्रजिन्नैर्ऋतयोधमुख्यः' वा० ।—**विजयिन्**–(पुं०) लक्ष्मण ।—**तापन**–(पुं०) एक दानव ।—**तूल,—तूलक**–(न०) रुई का ढेर। हवा में उड़ने वाला सूत ।—**दारु**–(पुं०) देवदारु वृक्ष ।—**द्वीप**– (पुं०) जंबुद्वीप के नव खंडों में से एक ।—**नील,—नीलक**–(पुं०) मरकतमणि, पन्ना ।—**पत्नी**–(स्त्री०) शची देवी ।—**पर्णी—पुष्पी**–(स्त्री०) एक वनौषधि, करियारी।—**पुरोहित**–(पुं०) वृहस्पति। —**प्रस्थ**–(न०) आधुनिक दिल्ली नगरी ।—**प्रहरण**–(न०) वज्र ।—**भेषज**–(न०) सोंठ ।—**मण्डल**–(न०) अभिजित् से अनुराधा तक के सात नक्षत्र ।—**मह**–(पुं०) इन्द्रोत्सव । वर्षाऋतु ।—**यव**–(न०) कुटज का बीज, इंद्रजौ ।—**लुप्त,—लुप्तक**–(न०) सिर के बाल झड़ जाने का रोग, गंजापन ।—**लोक**–(पुं०) स्वर्ग ।—**वंशा,—वज्रा**–(स्त्री०) दो छन्दों के नाम।—**वधू**–(स्त्री०) बीरबहूटी । —**वल्लरी, —वल्ली**–(स्त्री०) पारिजात। —**व्रत**–(न०) राजा का प्रजा के समृद्धिसाधन में इंद्र का अनुसरण करना, जो जल बरसा कर संपूर्ण प्राणियों का पोषण करता है ।—**शत्रु**–(पुं०) इन्द्र का वैरी । वृत्रासुर; 'यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोपराधात्' महा०। प्रह्लाद । (वि०) वह जिसका शत्रु इन्द्र हो । —**शलभ**–(पुं०) बीरबहूटी नाम का कीड़ा । —**सारथि**–(पुं०) मातलि, वायु ।—**सुत, —सूनु**–(पुं०) इन्द्र का पुत्र (क) जयन्त, (ख) अर्जुन । (ग) बालि । —**सेनानी**–(पुं०) कार्त्तिकेय की उपाधि ।

इन्द्रक—(न०) [इन्द्रस्य कं सुखमिव कं यत्रं ब० स०] सभाभवन । बड़ा कमरा ।

इन्द्राणी—(स्त्री०) [इन्द्र+ङीष्, आनुक्] शची देवी । इन्द्रायन वृक्ष । बड़ी इलायची । बाँई आँख की पुतली । संभालू, सिन्धुवार वृक्ष, निर्गुण्डी ।

इन्द्रिय—(न०) [इन्द्र+घ—इय] बल, जोर । शरीर के वे अवयव, जिनसे बाहरी विषयों का ज्ञान प्राप्त होता है। ये दो प्रकार के होते हैं, यथा कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय अथवा बुद्धीन्द्रिय (कर्मेन्द्रिय—हाथ, पाँव, वाणी, गुदा और उपस्थ । ज्ञानेन्द्रिय—आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा। कुछ दर्शन मन को भी इन्द्रिय मानते हैं) । शारीरिक शक्ति । वीर्य । पाँच की संख्या का सङ्केत ।—**अगोचर (इन्द्रियागोचर)**–(वि०) अज्ञेय । जो दिखलायी न दे ।—**अर्थ (इन्द्रियार्थ)** (पुं०) इन्द्रियों का विषय, विषय जिनका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा हो [ये विषय हैं—रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श।]—**आयतन (इन्द्रियायतन)**;–(न०) शरीर ।—**ग्राम—वर्ग**–(पुं०) इन्द्रियों का समूह; 'बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति' हितो०—**ज्ञान**–(न०) सत्यासत्य-विवेकशक्ति । —**निग्रह**–(पुं०) इन्द्रियों का दमन ।—**वध**–(पुं०) अज्ञानता, अचेतनता, मूर्च्छा । —**विप्रतिपत्ति**–(स्त्री०) इन्द्रियों का उत्पथगमन ।—**स्वाप**–(पुं०) मूर्च्छा, अचेतना, बेहोशी ।

√इन्व्—रु० आत्म० अक० चमकना । (सक०) जलाना । इन्धे, इन्धिष्यते, ऐन्धिष्ट ।

इन्ध—(पुं०) [√इन्ध+घञ्] ईंधन, जलाने की लकड़ी । परमेश्वर ।

इन्धन—(न०) [√इन्ध्+ल्युट्] जलाना । जलावन, ईंधन ।

√इन्व्—भ्वा० पर० अक० व्याप्त होना । इन्वति, इन्विष्यति, ऐन्वीत् ।

इभ—(पुं०) [√इण्+भ, कित्] हाथी । आठ की संख्या ।— **अरि (इभारि)**–(पुं०) शेर ।—**आनन (इभानन)**–(पुं०) गणेश जी का नाम, गजानन।—**निमीलिका**–(स्त्री०) चातुर्य, बुद्धिमत्ता। भाग ।—**पालक**–(पुं०) महावत ।—**पोटा**–(स्त्री०) हाथी की मादा छोटी सन्तान ।—**पोत**– (पुं०) हाथी का बच्चा ।—**युवति**–(स्त्री०) हथिनी ।

इभी––(स्त्री०) [इभ+ङीष्] हथिनी ।
इभ्य––(वि०) [इभ+यत्] धनी, धनवान् । (पुं०) राजा । महावत । शत्रु ।
इभ्यक––(वि०) [इभ्य+कन्] धनी, धनवान् ।
इभ्या––(स्त्री०) [इभ्य+टाप्] हथिनी । सलई का पेड़ ।
इयत्––(वि०) [इदम्+वतुप्] इतना, इतना बड़ा, इतने विस्तार का ।
इयत्ता––(स्त्री०), **इयत्त्व**–(न०)[इयत्+तल्, टाप्] [इयत्+त्वल्] सीमा । परिमाण, माप ।
इरण––(न०) [√ऋ+अण्, पृषो०] ऊसर भूमि, लुनई जमीन । वियावान, उजाड़ ।
इरम्मद––(पुं०) [इरया जलेन माद्यति वर्धते इत्यर्थे इरा√ मद्+खश्, ह्रस्व, मुम्] विजली की कड़क या कौंधा, वह आग जो विजली गिरने पर प्रकट होती है, वज्राग्नि । वाड़वानल ।
इरा––(स्त्री०) [√इण्+रक् वा इं कामं राति इत्यर्थे इ√रा+क] पृथिवी । वाणी । वाणी की अधिष्ठात्री देवी, सरस्वती । जल । भोज्य पदार्थ । मदिरा । **––ईश (इरेश)**–(पुं०) वरुण । विष्णु । गणेश । सम्राट् । ब्राह्मण ।**––चर**–(न०) ओला, पत्थर जो वादल से वरसते हैं ।**––ज**–(पुं०) कामदेव ।
इरावत्––(पुं०) [इरा+मतुप्] समुद्र, सागर । मेघ । एक पर्वत । अर्जुन का एक पुत्र ।
इरु––(पुं०) वीज ।
इरिण–(न०) [√ऋ+इन्, कित्] दे० 'इरण' ।
इर्वारु, इर्वालु––(वि०) [√उर्व्+आरु पृषो०] नाशक, हिंसक । (पुं० स्त्री०) ककड़ी, कर्कटी ।
√इल्––तु० पर० अक० सोना । सक० फेंकना । इलति, एलिष्यति, ऐलीत् । चु० उभ० सक० प्रेरित करना । एलयति-ते, इलयिष्यति, ऐलिलत्-त ।
इलविला––(स्त्री०) पुलस्त्य मुनि की स्त्री, कुबेर की माता ।
इला––(स्त्री०) [√इल्+क, टाप्] दे० । 'इडा' ।**––गोल**–(पुं०) (न०) पृथिवी, भूगोल ।**––धर**–(पुं०) पहाड़ ।**––वृत्त**–(न०) जंबुद्वीप के नौ वर्ष (भागों) में से एक ।
इलिका––(स्त्री०)[इला+कन्,इत्व]पृथिवी
इली––(स्त्री०)[√इश+इन्–ङीष्] छोटी तलवार, करवालिका ।
इल्वला––(पुं०) [√इल्+वल वा√इल्+क्विप्+वलच्] एक तरह की मछली । एक दैत्य ।
इल्वला, इल्वका –(स्त्री०) [इल्वल+टाप्] मृगशिरा नक्षत्र के शिर पर स्थित पाँच शुद्ध तारे ।
इव––(अव्य०) [√इ+क्वन् (वा०)] जैसा; 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' र० १.१ । गोया । कुछ, थोड़ा । कुछ-कुछ । शायद, कदाचित् ।
√इष्––दि० पर० सक० जाना । इष्यति एषिष्यति, ऐषीत् । तु० पर० सक० चाहना । इच्छा करना । इच्छति, एषिष्यति, ऐषीत् । क्र्या० पर० अक० वार-वार (होना) । इष्णाति, एषिष्यति, ऐषीत् ।
इष––(पुं०) [√इष्+क्विप्–इट्+अच्] शक्तिशाली या वलवान् व्यक्ति । आश्विनमास। ('ध्वनिमिषेऽनिमिषेक्षणमग्रतः' शि. ६.४६)
इषिका,–– इषीका–(स्त्री०) [√इष्+वुन्] [इष्+ईकन्, ह्रस्व] नरकुल, सींक । वाण । कूँची । हाथी की आँख का डेला ।
इषिर––(पुं०) [√इष्+किरच्] अग्नि । (वि०)–गमनशील ।
इषु––(पुं०) [√ईष्+उ, कित्, ह्रस्व] तीर । पाँच की संख्या का संकेत ।**––अग्र, ––अनीक** (इष्वग्र,––इश्वनीक)–(न०)

तीरकी नोक।—असन,—अस्त्र (इष्वसन,—इष्वस्त्र)—(न०) कमान, धनुष।—आस (इष्वास)—(पुं०) धनुष। धनुर्धर। योद्धा। —कार,—कृत्—(पुं०) धनुष बनाने वाला। —धर,—भृध्—(पुं०) धनुर्धर।—विक्षेप—(पुं०) तीर छोड़ना।—प्रयोग।(पुं०) तीर चलाना।

इषुधि—(पुं०) [इषु√धा+कि] तरकस, तूणीर।

इष्ट—(वि०)[√इष् वा√यज्+क्त] अभिलषित, चाहा गया। प्रिय, प्यारा प्रेमपात्र। कृपापात्र। पूज्य, मान्य। यज्ञ किया हुआ। यज्ञ में पूजन किया हुआ। (पुं०) प्रेमी। पति। (न०) कामना, अभिलाषा, चाह। संस्कार। यज्ञादि कर्मानुष्ठान।—अर्थ (इष्टार्थ)—(पुं०) अभिलषित वस्तु।—आपत्ति (इष्टापत्ति)—अभिलषित कार्य का होना। प्रतिवादी के अनुकूल वादी का कथन या बयान यथा—'इष्टापत्तौ दोषान्तरमाह'। —पूर्त (इष्टापूर्त)—(न०) [समाहार द्व० स०, पूर्वपद-दीर्घ] यज्ञादि अनुष्ठान, कूप बावली खुदवाना, वृक्षादि रोपण करना, धर्मशाला आदि परोपकारी कार्य करना।—देव (पुं०),—देवता-(स्त्री०) आराध्य देव। कुलदेवता।

इष्टका—(स्त्री०) [√इष्+तकन्] ईंट। —चित—(वि०) ईंटों से बना हुआ।—न्यास—(पुं०) नींव रखना।—पथ—(पुं०) ईंटों की बनी सड़क।

इष्टा—(स्त्री०) [√यज+क्त] शमी वृक्ष, छँकुर का पेड़।

इष्टि—(स्त्री०) [√इष्+क्तिन्] अभिलाषा, कामना। प्रवृत्ति। व्याकरण में भाष्यकार की वह सम्मति, जिसके विषय में सूत्रकार ने कुछ न लिखा हो, सूत्र और वार्तिक से भिन्न व्याकरण का नियम विशेष। [√यज्+क्तिन्] यज्ञ, दर्शपौर्ण-मास यज्ञ का भेद।— पच (पुं०)—कंजूस।—पशु—(पुं०) बलिदान के लिये पशु।

इष्टिका—स्त्री) [√ इष्+तिकन्—टाप्] ईंट।

इष्म—(पुं०) [√इष्+मक्] कामदेव। वसन्त ऋतु।

इष्य—(पुं० न०)[इष्+क्यप्] वसन्त ऋतु।

इस्—(अव्य) [इं कामं स्यति √सो+क्विप्, नि० ओलोप]क्रोध, पीड़ा एवं शोक व्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन।

इह—(अव्य) [इदम्+ह, इ आदेश] यहाँ, इस स्थान में। इस समय, अब।—अमुत्र, (इहामुत्र)—(अव्य) इस लोक और परलोक में। यहाँ और वहाँ।—लोक—(पुं०) यह दुनिया या यह जन्म।—स्थ—(वि०) यहाँ खड़ा हुआ।

इहत्य—(वि०) [इह+त्यप्] यहाँ का, इस स्थान का। इस लोक का।

इहल—(पुं०) [इह भवं लाति√ला+क] चेदिदेश का नाम।

ई

ई—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का चौथा अक्षर। यह "इ" का दीर्घ रूप है। तालु इसका उच्चारण स्थान है। (पुं०) [√ई+क्विप्] कामदेव का नाम। (अव्य०) उदासी, पीड़ा, क्रोध, शोक, अनुकम्पा, सम्बोधन और विवेक व्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन।

√ई—अ० पर० सक० चाहना। जाना। अक० फैलना। एति, एष्यति, ऐषीत्।

√ईक्ष्—भ्वा० आत्म० सक० देखना, ताकना। जानना। आलोचना करना। घूरना। सम्मान करना। परवाह करना। सोचना, विचारना। खोजना। ढूँढ़ना, अनुसन्धान करना। ईक्षते, ईक्षिष्यते, एेक्षिष्ट।

ईक्षक—(पुं०) [√ईक्ष्+ण्वुल्] दर्शक, देखने वाला।

ईक्षण—(न०) [ईक्ष्+ल्युट्] देखना। दृष्टि, चितवन। नेत्र, आँख।

ईक्षणिक—(पुं०) [ईक्षणं शुभाशुभदर्शनं शिल्पमस्य इत्यर्थे ईक्षण+ठन्] ज्योतिषी, भविष्यद्वक्ता।

ईक्षति—(पुं०) [√ईक्ष्+श्तिप्] चितवन, दृष्टि।

ईक्षा—(स्त्री०) [√ईक्ष्+अ] चितवन, दृष्टि। विवेचना।

ईक्षिका—(स्त्री०) [√ईक्ष्+ण्वुल् वा ईक्षा +कन्—टाप्, इत्व] नेत्र। झलक।

ईक्षित—[√ ईक्ष्+क्त] देखा हुआ। विचारा हुआ। (न०) चितवन, निगाह। नेत्र, आँख; 'अभिमुखे मयि संहृतमीक्षितम्' श० २.११।

√ईङ—दि० आत्म० सक० जाना। ईयते, एष्यते, ऐष्ट।

ईङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना। ईङ्खति, ईङ्खिष्यति, ऐङ्खीत्।

√ईज्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। दोष लगाना, कलङ्क लगाना। ईजते, ईजिष्यते, एजिष्ट।

√ईड्—अ० आत्म० सक० स्तुति या प्रशंसा करना। ईट्टे, ईडिष्यते, ऐडिष्ट। चु० उभ० सक० ईडयति-ते, ईडयिष्यति-ते, ऐडिडत्-ते।

ईडा—(स्त्री०) [√ईड्+अ] प्रशंसा, स्तुति, बड़ाई।

ईड्य—[√ईड्+ ण्यत्] प्रशंसनीय, श्लाघनीय; 'भवन्तमीड्यम्भवतः पितेव' र० ५.३४।

ईति—(पुं०) [ईयतेऽनया विग्रहे√ई+ क्तिन्] आपत्ति। फसल सम्बन्धी उपद्रव। ऐसे उपद्रव ६ प्रकार के होते हैं। यथा,—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, टिड्डियों का आगमन, चूहों का उपद्रव, तोतों का उपद्रव, राजाओं की चढ़ाई या उनका दौरा।—'अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभा मूषकाः शुकाः। प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः।' संक्रामक रोग। विदेशों में भ्रमण या यात्रा। दंगा, मारपीट।

ईदृक्ता—(स्त्री०) [ईदृश्+तल् टाप्] इस प्रकार का भाव, ऐसी हालत।

ईदृक्ष, ईदृश—(वि०) [स्त्री०—**ईदृशी, ईदृशी**] [अस्येव दर्शनम् अस्य इति विग्रहे इदम्√दृश्+क्स्, इशादेश, दीर्घ] [इदम् √दृश्+कञ्, इशादेश, दीर्घ] [ईदृश में क्विन् प्रत्यय] इसका **ईदृश्** रूप भी होता है। ऐसा, इस प्रकार का, इसके सदृश, इसके बराबर, इस प्रकार के गुणों वाला।

ईप्सा—(स्त्री०) [आप्तुम् इच्छा इत्यर्थे √आप्+सन्, इत्व+अ, टाप्] अपेक्षा। चाह, अभिलाषा।

ईप्सित—(वि०) [√आप्+सन्+क्त] अभिलषित, चाहा हुआ। प्रिय, प्यारा। (न०) अभिलाषा, चाह।

ईप्सु—(वि०) [√आप्+सन्+उ] प्राप्ति की कामना करने वाला। किसी वस्तु की प्राप्ति के लिये परिश्रम करने वाला।

√ईर—अ० आत्म० सक० जाना। अक० काँपना। ईर्ते, ईरिष्यते, ऐरिष्ट। चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० फेंकना। ईरयति—ते, ईरयिष्यति—ते, ऐरिरत्—त। पक्षे ईरति, ईरिष्यति, ऐरीत्।

ईरण—(वि०) [√ईर्+ल्यु] क्षुब्ध या अस्थिर करने वाला। (पुं०) वायु। (न०) आन्दोलन। गमन। कथन। प्रेषण। कष्टपूर्ण मलत्याग।

ईरिण—(वि०) [√ईर्+इनन्] ऊसर, उजाड़। (न०) उजाड़ स्थान, ऊसर जमीन; 'मुहूर्तमिव निःशब्दमासीदीरिणसन्निभम्' वा०।

√ईर्ष्य्—भ्वा० पर० सक० डाह करना। होड़ करना। ईर्ष्यति, ईर्ष्यिष्यति, ऐर्ष्यीत्।

ईर्म—(वि०) [√ईर्+मक्] बराबर चलने या भड़काने वाला। (न०) घाव। (पुं०) बाहु।

ईर्या—(स्त्री०) [√ईर्+ण्यत्, टाप्] इधर-उधर घूमना-फिरना, भिक्षु-व्रत।

ईर्वारु—(पुं० स्त्री०) [ईरु√ऋ+ उण (बा०)] ककड़ी।

ईर्षा,—ईर्ष्या—(स्त्री०) [ईर्ष्य्+घञ्, यलोप] [√ईर्ष्य्+अ] डाह, परोत्कर्ष-असहिष्णुता। दूसरे की बढ़ती देख जो जलन पैदा होती है उसे ईर्ष्या कहते हैं।

√ईर्ष्य्—भ्वा० पर० सक० डाह करना, दूसरे की बढ़ती न देख सकना। ईर्ष्यति, ईर्ष्यिष्यति, ऐर्ष्यीत्।

ईर्ष्य,—ईर्ष्यक,—ईर्ष्यु—(वि०) [√ईर्ष्य् + अच्] [√ईर्ष्य्+ण्वुल्] [√ईर्ष्य्+उण्] डाही, ईर्ष्यालु।

ईर्ष्यालु—(वि०) [ईर्ष्या√ला+डु] डाह करने वाला।

ईलि—(पुं०) [स्त्री०—**ईली**] [√ईड् +कि, डस्य लः] सोंटा। छोटी तलवार।

ईलित—(वि०) [√ईड्+क्त, डस्य लः] स्तुति किया हुआ।

√ईश्—अ० आत्म० अक० ऐश्वर्यवान् होना। समर्थ होना। सक० शासन करना। ईष्टे, ईशिष्यते, ऐशिष्ट।

ईश—(वि०) [√ईश्+क] ऐश्वर्ययुक्त। समर्थ। (पुं०) प्रभु, मालिक। पति। ग्यारह की संख्या। शिव का नाम।—**कोण**—(पुं०) ईशान दिशा, उत्तर और पूर्व की दिशाओं के बीच का कोना।—**नगरी,—पुरी**— (स्त्री०) काशीपुरी, बनारस नगर।—**सख**—(पुं०) कुबेर की उपाधि।

ईशा—(स्त्री०) [ईश+टाप्] दुर्गा का नाम। धनवती स्त्री।

ईशान—(पुं०) [√ईश्+शानच्] (वि०) ऐश्वर्ययुक्त। आधिपत्ययुक्त। शासक। प्रभु। शिव का नाम। विष्णु का नाम। सूर्य।

ईशानी—(स्त्री०) [ईशान+ ङीष्] दुर्गा देवी का नाम। शाल्मली वृक्ष।

ईशिता—(स्त्री०),—**ईशित्व**—(न०) [ईशिनो भावः इत्यर्थे ईशिन्+तल्, टाप्] [ईशिन् +त्वल] उत्कृष्टता, महत्त्व। आठ सिद्धियों में से एक। [जिसको ईशिता की सिद्धि प्राप्त हो जाय, वह सब पर शासन कर सकता है।]

ईश्वर—(वि०) [स्त्री०—**ईश्वरा, ईश्वरी**] [√ईश्+वरच्]√ ऐश्वर्ययुक्त। समर्थ। शक्तिशाली। धनी। (पुं०) प्रभु, मालिक। राजा, शासक। धनी या बड़ा आदमी। यथा—'मा प्रयच्छेश्वरे धनम्'। पति। परमात्मा, परमेश्वर। शिव का नाम। विष्णु का नाम। कामदेव।—**निषेध**—(पुं०) ईश्वर के अस्तित्व को न मानना, नास्तिकता।—**पूजक**—(वि०) ईश्वर की पूजा करने वाला, ईश्वर में आस्था रखने वाला, ईश्वरभक्त।—**सद्मन्**—(न०) देवालय, मन्दिर।—**सभ**—(न०) राजदरबार, राजसभा।

ईश्वरा,—ईश्वरी—(स्त्री०) [ईश्वर+टाप्] [ईश्वर+ङीष्]√दुर्गा। लक्ष्मी। कोई शक्ति। लिंगिनी, वन्ध्या कर्कटी, क्षुद्रजटा, नाकुली आदि पौधे।

√ईष्—भ्वा० आत्म० अक० सक० उड़ जाना। भाग जाना। देखना। देना। मार डालना। ईषते, ईषिष्यते, ऐषिष्ठ। पर० सक० सीला बीनना। ईषति, ईषिष्यति, ऐषीत्।

ईष—(पुं०) [√ईष्+क] आश्विन मास।

ईषत्—(अव्य०) [√ईष्+अति (बा०)] हल्का सा, थोड़ा सा।—**उष्ण** (**ईषदुष्ण**)—(वि०)गुनगुना।—**कर**—(वि०) थोड़ा करने वाला। सहज में होने वाला।—**जल** (**ईषज्जल**) (न०) उथला पानी।—**पाण्डु**—(वि०) हल्का सफ़ेद या पीला।—**पुरुष**—(पुं०) अधम या तिरस्कार करने योग्य मनुष्य।—**रक्त** (**ईषद्रक्त**)—(वि०) पिलौहाँ, लाल, नारंगी।—**लभ** (**ईषल्लभ**,), —**प्रलभ**—(वि०) थोड़े में मिलने वाला।—**स्पृष्ट**—(न०)

अर्ध स्वर (य, र, ल, व) ।—**ह्रास** (**ईष-द्धास**)-(पुं०) मुसक्यान, मुसकराहट ।

ईषा—(स्त्री०) [√ईष्+क, टाप्] गाड़ी का बम या हल का बाँस, हरिस ।

ईषिका—(स्त्री०) [ईषा+कन्] हाथी की आँख की पुतली । रंगसाज की कूँची । तीर । सींक ।

ईषिर—(पुं०) [√ईष्+किरच्] अग्नि, आग ।

ईषीका—(स्त्री०) [√ईष्+क्वुन्, इत्व, दीर्घ] रंगसाज की कूँची । (सोने या चाँदी की) छड़ । ईंट । सलाका या डला ।

ईष्म,—ईष्व-(पुं०) [√ईष्+मक्] [√ईष् +वन्] कामदेव । वसन्तऋतु ।

√ईह—भ्वा० आत्म० सक० अक० इच्छा करना, अभिलाषा रखना । किसी वस्तु के पाने के लिये प्रयत्न करना । उद्योग करना । ईहते, ईहिष्यते, ऐहिष्ट ।

ईहा—(स्त्री०) [√ईह + अ] ख्वाहिश, चाह । उद्योग, क्रियाशीलता ।—**मृग**-(पुं०) भेड़िया । नाटक का एक परिच्छेद जिसमें चार दृश्य हों ।—**वृक**-(पुं०) भेड़िया ।

ईहित—[√ईह+क्त] चाहा हुआ, वांछित । चेष्टित । (न०) वाञ्छा, अभिलाषा, चाह । उद्योग, प्रयत्न । कर्म, कार्य ।

उ

उ—नागरी वर्णमाला का पाँचवाँ अक्षर, इसका उच्चारण ओष्ठ की सहायता से होता है। इसकी गणना मुख्य तीन स्वरों में है । ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, सानुनासिक एवं निरनुनासिक—इस प्रकार इसके १८ भेद हैं । उ, को गुण करने से 'ओ' और वृद्धि करने से 'औ' होता है । (पुं०) [√अत्+डु] शिव का नाम । ब्रह्मा का नाम । चन्द्रमा का बिम्ब । ओम् का दूसरा अक्षर । (अव्य०) पुकारना, क्रोध, अनुग्रह, आदेश, स्वीकृति, एवं प्रश्न-व्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन; "उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम, कु० १.२६ ।

उकानह—(पुं०) लाल और पीले रंग का घोड़ा ।

उकुण—(पुं०) खटमल, खटकीरा ।

उक्त—[√वच्+क्त] कहा हुआ, कथित । बतलाया हुआ । सम्बोधित । वर्णित । (न०) वाणी, शब्दराशि ।—**अनुक्त** (**उक्तानुक्त**) -(वि०) कहा और अनकहा हुआ ।—**उपसंहार** (**उक्तोपसंहार**)-(पुं०) संक्षिप्त वर्णन । सिंहावलोकन । सारांश ।—**निर्वाह**-(पुं०) कथन का समर्थन ।—**प्रत्युक्त**-(न०) कथन और उत्तर, संवाद ।

उक्ति—(स्त्री०) [√वच्+क्तिन्] कथन, वचन । वाक्य । (मानसिक भाव) व्यक्त करने की शक्ति । यथा—'एकयोक्त्या पुष्पवन्तौ दिवाकरनिशाकरौ ।' —अमरकोश।

उक्थ—(न०) [√वच्+थक्] स्तोत्र । सामवेद का प्रधान अंग । महाव्रत नामक यज्ञ । प्राण । ऋषभक नामक औषधि ।

√उक्ष्—भ्वा० पर० सक० छिड़कना, तर करना । निकालना । छोड़ना । उक्षति, उक्षिष्यति, औक्षीत् ।

उक्षण—(न०) [√उक्ष्+ल्युट्] छिड़काव, प्रोक्षण या मार्जन ; 'वशिष्ठमन्त्रोक्षणजात्प्रभावात्' र० ५.२७ ।

उक्षतर—(पुं०) [उक्षन्+ष्टरच्] छोटा बैल । बड़ा बैल ।

उक्षन्—(पुं०) [√उक्ष्+कनिन्] बैल । सूर्य । अग्नि । सोम । मरुत् । अष्टवर्ग के अंतर्गत ऋषभ नामक ओषधि ।

उक्षाल—(वि०) तेज । भयानक । ऊँचा, बड़ा । सर्वोत्तम । (पुं०) बंदर, वानर ।

उक्षित—(वि०) [√ उक्ष्+क्त] सींचा हुआ ।

√उख्—भ्वा० पर० सक० जाना, ओखति, ओखिष्यति, औखीत् ।

उखा—(स्त्री०) [√उख् + क] बटलोई, डेगची ।

उख्य—(वि०) [उखा+यत्] बटलोई में उबाला हुआ ।

उग्र—(पुं०) [√ उच्+रक्, ग आदेश] शिव या रुद्र का नाम । क्षत्रिय पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति । रौद्र रस । केरल देश । सहजन का पेड़ । वच्छनाग (वत्सनाग) विष । पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा आदि पाँच नक्षत्रों का समूह । वायु । (वि०) निष्ठुर । हिंसक । भयानक । प्रचण्ड । तीक्ष्ण । उच्च । परिश्रमी ।—**काण्ड**–(पुं०) करेला ।—**गन्ध**–(पुं०) चम्पा का वृक्ष । चमेली । लशुन । हींग । (वि०) तेज महकवाला ।—**चण्डा,—चारिणी**–(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—**जाति**–(वि०) नीच जाति में उत्पन्न ।—**दर्शन,—रूप**–(वि०) भयानक शक्ल वाला ।—**धन्वन्**–(वि०) मजबूत धनुषधारी । (पुं०) शिव का नाम । इन्द्र का नाम ।—**पुत्र**–(वि०) बड़े वंश में उत्पन्न । (पुं०) कार्त्तिकेय ।—**शेखरा**–(स्त्री०) गङ्गा का नाम ।—**श्रवस्**–(पुं०) रोमहर्षण का पुत्र । (वि०) सुनी बात को तुरन्त याद कर लेने वाला ।—**सेन**–(पुं०) कंस के पिता का नाम ।

उग्रम्पश्य—(वि०) [उग्र√दृश्+खश्, मुम्] भयानक शक्ल वाला । भयानक ।

उङ—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । गरजना । (सक०) माँगना । तगादा करना । अवते ओष्यते, औष्ट ।

उङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । उङ्खति, उङ्खिष्यति, औङ्खीत् ।

उच्—दि० पर० सक० जमा करना, इकट्ठा करना । (अक०) अनुरागी होना । प्रसन्न होना । उपयुक्त होना । आदी होना, अभ्यस्त होना । उच्यति, ओचिष्यति, औचीत् ।

उचथ—(न०) [वच+कथन्] स्तुति करने का मंत्र । स्तोत्र ।

उचथ्य—(वि०) [उचथ+यत्] स्तुति करने योग्य ।

उचित—[√उच्+क्त] योग्य, ठीक, मुनासिब । सामान्य, साधारण । प्रथानुरूप, प्रचलित । अभ्यस्त, आदी । श्लाघ्य; प्रशंसनीय ।

उच्च—(वि०) [उत्क्षिप्य बाहू चीयते इति विग्रहे उद्√चि+ड] ऊँचा, लंबा । बड़ा, श्रेष्ठ । कुलीन । तेज । जोरदार । शुभ ।—**आयुक्त, (उच्चायुक्त)**–(पुं०) राष्ट्रमंडल के किसी एक देश का राजदूत जो मंडल के किसी अन्य देश में अपने देश का प्रतिनिधि बनकर रहे (हाई कमिश्नर) ।—**तरु**–(पुं०) नारियल का वृक्ष । —**ताल**–(पुं०) मद्यशाला का सङ्गीत, नृत्य आदि ।—**नीच**–(वि०) ऊँचा-नीचा । उतार- चढ़ाव । विविध । बहुप्रकार । —**न्यायालय**– (पुं०) किसी प्रदेश या राज्य का प्रधान न्यायालय (हाईकोर्ट) ।—**ललाटा, —ललाटिका**–(स्त्री०) चौड़े माथे वाली स्त्री ।—**संश्रय**–(वि०) उच्चस्थानीय । (उच्चग्रह के लिये)

उच्चकैः—(अव्य०) [उच्चैस+अकच्] अत्यन्त ऊँचा ।

उच्चक्षुस्—(वि०) [ब० स०] ऊपर देखने वाला । ऊपर की ओर निगाह किये हुए । अंधा, दृष्टिहीन ।

उच्चण्ड—(वि०) [प्रा० स०] भयानक, भयंकर । तेज, फुर्तीला । उच्च स्वर वाला । क्रुद्ध, कुपित ।

उच्चन्द्र—(पुं०) [अत्या० स०] रात का अन्तिम पहर ।

उच्चय—(पुं०) [उद्√चि+अच्] संग्रह, ढेर । समूह, समुदाय । स्त्री के दुपट्टे की ग्रन्थि । समृद्धि, अभ्युदय ।

उच्चरण—(न०) [उद्√चर्+ल्युट्] ऊपर या बाहर जाना । उच्चारण, कथन ।

उच्चल—(वि०) [उद्√चल+अच्] हिलने वाला। सरकने वाला। (न०) मन।

उच्चलन—(न०) [उद्√चल्+ल्युट्] निकलना। चला जाना।

उच्चलित—[उद्√चल्+क्त] चलने को तैयार। जाने को उद्यत। बाहर आया या ऊपर गया हुआ। फटका हुआ।

उच्चाटन—(न०) [उद्√चट्+णिच्+ल्युट्] हटाना। नकालना। विछोह। उखाड़ना (वृक्ष का)। तांत्रिक षट् कर्मों में से एक। चित्त का न लगना।

उच्चार—(पुं०) [उद्√चर्+णिच्+घञ्] (शब्द को) बोलना। कहना। मल, विष्ठा। 'मातुरुच्चार एव सः।' विसर्जन, छोड़ना।

उच्चारण—(न०) [उद्√चर्+णिच्+ल्युट्] शब्द को मुँह से निकालना, बोलना। शब्द या उसके वर्णों को कहने का ढंग।—**स्थान**–(न०) मुँह का वह स्थान जिसके प्रयत्न से कोई विशेष ध्वनि निकले (कंठ, तालु, ओष्ठ, जिह्वा आदि)।

उच्चावच—(वि०) [उदक्=उत्कृष्टं च अवाक्=अपकृष्टं च इति विग्रहे मयू० स०] ऊँचा-नीचा। ऊबड़-खाबड़। छोटा-बड़ा। विविध, विभिन्न। विषम।

उच्चूड, उच्चूल—(पुं०) [उद्गता चूडा वा चूला यस्य ब० स०] ध्वजा या उसका ऊपर का भाग। झंडे के सिरे पर की सजावट।

उच्चैः—(अव्य०) [उद्√चि+डैस्] ऊँचा, ऊपर। ऊपर की ओर। जोर की आवाज के साथ, बड़े शोर के साथ। बहुत अधिक, बहुतायत।—**घुष्ट**, (**उच्चैर्घुष्ट**)–(न०) शोरगुल, कोलाहल। उच्च स्वर से पढ़ी गयी घोषणा।—**वाद**, (**उच्चैर्वाद**)–(पुं०) प्रशंसा।—**शिरस्**–(वि०) जिसका सिर ऊँचा हो। उच्चाशय, उदारचेता।—**श्रवस्**,—**श्रवस**–(वि०) बड़े-बड़े कानों वाला। बहरा। (पुं०) इन्द्र के घोड़े का नाम।

उच्चैस्तमाम्—(अव्य०) [उच्चैस्√तमप्+आम्] अत्युच्च, बहुत ही अधिक ऊँचा। बड़े जोर से, अत्युच्च स्वर से।

उच्चैस्तरम्, उच्चैस्तराम्—(न०) [उच्चैस्+तर्] [उच्चैस+तर्+आम्] अत्युच्च स्वर का। बहुत अधिक लंबा या ऊँचा।

√उच्छ्—भ्वा०, तु० पर० सक० बाँधना। समाप्त करना। छोड़ना। (प्रायेणायं विपूर्वः) व्युच्छति, व्युच्छिष्यति, अव्युच्छीत्। (तु० न विपूर्वः)।

उच्छन्न—(वि०) [उद्√छद्+क्त] अनावृत। विनष्ट, नष्ट किया हुआ। लुप्त।

उच्छलत्—(वि०) [√उद्+शल्+शतृ] प्रकाशित, दीप्त। इधर-उधर डोलने वाला। गतिशील। उड़ जाने वाला या ऊपर उड़ने वाला। बहुत ऊँचा जाने वाला।

उच्छलन—(न०) [उद्√शल्+ल्युट्] ऊपर को जाना या सरकना।

उच्छादन—(न०) [उद्√छद्+णिच्+ल्युट्] ढकना। शरीर में तेल-फुलेल की मालिश करना।

उच्छासन—(वि०) [उद्गतः शासनात् ग० स०] नियम या आदेश के अनुसार न चलने वाला। अदम्य। निरंकुश।

उच्छास्त्र—(वि०) [उद्गतः शास्त्रात् ग०स०] शास्त्रविरुद्ध। धर्मशास्त्र का अतिक्रम करने वाला।

उच्छिख—(वि०) [उद्गता शिखा यस्य ब० स०] जिसकी शिखा ऊपर को उठी हो। जिसकी ज्वाला ऊपर की ओर जा रही हो, भभकता हुआ।

उच्छित्ति—(स्त्री०) [उद्√छिद्+क्तिन्] नाश। मूलोच्छेदन, जड़ से नाश करना।

उच्छिन्न—[उद्√छिद्+क्त] मूलोच्छेद किया हुआ। नष्ट किया हुआ; 'उच्छिन्नाश्रय कातरेव कुलटा गोत्रान्तरं श्रीर्गता' मु० ६.५। नीच, हीन। —**सन्धि**–(पुं०) उर्वरा या

खनिज पदार्थों से पूर्ण भूमि देकर की जाने वाली संधि ।

उच्छिरस्—(वि०) [ब० स०] गर्दन उठाये हुए । कुलीन । महान्; 'शैलात्मजापि पितुरुच्छिरसोऽभिलाषं" कु० ३.७५ ।

उच्छिलीन्ध्र—(वि०) [ब० स०] कुकुरमुत्तों से परिपूर्ण । (न०) [प्रा० स०] कुकुरमुत्ता ।

उच्छिष्ट—[उद्√शिष् +क्त] बचा हुआ । जूठा । छूटा हुआ । अस्वीकृत किया हुआ । त्यागा हुआ । बासी । (न०) जूठन ।—**मोदन**–(न०) मोम ।

उच्छीर्षक—(न०) [उत्थापितं शय्यात उत्तोल्य स्थापितं शीर्षं यस्मिन् इति विग्रहे ब० स० कप्] तकिया ।

उच्छुष्क—(वि०) [प्रा० स०] सूखा हुआ । मुरझाया हुआ ।

उच्छून—(वि०) [उद्√श्वि+क्त] फूला हुआ । सूजा हुआ । मोटा, ऊँचा ।

उच्छृङ्खल—(वि०) (उद्गतः शृङ्खलातः ग० स०] बेलगाम का, जो बस या काबू में न हो । स्वेच्छाचारी । डाँवाडोल ।

उच्छेद (पुं०) **उच्छेदन**—(न०) [उद्√छिद्+घञ्] [उद्√छिद्+ल्युट्] उखाड़-पुखाड़ । खण्डन । नाश । नश्तर लगाने की क्रिया ।

उच्छेष—(पुं०), **उच्छेषण**—(न०)[उद्√शिष्+घञ्] [उद्√शिष+ल्युट्] अवशिष्ट, बचा हुआ, शेष ।

उच्छोषण—(वि०) [उद्√शुष्+णिच् ल्यु] सुखाने वाला । कुम्हलाने वाला । जलन करने वाला । (न०) [अत्र ल्युट्] सुखाना । रस ऊपर खींच लेना ।

उच्छ्रय, उच्छ्राय–(पुं०) [उद्√श्रि + अच्] [उद्√श्रि+घञ्] किसी ग्रह का उदय । (इमारत का) खड़ा करना । ऊँचाई । बाढ़ । वृद्धि । अभिमान ।

उच्छ्रयण—(न०) [उद्√श्रि+ल्युट्] उठान, ऊँचाई ।

उच्छ्रित—[उद्√श्रि+क्त] उठा हुआ । ऊँचा किया हुआ । ऊपर गया हुआ । लंबा, बड़ा । उत्पन्न किया हुआ या उत्पन्न हुआ । समृद्धिशाली । अभिमानी । उदित ।

उच्छ्वसन—(न०) [उद्√श्वस्+ल्युट्] साँस लेना । आह भरना ।

उच्छ्वसित—[उद्√श्वस्+क्त] आह भरता हुआ; 'उत्कण्ठोच्छ्वसित हृदया' मे० १०० । साँस लेता हुआ । तरोताजा । पूरा फूला हुआ । खुला हुआ । विश्राम लिये हुए । ढाढ़स बँधाया हुआ । (न०) साँस । प्राणवायु । साँस से फूलना । साँस भीतर खींचना । उभार । सिसकना । शरीरव्यापी पाँच प्राणवायु ।

उच्छ्वास —[उद्√श्वस्+घञ्] ऊपर को खींची हुई साँस । उसाँस, आह । सान्त्वना, ढाढ़स । वायुरन्ध्र । ग्रन्थ का प्रकरण या अध्याय ।

उच्छ्वासिन्—(वि०) (उच्छ्वास+इनि] साँस लेते हुए । उसाँस लेते हुए, आह भरते हुए । अदृश्य होते हुए । कुम्हलाते हुए ।

उज्ज(य)यिनी–(स्त्री०) [प्रा० स०]विक्रमादित्य की राजधानी, आधुनिक उज्जैन नगरी ।

उज्जासन—(न०) [उद्√जस्+णिच्+ल्युट्] मार डालना, मारण ।

उज्जिहान—(वि०) [उद्√हा+शानच्] उठता हुआ । उदित होता हुआ । प्रस्थान करता हुआ; 'उज्जिहानस्य भानोः' मु० ४.२१ ।

उज्जृम्भ—(वि०) [ब० स०] फूला या खिला हुआ । खुला हुआ ।(पुं०) [प्रा० स०] खिलना, फूलना, । विछोह, जुदाई ।

उज्जिहीर्षा—(स्त्री०) [उद्√हृ+सन्, द्वित्वादि,+अ—टाप्] पकड़ने की इच्छा ।

उज्जृम्भण—(न०), **उज्जृम्भा**–(स्त्री०) [उद्√जृम्भ्+ल्युट्] [उद्√जृम्भ+अ]

मुँह बाना। जँभाई लेना। फैलना। खिलना। फटना। क्षोभ।

उज्ज्य—(वि०) [ब० स०] खुली हुई डोरी का धनुष रखने वाला।

उज्ज्वल—(वि०) [उद्√ज्वल्+अच्] उजला। चमकीला। मनोहर, सुन्दर। खिला हुआ। बढ़ा हुआ। असंयमी। (पुं०) प्रेम, अनुराग। (न०) सोना।

उज्ज्वलन—(न०) [उद्√ज्वल्+ल्युट्] जलना। चमकना। दीप्ति। चमक। सोना।

√उज्झ्—तु० पर० सक० छोड़ना। बाहर निकालना। उज्झति, उज्झिष्यति, औज्झीत्।

उज्झन—(पुं०) [उज्झ्+ण्वुल्] त्याग। स्थानान्तररण।

उज्झक—(न०) [√उज्झ्+ल्युट्] बादल। भक्त।

√उञ्छ्—भ्वा, तु० पर० सक० खेत में सिल उठ जाने के बाद पड़े हुए अनाज के दाने बीनना, एकत्र करना। उञ्छति, उञ्छिष्यति, औञ्छीत्।

उञ्छ—(पुं०) [√उञ्छ्+घञ्] अनाज के दानों का संग्रह करने की क्रिया।—**वृत्ति**,—**शील**–(वि०) खेत में छूटे हुए अनाज के कणों को बीनकर पेट भरने वाला।

उञ्छन—[√उञ्छ्+ल्युट्] खेत में (लुनाई के बाद) या रास्ते में पड़े हुये अनाज के दानों को एकत्र करने की क्रिया।

उट—(न०) [√उ+टक्] पत्र, पत्ता। घास, तृण।—**ज**–(पुं०) झोपड़ी, कुटी।

√उठ्—भ्वा० पर० सक० आघात करना। ओ ति, ओठिष्यति, औठीत्।

√उड्—भ्वा० पर० सक० इकट्ठा करना। ओडति, ओडिष्यति, औडीत्।

उडु—(स्त्री० न०) [उ√डी+डु] नक्षत्र, तारा। जल।—**चक्र**–(न०) राशिचक्र।—**प**–(पुं०) एक तरह की नाव, भेला। एक तरह का पान पात्र। चन्द्रमा।—**पति**,—**राज्**–(पुं०) चन्द्रमा।—**पथ**–(पुं०) आकाश।

उडुम्बर—(पुं०) [उं शम्भुं वृणोति, उ√वृ+खच्, मुम्, उत्कृष्टः उम्बरः, प्रा० स०, दस्य डत्वम्] गूलर का पेड़। घर की ड्योढ़ी। हिजड़ा, नपुंसक। कोढ़ का भेद। (यह नपुंसक लिंग भी होता है)। (न०) गूलर का फल। ताँबा।

उड्डयन—(न०) [उद्√डी+ल्युट्] उड़ान (पक्षियों की)।

उड्डामर–(वि०) [प्रा० स०] मनोहर। समीचीन। सर्वोत्तम। भीम, भयानक।

उड्डीन—(वि०) [उद्√डी०+क्त] उड़ा हुआ। उड़ता हुआ। (न०) उड़ान, चिड़ियों की क विशेष प्रकार की उड़ान।

उड्डीयन—(न०) [ऊड्डः स इव आचरति, क्यङ्, √उड्डीय+ल्युट्] उड़ान।

उड्डीश—(पुं०) [उद्√डी+क्विप्, उड्डी तस्य ईशः] शिव का नाम।

उड्र—(पुं०) [√उड्+रक्] उड़ीसा प्रान्त का प्राचीन नाम।

उण्डेरक—(पुं०) आटे का लड्डू, रोट।

उत्—(अव्य०) [√उ+क्विप्] सन्देह, प्रश्न, विचार और प्रचण्डता सूचक अव्यय।

उत—(अव्य०) [√उ+क्त] सन्देह, अनिश्चितता, अनुमान, अथवा, या, और, सङ्गति सूचक अव्यय।

उतथ्य—(पुं०) अंगिरा के एक पुत्र का नाम जो बृहस्पति के ज्येष्ठ भ्राता थे।—**अनुज**,-**अनुजन्मन्**, (**उतथ्यानुज**,—**उतथ्यानुजन्मन्**) (पुं०) देवाचार्य बृहस्पति; 'तथ्यामुतथ्यानुजवज्जगाद' शि० २.६९।

उताहो—(अव्य) [उत च आहो च इति विग्रहे द्व० स०]। विकल्प। संदेह। प्रश्न। विचार।

उत्क—(वि०) [उद्+क नि०] अभिलाषी, चाह रखने वाला। दुःखी, शोकान्वित। अमनस्क।

उत्कञ्चुक—(वि०) [ब०स०] विना अंगिया या कञ्चुकी धारण किये हुए।

उत्कट—(वि०) [उद्+कटच्] तीव्र। उग्र। प्रबल। विकट। नशे में चूर, मदमाता। श्रेष्ठ। विषम। (पुं०) हाथी का मद। मदमाता हाथी। ईख। दालचीनी। घमंड। नशा। मूंज। तेजपत्ता।

उत्कण्ठ—(वि०) [ब० स०] ऊपर को गर्दन उठाये हुये, उद्ग्रीव। तत्पर। उत्सुक। (पुं०) मैथुन करने का एक ढंग।

उत्कण्ठा—(स्त्री०) [उद्√कण्ठ्+अ, टाप्] प्रबल इच्छा, लालसा। व्याकुलता। प्रिय से मिलने की उत्सुकता। रतिक्रिया का एक आसन।

उत्कण्ठित—(वि०) [उद्√कण्ठ्+क्त] उत्सुक। चिन्तित। शोकान्वित। किसी प्यारे पुरुष या प्रियवस्तु के मिलने की प्रबल इच्छा से युक्त।

उत्कण्ठिता—(स्त्री०) [उत्कण्ठित+टाप्] सङ्केत स्थान पर प्यारे के न आने पर तर्क-वितर्क करने वाली नायिका, आठ प्रकार की नायिकाओं में से एक।

उत्कन्धर—(वि०) [उन्नता कन्धरा अस्य ब० स०] गर्दन उठाये हुए।

उत्कम्प—(वि० [ब० स०] काँपते हुए। (पुं०) [प्रा० स०] कँपकपी।

उत्कम्पन—(न०) [प्रा० स०] कँपकपी, सिहरन।

उत्कर—(पुं०) [उद्√कृ+अप्] ढेर, समूह। टाल, गोला। कूड़ा-कर्कट।

उत्करिका—(स्त्री०) गुड़, घी और दूध की बनी मिठाई।

उत्कर्कर—(पुं०) [ब० स०] एक प्रकार का बाजा।

उत्कर्ण—(वि०) [ब० स०] जो कान खड़े किये हुए हो। सुनने को उत्सुक।

उत्कर्तन—(न०) [उद्√कृत्+ल्युट्] काटना। फाड़ना। उन्मूलन।

उत्कर्ष—(पुं०) [उद्√कृष्+घञ्] उखाड़ना। ऊपर खींच लेना। उन्नति। प्रसिद्धि। समृद्धि। आधिक्य, अधिकाई। सर्वोत्कृष्टता। अहङ्कार। हर्ष।

उत्कर्षण—(न०) [उद्√कृष+ल्युट्] ऊपर खींचना। उखाड़ लेना, उचेल लेना।

उत्कल—(पुं०) [उद्√कल्+अच्] वर्तमान उड़ीसा। [उत्कः सन् लाति, उत्क√ला+क] बहेलिया, चिड़ीमार। कुली।

उत्कलाप—(वि०) [ब० ह०] पूँछ उठाये और फैलाये हुये।

उत्कलिका—(स्त्री०) [उद्√कल+वुन्] उत्कण्ठा। चिन्ता। विकलता। हेला, कामक्रीड़ा। कली। लहर।—प्राय-(न०) ऐसी गद्य-रचना जिसमें कर्णकटुअक्षरों और लंबे-लंबे समासों की भरमार हो। 'भवेदुत्कलिकाप्रायं समासाढ्यं दृढाक्षरम्'।

उत्कषण—(न०) [उद्√कष्+ल्युट्] फाड़ना। खींचना। जोतना, हल चलाना; 'सद्यः सीरोत्कषणसुरभि' मे० १६। मलना, रगड़ना।

उत्कार—(पुं०) [उद्√कृ+घञ्] अनाज फटकना। अनाज की ढेरी लगाना। [उद्√कृ+अण्] अनाज बोने वाला।

उत्कारिका—(स्त्री०) पुलटिस।

उत्कास—(पुं०), —**उत्कासन**—(न०),—**उत्कासिका**—(स्त्री०) [उत्क√अस्+अण्] [उत्क√अस्+ल्युट्] [उत्क√अस्+ण्वुल्] खखारना, खाँसना। गले का कफ साफ करना।

उत्किर—(वि०) [उद्√कॄ+श] गुफना की तरह घुमाया हुआ। हवा में उड़ाया हुआ।

उत्कीर्ण—(वि०) [उद्√कॄ+क्त] छितराया या ढेर किया हुआ। खुदा हुआ। छिदा हुआ।

उत्कीर्तन—(न०) [उद्√कृत्+ल्युट्] चिल्लाना। घोषणा करना। प्रशंसा या स्तुति करना।

उत्कुट--(न०) [व० उ०] उत्तान, लेटना, चित्त लेटना।

उत्कुण--(पुं०) [सद्√कुण्+क] खटमल। जूँ।

उत्कुल--(वि०) [अत्या० स०] पतित, भ्रष्ट। अपने कुल को बदनाम करने वाला।

उत्कूज--(पुं०) [प्रा० स०] कोकिल की कूक।

उत्कूट--(पुं०)[व० स०] छाता, छतरी।

उत्कूर्दन--(न०) [उद्√कूर्द्+ल्युट्] उछाल, कुलाँच।

उत्कूल--(वि०) [अत्या० स०] किनारे पर पहुँचने वाला। तट को लाँघकर बहने वाला।

उत्कृष्ट--[उद्√कृष्+क्त] ऊपर उठाया हुआ। उन्नत। सर्वोत्तम। उत्तम। जोता हुआ, हल चलाया हुआ।

उत्कोच--(पुं०) [उद्√कुच्+घञ्] घूस, रिश्वत।

उत्कोचक--(पुं०) [उत्कोच+कन्] घूस। (वि०) [उद्+√ कुच्+ण्वुल्] घूसखोर, रिश्वती।

उत्क्रम--(पुं०) [उद्√क्रम+घञ्, अवृद्धि] ऊपर जाना, चढ़ना। क्रमोन्नति। बाहर जाना। प्रस्थान। क्रमभंग। नियमविरुद्धता, विरुद्धाचरण। उछाल, छलांग।

उत्क्रमण--(न०) [उद्√क्रम्+ल्युट्] ऊपर जाना, चढ़ना। बढ़ जाना। प्रस्थान। मृत्यु, जीव का शरीर से वियोग।

उत्क्रान्ति--(स्त्री०) [उद्√क्रम्+क्तिन्] उछाल। बहिर्निष्क्रमण।

उत्क्राम--(पुं०) (उद्√क्रम्+घञ्] ऊपर या बाहर जाना। प्रस्थान। अतिक्रमण। विरुद्धता। नियम का भंगकरण।

उत्क्रोश--(पुं०) [उद्√क्रुश्+अच्] चिल्लपों, शोरगुल, कोलाहल। घोषणा, ढिंढोरा। कुररी।

उत्क्लेद--(पुं०) [उद्√क्लिद्+घञ्] तर होना, भींगना।

उत्क्लेश--(पुं०) [उद्√क्लिश्+घञ्] घबड़ाहट, अशान्ति, विकलता। विचारों की गड़बड़ी। रोग, बीमारी, विशेष कर समुद्री बीमारी।

उत्क्षिप्त--(उद्√क्षिप्+क्त] उछाला हुआ, लुकाया हुआ। रोका हुआ या रुका हुआ। पकड़ा हुआ। ढाया हुआ, गिराया हुआ, उजाड़ा हुआ। दूर फेंका हुआ। (पुं०) धतूरे का पौधा।

उत्क्षिप्तिका--(स्त्री०)[उत्क्षिप्त-टाप्,कन्, इत्व] आभूषण विशेष जो कान के ऊपरी भाग में पहिना जाता है, बाला।

उत्क्षेप--(पुं०) [उद्√क्षिप्+घञ्] उछाल, लुकान। ऊपर उछाली जाने वाली वस्तु। प्रेषण, रवानगी। वमन। कनपटी के ऊपर का सिर का भाग।

उत्क्षेपक--(वि०) [उद्√क्षिप्+ण्वुल्] फेंकने, उछालने, भेजने वाला। (पुं०) कपड़ों का चोर।

उत्क्षेपण--(न०) [उद्√क्षिप्+ल्युट्] उछाल, लुकान। वमन। रवानगी, प्रेषण। सूप। पंखा।

उत्खचित--(वि०)[उद्√खच्+क्त] मिला कर गुँथा, बुना हुआ; 'कुसुमोत्खचितान् वलीभृतः' र. ८.५३। जड़ा हुआ।

उत्खला--(स्त्री०) [उद्√खल्+अच्-टाप्] मुरा नामक गंधद्रव्य।

उत्खात--[उद्√खन्+क्त] खोदा हुआ। उखाड़ा हुआ। खींच कर बाहर निकाला हुआ। जड़ से उखाड़ा हुआ। नष्ट किया हुआ। (न०) छेद, बिल। गढ़ा। ऊबड़-खाबड़ जमीन।—**केलि**-(स्त्री०) क्रीड़ा के लिये सींग या हाथी के दाँत से जमीन को खोदना।

उत्खातिन्--(वि०) [उत्खात+इनि] जो

समतल न हो, ऊबड़-खावड़ । नाश करने वाला ।

उत्त—(वि०) [√उन्द्+क्त] भींगा हुआ, नम, तर ।

उत्तंस—(पुं०) [उद्√तंस्+अच्] शिखा, चोटी, सीसफूल । कान की बाली या झुमका ।

उत्तंसित—(वि०) [उत्तंस+इतच्] कानों में बाली पहिने हुए, चोटी पर रखे या पहिने हुए ।

उत्तट—(वि०) [अत्या० स०] तटों के ऊपर निकलकर बहने वाला (नद या नदी) ।

उत्तप्त--[उद्√तप्+क्त] जला हुआ । गर्म । सूखा, शुष्क । (न०) सूखा मांस ।

उत्तम—(वि०) [उद्+तमप्] सर्वोत्कृष्ट, सबसे अच्छा । मुख्य, प्रधान । सबसे बड़ा । (पुं०) विष्णु । ध्रुव का सौतेला भाई ।—**अङ्ग**, (**उत्तमाङ्ग**)– (न०) शिर, सिर।—**अर्ध**, (**उत्तमार्ध**)–(पुं०) सब से अच्छा आधा भाग । अन्तिम अर्धभाग।—**अह**, (**उत्तमाह**)–(पुं०) अन्तिम या पिछला दिवस । सुदिन, शुभ दिन ।—**ऋण**,–**ऋणिक** (**उत्तमर्ण, उत्तमर्णिक**)–(पुं०) महाजन, कर्ज देने वाला । (अधमर्ण—कर्जदार का उल्टा)—**पुरुष**,—**पूरुष**–(पुं०) बोलने वाले का सूचक सर्वनाम (मैं, हम) । परमेश्वर । सबसे अच्छा आदमी ।—**श्लोक**–(वि०) सर्वोत्कृष्ट-कीर्ति-सम्पन्न, आदर्श ।–**साहस**–(पुं०) (न०) सबसे अधिक जुर्माना या अर्थदण्ड, एक हजार (और किसी किसी के मतानुसार) अस्सी हजार पण का जुर्माना ।

उत्तमा—(स्त्री०) [उत्तम+टाप्] सबसे अच्छी स्त्री ।

उत्तमीय—(वि०) [उत्तम+छ—ईय] सब से ऊपर का, सर्वश्रेष्ठ । मुख्य, प्रधान ।

उत्तम्भ—(पुं०), **उत्तम्भन**–(न०) [उद्√स्तम्भ्+घञ्], [उद्√स्तम्भ्+ल्युट्] सहारा, टेक; 'भुवनोत्तम्भनस्तम्भान्, काद०। रोकना ।

उत्तर—(वि०) [उत्तीर्यते प्रकृताभियोगोऽनेन इति उद्√तृ+अप्] उत्तर दिशा का, उत्तर दिशा में उत्पन्न । उच्चतर, अपेक्षाकृत ऊँचा । पिछला, बाद का । अन्त का । बाँया । श्रेष्ठ (लोकोत्तर) । अतीत । अधिक—जैसे अष्टोत्तर शत—सौ से आठ अधिक । शक्तिशाली । पार करने या किया जाने वाला । (न०) दक्षिण की उलटी दिशा । जवाब । बदला । बाद का जवाब, बचाव । (पुं०) राजा विराट् का पुत्र । भविष्यत् काल । विष्णु । शिव । भविष्यत् काल ।—**अधर**, (**उत्तराधर**)–(वि०) उच्चतर-नीचतर ।—**अधिकार**, (**उत्तराधिकार**)—(पुं०)–**अधिकारिता**, (**उत्तराधिकारिता**)–(स्त्री०)—**अधिकारित्व**, (**उत्तराधिकारित्व**)–(न०) किसी के (मरने के) बाद उसकी संपत्ति पाने का हक, वरासत ।—**अधिकारिन्** (**उत्तराधिकारिन्**–(वि०) किसी के बाद उसकी संपत्ति पाने का हकदार, वारिस ।—**अयन**, (**उत्तरायण**)–(न०) उत्तरी मार्ग, वे छः मास जिनमें सूर्य की गति उत्तर की ओर झुकी हुई होती है, मकर से मिथुन तक के सूर्य का छः मास का समय ।—**अर्ध** (**उत्तरार्ध**)–(न०) शरीर का नाभि के ऊपर का आधा भाग । उत्तरी भाग । पूर्वार्ध का उल्टा ।—**अह**, (**उत्तराह**)–(पुं०) अगला दिन, आने वाला कल । —**आभास**, (**उत्तराभास**)–(पुं०) झूठा जवाब । बहाना । टालमटूल ।—**आशा**, (**उत्तराशा**)– (स्त्री०) उत्तर दिशा ।—०**अधिपति**, —०**पति**, (**उत्तराशाधिपति**) (**उत्तराशापति**)–(पुं०) कुबेर ।—**आषाढा**, (**उत्तराषाढा**)–(स्त्री०) २१ वाँ नक्षत्र ।—**आसङ्ग**, (**उत्तरासङ्ग**)–(पुं०) ऊपर पहनने का वस्त्र ।—**इतर**, (**उत्तरेतरा**)–(वि०) दक्षिण का ।—**इतरा**, (**उत्तरेतर**)–(स्त्री०) दक्षिण दिशा ।— **उत्तर**(**उत्तरोत्तर**)–(वि०) अधिक-अधिक । सदा बढ़ने वाला ।—(न०) जवाब का जवाब ।—**ओष्ठ**,

(उत्तरौष्ठ या उत्तरोष्ठ)-(पुं०) ऊपर का ओंठ।—काण्ड-(न०) (श्रीमद्वाल्मीकि) रामायण का सातवाँ काण्ड।—काय-(पुं०) शरीर का ऊपरी भाग।—काल-(पुं०) आगे आने वाला समय।—कुरु-(पुं०) जंवुद्वीप का एक खंड,उत्तरकुरु का प्रदेश।-कोश(स)-ल-(पुं०) अयोध्या के आस-पास का देश। —कोशला-(स्त्री०) अयोध्या नगरी।—क्रिया-(स्त्री०) शवदाह के अनन्तर मृतक के निमित्त होनेवाला कर्म।—च्छद-(पुं०) चादर, चद्दर। पलंगपोश।—ज्योतिष-(पुं०) पश्चिम दिशा का एक देश।—दायक-(वि०) जवाव देने वाला, जिम्मेदार। धृष्ट, ढीठ।—दिश्-(स्त्री०) उत्तर दिशा।—पक्ष-(पुं०) कृष्णपक्ष, अँधेरा पाख। पूर्वपक्ष का उल्टा, शास्त्रार्थ में वह सिद्धान्त जो विवादग्रस्त विषय का खण्डन करे; 'प्रापयन् पवनव्याधेर्गिरमुत्तरपक्षताम्' शि० २.१५।—पद-(न०) किसी यौगिक शब्द का अन्तिम शब्द।—पाद-(पुं०) अर्जीदावे का दूसरा हिस्सा।—प्रच्छद-(पुं०) रजाई, लिहाफ। तोशक।—प्रत्युत्तर-(न०) वाद-पववाद, वहस। किसी मुकदमें में वकालत।—फल्गुनी,—फाल्गुनी-(स्त्री०) १२वाँ नक्षत्र।—भाद्रपद,—भाद्रपदा-(स्त्री०) २६ वाँ नक्षत्र। —मीमांसा-(स्त्री०) वेदान्त दर्शन।—वयस्,—वयस-(न०) वुढ़ापा।—वस्त्र,—वासस्-(न०) ऊपर का वस्त्र, चुगा लवादा। —वादिन्-(पुं०) प्रतिवादी, मुद्दालेह, प्रतिपक्षी।—सावक-(पुं०) सहायक। (वि०) शेषांश को पूरा करने वाला। जवाव को सावित करने वाला।

उत्तरङ्ग—(वि०) [व० स०] ऊँची तरंगों वाला। अत्यन्त क्षुब्ध। (न०) [उत्तरम् अङ्गम् कर्म० स०, शक० पररूप] चौखट के ऊपर की काठ की मेहराव।

उत्तरतस्,—उत्तरात्-(अव्य०) [उत्तर+तस्] [उत्तर+आति] उत्तर से उत्तर दिशा तक। वाँई ओर। पीछे, वाद को।

उत्तरत्र—(अव्य०) [उत्तर+त्रल्] पीछे से, वाद को। नीचे। अन्त में।

उत्तरा—(स्त्री०) [उत्तर+टाप्] उत्तर दिशा। नक्षत्र विशेष। विराट की कन्या का नाम, जो अभिमन्यु को व्याही गई थी।

उत्तराहि—(अव्य०) [उत्तर+आहि] उत्तर दिशा की ओर।

उत्तरीय,—उत्तरीयक-(न०) [उत्तर+छ—ईय], [उत्तरीय+कन्] ऊपर पहिनने का कपड़ा।

उत्तरेण—(अव्य०) [उत्तर+एनप्] उत्तर की ओर, उत्तर दिशा की तरफ।

उत्तरेद्युस—(अव्य) [उत्तर+एद्युस्] अगले दिन के वाद, परसों, आने वाले कल के वाद।

उत्तर्जन—(न०) [उच्चैः तर्जनम्, प्रा० स०] जोर की झाड़-फटकार। (वि०) [अत्या० स०] प्रचंड। भयंकर।

उत्तान—(वि०) [उद्गतस्तानो विस्तारो यस्मात्, व० स०] फैलाया हुआ। प्रसारित। चित्त पड़ा हुआ। सीधा। साफ दिल का। स्पष्ट वक्ता। उथला।—पाद-(पुं०) एक पौराणिक राजा का नाम जिसका पुत्र भक्तशिरोमणि ध्रुव था।—पादज-(पुं०) ध्रुव का नाम।— शय-(वि०) चित्त लेटा हुआ। (पुं०) स्तनंधय, दुवमुँहा वच्चा; 'कदा उत्तानशयः पुत्रकः जनयिष्यति मे हृदयाह्लादम्' काद०।

उत्ताप—(पुं०) [उद्√तप्+घञ्] वड़ी गर्मी, तपन। पीड़ा। कष्ट। घवड़ाहट। चिंता। उत्तेजना। शक्ति। प्रयास।

उत्तार—(पुं०) [उद्√तॄ+घञ्] उतारा। ढुलाई, नाव पर लदे माल का उतारना। पिंड छूटना। वमन।

उत्तारक—(पुं०) [उद्+तॄ+णिच्+ण्वुल्]

उद्धारक, तारने वाला। रक्षक, विपत्ति से छुड़ाने वाला।

उत्तारण--(न०) [उद्√तृ+णिच्+ल्युट्] नाव पर से तट पर उतारने की क्रिया। छुड़ाने की क्रिया। (पुं०) [उद्√तृ+णिच्+ल्युट्] विष्णु का नाम।

उत्ताल--(वि०) [अत्या० स०] बड़ा। मजबूत। उग्र। भयानक; 'उत्तालास्त इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्संगमाः' उत्त० २.३०। दुरूह, कठिन। ऊँचा, लंबा। (पुं०) लंगूर।

उत्तीर्ण--(वि०) [उद्√तृ+क्त] पार पहुँचा हुआ। *जिसका उद्धार किया गया हो*। कर्त्तव्य से युक्त। परीक्षा में पास। चतुर, अनुभवी।

उत्तुङ्ग--(वि०) [प्रा० स०] बहुत ऊँचा, अत्युन्नत।

उत्तुण्डित--(न०) खाल या मांस के भीतर घुसी काँटे की नोक।

उत्तुष--(पुं०) [ग० स०] भूसी निकाला हुआ अन्न। भुना हुआ अनाज।

उत्तेजक--(वि०) [उद्√तिज्+णिच्+ण्वुल्] उभाड़ने, बढ़ाने या उकसाने वाला। वेगों को तीव्र करने वाला।

उत्तेजन--(न०), **उत्तेजना**--(स्त्री०) [उद्√तिज्+णिच्+ल्युट्], [उद्√तिज्+णिच्+युच्] घबड़ाहट, विकलता। बढ़ावा; प्रोत्साहन। तेज करना। भड़काने वाला भाषण। प्रलोभन।

उत्तोरण--(वि०) [ब० स०] ऊँची या सीधी मेहराबों से सुसज्जित।

उत्तोलन--(न०) [उद्√तुल्+णिच्+ल्युट्] ऊपर उठाना। तौलना।--**यन्त्र**--(न०) रेल के डब्बे, भारी गाँठें आदि ऊपर उठाने वाला, सारस की चोंच जैसा, यन्त्र (क्रेन)।

उत्त्याग--(पुं०) [उद्√त्यज्+घञ्] छोड़ना, उत्सर्ग। उछाल। संसार से वैराग्य।

उत्त्रास--(पुं०) [प्रा० स०] बड़ा भारी भय या डर।

उत्थ--(वि०) [उद्√स्था+क] उत्पन्न हुआ, निकला। खड़ा हुआ, आगे आया हुआ।

उत्थान--(न०) [उद्√स्था+ल्युट्] उठने या खड़े होने की क्रिया। उदय। उत्पत्ति। समाधि से पुनरुत्थान। उद्योग, प्रयत्न, क्रियाशीलता। शक्ति, स्फूर्ति। हर्ष, आनन्द। युद्ध। सेना। आँगन। वह मण्डप जहाँ बलिदान दिया जाय। सीमा, हद। सजग होना, जाग उठना।--**एकादशी**, (**उत्थानैकादशी**)-(स्त्री०) कार्तिक शुक्ला ११। इस *दिन भगवान चार मास सो चुकने के बाद* जागते हैं, इसको प्रबोधनी-एकादशी भी कहते हैं।

उत्थापन--(न०) [उद्+स्था+णिच्, पुक्+ल्युट्] उठाना, खड़ा करना। ऊंचा उठाना। भड़काना, उत्तेजित करना। जगाना। वमन करना। समाप्त करना। उत्पन्न करना। अभीष्ट राशि या उत्तर प्राप्त करना (गणित)।

उत्थित--[उद्√स्था+क्त] उठा हुआ। खड़ा हुआ। उत्पन्न। निकला हुआ। बढ़ा हुआ। मर्यादित, सीमाबद्ध। फैला हुआ, पसरा हुआ।--**अंगुलि**, (**उत्थितांगुलि**)-(पुं०) पसारा हुआ हाथ, खुला हुआ हाथ, फैलाया हुआ हाथ।

उत्थिति--(स्त्री०) [उद्√स्था+क्तिन्] उठान, ऊपर उठना, उन्नत होना।

उत्पक्ष्मन्--(वि०) [ब० स०] उलटे पलकों वाला।

उत्पत--(पुं०) [उद्√पत्+अच्] पक्षी, चिड़िया।

उत्पतन--(न०) [उद्√पत्+ल्युट्] ऊपर उड़ना। ऊपर उठना। कूदना। चढ़ना। उछलना। फेंकना। उछालना। उत्पत्ति।

उत्पताक--(वि०) [उत्तोलिता पताका यत्र ब० स०] झंडा उठाये हुए।

उत्पतिष्णु—(वि०) [उद्√ पत्+इष्णुच्] उड़ने वाला । ऊपर जाने वाला ।

उत्पत्ति—(स्त्री०) [उद्√ पत्+क्तिन्] जन्म । उत्पादन । उत्पत्ति-स्थान, उद्गमस्थान । उदय होना । ऊपर चढ़ना । दृष्टिगोचर होना । लाभ, मुनाफा ।—**व्यञ्जक**–(पुं०) दूसरा जन्म । [उपनयन-संस्कार दूसरा जन्म कहलाता है । क्योंकि 'द्विजन्मा' संज्ञा उपनयन संस्कार के बाद ही होती है ।] द्विजन्मा का चिह्न ।

उत्पथ—(पुं०) [प्रा० स०] असन्मार्ग खराब रास्ता । (वि०) [अत्या० स०] पथभ्रष्ट, भटका हुआ; 'उत्पथप्रतिपन्नस्य न्याय्यम्भवति शासनं, महा० ।

उत्पन्न—[उद् √पद्+क्त] पैदा हुआ, निकला हुआ । उदय हुआ, उगा हुआ । प्राप्त किया हुआ ।

उत्पल—(वि०) [उद्√पल्+अच्] कमल । नीलकमल । कुमुद । बिना साफ किये हुए अन्न की पीठी । पौधा । (वि०) मांसरहित, दुबला-पतला, लटा ।—**अक्ष**, (उत्पलाक्ष), —**चक्षुस**–(वि०) कमलनयन ।—**पत्र**– (न०) कमल का पत्ता । स्त्री के नख की खरोंच से उत्पन्न घाव, नखक्षत । चंदन का तिलक । चौड़े फल का चाकू ।

उत्पलिन्—(वि०) [उत्पल+इनि] बहु-कमल-पुष्प-सम्पन्न ।

उत्पलिनी—(स्त्री०) [उत्पलिन् +ङीप्] कमल पुष्पों का ढेर । कमल का पौधा जिसमें कमल के फूल लगे हों । एक छंद ।

उत्पवन—(न०) [उत्√पू+ल्युट्] निर्मल करना, शुद्ध करना । पानी छानना । साफ करने का यंत्र । कुश से अग्नि पर घी छिड़कना ।

उत्पाट—(पुं०) [उद्√पट्+णिच्+घञ्] उखाड़ना, उचेलना । जड़-डाली सहित नष्ट करना । कान के भीतर का एक रोग ।

उत्पाटन— (न०) [उद्√पट्+णिच्+ल्युट्] जड़ से उखाड़ डालना, जड़-डाली सहित नष्ट कर डालना ।

उत्पाटिका—(स्त्री०) [उद्√पट्+णिच्+ण्वुल—टाप्, इत्व] वृक्ष की छाल ।

उत्पाटिन्—(वि०) [उद्√पट्+णिच्+णिनि] उन्मूलन करने वाला, उखाड़ डालने वाला ।

उत्पात—(पुं०) [उद्√पत्+घञ्] उछाल, कुलाँच । उड़ान । प्रतिक्षेप । उठान, उभाड़ । अशुभसूचक शकुन । ग्रहण, भूकम्प आदि अशुभ-सूचक घटनाएँ ।—**पवन**,—**वात**,—**वातालि**–(पुं०) बवंडर, तूफान ।

उत्पाद—(वि०) [ब० स०] ऊपर को पैर किये हुये । (पुं०) [उद्√पद्+घञ्] उत्पत्ति, प्राकट्य, प्रादुर्भाव ।—**शय**,—**शयन**– (पुं०) शिशु । टिट्टिभ पक्षी ।

उत्पादक—(वि०) [स्त्री०—**उत्पादिका**] [उद्√पद्+णिच्— ण्वुल्] पैदा करने वाला । प्रभावोत्पादक । पूरा करने वाला ।(पुं०) जनक, पिता । [ऊर्ध्वं स्थिताः पादा अस्य ब० स०, उत्पाद+कन्] शरभ नामक पशु (इसके पीठ पर भी पाँव होते हैं) । (न०) [उद्√ पद्+णिच्+ण्वुल्] उद्गम स्थान, कारण ।

उत्पादन—(न०) [उद्√पद्+णिच् + ल्युट्] पैदा करना उपजाना ।

उत्पादिन्—(वि०) [उद्√पद्+णिच्+णिनि] उत्पन्न करने वाला ।

उत्पादिका—(स्त्री०) [उद्√पद्+णिच्+ण्वुल्, टाप्, इत्व] एक कीट, दीमक । जननी, माता, पैदा करने वाली ।

उत्पाली—(स्त्री०) [उद्√ पल्+घञ्—ङीप्] तन्दुरुस्ती, स्वास्थ्य ।

उत्पाव—(पुं०)[उत्√पू+घञ्] शुद्ध घृत ।

उत्पिञ्जर,—**उत्पिञ्जल**– (वि०)[अत्या० स०] जो पिंजड़े में बन्द न हो । गड़-बड़ । अत्यन्त घबड़ाया हुआ ।

उत्पीड—(पुं०)[उद् √पीड्+घञ्] दबाव ।

प्रवल या प्रचण्ड बहाव; 'नयनसलिलोत्पीड-रुद्धावकाशां' मे० ९१ । फेन, झाग ।

उत्पीडन—(न०) [उद्√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाना । सताना, जुल्म करना ।

उत्पुच्छ—(वि०) [व० स०] पूंछ उठाये हुए ।

उत्पुलक—(वि०) [व० स०] रोमाञ्चित, जिसके रोंगटे खड़े हों । प्रसन्न, हर्षित ।

उत्प्रवास—(पुं०) [उद्–प्र√वस्+घञ्] एक देश छोड़कर अन्य देश में जा वसना (एमीग्रेशन) ।

उत्प्रवासिन्—(वि०) [उत्प्रवास+इनि] एक देश छोड़कर अन्य देश में जा वसने वाला (एमीग्रेंट) ।

उत्प्रभ—(वि०) [व० स०] चमकीला, प्रकाशमान ।(पुं०) दहकती हुई आग ।

उत्प्रसव—(पुं०) [प्रा० स०] गर्भपात या गर्भस्राव ।

उत्प्रास—(पुं०), **उत्प्रासन**–(न०) [उद्–प्र√अस्+घञ्], [उद्–प्र√अस्+ल्युट्] जोर से फेंकना । हँसी-मजाक । अट्टहास । उपहास, मजाक । ताना, व्यङ्ग ।

उत्प्रेक्षण—(न०) [उद्–प्र√ईक्ष्+ल्युट्] चितवन, अवलोकन । ऊपर की ओर ताकना । अनुमान, कल्पना । तुलना ।

उत्प्रेक्षा—(स्त्री०) [उद्–प्र√ईक्ष्+अ] अनुमान, कल्पना । असावधानी, उदासीनता । एक अर्थालङ्कार इसमें भेदज्ञानपूर्वक उपमेय में उपमान की प्रतीति होती है ।

उत्प्लव—(पुं०) [उद्√प्लु+अप्] उछाल, कुदान । फलाँग, छलाँग ।

उत्प्लवन—(न०) [उद्√प्लु+ल्युट्] कूदना, उछलना । कुश से तेल, घी, आदि का ऊपर का मैल निकालना ।

उत्प्लवा—(स्त्री०) [उद्√प्लु+अच्, टाप्] नाव, किश्ती ।

उत्फल—(न०) [प्रा० स०) उत्तम फल ।

उत्फाल—(पुं०) [उद्√फल्+घञ्] उछाल। छलाँग, फलाँग । कूदने को उद्यत होने का एक ढंग ।

उत्फुल्ल—(वि०) [उद्√फुल्+क्त] खिला हुआ । विलकुल खुला हुआ, फैला हुआ । फूला हुआ । आकार में बढ़ा हुआ । उतान लेटा हुआ । (न०) योनि । एक रतिबंध ।

उत्स—(पुं०) [√ उन्द्+स, कित्, नलोप] सोता, स्रोत । जल का स्थान ।

उत्सङ्ग—(पुं०) [उद्+सञ्ज्+घञ्] गोद, अङ्क । आलिङ्गन । सामीप्य, पड़ोस । सतह, तल; "वृषदो वासितोत्सङ्गाः' र० ४.७४ । ढाल । नितंब के ऊपर का भाग । चोटी, शिखर । घर की छत । संपर्क ।

उत्सङ्गित–(वि०) [उत्सङ्ग+इतच्]संपर्क में लाया हुआ । गोद में लिया हुआ, आलिंगित

उत्सञ्जन—(न०) [उद्√सञ्ज्+ल्युट्] उछाल या लुकान । ऊपर को उठाने की क्रिया ।

उत्सन्न—[उद्√सद्+क्त] सड़ा हुआ । नष्ट किया हुआ । उजाड़ा हुआ । जड़ से उखाड़ा हुआ । त्यागा हुआ । अकोसा हुआ, शापित । अप्रचलित । लुप्त ।

उत्सर्ग—(पुं०)[उद्√सृज्+घञ्] त्याग । उड़ेलना, गिराना; 'तोयोत्सर्गद्रुततरगतिः' मे० १९ । भेंट, अर्पण (करना) व्यय करना । छोड़ देना ।[जैसे वृषोत्सर्ग में]। वलिदान । विष्ठा या मल का त्याग । (अध्ययन या किसी व्रत की) समाप्ति । साधारण नियम (अपवाद का उल्टा) । योनि, भग ।

उत्सर्जन—(न०) [उद्√सृज् + ल्युट्] उत्सर्ग करना । दान करना । (वैदिक) अध्ययन को स्थगित करना । वैदिक अध्ययन वंद करने के उपलक्ष में एक गृहकर्म, यह वर्ष में दो बार अर्थात् पूस और श्रावण में किया जाता है ।

उत्सर्प—(पुं०), **उत्सर्पण**—(न०)[उद्√सृप्+घञ्], [उद्√सृप्+ल्युट्] ऊपर जाना या ऊपर सरकना । फूलना । साँस लेना ।

उत्सर्या—(स्त्री०) [उत्√सृ+मत्, टाप्] बैल के समागम के योग्य गाय, अलंग पर आयी हुई गाय ।

उत्सव—(पुं०) [उद्√सू+अप्] मङ्गल-कार्य, उछाह । आनन्द, हर्ष । ऊँचाई । क्रोध । इच्छा । ग्रंथ का खंड, भाग । कार्य-भार ग्रहण करना । कार्यारंभ ।—**संकेत**-(बहुवचन पुं०) हिमालय में रहने वाली एक जंगली जाति के लोग । 'शरैरुत्सवसंकेतान्' रघु: ।

उत्साद—(पुं०) [उद्√सद्+णिच्+घञ्] नाश । उजाड़ ।

उत्सादन—(न०) [उद्√सद्+णिच्+ल्युट्] नाश । सुगन्धि । घाव का भरना या उसका अच्छा होना । चढ़ना । ऊपर उठाना, ऊँचा करना । दो बार किसी खेत को अच्छी तरह जोतना ।

उत्सारक—(पुं०) [उद्√सृ+णिच्+ण्वुल्] पहरेदार, चौकीदार । दरवान, द्वारपाल ।

उत्सारण—(न०) [उद्√सृ+णिच्+ल्युट्] हटाना, दूर करना । अतिथि का सत्कार । (सवारी आदि से) उतरने में सहायता देना ।

उत्साह—(पुं०) [उद्√सह्+घञ्] साहस, हिम्मत । उमङ्ग, उछाह, जोश, हौसला । दृढ़ अध्यवसाय । दृढ़ सङ्कल्प । शक्ति, सामर्थ्य । दृढ़ता । पराक्रम, बल ।—**वर्धन**-(पुं०) वीर रस । (न०) वीरता ।—**शक्ति**-(स्त्री०) दृढ़ता । उछाह । आक्रमण और युद्ध करने की शक्ति ।—**सिद्धि**-(स्त्री०) उत्साहशक्ति से सिद्ध होने वाला कार्य ।

उत्साहन—(न०) [उद्√सह्+णिच्+ल्युट्] उद्योग, प्रयत्न । अध्यवसाय । उत्साह-वृद्धि, हौसला बढ़ाना, उभाड़ना ।

उत्सिक्त—[उद् √सिच्+क्त] छिड़का हुआ । अभिमानी । क्रोधी । जल की बाढ़ से बढ़ा हुआ । अत्यधिक । चंचल । विकल ।

उत्सुक—(वि०) [उद्√सू +क्विप्+कन् ह्रस्व] अत्यन्त इच्छावान्, उत्कण्ठित, चाह से आकुल । बेचैन, उद्विग्न, व्याकुल । अनु-रक्त । शोकान्वित

उत्सूत्र—(वि०) [अत्या० स०] डोरी से न बँधा हुआ, ढीला, बंधनमुक्त । अनियमित, गड़बड़ । व्याकरण के नियम के विरुद्ध ।

उत्सूर—(पुं०) [अत्या० स०] सन्ध्याकाल, झुटपुटा ।

उत्सेक—(पुं०) [उद्√ सिच्+घञ्] छिड़-काव, उड़ेलना । उमड़न, बढ़ती, अत्य-धिकता । अभिमान, शेखी ।

उत्सेकिन्—(वि०) [उत्सेक+इनि] प्लावित करने वाला । उमड़ा हुआ । अभिमानी । क्रोधी ।

उत्सेचन—(न०) [उद्√सिच्+ल्युट्] जल का छिड़काव या जल को उछालने की क्रिया ।

उत्सेध—(पुं०) [उद् √सिध्+घञ्] उच्च-स्थान, ऊँचा स्थान । मुटाई, मोटापन; 'पीनता; पयोधरोत्सेध विशीर्णसंहति' कु० ५.८ । शरीर । (न०) हनन, मारण ।

उत्स्मय—(पुं०) [उद्√स्मि+अच्] मुस-क्यान, मुस्कराहट ।

उत्स्वन—(वि०) [ब० स०] उच्चरव-कारी, दीर्घ स्वर वाला । (पुं०) [प्रा० स०] उच्चरव, दीर्घस्वर ।

उद्—(अव्य०) [√उ+क्विप्, तुक्] यह एक उपसर्ग है जो क्रियाओं और संज्ञाओं में लगाया जाता है, अर्थ होता है; ऊपर । बाहर । अलग, पृथक् । उपार्जन, लाभ । लोक-प्रसिद्धि । कौतूहल । चिन्ता । मुक्ति । अनु-पस्थिति । फुलाना । बढ़ाना । खोलना । मुख्यता, शक्ति ।

उदक्—(अव्य०) [उद्√अञ्च्+क्विन्] उत्तर दिशा की ओर ।

उदक—(न०) [√उन्द्+क्वुन्, नलोप नि०] जल, पानी ।—**अन्त**, (उदकान्त)-(पुं०) तट, किनारा । समुद्रतट ।—**अर्थिन्** (उदकार्थिन्)-(वि०) प्यासा ।—**आधार** (उदकाधार)-(पुं०) कुण्ड । हौद ।—**उदञ्चन** (उदकोदञ्चन)-(पुं०) लोटा । कलसा ।—**उदर** (उदकोदर)-(न०) जलंधर रोग ।—**कर्मन्**, —**कार्य**-(न०)—**क्रिया**-(स्त्री०)—**दान**-(न०) पितरों की तृप्ति के लिये जल से तर्पण ।—**कुम्भ**-(पुं०) जल का घड़ा या कलसा ।—**कृच्छ्र**-(न०) एक व्रत जिसमें महीने भर केवल जौ के सत्तू और पानी पर रहना होता है ।—**गाह**-(पुं०) स्नान ।—**ग्रहण**-(न०) पीने का जल ।—**द**, —**दातृ**—**दायिन्**-(वि०) जलदाता, जल देने वाला । तर्पण करने वाला । वंश वाला, उत्तराधिकारी ।—**धर**- (पुं०) बादल ।—**शान्ति**-(स्त्री०) मार्जनक्रिया । रोग दूर करने के लिये अभिमंत्रित जल छिड़कना ।—**हार**-(पुं०) पनभरा, कहार ।

उदकल,—उदकिल-(वि०) [उदक+लच्], [उदक+इलच्] पनीला, जिसमें पानी का भाग विशेष हो ।

[illegible]र—(पुं०) [अलुक् स०] जलजन्तु, पानी में रहने वाला जीव-जन्तु ।

उदक्त—(वि०) [उद्√अञ्ज्+क्त] ऊपर उठा हुआ ।

उदक्य—(वि०) [उदक+यत्] जल की अपेक्षा रखने वाला ।

उदक्या—(स्त्री०) [उदक्य—टाप्] रजस्वला स्त्री ।

उदग्र—(वि०) [उद्गतम् अग्रं यस्य ब० स०] ऊँचा, उन्नत, उठा हुआ । बाहर निकला हुआ या बाहर की ओर बढ़ा हुआ । बड़ा । चौड़ा । वयोवृद्ध । मुख्य । प्रसिद्ध । प्रचण्ड; 'उदग्रदशनांशुभिः' शि० २.२१ । असह्य । भयानक, डरावना । उद्विग्न । परमानन्दित ।

उदङ्क—(पुं०) [उद्√अञ्च्+घञ्] चमड़े की बनी (तेल या घी रखने की) कुप्पी या कुप्पा ।

उदच्,—उदञ्च्-(वि०) [(पुं०)—उदङ्; (न०)—उदक्, (स्त्री०)—उदीची] [उद्√अञ्च+क्विन्] ऊपर की ओर घूमा हुआ या जाता हुआ । ऊपर का । उत्तरी या उत्तर की ओर घूमा हुआ । पिछला ।—**अद्रि** (उदगद्रि)-(पुं०) हिमालय पर्वत ।—**अयन** (उदगयन)-(न०) उत्तरायण ।—**आवृत्ति** (उदगावृत्ति)-(स्त्री०) उत्तर से लौटने की क्रिया ।—**पथ** (उदक्पथ)-(पुं०) उत्तर का एक देश ।—**प्रवण** (उदक्प्रवण) -(वि०) उत्तर की ओर झुका हुआ या ढालुआ ।—**मुख** (उदङ्मुख)-(वि०) उत्तर की ओर मुख किये हुए ।

उदञ्चन-(न०) [उद्√अञ्च्+ल्युट्] डोल, बाल्टी जिससे कुएँ से जल निकाला जाय । चढ़ाव । ढक्कन । ऊपर फेंकना ।

उदञ्जलि—(वि०) [ब० स०] दोनों हाथों से सम्पुट-सा बनाये और उंगुलियों को ऊपर किये हुए हाथों वाला ।

उदण्डपाल—(पुं०) [अत्या० स०] मत्स्य। सर्प विशेष ।

उदन्—(न०) [उदक्शब्दस्य उदनादेशः] जल, पानी । [अन्य शब्दों के साथ जब इसका योग किया जाता है, तब इसके 'न्' का लोप हो जाता है । [जैसे—**उदधि**]—**कुम्भ**-(पुं०) घड़ा, कलसा ।—**ज**-(वि०) पानी का ।—**धान**-(पुं०) पानी का घड़ा । बादल ।—**धि**-(पुं०) समुद्र । घड़ा । बादल । —०**कन्या**-(स्त्री०) लक्ष्मी । द्वारकापुरी ।—०**मेखला**—(स्त्री०) पृथ्वी ।—**पात्र**-(न०)—**पात्री**-(स्त्री०) जल भरने का बर्तन ।—**पान**-(पुं० न०) कुएँ के समीप का हौद । कूप ।—**पेष**-(न०) लेई, चिपकाने की वस्तु ।—**बिन्दु**—(पुं०) जल की

बूंद ।—भार–(पुं०) जल ढोने वाला अर्थात् बादल ।—मन्थ–(पुं०) यवागू या यव का विशेष रीति से बनाया हुआ जल, जो रोगी को पथ्य में दिया जाता है, जौ की माँड़ी ।—मान–(पुं० न०) आढक का पचासवाँ भाग ।—मेघ–(पुं०) वृष्टि करने वाला बादल ।—वज्र–(पुं०) ओलों की वर्षा । फुआरा ।—वास–(पुं०) जल में रहना या जल में खड़ा रहना ।—वाह–(वि०) जल लाने वाला । (पुं०) मेघ ।—वाहन–(न०) जलपात्र ।—शराव–(पुं०) जल से भरा घड़ा ।—श्वित्–(न०) छाछ या मट्ठा जिसमें १ हिस्सा जल और २ हिस्सा मट्ठा हो ।—हरण–(पुं०) पानी निकालने का पात्र ।

उदन्त—(पुं०) [उद्गतोऽन्तो निर्णयो यस्मात् व० स०] समाचार, खबर; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः संगमात्किञ्चिदूनः' मे० १०० । साधु पुरुष ।

उदन्तक—(पुं०) [उदन्त+कन्] समाचार, वृत्तांत ।

उदन्तिका—(स्त्री०) [उद्√अन्त्+णिच् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] सन्तोष, तृप्ति ।

उदन्य—(वि०) [उदक+क्यच् नि० उदन् आदेश+क्विप्] प्यासा, तृषित ।

उदन्या—(स्त्री०) [उदक+ क्यच् नि० उदन् आदेश+अङ—टाप्] प्यास, तृषा ।

उदन्वत्—(पुं०) [उदक+मतुप्, उदन्भावः, मस्य वः] समुद्र, सागर ।

उदय—(पुं०) [उद्√इ+अच्] उगना । उठना । आगमन (जैसे धनोदय) । उपज (जैसे फलोदय) । सृष्टि । उदयगिरि । उन्नति, अभ्युदय । परिणाम । पूर्णता । लाभ, नफा । आमदनी, आय । मालगुजारी । व्याज, सूद । कान्ति, चमक ।—अचल (उदयाचल),—अद्रि (उदयाद्रि),—गिरि,—पर्वत,—शैल–(पुं०) उदयाचल नामक पर्वत जो पूर्व दिशा में है ।—प्रस्थ–(पुं०) उदयाचल की अधित्यका या पठार ।

उदयन—(न०) [उद्√इ+ल्युट्] उगना, निकलना । ऊपर चढ़ना । परिणाम ।(पुं०) [उद्√इ+ल्यु] अगस्त्य का नाम । एक चन्द्रवंशी राजा का नाम, यह वत्सराज के नाम से प्रसिद्ध था और कौशाम्बी इसकी राजधानी थी । कुसुमांजलिकार उदयनाचार्य ।

उदर—(न०) [उद्√ऋ+अप्] पेट । किसी वस्तु का भीतरी भाग, खोखलापन, पोलापन । जलोदर रोग के कारण पेट का बढ़ना । हनन, घात, हत्या ।—आध्मान (उदराध्मान)–(न०) अफरा, अजीर्ण, आदि । पेट का फूलना ।—आमय (उदरामय)–(पुं०) अतीसार, संग्रहणी, दस्तों की बीमारी ।—आवर्त (उदरावर्त)–(पुं०) नाभि ।—आवेष्ट (उदरावेष्ट)–(पुं०) फीता जैसा कीड़ा ।—त्राण–(न०) कवच, बख्तर । पेटी, पेट पर बाँधने की पट्टी ।—पिशाच–(वि०) बहुत खाने वाला, भोजनभट्ट ।—सर्वस्व–(पुं०) भोजन-भट्ट या जिसे केवल पेट भरने ही की चिन्ता हो ।

उदरथि—(पुं०) [उद्√ऋ + अथिन्] समुद्र । सूर्य ।

उदरम्भरि—(वि०) [उदर√भृ+इन्, मुमागम] अपने पेट का भरण-पोषण करने वाला, स्वार्थी । भोजनभट्ट ।

उदरवत्, उदरिक, उदरिल—(वि०) [उदर+मतुप्, वत्व], [उदर+ठन्—इक्], [उदर+इलच्] बड़पिट्टू, बड़े पेट वाला, तोंदिल ।

उदरिन्—[उदर+इनि] बड़े पेट या तोंद वाला, मोटा ।

उदरिणी—(स्त्री०) [उदरिन्+ङीप्] गर्भवती स्त्री ।

उदर्क—(पुं०) [उद्√अर्क् वा√ अर्च्+घञ्] समाप्ति, अन्त, उपसंहार । परिणाम, फल, किसी कर्म का भावी परिणाम । आने वाला काल, भविष्यत् काल; 'किन्तु कल्याणोदर्कं भविष्यति' उत्त० ४।

उदर्चिस्—(वि०) [उद् ऊर्ध्वम् अर्चिः शिरा यस्य ब० स०] ऊपर की ओर ज्वाला या कांति विकीर्ण करने वाला। (पुं०) अग्नि। कामदेव। शिव।

उदलावणिक—(वि०) उदकीभूतं लवणम् उदलवणम् ततः ठक्—इक] नमकीन।

उदहार—(पुं०) [उदक√हृ+अण्, उप० स० उदादेशं] बादल।

उदवसित—(न०) [उद्—अव√सि+क्त] घर, गृह।

उदश्रु—(वि०) [ब० स०] जो फूट-फूट कर रोता हो, जिसकी आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो।

उदसन—(न०) [उद्√अस+ल्युट्] फेंकना। उठाना। बनाकर खड़ा करना। निकालना।

उदात्त—(वि०) [उद्—आ√दा+क्त] ऊँचा। कुलीन। उदार। प्रख्यात। प्रिय। ऊँचे स्वर से उच्चारण किया हुआ। (पुं०) दान। एक प्रकार का बाजा, ढोल। स्वर के तीन भेदों में से एक, ऊँचा स्वर। (न०) अलङ्कार विशेष, इसमें सम्भाव्य विभूति का वर्णन खूब चढ़ा-बढ़ाकर किया जाता है।

उदान—(पुं०) [उद्√अन्+घञ्] शरीरस्थ पाँच वायु में से एक, यह कण्ठ में रहती है, इसकी चाल हृदय से कण्ठ और तालू तक तथा सिर से भ्रूमध्य तक मानी गयी है, डकार और छींक इसी से आती हैं। नाभि। बरुनी। एक सर्प।

उदायुध—(वि०) [ब० स०] हथियार उठाये हुए।

उदार—(वि०) [उद्—आ√रा+क] दाता, दानशील। महान्, श्रेष्ठ। ऊँचे दिल का, असङ्कीर्ण; 'उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्' हितो०। ईमानदार, सच्चा। अच्छा, भला। वाग्मी। विशाल। कान्तियुक्त, चमकीला। बढ़िया पोशाक पहिनने वाला। सुन्दर, मनोहर। धीर।—**आत्मन्**, (**उदारात्मन्**), —**चेतस्**,—**मनस्**-(वि०) ऊँचे दिल वाला, महामना।—**दर्शन**-(वि०) देखने में भला लगने वाला।—**धी**-(वि०) प्रतिभाशाली। ऊँचे दिल वाला। (पुं०) विष्णु।

उदारता—(स्त्री०) [उदार+तल्, टाप्] दानशीलता, उदार स्वभाव।

उदास—(पुं०) [उद्√अस्+घञ्] ऊपर फेंकना। हटाना। [उद्√आस्+घञ्] उपेक्षा। तटस्थता। संन्यास। (वि०) [ब० स०] खिन्नचित्त, दुःखी।

उदासिन्—(वि०) [उद्√आस्+णिनि] तटस्थ। निरपेक्ष। विरक्त।

उदासीन—(वि०) [उद्√आस्+शानच्] तटस्थ, जो विरोधी पक्षों में से किसी की ओर न हो। अपरिचित। सामान्य रूप से सब से परिचित।

उदास्थित—(पुं०) [उद्—आ√स्था+क्त पर्यवेक्षक, दरोगा। द्वारपाल, दरवान। जासूस, भेदिया। व्रतभङ्ग यती।

उदाहरण—(न०) [उद्—आ√हृ+ल्युट्] वर्णन। कथन। निरूपण। पाठ करना। वार्तालाप आरम्भ करना। दृष्टान्त, मिसाल। (न्यायदर्शन) वाक्य के पाँच अवयवों में से तीसरा, इसमें साध्य के साथ साधर्म्य वा वैधर्म्य होता है। अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

उदाहार—(पुं०) [उद्—आ√हृ+घञ्] दृष्टान्त, मिसाल। भाषण का आरम्भिक भाग।

उदित—[उद्√इ+क्त] उगा हुआ, ऊपर चढ़ा हुआ। ऊँचा, लंबा। बढ़ा हुआ। उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ। [√+वद्+क्त] कथित, कहा हुआ।

उदीक्षण—(न०) [उद्√ईक्ष्+ल्युट्] खोज, तलाश। चितवन, अवलोकन।

उदीची—(स्त्री०) [उद्√अञ्च+क्विन्; ङीप्] उत्तर दिशा; 'तेनोदीचीं दिशमनुसरेः' मे० ५७।

उदीचीन—(वि०) [उदीची+ख—ईन] उत्तर दिशा सम्बन्धी । उत्तर की ओर झुका या मुड़ा हुआ । उत्तर का ।

उदीच्य—(त्रि०) [उदीची+यत्]उत्तर का, उत्तर का रहने वाला । (पुं०) सरस्वती नदी के उत्तर-पश्चिम वाला देश । (बहुवचन में) उक्त देश निवासी । (न०) एक प्रकार की सुगन्धित वस्तु ।

उदीप—(पुं०) [उद्गता आपो यतः ब०-स०] समा० अच्, ईत्व] बाढ़ । (वि०) जल-प्लावित ।

उदीरण—(न०) [उद्√ईर्+ल्युट्] कथन । उच्चारण । फेंकना । पठाना । विदा करना ।

उदीर्ण—[उद्√ऋ+क्त] उदित, उगा हुआ । उत्पन्न । उठा हुआ । तना हुआ । खिचा हुआ ।

उदुम्बर—(पुं०) [=उडुम्बर] गूलर का पेड़ ।

उदूखल—(न०) [ऊर्ध्वं खलति इति√ला+क, पृषो० नि०] उलूखल, ओखली ।

उदूढा—(स्त्री०) [उद्√वह्+क्त, टाप्] विवाहित स्त्री ।

उदेजय—(वि०) [उद्√एज्+णिच्+खश्] हिलाने वाला, कँपाने वाला । भयंकर; 'उदेजयान् भूतगणान् न्यषेवीत्' भट्टि० १·१५ ।

उद्गत—(वि०) [उद्√गम्+क्त] ऊपर आया हुआ । उठा हुआ । फेंका हुआ । वमन किया हुआ । उत्पन्न ।

उद्गति—(स्त्री०) [उद्√गम्+क्तिन्] उठान, उगना । चढ़ाव । निकास, उद्गमस्थान । वमन ।

उद्गन्धि—(वि०) [ब० स०, इत्व] खुशबूदार । उग्रगन्ध वाला ।

उद्गम—(पुं०) [उद्√गम्+घञ्] उदय, आविर्भाव । उत्पत्ति का स्थान, निकास । सीधे खड़े होना, जैसे रोमोद्गमः । बाहर जाना, प्रस्थान । उत्पत्ति । ऊँचाई । पौधे का अँखुआ । वमन, छाँट, उगलन ।

उद्गमन—(न०) [उद्√गम्+ल्युट्] उदय, आविर्भाव ।

उद्गमनीय—(वि०) [उद्√गम्+अनीयर्] ऊर्ध्व गमन के योग्य । (न०) धुले हुए कपड़े का जोड़ा ।

उद्गाढ—(वि०) [उद्√गाह्+क्त] गहरा, सघन । अत्यन्त, बहुत । (न०) अत्यन्त-अधिकता ।

उद्गातृ—(पुं०) [उद्√गै+तृच्] यज्ञ में सामगान करने वाला ऋत्विज ।

उद्गार—(पुं०) [उद्√गॄ+घञ्] उबाल, उफान । वमन । थूक, खखार, डकार ।

उद्गारिन्—(वि०) [उद्√ गॄ+णिनि] डकार लेने या वमन करने वाला । ऊपर जाने वाला । बाहर निकालने वाला ।

उद्गिरण—(न०) [उद्√गॄ+ल्युट्] उगलना । वमन । लार, राल । डकार । उखाड़-पछाड़ ।

उद्गीति—(स्त्री०) [उद्√गै+क्तिन्] उच्चस्वर का गान । सामगान । आर्याछन्द का एक भेद ।

उद्गीथ— (पुं०) [उद्√गै+थक्] सामगान । सामवेद का दूसरा भाग । ओंकार, परब्रह्म ।

उद्गीर्ण–(वि०) [उद्√गॄ+क्त] वमन किया हुआ । उगला हुआ । उड़ेला हुआ, बाहर निकला हुआ ।

उद्गूर्ण—(वि०) [उद्√गूर्+क्त] ऊपर उठाया हुआ । उत्तेजित । क्षुब्ध ।

उद्ग्रन्थ—(पुं०) [उद्√ग्रन्थ्+घञ्] अध्याय परिच्छेद ।

उद्ग्रन्थि—(वि०) [ब० स०] न बँधा हुआ । सांसारिक बंधनों से मुक्त । असंग ।

उद्ग्रह—(पुं०), **उद्ग्रहण**–(न०) [उद्√ग्रह्+अच्] [उद्√ग्रह+ल्युट्] उठाना, ऊपर करना । ऐसा कार्य जो धर्मानुष्ठान अथवा अन्य किसी अनुष्ठान से पूरा हो सके । डकार । अविकारपूर्वक कर आदि वसूल करना, उगाहना (लेवी) ।

उद्ग्राह—(पु०) [उद्√ग्रह+घञ्] उन्नयन, उठा लेना। प्रत्युत्तर। प्रतिवाद।

उद्ग्राहणिका—(स्त्री०) [उद्√ग्रह+णिच्+युच्—अन+टाप्+क, इत्व] वादी का जवाब, प्रतिवाद।

उद्ग्राहित—[उद्√ग्रह + णिच्+क्त] उठाया हुआ, ऊपर किया हुआ। ले जाया हुआ। सर्वोत्तम। रखा हुआ। बँधा हुआ। स्मरण किया हुआ।

उद्ग्रीव—उद्ग्रीविन् (वि०) [उन्नता ग्रीवा यस्य ब० स०], [उन्नता ग्रीवा प्रा० सं०, उद्ग्रीवा + इनि] गर्दन उठाए हुए।

उद्घ—(पु०) [उद्√हन्+ड] उत्तमता। प्रसन्नता, हर्ष। अञ्जुलि। अग्नि। आदर्श, नमूना। शरीरस्थित वायु विशेष।

उद्घट्टन—(न०) **उद्घट्टना**–(स्त्री०) [उद्√घट्ट् + ल्युट्], [उद्√घट्ट्+युच्] खोलना। खंड। संघर्ष।

उद्घन—(पुं०) [उद्√हन्+अप्] वह लकड़ी जिस पर रखकर बढ़ई लकड़ी गढ़ता है, ठीहा। 'लौहोद्घनघनस्कन्धा ललितोपघनां स्त्रियं' भट्टि० ७.६२।

उद्घर्षण—(न०) [उद्√घृष्+ल्युट्] रगड़ना। खुरचना। घोटना। सोंटा।

उद्घाट--(पुं०) [उद्√घट्+घञ्] खोलना। चुंगी की चौकी।

उद्घाटक—(पुं०) [उद्√घट् + णिच्+ण्वुल्] चाबी, कुंजी। कुएँ पर की रस्सी और डोल।

उद्घाटन—(न०) [उ√घट्+णिच्+ल्युट्] खोलना, उघारना। प्रकट करना, प्रकाशित करना। उठाना। चाबी, कुंजी। कुएं की रस्सी और डोल, गिरी, चरखी।

उद्घात--(पुं०) [उद्√हन्+घञ्] आरम्भ। हवाला। ताड़ना। प्रहार। झटका जो गाड़ी में बैठने पर लगता है। उठान। लाठी। हथियार। अध्याय।

उद्घोष—(पुं०) [उद्√घुष्+घञ्] घोषणा, ढिंढोरा। जनता में चलने वाली बात।

उद्दंश—(पुं०) [उद्√दंश्+अच्] खटमल। जूं। मच्छर।

उद्दण्ड—(वि०) [अत्या० स०] न दबने वाला, अक्खड़, प्रचंड।—**पाल**–(पुं०) दण्डविधानकर्त्ता या दण्ड देने वाला। मत्स्य विशेष। सर्प विशेष।

उद्दन्तुर—(वि०) [प्रा० स०] बड़े दाँतों वाला या वह जिसके दांत आगे निकले हों। ऊँचा। भयङ्कर।

उद्दान—(न०) [उद्√दो—ल्युट्] बंधन; 'उद्दाने क्रियमाणे तु मत्स्यानां तत्र रज्जुभिः' महा०। पालतू बनाना, वश में करना। कटि, कमर। अग्निकुण्ड। बाड़वानल।

उद्दान्त—(वि०) [उद्√दम्+क्त] वीर्यवान, प्रबल। विनीत।

उद्दाम—(वि०) [उद्गतं दाम्नः ग० स०] बन्धन-रहित, मुक्त, स्वतंत्र। बलवान् शक्तिशाली। मद में चूर, नशे में चूर। भयानक। स्वेच्छाचारी। बड़ा, महान्। अत्यधिक। (पुं०) वरुणदेव का नाम। यम।

उद्दालक—(पुं०) [उद्√दल+णिच्+ अच् कन्] एक ऋषि। लसोड़े का पेड़। बनकोदो।

उद्दित—(वि०) [उद्√दो+क्त] बंधनयुक्त, बँधा हुआ।

उद्दिन—(न०) [प्रा० स०] दोपहर।

उद्दिष्ट–(वि०) [उद्√दिश्+क्त] वर्णित, कथित। विशेष रूप से कहा हुआ। व्याख्या किया हुआ। सिखलाया हुआ।

उद्दीप—(पुं०) [उद्√दीप+घञ्] प्रज्ज्वलित करना। उत्तेजित करना। गुग्गुल।

उद्दीपक—(वि०) [उद्√दीप्+णिच् + ण्वुल्] प्रज्ज्वलित करने वाला। उत्तेजित करने वाला।

उद्दीपन—(न०) [उद्+दीप्+णिच्+ल्युट्] उत्तेजित करने की क्रिया। उत्तेजित

करने वाला पदार्थ। अलङ्कार-शास्त्र के वे विभाव जो रस को उत्तेजित करते हैं। रोशनी करना, प्रकाश करना। देह को भस्म करना या जलाना।

उद्दीप्र--(वि०) [उद्√दीप्+रण्] दहकता हुआ, जलता हुआ।

उद्दृप्त--(वि०) [उ√दृप्+क्त] अभिमानी, घमंडी।

उद्देश--(न०) [उद्√दिश्+घञ्] वर्णन। सविशेष विवरण। उदाहरण। दृष्टान्त द्वारा प्रदर्शन। खोज, अनुसंधान। संक्षिप्त विवरण। निर्देशपत्र। शर्त, इकरार। हेतु, कारण। स्थान, जगह। मतलव, अभिप्राय।

उद्देशक--(पुं०) [उद्√दिश् + ण्वुल्] उदाहरण। (अंगणित में) प्रश्न। कठिन प्रश्न, कूट प्रश्न।

उद्देश्य--[उद्√दिश् + ण्यत्] स्पष्ट या इंगित किये जाने योग्य। लक्ष्य। इष्ट। (न०) अभिप्रेत अर्थ। वह वस्तु जिसको लक्ष्य में रख कर कोई वात कही जाय। वह वस्तु जो किसी कार्य में प्रवृत्त करे। विधेय का उल्टा, विशेष्य।

उद्द्योत--(पुं०) [उद्√द्युत्+घञ्] चमक, आव। ग्रन्थ का भाग। अध्याय, पर्व, काण्ड।

उद्द्राव--(पुं०) पीछे हटना, भागना।

उद्धत--[उद्√हन्+क्त] उठा हुआ, उठाया हुआ; 'लाङ्गूलमुद्धतं धुन्वन्' भट्टि०, ९.७। अत्यधिक, वहुत अधिक। अहङ्कारी, घमंडी, अकड़वाज। सख्त। व्याकुल, उद्विग्न। विशाल, महान्। गँवारू, वदतमीज।--**मनस**--**मनस्क**--(वि०) अभिमानी, अक्खड़। (पुं०) राजा का पहलवान, राजमल्ल।

उद्धति--(स्त्री०) [उद्√हन् + क्तिन्] ऊँचाई। अभिमान, घमंड। गौरव। आघात। प्रहार।

उद्धम--(पुं०) [उद्√ध्मा+श, धमादेश] वजाना, फूंकना। साँस लेना। दम फूलना।

उद्धरण--(न०) [उद्√हृ+ल्युट्] खींचना, उतारना। खींचकर निकालना। छुड़ाना। नामोनिशान मिटाना। ऊपर उठाना। वमन करना। मुक्ति, मोक्ष। ऋण से उऋण होना। किसी उक्ति या लेख का दूसरी जगह अविकल रखा जाना, अवतरण।

उद्धर्तृ, उद्धारक--(वि०) [उद्√हृ+तृच्] [उद्√हृ+ण्वुल्] ऊपर उठानेवाला, ऊँचा करने वाला। भागीदार, साझीदार।

उद्धर्ष--(वि०) [उद्गतः हर्षो यस्य यस्मिन् वा व० स०] हर्षित, प्रसन्न। (पुं०) [प्रा० स०] वड़ी भारी प्रसन्नता। किसी कार्य को आरम्भ करने का साहस। [व० स०] त्योहार, पर्व।

उद्धर्षण--(न०) [उद्√हृष् + ल्युट्] उत्साहवर्द्धन, जान डालना। रोमाञ्च, शरीर के रोंगटों का खड़ा होना।

उद्धव--(पुं०) [उद्√धू+अच्] यज्ञाग्नि। उत्सव, पर्व। एक यादव का नाम जो श्रीकृष्ण का मित्र था।

उद्धस्त--(वि०) [व० स०] हाथ वढ़ाये या उठाये हुए।

उद्धान--(न०) [उद्√धा+ल्युट्] यज्ञ-कुण्ड। उगाल, वमन]

उद्धान्त--(वि०) [उद्√धा+क्त (वा०)] उगला हुआ, वमन किया हुआ। (पुं०) हाथी जिसका मद चूना वन्द हो गया हो।

उद्धार--(पुं०) [उद्√हृ+घञ्] मुक्ति, छुटकारा, त्राण। ऊपर उठाना। सम्पत्ति का वह भाग, जो वरावर वाँटने के लिये अलग कर लिया जाय। युद्ध की लूट का ६वाँ भाग जो राजा का होता है। ऋण। सम्पत्ति की पुनः प्राप्ति। मोक्ष, नर्सगिक आनन्द।

उद्धारण--(न०) [उद्√धृ+णिच्+ल्युट्] निकालना। ऊपर उठाना। वचाना (किसी सङ्कट से) उवारना।

उद्धुर--(वि०) [उद्√धुर्+क] भारमुक्त। स्वतन्त्र। दृढ़। निडर। भारी। परिपूर्ण। गाढ़ा, सघन। योग्य।

उद्धूत--[उद्√धू+क्त] हिला हुआ । गिरा हुआ । उठाया हुआ । ऊपर फैला हुआ । उन्नत ।

उद्धूनन--(न०) [उद्√धू+णिच्, पुक्+ ल्युट्] ऊपर फेंकना । ऊपर उठाना । हिलाना ।

उद्धूपन--(न०) [उद्√धूप्+ल्युट्] धूप देना ।

उद्धूलन--(न०) [उद्—धूलि+णिच्+ ल्युट्] चूर्ण करना, पीसना, धूल या चूर्ण बुरकना ।

उद्धूषण--(न०) [उद्√धूष्+ल्युट्] शरीर के रोंगटों का खड़ा होना ।

उद्धृत—[उद्√हृ वा√धृ+ क्त] निकाला हुआ । ऊपर खींचा हुआ । जड़ से उखाड़ा हुआ, नष्ट किया हुआ । अन्य स्थान से ज्यों का त्यों लिखा हुआ । वमन किया हुआ । अनावृत । (पुं०) गाँव की प्राचीन घटनाओं के जानकार वृद्धजन ।

उद्धृति—(स्त्री०) [उद्√हृ वा√धृ + क्तिन्] खींचना, खींचकर बाहर निकालना । किसी ग्रन्थ का कोई अंश उतार लेना । बचाना । छुड़ाना।

उद्ध्मान—(न०) [उद्√ध्मा+ल्युट्] अँगीठी, अलाव ।

उद्ध्य—(पुं०) [उद्√ उज्झ्+ क्यप् नि० साधु:] नद ।

उद्बन्ध—(वि०) [अत्या० स०] बंधनमुक्त । ढीला । (पुं०) [उद्√बन्ध्+ घञ्] दे० 'उद्बन्धन' ।

उद्बन्धक—(पुं०) [उद्√बन्ध+ण्वुल्] एक जाति जो धोबी का काम करती है ।

उद्बन्धन-(न०) [उद्√बन्ध्+ल्युट्] लटकाना, टाँगना । स्वयं फाँसी लगा लेना ।

उद्बल—(वि०) [ब० स०] मजबूत, ताकतवर ।

उद्बाष्प(वि०) [ब० स०] आँसुओं से परिपूर्ण ।

उद्बाहु—(वि० [ब० स०] बाहें उठाये हुए 'उद्बाहुरिव वामनः' र० १.२ ।

उद्बुद्ध—[उद्√बुध्+क्त] जागा हुआ । उत्तेजित । खुला हुआ । स्मरण कराया हुआ । स्मरण किया हुआ ।

उद्बोध—(पुं०) [उद्√बुध्+ घञ्] जागृति । स्मृति । याद करना ।

उद्बोधक--(वि०) [उद्√बुध्+णिच्+ ण्वुल्] बोध कराने वाला । याद कराने वाला । चेताने वाला, ख्याल कराने वाला । उद्दीप्त कराने वाला । (पुं०) सूर्य का नाम ।

उद्बोधन—(न०) [उद्√बुध्+णिच्+ ल्युट्] जगाना । स्मरण दिलाना । मामूली *डाँट-डपट के साथ समझाना, चेतावनी देना* (एडमॉनिशन)

उद्भट—(वि०) [उद्√भट्+अप्] सर्वोत्तम । मुख्य । प्रबल । प्रचण्ड । (पुं०) सूप । कछुआ, कच्छप ।

उद्भव—(पुं०) [उद्√भू+अप्] उत्पत्ति, सृष्टि, जन्म । उद्गमस्थान । विष्णु का नाम ।

उद्भाव--(पुं०) [उद्√भू+घञ्] उत्पत्ति प्रादुर्भाव । विशालता ।

उद्भावन—(न०) [उद्√भू+णिच्+ल्युट्] उत्पादन । सोचना । कल्पना करना । उपेक्षा करना । कहना ।

उद्भावयितृ— (वि०) [उद्√भू+णिच् +तृच्] ऊपर उठाने वाला । उत्पन्न करने वाला । कल्पना करने वाला ।

उद्भास—(पुं०) [उद्+भास्+घञ्] चमक, आभा, कान्ति, आब ।

उद्भासिन्, उद्भासुर—(वि०) [उद्√ भास +णिनि] [उद्√भास्+घुरच्] दीप्तिमान् । चमकीला ।

उद्भिद्—(वि०) [उद् √भिद्+क्विप्] धरती फोड़कर उगने या निकलने वाला । भेदक । तोड़ डालने वाला ।**–ज** (**उद्भिज्ज**) (वि०) [उद्भिद्√ जन्+ड] उगने वाला । (न०) पेड़ पौधे, वनस्पति ।

उद्भिद—(वि०) [उद्√भिद्+क] उगने या निकलने वाला। (पुं०) अंकुर, अँखुआ। पौधा। उत्स, झरना।—**विद्या** – (स्त्री०) वनस्पति-विज्ञान।

उद्भूत—[उद्√भू+क्त] उत्पन्न हुआ। पैदा किया हुआ। विशाल। इन्द्रियगोचर।

उद्भूति—(स्त्री०) [उद्√भू + क्तिन्] उत्पत्ति, पैदायश। समृद्धि, उन्नति; 'वरः शम्भुरलं ह्येष त्वत्कुलोद्भूतये' कु० ६.८२।

उद्भेद—(पुं०) **उद्भेदन**—(न०) [उद् √ भिद्+ घञ्], [उद्√भिद्+ल्युट्] वेधना। फोड़कर निकलना। दिखलाई पड़ना। प्रादुर्भाव। वाहु। झरना। रोंगटों का खड़ा होना।

उद्भ्रम—(पुं०) [उद्√भ्रम्+घञ्] घूमना, चक्कर खाना। (तलवार को) घुमाना। खेद।

उद्भ्रमण—(न०) [उद्√भ्रम्+ल्युट्] घूमना-फिरना। उठना, निकलना।

उद्यत—[उद्√यम्+क्त] उठाया हुआ। निरन्तर उद्योगकारी, परिश्रमी। ताना हुआ। तत्पर, तुला हुआ। अनुशासित।

उद्यम—(पुं०) [उद्√यम्+घञ्, न वृद्धिः] उठाना, उन्नयन। सत्य उद्योग, अध्यवसाय। तत्परता, तैयारी।—**भृत**–(वि०) कठिन परिश्रम करने वाला।

उद्यमन—(न०) [उद्√यम्+णिच्+ल्युट्] उठाना। ऊपर फेंकन।

उद्यमिन्—(वि०) [उद्यम+इनि] परिश्रमी अध्यवसायी।

उद्यान—(न०) [उद्√या+ल्युट्] वहिर्गमन। उपवन, वाग, आनन्दवाटिका। प्रयोजन।—**पाल**,—**रक्षक**-(पुं०) माली।

उद्यानक—(न०) [उद्यान+कन्] वाग।

उद्यापन—(न०) [उद्√या+णिच्, पुक्+ल्युट्] आरंभ। व्रत आदि की समाप्ति।

उद्योग—(पुं०) [उद्√युज्+घञ्] प्रयत्न, प्रयास। उद्यम, कामधंधा। श्रम, मिहनत।

उद्योगिन्—(वि०) [उद्√युज+विनुण्] क्रियाशील। अध्यवसायी। परिश्रमी।

उद्र—(पुं०) [√उन्द्+रक्] एक जलजंतु, ऊदबिलाव।

उद्रथ—(पुं०) [उद्गतो रथो यस्मात् ग० स०] रथ की धुरी की कील या पिन। मुर्गा।

उद्राव—(पुं०) [उद्√रु+घञ्] शोरगुल, होहल्ला, कोलाहल।

उद्रिक्त—[उद्√रिच्+क्त] बढ़ा हुआ। अत्यधिक, विपुल। स्पष्ट, साफ।

उद्रुज—(वि०) [उद्√रुज्+क] तोड़ना। नष्ट करना। उखाड़ना।

उद्रेक—(पुं०) [उद्√रिच्+घञ्] वृद्धि बढ़ती। अधिकता, विपुलता; 'ज्ञानोद्रेकाद्विघटिततमोग्रन्थयः सत्त्वनिष्ठा' वे० १.२३। एक अर्थालंकार।

उद्वत्सर—(पुं०) [उद्√वस्+सरन्] वर्ष, साल।

उद्वपन—(न०) [उद्√वप्+ल्युट्] भेंट। दान। उड़ेलना। उखाड़ना।

उद्वमन—(न०), **उद्वान्ति**—(स्त्री०) [उद्√ वम्+ल्युट्],[उद्√वम्+क्तिन्] वमन, उबकाई।

उद्वर्त—(पुं०) [उद्+वृत्+घञ्] बचत। अधिकता। शरीर में तेल-फुलेल की मालिश या उबटन।

उद्वर्तन—(न०) [उद्√वृत+ल्युट्] ऊपर जाना। निकलना। बाढ़ (पौधों की)। समृद्धि। करवटें लेना। उठ खड़े होना। पीसना। उबटन लगाना। तेल-फुलेल की मालिश।

उद्वर्धन—(न०) [उद्√वृध् + ल्युट्] उन्नति। छिपाकर या धीरे-धीरे हँसना।

उद्वह—(पुं०) [उद्√वह+अच्] पुत्र। पवन के सप्त पथों में से चौथा। विवाह। उदान वायु। अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

उद्वहन—(न०) [उद्√वह्+ल्युट्]

विवाह। सहारा। ऊपर उठाना। ले जाना। सवारी करना।

उद्वहा—(स्त्री०) [उद्वह+टाप्] बेटी। पुत्री।

उद्वान—(वि०) [उद्√वन्+घञ्] उगला हुआ, ओका हुआ। (न०) वमन, उगाल। अँगीठी।

उद्वान्त—(वि०) [उद्√वम्+क्त] वमन किया हुआ, ओका हुआ। [उद्गतं वान्तं मदो यस्मात् ब० स०] मदरहित।

उद्वाप—(पुं०) [उद्√वप्+घञ्] उन्मूलन। बहिर्निक्षेप। हजामत, क्षौरकर्म।

उद्वास—(पुं०) [उद्√वस्+घञ्] देश-निकाला। त्याग। वध। यज्ञीय संस्कार विशेष।

उद्वासन—(न०) [उद्√वस्+णिच्+ल्युट्] निकालना, देश-निकाला देना। त्यागना। निकाल लेना या निकाल कर ले जाना (आग से)। वध करना। यज्ञ के पहले आसन बिछाना आदि।

उद्वाह—(पुं०) [उद्√वह्+घञ्] उठाना। सँभालना। विवाह, परिणय।

उद्वाहन—(न०) [उद्√वह्+णिच्+ल्युट्] ऊपर ले जाना। विवाह। एक बार जोते हुए खेत को जोतना। चिंता।

उद्वाहनी—(स्त्री०) [उद्वाहन+ङीप्] रस्सी, डोरी। कौड़ी।

उद्वाहिक—(वि०) [उद्वाह+ठन्+इक] विवाह सम्बन्धी।

उद्वाहिन्—(वि०) [उद्√वह्+णिनि] उठाने वाला। विवाह करने वाला।

उद्वाहिनी—(स्त्री०) [उद्वाहिन्+ङीप्] रस्सी, डोर।

उद्विग्न—(वि०) [उद्√विज्+क्त] दुःखी, सन्तप्त, शोकप्लुत, उदास।

उद्वीक्षण—(न०) [उद्—वि√ईक्ष्+ल्युट्] ऊपर की ओर देखना। दृष्टि, नेत्र।

उद्वीजन—(न०) [उद्√वीज्+ल्युट्] पंखा करना।

उद्वृंहण—(न०) [उद्√वृंह्+ल्युट्] बढ़ती, बाढ़।

उद्वृत—(वि०) [उद्√वृत्+क्त] उठा हुआ। ऊँचा किया हुआ। उमड़ कर बहा हुआ। उजड्ड; 'उद्वृत्तः क इव सुखावहः परेषाम्' शि० ८.१८।

उद्वेग—(पुं०) [उद्√विज्+घञ्] काँपना, थरथराना। घबड़ाहट, विकलता। भय। चिन्ता। आश्चर्य। (न०) सुपारी।

उद्वेजन—(न०) [उद्√विज्+ल्युट्] विकलता, व्याकुलता। पीड़ा, कष्ट, सन्तोष। खेद।

उद्वेदि—(वि०) [ब० स०] जहाँ की वेदी ऊँची हो अथवा उच्चस्थान से युक्त।

उद्वेप—(पुं०) [प्रा० स०] काँपना, थरथराना, अत्यधिक प्रकम्प।

उद्वेल—(वि०) [अत्या० स०] उमड़ कर बहने वाला। मर्यादा का अतिक्रमण करने वाला।

उद्वेल्लित—[उद्√वेल्ल्+क्त] काँपा हुआ। उछाला हुआ। (न०) हिलना-डुलना।

उद्वेष्टन—(वि०) [उद्गतं, वेष्टनात् ग० स०] ढीला किया हुआ। खुला हुआ। मुक्त, बंधन-रहित। (न०) [उद्√विष्ट्+ल्युट्] चारों ओर से घेरने या ढकने की क्रिया। घेरा, हाता। पीठ या नितंब की पीड़ा।

उद्वोढृ—(पुं०) [उद्√वह्+तृच्] पति।

उधस्—(न०) [√उन्द्+असुन्] दूध देने वाले पशुओं का ऐन, लेवा।

√उन्द्—रुध० पर० सक० भिगोना, तर करना, नम करना। उनत्ति, उन्दिष्यति, औन्दीत्।

उन्दन—(न०) [√उन्द्+ल्युट्] नमी, तरी।

उन्दरु, उन्दुर, उन्दुरु, उन्दूरु—(पुं०) [√उन्द्+अरु], [√उन्द्+उर], [√उन्द्+उरु], [√उन्द्+ऊरु] चूहा।

उन्नत––(वि०) [उद्√नम्+क्त] उठा हुआ। ऊँचा। आगे बढ़ा हुआ। श्रेष्ठ। विद्या, कला आदि में आगे बढ़ा हुआ। सभ्य। ककुद् (डिल्ला) वाला। (पुं०) अजगर। (न०) ऊँचाई।––**आनत, (उन्नतानत)**–(वि०) विषम, ऊँचा-नीचा।––**चरण**–(वि०) बेरोक बढ़ने और फैलने वाला। पिछले पैरों पर खड़ा।––**शिरस्**–(वि०) बड़ा अभिमानी।

उन्नति––(स्त्री०) [उद्√नम्+क्तिन्] ऊँचाई, चढ़ाव। वृद्धि। तरक्की। गरुड़ की पत्नी]––**ईश, (उन्नतीश)**-(पुं०) गरुड़ का नाम।

उन्नतिमत्––(वि०) [उन्नति+मतुप्] उठा या निकला हुआ। उत्तुंग, ऊँचा।

उन्नद्ध––(वि०) [उद्√नह्+क्त] बढ़ा हुआ। लटकाया हुआ।

उन्नमन––(न०) [उद्√नम्+ल्युट्] ऊपर ले जाना, उठाना। उन्नति करना। अभ्युदय।

उन्नम्र–(वि०)[उद्√नम्+रन्] सीधा। ऊँचा; 'उन्नम्रताम्रपटमण्डपमण्डितं तत्' शि० ५.६८

उन्नय, उन्नाय––(पुं०) [उद्√नी+अच्] [उद्√नी+घञ्] ऊपर चढ़ना, ऊपर उठना। ऊँचाई, चढ़ाई। सादृश्य, समता। अटकल।

उन्नयन––(न०) [उद्√नी+ल्युट्] ऊपर उठाना। ऊपर खींचकर पानी निकालना। विचार। अटकल। अर्क रखने का बरतन। (वि०) [ब० स०] जिसकी आँखें ऊपर उठी हों।

उन्नस––(वि०) [उन्नता नासिका यस्य ब० स०] ऊँची नाक वाला।

उन्नाद––(पुं०) [उद्√नद्+घञ्] चिल्लाहट। गुञ्जार; पक्षियों की चहक या कूजन। (मक्खियों की) भिनभिनाहट।

उन्नाभ––(वि०)[उन्नतानाभिः यस्य ब० स०] जिसकी नाभि उभरी हुई हो। तोंद वाला।

उन्नाह––(पुं०)[उद्√नह्+घञ्] आगे की ओर निकलना। प्रचुरता। दर्प। काँजी, यह चावल के माँड़ से बनाया जाता है।

उन्निद्र––(वि०) [उद्गता निद्रा यस्मात् ब० स०] निद्रारहित, जागता हुआ। फैला हुआ, पूरा फूला हुआ।

उन्नीत––(वि०) [उद्√नी+क्त] ऊपर उठाया हुआ। अग्रिम कक्षा में चढ़ाया हुआ छात्र। (प्रमोटेड)

उन्नेतृ––(वि०) [उद्√नी+तृच्] ऊपर उठाने वाला, उन्नति कराने वाला। परिणाम की ओर ले जाने वाला। (पुं०) सोलह प्रकार के यज्ञ कराने वालों में से एक।

उन्मज्जन––(न०) [उद्√मस्ज्+ल्युट्] पानी से बाहर निकलना।

उन्मत्त––(वि०) [उद्√मद्+क्त] मदमाता, नशे में चूर। पागल, सिड़ी। अकड़ा हुआ, फूला हुआ। वहमी, उचङ्गी, प्रेतावेशित। (पुं०) धतूरा।––**कीर्त्ति,––वेश**–(पुं०) शिव जी का नाम।––**गङ्ग**–(न०) वह प्रदेश जहाँ गङ्गा जी का हरहराना प्रबल रूप से होता है।––**दर्शन,––रूप**–(वि०) देखने में या शक्ल से पागल।––**प्रलपित**–(न०) पागल की बहक, मतवाले की बकवास। अर्थ-संगति-रहित बातें।––**लिङ्गिन्**–(वि०) पागल होने का बहाना करने वाला।

उन्मथन––(न०) [उद्√मथ्+ल्युट्] हिलाना-डुलाना। पटक देना। गिरा देना। मारण, वध।

उन्मद––(वि०) [उद्गतो मदो यस्य ब० स०] नशे में चूर। पागल। (पुं०) [प्रा० स०] पागलपन। नशा।

उन्मदन––(वि०) [ब० स०] प्रेमासक्त, प्रेम में विह्वल।

उन्मदिष्णु––(वि०) [उद्√मद्+इष्णुच्] पागल। मदमाता, नशे में चूर।

उन्मनस्, उन्मनस्क––(वि०) [उत्कण्ठितं मनो यस्य ब० स०], [ब० स० कप्] उद्विग्न, विकल, व्याकुल, बेचैन। मित्र विछोह से संतप्त। उत्सुक, लालायित।

उन्मन्थ—(पुं०) [उद्√मन्थ्+घञ्] विकलता । हत्या ।

उन्मन्थन—(न०) [उद्√मन्थ्+ल्युट्] हत्या । लकड़ी से पीटना । क्षोभ, उद्वेग ।

उन्मयूख—(वि०) [ब० स०] चमकीला, चमकदार ।

उन्मर्दन—(न०) [उद्√मृद्+ल्युट्] मलना, रगड़ना । शरीर में मलने का एक सुगंधित द्रव्य । हवा शुद्ध करना ।

उन्माथ—(पुं०) [उद्√मथ्+घञ्]पीड़ा । क्षोभ । हत्या । जाल ।

उन्माद—(वि०) [उद्√मद्+घञ्]पागल, सिड़ी । डाँवाडोल । (पुं०) पागलपन । बड़ी झाँझ या क्रोध । मानसिक रोग विशेष जिससे मन और बुद्धि का कार्यक्रम अस्तव्यस्त हो जाता है । रस के ३३ सञ्चारी भावों में से एक जिसमें वियोगादि के कारण चित्त ठिकाने नहीं रहता । खिलना, प्रस्फुटन । यथा—'उन्मादं वीक्ष्य पद्मानाम्' ।—साहित्यदर्पण ।

उन्मादन—(वि०) [उद्√मद्+णिच् + ल्युट्] उन्मत्त करना । (पुं०) कामदेव के पाँच बाणों में से एक ।

उन्मान—(न०) [उद्√मा+ल्युट्] तौल, नाप । मूल्य, कीमत ।

उन्मार्ग—(वि०) [उत्क्रान्तो मार्गम्, अत्या० स०] असन्मार्ग में जाने वाला, कुपथगामी (पुं०) [प्रा० स०] कुपंथ । निकृष्ट आचरण, बुरी चाल ।

उन्मार्जन—(न०) [उद्√मृज्+णिच् + ल्युट्] रगड़, मालिश । पोंछना । झाड़ना ।

उन्मिति—(स्त्री०[उद्√मा+क्तिन्] नाप । मूल्य ।

उन्मिश्र—(वि०) [प्रा० स०] मिश्रित, मिलावटी ।

उन्मिषित—(वि०) [उद्√मिष+क्त] खुला हुआ । खिला हुआ । (न०) दृष्टि, नजर, निगाह ।

उन्मील—(पुं०), **उन्मीलन**—(न०) [उद्√मील्+घञ्], [उद्√मील्+ल्युट्] खुलना (आँख का) । खिलना । अंकन । व्यक्त होना ।

उन्मुख—(वि०) [उदूर्ध्वं मुखं यस्य ब० स०] ऊपर मुँह किये, ऊपर को ताकता हुआ । उत्कण्ठा से देखता हुआ । उत्कण्ठित, उत्सुक । उद्यत, तैयार; 'तमरण्यसमाश्रयोन्मुखं' र० ८.१२ ।

उन्मुखर—(वि०) [प्रा० स०] कोलाहल मचाने वाला, शोर-गुल करने वाला ।

उन्मुद्र—(वि०) [उद्गता मुद्रा यस्मात् ब० स०] बिना मोहर या सील का । खुला हुआ । फूंककर बढ़ाया हुआ या फुलाया हुआ । ताना हुआ, खींचकर बढ़ाया हुआ ।

उन्मूलन—(न०) [उद्√मूल्+ल्युट्] जड़ से उखाड़ना, समूल नष्ट करना ।

उन्मेदा—(स्त्री०) [प्रा० स०] मुटाई, मोटापन ।

उन्मेष—(पुं०), **उन्मेषण**—(न०) [उद्√मिष्+घञ्], [उद्√मिष्+ल्युट्] खुलना (आँख का) । खिलना । स्फुरण । प्रकाश ।

उन्मोचन—(न०) [उद्√मुच्+ल्युट्] खोलने की क्रिया । ढीला करने की क्रिया ।

उप—(अव्य०) यह उपसर्ग जब किसी क्रिया या संज्ञावाची शब्द के पूर्व लगाया जाता है, तब वह निम्न अर्थों का बोधक होता है :— सामीप्य, सान्निध्य । शक्ति, योग्यता । व्याप्ति उपदेश । मृत्यु, नाश । त्रुटि, दोष । प्रदान क्रिया, उद्योग । आरम्भ । अध्ययन । सम्मान पूजन । सादृश्य । वशित्व । अश्रेष्ठत्व ।

उपकण्ठ—(वि०) [उपगतः कण्ठम् अत्या० स०] समीप का, नजदीकी । (पुं० न०) [प्रा० स०) सामीप्य । ग्राम की सीमा के भीतर का स्थान । घोड़े की सरपट चाल । (अव्य० [अव्य० स०] गर्दन के ऊपर, गले के पास पास में, पड़ोस में ।

उपकथा—(स्त्री०) [प्रा०स०] छोटी कहानी, गल्प ।

उपकनिष्ठिका—(स्त्री०) [अत्या० स०] कनिष्ठिका के पास की उँगली, अनामिका ।

उपकरण—(न०) [उप√कृ+ल्युट्] अनुग्रह । सामान, सामग्री । औजार, हथियार । यन्त्र । आजीविका का द्वार । जीवनोपयोगी कोई वस्तु । राजचिह्न (छत्र, दण्ड, चँवर आदि)

उपकर्णन—(न०) [उप√कर्ण् +ल्युट्] श्रवण, सुनना ।

उपकर्णिका—(स्त्री०) [उपकर्ण, अव्य० स० +कन्–टाप्, इत्व] अफवाह, जनश्रुति ।

उपकर्तृ—(वि०) [उप√कृ+तृच्] उपकार करने वाला ।

उपकल्पन—(न०), **उपकल्पना**—(स्त्री०) [उप√कृप्+णिच्+ल्युट्], [उप√कृप् +णिच्+युच्] तैयार करना । आयोजन । बनाना । मिथ्या रचना । कोई बात सिद्ध करने के लिये पहले से ही कुछ मान लेना । जो बात प्रमाणित की जा सकती हो या जिसके सत्य होने की संभावना हो उसकी कल्पना पहले से कर लेना (हाइपाथेसिस) ।

उपकार—(पुं०) [उप√कृ+घञ्] परिचर्या । सहायता । अनुग्रह । आभूषण । वंदनवार ।

उपकारी—(स्त्री०) [उपकार–ङीष्] शाही खेमा । राजप्रासाद । सराय, धर्मशाला ।

उपकार्या—(स्त्री०) [उप√कृ+ण्यत्, टाप्]शाही खेमा । राजभवन । पांथशाला । समाधिस्थान ।

उपकुञ्चि—(पुं०), **उपकुञ्चिका**–(स्त्री०) [उप √कुञ्च्+कि] [उपकुञ्चि+कन्, टाप्] छोटी इलायची । स्याह जीरा ।

उपकुम्भ—(वि०) [अत्या० स०] समीप का । अकेला । (अव्य०) [अव्य० स०] घड़े के पास ।

उपकुर्वाण—(पुं०) [उप√कृ+शानच्] ब्रह्मचारी, जो गृहस्थ होने की इच्छा रखता हो ।

उपकुल्या—(स्त्री०) [उप√कुल्–अघ्न्यादिनिपातनात् साधुः] नहर, खाईं ।

उपकूप—(वि०) [अत्या० स०] कुएँ के समीप का । (न०) [प्रा० स०] छोटा कुआँ । (अव्य०) [अव्य० स०] कुएँ के समीप ।

उपकृति, उपक्रिया—(स्त्री०) [उप√कृ+क्तिन्], [उप√कृ+श] उपकार, भलाई । अनुग्रह, कृपा ।

उपक्रम—(पुं०) [उप√क्रम्+घञ्]आरम्भ । अनुष्ठान । रोगी की परिचर्या । ईमानदारी की परीक्षा । चिकित्सा, इलाज । सामीप्य । लेख या भाषण का उठान, प्रस्तावना ।

उपक्रमण—(न०) [उप√क्रम्+ल्युट्] समीपागमन । अनुष्ठान । आरम्भ । चिकित्सा ।

उपक्रमणिका—(स्त्री०) [उपक्रमण+ङीप् +कन्, टाप्, ह्रस्व] भूमिका, विषयसूची ।

उपक्रीडा—(स्त्री०) [अत्या० स०] चौगान, खेलने के लिये मैदान ।

उपक्रोश—(पुं०), **उपक्रोशन**—(न०) [उप √क्रुश्+घञ्], (उप√क्रुश्+ल्युट्] निंदा; 'प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा' र० २.५३ फटकार, डाँट-डपट, भर्त्सना ।

उपक्रोष्टृ—(वि०) [उप√क्रुश्+तृच्] निंदा करने वाला । (पुं०) (रेंकता हुआ) गधा ।

उपक्वण, उपक्वाण—(न०) [उप√क्वण् +अप्], [उप√क्वण्+घञ्] वीणा की झनकार ।

उपक्षय—(पुं०) [उप√क्षि+अच्] अवनति । कमी, ह्रास, घटती । व्यय ।

उपक्षेप—(पुं०) [उप√क्षिप्+घञ्] घुमाना । धमकी । आक्षेप । अभिनय के आरम्भ में अभिनय का संक्षिप्त वृत्तान्त-कथन । संकेत । चर्चा ।

उपक्षेपण—(न०) [उप√क्षिप्+ल्युट्] नीचे फेंकना या गिराना । दोषारोप करना । संकेत । शूद्र का खाद्य पदार्थ ब्राह्मण के घर में रखना ।

उपग—(वि०) [उप√ गम्+ड] समीप आया हुआ । पीछे लगा हुआ । सम्मिलित । प्राप्त हुआ ।

उपगण—(पुं०) [प्रा० स०] छोटी या अन्तर्गत श्रेणी।

उपगत—(वि०) [उप√गम्+क्त] गया हुआ। समीप आया हुआ। घटित। प्राप्त। अनुभूत। प्रतिज्ञात।

उपगति—(स्त्री०) [उप√गम्+क्तिन्] समीपागमन। ज्ञान। परिचय। स्वीकृति। प्राप्ति।

उपगम—(पुं०), **उपगमन**—(न०) [उप √ गम्+अप्], [उप√गम+ल्युट्] गमन। समीप गमन। ज्ञान। परिचय। प्राप्ति। समागम (स्त्री-पुरुष का)। सहिष्णुता। अनुभव। स्वीकृति। प्रतिज्ञा।

उपगिरम्, उपगिरि—(अव्य०) [अव्य० स०, टच्, पक्षे टच्न] पर्वत के समीप।

उपगिरि—(पुं०) [अत्या० स०] उत्तर दिशा में पर्वत के समीप अवस्थित एक प्रदेश का नाम।

उपगु—(अव्य०) [अव्य० स०] गौ के समीप। (पुं०) [अत्या० स०] ग्वाला, गोप।

उपगुरु—(पुं०) [प्रा० स०] सहायक शिक्षक।

उपगूढ—(वि०) [उप्√गुह्+क्त] छिपा हुआ। आलिङ्गन किया हुआ।

उपगूहन—(न०) [उप√गुह्+ल्युट्] छिपाव, दुराव। आलिङ्गन। आश्चर्य, अचंभा।

उपग्रह—(पुं०) [उप√ग्रह्+अप्] क़ैद, पकड़, गिरफ्तारी। हार, पराजय। क़ैदी, वंदी। योग, सम्मेलन। अनुग्रह। प्रोत्साहन। छोटा ग्रह (राहु, केतु आदि)।

उपग्रहण—(न०) [उप√ग्रह्+ल्युट्] नजदीक से पकड़ना, गिरफ्तारी, वंदी बनाना। सहारा वेदाध्ययन।

उपग्राह—(पुं०) [उप√ग्रह्+णिच्+अच्] भेंट देना। [कर्मणि घञ्] भेंट।

उपग्राह्य—(न०) [उप√ग्रह्+ण्यत्] भेंट, नजराना।

उपघात—(पुं०) [उप√हन्+घञ्] प्रहार। तिरस्कार। नाश। स्पर्श। आक्रमण। रोग। पाप।

उपघोषण—(न०) [उप√घुष्+ल्युट्] प्रकटन, प्रकाशन। ढिंढोरा।

उपघ्न—(पुं०) [उप्√हन्+क] सहारा। संरक्षण, पनाह; 'छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ' र० १४.१।

उपचक्र—(पुं०) [प्रा० स०] लाल रंग का हंस विशेष।

उपचक्षुस्—(न०) [प्रा० स०] चश्मा, ऐनक।

उपचय—(पुं०) [उप√चि+अच्] सञ्चय। वृद्धि, बढ़ती। ढेर। समृद्धि। कुण्डली में लग्न से तीसरा, छठा और ग्यारहवाँ स्थान।

उपचर—(पुं०) [उप√चर्+अच्] उपचार। चिकित्सा, इलाज।

उपचरण—(न०) [उप√चर्+ल्युट्] समीपगमन।

उपचाय्य—(पुं०) [उप√चि+ण्यत्] यज्ञीयाग्नि-विशेष। वेदी।

उपचार—(पुं०) [उप√चर्+घञ्] सेवा, परिचर्या। पूजन। सत्कार। विनम्रता। चापलूसी। नमस्कार करने का एक ढंग। दिखावटी रीतिरस्म। चिकित्सा, इलाज। व्यवस्था, प्रवन्ध। धर्मानुष्ठान। व्यवहार। घूस, रिश्वत। बहाना। प्रार्थना। विसर्ग के स्थान में स् और ष् का प्रयोग।

उपचित—(वि०) [उप√ चि+क्त] इकट्ठा किया हुआ। बढ़ा हुआ। जला हुआ।

उपचिति—(स्त्री०) [उप√चि+क्तिन्] संग्रह। बढ़ती। उन्नति।

उपचूलन—(न०) [उप√चूल्+ल्युट्] गरमाने की क्रिया, जलाना।

उपच्छद—(पुं०) [उप√छद्+णिच्+घञ् ह्रस्व] ढक्कन। चादर। परदा।

उपच्छन्दन—(न०) [उप√छन्द+णिच्+ल्युट्] मीठी-मीठी बातें कहकर अपना काम निकालने की क्रिया। प्रलोभित करना। आमन्त्रण देना, न्योता।

उपजन—(पुं०) [उप√जन् +अच्] उत्पत्ति । वृद्धि । मूल । अलग से जोड़ी बढ़ाई हुई वस्तु । शरीर ।

उपजल्पन, उपजल्पित—(न०) [उप√जल्प्+ल्युट्] [उप√जल्प्+क्त (भावे)] वार्तालाप ।

उपजाति—(स्त्री०) [अत्या० स०] इंद्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा तथा इंद्रवंशा और वंशस्थ के मेल से बनने वाले वर्णवृत्त ।

उपजाप—(पुं०) [उप√ जप्+घञ्] चुपचाप कान में कहना या बतलाना; 'उपजापसहान् विलङ्घयन् स विधाता नृपतीन्मदोद्धत-कि० २.४७ । वैरी के मित्र के साथ सन्धि के गुपचुप पैगाम । राजक्रान्ति के लिये असन्तोष का बीज-वपन । विच्छेद, अलगाव ।

उपजापक—(वि०) [उप√जप्+ण्वुल्—अक] बहकाने वाला । कान भरने वाला । विश्वासघाती ।

उपजीवक, उपजीविन्—(पुं०) [उप्√जीव्+ण्वुल्], [उप√जीव्+णिनि] दूसरे के आधार पर रहने वाला, परतंत्र, अनुचर ।

उपजीवन—(न०), **उपजीविका**—(स्त्री०) [उप√जीव्+ल्युट्], [उप√जीव्+क्वुन्] जीविका, रोजी । निर्वाह । जीविका का साधन, सम्पत्ति आदि ।

उपजीव्य—(वि०) [उप√जीव्+ण्यत्] जीविका देने वाला । संरक्षकता प्रदान करने वाला । लिखने के लिये सामग्री प्रदान करने वाला । 'सर्वेषां कविमुख्यानामुपजीव्यो भविष्यति ।' —महाभारत ।—(पुं०) संरक्षक । आधार या प्रमाण, जिससे कोई लेखक अपने लेख की सामग्री पावे ।

उपजोष—(पुं०), **उपजोषण**—(न०) [उप√जुष्+घञ्],[उप√जुष्+ल्युट्] स्नेह । भोगविलास ।

उपज्ञा—(स्त्री०) [उप√ज्ञा+अङ] वह ज्ञान जो स्वयं प्राप्त किया हो, परम्परा से प्राप्त न हुआ हो । ऐसे कार्य का अनुष्ठान जो पूर्व में कभी न किया गया हो ।

उपढौकन—(न०) [उप√ढौक्+ल्युट्] नजर, भेंट, उपहार ।

उपताप—(पुं०) [उप√तप्+घञ्] गर्मी, उष्णता । क्लेश, पीड़ा, शोक । सङ्कट, विपत्ति । रोग, बीमारी । शीघ्रता, हड़बड़ी ।

उपतापन—(न०) [उप√तप्+णिच्+ल्युट्] गर्माना । सन्तप्त करना, कष्ट देना ।

उपतापिन्—(वि०) [उपताप+इनि] गरमाया हुआ, गर्म, उष्ण । सन्तप्त, पीड़ित । बीमार ।

उपतिष्य— (न०) [अत्या० स०] अश्लेषा नक्षत्र का नाम । पुनर्वसु नक्षत्र का नाम ।

उपत्यका—(स्त्री०) [उप+त्यकन्] पर्वत के नीचे की भूमि, पहाड़ की तलहटी, पहाड़ की तराई ।

उपदंश—(पुं०) [उप√दंश्+घञ्] वह वस्तु जो प्यास या भूख को भड़कावे । डसना, डंक मारना । गर्मी की बीमारी, आतशक ।

उपदर्शक—(पुं०) [उप√दृश्+णिच् +ण्वुल्] मार्गदर्शक । द्वारपाल । [उप√दृश् +ण्वुल्] गवाह, साक्षी ।

उपदश—(वि०) [दशानां समीपे ये सन्ति इति विग्रहे ब० स०][बहुवचन] लगभग दस । नौ या ग्यारह ।

उपदा—(स्त्री०) [उप√दा+अङ] नजराना, भेंट । घूस, रिश्वत ।

उपदान, उपदानक—(न०) [उप√दा+ल्युट्], [उपदान+कन्] बलि, चढ़ावा । दान । रिश्वत ।

उपदिश्, उपदिशा—(स्त्री०) [प्रा० स०] उपदिशा, दिशाओं के कोण—ऐशानी । आग्नेयी । नैर्ऋती । वायवी ।

उपदेव—(पुं०)—**उपदेवता**— (स्त्री०) [प्रा० स०]छोटा देवता, निकृष्ट देवता ।

उपदेश—(पुं०) [उप√दिश्+घञ्]शिक्षा

नसीहत । दीक्षागुरुमन्त्र । सविशेष विवरण । व्याज, बहाना, मिस । नेक सलाह ।

उपदेशक—(वि०) [उप√दिश्+ण्वुल्] उपदेश करने वाला । शिक्षा देने वाला , नसीहत देने वाला । (पुं०) शिक्षक । दीक्षागुरु ।

उपदेशन—(न०) [उप√दिश्+ल्युट्] शिक्षा, नसीहत, सीख ।

उपदेशिन्—(विङ) [उप√दिश्+णिनि] उपदेष्टा, नसीहत देने वाला ।

उपदेष्टृ—(पुं०) [उप√ दिश्+तृच्] शिक्षक, गुरु । दीक्षागुरु ।

उपदेह—(पुं०) [उप√दिह्+घञ्] मलहम । ढकना ।

उपदोह—(पुं०) [उप√दुह्+घञ्] गाय के स्तन के ऊपर की घुंडी । दोहनी, पात्र जिसमें दूध दुहा जाय ।

उपद्रव—(पुं०) [उप√द्रु+अप्] उत्पात । क्षति । सार्वजनिक संकट या आपत्ति (अतिवर्षण, विप्लव आदि) दंगा-फसाद, गड़बड़, बखेड़ा । एक रोग के बीच में होने वाला दूसरा गौण रोग । उपसर्ग ।

उपधर्म—(पुं०) [प्रा० स०] गौण धर्म या नियम ।

उपधा—(स्त्री०) [उप√धा+अङ] छल, प्रवञ्चना, जाल, फरेब । सत्यता या ईमानदारी की परीक्षा । व्याकरण में अन्त्य वर्ण से पूर्व का वर्ण । उपाय; 'अयशोभिदुरा लोके कोपधा मरणादृते' शि० १९.५८ ।—**भृत**—(पुं०) वह नौकर जिसके ऊपर बेईमानी का इलजाम लगाया गया हो ।—**शुचि**—(वि०) परीक्षित, जाँचा हुआ ।

उपधातु—(पुं०) [प्रा० स०] निकृष्ट धातु अथवा प्रधान धातुओं के समान । वे ये हैं :—
"सप्तोपधातवः स्वर्णं माक्षिकं तारमाक्षिकम् ।
तुत्थं कांस्यं च रीतिश्च सिन्दूरं च शिलाजतु ॥'
शरीर के रस-रक्तादि सात धातुओं से बने हुए दूध, पसीना, चर्बी आदि । वे ये हैं :—
स्तन्यं रजो वसा स्वेदो दन्ताः केशास्तथैव च ।
औजस्यं सप्तधातूनां क्रमात्सप्तोपधातवः ॥

उपधान—(न०) [उप√धा+ल्युट्] जिस पर रखकर सहारा लिया जाय । तकिया । विशेषता । स्नेह । एक धार्मिक अनुष्ठान । सर्वोत्तम-गुण-विशिष्टता । विष, जहर ।

उपधानीय—(वि०) [उप√धा+अनीयर्] पास रखने योग्य । (न०) तकिया ।

उपधारण—(न०) [उप√धृ+णिच्+ल्युट्] सम्यक् चिंतन । चित्त को किसी एक विषय में लगाना । किसी ऊपर रखी या लगी हुई चीज को लग्गी में अटका कर खींच लेने की क्रिया ।

उपधि—(पुं०) [उप√धा+कि] जालसाजी, बेईमानी; "विजयार्थिनः क्षितीशाः विदधीत सोपधि सन्धिदूषणानि' कि० १.४५ । सत्य का अपलाप, जान-बूझकर सत्य को छिपाना । भय । धमकी । पहिया या पहिये का स्थान विशेष ।

उपधिक—(पुं०) [उपधि+ठन्—इक] दगाबाज, धोखेबाज, प्रवञ्चक, छली, कपटी ।

उपधूपित—(वि०) [उप√धूप् + क्त] सुवासित । मरणासन्न । अत्यन्त पीड़ित । (न०) मृत्यु ।

उपधृति—(स्त्री०) [उप√धृ+क्तिन्] किरण । ग्रहण ।

उपध्मान—(पुं०) [उप √ध्मा+ ल्युट्] ओंठ । (न०) फूंक ।

उपध्मानीय—(पुं०) [उप√ध्मा+अनीयर्] व्याकरणीय संज्ञा विशेष । 'प' और 'फ' से पहले आने वाला महाप्राण विसर्ग अर्थात् अर्धविसर्गसदृश एक चिह्न, ⌣⌢ ।

उपनक्षत्र—(न०) [प्रा० स०] सहकारी नक्षत्र, गौण नक्षत्र, ऐसे नक्षत्रों की संख्या ७२९ कही जाती है ।

उपनगर—(न०) [प्रा० स०] नगर का बाहरी भाग । शहर से सटी हुई या उसके डाँड़े पर की बस्ती, शाखानगर ।

उपनत—[उप√नम्+क्त] नम्र, झुका हुआ। शरणागत। उपस्थित। प्राप्त। घटित।

उपनति—(स्त्री०) [उप√नम्+क्तिन्] समीप आगमन। झुकाव। प्रणाम।

उपनय—(पुं०) [उप√नी+अच्] समीप ले जाना। प्राप्ति, उपलब्धि। उपनयन संस्कार। न्याय में वाक्य के चौथे अवयव का नाम।

उपनयन—(न०) [उप√नी+ल्युट्] पास ले जाना। भेंट करने की क्रिया, चढ़ावा। यज्ञोपवीत संस्कार, व्रतबंध, जनेऊ।

उपनागरिका—(स्त्री०) [प्रा० स०] अलङ्कार में वृत्ति अनुप्रास का एक भेद; इसमें कर्णमधुर वर्णों का प्रयोग किया जाता है।

उपनाय—(पुं०) **उपनायन**—(न०) [उप √नी+णिच्+घञ्] [उप√नी+णिच् +ल्युट्—अन] दे० 'उपनयन'।

उपनायक—(पुं०) [प्रा० स०] नाटकों में या किसी साहित्य-ग्रन्थ में प्रधान नायक का साथी या सहकारी (जैसे, रामायण में लक्ष्मण)। उपपति, प्रेमी।

उपनायिका—(स्त्री०) [प्रा० स०] नाटकों में प्रधान नायिका की सखी या सहेली (जैसे, मालतीमाधव में मदयन्तिका)।

उपनाह—(पुं०) [उप√नह्+घञ्] गठरी। घाव या फोड़े पर लगाने का मलहम या लेप। सितार की खूंटी।

उपनाहन—(न०) [उप√नह्+णिच्+ल्युट्] मलहम या लेप लगाने की क्रिया।

उपनिक्षेप—(पुं०) [उप—नि √क्षिप्+घञ्] अमानत, धरोहर, [ऐसी धरोहर जिसकी संख्या, तौल आदि धरोहर रखने वाले को बतला कर दिखला दी जाय। मिताक्षराकार ने ऐसी धरोहर की यह परिभाषा दी है :—'उपनिक्षेपो नाम रूपसंख्याप्रदर्शनेन रक्षणार्थं परस्य हस्ते निहितं द्रव्यम्'।

उपनिधान—(न०) [उप—नि√धा+ल्युट्] समीप रखना। धरोहर रखना। धरोहर, अमानत।

उपनिधि—(पुं०) [उप—नि√धा+कि] मोहर लगा कर और बंद करके रखी हुई अमानत, धरोहर, गिरवी रखी हुई वस्तु।

उपनिपात—(पुं०) [उप—नि√पत्+घञ्] समीप आगमन। अचानक घटित घटना या आक्रमण।

उपनिपातिन्—(वि०) [उप—नि√पत्+णिनि] आ पड़ने वाला, टूट पड़ने वाला। हठात् आक्रमण करने वाला।

उपनिबन्धन—(न०) [उप—नि√बन्ध्+ल्युट्] किसी कार्य को सुसम्पन्न करने का साधन। बंधन। बस्ता, पुस्तक के ऊपर की जिल्द।

उपनिमन्त्रण—(न०) [उप—नि√मन्त्र्+णिच्+ल्युट्] बुलावा, आमंत्रण। प्रतिष्ठा, अभिषेक-संस्कार।

उपनियम—(पुं०) [प्रा० स०] किसी नियम के अंतर्गत बना हुआ अन्य छोटा नियम (सबरूल)।

उपनिर्वाचन—(न०) [प्रा० स०] मृत्यु या अन्य कारण से विधान सभा, नगरपालिका आदि के किसी सदस्य का या किसी पदाधिकारी आदि का स्थान रिक्त हो जाने पर होने वाला चुनाव (बाई-इलेक्शन)।

उपनिवेश—(पुं०) [उप—नि √विश्+घञ्] उपनगर। दूसरे देश से आये हुए लोगों की बस्ती। विजित देश, जिसमें विजेता राष्ट्र के लोग आकर बस गये हों (कॉलोनी)। —**पद**—(न०) उपनिवेशों का दरजा। उस प्रकार का स्वराज्य या स्वतंत्रता जो उन्हें प्राप्त है (डोमिनियन स्टेट्स)।

उपनिवेशित—(वि०) [उप—नि√विश्+णिच्+क्त] उपनिवेश बनाया हुआ।

उपनिषद्—(स्त्री०) [उप—नि√सद्+क्विप् अथवा √सद्+णिच्+क्विप्] वेद की शाखाओं के ब्राह्मणों के वे अन्तिम भाग जिनमें आत्मा और परमात्मा आदि का वर्णन

किया गया है। वेद के गुप्तार्थ-प्रकाशक ग्रन्थ। ब्रह्मविद्या, ब्रह्मसम्वन्धी सत्य ज्ञान। वेदान्त दर्शन। रहस्य, एकान्त। समीप या पड़ोस का भवन। समीप उपवेशन, ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के लिये गुरु के निकट उपवेशन।

उपनिष्कर—(पुं०) [उप—निस्√कृ+घ] राजमार्ग, मुख्य मार्ग, प्रधान रास्ता।

उपनिष्क्रमण—(न०) [उप—निस् √क्रम्+ल्युट्] वाहर निकलना। नवजात शिशु को सब से प्रथम वाहर लाने के समय का संस्कार विशेष यह संस्कार चौथे मास में किया जाता है। मुख्यमार्ग।

उपनीत—(वि०) [उप√नी+क्त] पास लाया हुआ। जिसका उपनयन हुआ हो।

उपनृत्य—(न०) [व० स०] नृत्यशाला या नाचने की जगह।

उपनेतृ—(वि०) [उप√नी+तृच्] पास ले जाने वाला। (पुं०) नेता का नायब या सहकारी। उपनयन संस्कार कराने वाला आचार्य।

उपन्यास—(पुं०) [उप—नि√अस्+घञ्] पास लाना। धरोहर, अमानत। प्रस्ताव। प्रमाण। वाक्य का उपक्रम। संधि का एक प्रकार। कल्पित और काफी लंबी कहानी (नावेल)।—**सन्धि**-(पुं०) मंगलकारी कार्य की इच्छा से की जाने वाली संधि।

उपपति—(पुं०) [प्रा० स०] जार, आशिक।

उपपत्ति—(स्त्री०) [उप√पद्+क्तिन्] प्राप्ति। सिद्धि। प्रतिपादन। हेतु द्वारा किसी पदार्थ की स्थिति का निश्चय। घटना। चरितार्थ होना। मेल मिलना। युक्ति, हेतु। प्रमाण। आधार, सहारा। औचित्य। अंत। साधन। स्वीकृति। समाधि।

उपपद—(न०) [प्रा० स०] पास या पीछे बोला गया या लगाया गया पद। उपाधि, शिक्षा-सम्वन्धी योग्यता-प्रदर्शक पदवी। प्रतिष्ठासूचक सम्वोधनवाची शब्द; जैसे "आर्य"! "शर्मन्"! —**समास**-(पुं०) कृदंत के साथ हुआ नाम (संज्ञा) का समास, जैसे "कुम्भकारः"।

उपपन्न—(वि०) [उप√पद्+क्त] लब्ध, प्राप्त, पाया हुआ। योग्य, उपयुक्त, उचित। युक्तियुक्त, यथार्थ। पास आया हुआ, पहुँचा हुआ। शरणागत। सिद्ध किया हुआ। नीरोग किया हुआ।

उपपरीक्षण—(न०), **उपपरीक्षा**—(स्त्री०) [प्रा० स०] जाँचपड़ताल, अनुसन्धान।

उपपात—(पुं०) [उप√पत्+घञ्] इत्तिफाकिया घटना। विपत्ति, सङ्कट।

उपपातक—(न०) [प्रा० स०] छोटा पाप, याज्ञवल्क्य स्मृति में लिखा है।—महापातकतुल्यानि पापान्युक्तानि यानि तु। तानि पातक-संज्ञानि तन्न्यूनमुपपातकम्॥

उपपादन—(न०) [उप√पद्+णिच्+ल्युट्] पूरा करना। सौंपना, हवाले करना। सिद्ध करना, युक्तिपूर्वक किसी विशेष को समझाना। परीक्षण।

उपपार्श्व—(न०) [अत्या० स० वा प्रा० स०] कंधा। पक्ष। वगल। छोटी पसली। विपक्ष।

उपपीडन—(न०) [उप√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाना। नष्ट करना, उजाड़ना। पीड़ित करना, घायल करना। पीड़ा, कष्ट।

उपपुर—(न०) [प्रा० स०] नगर के समीप की बस्ती, शाखानगर।

उपपुराण—(न०) [प्रा० स०] अठारह प्रधान पुराणों के अतिरिक्त अन्य छोटे पुराण, पुराणों के वाद बनाये गये पुराण। इनके नाम ये हैं;—सनत्कुमार। नारसिंह। नारदीय। शिव। दुर्वासा। कपिल। वामन। औशनस्। वरुण। कालिका। शाम्ब। नन्दा। सौर। पराशर। आदित्य। माहेश्वर। भार्गव। वासिष्ठ।

उपपुष्पिका—(स्त्री०) [अत्या० स०, संज्ञायां कन्, टाप्, इत्वम्] जमुहाई। हाँफना।

उपप्रदर्शन—(न०) [प्रा० स०] बतलाना, निर्देश करना ।

उपप्रदान—(न०) [प्रा० स०] सौंपना, हवाले करना । रिश्वत, घूस । राजस्व, खिराज ।

उपप्रलोभन—(न०) [प्रा० स०] फुसलाहट, लोभन, लालच । घूस, रिश्वत. प्रलोभन ।

उपप्रेक्षण—(न०) [प्रा० स०] उपेक्षा, तिरस्कार ।

उपप्रैष—(पुं०) [प्रा० स०] निमंत्रण, बुलावा ।

उपप्लव—(पुं०) [उप√प्लु+अप्] विपत्ति, सङ्कट । अशुभ घटना । अत्याचार । भय, आतङ्क । अशुभसूचक दैवी उपद्रव । चन्द्र या सूर्य ग्रहण । उल्कापात । राहु उपग्रह का नाम । राज्यक्रान्ति । विघ्न, बाधा । शिव ।

उपप्लविन्—(वि०) [उपप्लव+इनि] सन्तप्त, पीड़ित । अत्याचार से सताया हुआ ।

उपबन्ध—(पुं०) [उप√ बन्ध्+घञ्] संबंध । उपसर्ग । रति-क्रिया का आसन विशेष । किसी विधि, अधिनियम आदि के वे खंड या उपखंड जिनमें किसी बात की संभावना आदि को ध्यान में रखते हुए पहले से कोई प्रबन्ध या गुंजाइश रख दी जाय (प्रोविजन) । इस तरह रखी गई गुंजाइश या गुंजाइश रखने की क्रिया ।

उपबर्ह—(पुं०), **उपबर्हण**—(न०) [उप√बर्ह्+घञ्] [उप√बर्ह्+ल्युट्] दबाना । तकिया, बालिश ।

उपबहु—(वि०) [प्रा० स०] थोड़ा, कुछ ।

उपबाहु—(पुं०) [अत्या० स०] नीचे की बाँह ।

उपबृंहण—(न०) [उप√बृह्+ल्युट्] वृद्धि, बढ़ती ।

उपभंग—(पुं०) [उप√भञ्ज्+घञ्] भाग जाना, पीछे भागना ।

उपभाषा—(स्त्री०) [प्रा० स०] गौण, बोलचाल की भाषा ।

उपभृत्—(स्त्री०) [उप√भृ+क्विप्] यज्ञीय पात्र विशेष, यह बरगद की लकड़ी का बनाया जाता है ।

उपभोग—(पुं०) [उप √भुज+घञ्] भोगना; 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति' भग० । स्वाद लेना । व्यवहार, बरतना । विषय-सुख । स्त्रीसहवास । फलभोग ।

उपमंत्रण—(न०) [उप√मन्त्र्+ल्युट्] सम्बोधन करने, निमंत्रण देने और बुलाने की क्रिया ।

उपमन्थनी—(स्त्री०) [उप√मन्थ्+ल्युट्—ङीप्] आग उकसाने की एक लकड़ी ।

उपमर्द—(पुं०) [उप√मृद्+घञ्] रगड़ । निचोड़ । कुचलना । नाश । धिक्कार, भर्त्सना । भूसी अलगाना । किसी लगाये हुए दोष का प्रतिवाद या खण्डन ।

उपमा—(स्त्री०) [उप√मा+अङ—टाप्] समानता, सादृश्य, तुलना । पटतर, मिलान । एक अर्थालङ्कार जिसमें दो वस्तुओं में भेद रहते भी उनकी समानता दिखलाई जाती है ।

उपमातृ—(स्त्री०) [प्रा० स०] धाय, दूध पिलाने वाली दाई । बिल्कुल निकट का सम्बन्ध रखने वाली स्त्री । (वि०) [उप√मा+तृच्] उपमा देने वाला । (पुं०) चित्रकार ।

उपमान—(न०) [उप√मा+ल्युट्] वह वस्तु जिससे उपमा दी जाय । समानतासूचक वस्तु । न्याय में चार प्रमाणों में से एक ।

उपमिति—(स्त्री०) [उप√मा+क्तिन्] समानता, तुलना, सादृश्य । उपमा या सादृश्य से होने वाला ज्ञान ।

उपमेय—(वि०) [उप√मा+यत्] उपमा देने योग्य । (न०) वह वस्तु जिसकी किसी से तुलना की जाय । वर्ण्य, वर्णनीय ।

उपयन्तृ—(पुं०) [उप√यम्+तृच्] पति; 'अथोपयन्तारमलं समाधिना' कु० ५.४५ ।

उपयन्त्र—(न०) [प्रा० स० वा अत्या० स०] छोटा यंत्र या औजार । चीर-फाड़ के काम आने वाला एक विशेष यंत्र ।

उपयम—(पुं०) [उप√यम्+अप्] विवाह, परिणय ।
उपयमन—(न०) [उप√यम्+ ल्युट्] विवाह करना । रोकना, संयम करना । अग्नि-स्थापन ।
उपयष्टृ—(पुं०) [उप√यज्+तृच्] सोलह प्रकार के ऋत्विजों में से प्रतिप्रस्थाता नामक ऋत्विक् ।
उपयाचक—(वि०) [उप√याच्+ण्वुल्] माँगने वाला, मँगता, प्रार्थी, आवेदक ।
उपयाचन—(न०) (उप√याच्+ल्युट्] याचना, प्रार्थना, आवेदन ।
उपयाचित, उपयाचितक— (वि०) [उप √ याच्+क्त][उपयाचित+कन्] याचित, प्रार्थित । (न०) प्रार्थना, निवेदन । मनौती, मानता। किसी कार्य की सिद्धि के लिए देवी-देवता से प्रार्थना करना ।
उपयाज—(पुं०) [उप√यज्+घञ्] यज्ञांग याग विशेष, यह ११ प्रकार का होता है । यज्ञ का अतिरिक्त विधान ।
उपयान—(न०) [उप√या+ल्युट्] समीप जाना; 'हरोपयाने त्वरिता बभूव' कु० ७.२२।
उपयुक्त—(वि०) [उप√युज्+ क्त] उपयोग में लाया हुआ । प्रयुक्त । उचित, ठीक । योग्य। अनुकूल ।
उपयोग—(पुं०) [उप√युज्+घञ्] काम, व्यवहार, इस्तेमाल, प्रयोग । औषधोपचार या दवाइयों का बनाना । योग्यता, उपयुक्तता, औचित्य । सामीप्य ।—वाद–(पुं०) एक सिद्धान्त, जिसके अनुसार मनुष्य ऐसा कोई काम न करे जिससे किसी जीव को दुःख हो। अधिक से अधिक लोगों का अधिक से अधिक हितसाधन धर्म है—यह मत (यूटिलिटेरियनिज्म ।)
उपयोगिन्—(वि०) [उप√युज्+घिनुण्] उपयुक्त । लाभजनक । अनुकूल । योग्य, ठीक । काम में आने वाला, कारामद ।
उपयोजन—(न०) [उप√युज्+णिच्+ल्युट्] उपयोग करना । घोड़ा जोतने का काम । (कोई वस्तु या धन) अधिकार में ले लेना या अपने प्रयोग में ले आना (ऐप्रोप्रियेशन) ।
उपरक्त—(वि०) [उप√रञ्ज्+क्त] विषयासक्त । पीड़ित, सन्तप्त । ग्रस्त । रंगीन, रंगा हुआ । (पुं०) राहु केतु ग्रस्त चन्द्र, सूर्य । राहु ।
उपरक्ष—(पुं०) [उप√रक्ष्+अच्] अंगरक्षक । सेना का पहरेदार ।
उपरक्षण—(न०) [उप√रक्ष्+ल्युट्] पहरा, चौकी ।
उपरत—(वि०) [उप√रम्+क्त] हटा हुआ । रागरहित । निवृत्त । मरा हुआ ।—कर्मन्–(वि०) सांसारिक कर्मों पर भरोसा न करने वाला ।—स्पृह–(वि०) समस्त कामनाओं से शून्य, संसार से विरुद्ध ।
उपरति—(स्त्री०) [उप√रम्+क्तिन्] विरति, विषय से विराग । स्त्रीसम्भोग से अरुचि । उदासीनता । मृत्यु ।
उपरत्न—(न०) [प्रा० स०)] घटिया किस्म के रत्न (काच, कपूर, प्रस्तर, मुक्ता, शुक्ति, शंख इत्यादि) ।
उपरम, उपराम—(पुं०) [उप√रम्+घञ् नि० न वृद्धिः], [उप√रम्+घञ्] निवृत्ति । वैराग्य । मृत्यु । विश्रांति ।
उपरमण—(न०) (उप√रम्+ल्युट्] स्त्रीसम्भोग से विरति । विराम ।
उपरस—(पुं०) [प्रा० स०] वैद्यक में पारे के समान गुण करने वाले रस । गंधक, अभ्रक, मैनसिल, गेरू आदि । गौण भाव । थोड़ा-थोड़ा मालूम होने वाला अप्रधान स्वाद ।
उपराग—(पुं०) [उप√रञ्ज्+घञ्] सूर्य-चन्द्र का ग्रहण । राहु । ललाई । लाल रंग । रंग । विपत्ति, सङ्कट; 'मृणालिनी हैममिवोपरागं' र० १६.७ । धिक्कार, भर्त्सना । निकटस्थ वस्तु के प्रभाव से रंग-रूप बदलना (सांख्य०) ।

उपराम—(पुं०) [उप√रम्+घञ्] निवृत्ति। रोक। विश्रान्ति। मृत्यु।
उपराज—(पुं०) [प्रा० स०] राजा का नायव, राजप्रतिनिधि।
उपरि—(अव्य०) [ऊर्ध्व+रिल्, उप आदेश] ऊपर। उपरांत, वाद।—चर—(वि०) ऊपर चलने वाला। (पुं०) पक्षी। एक वस्तु।—भाग—(पुं०) ऊपरी हिस्सा।—भूमि—(स्त्री०) ऊपर की जमीन।
उपरितन—(वि०) [उपरि+ट्यु, तुट्] ऊपर का, ऊँचा।
उपरिष्टात्—(अव्य०) [ऊर्ध्व+रिष्टातिल्, उप आदेश] ऊपर। पीछे।
उपरीतक—(पुं०) [उप√री+क्त+कन्] रतिक्रिया का आसन या विधि विशेष। 'एक पादमुरौ कृत्वा द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम्। नारीं कामयते कामी वन्धः स्यादुपरीतकः ॥' [रतिमञ्जरी)
उपरूपक—(न०) [प्रा० स०] निम्न श्रेणी का या गौण रूपक (नाटक) जो १८ प्रकार का होता है।
उपरोध—(पुं०) [उप√रुध्+घञ्] रोकटोक, बाधा, अड़चन। उत्पात, आफ़त। आड़, पर्दा, रोक। रक्षा। अनुग्रह।
उपरोधक—(वि०) [उप√रुध्+ण्वुल्] रोकने वाला। ढकने वाला। आड़ करने वाला। घेरने वाला। (न०) भीतर का कमरा।
उपरोधन—(न०) [उप√रुध्+ल्युट्] रोकटोक, बाधा, अड़चन।
उपल—(पुं०) [उप√ला+क वा उ√पल्+अच्] पत्थर। रत्न। ओला। बादल।
उपलक—(पुं०) [उपल+कन्] एक पत्थर।
उपलक्षण—(न०) [उप√लक्ष्+ल्युट्] देखना, लखना। बोधक चिह्न। पहचान। संकेत। शब्द की वह शक्ति जिससे निर्दिष्ट वस्तु के अतिरिक्त उस तरह की और वस्तुओं का भी बोध हो।
उपलब्धि—(स्त्री०) [उप√लभ्+क्तिन्] प्राप्ति। बोध, ज्ञान। अनुमान। बुद्धि। किसी पण्य वस्तु की वह संख्या या परिणाम जो बाजार में खरीदने या माँग की पूर्ति करने के लिये किसी समय प्राप्य हो (सप्लाई)।
उपलम्भ—(पुं०) [उप√लभ्+घञ्, नुम्] प्राप्ति, उपलब्धि। पहचान। खोज, तलाश।
उपला—(स्त्री०) [उप√ला+क, टाप्] बालू, रेत। साफ की हुई चीनी।
उपलालन—(न०) [उप√लल्+णिच्+ल्युट्] प्यार करना, दुलारना।
उपलालिका—(स्त्री०) [उप√लल्+ण्वुच्] प्यास।
उपलिङ्ग—(न०) [प्रा० स०] दुर्निमित्त, अशकुन।
उपलिप्सा—(स्त्री०) [उप√लभ्+सन्+अ, टाप्] पाने की इच्छा।
उपलेप—(पुं०) [उप√लिप+घञ्] लेप, मालिश, उबटन। लीपना, पोतना। रोक। सुन्न पड़ जाना।
उपलेपन—(न०) [उप√लिप्+ल्युट्] मालिश, लेप या उबटन करने की क्रिया। लेप, उबटन, मलहम।
उपवन—(न०) [प्रा० स०] बाग, उद्यान।
उपवर्ण—(पुं०), उपवर्णन—(न०) [उप√वर्ण्+घञ्] [उप√वर्ण्+ल्युट्] विस्तृत, ब्योरेवार वर्णन।
उपवर्तन—(न०) [उप√वृत्+ल्युट्] अखाड़ा, कसरत करने का स्थान। जिला या परगना। राज्य। दलदल।
उपवसथ—(पुं०) [उप√वस+अथ] ग्राम, गाँव। सोमयाग का पूर्वदिवस, इस दिन उपवास करते हैं।
उपवस्त—(न०) [उप√वस् (स्तम्भे)+क्त] उपवास, कड़ाका, व्रत।
उपवास—(पुं०) [उप√वस्+घञ्] व्रत,

उपोषण, निराहार रहना । यज्ञीय अग्नि का प्रज्वलित करना ।
उपवाहन—(न०) [उप√वह्+णिच्+ल्युट्] पास ले जाना ।
उपवाह्य—(पुं०), उपवाह्या-(स्त्री०) [उप √वह्+ण्यत्], [उपवाह्य+टाप्] राजा की सवारी में काम आने वाला वाहन—हाथी, रथ आदि । वाहन । (वि०) पास लाने योग्य । सवारी के काम आने वाला ।
उपविद्या—(स्त्री०) [प्रा० स०] लौकिक विद्या, घटिया ज्ञान ।
उपविधि—(पुं०) [प्रा० स०] किसी विधि के अंतर्गत बनाई गई छोटी विधि (बाई-ला) ।
उपविष—(पुं०) [प्रा० स०] बनावटी, जहर । घटिया जहर, मादक विष; यथा अफीम, धतूरा ।
उपवीणयति—ना० धा० क्रि० उत्सव में किसी देवता के आगे वीणा बजाना ।
उपवीत—(न०) [उप–वि√ इ+क्त] जनेऊ । उपनयन संस्कार ।
उपवृंहण—(न०) दे० 'उपबृंहण' ।
उपवेद—(पुं०) [प्रा० स०] वे विद्याएँ जिनका मूल वेद में है । ये चार हैं । यथा धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, आयुर्वेद, स्थापत्य । धनुर्वेद विद्या का मूल यजुर्वेद में, गन्धर्व विद्या का सामवेद में, आयुर्वेद विद्या का ऋग्वेद में और स्थापत्य विद्या का अथर्ववेद में है ।
उपवेश—(पुं०), **उपवेशन**–(न०) [उप √विश्+घञ्] बैठना । किसी कार्य में संलग्न होना । मलत्याग । [उप√विश्+ल्युट्] दे० 'उपवेश' । सभा की बैठक होती रहना, बैठक होती रहने की स्थिति (सिटिंग) ।
उपवैणव—(न०) [उपवेणु+अण्] दिन के तीन काल, प्रातः, मध्याह्न और सायम्; त्रिसन्ध्या ।
उपव्याख्यान—(न०) [प्रा० स०] पीछे से लगायी या जोड़ी हुई व्याख्या या टीका ।
उपव्याघ्र—(पुं०) [प्रा० स०] चित्रक, चीता ।
उपशम—(पुं०) [उप√शम्+घञ्] निस्तब्ध हो जाना, शान्त हो जाना । विराम । अवसान । निवृत्ति । इन्द्रियनिग्रह । निवारण का उपाय । इलाज, चारा ।
उपशमन—(न०) [उप√शम्+णिच्+ल्युट्] शांत करना । तुष्ट करना । निवारण । दबाना । घटाना । शूल-नाशक औषध ।
उपशय—(वि०) [उप√शी+अच्] पास में सोना । ओषधि या पथ्य विशेष के प्रभाव से रोग का निदान । अनुकूल ओषधि या पथ्य द्वारा रोग का इलाज । घात में बैठना ।
उपशल्य—(न०) [अत्या० स०] भाला । गाँव या नगर का सिवाना, डाँडा; 'ग्रामान्त; 'अथोपशल्ये रिपुमग्नशल्यः' र० १६.३७ । पहाड़ के पास की जमीन ।
उपशाखा—(स्त्री०) [प्रा० स०] छोटी डाली या छोटी शाखा ।
उपशान्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] विराम । निवृत्ति । बुझाना । (जैसे भूख को या प्यास को) कम करना ।
उपशाय—(पुं०) [उप√शी+घञ्] बारी-बारी से सोना ।
उपशाल—(न०) [अत्या० स०] भवन के पास का छोटा घर । मकान के सामने का घेरा या हाता । अव्य० [अव्य० स०] घर के समीप या पास ।
उपशास्त्र—(न०) [प्रा० स०] गौण शास्त्र या कोई छोटी कला ।
उपशिक्षण—(न०), **उपशिक्षा**– (स्त्री०) [उप√शिक्ष् +ल्युट्], [उप√शिक्ष्+अ] अध्ययन-अध्यापन, पढ़ना-पढ़ाना ।
उपशिष्य—(पुं०) [प्रा० स०] शिष्य का शिष्य, शागिर्द का शागिर्द; 'शिष्योपशिष्यै-रुपगीयमानमवेहि तन्मण्डनमिश्रधाम' ।
उपशोभन—(न०), **उपशोभा**–(स्त्री०)

[उप√शुभ्+ल्युट्],[उप√शुभ्+अ] शृंगार, सजावट ।

उपशोषण—(न०) [उप√शुष्+ल्युट् वा √ शुष्+णिच्+ल्युट्] सूखना । सुखाना, शोषण करना । चूसना ।

उपश्रुति—(स्त्री०) [उप√श्रु + क्तिन्] सुनना । सुनाई देने की हद । स्वीकृति । वचन । रात में सुनाई देने वाली भविष्य सूचक देववाणी । भविष्य कथन ।

उपश्लेष—(पुं०), **उपश्लेषण**– (न०) [उप√ श्लिष्+घञ्], [उप√श्लिष्+ल्युट्] संसर्ग । आलिङ्गन ।

उपश्लोकयति—ना० धा० क्रि० श्लोक बनाकर प्रशंसा करना ।

उपसंयम—(पुं०) [उप—सम्√यम्+अप्] दमन करना । बाँधना । प्रलय ।

उपसंयोग—(पुं०) [प्रा० स०] गौण सम्बन्ध । सुधार ।

उपसंरोह—(पुं०) [प्रा० स०] साथ-साथ उगना या किसी के ऊपर उगना ।

उपसंवाद—(पुं०) [प्रा० स०] इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र ।

उपसंव्यान—(न०) [उप—सम्√व्ये+ल्युट्] कपड़े के भीतर पहिना जाने वाला कपड़ा, कुर्त्ता, बनियाइन आदि। अंतःपट ।

उपसंहरण—(न०) [उप—सम्√हृ+ ल्युट्] वापिस ले लेना । छीन लेना । रोक रखना । छेक देना । आक्रमण करना ।

उपसंहार—(पुं०) [उप—सम्√हृ+घञ्] मिला देना । वापिस लेना या रोक रखना । समारोह । समाप्त करना । लेख आदि के अंत में दिया जाने वाला खुलासा । सारांश । संक्षिप्तता । पूर्णता । नाश । आक्रमण ।

उपसंहारिन्—(वि०) [उप—सम्√हृ + णिनि] अन्तर्भाव करने वाला, मिला लेने वाला ।

उपसंक्षेप—(पुं०) [प्रा० स०] सार । संग्रह ।

उपसंख्यान—(न०) [उप—सम्√ख्या+ल्युट्] जोड़, जमा । अतिरिक्त योग या वृद्धि। यह शब्द प्रायः कात्यायन के वार्तिक के लिये प्रयुक्त होता है, जिसमें पाणिनि की छूटों की पूर्ति की गई है ।

उपसंग्रह—(पुं०), **उपसंग्रहण**–(न०) [उप—सम्√ग्रह्+अप्], [उप—सम् √ग्रह्+ल्युट्] आनन्दित रखना । किसी के खाने-पीने आदि की आवश्यकताओं का प्रबन्ध कर देना । प्रणाम के लिए चरणस्पर्श । अंगीकार-करण । विनम्र आवेदन । एकत्र करना, जमा करना । संयोग करना, मिलाना । ग्रहण करना । उपकरण ।

उपसत्ति—(स्त्री०) [उप√सद्+क्तिन्] संयोग, सम्बन्ध । सेवा, परिचर्या । दान ।

उपसद्—(पुं०) [उप√सद्+क] समीपगमन । दान ।

उपसदन—(न०) [उप √सद्+ल्युट्] समीप जाना, समीपवर्त्ती होना । गुरु के चरणों में बैठना, शिष्य बनना; 'तत्रोपसदनं चक्रे द्रोणस्येष्वस्त्रकर्मणि' महा० । पड़ोस । सेवा ।

उपसन्तान—(पुं०) [प्रा० स०] निकट सम्बन्ध । सन्तान ।

उपसन्धान—(न०) [उप—सम्√धा+ल्युट्] जोड़ना । बढ़ाना ।

उपसंन्यास—(पुं०) [उप—सम्—नि√ अस्+घञ्] रख देना । त्याग देना, छोड़ देना ।

उपसमाधान—(न०) [उप—सम्—आ√धा+ल्युट्] जमा करना, ढेर करना ।

उपसम्पत्ति—(स्त्री०) [उप—सम्√पद्+क्तिन्] पहुँचना । अवस्थांतर में प्रवेश करना ।

उपसम्पन्न—(वि०) [उप—सम्√पद्+क्त] प्राप्त । आया हुआ, आगत । स्वत्वप्राप्त । बलि में मारा हुआ (पशु) । मृत । राँधा हुआ । (न०) मसाला, छौंक, बघार ।

उपसम्भाष—(पुं०), **उपसम्भाषा**–(स्त्री०) [उप—सम्√भाष+घञ्], [उप—सम्√भाष्+अ, टाप्] बातचीत । मैत्रीपूर्ण अनुरोध ।

उपसर—(पुं०) [उप√सृ+अप्] समीप जाना। गौ का प्रथम गर्भ। "गवामुपसरः"।
उपसरण—(न०) [उप√ सृ+ल्युट्] (किसी की ओर) जाना। शरणागत होना।
उपसर्ग—(पुं०) [उप√सृज्+घञ्] भौतिक या दैविक उपद्रव। एक रोग के बीच में उत्पन्न दूसरा गौण रोग; 'क्षीणं हन्त्युश्चोपसर्गाः प्रभूताः'। विपत्ति, संकट। प्रेतबाधा। मृत्यु का पूर्व लक्षण। वह शब्द या अव्यय जो केवल किसी शब्द के पूर्व लगता है और उसमें किसी अर्थ की विशेषता करता है, जैसे अनु, उप, अव आदि।
उपसर्जन—(न०) [उप√सृज्+ल्युट्] उडेलना। दैवी उत्पात। विसर्जन। ग्रहण। कोई व्यक्ति या वस्तु जो दूसरे के अधीन हो।
उपसर्प—(पुं०), **उपसर्पण**–(न०) [उप√ सृप् +घञ्], [उप√सृप्+ल्युट्] समीप जाना।
उपसर्या—(स्त्री०) [उप√सृ+यत्, टाप्] गर्भ धारण करने योग्य ऋतुमती गाय।
उपसुन्द—(पुं०) [प्रा० स०] निकुम्भ का पुत्र और सुन्द का भाई। एक असुर।
उपसूर्यक—(न०) [अत्या० स०,+कन्] सूर्यमण्डल।
उपसृष्ट—(वि०) [उप√सृज+क्त] मिला हुआ, जुड़ा हुआ। आवेशित। सन्तप्त। पीड़ित। ग्रस्त। उपसर्ग से युक्त। (पुं०) राहु-केतु-ग्रसित सूर्य या चन्द्र। (न०) स्त्रीमैथुन, स्त्रीसम्भोग।
उपसेक—(पुं०), **उपसेचन**–(न०) [उप√ सिच्+घञ्], [उप√सिच+ल्युट्] सींचना। उड़ेलना। छिड़कना। पानी से तर करना। गीली चीज, रस।
उपसेचनी—(स्त्री०) [उपसेचन + ङीप्] चमची। कलछी।
उपसेवन—(न०), **उपसेवा**–(स्त्री०) [उप्√ सेव्+ल्युट्][उप√ सेव+अ, टाप्] पूजन, अर्चा। सेवा। (किसी वस्तु का) आदी होना, अभ्यस्त होना। इस्तेमाल करना। उपभोग करना (स्त्री का)।
उपस्कर—(पुं०) [उप√कृ+अप्, सुट्] अंग अर्थात् जिसके विना कोई वस्तु अधूरी रहे। मसाला। सामान, असबाब, उपकरण। गृहस्थी के लिए उपयोगी सामान जैसे बुहारी, सूप, चलनी आदि। आभूषण। कलङ्क, दोष।
उपस्करण—(न०) [उप √कृ+ल्युट्, सुट्] वध, हत्या। संग्रह। परिवर्तन। संशोधन। त्रुटि। कलंक। भूषण। साज।
उपस्कार—(पुं०) [उप√कृ+घञ्, सुट्] परिशिष्ट, न्यूनता-पूरक; 'साकांक्षमनुपस्कारं विष्वग्गति निराकुलं' कि० ११.३८। सजावट। आभूषण। आघात, प्रहार। संग्रह।
उपस्कृत—[उप√कृ+क्त,सुट्]तैयार किया हुआ, बनाया हुआ। संगृहीत। सजाया हुआ, भूषित किया हुआ। न्यूनता की पूर्ति किया हुआ। संशोधित किया हुआ।
उपस्कृति—(स्त्री०) [उप√कृ+क्तिन्, सुट्] भूषण। परिशिष्ट।
उपस्तम्भ—(पुं०), **उपस्तम्भन**–(न०) [उप √स्तम्भ्+घञ्], [उप√स्तम्भ्+ल्युट्] सहारा। उत्साह। सहायता। आधार।
उपस्तरण—(न०) [उप√स्तृ +ल्युट्] फैलाना, बिखेरना। चादर। बिछौना, शय्या। कोई वस्तु जो बिछायी जाय।
उपस्त्री—(स्त्री०) [प्रा० स०] रंडी।
उपस्थ—(पुं०) [उप√स्था+क] गोद। मध्यभाग। गुदा। (न०) स्त्री की योनि। पुरुष का लिङ्ग। कूल्हा। —निग्रह–(पुं०) इन्द्रिय-निग्रह, बंधेज; 'स्नानं मौनोपवासेज्या स्वाध्यायोपस्थनिग्रहाः'। —पत्र,—दल–(पुं०) पीपल का वृक्ष।
उपस्थान—(न०) [उप√स्था+ल्युट्] निकट आना। सामने आना। अभ्यर्थना या पूजा के लिये निकट आना। रहने की जगह, डेरा, बासा। तीर्थ या देवालय। स्मृति, याद-

दाश्त। देवता के सामने खड़ा होकर स्तुति या आराधना करना।

उपस्थापन—(न०) [उप√स्था+णिच्, पुक्+ल्युट्] पास रखना। तैयार करना। स्मृति को नया करना। याददाश्त का ताजा करना। परिचर्या, सेवा। विधान-सभा आदि के सामने कोई प्रस्ताव विचारार्थ उपस्थित करना। किसी अधिकारी के सामने कोई विषय उसकी स्वीकृति प्राप्त करने के लिये रखना (प्रेजेंटेशन)।

उपस्थायक—(पुं०) [उप√स्था+ण्वुल्] नौकर, भृत्य।

उपस्थिति—(वि०) [उप√स्था+क्तिन्] निकटता। विद्यमानता। प्राप्त करना। पूरा करना। स्मृति। सेवा।

उपस्नेह—(पुं०) [उप√स्निह्+ घञ्] आर्द्र होना, गीला होना। उपलेप। स्नेह (चिकनाई) युक्त अन्न-रस।

उपस्पर्श—(पुं०), **उपस्पर्शन** –(न०) [उप√ स्पृश्+घञ्], [उप√स्पृश्+ल्युट्] स्पर्श करना, छूना। संसर्ग होना। स्नान। कुल्ला करना। मुँह साफ करना। आचमन करना।

उपस्मृति—(स्त्री०) [प्रा० स०] धर्मशास्त्र के छोटे ग्रन्थ। इनकी संख्या १८ है।

उपस्रवण—(न०) [उप√स्रु+ल्युट्] रजस्वला धर्म। वहाव।

उपस्वत्व—(न०) [प्रा० स०] राजस्व। लाभ, जो भूमि की आय से अथवा पूंजी से होता है।

उपस्वेद—(पुं०) [उप√स्विद्+ घञ्] पसीना। वाष्प। आर्द्रता, तरी।

उपहत—(वि०) [उप√हन्+क्त] आहत, घायल। हराया हुआ। नष्ट किया हुआ; 'कथमत्रापि दैवोपहता वयम्' मु० २। विक्कारित। विगाड़ा हुआ। अपवित्र किया हुआ। —आत्मन् (उपहतात्मन्)–(वि०) बड़ाया हुआ, उद्विग्न-चित्त। —दृश्–(वि०) चौंधियाया हुआ। अंधा। —धी–(वि०) मूढ़।

उपहतक—(वि०) [उपहत+कन्] अभागा, वदकिस्मत।

उपहति—(स्त्री०) [उप√हन्+ क्तिन्] प्रहार, चोट। वध, हत्या।

उपहत्या—(स्त्री०) [प्रा० स०] आँखों का चौंधियाना। चकाचौंध।

उपहरण—(न०) [उप√हृ+ल्युट्] लाना, जाकर लाना। ग्रहण करना, पकड़ना। नजर करना, भेंट देना। वलिपशु चढ़ाना। भोजन परोसना या बाँटना।

उपहसित—(वि०) [उप√हस्+क्त] चिढ़ाया हुआ, मजाक उड़ाया हुआ। (न०) कटाक्ष-युक्त हँसी।

उपहस्तिका—(स्त्री०) [अत्या० स०,+कन्, टाप्, इत्व] वटुआ जिसमें पान का सामान रहता है; 'उपहस्तिकायास्ताम्वूलं कर्पूरसहितमुद्धृत्य' दश०।

उपहार—(पुं०) [उप√हृ +घञ्] भेंट, सौगात। दान। नैवेद्य। दक्षिणा। सम्मान। लड़ाई का हर्जाना। मेहमानों को बाँटा हुआ भोजन।

उपहालक—(पुं०) कुन्तल देश का नाम।

उपहास—(पुं०) [उप√हस्+घञ्] हँसी, ठट्ठा, दिल्लगी। निन्दा, वुराई। —आस्पद (उपहासास्पद)–पात्र–(न०) हँसने, खिल्ली उड़ाने योग्य। उपहास्य।

उपहासक—(वि०) [उप√हस्+ण्वुल्] दूसरों की दिल्लगी उड़ाने वाला। (पुं०) मसखरा।

उपहास्य—(वि०) [उप√हस्+ण्यत्] उपहास के योग्य।

उपहित—(वि०) [उप√धा+क्त] ऊपर, नीचे या पास रखा हुआ। युक्त, सहित। उपाधियुक्त। दत्त। गृहीत। कुछ अच्छा।

उपहूति—(स्त्री०) [उप√ह्वे +क्तिन्] आह्वान, वुलौआ।

उपह्वर—(पुं०) [उप√ह्वृ+घ] सामीप्य। एकान्त स्थल। उतार।

उपह्वान—(न०) [उप√ह्वे+ल्युट्] बुलाना। मन्त्रों से आह्वान करना।

उपांशु—(अव्य०) [उपगता अंशवो यत्र ब० स०] मन्द स्वर से, धीमी आवाज से। चुपके चुपके। (पुं०) मंत्र जपने की एक विधि, ऐसे जपना जिससे अन्य कोई जाप्य मंत्र को सुन न सके।

उपाकरण—(न०) [उप—आ√कृ+ल्युट्] योजना, उपक्रम, तैयारी, अनुष्ठान। यज्ञ में वेदपाठ। यज्ञीय पशु का संस्कार विशेष।

उपाकर्मन्—(न०) [उप—आ√कृ+मनिन्] उपक्रम। आरम्भ। श्रावणी कर्म, श्रावणी पूर्णिमा को किया जाने वाला एक संस्कार।

उपाकृत—(वि०) [उप—आ√कृ+क्त] समीप लाया हुआ। बलिदान किया हुआ। आरम्भ किया हुआ।

उपाक्षम्—(अव्य०) [अक्ष्णः समीपे इति विग्रहे अव्य० स०] नेत्रों के सामने, विद्यमानता में।

उपाख्यान, उपाख्यानक—(न०) [उप—आ√ख्या+ल्युट्], [उपाख्यान+कन्] पुरानी कथा, पुराना वृत्तान्त। किसी कथा के अन्तर्गत कोई अन्य कथा।

उपागम—(पुं०) [उप—आ√गम्+अप्] समीप आगमन, पहुँचना। घटित होना। प्रतिज्ञा, इकरार। स्वीकृति।

उपाग्र—(न०) [प्रा० स०] छोर के पास का भाग। गौण अवयव।

उपाग्रहण—(न०) [उप—आ√ग्रह+ल्युट्] संस्कारपूर्वक वेदाध्ययन का आरंभ करना। वेदाध्ययन का अधिकारी होने के पीछे वेदाध्ययन करना।

उपाङ्ग—(न०) [प्रा० स०] छोटा अंग। अंग का विभाग। पूरक, सहायक वस्तु। वेदांग के पूरक विषय—पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र। टीका। भालांकित पादुका-चिह्न। ढोल जैसा एक बाजा।

उपाचार—(पुं०) [उप—आ√चर्+घञ्] स्थान। पद्धति।

उपाजे—(अव्य०) (यह केवल कृ धातु के साथ ही व्यवहृत होता है) सहारे, सहारे से।

उपाञ्जन—(न०) [उप√अञ्ज्+ल्युट्] तेल मलना। लीपना। सफेदी करना।

उपात्त—(वि०) [उप—आ√दा+क्त] लिया हुआ। लब्ध, प्राप्त। अधिकृत। अनुभूत। प्रयुक्त। उल्लिखित। आरब्ध। (पुं०) निर्मद हस्ती।—शस्त्र—(वि०) हथियारबंद।

उपात्यय—(पुं०) [उप—अति√इ+इच्] आज्ञा-उल्लंघन। मर्यादा भङ्ग करना।

उपादान—(न०) [उप—आ√दा+ल्युट्] ग्रहण करना, लेना, प्राप्त करना। वर्णन करना, बखान करना। सम्मिलित करना, शामिल करना। सांसारिक पदार्थों से इन्द्रियों को हटाना। कारण, हेतु। वे पदार्थ जिनसे कोई वस्तु बनी हो। सांख्य की चार आध्यात्मिक तुष्टियों में से एक।

उपाधि—(पुं०) [उप—आ√धा+कि] धोखा। भ्रम। वह जिसके संयोग से कोई पदार्थ और का और दिखलाई पड़े। विशेषता। प्रतिष्ठासूचक पद, पदवी। अपने कुटुम्ब के भरणपोषण में सावधान रहने वाले पुरुष की परिस्थिति। धर्मचिन्ता, कर्त्तव्य का विचार। उत्पात, उपद्रव।

उपाधिक—(वि०) [अत्या० स०] अत्यधिक, नियमित संख्या से अधिक, बेशी, अतिरिक्त।

उपाध्यक्ष—(पुं०) [प्रा० स०] किसी सभा, संस्था, विधान-सभा आदि का वह पदाधिकारी जो अध्यक्ष के सहायक रूप में या उसके अनुपस्थित रहने पर उसके स्थान पर काम करता है (डिप्टी चेयरमैन, डिप्टी स्पीकर)।

उपाध्याय—(पुं०) [उपेत्य अस्मात् अधीयते इति उप—अधि√इ+घञ्] अध्यापक, शिक्षक, गुरु। वेदवेदाङ्ग पढ़ाने वाला।

उपाध्याया, उपाध्यायी—(स्त्री०) [उपाध्याय+टाप्] पढ़ानेवाली अध्यापिका। [उपाध्याय+ङीष्] गुरु की पत्नी।
उपाध्यायानी—(स्त्री०) [उपाध्याय+ङीष्, आनुक्] गुरु की पत्नी।
उपानह्—(स्त्री०) [उप√नह्+क्विप्, दीर्घ] जूता।
उपान्त—(पुं०) [प्रा० स०] किनारा, प्रांत, सिरा 'उपान्तयोर्निष्कुषितं विहङ्गै०' र० ७·५०। आँख की कोर। पड़ोस, सन्निकट। नितम्ब।
उपान्तिक—(वि०) [प्रा० स०] समीपवर्त्ती, पड़ोस का। (न०) पड़ोस, पास, समीप।
उपान्त्य—(वि०) [उपान्त+यत्] अन्तिम के पूर्व का एक। (पुं०) आँख की कोर। (न०) पड़ोस, समीप, निकट।
उपाय—(पुं०) [उप√अय्+घञ्] साधन, युक्ति, तदबीर। युद्ध में शत्रु को धोखा देना। आरम्भ। उद्योग, प्रयत्न। शत्रु को परास्त करने की युक्ति। यथा—साम, दाम, भेद, दण्ड। उपागम। शृंगार के दो साधन। —चतुष्टय-(न०) शत्रु को वश में करने के चार उपाय। साम, दाम, भेद, दण्ड। ०ज्ञ-(वि०) इन चार साधनों का जानकार या इन साधनों का व्यवहार करने में चतुर।—तुरीय—(पुं०) चौथा उपाय अर्थात् दण्ड।
उपायन—(न०) [उप√अय्+ल्युट्] समीपगमन। शिष्य बनना। धर्मानुष्ठान में लगना। भेंट, चढ़ावा; 'तस्योपायनयोग्यानि वस्तूनि सरिताम्पतिः' कु० २.३७।
उपारम्भ—(पुं०) [उप—आ√रभ्+घञ्, नुम्] आरम्भ, प्रारम्भ।
उपार्जन—(न०), उपार्जना—(स्त्री०) उप √अर्ज + ल्युट्] [उप√अर्ज युच्] कमाना। पैदा करना। हासिल करना।
उपार्घ—(वि०) [ब० स०] कम मूल्य का, घटिया।
उपालम्भ—(पुं०), उपालम्भन-(न०) [उप—आ√लभ्+घञ्, नुम्], [उप—आ √लभ्+ल्युट्, नुम्] उलाहना, शिकायत। निन्दा। विलम्ब करना। स्थगित करना।
उपावर्तन—(न०) [उप—आ√वृत्+ल्युट्] लौटा आना। लौट जाना। वापिस आना या जाना। चक्कर खाना, घूमना। समीप आना।
उपावृत्त—(वि०) [उप—आ √ वृत् +क्त] लौटा हुआ। विरत। उचित। चक्कर खाया हुआ। लोटा हुआ। (पुं०) थकावट दूर करने के लिए लोटने वाला घोड़ा।
उपाश्रय—(पुं०) [उप—आ√श्रि+अच्] सहायता प्राप्त करने का साधन, आधार, सहारा। मतवाला हाथी। विश्वास।
उपासक—(पुं०) [उप√आस्+ण्वुल्] उपासना करने वाला। सेवक। भक्त। अनुयायी। शूद्र। भिक्षु से भिन्न बुद्ध का पूजक।
उपासन—(न०), उपासना-(स्त्री०) [उप √आस्+ल्युट्], [उप√आस+युच्] सेवा, परिचर्या; 'उपासनामेत्य पितुः स्म रज्यते' नैष० १.३४। सेवा में उपस्थित रहना। पूजन, सम्मान। ध्यान। गार्हपत्याग्नि।
उपासन—[उप√अस्+ल्युट्] बाण या तीर चलाने का अभ्यास।
उपासा—(स्त्री०) [उप√आस्+अ, टाप्] सेवा, परिचर्या। पूजन। ध्यान।
उपास्तमन—(न०) [उप—अस्तमन प्रा० स०] सूर्यास्त।
उपास्ति—(स्त्री०) [उप√आस्+क्तिन्] चाकरी, सेवा में उपस्थित रहना। पूजन, अर्चन।
उपास्त्र—(न०) [प्रा० स०] गौण अस्त्र, छोटा हथियार।
उपाहार—(पुं०) (प्रा० स०] हलका जलपान।
उपाहित—(वि०) [उप—आ√धा+क्त] स्थापित। आरोपित। सम्बन्धयुक्त। (पुं०) अग्निमय या अग्नि का किया हुआ सर्वनाश।

उपेक्षा—(स्त्री०) [उप√ईक्ष्+अ, टाप्] लापरवाही, उदासीनता । विरक्ति, चित्त का हटना । घृणा, तिरस्कार ।

उपेत—[उप√इ+क्त] समीप आया हुआ । उपस्थित । युक्त, सम्पन्न; 'पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि' श० १.१२ ।

उपेन्द्र—(पुं०) [प्रा० व०] वामन या विष्णु भगवान्, इन्द्र का छोटा भाई ।

उपेय—[उप√इ+यत्] समीप जाने योग्य । पाने योग्य, किसी उपाय से होने योग्य ।

उपोढ—(वि०) [उप√वह्+क्त] संग्रह किया हुआ, जमा किया हुआ, राशीकृत । समीप लाया हुआ । युद्ध के लिये क्रमबद्ध किया हुआ । विवाहित ।

उपोत्तम—(वि०) [अत्या० स०] अन्तिम से पूर्व का एक । (न०) अंतिम स्वर से संलग्न स्वर ।

उपोद्घात—(पुं०) [उप—उद् √ हन् + घञ्] आरम्भ । भूमिका । उदाहरण । किसी के कथन के विपरीत युक्ति । अवसर । माध्यम, द्वारा, जरिया । पृथक्करण ।

उपोत्पादन—(न०) [प्रा० स०] वह गौण उत्पादन (उत्पादित वस्तु) जो किसी अन्य मुख्य वस्तु का निर्माण करते समय अनायास तैयार हो जाय या की जाय (बाइप्राडक्ट) ।

उपोद्वलक—(वि०) [उप—उद्√वल्+ण्वुल्] दृढ़ करने वाला, मजबूत बनाने वाला ।

उपोषण, उपोषित—(न०) [उप√उष् + ल्युट्] [उप√उष्+क्त] उपवास, व्रत, फाँका, कड़ाका ।

उप्ति—(स्त्री०) [√वप्+क्तिन्] बीज बोना ।

√उब्ज्—तु० पर० सक० दबाना, वश में करना । सीधा करना । उब्जति, उब्जिष्यति, औब्जीत् ।

√उभ्, √ उम्भ्—तु० पर० सक० कैद करना । दो को मिलाना । परिपूर्ण करना । ढाँकना । उभति,—उम्भति, ओभिष्यति,—उम्भिष्यति, औभीत् —औम्भीत् ।

उभ—(सर्वनाम) (वि०) [√ उभ् + क] दोनों ।

उभय—(सर्वनाम (वि०) [√ उभ्+अयट्] दोनों ।—चर—(वि०) जल-थल दोनों जगह रहने वाला ।—मुखी—(स्त्री०) गर्भवती ।—विद्या-(स्त्री०) आध्यात्मिक ज्ञान और लौकिक ज्ञान ।—वेतन—(वि०) दोनों ओर से वेतन पाने वाला, दगाबाज । —व्यञ्जन—(वि०) स्त्री और पुरुष दोनों के चिह्न रखने वाला । —सम्भव—(पुं०) दुविधा, भ्रम ।

उभयतस्—(अव्य०) [उभय+तसिल्] दोनों ओर से, दोनों ओर । दोनों दशाओं में । दोनों प्रकार से ।—दत्,—दन्त (उभयतोदत्), (उभयतोदन्त)—(वि०) दाँतों की दुहरी पंक्तियों वाला ।—भागिन् (उभयतोभागिन्)—(पुं०) मित्र और अमित्र दोनों का एक साथ उपकार करने वाला राजा (कौ०) । —मुख (उभयतोमुख)—(वि०) दोनों ओर मुँह या दृष्टि वाला, दुमुँहा ।—मुखी (उभयतोमुखी)—(स्त्री०) ब्याती हुई (गाय) ।

उभयत्र—(अव्य०) [उभय+त्रल्] दोनों जगह । दोनों तरफ । दोनों दशाओं में ।

उभयथा—(अव्य०) [उभय+थाल्] दोनों प्रकार से । दोनों दशाओं में ।

उभयद्युस्, उभयेद्युस्—(अव्य०) [उभय +द्युस्] [उभय+एद्युस्] दोनों दिवस । दोनों पिछले दिनों ।

उम्—(अव्य०) [√उभ्+डुम्] क्रोध, प्रश्न, प्रतिज्ञा, स्वीकारोक्ति, सच्चाई व्यञ्जक अव्यय विशेष ।

उमा—(स्त्री०) [ओः शिवस्य मा लक्ष्मीरिव उं शिवं माति मिमीते वा, उ√मा+क, टाप्] शिव जी की पत्नी, जो हिमालय की पुत्री थी । कान्ति । सौन्दर्य । यश, कीर्ति, निस्त-

ब्धता, शान्ति । रात्रि । हल्दी । सन ।—गुरु, —जनक—(पुं०) हिमालय पर्वत ।—पति-(पुं०) शिव जी ।—सुत—(पुं०) कार्त्तिकेय या गणेश जी ।

उम्बर, उम्बुर (पुं०) [उम्√वृ+अच्, पृषो० साधुः] चौखट की ऊपर वाली लकड़ी ।

√उर्—भ्वा० पर० सक० जाना । ओरति, ओरिष्यति, औरीत् ।

उर—(पुं०) [√उर्+क] भेड़ ।

उरग—(पुं०) [उरस्√गम्+ड, सलोप] [स्त्री०—उरगी] साँप, सर्प । नाग । सीसा । अश्लेषा नक्षत्र । नागकेसर वृक्ष ।—अशन (उरगाशन)—(पुं०) सर्पभक्षक, गरुड़ । मोर । नेवला ।—इन्द्र (उरगेन्द्र,),—राज—(पुं०) वासुकि या शेष का नाम ।—प्रतिसर—(वि०) परिणयाङ्गुलीयक के लिये सर्प रखने वाला ।—भूषण—(पुं०) शिव ।—सारचन्दन—(पुं० न०) एक प्रकार के चन्दन का काष्ठ ।—स्थान—(पुं०) पाताल, जहाँ सर्प रहते हैं ।

उरगा—(स्त्री०) [उरग+टाप्] एक नगरी का नाम ।

उरङ्ग, उरङ्गम—(पुं०) [उरस्√गम्+ड, नि०] [उरस्√गम् + खच्, सलोप, मुम्] सर्प, साँप ।

उरण—(पुं०) [√ऋ+क्यु, उत्व, रपर] [स्त्री०—उरणी] मेढ़ा, मेष, भेड़ा; 'वृकीवोरणमासाद्य मृत्युरादाय गच्छति' महा० । एक दैत्य, जिसे इन्द्र ने मारा था ।

उरणक—(पुं०) [उरण+कन्] मेष । बादल ।

उरणी—(स्त्री०) [उरण +ङीप्] भेड़ी, मेषी ।

उरभ्र—(पुं०) [उरु उत्कटं भ्रमति इति उरु √भ्रम्+ड, पृषो० उलोप] भेड़, मेष ।

उररी—(अव्य०) [√उर्+अरीक् (वा०)] स्वीकारोक्ति, प्रवेश और सम्मति-व्यञ्जक अव्यय ।

उरस्—(पुं०) [√ऋ +असुन्, उत्व, रपर] छाती, वक्षःस्थल ।—क्षत (उरःक्षत)—(न०) छाती का घाव ।—ग्रह,—घात (उरोग्रह) (उरोघात)—(पुं०) फेफड़े का रोग ।—छदस्, —त्राण (उरश्छदस्) (उरस्त्राण)—(न०) छाती की रक्षा के लिये कवच विशेष ।—ज (उरोज,),—भू (उरोभू), उरसिज, उरसिरुह—[सप्तम्या अलुक्] (पुं०) स्त्रियों की छाती, स्तन ।—सूत्रिका (उरःसूत्रिका)—(स्त्री०) मोती का हार जो वक्षःस्थल पर पड़ा है ।—स्थल (उरःस्थल)—(न०) छाती, वक्षःस्थल ।

उरस्य—(वि०) [उरस्+यत्] औरस (सन्तान) । वक्षःस्थल का । सर्वोत्कृष्ट । (पुं०) पुत्र ।

उरसिल, उरस्वत्—(वि०) [उरस्+इलच्] [उरस्+मतुप् मस्य वः] चौड़ी छाती वाला ।

उरी—(अव्य०) [√उर्+ईक् (वा०)] दे० 'उररी' ।

उरु—(वि०) [ऊर्णु+उण्, णुलोप, ह्रस्व] [स्त्री० उरु और उर्वी] विशाल, विस्तृत । लंबा । अत्यधिक, विपुल । बहुमूल्यवान्, बेशकीमती । महान्, श्रेष्ठ ।—कीर्ति—(वि०) प्रसिद्ध, सुपरिचित । —क्रम—(पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधि (वामनावतार की) ।—गाय—(वि०) महान् लोगों से प्रशंसित ।—मार्ग—(पुं०) लंबा मार्ग ।—विक्रम—(वि०) पराक्रमी, बलवान् ।—स्वन—(पुं०) अतिउच्च स्वर, गम्भीर रव ।—हार—(पुं०) मूल्यवान् हार ।

उरुरी—(अव्य०) [√उर्+उरीक्] दे० 'उररी' ।

उर्णनाभ—(पुं०) [उर्णेव सूत्रं नाभौ गर्भेऽस्य ब० स०] मकड़ा ।

उर्णा—(स्त्री०) [√ऊर्णु+ड, ह्रस्व] ऊन । दोनों भौंवों के बीच का केश-मण्डल ।

√उर्व्——भ्वा० पर० सक० मारना । उर्वति । उर्विष्यति, और्वीत् ।

उर्वट——(पुं०) [उरु√अट्+अच्] वछड़ा । वर्ष ।

उर्वरा——(स्त्री०) [उरु√ऋ+अच्, टाप्] उपजाऊ भूमि । (सामान्यतः) भूमि ।

उर्वशी——(स्त्री०) [उरून् महतोऽपि अश्नुते वशीकरोति इति उरु √ अश + क, ङीप्] विषम वासना, उत्कट अभिलाषा । इन्द्र-लोक की एक प्रसिद्ध अप्सरा ।—रमण,—वल्लभ, ——सहाय–(पुं०) पुरूरवा का नाम ।

उर्वारु——(पुं०) [उरु√ऋ+उण्] एक प्रकार की ककड़ी । खरबूजा ।

उर्वी——(स्त्री०) [√ऊर्णु+कु, नलोप, ह्रस्व ङीष्] भूमि । पृथ्वी ; 'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्' र० २.३ ।' मैदान ।—ईश– (उर्वीश),—ईश्वर (उर्वीश्वर) ——धव,—— पति–(पुं०) राजा ।—धर–(पुं०) पर्वत । शेषनाग ।—भृत्–(पुं०) राजा । पहाड़ ।— रुह–(पुं०) वृक्ष, पेड़ ।

√उल्——भ्वा० पर० सक० देना । ओलति, ओलिष्यति, औलीत् ।

उलप——(पुं०) [√वल+कपच्, संप्रसारण] बेल, लता । कोमल तृण ।

उलूक——(पुं०) [√वल्+ऊक, संप्रसारण] उल्लू, घुग्घू । इन्द्र का नाम ।

उलूखल——(न०) [ऊर्ध्वं खम् उलूखम्, पृषो० √ला+क] ओखली । खल । गूलर की लकड़ी का डंडा । गुग्गुल । कान का एक गहना ।

उलूखलक——(न०) [उलूखल+कन्] खल, इमामदस्ता ।

उलूखलिक——(वि०) [उलूखल+ठन्—इक] ऊखल में कूटा हुआ ।

उलूत——(पुं०) [√उल्+ऊतच्] अजगर सर्प ।

उलूपी——(स्त्री०) एक नाग-कुमारी का नाम, जो अर्जुन को व्याही थी । इस के गर्भ से बभ्रुवाहन नामक एक वीर उत्पन्न हुआ था, जिसने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ की दिग्विजय यात्रा में अर्जुन को परास्त किया था ।

उल्का——(स्त्री०) [√उष्+क, नि० षस्य लः] प्रकाश, तेज । लुक, लुआठा, आकाश से टूटकर गिरा हुआ तारा । मशाल । अग्नि ।—धारिन्–(वि०) मशालची ।— पात–(पुं०) आकाश से जलते पिंड का टूट कर गिरना ।—मुख–(पुं०) प्रेतों का एक भेद । अगिया वैताल । गीदड़ ।

उल्कुषी——(स्त्री०) [उल्√कुष+क, ङीप्] उल्का । मशाल ।

उल्ब, उल्व–(न०) [√उच्+व (ब) नु, चस्य लत्वम्] भग, योनि । गर्भाशय ।

उल्बण, उल्वण–(वि०) [उत्√बण(वण) +अच्, पृषो० साधुः] गाढ़ा । अधिक, विपुल । दृढ़, मजबूत । प्रादुर्भूत । प्रत्यक्ष; 'तस्यासीदुल्बणो मार्गः' र० ४.३३ ।

उल्मुक——(पुं०) [√उष+मुक्, षस्य लः] अधजली लकड़ी । मशाल ।

उल्लङ्घन——(न०) [उद्√लङ्घ+ल्युट्] लाँघना, डाँकना । अतिक्रमण । विरुद्धाचरण ।

उल्लल——(वि०) [उद्√लल्+अच्] हिलने-डुलने वाला । घने बालों वाला ।

उल्लसन——(न०) [उद्√लस्+ल्युट्] हर्ष । रोमाञ्च ।

उल्लसित——(वि०) [उद्√लस्+क्त] चमकीला, दमकदार । प्रसन्न, आनन्दित ।

उल्लाघ——(वि०) [उद्√लाघ्+क्त, नि० साधुः] रोग से मुक्त । निपुण, पटु । विशुद्ध । हर्षित, प्रसन्न ।

उल्लाप——(पुं०) [उद्√लप्+घञ्] वाणी, शब्द । अपमानकारक शब्द, आक्षेपयुक्त भाषण; 'खलोल्लापाः सोढाः' भ० । तार

स्वर से पुकारना या बुलाना। बीमारी या भावावेश के कारण परिवर्तित कण्ठस्वर। सङ्केत, इशारा।

उल्लाप्य—(न०) [उद्√लप्+णिच्+यत्] एक प्रकार का नाटक। एक तरह का गीत।

उल्लास—(पुं०) [उद्√लस्+घञ्] हर्ष, आनन्द। चमक, आभा, दीप्ति। एक अलंकार, जिसमें एक गुण या दोष से दूसरे के गुण या दोष दिखलाये जाते हैं; इसके चार भेद माने गये हैं। ग्रन्थ का एक भाग, पर्व, काण्ड।

उल्लासन—(न०) [उद्√लस्+णिच्+ल्युट्] दीप्ति, चमक, आभा। नचाना या कुदाना।

उल्लिङ्गित—(वि०) [उद्√लिङ्ग्+क्त] प्रसिद्ध, प्रख्यात, मशहूर। परिचित।

उल्लीढ—(वि०) [उद्√लिह्+क्त] चिकनाया हुआ। मला हुआ। रगड़ा हुआ।

उल्लुञ्चन—(न०) [उद्√लुञ्च्+ल्युट्] तोड़ना। बाल को खींचना या उखाड़ना।

उल्लुण्ठन—(न०), **उल्लुण्ठा**—(स्त्री०) [उद्√लुण्ठ्+ल्युट्] [उद्√लुण्ठ्+अ, टाप्] श्लेषवाक्य, व्यङ्ग्यवाक्य। व्यङ्ग्योक्ति।

उल्लेख—(पुं०) [उद्√लिख्+घञ्]वर्णन, चर्चा, जिक्र। लिखना, लेख। एक काव्यालङ्कार, इसमें एक ही वस्तु का अनेक रूपों में दिखलाई पड़ना वर्णन किया जाता है। खुरचना, छीलना।

उल्लेखन—(न०) [उद्√लिख्+ल्युट्] खुरचना, छीलना। खुदाई। वमन, छर्दि। वर्णन, चर्चा। लेख, चित्रण।

उल्लोच—(पुं०) [उद्√लोच+घञ्] राजछत्र। मण्डप। चन्द्रातप, चँदोवा। शामियाना।

उल्लोल—(पुं०) [उद्√लोड्+घञ्, डस्य लत्वम्] बड़ी लहर, महा-तरङ्ग।

उल्व, उल्वण—दे० "उल्ब, उल्बण"।

उशनस्—(पुं०) [√वश+कनस्] शुक्र का नाम, शुक्र-ग्रह का अधिष्ठातृ-देवता; वैदिक साहित्य में इनको कवि की उपाधि प्राप्त है, इनके नाम से एक स्मृति भी है।

उशी—(स्त्री०) [√वश+ई, संप्रसारण] इच्छा, अभिलाषा।

उशीर, उषीर—(पुं० न०) **उशीरक, उषीरक**—(न०) [√वश+ईरन्, कित्, संप्रसारण] [√उष+कीरच्] [उशीर वा उषीर+कन्] खस, वीरणमूल।

√उष्—भ्वा० पर० सक० जलाना। दण्ड देना। मार डालना। ओषति, ओषिष्यति, औषीत्।

उष—(पुं०) [√उष्+क] भोर, तड़का। कामुक पुरुष। गुग्गुल। खारी मिट्टी। लोना नमक।

उषण—(न०) [√उष+क्युन्] काली मिर्च। अदरक, आदी। सोंठ। पिप्पलीमूल।

उषप—(पुं०) [√उष्+कपन्] अग्नि। सूर्य।

उषस्—(स्त्री०) [√उष्+असि] तड़का, भोर। प्रातःकाल का प्रकाश। प्रातः सायं सन्ध्याओं की अधिष्ठात्री देवी।—**बुध**—(**उषर्बुध**) (पुं०) अग्नि। चित्रक वृक्ष। बच्चा। (वि०) उषःकाल में उठने वाला।

उषसी—(स्त्री०) [उष√सी+क—ङीप्] दिन का अवसान, सायंकाल।

उषा—(स्त्री०) [√उष+क—टाप्] तड़का, भोर। प्रातःकालीन प्रकाश। झुट-पुटा। लुनियाही भूमि। वटलोई। बाणासुर की पुत्री का नाम।—**कल**—(पुं०) मुर्गा।—**पति,—रमण**—(पुं०) अनिरुद्ध का नाम।

उषित—(वि०) [√वस् वा√उष्+क्त] वसा हुआ। जला हुआ।

उष्ट्र—(पुं०) [√उष्+ष्ट्रन्, कित्] ऊँट। भैंसा। साँड़, रथ। बैलगाड़ी। [स्त्री०—**उष्ट्री**]।

उष्ट्रिका—(स्त्री०) [उष्ट्र+कन्, टाप्, इत्व] ऊँटनी। मिट्टी का बना ऊँट की शक्ल का मदिरापात्र।

उष्ण—(वि०) [√उष्+नक्] गरम। पैना, तीक्ष्ण। तासीर में गरम। तेज, फुर्तीला। हैजा सम्बन्धी। (पुं०) गर्मी, ताप। ग्रीष्मऋतु। सूर्यातप, घाम। (पुं०) प्याज। एक नरक।—**अंशु** (उष्णांशु)—**कर**,—**गु**,—**दीधिति**,—**रश्मि**,—**रुचि**—(पुं०) सूर्य।—**अभिगम** (उष्णाभिगम),—**आगम** (उष्णागम),—**उपगम** (उष्णोपगम)-(पुं०) ग्रीष्मऋतु।—**उदक** (उष्णोदक),-(न०) गर्म जल, ताता पानी।—**काल**,—**ग**-(पुं०) ग्रीष्मऋतु।—**वाष्प**-(पुं०) आँसू। गर्म भाफ।—**वारण**-(पुं०) (न०) छाता, छत्र; 'यदर्यमम्भोजमिवोष्णवारणम्' कु० ५.५।

उष्णक—(वि०) [उष्ण+कन्] तीक्ष्ण। क्रियाशील। ज्वर-पीड़ित। गरमी पहुँचाने वाला। झुका हुआ, प्रणत। (पुं०) ज्वर। ग्रीष्मऋतु, गर्मी का मौसम।

उष्णालु—(वि०) [उष्ण+आलुच्] गरमी न सह सकने वाला। गरमी से व्याकुल, घमाया हुआ।

उष्णिका—(स्त्री०) [अल्पमन्नम् इत्यर्थे अल्प+कन्, नि० उष्ण आदेश, टाप्, इत्व] माँड़।

उष्णिमन्—(पुं०) [उष्ण+इमनिच्] गर्मी।

उष्णीष—(पुं०) [उष्ण√ईष्+क, शक० पररूप] फेंटा, साफा। पगड़ी। मकट। पहचान का चिह्न।

उष्णीषिन्—(वि०) [उष्णीष+इनि] मुकुटधारी। (पुं०) शिव का नाम।

उष्म, उष्मक-(पुं०) [√उष्+मक्] [उष्म+कन्] गर्मी। ग्रीष्मऋतु। क्रोध। उत्सुकता, उत्कण्ठा।—**अन्वित** (उष्मान्वित)-(वि०) क्रुद्ध, क्रोध में भरा।—**भास्**-(पुं०) सूर्य।—**स्वेद**-(पुं०) वफारा, भाप से स्नान।

उष्मन्—(पुं०) [√उष्+मनिन्] गर्मी, गर्माहट। भाफ, वाष्प। ग्रीष्मऋतु। उत्सुकता। श्, ष्, स् और ह् ये अक्षर व्याकरण में उष्मन् माने गये हैं।

उस्र—(पुं०) [√वस्+रक्, संप्रसारण] किरण। साँड़। देवता।

उस्रा, उस्रि-(स्त्री०) [उस्र+टाप्] प्रातःकाल, भोर, तड़का। प्रकाश। गौ।—**क** (उस्रिक)-(पुं०) नाटा बैल।

√उह्,—भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना। घायल करना। नाश करना। ओहति, ओहिष्यति, औहीत्।

उह, उहह-(अव्य०) बुलाने के अर्थ में प्रयोग किया जाने वाला अव्यय।

उह्ल—(पुं०) [√वह्+रक्] साँड़।

ऊ

ऊ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का छठा अक्षर। उच्चारण-स्थान ओंठ है। दो मात्राओं से दीर्घ और तीन मात्राओं से यह प्रयत्न होता है। अनुनासिक-भेद से इसके भी दो-दो भेद हैं। (पुं०) [√अव्+क्विप्, ऊठ्] शिव का नाम। चन्द्रमा। (अव्य०) [√वेञ्+क्विप्] आरम्भसूचक अव्यय। आह्वान, अनुकंपा और रक्षा-व्यञ्जक अव्यय।

ऊढ—(वि०) [√वह+क्त] ढोया गया। लिया गया। विवाहित। (पुं०) विवाहित पुरुष।

ऊढा—(स्त्री०) [ऊढ—टाप्] लड़की जिसका विवाह हो चुका हो।

ऊढि—(स्त्री०) [√वह्+क्तिन्] विवाह, शादी।

ऊत—(वि०) [√वें+क्त] बुना हुआ। सीया हुआ।

ऊति—(स्त्री०) [√वे+क्तिन्] बुनना। सीना। [√अव्+क्तिन्, ऊठ्] रक्षण। सहायता। क्रीड़ा। कृपा। इच्छा।

ऊधस्—(न०) [√उन्द्+असुन्, ऊध आदेश] गौ या भैंस आदि का ऐन, वह थैली जिसमें दूध रहता है।

ऊधस्य—(न०) [उधस्+यत्] दूध, क्षीर; ऊधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुम्' र० २.६६।

√ऊन्—चु० पर० सक०, कम करना, घटाना, ऊनयति, ऊनयिष्यति, औननत्।

ऊन—(वि०) [√ऊन्+अच् वा√अव्+नक्, ऊठ्] कम। अधूरा। (संख्या, आकार या अंश में) अपकृष्ट, घटिया। हीन। निर्वल।

ऊम्—(अव्य ०) [√ऊय+मुक्] प्रश्न, क्रोध, भर्त्सना, गर्व, ईर्ष्या व्यञ्जक अव्यय।

√ऊय्—भ्वा० आत्म० सक० वुनना। सीना। ऊयते, ऊयिष्यते, औयिष्ट।

ऊररी—(अव्य०) [√ऊय्+ररीक्] विस्तार से। अंगीकार, हाँ।

ऊरव्य—(पुं०) [ऊरु+यत्] [स्त्री०—**ऊरव्या**] वैश्य, जिसकी उत्पत्ति वेद में ब्रह्मा की जंघा से वतलायी गयी है।

ऊरु—(पुं०) [√ऊर्णु+कु: नुलोप] जाँघ, रान।—**अष्ठीव (ऊर्वष्ठीव)**-(न०) जाँघ और घुटना।—**उद्भव (ऊरूद्भव)**-(वि०) जाँघ से निकला या उत्पन्न हुआ।—**ज,—जन्मन्,—सम्भव**-(वि०) दे० 'ऊरुद्भव।' (पुं०) वैश्य।—**पर्वन्**-(पुं० न०) घुटना। —**फलक**-(न०) जाँघ की हड्डी, पुट्ठा या कूल्हे की हड्डी।

ऊरुदघ्न—(वि०) [ऊरु+दघ्नच्] घुटने तक या घुटने तक ऊँचा या घुटने के वरावर गहरा।

ऊरुद्वय—(वि०) [ऊरु+द्वयसच्] दे० 'ऊरुदघ्न'।

ऊरुमात्र—(वि०) [ऊरु+मात्रच्] दे० 'ऊरुदघ्न'।

ऊरुरी—(अव्य०) [√ऊय+रुरीक्] दे० 'ऊररी'।

√ ऊर्ज्—चु० उभ० अक० जीना। वलवान् होना। ऊर्जयति-ते, ऊर्जयिष्यति-ते, औजिजत्-त।

ऊर्ज्—(स्त्री०) [√ऊर्ज्+क्विप्] शक्ति, वल। रस। भोज्य पदार्थ।

ऊर्ज—(पुं०) [√ऊर्ज्+णिच्+अच्] कार्त्तिक मास का नाम। स्फूर्ति। वल, ताकत। उत्पन्न करने की शक्ति। जीवन। प्राण।

ऊर्जस्—(न०) [√ऊर्ज्+असुन्] वल, शक्ति। भोजन।

ऊर्जस्वत्—वि०) [ऊर्जस्+मतुप्] रसीला। जिसमें भोज्य पदार्थ का अंश अत्यधिक हो। शक्तिशाली, वलवान्।

ऊर्जस्वल—(वि०) [ऊर्जस्+वलच्] वलवान्। तेजस्वी। श्रेष्ठ।

ऊर्जस्विन्—(वि०) [ऊर्जस्+विन्] दे० 'ऊर्जस्वल'।

ऊर्जा—(स्त्री०) [√ऊर्ज्+ अ—टाप्] भोजन। शक्ति। उत्साह। वढ़ती या वृद्धि। दक्ष की एक कन्या।

ऊर्जित—(वि०) [√ऊर्ज्+क्त] वलवान्, शक्तिसम्पन्न। उत्कृष्ट, श्रेष्ठ। समृद्ध। तेजस्वी। गंभीर। (न०) शक्ति, वलवूता। पौरुष, फुर्त्ती।

ऊर्ण—(न०) [√ऊर्णु+ड] ऊन। [ऊर्ण+अच्] ऊनी कपड़ा।—**नाभ,—नाभि,—पट**-(पुं०) मकड़ा।—**म्रद**-(वि०) ऊन की तरह कोमल।

ऊर्णा—(स्त्री०) [ऊर्ण+टाप्] ऊन, पश्म। भौंओं के मध्य का केशमण्डल।—**पिण्ड**-(पुं०) ऊन का गोला या पिंडी।

ऊर्णायु—(वि०) [ऊर्णा+युस्] ऊनी। (पुं०) मेष, मेढ़ा। मकड़ी। ऊनी कंवल।

√उर्णु—अ० उभ० सक० ढाँकना। उर्णोति—ऊर्णुते, ऊर्णुविष्यति-ते,—ऊर्णविष्यति-ते, और्णावीत्— और्णुवीत्—और्णवीत्—और्णविष्ट।

ऊर्ध्व—(वि०) [उद्√हा+ड पृषो० ऊर् आदेश] सीधा । उठा हुआ । उच्च । खड़ा हुआ (बैठे हुए का उलटा) । टूटा हुआ । (न०) ऊँचाई । ठीक ऊपर की दिशा । (अव्य०) ऊपर । ऊपर की ओर । आगे । बाद ।—**कच**,—**केश**-(वि०) खड़े बालों वाला । (पुं०) केतु का नाम ।—**कर्मन्**-(न०)-**क्रिया**-(स्त्री०) ऊपर की ओर की गति । उच्च स्थान प्राप्त करने के लिये किया गया कर्म । (पुं०) विष्णु का नाम ।—**काय**-(पुं० न०) शरीर का ऊपर का भाग ।—**ग**—**गामिन्**-(वि०) ऊपर की ओर जाने वाला । पुण्यात्मा ।—**गति**- (स्त्री०)—**गम**, (पुं०),—**गमन**-(न०) उच्चगति, ऊँची चाल । चढ़ाई । स्वर्ग-गमन ।—**चरण**,—**पाद**-(वि०) जिसकी टाँगें ऊपर की ओर उठी हों, सिर के बल खड़ा । (पुं०) शरभ नामक एक पौराणिक जंतु ।—**जानु**,—**ज्ञ**,—**ज्ञु**-(वि०) उकड़ूँ बैठा हुआ, घुटनों के बल बैठा हुआ ।—**दृष्टि**,—**नेत्र**-(वि०) ऊपर देखने वाला । (अलं०) उच्चाभिलाषी ।—**दृष्टि**-(स्त्री०) योगदर्शन के अनुसार दृष्टि को भौंओं के मध्यभाग में टिकाने की क्रिया ।—**देह**—(पुं०) मृत्यु के बाद मिलने वाला शरीर ।—**पातन** -(न०) (जैसे पारे का) शोधना, परिष्कार ।—**पात्र**-(न०) यज्ञीय पात्र ।—**मुख**-(वि०) ऊपर को मुख किये हुए ।—**मौहूर्तिक**-(वि०) कुछ देर बाद होने वाला ।—**रेतस्**-(वि०) अपने वीर्य को कभी न गिराने वाला, स्त्री-सम्भोग कभी न करने वाला । (पुं०) शिव । भीष्म ।—**लोक**-(पुं०) ऊपर का लोक, स्वर्ग ।—**वर्त्मन्**-(पुं०) अन्तरिक्ष ।—**वात**, —**वायु**-(पुं०) शरीर के ऊपरी भाग में रहने वाला पवन ।—**शायिन्**-(वि०) चित सोने वाला । (पुं०) शिव का नाम ।—**शोधन**-(न०) वमन करने की क्रिया ।—**श्वास**-(पुं०) ऊपर को चढ़ने वाली साँस । मृत्यु को प्राप्त होना ।—**स्थिति**-(स्त्री०) सीधे खड़ा होना । अश्व-शिक्षण । घोड़े की पीठ । उत्थान ।—**स्रोतस्**-दे० 'ऊर्ध्वरेतस्' ।

ऊर्मि—(पुं० स्त्री०) [√ऋ+मि, ऊर् आदेश] लहर, तरङ्ग; 'वेत्रवत्याश्चलोर्मि' मे० २४। धार, प्रवाह । प्रकाश । गति । वेग । कपड़े की शिकन । प्राण, चित्त और शरीर के ये छः क्लेश—भूख, प्यास, लोभ, मोह, सर्दी और गर्मी (न्या०) । ६ की संख्या । व्यक्त या प्रकट होना । इच्छा । पंक्ति, रेखा । दुःख । बेचैनी । चिन्ता ।—**मालिन्**—(पुं०) तरंगमालाओं से विभूषित । (पुं०) समुद्र ।

ऊर्मिका—(स्त्री०) [ऊर्मि + कन्—टाप्] तरङ्ग । अँगूठी । खेद, शोक (जो किसी वस्तु के खोने से उत्पन्न हो) । शहद की मक्खी या भौंरे का गुंजार । वस्त्र की शिकन ।

ऊर्मिला—(स्त्री०) लक्ष्मण की पत्नी ।

ऊर्व—(वि०) विस्तृत, विशाल । (पुं०) बड़वानल । झील । ताल । समुद्र । पशुशाला । मेघ । पितरों का एक वर्ग ।

ऊर्वरा—(स्त्री०) [=उर्वरा, पृषो० साधुः] उपजाऊ भूमि ।

ऊलपिन्—(न०) सूँस, शिशुमार ।

√ऊष्—भ्वा० पर० अक० रोगी होना । ऊषति, ऊषिष्यति, औषीत् ।

ऊष—(पुं०) [√ऊष्+क] लुनही जमीन । क्षार । दरार । कान के भीतर का पोला भाग । मलयगिरि । प्रातःकाल ।

ऊषक—(न०) [ऊष्+कन्] प्रभात, तड़का । भोर ।

ऊषण—(न०) **ऊषणा**-(स्त्री०) [√ऊष्+ल्युट्] [ऊषण+टाप्] काली मिर्च, अदरक, आदी ।

ऊषर—(वि०) [ऊष√रा+क] नमक या

लोना मिला हुआ, खारा। (पुं० न०) ऊसर भूखण्ड जो लुनहा हो।

ऊषवत्—[ऊष+मतुप्] दे० 'ऊपर'।

ऊष्म—(पुं०) [ऊष्+मक्] गर्मी। ग्रीष्मऋतु।

ऊष्मण, ऊष्मण्य—(वि०) [ऊष्म+न] [ऊष्मन्+यत्] गर्म।

ऊष्मन्—(पुं०) [√ऊष्+मनिन्] गर्मी। ग्रीष्मऋतु। भाप। उत्ताप, क्रोध। उग्रता। श्, ष्, स् और ह्।—**उपगम (ऊष्मोपगम)**-(पुं०) ग्रीष्मऋतु का आगमन।—**प**-(पुं०) अग्नि। पितृगण विशेष।

√ऊह्—भ्वा० आत्म० सक० अक० टीपना। चिह्नित करना। आलोचना करना। अनुमान करना, अटकल लगाना। समझना। पहचानना। आशा करना। वहस करना। विचार करना। ऊहते, ऊहिष्यते, औहिष्ट।

ऊह—(पुं०) [√ऊह्+घञ्] अनुमान, अटकल। परीक्षण और निश्चय-करण। समझ। युक्ति। अनुक्त पद की अध्याहार द्वारा पूर्ति। परिवर्तन। सुधार।—**अपोह (ऊहापोह)**—(पुं०) तर्क-वितर्क, सोच-विचार।

ऊहन—(न०) [√ऊह+ल्युट्] परिवर्तन। सुधार। तर्क-वितर्क करना। विचारना।

ऊहनी—(स्त्री०) [ऊहन+ङीप्] झाड़ू, बुहारी।

ऊहवत्—(वि०) [ऊह+मतुप्—व] बुद्धिमान्। तीव्र।

ऊहा—(स्त्री०) [√ऊह्+अ, टाप्] अध्याहार, वाक्य में त्रुटि को पूरा करना।

ऊहिन्—(वि०) [ऊह+इनि] कौन और क्या की वहस कर अटकल लगाने वाला।

ऊहिनी—(स्त्री०) [√ऊह+इन्—ङीप्] समूह, समुदाय। सेना, फौज।

ऋ

ऋ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का सातवाँ वर्ण। यह भी एक स्वर है और इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत के अनुसार इसके तीन भेद हैं। इन भेदों में भी उदात्त, अनुदात्त और प्लुत के अनुसार प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं। फिर इन नौ भेदों में भी प्रत्येक के अनुनासिक और निरनुनासिक दो-दो भेद हैं। इस प्रकार सब मिलाकर ऋ के अठारह भेद हैं। (अव्य०) आह्वान, उपहास और निन्दाव्यञ्जक अव्यय विशेष। (स्त्री०)देवमाता, अदिति। उपहास। निंदा।

√ऋ—भ्वा०, जु०, स्वा० पर० सक० जाना। हिलाना। प्राप्त करना, पहुँचना। मिलना। उत्तेजित करना। घायल करना। आक्रमण करना। फेंकना। रोपना। रखना। लगाना। देना। हवाले करना, सौंपना। भ्वा० ऋच्छति, अरिष्यति, आर्षीत्। जु० इयर्ति, अरिष्यति, आरत्। स्वा० ऋणोति, अरिष्यति, आर्षीत्।

ऋक्ण—(वि०) [√व्रश्च्+क्त, पृषो० वलोप] आहत, क्षत। छिन्न, कटा हुआ।

ऋक्थ—(न०) [√ऋच्+थक्] सम्पत्ति। विशेषकर मरने पर छोड़ी हुई सम्पत्ति, सामान। सुवर्ण, सोना।—**ग्रहण**-(न०) सम्पत्ति का प्राप्त करना।—**ग्राह**-(पुं०) वारिस, उत्तराधिकारी।—**भाग**-(पुं०) बटवारा, बाँट। हिस्सा, भाग। पैतृक सम्पत्ति।—**भागिन्,—हर,—हारिन्**-(पुं०) दे० 'ऋक्थग्राह'।

ऋक्ष—(वि०) [√ऋष्+स, कित्] गंजा। (पुं०)रीछ, भालू। रैवतक पर्वत। (न० पुं०) नक्षत्र, तारा। राशि। राशिचक्र की एक राशि।—**चक्र**-(न०) राशिचक्र।—**ईश (ऋक्षेश)**,—**नाथ**-(पुं०) चन्द्रमा।—**नेमि**-(पुं०) विष्णु का नाम।—**राज्**—**राज**-(पुं०) चन्द्रमा। जाम्ववान्, रीछों का राजा।—**हरीश्वर**-(पुं०) रीछों और लंगूरों का राजा।

ऋक्षा—(स्त्री०) [ऋक्ष+टाप्] उत्तर दिशा।

ऋक्षी—(स्त्री०) [ऋक्ष+ङीष्] मादा भालू।

ऋक्षर—(पुं०) [√ऋष्+क्सरन्] ऋत्विज। काँटा। वर्षा।

ऋक्षवत्—(पुं०) [ऋक्ष+मतुप्—व] नर्मदा नदी का समीपवर्त्ती एक पर्वत।

√ऋच्—तु० पर० सक० अक० प्रशंसा करना। ढकना, पर्दा डालना। चमकना। ऋचति, अर्चिष्य, ति आर्चीत्।

ऋच्—(स्त्री०) [ऋच्यते स्तूयते अनया इत्यर्थे √ऋच्+क्विप्] ऋचा। ऋग्वेद का मन्त्र। ऋग्वेद। चमक, दमक। प्रशंसा। पूजन। —**विधान** (**ऋग्विधान**)—(न०) कतिपय वैदिक कर्मों का विधान; जो ऋग्वेद के मंत्रों को पढ़कर किये जाते हैं।—**वेद** (**ऋग्वेद**)—(पुं०) चार वेदों में से एक जो पहला और प्रधान माना जाता है।—**संहिता** (**ऋक्संहिता**)—(स्त्री०) ऋग्वेद के मंत्रों का संग्रह।

ऋचीक—(पुं०) [√ऋच्+ईकक्] भृगु-वंशीय एक ऋषि। यह जमदग्नि के पिता थे।

ऋचीष—[√ऋच्+ईषन्] दे० 'ऋजीष'।

√ऋच्छ्—तु० पर० अक० कड़ा होना, सख्त होना। क्षमता का न रहना। सक० जाना। ऋच्छति, अर्च्छिष्यति आर्च्छीत।

ऋच्छका—(स्त्री०) इच्छा, कामना।

ऋच्छरा—(स्त्री०) [√ ऋच्छ्+अर, टाप्] वेश्या। बंधन।

√ऋज्—भ्वा० आत्म० सक० अक० जाना। प्राप्त करना। उपार्जन करना। खड़ा रहना या दृढ़ होना। स्वस्थ होना या मज़बूत होना। अर्जते, अर्जिष्यते, आर्जिष्ट।

ऋजीष—(न०) [√अर्ज्+ईषन्, ऋजा-देश] कड़ाही। एक नरक। नीरस सोमलता का चूर्ण। धन। सोमलता का रस।

ऋजु, ऋजुक—(वि०) [√ऋज्+कु, ऋजु+कन्] [स्त्री०—**ऋजु** या **ऋज्वी**] सीधा; 'उमां स पश्यति ऋजुनैव चक्षुषा' कु० ५.३२। ईमानदार। सच्चा। अनुकूल। सरल। हितकर।—**काय**—(वि०) सीधे शरीर वाला। (पुं०) कश्यप मुनि।—**ग**—(पुं०) व्यवहार में ईमानदार या सच्चा व्यक्ति। तीर, बाण।—**रोहित**— (न०) इन्द्र का लाल और सीधा धनुष।

ऋज्वी—(स्त्री०) [ऋजु+ङीप्] ईमानदार स्त्री। नक्षत्रपथ विशेष।

√ऋञ्ज्— भ्वा० आत्म० सक० भूनना, ऋञ्जते, ऋञ्जिष्यते, आर्ञ्जिष्ट।

√ऋण्—त० उभ० सक० जाना। ऋणोति-अर्णोति—ऋणुते, अर्णिष्यति— ते, आर्णीत —आर्णिष्ट।

ऋण—(न०) [√ऋ+क्त नि० णत्व] कर्ज, उधार। दुर्ग, किला। जल। भूमि। देव, ऋषि और पितरों के उद्देश्य से किया हुआ यथाक्रम यज्ञ। वेदाध्ययन और सन्तानोत्पत्ति नामक आवश्यक कर्त्तव्य कर्म।—**अन्तक** (**ऋणान्तक**)—(पुं०) मङ्गल ग्रह।—**अपनयन** (**ऋणापनयन**), — **अपनोदन** (**ऋणापनोदन**), —**अपाकरण** (**ऋणापाकरण**), —**दान**—(न०),—**मुक्ति**—(स्त्री०), —**मोक्ष** (पुं०),—**शोधन**—(न०) कर्ज की अदायगी, ऋणशोध, कर्ज चुकाना।—**आदान** (**ऋणादान**)—(न०) ऋण में दिये हुए रुपयों का वापिस मिलना।—**ऋण**—(**ऋणार्ण**) कर्ज के ऊपर कर्ज, एक कर्ज चुकाने को जो दूसरा कर्ज काढ़ा जाय।—**ग्रह**—(पुं०) कर्जा लेना। कर्ज लेने वाला व्यक्ति।—**दातृ**, —**दायिन्**—(वि०) कर्ज देने वाला।—**दास** (पुं०) कर्जा चुका देने के वदले कर्जा देने वाले का बना हुआ दास।—**मत्कुण**,—**मार्गण**—(पुं०) कर्ज की अदायगी की जमानत करने वाला, प्रतिभू।—**मुक्त**— (वि०) कर्ज से छुटकारा पाया हुआ।—**मुक्ति**—(स्त्री०)

कर्ज से छुटकारा पाना ।—लेख्य-(न०) दस्तावेज, ऋणपत्र ।—विद्युत्-(स्त्री०) विकर्षण करने वाली बिजली ।—स्थगन-(न०) बैंकों आदि द्वारा (उच्च न्यायालय के या सरकार के आदेश से) लोगों का पावना या ऋण चुकाना अस्थायी रूप से बन्द कर दिया जाना (मॉरेटोरियम) ।

ऋणिक—(पुं०) [ऋण + ष्ठन् — इक] कर्जदार, ऋणी ।

ऋणिन्—(वि०) [√ऋण+इनि] कर्जदार ।

ऋत—(वि०) [ऋ+क्त] उचित, ठीक । ईमानदार, सच्चा। पूजित, सम्मानित। (न०) सत्य । सृष्टि का आदि और धारक तत्त्व । ईश्वरीय नियम । ब्रह्म। कर्मफल । जल । यज्ञ । उञ्छवृत्ति । ब्राह्मण की उपजीव्यवृत्ति । अनुकूल वचन ।—उक्ति(ऋतोक्ति)-(स्त्री०) सत्य वचन ।—धामन्-(वि०) सच्चे या पवित्र स्वभाव वाला । (पुं०) विष्णु भगवान् का नाम । —पर्ण-(पुं०) अयोध्या का एक राजा, जो राजा नल का मित्र था और पासा खेलने में बड़ा निपुण था ।—पेय (पुं०) एकाह यज्ञ जो छोटे-छोटे पापों को नष्ट करने के लिये किया जाता है ।

ऋतम्भरा—(स्त्री०) [ऋत√भृ + खच्, मुम्—टाप्] योगशास्त्रानुसार सत्य को धारण और पुष्ट करने वाली एक चित्तवृत्ति ।

ऋति—(स्त्री०) [√ऋ+क्तिन्] गति । स्पर्धा । निन्दा । मार्ग । मङ्गल, कल्याण ।

ऋतीया—(स्त्री०) [ऋत+ईयङ—टाप्] धिक्कार, भर्त्सना। लज्जा ।

ऋतु—(पुं०) [√ऋ+तु, कित्] मौसम, वसन्तादि छः ऋतुएँ । अब्द-प्रवर्तक काल । रजोदर्शन । रजोदर्शन के उपरान्त का समय जो गर्भाधान के लिये उपयुक्त काल है; 'वरमृतुषु नैवाभिगमनम्' पं० १ । उपयुक्त या ठीक समय । प्रकाश, चमक । छः की संख्या का सङ्केत ।—अन्त (ऋत्वन्त)-(पुं०) ऋतुकाल की समाप्ति । स्त्री के रजोदर्शन से १६वीं रात्रि ।—काल,—समय-(पुं०),—वेला-(स्त्री०) रजोदर्शन के पीछे १६ रात्रि पर्यन्त गर्भाधान का उपयुक्त काल । ऋतु-मौसम का अवधि-काल ।—गण-(पुं०) ऋतुओं का समुदाय ।—गामिन्-(वि०) ऋतुकाल में स्त्री के पास जाने वाला ।—पर्ण-(पुं०) अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा का नाम ।—पर्याय (पुं०)—वृत्ति-(स्त्री०) मौसम का आना-जाना । —मुख-(न०) किसी ऋतु का प्रथम दिवस । —राज-(पुं०) ऋतुओं का राजा अर्थात् वसन्त ।—लिङ्ग-(न०) ऋतु का परिचायक चिह्न । रजःस्राव का लक्षण ।—विज्ञान-(न०) वायुमंडल में होने वाले परिवर्तनों का विज्ञान जिसके आधार पर वर्षा, तूफान का अनुमान किया जाता है (मीटियरालॉजी) । —विपर्यय-(पुं०)ऋतु के विपरीत बात होना (जैसे—जाड़े में वर्षा) ।—सन्धि-(पुं०) ऋतुओं का मिलान ।—सात्म्य-(न०) ऋतु के उपयुक्त आहार आदि ।—स्नाता-(स्त्री०) वह स्त्री० जो रजोदर्शन होने के बाद स्नान कर चुकी हो और सम्भोग के योग्य हो गयी हो; धर्मलोपभयाद्राज्ञीमृतुस्नातामनुस्मरन्' र० १.७६ ।—स्नान -(न०) रजोदर्शन के बाद का स्नान ।

ऋतुमती—(स्त्री०) [ऋतु+मतुप्+ङीप्] रजस्वला, मासिक धर्मयुक्ता ।

ऋते—(अव्य०)बिना, सिवाय; 'ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे' भग० ११.३२ ।

ऋतेजा—(वि०) [ऋते जायते इति ऋते√जन्+विट्] यज्ञ के लिये उत्पन्न । नियमानुकूल ।

ऋत्विज्—(पुं०) [ऋतौ यजते इति ऋतु √यज्+क्विन्]यज्ञ करने वाला, साधारणतया प्रत्येक यज्ञ में चार ऋत्विज् हुआ करते हैं,

अर्थात् होतृ, उद्गातृ, अध्वर्यु, ब्रह्मन् । किन्तु बड़े यज्ञ में इनकी संख्या १६ होती है ।

ऋत्विय—(वि०) [ऋतु+घस्] ऋतु-काल-संबंधी । नियमानुसारी ।

ऋद्ध—(वि०) [√ऋध्+क्त] खुशहाल, धन-धान्य से संपन्न । वर्धमान, बढ़ने वाला । जमा किया हुआ । (पुं०) विष्णु भगवान् का नाम । (न०) बढ़ती । प्रत्यक्षीभूत प्रमाण ।

ऋद्धि—(स्त्री०) [√ऋध्+क्तिन्] बढ़ती, वृद्धि । सफलता । समृद्धि, धन-दौलत । परिमाण । अलौकिक शक्ति । पूर्णता । पार्वती । लक्ष्मी । पत्नी । दवा के काम आने वाली एक लता, प्राणदा ।

ऋद्धिमत्—(वि०) [ऋद्धि+मतुप्] धनाढ्य ।

√ऋध्—दि०, स्वा० पर० अक०, सक० फलना-फूलना, सफल मनोरथ होना । बढ़ना, बढ़ती होना । सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना । ऋध्यति,—ऋध्नोति, अर्धिष्यति, आर्धत्,—आर्धीत् ।

√ऋफ्, √ऋम्फ्—तु० पर० सक० देना । मारना । निन्दा करना । लड़ना । ऋफति,—ऋम्फति, अर्फिष्यति,—ऋम्फिष्यति, आर्फीत्,—आर्म्फीत् ।

ऋभु—(पुं०) [अरि स्वर्गे अदितौ वा भवति इति ऋ√भू+डु] देवता । एक देवगण । देवों का एक अनुचर-वर्ग । तीन अर्धदेवों (ऋभु, वाज और विभ्वन्) में से पहला जिसके नाम से तीनों का द्योतन होता है ।

ऋभुक्ष—(पुं०) [ऋभवो देवाः क्षियन्ति वसन्ति अत्र इति ऋभु√क्षि+ड] इन्द्र का नाम । स्वर्ग । वज्र ।

ऋभुक्षिन्—(पुं०) [ऋभुक्ष+इनि] इन्द्र का नाम ।

ऋभ्वन्—(वि०) पटु, दक्ष, निपुण ।

ऋल्लक—(पुं०) वाद्ययंत्र या बाजा बजाने वाला ।

√ऋश्—सौत्र० पर० सक० जाना । सोचना ।

ऋश्य—(पुं०) [√ऋश्+क्यप्] सफेद पैरों वाला बारहसिंघा । (न०) वध, हत्या ।—**केतन**,—**केतु**-(पुं०) प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध का नाम । कामदेव का नाम ।

√ऋष्—तु० पर० सक०, अक० जाना । मार डालना । बहना । फिसलना । ऋषति, अर्षिष्यति, आर्षीत् ।

ऋषभ—(पुं०) [√ऋष+अभच्, कित्] साँड़ । संगीत के सप्तस्वरों में से दूसरा । सुअर की पूँछ । मगर की पूँछ । जैनियों के मान्य अवतार विशेष । आठ प्रसिद्ध ओषधियों में से एक । (वि०) उत्तम, श्रेष्ठ (समासांत में—पुरुषर्षभ, भरतर्षभ इत्यादि) ।—**कूट**-(पुं०) एक पर्वत ।—**ध्वज**-(पुं०) शिव ।

ऋषभी—(स्त्री०) [ऋषभ+ङीष्] स्त्री जो पुरुष के रूप रंग की हो । गौ । विधवा स्त्री ।

ऋषि—(पुं०) [ऋषति गच्छति संसार-पारम् इति √ऋष्+इन्, कित्] वैदिक-मंत्र-द्रष्टा । अनुष्ठानादि कर्म बतलाने वाले सूत्रों के रचयिता, गोत्र-प्रवर-प्रवर्तक । प्रकाश की किरण । मत्स्य-विशेष । ७ की संख्या । एक कल्पित वृत्त ।—**ऋण**-(न०) मनुष्य का ऋषियों के प्रति कर्तव्य (वेद पढ़ने-पढ़ाने से इससे मुक्ति मिलती है) ।—**कुल्या**-(स्त्री०) एक नदी का नाम जिसका उल्लेख महाभारत के तीर्थयात्रा-पर्व में है ।—**तर्पण**-(न०) ऋषियों की तृप्ति के लिये जलदान ।—**पञ्चमी**-(स्त्री०) भाद्रमास की शुक्ला ५मी ।—**लोक**-(पुं०) एक लोक जो सत्यलोक के पास माना जाता है ।—**स्तोम**-(पुं०) ऋषियों की प्रशंसा । यज्ञ विशेष जो एक ही दिन में पूरा होता है ।

ऋषु—(पुं०) [√ऋष्+कु] (वि०) बड़ा । शक्तिशाली । चतुर । सूर्य-रश्मि । मशाल । प्रज्वलित अग्नि । ऋषि ।

ऋष्टि—(स्त्री०) [ऋष्+क्तिन्] दुधारा खाँड़ा । तलवार । भाला-बर्छी आदि कोई सा हथियार ।

ऋष्य—(पुं०) [√ऋष्+क्यप्] एक तरह का हिरन । एक तरह का कोढ़ ।—**अङ्क** (**ऋष्याङ्क**)—**केतन**, —**केतु**—(पुं०) अनिरुद्ध का नाम ।—**मूक**—(पुं०) एक पर्वत जो पंपासरोवर के निकट है ।—**शृङ्ग**—(पुं०) विभाण्डक ऋषि के पुत्र का नाम ।

ऋष्यक—(पुं०) [ऋष्य+कन्] चित्रित या सफेद पैरों वाला हिरन ।

ऋष्व—(वि०) [√ऋष्+क्वन्] बड़ा । ऊँचा । अच्छा । देखने योग्य । (पुं०) इन्द्र और अग्नि का नाम ।

ॠ

ॠ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का आठवाँ वर्ण, इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। (अव्य०)[√ऋ+क्विप्, (बा०)] भय, बचाव या रोक, भर्त्सना, धिक्कार, अनुकम्पा अथवा स्मृतिव्यञ्जक अव्यय विशेष । (पुं०) भैरव का नाम । एक दानव या दैत्य का नाम । (स्त्री०) दानव-माता । देव-माता ।

√ॠ—क्र्या० परि० सक० जाना । ऋणाति, अरिष्यति—अरीष्यति, आरीत् ।

ऌ

ऌ—(अव्य०) [√ऋ+क्विप्, तुगभावः, लत्वम्] स्वरवर्ण का नवम अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान दन्त है, यह वर्ण ह्रस्व, दीर्घ एवम् प्लुत के भेद से तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक के भेद से दो और उदात्त, अनुदात्त एवम् स्वरित के भेद से फिर तीन प्रकार का होता है । (अव्य०) देवमाता । भूमि । पर्वत ।

ॡ

ॡ-[√ॠ+क्विप्, रस्य लः] स्वरवर्ण का दसवाँ अक्षर । सका ी उच्चारण-स्थान दन्त है। यह दीर्घ एवम् प्लुत तथा अनुनासिक और निरनुनासिक भेद से दो-दो प्रकार का होता है । फिर उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेद से त्रिविध भी होता है, यद्यपि पाणिनि इस अक्षर को नहीं मानते हैं; किन्तु तन्त्र-शास्त्र और मुग्धबोध व्याकरण के अनुसार यह मान्य है। (अव्य०) देव-नारी । माता । नारी की आत्मा । (स्त्री०) दैत्य-स्त्री । दानव-माता । कामधेनु । (पुं०) महादेव ।

ए

ए—संस्कृत वर्णमाला का नवाँ वर्ण । शिक्षा में इसे सन्ध्यक्षर माना है । इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ और तालु हैं । संस्कृत में मात्रानुसार इसके दीर्घ और प्लुत दो ही भेद हैं । (पुं०) [√इ+विच्] विष्णु का नाम । (अव्य०) स्मरण, ईर्ष्या, दया, आह्वान, तिरस्कार अथवा धिक्कार-बोधक अव्यय विशेष ।

एक—(सर्वनाम० वि०) [√इ+कन्] पहले अंक या इकाई से सूचित, दो का आधा । अकेला । जैसा दूसरा न हो, बेजोड़ । वही । अपरिवर्तित । स्थिर । प्रधान । सत्य । ईषत् । कोई । एक भी । कोई या कुछ भी (एक न चलना, न सुनना) । जो मिलकर एक चीज, एक रूप हो गया हो, भेद-रहित । (पुं०) परमेश्वर । विष्णु । ऐलवंशीय एक राजा । अग्नि । सूर्य । देवराज । यम ।—**अक्ष** (**एकाक्ष**)—(वि०) एक धुरी वाला । काना । (पुं०) काक । शिव ।—**अक्षर** (**एकाक्षर**)—(पव०) एक अक्षर का । (न०) ओंकार ।—**अग्र** (**एकाग्र**)—(वि०) एक ही ओर ध्यान लगाए हुए । ध्यानावस्थित । अचञ्चल ।—**अग्र्य** (**एकाग्र्य**)—(वि०) एक ही ओर लगा हुआ । एकतान ।—**अङ्ग** (**एकाङ्ग**)—(पुं०) शरीररक्षक । बुध या मङ्गल ग्रह ।—**अनुदिष्ट** (**एकानुदिष्ट**)—(न०) एक पितृ

के उद्देश्य से किया हुआ मृत कर्म (श्राद्ध)। **—अन्त (एकान्त)**–(वि०) अकेला। अलग। एक ही वस्तु को लक्ष्य करने वाला। अत्यंत। निरपवाद। निश्चित। एक ही ओर लगा हुआ। (पुं०) निराला, सूना स्थान। तनहाई। **—अन्तर (एकान्तर)**–(वि०) एक के बाद आने या पड़ने वाला। **—अयन (एकायन)**–(वि०) एक के गमन करने योग्य (पगडंडी)। एकाग्र। (न०) एकांत स्थान। मिलने की जगह। एकमात्र उद्देश्य। विचारों की एकता। नीतिशास्त्र। वेद की एक शाखा। **—अर्थ (एकार्थ)**–(पुं०) एक ही वस्तु। एक ही अर्थ, समान अर्थ। **—अह (एकाह)**–(पुं०) एक दिन की अवधि। एक ही दिन में पूरा होने वाला यज्ञ। **—आतपत्र (एकातपत्र)**–(वि०) एकच्छत्र, चक्रवर्ती; 'एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वम्' र० २.४७। **—आदेश (एकादेश)**–(पुं०) एक आज्ञा। दो या अधिक अक्षरों के स्थान पर एक अक्षर का प्रयोग। **—आवली (एकावली)**–(स्त्री०) अर्थालंकार का एक भेद। एक छंद। मोतियों की एक हाथ लंबी माला (कौ०)। **—उदक (एकोदक)**–(पुं०) एक ही पितर को जल देने वाला, सम्बन्धी, सगोत्री। **—उदर (एकोदर)**–(पुं०) सगा भाई। **—उद्दिष्ट (एकोद्दिष्ट)**–(न०) एक के उद्देश्य से किया हुआ श्राद्ध, वार्षिक श्राद्ध। **—ऊन (एकोन)**–(वि०) एक कम। **—एक (एकैक)**–(वि०) एकाकी, अकेला। **—एकशस् (एकैकशः)**–(अव्य०) एक-एक करके, अलग-अलग। **—ओघ (एकौघ)**–(पुं०) अविच्छिन्न प्रवाह। **—कर**–(वि०) एक ही काम करने वाला। एक हाथ वाला। एक किरण वाला। **—कार्य**–(वि०) मिलकर काम करने वाला, सहयोगी। (न०) एक ही काम, एक ही व्यवसाय। **—काल**–(पुं०) एक समय, एक ही समय। **—कालिक, —कालीन**–(वि०) एक ही बार होने वाला। समवयस्क। **—कुण्डल**–(पुं०) कुबेर। बलभद्र। शेष। **—गुरु, —गुरुक**–(वि०) एक ही गुरु वाले। (पुं०) गुरुभाई। **—चक्र**–(वि०) एक पहिये वाला। एक ही नरेश द्वारा शासित। चक्रवर्ती। एक पहिए वाला। (पुं०) सूर्य का रथ। सूर्य। **—चक्रा**–(स्त्री०) महाभारत में वर्णित एक प्राचीन नगरी। **—चत्वारिंशत्**–(स्त्री०) ४१, इकतालीस। **—चर**–(वि०) अकेला घूमने या रहने वाला। वह जिसके पास एक ही चाकर हो। बिना सहायता लिये रहने वाला। **—चारिन्**–(वि०) अकेला। **—चारिणी**–(स्त्री०) पतिव्रता स्त्री। **—चित्त**–(वि०) केवल एक ही बात को सोचने वाला, एकाग्र। (न०) ऐकमत्य, एक राय। **—चेतस्, —मनस्**–(वि०) दे० 'एकचित्त'। **—जन्मन्**–(पुं०) राजा। शूद्र। **—जात**–(वि०) एक ही माता-पिता से उत्पन्न। **—जाति**–(पुं०) शूद्र। **—जातीय**–(वि०) एक ही वंश या कुल का। **—ज्योतिस्**–(पुं०) शिव। **—तन्त्र**–(वि०) जिसमें सब शक्ति, अधिकार एक आदमी के हाथ में हो, एकहत्था (राज्य, शासन-प्रबन्ध)। एक व्यक्ति द्वारा, एक के प्रबन्ध से परिचालित। **—शासनप्रणाली**–(स्त्री०) वह शासनप्रणाली जिसमें सब अधिकार राजा के ही हाथ में हो और उसके आदेशानुसार सब कार्य परिचालित होते हों, एकहत्थी हुकूमत। **—तान**–(वि०) अत्यन्त दत्तचित्त। **—ताल**–(पुं०) सम-स्वर। गान, नृत्य और वाद्य की सङ्गति, तौर्यत्रिक। **—तीर्थिन्**–(वि०) एक ही तीर्थ में स्नान करने वाले, एक ही सम्प्रदाय के। (पुं०) सहपाठी, गुरुभाई। **—त्रिंशत्**–(स्त्री०) ३१, इकतीस। **—दंष्ट्र, —दन्त**–(पुं०) एक दाँत वाला अर्थात् गणेश। **—दण्डिन्**–(पुं०) संन्यासी या भिक्षुक विशेष। (हारीतस्मृति में इनके चार भेद बतलाये गये हैं—कुटीचक,

बहूदक, हंस और परमहंस । ये उत्तरोत्तर श्रेष्ठतर माने गये हैं ।)—**दृश**,—**दृष्टि**—(पुं०) काक । शिव जी । दार्शनिक । (वि०) काना ।—**देव**—(पुं०) परब्रह्म ।—**देश**—(पुं०) एक स्थान या जगह । एक भाग या अंश, एक तरफ ।—**धर्मन्**,—**धर्मिन्**—(वि०) समान धर्म या गुण-स्वभाव वाला ।—**धुर**,—**धुरावह**,—**धुरीण**—(वि०) केवल एक ही काम करने योग्य । एक ही जुए में जोते जाने योग्य ।—**नट**—(पुं०) किसी अभिनय का मुख्य पात्र, सूत्रधार ।—**नवति**—(स्त्री०) ९१, इक्यानवे ।—**पक्ष**—(पुं०) एक दल, एक ओर ।—**पत्नी**—(स्त्री०) सच्ची पत्नी, पतिव्रता पत्नी । सौत ।—**पदी**—(स्त्री०) पगडंडी ।—**पदे**—(अव्य०) सहसा, अचानक ।—**पाद**—(पुं०) एक पैर, विष्णु और शिव का नाम । (वि०) लँगड़ा । एकटंगा ।—**पिङ्ग**,—**पिङ्गल**—(पुं०) कुबेर का नाम ।—**पिण्ड**—(वि०) सपिण्ड ।—**भार्य**—(पुं०) केवल एक पत्नी रखने वाला ।—**भार्या**—(स्त्री०) पतिव्रता स्त्री ।—**भाव**—(वि०) सच्चा भक्त, ईमानदार ।—**यष्टि**—(पुं०), **यष्टिका**—(स्त्री०) इकलड़ा मोतीहार ।—**योनि**—(वि०) गर्भाशय सम्बन्धी एक ही वंश या जाति का ।—**रस**—(वि०) जो सदा एक रूप में रहे , कभी बदले नहीं, अपरिणामी । जो मिल कर एक हो गया हो, एकदिल ।—**राज्**,—**राज**—(पुं०)सम्राट्, बादशाह, एकछत्र राजा ।—**रात्र**—(पुं०) केवल एक ही रात में समाप्त हो जाने वाला उत्सव विशेष ।—**रिक्थिन्**—(पुं०)पैतृक संपत्ति का समान स्वत्वाधिकारी ।—**रूप**—(वि०) समान आकृति वाला । एक ही रङ्ग-ढङ्ग का ।—**लिङ्ग**—(पुं०) वह शब्द जो समान लिङ्गवाची हो । कुबेर का नाम ।—**वचन**—(न०) एक संख्यावाची शब्द ।—**वर्ण**—(वि०) एक जाति का ।—**वर्षिका**—(स्त्री०) एक वर्ष की बछिया ।

—**वाक्यता**—(स्त्री०) सामञ्जस्य ।—**वारम्**, —**वारे**—(अव्य०) केवल एक बार । तुरन्त, अचानक, सहसा । एक बार, एक मरतबा ।—**विंशति**—(स्त्री०) इक्कीस, २१ ।—**विलोचन**—(वि०) एक आँख का, काना ।—**विषयिन्**—(पुं०) प्रतिद्वन्द्वी ।—**वीर**-(पुं०) महावीर, प्रसिद्ध योद्धा । एक वृक्ष जो वातव्याधि तथा पक्षाघात का नाश करता है ।—**वेणि**,—**वेणी**—(स्त्री०) एक चोटी । (जब पतिव्रता स्त्रियाँ पति से अलग हो जाती हैं, तब वे केश-विन्यास न कर, सब केशों को जोड़-बटोर कर उन सबकी एक चोटी बना लेती हैं ।)—**शफ**—(पुं०) एक सुम या खुर वाला जानवर, जैसे घोड़ा, गधा आदि ।—**शृङ्ग**—(वि०) एक सींग वाला । (पुं०) गेंडा । विष्णु का नाम ।—**शेष**—(पुं०) द्वन्द्व समास का एक भेद, जिसमें दो या तीन अथवा अधिक शब्दों का लोपकर एक ही शब्द रहे और वह उन सब शब्दों का अर्थ दे, जैसे पितरौ, यहाँ पितरौ का अर्थ माता और पिता दोनों है ।—**श्रुत**—(वि०) एक बार सुना हुआ ।—**श्रुति**—(स्त्री०) एकस्वरी, वेद पाठ करने का क्रम विशेष, जिसमें उदात्तादि स्वरों का विचार नहीं किया जाता ।—**सप्तति**—(स्त्री०)७१, इकहत्तर ।—**सर्ग**—(वि०) दत्तचित्त ।—**साक्षिक**—(वि०) एक का देखा हुआ ।—**हायन**—(वि०) एक वर्ष का पुराना या एक वर्ष की उम्र का ।—**हायनी**—(स्त्री०) एक वर्ष की बछिया ।

एकक—(वि०) [एक+कन्] अकेला । समान, सदृश ।

एकजातीय—(वि०) [एक+जातीयर्] एक प्रकार का ।

एकतम—(वि०) [एक+डतमच्] बहुतों में से एक । दूसरा, भिन्न ।

एकतर—(वि०) [एक+डतरच्] दो में से एक । दूसरा, भिन्न । बहुतों में से एक ।

एकतस्—(अव्य०) [एक+तसिल्] एक ओर से। एक ओर। अकेले। एक-एक करके।

एकत्र—(अव्य०) [एक+त्रल्] एक स्थान पर। साथ-साथ। एक-साथ।

एकदा—(अव्य०) [एक+दा] एक बार। एक ही बार, एक ही समय में।

एकधा—(अव्य०) [एक+धा] एक प्रकार। अकेले। तुरन्त, एक ही समय में। एक साथ।

एकल—(वि०) [एक√ला+क] अकेला। **—संक्रमणीयमत**–(न०) (आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली में) मतदाता द्वारा, किसी निर्वाचन-क्षेत्र से चुने जाने वाले अनेक सदस्यों में से किसी एक को इस शर्त के साथ दिया गया मत कि यदि निर्धारित संख्या में मत प्राप्त कर लेने के कारण, उसे इसकी आवश्यकता न रहे तो वह उसके बाद के अधिमान दिये गये उम्मेदवार के पक्ष में संक्रामित हो जायगा (सिंगिल ट्रांसफरेबल वोट)।

एकशस्—(अव्य०) [एक+शस्] एक-एक करके।

एकाकिन्—(वि०) [एक+आकिनच्] अकेला।

एकादशन्—(वि०) [एकेन अधिका दश इति विग्रहे मध्य० स०] (संख्यावाची विशेषण), ११, ग्यारह। **—द्वार**–(न०) शरीर के ११ छेद या दरवाजे। **—रुद्र**–(बहुवचन पुं०) ग्यारह रुद्र।

एकादश—(वि०) [एकादश परिमाणमस्य इत्यर्थे एकादशन्+डट्] [स्त्री०—**एकादशी**] ग्यारहवाँ।

एकादशी—(स्त्री०) [एकादश +ङीप्] चन्द्रमा के प्रत्येक पक्ष की ग्यारहवीं तिथि, विष्णुभक्तों के उपवास का दिवस। यह विष्णु सम्बन्धी उपवास-दिवस है।

एकीभाव—(पुं०) [एक+च्वि—√भू + घञ्] संमिश्रण, एकत्व, ऐक्य।

एकीय—(वि०) [एक+छ—ईय] एक का या एक से। एक का सहायक, एक पक्ष का।

√एज्—भ्वा० आत्म० अक० काँपना। एजते, एजिष्यते, ऐजिष्ट। भ्वा० पर० अक० चमकना। एजति, एजिष्यति, एजीत्।

एजक—(वि०) [√एज्+ण्वुल्] हिलता हुआ, काँपता हुआ। हिलने वाला, काँपने-वाला।

एजन—(न०) [√एज्+ल्युट्] कम्प, काँपना।

√एठ्—भ्वा० आत्म० सक० चिढ़ाना। सामना करना। एठते, एठिष्यते, ऐठिष्ट।

एड—(वि०) [√इल्+अच्, डलयोरैक्यम्] बहरा। (पुं०) एक तरह का भेड़ा। **—गज**–(पुं०) एक ओषधि, चक्रमर्दक। **—मूक**–(वि०) बहरा-गूंगा। दुष्ट।

एडक—(पुं०) [एड+कन्] भेड़ा। जङ्गली बकरा।

एडका—(स्त्री०) [एडक+टाप्] भेड़ी।

एण, एणक–(पुं०) [एति द्रुतं गच्छति इति √इ+ण] [एण+कन्] काला मृग। **—अजिन (एणाजिन)**–(न०) मृगचर्म। **—तिलक,—भृत्**–(पुं०) चन्द्रमा। **—दृश्**–(वि०) हिरन जैसे नेत्रोंवाला। (पुं०) मकर राशि।

एणी—(स्त्री०) [एण+ङीष्]काली हिरनी।

एत—(वि०) [आ√इ+क्त वा√इ +तन्] आया हुआ। [स्त्री०—**एता, एती**] रंग-बिरंगा, चमकीला। (पुं०)हिरन, बारहसिंहा।

एतद्—(सर्वनाम वि०) [पुं० **एषः**। स्त्री० **एषा**। न० **एतद्**।] [√इ+अदि, तुक्] यह।

एतदीय—(वि०) [एतद्+छ—ईय] इसका, इससे सम्बन्ध-युक्त।

एतन—(पुं०) [आ√इ+तन] निःश्वास। एक मत्स्य।

एर्तहि—(अव्य०) [इदम्+र्हिल् एत आदेश] अब, इस समय, वर्तमान समय में ।

एतादृक्ष, एतादृश्–(वि०) [एतद्√दृश् +क्स] [एतद्√दृश्+क्विन्] [स्त्री०— **एतादृशी, एतादृक्षी**] ऐसा, इस तरह का ।

एतावत्—[एतद्+वतुप्]इतना । (अव्य०) इस प्रकार ।

√एध्—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना । आराम से रहना । समृद्धिशाली होना । (णिजन्त) बढ़ाना । बधाई देना । सम्मान करना । एधते, एधिष्यते, ऐधिष्ट ।

एध—(पुं०) [√इन्ध्+घञ्, निपातनात् साधुः] ईंधन, जलाने के लिये लकड़ी; 'स्फुलिङ्गावस्थया वह्निरेधापेक्ष इव स्थितः' श० ७.१६ ।

एधतु—(पुं०) [√एध्+चतु] मानव । अग्नि ।

एधस्—(न०) [√इन्ध्+असि] ईंधन ।

एधा—(स्त्री०) [√एध्+अ, टाप्] समृद्धि । हर्ष, आनन्द ।

एधित—(वि०) [√एध्+क्त] वृद्धि-युक्त, बढ़ा हुआ । पाला-पोसा हुआ; 'मृगशावैः सममेधितो जनः' श० २.१८ ।

एनस्—(न०) [एति गच्छति प्रायश्चित्तादिना इति√इ+असुन् नुडागम]पाप। अपराध, दोष । क्लेश । भर्त्सना, कलङ्क ।

एनस्वत्, एनस्विन्–(वि०) [एनस्+मतुप्, व आदेश] [एनस् विनि] दुष्ट । पापी ।

एनी—(स्त्री०) [एत—ङीप्, तस्य नः] अनेक वर्णों या रंगों वाली ।

एमन्—(पुं०) [√इ+मनिन्] रास्ता, मार्ग ।

एरका—(स्त्री०) [√इ+रक, टाप्] एक प्रकार की घास जिसमें गाँठें नहीं होती हैं ।

एरण्ड—(पुं०) [आ√ईर+अण्डच्] रेंड का पेड़ ।

एर्वारुक—(पुं०) [आ√ईर्+क्विप्, एर्√ वृ+उण् ततः कन्] खरबूजा, ककड़ी ।

एलक—(पुं०) [√एल्+ण्वुल्] मेढ़ा ।

एलवालु, एलवालुक–(न०) [एला √ वल् +उण्, ह्रस्व] [एलावालु+कन्] कैथा की छाल जो सुगंधित होती है । एक रवादार द्रव्य ।

एलविल—दे० 'ऐलविल' ।

एला—(स्त्री०) [√इल+अच्—टाप्] इलायची का पौधा । इलायची के दाने ।

एलापर्णी—(स्त्री०) [एलायाः पर्णमिव पर्णमस्याः, ब० स०, ङीष्] लज्जावन्ती जाति का एक गुल्म ।

एलीका—(स्त्री०) [आ√ईल्+ईकन्—टाप्] छोटी इलायची ।

एव—(अव्य०) [√इ+वन्] सादृश्य, समानता । परिभव, तिरस्कार । निश्चय, ही ।

एवम्—(अव्य०) [√इ+वमु (बा०)] इस प्रकार। और। स्वीकार । प्रश्न । निश्चय ।—**अवस्थ (एवमवस्थ)**—(वि०) इस प्रकार अवस्थित, जो ऐसे टिका या जमा हो ।—**आदि,—आद्य, (एवमादि), (एवमाद्य)** —(वि०) ऐसे आरंभ वाला, जो इस प्रकार प्रारंभ हो ।—**कार (एवङ्कार)**—(अव्य०) इस प्रकार से ।—**गुण (एवङ्गुण),**—(वि०) इस प्रकार के गुणों वाला ।—**प्रकार,—प्राय** –(वि०) इस तरह का । इस किस्म का।—**भूत**–(वि०) इस प्रकार के गुणवाला, इस रकम का, ऐसा ।— **रूप (एवंरूप)**— (वि०) इस किस्म का, इस शक्ल का ।—**विध, (एवंविध)**—(वि०) इस प्रकार का, ऐसा ।

√ एष्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । किसी ओर शीघ्रता से जाना । एषते, एषिष्यते, ऐषिष्ट ।

एषण—(पुं०) [√एष्+ल्युट्] लोहे का वाण।—(न०) [√इष्+ल्युट्] इच्छा, कामना। खोज।

एषणा—(स्त्री०) [√इष्+णिच्+युच्] इच्छा, अभिलाषा।

एषणिका—(स्त्री०) [√इष्+ल्युट्+कन्, टाप्, इत्व] सुनार का काँटा (तौलने का)।

एषणीय—(वि०) [√इष्+ अनीयर्] चाहने योग्य, स्पृहणीय।

एषा—(स्त्री०) [√इष्+अ, टाप्] कामना, इच्छा।

एषितृ—(वि०) [√इष् +तृच्] दे० 'एषिन्'।

एषिन्—(वि०) [√इष्+णिनि] इच्छा करने वाला, कामना करने वाला।

ऐ

ऐ—संस्कृत वर्णमाला या नागरी वर्णमाला का दसवाँ वर्ण, इसका उच्चारण कण्ठ और तालु से होता है। (पुं०) [आ√इ+विच्] शिव का नाम। (अव्य०) स्मरण, बुलावा तथा सम्बोधन-व्यञ्जक अव्यय।

ऐकध्य—(न०) [एकधा+ष्यमन् (धा-स्थाने)] समय या घटना विशेष का एकत्व।

ऐकपत्य—(न०) [एकपति+ष्यञ्] सर्वोपरि प्रधानता, एकतंत्र शासन।

ऐकपदिक—(वि०) [एकपद+ठञ् —इक] [स्त्री०—**ऐकपदिकी**] एक पद से सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐकपद्य—(न०) [एकपद+ष्यञ्] शब्दों का योग।

ऐकमत्य—(न०) [एकमत+ष्यञ्] एक मत, एक आशय, एकवाक्यता।

ऐकागारिक—(पुं०) [एकम् असहायम् अगारम् प्रयोजनम् अस्य इत्यर्थे एकागार+ठक् —इक]चोर; 'केनचित्तु हस्तवतैकागारिकेण' दश०। एक घर का मालिक।

ऐकाग्र्य—(न०) [एकाग्र+ष्यञ्] एक ही वस्तु पर ध्यान लगना, एकाग्रता।

ऐकाङ्ग—(पुं०) [एकाङ्ग+अण्] शरीर-रक्षक दल का एक सिपाही।

ऐकात्म्य—(न०) [एकात्मन्—ष्यञ्] एकता, ऐक्य। एकरूपता, समता। ब्रह्म के साथ एक होने का भाव।

ऐकाधिकरण्य—(न०) [एकाधिकरण+ष्यञ्] एक ही विषय से संवद्ध होने की अवस्था, एककालिकत्व। समकालीन विद्यमानता।

ऐकान्तिक—(वि०) [एकान्त+ठञ्—इक] सम्पूर्ण, विल्कुल। निश्चित। अत्यन्त।

ऐकान्यिक—(पुं०) [एकान्य+ठक्—इक] वह शिष्य जो वेद पढ़ने में एक भूल करे।

ऐकार्थ्य—(न०) [एकार्थ+ष्यञ्] उद्देश्य या प्रयोजन की एकता। अर्थसामञ्जस्य।

ऐकाहिक—(वि०) [एकाह+ठक्—इक] [स्त्री०—**ऐकाहिकी**] एक दिन में होने वाला, एक दिन का।

ऐक्य—(न०) [एक+ष्यञ्] एकत्व, एका। समानता, सादृश्य। जोड़, योग।

ऐक्षव—(वि०) [इक्षु+अण्] गन्ने का, गन्ने से बना हुआ, गन्ने से निकला हुआ। (न०) गुड़। शक्कर। मदिरा विशेष।

ऐक्षुक—(वि०) [इक्षु+ठञ्] गन्ना के लिये उपयुक्त। (पुं०) गन्ना ढोने वाला।

ऐक्षुभारिक—(वि०) [इक्षुभार+ठक्—इक] गन्ने का गट्ठर ढोने वाला।

ऐक्ष्वाक—(वि०) [इक्ष्वाकु+अण्] इक्ष्वाकु का। (पुं०) दे० 'एक्ष्वाकु'।

ऐक्ष्वाकु—(पुं०) [आर्ष प्रयोग] इक्ष्वाकु का वंशधर। इक्ष्वाकु के वंशधर का राज्य।

ऐङ्गुद—(वि०) [इङ्गुदी+अण्] [स्त्री० —**ऐङ्गुदी**] हिंगोट वृक्ष से उत्पन्न। (न०) हिंगोट वृक्ष का फल।

ऐच्छिक—(वि०) [इच्छा+ठञ्] अपनी

इच्छा या मर्जी पर अवलंबित, इख्तियारी। वैकल्पिक। [स्त्री०—**ऐच्छिकी**]।

ऐडक—(वि०) [एडक+अण्] [स्त्री०—**ऐडकी**] भेड़ का। (पुं०) भेड़ की एक जाति।

ऐडविड—ऐलविल—(पुं०) [इडविडा+अण्, पक्षे डलयोरभेदः] कुबेर का नाम।

ऐण—(वि०) [एण+अण्] [स्त्री०—**ऐणी**] हिरन का (चर्म या ऊन)।

ऐणेय—(वि०) [एणी+ढञ्—एय] [स्त्री० —**ऐणेयी**] काले हिरन से उत्पन्न अथवा काले हिरन की किसी वस्तु से उत्पन्न। (पुं०) काला बारहसिंघा। (न०) एक रतिबन्ध।

ऐतदात्म्य—(न०) [एतदात्मन्+ष्यञ्] इस प्रकार का विशेष गुण या विशिष्टता।

ऐतरेय—(पुं०) [इतर+ढक्—एय] इतर ऋषि के वंशज। (वि०) [एतरेय+अण्] ऐतरेयकृत (ब्राह्मण या उपनिषद्) (न०) ऋग्वेद का एक ब्राह्मण। एक आरण्यक।

ऐतरेयिन्—(पुं०) [ऐतरेय+इनि] ऐतरेय ब्राह्मण का पढ़ने वाला।

ऐतिहासिक—(वि०) [इतिहास+ठक्—इक] इतिहास सम्बन्धी। (पुं०) इतिहास-लेखक। इतिहास जानने वाला व्यक्ति। [स्त्री० —**ऐतिहासिकी**]

ऐतिह्य—(न०) [इतिह+ञ्य] परम्परागत उपदेश, पौराणिक वृत्तान्त।

ऐदम्पर्य—(न०) [इदम्पर+ञ्य] मूलाधार, अभिप्राय, उद्देश्य, आशय।

ऐनस—(न०) [एनस+अण्] पाप।

ऐन्दव—(वि०) [इन्दु+अण्] चन्द्रमा सम्बन्धी। (पुं०) चान्द्र मास।

ऐन्द्र—(वि०) [इन्द्र+अण्] [स्त्री०—ऐन्द्री] इन्द्र सम्बन्धी। (पुं०) अर्जुन और वलि का नाम।

ऐन्द्रजालिक—(वि०) [इन्द्रजाल+ठक्—इक] इंद्रजाल, जादू या नजरबंदी का (काम)। बाजीगरी जानने वाला। (पुं०) बाजीगर, जादूगर। [स्त्री०—**ऐन्द्रजालिकी**]।

ऐन्द्रलुप्तिक—(वि०) [इन्द्रलुप्त+ठक्—इक] गंज के रोग से पीड़ित। गंजा, खल्वाट।

ऐन्द्रशिर—(पुं०) [इन्द्रशिर+अण्] हाथियों की एक जाति।

ऐन्द्रि—(पुं०) [इन्द्र+इञ्] इन्द्रपुत्र जयन्त, अर्जुन, बालि। काक।

ऐन्द्रिय, ऐन्द्रियक—(वि०) [इन्द्रिय+अण्] [इन्द्रिय+वुञ्—अक] इन्द्रियों से सम्बन्ध रखने वाला, विषयभोगी। विद्यमान, इन्द्रिय-गोचर।

ऐन्द्री—(स्त्री०) [इन्द्र+अण्—ङीप्] एक वैदिक मंत्र जिसमें इन्द्र की प्रार्थना है। पूर्व दिशा। विपत्ति, संकट। दुर्गादेवी की उपाधि। छोटी इलायची।

ऐन्धन—(वि०) [इन्धन+अण्] [स्त्री०—**ऐन्धनी**] ईंधन का। (पुं०) सूर्य का नाम।

ऐयत्य—(न०) [इयत्+ष्यञ्] परिमाण, संख्या।

ऐरावण—(पुं०) [इरया जलेन वनति शब्दायते इति इरा√वन्+अच्, ततः अण्] इन्द्र का हाथी।

ऐरावत—(पुं०) [इरा+मतुप्, मस्य वः—रावान्=समुद्रः तत्र भवः त्यर्थे अण्] इन्द्र के हाथी का नाम। श्रेष्ठ हाथी। पाताल-वासी नागों के नेताओं में से एक नेता। पूर्व दिशा का दिग्गज। एक प्रकार का इन्द्र-धनुष।

ऐरावती—(स्त्री०) [ऐरावत+ङीप्] ऐरावत हाथी की हथिनी। बिजली। पंजाब की रावी नदी का नाम, इरावती नदी।

ऐरेय—(न०) [इरा+ढ—एय] मद्य, शराब। मङ्गल ग्रह।

ऐल—(पुं०) [इला+अण्] इला और बुध से उत्पन्न पुरूरवा का नाम।

ऐलवालुक—(पुं०) [एलवालुक+अण्] एक सुगन्धि-द्रव्य का नाम ।

ऐलविल—(पुं०) [इलविला+अण्] कुवेर का नाम । मङ्गल ग्रह ।

ऐलेय—(पुं०) [इला+ढक्—एय] एक सुगन्धित-द्रव्य । मङ्गल ग्रह ।

ऐश—(वि०) [ईश+अण्] ईश—शिव से संवन्ध रखने वाला । ईश्वरीय । राजकीय । [स्त्री०—**ऐशी**]

ऐशान—(वि०) [ईशान+अण्] शिव-संवंधी । उत्तर-पूर्व-संवंधी ।

ऐशानी—(स्त्री०) [ऐशान+ङीप्] ईशान उपदिशा या कोण । दुर्गा का नाम ।

ऐश्वर—(वि०) [ईश्वर+अण्] [स्त्री०—**ऐश्वरी**] विशाल । शक्तिशाली । शिव का । राजकीय । ईश्वरीय ।

ऐश्वरी—(स्त्री०) [ऐश्वर+ङीप्] दुर्गा देवी का नाम ।

ऐश्वर्य—(न०) [ईश्वर+ ष्यञ्] प्रभुत्व, आधिपत्य । शक्ति, वल । शासन, अधिकार । राज्य । धन, सम्पत्ति, विभव । भगवान् की सर्वव्यापकता की शक्ति, सर्वव्यापकता ।

ऐषमस्—(अव्य०) [अस्मिन् वत्सरे इति नि० साधुः] इस वर्ष के भीतर, इस वर्ष में ।

ऐषमस्तन, ऐषमस्त्य—(वि०) [ऐषमस्+तनप्] [ऐषमस्+त्यप्] वर्त्तमान वर्ष का, चालू साल का ।

ऐष्टिक—(वि०) [इष्टि+ठक्—इक] [स्त्री० —**ऐष्टिकी**] यज्ञीय, संस्कारात्मक, शिष्टाचार सम्वन्धी ।—**पौर्तिक**—(वि०) इष्टापूर्त (यज्ञ और धर्मादि) से सम्वन्ध युक्त ।

ऐहलौकिक—(वि०) [इहलोक+ठक्—इक] [स्त्री०—**ऐहलौकिकी**] इस लोक का, सांसारिक, दुनियावी ।

ऐहिक—(वि०) [इह+ठक्—इक] [स्त्री० —**ऐहिकी**] इस लोक का, सांसारिक । स्थानीय । (न०) (इस दुनिया का) धंधा, व्यवसाय ।

ओ

ओ—संस्कृत वर्णमाला या नागरी वर्णमाला का ग्यारहवाँ वर्ण । इसका उच्चारण ओष्ठ और कण्ठ से होता है । इसके उदात्त, अनुदात्त, स्वरित तथा सानुनासिक भेद होते हैं । (पुं०) [√उ+ विच्] ब्रह्म का नाम । (अव्य०) ओह का संक्षिप्त रूप । पुकारने, याद करने और दया प्रदर्शित करने के काम में प्रयुक्त होने वाला एक अव्यय ।

ओक—(पुं०) [√उच्+क, नि० चस्य कः] घर । शरण । पक्षी । शूद्र ।

ओकण, ओकणि—(पुं०) [√उ+विच् —ओ√कण्+अच्] [ओ√कन्+इन्] खटमल । जूं ।

ओकस्—(न०) [उच्+असुन्] गृह । मकान । आश्रय, शरण ।

√ओख्—भ्वा० पर० अक० सक० सूख जाना । योग्य होना । पर्याप्त होना । शोभा वढ़ाना, सजाना । अस्वीकृत करना । रोकना । आड़ करना । ओखति, ओखिष्यति, औखीत् ।

ओघ—(पुं०) [√उच्+घञ्, पृषो०] जल की वाढ़ । जल की धार, जल का प्रवाह; 'पुनरोघेन प्रयुज्यते नदी' कु० ४.४४। ढेर । समुदाय । सम्पूर्ण, समूचा । अविच्छिन्नता, सातत्य । परम्परागत उपदेश । एक प्रकार का नृत्य । द्रुतलय (संगीत)। कालतुष्टि (सांख्य०)।

ओङ्कार—(पुं०) [ओम्+कार] एक पवित्र पद जो वेदाध्ययन के पूर्व और अन्त में कहा जाता है । अव्ययात्मक रूप में इसका अर्थ होता है—सम्मानपूर्ण स्वीकृति, गम्भीर समर्थन, हाँ, बहुत अच्छा । मङ्गल । स्थानान्तरकरण । बचाव । ब्रह्म, प्रणव ।

√ओज्—चु० उभ० अक० वलवान् होना । योग्य होना । ओजयति-ते, ओजयिष्यति-ते, औजिजत्-त ।

ओज—(वि०) [√ओज्+अच्] विषम (पहला, तीसरा आदि) ।

ओजस्—(न०) [√उब्ज्+असुन्, वलोप, गुण] प्राणवल, सामर्थ्य, शक्ति । उत्पादन-शक्ति । चमक, दीप्ति । एक काव्यालंकार । जल । धातु जैसी आभा ।

ओजसीन, ओजस्य—(वि०) [ओजस्+ख—ईन] [ओजस्+यत्] दे० 'ओजस्वत्'।

ओजस्वत्, ओजस्विन्—(वि०) [ओजस्+मतुप्] [ओजस्+विनि] ओज भरा । वलवीर्य-शाली ।

ओडिका, ओडी—(स्त्री०) [√उ+ड, ङीष्+क, ह्रस्व] [√उ+ड, ङीष्] नीवार, विना वोये उत्पन्न होने वाला धान ।

ओड्र—(पुं०) [आ√उन्द् +रक्, दस्य डत्वम्] उड़ीसा प्रदेश और उड़ीसा-प्रदेश-वासी । (न०) जवाकुसुम ।

√ओण्— भ्वा० पर० सक० हटाना । ओणति, ओणिष्यति, औणीत् ।

ओत—(वि०) [आ√वे+क्त, सम्प्रसारण] वुना हुआ, सूत से एक छोर से दूसरे छोर तक सिला हुआ ।—**प्रोत**–(वि०) अन्त-र्व्याप्ति, एक में एक वुना हुआ, गुथा हुआ, परस्पर लगा और उलझा हुआ । सव ओर फैला हुआ ।

ओतु—(पुं०) [अव्+तुन्, ऊठ्, गुण] विलाव ।

ओदन—(पुं० न०) [उन्द्+युच्, नलोप] भात । भोज्य पदार्थ, भिगोया और दूध से राँधा हुआ अन्न ।

ओम्—(अव्य०) [√अव+मन्, तस्य अतो लोपः, उठ्, गुणः] दे० 'ओङ्कार' ।

ओरम्फ—(पुं०) [?] गहरी खरोंच ।

ओल—(वि०) [आ√उन्द्+क, पृषो०] भीगा, आर्द्र, नम, तर ।

√ओलण्ड्—चु० पर० सक० ऊपर की ओर फेंकना, उछालना । ओलण्डयति— ओलण्डति ।

ओल्ल—(वि०)[ओल—पृषो०] नम, तर। (पुं०) प्रतिभू, जामिन ।

ओष—(पुं०) [√उष+घञ्] जलन, दाह।

ओषण—(पुं०) [√उष+ल्युट्] चरपरा-हट, तीक्ष्णता ।

ओषधि, ओषधी—(स्त्री०) [ओष√धा+कि, पक्षे ङीष्] वनस्पति। जड़ी-वूटी । एक फसली पौधा ।—**ईश (ओषधीश,),—गर्भ—नाथ**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**ज**–(वि०) पौधों से उत्पन्न ।—**धर,—पति**–(पुं०) कपूर । वैद्य । हकीम । चन्द्रमा ।—**प्रस्थ**–(पुं०) हिमालय । हिमालयस्थ एक नगर; 'तत्प्रयातौषधिप्रस्थस्थितये हिमवत्पुरम्' कु० ६.३३ ।

ओष्ठ—(पुं०) [√उष्+थन्]ओंठ, अधर। —**अधर (ओष्ठाधर)**–(न०) ऊपर और नीचे का ओंठ ।—**पुट**–(न०) ओंठों के खोलने से वनने वाला गड्ढा ।—**पुष्प**–(न०) वंधुक वृक्ष ।

ओष्ठ्य—(वि०) [ओष्ठ+यत्] ओंठ से सम्वद्ध । ओंठ पर उपस्थित । ओंठ से उच्च-रित ।—**वर्ण**– (पुं० न०) ओंठों की सहायता से उच्चारित होने वाले वर्ण । अर्थात् उ, ऊ, प, फ, व, भ, म ।

ओष्ण—(वि०) [ईषत् उष्णः ग० स०] गुनगुना, थोड़ा गरम ।

औ

औ—संस्कृत वर्णमाला का वारहवाँ वर्ण । इसका उच्चारणस्थान कण्ठ और ओष्ठ है । यह स्वर अ+ओ के मिलाने से वनता है । (अव्य०) [आ√अव्+क्विप्, ऊठ्] आह्वान, सम्वोधन, विरोध, और सङ्कल्प द्योतक एक अव्यय ।

औक्थ—(न०) [उक्थ+यत्+अण्, यतो लुक्] उक्थ की संतान औक्थ्य, उसकी संतान ।

औक्थिक्य—(न०) [उक्थ+ठक्+ष्यञ्] सामवेद के उक्थ नामक अंग के पढ़ने की विधि ।

औक्ष, औक्षक—(न०) [उक्ष्णां समूहः इत्यर्थे उक्षन्+अण्, टिलोप] [उक्षन् + वुञ्—अक] बैलों की हेड़ या बैलों का झुंड ।

औख्य—(वि०) [उखा+ष्यञ्] बटलोई में राँधी हुई चीज ।

औग्र्य—(न०) [उग्र+ष्यञ्] उग्रता, भयानकता, निष्ठुरता ।

औघ—(पुं०) [ओघ+अण्] जल की बाढ़, प्लावन ।

औचिती (स्त्री०); **औचित्य**—(न०) [उचित + ष्यञ्—ङीष्, यलोप] [उचित+ष्यञ्] उचित होना । योग्यता, उपयुक्तता । सत्यत्व ।

औच्चैःश्रवस—(पुं०) [उच्चैःश्रवस् + अण्] इन्द्र के घोड़े का नाम ।

औजसिक—(वि०) [ओजस्+ठक्—इक] शक्तिशाली, बलवान् ।

औजस्य—(वि०) [ओजस्+ष्यञ्] शक्ति और बल के लिये लाभदायक । (न०) शक्ति, जीवन शक्ति ।

औज्ज्वल्य—(न०) [उज्ज्वल + ष्यञ्] उजलापन । चमक । कान्ति ।

औडुपिक—(वि०) [उडुप+ठक्] नाव से नदी पार करने वाला ।(पुं०) नाव का यात्री ।

औडुम्बर—[उडुम्बर +अञ्] दे० 'औदुम्बर' ।

औड्र—(पुं०) [ओड्र+अण्] उड़ीसा प्रान्त का रहने वाला या वहाँ का राजा ।

औत्कण्ठ्य—(न०) [उत्कण्ठा+ष्यञ् (स्वार्थे)] अभिलाषा । चिन्ता ।

औत्कर्ष्य—(न०) [उत्कर्ष + ष्यञ् (भावे)] सर्वश्रेष्ठता, उत्कृष्टता ।

औत्तमि—(पुं०) [उत्तम्+इञ्] मनुओं में से एक मनु का नाम ।

औत्तर—(वि०) [उत्तर+अण्] उत्तरी, उत्तर दिशा का ।

औत्तरेय—(पुं०) [उत्तरा+ढक्—एय] परीक्षित राजा का नाम, जिनका जन्म उत्तरा के गर्भ से हुआ था ।

औत्तानपाद, औत्तानपादि—(पुं०) [उत्तानपाद+अण्] [उत्तानपाद+इञ्] ध्रुव का नाम । ध्रुव नाम का सितारा जो सदा उत्तर दिशा में देख पड़ता है ।

औत्पत्तिक—(वि०) [उत्पत्ति+ठक्—इक] प्राकृतिक, प्रकृति सम्बन्धी, सहज । एक ही समय में उत्पन्न ।

औत्पात—(वि०) [उत्पात+अण्] दे० 'औत्पातिक' ।

औत्पातिक—(वि०) [उत्पात+ठक्—इक] उत्पात संबंधी । अमाङ्गलिक । विपत्तिकारक । (न) अपशकुन । अमङ्गल ।

औत्स—(वि०) [उत्स+अण्] झरने से उत्पन्न या झरना संबंधी ।

औत्सङ्गिक—(वि०) [उत्सङ्ग + ठक्—इक] कूल्हे पर रखकर ढोया हुआ या कूल्हे पर रखा हुआ ।

औत्सर्गिक—(वि०) [उत्सर्ग+ठञ् —इक] सामान्य विधि के योग्य । त्याज्य, छोड़ने योग्य । प्राकृतिक, स्वाभाविक । औत्पत्तिक ।

औत्सुक्य—(न०) [उत्सुक+ष्यञ्] चिन्ता । बेचैनी, व्याकुलता । उत्कण्ठा, उत्सुकता ।

औदक—(वि०) [उदक+अण्] जलीय, जल से उत्पन्न होने वाला, जल सम्बन्धी ।

औदञ्चन—(वि०) [उदञ्चन + अण्] बाल्टी या घड़े में रखा हुआ ।

औदनिक—(पुं०) [ओदन+ठञ्—इक] रसोइया ।

औदरिक—(वि०) [उदर+ठक्—इक] उदर सम्बन्धी, पेटू, भोजनभट्ट ।

औदर्य—(वि०) [उदर+यत्, ततः स्वार्थे अण्] गर्भस्थित। अन्तःप्रविष्ट।

औदश्वित—(न०) [उदश्वित्+अण्] माठा जिसमें बराबर का पानी मिला हो।

औदार्य—(न०) [उदार+ष्यञ्] उदारता। कुलीनता। बड़प्पन। अर्थसम्पत्ति; 'स सौष्ठवौदार्यविशेषशालिनीं विनिश्चितार्थामिति वाचमाददे'। कि० १.३।

औदासीन्य—(न०), **औदास्य**—(न०) [उदासीन+ष्यञ्] [उदास+ष्यञ्] उपेक्षा, उदासीनता। एकान्तता। वैराग्य।

औदुम्बर—(वि०) [उदुम्बर+अञ्] गूलर की लकड़ी का बना हुआ। (पुं०) वह प्रदेश जहाँ गूलर के वृक्षों का आधिक्य हो। (न०) गूलर के वृक्ष की लकड़ी। गूलर के फल। तांबा।

औदुम्बरी—(स्त्री०) [औदुम्बर+ङीप्] गूलर के वृक्ष की डाली।

औद्गात्र—(न०) [उद्गातृ+अञ्] उद्गाता का पद या कर्म।

औद्दालक—(न०) [उद्दाल+अण् ततः सञ्ज्ञायां कन्] दीमक आदि के बिल से प्राप्त होने वाला मधु जैसा एक पदार्थ जो कड़वा और कसैला होता है।

औद्देशिक—(वि०) [उद्देश+ठक्] [स्त्री० —**औद्देशिकी**] उद्देश-सम्बन्धी। निर्देश करने वाला।

औद्धत्य—(न०) [उद्धत+ष्यञ्] उद्दण्डता, अक्खड़पन, उजड्डपन। धृष्टता, ढिठाई।

औद्धारिक—(वि०)[उद्धार+ठञ्] [स्त्री० —**औद्धारिकी**] उद्धार के लिये दिया जाने वाला। बँटवारे के योग्य।

औद्भिद—(न०) [उद्भिद्+अण्] झरने का जल। सेंधा नमक।

औद्वाहिक—(वि०) [उद्वाह+ठञ्][स्त्री० —**औद्वाहिकी**] विवाह के समय मिला हुआ। विवाह-सम्बन्धी। (न०) स्त्री को विवाह के अवसर पर मिली हुई वस्तु।

औधस्य—(न०) [उधस्+ष्यञ्] थन से निकला हुआ दूध।

औन्नत्य—(न०) [उन्नत+ष्यञ्] ऊँचाई। उत्थान।

औपकर्णिक—(वि०) [उपकर्ण+ठक्] [स्त्री०—**औपकर्णिकी**] कान के समीप वाला।

औपकार्य—(न०), **औपकार्या**—(स्त्री०) [उपकार्य+अण्] [औपकार्य— टाप्] मकान। खेमा।

औपग्रस्तिक,—**औपग्रहिक**—(पुं०) [उपग्रस्त +ठञ्] [उपग्रह+ठञ्] ग्रहण। राहुग्रस्त चन्द्र या सूर्य।

औपचारिक—(वि०) [उपचार+ठञ्] [स्त्री०—**औपचारिकी**]उपचार- सम्बन्धी। जो केवल कहने-सुनने के लिये हो, दिखाऊ। गौण, अप्रधान।

औपजानुक—(वि०)[उपजानु+ठक्][स्त्री० —**औपजानुकी**] घुटनों के समीप का।

औपदेशिक—(वि०) [उपदेश+ठञ्] [स्त्री०—**औपदेशिकी**] जो उपदेश से जीविका करता हो। जो पढ़ाकर अपना निर्वाह करता हो। उपदेश से प्राप्त।

औपधर्म्य—(न०) [उपधर्म+ष्यञ्] धर्मविरोधी मत, मिथ्या सिद्धान्त। अपकृष्ट धर्म।

औपधिक—(वि०) [उपधि+ठञ्] [स्त्री० —**औपधिकी**] प्रपञ्ची, धोखेबाज, छली, कपटी।

औपधेय—(न०) [उपधि+ठञ्] रथ का पहिया, रथाङ्ग।

औपनायनिक—(वि०) [उपनयन+ठञ्] [स्त्री०—**औपनायनिकी**] उपनयन संबंधी।

औपनिधिक—(वि०) [उपनिधि+ठञ्] [स्त्री०—**औपनिधिकी**] धरोहर सम्बन्धी। (न०) धरोहर, अमानत बंधक।

औपनिषद—(वि०) [उपनिषद्+अण्] [स्त्री०—**औपनिषदी**] उपनिषदों द्वारा

जानने योग्य । ब्रह्मविद्या सम्बन्धी । उपनिषदों पर अवलम्बित । उपनिषदों से निकला हुआ । (पुं०) ब्रह्म । उपनिषदों के सिद्धान्त का अनयायी या मानने वाला व्यक्ति ।

औपनीविक (वि०) [उपनीवि+ठक्] [स्त्री०—**औपनीविकी**] नीवि के पास का, धोती की गाँठ के पास लगा हुआ; 'औपनीविकमरुन्द्ध किल स्त्रीकरम्' शि० १०.६० ।

औपपत्तिक—(वि०) [उपपत्ति+ठक्] [स्त्री० —**औपपत्तिकी**] तैयार । उपयुक्त । कल्पनात्मक ।

औपमिक—(वि०) [उपमा+ठक्] [स्त्री० —**औपमिकी**] उपमा के योग्य, तुलना के योग्य । उपमा से प्रदर्शित ।

औपम्य—(वि०) [उपमा + ष्यञ्] तुलना । समानता, सादृश्य; 'आत्मौपम्येन भूतेषु दयां कुर्वन्ति साधवः ।'

औपयिक—(वि०) [उपाय+ठक्, ह्रस्व] [स्त्री०—**औपयिकी**] उपयुक्त, योग्य, उचित । प्रयोग द्वारा प्राप्त (पुं० न०) उपाय, प्रतीकार ।

औपरिष्ट—(वि०) [उपरिष्ट+ अण्] [स्त्री०—**औपरिष्टी**] ऊपर का ।

औपरोधिक—(वि०)[उपरोध+ठक्] कृपा या अनुग्रह सम्बन्धी । रोक डालने वाला । (पुं०) पीलू वृक्ष की लकड़ी का डंडा ।

औपल—(वि०) [उपल+अण्] [स्त्री०—**औपली**] पथरीला, पत्थर का ।

औपवस्त—(न०) [उपवस्त+अण्] कड़ाका, उपवास ।

औपवस्त्र—(न०) [उपवस्त+अण्] उपवासोपयुक्त भोजन, फलाहार । उपवास ।

औपवास्य—(न०) [उपवास+ष्यञ्] उपवास ।

औपवाह्य—(वि०) [उपवाह्य+अण्] सवारी करने योग्य । (पुं०) गजराज । राज-यान, शाही सवारी ।

औपवेशिक—(वि०) [उपवेश+ठञ्] [स्त्री०—**औपवेशिकी**] सारा समय लगाकर सेवा वृत्ति द्वारा आजीविका उपार्जन करने वाला ।

औपसंख्यानिक—(वि०)[उपसंख्यान+ठक्] [स्त्री०—**औपसंख्यानिकी**] न्यूनतापूरक । यौगिक ।

औपसर्गिक—(वि०) [उपसर्ग + ठक्] [स्त्री०—**औपसर्गिकी**] उपसर्ग-सम्बन्धी । विपत्ति का सामना करने की योग्यता से सम्पन्न । भावी अमङ्गलसूचक । वातादि सन्निपात से उत्पन्न ।

औपस्थिक—(वि०) [उपस्थ+ठञ्] व्यभिचार से पेट पालने वाला ।

औपस्थ्य—(न०) [उपस्थ+ष्यञ्] मैथुन, स्त्रीसहवास ।

औपहारिक—(वि०) [उपहार+ठक्] [स्त्री०—**औपहारिकी**] भेंट या चढ़ावा सम्बन्धी ।

औपाकरण—(न०) [उपाकरण+अण्] वेदाध्ययन का आरम्भ ।

औपाधिक—(वि०)[उपाधि+ठञ्]सापेक्ष । उपाधि-सम्बन्धी ।

औपाध्यायक—[उपाध्याय+वुञ्] [स्त्री० —**औपाध्यायकी**] अध्यापक से प्राप्त ।

औपायनिक—(वि०) [उपायन+ठक्—इक] उपहार में मिला हुआ या दिया जाने वाला (कौ०) ।

औपासन—(वि०) [उपासन+अण्] [स्त्री०—**औपासनी**] गृह्याग्नि सम्बन्धी । (पुं०) गृह्याग्नि ।

औम्—(अव्य०) शूद्रों के उच्चारणार्थ प्रणव का रूप विशेष। (क्योंकि शूद्रों के लिए ओम् का उच्चारण वर्जित है ।)

औरभ्र (वि०)—[उरभ्र+अण्] [स्त्री०—

औरभ्री] भेड़ से उत्पन्न या भेड़ सम्बन्धी। (न०) भड़ का मांस। ऊनी वस्त्र। भेड़ों का झुंड। मोटा ऊनी कंबल।

औरभ्रक—(न०) [औरभ्र+कन्] भेड़ों का झुंड।

औरभ्रिक—(पुं०) [उरभ्र+ठञ्] गड़रिया, मेषपाल।

औरस—(वि०) [उरस्+अण्] [स्त्री०—**औरसी**] छाती से उत्पन्न, अपने वास्तविक पिता के वीर्य से उत्पन्न। वैध, जायज। (पुं०) विहित पुत्र।

औरसी—(स्त्री०) [औरस+ङीप्] विहित पुत्री।

औरस्य—[उरस्+यत्, ततः स्वार्थे अण्] दे० 'औरस'।

और्ण [स्त्री०—**और्णी**], **और्णक** [स्त्री०—**और्णकी**], **और्णिक** [स्त्री०—**और्णिकी**] (वि०) [ऊर्णा+अञ्] [और्ण+कन्] [ऊर्णा+ठञ्] ऊनी, ऊन से बनी।

और्ध्वकालिक—(वि०) [ऊर्ध्वकाल+ठञ्] [स्त्री०—**और्ध्वकालिकी**] आगे की, आगामी समय की।

और्ध्वदेह—(न०) [ऊर्ध्वदेह+अण्] प्रेत-क्रिया, दशगात्र, पिण्डदान कर्म।

और्ध्वदेहिक, और्ध्वदैहिक—(वि०) [ऊर्ध्व-देह+ठञ्, वैकल्पिक उत्तर-पद-वृद्धि] मृत पुरुष से सम्बन्ध युक्त, प्रेतकर्म सम्बन्धी। (न०) प्रेतकर्म, अन्त्येष्टिकर्म, मरने के बाद किये जाने वाले कर्म।

और्व—(वि०) [ऊर्वी+अण्] धरती से संबद्ध या उत्पन्न। [उरु+अण्] जंघा से उत्पन्न। [स्त्री०—**और्वी**] (पुं०) [उर्व-ऋषेः अपत्यम् इत्यर्थे उर्व+अण्] (पुं०) 'नमक' और 'भूगोल का भाग' अर्थों में उर्वी से एवमं इतर अर्थों में और्व से अण् होता है। भृगु-वंशीय एक प्रसिद्ध ऋषि। बाड़वानल। नौना मिट्टी का नमक। पौराणिक भूगोल का दक्षिण भाग, जहाँ दैत्यों का निवास है। पञ्चप्रवर मुनियों में से एक।

औलूक—(न०) [उलूक+अञ्] उल्लुओं का झुंड।

औलूक्य—(पुं०) [उलूकऋषेः अपत्यम् इत्यर्थे उलूक+ष्यञ्] कणाद का नाम जो वैशेषिक दर्शन के प्रचारक थे।

औल्वण्य—(न०) [उल्वण+ष्यञ्] अधि-कता। अत्यधिक। विषमता। तीव्रता। अति तीक्ष्णता।

औशनस—(वि०) [उशनस्+अण्] [स्त्री० —**औशनसी**] उशना (शुक्राचार्य) सम्बन्धी या उशना से उत्पन्न अथवा उशना से अधीत। (न०) उशना कृत स्मृति या धर्मशास्त्र।

औशीनर—(पुं०) [उशीनर+अण्] उशी-नर के पुत्र शिवि प्रभृति।

औशीनरी—(स्त्री०) [औशीनर+ङीप्] पुरूरवा की रानी का नाम।

औशीर—(न०) [उशीर+अण्] पंखे या चँवर की डाँड़ी। शय्या; 'औशीरे कामचारः कृतोऽभूत्' दश०। आसन। खस पड़ा हुआ उबटन। खस की जड़। कुरसी।

औषण—(न०) [उषण+अण्] कड़वापन। काली मिर्च।

औषध—(न०) [ओषधि+अण्] दवा, ओषधि। जड़ी-बूटी। एक खनिज द्रव्य। (वि०) ओषधिजात, जड़ी-बूटी से बना हुआ।

औषधि, औषधी—(स्त्री०) [आ—ओषधि (धी) प्रा० स०] जड़ी-बूटी। काष्ठादि चिकित्सा के पदार्थ। बूटी जिससे अग्नि निकलता है, यथा—'विरमन्ति न ज्वलितु-मौषधयः।' —किरातार्जुनीय।

औषधीय—(वि०) [औषध+छ] दवा सम्बन्धी। जिसमें जड़ी-बूटी पड़ी हो।

औषर, औषरक—(न०) [ऊषर+अण्] [औषर+कन्] सेंधा नमक।

औषस—(वि०) [उषस्+अण्] [स्त्री०—**औषसी**] प्रातःकाल सम्बन्धी, सवेरे का ।

औषसी—(स्त्री०) [औषस—ङीप्] भोर ।

औषसिक, औषिक–(वि०) [उषस्+ठञ्] [उषा+ठञ्] [स्त्री०—**औषसिकी, औषिकी**] भोर का ।

औष्ट्र—(वि०) [उष्ट्र+अण्] [स्त्री०—**औष्ट्री**] ऊँट सम्बन्धी या ऊँट से उत्पन्न । ऊँटों के बाहुल्य से युक्त । (न०) ऊँटनी का दूध ।

औष्ट्रक—(न०) [उष्ट्र+वुञ्] ऊँटों का समुदाय ।

औष्ठ्य—(वि०) [ओष्ठ+यत्, ततः स्वार्थे अण्] ओंठ सम्बन्धी ।—**वर्ण**–(पुं०) ओंठ से उच्चारित होने वाले वर्ण अर्थात् प्, फ्, ब्, भ्, म् ।

औष्ण—(न०) [उष्ण+अण्] गरमी, ताप, उष्णता ।

औष्ण्य, औष्म्य (न०) [उष्ण + ष्यञ्] [उष्मन् + ष्यञ्] दे० 'औष्ण' ।

क

क—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का प्रथम व्यञ्जन। इसका उच्चारणस्थान कण्ठ है। इसको स्पर्शवर्ण भी कहते हैं । ख, ग, घ, ङ इसके सवर्ण हैं । (पुं०) [√कच्+ड]ब्रह्म । विष्णु । कामदेव । अग्नि । पवन । यम । सूर्य । जीव। राजा। गाँठ या जोड़ । मोर, मयूर । पक्षियों का राजा । पक्षी । मन । शरीर । काल, समय । बादल, मेघ । शब्द, स्वर । बाल, केश । (न०) [√कै+ड] प्रसन्नता, हर्ष । जल । 'केशवं पतितं दृष्ट्वा पाण्डवाः हर्षनिर्भराः' । शिर ।

कंस—(पुं०) (न०) [√कम्+स] जल पीने का पात्र, गिलास । कटोरा । काँसा । परिमाण विशेष, जिसे आढ़क कहते हैं । (पुं०) उग्रसेन के पुत्र कंस का नाम। यह मथुरा का राजा था और बड़ा अत्याचारी था। इसे श्रीकृष्ण ने मथुरा ही में मारा था।—**अरि** (**कंसारि**),—**अराति** (**कंसाराति**) —**कृष, –जित्, –द्विष्, –हन्**(वि०) कंस का मारने वाला, अर्थात् श्रीकृष्ण भगवान् । —**अस्थि** (**कंसास्थि**)—(न०) काँसा ।—**कार**–(पुं०) एक वर्णसङ्कर जाति, कसेरा । —'कंसकारशङ्खकारौ ब्राह्मणात्संबभूवतुः' ।–शब्दकल्पद्रुम ।

कंसक—(न०) [कंस+कन्] काँसा ।

√कक्—भ्वा० आत्म० सक० अक० चाहना, अभिलाषा करना । घमंड करना । चंचल होना । ककते, ककिष्यते, अककिष्ट ।

ककन्द—(न०) [√कक्+अन्दच्] सोना ।

ककुञ्जल—(पुं०) [कं जलं कूजयति याचते, क√कूज्+अलच् पृषो० नुम् ह्रस्वश्च] चातक पक्षी ।

ककुद्—(स्त्री०) [कं सुखं कौति सूचयति, क √कु+क्विप्, तुक् , तस्य दः] चोटी, शिखर । मुख्य, प्रधान । बैल के कंधे पर का डिल्ला । सींग । राजकीय चिह्न (जैसे—छत्र, चामर आदि); 'नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम् र० ३.७०।—**स्थ** (**ककुत्स्थ**) —(पुं०)राजा पुरञ्जय की उपाधि, सूर्यवंशी राजा विशेष। यह इक्ष्वाकु के वंश में उत्पन्न हुए थे ।

ककुद—(पुं०, न०) [कस्य देहस्य सुखस्य वा कुं भूमिं ददाति, √दा+क] दे० 'ककुद्' ।

ककुद्मत्—(वि०) [ककुद्+मतुप्] चोटी या डिल्ले वाला ।—(पुं०) बैल । पर्वत । ऋषभ नामक औषधि ।

ककुद्मती—(स्त्री०)[ककुद्मत्+ङीप्]नितम्ब, चूतड़ । एक छंद ।

ककुद्मिन्—(वि०) [ककुद्+मिनि] दे० 'ककुद्मत्' । बैल । पहाड़ । रैवतक राजा का नाम । विष्णु ।

ककुद्वत्—(पुं०) [ककुद्+मतुप्—वत्व] डिल्ले वाला बैल या भैंसा ।

ककुन्दर—(न०) [कस्य शरीरस्य कुम् अवयवं विशेषं दृणाति, ककु√दृ+खच्, नुम्] जघन कूप, नितम्बों का गड्ढा ।

ककुभ्—(स्त्री०) [क√स्कुभ्+क्विप्] दिशा । कान्ति । सौन्दर्य । चम्पा के फूलों की माला । धर्मशास्त्र । चोटी, शिखर ।

ककुभ—(पुं०) [कस्य वायोः कुः स्थानं भाति अस्मात्, क—कु√भा+क (पृषो०); वा कं वातं स्कुभ्नाति विस्तारयति, क√स्कुभ्+क] वीणा की झुकी हुई लकड़ी । (न०) कुटज वृक्ष का फूल ।

√कक्क— भ्वा० पर० अक० हँसना । कक्कति, कक्किष्यति, अकक्कीत् ।

कक्कुल—(पुं०) [√कक्कु+उलच्] वकुल वृक्ष, मौलसिरी का पेड़ ।

कक्कोल—(पुं०),—**कक्कोली**— (स्त्री०) [√कक् +क्विप्√ कुल्+ण; कक् चासौ कोलश्चेति कर्म० स०] [कक्कोल+ङीष्] शीतलचीनी, गन्धद्रव्य, वनकपूर ।

√कक्ख्—भ्वा० पर० अक० हँसना । कक्खति, कक्खिष्यति, अकक्खीत् ।

कक्खट—(वि०) [√कक्ख्+अटन्] सख्त, कड़ा । हँसने वाला ।

कक्खटी—(स्त्री०) [कक्खट+ङीप्] खड़िया मिट्टी ।

कक्ष—(पुं०) [√कष्+स] छिपने की जगह । छोर उस वस्त्र का जो सब वस्त्रों के नीचे पहिना जाता है या धोती का छोर । लता या वेल । घास या सूखी घास; 'यतस्तु कक्षस्तत एव वह्निः' र० ७.५५ । सूखे वृक्षों का वन । वगल, काँख । राजा का अन्तःपुर । जंगल का भीतरी भाग । भीत । भैंसा । फाटक । दलदल वाली जमीन । (न०) तारा । पाप । —**अग्नि** (कक्षाग्नि)—(पुं०) दावानल । —**अन्तर** (कक्षान्तर)–(न०) भीतर का या निज का कमरा ।—**अवेक्षक** (कक्षावेक्षक–(पुं०) जनानी ड्योढ़ी का दरोगा । राजकीय उद्यान का निरीक्षक । द्वारपाल । कवि । लम्पट । खिलाड़ी । अभिनयपात्र । प्रेमी ।—**धर**–(न०) कंधे का जोड़ ।—**प**–(पुं०) कछुआ ।—**पट**–(पुं०) लँगोट । —**पुट**–(पुं०) काँख, बगल ।—**शाय**—**शायु**–(पुं०) कुत्ता ।

कक्षा—(स्त्री०) [कक्ष+टाप्] कँखोरी । हाथी बाँधने की जंजीर या रस्सी । कमरबंद, इजारबंद । चहारदीवारी या दीवाल । कमर, मध्यभाग । आँगन, सहन । अहाता । घर के भीतर का कमरा या कोठा । अन्तःपुर । सादृश्य । उत्तरीय वस्त्र, दुपट्टा । आपत्ति, एतराज । प्रतिद्वन्द्विता, होड़ । काँसोटा (कमर-में बाँधने का वस्त्र विशेष)। पटका, कमरबंद । पहुँचा ।

कक्ष्या—(स्त्री०) [कक्ष+यत्—टाप्] हाथी या घोड़े का जेवरबन्द । स्त्री का कमरबंद या नारा । उत्तरीय वस्त्र, दुपट्टा । अंगे आदि की गोट, मग्जी । अन्तःपुर का कमरा । दीवाल, अहाता । सादृश्य ।

√कख्—भ्वा० पर० अक० हँसना । कखति, कखिष्यति, अकखीत् ।

कख्या—(स्त्री०) [√कख्+यत् —टाप्] अहाता, घेरा, बड़े भवन का खण्ड ।

√कग्—भ्वा० पर० सक० छिपाना । कगति, कगिष्यति, अकगीत् ।

√कङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । कङ्कते, कङ्किष्यते, अकङ्किष्ट ।

कङ्क—(पुं०) [√कङ्क्+अच्] एक मांसाहारी पक्षी, जिसके पंख बाण में लगाये जाते थे । वगले का एक भेद । आमों की जातियाँ । यमराज का नाम । क्षत्रिय । वनावटी ब्राह्मण । विराट के यहाँ अज्ञातवास की अवधि में युधिष्ठिर ने अपना नाम कङ्क ही रखा था ।—**पत्र**–(वि०) कंक पक्षी के पंखों से सम्पन्न । (पुं०) तीर, वाण ।—**पत्रिन्**–(पुं०) वाण ।—**मुख**–(पुं०) एक तरह का

चिमटा जिससे चुभा हुआ काँटा निकाला जा सकता है ।—शाय–(पुं०) कुत्ता ।

कङ्कट, कङ्कटक—(पुं०) [√कङ्क्+अटन्] [कङ्कट+कन्] कवच, वख्तर, अङ्कुश ।

कङ्कण—(पुं०, न०) [कम् इति कणति, कम् √कण्+अच्] कलाई में पहनने का एक आभूषण, कंगन । कड़ा । विवाहसूत्र, कौतुक-सूत्र । साधारणतः कोई भी आभूषण । चोटी, कलँगी । (पुं०) पानी की फुहार, यथा—नितम्बे हारालो नयनयुगले कङ्कणभरम्' ।—उद्भट ।

कङ्कणी, कङ्कणीका—(स्त्री०) [कङ्क√ अण्+अच् – ङीप्] [√कण्+यङ (लुक्) –ईकन्, कङ्कण आदेश] घुंघरू । बजने वाला आभूषण ।

कङ्कत—(पुं०, न०) **कङ्कतिका—कङ्कती**, —(स्त्री०) [√कङ्क्+अलच्] कंघी, बाल झाड़ने की कंघी या कंघा ।

कङ्कर—(वि०) [कं सुखं किरति क्षिपति, कम् √कॄ+अच्] कुत्सित, खराब । (न०) [कं जलं कीर्यते अत्र, कम्√कॄ+अप्] मट्ठा । दस करोड़ की संख्या ।

कङ्काल—(पुं, न०) [कं शिरं कालयति क्षिपति कम्√कल+णिच्+अच्] ठठरी, हड्डियों का ढाँचा, अस्थिपञ्जिर ।—**मालिन्**–(पुं०) शिव का नाम ।—**शेष**–(वि०) जिसके शरीर में केवल हड्डियाँ ही रह गयी हों ।

कङ्कालय–(पुं०) [कङ्काल√या+क] शरीर ।

कङ्केल्ल, कङ्केल्लि–(पुं०) [√कङ्क्+ एल्ल] [कङ्क्+एलि, पृषो०] अशोक वृक्ष ।

कङ्कोली—(स्त्री०) [√ कङ्क् + ओलच् (वा०) —ङीप्] दे० 'कक्कोली' ।

कङ्गुल—(पुं०) [कङ्ग√ला+क] हाथ ।

√कच्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना, चिल्लाना, शोर मचाना । कचति, कचिष्यति, अकचीत्—अकाचीत् । भ्वा० आत्म० सक० बाँधना, नत्थी करना । चमकाना । कचते, कचिष्यते, अकचिष्ट ।

कच—(पुं०) [√कच्+अच्] केश (विशेष कर सिर के) । सूखा घाव । बंधन । वस्त्र की गोट या संजाफ । बादल । बृहस्पति के पुत्र का नाम ।—**आचित (कचाचित)**–(वि०) खुले या बिखरे बालों वाला । –**ग्रह**–(पुं०) बाल पकड़नेवाला ।—**माल**–(पुं०) धूम, धुआँ ।

कचङ्गन—(न०) [कचस्य जनरवस्य अङ्गनम् ष० त०, शक० पररूप] वह मण्डी जहाँ बिकने के लिये आये हुए माल पर कोई कर वसूल न किया जाय ।

कचङ्गल—(पुं०) [कच्यते रुध्यते वेलया, √कच्+अङ्गलच्] समुद्र ।

कचा–(स्त्री०) [कच्यते रुध्यते शृङ्खलादिभिः, √कच्+अच्–टाप्] हथिनी । शोभा । छड़ी ।

कचाकचि—(अव्य०) [कचेषु कचेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम् ब० स०, इच् पूर्वपददीर्घ] एक दूसरे के बाल पकड़ कर खींचना और लड़ना ।

कचाकु—(वि०) [कच√अक्+उण्] दुष्ट । असह्य । दुष्प्राप्य । (पुं०) सर्प ।

कचाटुर—(पुं०) [कचवत् मेघ इव अटति शून्ये भ्रमति, कच√अट्+उरच्] जल-कुक्कुट ।

कच्चर—(वि०) [कुत्सितं चरति, कु√चर् +अच्] बुरा । मैला । दुष्ट, नीच ।

कच्चित्—(अव्य०) [√कम्+विच्,√चि क्विप्, पृषो० मस्य दत्वम्; कच्च चिच्च द्वयोः समाहार द्व० स०] प्रश्न; 'कच्चिन्मृगाणा-मनघा प्रसूतिः' र० ५.७ । हर्ष, और मङ्गल व्यञ्जक अव्यय विशेष ।

कच्छ—(पुं० न०) [केन जलेन छ्यति दीप्यते छाद्यते वा, क√छो+क] किनारे की जमीन, कछार । दलदल । गोट, मग्जी । नाव का एक हिस्सा । कछुए का शरीराङ्ग विशेष ।

—अन्त (कच्छान्त)–(पुं०) किसी नदी या झील का तट ।**—प**–(पुं०) कछुआ ।**—पी**–(स्त्री०) कछवी । वीणा विशेष ।**—भू**–(स्त्री०) दलदल ।

कच्छटिका, कच्छाटिका, कच्छाटी—(स्त्री०) [कच्छ√अट्+अच्+कन्, इत्व शक० पररूप; पररूपाभावे 'कच्छाटिका', ङीपि कृते 'कच्छाटी'] झगा की चुन्नट, धोती की लाँग ।

कच्छा—(स्त्री०) [कच√छद्+णिच्+ड –टाप्] झींगुर, झिल्ली ।

कच्छु, कच्छू–(स्त्री०) [√कष्+ऊ, छ आदेश ह्रस्व] [√कष्+ऊ, छ आदेश] खाज, खुजली ।

कच्छुर—(वि०) [कच्छु+र, ह्रस्व] जिसे खुजली की बीमारी हो । [कु√छुर्+क, कदादेश] लंपट, व्यभिचारी ।

कज्जल—(न०) [कु कुत्सितं जलं दूरी भवति अस्मात् व० स०, कदादेश] काजल । सुर्मा । नीलकमल । [कु√जल्+णिच्+अच, ह्रस्व कदादेश] बादल । कामरूप के अंतर्गत एक पर्वत ।**—ध्वज**–(पुं०) दीपक ।**—रोचक**–(पुं०, न०) दीवट, दीपाधार ।

√कञ्च्—भ्वा० आत्म० सक० बाँधना । चमकाना । कञ्चते, कञ्चिष्यते, अकञ्चिष्ट ।

कञ्चार—(पुं०) [कम्√चर्+णिच्+अच्] सूर्य । मदार का पौधा ।

कञ्चुक—(पुं०) [√कञ्च्+उकन्] कवच । सर्पचर्म, केंचुली । पोशाक, परिच्छद । चुस्त पोशाक । अंगिया, चोली । भूसी ।

कञ्चुकालु—(पुं०) [कञ्चुक+आलुच्] सर्प, साँप ।

कञ्चुकित—(वि०) [कञ्चक+इतच्] कवच धारण किये हुए । पोशाक पहिने हुए ।

कञ्चुकिन्—(वि०) [कञ्चुक+इनि] कवचधारी । (पुं०) जनानी ड्योढ़ी का रखवाला, अंतःपुराध्यक्ष । लम्पट, व्यभिचारी । सर्प । द्वारपाल । यव, जौ ।

कञ्चुलिका, कञ्चुली–(स्त्री०) [√कञ्च् +उलच्– ङीष्+ कन्, ह्रस्व, टाप्] [√कञ्च् + उलच् – ङीष्] चोली, अँगिया ।

कञ्ज—(पुं०) [कम्√जन्+ड] बाल । ब्रह्मा का नाम । (न०) कमल । अमृत ।**—नाभ**– (पुं०) विष्णु ।

कञ्जक—(पुं०), **कञ्जकी**—(स्त्री०) [√कञ्ज: केश इव कायति कञ्ज√कै+क] [कञ्जक+ ङीष्] मैना । कोयल ।

कञ्जन—(पुं०) [कम्√जन्+अच्] कामदेव । मैना पक्षी ।

कञ्जर, कञ्जार–(पुं०) [कम्√जॄ+अच्] [कम्√जॄ+अण्] सूर्य । हाथी । उदर, पेट । ब्रह्मा की उपाधि । मयूर । अगस्त्य मुनि ।

कञ्जल—(पुं०) [कञ्जते पठितुं शक्नोति, √कञ्ज्+कलच्] मदन पक्षी, मैना ।

√कट्—भ्वा० पर० सक० जाना । ढकना । (अक०) बरसना । कटति, कटिष्यति, अकटीत् । (जाने के अर्थ में) अकाटीत् ।

कट—(पुं०) [√कट्+अच्] चटाई । कूल्हा । कूल्हा और कमर । हाथी की कनपटी; 'कण्डूयमानेन कटं कदाचित्' र० २.३७ । घास विशेष । शव, लाश । शव-वाहन-शिविका । समाधि, मण्डप । पासा फेंकने का विशेष प्रकार । आधिक्य । तीर । रीति । श्मशान ।**—अक्ष** (कटाक्ष)–(पुं०) तिरछी निगाह । आक्षेप ।**—उदक** (कटोदक)–(न०) तर्पण का जल । हाथी का मद ।**—कार**–(पुं०) वैश्य पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न एक वर्णसङ्कर जाति । [शूद्रायां वैश्यतश्चौर्यात् कटकार इति स्मृतः—उशना ।] (वि०) चटाई बनाने वाला ।**—कोल**–(पुं०) खखारदान, पीकदान ।**—खादक**–(पुं०)

स्यार, गीदड़ । काक । काँच का पात्र ।—घोष-(पुं०) गड़रियों का पुरवा । —पूतन-(पुं०)— पूतना-(स्त्री०) एक प्रकार के प्रेतात्मा ।— प्र-(पुं०) शिव । क्षुद्र भूत या पिशाच । कीट, कीड़ा ।—प्रोथ-(पुं० न०) चूतड़, नितंब ।—मालिनी-(स्त्री०) मदिरा, शराब ।

कटक—(पुं०, न०) [√कट्+वुन्] पहुँची, कड़ा । मेखला, कमरबन्द। डोरी । जंजीर की कड़ी । चढ़ाई । सेंधा नमक । पर्वतपार्श्व । उपत्यका । सेना । राजधानी । घर, मकान । चक्र, पहिया । सोना ।

कटकिन्—(पुं०) पर्वत, पहाड़ ।

कटङ्कट—(पुं०) [कट√कट+खच् (वा०), मुम्] आग । सोना । गणेश । शिव । चित्रक वृक्ष ।

कटन—(न०) [कट√अन्+अच्] मकान की छत, खपरैल या छप्पर ।

कटम्ब—(पुं०) [√कट्+अम्बच्] एक संगीत-वाद्य । वाण ।

कटाह—(पुं०) [कट—आ√हन् + ड] कड़ाह । कूप । कछुए की पीठ का कड़ा आवरण । सूप । टूटे हुए घड़े का टुकड़ा । भैंस का बच्चा जिसे सींग निकल रहे हों । राशि, ढेर । एक द्वीप । टीला, एक नरक ।

कटि, कटी—(स्त्री०) [कट+इन्] [कटि +ङीष्] कमर । नितम्ब । हाथी का गण्ड-स्थल ।—तट-(न०) कटिदेश, कमर । चूतड़ ।—त्र-(न०) धोती । कमरबन्द ।—प्रोथ-(पुं०) चूतड़ ।—बन्ध-(पुं०) कमर-बंद । सरदी-गरमी की कमी-वेशी के विचार से किये गये पृथ्वी के विषुवत् रेखा के समानांतर पाँच विभागों में से एक ।—मालिका —(स्त्री०) स्त्रियों का इजारबन्द, नारा ।—रोहक-(पुं०) पीलवान ।—शीर्षक-(पुं०) कूल्हा ।—शृङ्खला-(स्त्री०) करधनी ।—सूत्र-(न०) कमरबन्द, इजारबन्द ।

कटिका—(स्त्री०) [कटि + कन्— टाप्] कूल्हा ।

कटीर—(पुं० , न०) [√कट्+ईरन्] गुफा । कूल्हा । कटि ।

कटीरक—(न०) [कटीर+कन्] दे० 'कटीर' ।

कटु—(वि०) [√कट्+उ] कड़वा, चरपरा । अप्रिय । बुरा लगने वाला । सुगंधित । दुर्गंधित । उग्र, तीक्ष्ण । उष्ण, गरम ।(पुं०) कड़वापन । [स्त्री०—कटु, कटवी] षट्रसों में से एक (छः प्रकार के रस ये हैं—मधुर, कटु, अम्ल, तिक्त, कषाय और लवण ।) (न०) अनुचित कर्म । धिक्कार, फटकार ।—कीट, कीटक-(पुं०) डाँस, मच्छर ।—क्वाण-(पुं०) टिट्टिभ पक्षी ।—ग्रन्थि-(न०) सोंठ ।—निष्प्लाव-(पुं०) वह अनाज जो जल की बाढ़ में डूबा न हो ।—मोद-(न०) ज्वरादिनाशक एक सुगंधित द्रव्य ।—रव-(पुं०) मेढ़क ।—विपाक-(वि०) पचने के बाद जिसका स्वाद कड़वा हो जाय । अम्ल-कारक ।—स्नेह-(पुं०) सफेद सरसों ।

कटुक—(वि०) [कटु+कन्]तीक्ष्ण, चरपरा । प्रचण्ड, तेज । अप्रीतिकर, अप्रिय । (पुं०) कड़वापन । परवल । कुटज वृक्ष । अर्क वृक्ष । राजसर्षप । अदरक । लहसुन ।—त्रय-(न०) मिर्च, सोंठ और पीपल ।—फल-(न०) कक्कोल, सीतलचीनी ।

कटुकता—(स्त्री०) [कटुक +तल्—टाप्] कड़वापन । अशिष्ट व्यवहार, अशिष्टता।

कट्टर—(न०) [√कट+उरन्] जल मिश्रित छाछ या माठा ।

कटोर—(न०) [√कट्+ओलच्, रस्य लत्वम्] मृण्मयपात्र, मिट्टी का बर्तन ।

कटोल—(पुं०) [√कट्+ओलच्] चरपरा स्वाद । निम्नवर्ण का पुरुष जैसे चाण्डाल ।

कट्टार—(पुं०) कटारी ।

√**कठ्**—भ्वा० पर० अक० कष्ट में रहना। कठति, कठिष्यति, अकाठीत्–अकठीत्।

कठ–(पुं०) [√कठ्+अच्] एक ऋषि का नाम, यह वैशम्पायन के शिष्य थे, यजुर्वेद की एक शाखा इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है। [कठ +अण्—लुक्] कठ-शाखा के पढ़ने वाले या जानने वाले।—**धूर्त**–(पुं०) कठशाखा में निष्णात ब्राह्मण।—**श्रोत्रिय**–(पुं०) यजुर्वेद की कठशाखा में पारङ्गत ब्राह्मण।

कठमर्द—(पुं०) [कठं कष्टजीवनं मृद्नाति, कठ√मृद्+अण्] शिव का नाम।

कठर—(वि०) [√कठ+अरन्] कड़ा, सख्त।

कठिका—(स्त्री०) [√कठ्+वुन् (बा०)] खड़िया।

कठिन—(वि०) [√कठ्+इनच्] कड़ा, सख्त। निष्ठुर-हृदय, संगदिल। नम्र न होने वाला। उग्र, प्रचण्ड। पीड़ाकारक।(पुं०) झाड़ी।—**पृष्ठ, पृष्ठक**–(पुं०) कछुवा।

कठिना—(स्त्री०) [कठिन+टाप्] मिश्री या बूरे की बनी मिठाई। मिट्टी की हँड़िया।

कठिनिका, कठिनी–(स्त्री०) [कठिन+ङीष् +कन्—टाप्, ह्रस्व] [कठिन+ङीष्] खड़िया मिट्टी। छगुनिया, कनिष्ठिका।

कठोर—(वि०) [√कठ+ओरन्] कड़ा, ठोस। निर्दयी, कठोर-हृदय; 'अयि कठोरयशः किल तेप्रियं' उत्त० ३.२७। पैना, तेज। पूरा, सम्पूर्ण। (आलं०) पक्का। संस्कारित, साफ किया हुआ।

√**कड्**—भ्वा०, तु० पर० अक० प्रसन्न होना। कडति, कडिष्यति, अकाडीत्।

कड—(वि०)[√कड्+अच्] गूंगा। रूखा। अज्ञान, मूर्ख।

कडङ्कर, कडङ्गर—(पुं०) [कड√कृ वा √गृ+खच्, मुम्] तृण। भूसा। मूंग आदि के डंठल, तिनका।

कडङ्करीय, कडङ्गरीय–(वि०) [कडङ्कर, कडङ्गर+छ—ईय] तृण खाने वाला (गौ, भैंस आदि)।

कडत्र—(न०) [गड्यते सिच्यते जलादिकम् अत्र, √ गड्+अत्रन्, गकारस्य ककारः] पात्र विशेष, एक प्रकार का बर्तन। नितम्ब। पत्नी।

कडन्दिका—(स्त्री०) [=कलन्दिका, डलयोरभेदः] विज्ञान। सर्वविद्या।

कडम्ब, कलम्ब–(पुं०) [√कड+अम्बच्] [√ कड+अम्बच्, डस्य लः] बाण। कदंब। साग आदि का डंठल।

कडार—(वि०) [√गड्+आरन्, कडादश] पिंगल वर्ण या भूरे रंग का। साँवला। क्रोधी। अहंकारी, घमंडी। (पुं०) साँवला या भूरा रंग। नौकर।

कडितुल—(पुं०) [कट्यां तुला तोलनं ग्रहणं यस्य, पृषो० टस्य डः] तलवार, खाँड़ा।

√**कड्ड्**—भ्वा० पर० अक० कठोर होना। कड्डति, कड्डिष्यति, अकड्डीत्।

√**कण्**—भ्वा० पर० अक० कराहना, सिसकना। छोटा होना। (सक०) जाना। कणति, कणिष्यति, अकाणीत्—अकणीत्। चु० पर० अक० आँख मूंदना। काणयति, काणयिष्यति, अचीकणत्—अचकाणत्।

कण—(पुं०) [√कण्+अच्] अनाज का एक दाना। चावल आदि का बहुत छोटा टुकड़ा। भिक्षा। रत्ती भर गर्द या धूल। पानी का बूंद या फुहार; 'कणवाही मालिनीतरङ्गाणाम्' श० ३.५। अनाज की बाल। आग का अङ्गारा।—**अद (कणाद)**,—**भक्ष**,—**भुज्**–(पुं०) अणुवाद अर्थात् वैशेषिक दर्शन के आविर्भावकर्त्ता का नाम।—**जीरक**–(न०) सफेद जीरा।—**भक्षक**–(पुं०)कणाद। एक पक्षी।—**लाभ**–(पुं०) भँवर।

कणप—(पुं०) [कण√पा+क] भाला या साँग; 'चापचक्रकणपकर्पणम्' दश०।

कणशः—(अव्य०) [कण+शस्] थोड़ा-थोड़ा, बूंद-बूंद, कण-कण ।

कणिक—(पुं०) [कण+कन्, इत्व] अनाज का दाना । अणु । अनाज की बाल । भुने हुए गेहुँओं का भोज्य-पदार्थ । शत्रु ।

कणिका—(स्त्री०) [कण+ठन्] अणु, छोटे से छोटा पदार्थ । जलबिन्दु । एक प्रकार का चावल । जीरा । अग्निमंथ वृक्ष ।

कणिश—(पुं०, न०) [कण+इनि, कणिन् √शी+ड] अनाज की बाल ।

कणीक—(वि०) [√कण्+ईकन्] छोटा, नन्हा ।

कणे—(अव्य०) [√कण्+ए] कामना-पूर्ति-व्यञ्जक अव्यय ।

कणेर—(पुं०) [√कण्+एर] कर्णिकार या कनियार का पेड़ ।

कणेरा—(स्त्री०) [कणेर+टाप्] हथिनी । रंडी, वेश्या ।

कणेरु—(पुं०) [√कण्+एरु] कर्णिकार वृक्ष । (स्त्री०) दे० 'कणेरा' ।

कण्टक—(न०) [√कण्ट्+ण्वुल्] काँटा । डंक । (आलं०) शासन या राज्य का कण्टक रूप व्यक्ति । व्याधि । रोमाञ्च । नख । मन को दुखाने वाला भाषण । (पुं०) बाँस । कारखाना । —**अशन** (**कण्टकाशन**),—**भक्षक**, —**भुज्**-(पुं०) ऊँट ।—**उद्धरण** (**कण्टकोद्धरण**)-(न०) काँटा निकालना । (आलं०)अप्रिय या उत्पातकारी व्यक्ति या वस्तु को दूर करना ।—**प्रभु**-(पुं०) काँटा, झाड़ी । शाल्मली वृक्ष ।—**मर्दन**-(न०) काँटों को कुचलना । उपद्रवों को शान्त करना ।—**विशोधन**-(न०) काँटा निकालना, दूर करना । विघ्न-बाधाओं को दूर करना । उपद्रवियों का दमन; 'कण्टकोद्धरणे नित्यमातिष्ठेद्यत्नमुत्तमम्' मनु० ।—**श्रेणी**-(स्त्री०) भटकटैया । साही ।

कण्टकार—(पुं०) [कण्टक√ऋ+अण्] सेमल । एक तरह का बबूल ।

कण्टकारिका, कण्टकारी—(स्त्री०) [कण्टक √ऋ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] [कण्टकार+ ङीष्] भटकटैया । सेमल ।

कण्टकित—(वि०) [कण्टक + इतच्] कँटीला । रोमाञ्चित ।

कण्टकिन्—(वि०) [कण्टक+इनि] कँटीला । दुःखदायी । (पुं०) मछली । काँटेदार पेड़ । खैर, बाँस, बेर या गोखरू का पेड़ ।—**फल**—(पुं०) कटहल का वृक्ष ।

कण्टकिल—(पुं०) [कण्टक+इलच्] कँटीला बाँस ।

√कण्ठ्— भ्वा० आत्म० अक० शोक करना । कण्ठते, कण्ठिष्यते, अकण्ठिष्ट । चु० उभ० अक० शोक करना । कण्ठयति-ते,—कण्ठति-ते ।

कण्ठ—(पुं०, न०) [√कण्+ठ]गला । गर्दन । स्वर, आवाज । पात्र का किनारा या गर्दन । सामीप्य, पड़ोस ।—**आभरण** (**कण्ठाभरण**-(न०) कंठा, पाटिया, तिलरी आदि गले का गहना ।—**कूणिका**-(स्त्री०) वीणा, सारंगी ।—**गत**-(वि०) गले में आया या अटका हुआ ।—**तट**-(पुं०, न०),—**तटी**-(स्त्री०) गर्दन की अगल-बगल का स्थान । —**नीडक**-(पुं०) चील ।—**नीलक**-(पुं०) मशाल, लुक्का, पलीता ।—**पाशक**- (पुं०) हाथी की गर्दन का रस्सा ।—**भूषा**-(स्त्री०) गले का जेवर, इसका संस्कृत पर्याय ग्रैवेय, ग्रैव, रुचक और निष्क है ।—**मणि**-(पुं०) रत्न जो गले में पहिना जाय ।—**माला**-(स्त्री०) गले में पहनी जाने वाली माला । गले का एक रोग जिसमें लगातार बहुत से फोड़े निकलते हैं ।—**लता**-(स्त्री०) पट्टा । बागडोर । —**शोष**-(पुं०) गला सूखना ।—**स्थ**-(वि०) गले वाला । गले से उच्चारण किया जाने वाला ।

कण्ठतः—(अव्य०) [कण्ठ+तस्] गले से, स्पष्टतः, साफ-साफ ।

कण्ठदघ्न—(वि०) [कण्ठ+दघ्नच्] गरदन तक ।

कण्ठाल—(पुं०) [√कण्ठ्+आलच्] नाव । बेलचा, कुदाली । युद्ध । ऊँट ।

कण्ठाला—(स्त्री०) [कण्ठाल+टाप्] वर्तन जिसमें दही या दूध विलोया जाय ।

कण्ठिका—(स्त्री०) [कण्ठ+ठन्—टाप्] एकलरा हार या गुंज ।

कण्ठी—(स्त्री०) [कण्ठ+ङीष्] गर्दन, गला । गुंज, गोफ । घोड़े की गर्दन में बाँधने की रस्सी ।—**रव**–(पुं०) शेर, सिंह । मद-माता हाथी । कबूतर । स्पष्ट घोषणा या उल्लेख ।

कण्ठील—(पुं०) [√कण्ठ्+ईलच्] ऊँट, उष्ट्र ।

कण्ठेकाल—(पुं०) [कण्ठे कालः विषपानजो नीलिमा यस्य, अलुक् सं०] शिव जी का नाम ।

कण्ठ्य—(वि०) [कण्ठ+यत्] गले से उत्पन्न । जिसका उच्चारण गले से हो ।—**वर्ण**–(पुं०) कण्ठ से उच्चरित होने वाले अक्षर । यथा अ, आ, क्, ख्, ग्, घ्, ङ और ह् ।—**स्वर**–(पुं०) अ और आ अक्षर ।

√**कण्ड्**—भ्वा० आत्म० अक० गर्व करना । कण्डते, कण्डिष्यते, अकण्डिष्ट । (पर०) कण्डति, कण्डिष्यति, अकण्डीत् । चु० पर० सक० भेदन करना । कण्डयति — कण्डति ।

कण्डन—(न०) [√कण्ड+ल्युट्] भूसी से अनाज को अलगाने की क्रिया । फटकना, पछोरना । भूसी ।

कण्डनी—(स्त्री०) [√कण्ड्+ल्युट्—ङीप्] ओखली । मूसल ।

कण्डरा—(स्त्री०) [√कण्ड+अरन्] नस ।

कण्डिका—(स्त्री०) [√कण्ड्+ण्वुल्—टाप्] छोटे से छोटा विभाग । वेद का एक-देश । अध्याय, प्रपाठक प्रभृति के अंतर्गत ब्राह्मण-वाक्यसमूह को कण्डिका कहते हैं ।

कण्डु—(पुं०, स्त्री०) [√कण्ड्+कु] खुजलाहट, खुजली, खाज ।

√**कण्डू**—कण्ड्वा० उभ० खुजलाना, धीरे-धीरे मलना । कण्डूयति-ते ।

कण्डू—(स्त्री०) [√कण्डू+यक्+क्विप्, अलोप, यलोप] खुजली, खाज; 'कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं' कु० १.९ ।

कण्डूति—(स्त्री०) [√कण्डू+यक्+क्तिन्, अलोप, यलोप] खाज, खुजली ।

कण्डूयन—(न०) [√कण्डू+यक्+ल्युट्] मलना, खुजलाना । (वि०) [√कण्डू+यक्+ल्यु] खुजली पैदा करने वाला ।

कण्डूयनक—(वि०) [कण्डूयन+कन्] गुदगुदाने वाला, सुरसुरी पैदा करने वाला ।

कण्डूया—(स्त्री०) [√कण्डू+यक्+अ—टाप्] खाज, खुजली ।

कण्डूरा—(स्त्री०) [कण्डू√रा+क] केवाँच ।

कण्डूल—(वि०) [कण्डू+लच्] खाज पैदा करने वाला । (पुं०) ओल, जमीकंद आदि ।

कण्डोल—(पुं०) [√कण्ड्+ ओलच्] डलिया, टोकरी ।

कण्डोष—(पुं०) झाँझा, कीड़ा, कीट ।

कण्व—(पुं०) [√कण्+वन्] एक ऋषि का नाम जिन्होंने शकुन्तला का पालन किया था ।—**दुहितृ**,—**सुता**–(स्त्री०) शकुन्तला ।

कत, कतक—(पुं०) [क√ तन् + ड], [√तक्+घ, कस्य जलस्य तकः हासः प्रकाशो वा अस्मात् व० स०]निर्मली का वृक्ष जिसके फल से जल साफ किया जाता है । (न०) निर्मली वृक्ष का फल ।

कतम—(सर्वनाम वि०) [√किम्+डतमच्] बहुतों में से कौन, कौनसा ।

कतर—(सर्वनाम वि०) [किम्+डतरच्] दो में से कौन ।

कतमाल—(पुं०) [कस्य जलस्य तमाय शोपणाय अलति पर्याप्नोति, √ अल्+अच्] अग्नि, आग ।

कति—(सर्वनाम वि०) [का संख्या परिमाणं येषाम्, किम्+डति] कितने । कुछ ।

कतिकृत्वः—(अव्य०) [कति+कृत्वसुच्] कितने बार, कितने दफा ।

कतिधा—(अव्य०) [कति+धा] कितने वार । कितने स्थानों पर । कितने भागों में ।

कतिपय—(वि०) [कति+अय, पुक्] कुछ, थोड़े-से, कुछेक; 'कतिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः' उत्त० ३.२० ।

कतिविध—(वि०) [कति विधा प्रकारोऽस्य व० स०] कितने प्रकार के ।

कतिशस्—(अव्य०) [कति+शस्] कितना-कितना । एक दफे में कितना ।

√ कत्थ्—भ्वा० आत्म० अक० सक० डींग हाँकना, शेखी बघारना । प्रशंसा करना । गाली देना । कत्थते, कत्थिष्यते, अकत्थिष्ट ।

कत्थन,–(न०) **कत्थना**—(स्त्री०)[कत्थ्+ल्युट्] [कत्थ+युच्] डींग ।

√कत्र्—चु० पर० अक० शिथिल होना । कत्रति—कत्रयति ।

कत्सवर—(न०) (कत्स√वृ+अप्) कंधा ।

√कथ्—चु० उभ० सक० कहना । वर्णन करना । वार्तालाप करना । निर्देश करना । निरूपण करना । सूचना देना । कथयति-ते, कथयिष्यति-ते, अचीकथत्-त, अचकथत्-त ।

कथक—(वि०) [√कथ्+ण्वुल्] कहने वाला । (पुं०) कथा कहने या पुराण बाँचने का पेशा करने वाला । नाटक की कथा का वर्णन करने वाला पात्र ।

कथन—(न०) [√कथ्+ल्युट्] कहना । वचन । वर्णन । उपन्यास का एक भेद ।

कथङ्कारम्—(अव्य०) [कथम्√कृ+ण्वुल्] किस प्रकार, कैसे ।

कथङ्कथिक—(वि०) [कथम् कथम् इति पृष्टत्वेन अस्ति अस्य, कथङ्कथ+ठन् (वा०)] पूछने वाला । जिज्ञासु ।

कथञ्चन—(अव्य०) [कथम्+चन] किसी प्रकार ।

कथञ्चित्—(अव्य०) [कथम् + चित्] किसी तरह । बड़ी मुश्किल से ।

कथन्ता—(स्त्री०) [कथम्+तल्] जिज्ञासा । पूछताछ ।

कथम्—(अव्य०) कैसे, किस प्रकार, किस तरह से । यह आश्चर्य-व्यञ्जक भी है ।—**प्रमाण**–(वि०) किस नाप का ।—**भूत**–(वि०) किस प्रकार का, कैसा ।—**रूप** (**कथंरूप**)–(वि०) किस सूरत-शक्ल का ।

कथा—(स्त्री०) [√कथ् + अङ –टाप्] कहानी, किस्सा । कल्पित कहानी । वृत्तान्त-वर्णन । वार्तालाप, कथोपकथन । आख्यायिका के ढंग का गद्यमय निबन्ध ।—**अनुराग** (**कथानुराग**)–(पुं०) वार्तालाप करने में हर्षित होने वाला पुरुष ।—**अन्तर** (**कथान्तर**)–(न०) दूसरी कहानी । किसी कथा के अंतर्गत दूसरी गौण कथा ।—**आरम्भ** (**कथारम्भ**)-(पुं०) कहानी का प्रारम्भ ।—**उदय** (**कथोदय**)-(पुं०) कहानी का प्रारम्भ ।—**उद्घात** (**कथोद्घात**)–(पुं०) पाँच प्रकार की प्रस्तावनाओं में से दूसरी । किसी कहानी के वर्णन का आरम्भ ।—**उपाख्यान** (**कथोपाख्यान**) –(न०) कथा का वर्णन या निरूपण ।—**छल** (**कथाच्छल**)–(न०) कल्पित कहानी का रूप-रंग । मिथ्यावर्णन ।—**नायक**,—**पुरुष**–(पुं०)किसी कहानी का मुख्य पात्र ।—**पीठ**–(न०) किसी कहानी का आरम्भिक भाग ।—**प्रबन्ध**–(पुं०) कहानी, किस्सा ।—**प्रसङ्ग**—(पुं०) वार्तालाप, बातचीत का सिलसिला । विषवैद्य; 'कथाप्रसंगेन जनैरु-

दाहृतात्' कि० १.२४ ।—प्राण-(पुं०) नाटक का पात्र ।—मुख-(न०) कथापीठ, किसी कहानी का आरम्भिक अंश ।—योग-(पुं०) वार्तालाप का सिलसिला ।—वस्तु-(न०) कथा का मूल रूप ।—वार्ता-(स्त्री०) पुराणादि की कथाओं की चर्चा । अनेक प्रकार के प्रसंग । —विपर्यास-(पुं०) किसी कहानी का बदला हुआ ढंग ।—शेष—अवशेष (कथावशेष)-(वि०) जिसका केवल वृत्तान्त बच रहे अर्थात् मृत । मरा हुआ । (पुं०) कहानी का शेष अंश या बचा हुआ भाग ।

कथानक—(न०) [कथयति अत्र,√कथ्+आनक (वा०)] छोटी कहानी, जैसे—वैताल-पच्चीसी । कहानी का संक्षेप ।

कथित—(वि०) [√कथ्+क्त] कहा हुआ । वर्णित । निरूपित ।(न०)कथन । बातचीत । मृदंग की बोली का एक भेद । (पुं०)विष्णु । —पद-(न०) पुनरुक्ति, दोहराव । (यह निबन्ध-रचना में रचना-सम्बन्धी एक दोष माना गया है ।)

√कद्—भ्वा० आत्म० अक० सक० रोना, आँसू बहाना । दुःखी होना । बुलाना । पुकारना । मार डालना । कदते, कदिष्यते, अकदिष्ट ।

कद्—(अव्य०) [समास में 'कु' के स्थान में यह आदेश होता है] यह 'कु' का पर्यायवाची है और बुराई, स्वल्पता, ह्रास, अनुपयोगिता, त्रुटिपूर्णता आदि भावों को प्रकट करता है । अक्षर (कदक्षर)-(न०) बुरा अक्षर । बुरी लिखावट ।—अग्नि (कदग्नि)-(पुं०)थोड़ी आग ।—अध्वन् (कदध्वन्)-(पुं०) बुरा मार्ग ।—अन्न (कदन्न)-(न०)मोटा अन्न—साँवा, कोदो आदि । बुरा भोजन ।—अपत्य (कदपत्य)-(न०) कपूत, बुरी संतान ।—अभ्यास (कदभ्यास)-(पुं०) बुरी आदत या बान; कुटेव ।—अर्थ (कदर्थ)-(वि०) निरर्थक, अर्थरहित ।—अर्थना (कदर्थना)-(स्त्री०) पीड़ा, अत्याचार ।—अर्थित (कदर्थित)-(वि०) तिरस्कृत, घृणित, तुच्छीकृत । अत्याचार-पीड़ित । चिढ़ाया हुआ । तुच्छ, कमीना । बद, दुष्ट ।—अर्य (कदर्य) -(पुं०) लोभी, लालची ।—०भाव (कदर्य-भाव)-लोभ, लालच । कंजूसी । कृपणता । —अश्व (कदश्व)-(पुं०) दुष्ट घोड़ा । —आकार (कदाकार)-(वि०) भोंड़ा, बदशक्ल, अपरूप ।—आचार (कदाचार) -(वि०) दुष्ट, बुरे आचरणों वाला ।-(पुं०) बुरा चालचलन ।—उष्ट्र (कदुष्ट्र)-(पुं०) बुरा ऊँट ।—उष्ण (कदुष्ण)-(वि०) गुनगुना । (न०) गुनगुनापन ।—रथ (कद्रथ)-(पुं०) बुरा रथ या गाड़ी ।—वद (कद्वद)-(वि०) बुरी बात कहने वाला । अस्पष्ट बोलने वाला अथवा ठीक ठीक बात न कहने वाला । दुष्ट; 'येन जातं प्रियापाये कद्वदं हंसकोकिलं' भट्टि० ६.७५ ।

कद—(पुं०) [कं जलं ददाति, क√दा+क] मेघ । (वि०) जलदाता ।

कदक—(न०) [कदः मेघ इव कायति प्रकाशते, कद√कै+क] चँदवा । शामियाना ।

कदन—(न०) नाश, बरबादी । हत्या । युद्ध । पाप ।

कदम्ब, कदम्बक—(पुं०) [√कद्+अम्बच्] [कदम्ब+कन्] इस नाम से ख्यात एक सुंदर पेड़ जिसमें गोल पीले फूल लगते हैं । इसके बारे में कहा जाता है कि जब बादल गरजते हैं, तब इसमें कलियाँ लगती हैं । देवताडक तृण । हलदी । सरसों । दारु हल्दी । अश्व के पाँव का एक रोग । (न०) समूह; 'पृथुकदम्बकदम्बकराजितम्' कि० ५.६ ।—अनिल-(पुं०) कदम्ब के पुष्पों की सुवास से सुवासित पवन । वसन्त ऋतु ।—वायु -(पुं०) सुवासित पवन ।

कदर—[कं जलं दारयति नाशयति, क√दॄ

+अच्] जमा हुआ दूध, दही । (न०) समारोह । कदम्ब वृक्ष के फूल ।
कदल, कदलक—(पुं०) [√कद्+कलच्] [कदल+कन्] केले का पेड़, कदली वृक्ष ।
कदली—(स्त्री०) [कदल+ङीष्] केले का पेड़ । मृग-विशेष । ध्वजा जो हाथी की पीठ पर लेकर आगे बढ़ाई जाती है । ध्वजा या झंडा ।
कदा—(अव्य०) [कस्मिन् काले, किम्+दा] कब, किस समय ।
कद्रु—(वि०) [√कद्+रु]भूरा या गेहुँवाँ । (पुं०) भूरा या गेहुँवाँ रंग । एक ऋषि । (स्त्री०) दे० 'कद्रू' ।
कद्रू—(स्त्री०) [कद्रु+ङीष्] कश्यप ऋषि की पत्नी और नागों की माता । **—पुत्र,—सुत**–(पुं०) साँप । सर्प ।
√कन्—भ्वा० पर० अक० चमकना । शोभित होना । (सक०) जाना । कनति, कनिष्यति, अकनीत्—अकानीत् ।
कनक—(न०) [कनति दीप्यते,√कन्+वुन्] सोना ।–(पुं०) पलास वृक्ष । धतूरे का वृक्ष । तिंदुक ।**—अंगद** (कनकांगद)–(पुं०) सोने का बाजू ।**—अचल** (कनकाचल),**—अद्रि** (कनकाद्रि),**—गिरि,—शैल** –(पुं०) सुमेरु पर्वत ।**—आलुका** (कनकालुका)–(स्त्री०) सुवर्ण-कलस या सोने का फूलदान । **—आह्वय** (कनकाह्वय)–(पुं०) धतूरे का पौदा ।**—कदली**–(स्त्री०)एक तरह का केला । **—कशिपु**–(पुं०)हिरण्यकश्यप नामक दैत्य । **—क्षार**–(पुं०) सुहागा ।**—टङ्क**–(पुं०)सोने की कुल्हाड़ी ।**—पत्र**–(न०) सोने का बना कान का एक गहना ।**—पराग**–(पुं०) सोने की रज या धूल ।**—सर**–(पुं०) हरताल । गला हुआ सोना ।**—सूत्र**–(न०) सोने की गुंज, आभूषण-विशेष ।**—स्थली**–(स्त्री०) सोने की खान ।
कनकमय—(वि०) [कनक+मयट्] जो बिलकुल सोने का है ।

कनखल—(न०) हरिद्वार के समीप का एक तीर्थ ।
कनन—(वि०) [√कन्+युच्] काना, एक आँख का ।
कनिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन् वा अल्प+इष्ठन् , कनादेश] सब से छोटा । सब से कम । उम्र में सब से छोटा ।
कनिष्ठा—(स्त्री०) [कनिष्ठ+टाप्]छगुनिया, हाथ की सब से छोटी उँगली ।
कनी—(स्त्री०) [√कन्+अच्—ङीष्] कन्या ।
कनीचि—(स्त्री०) [√कन्+ईचि] फूलदार बेल । छकड़ा । गुंजा ।
कनीन—(वि०) [√कन्+ईनन्] कमनीय, सुन्दर ।
कनीनिका, कनीनी—[कनीन + कन्—टाप्, इत्व] [√कन्+ईन्—ङीष्] छगुनिया, हाथ की सब से छोटी उँगली । आँख की पुतली ।
कनीयस्—(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन् वा अल्प+ईयसुन् कनादेश] अपेक्षाकृत कम । अपेक्षाकृत छोटा । वय में अपेक्षाकृत छोटा ।
कनेरा—(स्त्री०) रण्डी । वेश्या । हथिनी ।
कन्तु—(पुं०) [√कम्+तु] काम । हृदय (जो विचार और अनुभव का स्थान है) । खत्ती या खौ जिसमें अनाज भरा जाता है, अन्न-भांडार ।
कन्था—(स्त्री०) [√कम्+थन्—टाप्] गुदड़ी, कथरी ।**—धारण**–(न०) कथरी पहनना ।**—धारिन्**–(पुं०) योगी । भिक्षुक ।
√कन्द्—भ्वा० पर० सक० बुलाना । (अक०) रोना । कन्दति, कन्दिष्यति, अकन्दीत् । (आत्म०) (अक०) विकल होना । कन्दते, कन्दिष्यते, अकन्दिष्ट ।
कन्द—(पुं०, न०) [√कन्द्+णिच्+अच्] गाँठदार या गूदेदार जड़ । सूरन । बादल ।

लहसुन । कपूर । योनि का एक रोग । गाँठ । शोथ । एक वर्णवृत्त ।—**मूल**–(न०) मूली । **सार**–(न०) इन्द्र का उद्यान । (पुं०) वादल ।

कन्दट—(न०) [√कन्द्+अटन्] सफेद कमल, कुमुदिनी ।

कन्दर—(पुं०, न०) [कम्√दृ+अच्] गुफा । (पुं०) अंकुश, आँकुस ।

कन्दरा—[कन्दर+टाप्]गुफा । घाटी ।—**आकर** (**कन्दराकर**)–(पुं०)पर्वत, पहाड़ ।

कन्दरी—(स्त्री०) [कन्दर+ङीष्] गुफा ।

कन्दर्प—(पुं०) [कं कुत्सितो दर्पो यस्मात् व० स०] कामदेव । प्रेम ।—**कूप**–(पुं०)कुस या कुशा । योनि, भग ।—**ज्वर**–(पुं०) कामज्वर ।—**दहन**–(पुं०) शिव का नाम ।—**मुषल,**—**मुसल**–(पुं०) पुरुष की जननेन्द्रिय, लिङ्ग ।—**शृङ्खल**–(पुं०) एक रतिवन्ध ।

कन्दल—(पुं०, न०) [√कन्द्+अलच्] अँखुआ, अंकुर । लानत, मलामत, भर्त्सना । गाल अथवा गाल और कनपटी । अशकुन । मधुर स्वर । केले का वृक्ष । (पुं०) सुवर्ण । युद्ध, लड़ाई । वादानुवाद, वहस । (न०) पुष्प-विशेष; 'विदलकन्दल-कम्पनलालिताः' शि० ६.३० ।

कन्दली—(स्त्री०)[कन्दल+ङीष्] केले का वृक्ष । एक जाति का हिरन । झंडा । कमलगट्टा या कमल का वीज ।—**कुसुम**–(न०) कुकुरमुत्ता ।

कन्दु—(पुं०,स्त्री०) [√स्कन्द्+उ, सलोप] वटलोई, पतीली । तंदूर, चूल्हा ।

कन्दुक—(पुं०, न०) [कम्√दा+डु+कन्] गेंद । गलतकिया । सुपारी । एक वर्णवृत्त ।—**लीला**–(स्त्री०) गेंद का खेल ।

कन्दोट—(पुं०) [√कन्द्+ओटन्] सफेद कमल का फूल । नील कमल ।

कन्धर—(पुं०) [कं शिरो जलं वा वारयति, +अच्] गरदन । वादल ।

कन्धरा—(स्त्री०) [कन्धर+टाप्]गरदन ।

कन्धि—(स्त्री०) [कं जलं शिरो वा धीयतेऽस्मिन् , कम्√धा+कि]समुद्र । गरदन ।

कन्न—(न०) [√कद्+क्त] पाप । मूर्च्छा, वेहोशी ।

कन्यका—(स्त्री०) [कन्या+कन् , ह्रस्वता] लड़की । दस वर्ष की लड़की की संज्ञा । साहित्यालंकार में कई प्रकार की नायिकाओं में से एक, अविवाहिता लड़की, जो किसी पद्यमय काव्य की प्रधान नायिका हो । कन्याराशि ।—**छल**–(पुं०) वहकावा, झाँसा, फुसलाहट ।—**जन**–(पुं०) कुँवारी कन्या । अविवाहिता लड़की ।—**जात**–(पुं०)अविवाहिता लड़की से उत्पन्न पुत्र । कानीन ।

कन्यस—(पुं०) [कन्य√सो+क] सवसे छोटा भाई ।

कन्यसा—(स्त्री०) [कन्यस+टाप्]सवसे छोटी उँगली ।

कन्यसी—(स्त्री०) [कन्यस+ङीष्] सवसे छोटी वहन ।

कन्या—(स्त्री०) [√कन् + यक्—टाप्] अविवाहिता लड़की या पुत्री । दस वर्ष की उम्र की लड़की । क्वाँरी लड़की । साधारणतः कोई भी स्त्री । कन्या राशि । दुर्गा का नाम । वड़ी इलायची ।—**अन्तःपुर** (**कन्यान्तःपुर**) –(न०) जनानखाना, अन्तःपुर; 'सुरक्षितेऽपि कन्यान्तःपुरे कश्चित् प्रविशति' पं० १ ।—**आट** (**कन्याट**)–(वि०) युवती लड़कियों की खोज में रहने वाला । (पुं०) लड़कियों के रहने का स्थान । वह पुरुष जो युवतियों का शिकार करे अथवा उनकी खोज में रहे ।—**कुब्ज**–(पुं०) कन्नौज नामक नगर ।—**गत**–(वि०) लड़की से संवंधित । कन्या राशि पर गया हुआ ।—**ग्रहण**–(न०) विवाह में कन्या को ग्रहण करना या लेना ।—**दान**–(न०) विवाह में कन्या को देना ।—**दोष**–(पुं०) कन्याओं के ऐव जैसे रोग, अङ्गन्यूनता आदि ।—**धन**–(न०) दहेज । यौतुक । —**पति**–

(पुं०) दामाद, जामाता ।—पुत्र–(पुं०) अविवाहिता लड़की से उत्पन्न लड़का जिसे कानीन कहते हैं ।—पुर–(न०) जनानखाना। —भर्तृ–(पुं०) दामाद, जमाई । कार्त्तिकेय का नाम ।—रत्न–(न०) अत्यन्त सुन्दरी कन्या।—राशि–(पुं०) छठी राशि ।—वेदिन् –(पुं०) जमाई।—शुल्क–(न०) वह धन जो कन्या का मूल्य-स्वरूप कन्या के पिता को दिया जाता है ।—स्वयंवर–(पुं०) क्वाँरी कन्या द्वारा अपने लिये पति का वरण करने का विधान ।—हरण–(न०) कन्या को भगा ले जाना ।

कन्याका, कन्यिका–(स्त्री०) [कन्या+कन् –टाप्] [कन्या+कन्–टाप् , इत्व] युवती लड़की । क्वाँरी लड़की ।

कन्यामय—(वि०) [कन्या+मयट्] कन्या-स्वरूप, लड़की-जैसा; 'कन्यामये नेत्रशतैक-लक्ष्ये' र० ६.११। कन्या-विशिष्ट, लड़कियों से भरा-पूरा । (न०) जनानखाना, अन्तःपुर, (जिसमें अधिक संख्या लड़कियों की ही हो) ।

कपट—(पुं०) [के मूर्ध्नि अग्रे पट इव आच्छादकः] बनावटी व्यवहार, धोखा, छल ।—तापस–पाखण्डी साधु, बना हुआ तपस्वी ।—पटु–(वि०) धोखा देने में निपुण ।—प्रबन्ध–(पुं०) कपटपूर्ण चाल । —लेख्य–(न०) जाली दस्तावेज या टीप । —वचन–(न०) धोखे की बात ।—वेश– (वि०) बहुरूपिया, शक्ल बदले हुए ।

कपटिक—(वि०) [कपट+ठन्–इक] छली, दगाबाज ।

कपटिन्—(वि०) [कपट+इनि] छलिया । शठ ।

कपर्द, कपर्दक–(पुं०) [√पर्व्+क्विप्, वलोप पर्, कस्य गंगाजलस्य परां पूरणेन दापयति शुध्यति, क–पर्√दैप्+क] [कपर्द+कन्] कौड़ी । जटा, विशेष कर शिव का जटाजूट ।

कपर्दिका—(स्त्री०) [कपर्दक+टाप् , इत्व] कौड़ी ।

कपर्दिन्—(पुं०) [कपर्द+इनि] शिव का नाम ।

कपाट—(पुं०, न०) [कं वायुं मस्तकं वा पाटयति, क√पट्+णिच्+अण्] किवाड़। द्वार, दरवाजा ।—उद्घाटन (कपाटोद्घाटन) –(न०) किवाड़ खोलना।—घ्न–(पुं०) [कपाट √हन्+टक्] सेंध फोड़ने वाला, चोर ।

कपाल—(पुं०, न०) [कं मस्तकं पालयति, क √पालि+अण्] खोपड़ी । खप्पर । समा-रोह। भिक्षापात्र। प्याला या कटोरा। ढक्कन, ढकना ।—पाणि,—भृत् ,—मालिन् ,—शिरस–(पुं०) शिव की उपाधियाँ ।—मालिनी–(स्त्री०) दुर्गादेवी का नाम ।

कपालिका—(स्त्री०) [कपाल+कन्–टाप्, इत्व]खोपड़ी । घड़े का टुकड़ा । दाँत की पपड़ी । दुर्गा ।

कपालिन्—(वि०) [कपाल+इनि] खोपड़ी रखने वाला । खोपड़ियों की माला पहनने वाला । (पुं०) शिव की उपाधि । नीच जाति का आदमी, जो ब्राह्मणी माता और धीवर पिता से उत्पन्न हुआ हो ।

कपि—(पुं०) [√कम्प्+इ, नलोप] बंदर, लङ्गूर । हाथी । करंज का एक भेद । सूर्य । शिलारस । एक धूप ।—आख्य (कप्याख्य) –सुगन्धित द्रव्य, धूप, धूना ।—इज्य (कपी-ज्य)–(पुं०) श्रीरामचन्द्र और सुग्रीव की उपाधि ।—इन्द्र (कपीन्द्र)–(पुं०) हनुमान की उपाधि । सुग्रीव की उपाधि । जाम्बवान की उपाधि ।–कच्छु–(स्त्री०) केवाँच ।—केतन,—ध्वज–(पुं०) अर्जुन का नाम ।–ज,—तैल,—नामन्–(न०) शिलाजीत । लोबान ।—प्रभु–(पुं०) श्रीरामचन्द्र की उपाधि ।—प्रिय–(पुं०) अमड़ा । कैथ ।—रथ–(पुं०) राम । अर्जुन ।—लता–(स्त्री०)

केवाँच ।—लोमफला–(स्त्री०) केवाँच ।—लोह–(न०) पीतल ।

कपिञ्जल—(पुं०) [क√पिञ्ज्+कलच्] चातक पक्षी । तीतर पक्षी ।

कपित्थ—(पुं०) [कपिस्तिष्ठति अत्र तत्फल-प्रियत्वात्, कपि√स्था+क—पृषो०] कैथा का पेड़ । (न०) कैथा का फल ।—**आस्य** (**कपित्थास्य**)—(पुं०) गोलाङ्गूल नामक वानर की एक जाति ।

कपिल—(वि०) [√कम्प्+इलच्, पादेश] भूरा, बादामी । (पुं०) एक महर्षि का नाम, जिन्होंने सगर राजा के ६० हजार पुत्रों को भस्म कर डाला था । इन्होंने सांख्यदर्शन का आविष्कार किया था । कुत्ता । लोबान । धूप । एक प्रकार की आग । भूरा रंग ।—**अश्व**, **कपिलाश्व**–(पुं०) इन्द्र ।—**द्युति**-(पुं०) सूर्य ।—**द्रुम**—(पुं०) एक वृक्ष जिसकी लकड़ी सुगंधित होती है ।—**धारा**–(स्त्री०) काशी के पास एक तीर्थस्थान । गंगा ।—**स्मृति**–(स्त्री०) कपिल-रचित सांख्य-सूत्र ।

कपिला—(स्त्री०) [कपिल+टाप्] भूरे रंग की गाय । एक प्रकार का सुगन्धित द्रव्य । लकड़ी का लट्ठा । जोंक ।

कपिश—(वि०) [कपिः कपिलवर्णोऽस्य अस्ति, कपि+श] भूरा, सुनहला । ललौंहा । (पुं०) भूरा या सुनहला रंग । शिलाजीत या लोबान ।

कपिशा—(स्त्री०) [कपिश+टाप्] माधवी लता । एक नदी का नाम ।

कपिशित—(वि०) [कपिश+इतच्] सुन-हला या भूरे रंग का ।

कपुच्छल—(न०), **कपुष्टिका**—(स्त्री०) [कस्य शिरसः पुच्छमिव लाति, क—पुच्छ √ला+क] [कस्य शिरसः पुष्टौ पोपणाय कायति, क—पुष्टि√कै+क—टाप्] चूड़ा-करण संस्कार । दोनों कनपटियों के ऊपर के केशगच्छ ।

कपूय—(वि०) [कुत्सितं पूयते, कु√पूय्+अच्, पृषो० उलोप] निकम्मा, हेय, नीच ।

कपोत—(पुं०) [को वातः पोत इव यस्य, ब० स०] कबूतर । पंडुक । चिड़िया ।—**अङ्घ्रि** (**कपोताङ्घ्रि**)–(पुं०) एक सुगन्ध-द्रव्य ।—**अञ्जन** (**कपोताञ्जन**)–(न०) सुर्मा ।—**अरि** (**कपोतारि**)- (पुं०) बाज पक्षी ।—**चरणा**–(स्त्री०) एक सुगन्धित द्रव्य ।—**पालिका**,—**पाली**–(स्त्री०) काबुक, कबूतरों का दरबा ।—**वङ्का**–(स्त्री०) ब्राह्मी लता ।—**वर्णी**–(स्त्री०) छोटी इलायची ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) संचय न करने की वृत्ति ।—**व्रत**–(न०) दूसरों का अत्याचार सहन करना ।—**सार**–(न०) सुर्मा ।—**हस्त**–(पुं०) हाथ जोड़ने की एक विधि जो भय या प्रार्थना व्यञ्जक होती है ।

कपोतक—(पुं०) [कपोत+ कन्] छोटा कबूतर । (न०) सुर्मा ।

कपोल—(पुं०) [काप+ओलच्, पादेश] गाल ।—**कल्पित**–(वि०) मनगढ़ंत ।—**फलक**–(पुं०) चौड़े गाल ।—**भित्ति**–(स्त्री०) कनपटी और गाल ।—**राग**-(पुं०) गालों का गुलाबी रंग ।

कफ—(पुं०) [केन जलेन फलति, क√फल् +ड] एक गाढ़ी, लसीली चीज जो अक्सर खाँसने से बाहर आती है । श्लेष्मा, बलगम ।—**अरि** (**कफारि**)–(पुं०) सोंठ ।—**कूर्चिका**–(स्त्री०) थूक, खखार ।—**क्षय**–(पुं०) क्षय रोग ।—**घ्न**,—**नाशन**,—**हर**-(वि०) कफनाशक ।—**ज्वर**–(पुं०) कफ की वृद्धि या कफ के विकार से उत्पन्न हुआ ज्वर ।—**विरोधिन्**–(पुं०, न०) मिर्च ।

कफणि, कफोणि, कफोणी—(स्त्री०) [केन सुखेन फणति स्फुरति, क√फण् + इन्] [क√फण् वा√स्फुर्+इन्, पृषो० साधुः] [कफोणि+ङीप्] कुहनी ।

कफल—(वि०) [कफ+लच्] कफ प्रकृति का।

कफिन्—(वि०) [कफ+इनि] [स्त्री०—कफिनी] कफ की वृद्धि से पीड़ित। (पुं०) हाथी।

कबन्ध—(पुं०, न०) [कं मुखं बध्नाति, क√बन्ध+अण्] सिररहित धड़, (विशेष कर वह धड़ जिसमें प्राण बाकी हों; नृत्यत्कबन्धं समरे ददर्श' र० ७.५१। (पुं०) पेट। बादल। धूमकेतु। राहु का नाम। जल। श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में वर्णित एक राक्षस, जिसे श्रीरामचन्द्र ने मारा था।

कवित्थ—(पुं०) [कपित्थ—पृषो० साधुः] कैथा का पेड़।

√कम्—भ्वा० आत्म० सक० चाहना। कामयते, कामयिष्यते— कमिष्यते, अचीकमत —अचकमत।

कमठ—(पुं०) [√कम्+अठन्] कछुआ। बाँस। घड़ा।—**पति**–(पुं०) कछुवों का राजा।

कमठी—(स्त्री०) [कमठ+ङीष्] कछुई या छोटा कछुवा।

कमण्डलु—(पुं०) [मण्डनं मण्डः कस्य जलस्य मण्डं लाति क—मण्ड√ला+कु] साधु संन्यासियों का दरियाई नारियल, तूंबी आदि का बना जलपात्र।—**तरु**–(पुं०) पाकर का पेड़।—**धर**–(पुं०) शिव का नाम।

कमन—(वि०) [√कम्+ल्यु] विषयी, लम्पट। सुन्दर, मनोहर। (पुं०) कामदेव। अशोक वृक्ष। ब्रह्मा का नाम।

कमनीय—(वि०) [√कम्+अनीयर्] वाञ्छनीय। मनोहर, सुन्दर। प्रिय।

कमर—(वि०) [√कम्+अर] कामासक्त। उत्सुक।

कमल—(न०) [कं जलम् अलति भूषयति, कम्√अल्+अच्] पानी में होने वाला एक प्रसिद्ध पौधा और उसका फल, पद्म। जल। ताँबा। अर्क विशेष। सारस पक्षी। मूत्र-स्थली। (पुं०) मृगों का एक भेद। सारस।—**अक्षी** (**कमलाक्षी**)–(स्त्री०) कमल जैसे नेत्रों वाली स्त्री।—**आकर** (**कमलाकर**)–(पुं०) कमल-समूह। कमल-परिपूर्ण सरोवर।—**आलया** (**कमलालया**)–(स्त्री०) लक्ष्मी का नाम।—**आसन** (**कमलासन**)–(पुं०) ब्रह्मा का नाम।—**ईक्षण** (**कमलेक्षण**)–(वि०) कमल जैसे नेत्रों वाला।—**उत्तर** (**कमलोत्तर**)–(न०) कुसुम्भ पुष्प।—**खण्ड**–(न०) कमलसमूह।—**ज**–(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि। रोहिणी नक्षत्र।—**जन्मन्**,—**भव**,—**योनि**,—**सम्भव**—(पुं०) ब्रह्मा की उपाधियाँ।

कमलक—(न०) [कमल+कन्] छोटा कमल।

कमला—(स्त्री०) [कमलं विद्यतेऽस्याः, कमल+अच्—टाप्] लक्ष्मी की उपाधि। सर्वोत्तम स्त्री।—**पति**,—**सख**–(पुं०) विष्णु की उपाधि।

कमलिनी—(स्त्री०) [कमल+इनि—ङीप्] कमल का पौधा। कमल-समूह। वह स्थान जहाँ कमलों का बाहुल्य हो।

कमा—(स्त्री०) [√कम्+णिच्+अ—टाप्] सौन्दर्य, कमनीयता।

कमितृ—(वि०) [स्त्री० कमित्री] [√कम्+तृच्] कामासक्त, कामुक।

कम्प्—भ्वा० आत्म० अक० हिलना, काँपना, थरथराना। घूमना-फिरना। कम्पते, कम्पिष्यते, अकम्पिष्ट।

कम्प—(पुं०), **कम्पा**–(स्त्री०) [√कम्प्+घञ्] [√कम्प्+अ—टाप्] थरथरी, कँपकँपी।—**अन्वित** (**कम्पान्वित**)–(वि०) थरथराने वाला, आन्दोलित।—**लक्ष्मन्**–(पुं०) वायु, पवन।

कम्पन—(वि०) [√कम्प्+युच्] थरथराने वाला, काँपने वाला। (पुं० न०) शिशिर-

ऋतु । (न०) [√कम्प्+ल्युट्] थरथरी, कँपकँपी । उच्चारण-विशेष, गिटकिरी ।

कम्पाक--(पुं०) [कम्पया चलनेन कायति प्रकाशते, कम्पा√कै+क] वायु, पवन ।

कम्प्र--(वि०) [√कम्प्+र] काँपने वाला, हिलने वाला; 'विधाय कम्प्राणि मुखानि कं प्रति' नै० १.१४२ ।

√कम्ब्--भ्वा० पर० सक० जाना । कम्बति, कम्बिष्यति, अकम्बीत् ।

कम्बर--(वि०) [√कम्ब्+अरन्] चित्र-विचित्र रंग का, रंग-बिरंगा । (पुं०) चित्र-विचित्र रंग ।

कम्बल-(पुं०)[√कम्ब्+कलच्]ऊनी कंबल। गलत्था, गौ की गरदन के नीचे का लटकता हुआ मांसल चर्म । हेंगा । हिरन-विशेष । ऊनी वस्त्र जो ऊपर से पहना जाय । दीवाल । जल । **वाह्यक**-(न०) वहली जिस पर ऊनी पर्दा पड़ा हो ।

कम्बलिका--(स्त्री०) [कम्बल+ई+कन्, ह्रस्व, टाप्] छोटा कंबल, कमली ।--**वाह्यक**-(न०) कंबल के उघार की बैल-गाड़ी ।

कम्बलिन्--(वि०) [कम्बल+ इनि] कंबल से युक्त । (पुं०) बैल ।

कम्बी (वी)--(स्त्री०) [√कम्+विन् (वा०)+ङीप्] कलछी या चमचा ।

कम्बु--(वि०)[√कम्+उण्, वुक] [स्त्री --कम्बु, कम्बू] चित्तीदार, धब्बादार, रंगविरंगा । (पुं०, न०) शङ्ख । (पुं०) हाथी । गरदन । रंगविरंगा रंग । शरीरस्थ एक रंग । कंकण, पहुँची । नलीनुमा हड्डी ।--**कण्ठी**, --**ग्रीवा**-(स्त्री०) शंख जैसी गरदन वाली स्त्री ।

कम्बोज--(पुं०) [√कम्ब्+ओज] एक प्राचीन जनपद जो अब अफगानिस्तान का भाग है । शंख । एक तरह का हाथी ।

कम्र--(वि०) [√कम्+र] मनोहर, सुन्दर।

कर--(पुं०) [√कृ+ अप् वा√कृ+अच्] [स्त्री०--**करा या करी**] हाथ । किरण; 'अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्रमपि' शि० ९.६। हाथी की सूँड़ ।मालगुजारी, चुंगी, खिराज । ओला । २४ अंगुल का एक माप । हस्त नक्षत्र ।--**अग्र** (**कराग्र**)-(न०) हाथ का अगला भाग । हाथी की सूँड़ की नोक ।--**आघात** (**कराघात**)-(पुं०) हाथ का प्रहार या आघात ।--**आरोट** (**करारोट**)-(पुं०) अँगूठी ।--**आलम्ब** (**करालम्ब**)-(पुं०) हाथ का सहारा देना ।-**आस्फोट**(**करास्फोट**)-(पुं०) छाती । हाथ का आघात । --**कण्टक**-(पुं०, न०) हाथ की उँगली का नाखून ।--**कमल**,--**पङ्कज**,--**पद्म**-(न०) कमल जैसा हाथ, सुन्दर हाथ ।--**कलश**- (पुं०, न०) हाथ की अंजलि ।--**किसलय**-(पुं०, न०) कोमल कर । अँगुली ।--**कोष**--(पुं०) हाथ की उँगली ।--**ग्रह**-(पुं०)--**ग्रहण**-(न०) कर लगाना । पाणिग्रहण करना । विवाह ।--**ग्राह**-(पुं०) पति । कर उगाहने वाला ।----**ज**- (पुं०) हाथ की उँगली का नख । (न०) एक सुगन्धित द्रव्य ।-- **जाल**-(न०) प्रकाश की धारा ।--**तल**- (पुं०) हथेली । --**ताल**-(पुं०)--**तालक**- (पुं०) ताली बजाना । करताल नाम का बाजा ।--**तालिका**,--**ताली**-(स्त्री०) ताली । --**तोया**-(स्त्री०) पूर्व बंगाल की एक नदी का नाम ।--**द**-(वि०) कर अदा करने वाला । कर या सहारा देने वाला ।--**पत्र**-(न०) आरा, आरी ।--**पत्रिका**-(स्त्री०) जलक्रीड़ा, जल में क्रीड़ा करते समय पानी को उछालना ।--**पल्लव**-(पुं०) कोमल हस्त । उँगली ।--**पालिका**-(स्त्री०) तलवार । फावड़ा, कुदाली ।--**पीडन**-(न०) विवाह । --**पुट**-(न०) अंजलि ।--**पृष्ठ**-(न०) हाथ की पीठ ।--**बाल**,--**वाल**-(पुं०) तलवार ।

उँगली का नख।—भार–(पुं०) अत्यन्त अधिक कर।—भू–(पुं०) उँगली का नख। —भूषण–(न०) पहुँची। कड़ा।—माल–(पुं०) धुआँ।—मुक्त–(न०) फेंक कर वार करने का हथियार।—रुह–(पुं०) नख, नाखून; 'अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहैः' श० २.१०। —वीर,—वीरक–(पुं०) तलवार, खाँड़ा। कब्रगाह। एक देश का नाम। कनेर।—शाखा–(स्त्री०) उँगली।—शीकर–(पुं०) हाथी की सूँड़ से फेंका हुआ जल।—शूक- (पुं०) उँगली का नाखून।—साद–(पुं०) किरणों के प्रकाश का मंदा पड़ जाना।—सूत्र–(न०) सूत्र जो विवाह के समय कलाई पर बाँधा जाता है। —स्थालिन्–(पुं०) शिव का नाम।—स्वन–(पुं०) ताली बजाना।

करक—(पुं०, न०) [√कृ वा √कृ+वुन्] कमंडलु। करवा। नारियल की खोपड़ी अनार। हाथ। महसूल। एक पक्षी। ओला, उपल। —अम्भस् (करकाम्भस्)–(पुं०) नारियल का वृक्ष।—आसार (करकासार)–(पुं०) ओलों की फुहार या वर्षा।—ज-(पुं०) पानी। —पात्रिका–(स्त्री०) एक चर्म-पात्र, मशक।

करङ्क—(पुं०) [कस्य रङ्क इव ष० त०] हड्डियों की गठरी। खोपड़ी। नरेरी, नारियल का बना पात्र।

करञ्ज—(पुं०) [क√रञ्ज्+णिच्+अण्] एक झाड़, कंजा जिसके फल आदि दवा के काम आते हैं।

करट—(पुं०) [क√रट्+अच्] हाथी का गाल। कुसुंभ। काक। नास्तिक। पतित ब्राह्मण।

करटक—(पुं०) [करट+कन्] काक। चोरी की कला का विस्तार करने वाले कर्णीरथ का नाम। हितोपदेश और पञ्चतंत्र में वर्णित एक शृगाल का नाम।

करटा—(स्त्री०) [√कृ+अटन्– टाप्] कठिनता से दूध देने वाली गाय।

करटिन्—(पुं०) [करट+इनि] हाथी; 'दिगन्ते श्रूयन्ते मदमलिनगण्डाः करटिनः'।

करटु, करेटु—(पुं०) [√कृ+अटु] [के जले वायौ वा रेटति, क√रेट्+कु] सारस पक्षी का भेद।

करण—(न०) [√कृ+ल्युट्] करना। सम्पन्न करना। क्रिया। धार्मिक अनुष्ठान। व्यवसाय, व्यापार। इन्द्रिय; 'वपुषा करणोज्झितेन सा निपतन्ती पतिमप्यपातयत्' र० ८.३८। शरीर। क्रिया का साधन। कारण, हेतु। टीप, दस्तावेज, लिखित प्रमाण। संगीत विद्या में ताली से ताल देना। ज्योतिष में दिन का एक विभाग।—अधिप (करणाधिप)–(पुं०) जीव।—ग्राम–(पुं०) इन्द्रियों की समष्टि।—त्राण–(न०) सिर।

करण्ड—(पुं०) [√कृ+अण्डन्] संदूकची या छोटी डलिया। शहद की मक्खी का छत्ता। तलवार। कारण्डव (जल) पक्षी।

करण्डिका, करण्डी—(स्त्री०) [करण्ड+ङीष्, +कन्, टाप् ह्रस्व] [करण्ड+ङीष्] बाँस की पिटारी।

करन्धय—(वि०) [कर√धे+खश्, मुम्] हाथ चूमते हुए।

करभ—(पुं०) [√कृ+अभच् वा कर√भा +क] कलाई से लेकर उँगली के नख तक के हाथ का पृष्ठ भाग। सूँड़। जवान हाथी। जवान ऊँट। ऊँट। एक सुगन्धि-द्रव्य।—ऊरू (करभोरू)–(स्त्री०) हाथी की सूँड़ जैसी जंघाओं वाली स्त्री।

करभक—(पुं०) [करभ+कन्] ऊँट।

करभिन्—(पुं०) [करभ+इनि] हाथी।

करम्ब, करम्बित—(वि०) [√कृ+अम्बच्] [करम्ब+इतच्] मिश्रित। मिलाजुला। जड़ा हुआ, बैठाया हुआ।

करम्ब, करम्भ—(पुं०) [क√रम्भ्+घञ्]

आटा या अन्य भोज्य पदार्थ जिसमें दही मिला हो। कीचड़। यथा--करंभावालुकातापान्-मनु।

करहाट--(पुं०) [कर√हट्+णिच्+अण्] एक देश। सम्भवतः सतारा जिले का आधुनिक कह्लाड। कमल का डंठल या कमल-नाल। कमल की जड़ से निकलने वाले रेशे। मदन वृक्ष, मैनफल।

कराल--(वि०) [कर-आ√ला+क] भयानक। फटा हुआ। चौड़ा खुला हुआ। बड़ा, लंबा, ऊँचा। असम, विषम। नुकीला।--(पुं०) राल मिला हुआ तेल। दाँतों का एक रोग। कस्तूरीमृग। काला बबूल।--**दंष्ट्र**-(वि०) भयानक दाढ़ों वाला।--**वदना**-(स्त्री०) काली। भयानक मुख वाली स्त्री।

करालिक--(पुं०) [कराणां करसदृशशाखानां आलिः श्रेणी यत्र, ब० स० कप्] वृक्ष। तलवार।

करिक--(पुं०) [कर+ठन्+इक] पैर का चिह्न।

करिका--(स्त्री० [करो विलेखनम् अस्ति अस्याः, कर+अच्+ङीष्+कन्-टाप्, ह्रस्व] खरोंच, नखाघात।

करिणी--(स्त्री०) [करिन्+ङीष्] हथिनी; 'कथमेत्य मतिर्विपर्ययं करिणी पङ्कमिवावसीदति' कि० २.६।

करिन्--(पुं०) [कर+इनि] हाथी। आठ की संख्या।--**इन्द्र** (**करीन्द्र**),--**ईश्वर** (**करीश्वर**),-**वर**-(पुं०) विशाल हाथी, गजराज। ऐरावत।--**कुम्भ**-(पुं०) हाथी के मस्तक का वह भाग जो ऊँचा उठा हुआ हो।--**गर्जित**-(न०) हाथी की चिंघाड़।--**दन्त**-(पुं०) हाथी का दाँत।--**प**-(पुं०) महावत।--**पोत**,--**शाव**,--**शावक**-(पुं०) हाथी का बच्चा।--**बंध**--(पुं०) हाथी का खूँटा।--**माचल**-(पुं०) सिंह।--**मुख**-(पुं०) गणेश।--**वैजयन्ती**-(वि०) हाथी की पीठ पर रखा हुआ झंडा।--**स्कन्ध**-(वि०) हाथियों का समूह।

करीर--(पुं०) [कॄ+ईरन्] बाँस का अँखुआ। अँखुआ। करील नाम का कंटीला एक झाड़। जलकुम्भ।

करीष--(पुं० न०) [√कॄ+ईषन्] सूखा गोबर।--**अग्नि** (**करीषाग्नि**)-(पुं०) कंडे या करसी की आग।

करीषंकषा--(स्त्री०) [करीष√कष्+खच्, मुम्] प्रचण्ड पवन या आँधी।

करीषिणी--(स्त्री०) [करीष+इनि-ङीप्] सम्पत्ति की अधिष्ठात्री देवी।

करुण-(वि०) [√कॄ+उनन्] कोमल, करुण-हृदय। दयापात्र, दया प्रदर्शित करने योग्य। दयोत्पादक। शोकान्वित। (पुं०) रहम, दया, अनुकम्पा। दुःख, शोक। परमेश्वर।--**मल्ली**-(स्त्री०) मल्लिका का पौधा।--**विप्रलम्भ** (पुं०) साहित्यालंकार में वियोग-जन्य प्रेम का भाव।

करुणा--(स्त्री०) [करुण-टाप्] अनुकम्पा, रहम, दया।--**आर्द्र** (**करुणार्द्र**)-(वि०) कोमल-हृदय।--**निधि**-(वि०) दया का भण्डार।--**पर**,--**मय**-(वि०) अत्यन्त दयालु।--**विमुख**-(वि०) निष्ठुर, सङ्गदिल।

करेट--(पुं०) [करे√अट्+अच्, अलुक् स०] उँगली का नख।

करेणु--(पुं०) [√कॄ+एणु] हाथी; 'करेणुरारोहयते निषादिनम्' शि० १२.५। कर्णिकार, कठचंपा या वनचंपा का पेड़।--**भू**,--**सुत**-(पुं०) हस्ति-विज्ञान के आविर्भावकर्ता, पालकाप्य का नाम। (स्त्री०) हथिनी। पालकाप्य की माता का नाम।

करोट-(न०), **करोटि**--(स्त्री०) [क√रुट्+अच्] [क√रुट्+इन्] खोपड़ी। कटोरा या पात्र।

√**कर्क्**--भ्वा० पर० अक० हँसना। कर्कति, कर्किष्यति, अकर्कीत्।

कर्क—(पुं०) [√कृ+क] केकड़ा। राशि-चक्र की चौथी राशि। अग्नि। जलपात्र। आईना, दर्पण। सफेद रंग का घोड़ा।

कर्कट, कर्कटक—(पुं०) [√कर्क्+अटन्] [कर्कट+कन्] केकड़ा। कर्कराशि। घेरा, चक्कर, कंक पक्षी। कमल की जड़। काँटा। तराजू की डंडी का सिरा जिसमें पलड़े की तन्नी बाँधी जाती है। एक रतिबंध। वृत्त की त्रिज्या। नृत्य का एक हस्तक। सेमल का पेड़।—**शृङ्गी**-(स्त्री०) काकड़ासींगी।

कर्कटि, कर्कटी—(स्त्री०) [कर√कट+इन्, शक० पररूप] [कर्क √अट्+इन्, पररूप, ङीप्] मादा केकड़ा। छोटा घड़ा। सेमल का फल। तराजू की डाँड़ी का टेढ़ा छोर। एक तरह की ककड़ी। तरोई। एक साँप।

कर्कन्धु, कर्कन्धू—(स्त्री०) [कर्कं कण्टकं, दधाति, कर्क√धा+कु, नुम्] [कर्क√धा+कू, (न०)] उन्नाव या ईरानी बेर का पेड़ और उसके फल; "कर्कन्धूनामुपरि तुहिनं रञ्जयत्यग्रसन्ध्या", श० ४।

कर्कर—(वि०) [कर्क√रा+क] कड़ा, ठोस, पोढ़ा। (पुं०) हथौड़ा, घन। दर्पण, आईना। हड्डी। खोपड़ी की हड्डी का टूटा हुआ टुकड़ा।—**अक्ष** (कर्कराक्ष)—**अङ्ग** (कर्कराङ्ग)—(पुं०) खञ्जन पक्षी।—**अन्धुक** (कर्करान्धुक)—(पुं०) अन्धा कुआँ, अन्धकूप।

कर्कराटु—(पुं०) (कर्क हासं रटति प्रकाशयति, कर्क√रट्+कुन्] दीर्घ तिरछी दृष्टि, दूर तक देखनेवाली तिरछी चितवन। झलक।

कर्कराल—(पुं०) [कर्कर√अल्+अच्] सुवासित घुँघराले बाल।

कर्करी—(स्त्री०) [कर्कर+ङीष्] ऐसा जलपात्र जिसकी पेंदी में चलनी की तरह छिद्र हों।

कर्कश—(वि०) [कर√कश्+अच्, पृषो० वा कर्क+श] कड़ा, सख्त, रूखा, निष्ठुर, दयाशून्य। प्रचण्ड। उद्दण्ड। समझने में कठिन, समझ में न आने योग्य। (पुं०) तलवार, खड्ग। करञ्जा, गन्ना।

कर्कशा—(स्त्री०) [कर्कश+टाप्] व्यभिचारिणी या कटुभाषिणी स्त्री। वृश्चिकाली वृक्ष। छोटी मेढ़ासींगी। झड़बेर।

कर्कशिका, कर्कशी—(स्त्री०) [कर्कश+कन्—टाप्, इत्व] [कर्कश+ङीप्] झड़बेर या वनबेर।

कर्कि—(पुं०) [√कर्क+इन्] कर्क राशि।

कर्कोट, कर्कोटक—(पुं०) [√कर्क+ओट] [कर्क√अट्+अच्+कन्, पृषो० ओकारादेश] आठ मुख्य सर्पों में से एक। यह एक बड़ा विषैला सर्प होता है। यहाँ तक कि इसके देख देने ही से देखे जाने वाले पर सर्प-विष का असर पैदा हो जाता है। गन्ना। बेल का पेड़।

√कर्चूर—(पुं०) [√कर्ज्+ऊर, पृषो० च आदेश] कचूर। एक सुगन्ध-द्रव्य।

√कर्ज्—भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना। कर्जति, कर्जिष्यति, अकर्जीत्। (न०) सुवर्ण। हरताल, मैनफल।

√कर्ण्—चु० उभ० सक० छेदना। (आ उपसर्ग के साथ इसका अर्थ सुनना हो जाता है) कर्णयति—ते, कर्णयिष्यति—ते, अचकर्णत्—त।

कर्ण—(पुं०) [कीर्यते क्षिप्यते वायुना शब्दो यत्र,√कॄ+न, वा कर्ण्यते आकर्ण्यते अनेन, √कर्ण्+अप्] कान। कड़ादार गंगाल या जंगाल आदि बर्तन के कड़ या कान। दस्ता, बेंट। डाँड़, पतवार। समकोण त्रिभुज की वह रेखा जो समकोण के सामने होती है। महाभारत में वर्णित कौरव-पक्षीय एक प्रसिद्ध योद्धा राजा (यह सूर्यपुत्र के नाम से प्रसिद्ध था, तथा बड़ा प्रसिद्ध दानी था। कुन्ती जब क्वाँरी थी, तब उसके गर्भ से इसकी उत्पत्ति हुई थी। इसीसे यह "कानीन" भी कहलाता था। कुरुक्षेत्र के युद्ध में इसने कौरवों

की ओर से पाण्डवों से युद्ध किया था। अन्त में अर्जुन द्वारा यह मारा गया था)।—**अञ्जलि** (**कर्णाञ्जलि**)–(पुं०) कान का एक भाग अथवा वह मुख्य भाग जिससे सुनाई पड़ता है।—**अनुज** (**कर्णानुज**)–(पुं०) युधिष्ठिर।—**अन्तिक** (**कर्णान्तिक**)–(वि०) कान के समीप का।—**अन्दु**,—**अन्दू** (**कर्णान्दु,-न्दू**)–(स्त्री०) कान की वाली या करनफूल।—**अर्पण** (**कर्णार्पण**)–(न०) सुनना, कान देना।—**आस्फाल**, (**कर्णास्फाल**)–(पुं०) हाथी आदि का कान फटफटाना।—**उत्तंस** (**कर्णोत्तंस**)–(पुं०) कान में धारण किया जानेवाला एक आभूषण।—**उपकर्णिका** (**कर्णोपकर्णिका**)–(स्त्री०) अफवाह, किंवदन्ती।—**क्ष्वेड**–(पुं०) कान में सतत आवाज का होना।—**गोचर**–(वि०) जो सुन पड़े।—**ग्राह**-(पुं०) कर्णधार, पतवारी।—**जप**–(वि०) (**कर्णेजप** भी रूप होता है) गप्त बात कहने वाला, मुखबिर। (पुं०) निन्दक।—**जाह**–(पुं०) [कण+जाहच्] कान की जड़; 'अपि कर्णजाहविनिवेशितानन:' माल० ५.८।—**जित्**–(पुं०) कर्ण को हरानेवाला, अर्जुन की उपाधि।—**ताल**–(पुं०) हाथी के कानों की फटफट का शब्द।—**धार**-(पुं०)पतवारी।—**धारिणी**–(स्त्री०)हथिनी।—**परम्परा**–(स्त्री०)) सुनी-सुनाई बात, अफवाह।—**पालि**–(स्त्री०) कान की लौ, वाली।—**पाश**–(पुं०) [कर्ण+पाशप्] सुन्दर कान।—**पिशाची**–(स्त्री०) एक देवी या पिशाचिनी। उसकी प्रसन्नता से मिलने वाली परोक्ष ज्ञान की शक्ति। — **पूर**–(पुं०) करनफूल, कान का आभूषण-विशेष। अशोक का वृक्ष।—**पूरक**–(पुं०) करन-फल, वाली। कदम्ब का पेड़। अशोक का पेड़। नील कमल।—**प्रान्त**–(पुं०) दे० 'कर्णपालि'।—**भूषण**– (न०),—**भूषा**–(स्त्री०) कान का गहना।—**मूल**–(न०) कान के नीचे का भाग।—**मोटी**–(स्त्री०) दुर्गा का एक रूप।—**वंश**–(पुं०) बाँस-वल्ली से बना मचान।—**वर्जित**–(वि०) कानरहित। (पुं०) सर्प।—**विद्रधि**–(पुं०) कान के भीतर होने वाली फुंसी या घाव।—**विवर**–(न०) कान का छेद।—**विष्**–(स्त्री०) कान का मैल या ठेठ।—**वेध**–(पुं०) संस्कार-विशेष जिसमें कान छेदे जाते हैं, छिदाउन।—**वेष्ट**–(पुं०),—**वेष्टन**–(न०) कान की बालियाँ।—**शष्कुली**–(स्त्री०) कान का बहिर्भाग।—**शूल**–(पुं०, न०) कान का दर्द।—**श्रव**–(वि०) ऊँची आवाज से कहा गया, सुन पड़ने योग्य; 'कर्णश्रवेऽनिले' मनु० ४.१०२।—**स्राव**,—**संस्रव**–(पुं०) कान का बहना, कान का रोग-विशेष।—**सू**–(स्त्री०) कर्ण की जननी, कुन्ती।—**हीन**–(वि०) कर्णविवर्जित। (पुं०) सर्प।

कर्णाकर्णि—(अव्य०) [कर्णे कर्णे गृहीत्वा प्रवृत्तं कथनम्, व्यतिहारे इच्, पूर्वस्य दीर्घश्च] कानों-कान।

कर्णाट—[कर्ण√अट्+अच्, शक० पर-रूप; किन्तु भाषा-विज्ञान के मत में कर्णाटु (कर् कृष्ण+नाटु स्थान) अर्थात् कृष्ण प्रदेश या कृष्णकार्पासोत्पादक क्षेत्र से कर्णाट बना है] भारत के दक्षिणी प्रायद्वीप का एक भूखण्ड। एक राग।

कर्णाटी—(स्त्री०) [कर्णाट+ङीष्] कर्णाट देश की स्त्री। एक राग।

कर्णिन्—(पुं०) [√कर्ण्+इन] वाण का भेद। छेदाई।

कर्णिक—(वि०) [√कर्ण्+इकन्] कानों वाला। पतवार वाला। (पुं०) माझी, पतवारी।

कर्णिका—(स्त्री०) [कर्णिका+टाप्] कानों

को वालो, गुमड़ी । पद्मबीजकोष । कूंची या चित्रकार की लेखनी । मध्यमा उँगली । फल का डंठल । हाथी की सूँड़ की नोक । खड़िया ।

कर्णिकार—(पुं०) [कर्णि√कृ+अण्]वन-चम्पा या कठचम्पा का पेड़ । पद्मकोषबीज । (न०) कर्णिकार वृक्ष का फल ।

कर्णिन्—(वि०)[कर्ण+इनि] कानों वाला । बड़े-बड़े कानों वाला । शरपक्ष युक्त । (पुं०) गधा । पतवारी । गाँठोंदार वाण ।

कर्णी—(स्त्री०) [कर्ण+ङीप्] पुङ्खदार या विशेष बनावट का वाण । मूलदेव की माता का नाम, यह मूलदेव चौर्यकला-विज्ञान के प्रादुर्भाव-कर्त्ता थे ।—**सुत**–(पुं०) मूलदेव जो चुराने की कला के आविष्कारकर्त्ता बतलाने जाते हैं ।

कर्णीरथ—(पुं०) [कर्ण: सामीप्यात् स्कन्धः अस्य अस्ति वाहनत्वेन, कर्ण +इनि, स चासौ रथश्च इति कर्म० स० दीर्घश्च]म्याना, डोली, पालकी । (जो स्त्रियों की सवारी के काम आती है);'कर्णीरथस्थां रघुवीरपत्नीं' र० १४.१३ ।

√कर्त्—चु० उभ० अक० शिथिल होना, ढीला होना । कर्तयति-ते, कर्तयिष्यति-ते, अचकर्तत्-ते ।

कर्तन—(न०) [√कृत्+ल्युट्] काटना, तराशना । रूई या सूत कातना ।

कर्तनी—(स्त्री०) [कर्तन+ङीप्] कैंची । चक्कू, छोटी तलवार ।

कर्तरी, कर्तरिका—(स्त्री०) [√कृत्+अरन्+ङीप्] [कर्तरी+कन्-टाप्, ह्रस्व]दे० 'कर्तनी' ।

कर्त्तव्य—(वि०) [√कृ+तव्यत्] करने योग्य । [√कृत्+तव्यत्] काटने या नाश करने योग्य ।

कर्तृ—(वि०) [√कृ+तृच्] कर्त्ता, करने वाला । (पुं०) ईश्वर । ब्रह्म की एक उपाधि । विष्णु और शिव की उपाधि ।

कर्त्री—(स्त्री०) [कर्तृ+ङीप्] छुरी । कतरनी, कैंची ।

√कर्द्—भ्वा० पर० अक० कुत्सित शब्द करना । कर्दति, कर्दिष्यति, अकर्दीत् ।

कर्द—(पुं०) [√कर्द्+अच्] कीचड़ ।

कर्दट—(पुं०) [कर्द√अट्+अच्, पररूप] कीचड़ । पद्मकंद । जलज तृणमात्र ।

कर्दम—(पुं०) [√कर्द्+अम्] कीचड़, कीच । मैल, कूड़ा । (आलं०) पाप । (न०) मांस ।—**आटक** (**कर्दमाटक**)– (पुं०) कूड़ाखाना ।

कर्पट—(पुं०, न०) [√कृ+विच्–कर् स चासौ पटश्च कर्म० स०] पुराना या पैबंद लगा हुआ कपड़ा । दगीला कपड़ा ।

कर्पटिक, कर्पटिन्–(वि०) [कर्पट +ठन्–इक] [कर्पट+इनि] जो चिथड़े लपेटे हो ।

कर्पण—(पुं०) [√कृप+ल्युट्] एक प्रकार का शस्त्र, साँग ; 'चापचक्रकणपकर्पणप्राश-पट्टिश' दश० ।

कर्पर—(पुं०) [√कृप्+अरन् (बा०)] कड़ाही, कड़ाह । पात्र, बर्तन । ठीकरा । खोपड़ी । एक प्रकार का हथियार ।

कर्पास—(पुं०, न०), **कर्पासी**–(स्त्री०) [√कृ+पास] [कर्पास+ङीप्] कपास का वृक्ष, रूई का पेड़ ।

कर्पूर—(पुं०, न०) [√कृप् +ऊर] कपूर, काफूर ।—**खण्ड**–(पुं०) कपूर का खेत । कपूर की डली ।—**तैल**–(न०) कपूर का तेल ।

कर्फर—(पुं०) [√कृ+ विच्, √फल्–अच्, रस्य लः, कीर्यमाणः फलः प्रतिबिम्बो यत्र ब० स०] दर्पण, आईना ।

कर्बु—(वि०) [√कर्ब् (र्ब्)+उन्] रंग-बिरंगा, चितकबरा ।

कर्बुर—(वि०) [√कर्ब् (र्ब्)+उरच्] रंग-बिरंगा, चितकबरा; 'क्वचिल्लसद्घन-

निकुम्बकर्बुरः' शि० १७.५६ । भूरा, धुमैला । (पुं०) चितकबरा रंग । पाप । प्रेत, शैतान । धतूरे का पेड़ । (न०) सोना । जल ।

कर्बुरित—(विव०) [कर्बुर+इतच्] रंग-बिरंगा ।

कर्मठ—(वि०) [कर्मणि घटते, कर्मन्+अठच्] कार्यकुशल, क्रियाकुशल, काम करने में निपुण । परिश्रम से काम करने वाला । केवल धार्मिक अनुष्ठानों के करने ही में लवलीन ।

कर्मण्य—(वि०) [कर्मन्+यत्] कर्म-कुशल । चतुर । (न०) कार्य-निष्ठा । सक्रियता ।

कर्मण्या—(स्त्री०) [कर्मण्य+टाप्] मजदूरी, पारिश्रमिक ।

कर्मन्—(न०) [√कृ+मनिन्] कार्य, काम । क्रिया । धंधा । शास्त्रविहित नित्य-नैमित्तिक ग्रादि कर्म । आचरण । वह पूर्व-जन्म-कृत कर्म जिसका फल इस जन्म में मिल रहा हो, भाग्य । वह जिस पर क्रिया का फल पड़े (व्या०) ।—**अक्षम (कर्माक्षम)**—(वि०) कार्य करने में असमर्थ, निकम्मा ।—**अङ्ग (कर्माङ्ग)**—(न०)यज्ञ कर्म का एक भाग ।—**अधिकार (कर्माधिकार)**—(पुं०) धार्मिक कृत्य या क्रिया करने का अधिकार ।—**अनुरूप (कर्मानुरूप)**—(वि०)कर्मानुसार । पूर्व-जन्म में किये हुए कर्मों के अनुसार ।—**अन्त (कर्मान्त)**—(पुं०) किसी कार्य या क्रिया का अवसान । व्यापार, व्यवसाय । कार्य-संपादन । खत्ती, अनाज का भाण्डार । जुती हुई जमीन ।—**अन्तर (कर्मान्तर)**—दूसरा काम । प्रायश्चित्त, पापनिवृत्ति । किसी धर्मानुष्ठान के मध्य का अवकाश ।—**अन्तिक (कर्मान्तिक)**—(वि०) अन्तिम ।(पुं०) नौकर ।—**आजीव (कर्माजीव)**—(पुं०) किसी पेशे से जीविका-निर्वाह करना ।—**इन्द्रिय (कर्मेन्द्रिय)**—(न०) वे इन्द्रियाँ जो कर्म करें, जैसे हाथ, पैर, वाणी, गुदा और उपस्थ ।—**उदार (कर्मोदार)**—(न०) उदार कर्म, उच्चाशयता ।—**उद्युक्त (कर्मोद्युक्त)**—(वि०) मशगूल, लवलीन, क्रियाशील ।—**कर**—(पुं०) रोजनदारी पर काम करने वाला मजदूर । यमराज ।—**कर्तृ**— (वि०) काम करने वाला ।(पुं०) व्याकरणोक्त वाच्यविशेष, इसमें कर्तृत्व की विवक्षा से कर्म ही कर्ता होता है ।—**काण्ड**—(पुं०, न०) वेद का वह अंश जिसमें यज्ञानुष्ठानादि कर्मों का तथा उनके माहात्म्य का वर्णन है । —**कार**—(पुं०) वह मनुष्य जो कोई भी काम करे । कारीगर । मजदूर । लुहार । साँड़ ।—**कारिन्**—(पुं०) मजदूर । कारीगर ।—**कार्मुक**—(पुं०, न०) सुदृढ़ धनुष ।—**कीलक**—(पुं०) धोबी ।—**क्षेत्र**—(न०) वह भूमि जहाँ धार्मिक कर्मानुष्ठान किया जाय (भारतवर्ष कर्मभूमि कहलाता है) ।—**गृहीत**—(वि०) कोई कार्य करते समय पकड़ा हुआ (जैसे चोरी करते समय चोर) ।—**घात**—(पुं०) काम बंद कर देना, काम छोड़ बैठना ।—**चण्डाल—चाण्डाल**—(पुं०) नीच काम करने वाला, वशिष्ठ जी ने पाँच प्रकार के कर्मचाण्डाल बतलाते हैं :—असूयकः पिशुनश्च कृतघ्नो दीर्घरोषकः । चत्वारः कर्मचाण्डाला जन्मतश्चापि पञ्चमः ।।—दुस्साहस-पूर्ण या निष्ठुर काम करने वाला । राहु का नाम ।—**चारिन्** (पुं०) काम करने वाला, अहलकार ।—**चोदना**—(स्त्री०) वह हेतु या कारण जिससे प्रेरित हो कोई यज्ञानुष्ठान कर्म करे । शास्त्र की वह स्पष्ट आज्ञा या निर्देश, जिसमें किसी धार्मिक अनुष्ठान करने का अवश्य करणीय विधान वर्णित हो ।—**ज्ञ**-(वि०) धर्मानुष्ठान का विधान जानने वाला ।—**त्याग**—(पुं०) लौकिक कर्मों का त्याग ।—**दुष्ट**—(वि०) असदाचारी, दुष्ट, लंपट ।—**दोष**—(पुं०) पाप । भूल, चूक । मानवोचित कर्मों का शोच्य परिणाम । अयशस्कर आचरण ।

—धारय—(पुं०)एक प्रकार का समास, इसमें विशेषण और विशेष्य का समान अधिकरण होता है।—ध्वंस—(पुं०) किसी धर्मानुष्ठान-कर्म के फल का नाश। कर्मक्षति।—नाशा—(स्त्री०) शाहाबाद जिले की एक नदी जिसके जलस्पर्श से समस्त पुण्य का नाश हो जाता है।—निष्ठ—(वि०) धार्मिक कृत्यों के करने में संलग्न।—न्यास—(पुं०) धर्मानुष्ठानों के फल का त्याग।—पथ—(पुं०) कर्मयोग, कर्ममार्ग (ज्ञानमार्ग का उल्टा)।—पाक-(पुं०) पूर्व जन्म में किये हुए कर्मों के फल की प्राप्ति का समय।—फल-(न०) पूर्वजन्म में किये हुए शुभाशुभ कर्मों का शुभाशुभ फल।—बंध,—बंधन—(न०), आवागमन, अथवा जन्म-मरण का बंधन।—भू, —भूमि—(स्त्री०) भारतवर्ष।—मीमांसा-(स्त्री०) कर्मकाण्ड सम्बन्धी वेदभाग पर विचार करने वाला जैमिनि द्वारा रचित शास्त्र।—मूल—(न०) कुश।—युग-(न०) कलियुग।—योग—(पुं०) कर्ममार्ग। —वज्र—(पुं०) शूद्र।—वाटी—(स्त्री०)तिथि। —विपाक—(पुं०) दे० 'कर्मपाक'।—शाला—(स्त्री०) दूकान। कारखाना।—शील,—शूर—(वि०) परिश्रमी, क्रियाशील।—सङ्ग—(पुं०) लौकिक कर्मों और उनके फलों में आसक्ति।—सचिव—(पुं०) दीवान, वजीर। —संन्यासिक, —संन्यासिन्—(पुं०) संन्यासी जिसने समस्त लौकिक कर्मों का त्याग कर दिया हो। ऐसा तपस्वी जो धार्मिक अनुष्ठान तो करे किन्तु उनके फलों की कामना न करे।—साक्षिन्—(पुं०) प्रत्यक्षदर्शी साक्षी। वह साक्षी जो जीवधारियों के शुभाशुभ कर्मों को साक्षी बनकर देखता हो। (ऐसे नौ साक्षी माने गये हैं। यथा :—सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च। एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः ।।) —सिद्धि—(स्त्री०) सफलता, मनोरथ का साफल्य।—स्थान—(न०) कार्यालय, दफ्तर। कारखाना। कुंडली में लग्न से दसवाँ स्थान। —हीन—(वि०) जिससे कोई अच्छा कार्य न हो। हतभाग्य।

कर्मार—(पुं०) [कर्मन्√ऋ+अण्] कर्मकार। कारीगर। लुहार। बाँस। कमरख।

कर्मिन्—(वि०) [कर्मन्+इनि] क्रियाशील, कार्यतत्पर। जो फल-प्राप्ति की अभिलाषा से धर्मानुष्ठान करता हो; 'कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन' भग ६.४६। (पुं०) कारीगर।

कर्मिष्ठ—(वि०) [कर्मिन्+इष्ठन्,इनो लुक्] कर्म-कुशल। कर्म-निष्ठ।

√कर्व्—भ्वा० पर० अक० अहंकार करना। (सक०) जाना। कर्वति, कर्विष्यति, अकर्वीत्।

कर्वट—(पुं०) [√कर्व्+अटन्] मण्डी अथवा किसी प्रान्त का ऐसा मुख्य नगर जिसके अन्तर्गत कम से कम २०० से ४०० तक ग्राम हों।

कर्ष—(पुं०) [√कृष्+अच् वा घञ्] तनाव, खिचाव। आकर्षण। खेत की जुताई। हल-रेखा। बहेड़े का पेड़। खरोंच। (पुं०, (न०) १६ माशे का मान (५ रत्ती के माशे से)।

कर्षक—(वि०) [√कृष्+ण्वुल्] खींचने वाला।(पुं०) किसान।

कर्षण—(न०) [√ कृष्+ल्युट्] खींचना, तानना; 'भज्यमानमतिमात्रकर्षणात्' र० ११.४६। जोतना, हल चलाना। खरोंचना। समय बढ़ाना। क्षति पहुँचाना।

कर्षिणी—(स्त्री०) [√कृष्+णिनि—ङीप्] घोड़े की लगाम। खिरनी का पेड़।

कर्षू—(स्त्री०) [√कृष्+ऊ] कृत्रिम क्षुद्र जलाशय। नदी। नहर। (पुं०) कंडों की आग। खेती। आजीविका।

कर्हि—(अव्य०) [किम्+र्हिल्, क आदेश] किस समय, कब ।—**चित्**-(अव्य०) कभी, किसी समय ।

√कल्—भ्वा० आत्म० अक० आवाज करना । (सक०) गिनती करना । कलते, कलिष्यते, अकलिष्ट । चु० उभ० सक० जाना । गिनना । कलयति-ते, कलयिष्यति-ते अचीकलत्-त । प्रेरणा करना । कालयति-ते, अचीकलत्-त ।

कल—(वि०) [√कल् वा√कड्+घञ्, अवृद्धि;, डलयोरेकत्वम्] अस्पष्ट, मधुर, धीमी और कोमल (ध्वनि) । निर्बल । कच्चा, अनपचा हुआ, अपक्व । रुनझुन का शब्द करने वाला । —**अंकुर** (**कलांकुर**)-(पुं०) सारसपक्षी ।—**अनुनादिन्** (**कलानुनादिन्**)-(पुं०) गौरैया पक्षी । भ्रमर । चातक पक्षी ।—**अविकल** (**कलाविकल**)-(पुं०) गौरैया पक्षी ।—**आलाप** (**कलालाप**) (पुं०) धीमी कोमल गुनगुनाहट । मधुर एवं प्रिय सम्भाषण । भ्रमर ।—**उत्ताल** (**कलोत्ताल**)-(वि०) मधुर और ऊँचा (शब्द)। —**कण्ठ**-(वि०) मधुर कण्ठस्वर वाला ।—(पुं०) कोयल । हंस । कबूतर ।—**कल** (पुं०)-जन-समुदाय का कोलाहल । अस्पष्ट और अंडबंड शोरगुल; 'चलितया विदधे कलमेखलाकलकलोऽलकलोलदृशान्यया' शि० ६.१४ । शिव का नाम । —**कूजिका**,—**कूणिका**-(स्त्री०) निर्लज्जा स्त्री, असती स्त्री ।—**घोष**-(पुं०) कोयल ।—**तूलिका**-(स्त्री०) निर्लज्जा या रसीली स्त्री।—**धौत**-(न०) चाँदी । सोना ।—**लिपि**-(स्त्री०) सुनहले अक्षरों की लिखावट ।—**ध्वनि**-(पुं०) मधुर धीमा स्वर । कबूतर । मोर, मयूर । कोयल ।—**नाद**-(पुं०) मधुर धीमी स्वर ।—**भाषण**-(न०) बालकों की तोतली बोली ।—**रव**-(पुं०) मधुर धीमा स्वर ।—**हंस**-(पुं०) हंस, राजहंस । बत्तक । परमात्मा । उत्तम राजा ।

कलङ्क—(पुं०) [√कल्+क्विप्, कल् चासौ अंकश्च कर्म० स०] धब्बा, दाग । काला दाग । लांछन, बदनामी, अपकीर्ति । दोष, त्रुटि । लोहे का मोर्चा । पारे की कजली ।

कलङ्कष—(पुं०) [करेण कषति हिनस्ति, कल√कष्+खच्—मुम्] [स्त्री०—**कलङ्कषी**] सिंह ।

कलङ्कित—(वि०) [कलङ्क+इतच्] बदनाम । मुर्चा लगा हुआ ।

कलङ्कुर—(पुं०)[कं जलं लङ्कयति भ्रामयति, क√लङ्क्+णिच्+उरच्] पानी का भँवर, आवर्त ।

कलञ्ज—(पुं०) [कं लञ्जयति, क√लञ्ज्+ अण्] पक्षी । जहरीले अस्त्र से मारा हुआ हिरन आदि जीव । तंबाकू का पौधा । (न०) जहरीले अस्त्र से मारे हुए पशु-पक्षी का मांस ।

कलत्र—(न०) [√गड्+अत्रन्, गकारस्य ककारः, डलयोरभेदः] पत्नी । कमर । शाही गढ़ ।

कलन—(न०) [√कल्+ल्युट्] धब्बा, दाग । त्रुटि, अपराध । ग्रहण, पकड़, 'कलनात्सर्वभूतानां तस्मात्कालः प्रकीर्तितः' । अवगति, समझ । रव, शब्द । गर्भ की बिलकुल पहली, शुक्र-शोणित के संयोग के बाद की अवस्था । गणित की क्रिया ।

कलना—(स्त्री०) [√कल्+युच्—टाप्] पकड़, ग्रहण । मोचन, छोड़ना । वशवर्तित्व । समझ । धारण करना, पहनना ।

कलन्दिका—(स्त्री०) [कल√दा+क+कन्—टाप्, इत्व, पृषो० मुम्] बुद्धि । प्रतिभा ।

कलभ—(पुं०) [स्त्री०—**कलभी**] [कलेन करेण शुण्डेन भाति, कल√भा+क वा√कल्+अभच्] [कलभ+ङीप्] हाथी का बच्चा । तीस वर्ष की उम्र का हाथी । ऊँट का या अन्य किसी जानवर का बच्चा । —**वल्लभ**-(पुं०) पीलू का वृक्ष ।

कलम—(पुं०) [√कल्+णिच् + अम] एक तरह का धान जिसका चावल महीन और सुगंधित होता है। नरकुल जिसकी कलम बनती है। चोर। गुंडा, बदमाश, दुष्ट। लेखनी।

कलम्ब—(पुं०) [√कल्+अम्बच्] तीर। कदम्ब वृक्ष।

कलम्बुट—(न०) [क√लम्ब्+उटन्] (ताजा) मक्खन।

कलल—(पुं०) [√कल्+कलच्] गर्भ का आरंभिक रूप जब वह कुछ कोषों का गोला रहता है। गर्भाशय।—**ज**–(पुं०) राल। गर्भ।

कलविङ्क (ङ्ग)–(पुं०)[कल√वङ्क्+अच्, पृषो० इत्वम्] गौरैया पक्षी। इन्द्रजौ। धब्बा, दाग। सफेद चँवर।

कलश, कलस—(पुं०, न०) [कल√शु+ड] [क√लस्+अच्] घड़ा, कलसा। चौंतीस सेर का माप।—**जन्मन्**–(पुं०) अगस्त्य का नाम।

कलशी, कलसी—(स्त्री०) [कलश—स+ ङीष्] छोटा घड़ा, गगरी।—**सुत**–(पुं०) अगस्त्य ऋषि का नाम।

कलह—(पुं०, न०) [कलं कामं हन्ति अत्र, कल√हन्+ड] झगड़ा, लड़ाई-भिड़ाई। युद्ध, जंग। दावपेंच, धोखाधड़ी। आघात। प्रहार। (पुं०) नारद।—**अन्तरिता** (**कलहान्तरिता**)–(स्त्री०) प्रेमी से झगड़ा हो जाने के कारण उस अपने से वियुक्त स्त्री।—**अपहृत** (**कलहापहृत**)–(वि०) बरजोरी हरा हुआ, छीना हुआ।—**प्रिय**–(वि०) वह व्यक्ति जिसे लड़ाई-झगड़ा अच्छा लगता हो।

कला—(स्त्री०) [√कल्+ अच्—टाप्] किसी वस्तु का छोटा अंश, टुकड़ा। चन्द्र-मण्डल का १६वाँ अंश। ब्याज, सूद। समयविभाग। राशि के तीसवें भाग का ६०वाँ भाग। कलाएँ चौंसठ होती हैं। यथा—१ गीत, २ वाद्य, ३ नृत्य, ४ नाट्य, ५ चित्रकारी, ६ तिलक के साँचे बनाना, ७ चावलों और फूलों का चौका पूरना, ८ फूलों की सेज बिछाना, ९ दाँतों, कपड़ों और अंगों को रँगना, १० ऋतु के अनुकूल घर सजाना, ११ पलँग बिछाना, १२ जलतरंग बजाना, १३ पिचकारी और गुलाबपाश का उपयोग, १४ चित्र इकट्ठे करना, १५ माला गूँथना, १६ सिर के बालों में फूल लगाकर गूँथना, १७ वस्त्राभूषण-धारण, १८ कानों के लिए आभूषण बनाना, १९ इत्र निकालना २० भूषणों की योजना, २१ इन्द्रजाल, २२ कुरूप को सुन्दर करना, २३ हाथ की सफाई, २४ अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थ बनाना, २५ पीने के लिए शर्बत, अर्क तथा शराब बनाना, २६ सीना-पिरोना, २७ रफूगरी, कसीदा, २८ पहेलियाँ हल करना, २९ श्लोक का अन्तिम अक्षर लेकर उसी अक्षर से आरम्भ होने वाला दूसरा श्लोक कहना, ३० कठिन पदों का तात्पर्य निकालना, ३१ पुस्तक वाचन, ३२ नाटक देखना, ३३ काव्य- समस्या- पूर्ति, ३४ निवाड़ या बेंत से चारपाई बुनना, ३५ तर्क करना, ३६ बढ़ई, संगतराश का काम, ३७ घर बनाना, ३८ सोना, चाँदी और रत्नों की परीक्षा, ३९ मिली धातुओं को अलग-अलग करके साफ करना, ४० रत्नों के रंगों की पहचान, ४१ खानों की विद्या, ४२ वृक्षों का ज्ञान, चिकित्सा और उन्हें रोपने की विधि, ४३ मेंढ़े, बटेर, बुलबुल लड़ाने की विधि, ४४ तोता-मैना पढ़ाना, ४५ उबटन लगाना और पैर, सिर आदि दबाना, ४६ बालों का मलना और तेल लगाना, ४७ अक्षरों से और मुष्टिका से बात बताना, ४८ विदेशी भाषाओं का ज्ञान, ४९ दैवी लक्षण (जैसे बादल की गरज आदि) देखकर आगामी घटना के लिए भविष्यवाणी कहना, ५० यंत्र-निर्माण, ५१ स्मरणशक्ति

बढ़ाना, ५२ दूसरे को पढ़ते हुए सुनकर उसे उसी तरह पढ़ देना ५३ दूसरे का अभिप्राय समझकर उसके अनुसार तुरन्त कविता करना, ५४ क्रिया के प्रभाव को पलटना, ५५ छल करना, ५६ अभिधानकोष-छंद-ज्ञान, ५७ वस्त्रों को हिफाजत से रखना, ५८ जुआ खेलना, ५९ पासा फेंकना, ६० बच्चों को खिलाना, ६१ विनय और शिष्टाचार, ६२ विजय-संबंधी विद्या का ज्ञान, ४३ वेतालों की विद्या का ज्ञान, ६४ कामशास्त्र का ज्ञान। चातुर्य। कपट, छल। नौका। रजोदर्शन।—**अन्तर** (**कलान्तर**) -(न०) अन्य अंश। व्याज, सूद, लाभ। —**अयन** (**कलायन**)-(पुं०) तलवार की धार पर नृत्य करने वाला।—**आकुल** (**कलाकुल**)-हलाहल विष।— **केलि**-(वि०) विलासी, रसीला। (पुं०) कामदेव की उपाधि।—**क्षय**-(पुं०) चन्द्र का ह्रास।—**धर**,—**निधि**,—**पूर्ण**,-**भृत्**-(पुं०) चन्द्रमा।

कलाद, कलादक-(पुं०) [कला—आ √दा +क] [कला √अद्+ण्वुल्] सुनार।

कलाप—(पुं०) [कला√आप्+अण् वा घञ्] गट्ठा, गट्ठर। समुदाय। मयूरपुच्छ। स्त्री का इजारबंद या करधनी। आभूषण। हाथी की गरदन की रस्सी। तरकस, तूणीर। तीर, वाण। चन्द्रमा। बुद्धिमान् एवं चतुर मनुष्य। एक ही छन्द में लिखी हुई पद्य-रचना। संस्कृत का एक व्याकरण।

कलापक—(न०) [कलाप+कन] चार श्लोकों का समूह जो किसी एक ही विषय के वर्णन में हो और जिनका एक ही अन्वय हो। [कलाप+वुन्] ऋण जिसकी अदायगी उस समय हो जिस समय मोर अपनी पूँछ फैलावे। (पुं०) [कलाप+कन्] गट्ठा, गट्ठर। मोतियों की माला। हाथी के गले की रस्सी। करधनी या कमरबंद। माथे पर का तिलक-विशेष।

कलापिन्—(पुं०) [कलाप+इनि] मोर; 'कलविलापि कलापि कदम्बकं' शि० ६.३१। कोयल। वटवृक्ष।

कलापिनी—(स्त्री०) [कलापिन् + ङीष्] मोरनी। रात। नागरमोथा।

कलाय—(पुं०) [कला√अय्+अण्] मटर, केराव (एक मोटा अन्न)।

कलाविक—(पुं०) [कलम् आविकायति विशेषेण रौति, कल—आ—वि√कै+क] मुर्गा।

कलाहक—(पुं०) [कलम् आहन्ति, कल—आ √हन्+ड+कन्] कोहिली, एक प्रकार का मुँह से वजाया जाने वाला वाजा।

कलि—(पुं०) [कलते कलेराश्रयत्वेन वर्तते, √कल्+इन्] झगड़ा, लड़ाई। युद्ध, जंग। चौथा युग यानी कलियुग। (कलियुग ४३२००० वर्ष का होता है, यह ११०२ खी० पू० वर्ष की ८वीं फरवरी को लगा था।) मूर्त्तिधारी कलियुग जिसने राजा नल को सताया था। किसी श्रेणी का सर्वनिकृष्ट व्यक्ति। विभीतक वृक्ष, वहेड़ा का पेड़। पासे का वह पहलू जिस पर १ अंकित हो। वीर, शूर। तीर, वाण। (स्त्री०) कली।—**कार**,—**कारक**,—**क्रिय**-(पुं०) नारद की उपाधि। —**द्रुम**,—**वृक्ष**-(पुं०) वहेड़े का पेड़।—**युग**-(न०) कलिकाल।

कलिका—(स्त्री०) [कलि+ कन्—टाप्] अनखिला फूल, बौड़ी। वीणा का मूल। एक छंद। [कला+कन् —टाप्, इत्व] कला, अंश, इकाई।

कलिङ्ग—(पुं०) [कलि√गम्+ड] इन्द्रयव। सिरिस। वटवृक्ष। तरबूज। एक राग। प्राचीन भारत का एक जनपद। वहाँ का निवासी। वाममार्ग में इसकी सीमा का उल्लेख इस प्रकार पाया जाता है—जगन्नाथात्समारभ्य कृष्णतीरान्तगः प्रिये। कलिङ्गदेशः सम्प्रोक्तो वाममार्गपरायणः॥

फलिञ्ज—(पुं०) [क √लञ्ज्+अण्, नि० साधुः] चटाई । चिक, पर्दा ।

कलित—(वि०) [√कल्+क्त] गृहीत । ज्ञात । प्राप्त । युक्त । विभूषित । गणना किया हुआ । ध्वनित । सुन्दर ।

कलिन्द—(पुं०) [कलि√दा वा √दो+खच्, मुम्] पर्वत जिससे यमुना नदी निकलती है । सूर्य ।—**कन्या,—जा,—तनया,—नन्दिनी**-(स्त्री०) यमुना नदी की उपाधियाँ ।

कलिल—(वि०) [√कल्+इलच्] ढका हुआ । भरा हुआ । मिला हुआ । प्रभावान्वित । अभेद्य । (न०) एक बड़ा ढेर ।

कलुष—(वि०) [क√लुष्+अण् वा√कल्+उषच्] मटीला, गँदला । छिलकादार । भरा हुआ । क्रुद्ध । दुष्ट । पापी । निष्ठुर । काला । सुस्त, आलसी । क्रोध । मैल । गंदगी । पाप । (पुं०) भैंसा ।—**योनिज**-(वि०) वर्णसङ्कर ।

कलेवर—(पुं०, न०) [किले शुक्रे वरं श्रेष्ठम्, अलुक् स०] शरीर, देह । डील, आकार ।

कल्क—(पुं ०, न०) [√कल्+क] घी या तेल की तलछट, काँइट, कीट । लेही या लेही की तरह चिपकने वाला कोई पदार्थ : मैल, कूड़ा । विष्ठा । नीचता । कपट । दम्भ । पाप । पीसा हुआ चूर्ण । एक गंधद्रव्य, तुरुष्क ।—**फल**-(पुं०) अनार का पेड़ ।

कल्कन—(न०) [कल्क+णिच्+ल्युट्] छलना, प्रवञ्चना । विवाद ।

कल्कि, कल्किन्-(पुं०) [कल्क+णिच्+इन्] [कल्क+इनि] भगवान् विष्णु का दसवाँ अथवा अन्तिम अवतार, जो पुराणों के अनुसार कलियुग के अंत में संभल (मुरादाबाद) में होगा । (मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, रामचंद्र, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि—ये दस अवतार हैं) ।

कल्प—(वि०) [√क्लृप्+अच् घञ् वा] साध्य, होने योग्य, सम्भव । उचित, ठीक, योग्य । निपुण, दक्ष । (पुं०) धर्मशास्त्र की आज्ञा, आईन । निर्दिष्ट नियम । प्रस्ताव । सूचना । निश्चय, सङ्कल्प । पद्धति, ढंग, तरीका । प्रलय । ब्रह्मा का एक दिवस अथवा १००० युगव्यापी काल । चिकित्सा । छः वेदाङ्गों में से वेद का एक अङ्ग ।—**अन्त** (कल्पान्त)-(पुं०) प्रलय काल, नाश ।—**आदि** (कल्पादि)- (पुं०) सृष्टि के आरम्भ काल में सब वस्तुओं का पुनः निर्माण ।—**कार**-(पुं०) कल्पसूत्र के निर्माता, (आश्वलायन, आपस्तंव, वोधायन, कात्यायन)। नाई । (वि०)सजाने-सँवारने वाला ।—**क्षय**-(पुं०) प्रलय, सर्वनाश ।—**तरु,—द्रुम,—पादप,—वृक्ष**-(पुं०) स्वर्ग का एक वृक्ष जो समद्र-मंथन से निकले हुए १४ रत्नों में है और जो कुछ भी माँगिये उसे देने वाला माना जाता है । एक वृक्ष जो अफ्रीका और भारत के मद्रास, वंबई आदि प्रदेशों में होता है । (आल०) उदार वस्तु ।—**पाल**-(पुं०) मद्य-विक्रेता ।—**लता,—लतिका**-(स्त्री०) स्वर्गीय लता-विशेष ।—**सूत्र**-(न०) वैदिक यज्ञादि या गृहस्थ कर्मों का विधान करने वाला सूत्रग्रंथ (श्रौत गृह्य सूत्र) ।—**हिंसा**-(स्त्री०) अन्न के पीसने, पकाने आदि में होने वाली हिंसा (जैन०) ।

कल्पक—(पुं०) [√ क्लृप्+णिच्+ण्वुल्] नाई । कचूर । एक संस्कार । (वि०) कल्पना करने वाला । रचने वाला । काटने वाला ।

कल्पन—(न०)[√क्लृप्+ल्युट्] वनाना । सजाना, सुव्यवस्थित करना । पूरा करना । कार्य में परिणत करना । कतरना । काटना । गाड़ना । सजाने के लिये तर-ऊपर रखना ।

कल्पना—(स्त्री०) [√क्लृप्+णिच्+युच्] वनाना, करना । तरतीव में लाना । सजाना । रचना करना । आविष्कार करना । विचार ।

मानसिक कल्पना। जाल, जालसाजी। रीति, भाँति, युक्ति।

कल्पनी—(स्त्री०) [कल्पन+ङीप्] कैंची, कतरनी।

कल्पित—(वि०) [क्लृप्+णिच्+क्त] सोचा, माना हुआ। मन से गढ़ा हुआ, फर्जी। सजाया, सँवारा हुआ।

कल्मष—(वि०) [कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति पृषो० साधु] पापी। दुष्ट। मैला-कुचैला, गंदा। (न०)पाप; 'स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी' हि० १.२१। हाथी की पूँछ। मल। मैल। (पुं०) एक नरक। एक मास।

कल्माष—(वि०) [कलयति,√कल+क्विप्, तं माषयति अभिभवति, √माष्+णिच् + अच्, कल् चासौ माषश्च कर्म० स०] [स्त्री० —**कल्माषी**] रंग-विरंगा, चितकवरा। सफेद और काला मिला हुआ। (पुं०) चितकवरा रंग। सफेद और काले रंगों का संमिश्रण। दैत्य, दानव।—**कण्ठ**–(पुं०) शिव की उपाधि।

कल्माषी—(स्त्री०) [कल्माष+ङीष्] काली या सांवली स्त्री। यमुना नदी का नाम।

कल्य—(वि०) [√कल+यत्] स्वस्थ, रोग-रहित। तैयार। तत्पर। चतुर। शुभ। वहरा। गूंगा। शिक्षाप्रद। (न०) तड़का, सवेरा। आने वाला अगला दिन। मदिरा। वधाई। शुभ कामना, आशीर्वाद। शुभ संवाद। —**आश** (**कल्याश**)–(पुं०),—**जग्धि**–(स्त्री०) कलेवा, सवेरे का भोजन।—**पाल**,—**पालक** (पुं०) कलार, कलवार, शराव खींचने वाला। —**वर्त**–(पुं०) कलेवा, जलपान। (न०) तुच्छ वस्तु।

कल्या—(स्त्री०) [कलयति मादयति, √कल्+णिच्+यक्—टाप्]मदिरा। वधाई। —**पाल**,—**पालक**–(पुं०) कलाल, कलवार।

कल्याण—(वि०) [कल्ये प्रातः अण्यते शब्द्यते, कल्य √ अण्+घञ्] (पुं०, न०) मंगल। सुख-सौभाग्य। भलाई। अभ्युदय। सोना। स्वर्ग। शुभ कर्म। एक राग। (वि०) मंगलकारी। सुंदर। सौभाग्यशाली [स्त्री० —**कल्याणा, कल्याणी**]।—**कृत्**–(वि०) लाभदायक, शुभ। मङ्गलकारी, शुभप्रद। पुण्यात्मा।—**धर्मन्**–(वि०) पुण्यात्मा।—**वचन**–(न०) सौहार्दव्यञ्जक भाषण, शुभ कामनाएँ।

कल्याणक—(वि०) [कल्याण+कन्][स्त्री० **कल्याणिका**] शुभ। समृद्धिशाली। धन्य।

कल्याणिन्—(वि०) [कल्याण+इनि] **इनि**] [स्त्री०—**कल्याणिनी**] सुखी, भरापूरा। भाग्यशाली, धन्य। शुभ, मङ्गलकारी।

कल्याणी—(स्त्री०) [कल्याण+ङीष्] गौ, गाय।

√**कल्ल्**—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। चुप रहना। कल्लते, कल्लिष्यते, अकल्लिष्ट।

कल्ल—(वि०) [कल्लते शब्दं न गृह्णाति, √कल्ल+अच्] वहरा, वधिर।

कल्लोल—(पुं०) [√ कल्ल् + ओलच्] विशाल लहर। शत्रु। प्रसन्नता, हर्ष।

कल्लोलिनी—(स्त्री०) [कल्लोल+इनि—ङीप्] नदी, सरिता।

√**कव्**—भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना। वर्णन करना। चित्रण करना, चित्र वनाना। कवते, कविष्यते, अकविष्ट।

कवक—(पुं०) [√कव् + अच्+कन्] कवल, निवाला। कुकुरमुत्ता।

कवच—(पुं०, न०) [कं वातं वञ्चयति, क√ वञ्च+अच्] वर्म, जिरहवख्तर। तावीज, यंत्र। ढोल। पाकर का पेड़।—**पत्र**-(न०) भोजपत्र।—**हर**(वि०) वर्म धारण किये हुए। कवच धारण करने योग्य अवस्था का।

कवटी—(स्त्री०) [√कु+अटन्—ङीप्] दरवाजे का पल्ला।

कवर, कबर—(वि०) [√कु+अरन्] [स्त्री०—**कवरा या कवरी, कबरा या कबरी**] मिश्रित, मिलाजुला । जड़ा हुआ । रंगविरंगा । (पुं०, न०) नमक । खटाई या खट्टापन । चोटी, जूड़ा । चितकवरापन ।

कवरी, कबरी—(पुं०) [कवर+ङीप्] गुथी हुई चोटी, चोटीबन्द; 'दधती विलोल-कवरीकमाननं' उत्त० ३.४ । वन-तुलसी ।

कवल—(पुं०, न०) [क√वल्+अच्] कौर, ग्रास । कुल्ली । एक मछली ।

कवलित—(वि०) [कवल+णिच् +क्त] खाया हुआ, निगला हुआ । चवाया हुआ । ग्रहण किया हुआ, पकड़ा हुआ ।

कवाट—(न०) [कलं शब्दम् अटति, √कु +अप्, √अट्+अच् या कं वातं वटति वारयति, क√वट्+अण्] दे० 'कपाट'।

कवि—(वि०) [कव्+इन्] सर्वज्ञ, सर्ववित् । बुद्धिमान्, चतुर, प्रतिभावान् । विचारवान् । प्रशंसनीय, श्लाघ्य । (पुं०) पद्यरचना करने वाला, शायर; 'इदम् कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे' उत्त० १ । एक ऋषि असुराचार्य, शुक्र । आदिकवि वाल्मीकि। ब्रह्मा । सूर्य । (स्त्री०) लगाम ।—**ज्येष्ठ**—(पुं०) वाल्मीकि की उपाधि ।—**पुत्र**—(पुं०) शुक्र की उपाधि ।—**राज**—(पुं०) बड़ा शायर । एक कवि का नाम, एक पद्य-रचयिता जो राघवपाण्डवीय के नाम से प्रसिद्ध है ।

कविक—(पुं०) [कवि+कन्] लगाम । कवि, शायर ।

कविका—(स्त्री०) [कविक+टाप्] लगाम, खलीन । केवड़ा । एक मछली ।

कविता—(स्त्री०) [कवेर्भावः, कवि+तल् —टाप्] पद्यरचना, रसात्मक छंदोबद्ध रचना ।

कविय, कवीय—(न०) [कं सुखम् अजति, क√ अज् +क, अजः स्थाने वी आदेशः, इयङ] [कवि+छ— ईय] लगाम ।

कवोष्ण—(वि०) [कुत्सितम् ईषत् उष्णम् कर्म० स०, कोः कवादेशः] गुनगुना, कुछ-कुछ गर्म ।

कव्य—(न०) [कूयते हीयते पितृभ्यः यत् अन्नादिकम्, √कु+यत्] पितरों के लिए तैयार किया हुआ अन्न (देवताओं के लिए तैयार किया हुआ अन्न हव्य कहलाता है) (वि०) [कवि+यत्] स्तुति या प्रशंसा करने वाला । (पुं०) वेदोक्त पितृलोक-विशेष । —**वाह्**,—**वाह**, —**वाहन**—(पुं०) अग्नि ।

√कश्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । कशति, कशिष्यति, अकशीत्— अकाशीत् ।

कश—(पुं०) [कशति शब्दायते ताडयति वा, √कश्+अच्] कोड़ा, चाबुक ।

कशा—(स्त्री०) [कश+टाप्] चावुक, कोड़ा । कोड़े मारना, डोरी, रस्सी ।

कशिपु—(पुं०, न०) [कशति दुःखं कश्यते वा, मृगय्वादित्वात् निपातनात् साधुः]चटाई । तकिया । बिस्तर, शय्या । (पुं०) भोजन । परिच्छद, वस्त्र । भोजन-वस्त्र ।

कशरु, कसेरु—(पुं०, न०) [के दे शीर्यते वा कं जलं वातं वा शृणाति, क√शॄ+उ, एरङ्आदेश] [√कस्+एरुन्] मेरुदण्ड-अस्थि, पीठ के वीच की हड्डी । एक घास या जल में उत्पन्न होने वाला एक मूल जिसे कसेरू कहते हैं ।

कश्मल—(वि०) [√कश+कल, मुट्] गंदा, मैला । लज्जाकर, घृणित । (न०) मन की उदासी; 'कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितं' भग० २.२ । मोह। पाप। मूर्च्छा ।

कश्मीर—(पुं०) [√कश+ईरन्, मुट्] भारत के पश्चिमोत्तर कोण में स्थित एक सुंदर पहाड़ी प्रदेश । तंत्र ग्रन्थानुसार इस देश की सीमा यह है।—'शारदामठमारभ्य कुङ्कुमाद्रितटान्तकः । तावत्कश्मीरदेशः स्यात् पञ्चाशद्योजनात्मकः ।। **ज,—जन्मन्**—(पुं०, न०) केसर, जाफ़ान ।

कश्य—(वि०)[कशाम् अर्हति, कशा+य] चाबुक लगाने योग्य। (न०) शराब, मदिरा, मद्य।

कश्यप—(पुं०) [कश्यं सोमरसादिजनितं मद्यं पिवति, कश्य√पा+क] एक ऋषि जिनकी विभिन्न पत्नियों से सुर, असुर आदि संपूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति मानी जाती है। सप्तर्षिमंडल का एक तारा। कछुवा। एक तरह की मछली। एक तरह का हिरन। —**नन्दन**— (पुं०) गरुड़। देव, असुर आदि।

√**कष्**—भ्वा० पर० सक० मलना। खरोंचना। छीलना। जाँचना, परीक्षा लेना। (कसौटी पर रगड़ कर) परीक्षा लेना। घायल करना। नष्ट करना। खुजलाना। कषति, कषिष्यति, अकषीत्—अकाषीत्।

कष—(वि०) [कषति अत्र अनेन वा, √कष् +अच् वा√कष्+घ नि०] रगड़ा हुआ, खुरचा हुआ। (पुं०) रगड़। कसौटी का पत्थर। परीक्षा।

कषण—(न०) [√कष्+ल्युट्] रगड़ना। चिह्न करना। छीलना। कसौटी पर कसना।

कषा—[कष्यते ताड्यते अनया, √कष्+अप् (वा०)—टाप्] दे० 'कशा।'

कषाय—(वि०) [कषति कण्ठम्, √कष्+आय] कड़ुआ, कसैला। सुगन्धित। कलौंहा लाल। मधुर स्वर वाला। भूरा। अनुचित। मैला। (पुं० न०) कसैला या कड़ुवा स्वाद या रस। लाल रङ्ग। काढ़ा। लेप, उबटन। तेल, फुलेल लगाकर शरीर को सुवासित करना। गोंद, राल। मैल। सुस्ती। मूढ़ता। सांसारिक पदार्थों में अनुराग या अनुरक्ति। (पुं०) अत्यासक्ति। कलियुग।

कषायित—(वि०) कषायः रक्तपीतादिवर्णः संजातोऽस्य, कषाय+इतच्] रंगीन, रंजित; 'अमुनैव कषायितस्तनी' कु० ४.३४। भावान्तरित, विकृत।

कषि—(वि०) [कषति हिनस्ति √कष+इ] हानिकर, अनिष्टकर, क्षतिजनक।

कषेरुका, कसेरुका—(स्त्री०) [√कष् वा√कस् + एरक् + उत्व + कन्—टाप्] पीठ के बीच की हड्डी, मेरुदण्ड, रीढ़।

कष्ट—(वि०) [√कष्+क्त] बुरा, खराब। पीड़ाकारक, सन्तापकारी। क्लिष्ट, कठिनाई से वश में होने वाला। उपद्रवी, अनिष्टकारी, अशुभ बतलाने वाला। (न०) पीड़ा, व्यथा। पाप। दुष्टता। कठिनाई। मुसीबत। श्रम। (अव्य०) हाय! हन्त!—**आगत** (**कष्टागत**)—(वि०) कठिनाई से प्राप्त या कठिनाई से आया हुआ।—**कर**(वि०) पीड़ाकारक, दुःखमय।—**तपस्**—(वि०) कठोर तप करने वाला।—**साध्य**—(वि०) कठिनाई से पूरा होने वाला।—**स्थान**— (न०) दूषित जगह, कठिनाई का या अप्रिय या प्रतिकूल स्थान।

कष्टि—(स्त्री०) [√कष+क्तिन्] जाँच, परीक्षा। पीड़ा, दुःख।

√**कस्**—भ्वा० पर० सक० जाना। कसति, कसिष्यति, अकसीत्— अकासीत्।

कस्तीर—(पुं० न०) [क√तॄ+अच्, नि० सुट्] राँगा। टीन।

कस्तुरिका, कस्तूरिका, कस्तूरी—(स्त्री०) [कस्तूरी + कन्—टाप्, पृषो० साधुः] [कस्तूरी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [कसति गन्धोऽस्याः, √कस् + ऊर, तुट्—ङीप्] एक सुगन्धित पदार्थ जो एक तरह के नर हिरन की नाभि के पास की गाँठ में पैदा होता है और दवा के काम में आता है। मुश्क, कस्तूरी।—**मृग**—(पुं०) वह हिरन जिसकी नाभि से कस्तूरी निकलती है।

कह्लार—(न०) [के जले ह्लादते, क√ ह्लाद् +अच्, पृषो० दस्य रः] सफेद कमल।

कह्व—(पुं०) [के जले ह्वयति शब्दायते स्पर्धते

वा, क√ह्वे+क] वगला । एक प्रकार का सारस ।

कांसीय--(न०) [कंस+छ--ईय+अण्] जस्ता ।

कांस्य--(वि०) [कंस+ञ्य वा कंस+छ--ईय+यञ्, छलोप] काँसे या फूल का बना हुआ । (न०) फूल, काँसा । काँसे का घड़ियाल । पीतल का बना जल पीने का पात्र, गिलास ।--**कार**-(पुं०) कसेरा, काँसे का वरतन बनाने वाला ।--**ताल**-(पुं०) झाँझ, मजीरा ।--**भाजन**-(न०) काँसे का पात्र । --**मल**-(न०) कसाव, ताँबे-पीतल आदि का मोर्चा, तिराई ।

काक---(पुं०) [√कै +कन्] कौवा । (आलं०) तुच्छ जन, नीच, निर्लज्ज या उद्धत पुरुष । लँगड़ा आदमी । जल में केवल सिर भिगोकर (काक की तरह) स्नान करना । (न०) कौओं का झुंड ।--**अक्षिगोलक-न्याय** (**काकाक्षिगोलक०**)-(पुं०) कौए की एक ही आँख की पुतली दोनों नेत्रों में चली जाती है, इसी प्रकार उभय सम्बन्धी दृष्टान्त । --**अरि (काकारि)**-(पुं०) उल्लू, उलूक । --**उदर (काकोदर)**-(पुं०) साँप ।--**उलूकिका,--उलूकीय (काकोलूकिका), (काकोलूकीय)**- (न०) काक और उलक का स्वाभाविक वैर। पंचतंत्र के तीसरे तंत्र का नाम 'काकोलूकीयम्' है ।--**चिञ्चा**-(स्त्री०) गुञ्जा या घुँघची का झाड़ ।--**छद (काकच्छद)**,--**छदि (काकच्छदि**- (पुं०) खंजन पक्षी । जुल्फ, अलक ।--**जात**-(पुं०) कोकिल ।--**तालीय**-(वि०) अचानक या इत्तिफाकिया होने वाला; 'अहो न खलु भोः तदेतत् काकतालीयं नाम' माल० ५ । --**तालुकिन्**-(वि०) तिरस्करणीय, दुष्ट । --**दन्त**-(पुं०)कौए के दाँत । (आलं०)कोई वस्तु जिसका अस्तित्व असम्भव हो, अनहोनी बात ।--**दन्तगवेषण**-(न०) ऐसी बात की खोज जो सर्वथा असम्भव हो, व्यर्थ का काम ऐसा काम जिसके करने में कुछ भी लाभ न हो ।--**ध्वज**-(पुं०) वाड़वानल ।--**निद्रा**-(स्त्री०) झपकी जो तुरन्त दूर हो जाय ।--**पक्ष,--पक्षक**-(पुं०) एक प्रकार की जुल्फें, पट्टे; वालकों की दोनों कनपटियों के लंबे वालों को काकपक्ष कहते हैं ।--**पद**-(न०) छूट का यह (‸) चिह्न । (हस्तलिखित पुस्तक या किसी लेख में जहाँ यह चिह्न लगा हो वहाँ समझ लें कि यहाँ कुछ छूट गया है ।) (पुं०) स्त्री-समागम का एक ढंग ।--**पीलु**-(पुं०) कुचला ।--**पुच्छ, --पुष्ट**-(पुं०) कोकिल, कोयल ।--**पेय**-(वि०) छिछला, उथला ।--**फल**-(पुं०) नीम का पेड़ ।--**फला**-(स्त्री०) बन-जामुन ।--**वन्ध्या (वन्ध्या)**-(स्त्री०) एक बच्चा जनकर बाँझ हो जाने वाली स्त्री ।--**बलि**-(पुं०) श्राद्ध आदि में कौए के लिये निकाला जाने वाला अन्न ।--**भीरु**-(पुं०) उल्लू, उलूक ।--**यव**-(पुं०) अनाज की वाल जिसमें दाना न हो । --**रुत**-(न०) कौए की काँव-काँव जिससे भविष्यद् के शुभाशुभ का ज्ञान होता है । --**रुहा**-(स्त्री०) पेड़ों के सहारे जीने वाला पौधा, । --**शीर्ष**- (पुं०) वकवृक्ष, अगस्त का पेड़ ।--**स्वर**-(पुं०) कौए की कर्णकर्कश बोली ।

काकी--(स्त्री०) [काक+ङीष्] मादा कौआ । वायसी लता ।

काकल, काकाल---(पुं०) [का इत्येवं कलो यस्य ब० स०] [का इति शब्दं कलति रौति, का√कल् + अण्] द्रोणकाक, पहाड़ी कौआ ।(काकल न०) [ईषत् कलो यस्मात्, कोः कादेशः] कंठमणि ।

काकलि, काकली-(स्त्री०) [√कल+इन् कलिः, कु ईषत् कलिः कोः कादेशः] [काकलि+ङीष्] धीमा मधुर स्वर; 'अनुबद्धमुग्धकाकलीसहितं' उत्त० ३ ।

एक यन्त्र या बाजा जिससे चोर यह जानने का यत्न किया करते हैं कि लोग जगते हैं या सोते हैं। कैंची। गुञ्जा का झाड़।—रव-(पुं०) कोकिल।

काकिणिका, काकिणी-(स्त्री०) [काकिणी +कन्—टाप्, ह्रस्व] [ककते गणनाकाले चञ्चलीभवति, √ कक् + णिनि—ङीप् पृषो० नस्य णः] कौड़ी। एक सिक्का जो चौथाई पण या २० कौड़ियों के बराबर होता है। चौथाई माशा। माप का एक अंश। तराजू की डंडी। अठारह इंच या आधगज।

काकिनी—(स्त्री०) [√कक्+णिनि—ङीप्] दे० 'काकिणी।'

काकु—(स्त्री०) [√कक्+उण्] वक्रोक्ति। भय, क्रोध, शोक के आवेश में स्वर की विकृति या परिवर्तन। अस्वीकारोक्ति को इस ढंग से कहना कि सुनने वाले को वह स्वीकारोक्ति जान पड़े। गुनगुनाहट। जिह्वा।

काकुत्स्थ—(पुं०) [ककुत्स्थ+अण्] ककुत्स्थ राजा के वंशधर, सूर्यवंशी राजाओं की एक उपाधि।

काकुद—(न०) [काकुं ध्वनिभेदं ददाति, काकु√ दा+क] तालू, तलुआ, जिह्वा का आश्रयस्थान।

काकोल—(पुं०) [√कक्+णिच्+ओल वा क√कुल्+घञ् कोः कादेशः] काला कौआ, पहाड़ी काक। सर्प। शूकर। कुम्हार। नरक-भेद।

काक्ष—(पुं०) [कुत्सितम् अक्षं यत्र, कोः कादेशः] तिरछी चितवन, कनखिया देखना। (न०) चढ़ी हुई त्योरी। ऐसे देखना जिससे आन्तरिक अप्रसन्नता प्रकट हो; "काक्षेणानादरेक्षितः" भट्टि ५.२८।

काक्षीव—(पुं०) [ईषत् क्षीवति अस्मात्, √क्षीव+घञ्, कादेशः] सहिजन का पेड़।

√काङ्क्ष्—भ्वा० उभ० सक० इच्छा करना, चाहना। आशा करना, प्रतीक्षा करना। काङ्क्षति-ते, काङ्क्षिष्यति-ते, अकाङ्क्षीत् —अकाङ्क्षिष्ट।

काङ्क्षा—(स्त्री०) [√काङ्क्ष्+अ—टाप्] कामना, इच्छा। प्रवृत्ति, झुकाव।

काङ्क्षिन्—(वि०) [√काङ्क्ष् +णिनि] [स्त्री०—**काङ्क्षिणी**] इच्छा करने वाला, अभिलाषी।

काच—(पुं०) [√कच्+घञ्, कुत्वाभाव] काच, शीशा। फाँसा, फंदा। लटकने वाली अलमारी का खाना। जुए की रस्सी। एक नेत्र-रोग। मोम। खारी मिट्टी।—**घटी**-(स्त्री०) झारी, लोटा जो काच का बना हो। —**भाजन**-(न०) शीशे का पात्र।—**मणि**-(पुं०) स्फटिक।—**मल, —लवण—सम्भव**-(न०) काला नमक या सोडा।

काचक—(पुं०) [काच+कन्] शीशा। पत्थर।

काचन, काचनक-(न०) [√कच+णिच् +ल्युट्] [काचन+कन्] डोरी या फीता जो बंडल लपेटने या कागजों को नत्थी करने के काम में आवे।

काचनकिन्—(पुं०) [काचनक+इनि]पोथी, पत्रा। हस्तलिखित ग्रन्थ।

काचूक—(पुं०) [√कच्+ऊकञ् (बा०)] मुर्गा। चक्रवाक, चकवा।

काजल—(न०) [ईषत् वा कुत्सितं जलम्, कोः कादेशः] स्वल्प जल। दूषित जल।

√काञ्च्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना, (सक०) बाँधना। काञ्चते, काञ्चिष्यते, अकाञ्चिष्ट।

काञ्चन—(वि०) [काञ्चन+अण्] [स्त्री०—**काञ्चनी**] सुनहला या सोने का बना हुआ। (न०) [√काञ्च्+ल्यु] सोना, सुवर्ण। चमक, दमक। सम्पत्ति, धनदौलत। कमल का रेशा। (पुं०) धतूरे का पौधा। चम्पा का पौधा।—**अङ्गी** (**काञ्चनाङ्गी**)-(स्त्री०)

सुनहले रंग की स्त्री।—**कन्दर**–(पुं०) सोने की खान।—**गिरि**–(पुं०) सुमेरु पर्वत।—**भू**–(स्त्री०) पीली मिट्टी वाली जमीन। सुवर्णरज।—**सन्धि**–(पुं०) दो पक्षों के बीच हुई ऐसी सन्धि या सुलह जिसमें उभय पक्ष के लिये समान शर्तें हों।

काञ्चनार, काञ्चनाल–(पुं०) [काञ्चन√ऋ+अण्] [काञ्चन√अल+अण्] कोविदार या कचनार का पेड़।

काञ्चि, काञ्ची–(स्त्री०) [काञ्च्+इन्] [काञ्चि+ङीष्] करधनी जिसमें रोनें या घूँघुरु लगे हों, बजनी करधनी। दक्षिण भारत की स्वनाम-प्रसिद्ध एक नगरी जिसकी गणना सप्त मोक्षपुरियों में है; आधुनिक काँजीवरम् नगर।—**पद**–(न०) कूल्हा और कमर।

काञ्चिक—(न०) [कुत्सिता अञ्जिका प्रकाशो यस्य कु√अञ्च्+ण्वुल—टाप्, इत्व, कोः कादेशः] धान्याम्ल, काँजी, एक खट्टा पेय।

काटुक—(न०) [कटुकस्य भावः, कटुक+अण्] खटाई, खट्टापन।

काठ—(पुं०) [√कठ्+घञ्] चट्टान, पत्थर।

काठिन, काठिन्य–(न०) [कठिन+अण्] [कठिन+ष्यञ्] कड़ाई, कड़ापन। निष्ठुरता, कठोरता।

काण—(वि०) [√कण्+घञ्] काना। छेद किया हुआ। फूटी (कौड़ी)। यथा—'प्राप्तः काणवराटकोपि न मया तृष्णेऽधुना मुञ्च माम्।'

काणेय, काणेर–(पुं०) [काणा+ढक्—एय] [काणा+ढक्] कानी स्त्री का पुत्र।

काणेली—(स्त्री०) [काण√इल्+अच्—ङीष्] असती या व्यभिचारिणी स्त्री। अविवाहिता स्त्री।—**मातृ**–(पुं०) अविवाहिता स्त्री का पुत्र। छिनाल स्त्री का पुत्र; 'काणेलीमातः अस्ति किञ्चिच्चिह्नं यदुपलक्षयति' मृच्छ०१।

काण्ड—(पुं०, न०) [√कण्+ड, दीर्घ] भाग, अंश। एक पोर से दूसरे पोर तक का किसी पोरदार पौधे का भाग। पेड़ का तना। किसी ग्रंथ का एक भाग। विभाग। गुच्छा। तीर। लंबी हड्डी। बेंत। डंडा। जल। अवसर, मौका। खास जगह। समूह। खुशामद। एक माप।—**कटुक**–(पुं०) करेला।—**कार**–(पुं०) तीर बनाने वाला। (न०) सुपारी का पेड़।—**गोचर**–(पुं०) लोहे का तीर।—**पट,—पटक**–(पुं०) कनात, पर्दा।—**पात**–(पुं०) तीर की उड़ान या वह स्थान जहाँ तक तीर जा सके।—**पृष्ठ**-(पुं०) सैनिक, शस्त्रजीवी। वेश्या स्त्री का पति। दत्तक पुत्र या औरस पुत्र से भिन्न कोई पुत्र (यह गाली देने में प्रयुक्त होता है)। कमीना, नमकहराम। महावीर-चरित्र में जामदग्न्य को शतानन्द ने काण्डपृष्ठ कहा है—'स्वकुलं पृष्ठतः कृत्वा यो वै परकुलं व्रजेत्। तेन दुश्चरितेनासौ काण्डपृष्ठ इति स्मृतः॥—**भङ्ग**–(पुं०) हड्डी का टूटना या किसी शरीरावयव का भङ्ग होना।—**वीणा**–(स्त्री०) चंडालवीणा, बेंतों का बना एक बाजा।—**सन्धि**–(पुं०) गाँठ।—**स्पृष्ट**–(पुं०) योद्धा, सैनिक।—**हीन**–(न०) भद्रमुस्ता, एक प्रकार का मोथा। (पुं०) लोध्र, लोध।

काण्डवत्—(पुं०) [काण्ड+मतुप्—व] धनुषधारी।

काण्डीर—(पुं०) [काण्ड—ईरन्] धनुषधारी। अपामार्ग।

काण्डोल—[कण्डोल+अण्] नरकुल की बनी डलिया या टोकरी।

कात्—(अव्य०) [कुत्सितम् अतति अनेन, कु√अत्+क्विप्, कोः कादेशः] गाली, तिरस्कारव्यञ्जक अव्यय। प्रायेण इसका प्रयोग 'कृ' के साथ ही होता है (कात्कृ); 'यन्मयैश्वर्यमत्तेन गुरुः सदसि कात्कृतः'।

कातर—(वि०) [ईषत् तरति स्वयं कार्य कर्तुं

शक्नोति, कु√तॄ+अच् , कोः कादेशः] भीरु, डरपोक, उत्साहहीन। दुःखित, शोकान्वित। भीत। घबड़ाया हुआ, विकल, व्याकुल। भय से विह्वल या भय के कारण थरथराता हुआ।

कातर्य—(न०) [कातर+ष्यञ्] भीरुता, डरपोकपना।

कात्यायन—(पुं०) [कतस्य गोत्रापत्यम् , कत+यञ्+फक्—आयन] कत गोत्र में उत्पन्न पुरुष। पाणिनीय सूत्रों पर वार्तिक लिखने वाले वररुचि। विश्वामित्र के वंशज एक ऋषि जिन्होंने श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र आदि की रचना की है।

कात्यायनी—(स्त्री०) [कात्यायन—ङीप्] कत गोत्र में उत्पन्न स्त्री। याज्ञवल्क्य की एक पत्नी। वृद्ध या अधेड़ विधवा (जो लाल वस्त्र पहनती हो)। पार्वती।—**पुत्र,—सुत**—(पुं०) कार्त्तिकेय का नाम।

कार्थश्चित्क—(वि०) [कथश्चित्+ठक्] [स्त्री०—**कार्थंचित्की**] जो कठिनाई से पूर्ण हुआ हो।

काथिक—(पुं०) [कथा—ठक्] कहानी कहने वाला।

कादम्ब—(पुं०) [कदम्ब+अण्] कलहंस। तीर। गन्ना। कदम्ब का पेड़। (न०) कदम्ब के फूल।

कादम्बर—(न०) [कादम्ब√ला+क, लस्य रः] कदम्ब के फूलों की शराब; 'निषेव्य मधुमाधवाः सरसमत्र कादम्बरं' शि० ४.६६। गुड़। दही की मलाई।

कादम्बरी—(स्त्री०)[कु कृष्णवर्णं नीलवर्णम् अम्बरं यस्य ब० स० कोः कदादेशः, कदम्बरो बलरामः तस्य प्रिया, कदम्बर+अण्—ङीप्] कदम्ब के फूलों से खींची हुई मदिरा। मदिरा, शराब। हाथी की कनपटी से चूने वाला मद। सरस्वती। मादा कोकिल। मैना। बाणभट्ट-रचित प्रसिद्ध गद्यकाव्य और उसकी नायिका। गड्ढों में एकत्र वर्षा का जल।

कादम्बिनी—(स्त्री०) [कादम्बाः कलहंसाः सन्ति अस्याम्, कादम्ब + इनि—ङीप्] बादलों की लंबी पंक्ति, मेघमाला। एक रागिनी।

कादाचित्क—(वि०) [कदाचित्+ठञ्] जो कभी हो, इत्तिफाकिया।

काद्रवेय—(पुं०) [कद्रोः अपत्यम्, कद्रु+ढक्] कद्रु के पुत्र—शेष, अनन्त, वासुकि आदि सर्प।

कानक—(न०) [कनक+अण्] जमालगोटा।

कानन—(न०) [√कन्+णिच्+ल्युट्] जङ्गल, वन। घर, मकान।—**अग्नि** (**काननाग्नि**)—(पुं०) दावानल।—**ओकस्** (**काननौकस्**)— (पुं०) वनवासी। वानर।

कानिष्ठिक—(न०) [कनिष्ठिका+अण्] छगुनिया, सबसे छोटी हाथ की उँगली।

कानिष्ठिनेय—(पुं०) [कनिष्ठा+ढञ् , इनङ् आदेश] सबसे छोटे बच्चे (लड़की) की सन्तान।

कानीन—(पुं०) [कन्यायाः जातः, कन्या+अण्, कानीन आदेश] अविवाहिता स्त्री से उत्पन्न पुत्र। व्यास। कर्ण।

कान्त—(वि०) [√कन्+क्त वा √कम्+क्त] प्रिय, इष्ट, प्यारा। मनोहर, सुन्दर। (पुं०) प्रेमी, आशिक। पति। प्रेमपात्र, माशूक; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपगतः सङ्गमात्किञ्चिदूनः' मे० १००। चन्द्रमा। वसन्तऋतु। एक प्रकार का लोहा। रत्नविशेष। कार्त्तिकेय। विष्णु। शिव। कामदेव। चक्रवाक। श्रीकृष्ण। कुंकुम।—**पक्षिन्**—(पुं०) मोर, मयूर।—लोह—(न०) चुम्बक पत्थर।

कान्ता—(स्त्री०) [√कम् + क्त—टाप्] माशूका या प्रेमपात्री सुन्दरी स्त्री। पत्नी, भार्या। प्रियङ्गु बेल। बड़ी इलायची। पृथिवी।—**अङ्घ्रिदोहद** (**कान्ताङ्घ्रिदोहद**)— (पुं०) अशोकवृक्ष।

कान्तार--(पुं०, न०) [कान्त√ऋ+अण्] विशाल वियावान, निर्जन वन। खराव सड़क। रन्ध्र, छेद। गड्ढा। (पुं०) लाल रङ्ग के गन्नों की अनेक जातियाँ। तिन्दुक, पहाड़ी आवनूस।

कान्ति--(स्त्री०)[√कम् +क्तिन्] मनोहरता, सौन्दर्य। आभा, दीप्ति, आव। व्यक्तिगत श्रृङ्गार। कामना, इच्छा, चाह। अलङ्कार शास्त्र में प्रेम से बढ़ी हुई सुन्दरता। साहित्य,-दर्पणकार ने, 'कान्ति' 'शोभा' और 'दीप्ति' में इस प्रकार अन्तर वतलाया है--'रूपयौवनलालित्यं भोगाद्यैरङ्गभूषणम्। शोभा प्रोक्ता सैव कान्तिर्मन्मथाप्यायिता द्युतिः। कान्तिरेवातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्यभिधीयते॥' मनोहर मनोनीत स्त्री। दुर्गा की उपाधि।--**कर**-(वि०) सौन्दर्य लानेवाला, शोभा वढ़ाने वाला।--**द**-(वि०) सौन्दर्यप्रद, शोभाजनक। (न०) पित्त। घी।--**दायक**,--**दायिन्**-(वि०) शोभा देनेवाला।--**भृत्**-(पुं०) चन्द्रमा।

कान्तिमत्--(वि०)[कान्ति+मतुप्] कान्तियुक्त, मनोहर, सुन्दर। (पुं०) चन्द्रमा। कामदेव।

कान्दव—(न०) [कन्दु+अण्] लोहे की कढ़ाई या चूल्हे में भुनी हुई कोई वस्तु।

कान्दविक--(पुं०) [कान्दव+ठक्] नानवाई, हलवाई।

कान्दिशीक--(वि०) ['कां दिशं यामि' इत्येवं वादिनोऽर्थे ठक्, पृषो० साधुः] भगोड़ा, भाग जाने वाला; 'मृगजनः कान्दिशीकः संवृत्तः' पं० १.२। भयभीत, डरा हुआ।

कान्यकुब्ज--(पुं०) [कन्याः कुब्जाः यत्र, कन्याकुब्ज+अण्, पृषो० साधुः] एक देश का नाम, कन्नौज। ब्राह्मण-भेद।

कापटिक--(वि०) [कपट+ठक्][स्त्री०--**कापटिकी**] धोखेवाज, जालसाज। दुष्ट। (पुं०) चापलूस, खुशामदी।

कापट्य— (न०) [कपट+ष्यञ्] दुष्टता। जालसाजी, धोखा, छल, कपट।

कापथ--(पुं०) [कुत्सितः पन्थाः कु० स०, समासान्त अच्, कादेशः] खराव सड़क।

कापाल, कापालिक-(पुं०) [कपाल+अण्] [कपाल+ठक्] शैव सम्प्रदाय के अन्तर्गत एक उपसम्प्रदाय। इस सम्प्रदाय के लोग अपने पास खोपड़ी रखते हैं और उसी में रींध कर या रख कर खाते हैं, वामाचारी। एक प्रकार का कोढ़।

कापालिन्--(पुं०) [कपाल+अण् (स्वार्थे) +इनि] शिव का नाम।

कापिक--(वि०) [कपि+ठक्] [स्त्री०--**कापिकी**] वानर जैसी शक्ल का या वानर की तरह आचरण करने वाला।

कापिल--(वि०) [कपिल+अण् (स्वार्थे)] [स्त्री०--**कापिली**] कपिल का या कपिल संवंधी। कपिल द्वारा पढ़ाया हुआ या कपिल से निकला हुआ। (पुं०) कपिल के सांख्यदर्शन को मानने वाला या उसका अनुयायी। भूरा रंग।

कापिश--(न०) [कपिशा माधवी तत्पुष्पात् जातम्, कपिशा+अण्] माधवी के फूलों की शराव। मद्यमात्र।

कापिशायन—(न०) [कापिशी+ष्फक्] मद्य। मधु। देवता।

कापिशी—(स्त्री०) [कपिश+अण्--ङीप्] एक स्थान जहाँ शराव अच्छी वनती थी।

कापुरुष--(पुं०) [कुत्सितः पुरुषः, कु० स०, कोः कदादेशः] नीच या ओछा जन। डरपोक या दुष्ट जन; 'सुसन्तुष्टः कापुरुषः स्वल्पेनापि तुष्यति' पं० १.२५।

कापेय--(वि०) [कपि+ढक्] वानर की जाति का। वानर जैसी चेष्टा करने वाला। (न०) वंदरों की घुड़की आदि।

कापोत--(वि०) [कपोत+अण्] धूसर वर्ण का। (पुं०) धूसर वर्ण। [स्त्री०--**कापोती**] (न०) कवूतरों का गिरोह। सुर्मा। -**अञ्जन**

(कापोताञ्जन)–(न०) आँख में लगाने का सुर्मा।

काप्यकार––(पुं०) [कुत्सितमाप्यं काप्यं पापं करोति धातूनामनेकार्थत्वात् कथयति इति√कृ+ट्] अपने पापों को स्वीकार करने वाला।

काम्––(अव्य०) किसी को बुलाने में प्रयोग होने वाला अव्यय।

काम––(पुं०) [√कम्+णिङ + घञ्] कामना, अभिलाषा। अभिलषित वस्तु। स्नेह, प्रेम। एक पुरुषार्थ। स्त्री-सम्भोग की कामना या स्त्रीसम्भोग का अनुराग, मैथुनेच्छा। कामदेव। प्रद्युम्न का नाम। बलराम का नाम। एक प्रकार का आम का पेड़। (न०) [√कम्+णिङ+अण्] इष्ट वस्तु, अभीष्ट पदार्थ। वीर्य, धातु।––**अग्नि (कामाग्नि)**– (पुं०) प्रेम की आग या सरगर्मी, उत्कट प्रेम।––**अङ्कुश (कामाङ्कुश)**-(पुं०) नख, नाखून। जननेन्द्रिय, लिङ्ग।––**अङ्ग (कामाङ्ग)**–(पुं०) आम का पेड़।––**अन्ध (कामान्ध)**–(पुं०) कोकिल।––**अन्धा (कामान्धा)**–(स्त्री०) कस्तूरी।––**अन्निन् (कामान्निन्)**–(वि०) मनोभिलषित भोजन जब चाहे तब पाने वाला।––**अभिकाम (कामाभिकाम)**–(वि०) कामुक, लंपट।––**अरण्य (कामारण्य)**–(न०) मनोहर उपवन या सुन्दर उद्यान।––**अरि (कामारि)**–(पुं०) शिव।––**अर्थिन् (कामार्थिन्)**–(वि०) कामुक।––**अवतार (कामावतार)**– (पुं०) प्रद्युम्न का नाम।––**अवसाय (कामावसाय)** (पुं०) दुःख-सूख की ओर से उदासीनता।––**अशन (कामाशन)**–(न०) इच्छानुसार खाना। असंयत भोग-विलास।––**आतुर (कामातुर)**–(वि०) प्रेम के कारण बीमार, कामवेग से बेहाल।––**आत्मज (कामात्मज)**–(पुं०) प्रद्युम्न-पुत्र अनिरुद्ध की उपाधि।––**आत्मन् (कामात्मन्)**–(वि०) कामुक, कामासक्त, आशिक।––**आयुध (कामायुध)**–(न०) कामदेव के बाण। जननेन्द्रिय। (पुं०) आम का पेड़।––**आयुस् (कामायुस्)**–(पुं०) गीध, गिद्ध। गरुड़।––**आर्त (कामार्त)**–(पुं०) कामपीड़ित,प्रेमविह्वल; 'कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु, मे० ५।––**आसक्त (कामासक्त)**–(वि०) कामी, कामुक, प्रेम में विह्वल।––**ईप्सु (कामेप्सु)**–(वि०) अभीष्ट वस्तु के लिये प्रयत्नवान्।––**ईश्वर (कामेश्वर)**–(पुं०) कुबेर की उपाधि। परब्रह्म।––**उदक (कामोदक)**– (न०) स्वेच्छापूर्वक जलदान। सगोत्र या जो तर्पण के अधिकारी हैं, उनसे भिन्न किसी का जलतर्पण करना।––**उपहत (कामोपहत)** –(वि०) काम-पीड़ित।––**कला**-(स्त्री०) काम की स्त्री रति का नाम। काम का उद्दीपन। मैथुन। एक तंत्रोक्त विद्या। रति-सुख-वर्धन करने वाली कला।–**कामिन्**-(वि०) कामना का अनुसरण करने वाला 'स शान्तिमाप्नोति न कामकामी' भग०।––**कूट**– (पुं०) वेश्या का प्रेमी। वेश्यापना।––**केलि**– (वि०) कामरत, कामुक, कामी। (पुं०) रतिक्रीड़ा।––**चर,––चार**–(वि०) बेरोकटोक, असंयत। (पुं०) बेरोकटोक गति। स्वेच्छाचारिता। कामासक्तता। मैथुनेच्छा। स्वार्थपरता।––**चारिन्**–(वि०) असंयतगतिशील। कामी, कामुक। स्वेच्छाचारी। (पुं०) गरुड़। गौरैया।––**जित्**-(वि०) काम को जीतने वाला। (पुं०) शिव की उपाधि। स्कन्द की उपाधि।––**ताल**-(पुं०) कोकिल।––**तिथि**–(स्त्री०) काम की पूजा की तिथि, त्रयोदशी।––**द**–(वि०) अभिलाषा पूर्ण करने वाला।––**दा**–(स्त्री०) कामधेनु।––**दर्शन**– (वि०) मनोहर रूप वाला।––**दुघा,––दुह्** (स्त्री०) कामधेनु।––**दूती**–(स्त्री०) कोकिला।––**देव**–(पुं०)प्रेम के अधिष्ठाता देवता। कंदर्प।

विष्णु । शिव ।—**धेनु**–(स्त्री०) स्वर्ग की गाय जो सब कामनाओं की पूर्ति करने वाली मानी जाती है । वसिष्ठ की गाय नंदिनी जिसके लिये विश्वामित्र से उनका युद्ध हुआ । —**ध्वंसिन्**–(पुं०) शिव का नाम ।—**पत्नी**–(स्त्री०) रति, कामदेव की स्त्री ।—**पाल**–(पुं०) विष्णु । शिव । वलराम ।—**प्रवेदन**–(न०) अपनी इच्छा प्रकट करना ।—**प्रश्न**–(पुं०) मनमाना प्रश्न या सवाल ।—**फल**–(पुं०) आम के पेड़ों की एक जाति ।—**वाण**–(पुं०) कामदेव के पाँच वाण—मोहन, उन्मादन, संतपन, शोषण और निश्चेष्टीकरण अथवा ये पाँच पुष्प—लालकमल, नीलकमल, अशोक, आम और चमेली ।—**भोग**–(पुं०) मैथुनेच्छा की पूर्ति । —**मह**–(पुं०) कामदेव सम्वन्धी उत्सव-विशेष जो चैत्रमास की पूर्णिमा को मनाया जाता है । —**मूढ़**,—**मोहित**–(वि०) प्रेम से वुद्धि गँवाये हुए, कामान्ध ।—**रस**–(पुं०) वीर्यपात ।—**रसिक**–(वि०) कामुक, कामी ।—**रूप**–(वि०) इच्छानुसार रूप धारण करने वाला; 'जानामि त्वाम् प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः' मे० ६ । सुन्दर, खूवसूरत । (पुं०) गोहाटी का प्रदेश कामरूप देश के नाम से प्रसिद्ध है ।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०) वेश्या, रंडी । —**लता**–(स्त्री०) पुरुषेंद्रिय, लिंग । —**लोल**–(वि०) कामपीड़ित ।—**वर**–(पुं०) मुँहमाँगा वरदान ।—**वल्लभ**–(पुं०) वसन्तऋतु । आम का पेड़ ।—**वल्लभा**–(स्त्री०) चन्द्रमा की चाँदनी ।—**वश**–(वि०) प्रेमासक्त । (पुं०) प्रेमासक्ति ।—**वाद**–(पुं०) मनमाना कहना, जो जी में आवे सो कहना ।—**विहन्तृ**–(वि०) कामदेव को जीत लेने वाला । (पुं०) महादेव ।—**वृत्त**–(वि०) यथेच्छाचारी । कामुक, ऐयाश ।—**वृत्ति**–(वि०) स्वेच्छाचारी, स्वतंत्र । (स्त्री०) स्वतन्त्रता, स्वेच्छाचारिता ।—**वृद्धि**–(स्त्री०) कामेच्छा की वृद्धि ।—**शर**–(पुं०) दे० 'कामवाण' । आम का पेड़ ।—**शास्त्र**–(पुं०) कामकला सिखाने वाला शास्त्र, प्रणयात्मक विज्ञान । —**संयोग**–(पुं०) अभीष्ट पदार्थ की उपलब्धि या प्राप्ति ।—**सख**–(पुं०) वसन्तऋतु । —**सू**–(वि०) किसी भी अभिलाषा को पूरा करने वाला ।—**सूत्र**–(न०) वात्स्यायन सूत्र जिसमें कामशास्त्र का प्रतिपादन है ।—**हेतुक** (वि०) विना किसी कारण के केवल इच्छामात्र से उत्पन्न ।

कामतः—(अव्य०) [काम+तस्] स्वेच्छा से । जानवूझ कर, इरादतन । रसिकता से ।

कामन—(वि०) [कामयते इति,√कम्+णिङ् +युच्] कामुक, लंपट । (न०) [भावे युज्] ख्वाहिश, चाह, अभिलाषा ।

कामना—(स्त्री) [कामन+टाप्] अभिलाषा, इच्छा, चाह ।

कामनीयक—(न०) [कमनीयस्य भावः, कमनीय+वुञ्] रमणीयता, खूवसूरती ।

कामन्दकि—(पुं०) [कमन्दकस्य अपत्यम्, कमन्दक+इञ्] एक नीतिशास्त्र-प्रणेता ।

कामन्दकीय—(न०) [कामन्दकि+छ—ईय] कामन्दकि-प्रणीत एक नीतिशास्त्र ।

कामन्धमिन्—(पुं०) [कामं यथेष्टं धमति, काम√ध्मा+णिनि, धमादेशः मुम् च नि०] कसेरा, ठठेरा ।

कामम्—(अव्य०) [√कम्+णिङ +अमु] इच्छा या प्रवृत्ति के अनुसार । इच्छानुकूल । प्रसन्नता से, रजामन्दी से । ठीक, स्वीकारोक्ति सूचक अव्यय । माना हुआ, स्वीकार किया हुआ । निस्सन्देह, सचमुच, वस्तुतः । वेहतर, वल्कि ।

कामयमान, कामयान, कामयितृ–(वि०) [√कम्+णिङ्+शानच्, मुक्] [√कम् +णिङ +शानच्, मुगभाव] [√कम् + णिङ +तृच्] कामुक । रसिया, ऐयाश, लम्पट ।

कामल—(वि०) [√कम्+णिङ्+कलच्] रसिया, ऐयाश, लम्पट। (पुं०) वसन्त ऋतु। मरुभूमि, रेगिस्तान।

कामलिका—(स्त्री०) [कामल+कन्—टाप् इत्व] मदिरा, शराव।

कामवत्—(वि०) [काम+मतुप्—वत्व]। अभिलाषी, चाह रखने वाला। रसिक, ऐयाश।

कामिन्—(वि०) [√कम्+णिङ +णिनि] [स्त्री०—**कामिनी**] कामी, रसिक, ऐयाश। अभिलाषी। (पुं०) प्रेमी, आशिक। स्त्रैण, स्त्रीनिर्जित पुरुष। चक्रवाक। गौरैया। शिव की उपाधि। चन्द्रमा। कवूतर।

कामिनी—(स्त्री०) [कामिन्+ङीप्] प्यार करने वाली स्त्री। मनोहर या सुन्दरी स्त्री; 'उदयति हि शशाङ्कः कामिनी गण्डपाण्डुः' मृच्छ० १.५७। स्त्री, औरत। भीरु स्त्री। शराव, मदिरा।

कामुक—(वि०) [√कम्+णिङ +उकञ्] [स्त्री०—**कामुका या कामुकी**] अभिलाषी, चाह रखने वाला। रसिक। लम्पट, ऐयाश। (पुं०) प्रेमी, आशिक। ऐयाश आदमी। गौरैया पक्षी। अशोक वृक्ष।

कामुका—(स्त्री०) [कामुक+टाप्] धन की कामना रखने वाली स्त्री। जरपरस्त औरत।

कामुकी—(स्त्री०) [कामुक+ङीष्] छिनाल या ऐयाश औरत।

काम्पिल्ल, काम्पील–[कम्पिला नदीविशेषः तस्याः अदूरे भवः, कम्पिला+अण्, काम्पिल +अरम् नि० साधुः] [कम्पिला+अण् नि० दीर्घः] गुण्डारोचना नामक लता।

काम्बल—(पुं०) [कम्वलेन आवृतः, कम्वल +अण्] कंवल या ऊनी वस्त्र से ढकी हुई गाड़ी या रथ।

काम्बविक—(पुं०) [कम्वुः भूषणत्वेन शिल्पमस्य, कम्वु+ठक्] शंख या सीप के वने आभूषण वेचने वाला दूकानदार, शंख का व्यापारी।

काम्बोज—(पुं०) [कम्वोज+अण्] कम्वोज (कंवोडिया) देशवासी। कम्वोज देश का राजा। पुन्नाग वृक्ष। कम्वोज देश में उत्पन्न होने वाले घोड़ों की एक जाति।

काम्य—(वि०) [√कम्+णिङ +यत्] वाञ्छनीय। किसी विशेष कामना के लिए किया हुआ (कर्मानुष्ठान)। सुन्दर, मनोहर, कमनीय।—**अभिप्राय** (**काम्याभिप्राय**)–(पुं०)स्वार्थवश किया हुआ कर्म, जिसका हेतु या कारण स्वार्थ हो।—**कर्मन्**–(पुं०) धर्मानुष्ठान जो किसी उद्देश्य-विशेष के लिये किया गया हो और जिससे भविष्य में फल-प्राप्ति की इच्छा हो।—**गिर्**–(स्त्री०) अनुकूल कथन या भाषण।—**दान**–(न०) ऐसा दान या भेंट जो स्वीकार करने योग्य हो। स्वेच्छानुसार दी हुई भेंट या अपनी इच्छा के अनुसार दिया हुआ दान।—**मरण**–(न०) इच्छामृत्यु। आत्महत्या।—**व्रत**–(न०) अपनी इच्छा से रखा हुआ व्रत।

काम्या—(स्त्री०) [√कम्+णिङ +क्यप् —टाप्] अभिलाषा, इच्छा। प्रार्थना।

काम्ल—(वि०) [कु ईषत् अम्लः, कु० स०] नाममात्र को खट्टा, कम खट्टा।

काय—(पुं०, न०) [√चि+घञ् नि० साधुः] शरीर, देह, तन। पेड़ का धड़ या तना। तारों को छोड़कर वीणा का समस्त काठ का ढाँचा। समुदाय, संघ। पूँजी, मूलधन। घर, वासा, डेरा। चिह्न। स्वभाव। (पुं०) [कः प्रजापतिः देवता अस्य, क+अण्, इदादेश, आदि-वृद्धि] प्राजापत्य विवाह। आठ प्रकार के विवाहों में से एक। (न०) प्रजापतितीर्थ। हाथ की उँगलियों की जड़ के पास का भाग, विशेष कर कनिष्ठिका का मूल भाग।—**अग्नि**-(**कायाग्नि**) (पुं०) पाचनशक्ति।—**क्लेश**–(पुं०)शरीर सम्वन्धी कष्ट।—

चिकित्सा–(स्त्री०) आयुर्वेद के आठ विभागों में तीसरा विभाग अर्थात् उन रोगों की चिकित्सा या इलाज जो समस्त शरीर में व्याप्त हों ।—**मान**–(न०) शरीर का माप । पर्णशाला, झोपड़ी ।—**वलन**– (न०) कवच, वर्म ।

कायक, कायिक– (वि०) [काय+वुञ्] [काय+ठक्] शरीर-सम्बन्धी ।

कायका, कायिका– (स्त्री०) [कायक+टाप्] [कायिक+टाप्] व्याज़, सूद ।—**वृद्धि**– (स्त्री०) वह व्याज या सूद जो किसी धरोहर रखे हुए जानवर का उपयोग करने के बदले मुजरा दिया जाय ।

कायस्थ—(पुं०) [काय√स्था+क] परमात्मा । एक हिंदू उपजाति ।

कायस्था—(स्त्री०) [कायस्थ+टाप्] कायस्थ स्त्री । हड़ । आँवला । तुलसी । काकोली ।

कायस्थी—(स्त्री०) [कायस्थ+ ङीष्] कायस्थ की स्त्री ।

कार—(वि०) [√कृ+अण् वा√कृ+घञ् वा कं√ऋ+घञ्] [स्त्री०—**कारी**] समासान्त शब्द का अन्तिम भाग होकर जब यह आता है, तब इसका अर्थ होता है करने वाला, बनाने वाला, सम्पादन करने वाला, यथा, कुम्भकार, ग्रन्थकार आदि । (पुं०) कार्य । कर्म (यथा पुरुषकार) । उद्योग, प्रयत्न, चेष्टा । धार्मिक तप । पति, स्वामी, मालिक । सङ्कल्प, दृढ़ निश्चय । शक्ति, सामर्थ्य, ताकत । कर या चुंगी । बर्फ का ढेर । हिमालय पर्वत । —**अवर** (**कारावर**)–(पुं०) एक वर्णसङ्कर जाति जिसकी उत्पत्ति निषाद पिता और वैदेही जाति की माता से हुई है ।—**कर**–(वि०) गुमाश्ता या आममुख्तार की जगह काम करने वाला ।—**भू**–(पुं०) चुंगी उगाहने की जगह, कर वसूल करने का स्थान ।

कारक—(वि०) [√कृ +ण्वुल्] [स्त्री०—**कारिका**] करने वाला, बनाने वाला । प्रतिनिधि, कारिन्दा, मुनीम । (न०) व्याकरण में कारक उसे कहते हैं जिसका क्रिया से सम्बन्ध होता है । कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण, सम्बन्ध—ये सात कारक हैं । व्याकरण का वह भाग जिसमें कारकों का वर्णन है ।—**दीपक**–(न०) एक अर्थालङ्कार ।—**हेतु**–(पुं०) ज्ञापक हेतु का उल्टा, क्रियात्मक हेतु ।

कारण—(न०) [√कृ+णिच्+ल्युट्] हेतु । जिसके बिना कार्य की उत्पत्ति न हो सके । साधन, जरिया । उत्पादक, कर्त्ता, जनक, तत्त्व । किसी नाटक की मूल घटना । इन्द्रिय । शरीर । चिह्न । दस्तावेज, प्रमाण । वह आधार जिस पर कोई मत या निर्णय अवलम्बित हो ।—**उत्तर** (**कारणोत्तर**)–(न०) मन में कुछ अभिप्राय रख कर उत्तर देना । वादी की कही बात को कह कर पीछे उसका खण्डन करना)। जैसे—मैं यह स्वीकार करता हूँ कि यह घर गोविन्द का है; किन्तु गोविन्द ने मुझे यह दान में दे दिया है)।—**भूत**–(वि०) कारण बना हुआ, हेतु बना हुआ ।—**माला**–(स्त्री०) एक अर्थालङ्कार ।—**वादिन्**–(पुं०) वादी, मुद्दई ।—**वारि**–(न०) वह जल जो सृष्टि के आदि में उत्पन्न किया गया था ।—**विहीन**–(वि०) हेतुरहित, कारणरहित, बेवजह ।—**शरीर**–(न०)नैमित्तिक शरीर । अज्ञान या अविद्यारूप शरीर ।

कारणा—(स्त्री०) [√कृ+णिच्+युच्–टाप्] पीड़ा, क्लेश । नरक में डाला जाना ।

कारणिक—(वि०) [कारण+ठक्] परीक्षक । न्यायकर्त्ता । नैमित्तिक ।

कारण्डव—(पुं०) [√रम्+ड रण्डः ईषत् रण्डः कारण्डः तं वाति, कारण्ड√वा+क] एक प्रकार का हंस या बत्तख ।

कारन्धमिन्—(पुं०) [कर एव कारः तं धमति,

कार√ध्मा+इनि पृषो० साधु:] कसेरा, ठठेरा। खनिज-विद्या-विद्। धातु-परीक्षक।

कारव—(पुं०) [का इति रवो यस्य, ब० स०] काक, कौआ।

कारवेल्ल,—वेल्लक—(पुं०) [कार √वेल्ल्+अच्] [कारवेल्ल+क] करेला।

कारस्कर—(पुं०) [कारं करोति, कार √कृ+ट, सुट्] किंपाक नामक वृक्ष।

कारा—(स्त्री०) [कीर्यते क्षिप्यते दण्डार्हो यस्याम्, √कृ+अङ, गुण, दीर्घ नि०] जेलखाना, बंदीगृह। वीणा का एक भाग या तूंवी। पीड़ा। कष्ट। दूती। सुनारिन। वीणा की गूँज को कम करने का औजार।—**आगार**, (**कारागार**),—**गृह**,—**वेश्मन्**—(न०) जेलखाना, कैदखाना; 'कारागृहे निर्जितवासवेन लङ्केश्वरेणोषितमाप्रसादात्' र० ६.४०।—**गुप्त**—(पुं०) कैदी, बंदी।—**पाल**—(पुं०) जेलखाने का दरोगा।

कारि—(स्त्री०) [√कृ+इञ्] क्रिया, कर्म। (पुं० या स्त्री०) कला-कुशल, दस्तकार।

कारिका—(स्त्री०) [√कृ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] नाचने वाली स्त्री। कारोवार, व्यापार, व्यवसाय। काव्य, दर्शन, व्याकरण, विज्ञान सम्बन्धी प्रसिद्ध पद्यात्मक कोई रचना [जैसे सांख्यकारिका]। अत्याचार, जुल्म। व्याज, सूद। अल्पाक्षरयुक्त और बहु अर्थवाची श्लोक।

कारित—(वि०) [√कृ+णिच्+क्त] कराया हुआ।

कारिता—(स्त्री०) [कारित+टाप्] वह अधिक सूद जो ऋणी ने देना स्वीकार किया हो।—**वृद्धि**—(स्त्री०) ऋण किये हुए द्रव्य को किसी को देकर उससे लिया जाने वाला सूद।

कारिन्—(पुं० [√कृ+णिनि] कारीगर। कलाकार। (वि०) करने वाला।

कारीरी—(स्त्री०) [कं जलम् ऋच्छति, क√ऋ+विच्, कारो मेघः तम् ईरयति, कार √ईर्+अण्—ङीप्] वर्षा के लिये किया जाने वाला एक यज्ञ।

कारीष—(न०) [करीष+अण्] सूखे गोवर या करसी का ढेर।

कारु—(वि०) [√कृ+उण्] [स्त्री०—**कारू**] कर्त्ता, करने वाला। भयावह। (पुं०) कारिंदा, नौकर। कलाकार। कारीगर, कारीगरों में गणना इतनों की है —'तक्षा च तंतुवायश्च नापितो रजकस्तथा। पञ्चमश्चर्मकारश्च कारवः शिल्पिनो मताः॥'—**चौर**—(पुं०) सेंध फोड़ने वाला चोर। डाकू।—**ज**—(पुं०) शिल्प से वनी कोई वस्तु। युवा हाथी या हाथी का बच्चा। टीला, पहाड़ी। फेन। गेरू। तिल, मस्सा।

कारुणिक—(वि०) [करुणा शीलमस्य, करुणा+ठक्] [स्त्री०—**कारुणिकी**] दयालु, करुणा करने वाला।

कारुण्य—(न०) [करुणा+ष्यञ्] दया, रहम, अनुकम्पा।

कार्कश्य—(न०) [कर्कश+ष्यञ्] सख्ती। कठोरता। दृढ़ता। ठोसपना। हृदय की कठोरता, संगदिली।

कार्तवीर्य—(पुं०) [कृतवीर्य+अण्] हैहयराज कृतवीर्य का पुत्र। इसकी राजधानी माहिष्मती नगरी थी, इसको सहस्रबाहु या सहस्रार्जुन भी कहते हैं।

कार्त्तस्वर—(न०) [कृतस्वरे तदाख्ये आकरविशेषे भवम् अथवा कृताः पठिताः स्वरा येन सः कृतस्वरः सामगायकः तस्मै दक्षिणात्वेन देयम्, कृतस्वर+अण्] सोना, सुवर्ण।

कार्तान्तिक—(पुं०) [कृतान्तं वेत्ति, कृतान्त+ठक्] ज्योतिषी, भविष्यद्वक्ता; 'कार्तान्तिको भूत्वा भुवं बभ्राम' दश०।

कार्त्तिक—(पुं०) [कृत्तिकानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी यत्र, कृत्तिका+अण्] आश्विन के वाद के मास का नाम जिसकी पूर्णमासी के

दिन चन्द्रमा कृत्तिका नक्षत्र में होता है, अथवा जिसकी पूर्णमासी के दिन कृत्तिका नक्षत्र होता है। स्कन्द की उपाधि। बार्हस्पत्य वर्ष।

कार्त्तिकी—(स्त्री०) [कार्त्तिक+अण्–ङीन्] कार्त्तिक मास की पूर्णमासी।

कार्त्तिकेय—(पुं०) [कृत्तिकानाम् अपत्यम् पाल्यत्वेन, कृत्तिका+ढक्] शिवपुत्र, स्कन्द, स्वामिकार्त्तिकेय।—**प्रसू**–(स्त्री०) पार्वती-देवी, स्कन्द की जननी।

कार्त्स्न्य—(न०) [कृत्स्न+ष्यञ्] सम्पूर्णता, समूचापन।

कार्दम—(वि०) [कर्दम+अण्] [स्त्री०—**कार्दमी**] कीचड़ युक्त, कीचड़ से भरा या उससे सना। कर्दम प्रजापति सम्बन्धी।

कार्पट—(पुं०) [कर्पट+अण्] आवेदनकर्त्ता, अर्जी देने वाला, प्रार्थी, उम्मेदवार। चिथड़ा, लत्ता।

कार्पटिक—(पुं०) [कर्पट+ठक्] तीर्थ-यात्री। तीर्थजलों को ढोकर आजीविका करने वाला। तीर्थयात्रियों का एक दल। अनुभवी मनुष्य। पिछलग्गू, खुशामदी।

कार्पण्य—(न०) [कृपण+ष्यञ्] धनहीनता, गरीबी। अनुकम्पा, दया। कंजूसी, सूमपना। शक्तिहीनता, निर्बलता; 'कार्पण्यदोषोपहत-स्वभावः' भग० २.७। हल्कापन, ओछापन।

कार्पास—(वि०) [कर्पास+अण्] [स्त्री०—**कार्पासी**] कपास या रुई का बना हुआ। (पुं०, न०) कोई वस्तु जो रुई से बनी हो। कागज।—**अस्थि** (**कार्पासास्थि**)–(न०) बिनौला, कपास का बीज।—**नासिका**-(स्त्री०) तकुआ, तकला।—**सौत्रिक**–(वि०) (कार्पाससूत्रण निर्वृत्तः, कार्पाससूत्र +ठक्, द्विपदवृद्धि] कपास के सूत से बना हुआ।

कार्पासिक—(वि०) [कर्पास+ठक्] [स्त्री० —**कार्पासिकी**] रुई का बना हुआ या कपास से उत्पन्न।

कार्पासिका, कार्पासी—(स्त्री०) [कार्पासी+कन्–टाप्, ह्रस्व] [कार्पास+ङीप्] कपास का पौधा।

कार्मण—(वि०) [कर्मन्+अण्][स्त्री०—**कार्मणी**] किसी कार्य को पूरा करने वाला, किसी कार्य को सुचारु रूप से करने वाला। (न०) जादू। तंत्रविद्या।

कार्मिक—(वि०) [कर्मन्+ठक्][स्त्री०—**कार्मिकी**] निर्मित, बना हुआ। जरी का काम किया हुआ, रंगबिरंगे सूतों से बिना हुआ। (न०) वह वस्त्र जिसमें, चक्र, स्वस्तिक आदि चिह्न बुनकर बनाये गये हों।

कार्मुक—(वि०) [कर्मन्+उकञ्] [स्त्री० **कार्मुकी**] काम के योग्य, काम करने लायक। किसी कार्य को सुचारु रूप से पूर्ण करने वाला। (न०) धनुष, कमान। बाँस।

कार्य—(वि०) [√कृ+ण्यत्] करने योग्य, कर्तव्य। (न०) काम। धंधा, व्यवसाय। धार्मिक कृत्य। अभाव। कारण का विकार, परिणाम। लेन-देन का विवाद। मुकदमा। प्रयोजन। हेतु। फलित ज्योतिष में लग्न से दसवाँ स्थान। नाटक का शेष अंक।—**अक्षम**–(वि०) जो अपने कर्त्तव्य कार्य करने में असमर्थ हो, अयोग्य।—**अकार्य-विचार** (**कार्याकार्यविचार**)–(पुं०) किसी विषय की सपक्ष-विपक्ष युक्तियों पर वादानुवाद, किसी कार्य के औचित्य-अनौचित्य पर वादानुवाद।—**अधिप** (**कार्याधिप**)–(पुं०) कार्याध्यक्ष। ज्योतिष में वह ग्रह जिसकी परिस्थिति देखकर किसी प्रश्न का उत्तर दिया जाय।—**अर्थ** (**कार्यार्थ**)–(पुं०) उद्देश्य, प्रयोजन। नौकरी पाने के लिये आवेदनपत्र। **अर्थिन्** (**कार्यार्थिन्**)–(वि०) प्रार्थी। किसी पदार्थ की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील। पद-प्रार्थी, नौकरी चाहने वाला। अदालत में किसी दावे के लिये वकालत करने वाला। अदालत का आश्रय ग्रहण करने वाला।

—आसन (कार्यासन)–(न०) वह स्थान जहाँ लेन-देन या क्रय-विक्रय होता हो, दूकान, गद्दी ।—**ईक्षण (कार्येक्षण)**–(न०) काम की निगरानी ।—**उद्धार (कार्योद्धार)**–(पुं०) कार्य का संपादन । कर्त्तव्यपालन ।—**कर**–(वि०) काम करने वाला । गुणकारी । —**कारण**–(न०) मिलित कार्य और कारण, नतीजा और सवव ।—**काल**—(पुं०) काम करने का समय । कार्य का उपयुक्त समय या अवसर ।—**गौरव**–(न०) कार्य या विषय का महत्त्व ।—**चिन्तक**–(वि०) परिणामदर्शी, विवेकी । (पुं०) किसी कार्य या कार्यालय का प्रवन्धकर्त्ता या व्यवस्थापक ।——**च्युत**–(वि०) वेकार, जो कहीं नौकर-चाकर न हो । किसी पद से हटाया या निकाला हुआ ।—**दर्शन**– (न०) अवेक्षण, मुआयना, पर्यवेक्षण । अनुसन्धान, तहकीकात ।—**निर्णय**–(पुं०) किसी काम का फैसला या निपटारा ।—**पञ्चक**–(पुं०) ईश्वर के पाँच काम—अनुग्रह, तिरोभाव, आदान, स्थिति और उद्‌भव ।—**पुट**–(पुं०) निरर्थक काम करने वाला व्यक्ति । पागल, झक्की । निठल्ला । —**प्रद्वेष**–(पुं०) अकर्मण्यता, काहिली, सुस्ती ।—**प्रेष्य**- (पुं०) प्रतिनिधि । दूत । —**विपत्ति**–(स्त्री०) कार्य के संपादन में उपस्थित होने वाली वाधा । असफलता । –**शेष**-(पुं०)किसी कार्य का अवशिष्ट अंश । किसी कार्य की सम्पन्नता, पूर्णता ।—**सिद्धि**–(स्त्री०) सफलता, कामयावी ।—**स्थान**–(न०) दफ्तर, कार्यालय ।—**हन्तृ**–(वि०) दूसरे के काम में वाधा डालने वाला, विपक्षी ।

कार्यतः—(अव्य०) [कार्य+तस्] किसी प्रयोजन या उद्देश्य से । अन्ततोगत्वा, लिहाजा, फलतः ।

कार्श्य—(न०) [कृश+ष्यञ्] लटापन, दुवलापन, पतलापन । कमी, स्वल्पता, थोड़ापन । साल का पेड़ । वड़हर । कचूर ।

कार्ष, कार्षक–(पुं०) [कृषि+ण][कार्ष+कन्] किसान, खेतिहर ।

कार्षापण—(पुं०, न०), **कार्षापणक**–(पुं०) [कर्ष + अण्—कार्षः, आ √पण्+घञ्—आपणः, कार्षस्य आपणः ष० त०] [कार्षापण+कन्] भारत में पुराने समय में चलने वाला एक सिक्का । सोलह कौड़ी या रत्ती । सोना-चाँदी । (पुं०) कृषक, किसान ।

कार्षापणिक—(वि०) [कार्षापण+टिठन्] [स्त्री०—**कार्षापणिकी**] एक कार्षापण के मूल्य का, जिसका मूल्य एक कार्षापण हो ।

कार्षिक—(पुं०) [कर्ष+ठक् (स्वार्थे)] दे० 'कार्षापण' ।

कार्ष्ण—(वि०) [कृष्ण+अण्] [स्त्री०—**कार्ष्णी**] श्रीविष्णु या श्रीकृष्ण से सम्वन्ध रखने वाला । व्यास का । कृष्ण मृग का ।

कार्ष्णायस—(वि०) [कृष्णायस्+ अण्] [स्त्री०—**कार्ष्णायसी**] काले लोहे का वना हुआ । (न०) लोहा ।

कार्ष्णि—(पुं०) [कृष्णस्य अपत्यम्, कृष्ण +इञ्] प्रद्युम्न । कामदेव । शुकदेव ।

कार्ष्ण्य—(न०) [कृष्ण+ष्यञ्] कालापन । स्याही ।

काल—(वि०) [कु ईषत् कृष्णत्वं लाति, कु √ला+क, कोः कादेशः वा धातुषु कुत्सितरूपतया अलति, कु√अल्+अच्, कोः कादेशः] [स्त्री० **काली**] काला । गहरे नीले रंग का । (न०) लोहा । कक्कोल, शीतल चीनी । कालीयक नामक गंधद्रव्य । (पुं०) काला या गहरा नीला रंग । मृत्यु । महाकाल । शनिग्रह । कासमर्द या कसौंदे का पेड़ । रक्तचित्रक । राल । कोयल । शिव । विष्णु । नेत्र का काला भाग । कलवार । प्रारव्ध । एक पर्वत । [कलयति आयुः, √कल्+णिच्+अच्+अण् वा कलयति सर्वाणि भूतानि, √कल्+ णिच्+अच्+ अण्] समय । उपयुक्त समय या अवसर । समय का कोई

विभाग (घड़ी, घंटा आदि) । मौसम, (वैशेषिक दर्शन के अनुसार नौ द्रव्यों में से काल एक द्रव्य माना गया है) ।—**अक्षरिक** (**कालाक्षरिक**)-(पुं०) [काले अक्षरं वेत्ति, कालाक्षर+ठक्] पढ़ा-लिखा, साक्षर ।—**अगरु** (**कालागरु**)-(न०) काला अगर ।—**अग्नि** (**कालाग्नि**),—**अनल** (**कालानल**) -(पुं०) प्रलय के समय की आग ।—**अजिन** (**कालाजिन**)-(न०) काले मृग का चर्म । —**अञ्जन** (**कालाञ्जन**)-(न०) एक प्रकार का अंजन या सुरमा ।—**अण्डज** (**कालाण्डज**)-(पुं०) कोकिल ।—**अतिपात** (**कालातिपात**),—**अतिरेक** (**कालातिरेक**)-(पुं०) विलम्ब, देरी, समय गँवाना । अवधि या म्याद बीत जाने के कारण होने वाली हानि ।—**अध्यक्ष** (**कालाध्यक्ष**)-(पुं०) सूर्य देवता । परमात्मा ।—**अनुनादिन्** (**कालानुनादिन्**) (पुं०) मधुमक्षिका । गौरैया पक्षी । चातक पक्षी ।—**अन्तक** (**कालान्तक**)-(पुं०) समय, जो मृत्यु का अधिष्ठातृ देवता और समस्त पदार्थों का नाशक माना जाता है ।—**अन्तर** (**कालान्तर**)-(न०) अन्य समय या अन्य अवसर ।—**अन्तस्** (**कालान्तस्**)-(न०) बीच का समय । समय की अवधि ।—**अभ्र**(**कालाभ्र**)-(पुं०) काला, पनीला बादल ।—**अयस** (**कालायस**-(न०) [कालश्च तत् अयश्च कर्म० स०, टच्] कान्त लौह, इस्पात । लोहा ।—**अवधि** (**कालावधि**) (पुं०) निर्दिष्ट समय ।—**अशुद्धि** (**कालाशुद्धि**)—(स्त्री०) स्यापे या शोक मनाने की अवधि, जन्म अथवा मरण अशौच या सूतक ।—**उप्त** (**कालोप्त**)- (वि०) ठीक मौसम में बोया हुआ ।—**कञ्ज**-(न०) नीलकमल ।—**कटङ्कट**-(पुं०) शिव का नाम । —**कण्ठ**-(पुं०) मोर, मयूर । गौरैया पक्षी । शिव की उपाधि ।—**करण**- (न०) समय नियत करना ।—**कर्णिका**,—**कर्णी**-(स्त्री०) बदकिस्मती, विपत्ति, दुर्भाग्य ।—**कर्मन्**-(न०) मृत्यु, मौत ।—**कील**-(पुं०) कोलाहल ।—**कुण्ठ**-(पुं०) यमराज, धर्मराज । —**कूट**-(पुं०, न०) हलाहल विष, वह विष जो समुद्र-मन्थन के समय निकला था जिसे शंकर ने अपने कण्ठ में रख लिया था ।—**कृत्**-(पुं०) सूर्य । मोर, मयूर । परमात्मा । —**क्रम**-(पुं०) समय का बीत जाना ।—**क्रिया**-(स्त्री०) समय का नियत करना । मृत्यु ।—**क्षेप**-(पुं०) विलम्ब, देरी, समय का नाश । समय बिताना ।—**खण्ड**-(न०) यकृत्, लीवर ।—**गङ्गा**-(स्त्री०) यमुनानदी । —**ग्रन्थि**-(पुं०) वर्ष ।—**चक्र**-(न०) समय का पहिया । युग । (आलं०) भाग्यचक्र, जीवन के उतार-चढ़ाव ।—**चिह्न**- (न०) मृत्यु निकट आने के लक्षण ।— **चोदित**-(वि०) वह जिसके सिर पर काल या मृत्युदेव खेल रहे हों ।—**ज्ञ**-(वि०) उचित समय या उचित अवसर जानने वाला; "अत्यारूढो हि नारीणामकालज्ञो मनोभवः' र० १२.३३ । (पुं०) ज्योतिषी । मुर्गा ।—**त्रय**-(न०) भूत, वर्तमान, भविष्यद् ।—**दण्ड**-(पुं०) मृत्यु, मौत ।—**धर्म**,—**धर्मन्**-(पुं०) ऐसे आचरण जो किसी भी समय के लिये उपयुक्त हों । ऋतुविशेष के लिये उपयुक्त आचरण । मृत्युकाल, मृत्यु ।—**धारणा**-(स्त्री०) समय का निर्धारण । काल की अवस्था का ज्ञान । —**निरूपण**-(न०) समय का निश्चय करना । समय जानने की विद्या, कालनिरूपण शास्त्र ।—**निर्यास**—(पुं०) गुग्गुल ।—**नेमि**-(स्त्री०) कालरूपी पहिये के आरे । रावण के चाचा का नाम, जिसे रावण ने हनुमान को मार डालने का काम सौंपा था, किन्तु पीछे वह स्वयं हनुमान द्वारा मार डाला गया था । हिरण्यकशिपु का पुत्र । एक अन्य राक्षस, जिसके १०० पुत्र थे और जिसे विष्णु ने मारा था ।—**पाश**-(पुं०) यम का पाश या फाँसी ।—**पाशिक** -(पुं०) जल्लाद, वह आदमी जो मृत्युदण्ड-प्राप्त

लोगों को फाँसी लगाता हो।—**पृष्ठ**–(न०) हिरनों की एक जाति। कङ्कपक्षी।—**पृष्ठक**–(न०) कर्ण के धनुष का नाम। धनुष। —**प्रभात**–(न०) शरद् ऋतु।—**भक्ष**–(पुं०) शिव।—**मुख**–(पुं०) लंगूरों की एक जाति।—**मेषी**–(स्त्री०) मंजिष्ठा नामक पौधा।—**यवन**–(पुं०) यवन जातीय राजा, जिसने श्रीकृष्ण पर मथुरा में, जरासन्ध के कहने से चढ़ाई की थी और जो श्रीकृष्ण की युक्ति से राजा मुचुकुन्द द्वारा भस्म किया गया था। —**योग**–(पुं०) भाग्य, किस्मत।—**योगिन्**–(पुं०) शिव की उपाधि।—**रात्रि**, —**रात्री**–(स्त्री०) अँधेरी रात। प्रलयकाल की रात, कल्पान्तरात्रि। कार्त्तिकी अमा की रात।—**लौह**–(न०) इस्पात लोहा।—**विप्रकर्ष**–(पुं०) समय की वृद्धि।—**वृद्धि**–(स्त्री०) व्याज या सूद जो नियत रूप से किसी निर्दिष्ट समय पर अदा किया जाय।—**वेला**–(स्त्री०) शनिग्रह का समय, दिन में आधे पहर यह समय नित्य आता है। इस समय में शुभ कार्य करना वर्जित है।—**सदृश**–(वि०) समयानुकूल। मृत्युतुल्य।—**सर्प**–(पुं०) काला और महाविषैला साँप।—**सार**–(पुं०) काले रंग का मृग।—**सूत्र**,—**सूत्रक**–(न०) समय या मृत्यु का डोरा। एक नरक।—**स्कन्ध**–(पुं०) तमालवृक्ष।—**स्वरूप**–(वि०) मृत्यु की तरह भयङ्कर।—**हर**–(पुं०) शिवजी का नाम।—**हरण**–(न०) समय का नाश, विलम्ब।—**हानि**–(स्त्री०) विलम्ब, कालातिक्रमण।

कालक—(न०) [काल+कन् वा√कल्+णिच्+ण्वुल्] यकृत्, कलेजा, जिगर। (पुं०) तिल, मस्सा, लहसुन। पनिया साँप। आँख का गोल और काला भाग।

कालञ्जर—(पुं०) [कालं जरयति, काल√जॄ+णिच्√अच्, मुम् (वा०)] मेरु के उत्तर का एक पर्वत तथा उस पर्वत के समीप का भूखण्ड। साधु-समारोह। शिव की उपाधि।

कालशेय—(न०) [कलश+ढक्—एय] मखनिया दूध, वह दूध जो मक्खन निकालने के पश्चात् शेष रहता है।

काला—(स्त्री०) [काल + अच्—टाप्] नीलिनी वृक्ष। त्रिवृत्। पिप्पली। नागवला। मजीठ। कृष्णजीरक। अहिंसा। असगंध। पाटला। दक्ष की एक कन्या।

कालाप—(पुं०) [कालः मृत्युः आप्यते यस्मात्, काल√आप्+घञ्] सिर के केश। साँप का फन। राक्षस। [कलापं वेत्ति अधीते वा, कलाप+अण्] कलाप व्याकरण पढ़ने वाला। इस व्याकरण का जानने वाला।

कालापक—(न०) [कलाप+वुन्] कलाप व्याकरण जानने वाले विद्वानों का समुदाय। कलाप के सिद्धांत या उसकी शिक्षा।

कालिक—(वि०) [काल+ठक्] [स्त्री०—**कालिकी**] समय सम्बन्धी। समय पर निर्भर। समयानुसार। (पुं०) सारस। बगला। (न०) कृष्णचन्दन।

कालिका—(स्त्री०) [काल+ठन्—टाप् वा काल+ङीष्+कन्—टाप् ह्रस्व] काला रंग, कालौंच। स्याही, काली स्याही। किसी वस्तु का मूल्य जो किश्तवन्दी करके चुकाया जाय। छमाही या तिमाही सूद जो निर्दिष्ट समय पर अदा किया जाय। बादलों का समूह; 'कालिकेव निविडा बलाकिनी' र० ११.१५। बट्टा, वह धातु जो सोने में मिलाई जाती है। कलेजा, यकृत्। कौए की मादा। विच्छू। मदिरा, शराब। दुर्गा देवी का नाम।

कालिङ्ग—(वि०) [कलिङ्ग+अण्] [स्त्री०—**कालिङ्गी**] कलिंग देश में उत्पन्न या उस देश का। (पुं०) कलिङ्ग देश का राजा। कलिङ्ग देश का सर्प। हाथी। [केन जलेन आलिङ्ग्यतेऽसौ, क—आ√लिङ्ग्+घञ्]

राजकर्कटी, एक प्रकार की ककड़ी। (न०) तरबूज, हिंदवाना, कलींदा।

कालिनी—(स्त्री०) [काल+इनि+ङीप्] आर्द्रा नक्षत्र।

कालिन्द—(न०) [कालिं जलराशिं ददाति, कालि√दा+क, पृषो० मुम्] तरबूज। (वि०) [कलिन्द वा कालिन्दी+अण्] कलिंद पर्वत या कालिंदी नदी से संबद्ध।

कालिन्दी—(स्त्री०) [कलिन्द +अण्—ङीप्] यमुना नदी। श्रीकृष्ण की एक स्त्री। असित की स्त्री और सगर की माता। निसोत औषधि।—**कर्षण,—भेदन**–(पुं०) बलराम की उपाधि।—**सू**–(स्त्री०) सूर्य-पत्नी संज्ञा।—**सोदर**–(पुं०) यमराज।

कालिमन्—(पुं०) [कालस्य भावः, काल+इमनिच्] कालौंछ, कालापन।

कालिय—(पुं०) [के जले आलीयते, क—आ√ली+क] एक बड़ा भारी सर्प जो यमुना म रहता था और जिसे श्रीकृष्ण ने दमन कर वृन्दावन से भगाया था।—**दमन,—मर्दन**–(पुं०) श्रीकृष्ण की उपाधि।

काली—(स्त्री०)[काल+ङीष्]काला रंग। स्याही, मसी। पार्वती की उपाधि। कृष्ण मेघमाला। काले रंग की स्त्री। व्यास-माता सत्यवती का नाम। रात्रि।—**तनय**–(पुं०) भैंसा।

कालीक—(पुं०) [के जले अलति पर्याप्नोति, क√अल्+इकन्, पृषो० दीर्घ] क्रौञ्च पक्षी, बगले का भेद।

कालीन—(वि०) [काल+ख—ईन] किसी विशेष समय का, सामयिक।

कालीयक—(न०) [काल+छ—ईय+कन् वा कालीय√कै+क]एक प्रकार का चंदन। एक तरह की हल्दी। केसर।

कालुष्य—(न०) [कलुष+ष्यञ्] गन्दगी, मैलाकुचैलापन, गँदलापना। मलिनता, अस्वच्छता; 'कालुष्यमुपयाति बुद्धिः' काद०। अनैक्य।

कालेय—(वि०) [कलि+ढक्] कलियुग संबंधी। (पुं०) [कालायाः अपत्यम्, काला +ढक्] एक दैत्य। दारु हल्दी। कुत्ता। कामला रोग। नील कमल। शिलाजीत। (न०) [कलायै रक्तधारिण्यै हितम्, कला+ढक्] यकृत्, कलेजा। कृष्णचन्दन। केसर, जाफरान।

कालेयक—(पुं०) [कालेय + कन्] दे० 'कालेय'।

काल्पनिक—(वि०)[कल्पना+ठक्] [स्त्री० —**काल्पनिकी**] बनावटी, फर्जी। जाली।

काल्य—(वि०) [काल+यत्] सामयिक, अवसरानुसार। अनुकूल। शुभ, कल्याणकारी। (न०) [कल्य+अण्] तड़का, सवेरा, भोर, प्रभात। प्रातःकाल का कर्तव्य।

काल्या—(स्त्री०) [कालः गर्भधारणयोग्य-समयः प्राप्तोऽस्याः, काल+यत्—टाप्] गर्भा-धान के योग्य गाय। इसका दूसरा नाम उप-सर्या है।

काल्याणक—(न०) [कल्याण+वुञ्] भलाई, शुभ।

कावचिक—(वि०)[कवच+ठञ्] [स्त्री०—**कावचिकी**] कवच या वर्म सम्बन्धी। (न०) [कवचिन्+ठञ्] कवचधारी पुरुषों का समूह।

कावृक—(पुं०) [कुत्सितो वृक इव वा ईषत् वृकइव, कोः कादेशः] मुर्गा। चकवा।

कावेर—(न०) [कस्य सूर्यस्य इव आ ईषत् वेरम् अङ्गं यस्य ज्योतिर्मयत्वात्] केसर, जाफरान।

कावेरी—(स्त्री०) [कं जलमेव वेरं शरीर-मस्याः, कवेर+अण्—ङीप्] दक्षिण भारत की एक नदी का नाम। [कुत्सितं वेरं यस्याः] रंडी, वेश्या।

काव्य—(वि०) [कवि+ण्य] जिसमें कवि अथवा पण्डित के लक्षण विद्यमान हों। कवि संबंधी।(न०) [कवि+ष्यञ् (भावे)]

पद्यमयी रचना; 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' सा० द० । शायरी, कविता । प्रसन्नता । वुद्धि । ईश्वरी प्रेरणा, स्फूर्ति । (पुं०) [कवि +ष्यञ् (स्वार्थे)] शुक्राचार्य का नाम, यह असुरों के गुरु थे ।—**चौर**–(पुं०) दूसरे की कविता चुरानेवाला ।—**रसिक**–(वि०) वह जो कविता को पसंद करता तथा उसकी विशेषताओं और सौन्दर्य की सराहना करता हो । शायरी का शौकीन ।—**लिङ्ग**–(न०) एक अर्थालंकार ।

काव्या—(स्त्री०) [√कव्+ण्यत्—टाप्] । समझ, वुद्धि । पूतना ।

√काश्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । काशते, काशिष्यते, अकाशिष्ट । दि० आत्म० अक० काश्यते, काशिष्यते, अकाशिष्ट ।

काश—(पुं०, न०) [√काश्+अच्] एक प्रकार की घास जो छत छाने और चटाई वनाने के काम में आती है, काँस।(न०) उस घास का फूल, तृणपुष्प । फेफड़े का एक रोग, खाँसी ।

काशि—(पुं०) [√काश्+इन्]काशी नगरी के आस-पास का प्रदेश । मुट्ठी । सूर्य । (स्त्री०) काशी, वनारस ।—**प**–(पुं०) शिव की उपाधि ।—**राज**–(पुं०) काशी के एक राजा का नाम जो अम्वा, अम्विका और अम्वालिका का पिता था।

काशिका—(स्त्री०) [काशि+कन्—टाप्] काशी-पुरी । पाणिनीय व्याकरण पर जयादित्य और वामन की लिखी हुई वृत्ति ।

काशिन्—(वि०) [√काश्+णिनि] [स्त्री० —**काशिनी**] चमकीला । सदृश, समान [यथा जितकाशिन् अर्थात् जो विजयी के समान आचरण करे ।]

काशी—(स्त्री०) [√काश्+अच्—ङीप्] उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध नगरी जो सप्त मोक्षदा पुरियों में से एक है, वाराणसी ।—**नाथ**–(पुं०) शिव ।—**यात्रा**–(स्त्री०) काशी की तीर्थयात्रा ।

काश्मरी—(स्त्री०) [√काश्+वनिप् , र, ङीप्, पृषो० मत्व] एक पौधा जिसे गँभारी कहते हैं ।

काश्मीर—(वि०) [कश्मीर वा काश्मीर+ अण्] [स्त्री०—**काश्मीरी**] कश्मीर देश में उत्पन्न । कश्मीर देश का । कश्मीर से आया हुआ । (पुं०) कश्मीर देश । वहाँ वसने वाला । (न०) पुष्करमूल । केसर ।—**ज**,—**जन्मन्**–(न०) केसर, जाफ़ान ।

काश्य—(न०) [कुत्सितम् अश्यं यस्मात् व० स०] मदिरा, शराब, मद्य ।—**प**–(न०) मांस, गोश्त ।

काश्यप—(पुं०) [कश्यप+अण्] एक प्रसिद्ध ऋषि । कणाद का नाम ।—**नन्दन**–(पुं०) गरुड़ की उपाधि । अरुण का नाम ।

काश्यपि—(पुं०) [कश्यप+इञ्] गरुड़ और अरुण की उपाधि ।

काश्यपी—(स्त्री०)[काश्यप+ङीष्] पृथ्वी।

काष—(पुं०)[√कष+घञ्] वह वस्तु जिस पर कोई चीज घिसी, रगड़ी जाय; 'लीनालिः सुरकरिणाम् कपोलकाषः' कि० ५.२६। कसौटी । सान । एक ऋषि । रगड़न, खरोंच ।

काषाय—(वि०) [कषाय+अण्][स्त्री०— **काषायी**]जोगिया या गेरुआ रङ्ग का ।(न०) जोगिया या गेरुआ रङ्ग का वस्त्र ।

काष्ठ—(न०) [√काश्+क्थन्] । काठ, लकड़ी । शहतीर, लट्ठा । छड़ी । नापने का एक औजार ।—**आगार** (**काष्ठागार**)–(न०) लकड़ी का वना मकान या घेरा ।—**अम्बुवाहिनी** (**काष्ठाम्बुवाहिनी**)–(स्त्री०) जल सींचने के लिये काष्ठनिर्मित एक पात्र, द्रोणी । डोलची ।—**कदली**–(स्त्री०) जंगली केला । —**कीट**–(पुं०) लकड़ी का घुन ।—**कुट्ट**,—**कूट**–(पुं०) कठफोड़वा, हुदहुद पक्षी ।

—कुद्दाल–(पुं०) लकड़ी की कुदाल ।—तक्ष,—तक्षक–(पुं०) बढ़ई ।—तन्तु–(पुं०) शहतीरों में रहने वाला एक छोटा कीड़ा ।—दारु–(पुं०) देवदारु का पेड़, पलाश का पेड़ । —भारिक–(पुं०) लकड़हारा, लकड़ी ढोने वाला ।—मठी–(स्त्री०) चिता ।—मल्ल–(पुं०) अरथी या ठठरी जिस पर रख कर मुर्दा ले जाया जाता है ।—लेखक–(पुं०) लकड़ी में रहने वाला एक छोटा कीड़ा, घुन ।—वाट–(पुं०) (न०) लकड़ी की दीवाल ।

काष्ठक—(न०) [काष्ठ√कै+क] ऊद, अगर ।

काष्ठा—(स्त्री०) [√काश्+क्थन्—टाप्] दिशा । सीमा । चरम सीमा; 'काष्ठागतस्नेहरसानुविद्धम्' कु० ३.३५ । घुड़दौड़ का मैदान । घुड़दौड़ का पाला । आकाशस्थित पवन वा वायु का मार्ग । समय का परिमाण, कला का तीसवाँ भाग ।

काष्ठिक—(पुं०) [काष्ठ+ठन्] लकड़ी ढोने वाला ।

काष्ठिका—(स्त्री०) [काष्ठ—ङीप्+कन्—टाप् , ह्रस्व] लकड़ी का एक छोटा टुकड़ा ।

काष्ठीला—(स्त्री०) [कुत्सिता ईषत् वा अष्ठीलेव, कोः कादेशः] कदली वृक्ष, केले का पेड़ ।

√कास्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । खखारना, खाँसना । कासते, कासिष्यते, अकासिष्ट ।

कास—[√कास्+घञ्] खाँसी । जुकाम । छींक । सहिजन का पेड़ ।—कन्द–(पुं०) कसेरू ।—कुण्ठ–(वि०) खाँसी से पीड़ित । —घ्न,—हृत्–(वि०) खाँसी दूर करने वाला, कफ निकालने वाला ।

कासर—(पुं०) [के जले आसरति, क—आ √सृ+अच्] भैंसा । [स्त्री०—कासरी] भैंस ।

कासार—(पुं०, न०) [√कास्+आरन् वा कस्य जलस्य आसारो यत्र ब० स०] तालाब । पुष्करिणी, तलैया । झील, सरोवर ।

कासू, काशू—(स्त्री०) [√कस् वा√कश् +ऊ, पृषो०] एक प्रकार का भाला । अस्पष्ट भाषण । दीप्ति, दमक, आब । रोग । भक्ति ।

कासृति—(स्त्री०) [कुत्सिता सरणिः, कोः कादेशः] पगडंडी । गुप्तमार्ग । गली ।

काहल—(वि०) [कुत्सितम् अस्पष्टं हलं वाक्यं ध्वनिर्वा यत्र ब० स०] सूखा, मुर्झाया हुआ । उत्पाती । अत्यधिक, बड़ा । (पुं०) बिल्ली । मुर्गा । काक । रव, आवाज । (न०) अस्पष्ट भाषण ।

काहला—(स्त्री०) [कुत्सितं हलति शब्दं करोति कु√हल्+अच्—टाप्, कोः कादेशः] बड़ा ढोल ।

काहली—(स्त्री०) [कं सुखम् आहलति ददाति, क—आ√हल्+इन्—ङीप्] युवती स्त्री ।

किंवत्—(वि०) [किम्+मतुप् , मस्य वः] गरीब, तुच्छ, बापुरा, बेचारा ।

किंशारु—(पुं०) [किम्√शॄ+ञुण्] शस्यशूक, अनाज का रेशा या बाल का टूँड़ । बगुला । कङ्कपक्षी । तीर ।

किंशुक—(पुं०) [किञ्चित् शुकः शुकावयवविशेष इव, उपमि० स०] पलाश वृक्ष, ढाक या टेसू का पेड़ । (न०) पलाश पुष्प; 'किंशुकैः शुकमुखच्छविभिर्न दग्धम्' र० ९.३१ ।

किंशुलक—(पुं०) [किंशुक नि० साधुः]पलाश वृक्ष ।

किकि—(पुं०) [√कक्+इन्, पृषो० इत्व] नारियल का पेड़ । नीलकण्ठ पक्षी । चातक पक्षी ।

किक्किश—(पुं०) एक तरह का कीड़ा ।

किखि—(पुं०) बन्दर । (स्त्री०) लोमड़ी ।

किङ्किणिका, किङ्किणी—(स्त्री०) [किमपि किञ्चित् वा कणति, किम्√कण्+इन्—ङीप्, पृषो० साधुः] [किङ्किणी+कन्—टाप् ,

ह्रस्व] करधनी। छोटी घण्टी; 'क्वणत्कनक-किङ्किणीझणझणायितस्यन्दनैः;' उत्त० ५.५। एक तरह का खट्टा अंगूर।

किङ्किर—(पुं०) [किम्√कृ+क] घोड़ा, कोकिल। भौंरा। कामदेव। लाल रंग।

किङ्किरा—(स्त्री०) [किङ्किर+टाप्] खून, रक्त, लोहू।

किङ्किरात—(पुं०) [किङ्किर√अत्+अण्] तोता। कोकिल। कामदेव। अशोक वृक्ष।

किञ्जल, किञ्जल्क—(पुं०) [किञ्चित् जलं यत्र, व० स०] [किञ्चित् जलति अपवारयति, किम्√जल्+क (वा०)] कमल पुष्प का रेशा या कमल का फूल, किसी वृक्ष का फूल या उसका रेशा।

√किट्—भ्वा० पर० सक० जाना। अक० डरना। केटति, केटिष्यति, अकेटीत्।

किटि—(पुं०) [√किट्+इन् किच्च गुण-निषेध] शूकर,सुअर।

किटिभ—(पुं०) [किटि√भा+क] जूँ, खटमल।

किट्ट, किट्टक—(न०) [√किट्+क्त] [किट्ट+कन्] कीट, काँइट, मैल, तलछट, छानन।

किट्टाल—(पुं०) [किट्ट√अल्+अच्] ताँबे का घड़ा। लोहे का मोर्चा।

किण—(पुं०) [√कण्+अच्, पृषो० इत्व] ठेठ, घट्टा, चट्टा, गूत, फोड़े या घाव का निशान। तिल, मस्सा। लकड़ी का घुन।

किण्व—(न०) [√कण्+क्वन्, इत्व] पाप। (पुं०, न०) मदिरा का खमीर उठाने या उसमें उफान लाने वाली एक चीज।

√कित्—भ्वा० पर० सक० चिकित्सा करना। चिकित्सति, चिकित्सिष्यति, अचिकित्सीत्। जु० पर० सक० जानना। चिकेति, केतिष्यति, अकेतीत्।

कितव—(पुं०) [√कि+क्त, कित√वा+क] जुआरी। धूर्त। [स्त्री—**कितवी**] बदमाश, गुंडा। धतूरे का पौधा। गोरोचन।

किन्विन्—(पुं०) [किं कुत्सिता बुद्धिरस्ति अस्य, किन्वी+इनि] घोड़ा, अश्व।

किन्नर—(पुं०) [किं कुत्सितो नरः, कु० स०] देवताओं के गायक। इनका मुख घोड़े जैसा और शरीर मनुष्य जैसा होता है।—**ईश** (**किन्नरेश**)—(पुं०) कुबेर, धनाधिप।

किम्—(अव्य०) [कु+डिमु (वा०)]समासान्त शब्दों में यह प्रथम कु की जगह प्रयुक्त होता है और इसके अर्थ यह होते हैं—खराबी, ह्रास, रोष, कलङ्क या धिक्कार, यथा—**किंसखा**, अर्थात् दुष्ट या बुरा मित्र। किन्नर, अर्थात् बुरा मनुष्य या अङ्ग-भङ्ग मनुष्य आदि, दे० आगे के समासान्त शब्द।—**दास** (**किन्दास**)—(पुं०) बुरा नौकर।—**नर** (**किन्नर**)—(पुं०) दुष्ट या विकृत पुरुष। देवगायक जाति-विशेष।—**नरी** (**किन्नरी**)—(स्त्री०)किन्नर की स्त्री। वीणा विशेष।—**पाक** (**किम्पाक**)—(पुं०) [किं कुत्सितः पाकः परिणामो यस्य व० स०] लाल इन्द्रायण। कुचला। रोग। ज्वर।—**पुरुष** (पुं०) नीच या तिरस्करणीय पुरुष। किन्नर।—**पुरुषेश्वर**—(पुं०) कुबेर।—**प्रभु**—(पुं०) बुरा स्वामी या बुरा राजा।—**राजन्** (**किंराजन्**) (पुं०) बुरा राजा। (वि०) बुरे राजा वाला।—**सखि** (**किंसखि**)—(पुं०) (एकवचन कर्त्ता कारक में किंसखा रूप होता है) दुष्ट मित्र, यथा —'स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपं' —किरातार्जुनीय।

किम्—(सर्वनाम०, अव्य०) [कर्त्ता एकवचन (पुं०) कः, (स्त्री०) का, (न०) किम्] कौन। क्या। कौनसा। —**अपि** (**किमपि**)—(अव्य०) कुछ-कुछ। बहुत अधिक, अकथनीय, अवर्णनीय। कहीं ज्यादा।—**अर्थम्** (**किमर्थम्**)—(अव्य०)— किस प्रयोजन से, किस

उद्देश्य से। क्यों, क्योंकर।—**आख्य** (**किमाख्य**)–(वि०) किस नाम का, किस नाम वाला।—**इति** (**किमिति**)–(अव्य०) काहे, को, क्योंकर, किस काम के लिये।—**उ**, **उत**,—(**किमु**, **किमुत**)–(अव्य०) या, अथवा, वा। (सन्देहात्मक) क्यों। कितना और अधिक। कितना और कम।—**कर** (**किङ्कर**)–(पुं०) नौकर, दास, गुलाम।—'अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः' —रघुवंश।—**करा** (**किङ्करा**)–(स्त्री०) दासी, नौकरानी।—**करी** (**किङ्करी**)–(स्त्री०) नौकर की पत्नी।—**कर्तव्यता**,—(**कार्यता**) (**किङ्कर्तव्यता**),—(**किङ्कार्यता**)–(स्त्री०) किंकर्तव्यमूढ़ता, अर्थात् ऐसी परिस्थिति में पहुँचना जब अपने मन में स्वयं यह प्रश्न उठे कि अब मुझे क्या करना चाहिये, परेशानी।—**कारणम्** (**किङ्कारणम्**)–(अव्य०) क्योंकर, किस कारण से।—**किल** (**किङ्किल**)–(अव्य०) एक अव्यय जो अप्रसन्नता या असन्तोष प्रकट करता है।—**क्षण** (**किङ्क्षण**)–(वि०) कितने क्षणों में सम्पन्न। अकर्मण्य, जो समय का मूल्य नहीं समझता।—**गोत्र** (**किङ्गोत्र**)–(वि०) किस वंश का, किस खानदान का।—**च** (**किञ्च**)–(अव्य०) अतिरिक्त। उपरान्त।—**चन** (**किञ्चन**)–(अव्य०) कुछ अंश में, थोड़ा सा।—**चित्** (**किञ्चित्**) (अव्य०) कुछ अंश में, कुछ-कुछ, थोड़ा-सा।—**०कर** (**किञ्चित्कर**)–(वि०) कुछ करने वाला, उपयोगी। —**०काल** (**किञ्चित्काल**)–(पुं०) कभी-कभी, कुछ समय।—**०ज्ञ** (**किञ्चिज्ज्ञ**)–(वि०) थोड़ा जानने वाला, बकवादी।—**०प्राण** (**किञ्चित्प्राण**)–(वि०) थोड़े जीवन वाला।—**०मात्र** (**किञ्चिन्मात्र**) (वि०) बहुत थोड़ा।—**छंदस्** (**किञ्छन्दस्**)–(वि०) किस वेद को जानने वाला। —**तर्हि** (**किन्तर्हि**)–(अव्य०) फिर क्योंकर। किन्तु। तथापि। कितना ही। फिर भी इसके उपरान्त।—**तु** (**किन्तु**)–(अव्य०) लेकिन। तो भी, तथापि।—**देवत** (**किन्देवत**)–(वि०) किस देवता का।—**नामधेय**, **नामन्** (**किन्नामधेय**),—(**किन्नामन्**)–(वि०) किस नाम का।—**निमित्त** (**किन्निमित्त**)–(वि०) किस प्रयोजन का। (अव्य०) क्यों, क्योंकर, किस लिये, किस कारण से।—**नु** (**किन्नु**)–(अव्य०) या, अथवा। अत्यधिक। अत्यल्प। क्या।—**०खलु** (**किन्नुखलु**)–(अव्य०) ऐसा क्यों कर, क्योंकर सम्भव, क्यों। निश्चय ही। अस्तु, ऐसा ही सही।—**पच**, —**पचान**–(वि०) कंजूस, सूम, मक्खीचूस। —**पराक्रम**–(वि०) किस शक्ति या विक्रम वाला।—**पुनर्**–(अव्य०) कितना और अधिक या कितना और कम।—**प्रकारम्**–(अव्य०) किस ढंग से, किस तरह।—**प्रभाव**–(वि०) किस प्रभाव या चलाव का, किस रुतबे का।—**भूत**–(वि०) किस तरह का या किस स्वभाव का। —**रूप** (**किंरूप**)–(वि०) किस शक्ल का।—**वदन्ति**,—**वदन्ती**, (**किंवदन्ति**), (**किंवदन्ती**)–(स्त्री०) [किम्√वद्+झिच्–अन्तादेश, पक्षे ङीष्] जनरव, अफवाह।—**वराटक** (**किंवराटक**)–(पुं०) अपव्ययी पुरुष, फजूल खर्च करने वाला आदमी।—**वा** (**किंवा**)–(अव्य०) या, या तो, अथवा।—**विद्**—(**किंविद्**)–(वि०) क्या जानने वाला।—**व्यापार**,—(**किंव्यापार**)–(वि०) किस पेशे का।—**शील** (**किंशील**)–(वि०) कैसे स्वभाव का।—**स्वित्** (**किंस्वित्**)–(अव्य०) या, अथवा; 'अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुखीभिः' मे० १४।

कियत्—(वि०) [किं परिमाणमस्य, किम्+

वतुप्, वस्य घः किमः किं आदेशः] [कर्त्ता एकवचन] (पुं०)—**कियान्**, –(स्त्री०)—**कियती**;–(न०)**कियत्**] कितना। निकम्मा। कुछ, थोड़ा सा।—**एतिका** (**कियदेतिका**)–(स्त्री०) उद्योग। घोर गम्भोर उद्योग।—**काल**—(वि०) कितने समय का। कुछ थोड़े समय का।—**चिरम्** (**कियच्चिरम्**)–(अव्य०) कब तक, कितने समय तक।—**दूरम्** (**कियद्दूरम्**)-कितनी दूर, कितने फासिले पर। कुछ समय के लिये। कुछ दूर पर।

कियाह्—(पुं०) लाल रंग का घोड़ा।

किर—(पुं०) [√कॄ+क] शूकर, सुअर।

किरक—(पुं०) [√कॄ+ण्वुल्] लेखक। [किर+कन् (क्षुद्रार्थे)] सुअर का वच्चा, घेंटा।

किरण—(पुं०) [कीर्यन्ते विक्षिप्यन्ते रश्मयोऽस्मात्, √कॄ+क्यु] ज्योति से प्रवाह रूप में निकलने वाली रेखा। (सूर्य, चन्द्र अथवा किसी प्रकाशयुक्त पदार्थ की) किरन; 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः' कु० १.३। धूलिकण।—**मालिन्**–(पुं०) सूर्य।

किरात— (पुं०)[किरम् अवस्करादेः निक्षेपभूमिम् अतति निरन्तरं भ्रमति, किर√अत्+अच्] एक पहाड़ी जंगली जाति, जो वनजन्तुओं को मारकर उनके माँस पर अपना निर्वाह करती है।—'वैयाकरणकिरातादपशब्दमृगाः क्व यान्तु संत्रस्ताः। यदि नटगणकचिकित्सकवैतालिकवदनकंदरा न स्युः'॥ जंगली या वर्वर जाति। वौना, वामन। साईस, घुड़सवार। किरात का रूप धारण करने वाले शिव का नाम। एक प्रदेश का नाम।—**आशिन्** (**किराताशिन्**)–(पुं०) गरुड़ की उपाधि।

किराती—(स्त्री०)[किरात+ङीप्] किरात जाति की स्त्री। चमर डुलाने वाली स्त्री। कुटनी। किराती का रूप धारण करने वाली पार्वती। आकाश-गंगा।

किरि—(पुं०) [√कॄ+इ] शूकर, सुअर। वादल।

किरीट--(पुं०, न०)[√कॄ+कीटन्] मुकुट, ताज, कलँगी। व्यापारी।—**धारिन्**–(पुं०) राजा।—**मालिन्**- (पुं०) अर्जुन की उपाधि।

किरीटिन्—(वि०) [किरीट+इनि] मुकुट धारण करने वाला। (पुं०) अर्जुन का नाम।

किर्मी—(स्त्री०) [√कॄ+क्विप्, किर्√मा+क—ङीप्] बड़ा कमरा। भवन। सोने की पुतली। पलाश वृक्ष।

किर्मीर—(वि०) [√कॄ+ईरन्, मुट्] चित्र वर्ण वाला, चितकवरा। (पुं०) नारंगी का पेड़। चितकवरा रंग। एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था।—**जित्**,—**निषूदन**—**सूदन**–(पुं०) भीम की उपाधि।

√किल्—तु० पर० अक० सफेद होना, क्रीड़ा करना। किलति, केलिष्यति, अकेलीत्।

किल—(अव्य०) [√ किल्+क] निश्चय, अवश्य। सत्य। यथावत्, ज्यों का त्यों। अलीक कार्य। सम्भावना। असन्तोष। अरुचि। तिरस्कार। हेतु, कारण। (पुं०) खेल।—**किञ्चित्**–(न०) कामप्रणोदित उद्विग्नता, प्रेमी के सामने रोदन, हास्य, मचलना, रूठना, क्रोध करना आदि।

किलकिल (पुं०), **किलकिला**—(स्त्री०) [√किल्+क, प्रकारे वीप्सायां वा द्वित्वम्, पक्षे टाप्] एक प्रकार का हर्षसूचक शब्द-विशेष, वानरों की किलकारी।

किलिञ्ज–(न०)[किलि√जन्+ड]चटाई। हरी लकड़ी का पतला तख्ता। तख्ता।

किल्विन्—(पुं०) [√किल्+क्विप्, किल्+विनि] घोड़ा।

किल्विष—(न०) [√किल्+टिषच्, वुक्] पाप। अपराध, दोष। रोग।

किशलय—(पुं०, न०) [किञ्चित् शलति, किम् √शल+कयन् (बा०), पृषो० साधुः] कोंपल, नवपल्लव, कोमल नया पत्ता ।

किशोर—(पुं०) [किम्√शॄ+ओरन्] ११ से १५ वर्ष तक की उम्र वाला लड़का । बछेड़ा । सिंह आदि का बच्चा जो जवान न हुआ हो । सूर्य ।

किशोरी—(स्त्री०) [किशोर+ङीष्] ११ से १५ वर्ष तक की लड़की ।

किष्किन्ध, किष्किन्ध्य—(पुं०) [किं किं दधाति, किम् किम्√धा+क, पूर्वस्य किमो मलोपः, सुट्, षत्वम्] [किष्किन्ध+यत्] मैसूर के आसपास का प्रदेश । उस प्रदेश में स्थित एक पर्वत ।

किष्किन्धा, किष्किन्ध्या—(स्त्री०) [किष्किन्ध+टाप्] [किष्किन्ध्य+टाप्] किष्किन्ध्य प्रदेश की (वालि-सुग्रीव की) राजधानी ।

किष्कु—(वि०) [√कै+कु, नि० साधुः] दुष्ट, तिरस्करणीय, बुरा ।(पुं०) (स्त्री०) बाँह । बारह अंगुल का माप ।

किसल, किसलय—(पुं०, न०) दे० 'किशल', 'किशलय' ।

कीकट—(वि०) [की शनैः द्रुतं वा कटति गच्छति, की√कट+अच्] [स्त्री०—**कीकटी**] गरीब, बपुरा, दीन । कंजूस, कृपण । (पुं०) मगध का वेदोक्त नाम, चरणाद्रि (चुनार) से गृध्रकूट (गिद्धौर) पर्वत पर्यन्त कीकट देश है । "कीकटेषु गया पुण्या ।"

कीकश—(पुं०) [की √कश्+अच्] चांडाल ।

कीकस—(वि०) [की कुत्सितं यथा स्यात् तथा कसति, की√कस्+अच्] कर्कश । (पुं०) कीड़ा (न०) हड्डी, अस्थि ।

कीचक—(पुं०) [चीकयति शब्दायते,√चीक्+वुन्, आद्यन्त विपर्यय] खोखला बाँस, पोला बाँस । बाँस जो हवा चलने पर खड़खड़ाता हो अथवा हवा के चलने से उत्पन्न बाँस की सनसनाहट; 'शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकाः पूर्यमाणाः' मे० ५५ । एक जाति का नाम । विराट राजा का साला और उसकी सेना का प्रधान सेनापति । इसे भीम ने मारा था क्योंकि इसने द्रौपदी के साथ अनुचित कर्म करना चाहा था ।—**चित्**—(पुं०) भीम की उपाधि ।

√कीट्—चु० उभ० सक० बाँधना । कीटयति—ते, कीटयिष्यति—ते, अचीकिटत्—त ।

कीट—(पुं०) [√कीट्+अच्] कीड़ा । तिरस्कार या हिकारत में इस शब्द का प्रयोग समासान्त शब्दों में किया जाता है । जैसे **द्विपकीटः**, अर्थात् दुष्ट हाथी; **पक्षिकीट**, अर्थात् दुष्ट पक्षी आदि ।—**घ्न**—(पुं०)गन्धक । —**ज**—(न०) रेशम ।—**जा**—(स्त्री०) लाख, चपड़ा ।—**मणि**—(पुं०) जुगनू, खद्योत ।

कीटक—(पुं०) [कीट+कन्] कीड़ा । मागध जाति का बन्दीजन ।

कीदृक्ष, कीदृश्, कीदृश—[किम् √ दृश् + क्स, की आदेश] [किम्√दृश्+क्विन्, की आदेश] [किम्√दृश्+कञ्, की आदेश] किस प्रकार का, कैसा, किस स्वभाव का ।

कीनाश—(वि०) [क्लिश्नाति हिनस्ति √क्लिश्+कन्, ईत्व, लकार का लोप, ना का आगम]भूमि जोतने वाला । गरीब, धनहीन । कंजूस । स्वल्प, थोड़ा । (पुं०) यमराज की उपाधि । वानर विशेष ।

कीर—(पुं०) [की इति अव्यक्तशब्दम् ईरयति, की√ईर्+अच्] तोता, सुग्गा । न० [कीलति बध्नाति शरीरम्, √कील्+अच्, लस्य र०] मांस । (पुं०) (बहु०) [क√ईर्+ णिच्, पृषो० साधुः] कश्मीर देश और उस देश के रहने वाले ।—**इष्ट**—(कीरेष्ट) (पुं०) आम का वृक्ष ।—**वर्णक**—(न०) सुगन्ध द्रव्यों का सरताज ।

कीर्ण—(वि०) [√कॄ+क्त] गुथा हुआ। फैला हुआ। पड़ा हुआ। बिखरा हुआ। ढका हुआ। भरा हुआ। रखा हुआ। घायल, चोटिल।

कीर्णि—(स्त्री०) [√कॄ+क्तिन्] बिखेरना। ढकना, छिपाना। घायल करना।

कीर्तन—(न०) [कॄत्+ल्युट्] कीर्ति-वर्णन, यशोगान। राम-कृष्ण आदि की कथा गाते-बजाते हुए कहना। गाते-बजाते हुए भाषण करना। कथन। वर्णन।

कीर्तना—(स्त्री०) [√कॄत्+णिच्+युच्] वर्णन। कथन। पाठ। कीर्त्ति, यश।

कीर्ति—(स्त्री०) [√कॄत्+इन्, इरादिश्च] प्रसिद्धि। यश। प्रशंसा। कीचड़। फैलाव। प्रकाश। आवाज। दक्ष प्रजापति की कन्या और धर्म की पत्नी।—**भाज्**–(वि०) प्रसिद्ध, प्रख्यात, मशहूर। (पुं०) द्रोणाचार्य की उपाधि।—**शेष**–(पुं०) मृत्यु, मौत। (वि०) जिसकी कीर्तिमात्र इस दुनिया में रह गई हो, मृत।

√कील्—भ्वा० पर० सक० बाँधना। खोंसना। कीलना। अर्थात् बन्द कर देना। कील ठोंकना। सहारा देना, टेक लगाना। कीलति, कीलिष्यति, अकीलीत्।

कील—(पुं०) [√कील्+घञ्] लोहे का काँटा। बर्छी, खंभा। खूँटा। हथियार। कोहनी। कोहनी का प्रहार। लौ। सूक्ष्म अणु। शिव का नाम। मूढ़गर्भ।

कीलक—(पुं०) [कील+कन्] पच्चर, खूँटी, मेख, कील। खम्भा, स्तूप। पशुओं के बाँधने का खूँटा। एक तंत्रोक्त देवता। (न०) अन्य मंत्र का प्रभाव नष्ट कर देने वाला मंत्र। ज्योतिष के अनुसार प्रभव आदि ६० वर्षों के अंतर्गत एक वर्ष।

कीलाल—(पुं०) न० [कील√अल्+अण्] अमृत के समान स्वर्गीय एक पेय पदार्थ। शहद। पशु, जानवर। जल। रुधिर। सीना।—**धि**–(पुं०) समुद्र।—**प**–(पुं०) राक्षस।

कीलिका—(स्त्री०) [कील+कन् –टाप्, इत्व] धुरे की खूँटी। एक तरह का वाण। मनुष्य के शरीर की एक अस्थि।

कीलित—(वि०) [√कील+क्त] बँधा हुआ। गड़ा हुआ। कील से जड़ा हुआ; 'तेन मम हृदयमिदमसमशरकीलितम्' गीत ७।

कीश—(वि०) [क√ईश्+क] । नंगा। (पुं०) वानर। सूर्य। पक्षी।

√कु—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। कवते, कोष्यते, अकोष्ट। तु० आत्म० अक० कराहना। कुवते, कोष्यते, अकुत। अ० पर० अक० शब्द करना। कौति, कोष्यति, अकौषीत्।

कु—(अव्य०) [√कु+डु] ह्रास। खराबी। कमी। घिसावट। पाप। धिक्कार। स्वल्पता। आवश्यकता और त्रुटि व्यञ्जक अव्यय। इसके विविध पर्यायवाची शब्द हैं– "कद्", "कव"। "का" और "किं"। [उदाहरण।—**कदश्व**। **कवोष्ण**। **कोष्ण** **किंप्रभु**]। (स्त्री०) पृथिवी। त्रिभुज का आधार।—**कर्मन्**– (न०) ओछा काम, बुरा काम।—**कील**–(पुं०) पर्वत।—**ग्रह**–(पुं०) अशुभ ग्रह।—**ग्राम**–(पुं०) पुरवा, छोटा ग्राम।—**चर**–(वि०) [स्त्री० कुचरा, कुचरी] रेंगने वाला। दुष्ट। निंदक। (पुं०) स्थिर ग्रह।—**चर्या**–(स्त्री०) दुष्टता, दुष्टाचरण।—**चेल,**—**चैल**—(वि०) जिसके कपड़े बहुत मैले या फटे हों। (न०) मलिन वस्त्र।—**जन्मन्**–(वि०) अकुलीन, नीच।—**तनु**–(वि०)कुरूप। विकलाङ्ग।—(पुं०) कुवेर की उपाधि।—**तंत्री**–(स्त्री०) बुरी वीणा।—**तीर्थ**–(पुं०) बुरा शिक्षक।—**दिन**–(न०) अशुभ दिवस।—

दृष्टि–(स्त्री०) बुरी निगाह। कमजोर निगाह। वेद-विरुद्ध सम्मति।—**देश**–(पुं०) बुरा देश या स्थान। ऐसा देश जहाँ जीवनोपयोगी पदार्थ अप्राप्त हों या जहाँ का राजा अच्छा न हो और अत्याचारी हो।—**देह**–(वि०) कुरूप। विकलाङ्ग।—(पुं०) कुवेर की उपाधि।—**धी**–(वि०) मूर्ख, मूढ़, वेवकूफ। दुष्ट।—**नट**–(पुं०) बुरा अभिनय पात्र।—**नदिका**–(स्त्री०) छोटी नदी या नाला।—**नाथ**–(पुं०) दुष्ट स्वामी या मालिक।—**नामन्**–(पुं०) कंजूस।—**पथ**–(पुं०) कुमार्ग।—**पुत्र**–(पुं०) दुष्ट पुत्र या वेटा।—**पुरुष**–(पुं०) नीच आदमी।—**पूय**–(वि०) नीच, ओछा, तिरस्करणीय।—**प्रिय**–(वि०) अप्रिय, तिस्करणीय, नीच, ओछा।—**प्लव**–(पुं०) बुरी नाव।—**ब्रह्मन्**–(पुं०) पतित ब्राह्मण।—**मंत्र**–(पुं०) बुरी सलाह—**मुख**–(पुं०) रावण की सेना का एक योद्धा, दुर्मुख।—**योग**–(पुं०) ग्रहों का बुरा या अशुभ संयोग।—**रस**-(पुं०) मदिरा-विशेष।—**रूप**–(वि०) वदशक्ल, भद्दा।—**रूप्य**–(न०) टीन, जस्ता।—**लक्षण**–(न०) बुरा लक्षण। अनिष्टसूचक चिह्न। (वि०) बुरे लक्षण वाला।—**वंग**-(पुं०) सीसा।—**वचस्**,—**वाक्य**–(न०) गाली-गलौज।—**वर्षा**–(पुं०) अचानक या प्रचंड वर्षा।—**विवाह**–(पुं०) विवाह की बुरी पद्धति।—**वृत्ति**–(स्त्री०) बुरा आचरण, वद चाल-चलन।—**वैद्य**—(पुं०) खराब वैद्य, नीम हकीम।—**शील**–(वि०) उजड्ड, असभ्य, दुष्ट, वदतमीज, अशिष्ट, दुष्टस्वभाव।—**स्थल**–(न०)बुरा स्थान।—**सरित्**–(स्त्री०) छोटी नदी या नाला।—**सृति**–(स्त्री०) दुष्टाचरण।—**स्त्री**–(स्त्री०) दुष्टा स्त्री।

कुकभ—(न०) [कुकेन आदानेन पानेन भाति, कुक√भा+क] एक प्रकार की शराब।

कुकुद कुकूद—(पुं०) [कु कु वा कू इत्यव्ययम् अलङ्कृता कन्या तां सत्कृत्य पात्राय ददाति, कु कु वा कु कू√दा+क] विवाह में उपयुक्त पात्र को उचित शृङ्गार सहित एवं शास्त्रीय विधानानुसार कन्या देने वाला।

कुकुन्दर कुकुन्दुर—(न०) [स्कन्द्यते कामिना अत्र, नि० साधुः] जघनकूप, मेरुदण्ड के निम्नभाग में नितम्ब-स्थान-स्थित गर्तद्वय। (पुं०) [कु√दृ (अन्तर्भूतण्यर्थात्) +अण्, नि० साधुः] कुकरौंधा।

कुकुर—(पुं०)[कु√कुर्+क] यादव क्षत्रियों की एक शाखा। यादव राजा अंधक का पुत्र जिससे उक्त शाखा चली। एक जनपद, दशार्ह। कुत्ता। ग्रन्थिपर्णी। एक साँप।

कुकूल—(पुं०, न०) [√कू+ऊलचु, कुगागम] भूसी, चोकर। चोकर की आग; 'कुकूलानां राशौ तदनु हृदयं पच्यत इव' उत्त० ६.४०।(न०) [कोः कूलम् ष० त०] सूराख, छेद। गड्ढा, गर्त। कवच, वर्म।

कुक्कुट—(पुं०) [√कुक्+क्विप् तेन कुटति, कुक्√कुट्+क] मुर्गा। लुक्, अधजल लकड़ी। चिनगारी [स्त्री०—**कुक्कुटी**] मुर्गी।

कुक्कुटक—(पुं०) [कुक्कुट+कन्] शूद्र से निषादी में उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति।

कुक्कुटि, कुक्कुटी—(स्त्री०) [कुक्कुट+क्विप्+इन्, पक्षे ङीप्] ढोंग। दम्भ। स्वार्थसिद्धि के लिये किया गया धर्मानुष्ठान। छिपकली। शाल्मली। [कुक्कुट+ङीप्] मुर्गी।

कुक्कुभ—(पुं०) [कुक्कु शब्दं भाषते, कुक्कु√भाष्+ड (वा०)] जंगली मुर्गा। मुर्गा। वारनिश, रोगन।

कुक्कुर—(पुं०) [कोकते आदत्ते √कुक्+क्विप्] कुक् किञ्चिदपि गृह्णन्तं जनं दृष्ट्वा कुरति शब्दायते, कुक्√कुर्+क] [स्त्री०—**कुक्कुरी**] कुत्ता।—**वाच्**–(पुं०) हिरनों की एक जाति।

कुक्ष—(पुं०) [√कुष+स] पेट।

कुक्षि—(पुं०) [√कुष्+क्सि] पेट । गर्भाशय, पेट का वह भाग जिसमें गर्भ की झिल्ली रहती है । किसी भी वस्तु का भीतरी भाग। रन्ध्र । गुफा, गुहा । म्यान । खाड़ी ।—**शूल**–(पुं०) पेट का दर्द ।

कुक्षिम्भरि—(वि०) [कुक्षि√भृ+इन्, मुम्] पेटू, पल्ले दर्जे का स्वार्थी, मरभुका, भोजनभट्ट ।

कुङ्कुम—(न०) [कुक्+उमक्, नि० मुम्] केसर। रोली। कुंकुमा; 'लग्नकुंकुमकेसरान्, र० ४.६७ ।—**अद्रि**–, (**कुङ्कुमाद्रि**) पुं० कश्मीर का एक पर्वत ।

कुच्—√तु० पर० अक० सिकुड़ना । कुचति, कुचिष्यति, अकुचीत् । भ्वा० पर० अक० ऊँची आवाज करना । टेढ़ा होना । सक० । रोकना । लिखना । कोचति, कोचिष्यति, अकोचीत् ।

कुच—(पुं०)[√कुच्+क] स्तन, उरोज, चूची ।—**अग्र** (**कुचाग्र**)—**मुख**–(न०) चूची के ऊपर की घुंडी ।—**फल**–(पुं०) अनार का वृक्ष ।

कुचर—(वि०) [कु√चर्+अच्] [स्त्री० —**कुचरा**,—**कुचरी**] रेंगने वाला । दुष्ट । निन्दक । (पुं०) स्थिर ग्रह। हिंसक । 'मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठः, वेद ।

कुचेल—(वि०) [प्रा० ब०] मैले कपड़े पहनने वाला ।

कुचुमार—(पुं०) कामशास्त्र के एक प्राचीन आचार्य ।

कुच्छ—(न०) [कु√छो+क] कुमुदपुष्प । श्वेत पद्म ।

√**कुज्**—भ्वा० पर० सक० चोरी करना । कोजति, कोजिष्यति, अकोजीत् ।

कुज—(पुं०)[कु√जन्+ड] वृक्ष । मङ्गलग्रह । नरकासुर ।

कुजम्भन, कुजम्भिल–(पुं०) [कोःपृथिव्या जन्मनमिव अत्र, ब० स०] [कोः पृथिव्याः की वा जम्भलः, ष० त० वा स० त०] घर में सेंध लगाने वाला चोर ।

कुज्झटि, कूज्झटिका, कुज्झटी–(स्त्री०) [√कुज्+क्विप्, √झट्+इन्, कुज् चासौ झटिश्च कर्म० स०] [कुज्झटि+कन्—टाप्] [कुज्झटि+ङीष्] कुहासा । नीहार । पाला ।

√**कुञ्च्**—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना । थोड़ा होना । कुञ्चति, कुञ्चिष्यति, अकुञ्चीत् ।

कञ्चन—(न०) [√कुञ्च्+ल्युट्] सिकुड़ना, सिमटना । टेढ़ा होना । आँखों का एक रोग ।

कुञ्चि—(पुं०)[√कुञ्च्+इन्] आठ अंजुली या मुट्ठी का एक परिमाण ।

कुञ्चिका—(स्त्री०) [√कुञ्च्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] ताली, चाबी । बाँस का अङ्कुर । गुंजा । काला जीरा ।

कुञ्चित—(वि०)[√कुञ्च्+क्त] सिकुड़ा हुआ । मुड़ा हुआ । घुँघराला (बाल) ।

कुञ्ज—(पुं०, न०) [कु√जन्+ड, पृषो० साधुः] लता वृक्षों से परिवेष्टित स्थान, लतागृह, लतावितान; 'चल सखि कुञ्जं सतिमिरपुञ्जं शीलय नीलनिचोलम् ।'—गीतगोविन्द । हाथी के दाँत ।—**कुटीर**–(पुं०) लतागृह ।

कुञ्जर—(पुं०) [कुञ्ज+र] हाथी । श्रेष्ठार्थवाचक (अमरकोषकार ने निम्न शब्द श्रेष्ठार्थवाचक बतलाये हैं—व्याघ्र, पुङ्गव, ऋषभ, कुञ्जर, सिंह, शार्दूल, नाग) । पीपल । हस्त नक्षत्र ।—**अनीक** (**कुञ्जरानीक**)–(न०) सेना का एक अंग जिसमें हाथीसवारों की टोली हो ।—**अशन**, (**कुञ्जराशन**)–(पुं०) पीपल का वृक्ष ।—**अराति** (**कुञ्जरारा ति**)–(पं०) शेर । शरभ ।—**ग्रह**–(पुं०)हाथी पकड़ने वाला ।

√**कुट्**–तु० पर० अक० कुटिल होना । कुटति, कुटिष्यति, अकुटीत् । चु० आत्म०

सक० काटना। कोटयते, कोटयिष्यते, अचूकुटत ।

कुट--(पुं०, न०) [√कुट्+क] जलपात्र, कलसा, घड़ा, (पुं०) दुर्ग, गढ़ । हथौड़ा, घन । वृक्ष । घर । पर्वत ।--**ज**-(पुं०) इन्द्रजौ । कमल । अगस्त्य । द्रोणाचार्य ।--**हारिका**-(स्त्री०) दासी, चाकरानी ।

कुटक--(न०) [कुट+कन्] एक वृक्ष । दक्षिण का एक प्राचीन देश । वह डंडा जिसमें मथानी की रस्सी लपेटी जाती है । हल का फाल ।

कुटङ्क--(पुं०) [कु√टङ्क्+घञ्] छत । छप्पर ।

कुटङ्गक--(पुं०) [कुटस्य अङ्गुलिः पृषो० साधुः] वृक्ष पर फैली हुई लताओं से बना आ मंडप । वृक्ष पर फैलने वाली लता । छत, छाजन । झोपड़ी । छोटा घर । भांडार गृह ।

कुटप--(पुं०) [कुट√पा+क] ३२ तोले की एक तौल । गृहउद्यान । घर के निकट का वाग । ऋषि । (न०) कमल ।

कुटर--(पुं०)[√कुट्+करन्(वा०)]खंभा जिसमें मथानी की रस्सी लपेटी जाय ।

कुटल--(न०) [√कुट्+कलच्] छप्पर, छाजन ।

कुटि--(पुं०)[√कुट+इन्] शरीर । वृक्ष । (स्त्री०) झोपड़ी । मोड़ । झुकाव ।--**चर**--(पुं०) सूंस, शिशुमार ।

कुटिर--(न०) [√ कुट्+इरन्] कुटी, झोपड़ी ।

कुटिल--(वि०) [√कुट्+इलच्] टेढ़ा, झुका हुआ, मुड़ा हुआ । दुःखदायी । कपटी, बेईमान ।--**आशय** (**कुटिलाशय**)--(वि०) दुष्ट नीयत का, दुष्टात्मा ।--**पक्ष्मन्**--(वि०) झुके हुए पलकों वाला ।--**स्वभाव**--(वि०) कपटी, छली, धोखेबाज ।

कुटिलिका--(स्त्री०) [कुटिल+कन्--टाप्, इत्व] पैर दबाकर चलना (जैसे शिकारी चलते हैं) । लुहार की भट्ठी, लोहसाही ।

कुटी--(स्त्री०) [कुटी+ङीष्] मोड़ । झोपड़ी । कुटनी ।--**चक**--(पुं०) चार प्रकार के संन्यासियों में से एक ।--'चतुर्विधा भिक्षवस्ते कुटीचकबहूदकौ । हंसः परमहंसश्च यो यः पश्चात् स उत्तमः' ।।--महाभारत ।--**चर**--(पुं०) वह संन्यासी जो अपनी गृहस्थी का भार अपने पुत्र को सौंप स्वयं तप और धर्मानुष्ठान में लग जाता है ।

कुटीर--(पुं०, न०) **कुटीरक**-(पुं०) [कुटी+र] [कुटीर+कन्] कुटी, कुटिया । रतिक्रिया ।

कुट्नी--(स्त्री०) [√कुट+उन्--ङीष्] कुटनी, जो लंपटों को छिनाल औरतें लाकर दे ।

√कुटुम्ब्--चु० आत्म० अक० धारण करना। कुटुम्बयते ।

कुटुम्ब, कुटुम्बक--(न०, पुं०) [√कुटुम्ब्+अच्] [कुटुम्ब+कन्] बाल-बच्चे, संतान । कुनबा, परिवार; 'उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्' हि० १.७० । कुटुंब का व्यक्ति, स्वजन । संबंधी । परिवार के प्रति कर्तव्य। नाम । समूह ।--**कलह**-(पुं०, न०) घरेलू झगड़ा, घरू विवाद ।--**भर**--(पुं०) गृहस्थी का भार ।--**व्यापृत**--(वि०) जो गृहस्थी का पालन-पोषण करे और उनकी सम्हाल रखे ।

कुटुम्बिक, कुटुम्बिन्--(वि०) [कुटुम्ब + ठन्] [कुटुम्ब+इनि] कुनबे, बाल-बच्चे वाला, (पुं०) कुटुम्ब का व्यक्ति । किसान ।

कुटुम्बिनी--[कुटुम्बिन्+ङीप्] बाल-बच्चे वाली स्त्री । गृहिणी; 'भवतु कुटुम्बिनीमाहूय पृच्छामि' मु० १ । क्षीरिणी नामक पौधा ।

√कुट्ट--चु० उभ० सक० । काटना, विभाजित करना । पीसना, चूर्ण करना, कूटना । कलङ्क

लगाना, दोष लगाना । धिक्कारना । वृद्धि करना । कुट्टयति-ते ।

कुट्टक—(पुं०) [√कुट्ट्+ण्वुल्] पीसने वाला, कूटने वाला ।

कुट्टन—(न०) [√कुट्ट्+ल्युट्] काटना, कतरना । पीसना, कूटना । गाली देना, धिक्कारना ।

कुट्टनी, कुट्टिनी—(स्त्री०) [कुट्टयति नाशयति स्त्रीणां कुलम्, √कुट्ट्+णिच् (स्वार्थे)+ल्युट्—ङीप्] [कुट्टं स्त्रीणां कुलनाशः कर्तव्यतया अस्ति अस्याः, कुट्ट+इनि—ङीप्] कुटनी ।

कुट्टमित—(न०) [√कुट्ट् + घञ्, तेन निर्वृत्तः इत्यर्थे कुट्ट+इमप्+इतच्] प्रियतम के साथ मिलने की आन्तरिक इच्छा रहते भी, न मानने के लिये हाथ या सिर हिलाकर, इशारे से इनकार करना ।

कुट्टाक—(वि०) [कुट्ट्+षाकन्] [स्त्री०—कुट्टाकी] जो काटता या विभाजित करता है या जो काटा या विभाजित किया जाता है ।

कुट्टार—(पुं०) [√कुट्ट्+आरन्] पहाड़ । (न०) स्त्रीमैथुन । ऊनी कंबल । अकेलापन ।

कुट्टिम—(पुं०, न०) [√कुट्ट्+इमप्] पत्थर जड़ा हुआ फर्श; 'कान्तेन्दुकान्तोपलकुट्टिमेषु' शि० ३.४४ । ठोंक-पीटकर मकान बनाने के लिये तैयार की गयी नींव । रत्नों की खान । अनार । झोपड़ी ।

कुट्टिहारिका—(स्त्री०) [कुट्टि मत्स्यमांसादिकं हरति, कुट्टि√हृ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] दासी, खरीदी हुई दासी ।

कुट्टीर—(पुं०)[√कुट्ट्+ईरन्] छोटा पहाड़ ।

कुठ—(पुं०) [कुठ्यते छिद्यते असौ, √कुठ् क (घञर्थे)] वृक्ष ।

कुठर—(पुं०) [√कुठ +करन् (वा०)] दे० 'कुटर' ।

कुठार—(पुं०) [√कुठ्+आरन्] [स्त्री०—कुठारी] कुल्हाड़ी, फरसा ।

कुठारिक—(पुं०) [कुठार+ठन्] लकड़हारा, लकड़ी काटने वाला ।

कुठारिका—(स्त्री०) [कुठार + ङीप् + कन्— टाप्, ह्रस्व] छोटी कुल्हाड़ी ।

कुठारु—(पुं०) [√कुठ+आरु] वृक्ष । बंदर ।

कुठि—(पुं०) [√कुठ्+इन्, कित्] वृक्ष । पहाड़ ।

√कुड्—तु० पर० अक० । बालक होना । कुडति, कुडिष्यति, अकुडीत् ।

कुडङ्ग—(पुं०) लताकुञ्ज, लतागृह ।

कुडप, कुडव—(पुं०) [√कुड् + कपन्] [√कुड+कवन्] अनाज की एक तौल जो १२ अंजलि भर अथवा प्रस्थ के बराबर होती है ।

कुड्मल—(वि०) [√कुड्+कलच्, मुट्] खुला हुआ, खिला हुआ, फैला हुआ; 'विजृम्भणोद्गन्धिषु कुड्मलेषु' । (पुं०) खिलावट, कली । (न०) नरक-विशेष ।

कुड्मलित—(वि०) [कुड्मल+इतच्] कलीदार, जिसमें कलियाँ आ गयी हों, फूला हुआ । प्रसन्न, हँसमुख ।

कुड्य—(न०) [कुं+यक् (अघ्न्यादित्वात्), डुगागम] दीवाल । दीवाल पर पलस्तर करना । उत्सुकता ।—**छेदिन्** (**कुड्यच्छेदिन्**)—(पुं०) सेंध लगाने वाला चोर ।—**छेद्य** (**कुड्यच्छेद्य**)—(न०) दीवार का गड्ढा ।

√कुण्—तु० पर० अक० शब्द करना । सक० सहारा देना । कुणति, कुणिष्यति, अकुणीत् । चु० (अदन्त) पर० सक० बुलाना । कुणयति ।

कुणक—(पुं०) [कुण्+क (घञर्थे)+कन् (अनुकम्पायाम्)] हाल का उत्पन्न हुआ जानवर का बच्चा ।

कुणप—(वि०) [√कुण्+कपन्] [स्त्री०—कुणपी] मुर्दा जैसी दुर्गंध वाला । (पुं०, न०)

मुर्दा, शव,; 'शासनीयः कुणपभोजनः' विक्र० .५ (पुं०) भाला, वर्छी । दुर्गंध ।

कुणि—(पुं०) [√कुण्+इन्] विसहरी, फोड़ा जो हाथ की अँगुलियों के नाखूनों के किनारे होता है । लुञ्जा, जिसकी एक बाँह सूख गयी हो । तुन का पेड़ ।

कुण्टक—(वि०) [√कुण्ट्+ण्वुल्] [स्त्री० —**कुण्टकी**] मोटा, स्थूल ।

कुण्ठ्—भ्वा० पर० अक० सुस्त पड़ जाना । लँगड़ा हो जाना या अंगहीन हो जाना । मूर्ख बनना । कुण्ठति, कुण्ठिष्यति, अकुण्ठीत्, चु० पर० सक० लपेटना । बचाना । कुण्ठ-यति—कुण्ठति ।

कुण्ठ—(वि०) [√कुण्ठ्+अच्] सुस्त, ढीला; 'वज्रं तपोवीर्यमहत्सु कुण्ठं' कु० ३.१२ । अल्हड़, अनाड़ी, मूढ़ । काहिल, अकर्मण्य । निर्बल ।

कुण्ठक—(पुं०) [√कुण्ठ्+ण्वुल्] मूर्ख, बेवकूफ ।

कुण्ठित—(√कुण्ठ्+क्त] भोथरा, गोंठिल । मूर्ख । विकलाङ्ग ।

√कुण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० जलाना । कुण्डते, कुण्डिष्यते, अकुण्डिष्ट । भ्वा० पर० अक० विकल होना । कुण्डति, कुण्डिष्यति, अकुण्डीत् । चु० पर० सक० बचाना । कुण्डयति—कुण्डति ।

कुण्ड—(पुं०, न०) [√कुण्+ड] पानी रखने का कुंडा । मटका । छोटा तालाब । हौज । हवन की अग्नि या जल-संचय के लिये खोदा हुआ गढ़ा । बटलोई । कमंडलु । खप्पर, भिक्षा-पात्र । (पुं०) [कुण्ड्यते दह्यते कुलम् अनेन, √कुण्ड्+घञ्] छिनाले का लड़का, पति जीवित रहते हुए अन्य पुरुष से उत्पन्न किया हुआ पुत्र, [स्त्री०—**कुण्डी**]—"पत्यौ जीवति कुण्डः स्यात् ।" —मनु० ।—**आशिन्** (**कुण्डाशिन्**)-(पुं०) जारज बेटे की कमाई खाने वाला ।—**ऊधस्** [ब० स०, ङीष्, अनङ् आदेश—कुण्डोघ्नी] । दूध से ऐन भरी हुई गौ । स्त्री जिसके कुच पूरे निकल चुके हों ।—**कीट**—(पुं०) चकले वाला, व्यभिचारिणी स्त्रियों के अड्डे वाला । चार्वाक मतावलम्वी, नास्तिक । छिनाले में उत्पन्न ब्राह्मण ।—**कील**—(पुं०) कमीना या अधम पुरुष ।—**गोल**, —**गोलक**— (न०) महेरी, पसाव, पीच, माँड़, काँजी । (पुं०) कुण्ड और गोलक का समुदाय ।

कुण्डल—(पुं०, न०) [√कुण्ड्+कलच् वा कुण्ड√ला+क] कान का आभूषण । पहुँची । रस्सी या साँप की फेंटी ।

कुण्डलना—(स्त्री०) [कुण्डल+णिच्+युच् टाप्] घिराव । एक गोल चिह्न जो उस शब्द पर लगाया जाता है, जिसको पढ़ते समय, विचारते समय अथवा नकल करते समय छोड़ देना चाहिये, वह चिह्न गोलाकार होता है ।

कुण्डलिन्—(वि०) [कुण्डल+इनि] [स्त्री० —**कुण्डलिनी**] कुण्डलों से भूषित । गोलाकार । ऐंठनदार, उमेंठा हुआ । (पुं०) सर्प । मोर । वरुण की उपाधि ।

कुण्डलिनी—(स्त्री०) [कुण्डलिन्+ङीप्] दुर्गा या शक्ति का एक रूप । मूलाधार चक्र में स्थित एक शक्ति जिसे तंत्र और हठयोग का साधक जगाकर ब्रह्मरंध्र में लगाने का यत्न करता है ।

कुण्डिका—(स्त्री०) [कुण्ड+कन्—टाप्, इत्व] घड़ा । कमण्डलु ।

कुण्डिन—[√कुण्ड्+इनच्] (पुं०) एक मुनि । (न०) एक नगर का नाम, विदर्भों की राजधानी ।

कुण्डिर, कुण्डीर—(वि०) [√कुण्ड्+इरन्] [√कुण्ड्+ईरन्] बलवान् (पुं०) मनुष्य ।

कुतप—(पुं०) [कु√तप्+अच्] ब्राह्मण । एक बाजा । सूर्य । अग्नि । मेहमान । बैल ।

दौहित्र, धोइता, लड़की का लड़का। भानजा, वहिन का लड़का। अनाज। दिन का आठवाँ मुहूर्त्त। (न०) कुश, दर्भ। एक प्रकार का कंबल।

कुतस्—(अव्य०) [किम्+तसिल्] कहाँ से, किधर से। कहाँ, किस स्थान पर। क्यों, किसलिए। क्योंकर, किस प्रकार। अत्यधिक, अत्यल्प। क्योंकि, यतः।

कुतस्त्य—(वि०) [कुतस्+त्यप्] कहाँ से आया हुआ। कैसे हुआ।

कुतुक—(न०) [√कुत्+उकञ्] अभिलाषा, कामना। कौतुक। उत्कण्ठा; 'केलिकलाकुतुकेन च' गीत० १।

कुतुप—(पुं०, न०) [कुतप पृषो० साधुः] दिन का आठवाँ मुहूर्त। [ह्रस्वा कुतूः, कुतू+डुप् पृषो० साधुः] चमड़े की कुप्पी।

कुतू—(स्त्री०) [कु √ तन्+कू, टिलोप (वा०)] चमड़े की कुप्पी।

कुतूहल—(वि०) [कुतू√हल्+अच्] अद्भुत, विलक्षण। सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ। श्लाघ्य। प्रसिद्ध। अभिलाषा। उत्सुकता, उत्कण्ठा। क्रीड़ा। अचंभा।

कुत्र—(अव्य०) [किम्+त्रल्] कहाँ, किस जगह।

कुत्रत्य—(वि०) [कुत्र+त्यप्] कहाँ रहनेवाला, कहाँ बसनेवाला।

√कुत्स्—चु० आत्म० सक० निंदा करना। कुत्सयते।

कुत्सन—(न०), कुत्सा—(स्त्री०) [√कुत्स्+ल्युट्] [√कुत्स्+अ—टाप्] गाली, तिरस्कार, निन्दा, अपशब्द।

कुत्सित—(वि०) [√कुत्स्+क्त] निंदित, कमीना, दुष्ट।

√कुथ्—दि० पर० अक० दुर्गंध करना। कुथ्यति, कोथिष्यति, अकोथीत्। क्र्या० दे० '√कुन्थ्'।

कुथ—(पुं०, न०), कुथा—(स्त्री०) [√कु+थक्] हाथी की झूल। कालीन, गलीचा। कुश। कंथा। एक कीड़ा।

कुद्दार, कुद्दाल, कुद्दालक—(पुं०) [कु √दॄ+णिच्+अण्, पृषो० साधुः] [कु √दल्+णिच्+अण्, पृषो० साधुः] [कुद्दाल+कन्] कुदाली। फावड़ा। कचनार का वृक्ष, काञ्चन वृक्ष।

कुद्मल—(न०) [=कुड्मल, पृषो० साधुः] दे० 'कुड्मल'।

कुद्रङ्क, कुद्रङ्ग—(पुं०) [कुद्र√कै+क नि० साधुः] [कु—उत्√रञ्ज्+घञ्] चौकीदार का घर या चौकी या मचान पर बनी मड़ैया। घंटाघर।

कुनक—(पुं०) काक, कौआ।

कुन्त—(पुं०) [कु√उन्द्+त (वा०), शक० पररूप] प्रास नामक शस्त्र, भाला। सपक्ष तीर। छोटा कीड़ा।

कुन्तल—(पुं०) [कुन्त√ला+क] सिर के केश। जलपान करने का कटोरा या प्याला। हल। जौ। सुगन्ध द्रव्य। एक देश और उसके निवासी।

कुन्ति—(पुं०) [√कम्+झिच्] राजा क्रथ के पुत्र का नाम।—भोज—(पुं०) एक यादव वंशी राजा का नाम। (इसके कोई सन्तान न थी, अतः इसने कुन्ती को गोद लिया था)।

कुन्ती—(स्त्री०) [कुन्ति + ङीप्] शूरसेन राजा की औरसी पुत्री जिसका नाम पृथा था और कुन्तिभोज ने इसे गोद लिया था। यह राजा पाण्डु की पटरानी थी और इसी के गर्भ से कर्ण, युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन का जन्म हुआ था।

√कुन्थ्—क्र्या० पर० सक०। चिपटाना। पीड़ित करना। कुथ्नाति, कुन्थिष्यति, अकुन्थीत्। भ्वा० पर० सक० कष्ट देना। मारना। कुन्थति, कुन्थिष्यति, अकुन्थीत्।

कुन्द—(पुं०, न०) [कु√दै वा√दो+क,

नि० मुम् अथवा√कु+दत्, नुम्] चमेली की जाति का एक पौधा। (न०) कुन्द का फूल; 'कुन्दावदाताः कलहंसमालाः' भट्टि० २.१८। (पुं०) विष्णु की उपाधि। खराद। कुबेर के नौ धनागारों में से एक। करवीर वृक्ष।

कुन्दम--(पुं०) [कुन्द√मा+क] बिल्ली, बिडाल।

कुन्दिनी--(स्त्री०) [कुन्द+इनि--ङीप्] कमलों का समूह।

कुन्दु--(पुं०) [कु√दृ+डु, बा० नुम्] चूहा, मूसा।

√कुन्द्र्--चु० पर० सक० झूठ बोलना। कुन्द्रयति।

√कुप्--दि० पर० सक० क्रोध करना। कुप्यति, कोपिष्यति, अकोपीत्।

कुपिन्द--दे० कुविन्द।

कुपिनिन्--(पुं०) [कुपिनी मत्स्यधानी अस्ति अस्य, कुपिनी+इनि] धीवर, मछुवा।

कुपिनी--(स्त्री०) [√कुप्+इनि--ङीप्] छोटी मछलियां फँसाने का एक प्रकार का जाल।

कुपूय--(वि०) [कु√पूय्+अच्] दुष्टाचरण वाला। नीच, अकुलीन, घृणित।

कुप्य--(न०) [√गुप्+क्यप्, कुत्व] उपधातु। चाँदी और सोने को छोड़कर अन्य कोई भी धातु।

कुबेर, कुवेर--(पुं०) [√कुम्ब्+एरक्, नलोप वा कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य, ब० स०] [√कुम्ब् +एरक् आदि] धनाध्यक्ष देवता का नाम जो उत्तर दिशा के अधिष्ठाता और धन-समृद्धि के स्वामी माने जाते हैं।--**अद्रि,--अचल, (कुबेराद्रि), (कुबेराचल)**--(पुं०) कैलास पर्वत का नाम।--**दिश्**--(स्त्री०) उत्तर दिशा।

कुब्ज--(वि०) [कु√उब्ज्+अच्, उकार-लोप] कुबड़ा, झुका हुआ। (पुं०) खड्ग-विशेष। कूबड़। एक रोग। अपामार्ग।

कुब्जक--(पुं०) [कु√उब्ज्+ण्वुल्] एक वृक्ष का नाम।

कुब्जा--(स्त्री०) [कुब्ज+टाप्] राजा कंस की एक जवान कुबड़ी दासी का नाम, इसका कुबड़ापन श्रीकृष्ण ने मिटाया था।

कुब्जिका--(स्त्री) [कुब्जक+टाप्, इत्व] आठ वर्ष की अविवाहिता लड़की।

कुभृत्--(पुं०) [कु√भृ+क्विप्] पर्वत, पहाड़।

कुमार्--चु० पर० अक० खेलना। कुमारयति, कुमारयिष्यति, अचुकुमारत्।

कुमार--(पुं०) [√कुमार्+अच्] पुत्र, बालक। पाँच वर्ष के नीचे की उम्र का बालक। युवराज, राजकुमार। कार्त्तिकेय का नाम। अग्नि का नाम। तोता। सिन्धुनद का नाम।--**पालन**--(पुं०) वह पुरुष जो बालकों की देखभाल करे। शालिवाहन राजा का नाम।--**भृत्या**--(स्त्री०) लड़कों की देखभाल। धातृपना, दाई का काम, प्रसूता स्त्री की परिचर्या।--**वाहन,--वाहिन्**--(पुं०) मोर, मयूर।--**सू**--(स्त्री०) पार्वती का नाम।

कुमारक--(पुं०) [कुमार+कन्] बच्चा, बालक। आँख की पुतली।

कुमारिक--(वि०) [स्त्री०--**कुमारिकी**],--**कुमारिन्**--(वि०) [स्त्री०--**कुमारिणी**],--[कुमारी+ठन्] [कुमारी+इनि] लड़कियों के बाहुल्य वाला।

कुमारिका, कुमारी--(स्त्री०) [कुमारी+ठन्--टाप्] [कुमार+ङीष्] १० और १२ वर्ष के बीच की उम्र की लड़की। अविवाहिता कन्या। लड़की, पुत्री। दुर्गा का नाम। कई एक पौधों का नाम। सीता। बड़ी इलायची। भारतवर्ष की दक्षिणी सीमा का एक अन्तरीप। श्यामा पक्षी। नवमल्लिका। घृतकुमारी। एक नदी।--**पुत्र**--(पुं०) कानीन, अविवाहिता का पुत्र।--**श्वशुर**--(पुं०) विवाह

होने से पहिले सतीत्व से भ्रष्ट हुई लड़की का ससुर ।

कुमुद्—(वि०) [कु√मुद्+क्विप्] अकृपालु। अमित्र । लालची । (न०) कुमुदनी का फूल। लाल कमल का फूल ।

कुमुद—(पुं०,न०) [कु√मुद्+क] कुईं या सफेद कमल जो चन्द्रमा के उदय होने पर खिलता है। लाल कमल। (न०) चाँदी। (पुं०) विष्णु की उपाधि ; दक्षिण दिशा के दिग्गज का नाम जिसने अपनी छोटी बहिन कुमुद्वती का विवाह श्रीरामपुत्र कुश के साथ किया था।—**अभिख्य (कुमुदाभिख्य)**–(न०) चाँदी । —**आकर,—आवास, (कुमुदाकर), (कुमुदावास)**–(पुं०) सरोवर जो कमलों से भरा हो।—**ईश (कुमुदेश)**–(पुं०) चन्द्रमा। —**खण्ड**–(न०) कमल-समूह ।—**नाथ,—पति,—बन्धु,—बान्धव, —सुहृद्**–(पुं०) चन्द्रमा ।

कुमुदवती—(स्त्री०) [कुमुद+मतुप्— वत्व] दे० 'कुमुदिनी' ।

कुमुदिनी—(स्त्री०) [कुमुद+इनि] कुईं या सफेद कमल का पौधा । कुमुद पुष्पों का समूह; 'यथेन्दावानन्दं व्रजति समुपोढे कुमुदिनी' उत्त० ५.२६ । वह स्थान जहाँ कुमुदों का बाहुल्य हो। —**नायक,—पति**–(पुं०) चन्द्रमा ।

कुमोदक—(पुं०) [कु√मुद्+णिच्+ण्वुल्] विष्णु की उपाधि ।

√कुम्ब्—भ्वा० पर० सक० ढाँकना। कुम्बति, कुम्बिष्यति, अकुम्बीत् । चु० पर० सक० ढाँकना, कुम्बयति—कुम्बति ।

कुम्बा—(स्त्री०) [√कुम्ब्+अङ—टाप्] यज्ञस्थान का परदा या घेरा ।

√कुम्भ्—चु० पर० सक० ढाँकना । कुम्भयति—कुम्भति ।

कुम्भ—(पुं०) [कु√उम्भ्+अच्, शक० पररूप] घड़ा, कलसा; 'इयं सुस्तनी मस्तकन्यस्तकुम्भा'। हाथी के माथे के दो मांसपिण्ड। कुम्भ राशि । चौंसठ सेर या २० द्रोण की तौल । प्राणायाम का एक अंग जिसमें साँस खींचने के बाद रोकी जाती है । वेश्यापति । कुम्भकर्ण का पुत्र । गुग्गुल ।—**कर्ण**–(पुं०) रावण का छोटा भाई ।—**कार**–(पुं०) कुम्हार । वर्णसङ्कर जाति, उशना के मतानुसार —'वैश्यायां विप्रतश्चौर्यात् कुम्भकारः स उच्यते ।'—पराशर के मतानुसार —'मालाकारात्कर्मकर्यां कुम्भकारो व्यजायत ।' —**घोष**–(पुं०) एक प्राचीन कस्बे का नाम । —**ज,—जन्मन्,—योनि, —सम्भव**– (पुं०) अगस्त्य की उपाधियाँ । द्रोणाचार्य की उपाधि । वशिष्ठ की उपाधि । —**दासी**– (स्त्री०) कुटनी ।—**मण्डूक**–(पुं०) घड़े का मेढक । (आलं०) अनुभवशून्य मनुष्य ।—**सन्धि**–(पुं०) हाथी के माथे पर के दो मांसपिण्डों के बीच का गढ़ा ।

कुम्भक—(पुं०) [कुम्भ√कै+क] प्राणायाम का एक अंग जिसमें नाक-मुँह बंद करके साँस रोकी जाती है ।

कुम्भा—(स्त्री०) [कुत्सितवृत्त्या उम्भा पूर्तिः अस्याः शक० पररूप] छिनाल स्त्री, रंडी ।

कुम्भिका—(स्त्री०) [कुम्भ+कन्—टाप्, इत्व] छोटा घड़ा । वेश्या । जलकुंभी । परवल की लता। एक नेत्र-रोग, बिलनी। कायफल। एक शिश्नरोग

कुम्भिन्—(पुं०) [कुम्भ+इनि] हाथी । मगर, घड़ियाल । एक मछली । एक प्रकार का विषैला कीड़ा । गुग्गुल ।—**मद (कुम्भिमद)**–(पुं०) हाथी का मद ।

कुम्भिल—(पुं०) [√कुम्भ्+इलच्] घर में सेंध फोड़ने वाला चोर । ग्रन्थचोर, लेखचोर, श्लोकार्ध चुराने वाला । साला । गर्भ पूर्ण होने के पूर्व ही उत्पन्न हुआ बालक ।

कुम्भी—(स्त्री०) [कुम्भ+ङीष्] छोटा

घड़ा। हंडी। अनाज की तौल का एक बटखरा। जलकुंभी। सलई का पेड़। गनियारी। दंती। पाँडर।—नस–(पुं०) [कुम्भी इव नासिका अस्य, ब० स०, अच्, नसादेश:] एक प्रकार का विषैला साँप।—पाक–(एकवचन या बहुवचन) (पुं०) एक नरक जहाँ पापी, कुम्हार के बरतनों की तरह आवाँ में पकाये जाते हैं।

कुम्भीक—(पुं०) [कुम्भी√कै+क] पुन्नाग वृक्ष। एक तरह का नपुंसक, गाँड़ू।—**मक्षिका**–(स्त्री०) एक प्रकार की मक्खी।

कुम्भीर—(पुं०) [कुम्भिन्√ईर्+अण्] घड़ियाल। एक छोटा कीड़ा। एक यक्ष।

कुम्भीरक, कुम्भील, कुम्भीलक—(पुं०) [कुम्भीर+कन्] [=कुम्भीर रस्य लः] [कुम्भील+कन्] चोर। मगर, घड़ियाल।

√कुर्—तु० पर० अक० शब्द करना। कुरति, कोरिष्यति, अकोरीत्।

कुरङ्कर, कुरङ्कुर–(पुं०) [कुरम् इति अव्यक्त-शब्दं करोति, कुरम्√कृ+ट] [कुरम्√कुर्+अच्] सारस पक्षी।

कुरङ्ग—(पुं०) [√कु+अङ्गच्] हिरन। तामड़े रंग का हिरन। एक पर्वत। एक तीर्थ। [स्त्री०—**कुरङ्गी**]—'लवंगी कुरङ्गीदृगङ्गी-करोतु।'—जगन्नाथ।—**अक्षी** (**कुरङ्गाक्षी**), —**नयना**, —**नेत्रा**–(स्त्री०) हिरन जैसी आँखों वाली स्त्री।—**नाभि**(पुं०) कस्तूरी, मुश्क।

कुरङ्गम—(पुं०) [कुर√गम्+खच्, मुम्] दे० 'कुरङ्ग'।

कुरचिल्ल—(पुं०) [कुर√चिल्ल्+अच्] केकड़ा। बनैले सेव। कर्कराशि।

कुरट—(पुं०) [√कुर्+अटन्, कित्] मोची, चमार।

कुरण्ट, कुरण्टक–(पुं०), **कुरण्टिका**-(स्त्री०) [√ कुर्+अण्टक्] [कुरण्ट+कन्] [कुरण्ट +कन्—टाप्, इत्व] कटसरैया। कुटज वृक्ष। सितिवार वृक्ष।

कुरण्ड—(पुं०) [√कुर्+अण्डक्] अण्ड-कोशवृद्धि का रोग, एक रोग जिसमें पोते बढ़ जाते हैं।

कुरर, कुरल–(पुं०)[√कु+क्रुरच्, पक्षे रल-योरभेद:] क्रौंच पक्षी, कराँकुल। एक तरह का गिद्ध।

कुररी–(स्त्री०)[कुरर+ङीष्]मादा कुरर; 'चक्रन्द विग्ना कुररीव भूय:'र०१४·६८ भेड़, मेषी।—**गुण**–(पुं०)कुररी पक्षियों का झुंड।

कुरव, (पुं०), **कुरवक**–(पुं० न०) [कु ईषत् रवो यत्र] [कुरव+कन्] लाल फूल वाली कटसरैया; 'कुरवका: रवकारणतां ययु:' र० ६.२६। आक। गीदड़।

कुरीर—(न०) [√कृ+ईरन्, उकारादेश] मैथुन। स्त्रियों के सिर पर ओढ़ने का वस्त्र-विशेष।

कुरु—(पुं०) [√कृ+कु, उकारादेश] आधुनिक दिल्ली के आस-पास का प्रदेश। उस देश के राजा। पुरोहित। भात।—**क्षेत्र**– (न०) दिल्ली के पश्चिम एक तीर्थ-स्थान, जहाँ कौरवों और पाण्डवों का लोकक्षय-कारी इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध हुआ था।—**जांगल**–(न०) कुरुक्षेत्र।—**राज्**,—**राज**–(पुं०) राजा दुर्योधन।—**विस्त**–(पुं०) चार तोले की सोने की तौल।—**वृद्ध**–(पुं०) भीष्म की उपाधि।

कुरुविन्द—(न०) [कुरु√विद्+श, मुम्] माणिक। आईना। काला नमक। (पुं०) कुलथी। उड़द। मोथा।

कुर्कुट—(पुं०) [कुर्√कुट्+क] मुर्गा। कूड़ा।

कुर्कुर—(पुं०) [कुर् इति अव्यक्तशब्दं कुरति शब्दायते, कुर्√कुर्+क] कुत्ता।

कुर्चिका—(स्त्री०) [=कूर्चिका पृषो० ह्रस्व] कूर्चिका, कूँची।

√कुर्द्—भ्वा० आत्म० अक० खेलना। कुर्दते, कुर्दिष्यते, अकुर्दिष्ट।

कुर्दन—(न०) [√कुर्द्+ल्युट्] खेलकूद ।
कुर्पर, कूर्पर—(पुं०) [√कुर्+क्विप, कुर् √पृ+अच्, पक्षे दीर्घ नि०] घुटना । कोहनी ।
कुर्पास, कूर्पास, कुर्पासक, कूर्पासक—(पुं०) [कुर्पर√अस्+घञ्, पृषो० साधुः] [कुर्पास वा कूर्पास+कन्] स्त्रियों के पहिनने की एक प्रकार की चोली या अँगिया; 'मनोज्ञ-कूर्पासकपीडितस्तना' ।
कुर्वत्—[√कृ + शतृ] करता हुआ । (पुं०) नौकर । मोची, चमार ।
कुल्√—भ्वा० पर० सक० बाँधना । मेल करना । कोलति, कोलिष्यति, अकोलीत् ।
कुल—(न०) [√कुल्+क] वंश, घराना । घर, मकान । उच्च वंश । झुंड, समूह, समुदाय; 'मृगकुलं रोमन्यमभ्यस्यतु' श० २.५ ।(बुरे अर्थ में) गिरोह । देश । शरीर । अगला भाग । —**अकुल** (**कुलाकुल**)-(पुं०) तन्त्रशास्त्र के अनुसार बुध दिन, द्वितीया, षष्ठी तथा द्वादशी तिथि और आर्द्रा, मूल, अभिजित् एवं शत-भिषा नक्षत्र को कुलाकुल कहते हैं ।—**अङ्गना** (**कुलाङ्गना**)-उ (स्त्री०) उच्च-कुलोद्भवा स्त्री ।—**अङ्गार** (**कुलाङ्गार**)-(पुं०) कुल का नाश करने वाला । कुलकलङ्क । —**अचल** (**कुलाचल**),—**अद्रि**, (**कुलाद्रि**), —**पर्वत**,—**शैल**-(पुं०) प्रसिद्ध सप्त पर्वतों —महेंद्र, मलय, सह्य, शुक्ति, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र में से कोई ।—**अन्वित** (**कुलान्वित**)-(वि०)उत्तम कुलोत्पन्न ।—**अभिमान** (**कुलाभिमान**)-(पुं०) अपने कुल का अहङ्कार ।—**आचार** (**कुलाचार**)-(पुं०) अपने वंश का परम्परागत आचार ।—**आचार्य** (**कुलाचार्य**)-(पुं०)कुलपुरोहित । वंशावली रखने वाला ।—**ईश्वर** (**कुलेश्वर**)-(पुं०)कुटुम्ब का मुखिया । शिव का नाम ।—**उत्कट** (**कुलोत्कट**)-(वि०) उच्च कुलोद्भव । (पुं०) अच्छी नस्ल का घोड़ा ।—**उत्पन्न** (**कुलोत्पन्न**),—**उद्गत** (**कुलोद्गत**),—**उद्भव** (**कुलोद्भव**)-(वि०) अच्छे वंश में उत्पन्न । —**उद्वह** (**कुलोद्वह**)-(पुं०) खानदान का मुखिया ।—**उपदेश** (**कुलोपदेश**)-(पुं०) खानदानी नाम ।—**कज्जल**-(पुं०) कुल-कलंक, कुलाङ्गार ।—**कण्टक**-(पुं०) अपने कुल के लिये दुःखदायी ।—**कन्यका**,—**कन्या**-(स्त्री०)कुलीन लड़की ।—**कर**-(पुं०) कुल का आदिपुरुष ।—**कर्मन्**-(न०) अपने कुल खानदान की खास रस्म अथवा विशेष रीति ।—**कलङ्क**-(पुं०) अपने खानदान में धव्वा लगाने वाला ।—**क्षय**-(पुं०) वंश का नाश । कुल की बरबादी ।—**गिरि**,—**पर्वत**, —**भूभृत्**,—**शैल**-(पुं०) प्रधान सप्त पर्वतों में से एक, कुलाचल ।—**घ्न**-(वि०) वंश को बरबाद करने वाला ।—**ज**,—**जात**-(वि०) कुलीन, अच्छे खानदान का, खानदानी । पैतृक, बाप-दादों का, पुरखों का ।—**जन**-(पुं०) कुलीन जन ।—**जन्तु**-(पुं०) अपने कुल को कायम रखने वाला ।—**तिथि**-(पुं०, स्त्री०) चतुर्थी, अष्टमी, द्वादशी, चतु-र्दशी, वह तिथि जिस दिन कुलदेवता का पूजन होता है ।—**तिलक**—(पुं०) अपने वंश को उजागर करने वाला, वंशउजागर । —**दीप**,—**दीपक**-(पुं०) कुलउजागर ।—**दुहितृ**-(स्त्री०)कुलकन्या ।—**देवता**-(स्त्री०) खानदानी देवता, वह देवता जिनका पूजन अपने कुल में सदा से होता चला आता हो । —**द्रुम**-(पुं०) बेल, बरगद, पीपल, गूलर, नीम, आमला, लसोढ़ा, इमली, करंज और कदंब—ये दस प्रधान वृक्ष ।—**धर्म**-वंश-(पुं०) परम्परा से प्रचलित धर्म, अपने खानदान की पद्धति या रीति-रस्म; 'उत्सन्नकुलधर्माणाम् मनुष्याणाम् जनार्दन' भग० १.४३।—**धारक**-(पुं०) पुत्र ।—**धुर्य**-(पुं०) वह पुत्र जो अपने घर वालों का भरणपोषण कर सकता हो, वयस्क पुत्र ।—**नन्दन**-(वि०) अपने कुल की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाला ।—

नायिका—(स्त्री॰) वह लड़की जिसकी पूजा वाममार्गी तांत्रिक भैरवीचक्र में किया करते हैं।—नारी—(स्त्री॰) कुलीन और सती स्त्री।—नाश—(पुं॰) खानदान का नाश या बरबादी। [कुलं भूमिलग्नम् न अश्नाति, कुल—नञ्√अश्+अच्] ऊँट।— परम्परा—(स्त्री॰) वंशावली।—पति— (पुं॰) १० हजार शिष्यों का भरण-पोषण कर, उनको पढ़ाने वाला ब्रह्मर्षि; 'मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्। अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः'॥—पांसुका—(स्त्री॰) कुलटा स्त्री।—पालि,—पालिका,—पाली—(स्त्री॰) सती या कुलीन स्त्री।—पुत्र-(पुं॰) उत्तम कुल में उत्पन्न लड़का।—पुरुष—(पुं॰) कुलीन, पुरुष, खानदानी आदमी। पुरखा, बुजुर्ग।—पूर्वग—(पुं॰) पुरखा, बुजुर्ग।—भार्या—(स्त्री॰) पतिव्रता या सती स्त्री।—भृत्या—(स्त्री॰) गर्भवती स्त्री की परिचर्या।—मर्यादा-(स्त्री॰) कुल की प्रतिष्ठा, खानदानी इज्जत।—मार्ग—(पुं॰) खानदानी रस्म।—योषित्,—वधू—(स्त्री॰) कुलीन और अच्छे आचरण वाली स्त्री।—वार—(पुं॰) मुख्य दिवस अर्थात् मंगलवार और शुक्रवार।—विद्या—(स्त्री॰) वह ज्ञान जो किसी घर में परम्परा से प्राप्त होता आया हो।—विप्र—(पुं॰) पुरोहित।—वृद्ध—(पुं॰) कुल का वृद्ध और अनुभवी पुरुष।—व्रत—(न॰) खानदानी व्रत।—श्रेष्ठिन्—(पुं॰) किसी वंश का प्रधान। कुलीन घराने का कारीगर।—संख्या—(स्त्री॰) खानदानी इज्जत। सम्मानित घरानों में गणना।—सन्तति—(स्त्री॰) आल-औलाद।—सम्भव—(वि॰) कुलीन घराने का।—सेवक—(पुं॰) खानदानी या उत्कृष्ट नौकर।—स्त्री-(स्त्री॰) अच्छे घराने की औरत, नेकऔरत; 'अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः' भग॰ १.४१। —स्थिति- स्त्री॰) वंश की प्राचीनता या समृद्धि।

कुलक—(वि॰) [√कुल्+अच्+कन्] कुलीन। (पुं॰) किसी जत्थे का मुखिया, किसी थोक का प्रधान। किसी प्रसिद्ध घराने का कला-कोविद। बाँबी। (न॰) समूह, समुदाय। ऐसे ५ से १५ तक के श्लोकों का समूह जो एक वाक्य बनाते हों या एकान्वयी हों।

कुलटा—(स्त्री॰) [कुल√अट्+अच्—टाप्, शक॰ पररूप] छिनाल औरत, व्यभिचारिणी स्त्री।—पति—(पुं॰) कुटना, मछन्दर।

कुलतः—(अव्य॰) [कुल+तस्] जन्म से।

कुलत्थ—(पुं॰) [कुल√स्था+क, पृषो॰ साधुः] कुलथी, एक प्रकार का अनाज।

कुलन्धर—(वि॰) [कुल√धृ+खच्, मुम्] अपने कुल या वंश को स्थिर रखने वाला।

कुलम्भर—(पुं॰) [कुल √ भृ + खच्, मुम्] चोर।

कुलवत्—(वि॰) [कुल+मतुप्] कुलीन, खानदानी।

कुलाय—(पुं॰न॰) [कुलं पक्षिसमूहः अयतेऽत्र, कुल √ अय् + घञ्] पक्षी का घोंसला; 'कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कूले कुलायद्रुमाः' उत्त॰ २.९। स्थान, जगह। जाला, बुना हुआ वस्त्र। किसी वस्तु के रखने का घर या खाना, पात्र। [कौ पृथिव्यां लायो लयोऽस्य] शरीर।—निलाय—(पुं॰) घोंसले में बैठना, अंडे सेना।—स्थ— (पुं॰) पक्षी।

कुलायिका—(स्त्री॰) [कुलाय+ठन्—टाप्] चिड़ियाखाना। पिंजड़ा। पक्षियों के बैठने की अटारी।

कुलाल—(पुं॰) [√कुल्+कालन्] कुम्हार। जंगली मुर्गा।

कुलि—(पुं॰) [√कुल्+इन्, कित्] हाथ।

कुलिक—(पुं॰) [कुल+ठन्] शिल्पि-श्रेणी का प्रधान। कुलीन शिल्पी। स्वजन। शिकारी। एक कँटीला पौधा। कुलवार। एक विष। (वि॰) कुलीन।—वेला—(स्त्री॰)

दिन का वह विशेष भाग जिसमें शुभ कार्य करने का निषेध है।
कुलिङ्ग—(पुं०) [कु+लिङ्ग्+अच्] पक्षी। गौरैया। जहरीला चूहा।
कुलिन्—(वि०) [√कुल+इनि] [स्त्री०—कुलिनी] कुलीन। (पुं०) पर्वत, पहाड़।
कुलिन्द—[कुल्+इन्द] पश्चिमोत्तर भारत का एक प्राचीन जनपद। कुलिंद-निवासी।
कुलिर—(पुं०, न०) [√कुल+इरन्, कित्] केकड़ा। कर्कराशि।
कुलिश, कुलीश—(पुं०) [कुलि√शी+ड, पक्षे पृषो० दीर्घ] इंद्र का वज्र। बिजली। हीरा। कुल्हाड़ी। एक तरह की मछली।—**धर,—पाणि**-(पुं०) इंद्र।—**नायक**-(पुं०) स्त्रीमैथुन का आसन-विशेष, एक रतिबन्ध।
कुली—(स्त्री०) [कुलि+ङीप्] बड़ी साली। भटकटैया।
कुलीन—(वि०) [कुल+ख—ईन] अच्छे खानदान का। (पुं०) अच्छी नस्ल का घोड़ा।
कुलीनस—(न०) कुलीनं भूमिलग्नं द्रव्यं स्यति, कुलीन√सो+क] जल।
कुलीर, कुलीरक-(पुं०) [√कुल्+ईरन्, कित्] [कुलीर+कन्] केकड़ा। कर्क राशि।
कुलुक-(न०) [√कुल्+उकच्] जीभ का मैल।
कुलुक्कगुञ्जा-(स्त्री०) [कौ पृथिव्यां लुक्का लुक्कायिता गुञ्जा इव] लुकाठी, अधजली लकड़ी।
कुलूत—(पुं०) पश्चिमोत्तर भारत का एक जनपद।
कुल्माष—(न०) [√कुल्+क्विप्, कुल् माषोऽस्मिन्, ब० स०] काँजी। (पुं०) कुलथी। वन कुलथी। बोरो धान। चना आदि द्विदल। एक रोग।
कुल्य—(वि०) [कुल+य वा यत्] कुल या, वंश-सम्बन्धी। कुलीन पुरुष। (न०) मित्र-भाव से घरेलू बातों के सम्बन्ध में प्रश्न, (समवेदना, सहानुभूति, बधाई आदि)। [√कुल्+क्यप्] हड्डी। मांस। सूप।
कुल्या—(स्त्री०) [√कुल्+क्यप्—टाप्] सती स्त्री। नहर, नाला, छोटी नदी; 'कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः' श० १.१५। गढ़ा, गर्त, खाई। अनाज की तौल-विशेष, जो ८ द्रोण के बराबर होती है।
कुव—(न०) [कु√वा+क] फूल। कमल।
कुवल—(न०) [कु√वल्+अच्] कुई। मोती। जल।
कुवलय—(न०) [कोः पृथिव्याः वलयमिव, उपमित स०] कुई। नीली कुई। नील कमल। [कोः वलयम्, ष० त०] भूमण्डल।
कुवलयिनी—(स्त्री०) [कुवलय+इनि—ङीप्] नीली कुई का पौधा। नीली कुई के फूलों का समूह।
कुवाद—(वि०) [कु√वद्+अण्] निन्दक, दोष ढूँढ़ने वाला। नीच, कमीना, दुष्ट।
कुविक—(पुं०) एक देश का नाम।
कुविन्द, कुपिन्द—(पुं०) [कु √ विद्+श] [√कुप्+किन्दच्] जुलाहा, कोरी। कोरी की जाति का नाम।
कुवेणी—(स्त्री०) [कु√वेण्+इन्—ङीप्] पकड़ी हुई मछलियों को रखने की टोकरी। [कुत्सिता वेणी, कु० स०] बुरी बँधी हुई सिर की चोटी।
कुवेल—(न०) [कुवेषु जलजपुष्पेषु ईः शोभा लाति, कुव—ई√ला+क] कमल।
कुश—(वि०) [कु√शी+ड] पापी। मतवाला। (न०) जल। (पुं०) कड़ी और नुकीली पत्तियों वाली एक घास जो यज्ञ, पूजन आदि धार्मिक कृत्यों की आवश्यक सामग्री है, दर्भ। श्री रामचन्द्र जी के ज्येष्ठ पुत्र। द्वीप-विशेष।—**अग्र**-(कुशाग्र)-(वि०) कुश की नोक जैसा तीक्ष्ण, तेज।—**बुद्धि**-(वि०) पैनी, तीक्ष्ण बुद्धि वाला; 'कुशाग्रबुद्धे! कुशली गुरुस्ते' र० ५.४।०—**अरणि** (कुशा-

रणि)–(पुं०) [कुशं शापदानार्थं जलम् अरणिरिवास्य] दुर्वासा । —कण्डिका–(स्त्री०) वेदी पर या कुंड में अग्नि-स्थापन की क्रिया ।—स्थल–(न०) [कुशप्रधानं स्थलम्, मध्य स०] कन्नौज ।—स्थली–(स्त्री०) द्वारका ।—हस्त–(वि०) दान, श्राद्ध आदि करने को उद्यत ।

कुशल––(न०) [√कुश्+कलन्] कल्याण, मंगल । गुण, धर्म । चतुरता, निपुणता । (वि०) [कुशल+अच्] ठीक, उचित । प्रसन्न । निपुण, पटु ।—**काम**–(वि०) सुख-प्राप्ति का अभिलाषी ।—**प्रश्न**–(पुं०) राजी-खुशी पूछना ।—**बुद्धि**–(वि०) बुद्धिमान् । कुशाग्रबुद्धि, प्रतिभाशाली ।

कुशलिन्––(वि०) [कुशल+इनि] [स्त्री०–कुशलिनी] प्रसन्न । अच्छी दशा में । भरा-पूरा ।

कुशा––(स्त्री०) [कुश+टाप्] रस्सी । लगाम ।

कुशावती––(स्त्री०) [कुश+मतुप, मस्य वः, दीर्घः] श्रीरामचन्द्र जी के पुत्र कुश की राजधानी का नाम ।

कुशिक––(वि०) [कुश+ठन्] ऐंचा-ताना । (पुं०) विश्वामित्र के पिता का नाम । हल की फाल । तेल की तलछट । बहेड़ा । धूने का पेड़ ।

कुशी––(स्त्री०) [कुश+ङीष्] हल की फाल ।

कुशीलव––(पुं०) [कुत्सितं शीलमस्य, कुशील+व] भाट, चारण । गवैया । अभिनय या नाटक का पात्र बनने वाला ; 'तत्किमिति नारम्भयसि कुशीलवैः सह संगीतकं' वे० १ । नट, नर्तक । खबर फैलाने वाला । वाल्मीकि की उपाधि ।

कुशुम्भ––(पुं०) [कु√शुम्भ्+अच्] संन्यासी का जलपात्र, कमण्डलु ।

कुशूल––(पुं०) [√कुस्+ऊलच्, पृषो० सस्य शत्वम्] अन्न भरने का कोठार, भण्डारी । धान की भूसी की आग ।

कुशेशय––(न०) [कुशे√शी+अच्, अलुक् स०] कमल; 'भूयात्कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याः पन्थाः' श० ४.१० । (पुं०) सारस । कनेर का पेड़ ।

√कुष्––क्र्या० पर० फाड़ना । खींच कर निकालना । खींचना । परीक्षा करना, जाँचना, पड़तालना । अक० चमकना । कुष्णाति, कोषिष्यति, अकोषीत् ।

कषल––(वि०) [√कुष् + कलच्] होशियार ।

कुषाकु––(पुं०) [√कुष्+काकु] सूर्य । अग्नि । बन्दर ।

कुषित––(वि०) [√कुष्+क्त] जल-मिश्रित, जिसमें पानी मिला हो ।

कुष्ठ––(पुं०, न०) [√ कुष्+क्थन्] कोढ़ रोग ।—**अरि** (**कुष्ठारि**)–(पुं०) गन्धक। कत्था । परवल । कितने ही पौधों का नाम ।—**केतु**–(पुं०) खेखसा का साग ।—**गन्धिनी**–(स्त्री०) अशगन्ध ।

कुष्ठिन्––(वि०) [कुष्ठ+इनि] [स्त्री०-कुष्ठिनी] कोढ़ी ।

कुष्माण्ड––(पुं०) [कु ईषत् उष्मा अण्डेषु बीजेषु यस्य, ब० स०, शक० पररूप] कुम्हड़ा । झूठा गर्भ । शिव का एक गण ।

कुष्माण्डक––(पुं०) [कुष्माण्ड+कन्] कुम्हड़ा ।

√कुस्––दि० पर० सक० आलिङ्गन करना । घरना । कुस्यति, कोसिष्यति, अकुसत्––अकोसीत् ।

कुसित––(पुं०) [√कुस्+क्त] आबाद देश । ब्याज या सूद पर निर्वाह करने वाला ।

कुसीद––(न०) [√कुस्+ईद] कर्जा जो सूद सहित अदा किया जाय । रुपये उधार देना । व्याजखोरी, व्याज का धंधा । (वि०) काहिल ।—**जीविन्**–(पुं०) महाजनी करने

वाला। सूदखोर।—पथ–(पुं०) सूदखोरी। व्याज, सूद। ५ सैंकड़े से अधिक भाव का सूद।—वृद्धि–(स्त्री०) रुपयों पर व्याज।

कुसीदा—(स्त्री०) [कुसीद+टाप्] व्याज-खोर स्त्री।

कुसीदायी—(स्त्री०) [कुसीद+ङीप्, ऐ आदेश] व्याजखोर की पत्नी।

कुसीदिक, कुसीदिन्—(पुं०), [कुसीद+ष्ठन्] [कुसीद+इनि] व्याजखोर, सूद खाने वाला।

कुसुम—(न०) [√कुस्+उम] फूल। रजो-दर्शन। फल।—**अञ्जन** (**कुसुमाञ्जन**) (न०) पीतल की भस्म जो अञ्जन की जगह इस्तेमाल की जाती है।—**अञ्जलि** (**कुसु-माञ्जलि**)–(पुं०) फूलों से भरी अंजलि, पुष्पाञ्जलि।—**अधिप** (**कुसुमाधिप**),—**अधिराज** (**कुसुमाधिराज**)– (पुं०) चम्पा का पेड़।—**अवचाय** (**कुसुमाव-चाय**)–(पुं०) फूल एकत्र करना।—**अवतं-सक** (**कुसुमावतंसक**)–(न०) सेहरा, सरपेच, हार।—**अस्त्र** (**कुसुमास्त्र**),—**आयुध** (**कुसुमायुध**),—**इषु** (**कुसुमेषु**),—**बाण**,—**शर**–(पुं०) कुसुम बाण, पुष्पशर, फूल का तीर। कामदेव का नाम।—**आकर** (**कुसुमाकर**)–(पुं०) बाग, बगीचा, पुष्पो-द्यान। गुलदस्ता। वसन्त ऋतु।—**आत्मक** (**कुसुमात्मक**)–(न०) केसर, जाफरान।—**आसव** (**कुसुमासव**)–(न०) शहद, मधु। मदिरा-विशेष।—**उज्ज्वल** (**कुसुमोज्वल**)–(वि०) पुष्पों से प्रकाशित।—**कार्मुक**,—**चाप**,—**धन्वन्**-(पुं०) कामदेव।—**चित**–(वि०) पुष्पों के ढेर का।—**पुर**–(न०) पटना, पाटलिपुत्र; 'कुसुमपुराभियोगं प्रत्य-नुदासीनो राक्षसः' मुद्रा० २।—**लता**–(स्त्री०) फूली हुई बेल।—**शयन**–(न०) फूलों की सेज।—**स्तवक**–(पुं०) गुलदस्ता।

कुसुमवती—(स्त्री०) [कुसुम+मतुप्—ङीप्, मस्य वः] रजस्वला स्त्री।

कुसुमित—(वि०) [कुसुम+इतच्] फूला हुआ, पुष्पित।

कुसुमाल—(पुं०) [कुसुमवत् लोभनीयानि द्रव्याणि आलाति, कुसुम—आ√ला+क] चोर।

कुसुम्भ—(पुं०,न०) [√कुस्+उम्भ] कुसुंभ। केसर। संन्यासी का जलपात्र। (पुं०) दिखा-वटी स्नेह। (न०) सुवर्ण, सोना।

कुसूल—(पुं०) [√कुस्+ऊलच्] खत्ती, खों, अन्न का भाण्डार-गृह।

कुसृति—(स्त्री०) [कुत्सिता सृतिः उपायो व्यवहारो वा, कु० स०] छल। जाल, कपट। धोखा, प्रवञ्चना।

कुस्तुभ—(पुं०) [कु√स्तुन्भ्+क] विष्णु। समुद्र।

√**कुह्**—चु० आत्म० सक० आश्चर्यित करना। कुहयते, अचूकुहत।

कुह—(अव्य०) [किम्+ह, किमः कु आदेशः] कहाँ। किस स्थान पर। (पुं०) [√कुह् + णिच्+अच्] कुबेर। छलिया। बड़े बेर का पेड़। नील कमल।

कुहक—(वि०) [√कुह्+क्वुन्] ठग, वंचक। ऐन्द्रजालिक। (पुं०) मेढक। ग्रन्थि-पर्ण वृक्ष। (न०) जालसाजी। इन्द्रजाल।—**कार**–(वि०) ऐन्द्रजालिक। जालसाज। छलिया।—**चकित**–(वि०) इन्द्रजाल विद्या के प्रभाव से विस्मित। संशयात्मा, शक्की। धोखे से डरा हुआ।—**स्वन**,—**स्वर**–(पुं०) मुर्गा।

कुहका—(स्त्री०) [कुहक+टाप्] इंद्र-जाल। धोखेबाजी।

कुहन—(पुं०) [कु√हन्+अच्] चूहा, मूसा। साँप। (न०) [कु√हन्+अप्] छोटा मिट्टी का पात्र। शीशे का पात्र।

कुहना, कुहनिका—(स्त्री०) [√कुह्+युच्] [कुहन+क—टाप्, इत्व] दंभ।

कुहर—(न०) [√कुह्+क, कुहं राति, कुह

√ रा+क] रन्ध्र, छिद्र। गुफा। बिल। कान। गला। सामीप्य। मैथुन, समागम।

कुहरित--(न०) [कुहर+णिच्+क्त] आवाज। कोकिल की कूक। मैथुन के समय की सिसकारी।

कुहु, कुहू--(स्त्री०) [√कुह्+कु] [कुहु+ऊङ] अमावस्या, अमावस। इस तिथि का देवता। कोकिल की कूक; 'पिकेन रोषारुण-चक्षुषा मुहुः कुहूरुताहूयत चन्द्रवैरिणी' नैष० १.१०० । --**कण्ठ,**--**मुख,**- **रव,**--**शब्द**-(पुं०) कोयल।

√**कू**--क्र्या० उभ० अक० शब्द करना, शोर करना। दुःख में चिल्लाना, कहरना। कुनाति-कुनीते, कविष्यति-ते, अकवीत्-अकविष्ट।

कू--(स्त्री०)[√कू+क्विप्]चुड़ैल,दुष्टा स्त्री।

कूच--(पुं०) [√कू+चट्] चूची, विशेष कर युवती अथवा अविवाहिता स्त्री की।

कूचिका, कूची--(स्त्री०) [कूच+कन्-टाप्, इत्व] [कूच+ङीष्] कूँची। ताली।

√**कूज्**-भ्वा०पर०अक० भिनभिनाना, गुञ्जार करना, कूजना। कूजति, कूजिष्यति, अकूजीत्।

कूज--(पुं०), **कजन**--(न०),**कूजित**-(न०) [√कूज्+अच्] [√कूज्+ल्युट्] [कूज्+क्त] कूक, चहचहाहट। पहियों की खड़खड़ाहट या चूं-चाँ।

कुट्--चु० पर० सक० कू० जलाना। पीडित करना। मन्त्रणा देना; 'आत्म० छिपाना, छमरूप देना। कूटयति-ते।

कूट--(वि०)[√कूट्+अच्]मिथ्या। अचल, दृढ़। (पुं० न०) कपट, छल, माया, धोखा। चालाकी, जालसाजी। विषम प्रश्न, परेशान करने वाला सवाल। क्लिष्ट रचना। झूठ, मिथ्या। पर्वत की चोटी या शिखर, 'वर्धयन्निव तत्कटानुद्धतैर्धातुरेणुभिः' र० ४.७१। निकास, ऊँचाई, उभाड़। माथे की हड्डी। शिखा। सींग। कोना। छोर। प्रधान, मुख्य। ढेर, राशि। हथौड़ा, घन। हल की फाल, कुशी। हिरन फँसाने की जाल। गुप्ती। कलसा, घड़ा। (पुं०) घर, आवास-स्थल। अगस्त्य का नाम। --**अक्ष** (**कूटाक्ष**)-(पुं०) सीसा या पारा भरा हुआ पासा जो फेंकने पर किसी खास बल से ही चित हो। झूठा पासा। --**आगार** (**कूटागार**)-(न०) अटारी, अटा। --**अर्थ** (**कूटार्थ**)-(पुं०) सन्दिग्ध अर्थ। --**उपाय** (**कूटोपाय**)-(पुं०) जाल-साजी, ठगविद्या। --**कार**-(पुं०) जालसाज, ठग। झूठा गवाह। --**कृत्**-(वि०) जाली दस्तावेज बनाने वाला। घूस देने वाला। (पुं०) कायस्थ। शिव का नाम। --**खड्ग**-(पुं०) गुप्ती (तलवार)। --**छद्मन्**-(पुं०) कपटी, छलिया, ठग। --**तुला**-(स्त्री०) झूठी तराजू। --**धर्म**-(वि०) मिथ्या भाषण जहाँ कर्त्तव्य समझा जाय। --**पाकल**-(पुं०) हाथी का वातज्वर। --**पालक**-(पुं०) कुम्हार। कुम्हार का आँवा। --**पाश,**--**बन्ध**-(पुं०) फंदा, जाल। --**मान**-(न०) झूठी तौल। --**मोहन**-(पुं०) स्कन्द की उपाधि। --**यन्त्र**-(न०) फंदा, जाल, जिसमें पक्षी या हिरन फँसाये जाते हैं। --**युद्ध**-(न०) धोखे-धड़ी का युद्ध। --**शाल्मलि**-(पुं०, स्त्री०) काला शाल्मलि। नरक में दण्ड देने का यन्त्र-विशेष या यमराज की गदा। --**शासन**-(न०) बनावटी आज्ञापत्र, फरमान। --**साक्षिन्**-(पुं०) झूठा गवाह। --**स्थ**-(वि०) शिखर या चोटी पर अवस्थित या खड़ा हुआ। सर्वोच्च पद पर अधिष्ठित। सर्वोपरि। (पुं०) परमात्मा। आकाशादि तत्त्व। व्याघ्रनख नामक सुगन्ध द्रव्य विशेष। --**स्वर्ण**-(न०) बनावटी या झूठा सोना; मुलम्मा।

कूटक--(न०) [कूट+कन्] छल, धोखा। श्रेष्ठत्व। उन्नयन। हल की नोक, कुशी। -**आख्यान** (**कूटकाख्यान**)-(न०) बनावटी कहानी।

कूटशः--(अव्य०) [कूट+शस्] ढेर में, समूह में।

√कूण्—चु० आत्म० सक० बोलना, बातचीत करना। सिकोड़ना, बंद करना। कूणयते। (अदन्त कूण धातु परस्मैपदी है।)

कूणिका—(स्त्री०) [√कूण्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] सींग। वीणा की खूँटी।

कूणित—(वि०) [√कूण्+क्त] बंद, मुँदा हुआ।

कूदर—(पुं०) [कु-उदर ब० स०] पतित ब्राह्मण।

कूद्दाल—(पुं०) [कु√दल्+अण्, पृषो० साधुः] पहाड़ी आबनूस।

कूप—(पुं०) [√ कु+प, दीर्घ] कुआँ, इनारा। छेद, रन्ध्र। बिल। कुप्पी, कुप्पा। मस्तूल; 'क्षोणीनौकूपदण्डः' दश०।—**अङ्क (कूपाङ्क),—अङ्ग (कूपाङ्ग)**—(पुं०) रोमाञ्च, रोंगटे खड़े होना।—**कच्छप—मण्डूक**—(पुं०) कुएँ का कच्छप या मेढक। (आलं०) अनुभवशून्य मनुष्य।—**यन्त्र**—(न०) पानी निकालने का रहट।

कूपक—(पुं०) [कूप+कन्] अस्थायी या कच्चा कुआँ। गुफा। जाँघों के बीच का स्थान। जहाज का मस्तूल। चिता। चिता के नीचे के रन्ध्र। कुप्पी, कुप्पा। नदी के बीच की चट्टान या वृक्ष।

कूपार, कूवार—(पुं०) [कुत्सितः पारः तरणम्, अस्मिन् ब० स०] [कु√वृ+अण्, पृषो० दीर्घ] समुद्र।

कूपी—(स्त्री०) [कूप+ङीष्] कुइयाँ, छोटा कूप। बोतल, करावा। नाभि।

कूबर, कूवर—(वि०) [√कु+ब (व) रच्] [स्त्री०—**कूबरी, कूवरी**] सुन्दर, मनोहर। कुबड़ा। (पुं०) वह बाँस जिसमें जुए को फँसाते हैं। कुबड़ा आदमी।

कूबरी, कूवरी—(स्त्री०) [कूब (व) र + ङीष्] कंबल या कपड़े से ढकी गाड़ी। वह बाँस या लंबी लकड़ी जिसमें जुआ लगाया जाता है।

कूर—(न० पुं०) [√वे+क्विप्—ऊः, कौ भूमौ उवं वयनं लाति, √ला+कः, लस्य रः] भोजन। भात।

कूर्च—(पुं०, न०) [√कुर्+चट्, नि० दीर्घ] मूठा, पूला। मुट्ठी भर कुश। मोरपंख। दाढ़ी; 'लम्बकूर्चानां तापसानां कदम्बैः' श०.६ चुटकी। दोनों भौहों का मध्यभाग। कूँची। जाल, छल, कपट। डींग मारना, अकड़ना। दम्भ, ढोंग। (पुं०) सिर। भण्डारी।—**शीर्ष,—शेखर**—(पुं०) नारियल का वृक्ष।

कूर्चिका—(स्त्री०) [कूर्चक+टाप्, इत्व] चित्र लिखने की कूँची। कुंजी, ताली। कली, फूल। दुग्धविकार। सुई।

कूर्दन—(न०) [√कुर्द्+ल्युट्, दीर्घ] छलाँग। खेल, क्रीडा।

कूर्दनी—(स्त्री०) [कूर्दन+ङीष्] चैत्री पूर्णिमा को कामदेव सम्बन्धी उत्सव-विशेष। चैत्री पूर्णिमा।

कूर्प—(पुं०) [कुर्√पा+क, दीर्घ] दोनों भौहों के बीच का स्थान।

कूर्पर—(पुं०) दे० 'कुर्पर'।

कूर्म—(पुं०) [कु ईषत् ऊर्मिः वेगो यस्य, पृषो० साधुः] कछुवा। कच्छपावतार।—**अवतार (कूर्मावतार)**—(पुं०) विष्णु भगवान् का कच्छपावतार।—**पृष्ठ,—पृष्ठक**—(न०) कछुवे की पीठ। ढकना।—**राज**—(पुं०) विष्णु भगवान् अपने दूसरे अवतार के रूप में।

√कूल्—भ्वा० पर० सक० ढाँकना। कूलति, कूलिष्यति, अकूलीत्।

कूल—(न०) [√कूल्+अच्] नदी आदि का किनारा। ढाल, उतार। अंचल, छोर। सामीप्य। तालाब। सेना का पिछला भाग। ढेर, टीला।—**चर**—(वि०) नदीतट पर चरने वाला या रहने वाला।—**भू**—(स्त्री०)

तट की भूमि ।—हुण्डक,—हुण्डक-(पुं०) जलभँवर ।

कूलङ्कष—(पुं०) [कूल√कष्+खच्, मुम्] किनारे को छूने वाला, किनारे से टकराने वाला ।

कूलङ्कषा—(स्त्री०) [कूलङ्कष+टाप्] नदी, सरिता ।

कूलन्धय—(वि०) [कूल√धे+खश्, मुम्] किनारे को छूने वाला ।

कूलमुद्रुज—(वि०) [कूल—उद्√रुज्+खश्, मुम्] तट ढहाने वाला ।

कूलमुद्वह—(वि०) [कूल—उद्√वह्+खश्, मुम्] नदीतट को ढहाने वाला, ले जाने वाला ।

कूष्माण्ड—(पुं०) [कु ईषत् ऊष्मा अण्डेषु वीजेषु यस्य] कुम्हड़ा ।

कूहा—(स्त्री०) [कु ईषत् ऊह्यतेऽत्र, कु√-ऊह्+क] कुहासा, कुहरा ।

√**कृ**—स्वा० उभ० सक० हिंसा करना । कृणोति—कृणुते, करिष्यति—ते, अकार्षीत्—अकृत । त० उभ० सक० करना । करोति—कुरुते, करिष्यति—ते, अकार्षीत् —अकृत ।

कृक—(पुं०) [√कृ+कक्] गला ।

कृकण, कृकर—(पुं०) [कृ√कण्+अच्] [कृ√कृ+ट] तीतर ।

कृकलास, कृकुलास—(पुं०) [कृक√लस्+अण्] [कृकलास पृषो० साधुः] छिपकली, गिरगट ।

कृकवाकु—(पुं०) [कृक√वच्+ञुण्, क आदेश] मुर्गा । मोर । छिपकली, विस्तुइया । —**ध्वज**-(पुं०) कार्त्तिकेय की उपाधि ।

कृकाटिका—(स्त्री०) [कृक√ अट्+अण्—कृकाट+कन्—टाप्, इत्व] गरदन का उठा हुआ भाग । गरदन का पिछला भाग, घट्टी ।

कृच्छ्र—(वि०) [√कृन्त्+रक्, छकार आदेश] कष्टकर, पीड़ाकारी । बुरा, दुष्ट । पापी । सङ्कट में फँसा हुआ । (पुं०, न०) कठिनाई । कष्ट, पीड़ा; 'लब्धं कृच्छ्रेण रक्ष्यते' हि० । सङ्कट, विपत्ति । तप । प्रायश्चित्त । पाप । मूत्रकृच्छ्र रोग ।—**अतिकृच्छ्र** (कृच्छ्रातिकृच्छ्र) (न०) एक तरह का व्रत जसमें बारह दिन उपवास करना पड़ता है ।—**प्राण**-(वि०) जिसके प्राण सङ्कट में हों । कष्टपूर्वक साँस लेने वाला । कठिनाई से जीवन निर्वाह करने वाला ।—**साध्य**-(वि०) (रोगी) जो कठिनाई से अच्छा हो सके । कठिनाई से पूर्ण करने योग्य ।

√**कृत्**—तु० पर० सक० काटना । कृन्तति, कर्तिष्यति-कर्त्स्यति, अकर्तीत् । रु० पर० सक० घेरना । लपेटना । कृणत्ति, कर्तिष्यति —कर्त्स्यति, अकर्तीत् ।

कृत—(वि०) [√कृ+क्त] किया हुआ । बनाया हुआ । पकाया हुआ । (न०) कर्म, कार्य, क्रिया । सेवा । परिणाम, फल । उद्देश्य, प्रयोजन । पासे का वह पहल जिस पर ४ बिंदु बने हों । चार युगों में से प्रथम युग जिसमें मनुष्यों के १,२८०,०० वर्ष होते हैं (मनु० अ० १ श्लो० ६९ और इस पर कुल्लूकभट्ट की व्याख्या द्र०)। किन्तु महाभारत के अनुसार कृतयुग में मनुष्यों के ४८०० वर्षों के ऊपर वर्ष होते हैं । चार की संख्या ।—**अकृत** (**कृताकृत**)-(वि०) किया और अनकिया अर्थात् अधूरा ।—**अङ्क** (**कृताङ्क**)-(वि०) चिह्नित, दागा हुआ । गिनती किया हुआ । (पुं०) पासे का वह पहल जिसपर चार बिंदकी बनी हों ।—**अञ्जलि** (**कृताञ्जलि**)-(वि०) हाथ जोड़े हुए ।—**अनुकर** (**कृतानुकर**)-(वि०) किये हुये कार्य की नकल करने वाला । —**अनुसार** (**कृतानुसार**)-(पुं०) नियत अभ्यास । रीति, रस्म ।—**अन्त** (**कृतान्त**)-(पुं०) यमराज । प्रारब्ध, किस्मत; 'क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमं नौ कृतान्तः' मे० १०५ । सिद्धान्त । पापकर्म, दुष्टकर्म । शनिग्रह । शनिवार ।—०**जनक**-(पुं०) सूर्य ।—**अन्न** (**कृतान्न**)-(न०) पकाया हुआ खाना ।

पचा हुआ अन्न। विष्ठा।—**अपराध** (**कृतापराध**)-(वि०) कसूरवार, अपराधी, दोषी। —**अभय** (**कृताभय**)-(वि०) किसी सङ्कट या भय से बचाया हुआ।—**अभिषेक** (**कृताभिषेक**)-(वि०) राजगद्दी पर बैठाया हुआ, राजतिलक किया हुआ।—**अभ्यास** (**कृताभ्यास**)-(वि०) अभ्यस्त।—**अर्थ** (**कृतार्थ**)-(वि०) सफल। सन्तुष्ट, प्रसन्न। चतुर।—**अवधान** (**कृतावधान**)-(वि०) होशियार, सावधान।—**अवधि** (**कृतावधि**)-(वि०) निर्धारित, नियत। सीमाबद्ध, मर्यादित। —**अवस्थ** (**कृतावस्थ**)-(वि०) बुलाया हुआ। स्थिर। —**अस्त्र** (**कृतास्त्र**)-(वि०) हथियारबंद। अस्त्रविद्या में निपुण। —**आगम** (**कृतागम**) -(वि०) योग्य, कुशल। (पुं०) परमात्मा। —**आत्मन्** (**कृतात्मन्**)-(वि०) इन्द्रियजित्, संयमी। पवित्र मन वाला।—**आभरण** (**कृताभरण**) -(वि०) भूषित, सजा हुआ।—**आयास** (**कृतायास**)-(वि०) जिसने परिश्रम किया हो। पीड़ित।—**आह्वान** (**कृताह्वान**)-(वि०) ललकारा हुआ, चुनौती दिया हुआ। —**उद्वाह** (**कृतोद्वाह**)-(वि०) विवाहित। ऊपर को बाहें उठाकर तप करने वाला।—**उपकार** (**कृतोपकार**)-(वि०) जिसका उपकार किया गया हो, अनुगृहीत। —**कर्मन्**-(वि०) जो अपना काम कर चुका हो। चतुर, निपुण। (पुं०) परमात्मा। संन्यासी।—**काम**-(वि०) वह जिसकी कामनाएँ पूरी हो चुकी हों।—**काल**-(वि०) निश्चित समय का। वह जिसने कुछ काल तक प्रतीक्षा की हो। (पुं०) निश्चित समय। —**कृत्य**-(वि०) वह जिसकी उद्देश्य-सिद्धि हो चुकी हो। सन्तुष्ट, अघाया हुआ। कर्त्तव्य पालन किये हुए।—**क्रय**-(पुं०) खरीदार, गाहक।—**क्षण**-(वि०) घड़ी भर बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करने वाला। अवसर-प्राप्त।—**घ्न**-(वि०) नेकी, उपकार न मानने वाला, एहसान-फरामोश।—**चूड**-(पुं०) वह बालक जिसका चूड़ाकरण संस्कार हो चुका हो।—**ज्ञ**(वि०) नेकी, उपकार मानने वाला, मशकूर। (पुं०) कुत्ता।—**तीर्थ**-(वि०) जो सब तीर्थ कर आया हो। जो किसी अध्यापक के पास अध्ययन करता हो। उपायों को अच्छी तरह जानने वाला। पथप्रदर्शक।—**दास**-(पुं०) नियत काल के लिये किसी का दासत्व या नौकरी करने वाला, पन्द्रह प्रकार के दासों में से एक।—**धी**-(वि०) स्थिरचित्त। कृतसंकल्प। शिक्षित। —**निर्णेजन**-(वि०) धोया हुआ। धो डालने वाला। पाप-मुक्ति के लिये प्रायश्चित्त कर चुकने वाला।—**निश्चय**-(वि०) जिसने किसी बात का पक्का इरादा, निश्चय कर लिया हो।—**पुङ्ख**-(वि०) धनुर्विद्या में निपुण।—**पूर्व**-(वि०) पहले किया हुआ।—**प्रतिकृत**-(न०) प्रत्याक्रमण और बचाव।—**प्रतिज्ञ**-(वि०) वह जो किसी के साथ कोई प्रतिज्ञा या ठहराव कर चुका हो। अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण किये हुए।—**बुद्धि**-(वि०) दे० 'कृतधी'।—**मुख**-(वि०) शिक्षित, विद्वान्।—**युग**-(न०) सत्ययुग।—**लक्षण**-(वि०) चिह्नित। दागा हुआ। अपने गुणों से प्रसिद्ध। छट्टा, बीना हुआ। निरूपित।—**वर्मन्**-(पुं०) कौरव पक्षीय एक योद्धा जो सात्यकि द्वारा मारा गया था।—**विद्य**-(वि०) शिक्षित, विद्वान्; 'शूरोऽसि कृतविद्योऽसि' पुं० ४। —**वेतन**-(वि०) भाड़े का, वेतनभोगी। —**वेदिन्**-(वि०) कृतज्ञ।—**वेश**-(वि०) सजा हुआ, भूषित।—**शोभ**-(वि०) सुन्दर। उत्तम। चतुर, कुशल। —**शौच**-(वि०) पवित्र, शुद्ध।—**श्रम**-(वि०) मिहनत कर चुकने वाला। अधीत, पढ़ा-लिखा।—**सङ्कल्प**-(वि०) निश्चय किया हुआ।—**संज्ञ**-(वि०) सचेत, मूर्च्छा से जागा हुआ।

जागा हुआ ।—सन्नाह–(त्रि०) कवच पहिने हुए ।—सपत्निका–(वि०) वह स्त्री जिसके सौत हो ।—हस्त,—हस्तक–(वि०) निपुण, कुशल । धनुर्विद्या में पटु, अस्त्र-शस्त्र चलाने की विद्या में निपुण ।

कृतक—(वि०) [कृत+कन्] किया हुआ । बनाया हुआ । तैयार किया हुआ । [√कृत्+क्वुन्] कृत्रिम, बनावटी । मिथ्या, झूठा । गोद लिया हुआ (पुत्र) ।

कृतम्—(अव्य०) [√कृत्+कमु (वा०)] पर्याप्त, काफी, अधिक नहीं; 'अथवा कृतं सन्देहेन' श० १ ।

कृति—(स्त्री०) [√कृ+क्तिन्] करतूत । पुरुषार्थ । बीस अक्षर के चरण वाला श्लोक-विशेष । जादू, इन्द्रजाल । चोट । वध । बीस की संख्या ।—**कर**–(पुं०) रावण की उपाधि ।

कृतिन्—(वि०) [कृत+इनि] सन्तुष्ट, अघाया हुआ, अपनी साध पूरी किये हुए । भाग्यवान्, धन्य, कृतकृत्य । चतुर, योग्य, पटु, निपुण । नेक, धर्मात्मा, पवित्र । आज्ञानुसार करने वाला ।

कृते, कृतेन—(अव्य०) लिये, निमित्त, बवजह ।

कृत्ति—(स्त्री०) [√कृत्+क्तिन्] चर्म, चमड़ा । मृगछाला । भोजपत्र । कृत्तिका नक्षत्र ।—**वास,—वासस्**–(पुं०) शिव ।

कृत्तिका—[√कृत्+तिकन्, किच्च] २७ नक्षत्रों में से तीसरा ।—**तनय,—पुत्र,—सुत**–(पुं०) कार्त्तिकेय ।—**भव**–(पुं०) चन्द्रमा ।

कृत्नु—(वि०) [√कृ+क्तु] भलीभाँति करनेवाला । काम करने की योग्यता रखने वाला । चतुर, चालाक । (पुं०) कारीगर, शिल्पी ।

कृत्य—(वि०) [√कृ+क्यप्, तुगागम] वह जो किया जाना चाहिये, उपयुक्त, ठीक । संभव, साध्य । विश्वासघाती । (न०) कर्त्तव्य कर्म । कार्य । अवश्य करणीय कार्य । उद्देश्य, प्रयोजन । (पुं०) "तव्य", "अनीय" "य" और "एलिम" आदि प्रत्यय ।

कृत्या—(स्त्री०) [कृत्य+टाप्] कार्य, क्रिया । जादू, टोना । देवी-विशेष जो मारण कर्म के लिये, विशेष-रूप से बलिदानादि से पूजी जाती है ।

कृत्रिम—(वि०) [√कृ+क्त्रि, मप्] बनावटी, नकली, कल्पित । गोद लिया हुआ ।—**धूप,—धूपक**–(पुं०) राल, लोबान, गूगूल आदि को मिलाने से बनी हुई धूप ।—**पुत्रक**–(पुं०) गुड्डा, गुड़िया, पुतली । (पुं०) १२ प्रकार के पुत्रों में से एक, जो वयस्क हो और अपने जनक-जननी की अनुमति बिना किसी का पुत्र बन बैठा हो । "कृत्रिमः स्यात्स्वयंदत्तः ।" —याज्ञवल्क्य । (न०) एक प्रकार का नमक । एक सुगन्ध-पदार्थ ।

कृत्स—(न०) [√कृत्+स, कित्] जल । समूह । (पुं०) पाप ।

कृत्स्न—(वि०) [√कृत्+क्स्न] संपूर्ण, समूचा । (न०) जल । कुक्षि, पेट ।

कृन्तत्र—(न०) [√कृत्+क्त्रन्, नुमागम] हल ।

कृन्तन—(न०) [√कृत्+ल्युट्] काटना । फाड़ना । नोचना । कुतरना ।

√कृप्—भ्वा० आत्म० लुङ, लुट्, लृट्, लृङ में उभ० सक० कल्पना करना, रचना करना । कल्पते, कल्प्स्यति—कल्पिष्यते—कल्स्यते, अक्लृपत्—अकल्पिष्ट—अक्लृप्त ।

कृप—(पुं०) [√कृप्+अच्] अश्वत्थामा के मामा का नाम, सप्त चिरजीवियों में से एक ।

कृपण—(वि०) [√कृप्+क्युन्] गरीब, दयापात्र, अभागा, साहाय्यहीन । सत्यासत्य-विवेक-शून्य; 'कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्-

चेतनाचेतनेषु, मे० ५। अकर्मण्य, नीच, ओछा, दुष्ट। कंजूस, लालची। (पुं०) कंजूस आदमी। (न०) कंजूसी, दरिद्रता।—**धी,—बुद्धि**—(वि०) छोटे दिल का, नीचमना।—**वत्सल**—(वि०) दीनों पर दया करने वाला, दीनदयालु।

कृपा—(स्त्री०) [√कृप् + अङ—टाप्] रहम, दया, अनुकम्पा।

कृपाण—(पुं०) [कृपा√नुद्+ड] तलवार। छुरी। कटारी।

कृपाणिका—(स्त्री०) [कृपाण+कन्—टाप्, इत्व] खंजर। छुरी।

कृपाणी—(स्त्री०) [कृपाण+ङीप्] कैंची। खाँड़ा। खंजर।

कृपालु—(वि०) [कृपा√ला+डु] दयालु, कृपापूर्ण।

कृपी—(स्त्री०) [कृप+ङीष्] कृपाचार्य की वहिन और द्रोणाचार्य की पत्नी।—**पति**—(पुं०) द्रोणाचार्य।—**सुत**—(पुं०) अश्वत्थामा।

कृपीट—(न०) [√कृप्+कीटन्] जङ्गल, वन। ईंधन। जल। पेट।—**पाल**—(पुं०) पतवार। समुद्र। पवन, हवा।—**योनि**—(पुं०) अग्नि।

कृमि—(पुं०) [√क्रम्+इन्, संप्रसारण] कोड़ा। रोग के कीटाणु। गधा। मकड़ी। लाख। चींटी, कीड़ों से भरा हुआ।—**कोश—कोष**—(पुं०) रेशम के कीड़े का खोल, रेशम का कोया।—**०उत्थ** (**कृमिकोशोत्थ**)—(न०) रेशमी वस्त्र।—**ज,—जग्ध**—(न०) अगर की लकड़ी।—**जा**—(स्त्री०) लाह, लाख।—**जलज,—वारिरुह**—(पुं०) घोंघा, शंख का कोड़ा।—**पर्वत,—शैल**—(पुं०) डेहुर, वाँवी।—**फल**—(पुं०) उदुम्बुर या गूलर का पेड़।—**शङ्ख**—(पुं०) शंख का कोड़ा।—**शुक्ति**—(स्त्री०), घोंघा, सीप। कीड़ा जो इनमें रहे। दोपट्टा शंख।

कृमिण, कृमिल—(वि०) [कृमि+न, णत्व] [कृमि+ल] कीड़ेदार, कीड़ों से पूर्ण।

कृमिला—(स्त्री०) [कृमि√ला+क—टाप्] वहुत वच्चे जनने वाली औरत।

√कृश्—दि० पर० अक० दुवला होना, लटना। क्षीण पड़ना (चन्द्रमा की तरह)। कृश्यति, कर्शिष्यति, अकृशत्।

कृश—(वि०) [√कृश्+क्त, नि० साधुः] पतला, दुवला, लटा। थोड़ा। निर्धन।—**अक्ष** (**कृशाक्ष**)—(पुं०) मकड़ी।—**अङ्ग** (**कृशाङ्ग**)—(वि०) दुवला, लटा।—**अङ्गी** (**कृशाङ्गी**)—(स्त्री०) छरहरे शरीर की स्त्री। प्रियंगु लता।—**उदरी**(**कृशोदरी**)—(वि०) पतली कमरवाली।

कृशर—(पुं०) [कृश√रा+क] तिल-चावल की खिचड़ी। खिचड़ी।

कृशला—(स्त्री०) [कृश√ला+क—टाप्] सिर के वाल।

कृशानु—(पुं०) [√कृश् + आनुक्] आग।—**रेतस्**—(पुं०) शिव की उपाधि।

कृशाश्विन्—(पुं०) [कृशाश्वेन वुन्धुमार-वंश्यनृपतिना प्रोक्तं नाट्यसूत्रादिकम् अधीते वेत्ति वा, कृशाश्व+इनि] नाट्य करने वाला, नाटक का पात्र।

√कृष्—तु० उभ०, भ्वा० पर० सक० खींचना, घसीटना। आकर्षण करना। सेना की तरह परिचालन करना। झुकाना (कमान की तरह)। वशवर्त्ती करना। दवा लेना। जोतना। प्राप्त करना। छीन ले जाना। विमुक्त करना। तु० कृषति—ते, क्रक्ष्यति—ते, कर्क्ष्यति—ते, अक्राक्षीत्—अकार्क्षीत्—अकृक्षत्—अकृष्ट। भ्वा० कर्षति, क्रक्ष्यति—कर्क्ष्यति, अकार्क्षीत—अक्राक्षीत्—अकृक्षत्।

कृषाण, कृषिक—(पुं०) [√कृष्+आनक्

(वा०)] [√कृष्+किकन्] किसान, खतिहर।

कृषि—(स्त्री०) [√कृष्+इन्, कित्] जुताई। खेती, किसानी; 'चीयते वालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः' मु० १।—**कर्मन्**—(न०) खेती।—**जीविन्**—(वि०) खेती करके निर्वाह करनेवाला।—**फल**—(न०) खेती की पैदावार।—**सेवा**—(स्त्री०) किसानी, खतिहरपन।

कृषीवल—(पुं०) [कृषि+वलच्, दीर्घ] किसान, काश्तकार, खेतिहर।

कृष्कर—(पुं०) [कृष√कृ+टक् पृषो० साधुः] शिव।

कृष्ट—(वि०) [√कृष्+क्त] खींचा हुआ, आकृष्ट। जोता हुआ।

कृष्टि—(पुं०) [√कृष्+क्तिच्] विद्वान् व्यक्ति। (स्त्री०) [√कृष्+क्तिन्] खिंचाव, आकर्षण। जुताई।

कृष्ण—(वि०) [√कृष्+नक्+अच्] काला। दुष्ट, वुरा। (न०) [√कृष्+नक्]। कालिख। लोहा। सुरमा। आँख की पुतली। काली मिर्च या गोल मिर्च। सीसा। (पुं०) काला रङ्ग। काला मृग। काक। कोकिल। कृष्णपक्ष, अँधेरा पाख। कलियुग। भगवान् विष्णु का आठवाँ अवतार जो कंसादि दुर्दान्त दैत्यों के नाश के लिये मथुरा में हुआ था और जिनके चरित्रों से भागवतादि पुराण और महाभारतादि इतिहास पूर्ण हैं। महाभारत के रचयिता कृष्ण द्वैपायन व्यास। अर्जुन का नाम। अगर की लकड़ी।—**अगुरु** (**कृष्णागुरु**)—(न०) काला अगर।—**अचल** (**कृष्णाचल**)—(पुं०) रैवतक पहाड़।—**अजिन** (**कृष्णाजिन**)—(न०) काले मृग का चर्म।—**अयस्** (**कृष्णायस्**),—**आमिष** (**कृष्णामिष** (न०) लोहा, कान्तिसार लोहा।—**अध्वन्** (**कृष्णाध्वन्**), **अर्चिस्**—(**कृष्णार्चिस्**)—(पुं०) आग।—**अष्टमी** (**कृष्णाष्टमी**)—(स्त्री०) भाद्र-कृष्ण-अष्टमी जो श्रीकृष्ण के जन्म की तिथि है।—**आवास**—(**कृष्णावास**) (पुं०) अश्वत्थ।—**उदर** (**कृष्णोदर**)—(पुं०) एक प्रकार का सर्प।—**कन्द**—(न०) लाल कमल।—**कर्मन्**—(वि०) पाप कर्म करने वाला, असदाचरणी।—**काक**—(पुं०) जंगली काक या पहाड़ी कौआ।—**काय**—(पुं०) भैंसा।—**कोहल**—(पुं०) जुआरी।—**गति**—(पुं०) आग; 'आयोधने कृष्णगतिं सहायं' र० ६.४२।—**ग्रीव**—(पुं०) शिव।—**तार**—(पुं०) मृग विशेष।—**देह**—(पुं०) भौंरा, भ्रमर।—**धन**—(न०) वुरे ढङ्ग से या वेईमानी करके कमाया हुआ धन।—**द्वैपायन**—(पुं०) व्यास का नाम।—**पक्ष**—(पुं०) अँधियारा पाख, वदी।—**मृग**—(पुं०) काला हिरन।—**मुख**,—**वक्त्र**,—**वदन**—(पुं०) काले मुख का वानर।—**यजुर्वेद**—(पुं०) तैत्तिरीय या कृष्ण यजुर्वेद।—**लोह**—(पुं०) चुम्बक पत्थर।—**वर्ण**—(पुं०) काला रङ्ग। राहुग्रह। शूद्र।—**वर्त्मन्**—(पुं०) अग्नि। राहुग्रह। ओछा आदमी।—**वेणा**—(स्त्री०) कृष्णा नदी का नाम।—**शकुनि**—(पुं०) काक, कौआ।—**सार**—(पुं०) चित्तीदार हिरन।—**शृङ्ग**—(पुं०) भैंसा।—**सख**,—**सारथि**—(पुं०) अर्जुन।

कृष्णक—(न०) [अनुकम्पितं कृष्णाजिनम्, कृष्णाजिन+ कन्, अजिनस्य लोपः] काले हिरन का चमड़ा।

कृष्णल—(न०) घुँघची। (पुं०) [कृष्ण √ला+क] घुँघची का पौधा।

कृष्णा—(स्त्री०) [कृष्ण+टाप्] द्रौपदी। दक्षिण भारत की एक नदी का नाम।

कृष्णिका—(स्त्री०) [कृष्ण+ठन्—टाप्] राई।

कृष्णिमन्—(पुं०) [कृष्ण+इमनिच्] कालापन।

कृष्णी—(स्त्री०) [कृष्ण+ङीष्] अँधियारी रात ।

√**कॄ**—तु० पर० सक० फेंकना । बिखेरना । किरति, करिष्यति—करीष्यति, अकारीत् । क्र्या० उभ० सक० मारना । कृणाति—कृणीते, करिष्यति—ते, —करीष्यति—ते, —अकारीत्—अकरिष्ट—अकरीष्ट—अकीर्ष्ट ।

कॄत्—चु० पर० सक० उल्लेख करना । पुनरावृत्ति करना । उच्चारण करना । कहना । पढ़ना । घोषित करना । सूचना देना । पुकारना । स्तव करना, प्रशंसा करना । कीर्तयति, कीर्तयिष्यति, अचीकृतत्—अचिकीर्तत् ।

क्लृप्त—[√क्लृप+क्त, लत्व] रचित, बनाया हुआ । सजा हुआ हुआ । टुकड़े किया हुआ । उत्पन्न किया हुआ । स्थिर किया हुआ । नियत । आविष्कृत ।—**कीला**–(स्त्री०) किवाला, एक प्रकार की दस्तावेज ।

क्लृप्ति—(स्त्री०) [√क्लृप्+क्तिन्, लत्व] पूर्णता । सफलता । आविष्कार । सुव्यवस्था ।

क्लृप्तिक—(वि०) [क्लृप्त+ठन्] खरीदा हुआ, क्रीत ।

केकय—(पुं०) एक प्राचीन जनपद, आधुनिक कक्का (कश्मीर) । उस देश का निवासी ।

केकर—(वि०) [के मूर्ध्नि नेत्रतारां कर्तुं शीलमस्य, के√कृ+अच्, अलुक् स०] [स्त्री०— **केकरी**] ऐंचाताना, भेंगी आँख वाला । (न०) भेंगी या ऐंची आँख ।

केकल—(वि०) नाचने वाला ।

केका—(स्त्री०) [के√कै+ड, अलुक् स०, टाप्] मोर की बोली ।

केकावल, केकिक, केकिन्—(पुं०) [केका+वलच् (वा०)] [केका+ठन्] [केका+इनि] मोर, मयूर ।

केणिका—(स्त्री०) [के मूर्ध्नि कुत्सितः अणकः (स्त्रीत्वं लोकात्)—टाप्] पटकुटी, खीमा, तंबू, कनात ।

केत—(पुं०) [√कित्+घञ्] मकान । आबादी, बस्ती । झंडा, पताका । सङ्कल्प । मंत्रणा । बुद्धि । निमंत्रण । धन । आकाश । विवेक ।

केतक—(न०) [√कित्+ण्वुल्] केतकी का फूल । (पुं०) । केतकी या केवड़ा । झंडा, पताका ।

केतकी—(स्त्री०) [केतक+ङीष्] एक पुष्पवृक्ष, केवड़ा । केतकी का फूल ।

केतन—(न०) [√कित्+ल्युट्] घर, मकान । आमंत्रण, बुलावा । जगह, स्थान । झंडा, पताका; 'भग्नम्भीमेन मरुता भवतां रथकेतनं, वे० २.२३ । चिह्न । अनिवार्य कर्म ।

केतित—(व०) [केत+इतच्] आमंत्रित, बुलाया हुआ । बसा हुआ ।

केतु—(पुं०) [√चाय्+तु, क्यादेश] झंडा, पताका । प्रधान, मुखिया, नेता । पुच्छलतारा, धूमकेतु । निशान । चमक । किरण । उपग्रह विशेष ।—**ग्रह**–(पुं०) नव ग्रहों के अंतर्गत एक ।—**पताका**–(स्त्री०) वर्षेश निकालने का नौ कोष्ठों का एक चक्र ।—**भ**–(पुं०) बादल ।—**यष्टि**–(स्त्री०) पताका का बाँस ।—**रत्न**–(न०) वैदूर्यमणि, लहसुनिया ।—**वसन**–(न०) कपड़े की पताका ।

केदार—(पुं०) [केन जलेन दारोऽस्य वा के शिरसि दारोऽस्य, व० स०] पानी भरे खेत । चरागाह । थाला, खोडुआ । पर्वत । केदार पर्वत । शिव जी का एक रूप ।—**खण्ड**–(न०) मेंड़, बाँध ।—**नाथ**–(पुं०) शिव का रूप-विशेष ।

केनार—(पुं०) [के मूर्ध्नि नारः, अलुक् स०] सिर, शीश । खोपड़ी । जाल । गाँठ, जोड़ ।

केनिपात—(पुं०) [के जले निपात्यतेऽसौ, के—नि√पत्+णिच्+अच्] पतवार, डाँड़ ।

केन्द्र—(न०) किसी वृत्त के भीतर का वह बिन्दु जिससे परिधि तक खींची हुई सब

रेखायें परस्पर बराबर हों। जन्मपत्र के लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थान। मुख्य स्थान। मध्यस्थल।

√**केप्**—भ्वा० आत्म० अक० काँपना। सक० जाना। केपते, केप्स्यते, अकेप्त।

केयूर—(पुं०, न०) [के बाहुशिरसि याति, के √या+ऊर, कित्, अलुक् स०] बाजूबंद, बिजायठ। एक रतिबंध।

केरल—(पुं०) मलाबार देश और वहाँ के अधिवासी।

केरली—(स्त्री०) [केरल+ङीष्] मलाबार की स्त्री। ज्योतिर्विज्ञान।

√**केल्**—भ्वा० पर० सक० हिलाना। अक० क्रीड़ा करना। केलते, केलिष्यते, अकेलीत्।

केलक—(पुं०) [√केल्+ण्वुल्] नचैया, नाचने वाला।

केलास—(पुं०) [केला विलासः सीदति अस्मिन्, केला√सद्+ड] स्फटिक पत्थर।

केलि—(पुं०, स्त्री०) [√केल्+इन्] खेल, क्रीड़ा। आमोद-प्रमोद। हँसी-मजाक, दिल्लगी। (स्त्री०) धरती।—**कला**—(स्त्री०) रतिकला। सरस्वती देवी की वीणा।—**किल**—(पुं०) विदूषक, मसखरा।—**किलावती**—(स्त्री०) कामदेव की पत्नी रति देवी।—**कीर्ण**—(पुं०) ऊँट।—**कुञ्चिका**—(स्त्री०) छोटी साली।—**कुपित**—(वि०) खेल में क्रुद्ध।—**कोष**—(पुं०), अभिनय पात्र। नचैया।—**गृह,—निकेतन,—मन्दिर—सदन**—(न०) रतिगृह। क्रीड़ागृह। प्रमोद-भवन।—**नागर**—(पुं०) कामासक्त, कामुक, ऐयाश।—**पर**—(वि०) खिलाड़ी, आमोद-प्रमोद-प्रिय।—**मुख**—(पुं०) हँसी। आमोद-प्रमोद।—**वृक्ष**—(पुं०) कदम्ब, वृक्ष-विशेष।—**शयन**—(न०) सेज।—**शुषि**—(स्त्री०) पृथिवी। **सचिव**—(पुं०) कामक्रीड़ा के विषय में सलाह देने वाला, अभिन्न मित्र। खेल-मंत्री।

केलिक—(पुं०) [केलि+ठन्] अशोक वृक्ष।

केली—(स्त्री०) [केलि+ङीप्] खेल, क्रीड़ा। आमोद-प्रमोद।—**पिक**—(पुं०) आमोद के लिये पाली हुई कोयल।—**वनी**—(स्त्री०) प्रमोद-वन।—**शुक**—(पुं०) आमोद के लिये पाला गया तोता।

√**केव्**—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना। केवते, केविष्यते, अकेविष्ट।

केवल—(वि०) [√केव्+कलच्, वा के √वल्+अच्] विशिष्ट, असाधारण। अकेला, मात्र, एकमात्र, बेजोड़। समस्त, समूचा। अनावृत, बिना ढका हुआ। शुद्ध, साफ। अमिश्रित। (अव्य०) सिर्फ, एकमात्र।

केवलतस्—(अव्य०) [केवल+तस्] नितान्तता से। विशुद्धता से।

केवलिन्—(वि०) [केवल+इनि] [स्त्री० —**केवलिनी**] अकेला, सिर्फ, एकमात्र। ब्रह्म के साथ एकत्व के सिद्धान्त पर पूर्ण श्रद्धावान् जैन तीर्थङ्कर की उपाधि।

केश—(पुं०) [क्लिश्यते क्लिश्नाति वा, √क्लिश्+अच्, ललोप] बाल। विशेषकर सिर के केश। घोड़ा या सिंह के गर्दन के बाल, अयाल। किरण। [कस्य ईशः, ष० त०] वरुण। एक सुगन्ध द्रव्य।—**अन्त** (**केशान्त**)—(पुं०) बाल की नोक या सिरा। चूड़ाकरण संस्कार।—**उच्चय** (**केशोच्चय**)—(पुं०) बहुत या सुन्दर बाल।—**कर्मन्**—(पुं०) बालों को सम्हालना या काढ़ना, माँग-पट्टी बनाना।—**कलाप**—(पुं०) बालों का ढेर।—**कीट**—(पुं०) जूँ, बालों में रहने वाले कीट।—**गर्भ**—(पुं०) वेणी, चोटी।—**च्छिद्**—(पुं०) नाई, हज्जाम।—**पक्ष,—पाश—हस्त**—(पुं०) बहुत घने बाल, जुल्फ।—**बन्ध**—(पुं०) बाल बाँधने का फीता।—**भू,—भूमि**—(स्त्री०) सिर या शरीर का अन्य कोई भाग जिस पर केश उगें।—**प्रसाधनी**—(स्त्री०), —**मार्जक,—मार्जन**—

(न०) कंघा, कंघी ।—**रचना**–(स्त्री०) बाल सम्हालना ।—**वेश**–(पुं०) बालों का शृंगार ।

केशट—(पुं०) [केश √अट्+अच्, शक० पररूप] बकरा । विष्णु । खटमल । भाई । कामदेव का एक बाण ।

केशव—(पुं०) [को ब्रह्मा ईशो रुद्रः तौ वातः प्रलये उपाधिरूपं परित्यज्य तिष्ठतः यत्र, केश √वा+ड] परमात्मा । [केशं केशिनामानमसुरं वाति हन्ति, केश √ वा +क] विष्णु । विष्णु की एक मूर्ति । (वि०) [केश+व (प्राशस्त्ये)] बहुत अथवा सुन्दर केशों वाला । —**आयुध** (**केशवायुध**)–(पुं०) आम का पेड़ । (न०) विष्णु का शस्त्र ।—**आलय** (**केशवालय**),—**आवास** (**केशवावास**)– (पुं०) पीपल का पेड़ ।

केशाकेशि—(अव्य०) [केशेषु केशेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम्, पूर्वपदस्य आकार इत्वश्च] परस्पर बाल खींचकर की जाने वाली लड़ाई, झोंटाझोंटी ।

केशिक—(वि०) [केश+ठन् (प्राशस्त्ये)] [स्त्री०—**केशिकी**]– सुन्दर बालों वाला ।

केशिन्—(पुं०) [केश+इनि] सिंह । श्री कृष्ण के हाथ से निहत हुए एक राक्षस का नाम । देवसेना का हरण करने वाला और इन्द्र द्वारा मारा गया एक दूसरा राक्षस । श्रीकृष्ण । (वि०) अच्छे बालों वाला ।—**निषूदन** (**केशिनिषूदन**), — **मथन** (**केशिमथन**)–(पुं०)श्रीकृष्ण की उपाधियाँ ।

केशिनी—(स्त्री०) [केशिन्+ङीप्] सुन्दर वेणी वाली स्त्री । विश्रवस् की पत्नी और रावण की माता का नाम । एक अप्सरा । दमयंती की दूती जो नल के पास उसका संदेश ले गई थी । जटामासी । दुर्गा ।

केसर, केशर–(पुं०, न०) [के√सृ+अच्, अलुक् स०] [के√शॄ+अच्, अलुक् स०] सिंह की गरदन के बाल, अयाल । फूल का रेशा या सूत । वकुल वृक्ष । पुन्नाग । वृक्ष । (आम-फल का) रेशा । (न०) वकुलपुष्प ।—**अचल** (**केसराचल**)–(पुं०) मेरु पर्वत । —**वर**–(न०) कुंकुम, जाफ़रान ।

केसरिन्, केशरिन्—(पुं०) [केसर वा केशर +इनि] सिंह । अपनी श्रेणी का सर्वोत्कृष्ट या सर्वोत्तम व्यक्ति । घोड़ा । नीबू अथवा चकोतरा अथवा बिजौरे का पेड़ । पुन्नाग वृक्ष । हनुमान् के पिता का नाम ।—**सुत**–(पुं०) हनुमान् ।

√कै—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । कायति, कास्यति, अकासीत् ।

कैंशुक—(न०) [किंशुक+अण्] किंशुक का फूल, टेसू ।

कैकय—(पुं०) [केकय+अण्] केकय देश का राजा ।

कैकस—(पुं०) [कीकस+अण्] राक्षस ।

कैकेय—(पुं०) [केकय+अण्, इयादेश] केकय देश का राजा या राजकुमार ।

कैकेयी—(स्त्री०) [कैकेय+ङीप्] महाराज दशरथ की छोटी रानी और भरत की जननी ।

कैटभ—(पुं०) [कीट√भा+ड+अण्] एक दैत्य जो विष्णु के हाथ से मारा गया था ।—**अरि** (**कैटभारि**), —**जित्**,—**रिपु**,—**हन्**–(पुं०) विष्णु ।

कैतक—(न०) [केतकी+अण्] केतकी का फूल ।

कैतव—(न०) [कितव+अण्] धोखा, छल, ठगी । जुआ । पण । लहसुनिया । (पुं०) ठग, छलिया । जुआरी । धतूरा ।—**प्रयोग**–(पुं०) चालाकी, ठगी ।— **वाद**–(पुं०) छल । प्रवञ्चना ।

कैदार—(पुं०) [केदार+अण्] धान्य, अन्न । (न०) खेतों का समुदाय ।

कैमुतिक—(पुं०) [किमुत+ठक्] न्याय-विशेष ।

कैरव—(पुं०) [किम् कुत्सितो रवो यस्य, किरव+अण्, की आदेश, वृद्धि] जुआरी। ठग, प्रवञ्चक। शत्रु। (न०) [के जले रौति केरवः हंसः तस्य प्रियम्, केरव+अण्] कुमुद, कुईं। सफेद कमल जो चन्द्रमा की चाँदनी में खिलता है; 'चन्द्रो वकासयति कैरवचक्रवालं'।—**बंधु**–(पुं०) चन्द्रमा।

कैरविन्—(पुं०) [कैरव+इनि] चन्द्रमा।

कैरविणी—(स्त्री०) [कैरविन्+ङीप्] कुमुदिनी। कमल का पौधा जिसमें सफेद कमल के फूल लगे हों। सरोवर जिसमें कुमुद या सफेद कमल के फूलों का बाहुल्य हो। कुमुदों या सफेद कमलों का समूह।

कैरवी—(स्त्री०) [कैरव+ङीष्] चन्द्रमा की चाँदनी।

कैलास—(पुं०) [के जले लासो दीप्तिरस्य केलसः स्फटिकः स इव शुभ्रः, केलास+अण्] हिमालय पर्वत का शिखर।—**नाथ**–(पुं०) शिव। कुबेर।

कैवर्त—(पुं०) [के जले, वर्तते, के√वृत्+अच्, अलुक् स०+अण्] मल्लाह, मछुआ।

कैवल्य—(न०) [केवल+ष्यञ्] आत्मा का असंग, अलिप्त भाव। स्वरूप में स्थिति, मोक्ष। एक उपनिषद् का नाम।

कैशिक—(वि०) [केश+ठक्] [स्त्री०—**कैशिकी**] केशों जैसा। बालों की तरह महीन। (न०) बालों की लट या गुच्छा। (पुं०) प्रणय। शृंगार रस। नृत्य का एक भाव। एक राग।

कैशिकी—(स्त्री०) [कैशिक+ङीष्] नाट्य-शास्त्र की एक वृत्ति।

कैशोर—(न०) [किशोर+अण्] किशोर अवस्था जो १ से १५ वर्ष तक रहती है।

कैश्य—(न०) [केश+ष्यञ्) सम्पूर्ण केश, केश-समूह।

कोक—(पुं०) [कोकते आदत्ते, √कुक्+अच्] भेड़िया। चक्रवाक। कोकिल। मेंढक। विष्णु।—**देव**–(पुं०) कबूतर।—**बंधु**–(पुं०) सूर्य।

कोकनद—(न०) [कोक√नद्+अच्] लाल कमल।

कोकाह—(पुं०) [कोक–आ√हन्+ड] सफेद घोड़ा।

कोकिल—(पुं०) [√कुक्+इलच्] कोयल। अधजली लकड़ी।—**आवास** (कोकिलावास),—**उत्सव** (कोकिलोत्सव)–(पुं०) आम का वृक्ष।

कोङ्क, कोङ्कण–(पुं०) सह्य पर्वत और समुद्र के बीच का भूखण्ड या प्रदेश।

कोङ्कणा—(स्त्री०) [कोङ्कण+टाप्] जमदग्नि की पत्नी रेणुका का नाम।—**सुत**–(पुं०) परशुराम।

कोजागार—(पुं०) [को जागर्ति इति लक्ष्म्या उक्तिरत्र पृषो० साधुः] आश्विनी पूर्णिमा के दिवस का उत्सव विशेष।

कोट—(पुं०) [√कुट्+घञ्] गढ़, किला। परकोटा। राजप्रासाद। कुटिलता, बाँकापन। दाढ़ी।

कोटर—(पुं, न०) [कोट√रा+क] पेड़ के तने का खोखला भाग; 'नीवाराः शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः, श०' १.१४। किले के आसपास का जंगल जो उसके रक्षार्थ लगाया गया हो।

कोटरा—(स्त्री०) [कोटर+टाप्] बाणासुर की माता।

कोटरी, कोटवी—(स्त्री०) [कोट√री+क्विप्] [कोट√वी+क्विप्] नंगी स्त्री। दुर्गा देवी।

कोटि, कोटी—(स्त्री०) [√कुट्+इञ्] [कोटि+ङीष्] कमान की मुड़ी हुई नोक। छोर। अस्त्र की नोक या धारी; 'भूमिनिहितैककोटिकार्मुकं' र० ११.४१। चरम बिन्दु। आधिक्य। सर्वोत्कृष्टता। चन्द्रकला। करोड़

की संख्या। समकोण त्रिभुज की एक भुजा। श्रेणी, कक्षा, विभाग। राज्य, सल्तनत। विवादग्रस्त प्रश्न का एक पक्ष। माध्यमिकों के सिद्धान्त में तात्त्विक भावना जो चार प्रकार की मानी गई है—१ सत्, २ असत् ३ सत्-असत्, ४ न सत् न असत्।—**ईश्वर**—(कोटीश्वर)—(पुं०) करोड़पति।—**जित्**—(वि०) कालिदास की उपाधि।—**पात्र**—(न०) पतवार।—**पाल**—(पुं०) दुर्गरक्षक।—**वेधिन्**—(वि०) क्लिष्टकर्मा, बड़ा कठिन काम करने वाला।

कोटिक—(पुं०) [कोटि√कै+क] एक तरह का मेढक। इंद्रगोप। (वि०) अत्यन्त उच्च काम करने वाला, पराकाष्ठा को प्राप्त।

कोटिर—(पुं०) [कोटि√रा+क] साधुओं के सिर के बालों की चोटी जिसे वे माथे के ऊपर बाँध लेते हैं और जो सींग की तरह जान पड़ती हैं। नेवला। इन्द्र।

कोटिश, कोटीश—(पुं०) [कोटि—टी √शो+क] हेंगा, पाटा।

कोटिशस्—(अव्य०) [कोटि+शस्] करोड़ों, असंख्य।

कोटीर—(पुं०) [कोटि√ईर्+अण्] मुकुट, ताज। कलँगी, चोटी। साधुओं के सिर की चोटी। जिसे वे सींग की शक्ल में माथे के ऊपर बाँध लिया करते हैं।

कोट्ट—(पुं०) [√कुट्ट्+घञ्, नि० गुण] कोट, गढ़, किला। महल, राजप्रासाद।

कोट्टवी—(स्त्री०) [कोट्ट√वा+क—ङीप्] बाल खोले नंगी स्त्री। दुर्गादेवी। वाणासुर की माता का नाम।

कोट्टार—(पुं०) [√कुट्ट+आरक्, पृषो० साधु:] किला या किले के भीतर का ग्राम। तालाब की सीढ़ियाँ। कूप। लम्पट या दुराचारी पुरुष।

कोण—(पुं०) [√कुण्+घञ् वा अच्] कोना। सारंगी या बेला बजाने का गज। तलवार आदि हथियारों की पैनी धार। छड़ी। डंका या ढोल बजाने की लकड़ी। मंगल ग्रह। शनि ग्रह। जन्म-कुण्डली में लग्न से नवम और पञ्चम स्थान।—**ण**—(पुं०) खटमल।

कोणप—(पुं०) दे० 'कौणप'।

कोदण्ड—(पुं०, न०) [√कु+विच्, को: शब्दायमानो दण्डो यस्य, ब० स०] कमान, धनुष।(पुं०)[कोदण्डं धनुः तत्तुल्य आकारो यस्य, कोदण्ड+अच्] भौं।

कोद्रव—(पुं०) [√कु+विच्, √द्रु+अच्, कर्म० स०] कोदो अनाज।

कोप—(पुं०) [√ कुप्+घञ्] क्रोध, कोप, रोष, गुस्सा। (पित्त-) कोप (वात-) कोप आदि शारीरिक अस्वस्थता।—**आकुल** (कोपाकुल),—**आविष्ट** (कोपाविष्ट) (वि०) क्रुद्ध, कुपित।—**पद**—(न०) क्रोध का कारण। बनावटी क्रोध।—**लता**—(स्त्री०) कर्णस्फोटी लता।

कोपन—(वि०) [√कुप्+ल्यु] क्रोधी, क्रुद्ध हो जाना।

कोपना—(स्त्री०) [√कुप् ल्यु—टाप्] विगड़ैल औरत, क्रोधी स्वभाव की स्त्री।

कोपिन्—(वि०) [√कुप्+णिनि] क्रुद्ध। क्रोध उत्पन्न करने वाला। शरीरस्थ रसों का उपद्रव उत्पन्न करने वाला।

कोमल—(वि०) [√कु+कलच्, मुट्, नि० गुण] मुलायम, नरम। धीमा, मंद, प्रिय, मधुर। मनोहर, सुन्दर।

कोमलक—(न०) [कोमल+कन्] कमल नाल के सूत या रेशे।

कोयष्टि, कोयष्टिक—(पुं०) [कं जलं यष्टिरिव अस्य ब० स०, पृषो० अकारस्य उकार:] [कोयष्टि+कन्] शिखरी, एक पक्षी जो पानी के ऊपर उड़ा करता है।

कोर—(पुं०) [√कुल् + अच्, गुण:,

लस्य रः] वह संधि या जोड़ जिस पर से अंग मोड़ा जा सके । कली ।
कोरक——(पुं०, न०) [√कुल्+ण्वुल्, लस्य रः] कली । कमलनाल सूत्र । सुगन्ध द्रव्य-विशेष ।
कोरदूष——(पुं०) [कोर√दूष्+णिच्+अण्] कोदो ।
कोरित——(वि०) [कोर+इतच्] कलीदार, अङ्कुरित । चूर्ण किया हुआ, पिसा हुआ । टुकड़े-टुकड़े किया हुआ ।
कोल——(न०) [√कुल्+अच्] एक तोला भर की तौल । गोल या काली मिर्च । एक प्रकार का वेर । (पुं०) शूकर, सुअर । नाव, वेड़ा । वक्षस्थल । कवड़ । गोद । आलिङ्गन । शनिग्रह । एक जंगली जाति ।——**अञ्च** (**कोलाञ्च**)–(पुं०)कलिङ्ग देश ।——**पुच्छ**–(पुं०) सफेद चील ।
कोलम्वक——(पुं०) [√कुल्+ अम्वच्+कन्] वीणा का ढाँचा ।
कोला, कोलि, कोली——(स्त्री०) [√कुल्+ण-टाप्] [√कुल्+इन्] [√कुल्+अच्–ङीष्] वेर का पेड़ ।
कोलाहल——(पुं०) [एकीभूताव्यक्तशब्दविशेषः कोलः तम् आहलति, कोल—आ√हल्+अच्] वहुत से लोगों के एक साथ वोलने से होने वाला शोर, हंगामा, हल्ला । एक संकर राग । भूकदम्व ।
कोविद——(वि०) [√कु+विच्, तं वेत्ति, √विद्+क] पण्डित । अनुभवी । चतुर, वुद्धिमान् ।
कोविदार——(पुं०) [कु—वि√दृ+अण्] लाल कचनार का पेड़; ; 'चित्तं विदारयति कस्य न कोविदारः' र० ३.६।
कोश, कोष——(पुं०,न०)[कुश्यते, संश्लिष्यते, √कुश् वा √कुष्+घञ्] कठौती । वाल्टी । कोई भी पात्र । संदूक । आलमारी । दराज । म्यान । ढक्कन । खोल । ढेर । भाण्डारगृह । खजाना, धनागार । धन-सम्पत्ति, दौलत । सोना-चाँदी । शब्दार्थसंग्रहावली । कली, अनखिला फूल । फल की गुठली । छीमी, फली । जायफल । रेशम का कोया । योनि । अण्डकोश । अंडा । लिंग, पुरुषजननेन्द्रिय । गोला, गद । वेदान्त में वर्णित पाँच प्रकार के कोश; यथा अन्नमयकोश, प्राणमयकोश आदि । [धर्मशास्त्र में] एक प्रकार की अपराधी के अपराध की कठोर परीक्षा ।——**अधिपति** (**कोशाधिपति**), ——**अध्यक्ष** (**कोशाध्यक्ष**)–(पुं०) खजानची । कुवेर ।——**अगार** (**कोशागार**)–(पुं०) धनागार, खजाना ।——**कार**–(पुं०) म्यान या परतला वनाने वाला । शव्दकोश वनाने वाला । कोश के भीतर का रेशमी कीड़ा । कोशवासी तितली आदि जिनके पर न आये हों ।——**कारक**–(पुं०) रेशम का कीड़ा ।——**कृत्**–(पुं०) गन्ना ।——**गृह**–(न०) खजाना ।——**चञ्चु**–(पुं०) सारस ।——**नायक,——पाल**–(पुं०) खजानची । भंडारी ।——**पेटक**–(पुं०) (न०) तिजोरी । कॉफर ।——**वासिन्**–(पुं०) कोशस्थ जीव ।——**वृद्धि**–(स्त्री०) धन की वृद्धि । अंडकोश की वृद्धि ।——**शायिका**–(स्त्री०) म्यान में रखी हुई छुरी आदि ।——**स्थ**–(वि०) कोश में स्थित । (पुं०) कोशवासी जीव ।——**हीन**–(वि०) गरीव, धन-हीन ।
कोशलिक——(न०) [कुशल+ठन्] घूस, रिश्वत ।
कोशातकिन्——(पुं०) [कोश√अत्+क्वन्—कोशातक+इनि] व्यापार, व्यवसाय, तिजारत । व्यापारी, सौदागर । वाड़वानल ।
कोशिन्, कोषिन्——(पुं०) [कोश (ष)+इनि] आम का पेड़ ।
कोष्ठ——(न०) [√कुष+थन्] घेरे की दीवाल, चहारदीवारी । (पुं०) शरीर के भीतर का आमाशय, मूत्राशय, पित्ताशय जैसा

कोई अंग । पेट । भीतर का कमरा । अन्न-भाण्डार ।—**अगार** (**कोष्ठागार**)–(न०) भाण्डार; 'पर्याप्तभरितकोष्ठागारं मांस-शोणितैर्मे गृहं भविष्यति' वे० ३ ।—**अग्नि** (**कोष्ठाग्नि**)–(पुं०) अन्न पचाने वाली शक्ति ।—**पाल**–(पुं०) खजानची । भंडारी । चौकीदार ।

कोष्ठक—(न०) [कोष्ठ+कन्] ईंट-चूने का बना हौद जिसमें पशु पानी पिये । (पुं०) अनाज का भाण्डार । हाते की दीवाल, चारदीवारी ।

कोष्ण—(वि०) [ईषदुष्णः, कु—उष्ण, कोः कादेशः] गुनगुना, कुनकुना, थोड़ा गरम । (न०) गर्मी, ऊष्मा ।

कोसल, कोशल—(पुं०) एक प्राचीन जन-पद, अवध । कोसलवासी ।

कोसला, कोशला—(स्त्री०) [कोस (श)-ल+टाप्] अयोध्या नगरी ।

कोहल—(पुं०) [√कुह्+कलच्, गुण (वा०)] काहिली, वाद्य विशेष । शराब ।

कौक्कुटिक—(पुं०) [कुक्कुट+ठक्] मुर्गे पालने या वेचने वाला व्यक्ति । वह साधु जो चलते समय जमीन की ओर दृष्टि रखता है जिससे कोई जीव उसके पैर से न कुचले । दम्भी, पाखण्डी ।

कौक्ष—(वि०) [कुक्षि+अण्] कुक्षि या कोख से संबंध रखने वाला ।[स्त्री०—**कौक्षी**]

कौक्षेय— (वि०) [कुक्षि+ढञ् [स्त्री०—**कौक्षेयी**] पेट वाला । म्यान वाला ।

कौक्षेयक—(पुं०) [कुक्षि+ढकञ्] तलवार, खाँडा; 'वाम पार्श्वावलम्बिना कौक्षेयकेण' काद०।

कौङ्क, कौङ्कण—(पुं०) [कुङ्क+अण्] [कोङ्कण+अण्] कोङ्कण देश और वहाँ के अधिवासी ।

कौट—(पुं०) [कूट+अण्] छल । धोखा । जाल । (वि०) [स्त्री०—**कौटी**] स्वतन्त्र, मुक्त । घरेलू । वेईमान । छली । जाल में फँसा हुआ ।—**ज**–(पुं०) कुटज वृक्ष ।—**तक्ष**–(पुं०) स्वतन्त्र बढ़ई (ग्रामतक्ष का उलटा) ।—**साक्षिन्**–(पुं०) झूठा गवाह । —**साक्ष्य**–(न०) झूठी या जाली गवाही ।

कौटकिक, कौटिक—(पुं०) [कूट+कन्—कूटक+ठञ्] [कूट+ठक्] पक्षी आदि फँसाने वाला, बहेलिया । मांस-विक्रेता व्यक्ति ।

कौटिलिक—(पुं०) [कुटिलिकया हरति मृगान् अंगारान् वा, कुटिलिका+अण्] व्याध, बहेलिया । लुहार ।

कौटिल्य—(न०) [कुटिल+ष्यञ्] कुटि-लता । दुष्टता । वेईमानी । जाल । छल । (पुं०) [कौटिल्य+अच्] चाणक्य का नाम, एक प्रसिद्ध नीतिकार; 'कौटिल्यः कुटिलमतिः स एष येन क्रोधाग्नौ प्रसभम-दाहि नन्दवंशः' मुद्रा० १.७ ।

कौटुम्ब—(वि०) [कुटुम्ब+अण्] [स्त्री० —**कौटुम्बी**] गृहस्थोपयोगी । गृहोपयोगी । (न०) पारिवारिक सम्बन्ध, रिश्तेदारी ।

कौटुम्बिक—(वि०) [कुटुम्ब+ठक्] [स्त्री० —**कौटुम्बिकी**] पारिवारिक, परिवार सम्बन्धी । (पुं०) पिता या घर का बड़ा बूढ़ा ।

कौणप—(पुं०) [कुणप+अण्] राक्षस, दानव, दैत्य ।—**दन्त**–(पुं०) भीष्म ।

कौण्य—(वि०) लूला ।

कौतुक—(न०) [कुतुक+अण्] अभिलाषा, कुतूहल, इच्छा । कौतूहलोत्पादक कोई वस्तु । विवाहसूत्र जो कलाई पर बाँधा जाता है । विवाह की एक विधि । उत्सव, विवाहादि शुभ उत्सव । हर्ष, आह्लाद । क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद । तमाशा । हँसी-मजाक । बधाई ।—**अगार** (**कौतुकागार**), —**गृह**– (न०) जलसे या तमाशे का घर, प्रमोद-भवन ।—**क्रिया**–(स्त्री०),—**मङ्गल**– (न०) विवाह आदि का उत्सव ।—**तोरण**–(पुं०, न०) मङ्गलसूचक महरावदार द्वार, जो विवाहादि उत्सवों के अवसर पर बनाये जाते हैं ।

कौतूहल, कौतूहल्य—(न०) [कुतूहल+अण्] [कुतूहल+ष्यञ्] अभिलाषा। औत्सुक्य। आश्चर्य।

कौन्तिक—(पुं०) [कुन्त+ठक्—इक] भाला अथवा बर्छीधारी मनुष्य।

कौन्तेय—(पुं०) [कुन्ती+ढक्—एय] कुन्ती का पुत्र, युधिष्ठिर, भीम, और अर्जुन।

कौप—(वि०) [कूप+अण्] [स्त्री०—**कौपी**] कूप सम्बन्धी या कूप से निकला हुआ।

कौपीन—(न०) [कूप+खञ्—ईन] लँगोटी। गुप्तांग। चिथड़ा। पाप या अनुचित कर्म।

कौब्ज्य—(न०) [कुब्ज+ष्यञ्] टेढ़ापन। कुबड़ापन।

कौमार—(वि०) [कुमार+अण्] कुमार-संबंधी। कोमल। युद्ध-देव-संबंधी। [स्त्री०—**कौमारी**] (न०) जन्म से पाँच वर्ष तक की अवस्था। कुँवारापन (१६ वर्ष की अवस्था तक की लड़की का कुँवारापन माना गया है)।—**भृत्य** (न०) बालक का पालन-पोषण और चिकित्सा।

कौमारक—(न०) [कौमार+कन्] कुमारावस्था; 'कौमारकेऽपि गिरिवद् गुरुतां दधानः' उत्त० ६.१९।

कौमारिक—(पुं०) [कुमारी+ठक्] लड़कियों का पिता।

कौमारिकेय—(पुं०) [कुमारिका+ढक्] अनव्याही स्त्री का पुत्र।

कौमुद—(पुं०) [कुमुद+अण्] कार्तिक मास।

कौमुदी—(स्त्री०) [कौमुद+ङीप्] चाँदनी। सिद्धान्तकौमुदी नामक एक ग्रन्थ। कार्तिकी पूर्णिमा। आश्विनी पूर्णिमा। उत्सव; विशेष कर वह उत्सव जिसमें घरों और देवालयों में दीपमालिका की जाय। व्याख्या।—**पति**—(पुं०) चन्द्रमा।—**वृक्ष**—(पुं०) दीवट, चिराग-दान।

कौमोदकी, कौमोदी—(स्त्री०) [कोः पृथिव्याः मोदकः- कुमोदक+अण्—ङीप्] [कुं पृथिवीं मोदयति—कुमोद+अण्—ङीप्] भगवान् विष्णु की गदा का नाम।

कौरव—(पुं०) [कुरु+अण्] राजा कुरु की संतान। कुरु-नरेश। (वि०) [स्त्री०—**कौरवी**] कुरुओं से सम्बन्ध रखने वाला।

कौरव्य—(पुं०) [कुरु+ण्य] कुरु का वंशज। कुरुओं का राजा या शासक।

कौर्प्य—(पुं०) वृश्चिक राशि।

कौल—(वि०) [कुल+अण्] [स्त्री०—**कौली**] पैतृक, मौरूसी। कुलीन, अच्छे खानदान का। (पुं०) वाममार्गी तांत्रिक। ब्रह्मज्ञानी। (न०) वाममार्ग का सिद्धान्त और उसके अनुष्ठान।

कौलकेय—(पुं०) [कुल+ढक्, कुक्] वर्ण-सङ्कर। छिनाल का लड़का।

कौलटिनेय—(पुं०) [कुलटा+ढक्, इनङ् आदेश] सती भिखारिन का लड़का। वर्ण-सङ्कर।

कौलटेय—(पुं०) [कुलटा+ढक्] सती या असती भिखारिन का पुत्र। वर्णसङ्कर, दोगला।

कौलव—(पुं०) ज्योतिष् के २१ कारणों में से एक।

कौलिक—(वि०) [कुल+ठक्] [स्त्री०—**कौलिकी**] कुल-सम्बन्धी। कुल में प्रचलित। (पुं०) जुलाहा। पाखंडी, दम्भी। वाममार्गी।

कौलीन—(वि०) [कुल+खञ्] कुलीन, खानदानी। (पुं०) भिखारिन का लड़का। वाममार्गी। (न०) [कुलीनं भूमिलीनम् अर्हति, कुलीन+अण्] लोकापवाद, कुत्सा, निन्दा। असदाचरण, कुकर्म। पशुओं की लड़ाई। मुर्गों की लड़ाई। युद्ध, लड़ाई। छिपाने योग्य अंग, गुह्याङ्ग। [कुलीनस्य भावः, कुलीन+अण्] कुलीनता।

कौलीन्य—(न०) [कुलीन+ष्यञ्] कुलीनता। पारिवारिक अपवाद।

कौलूत—(पुं०) [कुलूत+अण्] कुलूतदेश का राजा; 'कौलूतश्चित्रवर्मा ।'—मुद्राराक्षस ।

कौलेयक—(पुं०) [कुल+ढकञ्] कुत्ता । ताजी कुत्ता । शिकारी कुत्ता ।

कौल्य—(वि०) [कुले भवः, कुल+ष्यञ्] कुलीन ।

कौवेर, कौबेर—(वि०) [कुवे (वे) र+अण्] [स्त्री०—कौवेरा, कौवेरी] कुवेरसम्बन्धी ।

कौबेरी कौवेरी—(स्त्री०) [कौवे (वे) र+ङीप्] उत्तर दिशा ।

कौश—(वि०) [कुश+अण्] [स्त्री०—**कौशी**] कुश का बना । (न०) [कोश+अण्] रेशमी वस्त्र ।

कौशल, कौशल्य—(न०) [कुशल+अण्] [कुशल+ष्यञ्] कुशलता, दक्षता । मंगल, कल्याण ।

कौशलिक—(न०) [कुशल+ठक्] घूस, रिश्वत ।

कौशलिका, कौशली—(स्त्री०) [कुशल+ठक्—टाप्] [कुशल+अण्—ङीप्] भेंट, चढ़ावा कुशलप्रश्न ।

कौशलेय—(पुं०) [कौशल्या+ढक्—एय, यलोप] कौशल्यानन्दन श्रीरामचन्द्र जी ।

कौशल्या, कौसल्या—(स्त्री०) [कोश (स)-ल+ञ्य] महाराज दशरथ की महारानी और श्रीरामचन्द्र की जननी ।

कौशल्यायनि—(पुं०) [कौशल्या+फिञ्] कौसल्यानन्दन श्रीराम ।

कौशाम्बी—(स्त्री०) [कुशाम्ब+अण्—ङीप्] वत्सदेश की प्राचीन राजधानी जिसे कुश के पुत्र कौशाम्ब ने वनाया था, आधुनिक कोसम ।

कौशिक—(वि०) [कुशिक+अण्] [स्त्री० **कौशिकी**] म्यानदार, म्यान में रखा हुआ । रेशमी । (पुं०) विश्वामित्र । उल्लू । कोशकार । गदा, सार । गूगल । नेवला । सँपेरा, साँप पकड़नेवाला । शृङ्गार । गुप्त धन जाननेवाला । इन्द्र ।—**अराति** (कौशिकाराति), —**अरि** (कौशिकारि)–(पुं०) काक, कौआ ।—**प्रिय**–(पुं०) श्री रामचन्द्र की उपाधि ।—**फल**–(पुं०) नारियल का पेड़ ।

कौशिका—(स्त्री०) [कोश+कन्+अण्—टाप्, इत्व] कटोरा, प्याला ।

कौशिकी—(स्त्री०) [कुशिक+अण्—ङीप्] विहार प्रान्त की एक नदी । दुर्गादेवी । चार प्रकार की नाट्यशास्त्र की वृत्तियों में से एक ।—'सुकुमारार्थसन्दर्भा कौशिकी तासु कथ्यते'—साहित्यदर्पण ।

कौशेय, कौषेय—(न०) [कोश + ढक्] [कौशेय पृषो० शस्य षः] रेशम । रेशमी वस्त्र । लहँगा ।

कौसीद्य—(न०) [कुसीद+ष्यञ्]सूदखोरी । सुस्ती, अकर्मण्यता, काहिली, परिश्रम से अरुचि ।

कौसृतिक—(पुं०) [कुसृति+ठक्] छलिया, धोखेवाज, वदमाश । मदारी, ऐन्द्रजालिक ।

कौस्तुभ—(पुं०) [कुं भूमिं स्तुभ्नाति व्याप्नोति कुस्तुभः समुद्रः तत्र भवः, कुस्तुभ+अण्] समुद्रमन्थन के समय प्राप्त एक मणि, जिसे भगवान् विष्णु अपने वक्षस्थल पर धारण करते हैं; 'सकौस्तुभं ह्लेपयतीव कृष्णम्' र० ६.४९ ।—**लक्षण**,—**वक्षस्**, —**हृदय**–(पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधियाँ ।

√क्नस्—दि० पर० अक० टेढ़ा होना । चमकना । क्नस्यति, क्नसिष्यति, अक्नसीत्—अक्नासीत् ।

√क्नू—क्र्या० उभ० अक० शब्द करना । क्नूनाति—क्नूनीते, क्नविष्यति—ते, अक्नावीत् ।

√क्नूय्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । गीला होना । क्नूयते, क्नयिष्यते, अक्नूयिष्ट ।

क्रकच—(पुं०) [क्र इति कचति शब्दायते, क्र√कच्+अच्] आरा ।—**च्छद**–(पुं०)

केतकी वृक्ष ।—**पत्र**–(पुं०) साल का वृक्ष । —**पाद्, पाद**–(पुं०) विस्तुइया, छिपकली ।

क्रकर—(पुं०) [क्र इति शब्दं कर्तुं शीलमस्य, क्र√कृ+अच्] तीतर । आरा । निर्धन मनुष्य । रोग, बीमारी ।

क्रतु—(पुं०) [√कृ+कतु] यज्ञ । विष्णु की उपाधि । दस प्रजापतियों में से एक । प्रतिभा । शक्ति, योग्यता ।—**उत्तम** (क्रतूत्तम)–(पुं०) राजसूय यज्ञ ।—**द्रुह्**,—**द्विष्**–(पुं०) राक्षस, दैत्य ।—**ध्वंसिन्**–(पुं०) शिव की उपाधि ।—**पति**–(पुं०) यज्ञकर्त्ता ।—**पुरुष**–(पुं०) विष्णु की उपाधि ।—**भुज्**–(पुं०) ईश्वर ।—**राज्**–(पुं०) यज्ञों के प्रभु । राजसूय यज्ञ ।

√क्रथ्—भ्वा० पर० सक० मारना । क्रथति, क्रथिष्यति, अक्रथीत्—अक्राथीत् ।

क्रथकौशिक—(पुं०) एक देश का नाम ।—'अथेश्वरेण क्रथकैशिकानां'—रघुवंश ।

क्रथन—(न०) [√क्रथ्+ल्युट्] हत्या, कतलआम ।

क्रथनक—(पुं०) [क्रथन+कन्] ऊँट ।

√क्रन्द्—भ्वा० पर० अक० रोना । सक० बुलाना । क्रन्दति, क्रन्दिष्यति, अक्रन्दीत् ।

क्रन्दन, क्रन्दित–(न०) [√क्रन्द्+ल्युट् √क्रन्द्+क्त भावे] रोदन, रोना, विलाप । पारस्परिक ललकार ।

√क्रम्—भ्वा० पर० अक० सक० चलना-फिरना, पदार्पण करना । समीप जाना । गुजरना, निकल जाना । कूदना । चढ़ना । ढकना । कब्जा करना, अधिकार जमाना । आगे निकल जाना, बढ़ जाना । योग्य होना । किसी काम को हाथ में लेना । बढ़ना । पूरा करना, सम्पन्न करना । स्त्रीमैथुन करना । क्राम्यति—क्रामति, क्रमिष्यति, अक्रमीत् ।

क्रम—(पुं०) [√क्रम्+घञ्] पग, कदम । पैर । गमन । अग्रगमन । मार्ग । अनुष्ठान । आरम्भ । सिलसिला । तरीका, ढंग । पकड़ । जानवर की उस समय की एक बैठक जब वह उछल कर किसी पर आक्रमण करना चाहता है, दबकन । तैयारी, तत्परता । भारी काम । जोखों का काम । कर्म । कार्य । वेद पढ़ने की एक विशेष शैली । शक्ति, ताकत ।—**अनुसार** (क्रमानुसार),—**अन्वय** (क्रमान्वय)–(पुं०) ठीक सिलसिलेवार. यथावस्थित ।—**आगत** (क्रमागत),—**आयात** (क्रमायात)–(वि०) पैतृक, पुश्तैनी ।—**ज्या**–(स्त्री०) क्षय, घटती ।—**भङ्ग**–(पुं०) अनियमितता ।

क्रमक—(वि०) [क्रम+वुन्] क्रमानुसार, क्रमबद्ध, पद्धति के अनुसार, यथानियम । (पुं०) वह विद्यार्थी जो क्रमशः पाठ्यक्रम पूरा करे ।

क्रमण—(न०) [√क्रम्+ल्युट्] पग, कदम । चलना या चाल । अग्रगमन । उल्लंघन, भंग । (पुं०) पैर । घोड़ा ।

क्रमतः—(अव्य०) [क्रम्+तस्] धीरे-धीरे । क्रम से ।

क्रमशः—(अव्य०) [क्रम+शस्] सिलसिलेवार, क्रमानुसार । धीरे-धीरे ।

क्रमिक—(वि०) [क्रम+ठन्] क्रमागत, एक के बाद एक, सिलसिलेवार । पैतृक, पुश्तैनी ।

क्रमु, क्रमुक—(पुं०) [√क्रम्+उ] [क्रमु+कन्] सुपारी का पेड़ ।

क्रमेल, क्रमेलक—(पुं०) [क्रम√एल्+अच्] [क्रमेल+कन्] ऊँट; 'निरीक्षते केलिवनं प्रविश्य क्रमेलकः कण्टकजालमेव' विक्र० १.२९ ।

क्रय—(पुं०) [√क्री+अच्] मोल लेना, खरीदना ।—**आरोह** (क्रयारोह)–(पुं०) बाजार, हाट ।—**क्रीत**–(वि०) खरीदा हुआ, मोल लिया हुआ ।—**लेख्य**–(न०) बेचीनामा, क्रयपत्र, बृहस्पति । बेचीनामे की व्याख्या इस प्रकार करते हैं—गृहक्षेत्रादिकम् क्रीत्वा तुल्यमूल्याक्षरान्वितम् । पत्रं कारयते यत्तु

क्रयलेख्यं तदुच्यते ।—**विक्रय**–(पुं०) व्यापार, व्यवसाय, खरीद-फरोख्त । —**विक्रयिक**–(पुं०) व्यापारी, सौदागर ।

क्रयण—(न०) [√क्री+ल्युट्] खरीद, लेवाली ।

क्रयिक—(पुं०) [क्रय+ठन्] व्यापारी, सौदागर । खरीदार, ग्राहक ।

क्रय्य—(वि०) [√क्री+यत्, नि० साधुः] विक्री के लिये, विकाऊ ।

क्रव्य—(न०) [√क्लव्+यत्, रस्य लः] कच्चा मांस । —**अद्** (**क्रव्याद्**), —**अद** (**क्रव्याद**),—**भुज्**–(वि०) कच्चा मांस खाने वाला ।(पुं०) शेर, चीता आदि मांस-भक्षी जीव-जन्तु । राक्षस, पिशाच ।

क्रशिमन्—(पुं०) [कृश+इमनिच्] दुबलापन, क्षीणता ।

क्राकचिक—(पुं०) [क्रकच+ठक्] आराकश, आरा चलाने वाला ।

क्रान्त—(वि०) [√क्रम्+क्त] बीता हुआ । लाँघा हुआ । दवा हुआ । चढ़ा हुआ । गया हुआ, गत । (पुं०) घोड़ा । पैर, पद ।—**दर्शिन्**–(वि०) सर्वज्ञ ।

क्रान्ति—(स्त्री०) [√क्रम्+क्तिन्] गति । पग, कदम । अग्रगमन । आक्रमण । विषुव-रेखा से किसी ग्रहमण्डल की दूरी । स्थिति में भारी उलट-फेर ।—**कक्ष**–(पुं०),—**मण्डल**, —**वृत्त**–(न०) अयनवृत्त या मण्डल, पृथिवी का भ्रमणपथ ।

क्रायक, क्रायिक—(पुं०) [√क्री+ण्वुल्] [क्रय+ठक्] खरीदार, गाहक । व्यापारी ।

क्रिमि—(पुं०) [√क्रम्+इन्, इत्व] कीड़ा । छोटा कीड़ा । —**जा**–(स्त्री०) लाख ।

क्रिया—(स्त्री०) [√कृ+श, रिङ आदेश, इयङ] कुछ किया जाना । कर्म । व्यापार, चेष्टा । उद्योग, उद्यम । परिश्रम । शिक्षण । गानवाद्यादि किसी कला की अभिज्ञता या जानकारी । अभ्यास । साहित्यिक रचना, यथा —'शृणुत मनोभिरवहितैः क्रियामिमां कालिदासस्य' —विक्रमोर्वशीय ।—'कालिदासस्य क्रियायां कथं परिषदो वहुमानः' —मालविकाग्निमित्र । अनुष्ठान । प्रायश्चित्त । श्राद्ध-कर्म । पूजन । चिकित्सा ।—**अन्वित** (**क्रियान्वित**)–(वि०) सत्कर्म करने वाला । —**अपवर्ग** (**क्रियापवर्ग**)–(पुं०) किसी कार्य का सम्पादन या सुसम्पन्नता । कर्मकाण्ड से छुटकारा ।—**अभ्युपपगर**, **याभ्युपगम**) –(पुं०) विशेष प्रतिज्ञापत्र, इकरारनामा ।—**अवसन्न** (**क्रियावसन्न**)–(वि०) वह पुरुष जो अपने गवाहों के बयान के कारण अपना मुकदमा हारता है ।—**कलाप**–(पुं०) वह समस्त कर्मकाण्ड जो एक सनातनधर्मी को करना चाहिये । किसी व्यवसाय का आद्यन्त विस्तृत विवरण ।—**कार**–(पुं०) गुमाश्ता, मुख्तार, मुनीम । नवसिखुआ । इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र ।—**द्वेषिन्**–(पुं०) जिसकी ओर गवाही दे उसके मामले को अपनी गवाही से हराने वाला (पाँच-प्रकार के गवाहों में से एक) ।—**निर्देश**–(पुं०) गवाही, साक्ष्य । **पटु**–(वि०) क्रियाकुशल, कार्यनिपुण ।— —**पथ**–(पुं०) चिकित्सा-प्रणाली ।—**पर**–(वि०) अपने कर्त्तव्य-पालन में परिश्रम करने वाला ।—**पाद**–(पुं०) लिखित प्रमाण तथा अन्य प्रमाण जो वादी की ओर से अपने अर्जी दावे में पेश किये गये हों ।—**योग**–(पुं०) क्रिया से सम्वन्ध । उपायों का प्रयोग । —**लोप**–(पुं०) किसी आवश्यक अनुष्ठेय कर्म का त्याग ।—**वाचक**, **वाचिन्**–(वि०) (अव्य०) जो क्रिया के ढङ्ग का वर्णन करे । —**वादिन्**–(पुं०) वादी, मुद्दई ।—**विधि**–(पुं०) किसी कर्म का विधान . —**वशेषण**–(न०) वह शब्द जो क्रिया की विशेपता—उसका काल, स्थान, रीति आदि वताये ।—**संक्रान्ति**–(स्त्री०) शिक्षण, ज्ञानोपदेश ।

—समभिहार—(पुं०) किसी कर्म की पुनरावृत्ति।

क्रियावत्—(वि०) [क्रिया+मतुप्] अभ्यस्त, किसी कार्य को करने का अभ्यासी।

√**क्री**—क्र्या० उभ० सक० खरीदना, मोल लेना। अदल-बदल करना, विनिमय करना। क्रीणाति—क्रीणीते, क्रेष्यति—ते, अक्रैषीत्—अक्रेष्ट।

√**क्रीड्**—भ्वा० पर० अक० सक० खेलना, अपना दिल बहलाना। जुआ खेलना। हँसी करना, उपहास करना, मसखरी करना। क्रीडति, क्रीडिष्यति, अक्रीडीत्।

क्रीड—(पुं०) [√क्रीड्+घञ्] खेल, आमोद-प्रमोद। हँसी-दिल्लगी।

क्रीडन—(न०) [√क्रीड्+ल्युट्] खेल, आमोद-प्रमोद। खिलौना।

क्रीडनक—(पुं०), **क्रीडनीय**—(न०), **क्रीडनीयक**—(न०) [क्रीडन+कन्] [√क्रीड्+अनीयर्] [क्रीडनीय+कन्] खिलौना।

क्रीडा—(स्त्री०) [√क्रीड्+अ—टाप्] खेल, आमोद-प्रमोद। हँसी-दिल्लगी। —**उपस्कर** (क्रीडोपस्कर) (न०) खेल का सामान। —**गृह**—(न०) प्रमोदभवन, क्रीडा-भवन। —**शैल**—(पुं०) कृत्रिम पहाड़, प्रमोद-शैल; 'क्रीडाशैलः कनककदलीवेष्टनः प्रेक्षणीयः' मे० ७७। —**नारी**—(स्त्री०) रंडी। —**कोप**—(पुं०) झूठा क्रोध, बनावटी कोप। —**कौतुक**—(न०) विलास। सहवास। —**मयूर**—(पुं०) मनबहलाव के लिये रखा हुआ मोर। —**रत्न**—(न०) रमणकार्य, मैथुन।

क्रीत—(वि०) [√क्री+क्त] खरीदा हुआ, मोल लिया हुआ। (पुं०) धर्मशास्त्र में वर्णित बारह प्रकार के पुत्रों में से एक प्रकार का, खरीदा हुआ पुत्र। —**अनुशय** (क्रीतानुशय) (पुं०) किसी चीज को खरीदने के बाद पछताना। मोल ली हुई वस्तु को वापिस करना।

√**क्रुञ्च्**—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना। सक० जाना। अनादर करना, क्रुञ्चति, क्रुञ्चिष्यति, अक्रुञ्चीत्।

क्रुञ्च्—(पुं०) **क्रुञ्च**—(पुं०) [√क्रुञ्च्+क्विन्] [√क्रुञ्च्+अच्] बगला। क्रौंच-पक्षी।

√**क्रुध्**—दि० पर० अक० कुपित होना, नाराज होना। क्रुध्यति, क्रोत्स्यति, अक्रुधत्।

क्रुध्—(स्त्री०) [√क्रुध्+क्विप्] क्रोध, गुस्सा।

√**क्रुश्**—भ्वा० पर० अक० रोना। सक० बुलाना, क्रोशति, क्रोक्ष्यति, अक्रुक्षत्।

क्रुष्ट—(वि०) [√क्रुश्+क्त] बुलाया हुआ। (न०) रोदन। शोर।

क्रूर—(वि०) [√कृत्+रक्, क्रू आदेश] निष्ठुर, निर्दयी, दयाशून्य, नृशंस। सख्त, रूखा। भयङ्कर, भयानक, भयप्रद; 'तस्याभिषेकसम्भारं कल्पितं क्रूरनिश्चया' र० १२.४। उपद्रवी, उत्पाती, बरबाद करने वाला। घायल, चोटिल। खूनी। कच्चा। मजबूत। गर्म। तीक्ष्ण। अप्रिय। (न०) घाव। हत्या। निर्दयता। (पुं०) बाज, शिकरा। बहरी बगुला। —**आकृति** (क्रूराकृति)—(वि०) भयङ्कर रूप वाला। —**आचार** (क्रूराचार) (वि०) निष्ठुर व्यवहार करने वाला। —**आशय** (क्रूराशय)—(वि०) जिसमें भयङ्कर जीव हों (जैसे नदी)। नृशंस स्वभाव वाला। —**कर्मन्**—(न०) खूनी काम। कोई भी कठोर परिश्रम का काम। —**कृत्**—(वि०) खूँखार, निर्दयी। —**कोष्ठ**—(वि०) दस्तावर दवा यानी जुलाब देने पर भी जिसको दस्त न आवें ऐसे कोठे वाला। कब्जियत रोग से पीड़ित। —**गन्ध**—(पुं०) गंधक। —**दृश्**—(वि०) कुदृष्टि वाला, बुरी निगाह डालने वाला। उत्पाती, दुष्ट। —**राविन्**—(पुं०) पहाड़ी काक। —**लोचन**—(पुं०) शनिग्रह।

क्रेतृ—(पुं०) [√क्री + तृच्] खरीदने वाला, गाहक ।

क्रौञ्च—(पुं०) [√क्रुञ्च् + अच्, गुण (वा०)] एक पर्वत का नाम ।

क्रोड—(पुं०) [क्रुड्+घञ्] शूकर । वृक्ष का खोड़र । वक्षस्थल । किसी वस्तु का मध्यभाग । शनिग्रह । (न०) दे० 'क्रोडा' ।—**अङ्क** (**क्रोडाङ्क**),—**अङ्घ्रि** (**क्रोडाङ्घ्रि**),—**पाद** –(पुं०) कछुवा ।—**पत्र**–(न०) हाशिये का लेख । पत्र की समाप्ति करने के बाद लिखा हुआ लेख । न्यूनता-पूरक पत्र । दानपत्र का अनुबन्ध ।

क्रोडा—(स्त्री०) [क्रोड+टाप्] वक्षःस्थल, छाती । वस्तु का भीतरी भाग, खोखला न ।

क्रोडी—(स्त्री०) [क्रोड+ङीष्] शूकरी । वाराहीकन्द ।

क्रोडीकरण—(न०) [क्रोड+च्वि,√कृ + ल्युट्] आलिङ्गन, छाती से लगाना ।

क्रोडीमुख—(पुं०) [क्रोड्याः मुखमिव मुखमस्य ब० स०] गैंड़ा ।

क्रोध—(पुं०) [√क्रुध् + घञ्] क्रोध, रोष । रौद्ररस का भाव ।—**मूर्च्छित**–(वि०) गुस्से में भरा हुआ, कुपित ।

क्रोधन—(वि०) [√क्रुध्+ल्यु] क्रोध में भरा हुआ, क्रुद्ध । (न०) [√क्रुध्+ल्युट्] क्रोध करना ।

क्रोधना—(स्त्री०) [क्रोधन+टाप्] क्रोध वाली स्त्री ।

क्रोधालु—(वि०) [क्रुध्+आलुच्] क्रोधी, गुस्सैल ।

क्रोश—(पुं०) [क्रुश्+घञ्] चीख, चीत्कार, चिल्लाहट । कोलाहल । कोस । मील ।—**ताल, ध्वनि**–(पुं०) बड़ा ढोल ।

क्रोशन—(वि०) [√क्रुश्+ल्यु] चीत्कार करने वाला । (न०) [√क्रुश्+ल्युट्] चीत्कार, चीख ।

क्रोष्टु—(पुं०) [√क्रुश्+तुन्] [स्त्री०—**क्रोष्ट्री**] गीदड़, शृगाल ।

क्रौञ्च—(पुं०) [क्रुञ्च+अण्] कुरर पक्षी । एक पर्वत, यह हिमालय पर्वत का नाती है, कार्तिकेय तथा परशुराम ने इसे वेधा था– 'हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत् क्रौञ्चरन्ध्रम्' म०५७।—**अदन** (**क्रौञ्चादन**)–(न०) कमलनाल के रेशे ।—**अराति** (**क्रौञ्चाराति**), —**अरि** (**क्रौञ्चारि**),—**रिपु**–(पुं०) कार्तिकेय । परशुराम ।—**दारण,**—**सूदन**– (पुं०) कार्तिकेय । परशुराम ।

क्रौर्य—(न०) [क्रूर+घञ्] क्रूरता, निष्ठुरता ।

√ **क्लन्द्**—भ्वा० पर० अक० रोना । सक० बुलाना । क्लन्दति । क्लन्दिष्यति । अक्लन्दीत् ।

√**क्लम्**—दि० पर० अक० ग्लानि करना । थक जाना । क्लाम्यति, क्लमिष्यति, अक्लमीत् ।

क्लम, क्लमथ–(पुं०) [√ क्लम् +घञ्, अवृद्धि] [√क्लम्+अथच्] थकावट, थकाई; 'विनोदितदिनक्लमः कृतरुचश्च जाम्बूनदैः' शि० ४.६६ ।

क्लान्त—(वि०) [√क्लम्+क्त] थका हुआ, परिश्रान्त । कुम्हलाया हुआ, मुर्झाया हुआ । लटा, निर्बल ।

क्लान्ति—(स्त्री०) [√क्लम्+क्तिन्] थकावट, श्रम ।—**छिद्** (**क्लान्तिच्छिद्**) –(वि०) थकावट दूर करने वाला ।

√**क्लिद्**—दि० पर० अक० गीला होना, क्लिद्यति, क्लेदिष्यति, अक्लेदीत्,—अक्लैत्सीत्,—अक्लिदत् ।

क्लिन्न—(वि०) [√क्लिद्+क्त]भींगा, तर ।—**अक्ष** (**क्लिन्नाक्ष**)–(वि०)चुंधा, किचड़ाहा ।

√**क्लिश्**—दि० आत्म० अक० पीड़ित होना । क्लिश्यते, क्लेशिष्यते, अक्लेशिष्ट, क्र्या० पर० सक० सताना । क्लिश्नाति, क्लेशिष्यति– क्लेक्ष्यति, अक्लेशीत् —अक्लिक्षत् ।

क्लिशित, क्लिष्ट–(वि०) [√क्लिश्+क्त] पीड़ित, दुःखी, सन्तप्त । सताया हुआ । मुर-

झाया हुआ। विरोधी, असङ्गत [जैसे, मेरी माता वन्ध्या है।] कृत्रिम। लज्जित।

क्लिष्टि—(स्त्री०) [√क्लिश्+क्तिन्] सन्ताप, पीड़ा, दुःख। नौकरी, चाकरी, सेवा।

√क्लिब्—(व्) भ्वा० आत्म० अक०, मस्त होना। नपुंसक होना। चतुर न होना। क्लीब (व) ते, क्लीवि (वि) ष्यते, अक्लीवि- (चि) ष्ट।

क्लीब, क्लीव—(वि०) [√क्लीव् (व) +क] नपुंसक, हिजड़ा। भीरु, निर्बल। ओछा, नीच। सुस्त, काहिल। नपुंसकलिङ्ग का। (पुं०, न०) नपुंसक, हिजड़ा, खोजा।—'न मूत्रं फेनिलं यस्य विष्ठा चाप्सु निमज्जति। मेढ्रं चोन्मादशुक्राभ्यां हीनं क्लीवः स उच्यते।'—कात्यायन। नपुंसकलिङ्ग।

क्लेद—(पुं०) [√क्लिद्+घञ्] नमी, तरी, सील। फोड़े का बहाव। कष्ट, दुःख, पीड़ा।

क्लेश—(पुं०) [√क्लिश्+घञ्] पीड़ा, कष्ट, क्रोध। सांसारिक झंझट।—**क्षम**— (वि०) कष्ट सहन करने योग्य।

क्लैब्य, क्लैव्य—(न०) [क्लीब (व)+ ष्यञ्] नपुंसकता। भीरुता; 'क्लैव्यं मा स्म गमः पार्थ' गी० २.३। निरर्थकता।

क्लोमन्—(न०) [√क्लु+मनिन्] दाहिना फेफड़ा, फुफ्फुस।

क्व—(अव्य०) [किम्+अत्, कु आदेश] कहाँ, किधर।—**चित्**-(अव्य०) कहीं। कहीं-कहीं। बहुत कम। कभी।

क्वण्—भ्वा० पर० अक० झंकार करना, घुंघरू जैसा शब्द करना। क्वणति, क्वणिष्यति, अक्वणीत्, —अक्वाणीत्।

क्वण—(पुं०), **क्वणन, क्वणित**—(न०), **क्वाण**—(पुं०) [√क्वण्+अप्] [√क्वण् +ल्युट्] [√क्वण्+क्त] [√क्वण्+घञ्] शब्द। किसी भी बाजे का शब्द।

क्वत्य—(वि०) [क्व+त्यप्] किस स्थान का, कहाँ का।

क्वथ्—भ्वा० पर० सक० उबालना, काढ़ा बनाना। जीर्ण करना, पचाना। क्वथति, क्वथिष्यति, अक्वथीत्।

क्वथ, क्वाथ—(पुं०) [√क्वथ्+अच्] [√क्वथ्+घञ्] काढ़ा।

क्वाचित्क—(वि०) [स्त्री०—**क्वाचित्की**] [क्वचित्+कञ्] क्वचित् होने, मिलने वाला। दुर्लभ। असाधारण।

क्ष—(पुं०) [√क्षि+ड] नाश। अन्तर्धान, अदर्शन। विद्युत्। क्षेत्र। किसान। विष्णु का चौथा या नृसिंहावतार। राक्षस।

√क्षण्, √क्षन्—त० उभ० सक० घायल करना। भङ्ग करना। क्षणोति, —क्षणुते, क्षणिष्यति—ते, अक्षणीत्—अक्षणिष्ट।

क्षण—(पुं०, न०) [√क्षण्+अच्] लहमा, पल, सेकेण्ड। अवकाश, फुर्सत।—'अहमपि लब्धक्षणः स्वगृहं गच्छामि।'—मालविकाग्निमित्र। उपयुक्त क्षण, अवसर। शुभ क्षण। उत्सव, हर्ष। परतंत्रता, दासता। मध्य विन्दु, मध्य।—**क्षेप**—(पुं०) क्षण भर का विलम्ब।—**द**—(पुं०) ज्योतिषी। (न०) पानी, जल।—**दा**—(स्त्री०) रात्रि; 'क्षणादथैष क्षणदा-पतिप्रभः' नैष० १.६७। हल्दी।—०कर,—**पति**—(पुं०) चन्द्रमा।—**द्युति**—(स्त्री०) **प्रभा**—(स्त्री०) विद्युत्, बिजली।—**निः-श्वास**—(पुं०) सूँस, शिशुमार।—**भङ्गुर**— (वि०) छन भर में, थोड़ी ही देर में मिट जाने वाला। निर्बल।—**रामिन्**—(पुं०) कबूतर, परेवा।—**विध्वंसिन्**—(वि०) एक क्षण में नष्ट होने वाला। (पुं०) एक श्रेणी का नास्तिक दार्शनिक।

क्षणतु—(पुं०) [√क्षण्+अतु] घाव, फोड़ा।

क्षणन—(न०) [√क्षण्+ल्युट्] घाव करना, चोटिल करना। मार डालना।

क्षणिक—(पुं०) [क्षण+ठन्] क्षणभर का, दमभर का।

क्षणिका—(स्त्री०) [क्षणिक+टाप्] विद्युत्, बिजली ।

क्षणिन्—(वि०) [क्षण+इनि] [स्त्री०—**क्षणिनी**] अवकाश रखने वाला । दमभर का, क्षणिक ।

क्षणिनी—(स्त्री०) [क्षणिन्+ङीप्] रात, रजनी ।

क्षत—(न०) [√क्षण्+क्त] घाव, जख्म । चोट से होने वाला फोड़ा । दुःख । भय । खतरा । (वि०) घायल । काटा हुआ । भंग किया हुआ । तोड़ा हुआ । चीरा हुआ । फाड़ा हुआ ।—**अरि** (क्षतारि)–(वि०) विजयी, फतहयाव ।—**उदर** (क्षतोदर)–(न०) दस्तों की बीमारी ।—**कास**–(पुं०) खाँसी जो चोटफेंट से उत्पन्न हुई हो ।—**ज**–(न०) रक्त, लोहू, खून; 'स छिन्नमूलः क्षतजेन रेणुः' र० ७.४३ । पीप, पसेव, राल ।—**योनि**–(स्त्री०) उपभुक्त स्त्री, वह स्त्री जो पुरुष के साथ सम्भोग करा चुकी हो ।—**विक्षत**–(वि०) जिसका शरीर घावों से भरा हो ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) आजीविका-रहित ।—**व्रत**–(पुं०) ब्रह्मचारी, व्रतभङ्ग करने वाला ब्रह्मचारी ।

क्षति—(स्त्री०) [√क्षण्+क्तिन्] चोट, घाव । विनाश । बरबादी, हानि, नुकसान, ह्रास, कमी ।

क्षत्तृ—(पुं०) [क्षद्+तृच्] वह जो काटता या मोड़ता है । द्वारपाल, दरवान । कोचवान, सारथी । शूद्र पुरुष और क्षत्रिया स्त्री से उत्पन्न पुरुष । दासीपुत्र । ब्रह्मा । मछली ।

क्षत्र—(न०, पुं०) [√क्षण्+क्विप्, क्षत् ततः त्रायते, √त्रै+क] अधिकार, प्रभुता, शक्ति । क्षत्रिय जाति का पुरुष या क्षत्रिय जाति ।—**अन्तक** (क्षत्रान्तक)–(पुं०) परशुराम ।—**धर्म**–(पुं०) बहादुरी, वीरता, सैनिक शूरता । क्षत्रिय के अवश्य कर्त्तव्य कर्म ।—**प**–(पुं०) शासक, मण्डलेश्वर, सूबेदार ।—**बन्धु**–(पुं०) जाति का क्षत्रिय । केवल क्षत्रिय, दुष्ट या पापी क्षत्रिय । (यह गाली है जैसे 'ब्रह्मबन्धु') ।

क्षत्रिय—(पुं०) [क्षत्र+घ–इय] दूसरे वर्ण का पुरुष, राजपूत ।—**हण**–(पुं०) परशुराम ।

क्षत्रियका, क्षत्रिया, क्षत्रियिका–(स्त्री०) [क्षत्रिया+कन्–टाप्, ह्रस्व] [क्षत्रिय+टाप्] [क्षत्रिया+कन्–टाप्, इत्व] क्षत्रिय वर्ण की स्त्री । क्षत्रिय की पत्नी ।

क्षत्रियाणी—(स्त्री०) [क्षत्रिय+ङीष्, आनुक्] क्षत्रिय वर्ण की स्त्री । क्षत्रिय की पत्नी ।

क्षत्रियी—(स्त्री०) [क्षत्रिय+ङीष्] क्षत्रिय की पत्नी ।

क्षन्तृ—(वि०) [√क्षम्+तृच्] [स्त्री०—**क्षन्त्री**] धैर्यवान्, सहन-शील । विनयी ।

√क्षप्—चु० उभ० सक० फेंकना । भेजना । प्रेरित करना । क्षपयति—ते, क्षपयिष्यति—ते, अचिक्षिपत्—त ।

क्षपण—(पुं०) [√क्षप्+णिच्+ल्यु] बौद्ध सम्प्रदाय का भिक्षुक । (न०) [√क्षप्+ल्युट्] अशौच, सूतक, अशुद्धि । नाश । निर्वासन ।

क्षपणक—(पुं०) [क्षपण+कन्] बौद्ध या जैन भिक्षुक ।

क्षपणी—(स्त्री०) [√क्षप्+ल्युट्–ङीप्] जड़ । जाल ।

क्षपण्यु—(पुं०) [√क्षप्+अन्यु, णत्व] अपराध, जुर्म ।

क्षपा—(स्त्री०) [√क्षप्+अच्–टाप्] रात, रजनी । हल्दी ।—**अट** (क्षपाट)–(पुं०) रात में घूमने वाला । राक्षस । पिशाच; 'ततः क्षपाटैः पृथुपिङ्गलाक्षैः' भट्टि० २.३० ।—**कर,—नाथ**–(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**घन**–(पुं०) काला मेघ ।—**चर**–(पुं०) राक्षस । पिशाच ।

√क्षम्—भ्वा० आत्म० सक० सहना । क्षमते, क्षमिष्यते,—क्षंस्यते, अक्षमिष्ट-अक्षंस्त । दि० पर० सक० सहना । क्षाम्यति, क्षमिष्यति—क्षंस्यति, अक्षमत् ।

क्षम—(वि०) [√क्षम्+अच्] धैर्यवान् । सहनशील, विनयी । उपयुक्त, योग्य । उचित, ठीक । सहने योग्य, सह लेने योग्य । अनुकूल ।

क्षमा—(स्त्री०) [√क्षम्+अङ –टाप्] धैर्य, सहनशक्ति, माफी । पृथिवी । दुर्गा देवी ।—**ज**-(पुं०) मङ्गल ग्रह ।—**भुज्-भुज**-(पुं०) राजा ।

क्षमितृ—(वि०) [स्त्री०-**क्षमित्री**], **क्षमिन्**—(वि०) [स्त्री०—**क्षमिनी**] [√क्षम्+तृच्] [√क्षम्+घिनुण्] धैर्यवान् । क्षमाशील, सहनशील ।

क्षमिन्—(वि०) [√क्षम्+घिनुण्] क्षमा करने वाला ।

क्षय—(पुं०) [√क्षि+अच्] घर, मकान । हानि । ह्रास, कमी । अन्त, नाश; 'निशाक्षये याति ह्रियेव पाण्डुताम्' । समाप्ति । आर्थिक हानि । (भाव का) गिराव । स्थानान्तरितकरण । प्रलय । यक्ष्मा रोग । साधारणतः कोई भी रोग । बीजगणित में ऋण या बाकी ।—**कर**-(वि०) नाशक, नाश करने वाला ।—**काल**-(पुं०) प्रलय का समय । घटती का समय ।—**कास**—(पुं०) क्षय रोग से उत्पन्न खाँसी ।—**पक्ष**-(पुं०) अँधियारा पाख ।—**युक्ति**-(स्त्री०),—**योग**- (पुं०) नाश करने का अवसर ।—**रोग**-(पुं०) यक्ष्मा रोग; तपेदिक की बीमारी ।—**वायु**-(पुं०) प्रलयकालीन पवन ।—**संपद्**-(स्त्री०) नितान्त हानि, सम्पूर्णतः हानि, सर्वनाश ।

क्षयथु—(पुं०) [√क्षि+अथुच्] क्षय रोग या उसकी खाँसी ।

क्षयिन्—(वि०) [क्षय +इनि] [स्त्री०—**क्षयिणी**] विनाशक, नाशक । क्षयरोगग्रस्त । विनश्वर । (पुं०) चन्द्रमा ।

क्षयिष्णु—(वि०) [√क्षि+इष्णुच्] नाश करने वाला । विनश्वर, टूटने-फूटने वाला ।

√क्षर्—भ्वा० पर० अक० बहना । चलना । क्षरति, क्षरिष्यति, अक्षारीत् ।

क्षर—(वि०) [√क्षर्+अच्] बहने वाला । जङ्गम, चर । (न०) पानी । शरीर । (पुं०) बादल ।

क्षरण—(न०) [√क्षर्+ल्युट्] बहने, चूने, टपकने, रिसने की क्रिया । पसीना लाने की क्रिया ।

क्षरिन्—(पुं०) [क्षर+इनि] वर्षा ऋतु ।

√क्षल्—चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० धोना, माँजना । पोंछ डालना । क्षालयति-ते,—क्षलति, क्षालयिष्यति-ते,—क्षलिष्यति, अचिक्षलत्-त,—अक्षालीत् ।

क्षव, क्षवथु—(पुं०) [√क्षु + अप्] [√क्षु+अथुच्] छींक । खाँसी ।

क्षात्र—(वि०) [क्षत्र+अण्] [स्त्री०—**क्षात्री**] क्षत्रिय सम्बन्धी या क्षत्रिय का । (न०) क्षत्रिय का कर्म । क्षत्रिय जाति । क्षत्रिय का भाव, क्षत्रियत्व ।

क्षान्त—(वि०) [√क्षम्+क्त] धैर्यवान्, सहनशील, क्षमावान् । माफ किया हुआ ।

क्षान्ता—(स्त्री०) [क्षान्त+टाप्] पृथिवी ।

क्षान्तु—(वि०) [√क्षम्+तुन्, वृद्धि] धैर्यवान् सहनशील । (पुं०) पिता, जनक, बाप ।

क्षाम—(वि०) [√क्षै+क्त] झुलसा हुआ । पतला । थोड़ा । निर्बल । नष्ट । (न०) क्षय । (पुं०) विष्णु ।

क्षार—(वि०) [√क्षर्+ण] खारा । क्षरणशील, रिसने वाला, बहने वाला । (न०) काला नमक । पानी, जल । (पुं०) रस, सार । शीरा, चोटा, राब । कोई भी तीक्ष्ण पदार्थ । शीशा । लच्चा, ठग ।—**अच्छ** (क्षाराच्छ)

-(न०) समुद्री नमक ।--**अञ्जन** (क्षारा-ञ्जन)-(न०) खारा अञ्जन या लेप ।--**अम्बु** (क्षाराम्बु)-(न०) खारा रस ।--**उद** (क्षारोद),--**उदक** (क्षारोदक),--**उदधि** (क्षारोदधि),--**समुद्र**-(पुं०) खारा समुद्र ।--**त्रय**,--**त्रितय**-(न०) सज्जी, शोरा और जवाखार (या सोहागा)।--**नदी**-(स्त्री०) नरक में खारे पानी की एक नदी ।--**भूमि**,--**मृत्तिका**-(स्त्री०) लुनिया जमीन ।--**मेलक**-(पुं०) खारा पदार्थ ।--**रस**-(पुं०) खारा रस ।

क्षारक--(पुं०) [क्षार+कन्] खार । रस, क्षार ।[√क्षर्+ण्वुल]पिंजड़ा । टोकरी या जाल जिसमें पक्षी रखे जाते हैं। धोबी।कली ।

क्षारण--(न०), **क्षारणा**--(स्त्री०)-[√क्षर्+णिच्+ल्युट्][√ क्षर् + णिच् +युच्] खार बनाना । टपकाना । पारे का १५ वाँ संस्कार । अभिशाप, अभियोग, विशेष कर व्यभिचार या लम्पटता का।

क्षारिका--(स्त्री०) [√क्षर्+ण्वुल्--टाप्, इत्व] भूख ।

क्षारित--(वि०) [√क्षर्+णिच्+क्त] टपकाया हुआ । लम्पटता का झूठा दोष लगाया हुआ ।

क्षालन--(न०) [√क्षल्+णिच्+ल्युट्] धोना, साफ करना, पखारना । छिड़कना ।

क्षालित--(वि०) [√क्षल्+णिच्+क्त] धुला हुआ, साफ किया हुआ; तथा वृत्तं पापैः व्यथयति यथा क्षालितमपि' उत्त० १.२८ । पोंछा हुआ, झाड़ा हुआ ।

√क्षि--भ्वा० पर० अक० क्षय होना । क्षयति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् । स्वा० पर० सक० हिंसा करना । क्षिणोति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् । तु० पर० सक० जाना, अक० निवास करना । क्षियति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् । क्र्या० पर० सक० मारना । क्षिणाति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् ।

√ क्षिण्--त० उभ० सक० मारना । क्षिणोति--क्षिणुते, क्षेणिष्यति-ते, अक्षेणीत् --अक्षेणिष्ट ।

क्षिति--(स्त्री०) [√क्षि+क्तिन्] पृथिवी । गृह, आवासस्थान । हानि, नाश ।।प्रलय ।--**ईश** (क्षितीश),--**ईश्वर** (क्षितीश्वर) -(पुं०) राजा ।--**कण**-(पुं०) धूल, रज ।--**कम्प**-(पुं०) भूचाल, भूडोल ।--**क्षित्**-(पुं०) राजा ।--**ज**-(पुं०) वृक्ष । केचुआ । मङ्गलग्रह । नरकासुर । (न०) अन्तरिक्ष ।--**जा**-(स्त्री०) सीता ।--**तल**-(न०) पृथिवी-तल, जमीन की सतह ।--**देव**-(पुं०) ब्राह्मण ।--**धर**-(पुं०) पहाड़ ।--**नाथ**,--**प**,--**पति**,--**पाल**,--**भुज्**,--**रक्षिन्** -(पुं०) राजा, सम्राट् ।--**पुत्र**-(पुं०) मङ्गल-ग्रह ।--**प्रतिष्ठ**-(वि०) धरती पर बसने-वाला ।--**भृत्**-(पुं०) पर्वत, पहाड़ ।--**मण्डल**-(न०) भूमण्डल, भगोलक ।--**रन्ध्र**-(न०) गढ़ा, गर्त ।--**रुह**-(पुं०) पेड़, वृक्ष ।--**वर्धन**-(पुं०) शव, मुर्दा, मृतकशरीर, लाश ।--**वृत्ति**-(स्त्री०) धैर्ययुक्त व्यवहार या आचरण । पृथिवी की गति ।--**व्युदास**-(पुं०) बिल ।

क्षिद्र--(पुं०)[√क्षिद्+रक्]रोग । सूर्य । सींग ।

√क्षिप्--तु० उभ० [किन्तु जब इसके पूर्व अभि, प्रति, और अति जोड़े जाते हैं तब यह धातु पर० होती है ।] सक० फेंकना; 'किं कूर्मस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मां न क्षिपत्येष यत्' मु० २.१८ । पटकना । भेजना, रवाना करना । छोड़ना, मुक्त कर देना । रखना, स्थापित करना । लगाना । अर्पित करना । छीन लेना । नाश कर डालना । खारिज कर देना, अस्वीकृत कर देना । घृणा करना । अपमान करना । क्षिपति-ते, क्षेप्स्यति-ते, अक्षैप्सीत्-अक्षिप्त ।

क्षिपण--(न०) [√क्षिप्+ल्युट्] भेजना, पठाना । फेंकना । गाली-गलौज ।

क्षिपणि, क्षिपणी—(स्त्री०) [√क्षिप्+अनि] [क्षिपणि+ङीष्] डाँड़ । जाल । हथियार । आघात, चोट, प्रहार ।

क्षिपण्यु—(पुं०) [√क्षिप्+कन्युच्] शरीर, वसन्तऋतु ।

क्षिपा—(स्त्री०) [√ क्षिप्+अङ—टाप्] भेजना । फेंकना । रात्रि ।

क्षिप्त—(वि०) [√क्षिप्+क्त] फेंका हुआ । त्यागा हुआ । अनादृत । स्थापित । पागल । सिड़ी । (न०) गोली का घाव ।—**कुक्कुर**—(पुं०) पागल कुत्ता ।—**चित्त**—(वि०) चंचल चित्त वाला । विकल ।—**देह**—(वि०) लेटा हुआ, पसरा हुआ ।

क्षिप्ति—(स्त्री०) [√क्षिप्+क्तिन्] फेंकना । कूटार्थ, पहेली का अर्थ ।

क्षिप्र—(वि०) [√ क्षिप् + रक्] [तुलनात्मक—क्षेपीयस् । क्षेपिष्ठ] फुर्तीला, शीघ्रगामी । लचीला । (न०, पुं०) अँगूठे और तर्जनी के बीच का स्थान । मुहूर्त का १५वाँ भाग । (अव्य०) जल्द, तत्काल ।—**कारिन्**—(वि०) तेजी से काम करने वाला । मुस्तैद ।

क्षिया—(स्त्री०) [√क्षि+अङ—टाप्] हानि, नाश, बरबादी । ह्रास । असभ्यता । आचारभेद ।

√क्षिव्—भ्वा० पर० सक० दूर करना । क्षेवति, क्षविष्यति, अक्षेवीत् ।

√क्षीज्—भ्वा० पर० अक० अव्यक्त शब्द करना । क्षीजति, क्षीजिष्यति, अक्षीजीत् ।

क्षीजन—(न०) [√क्षीज्+ल्युट्] पोले नरकुल आदि में से निकली हुई सरसराहट की आवाज ।

क्षीण—(वि०) [√क्षि+क्त, दीर्घ] दुबला, पतला, लटा हुआ । खर्च कर डाला गया । नाजुक । स्वल्प, थोड़ा, कम । धनहीन, गरीब । शक्तिहीन, निर्बल ।—**चन्द्र**—(पुं०) कृष्णपक्ष का चन्द्रमा ।—**धन**—(वि०) निर्धन, गरीब ।—**पाप**—(वि०) पाप का फल भोगने के पीछे उस पाप से रहित ।—**पुण्य**—(वि०) जिसका संचित पुण्यफल पूरा हो चुका हो और जिसे अगले जन्म के लिये पुनः पुण्यफल सञ्चय करना चाहिये ।—**मध्य**—(वि०) पतली कमर वाला ।—**वासिन्**—(वि०) खँडहर में रहने वाला ।—**विक्रान्त**—(वि०) साहस या सत्य से रहित ।—**वृत्ति**—(वि०) आजीविका से रहित ।

क्षीव्—भ्वा० आत्म० अक० मत्त होना, मस्त होना । क्षीवते, क्षीविष्यते, अक्षीविष्ट ।

क्षीव—(वि०) [√क्षीव्+क्त, नि० साधुः] मत्त, मतवाला ।

क्षीर—(पुं०, न०) [घस्यते अद्यते, √घस्+ईरन्, उपधालोपः, घस्य ककारः षत्वञ्च] दूध । किसी वृक्ष का दूध जैसा रस । जल ।—**अद** (**क्षीराद**)—(पुं०) बच्चा, शिशु ।—**अब्धि** (**क्षीराब्धि**)—(पुं०) दूध का समुद्र ।—**०ज** (**क्षीराब्धिज**)—(पुं०) चन्द्रमा । मोती ।—**०जा** (**क्षीराब्धिजा**),—**०तनया** (**क्षीराब्धितनया**)—(स्त्री०) लक्ष्मी ।—**आह्व** (**क्षीराह्व**)—(पुं०) सरल वृक्ष, सनौवर का वृक्ष ।—**उद** (**क्षीरोद**)—(पुं०) दूध का समुद्र; 'क्षीरोदवेलेव सफेनपुञ्जा' कु० ७.२६ ।—**ऊर्मि** (**क्षीरोर्मि**)—(स्त्री०) दूध के समुद्र की लहर ।—**ओदन** (**क्षीरोदन**)— (पुं०) दूध में उबले हुए चावल ।—**कण्ड**—(पुं०) बच्चा, शिशु ।—**ज**—(न०) जमौआ दूध, जमा हुआ दूध ।—**तनया**—(स्त्री०) लक्ष्मी ।—**द्रुम** (पुं०) अश्वत्थ वृक्ष । बरगद का पेड़ ।—**धात्री**—(स्त्री०) दूध पिलाने वाली दासी ।—**धि,—निधि**—(पुं०) दूध का समुद्र ।—**धेनु**—(स्त्री०) दुधार गाय ।—**नीर**—(न०) पानी और दूध । दूध सदृश जल । घोल-मेल, मिलावट ।—**प**—(पुं०) दूध पीने वाला बच्चा ।—**वारि, वारिधि**—(पुं०) दूध का समुद्र ।—**विकृति**—(स्त्री०) जमा

हुआ दूध, दूध का विकार।—**वृक्ष**–(पुं०) न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ और मधूक नाम के वृक्ष।—**शर**–(पुं०) मलाई। दूध का झाग या फेन।—**समुद्र**–(पुं०) दूध का समुद्र।—**सार**–(पुं०) मक्खन।—**हिण्डीर**–(पुं०) दूध का फेन।

क्षीरिका—(स्त्री०) [क्षीर+ठन्–टाप्] पिंडखजूर। वंशलोचन। खीर, दूध से बना खाद्य पदार्थ।

क्षीरिन्—(वि०) [क्षीर+इनि] दुधार, दूध देने वाला।

क्षीव्—दे० '√क्षीव्'।

क्षीव—(वि०) दे० 'क्षीव'।

√क्षु—अ० पर० अक० छींकना। खाँसना, खखारना। क्षौति, क्षविष्यति, अक्षावीत्।

क्षुण्ण—(वि०) [क्षुद्+क्त] कुचला हुआ, कूटा हुआ। अभ्यस्त। अनुगत। चूर्ण किया हुआ।—**मनस्**–(वि०) पश्चात्ताप करने वाला।

क्षुत्—(स्त्री०) [√क्षु+क्विप्, तुगागम] भूख, क्षुधा। छींक।—**क्षाम**—(वि०) आहार न मिलने से दुर्बल, क्षुधाक्षीण।—**पिपासा**—(स्त्री०) भूख-प्यास।

क्षुत—(न०) [√क्षु+क्त] छींक।

क्षुतक—(पुं०) [क्षुत+कन्] राई।

क्षुता—(स्त्री०) [क्षुत+टाप्] छींक।

√क्षुद्—रु० उभ० सक० पीसना। क्षुणत्ति—क्षुन्ते, क्षोदिष्यति—ते, अक्षुदत्—अक्षोदीत्—अक्षोदिष्ट।

क्षुद्र—(वि०) [√क्षुद्+रक्] बिलकुल छोटा। छोटा। ओछा, कमीना। उद्दण्ड। निष्ठुर। गरीब। कंजूस।—**अञ्जन** (क्षुद्राञ्जन)–(न०) रोग विशेष में व्यवहार किया जाने वाला सुर्मा।—**अन्त्र** (क्षुद्रान्त्र)–(पुं०) हृदय के भीतर का छोटा-सा रन्ध्र।—**उलूक** (क्षुद्रोलूक)–(पुं०) उल्लू।—**कम्बु**–(पुं०) छोटा शङ्ख।—**कुष्ठ**–(न०) एक प्रकार की हल्की कोढ़।—**घण्टिका**–(स्त्री०) घुंघरू, रोना। वजनी करधनी।—**चन्दन**–(न०) लाल-चन्दन की लकड़ी।—**जन्तु**–(पुं०) कोई भी क्षुद्र जीव।—**दंशिका**–(स्त्री०) डाँस, गो-मक्षिका।—**बुद्धि**–(वि०) ओछी बद्धि का, कमीना।—**रस**–(पुं०) शहद।—**रोग**–(पुं०) मामूली बीमारी, आयुर्वेद में इस प्रकार की ४४ बीमारियाँ गिनायी गयी हैं।—**शङ्ख**–(पुं०) छोटा घोंघा।—**सुवर्ण**–(न०) खोटा या हल्का सोना।

क्षुद्रल—(वि०) [क्षुद्र+लच्] महीन, छोटा। (पशुओं और रोगों के लिये इस शब्द का प्रयोग विशेप रूप से होता है।)

क्षुद्रा—(स्त्री०) [क्षुद्र+टाप्] मधुमक्षिका। कर्कशा स्त्री। लंजी औरत। वेश्या, रंडी।

√क्षुध्—दि० पर० अक० भूखा होना, भूख लगना। क्षुध्यति, क्षुत्स्यति, अक्षुधत्।

क्षुध्, क्षुधा—(स्त्री०) [√क्षुध्+क्विप्] [क्षुध्+टाप्] भूख।—**आर्त** (क्षुधार्त),—**आविष्ट** (क्षुधाविष्ट)–(वि०) भूख से पीड़ित।—**क्षाम** (क्षुत्क्षाम)–(वि०) भूखे रहते-रहते दुबला हो गया हुआ।—**पिपासित** (क्षुत्पिपासित)–(वि०) भूखा-प्यासा।—**निवृत्ति** (क्षुन्निवृत्ति)–(स्त्री०) भूख का दूर होना, पेट भरना।

क्षुधालु—(वि०) [√क्षुध्+आलुच्] भूखा।

क्षुधित—(वि०) [√क्षुध्+क्त] भूखा।

क्षुप—(पुं०) [√क्षुप्+क] झाड़ी, झाड़।

क्षुब्ध—(वि०) [√क्षुभ्+क्त] क्षोभयुक्त, उत्तेजित, अशान्त, भीत। जिसमें जोर की लहरें उठ रही हों। तूफानी (समुद्र)। (पुं०) मथानी की डाँड़ी; 'शोभैव मन्दरक्षुब्धक्षोभिताम्भोधिवर्णना' शि० २.१०७। रति का एक आसन।

√क्षुभ्—भ्वा० आत्म० अक० काँपना, थरथराना। उत्तेजित होना। विकल होना।

अस्थिर होना । क्षोभते, क्षोभिष्यते, अक्षोभिष्ट । दि० पर० क्षुभ्यति, क्षोभिष्यति, अक्षोभीत् । क्र्या० पर० क्षुभ्नाति ।

क्षुभित—(वि०) [√ क्षुभ्+क्त] अशान्त, व्याकुल । भयभीत । क्रुद्ध ।

क्षुमा— (स्त्री०) [√क्षु+मक्, टाप्] अलसी, एक प्रकार का सन ।

√**क्षुर्**—तु० पर० सक० काटना । खरोंचना । हल से खेत में रेखाएँ सी खींचना । रेखा खींचना । क्षुरति, क्षोरिष्यति, अक्षोरीत् ।

क्षुर—(पुं०) [√क्षुर्+क] छुरा, उस्तरा । छुरेनुमा शरपक्ष । गौ, घोड़े आदि का खुर । तीर ।—**कर्मन्** (न०)—**क्रिया**- (स्त्री०) हजामत ।—**चतुष्टय**- (न०) हजामत के लिये आवश्यक चार वस्तुएँ ।—**धान**,—**भाण्ड**-(न०) उस्तरे का घर, नाऊ की पेटी । —**धार**-(वि०) छुरे की तरह पैना ।—**प्र**- (पुं०) घोड़े के सुम के आकार की नोक वाला तीर । कुदाली, फावड़ी ।—**मर्दिन्**,—**मुण्डिन्**- (पुं०) नाई, हज्जाम ।

क्षुरिका, क्षुरी--(स्त्री०) [क्षुर—ङीप्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [क्षुर+ङीप्] चाकू, छुरी, कटार । छोटा उस्तरा ।

क्षुरिणी--(स्त्री०) [क्षुर+इनि—ङीप्] हज्जाम की पत्नी, नाइन, नाउन ।

क्षुरिन्—(पुं०) [क्षुर+इनि] हज्जाम, नाऊ, नाई ।

क्षुल्ल—(वि०) [क्षुदं लाति गृह्णाति, क्षुद्√ला+क] छोटा, कम, स्वल्प ।

क्षुल्लक—(वि०) [क्षुल्ल+कन्] थोड़ा । छोटा । नीच, तुच्छ । निर्धन । दुष्ट, कलुषित हृदय का । पीड़ित । कठिन ।

क्षेत्र--(न०) [√क्षि+त्रन्] खत । स्थावर सम्पत्ति । स्थान । तीर्थस्थान । चारों ओर से घेरा हुआ चौगान । उर्वरा भूमि, उपजाउ जमीन । उत्पत्तिस्थान । भार्या । शरीर । मन । घर । क्षेत्र, रेखागणित की एक आकृति [जैसे त्रिभुज] । अङ्कित क्षेत्र, चित्र ।—**अधिदेवता** (**क्षेत्राधिदेवता**),-(स्त्री०) किसी पवित्र स्थल का अधिष्ठातृ या रक्षक देवता । **आजीव**— (क्षेत्राजीव), —**कर**-(पुं०) किसान, खेतिहर ।—**गणित**-(न०) खेत, जमीन का रकवा निकालने की विद्या । भूमिति, रेखागणित ।—**गत**- (वि०) रेखागणित सम्बन्धी या भूमि की नापजोख सम्बन्धी । —**ज**-(वि०) क्षेत्रोत्पन्न । शरीरोत्पन्न । (पुं०) १२ प्रकार के पुत्रों में से एक, नियोग द्वारा उत्पन्न पुत्र ।—**जात**-(पुं०) दूसरे की भार्या से उत्पन्न किया आ पुत्र ।—**ज्ञ**- (वि०) स्थलों का जानकार । चतुर, दक्ष । (पुं०) जीवात्मा । परमात्मा; 'क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि' गीता । अधर्मी, दुराचारी । किसान । —**पति**-(पुं०) जमीन का मालिक । —**पद**-(पुं०) किसी देवता के उद्देश्य से उत्सर्ग किया हुआ पवित्र स्थल ।—**पाल**- (पुं०) खेत का रखवाला । देवता विशेष जो खेत की रखवाली करता है । शिव ।—**फल**- (न०) खेत की लंबाई-चौड़ाई का माप ।—**भक्ति**-(स्त्री०) खेत का विभाग ।—**भूमि**- (स्त्री०) भूमि जिसमें खेती की जाती है ।—**विद्**-(वि०) दे० 'क्षेत्रज्ञ' । (पुं०) किसान । आध्यात्मिक ज्ञान सम्पन्न विद्वान् । जीवात्मा । —**स्थ**-(वि०) पवित्र स्थल में रहने वाला ।

क्षेत्रिक--(वि०) [क्षेत्र+ठन्] [स्त्री०—**क्षेत्रिकी**] क्षेत्र सम्बन्धी; (पुं०) किसान । जोता ।

क्षेत्रिन्--(पुं०) [क्षेत्र+इनि] कृषक । (नाममात्र का) जोता । जीवात्मा । परमात्मा ।

क्षेत्रिय--(वि०) [क्षेत्र+घ] खेत सम्बन्धी । असाध्य । (न०) आभ्यन्तरिक रोग । चरागाह, गोचरभूमि । (पुं०) लम्पट । व्यभिचारी ।

क्षेप--(पुं०) [√क्षिप्+घञ्] उछालना । फेंकना । पटकना । घूमना । अवयवों का

चालन। भेजना, रवाना करना। भङ्ग करना। (नियम) तोड़ना। व्यतीत कर डालना। विलम्ब। दीर्घसूत्रता। अपशब्द। अपमान। अभिमान। पुष्प-स्तवक गुलदस्ता।

क्षेपक––(वि०) [√क्षिप्+ण्वुल् वा क्षप+कन्] फेंकने वाला। भेजने वाला। मिलावटी। बीच में घुसेड़ा हुआ। अपमान-कारक। (पुं०) मिलावटी या बनावटी भाग। किसी ग्रन्थ का वह अंश जो मूलग्रन्थकार का न हो कर अन्य किसी ने मूलग्रन्थकार के नाम से स्वयं बनाकर ग्रन्थ में जोड़ दिया हो, पुस्तक में ऊपर से मिलाया हुआ पाठ।

क्षेपण––(न०) [√क्षिप्+ल्युट्] फेंकना। भेजना। बतलाना। व्यतीत करना। छोड़ जाना। गाली देना। गुफना या गोफन नामक एक यंत्र जिसमें रखकर कंकड़ दूर तक फेंका जाता है।

क्षेपणि, क्षेपणी––(स्त्री०) [√क्षिप्+अनि] [क्षेपणि+ङीप्]: डाँड़। मछली पकड़ने का जाल। गोफ या गुफना जिससे कंकड़ दूर तक फेंके जाते हैं।

क्षेम––(वि०) [√क्षि+मन्] सुरक्षित। प्रसन्न। सुखी। नीरोग। (पुं०, न०) शान्ति। प्रसन्नता। चैन। सुख। नीरोगता। निर्विघ्नता। रक्षा। जो वस्तु पास है उसका रक्षण; 'योगक्षेमंवहाम्यहम्' गीता। मोक्ष, अनन्तसुख। (पुं०) एक प्रकार का सुगन्धद्रव्य।––**कर**–[क्षेम√कृ+अच्] (**क्षेमंकर**) [क्षेम√कृ+खच्] (वि०) शुभ। मङ्गलकारी।

क्षेमिन्––(वि०) [क्षेम+इनि] [स्त्री०––**क्षेमिणी**] सुरक्षित। आनन्दित।

√क्षै––भ्वा० पर० अक० क्षय या नाश होना। क्षायति, क्षास्यति, अक्षासीत्।

क्षैण्य––(न०) [क्षीण+ष्यञ्] नाश। दुबलापन। क्षीणता।

क्षैत्र––(न०) [क्षेत्र+अण्] खेतों का समूह। खेत।

क्षैरेय––(वि०) [क्षीर+ढञ्] [स्त्री०––**क्षैरेयी**] दुधार, दूध वाला। दूध सम्बन्धी।

क्षोड––(पुं०) [क्षोड्+घञ्] हाथी बाँधने का खूँटा।

क्षोणि, क्षोणी––(स्त्री०) [√क्षै+डोनि] [क्षोणि+ङीष्] भूमि। एक की संख्या।

क्षोत्तृ––(वि०) [√क्षुद्+तृच्] कूटने-पीसने वाला। (पुं०) मूसल। बट्टा।

क्षोद––(पुं०) [√क्षुद्+घञ्] घुटाई। पिसाई। सिल या उखली। रज, धूल, कण।
––**क्षम**–(वि०) जाँच, अनुसन्धान या परीक्षा में ठहरने योग्य।

क्षोदिमन्––(पुं०) [क्षुद्र+इमनिच्] सूक्ष्मता।

क्षोभ––(पुं०) [√क्षुभ्+घञ्] हिलाना। चलना। उछालना। झटका देना। उत्तेजना। घबड़ाहट। उत्पात।

क्षोभण––(न०) [√क्षभ्+ल्युट्] उत्तेजना भड़क। (पुं०) [√क्षभ्+णिच्+ल्युट्] कामदेव के पाँच बाणों में से एक।

क्षोम––(पुं०, न०) [√क्षु+मन्] दुमंजिले पर का कमरा। अटारी। अलसी आदि के रेशों से बना हुआ कपड़ा।

क्षौणि, क्षौणी––(स्त्री०) [√क्षु+नि, वृद्धि] [क्षौणि+ङीष्] भूमि। एक की संख्या।––**प्राचीर**–(पुं०) समुद्र।––**भुज्**–(पुं०) राजा।––**भृत्**–(पुं०) पहाड़, पर्वत।

क्षौद्र––(न०) [क्षुद्र+अण्] थोड़ापन, ओछापन, नीचता। पानी। रजकण। [क्षुद्राभिः मक्षिकाभिः निर्वृत्तम्, क्षुद्रा+अञ्] शहद, मधु।––**ज**–(न०) मोम। (पुं०) चम्पा का वृक्ष।

क्षौद्रेय––(न०) [क्षौद्र+ढञ्] मोम।

क्षौम––(न०) [√क्षु+मन्+अण्] (पुं०) रेशमी वस्त्र, बुना हुआ रेशम; 'क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं' श० ४.५। हवादार अटा या अटारी। मकान का पिछवाड़ा। (न०) अस्तर। अलसी।

क्षौमी—(स्त्री०) [क्षुमा+अण्—ङीप्] सन, पटसन ।
क्षौर—(न०) [क्षुर+अण्] हजामत ।
क्षौरिक—(पुं०) [क्षौर+ठन्]हज्जाम, नाई ।
√क्ष्णु—अ० पर० सक० तेज करना, क्ष्णौति, क्ष्णविष्यति, अक्ष्णावीत् ।
क्ष्मा—(स्त्री०) [√ क्षम्+अच्, उपधा-लोप] जमीन । एक की संख्या ।—**ज**—(पुं०) मङ्गलग्रह ।—**प**,—**पति**, —**भुज्**—(पुं०) राजा ।—**भृत्**—(पुं०) राजा या पहाड़ ।
√क्ष्माय्—भ्वा० आत्म० अक० काँपना । क्ष्मायते, क्ष्मायिष्यते, अक्ष्मायिष्ट ।
√क्ष्विड्—भ्वा० आत्म० सक० प्यार करना । क्ष्वेडते, क्ष्वेडिष्यते, अक्ष्वेडिष्ट ।
क्ष्विण्ण—(वि०) [√क्ष्विद्+क्त] छुटा हुआ । चिकना ।
√क्ष्विद्—भ्वा० आत्म० अक० भींगना । (वृक्षका) दूध निकलना । मवाद का बहना । (जब इसमें प्र लगता है तब इसका अर्थ होता है भिनभिनाना,बरबराना) । क्ष्वेदते, क्ष्वेदिष्यते, अक्ष्विदत् अक्ष्वेदिष्ट । दि० पर० क्ष्विद्यति, अक्ष्विदत् ।
क्ष्वेड—(पुं०) [√क्ष्विड्+घञ् वा अच्] आवाज, शोर । जहरीले जानवरों का जहर, विष । नमी । त्याग ।
ेडा—(स्त्री०) [√क्ष्विड्+अच्—टाप्] सहगर्जना । रणगुहार, रण में योद्धाओं की ललकार । बाँस, बल्ली ।
क्ष्वेडित—(न०) [√क्ष्विड्+क्त] सिंहनाद ।
√क्ष्वेल्—भ्वा० पर० अक० खेलना । सक० जाना । हिलाना । क्ष्वेलति, क्ष्वेलिष्यति, अक्ष्वेलीत् ।
क्ष्वेला—(स्त्री०) [√क्ष्वेल्+अ—टाप्] खेल, क्रीड़ा । हँसी, मजाक ।

ख

ख—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का दूसरा व्यञ्जन और कवर्ग का दूसरा वर्ण, इसका उच्चारण स्थान कण्ठ है, इसको स्पर्शवर्ण कहते हैं । (पुं०) [√खर्व्+ड] सूर्य । (न०) आकाश । स्वर्ग । इन्द्रिय । नगर । खेत । शून्य । अनुस्वार । रन्ध्र । शरीर के छेद या निकास यथा मुँह, कान, आँखें, नथुने, गुदा और इन्द्रिय । घाव । आनन्द । अवरक । क्रिया । ज्ञान । ब्राह्मण ।—**अट**—(पुं०) [खेऽट] ग्रह । राहु ।—**आपगा** (**खापगा**)—(स्त्री०) गङ्गा का नाम ।—**उल्क** (**खोल्क**); (पुं०) धूमकेतु । ग्रह ।—**उल्मुक** (**खोल्मुक**)—(पुं०) मङ्गल-ग्रह ।—**कामिनी**—(स्त्री०)दुर्गा ।—**कुन्तलग**—(पुं०) शिव ।—**ग**—(पुं०) चिड़िया, पक्षी । पवन । सूर्य । ग्रह । टिड्डा । देवता । बाण, तीर ।—०**अधिप** (**खगाधिप**)— (पुं०) गरुड़ ।—०**अन्तक** (**खगान्तक**)—(पुं०) बाज । गीध ।—०**अभिराम** (**खगाभिराम**) —(पुं०) शिव ।—० **आसन** (**खगासन**)—(पुं०) उदयाचलपर्वत । विष्णु ।—०**इन्द्र** (**खगेन्द्र**),—०**ईश्वर** (**खगेश्वर**)—(पुं०) गरुड़ ।—०**वती**— [खग+मतुप्, वत्व, ङीप्] (स्त्री०) पृथिवी ।—०**स्थान**—(न०) वृक्ष का कोटर या खोड़र । घोंसला ।—**गङ्गा**—(स्त्री०) आकाश गङ्गा ।—**गति**—(स्त्री०) उड़ान ।—**गम**— (पुं०) पक्षी । —**गोल**— (पुं०) आकाशमण्डल ।—०**विद्या**—(स्त्री०) ज्योतिर्विद्या ।—**चमस**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**चर**— (पुं०) (इसके **खचर**, और **खेचर**, दो रूप होते हैं) पक्षी । सूर्य । बादल । हवा; 'खचरस्य सुतस्य सुतः खचरः' महा०। राक्षस ।—**चरी** (**खचरी**,-**खेचरी**)— (स्त्री०) उड़ने वाली अप्सरा । दुर्गादेवी की उपाधि ।—**जल**—(न०) ओस । वर्षा का जल । कोहरा । कुहासा ।—**ज्योतिस्**—(पुं०) जुगनू । —**तमाल**—(पुं०) बादल । धुआँ ।—**द्योत**—(पुं०) जुगनू;

'खद्योतालीविलसितनिभां विद्युदुन्मेषदृष्टिं' मे० ८१ । सूर्य ।—**द्योतन**–(पुं०) सूर्य । —**धूप**–(पुं०) अग्निवाण ।—**पराग**–(पुं०) अन्धकार ।—**पुष्प**–(न०) आकाश का फूल (इस शब्द का प्रयोग उस समय किया जाता है, जब असम्भवता दिखलानी होती है)—निम्न श्लोक में चार असम्भवताएँ प्रदर्शित की गई हैं—'मृगतृष्णाम्भसि स्नातः शशशृङ्गधनुर्धरः । एष वन्ध्यासुतो याति खपुष्पकृतशेखरः ॥' —सुभाषित ।—**भ**–(न०)ग्रह ।—**भ्रान्ति**–(पुं०) चील ।—**मणि**–(पुं०) सूर्य ।—**मीलन**–(न०) तंद्रा, उँघाई ।—**मूर्ति**–(पुं०) शिव ।—**वारि**–(न०) वृष्टिजल । ओस ।—**वाष्प**–(पुं०) ओस । कुहरा, कुहासा ।—**शय** या **खेशय**–(वि०) आकाश में सोने वाला या रहने वाला । —**श्वास**–(पुं०) हवा, पवन ।—**समुत्थ**, —**सम्भव**–(वि०) आकाशोत्पन्न । —**सिन्धु**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**स्तनी** –(स्त्री०) धरती, जमीन ।—**स्फटिक**–(न०) सूर्यकान्त या चन्द्रकान्त मणि ।—**हर**–(वि०) जिसका भाजक शून्य हो ।

√**खक्ख्**—भ्वा० पर० अक० हँसना । खक्खति, खक्खिष्यति, अखक्खीत् ।

खक्खट—(वि०) [√खक्ख्+अटन्] सख्त, ठोस । (पुं०) खड़िया मिट्टी ।

खङ्कुर—(पुं०) [ख√कृ+ खच्, मुम्] अलक, लट ।

√**खच्**—चु० उभ० सक० बाँधना । जड़ना । लपेटना । खचयति-ते, खचयिष्यति-ते, अचखचत्-त । क्र्या० पर० अक० प्रकट होना, सामने आना । पुनर्जन्म होना । सक० पवित्र करना । खच्ञाति, खचिष्यति, अखचीत् —अखाचीत् ।

खचित—(वि०) [√खच्+क्त] जड़ा हुआ । अंकित; 'शकुन्तनीडखचितं विभ्रज्जटा-मण्डलं' श० ७-११ । आबद्ध ।

√**खज्**—भ्वा० पर० सक० मथना । खजति, खजिष्यति, अखजीत्—अखाजीत् ।

खज, खजक–(पुं०) [√ खज् + अच्] [खज+कन्] मथानी, मथने की लकड़ी विशेष ।

खजप—(न०) [√खज्+कपन्] घी, घृत ।

खजाक—(पुं०) [√खज्+आक] पक्षी, चिड़िया ।

खजाजिका—(स्त्री०) [√खज्+अ—टाप्, खजा–√ अज्+घञ्, खजायै आजो यस्याः, ब० स०, ङीष्+कन्—टाप्, ह्रस्व] कलछी, चमचा ।

√**खञ्ज्**—भ्वा० पर० अक० लँगड़ा कर चलना । खञ्जति, खञ्जिष्यति, अखञ्जीत् ।

खञ्ज—(वि०) [√खञ्ज्+अच्] लँगड़ा । —**खेट**,—**लेख**–(पुं०) खेल । खंजन पक्षी ।

खञ्जन—(पुं०) [√खञ्ज्+ल्यु] एक प्रसिद्ध छोटी चिड़िया, खँडरिच । (न०) [√खञ्ज्+ल्युट्] लँगड़ी चाल ।

खञ्जना, खञ्जनिका–(स्त्री०) [खञ्जन+क्यच्+क्विप्—टाप्] [खञ्जन+ठन्—टाप्] खंजन की शक्ल की एक चिड़िया । सर्षप ।

खञ्जरीट, खञ्जरीटक–(पुं०) [खञ्ज√ऋ+कीटन्][खञ्जरीट+कन्]खंजन पक्षी ।

√**खट्**—भ्वा० पर० सक० चाहना । खटति, खटिष्यति, अखटीत्—अखाटीत् ।

खट—(पुं०) [√खट्+अच्] कफ । अंधा कूप । टाँकी । हल । घास ।—**कटाहक**–(पुं०) पीकदान ।—**खादक**–(पुं०) गीदड़, शृगाल । काक, कौवा । जन्तु । शीशे का पात्र ।

खटक—(पुं०) [√खट+वुन्] सगाई कराने का धंधा करने वाला । अधमुँदा हाथ ।—**आमुख (खटकामुख)**– (न०) वाण चलाने में हाथ की एक मुद्रा ।

खटिका—(स्त्री०) [√ खट्+अच्+कन्—

टाप्, इत्व] खड़िया । कान की वाहरी भाग ।

खटिनी, खटी—(स्त्री०) [√ खट्+इनि –ङीप्] [√खट्+अच्+ङीप्] खड़ी, खड़िया मिट्टी ।

√ **खट्ट्**—चु० उभ० सक० घेरना । खट्टयति –ते, खट्टयिष्यति-ते, अचखट्टत्-त ।

खट्टन—(वि०) [√खट्ट् +ल्यु] बौने आकार का ।(पुं०) बौना, कदाकार मनुष्य ।

खट्टा—(स्त्री०) [√खट्ट् + अच्–टाप्] खाट, चारपाई । एक प्रकार की घास ।

खट्टि—(पुं०, स्त्री०) [√खट्ट्+इन्] अर्थी, विमान ।

खट्टिक—(पुं०) [√खट्ट्+अच्+ठन्] चिड़ीमार, वहेलिया । कसाई ।

खट्टेरक—(वि०) [√खट्ट्+एरक] ठिगना, कदाकार ।

खट्वा—(स्त्री०) [√खट्+क्वन्] खाट, चारपाई । हिंडोला, झूला ।—**अङ्ग** (**खट्वाङ्ग**)–(पुं०) लकड़ी या डंडा जिसकी मूंठ में खोपड़ी जड़ी हो, यह शिव का हथियार समझा जाता है और उनके अनुयायी गुसाँईं साधु उसे अपने पास रखते हैं । दिलीप राजा का दूसरा नाम ।—**०धर** (**खट्वाङ्गधर**), —**०भृत्** (**खटवाङ्गभृत्**)–(पुं०) शिव की उपाधियाँ ।—**आप्लुत** (**खट्वाप्लुत**), **आरूढ** (**खट्वारूढ**)–(वि०) नीच । दुष्ट । मूर्ख ।

खट्वाका, खट्विका—(स्त्री०) [खट्वा +कन् –टाप्] [खट्वा+कन्–टाप्, इत्व] खटोला, छोटी खाट ।

√**खड्**—चु० पर० सक० भेदन करना । खंडित करना । तोड़ना । खाडयति ।

खड—(पुं०) [√ खड् + अप्] घास, खर । पयाल । (पुं०) आयुर्वेद में वताया हुआ एक तरह का पन्ना । सोना-पाढ़ा ।

खडिका, खडी—(स्त्री०) [√खड्+अच् –ङीप्+कन्, ह्रस्व] [√खड्+अच्–ङीप्] खड़िया मिट्टी ।

खड्ग—(न०) [√खड्+गन्] लोहा । (पुं०) तलवार । गैंड़े का सींग । गैंड़ा ।—**आघात** (**खड्गाघात**)–(पुं०) तलवार का घाव ।— **आधार** (**खड्गाधार**)- (पुं०) म्यान, परतला ।—**आमिष** (**खड्गामिष**) -(न०) गैंड़े का माँस ।—**आह्व** (**खड्गाह्व**) –(पुं०) गैंडा ।—**कोश**- (पुं०) म्यान, परतला ।—**धर**-(पुं०) तलवार चलाने वाला योद्धा ।—**धेनु**, — **धेनुका**- (स्त्री०) छोटी तलवार । गैंड़े की मादा ।—**पत्र**-(न०) तलवार की धार ।—**पिधान**, —**पिधानक**–(न०) म्यान, परतला ।—**पुत्रिका**–(स्त्री०) छुरी, चाकू । छोटी तलवार । —**प्रहार**–(पुं०) तलवार का आघात । —**फल**–(न०) तलवार की धार ।—**बन्ध**—(पुं०) चित्रकाव्य का एक भेद जिसमें शब्द खड्ग की शक्ल में लिखे जाते हैं ।

खड्गवत्—(वि०) [खड्ग+मतुप्, वत्व] तलवार से सज्जित ।

खड्गिक—(पुं०) [खड्ग+ठन्] तलवार से लड़ने वाला योद्धा, तलवारबंद सिपाही । कसाई, बूचड़ ।

खड्गिन्—(वि०) [खड्ग+इनि] [स्त्री० —**खड्गिनी**] तलवारबंद । (पुं०) गैंडा ।

खड्गीक—(न०) [खड्ग+ईक (बा०)] हँसिया, दराँती ।

√**खण्ड्**—भ्वा० आत्म० सक० तोड़ना । काटना । चीरना, फाड़ना । चूर्ण कर डालना । भली भाँति हरा देना । नाश करना । हताश करना, विफल करना । गड़बड़ करना, उपद्रव मचाना । ठगना, धोखा देना खण्डते, खण्डिष्यते, अखण्डिष्ट ।

खण्ड—(न०, पुं०) [√खन्+ड] नकव, दरार । टुकड़ा, भाग, हिस्सा, अंश;

'दिवः कान्तिमत्खण्डमेकं' मे० ३० । अध्याय, सर्ग । समूह, समुदाय, झुंड । (पुं०) खाँड़, चोनी । रत्न का दोष । (न०) एक प्रकार का नमक । एक प्रकार का गन्ना ।—**अभ्र** (**खण्डाभ्र**)–(न०) बिखरे हुए बादल । भोगविलास में दाँतों से काटने का निशान । —**आली** (**खण्डाली**)– (स्त्री०) [खण्ड —आ√ला+क—ङीष्] तेल का एक नाप । सरोवर या झील । स्त्री जिसका पति नमकहरामी के लिये अपराधी ठहराया गया हो ।—**कथा**–(स्त्री०) छोटी कहानी ।—**काव्य**–(न०) छोटा पद्यात्मक ग्रन्थ, जैसे मेघदूत । खण्डकाव्य की परिभाषा साहित्य-दर्पणकार ने यह दी है—'खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्यैकदेशानुसारि च' ।—**ज**–(पुं०) एक प्रकार की चोनी ।—**धारा**–(स्त्री०) कैंची, कतरनी ।—**परशु**–(पुं०) शिव । परशुराम ।—**पर्शु**– (पुं०) शिव । परशुराम । राहु । हाथी, जिसका एक दाँत टूटा हो ।—**पाल**–(पुं०) हलवाई ।—**प्रलय**–(पुं०) छोटा प्रलय जिसमें स्वर्ग के नीचे के समस्त लोक नष्ट हो जाते हैं ।—**मोदक**–(पुं०) बतासा । —**लवण**–(न०) काला नमक ।—**विकार** (पुं०) खाँड़, चोनी ।—**शर्करा**–(स्त्री०) कुरा, मिश्री ।—**शीला**–पुंश्चली स्त्री, छिनाल औरत ।

खण्डक—(पुं०, न०) [खण्ड+कन्] टुकड़ा, अंश, भाग । (पुं०) [खण्ड+क] शक्कर, खाँड । (वि०) [√खण्ड्+ण्वुल्] खंडन करने वाला । काटने वाला ।

खण्डन—(न०) [√खण्ड्+ल्युट्] तोड़ना, टुकड़े-टुकड़े करना । काटना; 'घटय भुज-बन्धनं जनय रदखण्डनम्' गीत० १० । हताश करना । बाधा डालना । धोखा देना । किसी की दलीलों को काट देना । विसर्जन, बरखास्तगी ।

खण्डल—(पुं०) [खण्ड+लच् नि० (स्वार्थे)] खण्ड, टुकड़ा । (वि०) [खण्ड√ला+क] खंड धारण करने वाला ।

खण्डशस्—(अव्य०) [खण्ड+शस्] खंड-खंड करके । कई खंडों में बाँटकर ।

खण्डित—(वि०) [√खण्ड्+क्त] कटा हुआ । टुकड़े-टुकड़े किया हुआ । नष्ट किया हुआ । (बहस में) हराया हुआ । विप्लव किया हुआ ।—**विग्रह**–(वि०) अंगहीन, अंगभंग । —**वृत्त**–(वि०) असदाचारी, दुराचारी, भ्रष्ट ।

खण्डिता—(स्त्री०) [खण्डित+टाप्] वह स्त्री जिसका पति अन्यत्र रात बिताता हो । आठ मुख्य नायिकाओं में से एक ।

खण्डिनी—(स्त्री०) [खण्ड+इनि—ङीप्] पृथिवी ।

√ **खद्**—भ्वा० पर० अक० पक्का होना । सक० मारना । खदति, खदिष्यति, अखादीत्—अखदीत् ।

खदिर—(पुं०) [√खद्+किरच्] कत्थे का वृक्ष । इन्द्र । चन्द्रमा ।

खदिरी—(स्त्री०) [खदिर+ङीष्] लाजवंती । वराहक्रान्ता लता ।

√**खन्**—भ्वा० प० उभ० सक० खोदना । खनति—ते, खनिष्यति— ते, अखानीत्—अखनीत्—अखनिष्ट ।

खनक—(पुं०) [√खन्+वुन्] खोदने वाला । सेंध फोड़ने वाला । मूसा । खान ।

खनन—(न०) [√खन् + ल्युट्] खुदाई । गाड़ना ।

खनि, खनी—(स्त्री०) [√ खन्+इ] [खनि+ङीष्] खान ।

खनित्र—(न०) [√खन्+इत्र] फावड़ा, कुदाली । खंता ।

खपुर—(पुं०) [खं पिपर्ति उच्चतया, ख√पृ+क] सुपाड़ी का पेड़ ।

खर—(पुं०) [खं मुखविलम् अतिशयेन अस्ति अस्य, ख+र, वा खम् इन्द्रियं राति, ख√रा +क] गधा । खच्चर । बगला । कौआ ।

राम के हाथों मारा गया एक राक्षस । साठ संवत्सरों में से २५ वाँ । कुरर पक्षी । (वि०) मृदु, श्लक्ष्ण द्रव का उल्टा, कड़ा । तेज, तीक्ष्ण; 'देहि खरनयनशरघातं' गीत० १० । खट्टा । तोता । सघन, घना । हानिकारक । तेज धार वाला । गरम, उष्ण । निष्ठुर, नृशंस ।—**अंशु** (खरांशु),—**कर**, —**रश्मि** –(पुं०) सूर्य ।—**कुटी**–(स्त्री०) गधों का अस्तबल । नाई की दूकान ।—**कोण**,—**क्वाण**–(पुं०) तीतर विशेष ।—**कोमल**–(पुं०) ज्येष्ठमास ।—**गृह**, —**गेह**–(न०) गधों के लिये अस्तबल ।—**दण्ड**–(न०) कमल ।—**ध्वंसिन्**–(पं०) श्रीराम ।—**नाद** –(पुं०) गधे का रेंकना ।—**नाल**–(पुं०) कमल ।—**पात्र**– (न०) लोहे का बर्तन । **पाल**–(पुं०) काठ का वर्तन ।—**प्रिय**–(पुं०) कबूतर ।—**यान**– (न०) गधे की गाड़ी यानी वह गाड़ी जिसमें गधे जुते हों । ।—**शब्द**–(पं०) गधे का रेंकना । रामुद्री गिद्ध, लग्घड़ ।—**शाला**–(स्त्री०) गधों का अस्तवल ।—**स्वरा**–(स्त्री०) जंगली चमेली ।

खरिका—(स्त्री०) [ख√रा+क, ततः स्वार्थं कन्, टाप्, इत्व] पिसी हुई कस्तूरी ।

खरिन्धम, खरिन्धय—(वि०) [खरी √ध्मा+खश्, धमादेश, मुम्, ह्रस्व] [खरी √धे +खश्, मुम्, ह्रस्व] गधी का दूध पीने वाला ।

खरी—(स्त्री) [खर+ङीप्] गधी ।—**जंघ**–(पुं०) शिव ।—**वृष**–(पुं०) गधा । मूर्ख ।

खरु—(वि०) [√खन्+कु, र आदेश] सफेद । मूर्ख, मूढ । निर्दयी । वर्जित वस्तुओं का अभिलाषी । (पुं०) घोड़ा । दाँत । घमंड । कामदेव । शिव । (स्त्री०) वह लड़की जो अपना पति स्वयं पसंद करे ।

खर्ज्—भ्वा० पर० सक० पीड़ा पहुँचाना । खरोचना । पूजा करना । खर्जति, खर्जिष्यति, अखर्जीत् ।

खर्जन—(न०) [खर्ज्+ल्युट्] खरोचना, छीलना ।

खर्जिका—(स्त्री०) [√खर्ज्+ण्वुल—टाप्, इत्व] उपदंश रोग, गरमी की बीमारी । पानेच्छा उत्पन्न करने वाला खाद्य पदार्थ गजक ।

खर्जु—(स्त्री०) [√खर्ज्+उन्] खरोचना, छीलन । खजूर का पेड़ । धतूरे का झाड़ ।

खर्जुर—(न०) [√खर्ज्+उरच्] चाँदी । हरताल ।

खर्जू—(स्त्री०) [√खर्ज्+ऊ] खाज, खुजली ।

खर्जूर—(न०) [√खर्ज्+ऊर] चाँदी । हरताल । (पुं०) खजूर का वृक्ष । बिच्छू ।

खर्जूरी—(स्त्री०) [खर्जूर+ङीष्] खजर का पेड़ ।

खर्पर—(पुं०) [=कर्पर पृषो० कस्य खः] चोर । गुंडा । ठग । खप्पर, खोपड़ी । खपरा । छाता ।

खर्परिका, खर्परी—(स्त्री०) [खर्पर+अच् —ङीष्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [खर्पर+ङीष्] एक प्रकार का सुर्मा ।

√खर्ब्, खर्व्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० अकड़ना । खर्ब (र्व)ति, खर्बि (र्वि)-ष्यति, अखर्बी (र्वी) त् ।

खर्ब, खर्व—(वि०) [√खर्ब् (र्व्)+अच्] विकलांग । बौना, ठिगाना, कदाकार । छोटा (कद में) । (पुं०, न०) दस अरब की संख्या ।—**शाख**–(वि०) ठिगना, कदाकार ।

खर्वट—(पुं०, न०) [√खर्व्+अटन्] हाट, पैंठ । पहाड़ की तराई का ग्राम ।

√खल्—भ्वा० पर० अक० हिलना, काँपना । सक० एकत्र करना, इकट्ठा करना । खलति, खलिष्यति, अखालीत्—अखलीत् ।

खल—(पुं०) [√खल्+अच्] खलिहान ।

ज़मीन, स्थल। स्थान, जगह। धूल का ढेर। तलछट, नीचे बैठा हुआ कीचड़। (पुं०) दुष्ट मनुष्य।—उक्ति (खलोक्ति) (स्त्री०) गाली।—धान्य-(न०) खलिहान।—पू-(वि०) [खल√पू+क्विप्] खलिहान आदि की शुद्धि करने वाला।—मूर्ति-(पुं०) पारा। —संसर्ग-(पुं०) दुष्ट की संगति।

खलक—(पुं०) [ख√ला+क+कन्] घड़ा।

खलति—(वि०) [स्खलन्ति केशा अस्मात्, √स्खल्+अतच्, नि० साधुः] गंजा।

खलतिक—(पुं०) [खलति√कै+क] पहाड़।

खलि—(पुं०) [√खल्+इन्] तेल की तलछट, कीट, काइट, खरी।

खलिन, खलीन—(पुं०, न०) [खे अश्व-मुखच्छिद्रे लीनम्, पृषो० वा ह्रस्व] लगाम, रास।

खलिनी—(स्त्री०) [खल+इनि—ङीप्] खलिहानों का समूह।

खलीकार—(पुं०), **खलीकृति**-(स्त्री०) [खल+च्वि, ईत्व√कृ+घञ्] [खल+च्वि—√कृ+क्तिन्] चोटिल करना, घायल करना। बुरा व्यवहार करना। दुष्टता, उत्पात।

खलु—(अव्य०) [√खल्+उन् (बा०)] निश्चय, वास्तविकता, और यथार्थताबोधक अव्यय। मिन्नत, आर्ज़ू, प्रार्थना, विनय। अनुसंधान। वर्जन, मनाही, निषेध। हेतु। (कभी-कभी यह वाक्यालङ्कार की तरह भी व्यवहार में लाया जाता है)।

खलुज्—(पुं०) [खम् इन्द्रियं लुञ्चति हन्ति, ख√लुञ्च्+क्विप्] अँधियारा, अँधेरा।

खलूरिका—(स्त्री०) परेड, मैदान जहाँ सैनिक लोग कवायद करें तथा अस्त्रप्रयोग का अभ्यास करें।

खल्या—(स्त्री०) [खल+यत्—टाप्] खलिहानों का समूह।

खल्ल—(पुं०) [√खल्+क्विप् तं लाति, खल्√ला+क] खरल जिसमें डाल कर कोई वस्तु कूटी जाय, चक्की। खड्ड, गढ़ा। चमड़ा। चातक पक्षी। मसक।

खल्लिका—(स्त्री०) [खल्ल+कन्—टाप्, इत्व] कड़ाही।

खल्लिट, खल्लीट—(वि०) [खल्+क्विप् +इन्, खल्लि √टल्+ड] [खल्लि+ङीप् खल्ली√टल्+ड] गंजा।

खल्वाट—(वि०) [√खल्+क्विप् तं वटते वेष्टयते, √वट्+अण्, उप० स०] गंजा।

खश—(पुं०) उत्तर भारत में एक पहाड़ी देश और उस देश के अधिवासी।

खशीर—(पुं०) देश विशेष और उसके अधिवासी।

खष्प—(पुं०) [√खन्+प, नि० नस्य षः] क्रोध। निष्ठुरता, नृशंसता।

खस—(पुं०) [खानि इन्द्रियाणि स्यति निश्चलीकरोति, ख√सो+क] खाज, खुजली। देश विशेष।

खसूचि—(पुं०, स्त्री०) [ख √सूच्+इ] जो (पूछा जाने पर प्रश्न को भुलवाने के लिये) आकाश की ओर इंगित करता है। निन्दाव्यञ्जक शब्द, यथा "वैयाकरणखसूचिः"-वैयाकरण जो व्याकरण को भूल गया हो। व्याकरण को भली भाँति न जानने वाला।

खस्खस—(पुं०) [खस प्रकारे द्वित्वम्, पृषो० अकारलोपः] पोस्ते के दाने।—**रस**-(पुं०) अफीम, अहिफेन।

खाजिक—(पुं०) [खे ऊर्ध्वदेशे आजः क्षेपः तत्र साधुः, खाज+ठन्] भुना हुआ अनाज।

खाट, खात्—(अव्य०) गला साफ करते समय का शब्द, खखार।

खाट्—(पुं०), —**खाटा**, — **खाटिका**— **खाटी**—(स्त्री०) [खे ऊर्ध्वमार्गे अटत्यनेन, ख√अट्+घञ्] [खाट+टाप्] [खाट +कन्—टाप्, इत्व] [खाट+ङीप्] अर्थी, टिकटी, जिस पर रखकर मुर्दे को श्मशान में ले जाते हैं।

खाण्डव––(पुं०) [खण्ड+अण्––खाण्ड √वा+क] मिश्री, कन्द । (न०) इन्द्र के एक वन का नाम जो कुरुक्षेत्र के समीप था और जिसे अर्जुन और श्रीकृष्ण की सहायता से अग्निदेव ने भस्म किया था ।––**प्रस्थ**–(पुं०) एक नगर का नाम ।

खाण्डविक, खाण्डिक––(पुं०) [खाण्डव +ठञ्] [खण्ड+ठञ्] हलवाई ।

खात––(वि०) [√खन्+क्त] खुदा हुआ । फटा हुआ । टूटा, फूटा । (न०) गढ़ा, गर्त । रन्ध्र, सूराख, छेद । खनन, खुदाई । तालाब जो लंबा अधिक और चौड़ा कम हो ।––**भू**– (स्त्री०) नगर के या किले के चारों ओर जल से भरी खाई ।

खातक––(पुं०) [खात इव कायति, खात √कै+क] कढुआ, कर्जदार । (न०) [खात+ कन्] खाई, गढ़ा, गर्त ।

खाता––(स्त्री०) [खात+टाप्] कृत्रिम तालाव ।

खाति––(स्त्री०) [खन्+क्तिन्] खुदाई ।

खात्र––(न०) [√खन्+ष्ट्रन्, कित्] फड़ुआ, कुदाली । लंबा अधिक और चौड़ा कम तालाब । डोरा । वन, जंगल । भय ।

√खाद्––भ्वा० पर० सक० खाना, भक्षण करना । शिकार करना । काटना । खादति, खादिष्यति, अखादीत् ।

खादक––(वि०) [√खाद्+ण्वुल्] [स्त्री० ––**खादिका**] खाने वाला, निघटाने वाला । (पुं०) कर्जदार, ऋणी ।

खादन––(न०) [√खाद्+ल्युट्] खाना, चबाना । भोज्य पदार्थ । (पुं०) दाँत, दन्त ।

खादिर––(वि०) [खदिर+अञ्] [स्त्री० **खादिरी**––] खदिर यानी कत्थे के वृक्ष से बना हुआ या इस वृक्ष सम्बन्धी ।

खादुक––(वि०) [√खाद्+उन्+कन्] [स्त्री०––**खादुकी**] उत्पाती, उपद्रवी ।

खाद्य––(न०) [√खाद्+ण्यत्] भोज्य-पदार्थ, खाना ।

खान––(न०) खुदाई । चोट ।––उदक (**खानोदक**)–(पुं०) नारियल का वृक्ष ।

खानक––(वि०) [√ खन्+ण्वुल्] [स्त्री० ––**खानिका**] खोदने वाला । खान खोदने वाला । (पुं०) बेलदार ।

खानि––(स्त्री०) [खनिरेव पृषो० वृद्धिः] खान ।

खानिक––(न०) [खान+ठञ्] दीवार में किया हुआ छेद, दरार । सेंध ।

खानिल––(पुं०) [खान+इलच् (बा०)] घर में सेंध लगाने वाला चोर ।

खार––(पुं०), **खारि, खारी**–(स्त्री०) [खम् आकाशम् आधिक्येन ऋच्छति, ख√ऋ+ अण्] [ख–आ√रा+क–ङीष्, वा ह्रस्वः] १२ मन ३२ सेर की एक तौल ।

खार्वा––(स्त्री०) त्रेता युग ।

खिङ्किर––(पुं०) [खिम् इत्यव्यक्तशब्दं किरति, खिम् √कृ+क, पृषो० साधुः] लोमड़ी । खाट का पाया । एक गंधद्रव्य ।

√खिट्––भ्वा० पर० अक० डरना । खेटति, खेटिष्यति, अखेटीत् ।

√खिद्––दि० आत्म० अक० दीन होना । खिद्यते, खेत्स्यते, अखित्त । रु० आत्म० अक० दुःखी होना । खिन्ते, खेत्स्यते, अखित्त । तु० पर० सक० दुःख देना, खिन्दति, खेत्स्यति, अखेत्सीत् ।

खिदिर––(पुं०) [√खिद्+किरच्] संन्यासी, फकीर । मोहताज, भिखमंगा । चन्द्रमा ।

खिन्न––(वि०) [√खिद्+क्त] सन्तप्त, उदास, दुःखी, पीड़ित; 'खिन्नः खिन्नः शिखरिषु पदं न्यस्य गन्तासि यत्र' मे० १३ ।

√खिल्––तु० पर० सक० बीनना । खिलति, खेलिष्यति, अखेलीत् ।

खिल––(न०, पुं०) [√खिल्+क] बंजर जमीन का टुकड़ा, मरु-भूमि का एक खत्ता ।

अतिरिक्त भजन जो मूलभजनसंग्रह में न आया हो। त्रुटिपूरक, परिशिष्ट भाग। संग्रह। शून्यता, खोखलापन।

√खु—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना, खवते, खोष्यते, अखोष्ट।

खुङ्गाह—(पुं०) [खुम् इत्यव्यक्तशब्दं कृत्वा गाहते, खुम्√गाह्+अच्] काला टट्टुआ या घोड़ा।

√**खुज्**—भ्वा० पर० सक० चराना। खोजति, खोजिष्यति, अखोजीत्।

√**खुड्**—चु० उभ० सक० फाड़ना। खंड-खंड करना, खोडयति—ते, खोडयिष्यति—ते, अचुखोडत्—त।

√**खुर्**—तु० पर० सक० काटना, खुरति, खोरिष्यति, अखोरीत्।

खर—(पुं०) [√खुर्+क] (गाय आदि-का) खुर। एक सुगन्ध द्रव्य। छुरा, अस्तुरा। खाट का पाया।—**आघात (खुराघात)**,—**क्षेप**—(पुं०)खुर का आघात। टाप से मारना। —**णस्**,—**णस**—(वि०) [ब० स०, नासिकायाः नसादेशः, वा अन्त्यलोपः] चपटी नाक वाला। —**पदवी**—(स्त्री०) घोड़े के पैरों के चिह्न। —**प्र**—(पुं०)तीर जिसकी नोक या फल अर्द्ध-चन्द्राकार हो।

खरली—(स्त्री०) [खुरैः सह लाति पौनः-पुन्येन यत्र, खुर√ला+क—ङीप्] सैनिक कवायद या अस्त्र-चालन का अभ्यास।

खुराक—(पुं०) [√खुर्+आकन्] पशु।

खुरालक—(पुं०) [खुर इव अलति पर्याप्नोति, खुर√अल्+ण्वुल्] लोहे का तीर।

खरालिक—(पुं०) [खुरालि, ष० त०, खुराणाम् आलिभिः कायति प्रकाशते, खुरालि √कै+क]छुरा रखने का म्यान या केस। लोहे का तीर। तकिया।

खुल्ल—(वि०) [=क्षुल्ल, पृषो० साधुः] छोटा, कम, नीच, ओछा।—**तात**—(पुं०) पिता का छोटा भाई, छोटा चाचा।

खेट—(पुं०) [√खिट्+अच्] गाँव। कफ। देवतादि का आयुधरूप मूसल। घोड़ा।

खेटितान, खेटिताल—(पुं०) [√खिट्+इन्, खेटिः तानोऽस्य, ब० स०] [खेटिः तालोऽस्य, ब० स०] वैतालिक जो अपने मालिक को गा-बजा कर जगावे।

खेटिन्—(पुं०) [√खिट्+णिनि] नागर। कामुक।

खेद—(पुं०) [√खिद्+घञ्] उदासी। शिथिलता। थकावट; 'अध्वखेदं नयेथाः' मे० ३२। पीड़ा, शोक।

खेय—(न०) [√खन्+क्यप्, इकारादेश] गढ़ा, खाई। (पुं०) पुल।

√**खेल्**—भ्वा० पर० सक० हिलाना। अक० इधर-उधर घूमना। काँपना। खेलना। खेलति, खेलिष्यति, अखेलीत्।

खेल—(वि०) [√खेल्+अच्] खिलाड़ी। कामी, कामुक।

खेलन—(न०) [√खेल्+ल्युट्] हिलाना-डुलाना। खेल, क्रीड़ा। अभिनय।

खेला—(स्त्री०) [√खेल्+अ—टाप्] क्रीड़ा, खेल।

खेलि—(स्त्री०) [खे आकाशे अलति पर्याप्नोति, खे√अल्+इन्] क्रीड़ा, खेल। तीर।

√**खेव्**—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना। खेवते, खेविष्यते, अखेविष्ट।

√**खै**—भ्वा० पर० अक० स्थिर होना। सक० हिंसा करना। खाना। खायति, खास्यति, अखासीत्।

√**खोट्**—चु० पर० सक० खाना। खोटयति—ते, खोटयिष्यति—ते, अचुखोटत्—त।

खोटि—(स्त्री०) [√खोट्+इन्] चालाक या नटखट स्त्री।

√**खोड्**—भ्वा० पर० अक० गति में रुकावट पड़ना। खोडति, खोडिष्यति, अखोडीत्।

खोड—(वि०) [√खोड्+अच्] लँगड़ा। लूला।

√खोर् (ल्)——भ्वा० पर० अक० गति-भंग होना । खोरति, खोरिष्यति, अखोरीत् ।

खोर, खोल——(वि०) [√खोर् (ल्)+अच्] लँगड़ा । लूला ।

खोलक——(पुं०) [खोल+कन्] पुरवा, गाँव । बाँबी । सुपाड़ी का छिलका । डेगची विशेष ।

खोलि——(पुं०) [√खोल्+इन्] तरकस ।

खोल्क——(पुं०) जलती हुई लकड़ी ।

√ख्या——अ० पर० सक० कहना । वर्णन करना; 'ते रामाय वधोपायमाचख्युः विबुधद्विषः ' र० १५.५ । ख्याति, ख्यास्यति, अख्यत् ।

ख्यात——(वि०) [√ख्या+क्त] जाना हुआ । उक्त, कहा हुआ । प्रसिद्ध, मशहूर ।——गर्हण –(वि०) बदनाम ।

ख्याति——(स्त्री०) [√ख्या+क्तिन्] प्रसिद्धि, शोहरत, गौरव, कीर्ति, संज्ञा, पदवी, उपाधि । वर्णन । प्रशंसा । (दर्शन में) ज्ञान ।

ख्यापक——(वि०) [√ख्या+णिच्+ण्वुल्] प्रसिद्ध करने वाला ।

ख्यापन——(न०) [√ख्या + णिच्+ल्युट्] वर्णन । प्रकाशन, व्यक्तकरण, प्रकट करना । प्रसिद्ध करना, कीर्ति फैलाना ।

ग

ग——[√गै+क] संस्कृत या नागरी वर्णमाला का तीसरा व्यञ्जन, कवर्ग का तीसरा वर्ण, इसका उच्चारणस्थान कण्ठ है । इसको स्पर्श-वर्ण कहते हैं । (वि०) केवल समास में पीछे आता है और वहाँ इसका अर्थ होता है कौन, कौन जाता है, हिलने वाला, जाने वाला, ठहरने वाला, रहने वाला, मैथुन करने वाला । (न०) गीत, भजन । (पुं०) गन्धर्व । गणेश । छन्दःशास्त्र में गुरु अक्षर के लिये चिह्न ।

गगन, गगण——(न०) [√गच्छति, अस्मिन्, √गम्+ल्युट्, ग आदेश] (किसी-किसी के मतानुसार गगणम् रूप अशुद्ध है ।——'फाल्गुने गगने फेने णत्वमिच्छन्ति वर्वराः ।' ——अर्थात् फाल्गुन, गगन और फेन शब्दों में जङ्गली लोग न की जगह ण लगाते हैं)। आकाश, अन्तरिक्ष; 'सोऽयं चन्द्रः पतति गगनात्' श० ४ । शून्य, सिफर । स्वर्ग । **——अग्र** (**गगनाग्र**)–(न०) सब से ऊँचा ऊर्ध्वलोक ।**——अङ्गना** (**गगनाङ्गना**)–(स्त्री०) अप्सरा, परी, किन्नरी ।**——अध्वग** (**गगनाध्वग**)–(पुं०) सूर्य । ग्रह । स्वर्गीय जीव ।**——अम्बु** (**गगनाम्बु**)–(न०) वृष्टि-जल ।**——उल्मुक** (**गगनोल्मुक**)–(पुं०) मङ्गलग्रह ।**——कुसुम, पुष्प** (न०) आकाश का फूल (असम्भाव्य वस्तु) ।**——गति**–(पुं०) देवता । स्वर्गीय जीव । ग्रह ।**——चर** (**गगनेचर** भी) (वि०) आकाश में चलने वाला । (पुं०) पक्षी । ग्रह । स्वर्गीय आत्मा । **——ध्वज**– (पुं०) सूर्य । बादल ।**——सद्**–(पुं०) आकाशवासी या अन्तरिक्ष में बसने वाला । (पुं०) स्वर्गीय जीव ।**——सिन्धु**–(स्त्री) गङ्गा की उपाधि ।**——स्थ, ——स्थित**–(वि०) आकाश में टिका हुआ ।**——स्पर्शन**–(पुं०) पवन, हवा । अष्ट मारुतों में से एक का नाम ।

गङ्गा——(स्त्री०) [गम्यते ब्रह्मपदमनया गच्छतीति वा, √गम्+गन्–टाप्] भारतवर्ष की पुण्यतोया प्रसिद्ध नदी ।**——अम्बु** (**गङ्गाम्बु**), **——अम्भस्** (**गङ्गाम्भस्**)–(न०) गङ्गाजल । आश्विन मास की वृष्टि का निर्मल जल ।——**अवतार** (**गङ्गावतार**)–(पुं०) गङ्गा का भूलोक में आगमन । तीर्थस्थल विशेष ।——**उद्भेद** (**गङ्गोद्भेद**)–(पुं०) गङ्गा के निकलने का स्थान, गङ्गोत्री ।**——क्षेत्र**–(न०) गङ्गा और उसके दोनों तटों से दो-दो कोस का स्थान ।**——ज**–(पुं०) कार्त्तिकेय ।**——दत्त**–(पुं०) भीष्मपितामह ।**——द्वार**–(न०) वह स्थान जहाँ गङ्गा पहाड़ छोड़ मैदान में आती

है, हरिद्वार।—धर–(पुं०) शिव। समुद्र।—पुत्र–(पुं०) भीष्म। कार्तिकेय। एक वर्णसङ्कर जाति। इस जाति के लोग मुर्दे ढोया करते हैं। गङ्गा के घाटों पर बैठ कर यात्रियों से पुजवाने वाला ब्राह्मण, घाटिया।—भृत्–(पुं०) शिव। समुद्र।—यात्रा–(स्त्री०) गङ्गा को जाना। मरणासन्न पुरुष को मरने के लिये गङ्गातट पर ले जाना।—सागर–(पुं०) वह स्थान जहाँ गङ्गा समुद्र में गिरती है।—सुत–(पुं०) भीष्म। कार्त्तिकेय।—ह्रद–(पुं०) एक तीर्थ का नाम।

गङ्कका, गङ्गाका, गङ्गिका—(स्त्री०) [गङ्गा+कन्—टाप् वा ह्रस्वः] [गङ्गा+कन्—टाप्] [गङ्गा+कन्—टाप्, इत्व] श्री गङ्गा।

गङ्गोल—(पुं०) एक रत्न जिसे गोमेद भी कहते हैं।

गच्छ—(पुं०) [√गम्+श] वृक्ष। अङ्कगणित का पारिभाषिक शब्द विशेष।

√गज्—भ्वा० पर० अक० मद से शब्द करना। गरजना। गजति, गजिष्यति, अगाजीत्—अगजीत्।

गज—(पुं०) [√गज+अच्] हाथी; 'कचाचितौ विष्वगिवागजौ गजौ' कि० १.३६। आठ की संख्या। लंबाई नापने का माप विशेष जो दो हाथ का होता है।—'साधारणनराँगुल्या त्रिंशदंगुलको गजः।' राक्षस जिसे शिव ने मारा था।—अग्रणी (गजाग्रणी)–(पुं०) सर्वोत्तम हाथी। ऐरावत की उपाधि।—अधिपति (गजाधिपति)–(पुं०) गजराज।—अध्यक्ष (गजाध्यक्ष)–(पुं०) हाथियों का दारोगा।—अपसद (गजापसद)–(पुं०) दुष्ट हाथी।—अशन (गजाशन)–(पुं०) पीपल। (न०) कमल की जड़।—अरि (गजारि)–(पुं०) सिंह। गज नामक राक्षस के मारने वाले शिव।—आजीव (गजाजीव)–(पुं०) महावत।—आनन (गजानन),—आस्य (गजास्य)–(पुं०) गणेश।—आयुर्वेद (गजायुर्वेद)–(पुं०) हाथियों की चिकित्सा का शास्त्र।—आरोह (गजारोह)–(पुं०) महावत।—आह्व (गजाह्व),—आह्वय (गजाह्वय)–(न०) हस्तिनापुर नगर का नाम।—इन्द्र (गजेन्द्र)–(पुं०) गजराज। ऐरावत।—०कर्ण (गजेन्द्र कर्ण)–(पुं०) शिव।—कूर्माशिन्–(पुं०) गरुड़।—गति–(स्त्री०) हाथी जैसी चाल। मदमाती चाल। गजगामिनी स्त्री।—गामिनी–(स्त्री०) हाथी जैसी चाल से चलनेवाली स्त्री।—दन्त–(पुं०) हाथी का दाँत। गणेश। कपड़े टाँगने के लिये दीवार में गाड़ी हुई खूँटी। एक तरह का घोड़ा। दाँत पर निकला हुआ दाँत। नृत्य का एक भाव।—दन्तमय–(वि०) हाथी दाँत का बना हुआ।—दान–(न०) हाथी का मद। हाथी का दान।—नासा–(स्त्री०) हाथी की सूँड़।—पति–(पुं०) हाथी का स्वामी। बड़ा ऊँचा गजराज। सर्वोत्तम हाथी।—पुङ्गव–(पुं०) गजराज।—पुट–(पुं०) जमीन में एक छोटा-सा गड्ढा जिसमें आग सुलगाकर धातुओं को फूँका जाता है।—पुर (न०) हस्तिनापुर नगर।—बंधनी,—बंधिनी–(स्त्री०) गजशाला।—भक्षक–(पुं०) अश्वत्थ वृक्ष।—मण्डन–(न०) हाथी के माथे पर बनाई हुई रङ्ग-विरङ्गी रेखाएँ। हाथी का शृंगार।—मण्डलिका,—मण्डली–(स्त्री०) हाथियों की मण्डली।—माचल–(पुं०) सिंह।—मुक्ता–(स्त्री०),—मौक्तिक–(न०) गज के मस्तक से निकलने वाला मोती।—मुख,—वक्त्र—वदन–(पुं०) गणेश।—मोटन–(पुं०) सिंह, शेर।—यूथ–(न०) हाथियों का झुंड।—योधिन्–(वि०) हाथी की पीठ पर बैठकर लड़ने वाला।—राज–(पुं०) हाथियों में सर्वोत्कृष्ट हाथी।—व्रज–(पुं०) हाथियों की एक टोली।—साह्वय–(न०)

हस्तिनापुर ।—**स्नान**—(न०) हाथी का स्नान । (आलं०) व्यर्थ का काम, जिस प्रकार हाथी स्नान कर पुनः सूँड़ से सूखी मिट्टी अपने ऊपर डाल कर स्नान व्यर्थ कर डालता है उसी प्रकार कोई काम करके पुनः वह खराब कर डाला जाय, तो उस कार्य को गजस्नानवत् कार्य कहते हैं ।

गजता—(स्त्री०) [गज+तल्] हाथियों का समूह ।

गजदघ्न, गजद्वयस—(वि०) [गज+दघ्नच्] [गज+द्वयसच्] हाथी जितना (लंबा या ऊँचा ।

गजवत्—(अव्य०) [गज+वति] हाथी की तरह । (वि०) [गज+मतुप्] हाथी रखनेवाला ।

√गञ्ज्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । गञ्जति, गञ्जिष्यति, अगञ्जीत् ।

गञ्ज—(पुं०)[√गञ्ज्+घञ्]खान।खजाना। गोशाला । गञ्ज, अनाज की मण्डी । अवज्ञा, तिरस्कार ।—**जा**—(स्त्री०)झोपड़ी, मड़ैया । मदिरा की दूकान । मदिरापात्र ।

गञ्जन—(वि०) [√ गञ्ज् + णिच्+ ल्यु] अत्यधिक घृणित । लज्जित किया हुआ । विजयी; "स्थलकमलगञ्जनं मम हृदयरञ्जनं' गीत० १० ।

गञ्जा—(स्त्री०) [गञ्ज+टाप्] झोपड़ी । कलारी, शराब की दूकान । पानपात्र ।

गञ्जिका—(स्त्री०) [गञ्जा+कन्—टाप् इत्व] कलारी, शराब की दूकान ।

√गड्—भ्वा० पर० सक० चुआना । खींचना । गडति, गडिष्यति, अगाडीत्—अगडीत् ।

गड—(पुं०) [√गड्+अच्] पर्दा । हाता । खाई । रोकथाम, अटकाव । सुनहले रङ्ग की मछली ।—**उत्थ,** (**गडोत्थ**),—**देशज,**—**लवण**—(न०) सेंधा नमक ।

गडयन्त, गडयित्नु—(पुं०) [√ गड्+ णिच्+झच्] [√गड्+णिच्+इत्नुच्] बादल, मेघ ।

गडि—(न०) [√गड्+इन्] बछड़ा । सुस्त बैल ।

गडु—(वि०) [√गड्+ उन्] कुबड़ा ।(पुं०) कूबड़ । बर्छी, भाला, साँग । निरर्थक वस्तु ।

गडुक—(पुं०) [गडु √कै +क] झारी, लोटा, जलपात्र । अंगूठी ।

गडुर, गडुल—(वि०) [गडु+ल, पक्षे वा० लस्य रः] कुबड़ा, झुका हुआ ।

गडेर—(पुं०) [√गड्+एरक्] बादल, मेघ ।

गडोल—(पुं०) [√गड्+ओलच्] मुँह भर । कच्ची खाँड ।

गड्डर, गड्डल—(पुं०) [√गड्+डर वा डल] भेड़, मेष ।

गड्डरिका—(स्त्री०) [गड्डर+ठन्] भेड़ों की कतार । अविच्छिन्न धारा ।—**प्रवाह**—(पुं०) भेड़ियाधसान, अंधानुसरण ।

गड्डुक—(पुं०) [गडुक, पृषो० साधुः] सोने का गडुआ या पात्र विशेष ।

√ गण्—चु० उभ० सक० गिनना, गणना करना । जोड़ना, हिसाब लगाना । तखमीना करना, अन्दाजा लगाना । श्रेणीवार रखना । खयाल करना । लगाना । (दोष) । ध्यान देना । गणयति—ते, गणयिष्यति—ते, अजीगणत्—त, —अजगणत्—त ।

गण—(पुं०) [√गण्+अच्] झुण्ड, गिरोह, समूह, हेड़, टोली, दल । श्रेणी, कक्षा । नौकरों की टोली । शिव के गण । एक उद्देश्य के लिये बनी हुई मनुष्यों की संख्या । एक सम्प्रदाय । सैनिकों की एक छोटी टोली । संख्या । ज्योतिष के अनुसार नक्षत्रों के गण; यथा—देवतागण, मनुष्यगण, राक्षसगण । छन्द शास्त्र के तीन वर्णों के आठ समूह; यथा—मगण, यगण आदि । व्याकरण में धातुओं के दस गण; यथा—भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि । गणेश का नाम ।

—अग्रणी (गणाग्रणी)–(पुं०) गणेश।—अचल (गणाचल)–(पुं०) कैलास पर्वत का नाम।—अधिप (गणाधिप), —अधिपति (गणाधिपति)–(पुं०) शिव। गणेश। सेनापति। गुरु। यूथप या यूथपति।—अन्न (गणान्न)– (न०) कई आदमियों के खाने योग्य बनाया हुआ भोज्य पदार्थ।—अभ्यन्तर (गणाभ्यन्तर)–(वि०) दल या समुदाय में से एक। (पुं०) किसी धार्मिक संस्था का नेता या मुखिया।—ईश (गणेश)–(पुं०) पार्वतीनन्दन, गिरिजा के पुत्र गणेश।—ईशान (गणेशान),—ईश्वर (गणेश्वर) –(पुं०) गणेश। शिव।— उत्साह (गणोत्साह)–(पुं०) गैंडा।—कार–(पुं०) श्रेणी-बद्ध करने वाला। भीष्म की उपाधि।—चक्रक–(न०) धर्मात्माओं की पंक्ति या ज्योनार।—देवता–(पुं०) देव-समह। अमरकोशकार ने इनकी गणना यह बतलायी है:—'आदित्यविश्ववसवस्तुषिता भास्वरानिलाः, महाराजिकसाध्याश्च रुद्राश्च गणदेवताः'—अर्थात् १२ आदित्य, १० विश्वेदेव, ८ वसु, ४९ वायु, १२ साध्य, ११ रुद्र, ३६ तुषित, ६४ आभास्वर, २२० महाराजिक।—द्रव्य–(न०) सार्वजनिक सम्पत्ति।—धर–(पुं०) एक श्रेणी या संख्या का मुखिया। पाठशालीय अध्यापक।—नाथ,—नायक–(पुं०) गणेश। शिव।—नायिका —(स्त्री०)–दुर्गादेवी। प, —पति–(पुं०) शिव अथवा गणेश।—पीठक–(न०) वक्षस्थल, छाती।—पुङ्गव–(पुं०) जाति या श्रेणी का मुखिया। (बहुवचन) एक देश और उसके अधिवासी।—पूर्व–(पुं०) किसी जाति या श्रेणी का मुखिया।—भर्तृ–(पुं०) शिव। गणेश। श्रेणी का मुखिया।—भोजन–(न०) पंगत, ज्योनार, भोज।—राज्य–(न०) वह राज्य जिसमें शासन चुने हुए मुखियों के द्वारा होता हो। दक्षिण की एक रियासत का नाम।—हास,—हासक–(पुं०) सुगन्ध द्रव्य विशेष।

गणक—(वि०) [√गण्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०—**गणिका**] गणना करने वाला। (पुं०) ज्योतिषी।

गणकी—(स्त्री०) [गणक—ङीप्] ज्योतिषी की स्त्री।

गणतिथ—(वि०) [गणनां पूरकम्, गण+तिथुक्] दल या टोली बनाने वाला।

गणन—(न०) [√गण्+णिच्+ल्युट्] गिनती, हिसाब-किताब। जोड़। कल्पना, विचार। विश्वास।

गणना—(स्त्री०) [√गण्+णिच्+युच्] गिनती। हिसाब। लिहाज।—**महामात्र**–(पुं०) अर्थमंत्री।

गणशस्—(अव्य०) [गण+शस्] समूह में, टोली में। श्रेणी के क्रम से।

गणि—(स्त्री०) [√गण्+इन्] गिनती, गणना।

गणिका—(स्त्री०) [गणः लम्पटगणः उपपतित्वेन अस्ति अस्याः, गण+ठन्] रण्डी, वेश्या 'गुणानुरक्ता गणिका च यस्य वसन्तशोभेव वसन्तसेना' मृच्छ १.६। हथिनी। पुष्प विशेष।

गणित—(वि०) [गण्+क्त] गिना हुआ। संख्या डाला हुआ। जोड़ा-घटाया हुआ। ध्यान दिया हुआ। (न०) गणना, गिनती। अङ्कगणित, जिसके अन्तर्गत पाटीगणित या व्यक्तगणित, बीजगणित और रेखागणित सम्मिलित। जोड़।

गणितिन्—(पुं०) [गणित+इनि] जिसने गणना की हो। अङ्कगणित का जानने वाला।

गणिन्—(वि०) [गण+इनि], [स्त्री०—**गणिनी**] किसी का झुंड या दल रखने वाला। (पुं०) अध्यापक, शिक्षक।

गणेय—(वि०)[√गण्+एय] गिनती करने योग्य, गिनने योग्य।

गणेरु—(पुं०) [√गण्+एरु] कर्णिकार वृक्ष । (स्त्री०) रंडी । हथिनी ।

गणेरुका—(स्त्री०) [गणेरु √ कै+क] कुटनी । चाकरानी, दासी ।

गण्ड्—भ्वा० पर० अक० मुख का एक भाग होना । गण्डति, गण्डिष्यति, अगण्डीत् ।

गण्ड—(पुं०) [√गण्ड्+अच्] गाल; 'तदीयमार्द्रारुणगण्डलेखं' कु० ७.४२ । हाथ की कनपटी । बुद्बुद, बबूला, बुल्ला । फोड़ा । गिल्टी । मुँहासा । घेघा, गरदन की एक बीमारी । गाँठ, जोड़ । चिह्न, दाग । गैंडा । मूत्रस्थली । योद्धा । घोड़े के साज का एक अंश । (ज्यो०) एक अनिष्ट योग ।—**अङ्ग** (**गण्डाङ्ग**)–(पुं०) गैंड़ा ।—**उपधान** (**गण्डोपधान**)–(न०) तकिया, मसनद ।—**कुसुम**–(न०) हाथी का मद ।—**कूप**–(पुं०) पर्वतशिखर पर का कूप या कुआँ ।—**देश**,—**प्रदेश**–(पुं०) गाल ।—**फलक**—(न०) चौड़ा गाल ।—**माल**–(पुं०) —**माला** –(स्त्री०) वह रोग जिसमें गरदन में माला की तरह गिल्टियाँ निकलती हैं ।—**मूर्ख**–(वि०) वज्रमूर्ख । महामूर्ख ।—**शिला**–(स्त्री०) एक बड़ी भारी चट्टान जिसे भूडोल या तूफान ने नीचे गिरा दिया हो । माथा ।—**साह्वया**–(स्त्री०) गण्डकी नदी का नाम । —**स्थल**–(न०),—**स्थली**–(स्त्री०) गाल । हाथी की कनपटी ।

गण्डक—(पुं०) [गण्ड+कन्] गैंड़ा । रोक, अड़चन । गाँठ, ग्रन्थि । चिह्न । फोड़ा । वियोग, विरह । चार कौड़ी के मूल्य का एक सिक्का ।

गण्डका—(स्त्री०) [गण्डक+टाप्] डला, डली, भेला, भेली, लौंदा, चक्का, ढोंका, ढेला ।

गण्डकी—(स्त्री०) [गण्डक–ङीष्] एक नदी जो गङ्गा में गिरती है ।—**पुत्र**–(पुं०) —**शिला**–(स्त्री०) शालग्राम शिला ।

गण्डली—(पुं०) [गण्ड इव क्षुद्रशैलं तत्र लीयते, गण्ड√ ली+क्विप्] शिव ।

गण्डि—(पुं०) [√गण्ड्+इन्] पेड़ का तना या धड़, जड़ से लेकर उस स्थान तक का भाग जहाँ से डालियों का निकलना आरम्भ होता है ।

गण्डिका—(स्त्री०) [गण्ड+ठन्–टाप्] एक पत्थर ।

गण्डीर—(पुं०) [√गण्ड्+ईरन्] शूर-वीर । पोई का साग । सेंहुड़ ।

गण्डू—(स्त्री०) [√गण्ड्+उ–ऊङ] तकिया । जोड़, गाँठ, ग्रन्थि ।—**पद**–(पुं०) केंचुआ, किञ्चुलक ।

गण्डूष, (पुं०)—**गण्डूषा**–(स्त्री०) [√गण्ड्+ऊषन्]चुल्लू (जल आदि); 'गण्डूष-जलमात्रेण शफरी फरफरायते' । कुल्ली । हाथी की सूँड़ की नोक ।

गण्डोल—(पुं०) [√गण्ड्+ओलच्] कच्ची शक्कर । कौर, निवाला ।

गत—(वि०) [√गम्+क्त] गया हुआ । बीता हुआ, गुजरा हुआ । मृत, मरा हुआ । आया हुआ, पहुँचा हुआ । अवस्थित । गिरा हुआ । कम किया हुआ । सम्बन्धी, विषय का ।—**अक्ष** (**गताक्ष**)–(वि०) अन्धा, नेत्रहीन ।—**अध्वन्** (**गताध्वन्**)– वह जिसने अपनी यात्रा पूरी कर डाली हो । अभिज्ञ, अवगत । (स्त्री०) चतुर्दशी युक्त अमावस्या ।—**अनुगत** (**गतानुगत**)–(न०) किसी रीति या रस्म का अनुयायी या मानने-वाला ।—**अनुगतिक** (**गतानुगतिक**)–(वि०) आँख मूँद कर दूसरों के पीछे चलने वाला । अंधानुयायी; 'गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः' पं० ।—**अन्त** (**गतान्त**)–(वि०) वह जिसकी समाप्ति आ पहुँची हो । —**अर्थ** (**गतार्थ**)–(वि०) निर्धन, गरीब । अर्थहीन ।—**असु** (**गतासु**),—**जीवित**, —**प्राण**–(वि०) मृत, मरा हुआ ।—**आधि**

(गताधि) (वि०) मानसिक कष्ट से रहित। निश्चित, प्रसन्न।—**आयुस्** (**गतायुस्**)-(वि०) जिसकी आयु समाप्त हो चली हो। वेजान। अशक्त।—**आर्तवा** (**गतार्तवा**)-(स्त्री०) वह स्त्री जो ऋतुमती न होती हो। बुढ़िया।—**उत्साह** (**गतोत्साह**)-(वि०) उत्साहहीन। उदास।—**कल्मष**-(वि०) पाप या दोष से मुक्त, पवित्र।—**क्लम**-(वि०) थकान-रहित।—**चेतन**-(वि०) मूर्च्छित, वेहोश—**प्रत्यागत**-(वि०) जाकर लौटा हुआ।—**प्रभ**-(वि०) जिसमें प्रभा या तेज न हो। मंदा। धुँधला। कुम्हलाया हुआ।—**प्राण** (वि०) मृत, मरा हुआ।—**प्राय**-(वि०) लगभग गुजरा हुआ। गया, वीता हुआ-सा।—**भर्तृका**-(स्त्री०) विधवा, राँड़। प्रोषितभर्तृका, वह स्त्री जिसका पति विदेश गया हो।—**लज्ज**—(वि०) निर्लज्ज, वेशरम।—**लक्ष्मीक**-(वि०) भाग्य-हीन। प्रभाहीन, चमक रहित।—**वयस्क**-(वि०) अधिक अवस्था का, वूढ़ा।—**वर्ष**-(पुं०, न०) वीता हुआ वर्ष।—**वैर**-(वि०) मेल-मिलाप किये हुए, सन्धि किये हुए।—**व्यथ**-(वि०) पीड़ा-रहित।—**सत्त्व**-(वि०) मृत, मरा हुआ। नीच, ओछा।—**सन्नक**-(वि०) हाथी जिसके मद न चूता हो।—**स्पृह**-(वि०) जिसे कोई चाह या इच्छा न हो। साँसारिक अनुराग से रहित।

गति—(स्त्री०) [गम्+क्तिन्] जाना, गमन। चाल, हरकत। प्रवेश। पथ, मार्ग। पहुँचना, प्राप्ति। फल, परिणाम। हालत, दशा। उपाय, जरिया। शरण-स्थान। उत्पत्ति-स्थान। प्रवाह। यात्रा। कर्मफल। भाग्य। नक्षत्रपथ। ग्रहों की चाल। नासूर। ज्ञान। पुनर्जन्म। आयु की भिन्न दशाएँ, यथा—शैशव, यौवन, वुढ़ापा आदि।—**अनुसर** (**गत्यनुसर**)-(पुं०) दूसरे के पीछे चलना, दूसरे के मार्ग पर गमन करना।—**भङ्ग**-(पुं०) छंद, तान आदि में पढ़ने या गाने की लय का टूट जाना।—**हीन**-(वि०) गति-रहित। असहाय। अनाथ।

गत्वर—(वि०) [√गम्+क्वरप्, अनु-नासिकलोप, तुक्] [स्त्री०—**गत्वरी**] चर, जङ्गम, चलनेवाला। नश्वर, नाशवान्; 'गत्वर्यो यौवनश्रियः' कि० ११.१२।

√गद्—भ्वा० पर० अक० स्पष्ट बोलना। गदति, गदिष्यति, अगादीत् — अगदीत्।

गद-(न०) [√गद्+अच्] एक प्रकार का रोग। (पुं०) भाषण, वक्तृता। वाक्य। रोग। गर्जन, गड़गड़ाहट।—**अगद** (**गदागद**)-(पुं०) द्वि० में, अश्विनी कुमार।—**अग्रणी** (**गदाग्रणी**)-(पुं०) सव रोगों का सरदार अर्थात् क्षय रोग।—**अम्बर** (**गदाम्बर**)-(पुं०) वादल।—**अराति** (**गदाराति**)-(पुं०) दवा।

गदयित्नु—(वि०) [√गद्+णिच्+इत्नुच्] वातूनिया, वकवादी। कामी, लम्पट। (पुं०) कामदेव का नाम।

गदा—(स्त्री०) [√गद्+अच्—टाप्] लोहे का वना एक पुराना हथियार जिसके एक सिरे पर नोकदार वड़ा लट्टू लगा होता था, गुर्ज। वाँस के डंडे में पहनाया हुआ पत्थर का गोला जिसे मुद्गर की तरह भाँजते हैं।—**अग्रज** (**गदाग्रज**)-(पुं०) श्रीकृष्ण का नाम।—**अग्रपाणि** (**गदाग्रपाणि**)-(वि०) दाहिने हाथ में गदा लेनेवाला।—**धर**-(पुं०) विष्णु।—**भृत्**-(पुं०) गदा से युद्ध करने वाला। (पुं०) विष्णु।—**युद्ध**-(न०) गदा की लड़ाई।—**हस्त**-(वि०) गदास्त्र से सज्जित।

गदिन्—(वि०) [गदा+इनि] [स्त्री०—**गदिनी**] गदा लिये हुए। रोगी, वीमार। (पुं०) विष्णु।

गद्गद—(वि०) [गद् इत्यव्यक्तं गदति, गद्√गद्+क वा अच्] हर्ष, प्रेम, शोक आदि के

अतिरेक से जिसका गला भर आया हो जिसके मुँह से स्पष्ट शब्द न निकलते हों। पुलकित, आनन्दित। (पुं०) हकलाना। (न०) हकला कर बोलना।—**स्वर**–(पुं०) हकलाने की बोली। भैंसा।

गद्य—(वि०) [√गद्+यत्] कहने योग्य। (न०) पद्य नहीं, वार्तिक, वह रचना जिसमें कविता या पद्य न हो।

गद्याणक, गद्यातक, गद्यालक—(पुं०) घुँघची या रत्ती भर की तौल।

गन्तु—(पुं०) [√गम्+तुन्] पथिक। मार्ग।

गन्तृ—(वि०) [√गम्+तृन्] [स्त्री०—गन्त्री] जाने वाला। स्त्री के साथ मैथुन करने वाला।

गन्त्री—(स्त्री०) [√गम्+ष्ट्रन्—ङीप्] बैलगाड़ी। घोड़ागाड़ी।

√गन्ध्—चु० आत्म० सक० घायल करना। माँगना। जाना। गन्धयते, गन्धयिष्यते, अजगन्धत।

गन्ध—(पुं०) [√गन्ध्+अच्] बू, बास। सुगन्ध पदार्थ। गन्धक। घिसा हुआ चन्दन। सम्बन्ध, रिश्ता। घमण्ड।—**अम्ला** (**गन्धाम्ला**)–(स्त्री०) जंगली नीबू का वृक्ष। —**अश्मन** (**गन्धाश्मन**)–(पुं०) गन्धक। —**आखु** (**गन्धाखु**)–(पुं०) छछून्दर।—**आढ्य** (**गन्धाढ्य**)–(पुं०) नारंगी का पेड़। (न०) चन्दन काष्ठ।—**आली** (**गन्धाली**) –(स्त्री०) एक लता, गंधपसार। भिड़।—**०गर्भ**–(पुं०) छोटी इलायची।—**इन्द्रिय** (**गन्धेन्द्रिय**)–(न०) नाक, नासिका।—**इभ** (**गन्धेभ**),—**गज**,—**द्विप**,—**हस्तिन्**–(पुं०) सर्वोत्तम हाथी; 'शमयति गजानन्यान् गन्धद्विपः कलभोऽपि सन्' विक्र० ५.१८। —**उत्तमा** (**गन्धोत्तमा**)–(स्त्री०) शराब, मदिरा।—**ओतु** (**गन्धोतु**)– (पुं०) खट्टाश, गंध-विलाव।—**कालिका**—**काली**–(स्त्री०) वेद व्यास की माता का नाम। —**केलिका**, —**चेलिका**–(स्त्री०) कस्तूरी, मुश्क।—**ग्राही**–(स्त्री०) नाक।—**धूलि**– (स्त्री०) कस्तूरी।—**नकुल**– (पुं०) छछूंन्दर।—**नालिका**,—**नाली**–(स्त्री०) नाक, नासिका। —**निलया**–(स्त्री०) एक प्रकार की चमेली। —**प**–(पुं०) पितृगण विशष।—**पलाशिका** –(स्त्री०) हल्दी।—**पाषाण**–(पुं०) गन्धक। —**पुष्पा**–(स्त्री०) नील का पौधा।—**पूतना**–(स्त्री०) बालग्रह विशेष।—**फली**–(स्त्री०) प्रियङ्गुलता। चम्पा–वृक्ष की फली।—**बन्धु**–(पुं०) आम का पेड़।—**मादन**–(पुं०) भौंरा। गन्धक। मेरु पर्वत के पूर्व एक पर्वत जिसमें महकदार अनेक वन हैं।—**मादनी**–(स्त्री०) शराब।—**मादिनी**–(स्त्री०) लाख, चपड़ा।—**मार्जर**–(पुं०) गंधविलाव, मुश्कविलाई।—**मूल**—(पुं०) कुलंज का वृक्ष।—**मुखा**– (स्त्री०) —**मूषिक**–(पुं०)—**मूषी**–(स्त्री०) छछूँदर। —**मृग**– (पुं०) मुश्कविलाई। मुश्कहिरन, कस्तूरीमृग।—**मैथुन**–(पुं०) साँड़, बैल। —**मोदन**–(पुं०) गन्धक।—**मोहिनी**–(स्त्री०) चंपा की कली।—**राज**–(पु०) चमेली। (न०) चन्दन।—**लता**–(स्त्री०) प्रियङ्गु की बेल।—**लोलुपा**–(स्त्री०) मधुमक्षिका।—**वह**–(पुं०) पवन, हवा; 'रात्रिन्दिवं गन्धवहः प्रयाति' श० ५.४।—**वहा**–(स्त्री०) नासिका, नाक।—**वाहक**–(पुं०) पवन, हवा। कस्तूरीमृग।—**वाही**–(स्त्री०) नाक।—**विह्वल**–(पुं०) गेहूँ।—**वृक्ष**–(पुं०) साल का पेड़।—**व्याकुल**–(न०) कङ्कोल वृक्ष।—**शुण्डिनी**–(स्त्री०) छछूंदरी।—**शेखर**–(पुं०) मुश्क, कस्तूरी। —**सोम**–(न०) सफेद कुमुदिनी।

गन्धक—(पुं०) [गन्ध+कन्] गन्धक।

गन्धन—(न०) [√गन्ध+ल्युट्] अध्य-

वसाय, सततचेष्टा। चोट, घाव। प्राकट्य, प्रकाशन। सूचना, सङ्केत, इशारा।

गन्धवती—(स्त्री०) [गन्ध+मतुप्, वत्व—ङीप्] भूमि, पृथिवी। शराब। व्यास-माता सत्यवती। चमेली की जातियाँ।

गन्धर्व—(पुं०) [गन्ध√अर्व्+अच् वा गो √धृ+व, पृषो० साधु:] देवताओं के गवैया। गवैया। घोड़ा। मुश्कहिरन, कस्तूरीमृग। मृत्यु के बाद और जन्म के पूर्व की जीव की दशा। कोयल। —**नगर**, —**पुर**–(न०)। गन्धर्वों की पुरी। दृष्टिदोषसे आकाश में दिखाई देने वाला मिथ्या आभास रूप नगर, कल्पित नगर। —**राज**–(पुं०) गन्धर्वों के राजा चित्ररथ। —**विद्या**–(स्त्री०) सङ्गीत विद्या। —**विवाह**–(पुं०) आठ प्रकार के विवाहों में से एक, इस प्रकार का विवाह युवक और युवती के पारस्परिक प्रेमबंधन पर ही निर्भर है, युवक-युवती को न तो अपने किसी सगे सम्बन्धी से अनुमति लेने की आवश्यकता पड़ती है और न कोई रीतिरस्म अदा करने की जरूरत होती है। —**वेद**–(पुं०) चार उपवेदों में से एक, यह सामवेद का उपवेद है। —**हस्त**, —**हस्तक**–(पुं०) अंडी या रेंडी का वृक्ष।

गन्धा—(स्त्री०) [√गन्ध्+णिच्+अच् वा गन्ध+अच्+टाप्] चंपे की कली।

गन्धार—(पुं०) [गन्ध√ऋ+अण्] एक प्राचीन जनपद, कँधार के आस-पास का देश। सप्तक का तीसरा स्वर। सिन्दूर।

गन्धालु—(वि०) [गन्ध+आलुच्] सुवासित, सुगंधित।

गन्धिक—(वि०) [गन्ध+ठन्] सुगन्धियुक्त। अल्प परिमाण का। (पुं०) गन्धी, इत्रफरोश। गन्धक।

गभस्ति—(पुं०) [गम्यते ज्ञायते,√गम्+ड —ग: विषय: तं बभस्ति,√भस्+क्तिच्] किरण। सूर्य। शिव। (स्त्री०) अग्नि की स्त्री स्वाहा। उँगली। हाथ। —**कर**, —**पाणि** —**हस्त**–(पुं०) सूर्य।

गभस्तिमत्—(पुं०) [गभस्ति+मतुप्] सूर्य; 'घनव्यपायेन गभस्तिमानिव' र० ३.३७। (न०) पाताल के सप्त विभागों में से एक।

गभीर—(वि०) [गच्छति जलमत्र,√गम्+ईरन्, भ अन्तादेश] गहन, गहरा; 'उत्तालास्त इमे गभीरपयस: पुण्या: सरित्सङ्गमा:' उत्त० २.३०। गुप्त, रहस्यमय। दुर्बोध। गाढ़ा, सघन, घना। —**आत्मन्** (**गभीरात्मन्**) –(पुं०) परमेश्वर। —**वेपस्**– (वि०) अत्यन्त काँपने वाला।

गभीरिका—(स्त्री०) [गभीर+कन्—टाप्, इत्व] बड़ा ढोल जिसमें बड़ा गंभीर शब्द हो।

गभोलिक—(पुं०) [अव्युत्पन्न प्रातिपदिक] गोल छोटा तकिया। मसूर।

√गम्—भ्वा० पर० सक० जाना। गच्छति, गमिष्यति, अगमत्।

गम—(वि०) [√गम्+खच्] (समास के अन्त में जोड़ा जाता है जैसे, "हृदयङ्गम" "पुरोगमा" आदि और तब इसका अर्थ होता है) जाते हुए। पहुँचते हुए, प्राप्त होते हुए। (पुं०) [√गम्+अप्] गमन। प्रस्थान। आक्रमणकारी का कूच। मार्ग, रास्ता। अविवेक। कम समझ पाना। स्त्रीमैथुन। चौपड़ का खेल। —**आगम** (**गमागम**)–(पुं०) चराचर, संसार। जाना-आना।

गमक—(वि०) [√गम्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०—**गमिका**] सूचक, सङ्केतकारी। बोधक।

गमन—(न०) [√ गम्+ल्युट्]गमन, चाल, गति। समीपगमन। आक्रमणकारी का कूच। प्राप्ति, उपलब्धि। स्त्रीमैथुन।

गमिन्—(वि०) [√गम्+इनि] जाने वाला। जाने की इच्छा रखने वाला, गमनेच्छु। (पुं०) यात्री।

गमनीय, गम्य—(वि०) [√ गम्+अनी-

यर्] [√गम्+यत्] बोधगम्य, समझने योग्य। पाने योग्य। जिसके पास जाया जा सके। (स्त्री०) संभोग करने योग्य।

गम्भारिका, गम्भारी--(स्त्री०) [√गम्+विच्, गमं निम्नगतिं विभर्ति, गम्√भृ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] [गम्√भृ+अण्—ङीष्] एक वृक्ष का नाम।

गम्भीर--(वि०) [√गम्+ईरन्, नि० भुगागम] (हरेक अर्थ में) गहरा। गम्भीर शब्द वाला (जैसे ढोल)। गाढ़ा, सघन, प्रगाढ़। अगाध। संगीन, गुरुतर, रहस्यमय। दुरभिगम्य, कठिनता से समझने योग्य। (पुं०) कमल। नीबू, चकोतरा। एक राग।—**वेदिन्**–(वि०) अंकुश की परवाह न करने वाला, बार-बार अंकुश मारने पर भी आदिष्ट कार्य न करने वाला, हठीला (हाथी)।

गम्भीरा, गम्भीरिका–(स्त्री०) [गम्भीर—टाप्] [गम्भीर+कन्—टाप्] इत्व] एक नदी का नाम।

गय--(पुं०) रामायण में प्रसिद्ध एक वानर का नाम। एक राजर्षि, जिनकी यज्ञ-भूमि का नाम, महाभारत के अनुसार, गया पड़ा। एक असुर जिसको ब्रह्मा, विष्णु आदि से मिला हुआ वरदान गया के तीर्थत्व और माहात्म्य का कारण हुआ।

गया--(स्त्री०) [गयासुरः गयनृपो वा कारणत्वेन अस्ति अस्याः, गय अच्—टाप्] बिहार प्रान्त के एक नगर का नाम, जहाँ सनातनधर्मी अत्यन्त प्राचीन काल से अपने पितरों का उद्धार करने को जाते हैं।

गर--(वि०) (√गृ+अच्] [स्त्री०—**गरी**] निगलने योग्य। (पुं०) पेय, शरबत। रोग, बीमारी। निगलना, लीलना। (पुं०, न०) जहर, विष। विषनाशक वस्तु, जहरमोहरा। (न०) तर करना, भिगोना।—**अधिका** (**गराधिका**)–(स्त्री०) लाक्षा कीट, लाख या लाल रंग जो लाक्षा या लाख से निकलता है।—**घ्नी**–(स्त्री०) गरई मछली।—**द**–(वि०) जहर देने वाला, विष खिलाने वाला। (न०) जहर, विष।—**व्रत**–(पुं०) मयूर, मोर।

गरण--(न०) [√गृ+ल्युट्] निगलने की क्रिया। छिड़काव। जहर, विष।

गरभ--(पुं०) [√गृ+अभच्] बच्चादानी, गर्भाशय।

गरल--(न०, पुं) [√गृ+अलच्] विष, जहर। 'गरलमिव कलयति मलयसमीरं' गीत० ४। साँप का विष। घास का पूला। एक माप।—**अरि** (**गरलारि**)–(पुं०) पन्ना, हरे रंग की एक मणि।

गरित--(वि०) [गर+क्विप्+क्त] विष मिला हुआ।

गरिमन्--(पुं०) [गुरु+इमनिच्, गर् आदेश] भार, गुरुता। महत्त्व, विशेषता, गौरव। उत्तमता। अष्ट सिद्धियों में से एक जिसके अनुसार स्वेच्छापूर्वक अपने शरीर को जितना चाहे उतना बड़ा या भारी बनाया जा सकता है।

गरिष्ठ--(वि०) [गुरु+इष्ठन्, गर् आदेश] सबसे अधिक भारी। सर्वाधिक महत्त्व-पूर्ण।

गरीयस्--(वि०) [स्त्री० **गरीयसी**], [गुरु+ईयसुन्, गर् आदेश] अत्यन्त भारी। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण; 'वृद्धस्य तरुणी भार्या प्राणेभ्योऽपि गरीयसी' हि० १.११२।

गरुड--(पुं०) [गरुद्भ्यां पक्षाभ्यां डीयते, गरुद् √डी+ड, पृषो० तलोप] विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र जो पक्षिराज और विष्णु के वाहन माने जाते हैं। गरुडाकार भवन। गरुड़ के आकार का व्यूह।—**अग्रज** (**गरुडाग्रज**)–(पुं०) अरुण जो गरुड के बड़े भाई और सूर्य के सारथी माने जाते हैं।—**अङ्क** (**गरुडाङ्क**)–(पुं०) विष्णु का नाम।—**अङ्कित** (**गरुडाङ्कित**)—**अश्मन्** (**गरुडाश्मन्**),—**ध्वज**–(पुं०)

विष्णु की उपाधि ।—व्यूह–(पुं०) वह व्यूह या सैन्य रचना जिसमें सेना का मध्य भाग चौड़ा और अगला-पिछला भाग पतला हो ।

गरुत्—(पुं०) [√गृ वा √गॄ+उति] पक्षी का पर । भोजन करना, निगलना ।—**योधिन्**–(पुं०) लवा, बटेर ।

ग ल—(पुं०) [गरुड, डस्य लः] पक्षिराज गरुड़ ।

गर्ग—(पुं०) [√गॄ+ग] ब्रह्मा के पुत्रों में से एक । साँड़ । केंचुआ । [गर्ग+यञ्—लुक्] (बहु०) गर्ग के वंशधर, गर्गगोत्री ।—**स्रोतस्**–(न०) एक तीर्थ का नाम ।

गर्गर—(पुं०) [गर्ग इति शब्दं राति, गर्ग √रा+क]भँवर। वैदिक काल का एक बाजा । एक तरह की मछली । मथानी ।

गर्गरी—(स्त्री०) [गर्गर—ङीप्]मथानी। गगरी ।

गर्गाट—(पुं०) [गर्ग इति शब्देन अटति, गर्ग √अट्+अच्] एक प्रकार की मछली ।

√गर्ज्—भ्वा० पर० अक० गरजना । गुर्राना, घुरघुराना । सिंहनाद करना, कड़कना । गर्जति, गर्जिष्यति, अगर्जीत् ।

गर्ज—(पुं०) [√गर्ज्+घञ्] हाथी की चिंघाड़ । बादलों की गड़गड़ाहट ।

गर्जन—(न०) [√गर्ज्+ल्युट्] गरजने की क्रिया, गरजना । गरजने की आवाज । बादलों की गड़गड़ाहट । गंभीर ध्वनि । रोष, क्रोध । युद्ध, लड़ाई । भर्त्सना, फटकार ।

गर्जा—(स्त्री०),**गर्जि**–(पुं०) [गर्ज+टाप्] [√गर्ज्+इन्] बादलों का गर्जन ।

गर्जित—(वि०) [√गर्ज्+क्त] गरजा हुआ । (न०) मेघ आदि का गर्जन । (पुं०) [गर्ज+इतच्] मद वाला हाथी ।

गर्त—(न०, पुं०) [√गॄ+तन्] गढ़ा । बिल । नहर । समाधि । (पुं०) कटिखात, रोग विशेष । त्रिगर्त देश का एक प्रान्त ।—**आश्रय** (**गर्ताश्रय**)–(पुं०) चूहे की तरह भूमि में बिल बना कर रहने वाला जन्तु ।

गर्तिका—(स्त्री०) [गर्त+ठन्+टाप्] जुलाहे कारखाना, तंतुशाला ।

√गर्द्—चु उभ० पक्षे भ्वा० पर० अक० शब्द करना । गर्दयति—ते,—गर्दति, गर्दयिष्यति—ते,—गर्दिष्यति, अजगर्दत्—त,—अगर्दीत् ।

गर्दभ—(न०) [√गर्द्+अभच्] सफेद कुमुदिनी । (पुं०) [स्त्री०—**गर्दभी**) गधा । गंध, वास ।—**अण्ड** (**गर्दभाण्ड**) —**अण्डक** (**गर्दभाण्डक**)–(पुं०) पाकड़ । पीपल ।—**आह्वय** (**गर्दभाह्वय**)–(न०) सफेद कमल ।—**गद**–(पुं०) चर्मरोग विशेष ।

√गर्ध्—चु० उभ० सक० चाहना । गर्धयति—ते, गर्धयिष्यति—ते, अजगर्धत्—त ।

गर्ध—(पुं०) [√गर्ध्+घञ्] कामना, इच्छा । उत्सुकता । लालच ।

गर्धन, गर्धित—(वि०) [√गृध्+ल्युट्] [गर्ध+इतच्] लालची, लोभी ।

गर्धिन्—(वि०) [गर्ध+इनि] [स्त्री०—**गर्धिनी**] अभिलाषी, इच्छुक । लालची; 'नवान्नामिषगर्धिनः' मनु० ४.२८। उत्सुकता पूर्वक अनुसरण करने वाला ।

गर्भ—(पुं०) [√गॄ+भन्] शुक्र-शोणित के संयोग से उत्पन्न माँस-पिंड, हमल । गर्भाशय की झिल्ली, गर्भाधान । गर्भाधान का समय । गर्भ का बच्चा । बच्चा या पक्षिशावक । भीतर का भाग, अभ्यन्तरीण भाग । आकाशोत्पन्न पदार्थ, जैसे कोहासा, ओस, हिम । प्रसूतिका-गृह । कोठे के भीतर की कोठरी । छेद । अग्नि । भोजन । कटहल का काँटीला छिलका । नदी का पेटा । फल । संयोग । पद्मकोश ।—**अङ्क** (**गर्भाङ्क**)–(पुं०), (**गर्भेऽङ्क** भी होता है ।) अभिनय के किसी दृश्य के अन्तर्गत कोई दृश्य ।—**अवक्रान्ति** (**गर्भावक्रान्ति**)–(स्त्री०) गर्भस्थित बालक के शरीर में जीव का पड़ना ।—**आगार** (**गर्भागार**)–(न०) गर्भस्थान, बच्चेदानी । जनानखाना, अन्तः-

पुर । प्रसूतिकागृह । मन्दिर में वह स्थान जहाँ मूर्ति स्थापित हो, गर्भमन्दिर ।—**आधान (गर्भाधान)**–(न०) गर्भ-धारण । १६ संस्कारों में से एक ।—**आशय (गर्भाशय)** (पुं०) स्त्री के पेट की वह थैली जिसमें बच्चा रहता है, बच्चादानी ।—**आस्राव (गर्भास्राव)**–(पुं०) गर्भ का कच्ची अवस्था में गिर जाना ।—**ईश्वर (गर्भेश्वर)**–(पुं०) गर्भकाल से ही राजा, वंशानुगत राजा ।—**उत्पत्ति (गर्भोत्पत्ति)** (स्त्री०) गर्भपिण्ड का बनना ।—**उपघात (गर्भोपघात)**–(पुं०) गर्भ का गिर पड़ना ।—**काल**–(पुं०) गर्भस्थापन का समय ।—**कोश,—कोष**–(पुं०)गर्भाशय ।—**क्लेश**–(पुं०) गर्भस्थ बच्चे के बाहर निकलने के समय की पीड़ा जो गर्भधारिणी स्त्री को होती है ।—**क्षय**–(पुं०) गर्भ का नाश ।—**गृह,—भवन,—वेश्मन्**– (न०) भवन के बीचोबीच का कमरा । प्रसूतिका-गृह । गर्भमन्दिर या वह कमरा जिसमें मूर्ति स्थापित हो ।—**ग्रहण** (न०) गर्भधारण, गर्भ रह जाना ।—**घातिन्**–(वि०)गर्भ गिराने वाला । —**चलन**–(न०) गर्भ का हिलना-डुलना या स्थानच्युत होना ।—**च्युति**–(स्त्री०) जन्म, उत्पत्ति । कच्चा गर्भ गिर पड़ना ।—**दास**–(पुं०),—**दासी**–(स्त्री०) जन्म से गुलाम या जन्म से दासी ।—**द्रुह**–(वि०) गर्भाधान न चाहने वाला । गर्भपात कराने वाला ।—**धरा**–(स्त्री०) गर्भिणी ।—**धारण**–(न०) **धारणा**–(स्त्री०) गर्भ में सन्तान को रखना । —**ध्वंस**–(पुं०) गर्भ का नाश ।—**पाकिन्**–(पुं०) ६० दिन में पकने वाला धान ।—**पात**–(पुं०) गर्भ का गिर जाना । चौथे महीने के बाद के गर्भ का गिरना ।—**पोषण,—भर्मन्**–(न०) गर्भस्थ बच्चे का पालन-पोषण; 'अनुष्ठिते भिषग्भिराप्तैरथ गर्भभर्मणि' र० ३.४२ । —**मण्डप**–(पुं०) जच्चाघर, प्रसूतिका-गृह ।—**मास**-(पुं०) गर्भ रहने का महीना। —**मोचन**–(न०) प्रसव करना ।—**योषा**–(स्त्री०) गर्भिणी स्त्री ।—**लक्षण**–(न०) गर्भ धारण के चिह्न ।—**लम्भन**–(न०) गर्भ की रक्षा के लिये किया जाने वाला एक संस्कार ।—**वसति**–(स्त्री०),—**वास**–(पुं०) गर्भ के भीतर रहना । गर्भाशय ।—**विच्युति**–(स्त्री०) गर्भाधान के आरम्भ ही में गर्भपात । —**वेदना**–(स्त्री०) बच्चा उत्पन्न करने के समय का कष्ट ।—**व्याकरण**–(न०) चिकित्सा शास्त्र का एक अंग जिसमें गर्भ की उत्पत्ति, वृद्धि आदि का वर्णन किया गया है ।—**व्यूह**–(पुं०) एक व्यूह या सैन्य-रचना जिसमें सेना कमल के आकार में खड़ी की जाती है ।—**शङ्कु**–(पुं०) गर्भस्थित मृत शिशु को निकालने का औजार ।—**सम्भव** (पुं०),—**सम्भूति**–(स्त्री०) गर्भ रह जाना ।—**स्थ**–(वि०) गर्भ का । आभ्यन्तरिक, भीतरी ।—**स्राव**–(पुं०) दे० 'गर्भपात' ।

गर्भक—(न०) [गर्भ+कन्] दो रात्रि (जिसके बीच में एक दिन हो) की अवधि । (पुं०) पुष्पों का गुच्छा जो बालों में खोंसा जाता है ।

गर्भण्ड—(पुं०) [गर्भस्य अण्ड इव ष० त०, पररूप] नाभि की वृद्धि । अंडे की तरह उभरी हुई नाभि ।

गर्भवती—(स्त्री०) [गर्भ+मतुप्—ङीप्, वत्व] जिसके पेट में गर्भ हो ।

गर्भिणी—(स्त्री०) [गर्भ+इनि+ङीप्] गर्भवती स्त्री ।—**अवेक्षण (गर्भिण्यवेक्षण)**–(न०) गर्भिणी की परिचर्या । धातृपना, दाई का काम ।—**दोहद,—दौहद**—(न०)गर्भिणी स्त्री की इच्छाएँ या रुचि । —**व्याकरण**–(न०), —**व्याकृति**–(स्त्री०) दे० 'गर्भव्याकरण' ।

गर्भित—(वि०) [गर्भ+इतच्] गर्भयुक्त । भरा हुआ । (पुं०) काव्य का एक दोष, किसी अतिरिक्त वाक्य का किसी वाक्य के बीच में आ जाना ।

गभंतृप्त—(वि०) [अलुक् स० त०] गर्भ में बालक होने से तृप्त। भोजन एवं सन्तान की ओर से निश्चिन्त। कामचोर, आलसी।

गर्मुत्—(स्त्री०) [√गृ+उति, मुट्] एक प्रकार की घास। एक प्रकार का नरकुल। सुवर्ण, सोना।

√गर्व्—भ्वा० पर० अक० अहंकार करना। सक० जाना। गर्वति, गर्विष्यति, अगर्वीत्। चु० आत्म० अक० अहंकार करना। गर्वयते, गर्वयिष्यते, अजगर्वत।

गर्व—(पुं०) [√गर्व् + घञ्] अभिमान, घमण्ड, ऐंठ, अकड़।

गर्वाट—(पुं०) [गर्व√अट्+अच्] द्वारपाल, दरवान। चौकीदार।

√गर्ह्—भ्वा० आत्म० सक० निन्दा करना। गर्हते, गर्हिष्यते, अगर्हिष्ट। चु० गर्हयते, गर्हयिष्यते, अजगर्हत।

गर्हण—(न०), **गर्हणा**—(स्त्री०) [√गर्ह्+ल्युट्] [√गर्ह्+युच्—टाप्] निन्दा करना। दोष लगाना। भर्त्सना करना।

गर्हा—(स्त्री०) [√गर्ह्+अ—टाप्] निंदा। भर्त्सना।

गर्ह्य—(वि०) [√गर्ह्+ण्यत्] भर्त्सनीय, धिक्कारने योग्य। निन्द्य।—**वादिन्**—(वि०) निन्दक। अपशब्द कहने वाला।

√गल्—भ्वा० पर० सक० खाना। टपकाना, चुआना। अक० गिर पड़ना, गिर जाना। अदृश्य हो जाना, गायब हो जाना। गलति, गलिष्यति, अगालीत्।

गल—(पुं०) [√गल्+अप्] गला। गर्दन। साल वृक्ष की राल। एक वाद्ययंत्र या बाजा। —**अङ्कुर (गलाङ्कुर)**—(पुं०) गले का एक रोग।—**उद्भव (गलोद्भव)**— घोड़े के गले के बाल या अयाल।—**ओघ (गलौघ)**—(पुं०) गले का अर्बुद रोग।—**कंबल**—(पुं०) बैल या गाय के गले का झालर जो, लटकता रहता है।—**गण्ड**—(पुं०) घेघा, गले का एक रोग।—**ग्रह**—(पुं०)—**ग्रहण**—(न०) गरदनियाना, गर्दन में हाथ लगा कर पकड़ना। गले का एक रोग। कृष्णपक्ष की ४र्थी, ७मी, ८मी, ९मी, १३शी, अमावस्या। ऐसा दिवस जिसमें अध्ययन आरम्भ हो, किन्तु अगले दिन ही अनध्याय हो। अपने आप बिसाई विपत्ति। मछली की चटनी। —**चर्मन्**—(न०) नरेटी, नली, नरखड़ा। —**देश**—(पुं०) गर्दन।—**द्वार**—(न०) मुख।—**मेखला**—(स्त्री०) हार, कण्ठा। —**वार्त**—(वि०) स्वस्थ, तन्दुरुस्त। मुफ्तखोर, खुशामदी टट्टू।—**व्रत**—(पुं०) मयूर, मोर। —**शुण्डिका**—(स्त्री०) छोटी जीभ, उपजिह्वा, कव्वा।—**शुण्डी**—(स्त्री०) गरदन की गिल्टियों की सूजन।—**स्तनी (गलेस्तनी)**—(स्त्री०) गलथन वाली बकरी।—**हस्त**—(पुं०) अर्धचन्द्र, गलहत्था, गरदनिया। अर्धचन्द्र जैसा बाण।—**हस्तित**—(वि०) गले में हाथ डाल कर निकाला हुआ।

गलक—(पुं०) [√गल् + अच्—कन्] गला। गड़ाकू मछली।

गलन—(न०) [√गल्+ल्युट्] चूना, टपकना, रिसना।

गलन्तिका, गलन्ती—(स्त्री०) [√गल्+शतृ—ङीप्, नुम्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [√गल+शतृ—ङीप्, नुम्] कलसिया, छोटा कलसा, छोटा घड़ा। छोटा घड़ा जिसकी पेंदी में छेद करके शिव के ऊपर टाँग देते हैं, जिससे उस छेद से बराबर शिव पर जल टपका करे।

गलि—(पुं०) [√गल्+इन्] पुष्ट किन्तु कामचोर बैल।

गलित—(वि०) [√गल्+क्त] गिरा हुआ। पिघला हुआ। चुआ हुआ। बहा हुआ। खोया हुआ। पृथक् किया हुआ। नजर से छिपा हुआ। संयुक्त। ढीला। टपक-टपक कर खाली हुआ। साफ किया हुआ। क्षीण,

निर्बल ।—**कुष्ठ**–(न०) कोढ़ के रोग की वह दशा जब अँगुलियाँ आदि गल कर गिर पड़ती हैं । ।—**दन्त**–(वि०) दन्तहीन ।—**नयन**–(वि०) अँधा ।

गलितक—(पुं०) [गलित इव कायति, गलित √कै+क] नृत्य विशेष ।

गलु—(पुं०) एक प्रकार का पत्थर या नग, जिससे प्राचीन काल में मद्य-पात्र बनते थे ।

गलेगण्ड—(पुं०) [गले गण्ड इवास्य, अलुक् स०] एक पक्षी जिसकी गरदन में खाल की थैली सी लटका करती है ।

√गल्भ्—भ्वा० आत्म० अक० । साहसी होना । आत्म-निर्भर होना । गल्भते, गल्भिष्यते, अगल्भिष्ट ।

गल्भ—(वि०) [√गल्भ्+अच्] ढीठ । घमंडी । साहसी, हिम्मती ।

गल्या—(स्त्री०) [गलानां कण्ठानां समूहः, गल+यत्] गलों का समूह ।

गल्ल—(पुं०) [√गल्+ल] गाल, विशेष कर मुख के दोनों ओर के पास का भाग । —**चातुरी**–(स्त्री०) छोटा गोल तकिया जो गाल के नीचे रखा जाता है ।

गल्लक—(पुं०) [√गल्+क्विप्—गल्, तं लाति, गल्√ला+क, ततः स्वार्थे कन्] पानपात्र, जाम, मदिरा पीने का बरतन । नीलमणि, पुखराज ।

गल्लर्क—(पुं०) शराब पीने का प्याला ।

गल्वर्क—(पुं०) [गलुर्मणिभेदः तस्य इव अर्को दीप्तिर्यस्य ब० स०] स्फटिक मणि । लाजवर्द । मदिरा-पान-पात्र ।

√गल्ह्—भ्वा० आत्म० सक० । कलङ्क लगाना, इलजाम लगाना । भर्त्सना करना । गल्हते, गल्हिष्यते, अगल्हिष्ट ।

गव—[किसी-किसी समासान्त पद के पहले लगाया जानेवाला 'गौ' का पर्याय] ।—**अक्ष** (**गवाक्ष**)–(पुं०) रोशनदान, झरोखा ।— (**गवाक्षित**)–[गवाक्ष+इतच्] (वि०) खिड़कियोंदार ।—**अग्र** (**गवाग्र**)–(न०) गौओं का झुंड ।—**अदन** (**गवादन**)–(न०) चरागाह, गोचरभूमि ।—**अदनी** (**गवादनी**)–(स्त्री०) गोचरभूमि । नाँद जिसमें गौओं को सानी खिलायी जाती है ।—**अधिका** (**गवाधिका**) –(स्त्री०) लाख, लाक्षा ।—**अर्ह** (**गवार्ह**)– (वि०) गौ के मूल्य का ।—**अविक** (**गवाविक**)– (न०) गौओं और भेड़ों का झुंड ।—**अशन** (**गवाशन**)–(पुं०) चमार, मोची ।—**अश्व** (**गवाश्व**)–(न०) साँड़ और घोड़े ।—**आकृति** (**गवाकृति**)–(वि०) गौ की आकृति का ।—**आह्लिक** (**गवाह्लिक**)–(न०) नाप जिसके अनुसार रोज गौ को चारा दिया जाय ।—**इन्द्र** (**गवेन्द्र**)–(पुं०) गौ का मालिक । उत्तम साँड़ । —**उद्ध** (**गवोद्ध**)–(पुं०) उत्तम साँड़ या गाय ।

गवय—(पुं०) [गाम् सादृश्येन अयते, गो√अय्+अच्] गो जाति का एक पशु, नीलगाय का नर; 'दृष्टः कथञ्चिद्गवयैर्विविग्नैः' कु० १.५६ ।

गवल—(पुं०) [गवं शब्दं लाति, गव√ला+क] जङ्गली भैंसा । (न०) भैंसे का सींग; 'गवलासितकान्ति' शि० २०.१२ ।

गवालूक—(पुं०) [गवाय शब्दाय अलति, गव√अल्+ऊकञ्] दे० 'गवय' ।

गविनी—(स्त्री०) [गो+इनि—ङीप्] गौओं की हेड़ या झुंड ।

गवी—(स्त्री०) गाय । वाणी ।

गवेडु, गवेधु–(पुं०), **गवेधुका**–(स्त्री०) [गवे दीयते, गो√दा+क, पृषो० दस्य डः, अलुक् स०] [गवे धीयते, गो√धा+कु, अलुक् स०] [गवेधु+कन्—टाप्] मवेशियों के खाने योग्य एक घास ।

गवेरुक—(न०) [गां भूमिम् ईर्ते उत्पत्तये प्राप्नोति, गो √ईर्+उकञ्] गेरू, लाल खड़िया ।

√गवेष्—चु० आत्म० सक० तलाश करना,

खोजना, ढूँढ़ना । अक० उद्योग करना । कड़ा परिश्रम करना । गवेषयते, गवेषयिष्यते, अजगवेषत ।

गवेष––(वि०) [√गवेष्+अच्] खोज करने वाला । (पुं०) [√गवेष्+घञ्] ढूँढ़ना, खोज, तलाश ।

गवेषण, गवेषणा––[√गवेष् + ल्युट्] [√गवेष्+णिच्+युच्–टाप्] किसी वस्तु की खोज, तलाश ।

गवेषित––(वि०) [√गवेष्+क्त] ढूँढ़ा हुआ, तलाश किया हुआ, अनुसन्धान किया हुआ ।

गव्य––(वि०) [गो+यत्] गौ या मवेशियों से युक्त । गौ से उत्पन्न, यथा–दूध, दही, मक्खन आदि । मवेशियों के योग्य या उनके लिये उपयुक्त ।––(न०) गौओं की हेड़ या रौहर । गोचरभूमि । गौ का दूध । पीला रङ्ग या रोगन ।

गव्या––(स्त्री०) [गव्य+टाप्] गौओं की हेड़ । दो कोस की दूरी का माप । धनुष की डोरी । हरताल ।

गव्यूत––(न०), **गव्यूति**–(स्त्री०) [गव्यूति पृषो० साधुः][गोः यूतिः] माप विशेष जो एक कोस या दो मील के बराबर होता है । माप जो दो कोश या चार मील के बराबर होता है ।

√गह्––चु० उभ० अक०(वन की तरह) घना होना, सघन होना । अप्रवेश्य या अप्रवेशनीय होना । गहयति-ते, गहयिष्यति-ते, अजगहत्-त ।

गहन––(वि०) [√गह्+ल्यु] गहरा । सघन, घना । अप्रवेश्य जिसमें कोई घुस या पैठ न सके, अगम्य । क्लिष्टता पूर्वक समझने योग्य, दुरधिगम्य । क्लिष्ट, कठिन; 'गहना कर्मणो गतिः' भग० ४.१८ । पीड़ा या दुःख देने वाला । प्रचण्ड । (न०) [√गह् +ल्युट्] गहराई । ऐसा सघन वन जिसमें कोई घुस न सके । छिपने की जगह । गुफा । पीड़ा, कष्ट ।

गह्वर––(वि०) [√गह्+वरच्][स्त्री०–– **गह्वरी**] अप्रवेश्य । (न०) अतल-स्पर्श गर्त । गहराई । वन, जङ्गल । गुफा । अगम्य स्थान । छिपने का स्थान । पहेली । दम्भ, पाखंड । रोदन, क्रंदन । (पुं०) लता-मण्डप, निकुञ्ज ।

गह्वरी––(स्त्री०)[गह्वर–ङीष्]गुफा, कन्दरा ।

गा––भ्वा० आत्म० सक० जाना । गाते, गास्यते, अगास्त । जु० पर० सक० स्तुति करना । जिगाति, गास्यति, अगासीत् ।

गा––(स्त्री०) [√गै+डा] गीत, भजन ।

गाङ्ग––(वि०) [गङ्गा+अण्] [स्त्री०–– **गाङ्गी**] गङ्गा से उत्पन्न या गङ्गा का । (न०) आकाश-गङ्गा का जल । [लोगों का विश्वास है कि जब सूर्य के देखते-देखते जल की वृष्टि होती है तब वह आकाश-गंगा का जल होता है] । सुवर्ण, सोना । (पुं०) भीष्म । कार्तिकेय ।

गाङ्गट, गाङ्गटेय––(पुं०) [गाङ्ग√अट्+अच्, शक० पररूप] [गाङ्ग√अट्+अच्, पृषो० साधुः] झींगा मछली ।

गाङ्गायनि––(वि०) [गङ्गा+फिञ्–आयन] भीष्म । कार्तिकेय ।

गाङ्गेय––(वि०) [गङ्गा+ढक्][स्त्री०–– **गाङ्गेयी**] गङ्गा का या गङ्गा में स्थित । (न०) सुवर्ण, सोना । (पुं०) भीष्म । कार्तिकेय ।

गाजर––(न०) [गाजं मदं राति, गाज√रा +क] एक मीठा मूल जो कच्चा और अचार-मुरब्बे आदि के रूप में भी खाया जाता ।

गाढ––(वि०)[√गाह्+क्त] डूबा हुआ, गोता लगाया हुआ । गहरा घुसा हुआ । सघन बसा हुआ । अत्यन्त दबा हुआ । मूँदा हुआ, बन्द । पक्का कसा हुआ । सघन, घना । गहरा, अगम्य । मजबूत, दृढ़ । उग्र, प्रचण्ड । अत्यन्त, अतिशय । अपरिमित ।––**मुष्टि**–(वि०) बद्धमुष्टि, कञ्जूस, मक्खीचूस । (स्त्री०) तलवार ।

गाढम्—(अव्य०) अतिशयता से। गुरुता से, दृढ़ता से।

गाणपत—(वि०) [गणपति+अण्] [स्त्री०—**गाणपती**] किसी दल के नायक से संबंध रखने वाला। गणेश सम्बन्धी।

गाणपत्य—(न०) [गणपति+ण्य] गणेश की पूजा या आराधना। यूथपतित्व, सरदारी। (पुं०) गणेश का उपासक।

गाणिक्य—(न०) [गणिका+ष्यञ्] वेश्या या रंडियों का समूह।

गाणेश—(पुं०) [गणेश+अण्] गणेश का उपासक।

गाण्डिव—(पुं०), **गाण्डीव**—(न०) [गाण्डिः ग्रन्थिः अस्य अस्ति, गाण्डि+व, वैकल्पिक पूर्वदीर्घ] अर्जुन के धनुष का नाम; 'गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्' भग० १.२९। असल में यह धनुष सोम ने वरुण को और वरुण ने अग्नि को दिया था। खाण्डववनदाह के समय यह अर्जुन को अग्नि द्वारा प्राप्त हुआ था। धनुष।—**धन्वन्**—(पुं०) अर्जुन।

गाण्डीविन्—(पुं०) [गाण्डीव+इनि] अर्जुन।

गातागतिक—(वि०) [गतागत+ठक्] आने-जाने के कारण उत्पन्न।

गातानुगतिक—(वि०) [गतानुगत्+ठक्] [स्त्री०—**गातानुगतिकी**] अन्ध अनुयायी या पुरानी लकीर का फकीर बनने के कारण पैदा हुआ।

गातु—(पुं०) [√गै+तुन्] भजन। गीत। गवैया। गन्धर्व। कोयल। भौंरा।

गातृ—(पुं०) [√गै+तृच्] [स्त्री०—**गात्री**] गवैया। गन्धर्व।

गात्र—(न०) [गम्+त्रन्, आकार आदेश] देह। अंग। हाथी के अगले पैर का ऊपरी भाग।—**अनुलेपनी** (**गात्रानुलेपनी**)—(स्त्री०) उबटना।—**आवरण** (**गात्रावरण**) (न०) कवच। ढाल।—**उत्सादन** (**गात्रोत्सादन**)—(न०) तेल-उबटन लगा कर शरीर को साफ करना।—**कर्षण**—(न०) शरीर का कमजोर होना।—**मार्जनी**—(स्त्री०) तौलिया। अँगोछा।—**यष्टि**—(स्त्री०) लटा, दुबला शरीर।—**रुह**—(न०) रोंगटा, रोम।—**लता**—(स्त्री०) छरहरा बदन।—**विन्द**—(पुं०) लक्षणा के गर्भ से उत्पन्न कृष्ण के एक पुत्र का नाम।—**सङ्कोचिन्**—(पुं०) साही। जोंक।—**सम्प्लव**—(पुं०) गोताखोर पक्षी।—**सम्मित**—(वि०) तीन महीने से ऊपर का (भ्रूण)।—**सौष्ठव**—(न०) देह, अंगों की सुघड़ाई।

गाथ—(पुं०) [√गै+थन्] गीत। भजन।

गाथक, गाथिक—(पुं०) [√गै+थकन्] [गाथ+ठन्] गवैया। पुराणों या धर्म-कथाओं को गाकर पढ़ने वाला।

गाथा—(स्त्री०) [गाथ+टाप्] छन्द। वेद से भिन्न छन्द। श्लोक। गीत। प्राकृत भाषा का एक भेद।—**कार**—(पुं०) गाथा-रचयिता। गायक।

गाथिका—(स्त्री०) [गाथा+कन्—टाप् इत्व] गीत। भजन।

√गाध्—भ्वा० आत्म० अक० स्थगित होना, रुक जाना। रवाना होना। घुसना; 'गाधितासे नभोभूयः' भट्टि० २२.२। गोता लगाना। सक० पाने की इच्छा करना। ढूँढ़ना। बटोर-जोड़ कर एकत्र करना। गूँथना। गाधते; गाधिष्यते, अगाधिष्ट।

गाध—(वि०) [√गाध्+घञ्] पार होने योग्य, उथला। गम्य। (न०) उथली जगह, वह जगह जहाँ जल कम हो और पैदल ही लोग पार हो जायँ। स्थल। लाभेच्छा, लिप्सा। तली, तल।

गाधि, गाधिन्—(पुं०) [√गाध्+इन्] [गाध+इनि] विश्वामित्र के पिता का नाम।—**ज**,—**नन्दन**,—**पुत्र**—(पुं०) विश्वामित्र।—**नगर**,—**पुर**—(न०) आधुनिक कन्नौज या कान्यकुब्ज देश का नाम।

गाधेय—(पुं०) [गाधि+ढक्] विश्वामित्र का नाम ।

गान—(न०) [√गै+ल्युट्] गीत । भजन ।

गान्त्री—(स्त्री०) [गन्त्री+अण्—ङीप्] बैलगाड़ी ।

गान्दिनी—(स्त्री०) [गो√दा + णिनि, पृषो० साधुः] गङ्गा । स्वफल्क की माता और अक्रूर की पत्नी का नाम ।—**सुत** (पुं०) भीष्म । कार्तिकेय । अक्रूर ।

गान्धर्व—(वि०) [गन्धर्व+अण्] [स्त्री० —**गान्धर्वी**] गन्धर्व सम्बन्धी । (न०) गन्धर्वों की कला । जैसे सङ्गीत आदि; 'कापि वेला चारुदत्तस्य गान्धर्वं श्रोतुं गतस्य' मृ० ३ । (पुं०) गवैया । देवगायक । आठ प्रकार के विवाहों में से एक । उपवेद जो सामवेद के अन्तर्गत माना गया है । घोड़ा । —**शाला**—(स्त्री०) सङ्गीतालय ।

गान्धर्वक, गान्धर्विक—(पुं०) [गान्धर्व+कन्] [गन्धर्व+ठक्] गवैया ।

गान्धार—(पुं०) [गन्ध+अण्, गान्ध√ऋ +अण्] सङ्गीत के सप्तस्वरों में से तीसरा । सरगम (सा रे ग म प) का तीसरा वर्ण । गेरू । भारत और फारस के बीच का देश, आधुनिक कंधार । कंधार देश का शासक या अधिवासी ।

गान्धारि—(पुं०) [गन्ध+अण्, गान्ध √ऋ+इन्] दुर्योधन के मामा शकुनि की उपाधि ।

गान्धारी—(स्त्री०) [गान्धार+अण्—ङीप् धृतराष्ट्र की पत्नी और दुर्योधनादि कौरवों की जननी ।

गान्धारेय—(पुं०) [गान्धारी+ढक्] दुर्योधन की उपाधि ।

गान्धिक—(पुं०) [गन्ध+ठक्] गंधी, इतर-फुलेल बेचने वाला । लेखक । मुहर्रिर । (न०) इतर-फुलेल आदि सुगन्ध-द्रव्य ।

गामिन्—(वि०) [√गम्+णिनि] [समास के अन्त में आने वाला] जाने वाला; 'द्वितीयगामी नहि शब्द एष नः' र० ३.४६ । घूमने वाला । सवार होने वाला । सम्बन्धी, सम्बन्ध रखने वाला ।

गामुक—(वि०) [√ गम्+उकञ्] जाने वाला ।

गाम्भीर्य—(पुं०) [गम्भीर+ष्यञ्] गहराई, गंभीरता ।

गाय—(पुं०) [√गै+घञ्] गान, गीत । भजन ।

गायक—(पुं०) [√गै+ण्वुल्] गवैया ।

गायत्र—(पुं०, न०) [गायत्री+अण्] वैदिक छन्द विशेष जिसमें २४ अक्षर होते हैं । एक परम पवित्र एवं ब्राह्मणों द्वारा उपास्य वैदिक मंत्र, जिसकी उपासना किये विना ब्राह्मण में ब्राह्मणत्व ही नहीं आता ।

गायत्रिन्—(वि०) [गायत्र+इनि] [स्त्री० —**गायत्रिणी**] सामवेद के मंत्रों को गाने वाला ।

गायत्री—(स्त्री०) [गायन्तं त्रायते, गायत् √त्रै+क] वेदमाता, द्विजों का उपास्य एक वैदिक मंत्र । दुर्गा । गंगा ।

गायन—(पुं०) [√गै+ल्यु] [स्त्री०—**गायनी**] गवैया । आजीविका के लिये गान-विद्या का अभ्यास करने वाला । [√गै+ल्युट्] गाना ।

गारित्र—(पुं०)[√गॄ+णित्रन्] अन्न । चावल ।

गारुड—(वि०) [गरुड+अण्] [स्त्री०—**गारुडी**] गरुड़ के आकार का । गरुड़-सम्बन्धी । गरुडोत्पन्न । (पुं०, न०) पन्ना । सर्पों को वशीभूत करने का मंत्र विशेष । गरुड़-मंत्र से अभिमंत्रित अस्त्र । सोना, सुवर्ण ।

गारुडिक—(पुं०) [गारुड+ठक्] ऐन्द्र-जालिक, जादूगर । जहरमोहरा बेचने वाला, विषवैद्य ।

गारुत्मत्—(वि०) [गरुत्मत्+अण्]

[स्त्री०—गारुत्मती] गरुड़ के आकार का। गरुड़ के मंत्र से अभिमंत्रित (अस्त्र)। (न०) पन्ना।

गार्दभ—(वि०) [गर्दभ+अण्] [स्त्री०—**गार्दभी**] गधे का या गधे से उत्पन्न।

गार्द्ध्य—(न०) [गर्द्ध+ष्यञ्] लालच, लोभ; 'पीत्वा जलानां निधिनातिगार्द्ध्यात्' शि० ३.३७।

गार्ध्र—(वि०) [गृध्र+अण्] [स्त्री०—**गार्ध्री**] गीध से उत्पन्न। (पुं०) लोभ, लालच। तीर, वाण।—**पक्ष,—वासस्**—(पुं०) गीध के परों से युक्त तीर।

गार्भ—(वि०) [स्त्री०—**गार्भी**], **गार्भिक**-(वि०) [स्त्री०—**गार्भिकी**] [गर्भ+अण्] [गर्भ+ठक्] गर्भाशय सम्बन्धी। भ्रूण सम्बन्धी।

गार्भिणी, गर्भिण्य—(न०) [गर्भिणी+अण्] [प्रामादिकः पाठः] कई एक गर्भवती स्त्रियाँ।

गार्हपत—(न०) [गृहपति+अण्] गृहस्थ का पद और उसका गौरव।

गार्हपत्य—(पुं०) [गृहपति+ञ्य] अग्निहोत्र का अग्नि। तीन प्रकार के अग्नियों में से एक। वह स्थान जहाँ यह पवित्र अग्नि रखा जाय। (न०) गृहस्थ का पद और गौरव।

गार्हमेध—(वि०) [गृह+अण्, गार्ह—मेध कर्म० स०] [स्त्री०—गार्हमेधी] गृहस्थ के योग्य या गृहस्थ के उपयुक्त। (पुं०) गृहस्थ के नित्य अनुष्ठेय पञ्चयज्ञ।

गालन—(न०) [√गल्+णिच्+ल्युट्] (किसी पनीली वस्तु को) छानना। पिघलाना।

गालव—(पुं०) [√गल्+घञ्, तं वाति, √वा+क] लोध्र वृक्ष। आबनूस विशेष। विश्वामित्र के एक शिष्य का नाम। पाणिनि के पूर्ववर्ती एक वैयाकरण।

गालि—(स्त्री०) [√गल्+इञ्] गाली, अपशब्द, कुवाच्य; 'ददतु ददतु गालीर्गालिमन्तो भवन्तः'।

गालित—(वि०) [√गल्+णिच्+क्त] छाना हुआ। चुआया हुआ, (अर्क की तरह) खींचा हुआ। पिघलाया हुआ।

गालोड्य—(न०) [गलोड्य+अण्] कमल गट्टा या कमल का बीज।

गावल्गणि—(स्त्री०) [गवल्गण+इञ्] सञ्जय की उपाधि, गवल्गण का पुत्र।

√गाह्—भ्वा० आत्म० अक० गोता लगाना, स्नान करना। घुसना। पैठना। घूमना-फिरना। गड़बड़ करना, उथल-पुथल करना। लीन होना, तन्मय होना। सक० मथना। हिलाना-डुलाना। अपने को छिपाना। नष्ट करना। गाहते, गाहिष्यते,—घाक्ष्यते, अगाहिष्ट,—अगाढ।

गाह—(पुं०) [√गाह्+घञ्]डुबकी, गोता, स्नान। गहराई।

गाहन—(न०) [√गाह्+ल्युट्] गोता या डुबकी लगाने की क्रिया, स्नान।

गाहित—(वि०) [√गाह्+क्त]स्नान किया हुआ, डुबकी लगाया हुआ। घुसा हुआ।

गिन्दुक—(पुं०) [गेन्दुक पृषो० साधुः] खेलने का गेंद। गेंदुक नामक वृक्ष विशेष।

गिर्—(स्त्री०) [√गॄ+क्विप्] वाणी। शब्द। भाषा। स्तव। संसार। गीत। भजन। विद्या की अधिष्ठात्री देवी श्रीसरस्वती।—**पति**-(पुं०) [**गीःपति, गीष्पति,** और **गीर्पति**) बृहस्पति अर्थात् देवाचार्य। विद्वान्, पंडित।—**रथ** (**गीरथ**)-बृहस्पति का नाम।—**वाण,—बाण**-(पुं०) (**गीर्वाण**) देवता।

गिरा—(स्त्री०) [गिर्+टाप्] दे० 'गिर्'।

गिरि—(पुं०) [√गॄ+कि] पहाड़, पर्वत। संन्यासियों की एक उपाधि। आँख का एक रोग। पारे का एक दोष। गेंद। बादल। आठ की संख्या। (स्त्री०) चुहिया। निगलना, लीलना।—**इन्द्र** (**गिरीन्द्र**)-(पुं०) ऊँचा

पहाड़ । शिव । हिमालय ।—**ईश** (**गिरीश**) –(पुं०) हिमालय, शिव ।—**कच्छप**–(पुं०) पहाड़ी कछुआ ।—**कण्टक**–(पुं०) इन्द्र का वज्र ।—**कदम्ब** (पुं०)—**कदम्बक**–(पुं०) कदम्ब वृक्ष की एक जाति ।—**कन्दर**–(पुं०) गुफा ।—**कर्णिका**–(स्त्री०) पृथिवी ।—**काण** –(वि०) जिसकी एक आँख गिरि रोग से नष्ट हो गई हो ।—**कानन**–(न०) पहाड़ी छोटा वन ।—**कूट**–(न०) पर्वतशिखर ।—**गङ्गा**– (स्त्री०) पहाड़ से निकलने वाली एक नदी । —**गुड**–(पुं०) गेंद । गोला ।—**गुहा**–(स्त्री० पहाड़ी गुफा या कंदरा ।—**चर**–(पुं०) पर्वत-वासी । चोर ।—**ज**–(वि०)पहाड़ से उत्पन्न । (न०) अबरक । गेरू । लोबान । राल । लोहा । —**जा**–(स्त्री०) पार्वती देवी । पहाड़ी केला । मल्लिका लता । गङ्गा ।—**०तनय**,— **०नन्दन**, —**०सुत**– (पुं०) कार्तिकेय । गणेश ।—**०पति**–(पुं०) शिव ।—**०अमल** (**गिरिजामल**)–(न०) अबरक ।—**जाल**– (न०) पहाड़ की पंक्ति या सिलसिला ।— **ज्वर**–(पुं०) इन्द्र का वज्र ।—**दुर्ग**–(न०) पहाड़ी किला ।—**द्वार**–(न०) घाटी ।— **धातु**–(पुं०) गेरू ।—**ध्वज**–(न०) इन्द्र का वज्र ।—**नगर**–(न०) दक्षिणापथ के एक नगर का नाम ।—**णदी**–(स्त्री०) (नदी) पहाड़ी चश्मा ।—**णद्ध**–(नद्ध) (वि०) पहाड़ों से घिरा हुआ ।—**नन्दिनी**–(स्त्री०) पार्वती । गङ्गा । कोई भी (पहाड़ी) नदी । यथा—'कलिन्दगिरिनन्दिनीतटसुरद्रुमालंबिनी' भामिनीविलास ।—**णितम्ब** –(नितम्ब)– (पुं०) पहाड़ का ढाल ।—**निम्ब**–(पुं०) बकायन ।—**पीलु**–(पुं०) एक फलदार वृक्ष, फालसा ।—**पुष्पक**–(न०)शिलाजीत । पथर-फोड़ ।—**पृष्ठ**–(पुं०) पहाड़ की चोटी ।— **प्रपात**–(पुं०)पहाड़ की ढाल ।—**प्रस्थ**–(पुं०) पहाड़ के ऊपर का चौरस मैदान ।—**भिद्**– (पुं०) इन्द्र ।—**भू**–(वि०) पहाड़ से उत्पन्न (स्त्री०) श्री गङ्गा । पार्वती ।—**मल्लिका**– (स्त्री०) कुटजवृक्ष ।—**मान**–(पुं०) विशाल और अतिबलिष्ठ हाथी ।—**मृद्**–(स्त्री०) **०भव**–(न०) गेरू ।—**राज्**,—**राज**–(पुं०) हिमालय ।—**व्रज**–(न०)मगध के एक नगर का नाम ।—**शाल**–(पुं०) एक प्रकार का बाज पक्षी ।—**शृङ्ग**–(पुं०) गणेश की उपाधि । (न०) पर्वत-शिखर ।—**षद्**,–(सद्) (पुं०) शिव ।—**सानु**–(न०) पठार, अधित्यका । —**सार**–(पुं०)लोहा । जस्ता । मलयपर्वत की उपाधि ।—**सुत**–(पुं०) मैनाक पर्वत ।— **सुता**–(स्त्री०) पार्वती ।—**स्रवा**–(स्त्री०) पहाड़ी नदी, पहाड़ी चश्मा जो बड़े वेग से बहे ।

गिरिक, गिरियक, गिरियाक—(पुं०) [गिरि √कै+क] [गिरि√या+कन्+कन्] [गिरि √या+क्विप्+कन्] शिव । गेंद ।

गिरिका—(स्त्री०) [गिरि+कन्—टाप्] चुहिया, छोटा चूहा ।

गिरिश—(पुं०) [गिरि√शी+ड, अथवा गिरि+श]शिव; 'गिरिशमुपचचार प्रत्यहं सा सुकेशी' कु० १.६० ।

गिल—(पुं०) [√गॄ+क, इत्व, लकार] मगर । जंबीरी नीबू । (वि०) भक्षक, निगलने वाला ।—**गिल**–[गिल√गिल्+क],— **ग्राह**–[गिल√ग्रह्+अण्] (पुं०) घड़ियाल ।

गिलन—(न०) [√गॄ+ल्युट्, इत्व, लकार] निगलना, खा डालना ।

गिलायु—(पुं०) गले की कड़ी गिल्टी ।

गिलित, गिरित—(वि०) [√गॄ+क] (भावे) —गिल (र)=भक्षण,+इतच्] खाया हुआ, निगला हुआ ।

गिष्णु, गेष्णु—(पुं०) [√गै+इष्णुच्, आकार-लोपः, पक्षे आकारलोपाभावः]गवैया, सामवेद गाने वाला ब्राह्मण ।

गीत—(वि०) [√गै+क्त] गाया हुआ ।

वर्णित, कथित ।—**अयन** (**गीतायन**) (न०) गीत का साधन, वीणा आदि ।—**क्रम**–(पुं०) किसी गीत का गानक्रम, स्वरों का उतार-चढ़ाव । एक तरह की तान ।—**गोविन्द**–(पुं०) जयदेव-रचित एक प्रसिद्ध गीतकाव्य ।—**ज्ञ**–(वि०) गानविद्या में निपुण ।—**प्रिय**–(पुं०) शिव ।—**मोदिन्**–(पुं०) किन्नर ।—**शास्त्र**–(न०) सङ्गीत विद्या ।

गीतक—(न०) [गीत+कन्] गान । स्तोत्र ।

गीता—(स्त्री०) [गीत+टाप्] संस्कृत के कतिपय पद्यमय धार्मिक ग्रन्थों के नाम । जैसे रामगीता, भगवद्‌गीता, शिवगीता आदि ।

गीति—(स्त्री०) [√गै+क्तिन्] भजन, गीत, एक छन्द का नाम ।

गीतिका—(स्त्री०) [गीति√कै+क—टाप्] छोटा भजन । गान ।

गीतिन्—(वि०) [गीत+इनि] [स्त्री०—**गीतिनी**] जो गाने की ध्वनि में पढ़ता हो । ऐसा पढ़ने वाला अधम माना गया है । यथा —'गीती शीघ्री शिरःकंपी तथा लिखितपाठकः ।'—शिक्षा ।

गीर्ण—(वि०) [√गॄ+क्त] निगला हुआ, खाया हुआ । प्रशंसित ।

गीर्णि—(स्त्री०) [√गॄ+क्तिन्] प्रशंसा । कीर्ति । भक्षण, निगलना ।

√गु—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । गवते, गोष्यते, अगोष्ट । तु० पर० अक० विष्ठोत्सर्ग करना । गुवति, गुष्यति, अगुषीत् ।

गुग्गुल, गुग्गुलु—(पुं०) [√गुज्+क्विप्—गुक् रोगः ततो गुडति रक्षति, गुक्√गुड्+क, डस्य लकारः] [गुक्√गुड्+कु, डस्य लकारः] एक प्रकार का सुगन्ध पदार्थ । गूगुल ।

गुच्छ—(पुं०) [√गु+क्विप्—गुत्, तं श्यति, गुत्√शो+क] गुच्छा । फूलों का गुच्छा, गुलदस्ता, मयूरपंख । मुक्ताहार । ३२ या ७० लरों की मोतियों की माला ।—**अर्ध** (**गुच्छार्ध**)–(पुं०) २४ लरों की मोतियों की माला । (न०)आधा गुच्छा ।—**कणिश**–(पुं०)अन्नविशेष, रागी धान ।—**पत्र**–(पुं०) खजूर का पेड़ । ताड़ का पेड़ ।—**फल**–(पुं०) अंगूर । केले का पेड़ । मकोय । रीठा ।—**फला**—(स्त्री०) अग्निदमनी । द्राक्षा । कदली । काकमाची ।—**मूलिका**—(स्त्री०) एक घास, गुंडासिनी ।

गुच्छक—(पुं०) [गुच्छ+कन्] गुच्छा ।

√गुज्—तु० पर० अ० शब्द करना । गुजति, गुजिष्यति, अगुजीत् ।

गुज—(पुं०) [√गुज्+क] गुनगुनाहट, भिनभिनाहट । पुष्पगुच्छ, गुलदस्ता ।—**कृत्**–(पुं०) भौंरा ।

√गुञ्ज्—भ्वा० पर० अक० गूँजना, गुनगुनाना । गुञ्जति, गुञ्जिष्यति, अगुञ्जीत् ।

गुञ्जन—(न०) [√गुञ्ज्+ल्युट्] धीरे-धीरे बोलना, गुनगुनाना ।

गुञ्जा—(स्त्री०) [√गुञ्ज्+अच्—टाप्] घुंघची का झाड़ । धीमी आवाज, गुनगुनाहट । ढोल । मदिरा की दूकान । ध्यान ।

गुञ्जिका—(स्त्री०) [गुञ्जा+कन्—टाप्, इत्व] घुंघची का दाना ।

गुञ्जित—(न०) [√गुञ्ज्+क्त] गुंजार, गुनगुनाहट ।

गुटिका—(स्त्री०) [√गु+टिक्—गुटि+कन्—टाप्] गोली । गोल स्फटिक, स्फटिक की गुरिया । गोला या गेंद । रेशम का कोया । मोती ।—**अञ्जन**–(न०) सुर्मा विशेष ।

गुटी—(स्त्री०) [गुटि+ङीष्]दे० 'गुटिका' ।

√गुड्—तु० पर० सक० बचाना । गुडति, गुडिष्यति, अगुडीत् ।

गुड—(पुं०) [√गुड्+क] ईख या ताड़-खजूर के रस को गाढ़ा करके बनाई हुई बट्टी या भेली । गोला, गेंद । कौर । हाथी का

कवच या जिरहवख्तर ।—**उदक (गुडोदक)** –(न०) गुड़ या सीरे का शरवत ।—**उद्भवा (गुडोद्भवा)**–(स्त्री०) चीनी । शक्कर ।—**ओदन (गुडौदन)**–(न०) मीठा भात ।—**तृण**–(न०)—**दारु**–(पुं०, न०) गन्ना, ऊख ।—**त्वचा**–(स्त्री०)दारचीनी ।—**धेनु**–(स्त्री०) दान के लिये बनाई हुई गुड़ की गाय ।—**पर्वत**–(पुं०) दान के लिये गुड़ का वनाया हुआ पहाड़ ।—**पाक**–(पुं०) गुड़ की चाशनी में डालकर ओषधि बनाने की प्रक्रिया । उस प्रक्रिया से वनी औषधि ।—**पुष्प**–(पुं०) महुआ ।—**फल**–(पुं०) पीलू का पेड़ ।—**शर्करा**–(स्त्री०) चीनी ।—**शृङ्ग**–(न०) कलश ।—**हरीतकी**–(स्त्री०) शीरे में पड़ी हुई हर्र अर्थात् हर्र का मुरब्बा ।

गुडक—(पुं०) [गुड्+कन्]गोलाकार पदार्थ गेंद । गुड़ । गुड़-पक्व औषधि ।

गुडल—(न०) [गुडं कारणतया लाति, गुड √ला√क] मदिरा, शराव, वह शराव जो शीरे से खींची गयी हो ।

गुडा—(स्त्री०) [गुड+टाप्] कपास का पौधा । गोली ।

गुडाका—(स्त्री०) [गुडयति संकोचयति देहेन्द्रियादीनि स गुडः तम् आकति प्रकाशयति, गुड—आ√कै+क—टाप्] सुस्ती । निद्रा । **ईश (गुडाकेश)**–(वि०) नींद को वश में करने वाला । (पुं०) अर्जुन; 'मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद् द्रष्टुमर्हसि' भग० ११.७ । शिव ।

गुडगुडायन—(वि०) [गुडगुड इत्येवम् अयनं यस्य, ब० स०] जिससे गुड़गुड़ का शब्द हो ।

गुडेर—(पुं०) [√गुड्+एरक्] गेंद । गोला । कौर, ग्रास ।

√गुण्—चु० उभ० सक० गुणा करना । सलाह देना । आमन्त्रण देना, न्योतना । गुणयति—ते, गुणयिष्यति—ते, अजूगुणत्—त ।

गुण—(पुं०) [√गुण्+अच्] सिफत (अच्छी या वुरी) । भलाई । सुकृति । उत्तमता । ख्याति । उपयोग । लाभ । प्रभाव । परिणाम । शुभ परिणाम । डोरा । रस्सा । धनुष की प्रत्यञ्चा; 'कनकपिङ्गतडिद्गुणसंयुतं' र० ९.५४ । बीजे की डोरी । नस । लक्षण । प्रकृति का धर्म—सत्त्व, रजस्, तमस् । सूत की वत्ती । तन्तु । इन्द्रियजन्य विषय (यथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द) । पुनरावृत्ति, गुना, यथा दसगुना । वार, यथा दस वार । गौण । आधिक्य । विशेषण । इ, उ, ऋ और लृ के स्थान में ए, ओ, अर् और अल् का आदेश । काव्यालंकार-शास्त्र में मम्मट ने गुण की परिभाषा यह दी है :—'ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः, उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः' । नीति में राजा के लिए ६ गुण वतलाये हैं । यथा—सन्धि, विग्रह, यान, स्थान, आसन, संश्रय और द्वैध या द्वैधीभाव । तीन की संख्या । वृत्तांश की प्रान्तद्वय-संयोजक सरल रेखा । ज्ञानेन्द्रिय । पाचक भीम की उपाधि । त्याग । विराग ।—**कार**–(पुं०) कुशल रसोइया जो हर प्रकार के व्यञ्जन वना सके । भीम की उपाधि ।—**ग्राम**–(पुं०) सद्गुणों का समूह ।—**त्रय**,—**त्रितय**–(न०) सत्त्व, रजस्, तमस् ।—**लयनिका**,—**लयनी**–(स्त्री०) तम्बू, खीमा ।—**वृक्ष**,—**वृक्षक**–(पुं०) मस्तूल या वह खंभा जिससे जहाज या नाव बाँध दी जाती है ।—**शब्द**–(पुं०) विशेषण ।—**सागर**–(पुं०) अच्छे गुणों का समुद्र, अत्यन्त गुणवान् पुरुष । ब्रह्म, परमात्मा ।

गुणक—(वि०) [√गुण्+ण्वुल्] हिसाव जोड़ने वाला या लगाने वाला । (पुं०) वह अंक जिससे गुणा करें । इन्द्रिय ।

गुणन—(न०) [√गुण्+ल्युट्] गुणा । गिनती । किसी के सद्गुणों का वखान ।

गुणनिका—(स्त्री०) [√गुण्+युच्+कन्] अध्ययन । पुनरावृत्ति । नृत्य या नृत्यकला ।

(नाटक की) प्रस्तावना । माला, हार । शून्य, सिफर ।

गुणनीय—(वि०) [√गुण्+अनीयर्] गुणा करने योग्य । गिनने योग्य । परामर्श देने योग्य । (पुं०) अध्ययन । अभ्यास ।

गुणवत्—(वि०) [गुण+मतुप्] गुण वाला, गुणी ।

गुणा—(स्त्री०) [√गुण्+अच्+टाप्]दूब ।

गुणिका—(स्त्री०) [√गुण्+इन्+कन्—टाप्] गुमड़ी, गिल्टी ।

गुणित—(वि०) [√गुण्+क्त] गुणा किया हुआ । ढेर लगाया हुआ, जमा किया हुआ । गिना हुआ ।

गुणिन्—(वि०) [गुण+इनि] गुणों से युक्त, गुणवान् । नेक । शुभ । किसी के गुणों से परिचित । मुख्य ।

गुणीभूत—(वि०) [अगुणो गुणो भूतः, गुण+च्वि√भू+क्त] महत्त्वपूर्ण अर्थ से वञ्चित । गौण गुणों से युक्त ।—**व्यङ्ग्य**—(न०) अलङ्कार में कहा हुआ मध्यम काव्य ।

√गुण्ठ्—चु० पर० सक० घेरना, चारों ओर से छेक लेना । लपेटना । ढकना । गुण्ठयति—गुण्ठति, गुण्ठयिष्यति— गुण्ठिष्यति, अजगुण्ठत्—अगुण्ठीत् ।

गुण्ठन—(न०) [√गुण्ठ्+ल्युट्] ढकना । छिपाना । (शरीर में) मलना । जैसे शरीर में भस्म मलना ।

गुण्ठित—(वि०) [√गुण्ठ्+क्त] घिरा आ । ढका हुआ । पिसा हुआ, चूर्ण किया आ ।

√गुण्ड्—चु० पर० सक० ढकना । छिपाना । पीसना, चूर्ण करना । गुण्डयति—गुण्डति (√गुण्ठ् की तरह) ।

गुण्ड—(पुं०) [√गुण्ड्+अच्] चूर्ण । कसेरू ।

गुण्डक—(पुं०) [गुण्ड+कन्] रज । चूर्ण । तैलभाण्ड । धीमा मधुर स्वर ।

गुण्डिक—(पुं०) [गुण्ड+ठन्] आटा । भोजन । चूर्ण ।

गुण्डित—(वि०) [गुण्ड्+क्त] पिसा हुआ । धूलधूसरित ।

गुण्य—(वि०) [√गुण्+यत्] गुणी, गुणवान् । बखानने योग्य । प्रशंसनीय । गुणा करने योग्य ।

गुत्स—(पुं०)[√गुध्+स]गुच्छा । चँवर । ग्रन्थ का परिच्छेद । ३२ लड़ियों का मुक्ताहार ।

गुत्सक—(पुं०)[√गुध्+स+कन्] गट्ठर । गुच्छा । चँवर । अध्याय । सर्ग ।

√गुद्—भ्वा० आत्म० अक० खेलना, क्रीड़ा करना । गोदते, गोदिष्यते, अगोदिष्ट ।

गुद—(न०) [√गुद्+क] गुदा, मलद्वार । —**अंकुर** (**गुदाङ्कुर**)–(पुं०) ववासीर । —**आवर्त** (**गुदावर्त**)–(पुं०) कोष्ठवद्धता । —**उद्भव** (**गुदोद्भव**) (पुं०) ववासीर ।—**ओष्ठ** (**गुदौष्ठ**)–(पुं०)गुदा का मुख ।—**कील, कीलक**–(पुं०) ववासीर ।—**ग्रह**–(पुं०) कब्जियत, कोष्ठवद्धता ।—**पाक**–(पुं०) गुदा की सूजन ।—**वर्त्मन्**–(न०) मलद्वार ।—**स्तम्भ**–(पुं०) कोष्ठवद्धता ।

√गुध्—क्र्या० पर० सक० रोकना । गुध्नाति, गोधिष्यति, अगोधीत् । भ्वा० आत्म० अक० खेलना । गोधते, गोधिष्यते, अगोधिष्ट । दि० पर० सक० घेरना । लपेटना । गुध्यति, गोधिष्यति, अगोधीत् ।

गुन्दल—(पुं०) [गुन् इति शब्देन दल्यतेऽसौ, गुन्√ दल् + णिच् + अच्]मृदंग का शब्द ।

गुन्दाल, गुन्द्राल—(पुं०) चातक पक्षी ।

√गुप्—भ्वा० आत्म० सक० निंदा करना । जुगुप्सते, जुगुप्सिष्यते, अजुगुप्सिष्ट । रक्षा करना । छिपाना । गोपते, गोपिष्यते, अगोपिष्ट । भ्वा० पर० सक० बचाना । गोपायति, गोपायिष्यति, —गोपिष्यति,—गोप्स्यति, अगोपायीत्, —अगोपीत्,—अगौप्सीत् ।

गुपिल—(पुं०) [√गुप्+इलच्] राजा । त्राता ।

गुप्त—(वि०) [√गुप्+क्त] रक्षित । छिपा हुआ । गोप्य, छिपाने लायक । अदृश्य, आँखों से ओझल । जुड़ा हुआ या जोड़ा हुआ । (पुं०) वैश्य की उपाधि ।—**कथा**–(स्त्री०) गुप्त सूचना, ऐसी सूचना जो प्रकट करने योग्य न हो ।—**गति**–(पुं०) जासूस, भेदिया । **चर**–(पुं०) जासूस । बलराम ।—**दान**–(न०) अप्रकट दान ।—**वेश**–(पुं०) बनावटी वेश ।

गुप्तक—(पुं०) [गुप्त+कन्] दे० 'गुप्त' ।

गुप्ता—(स्त्री०) [गुप्त–टाप्] परकीया नायिका के ६ भेदों में से एक, सुरति छिपाने वाली नायिका । रखेली । वैश्य स्त्री का उपनाम या वर्णसूचक उपाधि ।

गुप्ति—(स्त्री०) [√गुप्+क्तिन्] रक्षण । संरक्षण । छिपाव, दुराव । ढकना । गुफा । बिल । जमीन में गढ़ा खोदना । किलाबन्दी, परकोटा । बन्दीगृह । नाव का निचला तला । रोकथाम ।

√गुफ्, गुम्फ्—तु० पर० सक० गूँथना । (आलं०)लिखना । रचना । गुफति—गुम्फति, गोफिष्यति — गुम्फिष्यति, अगोफीत्— अगुम्फीत् ।

गुफित, गुम्फित—(वि०) [√गुफ्+क्त] [√गुम्फ्+क्त] गुथा हुआ । बाँधा हुआ । बुना हुआ ।

गुम्फ—(पुं०) [√गुम्फ्+घञ्] गूँथना । संयुक्त करना । सजावट । मूँछ, गलमुच्छा । बाजूबंद ।

गुम्फना—(स्त्री०)[√गुम्फ्+युच्] गूँथना । क्रमबद्ध करना । यथारीति शब्दयोजना करना । वाक्य की सुन्दर रचना ।

√गुर्—दि० आत्म० सक० मारना । जाना । कष्ट देना । अक० प्रयत्न करना । गूर्यते, गोरिष्यते, अगोरिष्ट ।

गुरण—(न०) [√गुर्+ल्युट्] प्रयत्न । सतत चेष्टा ।

गुरु—(वि०)[गृणाति उपदिशति धर्मं गिरति अज्ञानं वा, यद्वा गीर्यते स्तूयते देवगन्धर्वादिभिः, √गॄ+कु, उत्व] [तुलनात्मक— गरीयस्, गरिष्ठ] भारी, बोझिल । महान् । दीर्घ । महत्त्वपूर्ण । क्लिष्ट (असह्य) । प्रचण्ड । सम्मानित । गरिष्ठ जो शीघ्र न पचे । उत्तम । प्यारा । अहङ्कारी । (पुं०) पिता । बूढ़ा, बुजुर्ग । अध्यापक । मन्त्रदाता । प्रभु । अध्यक्ष । शासक । देवाचार्य, बृहस्पति । बृहस्पति ग्रह । किसी नये सिद्धान्त का प्रचारक । पुष्य नक्षत्र । द्रोणाचार्य । मीमांसकों में सिद्धान्त-विशेष के प्रवर्तक प्रभाकर । दो मात्राओं वाला वर्ण, दीर्घ अक्षर ।—**अर्थ** (**गुर्वर्थ**)–(पुं०) अध्यापन का शुल्क, गुरुदक्षिणा; 'गुर्वर्थमाहर्तुमहं यतिष्ये' र० ५.७ ।—**उत्तम** (**गुरूत्तम**)–(पुं०) परमात्मा ।—**कार**–(न०) पूजन, सम्मान ।—**कुण्डली**–(स्त्री०) फलित ज्योतिष के अनुसार बनाया जाने वाला एक चक्र जिसके मध्य में बृहस्पति होते हैं ।—**क्रम**–(पुं०) परम्परागत प्राप्त शिक्षा ।—**जन**–(पुं०) बड़ा, बुजुर्ग, पूज्य पुरुष, माता, पिता, आचार्य आदि । —**तल्प**–(पुं०) गुरु की शय्या ।—**तल्पग**, —**तल्पिन्**–(पुं०) गुरुपत्नी के साथ व्यभिचार करनेवाला, पाँच महापातकियों में से एक । सौतेली माता के साथ मैथुन करने वाला ।—**दक्षिणा**–(स्त्री०) वह शुल्क जो गुरु को दिया जाय ।—**दैवत**–(पुं०) पुष्यनक्षत्र ।—**पाक**–(वि०) गरिष्ठ (पदार्थ)जो कठिनता से पचे । —**भ**–(न०) पुष्य नक्षत्र । कमान, धनुष । —**मर्दल**–(पुं०) ढोलक या मृदङ्ग ।—**रत्न** –(न०) पुखराज ।—**वर्तिन्**,—**वासिन्**–(पुं०) ब्रह्मचारी । विद्यार्थी, जो गुरु के पास या घर में रहे ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) ब्रह्मचारी का अपने गुरु के प्रति व्यवहार ।—**व्यथ**–

(वि०) बहुत पीड़ित या शोकान्वित ।—सिंह–(पुं०) बृहस्पति के सिंह राशि पर आने से लगने वाला एक पर्व ।

गुरुक—(वि०) [गुरु+कन्] [स्त्री०—गुरुकी] कुछ थोड़ा हल्का । दीर्घ (छंदः-शास्त्र) ।

गुरुत्व—(न०) [गुरु+त्व] बड़ाई । भारीपन ।

गुर्जर, गूर्जर—(पुं०) [गुरु√जृ+णिच्+अण्, पृषो० साधुः] गुजरात प्रान्त ।

गुर्विणी, गुर्वी—(स्त्री०) [गुरुः गर्भः अस्ति अस्याः, गुरु+इनि—ङीप्] [गुरु—ङीष्] गर्भवती स्त्री; 'गुर्विणी नानुगच्छन्ति न स्पृशन्ति रजस्वलाम्' ।

गुल—(पुं०) [=गुड, डस्य लः] गुड़ ।

गुलुच्छ, गुलुञ्छ—(पुं०) [=गुच्छ, पृषो० साधुः] [√गुड्+क्विप्, डस्य लः, गुल √उञ्छ्+अण्] दस्ता, गुच्छा ।

गुल्फ—(पुं०) [√गल्+फक्, अकारस्य उकारः] एड़ी के ऊपर की गाँठ । टखना, घट्टी ।

गुल्म—(न०, पुं०) [√गुड्+मक्, डस्य लकारः] झाड़ी । वृक्षों का झुरमुट । वन । प्रधान पुरुषों से युक्त रक्षकदल, जिसमें ९ हाथी, ९ रथ, २७ घुड़सवार और ४५ पैदल होते हैं । दुर्ग, किला । प्लीहा । प्लीहावृद्धि । सिपाहियों की चौकी । घाट ।—केश–(वि०) झबरीले बालों वाला ।—मूल–(न०) अदरक, आदी ।—लता–(स्त्री०) सोमलता ।

गुल्मिन्—(वि०) [गुल्म+इनि] [स्त्री०—[illegible]] झाड़ बाँधकर उगने वाला । प्लीहावृद्धि का रोगी ।

गुल्मी—(स्त्री०) [गुल्म+ङीष्] पटकुटी, खीमा, तंबू ।

गुवाक, गूवाक—(पुं०) [गुवति मलवत् क्वाथमुत्सृजति, √ गु+आक] [=गुवाक, पृषो० साधुः] सुपाड़ी का पेड़ ।

√गुह्—भ्वा० उभ० सक० संवरण करना, छिपाना, ढकना । गूहति-ते, गूहिष्यति-ते, —घोक्ष्यति-ते, अगूहीत्—अघुक्षत्—अगूढ —अघुक्षत ।

गुह—(पुं०) [√गुह्+क] कार्तिकेय । घोड़ा । शृङ्गवेरपुर के निषादों का राजा और श्रीरामचन्द्र का मित्र । विष्णु ।

गुहा—(स्त्री०) [गुह+टाप्] गुफा । छिपाव, दुराव । गढ़ा । बिल । हृदय ।—**आहित** (**गुहाहित**)–(वि०) हृदयस्थित ।—**चर**–(न०) ब्रह्म ।—**मुख**–(वि०) खुले हुए मुख वाला ।—**शय**–(पुं०) चूहा । शेर, चीता । परमात्मा । अज्ञान ।

गुहिन—(न०) [√गुह्+इनन्] वन, जंगल ।

गुहेर—(वि०) [√गुह्+एरक्] अभिभावक, संरक्षक । (पुं०) लुहार ।

गुह्य—(वि०) [√गुह्+क्यप्] छिपने के योग्य । गुप्त; 'मौनं चैवास्मि गुह्यानाम्' भग० १०.३७ । गूढ़, कठिनता से समझ में आने वाला । (न०) भेद, रहस्य । गुप्त अंग (गुदा आदि) । (पुं०) दम्भ । कछुआ । विष्णु ।—**गुरु**–(पुं०) शिव । **दीपक**–(पुं०) जुगनू ।—**निष्यन्द**–(पुं०) पेशाब, मूत्र ।—**भाषित**–(न०) गुप्त वार्ता । गुप्त मंत्रणा ।

गुह्यक—(पुं०) [गुह्यं गोपनीयं कं सुखं येषाम्, ब० स०] देवयोनि विशेष । यह भी कुबेर के किन्नरों की तरह प्रजा हैं और धनागार की रक्षा का काम इनके सुपुर्द है ।

गुह्यमय—(पुं०) [गुह्य+मयट्] कार्तिकेय ।

गू—(स्त्री०) [गच्छति अपानवायुना देहात्, √गम्+कू, टिलोप] विष्ठा, मल । कूड़ा करकट ।

गूढ—(वि०) [√गुह्+क्त] गुप्त । छिपा हुआ । ढका हुआ । गहन, जिसमें कोई छिपा अर्थ या व्यंग्य हो । (पुं०) स्मृति के अनुसार पाँच प्रकार के गवाहों में से एक ।

एक अलङ्कार ।—**अङ्ग** (**गूढाङ्ग**)–(पुं०) कछुवा ।—**अङ्घ्रि**(**गूढाङ्घ्रि**)–(पुं०)साँप । **आत्मन्** (**गूढात्मन्**)–परमात्मा ।—**उत्पन्न** (**गूढोत्पन्न**),—**ज**–(पुं०) धर्मशास्त्रों के मतानुसार १२ प्रकार के पुत्रों में से एक । अज्ञातनामा पिता का पुत्र, जिसकी उत्पत्ति गुपचुप हुई हो —'गृहे प्रच्छन्न उत्पन्नो गूढजस्तु सुतः स्मृतः' ।—याज्ञवल्क्य ।—**नीड**–(पुं०) खञ्जन पक्षी ।—**पथ**–(पुं०) गुप्तमार्ग । पगडंडी । मन । समझ । प्रतिभा । —**पाद्**,—**पाद**–(पुं०) सर्प, साँप ।—**पुरुष** –(पुं०) भेदिया, जासूस ।—**पुष्पक**–(पुं०) मौलसिरी, वकुल वृक्ष ।—**मार्ग**–(पुं०) सुरङ्गी रास्ता ।—**मैथुन**–(पुं०) काक, कौआ,। —**वर्चस्**–(पुं०) मेढक ।—**साक्षिन्**–(पुं०) प्रपञ्ची गवाह, ऐसा गवाह जो छिपकर अन्य गवाहों की गवाही सुन ले और तदनुसार स्वयं गवाही दे ।

गूथ—(न०, पुं०) [√गू+थक्] विष्ठा, मल। ।

√**गूर्**—दि० आत्म० सक० मारना । जाना । गूर्यते, गूरिष्यते, अगूरिष्ट । चु० आत्म० अक० उद्यम करना । गूरयते, गूरयिष्यते, अजूगुरत ।

गूषणा—(स्त्री०) आँखों की वह आकृति जो मोर के पंखों में होती है ।

√**गृ**—भ्वा० पर० सक० छिड़कना, तर करना, नम करना । गरति, गरिष्यति, अगार्षीत । चु० आत्म० सक० भलीभाँति जानना । गारयते ।

√**गृज्, गृञ्ज्**—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । गरजना । गर्जति,—गृञ्जति, गर्जिष्यति,—गृञ्जिष्यति, अगर्जीत्,—अगृञ्जीत् ।

गृञ्जन—(पुं०) [√गृञ्ज्+ल्युट्] गाजर । शलगम । गाँजा । (न०) विषैले तीरों से वध किये हुए पशु का मांस ।

गृण्डिव गृण्डीव—(पुं०) शृगाल विशेष, स्यारों की एक जाति ।

√**गृध्**—दि० पर० सक० कामना करना । लोभ करना, लालच दिखाना । गृध्यति, गर्धिष्यति, अगृधत्-अगर्धीत् ।

गृधु—(वि०) [√गृध्+कु] कामी । (पुं०) कामदेव ।

गृध्नु—(वि०) [√गृध्+क्नु] लालची, लोभी । उत्सुक । अभिलाषी ।

गृध्य—(न०), **गृध्या**–(स्त्री०) [√गृध्+क्यप्] [गृध्य+टाप्] अभिलाषा । लालच, लोभ ।

गृध्र—(वि०) [गृध्+क्रन्] लोभी । (पुं०) गिद्ध, गीध ।—**कूट**–(पुं०) एक पर्वत का नाम जो राजगृह के समीप है ।—**पति**,—**राज**–(पुं०) जटायु की उपाधि । —**वाज**, —**वाजित**–(वि०) गीध के परों से युक्त (वाण) ।—**व्यूह**–(पुं०) वह व्यूह जिसमें सेना गिद्ध की शकल में खड़ी की जाय ।—**सी**–(स्त्री०) [गृध्र√सो+क—ङीष्] एक वातरोग जिसमें कमर से आरंभ होकर सारे पैर में दर्द होता है और गाँठें जकड़ सी जाती हैं ।

गृष्टि—(स्त्री०)[गृह्णाति सकृद् गर्भम्, √ग्रह् +क्तिच्, पृषो० साधुः] एक ब्यान की गौ, वह गौ जो केवल एक वार ही व्यायी हो; 'आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद् गृष्टिः' र० २.१८ । कोई भी जवान मादा जानवर ।

√**गृह्**—भ्वा० आत्म० सक० ग्रहण करना । गर्हते, गर्हिष्यते—घर्क्ष्यते, अगर्हिष्ट—अघृक्षत । चु० आत्म० सक० ग्रहण करना । गृहयते, गृहयिष्यते, अजगृहत ।

गृह्—(न०) [√ग्रह्+क] घर, भवन । पत्नी ।—'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते ।'—पंचतन्त्र । गृहस्थ का जीवन । नाम । (यह शब्द जब एक घर के लिये प्रयुक्त किया जाता है, तब नपुंसक लिङ्ग और जब एक से अधिक घरों के लिये तब पुंल्लिङ्ग

होता है। यथा मेघदूते--"तत्रागारं धनपतिगृहान्)।"--**अक्ष** (**गृहाक्ष**)-(पुं०) खिड़की।--**अधिप** (**गृहाधिप**),--**ईश**, (**गृहेश**),--**ईश्वर** (**गृहेश्वर**)-(पुं०) घर का स्वामी, गृहपति।--**अम्ल** (**गृहाम्ल**)-(न०) काँजी।--**अयनिक** (**गृहायनिक**)-(पुं०) [गृहरूपम् अयनं विद्यतेऽस्य, गृहायन+ठन्] गृहस्थ।--**अर्थ** (**गृहार्थ**)-(पुं०) घर का कामकाज। गृहस्थी के मामले।--**अवग्रहणी** (**गहावग्रहणी**)-(स्त्री०) देहरी, दहलीज।--**आराम** (**गृहाराम**)-(पुं०) घर के आसपास का बाग।--**आश्रम** (**गृहाश्रम**)-(पुं०) गृहरूप आश्रम। गृहस्थ।--**आश्रमिन्** (**गृहाश्रमिन्**)-(पुं०) [गृहाश्रम+इनि] गृहस्थ।--**उपकरण** (**गृहोपकरण**)-(न०) गृहस्थी के लिये उपयोगी पात्र अथवा अन्य कोई वस्तु।--**कपोत**,--**कपोतक**-(पुं०) पालतू कबूतर।--**करण**-(न०) घर-गृहस्थी के मामले। भवन या घर की इमारत।--**कर्मन्**-(न०) गृहस्थी के धंधे।--**कलह**-(पुं०) घरेलू झगड़े।--**कारक**-(पुं०) घर बनाने वाला, राज।--**कार्य**-(न०) घर-गृहस्थी के काम।--**गोधा**,--**गोधिका**--(स्त्री०) छिपकली।--**चुल्ली**-(स्त्री०) घर, जिसमें पास-पास दो कमरे हों, किन्तु इनमें से एक का मुख पूर्व और दूसरे का पश्चिम की ओर हो।--**छिद्र**-(न०) घर-गृहस्थी की कमजोरियाँ या कलङ्क। पारिवारिक झगड़े।--**ज**,--**जात**-(पुं०) वह दास, जो उसी घर में जन्मा हो जिसमें वह नौकर हो।--**जालिका**-(स्त्री०) धोखा, कपट, छल।--**ज्ञानिन्** [**गृहेज्ञानिन्** रूप भी होता है।] (वि०) अनुभवशून्य। मूर्ख।--**तटी**-(स्त्री०) चबूतरा, चौतरा।--**देवता**-(स्त्री०) घर का देवता, कुल-देवता।--**देवी**- (स्त्री०) जरा नाम की राक्षसी। गृहिणी।--**द्रुम**-(पुं०) मेढ्रशृंगी वृक्ष। सहिजन का पेड़।--**देहली**-(स्त्री०) दहलीज।--**नमन**-(न०) पवन, हवा।--**नाशन**-(पुं०) जंगली कबूतर।--**नीड**-(पुं०) गौरैया।--**पति**-(पुं०) गृहस्थ। यज्ञ करने वाला। घर का स्वामी। गृहस्थ। यजमान। अग्नि।--**पत्नी**-(स्त्री०) गृहस्वामिनी।--**पाल**-(पुं०) घर का मालिक। घर का कुत्ता।--**पोतक**-(पुं०) वह स्थल जिसके ऊपर मकान खड़ा हो और उससे सम्बन्ध रखने वाली उसके आस पास की जमीन।--**प्रवेश**-(पुं०) नये बने मकान में जाने के पूर्व कतिपय शास्त्रीय कर्मानुष्ठान।--**बभ्रु**-(पुं०) पालतू नेवला।--**बलि**-(स्त्री०) अवशिष्ट अन्न से सब प्राणियों को आहारदान। जैसे पशु, पक्षी, गृहदेवता आदि को।--**भङ्ग**-(पुं०) घर से निर्वासित व्यक्ति। घर को नाश करना। घर फोड़ना। असफलता। किसी दूकान या घर की बरबादी।--**भेदिन्**-(वि०) घर का भेदिया। घर में झगड़े उत्पन्न कराने वाला।--**मणि**-(पुं०) दीपक।--**माचिका**-(स्त्री०) चमगादड़।--**मृग**-(पुं०) कुत्ता।--**मेघ**-(पुं०) मकानों का समूह।--**मेध**-(पुं०) पंचयज्ञ। पंचयज्ञ करने वाला, गृहस्थ।--**यन्त्र**-(न०) डंडा या बाँस जिस पर उत्सव के अवसरों पर ध्वजा फहरायी जाय।--**युद्ध**-(न०) घर का भाई-भाई का झगड़ा। किसी देश के निवासियों या विभिन्न वर्गों की आपस की लड़ाई, खानाजंगी।--**रन्ध्र**-(न०) पारिवारिक कलह या फूट।--**लक्ष्मी**-(स्त्री०) घर की लक्ष्मी, सुशीला गृहिणी।--**विच्छेद**-(पुं०) परिवार की बरबादी। गृहकलह।--**वित्त**-(पुं०) घर का मालिक।--**शायिन्**-(पुं०) कबूतर।--**शुक**-(पुं०) आमोद-प्रमोद के लिये पाला गया तोता।--**संवेशक**-(पुं०) थवई, राज, मैमार।--**सज्जा**--(स्त्री०)घर का साज-समान, असबाब।--

स्थ–(पुं०) ब्रह्मचर्य-पालन के बाद विवाह करके दूसरे आश्रम में प्रवेश करने या रहने वाला, गृही । घर-बार वाला । खेती-बारी करने वाला, किसान ।

गृहयाय्य—(पुं०) [√गृह्+णिच्+आय्य] गृहस्थ, बालबच्चों वाला ।

गृहयालु—(वि०) [√गृह्+णिच्+आलु] पकड़ने वाला, ग्रहण करने वाला ।

गृहिणी—(स्त्री०) [गृह+इनि—ङीप्] घर-वाली, पत्नी ।—**पद**–(न०) घरस्वामिनी की मर्यादा; 'यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः' श० ४.१७ ।

गृहिन्—(पुं०) [गृह+इनि] गृहस्थ, बाल-बच्चे वाला ।

गृहीत—(वि०) [√ग्रह्+क्त] ग्रहण किया हुआ । स्वीकृत । प्राप्त, उपलब्ध । पहिना हुआ, धारण किया हुआ । लूटा हुआ या लुटा हुआ । समझा हुआ ।—**गर्भा**–(स्त्री०) गर्भवती स्त्री ।—**दिश्**–(वि०) भागा हुआ । गायब, लापता ।

गृहीतिन्—(वि०) [गृहीत+इनि] [स्त्री०—**गृहीतिनी**] वह व्यक्ति जिसने कोई बात समझ ली हो; 'गृहीती षट्स्वङ्गेषु' दश० ।

गृहेनर्दिन्—(पुं०) [गृहे√नर्द्+णिनि, अलुक् स०] घर में डींगें मारने वाला और घर के बाहर युद्ध में पीठ दिखाने वाला, कायर, डरपोक ।

गृह्य—(वि०) [√ग्रह्+क्यप्] आकर्ष-णीय । प्रसन्न करने योग्य । घरेलू । परतंत्र, परमुखापेक्षी । पालतू । बाहर अवस्थित । (पुं०) पालतू पशु-पक्षी । गृहजन । गृहाग्नि । (न०) मलद्वार ।—**अग्नि (गृह्याग्नि)**–(पुं०) अग्निहोत्र की आग ।—**कर्मन्**–(न०) गृहस्थ के लिये विहित कर्म, संस्कारादि ।—**सूत्र**–(न०) गृह्य कर्मों, संस्कारों की विधियाँ बताने वाला वैदिक ग्रन्थ ।

गृह्या—(स्त्री०) [गृह्य+टाप्] नगर के आस-पास का गाँव ।

√गॄ—तु पर० सक० लीलना, निगल जाना । गिरति—गिलति, गरिष्यति—गरीष्यति, अगारीत्—अगालीत् । क्र्या० पर० अक० शब्द करना । सक० स्तुति करना । गृणाति, गरिष्यति—गरीष्यति, आगारीत् ।

गेन्दु (ण्डु) क—(पुं०) [गच्छतीति गः इन्दुरिव, गेन्दु + कन्, गेण्डुक— पृषो० साधुः] खेलने का गेंद । गद्दा ।

गेय—(वि०) [√गै+यत्] गाने लायक, जो गाया जा सके; 'अनन्ता वाङ्मयस्याहो गेयस्येव विचित्रता' शि० २.७२ ।

√गेव्—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना । गेवते, गेविष्यते, अगेविष्ट ।

√गेष्—भ्वा० आत्म० सक० अन्वेषण करना । गेषते, गेषिष्यते, अगेषिष्ट ।

गेह—(न०) [गो गणेशः गन्धर्वो वा ईहः ईप्सितो यत्र, ब० स०] घर, मकान ।

गेहेक्ष्वेडिन्—(वि०) [अलुक् स०] भीरु, कायर ।

गेहेदाहिन्—(वि०) [अलुक् स०] भीरु, कायर ।

गेहेनर्दिन्—(वि०) [अलुक् स०] डरपोक, भीरु ।

गेहेमेहिन्—(वि०) [अलुक् स०] घर में मूतने वाला । आलसी, काहिल ।

गेहेव्याड—(पुं०) [अलुक् स०] धूर्त । छली ।

गेहेशूर—(पुं०) [अलुक् स०] भीरु, डरपोक ।

गेहिन्—(वि०) [गेह+इनि] [स्त्री०—**गेहिनी**] दे० 'गृहिन्' ।

गेहिनी—(स्त्री०) [गेहिन्+ङीप्] पत्नी, गृहिणी ।

√गै—भ्वा० पर० अक० सक० गाना, गीत गाना । गाने के स्वर में पढ़ना या बोलना । वर्णन करना । निरूपण करना । पद्य द्वारा वर्णन

करना या कविता बनाकर प्रसिद्ध करना। गायति, गास्यति, अगासीत्।

गैर—(वि०) [गिरि+अण्] [स्त्री०—**गैरी**] पहाड़ पर उत्पन्न।

गैरिक—(वि०) [गिरि+ठञ्] [स्त्री०—**गैरिकी**] पहाड़ पर उत्पन्न। (पुं०, न०) गेरू। (न०) सुवर्ण, सोना।

गैरेय—(न०) [गिरि+ढक्] शिलाजीत। गेरू।

गो—(पुं०, स्त्री) [√गम्+डो] पशु, मवेशी (बहुवचन में)। गौ से उत्पन्न कोई भी वस्तु जैसे दूध, चमड़ा आदि। नक्षत्र। आकाश। इन्द्र का वज्र। किरण। हीरा। स्वर्ग। तीर। (स्त्री०)गाय। पृथ्वी। वाणी। सरस्वती देवी। माता। दिशा। जल। नेत्र। (पुं०) साँड़, बैल। रोम, लोम। इन्द्रिय। वृषराशि। सूर्य। नौ की संख्या। चन्द्रमा। घोड़ा।—**कण्टक**—(पुं०, न०) बैलों से खूँदा हुआ मार्ग या स्थान जो दूसरों के जाने योग्य न रह गया हो। गाय का खुर। गौ के खुर की नोक।—**कर्ण**—(पुं०) गाय का कान। खच्चर। साँप। बालिश्त, बित्ता। अवध प्रान्त का तीर्थ-विशेष जो गोकरननाथ के नाम से प्रसिद्ध है; 'श्रित-गोकर्णनिकेतमीश्वरं' र० ८.२३। बाण-विशेष।—**किराट**, —**किराटिका**—(स्त्री०) मैना पक्षी।—**किल**, —**कील**—(पुं०) हल। मूसल।—**कुञ्जर**—(पुं०) हृष्ट-पुष्ट बैल। शिव का नंदी।—**कुल**—(न०) गौओं का समूह। गोशाला। गोकुल गाँव जहाँ श्रीकृष्ण पाले-पोसे गये थे।—**कुलिक**—(वि०) [गवि पङ्कस्थगव्यां कुलिकः जड इव] दलदल में फँसी गौ को निकालने में सहायता न देने वाला। [गोः नेत्रस्य कुलमत्र, गोकुल+ठन्] ऐंचाताना।—**कृत**—(न०) गोबर।—**क्षीर**—(न०) गाय का दूध।—**गृष्टि**—(स्त्री०) एक बार की व्यायी गाय।—**गोष्ठ**—(न०) गोशाला।—**ग्रन्थि**—(स्त्री०) कंडी, करसी। गोशाला।—**ग्रह**—(पुं०) मवेशी पकड़ना।—**ग्रास**—(पुं०) भोजन का वह भाग जो गाय के लिये अलग कर दिया जाता है। गाय की तरह मुँह से उठाकर बिना चबाये भोजन करना।—**घृत**—(न०) वृष्टि का जल। गौ का घी।—**चन्दन**—(न०) एक प्रकार का चन्दन।—**चर**—(वि०) इन्द्रिय द्वारा जानने योग्य, इन्द्रियग्राह्य। पृथिवी पर घूमने वाला। (पुं०) इन्द्रिय का विषय (रूप, रस आदि)। इन्द्रियग्राह्य वस्तु। साक्षात्कार। चरागाह। व्यक्ति के नाम के अनुसार निकाला हुआ ग्रह (फ० ज्यो०)।—**चर्मन्**—(न०) गाय का चमड़ा। सतह नापने का माप-विशेष, जिसकी परिभाषा वशिष्ठ ने इस प्रकार दी है—'दश-हस्तेन वंशेन दशवंशान् समन्ततः। पञ्च चाभ्य-धिकान् दद्यादेतद्गोचर्म चोच्यते॥'—०**वसन**—(पुं०) शिव।—**चारक**—(पुं०) ग्वाला, अहीर।—**जर**—(पुं०) बूढ़ा साँड़ या बैल।—**जल**—(न०) गोमूत्र।—**जाग-रिक**—(न०) आनन्द। मङ्गल।—**जिह्वा**, —**जिह्विका**—(स्त्री०) बनगोभी।—**डुम्बा**—(स्त्री०)तरबूज।—**तम**—(पुं०) [गोभिर्ध्वस्तं तमो यस्य, ब० स० पृषो० साधुः] एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि, अहल्या के पति।—०**स्तोम**—(पुं०) एक सूक्त। एक प्रकार का यज्ञ।—**तमी** (स्त्री०) अहल्या।—०**पुत्र**—(पुं०) शता-नन्द।—**तल्लज**—(पुं०) उत्तम साँड़ या गाय।—**तीर्थ**—(न०) गोशाला।—**त्र**—(न०) गोशाला। वंश, कुल। नाम, संज्ञा। समूह। वृद्धि। वन। खेत। मार्ग। सम्पत्ति। छत्र, छाता। भविष्यज्ञान। श्रेणी। जाति। वर्ग। (पुं०) पर्वत, पहाड़।—०**कीला**—(स्त्री०) पृथिवी।—०**ज**—(वि०) एक ही कुल या वंश में उत्पन्न।—०**पट**—(पुं०) वंशावली।—०**भिद्**—(पुं०) पहाड़ों को फोड़ने वाला, इन्द्र।—०**स्खलन**—०**स्खलित**—(न०) गलत नाम से पुकारना।—**त्रा**—(स्त्री०) गौओं

की हेड़ । पृथिवी ।—दन्त–(न०) हरताल ।—दा–(स्त्री०) गोदावरी नदी ।—दान–(न०) गाय का दान । विवाह के पहले का एक संस्कार, केशान्त; 'कृतगोदानमङ्गलाः' उत्त० १ ।—दारण–(न०) हल । कुदाली ।—दावरी–(स्त्री०) [गो√दा+ वनिप्–ङीप्, र आदेश] दक्षिण भारत की एक प्रधान नदी ।—दुह्,—दुह–(पुं०) गाय दुहने वाला, ग्वाला,—दोह–(पुं०),—दोहन–(न०) गाय दुहने का समय ।– गाय दुहना ।—दोहनी–(स्त्री०) वासन जिसमें दूध दुहा जाय ।—द्रव–(पुं०) गोमूत्र ।—धन–(न०) गायों, गाय-बैलों का समूह । गाय-बैल रूप धन ।—धर–(पुं०) पर्वत ।—धूलि–(पुं०) वह समय जब गोचरभूमि से गौएँ चर कर लौटें ।—धेनु–(स्त्री०) गाय जो दूध देती हो और जिसके नीचे बछड़ा हो ।—ध्र–(पुं०) [गो√धृ (धारण करना)+क] पर्वत, पहाड़ ।—नन्दी–(स्त्री०) मादा सारस ।—नर्द–(पुं०) एक प्राचीन जनपद जो पतंजलि का जन्म-स्थान था । शिव । नागरमोथा । सारस ।—नर्दीय–(पुं०) [गोनर्द+छ–ईय] महा-भाष्यकार पतञ्जलि ।—नस,—नास–(पुं०) सर्प विशेष । वैक्रांत मणि ।—नाथ–(पुं०) बैल, साँड़ । जमींदार । ग्वाला । गौ का धनी ।—निष्यन्द–(पुं०) गोमूत्र ।—प–(पुं०) [गो√पा+क] गोपालक; 'गोपवेशस्य विष्णोः' मे० १५ । ग्वाला । प्राचीन हिन्दू राज्य-व्यवस्था में गाँव की सीमा, आबादी, खेती-बारी, क्रय-विक्रय आदि का लेखा रखने वाला कर्मचारी । गोष्ठ का अध्यक्ष । रक्षक । एक पौधा । भूमिपति, राजा ।—०अध्यक्ष (गोपाध्यक्ष),—०इन्द्र (गोपेन्द्र),—ईश (गोपेश)–(पुं०) श्रीकृष्ण ।—०दल–(पुं०) सुपारी का पेड़ ।—०वधूटी–(स्त्री०) गोप-पत्नी । गोप-युवती । ग्वालिन, गोपी ।—पति–(पुं०) गौ का धनी । साँड़, मुखिया, प्रधान । सूर्य । इन्द्र । कृष्ण । शिव । वरुण । राजा ।—पशु–(पुं०) यज्ञीय पशु ।—पानसी–(स्त्री०) [गवां किरणानां पानं शोधनम्, गोपान√सो+क–ङीष्] घर में लगाने को टेढ़ी धरन, वलभी, छप्पर की थुनकिया ।—पाल–(पुं०) ग्वाला, अहीर । श्रीकृष्ण । राजा ।—पालक,–(पुं०) अहीर, ग्वाला । शिव ।—पालिका—पाली–(स्त्री०) अहीरिन, ग्वाला की स्त्री ।—पी–(स्त्री०) [गोप+ङीप्] गोप-वधू, ग्वालिन ।—पीत–(पुं०) खंजन पक्षी का एक भेद ।—पुच्छ–(पुं०) वानर-विशेष । हार-विशेष जिसमें दो, चार या ३४ लड़े हों ।—पुटिक–(न०) शिव के नादिया का सिर ।—पुत्र–(पुं०) बछड़ा ।—पुर–(न०) नगर-द्वार । मुख्य द्वार । मंदिर का सजा हुआ द्वार ।—पुरीष–(न०) गोबर ।—प्रकाण्ड–(न०) विशाल बैल ।—प्रचार–(पुं०) गोचर भूमि ।—प्रवेश–(पुं०) गौओं के चरकर लौटने का समय, सूर्यास्त काल ।—भृत्–(पुं०) पहाड़ ।—मक्षिका–(स्त्री०) कुकुरौंछी, डाँस ।—मण्डल–(न०) भूगोल । गौओं का झुंड ।—मतल्लिका–(स्त्री०) वह गाय जो काबू में लायी जा सके, सीधी गाय । उत्तम गाय ।—मय–(पुं०) ग्वाला ।—मातृ–(स्त्री०) मातृस्थानीय गोजाति, गायरूपी माता । गोवंश की आदिमाता, कश्यप की पत्नी सुरभि ।—मायु– (पुं०) शृगाल; 'अनुहुङ्कुरुते घनध्वनिं नहि गोमायुरुतानि केशरी' शि० १६.२५ । मेढक । एक गन्धर्व का नाम ।—मुख–(न०) एक तरह का शंख । (पुं०) घड़ियाल, नक्र । चोरों का किया हुआ विशेष प्रकार का दीवार में सूराख । (न०, स्त्री०) जप करने की थैली ।—०व्याघ्र–(पुं०) एक तरह का व्याघ्र जिसका मुख गौ के मुख जैसा हो । (आलं०) देखने में सीधा पर असल में बहुत कुटिल मनुष्य ।—मूढ–(वि०) बैल की

तरह मूढ़ ।—मूत्र–(न०) गाय का मूत्र ।—मूत्रिका–(स्त्री०) [गोमूत्र+ठन्–टाप्] चित्रकाव्य का एक भेद । इस आकृति की बैल । एक मणि जिसका रंग लाली लिये हुए पीला होता है, पीतमणि । शीतलचीनी । —मृग–(पुं०) नील गाय ।—मेद–(पुं०) मणि-विशेष ।—यान–(न०) बैलगाड़ी, बहली ।—रक्ष–(पुं०) गोपाल, ग्वाला । नारंगी ।—रङ्कु–(पुं०) जलपक्षी । कैदी, बंदी । परमहंस ।—रस–(पुं०) गाय का दूध । दही । मक्खन ।—राज–(पुं०) सर्वोत्तम बैल ।—राटिका—राटी–(स्त्री०) मैना पक्षी ।—रुत–(न०) दो कोस या चार मील का माप ।—रोचना–(स्त्री०) एक सुगंधित पदार्थ जिसकी उत्पत्ति गाय के पित्त से मानी जाती है ।—लवण–(न०) माप-विशेष जिसके अनुसार गाय को नमक दिया जाता है ।—लाङ्गुल,—लाङ्गूल–(पुं०) वानर-विशेष ।—लोमी–(स्त्री०) वेश्या, रंडी । सफेद दूब ।—वत्स–(पुं०) बछड़ा ।—० आदिन् (गोवत्सादिन्)–(पुं०) भेड़िया । —वर्धन–(पुं०) मथुरा जिले का एक पर्वत और तीर्थस्थान ।—०धर,—०धारिन्–(पुं०) श्रीकृष्ण ।—वशा–(स्त्री०) बांझ गाय ।—वाट,—वास–(पुं०) गोशाला ।—विन्द–(पुं०) मुख्य ग्वाला, अहीरों का मुखिया । श्रीकृष्ण । बृहस्पति ।—विष्–(स्त्री०)—विष्ठा–(स्त्री०) गोबर ।—विसर्ग–(पुं०) प्रातःकाल का वह समय जब चरने के लिए गौएं ढीली जाती हैं ।—वृन्द–(न०) मवेशियों की हेड़ या रौहर ।—वृन्दारक–(पुं०) सर्वोत्तम बैल या गौ ।—वृष–(पुं०) उत्तम साँड़ ।—०–ध्वज (पुं०) शिव ।—व्रज–(पुं०) गोशाला । गौओं का झुंड । चरागाह जहाँ गौएँ चरें । —शकृत्–(न०) गोबर ।—शाल–(न०), —शाला–(स्त्री०) वह छाया हुआ घर, जिसमें गौएँ रक्खी जायँ ।—शीर्ष–(पुं०) ऋषभ पर्वत । उस पर्वत पर होने वाला चंदन ।—शृङ्ग–(पुं०) दक्षिण भारत का एक पर्वत । एक ऋषि ।—षड्गव–(न०) बैलों की तीन जोड़ियाँ ।—ष्ठ–(पुं०, न०) [गो√स्था+क] गोशाला, गोठ । पशु-शाला । अहीरों का गाँव । (पुं०) गोष्ठी, जमाव । (न०) [गोष्ठी+अच्] कई आदमियों के साथ मिलकर करने का एक श्राद्ध ।—ष्ठी–(स्त्री०) [गो√स्था+क—ङीष्] सभा, मंडली, समाज । वार्तालाप । समूह । पारिवारिक सम्बन्ध । नाटक का एक भेद जिसमें एक ही अंक होता है ।—संख्य–(पुं०) ग्वाला, अहीर ।—सर्ग–(पुं०) प्रातःकाल ।—सूत्रिका–(स्त्री०) गाय बाँधने की रस्सी ।—स्तन–(पुं०) गाय का ऐन या थन । गुलदस्ता । चौलड़ा मोतियों का हार ।—स्तना,—स्तनी–(स्त्री०) अँगूरों का गुच्छा । —स्थान–(न०) गोशाला ।—स्वामिन्–(पुं०) गायों का मालिक । जितेन्द्रिय । वल्लभ-कुल, निम्बार्क-सम्प्रदाय और मध्व-सम्प्रदाय के आचार्यों की पदवी ।—हत्या–(स्त्री०) गोवध ।—हित–(वि०) गौ की रक्षा करने वाला ।

गोगोयुग—(न०) [गो+गोयुगच्] गाय या बैलों की जोड़ी ।

गोणी—(स्त्री०) [√गुण्+घञ्—ङीष्] गोनी, बोरा ; एक द्रोण के बराबर की तौल । चिथड़ा ।

गोऽण्ड—(पुं०) [गोः अण्ड इव] मांसल नाभि । नीच जाति-विशेष, विशेष कर नर्मदा और कृष्णानदी के बीच विन्ध्याचल के पूर्वी भाग में बसने वाली जाति के लोग ।

गोधा—(स्त्री०) [√गुध्+घञ्—टाप्] गोह । चमड़े का पट्टा जो बाँई भुजा पर धनुष की रगड़ बचाने के लिए बाँधा जाता है । घड़ियाल । ताँत ।

गोधि—(पुं०) [गुध्नाति सहसा कुप्यति,

√गुध्+इन्] घड़ियाल। [गौः नेत्रं धीयतेऽस्मिन्, गो√धा+कि] ललाट।

गोधिका—(स्त्री०) [गुध्नाति, √गुध्+ण्वुल्—टाप्] छिपकली। घड़ियाल की मादा।

गोधूम—(पुं०) [√गुध्+ऊम] गेहूँ। नारंगी।

गोप—(वि०) [√गुप्+अच्] रक्षक, रक्षा करने वाला। (पुं०) [√गुप्+घञ्] रक्षा।

गोपायन—(न०) [√गुप्+आय्+ल्युट्] रक्षण, बचाव।

गोपायित—(वि०) [√गुप्+आय्+क्त] रक्षित।

गोपी—(स्त्री०) [√गुप्+अच्—ङीष्] शारिवा, अनन्तमूल नामक लता। रक्षा करने वाली; 'गोप्यो जगुर्यशः' र० ४.२०। छिपाने वाली। गोप-स्त्री।

गोप्तृ—(वि०) [√गुप्+तृच्] [स्त्री०—**गोप्त्री**] रक्षा करने वाला; 'तस्मिन् वनं गोप्तरि गाहमाने' र० २.१४। छिपाने वाला।

गोप्य—(वि०) [√गुप्+ण्यत्] रक्षा करने के योग्य। (न०) [गोपी+यत्] गोपियों का समूह। (पुं०) [√गुप्+ण्यत्] दासी-पुत्र, दास।

गोमत्—(वि०) [गो+मतुप्] गोधन वाला।

गोमती—(स्त्री०) [गोमत्+ङीप्] इस नाम से प्रसिद्ध एक नदी।

गोमय—(न०, पुं०) [गो+मयट्] गोबर। —छत्र-(न०) कुकुरमुत्ता। —**प्रिय**-(न०) भूतृण, एक तरह की सुगंधित घास।

गोमिन्—(पुं०) [गो+मिनि] मवेशी का धनी। स्यार, शृगाल। अर्चक। बुद्धदेव का सेवक।

गोरण—(न०) [√गुर्+ल्युट्] स्फूर्ति। सतत प्रयत्न, अविच्छिन्न चेष्टा।

गोर्द—(न०) [√गुर्+ददन्, नि० साधुः] मस्तिष्क, दिमाग।

गोल—(पुं०) [√गुड्+अच्, डस्य लः] गोला। भूगोल। नभोमण्डल। विधवा का जारज पुत्र। एक राशि पर कई ग्रहों का समागम। मुर नामक औषधि। मैनफल।

गोलक—(पुं०) [गोल+कन्] गोला। लकड़ी का गेंद। मिट्टी का बड़ा घड़ा। विधवा का जारज पुत्र। एक राशि पर ६ या अधिक ग्रहों का योग। शीरा, राब। मदन का पेड़।

गोला—(स्त्री०) [गोल+टाप्] लड़कों के खेलने का काठ का गेंद। जल रखने का मटका। सिंगरफ, लाल संखिया। स्याही, मसी। सखी। सहेली। दुर्गा का नाम। गोदावरी नदी का नाम।

√गोष्ठ्—भ्वा० आत्म० सक० इकट्ठा करना। गोष्ठते, गोष्ठिष्यते, अगोष्ठिष्ठ।

गोष्पद—(न०) [गोः पदम्, ष० त०, या गो√पद्+अच्; नि० सुट्, षत्व] गौ का खुर। धूल में गाय के खुर का चिह्न। उस खुरचिह्न में समा जाने वाला जल। गौ के खुर में समावे उतना जल। स्थान जहाँ गौएँ प्रायः आया-जाया करें।

गोह्य—(वि०) [√गुह्+ण्यत्] छिपाने योग्य, गोप्य।

गौञ्जिक—(पुं०) [गुञ्जा परिमाणविशेषः तां ग्रहीतुं शीलमस्य, गुञ्जा+ठक्] सुनार।

गौड—(पुं०)बंगाल का पुराना नाम। स्कन्द-पुराण में इसका परिचय इस प्रकार दिया गया है :—'वङ्गदेशं समारभ्य भुवनेशान्तगः शिवे। गौडदेशः समाख्यातः सर्वविद्याविशारदः।' गौड़देशवासी। ब्राह्मणों का एक वर्ग, पंच गौड़। ब्राह्मणों की एक उपजाति।

गौडी—(स्त्री०) [√गुड्+अण्—ङीप्] शीरा या गुड़ की शराब। रागिनी-विशेष। छन्दःशास्त्र की रीति या वृत्ति-विशेष।

गौडिक—(पुं०) [√गुड्+ठक्] गन्ना, ऊख।

गौण—(वि०) [गुण+अण्] [स्त्री०—**गौणी**] अमुख्य, अप्रधान । (व्याकरण में) प्रधान का उल्टा । गुणवाचक, गुण बतलाने वाला ।

गौण्य—(न०) [गुण+ष्यञ्] गुण का धर्म । अधीन होकर रहना ।

गौतम—(पुं०) [गोतम+अण्] गोतम का वंशज । न्याय शास्त्र के प्रवर्तक अक्षपाद ऋषि । भरद्वाज ऋषि का नाम । शतानन्द मुनि का नाम । कृपाचार्य का नाम, जो द्रोणाचार्य के साले थे । बुद्धदेव का नाम ।—**सम्भवा**—(स्त्री०) गोदावरी नदी ।

गौतमी—(स्त्री०) [गौतम+ङीप्] द्रोणाचार्य की स्त्री कृपी का नाम । गोदावरी नदी की उपाधि । बुद्धदेव की शिक्षा या उपदेश । गौतम द्वारा प्रवर्तित न्याय दर्शन । हल्दी । गोरोचन । कण्व मुनि की बहिन ।

गौधूमीन—(न०) [गोधूम+खञ्] खेत जिसमें गेहूँ उत्पन्न होते हैं ।

गौनर्द—(पुं०) [गोनर्द+अण्] महाभाष्य-प्रणेता पतञ्जलि की उपाधि ।

गौपिक—(पुं०) [गोपिका+अण्] गोपी या गोप की स्त्री का बालक या पुत्र ।

गौप्तेय—(पुं०) [गुप्ता+ढक्] वैश्य-स्त्री का पुत्र।

गौर—(वि०) [√गु+र, नि० साधुः] [स्त्री० —**गौरा या गौरी**] सफेद । पीला या लाल । चमकीला, दीप्तियुक्त । विशुद्ध, स्वच्छ । मनोहर । (पुं०) सफेद रंग । पीला रंग । लाल रंग । सफेद राई । चन्द्रमा । एक प्रकार का हिरन । एक प्रकार का भैंसा । (न०) कमल-नाल-तन्तु । केसर, जाफ़रान । सुवर्ण, सोना ।—**आस्य** (**गौरास्य**)—(पुं०) एक प्रकार का काले रंग का बन्दर जिसका मुख सफेद होता है ।—**सर्षप**—(पुं०) सफेद राई । **गौरक्ष्य**—(न०) [गोरक्षा+ष्यञ्] गोपालन, गोरक्षण (वैश्य के लिये विहित तीन विशेष कर्मों में से एक) ।

गौरव—(न०) [गुरु+अण्] गुरुता, भारीपन । महत्त्व, बड़प्पन । आदर, सम्मान । प्रतिष्ठा, मर्यादा; 'कोऽर्थो गतो गौरवं' पंच० १.१४६ । गाम्भीर्य, गहराई ।—**आसन** (**गौरवासन**)—(न०) सम्मान की बैठक ।—**ईरित** (**गौरवेरित**)—(वि०) प्रशंसित । ख्याति-सम्पन्न ।

गौरवित—(वि०) [गौरव+इतच्] गौरव-युक्त । सम्मानयुक्त ।

गौरिका—(स्त्री०) [गौरी+कन्—टाप्,-ह्रस्व] क्वारी, अविवाहिता कन्या, गौरी ।

गौरिल—(पुं०) [गौर+इलच्] सफेद सरसों। लोहे या इस्पात लोहे की चूर या धूल ।

गौरी—(स्त्री०) [गौर+ङीष्] पार्वती का नाम । आठ वर्ष की कन्या । क्वाँरी । रजोधर्म जिस लड़की को न हुआ हो वह लड़की । गोरी या गेहुआँ रंग की लड़की । पृथिवी । हल्दी । गोरोचन । वरुण की स्त्री । मल्लिका की लता । तुलसी का पौधा । मज़ीठ का पौधा ।—**कान्त**,—**नाथ**—(पुं०) शिव ।—**गुरु**—(पुं०) हिमालय पर्वत; 'गौरीगुरोः गह्वरमाविवेश' र० २.२६ ।—**ज**—(पुं०) गणेश। कार्त्तिकेय । (न०) अबरक ।—**पट्ट**—(पुं०) वह योनिरूपी अर्घा जिसमें शिवलिङ्ग स्थापित किया जाता है ।—**पुत्र**—(पुं०) गणेश । कार्त्तिकेय ।—**पुष्प**—(पुं०) प्रियंगु नामक वृक्ष ।—**ललित**—(न०) गोरोचन । हरताल ।—**सुत**—(पुं०) कार्त्तिकेय । ऐसी स्त्री का पुत्र जिसका विवाह आठ वर्ष की अवस्था में हुआ हो ।

गौरुतल्पिक—(पुं०) [गुरुतल्प+ठक्] गुरु-पत्नी के साथ गमन करने वाला या गुरु की शय्या को भ्रष्ट करने वाला ।

गौलक्षणिक—(पुं०) [गोलक्षण+ठक्] गौ के शुभाशुभ लक्षणों को जानने वाला ।

गौल्मिक—(पुं०) [गुल्म+ठक्] किसी सैनिक-दल का एक सिपाही ।

गोशतिक—(वि०) [गोशत+ठञ्] [स्त्री० —**गौशतिकी**] १०० गायें पालने वाला ।

ग्ना—(स्त्री०) [√गम्+ना, डित्, डित्वात् अमो लोपः] स्त्री । देव-पत्नी । वाक्य । वेद ।

ग्मा—(स्त्री०) [√गम्+मा, डित्; डित्वात् अमो लोपः] पृथिवी ।

ग्रथन—(न०) [√ग्रन्थ्+क्यु, नलोप] गाढ़ा करना । जमाना । गूँथना । पुस्तक की रचना करना । लिखना । [**ग्रथना**, भी अन्तिम दो अर्थों का वाची है ।]

ग्रथ्न—(पुं०) [√ग्रन्थ्+नङ] गुच्छा ।

ग्रथित—(वि०) [√ग्रन्थ्+क्त] गूँथा हुआ । रचा हुआ । श्रेणीवद्ध किया हुआ, यथाक्रम किया हुआ । जमाया हुआ । गाढ़ा किया हुआ । गाँठ वाला ।

√ग्रन्थ्—भ्वा० आत्म० अक० टेढ़ा करना । ग्रन्थते, ग्रन्थिष्यते, अग्रन्थिष्ट । क्र्या० पर० सक० गूँथना । रचना । ग्रथ्नाति, ग्रन्थिष्यति, अग्रन्थीत् । चु० पर० सक० बाँधना । ग्रन्थयति—ग्रन्थति ।

ग्रन्थ—(पुं०) [√ग्रन्थ्+घञ्] बाँधना, गाँठ लगाना । रचना । पुस्तक । धन, सम्पत्ति । अनुष्टुप् छन्द वाला पद्य ।—**कार,—कृत्**—(पुं०) ग्रन्थरचयिता । लेखक ।—**कुटी,—कूटी**—(स्त्री०) पुस्तकालय । दफ्तर जहाँ काम किया जाय ।—**चुम्बक**—(पुं०) जो किसी विषय का पूर्ण विद्वान् न हो । जिसने वहुत-सी कितावें पढ़ ली हों, किन्तु उनका तात्पर्य कुछ भी न समझा हो ।—**विस्तर**—(पुं०) ग्रन्थ का वाहुल्य । प्रकाण्डता । प्रगल्भ शैली । —**सन्धि**—(पुं०) काण्ड । अध्याय । सर्ग ।

ग्रन्थन—(न०), **ग्रन्थना**—(स्त्री०) [√ग्रन्थ्+ल्युट्] [√ग्रन्थ्+णिच्+युच्] दे० 'ग्रथन' ।

ग्रन्थि—(स्त्री०) [√ग्रन्थ्+इन्] गिल्टी । रस्सी की गाँठ । कपड़े के आँचल की गाँठ जिसमें पैसे-रुपये गठियाये जाते हैं । वेंत या नरकुल की पोरों की गाँठ या जोड़ । टेढ़ापन । भद्दापन । माया-पाश । सूजना या फूलना ।—**छेदक,—भेदक,—मोचक**—(पुं०) गिरहकट, जेव कतरने वाला ।—**पर्ण**—(पुं०, न०) एक सुगन्धित वृक्ष, गठिवन । एक सुगन्धित पदार्थ ।—**बन्धन**—(न०) विवाह के समय दूल्हा-दुलहिन का गँठजोड़ा । गँठबंधन ।—**हर**—(पुं०) सचिव, दीवान ।

ग्रन्थिक—(पुं०) [ग्रन्थि√कै+क] पिपरामूल । गठिवन । करार । गुग्गुल । दैवज्ञ, ज्योतिषी । अज्ञातवास के समय राजा विराट के यहाँ रहते समय नकुल ने अपना नाम ग्रन्थिक रखा था ।

ग्रन्थित—(वि०) दे० 'ग्रथित' ।

ग्रन्थिन्—(वि०) [ग्रन्थ+इनि] जिसके पास बहुत-से ग्रन्थ हों । जिसने बहुत-से ग्रन्थ पढ़े हों । (पुं०) ग्रन्थकर्ता । विद्वान् ।

ग्रन्थिल—(वि०) [ग्रन्थि+लच्] गाँठदार । (न०) पिपरामूल । अदरक । (पुं०) विकंकत वृक्ष । करीर । चोरक नामक गंधद्रव्य । चौराई का साग । पिंडालू ।

√ग्रस्—भ्वा० आत्म० सक० निगलना, लील लेना । पकड़ना । शब्दों पर चिह्न लगाना । नष्ट करना । खा डालना, भक्षण कर जाना । ग्रसते, ग्रसिष्यते, अग्रसिष्ट ।

ग्रसन—(न०) [√ग्रस्+ल्युट्] निगलना, खाना । पकड़ना । चन्द्र और सूर्य का अपूर्ण ग्रास ।

ग्रस्त—(वि०) [√ग्रस्+क्त] खाया हुआ, भक्षण किया हुआ । पकड़ा हुआ । अविकृत किया हुआ । प्रभाव पड़ा हुआ । ग्रहण लगा हुआ । (न०) अर्वोच्चारित शब्द या वाक्य । —**अस्त** (**ग्रस्तास्त**)—(न०) ग्रहण सहित सूर्य या चन्द्रमा का अस्त होना ।—**उदय** (**ग्रस्तोदय**)—(पुं०) ग्रहण लगे हुए चन्द्रमा या सूर्य का उदय होना ।

√ग्रह्—वैदिक साहित्य में √ग्रभ्, क्र्या०

उभ० सक० पकड़ना, लेना, ग्रहण करना। पाना, प्राप्त करना। वसूल करना, उगाहना। गिरफ्तार करना, बंदी बनाना। रोकना, थामना। आकर्षित करना, अपनी ओर खींचना। जीतना। एक पक्ष में कर लेना। प्रसन्न करना, खुश करना। अधिकार में करना। प्रभावान्वित करना। धारण करना। सीखना। जानना-पहिचानना। विश्वास करना। खयाल करना। इन्द्रियगोचर करना। वशवर्ती करना। अनुमान करना। परिणाम निकालना। बखान करना, वर्णन करना। खरीदना, मोल लेना। वञ्चित करना, छीन लेना। लूट लेना। धारण करना, पहिन लेना। (व्रत) रखना। ग्रस लेना। हाथ में (किसी कार्य को) लेना। स्वीकार करना। विवाह में दान कर डालना। सिखलाना। बतलाना। गृह्णाति-गृह्णीते, ग्रहीष्यति-ते, अग्रहीत्-अग्रहीष्ट।

ग्रह--(पुं०) [√ग्रह्+अच्] सूर्य की परिक्रमा करने वाला तारा। सौर मंडल के नौ प्रधान तारों में से कोई एक। नौ की संख्या। पकड़ना। प्राप्त करना। अङ्गीकार करना। उपलब्धि। चोरी। लूट का माल। ग्रहण (चन्द्रमा, सूर्य का)। ग्रह। वर्णन। निरूपण। दुहराना। ग्राह, घड़ियाल। भूत। पिशाच। बालग्रह। ज्ञान, बोध। ज्ञानेन्द्रिय। सतत चेष्टा, निरन्तर प्रयत्न। अभिप्राय। संरक्षकता। अनुग्रह।--**अधीन** (**ग्रहाधीन**)-(वि०) ग्रहों के शुभाशुभ फलों के ऊपर निर्भर।--**अवमर्दन** (**ग्रहावमर्दन**)-(पुं०) राहु का नाम। (न०) ग्रहों की टक्कर।--**अधीश** (**ग्रहाधीश**)-(पुं०) सूर्य।--**आधार** (**ग्रहाधार**),--**आश्रय** (**ग्रहाश्रय**)-(पुं०) ध्रुव वृत्त सम्बन्धी नक्षत्र। मेरु सम्बन्धी नक्षत्र।--**आमय** (**ग्रहामय**)-(पुं०) मिर्गी। भूतावेश।--**आलुञ्चन** (**ग्रहालुञ्चन**)-(न०) शिकार पर झपटना और उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालना।--**ईश** (**ग्रहेश**)-(पुं०) सूर्य।--**कल्लोल**-(पुं०) राहु।--**गति**-(स्त्री०) ग्रहों की चाल।--**चिन्तक**-(पुं०) ज्योतिषी, दैवज्ञ।--**दशा**-(स्त्री०) ग्रह की दशा।--**नायक**-(पुं०) सूर्य। शनि।--**नेमि**-(पुं०) चन्द्रमा।--**पति**-(पुं०) सूर्य। चन्द्रमा।--**पीडन**-(न०),--**पीडा**-(स्त्री०) ग्रह के कारण दुःख या क्लेश। चन्द्र-सूर्य का ग्रहण, 'शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं' पं०।--**राज**-(पुं०) सूर्य। चन्द्र। बृहस्पति।--**मण्डल**-(न०)--**मण्डली**-(स्त्री०) ग्रह-समूह। ग्रहों का वृत्त।--**युति**-(स्त्री०) राशि-विशेष के एक ही अंश पर दो ग्रहों का आ जाना।--**वर्ष**-(पुं०) ग्रहों की गति के हिसाब से माना जाने वाला वर्ष। वर्षफल।--**विग्रह**-(पुं०) इनाम और दण्ड।--**विप्र**-(पुं०) ज्योतिषी।--**वेध**-(पुं०) ग्रहों की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करना।--**शान्ति**-(स्त्री०) जपदानादि से अशुभ ग्रहों के अशुभ फल को दूर करना।--**शृंगाटक**-(न०) ग्रहों का एक तरह का योग।--**संगम**-(न०) कई ग्रहों का इकट्ठा हो जाना।--**स्वर**-(पुं०) राग आरंभ करने का स्वर।

ग्रहण--(न०) [√ग्रह्+ल्युट्] पकड़ना, ग्रहण करना। पाना, प्राप्ति। अङ्गीकार करना। वर्णन करना। पहनना, धारण करना। चन्द्र और सूर्य का ग्रहण। बुद्धि। ज्ञान। प्रतिध्वनि। हाथ। इन्द्रिय।

ग्रहणि, ग्रहणी--(स्त्री०) [√ग्रह्+अनि] [ग्रहणि-ङीष्] संग्रहणी का रोग, दस्तों की बीमारी।

ग्रहिल--(वि०) [ग्रह+इलच्] दिलचस्पी लेने वाला। हठी। 'प्रससाद ग्रहिलेव मानिनी' नैष० २·७७। भूताविष्ट।

ग्रहीतृ--(वि०) [स्त्री०--**ग्रहीत्री**] [√ग्रह्+तृच्]पाने वाला। स्वीकार करने

वाला। जान लेने वाला, पहिचान लेने वाला। देखने वाला। कर्जदार।

ग्राम—(पुं०) [√ग्रस्+मन्, आदन्तादेश] गाँव। पुरवा। जाति। समाज। समूह। एक षड्ज से दूसरे षड्ज तक का स्वर-समूह, स्वर-सप्तक।—**अधिकृत** (**ग्रामाधिकृत**),—**अध्यक्ष** (**ग्रामाध्यक्ष**),—**ईश** (**ग्रामेश**),—**ईश्वर** (**ग्रामेश्वर**) (पुं०)—गाँव का मुखिया, चौधरी।—**अन्त** (**ग्रामान्त**)—(पुं०) ग्राम की सीमा। ग्राम के समीप की जगह।—**अन्तर** (**ग्रामान्तर**)—(न०) अन्य ग्राम।—**अन्तिक** (**ग्रामान्तिक**)—(न०) ग्राम का पड़ोस या सामीप्य।—**आचार** (**ग्रामाचार**)—(पुं०) गाँव की प्रथा (रस्म)।—**आधान** (**ग्रामाधान**)—(न०) शिकार।—**उपाध्याय** (**ग्रामोपाध्याय**)—(पुं०) ग्रामयाजक।—**कण्टक**—(पुं०) चुगलखोर, पिशुन।—**कुमार**—(पुं०) देहाती लड़का।—**कूट**—(पुं०) ग्राम का सर्वोत्तम पुरुष। शूद्र।—**घात**—(पुं०) गाँव की लूट करना।—**घोषिन्**—(पुं०) इन्द्र।—**चर्या**—(स्त्री०) स्त्रीमैथुन।—**चैत्य**—(पुं०) गाँव का पवित्र वृक्ष।—**जाल**—(न०) कई एक ग्रामों का समूह।—**णी**—(पुं०) गाँव या समाज का मुखिया या चौधरी। नेता, मुखिया। नाई। कामी पुरुष। (स्त्री०) रंडी, वेश्या। नील का पौधा।—**तक्ष**—(पुं०) बढ़ई जो गाँव में काम करे।—**धर्म**—(पुं०) मैथुन, स्त्री-प्रसंग।—**प्रेष्य**—(पुं०) किसी ग्राम के समाज का संदेश ले जाने और ले आने वाला।—**मद्गुरिका**—(स्त्री०) ग्राम का झगड़ा या उत्पात, उपद्रव।—**मुख**—(पुं०) हाट, बाजार।—**मृग**—(पुं०) कुत्ता।—**याजक**—(पुं०),—**याजिन्**—(पुं०) ग्राम का उपाध्याय। पुजारी।—**षंड**—(पुं०) नपुंसक, हिजड़ा।—**संकर**—(पुं०) गाँव की नाली, मोरी।—**संघटन**—(पुं०) ग्राम-जीवन को संघटित, व्यवस्थित करने का कार्य।—**सिंह**—(पुं०) कुत्ता।—**स्थ**—(वि०) ग्राम में रहने वाला। एक ही ग्राम का बसने वाला साथी।—**हासक**—(पुं०) बहनोई।

ग्रामटिका—(स्त्री०) अभागा गाँव। दरिद्र गाँव।

ग्रामिक—(वि०) [ग्राम+ठञ्] ग्राम संबंधी। देहाती। गँवार, असभ्य। (पुं०) ग्राम के रक्षार्थ नियुक्त अधिकारी, मुखिया। [स्त्री०—**ग्रामिकी**]

ग्रामीण—(पुं०) [ग्राम+खञ्] गाँव में रहने वाला। कुत्ता। काक। शूकर। (वि०) ग्राम संबंधी। गँवार। गाँव का।

ग्रामेय—(वि०) [ग्राम+ढक्] गाँव में उत्पन्न। गँवार।

ग्रामेयी—(स्त्री०) [ग्रामेय+ङीष्] रंडी, वेश्या।

ग्राम्य—(वि०) [ग्राम+य] गाँव सम्बन्धी। गाँव का। ग्रामवासी। पालतू। जुता हुआ। नीच। अशिष्ट। अश्लील। (पुं०) पालतू कुत्ता। (न०) मैथुन। स्वीकार। एक प्रकार का रतिबन्ध। अश्लील शब्द या वाक्य। काव्य का एक दोष। देहाती भोजन। मिथुन राशि। रात्रि में मेष और वृष राशि को ग्राम्य कहते हैं।—**अश्व** (**ग्राम्याश्व**)—(पुं०) गधा।—**कर्मन्**—(न०) ग्रामवासी का पेशा या रोजगार।—**कुङ्कुम**—(न०) केसर।—**धर्म**—(पुं०) ग्रामवासी का कर्त्तव्य। मैथुन। **पशु**—(पुं०) पालतू जानवर।—**बुद्धि**—(वि०) अज्ञानी। हंसोड़। मसखरा।—**वल्लभा**—(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**सुख**—(न०) मैथुन।

ग्रावन्—(पुं०) [√ग्रस्+ड—ग्रः, ग्र—आ √वन्+विच्] पत्थर, चट्टान। पहाड़; 'अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयं' उत्त० १२८। बादल।

ग्रास—(पुं०) [√ग्रस्+घञ्] कौर,

निवाला। भोजन। पालन पोषण का उपस्कर। राहु या केतु से ग्रस्त चन्द्र या सूर्य का एक भाग।——**ग्राच्छादन** (**ग्रासाच्छादन**)–(न०) भोजन-कपड़ा।——**शल्य**–(न०) गले में अटकने वाली कोई भी वस्तु।

ग्राह——(वि०) [√ग्रह्+ण] पकड़ने वाला। लेने वाला। (पुं०) मगर, घड़ियाल। [√ग्रह्+घञ्] ग्रहण। पकड़। आग्रह। बंदी, कैदी। स्वीकृति। समझ, ज्ञान। अटलता, दृढ़ता। दृढ़प्रतिज्ञता, सङ्कल्प, निश्चय। रोग, बीमारी।

ग्राहक——(वि०) [√ग्रह्+ण्वुल्] ग्रहण करने वाला। मलरोधक। (पुं०) गाहक, खरीदार। बाज पक्षी। विष-चिकित्सक।

ग्रीवा——(स्त्री०) [गीर्यतेऽनया, √गॄ+वन्, नि० साधुः] गरदन।——**घंटा**–(स्त्री०) घोड़े के गले की घंटी या घुँघुरू।

ग्रीवालिका——दे० 'गीवा'।

ग्रीविन्——(पुं०) [प्रशस्ता ग्रीवा अस्ति अस्य, ग्रीवा+इनि] ऊँट। (वि०) लंबी, सुन्दर गरदन वाला।

ग्रीष्म——(पुं०) [ग्रसते रसान्, √ग्रस्+मक् नि० साधुः] गर्मी की ऋतु, ज्येष्ठ और आषाढ़ के मास। गर्मी, उष्णता।——**उद्भवा** (**ग्रीष्मोद्भवा**)–(स्त्री०)–**जा**–(स्त्री०) नवमल्लिका लता।

ग्रैव——(वि०) [स्त्री०——**ग्रैवी**], **ग्रैवेय**——(वि०) [स्त्री०——**ग्रैवेयी**]–[ग्रीवा+अण्] [ग्रीवा+ढञ्] गरदन सम्बन्धी। (न०) गले का पट्टा या कंठा। हाथी के गले की जंजीर।

ग्रैवेयक——(न०) [ग्रीवा+ढकञ्] हार। कंठा; 'ग्रैवेयकं नोज्ज्वलं' सा०। हाथी के गले की जंजीर।

ग्रैष्मक——(वि०) [ग्रीष्म+वुञ्] ग्रीष्म-संबंधी। गर्मी में बोया हुआ। गर्मी की ऋतु में अदा करने योग्य।

ग्लपन——(न०) [√ग्लै+णिच्, पुक्, ह्रस्व+ल्युट्] मुर्झाना, कुम्हलाना। पर्यवसान।

ग्लपित——(वि०) [√ग्लै+णिच्, आत्व, पुक्, ह्रस्व, क्त] क्लान्त। शिथिल।

√**ग्लस्**——भ्वा० आत्म० सक० खाना, भक्षण करना। ग्लसते, ग्लसिष्यते, अग्लसिष्ट।

√**ग्लह्**——भ्वा० पर०, चु० उभ० अक० जुआ खेलना। सक० पाना। ग्लहति, ग्लहिष्यति, अग्लहीत्। ग्लाहयति-ते, ग्लाहयिष्यति-ते, अजग्लहत्-त।

ग्लह——(पुं०) [√ग्लह्+अप्] जुआरी। दाव। पासा। जुआ, द्यूत।

ग्लान——(वि०) [√ग्लै+क्त] थका हुआ, परिश्रान्त। बीमार, रोगी।

ग्लानि——(स्त्री०) [√ग्लै+नि] थकान; 'अङ्गग्लानिं सुरतजनितां' मे० ७०। ह्रास। निर्बलता। बीमारी। घृणा, अरुचि। एक संचारी भाव।

ग्लास्नु——(वि०) [√ग्लै+स्नु] थका हुआ, श्रान्त।

√**ग्लुच्**——भ्वा० पर० सक० चोरी करना। ग्लोचति, ग्लोचिष्यति, अग्लुचत्- अग्लोचीत्।

√**ग्लुञ्च्**——भ्वा० पर० सक० चोरी करना। ग्लुञ्चति, ग्लुञ्चिष्यति, अग्लुचत्-अग्लुञ्चीत्।

√**ग्लेप्**——भ्वा० आत्म० सक० जाना। अक० काँपना। दुःखी होना। ग्लेपते, ग्लेपिष्यते, अग्लेपिष्ट।

√**ग्लेव्**——भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना। पूजा करना। ग्लेवते, ग्लेविष्यते, अग्लेविष्ट।

√**ग्लेष्**——भ्वा० आत्म० सक० ढूँढ़ना, तलाश करना। ग्लेषते, ग्लेषिष्यते, अग्लेषिष्ट।

√**ग्लै**——भ्वा० पर० अक० हर्ष-क्षय होना। थक जाना। मूर्च्छित होना। ग्लायति, ग्लास्यति, अग्लासीत्।

ग्लौ——(पुं०) [√ग्लै+डौ] चन्द्रमा। कपूर। हृदय की नाड़ी।

घ

घ—संस्कृत वर्णमाला या नागरी वर्णमाला का बीसवाँ वर्ण और व्यञ्जनों में से कवर्ग का चौथा व्यञ्जन। इसका उच्चारण जिह्वामूल या कण्ठ से होता है। यह स्पर्श वर्ण है। इसमें घोष, नाद, संवार और महाप्राण प्रयत्न होते हैं। (वि०) यह समास में पीछे जुड़ता है और इसका अर्थ होता है मारने वाला; हत्या करने वाला जैसे **प्राणिघ, राजघ**। (पुं०) [घटयति घर्घरादिशब्दं करोति, √ घट्+ड] घंटा। घर्घरशब्द।

√घघ्—भ्वा० पर० अक० हँसना। घघति, घघिष्यति, अघघीत्-अघाघीत्।

√घट्—भ्वा० आत्म० अक० यत्न करना। प्रयत्न करना। घटित होना। होना। घटते, घटिष्यते, अघटिष्ट। णिचि घटयति इत्यादि।

घट—(पुं०) [√घट्+अच्] घड़ा। कुम्भराशि। हाथी का माथा। कुम्भक प्राणायाम। द्रोण के समान तौल। स्तम्भ का एक भाग। **—आटोप** (**घटाटोप**)-(पुं०) गाड़ी, पालकी आदि का ओहार जो उसे पूरी तरह ढक ले। कोई ढक लेने वाली वस्तु, सामान। घनघटा। आडंबर।**—उद्भव** (**घटोद्भव**) **ज,—योनि,—सम्भव**-(पुं०) अगस्त्य मुनि। **—ऊधस्**-(स्त्री०) (=**घटोघ्नी**) दूध भरे घड़े जैसे ऐन वाली गौ।**—कञ्चुकी**-(स्त्री०) तान्त्रिकों की एक अनैतिक रीति।**—कर्ण**-(पुं०)कुंभकर्ण।**—कर्पर, खर्पर**-(पुं०)संस्कृत साहित्य के एक कवि जो विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से थे। खपरा।**—कार,—कृत्**-(पुं०) कुम्हार।**—ग्रह**-(पुं०) कहार, पनभरा।**—दासी**-(स्त्री०) कुटनी।**—पर्यसन**-(न०) जो अपने जीवनकाल में पुनः अपनी जाति में शामिल होने को रजामंद न हुआ हो ऐसे जातिच्युत का और्ध्वदैहिक कृत्य। **—पल्लव**-(न०) घड़े और पत्ते जैसे सिरे वाला खंभा।**—भेदनक**-(न०) कुम्हार का एक उपकरण जो बरतन बनाने के काम में आता है।**—योनि**—(पुं०) अगस्त्य।**—राज**-(पुं०) आँवा में पकाया हुआ मिट्टी का बड़ा घड़ा।**—स्थापन**-(न०) घड़ा रख कर उसमें देव-विशेष का आवाहन पूर्वक पूजन।

घटक—(वि०) [√घट्+णिच्+ण्वुल्] प्रयत्नवान्, चेष्टा करने वाला। सम्पन्न करने वाला। मौलिक। प्रधान। वास्तविक। (पुं०) एक वृक्ष जिसमें फूल न लग कर फल ही लगते हैं। दियासलाई बनाने वाला। सगाई कराने वाला, बिचवानिया। वंशावली जानने वाला।

घटन, घटना—(न०) [√घट्+ल्युट्] [√घट्+णिच्+युच्—टाप्] प्रयत्न, उद्योग। घटना। सम्पन्नता, पूर्णता। मेल, ऐक्य। संसर्ग, सम्बन्ध। बनाना। गढ़ना। तैयार करना।

घटा—(स्त्री०) [√घट्+अङ—टाप्] उद्योग, प्रयत्न। संख्या। दल, जमाव। सैनिक कार्य के लिये जमा हुए हाथियों का समूह। समूह (बादलों का)।

घटिक—(पुं०) [घट+ठन्] घड़े, घड़नई के सहारे नदी पार करने-कराने वाला। घड़ियाल बजाने वाला। (न०) नितंब।

घटिका—(स्त्री०)[घटी+कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटा मिट्टी का घड़ा। २४ मिनिट की एक घड़ी। जलघड़ी। घुटना।

घटिन्—(पुं०) [घटस्तदाकारोऽस्त्यस्य, घट+इनि] कुम्भ राशि।

घटिन्धम—(न०) [घटी √ धेट्+खश्, मुम्, ह्रस्व] जो घड़ा भर (जल) पी जाय।

घटी—(स्त्री०) [घट+ङीप्] छोटा घड़ा। २४ मिनिट का काल। जलघड़ी।**—कार**-(पुं०)कुम्हार।**—ग्रह,—ग्राह**-(वि०) पनभरा, पानी ढोनेवाला।**—यंत्र**-(न०)

एक यंत्र जो पानी उलीचने के काम में आता है। जलघड़ी।

घटोत्कच—(पुं०) हिडिम्बा राक्षसी के गर्भ से उत्पन्न भीम का पुत्र। गुप्त वंश का सम्राट, महाराज श्रीगुप्त के पुत्र का नाम।

√घट्ट्—भ्वा० आत्म०, चु० उभ० हिलाना-डुलाना। स्पर्श करना। मलना। हाथों को मलना। चिकनाना। चोट मारना। निन्दा करना। उखाड़-पछाड़ करना। घट्टते, घट्टिष्यते, अघट्टिष्ट। घट्टति-ते, घट्टयिष्यति-ते, अजघट्टत्-त।

घट्ट—(पुं०) [घट्टतेऽस्मिन्, √घट्ट्+घञ्] घाट। महसूल उगाहने का स्थान। **—कुटी**—महसूल उगाहने की चौकी। **—जीविन्**—(पुं०) घाट के महसूल या घटही नाव के खेवे से गुजर करने वाला। एक वर्णसंकर जाति (यथा "वैश्यायां रजकाज्जातः")।

घट्टना—(स्त्री०) [√घट्ट्+युच्—टाप्] हिलाना। मलना। व्यवसाय, पेशा।

√घण्—त० उभ० अक० चमकना। घणोति-घणुते, घणिष्यति-ते, अघाणीत्-अघणीत्-अघणिष्ट।

√घण्ट्—चु० पर० अक० शब्द करना। घण्टयति, घण्टयिष्यति, अजघण्टत्।

घण्ट—(पुं०) [√घण्+क्त] एक प्रकार की चटनी।

घण्टा—(स्त्री०) [√घण्ट्+अच्—टाप्] घंटा, घड़ियाल। **—अगार (घण्टागार)**—(न०) घंटाघर। **—ताड**—(पुं०) घंटा बजाने वाला। **—नाद**—(पुं०) घंटे का शब्द। **—पथ**—(पुं०) राजमार्ग, मुख्य सड़क। यथा—'दशधन्वन्तरो राजमार्गो घंटापथः स्मृतः।'—कौटिल्य। **—शब्द**—(पुं०) काँसा। फूल। घंटे की आवाज।

घण्टिका—(स्त्री०) [घण्टा+ङीप्+कन्, ह्रस्व] छोटी घंटी। घुंघरू। उपजिह्वा, कौआ।

घण्टु—(पुं०) [√घण्ट्+उण्] हाथी की छाती के आर-पार बाँधने की रस्सी जिसमें घंटे अटके हों। उष्णता। प्रकाश।

घण्ड—(पुं०) [घण् इति शब्दं कुर्वन् डीयते, घण्√डी+ड] मधुमक्षिका।

घन—(वि०) [√हन्+अप्, घनादेश] बादल। गदा। लुहार का बड़ा हथौड़ा। शरीर। समूह। अबरक। कफ। (न०) झाँझ, मजीरा। घंटा, घड़ियाल। लोहा। टीन। चमड़ा। छिलका। कसा हुआ, दृढ़, कड़ा, ठोस। गाढ़ा, घना, सघन। पूर्ण। गहरा। स्थायी। अभेद्य। महान्। अतिशय। तीक्ष्ण। सम्पूर्ण। शुभ। सौभाग्य-सम्पन्न। **—अत्यय (घनात्यय)**, **—अन्त (घनान्त)** (पुं०) शरद ऋतु। **—अम्बु (घनाम्बु)**—(न०) वर्षा। **—आकर (घनाकर)**—(पुं०) वर्षा ऋतु। **—आगम (घनागम)**—(पुं०) वर्षा ऋतु; 'घनागमः कामिजनप्रियः प्रिये' ऋ० ३.१। **—आमय (घनामय)**—(पुं०) छुहारे की वृक्ष। **—आश्रय (घनाश्रय)**—(पुं०) आकाश, अन्तरिक्ष। **—उपल (घनोपल)**—(पुं०) ओला। **—ओघ (घनौघ)**—(पुं०) बादलों का समूह। **—कफ**—(पुं०) ओला। बिनौला। **—काल**—(पुं०) वर्षाकाल। **—गर्जित**—(न०) बादलों की गड़गड़ाहट। **—गोलक**—(पुं०) चाँदी, सोने की मिलावट। खोटी धातु। **—जम्बाल**—(पुं०) गाढ़ी कीचड़ या काँदो। **—ताल**—(पुं०) चातक पक्षी। सारङ्ग पक्षी। **—तोल**—(पुं०) चातक पक्षी। **—नाभि**—(पुं०) धूम, धुआँ। **—नीहार**—(पुं०) सघन कोहासा, कोहरा। **—पदवी**—(स्त्री०) आकाश, अन्तरिक्ष; "क्रामद्भिर्घनपदवीमनेकसंख्यैः" कि० ५.३४। **—पाषण्ड**—(पुं०) मयूर, मोर। **—फल**—(पुं०) विकंटक वृक्ष। (न०) लंबाई-चौड़ाई-मोटाई का गुणनफल। **—मूल**—(न०) जिस समान अंक के त्रिघात को घन कहते हैं वह समान अंक ही

उस अंक का घनमूल है ।—**रस**–(पुं०) गाढ़ा रस । सार । काढ़ा । कपूर । जल ।—**वर्त्मन्**–(न०) आकाश ।—**वल्लिका,—वल्ली**–(स्त्री०) बिजली ।—**वास**–(पुं०) कोंहड़ा, कूष्मांड ।—**वाहन**–(पुं०) शिव । इन्द्र ।—**श्याम**–(वि०) अत्यन्त काला । (पुं०) श्रीरामचन्द्र । श्री कृष्ण ।—**समय**–(पुं०) वर्षा ऋतु ।—**सार**–(पुं०) कपूर । पारा, पारद । जल ।—**स्वन**–(पुं०) बादलों की गड़गड़ाहट ।—**हस्त**–(पुं०) एक हाथ लंबा, एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा क्षेत्र या एक हाथ मोटा पिंड । अन्नादि नापने का एक मान ।

घना—(स्त्री०) [घन+अच्+टाप्] शिव की जटा ।

घनाघन—(पुं०) [√हन्+अच् नि० साधुः] इन्द्र । मदमत्त हाथी । पानी से भरा काला बादल ।

घनिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन घनः, घन+इष्ठन्] बहुत घना । बहुत गाढ़ा । गहरा । बहुत निकट का । अंतरंग ।

घनीभाव—(पुं०) [घन+च्वि√भू+घञ्] गाढ़ा, गहरा होना । जमना, ठोस बनना । केंद्रीभूत होना ।

√घम्व्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० हिलना । घम्वति, घम्विष्यति, अघम्वीत् ।

घर—(पुं०) [√घृ+अच्] आवास, मकान ।

घरट्ट—(पुं०) [घरं सेकम् अट्टति अतिक्रामति, घर√अट्ट्+अण्, शक० पररूप] चक्की, जाँता ।

घर्घर—(वि०) [घर्घ√रा+क] अस्पष्ट । बर्राता हुआ । (बादल की तरह) घर्र घर्र करने वाला । (पुं०) [पुनः पुनः घरति, √घृ+यङ—लुक्+अच्] बरबराहट । कोलाहल । द्वार, फाटक । हास्य । उल्लू । तुषाग्नि ।

घर्घरा, घर्घरी—(स्त्री०) [घर्घर+टाप्] [घर्घर+ङीष्] घुँघरू । घूँघरूदार करधनी । गङ्गा । वीणा-विशेष ।

घर्घरिका—(स्त्री०) [घर्घर+ठन्—टाप्] घूँघरू । एक प्रकार का बाजा । लावा ।

घर्घरित—(न०) [घर्घर+णिच्+क्त] शूकर की घुरघुराहट ।

घर्म—(पुं०) [घरति अङ्गात्, √घृ+मक्, नि० साधुः] गर्मी, उष्णता । ग्रीष्म ऋतु । पसीना, स्वेद । कड़ाह, बड़ी कड़ाही ।—**अंशु** (**घर्मांशु**) –(पुं०) सूर्य ।—**अन्त** (**घर्मान्त**) –(पुं०) वर्षाऋतु ।—**अम्बु** (**घर्माम्बु**), —**अम्भस्** (**घर्माम्भस्**)–(न०) पसीना, स्वेद ।—**र्चिका,** —**विर्चिका**–(स्त्री०) घमौरी, अम्हौरी ।—**दीधिति,—द्युति,**—**रश्मि**–(पुं०) सूर्य ।—**पयस्**–(न०) पसीना, स्वेद ।

√घर्व्—भ्वा० पर० सक० जाना । घर्वति, घर्विष्यति, अघर्वीत् ।

घर्ष, घर्षण—(पुं०) (न०) [√घृष्+घञ्] [√घृष्+ल्युट्] रगड़न, रगड़ । पीसना ।

घर्षणी—(स्त्री०) [√घृष्+ल्युट्—ङीप्] हरिद्रा, हलदी ।

√घस्—भ्वा० पर० सक० खाना । घसति, घत्स्यति, अघसत् ।

घस्मर—(वि०) [√घस्+क्मरच्] मरभुखा, खाऊ, पेटू । भक्षक; 'द्रुपदसुतचमूघस्मरो द्रौणिरस्मि' वे० ५.३६ ।

घस्र—(वि०) [√घस्+रक्] चोट पहुँचाने वाला, हानिकारक । (न०) केसर, जाफ़रान । (पुं०) दिन । सूर्य । शिव ।

घाट—(पुं०), **घाटा**–(स्त्री०) [√घट+घञ् +अच्] [घाट+टाप्] गरदन के पीछे का भाग । घड़ा । नाव आदि से उतरने का स्थान ।

घाण्टिक—(पुं०) [घण्टा+ठक्] घंटा बजाने वाला । वंदीजन, भाट । धतूरा ।

घात—(पुं०) [√हन्+घञ्] प्रहार, चोट ।

हत्या । तीर । गुणनफल ।—**चन्द्र**–(पुं०) अशुभ राशि स्थित चन्द्रमा ।—**तिथि**–(स्त्री०) अशुभ चान्द्र तिथि ।—**नक्षत्र**–(न०) अशुभ नक्षत्र ।—**वार**–(पुं०) अशुभ दिन ।—**स्थान**–(न०) कसाईखाना । फाँसी-घर ।

घातक—(वि०) [√हन्+ण्वुल्] घात करने वाला, हत्यारा । हानिकार ।

घातन—(वि०) [√हन्+णिच्+ल्यु (कर्तरि)] वध करने वाला । (न०) [√हन्+णिच्+ल्युट् (भावे)] मारना, वध करना । यज्ञ में पशुहिंसा ।

घातिन्—(वि०) [√हन्+णिनि] [स्त्री०—**घातिनी**] प्रहार करने वाला मारने वाला । नाशक ।—**पक्षिन्** (**घातिपक्षिन्**),—**विहग** (**घातिविहग**)–(पुं०) बाज पक्षी ।

घातुक—(वि०) [√हन्+उकञ्] [स्त्री०—**घातुकी**] हिंसक । क्रूर, निष्ठुर, नृशंस ।

घात्य—(वि०) [√हन्+ण्यत्] मार डालने योग्य ।

घार—(पुं०) [√घृ+घञ्] सिंचन, तर करना ।

घार्तिक—(पुं०) [घृत+ठक्] घी में सिकी पूड़ी या मालपुआ, विशेष कर जिसमें अनेक छिद्र-से होते हैं ।

घास—(पुं०) [√घस्+घञ्] चारा । चरागाह, गोचरभूमि ।—**कुन्द**,—**स्थान**–(न०) चरागाह ।

घासि—(पुं०) [√घस्+इण्] आग ।

√घु—भ्वा० आत्म० अक० अस्पष्ट शब्द करना, ऐसा शब्द करना जिसका अर्थ समझ में न आवे । घवते, घोष्यते, अघोष्ट ।

घु—(पुं०) कबूतर की कुटुरगूँ, गुटुरगूँ ।

√घुट्—भ्वा० आत्म० अक० लौटना । पीछे हटना । घोटते, घोटिष्यते, अघुटत्—अघोटिष्ट । तु० पर० सक० सामने से चोट करना । उलट कर मारना । घुटति, घुटिष्यति, अघुटीत् ।

घुट, घुटि, घुटी–(स्त्री०) [√घुट्+अच्] [√घट्+इन्] [घुटि—ङीष्] टखना । एड़ी ।

√घुण्—तु० उभ० अक लौटना । डगमगाना । घूमना । लौटना । घूमकर लौट आना । चक्कर दना । सक० लेना, प्राप्त करना । घुणति—ते, घोणिष्यति—ते, अघोणीत्—अघोणिष्ट ।

√घुण—(पुं०) [√घुण्+क] घुन, काष्ठकीट ।—**अक्षर** (**घुणाक्षर**),—**लिपि**–(स्त्री०) लकड़ी में घुनों की बनाई अक्षरनुमा आकृतियाँ ।

घुण्ट, घुण्टक—(पुं०), **घुण्टिका**–(स्त्री०) [√घुट्+क, नि० साधुः] [घुण्ट+कन्] [घुण्टक+टाप्, इत्व] एड़ी ।

घुण्ड—(पुं०) [√घुण्+ड, नि० साधुः] भौंरा, भ्रमर ।

√घुर्—तु० पर० अक० शब्द करना । कोलाहल करना । सोने के समय खुर्राना । गुर्राना । भयङ्कर होना । दुःख में रोना । घुरति, घोरिष्यति, अघोरीत् ।

घुरी—(स्त्री०) [√घुर्+कि—ङीष्] थूथुन । नथुना (विशेष कर शूकर का) ।

घुर्घुर—(पुं०) [घुर् इत्यव्यक्त घुरति, घुर् √घुर्+क] यमकीट, घुरघुरा नामक कीड़ा । सूअर का शब्द ।

घुर्घुरी—(स्त्री०) [घुर्घुर+अच्—ङीष्] एक प्रकार का जलजन्तु ।

घुलघुलारव—(पुं०) ['घुलघुल' इत्यव्यक्तम् आरौति, आ√रु+अच्] एक प्रकार का कबूतर ।

√घुष्—भ्वा०, चु० पर० अक० शब्द करना, आवाज करना । घोषणा करना । (भ्वा०)घोषति, घोषिष्यति, अघुषत्—अघोषीत् ।

(चु०) घोषयति, घोषयिष्यति, अजूघुषत् । पक्षे भ्वा० वत् रूपाणि ।

घुसृण—(न०) [√घुष्+ऋणक्, पृषो० साधुः] केसर, जाफ़ान ।

घूक—(पुं०) [घू इत्यव्यक्तं कायति, घू√कै +क] उल्लू, घुग्घू ।—**अरि (घूकारि)**—(पुं०) कौआ ।

√घूर्—दि० आत्म० सक० मारना । अक० पुराना होना । घूर्यते, घूरिष्यते, अघूरिष्ट ।

√घूर्ण्—भ्वा० आत्म०, तु० पर० अक० इधर-उधर घूमना या मारे-मारे फिरना । चक्कर लगाना । हिलाना । घूमकर पीछे पलटना । (भ्वा०) घूर्णते, घूर्णिष्यते, अघूर्णिष्ट । (तु०) घूर्णति, घूर्णिष्यति, अघूर्णीत् ।

घूर्ण—(वि०) [√घूर्ण्+अच्] इधर-उधर घूमने वाला । (पुं०) [√घूर्ण्+घञ्] घूमना ।—**वायु**—(पुं०) बवण्डर ।

घूर्णन—(न०), **घूर्णना**—(स्त्री०) [√घूर्ण् +ल्युट्] [√घूर्ण+णिच्+युच्—टाप्] घूमना, चक्कर खाना । भ्रमण । घुमाना ।

√घृ—भ्वा० पर० सक० सींचना । घरति, घरिष्यति, अघार्षीत् ।

√घृण्—त० उभ० अक० चमकना । घृणोति —घृणुते, घर्णिष्यति—ते, अघर्णीत्, —अघृत,—अघर्णिष्ट ।

घृणा—(स्त्री०) [√घृ+नक्—टाप्] अरुचि, घिन । दया, रहम । तिरस्कार । भर्त्सना, धिक्कार ।

घृणालु—(वि०) [घृणा+आलुच्] दयालु, कोमल हृदय ।

घृणि—(पुं०) [√घृ+नि, नि० साधुः] गर्मी । धूप । किरण । सूर्य । लहर । (न०) जल ।—**निधि**—(पुं०) सूर्य ।

√घृण्ण्—भ्वा० आत्म० सक० लेना । घृण्णते, घृण्णिष्यते, अघृण्णिष्ट ।

घृत—(न०) [जर्घति क्षरति,√घृ+क्त] घी । मक्खन । पानी ।—**अन्न (घृतान्न)**,—**अर्चिस् (घृतार्चिस्)**—(पुं०) दहकती हुई आग ।—**आहुति (घृताहुति)**—(स्त्री०) घी की आहुति ।—**आह्व (घृताह्व)**—(पुं०) वृक्ष-विशेष ।—**उद (घृतोद)**—(पुं०) घी का समुद्र ।—**ओदन (घृतौदन)**—(पुं०) घी मिश्रित भात ।—**कुल्या**—(स्त्री०) घी की नदी ।—**दीधिति**—(पुं०) आग ।—**धारा**—(स्त्री०) अविच्छिन्न घी की धार ।—**पूर**,—**वर**—(पुं०) एक मिठाई, घेवर ।—**लेखनी**—(स्त्री०) कलछी या चमचा जिससे घी डाला या निकाला जाय ।

घृताची—(स्त्री०) [घृत√अञ्च्+क्विप्—ङीप्] एक अप्सरा । राजर्षि कुशनाभ की स्त्री । प्रमति की स्त्री और रुरु की माता । रात्रि । सरस्वती । स्रुवा ।—**गर्भसम्भवा**—(स्त्री०) बड़ी इलायची । घृताची की कन्या ।

√घृष्—भ्वा० आत्म० सक० रगड़ना । प्रहार करना । झाड़ना । चिकनाना । चमकाना । पीसना । कूटना । स्पर्धा करना । घर्षते, घर्षिष्यते, अघर्षिष्ट ।

घृष्ट—(वि०) [√घृष्+क्त] घिसा हुआ । माँजा हुआ ।

घृष्टि—(पुं०) [√घृष्+क्तिच्] शूकर । (स्त्री०) [√घृष्+क्तिन्] पीसना । कूटना । मलना । स्पर्धा ।

घोट, घोटक—(पुं०) [√घुट्+अच्] [√घुट्+ण्वुल्] घोड़ा, अश्व ।—**अरि (घोटकारि)**—(पुं०) भैंसा ।

घोटिका, घोटी—(स्त्री०) [√घुट्+ण्वुल् —टाप्, इत्व] [घोट+ङीष्] घोड़ी ।

घोणस, घोनस—(पुं०) [=गोनस, पृषो० साधुः] एक तरह का साँप ।

घोणा—(स्त्री०) [√घुण्+अच्—टाप्] नासिका, नाक । घोड़े का नथुना । शूकर का थूथन ।

घोणिन्—(पुं०) [घोणा+इनि] शूकर ।

घोण्टा—(स्त्री०) [√घुण्+ट—टाप्]

सुपारी का पेड़ । मदन वृक्ष । नागवला । शाकवृक्ष ।

घोर--(वि०) [√हन्+अच्, घुरादेश, अथवा√घुर्+अच्] भयङ्कर, भयानक । प्रचण्ड, उग्र; 'तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव' भग० । (न०) भय । विष । (पुं०) शिव ।--**आकृति** (घोराकृति),--**दर्शन**--(वि०) भयानक शक्ल का ।--**घुष्य**--(न०) काँसा । फूल ।--**रासन**,--**रासिन्**,--**वाशन**,--**वाशिन्**-(पुं०) शृगाल, स्यार । --**रूप**-(पुं०) शिव ।

घोरा--(स्त्री०) [घोर-टाप्] देवताड़ी लता । रात्रि । सांख्य-मत में राजसी मनोवृत्ति । भरणी, मघा, पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ और पूर्वभाद्रपद नक्षत्रों में से किसी एक में रवि-संक्रान्ति होने पर उसे घोरा कहते हैं ।

घोल--(पुं०, न०) [√घुर्+घञ्, रस्य लः] माठा, छाँछ ।

घोष--(पुं०) [√घुष्+घञ्] शोर गुल; 'स घोषो धार्तराष्ट्राणाम्' भग० १:१९ । बादल की गड़गड़ाहट । घोषणा, ढिंढोरा । अफवाह, किंवदन्ती । ग्वाला, गोप । मच्छर । वर्णों के उच्चारण के बाह्य प्रयत्नों में से एक । अहीरों की बस्ती । बंगाली कायस्थों की एक उपाधि । (न०) काँसा ।--**कर्ण**--(पुं०) वर्ग का ३, ४, ५ अक्षर तथा य, र, ल, व ।

घोषण--(न०), **घोषणा**-(स्त्री०) [√घुष्+ल्युट्] [√घुष्+णिच्+युच्-टाप्] जोर से बोलकर जताना, मुनादी या एलान करना । ध्वनि ।

घोषयित्नु--(पुं०) [√घुष्+णिच्+इत्नुच्] घोषणा करने वाला । भाट, चारण । कोकिल ।

घ्न--(वि०) [√हन्+क] [स्त्री०-**घ्नी**] मारने वाला, हत्या करने वाला । नष्ट करने वाला (समासान्त में यथा, विषघ्न) ।

√**घ्रा**--भ्वा० पर० सक० सूँघना । सूँघ कर जान लेना । चुंबन करना । जिघ्रति, घ्रास्यति, अघ्रासीत् ।

घ्राण--(वि०) [√घ्रा+क्त] सूँघा हुआ । (न०) [√घ्रा+ल्युट्] गंध । सूँघना । सूँघने की शक्ति । नाक ।--**इन्द्रिय** (**घ्राणेन्द्रिय**)-(न०) नाक ।--**चक्षुस्**-(वि०) आँखों का अंधा किन्तु नाक से सूँघ कर जान लेने वाला ।--**तर्पण**-(वि०) घ्राणेन्द्रिय को तृप्त करने वाला । सुगंधयुक्त । (न०) सुगंध ।

घ्राति--(स्त्री०) [√घ्रा+क्तिन्] सूँघने की क्रिया । नाक ।

ङ

ङ--व्यञ्जन वर्ण का पाँचवाँ और कवर्ग का अंतिम अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान कंठ और नासिका है । (पुं०) [√ङु+ड] इंद्रिय-विषय । विषयेच्छा । भैरव ।

√ङु--भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । ङवते, ङविष्यते, अङविष्ट ।

च

च--संस्कृतवर्णमाला या नागरीवर्णमाला का २२ वाँ अक्षर और छठा व्यञ्जन और दूसरे वर्ग चवर्ग का प्रथम अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान तालु है । यह स्पर्श वर्ण है और इसके उच्चारण में श्वास, विवार, घोष और अल्प-प्राण प्रयत्न लगते हैं । (पुं०) [√चण् वा √चि+ड] चन्द्रमा । कछुवा । चोर । (अव्य०) और ।, पादपूरण ।

√**चक्**--भ्वा० आत्म० अक० तृप्त होना । सक० रोकना । चकते, चकिष्यते, अचकिष्ट । भ्वा० पर० अक० तृप्त होना । चकति, चकिष्यति, अचकीत्--अचाकीत् ।

√**चकास्**--अ० पर० अक० चमकना । चकास्ति, चकासिष्यति, अचकासीत् ।

चकित--(वि०) [√चक्+क्त] (भय के कारण) थरथर काँपता हुआ । भयभीत ।

(न०) एक
चौंका हुआ। भीरु। ... में १६ अक्षर
छन्द जिसके प्र...
होते हैं। ...चकते चन्द्रकिरणेन तृप्यति,
चकोर—( ] तीतर की जाति का एक
√चक... जो कि चन्द्रमा को देखकर बहुत
पहा... होता है।

√चक्क्—चु० उभ० अक० पीड़ित होना। चक्कयति—ते, चक्कयिष्यति—ते, अचचक्कत्—त।

चक्कल—(वि०) [√चक्क्+अलन्] गोल, वर्तुल।

चक्र—(पुं०) [√कृ+क, नि० द्वित्व] चकवा पक्षी। पहिया; 'चक्रवत्परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च' हि० १.१७३। कुम्हार का चाक। तेली का कोल्हू। भगवान् विष्णु का आयुध विशेष। वृत्त, मण्डल। दल, समूह। राष्ट्र। राज्य। प्रान्त, सूवा, जिला या ग्रामों का समुदाय। सैनिक व्यूह। युग। अन्तरिक्ष, आकाश-मण्डल। सेना। भीड़भाड़। ग्रन्थ का अध्याय। भँवर। नदी का घूमघुमाव।—**अङ्ग** (**चक्राङ्ग**)–(पुं०) राजहंस। गाड़ी। चक्रवाक।—**अट** (**चक्राट**)–(पुं०) मदारी, सँपेरा। गुंडा, वदमाश। दीनार या सिक्का विशेष।—**आकार** (**चक्राकार**),—**आकृति** (**चक्राकृति**)–(वि०) गोलाकार, गोल।—**आयुध** (**चक्रायुध**)–(पुं०) श्रीविष्णु।—**आवर्त** (**चक्रावर्त**)–(पुं०) भँवर जैसी या चक्करदार गति।—**आह्व** (**चक्राह्व**)–(पुं०)—**आह्वय** (**चक्राह्वय**)–(पुं०) चक्रवाक।—**ईश्वर** (**चक्रेश्वर**)–(पुं०) चक्रवर्ती। तांत्रिक चक्र का अधिष्ठाता। विष्णु। जिले का सर्वोच्च अधिकारी।—**उपजीविन्** (**चक्रोपजीविन्**)–(पुं०) तेली।—**कारक**–(न०) नाखून, नख। सुगन्ध-द्रव्य विशेष।—**कुल्या**–(स्त्री०) पिठवन।—**गण्डु**–(पुं०) गोल तकिया।—**गति**–(स्त्री०) चक्कर। चक्करदार चाल या गति।—**गुच्छ**–(पुं०) अशोक वृक्ष।—**गोप्तृ**–(पुं०) रथचक्र की रक्षा करने वाला। सेनापति। राज्य-रक्षक।—**ग्रहण**–(न०) [स्त्री०—**ग्रहणी**] परकोटा। खाई।—**चर**–(वि०) मण्डल में घूमने वाला।—**चूडामणि**–(पुं०) मुकुटमणि।—**जीवक**,—**जीविन्**–(पुं०) कुम्हार।—**तीर्थ**–(न०) प्रभास-क्षेत्र के अंतर्गत एक तीर्थ (देवासुर-संग्राम के वाद सुदर्शन चक्र में लगा रुधिर धोने से इसकी उत्पत्ति मानी जाती है)।—**तुण्ड**–(पुं०) गोल मुख वाली एक मछली।—**दण्ड**–(पुं०) एक तरह की कसरत।—**दन्ती**–(स्त्री०) दंती वृक्ष। जमाल-गोटा।—**दंष्ट्र**–(पुं०) सुअर।—**धर**–(वि०) चक्र धारण करने वाला। (पुं०) विष्णु। राजा। सूवेदार। सर्प। जादूगर, मदारी।—**धारा**–(स्त्री०) पहिये की परिधि या उसका घेरा।—**नाभि**–(पुं०) पहिये की नाह।—**नामन्**–(पुं०) चक्रवाक। लोहभस्म।—**नायक**–(पुं०) सैनिक टोली का नायक। सुगन्ध द्रव्य विशेष।—**नेमि**–पहिये की परिधि या उसका घेरा; 'नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण' मे० १०९।—**पाणि**–(पुं०) विष्णु भगवान्।—**पाद**,—**पादक**–(पुं०) गाड़ी। हाथी।—**पाल**–(पुं०) सूवेदार। सैनिक-विभाग का अधिकारी। आकाश-मण्डल।—**बन्धु**,—**बान्धव**–(पुं०) सूर्य।—**बाल**,—**वाल**,—**बाड**,—**वाड**–(पुं०, न०) मंडल, वृत्त। समुदाय, समूह। आकाश-मण्डल। (पुं०) पौराणिक पर्वत-माला जो पृथिवी की परिधि को दीवाल की तरह घेरे हुए है और जो प्रकाश और अन्धकार की सीमा समझी जाती है। चक्रवाक।—**भृत्**–(पुं०) चक्रधारी। विष्णु।—**भेदिनी**–(स्त्री०) रात।—**भ्रमि**–(स्त्री०) चक्की (आटा पीसने की)।—**मण्डलिन्**–(पुं०) सर्प विशेष। नृत्य का एक भेद।—**मर्द**,—**मर्दक**–(पुं०)

चकवँड़ । ——मुख–(पुं०) शूकर ।——मुद्रा–(स्त्री०) तांत्रिक पूजन में प्रयुक्त एक मुद्रा । शंख, चक्र आदि के चिह्न जो वैष्णव अपने शरीर पर छपाते हैं ।——यान–(न०) गाड़ी । ——रद–(पुं०) शूकर ।——वर्तिन्–(पुं०) आसमुद्र-क्षितीश, सम्राट् ।——वाक–(पुं०) चकवा । ——वाट–(पुं०) सीमा । डीवट, पतीलसोत । किसी कार्य में व्याप्ति ।——वात–(पुं०) तूफान, ववंडर ।——वाल——(पुं०) लोकालोक पर्वत । मंडल । घेरा ।——वालधि–(पुं०) कुत्ता । ——वृद्धि–(स्त्री०) सूद दर सूद ।——व्यूह–(पुं०) मण्डलाकार सैनिक-संस्थापना ।—— संज्ञ –(न०) टीन । (पुं०) चक्रवाक ।—— साह्वय–(पुं०) चक्रवाक ।—— हस्त–(पुं०) विष्णु ।

चक्रक——(वि०) [चक्र√कै+क] पहिये के आकार का, गोल, मंडलाकार । (पुं०) एक तरह का साँप । युद्ध का एक ढंग । एक प्रकार का तर्क । इसका लक्षण है——'स्वापेक्षणीयापेक्षितसापेक्षत्वनिवन्धनः प्रसंगश्चक्रकः' (जगदीश) ।

चक्रवत्——(वि०) [चक्र+मतुप्, वत्व] पहियादार या जिसमें पहिये लगे हों । गोल । (पुं०) तेली । सम्राट् । विष्णु ।

चक्रिका——(स्त्री०) [चक्र+ठन्—टाप्] ढेर । दल । धोखा । घुटनों पर की गोल हड्डी ।

चक्रिन्——(पुं०) [चक्र+इनि] विष्णु । कुम्हार । तेली । सम्राट् । सूवेदार । गधा । चक्रवाक । मुखविर । सर्प । काक । मदारी ।

चक्रिय——(वि०) [चक्र+घ] यात्रा करने वाला । गाड़ी में वैठने वाला ।

चक्रीवत्——(पुं०) [चक्र+मतुप्, वत्व, नि० चक्रस्य चक्रीभावः] गधा । एक राजा का नाम । चकवा ।

√चक्ष्——अ० आत्म० सक० देखना । पहचानना । वोलना, कहना । चष्टे, ख्यास्यति——ते,——
सीत्——अ... ते, अख्यत्——त, अक्शा-
चक्षण——(न०
चखना । चखने क... √चक्ष् + ल्युट्]
अनुग्रह । ...ाट । कथन ।
चक्षस्——(पुं०) [√चक्ष्+आ...
अध्यात्म-सम्बन्धी विद्या पढ़ाने ...क्षागुरु,
...।
देवगुरु बृहस्पति ।

चक्षुष्मत्——(वि०) [√चक्षुस्+मतुप्] देखने की शक्ति से सम्पन्न । अच्छे या स्वच्छ नेत्रों वाला ।

चक्षुष्य——(वि०) [चक्षुस्+यत्] सुन्दर, मनोहर । आँखों के लिये भला । (पुं०) केवड़ा । सहिजन । अंजन ।

चक्षुष्या——(स्त्री०) [चक्षुष्य+टाप्] सुन्दरी स्त्री । वनतुलसी । अजश्रृंगी । सुरमा ।

चक्षुस्——(न०) [√चक्ष्+उसि] नेत्र । दृष्टि, देखने की शक्ति । रोशनी । कांति ।——गोचर (**चक्षुर्गोचर**)–(पुं०) दिखलाई पड़ने वाला ।——दान (**चक्षुर्दान**)–(न०) मूर्ति-प्रतिष्ठा के अन्तर्गत नेत्रोन्मीलन कृत्य । ——पथ (**चक्षुःपथ**)–(पुं०) दृष्टि की पहुँच । अन्तरिक्ष ।——मल (**चक्षुर्मल**)–(न०) कीचड़, आँखों का मैल ।——राग (**चक्षूरोग**)–(पुं०) आँखों की सुर्खी । आँखभिड़ौअल । ——रोग (**चक्षूरोग**)–(पुं०) नेत्ररोग । ——विषय (**चक्षुर्विषय**)–(पुं०) दृष्टि-गोचरत्व । चिह्नानी, देखने से प्राप्त हुआ ज्ञान अथवा देखने से प्राप्त होने वाला ज्ञान । कोई भी पदार्थ, जो दिखलाई पड़े ।

चङ्कुर–(पुं०) [√चक्, उणादि उरच्]वृक्ष । गाड़ी । कोई भी पहियादार सवारी ।

चङ्क्रमण——(न०) [√क्रम्+यङ +ल्युट्, यङो लुक्] घूमना; 'चक्रे स चक्रनिभचंक्रमणच्छलेन' नै० १.१४४ । टहलना । धीरे-धीरे चलना । कूदना ।

√चञ्च्——भ्वा० पर० अक० हिलना ।

काँपना । झूमना । चञ्चति; चञ्चिष्यति, अचञ्चीत् ।

चञ्च--(पुं०) [√चञ्च्+अच्] टोकरी, डलिया । पञ्चाङ्गुलमान, पाँच अंगुल की एक नाप ।

चञ्चरिन्--(पुं०) [√चर्+यङ--लुक् +णिनि] भ्रमर, भौंरा ।

चञ्चरीक--(पुं०) [√चर्+ईकन्, नि० साधुः] भ्रमर ।

चञ्चल--(वि०)[√चञ्च्+अलच्, अथवा चञ्च√ला+क] कँपकपा, थरथराने वाला, काँपने वाला । अस्थिर, एकसा न रहने वाला । (पुं०) पवन । प्रेमी, आशिक । मनमौजी, लम्पट ।

चञ्चला--(स्त्री०) [चञ्चल+टाप्] विद्युत्, विजली । धन की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी । पिप्पली ।

चञ्चा--(स्त्री०) [√चञ्च्+अच्--टाप्] वेंत आदि की वनी डलिया । चटाई ।--**पुरुष**-(पुं०) पक्षी आदि को डराने के लिये वनाया जाने वाला पुआल आदि का पुतला । तुच्छ व्यक्ति ।

चञ्चु--(वि०) [√यञ्च्+उन्] प्रसिद्ध । चतुर । (पुं०) एरंड वृक्ष । वरसात में होने वाला एक साग, चेंच । हिरन । (स्त्री०) चोंच ।--**पत्र**-(पुं०) एक साग ।--**पुट**-(पुं०) पक्षी की वंद चोंच ।--**प्रहार**-(पुं०) चोंच की चोट ।--**भृत्**-(पुं०) पक्षी ।--**सूचि**--(पुं०) कारंडव पक्षी ।

चञ्चुर--(वि०) [√चञ्च्+उरच्] दक्ष, चतुर ।

चञ्चू--(स्त्री०) [चञ्चु+ऊङ] चेंच का साग । चोंच ।

√चट्--भ्वा० पर० अक० वरसना । सक० ढाँकना । चटति, चटिष्यति, अचटीत् । चु० उभ० सक० मारना । तोड़ना । चाटयति-ते, चाटयिष्यति-ते, अचीचटत्-त ।

चटक--(पुं०) [√चट्+क्वुन्] गौरवा या गौरैया ।

चटका, चटिका--(स्त्री०) [चटक+टाप्, चटक+टाप्, इदादेश] मादा गौरैया ।

चटु--(पुं०) [√चट्+कु] प्रियवाक्य, चापलूसी । पेट । आराधना का एक आसन । चीत्कार ।

चटुल--(वि०) [चटु+लच्] अस्थिर । चञ्चल; 'आयस्तमैक्षत जनश्चटुलाग्रपादं' शि० ५.६ । मनोहर, सुन्दर ।

चटुला--(स्त्री०) [चटुल+टाप्] विजली, विद्युत् ।

चटुलोल, चटूल्लोल--(वि०) [कर्म० स०, नि० साधुः] सुचंचल । सुन्दर । मधुरभाषी ।

√चण्--भ्वा० पर० सक० जाना । देना । चणति, चणिष्यति, अचणीत्--अचाणीत् ।

चण--(वि०) [√चण्+अच्] प्रसिद्ध, प्रख्यात । निपुण । (पुं०) चना ।--**पत्री**--(स्त्री०) रुदंती नामक पौधा ।

चणक--(पुं०) [√चण्+क्वुन्] चना । एक गोत्रकार ऋषि ।

चणिका--(स्त्री०) [√चण्+क्वुन्+टाप्, इत्व] अलसी ।

√चण्ड्--भ्वा० आत्म० सक० क्रोध करना । चण्डते, चण्डिष्यते, अचण्डिष्ट ।

चण्ड--(वि०) [√चण्ड्+अच्] भयानक । उग्र । क्रुद्ध । गर्म, उष्ण । फुर्तीला । कर्मठ । हानिकर । जिसका लिंगाग्रचर्म कटा हो । (पुं०) मुंड दैत्य का भाई । शिव । स्कंद । [√चण्+ड] इमली का पेड़ । (न०) गर्मी, उष्णता । क्रोध ।--**अंशु** (**चण्डांशु**)--कर,--**दीधिति**,--**भानु**-(पुं०) सूर्य ।--**ईश्वर** (**चण्डेश्वर**)-(पुं०) शिव का रूप विशेष ।--**कौशिक**-(पुं०) एक ऋषि । संस्कृत का एक प्रसिद्ध नाटक ।--**घण्टा**--

(स्त्री०) दुर्गा ।—तुण्डक–(पुं०) गरुड़ का एक पुत्र ।—नायिका –(स्त्री०),—मुण्डा (चामुण्डा)–(स्त्री०) दुर्गा का रूप विशेष । —मृग–(पुं०) वन्य जन्तु विशेष ।—रश्मि –(पुं०)सूर्य।—रुद्रिका–(स्त्री०) अष्टनायिकाओं के पूजन से प्राप्त होने वाली सिद्धि । —रूपा–(स्त्री०) एक देवी ।—विक्रम– (वि०) अत्यन्त पराक्रमी ।—वृत्ति–(वि०) हठी । विद्रोही ।—शक्ति–(वि०) प्रचंड शक्ति, पराक्रम वाला । (पुं०) बलि की सेना का एक दानव ।—शील–(वि०) कामी ।

चण्डा, चण्डी—(स्त्री०) [चण्ड+टाप्] [चण्ड+ङीष्] दुर्गा देवी । क्रोधी स्वभाव की स्त्री । अष्टनायिकाओं में से एक । एक गंधद्रव्य । सौंफ । सोवा । सफेद दूब ।

चण्डात—(पुं०) [चण्ड√अत्+अण्] सुगन्ध-युक्त कनेर ।

चण्डातक—(पुं०, न०) [चण्ड√अत्+ण्वुल्] लहँगा । साया ।

चण्डाल—(पुं०) [√चण्ड्+आलञ्] अत्यन्त नीच एवं घृणित एक वर्णसङ्कर जाति का नाम जिसकी उत्पत्ति ब्राह्मण पिता और शूद्र माता से मानी गई है । इस जाति का मनुष्य । (वि०) क्रूर कर्म करने वाला । —पक्षिन् (पुं०) कौआ ।—वल्लकी, —वीणा–(स्त्री०) एक तरह का तंबूरा या चिकारा ।

चण्डालिका—(स्त्री०) [चण्डाल+ठन्—इक—टाप्] चण्डाल की वीणा । दुर्गा । करवीर ।

चण्डिका—(स्त्री०) [चण्डी+कन्—टाप्, ह्रस्व] दुर्गा का नाम ।

चण्डिमन्—(पुं०) [चण्ड+इमनिच्] क्रोध । उग्रता । गर्मी, उष्णता ।

चण्डिल—(पुं०) [√ चण्ड् + इलच्] रुद्र । नाई । वथुआ साग ।

चण्डी—(स्त्री०) [चण्ड+ङीष्] दुर्गा । कर्कशा और उग्र स्त्री ।—कुसुम–(न०) लाल कनेर ।

चण्डु—(पुं०) [√चण्ड्+उन्] चूहा । छोटा बंदर ।

√चत्—भ्वा० उभ० द्विक० माँगना । सक० जाना । चतति-ते, चतिष्यति-ते, अचतीत्—अचतिष्ट ।

चतुर्—(त्रि०) [√चत्+उरन्] [संख्या-वाची—सदा बहुवचनान्त, यथा—(पुं०) **चत्वारः**, (स्त्री०) **चतस्रः**, (न०) **चत्वारि**] चार; 'शेषान् मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा' मे० ११० ।—अंश (**चतुरंश**) –(पुं०) चतुर्थ भाग ।—अङ्ग (**चतुरङ्ग**)–(न०) जिसके चार अंग हों, हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सिपाहियों से सज्जित सेना; 'एको हि खञ्जनवरो नलिनीदलस्थो दृष्टः करोति चतुरङ्गबलाधिपत्यम्' ज्यो० । एक प्रकार की शतरञ्ज ।—अन्त (**चतुरन्त**)–(पुं०) चारों ओर से सीमित ।—अन्ता (**चतुरन्ता**)– (स्त्री०) पृथिवी ।—अशीत (**चतुरशीत**)–(वि०) ८४ वाँ ।—अशीति (**चतुरशीति**) –(वि०) ८४, चौरासी ।—अश्र (**चतुरश्र**) —अस्र (**चतुरस्र**)–(वि०) चार कोनों वाला, चतुष्कोण । सब प्रकार से सुन्दर, सुडौल ।—अह (**चतुरह**)–(न०) चार दिवस की अवधि । चार दिनों में पूरा होने वाला एक सोम-यज्ञ ।—आनन (**चतुरानन**) –(पुं०) ब्रह्मा जी ।—आश्रम (**चतुराश्रम**) –(न०) ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास—इन चार आश्रमों का समाहार । —कर्ण–(वि०) (**चतुष्कर्ण**) केवल दो आदमियों का सुना हुआ ।—गति–(पुं०) परमात्मा । कछुवा ।—गुण–(वि०) चार-गुना । चौपाया ।—चत्वारिंशत्– (चतुश्-चत्वारिंशत्)–(स्त्री०) ४४, चौवालीस ।—दन्त–(पुं०) इन्द्र के हाथी ऐरावत की उपाधि ।—दश–(वि०) चतुर्दशानां पूरणः,

चतुर्दशन्+डट्] १४ वाँ ।—**दशन्**—(त्रि० [चतुरधिका दश, मध्य० स०] चौदह । —०**भुवन** (**चतुर्दशभुवन**)—(न०) भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्—ये सात ऊर्ध्वलोक और अतल, सुतल, वितल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल —ये सात अधोलोक ।—०**रत्न** (**चतुर्दशरत्न**) —(न०) चौदह रत्न जो समुद्रमन्थन के समय निकले थे । यथा— लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्चन्द्रमा, गावो कामदुघाः सुरेश्वरगजो रम्भादि-देवाङ्गनाः ।। अश्वः सप्तमुखो विषं हरिधनुः शङ्खोऽमृतं चाम्बुधे रत्नानीह चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।—०**विद्या**—(स्त्री०) चौदह विद्याएँ । वे ये हैं :—षडङ्गमिश्रिता वेदा धर्मशास्त्रं पुराणकम् ।। मीमांसा तर्कशास्त्रं च एता विद्याश्चतुर्दश ।—**दशी**—(स्त्री०) [चतुर्दश+ङीप्] चौदहवीं तिथि ।—**दिश**—(न०) चारों दिशाओं का समूह । (अव्य०) चारों दिशाओं की ओर । सब तरफ़ से ।—**दोल**—(पुं०, न०) चार आदमियों से ढोयी जाने वाली सवारी (पालकी, नालकी आदि) । चंडोल । चार डंडों का पालना ।—**नवति** (**चतुर्णवति**)—[चतुरधिका नवतिः, मध्य० स०, णत्व] (स्त्री०) ९४, चौरानवे ।—**पंच**—(त्रि०) [चतुःपञ्च या **चतुष्पञ्च**] चार या पाँच ।—**पञ्चाशत्**—(स्त्री०) [**चतुःपञ्चाशत् या चतुष्पञ्चाशत्**] ५४, चौवन ।—**पथ**—(पुं०) [**चतुःपथ** या **चतुष्प**] चौराहा । (पुं०) ब्राह्मण ।—**पद**—(वि०) [**चतुष्पद**] चार पैरों वाला । चार अवयवों वाला । (पुं०) चौपाया ।—**पदी**—(स्त्री०) चार पदों वाला श्लोक, जिसमें ३२ अक्षर होते हैं ।—**पाठी**—(स्त्री०) [**चतुष्पाठी**] ब्राह्मणों की पाठशाला जिसमें चारों वेद पढ़ाये जायँ ।—**पाणि**—(पुं०) [**चतुष्पाणि**] विष्णु भगवान् ।—**पाद्**, —**पाद**—[**चतुःपाद** या **चतुष्पाद**] (वि०) चार पादों वाला । चार भागों या अवयवों वाला । (पुं०) चौपाया ।—**बाहु**—(पुं०) विष्णु । (न०) चतुष्कोण ।—**बीज**—(न०) काला जीरा, अजवायन, मेथी और चंसुर का समाहार ।—**भद्र**—(न०) मनुष्य के चार पुरुषार्थ अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । —**भाग**—(पुं०) चतुर्थांश, चौथा हिस्सा, चौथाई ।—**भुज**—(वि०) चार भुजा वाला । (पुं०) विष्णु । (न०) चतुष्कोण ।—**मास**—(न०) चार मास की अवधि [आषाढ़ मास की शुक्ला ११ से कार्तिक शुक्ला ११ तक की अवधि] ।—**मुख**—(वि०) चार मुखों वाला । (पुं०) ब्रह्मा जी । (न०) चार मुख । चार द्वारों वाला घर ।—**युग**—(न०) चार युग । —**मूर्त्ति**—(पुं०) विराट्, सूत्रात्मा, अव्याकृत और तुरीय इन चारों अवस्थाओं में रहने वाला ईश्वर, परमेश्वर ।—**वक्त्र**—(पुं०) ब्रह्मा जी ।—**वर्ग**—(पुं०) चार पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ।—**वर्ण**—(पुं०) चार जातियाँ यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र; 'चतुर्वर्णमयो लोकः' र० १०.२२ ।—**वर्षिका** —(स्त्री०)चार वर्ष की अवस्था वाली (गौ)।—**विंश**—(वि०) [चतुर्विंशति+डट्] २४ वाँ । (न०) एक दिन में होने वाला एक तरह का याग ।—**विंशति**—(वि० या स्त्री०) २४, चौबीस ।—**विद्य**—(वि०) चारों वेदों को जानने वाला ।—**विद्या**—(स्त्री०) चारों वेद । —**विध**—(वि०)चार प्रकार का । चौगुना । —**वेद**—(वि०) चारों वेदों से परिचित । (पुं०) चारों वेद । परब्रह्म ।—**व्यूह**—(पुं०) चार पुरुषों, पदार्थों का समुदाय (जैसे— वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध । हेय (संसार), हेयहेतु, हान (मोक्ष), मोक्ष का उपाय । रोग, रोगनिदान, आरोग्य, भैषज) । विष्णु । (न०) योगशास्त्र । वैद्यक-शास्त्र । —**षष्टि**—(वि० या स्त्री०) (चतुःषष्टि)

चौंसठ, ६४ ।—**सप्तति**–(वि० या स्त्री०) (चतुःसप्तति) ७४, चौहत्तर ।—**हायन**, —**हायण**–(वि०) चार वर्ष की अवस्था का।

चतुर—(वि०) [√चत्+उरच्] होशियार, निपुण, पटु । तीक्ष्ण बुद्धि-सम्पन्न । फुर्तीला, तेज। मनोहर, सुन्दर; 'न पुनरेति गतं चतुरं वयः' र० ६.४७ । (पुं०) क्रिया-चतुर या वचन-चतुर नायक । (न०) हाथीखाना, गजशाला । वक्र गति । गोल तकिया । होशियारी ।

चतुर्थ—(वि०) [चतुर्+डट्, थुगागम] [स्त्री०—**चतुर्थी**] चौथा। (पुं०) एक प्रकार का तिताला ताल ।—**आश्रम** (**चतुर्थाश्रम**)–(पुं०) संन्यासाश्रम ।

चतुर्थक—(वि०) [चतुर्थ+कन्] चौथा । (पुं०) चौथिया ज्वर ।

चतुर्थी—(स्त्री०) [चतुर्थ+ङीप्] चौथ-तिथि । संप्रदान कारक ।—**कर्मन्**–(न०) विवाह में एक कर्म जो चतुर्थ दिवस किया जाता है ।

चतुर्धा—(अव्य०) [चतुर्+धा] चार प्रकार से । चार गुना ।

चतुष्क—(न०) [चतुर्+कन्] चार का समूह । चौराहा। चौकोन आँगन । चार खंभों पर टिका हुआ बड़ा कमरा । चार लड़ियों का हार ।

चतुष्की—(स्त्री०) [चतुष्क+ङीप्] चौकोन बड़ी पुष्करिणी । मसहरी, मच्छरदानी । चौकी ।

चतुष्टय—(वि०) [चत्वारोऽवयवा यस्य, चतुर्+तयप्] चार अवयवों वाला। चारगुना। (न०) [चतुर्णाम् अवयवः, चतुर्+तयप्] चार की संख्या । चार चीजों का समूह । जन्म-कुंडली में केन्द्र, लग्न और लग्न से सातवाँ तथा दसवाँ स्थान ।

चत्वर—(न०) [√चत्+ष्वरच्] चबूतरा। आँगन । चौराहा; 'स खलु श्रेष्ठिचत्वरे निवसति' मृ० २ । समतल भूमि जो यज्ञ के लिये तैयार की गयी हो ।

चत्वारिंशत्—(स्त्री०) [चत्वारो दशतः परिमाणमस्य, ब० स० नि० साधुः] चालीस, ४० ।

चत्वाल—(पुं०) [√चत्+वालञ्] हवन-कुण्ड । कुश । गर्भाशय ।

√चद्—भ्वा० उभ० द्विक० माँगना । चदति, चदिष्यति, अचदीत् ।

चदिर—(पुं०) [√चन्द्+किरच्, नि०साधुः] चन्द्रमा । कपूर । हाथी । सर्प ।

√चन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । सक० मारना । चनति, चनिष्यति, अचनीत् —अचानीत् ।

चन—(अव्य०) [द्व० स०] और नहीं । [√चन्+अच्] थोड़ा ।

चनस्—(न०) [√चाय्+असुन्, नुट्] आहार ।

√चन्द्—भ्वा० पर० अक० चमकना । प्रसन्न होना । चन्दति, चन्दिष्यति, अचन्दीत् ।

चन्द—(पुं०) [√चन्द्+णिच+अच्] चन्द्रमा । कपूर ।

चन्दन—(पुं०, न०) [√ चन्द् + णिच् +ल्युट्]एक प्रसिद्ध वृक्ष जिसकी लकड़ी एक प्रधान गंध द्रव्य है, संदल । उसकी लकड़ी । चंदन को घिस कर बनाया हुआ लेप ।—**अचल** (**चन्दनाचल**),—**अद्रि** (**चन्दनाद्रि**),—**गिरि**–(पुं०) मलयपर्वत ।—**उदक** (**चन्दनोदक**)–(न०) चन्दन-मिश्रित जल । —**पुष्प**–(न०) लवँग, लौंग ।

चन्दिर—(पुं०) [√चन्द्+किरच्] हाथी । चन्द्रमा । कपूर ।

चन्द्र—(पुं०) [चन्दयति आह्लादयति वा चन्दति दीप्यते, √ चन्द् + णिच्+रक् वा √चन्द्+रक्] चन्द्रमा । चन्द्रग्रह । कपूर । मयूरपंख में की चन्द्रिकाएँ । जल । सुवर्ण । (चन्द्र जब समासान्त शब्दों के अन्त में आता

है, तब इसका अर्थ प्रख्यात या आदर्श होता है । यथा पुरुषचन्द्र अर्थात् सर्वोत्कृष्ट या आदर्श पुरुष) ।—**अंशु (चन्द्रांशु)**–(पुं०) चन्द्र की किरण ।—**अर्ध (चन्द्रार्ध)**–(पुं०) आधा चन्द्रमा ।—**आत्मज (चन्द्रात्मज)**, —**औरस (चन्द्रौरस)**;—**ज**,—**जात**,—**तनय**,—**नन्दन**,—**पुत्र**–(पुं०) बुध ग्रह । —**आनन (चन्द्रानन)**–(पुं०) कार्तिकेय । —**आपीड (चन्द्रापीड)**–(पुं०) शिव ।—**आह्वय (चन्द्राह्वय)**—(पुं०) कपूर ।—**इष्टा (चन्द्रेष्टा)**–(पुं०) कुमुदिनी ।—**उपल (चन्द्रोपल)**–(पुं०) चन्द्रकान्त मणि । —**कला**–(स्त्री०) चंद्रमंडल का १६वाँ भाग । चंद्रमा की १६ कलाएँ (कामशास्त्र के अनुसार—पूषा, यशा, सुमनसा, रति, प्राप्ति, धृति, ऋद्धि, सौम्या, मरीचि, अंशुमालिनी, अंगिरा, शशिनी, छाया, संपूर्णमंडला, तुष्टि और अमृता) । चंद्रमा की किरण । माथे पर पहनने का एक गहना । एक वर्णवृत्त । एक सतताला ताल । छोटा ढोल । एक मछली । नखक्षत ।—**०धर**–(पुं०) महादेव । —**कान्त**–(पुं०) एक मणि जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि चंद्रकिरण के स्पर्श से वह पसीज जाता है; "द्रवति च चन्द्रकान्तः हिमरश्मावुद्गते" उत्त० ६.१२ । मुद । (न०) श्रीखंडचंदन । एक राग ।—**कान्ता**–(स्त्री०) रात । चाँदनी ।—**कान्ति**–(स्त्री०) चाँदनी । (न०) चाँदी ।—**क्षय**–(पुं०) अमावस्या ।—**गोल**–(पुं०) चन्द्रलोक । —**गोलिका**–(स्त्री०) चाँदनी ।—**ग्रहण**–(न०) पृथ्वी की छाया से चंद्रमंडल का छिप जाना, पौराणिक मत से राहु द्वारा चन्द्रमा का ग्रसन ।—**चञ्चला**–(स्त्री०) एक प्रकार की छोटी मछली ।—**चूड**,—**मौलि**, —**शेखर**–(पुं०) शिवजी की उपाधियाँ ।—**दारा**–(पुं० बहु०) २७ नक्षत्र जो दक्ष की कन्यायें और चन्द्रमा की स्त्रियाँ हैं ।—**द्युति**–(पुं०) चन्दन काष्ठ । (स्त्री०) चाँदनी ।—**नामन्**–(पुं०) कपूर ।—**पाद**–(पुं०) चन्द्रकिरण ।—**प्रभा**–(स्त्री०) चाँदनी ।—**बाला**–(स्त्री०) बड़ी इलायची । चाँदनी ।—**बिन्दु**–(पुं०) अर्धचन्द्राकार-चिह्न-युक्त बिंदु(ँ)। —**भस्मन्**–(न०) कपूर ।—**भागा**–(स्त्री०) दक्षिण भारत की एक नदी का नाम ।—**भास**–(पुं०) तलवार ।—**भूति**–(न०) चाँदी ।—**मणि**–(पुं०) चन्द्रकान्त मणि ।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०) चन्द्रमा की कला । —**रेणु**—(पुं०) ग्रन्थचोर, लेखचोर ।—**लोक**–(पुं०) चन्द्रमा का लोक ।—**लोहक**,—**लौह**,—**लौहक**–(न०) चाँदी ।—**वंश**–(पुं०) भारतीय प्राचीन प्रसिद्ध राजवंशों में से एक जिसका आरंभ बुध के पुत्र पुरूरवा से माना जाता है ।—**वदन**–(वि०) चन्द्रमा-जैसे मुख वाला ।—**वल्ली**–(स्त्री०) सोमलता । माधवी लता ।—**वेष**–(पुं०) शिव ।—**व्रत**–(न०) चांद्रायण व्रत ।—**शाला**,—**शालिका**–(स्त्री०) छत के ऊपर का कमरा या बँगला जिससे चाँदनी का पूरा आनंद लिया जा सके । चाँदनी ।—**शिला**–(स्त्री०) चन्द्रकान्त मणि । **शेखर**—(पुं०) शिव ।—**संज्ञ**–(पुं०) कपूर । —**सम्भव**–(पुं०) बुध ग्रह ।—**सम्भवा**–(स्त्री०) छोटी इलायची ।—**सालोक्य**–(न०) चन्द्रलोक की प्राप्ति ।—**हन्तु**–(पुं०) राहु की उपाधि ।—**हास**–(पुं०) चमचमाती तलवार । रावण की तलवार का नाम । केरल के राजा सुधार्मिक का पुत्र ।—**हासा**–(स्त्री०) सोमलता ।

चन्द्रक—(पुं०) [चन्द्र+कन्] चन्द्रमा । (न०) सहिजन । श्वेतमरिच । कपूर । चंदन । (पुं०) [चन्द्र√कै+क] मयूर के पंखों की चन्द्रिका । नख । चन्द्र के आकार का मंडल (जो जल में तैल-बिन्दु डालने से बन जाता है) ।

चन्द्रकिन्—(पुं०) [चन्द्रक+इनि] मयूर, मोर।

चन्द्रमस्––(पुं०) [चन्द्रम् आह्लादं मिमीते, चन्द्र√मि+असुन्, मादेशः] चन्द्रमा।

चन्द्रिका––(स्त्री०) [चन्द्र+ठन्] चाँदनी। व्याख्या; टीका। रोशनी। बड़ी इलायची। चन्द्रभागा नदी। मल्लिका लता।––**अम्बुज** (**चन्द्रिकाम्बुज**)–(न०) सफेद कमल जो चंद्रमा के उदय होने पर खिलता है।––**द्राव**–(पुं०) चंद्रकान्त मणि।––**पायिन्**–(पुं०) चकोर पक्षी।

चन्द्रिल––(पुं०) [चन्द्र+इलच्] नाई। शिव।

√चप्––भ्वा० पर० सक० सान्त्वना देना, ढाढ़स बँधाना। चपति, चपिष्यति, अचपीत्––अचापीत्। चु० उभ० सक० पीसना। सानना। चपयति––ते, चपयिष्यति––ते, अचीचपत्––त।

चपट––(पुं०) [√चप्+क, चप√अट्+अच्, शक० पररूप] चपत, तमाचा।

चपल––(वि०) [√चुप्+कल, उकारस्य अकारः] काँपने वाला, थरथराने वाला। अस्थिर, चंचल; 'पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः' श० १.१५। डाँवाँडोल। निर्बल। नश्वर। फुर्तीला। उतावला। अविचारी, अविवेकी। (पुं०) मछली। पारा, पारद। चातक पक्षी। सुगन्ध द्रव्य विशेष।

चपला––(स्त्री०) [चपल+टाप्] बिजली। कुलटा स्त्री। मदिरा। लक्ष्मी। जिह्वा।––**जन**–(पुं०) चंचल या अस्थिर स्वभाव की स्त्री।

चपेट––(पुं०) [चप√इट्+अच्] थप्पड़। फैले हुए हाथ की हथेली।

चपेटा, चपेटिका––(स्त्री०) [चपेट+टाप्] [चपेट+कन्–टाप्, इत्व] थप्पड़, झापड़।

√चम्––भ्वा० पर० सक० पीना। खाना। आचामति––चमति, चमिष्यति, अचमीत्। स्वा० पर० सक० खाना। चम्नोति, चमिष्यति, अचमीत्।

चमर––(पुं०) [√चम्+अरच्] एक प्रकार का हिरन, सुरा गाय। (पुं०, न०) सुरा गाय की पूंछ का बना चँवर, चामर।

चमरी––(स्त्री०) [चमर+ङीष्] सुरा गाय, चमर की मादा।––**पुच्छ**–(न०) चमरी की पूंछ जो चँवर की तरह इस्तेमाल की जाती है। (पुं०) गिलहरी। लोमड़ी।

चमरिक––(पुं०) [चमर+ठन्] कचनार का वृक्ष।

चमस––(पुं०, न०), **चमसी**–(स्त्री०) [√चम्+असच्] [चमस+ङीष्] यज्ञों में सोमवल्ली का रस पीने का पात्र-विशेष। चमचा। घुआँस। पापड़। लड्डू।

चमू––(स्त्री०) [चमयति विनाशयति रिपून्, √चम्+ऊ] सेना, फौज। सैन्यदल-जिसमें ७२९ हाथी, ७२९ ही रथ, २१८७ घुड़सवार और ३६४५ पैदल होते हैं; 'गजवती जवतीव्रहया चमूः' र० ९.१०।––**चर**–(पुं०) योद्धा। सिपाही।––**नाथ,––प,––पति**–(पुं०) सेनानायक (कमाँडर)।

चमूरु––(पुं०) [√चम्+ऊरु, उत्व] एक प्रकार का हिरन।

√चम्प्––चु० पर० सक० जाना। चम्पयति––चम्पति।

चम्प––(पुं०) [√चम्प्+अच्] कचनार का पेड़। चंपा फूल। एक क्षत्रिय राजा जिसने चम्पा पुरी स्थापित की थी।

चम्पक––(पुं०) [√चम्प्+ण्वुल] चंपा का वृक्ष। सुगन्धिद्रव्य विशेष। (न०) चम्पा का फूल।––**माला**–(स्त्री०) चंपाकली, आभूषण-विशेष। चम्पा का हार। छन्द-विशेष।––**रम्भा**–(स्त्री०) चंपा केला।

चम्पकालु––(पुं०) [चंपकेन पनसावयवविशेषेण अलति, चम्पक√अल्+उण्] कटहल।

चम्पकावती, चम्पा, चम्पावती––(स्त्री०) [चम्पक+मतुप्, वत्व, दीर्घ] [√चम्प्+

अच्, चम्प+अच्—टाप्] [चम्प+मतुप्, वत्व, दीर्घ, ङीप्] गंगातट पर अवस्थित एक प्राचीन नगर का नाम । इस पुरी का आधुनिक नाम भागलपुर है ।

चम्पालु—(पुं०) [चम्प—आ√ला+डु] कटहल ।

चम्पू—(स्त्री०) [√चम्प्+ऊ] गद्यपद्य-मिश्रित काव्य-विशेष; 'गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते' साहित्यदर्पण ।

√चय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । चयते, चयिष्यते, अचयिष्ट ।

चय—(पुं०) [√चि+अच्] समूह, ढेर । टीला । धुस्स । परकोटा । दुर्गद्वार । बैठकी । इमारत, भवन । लकड़ी की टाल ।

चयन—(न०) [√चि+ल्युट्] पुष्पादिक को बीनना । ढेर ।

√चर्—भ्वा० पर० सक० जाना । खाना । चरति, चरिष्यति, अचारीत् । चु० पर० सक० संदेह करना । चारयति ।

चर—(वि०) [√चर्+अच्] [स्त्री०—**चरी**] काँपता हुआ, थर-थराता हुआ । जंगम, चलने वाला । जानदार, जीवधारी । (पुं०) जासूस, भेदिया । दूत । खंजन पक्षी । जुआ । कौड़ी । मङ्गलग्रह । मङ्गलवार ।—**अचर** (**चराचर**)–(पुं०) स्थावर-जङ्गम । (न०) संसार । आकाश, अन्तरिक्ष ।—**द्रव्य**–(न०) चल पदार्थ, संपत्ति ।—**नक्षत्र**–(न०) स्वाती, पुनर्वसु श्रवण, धनिष्ठा आदि नक्षत्र ।—**मूर्ति**–(पुं०) वह मूर्ति जिसकी सवारी निकाली जाय ।

चरक—(पुं०) [√चर्+क्वुन् वा चर +कन्] जासूस । रमता भिक्षुक । आयुर्वेद-विशेष । पापड़ ।

चरट—(पुं०) [√चर्+अटच्] खञ्जन पक्षी ।

चरण—(पुं०) [√चर्+ल्युट्] पैर । सहारा । खंभा । वृक्ष-मूल । श्लोक का एक पाद । चौथाई । वेद की शाखा । जाति । (न०) घूमना-फिरना, भ्रमण । सम्पादन । अभ्यास । चालचलन । बर्ताव । सम्पन्नता । भक्षण ।—**अमृत** (**चरणामृत**),—**उदक** (**चरणोदक**)–(न०) जल जिससे पूज्य व्यक्ति या देव-मूर्ति के पैर धोये गये हों ।—**अरविन्द** (**चरणारविन्द**),—**कमल**,—**पद्म**–(न०) कमल-जैसे पैर ।—**आयुध** (**चरणायुध**)–(पुं०) मुर्गा ।—**आस्कन्दन** (**चरणास्कन्दन**)–(न०) पैरों से कुचलना, रौंदना ।—**ग्रन्थि**–(पुं०)—**पर्वन्**–(न०) टखना ।—**न्यास**–(पुं०) कदम ।—**प**–(पुं०) वृक्ष ।—**पतन**–(न०) पैरों पड़ना, पैर लगना ।—**पदवी**–(स्त्री०) पैरों के निशान ।—**शुश्रूषा**,—**सेवा**–(स्त्री०) चरणगत होना । पाँव दबाना, पौंचप्पी । सेवा ।

चरम—(वि०) [√चर्+अमच्] अन्तिम, आखिरी । पिछला । बूढ़ा, पुराना । बिल्कुल बाहरी । पश्चिमी । सब से नीचा या कम ।—**अचल** (**चरमाचल**),—**अद्रि** (**चरमाद्रि**),—**क्ष्माभृत्**–(पुं०) अस्ताचल पर्वत ।—**अवस्था** (**चरमावस्था**)–(स्त्री०) वृद्धावस्था, बुढ़ापा ।—**काल**–(पुं०) मृत्यु की घड़ी ।

चरि—(पुं०) [√चर्+इन्] पशु ।

चरित—(वि०) [√चर्+क्त] भ्रमण किया हुआ, घूमा हुआ । पूरा किया हुआ । अभ्यास किया हुआ । उपलब्ध किया हुआ । जाना हुआ । भेंट किया हुआ । (न०) गमन । मार्ग । अभ्यास । चाल-चलन, आचरण । जीवन-चरित; 'उत्तरं रामचरितं तत्प्रणीतं प्रयुज्यते' उत्त० १.२ । स्वयं लिखित जीवनी । (कथा) ।—**अर्थ** (**चरितार्थ**)–(वि०) सफल । सन्तुष्ट । पूरा किया हुआ ।

चरित्र—(न०) [√चर्+इत्र] आचरण, व्यवहार । चाल-चलन । कर्त्तव्य, कर्म-कलाप । शील, स्वभाव । सदाचार । जीवनी, वृत्त । पैर । गमन ।

चरिष्णु—(वि०) [√चर्+इष्णुच्] चलने-फिरने वाला, जंगम ।

चरु—(पुं०) [√चर्+उ] यज्ञ में आहुति देने के लिये पकाया हुआ अन्न, हव्यान्न । वह बरतन जिसमें चरु पकाया जाय । मेघ । यज्ञ ।—**व्रण**–(पुं०) एक तरह की पीठी या पकवान ।

√चर्च्—भ्वा० पर० सक० बोलना । हिंसा करना । ताड़ना करना । चर्चति, चर्चिष्यति, अचर्चीत् । तु० पर० सक० बोलना । झिड़कना । चर्चति, चर्चिष्यति, अचर्चीत् । चु० उभ० सक० पढ़ना । चर्चयति—ते, चर्चयिष्यति—ते, अचचर्चत्—त ।

चर्चन—(न०) [√चर्च्+ल्युट्] चर्चा । अध्ययन । पुनरावृत्ति । शरीर में उबटन या लेप करना ।

चर्चरिका, चर्चरी—(स्त्री०) [चर्चरी +कन्—टाप्, ह्रस्व] [√चर्च्+अरन्—ङीप्] चाँचर, फाग । रंगरलियाँ मनाना, हर्ष-क्रीड़ा । करतलध्वनि । ताल का एक भेद । एक वर्णवृत्त । एक तरह का ढोल । आमोद-प्रमोद । गाना-बजाना । अंग-भंग । नाटक में एक परदा गिरने के बाद और दूसरा उठने के पहले गाया जाने वाला गाना । चापलूसी । घुँघराले बाल । दो आदमियों का बारी-बारी कविता पाठ करना ।

चर्चा, चर्चिका—(स्त्री०) [√चर्च्+अङ—टाप्] [चर्चा+कन्—टाप, इत्व] पाठ । पुनरावृत्ति । अध्ययन । बार-बार पढ़ना । बहस । खोज, अनुसंधान । निदिध्यासन । शरीर में चन्दनादि का लेप; 'श्रीखण्डचर्चा विषम्' गीत० ६ ।

चर्चिक्य—(न०) [=चार्चिक्य पृषो० साधुः] शरीर में चन्दनादि लगाना । लेप । उबटन । अंगराग ।

चर्चित—(वि०) [√चर्च्+क्त] जिसकी चर्चा की गई हो । लेप किया हुआ; 'चन्दन-चर्चितनीलकलेवरपीतवसनवनमाली' गीत० १ । विचारित । अनुसन्धान किया हुआ ।

चर्पट—(पुं०) [√चृप्+अटन्] खुली या फैली हुई हथेली, चपेट, थप्पड़ ।

चर्पटी—(स्त्री०) [चर्पट+ङीष्] चपाती, रोटी ।

√चर्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना । चर्बति, चर्बिष्यति, अचर्बीत् ।

चर्भट—(पुं०) [√चर्+क्विप्, √भट्+अच्, ततः कर्म० स०] ककड़ी ।

चर्भटी—(स्त्री०) [चर्भट+ङीष्] आनन्द-कोलाहल, हर्षरव । चर्चा । गर्वोक्ति ।

चर्म—(न०) [चर्म साधनतया अस्ति अस्य, चर्मन्+अच्, टिलोप] ढाल ।

चर्मण्वती—(स्त्री०) [चर्मन्+मतुप्, मस्य वः, ङीप्] चंबल नदी । यह नदी इटावे के पास यमुना में गिरती है ।

चर्मन्—(न०) [√चर्+मनिन्] चाम, चमड़ा । स्पर्शेन्द्रिय । ढाल ।—**अम्भस्** (**चर्माम्भस्**)–(न०) चर्म-मध्य-स्थित रस जो खाये हुए पदार्थों से बनता है ।—**अव-कर्तन** (**चर्मावकर्तन**)–(न०) चमड़े का कारोबार ।—**अवकर्तिन्** (**चर्मावकर्तिन्**), —**अवकर्तृ** (**चर्मावकर्तृ**)–(पुं०) मोची, चमार ।—**कशा(षा)**–(स्त्री०)एक गंधद्रव्य, चमरखा ।—**कार** (**चर्मकार**),—**कारिन्** (**चर्मकारिन्**)–(पुं०) मोची, चमार ।—**कील** (**चर्मकील**)–(पुं०) बवासीर । एक रोग जिसमें देह में नुकीले मस्से निकल आते हैं।—**चित्रक** (**चर्मचित्रक**)–(न०) सफेद कोढ़ ।—**ज** (**चर्मज**)–(न०) बाल । रक्त ।—**तरङ्ग** (**चर्मतरङ्ग**)–(पुं०) झुर्री, शिकन ।—**दण्ड** (**चर्मदण्ड**)–(पुं०)—**दूषिका**—(स्त्री०) दाद । कुष्ठ ।—**नालिका** (**चमनालिका**)–(स्त्री०) कोड़ा, चाबुक । —**द्रुम** (**चर्मद्रुम**)— **वृक्ष** (**चर्मवृक्ष**)–

(पुं०) भोजपत्र का वृक्ष ।—पट्टिका। (चर्मपट्टिका)-(स्त्री०) पाँसे फेंकने का चमड़े का चौरस टुकड़ा ।—पत्रा (चर्मपत्रा)—(स्त्री०) चमगादड़ ।—पादुका (चर्मपादुका)-(स्त्री०) जूता ।—प्रभेदिका (चर्मप्रभेदिका)-(स्त्री०) चमार की राँपी । —प्रसेवक (चर्मप्रसेवक)-(पुं०)—प्रसेविका (चर्मप्रसेविका)-(स्त्री०) धौंकनी । —वन्ध (चर्मवन्ध)-(पुं०) चमड़े का तस्मा ।—मुण्डा (चर्ममुण्डा)-(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—यष्टि (चर्मयष्टि)-(स्त्री०) चाबुक ।—वसन (चर्मवसन)-(पुं०) शिवजी ।—वाद्य (चर्मवाद्य)-(न०) ढोल, ढोलक, तवला आदि ।—सम्भवा (चर्मसम्भवा)-(स्त्री०) वड़ी इलायची ।—सार (चर्मसार)-(पुं०) शरीर का स्वच्छ तरल पदार्थ या रस, लसीका ।

चर्ममय—(वि०) [चर्मन्+मयट्] चमड़े का ।

चर्मरु, चर्मार—(पुं०) [चर्मन्√रा+कु] [चर्मन्√ऋ+अण्] मोची, चमार ।

चर्मिक—(वि०) [चर्मन्+ठन्] ढालधारी ।

चर्मिन्—(वि०) [चर्मन्+इनि, टिलोप] ढालधारी । चमड़े का । (पुं०) ढालधारी सिपाही । केला । भूर्जपत्र का पेड़ ।

चर्य—(वि०) [√चर्+यत्] गमन करने योग्य (स्थानादि) । करने योग्य, आचरणीय ।

चर्या—(स्त्री०) [चर्य+टाप्] गति, चाल । चालचलन । व्यवहार । आचरण । अभ्यास । अनुष्ठान । निर्वाह । रक्षा । नियमित अनुष्ठान । भक्षण । रस्म, रीति ।

√चर्व्—भ्वा० पर० सक० चवाना । चूसना । चखना । चर्वति, चर्विष्यति, अचर्वीत् ।

चर्वण—(न०), चर्वणा-(स्त्री०) [√चर्व्+ल्युट्] [√चर्व् + युच्—टाप्] चवाना । चसकना । चखना ।

चर्वा—(स्त्री०) [√चर्व्+अङ—टाप्] थप्पड़ का प्रहार । चपत ।

चर्वित—(वि०) [√चर्व्+क्त] चवाया हुआ ।—चर्वण-(न०) चबाये हुए को चबाना । एक ही विषय की शब्दान्तर में पुनरुक्ति ।—पात्र-(न०) पीकदान ।

चर्व्य—(वि०) [√चर्व्+ण्यत्] चबाने के योग्य ।

√चल्—भ्वा० पर० अक० हिलना, काँपना, थर्राना । धड़कना । उथल-पुथल होना । चलति, चलिष्यति, अचालीत् ।

चल—(वि०) [√चल्+अच्] डोलता हुआ, काँपता हुआ । अस्थिर । निर्बल । नाशवान् । घवड़ाया हुआ । (पुं०) कँपकँपी । घवड़ाहट, विकलता । पवन । पारद, पारा । विष्णु ।—अचल (चलाचल)-(वि०) स्थावर-जंगम । चंचल; 'लक्ष्मीमिव चलाचलां' कि० ११.३० । नाशवान् । (पुं०) काक । —अर्थ (चलार्थ)-(पुं०) वह सिक्का या मुद्रा जिसका प्रयोग या व्यवहार निरंतर होता रहता हो, जो एक आदमी के हाथ से दूसरे के हाथ में जाता रहता हो (करेंसी) । —०पत्र-(न०)सिक्के की तरह व्यवहृत होने वाली कागज़ की मुद्रा (करेंसी नोट) ।—आतङ्क (चलातङ्क)—(पुं०) गठिया वातरोग ।—आत्मन् (चलात्मन्)-(वि०) चञ्चल ।—इन्द्रिय (चलेन्द्रिय)-(वि०) इन्द्रिय-सम्वन्धी । इन्द्रियसेव्य । सहज में परिवर्तनीय ।—इषु (चलेषु)-(पुं०) वह तीरंदाज जिसका तीर लक्ष्यच्युत हो जाय ।—कर्ण-(पुं०) किसी ग्रह का पृथिवी से ठीक-ठीक अन्तर । हाथी । (वि०) जिसके कान सदा हिलते रहें ।—चञ्चु-(पुं०) चकोर पक्षी ।—चित्त-(वि०) चञ्चल चित्त वाला । —दल, —पत्र-(पुं०) अश्वत्थ वृक्ष ।

चलन—(वि०) [√चल्+ल्यु] हिलने वाला, काँपने वाला। (पुं०) पैर। हरिण। (न०) [√चल्+ल्युट्] काँपना। गति। भ्रमण।

चलनक—(न०) [चलन+कन्] (नर्तकी आदि का) घाघरा। नीच जाति की स्त्रियों के पहिनने की कुर्ती।

चलनी—(स्त्री०) [√चल्+ल्युट्—ङीप्] घँघरी। स्त्रियों की कुर्ती। हाथी बाँधने का रस्सा।

चला—(स्त्री०) [चल+टाप्] लक्ष्मी। शिलारस नामक गंधद्रव्य। बिजली। चार चरण और अठारह अक्षरों वाला एक छन्द। पृथिवी। पिप्पली।

चलि—(पुं०) [√चल्+इन्] चादर, ओढ़नी।

चलित—(वि०) [√चल्+क्त] चला हुआ, हिला हुआ, आन्दोलित। गया हुआ, प्रस्थानित। प्राप्त। जाना हुआ, समझा हुआ। (न०) नृत्य-विशेष।

चलु—(पुं०) [√चल्+उन्] मुखभर जल।

चलुक—(पुं०) [चलु+कन्] कुल्ला करने को हथेली में लिया जल। अंजलिभर या मुँह-भर जल।

√चष्—भ्वा० उभ० सक० खाना। चषति-ते, चषिष्यति-ते, अचषीत्-अचाषीत्।

चषक—(पुं० न०) [√चष्+क्वुन्] मदिरा पीने का बरतन। (न०) मदिरा। शहद।

चषति—(स्त्री०) [√चष्+अति] भोजन। हत्या। निर्बलता। ह्रास। गलाव।

चषाल—(पुं०) [√चष्+आलच्] यज्ञीय-स्तम्भ के ऊपर लगाने को काठ का छल्ला। छत्ता।

√चह्—भ्वा० पर० सक० दुष्टता करना। छलना, धोखा देना। अक० अभिमान करना। चहति, चहिष्यति, अचहीत्।

चाकचक्य—(न०) [√चक्+अच् चकः, प्रकारे द्वित्वम् चकचकः, तस्य भावः, चक-चक+ष्यञ्] उज्ज्वलता। चमक-दमक। शोभा।

चाक्र—(वि०) [चक्र+अण्] चक्र-संबंधी। चक्राकार, गोल।

चाक्रिक—(पुं०) [चक्र+ठक्] कुमार। तेली। गाड़ीवान।

चाक्रिण—(पुं०) [चक्रिन्+अण्] कुम्हार या तेली का पुत्र।

चाक्षुष—(वि०) [चक्षुस्+अण्] नेत्र-सम्बन्धी। दृष्टिगोचर। (पुं०) छठे मनु।

चाङ्ग—(पुं०) [√चि+ड, चम् अङ्गं यस्य, ब० स०] अम्ललोणिका नामक खट्टा शाक। दाँतों की सफेदी या उनका सौन्दर्य।

चाञ्चल्य—(न०) [चञ्चल+ष्यञ्] अस्थिरता। चंचलता, विनश्वरता।

चाट—(पुं०) [√चट्+णिच्+अच्] ठग। (चाट ऐसे ठग को कहते हैं जो आरम्भ में अपनी ओर से उस मनुष्य के मन में पूर्ण विश्वास उत्पन्न कर लेता है, जिसे वह धोखा देना चाहता है।—'प्रतारकाः विश्वास्य ये परधनमपहरन्ति।'—मिताक्षरा।

चाटु—(न०), (पुं०) [√चट्+ञुण्] चापलूसी, खुशामद, ठकुर-सुहाती; 'प्रियः प्रियायाः प्रकरोति चाटुं' शृं० ६.१४। स्पष्ट कथन। —**उक्ति** (**चाटूक्ति**)-(स्त्री०) चापलूसी की बात।—**उल्लोल** (**चाटूल्लोल**),—**कार**-(वि०) चापलूस, खुशामदी।—**पटु**-(वि०) चापलूसी करने में निपुण। (पुं०) मसखरा, भाँड़, विदूषक।

चाणक्य—(पुं०) [चणक+यञ्] विष्णु-गुप्त या कौटिल्य भी चाणक्य का नाम था। इन्होंने नीतिविषयक एक उत्कृष्ट ग्रन्थ की रचना की।

चाणर—(पुं०) कंस का एक सेवक दैत्य, जिसे मल्लयुद्ध में श्रीकृष्ण ने पछाड़ा था।

चाण्डाल—(पुं०) [चण्डाल+अण्] अन्त्यज-वर्ग में सबसे नीची मानी गई जाति, डोम। निषाद। क्रूर, नीच कर्म करने वाला व्यक्ति।

चातक—(पुं०) [√चत्+ण्वुल्] एक पक्षी जो वर्षाजल में स्वाती की बूंद से बड़ा प्रसन्न होता है, पपीहा।—**आनन्दन** (**चातकानन्दन**)—(पुं०) वर्षाॠतु। बादल। [स्त्री०—**चातकी**]।

चातन—(न०) [√चत्+णिच्+ल्युट्] स्थानान्तरण। चोटिल करना।

चातुर—(वि०) [चतुर+अण्] चार संख्या-सम्बन्धी। [चतुर्+अण्] चतुर। चापलूस। दृश्य, दृष्टिगोचर। (न०) [चतुर+अण्] चार पहिये की गाड़ी।

चातुरक्ष—(न०) [चतुरक्ष+अण्] चौपड़ के या पासे के खेल में चार संख्या चिह्नित पासे का पड़ना, चार का दाँव आना। (पुं०) छोटा गोल तकिया।

चातुरर्थिक—(पुं०) [चतुरर्थ+ठक्—इक, वृद्धि] चार अर्थों में प्रयुक्त तद्धित प्रत्यय।

चातुराश्रमिक, चातुराश्रमिन्—(पुं०) [चतुराश्रम+ठक्] [चतुराश्रम+अण्+इनि] वह ब्राह्मण जो चार आश्रमों में से किसी एक आश्रम में हो।

चातुराश्रम्य—(न०) [चतुराश्रम+ष्यञ्] ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास नामक चार आश्रम।

चातुरिक—(पुं०) [चातुरीं वेत्ति, चातुरी+ठक्] सारथी, गाड़ीवान।

चातुरी—(स्त्री०) [चतुर+अण्—ङीप्] निपुणता, चतुराई, चतुरता; 'तद्भटचातुरी तुरी' नै० १.१२।

चातुर्थक, चातुर्थिक—(वि०) [चतुर्थ+अण्+कन्] [चतुर्थ+ठक्] चौथिया, चौथे दिन होने वाला। (पुं०) चौथिया बुखार।

चातुर्थाह्निक—(वि०) [चतुर्थमह्नः; समासान्त टच्, चतुर्थाह्ने भवः चतुर्थाह्न+ठक्] चौथे दिन का।

चातुर्दश—(न०) चतुर्दश्यां दृश्यते, चतुर्दशी+अण्] राक्षस।

चातुर्दशिक—(पुं०) [चतुर्दशी+ठक्] चतुर्दशी के दिन अनध्याय दिवस होता है। जो इस अनध्याय के दिवस अध्ययन करता है उसे चातुर्दशिक कहते हैं।

चातुर्मासिक—(वि०) [चतुरो मासान् व्याप्य ब्रह्मचर्यमस्य, चतुर्मास+ठक्] चार महीने में होने वाला (यज्ञकर्म आदि)। चातुर्मास्य यज्ञ करने वाला।

चातुर्मास्य—(न०) [चतुर्मास+ण्य] यज्ञ-विशेष जो प्रत्येक चार मास बाद अर्थात् कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ़ के आरम्भ में किया जाता है। चौमासा, आषाढ़ की पूर्णिमा या शुक्ला द्वादशी से कार्तिक की पूर्णिमा या शुक्ला द्वादशी तक का समय। इस काल में किया जाने वाला एक पौराणिक व्रत।

चातुर्य—(न०) [चतुर+ष्यञ्] निपुणता चतुराई। मनोहरता, सौन्दर्य।

चातुर्वर्ण्य—(न०) [चतुर्वर्ण+ष्यञ्] हिंदुओं की चार वर्ण की व्यवस्था; 'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः' भग०। इन चारों वर्णों के अनुष्ठेय कर्म।

चातुर्विध्य—(न०) [चतुर्विध+ष्यञ्] चार प्रकार, चार तरह।

चात्वाल—(पुं०) [√चत्+वालञ्] चौकोर अग्निकुण्ड। दर्भ, कुशा।

चान्दनिक—(त्रि०) [चन्दन+ठक्] चन्दन-संबंधी या चन्दन से उत्पन्न। चन्दन के तेल या लेप से सुवासित।

चान्द्र—(वि०) [चन्द्र+अण्] चन्द्रमा-सम्बन्धी। —**आलय** (**चान्द्रालय**)—(न०) अदरक। —**भागा**—(स्त्री०) चन्द्रभागा नदी। (पुं०) चन्द्रतिथियों से गणित मास। शुक्लपक्ष। चन्द्रकान्त मणि। (न०) चान्द्रायण व्रत।—

मास–(पुं०) महीना जिसकी गणना चन्द्र-तिथियों के अनुसार की जाती है।—**व्रतिक**–(पुं०) चान्द्रायण-व्रत-धारी।

चान्द्रक—(न०) [चान्द्र √कै+क] सोंठ।

चान्द्रमस—(वि०) [चन्द्रमस्+अण्] चन्द्रमा-सम्बन्धी। (न०) मृगशिरस् नक्षत्र।

चान्द्रमसायन, चान्द्रमसायनि—(पुं०) [चान्द्रमसायन पृषो० इकारस्य अकारः] [चन्द्रमस्+फिञ्] बुधग्रह।

चान्द्रायण—(पुं०) [चान्द्र√अय्+ल्युट्] महीने भर का एक व्रत।

चान्द्रायणिक—(वि०) [चान्द्रायण+ठञ्] चान्द्रायण-व्रत-धारी।

चाप—(न०) [चपस्य वंशविशेषस्य विकारः, चप+अण्] धनुष, कमान। इन्द्रधनुष। वृत्तांश। धनु राशि।

चापल, चापल्य—(न०) [चपल+अण्] [चपल+ष्यञ्] चपलता, चञ्चलता। फुर्तीलापन, अस्थिरता, नश्वरता। अविचारित कर्म, जल्दबाजी का काम, बेचैनी, विकलता।

चामर—(पुं०, न०) [चमरी+अण्] चँवर, चौरी।—**ग्राह,—ग्राहिन्**–(पुं०) चँवर डुलाने वाला, चँवरबरदार।—**ग्राहिणी**–(स्त्री०) दासी जो राजा के ऊपर चँवर डुलावे।—**पुष्प,—पुष्पक**–(पुं०) सुपाड़ी का पेड़। केतकी का पेड़। आम का पेड़।

चामरिन्—(पुं०) [चामर+इनि] घोड़ा।

चामीकर—(न०) [चमीकरे रत्नाकरविशेषे भवम्, चमीकर+अण्] सुवर्ण, सोना। धतूरा।—**प्रख्य**–(वि०) सुवर्ण जैसा।

चामुण्डा—(स्त्री०) [चमू √ला+क, पृषो० साधुः] दुर्गा देवी का एक भयानक रूप।

चाम्पिला—(स्त्री०) [√चम्प्+अङ, टाप् —चम्पा+अण्+इलच्] चंपा अथवा आधुनिक चंबल नदी।

चाम्पेय—(पुं०) [चम्पा+ढक्] चंपा वृक्ष। नागकेसर वृक्ष।—(न०) कमल नाल का सूत या रेशा। सुवर्ण। धतूरे का पौधा।

√चाय्—भ्वा० उभ० सक० पूजन करना। देखना। चायति-ते, चायिष्यति-ते, अचायीत्-अचायिष्ट।

चाय—(पुं०) [चय+अण्] समूह। संचय।

चार—(पुं०) [√चर्+घञ्] गमन, गति, चाल। अभ्यास, अनुष्ठान। वंदीगृह। बेड़ी, जंजीर। [चर+अण्] गुप्तचर, जासूस; 'चारैः पश्यन्ति राजानः' वा०। (न०) [√चर्+अण्] एक कृत्रिम विष —**अन्तरित** (**चारान्तरित**)–(पुं०) जासूस —**ईक्षण** (**चारेक्षण**),—**चक्षुस्**–(पुं०) राजा जो चरों के द्वारा देखता है।—**पथ**–(पुं०) चौराहा।—**भट**–(पुं०) वीर, योद्धा। —**वायु**–(पुं०) ग्रीष्म ऋतु में बहने वाला पवन, लू।

चारक—(पुं०) [√चर्+णिच्+ण्वुल्] चरवाहा। चालक। अश्वारोही, सवार। नायक, नेता। [चार+कन्] गुप्तचर। साथी। कारागार। हवालात; 'निगडितचरणा चारके निरोद्धव्या' दश०। बंधन। हथकड़ी। भ्रमणकारी ब्रह्मचारी।

चारचण, चारचुञ्चु—(वि०) [चार+चणप्] [चार+चुञ्चु] सुंदर चाल वाला।

चारण—(पुं०) [चारयति प्रचारयति नृत्यगीतादिविद्यां तज्जन्यकीर्तिं वा, √चर्+णिच्+ल्यु] घूमने-फिरने वाला नट या गायक, बंदीजन, भाट। गन्धर्व। पुराणपाठक। जासूस, भेदिया। भ्रमणकारी, पर्यटक।

चारिका—(स्त्री०) [√चर्+णिच्+ण्वुल् टाप्, इत्व] दासी, परिचारिका।

चारितार्थ्य—(न०) [चरितार्थ+ष्यञ्] उद्देश्य-सिद्धि। सफलता।

चारित्र, चारित्र्य—(न०) [चरित्र+अण् (स्वार्थे)] [चरित्र+ष्यञ् (स्वार्थे)] आचरण, चालचलन। सुकीर्त्ति, नामवरी।

सत्यता, साधुता । सतीत्व । शील, स्वभाव । कुलक्रमागत आचार, सदाचार ।—**कवच**–(वि०) सदाचार ही जिसका कवच हो ।

चारु—(वि०) [चरति चित्ते, √चर्+उण्] प्रिय । अनुकूल । प्रेमपात्र, माशूक । मनोहर, सुन्दर; 'सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते' ऋ० ६.२ । (न०) केसर । (पुं०) बृहस्पति ।—**अङ्गी** (**चार्वङ्गी**)–(स्त्री०) सुंदर अंगों वाली स्त्री । —**घोण**–(वि०) सुन्दर नासिका वाला । —**दर्शन**–(वि०) खूबसूरत, मनोहर ।—**धामा**, –**धारा**–(स्त्री०) इन्द्राणी, शची ।—**नेत्र**,–**लोचन**–(वि०) सुन्दर नेत्रों वाला । (पुं०) हिरन, मृग ।—**पर्णी**–(स्त्री०) प्रसारणी नामक पौधा ।—**फला**–(स्त्री०) अंगूर, द्राक्षा लता ।—**लोचना**–(स्त्री०) सुन्दर नेत्रों वाली स्त्री ।—**वक्त्र**–(वि०) खूबसूरत चेहरे वाला । —**वर्धना**–(स्त्री०) रमणी, सुन्दर स्त्री ।—**व्रता**–(स्त्री०) मास भर व्रत रखने वाली स्त्री ।—**शिला**–(स्त्री०) रत्न, जवाहर ।—**शील**–(वि०) अच्छे स्वभाव का ।—**हासिन्**–(वि०) मधुर हास करने वाला ।

चार्चिक्य—(न०) [चर्चिका+ष्यञ्] शरीर को सुवासित करना । शरीर में उबटन लगाना । उबटन ।

चार्म—(वि०) [चर्मन्+अण्, टिलोप] [स्त्री०—**चार्मी**] चमड़े का । चमड़े से ढका हुआ । ढालधारी ।

चार्मण—(वि०) [चर्मन्+अण्] [स्त्री०—**चार्मणी**] चर्म या चाम से ढका हुआ । (न०) चमड़ा या ढालों का समूह ।

चार्मिक—(वि०) [चर्मन्+ठक्] [स्त्री०—**चार्मिकी**] चमड़े का बना हुआ ।

चार्मिण—(न०) [चर्मिन्+अण्] ढालधारी मनुष्यों की टोली ।

चार्वाक—(पुं०) [चारुः आपातमनोरमः वाकः वाक्यं यस्य, पृषो० साधुः] इस नाम का एक व्यक्ति जो नास्तिक मत का आदि-प्रवर्तक, बृहस्पति का शिष्य बताया जाता है । महाभारत में उल्लिखित एक राक्षस जो दुर्योधन का मित्र और पाण्डवों का शत्रु था ।

चार्वी—(स्त्री०) [चारु+ङीप्] सुन्दरी स्त्री । चाँदनी । प्रतिभा । चमक । कुबेर की पत्नी का नाम ।

चाल—(पुं०) [√चल्+ण] घर का छप्पर या छाजन । नीलकण्ठ पक्षी । प्रकम्प । चर, जंगम ।

चालक—(वि०) [√चल्+णिच्+ण्वुल्] चलाने वाला । (पुं०) [√चल्+ण्वुल्] चञ्चल या बेचैन हाथी ।

चालन—(न०) [√चल्+णिच्+ल्युट्] चलाना । (पूंछ का) हिलाना या डुलाना । चलनी में रखकर छानना । छलनी ।

चालनी—(स्त्री०) [चालन+ङीप्]चलनी, छलनी ।

चाष, चास—(पुं०) [√चष्+णिच्+अच्] [चाष=पृषो० सत्व] नीलकण्ठ पक्षी ।

√चि—स्वा० उभ० सक० चयन करना, बटोरना । चिनोति—चिनुते, चेष्यति—ते, अचैषीत्—अचेष्ट । चु० उभ० सक० चयन करना । चपयति—ते, चययति—ते, चयति —ते, चपयिष्यति—ते, चययिष्यति—ते, चेष्यति—ते, अचीचपत्—त, अचीचयत्—त, अचैषीत्—अचेष्ट ।

चिकित्सक—(पुं०) [√कित्+सन्+ण्वुल्] वैद्य, हकीम ।

चिकित्सा—(स्त्री०) [√कित्+सन्+अ—टाप्] औषधोपचार, इलाज ।

चिकित्स्य—(वि०) [√कित्+सन्+यत्] साध्य रोगी, इलाज करने योग्य बीमार ।

चिकिन—(वि०) [नि नता नासिकास्य इति इनच्, चिकि आदेश] चपटी नाक वाला ।

चिकिल—(पुं०) [√चि+इलच्, कुक्] कीचड़, पंक ।

चिकीर्षा--(स्त्री०) [√कृ+सन्+अ--टाप्] करने की इच्छा। अभिलाषा, कामना।

चिकीर्षित--(वि०) [√कृ+सन्+क्त] जिसे करने की इच्छा की गई हो। अभिलषित। (न०) अभिप्राय, प्रयोजन, मतलब।

चिकीर्षु--(वि०) [√कृ+सन्+उ] करने की इच्छा रखने वाला। अभिलाषी, इच्छुक।

चिकुर--(वि०) [चि इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, चि√कुर्+क] चञ्चल, अस्थिर। काँपने वाला। अविचारी। दुस्साहसी। (पुं०) सिर के केश; 'मम रुचिरे चिकुरे कुरु मानद' गीत० १२। पर्वत। सर्प या रेंगने वाला कोई भी जीव।—**उच्चय** (**चिकुरोच्चय**)—**कलाप**,—**निकर**,—**पक्ष**,—**पाश**,—**भार**,——**हस्त**-(पुं०) बालों की चोटी या जूड़ा।

चिकूर--(पुं०) [चिकुर नि० दीर्घ] केश, बाल।

√चिक्क्--चु० उभ० सक० कष्ट देना। चिक्कयति--ते, चिक्कयिष्यति--ते, अचिचिक्कत्--त।

चिक्क--(पुं०) [चिक् इति अव्यक्तशब्देन कायति शब्दायते, चिक् √कै+क] छछूंदर।

चिक्कण--(वि०) [चित्यते ज्ञायते √चित्+क्विप्, चित्√कण्+क] चिकना। चमकीला। फिसलाहट वाला। कोमल, स्निग्ध। तैलाक्त। (पुं०) सुपारी का वृक्ष। (न०) सुपारी फल।

चिक्कस--(पुं०) [चिक्क्+असच्] जौ का आटा। तेल और हल्दी मिला हुआ जौ का आटा जो वर और कन्या को उबटन की तरह मला जाता है।

चिक्का--(स्त्री०) [√चिक्क्+अच्--टाप्] सुपारी। चुहिया।

चिक्किर--(न०) [√चिक्क्+इरन्] चूहा, गिलहरी।

चिक्लिद--(न०) [√क्लिद्+यङ--लुक्+अच्] नमी, तरी। ताजगी, टटकापन।

चिच्चिड--(न०) कुम्हड़ा या कद्दू।

चिच्छिल--(पुं०) एक देश और उसका निवासी।

चिञ्चा--(स्त्री०) [चिम् इति अव्यक्तशब्दं चिनोति, चिम्√चि+ड] इमली का पेड़। इमली, घुंघुची का पौधा।

√चिट्--भ्वा० पर० सक० भेजना। चेटति, चेटिष्यति, अचेटीत्।

√चित्--पहचानना। भ्वा० पर० सक० जानना, पहचानना। चेतति, चेतिष्यति, अचेतीत्। चु० आत्म० अक० सचेत होना, होश में आना। चेतयते, चेतयिष्यते, अचीचितत।

चित्--(स्त्री०) [√चित्+क्विप्] विवेक। ज्ञान। बुद्धि। प्रतिभा। हृदय। मन। जीवात्मा। ब्रह्म।—**आत्मन्** (**चिदात्मन्**) (पुं०) चैतन्य-स्वरूप परब्रह्म।—**आनन्द** (**चिदानन्द**)-(पुं०) चैतन्य और आनन्दमय परब्रह्म।—**आभास** (**चिदाभास**)-(पुं०) जीव।—**उल्लास**(**चिदुल्लास**)-(पुं०)जीवात्माओं के मन की प्रसन्नता। चैतन्य का स्फुरण।—**घन** (**चिद्घन**)-(पुं०) परमात्मा या ब्रह्म।—**प्रवृत्ति**-(स्त्री०) चैतन्य की प्रवृत्ति, ज्ञान का प्रवाह या झुकाव।—**शक्ति** (स्त्री०) बोध-शक्ति।—**स्वरूप**-(न०) परमात्मा।

चित--(वि०) [√चि+क्त] एकत्र किया हुआ, ढेर लगाया हुआ। प्राप्त, उपलब्ध। जड़ा हुआ, बैठाया हुआ। (न०) भवन, इमारत।

चिता--(स्त्री०) [चित्+टाप्] शव जलाने के लिये तर-ऊपर रखा हुआ काष्ठ का ढेर।—**चूडक**-(न०) चिता।

चिति--(स्त्री०) [√चि+क्तिन्] एकत्रीकरण। ढेर। तह, पर्त। चिता। बुद्धि।

चितिका—(स्त्री०) [चिता+कन्—टाप्, इत्व] चिता। [चिति+कन्—टाप्] टाल, गोला, गंज। [चिति√कै+क—टाप्] करधनी।

चित्त—(वि०) [√चित्+क्त] देखा हुआ। पहिचाना हुआ। विचारित, मनन किया हुआ। निर्धारित। इच्छित। (न०) विचार। मनोयोग। इच्छा। उद्देश्य। मन। हृदय। युक्ति। प्रतिभा। विचारशक्ति।—**अनुवर्तिन्** (**चित्तानुवर्तिन्**)-(वि०) मन का अनुसरण करने वाला।—**अपहारक** (**चित्तापहारक**),—**अपहारिन्** (**चित्तापहारिन्**)-(वि०) आकर्षक, मन चुराने वाला।—**आभोग** (**चित्ताभोग**)-(पुं०) किसी वस्तु के प्रति अनन्य अनुराग।—**आसङ्ग** (**चित्तासङ्ग**)-(पुं०) अनुराग, प्रेम।—**उद्रेक** (**चित्तोद्रेक**)-(पुं०) अभिमान, अहङ्कार।—**ऐक्य** (**चित्तैक्य**)-(वि०) मतैक्य, एकदिली।—**उन्नति** (**चित्तोन्नति**),—**समुन्नति**-(स्त्री०) उदारता, उच्चाशयता। अहङ्कार, अभिमान।—**चारिन्**-(वि०) दूसरे के इच्छानुसार चलने वाला।—**ज**,—**जन्मन्**,—**भू**, —**योनि** (पुं०) प्रेम, अनुराग। कामदेव; 'चित्तयोनिरभवत् पुनर्नवः' र० १९.४६।—**ज्ञ**-(वि०) दूसरे के मन की बात जानने वाला।—**नाश**-(पुं०) विवेकहीनता।—**निर्वृति**-(स्त्री०) सन्तोष। प्रसन्नता।—**प्रशम**-(वि०) शान्त। स्वस्थ।—**प्रशम**-(पुं०) मन की शान्ति।—**प्रसन्नता**-(स्त्री०) हर्ष।—**प्रसादन**-(न०) योगदर्शन में वर्णित चित्त का एक संस्कार जिससे चित्त की प्रसन्नता प्राप्त होती है।—**भूमि**-(स्त्री०) चित्त की अवस्था। इन पाँच में से चित्त की कोई अवस्था—क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध (योग)। समाधि की इन चार भूमियों में से कोई—मधुमती, मधुप्रतीका, विशोका और ऋतंभरा।—**भेद**-(पुं०) मत-अनैक्य। असङ्गति।—**मोह**-(पुं०) चित्त-विभ्रम।—**विकार**-(पुं०) विचार या भावना का परिवर्तन।—**विक्षेप**-(पुं०) चित्त की अस्थिरता, अनेक विषयों में भटकते रहना।—**विप्लव**,—**विभ्रम**-(पुं०) विक्षिप्तता, पागलपन।—**विश्लेष**-(पुं०) मैत्रीभङ्ग।—**वृत्ति**-(स्त्री०) प्रवृत्ति, झुकाव; 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' योग०। आन्तरिक अभिप्राय। उमङ्ग।—०**निरोध**—(पुं०) चित्त को बाह्य विषयों से हटाकर अन्तर्मुख करना।—**वेदना**-(स्त्री०) कष्ट। विपत्ति। चिन्ता।—**वैकल्य**-(न०) मन की बेचैनी। बावलापन, सिड़ीपन।—**हारिन्**-(वि०) मनोहर। आकर्षक। मनोमुग्धकारी। प्रिय।

चित्तवत्—(वि०) [चित्त+मतुप्, वत्व] युक्तियुक्त, सहेतुक। दयालु-हृदय। मनभावन। सर्वप्रिय।

चित्य—(पुं०) [√चि+क्यप्] अग्नि। (वि०) चुनने योग्य, चयनीय। (न०) श्मशान।

चित्या—(स्त्री०) [चित्य—टाप्] चिता।

√चित्र्—चु० पर० सक० मूर्ति आदि लिखना। देखना। अक० आश्चर्य होना। चित्रयति, चित्रयिष्यति, अचिचित्रत्।

चित्र—(वि०) [√चि+क्त्र अथवा √चित्र्+अच्] चमकीला। रंग-विरंगा। रुचिकर। भिन्न-भिन्न, तरह-तरह का। आश्चर्यकारी, अद्भुत। (न०) कागज, कपड़े आदि पर बनाई हुई वस्तु की प्रतिमूर्ति, तसवीर। आलेख्य। साम्प्रदायिक तिलक। शब्दचित्र। चित्रकाव्य। निम्न श्रेणी का काव्य। चमकीला आभूषण। आकाश। धब्बा। श्वेत कुष्ठ। आश्चर्य। (पुं०) कई प्रकार के रंग के समूह का एक रंग, चितकबरा रंग। अशोक वृक्ष। चित्रक वृक्ष। एरंड वृक्ष। चित्रगुप्त। (अव्य०) आह। ओह। कैसा आश्चर्य;

'किमत्र चित्रं यत्सन्तः परानुग्रहकाङ्क्षिणः' सुभा।०—**अक्षी (चित्राक्षी)**,—**नेत्रा**,—**लोचना**—(स्त्री०) सारिका, मैना पक्षी।—**अङ्ग (चित्राङ्ग)**—(वि०) धारियोंदार। धव्वेदार। (न०) सेंदुर। इंगुर।—**अर्पित (चित्रार्पित)**—(वि०) चित्रित।—**आकृति (चित्राकृति)**—(स्त्री०) हाथ की वनी तसवीर।—**आयस (चित्रायस)**—(न०) इस्पात लोहा।—**आरम्भ (चित्रारम्भ)**—(पुं०) तसवीर का खाका।—**उक्ति (चित्रोक्ति)**—(स्त्री०) आकाशवाणी। आश्चर्यप्रद कहानी।—**ओदन (चित्रौदन)**—(पुं०) पीला भात।—**कण्ठ**—(पुं०) कबूतर, परेवा।—**कवल**—(पुं०) रंग-विरंगी हाथी की झूल। रंगबिरंगा गलीचा।—**कर**—(पुं०) चित्रकार। नाटक का पात्र।—**कर्मन्**—(न०) अस्त्रधारण कार्य। शृङ्गार, सजावट। तसवीर। जादू। चितेरा। जादूगर।—**काम**—(पुं०)चीता, बाघ।—**कार**—(पुं०) चितेरा। सङ्कर वर्ण-विशेष।—"स्थपतेरपि गान्धिक्यां चित्रकारो व्यजायत" पराशर।—**कूट**—(पुं०) तीर्थक्षेत्र विशेष जो बाँदा जिले (बुन्देलखण्ड) में है।—**कृत्**—(पुं०) चितेरा।—**क्रिया**—(स्त्री०) चित्रणकला।—**ग**,—**गत**—(वि०) चित्रित।—**गन्ध**—(न०) हरताल।—**गुप्त**—(पुं०) यमराज के पेशकार जो जीवधारियों के पाप-पुण्यों का लेखा रखते हैं। कायस्थों के कुलदेवता।—**घण्टा**—(स्त्री०) एक देवी जिनकी गणना नौ दुर्गाओं में है।—**जल्प**—(पुं०) नाना विषयों पर अस्त-व्यस्त विचार।—**तण्डुल**—(न०) वायविडंग।—**त्वच्**—(पुं०) भोजपत्र।—**दण्डक**—(पुं०) कपास का पौधा।—**न्यस्त**—(वि०) चित्रित।—**पक्ष**—(पुं०) तीतर विशेष।—**पट**,—**पट्ट**—(पुं०) चित्र। रंगीन और खानेदार कपड़ा। वह कपड़ा, चमड़ा या कागज जिस पर चित्र बनाया जाय, चित्राधार।—**पत्रिका**—(स्त्री०) कपित्थपर्णी। द्रोणपुष्पी।—**पत्री**—(स्त्री०) जलपिप्पली।—**पथा**—(स्त्री०) प्रभास तीर्थ के अंतर्गत एक छोटी नदी।—**पद**—(वि०) अनेक भागों में विभक्त। अच्छे या सुन्दर भावों से भरा हुआ।—**पादा**—(स्त्री०) मैना पक्षी।—**पिच्छक**—(पुं०) मोर।—**पुङ्ख**—(पुं०) एक प्रकार का तीर।—**पृष्ठ**—(पुं०) गौरैया पक्षी।—**फलक**—(न०) तख्ता या जिस पर रखकर चित्र खींचा जाय।—**फला**—(स्त्री०) लिंगिनी लता। एक मछली।—**बर्ह**—(पुं०)मयूर।—**भानु**—(पुं०) आग। सूर्य। भैरव। मदार का पौधा।—**भेषजा**—(स्त्री०) काकोदुंबरिका, कठगूलर।—**मण्डप**—(पुं०) अर्जुन की पत्नी चित्रांगदा के पिता। अश्विनीकुमार।—**मण्डल**—(पुं०) सर्प विशेष।—**मृग**—(पुं०) चीतल हिरन।—**मेखल**—(पुं०)मयूर।—**योग**—(पुं०) बूढ़े को जवान, जवान को बूढ़ा बना देने की विद्या। ६४ कलाओं में से एक।—**योधिन्**—(पुं०) अर्जुन का नाम।—**रथ**—(पुं०) सूर्य। गन्धर्वों के एक सरदार का नाम। मुनि नाम्नी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न कश्यप ऋषि के सोलह पुत्रों में से एक का नाम।—**रश्मि**—(पुं०) ४९ मरुतों में से एक।—**रेफ**—(पुं०) एक वर्ष या भूखंड।—**ल**—(वि०) चितकबरा।—**लता**—(स्त्री०) मजीठ।—**लिखित**—(वि०) चित्रित। गतिहीन। मूक।—**लिपि**—(स्त्री०) वह लिपि जिसमें अक्षरों की जगह सांकेतिक चित्र काम में लाये जायँ।—**लेखा**—(स्त्री०) उषा की एक सहेली का नाम।—**लेखक**—(पुं०)चितेरा।—**लेखनिका**—(स्त्री०) चितेरे की कूंची। तूलिका।—**विचित्र**—(वि०) रंगबिरंगा।—**विद्या**—(स्त्री०) चित्रकला।—**शाला**—(स्त्री०) चितेरे का कार्यालय।—**शिखण्डिन्**—(पुं०) सप्तर्षियों की उपाधि।—**संस्थ**—(वि०) चित्रित।—

हस्त-(पुं०) युद्ध के समय हाथ की एक विशिष्ट स्थिति ।

चित्रक—(न०) [चित्र+कन्] माथे का साम्प्रदायिक चिह्न, स्वरूप तिलक । (पुं०) [चित्र√कै+क] चित्रकार, चितेरा । चीता । रेंड़ों का पेड़ । चीता नामक क्षुप । चिरायता ।

चित्रा—(स्त्री०) [√चित्र्+अच्—टाप्] चौदहवाँ नक्षत्र; 'हिमनिर्मुक्तयोर्योगे चित्राचन्द्रमसोरिव' र० १.४६ । चितकबरी गाय । ककड़ी । खीरा । मजीठ । बायविडंग । मूषिकपर्णी । एक अप्सरा । एक रागिनी । एक मूर्च्छना । एक सर्प । सुभद्रा ।—**अटीर** (**चित्राटीर**)-[चित्रा √अट्+ईरच्],—**ईश** (**चित्रेश**) -(पुं०) चन्द्रमा ।

चित्रिक—(पुं०) [चैत्र+क, पृषो० साधुः] चैत्र मास ।

चित्रिणी—(स्त्री०) [चित्र+इनि—ङीप्] चार प्रकार की (अर्थात् पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी और हस्तिनी अथवा करिणी) स्त्रियों में से एक । रतिमञ्जरीकार ने चित्रिणी के लक्षण यह लिखे हैं:—'भवति रतिरसज्ञा नातिखर्वा न दीर्घा, तिलकुसुमसुनासा स्निग्धनीलोत्पलाक्षी । घनकठिनकुचाढ्या सुन्दरी बद्धशाला, सकलगुणविचित्रा चित्रिणी चित्रवक्त्रा' ।

चित्रित—(वि०) [√चित्र्+क्त] रंगविरंगा । धब्बेदार । रँगा हुआ ।

चित्रिन्—(वि०) [√चित्र्+णिनि] आश्चर्यजनक । [चित्र+इनि] चित्रयुक्त । रंगविरंगा । उजले काले बालों वाला ।

√चिन्त्—चु० पर० सक० सोचना, विचारना । ध्यान देना, ख्याल करना । स्मरण करना, याद करना । ढूँढ़ निकालना, खोज निकालना । सम्मान करना । तोलना । अच्छेबुरे का विचार करना । बहस करना । चिन्तयति, चिन्तयिष्यति, अचिचिन्तत्; चिन्तति, चिन्तिष्यति, अचिन्तीत् ।

चिन्तन—(न०), **चिन्तना**—(स्त्री०) [√चिन्त्+ल्युट्] [√चिन्त्+णिच्+युच्] सोचना-विचारना । सोच-विचार में पड़ जाना ।

चिन्तनीय—(वि०) [√चिन्त्+अनीयर्] विचारने के योग्य । शोचनीय ।

चिन्ता—(स्त्री०) [√चिन्त्+णिच्+अङ—टाप्] चिंतन । फिक्र, सोच । दुःखदायी विचार; 'चिन्ताजडं दर्शनम्' श० ४.५ ।—**आकुल** (**चिन्ताकुल**)-(वि०) चिन्ता से विकल, उद्विग्न ।—**कर्मन्**-(न०) सोच-फिक्र ।—**पर**-(वि०) चिंता, सोच में डूबा हुआ ।—**मणि**-(पुं०) विचारते ही अभिलषित वस्तु को देने वाला रत्न विशेष ।—**वेश्मन्**-(न०) विचार-भवन, मंत्रणागृह ।—**शील**-(वि०) जिसे सोच-विचार की आदत हो, मननशील, मनीषी ।

चिन्तिडी—(स्त्री०) [=तिन्तिडी, पृषो० तस्य चत्वम्] इमली का पेड़ ।

चिन्तित—(वि०) [√चिन्त्+क्त] चिंतायुक्त, सोच में पड़ा हुआ । विचारा हुआ ।

चिन्तिति, चिन्तिया—(स्त्री०) [√चिन्त्+क्तिन्] [चिन्ता+घ] सोच । विचार । ख्याल ।

चिन्त्य—(वि०) [√चिन्त्+यत्] सोचने योग्य, विचारने लायक । ढूँढ़ने लायक, पता लगाने योग्य । सन्दिग्ध, विचारने योग्य ।

चिन्मय—(वि०) [चित्+मयट्] शुद्धज्ञानमय, ज्ञानस्वरूप । (न०) विशुद्ध ज्ञान । परब्रह्म ।

चिपट—(वि०) [नि नता नासिका विद्यतेऽस्य, नि+पटच्, चिआदेश] चपटी नाक का । (पुं०) [√चि+पटच्] चावल या अनाज जो चपटा किया गया हो, चिड़वा, चिउड़ा ।

चिपिट—(पुं०) [नि+पिटच्, चि आदेश] दे० 'चिपट' । [√चि+पिटच्] दे० 'चिपट' ।

—ग्रीव–(वि०) छोटी गरदन वाला ।—नास,—नासिक–(वि०) चपटी नाक वाला ।

चिपिटक, चिपुट—(न०) [चिपिट+कन्] [=चिपिट पृषो० साधुः] चिड़वा, चिउरा ।

चिबुक, चिबुक—(न०) [√चीव् (व्) +उ, पृषो० ह्रस्व, चिवु(बु)+कन्] ठुड्डी, ठोड़ी ।

चिमि—(पुं०) [चिनोति मनुष्यवत् वाक्यानि, √चि+मिक् (वा०)] तोता ।

चिर—(वि०) [√चि+रक्] दीर्घ । दीर्घ-काल-व्यापी, वहुत दिनों का पुराना । (न०) दीर्घकाल, वहुत समय; 'चिरात्सुतस्पर्शरसज्ञतां ययौ' र० ३.२६ । (अव्य०) वहुत दिन । वहुत दिनों तक । सदा ।—**आयुस्** (**चिरायुस्**)-(वि०) वहुत दिनों का या बड़ी उम्र का । (पुं०) देवता ।—**आरोध** (**चिरारोध**) –(पुं०) वहुत दिनों से डाला हुआ घेरा ।—**उत्थ** (**चिरोत्थ**)–(वि०) दीर्घ-काल-व्यापी ।—**कार**, —**कारिक**,—**कारिन्**, —**क्रिय**–(वि०) धीरे-धीरे कार्य करने वाला, दीर्घसूत्री ।—**काल**–(पुं०) दीर्घकाल ।—**कालिक**,—**कालीन**–(वि०) वहुत दिनों का, पुराना ।—**जात**–(वि०) वहुत दिनों पूर्व उत्पन्न ।—**जीविन्**–(वि०) दीर्घ-जीवी । चिरजीवियों में सात की गणना है । यथा—अश्वत्थामा वलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः । कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ।—**पाकिन्**–(वि०) देर में पकने वाला ।—**पुष्प**–(पुं०) वकुल वृक्ष ।—**मित्र**–(न०) पुराना दोस्त ।—**मेहिन्**–(पुं०) गधा, रासभ ।—**रात्र**–(न०) कई रात्रियों की अवधि का काल । दीर्घकाल ।—**विप्रोषित**–(वि०) दीर्घकाल से निर्वासित । दीर्घकालीन प्रवासी ।—**सूता**,—**सूतिका**–(स्त्री०) वह गौ जिसके अनेक वछड़े उत्पन्न हुए हों ।—**सेवक**–(पुं०) पुराना नौकर ।—**स्थ**,—**स्थायिन्**,—**स्थित**–(वि०) टिकाऊ । वहुत दिनों तक चलने वाला ।

चिरञ्जीव—(वि०) [चिरम्√जीव्+अच्] दे० 'चिरजीविन्' । (पुं०) कामदेव की उपाधि ।

चिरण्टी, चिरिण्टी—(स्त्री०) [चिरेण अटति पितृगृहात्, चिर√अट्+अच् —ङीप्, पृषो० साधुः] [=चिरण्टी पृषो० साधुः] वह विवाहित अथवा अविवाहित स्त्री जो जवान होने पर भी दीर्घकाल तक अपने पिता के घर ही में रहे ।

चिरत्न—(वि०) [चिर+त्न (भवार्थे)] [स्त्री०—**चिरत्नी**] प्राचीनकालीन, वहुत पुरानी ।

चिरन्तन—(वि०) [चिरम्+ट्युल्, तुट्] प्राचीन, वहुत दिनों का; 'मुनिश्चिरन्तन-स्तावदभिन्यवीविशत्' शि० १.१५ ।

चिरस्य—(अव्य०) [चिरम् अस्यते, चिर √अस्+यत्, शक० पररूप] दीर्घकाल, वहुत समय ।

चिराय—(अव्य०) [चिर√अय्+अण्] दीर्घकाल ।—'चिराय नाम्नः प्रथमाभिधेयता' शि० १.४३ ।

चिरि—(पुं०) [चिनोति मनुष्यवत् वाक्यादिकम्, √चि+रिक्] तोता ।

चिरु—(पुं०)[√चि+रुक्] कंधे के जोड़ ।

चिर्भटी—(स्त्री०) [चिर√भट्+अच्—ङीप् पृषो० साधुः] ककड़ी ।

√चिल्—तु० पर० अक० वस्त्र धारण करना । चिलति, चेलिष्यति, अचेलीत् ।

चिलमिलिका, चिलमीलिका—(स्त्री०) [चिर√मिल् वा√मील्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] एक प्रकार की गुंज या सोने की सकड़ी । जुगनू । विजली ।

√चिल्ल्—भ्वा० पर० अक० ढीला पड़ जाना, शिथिल होना । चिल्लति, चिल्लिष्यति, अचिल्लीत् ।

चिल्ल—(पुं०), **चिल्ला**—(स्त्री०) [√चिल्ल्+अच्] [चिल्ल+टाप्] चील । (वि०) [क्लिन्ने चक्षुषी अस्य, क्लिन्न+ल, चिल् आदेश] कीचभरी आँखों वाला ।—**आभ** (**चिल्लाभ**) (पुं०) जेबकट, गिरहकट ।

चिल्लि—(पुं०) [√चिल्ल्+इन्] दोनों भौहों के मध्य का स्थान । चोल ।

चिल्लिका—(स्त्री०) [चिल्लि+कन्—टाप्] दे० 'चिल्लि' ।

चिल्ली—(स्त्री०) [√चिल्ल्+इन्—ङीष्] लोध का पेड़ । झींगुर । बथुआ साग ।

चिल्लीका—(स्त्री०) [चिल्ली+कन्—टाप्] दे० 'चिल्ली' ।

चिवि—(पुं०) [√चीव्+इन्, पृषो० साधुः] ठुड्डी, ठोड़ी ।

√चिह्न्—चु० उभ० सक० निशान लगाना । चिह्नयति-ते, चिह्नयिष्यति-ते, अचिचिह्नत्-त ।

चिह्न—(न०) [√चिह्न्+अच्] निशान, दाग । लक्षण; 'प्रसादचिह्नानि पुरःफलानि' र० २.२२ । निशानी, यादगार । ध्वजा । लकीर । प आदि को सूचक वस्तु । राशि । लक्ष्य ।—**कारिन्**—(पुं०) चिह्न बनाने वाला । घायल करने वाला । भयप्रद ।

चिह्नित—(वि०) [√चिह्न्+क्त] निशान किया हुआ । दागा हुआ । परिचित ।

चीत्कार—(पुं०) [चीत्√कृ+घञ्] हाथी की चिंघाड़ या गधे की रेंक ।

चीन—(पुं०) [√चि+नक्, दीर्घ] चीन-देश । हिरन विशेष । वस्त्र विशेष । (न०) झंडा, पताका । आँखों के कोयों के लिये पट्टी विशेष । सीमा । (पुं०) चीन का राजा या चीनदेशवासी ।—**अंशुक** (**चीनांशुक**), —**वासस्**—(न०) रेशमी वस्त्र; 'चीनांशुकैः कल्पितकेतुमालम्' कु० ७.३ ।—**कर्पूर**—(पुं०) कपूर विशेष ।—**ज**—(न०) इस्पात लोहा ।—**पिष्ट**—(न०) सिन्दूर । सीसा ।—**वङ्ग**—(न०) सीसा ।

चीनक—(पुं०) चेना नामक अन्न । चीना । कंगनी ।

चीनाक—(पुं०) [चीन√अक्+अण्] कपूर विशेष ।

√चीभ्—भ्वा० आत्म० अक० डींग मारना । चीभते, चीभिष्यते, अचीभिष्ट ।

चीर—(न०) [√चि+क्रन्, दीर्घ] चिथड़ा, धज्जी । छाल । वस्त्र । चौलड़ा मोती का हार । धारी । लकीर । खुदाई । नक्काशी । सीसा ।—**परिग्रह**, —**वासिन्**—(वि०) छाल को (वस्त्र के स्थान पर) पहिने हुए । चिथड़े पहिने हुए ।

चीरि—(स्त्री०) [√चि+क्रि, दीर्घ] आँख ढाँपने का घूंघट विशेष । गेंद बल्ले का खेल । भीतर पहिनने वाले कपड़े की संजाप या गोट ।

चीरिका, चीरुका—(स्त्री०) [चीरि√कै+क—टाप्] [=चीरिका, पृषो० साधुः] झींगुर । गेंद बल्ले का खेल ।

चीर्ण—(वि०) [√चर्+नक्, पृषो० इत्व] किया हुआ, कृत । अधीत । चीरा-फाड़ा हुआ । विभाजित । संपादित ।—**पर्ण**—(पुं०) खजूर । नीम ।

चीलिका—(स्त्री०) [ची√ला+क—टाप्, इत्व] झींगुर । गेंद बल्ले का खेल ।

√चीव्—भ्वा० उभ० सक० ग्रहण करना । ढाँकना । चीवति—ते, चीविष्यति—ते, अचीवीत्—अचीविष्ट । चु० उभ० अक० चमकना । चीवयति—ते, चीवयिष्यति—ते अचिचीवत्—त ।

चीवर—(न०) [√चि+ष्वरच्, नि० साधुः] वस्त्र; 'प्रक्षालितमेतन्मया चीवरखण्डं' मृ० ८ । कथड़ी, कंथा ।

चीवरिन्—(पुं०) [चीवर+इनि] बौद्ध या जैन भिक्षुक । भिक्षुक ।

√चुक्क्—चु० पर० सक० पीड़ा देना । चुक्कयति, चुक्कयिष्यति, अचुचुक्कत् ।

चुक्कार—(पुं०) [√चुक्क्+ अच्, चुक्क—आ√रा+क] सिंह की दहाड़ या गर्जन ।
चुक्र—(पुं०) [√चुक्+रक्, उत्व] चूक । चूका साग । अमलबेत । काँजी ।—**फल**—(न०) इमली का फल ।—**वास्तुक**—(न०) खट्टा साग विशेष, अमलोनी का साग ।
चुक्रा—(स्त्री०) [चुक्र+टाप्] अमलोनी का साग । इमली का पेड़ ।
चुक्रिमन्—(पुं०) [चुक्र+इमनिच्] खट्टापन ।
चुचुक, चुचूक—(न०) [चुचु इत्यव्यक्तशब्दं कायति, चुचु√कै+क] [=चुचुक पृषो० साधु] चूचा के ऊपर की घुंडी ।
चुञ्चु—(वि०) प्रख्यात, प्रसिद्ध । निपुण । (पुं०) छछूंदर । ब्राह्मण पुरुष और वैदेह स्त्री से उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति ।

√चुट्—चु० पर० सक० काटना । चुटति, चुटिष्यति, अचुटीत् । चु० पर० सक० काटना । चोटयति, चोटयिष्यति, अचूचुटत् ।
√चुट्ट्—चु० पर० अक० थोड़ा होना । चुट्टयति, चुट्टयिष्यति, अचुचुट्टत् ।
√चुण्ट्—चु० पर० सक० काटना । चुण्टयति, चुण्टयिष्यति, अचुचुण्टत् ।
चुण्टा, चुण्डा—(स्त्री०) [√चुण्ट्+अच्—टाप्][√चुण्ड्+अच्—टाप्]छोटा कुआँ । कुएँ के पास का हौज । छोटा तालाव ।
√चुण्ड्—भ्वा० पर० अक० थोड़ा होना । चुण्डति, चुण्डिष्यति, अचुण्डीत् ।
√चुत्—भ्वा० पर० अक० चूना, टपकना । चोतति, चोतिष्यति, अचोतीत् ।
चुत—(पुं०) [√चुत्+क] गुदाद्वार । भग, योनि ।
√चुद्—चु० पर० सक० भेजना । निर्देश करना । आगे फेंकना । आगे बढ़ाना । सुझाना, मन में डालना । प्रेरणा करना । उसकाना, भड़काना, सजीव करना । प्रवृत्त करना । पथ प्रदर्शन करना । प्रश्न करना । दवाना । प्रार्थना द्वारा दवाव डालना । उपस्थित करना, पेश करना । चोदयति, चोदयिष्यति, अचूचुदत् ।
चुन्दी—(स्त्री०) [√चुन्द्+अच् (नि०)—ङीष्] कुटनी ।
√चुप्—भ्वा० पर० अक० धीरे-धीरे चलना । रेंगना । चोपति, चोपिष्यति, अचोपीत् ।
चुबुक—(पुं०) [=चिबुक पृषो० साधु:] ठुड्डी ।
√चुम्ब्—भ्वा० पर० सक० चूमना । चुम्बति, चुम्बिष्यति, अचुम्बीत । चु० पर० सक० मारना । चुम्बयति, चुम्बयिष्यति, अचुचुम्बत् ।
चुम्ब—(पुं०), **चुम्बा**—(स्त्री०) [√चुम्ब्+घञ्] [√चुम्ब्+अ—टाप्] दे० 'चुम्बन' ।
चुम्बक—(पुं०) [√चुम्ब्+ण्वुल्] चूमा लेने वाला । लम्पट, रसिया । गुंडा । लेउड़ू पण्डित, पल्लवग्राही पण्डित । चुम्बक पत्थर, मकनातीसी पत्थर ।
चुम्बन—(न०) [√चुम्ब्+ल्युट्] चूमने की क्रिया, चूमा ।
√चुर्—चु० उभ० चुराना । चोरयति—ते, चोरयिष्यति—ते, अचूचुरत्—त ।
चुरा—(स्त्री०)[√चुर्+अ—टाप्] चोरी ।
चुरि, चुरी—(स्त्री०) [√चुर्+कि] [चुरि+ङीष्] छोटा कुआँ ।
√चुल्—चु० पर० अक० ऊँचा होना । चोलयति, चोलयिष्यति, अचूचुलत् ।
चुलुक—(पुं०) [√चुल्+उकक् (बा०)] गहरी कीचड़ । मुँहभर जल या अञ्जली, चुल्लू । छोटा बरतन ।
चुलुकिन्—(पुं०) [चुलुक+इनि] सूंस के आकार का एक मत्स्य ।

√चुलुम्प्—भ्वा० पर० अक० झूलना, इधर-उधर हिलना । चुलुम्पति, चुलुम्पिष्यति, अचुलुम्पीत् ।
चुलुम्प—(पुं०) [√चुलुम्प्+घञ्] बच्चों का लाड़-प्यार । लालन ।

चुलुम्पा—(स्त्री०) [चुलुम्प+टाप्] बकरी।

√चुल्ल्—भ्वा० पर० अक० खेलना, क्रीड़ा करना। प्रेमसूचक भाव प्रदर्शित करना। चुल्लति, चुल्लिष्यति, अचुल्लीत्।

चुल्लि—(स्त्री०) [√चुल्ल्+इन्] चूल्हा।

चूचुक, चूचूक—(न०) [√चूष्+उक, षकारस्य चकारः] [=चूचुक पृषो० साधुः] स्तनाग्रभाग, चूचों के ऊपर की घुंडी।

चूडक—(पुं०) [चूडा+कन्, ह्रस्व] कूप, कुआँ।

चूडा—(स्त्री०) [चोलयति, उन्नतो भवति, √चुल्+अङ, लस्य डः, दीर्घ (नि०)] चोटी, चुटिया, शिखा। चूडाकरण संस्कार। मुर्गा या मोर के सिर की कलँगी। सिर। चोटी, शिखर। अटारी, अटा। कूप। कलाई का आभूषण।—**करण,—कर्मन्**–(न०) मुण्डन संस्कार।—**पाश**–(पुं०) केश-समूह; 'चुडापाशे नवकुरवकं' मे० ६५।—**मणि**–(पुं०),—**रत्न**–(न०) सीसफल या सीस में धारण करने के लिये मणि-जटित आभूषण विशेष। सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट।

चूडार, चूडाल—(वि०)—[चूडा√ऋ+अण्] [चूडा+लच्] चोटीदार, कलँगी-दार। (न०) सिर।

चूत—(पुं०) [√चूष्+क्त, पृषो० साधुः] आम्रवृक्ष, आम का पेड़। (न०) [=चुत पृषो० साधुः] भग, योनि।

√चूर्ण्—चु० पर० सक० कूट कर या पीस कर आटा कर डालना। कूटना, कुचरना। चूर्णयति, चूर्णयिष्यति, अचुचूर्णत्।

चूर्ण—(पुं०, न०) [√चूर्ण्+घञ् वा अप्] चूर्ण। आटा। धूल। घिसा हुआ चंदन। खुशबूदार चूर्ण। (पुं०) खड़िया। चूना।—**कार**–(पुं०) चूना फूंकने वाला।—**कुन्तल**–(पुं०) घुँघराले वाल; समं केरल-कान्तानां चूर्णकुन्तल वल्लिभिः' वि० ४.२।—**खण्ड**–(न०) रोड़ा, कंकड़।—**पारद**–(पुं०) सिंदूर। शिंगरफ। लाल रंग।—**योग**–(पुं०) सुगन्धित चूर्ण।

चूर्णक—(पुं०) [चूर्ण+कन्] भुना और पिसा हुआ अनाज, सत्तू। (न०) सुगन्धयुक्त चूर्ण। सरल गद्यमय निबन्ध। यथा—'अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः।'—छन्दोमञ्जरी।

चूर्णन—(न०) [√चूर्ण्+ल्युट्] चूर्ण करना। चूर्ण।

चूर्णि, चूर्णी—(स्त्री०) [√चूर्ण्+इन्] [चूर्णि+ङीष्] चूर्ण। सौ कौड़ियों का योग या जोड़।

चूर्णिका—(स्त्री०) [चूर्ण+ठन्—टाप्] भुना और पिसा अनाज, सत्तू। गद्य रचना की एक शैली।

चूर्णित—(वि०) [√चूर्ण्+क्त] कूटा हुआ। पीसा हुआ। टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। नष्ट, ध्वस्त।

चूल—(पुं०) [√चुल्+क, पृषो० दीर्घ] बाल। चोटी।

चूला—(स्त्री०) [=चूडा, पृषो० डस्य लः] ऊपर के खण्ड का कमरा। चोटी, कलँगी। पुच्छल तारे की चोटी।

चूलिका—(स्त्री०) [√चुल्+ण्वुल्, पृषो० साधुः] मुर्गे की कलँगी। हाथी का कर्णमूल। नाटक में वह कथन जो पर्दे की आड़ से कहा जाता है। यथा—'अन्तर्जवनिकासंस्थैः सूचनार्थस्य चूलिका।'—साहित्यदर्पण।

√चूष्—भ्वा० पर० सक० चूसना। चूषति, चूषिष्यति, अचूषीत्।

चूषा—(स्त्री०) [√चूष्+क—टाप्] चूसना। हाथी का हौदा कसने का तस्मा, तंग, पेटी, कमरबंद।

चूष्य—(न०) [√चूष्+ण्यत्] कोई भोज्य पदार्थ जो चूसकर खाने योग्य हो; आम आदि।

√चृत्—तु० पर० सक० चोटिल करना, मार,

डालना । बाँध लेना । आपस में जोड़कर मिला देना । जलाना, प्रकाश करना । चृतति, चर्तिष्यति,, अचर्तीत् ।

चेकितान—(पुं०) [√कित्+यङ —लुक् +चानश्] शिवजी। एक यादव वंशी राजा जो महाभारत के युद्ध में पाण्डवों की ओर से लड़ा था । (वि०) अत्यन्त ज्ञानयुक्त, बहुत बड़ा ज्ञानी ।

चेट, चेड—(पुं०) [चिट्+अच्, पक्षे डत्वम्] दास । पति । उपपति । भाँड़ । शिश्न । एक प्रकार की मछली ।

चेटिका, चेडिका, चेटी, चेडी—(स्त्री०) [√चिट्+ण्वुल—टाप्, इत्व, पक्षे डत्वम्] [चेट+ङीष्, पक्षे डत्वम्] दासी, टहलनी ।

चेत्—(अव्य०) [√चित्+विच्] यदि, अगर । पक्षान्तर, दूसरी तौर पर । जहाँ संदेह न हो वहाँ भी संदेह कथन । कदाचित्, शायद ।

चेतन—(वि०) [√चित्+ल्युट्] । सजीव, जीवित, प्राणधारी; 'चेतनाचेतनेषु'। दृश्यमान, दृष्टिगोचर । (पुं०) जीवित-प्राणी । जीवात्मा, रूह । मन । परमात्मा ।

चेतना—(स्त्री०) [√चित्+युच्—टाप्] संज्ञा, बोध । समझ, धी । जीवन, सजीवता, ज्ञान । बुद्धि, विवेक ।

चेतस्—(न०) [√चित्+असुन्] विवेक । चित्त, मन, आत्मा । तर्कण -शक्ति, विचार-शक्ति ।—**जन्मन्** (**चेतोजन्मन्**), —**भव** (**चेतोभव**),—**भू** (**चेतोभू**)-(पुं०) प्रेम, अनुराग । कामदेव ।—**विकार** (**चेतोविकार**)-(पुं०) मन का विकार, क्रोध । मन की विकलता ।

चेतोमत्—(वि०) [चेतस्+मतुप्] जीवित, सजीव ।

चेदि—(पुं०) एक देश का नाम । उस देश के निवासी । वहाँ का राजा ।—**पति**,—**भूभृत्**, —**राज्**,—**राज**-(पुं०) शिशुपाल का नाम । यह दमघोष राजा का पुत्र था और श्रीकृष्ण के हाथ से युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में श्रीकृष्ण का अपमान करने के लिये मारा गया था ।

चेय—(वि०) [√चि+यत्] ढेर करने योग्य, जमा करने योग्य ।

√चेल्—भ्वा० पर० सक० चलना, जाना । अक० हिलना, काँपना । चेलति, चेलिष्यति, अचेलीत् ।

चेल—(न०) [चिल्यते आच्छाद्यते, √चिल् +घञ्] कपड़ा ।—**प्रक्षालक**-(पुं०) धोबी ।

चेलिका—(स्त्री०) [चेल+कन्—टाप्, इत्व] पट्ट वस्त्र । अँगिया, चोली ।

√चेष्ट्—भ्वा० आत्म० अक० सक० डोलना, घूमना । जीवन के चिह्न दिखाना, सजीव होने के लक्षण, प्रदर्शित करना । उद्योग करना । पूर्ण करना । आचरण करना । चेष्टते, चेष्टिष्यते, अचेष्टिष्ट ।

चेष्टक—(वि०) [√चेष्ट्+ण्वुल्] चेष्टा करने वाला । (पुं०) स्त्रीप्रसङ्ग का आसन या विधान विशेष, रतिबन्ध ।

चेष्टन—(न०) [चेष्ट्+ल्युट्] उद्योग, चेष्टा, प्रयत्न ।

चेष्टा—(स्त्री०) [√चेष्ट्+अङ —टाप्] यत्न, उद्योग । हावभाव । आचरण ।—**नाश**-(पुं०) मूर्च्छा। प्रलय ।—**निरूपण**-(न०) किसी व्यक्ति विशेष के आचरणों पर दृष्टि रखना ।—**बल**-(न०) ग्रह का स्थिति-विशेष में अधिक बलवान् हो जाना ।

चेष्टित—(वि०) [√चेष्ट्+क्त]चेष्टा किया हुआ, प्रयत्न किया हुआ ।

चैतन्य—(न०) [चेतन+ष्यञ्] चेतना, बोध । परमात्मा । प्रकृति ।

चैत्तिक—(वि०) [चित्त+ठक्] बुद्धि सम्बन्धी, मानसिक ।

चैत्य—(पुं०, न०) [चित्य+अण्] पत्थरों

का ढेर। स्मारक, कबर का पत्थर जिस पर मुर्दे के जीवनकाल आदि का परिचय रहता है। यज्ञमण्डप। मन्दिर, देवालय। धार्मिक अनुष्ठान करने का स्थान। बुद्ध या जैन मंदिर। गूलर का वृक्ष। पीपल। वेल का पेड़।—**तरु,—द्रुम,—वृक्ष**–(पुं०) किसी पवित्र स्थान पर जमा हुआ गूलर का पेड़। —**पाल**–(पुं०) किसी देवालय का पुजारी। —**मुख**–(पुं०) साधु का कमण्डलु।

चैत्र—(पुं०) [चित्रा+अण्] चैत मास। [√चि+ष्ट्रन्+अण्] बौद्ध भिक्षुक। (न०) मंदिर। मृत पुरुष का स्मारक।—**आवलि** (**चैत्रावलि**)–(स्त्री०) चैत्र की पूर्णमासी।—**सख**–(पुं०) कामदेव।

चैत्ररथ, चैत्ररथ्य—(न०) [चित्ररथेन गन्धर्वेण निवृत्तम्, चित्ररथ+अण्] [चैत्ररथ+ष्यञ्] (न०) कुबेर के बाग का नाम।

चैत्रि, चैत्रिक, चैत्रिन्—(पुं०) [चैत्री विद्यतेऽस्मिन्, चैत्री+इञ्] [चित्रानक्षत्रयुक्तपूर्णिमा विद्यतेऽस्मिन्, चैत्र+ठक्] [चित्रानक्षत्रयुक्तपूर्णिमा विद्यतेऽस्मिन्, चैत्र+इनि] चैत्र मास या चैत का महीना।

चैत्री—(स्त्री०) [चित्रा+अण्—ङीप्] चैत्र की पूर्णमासी।

चैद्य—(पुं० [चेदीनां जनपदानां राजा, चेदि+ष्यञ्] शिशुपाल।

चैल—(न०) [चेल+अण्] वस्त्र। कपड़े का टुकड़ा; 'चैलाजिनकुशोत्तरं' भग०।—**धाव**–(पुं०) धोबी।

चोक्ष—(वि०) [√चक्ष्+घञ्, पृषो० साधुः] साफ सुथरा, शुद्ध। ईमानदार, सच्चा। चतुर, निपुण। प्रिय। मनोहर। तेज।

चोच—(न०) [कोचति अवरुणद्धि आवृणोति वा, √कुच्—पृषो० साधुः] छाल, वकला। चर्म, खाल। नारियल।

चोटी—(स्त्री०) [√चुट्+अण्—ङीप्] लहँगा, साया आदि।

चोड—(पुं०) [चोडति, संवृणोति शरीरम् √चुड्+अच्] दुपट्टा, उपरना। कुरती। चोलदेश।

चोदना—(स्त्री०) [√चुद्+णिच्+युच्] प्रेरणा। उत्साह। उपदेश।—**गुड** (पुं०) गेंद, कंदुक।

चोदित—(वि०) [√चुद्+णिच्+क्त] भेजा हुआ। उत्तेजित। जीवन डाला हुआ। युक्ति या कारण प्रदर्शित करने के लिये पेश किया हुआ।

चोद्य—(न०) [√चुद्+ण्यत्] एतराज या प्रश्न करना। पूर्वपक्ष। आश्चर्य। (वि०) प्रेरणा करने योग्य।

चोर, चौर—(पुं०) [√चुर्+णिच्+अच्] [चुरा चौर्यं शीलमस्य, चुरा+ण] चोरी करने वाला, छिपकर दूसरे की चीज हथिया लेने वाला, तस्कर। (न०) एक गंधद्रव्य। चोरपुष्पी नामक क्षुप।

चोरिका, चौरिका—[चोर+ठन्—टाप्] [चोर+वुञ्] चोरी। चोर का धर्म।

चोरित—(वि०) [√चुर्+णिच्+क्त] चुराया हुआ।

चोरितक—(न०) [चोरित+कन्] छोटी चोरी। चुराई हुई कोई भी वस्तु।

चोल—(पुं०) [√चुल्+घञ्] अँगिया, चोली। चोला। मजीठ। वल्कल। कवच। आधुनिक तंजौर प्रान्त प्राचीन काल में चोल देश के नाम से प्रसिद्ध था। इस देश के अधिवासी।

चोलक—(पुं०) [चोल√कै+क] कवच। [चोल+कन्] अँगिया, चोली। छाल।

चोलकिन्—(पुं०) [चोलक+इनि] कवचधारी सैनिक। बाँस का कल्ला। नारंगी का पेड़। कलाई।

चोलण्डक, चोलोण्डुक—(पुं०) [चोलस्य अण्डुक इव, ष० त०, शक० पररूप] [चोलस्य

उण्डुक इव, ष० त०] पगड़ी, साफा। मुकुट।

चोली—(स्त्री०) [चोल+ङीप्] चोली, अँगिया।

चोष—(पुं०) [√चूष+घञ्] चोषण, चूसना। [√चि+ड, च—उप, कर्म स०] एक रोग जिसमें रोगी के बगल में बहुत तेज जलन होती है।

चौड, चौल—(वि०) [चूडा+अण् डलयोरभेदः] कलँगीदार। चूडा संबंधी। (न०) चूडाकरण संस्कार।

चौर्य—(न०) [चोर+ष्यञ्] चोरी, चोर का काम। छलछद्म। छिपाव।—**रत**–(न०) गुपचुप स्त्रीसम्भोग।—**वृत्ति**–(स्त्री०) चोरी की आदत। चोरी से जीविका चलाना।

च्यवन—(न०) [√च्यु+ल्युट्] गति, गतिशीलता। राहित्य, शून्यता, हीनता। मरण, नाश। बहाव। चुआव, टपकाव। (पुं०) एक ऋषि जिनके विषय में प्रसिद्ध है कि अश्विनीकुमारों ने उन्हें च्यवनप्राश खिला कर बूढ़े से जवान बना दिया।

√च्यु—भ्वा० आत्म० अक० गिरना। टपकना, चूना। फिसलना। डूबना। बाहर निकलना; 'स्वतश्च्युतं वह्निमिवाद्भिरम्बुदः' र० ३.५८। बह निकलना। अलग होना, रहित होना। च्यवते, च्योष्यते, अच्योष्ट। चु० पर० अक० हँसना। सक० सहना। च्यावयति।

√च्युत्—भ्वा० पर० सक० बहना। टपकना फिसलना। च्योतति, च्योतिष्यति, अच्योतीत्।

च्युत—(वि०) [√च्यु+क्त] चुआ, झड़ा हुआ, क्षरित। गिरा हुआ। फिसला हुआ। स्थानान्तरित। भटका हुआ, भूला हुआ।—**अधिकार** (**च्युताधिकार**)–(वि०) बर्खास्त, नौकरी से छुड़ाया हुआ।—**आत्मन्** (**च्युतात्मन्**)–(वि०) दुष्टात्मा।

च्युति—(स्त्री०) [√च्यु+क्तिन्] पतन। अलगाव। टपकना। अदृश्य होना। नष्ट होना। योनि, भग। मलद्वार, गुदा।

च्युप—(पुं०) [√च्यु+प, किच्च] मुख, चेहरा।

च्यूत—(पुं०) [=च्युत, पृषो० उकारस्य दीर्घः] आम का पेड़।

च्योत—(न०) [√च्युत्+घञ्] चूना, टपकना।

च्योत्न—(न०) [√च्यु+त्नण् (करणे)] बल, शक्ति। (वि०) [च्यु+त्नण् (कर्तरि)] दृढ़, मजबूत। जाने वाला। अण्डज। जिसका पुण्य क्षीण हो गया हो।

छ

छ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला के स्पर्श नामक भेद के अन्तर्गत चवर्ग का दूसरा वर्ण। यह व्यंजन है। इसके उच्चारण का स्थान तालु है। इसके उच्चारण में अघोष और महाप्राण नामक प्रयत्न लगते हैं। (पुं०) [√छो+ड वा क] छेदन। भाग, अंश, टुकड़ा। (वि०) स्वच्छ। छेदक। चञ्चल।

छग—(पुं०) [स्त्री०—**छगी**] [छम् यज्ञादौ छेदनं गच्छति, छ√गम्+ड] बकरा।

छगण—(पुं०) [छ√गण्+अप्] कंडा, सूखा गोबर।

छगल—(पुं०) [स्त्री०—**छगली**] [√छो +कल, गुगागम, ह्रस्व]बकरा। (न०)नीला कपड़ा।

छगलक—(पुं०) [छगल+कन्] बकरा।

छटा—(स्त्री०) [√छो+अटन्] समूह, समुदाय। प्रकाश की किरणों का समूह। चमक, कान्ति, दीप्ति; 'सटाच्छटाभिन्नघनेन' शि० १.४७। अविच्छिन्न पंक्ति। छवि। बिजली,—**आभा** (**छटाभा**)–(पुं०) (स्त्री०) बिजली विद्युत्।—**फल**–(पुं०) सुपाड़ी का वृक्ष।

छत्र—(न०) [छादयति अनेन आतपत्रादिकम् √छद्+णिच्+त्रन्, ह्रस्व] छाता,

छतरी ।—घर, धार–(पुं०) छाता तानकर (किसी के पीछे-पीछे) चलने वाला भृत्य । (पुं०) कुकुरमुत्ता ।—चक्र–(न०) ज्योतिष का एक चक्र जिससे शुभ-अशुभ फल जाने जा सकते हैं ।—धारण–(न०) छाता लेकर चलना । राजचिह्न छत्र (चँवर आदि) से भूषित होना ।—पति–(पुं०) सम्राट्, चक्रवर्ती । जम्बुद्वीप के एक प्राचीन राजा का नाम ।—भङ्ग–(पुं०) राज्यनाश । राजसिंहासन से च्युति । पारतन्त्र्य, परवशता । रजामंदी । वैधव्य ।

छत्रक—(पुं०) [छत्र√कै+क] मछरंग नाम की चिड़िया । ताल मखाने की जाति का एक वृक्ष । शिवमंदिर । (न०) [छत्र+कन्] छतरी । कुकुरमुत्ता । खुमी । शहद का छत्ता ।

छत्रा, छत्राक—(स्त्री०, पुं०) [√छद्+ष्ट्रन्] [छत्रा+कन्] कुकुरमुत्ता । धनिया । सोया ।

छत्रिक—(पुं०) [छत्र+ठन्] वह नौकर जो छाता तानकर चले ।

छत्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**छत्रिणी**] [छत्र+इनि] छाता रखने वाला या छाता ले जाने वाला । (पुं०) नाई, हज्जाम ।

छत्वर—(पुं०) [√छद्+ष्वरच्] घर । कुञ्ज, लतामण्डप ।

√छद्—चु० उभ० सक० ढकना । फैलना । छिपाना । ग्रसना । छादयति—ते ।

छद, छदन—(पुं०, न०) [√छद्+अच्] [√छद्+ल्युट्] आवरण, ढकने वाली चीज । खाल । छाल । गिलाफ, खोल । पत्ता । पंख ।—पत्र–(पुं०) भोजपत्र । तेजपत्ता ।

छदि, छदिस्—(स्त्री०, न०) [√छद्+कि] [√छद्+इस्] गाड़ी की छत । घर की छत या छावनी ।

छद्मन्—(न०) [√छद्+मनिन्] कपटवेश । व्याज, बहाना । ठगी, धोखेबाजी । बेईमानी । छाजन ।—तापस–(पुं०) पाखण्डी, धर्म की ओट में शिकार खेलने वाला ।—वेशिन्–(वि०) जो वेष बदले हो ।

छद्मिका—(स्त्री०) [छद्मन्+इनि+कन्–टाप्] गुडुच, गिलोय । मजीठ ।

छद्मिन्—(वि०) [छद्मन्+इनि] कपटी, दगाबाज । कपटवेशधारी ।

छनच्छन्—(अव्य०) [अव्यु० प्रा०] बनावटी आवाज । छनाछन या छनछनाहट की आवाज ।

√छन्द्—चु० पर० सक० प्रसन्न करना, खुश करना । प्रवृत्त करना । ढकना । अक० प्रसन्न होना । छन्दयति—छन्दति ।

छन्द—(पुं०) [√छन्द्+घञ्] इच्छा, कामना, अभिलाषा । वश में करना, काबू में करना । अभिप्राय, इरादा । विष, जहर ।

छन्दस्—(न०) [√छन्द्+असुन्] कामना, अभिलाषा । स्वेच्छाचार । उद्देश्य । अभिप्राय । चालाकी । धोखा । वेद; 'प्रणवश्छन्दसामिव' र० १.११ । वृत्त, पद्य । छन्दःशास्त्र ।—कृत (छन्दस्कृत)–(न०) वेद का कोई सा भाग ।—ग (छन्दोग)– सामवेद गाने वाला ब्राह्मण, सामवेदी ।—भङ्ग (छन्दोभङ्ग)–(पुं०) छंद में वर्ण, मात्रा आदि के नियम का पूर्ण पालन न होना ।

छन्न—(वि०) [√छद्+क्त] ढका हुआ । छिपा हुआ । रहस्यमय ।

√छम्—भ्वा० पर० सक० खाना । छमति, छमिष्यति, अछमीत् ।

छमण्ड—(पुं०) [छम्+अण्डन्] मातृपितृहीन बालक ।

√छर्द्—चु० उभ० सक० वमन करना, कै करना । छर्दयति—ते ।

छर्द—(पुं०), **छर्दन**–(न०), **छर्दि, छर्दिका, छर्दिस्**–(स्त्री०) [√छर्द्+घञ्] [√छर्द्+ल्युट्] [√छर्द्+इन्] [छर्दि+कन्–टाप्] [√छर्द्+इसि] वमन, कै ।

ल—(पुं०, न०) [√छो+कलच्, पृषो० साधुः] अपने असली रूप को छिपाना, यथार्थ का गोपन। दूसरे को ठगने, धोखा देने वाली बात। व्याज, वहाना। कपट। शठता, धर्तता। शत्रु पर युद्ध-नियम के विरुद्ध प्रहार करना। शास्त्रार्थ में प्रतिपक्षी के शब्दों या वाक्यों का उसके अभिप्राय से भिन्न अर्थ करना।

छलन—(न०), **छलना**—(स्त्री०) [√छल्+णिच्+ल्युट्] [√छल्+णिच्+युच्—टाप्] धोखा देना, ठगना।

छलिक—(न०) [छल+ठन्] नाटक या नृत्य का एक भेद।

छलिन्—(वि०) [छल+इनि] छल करने वाला, धोखेवाज।

छल्लि, छल्ली—(स्त्री०) [छदं छादयतां लाति, छद्√ला+कि] [छल्लि+ङीष्] छाल, वकला। लता विशेष। सन्तान, औलाद।

छवि—(स्त्री०) [√छो+क्विन्, नि० साधुः] चमड़ी की रंगत। सौन्दर्य। कान्ति, दमक। चमड़ा, चर्म।

छाग—(पुं०) [√छो+गन्] [स्त्री०—**छागी**] वकरा। मेषराशि। (न०) बकरी का दूध। (वि०) बकरा सम्बन्धी।—**भोजन**—(पुं०) भेड़िया।—**मुख**—(पुं०) कार्त्तिकेय।—**रथ**—**वाहन**—(पुं०) अग्निदेव।

छागण—(पुं०) [छगण+अण्] कंडों की आग।

छागल—(वि०) [छगल+अण्] [स्त्री०—**छागली**] बकरा सम्बन्धी। (पुं०) बकरा।

छात—(वि०) [√छो+क्त] छिन्न, कटा हुआ। दुबला, लटा हुआ।

छात्र—(पुं०) [छत्रं गुरोर्दोषावरणं शीलमस्य, छत्र+ण] शिष्य, विद्यार्थी। (न०) एक तरह की मधुमक्खी, सरघा। उस मक्खी द्वारा संचित मधु।—**गण्ड**—(पुं०) वह विद्यार्थी जिसे श्लोक का पहला चरण भर याद हो, मंद-बुद्धि शिष्य।—**दर्शन**—(न०) एक दिन रखे हुए दूध का ताजा मक्खन।—**व्यंसक**—(पुं०) कुन्दजहेन तालिवइल्म, दुष्ट या मंदवुद्धि छात्र।

छाद—(न०) [√छद्+णिच्+घञ्] छप्पर। छत।

छादन—(न०) [√छद्+णिच् +ल्युट्] पर्दा; 'विनिर्मितं छादनमज्ञतायाः'। छिपाव। पत्ता। वस्त्र।

छाद्मिक—(वि०) [छद्मन्+ठक्] छद्मवेशधारी, कपटी। (पुं०) ठग।

छान्दस—(वि०) [छन्दस्+अण्] वैदिक। वेदाधीत। पद्यमय। (पुं०) वेदज्ञ ब्राह्मण।

छाया—(स्त्री०) [√छो+य—टाप्] प्रकाश के अवरोध से उत्पन्न हलका अँधेरा, छाया। प्रतिविम्ब, अक्स। समानता, सादृश्य। भ्रम, धोखा। रंगों की गड़बड़ी। चमक। रंग। चेहरे की रंगत। सौंदर्य। रक्षा। पंक्ति। अंधकार। घूस, रिश्वत। दुर्गादेवी। सूर्यपत्नी का नाम।—**अङ्क** (**छायाङ्क**)—(पुं०) चन्द्रमा।—**गणित**—(न०) गणित की वह क्रिया जिससे छाया के सहारे ग्रहों की गति आदि जानी जा सकती है।—**ग्रह**—(पुं०) शीशा, दर्पण।—**तनय**, —**सुत**—(पुं०) शनिग्रह।—**तरु**—(पुं०) छायादार पेड़।—**दान**—(न०) ग्रहजनित अरिष्ट की शान्ति के लिये किया जाने वाला एक विशेष दान जिसमें काँसे की कटोरी में घी या तेल भर कर और उसमें अपनी छाया देखकर दक्षिणा सहित दान करते हैं।—**द्वितीय**—(वि०) अकेला।—**पथ**—(पुं०) अन्तरिक्ष, आकाशमण्डल।—**पुरुष**—(पुं०) हठयोग तंत्र के अनुसार आकाश में (साधना-विशेष से) दिखाई पड़ने वाली द्रष्टा की छायारूप आकृति।—**भृत्**—(पुं०) चन्द्रमा।—**मान**—(न०) छाया का माप।—

मित्र–(न०) छाता ।—**मृगधर**– (पुं०) चन्द्रमा ।—**यन्त्र**–(न०) धूपघड़ी ।

छायामय—(वि०) [छाया+मयट्] छाया-युक्त, सायादार ।

छिक्का—(स्त्री०) [छिक् इत्यव्यक्त कायति छिक्√कै+क] छींक ।

छित्ति—(स्त्री०) [√छिद्+क्तिन्] छेदना, काटना ।

छित्वर—(वि०) [√छिद्+ष्वरप्, पृषो० दस्य तः] काटने वाला । छली, कपटी । शत्रु ।

√छिद्—रु० पर० सक० काटना । चीरना । तोड़ना । बाधा डालना । स्थानान्तरित करना, हटाना । नाश करना । शान्त करना । छिनत्ति —छिन्ते, छेत्स्यति—ते, अच्छिदत्—अच्छैत्सीत्—अच्छित्त ।

छिदक—(न०) [√छिद्+क्वुन्] इन्द्र का वज्र । हीरा ।

छिदा—(स्त्री०) [√छिद्+अङ—टाप्] काटना, विभाजित करना ।

छिदि—(स्त्री०) [√छिद्+इन्] कुल्हाड़ी । इन्द्र का वज्र ।

छिदिर—(पुं०) [√छिद्+किरच्] कुल्हाड़ी । शव्द । अग्नि । रस्सा ।

छिदुर—(वि०) [√छिद्+कुरच्] काटने-वाला । सहज में तोड़ा जाने वाला । टूटा हुआ; 'संलक्ष्यते न छिदुरोऽपि हारः' र० १६.६२ । (पुं०) वैरी । धूर्त ।

छिद्र—(वि०) [√छिद्+रक्] छिदा हुआ, छेददार । (न०) छेद, सूराख । अवकाश । गड्ढा । दोष, ऐब । दुर्वलताजनक, वाधक वात । दुर्वल पक्ष (शत्रु के छिद्र) 'छिद्रं निरूप्य सहसा प्रविशत्यशङ्कः' हि० १.८१ ।—**अनुजीविन्** (छिद्रानुजीविन्),—**अनुसन्धानिन्** (छिद्रानुसन्धानिन्),—**अनुसारिन्** (छिद्रानुसारिन्),—**अन्वेषिन्** (छिद्रान्वेषिन्)–(वि०) छिद्र या दोष ढूंढने वाला, निंदक ।—**अन्तर**—(छिद्रान्तर)–(पुं०) वेंत । नरकुल । —**आत्मन्**—(छिद्रात्मन्)–(वि०) जो अपनी निर्वलता वतला कर दूसरों को अपने ऊपर आक्रमण करने का अवसर दे ।—**कर्ण**–(वि०) छिदे हुए कानों वाला ।—**दर्शन**–(वि०) दोषदर्शी, पराया दोष देखने वाला ।

छिद्रित—(वि०) [छिद्र+इतच्]छेदों वाला । सूराख किया हुआ । पास-पास छोटे-छोटे छिद्रों से युक्त ।

छिन्न—(वि०) [√छिद्+क्त] कटा हुआ । चिरा हुआ । अलगाया हुआ । नष्ट किया हुआ । स्थानान्तरित किया हुआ ।—**केश**–(वि०) मुण्डित, मुड़ा हुआ ।—**द्रुम**–(पुं०) कटा हुआ पेड़ ।—**द्वैध** –(वि०) जिसकी दुविधा, संशय मिट गया हो ।—**नास**,—**नासिक**–(वि०) जिसकी नाक कट गई हो, नकटा ।—**भिन्न**–(वि०) कटा-फटा । नष्ट-भ्रष्ट । जो तितर-वितर हो गया हो ।—**मस्त**,—**मस्तक**-(वि०) सिर कटा हुआ ।—**मस्तका**,—**मस्ता**–(स्त्री०) दस महाविद्याओं के अंतर्गत एक देवी जो अपना सिर हथेली पर धरे गले से निकलती रक्तधारा को पीती हुई मानी जाती है ।—**मूल** –(वि०) जड़ से कटा हुआ ।—**रुहा**–(स्त्री०) गुडूची ।—**वेशिका**–(स्त्री०) पाठा ।—**श्वास** –(पुं०) एक प्रकार का दमे का रोग ।—**संशय**–(वि०) संशयहीन, सन्देहरहित ।

छुछुन्दर—(पुं०) [छुछुम् इत्यव्यक्तशब्दो दीर्यते निर्गच्छति अस्मात्, छुछुम्√दृ+अप्] छछूंदर जन्तु ।

√छुट्—तु० पर० सक० काटना । छुटति, छुटिष्यति, अछुटीत् ।

√छुड्—तु० पर० सक० छिपाना । छुडति, छुडिष्यति, अछुडीत् ।

√छुप्—तु० पर० सक० छूना । छुपति, छोप्स्यति, अच्छौप्सीत ।

छुप—(पुं०) [√छुप्+क] स्पर्श । झाड़ा । युद्ध, लड़ाई ।

√छुर्—तु० पर० सक० काटना । छुरति, छुरिष्यति, अच्छुरीत् ।

छुरण—(न०) [√छुर्+ल्युट्] लेप करना, पोतना; 'ज्योत्स्नाभस्मच्छुरणधवला' का. प्र. ।

छुरा—(स्त्री०) [√छुर्+क—टाप्] चूना, कलई, सफेदी ।

छुरिका—(स्त्री०) [√छुर्+क्वन्—टाप्, इत्व] छुरी । चाकू ।

छुरित—(वि०) [√छुर्+क्त] जड़ा हुआ । फैलाया हुआ । ढका हुआ । गड्डबड्ड किया हुआ, गोलमाल किया हुआ । मिश्रित; 'परस्परेणच्छुरितामलच्छवी' शि० १.२२ ।

छुरी, छूरिका, छूरी—(स्त्री०) [छुर+ङीप्] [छूरी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [=छुरी, पृषो० दीर्घ] छोटा छूरा । चाकू ।

√छृद्—रु० उभ० अक० चमकना । खेलना । छृणत्ति—छृन्ते, छर्दिष्यति—ते, —छर्त्स्यति—ते, अच्छृदत्—अच्छर्दीत्— अच्छर्दिष्ट । चु० पर० सक० जलाना । छर्दयति —छर्दति ।

छेक—(वि०) [√छो+डेकन्] पालतू, हिला हुआ । शहरुआ, नागरिक । धूर्त ।—**अनुप्रास** (**छेकानुप्रास**)—(पुं०) अनुप्रास अलंकार का वह भेद जिसमें एक या अधिक वर्णों की आवृत्ति एक ही बार होती है ।—**अपह्नुति** (**छेकापह्नुति**)—(स्त्री०) अपह्नुति अलंकार का एक भेद—दूसरे की अनुमिति का अयथार्थ उक्ति द्वारा खंडन । —**उक्ति** (**छेकोक्ति**)—(स्त्री०) वह लोकोक्ति जो अर्थान्तर-गर्भित हो अर्थात् जिससे अन्य अर्थ की ध्वनि निकले ।

छेत्तव्य—(वि०) [√छिद्+तव्यत्] तोड़ने के लायक ।

छेद—(पुं०) [√छिद्+घञ्] काटना, काटकर गिराना, तोड़कर गिराना । स्थानान्तरकरण । नाश । अवसान, अन्त । खंड । गणित में भाजक । कटने का घाव । परिचायक चिह्न । अभाव । असफलता ।

छेदन—(न०) [√छिद्+ल्युट्] काटना, स्थानान्तरकरण । काटने, छाँटने का अस्त्र, औजार । कफ निकालने वाली दवा ।

छेदि—(वि०) [√छिद्+इन्] छेदनकर्ता । (पुं०) बढ़ई । वज्र ।

छेमण्ड—(पुं०) [√छम्+अण्डन्, एत्व] मातृपितृहीन बालक ।

छेलक—(पुं०) [√छो+डेलक] बकरा, छाग ।

छैदिक—(पुं०) [छेदम् अर्हति, छेद+ठक्] बेत ।

√छो—दि० पर० सक० काटना । छ्यति, छास्यति, अच्छासीत् ।

छोटिका—(स्त्री०) [√छुट्+ण्वुल् —टाप्, इत्व] चुटकी ।

छोरण—(न०) [√छुर्+ल्युट्] त्याग ।

√छ्यु—भ्वा० आत्म० सक० जाना । छ्यवते, छ्योष्यते, अछ्योष्ट ।

ज

ज—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का एक व्यञ्जन और चवर्ग का तीसरा वर्ण । यह स्पर्श वर्ण है । इसका बाह्य प्रयत्न संवार और नाद घोष है । यह अल्पप्राण माना जाता है । इसका उच्चारण-स्थान तालु है । जब "ज" समास के अन्त में आता है तब इसका अर्थ होता है—उससे या इससे उत्पन्न हुआ । जैसे पङ्क+ज=पङ्कज । अर्थात् कीचड़ से उत्पन्न । (पुं०) [√जन्+ड वा√जि+ड] पिता, जनक । उत्पत्ति, जन्म । जहर । पिशाच । विजयी । कान्ति, आभा, आब । विष्णु । मोक्ष । वेग ।—**कुट**—(पुं०) मलय पर्वत । कुत्ता । युग्म, जोड़ा । (न०) बैंगन का फूल ।

√जक्ष्—अ० पर० सक० खाना । अक० हँसना । जक्षति, जक्षिष्यति, अजक्षीत् ।

जक्षण—(न०), **जक्षि**—(स्त्री०) [√जक्ष्+ल्युट्] [√जक्ष्+इन्] खा डालना, निघटा डालना। व्यय करना। नष्ट करना।

जगत्—(वि०) [√गम्+क्विप्, नि० द्वित्व, तुगागम] चर, चलने वाला; 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुपश्च' वेद। (पुं०) हवा, पवन। (न०) संसार।—**अम्बिका** (**जगदम्बिका**)–(स्त्री०) दुर्गा।—**आत्मन्** (**जगदात्मन्**)–(पुं०) परमात्मा।—**आदिज** (**जगदादिज**)–(पुं०) शिव।—**आधार** (**जगदाधार**)– (पुं०) काल। पवन।—**आयु** (**जगदायु**),—**आयुस्** (**जगदायुस्**)–(पुं०) पवन।—**ईश** (**जगदीश**),—**पति**–(पुं०) परमात्मा।—**उद्धार** (**जगदुद्धार**)–(पुं०) संसार का मोक्ष।—**कर्तृ**, —**धातृ** (**जगद्धातृ**)–(पुं०) सृष्टिकर्त्ता।—**चक्षुस्** (**जगच्चक्षुस्**)–(पुं०) सूर्य।—**नाथ** (**जगन्नाथ**)–(पुं०) सृष्टि का स्वामी।—**निवास** (**जगन्निवास**)–(पुं०) परमात्मा। विष्णु। सांसारिक स्थिति।—**प्राण**, —**बल** (**जगद्बल**)–(पुं०) पवन।—**योनि** (**जगद्योनि**)–(पुं०) परमात्मा। विष्णु। शिव। ब्रह्मा। (स्त्री०) पृथिवी।—**वहा** (**जगद्वहा**)–(स्त्री०) पृथिवी।—**साक्षिन्**–(पुं०) परमात्मा। सूर्य।

जगती—(स्त्री०) [√गम्+अति, नि० साधुः] पृथिवी। मानवजाति, लोग। गौ। छन्द विशेष जिसके प्रत्येक पद में १२ अक्षर होते हैं।—**अधीश्वर** (**जगत्यधीश्वर**), —**ईश्वर** (**जगतीश्वर**)–(पुं०) राजा।—**रुह**–(पुं०) वृक्ष।

जगनु, **जगन्नु**—(पुं०) अग्नि। कीट। जानवर।

जगर—(पुं०) [√जागृ+अच्, पृषो० साधुः] कवच, जिरह।

जगल—(वि०) [√जन्+ड, जः जातः सन्√गलति, √गल्+अच्] धूर्त, चालबाज। (पुं०) शराब की सीठी। पीठी की शराव। मदन वृक्ष। (न०) कवच। गोबर।

जग्ध—(वि०) [√अद्+क्त, जग्ध् आदेश] खाया हुआ। (न०) भोजन।

जग्धि—(स्त्री०) [√अद्+क्तिन्, जग्ध् आदेश] सहभोजन। भोजन, भोज्य पदार्थ।

जग्मि—(पुं०) [√गम्+कि, द्वित्व] पवन।

जघन—(न०) [√हन्+अच्, द्वित्व] कटि के नीचे आगे का भाग, पेड़ू। कटि देश, नितम्ब। सेना का सबसे पिछला भाग।—**कूप**,—**कूपक**–(पुं०) चूतड़ के ऊपर का गड्ढा।—**गौरव**–(पुं०) नितम्बभार।—**चपला**–(स्त्री०) असती स्त्री। तेजी से नाचने वाली स्त्री। एक मात्रावृत्त।

जघन्य—(वि०) [जघन+यत्] सब से पीछे का, पिछला, अन्तिम। सब से गया बीता, निकृष्ट, नीच। नीच जाति का। (पुं०) शूद्र। (न०) लिंगेन्द्रिय।—**ज**–(पुं०) छोटा भाई। शूद्र।

जघ्नि—(पुं०) [√हन्+कि, द्वित्व] (वध करने का एक) अस्त्र। (वि०) मारने वाला। मार डालने वाला।

जघ्नु—(वि०) [√हन्+कु, द्वित्व] हनन करने वाला, घातक।

जघ्रि—(वि०) [√घ्रा+कि, द्वित्व] सूँघने वाला।

जङ्गम—(वि०) [√गम्+यङ—लुक्+अच्] चर, जीवधारी, चलने-फिरने वाला। (न०) चलने-फिरने वाला पदार्थ।—**इतर** (**जङ्गमेतर**)–(वि०) अचल, स्थावर, जो चलफिर न सके।—**कुटी**–(स्त्री०) छाता।—**गुल्म**–(पुं०) पैदल सिपाहियों की सेना।

जङ्गल—(न०) [√गल्+यङ—लुक्+अच्, नि० साधुः] वन। रेगिस्तान। एकांत स्थान। उजाड़ स्थान, बंजर। मांस।

जङ्गाल—(पुं०) [=जङ्गल, पृषो० साधुः] खेत की मेंड़ ।

जङ्गुल—(न०) [√ गम्+यङ—लुक्+डुल] जहर, विष ।

जङ्घा—(स्त्री०) [जंघन्यते कुटिलं व्रजति, √हन्+यङ —लुक्+अच् पृषो०, ततः टाप्] जाँघ, एड़ी से घुटनों तक का भाग । —**करिक**–[√कृ+अप्, करः, जंघायाः करः, ष० त०, जंघाकर+ठन्—इक] (पुं०) हरकारा, डाकिया ।—**त्राण**–(न०) टाँगों के लिये कवच ।

जङ्घाल—(वि०) [जंघा+लच्] तेज दौड़ने वाला । (पुं०) हरकारा । हिरन, बारहसिंघा ।

जङ्घिल—(वि०) [जंघा+इलच्] तेज दौड़ने वाला । तेज, फुर्तीला ।

√जज्—भ्वा० पर० सक० लड़ाई करना । जजति, जजिष्यति, अजाजीत्—अजजीत् ।

√जञ्ज्—भ्वा० पर० सक० युद्ध करना । जञ्जति, जञ्जिष्यति, अजञ्जीत् ।

जञ्जपूक—(वि०) [√ जप्+यङ + क] मन में मन्त्र जपने वाला । (पुं०) तपस्वी ।

√जट्—भ्वा० पर० अक० जुड़ना, इकट्ठा होना (जैसे बालों का) । जटति, जटिष्यति, अजटीत्—अजाटीत् ।

जटा—(स्त्री०) [√जट्+अच् —टाप्] उलझे और आपस में चिपके हुए लंबे बाल; 'अंसव्यापि शकुन्तनीडनिचितं बिभ्रज्जटामण्डलं' श० ७.११ । जटामांसी । जड़ या मूल । शाखा । शतावरी । शेर के अयाल । वेदपाठ की एक प्रणाली (इसमें 'नमः रुद्रेभ्यः' का पाठ इस तरह किया जायगा —'नमो रुद्रेभ्यो, रुद्रेभ्यो नमो नमो रुद्रेभ्यः') ।—**चीर**,—**टङ्क**,—**टीर**,—**धर**–(पुं०) शिव जी की उपाधियाँ ।—**जूट**–(पुं०) जटाओं का समुदाय । शिवजी के सिर के उठे हुए बाल ।—**ज्वाल**–(पुं०) दीपक । —**धर**–(वि०) जटाजूट धारण करने वाला ।

जटायु, जटायुस्—(पुं०) [जटा√या+कु] [जटं संहतम् आयुः यस्य, ब० स०] रामायण में वर्णित बड़ी आयु वाला एक गिद्ध जिसने सीता जी के लिये रावण से युद्ध कर अपने प्राण गँवाये थे । गूगल ।

जटाल—(वि०) [जटा+लच्] जटाजूटधारी । एकत्रीभूत । (पुं०) गूलर का वृक्ष ।

जटि, जटी—(स्त्री०) [√जट्+इन्] [जटि—ङीप्] जटा । समूह । बरगद । पाकड़ । जटामासी ।

जटिन्—(वि०) [जटा+इनि] [स्त्री०—जटिनी] जटाधारी । (पुं०) शिव जी का नाम । प्लक्ष वृक्ष, पाकड़ ।

जटिल—(वि०) [जटा+इलच्] जटाधारी । उलझन डालने वाला, पेचीदा । अगम्य । (पुं०) ब्रह्मचारी । शिव । सिंह । बकरा ।

जठर—(वि०) [√जन्+अर, ठ आदेश] कड़ा, कठिन । बद्ध । बूढ़ा । (पुं०, न०) पेट, मेदा, कुक्षि । गर्भाशय । किसी भी वस्तु का अंदरूनी भाग ।—**अग्नि** (**जठराग्नि**)–(पुं०) पेट के भीतर खाये हुए पदार्थों को पचाने वाली आग । पाकस्थली का पाचक-रस ।—**आमय** (**जठरामय**)–(पुं०) उदर सम्बन्धी रोग । जलोदर रोग ।—**ज्वाला**,—**व्यथा**–(स्त्री०) पेट की पीड़ा, पेट की व्यथा । बायगोले का दर्द ।—**यंत्रणा**,—**यातना**–(स्त्री०) गर्भ में रहते समय का कष्ट ।

जड—(वि०) [जलति घनीभवति, √जल्+अच्, लस्य डः] ठंडा, शीतल; 'परामृशन् हर्षजडेन पाणिना' र० ३.६८ । निर्जीव । तेजस्विताहीन । गतिहीन । लकवा मारा हुआ । मूढ़, बुद्धिहीन । विवेकहीन, अच्छे-बुरे ज्ञान से शून्य । सुन्न, अकड़ा हुआ । ठिठुरा हुआ । गूँगा । वेदाध्ययन करने में असमर्थ । (न०) जल । सीसा ।—**क्रिय**–(वि०) सुस्त, दीर्घसूत्री ।—**भरत**–(पुं०) भागवत में वर्णित

एक योगी जो संसार की आसक्ति से बचने के लिये जड़वत् व्यवहार करते थे।

जड़ता—(स्त्री०), **जडत्व**—(न०) [जड+तल्] [जड+त्व] सुस्ती । अज्ञानता । मूर्खता ।

जडिमन्—(पुं०) [जड+इमनिच्] शीतलता । विवेकहीनता । सुस्ती, काहिली । ठिठुरन ।

जतु—(न०) [जायते वृक्षादिभ्यः, √जन्+उ, त आदेश] गोंद । लाक्षा, लाख । शिलाजीत ।—**अश्मक** (**जत्वश्मक**)—(न०) शिलाजीत ।—**कारी**—(स्त्री०) पपड़ी नामक लता ।—**पुत्रक**—(पुं०) लाख की बनी पुतली । शतरंज का मुहरा । चौरस की गोटी ।—**रस**—(पुं०) लाख । महावर ।

जतुक—(न०) [जतु√कै+क] हींग । [जतु+कन्] लाख ।

जतुका—(न०) [जतुक+टाप्] लाख । चमगादड़ । पर्पटी लता ।

जतुकी, जतूका—(स्त्री०) [जतुक+ङीष्] [=जतुका, नि० दीर्घ] चमगादड़ ।

जत्रु—(पुं०) [√जन्+रु, त आदेश] कंधे के नीचे की कमानी जैसी हड्डी, हँसली ।

√जन्—दि० आत्म० अक० उत्पन्न होना, पैदा होना । उदय होना, निकलना । होना, घटित होना । जायते, जनिष्यते, अजनिष्ट ।

जन—(पुं०) [√जन्+अच्] जीवधारी, प्राणधारी । व्यक्ति; 'अयं जनः प्रष्टुमनास्तपोधने' कु० ५.४० । पुरुष या स्त्री । (समूहार्थ में) मनुष्य-गण, लोग । जाति । महर्लोक के आगे का लोक ।—**अतिग** (**जनातिग**)—(वि०) असाधारण, असामान्य, अलौकिक ।—**अधिप** (**जनाधिप**),—**अधिनाथ** (**जनाधिनाथ**)—(पुं०) राजा ।—**अन्त** (**जनान्त**)—(पुं०) ऐसा स्थान जहाँ बस्ती न हो । अञ्चल, प्रदेश । यम की उपाधि ।—**अन्तिक** (**जनान्तिक**)—(न०) कानाफूसी, फुसफुस ।—**अर्दन** (**जनार्दन**)—(पुं०) विष्णु या कृष्ण ।—**अशन** (**जनाशन**)—(पुं०) भेड़िया ।—**आचार** (**जनाचार**) (पुं०) रस्म, रिवाज ।—**आश्रम** (**जनाश्रम**)—(पुं०) सराय, धर्मशाला, उतारा ।—**आश्रय** (**जनाश्रय**)—(पुं०) थोड़े समय के लिये निर्मित वासस्थान । मण्डप । शामियाना । धर्मशाला ।—**इन्द्र** (**जनेन्द्र**),—**ईश** (**जनेश**),—**ईश्वर** (**जनेश्वर**)—(पुं०) राजा ।—**इष्ट** (**जनेष्ट**)—(वि०) लोगों द्वारा वाञ्छित या पसंद । (पुं०) एक प्रकार की चमेली ।—**उदाहरण** (**जनोदाहरण**)—(न०) महिमा । कीर्ति ।—**ओघ** (**जनौघ**)—(पुं०) मनुष्यों का जमाव या समूह ।—**कारिन्**—(पुं०) लाख ।—**चक्षुस्**—(न०) लोगों की आँख । सूर्य ।—**चर्चा**—(स्त्री०) लोकवाद, वह बात जो सर्वसाधारण में फैल गई हो ।—**जागरण**—(न०) जनसाधारण, समस्त जनता में अपने अधिकार, हिताहित का ज्ञान होना ।—**त्रा**—(स्त्री०) छतरी, छाता ।—**देव**—(पुं०) राजा ।—**पद**—(पुं०) देश, राज्य, 'जनपदे न गदः पदमादधौ' र० ९.४ । राज्य-विशेष का ग्राम-भाग । लोक, प्रजा ।—०**कल्याणी**—(स्त्री०) वेश्या ।—**पदिन्**—(पुं०) किसी देश या समाज का शासक ।—**प्रवाद**—(पुं०) किंवदन्ती, अफवाह । कलङ्क, अपवाद ।—**प्रिय**—(वि०) लोकप्रिय, सब का प्यारा । (पुं०) शिव । गोधूम । नागर वृक्ष । सहिजन का पेड़ । (पुं०, न०) धनिया ।—**मरक**—(पुं०) महामारी ।—**मर्यादा**—(स्त्री०) प्रचलित पद्धति ।—**रञ्जन**—(वि०) लोक को सुख, आनन्द देने वाला । सार्वजनिक अनुग्रह प्राप्त करने वाला ।—**रव**—(पुं०) किंवदन्ती, अफवाह । अपवाद, कलङ्क ।—**लोक**—(पुं०) महर्लोक के ऊपर का लोक ।—**वाद** (**जनेवाद** भी)—(पुं०) दे० 'जनरव' ।—**व्यवहार**—(पुं०) प्रचलित रीति, लोकाचार ।—**श्रुत**—(वि०)

सुप्रसिद्ध ।——श्रुति–(स्त्री०) अफवाह, किंवदन्ती ।——संबाध–(वि०) सघन बसी हुई (बस्ती) ।——स्थान–(न०) दण्डकवन, दण्डकारण्य जहाँ खर और दूषण की चौकी थी ।——हरण (पुं०) एक दंडक वृत्त ।

जनक——(वि०) [√जन्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०——**जनिका**] पैदा करने वाला, उत्पन्न करने वाला । कारणीभूत । (पुं०) पिता । विदेह या मिथिला के एक प्रसिद्ध राजा का नाम जो सीता जी के पिता थे ।——**आत्मजा** (जनकात्मजा),——**तनया,**—— **नन्दिनी,**——**सुता**–(स्त्री०) सीता जी ।

जनङ्गम——(पुं०) [जनेभ्यो गच्छति वहिः, जन√गम्+खच्, मुमागम] चाण्डाल ।

जनता——(स्त्री०) [जन+तल्] उत्पत्ति । मानवजाति । जन-समूह ।

जनन——(वि०) [√जन्+णिच्+ल्युट्] उत्पादक । (पुं०) पिता । परमेश्वर । मंत्र के दस संस्कार में से पहला (तंत्र) । (न०) [√जन्+ल्युट्] उत्पत्ति, जन्म; 'यदैव पूर्वे जनने शरीरं सा दक्षरोषात्सुदती ससर्ज' कु० १.५३ । सृष्टि । प्रादुर्भाव । जीवन । वंश, कुल ।

जननि——(स्त्री०) [√जन्+अनि] माता । जन्म, उत्पत्ति ।

जननी——(स्त्री०) [जननि+ङीष्] माता । दया । चमगादड़ । लाख । जूही । मजीठ । कुटकी । जटामासी । पर्पटी ।

जनमेजय——(पुं०) [जनान् शत्रुजनान् एजयति प्रतापैः कम्पयति, जन√एज्+णिच् +खश्] चन्द्रवंशी एक प्रसिद्ध राजा । यह महाराज परीक्षित् का पुत्र था और अपने पिता को डसने वाले तक्षक से बदला लेने के लिये इसने सर्पयज्ञ किया था । पीछे आस्तिक ऋषि के समझाने पर सर्पयज्ञ बंद किया गया था ।

जनयितृ——(वि०) [√जन्+णिच्+तृच्] [स्त्री०——**जनयित्री**] उत्पादक, सृष्टिकर्त्ता । (पुं०) पिता ।

जनयित्री–(स्त्री०)[जनयितृ–ङीप्] माता ।

जनयिष्णु——(वि०) [√जन्+णिच्+इष्णुच्] उत्पन्न करने वाला ।

जनस्——(न०) [√जन्+णिच्+असु] जनलोक ।

जनि, जनिका, जनी——[√जन्+इन्] [जनि+कन्–टाप् तथा √जन्+णिच्+ण्वुल्–टाप्, इत्व] [जनि+ङीष्] उत्पत्ति, सृष्टि, पैदावार । स्त्री । माता । भार्या । पुत्रवधू ।

जनित——(वि०) [√जन्+णिच्+क्त] उत्पन्न किया हुआ, पैदा किया हुआ । [√जन्+क्त] उत्पन्न, जनमा हुआ ।

जनितृ——(पुं०) [√जन्+णिच्+तृच्, नि० णिलोप]पिता । (वि०) [√जन्+तृच्] जो जनमता हो ।

जनित्र——(न०) [जनि+त्रल्] जन्म-स्थान । स्रोत ।

जनित्री——(स्त्री०) [जनितृ+ङीप्] माता ।

जनु, जनू——(स्त्री०) [√जन्+उ] [जनु –ऊङ्] उत्पत्ति, पैदावार, पैदाइश ।

जनुस्——(न०) [√जन्+उसि] उत्पत्ति, जन्म । सृष्टि । जीवन, अस्तित्व ।——**अन्ध** (**जनुषान्ध**)–(पुं०)[अलुक् स०] जन्मान्ध, पैदायशी अंधा ।

जन्तु——(पुं०) [√जन्+तुन्] प्राणी, जीव । पशु । कीड़ा-मकोड़ा । जीवात्मा ।——**कम्बु**–(पुं०) घोंघा ।——**घ्न**–(पुं०) [जन्तु√ हन् +टक्] बिजौरा नीबू । (न०) बायबिडंग । हींग ।——**घ्नी**–(स्त्री०) [जन्तुघ्न+ङीष्] बायबिडंग ।——फल–(पुं०) गूलर का वृक्ष ।

जन्तुका——(स्त्री०) [जन्तु√कै+क–टाप्] लाख । पपड़ी नामक लता ।

जन्तुमती——(स्त्री०) [जन्तु+मतुप्–ङीप्] पृथिवी ।

जन्म—(न०) [√जन्+मन्] उत्पत्ति । **जन्मन्**—(न०) [√जन्+मनिन्] जन्म, उत्पत्ति, पैदाइश; 'तां जन्मने शैलवधूम्प्रपेदे' कु० १.२१ । निकास, उद्गम, प्रादुर्भाव । सृष्टि । जीवन, अस्तित्व । जन्मस्थान ।—**अधिप (जन्माधिप)**–(पुं०) शिव । जन्म-राशि का स्वामी । जन्मलग्न का स्वामी ।—**अन्तर (जन्मान्तर)**–(न०) दूसरा जन्म । पिछला जन्म । अगला जन्म । परलोक । —**अन्तरीय (जन्मान्तरीय)**–(वि०) दूसरे जन्म का । जन्मान्तरकृत ।—**अन्ध (जन्मान्ध)** –(वि०) जन्म से अंधा ।—**अष्टमी (जन्माष्टमी)**–(स्त्री०) भाद्रकृष्णा अष्टमी, जिस दिन श्रीकृष्ण भगवान् का जन्म हुआ था । —**कील**–(पुं०)विष्णु ।—**कुण्डली**–(स्त्री०) एक चक्र जिसमें जन्म-समय के ग्रहों की स्थिति का उल्लेख किया जाता है ।—**कृत्**–(पुं०) पिता ।— **क्षेत्र**–(न०) उत्पत्तिस्थान ।—**तिथि**–(पुं०, स्त्री०), —**दिन**–(न०), —**दिवस**–(पुं०)किसी के जन्म या पैदाइश का दिन, जन्मतिथि । बरसगाँठ ।—**द**–(पुं०) पिता ।— **नक्षत्र,**—**भ**–(न०) वह नक्षत्र जो जन्म के समय हो ।—**नामन्**–(न०) जन्म होने के १२ वें दिवस रखा गया नाम जो राशि के अनुसार आद्य-अक्षर-संयुक्त होता है ।—**पत्र**–(न०),—**पत्रिका**–(स्त्री०) वह पत्र या कागज जिसमें किसी के जन्मकाल के ग्रहनक्षत्रों की स्थिति, उनकी दशा, अंतर्दशा और उनके शुभाशुभ फल बताये जाते हैं, जायचा ।—**प्रतिष्ठा**–(स्त्री०) जन्मस्थान । माता ।—**भाज्**–(पुं०) प्राणी, जीवधारी; 'मोदन्ताम् जन्मभाजः सततं' मृ० १०.६० । —**भाषा**–(स्त्री०) मातृभाषा ।—**भूमि**–(स्त्री०) जन्मस्थान ।—**योग**–(पुं०) जन्म-कुण्डली ।—**रोगिन्**–(वि०)पैदाइशी बीमार । —**लग्न**–(न०) वह लग्न जो जन्म के समय हो ।—**वर्त्मन्**–(न०) भग, योनि ।—**शोधन**–(न०) जन्म होने पर, तत्सम्बन्धी कर्त्तव्यों का यथाविधि पालन ।—**साफल्य**–(न०) जीवन के उद्देश्यों की सिद्धि ।—**स्थान**–(न०) जन्मभूमि । गर्भाशय ।

जन्मिन्—(पुं०) [जन्मन्+इनि] प्राणी, जीवधारी ।

जन्य—(वि०) [√जन्+ण्यत् वा√जन्+णिच्+यत्] उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ (समासान्त में इसका अर्थ होता है) । किसी कुल या वंश का अथवा किसी कुल या वंश सम्बन्धी । (अमुक से) उत्पन्न । गँवारू, ग्रामीण । राष्ट्रीय । (पुं०) पिता । मित्र । वर (दूल्हा) का नातेदार । वराती । साधारण जन । किंवदन्ती, अफवाह । उत्पत्ति, सृष्टि । सृष्टि की हुई वस्तु । कर्म (क्रिया का फल) । शरीर । जन्म के समय होने वाला अशकुन । महादेव । पुत्र । जामाता । (न०) हाट । युद्ध, लड़ाई; 'तत्र जन्यं रघोर्घोरं पर्वतीयैर्गणैरभूत्' र० ४.७७ । भर्त्सना, फटकार ।

जन्या—(स्त्री०) [जन्य+टाप्] माता की सखी । वधू की सहेली । हर्ष, आह्लाद । स्नेह, प्रीति ।

जन्यु—(पुं०) [√जन्+युच्, वा० न अनादेशः] उत्पत्ति । प्राणी, जीवधारी । अग्नि । सृष्टिकर्त्ता या ब्रह्मा ।

√जप्—भ्वा० पर० सक० मन ही मन किसी (मंत्र को) बार-बार कहना, जप करना । जपति, जपिष्यति, अजपीत्+अजापीत् ।

जप—(पुं०) [√जप्+अच्] किसी मंत्र, स्तोत्र, ईश्वर के नाम आदि को धीमे स्वर से बार-बार दुहराना । किसी शब्द, नाम आदि को बार-बार मुँह से कहना ।—**परायण**–(वि०) जप में आसक्त, जपनिरत ।—**माला**–(स्त्री०) माला जिस पर जप किया जाय ।

जपा—(स्त्री०) [√जप्+अच्—टाप्] अड़हुल ।

जप्य—(न०, पुं०) [√जप्+यत्] मंत्र जो जपा जाय। (वि०) जपने योग्य।

√जम्—भ्वा० पर० सक० खाना। जमति, जमिष्यति, अजमीत्।

जमदग्नि—(पुं०) भृगुवंशीय एक ऋषि जो परशुराम के पिता थे। इनके पिता का नाम ऋचीक और माता का नाम सत्यवती था। जमदग्नि बड़े अध्ययनशील थे। कहा जाता है कि इन्होंने वेदाध्ययन भली भाँति किया था। इनकी पत्नी का नाम रेणुका था, जिसके गर्भ से इनके पाँच पुत्र हुए थे।

जम्पती—(पुं०) [द्विवचन] [जाया च पतिश्च, द्व० स०] पति-पत्नी, दम्पती या जायापती।

जम्बाल—(पुं०) [√जम्भ्+घञ्, नि० भस्य वः जम्ब—आ√ला+क] कीचड़। काई। सेवार। केवड़ा।

जम्बालिनी—(स्त्री०) [जम्बाल+इनि—ङीप्] नदी।

जम्बीर—(न०) [√जम्भ्+ईरन्, व आदेश] जभीरी का फल। (पुं०) जभीरी का वृक्ष। मरुवक वृक्ष। वनतुलसी।

जम्बु, जम्बू—(स्त्री०) [√जम्+कु, पृषो० बुगागम] [जम्बु+ऊङ] जामुन का फल और जामुन का पेड़। **—खण्ड, —द्वीप**—(पुं०) सात द्वीपों में से एक, जो मेरु पर्वत को घेरे हुए है। **—प्रस्थ**—(पुं०) एक नगर। यह कश्मीर का वर्तमान जम्मू शहर है। **—ल**—(पुं०) जामुन। केवड़ा। कर्णपाली नामक रोग। **—वनज**—(न०) सफेद अड़हुल।

जम्बुक, जम्बूक—(पुं०) [जम्बु (म्बू) √कै+क] शृगाल, गीदड़। नीच मनुष्य। केवड़ा। वरुण। [जम्बु (म्बू) +कन्] जामुन।

√जम्भ्—भ्वा० आत्म० अक० जमुहाई लेना, उवासी लेना। जम्भते, जम्भिष्यते, अजम्भिष्ट। चु० पर० सक० नाश करना। जम्भयति—जम्भति।

जम्भ—(पुं०) [√जम्भ्+घञ्] दाँत। जबड़ा। भक्षण। कुतरना, काटकर टुकड़े-टुकड़े कर डालना। भाग, अंश। तरकस, तूणीर। ठोड़ी। जमुहाई। नीबू या जंभीरी का पेड़। [√जम्भ्+अच्] महिषासुर का बाप जो इंद्र के हाथों मारा गया। **—अराति** (**जम्भाराति**), **—द्विष्, —भेदिन्, —रिपु**—(पुं०) इन्द्र। **—अरि** (**जम्भारि**)—(पुं०) आग। इन्द्र का वज्र। इन्द्र।

जम्भका, जम्भा, जम्भिका—(स्त्री०) [जम्भ+कन्—टाप्] [√जम्भ्+णिच्+अच्—टाप्] [जम्भा+कन्—टाप्, इत्व] जमुहाई, उवासी।

जम्भन—(न०) [√जम्भ्+ल्युट्] जम्हाना। भक्षण। मैथुन।

जम्भर, जम्भीर—(पुं०) [जम्भं भक्षण-रुचिं राति ददाति, जम्भ√रा+क] [√जम्भ्+ईरन्] नीबू या जंभीरी का वृक्ष।

जय—(पुं०) [√जि+अच्] विजय, जीत (युद्ध या जुए या मुकद्दमे में)। संयम, निग्रह। सूर्य। इन्द्रपुत्र जयन्त। युधिष्ठिर। विष्णु के द्वारपालों में से एक। अर्जुन की उपाधि। पताका विशेष। मार्ग। अग्निमंथ वृक्ष। साठ संवत्सरों में से एक। लाभ। **—आवह** (**जयावह**)—(वि०) विजयदायी, विजय देने वाला। **—उद्धुर** (**जयोद्धुर**)—(वि०) विजय-प्राप्ति के आनन्द में नृत्य करने वाला। **—कोलाहल**—(पुं०) जयजयकार। पासों का खेल-विशेष। **—घोष**—(पुं०), **—घोषण**—(न०) **—घोषणा**—(स्त्री०) विजय का ढिंढोरा। **—ढक्का**—(स्त्री०) विजयसूचक ढोल का शब्द। **—देव**—(पुं०) गीतगोविंद के रचयिता प्रसिद्ध वंगीय कवि जो महाराज लक्ष्मणसेन के सभापंडित थे। **—ध्वज**—(पुं०) विजय-पताका। अवंतिराज कार्तवीर्यार्जुन का पुत्र। **—पत्र**—(न०) पराजित राजा आदि का वह लेख जिसमें वह अपनी पराजय स्वीकार करे।

मुकदमे में जीतने वाले पक्ष को मिलने वाला जयसूचक पत्र, डिगरी। अश्वमेध के घोड़े के माथे पर बँधा हुआ विजय-पत्र।**—पाल**–(पुं०) जमालगोटा। राजा। ब्रह्मा।**—पुत्रक**–(पुं०) एक प्रकार का पासा।**—मङ्गल**–(पुं०) शाही हाथी। ज्वर की दवा।**—वाहिनी**–(स्त्री०) शची देवी की उपाधि।**—शब्द**–(पुं०) जयजयकार। जय।**—श्री**–(स्त्री०) विजय की अधिष्ठात्री देवी। विजय। एक रागिनी।**—स्तम्भ**–(पुं०) विजय का स्मारक स्वरूप स्तम्भ; 'निचखान जयस्तम्भान् गङ्गास्रोतोऽन्तरेषु सः' र० ४.३६।

जयद्रथ—(पुं०) [जयत् रथो यस्य, ब० स०] दुर्योधन का बहनोई जो सिन्धु देश का राजा था। यह दुःशला का पति था। अर्जुन के हाथ से यह महाभारत के युद्ध में मारा गया था।

जयन—(न०) [√जि+ल्युट्] जीत, विजय। घुड़सवारों तथा हाथीसवारों आदि का कवच।**—युज्**–(वि०) विजयी। बहुमूल्य साज-सामान से सजा हुआ घोड़ा आदि।

जयन्त—(पुं०) [√जि+झच्—अन्तादेश] इन्द्रपुत्र; 'पौलोमीसम्भवेनेव जयन्तेन पुरन्दरः' विक्र० ५.४। शिव। चन्द्रमा।

जयन्ती—(स्त्री०) [√जि+शतृ—ङीप्] पताका, ध्वजा। इन्द्रपुत्री। दुर्गा का नाम। भाद्र-कृष्ण अष्टमी को आधी रात को रोहिणी नक्षत्र होने से पड़ने वाला एक योग (कृष्ण का जन्म इसी योग में हुआ था)।

जया—(स्त्री०) [जय+टाप्] दुर्गा की एक सहचरी। पताका। हरी दूब। शमी। जैंत। हड़। भाँग। अड़हुल का फूल। दोनों पक्षों की तृतीया, अष्टमी और त्रयोदशी। एक प्राचीन बाजा।

जयिन्—(वि०) [जेतुं शीलमस्य, √जि+इनि] जीतने वाला, जयशील। मनोहर।

जय्य—(वि०) [√जि+यत् नि०] जीतने योग्य, जो जीता जा सके।

जरठ—(वि०) [√जॄ+अठच्] सख्त, कड़ा। बूढ़ा। जर्जरित। पूरा बढ़ा हुआ। पक्का, पका हुआ। निष्ठुर, नृशंस। (पुं०) पाण्डु राजा का नाम।

जरण—(वि०) [√जॄ+णिच्+ल्यु] जीर्ण, पुराना। (न०) बुढ़ापा। जीरा। स्याह जीरा। हींग। कसौंजा। काला नमक।

जरत्—(वि०) [√जॄ+अतृन्] बूढ़ा। जीर्ण। (पुं०) [√जॄ+शतृ] बूढ़ा आदमी।
—कारु–(पुं०) एक महर्षि का नाम जिसने वासुकि की बहिन के साथ शादी की थी।
—गव (**जरद्गव**)–(पुं०) बूढ़ा बैल; 'जरद्गववहः शर्वस्तथापि परमेश्वरः' पं० २.१५६।

जरती—(स्त्री०) [जरत्+ङीप्] बूढ़ी स्त्री, बुढ़िया।

जरन्त—(पुं०) [√जॄ+झच्, अन्तादेश] बूढ़ा आदमी। भैंसा।

जरा—(स्त्री०) [√जॄ+अङ्—टाप्] बुढ़ापा। निर्बलता। बुढ़ाई। पाचनशक्ति। एक राक्षसी का नाम जिसने जरासंध के शरीर के दो टुकड़ों को जोड़ा था।**—अवस्था** (**जरावस्था**)–(स्त्री०) वार्धक्य, वृद्धता।**—जीर्ण** (वि०) बुढ़ापे से जिसके अंग और इंद्रियाँ शिथिल हो गई हों, जरा से जर्जर।
—सन्ध[जरया तदाख्यया प्रसिद्धया राक्षस्या कृता सन्धा देहसंयोजनम् अस्य, ब० स०] (पुं०) यह बृहद्रथ का पुत्र था और मगध देश का राजा था। इसकी बेटी कंस को ब्याही थी। जब उसने सुना कि श्रीकृष्ण ने इसके दामाद को मार डाला है तब इसने १८ बार मथुरा पर चढ़ाई की। इसकी चढ़ाइयों से तंग आकर यादवों को मथुरा त्यागनी पड़ी और वे मथुरा से सुदूर, समुद्रस्थित, द्वारकापुरी में जा बसे थे। अन्त में महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में श्रीकृष्णचन्द्र जी की अभिसन्धि से भीम ने इसका वध किया था।

जरायणि—(पुं०) [जराया राक्षस्या अपत्यम्, जरा+फिञ्] जरासन्ध का नाम ।

जरायु—(न०) [जराम् एति, जरा√इ+युण्] केंचुली । गर्भाशय की ऊपर की झिल्ली । गर्भाशय । भग ।—**ज**—(वि०) वह प्राणी जो खेड़ी में लिपटा हुआ पैदा हो या जिसका जन्म गर्भाशय में हो, पिंडज । यथा मनुष्य, मृग आदि ।

जरित्—(वि०) [जरा+इतच्] जरायुक्त, बूढ़ा ।

जरिन्—(वि०) [जरा+इनि][स्त्री०—जरिणी] बूढ़ा, अधिक उम्र का ।

जरूथ—(न०) [√जृ+ऊथन्] मांस । (वि०) कटुभाषी ।

√जर्ज्—भ्वा० पर० सक० झिड़कना । मारना, ताड़ना करना । जर्जति, जर्जिष्यति, अजर्जीत् । तु० पर० सक० निंदा करना । फटकारना । जर्जति, जर्जिष्यति, अजर्जीत् ।

जर्जर—(वि०) [√जर्ज्+अर] बूढ़ा । जीर्ण । घिरा हुआ । फटा हुआ । टुकड़े-टुकड़े किया हुआ । चीरा हुआ । घायल । पोला । (पुं०) पत्थरफूल । इंद्र की ध्वजा । सेवार ।

जर्जरित—(वि०) [जर्जर+णिच्+क्त] जीर्ण किया हुआ, पुराना । घिसा हुआ । टुकड़े-टुकड़े किया हुआ । टुकड़े-टुकड़े हो कर बिखरा हुआ । निकम्मा किया हुआ ।

जर्जरीक—(वि०) [√जर्ज्+इक नि० साधुः] क्षीण । पुराना । छिद्रों से परिपूर्ण, छिद्रान्वित ।

जर्तु—(पुं०) [√जन्√तु, र आदेश] भग, योनि । हाथी ।

√जल्—भ्वा० पर० अक० तेज होना । जलति, जलिष्यति, अजालीत्—अजलीत् । चु० उभ० सक० ढाँकना । जालयति—ते ।

जल—(न०) [√जल्+अच्] पानी । खस । पूर्वाषाढा नक्षत्र । सुगंधवाला । (वि०) [=जड, डलयोरभेदः] दे० 'जड' ।—**अञ्चल** (जलाञ्चल)–(न०) चश्मा, सोता । प्राकृतिक जल-प्रवाह । काई, सिवार ।—**अञ्जलि** (जलाञ्जलि)–(पुं०) अञ्जलीभर जल । जलतर्पण; 'कुपुत्रमासाद्य कुतो जलाञ्जलिः' ।—**अटन** (जलाटन)– (पुं०) वगुला ।—**अटनी** (जलाटनी)– (स्त्री०) जोंक, जलौका ।—**अण्टक** (जलाण्टक)–(न०) मगर, नक्रराज ।—**अत्यय** (जलात्यय)–(पुं०) शरद्ऋतु ।—**अधिदैवत** (जलाधिदैवत)–(पुं०) (न०) वरुण । पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र ।—**अधिप** (जलाधिप)–(पुं०) वरुण ।—**अम्बिका** (जलाम्बिका) –(स्त्री०) कूप, कुआँ ।—**अर्क** (जलार्क)–(पुं०) जल में सूर्यमण्डल का प्रतिविम्ब ।—**अर्णव** (जलार्णव)–(पुं०) वर्षाऋतु । मीठे जल का समुद्र ।—**अर्थिन्** (जलार्थिन्) –(वि०) प्यासा ।—**अवतार** (जलावतार) –(पुं०) नदी का घाट ।—**अष्ठीला** (जलाष्ठीला)–(पुं०) वृहद् चौकोर तालाव ।—**असुका** (जलासुका)– (स्त्री०) जोंक ।—**आकार** (जलाकार)– (न०) सोता । फुआरा, फव्वारा । कूप ।—**आकांक्ष** (जलाकांक्ष), —**कांक्ष**,—**कांक्षिन्**—(पुं०) हाथी ।—**आखु** (जलाखु) (पुं०) उदविलाव ।—**आगम** (जलागम)–(पुं०) वर्षा ऋतु ।—**आत्मिका** (जलात्मिका)– (स्त्री०) जोंक ।—**आधार** (जलाधार)–(पुं०) तालाव, जलाशय ।—**आयुका** (जलायुका)– (स्त्री०) जोंक ।—**आर्द्र** (जलार्द्र)–(वि०) भींगा, तर । (न०) भींगा कपड़ा ।—**आर्द्रा** (जलार्द्रा) –(स्त्री०) पानी से तर पंखा ।—**आलोका** (जलालोका)–(स्त्री०) जोंक ।—**आवर्त** (जलावर्त)–(पुं०) भँवर ।—**आशय** (जलाशय)–(पुं०) तालाव । मछली । समुद्र ।—**आश्रय** (जलाश्रय)–(पुं०) तालाव । जलभवन ।—**आह्वय** (जलाह्वय) –(न०) कमल ।—**इन्द्र** (जलेन्द्र)–(पुं०)

वरुण। समुद्र।—**इन्धन (जलेन्धन)**–(न०) वाड़वानल।—**इभ (जलेभ)**–(पुं०) सूँस, शिशुमार।—**ईश (जलेश)**, —**ईश्वर (जलेश्वर)**–(पुं०) वरुण। समुद्र।—**उच्छ्वास (जलोच्छ्वास)** (पुं०) (नदी-आदि के) जल का किनारे से ऊपर उठकर, उछल कर बहना। अतिरिक्त जल का निकास। नदी की बाढ़।—**उदर (जलोदर)**–(न०) एक रोग जिसमें पेट की त्वचा के नीचे पानी इकट्ठा हो जाता है।—**उरगी (जलोरगी)**–(स्त्री०) जोंक।—**ओकस् (जलौकस्)**–(स्त्री०),—**ओकस (जलौकस)**–(पुं०) जोंक।—**कण्टक** (पुं०) सिंघाड़ा। घड़ियाल।—**कपि**–(पुं०) सूँस।—**कपोत**–(पुं०) जल कबूतर जो सदा पानी के किनारे रहता है।—**करङ्क**–(पुं०) शंख। नारियल। बादल। लहर। कमल।—**कल्क**–(पुं०) कीचड़। सेवार।—**काक**–(पुं०) पानी का कौआ।—**कान्तार**–(पुं०) वरुण।—**किराट**–(पुं०) शार्क मछली। घड़ियाल। सूँस।—**कुक्कुट**–(पुं०) जलमुर्ग, मुरगाबी, कुलंज।—**कुन्तल**,—**केश**–(पुं०) सिवार।—**कूपी**–(स्त्री०) चश्मा, सोता। कूप। तालाब, पोखरा। भँवर।—**कूर्म**–(पुं०) सूँस।—**केलि**–(पुं०),—**क्रीडा**–(स्त्री०) जल में का खेल जैसे एक दूसरे पर पानी उलीचना।—**क्रिया**–(स्त्री०) जलतर्पण।—**गुल्म**–(पुं०) कछुआ। चौखूँटा तालाब। भँवर।—**चर**–(पुं०) (**जलेचर** भी रूप होता है) जल में रहने वाला प्राणी, जल-जंतु।—०**जीव**—०**आजीव (जलचराजीव)**–(पुं०) मछुवा, माहीगीर।—**चारिन्**–(पुं०) जल में रहने वाला जन्तु। मछली।—**ज**–(वि०) जल में पैदा होने वाला। जल में रहने वाला। (पुं०) जलजन्तु। मछली। सिवार, काई। चन्द्रमा। (पुं०, न०) शंख। घोंघा। कमल।—**जन्तु**–(पुं०) मछली। कोई भी जल में रहने वाला जीव।—**जन्तुका**–(स्त्री०) जोंक।—**जन्मन्**–(न०) कमल।—**जिह्व**–(पुं०) मगर, घड़ियाल।—**जीविन्**–(पुं०) धीवर, माहीगीर, मछुवा।—**तरङ्ग**–(पुं०) लहर। एक बाजा जिसमें पानी से भरी कटोरियों पर छड़ी से आघात कर ध्वनि उत्पन्न की जाती है।—**ताडन**–(न०) पानी पीटना, बेकार काम।—**तापिन्**–(पुं०) हिलसा मछली।—**तिक्तिका**–(स्त्री०) सलई का पेड़।—**त्रा**–(स्त्री०) छाता।—**त्रास**–(पुं०) जलातङ्क रोग, पागल कुत्ते के काटने से उत्पन्न पागलपन।—**द**–(पुं०) बादल; 'जायन्ते विरला लोके जलदा इव सज्जनाः' पं० १.२९। कपूर।—**दर्दुर**–(पुं०) वाद्ययंत्र विशेष।—**देवता**–(स्त्री०) वरुण।—**द्रोणी**–(स्त्री०) नाव का पानी उलीचने का हत्था, डोलची।—**धर**–(पुं०) बादल। समुद्र।—**धि**–(पुं०) समुद्र। चार की संख्या।—**नकुल**–(पुं०) ऊदबिलाव।—**निधि**–(पुं०) समुद्र। चार की संख्या।—**निर्गम**–(पुं०) नाली, पानी निकलने का मार्ग। जलप्रपात।—**नीली**–(स्त्री०) सिवार, काई।—**पटल**–(न०) बादल।—**पति**–(पुं०) समुद्र। वरुण।—**पथ**–(पुं०) जल-मार्ग। नहर आदि। समुद्री यात्रा।—**पारावत**–(पुं०) दे० 'जलकपोत'।—**पुष्प**–(न०) जल में उत्पन्न होने वाला फूल।—**पूर**–(पुं०) जल की बाढ़। जल से परिपूर्ण चश्मा।—**पृष्ठजा**–(स्त्री०) काई, सिवार।—**प्रदान**–(न०) तर्पण।—**प्रपा**–(स्त्री०) पौसरा, प्याऊ।—**प्रपात**–(पुं०) झरना। किसी नदी-नाले का पहाड़ के ऊपर से नीचे गिरना।—**प्रलय**–(पुं०) संपूर्ण सृष्टि का जलमग्न हो जाना।—**प्रान्त**–(पुं०) नदी, झील आदि के पास की जमीन। नदीतट।—**प्राय**–(न०) वह देश जिसमें जल का बाहुल्य हो।—**प्रिय**–(पुं०) चातक पक्षी। मछली।

—प्रिया—(स्त्री०) चातकी । पार्वती ।—प्लव—(पुं०) ऊदविलाव ।—प्लावन—(न०) दे० 'जल-प्रलय' । वाढ़ ।—वन्धु—(पुं०) मछली । —वालक,—वालक—(पुं०) विन्ध्यगिरि ।—वालिका—(स्त्री०) विजली । —विडाल— (पुं०) ऊदविलाव ।—विम्व—(पुं०, न०) वुलवुला । बिल्व—(पुं०) झील । सरोवर । कछुआ । सूँस । केकड़ा ।—भू—(पुं०) वादल । कपूर विशेष । (स्त्री०) पानी जमा रखने का स्थान ।—भृत्—(पुं०) वादल । घड़ा । कपूर । मक्षिका—(स्त्री०) जल का एक कीड़ा ।—मण्डूक—(न०) जल-दर्दुर । एक प्रकार का वाजा ।—मार्ग—(पुं०) नाली, पनाला, पानी निकलने का रास्ता । नहर ।— मुच्—(पुं०) वादल । कपूर विशेष ।—मूर्ति (पुं०) शिव ।—मूर्तिका—(स्त्री०) ओला ।—मोद—(पुं०) खँस ।—यन्त्र—(न०) फुहारा । कुएँ आदि से पानी निकालने का यंत्र (रहट आदि) । जलघड़ी ।—०गृह, —०मन्दिर— (न०) वह मकान जिसमें या जिसके आस-पास फुहारे हों । वह मकान जिसके चारों ओर पानी हो ।—यात्रा—(स्त्री०) जलमार्ग से नाव आदि के द्वारा यात्रा । तीर्थजल लाने के लिये यजमान की सविधि यात्रा ।—यान—(न०) जहाज । नौका ।—रण्ड,—रुण्ड—(पुं०) भँवर । फुहार । बूँद । सर्प ।—रस—(पुं०) नमक, लवण ।—राशि—(पुं०) समुद्र ।—रुह—(पुं०, न०) कमल ।—रूप—(पुं०) मगर, घड़ियाल ।—लता—(स्त्री०) लहर ।—वायस—(पुं०) कौड़िल्ला पक्षी ।—वाह—(पुं०) वादल ।—वाहनी—(स्त्री०) नाली, परनाला । नहर ।—विन्दुजा—(स्त्री०) याव-नाली शर्करा, जुआर की चीनी ।—विषुव—(न०) तुला की संक्रांति ।—वृश्चिक—(पुं०) झींगा मछली ।—व्याल—(पुं०) पानी में रहने वाला साँप, डेंड़हा ।—शय,—शयन,—शायिन्—(पुं०) विष्णु ।—शूक—(न०) सिवार, काई ।—शूकर—(पुं०) मगर, घड़ियाल ।—शोष—(पुं०) सूखा, अनावृष्टि ।—सर्पिणी—(स्त्री०) जोंक ।—सूचि—(स्त्री०) सूँस, शिशुमार । काक । जोंक । कंकत्रोट नामक मछली । कछुआ । सिंघाड़ा ।—स्थान—(न०),—स्थाय—(पुं०) सरोवर । झील । तालाव ।—हस्तिन्—(पुं०) सील की जाति का एक स्तनपायी जलजंतु जिसकी शकल हाथी से थोड़ी-वहुत मिलती है, जल-हाथी । —हारिणी—(स्त्री०) पानी ढोने वाली, पनि-हारिन । नाली ।—हास—(पुं०) फेन, झाग । समुद्रफेन ।

जलङ्गम—(पुं०) [जलं ग्रामान्तजलभूमिं गच्छति, जल√गम्, खच्] चाण्डाल ।

जलमसि—(पुं०) [जलेन जलाकारेण मस्यति परिणमति, जल√मस् + इन्] वादल । कपूर ।

जलाका, जलालुका, जलिका, जलुका, जलूका—(स्त्री०) [जले आकायति प्रकाशते, जल—आ√कै+क—टाप्] [जले अलति गच्छति, जल√अल्+उक—टाप्] [जलम् उत्पत्तिस्थानत्वेन अस्ति अस्याः, जल+ठन्—इक, टाप्] [जलम् ओको यस्याः पृषो० साधुः] जोंक ।

जलेज, जलेजात—(न०) [जले√जन्+ड] [जले जातम्, सप्तम्या अलुक्] कमल ।

जलेशय—(पुं०) [जले शेते, √शी+अच्, सप्तम्या अलुक्] मछली । विष्णु ।

√जल्प्—भ्वा० पर० सक०, अक० बोलना । वातचीत करना । वर्णना । अस्पष्ट बोलना । तोतलाना । जल्पति, जल्पिष्यति, अजल्पीत् ।

जल्प—(पुं०) [√जल्प् + अच्] कथन । वकवाद । तर्क । वहस । (वि०) [√जल्प्+अच्] दूसरे की वात काट कर अपनी वात रखने वाला ।

जल्पक, जल्पाक—(वि०) [जल्प+कन्]

[जल्+षाकन्] [स्त्री०—जल्पिका] वातूनी, वक्की ।

जल्पन—(न०) [√जल्प्+ल्युट्] कहना । बक-बक करना ।

जव—(पुं०) [√जु+अप्] तेजी, फुरती ; 'जवेन पीठादुदतिष्ठदच्युतः' शि० १.१२ । वेग । (वि०) तेज । वेगवान् ।—**अधिक** (**जवाधिक**)—(पुं०) वेगवान् घोड़ा । युद्ध की शिक्षा प्राप्त घोड़ा ।—**अनिल** (**जवानिल**)—(पुं०) आँधी, तूफान ।

जवन—(वि०) [√जु + ल्यु] [स्त्री०—**जवनी**] तेज, फुर्तीला । (पुं०) युद्ध की शिक्षा प्राप्त घोड़ा । वेगवन्त घोड़ा । (न०) [√जु +ल्युट्] तेजी, फुर्ती । वेग ।

जवनिका, जवनी—(स्त्री०) [जूयते आच्छाद्यते अनया, √जु+ल्युट्—ङीप्, जवनी] [जवनी + कन्—टाप्, ह्रस्व, जवनिका] कनात । पर्दा; 'नरः संसारान्ते विशति यमधानीजवनिकाम्' । चिक ।

जवस—(पुं०) [√जु+असच्] घास ।

जवा—(स्त्री०) [जव+टाप्] जवाकुसुम, अड़हुल ।

√जष्—भ्वा० पर० सक० मारना । जषति, जषिष्यति, अजषीत् ।

√जस्—दि० पर० सक० मुक्त करना, छोड़ देना । जस्यति, जसिष्यति, अजसत्—अजासीत्—अजसीत् । चु० उभ० सक० मारना । तिरस्कार करना । जासयति—ते, जासयिष्यति—ते, अजीजसत्—त ।

जहक—(पुं०) [√हा+कन्, द्वित्व] समय, काल । बच्चा । साँप की केंचुली ।

जहत्स्वार्था—(स्त्री०) [जहत् स्वार्थो याम्] लक्षणा का एक भेद जिसमें पद या वाक्य वाच्यार्थ का त्याग कर उससे सम्बद्ध दूसरा अर्थ प्रकट करता है ।

जहदजहल्लक्षणा—(स्त्री०) [जहच्च अजहच्च स्वार्थो याम् तादृशी लक्षणा] लक्षणा का एक भेद जिसमें कुछ अर्थों या विषयों का त्याग कर किसी एक को ग्रहण किया जाता है ।

जहानक—(पुं०) [√हा+शानच्+कन्] कल्पान्त प्रलय ।

जहु—(पुं०) [√हा+उण्, द्वित्व] किसी भी पशु का बच्चा ।

जह्नु—(पुं०) [√हा+नु, द्वित्व, आकारलोप] सुहोत्र राजा का पुत्र जिसने गङ्गा को अपना दत्तक बनाया था ।

जागर—(पुं०) [√जागृ + घञ्, गुण] जागरण; 'रात्रिजागरपरो दिवाशयः' र० ६.३४ । जाग्रत् अवस्था का दृश्य । कवच, जरहबख्तर ।

जागरण—(न०) [√जागृ+ल्युट्] जागना, निद्रा का अभाव । सावधानी, सतर्कता ।

जागरा—(स्त्री०) [√जागृ+अ—टाप्] दे० 'जागरण' ।

जागरित—(वि०) [√जागृ+क्त] जागा हुआ । सतर्क । सावधान । (न०) जागृति, जागरण । सांख्य और वेदान्त के मत से वह अवस्था जिसमें मनुष्य को इन्द्रियों द्वारा सब प्रकार के व्यवहारों और कार्यों का अनुभव होता रहे ।

जागरितृ, जागरूक—(वि०) [स्त्री०—**जागरित्री**] [√जागृ+तृच्] [√जागृ+ऊक] जागता हुआ । जागरणशील । सावधान, सतर्क ।

जागर्ति, जागर्या, जागिया—(स्त्री०) [√जागृ+क्तिन्] [√जागृ+श, यक्, गुण, टाप्] [√जागृ+श, रिङादेश] जागरण, जागते रहना ।

जागुड—(न०) [जगुड+अण्] केसर, जाफ़रान । (पुं०) एक प्राचीन जनपद और वहाँ का निवासी ।

√जागृ—अ० पर० अक० जागते रहना । सावधान रहना । रात भर बैठे रहना । नींद

में जाग जाना। पहिले से देखना। जागर्ति, जागरिष्यति, अजागरीत्।

जाघनी—(स्त्री०) [जघन+अण्—ङीप्] पूँछ। जंघा।

जाङ्गल—(वि०) [स्त्री०—**जाङ्गली**][जङ्गल+अण्] जंगली। वहशी, वर्बर। उजाड़, सूना। (पुं०) तीतर विशेष, कपिञ्जल पक्षी। (न०) मांस। हिरन का मांस। कुरुदेश का समीपवर्ती देश विशेष। वह प्रदेश जहाँ पानी कम वरसे, धूप-गर्मी अधिक कड़ी हो, पेड़-पौधे कम हों।

जाङ्गुल—(न०) [जङ्गुल+अण्]जहर, सर्प आदि विषैले जानवरों का जहर।

जाङ्गुलि, जाङ्गुलिक—(पुं०) [जङ्गुल+इञ्] [जङ्गुल+ठञ्—इक] सँपेरा, विषवैद्य।

जाङ्घिक—(पुं०) [जंघा+ठञ्—इक] धावक, हरकारा। ऊँट।

जाजिन्—(पुं०) [√जज्+णिनि] योद्धा, लड़ने वाला।

जाठर—(वि०) [जठर+अण्] [स्त्री०—**जाठरी**] पेट सम्वन्धी या पेट का। (पुं०) पाचन शक्ति, जठराग्नि।

जाड्य—(न०) [जड+ष्यञ्] ठिठुरन। सुस्ती, अकर्मण्यता। मूर्खता। जड़ता। जिह्वा का स्वादराहित्य।

जात—(वि०) [√जन्+क्त] जनमा हुआ। उत्पन्न। प्रकट, व्यक्त। घटित। संगृहीत। (न०) जन्म। वर्ग। समूह; 'निःशेषविश्राणितकोशजातम्' र० ५.१। प्राणी। (पुं०) जात, अनुजात, अतिजात और अपजात इन चार प्रकार के पारिभाषिक पुत्रों में से एक पुत्र, वेटा।—**अपत्या** (**जातापत्या**)—(स्त्री०) माता।—**अमर्ष** (**जातामर्ष**)—(वि०) क्रुद्ध।—**अश्रु** (**जाताश्रु**)—(वि०) आँसू वहाता हुआ, रोता हुआ।—**इष्टि** (**जातेष्टि**)-(स्त्री०)पुत्रोत्पत्ति के समय किया जाने वाला धर्मकृत्य विशेष।—**उक्ष** (**जातोक्ष**)—(पुं०) जवान वैल।—**कर्मन्**—(न०) वालक उत्पन्न होने के समय किया जाने वाला एक संस्कार।—**कलाप**—(वि०) पूँछ वाला (जैसे मोर)।—**काम**—(वि०) मोहित, लट्टू, लवलीन।—**पक्ष**—(वि०) पंखों-वाला।—**पाश**-(वि०) वेड़ी पड़ा हुआ।—**प्रत्यय**—(वि०) विश्वास दिलाया हुआ।—**मन्मथ**—(वि०) प्रेमासक्त।—**मात्र**—(वि०) हाल का जन्मा हुआ।—**रूप**—(वि०) सुन्दर। (न०) धतूरा। सोना।—**वेदस्**—(पुं०) अग्नि। सूर्य। चित्रक वृक्ष। परमेश्वर।—**वेदसी**—(स्त्री०) दुर्गा।—**वेश्मन्**—(न०) सौरी, सूतिका-गृह।

जातक—(वि०) [जात+कन्] उत्पन्न। (पुं०) सद्योजात वालक। भिक्षुक। (न०) जातकर्म, वालक के उत्पन्न होने पर किया जाने वाला कर्म विशेष। समान वस्तुओं का जोड़ या ढेर। फलित ज्योतिष का वह अंग जिससे नवजात शिशु का शुभाशुभ फल कहा जाता है। वह वौद्ध ग्रन्थ जिसमें वुद्ध के पूर्वजन्मों की कथाएँ लिखी हैं।—**ध्वनि**—(पुं०) जोंक।

जाति—(स्त्री०) [√जन्+क्तिन्] उत्पत्ति, जन्म। जन्म से निश्चित होने वाली जाति। वर्ण। वंश, कुल। श्रेणी, कक्षा। किसी वस्तु या जीव की पहिचान का चिह्न या विशेषता। अग्निकुण्ड। जायफल। चमेली का फूल या पौधा। अव्यवहार्य उत्तर (न्याय में)। सरगम, सा रे ग म प धा नी सा। छन्द विशेष।—**अन्ध** (**जात्यन्ध**)—(पुं०) जन्म से अन्धा।—**कोश,—कोष**—(पुं०,न०) जायफल।—**कोशी,—कोषी**—(स्त्री०) जायफल का छिलका।—**धर्म**-(पुं०) वर्ण धर्म। जातीय गुण।—**ध्वंस**—(पुं०) वर्णच्युति या वर्णाधिकार से वहिष्कृति।—**पत्री**—(स्त्री०) जायफल का ऊपरी छिलका।—**ब्राह्मण**—(पुं०) केवल जन्म से ब्राह्मण किन्तु कर्म से नहीं। अपढ़ ब्राह्मण।—**भ्रंश**—(पुं०) जाति

भ्रष्टता, जातिच्युति ।--०कर-(न०) नौ प्रकार के पापों में से एक जिसके करने से जाति नष्ट हो जाती है। मनु के मत से--(ब्राह्मण को कष्ट देना, शराब पीना, मित्र के साथ कुटिलता का व्यवहार करना और पुरुष के साथ मैथुन करना जातिभ्रंशकर हैं)।--**लक्षण**-(न०) जातीय पहचिान ।--**वैर**-(न०) स्वाभाविक शत्रुता ।--**वैरिन्**-(पुं०) स्वाभाविक वैरी ।--**शब्द**-(पुं०) जातिवाचक शब्द, जैसे हंस, मृग आदि ।--**सङ्कर**-(पुं०) दोगला, वर्णसङ्कर ।--**सम्पन्न** (वि०) कुलीन, उत्तम कुल का ।--**सार**-(न०) जायफल ।--**स्मर**-(वि०) पिछले जन्म का वृत्तान्त स्मरण रखने वाला ।--**हीन** (वि०) नीच जाति का । जातिच्युत ।

जातिमत्--(वि०) [जाति+मतुप्] कुलीन, उत्तम कुल का ।

जातु--(अव्य०) [√जन्+क्तुन्, पृषो० साधुः] शायद, सम्भवतः, कदाचित्; 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति' गीता । कभी-कभी । एक बार । किसी समय । किसी दिन ।--**धान**-(पुं०) [धीयते सन्निधीयते इति धानम् सन्निधानम्, जातु गर्हितं धानम् यस्य, ब० स०] राक्षस । दैत्य । पिशाच ।

जातुष--(वि०) [स्त्री०--**जातुषी**] जतु+अण्, षुक्] लाख का बना या लाख से ढका हुआ । चिपचिपा, चिपकने वाला ।

जातू--(न०) [जान् तूर्वति हिनस्ति, √तूर्व्+क्विप्, पूर्वपददीर्घ] वज्र ।--**कर्ण**-(पुं०) एक ऋषि जिनका जन्म २८ वें द्वापर में हुआ था । ये एक उपस्मृति के रचयिता हैं ।

जात्य--(वि०) [जाति+यत्] एक ही कुल वाला । कुलीन । मनोहर । प्रिय । त्रिकोण ।

जानकी--(स्त्री०) [जनक+अण्--ङीप्] जनक की पुत्री, सीता ।

जानपद--(पुं०) [जनपद+अण्] जनपद-वासी, ग्रामवासी । कर, मालगुजारी । देहात । प्रजा । (वि०) जनपद सम्बन्धी ।

जानु--(न०) [√जन्+ञुण्] घुटना ।--**फलक**--**मण्डल**-(न०) घुटने के जोड़ के ऊपर की हड्डी ।--**विज्ञानु**-(न०) खड्गयुद्ध का एक प्रकार, तलवार के ३२ हाथों में से एक ।

जानुदघ्न--(वि०) [जानु+दघ्नच्] घुटने तक ऊँचा या गहरा ।

जाप--(पुं०) [√जप्+घञ्] जप, फुसफुसाहट । मन्त्र का जप ।

जाबाल--(पुं०) [जबाला+अण्] सत्यकाम ऋषि जिनकी माता का नाम जबाला था । बकरों का समूह ।

जामदग्न्य--(पुं०) [जमदग्नि+यञ्] परशुराम का नाम ।

जामा--(स्त्री०) [√जम्+अण्--टाप्] लड़की । बहू, वधू ।

जामातृ--(पुं०) [जायां माति, मिमीते, मिनोति वा,√मा+तृच्] दामाद । प्रभु, स्वामी । सूरजमुखी । धव का पेड़ ।

जामि--(स्त्री०) [√जम्+इञ्] बहिन । लड़की । पुत्रवधू । निकट की स्त्री, नातेदारिन । सती साध्वी स्त्री ।

जामित्र--(न०) [=जायमित्र] लग्न से सातवाँ घर या जन्मलग्न से ७वीं लग्न ।

जामेय--(पुं०) [जामि+ढञ्] भाँजा, बहिन का पुत्र ।

जाम्बव--(न०) [जम्बू+अण्] सुवर्ण, सोना । जामुन-फल ।

जाम्बवत्--(पुं०) [जाम्ब+मतुप्] रीछों के राजा, जिन्होंने लंका पर आक्रमण करने में श्रीरामचन्द्र जी की सहायता की थी ।

जाम्बीर, जाम्बील--(पुं०) [जम्बीर+अण्, पक्षे रलयोरभेदः] जँबीरी नीबू ।

जाम्बूनद--(न०) [जम्बूनद+अण्]

सुवर्ण, सोना। सोने का आभूषण। धतूरे का पौधा।

जाया—(स्त्री०) [√जन्+यक्,आत्व]स्त्री। स्त्री को जाया कहने का कारण मनुस्मृति-कार ने यह बतलाया है—'पतिर्भार्यां सम्प्र-विश्य गर्भो भूत्वेह जायते, जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः।'—**अनुजीविन्** (**जायानुजीविन्**),—**आजीव** (**जायाजीव**),——**अनु**-(पुं०) नट, नचैया। रण्डी का पति। भिक्षुक, मोहताज।

जायिन्—(वि०) [√जि+णिनि] [स्त्री०—**जायिनी**] जीतने वाला, जयशील। (पुं०) ध्रुपद की जाति का एक ताल।

जायु—(पुं०) [√जि+उण्] औषध, दवा। वैद्य। (वि०) जयशील।

जार—(पुं०) [जीर्यति स्त्रियाः सतीत्वम् अनेन, √जॄ+घञ्] उपपति, आशिक; 'रथकारः स्वकां भार्यां सजारां शिरसावहत्' पं० ४.५४।—**ज**-**जन्मन्**, —**जात**-(पुं०) दोगला।—**भरा**-(स्त्री०) छिनाल औरत।

जारिणी—(स्त्री०) [जार+इनि—ङीप्] छिनाल औरत।

जाल—(न०) [√जल्+ण]सूत, सन आदि की जालीदार बुनी हुई चीज जिससे मछलियाँ, चिड़ियाँ आदि फँसाते हैं। फंदा। मकड़ी का जाला। कवच। रोशनदान, खिड़की। संग्रह, समुदाय। जादू। माया। अनखिला फूल।—**अक्ष** (**जालाक्ष**)-(पुं०) झरोखा, खिड़की। (पुं०) सूराख, छेद।—**कर्मन्**-(न०) मछली पकड़ने का धंधा या पेशा।—**कारक**-(पुं०) जाल बनाने वाला। मकड़ी।—**गोणिका**-(स्त्री०) दही मथने की हाँड़ी, दहेंड़ी।—**पाद्**,—**पाद**-(पुं०) हंस।—**प्राया**-(स्त्री० कवच, जिरहबख्तर।

जालक—(न०) [जाल+कन् वा जाल√कै+क] जाल। समूह। झरोखा, खिड़की। कली, अनखिला फूल; 'अभिनवैर्जालकैर्मालतीनाम्' मे० ९८। चूड़ामणि। घोंसला। भ्रम, धोखा।—**मालिन्**-(वि०) अवगुण्ठित, घूंघर।

जालकिन्—(पुं०) [जालक+इनि] बादल।

जालकिनी—(स्त्री०) [जालकिन्+ङीप्] भेड़।

जालिक—(पुं०) [जाल+ठन्] माहीगीर, मछुआ। बहेलिया, चिड़ीमार। मकड़ी। सूबे-दार। बदमाश, गुंडा।

जालिका—(स्त्री०) [जालिक+टाप्] जाल कवच। मकड़ी। जोंक। विधवा। लोहा। घूंघट। ऊनी वस्त्र।

जालिनी—(स्त्री०) [जाल+इनि—ङीप्] चित्र-शाला। तसवीरों से सुसज्जित कमरा।

जाल्म—(वि०) [√जल्+णिच्+म (बा०)] [स्त्री०—**जाल्मी**] निष्ठुर, नृशंस। कड़ा, सख्त। दुस्साहसी, अविवेकी। (पुं०) बदमाश। धनहीन। नीच।

जाल्मक—(वि०) [जाल्म+कन्] [स्त्री०—**जाल्मिका**] घृणित, नीच, कमीना।

जाल्य—(वि०) [√जल्+ण्यत् वा जाल+यत्] जाल में फँसाये जाने योग्य। (पुं०) शिव।

जावन्य—(न०) [जवन+ष्यञ्] वेग, तेजी शीघ्रता।

जाह्नवी—(स्त्री०) [जह्नु+अण्—ङीप्] श्री गंगा जी।

√जि—भ्वा० पर० सक० जीतना, हराना। आगे बढ़ जाना। निग्रह करना। जयति, जेष्यति, अजैषीत्।

जि—(पुं०) [√जि+ड] पिशाच। (वि०) जीतने वाला।

जिगत्नु—(पुं०) [√गम्+त्नु, सन्वद्भावः, तेन द्वित्वम्] प्राणवायु।

जिगीषा—(स्त्री०) [√जि+सन्+अ—टाप्] जीतने की अभिलाषा; 'यानं सस्मार कौबेरं

वैवस्वतीजिगीषया' र० १५.४५ । स्पर्धा । प्रतिष्ठा, मान, पेशा ।

जिगीषु—(वि०) [√जि+सन्+उ] विजयी होने का अभिलाषी ।

जिघत्सा—(वि०) [√अद्+सन्+अ, घसादेश] भोजन की इच्छा, भूख ।

जिघत्सु—(वि०) [√अद्+सन्+उ] खाने का इच्छुक, भूखा ।

जिघांसा—(स्त्री०) [√हन्+सन्+अ—टाप्] वध करने की अभिलाषा । प्रतिहिंसा ।

जिघांसु—(वि०) [√हन्+सन्+उ] मार डालने की इच्छा रखने वाला । (पुं०) शत्रु, वैरी ।

जिघृक्षा—(स्त्री०) [√ग्रह्+सन्+अ—टाप्] ग्रहण करने या पकड़ने की अभिलाषा ।

जिघ्र—(वि०) [√घ्रा+श, जिघ्र आदेश] सूंघने वाला । संदेह करने वाला । देखने-समझने वाला ।

जिज्ञासा—(स्त्री०) [√ज्ञा+सन्+अ—टाप्] (किसी बात को) जानने की इच्छा ।

जिज्ञासु—(वि०) [√ज्ञा+सन्+उ] किसी बात को जानने का अभिलाषी । मुमुक्षु ।

जित्—(वि०) [√जि+क्विप्] (यह समासान्त शब्द के अन्त में आता है । यथा कामजित्) जीतने वाला । वशवर्ती करने वाला, काबू में करने वाला ।

जित—(वि०) [√जि+क्त] जीता हुआ, वशवर्ती किया हुआ । संयत । जीत कर हस्तगत किया हुआ। प्राप्त । अतिशयित ।—**अक्षर** (**जिताक्षर**)–(वि०) उत्तम पाठक जो अक्षर देखते ही पढ़ सकता हो ।—**अमित्र**—(**जितामित्र**)–(वि०) वह मनुष्य जिसने अपने वैरियों को परास्त कर दिया हो, विजयी । काम, क्रोध आदि षड्रिपुओं को जीतने वाला । (पुं०) विष्णु ।—**अरि** (**जितारि**)–(वि०) दे० 'जितामित्र' । (पुं०) बुद्धदेव की उपाधि ।—**आत्मन्** (**जितात्मन्**)–(वि०) जिसने अपने मन, अपनी इंद्रियों को वश में कर लिया हो ।—**आहव**—(**जिताहव**)–(वि०) वह जिसने लड़ाई जीती हो, विजयी ।—**इन्द्रिय**—(**जितेन्द्रिय**–(वि०) अपनी इन्द्रियों को काबू में रखने वाला । जितेन्द्रिय की परिभाषा यह है :—'श्रुत्वा स्पृष्ट्वाथ दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः । न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः ।'—**काशिन्**–(वि०) विजयी होने का अभिमानी; 'चाणक्योऽपि जितकाशितया' मु० २। विजयी होने की शान दिखाने वाला ।—**कोप,—क्रोध**–(वि०) क्रोध को जीतने वाला, उद्विग्न न होने वाला ।—**नेमि**–(पुं०) पीपल की लकड़ी का बना डंडा ।—**श्रम**–(वि०) परिश्रमी, न थकने वाला।—**स्वर्ग**–(वि०) मरने के बाद शुभकर्मों द्वारा स्वर्ग में जाने वाला ।

जिति—(स्त्री०) [√जि+क्तिन्] जीत, विजय ।

जितुम, जित्तम–(पुं०) [जित् + तमप्] [जितुम=जित्तम, पृषो० साधुः] मिथुन राशि, द्वादश राशियों में तीसरी राशि ।

जित्वर—(वि०) [√जि+क्वरप्] [स्त्री० —**जित्वरी**] विजयी, फतहयाब ।

जिन—(वि०) [√जि+नक्] विजयी, फतहयाब । बहुत पुराना या बुड्ढा । (पुं०) बौद्ध या जैन साधु । जैनी अर्हतों की उपाधि । विष्णु ।—**इन्द्र** (**जिनेन्द्र**), —**ईश्वर** (**जिनेश्वर**)–(पुं०) प्रधान बौद्ध भिक्षुक, जैनियों का अर्हत ।—**सद्मन्**–(न०) जैनियों का मन्दिर ।

जिवाजिव—(पुं०) [=जीवञ्जीव, पृषो० साधुः] चकोर पक्षी ।

√**जिव्**—भ्वा० पर० सक० सींचना । जेपति, जेपिष्यति, अजेपीत् ।

जिष्णु—(वि०) [√जि+ग्स्नु] विजयी,

जीतने वाला। (पुं०) सूर्य। इन्द्र। विष्णु। अर्जुन।

जिह्म—(वि०) [√हा+मन्, द्वित्वादि नि०] तिरछा, टेढ़ा, बाँका। ऐंचाताना। अनियमित चलने वाला। दुष्ट। धुँधला। पीले रंग का। सुस्त। (न०) बेईमानी। तगर का फूल।—**अक्ष** (**जिह्माक्ष**)–(वि०) भेंड़ी आँख वाला, ऐंचा।—**ग**,—**गति**–(वि०) टेढ़ा-मेढ़ा चलने वाला। (पुं०) साँप।—**मेहन**–(पुं०) मेढक।—**योधिन्**–(वि०) बेईमानी से युद्ध करने वाला।—**शल्य**–(पुं०) खदिर वृक्ष।

जिह्व—(पुं०) [√ह्वे+ड, द्वित्वादि]जीभ।

जिह्वल—(वि०) [जिह्व √ ला+क] जिभला, चटोरा। लालची।

जिह्वा—(स्त्री०) [लिहन्ति अनया, √लिह् +वन्, नि० साधुः] जबान, जीभ। अग्नि की जिह्वा अर्थात् आग की लौ।—**आस्वाद** (**जिह्वास्वाद**)–(पुं०) चाटना, लपलपाना।—**उल्लेखनी** (**जिह्वोल्लेखनी**),—**उल्लेखनिका** (**जिह्वोल्लेखनिका**) — (स्त्री०),—**निर्लेखन**–(न०) जिह्वा का मैल साफ करने वाली वस्तु, जीभी।—**प**–(पुं०) कुत्ता। बिल्ली। चीता, बाघ। लकड़-बग्घा। रीछ।—**मूल**–(न०)जिह्वा की जड़।—**मूलीय**–(पुं०) वर्ण जिनके उच्चारण के लिये जिह्वामूल से सहायता ली जाती है।—**रद**–(पुं०) पक्षी।—**लिह्**–(पुं०) कुत्ता।—**लौल्य**–(न०) लालच, चटोरापन।—**शल्य**—(पुं०) खदिर का पेड़।

जीन—(वि०) [ज्या+क्त] बूढ़ा, पुराना। घिसा हुआ, क्षीण। (पुं०) चमड़े का थैला।

जीमूत—(वि०) [√ज्या+क्विप्, जोः तया जरया मूतः बद्धः] बुढ़ापे से बँधा हुआ। (पुं०) [जयति आकाशम्, √जि+क्त, मुट्, दीर्घ] बादल; 'जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिं' मे० ४। पर्वत। इन्द्र। सूर्य। नागरमोथा। देवताड़ वृक्ष। एक ऋषि।—**कूट**–(पुं०) पहाड़।—**वाहन**–(पुं०) इन्द्र। विद्याधरों के एक राजा का नाम। नागानन्द नाटक का प्रधान पात्र।—**वाहिन्**–(पुं०) धूम, धुआँ।

जीर—(पुं०) [√जु+रक्, ई आदेश] तलवार। जीरा।

जीरक, **जीरण**—(पुं०) [जीर+कन्] [=जीरक पृषो० कस्य णः] जीरा।

जीर्ण—(वि०) [√जॄ+क्त]पुराना, प्राचीन। घिसा हुआ, फटा हुआ। पचा हुआ। (न०) लोबान। बुढ़ापा। (पुं०) बूढ़ा आदमी। वृक्ष।—**उद्धार** (**जीर्णोद्धार**)–(पुं०) मरम्मत, रफू।—**उद्यान** (**जीर्णोद्यान**)–(न०) उजड़ा हुआ बगीचा।—**ज्वर**–(स्त्री०)पुराना बुखार, बहुत दिनों का ज्वर।—**पर्ण**–(पुं०) कदम्ब वृक्ष।—**वाटिका**–(स्त्री०) उजड़ी हुई बगिया या मकान, खंडहर।—**वज्र**–(न०) वैक्रान्त मणि।

जीर्णक—(वि०) [जीर्ण+कन्] सूखा हुआ। मुरझाया हुआ।

जीर्णि—(स्त्री०) [√जॄ+क्तिन्] जीर्णता, पुरानापन। पाचन शक्ति।

√जीव्—भ्वा० पर० अक०, जीवित रहना। किसी वस्तु के सहारे निर्वाह करना। जीवति, जीविष्यति, अजीवीत्।

जीव—(पुं०) [√जीव्+घञ्] जीना, अस्तित्व कायम रखना। [√जीव्+क] प्राण, अन्तरात्मा। जीवात्मा। प्राणी। आजीविका, पेशा। कर्ण का नाम। मरुतों का नाम। पुष्य नक्षत्र।—**अन्तक** (**जीवान्तक**)–(पुं०) चिड़ीमार। जल्लाद, हत्यारा।—**आत्मन्** (**जीवात्मन्**)–(पुं०) चैतन्य स्वरूप एक पदार्थ जो शरीर के भीतर रहता है।—**आदान** (**जीवादान**)–(न०) मूर्च्छा, बेहोशी।—**आधान** (**जीवाधान**)–(न०) शरीर, देह।—**आधार** (**जीवाधार**)–(पुं०) हृदय।

—इन्धन (जीवेन्धन)–(न०) दहकती हुई लकड़ी, लुआठी ।—उत्सर्ग (जीवोत्सर्ग)–(पुं०) इच्छा पूर्वक जान देना, आत्महत्या । —ऊर्णा (जीवोर्णा)–(स्त्री०) जीवित पशु की ऊन ।—गृह,—मन्दिर–(न०) शरीर, देह ।—ग्राह–(पुं०) जीवित पकड़ा हुआ कैदी ।—जीव (जीवंजीव भी)–(पुं०) चकोर पक्षी ।—द–(पुं०) वैद्य । शत्रु ।—धन–(न०) पशु धन, गाय, बैल आदि ।—धानी–(स्त्री०) पृथिवी ।—पति, —पत्नी–(स्त्री०) स्त्री जिसका पति जीवित हो ।—पुत्रा,—वत्सा–(स्त्री०) बच्चे वाली स्त्री ।—मातृका–(स्त्री०) सप्तमातृका जिनके नाम ये हैं—कुमारी धनदा नंदा विमला मङ्गला बला। पद्मा चेति च विख्याताः सप्तैता जीवमातृकाः । —रक्त–(न०) रजोधर्म का रक्त या लोहू । —लोक–(पुं०) मर्त्यलोक, भूलोक । प्राणी । मानव जाति; 'आलोकमर्कादिव जीवलोकः' र० ५.५५ । —विज्ञान–(न०) जीव-जंतुओं की शरीर-रचना, वर्गीकरण, जीने के ढंग आदि का विज्ञान (जूलॉजी) ।—वृत्ति–(स्त्री०) पशु पालने का पेशा ।—शेष–(वि०) वह जिसके पास अपने प्राण को छोड़ और कुछ भी न रह गया हो ।—संक्रमण– (न०) जीव का जन्मग्रहण और शरीरत्याग, आवागमन ।—साधन–(न०) अनाज, अन्न । —साफल्य–(न०) जन्मधारण करने की सफलता ।—सू–(स्त्री०) स्त्री जिसकी सन्तान जीवित हो ।—स्थान–(न०) मर्म । हृदय ।

जीवक—(पुं०) [√जीव्+ण्वुल् वा √जीव्+णिच्+ण्वुल्] जीवधारी । बौद्धभिक्षुक । भीख पर निर्भर रहने वाला कोई भी भिक्षुक । सूदखोर । सँपेरा, साँप पकड़ने वाला । अष्टवर्ग के अन्तर्गत एक जड़ी ।

जीवत्—(वि०) [√जीव्+शतृ] [स्त्री०—जीवन्ती] जिंदा, जीवित ।—तोका (जीवत्तोका)–(स्त्री०) वह औरत जिसके बच्चे जीवित हों ।—पति,—पत्नी–(स्त्री०) स्त्री जिसका पति जीवित हो, सधवा ।—मुक्त (जीवन्मुक्त)–(वि०) परमात्मा का साक्षात्कार करने वाला, सांसारिक कर्मबन्धन से छूटा हुआ —मृत (जीवन्मृत)–(वि०) जिंदा मरा हुआ; अर्थात् जिंदा होने पर भी मुर्दे की तरह बेकार ।

जीवथ—(पुं०) [√जीव्+अथ] जीवन, अस्तित्व । कछुवा । मोर । बादल ।

जीवन—(वि०) [√जीव्+णिच्+ल्यु वा √जीव्+ल्युट्] [स्त्री०—जीवनी] जीवन-प्रद, जीवनी शक्ति देने वाला । (न०) जीवन, अस्तित्व । सञ्जीवनी शक्ति । जल । पेशा । ताजा घी । (पुं०) प्राणधारी । पवन । पुत्र । —अन्त (जीवनान्त)–(पुं०) मृत्यु, मौत । —आघात (जीवनाघात)–(न०) विष । —आवास (जीवनावास)–(पुं०) वरुण देव । शरीर ।—उपाय (जीवनोपाय)—(पुं०) आजीविका ।—औषध (जीवनौषध) –(न०) अमृत । सञ्जीवनी दवा ।

जीवनक—(न०) [जीवन+कन्] अन्न । (स्त्री०) खूराक । ठंड ।

जीवनीय—(न०) [√जीव्+अनीयर्] पानी । ताजा या टटका दूध ।

जीवन्त—(पुं०) [√जीव्+झच्] जिंदगी, अस्तित्व । दवाई ।

जीवन्तिक—(पुं०) [=जीवान्तक, पृषो० साधुः] चिड़ीमार, बहेलिया ।

जीवा—(स्त्री०) [√जीव्+णिच्+अच्—टाप् वा √ज्या+क्विप्, संप्रसारण, दीर्घ, सा अस्ति अस्य इत्यर्थे व—टाप्] जल । पृथिवी । कमान की डोरी । वृत्तांश के दोनों प्रान्तों को मिलाने वाली सरल रेखा । आजीविका के साधन । गहनों की झंकार का शब्द । वच ओषधि ।

जीवातु—(पुं०, न०) [जीवत्यनेन, √जीव्+आतु] भोजन । जीवन। पुनरुज्जीवन; 'रे हस्त

दक्षिण मृतस्य शिशोर्द्विजस्य जीवातवे विसृज शूद्रमुनौ कृपाणं' उत्त० २.१० । मुर्दे को जिलाने वाली दवा ।

जीविका—(स्त्री०) [जीव्यतेऽनया, √जीव्+अ+कन्—टाप्, इत्व] जीवन-यात्रा का साधन, रोजी, वृत्ति ।

जीवित—(वि०) [√जीव्+क्त] जीता हुआ, जीवंत, जीवनयुक्त । जिसे पुनः जीवन मिला हो । (न०) जीवन, अस्तित्व । जीवन की अवधि । आजीविका । प्राणधारी, जीव ।—**अन्तक** (**जीवितान्तक**)–(पुं०) शिव । —**ईश** (**जीवितेश**)–(पुं०) प्रेमी । पति । यम; 'जीवितेशवसतिं जगाम सा' र० ११.२० । सूर्य । चन्द्रमा ।—**काल**–(पुं०) जीवन काल या जीवन की अवधि ।—**ज्ञा**–(स्त्री०) नाड़ी, धमनी ।—**व्यय**–(पुं०) जीवनोत्सर्ग । —**संशय**–(पुं०) प्राणसङ्कट ।

जीविन्—(वि०) [जीव+इनि] [स्त्री०—**जीविनी**] जीवित, जिंदा । (पुं०) प्राणधारी ।

जीव्या—(स्त्री०) [जीव+यत्] आजीविका का साधन ।

√जु—भ्वा० पर० अक० जोर से चलना । जवति, जविष्यति, अजवीत् ।

जुकुट—(पुं०) मलय पर्वत । कुत्ता । (न०) बैंगन का पौधा ।

जुगुप्सन—(न०), **जुगुप्सा**—(स्त्री०) [√गुप्+सन्+ल्युट्] [√गुप्+सन्+अ—टाप्] भर्त्सना, फटकार । अरुचि, घृणा । निंदा ।

√जुङ्ग्—भ्वा० पर० सक० त्यागना । जुङ्गति, जुङ्गिष्यति, अजुङ्गीत् ।

जुटिका—(स्त्री०) [√जुट्(संहति, इकट्ठा होना)+क+कन्—टाप्, इत्व] शिखा, चोटी ।

√जुड्—तु० पर० सक० जाना । जुडति, जोडिष्यति, अजोडीत् । बाँधना । जुडति, जुडिष्यति, अजुडीत् । चु० पर० सक० प्रेरित करना । जोडयति, जोडयिष्यति, अजूजुडत् ।

√जुत्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । जोतते, जोतिष्यते, अजोतिष्ट ।

√जुष्—तु० आत्म० अक० सक० प्रसन्न या सन्तुष्ट होना । अनुकूल होना । पसन्द करना । उपयोग करना । अनुरक्त होना । सेवा करना । अनुसंधान करना । चुनना । तर्क करना । जुषते, जोषिष्यते, अजोषिष्ट ।

जुष्ट—(वि०) [√जुष्+क्त] प्रसन्न । सेवित । सम्पन्न । जूठा ।

जुष्य—(वि०) [√जुष्+क्यप्] सेवन करने योग्य ।

जुहुवान—(पुं०) अग्नि । चन्द्रमा । निष्ठुर व्यक्ति ।

जुहू—(स्त्री०) [जुहोति अनया, √हु+क्विप्, श्लुवद्भावेन द्वित्वादि] पलाश की लकड़ी का बना हुआ एक अर्धचन्द्राकार यज्ञपात्र । पूर्व दिशा ।

जुहोति—(स्त्री०) [√जु+श्तिप् (धात्वर्थ-निर्देश)] एक प्रकार का होम । यज्ञीयकर्म सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द विशेष ।

जू—(स्त्री०) [√जु+क्विप्] तेज चाल । वायुमण्डल । राक्षसी । सरस्वती । बैल या घोड़े के माथे पर का टीका ।

जूक—(पुं०) [ग्रीक शब्द ?] तुला राशि ।

जूट—(पुं०) [√जुट् (संहति)+अच्, नि० ऊत्व] जटा । सिर के लम्बे और आपस में चिपटे हुए बाल ।

जूटक—(न०) [जूट+कन्] जटा ।

जूति—(स्त्री०) [√जु+क्तिन्, नि० दीर्घ] वेग, तेज रफ्तार । उत्तेजना । प्रवृत्ति ।

√जूर्—दि० आत्म० सक० वध करना । अक० नाराज होना । बढ़ना । जूर्यते, जूरिष्यते, अजूरिष्ट ।

जूर्ति—(स्त्री०) [√ज्वर्+क्तिन्, ऊठ्] ज्वर ।

√जुष्—भ्वा० पर० सक० मारना। जूषति, जूषिष्यति, अजूषीत्।

√जृम्भ्—भ्वा० आत्म० अक०, सक० जमुहाई लेना। खोलना। फैलाना। बढ़ाना। छा देना, सर्वत्र व्याप्त कर देना। प्रकट करना। आराम करना। पल्टा खाना, लौटना। जृम्भते, जृम्भिष्यते, अजृम्भिष्ट।

जृम्भ—(पुं०), **जृम्भणं**-(न०), **जृम्भा, जृम्भिका**-(स्त्री०) [√जृम्भ्+घञ् [√जृम्भ्+ल्युट्] [√जृम्भ्+अ—टाप्] [जृम्भा+कन्, इत्व] जमुहाई। खिलना, प्रस्फुटन। फैलाव।

जृम्भक—(वि०) [√जृम्भ्+ण्वुल् वा √जृम्भ्+णिच्+ण्वुल्] जंभाई लेने वाला। सुस्त करने वाला। (पुं०) एक अस्त्र। एक रुद्रगण।

√जॄ—दि० पर० अक० बूढ़ा होना, पुराना पड़ जाना। जीर्यति, जरिष्यति—जरीष्यति, अजरत्—अजारीत्। क्र्या० पर० अक० बूढ़ा होना। जृणाति, जरिष्यति—जरीष्यति, अजरत्—अजारीत्।

जेतृ—(पुं०) [√जि+तृच्] जीतने वाला, विजयी। (पुं०) विष्णु।

जेन्ताक—(पुं०) [विदेशी शब्द?] गर्म कोठरी जिसमें बैठकर शरीर से पसीना निकाला जाय।

जेमन—(न०) [√जिम्+ल्युट्] भोजन करना, खाना। भोज्य पदार्थ।

√जेष्—भ्वा० पर० सक० जाना। जेषते, जेषिष्यते, अजेषिष्ट।

√जेह्—भ्वा० पर० अक० प्रयत्न करना। जेहते, जेहिष्यते, अजेहिष्ट।

जैत्र—(वि०) [स्त्री०—**जैत्री**] [जेतृ+अण्] जीतने वाला, विजयी। उत्कृष्ट; 'धनुर्जैत्रं रघुर्दधौ' र० ४.६६। (न०) विजय, जीत। उत्कृष्टता। (पुं०) पारा, पारद। एक औषध।

जैन—(पुं०) [जिन+अण्] जिनका उपासक, जैनी, जैन मतावलम्बी।

जैमिनि—(पुं०) पूर्वमीमांसा दर्शन के प्रवर्तक एक मुनि जो वेदव्यास के शिष्य थे।

जैवातृक—(वि०) [√जीव्+णिच्+आतृकन्] [स्त्री०—**जैवातृकी**] दीर्घजीवी। (पुं०) चंद्रमा। कपूर। पुत्र। दवा। किसान।

जैवेय—(पुं०) [जीवस्य गुरोः अपत्यम्, जीव+ढक्] बृहस्पति के पुत्र कच की उपाधि।

जैह्म्य—(न०) [जिह्म+ष्यञ्] टेढ़ापन, कुटिलता। असत्य।

जोङ्गट—(पुं०) [जुङ्गति अरोचकत्वं परित्यजति अनेन, √जुङ्ग्+अटन्, नि० गुण] गर्भवती स्त्री की रुचि या इच्छायें।

जोटिङ्ग—(पुं०) [जुट्+इन्, जोटि√गम्+ड, खित्वात् मुम्] शिव का नाम। महाव्रती।

जोष—(पुं०) [√जुष्+घञ्] सन्तोष। उपभोग। प्रसन्नता। शान्ति।

जोषम्—(अव्य०) [√जुष्+अम्] अपनी इच्छानुसार। सहज में। चुपचाप।

जोषा, जोषित्—(स्त्री०) [जुष्यते उपभुज्यते, √जुष्+घञ्—टाप्] [√जुष्+इति] नारी, स्त्री।

जोषिका—(स्त्री०) [√जुष्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] कलियों का गुच्छा। स्त्री।

ज्ञ—(वि०) [जानाति, √ज्ञा+क] (समासान्त शब्द के अन्त में जुड़ता है।) ज्ञाता। (पुं०) बुद्धिमान् एवं विद्वान् मनुष्य। बोधसम आत्मा। बुधग्रह। मङ्गलग्रह। ब्रह्मा।

√ज्ञप्—चु० पर० सक० जानना। जताना। मारना। तेज करना। प्रसन्न करना। स्तुति करना। ज्ञपयति, ज्ञपयिष्यति, अजिज्ञपत्।

ज्ञपित, ज्ञप्त—(वि०) [√ज्ञप्+णिच्+क्त] जाना हुआ। जताया हुआ। मारा हुआ। तुष्ट किया हुआ। तेज किया हुआ। प्रसन्न किया हुआ।

ज्ञप्ति—(स्त्री०) [√ज्ञप्+क्तिन्] ज्ञान। बुद्धि। तेज करना। तोषण। स्तुति। मारण। समझ। बुद्धि। प्रकटन। प्रख्यापन।

√**ज्ञा**––क्या० पर० सक० जानना । ढूँढ़ निकालना, पता लगा लेना । जाँचना, परीक्षा करना । पहचान लेना । सोचना-विचारना । (णिजन्त)––[**ज्ञापयति, ज्ञपयति**] सूचना देना । प्रकट करना । प्रार्थना करना । जानाति, ज्ञास्यति, अज्ञासीत् ।

ज्ञात––(वि०) [√ज्ञा+क्त] जाना हुआ, विदित ।––**सिद्धान्त**–(पुं०) वह मनुष्य जो किसी शास्त्र की पूर्ण रूप से जानकारी रखता हो ।

ज्ञाति––(पुं०) [√ज्ञा+क्तिच्] पिता । पितृवंश में उत्पन्न व्यक्ति, गोतिया, सपिण्ड । ––**भाव**–(पुं०) बिरादरी, रिश्तेदारी, नातेदारी ।––**भेद**–(पुं०) नातेदारी में मतभेद । ––**विद्**–(वि०) नगीची नातेदारी करने वाला ।

ज्ञातेय––(न०) [ज्ञाति+ढक्—एय] ज्ञातित्व । कुल, वंश का होना । नातेदारी ।

ज्ञातृ––(वि०) [√ज्ञा+तृच्] जानने वाला । (पुं०) बुद्धिमान् आदमी । परिचित व्यक्ति । जमानत, प्रतिभू ।

ज्ञान––(न०) [√ज्ञा+ल्युट्] जानना, बोध, जानकारी । सच्ची जानकारी, सम्यक् बोध; 'बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति' मनु । पदार्थ का ग्रहण करने वाली मन की वृत्ति । शास्त्रानुशीलन आदि से आत्मतत्त्व का अवगम, आत्मसाक्षात्कार । बुद्धिवृत्ति । वेद । परब्रह्म ।––**अनुत्पाद** (**ज्ञानानुत्पाद**)–(पुं०) अज्ञानता, मूर्खता ।––**आत्मन्** (**ज्ञानात्मन्**)–(वि०) सर्वविद् । बुद्धिमान् ।––**इन्द्रिय** (**ज्ञानेन्द्रिय**)–(न०) ज्ञानेन्द्रिय जो पाँच हैं । (यथा त्वच्, रसना, चक्षुस्, कर्ण, नासिका) ।––**काण्ड**–(न०) वेद का भाग विशेष, जिसमें आत्मा और परमात्मा सम्बन्धी ज्ञान है ।––**कृत**–(वि०) जानबूझ कर किया हुआ ।––**गम्य**–(वि०) ज्ञान से जानने योग्य ।––**चक्षुस्**–(वि०) ज्ञानदृष्टि रखने वाला, विद्वान् ।––**तत्त्व**–(न०) सत्यज्ञान, ब्रह्मज्ञान ।––**तपस्**–(न०) तपस्या जो सत्यज्ञान सम्पादनार्थ की जाय ।––**द**–(पुं०) गुरु ।––**दा**–(स्त्री०) सरस्वती ।––**दुर्बल**–(वि०) ज्ञान-शून्य ।–**निष्ठ**–(वि०) सत्य अथवा आध्यात्मिक ज्ञान सम्पादन में तत्पर ।––**पति**–(पुं०) गुरु । परमेश्वर ।––**मुद्र**–(वि०) ज्ञानवान् । ––**यज्ञ**–(पुं०) दार्शनिक ।––**लक्षण**–(स्त्री०) विशेषण द्वारा विशेष्य का ज्ञान । न्यायशास्त्र के अनुसार अलौकिक प्रत्यक्ष का एक भेद ।––**वापी**–(स्त्री०) काशी का एक प्रसिद्ध तीर्थ ।––**शास्त्र**–(न०) भविष्य-कथन का विज्ञान, भाग्य में लिखे को बताने की विद्या ।––**साधन**–(न०) ज्ञानेन्द्रिय ।

ज्ञानतः––(अव्य) [ज्ञान+तस्] जान-बूझ कर, इरादतन ।

ज्ञानमय––(वि०) [ज्ञान+मयट्] आध्यात्मिक ज्ञानसम्पन्न ज्ञानरूप; 'इतरो दहने स्वकर्मणां ववृते ज्ञानमयेन वह्निना' र० ८.२० । (पुं०) परब्रह्म । शिव ।

ज्ञानिन्––(वि०) [ज्ञान+इनि] ज्ञानयुक्त । जिसने आत्मज्ञान या ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है । (पुं०) ज्योतिषी । ऋषि ।

ज्ञापक––(वि०) [√ज्ञा+णिच्+ण्वुल्] जताने वाला, सूचक, बोधक । (पुं०) गुरु । स्वामी ।

ज्ञापन––(न०) [√ज्ञा+णिच्+ल्युट्] जताना, बताना । प्रकट करना ।

ज्ञापित––(वि०) [√ज्ञा+णिच्+क्त] जताया हुआ । सूचित । प्रकाशित ।

ज्ञीप्सा––(स्त्री०) [ज्ञातुम् इच्छा, √ज्ञा +सन्+अ—टाप्] जानने की अभिलाषा ।

√**ज्या**––क्या० पर अक० वृद्ध होना । जिनाति, ज्यास्यति, अज्यासीत् ।

ज्या––(स्त्री०) [√ज्या+अङ—टाप्] कमान की डोरी । प्रत्यञ्चा । वृत्तांश की सरल रेखा ।

पृथिवी । जननी, माता ।—**मिति**–(स्त्री०) रेखागणित, क्षेत्रगणित ।

ज्यानि—(स्त्री०) [√ज्या+नि] बुढ़ापा । त्याग । नदी । हानि ।

ज्यायस्—(वि०) [स्त्री०—**ज्यायसी**][अयम् अनयोः अतिशयेन प्रशस्यः वृद्धो वा, प्रशस्य वा वृद्ध+ईयसुन्, ज्यादेश] सर्वोत्कृष्ट, सर्वोत्तम । अधिकतर, बड़ा; 'प्रसवक्रमेण स किल ज्यायान्' उत्त० ६ । अधिकतर, वयस्क, बालिग ।

√**ज्यु**—भ्वा० आत्म० सक० जोना । ज्यवते ज्योष्यते, अज्योष्ट ।

ज्येष्ठ—(वि०) [अयमेषामतिशयेन वृद्धः प्रशस्यो वा, वृद्ध वा प्रशस्य+इष्ठन्, ज्यादेश] जेठा, सब से बड़ा । सर्वोत्तम । मुख्य, प्रधान । प्रथम । (पुं०) बड़ा भाई । जेठ का महीना । परमेश्वर । सामगान का एक भेद । प्राण । टीन ।—**अंश**—(**ज्येष्ठांश**)–(पुं०) बड़े भाई का हिस्सा । पैतृक सम्पत्ति का वह विशेष हक़ जो सबसे बड़े भाई को (सब से बड़ा होने के कारण) प्राप्त होता है । सर्वोत्तम भाग ।—**अंबु**– (**ज्येष्ठाम्बु**)–(न०) पानी जिसमें अनाज धोया गया हो । माँड़, भात का पसावन ।—**आश्रम**—(**ज्येष्ठाश्रम**)– (पुं०) सर्वोत्तम अर्थात् गृहस्थ आश्रम । गृहस्थ ।—**तात**–(पुं०) ताऊ, पिता का बड़ा भाई ।—**वर्ण**–(पुं०) सब से ऊँची जाति अर्थात् ब्राह्मण जाति ।—**वृत्ति**–(पुं०) बड़ों का कर्त्तव्य ।—**श्वश्रू**–(स्त्री०) भार्या की बड़ी बहिन, बड़ी साली ।

ज्येष्ठा—(स्त्री०) [ज्येष्ठ+टाप्] सब से बड़ी बहिन । १८ वाँ नक्षत्र । मध्यमा अँगुली । छिपकली, बिस्तुइया । गङ्गा का नाम ।

ज्येष्ठी—(स्त्री०)[ज्येष्ठ+ङीष्] छिपकली ।

ज्यैष्ठ—(पुं०) [ज्येष्ठानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी, ज्येष्ठ+अण्—ङीप्, सा अस्मिन् मासे इति पुनः अण्] चान्द्र मास विशेष, जेठ मास ।

ज्यैष्ठी—(स्त्री०) [ज्येष्ठानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी, ज्येष्ठ+अण्—ङीप्] ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा । छिपकली, बिस्तुइया ।

ज्यैष्ठ्य—(न०) [ज्येष्ठ+ष्यञ्] ज्येष्ठत्व, जेठापन । मुख्यता, प्रधानता ।

ज्योक्—(अव्य०) [√ज्या+उकुन्] दीर्घ-काल । प्रश्न । शीघ्रता । अभी । उज्ज्वलता ।

ज्योतिर्मय—(वि०) [ज्योतिस्+मयट्]ज्योति से भरा हुआ, प्रकाशमय ।

ज्योतिष—(वि०) [ज्योतिः अस्ति अस्य, ज्योतिस्+अच्] ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति, गति आदि का विचार करने वाला शास्त्र (गणित ज्यो०) । ग्रह-नक्षत्र आदि के शुभा-शुभ फल बताने वाला शास्त्र (फलित ज्यो०) ।

ज्योतिषी—(स्त्री०) **ज्योतिष्क**–(पुं०) [ज्योतिष—ङीप्] [ज्योतिः इव कायति, ज्योतिस् √कै+क] नक्षत्र, तारा ।

ज्योतिष्मत्—(वि०) [ज्योतिस्+मतुप्] चमकदार, चमकीला । स्वर्गीय । (पुं०) सूर्य ।

ज्योतिष्मती—(स्त्री०) [ज्योतिष्मत्+ङीप्] रात; 'नक्षत्रताराग्रहसंकुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः' र० ६.२२ । मन की शान्ति । मालकंगनी । एक नदी ।

ज्योतिस्—(न०) [द्योतते द्युत्यते वा√द्युत् +इसुन्, दस्य जादेशः] प्रकाश, रोशनी । लौ । (पुं०) सूर्य । नक्षत्र । अग्नि । आँख की पुतली का मध्यबिंदु । दृष्टि । आत्मा, चैतन्य । ज्योतिष शास्त्र । मेथी ।—**इङ्ग** (**ज्योतिरिङ्ग**), —**इङ्गण** (ज्योतिरिङ्गण) (पुं०) जुगनू ।—**कण** (**ज्योतिष्कण**)–(पुं०) आग की चिन-गारी ।—**गण** (**ज्योतिर्गण**)–(पुं०) नक्षत्र या ग्रह समूह ।—**चक्र** (**ज्योतिश्चक्र**)– (न०) राशिचक्र ।—**ज्ञ** (**ज्योतिर्ज्ञ**) (पुं०)– ज्योतिषी ।—**मण्डल** (**ज्योतिर्मण्डल**)–(न०) ग्रहमण्डल ।—**रथ**–(**ज्योतीरथ**) ध्रुवतारा । —**विद्** (**ज्योतिर्विद्**)–(पुं०) ज्योतिषी ।—**विद्या** (**ज्योतिर्विद्या**)–(स्त्री०), —**शास्त्र**

(ज्योतिःशास्त्र)–(न०) ग्रह नक्षत्रादि की गति और स्वरूप का निश्चय कराने वाला शास्त्र।—स्तोम (ज्योतिष्टोम)–(पुं०) [ज्योतींषि स्तोमा यस्य, ब० स०, षत्व] यज्ञ विशेष जिसे सम्पन्न करने के लिये १६ कर्मकाण्डी विधानों की आवश्यकता होती है।

ज्योत्स्ना––(स्त्री०) [ज्योतिः अस्ति अस्याम् ज्योतिस्+न (नि०), उपधालोप] चाँदनी; 'स्फुरत्स्फार-ज्योत्स्ना-धवलित-तले क्वापि पुलिने' भर्तृ० ३.४२। चाँदनी रात। दुर्गा। सौंफ।—**ईश** (**ज्योत्स्नेश**)–(पुं०) चन्द्रमा।—**प्रिय**–(पुं०) चकोर पक्षी।—**वृक्ष**–(पुं०) शमादान, दीवट। मोमबत्ती।

ज्योत्स्नी––(स्त्री०) [ज्योत्स्ना अस्ति अस्य +ज्योत्स्ना + अण्–ङीप् (संज्ञापूर्वकस्य) विधेः अनित्यत्वात् न वृद्धिः] चाँदनी रात। पटोल।

ज्यौतिषिक––(पुं०) [ज्योतिष् +ठक्] दैवज्ञ, ज्योतिषी।

ज्यौत्स्न––(पुं०) [ज्योत्स्ना+अण्] शुक्ल पक्ष।

√ज्रि––भ्वा० पर० सक० दबाना। अक० दबना। ज्रयति, ज्रेष्यति, अज्रैषीत्। चु० पर० अक० वृद्ध होना। ज्राययति–ज्रयति।

√ज्वर्––भ्वा० पर० अक० ज्वर आना। रोगी होना, बीमार होना। ज्वरति, ज्वरिष्यति, अज्वारीत्।

ज्वर––(पुं०) [√ज्वर्+घञ्] बुखार, ताप। मानसिक व्यथा। पीड़ा।—**अग्नि** (**ज्वराग्नि**)–(पुं०) ज्वर का चढ़ाव।—**अंकुश** (**ज्वरांकुश**)–(पुं०) ज्वरान्तक दवा।—**प्रतीकार**–(पुं०) ज्वर की दवा या ज्वर दूर करने का उपाय।

ज्वरित, ज्वरिन्––(वि०) [ज्वर+इतच्] [ज्वर+इनि] ज्वर चढ़ा हुआ, ज्वर से आक्रान्त।

√ज्वल्––भ्वा० पर० अक० दहकना। जल जाना। उत्सुक होना। ज्वलति–ज्वलयति, ज्वलिष्यति, अज्वालीत्।

ज्वलन––(वि०) [√ज्वल्+ल्यु] दाहकारी। दहकता हुआ। जल उठने वाला। (पुं०) अग्नि; "तदनु ज्वलनं मदर्पितं त्वरयेर्दक्षिणवातवीजनैः' कु० ४.३६। चित्रक वृक्ष। तीन की संख्या। (न०) [√ज्वल्+ल्युट्] जलना। चमकना।

ज्वलित––(वि०) [√ज्वल्+क्त] जला हुआ। प्रकाशमान।

ज्वाल––(पुं०) [√ज्वल् + ण] ज्वाला। मशाल।

ज्वाला––(स्त्री०) [ज्वाल+टाप्] आग की लपट, अग्निशिखा। ताप, दाह। दग्धान्न।—**जिह्व**,–**ध्वज**–(पुं०) आग।—**मुखी**–(स्त्री०) आतिशी पहाड़, पहाड़ जिससे आग निकले।—**वक्त्र**–(पुं०) शिव की एक उपाधि।

ज्वालिन्––(वि०) [√ज्वल्+णिनि] (पुं०) शिव।

झ

झ––संस्कृत अथवा देवनागरी वर्णमाला का नवाँ और चवर्ग का चौथा वर्ण। यह स्पर्श वर्ण है और इसके उच्चारण में संवार, नाद और घोष प्रयत्न होते हैं। च, छ, ज और ञ इसके सवर्ण कहे जाते हैं। इसका उच्चारणस्थान तालु है। (पुं०) [√झट्+ड] झुनझुन की आवाज। झंझावात। बृहस्पति।

झगझगायति––(क्रि०) [झगझग + क्यङ्, लट्–तिप्] चमकना। जल उठना।

झगति, झगिति––(अव्य०) [=झटिति, पृषो० साधुः] शीघ्रता से, फुर्ती से; 'साप्यप्सरा झगित्यासीत्तद्रूपाकृष्टलोचना' महा०

झङ्कार––(पुं०), **झङ्कृत**–(न०) [झन् इति अव्यक्तशब्दस्य कृतम् करणं यत्र] झनझनाहट। झाँझ, पायल आदि के बजने से

होने वाली ध्वनि । वीणा, सितार आदि की ध्वनि ।

झङ्कारिणी--(स्त्री०) [झङ्कार+इनि--ङीप्] गङ्गा नदी ।

झङ्कृति--(स्त्री०) दे० 'झङ्कार' ।

झञ्झन--(न०) [अव्यक्त शब्द] धातु के बने आभूषणों का शब्द, झनकार ।

झञ्झा--(स्त्री०) [झम् इत्यव्यक्तशब्दं कृत्वा झटिति वेगेन वहतीति √झट्+ड--टाप्] पवन के चलने या जलवृष्टि का शब्द । आँधी-पानी । तूफान । झनझन शब्द ।--**अनिल** (**झञ्झानिल**), --**मरुत्**,--**वात**-- (पुं०) आँधी-पानी । तूफान ।

√झट्--भ्वा० पर० अक० इकट्ठा होना । झटति, झटिष्यति, अझाटीत्--अझटीत् ।

झटिति--(अव्य०) [√झट्+क्विप्, √इ+क्तिन्] तुरन्त, फुर्ती से, फौरन ।

झणझण--(न०) **झणझणा**--(स्त्री०) [झणत्+डाच्, द्वित्व, पूर्वपदटिलोप] झंकार, झनझन का शब्द ।

झणझणायित--(वि०) [झणझण + क्यङ +क्त] झणझण शब्द से शब्दित ।

झणत्कार, झनत्कार--(पुं०) [झणत् वा झनत् शब्दस्य कारः करणं यत्र] नूपुर कङ्कण आदि के बजने का शब्द, झनकार; 'झणत्कारक्रूरक्वणितगुणगुञ्जद्गुरुधनुः' उत्त० ५.२६ ।

√झम्--भ्वा० पर० सक० खाना । झमति, झमिष्यति, अझमीत् ।

झम्प--(पुं०), **झम्पा**--(स्त्री०) [झम् √पत्+ड] [झम्प+टाप्] कूदना, कुलाँच, उछाल, झपट । घोड़ों के गले में पहनाने का एक गहना ।

झम्पाक, झम्पारु, झम्पिन्--[झम्पेन अकति गच्छति, झम्प √अक्+अण्] [झम्प--आ√रा+डु] [झम्प+इनि] बंदर । लंगूर ।

झर--(पुं०), **झरा, झरी**--(स्त्री०) [√+अच्] [झर+टाप्] [झर+ङीप् झरना । जलप्रपात । सोता ।

√झर्झ्--भ्वा० तु० पर० सक० झि[ड़]कना, मारना । पीटना । झर्झति, झर्झिष्यति अझर्झीत् ।

झर्झर--(पुं०) [√झर्झ्+अरन्] ढोल कलियुग । बेंत की छड़ी । झाँझ, मजीरा

झर्झरा--(स्त्री०) [झर्झर+टाप्] वेश्य रंडी ।

झर्झरिन्--(पुं०) [झर्झर+इनि] शिव ज की उपाधि ।

झर्झरीक--(पुं०) [√झर्झ्+ईकन्, नि० सिद्धि] शरीर । देश । तसवीर ।

झलज्झला--(स्त्री०) [झलज्झल इत्यव्यक्त शब्दः अस्ति, अस्य, झलज्झल+अच्--टाप् बूँदों की झड़ी की आवाज । हाथी के कान के फड़फड़ाने का शब्द ।

झला--(स्त्री०) [=झरा, पृषो० साधुः लड़की । धूप । झींगुर ।

झल्ल--(पुं०) [√झर्झ्+क्विप्, तं लाति √ला+क] एक वर्णसंकर जाति । भाँड़ हुडुक । ज्वाला ।--**कण्ठ**--(पुं०) कबूतर

झल्लक--(न०), **झल्लकी**--(स्त्री०) [झल्ल+कन्] [झल्लक+ङीष्] करताल । झाँझ

झल्लरी--(स्त्री०) [√झर्झ्+अरन्, पृषो० साधुः] हुडुक । झाँझ । पसीना । शुद्धता घुँघराले बाल ।

झल्लिका--(स्त्री०) [झल्ली√कै+क, पृषो० साधुः] उबटन लगाने से छूटा हुआ शरीर का मैल । रंग, इत्र आदि लगाने में व्यवहृत रुई या कपड़े की धज्जी । द्युति, चमक ।

झल्ली--(स्त्री०) [झल्ल+ङीप्]एक बाजा हुडुक ।

√झष्--भ्वा० पर० सक० मारना । झषति झषिष्यति, अझाषीत्--अझषीत् । उभ० सक० लेना । छिपाना । झषति--ते, झषि-

ष्यति—ते, अझपीत् — अझापीत्—अझषिष्ट।

झष—(न०) [√झष्+अच्] रेगिस्तान, वियावान वन। (पुं०)[√झष्+घ] मछली। मगर।; सामान्यतः जलचर जीव 'झषाणाम् मकरश्चास्मि' भग० १०.३१। मीन-राशि। गर्मी। ताप।—**अङ्क** (झषाङ्क),—**केतन**,—**केतु**,—**ध्वज**–(पुं०) कामदेव के नाम।—**अशन** (झषाशन)–(पुं०) सूंस।—**उदरी** (झषोदरी)–(स्त्री०) व्यासमाता सत्यवती का नाम।

झांकृत—(न०) [झंकृत + अण्] पायजेव, झाँझन। जल गिरने का शब्द; 'स्थाने स्थाने मुखरककुभो झांकृतैर्निर्झराणाम्' उत्त० २.१४।

झाट—(पुं०) [√झट्+घञ्] लताच्छादित स्थान, कुञ्ज। झाड़ी। घाव को धोना।

झामक—(न०) [√झम् + ण्वुल्] जली हुई ईंट, झाँवा।

झालरी—(स्त्री०) नौवत। मृदंग। नगारा। खंजरी।

झिङ्गिनी—(स्त्री०) [√लिङ्ग्+णिनि, पृषो० साधुः] लुक। जिंगिनी नामक एक जंगली पेड़।

झिण्टी—(स्त्री०) [झिम् √रट्+अच्—ङीष्, पृषो० साधुः] कटसरैया।

झिरिका—(स्त्री०)—[झिरि इति कायति शब्दायते, झिरि √कै+क—टाप्] झींगुर।

झिल्लि—(स्त्री०) [झिर् इत्यव्यक्तशब्दं लिशति, झिर् √लिश्+डि] झींगुर। एक वाजा। रोशनी, प्रकाश।—**कण्ठ**–(पुं०) पालतू कबूतर।

झिल्लिका—(स्त्री०) [झिल्ली + कन्—टाप्] झींगुर। झींगुर की झनकार। सूर्य-प्रकाश। दीप्ति। झिल्ली।

झिल्ली—(स्त्री०) [झिल्लि+ङीष्] झींगुर। सूर्य की किरण का तेज। दीप्ति। दीये की वत्ती। एक वाजा।

झीरुका—(स्त्री०) झींगुर।

झुण्ट—(पुं०) [√लुण्ट् + अच्, पृषो० साधुः] विना तने का पेड़। झाड़ी।

√झॄ—दि०, क्र्या० पर० अक० वृद्ध या पुराना होना। झीर्यति, (क्र्या०) झृणाति, झरिष्यति—झरीष्यति, अझारीत्।

झोड—(पुं०) सुपाड़ी का पेड़।

ञ

ञ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का दसवाँ व्यञ्जन जो चवर्ग का पाँचवाँ वर्ण है। इसका उच्चारण-स्थान तालु और नासिका है। इसका प्रयत्न स्पर्श, घोष और अल्पप्राण है। (पुं०) वैल। शुक्र। ऐंड़ी-वैंड़ी चाल। सङ्गीत। घर्घर शब्द।

ट

ट—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का ग्यारहवाँ व्यञ्जन और टवर्ग का प्रथम अक्षर। इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। इसके उच्चारण में तालु से जीभ लगानी पड़ती है। (पुं०) [√टल्+ड] धनुष की टंकार। चतुर्थांश। शपथ। पृथिवी। नारियल की नरेरी। वौना।

√टङ्क्—चु० उभ० सक० वाँधना। लपेटना। कसना। ढकना। आच्छादित करना। टङ्कयति—ते, टङ्कयिष्यति—ते, अटटङ्कत्—त।

टङ्क—(पुं०, न०) [√टङ्क्+घञ् वा अच्] कुदाली, कुल्हाड़ी। छेनी; 'टङ्कैर्मनःशिलगुहेव विदार्यमाणा' मृ० १.२०। तलवार। तलवार की म्यान। पहाड़ी का ढाल। क्रोध। अहङ्कार। टाँग।

टङ्कक—(पुं०) [टङ्क+कन्] चाँदी का सिक्का जिस पर ठप्पा लगा हो।—**पति**–(पुं०) टकसाल का प्रधानाध्यक्ष।—**शाला**–(स्त्री०) टकसालघर।

टङ्कण, टङ्कन—(न०) [√टंक्+ल्यु, पृषो० णत्व, पक्षे णत्वाभाव] सुहागा। (पुं०) घोड़े की एक जाति। जाति विशेष के मनुष्य।—**क्षार**–(पुं०) सुहागा।

टङ्कार—(पुं०) [टं चित्र-विकृतिं करोति, टम् √कृ+अण्] धनुष की चढ़ी हुई डोरी को खींचकर छोड़ने से उत्पन्न ध्वनि। धातुखंड आदि पर आघात होने से उत्पन्न ध्वनि। चिल्लाहट। प्रसिद्धि। विस्मय।

टङ्कारिन्—(वि०) [टङ्कार+इनि] टंकार करने वाला। [स्त्री०—**टङ्कारिणी**]

टङ्किका—(स्त्री०) [टङ्क+कन्—टाप्, इत्व] पत्थर काटने की छेनी, टाँकी।

टङ्ग—(पुं०, न०) [=टङ्क, पृषो० साधुः] कुदाल। फरसा। चार माशे की एक तौल। सोहागा। जंघा।

टङ्गण—(पुं०, न०) [टङ्कण, पृषो० साधुः] सोहागा।

टङ्गा—(स्त्री०) [टङ्ग+टाप्] टाँग।

टट्टनी—(स्त्री०) [टट्ट√नी+ड, ङीष्] छिपकली।

टट्टरी—(स्त्री०) [टट्टेति शब्दं राति, टट्ट √रा+क—ङीष्] ठट्ठा। डींग। झूठी बात। एक बाजा, ढोल।

√टल्—भ्वा० पर० अक० बेचैन होना। टलति, टलिष्यति, अटालीत्—अटलीत्।

टाङ्कर—(पुं०) [टङ्कस्येदं टाङ्कं राति, √रा+क] लंपट। कुटना।

टाङ्कार—(पुं०) [टङ्कार+अण्] टंकार। झंकार। गुंजार।

√टिक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। टेकते, टेकिष्यते, अटेकिष्ट।

टिटिभ, टिट्टिभ—(पुं०) [टिटीत्यव्यक्तशब्दं भणति, टिटि√भण्+ड] [टिट्टीत्यव्यक्तशब्दं भणति, टिट्टि√भण्+ड] [स्त्री०—**टिटिभी या टिट्टिभी**] टिटहरी चिड़िया।

√टिप्—चु० उभ० सक० प्रेरणा करना। चलाना। टेपयति—ते, टेपयिष्यति—ते, अटीटिपत्—त।

टिप्पणी, टिप्पनी—(स्त्री०) [√टिप्+क्विप्, टिपा पन्यते स्तूयते, टिप्√पन्+अच्—ङीष् पक्षे पृषो० णत्व] व्याख्या। टीका।

√टीक्—भ्वा० पर० सक० जाना। टीकते, टीकिष्यते, अटीकिष्ट।

टीका—(स्त्री०) [टीक्यते गम्यते बुध्यते वा अनया, √टीक्+क—टाप्] किसी वाक्य या पद का अर्थ स्पष्ट करने वाला वाक्य, व्याख्या।

टुण्टुक—(पुं०) [टुण्टु इत्यव्यक्तशब्दं कायति, टुण्टु√कै+क] एक पक्षी। काला खैर। श्योनाक वृक्ष, सोनापाठा। (वि०) छोटा। थोड़ा। निष्ठुर, नृशंस। सख्त, कड़ा।

√ट्वल्—भ्वा० पर० अक० बेचैन होना। ट्वलति, ट्वलिष्यति, अट्वलीत्।

ठ

ठ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का बारहवाँ व्यञ्जन और टवर्ग का दूसरा वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। इसका उच्चारण करते समय जीभ का मध्य-भाग तालू में लगाना पड़ता है। (पुं०) [पृषो० साधुः] रव। चन्द्र अथवा सूर्य मण्डल। वृत्त। शून्य। पवित्र स्थान। मूर्ति। देव। शिव जी का नाम।

ठक्कुर—(पुं०) देव-प्रतिमा। प्रतिष्ठासूचक एक उपाधि। काव्यप्रदीप के रचयिता का नाम।

ठार—(पुं०) पाला, बरफ।

ठालिनी—(स्त्री०) पटका, कमरबंद।

ड

ड—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का तेरहवाँ व्यञ्जन। टवर्ग का तीसरा वर्ण। इसका उच्चारण आभ्यन्तर प्रयत्न द्वारा तथा जिह्वा-मध्य को मूर्द्धा में लगाने से किया जाता है। (पुं०) [√डी+ड] शब्द विशेष। एक प्रकार का ढोल या मृदङ्ग। वाडवाग्नि, समुद्र की आग। भय। शिव। पक्षी विशेष।

डक्कारी—(स्त्री०) चाण्डाल का बाजा। वीणा।

√डप्—चु० आत्म० सक० इकट्ठा करना। डापयते।

डम—(पुं०) [ड√मा+क]डोम, एक नीच जाति।

डमर—(न०) [√मृ+अच्, मरम्, डेन त्रासेन मरम् पलायनम्, तृ० त०] डर कर भाग निकलना। (पुं०) गदर, विप्लव। शत्रु को भावभङ्गी और ललकार से डराना।

डमरु—(पुं०) [डम् इत्यव्यक्तशब्दम् ऋच्छति, डम्√ऋ+कु] एक प्रकार का बाजा जो शिव जी को बड़ा प्रिय है, कापालिक शैवों का वाद्ययंत्र।

√डम्ब्—चु० उभ० सक० फेंकना। भेजना। आज्ञा देना। देखना। डम्बयति—ते, डम्बयिष्यति—ते, अडडम्बत्—त।

डम्बर—(वि०) [√डम्ब्+अरन्] प्रसिद्ध, विख्यात। (पुं०) आडंबर। चहल-पहल। समूह। सादृश्य। गर्व। आयोजन। भारी शब्द; 'गौडी डम्बरबद्धा स्यात्' सा० द०। सौंदर्य। विस्तार। एक प्रकार का बड़ा चँदोवा।

डयन—(न०) [√डी+ल्युट्] उड़ने की क्रिया, उड़ान। पालकी, डोली।

डलक या डल्लक—(न०) डलिया या डला।

डवित्थ—(पुं०) काठ का बारहसिंहा।

डाकिनी—(स्त्री०) [डाय भयदानाय अकति व्रजति, ड√अक्+इनि—ङीप्] काली देवी की एक सहचरी।

डाकृति—(स्त्री०) घंटे का नाद, झालर का शब्द।

डामर—(वि०) भयानक, भयङ्कर। विप्लवकारी, उपद्रवी। मनोहर, सुस्वरूप। (पुं०) कोलाहल, चीत्कार। उपद्रव। किसी उत्सव या लड़ाई झगड़े के समय होने वाला चीत्कार या कोलाहल।

डालिम—(पुं०) [=दाडिम, पृषो० साधुः] दाडिम, अनार।

डाहल—(पुं०) एक देश और उस देश के अधिवासी।

डिङ्गर—(पुं०) नौकर, चाकर। गुण्डा, बदमाश। नीच जाति का आदमी।

डिण्डिम—(पुं०) [डिण्डीतिशब्दं माति, डिण्डि√मा+क] ढोलक। डुग्गी।

डिण्डिर, डिण्डीर—(पुं०) [डिण्डि+र, पक्षे दीर्घः] समुद्रफेन।

√डिप्—दि० पर० सक० निंदा करना। डिप्यति, डेपिष्यति, अडेपीत्। तु० पर० सक० निंदा करना। डिपति, डिपिष्यति, अडिपीत्। चु० आत्म० अक० इकट्ठा होना। डेपयते—डेपति।

डिम्—भ्वा० पर० सक० मारना। डेमति, डेमिष्यति, अडेमीत्।

डिम—(पुं०) [√डिम्+क] दस प्रकार के नाटकों में से एक।—'मायेन्द्रजालसंग्रामक्रोधोद्भ्रान्तादिचेष्टितैः। उपरागश्च भूयिष्ठो डिमः ख्यातोऽतिवृत्तकः॥

√डिम्ब्, डिम्भ्—चु० उभ० सक० प्रेरित करना। डिम्बयति—ते, डिम्भयति—ते।

डिम्ब—(पुं०) [√डिम्ब्+घञ्] झगड़ा, टंटा। भयभीत होने पर किया हुआ शब्द। बच्चा। अण्डा। गोला या गेंद।—**आहव** (**डिम्बाहव**)—(पुं०)—**युद्ध**—(न०) झूठा युद्ध, बिना हथियारों की लड़ाई।

डिम्बिका—(स्त्री०) [√डिम्ब्+ण्वुल्—टाप्] छिनाल औरत, कामुकी स्त्री। बुलबुला। सोनापाठा।

डिम्भ—(पुं०) [√डिम्भ्+अच्] बच्चा। जानवर का बच्चा; 'जृम्भस्व रे डिम्भ दन्तांस्ते गणयिष्यामि' श० ७। मूर्ख।

डिम्भक—(पुं०) [स्त्री०—**डिम्भिका**] [डिम्भ+कन्] छोटा बच्चा। जानवर का बच्चा।

√डी—भ्वा० आत्म० अक० उड़ना। डयते, डयिष्यते, अडयिष्ट। दि० आत्म० अक० उड़ना। डीयते, डयिष्यते, अडयिष्ट।

डीन—(वि०) [√डी+क्त] उड़ा हुआ। (न०) पक्षी की उड़ान। पक्षियों की उड़ान

१०१ प्रकार की होती हैं। इन उड़ानों के भेदों के द्योतक उपसर्ग डीन में लगाने से उस-उस उड़ान का बोध होता है। यथा:— "अवडीन", "उड्डीन", "प्रडीन" "अभिडीन", "विडीन", "परिडीन", "पराडीन" आदि।

डुण्डुभ—(पुं०) [डुण्डु√भा+क] निर्विष सर्प विशेष, ढोंढ़ साँप।

डुलि—(स्त्री०) [=दुलि, पृषो० साधुः] कछुई। एक वाहन।

डोम—(पुं०) [√डिम्+गच्] डोम। अत्यन्त नीच जाति का आदमी।

ढ

ढ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का चौदहवाँ व्यञ्जन। टवर्ग का चौथा वर्ण। इसका उच्चारण स्थान मूर्द्धा है। (पुं०) [√ढौक् +ड] बड़ा ढोल। कुत्ता। कुत्ते की पूँछ। परमेश्वर। ध्वनि। साँप।

ढक्का—(स्त्री०) [ढक् इति शब्देन कायति, ढक् √कै+क—टाप्] बड़ा ढोल।

ढामरा—(स्त्री०] हंसी, मादा हंस।

ढाल—(न०) [√ढौक्+अच्, पृषो० साधुः] तलवार, भाले आदि के आघात को रोकने का लोहे या गेंड़े के चमड़े का बना कछुए की पीठ जैसा एक साधन।

ढालिन्—(पुं०) [ढाल+इनि] ढालधारी योद्धा।

√ढुण्ढ्—भ्वा० आत्म० सक० ढूँढ़ना। ढुण्ढति, ढुण्ढिष्यति, अढुण्ढीत्।

ढुण्ढि—(पुं०) [√ढुण्ढ्+इन्] गणेश जी।

ढोल—(पुं०) [ढक्का तदाकारं लाति, √ला +क, पृषो० साधुः] हाथ से बजाने का एक बाजा जो दोनों ओर चमड़े से मढ़ा होता है, ढोल। कानका भीतरी परदा, कर्णपटह।

√ढौक्—भ्वा० आत्म० सक० चलाना। जाना। ढौकते, ढौकिष्यते, अढौकिष्ट।

ढौकन—(न०) [√ढौक् +ल्युट्] भेंट, चढ़ौ ी। घूस।

ण

ण—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का पन्द्रहवाँ व्यञ्जन टवर्ग का पञ्चम वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। इसके उच्चारण में आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट और सानुनासिक है। वाह्य प्रयत्न, संवार, नाद, घोष और अल्पप्राण है। इसका प्रयोग मूर्द्धन्य वर्ण, अन्तस्थ तथा "म" और "ह" के साथ होता है। (पुं०) [√नख् +ड, पृषो० साधुः] विन्दुदेव, एक बुद्ध का नाम। गहना। निर्णय। शिव। पानी का घर। दान। पिंगल में एक गण का नाम। ज्ञान। (वि०) गुणरहित।

संस्कृतभाषा में ण से आरम्भ होने वाले शब्दों का अभाव है; किन्तु धातुपाठ में कुछ धातु ऐसी हैं जिनका प्रथम अक्षर ण है। वास्तव में यह "ण" "न" स्थानीय है। इनके "ण" से लिखे जाने का कारण यह है कि इससे यह सूचित होता है कि "न" कतिपय उपसर्गों के पूर्व आने से "ण' के रूप में भी परिवर्तित होता है। √णट्, √णद् आदि धातुओं को 'न' अक्षर में देखना चाहिये।

त

त—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का सोलहवाँ व्यञ्जन। तवर्ग का प्रथम वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान दन्त है। इसके उच्चारण में विवार, श्वास और अघोष प्रयत्न लगाये जाते हैं। इसके उच्चारण में आधी मात्रा का समय लगता है। (पुं०) [√तक्+ड] पूँछ। गीदड़ की पूँछ। छाती। गर्भाशय। टेहनी। योद्धा। चोर। दुष्टजन। जातिच्युत। वर्वर। वौद्ध। रत्न। अमृत। छन्द में गण विशेष।

√तंस्—चु० पर० सक० सजाना। तंसयति, तंसयिष्यति, अततंसत्।

√तक्—भ्वा० पर० अक० हँसना । तकति, तकिष्यति, अताकीत्—अतकीत् ।

तकिल—(वि०) [√तक्+इलच्] छली, कपटी ।

तक्र—(न०) [√तक्+रक्] मट्ठा, छाछ । —**अट** (**तक्राट**)–(पुं०) मथानी ।—**कूर्चिका**–(स्त्री०) मट्ठे के योग से फाड़ा हुआ दूध, छेना ।—**पिण्ड**–(पुं०) छेना ।—**भिद्**–(पुं०) कैथ का फल, कपित्थ ।—**मांस**–(न०) मट्ठे के योग से पका मांस ।—**वामन**–(पुं०) नारंगी ।—**सन्धान**– (पुं०) एक तरह की काँजी ।—**सार**–(न०) ताजा मक्खन ।

√तक्ष्—भ्वा० पर० सक० काट डालना । छेनी से काटना । चीरना । टुकड़े-टुकड़े करना । सँभारना । बनाना । घायल करना । आविष्कार करना । मन में कल्पना करना । तक्ष्णोति—तक्षति, तक्षिष्यति, अतक्षीत्—अताक्षीत् ।

तक्षक—(पुं०) [√तक्ष्+ण्वुल्] बढ़ई । सूत्रधार । देवताओं का कारीगर । पाताल-वासी मुख्य नागों में से एक का नाम ।

तक्षण—(न०) [√तक्ष्+ल्युट्] पतला करना । रंदा करने का काम । काटना; 'दारवाणां च तक्षणम्' मनु० ।

तक्षणी—(स्त्री०) [√तक्ष्+ल्युट्+ङीप्] लकड़ी तराशने का औजार, बसूला ।

तक्षन्—(पुं०) [तक्ष्+कनिन्] बढ़ई । विश्व-कर्मा ।

तगर—(पुं०) [तस्य क्रोडस्य गरः, ष० त०] एक वृक्ष जो कोंकण, अफगानिस्तान आदि में होता है और जिसकी जड़ गंधद्रव्य के रूप में काम आती है । मदन वृक्ष । एक औषध ।

√तङ्क्—भ्वा० पर० सक० सहन करना । अक० हँसना । कष्ट में रहना । तङ्कति, तङ्किष्यति, अतङ्कीत् ।

तङ्क—(पुं०) [√तङ्क्+घञ् वा अच्] कष्ट-मय जीवन । प्रियजन के वियोग से उत्पन्न कष्ट । भय । संगतराश की छेनी ।

तङ्कन—(न०) [तङ्क्+ल्युट्] कष्टमय जीवन, दुःखी जीवन ।

√तङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० काँपना, थरथराना । ठोकर खाना । तङ्गति तङ्गिष्यति, अतङ्गीत् ।

तञ्च्—भ्वा० पर० सक० जाना । तञ्चति तञ्चिष्यति । अतञ्चीत् । रु० पर० सक० सिकोड़ना । तनक्ति, तञ्चिष्यति—तङ्क्ष्यति अतञ्चीत्—अतङ्क्षीत् ।

√तट्—भ्वा० पर० अक० ऊँचा होना तटति, तटिष्यति, अताटीत्—अतटी[illegible]

तट—(न०) [√तट्+अच्] नदी प्रभृति का किनारा, तीर । ऊँची जमीन । (पुं०) शिव । (वि०) उच्छ्रित, उठा हुआ ।—**स्थ**–(वि०) [तट√स्था+क] जो समीप रहता हो । जो मतलब न रखता हो, उदासीन । (पुं०) उदासीन व्यक्ति ।—**०लक्षण** –(न०) वह लक्षण जिसमें लक्ष्य के अस्थायी और परिवर्तनशील गुणों का निरूपण हो ।

तटाक—(पुं०, न०) [√तट्+आकन्] तालाब ।

तटिनी—(स्त्री०) [तट+इनि–ङीप्] नदी; 'कदा वाराणस्याममरतटिनीरोधसि वसन्' ।

√तड्—चु० पर० सक० मारना । सितार आदि के तारों को बजाना । ताडयति, ताड-यिष्यति, अतीतडत् ।

तडग—(पुं०) [=तडाग, पृषो० साधुः] दे० '**तडाग**' ।

तडाग—(पुं०) [√तड्+आग] तालाब । हिरन फँसाने का फंदा ।

तडित्—(स्त्री०) [ताडयति अभ्रम्, √तड्+इति] बिजली, विद्युत् ।—**गर्भ** (**तडिद्-गर्भ**)–(पुं०) बादल ।—**लता** (**तडिल्लता**)–(स्त्री०) दो शाखों में विभक्त विद्युत रेखा ।—

—लेखा (तडिल्लेखा)–(स्त्री०) बिजली की रेखा ।
डित्वत्—(वि०) [तडित्+मतुप्, वत्व] बिजली वाला । (पुं०) बादल ।
डिन्मय—(वि०) [तडित्+मयट्] बिजली से सम्पन्न ।
तण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० मारना । तण्डते, तण्डिष्यते, अतण्डिष्ट ।
ण्डक—(पुं०) [√तण्ड्+ण्वुल्] खञ्जन पक्षी । फेन । समासबहुल वाक्य । (न०) गृहस्तंभ । पेड़ का धड़ । सजावट । रोग । (वि०) मायावी । घातक ।
ण्डुल—(पुं०) [तण्ड्यते आहन्यते, √तण्ड्+उलच्] छिलका निकले हुए चावल । अनाज के चार रूप हैं—यथा शस्य, धान्य तण्डुल और अन्न । चारों की अलग-अलग परिभाषायें इस प्रकार हैं:—'शस्यं क्षेत्रगतं प्रोक्तं सतुषं धान्यमुच्यते । निस्तुषः तण्डुलः प्रोक्तः स्विन्नमन्नमुदाहृतम् ।
त—(वि०) [√तन्+क्त] फैला हुआ । बढ़ा हुआ । ढका हुआ; 'स तमीं तमोभिरभिगम्य ततां' शि० ९.२३ । (न०) [√तन्+तन्] तारों वाला बाजा ।
ततस् (ततः)—(अव्य०) [तद्+तसिल्] उससे । तब से । वहाँ । वहाँ से । तब । जिसके पीछे । पश्चात्, पीछे से । अतएव । अन्ततोगत्वा । ऐसी हालत में । उसके परे । तदपेक्षा । उसके अलावा या अतिरिक्त ।—प्रभृति—(अव्य०) वहाँ से लेकर ।
ततस्त्य—(वि०) [ततस्+त्यप्] वहाँ से आया हुआ ।
तति—(स्त्री०) [√तन्+क्तिन्] श्रेणी, पंक्ति । समूह; 'क्रियतां वराहततिभिर्मुस्ताक्षतिः पल्वले' श० २.५ । विस्तार । (वि०) [तत् परिमाणं येषाम्, तत्+डति] उतने ।
तत्तुरि—(वि०) [√तुर्व्+कि, द्वित्व, पृषो० साधुः] हिंसक । विजयी । तारने वाला । (पुं०) अग्नि । इंद्र ।
तत्त्व—(न०) [√तन्+क्विप्, तुक्, पृषो० साधुः, तस्य भावः, तत्+त्व] वास्तविक दशा या परिस्थिति । वास्तविक या यथार्थ रूप । सच्चाई । निष्कर्ष । परमात्मा । यथार्थ सिद्धान्त । मन । नृत्य विशेष । वस्तु । सांख्य के मतानुसार पच्चीस पदार्थ ।—अवधान (तत्त्वावधान)–(न०) निरीक्षण, जाँच-पड़ताल, देखरेख ।—ज्ञान–(न०) ब्रह्म, आत्मा और जगद्-विषयक यथार्थ ज्ञान, ब्रह्मज्ञान ।
तत्त्वतः—(अव्य०) [तत्त्व+तस्] यथार्थ रूप में, वास्तव में ।
तत्र—(अव्य०) [तत्+त्रल्] वहाँ । उस स्थान पर । उस अवसर पर ।—भवत्–(वि०) [पूज्यार्थे तत्र भवान् नित्य स० वा सुप्सुपेति स०] पूज्य, मान्य । प्रशंसनीय ।
तत्रत्य—(वि०) [तत्र+त्यप्] वहाँ होने वाला ।
तथा—(अव्य०) [तेन प्रकारेण, तद्+थाल्] वैसा । वैसा ही । और, व ।—अपि (तथापि) –(अव्य०) तो भी, तिस पर भी, वैसा होने पर भी ।—एव (तथैव)–(अव्य०) उसी प्रकार ।—गत–(पुं०) [तथा सत्यं गतं ज्ञानं यस्य, ब० स०] बुद्ध का एक नाम ।—च–(अव्य०) जैसा कि ।—हि–(अव्य०) दृष्टान्त, उदाहरण ।
तथात्व—(न०) [तथा+त्व] वैसा होने का भाव ।
तथ्य—(वि०) [तथा+यत्] सत्य, वास्तविक, असली । (न०) सचाई, वास्तविकता, असलियत ।
तद्—(सर्व०) [√तन्+अदि] वह ।—अनन्तर (तदनन्तर)–(अव्य०) ठीक उसके पीछे । उसके बाद ।—अनु (तदनु) –(अव्य०) उसके बाद; 'संदेशं मे तदनु

जलद श्रोष्यसि श्रोत्रपेयं' मे० २३। पीछे से। ––अन्त (तदन्त)–(वि०) उस प्रकार समाप्त। ––अपि (तदपि)––(अव्य०) तो भी।––अर्थ (तदर्थ),––अर्थीय (तदर्थीय),–(वि०) वह अर्थ रखते हुए।––अवधि (तदवधि)–(अव्य०) वहाँ तक। उस समय तक। तब तक। तब से। उस समय से।––उपरि (तदुपरि)––(अव्य०) उस पर।––एकचित्त (तदेकचित्त)–(वि०) अपने मन को नितान्ततया उस पर लगाये हुए।––काल (तत्काल)–(पुं०) वर्तमान क्षण, वर्तमान समय। (अव्य०) तुरन्त, फौरन।––क्षणं (तत्क्षणम्)––क्षणात् (तत्क्षणात्)–(अव्य०) तुरन्त, फौरन।––क्रिय (तत्क्रिय)–(वि०) बिना मजदूरी लिये काम करने वाला।––गुण (तद्गुण)–(वि०) जिसमें वे गुण हों। उसके जैसे गुणों वाला। (पुं०) अर्थालंकार का एक भेद।––०संविज्ञान–(पुं०) बहुव्रीहि समास का एक भेद। इसमें विशेष्य के अधीन होकर विशेषण का ज्ञान होता है। जैसे 'लम्बकर्णमानय' इस प्रयोग में गुणीभूत कर्ण का भी आनयन होता है।––ज्ञ (तज्ज्ञ)–(पुं०) बुद्धिमान् जन, विद्वान्।––तृतीय (तत्तृतीय)–(वि०) तीसरी बार वह कार्य करने वाला।––धन (तद्धन)–(वि०) कंजूस। लालची।––पर (तत्पर)–(वि०) कार्य-विशेष में लगा हुआ, तल्लीन। सन्नद्ध, तैयार।––परायण (तत्परायण)–(वि०) जिसका मन किसी एक ही में लगा हो।––पुरुष (तत्पुरुष)–(पुं०) परम पुरुष। एक समास (व्या०)।––फल (तत्फल)–(पुं०) कूट नाम की दवा। नील कमल। चौर नामक गंध द्रव्य।

तदा––(अव्य०) [तस्मिन् काले, तद्+दा] तब। उस समय। उस दशा में।––मुख–(वि०) आरम्भ किया हुआ। (वि०) आरम्भ।

तदात्व––(न०) [तदा+त्व] तत्काल, वर्तमान समय।

तदानीम्––(अव्य०) [तस्मिन् काले, तद्+दानीम्] उस समय, तब।

तदानींतन––(वि०) [तत्र भवः इत्यर्थे तदानीम्+ट्युल्, तुट्] उस समय का। समकालीन।

तदीय––(वि०) [तद्+छ–ईय] उसका।

तद्वत्––(वि०) [तद्+वति] उसके समान।

√तन्––त० उभ० सक० फैलाना, पसारना। ढकना। पूरा करना। रचना, करना, लिखना। झुकाना (धनुष को)। तनोति–तनुते, तनिष्यति–ते, अतानीत्–अतनीत्–अतत–अतनिष्ट।

तनय––(पुं०) [तनोति विस्तारयति कुलम्. √तन्+कयन्] पुत्र। नर सन्तान।

तनया––(स्त्री०) [तनय+टाप्] पुत्री, बेटी।

तनिका––(स्त्री०) [√तन्+इन्+कन्, टाप्] पाश। रस्सी। फाँसी।

तनिमन्––(पुं०) [तनोर्भावः, तनु+इमनिच्] दुबलापन, कृशता। सुकुमारता। यकृत्, प्लीहा।

तनिष्ठ––(वि०) [तनु+इष्ठन्] अति सूक्ष्म। बहुत थोड़ा।

तनु––(वि०) [स्त्री०––**तनु, तन्वी**] [√तन्+उ] पतला, दुबला। कोमल, मुलायम। महीन। छोटा। कम, थोड़ा। तुच्छ। छिछला। (स्त्री०) शरीर, देह। बाहरी रूप, आकार। स्वभाव। चर्म, चाम।––अङ्ग (तन्वङ्ग)–(वि०) दुबला-पतला, कोमल शरीर वाला।––अङ्गी (तन्वङ्गी)–(स्त्री०) दुबली-पतली स्त्री, नजाकत वाली औरत।––कूप–(पुं०) रोमों के छेद।––छद (तनुच्छद)–(पुं०) कवच।––छाय (तनुच्छाय)–(वि०) कम छाया वाला। (पुं०) बबूल।––ज–(पुं०) पुत्र।––जा–(स्त्री०) पुत्री।––त्यज्–(वि०) अपने प्राणों

को खतरे में डालने वाला, मरने वाला।—**त्याग**–(वि०) थोड़ा-थोड़ा खर्च करने वाला, कंजूस।—**त्र, त्राण**–(न०) कवच।—**पत्र**–(पुं०) गोंदी का पेड़, इंगुदी।—**पात**–(पुं०) मृत्यु।—**भव**–(पुं०) पुत्र।—**भवा**–(स्त्री०) पुत्री।—**भस्त्रा**–(स्त्री०) नाक।—**भृत्**–(पुं०)जीवधारी, प्राणधारी।—**मध्य**–(वि०) पतली कमर वाला।—**रस**–(पुं०) पसीना। पसेव।—**राग**–(पुं०) एक सुगन्धित उबटन जिसमें केसर आदि मिलाते हैं। इस उबटन के काम के गंधद्रव्य।—**रुह्**–(न०) शरीर के रोम।—**लता**–(स्त्री०) लता जैसी लोच वाली सुकुमार देह।—**वात**–(पुं०) एक नरक। (वि०) वह स्थान जहाँ कम हवा हो।—**वार**–(न०) कवच।—**व्रण**–(पुं०) मुँहासे।—**सञ्चारिणी**–(स्त्री०) दस वर्ष की उम्र की लड़की। युवती स्त्री।—**सर**–(पुं०) पसीना।—**ह्रद**–(पुं०) गुदा, मलद्वार।

तनुल–(वि०) [√तन्+उलच्] फैला हुआ। बढ़ा हुआ।

तनुस्—(न०) [√तन्+उसि] शरीर।

तनू—(स्त्री०) [√तन्+ऊ] शरीर।—**उद्भव (तनूद्भव), ज**–(पुं०) पुत्र।—**उद्भवा (तनूद्भवा), जा**–(स्त्री०) पुत्री।—**नप**–(न०) [तन्वा ऊनं कृशं पाति√पा+क] घी।—**नपात्**–[तनूं न पातयति√पत्+णिच्+क्विप्] (पुं०) आग; 'तनूनपाद् धूमवितानमाश्रितैः' शि० १.६२।—**रुह्**–(न०) रोम, लोम (पुं० भी होता है)। पंख। (पुं०) पुत्र।

तन्ति—(स्त्री०) [√तन्+क्तिच्] रेखा। वृत्तांश की सरल रेखा। गौ। डोरी। पंक्ति।—**पाल**-(पुं०) गौओं की हेड़ों का रखवाला। विराट्-राज के यहाँ रहते समय सहदेव ने अपना बनावटी नाम तन्तिपाल ही रखा था।

तन्तु—(पुं०) [√तन्+तुन्] सूत, तागा। मकड़ी का जाला। ताँत। सन्तान। ग्राह। परब्रह्म।—**काष्ठ**–(न०) ताना साफ करने का जुलाहों का एक औजार।—**कीट**–(पुं०) रेशम का कीड़ा।—**नाग**–(पुं०) बड़ा घड़ियाल।—**नाभ**–(पुं०) मकड़ी।—**निर्यास**–(पुं०) ताड़ का पेड़।—**पर्वन्**–(पुं०) श्रावण की पूर्णिमा जिस दिन रक्षा-बंधन का पर्व होता है।—**भ**–(पुं०) राई के दाने। बछड़ा।—**वाद्य**–(न०) बाजा जिसमें तार या डोरी लगी हो।—**वान**–(न०) बुनावट।—**वाप**–(पुं०) जुलाहा। करघा। बुनाई।—**विग्रहा**–(स्त्री०) केला।—**शाला**–(स्त्री०) कपड़ा बुनने का घर।—**सन्तत**–(वि०) बुना हुआ। सिला हुआ। सार–(पुं०) सुपारी का वृक्ष।

तन्तुक—(पुं०) [तन्तु√कै+क वा तन्तु+कन्] राई के दाने। सूत। एक सर्प।

तन्तुण, तन्तुन—(पुं०) [√तन्+तुनन्, पक्षे नि० णत्वम्] एक जलजंतु, मगर।

तन्तुर, तन्तुल—(न०) [तन्तु+र] [तन्तु+लच्] कमलनाल का रेशा।

√तन्त्र्—चु० आत्मा० सक० संयम में करना। शासन करना। पालन-पोषण करना। तन्त्रयते, तन्त्रयिष्यते, अततन्त्रत।

तन्त्र–(न०) [तन्त्र्+घञ्] करघा। सूत। ताना। वंश। अविच्छिन्न(वंश)परंपरा। कर्मकाण्डपद्धति। मुख्य विषय। सिद्धान्त। नियम। कल्पना। विज्ञान। परतंत्रता, पराधीनता। विज्ञान शास्त्र। अध्याय। पर्व। तंत्र शास्त्र। मंत्र-तंत्र। मुख्य या प्रधान तंत्र। दवाई। शपथ। पोशाक। किसी कार्य के करने की ठीक पद्धति। राजकीय परिवार। प्रान्त, प्रदेश। अधिकार। राज्य। शासन, हुकूमत। सेना। ढेर, समूह। घर। सजावट। धन-सम्पत्ति। आह्लाद;—**युक्ति**–(स्त्री०) अशुद्धियों को दूर करते हुए अर्थ को स्पष्ट करने की युक्ति (अधिकरण, योग, पदार्थ आदि)।—**वाप**–(पुं०) (कपड़े)

बुनना। करघा।—वाय-(पुं०) मकड़ी। जुलाहा।—संस्था-(स्त्री०) मंत्रिमंडल, शासक सभा।—स्कंद-(पुं०) गणित ज्योतिष।

तन्त्रक—(पुं०) [तंत्रात् सूत्रवापात् अचिराहृतम्, तंत्र+कन्] कोरा कपड़ा।

तन्त्रण—[√तन्त्र्+ल्युट्] (न०) हुकूमत कायम रखना। शान्ति बनाये रखना।

तन्त्रि, तन्त्री—(स्त्री०) [√तन्त्र्+इ] [तन्त्रि+ङीष्] ताँत। वीणा। वीणा का तार। नस। पूँछ।

तन्द्रा—(स्त्री०) [तद्√द्रा+क नि० दस्य नः वा√तन्द्र्+घञ्—टाप्] ऊँघ। क्लांति। वैद्यक में शरीर के भारी और इन्द्रियों के शिथिल होने की दशा।

तन्द्रालु—(वि०) [तद्√द्रा+आलुच्, तदो नान्तत्वं निपात्यते] थका हुआ। निद्रालु, सोने की इच्छा रखने वाला।

तन्द्रि, तन्द्री—(स्त्री०) [√तन्द्+क्रिन्] [तन्द्रि+ङीप्] अल्प निद्रा, ऊँघ।

तन्मय—(वि०) [तद्+मयट्] उसी में निवेशित चित्त वाला, उसी में लगा हुआ, उसी में लीन हो जाने वाला।

तन्मात्र—(न०) [तद्+मात्रच्] शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध—इनका आदि, अमिश्र, सूक्ष्म रूप। तदात्मक, उसी शकल का।

तन्वी—(स्त्री०) [तनु+ङीष्] कृशाङ्गी। कोमलाङ्गी; 'इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी' श० १.२०।

√तप्—भ्वा० पर० अक० तपना, जलना। चमकना। संतप्त होना। तपति, तपस्यति, अताप्सीत्। दि० आत्म० अक० तपस्या करना। तप्यते, तप्स्यते, अतप्त। चु० पर० सक० जलाना। तापयति—तपति, तापयिष्यति—तप्स्यति, अतीतपत्—अताप्सीत्।

तप—(वि०) [√तप्+अच्] गर्म, उष्ण, जलता हुआ। सन्तापदायी, दुःखदायी। (पुं०) गर्मी। आग। सूर्य। ग्रीष्म ऋतु। तपस्या।—अत्यय (तपात्यय),—अन्त (तपान्त)-(पुं०) ग्रीष्म ऋतु का अवसान और वर्षा ऋतु का आरम्भ।

तपती—(स्त्री०) [√तप्+शतृ—ङीप्] सूर्य की एक कन्या। ताप्ती नदी।

तपन—(पुं०) [√तप्+ल्यु] सूर्य; 'ललाटंतपस्तपति तपनः' उत्त० ६। ग्रीष्म ऋतु। सूर्यकान्त मणि। नरक विशेष। शिव। मदार या आक का पौधा।—आत्मज (तपनात्मज),—तनय-(पुं०) यम। कर्ण। सुग्रीव।—आत्मजा (तपनात्मजा),—तनया-(स्त्री०) यमुना। गोदावरी।—इष्ट (तपनेष्ट)-(न०) ताँवा।—उपल (तपनोपल),—मणि-(पुं०) सूर्यकान्त मणि।—छद (तपनच्छद)-(पुं०) सूर्यमुखी फूल।

तपनी—(स्त्री०) [तप्यते पापम् अनया,√तप्+ल्युट्—ङीप्] गोदावरी नदी। पाढ़ा लता।

तपनीय—(न०) [√तप्+अनीयर्] सुवर्ण, सोना; 'असंस्पृशतौ तपनीयपीठं' र० १३.४१।

तपस्—(न०) [√तप्+असन्] उष्णता, गर्मी। आग। पीड़ा, कष्ट। धार्मिक अनुष्ठान। ध्यान। आलोचना। पुण्यकर्म। अपने वर्ण या आश्रम का शास्त्र-विहित कर्मानुष्ठान। जनलोक के ऊपर का लोक। (पुं०) माघ मास। (पुं०, न०) शिशिर ऋतु। हेमन्त ऋतु। ग्रीष्म ऋतु।—अनुभाव (तपोऽनुभाव)-(पुं०) धार्मिक कर्मानुष्ठान का प्रभाव।—अवट (तपोऽवट)-(पुं०) ब्रह्मावर्त प्रदेश।—क्लेश (तपःक्लेश)-(पुं०) तपस्या के कष्ट।—चरण (तपश्चरण)-(न०),—चर्या (तपश्चर्या)-(स्त्री०) तपस्या।—तक्ष (तपस्तक्ष)-(पुं०) इन्द्र।—धन (तपोधन)-(पुं०) तपस्वी। संन्यासी।—निधि (तपोनिधि)-(पुं०) तपस्वी। संन्यासी।—प्रभाव (तपःप्रभाव)-(पुं०)—बल (तपोबल)-(न०) तपस्या द्वारा उपार्जित शक्ति।

--राशि (तपोराशि)-(पुं०) बहुत बड़ा तपस्वी। संन्यासी।--लोक (तपोलोक)-(पुं०) जनलोक के ऊपर का लोक।--वन (तपोवन)-(न०) वन, जहाँ तपस्वी तप करें।--वृद्ध (तपोवृद्ध)-(वि०) बहुत तप कर चुकने वाला।--विशेष (तपोविशेष)-(पुं०) सर्वोत्कृष्ट भक्ति। प्रधान धर्मानुष्ठान। --स्थली (तपःस्थली)-(स्त्री०) काशी।

तपस--(पुं०) [√तप्+असच्] सूर्य। चन्द्रमा। पक्षी।

तपस्य--(पुं०) [तपसि साधुः, तपस्+यत्] फाल्गुन मास। अर्जुन। तापस मनु के एक पुत्र। (न०) तपस्या। कुन्दपुष्प।

तपस्या--(स्त्री०) [तपस्+क्यङ+अ--टाप्] तप, व्रतचर्या।

तपस्विन्--(वि०) [तपस्+विनि] तपस्या करने वाला। दीन, दुखिया, बेचारा। (पुं०) नारद। संन्यासी। गौरैया। घीकुआर। दरिद्र मनुष्य। एक मत्स्य। (न०) सूर्यमुखी का फूल। दौना।

तप्त--(वि०) [√तप्+क्त] गरमाया हुआ। अंगारे की तरह लाल, अति गर्म। पिघला हुआ। सन्तप्त, पीड़ित। जिसने तपस्या की हो।--काञ्चन--(न०) तपाया हुआ सोना।--कृच्छ्र--(न०) प्रायश्चित्त रूप में किया जाने वाला एक व्रत।--माष-(पुं०) किसी की सचाई-झुठाई के लिये की जाने वाली एक प्राचीन कठोर परीक्षा।--रूपक-(न०) विशुद्ध चाँदी।--सुराकुण्ड-(न०) एक नरक।

√तम्--दि० पर० सक० चाहना। अक० (गला) घोंटना। थक जाना। शान्त होना। मन में सन्तप्त होना, विकल होना। ताम्यति।

तम--(न०) [√तम्+घ] अन्धकार। पैर की नोक। (पुं०) राहु। तमाल वृक्ष।

तमस्--(न०) [√तम्+असुन्] अन्धकार। नरक का अंधकार। भ्रम। तमोगुण। क्लेश, दुःख। पाप। (पुं०, न०) राहु।--अपह (तमोऽपह)-(वि०) भ्रम दूर करने वाला। अज्ञान हटाने वाला। (पुं०) सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि।--काण्ड (तमःकाण्ड)-(पुं०, न०) घोर या गाढ़ अन्धकार।--गुण (तमोगुण)-(पुं०) प्रकृति का एक गुण जो अज्ञान, आलस्य, क्रोध, भ्रम आदि का कारण है। घ्न (तमोघ्न)-(पुं०) सूर्य। चन्द्र। अग्नि। विष्णु। शिव। ज्ञान। बुद्धदेव।--ज्योतिस् (तमोज्योतिस्)-(पुं०) जुगनू, खद्योत। --तति (तमस्तति)-(स्त्री०) अंधकार का छा जाना।--नुद् (तमोनुद्)-(पुं०) नक्षत्र। सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। दीपक।--नुद (तमोनुद)-(पुं०) सूर्य। चन्द्रमा।--भिद्, (तमोभिद्),--मणि (तमोमणि)-(पुं०) जुगनू। --विकार (तमोविकार)-(पुं०) बीमारी। --हन् (तमोहन्),--हर (तमोहर) (वि०) अन्धकार दूर करने वाला। (पुं०) सूर्य। चन्द्रमा।

तमस--(पुं०) [√तम्+असच्] अन्धकार। कूप।

तमस्विनी, तमा--(स्त्री०) [तमस्विन्--ङीप्] [तम+अच्+टाप्] रात। हलदी।

तमाल--(पुं०) [√तम्+कालन्] पहाड़ों पर और यमुना के किनारे होने वाला एक सदाबहार वृक्ष। वरुण वृक्ष। काला खैर। तेजपात। बाँस की छाल। माथे पर लगाने का साम्प्रदायिक चिह्न या तिलक विशेष। तलवार।--पत्र-(न०) तिलक विशेष। तमाखू। तेजपात। दालचीनी।

तमि, तमी--(स्त्री०) [√तम्+इन्] [तमि--ङीप्] रात, विशेष कर कृष्णपक्ष की; 'स तमीं तमोभिरभिगम्य ततां' शि० ९.२३। मूर्छा। हल्दी।

तमिस्र--(वि०) [तमिस्रा+अच्] काला। (न०) [तमस्+र, नि० साधुः] अँधियारी

अन्धकार । भ्रम । अज्ञान । क्रोध ।—**पक्ष**–(पुं॰) कृष्णपक्ष ।

तमिस्रा—(स्त्री॰) [तमिस्र+टाप्] कृष्ण पक्ष की रात । प्रगाढ़ अन्धकार ।

तमोमय—(पुं॰) [तमस्+मयट्] राहु । (वि॰) ज्ञानहीन । अंधकारपूर्ण ।

तम्बा, तम्बिका—(स्त्री) [तम्बति गच्छति, √तम्ब्+अच्—टाप्] [√तम्ब्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] गौ, गाय ।

√तय्—भ्वा॰ आत्म॰, सक॰ जाना । रक्षा करना । तयते, तयिष्यते, अतयिष्ट ।

तर—(पुं॰) [√तॄ+अप्] पार करने की क्रिया । बढ़ जाना । पराभूत करना । अग्नि । वृक्ष । गति । मार्ग । घाटवाली नाव । नाव का भाड़ा । तद्धित का एक प्रत्यय जो गुणाधिक्य प्रकट करने के लिये लगाया जाता है जैसे—स्थूलतर ।—**पण्य**–(न॰) भाड़ा । —**स्थान**–(न॰) घाट ।

तरक्ष, तरक्षु—(पुं॰) [=तरक्षु, पृषो॰ उलोप] [तरं बलं मार्गं वा क्षिणोति, तर √क्षि+डु] एक छोटी जाति का बाघ, लकड़बग्घा ।

तरङ्ग—(पुं॰) [√तॄ+अङ्गच्] लहर । (ग्रन्थ का) अध्याय । फलांग । वस्त्र ।

तरङ्गिणी—(स्त्री॰) [तरङ्ग+इनि—ङीप्] नदी ।

तरङ्गित—(न॰) [तरङ्ग+इतच्] लहराता हुआ, ऊपर से बहता हुआ । कंपायमान ।

तरण—(न॰) [√तॄ+ल्युट्] पार करना । विजय । डाँड़ । (पुं॰) नाव, बेड़ा । स्वर्ग ।

तरणि—(पुं॰) [√तॄ+अनि] सूर्य । प्रकाश की किरण ।

तरणि, तरणी—(स्त्री॰) [तरणि+ङीप्] नाव, बेड़ा ।—**रत्न**–(न॰) लाल ।

तरण्ड—(पुं॰, न॰) [√तॄ+अण्डच्] मछली फँसाने की बंसी की डोरी में बाँधी जाने वाली छोटी लकड़ी जो ऊपर उतराती रहती है । डाँड़ । नाव, बेड़ा ।—**पादा**–(स्त्री॰) एक प्रकार की नाव ।

तरण्डी, तरद्, तरन्ती—(स्त्री॰) [तरण्ड+ङीप्] [√तॄ+अदि] [तरन्त+ङीप्] नाव, बेड़ा ।

तरन्त—(पुं॰) [√तॄ+झच्] समुद्र । प्रचण्ड जलवृष्टि । मेंढ़क । दैत्य या राक्षस ।

तरल—(वि॰) [√तॄ+अलच्] थरथराने वाला, काँपने वाला । चंचल; 'तारापतिस्तरलविद्युदिवाभ्रवृन्दं' र॰ १३.७६ । अदृढ़ । विनश्वर । उत्तम । चमकीला । पनीला । लंपट । (पुं॰) हार के बीचों बीच की मुख्य मणि । हार । समतल, सतह । ताली, गहराई । हीरा । लोहा ।

तरला—(स्त्री॰) [तरल+टाप्] माँड़, उबले हुए चावलों का जल विशेष । सुरा । मधुमक्खी ।

तरलायित—(वि॰) [तरल+क्यच्+क्त] कँपाया या हिलाया हुआ । (न॰) बड़ी लहर । अस्थिरता ।

तरवारि—(पुं॰) [तरं समागतविपक्षबलं वारयति, तर √वृ + णिच्+इन्] तलवार, खड्ग ।

तरस्—(न॰) [√तॄ+असुन्] गति, वेग । विक्रम, शक्ति । स्फूर्ति । तीर । किनारा । चौराहा । बेड़ा ।

तरस—(न॰) [√तॄ+असच्] मांस ।

तरसान—(पुं॰) [√तॄ+आनच्, सुट्] नौका, नाव ।

तरस्विन्—(वि॰) [स्त्री॰—तरस्विनी] [तरस्+विनि] तेज । मजबूत । साहसी । बलवान् । (पुं॰) हरकारा । वीर । पवन । गरुड़ ।

तरान्धु, तरालु—(पुं॰) -तराय तरणाय अन्धुरिव] [तराय अलति पर्याप्नोति, तर √अल्+उण्] बड़ी और चपटी तली की नाव ।

तरि, तरी—(स्त्री०) [तरति अनया, √तॄ +इ] [तरि+ङीष्] नाव; 'जीर्णा तरी सरिदतीव गभीरनीरा' । कपड़े रखने का संदूक । कपड़े का छोर या किनारा ।—**रथ**—(पुं०) क्षेपणी, डाँड़ ।

तरिक—(पुं०) [तराय तरणाय हितः, तर +ठन्] बेड़ा, नाव । [तरे तरणार्थदेयशुल्कग्रहणे अधिकृतः, तर+ठन्] मल्लाह, नाव खेने वाला ।

तरिकिन्—(पुं०) [तरिक+इनि] मल्लाह, माँझी ।

तरिका, तरिणी—(स्त्री०), **तरित्र**—(न०) **तरित्री**—(स्त्री०) [तरिक+टाप्] [तरः तरणं कृत्यत्वेन अस्ति अस्याः, तर+इनि—ङीप्] [तरति अनेन, √तॄ+ष्ट्रन्] [तरित्र+ङीप्] नौका, नाव ।

तरिता—(स्त्री०) [तर+इतच्—टाप्] तर्जनी उँगली । गाँजा । एक दुर्गा ।

तरीष—(पुं०) [√तॄ+ईषण्] सूखा गोबर, कंडा । नाव, बेड़ा । समुद्र । योग्य पुरुष । स्वर्ग । कार्य, व्यापार, पेशा ।

तरु—(पुं०) [तरति समुद्रादिकम् अनेन, √तॄ +उ] वृक्ष ।—**खण्ड**—(पुं०, न०),—**षण्ड**—(पुं०, न०) वृक्ष-समूह ।—**जीवन**—(न०) पेड़ की जड़ ।—**तल**—(न०) वृक्ष की जड़ के समीप की भूमि ।—**नख**—(पुं०) काँटा ।—**मृग**—(पुं०) वानर ।—**राग**—(पुं०) कली या फूल । अँखुआ, अंकुर ।—**राज**—(पुं०) तालवृक्ष ।—**रुहा**—(स्त्री०) वह वृक्ष जो दूसरे वृक्ष पर जमे या फैले ।—**विलासिनी**—(स्त्री०) नवमल्लिका लता ।—**शायिन्**—(पुं०) पक्षी ।

तरुण—(वि०) [√तॄ+उनन्] जवान, युवा । छोटा । हाल का पैदा हुआ । कोमल, मुलायम । नवीन, ताजा, टटका । जिन्दादिल । (पुं०) युवा पुरुष, जवान आदमी ।—**ज्वर**—(पुं०) वह ज्वर जो एक सप्ताह तक न उतरे ।—**दधि**—(न०) पाँच दिन का रखा हुआ दही ।—**पीतिका**—(स्त्री०) ईंगुर । मैनसिल ।

तरुणी—(स्त्री०) [तरुण+ङीष्] युवती स्त्री, जवान औरत ।

तरुश—(वि०) [तरु+श] वृक्षों से परिपूर्ण ।

√तर्क्—चु० पर० सक०, अक० कल्पना करना । अनुमान करना । सन्देह करना । विश्वास करना । परिणाम पर पहुँचना । बहस करना । सोचना । इरादा करना । खोजना । चमकना । बोलना । तर्कयति, तर्कयिष्यति, अततर्कत् ।

तर्क—(पुं०) [√तर्क्+अच्] कल्पना । अनुमान । युक्ति । वादविवाद । सन्देह । न्याय शास्त्र । आकांक्षा । कारण ।—**विद्या**—(स्त्री०) न्याय शास्त्र ।—**शास्त्र**—(न०) वह शास्त्र जिसमें तर्क के नियम सिद्धांत आदि निरूपित हों । गौतम और कणाद इसके प्रधान आचार्य माने जाते हैं ।

तर्कक—(पुं०) [तर्क √कै+क] याचक, माँगने वाला । न्याय शास्त्र का जानने वाला ।

तर्कु—(पुं०, स्त्री०) [√कृत्+उ नि० साधुः] तकुआ जिस पर चर्खे में सूत लिपटता जाता है ।—**पिण्ड**—(पुं०) —**पीठी**—(स्त्री०) तकुआ के निचले छोर पर का गोला ।

तर्क्षु—(पुं०) [=तरक्षु पृषो० साधुः] तेंदुआ ।

तर्क्ष्य—(पुं०) [√तृक्ष्+ण्यत्] जवाखार नमक ।

√तर्ज्—भ्वा० पर०, चु० आत्म० सक० डरवाना, भयभीत करना । फटकारना । भर्त्सना करना । कलङ्क लगाना । चिढ़ाना । (भ्वा०) तर्जति, तर्जिष्यति अतर्जीत् । (चु०) तर्जयते, तर्जयिष्यते अततर्जत ।

तर्जन—(न०), **तर्जना**—(स्त्री०) [√तर्ज् +ल्युट्] [√तर्ज्+णिच्+युच्] भयभीत करना । डरवाना । भर्त्सना ।

तर्जनी—(स्त्री०) [तर्जन+ङीप्] अँगूठे के पास की अँगुली ।

तर्ण, तर्णक--(पुं०) [√ तृण् +अच्] [तर्ण+कन्] बछड़ा, बछवा; 'अभ्याजतोऽभ्यागततूर्णतर्णकाम्' शि० १२.४१ ।

तर्णि--(पुं०) [√तृ+नि] बेड़ा । सूर्य ।

√तर्द्--भ्वा० पर० सक० घायल करना, चोटिल करना । वध करना , काट गिराना । तर्दति, तर्दिष्यति, अतर्दीत् ।

तर्पण--(न०) [√तृप्+ल्युट्] प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना । सन्तोष, प्रसन्नता । आह्निक पाँच कर्त्तव्यानुष्ठानों में से एक, पितृयज्ञ विशेष । समिधा ।--**इच्छु** (**तर्पणेच्छु**) -(पुं०) भीष्म पितामह की उपाधि ।

तर्मन्--(न०) [√तृ+मनिन्] यज्ञीयस्तम्भ का शिरोभाग ।

तर्ष--(पुं०) [√तृष्+घञ्] प्यास । कामना, इच्छा । समुद्र । नाव । सूर्य ।

तर्षण--(न०) [√तृष्+ल्युट्] प्यास, तृषा ।

तर्षित, तर्षुल--(वि०) [तर्ष+इतच्] [√तृष् +उलच्] प्यासा, अभिलाषी, इच्छुक ।

तर्हि--(अव्य०) [तद्+र्हिल्] उस समय । उस दशा में ।)**यदा तर्हि**-(अव्य०) जब तब । **यदितर्हि**-(अव्य०) यदि तब ।--**कथं तर्हि**-(अव्य०) तब कैसे ।)

√तल्--चु० पर० अक० स्थिर होना । सक० पूरा करना । तालयति, तालयिष्यति, अतीतलत् ।

तल--(न०, पुं०) सतह । हथेली । तलवा । बाँह । थप्पड़ । नीचता, पद की अपकृष्टता । तलदेश, निम्न देश, तली, पेंदी ।--**अङ्गुलि** (**तलाङ्गुलि**)-(स्त्री०) पैर की उँगली ।--**अतल** (**तलातल**)-(न०) सात पातालों में एक ।--**ईक्षण** (**तलेक्षण**)-(पुं०) सुअर । --**उदा** (**तलोदा**-(स्त्री०) नदी ।--**घात**-(पुं०) थप्पड़, चपेटा ।--**ताल**-(पुं०) हाथ से बजाया जाने वाला एक बाजा । ताली । --**त्राण**,--**वारण**-(न०) धनुर्धरों का चमड़े का दस्ताना ।--**प्रहार**-(पुं०) थप्पड़ । --**सारक**-(न०) जेरबंद, तंग, अधोबंधन ।

तलक--(न०) [तल√कै+क] तालाब । एक फल ।

तलतः--(अव्य०) [तल+तस्] पेंदी से ।

तलाची--(स्त्री०) [तल√अञ्च् + क्विप् -ङीप्] चटाई ।

तलिका--(स्त्री०) [तल+ठन्] जेरबंद, तंग, अधोबंधन ।

तलित--(न०) [तल+इतच्] तला हुआ मांस ।

तलिन--(वि०) [√तल्+इनन्] पतला, दुबला । कम, थोड़ा । साफ, स्वच्छ । नीचे का । पृथक् । (न०) बिस्तरा । पलंग । कोच ।

तलिम--(न०) [√तल्+इमन्] पत्थर जड़ा हुआ फर्श । चारपाई, खाट । पाल । तिरपाल । चँदोवा । लंबी तलवार या छुरी ।

तलुन--(पुं०) [तरति वेगेन गच्छति, √तृ +उनन्] वायु ।

तलुनी--(स्त्री०) [√तल्+उनन्+ङीप्] युवती ।

तल्क--(न०) [√तल्+कन्] जंगल ।

तल्प--(न, पुं०) [तल्यते शयनार्थं गम्यते, √तल्+प] चारपाई । पलंग । सेज; 'सपदि विगतनिद्रस्तल्पमुज्झाञ्चकार' र० ५.७५ । स्त्री, भार्या (यथा गुरुतल्पग) । गाड़ी में बैठने का स्थान । मकान के ऊपर की मंजिल, गुम्मेठ ।

तल्पक--(पुं०) [तल्प+कन्] वह नौकर जिसका काम सेज या चारपाई बिछाने का हो ।

तल्ल--(पुं०) [तस्मिन् लीयते इति] कूप । तडाग । (न०) बिल । गड्ढा ।

तल्लज--(पुं०) [तत् प्रसिद्धं यथा तथा लजति, √लज्+अच्] उत्तम । सर्वोत्कृष्ट । यथा--**गोतल्लजा**, **कुमारीतल्लजा**:

तल्लिका—(पुं०) [तस्मिन् लीयते, √ली +ड+कन्, इत्व] ताली, कुंजी ।

तल्ली—(स्त्री०) [तत् प्रसिद्धं यथा तथा लसति, √लस्+ड—ङीष्] जवान स्त्री । वरुण की स्त्री । नाच ।

तष्ट—(वि०) [√तक्ष्+क्त] चिरा हुआ, कटा हुआ । छेनी से छीला हुआ । सँभाला हुआ ।

तष्टृ—(पुं०) [√तक्ष्+तृच्] बढ़ई । विश्वकर्मा ।

√**तस्**—दि० पर० सक० ऊपर फेंकना । तस्यति, तसिष्यति, अतसत् ।

तस्कर—(पुं०) [तद्√कृ+अच्, सुट्, दलोप] चोर । एक शाक । मदन-वृक्ष । कान ।—**वृत्ति**–(पुं०) पाकेटमार, गिरहकट ।

तस्करी—(स्त्री०) [तद्√कृ+ट, टित्वात् ङीप्] व्यसनी स्त्री ।

तस्थु—(वि०) [√स्था+कु, द्वित्व] अचल, स्थिर ।

ताक्षण्य, ताक्षण—(पुं०) [तक्षन्+ण्य] [तक्षन्+अण्] बढ़ई का पुत्र ।

ताच्छीलिक—(पुं०) [तच्छील+ठक्] विशेष प्रवृत्ति, झुकाव या स्वभाव सूचक प्रत्यय विशेष ।

ताच्छील्य—(न०) [तत् शीलं यस्य तस्य भावः, तच्छील+ष्यञ्] किसी काम को लगातार करने की क्रिया ।

ताटङ्क—(पुं०) [ताड्यते, ताड् पृषो० डस्य टः, तथाभूतम् अङ्कम् चिह्नं यस्य, ब० स०] कान का बाला, आभूषण विशेष ।

ताटस्थ्य—(न०) [तटस्थ+ष्यञ्] सामीप्य । अनासक्ति, उदासीनता, उपेक्षा ।

ताड—(पुं०) [√तड्+घञ्] प्रहार, ठोकर । कोलाहल । म्यान । पहाड़ ।

ताडका—(स्त्री०) [√तड्+णिच्+ण्वुल् —टाप्] एक राक्षसी जिसे श्रीरामचन्द्र जी ने विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करते समय जान से मारा था । वह सुकेत की बेटी, सुन्दर की भार्या और मारीच की माता थी ।

ताडकेय—(पुं०) [ताडका+ढक्—एय] ताड़का का पुत्र, मारीच ।

ताडङ्क, ताडपत्र—(पुं०, न०) [तालम् अङ्क्यते लक्ष्यते, √अङ्क्+घञ्, लस्य डत्वम्, शक० पररूप] [तालस्य पत्रमिव, ष० त०, लस्य डः] दे० 'ताटङ्क' ।

ताडन—(न०) [√तड्+णिच्+ल्युट्] आघात । मार । फटकार । अनुशासन । दीक्षा के मंत्र का एक संस्कार । खंडग्रहण । गुणन ।

ताडनी—(स्त्री०) [ताडन+ङीष्] कोड़ा, चाबुक ।

ताडि, ताडी—(स्त्री०) [√तड्+णिच् +इन्] [ताडि+ङीष्] एक प्रकार का खजूर वृक्ष । आभूषण विशेष ।

ताड्यमान—(वि०) [√तड्+णिच् + शानच्, मुक्, यक्] जिस पर मार पड़ती हो । (पुं०) एक प्रकार का बाजा जो लकड़ी से बजाया जाय, एक तरह का ढोल ।

ताण्डव—(न०) [तण्डुना, नन्दिना प्रोक्तम्, तण्डु√अण्] नृत्य, नाच । विशेष कर, शिव जी का नृत्य विशेष । नाचने की कला । एक प्रकार की घास ।—**प्रिय**–(पुं०) शिव जी ।

तात—(पुं०) [तनोति विस्तारयति गोत्रादिकम् √तन्+क्त, दीर्घ] पिता । अपने से उम्र में छोटों के लिये सम्बोधन का शब्द विशेष । यह शब्द अपने से बड़ों के लिए भी प्रतिष्ठा सूचक सम्बोधन की तरह प्रयुक्त किया जाता है ।—**गु**–(वि०) पिता के अनुकूल । (पुं०) ताऊ, चाचा ।

तातन—(पुं० [तातं प्रशस्तं यथा तथा नृत्यति, तात√नृत्+ड] खञ्जन पक्षी ।

तातल—(पुं०) [ताप√ला+क, पृषो० पस्य

त:] रोग। लोहे का डंडा, लोहे की तेज नोंक को कील। रसोई बनाना, पकाना। गर्मी।

ताति—(पुं०) [√ताय्+क्तिच्] पुत्र, बेटा। (स्त्री०) [√ताय्+क्तिन्] वंशपरंपरा।

तात्कालिक—(वि०) [तत्काल+ठञ्] तत्काल का, उसी या उस समय का। [स्त्री० —**तात्कालिकी**]

तात्पर्य—(न०) [तत्पर+ष्यञ्] आशय, निष्कर्ष, अभिप्राय।

तात्त्विक—(वि०) [तत्त्व+ठक्] तत्त्व-संबंधी। सत्य, असली। परमावश्यक।

तादात्म्य—(न०) [तदात्मन्+ष्यञ्] अभिन्नता, दो वस्तुओं के परस्पर अभिन्न होने का भाव।

तादृक्ष, तादृश्—(वि०) [स्त्री०—**तादृक्षी, तादृशी**] [स इव दृश्यते, तद्√दृश्+क्स] [तद् √दृश्+क्विन्] वैसा, उसकी तरह।

तान—(पुं०) [√तन्+घञ्] तनाव, फैलाव। ज्ञानेन्द्रिय। सूत। (गान में) तान; 'तान-प्रदायित्वमिवोपगन्तुम्' कु० १.८।

तानव—(न०) [तनु+अण्] दुबलापन, स्वल्पता।

तानूर—(पुं०) [√तन्+ऊरण्] भँवर।

तान्त—(वि०) [√तम्+क्त] थका हुआ, शिथिल, परिश्रान्त। पीड़ित, सन्तप्त। मुर्झाया हुआ, कुम्हलाया हुआ।

तान्तव—(न०) [तन्तु+अञ्] कातना, बुनना। मकड़ी का जाला। बुना हुआ कपड़ा।

तान्त्रिक—(वि०) [स्त्री०—**तान्त्रिकी**] [तन्त्र+ठक्] किसी कला या सिद्धान्त से भली-भाँति सुपरिचित। तंत्र-सम्बन्धी। तंत्रों में सुपठित। (पुं०) तंत्र शास्त्र का ज्ञाता। एक प्रकार का सन्निपात।

ताप—(पुं०) [√तप्+घञ्] गर्मी, धधक। पीड़ा, कष्ट; 'समस्तापः कामं मनसिज-निदाघप्रसरयोः' श० ३.६। शोक।—**त्रय**-(न०) तीन प्रकार के कष्ट (यथा आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक) —**मान**-(न०) थर्मामीटर द्वारा मापी गई शरीर या वायुमंडल के ताप की मात्रा।—०**यन्त्र**-(न०) थरमामीटर।—**स्वेद**-(पुं०) उष्णता पहुँचने से उत्पन्न पसीना।—**हर**-(वि०) तापनाशक, शान्तिदायी।

तापन—(पुं०) [√तप्+णिच्+ल्युट्] सूर्य। ग्रीष्मऋतु। सूर्य-कान्तमणि। कामदेव के बाणों में से एक बाण का नाम। (न०) [√तप्+णिच्+ल्युट्] तपाना, जलाना। कष्ट। दण्ड।

तापस—(वि०) [स्त्री०—**तापसी**] [तपस् +ण वा तापस+अण्] तपस्या या तपस्वी सम्बन्धी। (पुं०) [स्त्री०—**तापसी**] तपस्वी। बगला। तेजपात। दौना नामक पौधा।—**इष्टा** (**तापसेष्टा**)-(स्त्री०) द्राक्षा, दाख। —**तरु**,—**द्रुम**-(पुं०) इङ्गुदी वृक्ष, हिंगोट। —**प्रिय**-(पुं०) प्रियाल वृक्ष।

तापस्य—(न०) [तापस+ष्यञ्] तपस्या, व्रतचर्या।

तापिच्छ—(पुं०) [तापिनं छादयति, तापिन् √छद्+ड, पृषो० साधुः] तमालवृक्ष; तमाल पुष्प; 'प्रफुल्लतापिच्छनिभैरभीषुभिः' शि० १.२२।

तापिन्—(वि०) [√तप्+णिच्+णिनि] ताप देने वाला। [√तप्+णिनि] तापयुक्त, जिसमें ताप हो। (पुं०) बुद्धदेव।

तापी—(स्त्री०) [√तप्+णिच्+अच् —ङीप्] तापती नदी। यमुना नदी।

ताम—(पुं०) [√तम्+घञ्] भयप्रद वस्तु। दोष, अपराध। चिन्ता। अभिलाषा। ग्लानि। क्लांति।

तामर—(न०) [ताम√रा+क] जल। मक्खन।

तामरस—(न०) [तामर√सस्+ड] लाल-कमल। सोना। ताँबा। धतूरा।

तामरसी—(स्त्री०) [तामरस+ङीप्] कमलिनी। तालाब जिसमें कमल हों।

तामस—(वि०) [स्त्री०—**तामसी**] [तमस्+अण्] कृष्ण, काला। तमोगुणी। अज्ञानी। दुष्ट। (न०) अन्धकार। (पुं०) दुष्टजन। साँप। उल्लू। चौथा मनु। राहु का एक पुत्र।

तामसिक—(वि०) [तमस्+ठञ्] [स्त्री०—**तामसिकी**] अँधियारा। तमस् सम्बन्धी। तमस् से उत्पन्न या निकला हुआ।

तामसी—(स्त्री०) [तामस+ङीप्] कृष्णपक्ष की रात। निद्रा। दुर्गा की उपाधि।

तामिस्र—(पुं०) [तमिस्रा+अण्] एक नरक। द्वेष। क्रोध। घृणा। कृष्णपक्ष। एक राक्षस।

ताम्बूल—(न०) [√तम्+उलच्, वुगागम, दीर्घ] पान।—**करंक**–(पुं०),—**पेटिका**–(स्त्री०) पानदान, पनडब्बा।—**द**,—**धर**,—**वाहक**–(पुं०) नौकर जो अपने मालिक के साथ पानदान लिये हुए डोले और जहाँ जरूरत पड़े वहाँ पान खिलावे।—**वल्ली**–(स्त्री०) पान की वेल।

ताम्बूलिक—(पुं०) [ताम्बूल+ठन्] तमोली।

ताम्बूली—(स्त्री०) [ताम्बूल+ङीष्] पान का पौधा।

ताम्र—(वि०) [√तम्+रक्, दीर्घ] ताँवे का वना हुआ। ताँवे की तरह लाला रंग का। (न०) ताँवा। एक प्रकार का कोढ़।—**अक्ष (ताम्राक्ष)**–(पुं०) काक। कोयल।—**अर्ध (ताम्रार्ध)**–(पुं०) काँसा। फूल।—**अश्मन् (ताम्राश्मन्)**–(पुं०) पद्मरागमणि।—**उपजीविन् (ताम्रोपजीविन्)**–(पुं०) जो ताँवे की चीजें वना कर जीवन-निर्वाह करता है, कसेरा।—**ओष्ठ (ताम्रोष्ठ)**–(पुं०) लाल ओंठों वाला।—**कर्णी**–(स्त्री०) पश्चिम के दिग्गज अंजन की पत्नी।—**कार**,—**कुट्ट**–(पुं०) कसेरा, ठठेरा।—**कृमि**–(पुं०) इन्द्र-गोप कीट, वीरवहूटी।—**गर्भ**–(न०) तूतिया।—**चूड**–(पुं०) मुर्गा।—**त्रपुज**–(न०) पीतल।—**द्रु**–(पुं०) लालचन्दन।—**पट्ट**–(पुं०),—**पत्र**–(न०) ताम्रपत्र जिन पर दान दी हुई वस्तुओं के नाम, दानदाता का नाम और दानग्रहीता का नाम खोदा जाता था।—**पर्णी**–(स्त्री०) मलयाचल से निकलने वाली एक नदी का नाम।—**पल्लव**–(पुं०) अशोक।—**लिप्त**–(पुं०) वंगाल के अंतर्गत एक भू-खंड, तामलूक।—**वर्ण**–(वि०) ताँवे के रंग का, रक्तवर्ण। (पुं०) सिंहल द्वीप।—**वल्ली**–(स्त्री०) मजीठ।—**बीज**–(पुं०) कुलथी।—**वृक्ष**–(पुं०) लाल चन्दन का वृक्ष।—**शासन**–(न०) ताम्रपट्ट पर खुदा हुआ धर्मलेख आदि।—**शिखिन्**–(पुं०) मुर्गा, कुक्कुट।—**सार**–(न०) दे० 'ताम्रवृक्ष'।—**सारक**–(पुं०) रक्तचंदन का वृक्ष। खैर, कत्था।

ताम्रिक—(वि०) [ताम्र+ठन्] [स्त्री०—**ताम्रिकी**] ताँवे का बना हुआ। (पुं०) ठठेरा, कसेरा।

√ताय्—भ्वा० आत्म० सक० फैलाना। वढ़ाना। रक्षा करना, वचाना। तायते, तायिष्यते, अतायि, अतायिष्ट।

तार—(वि०) [√तृ+णिच्+अच् वा घञ्] ऊँचा। चमकीला। उत्तम। स्वादिष्ठ। (पुं०) नदीतट। मोती की आव। सुन्दर या वड़ा मोती; 'हारममलतरतारमुरसि दधतं, गीत० ११। उच्चस्वर। (न०, पुं०) ग्रह या नक्षत्र। कपूर। (न०) चाँदी। आँख की पुतली। मोती।—**अभ्र (ताराभ्र)**–(पुं०) कपूर।—**अरि (तारारि)**–(पुं०) लोहभस्म जो दवा के काम में आये।—**पतन**–(न०) नक्षत्रपात, उल्कापात।—**पुष्प**–(पुं०) कुन्द या चमेली की वेल।—**वायु**–(पुं०) सन्-सन् करती हुई हवा।—**शुद्धिकर**–(न०) सीसा, सीसक।—**स्वर**–(वि०) खर आवाज वाला।

—हार-(पुं०) मोती का हार। दमकता हुआ हार।

तारक—(वि०) [स्त्री०—तारिका] [√तॄ णिच्+ण्वुल्] ले जाने वाला,। पारकरैया। रक्षक, बचाने वाला। उद्धारक। (पुं०) इन्द्र का शत्रु एक दैत्य जिसे नपुंसक का रूप धारण कर विष्णु ने मारा था। महादेव। एक दानव जिसे कार्तिकेय ने मारा था। (पुं०, न०) बेड़ा। (न०) [तार+कन्] नक्षत्र, तारा। आँख की पुतली। [तारेण कनीनिकया कायति, तार √कै+क] आँख।—**अरि** (**तारकारि**),—**जित्**-(पुं०) कार्तिकेय का नाम।

तारका—(स्त्री०) [तारक+टाप्] सितारा, नक्षत्र। धूमकेतु। आँख की पुतली; 'संदधे दृशमुदग्रतारकां, र० ११.६९।

तारकिणी—(स्त्री०) [तारक+इनि—ङीप्] रात जिसमें आकाश के तारे देख पड़ें।

तारकित—(वि०) [तारक+इतच्] नक्षत्रों वाला। नक्षत्र-जड़ित।

तारण—(पुं०) [√तॄ+णिच्+ल्यु] विष्णु। शिव। नौका, बेड़ा। (न०) [√तॄ +णिच्+ल्युट्] तारने या उद्धार करने की क्रिया।

तारणि, तारणी—(पुं०) [√तॄ+णिच् +अनि] [तारणि+ङीप्] बेड़ा, नाव।

तारतम्य—(न०) [तरतम+ष्यञ्] न्यूनाधिक्य, कमज्यादा, थोड़ा-बहुत। एक दूसरे से कमी-बेशी का हिसाव। गुण, परिमाण आदि का परस्पर मिलान।

तारल—(पुं०) [तरल+अण्] लंपट मनुष्य, कामुक।

तारा—(स्त्री०) [तार+टाप्] तारा या नक्षत्र। स्थिर नक्षत्र। आँख की पुतली। मोती। बालि की स्त्री का नाम। बृहस्पति की स्त्री का नाम। तंत्रोक्त दश महाविद्याओं में से एक। हरिश्चन्द्र राजा की रानी का नाम।—**अधिप** (**ताराधिप**),—**आपीड** (**तारापीड**),—**पति**-(पुं०) चन्द्र।—**पथ**-(पुं०) आकाशमण्डल। आकाश।—**भूषा**-(स्त्री०) रात।—**मण्डल**- (न०) खगोल। आँख की पुतली।—**मृग**-(पुं०) मृगशिरस् नक्षत्र।

तारिक—(न०) [तार+ठन्] भाड़ा, किराया, उतराई।

तारिणी—(स्त्री०) [√तॄ+णिच्+णिनि —ङीप्] तारने वाली, सद्गति देने वाली। पार्वती। दूसरी महाविद्या।—**ईश** (**तारिणीश**)-(पुं०) शिव। (वि०) जिसकी प्रभु तारिणी है।

तारुण्य—(न०) [तरुण+ष्यञ्] जवानी, युवावस्था। ताजगी, टटकापन।

तारेय—(पुं०) [तारा+ढक्] बुधग्रह। वालिपुत्र अङ्गद की उपाधि।

तार्किक—(पुं०) [तर्क+ठक्] न्यायदर्शनवेत्ता, नैयायिक।

तार्क्ष्य—(पुं०) [तृक्ष+अण्—तार्क्ष+यञ्] गरुड़; 'त्रस्तेन तार्क्ष्यात् किल कालियेन, र० ६.४९। अरुण। गाड़ी। घोड़ा। सर्प। पक्षी।—**ध्वज**-(पुं०) विष्णु।—**नायक**-(पुं०) गरुड़।

तार्तीय—(वि०) [तृतीय+अण् (स्वार्थे)] तीसरा।

तार्तीयीक—(वि०) [तृतीय+ईकक्] तीसरा।

ताल—(पुं०) [√तल+घञ् वा √तल् +णिच्+अच् वा तल+अण्] तालवृक्ष। ताली बजाना। फड़फड़ाना। हाथी के कानों की फड़फड़ाहट। संगीत में नियत मात्राओं पर ताली बजाना। दुर्गा का सिंहासन। बालिश्त। मँजीरा। हथेली। ताला। तलवार की मूँठ। (न०) ताड़ वृक्ष का फल। हड़ताल।—**अङ्क** (**तालाङ्क**)-(पुं०) बलराम। तालपत्र जो लिखने के काम आते हैं। पुस्तक। आरा।—**अवचर** (**तालावचर**)-(पुं०) नचैया, नाचने वाला। नाटक का पात्र।—

केतु-(पुं०)भीष्मपितामह।—क्षीरक-(न०) —गर्भ-(पुं०) ताड़ वृक्ष का रस।—चर-(पुं०) एक देश। वहाँ का निवासी। वहाँ का राजा।—जङ्घ-(पुं०) एक देश। वहाँ का निवासी या राजा। एक प्रकार का ग्रह। महाभारत में वर्णित एक वीर जाति का पूर्व पुरुष।—ध्वज,—भृत्—(पुं०) वलराम का नाम। कर्णभूषण विशेष।—मर्दक-(पुं०)एक प्रकार का वाजा।—यंत्र-(न०)शल्य-चिकित्सा का औजार।—रेचनक-(पुं०) नृत्य करने वाला। नाटक खेलने वाला।—लक्षण-(पुं०) वलराम।—वन-(न०) ताड़ के पेड़ों का जंगल। यमुना के किनारे पर स्थित व्रज का एक वन।—वृन्त-(न०) पंखा।

तालक—(न०) [ताल+कन्] हड़ताल। चटखनी। ताला। (पुं०) कर्णभूषण विशेष।

तालव्य—(वि०) [तालु+यत्] तालू से संबंध रखने वाला।—वर्ण-(पुं०) वे अक्षर जो तालू की सहायता से वोले जायँ। ऐसे अक्षर ये हैं—इ, ई, च्, छ्, ज्, झ्, ञ और य्।

तालिक—(पुं०) [तल+ठक्] चपत, तमाचा। ताली। कागज का पुलिंदा या हस्तलिखित प्रति वाँधने का वेठन या वंधन।

तालिका—(स्त्री०) सूची। कुंजी। तालमूली। मजीठ। हाथों से वजाई गई ताली; 'यथैकेन न हस्तेन तालिका संप्रपद्यते' पं० २.१२८। चपत।

तालित—(न०) [√तड्+णिच्+क्त, डस्य लत्वम्] एक प्रकार का वाजा। रंगीन कपड़ा। रस्सी, डोरी।

ताली—(स्त्री०) [√तल्+णिच्+अच्—ङीप्] पहाड़ी ताड़ का पेड़। ताड़ी वृक्ष। महकदार मिट्टी। एक प्रकार की कुंजी।—वन-(न०) ताड़ के वृक्षों का झुरमुट।

तालु—(न०) [तरन्त्यनेन वर्णाः, √तॄ+ञुण्, रस्य लः] तालू।—जिह्व-(पुं०) मगर।

तालूर—(पुं०) [√तल्+णिच्+ऊर] भँवर। ज्वार। वाढ़।

तालूषक—(न०) [√तल्+णिच्+ऊषक] तालू।

तावक, तावकीन—(वि०) [तव इदम्, युष्मद्+अण्, तवक आदेश] [तव इदम्, युष्मद्+खञ्, तवक आदेश] तेरा, तुम्हारा; 'तपः क्व वत्से क्व च तावकं वपुः', कु० ५.४।

तावत्—(अव्य०) [तत्परिमाणमस्य, तत्+डवतु] साकल्य। अवधि। मान। अवधारण। प्रशंसा। पक्षान्तर। संग्राम। अधिकार। तव तक। (वि०) [तत्परिमाणमस्य, तद्+वतुप्] उतने परिमाण का।

तावतिक—(वि०) [तावत्+क, इट्] उतने में खरीदा हुआ।

तावत्क—(वि०) [तावता क्रीतः संख्यात्वात् कन्] इतने मूल्य का, इतने दामों का।

तावुरि—(पुं०) वृष राशि।

√तिक्—स्वा० पर० सक० जाना। तिक्नोति, तेकिष्यति, अतेकीत्।

तिक्त—(वि०) [√तिज्+क्त] तीता, कडुआ। (पुं०) ६ रसों में से एक। सुगंध। पित्तपापड़ा। कुटज। वरुण वृक्ष।—कन्दिका—(स्त्री०) गंधपत्रा। वनकचूर।—काण्ड—(पुं०) चिरायता।—गन्धा-(स्त्री०) राई। वाराही कंद।—घृत-(न०) तिक्त ओषधियों के योग से तैयार किया हुआ घृत जो कुष्ठ, विषमज्वर आदि में दिया जाता है।—तण्डुला-(स्त्री०) पीपर।—तण्डी-(स्त्री०) कटुतुम्बी लता।—तुम्बी-(स्त्री०) तितलौकी।—दुग्धा-(स्त्री०) खिरनी, क्षीरिणी वृक्ष। अजशृंगी, मेढ़ासिंघी।—धातु-(पुं०) पित्त।—फल-(पुं०),—मरिच-(पुं०)निर्मली।—सार-(पुं०) खदिर वृक्ष।

√तिग्—स्वा० पर० सक० जाना। तिग्नोति, तेगिष्यति, अतेगीत्।

तिग्म—(वि०) [√तिज्+मक्] तीव्र, पैना।

नोकदार (हथियार)। उग्र, प्रचण्ड । जलता हुआ। तीता। क्रोधी। (न०) गर्मी। तीतापन।—**अंशु** (**तिग्मांशु**)-(पुं०) सूर्य। अग्नि। शिव।—**कर**,—**दीधिति**,—**रश्मि** -(पुं०) सूर्य।

√तिज्—चु० उभ० सक० तेज करना। तेजयति—ते। भ्वा० आत्म० सक० सहन करना। (स्वार्थ में सन् प्रत्यय) तितिक्षते, तितिक्षिष्यते, अतितिक्षिष्ट।

तितउ—(पुं०) [तन्यन्ते भृष्टयवा अत्र, √तन्+डउ, द्वित्व, इत्व] चलनी। (न०) छाता।

तितिक्षा—(स्त्री०) [√तिज्+सन्+अ—टाप्] सर्दी-गर्मी आदि द्वंद्वों को सहने की क्रिया या शक्ति। विना प्रतीकार या विकलता के सभी दुःखों को सहना। क्षमा।

तितिक्षु—(वि०) [√तिज्+सन्+उ] सहनशील, क्षमावान्।

तितिभ—(पुं०) [तितीति शब्देन भणति, तिति√भण्+ड] जुगनू, खद्योत। इन्द्रगोप, बीरबहूटी।

तितिरि, तित्तिर—(पुं०) [=तित्तिर, पृषो० साधुः] [तित्ति इति शब्दं राति ददाति, तित्ति√रा+क] तीतर पक्षी।

तित्तिरि—(पुं०) [तित्ति इति शब्दं रौति, तित्ति√रु+डि] तीतर। एक ऋषि का नाम जिन्होंने कृष्णयजुर्वेद को सबसे प्रथम पढ़ाया।

तिथ—(पुं०) [√तिज्+थक्, जलोप] आग। समय। वर्षा या शरद् ऋतु। कामदेव।

तिथि—(पुं०, स्त्री०) [√अत्+इथिन्, पृषो० साधुः] चन्द्रकलाओं के हिसाब से होने वाली प्रतिपदा आदि तिथियाँ, चान्द्र दिवस। पन्द्रह की संख्या।—**क्षय**-(पुं०) अमावास्या। तिथि का ह्रास।—**पत्री**-(स्त्री०) पञ्चाङ्ग, पत्रा।

तिनिश—(पुं०) शीशम की जाति का एक वृक्ष।

तिन्तिड—(पुं०), **तिन्तिडी**, **तिन्तिडिका**-(स्त्री०), **तिन्तिडीक**-(पुं०) [=तिन्तिडी, पृषो० साधुः] [√तिम्+ईकन्, पृषो० साधुः] [तिन्तिडी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [√तिम् + ईकन्, नि० साधुः] इमली का वृक्ष। इमली।

तिन्दु, तिन्दुक, तिन्दुल—(पुं०) [√तिम् +कु, नि० साधुः] [तिन्दु+कन्] [=तिन्दुक, पृषो० कस्य लः] तेंदू का पेड़।

√तिम्—भ्वा० पर० सक० नम करना, गीला करना। तेमति, तेमिष्यति, अतेमीत्।

तिमि—(पुं०) [√तिम्+इन्] समुद्र। बहुत बड़े आकार का एक समुद्री मत्स्य। मत्स्य।—**कोष**-(पुं०) समुद्र।—**ध्वज**-(पुं०) एक दैत्य जिसे इन्द्र ने महाराज दशरथ की सहायता से मारा था।

तिमिङ्गिल—(पुं०) [तिमि √गिल्+खश्, मुम्]एक विशाल मत्स्य जो तिमि मत्स्य को भी खा डालता है।

तिमित—(वि०) [√तिम्+क्त] गतिहीन, स्थिर, अचल। गीला, नम, तर।

तिमिर—(वि०) [√तिम्+किरच्] काला। अन्धकारमय। (पुं०, न०) अंधकार। अंधापन। लोहे का मोर्चा।—**अरि** (**तिमिरारि**) —**नुद्**,—**रिपु**-(पुं०) सूर्य।

तिरश्ची—(स्त्री०) [तिर्यक् जातिः स्त्रियां ङीष्] किसी जानवर, पक्षी या जन्तु की मादा।

तिरश्चीन—(वि०) [तिर्यक्+ख—ईन] टेढ़ा, तिरछा; 'गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः' शि० १.२।

तिरस्—(अव्य०) [तरति दृष्टिपथं √तॄ +असुन्] तिरछेपन से, टेढ़ेपन से। विना, रहित। गुप्तरीत्या, अदृश्य रूप से।

तिरयति—(क्रि०) छिपाना, गुप्त रखना।

रोकना, अड़चन डालना, वाधा देना । जीत लेना ।

तिर्यक्—(अव्य०) [दे० 'तिर्यच्'] टेढ़ेपन से।

तिर्यच्—(वि०)(स्त्री०)[**तिरश्ची—तिर्यञ्ची**] [तिरस् √अञ्च्+क्विप्, तिरसः तिरि आदेशः अञ्चेर्नलोपः] टेढ़ा, तिरछा । मुड़ा हुआ, झुका हुआ । (पुं०, न०) पशु । पक्षी ।—**अन्तर (तिर्यगन्तर)**—(न०) अर्ज, चौड़ाई । —**अयन (तिर्यगयन)**—(न०) सूर्य की वार्षिक गति ।—**ईक्ष (तिर्यगीक्ष)**—(वि०) भेंड़ा, ऐंचाताना ।—**जाति (तिर्यग्जाति)**—(पुं०) पशु-पक्षी की जाति ।—**प्रमाण (तिर्यक्-प्रमाण)**—(न०) चौड़ाई ।—**प्रेक्षण (तिर्यक्-प्रेक्षण)**—(न०) क़नखियों देखना । तिरछी आँख कर देखना ।—**योनि (तिर्यग्योनि)**—(स्त्री०) पशु-पक्षी जाति ।—**स्रोतस् (तिर्यक्-स्रोतस्)**—(पुं०) पशु-सृष्टि ।

√तिल्—तु० पर० अक० चिकना होना । तिलति, तेलिष्यति, अतेलीत् । भ्वा० पर० सक० जाना । तेलति, तेलिष्यति, अतेलीत् ।

तिल—(पुं०) [√तिल्+क] तिल का पौधा। तिल-बीज । शरीर पर का तिल या मस्सा । तिल के समान छोटा टुकड़ा ।—**अम्बु (तिलाम्बु)**, —**उदक (तिलोदक)**—(न०) तिल मिश्रित जल, जो तर्पण के काम में आता है ।—**उत्तमा (तिलोत्तमा)**—(स्त्री०) एक अप्सरा का नाम ।—**ओदन (तिलौदन)**—(पुं०, न०) तिल-चावल की खीर । —**कालक**—(पुं०) मस्सा, तिल ।—**किट्ट**—(न०),—**खलि, —खली**—(स्त्री०),—**चूर्ण**—(न०) खली जो पशुओं को खिलायी जाती है ।—**तण्डुलक**—(न०) आलिंगन । —**धेनु**—(स्त्री०) तिल की वनी गाय जो दान रूप में दी जाय ।—**पर्ण**—(पुं०) तारपीन । (न०) चन्दन ।—**पर्णी**—(स्त्री०) चन्दन का वृक्ष । तारपीन ।—**पिच्चट**—(न०) तिल की पीठी । तिलकुट ।—**भाविनी**—(स्त्री०) चमेली ।—**भेद**—(पुं०) पोस्ते का दाना ।—**रस**—(पुं०) तिली का तेल ।—**स्नेह**—(पुं०) तिली का तेल ।—**होम**—(पुं०) तिल की आहुति ।

तिलक—(न०) [√तिल्+क्वुन्, तिल √कै+क, वा तिल+कन्]घिसे हुए चंदन, केसर या रोली आदि से ललाट पर वनाया हुआ विशेष आकार का चिह्न, टीका; 'न तिलकस्तिलकः प्रमदामिव' र० ६.४१ । सोंचर नमक । राज्याभिषेक, राजगद्दी । स्त्रियों का एक शिरोभूषण । पेट के भीतर की तिल्ली । फुफ्फुस । (पुं०) लोध्र वृक्ष । मरुवक वृक्ष । तिलकारक रोग । घोड़े का एक भेद । पीपल का एक भेद । ध्रुवक का एक भेद जिसमें प्रत्येक चरण में २५ अक्षर होते हैं ।—**आश्रय (तिलकाश्रय)**—(पुं०) माथा ।

तिलका—(स्त्री०) [तिल√कै+क—टाप्] हार का एक भेद ।

तिलतैल—(न०) [तिल+तैलच्] तिल का तेल ।

तिलन्तुद—(पुं०) [तिल√तुद्+खश्, मुम्] तेली ।

तिलशः (अव्य०) [तिल+शस्] अत्यन्त अल्प परिमाण में ।

तिलित्स—(पुं०) बड़ा सर्प ।

तिल्य—(न०) [तिलानां भवनं क्षेत्रं वा, तिल+यत्] तिल का खेत ।

तिल्व—(पुं०) [√तिल्+वन्] लोध का पेड़ ।

तिष्ठद्गु—(अव्य०) [तिष्ठन्त्यो गावो यस्मिन् काले, तिष्ठद्गुप्रभृतित्वात् नि० अव्य० स०] वह समय जब दूध देने को गौ खड़ी होती है । सन्ध्या के घंटे या डेढ़ घंटे के वाद का समय ।

तिष्य—(पुं०) [√तुष्+क्यप्, नि० साधुः] पुष्य नक्षत्र, २७ नक्षत्रों में से आठवाँ

नक्षत्र। (न०) [तिष्य+अच्] पौष मास। [√त्विष्+यक्, नि० साधुः] कलियुग।
√तीक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। तीकते, तीकिष्यते, अतीकिष्ट।
तीक्ष्ण—(पुं०) [√तिज्+क्स्न, दीर्घ] शोरा। लालमिर्च। कालीमिर्च। राई। (न०) लोहा। इस्पात। गर्मी। तीतापन। युद्ध। विष। मृत्यु। हथियार। समुद्री नमक। शीघ्रता। (वि०) पैना, तीव्र। गर्म, ताता। उग्र, प्रचण्ड। कड़ा। कर्कश। टेढ़ा। कठोर। हानिकर। विषैला। कुशाग्र। बुद्धिमान्, चतुर। डाही। आत्मत्यागी।—**अंशु** (**तीक्ष्णांशु**)—(पुं०) सूर्य। अग्नि।—**आयस** (**तीक्ष्णायस**)—(न०) इस्पात लोहा।—**उपाय** (**तीक्ष्णोपाय**)—(पुं०) उग्र साधन।—**कन्द**—(पुं०) लहसुन।—**कर्मन्**—(वि०) क्रियाशील। स्पर्धावान्।—**दंष्ट्र**—(पुं०) चीता।—**धार**—(पुं०) तलवार।—**पुष्प**—(न०) लौंग।—**पुष्पा**—(स्त्री०) लौंग का पौधा। केतकी का पौधा।—**बुद्धि**—(वि०) तेज अक्ल का, चतुर।—**रश्मि**—(पुं०) सूर्य।—**रस**—(पुं०) शोरा। विषैला तरल पदार्थ।—**लौह**—(न०) इस्पात।—**शूक**—(पुं०) जौ।—**सार**—(पुं०) लोहा।—**सारा**—(स्त्री०) शीशम का पेड़।
√तीम्—दि० पर० अक० भींगना, नम होना। तीम्यति, तीमिष्यति, अतीमीत्।
√तीर्—चु० पर० सक० पार जाना। काम समाप्त करना। तीरयति, तीरयिष्यति, अतितीरत्।
तीर—(न०) [√तीर्+अच्] तट, किनारा। हाशिया, छोर, किनारा। (पुं०) वाण। सीसा। टीन। जस्ता।
तीरित—(वि०) [√तीर्+क्त] तै किया हुआ, निर्णीत। साक्षी के अनुसार फैसला किया हुआ।—(न०) किसी कार्य की समाप्ति या अवसान।

तीर्ण—(वि०) [√तॄ+क्त] पार किया हुआ। फैला हुआ। सब से आगे निकला हुआ।
तीर्थ—(न०) [तरति पापादिकं यस्मात्, √तॄ+थक्] रास्ता, मार्ग। घाट, जलस्थान। पवित्रस्थान। द्वारा, जरिया, माध्यम। उपाय। पवित्र या पुण्यप्रद व्यक्ति। गुरु। उद्गम स्थान। यज्ञ। सचिव। उपदेश। उपयुक्त स्थान या काल। उपयुक्त या साधारण पद्धति। हाथ के कई भाग जो देव और पितृ कार्य के लिये पवित्र माने जाते हैं। दार्शनिक सिद्धान्त विशेष। स्त्रियों का रज। ब्राह्मण। अग्नि। (न०) संन्यासियों की एक उपाधि।—**उदक** (**तीर्थोदक**)—(न०) पवित्र जल।—**कर** (**तीर्थङ्कर** भी)—(पुं०) जैन अर्हत। संन्यासी। नवीन दर्शनकार। विष्णु का नाम।—**काक**,—**ध्वांक्ष**,—**वायस**—(पुं०) लोलुप।—**देव**—(पुं०) शिव।—**भूत**—(वि०) पवित्र। विशुद्ध।—**यात्रा**—(स्त्री०) पुण्यप्रद स्थानों में गमन।—**राज**—(पुं०) प्रयाग का नाम।—**राजि**,—**राजी**—(स्त्री०) काशी।—**वाक**—(पुं०) सिर के बाल।—**विधि**—(पुं०) तीर्थ में जाकर वहाँ कर्म विशेष करने की पद्धति।—**सेविन्**—(वि०) तीर्थयात्री। (पुं०) बगला पक्षी।
तीर्थिक—(पुं०) [तीर्थ+ठन्—इक] तीर्थ का ब्राह्मण, पंडा। तीर्थंकर। तीर्थयात्री।
√तीव्—भ्वा० पर० अक० मोटा होना। तीवति, तीविष्यति, अतीवीत्।
तीवर—(पुं०) [√तॄ+ष्वरच्] समुद्र। शिकारी। क्षत्रिया की वर्णसङ्कर औलाद।
तीव्र—(न०) [√तीव्+रक्] उष्णता, गर्मी। तट। लोहा। (पुं०) शिव। (वि०) उग्र, प्रचण्ड। गर्म, उष्ण। चमकीला। व्यापक। अनन्त, असीम। भयानक।—**आनन्द** (**तीव्रानन्द**)—(पुं०) शिव जी।—**कण्ठ**,—**कन्द**—(पुं०) सूरन, ओल।—

गति–(वि०) तेज, फुर्तीला ।—**पौरुष**–(न०) दुस्साहस पूर्ण वीरता । वीरता ।—**संवेग**–(वि०) दृढ़-विचार-सम्पन्न । अति-प्रचण्ड । (पुं०) तीव्र वैराग्य ।—**सव**–(पुं०) एक दिन में समाप्त होने वाला एक यज्ञ, एकाह यज्ञ ।

तु—(अव्य०) [√तुद्+डु] किन्तु । प्रत्युत । और । अब । इस सम्बन्ध में । भेदसूचक भी है ।

तुक्खार,—तुखार,—तुषार– (पुं०) विन्ध्याचल वासी जातियों में से एक जाति के लोगों का नाम ।

तुङ्ग—(वि०) [√तुञ्ज्+घञ्, कुत्व] ऊँचा, उन्नत । लंबा । प्रलंब । मेहराबदार । मुख्य । दृढ़ । (पुं०) ऊँचाई, उठान । पर्वत । चोटी । बुधग्रह । गेंडा । नारियल का वृक्ष । —**बीज**–(पुं०) पारा ।—**भद्र**–(पुं०) मदमाता हाथी ।—**भद्रा**–(स्त्री०) एक नदी का नाम जो कृष्णा नदी में गिरती है ।—**वेणा**–(स्त्री०) महाभारत में वर्णित एक नदी का नाम ।—**शेखर**–(पुं०) पर्वत ।

तुङ्गी—(स्त्री०) [तुङ्ग+ङीष्] रात्रि । हल्दी ।—**ईश (तुङ्गीश)**–(पुं०) चन्द्रमा । सूर्य । शिव । कृष्ण ।—**पति**–(पुं०) चन्द्रमा ।

तुच्छ—(न०) [√तुद्+क्विप्, तुद्√छो +क] तुष, भूसी । (पुं०) नील का पौधा । तूतिया । (वि०) खाली । हल्का । छोटा । थोड़ा । त्यागा हुआ । नीच । निकम्मा । गरीब । अभागा ।—**द्रु**-(पुं०) एरण्ड वृक्ष ।—**धान्य,—धान्यक**–(पुं०) फूस । पुआल ।

तुच्छता—(स्त्री०) [तुच्छ+तल्—टाप्] नीचता । अवज्ञा ।

√तुज्—भ्वा० पर० सक० हिंसा करना । तोजति, तोजिष्यति, अतोजीत् ।

√तुञ्ज्—भ्वा० पर० सक० पालन करना । तुञ्जति, तुञ्जिष्यति, अतुञ्जीत् । चु० पर० सक० मारना । अक० शक्तिग्रहण करना । निवास करना । तुञ्जयति, तुञ्जयिष्यति, अतुतुञ्जत् ।

तुञ्ज– (पुं०) [√तुञ्ज्+अच्] इन्द्र का वज्र ।

√तुट्—तु० पर० अक० झगड़ा करना । तुटति, तुटिष्यति, अतुटीत् ।

तुटुम—(पुं०) [√तुट्+उम] मूसा, चूहा ।

√तुड्—भ्वा० पर० सक० तोड़ना । तोडति, तोडिष्यति, अतोडीत् । तु० पर० सक० तोड़ना । तुडति, तुडिष्यति, अतुडीत् ।

√तुण्—तु० पर० सक० झुकाना, टेढ़ा करना । धोखा देना, ठगना । तुणति, तुणिष्यति, अतुणीत् ।

√तुण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० तोड़ना । मारना । तुण्डते, तुण्डिष्यते, अतुण्डिष्ट ।

तुण्ड—(न०) [√तुण्ड्+अच्] मुख । चोंच । थूथन (शूकर का) । हाथी की सूंड़ । औजार की नोक ।

तुण्डि—(पुं०) [√तुण्ड्+इन्] चेहरा, मुख । चोंच । (स्त्री०) टूँड़ी, नाभि ।

तुण्डिन्—(पुं०) [तुण्ड+इनि] शिव के वृषभ का नाम ।

तुण्डिभ—(वि०) =तुन्दिभ ।

तुण्डिल—(वि०) [तुण्ड+इलच्] बातूनी, गप्पी । तोंद वाला ।

तुत्थ—(पुं०) [√तुद्+थक्] अग्नि । पत्थर । —**अञ्जन (तुत्थाञ्जन)**–(न०) आँख में लगाने की एक दवा । (न०) तूतिया ।

तुत्था— (स्त्री०) [तुत्थ+टाप्] छोटी इलायची । नील का पौधा ।

√तुद्—तु० उभ० सक० मारना, घायल करना । चुभोना, गड़ाना । पीड़ित करना, सताना । तुदति—ते, तोत्स्यति—ते, अतौत्सीत्—अतुत्त ।

तुन्द—(न०) [√तुद्+दन्, पृषो० साधुः] पेट, तोंद ।—**कूपिका —कूपी**– (स्त्री०) नाभि ।—**परिमार्ज, —परिमृज्, —मृज**–(वि०) काहिल, सुस्त । दीर्घसूत्री ।

तुन्दवत्--(वि०) [तुन्द+मतुप्, वत्व] तोंद वाला, जिसका उदर बड़ा हो ।

तुन्दिक, तुन्दिन्, तुन्दिभ, तुन्दिल--(वि०) [अतिशयितं तुन्दम् उदरम् अस्ति अस्य, तुन्द+ठन्] [तुन्द+इनि] [तुन्दिर्वृद्धा अस्ति अस्य, तुन्दि+भ] [तुन्द+इलच्] बड़े पेट का । मटका जैसे पेट वाला । अत्यन्त मोटा । भरा हुआ या लदा हुआ ।

तुन्न--(वि०) [√तुद्+क्त] कटा हुआ । फटा हुआ । घायल । सताया हुआ ।--**वाय**-(पुं०) दर्जी ।

√तुप्--भ्वा०, तु० पर० सक० हिंसा करना । तोपति, तोपिष्यति, अतोपीत् । (तु०) तुपति ।

√तुभ्--दि०, क्र्या० पर० सक० हिंसा करना । तुभ्यति, तोभिष्यति, अतोभीत् । (क्र्या०) तुभ्नाति ।

तुमुल--(वि०) [√तु+मुलक्] शोर गुल मचाने वाला । भयानक । क्रोधी । उद्विग्न, व्याकुल । घबड़ाया हुआ । (पुं०, न०) कोलाहल, शोरगुल । अस्तव्यस्त द्वन्द्वयुद्ध ।

√तुम्ब्--भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना । तुम्बति, तुम्बिष्यति, अतुम्बीत् ।

तुम्ब--(पुं०) [√तुम्ब्+अच्] लौकी । तूंबा । आँवला ।

तुम्बर--(पुं०) [√तुम्ब रा+क] तानपूरा। एक गन्धर्व का नाम ।

तुम्बा--(स्त्री०) [तुम्ब+टाप्] तूंबा । दुधार गौ ।

तुम्बि, तुम्बी--(स्त्री०) [√तुम्ब्+इन्] [तुम्बि+ङीष्] कड़ुई लौकी, कड़ुआ घीया । इसका बना हुआ छोटा पात्र ।

तुम्बुरु--(पुं०) [√तुम्ब्+उरु] एक प्रसिद्ध गन्धर्व । जैनमत में पंचम अर्हत् का उपासक । (न०) धनिया ।

√तुर्--जु० पर० अक० शीघ्रता करना । तुतोर्ति । तोरिष्यति, अतोरीत् ।

तुरग--(पुं०) [तुरेण वेगेन गच्छति, तुर √गम्+ड] घोड़ा । मन ।--**आरोह** (तुरगारोह)-(पुं०) घुड़सवार ।--**उपचारक** (तुरगोपचारक)-(पुं०) साईस ।--**प्रिय**-(पुं०, न०) यव, जौ ।--**ब्रह्मचर्य**-(न०) स्त्री के अभाव में विवश हो ब्रह्मचर्य धारण करना ।

तुरगिन्--(पुं०) [तुरग+इनि] घुड़सवार ।

तुरगी--(स्त्री०) [तुरग+ङीष्] घोड़ी ।

तुरङ्ग--(पुं०) [तुर√गम्+खच्] घोड़ा । (न०) मन । सात की संख्या ।--**अरि** (तुरङ्गारि)-(पुं०) भैंसा ।--**द्विषणी**-(स्त्री०) भैंस ।--**प्रिय**-(पुं०, न०) यव, जौ । --**मेध**-(पुं०) अश्वमेध यज्ञ ।--**यायिन्**, --**सादिन्**-(पुं०) घुड़सवार ।--**वक्त्र**,--**वदन**-(पुं०) किन्नर ।--**शाला**-(स्त्री०)-- **स्थान**-(न०) अस्तबल, घुड़साल ।--**स्कन्ध** -(पुं०) रिसाला, घुड़सवारों की टोली ।--

तुरङ्गम--(पुं०) [तुर√गम्+खच्, मुम्] घोड़ा; 'अवेहि मां प्रीतमृते तुरङ्गमात् किमिच्छसीति' र० ३.६३ ।(न०)मन । एक छन्द का नाम ।

तुरङ्गी--(स्त्री०) [तुरङ्ग+ङीष्] घोड़ी ।

तुरायण--(न०) [√तुर्+क, तुर+फक्--आयन] असंग, अनासक्ति । एक यज्ञ जो चैत्र-शुक्ला-पंचमी और वैशाख-शुक्ला-पंचमी को किया जाता है ।

तुरासाह्--(पुं०) [तुरं त्वरितं साहयति, तुर √सह्+णिच्+क्विप्] [कर्त्ता एकवचन तुराषाट् या तुराषाड्] इन्द्र का नाम ।

तुरी--(स्त्री०) [√तुर्+इन्--ङीप्] जुलाहों का एक प्रकार का औजार जिससे बाने का सूत भरा जाता है । चित्रकार की कूची ।

तुरीय--(न०) [चतुर्णां पूरणः, चतुर्+छ--ईय, आद्यलोप] चौथाई, चौथा हिस्सा ।

[तुरीय+अच्] परब्रह्म । चौथा ।--**वर्ण**-(पुं०) शूद्र ।

तुरुष्क--(पुं०) तुर्क लोग ।

तुर्य--(वि०) [चतुर्+यत्, आद्यलोप] चौथा । (न०) चौथाई, चौथा हिस्सा ।

√तुर्व्--भ्वा० पर० सक० हिंसा करना । तुर्वति, तुर्विष्यति, अतूर्वीत् ।

√तुल्--चु० पर० सक० तोलना । सोचना, विचारना । उठाना, ऊँचा करना । पकड़ना । तुलना करना, बराबरी करना । तिरस्कार करना । सन्देह करना । परीक्षा लेना । तोलयति, तोलयिष्यति, अतूतुलत् ।

तुलन--(न०) [√तुल्+ल्युट्] तौलना । तौल । तुलना, बराबरी करना ।

तुलना--(स्त्री०) [√तुल्+णिच् +युच्--टाप्]न्यूनाधिक्य का विचार । समता, बराबरी, मिलान । उठाना । परीक्षा करना ।

तुलसी--(स्त्री०) [तुलां सादृश्यं स्यति नाशयति, तुला√सो+क--ङीष्, पररूप] एक प्रसिद्ध पौधा जो विष्णु को परम प्रिय है ।

तुला--(स्त्री०) [तोल्यतेऽनया, √तुल्+अङ--टाप्] तराजू । नाप । समानता, तुल्यता, बराबरी, 'किं धूर्जटेरिव तुलामुपयाति संख्ये' वे० ३.८ ।--**कूट**-(पुं०) तौल में की गई कमी । कम तौलने वाला ।--**कोटि, --कोटी**-(स्त्री०) तराजू की डंडी के दोनों छोर । नूपुर ।--**कोश,--कोष**-(पुं०) तौल द्वारा दिव्य परीक्षा । तराजू रखने की जगह ।--**दण्ड**-(पुं०) तराजू की डंडी । मानदण्ड । --**दान**-(न०) अपने शरीर के वजन के बराबर सुवर्ण आदि वस्तुएँ तौल कर उन्हें दान कर देना तुलादान कहलाता है ।--**धट**-(पुं०) बटखरा । व्यापारी, सौदागर । तुलाराशि ।--**धार**-(पुं०) व्यवसायी, सौदागर ।--**परीक्षा**-(स्त्री०) तुला द्वारा परीक्षा का विधान विशेष जिसमें मिट्टी आदि से तौला हुआ व्यक्ति यदि दूसरी बार तौलने में घट जाता था तो दोषी ठहराया जाता था । --**पुरुष**-(पुं०) सोलह प्रकार के महादानों में से एक ।--**०कृच्छ्र**-(न०) एक व्रत जिसमें तिल की खली, भात, मट्ठा, जल और सत्तू में से प्रत्येक तीन-तीन दिन खाकर पंद्रह दिनों तक रहना होता है ।--**०दान**-(न०) दे० 'तुलादान' ।--**प्रग्रह,-प्रग्राह** -(पुं०) तराजू की डोरी या डंडी ।--**मान**-(न०) --**यष्टि**-(स्त्री०) तराजू की डंडी ।--**वीज** -(न०) घुँघची के दाने ।--**सूत्र**-(न०) तराजू की डोरी ।

तुलित--(वि०) [√तुल्+क्त] तोला हुआ । मिलान किया हुआ ।

तुल्य--(वि०) [तुलया सम्मितम्, तुला+यत्] एक ही प्रकार का या एक ही श्रेणी का, बराबर का, समान, सदृश । एक सा, अभिन्न । --**दर्शन**--(वि०) जो सबको समान दृष्टि से देखता हो, समदर्शी ।--**पान**-(न०) एक साथ पीना ।--**रूप**-(वि०) एक जैसा, एक ही रूप का ।--**वृत्ति**-(वि०) वही पेशा करने वाला ।

तुवर--(वि०) [√तु+ष्वरच्] कसैले स्वाद का । दाढ़ी रहित । (पुं०) कषाय रस । अरहर ।

√तुष्--दि० पर० अक० प्रसन्न होना, संतुष्ट होना । तुष्यति, तोक्ष्यति, अतुषत् ।

तुष--(पुं०) [√तुष्+क] अन्न के ऊपर का छिलका, भूसी । बहेड़े का पेड़ । अंडे के ऊपर का छिलका ।--**अग्नि** (**तुषाग्नि**),--**अनल** (**तुषानल**)-(पुं०) भूसी या चोकर की आग ।--**अम्बु** (**तुषाम्बु**),--**उदक** (**तुषोदक**)-(न०) चावल या जौ की काँजी । --**ग्रह,-सार**-(पुं०) अग्नि ।--**धान्य**-(न०) छिलके वाला अन्न ।

तुषार--(वि०, पुं०) [√तुष्+आरक्] हवा में मिली भाप जो जम कर श्वेत कणों के रूप में पृथ्वी पर गिरती है, हिम, बरफ । चीनिया

कपूर । घोड़ों के लिये प्रसिद्ध हिमालय के उत्तर का एक प्राचीन देश । (वि०) जो छूने में बरफ की तरह ठंडा हो । ठंडा । कुहरे का । ओस का ।—**अद्रि (तुषाराद्रि)**,—**गिरि**,—**पर्वत**–(पुं०) हिमालय पर्वत ।—**कण**–(पुं०) कोहरा या पाले की बूँद, ओसकण ।—**काल**–(पुं०) जाड़े का मौसम ।—**किरण**,—**रश्मि**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**गौर**–(वि०) वर्फ की तरह सफेद । (पुं०) कपूर ।

तुषित—(बहु० पुं०) [√तुष्+कितच्] उपदेवता जिनकी संख्या १२ या ३६ वतलायी जाती है ।

तुष्ट—(वि०) [√तुष्+क्त] प्रसन्न, सन्तुष्ट । जो प्राप्त हो उससे सन्तुष्ट और अप्राप्त प्रत्येक वस्तु से विरक्त ।

तुष्टि—(स्त्री०) [√तुष्+क्तिन्] सन्तोष, प्रसन्नता ।

तुष्टु—(पुं०) [√तुष्+तुक्] कान में पहिनने का रत्न ।

√तुह्—भ्वा० पर० सक० वध करना । तोहति, तोहिष्यति, अतुहत्—अतोहीत् ।

तुहिन—(वि०) [√तुह्+इनन्] शीतल, ठंडा । (न०) हिम, वरफ । चाँदनी । पाला ।—**अंशु (तुहिनांशु)**,—**कर**,—**किरण**,—**द्युति**,—**रश्मि**– (पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**अचल (तुहिनाचल)**,—**अद्रि (तुहिनाद्रि)**,—**शैल**–(पुं०) हिमालय पर्वत ।—**कण**–(पुं०) ओस की बूंद ।—**शर्करा**–(स्त्री०) वरफ ।

√तूण्—चु० आत्म० सक० सिकोड़ना । पूर्ण करना । तूणयते, तूणयिष्यते, अतुतूणत ।

तूण—(पुं०) [√तूण्+घञ्] तूणीर, तरकस ।—**क्ष्वेड**–(पुं०) वाण, तीर ।—**धार**–(पुं०) धनुषधारी ।

तूणी, तूणीर—(स्त्री०) [तूण+ङीष्] [√तूण् +ईरन्] वाण रखने का चोंगा, तरकश ।

तूबर—(पुं०) [√तु+क्विप्, तु√वृ +पृषो० साधुः] दाढ़ी रहित पुरुष । विना सींग का वैल । कसैला स्वाद । हिजड़ा ।

√तूर्—दि० आत्म० सक० तेजी से जाना । वध करना । तूर्यते, तूरिष्यते, अतूरि—अतूरिष्ट ।

तूर—(न०) [√तूर्+घञ्] तुरही वाजा ।

तूर्ण—(वि०) [√त्वर्+क्त, ऊठ्, तस्य नत्वम्] तेज, वेगवान्, त्वरा वाला ।

तूर्णम्—(अव्य०) तेजी से, फुर्ती से, शीघ्रता से ।

तूर्णि—(पुं०) [√त्वर्+नि, नि० साधुः] मल । त्वरा । मन । तेजी ।

तूर्य—(न०, पुं०) [√तूर्+ण्यत्] तुरही । मृदंग ।—**ओघ (तूर्योघ)**–(पुं०) औजारों का समूह ।

√तूल्—भ्वा० पर० सक० काढ़ना । तूलति, तूलिष्यति, अतूलीत् ।

तूल—(न०, पुं०) [√तूल्+क] रुई । अन्तरिक्ष । वायुमंडल ।—**कार्मुक**, —**धनुस्**–(न०) रुई धुनने की कमान, धनुही ।—**पिचु** –(पुं०) रुई ।—**शर्करा**–(स्त्री०) विनौला । घास का गट्ठा । शहतूत ।

तूलक—(न०) [तूल+कन्] रुई ।

तूला—(स्त्री०) [√तूल्+अच्—टाप्] कपास का पेड़ । दीये की वत्ती ।

तूलि—(स्त्री०) [√तूल्+इन्]चित्रकार की कूँची ।

तूलिका—(स्त्री०) [तूलि+कन्—टाप्] चित्रकार की कूँची । सूती वत्ती । रुई भरा गद्दा । वर्मा, छेद करने का औजार ।

तूली—(स्त्री०) [√तूल्+इन्—ङीप्] रुई । वत्ती । जुलाहे की कूँची । चित्रकार की कूँची । नील का पौधा ।

√तूष्—भ्वा० पर० अक० प्रसन्न होना । तूषति, तूषिष्यति, अतूषीत् ।

तूष्णीक--(वि०) [तूष्णीम् शीलम् यस्य, तूष्णीम्+क, मलोप] मौन रहने वाला ।

तूष्णीम्--(अव्य०) [√तूष्+नीम् (बा०)] गुप्त रूप से, चुपचाप; 'न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीम्बभूव ह' भ० २.६ । बिना बोले या शोरगुल किये ।--**भाव**-(पुं०) खामोशी, मौनावलम्बन ।--**शील**-(वि०) खामोश, चुप रहने वाला ।

तूस्त--(न०) [√तुस्+तन्, दीर्घ] जटा । धूल । पाप । जर्रा, सूक्ष्म कण ।

√**तृह्**--तु० पर० सक० वध करना । घायल करना । तृंहति, तृंहिष्यति--तङ्क्ष्यति, अतृंहीत्--अताङ्क्षीत् ।

√**तृक्ष्**--भ्वा० पर० सक० जाना । तृक्षति, तृक्षिष्यति, अतृक्षीत् ।

√**तृण्**--त० उभ० सक० खाना । तृणोति--तर्णोति--तृणुते--तर्णुते ।

तृण--(न०) [√तृण्+घञ्, वा √तृह्+क्न, हकारलोप]तिनका; 'तृणमिव लघुलक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि' भर्तृ० २.१७ । खर-पात । घास । नरकुल, सरपत ।--**अग्नि** (**तृणाग्नि**)-(पुं०) फूस या भूसी की आग । आग जो जल्द बुझ जाय ।--**अञ्जन** (**तृणाञ्जन**)-(पुं०) गिरगिट ।-- **अटवी**(**तृणाटवी**)-(स्त्री०) वन जिसमें घास बहुत हो ।--**आवर्त** (**तृणावर्त**) -(पुं०) हवा का ववंडर । एक दैत्य का नाम जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था ।--**असृज्** (**तृणासृज्**),--**कुंकुम**,--**गौर**-(न०) भिन्न-भिन्न प्रकार के सुगन्ध-द्रव्य ।--**इन्द्र** (**तृणेन्द्र**)-(पुं०) खजूर का पेड़ ।--**उल्का** (**तृणोल्का**)-(स्त्री०) घास की बनी मशाल, फूस का लुआठ ।--**ओकस्** (**तृणौकस्**)-(न०) फूस की झोपड़ी ।--**काण्ड**- (पुं०, न०) [तृणानां समूहः, तृण+काण्डच्] घास का ढेर ।--**कुटी**-(स्त्री०),--**कुटीरक**- (न०) घास-फूस की कुटिया ।--**कूर्चिका**-(स्त्री०) झाड़ू ।--**केतु**-(पुं०)खजूर का पेड़ ।--**गोधा**-(स्त्री०) एक प्रकार का गिरगिट । गोह ।--**ग्राहिन्**-(पुं०) नीलम, पुखराज ।--**चर**-(पुं०) गोमेद मणि ।--**जलायुका**,--**जलूका**-(स्त्री०) झाँझा, एक कीड़ा ।--**द्रुम**-(पुं०) नारियल । ताल । खजूर । केतक वृक्ष । छुहारे का वृक्ष ।--**धान्य**- (न०) तिन्नी नामक धान, नीवार । सावाँ ।--**ध्वज**-(पुं०) ताल वृक्ष । बाँस ।--**पीड**- (न०) हाथापाई ।--**पूली**-(स्त्री०) चटाई, नरकुल की बनी बैठकी ।--**प्राय**-(वि०) निकम्मा, तुच्छ ।--**बिन्दु**-(पुं०) एक ऋषि का नाम ।--**मणि**-(पुं०) दे० 'तृणग्राहिन्' ।--**मत्कुण**-(पुं०) जामिन, जमानत करने वाला ।--**राज**-(पुं०) नारियल का पेड़ । बाँस । ईख । तालवृक्ष ।--**वृक्ष**-(पुं०) खजूर का पेड़ । छुहारे का पेड़ । नारियल का पेड़ ।--**शीत**-(न०) एक प्रकार की महकदार घास ।--**सारा**-(स्त्री०) केले का पेड़ ।--**सिंह**-(पुं०) कुल्हाड़ी ।--**हर्म्य**-(पुं०) फूस का झोपड़ा ।

तृण्या--(स्त्री०) [तृण+य] घास या फूस का ढेर ।

तृतीय--(वि०) [त्रयाणां पूरणः, त्रि+तीय, सम्प्रसारण] तीसरा ।--**प्रकृति**-(पुं०)या (स्त्री०) हिजड़ा, नपुंसक ।

तृतीयक--(वि०) [तृतीय+कन्] तिजारी, तीसरे दिन आने वाला ज्वर ।

तृतीया--(स्त्री०) [तृतीय+टाप्] पक्ष की तीसरी तिथि, तीज । करण कारक की विभक्ति ।--**कृत**-(वि०) तीन बार जोता हुआ (खेत) ।-**प्रकृति**-(पुं०, स्त्री०) हिजड़ा, नपुंसक ।

तृतीयिन्--(वि०) [तृतीय+इनि] तीसरा भाग पाने का अधिकारी ।

√**तृद्**--रु० उभ० सक० चीरना, फाड़ना । छेद करना । मार डालना । उजाड़ देना ।

छोड़ देना, मुक्त कर देना। तिरस्कार करना। तृणत्ति—तृन्ते, तर्दिष्यति—ते—तर्त्स्यति—ते, अतृदत्—अतर्दीत्—अतर्दिष्ट।

√तृप्—दि० पर० अक० संतुष्ट होना। सक० प्रसन्न करना। तृप्यति, तर्पिष्यति—तर्प्स्यति—त्रप्स्यति, अतार्प्सीत्—अत्राप्सीत्—अतर्पीत्—अतृपत्।

तृप्त—(वि०) [√तृप्+क्त] सन्तुष्ट, अघाया हुआ।

तृप्ति—(स्त्री०) [√तृप्+क्तिन्] सन्तोष। छकाई, अघाई। प्रसन्नता, आह्लाद।

√तृम्फ्—तु० पर० अक० प्रसन्न होना। तृम्फति, तृम्फिष्यति, अतृम्फीत्।

√तृष्—दि० पर० अक० प्यासा होना। लालच करना। तृष्यति, तृषिष्यति, अतृषत्।

तृष्—(स्त्री०) [√तृष्+क्विप्] [कर्त्ता एकवचन—तृट्, तृड्] प्यास। उत्कट अभिलाषा। उत्सुकता।

तृषा—(स्त्री०) [तृष्+टाप्] प्यास।—आर्त (तृषार्त)-(वि०) प्यासा।—ह-(न०) पानी।

तृषित—[तृषा+इतच्] प्यासा। इच्छुक। लोभी।

तृष्णज्—(वि०) [√तृष्+नजिङ] लालची, लोभी। प्यासा।

तृष्णा—(स्त्री०) [√तृष्+न—टाप्] प्यास। अभिलाषा। लालच।—क्षय-(पुं०) मन की शान्ति। सन्तोष।

तृष्णालु—(वि०) [तृष्णा+आलु] बहुत प्यासा। बड़ा लालची।

√तृह्—तु० पर० सक० हिंसा करना। तृहति, तर्हिष्यति—तर्क्ष्यति, अतर्हीत्—अतृक्षत्। रु० पर० सक० हिंसा करना। तृणेढि, तर्हिष्यति, अतर्हीत्।

√तॄ—भ्वा० पर० सक० पार होना। (मार्ग) तै करना। तैरना, उतराना। (कठिनाई को) पार करना। सम्पूर्णतः अपने अधिकार में कर लेना। पूरा करना, समाप्त करना। छुटकारा पाना, छूट जाना। तरति, तरीष्यति—तरिष्यति, अतारीत्।

√तिज्—भ्वा० पर० सक० पालन करना। तेजति, तेजिष्यति, अतेजीत्।

तेजन—(न०) [√तिज्+णिच्+ल्यु वा ल्युट्] बाँस। पैना करना, तेज करना। जलाना। चमकाना। पालिश करना। नरकुल। बाण की नोक। हथियार की धार।

तेजल—(पुं०) [√तिज्+णिच्+कलच्] एक प्रकार का तीतर।

तेजस्—(न०) [√तिज्+असुन्] तेजी। (चाकू की) तेज धार। आग की शिखा। गर्मी। चमक। पाँच तत्त्वों में से एक। सौन्दर्य। पराक्रम। स्फूर्ति। चरित्रबल। सर्वोत्कृष्ट आभा। वीर्य; 'दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः' श० ४.१। मुख्य लक्षण। सार। आध्यात्मिक शक्ति। अग्नि। गूदा। पित्त। घोड़े का वेग। ताजा मक्खन। सुवर्ण। ब्रह्म। सत्त्वगुण (सांख्यमतानुसार)।—कर-(वि०) चमक पैदा करने वाला। बलप्रद।—भङ्ग (तेजोभङ्ग)-(पुं०) अपमान। अनुत्साह।—मण्डल (तेजोमण्डल)-(न०) प्रकाश का घेरा।—मात्रा (तेजोमात्रा)-(स्त्री०) सत्त्वगुण का अंश। इन्द्रिय-समूह।—मूर्ति (तेजोमूर्ति)-(पुं०) सूर्य।—रूप (तेजोरूप)-(पुं०) ब्रह्म, परमात्मा।

तेजस्वत्, तेजोवत्—(वि०) [तेजस्+मतुप्, मस्य वः] चमकीला। तेज, तीक्ष्ण। वीर। क्रियाशील।

तेजस्विन्—(वि०) [तेजस्+विनि] [स्त्री० —तेजस्विनी] चमकीला। शक्तिमान्। वीर। कुलीन। प्रसिद्ध। प्रचण्ड। क्रोधी। विधान के अनुसार।

तेजित—(वि०) [√तिज्+णिच्+क्त] पैनाया हुआ। उत्तेजित, भड़काया हुआ।

तेजीयस्--(वि०) [तेजस्+ईयसुन्] अधिक तेज वाला ।

तेजोमय--(वि०) [तेजस्+मयट्] महत्त्व-पूर्ण । ज्योतिर्मय, प्रकाशमय । प्रधान तेज वाला ।

/तेप्--भ्वा० आत्म० अक० बहना । तेपते, तेप्स्यते, अतिप्त ।

म--(पुं०) [√तिम्+घञ्] आर्द्रीभाव, गीला होना ।

मन--(न०) [√तिम्+ल्युट्] गीला होना, भींगना । गीला । चटनी । मसाला ।

/तेव्--भ्वा० आत्म० अक० खेलना । तेवते, तेविष्यते, अतेविष्ट ।

वन--(न०) [√तेव्+ल्युट्] खेल, आमोद-प्रमोद । क्रीड़ास्थल, विहार भूमि ।

जस--(वि०) [तेजस्+अण्] [स्त्री०--**तैजसी**] चमकीला । ज्योतिर्मय, तेजोमय; 'तैजसस्य धनुषः प्रवृत्तये' र० ११.४३ । धातु का । विषयी । विक्रमी । क्रियात्मक । शक्तिमान्, बलिष्ठ । (न०) घी ।--**आवर्तनी (तैजसावर्तनी)**-(स्त्री०) सोना-चाँदी आदि गलाने की घरिया, मूषा ।

तैतिक्ष--(वि०) [तितिक्षा+ण] [स्त्री०--**तैतिक्षी**] सहनशील ।

तैतिर--(पुं०) [=तैत्तिर, पृषो० साधुः] तीतर पक्षी । गण्डक, गैंड़ा ।

तैतिल--(पुं०) गैंड़ा पशु । देवता । (न०) बव आदि करणों में से चौथा करण (ज्यो०) ।

तैत्तिर--(पुं०) [तित्तिर+अण्] तीतर । गैंड़ा । (न०) तीतरों का समूह ।

तैत्तिरीय--(पुं० बहु०) [तित्तिरिणा प्रोक्तम् अधीयते, तित्तिर+छण्-ईय] यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा वाले । (पुं०) [तित्ति-रिणः अधिगतः, तितिरि+छण्] कृष्ण यजुर्वेद ।

तैमिर--(पुं०) [तिमिर+अण्] आँख के धुँधलेपन का रोग ।

तैर्थिक--(वि०) [तीर्थ+ठञ्] पवित्र, शुद्ध । (न०) पवित्रजल, किसी पुण्य नदी या सरोवर का जल । (पुं०) संन्यासी । नवीन दार्शनिक सिद्धान्त का आविष्कार करने वाला । नवीन मत या सम्प्रदाय का प्रवर्तक ।

तैल--(न०) [तेल+अञ्] तेल । धूप, लोबान ।--**अटी (तैलाटी)**-(स्त्री०) बर्रैया । --**अभ्यङ्ग (तैलाभ्यङ्ग)**-(पुं०) शरीर में तेल की मालिश ।--**कल्कज**-(पुं०) खली । --**किट्ट**-(न०) तेल के नीचे बैठा हुआ मैल । खली ।--**चौरिका**-(स्त्री०) तेलचट्टा ।--**द्रोणी**-(स्त्री०) काठ का बना मनुष्य के बराबर का एक पात्र जिसमें प्राचीन काल में तेल भर कर रोगी लिटाये जाते थे तथा सड़ने से बचाने के लिये मुर्दे रखे जाते थे ।--**धान्य**-(न०) उन धान्यों का एक वर्ग जिनसे तैल निकलता है--(तिल, अलसी, तोरी, तीनों प्रकार की सरसों, खस और कुसुम के बीज) ।--**पर्णिका**,--**पर्णी**-(स्त्री०) चन्दन । धूप । तारपीन । --**पायिन्**-(पुं०) झींगुर ।--**पिञ्ज**-(पुं०) सफेद तिल ।--**पिपीलिका**-(स्त्री०) छोटी लाल चींटी ।--**फल**-(पुं०) इंगुदी वृक्ष । --**भाविनी**--(स्त्री०) चमेली ।--**माली**-(स्त्री०) दीपक की बत्ती ।--**यंत्र**-(न०) कोल्हू ।--**स्फटिक**-(पुं०) तृणमणि ।

तैलक--(न०) [तैल+कन्] थोड़ा तेल ।

तैलङ्ग--(पुं०) आधुनिक कर्नाटक प्रदेश । (पुं० बहु०) कर्नाटक के अधिवासी ।

तैलिक, तैलिन्--(पुं०) [तैल+ठन्] [तैल+इनि] तेली ।

तैलिनी--(स्त्री०) [तैल+इनि-ङीप्] बत्ती ।

तैलीन--(न०) [तिलानां भवनं क्षेत्रम्, तिल+खञ्] तिल का खेत ।

तैष--(पुं०) [तिष्येण नक्षत्रेण युक्ता पौर्ण-

मासी, तिष्य+अण्—ङीष्=तैषी, सा अस्ति अस्मिन् मासे, तैषी+अण्] पौष मास ।

तोक—(न०) [√तु+क] औलाद, बच्चा ।

तोकक—(पुं०) [तोक+कन्] चातक पक्षी।

तोक्म—(पुं०) [√तक्+म, पृषो० ओत्व] अंकुर। जौ का नया अंकुर। हरा और कच्चा जौ। हरा रंग। (न०) बादल। कान का मैल ।

तोडन—(न०) [√तुड्+ल्युट्] चीरना, विभाजित करना । चोटिल करना ।

तोत्र—(न०) [√तुद्+ष्ट्रन्] अंकुश या कीलदार चाबुक ।

तोद—(पुं०) [√तुद्+घञ्] पीड़ा। सन्ताप।

तोदन—(न०) [√तुद्+ल्युट्] पीड़ा । अंकुश । मुख। एक फलदार वृक्ष । दे० 'तोत्र' ।

तोमर—(न०, पुं०) [तुम्पति, हिनस्ति√तुम्प्+अर, नि० साधुः] लोहे का डंडा । बर्छी, साँग ।—धर–(पुं०) अग्निदेव ।

तोय—(न०) [√तु+विच्, तवे पूर्त्यै याति, √या+क वा√तु+यत् नि० साधुः] पानी ।—**अधिवासिनी** (**तोयाधिवासिनी**) –(स्त्री०) पाटला वृक्ष ।—**आधार** (**तोयाधार**),—**आशय** (**तोयाशय**)–(पुं०) सरोवर । कूप । जलाशय; 'तोयाधारपथाभवल्कलशिखानिष्यन्दरेखाङ्किताः' श० १.१४। —**आलय** (**तोयालय**) –(पुं०) समुद्र ।—**ईश** (**तोयेश**)–(पुं०) वरुण की उपाधि । (न०) शतभिषा नक्षत्र। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र।—**उत्सर्ग** (**तोयोत्सर्ग**)–(पुं०) जल-वृष्टि । —**कर्मन्**–(न०) शरीर के भिन्न-भिन्न अवयवों को जल से मार्जित करना। जलतर्पण। —**कृच्छ्र**–(पुं०, न०) व्रतचर्या विशेष जिसमें केवल जल पीकर ही निर्दिष्ट काल तक रहना पड़ता है।—**क्रीड़ा**–(स्त्री०) जल-विहार ।—**गर्भ**–(पुं०) नारियल ।—**चर**–(पुं०)जलजीव ।—**डिम्ब**,—**डिम्भ**–(पुं०) ओला ।—**द**–(पुं०) बादल ।—**धर**–(पुं०) बादल ।—**धि**,—**निधि**,–(पुं०) समुद्र ।—**नीवी**–(स्त्री०) पृथिवी ।—**प्रसादन**–(न०) कतकफल, निर्मली (इससे जल साफ किया जाता है) ।—**फला**–(स्त्री०)ककड़ी की बेल। —**मल**–(न०) समुद्र फेन ।—**मुच्**–(पुं०) बादल ।—**यंत्र**–(न०) जलघड़ी। फौवारा। —**राज्**,—**राशि**–(पुं०) समुद्र ।—**वेला**–(स्त्री०) समुद्रतट ।—**वल्ली**–(स्त्री०) करेला । —**वृक्ष**,—**शूक**–(पुं०) सेवार । —**व्यतिकर**–(पुं०) (नदियों का) सङ्गम। —**शुक्तिका**– (स्त्री०)सीपी।—**सर्पिका**–(स्त्री०) —**सूचक**–(पुं०) मेढ़क। एक वर्षासूचक योग (ज्यो०) ।

तोरण—(न०, पुं०) [√तुर्+ल्युट्] मेहराबदार द्वार । बरसाती । फाटक; 'गणो नृपाणामथ तोरणाद् बहिः' शि० १२.१ । अस्थायी रूप से बनाया हुआ फाटक । मेहराबदार स्नानागार के समीप का चबूतरा। (न०) गर्दन, गला । (पुं०) शिव ।

तोल—[√तुल्+घञ्] तौल जो तराजू में तौल कर जानी गयी हो। १२ माशे की तौल, एक तोला ।

तोष—(पुं०) [√तुष्+घञ्] सन्तोष, प्रसन्नता ।

तोषण—(न०) [√तुष्+ल्युट्] सन्तोष, प्रसन्नता ।

तोषल—(न०) [तोष√ला+ड] मूसल ।

तौक्षिक—(पुं०) तुलाराशि ।

तौतिक—(न०) मोती। (पुं०) सीपी जिसमें से मोती निकलता है ।

तौर्य—(न०) [तूर्य+अण्] तुरही का शब्द।—**त्रिक**–(न०) नृत्य, गीत और सङ्गीत, गान, वाद्य और नृत्य तीनों की संगति ।

तौल—(न०) [तुला+अण्] तराजू ।

तौलिक, तौलिकिक--(पुं०) [तूलि+ठक्] [तूलिका+ठक्] चित्रकार, चितेरा ।

त्यक्त—(वि०) [√त्यज्+क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । त्यागी ।—**अग्नि (त्यक्ताग्नि)** –(पुं०) ब्राह्मण जिसने अग्नि-होत्र करना त्याग दिया हो ।—**जीवित, —प्राण**–(वि०) किसी भी प्रकार की जोखिम में अपने को डालने के लिये उद्यत, प्राण त्यागने को तैयार ।—**लज्ज**- (वि०) वेहया, वेशर्म ।

√त्यज्—भ्वा० पर० सक०, अक० त्यागना, छोड़ना । विदा करना । विरक्त होना । वच निकलना । छुट्टी पाना, पीछा छुड़ाना । एक ओर कर देना । ध्यान न देना । बाँटना । त्यजति, त्यक्ष्यति, अत्याक्षीत् ।

त्यद्—(वि०) [√त्यज्+अदि, डित्] वह । आकाश । वायु । प्रसिद्ध ।

त्याग--(पुं०) [√त्यज्+घञ्] छोड़ना, अलग हो जाना । विराग । भेंट, दान; 'करे श्लाघ्यस्त्यागः, भर्तृ० २.६५ । उदारता । पसेव, शरीर का मल । —**युत**,—**शील**–(वि०) उदार ।

त्यागिन्—(वि०) [√त्यज्+घिनुण्] त्यागने वाला, छोड़ देने वाला । दे डालने वाला, दानी । वीर, वहादुर । कर्मानुष्ठान के फल की आशा न रखने वाला ; 'यस्तु कर्मफल-त्यागी स त्यागीत्यभिधीयते' भग०१८.११ ।

√त्रङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । त्रङ्क्ते, त्रङ्किष्यते, अत्रङ्किष्ट ।

√त्रन्द्—भ्वा० पर० अक० चेष्टा करना । त्रन्दति, त्रन्दिष्यति, अत्रन्दीत् ।

√त्रप्—भ्वा० आत्म० अक० शर्माना, लज्जित होना । त्रपते, त्रपिष्यते—त्रप्स्यते, अत्रपिष्ट —अत्रप्त ।

त्रपा—(स्त्री०) [√त्रप्+अङ—टाप्]लाज, शर्म । छिनाल स्त्री । ख्याति, प्रसिद्धि ।—**निरस्त,—हीन**–(वि०) निर्लज्ज, वेहया । —**रण्डा**–(स्त्री०) वेश्या, रंडी ।

त्रपिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन तृप्रः तृप्र+इष्ठन् तृप्रशब्दस्य त्रप् आदेशः] अत्यन्त लज्जाशील ।

त्रपीयस्—(वि०) [स्त्री०—**त्रपीयसी**][तृप्र +ईयसुन्, त्रप् आदेश] दे० 'त्रपिष्ठ' ।

त्रपु—(न०) [√त्रप्+उस्] सीसा । राँगा । —**कर्कटी**–(स्त्री०) ककड़ी । खीरा ।

त्रपुल, त्रपुष, त्रपुस्, त्रपुस—(न०) [√त्रप् +उल] [√त्रप्+उष] [√त्रप्+उस्] [√त्रप्+उस] राँगा ।

त्रप्स्य—(न०) माठा या घोला हुआ दही ।

त्रय—(वि०)[स्त्री०—**त्रयी**] [त्रि+अयच्] तिहरा, तीन गुना । तीन प्रकार के, तीन भागों में विभाजित । (न०) तिगड्डा, तीन का समूह ।

त्रयस्—[समास में त्रि शब्द का एक आदेश] —**चत्वारिंश (त्रयश्चत्वारिंश)**–(वि०) तैंतालीसवाँ । —**चत्वारिंशत् (त्रयश्चत्वारिंशत्)**–(वि०) तेंतालीस ।—**त्रिंश (त्रयस्त्रिंश)**–(वि०) ३३ वाँ ।—**त्रिंशति (त्रयस्त्रिंशति)**–(विं० या स्त्री०) तेंतीस । —**दश (त्रयोदश)**–(वि०) तेरहवाँ ।—**दशन् (त्रयोदशन्)**–(वि० वहु०) तेरह । —**दशी (त्रयोदशी)**–(स्त्री०) तेरस ।—**नवति (त्रयोनवति)**–(स्त्री०) तिरानवे ।—**पंचाशत् (त्रयःपंचाशत्)**–(स्त्री०) तिरपन । —**विंश (त्रयोविंश)**–(वि०) २३ वाँ । —**विंशति (त्रयोविंशति)**–(स्त्री०) तेईस । —**षष्टि (त्रयःषष्टि)**–(स्त्री०) तिरसठ । —**सप्तति (त्रयःसप्तति)** (स्त्री०) तिहत्तर ।

त्रयी--(स्त्री०) [त्रय+ङीप्] ऋक्, यजुः और साम, इन तीन वेदों का समूह । त्रिमूर्ति । सधवा स्त्री जिसका पति और वाल-बच्चे जीवित हों । वुद्धि ।—**तनु**–(पुं०) सूर्य । शिव ।—**धर्म** (पुं०) तीनों वेदों में कथित धर्म ।—**मुख**–(पुं०) ब्राह्मण ।

√त्रस्—दि० पर० अक० काँपना, थर-

थराना। त्रस्यति, त्रसिष्यति, अत्रसीत्—अत्रासीत्।

त्रस—(वि०) [√त्रस्+क] चल, जंगम, गतिशील। (न०) वन, जंगल। जानवर। (पुं०) हृदय।—**रेणु**-(पुं०) सूर्य की किरण में व्याप्त परमाणु का छठवाँ अंश। (स्त्री०) सूर्य की स्त्री का नाम।

त्रसर—(पुं०) [√त्रस्+अरन् (बा०)] सूत लपेटने की क्रिया। जुलाहे की ढरकी।

त्रसुर, त्रस्नु—(वि०) [√त्रस्+उरच्] [√त्रस्+क्नु] भयविह्वल, डरपोक।

त्रस्त—(वि०) [√त्रस्+क्त] डरा हुआ, भयभीत। चकित। काँपता हुआ। द्रुत (संगीत)।

त्राण—([illegible]) [√त्रै+क्त, तस्य नत्वम्] रक्षा [illegible] हु[illegible], बचाया हुआ। (न०) [illegible] √त्रै+ल्युट्] रक्षा, बचाव; 'आर्तत्राणाय [illegible] [illegible] न प्रहर्तुमनागपि' श० १.११। [illegible] [illegible], शरण।

त्रात—(वि०) [√त्रै √क्त, विकल्पेन तस्य नत्वाभावः] रक्षित, बचाया हुआ।

त्रापुष—(वि०) [त्रपुष+अण्] [स्त्री० —**त्रापुषी**] राँगे का बना हुआ।

त्रास—(पुं०) [√त्रस्+घञ्] डर, भय। शङ्का। रत्न का एक दोष।

त्रासन—(वि०) [√त्रस्+णिच्+ल्यु] भयप्रद, भयावह। (न०) [√त्रस्+णिच्+ल्युट्] भयभीत करने की क्रिया।

त्रासित—(वि०) [√त्रस्+णिच्+क्त] त्रस्त किया हुआ, डराया हुआ।

त्रि—(वि०) [√तृ+ड्रि] [इसके रूप केवल बहुवचन में होते हैं। कर्त्ता पुं०—**त्रयः**—(स्त्री०)—**तिस्रः**—(न०) **त्रीणि**] तीन।—**अंश** (**त्र्यंश**)-(पुं०) तिहरा हिस्सा, तिगुना हिस्सा। तिहाई हिस्सा।—**अक्ष** (**त्र्यक्ष**), —**अक्षक** (**त्र्यक्षक**)-(पुं०) शिव जी।—**अक्षर** (**त्र्यक्षर**)-(पुं०) ओंकार, प्रणव। घटक, स्त्री पुरुष की जोड़ी मिलाने वाला।—**अङ्कट** (**त्र्यङ्कट**),—**अङ्गट** (**त्र्यङ्गट**)-(न०) बहँगी। कामर। एक प्रकार का सुरमा या अञ्जन।—**अञ्जल** (**त्र्यञ्जल**)-(न०), —**अञ्जलि** (**त्र्यञ्जलि**)-(स्त्री०)-तीन अंजुली।—**अधिष्ठान** (**त्र्यधिष्ठान**)-(पुं०) जीवात्मा।—**अध्वगा** (**त्र्यध्वगा**),—**मार्गगा**,—**वर्त्मगा**-(स्त्री०) गङ्गा जी की उपाधियाँ।—**अम्बक** (**त्र्यम्बक**)-(पुं०) तीन नेत्रों वाला अर्थात् शिव जी।—**अम्बका** (**त्र्यम्बका**)-(स्त्री०) दुर्गा, पार्वती।—**अब्द** (**त्र्यब्द**)-(वि०) तीन साल का। (न०) तीन वर्षों का समूह।—**अशीत** (**त्र्यशीत**)-(वि०) ८३ वाँ।—**अष्टन्** (**त्र्यष्टन्**)-(वि०) चौबीस।—**अश्र** (**त्र्यश्र**),—**अस्र** (**त्र्यस्र**) (वि०)-तिकोना, त्रिभुजाकार। (न०) त्रिकोण, त्रिभुज।—**अह** (**त्र्यह**)-(पुं०) तीन दिवस का काल।—**आह्निक** (**त्र्याह्निक**)-(पुं०) तीन दिन में पूरा हुआ या तीन दिन में उत्पन्न हुआ, तिजारी।—**ऋच** (**त्र्यृच**)-(तृच भी) (न०) तीन ऋचाओं की समष्टि।—**कण्ट**,—**कण्टक**-(पुं०) गोखरू। सेहुँड़। टेंगरा मछली। (वि०) जिसमें तीन काँटे या नोंके हों।—**ककुद्**-(पुं०) त्रिकूट पर्वत। विष्णु। दस दिनों में किया जाने वाला एक याग। (वि०) जिसे तीन डील या सींग हों।—**ककुभ्**-(पुं०) इंद्र। उदान वायु। नौ दिनों में होने वाला एक यज्ञ।—**कटु**,—**कटुक**-(न०) तीन कड़ुए पदार्थों का समाहार—सोंठ, पीपर और मिर्च।—**कर्मन्**-(न०) ब्राह्मण के तीन मुख्य कर्त्तव्य अर्थात् यज्ञ करना, वेदों का पढ़ना और दान देना। (पुं०) इन तीन कर्मों को करने वाला ब्राह्मण।—**काय**-(पुं०) बुद्ध का नाम।—**काल**-(न०) तीनों काल अर्थात् भूत, भविष्यद् और वर्तमान या प्रातः, मध्याह्न और सायं।—**कूट**-(पुं०) एक पर्वत का नाम जो लंका में है और जिसकी

चोटी पर लंका नगरी वसी हुई थी ।—**कूर्चक**–(न०) त्रिफला चाकू ।—**कोण**–(वि०) तिकोना । (न०) तीन कोनों का क्षेत्र, त्रिभुज । कामरूप का एक सिद्ध पीठ । जन्म-कुंडली में लग्नस्थान से पाँचवाँ और नवाँ स्थान । मोक्ष । योनि ।—**गण**–(पुं०) धर्म, अर्थ और काम; 'न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परं' कि० १.११ ।—**गत**–(वि०) तिहरा । तीन दिन में किया हुआ ।—**गर्त**–(पुं०) देश विशेष, पंजाब का आधुनिक जालंधर क्षेत्र । इस देश के शासक अथवा अधिवासी ।—**गर्ता**–(स्त्री०) छिनाल औरत ।—**गुण**–(वि०) तीन डोरों वाला । तिगुना । तीन गुणों वाला अर्थात् सत्त्व, रजस् और तमस् गुणों वाला ।—**गुणा**–(स्त्री०) माया । दुर्गा ।—**चक्षुस्**– (पुं०) शिव ।—**चतुर**–(वि०) तीन या चार ।—**चत्वारिंश**–(वि०) ४३ वाँ ।—**चत्वारिंशत्**–(स्त्री०) ४३ ।—**जगत्**–(न०)—**जगती**–(स्त्री०) त्रिलोक, स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल । आकाश, स्वर्ग और भूलोक ।—**जट**–(पुं०) शिव जी का नाम ।—**जटा**– (स्त्री०) अशोक वाटिका में सीता जी के साथ रहने वाली राक्षसियों में से एक राक्षसी का नाम ।—**णता**–(स्त्री०) धनुष ।—**णव**,— **णवन्**–(वि० बहु०) तीन वार ९ अर्थात् २७ ।—**णाचिकेत**–(पुं०) वह जिसने तीन बार नाचिकेत अग्नि का आधान किया हो । कृष्ण यजुर्वेद की काठक संहिता का अध्ययन या अनुगमन करने वाला । नारायण ।—**तक्ष**(पुं०)स्त्री,—**तक्षी**–(पुं०)तीन वढ़इयों का समुदाय ।—**दण्ड**–(न०) वह दंड जिसे कुटीचक और वहूदक संन्यासी धारण करते हैं (यह बाँस के तीन डंडों को एक में वाँध कर वनाया जाता है) । वाणी, मन और शरीर—इन तीनों का संयमन ।—**दण्डिन्**–(पुं०) तीन दण्डों को वाँध कर उसे दाहिने हाथ में धारण करने वाले श्रीवैष्णव संन्यासी । वह जिसने अपने मन, वाणी और शरीर को अपने वश में कर लिया हो—'वाग्दण्डोऽथ मनोदण्डः कायदण्डस्तथैव च, यस्यैते निहिता बुद्धौ त्रिदण्डीति स उच्यते ।' —मनुस्मृति ।—**दश**–(पुं०) देवता । जीव । स्वर्ग । (वि०) तीस ।—०**गोप**–(पुं०) वीरबहूटी ।— ०**दीर्घिका**– (स्त्री०) आकाश गंगा, मंदाकिनी ।—**दिव**–(पुं०) स्वर्ग 'त्रिमार्गयेव त्रिदिवस्य मार्गः' कु० १.२८ । आकाश । (न०) सुख । —०**ओकस** (**त्रिदिवौकस**)–(पुं०) देवता । —**दोष**–(न०) वात, पित्त और कफ—इन तीनों का व्यतिक्रम ।—**धामन्**–(पुं०) शिव । [illegible] विष्णु । अग्नि । मृत्यु ।—**धारा**–([illegible]) तीन भाग[illegible] **नयन**, —**नेत्र**, —**लोच**[illegible] [illegible] **नवत**–(वि०) ९३व[illegible]क । [illegible] पन्द्रह ।—**पञ्चाश**–([illegible]) [illegible] **पञ्चाशत्**–(स्त्री०) ५३ ।— [illegible] काँच, शीशा ।—**पताक**–(पुं०) [illegible] उठाये हुए फैला हुआ हाथ । माथे का ऊर्ध्व-पुण्ड्र, तिलक ।—**पत्रक**–(न०) पलाश वृक्ष । —**पथ** (न०) तीन मार्गों का समूह । भूमि, स्वर्ग, आकाश या आकाश, भूमि, पाताल । ज्ञान, कर्म और उपासना— ये तीनों मार्ग । —०**गा**–(स्त्री०) गङ्गा ।—**पद**—(न०), —**पदिका**–(स्त्री०) तिपाई । —**पदी**–(स्त्री०) हाथी का जेरवंद । गायत्री छन्द । तिपाई, गोधापदी नाम का पौधा ।—**पर्ण**–(पुं०) किंशुक वृक्ष ।—**पाण**–(न०) तीन वार भिगोया हुआ सूत । वल्कल, छाल । —**पाद**–(वि०) तीन पैरों वाला । तीन हिस्सों वाला । तीन चौथाई वाला । (पुं०) ज्वर । विष्णु ।—**पिब**–(पुं०) वह वकरा जिसके दोनों कान पानी पीते समय पानी से छू जाते हैं ।—**पुट**–(वि०) तिकोना । (पुं०) वाण । खेसारी । हथेली । एक हाथ या आधा । गज । नदीतट या समुद्रतट ।—**पुटक**–(पुं०) त्रिकोण ।—**पुटा**–(स्त्री०) दुर्गा का

रसिक—(वि०) [रस+ न्] स्वादिष्ठ मनोज्ञ, मनोहर । गुणग्राही; 'परोपकार रसिकस्य' मृ० ६.१९ । रसिया । (पुं०) सहृदय मनुष्य, भावुक नर । रसिया आदमी, लंपट मनुष्य । हाथी । घोड़ा ।

रसिका—(स्त्री०) [रसिक+टाप्] सिखरन । गन्ने का रस । जीभ । कमरबंद । मैना ।

रसित—(वि०) [√रस्+क्त] चाखा हुआ । भावपूर्ण । मुलम्मा चढ़ा हुआ । (न०) शराब, मदिरा । चीख । दहाड़, गर्जन ।

रसोन—(पुं०) [रसेनैकेन ऊनः] लशुन, लहसुन ।

रस्य—(वि०) [रस +यत्] रसवाला । (न०) रक्त । मांस ।

√रह्—भ्वा० पर० सक० त्यागना । रहति, रहिष्यति, अरहीत् । चु० पर० सक० त्याग[illegible] रहयिष्यति, अरीरहत् [illegible]प, पीड़ा[illegible]

रहण—(न०) [√रह्+ल्युट्] वियोग । त्याग ।

रहस्—(न०) [√रम् +असुन् हकार आदेश] एकान्त, निर्जनता, विजनता । रहस्य, भेद । स्त्री-मैथुन ।

रहस्य—(वि०) [रहस्+यत्] वह जिसका तत्त्व सहज में सब की समझ में न आ सके । (न०) गुप्त भेद, गोपनीय विषय । एक तांत्रिक प्रयोग । किसी अस्त्र का रहस्य, 'सरहस्यानि जृंभकास्त्राणि' । किसी के चाल-चलन का गुप्त भेद । गोप्य सिद्धान्त । —**आख्यायिन्** (**रहस्याख्यानिन्**)–(वि०) गुप्त बात कहने वाला ।—**भेद**,—**विभेद**–(पुं०) किसी गुप्त भेद का प्राकट्य ।—**व्रत**– (न०) गुप्त व्रत या प्रायश्चित्त ।

रहाट—(पुं०) सलाहकार । मंत्री । भूत । झरना ।

रहित—(वि०) [√रह्+क्त] बिना, हीन, शून्य । त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । पृथक् किया हुआ ।

√रा—अ० पर० सक० देना, प्रदान करना । राति, रास्यति, अरासीत् ।

राका—(स्त्री०) [√रा + क—टाप्] पूर्णमासी । पूर्णिमा की रात । वह स्त्री जिसको पहले पहल रजोदर्शन हुआ हो । खुजली, खाज । पूर्णिमा की अधिष्ठात्री देवी । खर तथा शूर्पणखा की माता ।

राक्षस—(पुं०) [रक्षः एव राक्षसः, रक्षस् +अण्] दैत्य, निशाचर । आठ प्रकार के विवाहों में से एक प्रकार का राक्षस विवाह भी है; इसमें कन्या के लिये उभय पक्ष में युद्ध होता है । ज्योतिष सम्बन्धी योग विशेष । मुद्राराक्षस नाटक के राजा नन्द के एक मंत्री का नाम । सा संवत्सरों में से उनचासवाँ संवत्सर । दुष्ट प्राणी । पारे और गंधक के योग से बना एक रस ।

राक्षसी—(स्त्री०) [राक्षस+ ङीप्] राक्षस की स्त्री ।

√राख्—भ्वा० पर० सक० सोखना । सजाना । राखति, राखिष्यति, अराखीत् ।

राक्षा—(स्त्री०) [√रक्ष्+घञ्, पृषो० सिद्धि] लाख ।

राग—(पुं०) [√रञ्ज् +घञ्] रंग । लाल रंग । लाखी रंग । अनुराग, प्रीति । मैथुन सम्बन्धी भावना । भाव । हर्ष आनन्द । क्रोध । सौन्दर्य । संगीत में राग छः माने गये हैं । यथाः—'भैरवः कौशिकश्चैव हिन्दोलो दीपकस्तथा । श्रीरागो मेघरागश्च रागाः षडिति कीर्तिताः ॥' खेद । लालच । डाह । अंगराग । आलता, अलक्तक । राजा । चंद्रमा । सूर्य ।—**चूर्ण**– (पुं०) कत्था का पेड़ । सिन्दूर । लाख । अबीर । कामदेव ।—**च्छन्न**–(पुं०) राम । कामदेव ।—**द्रव्य**–(न०) रंग ।—**पुष्प**–(पुं०) गुल-दुपहरिया ।

—रज्जु–(पुं०) कामदेव।—लता–(स्त्री०) काम की पत्नी, रति।—सूत्र– (न०) ँगा हुआ सूत या डोरा। रेशमी डोरा। तराजू की डोरी।

रागिन्—(वि०) [√ रञ्ज् +घिनुण् वा रागोऽस्य अस्ति, राग+इनि] रंगीन। लाल ंग का। भावपूर्ण। प्रेमपूरित, प्रीतिपूर्ण। अनुरागवान्। (पुं०) चित्रकार। प्रेमी। कामुक, लंपट।

रागिणी—(स्त्री०) [रागिन्+ङीप्] रागिनियाँ या राग की पत्नियाँ। इनकी संख्या किसी के मतानुसार ३० और किसी के मतानुसार ३६ है। विदग्धा स्त्री। स्वेच्छाचारिणी स्त्री, छिनाल स्त्री। जयश्री नामक लक्ष्मी।

√राघ्—भ्वा० आत्म० अक० समर्थ होना। राघते, राघिष्यते, अराघिष्ट।

राघव—(पुं०) [रघोः अपत्यम्, रघु+अण्] रघु का वंशधर। श्रीरामचन्द्र। एक बहुत बड़ी समुद्री मछली— 'अस्ति मत्स्यतिमिर्नाम शतयोजनविस्तृतः। तिमिङ्गिलगिलोऽप्यस्ति तद्गिलोऽप्यस्ति राघवः॥' (कलापव्याकरण)।

राङ्कव—(वि०) [स्त्री०]—**राङ्कवी** [रङ्कु+अण्] रङ्कु जाति के हिरन सम्बन्धी या उसके चर्म का बना हुआ। ऊनी। (न०) हिरन के बालों का बना ऊनी वस्त्र। कंबल।

√राज्—भ्वा० उभ० अक० चमकना। सुन्दर देख पड़ना। राजति-ते, राजिष्यति-ते, अराजीत्–अराजिष्ट।

राज्—(पुं०) [राज्+क्विप्] राजा, नरेन्द्र, नरपति।

राजक—(पुं०) [राजन्+कन्] छोटा राजा। (न०) [राज्ञां समूहः, राजन्+वुञ्] कितने ही राजाओं का समुदाय; 'सहते न जनोऽप्यधः क्रियां किमु लोकाधिकधाम राजकं' कि० २.४७।

राजत—(वि०) [स्त्री०—**राजती**] [रजत+अञ्] रुपहला, चाँदी का बना हुआ। (न०) चाँदी; 'लीलां दधौ राजतगण्डशैलः' शि० ४.१३।

राजन्—(पुं०) [राजते शोभते, √ राज्+कनिन्] [समास में नकार का लोप हो जाता है। बहुधा उत्तरपद में प्रयुक्त होकर यह शब्द बड़ाई, श्रेष्ठता आदि का अर्थ प्रकट करता है] किसी देश, मंडल, जाति का शासक और नियामक, नरेश, नरेन्द्र। प्रभु, स्वामी। क्षत्रिय। युधिष्ठिर का एक नाम। इन्द्र का नाम। चन्द्रमा। यज्ञ।—**अङ्गन** (**राजाङ्गन**)–(न०) राजप्रासाद का आँगन।—**अधिकारिन्** (**राजाधिकारिन्**), —**अधिकृत** (**राजाधिकृत**) –(पुं०) न्यायाधीश, विचारपति।—**अधिराज** (**राजाधिराज**),—**इन्द्र** (**राजेन्द्र**) (पुं०) महाराज, राजाओं का राजा।—**अनक** (**राजानक**)–(पुं०) छोटा राजा, सामंत। प्राचीन कालीन एक उपाधि जो प्रसिद्ध कवियों और विद्वानों को दी जाती थी।—**अपसद** (**राजापसद**)– (पुं०) अयोग्य या पतित राजा।—**अभिषेक** (**राजाभिषेक**)– (पुं०) राजा का राजतिलक।—**अर्ह** (**राजार्ह**)– (न०) कपूर। शालिधान। जामुन का पेड़। अगर। (वि०) राजा के योग्य। अगरकाष्ठ।—**अर्हण** (**राजार्हण**) –(न०) राजा की दी हुई सम्मानसूचक उपहार की वस्तु।—**आज्ञा** (**राजाज्ञा**)– (स्त्री०) राजा की आज्ञा, राजघोषणा।—**ऋषि** (**राजर्षि** या **राजऋषि**)–(पुं०) क्षत्रिय जाति का ऋषि। (राजर्षियों में पुरूरवस्, जनक और विश्वामित्र की गणना है।)—**कर** –(पुं०) कर जो राजा को दिया जाय।—**कार्य**–(न०) राजकाज।—**कुमार**–(पुं०) राजा का पुत्र।—**कुल**–(न०)

राजवंश। राजा का दरवार। न्यायालय। राजप्रासाद। —गामिन्-(वि०) राज-सम्बन्धी, राजा का। (वह) राजा को प्राप्त होने वाली (सम्पत्ति, जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो) लावारिसी (जायदाद)।—गृह- (नं०) राजप्रासाद, महल। मगध के एक प्रधान नगर का नाम। —ताल-(पुं०), —ताली-(स्त्री०) सुपारी का पेड़।—दण्ड-(पुं०) राजा के हाथ का डंडा विशेष। राजशासन। वह दण्डाज्ञा या सजा जो राजा द्वारा दी गयी हो।—दन्त-(पुं०) सामने का दाँत।—दूत -(पुं०) किसी राज्य या राजा का संदेश (संधि, विग्रह, नैतिक कार्यादि संबंधी) लेकर किसी अन्य राज्य में जाने वाला व्यक्ति, प्रतिनिधि (प्राचीन काल में राजदूत विशेष अवसरों पर भेजे जाते थे, अब स्थायी रूप से सभी देशों में सभी देशों के राजदूत रहा करते हैं)।—द्रोह-(पुं०) वगावत, ऐसा काम जिससे राजा या राज्य के अनिष्ट की सम्भावना हो।—द्वारिक-(पुं०) राजा का ड्योढ़ीवान, द्वारपाल।—धर्म- (पुं०) राजा का कर्त्तव्य। महाभारत के शान्तिपर्व के एक अंश का नाम।—धान- (न०), —धानिका,—धानी- (स्त्री०) वह प्रधान नगर जहाँ किसी देश का राजा या शासक रहे।—नय-(पुं०), —नीति- (स्त्री०) वह नीति जिसका पालन करता हुआ राजा अपने राज्य की रक्षा और शासन को दृढ़ करता है।—नील- (न०) पन्ना।—पथ- (पुं०), —पद्धति-(स्त्री०) राजमार्ग।—पुत्र-(पुं०) राजकुमार। राजपूत, क्षत्रिय। वुधग्रह।—पुत्रा-(स्त्री०) राजमाता, जिस स्त्री का पुत्र राजा हो। —पुत्री-(स्त्री०) राजकुमारी। राजपूत वाला। जूही। मालती। कड़वा कद्दू। रेणुका। छछूंदर।—पुरुष- (पुं०) राजकर्मचारी। अमात्य।—प्रिया- (स्त्री०) राजपत्नी, रानी। लाल रंग का एक धान, तिलवासिनी।—प्रेष्य-(पुं०) राजा का नौकर। (न०) राजा की नौकरी।—वीजिन्, —वंश्य- (वि०) राजा के वंश का।—भृत- (पुं०) राजा का वेतनभोगी नौकर।—भृत्य-(पुं०) राजा का मंत्री। कोई भी सरकारी नौकर।—भोग्य-(न०) जातीकोष, जावित्री। (पुं०) प्रियाल, चिरौंजी। एक प्रकार का धान।—मण्डल-(न०) राज्य के आस-पास के चारों ओर के राज्य (नीतिशास्त्र में १२ राजमण्डल माने गये हैं —अरि, मित्र, उदासीन, विजिगीषु, पार्ष्णिग्रह, आक्रन्द, विजिगीषु का पुरःसर और पश्चाद्वर्ती, पार्ष्णिग्रहसार, आक्रन्दसार, अरिसम, मित्रसम और मध्यम)। —मार्ग-(पुं०) आम सड़क। राजपथ। —मुद्रा- (स्त्री०) राजा की मोहर।—यक्ष्मन्-(पुं०) क्षयरोग, तपेदिक।—यान -(न०) पालकी। शाही सवारी। —योग- (पुं०) फलित ज्योतिष के अनुसार ग्रहों का एक योग जिसके जन्मकुण्डली में पड़ने से राजा या राजा के तुल्य होता है। वह योग विशेष जिसका उपदेश पतंजलि ने योगशास्त्र में किया है।—रङ्ग-(न०) चाँदी।—राज- (पुं०) सम्राट्, महाराज। कुबेर का नाम। चन्द्रमा।—रीति- (स्त्री०) काँसा, कसकुट।—लक्षण- (न०) सामुद्रिक के अनुसार वे चिह्न या लक्षण जिनके होने से मनुष्य राजा होता है। राजचिह्न (छत्र, चँवर-आदि)।—लक्ष्मी, —श्री -(स्त्री०) राजवैभव। राजा की शक्ति और शोभा। —वंश- (पुं०) राजकुल।—विद्या-

(स्त्री०) राजनीति।--**विहार**-(पुं०) राजा के वास करने योग्य बौद्धाश्रम, राजमठ।--**शासन**-(न०) राजा की आज्ञा।--**शृङ्ग**- (न०) सोने की डंडी का छत्र जो राजा के ऊपर ताना जाय। मंगुरी मछली।--**संसद्**-(स्त्री०) राजसभा, दरबार। न्यायालय, धर्माधिकरण जिसमें स्वयं राजा उपस्थित हो।--**सदन**-(न०) राजप्रासाद।--**सर्षप**- (पुं०) राई।--**सायुज्य**- (न०) राजस्व।--**सारस** (पुं०) मयूर।--**सूय**- (पुं०, न०) राजाओं के करने योग्य यज्ञविशेष; 'राजा वै राजसूयेनेष्ट्वा भवति,।--**स्कन्ध**- (पुं०) घोड़ा।--**स्व**- (न०) राजा की सम्पत्ति। राजकर।--**हंस**-(पुं०) एक प्रकार का हंस जिसे सोना पक्षी भी कहते हैं; 'संपत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसाः सहायाः' मे०. ११।--**हस्तिन्**- (पुं०) वह हाथी जिस पर राजा सवार हो। बड़ा और सुन्दर हाथी।

राजन्य--(पुं०) [राज्ञोऽपत्यम्, राजन्+यत्] राजपुत्र। क्षत्रिय। [राजति दीप्यते, √राज्+अन्य] राजा। अग्नि। खिरनी का पेड़।

राजन्यक--(न०) [राजन्य+वुञ्] क्षत्रियों या योद्धाओं की टोली या समुदाय।

राजन्वत्--(वि०) [राजन्+मतुप्, वत्व] अच्छे राजा द्वारा शासित; 'राजन्वतीमाहुरनेन भूमिं' र० ६.२२।

राजस--(वि०) [स्त्री०--**राजसी**] [रजस्+अण्] रजोगुण सम्बन्धी।

राजसात्--(अव्य०) [राजन्+साति] राजा के अधिकार में।

राजि, राजी--(स्त्री०) [√राज्+इन्, पक्षे ङीष्] रेखा, लकीर। पंक्ति, कतार। राई।

राजिका--(स्त्री०) [राजि+कन्--टाप् वा √राज्+ण्वुल्--टाप्, इत्व] रेखा। पंक्ति। राई। सरसों। क्यारी। मड़ुआ। कठगूलर। एक छुद्र रोग जिसमें सरसों के बराबर छोटी-छोटी फुंसियाँ निकलती हैं, घमोरी। एक परिमाण।

राजिल--(पुं०) [राजि+लच् वा राजि √ला+क] विषरहित और सीधे सर्पों की एक जाति, डोंड़हा; 'किं महोरगविसर्पिविक्रमो राजिलेषु गरुडः प्रवर्तते' र० ११.२७।

राजीव--(पुं०) [राजी+व] रैंया मछली। हिरन विशेष। सारस। हाथी। (न०) नील कमल।--**अक्ष** (**राजीवाक्ष**)-(वि०) कमललोचन।

राज्ञी--(स्त्री०) [राजन्+ङीप्, अकारलोप] राजा की पत्नी, रानी।

राज्य--(न०) [राज्ञो भावः कर्म वा, राजन्+यक्] राज्याधिकार। वह देश जिसमें एक राजा का शासन हो। शासन, हुकूमत।--**तन्त्र**- (न०) राज्य की शासन-प्रणाली।--**व्यवहार**- (पुं०) राजकाज। शासन।--**सुख**- (न०) राज्य का सुख या आनन्द।

राढा--(स्त्री०) आभा, दीप्ति। बंगाल की एक प्राचीन पुरी का नाम।--'गौडं राष्ट्रमनुत्तमं निरुपमा तत्रापि राढापुरी'--प्रबोधचन्द्रोदय।

रात्रि, रात्री--(स्त्री०) [राति ददाति कर्मभ्योऽवसरं निद्रादिसुखं वा, √रा+त्रिप्, पक्षे ङीष्] रात, रजनी, निशा। हलदी।--**अट** (**रात्र्यट**)- (पुं०) राक्षस। भूत। प्रेत। चोर।--**अन्ध** (**रात्र्यन्ध**)-(वि०) जिसे रात में न देख पड़े।--**कर**-(पुं०) चन्द्रमा।--**चर** [**रात्रिञ्चर** भी होता है] चोर। डाकू। चौकीदार। भूत। प्रेत। राक्षस।--**ज**-(न०) नक्षत्र, तारा।--**जल**- (न०) ओस।--**जागर**-(पुं०) कुत्ता। **दिवम्** (**रात्रिन्दिवम्**) [रात्री च दिवा च द्वन्द्व स०, रात्रेर्मन्तित्वं

निपात्यते] रातदिन । निरन्तर; 'रात्रिन्दिवं गन्धवहः प्रयाति' श० ५, ४।—पुष्प– (न०) रात में खिलने वाला पुष्प, कुँई ।—पुष्प–(पुं०) रात हो जाना ।—**रक्षा**,—**रक्षक**– (पुं०) चौकीदार ।—**राग**–(पुं०) अन्धकार ।—**वासस्**—(न०) रात में पहनने की पोशाक। अंधकार। **विगम**– (पुं०) रात का अवसान, भोर, तड़का, सवेरा ।—**वेद**, —**वेदिन्**–(पुं०) मुर्गा, कुक्कुट ।—**हास**–(पुं०) कुमुद, कुँई ।—**हिण्डक**– (पुं०) राजाओं के अंतःपुर का पहरेदार ।

राद्ध—(वि०) [√राध्+क्त] पका हुआ, राँधा हुआ । मनाया हुआ, राजी किया हुआ । सिद्ध, पूरा किया हुआ । तैयार किया हुआ । पाया हुआ, प्राप्त । सफल-मनोरथ । भाग्यवान् । ऐन्द्रजालिक विद्या में निपुण ।

√राध्—दि० पर० सक० राजी कर लेना, प्रसन्न कर लेना । पूरा करना, सिद्ध करना । तैयार करना । मार डालना । जड़ से नष्ट कर डालना । राध्यति, रात्स्यति, अरात्सीत् । स्वा० राध्नोति ।

राध—(पुं०) [राधा विशाखा तद्वती पौर्णमासी राधी सा अस्मिन् अस्ति, राधी+अण्] वैशाख मास ।

राधा—(स्त्री०) [राध्नोति साधयति कार्याणि, √राध्+अच्–टाप्] एक प्रसिद्ध गोपी का नाम जिस पर श्रीकृष्ण का बड़ा अनुराग था और जो वृषभानु गोप की कन्या थी; 'तदिमं राधे गृहम्प्रापय' गीत० १ । अधिरथ की स्त्री का नाम, जिसने कर्ण को पाला-पोसा था । विशाखा नक्षत्र । बिजली आँवला । अपराजिता । अनुराग, प्रीति । सफलता ।

राधिका—(स्त्री०) [राधा +कन्–टाप्, इत्व] दे० 'राधा' ।

राधेय—(पुं०) [राधाया अपत्यम्, राधा +ढक्] कर्ण की उपाधि ।

राम—(वि०) [रमते इति √रम्+ण वा रम्यतेऽनेन, √रम्+घञ्] सुन्दर, मनोहर । कृष्ण-वर्ण, काले रंग का । सफेद । (पुं०) परशुराम, बलराम, दाशरथि राम । तीन की संख्या । घोड़ा । प्रेमी । वरुण । ईश्वर । बथुआ साग । अशोक वृक्ष ।–**अनुज** (**रामानुज**) (पुं०) दक्षिण प्रदेश में प्रादुर्भूत एक प्रसिद्ध श्रीवैष्णवाचार्य । श्रीरामचन्द्र जी के छोटे भाई—भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न । किन्तु विशेष कर लक्ष्मण ।—**अयण** (**रामायण**)–(न०) श्रीमद्वाल्मीकि-रचित- ऐतिहासिक एक काव्य ग्रन्थ, जिसमें २४,००० श्लोक और सात काण्ड हैं ।—**गिरि**– (पुं०) नागपुर के निकट एक पहाड़ी जिसका वर्णन कालिदास ने मेघदूत काव्य में किया है । इसका आधुनिक नाम रामटेक है । 'स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु ।' –मेघदूत ।—**चन्द्र**, —**भद्र**–(पुं०) दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्र जी ।—**दूत** –(पुं०) हनुमान जी । —**नवमी**– (स्त्री०) चैत्र-शुक्ला नवमी ।—**सेतु**–(पुं०) श्रीरामचन्द्र जी का बनाया पुल जो लंका और भारतवर्ष के बीच में है, जिसे आजकल 'एडम्स ब्रिज' कहते हैं ।

रामठ—(न०, पुं०) [√रम+अठ्, धातोः वृद्धिः] हींग ।

रामणीयक—(वि०) [स्त्री०—**रामणीयकी**] [रमणीय +वुञ्] मनोहर, सुन्दर । (न०) सौंदर्य, मनोहरता; 'सवारिजे वारिणि रामणीयकम्' कि० ४.४ ।

रामा—(स्त्री०) [रमते रमयति वा √रम् +ण –टाप् वा रमतेऽनया √रम्+घञ् – टाप्] सुंदरी स्त्री । गानकलाकुशल स्त्री । हींग । नदी । ईंगुर । सफेद भटकटैया ।

शीतला। अशोक। घीकुआर। गोरोचन। सुगन्धवाला। गेरू। तमाकू। त्रायमाण लता। लक्ष्मी। सीता। रुक्मिणी। राधा। आठ अक्षरों का एक वृत्त।

रामिल—(पुं०) कामदेव। कामुक।

राव—(पुं०) [√रु+घञ्] चीख, चीत्कार। नाद, गर्जन।

रावण—(वि०) [रावयति भीषयति सर्वान्, √रु+णिच्+ल्यु] डराने वाला, हाहाकार कराने वाला। (पुं०) [रवणस्यापत्यम्, रवण +अण् वा √रु+णिच् +ल्यु] राक्षसराज दशानन का नाम जिसे लङ्का में जाकर दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्र ने युद्ध में मारा था क्योंकि रावण श्रीरामचन्द्र जी की स्त्री सीता को वन में से अकेले में हर ले गया था।

रावणि—(पुं०) [रावणस्यापत्यम्, रावण +इञ्] रावणपुत्र मेघनाद। रावण का (कोई भी) पुत्र।

राशि—(पुं०) [अश्नुते व्याप्नोति, √अश् +इण्, रुडागम] ढेर, पुञ्ज। एक ही प्रकार की वहुत सी चीजों का समूह। क्रान्ति वृत्त में अवस्थित विशिष्ट तारा- समूह जो संख्या में वारह है।—**चक्र**-(न०) मेष, वृष, मिथुन आदि राशियों का चक्र या मण्डल, भचक्र। —**त्रय**-(न०) त्रैराशिक गणित।—**भाग**-(पुं०) भग्नांश, किसी राशि का भाग या अंश।—**भोग**- (पुं०) किसी ग्रह का किसी राशि में रहने का काल।

राष्ट्र—(न०, पुं०) [राजते, √ राज्+ष्ट्रन्, षत्व] राज्य, साम्राज्य। देश, मुल्क। प्रजा, जाति, 'नेशन'। (न०) किसी भी प्रकार का जातीय या देशव्यापी सङ्कट, ईति।

राष्ट्रिक—(पुं०) [राष्ट्र+ठक्] किसी देश या राज्य का रहने वाला। किसी राज्य का राजा या शासक।

राष्ट्रिय—(वि०) [राष्ट्र +घ] किसी राज्य सम्बन्धी। (पुं०) राजा, किसी राज्य का शासक। राजा का साला। यथा—'श्रुतं राष्ट्रियमुखाद्यावदङ्गुलीयकदर्शनम्।'

√रास्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। चिचियाना। चीखना। भूंकना। रेंकना रासते, रासिष्यते, अरासिष्ट।

रास—(पुं०) [√रास्+घञ्] कोलाहल, शोरगुल, हल्ला। गोपों की प्राचीन काल की क्रीड़ा जिसमें वे सव मण्डल वनाकर एक साथ नाचते थे। विलास।—**क्रीड़ा**-(स्त्री०), —**मण्डल**- (न०) श्रीकृष्ण और गोपियों का मण्डलाकार नृत्य।

रासक—(न०) [रास+कन्] नाटक का एक भेद जो केवल एक अङ्क का होता है। इसमें केवल ५ नट या अभिनय करने वाले होते हैं। इसमें हास्यरस प्रधान होता है और सूत्रधार नहीं आता।

रासभ—(पुं०) [रासते शब्दायते, √रास् +अभच्] गधा, गर्दभ।

रास्ना—(स्त्री०) [√रस्+णन्] रासन ओषधि।

राहित्य—(न०) [रहितस्य भावः, रहित +ष्यञ्] अभाव।

राहु—(पुं०) [√रह्+उण्] पुराणानुसार नौ ग्रहों में से एक जो विप्रचित्ति के वीर्य और सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।—**ग्रसन** -(न०), —**ग्रास**-(पुं०), —**दर्शन** -(न०), —**संस्पर्श**-(पुं०), —**सूतक** -(न०) चन्द्र या सूर्य का ग्रहण।

√रि—स्वा० पर० सक० मारना, वध करना। रिणोति, रेष्यति, अरैषीत्। तु० पर० सक० जाना। रियति, रेष्यति, अरैषीत्।

रिक्त—(वि०) [√रिच् + क्त] रीता किया हुआ, खाली किया हुआ। खाली, रीता। रहित, विना। खोखला (जैसे हाथ की अंजलि)। मोहताज, कंगाल। विभक्त;

वियुक्त। (न०) खाली स्थान। जंगल।—कुम्भ-(न०) रिक्त घट (की ध्वनि), ऐसी भाषा जो समझ में न आये, गड़बड़ बोली। —पाणि, —हस्त-(वि०) खाली हाथ, रीते हाथ।

रिक्तक—(वि०) [रिक्त +कन्] दे० 'रिक्त'।

रिक्ता—(स्त्री०) [रिक्त + टाप्] चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी तिथियाँ रिक्ता कहलाती हैं।

रिक्थ—(न०) [√रिच्+थक्] उत्तराधिकार या विरासत में मिली हुई सम्पत्ति। धन, सम्पत्ति। सुवर्ण; 'ननु गर्भः पित्र्यं रिक्थमर्हति' श० ६।—**आद (रिक्थाद)**, —**ग्राह**, —**भागिन्**,—**हर**, —**हारिन्**-(पुं०) उत्तराधिकारी। मामा।

√रिङ्ख्, **√रिङ्ग्**—भ्वा० पर० सक० रेंगना। धीरे-धीरे जाना। रिङ्खति, रिङ्गति, रिङ्खिष्यति, रिङ्गिष्यति, अरिङ्खीत्, अरिङ्गीत्।

रिङ्खण, **रिङ्गण**—(न०) [√रिङ्ख् +ल्युट्] [√रिङ्ग् +ल्युट्] रेंगना, घुटनों चलना। विचलित होना।

√रिच्—रु० पर० सक० खाली करना, साफ करना। वञ्चित करना, मुहताज करना। रिणक्ति — रिङ्क्ते, रेक्ष्यति—ते अरैक्षीत्—अरिक्त।

रिटि—(पुं०) [√रि+टिन्] एक प्रकार का बाजा। शिवजी के एक गण का नाम। अग्नि का शब्द। काला नमक।

रिपु—(पुं०) [अनिष्टं रपति, √रप्+कु, इत्व] शत्रु।

√रिफ्—तु० पर० सक० गाली देना। दोषी ठहराना, कलङ्क लगाना। कट-कटाने का शब्द करना। युद्ध करना। मारना। दान देना। रिफति, रेफिष्यति, अरेफीत्।

√रिवि—भ्वा० पर० सक० जाना। रिण्वति, रिण्विष्यति, अरिण्वीत्।

√रिश्—तु० पर० सक० मारना, वध करना। रिशति, रेक्ष्यति, अरेक्षीत्।

√रिष्—भ्वा०, दि०, पर० सक० नुकसान पहुँचाना, अनिष्ट करना। वध करना। नाश करना। रेषति, रेषिष्यति, अरेषीत्। दि० रिष्यति, रेषिष्यति, अरिषत्।

रिष्ट—(वि०) [√रिष्+क्त] नष्ट, बरबाद। घायल, चोटिल। अभागा, बदकिस्मत। (न०) उपद्रव। अनिष्ट, हानि। अभागापन, बदकिस्मती। नाश। पाप। सौभाग्य। समृद्धि।

रिष्टि—(पुं०) [√रिष् +क्तिच्] तलवार। (स्त्री०) [√रिष् + क्तिन्] अमंगल।

√री—दि० आत्म० अक० चूना, टपकना। उमड़ना, बहना। रीयते, रेष्यते, अरेष्ट। क्र्या० पर० सक० जाना। गुर्राना। रिणाति, रेष्यति, अरैषीत्।

रीज्या-(स्त्री०) भर्त्सना, फटकार। लज्जा। घृणा।

रीढक—(पुं०) मेरुदण्ड पीठ के बीच की हड्डी, रीढ़ की हड्डी।

रीढा—(स्त्री०) [√रिह्+क्त] अपमान, तिरस्कार।

रीण—(वि०) [√री+क्त] बहा हुआ, क्षरित। चुआ हुआ, टपका हुआ।

रीति—(स्त्री०) [√री+क्तिन् वा क्तिच्] गति, बहाव। नदी, सोता। रेखा, सीमा। ढंग, प्रकार। चलन, रिवाज, रस्म। तर्ज, शैली। पीतल। काँसा। लोहे का मोर्चा, जंग। बरतनों पर कलई। काव्य की आत्मा; यह रीति ओज, माधुर्य और प्रसाद गुण के भेद से—गौड़ी, वैदर्भी और पांचाली तथा वैदर्भी और पाञ्चाली के मध्य की लाटी —चार तरह की है।

√रु—अ० पर० अक० शब्द करना। चिल्लाना। चीखना। चिचियाना। दहाड़ना। गुञ्जार करना। रवीति—रौति, रविष्यति,

अरावीत्। भ्वा० आत्म० सक० जाना। मारना। रवते, रविष्यते, अरविष्ट।

रुक्म—(वि०) [√रुच् +मक्, कुत्व] चमकीला, चमकदार। (न०) सुवर्ण। लोहा। धतूरा। नागकेशर। रुक्मिणी का एक भाई। —**कारक**–(पुं०) सुनार। —**पृष्ठक**–(वि०) सोने का पानी चढ़ा हुआ, मुलम्मा किया हुआ। —**वाहन**–(पुं०) द्रोणाचार्य का नामान्तर।

रुक्मिन्—(पुं०) [रुक्म + इनि] राजा भीष्मक के ज्येष्ठ राजकुमार का नाम। —**भित्**—(पुं०) बलराम।

रुक्मिणी—(स्त्री०) [रुक्मिन्+ ङीप्] राजा भीष्मक की राजकुमारी और श्रीकृष्ण की पटरानी।

रुग्ण—(वि०) [√रुज्+क्त, तस्य नः] टूटा हुआ, चकनाचूर। झुका हुआ, मुड़ा हुआ। चोटिल, घायल। बीमार, रोगी। बिगड़ा हुआ।

√**रुच्**—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। रुचना, पसंद आना। रोचते, रोचिष्यते, अरुचत्—अरोचिष्ट।

रुच्, रुचा—(स्त्री०) [√ रुच् + क्विप्] [रुच् + टाप्] चमक, आभा, दीप्ति; क्षणदासु यत्र च रुचैकतां गताः' शि० १३.५३। मनोहरता, सुन्दरता। वर्ण, सूरत। रुचि, अभिलाषा। मैना, तोता, बुलबुल आदि पक्षियों का बोलना।

रुचक—(वि०) [√रुच्+क्वुन्] पसंद आने वाला, प्रसन्नकारक। पाकस्थली सम्बन्धी। तीक्ष्ण, चरपरा। (न०) दाँत। गले में धारण किया जाने वाला आभूषण, हार। पुष्पहार, गजरा। सज्जीखार, काला नमक। (पुं०) बिजोरा नीबू, जँभीरी। कबूतर।

रुचि—(स्त्री०) [√रुच्+इन्] आभा, दीप्ति, चमक। किरण। वर्ण, रूपरंग। सौन्दर्य। स्वाद, जायका। भूख, बुभुक्षा। अभिलाषा, इच्छा। पसंदगी, अभिरुचि। लवलीनता, लौ, लगन। —**कर**–(वि०) स्वादिष्ठ। अभिरुचि को उत्पन्न करने वाला। पाकस्थली सम्बन्धी। —**भर्तृ**– (पुं०) सूर्य; 'रुचिभर्तुरस्य विरहाधिगमादिति सन्ध्ययापि सपदि व्यगमि' शि० ९.१७। पति।

रुचिर—(वि०) [√रुच्+किरच्] चमकीला, चमकदार। स्वादिष्ठ। मधुर, मीठा। भूख बढ़ाने वाला। शक्तिप्रद, बलवर्द्धक। (न०) केसर। लौंग। मूली।

रुचिरा—(स्त्री०) [रुचिर+टाप्] एक प्रकार का पीला रोगन। वृत्त विशेष। एक नदी। मूली। लौंग। केसर।

रुच्य—(वि०) [√रुच् + क्यप्] चमकीला। मनोहर। (पुं०) पति। शालिधान्य, जड़हन। रीठा का पेड़। (न०) सेंधा नमक।

√**रुज्**—तु० पर० सक० टुकड़े-टुकड़े कर डालना। पीड़ित करना। अक० रोगाक्रान्त होना। रुजति, रोक्ष्यति, अरौक्षीत्। चु० पर० सक० हिंसा करना। रोजयति, रोजयिष्यति, अरूरुजत्।

रुज्, रुजा—(स्त्री०) [√रुज्+क्विप्] [रुज्+ टाप्] भङ्ग। वेदना, कष्ट। रोग, बीमारी। थकावट, श्रान्ति। —**प्रतिक्रिया** (**रुक्प्रतिक्रिया**)–(स्त्री०) रोग की चिकित्सा। —**भेषज** (**रुग्भेषज**)– (न०) दवा। —**सद्मन्** (**रुक्सद्मन्**)–(न०) मल, विष्ठा।

√**रुठ्**—भ्वा० पर० सक० आघात करना। रोठति, रोठिष्यति, अरोठीत्।

√**रुण्ट्**—भ्वा० पर० सक० चुराना। रुण्टति, रुण्टिष्यति, अरुण्टीत्।

√**रुण्ठ्**—भ्वा० पर० सक० चुराना। रुण्ठति, रुण्ठिष्यति, अरुण्ठीत्।

√रुण्ड्——भ्वा० पर० सक० चुराना। रुण्डति, रुण्डिष्यति, अरुण्डीत्।

रुण्ड——(पुं०, न०) [√रुण्ड् + अच्] सिर शून्य शरीर, कवन्ध, धड़ मात्र; 'वेल्लद्-भैरवरुण्डगुण्डनिकरैः' उ० ५.६।

रुत——(न०) [√रु + क्त] पक्षियों का शब्द। शब्द, ध्वनि।——**व्याज**-(पुं०) उत्तेजक उद्घोष। हास्योद्दीपक अनुकरण।

√रुद्——अ० पर० अक० रोना। चिल्लाना। विलाप करना। गुर्राना। भूँकना। दहाड़ना। चीखना। रोदिति, रोदिष्यति, अरुदत्——अरोदीत्।

रुदित——(न०) [√रुद्+ल्युट्] रोना, रोदन। चीत्कार। विलाप।

रुद्ध——(वि०) [√रुध् + क्त] रुका हुआ। वेष्टित, घिरा हुआ। मुँदा हुआ।

रुद्र——(वि०) [√रुद्+णिच् +रक्] भयानक, भयङ्कर। (पुं०) एकादश संख्यक एक प्रकार के गण देवता। ये शिव जी के अपकृष्ट रूप हैं। शंकर इनमें मुख्य हैं। गीता में कहा भी है:——'रुद्राणां शङ्करश्चास्मि।' शिव जी का नाम।——**अक्ष** (रुद्राक्ष)- (पुं०) एक प्रसिद्ध वड़ा पेड़। इसी वृक्ष के फल के वीजों (रुद्राक्ष) की माला वनायी जाती है।——**आवास** (रुद्रावास)- (पुं०) रुद्र का निवासस्थान, कैलास पर्वत। काशी। श्मशान।——**प्रिया**——(स्त्री०) पार्वती। हरड़।

रुद्राणी——(स्त्री०) [रुद्र+ङीप्, आनुक्] रुद्र की पत्नी अर्थात् पार्वती जी।

√रुध्——रु० उभ० सक० रोकना, थामना। वाधा डालना। रोक रखना। ताले में वंद कर रखना। वंधन में रखना, कैद करना। घेरा डालना, छिपाना, ढकना। पीड़ित करना, सताना। रुणद्धि —रुन्धे, रोत्स्यति—ते, अरुधत्—अरौत्सीत् —अरुद्ध। दि० आत्म० सक० चाहना। अनुरुध्यते, अनुरोत्स्यते, अन्वरुद्ध।

रुधिर——(न०) [√रुध् + किरच्] रक्त, खून, लहू। केसर। गेरू। (पुं०) मंगल ग्रह। एक प्रकार का रत्न।

√रुप्——दि० पर० सक० मोहित करना। रुप्यति, रोपिष्यति, अरुपत्।

रुमा——(स्त्री०) सुग्रीव की स्त्री।

रुरु——(पुं०) [√रु+क्रुन्] काला हिरन; 'विरुरुचे रुरुचेष्टितभूमिपु' र० ९.५१। एक मुनि। विश्वेदेवों का एक गण। एक फलदार वृक्ष। एक भैरव।

√रुश्——तु० पर० सक० घायल करना। वध करना। रुशति, रोक्ष्यति, अरौक्षीत्।

रुशत्——(वि०) [√रुश् +शतृ] चोट पहुँचाने वाला, अप्रिय, वुरा लगने वाला (जैसे शब्द)।

√रुष्——दि० भ्वा० पर० अक० रूठना, अप्रसन्न होना, नाराज होना। (सक०) घायल करना। वध करना। चिढ़ाना, छेड़छाड़ करना। रुष्यति, रोषिष्यति, अरुषत्। भ्वा० रोषति, रोषिष्यति, अरोषीत्।

रुष्, रुषा——(स्त्री०) [√रुष् + क्विप्] [रुष्+टाप्] क्रोध, गुस्सा, रोष; 'निर्वन्धसञ्जातरुषा' र० ५.२१।

√रुह्——भ्वा० पर० अक० उगना, अङ्कुरित होना। उत्पन्न होना। ऊपर को उठना, ऊपर चढ़ना। (घाव का) भरना। रोहति, रोक्ष्यति, अरुक्षत्।

रुह्, रुह——(वि०) [√रुह् + क्विप्] [√रुह्+क] उत्पन्न होने वाला, निकलने वाला।

रुहा——(स्त्री०) [रुह+टाप्] दूर्वा या दूव घास।

√रूक्ष्——चु० पर० अक० रूखा होना या करना। रूक्षयति, रूक्षयिष्यति, अरुरूक्षत्।

रूक्ष—(वि०) [√रूक्ष् + अच्] जो चिकना न हो, अस्निग्ध । रूखा । असम, ऊबड़-खाबड़ । कड़ा, कठिन । मैला-कुचैला । निष्ठुर, संगदिल । सूखा, नीरस ।

रूक्षण—(न०) [√रूक्ष् +ल्युट्] सुखाने या रूखा करने की क्रिया । मुटाई कम करने की क्रिया ।

रूढ—(वि०) [रुह्+क्त] उगा हुआ, निकला हुआ । अङ्कुरित । उत्पन्न । वृद्धि को प्राप्त । उगा हुआ (जैसे कोई ग्रह) । ऊपर को चढ़ा हुआ । अविभाज्य । व्याप्त, फैला हुआ । प्रचलित, प्रसिद्ध । सर्वजन-स्वीकृत । निश्चित किया हुआ । खोजा हुआ । (पुं०) प्रकृति और प्रत्यय की अपेक्षा न करके अर्थ का बोध कराने वाला शब्द; जैसे—घट, गौ आदि ।

रूढि—(स्त्री०) [√रुह् + क्तिन्] जन्म, उत्पत्ति । वृद्धि, बढ़ती । उभार, उठान । ख्याति, प्रसिद्धि । प्रथा, चाल । शब्द की शक्ति जो यौगिक न होने पर भी अर्थ स्पष्ट करती है ।

√रूप्—चु० पर० सक० बनाना, गढ़ना । रंगमञ्च पर रूप धरना । चिह्नानी करना, ध्यान से देखना । तलाश करना, ढूँढ़ना । ख्याल करना, विचार करना । निश्चय करना । परीक्षा करना । अन्वेषण करना । नियत करना । रूपयति, रूपयिष्यति, अरुरूपत् ।

रूप—(न०) [√रूप्+अच्] शक्ल, सूरत, आकार; 'मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः' श० १.२६ । कोई भी पदार्थ जो देख पड़े । सुन्दर पदार्थ, खूब-सूरत शक्ल । स्वभाव, प्रकृति । रीति, ढंग । पहचान, लक्षण । जाति, प्रकार, किस्म । मूर्ति, प्रतिमा । सादृश्य, समानता । आदर्श, नमूना । किसी संज्ञा या क्रिया की विभक्तियों और उसके लकारों के रूप । एक की संख्या । पूर्ण संख्या, पूर्णाङ्क । नाटक, रूपक । किसी ग्रन्थ को कण्ठस्थ करके अथवा बार-बार पढ़ कर, उसे अवगत करने की क्रिया । मवेशी, पशु । शब्द, ध्वनि ।—**अध्यक्ष** (**रूपाध्यक्ष**)- (पुं०) टकसाल का प्रधान अधिकारी । कोषाध्यक्ष ।—**अभिग्राहित** (**रूपाभिग्राहित**)-(वि०) वह जो अपराध करते हुए गिरफ्तार किया गया हो ।—**आजीवा** (**रूपाजीवा**)- (स्त्री०) वेश्या, रंडी ।—**आश्रय** (**रूपाश्रय**)-(पुं०) अत्यन्त सुन्दर पुरुष ।—**इन्द्रिय** (**रूपेन्द्रिय**)-(न०) वह इन्द्रिय जो रूप-वर्ण का ज्ञान सम्पादन करती है अर्थात् आँख ।—**उच्चय** (**रूपोच्चय**)- (पुं०) सुन्दर रूपों का संग्रह ।—**कार**, —**कृत्**-(पुं०) शिल्पी ।—**तत्त्व**-(न०) पैतृक सम्पत्ति । परमसत्ता । —**धर**- (वि०) (किसी की) शक्ल का बना हुआ, स्वाँग बनाया हुआ ।—**नाशन**-(पुं०) उल्लू ।—**लावण्य**- (न०) सौन्दर्य, सुन्दरता ।—**विपर्यय**- (पुं०) भद्दापन, कुरूपता, बदसूरती ।—**शालिन्**- (वि०) सुन्दर ।—**सम्पद्**, —**सम्पत्ति**- (स्त्री०) सौन्दर्य, उत्तम रूप ।

रूपक—(न०) [रूप+कन् वा √रूप्+ण्वुल्] आकृति, सूरत, शक्ल । मूर्ति, प्रतिकृति । चिह्नानी । लक्षण । किस्म, जाति । वह काव्य जो पात्रों द्वारा खेला जाता है, दृश्यकाव्य । एक अर्थालङ्कार जिसमें उपमेय में उपमान के साधर्म्य का आरोप कर, उसका वर्णन उपमान के रूप से किया जाता है । जैसे 'बाहु-लता', 'पाणि-पद्म' आदि । मान या तौल-विशेष । चाँदी । रुपया ।—**अतिशयोक्ति** (**रूपकातिशयोक्ति**)-(स्त्री०) अतिशयोक्ति का एक

भेद जिसमें उपमेय, वाचक-धर्मादि का लोप कर केवल उपमान का उल्लेख किया जाता है।—**ताल**— (पुं०) सङ्गीत में "दोताला" नामक एक ताल।

रूपण—(न०) [√रूप् + ल्युट्] आरोप करना। आलङ्कारिक वर्णन। अन्वेषण। परीक्षा। प्रमाण।

रूपवत्—(वि०) [रूप+मतुप्, वत्व] रंग या रूप वाला। शरीरधारी। सुन्दर, मनोहर।

रूपवती—(स्त्री०) [रूपवत् +ङीप्] सुन्दरी स्त्री।

रूपिन्—(वि०) [रूप+इनि] सदृश। शरीरधारी। सुन्दर।

रूप्य—(वि०) [प्रशस्तं रूपम् अस्ति अस्य, रूप+यत्] सुन्दर, मनोहर। उपमेय। (न०) [आहतं रूपम् अस्ति अस्य, रूप +यप्] आहत सुवर्ण, चाँदी। रुपया।

√रूष्—भ्वा० पर० सक० सजाना, शृङ्गार करना। मालिश करना। उबटन करना। अक० ढक जाना, आच्छादित होना। काँपना। फट जाना, तड़क जाना। रूषति, रूषिष्यति, अरूषीत्।

रूषित—(वि०) [√रूष्+क्त] सजा हुआ। लेप किया हुआ। उबटन किया हुआ। ढका हुआ। दगीला, दागी। दरदरा। कुटा हुआ।

रे—(अव्य०) [√रा+के] सम्बोधनात्मक अव्यय।

√रेक्—भ्वा० आत्म० सक० शंका करना। रेकते, रेकिष्यते, अरेकिष्ट।

रेखा—(स्त्री०) [√लिख् + अङ—टाप्, रलयोः ऐक्यात् लस्य रत्वम्] लकीर, धारी। पंक्ति, कतार। रूपरेखा, ढाँचा। अघाने की क्रिया। छल, कपट।—**अंश** (रेखांश)—(पुं०) याम्योत्तर वृत्त का एक-एक अंश।—**गणित**—(न०) गणित का वह विभाग जिसमें रेखाओं से कतिपय सिद्धान्त निर्धारित किये गये हैं।

रेच—(वि०) [√रिच्+घञ्] दे० 'रेचक'।

रेचक—(वि०) [स्त्री०—**रेचिका**] [√रिच् +णिच् +ण्वुल्] दस्तावर, दस्त लाने वाला। फेफड़ों को साफ करने वाला, साँस निकालने वाला। (पुं०) पूरक प्राणायाम का उल्टा, पेट में रुकी हुई साँस को नथुने से निकालने की क्रिया। पिचकारी। जवाखार। (न०) जमालगोटा।

रेचन—(न०), **रेचना**— (स्त्री०) [√रिच् +णिच्+ल्युट्] [√रिच् +णिच्+युच् —टाप्] खाली करने की क्रिया। कम करने की क्रिया, घटाने की क्रिया। साँस बाहर निकालने की क्रिया। मलप्रणाली साफ करने की क्रिया। मल।

रेचित—(वि०) [√रिच्+णिच्+क्त] साफ किया हुआ। रीता किया हुआ। (न०) घोड़े की दुलकी की चाल। नृत्य में हस्त-चालन।

√रेट्—भ्वा० उभ० सक० रटना। रेटति—ते, रेटिष्यति—ते, अरेटीत्— अरेटिष्ट।

रेणु—(पुं०, स्त्री०) [√री +नु]रज, धूल, रेत, बालू। पुष्प-पराग। कणिका, अत्यन्त लघु परिमाण। बिडंग।

रेणुका—(स्त्री०) [रेणु√कै+क—टाप्] परशुराम जी की माता का नाम।

रेतस्—(न०) [रीयते क्षरति, √री +असुन्, तुट्] वीर्य, धातु। पारा।

√रेप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। रेपते, रेपिष्यते, अरेपिष्ट।

रेप—(वि०) [रेप्यते निन्द्यते, √रेप्+घञ्] तिरस्करणीय, नीच। निष्ठुर। कृपण।

रेफ—(वि०) [√रिफ् + अच्] नीच, कमीना। दुष्ट। (पुं०) [√रिफ् +घञ् वा र+ इफन्] रकार का वह रूप जो अन्य अक्षर के पूर्व आने पर उसके ऊपर रहता है। ध्वनि-विशेष। अनुराग, स्नेह।

√रेव्—भ्वा० आत्म० अक० उछलते चलना । रेवते, रेविष्यते, अरेविष्ट ।

रेवट—(पुं०) [√रेव् +अटच्] शूकर । वाँस की छड़ी । भँवर ।

रेवत—(पुं०) [रेव्+अतच्] विजौरा नीबू, जँभीरी । अमलतास । एक राजा, बलरामजी का श्वशुर ।

रेवती—(स्त्री०) [रेवत+ङीष्] सत्ताइसवें नक्षत्र का नाम । २७ की संख्या । एक नदी । दुर्गा । [रेवतस्य अपत्यं स्त्री, रेवत+अण् पृषो० न वृद्धिः, ङीप्] बलराम जी की स्त्री का नाम; 'रेवतीवदनोच्छिष्टपरिपूतपुटे दृशौ' शि० २.१६ ।

रेवा—(न०) [रेव्+अच्—टाप्] नर्मदा नदी का नाम ।

√रेष्—भ्वा० आत्म० अक० दहाड़ना । गुर्राना । चीखना । हिनहिनाना । रेषते, रेषिष्यते, अरेषिष्ट ।

रेषण—(न०),**रेषा**-(स्त्री०) [√रेष्+ल्युट्] [√रेष्+अ—टाप्]दहाड़ । हिनहिनाहट ।

√रै—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । रायति, रास्यति, अरासीत् ।

रै—(पुं०) [√रा+डै] धन-दौलत, सम्पत्ति ।[**कर्त्ता—राः, रायौ, रायः**]

रैवत, रैवतक—(पुं०)[रेवत्या अदूरो देशः, रेवती+अञ् वा रेवती + अण्] [रैवत +कन्] रेवती नदी के पास का देश । द्वारका के समीपवर्त्ती एक पर्वत का नाम । स्वर्णालु वृक्ष । शिव । एक दैत्य जिसकी गणना बालग्रहों में है । रेवती के गर्भ से उत्पन्न पाँचवें मनु ।

रोक—(न०) [√रु+कन्] छिद्र । नाव । जहाज । [√रुच्+घञ्] नकद रुपया, रोकड़ । नकद दाम देकर चीज खरीदना । रुचि, कान्ति ।

रोग—(पुं०) [√रुज् +घञ्] बीमारी ।—**आयतन (रोगायतन)**- (न०) शरीर ।—**आर्त (रोगार्त)**-(वि०) रोग से दुःखी, व्याकुल ।—**शिल्पिन्**- (पुं०) सोनालू का पेड़ ।—**हर**-(वि०) रोग दूर करने वाला । (न०) दवा ।—**हारिन्**- (त्रि०) आरोग्यकर । (पुं०) वैद्य ।

रोचक—(वि०) [√रुच्+णिच्+ण्वुल्] रुचिकारक, रुचने वाला । मनोरंजक । भूख बढ़ाने वाला । (न०) भूख । वह दवा जिससे, भूख बढ़े । केला । राजपलाण्डु । अवदंश, गजक । (पुं०) काँच की चूड़ियाँ या अन्य चीजें बनाने वाला ।

रोचन—(वि०) [स्त्री०—**रोचनी** या **रोचना**] [√रुच् +ल्यु वा णिच्+ल्यु] अच्छा लगने वाला । शोभावान् । दीप्तिमान् । (पुं०) काला सेमर । कमीला । सफेद सहिजन । प्याज । अमलतास । करंज । अनार । रोगों का अधिष्ठातृ देवता । स्वारोचिष मन्वन्तर के इन्द्र । कामदेव का एक वाण । गोरोचन; "त्वं रोचनागौरशरीरयष्टिः' र० ६.६५ ।

रोचनक—(पुं०) [रोचन + कन्] जंवीरी नींबू । वंशलोचन । दे० 'रोचन' ।

रोचमान—(वि०) [√रुच्+शानच्] चमकीला । प्रिय । सुन्दर, मनोहर । (न०) घोड़े की गर्दन के वालों का जूड़ा ।

रोचिष्णु—(वि०) [√रुच्+इष्णुच्] चमकीला । हर्षित, प्रफुल्लित । अच्छे-अच्छे कपड़ों, अलंकारों आदि से जगमगाता हुआ । भूख को बढ़ाने वाला ।

रोचिस्—(न०) [√रुच्+इसिन्] चमक, दमक, तेज; 'शरच्चन्द्रमरीचिरोचिषम्' शि० १.५ ।

रोटिका—(स्त्री०) [√रुट् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] फुलकी, हलकी, छोटी रोटी ।

√रोड्—भ्वा० पर० अक० पागल होना । रोडति, रोडिष्यति, अरोडीत् ।

रोदन—(न०) [√रुद्+ल्युट्] रोना । आँसू ।

रोदस्—(न०) [स्त्री०—**रोदसी**] [√रुद् +असुन्] स्वर्ग और पृथिवी।

रोध—(पुं०) [√रुध् +घञ्] रोक, रुकावट। अड़चन। घेरा। बाँध। [√रुध् +अच्] किनारा, तट।

रोधन—(न०) [√रुध् + ल्युट्] रोक, प्रतिबन्ध। दमन। (पुं०) [√रुध्+ल्यु] बुध ग्रह। (वि०) रोकने वाला।

रोधस्—(न०) [√रुध्+असुन्] नदी का तट या बाँध। नदी का कगारा। समुद्रतट। **वक्रा (रोधोवक्रा),—वती (रोधोवती)** –(स्त्री०) नदी। वेग से बहने वाली नदी।

रोध्र—(पुं०) [√रुध्+रन्] लोध्र वृक्ष, लोध का पेड़। (पुं०, न०) पाप। जुर्म, अपराध।

रोप—(पुं०) [√रुह् + णिच्+घञ् वा √रुप्+घञ्] दे० 'रोपण'। ठहराव, रुकावट। छेद। बाण।

रोपण—(न०) [√रुह् + णिच्+ल्युट् वा √रुप्+ल्युट्] उठाने, लगाने या खड़ा करने की क्रिया। वृक्ष लगाने की क्रिया। घाव पुरना। घाव पुरने वाली दवा लगाने की क्रिया। मोहन, बुद्धि फेरना।

रोमक—(पुं०) [रोमन्+कन्] रोम नगर या देश। रोमनिवासी। (न०) [रोमन् √कै +क] सांभरी नमक। चुम्बक।—**आचार्य (रोमकाचार्य)**– (पुं०) एक विख्यात ज्योतिर्विद्।—**पत्तन**–(न०) रोम नगरी। —**सिद्धान्त**–(पुं०) रोमकाचार्य का सिद्धान्त, ज्योतिष के मुख्य पाँच सिद्धान्तों में से एक।

रोमन्–(न०) [√रु+मनिन्] रोयाँ, रोंगटा। (पुं०) रोम देश। उस देश का निवासी। —**अञ्च (रोमाञ्च)**–(पुं०) आनन्द या भय से शरीर के रोंगटों का खड़ा होना। —**अञ्चित (रोमाञ्चित)**– (वि०) पुलकित, हृष्टरोम।—**अन्त (रोमान्त)**–(पुं०) हथेली की पीठ पर के बाल।—**आली (रोमाली)**, —**आवलि (रोमावलि)**, —**आवली (रोमावली)**–(स्त्री०) रोमों की पंक्ति जो पेट के बीचों बीच नाभि से ऊपर की ओर गयी हो।—**उद्गम (रोमोद्गम)**, —**उद्भेद (रोमोद्भेद)**– (पुं०) रोंगटों का खड़ा होना। —**कूप**–(पुं०, न०), —**गर्त**–(पुं०) शरीर के चाम के ऊपर वे छिद्र जिनमें से रोएँ निकले हुए होते हैं, लोमछिद्र।—**केशर**, —**केसर**–(पुं०) चँवर, चामर, चौरी।— **पुलक**–(पुं०) रोंगटों का खड़ा होना।—**भूमि**–(पुं०) चमड़ा, चर्म।— **रन्ध्र**–(पुं०) रोमकूप।—**राजि**, —**राजी**, —**लता**–(स्त्री०) तरेट पर की रोमावली।—**विकार**–(पुं०),—**विक्रिया** –(स्त्री०), —**विभेद**–(पुं०) रोमाञ्च, रोंगटों का खड़ा होना।—**हर्ष**– (पुं०) रोंगटों का खड़ा होना; 'वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते' भग० १.२९। —**हर्षण**– (पुं०) व्यास देव के एक शिष्य का नाम, जिसने कई एक पुराणों की कथा शौनक को सुनायी थी। (न०) रोओं का खड़ा होना।

रोमन्थ—(न०) [रोगं मथ्नाति, रोग√मन्थ् +अण्, पृषो० साधुः] जुगाली, खाये हुए को चबाना; 'छायाबद्धकदम्बकं मृगकुलं रोमन्थमभ्यस्यतु' श० २.८। (आलं०) बार-बार की आवृत्ति, पुनरावृत्ति।

रोमश—(वि०) [रोमाणि सन्ति अस्य, रोमन् +श] जिसके बहुत रोएँ हों। (पुं०) भेड़ा। शूकर। रतालु।

रोरुदा—(स्त्री०) [√रुद् +यङ +अ –टाप्] अत्यधिक रोदन या विलाप।

रोलम्ब—(पुं०) [रु+विच्, रोः कुजन् सन् लम्बते स्थानात् स्थानान्तरं गच्छति, रो√लम्ब् +अच्] भौंरा; 'तस्या रोलम्बावली केशजालं' दश०।

रोष--(पुं०) [√रुष् +घञ्] क्रोध, गुस्सा। विद्वेष, विरोध। चिढ़। लड़ाई की उमंग, जोश।

रोषण--(वि०) [स्त्री०--**रोषणी**] [√रुष् युच्] क्रुद्ध। (पुं०) कसौटी, पारा। ऊसर जमीन, नुनही जमीन।

रोह--(पुं०) [√ रुह् +अच्] उठान, चढ़ाव। ऊपर चढ़ना। कली, अङ्कुर।

रोहण--(न०) [√रुह् +ल्युट्] ऊपर चढ़ने, सवार होने की क्रिया। अंकुरित होना, उगना। ऊपर की ओर बढ़ना। वीर्य। (पुं०) लङ्का के एक पर्वत का नाम, विदूराद्रि।--**द्रुम**-(पुं०)चन्दन का पेड़।

रोहन्त--(पुं०) [√रुह् +झच्] वृक्ष।

रोहन्ती--(स्त्री०) [रोहन्त+ङीष्] लता, बेल।

रोहि--(पुं०)[√रुह्+इन्] मृग विशेष। धार्मिक पुरुष। वृक्ष। बीज।

रोहिणी--(स्त्री०) [√रुह् + इनन्--ङीष्] लाल गौ। चौथे नक्षत्र का नाम। वसुदेव की एक पत्नी का नाम जिनके गर्भ से बलराम जी की उत्पत्ति हुई थी। हाल की रजस्वला स्त्री। बिजली। करंज। रीठा। सफेद कौआ। ठेंठी। लाल गदहपुरना। गंभारी। मजीठ। ब्राह्मी बूटी। जरा लंबी पीली हर्रे। नववर्षीया कन्या।--**पति**,--**प्रिय**,--**वल्लभ**- (पुं०) चन्द्रमा।--**रमण**- (पुं०) साँड़। चन्द्रमा।--**शकट**-(पुं०) रोहिणी नक्षत्र, जिसका आकार शकट जैसा है।

रोहित--(वि०) [स्त्री०--**रोहिता** या **रोहिणी**] [√रुह् +इतच्] लाल रंग का। (न०)रक्त। केसर। (पुं०) लाल रंग। लोमड़ी। मृग विशेष। रोहू मछली।--**अश्व (रोहिताश्व)**- (पुं०) अग्नि।

रोहिष--(पुं०)[√रुह्+इषन्]रूसा घास। गधे से मिलता-जुलता एक मृग। रोहू मछली।

रौक्ष्य--(न०) [रूक्ष+ष्यञ्] कड़ाई, सख्ती। रूखापन, निष्ठुरता।

रौद्र--(वि०) [स्त्री०--**रौद्रा**, **रौद्री**] रुद्रस्य इदम् वा रुद्रो देवता अस्य, रुद्र+अण्] रुद्र संबंधी। रुद्र की तरह उग्र, क्रोधाविष्ट। भयंकर। (न०) काव्य के नौ रसों में से एक जिसका स्थायी भाव क्रोध है। क्रोध। (पुं०) रुद्र का पूजक। धूप, घाम। हेमन्त ऋतु। यम। कार्त्तिकेय। बृहस्पति के ६० संवत्सरों में से ५४वाँ वर्ष। एक केतु। आर्द्रा नक्षत्र। एक साम।

रौप्य--(वि०) [रूप्य +अण्] चाँदी का बना हुआ। (न०) चाँदी।

रौम--(न०) [रुमा +अण्] साँभर नमक।

रौरव--(वि०) [स्त्री०--**रौरवी**] [रुरु +अण्] रुरु के चर्म का बना हुआ। भयङ्कर। बेईमान। (पुं०) एक प्रकार का कबाब। इक्कीस नरकों में से पाँचवाँ।

रौहिणी--(पुं०) [रोहिण + अण्] चन्दन वृक्ष। वट का वृक्ष।

रौहिणेय--(पुं०) [रोहिणी +ढक्] बछड़ा। बलराम जी। बुधग्रह। (न०) पन्ना, मरकत मणि।

रौहिष--(पुं०) [√रुह्+टिषच्, धातोश्च वृद्धिः] रोहू मछली। हिरन विशेष। (न०) एक प्रकार की घास।

ल

ल--संस्कृत या नागरी वर्णमाला का अट्ठाइसवाँ व्यञ्जन वर्ण। इसके उच्चारण में संवार, नाद और घोष प्रयत्न होने के कारण यह अल्पप्राण माना गया है। (पुं०) [√ली + ड] इन्द्र। छन्दःशास्त्र में लघु मात्रा का संकेत। व्याकरण में समय-विभाग के लिये पाणिनि ने दस लकार माने हैं, उन्हीं का यह अर्थवाची है। [दस लकार ये हैं--लट् लिट् लुट् लृट् लेट् लोट् लङ् लिङ् लुङ् और लृङ्।]

√लक्—चु० उभ० सक० चखना। पाना, प्राप्त करना। लाकयति-ते, लाकयिष्यति-ते, अलीलकत्-त।

लक—(पुं०) [√लक् + अच्] माथा, ललाट। वन्य चावलों की बाल।

लकच, लकुच—(पुं०) [√लक् + अचन्] [√लक्+उचन्] बड़हर का पेड़।

लकुट—(पुं०) [√लक् + उटन्] लाठी। छड़ी।

लक्तक—(पुं०) [रक्त √कै+क, रस्य लत्वम् वा लक्यते हीनैः आस्वाद्यते अनुभूयते, √लक् +क्त+कन्] महावर। चिथड़ा, लत्ता, फटा कपड़ा।

लक्तिका—(स्त्री०) [लक्तक+टाप्, इत्व] छिपकली। विस्तुइया।

√लक्ष्—चु० उभ० सक० देखना। पहचानना। चिह्न करना। परिभाषा निरूपण करना। गौण अर्थ वतलाना। निशाना लगाना। सोचना, विचारना। लक्षयति-ते, लक्षयिष्यति-ते, अललक्षत्-त।

लक्ष—(न०) [√लक्ष् +अच्] एक लाख की संख्या। चिह्न, निशाना। वहाना। पैर। मोती। अस्त्र का एक प्रकार का संहार। (वि०) एक लाख, सौ हजार; 'इच्छति शती सहस्रं सहस्री लक्षमीहते' सुभा०। —**अधीश** (**लक्षाधीश**)— (पुं०) लखपती आदमी।

लक्षक—(वि०) [√लक्ष् + णिच्+ण्वुल्] लक्ष्य कराने वाला, जता देने वाला। (पुं०) संबंध या प्रयोजन से अर्थ प्रकट करने वाला शब्द। (न०) [लक्ष+कन्] एक लाख की संख्या।

लक्षण—(न०) [√लक्ष्+णिच् + ल्यु वा√लक्ष्+ल्यु] किसी वस्तु की वह विशेषता जिससे वह पहचाना जाय। रोग की पहचान। उपाधि। परिभाषा। शरीर पर का कोई शुभ या अशुभ चिह्न; 'क्लेशावहा भर्तुरलक्षणाहम्' र० १४.५। नाम। विशिष्टता, उत्तमता। लक्ष्य, उद्देश्य। निर्धारित कर (या चुंगी का महसूल)। आकार, प्रकार, किस्म। कार्य, क्रिया। कारण। विषय, प्रसङ्ग। वहाना, मिस। (पुं०) सारस। —**अन्वित** (**लक्षणान्वित**) —(वि०) शुभ लक्षणों से युक्त। —**भ्रष्ट**— (वि०) अभागा, वदकिस्मत। —**संनिपात**— (पुं०) अङ्कन, दागने की क्रिया।

लक्षणा—(स्त्री०) [√लक्ष् + युच्—टाप् वा लक्षण+अच् —टाप्] लक्ष्य, उद्देश्य। शब्द की वह शक्ति जिससे उसका अर्थ लक्षित हो। शब्द की वह शक्ति जिससे उसका साधारण अर्थ से भिन्न और वास्तविक अर्थ प्रकट हो। यह शक्ति दो प्रकार की होती है। अर्थात् "निरूढ" और "प्रयोजनवती"। हंसी। सारसी। भटकटैया (छोटी)।

लक्षण्य—(वि०) [लक्षण+यत्] चिह्न का काम देने वाला। जिसके अच्छे चिह्न हों, अच्छे चिह्नों वाला। (पुं०) दैवशक्ति-सम्पन्न आदर्श पुरुष।

लक्षित—(वि०) [√लक्ष्+क्त] देखा हुआ। लक्ष्य किया हुआ। निरूपित। वर्णित। कहा हुआ। चिह्नित। पहिचाना हुआ। परिभाषा किया हुआ। निशाना बँधा हुआ। अन्य प्रकार से प्रकट किया हुआ। ढूंढ़ा हुआ, तलाश किया हुआ।

लक्ष्मण—(वि०) [लक्ष्मन् +अच्] लक्षण युक्त। भाग्यवान्, खुशकिस्मत। समृद्धिशाली, हर प्रकार से भरा-पूरा। (पुं०) महाराज दशरथ के एक पुत्र का नाम जो सुमित्रा रानी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। दुर्योधन का एक पुत्र। सारस। —**प्रसू**— (स्त्री०) लक्ष्मण-जननी, सुमित्रा रानी।

लक्ष्मणा—(स्त्री०) [लक्ष्मण+ टाप्] कृष्ण की आठ पटरानियों में से एक। दुर्योधन

की पुत्री । हंसी । श्वेत कंटकारी । एक पुत्रदा जड़ी ।

लक्ष्मन्—(न०) [√लक्ष् + मनिन्] चिह्न, निशान; 'व्यक्तलक्ष्म परिभोगमण्डनम्' र० १९.३० । दाग । विशेषता । परिभाषा । (पुं०) सारस पक्षी । लक्ष्मण का नाम ।

लक्ष्मी—(स्त्री०) [लक्षयति पश्यति उद्योगिनम्, √ लक्ष् +ई, मुट्] धन की अधिष्ठात्री देवी, कमला, श्री । सौभाग्य । समृद्धि, सम्पत्ति । सफलता । सौन्दर्य । शोभा । राज-शक्ति । वीर पत्नी । मोती । हल्दी । —**ईश (लक्ष्मीश)**- (पुं०) विष्णु का नाम । आम का पेड़ । भाग्यवान् आदमी ।—**कान्त** -(पुं०) विष्णु भगवान् । राजा ।—**गृह**-(न०) लाल कमल का फूल ।—**ताल**-(पुं०) एक प्रकार का ताड़ का पेड़ ।—**नाथ** -(पुं०) विष्णु का नाम ।—**पति**-(पुं०) विष्णु । राजा । सुपाड़ी का पेड़ । लवंग का वृक्ष ।—**पुत्र**- (पुं०) घोड़ा । कामदेव ।—**पुष्प**-(पुं०) मानिक, चुन्नी । (न०) कमल । —**पूजन**-(न०) लक्ष्मी जी का उस समय का पूजन जिस समय वर और वधू प्रथम वार (वर के) घर में प्रवेश करते हैं ।—**फल** -(पुं०) बेल वृक्ष ।—**रमण**-(पुं०) श्री विष्णु भगवान् ।—**वसति**- (स्त्री०) लाल कमल पुष्प ।—**वार**- (पुं०) गुरुवार ।—**वेष्ट** (पुं०) तारपीन ।—**सख**-(पुं०) लक्ष्मी के प्रिय पात्र या वरपुत्र । राजा या धनी व्यक्ति । —**सहज**,—**सहोदर**-(पुं०) चन्द्रमा ।

लक्ष्मीवत्—(वि०) [लक्ष्मी+मतुप्, वत्व] भाग्यवान्, खुशकिस्मत । धनी, धनवान् । सुन्दर, खूबसूरत ।

लक्ष्य—(वि०) [√लक्ष्+ण्यत्] दिखलाई पड़ने वाला । पहचाना जाने वाला । जानने लायक, वह जिसका पता चल सके । चिह्नित किया जाने वाला । निरूपण किया जाने वाला । निशाना लगाने के योग्य; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले' श० २.५ । घूम-घुमाकर वतलाने योग्य । विचारणीय । (न०) निशाना । चिह्न । वस्तु जो लक्षणवती हो । गौण अर्थ, लक्षण से उपलब्ध अर्थ । वहाना । एक लाख । —**भेद**, —**वेध**-(पुं०) लक्ष्य का भेदन करना, निशानावाजी ।—**सुप्त** —(वि०) देखने में सोया हुआ, मिथ्यासुप्त ।—**हन्**-(पुं०) तीर ।

√लख्, √लङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । लखति, लखिष्यति, अलाखीत् —अलखीत् । लङ्खति, लङ्खिष्यति, अलङ्खीत् ।

√लग्—भ्वा० पर० अक० लगना, चिपकना, चिपटना । अनुरक्त होना । मिल जाना, एक हो जाना । सक० पीछे लगना या पीछा करना । रोक रखना, काम में लगा रखना । लगति, लगिष्यति, अलगीत् ।

लगड—(वि०) [√ लग् + अलच्, डलयोः ऐक्यात् डः] मनोहर, सुन्दर ।

लगित—(वि०) [√लग् + क्त] चिपटा हुआ, लगा हुआ । जुड़ा हुआ, सम्बन्धयुक्त । प्राप्त, पाया हुआ ।

लगुड, लगुर, लगुल—(पुं०) [√ लग् + उलच्, पक्षे लस्य डः तथा रः] लाठी । दंड । एक तरह का छोटा लौह-दंड । लाल कनेर ।

लग्न—(वि०) [लग् + क्त] चिपटा हुआ, लगा हुआ । दृढ़तापूर्वक पकड़ा हुआ । छुआ हुआ, स्पर्श किया हुआ । सम्बन्धयुक्त । (पुं०) मदमस्त हाथी । भाट, वंदीजन । (न०) ज्योतिष में दिन का उतना अंश जितने में किसी एक राशि का उदय रहता है । वह समय जब सूर्य किसी राशि में जाता है । शुभ कार्य करने का शुभ

मुहूर्त ।--मास-(पुं०) शुभ मास जिसमें शुभकार्य विवाहादि हो सके ।

लग्नक--(पुं०) [लग्न + कन्] प्रतिभू, जामिन, वह जो जमानत करे ।

लघिमन्--(पुं०) [लघु + इमनिच्] हलकापन, गुरुत्वाभाव । ओछापन, नीचता । विचारहीनता । अष्टसिद्धियों में से चौथी सिद्धि, जिसके प्राप्त होने पर मनुष्य बहुत छोटा या हलका बन सकता है ।

लघिष्ठ--(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन लघुः, लघु+इष्ठन्] सब में से बहुत छोटा या हलका ।

लघीयस्--(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन लघुः, लघु+ईयसुन्] दो में से बहुत छोटा या हलका ।

लघु--(वि०) [स्त्री०--लघ्वी या लघु] [√लङ्घ्+कु, नलोप] हलका; 'रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः' मे० २० । छोटा । संक्षिप्त । अकिञ्चित्कर । कमीना, नीच । निर्बल, कमजोर । अभागा । चंचल । तेज । सरल । सहज में पचने वाला । ह्रस्व (जैसे स्वर) । मंद, कोमल । प्रिय, वाञ्छनीय । विशुद्ध, साफ । (पुं०) काला अगर । समय का एक परिमाण, जिसमें १५ क्षण होते हैं । तीन प्रकार के प्राणायामों में से बारह मात्राओं वाला प्राणायाम । व्याकरण में एक मात्रिक स्वर—अ, इ, उ, ऋ । छंदः-शास्त्रोक्त लघु गणभेद । रोगमुक्त, स्वस्थ । चाँदी । स्पृक्का, असबरग । खस ।--**आशिन्** (**लघ्वाशिन्**), --**आहार** (**लघ्वाहार**)-(वि०) कम खाने वाला । --**उक्ति** (**लघूक्ति**)-(स्त्री०) संक्षिप्त रूप से कहने का ढंग ।--**उत्थान** (**लघूत्थान**), --**समुत्थान**-(वि०) तेजी से काम करने वाला ।--**काय** -(वि०) हलके शरीर का । (पुं०) बकरा ।--**क्रम**-(वि०) तेज चलने वाला ।--**खट्विका**-(स्त्री०) छोटी चारपाई ।--**गोधूम**-(पुं०) छोटी जाति का गेहूँ । --**चित्त**, --**चेतस्**,--**मनस्**, --**हृदय**- (वि०) हलके मन का । चंचलचित्त ।-- **जङ्गल** -(पुं०) लवा पक्षी ।--**द्राक्षा**- (स्त्री०) किशमिश मेवा । --**द्राविन्**- (वि०) सहज में पिघलने वाला ।--**पञ्चक**,--**पञ्चमूल**-(न०) गोखरू, शालिपर्णी, छोटी कटाई, पिठवन, बड़ी कटेहरी—इन पाँच वनस्पतियों की जड़ों का संघात जो उपयोगी औषध है । --**पाक**-(वि०) सहज में पकने वाला । --**पुष्प**-(पुं०) भुइँ कदंब वृक्ष ।--**बदर**-(पुं०), --**बदरी**-(स्त्री०) छोटा बेर । --**भव**- (पुं०) नीच योनि का ।--**भोजन**-(न०) हलका भोजन ।--**मांस**-(पुं०) तीतर ।--**मूलक**-(न०) छोटी मूली । --**लय**- (न०) खस । पीला वाला या लामज नाम की घास ।--**वृत्ति**-(वि०) बदचलन । हलका, अव्यवस्थित ।--**समुत्थ**-(पुं०) वह राजा या राज्य जो युद्ध के लिये शीघ्र तैयार किया जा सके ।--**हस्त**-(वि०) हलके हाथ का, कुशल । (पुं०) कुशल तीरंदाज ।

लघुता--(स्त्री०), **लघुत्व**-(न०) [लघु +तल्—टाप्] [लघु+त्व] हलकापन । छुटाई; 'इन्द्रोऽपि लघुतां याति स्वयम्प्रख्यापितैर्गुणैः' । तुच्छता । तिरस्कार, अप्रतिष्ठा । तेजी, फुर्ती । संक्षिप्तता । सरलता । विचारहीनता । लंपटता ।

लघ्वी--(स्त्री०) [लघु+ङीष्] नजाकत से भरी औरत, कोमलाङ्गी स्त्री । छोटी गाड़ी ।

लङ्का--(स्त्री०) [रमन्तेऽस्याम्, √रम्+क —टाप्; रस्य लः] राक्षसराज रावण की राजधानी का नाम । वेश्या, रंडी । शाखा । काला चना । शिम्बी धान्य ।--**अधिप** (**लङ्काधिप**),--**अधिपति** (**लङ्काधिपति**),--

ईश (लङ्केश),—ईश्वर (लङ्केश्वर),—नाथ,—पति–(पुं०) रावण या विभीषण। —दाहिन्– (पुं०) श्रीहनुमान जी।

√लङ्ख्—दे० 'लख्'।

लङ्खनी—(स्त्री०) [√लङ्ख् + ल्युट् —ङीप्] लगाम।

√लङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना। लङ्गति, लङ्गिष्यति, अलङ्गीत्।

लङ्ग—(पुं०) [√लङ्ग्+अच्] मेल, संग। प्रेमी, आशिक।

लङ्गक—(पुं०) [लङ्ग + कन्] प्रेमी, आशिक।

लङ्गल—(न०) हल।

लङ्गूल—(न०) पूँछ।

√लङ्घ्—भ्वा० आत्म० सक० अक० उछलना, कूदना, कुलाँच मारना। सवार होना। चढ़ना। पार जाना, नाँघना। लंघन करना, उपवास करना। सुखा डालना। आक्रमण करना। अनिष्ट करना। लङ्घते, लङ्घिष्यते, अलङ्घिष्ट।

लङ्घन—(न०) [√लङ्घ् + ल्युट्] फाँदना, लाँघना; 'जनोऽयमुच्चैःपदलङ्घनोत्सुकः' कु० ५.६४। कुलाँच मारते आना। चढ़ना। आक्रमण करना। सीमा के बाहर होना। तिरस्कार करना। समुहाना। अपराध। हानि, अनिष्ट। लंघन, कड़ाका। घोड़े की बहुत तेज चाल।

लङ्घित—(वि०) [√लङ्घ् +क्त] लाँघा हुआ। आर-पार गया हुआ। भंग किया हुआ। तिरस्कृत अपमानित।

√लच्छ्—भ्वा० पर० सक० चिह्न करना। लच्छति, लच्छिष्यति, अलच्छीत्।

√लज्—भ्वा० पर० सक० भूनना। लजति, लजिष्यति, अलजीत् — अलाजीत्। तु० आत्म० अक० लजाना, शर्माना। लजते, लजिष्यते, अलजिष्ट।

√लज्ज्—तु० आत्म० अक० लजाना, शर्माना। लज्जते, लज्जिष्यते, अलज्जिष्ट।

लज्जका—(स्त्री०) जंगली कपास का वृक्ष।

लज्जा—(स्त्री०) [√लज्ज् + अ—टाप्] लाज, शर्म। मान-मर्यादा, छुईमुई का पेड़। —अन्वित (लज्जान्वित)–(वि०) लज्जालु, लजीला। —शील– (वि०) लजीला। —रहित, —शून्य, —हीन–(वि०) वेहया, वेशर्म।

लज्जालु—(वि०) [√लज्ज् +आलुच्] लजीला, शर्मीला। (पुं०, स्त्री०) लजालू या लज्जावन्ती का पौधा।

लज्जित—(वि०) [√लज्ज्+क्त] शर्मीला।

√लञ्ज्—भ्वा०, चु० पर० सक० दोषी ठहराना, भर्त्सना करना। भूनना। अनिष्ट करना। मारना। देना। वोलना। अक० मजवूत होना। वसना। चमकना। लञ्जति, लञ्जिष्यति, अलञ्जीत्। चु० लञ्जयति। लञ्जापयति।

लञ्ज—(पुं०) [√लञ्ज् + अच्] पांद, पैर। काँछ। पूँछ।

लञ्जा—(स्त्री०) [लञ्ज+टाप्] प्रवाह, धार। छिनाल स्त्री। लक्ष्मी जी का नाम। निद्रा।

लञ्जिका—(स्त्री०) [√लञ्ज् + ण्वुल् —टाप्, इत्व] रंडी, वेश्या।

√लट्—भ्वा० पर० अक० वालक वन जाना। लड़कों की तरह काम करना। वालकों की तरह वातें करना, तुतलाना। रोना, चिल्लाना। लटति, लटिष्यति, अलाटीत्—अलटीत्।

लट—(पुं०) [√लट्+अच्] मूर्ख। अपराध। डाकू।

लटक—(पुं०) [√लट् + क्वुन्] दगावाज। वदमाश, गुंडा। लौंडा। लड़का।

लटभ—(वि०) मनोज्ञ, मनोहर; 'अति-क्रान्तः कालो लटभललनाभोगसुलभः' भर्तृ० ३.३२।

लट्ट—(पुं०) दुष्ट, बदमाश।

लट्व—(पुं०) [√लट् +क्वन्] घोड़ा। नचैया लड़का। एक जाति। एक राग।

लट्वा—(स्त्री०) [लट्व+टाप्] द्यूत-क्रीड़ा। अलक, बालों की लट। व्यभि-चारिणी स्त्री। तूलिका, चित्र बनाने की कूँची। गौरैया। एक प्रकार का करंज। कुसुंभ। एक प्रकार का बाजा।

√लड्—भ्वा० पर० सक० खेलना, क्रीड़ा करना। उछालना। फेंकना। दोषी ठहराना। जीभ लपलपाना। तंग करना। लडति, लडि-ष्यति, अलाडीत्—अलडीत्। चु० पर० सक० थपकी लगाना। चिढ़ाना। लाडयति, लाडयिष्यति, अलीलडत्।

लडह—(वि०) खूबसूरत, सुन्दर।

लड्ड—(वि०) दुर्जन।

लड्डु, लड्डुक—(पुं०) गोल बँधी हुई मिठाई, मोदक, लड्डू।

√लण्ड्—चु० पर० सक० उछालना, ऊपर फेंकना। बोलना। लण्डयति—लण्डति, लण्डयिष्यति—लण्डिष्यति, अललण्डत्—अलण्डीत्।

लण्ड—(न०) [√लण्ड्+घञ्] विष्ठा, मल।

लता—(स्त्री०) [लतति वेष्टयति, √लत् +अच्—टाप्] बेल, लतर; 'लतेव संनद्ध-मनोज्ञपल्लवा' र० ३.७। शाखा, डाली। प्रियङ्गु लता। माधवी लता। मुश्क लता। दूब। चाबुक, कोड़ा। मोतियों की लड़ी। लीक, रेखा। सुन्दरी स्त्री।—**अन्त (लतान्त)**—(न०) फूल।—**अम्बुज (लताम्बुज)**—(न०) ककड़ी।—**अर्क (लतार्क)**—(पुं०) हरा प्याज।—**अलक (लतालक)**—(पुं०) हाथी।—**गृह**—(पुं०, न०) कुंज, लतामण्डप।—**जिह्व**, —**रसन**—(पुं०) साँप।—**तरु**—(पुं०) साल वृक्ष। नारंगी का पेड़।—**पनस**—(पुं०) तरबूज।—**प्रतान**—(पुं०) बेल का सूत।—**भवन**—(न०) लतागृह, लता-मण्डप।—**मणि**—(पुं०) मूँगा।—**मृग**—(पुं०) बंदर। बनमानुस।—**यष्टि**—(स्त्री०) मजीठ।—**यावक**—(न०) अङ्कुर, अँखुवा।—**वलय**—(न०) लतामण्डप।—**वृक्ष**—(पुं०) नारियल का वृक्ष।—**वेष्ट**—(पुं०) कामशास्त्र में वर्णित सोलह प्रकार के रतिबंधों में से तीसरा।—**वेष्टन**, —**वेष्टितक**—(न०) एक प्रकार का आलिङ्गन।—**साधन**—(न०) एक तंत्रोक्त साधना जिसका प्रधान अधिकरण लता अर्थात् स्त्री है।

लतिका—(स्त्री०) [लता+कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] छोटी लता। मोती की लड़ी।

लत्तिका—(स्त्री०) [√लत् + तिकन् —टाप्] बिस्तुइया, छिपकली।

√लप्—भ्वा० पर० सक० बोलना, बातचीत करना। बिना प्रयोजन बकबक करना। काना-फूँसी करना। लपति, लपिष्यति, अलापीत्—अलपीत्।

लपन—(न०) [√लप् + ल्युट्] वार्ता-लाप, बातचीत। मुख।

लपित—(वि०) [√लप् +क्त] कहा हुआ। (न०) कथन, वाणी।

लब्ध—(वि०) [√लभ्+क्त] प्राप्त, पाया हुआ। लिया हुआ, वसूल किया हुआ। जाना हुआ, समझा हुआ। (भाग देकर) निकाला हुआ। (पुं०) दस प्रकार के दासों में से एक।—**अन्तर (लब्धान्तर)**—(न०) वह जिसे प्रवेश करने का अधिकार प्राप्त हो गया हो। वह जिसे अवसर प्राप्त हुआ हो।—**उदय (लब्धोदय)**—(वि०) उत्पन्न। वह जिसका भाग्योदय हुआ हो।—**काम**—(वि०) वह जिसकी कामना सिद्ध हो गयी हो, सफल-मनोरथ; 'नाधमे

लब्धकामः' मे० ।—**कीर्ति**– (वि०) जिसने यश पाया हो । प्रसिद्ध, प्रख्यात । —**चेतस्**, —**संज्ञ**–(वि०) होश में आया हुआ ।—**जन्मन्**– (वि०) उत्पन्न ।—**नामन्**, —**शब्द**–(वि०) प्रसिद्ध, प्रख्यात । —**नाश**–(पुं०) जो पास हो उसका नाश होना या खो जाना ।—**प्रशमन**–(न०) मिले हुए धन का सत्पात्र को दान । उपार्जित धन की रक्षा ।—**लक्ष**,—**लक्ष्य**– (वि०) वह जिसका निशाना ठीक बै ा हो । निशाना लगाने में निपुण ।—**वर्ण**–(वि०) विद्वान्, पण्डित । प्रसिद्ध, प्रख्यात ।—**विद्य**–(वि०) विद्वान् ।—**सिद्धि** –(वि०) वह जिसका मनोरथ पूर्ण हो गया हो । जो किसी कला में पूर्ण निपुणता प्राप्त कर चुका हो ।

लब्धि—(स्त्री०) [√लभ्+क्तिन्] प्राप्ति । लाभ, मुनाफा । गणित में) लब्धाङ्क ।

लब्ध्रिम—(वि०) [√लभ्+क्त्रि, मप्] पाया हुआ, प्राप्त किया हुआ ।

√लभ्—भ्वा० आत्म० सक० प्राप्त करना, पाना । अधिकार में करना, कब्जा करना । लेना, पकड़ना, थामना । (खोई हुई वस्तु को) ढूँढ़ निकालना, पुनः प्राप्त करना : जानना । सीखना । पहचानना । लभते, लप्स्यते, अलब्ध ।

लभन—(न०) [√लभ्+ल्युट्] प्राप्त करने की क्रिया । पहचानने की क्रिया ।

लभस—(न०, पुं०) [√लभ् + असच्] घोड़ा बाँधने की रस्सी । (पुं०) धन-दौलत । याचक ।

लभ्य—(वि०) [√लभ्+यत्] पाने योग्य; प्रांशुलभ्ये फले मोहादुद्बाहुरिव वामनः' र० १.३ । पता पाने योग्य । न्याययुक्त, उचित । बोधगम्य ।

लमक—(पुं०) [√रम्+क्वुन्, रस्य लत्वम्] प्रेमी, आशिक । लंपट ।

लम्पट—(वि०) [√रम्+अटन्, पुक्, रस्य लः] मरभुका, लालची । कामुक, ऐयाश (पुं०) व्यभिचारी या कामी पुरुष ।

लम्फ—(पुं०) [√लम्फ् +घञ्] उछाल, कूद ।

लम्फन—(पुं०) [√लम्फ्+ल्युट्] उछलना, कूदना ।

√लम्ब्—भ्वा० आत्म० अक० लटकना । किसी के साथ लगना या नत्थी होना । नीचे उतरना । डूबना; 'लम्बमाने दिवाकरे' शि० । पीछे रह जाना । विलंब करना । ध्वनि करना । लम्बते, लम्बिष्यते, अलम्बिष्ट ।

लम्ब—(वि०) [√लम्ब् + अच्] दीर्घ, लंबा । बड़ा । प्रशस्त । (पुं०) वह खड़ी रेखा जो किसी बेंड़ी रेखा पर इस तरह गिरे कि उसके साथ वह समकोण बनावे उसे लंब रेखा कहते हैं । नर्तक । पति । घूस ।—**उदर** (**लम्बोदर**)–(वि०) बड़े पेट का । (पुं०) गणेश जी । मरभुका, भोजनभट्ट ।—**ओष्ठ** (**लम्बोष्ठ, लम्बौष्ठ**)– (पुं०) ऊँट ।—**कर्ण** –(पुं०) गधा । खरगोश । बकरा । हाथी । बाज पक्षी । राक्षस ।—**जठर**– (वि०) बड़े पेट वाला ।—**पयोधरा**– (स्त्री०) स्त्री जिसके कुच लंबे और नीचे लटकते हों ।—**स्फिच्**–(वि०) भारी या बड़े चूतड़ों वाला ।

लम्बक—(पुं०) [लम्ब +कन्] लंबा । लंब-रेखा । ज्योतिष में एक प्रकार का योग; इनकी संख्या १५ है । किसी पुस्तक का कोई अध्याय ।

लम्बन—(पुं०) [√लम्ब् +ल्यु] शिव जी । कफ । (न०) झालर । गले का हार जो नाभि तक लटकता हो । [√लम्ब् +ल्युट्] झूलने की क्रिया । अवलम्ब, आश्रय ।

लम्बा—(स्त्री०) [लम्ब+टाप्] दुर्गा । लक्ष्मी ।

लम्बिका——(स्त्री॰) [√लम्ब् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] गले के अन्दर की घंटी या कौआ ।

लम्बित——(वि॰) [√लम्ब्+क्त] लटकता हुआ, झूलता हुआ । डूबा हुआ, नीचे बैठा हुआ । आश्रित, टिका हुआ ।

लम्बुषा——(स्त्री॰) सात लड़ी का हार, सतलड़ी ।

लम्भ——(पुं॰) [√लभ् + घञ्, नुम्] प्राप्ति, उपलब्धि । मिलन । पुनः प्राप्ति । लाभ ।

लम्भन——(न॰) [√लभ् + ल्युट्, नुम्] प्राप्ति, उपलब्धि । पुनः प्राप्ति ।

लम्भित——(वि॰) [√लभ् +क्त, नुम्] प्राप्त किया हुआ, हासिल किया हुआ । प्रदत्त, दिया हुआ । वर्द्धित, बढ़ाया हुआ । प्रयोग किया हुआ । लालन-पालन किया हुआ । कथित । सम्बोधित ।

√लय्——भ्वा॰ आत्म॰ सक॰ जाना । लयते, लयिष्यते, अलयिष्ट ।

लय——(पुं॰) [√ली+अच्] विलीन होना, लीनता । एकाग्रता । नाश, विनाश । संगीत की लय [जो तीन प्रकार की मानी गयी है, द्रुत, मध्य और विलंबित] 'किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः' र॰ ९.३५ । संगीत का ताल । विश्राम । विश्रामस्थान, आलय, वासस्थान । मन की सुस्ती, मानसिक अकर्मण्यता । आलिङ्गन ।——**आरम्भ** (**लयारम्भ**),—— **आलम्भ** (**लयालम्भ**)–(पुं॰) नट, नचैया । ——**काल**–(पुं॰) प्रलय काल ।——**गत**– (वि॰) गला हुआ, पिघला हुआ ।——**पुत्री**–(स्त्री॰) नाचने वाली, नर्तकी ।

लयन——(न॰) [√ली+ल्युट्] चिपकना, लिपटना । आराम, विश्राम । विश्राम गृह ।

√लर्ब्——भ्वा॰ पर॰ सक॰ जाना । लर्बति, लर्बिष्यति, अलर्बीत् ।

√लल्——चु॰ उभ॰ अक॰ खेलना, क्रीड़ा करना, आमोद-प्रमोद करना । सक॰ चाहना । लालयति—ते, लालयिष्यति—ते, अलीललत्—त ।

लल——(वि॰) [√लल् + अच्] खिलाड़ी, क्रीड़ाप्रिय । अभिलाषी ।

ललत्——(वि॰) [√लल् +शतृ] खिलाड़ी । मुँह से बाहर निकाले हुए ।——**जिह्व** (**ललजिह्व**)–(वि॰) जिह्वा मुँह के बाहर निकाले हुए । भयानक । (पुं॰) कुत्ता । ऊँट ।

ललन——(न॰) [√लल्+ल्युट्] क्रीड़ा, खेल, आमोद । जिह्वा को मुँह से बाहर निकालना ।

ललना——(स्त्री॰) [लल्+णिच् + ल्यु—टाप्] स्त्री, रमणी । स्वेच्छाचारिणी स्त्री । जिह्वा ।——**प्रिय**– (पुं॰) कदम्ब वृक्ष ।

ललनिका——(स्त्री॰) [ललना+कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] छोटी अथवा अभागी स्त्री ।

ललन्तिका——(स्त्री॰) [√लल् + शतृ—ङीप् +कन्— टाप्, ह्रस्व] लंबी माला । छिपकली या गिरगिट ।

ललाक——(पुं॰) [√लल् +आकन्] लिङ्ग, जननेन्द्रिय ।

ललाट——(न॰) [ललम् ईप्साम् अटति ज्ञापयति, लल √अट्+अण्] माथा, भाल, मस्तक ।——**अक्ष** (**ललाटाक्ष**) –(पुं॰) शिवजी का नाम ।——**पट्ट**–(पुं॰),——**पट्टिका**– (स्त्री॰) माथे का चपटा भाग । मुकुट, किरीट ।——**लेखा**–(स्त्री॰) कपाल का लेख, भाग्यलेख ।

ललाटक——(न॰) [ललाट + कन्] माथा । सुन्दर माथा ।

ललाटन्तप——(वि॰) [ललाट √ तप् +खश्, मुम्] माथे को तपाने वाला । अत्यन्त पीड़ाकारी; 'लिपिर्ललाटन्तपनिष्ठुराक्षरा' नै॰ १.१३८ । (पुं॰) सूर्य ।

ललाटिका—(स्त्री०) [ललाटे भवः अलङ्कारः, ललाट + कन्—टाप्, इत्व] माथे का एक आभूषण, टीका। माथे पर लगा हुआ तिलक।

ललाटूल—(वि०) वह जिसका माथा ऊँचा या सुन्दर हो।

ललाम—(वि०) [स्त्री०—**ललामी**] [√लड् (विलासे) +क्विप्, तम् अमति प्राप्नोति, √अम्+अण्, डस्य लत्वम्] प्रधान, श्रेष्ठ। रमणीय, सुन्दर। लाल रंग का, सुर्ख। (न०) माथे पर धारण किये जाने वाले आभूषण (यथा बेनाबेंदिया, कटियाँ, झूमर) [यह शब्द पुंलिङ्ग भी होता है, जब यह भूषण के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है]। कोई भी सर्वोत्तम जाति की वस्तु। माथे का चिह्न या निशान। चिह्न, निशानी, झंडा, पताका। पंक्ति, रेखा। पूँछ, दुम। गरदन के बाल, अयाल। प्राधान्य। गौरव। सौन्दर्य। सींग, शृङ्ग। (पुं०) घोड़ा।

ललामक—(न०) [ललाम+कन्] माथे पर धारण किया जाने वाला पुष्पगुच्छ अथवा पुष्पमाला।

ललामन्—(न०) आभूषण, सजावट। कोई भी सर्वोत्तम वस्तु। ध्वज। साम्प्रदायिक तिलक। चिह्न। पूँछ, दुम।

ललित—(वि०) [√लल् + क्त] क्रीड़ासक्त, खिलाड़ी। कामुक। भोजनभट्ट। मनोहर, सुन्दर; 'प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ' र० ८.६७। मनोमुग्धकारी, उत्तम। अभिलषित। कोमल। सीधा। कँपकँपा, हिलता-डोलता हुआ। (न०) खेल, क्रीड़ा। आमोद- प्रमोद। शृङ्गार रस में कायिक हाव या अङ्गचेष्टा जिसमें सुकुमारता के साथ भौं, आँख, हाथ, पैर आदि अंग हिलाये जाते हैं। सौन्दर्य, मनोहरता। कोई भी स्वाभाविक क्रिया। भोलापन, अल्हड़पन। —**अर्थ** (**ललितार्थ**)—(वि०) जिसका सुन्दर अर्थ हो। —**पद**—(वि०) जिसमें सुन्दर पद या शब्द हो। —**प्रहार**—(पुं०) प्यार की थपथपी।

ललिता—(स्त्री०) [ललित+टाप्] रमणी। स्वेच्छाचारिणी स्त्री। मुश्क, कस्तूरी। दुर्गा-देवी का रूप। अनेक प्रकार के वृक्ष। —**पञ्चमी**—(स्त्री०) आश्विन-शुक्ला पंचमी जब ललिता देवी का पूजन होता है। —**सप्तमी**— (स्त्री०) भाद्रमास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी।

लव—(न०) [√ लू + अप्] लौंग, लवंग। जायफल, जातीफल। (पुं०) कटाई। पके हुए अनाज की कटाई। विभाग, टुकड़ा, खण्ड। बहुत थोड़ी मात्रा। ऊन। केश। क्रीड़ा। काल का एक मान, ३६ निमेष का समय। भिन्न के ऊपर की राशि (यथा ४/५ में ४ की संख्या लव है)। लग्नांश। विनाश। श्रीरामचन्द्र जी के एक पुत्र का नाम।

लवङ्ग—(न०) [√लू+अङ्गच्] लौंग। (पुं०) लौंग का वृक्ष। —**कलिका**—(स्त्री०) लौंग।

लवङ्गक—(न०) [लवङ्ग+कन्] लौंग।

लवण—(वि०) [लवणः रसः अस्ति अस्मिन्, लवण+अच्] नमकीन, खारा। [√लू+ल्यु, नि० णत्व] सलोना, सुन्दर। काटने वाला। (पुं०) नमक, लोन। मधु दैत्य का पुत्र, लवणासुर। एक नरक। —**अन्तक** (**लवणान्तक**)—(पुं०) शत्रुघ्न। —**अब्धि** (**लवणाब्धि**)—(पुं०) खारा समुद्र। —**अम्बुराशि** (**लवणाम्बुराशि**)—(पुं०) समुद्र। —**अम्भस्** (**लवणाम्भस्**)—(पुं०) समुद्र। (न०) खारा जल। —**आकर** (**लवणाकर**)—(पुं०) नमक की खान। खारे जल का कुण्ड अर्थात् समुद्र। —**आलय** (**लवणालय**)—(पुं०) समुद्र। —**उत्तम** (**लवणोत्तम**)—(न०) सेंधा

नमक । शोरा ।--उद (लवणोद)-(पुं०) खारे जल का समुद्र ।--उदक (लवणोदक), --उदधि ((लवणोदधि),--जल-(पुं०) लवण समुद्र ।--मेह-(पुं०) प्रमेह का एक भेद ।--समुद्र-(पुं०) खारे जल का समुद्र ।

लवणा--(स्त्री०) [लवण + टाप्] दीप्ति, आभा । सौन्दर्य । चँगेरी । अमलोनी साग । महाज्योतिष्मती लता । चुक । लूनी नदी ।

लवणिमन्--(पुं०) [लवण+इमनिच्] नमकीनी । सलोनापन, सौन्दर्य ।

लवन--(न०) [√लू+ल्युट्] काटना, छेदन । खेत की कटाई, लुनाई । (अनाज का) काटना । हँसिया ।

लवली--(स्त्री०) [लव√ला+क-ङीष्] पीले रंग की एक लता; 'मया लब्धः पाणि-र्ललितलवलीकन्दलनिभः' उ० ३.४० ।

लवित्र--(न०) [लूयते अनेन, √लू +इत्र] हँसिया ।

√लश्--चु० उभ० अक० किसी कलाकौशल को सीखने का अभ्यास करना । लशयति -ते ।

लशुन, लशून--(पुं०,न०) [अश्यते भुज्यते, √अश् + उनन्, लशादेश] [रसेन ऊनः, रस्य लत्वम्, पृषो० सस्य शः, अकार-लोपः] लहसुन ।

√लष्--दि०, भ्वा० उभ० सक० अभिलाषा करना, चाहना । दि० लष्यति-ते, भ्वा० लषति-ते, लषिष्यति-ते, अलषीत्-अला-षीत्-अलषिष्ट ।

लषित--(वि०) [√लष् + क्त] अभि-लषित, चाहा हुआ ।

लष्व--(पुं०) [√लष्+वन्] नट । अभि-नयकर्त्ता ।

√लस्--भ्वा० पर० अक० चमकना । निक-लना, उदय होना, प्रकट होना । खेलना । नाचना । भटकना । सक० आलिंगन करना । लसति, लसिष्यति, अलासीत्--अलसीत् ।

लसा--(स्त्री०) [√लस् + अच्-टाप्] केसर । हल्दी ।

लसिका--(स्त्री०) [√लस् +अच् +कन् -टाप्, इत्व] थूक, लार ।

लसित--(वि०) [√लस् +क्त] सुशोभित । खेला हुआ । प्रकट हुआ, प्रादुर्भूत ।

लस्त--(वि०) [√लस् + क्त] क्रीड़ित । सुशोभित । आलिङ्गित । निपुण, दक्ष ।

लस्तक--(पुं०) [लस्त +कन्] धनुष का मध्यभाग, मूठ ।

लस्तकिन्--(पुं०) [लस्तक+इनि] धनुष, कमान ।

लहरि, लहरी--(स्त्री०) [लेन इन्द्रेण इव ह्रियते ऊर्ध्वगमनाय, ल√हृ + इन्, पक्षे ङीष्] लहर, तरङ्ग; 'करेणोत्क्षिप्तास्ते जननि विजयन्तां लहरयः' गं० ४० ।

√ला--अ० पर० सक० लेना । पाना, प्राप्त करना । लाति, लास्यति, अलासीत् ।

लाकुटिक--(वि०) [स्त्री०--**लाकुटिकी**] [लकुट+ठञ्] लठैत, लाठी धारण किये हुए । (पुं०) सन्तरी, पहरेदार ।

लाक्षकी--(स्त्री०) सीताजी का नाम ।

लाक्षणिक--(वि०) [स्त्री०--**लाक्षणिकी**] [लक्षण+ठक्] वह जो लक्षणों का ज्ञाता हो, लक्षण जानने वाला । जिससे लक्षण प्रकट हो । [लक्षणा+ठक्] गौणार्थवाची । गौण, अपकृष्ट । पारिभाषिक । (पुं०) पारि-भाषिक शब्द ।

लाक्षण्य--(वि०) [लक्षण +ष्यञ्] लक्षण सम्बन्धी । लक्षण जानने या बतलाने वाला ।

लाक्षा--(स्त्री०) [√लक्ष् + अ-टाप् वा √राज्+स, लत्व-टाप्] लाख, लाह; 'निष्ठ्यूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः केनचित्' श० ४.५ । वह कीड़ा जो लाख

उत्पन्न करता है।— तरु,— वृक्ष-(पुं०) पलाश, ढाक।—रक्त- (वि०) लाख के रंग में रँगा हुआ।— प्रसादन-(पुं०) लाल लोध्र वृक्ष।

लाक्षिक—(वि०) [स्त्री०—**लाक्षिकी**] [लाक्षा+ठक्] लाख सम्बन्धी, लाख का बना हुआ। लाखी रंग का। [लक्ष+ठक्] लाख (संख्या) सम्बन्धी।

√लाख्—भ्वा० पर० अक० सूख जाना। काफी होना। सक० सजाना। देना। रोकना। लाखति, लाखिष्यति, अलाखीत्।

लागुडिक—(वि०) [लगुड + ठक्] दे० 'लाकुटिक'।

लाघ्—भ्वा० आत्म० अक० समर्थ होना। लाघते, लाघिष्यते, अलाघिष्ट।

लाघव—(न०) [लघोः भावः कर्म वा, लघु +अण्] लघुता, अल्पता। हलकापन। विचारहीनता। अकिञ्चित्करता। असम्मान, अप्रतिष्ठा। फुर्ती, वेग। तेजी, शीघ्रता। क्रियाशीलता, तत्परता। सब विषयों में पारदर्शिता। संक्षिप्तता। आरोग्य। नपुंसकता।

लाङ्गल—(न०) [√ लङ्ग् +कलच् पृषो० वद्धि] हल। हल के आकार का शहतीर या लट्ठा। ताड़ का वृक्ष। शिश्न, लिङ्ग। पुष्प विशेष।—**ईषा** (**लाङ्गलीषा**) -(स्त्री०) हल का लट्ठा, हरिस।—**ग्रह**-(पुं०) हलवाहा।—**दण्ड**-(पुं०) हल का लट्ठा, हरिस।—**ध्वज**-(पुं०) बलरामजी का नाम।—**पद्धति**-(स्त्री०) हल जोतने से बनी हुई रेखा, सीता।—**फाल**- (पुं०) हल की फाल।

लाङ्गलिन्—(पुं०) [लाङ्गल + इनि] बलरामजी का नाम; 'बन्धुप्रीत्या समरविमुखो लाङ्गली याः सिषेवे' मे० ४९। नारियल का पेड़। सर्प।

लाङ्गली—(स्त्री०) [लाङ्गल +अच्—ङीष्] कलियारी। मजीठ। नारियल। केवाँच। पिठवन। गजपीपल। जल- पिप्पली।

लाङ्गूल—(न०) [√लङ्ग्+ऊलच् (वा०) वृद्धि] पूँछ। लिङ्ग, जननेंद्रिय।

लाङ्गूलिन्—(पुं०) [लाङ्गूल + इनि] बंदर। ऋषभ नामक ओषधि। पिठवन। केवाँच।

√लाज्,√लाञ्ज्—भ्वा० पर० सक० कलङ्क लगाना। धिक्कारना। भूनना। तलना। लाजति—लाञ्जति, लाजिष्यति—लाञ्जिष्यति, अलाजीत्—अलाञ्जीत्।

लाज—(पुं०) [√लाज्+अच्] धान का लावा, खील। पानी में भीगा चावल। खस।

√लाञ्छ्—भ्वा० पर० सक० चिह्नित करना। सजाना। लाञ्छति लाञ्छिष्यति, अलाञ्छीत्।

लाञ्छन—(न०) [√लाञ्छ् + ल्युट्] चिह्न, निशान। पहचान का चिह्न। नाम, संज्ञा। दाग, धब्बा। चन्द्रलाञ्छन। भूसीमा।

लाञ्छित—(वि०) [√लाञ्छ् +क्त] चिह्नित। नामक। सजा हुआ। सम्पन्न।

√लाट—क० पर० अक० जीना। लाटयति।

लाट—(पुं०) गुजरात के एक भाग का प्राचीन नाम और उसके निवासी। लाटदेशाधिपति। पुराना कपड़ा, जीर्णवस्त्र। वस्त्र। लड़कों जैसी बोली।— **अनुप्रास** (**लाटानुप्रास**)- (पुं०) एक शब्दालङ्कार। इसमें शब्दों की पुनरुक्ति तो होती है किन्तु अन्वय में हेरफेर करने से अर्थ बदल जाता है।

लाटक—(वि०) [स्त्री०—**लाटिका**] [लाट +वुन्] लाट सम्बन्धी।

लाटिका, लाटी—(स्त्री०) [√लट् +ण्वुल् —टाप्, इत्व] [√लाट् + अच्—ङीप्]

साहित्य की चार प्रकार की शैलियों में से एक। इसमें वैदर्भी और पंचाली रीतियों का कुछ-कुछ अनुसरण किया जाता है। इसमें छोटे-छोटे पद तथा समास हुआ करते हैं।

√लाड्—चु० उभ० सक० थपथपाना, थपकी देना। दोषी ठहराना। धिक्कारना। फेंकना। उछालना। लाडयति-ते।

लाण्ठनी—(स्त्री०) कुलटा स्त्री।

लात—(वि०) [√ला+क्त] प्राप्त, पाया हुआ।

लाप—(पुं०) [√लप् +घञ्] वार्तालाप, बातचीत। तुतलाना।

लाभ—(पुं०) [√लभ्+घञ्] प्राप्ति, लब्धि। मुनाफा, फायदा। उपभोग। विजय। ज्ञान। —**कर**, —**कृत्**—(वि०) लाभदायक, फायदेमंद। —**लिप्सा**—(स्त्री०) मुनाफे की ख्वाहिश, लाभ की अभिलाषा। लोभ, लालच।

लाभक—(पुं०) [लाभ + कन्] मुनाफा, फायदा।

लामज्जक—(न०) [√ला + क्विप्, ला आदीयमाना मज्जा सारो यस्य, ब० स०, कप्] खस, उशीर।

लाम्पट्य—(न०) [लम्पट + ष्यञ्] लंपटता, कामुकता, ऐयाशी।

लालन—(न०) [√लल् + णिच्+ल्युट्] अत्यंत स्नेह करना, बहुत अधिक लाड़ करना। प्यार।

लालस—(वि०) [√लस् +यङ, द्वित्वादि +अच्] उत्सुकतापूर्वक अभिलाषी, उत्कट इच्छुक; 'निजस्त्रीचटुलालसानाम्' शि०४.६। अनुरागी।

लालसा—(स्त्री०) [√लस् +यङ+अ —टाप्] अभिलाषा। उत्सुकता। माँग, याचना। खेद, शोक। गर्भिणी स्त्री की रुचि।

लालसीक—(न०) चटनी।

लाला—(स्त्री०) [√लल् + णिच्+अच् —टाप्] लार, थूक। —**स्रव**—(पुं०) मुंह से लार बहना। मकड़ी। —**स्राव**—(पुं०) लार का टपकना। मकड़ी का जाला।

लालाटिक—(वि०) [स्त्री०—**लालाटिकी**] [ललाट+ठक्] भाल सम्बन्धी। भाग्य पर निर्भर रहने वाला। निकम्मा। (पुं०) सावधान अनुचर। निठल्ला आदमी। आलिङ्गन का एक प्रकार।

लालाटी—(न०) [ललाट + अण्—ङीप्] माथा।

लालिक—(पुं०) [लाला+ठञ्] भैंसा।

लालित—(वि०) [√लल् + णिच्+क्त] दुलारा हुआ। बहकाया हुआ। प्रिय। अभिलषित। (न०) प्रेम। प्रसन्नता।

लालितक—(पुं०) [लालित+कन्] लाड़ला बालक।

लालित्य—(न०) [ललित + ष्यञ्] मनोहरता, सौन्दर्य; 'दण्डिनः पदलालित्यम्' सुभा०। प्रीतिद्योतक हावभाव।

लालिन्—(पुं०) [√लल् + णिनि] दुलार-प्यार करने वाला। बहकाने वाला, स्त्रियों को कुपथ में प्रवृत्त करने वाला।

लालिनी—(स्त्री०) [लालिन्+ङीप्] स्वेच्छाचारिणी स्त्री।

लालुका—(स्त्री०) कण्ठहार विशेष।

लाव—(वि०) [स्त्री०—**लावी**] [√लू +ण] काटने वाला। कतरने वाला। तोड़ने वाला। नाशक। (पुं०) लवा नामक पक्षी। [√लू +घञ्] काटना। खंड-खंड करना। कतरना। नष्ट करना।

लावक—(वि०) [√ लू+ ण्वुल्] छेदन करने वाला। (पुं०) [लाव + कन्] लवा पक्षी।

लावण—(वि०) [स्त्री० — **लावणी**] [लवण +अण्] नमकीन, लवणयुक्त। लवण द्वारा संस्कृत (औषध आदि)।

लावणिक—(वि०) [स्त्री०—**लावणिकी**] [लवण+ठञ्] लवण सम्बन्धी। नमकीन।

मनोहर । (पुं०) नमक का व्यापारी । (न०) लवण-पात्र ।

लावण्य—(न०) [लवण + ष्यञ्] नमकीनी । सलोनापन, मनोहरता, सौन्दर्य; 'आसन्नलावण्यफलोऽधरोष्ठः' कु० ७.१८ । —**अर्जित** (**लावण्यार्जित**)–(न०) विवाहित स्त्री की व्यक्तिगत सम्पत्ति जो उसे विवाह के समय उसके पिता अथवा उसकी सास द्वारा मिली हो । (वि०) सौंदर्य द्वारा प्राप्त ।—**कलित**– (वि०) सौन्दर्य-युक्त ।

लावाणक—(पुं०) मगध के समीप का एक प्राचीन देश ।

लाविक—(पुं०) [लाव+ठक्] भैंसा ।

लाषुक—(वि०) [स्त्री०–**लाषुका, लाषुकी**] [√लष् +उकञ्] लोभी, लालची ।

लास—(पुं०) [√लस्+घञ्] स्त्रियों का कोमल भावमय नृत्य । रास । क्रीड़ा, उछल-कूद । झोल, रसा ।

लासक—(वि०) [स्त्री० —**लासिका**] [√लस् +ण्वुल्] खिलाड़ी, क्रीड़ाप्रिय । इधर- उधर हिलने वाला । (पुं०) नचैया । मोर, मयूर । आलिङ्गन । शिव । (न०) अटारी, अटा ।

लासकी—(स्त्री०) [लासक +ङीष्] नर्तकी, अभिनेत्री ।

लास्य—(न०) [√लस्+ण्यत्] (न०) नृत्य, नाच । गान-वादन सहित नृत्य । वह नृत्य जिसमें हाव-भाव दिखला कर प्रेमभाव प्रदर्शित किया जाता है । (पुं०) [लास्य +अच्] नर्तक, अभिनेता ।

लास्या—(स्त्री०) [लास्य + अच्—टाप्] नर्तकी, अभिनेत्री ।

लिकुच—(पुं०) [लक्यते आस्वाद्यते, √लक् +उच, पृषो० इत्व] बड़हर का पेड़ ।

लिक्षा—(स्त्री०) [√लिश्+श, स च कित् —टाप्] लीख, जूँ का अंडा । चार या आठ त्रसरेणु के बराबर की एक तौल ।

लिक्षिका—(स्त्री०) [लिक्षा+ कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] लीख ।

√लिख्—तु० पर० सक० लिखना । खाका खींचना । रेखाङ्कित करना । खरोंचना, छीलना । भाला से छेदना । स्पर्श करना । चोंच मारना । चिकनाना । स्त्री के साथ संगम करना । लिखति, लेखिष्यति, अलेखीत् ।

लिखन—(न०) [√लिख् +ल्युट्] लिखने की क्रिया । चित्रकारी । दस्तावेज, प्रमाण-पत्र । ललाट-लेखा, कर्म-रेखा ।

लिखित—(न०) [√लिख्+क्त] लेख । कोई ग्रन्थ या निबन्ध । प्रमाण-पत्र, दस्तावेज । (वि०) लिखा हुआ । (पुं०) एक स्मृतिकार का नाम ।

लिगु—(पुं०) [√लिङ्ग् +कु, नलोप] मृग, हिरन । मूर्ख । भू-प्रदेश । (न०) हृदय ।

√लिङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना ।लिङ्गति, लिङ्गिष्यति, अलिङ्गीत् । चु० पर० सक० चित्रण करना । लिङ्गयति—लिङ्गति ।

लिङ्ग—(पुं०) [√लिङ्ग् +घञ्, अभिधानात् नपुंसकत्वम् वा√लिङ्ग्+अच्]चिह्न, निशान । बनावटी निशानी, धोखा देने वाली चिह्नानी । रोग के लक्षण । प्रमाण। (न्याय में) वह जिससे किसी का अनुमान हो, साधक हेतु । नर या मादा पहचानने की चिह्नानी । शिव-लिंग । देवता की मूर्ति या प्रतिमा । एक प्रकार का सम्बन्ध या सूचक (जैसे संयोग, वियोग, साहचर्य । इससे शब्दार्थ का बोध होता है) । वह सूक्ष्म शरीर जो स्थूल शरीर के नष्ट होने पर कर्मफल भोगने के लिये प्राप्त होता है ।—**अनुशासन** (**लिङ्गानुशासन**)–(न०) व्याकरण के वे नियम जिनके द्वारा शब्द के लिङ्गों का ज्ञान प्राप्त होता है ।—**अर्चन** (**लिङ्गार्चन**)–(न०) शिवलिंग की पूजा।

—देह— (पुं०), —शरीर—(न०) सूक्ष्म शरीर।—धारिन्— (वि०) चिह्न धारण करने वाला। जो शिवलिंग धारण करे। —नाश—(पुं०) पहिचान के चिह्न का नाश। जननेन्द्रिय का नाश। नीलिका नामक नेत्ररोग। अंधकार।—पीठ—(न०) मंदिर की वह चौकी जिस पर देवलिंग स्थापित रहता है। इसे गर्भपीठ भी कहते हैं। अरघा। —पुराण—(न०) १८ पुराणों में से एक पुराण का नाम।—प्रतिष्ठा—(स्त्री०) शिव जी की पिण्डी की स्थापना।—विपर्यय— (पुं०) लिङ्गपरिवर्तन।—वृत्ति— (वि०) आडम्बरी, ढकोसलेबाज। —वेदी— (स्त्री०) वह पीठ जिस पर शिव की पिण्डी स्थापित की जाती है।

लिङ्गक—(पुं०) [लिङ्ग √कै+क] कपित्थ वृक्ष, कैथ का पेड़।

लिङ्गन—(न०) [√ लिङ्ग् +ल्युट्] आलिङ्गन, गले लगाना।

लिङ्गिन्—(पुं०) [लिङ्ग + इनि] चिह्न वाला। लक्षणयुक्त; 'स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ' कि० १.१। चपरासधारी। आडंबरी। लिङ्ग-सम्पन्न। सूक्ष्मशरीरधारी। (पुं०) ब्रह्मचारी। शैव, लिङ्गायत। पाखंडी, ढोंगी। हाथी।

√लिप्—तु० उभ० सक० लीपना। मालिश करना। उबटन करना। ढकना। बिछाना। कलङ्कित करना, भ्रष्ट करना। जलाना। लिम्पति —ते, लेप्स्यति—ते, अलिपत्—अलिपत—अलिप्त।

लिपि, लिपी—(स्त्री०) [√लिप् +इन् सच कित्] [लिपि + ङीष्] लिखावट; 'अयं दरिद्रो भवितेति वेधसीं लिपिं ललाटेऽर्थिजनस्य जाग्रतीं' नै० १.१५। अक्षर लिखने की प्रणाली। लेख। लेप। मालिश। उबटन। दस्तावेज। चित्रण।—कर, कार—(पुं०) पोतने वाला, राज। लेखक। खुदैया, अक्षर खोदने वाला।—ज्ञ—(वि०) वह जो लिख सके।—न्यास—(पुं०) लिखने की क्रिया। लेखन-कला।—फलक—(न०) पट्टी या दस्ती जिस पर कागज रख कर लिखा जाय।—शाला— (स्त्री०) वह स्थान जहाँ लिखना सिखलाया जाय।—सज्जा— (स्त्री०) लिखने की सामग्री।

लिपिका—(स्त्री०) [लिपि + कन्—टाप्] दे० 'लिपि'।

लिप्त—(वि०) [√लिप् + क्त] लिपा हुआ। ढका हुआ। दगीला, धब्बेदार। विष में बुझा हुआ। भक्षित। संयुक्त, जुड़ा हुआ। फँसा हुआ, व्यसनादि में डूबा हुआ।

लिप्तक—(पुं०) [लिप्त+कन्] विष का बुझा तीर।

लिप्सा—(स्त्री०) [लब्धुम् इच्छा, √लभ् +सन्+अ—टाप्] किसी वस्तु की प्राप्ति की अभिलाषा। कामना, इच्छा।

लिप्सु—(वि०) [√लभ् +सन्+उ] प्राप्ति की इच्छा वाला।

लिबि, लिबी—(स्त्री०) [√लिप् + इन् (वा०) पस्य बः] [लिबि +ङीष्] दे० 'लिपि'।

लिबिङ्कर—(पुं०) [लिबिं करोति, √कृ +ट, पृषो० द्वितीयाया अलुक्] लेखक। प्रतिलिपि करने वाला, नकलनवीस।

लिम्प—(पुं०) [√लिप् + श, मुम्] लेप। मालिश।

लिम्पट—(वि०) [=लम्पट, पृषो० साधुः] व्यभिचारी, लंपट। (पुं०) व्यभिचारी पुरुष।

लिम्पाक—(पुं०) [√लिप् +आकन्, पृषो० साधुः] बिजौरा नीबू का पेड़। गधा। (न०) बिजौरा नीबू।

√लिश्—दि० आत्म० अक० कम होना। लिश्यते, लेक्ष्यते, अलिक्षत। तु० पर० सक० जाना। लिशति, लेक्ष्यति, अलिक्षत्।

लिष्ट—(वि०) [√लिश् +क्त] क्षय-प्राप्त, घटा हुआ ।

लिष्व—(पुं०) [√लष्+वन्, नि० साधुः] नट, नचैया ।

√लिह्—अ० उभ० सक० चाटना । चुसक चुसक कर पीना । लेढि—लीढे, लेक्ष्यति—ते, अलीढ—अलिक्षत् —अलिक्षत ।

√ली—दि० आत्म० अक० मिलना, जुड़ना । लीयते, लेष्यते —लास्यते, अलेष्ट —अलास्त । क्र्या० पर० अक० मिलना, जुड़ना । लिनाति, लेष्यति —लास्यति, अलासीत् —अलैषीत् । चु० पर० सक० गलाना । घोलना । लापयति —लयति ।

लीक्का=लिक्षा ।

लीढ—(वि०) [√लिह् + क्त] चाटा हुआ । चाखा हुआ । खाया हुआ ।

लीन—(वि०) [√ली + क्त] चिपटा हुआ, सटा हुआ । छिपा हुआ; 'शमीमिवाभ्यन्तरलीनपावकाम्' र० ३.९ । सहारा लिया हुआ । पिघला हुआ, घुला हुआ । बिल्कुल मिला हुआ, एकीभूत । अनुरागी, भक्त । अन्तर्हित, लुप्त ।

लीला—(स्त्री०) [√ ली +क्विप्, लियं लाति, ली √ला+क—टाप्] क्रीड़ा, केलि; 'कलमं ययौ कन्दुकलीलयापि या' कु० ५.१९ । विलास, विहार । सौंदर्य । शृंगार- चेष्टा । नायिकाओं का एक हाव जिसमें वे अपने प्रेमी के वेश, वाणी आदि का अनुकरण करती हैं । अवतारों के चरित्र का अभिनय । रहस्यपूर्ण कार्य । बारह मात्राओं का एक छंद ।—**आगार** (**लीलागार**), —**गृह**,— **गेह**,—**वेश्मन्**- (न०) क्रीड़ा-भवन, आनन्द-भवन ।—**अङ्ग** (**लीलाङ्ग**)-(वि०) चंचल या निरंतर क्रीड़ेच्छु अंगों से युक्त । सुडौल अंगोंवाला । —**अब्ज** (**लीलाब्ज**),—**अम्बुज** (**लीलाम्बुज**), —**अरविन्द** (**लीलारविन्द**), —**कमल**,— **तामरस**,— **पद्म**-(न० खिलवाड़ करने के लिये खिलौने की तर हाथ में लिया हुआ कमल-पुष्प । —**अवतार** (**लीलावतार**)-(पुं०) लील करने के लिये धारण किया हुआ विष्णु भग वान् का अवतार ।—**उद्यान** (**लीलोद्यान**) (न०) आनन्दबाग । देवताओं का उद्यान —**कलह**-(पुं०) बनावटी झगड़ा ।

लीलायित—(न०) [लीला + क्यङ् +क्त] खेल, क्रीड़ा । मनोरंजन ।

लीलावत्—(वि०) [लीला + मतुप्, मस्य वः] खिलाड़ी, क्रीड़ायुक्त ।

लीलावती—(स्त्री०) [लीलावत् + ङीप्] सुन्दरी स्त्री । स्वेच्छाचारिणी अथवा व्यभि चारिणी स्त्री । दुर्गा का नाम । प्रसिद्ध ज्योति विद् भास्कराचार्य की कन्या का नाम, जिस अपने नाम पर लीलावती नाम की गणित क एक प्रसिद्ध पुस्तक बनायी थी ।

√लुञ्च्—भ्वा० पर० सक० तोड़ना । उखा ड़ना । चीरना । खींचना । नोचना । लुञ्चति लुञ्चिष्यति, अलुञ्चीत् ।

लुञ्च, लुञ्चन—(पुं० न०) [√लुञ्च् +घञ्] [√लुञ्च् +ल्युट्] छीलने वकला उतारने की क्रिया । तोड़ने की क्रिया काटने, नोचने की क्रिया ।

लुञ्चित—(वि०) [√लुञ्च् +क्त] छिलक उतारा हुआ । तोड़ा हुआ । नोचा हुआ

√लुट्—भ्वा० पर० सक० बिलोना । लोटति लोटिष्यति, अलोटीत् । भ्वा० आत्म० सक प्रतिघात करना । लोटते, लोटिष्यते, अलुट —अलोटिष्ट । तु० पर० सक० मिलाना लुटति, लुटिष्यति, अलुटीत् ।

√लुठ्—भ्वा० पर० सक० उपघात करना लोठति, लोठिष्यति, अलोठीत् । भ्वा० आत्म सक० प्रतिघात करना । लोठते, लोठिष्य अलुठत्—अलोठिष्ट । तु० पर० अक० लु कना या लोटना । लुठति; 'हारोऽयं हरिण

क्षीणा लुठति स्तनमण्डले', लुठिष्यति, अलुठीत् ।

लुठन--(न०) [√लुठ्+ल्युट्] लुढ़कने या लोटने की क्रिया ।

लुठित--(वि०) [√लुठ्+क्त] लुढ़का, गिरा या लोटा हुआ ।

लुण्ट्--भ्वा० पर० सक० जाना । चुराना । लूटना । अक० लँगड़ाना, लँगड़ा होना । सुस्त होना । लुण्टति, लुण्टिष्यति, अलुण्टीत् ।

लुण्टाक--(वि०) [स्त्री०--**लुण्टाकी**] [√लुण्ट्+षाकन्] चोर । डाकू । कौआ ।

√लुण्ठ्--भ्वा० पर० सक० चुराना । लूटना । सामना करना । जाना । विलोना । अक० लोटना । सुस्त होना । लंगड़ा होना । लुण्ठति, लुण्ठिष्यति, अलुण्ठीत् । चु० पर० सक० चुराना । लुण्ठयति--लुण्ठति ।

लुण्ठक--(पुं०) [√लुण्ठ् +ण्वुल्] डाकू । चोर ।

लुण्ठन--(न०) [√लुण्ठ् + ल्युट्] लूट । चोरी । लोटना ।

लुण्ठा--(स्त्री०) [√लुण्ठ् + अ--टाप्] लूट, डाका । लुढ़क-पुढ़क ।

लुण्ठाक--(पुं०) [√लुण्ठ् +षाकन्] डाकू । कौआ ।

लुण्ठि, लुण्ठी--(स्त्री०) [√लुण्ठ् + इन्] [लुण्ठि+ङीष्] लूटपाट । लुढ़कना या लोटना ।

√लुन्थ्--भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना । कष्ट देना । लुन्थति । लुन्थिष्यति, अलुन्थीत् ।

√लुप्--दि० पर० सक० व्याकुल करना । लुप्यति, लोपिष्यति, अलुपत् । तु० उभ० सक० छेदन करना, काटना । लुम्पति--ते, लोपिष्यति--ते, अलुपत्--अलुप्त ।

लुप्त--(वि०) [√ लुप् + क्त] छिपा हुआ. अदृश्य । टूटा हुआ, भग्न । नष्ट । खोया हुआ । लूटा हुआ । गिरा हुआ । छोड़ा हुआ । अव्यवहृत, जो काम में न लाया गया हो । (न०) लूटा हुआ माल ।

लुब्ध--(वि०) [√लुभ्+क्त] आकांक्षायुक्त । लोभयुक्त । (पुं०) शिकारी, बहेलिया । व्यभिचारी, लम्पट ।

लुब्धक--(पुं०) [लुब्ध + कन्] शिकारी, बहेलिया । लोभी या लालची आदमी । उत्तरी गोलार्द्ध का एक बहुत तेजस्वी तारा ।

√लुभ्--दि० पर० सक० लोभ करना, उत्सुकतापूर्वक अभिलाषा करना । लुभ्यति, लोभिष्यति, अलुभत् । तु० पर० सक० व्याकुल करना । लुभति, लोभिष्यति, अलोभीत् ।

√लुम्ब्--भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना । लुम्बति, लुम्बिष्यति, अलुम्बीत् ।

लुम्बिका--(स्त्री०) एक प्रकार का बाजा ।

√लुल्--भ्वा० पर० अक० लुढ़कना । हिलना । सक० हिलाना । कुचलना । लोलति, लोलिष्यति, अलोलीत् ।

लुलाप, लुलाय--(पुं०) [√लुल्+क, तम् आप्नोति, लुल √आप् + अण्] [लुल √अय्+अण्] भैंसा; 'खुरविधुरधरित्रीचित्रकायो लुलायः' ।

लुलित--(वि०) [√लुल्+क्त] लटकता, झूलता हुआ । गड्डबड्ड किया हुआ । खुला हुआ । बिखरा हुआ । अशांत । कुचला हुआ । थका हुआ । ध्वस्त किया हुआ ।

लुषभ--(पुं०) [√रुष् + अभच्, धातोः लुषादेशः] मदमस्त हाथी ।

√लू--क्र्या० उभ० सक० छेदन करना, काटना । लुनाति--लुनीते । लविष्यति--ते, अलावीत्--अलविष्ट ।

लूता--(स्त्री०) [√लू+तक्-- टाप्] मकड़ी । चींटी ।--**तन्तु**-- (पुं०) मकड़ी का जाला । --**मर्कटक**-- (पुं०) बनमानुस । अरबदेशीय जूही फूल ।

लूतिका—(स्त्री०) [लूता + कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] मकड़ी ।

लून—(वि०) [√लू+क्त] कटा हुआ । नष्ट किया हुआ । कुतरा हुआ । घायल किया हुआ । छिदा हुआ । (न०) पूँछ, दुम ।

लूम—(न०) [√लू + मक्] पूँछ ।

√लूष्—चु० पर० सक० मारना । अनिष्ट करना । लूटना । चुराना । लूषयति, लूषयिष्यति, अलूलुषत् ।

लेख—(पुं०) [√लिख्+घञ्] लिखी हुई बात । लिखावट । लिपि । लेखा, हिसाब-किताब । दस्तावेज । देवता ।—**अधिकारिन्** (लेखाधिकारि॰)-(पुं०) मंत्री (राजा का) । —**अर्ह** (लेखार्ह)- (पुं०) ताड़ का वृक्ष । —**ऋषभ** (**लेखर्षभ**)- (पुं०) इन्द्र का नाम ।—**पत्र**- (न०), —**पत्रिका**- (स्त्री०) चिट्ठी, पुर्जा । टीप, दस्तावेज ।—**संदेश**- (पुं०) लिखा हुआ सँदेशा ।—**हार**,—**हारिन्**- (पुं०) पत्रवाहक, चिट्ठीरसाँ, डाकिया ।

लेखक—(पुं०) [√लिख्+ण्वुल्] लिखने वाला, क्लर्क, नकलनवीस । चितेरा, चित्रकार । ग्रंथ-रचयिता । लेख लिखने वाला व्यक्ति ।

लेखन—(वि०) [स्त्री०-**लेखनी**] [√लिख्+ल्यु] खुरचने वाला । उत्तेजक । (न०) [√लिख् + ल्युट्] लिखने का कार्य । लिखने की कला या विद्या । चित्र बनाना । लेखा लगाना । औषध से रसादि सात धातुओं या वात आदि दोषों का शोषण करके पतला करना । उत्तेजन । काटना । खरोंचना । कै करना । भोजपत्र । ताड़पत्र । (पुं०) नरकुल जिसकी कलम बनाई जाती है । खाँसी ।

लेखनिक—(पुं०) [लेखन+ठन्] चिट्ठी ले जाने वाला । दूसरे से लिखा कर लेख में अपना नाम देने वाला व्यक्ति। अपने हाथ से लिखने वाला व्यक्ति ।

लेखनी—(स्त्री०) [√लिख् +ल्युट्—ङीप्] कलम । करछी ।

लेखा—(स्त्री०) [√लिख् + अ—टाप्] रेखा, लकीर । किनारी । चोटी । लिपि । चिह्न । चित्रण । रश्मि, किरण, कान्ति; 'लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा' कु० १.२५ ।

लेख्य—(वि०) [√लिख् + ण्यत्] लिखने योग्य । जो लिखा जाने को हो । (न०) लेखन-कला । लेख । पत्र । दस्तावेज । अक्षर । चित्रण । चित्रित आकृति ।—**आरूढ** (लेख्यारूढ), —**कृत**- (वि०) जो लिखा-पढ़ी करके पक्का किया गया हो ।—**गत**- (वि०) चित्रित । —**चूर्णिका**- (स्त्री०) कलम, तूलिका आदि । —**पत्र**, —**पत्रक**- (न०) लेख । पत्र । दस्तावेज । ताड़पत्र । —**प्रसङ्ग**- (पुं०)दस्तावेज । शर्तनामा । **स्थान**- (न०) लिखने का स्थान, दफ्तर ।

लेण्ड—(न०)विष्ठा । लेंड़, बँधामल ।

लेत—(पुं०, न०) आँसू ।

√लेप्—स्वा० आत्म० सक० जाना । पूजन करना । लेपते, लेपिष्यते, अलेपिष्ट ।

लेप—(पुं०) [√लिप्+घञ्] लीपने, पोतने की क्रिया । पोतने या चुपड़ने की चीज । उबटन । धब्बा, दाग । पाप । भोजन ।—**कर**- (पुं०) लेप करने वाला । लेप बनाने वाला ।—**भागिन्**, —**भुज्**-(पुं०) चौथी, पाँचवीं और छठवीं पीढ़ी के पूर्वपुरुष ।

लेपक—(वि०) [√लिप्+ण्वुल्] लेप करने वाला । (पुं०) थवई, राज, मैंमार ।

लेपन—(न०) [√लिप् + ल्युट्] लेपने की क्रिया । आँवले का चूर । भोजन । तुरुष्क नामक गंधद्रव्य । शिलारस ।

लेप्य—(वि०) [√लिप् + ण्यत्] लेपन करने योग्य ।—**कृत्**- (वि०) लेप करने वाला, लेपक ।—**स्त्री**-(स्त्री०)वह स्त्री जो

उबटन या चन्दनादि का लेप लगाये हो। पत्थर या मिट्टी की बनी स्त्री की मूर्ति।

लेप्यमयी--(स्त्री०) [लेप्य+मयट्--ङीप्] गुड़िया, पुतली।

लेलायमाना--(स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

लेलिह--(पुं०) [√लिह् + यङ --लुक्, द्वित्वादि, ततः शानच्] साँप, सर्प। शिवजी।

लेलिहान--(पुं०) [√ लिह् + यङ -- लुक्, द्वित्वादि ततः अच्] सर्प, साँप। जू। शिव जी की उपाधि।

लेश--(पुं०) [√ लिश् + घञ्] अणु। अत्यन्त लघु परिमाण; 'श्रमवारिलेशैः' कु० ३.३८। सूक्ष्मता। समय का माप विशेष जो २ कला के समान होता है। एक अलंकार जिसमें किसी वस्तु के वर्णन के केवल एक ही भाग या अंश में रोचकता आती है।

लेश्या--(स्त्री०) प्रकाश, उजियाला। जैनियों के अनुसार जीव की वह अवस्था जिसके कारण कर्म जीव को बाँधता है।

लेष्टु--(पुं०) [√ लिश्+तुन्] मिट्टी का ढेला।

लेसिक--(पुं०) हाथी पर चढ़ने वाला, गजारोही।

लेह--(पुं०) [√लिह् + घञ्] चाटना। स्वाद लेना, चखना; 'मधुनो लेहः' भट्टि० ६.८२। चाट कर खाने का पदार्थ। भोजन, भोज्य पदार्थ।

लेहन--(न०) [√ लिह् + ल्युट्] चाटना।

लेहिन--(पुं०) [√ लिह् + इनन्] सुहागा।

लेह्य--(वि०) [√लिह् +ण्यत्] चाटने योग्य। (न०) वह वस्तु जो चाट कर खायी जाय।

लैङ्ग--(न०) [लिङ्गम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः वा लिङ्गस्य इदम्, लिङ्ग+अण्] अष्टादश पुराणों में से एक, लिङ्गपुराण।

लैङ्गिक--(वि०) [स्त्री०--लैङ्गिकी] [लिङ्ग +ठक्] लिंग या चिह्न सम्बन्धी। (पुं०) मूर्ति बनाने वाला, शिल्पी। (न०) वैशेषिक दर्शन के अनुसार अनुमान प्रमाण।

√लोक्--भ्वा० आत्म० सक० देखना। लोकते, लोकिष्यते, अलोकिष्ट।

लोक--(पुं०) [√लोक् + घञ्] संसार। भुवन। साधारणतः स्वर्ग, पृथिवी और पाताल तीन लोक माने जाते हैं। किन्तु विशेष रूप से वर्णन करने वालों ने लोकों की संख्या १४ मानी है। सात ऊर्ध्वलोक और सात अधोलोक।

१ ऊर्ध्वलोकः--
भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक।

२ अधोलोक:--
अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल।

मानवगण। समूह, समुदाय; 'शशाम तेन क्षितिपाललोकः,' र० ७.३। प्रदेश, प्रान्त। प्राणी। समाज। साधारण चलन या प्रथा, साधारण या लौकिक व्यवहार। दृष्टि, चितवन। यश। ७ या १४ की संख्या।--**अतिग** (**लोकातिग**)- (वि०) असाधारण, अलौकिक। --**अतिशय** (**लोकातिशय**)- (वि०) लोकोत्तर, असाधारण।--**अधिक** (**लोकाधिक**)- (वि०) असाधारण, असामान्य। --**अधिप** (**लोकाधिप**)- (पुं०) लोकपाल। नरपति। बुद्ध। देवता।--**अधिपति** (**लोकाधिपति**)- (पुं०) संसार-पति। देवता।--**अनुराग** (**लोकानुराग**)- (पुं०) सार्वजनिक प्रेम, लोकहितैषिता, उदारता।--**अन्तर** (**लोकान्तर**)-(न०) परलोक।--**अपवाद** (**लोकापवाद**)-

(पुं०) लोकनिन्दा, बदनामी; 'लोकापवादो बलवान्मतो मे' र० १४.४० ।— **अयन** (**लोकायन**)–(न०) नारायण का नामान्तर।—**अरण्य**—(न०) भीड़।— **अलोक** (**लोकालोक**)– (पुं०) एक पौराणिक पहाड़ जो भूमण्डल के चारों ओर मधुर जल-पूरित सागर के परे है । दृष्ट और अदृष्ट लोक ।—**आचार** (**लोकाचार**)– (पुं०) लोक-व्यवहार, संसार में बरता जाने वाला व्यवहार।—**आयत** (**लोकायत**)– (पुं०) वह मनुष्य जो इस लोक के अतिरिक्त दूसरे लोक को न मानता हो । चार्वाक दर्शन का मानने वाला । (न०) नास्तिकवाद । चार्वाक दर्शन ।— **आयतिक** (**लोकायतिक**)–(पुं०) नास्तिक। चार्वाक ।—**ईश** (**लोकेश**)–(पुं०) राजा । ब्राह्मण । पारा, पारद ।—**उक्ति** (**लोकोक्ति**)–(स्त्री०) कहावत, मसल । एक अलंकार जिसमें लोकोक्ति के प्रयोग से रोचकता बढ़ायी जाती है ।—**उत्तर** (**लोकोत्तर**)–(वि०)अलौकिक, असाधारण, असामान्य । (पुं०) राजा ।—**एषणा** (**लोकैषणा**)– (स्त्री०) स्वर्गसुख-प्राप्ति की कामना । सांसारिक अभ्युदय या यश-प्रतिष्ठा की कामना ।—**कण्टक**– (पुं०) वह जो समाज का कण्टक(विरोधी या हानि-कर) हो, दुष्ट प्राणी ।—**कथा**– (स्त्री०) प्रसिद्ध प्राचीन कहानी ।—**कर्तृ**, —**कृत्**– (पुं०) संसार का रचने या बनाने वाला । ब्रह्मा। विष्णु। महेश।—**गाथा**–(स्त्री०) प्रचलित गीत ।—**चक्षुस्** –(न०) सूर्य । —**चारित्र**–(न०) संसार का ढंग ।— **जननी**–(स्त्री०) लक्ष्मी जी का नाम ।— **जित्**–(पुं०) बुद्धदेव । कोई भी संसार-विजयी ।—**ज्ञ**– (वि०) संसार का ज्ञाता । —**ज्येष्ठ**–(पुं०) बुद्धदेव की उपाधि ।— **तत्त्व**–(न०) मानव जाति का ज्ञान ।—

तुषार–(पुं०) कपूर ।—**त्रय**– (न०)— **त्रयी**–(स्त्री०) स्वर्ग, मर्त्य और पाताल-तीनों लोकों की समष्टि ।—**धातृ**–(पुं०) शिव जी का नाम ।—**नाथ**–(पुं०) ब्राह्मण । विष्णु । शिव । राजा । बौद्ध ।—**नेतृ**– (पुं०) शिव जी की उपाधि ।—**प**, — **पाल** –(पुं०) दिक्पाल, इनकी संख्या आ है ।—**पति** –(पुं०) ब्रह्मा । विष्णु । राजा ।— **पथ**– (पुं०), —**पद्धति**– (स्त्री०) सार्वजनिक व्यवहार या कार्य करने का ढंग ।—**पितामह**– (पुं०) ब्रह्मा जी ।— **प्रकाशन**– (पुं०) सूर्य ।—**प्रवाद** –(पुं०) किंवदन्ती, अफवाह ।—**प्रसिद्ध**– (वि०) विश्वविख्यात ।—**बन्धु**, — **बान्धव**– (पुं०) सूर्य ।—**बाह्य**,—**वाह्य**– (वि०) लोक बहिष्कृत, समाज से खारिज या निकाला हुआ । संसार से निराला, अकेला । (पुं०) जातिच्युत व्यक्ति ।— **भावन**– (पुं०) लोक की भलाई करने वाला । लोक-रचना करने वाला ।— **मर्यादा**– (स्त्री०) लौकिक व्यवहार, लौकिक चाल-चलन या रस्म ।—**मातृ**– (स्त्री०) लक्ष्मी जी । —**मार्ग**–(पुं०) लौकिक चलन । —**यात्रा**– (स्त्री०) व्यवहार । व्यापार । आजीविका ।— **रक्ष** –(पुं०) राजा ।—**रञ्जन**– (न०) लोक का प्रीति-सम्पादन, जनता को प्रसन्न करना ।—**लोचन**– (न०) सूर्य ।— **वचन**– (न०), —**वाद**–(पुं०), —**वार्ता**– (स्त्री०) अफवाह, किंवदन्ती ।—**विद्विष्ट**– (वि०) वह जो सब को नापसंद हो या जिसे सब नापसंद करें ।—**विधि**–(पुं०) प्रचलित पद्धति । संसार का रचयिता ।— **विश्रुत**– (वि०) जगद्विख्यात, संसार भर में प्रसिद्ध । —**वृत्त**–(न०) लोकरीति । गप्पाष्टक । —**श्रुति**– (स्त्री०) जनश्रुति, अफवाह । जगप्रसिद्धि या कीर्ति ।—**सङ्कर**–

(पुं०)संसार की गड़बड़ी, गोलमाल।—**संग्रह**– (पुं०) संसार का कल्याण या सब की भलाई; 'लोकसंग्रहमेवात्र सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि' गी० ।—**साक्षिन्**–(पुं०) ब्रह्मा। अग्नि ।—**सिद्ध**– (वि०) प्रसिद्ध । प्रचलित । जनसाधारण द्वारा गृहीत ।

लोकन—(न०) [√ लोक् + ल्युट्] अवलोकन, चितवन ।

लोकम्पृण—(वि०) [लोक √पृण्+क, मुमागम] संसार-व्यापी; 'लोकम्पृणैः परिमलैः परिपूरितस्य काश्मीरजस्य कटुतापि नितान्तरम्या' भा० १.७० । सर्वगामी ।

√लोच्— भ्वा० आत्म० सक० देखना । लोचते, लोचिष्यते, अलोचिष्ट ।

लोच—(न०) [√लोच् + अच्] आँसू ।

लोचक—(पुं०) [√लोच् + ण्वुल्] मूर्ख पुरुष । आँख की पुतली । दीपक की कालिख या काजल । सुर्मा, आँजन । स्त्रियों के ललाट या कान का एक गहना । काला या आसमानी वस्त्र । धनुष का रोदा । साँप की केंचुली । झुर्रियाँ पड़ा हुआ चर्म । झुर्री पड़ी हुई भौं । केले का पेड़ ।

लोचन—(न०) [लोच् + ल्युट्] देखने की क्रिया । आँख । जीरा । खिड़की । —**गोचर**, —**पथ**,—**मार्ग**– (पुं०) दृष्टि के अंदर पड़ने वाला क्षेत्र ।—**हिता**– (स्त्री०) नीलाथोथा, तूतिया ।

लो—(पुं०) [√लुठ् + घञ्] भूमि पर लोटना ।

√लोड्—भ्वा० पर० अक० पागल होना । मूर्ख होना । लोडति, लोडिष्यति, अलोडीत् ।

लोडन—(न०) [√लोड् +ल्युट्] पागल होना । हिलाना, डुलाना ।

लोणार—(पुं०) [लवण √ ऋ+अण्, पृषो० साधुः] एक तरह का नमक ।

लोत—(पुं०) [√लू + तन्] चोरी का धन । आँसू । चिह्न, निशान । लवण ।

लोत्र—(न०) [√लू +ष्ट्रन् वा √ला +उत्र] चोरी का माल । आँसू ।

लोध्र—(पुं०) [√रुध्+रन्, रस्य लः] लोध का पेड़ । इसमें लाल और सफेद फूल लगते हैं ।

लोप—(पुं०) [√लुप् + घञ्] अदर्शन, अभाव । नाश, क्षय । किसी रस्म या प्रथा की बंदी । अतिक्रम, लंघन । अनुपस्थिति । छूट । वर्णलोप ।

लोपन—(न०) [√लुप् +णिच् +ल्युट्] भंग करना । लुप्त करना । नष्ट करना ।

लोपा, लोपामुद्रा—(स्त्री०) [लोपयति योषितां रूपाभिधानम्, √लुप् + णिच् +अच् —टाप्] [आमुद्रयति स्रष्टुः सृष्टिम्, आमुद्रा +णिच् + अण्—टाप्, लोपा—आमुद्रा, कर्म० स०]विदर्भाधिपति की कन्या और महर्षि अगस्त्य की पत्नी का नाम ।

लोपापक–(पुं०) [लोपम् अदर्शनम् आप्नोति, लोप √आप् + ण्वुल्] शृगाल, गीदड़, सियार ।

लोपाश, लोपाशक—(पुं०)[लोपम् आकुलीभावं चकितम् अश्नाति, लोप √ अश् +अण्] [लोप√अश् + ण्वुल्] गीदड़ ।

लोपिन्—(वि०) [√लुप् +णिनि] लुप्त होने वाला । [√लुप् + णिच्+णिनि] हानिकारक, अनिष्टकारक ।

लोभ—(पुं०) [√लुभ् + घञ्] लालच । कृपणता । अभिलाषा ।—**अन्वित** (**लोभान्वित**)–(वि०) लालची, लोभी ।—**विरह** –(पुं०) लोभ का अभाव ।

लोभन—(न०) [√लुभ् +ल्युट्] लालच । सोना ।

लोभनीय—(वि०) [√लुभ् + अनीयर्] जो लुभाया जा सके, जो आकर्षित किया जा सके ।

लोमकिन्—(पुं०) पक्षी ।

लोमन्—(न०) [लूयते छिद्यते √लू +मनिन्; समास में 'न्' का लोप हो जाता है] मनुष्य या पशु के शरीर के ऊपर के रोएँ।—**कर्ण**—(पुं०) खरगोश, शशक। —**कीट**-(पुं०) जूँ।—**कूप**, —**गर्त**-(पुं०), —**रन्ध्र**, —**विवर**-(न०) रोएँ की जड़ में का छेद।—**पाद**- (पुं०) अंग देश का राजा।—**वाहिन्**- (वि०) रोएँ वाला।— **संहर्षण**- (न०) रोमाञ्च। —**सार** -(पुं०) पन्ना।—**हृत**- (पुं०) हरताल।

लोमश—(पुं०) [लोमानि सन्ति अस्य, लोमन् +श] भेड़ा। एक ऋषि जो अमर माने जाते हैं।—**मार्जार**—(पुं०) कोमल बालों वाला एक विलार, गंध विलाव।

लोमशा—(स्त्री०) [लोमश +टाप्] लोमड़ी। सियारिन, शृगाली। कसीस। काकजंघा। वच। शूकशिम्बी। महामेदा। अतिवला। केवाँच। कंकोली।

लोमाश—(पुं०) [लोमन् √अश् + अण्] गीदड़, शृगाल।

लोल—(वि०) [√लोड् + अच्, डस्य लः] कँपकँपा, हिलने वाला। चंचल; 'लोलापाङ्गैः लोचनैः' मे० २७। वेचैन, विकल। क्षणभङ्गुर, विनश्वर। उत्सुक। (पुं०) लिंग।—**अक्षिका** (**लोलाक्षिका**)-(स्त्री०) चंचल नेत्रों वाली स्त्री।—**अर्क** (**लोलार्क**)- (पुं०) सूर्य।—**कर्ण**-(वि०) सब की बात सुनने वाला।

लोला—(स्त्री०) [लोल+टाप्] लक्ष्मी जी। विजली। जिह्वा।

लोलुप—(वि०) [गर्हितं लुम्पति, √लुप् +यङ+अच्] अत्यन्त उत्सुक; 'मिथस्त्वदाभापणलोलुपं मनः' शि० १.४०।

लोलुपा—(स्त्री०) [√लुप् + यङ+अ —टाप्] उत्कण्ठा, उत्सुकता।

लोलुभ—(वि०) [√ लुभ् + यङ+अच्] अत्यन्त लोलुप।

√लोष्ट्—भ्वा० आत्म० सक० जमा करना, ढेर करना। लोष्टते, लोष्टिष्यते, अलोष्टिष्ट।

लोष्ट—(पुं०, न०) [√लोष्ट् + घञ्] मिट्टी का ढेला। (न०) लोहे का मोर्चा।

लोष्टु—(पुं०) मिट्टी का ढेला।

लोह—(पुं०, न०) [लूयते अनेन, √ लू +ह] लोहा, ताँबा, सोना आदि। रक्त। हथियार। मछली फँसाने का काँटा। (न०) अगर की लकड़ी। (पुं०) लाल वकरा। (वि०) ताँवे के रंग का, लाल। लोहे का बना। —**अज** (**लोहाज**)- (पुं०) लाल बकरा। —**अभिसार** (**लोहाभिसार**) —**अभिहार** (**लोहाभिहार**) (पुं०) शस्त्रधारी राजाओं की नीराजना विधि।—**कान्त** - (पुं०) चुम्बक।—**कार**-(पुं०) लुहार।—**किट्ट**- (न०) लोहे का मोर्चा।—**घातक**-(पुं०) लुहार। —**चूर्ण**- (न०) लोहे का चूरा। लोहे का मोर्चा।—**ज**- (न०) काँसा। लोहचूर्ण, लोहे की चूर जो रेतने से निकले। —**जाल** -(न०) कवच।—**जित्**- (पुं०) हीरा। —**द्राविन्**- (पुं०) सोहागा।— **नाल**-(पुं०) लोहे का तीर।—**पृष्ठ**- (पुं०) कंक पक्षी।—**प्रतिमा** -(स्त्री०) निहाई। लोहे की मूर्ति।—**बद्ध**- (वि०) लोहे से जड़ा हुआ या जिसकी नोंक पर लोहा जड़ा हो। —**मुक्तिका**-(स्त्री०) लाल मोती।—**रजस्** (न०) लोहे का मुर्चा।—**राजक**-(न०) चाँदी।—**वर**-(न०) सोना।—**शङ्कु**-(पुं०) लोहे की कील।—**श्लेषण** -(पुं०) सुहागा। —**सङ्कर**- (न०) नीले रंग का इस्पात लोहा।

लोहल—(वि०) [लोहे √ला+क] लोहे का बना हुआ। अस्पष्ट भाषण करने वाला।

लोहिका—(स्त्री०) [लोह + ठन्—टाप्] लोहे का पात्र ।

लोहित—(वि०) [स्त्री०—**लोहिता, लोहिनी**] [√रुह् +इतन्, रस्य लत्वम्] लाल रंग का। ताँबे का बना हुआ। (पुं०) लाल रंग। मङ्गल ग्रह। सर्प। मृग विशेष। चावल विशेष। (न०) ताँबा। खून, लोहू। केसर। युद्ध। लाल चन्दन। हरिचन्दन। अधूरा इन्द्रधनुष।—**अक्ष** (**लोहिताक्ष**)-(पुं०) लाल रंग का पासा। लाल रंग का सर्प विशेष। कोयल। विष्णु का नाम।—**अङ्ग** (**लोहिताङ्ग**)-(पुं०) मङ्गलग्रह।—**अयस** (**लोहितायस**)-(न०) ताँबा।—**अशोक** (**लोहिताशोक**)-(पुं०) अशोक वृक्ष।—**अश्व** (**लोहिताश्व**)-(पुं०) अग्नि।—**आनन** (**लोहितानन**)-(पुं०) न्योला।—**ईक्षण** (**लोहितेक्षण**)-(वि०) लाल नेत्रों वाला।—**उद** (**लोहितोद**)-(वि०) लाल जल वाला।—**कल्माष**-(वि०) लाल धब्बेदार।—**क्षय**-(पुं०) रक्त का नाश।—**ग्रीव**-(पुं०) अग्निदेव।—**चन्दन**-(न०) लाल-चंदन। केसर।—**मृत्तिका**-(स्त्री०) गेरू। लाल मिट्टी।—**शतपत्र**-(न०) लाल कमल।

लोहितक—(वि०) [स्त्री०—**लोहितिका**] [लोहित +कन्] लाल। (पुं०) माणिक, चुन्नी; 'लोहितकनिर्मिता भुवः' शि० १३.५२। मङ्गलग्रह। चावल विशेष। (न०) काँसा।

लोहिता—(स्त्री०) [लोहित —टाप्] वह स्त्री जो क्रोध से लाल हो गयी हो। लाल पुनर्नवा। अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

लोहितिमन्—(पुं०) [लोहित +इमनिच्] लाली।

लोहिनी—(स्त्री०) [लोहित + ङीष्, तकारस्य नकारादेशः] स्त्री जिसके शरीर का रंग लाल हो।

लौकायतिक—(पुं०) [लोकायतम् अधीते वेद वा, लोकायत +ठक्] चार्वाकमतानुयायी नास्तिक।

लौकिक—(वि०) [स्त्री०—**लौकिकी**] [लोक+ठक्] लोक सम्बन्धी। सांसारिक। व्यावहारिक। सामान्य। (न०) लोकाचार।

लौक्य—(वि०) [लोके भवः, लोक+ष्यञ्] सांसारिक। पार्थिव। साधारण, सामान्य।

लौल्य—(न०) [लोलस्य भावः, लोल +ष्यञ्] चंचलता, अस्थिरता। उत्सुकता। प्रलोभन। कामुकता। उत्कट कामना।

लौह—(वि०) [स्त्री०—**लौही**] लोहे का बना। [लोह+अण्] ताँबे का। ताँबे के रंग का, लाल। (न०) लोहा।—**आत्मन्** (**लौहात्मन्**)-(पुं०), —**भू**-(स्त्री०) पतीली, डेगची।—**कार**-(पुं०) लुहार।—**ज**-(न०) लोहे का मुर्चा।—**बन्ध**-(पुं०, न०) लोहे की बेड़ी, जंजीर।—**शङ्कु**-(पुं०) लोहे की कील।

लौहा—(स्त्री०) [लौह+टाप्] लोहे आदि की कड़ाही।

लौहित—(पुं०) [लोहित +अण्] शिव जी का त्रिशूल।

लौहित्य—(पुं०) [लोहित+ष्यञ्] ब्रह्मपुत्र नद का नाम; 'चकम्पे तीर्णलौहित्ये तस्मिन् प्राग्ज्योतिषेश्वरः' र० ४.८१। (न०) लालिमा, ललाई।

√ल्यी—क्र्या० पर० अक० मिलना। सक० जोड़ना, मिलाना। लियनाति, ल्येष्यति, अल्यैषीत्।

ल्वी—क्र्या० पर० सक० जाना। ल्विनाति, ल्वेष्यति, अल्वैषीत्।

व

व—संस्कृत अथवा देवनागरी वर्णमाला का उन्तीसवाँ व्यञ्जन वर्ण। यह उकार का विकार और अन्तःस्थ अर्द्धव्यञ्जन माना

गया है। यह दाँत और ओठ की सहायता से उच्चारण किया जाता है, अतः इसे दन्त्यौष्ठ कहते हैं। प्रयत्न ईषत्स्पृष्ट होता है अर्थात् इसका उच्चारण जब किया जाता है, तब दाँतों का ओठके साथ थोड़ा सा स्पर्श होता है। (न०, पुं०) [√ वा+ड] वरुण का नाम। (अव्य०) जैसा, समान। (पुं०) पवन हवा। बाहु। तुष्टिसाधन। सम्बोधन। कल्याण, मङ्गल। वास, निवास। समुद्र। चीता। वस्त्र। राहु का नाम। वृक्ष। मद्य। कलश से उत्पन्न ध्वनि। मूर्वा नामक लता। खड्गधारी पुरुष। (वि०) बलवान्।

वंश—(पुं०) [वमति उद्गिरति पुरुषान् वन्यते इति वा √वम् वा √वन्+श, अथवा √वश् +वल् ततो मुम्] बाँस। कुल, खानदान। बेड़ा। बाँस की बंसी; 'कूजद्भिरापादितवंशकृत्यं' र० २.१२। समूह। शहतीर, बल्ली, लट्ठा। गाँठ (जो बाँस में होती है)। गन्ना, ऊख। मेरुदण्ड, रीढ़ की हड्डी। साल का पेड़। बारह हाथ का एक मान। —**अग्र** (**वंशाग्र**)—(न०), —**अङ्कुर** (**वंशाङ्कुर**)—(पुं०) बाँस का अङ्कुर। —**अनुकीर्तन** (**वंशानुकीर्तन**)—(न०) वंश का परिचय देना। **अनुक्रम** (**वंशानुक्रम**)—(पुं०) वंशावली। —**अनुचरित** (**वंशानुचरित**)—(न०) किसी वंश या खान्दान का इतिहास या तवारीख। —**आवली** (**वंशावली**)—(स्त्री०) किसी वंश में उत्पन्न पुरुषों की पूर्वोत्तर क्रम से सूची। —**आह्व** (**वंशाह्व**)—(पुं०) वंसलोचन। —**कठिन**—(पुं०) बाँस का जंगल। —**कर**—(वि०) वंशस्थापक। (पुं०) मूलपुरुष। —**कर्पूररोचना**, —**रोचना**, —**लोचना**—(स्त्री०) वंसलोचन। —**कृत्**—(पुं०) दे० 'वंशकर'। —**क्रम**—(पुं०) किसी वंश की परंपरा। —**क्षीरी**—(स्त्री०) वंसलोचन। —**चिन्तक**—(पुं०) वंशावली जानने वाला। —**छेत्तृ**—(वि०) किसी वंश का अंतिम पुरुष। —**ज**—(पुं०) सन्तान, औलाद। बाँस का बिया। —**जा**—(स्त्री०) वंसलोचन। —**धर**, —**धारिन्**—(पुं०) कुल का रक्षक। संतान। बाँस धारण करने वाला व्यक्ति। —**नर्तिन्**—(पुं०) मसखरा, विदूषक। —**नाडिका**, —**नालिका**—(स्त्री०) बाँस की नली। —**नाथ**—(पुं०) किसी वंश का प्रधान पुरुष। —**नेत्र**—(न०) गन्ने की जड़। —**पत्र**—(न०) बाँस का पत्ता। (पुं०) नरकुल, सरपत। —**पत्रक**—(पुं०) नरकुल, सरपत। सफेद पौंडा। —**पत्रक**—(न०) हरताल। —**परम्परा**—(स्त्री०) किसी वंश में उत्पन्न पुरुषों की पूर्वोत्तर क्रमानुसार सूची। —**पूरक**—(न०) ऊख की जड़ जिसमें अँखुए होते हैं। —**भोज्य**—(वि०) बाप-दादों का। (न०) पैतृक सम्पत्ति। —**वितति**—(स्त्री०) खानदान, कुल। बाँस का वन। —**शर्करा**—(स्त्री०) वंसलोचन। —**शलाका**—(स्त्री०) वीणा के नीचे के भाग में लगायी जाने वाली बाँस की छोटी खूंटी। —**स्थिति**—(स्त्री०) किसी वंश की मर्यादा।

वंशक—(पुं०) [वंश+कन् वा √कै+क] एक प्रकार का गन्ना। बाँस की गाँठ। मछली। (न०) अगर की लकड़ी।

वंशिका—(स्त्री०) [वंश+न्—टाप्] बाँसुरी, मुरली। अगर की लकड़ी। पिप्पली।

वंशी—(स्त्री०) [वंश+अच्—ङीष्] बाँसुरी, मुरली; 'कंसरिपोर्व्यपोहतु स वोऽश्रेयांसि वंशीरवः' गी० ६। नस, रक्तप्रवाहिनी शिरा। वंसलोचन। चार कर्ष या ४ तोले का एक मान। —**धर**, —**धारिन्**—(पुं०) श्रीकृष्ण। वंसी बजाने वाला व्यक्ति।

वंश्य—(वि०) [वंश+यत्] बंडेर, या मुख्य बल्ली सम्बन्धी। मेरुदण्ड से सम्बन्ध युक्त।

किसी वंश से सम्बन्ध युक्त । कुलीन, उत्तम कुल का । (पुं०) वंशधर । पूर्वपुरुष, पूर्वज; 'नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः' र० १.६६ । किसी वंश का कोई भी पुरुष । रीढ़, पीठ की हड्डी । बँड़ेर, छाजन के बीच की लकड़ी । शिष्य ।

वक—दे० 'वक' ।

वकुल—दे० 'बकुल' ।

√वक्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । वक्कते, वक्किष्यते, अवक्किष्ट ।

वक्तव्य—(वि०) [√वच् + तव्यत्] कहने लायक, कहने योग्य । वह जिसके विषय में कहा जाय । धिक्कारने, फटकारने योग्य । कमीना, नीच । जिम्मेदार, उत्तरदायी । पराधीन, परतंत्र । (न०) कथन, वक्तृता । अनुशासन की आज्ञा । भर्त्सना, धिक्कार ।

वक्तृ—(वि०) [√वच्+तृच्] कहने, बोलने वाला । वाग्मी । व्याख्यानदाता । (पुं०) कथा कहने वाला पुरुष, व्यास । विद्वान् व्यक्ति । शिक्षक ।

वक्त्र—(न०) [वक्ति, अनेन, √वच् +त्र] मुख । चेहरा । थूथन । चोंच । आरम्भ । (तीर की) नोक । बर्तन की टोंटी । वस्त्रविशेष । अनुष्टुप् छंद के समान एक छंद । —**आसव** (**वक्त्रासव**)-(पुं०) थूक, खखार ।—**खुर**- (पुं०) दाँत ।—**ज**- (पुं०) ब्राह्मण ।—**ताल**-(न०) वह ताल जो मुख से निकाला जाय ।—**दल** -(न०) तालू ।—**रन्ध्र**-(न०) मुख का छेद ।—**पट्ट**—(पुं०) तोबड़ा । —**परिस्पन्द**- (पुं०) भाषण, वाणी ।—**भेदिन्**-(वि०) तीता, चरपरा ।—**वास**- (पुं०) नारंगी ।—**शोधन**-(न०) मुखप्रक्षालन । नीबू । भव्य, कमरख ।—**शोधिन्**-(पुं०) जमीरी नीबू । (वि०) मुखशोधक ।

वक्र—(वि०) [वङ्क् +रन्, पृषो० नलोप वा √वञ्च् +रक्] टेढ़ा, बाँका; 'वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां' मे० २७ । तिरछा । घुँघराला । पश्चाद्गामी । बेईमान । निष्ठुर । (पुं०) शनैश्चर । मंगलग्रह । रुद्र । त्रिपुरासुर । (न०) नदी का मोड़ ।—**अङ्ग** (**वक्राङ्ग**)- (न०) टेढ़ा शरीरावयव । (पुं०) हंस । चक्रवाक, चकई- चकवा । सर्प ।—**उक्ति** (**वक्रोक्ति**)- (स्त्री०) एक प्रकार का काव्यालङ्कार । इसमें काकु या श्लेष से किसी वाक्य का और का और ही अर्थ किया जाता है । काकूक्ति । बढ़िया या चमत्कार- पूर्ण कथन । —**कण्ट**-(पुं०) बेर का पेड़ ।—**कण्टक**- (पुं०) खदिर वृक्ष ।—**खड्ग**—**खड्गक**- (पुं०) करवाल ।—**गति**, —**गामिन्**- (वि०) टेढ़ी चाल वाला । बेईमान । (पुं०) मंगल ।—**ग्रीव**- (पुं०) ऊँट । —**चञ्चु**-(पुं०) तोता ।—**तुण्ड**- (पुं०) गणेशजी । तोता ।—**दंष्ट्र**-(पुं०) शूकर ।—**दृष्टि**- (वि०) ऐंचाताना, भैंड़ा । वह जिसकी निगाह में दुष्टता भरी हो । डाही, ईर्ष्यालु । (स्त्री०) भैंड़ापन । —**नक्र**-(पुं०) तोता । नीच आदमी । —**नासिक** -(पुं०) उल्लू । —**पुच्छ**, —**पुच्छिक**- (पुं०) कुत्ता ।—**पुष्प**- (पुं०) पलास का वृक्ष ।—**वालधि**,—**लाङ्गूल**-(पुं०) कुत्ता ।—**भाव**-(पुं०) बाँकापन, टेढ़ापन । दगाबाजी ।—**वक्त्र**- (पुं०) शूकर । (वि०) तिरछे मुँह वाला ।

वक्रय—(पुं०) [अव√क्री+अच्, उपसर्गाकारलोपः] मूल्य, कीमत ।

वक्रिन्—(वि०) [वक्र + इनि] टेढ़ा मेढ़ा । विपरीत, उल्टा । (पुं०) जैनी या बौद्ध ।

वक्रिमन्—(पुं०) [वक्र+इमनिच्] बाँकापन । ढिठाई । द्व्यर्थक-श्लेष । चालाकी ।

वक्रोष्ठिका—(स्त्री०) [वक्र ओष्ठो यस्याम्, व० स०, कप्—टाप्, इत्व] मन्द मुसकान।

√वक्ष्—भ्वा० पर० अक० बढ़ना। उगना। बलिष्ठ होना। क्रुद्ध होना। सक० जमा करना। वक्षति, वक्षिष्यति, अवक्षीत्।

वक्षस्—(न०) [√वक्ष् +असुन्] छाती। (पुं०) [√वह् +असुन्, सुट्] बैल।—**ज (वक्षोज)**,—**ह् (वक्षोरुह्)**,—**रुह (वक्षोरुह)**–(पुं०) (स्त्री का) कुच, स्तन।—**स्थल (वक्षःस्थल)**–(न०) छाती, सीना।

√वख्—भ्वा० पर० सक० जाना। वखति, वखिष्यति, अवाखीत्—अवखीत्।

वगाह—(पुं०) [भागुरिमते 'अवगाह' इत्यत्र अकारलोपः] दे० 'अवगाह'।

√वङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। अक० टेढ़ा होना। वङ्कते, वङ्किष्यते, अवङ्किष्ट।

वङ्क—(पुं०) [√ वङ्क् + अच्] नदी का मोड़।

वङ्का—(स्त्री०) [वङ्क —टाप्] घोड़े के चार-जामे की अगली मेंड़ी।

वङ्किल—(पुं०) [√वङ्क् + इलच्] काँटा।

वङ्क्रि—(पुं०) [√वङ्क् +क्रिन्] पसली। छत का शहतीर। एक प्रकार का बाजा।

वङ्क्षु—(पुं०) [√वह् +कुन्, नुम्] आक्सस नदी जो हिन्दुकुश पर्वत से निकल कर मध्य एशिया में बहती हुई अरल समुद्र में गिरती है।

√वङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना। वङ्खति, वङ्खिष्यति, अवङ्खीत्।

√वङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना। वङ्गति, वङ्गिष्यति, अवङ्गीत्।

वङ्ग—(न०) [√वङ्ग्+ अच्] सीसा। राँगा। राँगे का भस्म। (पुं०) कपास। बैंगन। एक पहाड़। एक चंद्रवंशी राजा। बंगाल प्रदेश तथा तद्देश-निवासी; 'वङ्गानुत्खाय तरसा नेता नौसाधनोद्यतान्' र० ४.३६।—**अरि (वङ्गारि)**–(पुं०) हरताल।—**ज**–(पुं०) पीतल। सिंदूर।—**जीवन**–(न०) चाँदी।—**शुल्वज**–(न०) काँसा।

वङ्गन—(पुं०) [√वङ्ग्+ल्यु] बैंगन।

√वङ्घ्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। आरम्भ करना। भर्त्सना करना। दोष लगाना। वङ्घते, वङ्घिष्यते, अवङ्घिष्ट।

√वच्—अ० पर० सक० कहना, बोलना। वर्णन करना। निरूपण करना। बतलाना। वक्ति, वक्ष्यति, अवोचत्।

वच—(पुं०) [√वच्+अच्] तोता। सूर्य। कारण। वचन, वाक्य।

वचन—(न०) [√वच् +ल्युट्] बोलने की क्रिया। वाणी। आदेश। निर्देश। परामर्श, सलाह। शपथपूर्वक वर्णन। शब्दार्थ। (व्याकरण में) वचन; यथा—एकवचन, द्विवचन, बहुवचन। सोंठ।—**उपक्रम (वचनोपक्रम)**–(पुं०) भूमिका, आरम्भिक वक्तव्य।—**कर**–(वि०) आज्ञाकारी, आज्ञा-पालक।—**कारिन्**–(वि०) आज्ञाकारी।—**क्रम**–(पुं०) संवाद, कथोपकथन।—**ग्राहिन्**–(वि०) आज्ञाकारी।—**पटु**–(वि०) बोलने में चतुर।—**विरोध**–(पुं०) कथन में परस्पर विरोध।—**स्थित**–(पुं०) आज्ञाकारी।

वचनीय—(वि०) [√वच् +अनीयर्] कहने योग्य। वर्णन करने योग्य। धिक्कारने योग्य। (न०) कलङ्क। अपवाद; 'न कामवृत्तिर्वचनीयमीक्षते' कु० ५.८२। निंदा।

वचर—(पुं०) मुर्गा। दुष्ट व्यक्ति।

वचस्—(न०) [√वच् +असुन्] वाक्य। आदेश। परामर्श। (व्याकरण में) वचन।—**कर**–(वि०) आज्ञाकारी। दूसरे की आज्ञा के अनुसार काम करने वाला।—**ग्रह (वचोग्रह)**–(पुं०) कान।—**प्रवृत्ति (वचःप्रवृत्ति)**–(स्त्री०) बोलने का प्रयत्न।

वचसांपति—(पुं०) [वचसां वाचां पतिः षष्ठ्या अलुक्] बृहस्पति ।

वचा—(स्त्री०) [√वच् + णिच् + अच् —टाप्] एक ओषधि । मैना पक्षी ।

√वज्—भ्वा० पर० सक० जाना । सम्हालना । तैयार करना । तीर में पर लगाना । वजति, वजिष्यति, अवाजीत्— अवजीत् ।

वज्र—(न०, पुं०)[√वज्+रन्] इन्द्र का वज्र । कोई भी विनाशक हथियार । हीरा काटने का औजार । हीरा । काँजी । (पुं०) व्यूह-रचना विशेष । श्वेत कुश । कोकिलाक्ष वृक्ष । थूहर का पेड़, सेहुँड़ । प्रद्युम्न के एक पुत्र का नाम । विश्वामित्र का एक पुत्र । (न०) इस्पात । अबरक । वज्र या कठोर भाषा । बच्चा । वज्रपुष्प । —**अङ्ग** (**वज्राङ्ग**)-(पुं०) हनुमान । सर्प ।—**अशनि** (**वज्राशनि**)- (पुं०) इन्द्र का वज्र ।—**आकर** (**वज्राकर**)-(पुं०) हीरों की खान ।—**आयुध** (**वज्रायुध**)-(पुं०) इन्द्र ।—**कङ्कट**- (पुं०) हनुमान् । —**कील**-(पुं०) बिजली ।—**क्षार**-(न०) वैद्यक का एक रसायन योग ।— **गोप**- (पुं०) वीरबहूटी, इंद्रगोप ।—**चञ्चु**- (पुं०) गीध ।—**चर्मन्**-(पुं०) गैंड़ा ।— **जित्**-(पुं०) गरुड़ का नाम ।—**ज्वलन** - (न०), —**ज्वाला**-(स्त्री०) बिजली ।—**तुण्ड**-(पुं०) गीध । मच्छर । डाँस । गरुड़ ।—गणेश ।—**दंष्ट्र** (पुं०) इंद्रगोप कीट, वीरबहूटी ।—**दन्त**-(पुं०) शूकर । चूहा ।— **दशन**- (पुं०) चूहा ।—**देह**, —**देहिन्**- (वि०) दृढ़ शरीर वाला ।—**धर**- (पुं०) इन्द्र । बोधिसत्त्व । उल्लू ।—**नाभ**-(पुं०) श्रीकृष्ण का चक्र ।—**निर्घोष**, —**निष्पेष**-(पुं०) बिजली का कड़कना ।—**पाणि**-(पुं०) इन्द्र; 'वज्रं मुमुक्षन्निव वज्रपाणिः' र० २.४२ ।—**पात** -(पुं०) बिजली का गिरना । —**पुष्प**- (न०) तिल्ली का फूल ।— **भृत्**- (पुं०) इन्द्र ।—**मणि**-(पुं०) हीरा । —**मुष्टि**-(पुं०)इन्द्र ।—**रद**- (पुं०) शूकर । —**लेप**-(पुं०) एक मसाला या पलस्तर जो मजबूती के लिये दीवार, मूर्ति आदि पर लगाया जाता है । —**लोहक**- (पुं०) चुंबक ।—**व्यूह**-(पुं०)दुधारी तलवार के आकार की सैन्य रचना ।—**शल्य**- (पुं०) साही नामक जानवर ।—**सार**- (वि०) वज्र की तरह कड़ा ।(पुं०) हीरा ।—**सूची**-(स्त्री०) वह सूई जिसकी नोक पर हीरा लगा हो ।—**हस्त**-(पुं०) इंद्र । शिव । मरुत् । अग्नि । —**हृदय**- (न०) हीरा की तरह कड़ा दिल ।

वज्रिन्—(पुं०) [वज्र + इनि] इन्द्र का नाम । उल्लू । बौद्ध या जैन साधु ।

√वञ्च्—चु० पर० सक० ठगना । वञ्चयति —वञ्चति, वञ्चयिष्यति —वञ्चिष्यति, अववञ्चत्—अवञ्चीत् ।

वञ्चक—(वि०) [√ वञ्च् + णिच् +ण्वुल्] ठग । धोखेबाज । छलिया । (पुं०)ठग या धूर्त व्यक्ति । शृगाल । छछूंदर । पालतू न्योला ।

वञ्चति—(पुं०) [√वञ्च् + अति] अग्नि ।

वञ्चथ—(पुं०) [√वञ्च् + अथ] ठगी । धोखेबाजी । धोखेबाज । कोयल । समय ।

वञ्चन—(न०), **वञ्चना** - (स्त्री०) [√ वञ्च् +ल्युट्] [√वञ्च्+णिच् +युच् —टाप्] ठगी, प्रतारणा । भ्रम । माया । हानि ।

वञ्चित—(वि०) [√वञ्च् + णिच् +क्त] ठगा हुआ । धोखा दिया हुआ । अलग किया हुआ । विमुख ।

वञ्चिता—(स्त्री०) [वञ्चित + टाप्] एक प्रकार की पहेली या बुझौवल ।

वञ्चुक—(वि०) [स्त्री० —**वञ्चुकी**] [√वञ्च् + उकन्] ठग। धोखेबाज। छलिया। बेईमान। (पुं०) शृगाल।

वञ्जुल—(पुं०) [√वज्+उलच्, नुम्] तिनिशवृक्ष। स्थलपद्म वृक्ष। अशोक वृक्ष; "आमञ्जुवञ्जुललतानि च तान्यमूनि नीरन्ध्रनीलनिचुलानि सरित्तटानि'। नरकुल या बेंत।। पक्षी विशेष।—**द्रुम**—(पुं०) अशोक वृक्ष।—**प्रिय**—(पुं०) बेंत।

√वट्—भ्वा० पर० सक० घेरना। स्पष्ट बोलना। वटति, वटिष्यति, अवाटीत्—अवटीत्। चु० पर० सक० गठियाना। बाँटना। वटयति, वटयिष्यति, अववटत्।

वट—(पुं०) [√वट् +अच्] बरगद का पेड़। कौड़ी। गोली। वटिका, बड़ी। छोटा गेंद। शून्य, सिफर। चपाती। डोरी। रूप की समानता या रूपसादृश्य।—**पत्र**—(न०) सफेद वनतुलसी।—**पत्रा**—(स्त्री०) एक प्रकार की चमेली।—**वासिन्**—(पुं०) यक्ष।

वटक—(पुं०) [√वट् +क्वुन् वा वट +कन्] बड़ा, पकौड़ा। गोली। एक तौल जो आ मासे की होती है।

वटर—(पुं०) बटेर पक्षी। चटाई। पगड़ी। चोर। रई। सुगन्धयुक्त घास।

वटाकर, वटारक—(पुं०) डोरी, रस्सी।

वटिक—(पुं०) [√वट्+ इन्+कन्] शतरंज का मोहरा।

वटिका—(स्त्री०) [वटी + कन्—टाप्, ह्रस्व] बड़ी। गोली। [वटिक+टाप्] शतरंज का मोहरा।

वटिन्—(वि०) [वट + इनि] गोल। डोरीदार।

वटी—(स्त्री०) [√ वट् +अच्—ङीष्] वड़ी। रस्सी, डोरी। गोली या टिकिया।

वटु—(पुं०) [√वट्+उ] छोकरा, बालक। ब्रह्मचारी, माणवक; 'निवार्यतामालि किमप्ययं वटुः पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः' कु० ५.८३।

वटुक—(पुं०) [वटु+कन्] बालक। ब्रह्मचारी, माणवक। एक भैरव।

√वठ्—भ्वा० पर० अक० मजबूत होना। हृष्टपुष्ट होना। वठति, वठिष्यति, अवाठीत्—अवठीत्।

वठर—(वि०) [√वठ् + अरन्] सुस्त, काहिल। दुष्ट, शठ। (पुं०) मूढ़जन, मूर्ख आदमी। शठजन, दुष्टजन। चिकित्सक। जल का घड़ा।

वडभि, वडभी— (स्त्री०) दे० 'वलभि' 'वलभी'।

वडवा—(स्त्री०) [बलं वाति, बल√वा +क —टाप्, डलयोरैक्यात् लस्य डत्वम्] घोड़ी। अश्विनी नाम की अप्सरा जिसने घोड़ी का रूप धर, सूर्य से दो पुत्र उत्पन्न करवाये थे। वे दोनों अश्विनीकुमार के नाम से प्रसिद्ध हैं। दासी। रंडी, वेश्या। ब्राह्मणी। —**अग्नि** (**वडवाग्नि**),—**अनल** (**वडवानल**)—(पुं०) [वडवायाः समुद्रस्थितायाः घोटक्याः मुखस्थोऽग्निः] समुद्र के भीतर रहने वाला अग्नि।—**मुख**—(पुं०) [वडवाया घोटक्याः मुखम् आश्रयत्वेन अस्ति अस्य, वडवामुख +अच्] वडवानल। शिव का नाम।

वडा—(स्त्री०) [√वड् + अच्—टाप्] बड़ा, घटक।

वडिश—(न०) [वलिनो मत्स्यान् श्यति नाशयति, √ शो +क, लस्य डत्वम्)] बंसी, कँटिया। नश्तर लगाने का एक औजार।

वड्र—(वि०) [√ वड् + रक्] बड़ा, दीर्घाकार।

√वण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। वणति, वणिष्यति, अवणीत्—अवाणीत्।

वणिज्––(पुं०) [पणायते व्यवहरति,√पण्+इजि, पस्य वः] वनिया । सौदागर, व्यापारी । तुलाराशि ।––**क्रिया** (**वणिक्क्रिया**) –(स्त्री०) सौदागरी, व्यापार ।––**जन** (**वणिग्जन**)–(पुं०) व्यापारी, तिजारती, सौदागर । वनिया ।––**पथ** (**वणिक्पथ**)–(पुं०) सौदागर, व्यापार । व्यापारी की दूकान । तुलाराशि ।––**वृत्ति** (**वणिग्वृत्ति**)– (स्त्री०) व्यापार, सौदागरी । ––**सार्थ** (**वणिक्सार्थ**)– (पुं०) व्यापारियों की टोली, कारवाँ ।

वणिज––(पुं०) [वणिज्+अच् (स्वार्थे)] व्यापारी । तुलाराशि ।

वणिजक––(पुं०) [वणिज+कन्]व्यापारी ।

वणिज्य––(न०), ––**वणिज्या**–(स्त्री०) [वणिज् + यत्] [वणिज्य+टाप्] व्यापार, सौदागरी, तिजारत ।

√वण्ट्––चु० पर० सक० बटवारा करना, बाँटना । वण्टयति––वण्टति, वण्टयिष्यति ––वण्टिष्यति, अववण्टत्––अवण्टीत् ।

वण्ट––(पुं०) [√ वण्ट् + घञ्] हिस्सा, बाँट, अंश । हँसिया का बेंट । (वि०) [√ वण्ट् + अच्] अविवाहित । पुच्छहीन ।

वण्टक––(पुं०) [वण्ट+कन्] अंश, भाग, हिस्सा । (वि०) [√वण्ट् + ण्वुल्] बाँटने वाला ।

वण्टन––(न०) [√वण्ट् +ल्युट्] बाँटना, हिस्सा लगाना ।

वण्टाल––(पुं०) [√वण्ट्+आलच्] शूरवीरों का झगड़ा । खनित्र, खंता । नाव।

√वण्ठ्––भ्वा० आत्म० सक० अकेले जाना । वण्ठते, वण्ठिष्यते, अवण्ठिष्ट । चु० पर० सक० बाँटना । वण्ठयति, वण्ठयिष्यति, अववण्ठत् ।

वण्ठ––(वि०) [√वण्ठ् + अच्] अविवाहित । बौना, खर्वाकार । पंगु । (पुं०) अविवाहित पुरुष । नौकर । भाला ।

वण्ठर––(पुं०) [√वण्ठ् + अरन्] बाँस के कल्ले का वह मोटा पत्ता जो उसे छिपाये रहता है (यह पत्ता गाँठ-गाँठ पर होता है) । ताड़ वृक्ष का नया अङ्कुर । बकरा बाँधने की रस्सी । कुत्ता । कुत्ते की पूँछ । बादल । स्तन ।

वण्ठाल––दे० 'वण्टाल' ।

√वण्ड्––भ्वा० आत्म० सक० बाँटना । वण्डते, वण्डिष्यते, अवण्डिष्ट । चु० पर० सक० बाँटना । वण्डयति, वण्डयिष्यति, अववण्डत् ।

वण्ड––(वि०) [√वन्+ड] अङ्गभङ्ग । पंगु । अविवाहित । (पुं०) वह पुरुष जिसकी लिङ्गेन्द्रिय के अग्रभाग पर ढकने वाला चमड़ा न हो । विना पूँछ का बैल ।

वण्डर––(पुं०) [√वण्ड् + अरन्] कंजूस आदमी । नपुंसक पुरुष, हिजड़ा आदमी ।

वण्डा––(स्त्री०) [वण्ड + टाप्] व्यभिचारिणी स्त्री, छिनाल औरत ।

वत्––(अव्य०) [√वा + डति] सदृश, समानता ।

वतंस––(पुं०) [अव√तंस् +अच् वा घञ्, अव इत्यस्य अकारलोपः]=अवतंस ।

वत––(अव्य०) [√वन्+क्त] एक अव्यय जो शोक, खेद, दया, संबोधन, हर्ष, संतोष, आश्चर्य और भर्त्सना के अर्थ में व्यवहृत होता है ।

वतोका––(स्त्री०) [अवगतं तोकं यस्याः, अवस्य अकारलोपः] सन्तानरहित स्त्री या गौ। वह स्त्री या गौ जिसका गर्भ किसी घटना विशेष से गिर पड़ा हो ।

वत्स––(पुं०) [√वद्+स] बछड़ा, गाय । या किसी भी जानवर का बच्चा । बेटा । सन्तान, औलाद । वर्ष। एक देश का नाम जहाँ उदयन नामक राजा राज्य करता था और जिसकी राजधानी का नाम कौशाम्बी था ।––**अक्षी** (**वत्साक्षी**)–(स्त्री०) एक

प्रकार का ककड़ी की जाति का फल (प्राय: तरबूज)।—अदन (वत्सादन)–(पुं०) भेड़िया।—काम–(वि०) बच्चों का अभिलाषी।—नाभ– (पुं०) एक विषैला पौधा, वछनाग नामक विष जो मीठा होता है। —पाल–(पुं०) श्रीकृष्ण। वलराम।—शाला–(स्त्री०) बछड़ों के रहने का घर।

वत्सक—(पुं०) [वत्स+कन्] छोटा बछआ, बछड़ा। बच्चा। कुटज का पौधा। (न०) पुष्पकसीस। कुटज। इन्द्रजौ। निर्गुण्डी।

वत्सतर—(पुं०) [वत्स + तरप्] जवान बछवा जो जोता न गया हो; 'महोक्षतां वत्सतर: स्पृशन्निव' र० ३.३२।

वत्सतरी—(स्त्री०) [वत्सतर+ ङीप्] वह बछिया जिसकी उम्र ३ वर्ष की हो, कलोर; 'श्रोत्रियायाभ्यागताय वत्सतरीं वा महोक्षं वा निर्वपन्ति गृहमेधिन:' उ० ४।

वत्सर—(पुं०) [वसन्ति अस्मिन् मास-पक्ष-वारादय:, √वस् +सरन्] वर्ष। विष्णु का नाम।—अन्तक (वत्सरान्तक)– (पुं०) फागुन मास।—ऋण (वत्सरार्ण)–(न०) वह कर्ज जिसका चुकाना वर्ष के अन्त में आवश्यक हो।

वत्सल—(वि०) [वत्स+लच्] पुत्र या सन्तान के प्रति पूर्ण स्नेहयुक्त, बच्चे के प्रेम से भरा हुआ। (पुं०) विष्णु। (न०) पुत्र आदि के प्रति प्रेम-प्रदर्शन। अनुराग।

वत्सला—(स्त्री०) [वत्सल+ टाप्] वह गाय जिसका अपने बच्चे पर पूर्ण अनुराग हो।

वत्सा, वत्सिका–(स्त्री०) [वत्स+ टाप्] [वत्सा+ कन—टाप्, ह्रस्व, इत्व] बछिया।

वत्सिमन्—(पुं०) [वत्स +इमनिच्] बचपन।

[वत्सी]य—(पुं०) [वत्स+छ] गोप, ग्वाला। (वि०) वत्सों का हितकारी।

√वद्—भ्वा० पर० सक० बोलना। सूचना देना। कहना। वर्णन करना। निर्दिष्ट करना। पुकारना। वदति, वदिष्यति, अवादीत्। चु० उ० सक० संदेशा कहना। वादयति—ते—वदति—ते। [दीप्ति, सान्त्वना, ज्ञान, उत्साह, विवाद और प्रार्थना के अर्थ में वद् धातु आत्मनेपदी है।]

वद—(वि०) [√वद् + अच्] बोलने वाला। बातचीत करने वाला। भलीभाँति बोलने वाला।

वदन—(न०) [√वद् +ल्युट्] बोलना। चेहरा। मुख। सूरत, रूप। अगला भाग। प्रथम संख्या (किसी माला का)।—आसव (वदनासव)–(पुं०) लार।

वदन्ती—(स्त्री०) [√वद् + झच्—ङीप्] वाणी। वक्तृता। संवाद।

वदन्य—(वि०) [√वद्+आन्य, पृषो० ह्रस्व]=वदान्य।

वदर—(पुं०) दे० 'वदर'।

वदान्य—(वि०) [वदति सर्वेभ्य: एव दास्यामि इति मनोहरवाक्यम्, √ वद् +आन्य] अतिशय दाता; 'तस्मै वदान्यगुरवे तरवे नमोऽस्तु' भा० १.९४। उदार। मधुरभाषी, अपनी बातचीत से दूसरे को सन्तुष्ट करने वाला।

वदाम—(न०) [√वद् + आमन्] बादाम फल।

वदाल—(पुं०) [√वद्+क, वद√ अल् +अच्] भँवर। पाठीन मत्स्य, पहिना मछली।

वदावद—(वि०) [अत्यन्तं वदति,√वद् +अच्, नि० द्वित्वादि] बहुत बोलने वाला। गप्पी।

वदि—(अव्य०) [√वद्+इन्] कृष्णपक्ष।

वध—(पुं०) [हननम् इति, √हन् +अप्, वधादेश] मारण, हत्या। आघात, प्रहार। लकवा। अन्तर्धान क्रिया। (अङ्कगणित में)

गुणा की क्रिया।—**अङ्गक** (**वधाङ्गक**)-(न०) विष।—**अर्ह** (**वधार्ह**)-(वि०) प्राणदण्ड पाने योग्य।—**उपाय** (**वधोपाय**) -(पुं०) वध का साधन।—**कर्माधिकारिन्**- (पुं०) जल्लाद, वधिक।—**जीविन्**- (पुं०) व्याध, बहेलिया। कसाई, बूचड़।—**दण्ड** - (पुं०) प्राणदण्ड।—**निर्णेक** -(०) हत्याजनित पाप का प्रायश्चित्त।— **भूमि**,— **स्थली**-(स्त्री०), **स्थान**- (न०) वह स्थान जहाँ प्राणदण्ड दिय जाय। कसाईखाना।

वधक—(पुं०) [√हन् + क्वुन्, वधादेश] जल्लाद। व्याध। मृत्यु। (वि०) हत्या करने वाला, हत्यारा।

वधत्र—(न०) [√वध् + अत्रन्] वध करने का हथियार।

वधित्र—(न०) [√वध् + इत्र] कामदेव। मैथुन करने की इच्छा, कामासक्ति।

वधु, वधुका—(स्त्री०) बहू, दुलहिन। पुत्र की पत्नी। युवती स्त्री।

वधू—(स्त्री०) [बध्नाति प्रेम्णा, √बन्ध् +ऊ, नलोप वा ऊह्यते भर्त्रादिभिः, √वह् +ऊ, ध आदेश] दुलहिन; 'वरः स वध्वा सह राजमार्गं प्राप ध्वजच्छायनिवारितोष्णम्' र० ७.४। पत्नी। पुत्रवधू, पतोहू। स्त्री, औरत। अपने से छोटे सम्बन्धी की स्त्री, नाते में छोटी स्त्री। पशु की मादा।—**जन**- (पुं०) स्त्रियाँ।—**वस्त्र**-(न०) वे कपड़े जो विवाह के समय कन्या को दिये जाते हैं।

वधूटी—(स्त्री०) [अल्पवयस्का वधूः, वधू +टि- ङीष्] नव युवती स्त्री। पुत्रवधू।

वध्य—(वि०) [वधम् अर्हति, वध+यत्] वध करने योग्य। प्राणदड की आज्ञा पाये हुए। (पुं०) शिकार, आपद्ग्रस्त व्यक्ति। शत्रु।—**पटह**-(पुं०) वह ढोल जो किसी को प्राणदण्ड देते समय बजाया जाय।—**भू**,—**भूमि**-(स्त्री०), —**स्थल**,—**स्थान**-(न०) वध करने की जगह।—**माला** -(स्त्री०) वह माला जो प्राणदण्ड प्राप्त पुरुष के गले में उस समय पहनायी जाय, जिस समय उसका वध किया जाय।

वध्र—(न०) [√ वन्ध् + ष्ट्रन्] चमड़े का तसमा; 'दधिरे फणिनस्तुरङ्गमेषु स्फुट-पल्याण-निबद्ध-वध्र-लीलाम्' शि० २०.५०। शीशा।

वध्री—(स्त्री०) [वध्र+ङीष्] चमड़े का तसमा या पट्टी।

वध्र्य—(पुं०) [वध्र+यत्] जूता।

√वन्—भ्वा० पर० सक० प्रतिष्ठा करना, सम्मान करना, पूजन करना। सहायता करना। अक० ध्वनि करना। संलग्न होना, किसी काम में लगना। वनति, वनिष्यति, अवानीत् —अवनीत्। त० उभ० सक० याचना करना, माँगना। प्रार्थना करना। ढूंढ़ना, तलाश करना। जीतना, अधिकार में करना। वनुते —वनोति, वनिष्यति —ते, अवनिष्ट —अवत— अवानीत्—अवनीत्। चु० उभ० सक० कृपा करना, अनुग्रह करना। चोटिल करना। अनिष्ट करना। ध्वनित करना। विश्वास करना। वानयति —ते, वानयिष्यति — ते, अवीवनत् —त।

वन—(न०) [√वन् +अच् वा घ] जंगल; 'वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति रागिणाम्'। कमल के फूलों का दस्ता। आवासस्थान। जल का चश्मा या सोता। जल। काष्ठ। किरण।—**अग्नि** (**वनाग्नि**)-(पुं०) दावानल, दावाग्नि।—**अज** (**वनाज**)-(पुं०) जंगली बकरा।—**अन्त** (**वनान्त**) -(पुं०) वन की सीमा, वन-प्रान्त।—**अन्तर** (**वनान्तर**)-(न०) दूसरा वन। वन का भीतरी हिस्सा।—**अरिष्टा** (**वनारिष्टा**) -(स्त्री०) जंगली हल्दी।—

अलक्त (वनालक्त)– (न०) लाल मिट्टी। गेरू।—अलिका (वनालिका)– (स्त्री०) हस्तिशुण्डी लता। सूरजमुखी।—आखु (वनाखु)– (पुं०) खरगोश।—आखुक (वनाखुक)– वनमूंग।—आपगा (वनापगा)–(स्त्री०) वन की नदी।—आर्द्रका (वनार्द्रका)–(स्त्री०) जंगली अदरक।—आश्रम (वनाश्रम)–(पुं०) वानप्रस्थाश्रम। वन का वास।—आश्रमिन् (वनाश्रमिन्) (पुं०) वानप्रस्थी। —आश्रय (वनाश्रय)–(पुं०) वनवासी। काला कौआ, डोम-कौआ।—उत्साह (वनोत्साह)–(पुं०) गैंड़ा।—उद्भवा (वनोद्भवा)–(स्त्री०) जंगली कपास का पौधा।—ओकस् (वनौकस्)– (पुं०) वनवासी, जंगल का रहने वाला। वानप्रस्थाश्रमी। वन्य पशु (यथा वंदर, शूकर आदि)।—कणा– (स्त्री०) वन-पिप्पली।—कदली– (स्त्री०) जंगली केला।—करिन्, —कुञ्जर,—गज– (पुं०) जंगली हाथी।—कुक्कुट– (पुं०) जंगली मुर्गा।—खण्ड– (न०) जंगल। —गहन–(न०) वन का अति सघन भाग।—गुप्त– (पुं०) जासूस, भेदिया, खुफिया।—गुल्म– (पुं०) जंगली झाड़ी। —गोचर –(वि०) वन में रहने वाला। (पुं०) बहेलिया। वनवासी। (न०) वन, जंगल।—चन्दन –(न०) देवदारु वृक्ष। अगर काष्ठ।—चर –(वि०) वन में विचरने वाला। (पुं०) वनवासी। वन्य पशु। शरभ।—चर्या–(स्त्री०) वन में विचरना। वन में निवास करना।—छाग– (पुं०) जंगली बकरा। शूकर।—ज– (पुं०) हाथी। सुगन्धयुक्त तृण विशेष। जंगली बिजौरा जाति का नीबू। (न०) नीलकमल का पुष्प। जंगली कपास का पौधा।—जीविन् –(वि०) लकड़हारा। बहेलिया।—द– (पुं०) बादल, मेघ।—दाह–(पुं०) दावानल।—देवता–(स्त्री०) वन का अधिष्ठाता देवता।—पांसुल– (पुं०) बहेलिया।— पूरक–(पुं०) अनैला बिजौरा नीबू।— प्रवेश– (पुं०) वान-प्रस्थाश्रम में प्रवेश।—प्रिय–(पुं०) कोयल। (न०) दालचीनी का पेड़।—माला–(स्त्री०) वन के पुष्पों की माला। घुटनों तक लंबी ऋतु-कुसुमों की माला।—मालिन्– (पुं०) [वनमाला + इनि] श्रीकृष्ण; 'धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली' गीत० ५।—मालिनी– (स्त्री०) [वनमालिन्+ङीप्] द्वारकापुरी का नामान्तर।—मूत– (पुं०) बादल, मेघ।— मोचा– (स्त्री०) जंगली केला। —राज– (पुं०) सिंह।—रुह– (न०) कमल का फूल — लक्ष्मी–(स्त्री०) वनश्री, वन की शोभा। केला।—वासन– (पुं०) गंध विलाव।—वासिन्–(पुं०) वन में वसने वाला व्यक्ति। वानप्रस्थी। ऋषभ नामक ओषधि। मुष्कक वृक्ष। वाराहीकन्द। शाल्मलीकन्द। द्रोणकाक, डोम कौआ।—व्रीहि –(पुं०) जंगली चावल।—शोभन– (न०) कमल।—श्वन्– (पुं०) शृगाल। चीता। गंध विलाव।—सङ्कट– (पुं०) मसूर।—सरोजिनी –(स्त्री०) कपास का पौधा। —स्थ– (पुं०) वनवासी व्यक्ति। वान-प्रस्थ। हिरन। —स्थली– (स्त्री०) वनभूमि, आरण्यदेश, जंगली जमीन। —स्था– (स्त्री०) पीपल वृक्ष। वट वृक्ष। —स्रज्– (स्त्री०) वनमाला, जंगली फूलों की माला।—हास– (पुं०) काँस। कुंदपुष्प।

वनस्पति— (पुं०) [वनस्य पतिः, ष० त०, सुट्] बड़ा जंगली वृक्ष, विशेष कर वह पेड़ जिसमें पुष्प लगे बिना ही फल लगें। वृक्ष-

मात्र। धृतराष्ट्र का एक पुत्र।—शास्त्र—(न०) पौधों और वृक्षों की जाति, रूप, बनावट आदि का द्योतक शास्त्र।

वनायु—(पुं०) [√वन् + आयुच्] एक प्राचीन देश का नाम जहाँ का घोड़ा अच्छा होता था।—**ज**—(वि०) वनायु देश में उत्पन्न (घोड़ा)।

वनि—(पुं०) [√वन्+इ] अग्नि। ढेर। याचना। कामना, अभिलाषा।

वनिका—(स्त्री०) [वनी+ कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटा वन, कुंजवन।

वनिता—(स्त्री०) [√वन् + क्त—टाप्] स्त्री। पत्नी। कोई भी प्रेमपात्री (माशूका) स्त्री। पशु की मादा।—**द्विष्**—(पुं०) स्त्रियों से घृणा करने वाला व्यक्ति।—**विलास**—(पुं०) स्त्री का आमोद-प्रमोद।

वनिन्—(पुं०) [वन +इनि] वृक्ष। सोमलता। वानप्रस्थ।

वनिष्णु—(वि०) [√वन् + इष्णुच्] याचक, मँगता।

वनी—(स्त्री०) [वन+ङीष्] छोटा वन, कुंज।

वनीयक—(पुं०) [वनिं याचनाम् इच्छति, वनि+क्यच्+ ण्वुल्] भिक्षुक, भिखारी; 'वनीयकानां स हि कल्पभूरुहः' नैष० १५.६०।

वनेकिंशुक—(पुं०) [वने किंशुक इव, सप्तम्या अलुक्] जंगल का किंशुक; अर्थात् वह वस्तु जो वैसे ही बिना माँगे मिले जैसे वन में किंशुक बिना माँगे या प्रयास किये मिलता है।

वनेचर—(वि०) [वने चरति, √चर्+ट, सप्तम्या अलुक्] वन में चलने-फिरने वाला। (पुं०) मुनि। वन्य पशु। वनमानुष। राक्षस।

वनेज्य—(पुं०) [वने इज्यः, स० त०] बढ़िया जंगली आम।

√वन्द्—भ्वा० आत्म० सक० प्रणाम करना। अर्चन करना, पूजन करना। प्रशंसा करना। वन्दते, वन्दिष्यते, अवन्दिष्ट।

वन्दक—(वि०) [√वन्द् + ण्वुल्] वंदना करने वाला। प्रशंसक। (पुं०) भाट, वंदीजन।

वन्दथ—(पुं०) [√वन्द् + अथ] भाट, वंदीजन।

वन्दन—(न०) [√वन्द्+ल्युट्] प्रणाम। नमस्कार। सम्मान। अर्चन, पूजन। सम्मान या प्रणाम जो ब्राह्मण को किया जाय। प्रशंसा, तारीफ। बाँदा, वन्दा।—**माला**, —**मालिका**—(स्त्री०) वंदनवार।

वन्दना—(स्त्री०) [√वन्द् +युच्—टाप्] अर्चन, पूजन। प्रशंसा।

वन्दनी—(स्त्री०) [वन्दन+ङीप्] पूजन, अर्चन। प्रशंसा। याचना। एक दवा जो मृतक को जीवित करे, जीवातु नामक ओषधि। गोरोचन। वटी। तिलक।

वन्दनीय—(वि०) [√वन्द्+अनीयर्] प्रणाम करने योग्य। सम्माननीय।

वन्दनीया—(स्त्री०) [वन्दनीय—टाप्] हरताल। गोरोचना।

वन्दा—(स्त्री०) [√वन्द् + अच्+टाप्] दूसरे पेड़ों के ऊपर उसीके रस से पलने वाला एक प्रकार का पौधा, बाँदा। भिक्षुकी।

वन्दाक—(पुं०) [√वन्द् +आकन्] बाँदा।

वन्दारु—(वि०) [√वन्द्+आरु] प्रशंसा करने वाला। वन्दनशील। (न०) प्रशंसा। बाँदा।

वन्दि—(स्त्री०) [√वन्द् +इन्] कैद। वंदना। सोपान, सीढ़ी। (पुं०) कैदी।

वन्दिन्—(पुं०) [√वन्द्+णिनि] चारण, बंदीजन, भाट। कैदी।

वन्दी—(स्त्री०) [वन्दि+ङीष्] दे० 'वन्दि'।—**पाल**—(पुं०) कैदियों का रक्षक।

वन्द्य—(वि०) [√वन्द्+ण्यत्] पूज्य। प्रणम्य; 'वन्द्यं युगं चरणयोर्जनकात्मजायाः' र० १३.७८। प्रशंसनीय।

वन्द्र—(वि०) [√वन्द्+रक्] पूजक, पूजा करने वाला। भक्त। (न०) समृद्धि। कल्याण।

वन्धुर—(वि०) दे० 'वन्धुर'।

वन्य—(वि०) [वन+यत्] वन का। वन सम्बन्धी। जंगली। (न०) वन की पैदावार। —**इतर** (**वन्येतर**)– (वि०) पालतू। शिक्षित। सभ्य। —**गज**,—**द्विप**– (पु०) जंगली हाथी।

वन्या—(स्त्री०) [वन + य —टाप्] वनसमूह। जल-प्लावन। जल-राशि। मुद्गपर्णी। गोपाल-ककड़ी। घुँघची, गुञ्जा। सौंफ। भद्रमुस्ता। असगंध। जंगली हल्दी। मेथी।

√वप्—भ्वा० उभ० सक० बोना, बीज बोना। (पासा) फेंकना। पैदा करना। बुनना। मूँड़ना। वपति—ते, वप्स्यति—ते अवाप्सीत्—अवप्त।

वप—(पुं०) [√वप् +घ] बीज बोने की क्रिया। मुण्डन। बुनना।

वपन—(न०) [√ वप् + ल्युट्] बीज बोना। मुण्डन। वीर्य।

वपनी—(स्त्री०) [वपन+ङीष्] नाई की दूकान। बुनने का औजार। तन्तुशाला।

वपा—(स्त्री०) [√वप् +अङ—टाप्] चर्बी, वसा। गुफा। मिट्टी का टीला जो चींटियों द्वारा बनाया गया हो, बाँबी।

वपिल—(पुं०)[√वप्+इलच्]पिता, जनक।

वपुष्मत्—(वि०) [वपुस्+मतुप्] उत्तम शरीर वाला। शरीरधारी। (पुं०) विश्वेदेवों में से एक।

वपुस्—(न०) [उप्यन्ते देहान्तभोगसाधनबीजीभूतानि कर्माणि अत्र, √वप्+उसि] शरीर, देह। सुन्दर रूप। सौन्दर्य। —**गुण** (**वपुर्गुण**),—**प्रकर्ष** (**वपुःप्रकर्ष**)–(पुं०) शारीरिक सौन्दर्य। —**धर** (**वपुर्धर**)– (वि०) शरीरधारी। सुन्दर।

वप्तृ—(पुं०) [√वप्+तृच्] बोने वाला, किसान; 'न शालेः स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते' मु० १.३। पिता, जनक। कवि।

वप्र—(पुं०, न०) [√वप्+रन्] मिट्टी की दीवाल, शहरपनाह। टीला। पहाड़ का उतार। चोटी, शिखर। नदीतट। किसी भवन की नींव। शहरपनाह का द्वार या फाटक। परिखा। वृत्त का व्यास। खेत। मिट्टी का घुस। (पुं०) पिता। (न०) सीसा। —**क्रीड़ा**— (स्त्री०) ऊँचे उठे मिट्टी के ढेर पर हाथी, साँड़ आदि का दाँत या सींग मारना।

व—(पुं०) [√वप् + क्रिन्] खेत। समुद्र।

वप्री—(स्त्री०) [वप्रि+ङीष्] बाँबी, मिट्टी का ढूहा।

√वभ्र्—भ्वा० पर० सक० जाना। वभ्रति, वभ्रिष्यति, अवभ्रीत्।

√वम्—भ्वा० पर० सक० कै करना। उड़ेलना। फेंकना। अस्वीकृत करना। वमति, वमिष्यति, अवमीत्।

वम—(पुं०) [√ वम्+अप्] वमन, छाँट, कै।

वमथु—(पुं०) [√वम्+अथुच्] कै, छाँट। जल जिसे हाथी ने अपनी सूँड़ में भर कर फेंका हो।

वमन—(न०) [√वम्+ल्युट्] उलटी, कै करना। खींचने या बाहर निकालने की क्रिया। वमन कराने वाली दवा।

वमि—(स्त्री०) [√वम्+इन्] वमन का रोग। वमन कराने वाली दवा। (पुं०) [वमति उद्गिरति धूमादिकम्, √ वम् +इक्] अग्नि। धूर्त।

वमी—(स्त्री०) [वमि+ ङीष्] दे० 'वमि'।

वम्भारव—(पुं०) पशु के रंभाने की आवाज।

वम्र—(पुं०), **वम्री**— (स्त्री०) [√वम् +र] [वम्रि+ङीष्] दीमक ।—**कूट**— (न०) बाँबी, विमौट ।

√**वय्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना । वयते, वयिष्यते, अवयिष्ट ।

वयन—(न०) [√वे +ल्युट्] बुनना । [√वय् +ल्युट्] जाना ।

वयस्—(न०) [√अज् + असुन्, वी आदेश] अवस्था, उम्र; 'गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः' उ० । जवानी । पक्षी; 'मृगवयोगवयोपचितं वनं' र० ६.५३ ।—**अतिग** (**वयोऽतिग**), —**अतीत** (**वयोऽतीत**) (वि०) बूढ़ा ।—**अवस्था** (**वयोऽवस्था**)-(स्त्री०) जीवन-काल, बाल आदि अवस्था ।—**कर** (**वयस्कर**) -(वि०) उम्र बढ़ाने वाला । —**परिणति** (**वयःपरिणति**)-(स्त्री०), —**परिणाम** (**वयःपरिणाम**)-(पुं०) अवस्था की प्रौढ़ता ।—**वृद्ध** (**वयोवृद्ध**)-(वि०) बूढ़ा ।—**स्थ** (**वयःस्थ**)-(वि०) बालिग, जवान । प्रौढ़ । बलवान् । —**स्था** (**वयःस्था**)-(स्त्री०) सखी, सहेली । काकोली । ब्राह्मी । छोटी इलायची । अत्यम्लपर्णी ।

वयस्य—(वि०) [वयसा तुल्यः, वयस् +यत्]समान उम्र वाला । सहयोगी । (पुं०) मित्र, साथी ।

वयस्या—(स्त्री०) [वयस्य +टाप्] सखी, सहेली ।

वयुन—(न०) [वीयते गम्यते प्राप्यते विषयोऽनेन, √अज् + उनन्, वी आदेश] ज्ञान, मन्दिर ।

वयोधस्—(पुं०) [वयो यौवनं दधाति, वयस् √धा+असि] जवान या अधेड़ उम्र का आदमी ।

वयोरङ्ग—(न०) [वयसा रङ्गमिव] सीसा ।

√**वर्**—चु० उभ० सक० माँगना, याचना करना । पसंद करना । वरयति—ते, वरयिष्यति—ते, अववरत्— त ।

वर—(वि०) [√वृ+अप्] उत्तम, श्रेष्ठ । (पुं०) चुनने या पसंद करने की क्रिया । चुनाव, पसंदगी । वरदान, आशीर्वाद । भेंट, पुरस्कार । अभिलाषा, इच्छा । याचना । दूल्हा, पति । दहेज । दामाद । लंपट आदमी । गोरैया पक्षी । (न०) केसर ।—**अङ्ग** (**वराङ्ग**)-(पुं०) हाथी । विष्णु । (न०) सिर । उत्तम अवयव । भग । दालचीनी ।—**अङ्गना** (**वराङ्गना**)-(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री ।—**अर्ह** (**वरार्ह**)-(पुं०) वरदान पाने योग्य ।—**आजीविन्** (**वराजीविन्**)-(पुं०) ज्योतिषी ।—**आरोह** (**वरारोह**)-(वि०) सुंदर कटि या नितंब वाला । (पुं०) विष्णु । एक पक्षी । गजारोही । उत्तम सवार ।—**आरोहा** (**वरारोहा**)-(स्त्री०) सुंदर कटि या नितंबों वाली स्त्री । सुन्दरी स्त्री । कमर । —**आलि** (**वरालि**)-(पुं०) चन्द्रमा । —**क्रतु**- (पुं०) इन्द्र ।—**चन्दन**-(न०), काला चंदन । देवदारु ।—**तनु**-(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री ।—**तन्तु**- (पुं०) एक प्राचीन ऋषि का नाम ।—**त्वच**- (पुं०) नीम का पेड़ ।—**द**- (वि०) वरदानदाता । शुभ ।—**दा**-(स्त्री०) एक नदी का नाम । क्वारी कन्या । अड़हुल । अश्वगन्धा । वाराही कन्द ।—**दक्षिणा**-(स्त्री०) वह धन जो वर को विवाह के समय कन्या के पिता से मिलता है, दहेज ।—**दान**-(न०) देवता या बड़ों का प्रसन्न होने पर कोई अभीष्ट वस्तु या सिद्धि प्रदान करना।—**द्रुम**-(पुं०) अगर का वृक्ष ।—**पक्ष**-(पुं०) बरात; 'प्रमुदित-वरपक्षमेकतः' र० ८.८६ ।—**यात्रा**- (स्त्री०) विवाह के लिये वर का अपने इष्टमित्रों और सम्बन्धियों के साथ

कन्या के घर गमन।—फल –(पुं०) नारियल।—वाह्लिक –(न०) केसर। —युवति, —युवती– (स्त्री०) सुन्दरी, जवान औरत।—रुचि– (पुं०) एक अत्यन्त प्रसिद्ध प्राचीन पण्डित जो व्याकरण और काव्य के मर्मज्ञ थे।— लब्ध–(पुं०) चंपा का पेड़।—वत्सला – (स्त्री०) सास।—वर्ण–(न०) सुवर्ण, सोना।—वर्णिनी– (स्त्री०) सुन्दरी स्त्री। लाख। लक्ष्मी। दुर्गा। सरस्वती। प्रियंगुलता। —स्रज्–(स्त्री०) वर की माला या गजरा, वह माला जो कन्या वर को पहनाती है।

वरक—(पुं०) [वर + कन्] वनमूंग। प्रियंगु नामक तृणधान्य, काकुन। (न०) नाव का चँदोवा। साधारण वस्त्र।

वरट—(पुं०) [√वृ+अटन्] हंस। भिड़, वर्रे। (न०) कुंद का फूल। कुसुम का बीज।

वरटा, वरटी—(स्त्री०) [वरट + टाप्] [वरट+ङीष्] हंसी। बर्रैया। गँविया कीड़ा।

वरण—(न०) [√वृ +ल्युट्] चुनाव, पसंदगी। याचना, प्रार्थना। फेरा, घिराव। पर्दा। चादर। वर का चुनाव। (पुं०) [√ वृ +ल्यु] शहरपनाह की दीवाल। पुल। वरुण नामक पेड़। ऊँट।—माला, —स्रज् –(स्त्री०) वह माला जो दुलहिन अपने दूल्हा की गरदन में पहनाती है।

वरणसी—(स्त्री०) = वाराणसी (शब्दरत्ना०)।

वरण्ड—(पुं०) [√वृ + अण्डन्] समूह, समुदाय। चेहरे पर मुँहासा। बरामदा। घास का ढेर। वंसी की डोरी। दो लड़ने वाले हाथियों को अलग करने वाली दीवार।

वरण्डक—(पुं०) [वरण्ड + कन्] मिट्टी का टीला। हौदा। दीवाल। मुरसा या मुहाँसा।

वरण्डा—(स्त्री०) [वरण्ड+ टाप्] खंजर, छूरी। सारिका, मैना। चिराग की बत्ती।

वरत्रा—(स्त्री०) [√वृ+ अत्रन्—टाप्] चमड़े का तसमा। घोड़ा या हाथी का जेरबंद।

वरम्—(अव्य०) वांछनीय; 'वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः' कि० १.८।

वरल—(पुं०) [√वृ + अलच्] भिड़, बर्रैया।

वरला—(स्त्री०) [वरल+ टाप्] हंसी। बर्रैया।

वरा—(स्त्री०) [√ वृ +अच्—टाप्] त्रिफला। रेणुका नामक गन्ध-द्रव्य। हल्दी। अड़हुल। बैंगन। ब्राह्मी। गुडूच। शतमूली। श्वेत अपराजिता। पाठा। सोमराजी। विडंग। मद्य। पार्वती।

वराक—(वि०) [स्त्री०—वराकी] [√वृ +षाकन्] दीन। दयनीय। अभागा। (पुं०) शिव। युद्ध। पापड़ा, पर्पट।

वराट—(पुं०) [वर √अट् + अण्] कौड़ी। रस्सी, डोरी।

वराटक—(पुं०) [वराट +कन्] कौड़ी। कमलगट्टा। रस्सी। —रजस्–(पुं०) नागकेसर का पेड़।

वराटिका—(स्त्री०) [वराट+कन्—टाप्, इत्व] कौड़ी। तुच्छ वस्तु। नागकेसर।

वराण—(पुं०) [√वृ+युच्, पृषो० दीर्घ] इन्द्र। व ण का वृक्ष।

वराणसी—(स्त्री०)=वाराणसी।

वरारक—(न०) [वर √ऋ + ण्वुल्] हीरा।

वराल, वरालक—(पुं०) [वर √अल् +अण्] [वराल+कन्] लौंग, लवंग।

वराशि,, वरासि—(पुं०) [वरम् आवरणम् अश्नुते व्याप्नोति, वर √अश् + इन्]

[वरैः श्रेष्ठैः अस्यते क्षिप्यते, वर √अस् इन्] मोटा कपड़ा ।

वराह—(पुं०) [वराय अभीष्टाय मुस्तादिलाभाय आहन्ति खनति भूमिम्, वर—आ √हन्+ड] सुअर, शूकर । मेढ़ा । साँड़ । बादल । घड़ियाल, मगर । शूकर के रूप का सैन्य-व्यूह । विष्णु का अवतार । एक मान । मोथा । वाराहीकन्द । वाराहमिहिर । अष्टादश पुराणों में से एक का नाम ।—**अवतार** (**वराहावतार**)–(पुं०) भगवान् विष्णु का तीसरा अवतार ।—**कन्द**–(पुं०) वाराहीकंद । —**कल्प**–(पुं०) वह काल जब भगवान् ने वराहावतार धारण किया था ।—**मिहिर**– (पुं०) ज्योतिष के एक प्रधान आचार्य जिनकी बनायी वृहत्संहिता बहुत प्रसिद्ध है ।—**शृङ्ग**– (पुं०) शिव का नाम ।

वरिमन्—(पुं०) [वर +इमनिच्] श्रेष्ठत्व, उत्तमता, उत्कृष्टता ।

वरिवस्—(न०) [√वृ+वसुन् , नि० इट्] पूजा, सम्मान । धन ।

वरिवस्यित—(वि०) [वरिवस्या+इतच्] पूजित, सम्मानित ।

वरिवस्या—(स्त्री०) [वरिवसः पूजायाः करणम्, वरिवस् + क्यच् + अ—टाप्] पूजा । शुश्रूषा ।

वरिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन वरः वा उरुः, उरु+इष्ठन्, वरादेश] सब से श्रेष्ठ, वरतम । सब से विस्तीर्ण, उरुतम । सब से अधिक भारी । (पुं०) तित्तिर पक्षी, तीतर । नारंगी का पेड़ । (न०) ताम्र, ताँबा । मिर्च ।

वरी—(स्त्री०) [√वृ +अच्—ङीष्] सूर्य-पत्नी छाया का नाम । शतावरी का पौधा ।

वरीयस्—(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन वरः उरुर्वा, वर वा उरु+ईयसुन्, वरादेश] दो में से अपेक्षाकृत अच्छा । दो में से अपेक्षाकृत लंबा या चौड़ा । (पुं०) नवयुवक । पुलह ऋषि का एक पुत्र । २७ योगों में से १८ वाँ (ज्यो०) ।

वरीवर्द, वलीवर्द—दे० 'वलीवर्द' ।

वरीषु—(पुं०) कामदेव का नाम ।

वरुट—(पुं०) म्लेच्छ विशेष ।

वरुड—(पुं०) एक नीच जाति का नाम ।

वरुण—(पुं०) [व्रियते सर्वैः, √ वृ+उनन्] मित्र देवता के साथ रहने वाले एक आदित्य का नाम । समुद्र के अधिष्ठातृ देवता और पश्चिम दिशा के दिक्पाल; 'अतिसक्तिमेत्य वरुणस्य दिशा भृशमन्वरज्यदतुषारकरः' शि० ९.७ । समुद्र । आकाश । वरुणवृक्ष ।—**अङ्गरुह** (**वरुणाङ्गरुह**)– (पुं०) अगस्त्य जी की उपाधि ।—**आत्मजा** (**वरुणात्मजा**)–(स्त्री०) मदिरा, शराब । —**आलय** (**वरुणालय**) —**आवास** (**वरुणावास**)–(पुं०) समुद्र ।—**पाश**–(पुं०) वरुण का अस्त्र, पाश । नक्र, नाक नामक जलजन्तु ।—**लोक**–(पुं०) वरुण का लोक । जल ।

वरुणानी—(स्त्री०) [वरुण + ङीष्, आनुक्] वरुण की स्त्री ।

वरुत्र—(न०) [√वृ+ उत्र] उत्तरीय वस्त्र, उपरना ।

वरूथ—(न०) [√वृ+ ऊथन्] लोहे की चद्दर या सीकड़ों का बना हुआ आवरण जो शत्रु के आघात से रथ को रक्षित रखने के लिये उसके ऊपर डाला जाता था । कवच, बखतर । ढाल । समूह । सेना । गृह ।

वरूथिन्—(वि०) [वरूथ+इनि] कवचधारी, बखतर पहिने हुए । रथारूढ़ । (पुं०) रथ । रक्षक । हाथी की काठी ।

वरूथी—(स्त्री०) [वरूथ + ङीष्] सेना ।

वरेण्य—(वि०) [√वृ+एण्य] वाञ्छनीय; 'अनेन चेदिच्छसि गृह्यमाणं पाणिं वरेण्येन'

र० ६.२४ । सर्वोत्तम । मुख्य । (न०) कुङ्कुम, केसर ।

वरोट—(न०) [वराणि श्रेष्ठानि उटानि दलानि यस्य, ब० स०] मरुवा के फूल । (पुं०) मरुवा, वरुवक वृक्ष ।

वरोल—(पुं०) [√वृ + ओलच्] बर्रे ।

वर्कर—(पुं०) [√वृक्+अर] मेमना, बकरी का बच्चा । बकरा । कोई भी पालतू जानवर का बच्चा । आमोद-प्रमोद, क्रीड़ा ।

वर्कराट—(पुं०) [वर्करं परिहासम् अटति गच्छति, वर्कर √अट् + अण्] कटाक्ष । स्त्री के कुच के ऊपर लगे हुए नखों का घाव या खरोंच । उठते हुए सूर्य का प्रकाश ।

वर्कुट—(पुं०) कील । अर्गल, अगड़ी ।

वर्ग—(पुं०) [√वृज् +घञ्] श्रेणी, कक्षा । दल, टोली । न्यायशास्त्र के नव या सप्त पदार्थ- विभाग । शब्दशास्त्र में एक स्थान से उच्चारित होने वाले स्पर्श व्यञ्जन वर्णों का समूह (यथा कवर्ग, चवर्ग आदि) । आकार-प्रकार में कुछ भिन्न, किन्तु कोई भी एक सामान्य धर्म रखने वालों का समूह (यथा—मनुष्यवर्ग, वनस्पतिवर्ग); 'न्यषेवि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः' र० २.४ । ग्रन्थ-विभाग, प्रकरण, परिच्छेद, अध्याय – विशेष कर ऋग्वेद के अध्याय के अन्तर्गत उपअध्याय । दो समान अङ्कों या राशियों का घात या गुणनफल (यथा ४ का १६) । शक्ति, ताकत । —**अन्त्य** (**वर्गान्त्य**),—**उत्तम** (**वर्गोत्तम**)- (न०) पाँचों वर्गों के अन्त के अक्षर, अनुनासिक वर्ण ।—**घन**- (पुं०) वर्ग का घनफल ।—**पद**, —**मूल**- (न०) वह अङ्क जिसके घात से कोई वर्गाङ्क बनावे, वर्गमूल ।

वर्गणा—(स्त्री०) गुणन, घात ।

वर्गशस्—(अव्य०) [वर्ग+शस्] श्रेणी या समूहों के अनुसार ।

वर्गीय—(वि०) [वर्ग +छ] किसी वर्ग या श्रेणी का, वर्ग सम्बन्धी । (पुं०) सहपाठी ।

वर्ग्य—(वि०) [वर्ग + यत्] एक ही श्रेणी का । (पुं०) सहपाठी ।

√वर्च्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना, चमकीला होना । वर्चते, वर्चिष्यते,अवर्चिष्ट।

वर्चस्—(न०) [√ वर्च् +असुन्] शक्ति । पराक्रम, प्रभाव । तेज, कान्ति । रूप, शक्ल । विष्ठा ।—**ग्रह** (**वर्चोग्रह**)-(पुं०) कोष्ठ-बद्धता , कब्जियत ।

वर्चस्क—(पुं०) [वर्चस्+कन्] दीप्ति, तेज । पराक्रम । विष्ठा ।

वर्चस्विन्—(वि०) [वर्चस् + विनि] तेजस्वी । पराक्रमी, शक्तिशाली । (पुं०) चंद्रमा । शक्तिशाली मनुष्य ।

वर्ज—(पुं०) [√वृज् + घञ्] त्याग, परित्याग ।

वर्जन—(न०) [√वृज् +ल्युट्] त्याग । वैराग्य । मनाई, निषेध । हिंसा, मारण ।

वर्जित—(वि०) [√ वृज् +क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । निषिद्ध । बाहर किया हुआ । रहित ।

वर्ज्य—(वि०) [√ वृज्+ण्यत्] छोड़ने योग्य, त्याज्य । जिसका निषेध किया गया हो, निषिद्ध ।

√वर्ण्—चु० पर० सक० रंग चढ़ाना , रँगना। वर्णन करना, बयान करना। व्याख्या करना । प्रशंसा करना । फैलाना । प्रकाश करना । वर्णयति, वर्णयिष्यति, अववर्णत् ।

वर्ण—(पुं०)[√वर्ण् +घञ्] रंग; 'अन्तः-शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्णः' मे० ४६ । रोगन। रूप-रंग, सौन्दर्य। मनुष्य-समुदाय के चार विभाग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । श्रेणी, जाति । क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । श्रेणी, जाति । अक्षर । स्वर । कीर्ति, प्रख्याति । प्रशंसा । परिच्छद, सजा-

वट । बाह्य आकार-प्रकार, रूपरेखा । लबादा । पोशाक । ढकना, ढक्कन । गीतक्रम । हाथी की झूल । गुण । धर्मानुष्ठान । अज्ञात राशि । (न०) केसर । अंगराग-लेपन ।—**अङ्का** (**वर्णाङ्का**)-(स्त्री०) लेखनी, कलम । —**अपसद** (**वर्णापसद**)-(पुं०) जातिच्युत व्यक्ति । —**अपेत** (**वर्णापेत**)-(वि०) जो किसी भी जाति में न हो, जातिवहिष्कृत, पतित । —**अर्ह** (**वर्णार्ह**)-(पुं०) मूंग ।—**आत्मन्** (**वर्णात्मन्**)- (पुं०) शब्द । —**उदक** (**वर्णोदक**)-(न०) रंगीन जल । —**कूपिका**- (स्त्री०) दावात ।—**क्रम**-(पुं०) वर्णव्यवस्था । अक्षरक्रम ।—**चारक** -(पुं०) चितेरा । रँगैया ।—**ज्येष्ठ**- (पुं०) ब्राह्मण । —**तूलि**, —**तूलिका**, —**तूली**-(स्त्री०) चितेरे की कूँची ।—**द**- (वि०) रंगसाज । (न०) दारुहल्दी ।— **दात्री**- (स्त्री०) हल्दी ।—**दूत**-(पुं०) लिपि, पत्र आदि ।—**धर्म**-(पुं०) प्रत्येक जाति के कर्म विशेष ।—**पात**-(पुं०) किसी अक्षर का लोप होना ।—**प्रकर्ष**-(पुं०) रंग की उत्तमता ।—**प्रसादन**-(न०)अगर की लकड़ी ।—**मातृ**-(स्त्री०) कलम, लेखनी ।—**मातृका**-(स्त्री०) सरस्वती ।— **माला**, —**राशि**-(स्त्री०) अक्षरों के रूपों की श्रेणी या लिखित सूची । —**र्वात**,— **वर्तिका**-(स्त्री०) चितेरे की कूँची ।— **विपर्यय**- (पुं०) निरुक्त के अनुसार शब्दों में वर्णों का उलट- फेर । —**विलासिनी**- (स्त्री०) हल्दी ।—**विलोडक**-(पुं०) सेंध लगाने वाला । लेखचोर ।— **वृत्त**- (न०) वह पद्य जिसके चरणों में वर्णों की संख्या और लघु-गुरु के क्रम में समानता हो । (मात्रावृत्त का-उलटा) ।— **व्यवस्थिति**- (स्त्री०) वर्णव्यवस्था ।— **श्रेष्ठ** - (पुं०) ब्राह्मण । —**संयोग**-(पुं०) एक ही जाति के लोगों में वैवाहिक सम्बन्ध ।—**सङ्कर**- (पुं०) वह व्यक्ति या जाति जो दो भिन्न-भिन्न जातियों के स्त्री-पुरुष के संयोग से उत्पन्न हो । रंगों का मिश्रण; 'चित्रेषु वर्णसङ्करः' का० । —**संघात**, —**समाम्नाय**- (पुं०) वर्णमाला ।—**सूची**-(स्त्री०) छंदःशास्त्र की एक प्रक्रिया जिसके द्वारा वर्णवृत्तों की शुद्ध संख्या और उनके भेदों में आदि-अंत लघु तथा आदि-अंत गुरु की संख्या ज्ञात हो जाती है ।

वर्णक—(पुं०) [वर्ण+ कन् वा √वर्ण् +ण्वुल्] अभिनेता का परिधान या परिच्छद । रंग । रोगन । अनुलेपन, उवटन । चारण । भाट, वंदीजन । चन्दन । (न०) रंग । रोगन । हरताल । चंदन । ग्रन्थ का अध्याय ।

वर्णका— (स्त्री०) [वर्णक + टाप्] मुश्क, कस्तूरी । रंग । रंगन, । लबादा ।

वर्णन—(न०), **वर्णना** -(स्त्री०) [√वर्ण् +ल्युट्] [√वर्ण् +णिच् + ल्युट्] चित्रण । रँगने की क्रिया । निरूपण । लेखन । बयान । श्लाघा, सराहना ।

वर्णसि—(पुं०)[√वृ+असि, धातोः नुक्] पानी, जल ।

वर्णाट—(पुं०) [वर्ण √ अट् + अच्] चितेरा, रंगसाज । गवैया । स्त्री की आमदनी से निर्वाह करने वाला व्यक्ति ।

वर्णि—(न०) [√वर्ण् +इन्] सोना ।

वर्णिक—(पुं०) [वर्ण +ठन्—इक्] लेखक । (वि०) वर्णसंबंधी । —**वृत्त**—(न०) दे० 'वर्णवृत्त' ।

वर्णिका—(स्त्री०) [वर्ण + ठन् —टाप्] अभिनयकर्त्ता का परिच्छद । रंग । रोगन । स्याही । कलम ।

वर्णित—(वि०) [√ वर्ण् + क्त] रँगा हुआ । रोगन किया हुआ । निरूपित ।

वर्णन किया हुआ। प्रशंसित, सराहा हुआ।

वर्णिन्—(वि०) [वर्ण + इनि] रंग या रूप सम्पन्न। किसी वर्ण या जाति का। (पुं०) चितेरा। रँगसाज। लेखक। ब्रह्मचारी; 'वर्णाश्रमाणां गुरवे स वर्णी विचक्षणः प्रस्तुतमाचचक्षे' र० ५.१६। मुख्य चार वर्णों में से किसी वर्ण का पुरुष।—**लिङ्गिन्**-(वि०) ब्रह्मचारी का बनावटी रूप धारण किये हुए [यथा—'स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ, युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचरः ॥' —किरातार्जुनीय]।

वर्णिनी—(स्त्री०) [वर्णिन्+ङीप्] वनिता। चार वर्णों में से किसी भी वर्ण की स्त्री। हल्दी।

वर्णु—(पुं०) [√ वृ + णु सच नित्] सूर्य।

वर्ण्य—(वि०) [√वर्ण् + ण्यत्] वर्णन करने योग्य। (न०) कुङ्कुम, केसर।

वर्त—(पुं०) [√वृत्+घञ्] आजीविका। —**जन्मन्**-(पुं०) बादल।—**लोह**-(न०) काँसा।

वर्तक—(वि०) [√वृत् + ण्वुल्] रहने वाला। जिसका अस्तित्व हो। अनुरक्त। (पुं०)बटेर। घोड़े का खुर।(न०) काँसा।

वर्तका—(स्त्री०)[वर्तक+टाप्]मादा बटेर।

वर्तन—(वि०) [√वृत्+ल्यु] रहने वाला। जीवित। अचल। (न०) [√ वृत् +ल्युट्] ठहरना। जीवित रहने का ढंग। निर्वाह। आजीविका। पेशा, धंधा। चरित्र। व्यवहार। मजदूरी, वेतन। तकुआ। गेंद। चक्कर खाना। ऐंठा। फेर-फार। पीसना। वटलोई। (पुं०) [√ वृत्+ल्यु] बौना। कौआ। विष्णु।

वर्तनि—(पुं०) [√वृत् + अनि] भारत का पूर्वी अंचल, पूर्वी देश। स्तव, स्तोत्र। (स्त्री०) रास्ता, मार्ग।

वर्तनी—(स्त्री०) [वर्तनि+ङीप्] रास्ता, मार्ग। [वर्तन+ङीप्] जीवन, जिंदगी। कूटना, पीसना। तकुआ।

वर्तमान—(वि०) [√वृत् + शानच्, मुक्] विद्यमान, मौजूद। जीवधारी, जिंदा। घूमने वाला, फिरने वाला। (पुं०) व्याकरण में क्रिया के तीन कालों में से एक जिसके द्वारा सूचित किया जाता है कि, क्रिया अभी चल रही है और समाप्त नहीं हुई।

वर्तरूक—(पुं०) [वर्त√रा+ऊक]पोखर। भँवर। कौवे का घोंसला। द्वारपाल। एक नदी का नाम।

वर्ति, वर्ती—(स्त्री०) [√वृत् + इन्] [वर्ति +ङीष्] लैंप या दीपक की बत्ती। घाव में भरने की बत्ती। घाव पर बाँधने की एक तरह की पट्टी। अंजन; 'इयममृतवर्तिर्नयनयोः' उत्त० १.३८। उबटन। कपड़े के छोर पर की झालर। गले की सूजन। जादू का दीपक। बर्तन के चारों ओर बाहर निकला हुआ किनारा। जर्राही औजार। धारी, रेखा।

वर्तिक—(पुं०) [√वृत् +तिकन् वा वर्त +ठन्] बटेर।

वर्तिका—(स्त्री०) [वर्ति + कन् —टाप्] चितेरे की कूँची; 'तदुपनय चित्रफलकं चित्रवर्तिकाश्च'। दीपक की बत्ती। रंग। रोगन। [वर्तिक+टाप्, इत्व] बटेर। अजशृङ्गी।

वर्तिन्—(वि०) [स्त्री०—**वर्तिनी**] [√ वृत् + णिनि] स्थित रहने वाला। वर्त्तनशील। घूमने वाला।

वर्तिर, वर्तीर—(पुं०) [√वृत् + इरच्, पक्षे पृषो० दीर्घ] बटेर।

वर्तिष्णु—(वि०) [√वृत् + इष्णुच्] रहने वाला। घूमने वाला। गोल, चक्करदार।

वर्तुल--(वि०) [√ वृत् + उलच्] गोलाकार, गोल। (पुं०) मटर। गद। (न०) चक्कर, वृत्त, परिधि।

वर्त्मन्--(न०) [√वृत् +मनिन्] मार्ग, रास्ता। लीक। (आलं०) चलन, रस्म। स्थान। आश्रय। पलक। किनारा, कोर। --**पात**-(पुं०) रास्ता भटक जाना।--**बन्ध**,-- **बन्धक**- (पुं०) पलकों का रोग विशेष।

वर्त्मनि, **वर्त्मनी**--(स्त्री०) [√ वृत् +अनि, मुडागम] [वर्त्मन्+ङीष्] रास्ता, सड़क।

√**वर्ध्**--चु० उभ० सक० विभाजित करना। काटना। कतरना। भरना, परिपूर्ण करना। वर्धयति--ते, वर्धयिष्यति--ते,अववर्धत्--त]।

वर्ध--(न०) [√वर्ध् + अच्] सीसा। सिंदूर। (पुं०) [√वर्ध् +घञ्] काट, तराश। विभाजन। [√वध् + घञ्] वृद्धि।

वर्धक--(वि०) [√वृध् +ण्वुल्] बढ़ने वाला। [√वृध् +णिच् +ण्वुल्] बढ़ाने वाला। [√वृध्+णिच्+ण्वुल्] बढ़ाने, काटने, तराशने वाला। (पुं०) बढ़ई।

वर्धकि, **वर्धकिन्**-- (पुं०) [√ वर्ध् + अच्, वर्ध √कष्+डि] [√वर्ध् +अच्+कन्+इनि] बढ़ई, तक्षक।

र्धन--(वि०) [√वृध् + ल्यु] बढ़ने वाला, उन्नति करने वाला। (न०) [√वृध् +ल्युट्] वृद्धि, बढ़ती। उन्नयन। [√वर्ध् +ल्युट्] काटना। कतरना। छीलना। पूर्ति। विभाजन। (पुं०) [√ वृध्+णिच् +ल्यु] समृद्धिदाता। वह दाँत जो दाँत के ऊपर उगता है। शिव जी।

वर्धनी--(स्त्री०) [वर्धन + ङीप्] झाड़ू। विशिष्ट रूप-सम्पन्न जलघट।

वर्धमान--(वि०) [√वृध् + शानच्, मुक्]बढ़ने वाला, बढ़ता हुआ। (पुं०, न०) विशेष रूप की बनी तश्तरी या पात्र। तांत्रिक चित्र। घर जिसका दरवाजा दक्षिण दिशा की ओर न हो। (पुं०) रेंड़ी का पौधा। पहेली, बुझौवल। विष्णु का नाम। बंगाल के एक जले का नाम (वर्दवान जिला)।

वर्धमानक--(पुं०) [वर्धमान +कन्] छोटा पात्र या ढक्कन, कसोरा। एरण्ड वृक्ष।

वर्धापन--(न०) [√वर्ध्+णिच्, आपुक् +ल्युट्] काटना। तराशना। विभाजन। नाड़ा काटने की क्रिया या इसका संस्कार विशेष, नालच्छेदन संस्कार। वर्षगाँठ का उत्सव। कोई भी उत्सव।

वर्धित--(वि०) [√वृध् + णिच्+क्त] बढ़ाया हुआ। [√वर्ध् +क्त] कटा हुआ। भरा हुआ।

वर्धिष्णु--(वि०) [√ वृध् +इष्णुच्] बढ़ने वाला।

वर्ध्र--(न०) [√वर्ध् + रन्] चमड़े का तसमा। चमड़ा। सीसा।

वर्ध्रिका, **वर्ध्री**--(स्त्री०) [वर्ध्री + कन् --टाप्, ह्रस्व] [वर्ध्र +ङीष्] चमड़े की पेटी, बद्धी। बद्धी नाम का गहना।

वर्मण--(पुं०) नारंगी का पेड़।

वर्मन्-- (न०) [वृणोति आच्छादयति शरीरम्, √वृ+मनिन्] कवच, बख्तर; 'वर्मभिः पवनोद्धूतराजतालीवनध्वनिः' र० ४.५६। छाल। (पुं०) क्षत्रिय की उपाधि।--**हर**- (वि०) कवचधारी। इतना तरुण कि जो कवच धारण करने या युद्ध में भाग लेने को समर्थ हो।

वर्मि--(पुं०) मत्स्य विशेष, बामी मछली।

वर्मित--(वि०) [वर्मन् + णिच्+क्त वा वर्मन्+इतच्] कवचधारी।

वर्य--(वि०) [√ वृ + यत्] चुनने योग्य। सर्वोत्तम। प्रधान; 'अन्वीतः स कतिपयैः किरातवर्यैः' कि० १२.५४। (पुं०) कामदेव।

वर्या—(स्त्री०) [वर्य—टाप्] वह लड़की जो स्वयं अपना पति वरण करे। लड़की।

वर्वट—(न०) वोड़ा, लोविया।

वर्वणा—(स्त्री०) [वर् इति अव्यक्तशव्देन वणति शव्दायते, वर् √वण् +अच्—टाप्] नीली मक्खी।

वर्वर—(वि०) [√वृ+ष्वरच्] छल्लेदार। अस्पष्ट। (पुं०) एक देश। वर्वर देश का निवासी। नीच जाति। मूर्ख जन। पतित व्यक्ति। घुंघराले वाल। हथियारों की खटापटी या झंकार। नृत्य का एक ढंग। (न०) गोपीचन्दन, पीलाचन्दन। हिंगुल, इंगुर। लोवान।

वर्वरक—(न०) [वर्वर + कन्] चन्दन विशेष।

वर्वरा, वर्वरी— (स्त्री०) [वर्वर + अच् —टाप्, पक्षे ङीष्] मक्खी विशेष। वनतुलसी।

वर्वरीक—(पुं०) [√वृ + ईकन्, द्वित्व, रुक् आगम] घुंघराले वाल। वनतुलसी। भारंगी, ब्राह्मणयष्टिका।

वर्वि—(वि०) [√ वृ + विन्] चटोरा। पेटू।

वर्वुर, वर्वूर—(पुं०) [√वृ + वुरच् पक्षे वूरच् (वा०) ववूल का पेड़।

वर्ष—(पुं०, न०)[√वृष् +अच् वा√वृ +स] वर्षा, पानी की झड़ी। छिड़काव। वीर्य का वहाव या ढरकाव। साल। पुराणानुसार सात द्वीपों का एक विभाग। किसी द्वीप का प्रधान भाग, जैसे—भारतवर्ष। वादल (केवल पुं० में)।—अंश(वर्षांश),—अंशक (वर्षांशक). —अङ्ग (वर्षाङ्ग)—(पुं०) मास, महीना।—अम्वु (वर्षाम्वु)—(न०) वृष्टि का जल।—अयुत (वर्षायुत) —(न०) दस हजार।—अर्चिस् (वर्षार्चिस्) —(पुं०) मङ्गलग्रह।—अवसान (वर्षावसान)—(न०) शरद्ऋतु।—आघोष (वर्षाघोष)—(पुं०) मेढक।—आमद (वर्षामद)—(पुं०) मयूर, मोर।—उपल (वर्षोपल)—(पुं०) ओला।—कर—(पुं०)वादल।—करी— (स्त्री०) झींगुर। —कोश,—कोष—(पुं०) मास। ज्योतिषी। —गिरि, —पर्वत —(पुं०) पृथ्वी का वर्षों में विभाग करने वाला पहाड़— हिमालय, हेमकूट, निषध, मेरु, चैत्र, कर्णी और शृङ्गी।—ज (वर्षज)—(वि०) वरसात में उत्पन्न।—धर—(पुं०) वादल। पहाड़। वर्ष का शासक। अंतःपुर का रक्षक, खोजा।— प्रतिवन्ध— (पुं०) सूखा, अनावृष्टि।—प्रिय —(पुं०) चातक पक्षी।—वर—(पुं०) [वर्षस्य रेतो वर्षणस्य वरः आवरकः] नपुंसक, हिजड़ा।— वृद्धि—(स्त्री०) जन्मतिथि। वयोवृद्धि।— शत—(न०) शताव्दी, सौ वर्ष।—सहस्र—(न०)एक हजार वर्ष।

वर्षक—(वि०) [√वृष्+ण्वुल्]वरसनेवाला।

वर्षण—(न०) [√वृष् +ल्युट्] वरसना। वर्षा, वृष्टि। छिड़काव।

वर्षणि—(स्त्री०) [√वृष् +अनि] वृष्टि। यज्ञ। क्रिया। वर्तन, व्यवहार।

वर्षा—(स्त्री०) [वर्ष + [अच्—टाप्] वरसात, वर्षा ऋतु। [वृष्+ अ —टाप्] वृष्टि।—काल —(पुं०) वरसाती मौसम। —भू— (पुं०) मेढक। वीरवहूटी, इन्द्रगोप।—भू, —भ्वी— (स्त्री०) मेढकी। पुनर्नवा। केंचुवा। —रात्र—(पुं०) वर्षाऋतु।

वार्षिक—(वि०) [वर्ष वा वर्षा+ष्णिक्] वर्ष या वर्षा सम्वन्धी। (न०) अगर की लकड़ी।

वर्षित—(न०) [√ वृष्+क्त)] वृष्टि, वर्षा।

वर्षिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन वृद्धः वृद्ध +इष्ठन्, वर्षादेश] वहुत वूढ़ा। वहुत मजवूत। सव से वड़ा।

वर्षीयस्—(वि० [**वर्षीयसी**] [अतिशयेन वृद्धः वृद्ध+ईयसुन वर्षादेश । बहुत बूढ़ा या पुराना । दृढ़तर ।

वर्षुक—(वि०) [स्त्री०—**वर्षुकी**] [√वृष्+उकञ्] बरसने वाला; 'वर्षुकस्य किमपः कृतोन्नतेरम्बुदस्य परिहायमूषरं' शि० १४.४६ । पानी उड़ेलने वाला ।—**अब्द** (**वर्षुकाब्द**),—**अम्बुद** (**वर्षुकाम्बुद**) –(पुं०) जल बरसाने वला, बादल ।

वर्ष्म—(न०) [√वृष् + मन्] शरीर ।

वर्ष्मन्—(न०) √वृष् + मनिन्] शरीर, देह । परिमाण; 'गजवर्ष्म किरातेभ्यः शशंसुर्देवदारवः' र० ४.७६ । ऊँचाई । सुन्दर रूप ।

वर्ह्, वर्ह्, वर्हण, वर्हिण, वर्हिन्, वर्हिस्—दे० '**बर्ह्, बर्ह्, बर्हण, बर्हिण, बर्हिन्, बर्हिस्**' ।

√**वल्**—भ्वा० आत्म० सक० अक० जाना । घूमना । बढ़ाना । (किसी ओर)आकर्षित होना । ढकना । लपेटना । घिर जाना, लपेटा जाना । वलते, वलिष्यते, अवलिष्ट ।

वलक्ष—दे० '**बलक्ष**' ।

वलग्न—(पुं० न०) [अवलग्न इत्यत्र अकारलोपः (भागुरिमते)] कमर ।

वलन—(न०) [√वल् + ल्युट्] घुमाव, फिराव । फेरा, कावा । ग्रह आदि का मार्ग से विचलित होकर चलना, वक्रगति ।

वलभि, वलभी—(स्त्री०) [वयते आच्छाद्यते, √वल्+अभि पक्षे ङीष्] घर के शिखर पर बना हुआ मंडप, चंद्रशाला । छप्पर का ठाठ । घर का सब से ऊंचा भाग । काठियावाड़ प्रान्त की एक प्राचीन नगरी का नाम ।

वलम्ब—[अवलम्ब इत्यत्र अकारलोपः (भागुरिमते)] दे० '**अवलम्ब**' ।

वलय—(पुं०, न०) [वल्+कयन्] कंकण । छल्ला । कमरपेटी, इजारबंद । घेरा । कुंज । दो-दो पंक्तियों की सैनिक स्थिति ।(पुं०) किनारा, छोर । गलगण्ड रोग विशेष ।

वलयित—(वि०) [वलय +णिच्+क्त वा वलय+इतच्] घेरा हुआ । लपेटा हुआ, वेष्टित ।

वलाक—दे० 'बलाक' ।

वलाकिन्—दे० 'बलाकिन्' ।

वलासक—(पुं०) कोयल । मेढक ।

वलाहक—दे० 'बलाहक' ।

वलि, वली—(स्त्री०) [√ वल्+इन्, पक्षे ङीष्]सिकुड़न, झुर्री । छप्पर की बड़ेरी । —**भृत्**– (वि०) घुंघराले ।—**मुख**,—**वदन** –(पुं०) वानर, बंदर । पेट में पड़ने वाला बल । चंदन आदि से बनाई हुई लकीर । श्रेणी, कतार ।

वलिक—(पुं०, न०) [वलि +कन्] ओलती ।

वलित—(वि०) [√ वल्+क्त] गतिशील । घूमा हुआ, मुड़ा हुआ । घिरा हुआ, लपेटा हुआ । झुर्री पड़ा हुआ । ढका हुआ । युक्त, सहित । (पुं०) काली मिर्च । नृत्य में हाथ मोड़ने की एक मुद्रा ।

वलिन, वलिभ—(वि०) [वलि + न] [वलि +भ] झुर्री पड़ा हुआ, सिकुड़नदार ।

वलिमत्—(वि०) [वलि + मतुप्] झुर्री पड़ा हुआ, सिकुड़नदार ।

वलिर—(वि०) [√ वल् +किरच्] ऐंचाताना, भैंड़ी आँख वाला ।

वलिश—(पुं०), **वलिशी**—(स्त्री०) [वलि √शो+क] [वलिश+ङीष्] बंसी, मछली पकड़ने का काँटा ।

वलीक—(न०) [√वल् + कीकन्] सरकंडा । ओलती ।

वलूक—(पुं०) [√वल्+ऊक]पक्षी विशेष । (न०) कमल की जड़, भसीड़ ।

वलूल—(वि०) [वल+लच्, ऊङ] वलशाली । हृष्टपुष्ट ।

√वल्क्—चु० पर० सक० बोलना । देखना । वल्कयति, वल्कयिष्यति, अववल्कत् ।

वल्क—(पुं०, न०) [√वल्+क] पेड़ की छाल, वल्कल; 'स वल्कवासांसि तवाधुना-हरन् करोति मन्युं न कथं धनञ्जयः' कि० १.३५ । मछली के शरीर का आवरण या पपड़ी । खण्ड, टुकड़ा ।—**त** –(पुं०) सुपाड़ी का वृक्ष ।—**लोध्र**– (पुं०) पठानी लोध ।

वल्कल—(न०, पुं०) [√वल् + कलन्] वृक्ष की छाल । छाल के बने वस्त्र; 'इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी' कु० श० १.२० ।— **संवीत**–(वि०) वल्कलवस्त्रधारी ।

वल्कवत्—(वि०) [वल्क+मतुप्] वल्कयुक्त । (पुं०) मछली जिसके शरीर पर पपड़ी हो ।

वल्किल—(पुं०) [वल्क + इलच्] काँटा ।

वल्कुट—(न०) छाल ।

√वल्ग्—भ्वा० पर० सक० अक० जाना । हिलना । उछलना । नाचना । प्रसन्न होना । खाना, भोजन करना । डींगें मारना, शेखी बघारना । वल्गति, वल्गिष्यति, अवल्गीत् ।

वल्गन—(स्त्री०) [√ वल्ग् +ल्युट्] गप्प हाँकना । (घोड़े की) दुलकी चाल ।

वल्गा—(स्त्री०) [√ वल्ग् + अच्–टाप्] लगाम, रास ।

वल्गित—(वि०) [√वल्ग् + क्त] कूदा हुआ, उछला हुआ । नाचा हुआ । (न०) घोड़े की दुलकी या सरपट चाल । डींग, शेखी ।

वल्गु—(वि०) [√ वल+उ, गुक् आगम] मनोहर, मनोज्ञ, चित्ताकर्षक । मधुर । वेशकीमती, बहुमूल्यवान् । (पुं०) बकरा ।—**पत्र**–(पुं०) वनमूंग ।

वल्गुक—(वि०) [वल्गु + कन्] सुन्दर, मनोहर । (न०) चन्दन । कीमत । जंगल ।

वल्गुल—(पुं०) [√वल्ग् + उल] शृगाल, गीदड़ ।

वल्गुलिका—(स्त्री०) [वल्गुल + कन् –टाप्, इत्व] कत्थई रंग का पतंग जाति का कीट जिसका दूसरा नाम तैलपायी है । मंजूषा, पेटी, पिटारा ।

√वल्भ्—भ्वा० आत्म० सक० खाना, भक्षण करना । वल्भते, वल्भिष्यते, अवल्भिष्ट ।

वल्मिक, वल्मिकि—(पुं०, न०) [=वल्मीक, पृषो० साधुः] बिमौट ।

वल्मी—(स्त्री०) [√वल्+अच्, मुम् नि० –ङीष्] दीमक, चींटी ।—**कूट**–(न०) दीमकों को लगाया हुआ मिट्टी का ढेर ।

वल्मीक—(पुं०, न०) [√वल+कीकन्, मुम्] दीमकों का बनाया हुआ मिट्टी का ढेर, बिमौट । (पुं०) शरीर के कतिपय अंगों की सूजन । आदिकवि वाल्मीकि ।—**शीर्ष**– (न०) लालसुर्मा, स्रोताञ्जन ।

वल्ल्—भ्वा० आत्म० सक० ढकना । गमन करना । वल्लते, वल्लिष्यते, अवल्लिष्ट ।

वल्ल–(पुं०) [√वल्ल् + अच्] चादर । गिलाफ । तीन घुंघची के बराबर की तौल । दूसरी तौल जिसमें एक या डेढ़ घुंघची पड़ती है । वर्जन, निषेध ।

वल्लकी—(स्त्री०) [√वल्ल्+क्वुन्–ङीष्] वीणा; 'अजस्रमास्फालितवल्लकीगुणक्षतोज्ज्वलाङ्गुष्ठनखांशुभिन्नया' शि० १.९ । सलई का पेड़ ।

वल्लभ—(वि०) [√वल्ल्+अभच्] प्यारा । प्रधान, सर्वोपरि । (पुं०) प्रेमी । पति । अध्यक्ष । प्रधान गोप । शुभलक्षणयुक्त अश्व ।—**आचार्य** (वल्लभाचार्य) –(पुं०) चार वैष्णव सम्प्रदायों में से एक

सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य का नाम।—पाल–(पुं०) घोड़े का सईस।

वल्लभायित—(न०) [वल्लभ + क्यङ +क्त] रतिक्रिया का आसन विशेष।

वल्लरि, वल्लरी—(स्त्री०) [√वल्ल +क्विप्, वल्ल्√ऋ+इ, पक्षे ङीष्] लता, बेल 'अनपायिनि संश्रयद्रुमे गजभग्ने पतनाय वल्लरी' कु० ४.३१। मंजरी। मेथी। वच।

वल्लव—(पुं०) [स्त्री०—**वल्लवी**] [वल्ल√ वा+क] गोप। भीमसेन। रसोइया।

वल्लि—(स्त्री०) [√ वल्ल्+इन्] बेल। पृथिवी।—**दूर्वा**– (स्त्री०) प्रकार की घास।

वल्ली—(स्त्री०) [वल्लि+ङीष्] लता। कैवर्तमुस्ता। अजमोदा। चई। सारिवा। अग्निदमनी। कृष्ण अपराजिता। गुडुच।—ज– (न०) मिर्च।—**वृक्ष**– (पुं०) साल का पेड़।

वल्लुर—(न०) [√वल्ल् + उरच्] लताकुञ्ज, लतामण्डप। पवन। मंजरी। अनजुता खेत। रेगिस्तान, वीरान। सूखी मछली। फूलों का गुच्छा।

वल्लूर—(पुं०) [√वल्ल् +ऊरच्] सूखा मांस। जंगली शूकर का मांस। ऊसर। जंगल। उजाड़। खाड़ी जमीन।

वल्ल्या—(स्त्री०) आँवले का पेड़, धात्रीवृक्ष।

√वल्ह्—भ्वा० आत्म० अक० प्रसिद्ध होना। सक० ढकना। मारना। बोलना। देना। वल्हते, वल्हिष्यते, अवल्हिष्ट।

वल्हिक, वल्हीक—(पुं०) बलख देश और वहाँ का अधिवासी।

√वश्—अ० पर० सक० चाहना। अनुकंपा करना। अक० चमकना। वष्टि, वशिष्यति, अवाशीत्—अवशीत्।

वश—(पुं, न०) [√वश् + अप्] इच्छा कामना, अभिलाषा। सङ्कल्प। शक्ति प्रभाव। प्रभुत्व, स्वामित्व, अधिकार उत्पत्ति। (पुं०) डियों का चकला, रंडीखाना। (वि०) काबू में आया हुआ, अधीन। आज्ञानुवर्ती। नीचा दिखलाया हुआ। जादू-टोने से मुग्ध किया हुआ। —**अनुग** (**वशानुग**,), —**वर्तिन्**–(पुं०) नौकर।–**आढ्यक** (**वशाढ्यक**)–(पुं०) सूंस, शिशुमार।—**गा**–(स्त्री०) आज्ञाकारिणी स्त्री।

वशंवद—(वि०) [वश √ वद् + खच्, मुम्] वशीभूत, वशवर्ती; 'सा ददर्श गुरुहर्षवशंवदवदनमनङ्गनिवासम्' गीत० ११। आज्ञाकारी।

वशका—(स्त्री०) [वश √कै+क—टाप्] आज्ञाकारिणी स्त्री।

वशा–(स्त्री०) [√वश्+अच्—टाप्] औरत। पत्नी। लड़की। ननद। पति की बहन। गौ। बाँझ स्त्री। बाँझ गौ। हथिनी।

वशि—(पुं०) [√वश् +इन्] अधीनता। मनोमोहकता। (न०) वशित्व।

वशिक—(वि०) [वश + ठन्] शून्यरहित। रीता, खाली।

वशिका—(स्त्री०) [वशिक+टाप्] अगरु की लकड़ी।

वशिन्—(वि०) [स्त्री०—**वशिनी**] [वश +इनि] अपने को वश में रखने वाला। वश में किया हुआ। शक्तिशाली।

वशिनी—(स्त्री०) [वशिन्+ङीप्] शमी या छेंकुर का पेड़।

वशिर—(न०) [√वश् +किरच्] समुद्री नमक। गजपिप्पली। एक प्रकार की लाल मिर्च। अपामार्ग। बच।

वशिष्ठ—(पुं०) [वशवतां वशिनां श्रेष्ठः, वशवत् + इष्ठन्, मतोर्लुक्, वा वरिष्ठ पृषो० साधुः] दे० 'वसिष्ठ'।

वश्य—(वि०) [वश + यत्] वश करने योग्य। वश में किया हुआ, जीता हुआ। आज्ञाकारी। अवलम्बित। (न०) लवंग। (पुं०) दास, अनुचर।

वश्यका—(स्त्री०) [वश्य+कन् —टाप्] दे० 'वश्या'।

वश्या—(स्त्री०) [वश्य+ टाप्] आज्ञाकारिणी स्त्री।

√वष्—भ्वा० पर० सक० अनिष्ट करना। वध करना। वषति, वषिष्यति, अवाषीत्—अवषीत्।

वषट्—(अव्य०) [√वह् + डषटि] एक शब्द जिसका उच्चारण अग्नि में आहुति देते समय यज्ञों में किया जाता है। [यथा —इन्द्राय वषट्। पूष्णे वषट्]।—**कर्तृ**- (पुं०) ऋत्विज् जो वषट् उच्चारण-पूर्वक आहुति दे।

√वष्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। वष्कते, वष्किष्यते, अवष्किष्ट।

वष्कय—(पुं०) [√वष्क् + अयन्] एक वर्ष का वछड़ा।

वष्कयणी, वष्कयिणी—(स्त्री०) [वष्कय √नी +क्विप्—ङीप्, णत्व] [वष्कय +इनि —ङीप्, णत्व] चिरप्रसूता गौ, वहुत दिनों की व्याही हुई गौ या वह गाय जिसका वछड़ा वहुत वड़ा हो गया हो. वकेना गाय।

√वस्—भ्वा० पर० अक० वसना, निवास करना। वसति, वत्स्यति, अवात्सीत्। अ० आत्म० सक० ढकना। वस्ते, वसिष्यते, अवसिष्ट। दि० पर० सक० रोकना। वस्यति, वसिष्यति, अवसत्। चु० पर० सक० स्नेह करना। काटना। अपहरण करना। अक० निवास करना वासयति, वासयिष्यति, अवीवसत्।

वसति, वसती—(स्त्री०) [√वस् +अति, पक्षे ङीप्] रहाइस, वास। घर, वासा, डेरा। आधार। शिविर। रात (जब सब लोग अपनी-अपनी यात्रा वंद कर टिक जाते हैं); 'तस्य मार्गवशादेका वभूव वसतिर्यतः' र० १५.११। वस्ती, आवादी।

वसन—(न०) [√वस् + ल्युट्] वास, रहना। घर, वासा। वस्त्रधारण करने की क्रिया। वस्त्र, परिधान। करधनी, स्त्रियों की कमर का एक आभूषण।

वसन्त—(पुं०) [√वस् + झच्—अन्तादेश] वर्ष की छः ऋतुओं में से प्रथम ऋतु, जिसके अन्तर्गत चैत्र और वैशाख मास हैं, मौसम, वहार। मूर्तिमान् ऋतु जो कामदेव का सखा माना गया है। अतीसार रोग। शीतला या चेचक की वीमारी। मसूरिका रोग।—उत्सव (वसन्तोत्सव)-(पुं०) उत्सव विशेष जो प्राचीन काल में वसन्त-पञ्चमी के अगले दिन मनाया जाता था। इसी उत्सव का दूसरा नाम "मद नोत्सव" है। आधुनिक पण्डित होली के उत्सव को ही वसन्तोत्सव कहते हैं।—घोषिन्-(पुं०) कोयल।—जा-(स्त्री०) वासन्ती या माधवी लता। वसन्तोत्सव।—तिलक-(पुं०, न०) वसन्त का आभूषण। 'फुल्लं वसन्ततिलकं तिलकं वनाल्याः।'— छन्दोमञ्जरी।—तिलक—(पुं०, न०),—तिलका—(स्त्री०)— एक वर्णवृत्त जिसके चरण में तगण, भगण, जगण, जगण और दो गुरु—इस तरह सव मिलाकर चौदह वर्ण होते हैं। दूत—(पुं०) कोयल चैत्र मास। आम का वृक्ष। पंचमराग। —दूती-(स्त्री०) पाटली वृक्ष। माधवी लता। कोयल। —द्रु,—द्रुम-(पुं०) आम का पेड़।—पञ्चमी-(स्त्री०) माघशुक्ला ५ मी।—वन्धु,—सख-(पुं०) कामदेव का नाम।

वसा—(स्त्री) [√वस् (आच्छादने) + अच्—टाप्] मेद, चरवी। मस्तिष्क।—आढ्य (वसा य),—आढ्यक (वसाढ्यक)

(पुं०) सूंस या शिशुमार।—पायिन्-(पु०) कुत्ता।

वसि—(पुं०) [√वस्+इन्] वस्त्र। वासा, डेरा, रहने का स्थान।

वसित—(वि०) [√वस्+क्त] पहिना हुआ, धारण किया हुआ। बसा हुआ। जमा किया हुआ। (अनाज)।

वसिर—(न०) [√वस्+किरच्] समुद्री नमक। (पुं०) गजपिप्पली। लाल चिचड़ा। जलनीन।

वसिष्ठ—(पुं०) [इसका साधु रूप वशिष्ठ है] एक प्रसिद्ध प्राचीन ऋषि जो सूर्यवंशी राजाओं के पुरोहित थे। एक स्मृतिकार ऋषि का नाम।

वसु—(न०) [√वस्+उ] धनदौलत; 'वसु तस्यविभोर्न केवलं गुणवत्तापि परप्रयोजना' र० ८-३१ रत्न, जवाहर। सुवर्ण। जल। पदार्थ, वस्तु। लवण-विशेष। एक जड़ी। (पुं०) एक श्रेणी के देवताओं की संज्ञा। वसु आ माने गये हैं) उनके नाम हैं—आप, ध्रुव, सोम, धर, या धव, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास। कहीं कहीं 'आप' के बजाय "अह" भी लिखा पाया जाता है)। आठ की संख्या। कुवेर का नाम। शिवजी का नाम। अग्नि का नाम। एक वृक्ष। एक झील या सरोवर। लगाम, रास। जुवा बाँधने की रस्सी। बागडोर। किरण। सूर्य।—**ओकसारा** (**वस्वौकसारा**)—(स्त्री०) इन्द्र की अमरावती पुरी का नाम। कुबेर की अलकापुरी का नाम। अमरावती और अलकापुरी में बहने वाली एक नदी का नाम।**क्रमि,—कीट**—(पुं०) भिक्षुक, भिखारी।—**दा**—(स्त्री०) पृथवी।—**देव**—(पुं०) श्रीकृष्ण के पिता का नाम।—०**सुत**-(पुं०) श्रीकृष्ण —**देवता,—देव्या**-स्त्री०) धनिष्ठा नक्षत्र। —**धर्मिका**-(स्त्री०) बिल्लौर।—**धा**-(स्त्री०) पृथिवी।—**धारा**-(स्त्री०) कुबेर की राजधानी। —**प्रभा**—(स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक का नाम।—**प्राण**-(पुं०) अग्नि-देव।—**रेतस्**-(पुं०) शिव। अग्नि।—**श्रेष्ठ**-(न०) चाँदी।—**षेण**।—(पुं०) कर्ण का नाम।—**स्थली**-(स्त्री०) कुबेर की नगरी का नाम।।—**हंस**-(पुं०) वसुदेव के एक पुत्र का नाम।—**हट्ट**,—**हट्टक**-(पुं०) वक वृक्ष, अगस्त का पेड़।

वसुक—(पुं०) [वसु√कै+क] मदार का पौधा। बड़ी मौलसिरी। पीली मूंग। (न०) साँभर नमक। पांशु लवण। क्षार लवण। बथुआ। काला अगर।

वसुन्धरा—(स्त्री०) [वसूनि धारयति, वसु√धृ+णिच्+खच्, ह्रस्व, मुम्—टाप्] पृथिवी; 'नानारत्ना वसुन्धरा' र. ४७ श्वफल्क की पुत्री, साम्ब की पत्नी।

वसुमत्—(वि०) [वसु+मतुप्] धनी, धनवान्।

वसुमती—(स्त्री०) [वसुमत्+ङीप्] पृथिवी; 'वसुमत्या हि नृपाः कलत्रिणः' र.८.८२

वसुल—(पुं०) [वसु√ला+क] देवता।

वसूक—(न०) [=वसुक, पृषो० साधुः] साँभर नमक। अगस्त का पेड़।

वसूरा—(स्त्री०) [√वस्+ऊरच्—टाप्] वेश्या, रंडी।

वस्क—(पुं०) [√वस्क्+घञ् भावे] गमन। अध्यवसाय, मिहनत।

वस्कराटिका—(स्त्री०) बीछी।

वस्त्√—चु० उभ० सक० मार डालना। माँगना। जाना। वस्तयति-ते, वस्तयिष्यति -ते, अववस्तत्-त।

वस्त—(पुं०) [वस्त्+घञ्] बकरा। (न०) [√वस्त्+अच्] रहने का स्थान, बासा, डेरा।

वस्तक—(न०) [वस्त√के+क] बनावटी नमक, कृत्रिम लवण।

वस्ति—(पुं०,स्त्री०) [√वस्+ति] निवास। कपड़े का छोर। पेट की नाभि के नीचे का भाग, पेड़ू। मूत्राशय। पिचकारी।—**कर्मन्**-(न०) लिंग, गुदा आदि में पिचकारी देना।—**मल**-(न०) मूत्र, पेशाब।—**शिरस्**-(न०) पिचकारी की नली।—**शोधन**-(न०) मूत्राशय साफ करने वाली दवा। मैनफल।

वस्तु—(न०) [√वस्+तुन्] वह जिसका अस्तित्व हो, वह जिसकी सत्ता हो। पदार्थ, चीज। धन-दौलत, वास्तविक सम्पत्ति। वे साधन या सामग्री जिससे कोई चीज बनी हो। किसी नाटक का कथानक। किसी काव्य की कथा। किसी वस्तु का सार। खाका, ढाँचा। . **अभाव** (**वस्त्वभाव**)-(पुं०) वास्तविकता का अभाव या राहित्य। धन-सम्पत्ति का नाश।—**रचना**-(स्त्री०) शैली। कथा-वस्तु का विकास।—**वाद**-(पुं०) एक दार्शनिक सिद्धान्त जिसमें जगत् जैसा दृश्य है, उसी रूप में उसकी सत्ता मानी जाती है। **शून्य**-(वि०) द्रव्य से रहित। जिसमें यथार्थता न हो, नकली।

वस्तुतस्—(अव्य०) [वस्तु+तस्] दरहकीकत, वास्तव में, दरअसल में। यथार्थतः।

वस्त्य—(न०) [वस्ति+यत्] घर, वासा, डेरा।

वस्त्र—(न०) [वस्यते आच्छाद्यते अनेन, √वस्+ष्ट्रन्] कपड़ा। पोशाक, परिच्छद। **अगार**— (**वस्त्रागार**)-(पुं०, न०),—**गृह**-(न०) खेमा, तंबू, कनात। कपड़े की दूकान।—**अञ्चल** (**वस्त्राञ्चल**),—**अन्त** (**वस्त्रान्त**)-(पुं०) कपड़े का छोर।—**कुट्टिम**-(न०) तंबू। छाता।—**गोपन**-(न०) ६४ कलाओं में से एक।—**ग्रन्थि**-(पुं०) धोती की गाँठ जो नाभि के पास लगती है। नीवी, नाड़ा, इजारबन्द।—**दशा** -स्त्री० कपड़े की किनारी।—**धारणी**-(स्त्री०) अलगनी।—**निर्णेजक**-(पुं०) धोबी। —**परिधान**-(न०) पोशाक पहिनना।—**पुत्रिका**-(स्त्री०) गुड़िया, पुतली।—**पूत**-(वि०) कपड़े में छना हुआ; 'वस्त्रपूतं पिबेज्जलं' मनु०।—**भेदक**,—**भेदिन्**-(पुं०) दर्जी।—**योनि**-(पुं०) रुई या जिससे कपड़ा बना हो।—**रञ्जन**-(न०) कुसुम का फूल।

वस्न—(न०) [√वस्+नन्] भाड़ा। मजदूरी (इस अर्थ में यह शब्द पुंलिंग भी है)। वास। धन। वसन, वस्त्र। चमड़ा। मूल्य। मृत्यु।

वस्नन—(न०) [√वस्+नन] पटुका, कमरबंद, करधनी।

वस्नसा—(स्त्री०) [वस्नं चर्म सीव्यति, वस्न √सिव्+ड—टाप्] स्नायु। नस।

√वह्—भ्वा० उभ० सक० ले जाना, ढोना। आगे बढ़वाना। जाकर लाना। समर्थन करना। निकाल ले जाना। विवाह करना। अधिकार में कर लेना, कब्जा कर लेना। प्रदर्शित करना, दिखलाना। रखवाली करना। खबर लेना। अनुभव करना। सहना। वहति-ते, वक्ष्यति-ते, अवाक्षीत् —अवोढ।

वह—(पुं०)—[वह्+अ वा अच्] ले जाने की क्रिया। बैल का कंधा। वाहन, सवारी। विशेष कर घोड़ा। पवन। मार्ग। नद। चार द्रोण भर का एक नाप।

वहत—(पुं०) [√वह+अतच्] यात्री। बैल।

वहति—[√वह्+अति] बैल। पवन। मित्र। परामर्शदाता, सलाहकार।

वहती, वहा—(स्त्री०) [वहति+ङीष्] [√वह+अच्—टाप्] नदी। चश्मा, सोता।

वहतु—(पुं०) [√वह+अतु] बैल। बटोही

वहन—(न०) [√वह्+ल्युट्] ले जाना। पहुँचाना। समर्थन। वहाव। सवारी। नाव, वेड़ा।

वहन्त—(पुं०) [वहति वाति,√वह+झच (कर्तरि)] हवा। [उह्यते, √ वह+झच् (कर्मणि)] वच्चा।

वहल—दे० 'बहल'।

वहला—दे० 'बहला'।

वहित्र, वहित्रक—(न०) **वहिनी**-(स्त्री०) [√वह्+इत्र] [वहित्र+कन्] [वह+इनि—ङीप्] वेड़ा, नाव; । 'प्रत्यूषस्यदृश्यत किमपि वहित्रम्' दश०, जहाज, पोत।

वहिस्—(अव्य०) दे० 'वहिस्'

वहिष्क—वि०) वाहरी, वाहर का।

वहीरु—(पुं) शिरा। स्नायु । पु ्ट ।

वहेडुक—(पुं०) वडेड़ा या विभीतक का पेड़।

वह्नि—(पुं०) [√वह्+नि]अग्नि, आग। अन्न पचाने या जो खाया जाय उसे पचाने वाली शक्ति। भूख। सवारी। जोते जाने वाले पशु। चित्रक, चीता। भिलावाँ। रेफ (तंत्र)। तीन की संख्या। देवता। मरुत्। सोम। कृष्ण का एक पुत्र। तुर्वसु के पुत्र का नाम। पुरोहित। आठवाँ कल्प। —**कर**- (वि०) जलाने वाला। भूख वढ़ाने वाला।—**काष्ठ**-(न०) अगर की लकड़ी।—**गर्भ**-(पुं०) बाँस। शमी का पेड़। **दीपक** -(पुं०) कुसुंभ का पेड़।—**भोग्य**-(न०) घी।—**मारक**-(न०) जल। **मित्र**-(पुं०) पवन।—**रेतस्**-(पुं०) शिव जी।—**लोह**,—**लोहक**-(न०) ताँवा।—**वल्लभ**-(पुं०) राल।—**बीज**-(न०) सुवर्ण। नीबू।—**शिख**-(न०) केसर। कुसुंभ।—**सख**-(पुं०) पवन।—**संज्ञक**-(पुं०) चित्रक का पेड़।

वह्य—(न०) [√वह्+यत्]गाड़ी। सवारी कोई भी।

√वा—अ० पर० सक० फूंकना। जाना। आघात करना। अनिष्ट करना। वाति, वास्यति, अवासीत्।

वा—(अव्य) [√वा+क्विप्] या, अथवा; 'जातं मन्ये तुहिनमथितां पद्मिनीं वान्यरूपां' मे.८३। और, तथा। जैसा, सदृश। उपमा। वितर्क। पादपूरण। निश्चय। नानार्थ। विश्वास।

वांश—(वि०) [स्त्री०—**वांशी**] [वंश+ +अण्] बाँस का बना हुआ।

वांशी—(स्त्री०) [वांश+ङी ्]वंसलोचन।

वांशिक—(पुं०) [वंश+ठक्] बाँस काटने वाला। वंसी वजाने वाला।

वाक—(न०) [वक+अण्] बगलों का समूह। वगलों की उड़ान। (वि०) वक सम्बन्धी, वगलों का। (पुं०) [√वच्+घञ्] वाक्य। कहना। वेद का एक भाग।

वाकुल—'वाकुल'।

वाक्य—(न०) [√वच्+ण्यत्] व्याकरण के नियमों के अनुसार क्रम से लगा हुआ वह सार्थक शव्द-समूह जिसके द्वारा किसी पर अपना अभिप्राय प्रकट किया जाता है। कथन। आदेश। सिद्धान्त। साक्ष्य। तर्क। —**पदीय**-(न०) एक ग्रन्थ का नाम जो भर्तृहरि का बनाया हुआ वतलाया जाता है। —**पद्धति**-(स्त्री०) वाक्यरचना की विधि। —**भेद**-(पुं०) मीमांसा के एक ही वाक्य का एक ही काल में परस्पर विरोधी अर्थ करना।

वागर—(पुं०) [वाचा इर्यति गच्छति, वाच् √ऋ+अच्] ऋषि। विद्वान् ब्राह्मण। मुमुक्षु। वीर पुरुष। सान रखने का पत्थर। रोक। निर्णय। वाड़वानल। भेड़िया।

वागा—(स्त्री०) वागडोर, लगाम, रास।

वागुरा—(स्त्री०) [√वा+उरच्, गुक् आगम—टाप्]फंदा,जाल; 'को वा दुर्जनवागुरासु पतितः क्षेमेण यातः पुमान्' पं० १।—

वृत्ति—(स्त्री०) जंगली जीवों को पकड़ कर आजीविका चलाना। (पुं०) बहेलिया।

वागुरिक—(पुं०) [वागुरा+ठक्] बहेलिया, हिरन पकड़ने वाला, व्याधा।

वाग्मिन्—(वि०) [प्रशस्ता वाक् अस्ति अस्य, वाच्+ग्मिनि] अच्छा बोलने वाला; भाषण-पटु। (पुं०) वक्ता, वाक्पटु मनुष्य। बृहस्पति का नाम। विष्णु।

वाग्य—(वि०) [वाचं परिमितं वाक्यं याति गच्छति, वाच्√या+क] कम बोलने वाला। बोलते समय सावधानी करने वाला। यथार्थ या सत्य कहने वाला। (पुं०) लज्जाशीलता, विनम्रता।

वाङ्क—(पुं०) समुद्र।

वाङ्क्ष्—भ्वा० पर० सक० अभिलाषा करना, इच्छा करना। वाङ्क्षति, वाङ्क्षिष्यति, अवाङ्क्षीत्।

वाङ्मय—(वि०) [स्त्री०—**वाङ्मयी**। [वाच्+मयट्] वाक्यात्मक, वचन सम्बन्धी। वाणीसम्पन्न। वाक्पटु। (न०) गद्य-पद्यात्मक वाक्य आदि जो पठन-पाठन का विषय हों, साहित्य।

वाङ्मयी—(स्त्री०) [वाङ्मय+ङीप्] सरस्वती देवी।

वाच्—(स्त्री०) [उच्यतेऽसौ अनया वा, √वच्+क्विप्, दीर्घ असम्प्रसारण] शब्द, ध्वनि; वाणी, भाषा। कहावत, कहतूत। बयान। वादा। सरस्वती का नाम।—**अर्थ** (**वागर्थ**)-(पुं०) शब्द और उसका अर्थ।—**आडम्बर** (**वागाडम्बर**)-(पुं०) वाणी का आडम्बर, बहु-वाक्यता।—**आत्मन्** (**वागात्मन्**)-(वि०) शब्दों से सम्पन्न।—**ईश** (**वागीश**)—(पुं०) वाग्मी, वक्ता। बृहस्पति का नामान्तर। ब्रह्मा;।—'वागीशं वाग्भिरर्थ्याभिः प्रणिपत्योपतस्थिरे' कु. २.३।—**ईश्वर** (**वागीश्वर**)-(पुं०) वाक्पटु, वक्ता।—**ईश्वरी** (**वागीश्वरी**)-(स्त्री०) सरस्वती।—**ऋषभ** (**वागृषभ**)-(पुं०) वाक्पटु या विद्वान् पुरुष।—**कलह** (**वाक्कलह**)-(पुं०) झगड़ा, टंटा, वाग्युद्ध।—**कीर** (**वाक्कीर**)-(पुं०) पत्नी का भाई, साला।—**गुद** (**वाग्गुद**)-(पुं०) पक्षी विशेष।—**गुलि** (**वाग्गुलि**),—**गुलिक** (**वाग्गुलिक**)-पुं०) राजा का वह अनुचर जो उसको पान का बीड़ा खिलाया करे।—**चपल** (**वाक्चपल**)-(वि०) वक्की, बातूनी।—**छल** (**वाक्छल**)-(न०) बहाना, टालमटूल वाली बात। काकु के सहारे वितंडा खड़ा करना।—**जाल** (**वाग्जाल**)-(न०) कोरी बातचीत।—**दण्ड** (**वाग्दण्ड**)-(पुं०) धिक्कार; फटकार। वाक्संयम।—**दत्त** (**वाग्दत्त**)-(वि०) जिसको देने की बात कह दी गई हो।—**दत्ता** (**वाग्दत्ता**)-(स्त्री०) सगाई की हुई क्वारी लड़की।—**दल** (**वाग्दल**)-(न०) ओठ।—**दान** (**वाग्दान**)-(न०) सगाई, मँगनी।—**दुष्ट** (**वाग्दुष्ट**)-(वि०) गाली-गलौज से भरा हुआ। वह जो व्याकरण के नियमों के विरुद्ध अशुद्ध भाषा का प्रयोग करे। (पुं०) निन्दक। वह ब्राह्मण जिसका यज्ञोपवीत समय पर न हुआ हो।—**देवता** (**वाग्देवता**),—**देवी** (**वाग्देवी**)-(स्त्री०) सरस्वती देवी।—**दोष** (**वाग्दोष**)-(पुं०) गाली। निन्दा। व्याकरण-विरुद्ध भाषण।—**निश्चय** (**वाङ्निश्चय**)-(पुं०) सगाई।—**निष्ठा** (**वाङ्निष्ठा**)-(स्त्री०) वचनबद्धता। विश्वासपात्रता।—**पटु** (**वाक्पटु**)-वि०) बात करने में चतुर।—**पति** (**वाक्पति**)-(पुं०) बृहस्पति।—**पारुष्य** (**वाक्पारुष्य**)-(न०) कठोर शब्द। गाली-गलौज। निन्दा।—**प्रचोदन** (**वाक्प्रचोदन**)-(न०) मौखिक आज्ञा।—**प्रतोद** (**वाक्प्रतोद**)-(पुं०) व्यङ्ग। कटाक्ष। आक्षेप।—**प्रलाप** (**वाक्प्रलाप**)-(पुं०) वाक्पटुता।—**मनस्** (**वाङ्मनस्**)-(वैदिक) वाणी और मन।—**मात्र**

(वाङ्मात्र)-(न०) शब्द मात्र।—मुख (वाङ्मुख)-(न०) भूमिका —यत (वाग्यत)—(वि०) मौन या वह जिसने अपनी वाणी को वश में कर रखा हो। —यम (वाग्यम)—(पुं०) वाणी पर संयम करने वाला, ऋषि, मुनि —याम (वाग्याम)-(पुं०) गूँगा आदमी।—युद्ध (वाग्युद्ध)-(न०)जबानी लड़ाई, गरम बहस या वाद-विवाद।—वज्र (वाग्वज्र)-(पुं०) शाप। कठोर शब्द।—विदग्ध (वाग्विदग्ध)-(वि०) वाक्पटु, बोल-चाल में निपुण।—विदग्धा (वाग्विदग्धा)-(स्त्री०) बातचीत करने में चतुर या मनोमोहिनी स्त्री।—विभव (वाग्विभव)-(पुं०) वर्णन करने की शक्ति।—विलास (वाग्विलास)-(पुं०) मौज, दिल-बहलाव के लिये बातचीत करना।—वैदग्ध्य (वाग्वैदग्ध्य)—(न०) भाषण, कथोपकथन में चतुरता। अलंकार और चमत्कारमयी उक्तियों में दक्षता, प्रवीणता।—व्यवहार (वाग्व्यवहार) (पुं०) मौखिक वादविवाद,-जबानी बहस।—व्यापार (वाग्व्यापार) (पुं०) बोलने की शैली या ढंग।—संयम (वाक्संयम)-(पुं०) वाणी का नियंत्रण।

वाच—(पुं०) [√वच्+णिच्+अच्] मछली। मदन नामक पौधा।

वाचंयम—(वि०) [वाचो वाक्यात् यच्छति विरमति,वाच्√यम्+खच्, नि० अम्]जबान बन्द रखने वाला, मौनी। (पुं०) मौन रहने वाला मुनि।

वाचक—(पुं०) [वक्ति अभिधावृत्त्या बोधयति अर्थान् √वच्+ण्वुल्√ शब्द; प्रकृति और प्रत्यय द्वारा शब्द वाचक होता है। [√वच्+णिच्+ण्वुल्] पुराण आदि बाँचने वाला व्यक्ति। (वि०) सूचक, बताने वाला।

वाचन—(न०) [√वच्+णिच्+ल्युट्] बाँचना। पढ़ने में प्रवृत्त करना। बताना। प्रतिपादन।

वाचनकं—(न०) [वाचन √कै+क] पहेली।

वाचनिक—(वि०) [स्त्री०—वाचनिकी] [वचन+ठक्] मौखिक, शब्दों द्वारा प्रकटित।

वाचस्पति—(पुं०) [वाचः पतिः, अलुक् स०] 'वाणी का प्रभु'; देवगुरु बृहस्पति की उपाधि। सोम। प्रजापति। सुवक्ता।

वाचस्पत्य—(न०) [वाचस्पति+ष्यञ्] वाक्पटुता। सुंदर भाषण।; 'तदूरीकृत्य कृतिभिर्वाचस्पत्यं प्रतायते' शि. २.३०

वाचा—(स्त्री०) [वाच्+टाप्] वाणी। शब्द। सिद्धान्त, स्मृति या श्रुतिवाक्य। शपथ।

वाचाट—(वि०) [कुत्सितं बहु भाषते, वाच्+आटच्] बातूनी, बकवकी। डींग मारने वाला।

वाचाल—(वि०) [कुत्सितं बहु भाषते, वाच्+आलच्] बकवादी, व्यर्थ बकने वाला।

वाचिक—(वि०) [स्त्री०—वाचिकी, वाचिका] [वाच्+ठक्] वाणी सम्बन्धी। शाब्दिक, मौखिक। (न०) जबानी संदेसा, मौखिक सूचना। समाचार, खबर।

वाचोयुक्ति—(व०) [वाचो युक्तिः यस्य, ब० स०, षठ्या अलुक् ?] वाक्पटु। (स्त्री०) [वाचो युक्तिः, ष० त०, षष्ठ्या अलुक्] वाणी की युक्ति या औचित्य। अच्छा भाषण।

वाच्य—(वि०) [√वच्+ण्यत्] कहने योग्य। शाब्दिक संकेत द्वारा जिसका बोध हो, अभिधेय। दोषी ठहराने लायक। (न०) कलंक। भर्त्सना। निन्दा। अभिधा द्वारा बोधगम्य अर्थ। क्रिया का वाच्य

(कर्मवाच्य, कर्तृवाच्य) ।—**वज्र**-(न०) कठोर शब्द।

वाज—(पुं०) [√वज्+घञ्] पर, डैना। तीर में लगे हुए पर। युद्ध, संग्राम। वेग। ध्वनि। (न०) घी। श्राद्धपिण्ड। भोज्य पदार्थ। जल। वह स्तव या मंत्र जिसको पढ़ कर कोई यज्ञ समाप्त किया जाय।—**पेय**-(पुं०, न०) एक प्रसिद्ध यज्ञ जो सात श्रौत यज्ञों में पाँचवाँ है।—**सन**-(पुं०) श्री विष्णु भगवान् का नाम। शिव।—**सनि**-(पुं०) सूर्य।

वाजसनेय—(पुं०) [वाजसनिः सूर्यस्य छात्रः, वाजसनि+ढक्] यजुर्वेद की एक शाखा। याज्ञवल्क्य ऋषि जिनके नाम से शुक्लयजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता प्रसिद्ध है।

वाजसनेयिन्—(पुं०) [वाजसनेय + इनि] शुक्लयजुर्वेदी।

वाजिन्—(पुं०) [वाज+इनि— घोड़ा; 'हरिं विदित्वा हरिभिश्च वाजिभिः' र० ३.४३। तीर। पक्षी। शुक्ल यजुर्वेदी।—**मेध**-(पुं०) अश्वमेध यज्ञ।—**शाला**-(स्त्री०) अस्तबल।

वाजीकर—(वि०) [वाज+च्वि√कृ+अच्] मनुष्य में वीर्य और पुंस्त्व की वृद्धि करने वाला।

वाजीकरण—(न०) [वाज+च्वि√कृ+ल्युट्] आयुर्वेदिक वह प्रयोग जिससे मनुष्य में वीर्य और पुंस्त्व की वृद्धि होती है।

वाञ्छ्—भ्वा० पर० सक० चाहना, इच्छा करना। वाञ्छति, वाञ्छिष्यति, अवाञ्छीत्।

वाञ्छन—(न०) [√वाञ्छ् + ल्युट्] चाहना, कामना करना।

वाञ्छा—(स्त्री०) [√वाञ्छ्+अ-टाप्] इच्छा, अभिलाषा।

वाञ्छित—(वि०) [√वाञ्छ्+क्त] चाहा हुआ, अभिलषित; 'न वाञ्छितं सिध्यति कल्पपादपे' सु०। (न०) कामना, इच्छा, अभिलाषा।

वाञ्छिन्—(वि०) [√वाञ्छ्+णिनि] चाहने वाला, कामना करने वाला, इच्छा करने वाला। लंपट, कामुक।

वाट—(पुं०, न०) [√वट्+घञ्] घेरा, हाता। बाग, उद्यान। लतामण्डप। मार्ग, रास्ता। कमर, कटि। अन्नविशेष।—**धान**-(पुं०) ब्राह्मणी माता और कर्महीन या नाम-मात्र के ब्राह्मण से उत्पन्न एक पतित या संकर जाति।

वाटिका—(स्त्री०) [√वट्+ण्वुल्-टाप्, इत्व] फुलबगिया। वह भूखण्ड जिस पर कोई इमारत या भवन खड़ा हो।

वाटी—(स्त्री०) [वाट+ङीष्] वह भूखण्ड जिस पर कोई भवन खड़ा हो। घर, डेरा। आँगन। घेरा। बाग, उपवन। मार्ग। कमर, कटि। अनाज विशेष।

वाट्या—(स्त्री०), **वाट्याल**—(पुं०), **वाट्याली**—(स्त्री०) [वाट्या वास्तुप्रदेशे हिता, वाटी+यत्—टाप्] [वाटीम् अलति भूषयति वाटी√अल्+अण] [वाट्याल +ङीष्] अतिबला नाम का पौधा।

√वाड्—भ्वा० आत्म० अक० स्नान करना, गोता लगाना। वाडते, वाडिष्यते, अवाडिष्ट।

वाडव—(पुं०) [वडवाया घोटक्या जातः, वडवा+अण्] वडवानल। [वाडं यज्ञान्तः-स्नानं वाति प्राप्नोति, वाड√वा+क] ब्राह्मण। (न०) वडवानां समूहः वडवा + अण] घोड़ियों का समुदाय।—**अग्नि** (**वाडवाग्नि**),—**अनल** (**वाडवानल**)-(पुं०) समुद्र के भीतर की आग।

वाडवेय—(पुं०) [वडवा+ढक्] वडवानल घोड़ा। अश्विनीकुमार।

वाडव्य—(न०) [वाडव+यत्] ब्राह्मण-समुदाय।

वाढ—(वि०) [वह्+क्त, नि० साधुः] दृढ़। अतिशय। उच्चस्वरयुक्त।

वाढम्—(अव्य०) [√वह्+क्त, पृषो० मुम्] हाँ! बहुत अधिक। बस। अवश्यमेव।

वाणि—(स्त्री०) [√वण्+इण्] बुनना, बुनावट। करघा।

वाणिज—(पुं०) [वणिज्+अण् (स्वार्थे)] व्यापारी, सौदागर।

वाणिज्य—(न०) [वणिज्+ष्यञ्] वनिज, व्यापार।

वाणिनी—(स्त्री०) [√वण्+णिनि—ङीप्] चालाक औरत। नर्तकी, अभिनेत्री। शराब के नशे में चूर स्त्री; यस्मिन्नहीं शासति वाणिनीनां निद्रां विहारार्धपथे गतानाम्' र. ६.७५। स्वेच्छाचारिणी या व्यभिचारिणी स्त्री।

वाणी—(स्त्री०) [√वण्+इण्—ङीप्] वचन, शब्द, भाषा। वाचाशक्ति; वाण्येका समलंकरोति पुरुषं' भर्तृ. २.१९। नाद, ध्वनि, स्वर। साहित्यिक निबन्ध। प्रशंसा। सरस्वती देवी।

√वात्—चु० उभ० सक० फूँकना, धोंकना। हवा करना, पंखा करना। परिचर्या करना। प्रसन्न करना। जाना। वातयति-ते, वातयिष्यति-ते, अववातत्-त।

वात—(वि०) [√वा+क्त] उड़ाया हुआ, फूँका हुआ। अभिलषित। आहत। आक्रान्त। (पुं०) वायु, हवा। वायु का अधिष्ठातृ देवता, पवनदेव। शरीरस्थ कफ, वात और पित्त, में से दूसरा। गठिया रोग। [√वात्+अच्] उपपति, प्रेमी। —**अट (वाताट)**-(पुं०) वातमृग, बारहसिंगा। सूर्य के घोड़ों में से एक। —**अण्ड (वाताण्ड)**-(पुं०) अण्डकोष की सूजन। —**अय (वाताय)**-(न०) पत्ता। —**अयन (वातायन)**-(पुं०) घोड़ा। (न०) खिड़की, झरोखा। बरसाती। फर्श, गच। —**अयु (वातायु)**-(पुं०) बारहसिंगा। —**अश्व (वाताश्व)**-(पुं०) तेज घोड़ा। —**आमोदा (वातामोदा)**-(स्त्री०) मुश्क, कस्तूरी। —**आलि (वातालि)**—(स्त्री०) भँवर। —**आहत (वाताहत)**-(वि०) वायु से ताड़ित। गठिया से ग्रस्त। —**आयहति (वाताहति)**-(स्त्री०) पवन का प्रचण्ड झोंका। —**ऋद्धि (वातर्द्धि)**-(स्त्री०) वायुवृद्धि। गदा। काठ का डंडा। लोहे की मूठ वाली छड़ी। —**कर्मन्**—(न०) अपान वायु निकालने की क्रिया। —**कुण्डलिका**-(स्त्री०) मूत्र रोग विशेष जिसमें रोगी को पेशाब करने में पीड़ा होती है। और बूँद-बूँद करके पेशाब निकलता है। —**कुम्भ**-(पुं०) हाथी के मस्तक का भाग विशेष। —**केतु**-(पुं०) धूल। —**केलि**-(पुं०) प्रेमरसपूर्ण अलाप। उपपति के दाँतों या नखों का घाव। —**गुल्म**-(पुं०) अंधड़। गठिया। —**ज्वर**-(पुं०) वात से होने वाला ज्वर। —**ध्वज**-(पुं०) बादल। —**पुत्र**-(पुं०) हनुमान्। भीम। —**पोथ**, —**पोथक**-(पुं०) पलाश वृक्ष। —**प्रमी**-(पुं०) तेज दौड़ने वाला हिरन। —**मण्डली**-(स्त्री०) बवंडर, हवा का चक्कर। —**रक्त**, —**शोणित**-(न०) रोग विशेष। —**रङ्ग**-(पुं०) पीपल का पेड़। —**रूष**-(पुं०) आँधी, तूफान। इन्द्रधनुष। घूस, रिश्वत। —**रोग**, —**व्याधि**-(पुं०) गठिया। —**वसन**—(वि०) नंगा। —**वस्ति**-(पुं०) मूत्र का न उतरना। —**वृद्धि**-(स्त्री०) अण्डकोष की सूजन। —**शीर्ष**-(न०) पेड़ू, तरेट। —**सारथि**-(पुं०) अग्नि।

वातक—(पुं०) [वात+कन्] जार, आशिक, उपपति। अशनपर्णी।

वातकिन्—(वि०) [स्त्री०—**वातकिनी**] [वातोऽतिशयितोऽस्ति अस्य, वात+इनि, कुक्] गठिया वाला।

वातमज—(पुं०) [वातम् अभिमुखीकृत्य अजति गच्छति, वात√अज्+खश्, मुम्] तेज चलने वाला मृग।

वातर—(वि०) [वात√रा+क] तूफानी। तेज।—**अयण** (**वातरायण**)-पुं०) तीर। तीर की उड़ान। धनुष की टंकार। शृङ्ग, शिखर। आरा। [वातेन वायुजनितरोगेण रायति शब्दायते, वात√रै+ल्यु] नशे में चूर या पागल मनुष्य। निकम्मा आदमी। सरल नामक वृक्ष।

वातल—(वि०) [स्त्री०—**वातली**] [वात √ला+क] तूफानी, हवाई। वायुवर्द्धक। (पुं०) पवन। चना।

वातापि—(पुं०) अगस्त्य द्वारा पचाया हुआ। एक राक्षस।—**द्विष्**,—**सदन**,—**हन्**—(पुं०) अगस्त्य जी की उपाधियाँ।

वाति—(पुं०) [√वा+अति] सूर्य। हवा। चन्द्रमा।—**ग**,—**गम**-(पुं०) बैंगन। (**वातिङ्गण** का भी अर्थ भाँटा है)।

वातिक—(वि०) [स्त्री०—**वातिकी**] [वात +ठञ्] तूफानी, हवाई। गठिया वाला। पागल। (पुं०) वायु के प्रकोप से उत्पन्न ज्वर।

वातीय—(वि०) [वात+छ] हवाई। (न०) काँजी।

वातुल—(वि०) [वात+उलच्] वायु से पीड़ित, गठिया का रोगी। पागल, फिरे हुए मग्ज का। (पुं०) बगूला, बवंडर, वातावर्त।

वातुलि—(पुं०) [√वा+उलि, तुट्] बड़ा चमगादड़।

वातूल—(वि०) [वात+ऊलच्] दे० 'वातुल'।

वातृ—(पुं०) [√वा+तृच्] पवन, वायु।

वात्या—(स्त्री०) [वात+य—टाप्] आँधी, अंधड़, तूफान; 'अभ्यभावि भरताग्रजस्तया वात्ययेव पितकाननोत्थया' र. ११.१६। बगूला, बवंडर।

वात्सक—(न०) [वत्स+वुञ्] बछड़ों की हेड़, झुंड।

वात्सल्य—(न०) [वत्सल+ष्यञ्] स्नेह जो अपने से छोटों के प्रति होता है।

वात्सि, **वात्सी**—(स्त्री०) ब्राह्मण के वीर्य और शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न लड़की।

वात्स्यायन—(पुं०) [वत्सस्य गोत्रापत्यम्, वत्स+यञ्+फक्] कामसूत्र के बनाने वाले का नाम। न्यायसूत्रों पर भाष्य रचयिता का नाम।

वाद—(पुं०) [√वद्+घञ्] बातचीत। वाणी। शब्द, वचन। कथन। वर्णन। निरूपण। वाद-विवाद, शास्त्रार्थ, खण्डन-मण्डन। 'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः' सुभा० उत्तर। टीका, व्याख्या। भाष्य। किसी पक्ष के तत्त्वज्ञों द्वारा निश्चित सिद्धान्त, वसूल। ध्वनि। अफवाह। अर्जीदावा।—**अनुवाद** (**वादानुवाद**)-(पुं०) अर्जीदावा और उसका जवाब। विवाद, बहस।—**ग्रस्त**-(वि०) झगड़े में पड़ा हुआ।—**प्रतिवाद** (पुं०) शास्त्रार्थ।

वादक—(वि०) [√वद्+णिच्+ण्वुल्] बजाने वाला। [√वद्+ण्वुल्] बोलने वाला।

वादन—(न०) [वद्+णिच्+ल्युट्] बजाने की क्रिया, बाजा बजाना।

वादर—(वि०) [स्त्री०—**वादरी**] [बदरायाः कार्पास्याः विकारः, बदरा+अण्] रुई का बना हुआ। (न०) सूती कपड़ा।

वादरङ्ग—(पुं०) [बादर√गम्+खच्, डित्] अश्वत्थ वृक्ष, पीपल का पेड़।

वादरा—(स्त्री०) [बदरवत् फलम् अस्ति अस्याः, बदर+अण्—टाप्] कपास का पौधा।

वादरायण—दे० '**बादरायण**'।

वादाल—(पुं०) [वात√ला+क, पृषो० साधुः] सहस्रदंष्ट्र नामक मछली।

वादि—(वि०) [वादयति व्यक्तम् उच्चारयति, √वद्+णिच्+इञ्] विद्वान्। निपुण।

वादित—(वि०) [√वद्+णिच्+क्त] बजाया हुआ।

वादित्र—(न०) [√वद्+णिच्+णित्र] बाजा। वादन।

वादिन्—(न०) [√वद्+णिनि] बोलने वाला। विवाद-कर्ता। (पुं०) वक्ता। वादी, मुद्दई। भाष्यकार। शिक्षक।

वादिश—(पुं०) विद्वान्, पण्डित। ऋषि।

वाद्य—(न०)[√वद्+णिच्+यत्] बाजा। बाजे का स्वर बजाना।—**कर**-(पुं०) बाजा बजाने वाला।—**निर्घोष**—(पुं०) बाजे का स्वर।—**भाण्ड**-(न०) मृदङ्गादि बाजे।

वाघुक्य, वाघूक्य—(न०) [वघु (घू)+यत्, कुक्] विवाह, परिणय।

वाध्रीणस—(पुं०) [=वार्ध्रीणस, पृषो० साधुः] गैंडा।

वान—(वि०) [वन+अण्] जंगली या जंगल का। (न०, पुं०) [√ॅ (शोषणे) +क्त, तस्य नत्वम्] सूखा या सुखाया हुआ फल। (न०) [√वा+ल्युट्]फूलना। रहना। घूमना। सुगन्ध द्रव्य। तरंगों का उठना, वातोर्मि। दीवार का छद। सुरंग। [√वे+ल्युट्] बुनने की क्रिया। बाना। चटाई। [वन+अण्] वनों का समूह।

वानप्रस्थ—(पुं०) [वनप्रस्थ+अण्] आर्यों के चार आश्रमों में से तीसरा। इस आश्रम में प्रविष्ट व्यक्ति। [वाने वनसमूहे प्रतिष्ठति, वान—प्र√स्था+क] महुए का पेड़। पलाश वृक्ष।

वानर—(पुं०) [वा विकल्पितो नरः अथवा वानं वने भवं फलादिकं राति, वान√रा+क]बंदर।—**अक्ष (वानराक्ष)**-(पुं०) जंगली बकरा।—**आघात (वानराघात)**-(पुं०) लोध्रवृक्ष।—**इन्द्र (वानरेन्द्र)**-(पुं०) सुग्रीव या हनुमान।—**प्रिय**-(पुं०) खिरनी का पेड़।

वानल—(पुं०) [वानं वनभावं निविडतां लाति, वान√ला+क] श्यामा तुलसी।

वानस्पत्य—(पुं०) [वनस्पति+ष्य] वह वृक्ष जिसमें बौर लगने पर फल लगे, यथा आम।

वाना—(स्त्री०) बटेर।

वानायु—(पुं०) [=वनायु, पृषो० साधुः] भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिम में अवस्थित देश-विशेष।

वानीर—(पुं०) [√वन्+ईरन्+अण्] बेंत। पाकर का पेड़।

वानीरक—(पुं०) [वानीर+कन्] मूँज तृण।

वानेय—(न०) [वन+ढञ्] कैवर्त मुस्तक, केवटी मोथा।

वान्त—(वि०) [√वम्+क्त] वमन किया हुआ, उगला हुआ। (न०) वमन। वमन किया हुआ पदार्थ।—**अद (वान्ताद)**-(पुं०) कुत्ता।

वान्ति—(स्त्री०) [√वम्+क्तिन्] वमन। उगाल।—**कृत्,—द**-(वि०) वमन कराने वाला। (पुं०) मैनफल का पेड़।

वान्या—(स्त्री०) [वन+यत्—टाप्] वन-समूह।

वाप—(पुं०) [√वप्+घञ्] बोना। बुनना। मुण्डन। खेत।—**दण्ड**-(पुं०) करघा।

वापन—(न०)[√वप्+णिच्+ल्युट्]बुवाई। मुण्डन।

वापित—(वि०) [√वप्+णिच्+क्त]बोया हुआ। मूँड़ा हुआ।

वापि, वापी—(स्त्री०) [उप्यते पद्मादिकम् अस्याम्, √वप्+इञ्] [वापि+ङीष्] बावली, छोटा चौकोर जलाशय; 'वापी चास्मिन्मरकतशिलाबद्धसोपानमार्गा' मे.७६।—**ह**-(पुं०) चातकपक्षी।

वाम—(वि०) [√वम्+ण अथवा √वा +मन्] बायाँ; 'विलोचनं दक्षिणमञ्जनेन सम्भाव्य तद्वञ्चितवामनेत्रा' र.७.८। वामभाग स्थित। उल्टा। कुटिल स्वभाव का। दुष्ट। नीच। मनोज्ञ, मनोहर। कठोर, निर्दय। इच्छुक। (पुं०) कामदेव। शिव। वरुण। ऋचीक का एक पुत्र। कृष्ण का एक पुत्र। वामाचार। चंद्रमा के रथ का एक अश्व। कुच। वयुआ। बायाँ पार्श्व। बायाँ हाथ। प्राणी। सर्प। वमन। निषिद्ध कर्म। दुर्भाग्य। संकट। (न०) धन।—**आचार** (**वामाचार**)-(पुं०) तांत्रिकमत का एक भेद। [इसमें पञ्चमकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा, और मैथुन द्वारा उपास्य देव की आराधना की जाती है। इस मत वाले अपने को वीर, साधक आदि कहते हैं और विरोधियों को कंटक बतलाते हैं]।—**आवर्त** (**वामावर्त**)-(पुं०) वह शङ्ख जिसमें बाईं ओर का घुमाव या भँवरी हो। **ऊरु** (**वामोरु**),—**ऊरू** (**वामोरू**)—(स्त्री०) सुन्दर ऊरुओंवाली स्त्री। सुन्दरी स्त्री।—**देव**-(पुं०) गौतमगोत्रीय एक वैदिक ऋषि जो ऋग्वेद के चौथे मंडल के अधिकांश सूक्तों के द्रष्टा थे। दशरथ महाराज के एक मंत्री का नाम। शिवजी का नाम।—**मार्ग**—(पुं०) वेद-विहित दक्षिण मार्ग के प्रतिकूल तांत्रिक मत विशेष।—**लोचना**-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके नेत्र सुन्दर हों; 'विरूपाक्षस्य जयिनीस्ताः स्तुवे वामलोचनाः'।—**शील**-(पुं०) कामदेव की उपाधि।

वामक—(वि०) [वाम+कन्] बाँया। उल्टा। (न०) एक भावभंगी।

वामन—(वि०) [√वम्+णिच्+ल्यु] बौना, छोटे, डील का, ह्रस्व, खर्व। नम्र। नीच, कमीना। (पुं०) बौना आदमी। विष्णु भगवान् के पाँचवें अवतार का नाम। दक्षिण दिग्गज का नाम। काशिका वृत्ति के रचयिता का नाम। अंकोट वृक्ष का नाम।—**आकृति** (**वामनाकृति**)-(वि०) खर्वाकार।—**पुराण**-(न०) १८ पुराणों में से एक।

वामनिका—(स्त्री०) [वामनी+कन्—टाप्, ह्रस्व] बौनी स्त्री।

वामनी—(स्त्री०) [वामन+ङीष्] स्त्री जो बौने डील की हो। घोड़ी। स्त्री विशेष। एक योनि-रोग।

वामलूर—(पुं०) [वाम√लू+रक्] दीमकों द्वारा बनाया हुआ मिट्टी का टीला।

वामा—(स्त्री०) [वामति सौन्दर्यम्, √वम् +अण्—टाप् अथवा वामति प्रतिकूलमेवार्थं कथयति वा वामः कामोऽस्ति अस्याः, वाम +अच्—टाप्] रमणी। सुन्दरी स्त्री। गौरी। लक्ष्मी। सरस्वती।

वामिल—(वि०) [वाम+इलच्] सुन्दर, मनोहर। अभिमानी, अहंकारी। चालाक, दगाबाज।

वामी—(स्त्री०) [वाम+ङीष्] घोड़ी; 'अयोष्ट्रवामीशतवाहितार्थम्' र.५.३२। गधी। हथिनी। गीदड़।

वाय—(पुं०) [√वे+घञ्] बुनना, बुनावट। सिलाई।—**दण्ड**-(पुं०) जुलाहे का करघा।

वायक—(पुं०) [√वे+ण्वुल्] जुलाहा। ढेर, समुदाय।

वायन, वायनक—(न०) [√वे+णिच्+ल्युट्] [वायन+कन्] देवता के लिये मिष्टान्न का नैवेद्य। ब्राह्मण के लिये उद्यापन में मिष्टान्न का भोजन।

वायव—(वि०) [स्त्री०—**वायवी**] [वायु +अण्] वायु सम्बन्धी। वायु के कारण उत्पन्न। पश्चिमोत्तर।

वायवीय, वायव्य—(वि०) [वायु+छ] [वायु+यत्] पवन सम्बन्धी, हवाई। (पुं०) पश्चिमोत्तर कोण। स्वाती नक्षत्र।

वायुपुराण। एक अस्त्र।—**पुराण**-(न०) एक पुराण का नाम।

वायस—(पुं०) [√वय्+असच्, स च णित्, वृद्धि] काक, कौआ। अगरु काष्ठ। तारपीन। —**अराति** (**वायसाराति**),—**अरि** (**वायसारि**)-(पुं०) उल्लू।—**इक्षु** (**वायसेक्षु**)-काँस नामक घास।

वायु—(पुं०) [√वा+उण्, युक् आगम] हवा, पवन। पवन देव। शरीरस्थ पाँच प्रकार का वायु [प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान] पृथ्वी और अन्तरिक्ष में जो वायु चलता है, उसके सात भेद हैं—प्रवह, आवह, उद्वह, संवह, विवह, परिवह और परावह। फिर इनके एकज्योति, द्विज्योति, त्रिज्योति, आदि सात-सात सप्तक हैं। इस प्रकार वायु के उनचास भेद हो जाते हैं।—**आस्पद** (**वाय्वास्पद**)-(न०) आकाश, अन्तरिक्ष।—**केतु**-(पुं०) धूल, रज।—**कोण**-(पुं०) उत्तर पश्चिमी कोण।—**गण्ड**-(पुं०) पेट का फूलना जो अनपच के कारण हुआ हो।—**गुल्म**-(पुं०) आँधी, तूफान। बवंडर, बवूला।—**ग्रस्त**-(वि०) गठिया का रोगी।—**जात**,—**तनय**,—**नन्दन**,—**पुत्र**,—**सुत**,—**सूनु**-(पुं०) हनुमान् या भीम।—**दारु**-(पुं०) बादल।—**निघ्न** (वि०) पागल, सिड़ी, सनकी।—**पुराण**-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।—**फल**-(न०) ओला। इन्द्रधनुष।—**भक्ष**,—**भक्षण**,—**भुज्**-(पुं०) वायु पीकर रहने वाला, तपस्वी। सर्प।—**रोषा**-(स्त्री०) रात।—**वर्त्मन्**-(न०) आकाश।—**वाह**-(पुं०) धुआँ।—**वाहिनी**-(स्त्री०) शिरा, धमनी।—**सख**,—**सखि**-(पुं०) अग्नि।

वार्—(न०) [√वृ+णिच्+क्विप्] जल, पानी।—**आसन** (**वारासन**)-(न०) जल का कुण्ड।—**किटि** (**वाःकिटि**)-(पुं०) सूँस, शिशुमार।—**च**-(पुं०) [वार्√चर्+ड] हंस।—**द**-(पुं०) बादल।—**दर**-(न०) पानी। रेशम। वाणी। आम की गुठली। घोड़े की गरदन की भौंरी। शङ्ख।—**धि**-(पुं०) समुद्र।—०**भव**-(न०) नमक, लवण।—**पुष्प** (**वाःपुष्प**)-(न०) लौंग।—**भट**-(पुं०) मगर, घड़ियाल।—**मुच्**-(पुं०) बादल।—**राशि** (**वाराशि**)-(पुं०) समुद्र।—**वट**-(पुं०) नाव। जहाज।—**सदन** (**वाःसदन**)-(न०) जलकुण्ड, जल का हौद।—**स्थ** (**वाःस्थ**)-(वि०) जल में स्थित।

वार—(पुं०) [√वृ+णिच्+अच् वा √वृ+घञ्] ढकना। बड़ी संख्या। समुदाय। ढेर। झुंड। दिन; यथा—बुधवार आदि। बारी, दफा; 'शशकस्य वारः समायातः' पं० १। अवसर। द्वार, फाटक। नदी का सामने का तट, पल्लीपार। शिवजी। (न०) मद्यपात्र। जलराशि।—**अङ्गना** (**वाराङ्गना**),—**नारी**,—**युवति**,—**योषित्**,—**वनिता**,—**विलासिनी**,—**सुन्दरी**,—**स्त्री**-(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**कीर**-(पुं०) पत्नी का भाई, साला। वाडवानल। कंघी। जूँ। तुरंग। युद्ध का घोड़ा।—**वुषा**,—**वूषा**-(स्त्री०) केले का पेड़।—**मुख्या**-(स्त्री०) प्रधान वेश्या।—**बाण**,—**वाण**-(पुं०, न०) कवच, बखतर।—**वाणि**-(पुं०) बाँसुरी बजाने वाला। मुख्य गवैया। एक संवत्सर। न्यायकर्त्ता। (स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**वाणी**-(स्त्री०) रंडी।—**सेवा**-(स्त्री०) वेश्यापन, वेश्यावृत्ति। रंडियों का समुदाय।

वारक—(वि०) [√वृ+णिच्+ण्वुल्] अड़चन डालने वाला। रोकने वाला अवरोधक। (न०) वह स्थान जहाँ पीड़ा होती हो। एक गंधतृण, ह्रीवेर। (पुं०) अश्वविशेष। घोड़े की चाल।

वारकिन्—(पुं०) [वारक+इनि] विरोधी, शत्रु। समुद्र। शुभलक्षणों से युक्त

अश्व। पत्ते खाकर रहने वाला तपस्वी।

वारङ्क—(पुं०) पक्षी।

वारङ्ग—(पुं०) [√वृ+णिच्+अङ्गच्] तलवार की मूठ। एक औजार जिससे विनष्ट शल्य निकाला जाता था।

वारट—(न०) [√वृ+णिच्+अटच्] खेत। खेतों का समूह।

वारटा—(स्त्री०) [वारट+टाप्] हंसी।

वारण—(वि०) [स्त्री०—**वारणी**] [√वृ + णिच् + ल्यु] रोकने वाला, मना करने वाला। सामना करने वाला। (न०) [√वृ+णिच्+ल्युट्] रोक, रुकावट। अड़चन। सामना। बचाव, रक्षा। (पुं०) [√वृ+णिच्+ल्यु] हाथी; 'न भवति बिसतन्तुर्वारणं वारणानाम्' भर्तृ. २.१७। कवच।—**बुषा,—बुसा,—वल्लभा**—(स्त्री०) केले का पेड़।—**साह्वय**-(न०) हस्तिनापुर का नाम।

वारणसी—(स्त्री०) [वरणा च असी च नदीद्वयम् तस्य अदूरे भवा इत्यर्थे अण्, ङीप् पृषो० साधुः] =वाराणसी।

वारणावत—(पुं०) गंगातटवर्ती एक प्राचीन नगर जहाँ दुर्योधन ने पाँडवों के लिए लाक्षा-गृह का निर्माण कराया था।

वारत्र—(न०) [वरत्रा+अण्] चमड़े का तसमा।

वारंवार—(अव्य०) [√वृ+णमुल्, द्वित्व] कई बार, फिर-फिर।

वारला—(स्त्री०) [वार√ला+क—टाप्] वरैंया। हंसी। केला।

वाराणसी—(स्त्री०) [वरणा च असी च तयोः नद्योः अदूरे भवा इत्यर्थे अण्—ङीप्, पृषो० साधुः] काशीपुरी।

वारांनिधि—(पुं०) [वारां जलानां निधिः, अलुक् स०] समुद्र।

वाराह—(वि०) [स्त्री०—**वाराही**] [वराह+अण्] शूकर संबन्धी। वराहमिहिरकृत। (पुं०) शूकर। महापिण्डीतक वृक्ष। कृष्ण-मदनवृक्ष। जल-बेत, अम्बु-वेतस। एक देश।—**कल्प**-(पुं०) वर्तमान कल्प का नाम।—**पुराण**-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।

वाराही—(स्त्री०) [वाराह+ङीप्] सुअरी। पृथिवी। शूकर-रूपधारी विष्णु की शक्ति। माप विशेष। कँगनी। श्यामा पक्षी।—**कन्द**-(पुं०) एक प्रकार का महाकन्द जिसे गेंठी कहते हैं।

वारि—(न०) [वारयति तृषाम्,√वृ+णिच्+इञ्] जल। तरल पदार्थ। वालछड़ या ह्रीवेर। (स्त्री०) हाथी के बाँधने की रस्सी, जंजीर आदि। हाथी पकड़ने के लिये बनाया हुआ गढ़ा। गगरा। सरस्वती का नाम।—**ईश (वारीश)**—(पुं०) समुद्र।—**उद्भव (वार्युद्भव)**—(न०) कमल।—**ओकस् (वार्योकस्)**-(पुं०) जोंक, जलौका।—**कर्पूर**-(पुं०) हिलसा मछली।—**कृमि**-(पुं०) जोंक।—**चत्वर**-(पुं०) जलाशय। सिंघाड़ा।—**चर**-(वि०) पानी में रहने वाला जन्तु। (पुं०) मत्स्य। जलचर कोई भी जन्तु।—**ज**-(वि०) जल में उत्पन्न। (पुं०) शङ्ख। घोंघा। (न०) कमल। नमक विशेष। गौर सुवर्ण नामक पौधा। लवंग।—**तस्कर**-(पुं०) सूर्य। बादल।—**त्रा**-(स्त्री०) छतरी, छाता।—**द**-(पुं०) बादल।—**द्र**-(पुं०) चातक पक्षी।—**धर**-(पुं०) बादल।—**धि**-(पुं०) समुद्र।—**नाथ**-(पुं०) समुद्र। वरुण-देव। बादल।—**निधि**-(पुं०) समुद्र।—**पथ**-(पुं०, न०) जलमार्ग।—**प्रवाह**-(पुं०) जलधारा। जलप्रपात।—**मसि,—मुच्**—(पुं) बादल, मेघ।—**यन्त्र**-(न०) जल निकालने की कल। फौवारा।—**रथ**-(पुं०) नाव। जहाज।—**राशि**-(पुं०) समुद्र। जलसमूह।—**रुह**-(न०) कमल।—**वास**-

(पुं०) शराब बेचने वाला, कलाल।—वाह,—वाहन-(पुं०) बादल।—श-(पुं०) विष्णु भगवान्।—शास्त्र-(न०) गर्गमुनि-प्रणीत एक शास्त्र जिसमें वृष्टि के स्थान और समय का पता चल जाता है।—सम्भव-(पुं०) लवंग, लौंग। सुर्मा विशेष। उशीर, खस।

वारित—(वि०) √वृ+णिच्+क्त] रोका हुआ, अवरुद्ध। रक्षा किया हुआ, बचाया हुआ। —**वाम**— (वि०) निषिद्ध वस्तुओं के लिये लालायित।

वारी—(स्त्री०) [वार्यतेऽनया, √वृ+णिच्+इञ्—ङीप्] हाथी बाँधने की जंजीर; 'वारी वारैः सस्मरे वारणानाम्' शि. १८.५६ कलसी, छोटा गगरा।

वारीट—(पुं०) [वारी√इट्+क] हाथी।

वारु—(पुं०) [वारयति रिपून्, √वृ+णिच्+उण्] विजय कुञ्जर, वह हाथी जिस पर सेना की विजय पताका रहती है।

वारुठ—(पुं०) अन्तशय्या, मरणशय्या। वह टिकठी जिस पर मुर्दे को रखकर ले जाते हैं, अरथी।

वारुण—(वि०) [स्त्री०—**वारुणी**] [वरुण+अण्] वरुण सम्बन्धी। वरुण को समर्पित किया हुआ। (न०) जल। (पुं०) भारतवर्ष के नव खण्डों में से एक।

वारुणि—(पुं०) [वरुण+इञ्] अगस्त्य ऋषि। भृगु। वसिष्ठ। सत्यधृति। दँतैल हाथी। वरुण वृक्ष।

वारुणी—(स्त्री०) [वारुण+ङीप्] वरुण की स्त्री या पुत्री। पश्चिम दिशा। मदिरा, शराब। पयोऽपि शौण्डिकीहस्ते वारुणीत्यभिधीयते' हि. ३.११, शतभिषा नक्षत्र। दूब। उपनिषद् विद्या जिसका उपदेश वरुण ने किया था। घोड़े की एक चाल। हथिनी। इन्द्रवारुणी। शतभिषा नक्षत्र-युक्त चैत्र-कृष्णा त्रयोदशी। —**वल्लभ**-(पुं०) वरुण।

वारुण्ड—(पुं०) [√वृ+णिच्+उण्ड] नाग जाति का प्रधान। (पुं०, न०) आँख का मैल या कीचड़। कान का मैल या ठेठ। नाव का पानी उलीचने का पात्र।

वारेन्द्री—(स्त्री०) बंगाल के एक अंचल का नाम जिसका आधुनिक नाम राजशाही है।

वार्क्ष—(वि०) [स्त्री०—**वार्क्षी**] [वृक्ष+अण्] वृक्षों से सम्पन्न। (न०) वन, जंगल।

वार्णिक—(पुं०) [वर्ण+ठञ्] लेखक।

वार्ताक—(पुं०) **वार्ताकी**-(स्त्री०), **वार्ताकु**-(पुं०, स्त्री०) [√वृत्+काकु, अत्व, वृद्धि] [√वृत्+काकु, ईत्व, वृद्धि] [√वृत्+काकु, वृद्धि] बैंगन या भाँटे का पौधा।

वार्त्त—(वि०) [वृत्ति+ण] स्वस्थ, तंदुरुस्त। हल्का। कमजोर। असार। धंधा करने वाला, पेशे वाला। (न०) तंदुरुस्ती। पटुता। कल्याण; 'सर्वत्र नो वार्त्तमवेहि राजन्—' र. ५.१३।

वार्त्ता—(स्त्री०) [वार्त्त+टाप्] दुर्गा। वृत्तान्त, हाल। प्रसंग, विषय। बातचीत। जन-श्रुति, अफवाह। पेशा, आजीविका। वैश्यवृत्ति, वैश्य का धंधा (अर्थात् कृषि, वाणिज्य, गोरक्षा और कुसीद)। बैंगन का पौधा।—**वह**—(पुं०) दूत। पनसारी, वैवधिक। नीति-शास्त्र का आय-व्यय से संबद्ध भाग।—**वृत्ति**-(पुं०) जो किसानी पेशे से निर्वाह करता हो, गृहस्थ; विशेषकर वैश्य। —**हर**,—**हर्तृ**,—**हार**-(पुं०) दूत।

वार्त्तायन—(पुं०) [वार्त्तानाम् अयनम् अनेन] संवाददाता। जासूस। दूत।

वार्त्तिक—(वि०) [स्त्री०—**वार्त्तिकी**] [वार्त्ता+ठक्] वार्त्ता संबंधी। खबर लाने वाला। (पुं०) दूत। जासूस। किसान (न०) [वृत्ति+ठक्] किसी ग्रन्थ के उक्त, अनुक्त और दुरुक्त अर्थों को स्पष्ट करने वाला वाक्य या ग्रंथ। [वार्त्तिक और भाष्य में यह भेद है कि, भाष्य में केवल

मूल ग्रन्थ का आशय स्पष्ट किया जाता है, किन्तु वार्त्तिक में पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। वार्त्तिककार नयी बातें भी कह सकता है।]

वार्त्रघ्न—(पुं०) [वृत्रहन्+अण्] अर्जुन का नाम।

वार्दर—(न०) दक्षिणावर्त शंख। जल। घोड़े के गले की दाहिनी ओर की भौंरी। रेशम। कार्कचिचा ओषधि। भाषण।

वार्दल—(न०) बादलों से घिरा दिन। (स्त्री०) दवात।

वार्द्धक—(न०) [वृद्ध+वुञ्] बुढ़ापा, वृद्धावस्था; 'धृतं त्वया वार्द्धकशोभि वल्कलं' कु. ५.४४। बुढ़ापे के कारण उत्पन्न अङ्गशैथिल्य। वृद्धजनों का समुदाय।

वार्द्धक्य—(न०) [वार्द्धक+ष्यञ्] बुढ़ापा। बुढ़ापे की निर्बलता।

वार्द्धुषि, वार्द्धुषिक, वार्द्धुषिन्—(पुं०) [=वार्द्धुषिक, पृषो० कलोप] [वृद्ध्यर्थं द्रव्यं वृद्धिः तां प्रयच्छति, वृद्धि+ठक्, वृधुषि आदेश] [वार्द्धुष्य+इनि] सूदखोर, ब्याजखोर।

वार्द्धुष्य—(न०) [वार्द्धुषि+ष्यञ्] सूदखोरी।

वार्ध्र—(न०), **वार्ध्री**—(स्त्री०) [वार्ध्र+अण्] [वार्ध्र—ङीप्] चमड़े का तसमा।

वार्ध्रीणस—(पुं०) [वार्ध्रीव नासिका अस्य, ब० स०, अच्, नासिकायाः नसादेशः णत्वम्] वह बधिया बकरा जिसका रंग सफेद हो और कान इतने लंबे हों कि पानी पीते समय पानी से छू जायं। एक पक्षी। गैंडा।

वार्मण—(न०) [वर्मन्+अण्] कवचों का समूह।

वार्मिण—(न०) [वर्मिन्+अण्] कवचधारी लोगों का जमाव।

वार्य—(वि०) [√वृ+ण्यत्] वरण करने योग्य। [√वृ+णिच्+यत्] निवारण करने योग्य, जिसे रोकना, वारण करना हो। [वारि+ष्यञ्] जल-सम्बन्धी। (न०) [√वृ+ण्यत्] वर। सम्पत्ति।

वार्वणा—(स्त्री०) [वर्वणा+अण्—टाप्] नीले रंग की मक्खी।

वार्ष—(वि०) [स्त्री०—**वार्षी**] [वर्ष+अण्] वर्षा-सम्बन्धी। सालाना, वार्षिक।

वार्षिक—(वि०) [स्त्री०—**वार्षिकी**] [वर्षा+ठक्] वर्षाऋतु या वर्षा-सम्बन्धी; 'वार्षिकं सञ्जहारेन्द्रो धनुर्जैत्रं रघुर्दधौ' र. ४.१६। [वर्ष+घञ्] सालाना। एक वर्ष भर का या एक वर्ष तक रहने वाला। (न०) त्रायमाणा लता।

वार्षिला—(स्त्री०) [वार्जाता शिला, मध्य० स०, पृषो० शस्य षः] ओला।

वार्ष्णेय—(पुं०) [वृष्णि+ढक्] वृष्णिवंशी; विशेषकर श्रीकृष्ण। राजा नल के सारथी का नाम।

वालि—(पुं०) [वाले केशे जातः वाल+ञ्] वानरराज सुग्रीव के बड़े भाई और अंगद के पिता का नाम।

वालुका—(स्त्री०) [√वल्+उँण्+कन्—टाप्] बालू, रेत। चूर्ण, बुकनी। कपूर। ककड़ी। शाखा।—**आत्मिका (वालुकात्मिका)** (स्त्री०) शक्कर, चीनी।

वालुकी—(स्त्री०) [वालुक+ङीष्] ककड़ी।

वालेय—दे० 'बालेय'।

वाल्क—(वि०) [स्त्री०—**वाल्की**] [वल्क+अण्] वृक्षों की छाल का बना हुआ।

वाल्कल—(वि०) [स्त्री०—**वाल्कली**] [वल्कल+अण्] वृक्ष की छाल का बना हुआ। (न०) वृक्ष की छाल का बना कपड़ा।

वाल्कली—(स्त्री०) [वाल्कल+ङीप्] शराब, मदिरा।

वाल्मीक, वाल्मीकि—(पुं०) [वल्मीके भवः, वल्मीक+अण्] [वल्मीक+इञ्] आदिकाव्य श्रीमद्रामायण के रचयिता का नाम।

वाल्लभ्य—(न०) [वल्लभ+ष्यञ्] प्रिय होने का भाव या धर्म, वल्लभता।

वावदूक—(वि०) [पुनः पुनः अतिशयेन वा वदति, √वद्+यङ—लुक्, द्वित्वादि, √वावद्+ऊक] वातूनी, बकवादी। अच्छा बोलने वाला, वक्ता।

वावय—(पुं०) [√वय्+यङ—लुक्+अच्] एक तरह की तुलसी।

वावुट—(पुं०) नाव, बेड़ा।

√वावृत्—चुनना, पसंद करना। प्यार करना। सेवा करना। वावृत्यते।

वावृत्त—(वि०) [√वावृत्+क्त] चुना हुआ, पसन्द किया हुआ।

√वाश्—दि० आत्म० अक० गरजना, दहाड़ना। भूँकना। चीखना। गूँजना। सक० बुलाना, पुकारना। वाश्यते, वाशिष्यते, अवाशिष्ट।

वाशक—(व०) [√वाश्+ण्वुल्] दहाड़ने वाला। ध्वनि करने वाला।

वाशन—(नि०) [√वाश्+ल्युट्] दहाड़, गर्जन। भूँकना। गुर्राहट। चीत्कार, चीख। पक्षियों की चहक। भौरों की गुंजार।

वाशि—(पुं०) [√वाश्+इञ्] अग्निदेव।

वाशित—(न०) [√वाश्+क्त] पक्षियों का कलरव।

वाशिता—(स्त्री०) [वाशित+टाप्] हथिनी; 'अभ्यपद्यत स वाशितासखः पुष्पिताः कमलिनीरिव द्विपः' र.१९.११ स्त्री।

वाशुरा—(स्त्री०) [√वाश्+उरच्—टाप्] रात।

वाश्र—(पुं०) [√वाश्+रक्] दिवस, दिन। (न०) रहने का घर। चौराहा। गोबर।

वाष्प—दे० 'वाष्प'।

√वास्—चु० उभ० सक० सुवासित करना, खुशबू उत्पन्न करना। सिक्त करना, भिगोना। मसाले डालना, सुस्वाद बनाना। अक० शब्द करना। वासयति—ते, वासयिष्यति—ते, अववासत्-त।

वास—(पुं०) [√वास्+घञ्] सुगंध। गंध। [√वस्+घञ्] अवस्थान, निवास। घर, मकान। स्थान, जगह। परिधान, पोशाक।—**कर्णी**-(स्त्री०) एक बड़ा कमरा या मण्डप जिसमें पहलवानों का दंगल या नृत्य आदि हुआ करे। **पर्याय**-(पुं०) रहने की जगह का परिवर्तन।—**यष्टि**-(स्त्री०) पालतू पक्षियों के बैठने की अड्डी।—**योग**-(पुं०) कई द्रव्यों का मिश्रित चूर्ण, अबीर। **सज्जा**—दे० 'वासकसज्जा'।

वासक—(वि०) [स्त्री०—**वासका, वासिका**], [√वास्+णिच्+ण्वुल्] खुशबूदार, खुशबू उत्पन्न करने वाला। [√वस्+णिच्+ण्वुल्] बसाने वाला। (न०) वस्त्र।—**सज्जा**—(स्त्री०) वह नायिका जो अपने नायक से मिलने के लिये स्वयं बनठन कर और अपने घर को सजा कर उसके आने की प्रतीक्षा में बैठी हो।

वासत—(पुं०) [√वास्+अतच्] गधा।

वासतेय—(वि०) [स्त्री०—**वासतेयी**] [वसतौ साधुः, वसति+ढञ्] आबाद करने योग्य, बसने योग्य।

वासतेयी—(स्त्री०) [वासतेय+ङीप्] रात, निशा।

वासन—(न०) [√वास्+णिच्+ल्युट् वा √वस्+णिच्+ल्युट्] बसाना, खुशबू पैदा करना। तर करना। वास। बसाना। घर, मकान। कोई पात्र; यथा टोकरा, पेटी, बर्तन आदि। ज्ञान। वस्त्र, परिधान। आच्छादन, चादर।

वासना—(स्त्री०) [√वास्+णिच्+युच्—टाप्] जन्मान्तर के जमे प्रभाव से उत्पन्न मानसिक सुख-दुःख की भावना, संस्कार। स्मृतिहेतु। कल्पना, विचार, ख्याल। मिथ्या

विचार, झू। ख्याल। अज्ञान। अभिलाषा, कामना। सम्मान।

वासन्त—(वि०) [स्त्री०—**वासन्ती**] [वसन्त+अण्] वसन्त सम्बन्धी। वसन्त ऋतु के योग्य या वसन्त ऋतु में उत्पन्न। जवान। बुद्धिमान्। (पुं०) ऊँट। जवान हाथी। किसी जानवर का बच्चा। कोयल। मलयाचल हो कर आयी हुई हवा, मलय-समीर। मूंग। लंपट या दुराचारी पुरुष।

वासन्तिक—(वि०) [वसन्त+ठक्] वसन्त सम्बन्धी। (पुं०) विदूषक। भाँड़। नट। अभिनेता।

वासन्ती—(स्त्री०) [वासन्त+ङीप्] माधवी। बड़ी पीपल। जूही। गनियारी नामक फूल। वसन्तोत्सव। दुर्गा। एक रागिनी।

वासर—(पुं०, न०) [वस्+अरण] दिवस, दिन।—**सङ्ग**-(पुं०) प्रातःकाल, सबेरा।

वासव—(वि०) [स्त्री०—**वासवी**] [वसु+अण्] वसु सम्बन्धी। [वासव+अण्] इन्द्र का, इन्द्र सम्बन्धी; 'पाण्डुतां वासवी दिगयासीत्' काद०। (पुं०) [वसु+अण्] इन्द्र का नाम। (न०) धनिष्ठा नक्षत्र।—**दत्ता**-(स्त्री०) कई एक कथानकों की नायिका का नाम। [वासवदत्तामधिकृत्य कृतो ग्रन्थः वासवदत्ता+अण्—लुक्—टाप्] सुबन्धु नामक कवि का बनाया नाटक।

वासवी—(स्त्री०) [वासव+ङीप्] व्यास की माता का नाम।

वासस्—(न०) [√वस्+असुन्, णित्] कपड़ा, वस्त्र; 'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय' भग.२.२२।

वासि—(पुं०, स्त्री०) [√वस्+इञ्] वसूला। वास।

वासित—(वि०) [√वास्+णिच्+क्त] सुवासित। तर, भिगोया हुआ। सुस्वादु बनाया हुआ। [√वस्+णिच्+क्त] वस्त्रों से सुसज्जित किया हुआ। बसा हुआ, आबाद। प्रसिद्ध, मशहूर। (न०) [√वास्+णिच् क्त] पक्षियों का कलरव। ज्ञान।

वासिष्ठ, वाशिष्ठ—(वि०) [स्त्री०—**वासिष्ठी, वाशिष्ठी**] [वसि (शि) ष्ठ+अण्] वसिष्ठ सम्बन्धी। वसिष्ठ द्वारा रचित या दृष्ट। (पुं०) वसिष्ठ के वंशधर। (न०) एक योगविद्या का शास्त्र। एक उपपुराण।

वासु—(पुं०) [सर्वोऽत्र वसति,√वस्+उण्] विश्वात्मा, परमात्मा। विष्णु भगवान् का नामान्तर। जीवात्मा। पुनर्वसु नक्षत्र।

वासुकि, वासुकेय—(पुं०) [वसुक+इञ्] [वसुक+ढञ्] कश्यपपुत्र सर्पराज वासुकि।

वासुदेव—(पुं०) [वसुदेवस्यापत्यम्, वसुदेव+अण्] वसुदेव का वंशज। विशेषकर श्रीकृष्ण का नाम।

वासुरा—(स्त्री०) [√वस् वा √वास्+उरण्] पृथिवी। रात। स्त्री। हथिनी।

वासू—(स्त्री०) [√वास्+ऊ] नाटकों की उक्ति में बालाओं का संबोधन; 'वासु! प्रसीद' मृच्छ०।

वास्त—(वि०) [वस्त+अण्] बकरे से प्राप्त या सम्बद्ध। (पुं०) बकरा।

वास्तव—(वि०) [स्त्री०—**वास्तवी**] [वस्तु+अण्] असली, सच्चा, निश्चय किया हुआ। (न०) कोई वस्तु जो निश्चित कर ली गयी हो, यथार्थ वस्तु।

वास्तविक—(वि०) [स्त्री०—**वास्तविकी**] [वस्तु+ क्] परमार्थ, सत्य, प्रकृत। ठीक, यथार्थ।

वास्तवोषा—(स्त्री०) [वास्तव=संकेत-स्थान, ऊषा=कामुकी स्त्री] रात।

वास्तव्य—(वि०) [√वस्+तव्यत्, णित्] रहने वाला, निवासी, बाशिंदा; 'पुरेऽस्य वास्तव्यकुटुम्बितां ययुः' शि. १.६६.। रहने

योग्य, रहने लायक। (न०) रहने लायक स्थान। बस्ती।

वास्तिक—(न०) [वस्त+ठक्] बकरों का झुंड। (वि०) बकरे का।

वास्तु—(पुं०, न०) [वसन्ति प्राणिनो यत्र, √वस्+तुन्, णित्] वह स्थान जिस पर कोई इमारत खड़ी हो। घर बनाने लायक जगह। घर। मकान की नींव। (न०) बथुआ। पुनर्नवा।—**याग**-(पुं०) उस समय का धर्मानुष्ठान विशेष, जिस समय किसी मकान की नींव रखी जाय।

वास्तुक—(न०) [वास्तु+कन्] बथुआ साग। पुनर्नवा।

वास्तेय—(वि०) [स्त्री०—**वास्तेयी**] [वस्ति+ढञ्] रहने योग्य, रहने लायक। पेड़ू सम्बन्धी।

वास्तोष्पति—(पुं०) [वास्तोः पतिः, नि० षष्ठ्या अलुक् षत्वञ्च] वास्तुपति। इन्द्र।

वास्त्र—(वि०) [वस्त्र+अण्] वस्त्र का बना हुआ। (पुं०) गाड़ी या सवारी जिस पर कपड़े का उघार या पर्दा पड़ा हो।

वास्पेय—(पुं०) [वास्पाय हितम्, वास्प+ढक्] नागकेसर का पेड़।

√वाह्—भ्वा० आत्म० अक० उद्योग करना, प्रयत्न करना। वाहते, वाहिष्यते, अवाहिष्ट।

वाह—(वि०) [√वह्+णिच्+अच्] ले जाने वाला। (पुं०) [√वह्+घञ्] ले जाना, ढोना। वाहन, सवारी। बोझ लादने वाला जानवर। घोड़ा। बैल। भैंसा। वाहु। हवा। प्राचीन काल की एक तौल जो ४ गोन की होती थी।—**द्विषत्**-(पुं०) भैंसा।—**श्रेष्ठ**-(पुं०) घोड़ा।

वाहक—(वि०) [√वह्+ण्वुल्] ढोने, ले जाने वाला। (पुं०) भारवाहक, कुली। [√वह्+णिच्+ण्वुल्] गाड़ीवान। घुड़सवार।

वाहन—(न०) [√वह्+णिच्+ल्युट्] घोड़ा, रथ या अन्य कोई सवारी। (पुं०) [√वह्+णिच्+ल्युट्] ढोने वाला पशु। हाथी।

वाहस—(पुं०) [√वह्+असच्, णित्] जलप्रवाहमार्ग, जलप्रणाली। अजगर सर्प। सुसनी नामक साग, सुनिषण्णक।

वाहिक—(पुं०) [वाह+ठक्] बड़ा ढोल। बैलगाड़ी। बोझ ढोने वाला कुली।

वाहित—(वि०) [√वह्+णिच्+क्त] चलाया हुआ। पहुँचाया हुआ। बहाया हुआ। प्रतारित, धोखा दिया हुआ। (न०) भारी बोझा।

वाहित्थ—(न०) [√वह्+णिनि, वाहिन् √स्था+क] हाथी का माथा।

वाहिनी—(स्त्री०) [वाह+इनि—ङीप्] सेना; 'आशिषं प्रयुयुजे न वाहिनीं; र० ११.६'। एक सैन्यदल जिसमें ८१ हाथी, ८१ रथ, २४३ घुड़सवार और ४०५ पैदल होते हैं। नदी।—**निवेश**-(पुं०) फौज की छावनी।—**पति**-(पुं०) सेनापति। समुद्र।

वाहीक—दे० 'बाहीक'।

वाहुक—दे० 'बाहुक'।

वाह्य—(वि०) [√वह्+ण्यत्] खींचा, ढोया या चढ़ा जाने योग्य। दे० 'बाह्य'। (न०) सवारी, यान। (पुं०) ढोने वाला पशु।

वाह्लि—(पुं०) आधुनिक बलख (बुखारा) का नाम।—**ज**-(पुं०) बलख देश का घोड़ा।

वाह्लिक, वाह्लीक—(पुं०) आधुनिक बलख का नाम। बलख देश का घोड़ा। (न०) केसर। हींग।

वि—(अव्य०) [√वा+इण् स च डित्] यह एक उपसर्ग है। क्रिया शब्द के पूर्व जोड़े जाने पर इसके ये अर्थ होते हैं:—

पार्थक्य, विलगाव। किसी क्रिया का विपरीत कर्म। विभाग। विशिष्टता। जाँच। क्रम। विरोध। तंगी। विचार। आधिक्य। (पुं०, स्त्री०) पक्षी। (न०) अन्न। (पुं०) घोड़ा। आकाश। नेत्र।

विंश—(वि०) [स्त्री०—**विंशी**] [विंशति+डट्, तेः लोपः] वीसवाँ। (पुं०) वीसवाँ भाग।

विंशक—(वि०) [स्त्री०—**विंशकी**] [विंशति+ण्वुन्, तिलोप] जो वीस में खरीदा गया हो। जिसमें वीस की वृद्धि की गई हो। जिसमें वीस भाग हों। (पुं०) वीस की संख्या।

विंशति—(स्त्री०) [द्वे दश परिमाणम् अस्य, नि० सिद्धिः] वीस की संख्या। (वि०) वीस, वीस की संख्या का।—**ईश** (**विंशतीश**),—**ईशिन्** (**विंशतीशिन्**)-(पुं०) वीस गाँव का ठाकुर या मालिक।

विंशतितम—(वि०) [स्त्री०—**विंशतितमी**] [विंशति+तमप्] वीसवाँ।

विंशिन्—(पुं०) [विंशति+डिन्, तिलोप] वीस। वीस गाँव का शासक या जमींदार।

विक—(न०) [विरुद्धं विगतं वा कं जलं सुखं वा यत्र] हाल की व्यायी गौ का दूध।

विकङ्कट—(पुं०) [वि√कङ्क्+अटन्] गोखरू।

विकङ्कत—(पुं०) [वि√कङ्क्+अतच्] एक वृक्ष जिसकी लकड़ी से स्रुवा बनाया जाता है। स्रुवावृक्ष।

विकच—(वि०) [वि√कच्+अच्] खिला हुआ, फैला हुआ। विखरा हुआ। [विगतः कचो यस्य वा विशिष्टः कचो यस्य, व० स०] केशविहीन। (पुं०) बौद्ध भिक्षुक। केतु का नाम।

विकट—(वि०) [वि+कटच्] बदशक्ल, कुरूप। भयंकर, डरावना। जंगली। बड़ा, विस्तृत। अहंकारी, अभिमानी। सुन्दर। त्योरी चढ़ाए हुए। धुँधला। शक्ल बदले हुए। (न०) [वि√कट्+अच्] फोड़ा। (पुं०) साकुरुण्ड वृक्ष। सोमलता। धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

विकत्थन—(वि०) [वि√कत्थ्+ल्यु] डींग मारने वाला, शेखी मारने वाला; 'विद्वांसोऽप्यविकत्थना: भवन्ति' मु. ३। व्याज स्तुति करने वाला। (न०) [वि० √कत्थ्+ल्युट्] शेखी, डींग। व्यङ्ग्य। झूठी प्रशंसा।

विकत्था—(स्त्री०) [वि√कत्थ्+अच्—टाप्] डींग, शेखी। प्रशंसा। झूठी प्रशंसा। व्यंग्य। उद्घोषणा।

विकम्प—(वि०) [विशेषेण कम्पो यस्य, प्रा० ब०] जो बहुत काँप रहा हो। अदृढ़, हिलता-डोलता।

विकर—(पुं०) [विकीर्यते हस्तपादादिकम् अनेन, वि√कॄ+अप्] बीमारी, रोग।

विकराल—(वि०) [विशेषेण करालः, प्रा० स०] बड़ा भयानक।

विकर्ण—(पुं०) [विशिष्टौ कर्णौ यस्य, प्रा० ब०] दुर्योधन का एक भाई। एक साम। एक प्रकार का बाण।

विकर्तन—(पुं०) [विशेषेण कर्तनं यस्य प्रा० ब०] सूर्य। अर्क, मदार। वह पुत्र जिसने अपने पिता का राज्य छीन लिया हो।

विकर्मन्—(वि०) [विरुद्धं कर्म यस्य, प्रा० ब०] निषिद्ध कर्म करने वाला। (न०) [विरुद्धं कर्म, प्रा० स०] निषिद्ध कर्म। —**स्थ**-(पुं०) धर्मशास्त्र के मत से वह पुरुष जो वेद-विरुद्ध काम करता हो।

विकर्मिक—(वि०) अनुचित काम करने वाला। विभिन्न कार्यों में संलग्न। (पुं०) बाजार या हाट का निरीक्षक।

विकर्ष—(पुं०) [वि√कृष्+घञ्] तीर, बाण।

विकर्षण—(न०) [वि√कृष्+ल्युट्] आकर्षण, खिंचाव। (पुं०) [वि√कृष्+ल्यु] कामदेव के पाँच वाणों में से एक का नाम।

विकल—(वि०) [विगतः कलो यत्र] खण्डित, अपूर्ण। अङ्गहीन। भयभीत। रहित, हीन। विह्वल, घवड़ाया हुआ। कुम्हलाया हुआ। मुर्झाया हुआ। —**अङ्ग** (**विकलाङ्ग**)—(वि०) जिसका कोई अंग भङ्ग हो, न्यूनाङ्ग, अङ्गहीन। —**पाणिक** —(पुं०) लुञ्जा।

विकला—(स्त्री०) [विगतः कलो यस्याः] वह स्त्री जिसका रजःस्राव बंद हो गया हो। बुधग्रह की गति का नाम। एक कला का ६० वाँ अंश।

विकल्प—(पुं०) वि√कृप्+घञ्] सन्देह, अनिश्चय; 'तत्सिषेवे नियोगेन सविकल्पपराङ्मुखः' र. १७.४९। भ्रम। कौशल, कला। इच्छा। किस्म, जाति। भूल, चूक। अज्ञान। —**जाल**-(न०) तरह-तरह की दुविधायें।

विकल्पन—(न०) [वि√कृप्+ल्युट्] सन्देह में पड़ना। अनिश्चय।

विकल्मष—(वि०) [विगतः कल्मषो यस्य; प्रा० ब०] पापरहित। कलङ्कशून्य। निरपराध।

विकषा, विकसा—(स्त्री०) [वि√कष्+अच्—टाप्] [वि√कस्+अच—टाप्] मजीठ।

विकस—(पुं०) [वि√कस्+अच्] चन्द्रमा।

विकसित—(वि०) [वि√कस्+क्त] खिला हुआ।, पूरा फैला हुआ।

विकस्वर—(वि०) [वि√कस्+वरच्] खुला हुआ, विकासशील। स्पष्ट समझ में आने वाला। (पुं०) एक काव्यालंकार जिसमें विशेष बात की पुष्टि सामान्य बात से की जाती है।

विकार—(पुं०) [वि√कृ+घञ्] विकृति; 'मूर्च्छन्त्यमी विकाराः प्रायेणैश्वर्यमत्तेषु' श.५.१९। तबदीली, परिवर्तन। बीमारी, रोग। मनःपरिवर्तन। भावना। वासना। उद्वेग, घबड़ाहट। वेदान्त और सांख्य दर्शन के अनुसार किसी के रूप आदि का बदल जाना, परिणाम। —**हेतु**-(पुं०) प्रलोभन। विकलता उत्पन्न करने वाला विषय।

विकारित—(वि०) [वि√कृ+णिच्+क्त] परिवर्तित या खराब किया हुआ।

विकारिन्—(वि०) [वि√कृ+णिनि] परिवर्तनशील। विकारयुक्त।

विकाल, विकालक—(पुं०) [विरुद्धः कार्यानर्हः कालः प्रा० स०] शाम, सन्ध्या काल।

विकालिका—(स्त्री०) [विज्ञातः कालो यया, प्रा० ब०; विकाल+कन्—टाप्, इत्व] जलघड़ी।

विकाश—(पुं०) [वि√काश्+घञ्] प्रदर्शन, प्राकट्य। खिलना, फैलना। खुला हुआ या सीधा मार्ग। विषम गति। हर्ष, आनन्द। आकाश। उत्सुकता, उत्कण्ठा। निर्जन, एकान्त।

विकाशक—(वि०) [स्त्री०—**विकाशिका**] [वि√काश्+ण्वुल्] प्रकट होने या करने वाला। खिलने वाला।

विकाशन—(न०) [वि√काश्+ल्युट्] प्रदर्शन, प्राकट्य। प्रस्फुटन, खिलना, फैलाव।

विकाशिन्, विकासिन्—(वि०) [स्त्री० —**विकाशिनी, विकासिनी**] [वि√काश्+णिनि] [वि√कास्+णिनि] दृष्टिगोचर होने वाला, प्रकट होने वाला। खिलने वाला। खुलने वाला।

विकास—(पुं०); **विकासन**-(न०) [वि√कास्+घञ्] [वि√कास्+ल्युट्] प्रस्फुटन, खिलना, फैलाव।

विकिर—(पुं०) [वि √कृ + क] वे चावल आदि जो पूजन के समय विघ्न दूर करने के लिये चारों ओर फेंके जाते हैं। पक्षी। कूप। वृक्ष।

विकिरण—(न०) [वि√कृ + ल्युट्] बिखेरना, छितराना। बिछाना, फैलाना। फाड़ना। हिंसन। ज्ञान।

विकीर्ण—(वि०) [वि√कृ + क्त] फैला हुआ। व्याप्त। प्रसिद्ध।—**केश-मूर्धज**—(वि०) वह जिसने अपने बाल नोंच डाले हों या जिसके बाल बिखरे हों।

विकुण्ठ—(वि०) [विगता कुण्ठा यस्य यत्र वा] कुंठारहित, जो कुंद या भोथरा न हो। (पुं०) वैकुण्ठ जहाँ भगवान् विष्णु का निवास है।

विकुर्वाण—(वि०) [वि०√कृ + शानच्] विकार या परिवर्तन को प्राप्त। प्रसन्न, आह्लादित।

विकुस्र—(पुं०) [वि√कस् + रक्, उत्व] चन्द्रमा।

विकूजन—(न०) [वि √कूज् + ल्युट्] कलरव, चहक। गुञ्जार। गुड़गुड़ाहट।

विकूणन—(न०) [वि√कूण् + ल्युट्] कटाक्ष, तिरछी चितवन।

विकूणिका—(स्त्री०) [वि√कूण् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] नाक।

विकृत—(वि०) [वि√कृ+क्त] परिवर्तित, बदला हुआ। बीमार। विकलाङ्ग, अङ्गहीन। अपूर्ण, खण्डित, अधूरा। आवेशित। ऊबा हुआ। बीभत्स, जघन्य, घृणाजनक। अद्भुत। (न०) परिवर्तन। खराबी। बीमारी। अरुचि, घृणा। (पुं०) दूसरे प्रजापति का नाम। परिवर्त राक्षस का पुत्र। प्रभव आदि सा संवत्सरों में से २४ वाँ।

विकृति—(स्त्री०) [वि√कृ + क्तिन्] परिवर्तन। घटना। बीमारी। घबड़ाहट, उद्वेग। मद्य आदि। माया। शत्रुता।

विकृष्ट—(वि०) [वि √कृष् +क्त] इधर-उधर कढ़ोरा हुआ। खींचा हुआ। बढ़ा हुआ, निकला हुआ। ध्वनित।

विकेश—(वि०) [स्त्री०—**विकेशी**] [विकीर्णाः विगताः वा केशाः यस्य, प्रा० ब०] खुले केशों वाला। बिना केशों वाला। गंजा।

विकेशी—(स्त्री०) [विकेश + ङीप्] स्त्री जिसके खुले केश हों। स्त्री जो गंजी हो। केशों की छोटी-छोटी लटों को मिला कर बनी हुई एक चोटी या वेणी।

विकोश, विकोष—(वि०) [विगतः कोशः (षः) यस्य, प्रा० ब०] बिना भूसी का। म्यान से निकला हुआ; 'विकोशनिर्धौत-तनोर्महासेः' कि० १७.४५। आवरणरहित।

विक्क—(पुं०) [विक् इति कायति शब्दायते, विक्√कै+क] हाथी का बच्चा।

विक्रम—(पुं०) [वि√क्रम्+घञ् वा अच्] कदम, पग। चलना। बहादुरी, पराक्रम; 'अनुत्सेकः खलु विक्रमालङ्कारः' वि० १। उज्जयनी के एक प्रसिद्ध महाराज का नाम। विष्णु भगवान् का नाम।

विक्रमण—(न०) [वि √क्रम् + ल्युट्] चलना, कदम रखना।

विक्रमिन्—(वि०) [वि √ क्रम् +णिनि] वीर, बहादुर। (पुं०) सिंह। शूरवीर। विष्णु का नाम।

विक्रय—(पुं०) [वि√क्री + अच्] बिक्री, बेचना।—**अनुशय** (**विक्रयानुशय**)—(पुं०) किसी वस्तु की खरीदारी की शर्त या आज्ञा को रद्द करना।

विक्रयिक, विक्रयिन्—(पुं०) [विक्रय+ठन् वा वि√क्री+इकन्] वि√क्री + णिनि] विक्रेता, बेचने वाला।

विक्रस्र—(पुं०) [वि √कस् + रक्, अत्व—रेफादेश] चन्द्रमा।

विक्रान्त--(पुं०) [वि √क्रम्+क्त] बलवान् । वीर । विजयी । (न०) पग, कदम । शौर्य, वीरता । (पुं०) योद्धा । सिंह ।

विक्रान्ता--(स्त्री०) [विक्रान्त+टाप्] वत्सादनी लता । गुड़ुच । अरणी । जयन्ती । मूसाकानी । अपराजिता । अड़हुल । लाल लजालू । हंसपदी लता ।

विक्रान्ति--(स्त्री०) [वि√क्रम् + क्तिन्] गति । घोड़े की सरपट चाल । विक्रम । बल । वीरता, बहादुरी ।

विक्रान्तृ--(वि०) [वि √क्रम् + तृच्] विजयी । शूरवीर ।(पुं०) सिंह ।

विक्रिया--(स्त्री०) [वि०√कृ+श--टाप्] विकार । उद्वेग । विकलता, घबड़ाहट । क्रोध । अप्रसन्नता । बुराई । भ्रूकुञ्चन । रोग जो अचानक उत्पन्न हो जाय । खण्डन । त्याग (जैसे कर्म का) चावल पकाना । रोमांच । शत्रुता । निर्वाण (दीप का) ।--**उपमा (विक्रियोपमा)**-(स्त्री०) काव्यालङ्कार विशेष ।

विक्रुष्ट--(पुं०) [वि√क्रुश् + क्त] पुकारा हुआ, चिल्लाया हुआ । निष्ठुर, बेरहम । (न०) सहायता के लिये बुलाहट । गाली ।

विक्रेय--(वि०) [वि√क्री +यत्] बिकाऊ ।

विक्रोशन--(न०) [वि√ क्रुश् + ल्युट्] गाली । चिल्लाहट ।

विक्लव--(वि०) [वि √क्लु + अच्] डरा हुआ, भयभीत । भीरु, डरपोक । उद्विग्न, घबड़ाया हुआ । सन्तप्त, पीड़ित । विह्वल, बेचैन । ऊबा हुआ । कंपित । अस्थिर ।

विक्लिन्न--(वि०) [वि √क्लिद् + क्त] बिल्कुल तराबोर या भींगा हुआ । सड़ा हुआ, गला हुआ । मुरझाया हुआ, कुम्हलाया हुआ । जीर्ण ।

विक्लिष्ट--(पुं०) [वि √क्लिश् + क्त] अत्यन्त सन्तप्त । घायल । नष्ट किया हुआ । (न०) उच्चारण का दोष ।

विक्षत--(वि०) [वि√क्षण् + क्त] आहत, घायल ।

विक्षाव--(पुं०) [वि√क्षु + घञ्] खाँसी । छींक । शब्द, आवाज ।

विक्षिप्त--(वि०) [वि√क्षिप् + क्त] बिखेरा हुआ । त्यागा हुआ । भेजा हुआ । घबड़ाया हुआ । खण्डन किया हुआ । पागल । (न०) योग की पाँच अवस्थाओं में से एक जिसमें चित्तवृत्ति प्रायः अस्थिर हो जाती है ।

विक्षीणक--(पुं०) शिवगणों का मुखिया । देवसभा ।

विक्षीर--(पुं०) [विशिष्टं विगतं वा क्षीरं यस्य, प्रा० ब०] मदार या अर्क या अकौआ का पेड़ ।

विक्षेप--(पुं०) [वि√क्षिप् + घञ्] ऊपर की ओर अथवा इधर-उधर फेंकना या डालना । झटका देना । हिलाना; 'लाङ्गूलविक्षेपविसर्पिशोभैः' कु० १.१३ । प्रेषण । विकलता, बेचैनी । भय, डर । खण्डन । चिल्ला चढ़ाना । असंयम । सेना का पड़ाव, छावनी । बाधा । ध्रुवीय अक्षरेखा । एक अस्त्र ।

विक्षेपण--(न०) [वि √क्षिप् + ल्युट्] ऊपर अथवा इधर-उधर फेंकने की क्रिया । हिलाने या झटका देने की क्रिया । प्रेषण । घबड़ाहट । धनुष की डोरी खींचना । विघ्न, बाधा ।

विक्षोभ--(पुं०) [वि √क्षुभ् + घञ्] मन की उद्विग्नता या चञ्चलता, क्षोभ । झगड़ा, टंटा । गति । भय । विदीर्ण करना, फाड़ना । उत्कं ।। हाथी की छाती का एक भाग ।

विख, विखु, विख्य, विख्र, विग्र--(वि०) [=विख्य नि० यलोप] [विगता नासिका यस्य, ब० स०, नासिकायाः खु आदेशः] [विगता नासिका यस्य, ब० स०, नासिकायाः ख्य आदेशः] [विगता नासिका यस्य,ब०स० नासिकायाः ख्र आदेशः] [विगता नासिका यस्य,

ब० स० नासिकायाः ग्र आदेशः [नासिका हीन, विना नाक का, जिसके नाक न हो।

विखण्डित--(वि०) [वि√खण्ड् + क्त] टुकड़ों में कटा हुआ। विघटित किया हुआ। विभाजित। बीच से चिरा या फटा हुआ।

विखानस--(पुं०) एक वैखानस मुनि।

विखुर--(पुं०) राक्षस। चोर।

विख्यात--(वि०) [वि√ख्या + क्त] प्रसिद्ध, मशहूर। नामधारी। माना हुआ, स्वीकृत।

विख्याति--(स्त्री०) [वि√ख्या + क्तिन्] प्रसिद्धि, शोहरत।

विगणन--(न०) [वि √गण् + ल्युट्] गिनती, गणना। विचार। ऋण की अदायगी या फारकती।

विगत--(वि०) [वि√गम् + क्त] अतीत, बीता हुआ। अंतिम या बीते हुए से पूर्व का। इधर-उधर गया हुआ। वियुक्त, जुदा। मृत। रहित, हीन। खोया हुआ। धुँधला। --**आर्तवा** (**विगतार्तवा**)-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके बच्चा होना बंद हो चुका हो अथवा जिसका रजोधर्म बंद हो गया हो।--**कल्मष**-(वि०) पापरहित, निष्पाप।--**भी**- (वि०) निडर, निर्भीक।--**लक्षण**-(वि०) अभागा। अशुभ।

विगन्धक--(पुं०) [विरुद्धः गन्धो यस्य, ब० स०, कप्] इंगुदी या हिंगोट का पेड़।

विगम--(पुं०) [वि√गम्+अप्] प्रस्थान, रवानगी। समाप्ति, अन्त; 'चारुनृत्यविगमे च तन्मुखं' र० १६.१५। त्याग। हानि। नाश। मृत्यु। मोक्ष। पार्थक्य। अनुपस्थिति।

विगर--(पुं०) परमहंस। वह साधु जो नंगा रहे। पर्वत। वह मनुष्य जिसने भोजन करना त्याग दिया हो।

विगर्हण--(न०), **विगर्हणा**-(स्त्री०) [वि√गर्ह् + ल्युट्] [वि √गर्ह्+णिच् + युच्--टाप्] भर्त्सना, फटकार, डाँट-डपट। निंदा।

विगर्हित--(वि०) [वि√गर्ह् + क्त] भर्त्सित, फटकारा हुआ। नफरत किया हुआ, घृणित। वर्जित। नीच, कमीना। बुरा। दुष्ट।

विगलित--(वि०) [वि√गल् + क्त] चू कर या टपक कर निकला हुआ। जो अन्तर्धान हो गया हो। गिरा हुआ। पिघला हुआ। विसर्जित। ढीला किया हुआ। अस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ (जैसे केश)।

विगान--(न०) [विरुद्धं गानम्, प्रा० स०] भर्त्सना। अपमान। खण्डनात्मक कथन।

विगाह--(पुं०) [वि √ गाह् + घञ्] स्नान। गोता।

विगीत--(वि०) [वि√गै+ क्त] बुरे ढंग से गाया हुआ। भर्त्सित। निंदित। असंगत।

विगीति--(स्त्री०) [वि√गै + क्तिन्] भर्त्सना। निंदा। खण्डन।

विगुण--(वि०) [विगतः विपरीतो वा गुणो यस्य] गुण-विहीन। बिना डोरी का। विकृत। अव्यवस्थित।

विगूढ--(वि०) [वि√गुह् + क्त] गुप्त, छिपा हुआ। भर्त्सित, फटकारा हुआ।

विगृहीत--(वि०) [वि √ ग्रह्+क्त] विभाजित। विश्लेषण किया हुआ। पकड़ा हुआ। जिसके साथ मुठभेड़ हुई है।

विग्रह--(पुं०) [वि√ग्रह् +अप्] फैलाव, प्रसार। आकृति, शक्ल। शरीर। यौगिक शब्दों अथवा समस्त पदों के किसी एक अथवा प्रत्येक शब्द को अलग करना। झगड़ा। प्रणय-कलह; 'विग्रहाच्च शयने पराङ्मुखीर्नानुनेतुमबलाः स तत्वरे' र० १६.३८। युद्ध। नीति के छः गुणों में से एक, फूट डालना। अनुग्रह का अभाव। भाग।

विघटन--(न०) [वि√घट् + ल्युट्] अलग करना। तोड़ना। छिन्न-भिन्न करना। बरबादी, नाश।

विघटिका--(स्त्री०) [विभक्ता घटिका यया] घड़ी का ६०वाँ अंश, पल ।

विघटित--(वि०) [वि√घट् + क्त] वियोजित, अलग किया हुआ । नष्ट किया हुआ ।

विघट्टन, विघट्टना--(न०) [वि √ घट्ट् +ल्युट्] [वि√घट्ट् + युच्--टाप्] रगड़ना । खोलना । वियोजित करना । व्यथित करना ।

विघन--(पुं०) [वि√ हन् + अप्, घनादेश] आघात करना, चोट पहुँचाना । हथौड़ा ।

विघस--(पुं०) [वि √ अद्+अप्, घस देश] अधचबाया हुआ कौर । भोज्य पदार्थ । (न०) मोम ।

विघात--(पुं०) [वि√हन् +घञ्] नाश । रोक, बचाव । हिंसन, वध । अड़चन, अटकाव; 'क्रियाविघाताय कथं प्रवर्तसे' र० ३.४४ । प्रहार । त्याग ।

विघूर्णित--(वि०) [वि √घूर्ण् + क्त] चारों ओर घुमाया हुआ ।

विघृष्ट--(वि०) [वि √घृष् + क्त] अत्यन्त मला हुआ । पीड़ित ।

विघोषण--(न०) [वि√घुष् + ल्युट् --अन] ऊँची आवाज में घोषित करने की क्रिया, चिल्लाना । ढिंढोरा पीटना ।

विघ्न--(पुं०) [विहन्यते अनेन, वि√हन्, + क] अड़चन, रुकावट, बाधा, खलल ।--**ईश (विघ्नेश),--ईशान (विघ्नेशान), --नायक, --नाशक,--नाशन, --राज,-- --विनायक,--हारिन्**-(पुं०) गणेशजी ।

विघ्नित--(वि०) [विघ्न +इतच्] विघ्न डाला हुआ ।

विङ्ख--(पुं०) घोड़े का खुर ।

√विच्--रु० उभ० सक० अलग करना । पहचानना । वञ्चित करना । वर्जित करना । विनक्ति--विङ्क्ते, वेक्ष्यति--ते, अविचत् --अवैक्षीत्--अविक्त ।

विचकिल--(पुं०) [√विच्+क, √किल् +क, कर्म० स०] एक प्रकार की मल्लिका या चमेली । दमनक वृक्ष, दौने का पेड़ ।

विचक्षण--(वि०) [वि √चक्ष्+युच्] पारदर्शी, दीर्घदर्शी । सतर्क, सावधान, चौकस । बुद्धिमान् । विद्वान् । निपुण, पटु । (पुं०) बुद्धिमान् आदमी । चतुर नर ।

विचक्षुस्--(वि०) [विगतं विनष्टं वा चक्षुः यस्य] अंधा, दृष्टिहीन । उदास । परेशान ।

विचय--(पुं०), **विचयन**-(न०) [वि√चि +अप्] [वि० चि+ ल्युट्] इकट्ठा करना । तलाश, खोज; 'तुरगविचयव्यग्रान्' उत्त० १.२३ । । अनुसंधान, तहकीकात । तरतीब से रखना ।

विचर्चिका--(स्त्री०) [विशेषेण चर्च्यते पाणिपादस्य त्वक् विदार्यतेऽनया, वि √ चर्च् +ण्वुल्--टाप्, इत्व] खुजली, रोग विशेष जिसमें दाने निकलते और उनमें खुजली होती है, पामा ।

विचर्चित--(वि०) [वि√चर्च् + क्त] मालिश किया हुआ । लेप किया हुआ ।

विचल--(वि०) [वि √चल् + अच्] जो बराबर हिलता रहता हो । अस्थिर । अभिमानी, अहंकारी । स्थान से हटा हुआ । प्रतिज्ञा या संकल्प से हटा हुआ ।

विचलन--(न०) [वि√चल् + ल्युट्] कम्पन । उत्पथगमन । अस्थिरता, चञ्चलता । अहङ्कार ।

विचार--(पुं०) [विशेषेण चरणं पदार्थादिनिर्णये ज्ञानम्, वि√चर् +घञ्] वह जो कुछ मन से सोचा अथवा सोच कर निश्चित किया जाय । मन में उठने वाली बात, भावना । खयाल । परीक्षा, जाँच । राजा या न्यायकर्ता का वह कार्य जिसमें वादी और प्रतिवादी के अभियोग और उत्तर आदि सुन कर न्याय किया जाय, निर्णय, फैसला । निश्चय, सङ्कल्प । चुनाव । सन्देह, शङ्का ।

सतर्कता, सावधानता।—ज्ञ–(वि०) निर्णायक, न्यायकर्त्ता।—भू–(स्त्री०) न्यायालय, विशेष कर यमराज का न्यायालय या न्यायासन।—शील–(वि०) सोच-विचार करने की शक्ति वाला, विचारवान्।—स्थल–(न०) न्यायालय, अदालत। वह स्थान जहाँ किसी विषय पर विचार होता हो।

विचारक—(पुं०) [वि√चर् + णिच् + ण्वुल्] विचार करने वाला, मीमांसक। न्यायकर्ता, न्यायाधीश। नेता। गुप्तचर।

विचारण—(न०) [वि √चर् + णिच् + ल्युट्] विचार करने की क्रिया या भाव। परीक्षा। संशय।

विचारणा–(स्त्री०) [वि √चर् + णिच् + युच्—टाप्] विचार, विवेचना; 'राजन्। किमद्यापि युक्तायुक्तविचारणया' वे० ३। परीक्षण। सन्देह। मीमांसा दर्शन।

विचारित—(वि०) [वि√चर् + णिच् + क्त] जिस पर विचार किया जा चुका हो। परीक्षित। निर्णय किया हुआ। विचाराधीन।

विचि—(पुं०, स्त्री०), **विची**–(स्त्री०) [√विच्+इन् स च कित्] [विचि+ङीष्] लहर, तरङ्ग।

विचिकित्सा—(स्त्री०) [वि √कित् + सन् + अ—टाप्] सन्देह, शक। भूल, चूक।

विचित—(वि०) [वि √चि+ क्त] तलाश किया हुआ, खोजा हुआ।

विचिति—(स्त्री०) [वि√चि + क्तिन्] विचार, सोचना।

विचित्र—(वि०) [विशेषेण चित्रम्, प्रा० स०]रंग-बिरंगा, चितकबरा। चित्रित। सुन्दर, मनोहर। विस्मित या चकित करने वाला; 'हतविधिलसितानां ही विचित्रो विपाकः' शि० ११.६४। मनोरंजक। विलक्षण। (पुं०) रौच्यमनु के एक पुत्र का नाम। अशोकवृक्ष। तिलकवृक्ष। भोजपत्र का वृक्ष। (न०) विभिन्न रंगों का समुदाय। आश्चर्य।—अङ्ग (विचित्राङ्ग)–(वि०) चित्तीदार रंग वाला। (पुं०) मयूर। चीता।—देह–(वि०) सुन्दर शरीर वाला। (पुं०) बादल, मेघ।—वीर्य–(पुं०) शान्तनु-सत्यवती के द्वितीय पुत्र।

विचित्रक—(पुं०) [विचित्राणि चित्राणि यस्मिन् प्रा० ब०, कप्] भोजपत्र का पेड़। तिलकवृक्ष। अशोकवृक्ष।

विचिन्वत्क—(पुं०) [वि√चि + शतृ + कन्] विचयन या अनुसंधान करने वाला व्यक्ति। वीर पुरुष।

विचेतन—(वि०) [विगता चेतना यस्य, प्रा० ब०] संज्ञाहीन, अचेत। विवेकहीन। विस्मरणशील। जीवरहित, निर्जीव।

विचेतस्—(वि०) [विगतं विरुद्धं वा चेतो यस्य, प्रा० ब०] विवेकहीन। दुष्ट। विकल, परेशान।

विचेष्टा—(स्त्री०) [विशिष्टा चेष्टा, प्रा० स०] उद्योग, प्रयत्न।

विचेष्टित—(वि०) [वि√चेष्ट् + क्त] उद्योग किया हुआ, प्रयत्न किया हुआ। परीक्षित, जाँचा हुआ। अनुसन्धान किया हुआ। बुरी तरह या मूर्खता-पूर्वक किया हुआ। (न०) क्रिया, कर्म। उद्योग। मुँह बनाना या हाथ-पैर पटकना। चैतन्य। कौशल।

√विच्छ्—तु० पर० सक० जाना। चमकाना। बोलना। विच्छायति, विच्छायिष्यति —विच्छिष्यति, अविच्छायीत्—अविच्छीत्।

विच्छन्द, विच्छन्दक—(पुं०) [विशिष्टः छन्दोऽभिप्रायो यस्मिन्] [विच्छन्द+कन्] विशाल भवन, जिसमें कई खण्ड हों।

विच्छर्दक—(पु०) [वि √छृद् + ण्वुल्] राजभवन।

विच्छर्दन--(न०) [वि √ छर्द्+ल्युट्] वमन, कै ।

विच्छर्दित--(वि०) [वि√छर्द् + क्त] वमन किया हुआ । भूला हुआ । तिरस्कृत । निर्बल किया हुआ । छोटा या कम किया हुआ ।

विच्छाय--(वि०) [विगता छाया(कान्तिः) यस्य, प्रा० ब०] कांतिहीन, विवर्ण । छाया-रहित । (पुं०) [विशिष्टा छाया कान्तिः यस्य] मणि । (न०) [पक्षिणां छाया (समासे षष्ठ्यन्तात् परा छाया क्लीवे स्यात्)] पक्षियों के झुंड की छाया ।

विच्छित्ति--(स्त्री०) [वि√छिद् + क्तिन्] काटकर अलग या टुकड़े करना । विच्छेद, अलगाव, वियोग; 'विच्छित्तिर्नवचन्दनेन वपुषः' शि० १६.८४ । कमी, त्रुटि । अवसान । शरीर पर रंग-विरंगे लिखना बनाना । सीमा । कविता या वेष-भूषा आदि में होने वाली लापरवाही या बेढंगापन ।

विच्छिन्न--(वि०) [वि√छिद् + क्त] काटकर अलग या टुकड़ा किया हुआ । विभाजित । पृथक् किया हुआ, जुदा । बाधा डाला हुआ । समाप्त किया हुआ । ग-विरंगा बना हुआ । छिपा हुआ । उबटन लगाया हुआ ।

विच्छुरित--(वि०) [वि √छुर् + क्त] आच्छादित । मढ़ा हुआ । जड़ा हुआ । मैला किया हुआ । चुपड़ा हुआ । तेल लगाया हुआ । राजतिलक किया हुआ । छिड़का हुआ । (न०) एक प्रकार की समाधि ।

विच्छेद--(पुं०) [वि √छिद्+घञ्] काट-कर अलग या ुकड़े करने की क्रिया । तोड़ने की क्रिया । क्रम का बीच से भङ्ग होना, सिलसिला टूटना । निषेध । वाग्युद्ध । ग्रन्थ का परिच्छेद या अध्याय । ीच में पड़ने वाला खाली स्थान, अवकाश ।

विच्छेदन--(न०) [वि √छिद् + ल्युट्] काट कर या छेद कर अलगाने की क्रिया ।

विच्युत--(वि०) [वि √ च्यु + क्त] गिरा हुआ । स्थानच्युत । अलगाया हुआ । विनष्ट ।

विच्युति--(स्त्री०) [वि√च्यु + क्तिन्] नीचे गिरना । वियोग, अलगाव । अवः-पात । नाश । गर्भपात ।

√विज्--जु० उभ० सक० अलग करना । वेवेक्ति—वेविक्ते, वेक्ष्यति—ते, अविजत् —अवैक्षीत् — अविक्त । तु० आत्म० अक० डरना । काँपना । (प्रायेणायम् उत्पूर्वः) उद्विजते, उद्विजिष्यते, उद्विजिष्ट । रु० पर० अक० डरना । काँपना । विनक्ति, विजिष्यति, अविजीत् ।

विजन--(वि०) [विगतो जनो यस्मात् अकेला, जनशून्य । (न०) एकान्त स्थान, निराला स्थान ।

विजनन--(न०) [वि√जन् + ल्युट्] जनन, प्रसव करना ।

विजन्मन्--(वि०) [विरुद्धं जन्म यस्य, प्रा० ब०] वर्णसङ्कर, दोगला । (पुं०) उप-पति का पुत्र, जारज । जातिच्युत व्यक्ति का पुत्र । एक वर्णसंकर जाति ।

विजपिल--(न०) [√विज् + क,√पिल् +क, कर्म० स०] कीचड़ ।

विजय--(पुं०) [वि√जि+अच्] जीत, जय । देवरथ, स्वर्गीय रथ । अर्जुन का नाम । यमराज । बृहस्पति की दशा का प्रथम वर्ष । विष्णु के एक द्वारपाल का नाम ।--**अभ्यु-पाय** (**विजयाभ्युपाय**)-(पुं०) जीत का उपाय; 'तस्मिन् सुराणां विजयाभ्युपाये' कु० ३.१९ । --**कुञ्जर**-(पुं०) लड़ाई का हाथी । --**च्छन्द**-(पुं०) पाँच सौ लड़ियों का हार । --**डिण्डिम**-(पुं०) लड़ाई का बड़ा ढोल ।--**नगर**-(न०) कर्णाटक के एक नगर का नाम ।--**मर्दल**-

(पुं०) एक बड़ा ढोल।—सिद्धि–(स्त्री०) सफलता। जीत।

विजयन्त—(पुं०) इन्द्र का नाम।

विजया—(स्त्री०) [विजय+टाप्] दुर्गा। दुर्गा की एक सहचरी या परिचारिका योगिनी का नाम। एक विद्या जिसे विश्वामित्र ने श्रीरामचन्द्र जी को सिखाया था। भाँग। विजयोत्सव। हर्र, हरीतकी।—**उत्सव** (**विजयोत्सव**)– (पुं०) एक उत्सव, जो आश्विन शुक्ला १०मी को मनाया जाता है। इसीको दुर्गोत्सव भी कहते हैं।—**दशमी** –(स्त्री०) आश्विन शुक्ला १०मी।

विजयिन्—(पुं०) [विशेषण जेतुं शीलमस्य, वि√जि+इनि] विजेता, जीतने वाला, फतहयाब।

विजर—(वि०) [विगता जरा यस्य, प्रा० ब०] जराहीन, जिसे बुढ़ापा न आया हो। नवीन। (न०) वृक्ष का तना।

विजल्प—(पुं०) [वि० √जल्प् + घञ्] सच, झूठ और तरह-तरह का ऊट-पटाँग वार्तालाप, बकवाद। द्वेषपूर्ण या निन्दात्मक वार्तालाप।

विजल्पित—(वि०) [वि√ जल्प्+क्त] कहा हुआ। जिसके विषय में वार्तालाप हो चुका हो या किया गया हो। बकबक किया हुआ।

विजात—(वि०) [विरुद्धं जातं जन्म यस्य, प्रा० ब०] वर्णसङ्कर, दोगला। परिवर्तित, दूसरे रूप में परिणत। [प्रा० स०] उत्पन्न, जनमा हुआ।

विजाता—(स्त्री०) [विजात + टाप्] वह लड़की जिसके हाल में सन्तान हुई हो। माता, जननी। जारज या दोगली लड़की।

विजाति—(वि०) [विरुद्धा जातिः यस्य, प्रा० ब०] भिन्न या दूसरी जाति का। दूसरी किस्म या प्रकार का। (स्त्री०) [विभिन्ना जातिः प्रा० स०] भिन्न जाति या वर्ग।

विजातीय—(वि०) [विभिन्नां वा विरुद्धां जातिम् अर्हति, विजाति+छ] दूसरी जाति का, असमान। वर्णसङ्कर, दोगला।

विजिगीषा—(स्त्री०) [विजेतुम् इच्छा, वि √जि+सन् +अ—टाप्] विजय प्राप्त करने की इच्छा। सबसे आगे बढ़ जाने की अभिलाषा।

विजिगीषु—(वि०) [विजेतुम् इच्छुः, वि √ जि+ सन् +उ] विजयाभिलाष; 'यशसे विजिगीषूणाम्' र० १.७। ईर्ष्यालु। (पुं०) योद्धा, भट। प्रतिस्पर्धी, प्रतिद्वन्द्वी।

विजिज्ञासा—(स्त्री०) [विशिष्टा जिज्ञासा, प्रा० स०] स्पष्ट या साफ जानने की अभिलाषा।

विजित—(वि०) [वि√जि + क्त] जीता हुआ, जिस पर विजय प्राप्त की गयी हो। (पुं०) जीता हुआ देश। वह ग्रह जो दूसरे ग्रह से युद्ध में कमजोर हो।—**आत्मन्** (**विजितात्मन्**)–(वि०) जितेन्द्रिय। (पुं०) शिव।—**इन्द्रिय** (**विजितेन्द्रिय**)–(वि०) अपनी इन्द्रियों को वश में कर लेने वाला।

विजिति—(स्त्री०) [वि √ जि + क्तिन्] जीत, विजय। प्राप्ति।

विजिन, विजिल—(पुं०, न०) [√विज् +इनच्] [√विज्+इलच्] चटनी। ऐसा भोजन जिसमें अधिक रस न हो।

विजिह्म—(वि०) [विशेषेण जिह्मः, प्रा० स०] टेढ़ा-मेढ़ा 'कृतं न वा कोपविजिह्ममाननम्' कि० १.२१। बेईमान।

विजुल—(पुं०) [√विज् + उलच्] शाल्मलि वृक्ष।

विजृम्भण—(न०) [वि √ जृम्भ् +ल्युट्] जँभाई। प्रस्फुटन, खिलना। खोलना, प्रकट करना। फैलाव। आमोद-प्रमोद।

विजृम्भित—(वि०) [वि√जृम्भ् + क्त] जमुहाई लेता हुआ । खुला हुआ । खिला हुआ । फैला हुआ । प्रदर्शित । खेला हुआ । (न०) क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद । इच्छा, अभिलाषा । प्रदर्शन । क्रिया । आचरण । जँभाई ।

विजेतृ—(वि०) [वि √ जि+तृच्] जीतने वाला, जिसने विजय प्राप्त की हो ।

विज्जन, विज्जल—(न०) [विध् √ जन् +अच्] [विध्√जड् + अच्, डस्य लः] एक प्रकार की चटनी । बाण, तीर ।

विज्जुल—(न०) दालचीनी ।

विज्ञ—(वि०) [विशेषेण जानाति, वि √ज्ञा+क] जानकार, जानने वाला । चतुर, निपुण । (पुं०) विद्वान् आदमी ।

विज्ञप्त—(वि०) [वि√ज्ञप् + क्त] जनाया हुआ, सूचित । सम्मानपूर्वक निवेदन किया हुआ ।

विज्ञप्ति—(स्त्री०) [वि √ ज्ञप् + क्तिन्] सूचित करने की क्रिया । विज्ञापन, इश्तहार । निवेदन, प्रार्थना ।

विज्ञात—(वि०) [वि√ज्ञा+क्त] जाना हुआ, समझा हुआ । प्रसिद्ध, मशहूर ।

विज्ञान—(न०) [वि√ज्ञा+ल्युट्] ज्ञान, जानकारी । बुद्धि । प्रतिमा । विवेक । निपुणता । शिल्प और शास्त्रादि का ज्ञान । माया या अविद्या नामक वृत्ति । बौद्धमत से आत्मरूप ज्ञान । विशेष रूप से आत्मा का अनुभव । काम-धन्धा, व्यवसाय । संगीत ।—**ईश्वर**(**विज्ञानेश्वर**)-(पुं०) याज्ञवल्क्य स्मृति की मिताक्षरा टीका के बनाने वाले विज्ञानेश्वर ।—**पाद**-(पुं०) व्यास जी का नाम ।—**मातृक** (पुं०) बुद्धदेव का नाम ।—**वाद**-(पुं०) वह वाद या सिद्धान्त जिसमें ब्रह्म और आत्मा का ऐक्य प्रतिपादित हो । बुद्धदेव द्वारा प्रचारित सिद्धान्त विशेष ।

विज्ञानिक—(वि०) [विज्ञान + न्] विज्ञ, पण्डित, ज्ञानी ।

विज्ञापक—(पुं०) [वि √ ज्ञा + णिच्, पुक्+ण्वुल्] विज्ञापन या इश्तहार करने वाला । समझाने, बतलाने वाला ।

विज्ञापन—(न०), **विज्ञापना**- (स्त्री०) [वि√ज्ञा+णिच्, पुक् + ल्युट्] [वि √ज्ञा+णिच्, पुक् + युच्—टाप्] समझाना । सूचना देना । इश्तहार । निवेदन, प्रार्थना ।

विज्ञापित—(वि०) [वि√ज्ञा + णिच्, पुक्+क्त] बताया हुआ । इश्तहार किया हुआ ।

विज्ञाप्ति—(स्त्री०) [वि√ज्ञा+णिच्, पुक् +क्तिन्] दे० 'विज्ञप्ति' ।

विज्ञाप्य—(वि०) [वि √ ज्ञा + णिच्, पुक्+ण्यत्] बतलाने योग्य । इश्तहार करने योग्य । (न०) प्रार्थना ।

विज्वर—(पुं०) [विगतः ज्वरो यस्य, प्रा० ब०] ज्वर से मुक्त । चिन्ता या कष्ट से मुक्त ।

विञ्जामर—(न०) नेत्र का सफेद भाग ।

विञ्जोलि, विञ्जोली—(स्त्री०) [√विज् +उल, पृषो० साधुः] पंक्ति, कतार ।

√विट्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । वेटति, वेटिष्यति, अवेटीत् ।

विट—(पुं०) [√विट्+क] कामुक, लंपट । वह व्यक्ति जो किसी वेश्या का यार हो या जिसने किसी वेश्या को रख लिया हो । धूर्त । विदूषक की श्रेणी का एक नाटकीय पात्र, नायक का सखा । साँचर नमक । चूहा । खदिर वृक्ष । नारंगी का पेड़ । पल्लव युक्त शाखा या डाली ।—**माक्षिक**-(न०) सोना-मक्खी नामक खनिज पदार्थ ।—**लवण**-(न०) साँचर नमक ।

विटङ्क, विटङ्कक—(वि०) [वि √ टङ्क् +घ] [विटङ्क+कन्] सुंदर । (पुं०,

न०) कबूतर का दरबा, काबुक, कबूतर की अड्डी। सब से ऊँचा सिरा या स्थान।

विटङ्कित—(वि०) [वि√टङ्क् + क्त] चिह्नित। मुद्रांकित। अलंकृत।

विटप—(पुं०) [विट√ पा+क] शाखा, डाल। गुच्छा। वृक्ष या लता की नयी शाखा; 'कोमलविटपानुकारिणौ बाहू' श० १.२१। छतनार पेड़। झाड़ी। कोंपल। सघन वृक्षों का झुरमुट। फैलाव। अण्डकोष के मध्य या नीचे की रेखा।

विटपिन्—(पुं०) [विटप+इनि] वृक्ष, पेड़। वटवृक्ष।—**मृग**-(पुं०) बंदर।

विठङ्क—(वि०) बुरा, नीच, कमीना, अधम।

विठर—(पुं०) वृहस्पति।

विट्ठल—(पुं०) विष्णु अथवा कृष्ण भगवान् की उपाधि।

√**विड्**—भ्वा० पर० सक० कोसना, शाप देना। जोर से चिल्लाना। वेडति, वेडिष्यति, अवेडीत्।

विड—(न०) [√विड्+क] साँचर नमक। बायविडंग।

विडङ्ग—(न०, पुं०) [√विड्+अङ्गच्] बायविडंग।

विडम्ब—(पुं०) [वि√डम्ब् + अप्] अनुकरण, नकल। कष्ट, पीड़ा।

विडम्बन—(न०), **विडम्बना**-(स्त्री०) [वि √डम्ब्+ल्युट्] [वि √ डम्ब्+णिच् +युच्—टाप्] किसी के रंगढंग या चाल-ढाल आदि की ज्यों की त्यों नकल उतारना। अनुकरण करके चिढ़ाने या अपमान करने की क्रिया। वेश बदलने की क्रिया। छल। चिढ़ाना। पीड़न, सन्तापन। हताश करना। मजाक, उपहास; 'इयं च तेऽन्या पुरतो विडम्बना' कु० ५.७०।

विडम्बित—(वि०) [वि√डम्ब्+क्त] नकल उतारा हुआ। नकल किया हुआ, हँसी उड़ाया हुआ। छला हुआ। चिढ़ाया हुआ। हताश किया हुआ। नीचय, धनहीन।

विडारक—(पुं०) [विडाल एव स्वार्थे कन्, लस्य रः] बिल्ली।

विडाल, **विडालक**—दे० 'विडाल', 'विडालक'।

विडीन—(न०) [वि√डी+क्त] पक्षियों की उड़ान का एक प्रकार।

विडुल—(पुं०) [√विड्+कुलन्] सारस विशेष।

विडोजस्, **विडौजस्**—(पुं०) [√विष्+क्विप्, विट् व्यापकम् ओजो यस्य, ब० स०] [विडम् आक्रोशि शत्रुद्वेषम् असहिष्णु ओजो यस्य, ब० स०] इन्द्र का नाम।

वितंस—(पुं०) [वि√तंस्+घञ्] पिंजड़ा। जाल या साधन जिसके द्वारा वनपशु या पक्षी कैद किये जायँ।

वितण्ड—(पुं०) [वि√तण्ड्+अच्] हाथी। ताला या चटखनी।

वितण्डा—(स्त्री०) [वि√तण्ड्+अ—टाप्] दूसरे के पक्ष को दबाते हुए अपने मत का स्थापन। व्यर्थ का झगड़ा या कहा-सुनी। कलछी, दर्वी। शिलारस।

वितत—(वि०) [वि √तन्+ क्त] फैला हुआ। विस्तृत, लंबा-चौड़ा। सम्पन्न किया हुआ, पूर्ण किया हुआ। व्याप्त। (न०) वीणा अथवा उसी प्रकार का तार वाला कोई बाजा। **धन्वन्**-(वि०) कमान को ताने हुए।

वितति—(स्त्री०) [वि√तन्+क्तिन्] विस्तार, फैलाव। समुदाय। झप्प, गुच्छा। पंक्ति, कतार।

वितथ—(वि०) [वि√ तन्+क्थन्] झूठ, मिथ्या; 'आजन्मनो न भवता वितथं किलोक्तम्' वे.३·१३। निष्फल, व्यर्थ।

वितथ्य—(वि०) [वितथ+यत्] असत्य, झूठ।

वितद्रु—(स्त्री०) [वि√तन्+रु, दुट् आगम] पंजाब की वितस्ता या झेलम नदी का नाम।

वितन्तु—(पुं०) अच्छा घोड़ा। (स्त्री०) विधवा स्त्री।

वितरण—(न०) [वि√तॄ+ल्युट्] देना, अर्पण करना। बाँटना। पार करना।

वितर्क—(पुं०) [वि√तर्क्+अच्] एक तर्क के बाद होने वाला दूसरा तर्क। अनुमान। विचार। सन्देह। विवाद। एक अर्थालंकार।

वितर्कण—(न०) [वि√तर्क्+ल्युट्] वाद-विवाद, बहस। अनुमान। सन्देह।

वितर्दि, वितर्दिका, वितर्दी—(स्त्री०) [वि√तर्द्+इन्] [वितर्दि+कन्—टाप्] [वितर्दि+ङीष्] वेदी। मंच। छज्जा।

वितर्द्धि, वितर्द्धिका, वितर्द्धी—दे० 'वितर्दि'।

वितल—(न०) [विशेषेण तलम्, प्रा० स०] पुराणानुसार पातालों में से एक।

वितस्ता—(स्त्री०) पंजाब की एक नदी जसका आधुनिक नाम झेलम है।

वितस्ति—(पुं०, स्त्री०) [वि√तस्+ति] १२ अंगुल का परिमाण या माप। एक बालिश्त। एक बित्ता।

वितान—(वि०) [प्रा० ब०] रीता, खाली निस्सार, सारहीन। उदास, गमगीन। कुंद, मूढ़। शठ। पतित। (पुं०, न०) [वि√तन्+घञ्] फैलाव, विस्तार। चंदोवा; 'बृहत्तुलैरप्यतुलैर्वितानमालापिनद्धैरपि चावितानैः' शि० ३.५०। गद्दी। समूह। राशि। यज्ञ। यज्ञीय कुण्ड या वेदी। अवसर। अवकाश। घृणा। एक छंद।

वितानक—(पुं०, न०) [वितान+कन्] विस्तार। ढेर। समूह। चँदोवा। नृत्य आदि के लिये कमरे में बिछाया जाने वाला बड़ा कपड़ा। संपत्ति। धनिया।

वितीर्ण—(वि०) [वि√तॄ+क्त] गुजरा हुआ। दिया हुआ; प्रदत्त। नीचे गया हुआ, उतरा हुआ। ले जाया हुआ, सवारी द्वारा पहुँचाया हुआ। वशवर्ती किया हुआ।

वितुन्न—(न०) [वि√तुद्+क्त] शिरियारी या सुसना नामक साग। शैवाल, सिवार।

वितुन्नक—(न०) [वितुन्न+कन्] धनिया। तूतिया। (पुं०) तामलकी नाम का वृक्ष।

वितुष्ट—वि०) [वि√तुष्+क्त] असन्तुष्ट, नाराज।

वितृष्ण—(वि०) [विगता तृष्णा यस्य, प्रा० ब०] तृष्णा से रहित, सन्तुष्ट।

√वित्—चु० उभ० सक० दे डालना, दान कर देना। वित्तयति—ते, वित्तयिष्यति—ते, अविवित्तत्—त।

वित्त—(वि०) [√विद्+क्त] पाया हुआ, प्राप्त। परीक्षित। प्रसिद्ध। ज्ञात। विचारित। (न०) धन-संपत्ति; 'यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः' भर्तृ०। अधिकार। शक्ति। ईश (वित्तेश)-(पुं०) कुबेर।—द-(पुं०) धनदाता, दानी। —**मात्रा**-(स्त्री०) सम्पत्ति। —**शाठ्य**—(न०) देन-लेन में धोखेबाजी।

वित्तवत्—(वि०) [वित्त+मतुप्—वत्व] धनी, धनवान्।

वित्ति—(स्त्री०) [√विद्+क्तिन्] ज्ञान। विवेक, विचार। उपलब्धि। सम्भावना।

वित्रास—(पुं०) [वि√त्रस्+घञ्] भय, डर।

वित्सन—(पुं०) [√विद्+क्विप्, √सन्+अच्] बैल, साँड़।

√विथ्—भ्वा० आत्म० सक० मांगना, याचना करना। वेथते, वेथिष्यते, अवेथिष्ट।

विथुर—(पुं०) [√व्यथ्+उरच्, संप्रसारण] दैत्य, दानव। चोर। क्षय, नाश। (वि०) अल्प, थोड़ा। व्यथित, दुःखित।

√विद्–अ० पर० सक० जानना । वेत्ति–वेद, वेदिष्यति, अवेदीत् । दि० आत्म० अक० होना । विद्यते, वेत्स्यते, अवित्त । तु० उभ० सक० पाना, प्राप्त करना । विन्दति–ते, वेदिष्यति–ते,–वेत्स्यति–ते, अविदत्- अवेदिष्ट–अवित्त । रु० आत्म० सक० विचार करना । विन्ते, वेत्स्यते, अवित्त । चु० आत्म० सक० कहना । अक० सचेत होना । निवास करना । वेदयते ।

विद्–(वि०) [√विद्+क्विप्] जानने वाला । (पुं०) बुधग्रह । पण्डितजन । (स्त्री०) ज्ञान । जानकारी । समझदारी ।

विद–(पुं०) [√विद्+क] पण्डित जन । बुधग्रह ।

विदंश–(पुं०) [वि√दंश्+घञ्] ऐसा भोजन जो प्यास लगावे । काटना, डँसना ।

विदग्ध–(वि०) [वि√दह्+क्त] जला हुआ, आग से भस्म किया हुआ । पकाया हुआ । पचाया हुआ, हजम किया हुआ । नष्ट किया हुआ । निपुण, चतुर । रसिक । अनपचा हुआ । (पुं०) पण्डित, विद्वान् व्यक्ति, रसिक जन । रूसा नामक घास, रोहिष तृण ।

विदग्धा–(स्त्री०) [विदग्ध+टाप्] चतुरता से पर-पुरुष को अपने में अनुरक्त करने वाली नायिका ।

विदथ–(पुं०) [√विद्+कथच्] विद्वान् जन, पण्डित जन । साधु-संन्यासी । ऋषि । यज्ञ । सेना । युद्ध ।

विदर–(पुं०) [वि√दॄ+अप्] फाड़ना, विदीर्ण करना । [विशेषेण दरः, प्रा०, स०] अत्यंत भय ।

विदर्भ–(पुं०) [विशिष्टा दर्भाः कुशा यत्र, विगता दर्भाः कुशा यतः इति वा] कुण्डिन नगर, आधुनिक बरार; 'अस्ति विदर्भो नाम जनपदः' दश० । एक राजा । एक मुनि । दाँतों में चोट लगने से मसूड़े का फूलना या दाँतों का हिलना ।–जा,–तनया, राजतनया,–सुभ्रू-(स्त्री०) दमयन्ती के नामान्तर ।

विदल–(वि०) [विघट्टितानि दलानि यस्य, प्रा० ब० वा वि√दल्+क] चिरा हुआ । खिला हुआ, विकसित । (न०) बाँस की खपाचियों की बनी टोकरी । अनार की छाल । डाली, टहनी । किसी वस्तु के टुकड़े । (पुं०) चपाती । चीरना, फाड़ना । दलना, दरना (जैसे चना, मूँग, उर्द आदि का) । पहाड़ी आबनूस ।

विदलन–(न०) [वि√दल् + ल्युट्] मलने, दबाने, दलने की क्रिया । टुकड़े-टुकड़े करना । फाड़ना ।

विदा–(स्त्री०) [विद्√+अङ–टाप्] ज्ञान । बुद्धि । विद्या ।

विदार–(पुं०) [वि√दॄ+घञ्] चीरना, विदीर्ण करना । युद्ध । जलाशय के पानी का ऊपर से बहना ।

विदारक–(वि०) [वि √दॄ + ण्वुल्] चीरने वाला, फाड़नेवाला । (पुं०) नदी के बीच की पहाड़ी या वृक्ष । पानी निकालने को नदी के गर्भ में खोदा हुआ कूप जैसा गढ़ा ।

विदारण–(पुं०) [वि√दॄ+णिच्+ल्यु वा ल्युट्] नदी के बीच में उगा हुआ वृक्ष अथवा चट्टान । युद्ध । कर्णिकार वृक्ष । (न०) बीच में से अलग करके दो या अधिक टुकड़े करना, फाड़ना । सताना । मार डालना, हत्या करना ।

विदारणा–(स्त्री०) [वि√दॄ+णिच्+युच्–टाप्] युद्ध, लड़ाई ।

विदारी–(स्त्री०) [वि√दॄ+णिच्+अच्–ङीष्] शालपर्णी । भूमिकूष्मांड । क्षीरकाकोली । वाराहीकंद । बगल या पट्टे की

सूजन। कान का एक रोग। कंठ का एक राग।

विदारु—(पुं०) [वि√दॄ+णिच्+उ] छिपकली, बिंतुइया।

विदित—(वि०) [√विद्+क्त] जाना हुआ, अवगत, ज्ञात। सूचित किया हुआ। प्रसिद्ध, प्रख्यात; 'भुवनविदिते वंशे' मे० ६। प्रतिज्ञात, इकरार किया हुआ। (पुं०) विद्वान् पुरुष, पण्डित। (न०) ज्ञान, जानकारी।

विदिश्—(स्त्री०) [दिग्भ्यां विगता] दो दिशाओं के बीच का कोना।

विदिशा—(स्त्री०) वर्तमान भेलसा नामक नगर का प्राचीन नाम। मालवा की एक नदी का नाम।

विदीर्ण—(वि०) [वि√दॄ+क्त] बीच से फाड़ा या विदारण किया हुआ। खिला हुआ। फैला हुआ।

विदु—(पुं०) [√विद्+कु] हाथी के मस्तक के बीच का भाग।

विदुर—(वि०) [√विद्+कुरच्] वेत्ता, जानने वाला। नागर, चालाक। धीर। कुशल। षड्यंत्रकारी। (पुं०) विद्वज्जन। चालाक या मुत्फन्नी आदमी। पाण्डु के छोटे भाई का नाम।

विदुल—(पुं०) [वि√दुल्+क] बेंत। जलबेंत। बोल या गन्धरस नामक गन्ध-द्रव्य।

विदून—(वि०) [वि√दू+क्त] सन्तप्त, सताया हुआ, पीड़ित किया हुआ।

विदूर—(वि०) [विशेषेण दूरः, प्रा० स०] जो बहुत दूर हो। (पुं०) एक पर्वत का नाम जिससे वैडूर्य मणि निकलती है; 'विदूर-भूमिर्नवमेघशब्दादुद्भिन्नया रत्नशलाकयेव' कु० १.२४।

विदूरज—(न०) [विदूर√जन्+ड] वैडूर्य मणि।

विदूषक—(स्त्री०) [स्त्री०- विदूषकी] [विदूषयति स्वं परं वा, वि√दूष्+णिच्+ण्वुल्] भ्रष्ट करने वाला, बिगाड़ने वाला। गाली देने वाला। मजाक करने वाला। परनिंदक। (पुं०) हँसोड़, मसखरा। विशेषकर राजाओं अथवा बड़े आदमियों के पास उनके मनोविनोद के लिये रहने वाला मसखरा। वह जो बहुत अधिक विषयी हो, कामुक।

विदूषण—(न०) [वि√दूष्+णिच्+ल्युट्] गंदा, भ्रष्ट करना। निंदा करना। दोषारोपण करना, ऐब लगाना।

विदृश्—(वि०) [विगते दृशौ चक्षुषी यस्य, प्रा० ब०] अंधा।

विदेश—(पुं०) [विप्रकृष्टो देशः प्रा० स०] दूसरा देश, परदेश।

विदेशज—(पुं०) [विदेश√जन्+ड] विदेश या अन्य देश का बना हुआ या उत्पन्न।

विदेशीय—(वि०) [विदेश+छ] अन्य देश का, परदेशी।

विदेह—(पुं०) [विगतो देहो देह-सम्बन्धो यस्य, प्रा० ब०] राजा जनक। राजा निमि। मिथिला का नाम; 'बभौ तमनु-गच्छन्ती विदेहाधिपतेः सुता' र० १२.२६। मिथिला के निवासी। (वि०) शरीर-रहित। जिसकी उत्पत्ति माता-पिता से न हो (जैसे-देवता)।—**कैवल्य**—(न०) वह मोक्ष जो जीवन्मुक्त को मरने पर प्राप्त होता है, निर्वाण।—**नगर**,—**पुर**—(न०) जनक की राजधानी, जनकपुर।

विद्ध—(वि०) [√व्यध्+क्त] बीच में से छेद किया हुआ। घायल किया हुआ। पीटा हुआ। फेंका हुआ। वह जिसमें बाधा पड़ी हो या डाली गयी हो। समान, तुल्य। टेढ़ा। (न०) घाव।—**कर्ण**- (वि०) वह जिसके कान छिदे हों।

विद्या—(स्त्री०) [विदन्ति अनया, √विद्+क्यप्—टाप्] ज्ञान। विज्ञान। [परा और अपरा विद्या के अतिरिक्त किसी-किसी शास्त्रकार के अनुसार विद्या के चार प्रकार माने गये हैं। यथा—'आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्च शाश्वती।' मनु ने इनमें पांचवी आत्मविद्या और जोड़ी है।] यथार्थ या सत्यज्ञान, आत्मविद्या। जादू, टोना। दुर्गा देवी। ऐन्द्रजालिक विद्या या निपुणता। —**अनुपालिन्** (**विद्यानुपालिन्**)—**अनुसेविन्** (**विद्यानुसेविन्**)-(वि०) ज्ञानोपार्जन करने वाला। —**अभ्यास** (**विद्याभ्यास**)-(पुं०) विद्याध्ययन। —**अर्जन** (**विद्यार्जन**)-(न०) **आगम** (**विद्यागम**)-(पुं०) विद्या, ज्ञान की प्राप्ति। —**अर्थ** (**विद्यार्थ**),—**अर्थिन्** (**विद्यार्थिन्**)-(वि०) विद्या का इच्छुक। (पुं०) विद्या पढ़ने वाला, ।—**आलय** (**विद्यालय**)-(पुं०) वह स्थान जहां अध्ययन किया जाता है, विद्या-मन्दिर। —**कर**-(पुं०) पण्डित, विद्वान् व्यक्ति। —**चण**,—**चुञ्चु**-(वि०) [विद्या+चणप्] [विद्या+चुञ्चु] वह जो अपनी विद्वत्ता के लिये प्रसिद्ध हो। —**धन**-(न०) विद्या रूपी धन।।—**धर**-(पुं०) देवयोनि विशेष (गन्धर्व, किन्नर आदि)। १६ प्रकार के रतिबन्धों में से एक। एक अस्त्र। विद्वान्, पण्डित जन। —**धरी**-(स्त्री०) विद्याधर जाति की स्त्री। —**राशि**-(पुं०) शिव। —**व्रतस्नातक**-(पुं०) मनु के अनुसार वह स्नातक जो गुरु के निकट रह कर वेद और विद्याव्रत दोनों समाप्त कर अपने घर लौटे।

विद्युत्—(स्त्री०) [विशेषेण द्योतते, वि √द्युत्+क्विप्] बिजली। वज्र। सन्ध्या। एक प्रकार की वीणा। एक प्रकार की उल्का। प्रजापति बाहुपुत्र की चार कन्यायें। —**उन्मेष** (**विद्युदुन्मेष**)-(पुं०) बिजली की कौंध। —**जिह्व** (**विद्युज्जिह्व**)-(पुं०) श्रीमद्रामायण के अनुसार रावण के पक्ष के एक राक्षस का नाम, जो शूर्पणखा का पति था। एक यक्ष का नाम। एक जाति के राक्षस। —**ज्वाला** (**विद्युज्ज्वाला**)-(स्त्री०)—**द्योत** (**विद्युद्द्योत**)-(पुं०) बिजली की दीप्ति। —**पात**-(पुं०) बिजली का गिरना। वज्रपात। —**लता** (**विद्युल्लता**), **लेखा** (**विद्युल्लेखा**)-(स्त्री०) बिजली की धारी या रेखा।

विद्युत्वत्—(वि०) [विद्युत् + मतुप्, मस्य वत्वम्] वह जिसमें बिजली हो (पुं०) बादल 'सोऽहं तृष्णातुरैर्वृष्टिं विद्युत्वानिव चातकैः' कु. ६.२७।

विद्योतन—(वि०) [स्त्री० —**विद्योतनी**] [वि√द्युत्+णिच्+ल्यु] प्रकाश करने वाला। व्याख्याकार।

विद्र—(पुं०) [√व्यध्+रक्, दान्तादेश, सम्प्रसारण] विदारण। छिद्र, छेद।

विद्रधि—(पुं०) [विद्√रुध्+कि, पृषो० साधुः] एक प्रकार का फोड़ा जो पेट में होता है। शूकदोषभेद।

विद्रव—(पुं०) [वि√द्रु+अप्] पलायन, भगदड़। भय, डर। बहाव। पिघलन।

विद्राण—(वि०) [वि √द्रा+क्त] नींद से जागा हुआ, जागृत।

विद्रावण—(न०) [वि√द्रु+णिच् + ल्युट्] खदेड़ना, भगाना, हराना। गलाना। तरल करना।

विद्रुम—(पुं०) [विशिष्टो द्रुमः] मूँगे का वृक्ष। मुक्ताफल नामक वृक्ष। मूँगा, प्रवाल। कोंपल, वृक्ष का नया पत्ता या अङ्कुर। —**लता**,-**लतिका**-(स्त्री०) नलिका या नली नामक गन्धद्रव्य। मूँगा; 'तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु' र०. १३.१३।

विद्वस्—(वि०) [कर्त्ता, एकवचन, (पुं०) **विद्वान्**, (स्त्री०) **विदुषी**, (न०) **विद्वत्**] [√विद्+शतृ, वसु आदेश] ज्ञाता, जान-

कार। पंडित, विद्वान्। (पुं०) पंडित, पूर्ण शिक्षित व्यक्ति।— **कल्प** (**विद्वत्कल्प**), —**देशीय** (**विद्वद्देशीय**), —**देश्य** (**विद्वद्देश्य**) -(वि०) [ईषदूनो विद्वान्, विद्वस् + कल्पप्, देशीयर्, देश्य] थोड़ा या कम विद्वान।—**जन** (**विद्वज्जन**)-(पुं०) पंडित, विद्वान् आदमी।

विद्विष्, विद्विष—(पुं०) [वि√द्विष्+क्विप्] [वि√द्विष्+क] शत्रु, दुश्मन; "कृतोपकारा इव विद्विषस्ते' कि. ३.१६।

विद्विष्ट—(वि०) [वि० √ द्विष्+क्त] जिसके प्रति द्वेष किया गया हो। घृणित। नापसंद।

विद्वेष—(पुं०) [वि√द्विष्+घञ्] शत्रुता। घृणा। तिरस्कार।

विद्वेषण—(पुं०) [वि√द्विष्+ल्यु] घृणा करने वाला व्यक्ति। शत्रु। (न०) [वि √द्विष्+ल्युट्] द्वेष करना। [वि √द्विष्+णिच्+ल्युट्] दो जनों में वैर करा देने की क्रिया।

विद्वेषणी—(स्त्री०) [विद्वेषण+ङीष्] विद्वेष करने वाली स्त्री। एक यक्ष-कन्या।

विद्वेषिन्, विद्वेष्टृ—वि०) [वि√द्विष्+णिनि] [वि√द्विष्+तृच्] विद्वेष या घृणा करने वाला। शत्रु।

√**विध्**—तु० पर० सक०। विधान करना। चुभोना, घुसेड़ना। बेधना। सम्मान करना, पूजन करना। शासन करना, हुकूमत करना विधति, वेधिष्यति, अवेधीत्।

विध—(पुं०) [√विध्+क] वेधन, छेद करना। विधि, विधान। प्रकार, किस्म, तरीका। गुना; यथा—अष्टविध, अठ-गुना। हाथी का खाद्य पदार्थ। समृद्धि।

विधवन—(न०) [वि√धू+ल्युट्] कम्पन, काँपना।

विधवा—(स्त्री०) [विगतो धवो भर्ता यस्याः प्रा० ब०] वह स्त्री जिसका पति मर गया हो, रांड़, बेवा।

विधव्य—(न०) भय की थरथरी। हैरानी, घबराहट, बेचैनी।

विधस्—(पुं०) सर्वसृष्टि-उत्पादक ब्रह्म।

विधस—(न०) मोम।

विधा—(स्त्री०)] वि√धा+क्विप्] जल। ढंग, तरीका। किस्म, जाति। धन-दौलत। हाथी या घोड़े का चारा। प्रवेशन। वेधन। मजदूरी।

विधातृ—(वि०) [वि√धा+तृच्] बनाने वाला। व्यवस्था करने वाला। देने वाला। (पुं०) सृष्टिकर्त्ता, ब्रह्मा। विष्णु। शिव। प्रारब्ध, भाग्य। विश्वकर्मा। कामदेव। मदिरा, शराब।—**आयुस्** (**विधात्रायुस्**)- -(पुं०) धूप, सूर्य का प्रकाश। सूरजमुखी फूल।—**भू**-(पुं०) नारद की उपाधि।

विधान—(न०) [वि√धा+ल्युट्] किसी कार्य का आयोजन। सम्पादन। विन्यास। अनुष्ठान। सृष्टि। कानून, धर्मशास्त्र की की आज्ञा। ढंग, तरीका। तरकीब, उपाय। हाथियों को नशे में लाने के लिये दिया गया खाद्यपदार्थ विशेष। धन, सम्पत्ति। पीड़ा, सन्ताप। विद्वेषण।—**ग**-(पुं०) पंडित। शिक्षक।—**ज्ञ**—वि०) विधान जानने वाला (पुं०) पंडित। शिक्षक।

विधानक—(न०) [विधान+कन्] पीडा, सन्ताप।

विधायक—(वि०) [स्त्री०—**विधायिका**] [वि √ धा + ण्वुल्] विधानकर्त्ता। निर्माता। प्रबंध करने वाला। उत्पादक। करने वाला।

विधि—(पुं०) [वि√धा+कि वा√विध्+इन्] कार्य करने की रीति। प्रणाली, ढंग। आज्ञा। मंशास्त्र की आज्ञा या आदेश। धार्मिक विधान या संस्कार। आचरण, व्यवहार। सृष्टि, रचना। सृष्टि-कर्त्ता। भाग्य (प्रारब्ध); 'विधौ वामारम्भे मम समुचितैषा परिणतिः' माल० ४.४।

हाथी का चारा। समय। वैद्य, चिकित्सक। विष्णु का नामान्तर।—ज्ञ-(पुं०) विधि-विधान जानने वाला ब्राह्मण। —दृष्ट, —विहित—(वि०) नियम या शास्त्र के अनुसार आचरित।—द्वैध-(न०) नियमों की भि ता। —पूर्वकम्-(अव्य०) नियम या विधि के अनुसार।—प्रयोग-(पुं०) नियम का प्रयोग या विनियोग।—योग-(पुं०) भाग या किस्मत की खूबी।—वधू-(स्त्री०) सरस्वती देवी।—हीन-(वि०) विधिरहित। शास्त्र-विरुद्ध।

विधित्सा—(स्त्री०) वि√धा+सन्+अ—टाप्] कार्य करने की अभिलाषा। युक्ति। विधि, विधान।

विधित्सित—(वि०) [वि√धा+सन्+क्त] जिसके करने की इच्छा की गयी हो। (न०) इरादा, विचार।

विधु—(पुं०) [√व्यध्+कु] चन्द्रमा। कपूर। राक्षस। प्रायश्चित्तात्मक कर्म। वायु। विष्णु का नामान्तर। ब्रह्मा।—पञ्जर,—पिञ्जर-(पुं०) खड्ग, खांड़ा।—प्रिया-(स्त्री०) चन्द्रमा की स्त्री रोहिणी।

विधुत—(वि०) दे० "विधूत"।

विधुति—(स्त्री०) [वि√धु+क्तिन्] कंपन, काँपना। निराकरण।

विधुनन—(न०) [वि√धू+णिच्+ल्युट्, नुक्, पृषो० ह्रस्वः] कंपन। थरथराहट।

विधुन्तुद—(पुं०) [विधुं तुदति पीडयति, विधु√तुद्+खश्, मुम्] राहु का नाम।

विधुर—(वि०) [विगता धूः कार्यभारः भारो वा यस्मात्, प्रा० ब०, अच्] पीड़ित, सन्तप्त, दुःख से विह्वल। पत्नी अथवा पति के वियोगजन्य दुःख से विकल, विरह-व्यथा से विकल; 'विधुरां ज्वलनातिसर्जनान्ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकं' कु. ४.३२। रहित, हीन। अभावग्रस्त, मोहताज। विरोधी। (पुं०) रँडुआ, वह पुरुष जिसकी पत्नी मर गयी हो। (न०) भय, डर। चिन्ता। विरह, वियोग। कैवल्य, मोक्ष।

विधुरा—(स्त्री०) [विधुर+टाप्] चीनी और मसालों से मिश्रित दही। दही की लस्सी। कान के पास की एक ग्रंथि।

विधुवन—(न०) [वि√धु+ल्युट्, कुटादित्वात् साधुः] कंपन, थरथराहट।

विधूत—(वि०) [वि√धू+क्त] कंपित, कांपता हुआ। हिलता हुआ, डोलता हुआ। हटाया हुआ, अलग किया हुआ। चञ्चल, अदृढ़। त्यक्त, त्यागा हुआ। (न०) घृणा, अरुचि, नफरत।

विधूति—(स्त्री०) [वि√धू+क्तिन्] कंपन, थरथराहट।

विधूनन—(न०) [वि√धू+णिच्+ल्युट्] हिलाना। कँपाना।

विधृत—(वि०) [वि√धृ+क्त] पकड़ा हुआ। ग्रहण किया हुआ। पृथक् किया हुआ। अधिकृत। दमन किया हुआ। समर्थित, रक्षित। (न०) आज्ञा की अवहेलना। असन्तोष।

विधेय—(वि०) [वि√धा+यत्] जिसका विधान या अनुष्ठान उचित हो, जिसका करना उचित हो, विधान के योग्य, कर्त्तव्य। जो नियम या विधि द्वारा जाना जाय। वचन या आज्ञा के वशीभूत, आज्ञा-पालक। विनम्र (व्याकरण में वह शब्द या वाक्य) जिसके द्वारा किसी के सम्बन्ध में कुछ कहा जाय। (न०) कर्तव्य कर्म। आवश्यकता। (पुं०) अनुचर, नौकर।—अविमर्श (विधेयाविमर्श)-(पुं०) साहित्य में एक वाक्यदोष जो विधेय अंश का अप्रधान अंश प्राप्त होने पर होता है। कही जाने वाली मुख्य बात का वाक्य-रचना के बीच में दब जाना।—आत्मन् (विधेयात्मन्)-(पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर।—ज्ञ-(वि०) अपने कर्त्तव्य को जानने वाला। —पद-(न०) वह कर्म जो पूरा किया जाने वाला हो।

विध्वंस—(पुं०) [वि√ध्वंस्+घञ्] नाश, बरबादी। वैर। घृणा। तिरस्कार, अनादर।

विध्वंसिन्—(वि०) [वि√ध्वंस्+णिनि] जो नष्ट होता हो। जो टुकड़े-टुकड़े हो कर गिर रहा हो। [वि√ध्वंस्+णिच्+णिनि] नाश करने वाला। वैरी।

विध्वस्त—(वि०) [वि√ध्वंस्+क्त] नष्ट, बरबाद। बिखरा हुआ। धुँधला। ग्रस्त।

विनत—(वि०) [वि√नम्+क्त] झुका हुआ, नवा हुआ। टेढ़ा पड़ा हुआ, वक्र। नीचे धँसा हुआ। विनीत, नम्र।

विनता—(स्त्री०) [विनत+टाप्] कश्यप की एक पत्नी और अरुण तथा गरुड की जननी का नाम। एक प्रकार की टोकरी। पीठ या पेट का एक घातक फोड़ा जो प्रमेह के रोगियों को होता है। व्याधि लाने वाली एक राक्षसी।—**नन्दन**,—**सुत**,—**सूनु**—(पुं०) गरुड़। अरुण।

विनति—(स्त्री०) [वि√नम्+क्तिन्] झुकाव। नम्रता। विनय। प्रार्थना।

विनद—(पुं०) [वि√नद्+अच्] ध्वनि, नाद। कोलाहल। छतिवन का पेड़।

विनमन—(न०) [वि√नम्+ल्युट्] झुकना, लचना।

विनम्र—(वि०) [वि√नम्+र] झुका हुआ, नवा हुआ। विनयी। (न०) तगर वृक्ष का फूल।

विनय—(वि०) [वि√नी+अच्] पटका हुआ, फेंका हुआ। गुप्त, गोपनीय। असदाचार। (पुं०) नम्रता; 'तथापि नीचैर्विनयाददृश्यत' र. ३.३४। शिष्टता। व्यवहार में अधीनता का भाव, शिष्टोचित व्यवहार। भद्रता। आचरण। स्थानान्तर-करण। जितेन्द्रिय पुरुष। व्यापारी। [विशिष्टो नयः, प्रा० स०] दंड, शासन।

विनयन—(न०) [वि√नी+ल्युट्] हटाना, ले जाना। शिक्षण। विनय।

विनशन—(न०) [वि√नश्+ल्युट्] नाश, बरबादी। (पुं०) उस स्थान का नाम जहाँ सरस्वती नदी गुप्त हो जाती है, कुरुक्षेत्र।

विनष्ट—(वि०) [वि√नश्+क्त] नष्ट, बरबाद। भ्रष्ट, बिगड़ा हुआ। लुप्त। मृत।

विनस—(वि०) [स्त्री०—**विनसा**, **विनसी**] [विगता नासिका यस्य, नासिकाशब्दस्य नसादेशः] नासिका-हीन।

विना—(अव्य०) [वि+ना] बगैर, अभाव में, न रहने की अवस्था में; 'पङ्कैर्विना सरो भाति' भा० १.१६। सिवा, अतिरिक्त, छोड़कर।

विनाडि, **विनाडिका**—(स्त्री०) [विगता नाडिः नाडिका वा यया] पल, एक घड़ी का ६०वाँ भाग।

विनायक—(पुं०) [विशिष्टो नायकः प्रा० स०] गणेश जी। बुद्ध। गरुड़। विघ्न। गुरु।

विनाश—(पुं०) [वि०√नश्+घञ्] नाश, बरबादी। स्थानान्तर-करण।—**धर्मन्**—**धर्मिन्**-(वि०) नाशवान्, नष्ट होने वाला। क्षणभंगुर।

विनाशन—(न०) [वि√नश्+णिच्+ल्युट्] नाश करना। लुप्त करना। हटाना। (वि०) [वि√नश्+णिच्+ल्यु] नाश करने वाला। (पुं०) एक असुर जो काल का पुत्र था।

विनासक, **विनासिक**—(वि०) [विगता नासा वा नासिका यस्य सः ब० स०, ह्रस्व, पक्षे कन्] नासिकाहीन, नकटा।

विनाह—(पुं०) [वि√नह+घञ्] कुएँ के मुख का ढकना।

विनिक्षेप—(पुं०) [वि—नि√क्षिप्+घञ्] फेंकना। उछालना। भेजना। छोड़ना।

विनिगमक—(वि०) [वि—नि√गम्+णिच्+ण्वुल्] दो पक्षों से से किसी एक को सिद्ध करने वाला।

विनिगमना—(स्त्री०) [वि—नि√गम्+णिच्+युच्—टाप्] एकतर-पक्षपातिनी युक्ति। दो पक्षों में से एक का प्रमाण और युक्ति से निश्चय करना। सिद्धान्त।

विनिग्रह—(पुं०) [वि—नि√ग्रह्+अप्] संयम, दमन। परस्पर विरोध। अवरोध। वाधा। प्रतिबंध।

विनिद्र—(वि०) [विगता निद्रा यस्य, प्रा० ब०] निद्रारहित, जागा हुआ। खिला हुआ, फूला हुआ; 'विनिद्रमन्दाररजोऽरुणाङ्गुली' कु. ५.८०।

विनिपात—(पुं०) [वि—नि√पत्+घञ्] पतन। संकट। नाश, वरवादी। मृत्यु। नरक। घरना। पीड़ा। अपमान।

विनिमय—(पुं०) [वि—नि√मी+अप्] अदल-बदल, एक वस्तु लेकर वदले में दूसरी वस्तु देने का व्यवहार। वन्धक, गिरवी।

विनिमेष—(पुं०) [वि—नि√मिष्+घञ्] पलकों का गिरना। पलक मारना। आंख के झपने की क्रिया।

विनियत—(वि०) [वि—नि√यम्+क्त] नियन्त्रित। संयत। वद्ध। शासित।

विनियुक्त—(वि०) [नि√युज्+क्त] काम में लगाया हुआ। अलग किया हुआ। विनियोग किया हुआ, व्यवहृत। संयुक्त, लगा हुआ। आज्ञा दिया हुआ।

विनियोग—(पुं०) [वि—नि√युज्+घञ्] विछोह, वियोग। त्याग। उपयोग; 'वभूव विनियोगज्ञः साधनीयेषु वस्तुषु' र.१७.६७। किसी कार्य को रोकने के लिये नियुक्ति, भारार्पण। अड़चन, रुकावट। भेजना। घुसना।

विनिर्जय—(पुं०) [वि—निर्√जि+अच्] सब प्रकार से या पूर्ण रूप से विजय।

विनिर्णय—(पुं०) [वि—निर्√नी+अच्] पूर्ण रूप से निवटारा या फैसला। निश्चय। निर्धारित नियम।

विनिर्वन्ध—(पुं०) [वि—निर्√वन्ध्+घञ्] अटलता, दृढ़ता। आग्रह, जिद।

विनिर्मित—(वि०) [वि—निर्√मा+क्त] बनाया हुआ। रचा हुआ। उत्पन्न किया हुआ।

विनिवृत्त—(वि०) [वि—नि√वृत्+क्त] लौटा हुआ। कार्य त्याग किया हुआ। हटा हुआ। समाप्त। मुक्त।

विनिवृत्ति—(स्त्री०) [वि—नि√वृत्+क्तिन्] लौटना। अवसान, समाप्ति। मुक्ति।

विनिश्चय—(पुं०) [विशेषेण निश्चयः, प्रा० स०] विशेष प्रकार से निर्णय करना।

विनिश्वास—(पुं०) [विशेषेण निश्वासः प्रा० स०] जोर की साँस। उसाँस।

विनिष्पेष—(पुं०) [वि—निर्√पिष्+घञ्] कुचलना, पीस डालना।

विनिहत—(वि०) [वि—नि√हन्+क्त] आहत, चोट खाया हुआ। मार डाला हुआ। सम्पूर्णतः वशवर्ती किया हुआ। (पुं०) कोई बड़ा अनिवार्य सङ्कट या आपत्ति जो भाग्यदोष से अथवा दैवप्रेरित आयी हो। अशकुन। धूम्रकेतु, पुच्छलतारा।

विनीत—(वि०) [वि√नी+क्त] हटाया हुआ, अलग किया हुआ। भली-भाँति शिक्षित, सुशिक्षित। सुनियंत्रित। सदाचारी। विनम्र, भद्र। शिष्टोचित, भद्रोचित। भेजा हुआ, प्रेषित। पालतू। साफ-सुथरा। आत्म-संयमी, जितेन्द्रिय। दण्डित, सजा-याफ्ता। मनोहर। (पुं०) सिखाया हुआ घोड़ा। व्यापारी, सौदागर।

विनीतक—(न०) विनीत+कन्] सवारी; गाड़ी, डोली आदि।

विनीय—(पुं०) कल्क, तलछट। मैल। पाप।

विनेतृ—(पुं०) [वि√नी+तृच्] नेता, रहनुमा। शिक्षक। राजा, शासक। दण्ड-विधान-कर्त्ता। (वि०) ले जाने वाला।

विनोद—(पुं०) [वि√नुद्+घञ्] हटाना, दूर करना। मनोरंजन। क्रीड़ा। आमोद-

प्रमोद। उत्सुकता, उत्कण्ठा। आह्लाद, प्रसन्नता। एक प्रकार का आलिंगन।

विनोदन—(न०) [वि√नुद्+ल्युट्] हटाने की क्रिया। मन बहलाना। क्रीड़ा करना।

विन्दु—(वि०) [√विद्+उ, नुमागम] ज्ञाता, जानकार। उदार। प्राप्त करने वाला। (पुं०) [विन्द्?+उ] बूँद। हाथी के मस्तक पर बनायी हुई रंग की बिंदी। भौंहों के बीच की बिन्दी। अनुस्वार। शून्य। रत्नों का एक दोष। छोटा टुकड़ा, कण। मूँज का धुआँ।

विन्ध्य—(पुं०) [√विध्+यत्, पृषो० मुम्] विन्ध्याचल नाम का पहाड़। यह मध्य-देश की दक्षिणी सीमा है। —**अटवी** (**विन्ध्याटवी**)-(स्त्री०) विन्ध्याचल का विशाल वन।— **कूट**,—**कूटन**-(पुं०) अगस्त्य जी की उपाधि।—**वासिन्**-(पुं०) वैयाकरण व्याडि की उपाधि।—**वासिनी**-(स्त्री०) दुर्गा देवी की उपाधि।

विन्न—वि०) [√विद्+क्त] विचारित। जाना हुआ। प्रसिद्ध। प्राप्त, उपलब्ध स्थापित। विवाहित।

विन्नक—(पुं०) [विन्न+कन्] अगस्त्य जी का नाम।

विन्यस्त—(वि०) [वि√न्यस्+क्त] स्थापित, रखा हुआ। जड़ा हुआ, बैठाया हुआ। गाड़ा हुआ। क्रम से रखा हुआ। सौंपा हुआ। अर्पित। न्यस्त, जमा किया हुआ।

विन्यास— (पुं०) [वि√न्यस्+घञ्] स्थापन, अमानत रखना। अमानत, धरोहर। ठीक जगह पर करीने से रखना, सजाना समूह, संग्रह। आधार।

विपक्त्रिम—(वि०) [वि√पच्+क्त्रि, मप्] अच्छी तरह पका हुआ। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त, परिपक्वता को प्राप्त।

विपक्व—(वि०) [वि√पच्+क्त] पूर्ण रूप से पका हुआ या परिपक्व। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त। रँधा हुआ, पकाया हुआ।

विपक्ष—(वि०) [विरुद्धः विगतो वा पक्षो यस्य, प्रा० ब०] विरुद्ध, खिलाफ, प्रतिकूल। उलटा, विपरीत। बिना पंख का। पक्षपात-रहित। जिसके पक्ष में कोई न हो। (पुं०) शत्रु, दुश्मन; 'गुणास्तस्य विपक्षेऽपि गुणिनो लेभिरेऽन्तरं' र. १७.७५। वादी, मुद्दई। [विरुद्धः पक्षः, प्रा० स०] व्याकरण में किसी नियम के विरुद्ध व्यवस्था, बाधक नियम, अपवाद। न्याय या तर्क-शास्त्र में वह पक्ष जिसमें साध्य का अभाव हो।

विपञ्चिका, विपञ्ची—(स्त्री०) [विपञ्ची+कन्—टाप्, ह्रस्व] [वि√पञ्च्+अच्—ङीष्] वीणा। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद।

विपण—(पुं०), **विपणन**—(न०) [वि√पण्+घञ्] [वि√पण्+ल्युट्] विक्री। तिजारत, छोटा व्यापार।

विपणि, विपणी—(स्त्री०) [वि√पण्+इन्] [विपणि+ङीप्] बाजार, हाट। दूकान। व्यापार, वाणिज्य।

विपणिन्—(पुं०) [विपण+इनि] व्यापारी, सौदागर। दूकानदार।

विपत्ति—(स्त्री०) [वि√पद्+क्तिन्] आपत्ति, सङ्कट। मृत्यु; 'हिमसेकविपत्तिरत्र मे नलिनी पूर्वनिदर्शनं मता' र. ८.४५। यातना। (पुं०) [विशिष्टः पत्तिः, प्रा० स०] उत्तम या प्रसिद्ध पैदल सिपाही।

विपथ—(पुं०) [विरुद्धः पन्था, प्रा० स०, अच्] कुपथ, बुरा मार्ग।

विपद्—(स्त्री०) [वि√पद्+क्विप्] आपत्ति, आफत, सङ्कट। मृत्यु।—**उद्धरण** (**विपदुद्धरण**)-(नं०),—**उद्धार**(**विपदुद्धार**)-(पुं०) विपत्ति से निस्तार।—**युक्त**-(वि०) अभागा। दुःखी।

विपदा—दे० 'विपद्'।

विपन्न—(वि०) [वि√पद्+क्त] मरा हुआ, मृत। खोया हुआ। नष्ट किया हुआ। अभागा, वदकिस्मत। पीड़ित। अशक्त, वेकाम। (पुं०) साँप।

विपरिणमन—(न०), **विपरिणाम**-(पुं०) [वि—परि√नम् + ल्युट्] [वि—परि√नम् +घञ्] परिवर्तन। रूप-परिवर्तन, रूपान्तर।

विपरिवर्तन—(न०) [वि—परि √ वृत् √ल्युट्] चक्कर खाना। लोटने की क्रिया।

विपरीत—(वि०) [वि—परि √ इ +क्त] उलटा। विरुद्ध, खिलाफ। अशुद्ध, नियम-विरुद्ध। झूठा, असत्य। प्रतिकूल। अशुभ। चिड़चिड़ा। (पुं०) रति-क्रिया का आसन-विशेष।

विपरीता—(स्त्री०) [विपरीत + टाप्] असती स्त्री। दुश्चरित्रा स्त्री।

विपर्णक—(पुं०) [विशिष्टानि पर्णानि यस्य, प्रा० व०] पलास वृक्ष।

विपर्यय—(पुं०) [वि—परि √इ + अच्] विरुद्धता, विपरीतता, उलटापन। परिवर्तन (वेष या पोशाक का)। अभाव, अनस्तित्व। हानि। सम्पूर्णतः नाश। अदल-वदल, विनिमय। भूल, गलती। विपत्ति। द्वेष। शत्रुता।

विपर्यस्त—(वि०) [वि—परि √ अस् +क्त] परिवर्तित, वदला हुआ; 'हन्त! विपर्यस्तः सम्प्रति जीवलोकः' उत्त० १। उलटा। भ्रमात्मक।

विपर्याय—(पुं०) [वि—परि √इ+घञ्] पर्याय का व्यतिक्रम, क्रम-परिवर्तन, नियम-भंग।

विपर्यास—(पुं०) [वि—परि √ अस् +घञ्] परिवर्तन, उलटापन। प्रतिकूलता, विरुद्धता। अदल-वदल, वदलौवल। भूल-चूक।

विपल—(न०) [विभक्तं पलं येन] समय का एक अत्यन्त छोटा विभाग जो एक पल का साठवाँ भाग होता है।

विपलायन—(न०) [विशेषेण पलायनम्, प्रा० स०] भिन्न-भिन्न दिशाओं में अथवा चारों ओर भाग जाना।

विपश्चित्—(वि०) [विप्रकृष्टं चेतति, चिनोति चिन्तयति वा, वि—प्र √चित् +क्विप्, पृषो० साधुः] पण्डित, बुद्धिमान्, सूक्ष्मदर्शी। (पुं०) पण्डित जन, बुद्धिमान् जन; 'भवन्ति ते सभ्यतमा विपश्चितां मनोगतं वाचि निवेशयन्ति ये" कि० १४.४।

विपाक—(पुं०) [वि√पच् + घञ्] परिपक्व होना, पकना। पूर्ण दशा को पहुँचना, चरम उत्कर्ष। फल, परिणाम। कर्म का फल। कठिनाई, साँसत। स्वाद, जायका।

विपाटन—(न०) [वि√पट् + णिच् +ल्युट्] उखाड़ना। चीरना, फाड़ना। अपहरण।

विपाठ—(पुं०) लंवा तीर विशेष।

विपाण्डु, विपाण्डुर—(वि०) [विशेषेण पाण्डुः, पाण्डुरः, प्रा० स०] वहुत पीला, पीत।

विपाण्डुरा—(स्त्री०) [विपाण्डुर+टाप्] महामेदा।

विपादिका—(स्त्री०) पैर का एक रोग, वेवाई। प्रहेलिका, पहेली।

विपाश्, विपाशा—(स्त्री०) [पाशं विमोचयति, वि√पश् + णिच्+क्विप्] [वि √पश्+णिच् + अच्—टाप्] पंजाव की व्यास नदी का प्राचीन नाम।

विपिन—(न०) [वेपन्ते जनाः अत्र,√वेप् इनन्, इत्व] वन, जंगल। उपवन।

विपुल—(वि०) [विशेषेण पोलति, वि √पुल्+क] वड़ा। विस्तृत। अधिक, वहुत। अगाध, गहरा। रोमाञ्चित।

(पुं०) मेरुपर्वत । हिमालय पर्वत । प्रतिष्ठित जन ।—च्छाय–(वि०) घनी छाया वाला ।— जघना–(स्त्री०) बड़े चूतड़ों वाली स्त्री ।—मति–(वि०) बहुत बुद्धि वाला, बड़ा बुद्धिमान् ।—रस–(पुं०) गन्ना, ऊख ।—स्कन्ध–(पुं०) अर्जुन ।—त्वचा–(स्त्री०) घीकुआर, घृतकुमारी ।

विपुला—(स्त्री०) [विपुल + टाप्] पृथिवी । आर्या छंद के तीन भेदों में से एक ।

विपूय—(पुं०) [वि√पू + क्यप्] मूंज, मुञ्जतृण ।

विप्र—(पुं०) [√वप् + र, नि० साधुः] ब्राह्मण । मेधावी जन । शुभ-कर्त्ता । (न०) पीपल का पेड़ । सिरिस का पेड़ ।—**प्रिय**–(पुं०) पलाश वृक्ष ।—स्व–(न०) ब्राह्मण की सम्पत्ति ।

विप्रकर्ष—(पुं०) [वि—प्र √कृष् +घञ्] दूर खींच ले जाना । फासला, दूरी ।

विप्रकार—(पुं०) [वि—प्र√कृ+घञ्] तिरस्कार, अनादर; 'उदीरितां तामिति याज्ञसेन्या नवीकृतोद्ग्राहितविप्रकारां' कि० ३.५५ । अपकार, अनिष्ट । दुष्टता, शठता, प्रतिकूलता । प्रतिहिंसन, बदला ।

विप्रकीर्ण—(वि०) [वि—प्र√कॄ + क्त] तितर-बितर, छितरा हुआ, बिखरा हुआ । अस्त-व्यस्त, अव्यवस्थित । ढीला । फैला हुआ । चौड़ा ।

विप्रकृत—(वि०) [वि—प्र√कृ + क्त] चोट खाया हुआ । अनिष्ट किया हुआ, अपकार किया हुआ । अपमानित, तिरस्कृत । सामना किया हुआ । बदला लिया हुआ ।

विप्रकृति—(स्त्री०) [वि—प्र√कृ+क्तिन्] अनिष्ट, अपकार । अपमान, तिरस्कार । कुवाच्य । बदला, प्रतिशोध ।

विप्रकृष्ट—(वि०) [वि—प्र √ कृष् +क्त] खींच कर दूर किया हुआ या हटाया हुआ । दूरस्थ, दूर का निकला हुआ, आगे बढ़ा हुआ । लंबा किया हुआ ।

विप्रकृष्टक—(वि०) [विप्रकृष्ट + कन्] दूरस्थ, दूर का ।

विप्रतिकार—(पुं०) [वि— प्रति √ कृ +घञ्] प्रतिरोध, प्रतिक्रिया । प्रतिहिंसा, बदला । विरोध । खंडन ।

विप्रतिपत्ति—(स्त्री०) [वि—प्रति √ पद् +क्तिन्] विरोध (मत का) । आपत्ति, एतराज । परेशानी, विकलता । पारस्परिक सम्बन्ध । अभिज्ञता ।

विप्रतिपन्न—(वि०) [वि—प्रति√पद् +क्त] परस्पर विरुद्ध, मत-विरोधी । विकल, व्याकुल, परेशान । विवाद-ग्रस्त, झगड़े में पड़ा हुआ । परस्पर-सम्बन्ध-युक्त ।

विप्रतिषेध–(पुं०) [वि—प्रति √ सिध् +घञ्] नियंत्रण । दो बातों का पर परस्पर विरोध, समान बल वालों का आपस का विरोध — 'तुल्यबलविरोधो विप्रतिषेधः ।' वर्जन ।

विप्रतिसार, विप्रतीसार—(पुं०) [वि—प्रति√सृ + घञ्, पक्षे दीर्घः] अनुताप, पछतावा । रोष, क्रोध । दुष्टता ।

विप्रदुष्ट—(वि०) [वि—प्र √दुष्+क्त] पाप-रत । कामी । मन्द, नीच ।

विप्रनष्ट—(वि०) [वि— प्र√नश्+क्त] जो पूर्ण रूप से नष्ट हो गया हो । खोया हुआ । व्यर्थ, निरर्थक ।

विप्रमुक्त—(वि०) [वि—प्र √मुच् + क्त] छूटा हुआ, छुटकारा पाया हुआ । फेंका हुआ, चलाया हुआ । रहित ।

विप्रयुक्त—(वि०) [वि—प्र√युज् + क्त] वियोजित, अलगाया हुआ । विश्लिष्ट, विभिन्न, जो मिला न हो । बिछुड़ा हुआ । मुक्त किया हुआ, छोड़ा हुआ । रहित किया हुआ, बिना ।

विप्रयोग—(पुं०) [वि—प्र √युज्+ घञ्] अनैक्य, पार्थक्य, विलगाव । (प्रेमियों का) विछोह, वियोग; 'मा भूदेवं क्षणमपि च ते विद्युता विप्रयोगः' मे० ११५ । झगड़ा, मन-मुटाव ।

विप्रलब्ध—(वि०) [वि—प्र √ लम्भ् +क्त] छला हुआ, प्रतारित, धोखा दिया हुआ । हताश, निराश । अपकार किया हुआ, अनिष्ट किया हुआ ।

विप्रलब्धा—(स्त्री०) [विप्रलब्ध +टाप्] वह नायिका जो संकेत-स्थान में प्रियतम को न पा कर निराश या दुःखी हुई हो ।

विप्रलम्भ—(पुं०) [वि—प्र √लम्भ्+घञ्] धोखा, प्रतारण, छल । विशेष कर प्रतिज्ञा-भङ्ग करके अथवा मिथ्या बोल कर दिया हुआ धोखा । झगड़ा, विवाद । विछोह, वियोग । प्रेमियों का वियोग । साहित्य में विप्रलम्भ शृङ्गार । (विप्रलम्भ शृङ्गार में नायक-नायिका के विरह-जन्य सन्ताप आदि का वर्णन किया जाता है ।)

विप्रलाप—(पुं०) [वि—प्र √ लप् +घञ्] बकवाद, व्यर्थ की बकबक, सार-हीन वाक्य । विवाद, झगड़ा । विरुद्ध कथन । प्रतिज्ञाभङ्ग ।

विप्रलय—(पुं०) [विशेषेण प्रलयः, प्रा० स०]समूलनाश, विनाश; 'ब्रह्मणीव विवर्तानाम् क्वापि विप्रलयः कृतः' उत्त० ६.६ ।

विप्रलुप्त—(वि०) [वि—प्र√लुप् + क्त] अपहृत, जो उड़ा लिया गया हो । जिसके कार्य में विघ्न या बाधा डाली गई हो ।

विप्रलुम्पक—(वि०) [वि—प्र √ लुम्प् +ण्वुल्—अक] बड़ा लालची । अपने लोभ के लिए दूसरों को सताने वाला ।

विप्रलोभिन्—(पुं०) [वि—प्र √ लुभ् +णिच् + णिनि] किङ्किरात और अशोक नामक वृक्षद्वय का नाम ।

विप्रवास—(पुं०) [वि—प्र√वस् + घञ्] परदेश-निवास, विदेश-वास ।

विप्रश्निका—(स्त्री०) [विशेषेण प्रश्नो यस्याः, ब० स०, कप्—टाप्, इत्व] स्त्री दैवज्ञ, स्त्री ज्योतिषी ।

विप्रहीण—(वि०) [वि—प्र √हा + क्त] रहित, विहीन ।

विप्रिय—(वि०) [वि √प्री+क—इयङ] अप्रिय, अरुचिकर । (न०) अपराध । बुरा कार्य ।

विप्रुष्—(स्त्री०) [वि√ प्रुष् + क्विप्] बूंद, छींटा । धब्बा । बिंदी । चिनगारी । कण ।

विप्रोषित—(वि०) [वि—प्र √ वस् +क्त]विदेश में रहने वाला, प्रवास में गया हुआ । निर्वासित ।—**भर्तृका**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसका पति परदेश में हो ।

विप्लव—(पुं०) [वि√प्लु + अप्] उतराना, तैरना । विरोध । परेशानी, विकलता । उपद्रव, हंगामा । नाश, बरबादी । वह युद्ध जिसमें लूट-पाट की जाय । शत्रु-भय । उत्पीड़न, अत्याचार । वैपरीत्य, विरोध । धूल या गर्द जो आईने या दर्पण पर जम जाती है । यथा —'अपवर्जितविप्लवे शुचौ मतिरादर्श इवाभिदृश्यते ।'—कि २.२६ । —लङ्घन, अतिक्रमण । आफत, विपत्ति । दुष्टता, पापकर्म ।

विप्लाव—(पुं०) [वि√प्लु+घञ्] बाढ़, बूड़ा । उपद्रव । घोड़े की बहुत तेज चाल ।

विप्लुत—(वि०) [वि√प्लु + क्त] छित-राया हुआ, बिखरा हुआ । डूबा हुआ, बूड़ा हुआ । आकुल, घबड़ाया हुआ । मार-काट या लूट-पाट करके नष्ट किया हुआ । खोया हुआ । अपमानित, तिरस्कृत । बरबाद किया हुआ, उजाड़ा हुआ । बदशक्ल किया हुआ । जारकर्म का अपराधी, व्यभिचारी । विरुद्ध,

उलटा । झूठा, असत्य; 'नैते वाचं विप्लुतार्था वदन्ति' उत्त० ४.१८ ।

विप्लुष्—(स्त्री०) [वि√प्लुष् + क्विप] दे० 'विप्रुष्' ।

विफल—(वि०) [विगतं फलं यस्य, प्रा० ब०] बिना फल का । व्यर्थ, निरर्थक । असफल । हताश । अंडकोश रहित । (पुं०) बाँझ ककड़ी ।

विबन्ध—(पुं०) [वि√बन्ध् + घञ्] जोर से बांधना । आलिंगन करना । कोष्ठ-बद्धता, मलावरोध, कब्जियत । अवरोध, रुकावट ।

विबाधा—(स्त्री०) [विशिष्टा बाधा, प्रा० स०] बड़ी बाधा । पीड़ा, सन्ताप ।

विबुद्ध—(वि०) [वि√बुध् + क्त] जागृत, जागता हुआ । खिला हुआ, फूला हुआ । चतुर, पटु ।

विबुध—(पुं०) [विशेषेण बुध्यते, वि√बुध् +क] बुद्धिमान् जन, विद्वान् पुरुष । देवता । चन्द्रमा ।—**अधिपति** (**विबुधाधिपति**), —**इन्द्र** (**विबुधेन्द्र**),—**ईश्वर** (**विबुधेश्वर**)–(पुं०) इन्द्र की उपाधियाँ । —**द्विष्**,— **शत्रु**–(पुं०) दैत्य, राक्षस ।

विबुधान—(पुं०) [वि √बुध् + शानच्] पण्डित पुरुष । शिक्षक ।

विबोध— (पुं०) [वि√बुध् +घञ्] जागृति, जागरण । वुद्धि । प्रतिभा । व्यभिचारी भाव (अलङ्कार शास्त्र में) सम्यक् बोध । होश में आना ।

विभक्त—(वि०) [वि√भज् + क्त] बँटा हुआ । पृथक् किया हुआ । जो अपने पिता की सम्पत्ति से अपना भाग पा चुका हो और अलग रहता हो । विमुक्त । भिन्न । काय से अवकाश-प्राप्त । एकान्तवासी । नियमित, व्यवस्थित । शोभित, भूषित । (पुं०) कार्त्तिकेय का नाम ।

विभक्ति—(स्त्री०) [वि√भज् + क्तिन्] विभाग, बाँट । अलग होने की क्रिया या भाव, पार्थक्य, अलगाव । पैतृक सम्पत्ति का भाग या हिस्सा । शब्द के आगे लगा हुआ वह प्रत्यय या चिह्न जो यह बतलाता है कि उस शब्द का क्रियापद से क्या सम्बन्ध है । संस्कृत व्याकरण में विभक्ति वास्तव में शब्द का रूपान्तरित अङ्ग है ।

विभङ्ग—(पुं०) [वि√भञ्ज् + घञ्] टूटना । अवरोध । सिकुड़न । झुर्री । तह । सीढ़ी । प्राकट्य । विघ्न । छल । तरंग ।

विभव—(पुं०) [वि √भू + अच्] धन-दौलत, सम्पत्ति । महिमा, बड़प्पन । पराक्रम, बल । उच्चपद, महिमान्वित पद । औदार्य । मोक्ष, मुक्ति । भोग-विलास की वस्तु । साठ संवत्सरों में से ३६वाँ ।

विभा—(स्त्री०) [वि√भा + क्विप्] दीप्ति, आभा । किरण । सौन्दर्य ।—**कर**–(पुं०) सूर्य । अग्नि । अर्क, आक । चित्रक । चन्द्रमा —**वसु**–(पुं०) सूर्य । अग्नि, 'रचयिष्यामि तनुं विभावसौ' कु० ४.३४। चन्द्रमा । एक प्रकार का हार । गायत्री से सोम की चोरी करने वाला एक गंधर्व । आक । चीते का पेड़ ।

विभाग—(पुं०) [वि √भज् + घञ्] बाँट, बँटवारा । पैतृक सम्पत्ति का एक भाग । अंश, भाग । अलगाव, पार्थक्य । परिच्छेद, खण्ड ।—**कल्पना**–(स्त्री०) हिस्सों का बाँटना ।—**धर्म**–(पुं०) दायभाग, बँटवारा सम्बन्धी कानून ।

विभाजन—(न०) [वि √भज् + णिच् +ल्युट्] बँटवारा, बाँटने की क्रिया ।

विभाज्य—(वि०) [वि√भज् + ण्यत्] बाँटे जाने के योग्य । खण्डनीय, विभेद्य ।

विभात—(न०) [वि √भा + क्त] प्रभात, तड़का ।

विभाव—(पुं०) [वि √भू + घञ्] (साहित्य में) रस-विधान में भाव का उद्‌बोधक, मन को किसी विशेष परिस्थिति में पहुँचाने वाली अवस्था विशेष। विभाव दो हैं— आलम्बन और उद्दीपन। आलम्बन वह है जिसके प्रति पात्र के हृदय में कोई भाव स्थित हो, जैसे शृंगार रस में नायक के लिए नायिका। उद्दीपन वह है जिससे आलम्बन के प्रति स्थित भाव उद्दीप्त हो, जैसे शृंगार में चन्द्रिका, पुष्प। मित्र। परिचित व्यक्ति। शिव।

विभावन—(न०), **विभावना**– (स्त्री०) [वि √भू+णिच् + ल्युट्] [वि√भू +णिच् + युच्] कल्पना। विवेक, विचार। वाद-विवाद। परीक्षण। चिन्तन। (स्त्री०) साहित्य में एक अर्थालङ्कार। इसमें कारण के विना कार्य की उत्पत्ति या किसी अपूर्ण कारण से कार्य की उत्पत्ति या प्रतिबन्ध होने पर भी कार्य की सिद्धि दिखलायी जाती है।

विभावरी—(स्त्री०) [वि√भा + वनिप् —ङीप्, र आदेश] रात; 'वद प्रदोषे स्फुटचन्द्रतारका विभावरी यद्यरुणाय कल्पते' कु० ५.४४। हल्दी। कुटनी। वेश्या। व्यभिचारिणी स्त्री। मुखरा स्त्री।

विभावित—(वि०) [वि √भू + णिच् +क्त] प्रकट, जो स्पष्ट दिखलायी दे। जाना हुआ, समझा हुआ। चिन्तन किया हुआ। देखा हुआ। विचारा हुआ, विवेचित। सूचित, वतलाया हुआ। सिद्ध किया हुआ, स्थापित किया हुआ।

विभाषा—(स्त्री०) [वि√भाष् + अ —टाप्] संस्कृत व्याकरण में वे स्थल जहाँ ऐसे वचन पाये जायँ कि 'ऐसा न होता' तथा 'ऐसा हो भी सकता है।' विकल्प। नाटक में व्यवहृत प्राकृत भाषा; शाकारी, चांडाली, शावरी, आभीरी, शाक्की आदि विभाषा हैं। बौद्ध-शास्त्र का ग्रन्थ-भेद।

विभासा—(स्त्री०) [वि √भास् + अ —टाप्] दीप्ति, प्रभा।

विभिन्न—(वि०) [वि√भिद् + क्त] तोड़ा हुआ। अलग किया हुआ। चीरा हुआ, फाड़ा हुआ। छिदा हुआ। बिंधा हुआ, विद्ध। भगाया हुआ। परेशान, विकल। इधर-उधर फिरता हुआ। हताश। अनेक प्रकार का, कई तरह का। मिश्रित, रंग-विरंगा। (पुं०) शिव जी।

विभीत, विभीतक—(पुं०, न०), **विभीतकी, विभीता**–(स्त्री०) [विशेषेण भीतः, प्रा० स०] [विभीत+कन्] [विभीतक —ङीष्] [विभीत+टाप्] बहेड़े का पेड़।

विभीषक—(वि०) [विशेषेण भीषयते, वि √भी+णिच्, षुक् आगम + ण्वुल्] भयप्रद, डराने वाला।

विभीषण—(पुं०) [वि√ भी + णिच्, षुक् + ल्यु] रावण का छोटा भाई जो भगवान् राम का परम भक्त था। नलतृण, नरसल का पौधा। (वि०) वहुत डरावना।

विभीषिका—(स्त्री०) [वि√भी + णिच्, षुक+ण्वुल् — टाप्, इत्व] डर दिखाना, भय-प्रदर्शन। आतंक। डराने का साधन।

विभु—(वि०) [स्त्री०—**विभु, विभ्वी**] [वि √भू+डु] ताकतवर, वलिष्ठ। प्रसिद्ध। योग्य। स्थिर। आत्मसंयमी, जितेन्द्रिय। सर्वगत, सर्वव्यापक। (पुं०) आकाश। काल। आत्मा। प्रभु, स्वामी। ईश्वर। भृत्य, नौकर। ब्रह्मा। शिव। विष्णु।

विभुग्न—(वि०) [वि√भुज् + क्त] टेढ़ा-मेढ़ा। कुछ टूटा हुआ।

विभूति—(स्त्री०) [वि√भू + क्तिन्] वड़प्पन। शक्ति। समृद्धि। महत्त्व। महिमान्वित पद। विभव, ऐश्वर्य। धन-सम्पत्ति। अलौकिक शक्ति। कंडे की राख।

विभूषण—(न०) [वि√ भूष् + णिच् +ल्युट्] सजाना, अलंकृत करना। अलंकार, गहना। सौंदर्य। कांति।

विभूषा—(स्त्री०) [वि √भूष् + अ—टाप्] आभूषण; 'भयोत्सृष्टविभूषाणां तेन केरलयोषिताम्' र० ४.५४। दीप्ति, प्रभा। सौन्दर्य।

विभूषित—(वि०) [वि√भूष् + णिच् + क्त वा विभूषा+इतच्] अलंकृत, सजाया हुआ। शोभित। गुण आदि से युक्त।

विभृत—(वि०) [वि √भृ+क्त] पोषण किया हुआ। धारण किया हुआ।

विभ्रंश—(पुं०) [वि√भ्रंश् + घञ्] पतन, अवनति। विनाश, ध्वंस। ऊँचा कगारा। पहाड़ की चोटी के ऊपर का चौरस मैदान। अतीसार।

विभ्रंशित—(वि०) [वि√भ्रंश् + क्त] गिराया हुआ। विनष्ट किया हुआ। वहकाया हुआ, फुसलाया हुआ। रहित किया हुआ।

विभ्रम—(पुं०) [वि√भ्रम्+घञ्] भ्रमण, चक्कर, फरा। भूल, चूक, गलती। उतावली, उद्विग्नता। स्त्रियों का एक हाव जिसमें वे भ्रम से उलटे-सीधे आभूषण और वस्त्र पहन लेती हैं तथा ठहर-ठहर कर मतवालियों की तरह कभी क्रोध, कभी हर्ष प्रकट करती हैं। किसी प्रकार की भी कामप्रणोदित क्रिया, प्रीतिद्योतक हाव-भाव। सौन्दर्य। शोभा; 'रुरुचिरे रुचिरेक्षणविभ्रमाः' शि० ६.४६। शङ्का, सन्देह। भ्रान्ति, भूल।

विभ्रमा—(स्त्री०) [विभ्रम + अच्—टाप्] वुढ़ापा।

विभ्रष्ट—(वि०) [वि√भ्रंश् + क्त] गिरा हुआ। अलगाया हुआ। उजाड़ा हुआ। नष्ट किया हुआ। अन्तर्निहित। दृष्टि के वहिर्भूत।

विभ्राज्—(वि०) [वि√भ्राज् + क्विप] चमकीला, प्रकाशमान।

विभ्रान्त—(वि०) [√भ्रम् +क्त] घूमता हुआ, चक्कर खाता हुआ। उद्विग्न, व्याकुल। भ्रम में पड़ा हुआ, विभ्रम-युक्त।—शील- (वि०) वह जिसका मन व्याकुल हो। नशे में चूर। (पुं०) वानर। सूर्य या चन्द्रमा का मण्डल।

विभ्रान्ति—(स्त्री०) [वि√भ्रम् + क्तिन्] चक्कर, फेरा। भ्रान्ति, भ्रम। घबड़ाहट।

विमत—(वि०) [वि√मन् + क्त] असंगत, विषम। वे जिनका मत या राय एक न हो। तिरस्कृत, तुच्छ समझा हुआ। (पुं०) शत्रु।

विमति—(वि०) [विरुद्धा विगता वा मतिः यस्य, प्रा० व०]भिन्न या विरुद्ध मत का। मूर्ख, वुद्धिहीन। (स्त्री०) [विरुद्धा वा विगता मतिः प्रा० स०] मतानैक्य, एक मत का अभाव। अरुचि, नापसंदगी। मूर्खता, मूढ़ता।

विमत्सर—(वि०) [विगतः मत्सरो यस्य, प्रा० व०] ईर्ष्या-रहित, जो इर्ष्यालु न हो।

विमद—(वि०) [विगतः मदो यस्य, प्रा० व०] मद-रहित, नशे से मुक्त। हर्ष-रहित।

विमनस्, विमनस्क—(वि०) [विरुद्धं मनो यस्य, प्रा० व०, पक्षे कप्] उदास, खिन्न। जिसका मन उचाट हो, अनमना। परेशान, विकल। अप्रसन्न। वह जिसका मन या भाव वदला हुआ हो।

विमन्यु—(वि०) [विगतः मन्युः यस्य, प्रा० व०] क्रोध-शून्य। शोक-रहित।

विमय—(पुं०) [वि√मी + अच्] अदल-बदल, विनिमय।

विमर्द—(पुं०) [वि√ मृद् + घञ्] खूब मर्दन करना, अच्छी तरह मलना-दलना। स्पर्श। शरीर में उवटन करना। युद्ध,

संग्राम; 'विमर्दक्षमां भूमिमवतराव:' उत्त० ५। नाश, वरवादी। सूर्य-चन्द्र का समागम। ग्रहण।

विमर्दक—(पुं०) [वि√मृद् + ण्वुल्] मर्दन करने वाला। चूर-चूर कर डालने वाला, पीस डालने वाला। सुगन्ध द्रव्यों की पिसाई या कुटाई। (चन्द्र सूर्य) ग्रहण। सूर्य एवं चन्द्र का समागम।

विमर्श—(पुं०) [वि √मृश्+घञ्] किसी तथ्य का अनुसन्धान। किसी विषय का विवेचन या विचार। आलोचना, समीक्षा। वहस। विरुद्ध निर्णय या फैसला। शङ्का, सन्देह। वासना।

विमर्ष—(पुं०) [वि √मृष् +घञ्] विवेचन, विचार। अधैर्य, असहिष्णुता। असन्तोष। नाटक का एक अङ्ग। इसके अन्तर्गत अपवाद, संकेत, व्यवसाय, द्रव, द्युति, शक्ति, प्रसंग, खेद, प्रतिषेध, विरोध, प्ररोचना, आदान और छादन का निरूपण किया जाता है।

विमल—(वि०) [विगतो मलो यस्मात्, प्रा० व०] मल-रहित, निर्मल। स्वच्छ, साफ। सफेद, चमकीला। (न०) चाँदी की कलई। अवरक।—**दान**–(न०) देवता का चढ़ावा। —**मणि**–(पुं०) स्फटिक।

विमांस—(न०, पुं०) [विरुद्धं मांसम्, प्रा० स०] अशुद्ध, अपवित्र या वर्जित मांस; जैसे कुत्ते का माँस।

विमातृ—(स्त्री०) [विरुद्धा माता, प्रा० स०] सौतेली माँ।—**ज**–(पुं०) सौतेली माता का पुत्र, सौतेला भाई।

विमान—(पुं०, न०) [वि√ मन्+घञ् वा √मा + ल्युट्] अपमान, तिरस्कार। देवयान, व्योमयान। सभाभवन। राजप्रासाद या महल जो सात मंजिलों का हो। यथा—"नेत्रा नीत: सततगतिना यद्विमानाग्रभूमी:।"—मेघदूत। देवालयविशेष। सजी हुई अरथी। (न०) सवारी। मापविशेष। (पुं०) घोड़ा।—**चारिन्**, —**यान**–(वि०) व्योमयान में वैठ कर घूमने वाला।—**राज**–(पुं०) सर्वोत्तम व्योमयान। व्योमयान का सञ्चालक या चलाने वाला।

विमानना—(स्त्री०) [वि√मन् + णिच् +युच्—टाप्] असम्मान, तिरस्कार; 'विमानना सुभ्रु! कुत: पितुर्गृहे' कु० ५.४३।

विमानित—(वि०) [वि √मन् + णिच् +क्त] अपमानित, तिरस्कृत।

विमार्ग—(पुं०) [विरुद्धो मार्ग:, प्रा० स०] कुपथ, वुरा रास्ता। कदाचार, वुरी चाल। [वि√मृज् + घञ्] झाड़ू, वुहारी।

विमार्गण—(न०) [वि √मार्ग् + ल्युट्] खोज, तलाश, अनुसन्धान।

विमिश्र, विमिश्रित—(वि०) [वि√मिश्र् +अच्] [वि√मिश्र्+क्त] मिला हुआ। जिसमें कई प्रकार की वस्तुओं का मेल हो।

विमुक्त—(वि०) वि√मुच् + क्त] छूटा हुआ, छुटकारा पाया हुआ। त्यागा हुआ, त्यक्त। फेंका हुआ, छोड़ा हुआ (जैसे अस्त्र)। —**कण्ठ**–(वि०) वड़े जोर से चिल्लाने वाला। फूट-फूट कर रुदन करने वाला।

विमुक्ति—(स्त्री०) [वि√मुच् + क्तिन्] छुटकारा। अलगाव। मोक्ष।

विमुख—(वि०) [स्त्री०—**विमुखी**] [विरुद्धम् अननूकूलम् विगतं वा मुखम् यस्य, प्रा० व०] जिसने अपना मुख किसी कारणवशात् फेर लिया हो; 'न क्षुद्रोऽपि प्रथमसुकृतापेक्षया संश्रयाय, प्राप्ते मित्रे भवति विमुख: किं पुनर्यस्तथोच्चै:' मे० १७। जो किसी कार्य या विषय में दत्तचित्त न हो, विमनस्क। विरुद्ध। रहित, विना। मुखहीन।

विमुग्ध—(वि०) [वि√मुह्+क्त] मोहित। मत्त। भ्रम में पड़ा हुआ। घवड़ाया हुआ, विकल, परेशान।

विमुद्र—(वि०) [विगता मुद्रा (मुद्रण-भावो) यस्य, प्रा० ब०] बिना मोहर किया हुआ। खुला हुआ, खिला हुआ, फूला हुआ।

विमूढ—(वि०) [वि + मुह्+क्त] मोह-प्राप्त, भ्रम में पड़ा हुआ। अत्यन्त मोहित। जड़बुद्धि। बेसुध, अचेत। ज्ञान-रहित।

विमृष्ट—(वि०) [वि √मृज् + क्त] मला हुआ, साफ किया हुआ। [वि√मृश्+क्त] सोचा-विचारा हुआ।

विमोक्ष—(पुं०) [वि√मोक्ष् + घञ्] छुट-कारा, रिहाई। प्रक्षेपण, छोड़ना (जैसे तीर का)। मोक्ष, मुक्ति, जन्म-मरण से छुटकारा।

विमोक्षण—(न०), **विमोक्षणा**—(स्त्री०) [वि √मोक्ष्+ ल्युट्] [वि√मोक्ष् +णिच् + युच्—टाप्] रिहाई, छुटकारा। मुक्ति। फेंकना, छोड़ना। त्यागना। (अंडे) देना।

विमोचन—(न०) [वि√मुच् + ल्युट्] बन्धन या गाँठ खोलना। बंधन से मुक्ति, छुटकारा। मुक्ति।

विमोहन—(वि०) [स्त्री०—**विमोहना, विमोहनी**] [वि√मुह् + णिच्+ल्यु] ललचाने वाला, मुग्धकारी। दूसरे के मन को वश में करने वाला। (न०, पुं०) नरक विशेष। (न०) [वि√मुह् +णिच्+ल्युट्] लुभाना। दूसरे के मन को वश में करना। ऐसा प्रभाव डालना कि चित्त ठिकाने न रहे। कामदेव का एक बाण।

विम्ब—दे० 'बिम्ब'।

विम्बक—दे० 'बिम्बक'।

विम्बट—(पुं०) [विम्ब √अट् + अच्, शक० पररूप] राई का पौधा।

विम्बा, विम्बी—(स्त्री०) [विम्ब + अच् —टाप्] [विम्ब + अच्—ङीष्] एक लता या बेल का नाम।

विम्बिका—(स्त्री०) [बिम्ब + कन्—टाप्, इत्व] सूर्य या चंद्रमा का मंडल। कुँदरू की लता।

विम्बित—दे० 'बिम्बित'।

विम्बु—(पुं०) सुपाड़ी का पेड़।

वियत्—(न०) [वियच्छति न विरमति, वि √यम् + क्विप्, मलोप, तुक्] आकाश, आसमान। वायु-मण्डल।—**गङ्गा** (**वियद्गङ्गा**)-(स्त्री०) आकाश-गंगा। छाया-पथ।—**चारिन्** (**वियच्चारिन्**)-(वि०) आकाश में विचरण करने वाला। (पुं०) पतंग।—**भूति** (**वियद्भूति**)-(स्त्री०) अन्धकार।—**मणि** (**वियन्मणि**)-(पुं०) सूर्य; 'वियन्मणेर्भा च विभाति भासुरा'।

वियति—(पुं०) एक पक्षी। नहुष के एक पुत्र का नाम।

वियम—(पुं०) [वि √यम् + अप्] रोक, नियंत्रण। कष्ट, पीड़ा। अवसान।

वियात—(वि०) [विरुद्धं निन्दां यातः प्राप्तः] धृष्ट। निर्लज्ज, बेहया।

वियाम—(पुं०) [वि√यम्+घञ्] दे० 'वियम'।

वियुक्त—(वि०) [वि√युज्+क्त] जो युक्त न हो, अलग। जिसकी जुदाई हो चुकी हो, वियोग-प्राप्त। रहित, हीन।

वियुत—(वि०) [वि√यु+क्त] वियुक्त, वियोग-प्राप्त। रहित, हीन।

वियोग—(पुं०) [वि√युज्+घञ्] विच्छेद, संयोग का अभाव। विरह, बिछोह; 'राजापि तद्वियोगार्तः स्मृत्वा शापं स्वकर्मजम्' र.१२.१०। अभाव, हानि। व्यवकलन, घटाव।

वियोगिन्—(वि०) [वियोग+इनि] वियोगयुक्त। विरही, जो प्रियतमा से बिछुड़ा हुआ हो। (पुं०) चक्रवाक, चकवा।

वियोगिनी—(स्त्री०) [वियोगिन्+ङीप्] वह स्त्री जो अपने पति या प्रियतम से बिछुड़ी हो। वृत्तविशेष।

वियोजित–(वि०) [वि√युज्+णिच्+क्त] पृथक् किया हुआ। अलगाया हुआ। रहित किया हुआ।

वियोनि–(स्त्री०) [विविधा विरुद्धा वा योनिः, प्रा० स०] अनेक जन्म। पशुओं का गर्भाशय। हीन उत्पत्ति।

विरक्त–(वि०) [वि√रञ्ज्+क्त] अत्यन्त लाल। वदरंग। असन्तुष्ट, अप्रसन्न। सांसारिक वन्धनों से मुक्त। उत्तेजित, क्रोधाविष्ट।

विरक्ति–(स्त्री०) [वि√रञ्ज् + क्तिन्] असन्तोष। अनुराग का अभाव। उदासीनता। खिन्नता, अप्रसन्नता।

विरचन–(न०), **विरचना**-(स्त्री०) [वि√रच् +ल्युट्] [वि√रच्+णिच्+युच्–टाप्] प्रणयन, निर्माण, वनाना।

विरचित–(वि०) [वि√रच्+क्त] निर्मित, वनाया हुआ, तैयार किया हुआ। रचा हुआ, लिखित। सम्हाला हुआ। भूषित। धारण किया हुआ, पहिना हुआ। जड़ा हुआ, वैठाया हुआ।

विरज–(वि०) [विगतं रजः यस्मात्, प्रा० व०] जिस पर धूल या गर्द न हो। जिसमें अनुराग न हो। (पुं०) विष्णु का नामान्तर।

विरजस्, **विरजस्क**–(वि०) [विगतं रजः यस्मात् यस्य वा, व० स० पक्षे कप्] धूल-गर्द से रहित। अनुराग-शून्य, सुख-वासना से मुक्त। जिसका रजोधर्म वंद हो गया हो।

विरजस्का–(स्त्री०) [विरजस्क+टाप्] वह स्त्री जिसका रजोधर्म वंद हो गया हो।

विरञ्च, **विरञ्चि**–(पुं०) [वि√रच्+अच्, मुम्] [वि√रच्+इन्, मुम्] ब्रह्मा का नाम।

विरट–(पुं०) कंधा। काला अगरु। अगर का वृक्ष।

विरण–(न०) [विशिष्टो रणो मूलम् यस्य, प्रा० व०] वारिन या वीरन नाम की घास, खस।

विरत–(वि०) [वि√रम्+क्त] निवृत्त। विमुख। जिसने सांसारिक विषयों से अपना मन हटा लिया हो। समाप्त। विशेष रूप से रत, वहुत लीन।

विरति–(स्त्री०) [वि√रम्+क्तिन्] निवृत्ति। अवसान, समाप्ति। सांसारिक वस्तुओं से उदासीनता।

विरम–(पुं०) [वि√रम्+अप्] विराम, ठहराव। सूर्यास्त। अंत।

विरल–(वि०) [वि√रा+कलन्] जिसके वीच-वीच में अवकाश या खाली जगह हो, सघन नहीं। पतला। नाजुक। ढीला। दुर्लभ। थोड़ा, कम। दूरस्थ। (न०) दही, जमा हुआ दूध। **–जानुक**-(वि०) जिसके घुटने वहुत अलग हों या झुके हों। **द्रवा**-(स्त्री०) एक तरह की लपसी।

विरस–(वि०) [विगतः रसो यस्य, प्रा० व०] फीका, रसहीन। अरुचिकर, अप्रिय। कष्टकर। निष्ठुर, हृदयहीन। (पुं०) [विपरीतो रसः, प्रा० स०] पीड़ा, कष्ट। काव्य में रसभंग।

विरह–(पुं०) [वि√रह्+अच्] वियोग; बिछोह। विशेष कर दो प्रेमियों का वियोग 'सा विरहे तव दीना' गीत० ४। अनुपस्थिति। अभाव। त्याग। **–अनल** (**विरहानल**)-(पुं०) विरह की अग्नि। **–अवस्था** (**विरहावस्था**)-(स्त्री०) वियोग की दशा। **–आर्त** (**विरहार्त**), **–उत्कण्ठ** (**विरहोत्कण्ठ**), **–उत्सुक** (**विरहोत्सुक**)-(वि०) वियोग-पीड़ित। **–उत्कण्ठिता** (**विरहोत्कण्ठिता**)-(स्त्री०) नायिका-भेद के अनुसार प्रिय के न आने से दुःखित नायिका। **–ज्वर**-(पुं०) ज्वर जो वियोग की पीड़ा के कारण चढ़ आया हो।

विरहिणी–(स्त्री०) [विरहिन्+ङीप्] वह स्त्री जिसका अपने प्रियतम या अपने पति से वियोग हो गया हो। मजदूरी, पारिश्रमिक।

विरहित—(वि०) [वि√रह्+क्त] त्यक्त, त्यागा हुआ। अलग किया हुआ। अकेला। रहित, विहीन।

विरहिन्—(वि०) [स्त्री०—**विरहिणी**] [विरह+इनि] विरह-युक्त। प्रिया के विरह से दुःखी। अकेला।

विराग—(पुं०) [वि√रञ्ज्+घञ्] रंग का परिवर्तन। मनोवृत्ति का बदलना। अनुराग का अभाव। सन्तोष। विरोध; 'विरागकारणेषु परिहृतेषु' मु० १। अरुचि। सांसारिक बन्धनों की ओर अनुराग का अभाव।

विराज्—(पुं०) [वि√राज्+क्विप्] सौन्दर्य। आभा। क्षत्रिय जाति का आदमी। ब्रह्मा की प्रथम सन्तान। शरीर, देह। (स्त्री०) एक वैदिक छन्द का नाम।

विराजित—(वि०) [वि√राज्+क्त] शोभित। प्रकाशित। प्रकटित। उपस्थित।

विराट—(पुं०) [विशेषो राटो यत्र] मत्स्य देश (अलवर, जयपुर आदि का भू-भाग)। वहाँ का राजा।—**ज**-(पुं०) कम मूल्य का हीरा, घटिया हीरा।—**पर्वन्**-(न०) महाभारत का चौथा पर्व।

विराटक—(पुं०) [विराट+कन्] घटिया हीरा।

विराणिन्—(पुं०) [वि√रण्+णिनि] हाथी, गज।

विराद्ध—वि०) [वि√राध्+क्त] जिसका विरोध किया गया हो। अपमानित। अपकृत।

विराध—(पुं०) [वि√राध्+घञ्] विरोध। अपमान। अपकार। [वि√राध्+अच्] एक बड़ा बलवान् राक्षस जिसे श्रीरामचन्द्र जी ने दण्डकवन में मारा था।

विराधन—(न०) [वि√राध्+ल्युट्] विरोध करना। अनिष्ट करना। अपकार करना। सताना।

विराम—(पुं०) [वि√रम्+घञ्] रोकना, थामना। अन्त, समाप्ति; 'रजनिरिदानीमियमपि याति विरामं' गीत० ५। ठहराव, वाक्य के अन्तर्गत वह स्थान जहाँ बोलते समय कुछ काल ठहरना पड़ता है। छंद के चरण में वह स्थान जहाँ पढ़ते समय कुछ काल के लिये ठहरना पड़े, यति। विष्णु का नामान्तर।

विराल—दे० 'विडाल'।

विराव—(पुं०) [वि√रु+घञ्] शब्द। चिल्लाहट। कोलाहल, होहल्ला, शोरगुल।

विराविन्—(वि०) [विराव+इनि] रोने-चिल्लाने वाला। शब्द करने वाला। गूँजने वाला। (पुं०) धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

विराविणी—(स्त्री०) [विराविन्+ङीप्] शब्द करने वाली। रोने-चिल्लाने वाली। झाड़ू।

विरिञ्च, विरिञ्चन—(पुं०) [वि√रिच्+अच्, मुम्] [वि√रिच्+ल्यु, मुम्] ब्रह्मा का नाम।

विरिञ्चि—(पुं०) [वि√रिच्+इन्, मुम्] ब्रह्मा का नाम। विष्णु का नाम। शिव जी का नाम।

विरुग्ण—(वि०) [वि√रुज्+क्त] टुकड़े-टुकड़े करके टूटा हुआ। नष्ट किया हुआ। मुड़ा हुआ। भोथरा। [विशेषेण रुग्णः प्रा० स०] बहुत बीमार।

विरुत—(वि०) [वि√रु+क्त] अव्यक्त-शब्द-युक्त-कूजित। गुञ्जायमान। (न०) चीत्कार। गर्जन। कोलाहल। गान। कूजन, कलरव।

विरुद—(न०, पुं०) घोषणा। चिल्लाहट। प्रशस्ति, यशःकीर्तन। यश या प्रशंसा-सूचक उपाधि।—**आवली** (**विरुदावली**)-(स्त्री०) किसी के गुण, प्रताप, पराक्रम आदि का सविस्तार कथन।

विरुदित—(नि०) [वि√रुद्+क्त] चीत्कार। विलाप।

विरुद्ध—(वि०) [वि√रुध्+क्त] अवरुद्ध, रोका हुआ। घेरा हुआ, (कैद में) वंद किया हुआ। चारों ओर से आक्रमण कर घेरा हुआ। असङ्गत, वेमेल। उलटा। विरोधी, जो खण्डन करे। विद्वेषी, वैरी। प्रतिकूल। अशुभ। वर्जित, निषिद्ध। अनुचित। (न०) विरोध। वैर। विवाद।

विरूक्षण—(न०) [वि√रूक्ष्+ल्युट्] रूखा करने की क्रिया। निंदा। भर्त्सना। शाप।

विरूढ—(वि०) [वि√रुह्+क्त] उगा हुआ; 'गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं' र० २.२६। वीज से फूटा हुआ। निकला हुआ, उत्पन्न। वृद्धि को प्राप्त, वढ़ा हुआ। फूला हुआ, कुसुमित। चढ़ा हुआ, सवार।

विरूप—(वि०) [स्त्री०—**विरूपा, विरूपी**] [विकृतं रूपं यस्य, प्रा० व०] वदशक्ल, कुरूप, वदसूरत। अप्राकृतिक। परिवर्तित। [विभिन्नानि रूपाणि यस्य] अनेकरूप वाला। विभिन्न प्रकार का। (न०) पिपरामूल। [विकृतं विभिन्नं वा रूपम्, प्रा० स०] कुत्सित रूप, भद्दी शकल। अनेक रूप।—अक्ष (**विरूपाक्ष**)-(वि०) जिसकी आंखें कुरूप हों। (पुं०) शिव; 'वपुर्विरूपाक्षम्' कु० ५.७२। रुद्र-भेद। एक राक्षस। एक नाग। एक यक्ष। एक लोकपाल।—**करण**-(न०) वदसूरत वनाना। अनिष्ट करना।—**चक्षुस्**-(पुं०) शिव जी।—**रूप**-(वि०) भद्दा, वेडौल।

विरूपिन्- (वि०) [स्त्री०) -**विरूपिणी**] [विरुद्धं रूपम् अस्ति अस्य, विरूप+इनि] भद्दा, वेडौल, वदशक्ल, वदसूरत। (पुं०) गिरगिट।

विरेक -(पुं०) [वि√रिच्+घञ्] मल-निष्कासन। दस्तावर या कोठा साफ करने वाली दवा, जुलाव।

विरेचन- (न०) [वि√रिच्+ल्युट्] दे० 'विरेक'।

विरेचित- (वि०) [वि√रिच्+णिच्+क्त] दस्त कराया हुआ।

विरेफ- (पुं०) [वि√रिफ्+अच् वा विशिष्टो रेफो यस्य, प्रा० व०] नदमात्र। [विशिष्टो रेफः प्रा० स०], "र"।

विरोक- (पुं०) [वि√रुच्+घञ् वा अच्] सूर्य-किरण। दीप्ति। चंद्रमा। विष्णु। (न०) छिद्र। गड्ढा।

विरोचन- (पुं०) [विशेषण रोचते, वि √रुच्+युच्] सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। प्रह्लाद के पुत्र और राजा वलि के पिता का नाम। -**सुत**-(पुं०) राजा वलि।

विरोध—(पुं०) [वि√रुध्+घञ्] विपरीत भाव, उलटी स्थिति। अनैक्य, मत-भेद अवरोध, रुकावट। घेरा। नियंत्रण। असङ्गति। शत्रुता। झगड़ा। विपत्ति। एक अर्थालङ्कार जिसमें जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य में से किसी एक के साथ विरोध होता है।—**कारिन्**-(वि०) झगड़ा करने वाला।—**कृत्**-(पुं०) शत्रु, वैरी। साठ संवत्सरों में से ४४वां वर्ष।

विरोधन- (न०) [वि√रुध्+ल्युट्] रुकावट, अवरोध। घेरा डालना। सामना करना। खण्डन। असङ्गति।

विरोधिन्—(वि०) [स्त्री०- **विरोधिनी**] [वि √ रुध्+णिनि] सामना करने वाला। रोकने वाला। घेरा डालने वाला। असङ्गत। द्वेषी। झगड़ालू। (पुं०) शत्रु, वैरी।

विरोपण- (न०) [वि√रुह्+णिच्, ह्रस्य पः+ल्युट्] पौधा लगाना, रोपना।

विरोहण- (न०) [वि√रुह्+ल्युट्] अंकुरित होना। घाव का भरना।

√विल्- तु० पर० सक० ढकना, छिपाना। विलति, वेलिष्यति, अवेलीत्।

विल- दे० 'विल'।

विलक्ष- (वि०) [वि√लक्ष्+अच्] विकल, व्याकुल। विस्मित, आश्चर्यान्वित। लज्जित। विलक्षण, अनोखा।

विलक्षण- (वि०) [विगतं लक्षणं यस्य, प्रा० ब०] लक्षण-हीन। [विभिन्नं लक्षणं यस्य] भिन्न चिह्नों वाला। [विशिष्टं लक्षणं यस्य] विशेषलक्षणयुक्त, अनोखा, अनूठा। [विरुद्धं लक्षणं यस्य] अशुभ लक्षणों वाला। (न०) [वि√लक्ष्+ल्युट्] गौर से देखना।

विलक्षित- (वि०) [वि√लक्ष्+क्त] जो गौर से देखा-समझा गया हो। घबड़ाया हुआ, परेशान। चिढ़ा हुआ।

विलग्न-(वि०) [वि√लस्ज्+ क्त] चिपटा हुआ, लगा हुआ। अवलम्बित। बँधा हुआ, फेंका हुआ। गड़ा हुआ। बीता हुआ। पतला, नाजुक; 'मध्येन सा वेदिविलग्नमध्या वलित्रयं चारु बभार बाला' कु० १.३९ (न०) कमर। नितंब। जन्म-लग्न। मेष आदि लग्नमात्र।

विलङ्घन- (न०) [वि√लङ्घ्+ल्युट्] लांघना। उपवास करना। किसी वस्तु के भोग से अपने आप को रोक रखना। अपराध।

विलज्ज- (वि०) [विगता लज्जा यस्य, प्रा० ब०] लज्जा-हीन, बेशर्म, बेहया।

विलपन- (वि०) [वि√लप् +ल्युट्] वार्तालाप। विलाप। तलछट।

विलपित- (वि०) [वि √ लप् +क्त] विलाप किया हुआ। (न०) विलाप।

विलम्ब- (पुं०) [वि√ लम्ब्+ घञ्] देर। सुस्ती। लटकना, झूलना। साठ संवत्सरों में से ३२वां वर्ष।

विलम्बन- (न०) [वि√ लम्ब्+ल्युट्] लटकना, टँगना, सहारा लेना। देरी; 'न कुरु नितम्बिनि! गमनविलम्बनं' गीत० ५। दीर्घसूत्रिता। सुस्ती।

विलम्बिका- (स्त्री०) [वि√लम्ब्+ ण्वुल् - टाप्, इत्व] एक घातक रोग जो हैजे की अंतिम अवस्था है।

विलम्बित- (वि०) [वि√लम्ब् + क्त] जिसमें देर हुई हो। लटकता हुआ, झूलता हुआ। आश्रित। दीर्घसूत्री। धीमा, मन्द। (न०) विलम्ब, देरी। सुस्ती।

विलम्बिन्- (वि०) [स्त्री०- **विलम्बिनी**] [वि√लम्ब्+णिनि] देर करने वाला। लटकने वाला, झूलने वाला। दीर्घसूत्री। काहिल।

विलम्भ- (पुं०) [वि√लभ्+घञ्, नुम्] उदारता। भेंट। दान।

विलय- (पुं०) [वि√ली+अच्] प्रलय। नाश। मृत्यु। विलीन होने की क्रिया या भाव। पिघलना।

विलयन- (न०) [वि√ली+ल्युट्] विलीन होना। पिघलना। दूर हटना। नष्ट होना।

विलसत्- (वि०) [स्त्री०- **विलसन्ती**] [वि√लस्+शतृ] शोभित होता हुआ। चमकता हुआ। क्रीड़ा करता हुआ।

विलसन- (न०) [वि√लस्+ल्युट्] चमक। विनोदन, मनोरञ्जन।

विलसित-(वि०) [वि√लस्+ क्त] शोभित। चमकदार, चमकीला। प्रकट। खिलाड़ी, मनमौजी। (न०) चमक। प्रकटन, प्राकटच। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद। प्रेमद्योतक हाव-भाव।

विलाप-(पुं०) [वि√लप्+घञ्] विलख-विलख कर या विकल होकर रोने की क्रिया; 'लङ्कास्त्रीणाम् पुनश्चक्रे विलापाचार्यकं शरैः' र० १२.७८। रोकर दुःख प्रकट करने की क्रिया।

विलाल-(पुं०) [वि√लल्+घञ्] यंत्र, कल। बिलाव।

विलास-(पुं०) [वि√लस्+घञ्] क्रीड़ा, खेल। प्रेमपूर्ण आमोद-प्रमोद, आनन्दमयी

क्रीड़ा। सुखोपभोग। हाव-भाव, नाज-नखरा। सौन्दर्य। चमक, ज्योति।

विलासन- (न०) [वि√लस्+णिच्+ल्युट्] खेल, क्रीड़ा, मन-बहलाव। चञ्चलता, लम्पटता।

विलासवती-(स्त्री०) [विलास+मतुप्, मस्य वः, ङीप्] रसिक स्त्री। स्वेच्छाचारिणी स्त्री।

विलासिका- स्त्री०) [वि√लस्+ण्वुल्-टाप्, इत्व] एक प्रकार का रूपक जो एक ही अङ्क का होता है। इसमें प्रेमलीला ही दिखलायी जाती है।

विलासिन्- (वि०) [स्त्री०- **विलासिनी**] [वि√लस्+घिनुण्] विलास-युक्त; 'उपमानमभूद्विलासिनां करणं यत्तव कान्तिमत्तया' कु० ४.५। क्रीड़ाशील। इधर-उधर घूमने वाला। चमकीला। कामी। (पुं०) रसिकजन। अग्नि। चन्द्रमा। सर्प। श्रीकृष्ण या विष्णु। शिव। कामदेव।

विलासिनी- (स्त्री०) [विलासिन्+ङीप्] सुंदरी युवती स्त्री, कामिनी। वेश्या, रंडी।

विलिप्त- वि०) [वि√लिप्+क्त] पुता हुआ, लिपा हुआ।

विलीन- (वि०) [वि√ली+क्त] जो मिल गया हो; जैसे पानी में नमक। लगा हुआ, सटा हुआ, चिपटा हुआ। जड़ा हुआ। बैठा हुआ। उतरा हुआ। छिपा हुआ। नष्ट। मृत।

विलुञ्चन- (न०) [वि√लुञ्च्+ल्युट्] उखाड़ना। नोंचना। चीर डालना।

विलुण्ठन- (न०) [वि √लुण्ठ्+ल्युट्] लूटना। चोरी करना। लोटना।

विलुप्त-(वि०) [वि√लुप्+क्त] जिसका लोप हो गया हो। छिन्न। विदीर्ण। पकड़ा हुआ। अपहृत। लूटा हुआ। नाश किया हुआ, बरबाद किया हुआ। कमजोर किया हुआ, निर्बल किया हुआ।

विलुम्पक- (पुं०) [वि√लुप्+ण्वुल्, मुम्] चोर। चाकू, लुटेरा।

विलुलित- (वि०) [वि√लुल्+क्त] इधर-उधर हिलाने वाला, अदृढ़, कांपने वाला। अव्यवस्थित किया हुआ, क्रम-भङ्ग किया हुआ।

विलून- (वि०) [वि√लू+क्त] काट कर अलग किया हुआ।

विलेखन-(न०) [वि √लिख्+ल्युट्] खरोचना। छीलना। धारी करना। चिह्न बनाना। खोदना। उखाड़ना। फाड़ना। जोतना। विभाग करना।

विलेप-(पुं०) [वि √लिप्+घञ्] शरीर आदि पर चुपड़ कर लगाने की चीज, लेप। पलस्तर, गारा।

विलेपन- (न०) [वि√लिप्+ल्युट्] लेप करने या लगाने की क्रिया। लेप। चन्दन, केसर आदि कोई भी सुगन्ध द्रव्य जो शरीर में लगाई जाय।

विलेपनी-(स्त्री०) [विलेपन+ङीप्] स्त्री जिसके शरीर पर सुगन्ध द्रव्य लगाये गये हों। सुवेशा स्त्री। चावल की कांजी।

विलेपिका, विलेपी- (स्त्री०) [विलेपी+कन्-टाप्, ह्रस्व] [विलेप+ङीष्] भात की माँड़ी।

विलेप्य-(वि०) [वि√लिप्+ण्यत्] जिसका लेप या पलस्तर किया जाय।

विलोकन-(न०) [वि√लोक्+ल्युट्] देखना। विचार करना। जांच करना। चितवन, अवलोकन। नेत्र।

विलोकित- (वि०) [वि√लोक्+क्त] देखा हुआ। जांचा हुआ। तलाशा हुआ। विचारा हुआ। (न०) चितवन। जांच।

विलोचन-(न०) [वि√लोच्+ल्युट्] आंख, नेत्र।-**अम्बु (विलोचनाम्बु)**- (न०) आंसू।

विलोडन—(न०) [वि√लोड्+ल्युट्] हिलना-डुलना, आन्दोलित करना। बिलोना, मथना।

विलोडित- (वि०) [वि√लोड्+क्त] हिलाया हुआ। विलोया हुआ, मथा हुआ। (न०) माठा, तक्र।

विलोप—(पुं०) [वि√लुप्+घञ्] किसी वस्तु को लेकर भाग जाने की क्रिया, लूट-पाट, अपहरण। अभाव। नाश।

विलोपन—(न०) [वि√लुप्+ल्युट्] काटना। ले भागना। नष्ट करना।

विलोभ—(पुं०) [वि√लुभ्+घञ्] आकर्षण। प्रलोभन। बहकावा, फुसलावा।

विलोभन—(न०) [वि√लुभ्+णिच्+ल्युट्] लोभ दिलाने या लुभाने की क्रिया। बहकाने या फुसलाने की क्रिया। प्रशंसा। चापलूसी।

विलोम—(वि०) [स्त्री०- **विलोमी**] [विगतं लोम यत्र, प्रा० ब०, अच्] विपरीत, उलटा। पिछड़ा हुआ, पीछे का। विपरीत क्रम से उत्पन्न किया हुआ।—**उत्पन्न,—ज,—जात,—वर्ण**-(वि०) विपरीत क्रम से उत्पन्न अर्थात् ऐसी माता से उत्पन्न जिसकी जाति उसके पति से ऊँची हो, ऊँची जाति की माता और माता की अपेक्षा हीन जाति के पिता से उत्पन्न सन्तान। (न०) रहट, कूप से जल निकालने का यंत्र विशेष। (पुं०) विपरीत क्रम। कुत्ता। साँप। वरुण का नाम। —**क्रिया**-(स्त्री०),- **विधि**-(पुं०) विपरीत क्रिया, वह क्रिया जो अन्त से आदि की ओर की जाय, उलटी ओर से होने वाली क्रिया।- **जिह्व**-(पुं०) हाथी।

विलोमी—(स्त्री०) [विलोम+ङीष्] आँवला।

विलोल-(वि०) [विशेषेण लोलः. प्रा० स०] हिलने-डुलने वाला, कांपने वाला, चंचल, 'पृषतीषु विलोलमीक्षितं' र० ८.५९। ढीला। अस्तव्यस्त। बिखरे हुए (बाल)।

विलोहित—(वि०) [विशेषेण लोहितः, प्रा० स०] अत्यंत लाल। (पुं०) रुद्र का नाम।

विल्ल—दे० 'बिल्ल'।

विल्व—दे० 'बिल्व'।

विवक्षा- (स्त्री०) [√वच्+सन्+अ—टाप्] बोलने की अभिलाषा। इच्छा, अभिलाषा। अर्थ, भाव। इरादा, अभिप्राय।

विवक्षित—(वि०) [√वच्+सन्+क्त] जिसके कहने की इच्छा हो। इच्छित, अपेक्षित। प्रिय। (न०) इरादा, अभिप्राय। भाव, अर्थ।

विवक्षु—(वि०) [√वच्+सन्+उ] बोलने या कोई बात कहने की इच्छा करने वाला; 'पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः' कु० ५.८३

विवत्सा—(स्त्री०) [विगतः वत्सो यस्याः, प्रा० ब०] वह गाय जिसका बछड़ा न हो।

विवध—(पुं०) [विविधो विगतो वा वधः हननं गतिर्वा यत्र, प्रा० ब०] वह लकड़ी जो बैलों के कंधों पर, बोझ खींचने के लिये रक्खी जाती है, जुआ। भार ढोने की लकड़ी, बहँगी। राजमार्ग, आम रास्ता। बोझा। अनाज की राशि। घड़ा, जलकुंभ।

विवधिक—(पुं०) [विवध+ठन्] बोझ ढोने वाला, कुली। फेरी लगाकर सौदागरी माल बेचने वाला, फेरी वाला।

विवर—(न०) [वि√वृ+अच्] छिद्र, बिल। गढ़ा, गर्त। गुफा, कन्दरा। निर्जन स्थान। दोष, ऐब। घाव। नौ की संख्या। विच्छेद। सन्धिस्थल।—**नालिका**-(स्त्री०) वंसी। नफीरी।

विवरण—(न०) [वि√वृ+ल्युट्] प्रकटन, प्रकाशन। उद्घाटन, खोलकर सब के सामने रखने की क्रिया। व्याख्या, टीका। सविस्तार वर्णन।

विवर्जन—(न०) [वि√वृज्+ल्युट्] परित्याग, त्याग करने की क्रिया।

विर्वाजित—(वि०) [वि√वृज्+क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। अनादृत, उपेक्षित। वञ्चित, रहित। बांटा हुआ। मना किया हुआ, निषिद्ध।

विवर्ण—(वि०) विगतो विरुद्धो वा वर्णो यस्य, प्रा० व०] रंगहीन, जिसका रंग विगड़ गया हो। पानी उतरा हुआ। 'नरेन्द्र-मार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपाल:' र० ६.६७। नीच, कमीना। अज्ञानी, मूर्ख। (पुं०) जाति-च्युत या नीच जाति का आदमी।

विवर्त—(पुं०) [वि√वृत्+घञ्] चक्कर, फेरा। प्रत्यावर्तन, लौटाव। नृत्य, नाच। परिवर्तन। संशोधन। भ्रम। समूह। ढेर। —**वाद**-(पुं०) वेदान्तियों का सिद्धान्त विशेष जिसके अनुसार ब्रह्म को छोड़ और सब मिथ्या है।

विवर्तन—(न०) [वि√वृत्+ल्युट्] परिभ्रमण, चक्कर, फेरा। प्रत्यावर्तन। उतार, नीचे आने की क्रिया। प्रणाम, आदर-सूचक नमस्कार। भिन्न-भिन्न दशाओं या योनियों में होकर गुजरना। परिवर्तित दशा, बदली हुई हालत।

विवर्धन—(न०) [वि० √वृध्+ल्युट्] वृद्धि, बढ़ती, उन्नति। महोन्नति, समृद्धि। [वि√वृध्+णिच्+ल्युट्] बढ़ाने की क्रिया।

विवर्धित—(वि०) [वि√वृध्+णिच्+क्त] बढ़ाया हुआ। संतुष्ट।

विवश—(वि०) [वि√वश्+अच्] लाचार, वेवस, मजबूर। जो अपने को काबू में न रख सके। बेहोश 'विवशा कामवधूर्विवोधिता' कु. ४.१। मृत। मृत्युकामी। मृत्यु से शङ्कित।

विवसन—(वि०) [विगतं वसनं यस्य, प्रा० व०] नंगा, विना वस्त्र का। (पुं०) जैन भिक्षुक।

विवस्वत्—(पुं०) विशेषेण वस्ते आच्छादयति, वि√वस्+क्विप्+मतुप्] सूर्य। अरुण। वर्तमान काल के मनु। देवता। अर्क, मदार।

विवह—(पुं०) [वि√वह्+अच्] सात वायुओं में से एक। अग्नि की सप्त जिह्वाओं में से एक का नाम।

विवाक—(पुं०) [विशिष्टो वाको यस्य, प्रा० व०] न्यायाधीश।

विवाद—(पुं०) [विरुद्धो वादः, वि√वद्+घञ्] किसी विषय या बात को लेकर वाक्कलह, वाग्युद्ध, झगड़ा। खण्डन, प्रतिवाद, मुक़दमा, अभियोग। चीत्कार। आज्ञा। —**अर्थिन्** (**विवादार्थिन्**)-(पुं०) मुक़दमेवाज। वादी, मुद्दई]—**पद**-(न०) जिसपर विवाद या झगड़ा हो, विवाद-युक्त विषय। —**वस्तु**-(न०) विवाद-ग्रस्त वस्तु।

विवादिन्—(वि०) [वि√वद् + णिनि वा विवाद+इनि] झगड़ालू, झगड़ने वाला। मुक़दमेवाज। (पुं०) स्वर जो विशेष अनुकूल न पड़ने के कारण कम आये।

विवार—(पुं०) [वि√वृ+घञ्] प्रस्फुटन, फैलाव। आभ्यन्तर प्रयत्नों में से एक, संवार का विपरीत।

विवास—(पुं०), **विवासन**-(न०) [वि √वस्+णिच्+घञ्] [वि√वस्+णिच्+ल्युट्] निर्वासन, देशनिकाला।

विवासित—(वि०) [वि√वस्+णिच्+क्त] निकाला हुआ, देश से निकाल-वाहर किया हुआ।

विवाह—(पुं०) [विशिष्टं वहनम्, वि√वह्+घञ्] शादी, परिणय, एक शास्त्रीय प्रथा जिसके अनुसार स्त्री और पुरुष आपस में दाम्पत्य-सूत्र में आवद्ध होते हैं। विवाह आठ प्रकार के माने गये हैं—आर्ष, ब्राह्म, दैव, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच।

विवाहित—(वि०) [वि√वह्+णिच् + क्त] वह जिसका विवाह हो चुका हो, व्याहा हुआ।

विवाह्य—(वि०) [वि√वह्+ण्यत्] ब्याह करने योग्य। (पुं०) दामाद, जामाता। वर।

विविक्त—(वि०) [वि√विच्+क्त] पृथक् किया हुआ। विजन, निर्जन, एकान्त। अकेला। पहचाना हुआ। विवेकी। पापरहित, विशुद्ध। (न०) निर्जन या एकान्त स्थल; 'विविक्तदेशसेवित्वम्'' भग०।

विविक्ता—(स्त्री०)[विविक्त+टाप्]अभागी स्त्री, दुर्भगा, वह स्त्री जो अपने पति की अरुचि का कारण हो।

विविग्न—(वि०) [विशेषेण विग्नः वि√विज्+क्त] अत्यन्त उद्विग्न या भयभीत।

विविध—(वि०) [विभिन्ना विधा यस्य, प्रा० ब०) बहुत प्रकार का, भांति-भांति का, अनेक तरह का।

विवीत—(पुं०) [विशिष्टं वीतं गवादिप्रचारस्थानम् यत्र, प्रा० ब०] वह स्थान जो चारों ओर से घिरा हो, बाड़ा। चारागाह।

विवृक्त—(वि०) [वि√वृज्+क्त] त्यक्त, त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ।

विवृक्ता—(स्त्री०) [विवृक्त+टाप्] विविक्ता स्त्री, स्त्री जिसे उसके पति ने छोड़ दिया हो।

विवृत—(वि०) [वि√वृ+क्त] प्रकटित, प्रदर्शित। प्रत्यक्ष, स्पष्ट। खोलकर सामने रक्खा हुआ। घोषित। टीका किया हुआ। व्याख्या किया हुआ। पसरा हुआ, फैला हुआ। विस्तृत।(न०)ऊष्मस्वरों के उच्चारण करने का एक प्रयत्न।—अक्ष (विवृताक्ष) (वि०) बड़ी आंखों वाला। (पुं०) मुर्गा। —द्वार-(वि०)खुले हुए फाटक वाला।

विवृति—(स्त्री०)[वि√वृ+क्तिन्]प्राकट्य। फैलाव, पसार। आविष्क्रिया। टीका, व्याख्या।

विवृत्त—(वि०)[वि√वृत्+क्त]घूमा हुआ। घूमने वाला, भ्रमणकारी।

विवृत्ति—(स्त्री०) [वि√वृत्+क्तिन्] चक्कर, भ्रमण। सन्धि-विश्लेष, सन्धि-भङ्ग।

विवृद्ध—(वि०) [वि√वृध्+क्त] बढ़ा हुआ, वृद्धि को प्राप्त। बहुत, विपुल, अधिक।

विवृद्धि—(स्त्री०) [वि√वृध्+क्तिन्] बाढ़, वृद्धि; 'विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि' र. १३.४। समृद्धि।

विवेक—(पुं०) [वि√विच्+घञ्] भली-बुरी वस्तु का ज्ञान, सत्-असत् का ज्ञान। मन की वह शक्ति जिसके-द्वारा भले-बुरे का ज्ञान हुआ करता है, भला-बुरा पहचानने की की शक्ति। समझ। विचार। सत्यज्ञान। प्रकृति और पुरुष की विभिन्नता का ज्ञान। जल-द्रोणी, पानी रखने का एक प्रकार का बरतन।—ज्ञ-(वि०) भले-बुरे का ज्ञान रखने वाला, विचारवान्।

विवेकिन्—(वि०) [विवेक+इनि] भले-बुरे की पहचान करने वाला। विचारवान्। (पुं०) निर्णायक, विचारकर्त्ता। दर्शनशास्त्री।

विवेक्तृ—(पुं०) [वि√विच्+तृच्] न्यायाधीश। पण्डित। दर्शनशास्त्री।

विवेचन—(न०) **विवेचना**—(स्त्री०) [वि√विच्+ल्युट्] [वि√विच्+युच्—टाप्] विवेक, भली-बुरी वस्तु का ज्ञान। मीमांसा। निर्णय, फैसला। अनुसंधान। परीक्षा।

विवोढृ—(पुं०) [वि√वह्+तृच्] वर, दूल्हा।

विव्वोक—(पुं०) [वि√वा+डु, तस्य ओकः स्थानम्] स्त्रियों की एक शृंगार-चेष्टा जिसमें वे प्रिय के प्रति अनादर प्रकट करती हैं। 'विव्वोकस्त्वतिगर्वेण वस्तुनीष्टेऽप्यनादरः।'—(साहित्य० ३, १३०)।

√विश्—तु० पर० सक० प्रवेश करना। जाना या आना। हिस्से में आना, बांट में

पड़ना। बैठ जाना। बस जाना। घुसना। किसी कार्य को अपने हाथ में लेना। विशति, वेक्ष्यति, अविक्षत्।

विश्—(पुं०) [√विश् + क्विप्] वैश्य, बनिया। मानव, मनुष्य। लोम। (स्त्री०) प्रजा, रैयत। कन्या। जाति।—**पण्य** (**विट्-पण्य**)–(न०) सौदागरी माल।—**पति** (**विट्पति** या **विशांपति**)–(पुं०) राजा। प्रधान व्यापारी।

विश—(न०) [√विश् + क] भसींड़े के रेशे।—**आकर** (**विशाकर**)–(पुं०) भद्र-चूड़ नामक पौधा।—**कण्ठा**–(स्त्री०) बलाका, बगला।

विशङ्कट—(वि०) [स्त्री०—**विशङ्कटा**, **विशङ्कटी**] [वि+शङ्कटच्] विशाल, बहुत बड़ा या विस्तृत। भयानक।

विशङ्का—(स्त्री०) [विशिष्टा वा विगता शङ्का, प्रा० स०] आशंका, भय। शंका का अभाव।

विशद—(वि०) [वि√शद् + अच्] साफ, शुद्ध, स्वच्छ। उज्ज्वल, सफेद। चमकीला। सुन्दर। स्पष्ट, व्यक्त। शान्त; 'जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा' श० ४.२२। निश्चिन्त।

विशय—(पुं०) [वि√शी + अच्] सन्देह, शक, अनिश्चय। आश्रय, सहारा।

विशर—(पुं०) [वि√शॄ+अप्] वध, मार डालना। विदारण, फाड़ना।

विशल्य—(वि०) [विगतं शल्यं यस्मात्, प्रा० ब०] कष्ट और चिन्ता से रहित, निश्चिन्त।

विशसन—(न०) [वि√शस् + ल्युट्] हत्या। बरबादी। कटार, खांड़ा। तलवार।

विशस्त—(वि०) [वि√शस् वा √शंस् +क्त] काटा हुआ। गँवार, शिष्टाचार-विहीन। प्रशंसित। प्रसिद्ध किया हुआ।

विशस्तृ—(पुं०) [वि √शस् + तृच्] हत्या करने या बलि देने वाला व्यक्ति। चाण्डाल।

विशस्त्र—(वि०) [विगतं शस्त्रं यस्य, प्रा० ब०] हथियार से हीन, जिसके पास बचाव अथवा आत्मरक्षा के लिये कोई हथियार न हो।

विशाख—(पुं०) [विशाखानक्षत्रे भवः, विशाखा+अण्, तस्य लुक्] कार्त्तिकेय का नाम। धनुष चलाने के समय एक पैर आगे और दूसरा उससे कुछ पीछे रखना। याचक, भिक्षु। तकुआ। शिव जी का नाम।—**ज**–(पुं०) नारंगी का पेड़।

विशाखल—(पुं०) [विशाख √ला+क] दे० 'विशाख' का दूसरा अर्थ।

विशाखा—(स्त्री०) [विशिष्टा शाखा प्रकारो यस्याः प्रा० ब०] १६वें नक्षत्र का नाम जिसमें दो तारे होते हैं।

विशाय—(पुं०) [वि√शी + घञ्] पहरे-दारों का पारी-पारी से सोना।

विशारण—(न०) [वि√शॄ+णिच् (स्वार्थे) +ल्युट्] चीरना, दो टुकड़े करना। हनन, मारण।

विशारद—(वि०) [विशाल √दा + क, लस्य रः] चतुर, निपुण। पण्डित। प्रसिद्ध, प्रख्यात। हिम्मती, साहसी। (पुं०) बकुल वृक्ष।

विशाल—(वि०) [वि + शालच्] बड़ा, महान्। लंबा-चौड़ा। प्रशस्त, चौड़ा। संपन्न। प्रसिद्ध। आदर्श। कुलीन। (पुं०) मृग, विशेष। पक्षी विशेष।—**अक्ष** (**विशालाक्ष**) –(पुं०) शिव।—**अक्षी** (**विशालाक्षी**)–(स्त्री०) पार्वती।

विशाला—(स्त्री०) [विशाल+टाप्] उज्जयिनी नगरी; 'पूर्वोद्दिष्टामनुसर पुरीं श्रीविशालां विशालां' मे० ३०। एक नदी का नाम।

विशिख—(वि०) [विगता शिखा यस्य, प्रा० ब०] चोटी-रहित, शिखा-हीन। जिसके सिर पर कलँगी हो। (पुं०) तीर। नरकुल। तोमर, भाले की तरह का एक हथियार।

विशिखा—(स्त्री०) [विशिख + टाप्] फावड़ा। तकुआ। सुई या आलपिन। छोटा वाण। राजमार्ग, आम रास्ता। नाऊ की स्त्री, नाइन।

विशित—(वि०) [वि√शो+क्त] पैना, तीक्ष्ण।

विशिप—(न०) [√विश् + क, नि० साधुः] मन्दिर। मकान।

विशिष्ट—(वि०) [वि√शिष् वा √शास् +क्त] प्रसिद्ध, मशहूर। यशस्वी, कीर्तिशाली। जो बहुत अधिक शिष्ट हो। विलक्षण, अद्भुत। विशेषता-युक्त, जिसमें किसी प्रकार की विशेषता हो। (पुं०) विष्णु। सीसा। **—अद्वैतवाद** (**विशिष्टाद्वैतवाद**)—(पुं०) श्रीरामानुजाचार्य का एक प्रसिद्ध दार्शनिक सिद्धान्त। [इसमें ब्रह्म, जीवात्मा और जगत् तीनों मूलतः एक ही माने जाते हैं तथापि तीनों कार्य रूप में एक दूसरे से भिन्न तथा कतिपय विशिष्ट गुणों से युक्त माने गये हैं।]

विशीर्ण—(वि०) [वि√शृ + क्त] टूटा फूटा। सड़ा हुआ। मुरझाया हुआ। गिरा हुआ। झुर्रियाया हुआ, झुर्रियाँ पड़ा हुआ। **—पर्ण**—(पुं०) नीम का पेड़। **—मूर्ति**—(पुं०) कामदेव का नाम।

विशुद्ध—(वि०) [वि√शुध् + क्त] साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ। पाप-रहित। कलङ्कशून्य। ठीक, सही। धर्मात्मा, ईमानदार। विनम्र।

विशुद्धि—(स्त्री०) [वि√शुध् + क्तिन्] शुद्धता, पवित्रता; 'तदङ्गसंस्पर्शमवाप्य कल्पते ध्रुवं चितामस्मरजो विशुद्धये' कु० ५.७९। सहीपन। मूल-संशोधन। समानता, सादृश्य।

विशूल—(वि०) [विगतं शूलं यस्य, प्रा० ब०] शूल-रहित। भाला-रहित, जिसके पास भाला न हो।

विशृङ्खल—(वि०) [विगता शृङ्खला यस्य, प्रा० ब०] जिसमें शृङ्खला न हो या न रह गई हो, शृङ्खला-विहीन। जो किसी प्रकार काबू में न लाया जा सके या दबाया अथवा रोका न जा सके। लंपट, दुराचारी।

विशेष—(वि०) [विगतः शेषो यस्मात्, प्रा० ब०] असाधारण, विलक्षण। विपुल, अधिक। (पुं०) [वि √शिष् + घञ्] विशिष्टता, पहिचान। अन्तर, भेद। विलक्षणता। तारतम्य। अवयव, अंग; 'पुपोष लावण्यमयान् विशेषान्' म० १.२५। प्रकार, तरह। वस्तु, पदार्थ। उत्तमता, उत्कृष्टता। श्रेणी, कक्षा। माथे पर का तिलक, टीका। विशेषण। साहित्य में एक प्रकार का पद्य जिसमें तीन श्लोकों या पदों में एक ही क्रिया रहती है अतः उन तीनों का एक साथ ही अन्वय होता है। वैशेषिक दर्शन के सप्त पदार्थों में से एक। **—उक्ति** (**विशेषोक्ति**)—(स्त्री०) काव्य में एक प्रकार का अलङ्कार इसमें पूर्ण कारण के रहते भी कार्य के न होने का वर्णन किया जाता है।

विशेषक—(वि०) [वि√शिष् + ण्वुल्] भेद स्पष्ट करने वाला। (पुं०, न०) [विशेष +कन्] विशेषण। टीका, तिलक। चन्दन आदि से अनेक प्रकार की रेखाएँ बनाकर शृङ्गार करने की क्रिया। (न०) ऐसे तीन श्लोकों का समुदाय जिनका एक साथ ही अन्वय हो।

विशेषण—(वि०) [वि√शिष्+ल्यु] जिसके द्वारा विशेष्य निरूपण किया जाय, गुण, रूप आदि का बताने वाला। (न०) [वि √शिष्+ल्युट्] किसी प्रकार की विशेषता उत्पन्न करने वाला या बतलाने

वाला शब्द। अन्तर, भेद। व्याकरण में वह विकारी शब्द, जिससे किसी संज्ञा-वाची शब्द की कोई विशेषता अवगत हो या उसकी व्याप्ति सीमाबद्ध हो। लक्षण। किस्म, जाति।

विशेषतस्—(अव्य०) [विशेष + तस्] खास करके, खास तौर पर।

विशेषित—(वि०) [वि √शिष् + णिच् + क्त] जिसमें विशेषण लगा हो। जिसकी परिभाषा की गयी हो या जिसकी पहिचान बतलायी गयी हो। विशेषण द्वारा पहिचाना हुआ। उत्कृष्ट, उत्तम।

विशेष्य—(वि०) [वि√शिष् + ण्यत्] गण आदि द्वारा भेद बतलाने योग्य। मुख्य, प्रधान। (न०) (व्याकरण में) वह संज्ञा जिसके साथ कोई विशेषण लगा हो। वह संज्ञावाची शब्द जिसकी विशेषता विशेषण लगाकर प्रकट की जाय।

विशोक—(वि०) [विगतः शोको यस्य यस्मात् वा, प्रा० ब०] शोक-रहित, सुखी। (पुं०) अशोक वृक्ष।

विशोका—(स्त्री०) [विशोक+टाप्] योग-शास्त्र के अनुसार संप्रज्ञात समाधि से पहले की चित्त-वृत्ति, ज्योतिष्मती। स्कन्द की एक माता।

विशोधन—(न०) [वि √शुध् + ल्युट्] अच्छी तरह साफ करने की क्रिया। प्राय-श्चित्त। (पुं०) [वि√शुध् + ल्यु] विष्णु।

विशोधिन्—(वि०) [वि√शुध् + णिनि] बिलकुल शुद्ध या साफ करने वाला। विशुद्धि करने वाला।

विशोध्य—(वि०) [वि √शुध् + ण्यत्] साफ करने योग्य। सही करने योग्य। (न०) ऋण, कर्जा।

विशोषण—(न०) [वि√ शुष् + ल्युट्] सुखाने की क्रिया।

विश्रणन, विश्राणन—(न०) [वि √श्रण् + ल्युट्] [वि √श्रण्+णिच् (स्वार्थे) + ल्युट्] दान; 'विश्राणनाच्चान्यपयस्वि-नीनां' र० २.५४। भेंट। पुरस्कार।

विश्रब्ध—(वि०) [वि√श्रम्भ् + क्त] जो उद्धत न हो, शान्त। जिसका विश्वास किया जाय। विश्वस्त। निर्भय, निडर। दृढ़, अच-ञ्चल। दीन। अत्यधिक, बहुत अधिक।—**नवोढा**-(स्त्री०) वह नवोढा नायिका जिसे अपने पति पर थोड़ा-थोड़ा अनुराग और विश्वास होने लगा हो।

विश्रम—(पुं०) [वि√श्रम् + अप्] दे० 'विश्राम'।

विश्रम्भ—(पुं०) [वि√श्रम्भ् + घञ्] विश्वास। घनिष्ठता। गुप्त बात, रहस्य। विश्राम। प्रेमपूर्वक (कुशल) प्रश्न। प्रेम-कलह। हत्या।—**आलाप** (**विश्रम्भालाप**) -(पुं०),-**भाषण** (न०) गुप्त वार्तालाप।—**पात्र**, (न०), —**भूमि** (स्त्री०),—**स्थान** (न०) विश्वस्त मनुष्य। विश्वसनीय पदार्थ।

विश्रय—(पुं०) [वि√श्रि + अच्] आश्रय। आश्रम।

विश्रवस्—(पुं०) पुलस्त्य ऋषि के पुत्र और रावण के पिता का नाम।

विश्राणित—(वि०) [वि√श्रण् + णिच् + क्त] दत्त, दिया हुआ; 'निःशेषविश्रा-णितकोशजातं' र० ५.१।

विश्रान्त—(वि०) [वि √श्रम् + क्त] बंद किया हुआ। विश्राम किया हुआ। शान्त।

विश्रान्ति—(स्त्री०) [वि √श्रम् + क्तिन्] विश्राम, आराम। अवसान।

विश्राम—(पुं०) [वि√श्रम्+घञ्] आराम। शान्ति। अंत। विराम। ठहरने का स्थान।

विश्राव—(पुं०) [वि√श्रु + घञ्] चुआव। बहाव। प्रसिद्धि, शोहरत।

विश्रुत—(वि०) [वि√श्रु + क्त] प्रसिद्ध। प्रख्यात। प्रसन्न, आह्लादित। वहा हुआ। ध्वनित।

विश्रुति—(स्त्री०) [वि√श्रु + क्तिन्] प्रसिद्धि। वहना। नाना प्रकार का स्तव।

विश्लथ—(वि०) [विशेषेण श्लथः, प्रा० स०] ढीला। खुला हुआ। सुस्त। थका हुआ।

विश्लिष्ट—(वि०) [वि√श्लिष् + क्त] खुला हुआ। अलग किया हुआ।

विश्लेष—(पुं०) [वि√श्लिष् + घञ्] अनैक्य। पार्थक्य। प्रेमियों या पति और पत्नी का विछोह। अभाव, हानि। दरार।

विश्लेषित—(वि०) [वि √श्लिष् + णिच् + क्त] वियोजित, अलहदा किया हुआ।

विश्व—(न०) [विशति स्वकारणम्, √विश् + क्वन्] चौदह भुवनों का समूह, समस्त ब्रह्माण्ड। संसार, जगत्, दुनिया। सोंठ। बोलनामक गन्ध द्रव्य। (पुं०) देवताओं का एक गण जिसमें वसु, सत्य, क्रतु, दक्ष, काल, काम, धृति, कुरु, पुरूरवा और माद्रवा परिगणित हैं। (वि०) समग्र, सकल। प्रत्येक। सर्वव्यापक।—**आत्मन्** (**विश्वात्मन्**)—(पुं०) परमात्मा। ब्रह्मा। विष्णु। शिव।—**ईश** (**विश्वेश**),—**ईश्वर** (**विश्वेश्वर**) (पुं०) परमात्मा। विष्णु। शिव।—**कद्रु** (वि०) नीच, कमीना। (पुं०) ताजी या शिकारी कुत्ता। ध्वनि, शब्द।—**कर्मन्** (पुं०) विश्वकर्मा अर्थात् देवताओं का शिल्पी। सूर्य।—**कृत्** (पुं०) सृष्टिकर्त्ता। विश्वकर्मा का नामान्तर।—**केतु** (पुं०) अनिरुद्ध।—**गन्ध** (पुं०) लहसुन। (न०) लोवान, गुग्गुल। बोल नामक गंध-द्रव्य।—**गन्धा** (स्त्री०) पृथिवी।—**जन** (न०) मानवजाति।—**जनीन**,—**जन्य** (वि०) मनुष्य-जाति मात्र के लिये भला या हितकर।—**जित्**—(पुं०) एक यज्ञ जिसमें सर्वस्व दक्षिणा में दे देना होता है। अग्नि का एक रूप। विष्णु। एक दानव। वरुण का पाश।—**देव** (**विश्वेदेव**)—(पुं०) [कर्म० स०, विभक्तेः अलुक्] अग्नि। एक देववर्ग। तेरह की संख्या। महापुरुष। एक असुर।—**धारिणी**—(स्त्री०) पृथिवी।—**धारिन्**—(पुं०) देवता विशेष—**नाथ**—(पुं०) विश्व का स्वामी। शिव। काशी के एक प्रसिद्ध ज्योतिर्लिङ्ग का नाम।—**पा**—(पुं०) ईश्वर। सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि।—**पावनी**,—**पूजिता**—(स्त्री०) तुलसी।—**प्सन्**—(पुं०) देवता। सूर्य। चन्द्र। अग्नि।—**भुज्** (वि०) सब का भोग करने वाला। (पुं०) ईश्वर। इन्द्र।—**भेषज**—(न०) सोंठ।—**मूर्ति**—(वि०) सर्वरूपमय, सर्वव्यापी।—**योनि**—(पुं०) ब्रह्मा। विष्णु।—**राज्**,—**राज**—(पुं०) सार्वदेशिक अधिपति।—**रूप**—(वि०) सर्वव्यापी, सर्वत्र विद्यमान। (पुं०) विष्णु। (न०) काला अगर।—**रेतस्**—(पुं०) ब्रह्मा। विष्णु।—**वाह्** (स्त्री० =**विश्वौही**)—(वि०) सबको धारण करने वाला।—**सहा**—(स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक। पृथिवी।—**सृज्**—(पुं०) सृष्टिकर्ता ब्रह्मा; 'प्रायेण सामग्र्यविधौ गुणानां पराङ्मुखी विश्वसृजः प्रवृत्तिः' कु० ३.२८।

विश्वङ्कर—(पुं०) [विश्वं सर्वं करोति प्रकाशयति, √कृ+ट, द्वितीयाया अलुक्] आँख, नेत्र।

विश्वतस्—(अव्य०) [विश्व + तसिल्] हर ओर, हर तरफ। हर जगह, सर्वत्र।—**मुख** (**विश्वतोमुख**) (वि०) हर ओर मुख वाला। (पुं०) परमेश्वर।

विश्वथा—(अव्य०) [विश्व + थाल्] सब प्रकार से, सभी तरह से।

विश्वम्भर—(वि०) [विश्वं बिभर्ति, विश्व √भृ+खच्, मुम्] सारे विश्व का पालन

या भरण करने वाला। (पुं०)परमात्मा। सर्वव्यापी परमेश्वर। विष्णु। इन्द्र।

विश्वम्भरा—(स्त्री०) [विश्वम्भर+टाप्] पृथिवी, धरा, मही; 'विश्वम्भरा भगवती भवतीमसूत' उत्त० १.९।

विश्वसनीय—(वि०) [वि √श्वस्+अनीयर्] विश्वास करने योग्य। विश्वास उत्पन्न करने की शक्ति रखने वाला।

विश्वस्त—(वि०) [वि√श्वस् + क्त] विश्वासपूर्ण। जिसका विश्वास किया जाय। निर्भय।

विश्वस्ता—(स्त्री०) [विश्वस्त + टाप्] विधवा।

विश्वाधायस्—(पुं०) [विश्वं दधाति, पालयति, विश्व√ धा + णिच्+असुन्, पूर्वदीर्घः] देवता।

विश्वानर—(पुं०) सविता। इंद्र। अग्नि के पिता। सब का नेता।

विश्वामित्र—(पुं०) [विश्वमेव मित्रम् अस्य, ब०, स०, विश्वस्याकारस्य दीर्घः] एक प्रसिद्ध ब्रह्मर्षि जो गाधिज, गाधेय और कौशिक भी कहलाते हैं। आयुर्वेद-पारदर्शी सुश्रुत के पिता का नाम।

विश्वावसु—(पुं०) [विश्वं वसु यस्य, विश्वेषां वसु यस्मात् वा, ब० स०, दीर्घ] अमरावती के रहने वाले एक गन्धर्व का नाम।

विश्वास—(पुं०) [वि√ श्वस्+घञ्] किसी के गुण आदि का निश्चय होने पर उसके प्रति उत्पन्न होने वाला मन का भाव, एतबार, यकीन। केवल अनुमान के आधार पर होने वाला मन का दृढ़ निश्चय। गुप्त सूचना।—घात, —**भङ्ग**—(पुं०) किसी के विश्वास के विरुद्ध की हुई क्रिया।—**घातिन्**—(पुं०) विश्वास-घातक, दगाबाज।

√विष्—जु० उभ० सक० घेरना। अक० छा जाना, व्याप्त हो जाना। मुठभेड़ होना। वेवेष्टि—वेविष्टे, वेक्ष्यति—ते, अविषत्—अविक्षत्—त।

विष्—(स्त्री०) [√विष्+क्विप्] विष्ठा, मल। व्याप्ति, फैलाव। लड़की।—**कारिका** (विट्कारिका)-(स्त्री०) पक्षी विशेष।—**ग्रह** (विड्ग्रह)-कोष्ठबद्धता, कब्जियत। **चर** (विट्चर),—**वराह** (विड्वराह)-(पुं०) विष्ठा-भक्षी गांव-शूकर।—**लवण** (विड्लवण)-(न०) सांचर नमक।—**सङ्ग** (विट्सङ्ग)-(पुं०) कब्जियत, कोष्ठबद्धता।—**सारिका**-(स्त्री०) एक तरह की मैना।

विष—(न०, पुं०) [√विष्+क] जहर। (न०) वत्सनाभ विष। जल; 'विषं जलधरैः पीतं मूर्छिताः पथिकाङ्गनाः' चं० ५.८२। कमल की जड़ अथवा भसीड़े के रेशे। गुग्गुल। बोल नामक गन्धद्रव्य।—**अक्त** (विषाक्त),—**दिग्ध**-(वि०) जहर मिला हुआ, विष-युक्त, जहरीला।—**अङ्कुर** (विषाङ्कुर)-(पुं०) भाला। विष में बुझा तीर।—**अन्तक** (विषान्तक)-(पुं०) शिव। **अपह** (विषापह),—**घ्न**-(वि०) विष-नाशक। —**आनन** (विषानन),—**आयुध** (विषायुध),—**आस्य** (विषास्य)-(पुं०) सर्प। —**कुम्भ**-(पुं०) विष से भरा घड़ा।—**कृमि**-(पुं०)वह कीड़ा जो विष में पले।—**ज्वर**-(पुं०) भैंसा।—**द**-(पुं०) बादल। सफेद रंग। (न०)हीराकसीस। तूतिया। —**दन्तक**-(पुं०)साँप।—**दर्शन**,—**मृत्युक**,—**मृत्यु**-(पुं०) चकोर पक्षी।—**धर** -(पुं०) साँप।—**पुष्प**-(न०) नील कमल।—**प्रयोग**—(पुं०) विष देना, विष का व्यवहार या इस्तेमाल।—**भिषज्**,—**वैद्य**-(पुं०) विष उतारने की चिकित्सा करने वाला, साँप के काटे हुए का इलाज करने वाला।—**मन्त्र**-(पुं०) विष उतारने का मंत्र। सँपेरा, काल-बेलिया।—**वृक्ष**-(पुं०) जहरीला पेड़।

गूलर ।—शलूका-(स्त्री०) कमल की जड़ । —शूक,—शृङ्गिन्,—सृक्कन्-(पुं०) वर्र, वरैंया ।—हृदय-(वि०) दुष्ट हृदय वाला, मलिन मन वाला ।

विषक्त—(वि०) [वि√सञ्ज्+क्त] मजबूती से गड़ा हुआ। दृढ़ता से चिपटा या सटा हुआ।

विषण्ड—(न०) [विशेषेण षण्डम्, प्रा० स०] कमल की जड़ के रेशे।

विषण्ण—(वि०) [वि√सद्+क्त] उदास, रंजीदा, विषाद-युक्त ।—मुख,—वदन-(वि०) जिसके चेहरे से उदासी झलकती हो।

विषम—(वि०) [विगतो विरुद्धो वा समः प्रा० स०] जो सम या समान न हो, असमान; 'पथिषु विषमेष्वप्यचलता' मु० ३.३। दो से पूरा-पूरा न बँटने वाला (अंक)। अनियमित, अव्यवस्थित। बहुत कठिन, रहस्यमय। अप्रवेश्य, दुष्प्रवेश्य। मोटा। तिरछा, बाँका। कष्टदायी, पीड़ाकारक। प्रचण्ड, विकट। भयानक, भय-प्रद। प्रतिकूल, विपरीत। अजीब, अनोखा। बेईमान। सविराम, अंतर देकर होने वाला (ज्वर आदि)। भिन्न। (पुं०) विष्णु। (न०) असमानता। अनोखापन। दुष्प्रवेश्य स्थान। गढ़ा, गर्त। सङ्कट, आपत्ति। एक अर्थालङ्कार जिसमें दो विरोधी वस्तुओं का संबन्ध वर्णन किया जाय या यथायोग्य का अभाव निरूपण किया जाय ।—अक्ष (विषमाक्ष),—ईक्षण (विषमेक्षण), —नयन,—नेत्र,—लोचन-(पुं०) शिव जी के नामान्तर।—अन्न (विषमान्न)-(न०) अनियमित भोजन।—आयुध (विषमायुध), —इषु (विषमेषु),—शर-(पुं०) कामदेव । —काल-(पुं०) प्रतिकूल मौसम या ऋतु । —चतुरस्र,—चतुर्भुज-(पुं०) वह चौकोर क्षेत्र जिसके चारों कोन समान न हों, विषम कोणवाला चतुष्कोण।—च्छद-(पुं०) छतिवन का पेड़।—ज्वर-(पुं०) ज्वर विशेष, इसके चढ़ने का कोई समय नियत नहीं रहता और न तापमान ही सदा समान रहता है।— —लक्ष्मी-(पुं०) दुर्भाग्य, वदकिस्मती।

विषमित—(वि०) [विषम+क्विप्+क्त] विषम बनाया हुआ। ऊबड़-खाबड़। सङ्कुचित, सिकुड़ हुआ। कठिन या दुर्गम बनाया हुआ।

विषय—(पुं०) [विषिण्वन्ति स्वात्मकतया विषयिणं संबध्नन्ति, वि√सि + अच्, षत्व] ज्ञानेन्द्रियों द्वारा गृहीत होने वाले पदार्थ (रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द)। सांसारिक व्यवहार। लौकिक आनन्द या मैथुन सम्बन्धी आनन्द। भोग; 'शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्' र.१.८। वस्तु, पदार्थ। उद्देश्य। सीमा। अवकाश। विभाग। प्रान्त। क्षेत्र। प्रसङ्ग, विवेच्य या आलोच्य विषय। स्थान, जगह। देश। राज्य। आश्रम। ग्रामों का समूह। पाँच की संख्या। पति। वीर्य। धार्मिक कृत्य।—अभिरति (विषयाभिरति)-(पुं०) इन्द्रिय-सम्बन्धी भोगों के प्रति अनुरक्ति।—आसक्त (विषयासक्त), — —निरत-(वि०) विषय-भोग में लीन। —सुख-(न०) इन्द्रिय-सुख।

विषयायिन्—(पुं०) [विषयान् अयते प्राप्नोति, विषय√अय्+णिनि] कामी पुरुष। सांसारिक या संसार में फँसा हुआ आदमी। कामदेव। राजा। इन्द्रिय। जड़वादी।

विषयिन्—(वि०) [विषय+इनि] विषयासक्त, विलासी। (पुं०) संसारी पुरुष। राजा। कामदेव। विषय-वासना में फँसा हुआ आदमी। (न०) इन्द्रिय। ज्ञान।

विषल—(पुं०) विष।

विषह्य—(वि०) [वि√सह्+यत्] सहने योग्य, बरदाश्त करने योग्य। निर्णय करने या फैसला करने योग्य। सम्भव।

विषा—(स्त्री०) [विषम् नाश्यत्वेन अस्ति अस्याः विष+अच्—टाप्] वृद्धि। कड़वी तरोई। काकोली। कलियारी। अतिविषा।

विषाण—(पुं०, न०) [√विष् + कानच्] सींग। मेढासिंगी। श्रृंगवाद्य। शूकर। हाथी या गणेश का दांत; 'न जातुवैनायकमेकमुद्वृतं विषाणमद्यापि पुनः प्ररोहति' शि० १.६० केकड़े का पंजा। चोटी। मथानी। शिव के सिर पर की सींग जैसी जटा। चूचुक। तलवार।

विषाणिन्—(वि०) [विषाण+इनि] सींग या नोकदार दाँतों वाला। (पुं०) सींग या नोकदार दाँतों वाला कोई भी जानवर। हाथी। साँड़।

विषाणी—(स्त्री०) [विषाण+ङीष्] क्षीरकाकोली। वृश्चिकाली। इमली। आवर्त्तकी लता। चमरखा। केले का पेड़। सिंघाड़ा। विष।

विषाद—(पुं०) [वि√सद्+घञ्] उदासी, रंजीदगी। दुःख, शोक। नाउम्मेदी, नैराश्य। शिथिलता, दौर्बल्य। मूढ़ता, अज्ञता।

विषादिन्—(वि०) [विषाद+इनि] विषाद-युक्त, वदास, गमगीन।

विषार—(पुं०) [विष√ ऋ+अण्] साँप।

विषालु—(वि०) [विष+आलुच्] जहरीला।

विषु—(अव्य०) [√विष्+कु] दो समान भागों में। वरावर का। भिन्न रूप में। समान, सदृश।

विषुप—(न०) [विषु दिनरात्र्योः साम्यं पाति रक्षति, विषु√पा+क] ज्योतिप के अनुसार वह समय जब कि सूर्य विषुव रेखा पर पहुँचता है और दिन रात दोनों वरावर होते हैं।

विषुव—(न०) [विपु√वा+क] दे० 'विपुप'।—रेखा-(स्त्री०) ज्योतिष के कार्य के लिये कल्पित एक रेखा जो पृथिवी-तल पर उसके ठीक मध्य भाग में पूर्व-पश्चिम पृथिवी के चारों ओर खींची हुई मानी जाती है। यह रेखा दोनों मेरुओं के ठीक मध्य में और दोनों से समान अन्तर पर है।

विषूचिका—(स्त्री०) [विशेषेण सूचयति मृत्युम्, वि √सूच्+ण्वुल्, षत्व—टाप्, इत्व] हैजा।

√विष्क्—चु० आत्म० सक० वध करना। विष्कयते, विष्कयिष्यते, अविविष्कत। पर० देखना। विष्कयति, विष्कयिष्यति, अविविष्कत्।

विष्कन्द—(पुं०) [वि√स्कन्द् + अच्, षत्व] छितराने या तितर-वितर करने की क्रिया। गमन।

विष्कम्भ—(पुं०) [वि√स्कम्भ्+अच्] रोक, रुकावट, अड़चन। अर्गल, किवाड़ का वेंड़ा या विल्ली। छत का वह मुख्य शहतीर जिस पर छत रक्खी हो। खंभा, स्तम्भ। वृक्ष। नाटक का एक अङ्क जो प्रायः गर्भाङ्क के निकट होता है; जो दृश्य पहले दिखलाया जा चुका है अथवा जो अभी होने वाला है, उसकी इसमें मध्यम पात्रों द्वारा सूचना दी जाती है। वृत्त का व्यास। योगियों का एक प्रकार का वन्ध। प्रसार। लंवाई।

विष्कम्भक—(न०) [विष्कम्भ+कन्] दे० 'विष्कम्भ'।

विष्कम्भित—(वि०) [वि√स्कम्भ्+ क्त] अवरुद्ध, रोका हुआ, अड़चन डाला हुआ।

विष्कम्भिन्—(पुं०) [वि√स्कम्भ्+णिनि] शिव। एक तांत्रिक देवता। अर्गल, किवाड़ों का वेंड़ा।

विष्किर—(पुं०) [वि√ कॄ+क, सुट्, षत्व] छितराने या नख से कुरेदने की क्रिया। मुर्गा, तीतर, वटेर की जाति के पक्षी।

विष्टप—(न०, पुं०) [√विश्+कपन्, तुट्] विश्व, भुवन, लोक; 'कार्यं त्रयाणामपि विष्टपानाम्' कु० ३.२०। **हारिन्**-(वि०) विश्व को प्रसन्न करने वाला।

विष्टब्ध—(वि०) [वि√स्तम्भ्+क्त] दृढ़ता से जमाया या बंधा हुआ। भली-भाँति अवलम्बित। समर्थित। रोका हुआ। गतिहीन किया हुआ, लकवा का मारा हुआ।

विष्टम्भ—(पुं०) [वि√स्तम्भ् + घञ्] दृढ़तापूर्वक गाड़ने की क्रिया। रुकावट, अड़चन। मूत्र अथवा मल का अवरोध। लकवा। ठहरना, टिकाव।

विष्टर—(पुं०) [वि√स्तृ+अप्, षत्व] बैठक (जैसे कुर्सी आदि)। कुशा का बना हुआ आसन; 'परिचेतुमुपांशु धारणां कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरं' र० ८.१८। कुशा का मुट्ठा। यज्ञ में ब्रह्मा का आसन। वृक्ष।—**श्रवस्**-(पुं०) विष्णु या कृष्ण का नामान्तर।

विष्टि—(स्त्री०) [√विष्+क्तिन्]व्याप्ति। धंधा, पेशा। मजदूरी। बेगार। प्रेषण। नरक-वास।

विष्ठल—(न०) [विदूरं स्थलम्, प्रा० स०, षत्व] दूर का स्थान।

विष्ठा—(स्त्री०) [विविधप्रकारेण तिष्ठति उदरे, वि√स्था+क, षत्व,—टाप्] मल, मैला, पाखाना। पेट, उदर।

विष्णु—(पुं०) [√विष् (व्याप्त होना)+नुक्] परब्रह्म का नामान्तर, सर्वप्रधान देव, जो सृष्टि के सर्वेसर्वा हैं। अग्नि। तपस्वी जन। एक स्मृतिकार, जिन्होंने विष्णु-स्मृति बनायी है। —**काञ्ची**-(स्त्री०) दक्षिण की एक नगरी का नाम। —**क्रम**-(पुं०) विष्णु भगवान् का पाद-न्यास।—**गुप्त**-(पुं०) प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ चाणक्य का असली नाम। —**तैल**-(न०) वैद्यक में बतलाया हुआ वातरोगों को नाश करने वाला तैल विशेष। —**दैवत्या**-(स्त्री०) चान्द्रमास के प्रत्येक पक्ष की एकादशी और द्वादशी तिथियाँ।—**पद**-(न०) आकाश। क्षीरसागर। कमल।—**पदी**-(स्त्री०) श्रीभागीरथी गङ्गा। वृष, कुंभ, वृश्चिक, सिंह आदि की संक्रान्तियाँ। द्वारिका पुरी।—**पुराण**-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक सात्त्विक पुराण का नाम। —**प्रीति**-(स्त्री०) वह जमीन जो विष्णु भगवान् की सेवा-पूजा करने के लिये किसी ब्राह्मण को बिना लगान दान दे दी गयी हो।—**रथ**-(पुं०)गरुड़ का नाम।—**रात**-(पुं०) राजा परीक्षित्।—**लिङ्गी**-(स्त्री०) बटेर।—**लोक**-(पुं०) वैकुण्ठधाम। —**वल्लभा**-(स्त्री) लक्ष्मी जी। तुलसी। अग्निशिखा।—**वाहन**, —**वाह्य**-(पुं०) गरुड़ जी।

विष्पन्द—(पुं०) [वि√स्पन्द्+घञ्, षत्व] सिसकन। धड़कन।

विष्फार—(पुं०) [वि√स्फुर्+णिच्+ अच् उकारस्य आत्वम्]धनुष की टंकार। कम्पन।

विष्यन्द—(पुं०) [वि√स्यन्द्+घञ्] क्षरण, बहाव।

विष्य—(वि०) [विषेण वध्यः, विष+यत्] विष देकर मार डालने योग्य।

विष्व—(वि०) अनिष्टकर, अपकारी।

विष्वच्, **विष्वञ्च्**—(वि०) [कर्त्ता, एकवचन, पुं०—**विष्वङ**, स्त्री०— **विषुची**, न०— **विष्वक्**] [विषुम् अञ्चति, विषु √अञ्च्+क्विन्] सर्वगत, सर्वव्यापी। भागों में पृथक् किया हुआ या करने वाला। विभिन्न। (न०) दे० 'विषुप',—**सेन** (**विष्वक्सेन**)-(पुं०) विष्णु भगवान् का नाम; 'विष्वक्सेनः स्वतनुमविशत्सर्वलोकप्रतिष्ठां' र० १५.१०३। एक मनु का नाम जो मत्स्यपुराण के अनुसार तेरहवें और विष्णु-पुराण के अनुसार चौदहवें हैं। शिव का नाम। एक प्राचीन ऋषि का नाम। —०**प्रिया**-(स्त्री०)लक्ष्मी जी का नामान्तर।

विष्वणन—(न०), **विष्वाण**-(पुं०) [वि √स्वन्+ल्युट्, षत्वणत्वे] [वि√स्वन्+घञ्, षत्वणत्वे] भोजन करने की क्रिया।

विष्वद्र्यच्, विष्वद्र्यञ्च्—(वि०) [स्त्री० —विष्वद्रीची] [विष्वच्√ अञ्च्+क्विन्, अद्रि आदेश] सर्वगत, सर्वव्यापी।

√विस्—दि० पर० सक० त्यागना, छोड़ना। विस्यति, वेसिष्यति, अवेसीत्।

विस—दे० 'बिस'।

विसंयुक्त—[वि—सम्√ युज्+क्त]असंयुक्त, पृथक्।

विसंयोग—(पुं०) [वि—सम्√युज्+घञ्] अलगाव, असंयोग।

विसंवाद—(पुं०) [वि—सम्√वद्+घञ्] छल, धोखा। प्रतिज्ञा-भङ्ग। नैराश्य। असङ्गति। विरोध, खण्डन।

विसंवादिन्—(वि०) [वि—सम्√वद्+णिनि वा विसंवाद+इनि] निराश करने वाला। धोखा देने वाला। असङ्गत, विरोधात्मक। भिन्न। असम्मत। छली, धोखेबाज।

विसंष्ठुल—(वि०) चंचल, आन्दोलित। असम, विषम।

विसङ्कट—(वि०) [विशिष्टः सङ्कटो यस्मात्, प्रा० ब०] भयानक, डरावना। (पुं०) सिंह। इंगुदी का पेड़।

विसङ्गत—(वि०) [वि—सम्√गम्+क्त] अयोग्य, असङ्गत, बेमेल।

विसन्धि—(पुं०) [विरुद्धो वा विगतः सन्धिः, प्रा० स०] कुसन्धि, सन्धि का अभाव।

विसर—(पुं०) [वि√सृ+अप्] गमन, प्रस्थान, रवानगी। वृद्धि। भीड़-भड़क्का। झुंड। अत्यधिक परिमाण, ढेर।

विसर्ग—(पुं०) [वि√सृज्+घञ्] प्रेरण। बहाव। प्रक्षेपण। भेंट। दान; 'आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव' र. ४.८६ छोड़ देना, त्याग कर देना। उत्सर्जन (जैसे मल-मूत्र का)। प्रस्थान। बिछोह। मोक्ष, मुक्ति। दीप्ति, प्रभा। व्याकरणानुसार एक वर्ण जिसका चिह्न खड़े दो बिन्दु (:) होते हैं। सूर्य का दक्षिण अयन। लिङ्ग, जननेन्द्रिय।

विसर्जन—(न०) [वि√सृज्+ल्युट्] परित्याग, त्याग। दान। भेंट। मल का त्याग करना। छोड़ देना। बरखास्तगी। किसी देवता की विदा, आवाहन का उलटा। वृषोत्सर्ग, सांड़ दाग कर छोड़ना।

विसर्जनीय—(वि०) [वि√ सृज्+अनीयर्] दान करने योग्य, त्यागने योग्य। (पुं०) एक अक्षर का संकेत, विसर्ग।

विसर्जित—(वि०) [वि√सृज् + क्त) प्रेरित। दत्त। छोड़ा हुआ, त्याग किया हुआ। प्रेषित, भेजा हुआ। बरखास्त किया हुआ।

विसर्प—(पुं०) [वि√सृप् + घञ्] रेंगना। सरकना। इधर-उधर घूमना। फैलना। किसी कर्म का अनाश्रित और अनपेक्षित परिणाम। रोग-विशेष जिसमें ज्वर के साथ-साथ सारे शरीर में छोटी-छोटी फुंसियाँ हो जाती हैं, सूखी खुजली।—**घ्न**-(न०) मोम।

विसर्पण—(न०) [वि√ सृप् + ल्युट्] रेंगना। धीमी चाल से चलना। व्याप्ति, प्रसार। स्थान-त्याग। फोड़े का स्फोट।

विसर्पि—(पुं०), **विसर्पिका**-(स्त्री०) [वि √सृप्+इन्] [वि √सृप् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] विसर्प रोग, सूखी खुजली।

विसल—दे० 'बिसल'।

विसार—(पुं०) [वि√सृ + घञ्] व्याप्ति, फैलाव। रेंगना। मछली। (न०) [वि √सृ + ण] काठ, लकड़ी। शहतीर, लट्ठा।

विसारिन्—(वि०) [स्त्री०—विसारिणी] [वि√सृ+णिनि] फैलने वाला। निकलने वाला। चलने वाला। (पुं०) मछली।

विसिनी—दे० 'बिसिनी'।

विसूचिका—(स्त्री०) [विशेषेण सूचयति मृत्युम्, वि√सूच् + अच्—ङीष् + कन्—टाप्, ह्रस्व] हैजा।

विसूरण—(न०), **विसूरणा**—(स्त्री०) [वि √सूर्+ल्युट्] [वि√सूर् + णिच्—युच्—टाप्] कष्ट, शोक। चिंता। विरक्ति।

विसूरित—(न०) [वि√सूर् + क्त] पश्चात्ताप, पछतावा, परिताप।

विसूरिता—(स्त्री०) [विसूरित+टाप्] ज्वर।

विसृत—(वि०) [वि√सृ + क्त] फैला हुआ, छाया हुआ, व्याप्त। आगे बढ़ा हुआ। उच्चारित।

विसृत्वर—(वि०) [स्त्री०—**विसृत्वरी**] [वि√सृ + क्वरप्, तुक्] फैलने, व्याप्त होने वाला; 'विसृत्वरैरम्बुरुहां रजोभिः' शि० ३.११। रेंगने वाला।

विसृमर—(वि०) [वि √सृ + क्मरच्] फैलने वाला। रेंगने वाला। चलने वाला।

विसृष्ट—(वि०) [वि√सृज् + क्त] प्रेरित। त्यक्त। रचा हुआ। बहाया हुआ। फेंका हुआ। भेजा हुआ। निकाला हुआ, बरखास्त किया हुआ। दिया हुआ।

विस्त—दे० 'बिस्त'।

विस्तर—(पुं०) [वि√स्तृ + अप्] प्रसार, फैलाव। विस्तृत विवरण; 'अङ्गुलिमुद्राधिगमं विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि' मु० १। व्याप्ति। विपुलता, बहुत्व। समूह। संख्या। आधार। बैठकी, पीढ़ा। प्रणय।

विस्तार—(पुं०) [वि√स्तृ + घञ्] लंबे-चौड़े होने का भाव। फैलाव। बढ़ाव, वृद्धि। ब्योरा। वृत्त का व्यास। झाड़ी। पेड़ की डाली या शाखा जिसमें नये पत्ते लगे हों।

विस्तीर्ण—(वि०) [वि√स्तृ + क्त] विस्तृत, दूर तक फैला हुआ। लंबा-चौड़ा, विशाल। बहुत अधिक। **—पर्ण**—(न०) मानकन्द।

विस्तृत—(वि०) [वि√स्तृ + क्त] विस्तारयुक्त। व्याप्त, फैला हुआ। विशाल, बहुत बड़ा। यथेष्ट विवरण वाला।

विस्तृति—(स्त्री०) [वि √स्तृ + क्तिन्] फैलाव, विस्तार। व्याप्ति। लंबाई-चौड़ाई। ऊँचाई या गहराई। वृत्त का व्यास।

विस्पष्ट—(वि०) [विशेषेण स्पष्टः, प्रा० स०] अत्यंत स्पष्ट या व्यक्त, सुस्पष्ट। प्रत्यक्ष, प्रकाशित, जाहिर।

विस्फार—(पुं०) [वि √स्फुर् + घञ्, उकारस्य आकारः] कंपन। स्फूर्ति, तेजी। धनुष की टंकार। विस्तार। विकाश।

विस्फारित—(वि०) [विस्फार + इतच्] कंपित, थरथराता हुआ। टंकोरा हुआ। खींचा हुआ, ताना हुआ। प्रदर्शित, दिखलाया हुआ। स्फूर्ति-युक्त।

विस्फुरित—(वि०) [वि √स्फुर् + क्त] कम्पित, चञ्चल। सूजा हुआ, फूला हुआ।

विस्फुलिङ्ग—(पुं०) [वि√स्फुर् + डु =विस्फु तादृशं लिङ्गम् अस्ति अस्य] चिनगारी, अग्निकण। एक प्रकार का विष।

विस्फूर्जथु—(पुं०) [वि √स्फूर्ज् +अथुच्] गर्जन, दहाड़। बादल की गड़गड़ाहट। लहरों का उत्थान; 'महोर्मिविस्फूर्जथुनिविशेषाः' र० १३.१२।

विस्फूर्जित—(न०) [वि √स्फूर्ज् + क्त] गर्जन। स्फुटन। सिकुड़न। परिणाम। (वि०) शब्दायमान। स्फुटित। कंपित।

विस्फोट—(पुं०) [वि√स्फुट् + घञ्] फटना, फूट पड़ना। [वि√स्फुट्+अच्] फोड़ा। गुमड़ा। चेचक, माता की बीमारी।

विस्मय—(पुं०) [वि √स्मि + अच्] आश्चर्य, ताज्जुब। अद्भुत रस का एक स्थायी भाव। (यह अनेक प्रकार के अलौकिक अथवा विलक्षण पदार्थों के वर्णन करने या सुनने से मन में उत्पन्न होता है।) अभिमान, अहङ्कार। सन्देह, शक। **—आकुल**

(विस्मयाकुल), — **आविष्ट** (विस्मयाविष्ट)–(वि०) विस्मित, आश्चर्य-चकित।

विस्मयङ्गम—(वि०) [विस्मयं गच्छति, विस्मय√गम्+खश्, मुम्] आश्चर्यान्वित।

विस्मरण—(न०) [वि √ स्मृ + ल्युट्] विस्मृति, याद या स्मरण का न रहना, भूल जाना।

विस्मापन—(वि०) [स्त्री०—**विस्मापनी**] [वि√स्मि + णिच्, आत्व, पुक्+ल्यु] आश्चर्य में डालने वाला, विस्मय-जनक। (पुं०) कामदेव। बाजीगर। कुहक, माया। (न०, पुं०) गंधर्व-नगर। (न०) [वि √स्मि + णिच्, आत्व, पुक्+ल्युट्] आश्चर्य में डालना। अचंभे में डालने का साधन।

विस्मित—(वि०) [वि √स्मि + क्त] चकित, आश्चर्य में पड़ा हुआ।

विस्मृत—(वि०) [वि√स्मृ + क्त] भूला हुआ, जो स्मरण न हो।

विस्मृति—(स्त्री०) [वि√स्मृ + क्तिन्] विस्मरण, भूल जाना।

विस्मेर—(वि०) [वि√स्मि +रन्] चकित, आश्चर्यान्वित।

विस्र—(न०) [√विस् + रक्] मुर्दा जलने की गंध। कच्चे मांस की गन्ध। बड़ी मूली।—**गन्धि**-(पुं०) हरताल।

विस्रंस—(पुं०) [वि√स्रंस् + घञ्] पतन। क्षरण। क्षय। ढीलापन। निर्बलता, कमजोरी।

विस्रंसन—(न०) [वि√स्रंस् + ल्युट्] पतन। बहाव। ढीलापन; 'नीविविस्रंसनः करः'। रेचन।

विस्रब्ध—(वि०) [वि√स्रम्भ् + क्त] विश्वस्त। निर्भीक। शांत। धीर। दृढ़। विनम्र। अतिशय।

विस्रम्भ—(पुं०) [वि √ स्रम्भ् + घञ्] विश्वास। प्रेम। केलि-कलह। हत्या।

विस्रसा—(स्त्री०) [वि√स्रंस् + क—टाप्] जीर्णता। निर्बलता। बुढ़ापा।

विस्रस्त—(वि०) [वि√स्रंस् +क्त] बिखरा हुआ। ढीला किया हुआ। कमजोर, निर्बल।

विस्रव, विस्राव—(पुं०) [वि√ स्रु+अप्] [वि√स्रु+घञ्] क्षरण, बहाव॥ धारा।

विस्रावण—(न०) [वि√स्रु + णिच्+ल्युट्] बहाना। रक्त बहाना। अर्क चुआना। गुड़ की बनी एक तरह की शराब।

विस्रुति—(स्त्री०) [वि√स्रु + क्तिन्] क्षरण, बहाव।

विस्वर—(वि०) [विरुद्धः विगतो वा स्वरो यस्य, प्रा० ब०] बेसुरा।

विहग—(पुं०) [विहायसा गच्छति, विहायस् √गम्+ड, विहादेश] पक्षी। बादल। तीर। सूर्य। चन्द्रमा। ग्रह।

विहङ्ग—(पुं०) [विहायसा गच्छति, विहायस्√गम् +खच्—डित्त्व, मुम्, विहादेश] पक्षी। बादल। तीर। सूर्य। चन्द्रमा।—**इन्द्र** (विहङ्गेन्द्र),—**ईश्वर** (विहङ्गेश्वर),—**राज**-(पुं०) गरुड़ जी।

विहङ्गम—(पुं०) [विहायसा गच्छति, विहायस्√गम्+खच्, मुम्, विहादेश] पक्षी; मदकलोदकलोलविहङ्गमाः' र० ९.३७। सूर्य।

विहङ्गमा, विहङ्गिका—(स्त्री०) [विहङ्गम+टाप्] [विहङ्ग +कन् — टाप्, इत्व] मादा चिड़िया। बहँगी, वह लकड़ी जिसके दोनों सिरों पर बोझ बांध कर लटकाया जाता है।

विहत—(वि०) [वि√हन्+क्त] सम्पूर्णतया आहत, वध किया हुआ। विरोध किया हुआ, रोका हुआ, अटकाया हुआ।

विहति—(पुं०) [वि√हन्+क्तिच्] सखा, सहचर। (स्त्री०) [वि√हन्+क्तिन्] वध करना। प्रहार करना। असफलता, नाकामयाबी। पराजय, हार।

विहनन—(न०) [वि√हन्+ल्युट्] ताड़न। मारण। चोट। अनिष्ट। अड़चन, रुकावट। धुनकी।

विहर—(पुं०) [वि√हृ+अप्] हटाना, ले जाना। विछोह, वियोग।

विहरण—(न०) [वि √हृ+ल्युट्] हटाने या ले जाने की क्रिया। चहलकदमी, हवाखोरी, सैर-सपाटा। आमोद-प्रमोद, मनोरंजन।

विहर्तृ—(वि०) [वि√हृ+तृच्] विहरण करने वाला। (पुं०) लुटेरा।

विहर्ष—(पुं०) [विशिष्टो हर्षः प्रा० सं०] बड़ा आनन्द, आह्लाद।

विहसन, विहसित—(न०) **विहास**-(पुं०) [वि√हस्+ल्युट्] [वि√हस्+क्त] [वि √हस्+ घञ्] मुसक्यान, मुसकुराहट, मन्द हास।

विहस्त—(वि०) [विगतः हस्तो यस्य, प्रा० ब०] हाथ-रहित। घबड़ाया हुआ। व्याकुल। अशक्त। अननुभवी। [विशिष्टः हस्तो यस्य] विद्वान्, पण्डित।

विहा—(अव्य०) [वि√हा+आ (नि०)] स्वर्ग, बिहिश्त।

विहापित—(वि०) [वि√हा+णिच्, पुक्+क्त] छुड़ाया हुआ, वियोग कराया हुआ। देने के लिये विवश किया हुआ। (न०) दान। उपहार।

विहायस्—(पुं०), न० [वि √हय् + असुन्, नि० वृद्धि] आकाश। (पुं०) पक्षी।

विहायस—(पुं०) [विहायस् +अच्] आकाश। पक्षी।

विहार—(पुं०) [वि√हृ +घञ्] हटाने या ले जाने की क्रिया। सैर-सपाटा, हवाखोरी, भ्रमण, विचरण। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद, 'विहारशैलानुगतेव नागैः' र० १६.२६। कदम बढ़ाना। उपवन, आमोद-वन। कंधा। जैन या बौद्ध मठ, संघाराम। मन्दिर। इन्द्र का प्रासाद या ध्वजा।—**गृह**-(न०) आमोद-भवन—**दासी**-(स्त्री०) क्रीड़ा-दासी।

विहारिका—(स्त्री०) बौद्ध मठ।

विहारिन्—(व०) [वि√हृ +णिनि] विहार करने वाला, आमोद-प्रमोद में व्यस्त।

विहित—(वि०) [वि√धा+क्त] किया हुआ, अनुष्ठित। सुव्यवस्थित। निश्चित। विधान किया हुआ। निर्माण किया हुआ, रचा हुआ। स्थापित। सम्पन्न किया हुआ। करने योग्य। विभाजित, बांटा हुआ। (न०) विधान, विधि। आदेश, आज्ञा।

विहिति—(स्त्री०) [वि√धा+क्तिन्] कृति, कार्य। विधान।

विहीन—(वि०) [वि√हा+क्त] त्यक्त, त्यागा हुआ। रहित, बगैर। कमीना, नीच। —**जाति**,—**योनि**-(वि०) नीच जाति में उत्पन्न, अकुलीन।

विहृत—(वि०) [वि√हृ+क्त] खेला हुआ, क्रीड़ा किया हुआ। विस्तृत। हटाया हुआ। (न०) (साहित्य में) रमणियों के दस प्रकार के स्वाभाविक अलङ्कारों में से एक।

विहृति—(स्त्री०) [वि√हृ+क्तिन्]. हटाने या छीन लेने की क्रिया। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद। विस्तार।

विहेठक—(वि०) [वि√हेठ्+ण्वुल्] अपकारक। हिंसक।

विहेठन—(न०) [वि√हेठ्+ल्युट्] अपकार करना। रगड़ना, पीसना। सन्ताप। पीड़ा, क्लेश।

विह्वल—(वि०) [वि√ह्वल्+अच्] भय अथवा वैसे ही किसी अन्य कारण से जिसका जी ठिकाने न हो, घबड़ाया हुआ, व्याकुल। भयभीत, डरा हुआ। मति-भ्रष्ट। पीड़ित। उदास। गला हुआ। पिघला हुआ।

√वी—अ० पर० सक० जाना, गमन करना, समीप गमन करना, नजदीक जाना। लाना। फेंकना। खाना। प्राप्त करना। पैदा करना। अक० उत्पन्न होना। पैदा होना। चमकना। सुन्दर होना। व्याप्त होना। वेति, वेष्यति, अवैषीत्।

वीक—(पुं०) [√अज्+कन्, वी आदेश] पवन। पक्षी। मन।

वीकाश—(पुं०) [वि√काश्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] दे० 'विकाश'।

वीक्ष—(पुं०) [वि√ईक्ष्+अच्] दृष्टि। (न०) कोई भी दृश्य पदार्थ। आश्चर्य, अचरज।

वीक्षण—(न०) [वि√ ईक्ष्+ल्युट्] विशेष रूप से देखना, निरीक्षण। नेत्र।

वीक्षा—(स्त्री०) [वि√ईक्ष्+अ—टाप्] अवलोकन। जाँच-पड़ताल। ज्ञान। बेहोशी।

वीक्षित—(वि०) [वि√ ईक्ष् +क्त] अच्छी तरह देखा हुआ। (न०) अवलोकन।

वीक्ष्य—(वि०) [वि√ईक्ष्+ण्यत्] देखने योग्य, जो दिखलाई पड़े। (पुं०) नर्तक। अभिनेता। घोड़ा। (न०) कोई देखने योग्य या दिखलाई पड़ने वाला पदार्थ या वस्तु। आश्चर्य, अचंभा।

वीङ्गा—(स्त्री०) [वि√इङ्ग्+अ—टाप्—गमन, गति। घोड़े की चालों में से एक चाल। नृत्य, नाच। सङ्गम, मिलन। केवाँच।

वीचि—(पुं०, स्त्री०) [√वे +डीचि] लहर, तरंग; 'समुद्रवीचीव चलस्वभावाः' पं० १.१९४। अविवेक। आनन्द। अवकाश। किरण। अल्पता। दीप्ति। —**मालिन्**-(पुं०) समुद्र।

वीची—(स्त्री०) [विचि+ङीष्] दे० 'वीचि'।

√**वीज**—चु० उभ० सक० पंखा करना। पंखा हाँक कर ठंडा करना। वीजयति—ते, वीजयिष्यति—ते, अवीविजत्—त।

वीज, वीजक, वीजल, वीजिक, वीजिन्, वीज्य—दे० 'वीज', 'वीजक', 'वीजल', 'वीजिक', 'वीजिन्', 'वीज्य'।

वीजन—(पुं०) [वि√ईज्+ल्यु] चक्रवाक। चकोर। पीला लोध। (न०) [√वीज्+ ल्युट्] पंखा। पंखा झलने की क्रिया; 'तदनु ज्वलनं मदर्पितं त्वरयेर्दक्षिणवातवीजनैः' कु० ४.३६।

वीटा—(स्त्री०) [वि√इट्+क—टाप्] प्राचीन कालीन एक प्रकार का खेल गुल्ली-डंडा के ढंग पर।

वीटि, वीटिका, वीटी—(स्त्री०) [वि√इट्+इन्, स च कित्][वीटि + कन्—टाप्] [वीटि +ङीष्] पान की बेल। पान का बीड़ा तैयार करने की क्रिया। बंधन, गाँठ। चोली की गांठ।

वीणा—(स्त्री०) [वेति वृद्धिमात्रम् अपगच्छति,√वी+न, णत्व] बीन। बिजली। एक योगिनी।—**आस्य** (**वीणास्य**)-(पुं०) नारद जी का नाम।—**दण्ड**-(पुं०)वीणा का लंबा डंडा जो मध्य में होता है।—**वाद,—वादक**- (पुं०) वीणा बजाने वाला।

वीत—(वि०)[√वी+क्त वा वि√इ+क्त] अन्तर्धान हुआ। प्रस्थानित। गया हुआ। छोड़ा हुआ। ढीला किया हुआ। प्रवर्जित। पसंद किया हुआ। स्वीकृत किया हुआ। युद्ध के अयोग्य। पालतू। सीधा। रहित। (पुं०) घोड़ा या हाथी जो लड़ाई के काम के अयोग्य हो। (न०) हाथी को अंकुश से गोद कर और पैरों की मार से मारने की की क्रिया।—**दम्भ**-(वि०) विनम्र।—**भय**-(वि०) निर्भय, निःशङ्क। (पुं०) विष्णु का नामान्तर।—**मल**-(वि०) विशुद्ध।—**राग**-(वि०) कामनाशून्य। बिना रंग का। (पुं०) जितेन्द्रिय साधु। —**शोक**-(पुं०) अशोक वृक्ष।

वीतंस—(पुं०) [विशेषेण बहिरेव तस्यते भूष्यते, वि √तंस्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] पिंजड़ा या जाल जिसमें पक्षी या जानवर फँसाये जाते हैं। चिड़ियाघर। वह स्थान जहाँ शिकार पाले जायँ।

वीतन—(पुं०) [विशिष्टं तनोति, वि√तन्+अच्, पृषो० दीर्घ] गले के अगल-बगल के दोनों स्थान।

वीति—(पुं०) [√वी+क्तिच्] घोड़ा। (स्त्री०) [√वी+क्तिन्] गति, गमन। पैदायश, पैदावार। उपभोग। भोजन। चमक, आभा।—**होत्र**-(पुं०) अग्नि। सूर्य।

वीथि, वीथी—(स्त्री०) [विथ्यते अनया, √विथ्+इन्, पृषो० साधुः] [वीथि—ङीष्] मार्ग, रास्ता। पंक्ति, कतार। हाट। दूकान। दृश्य काव्य या रूपक के २७ भेदों में से एक। यह एक ही अङ्क का होता है और इसमें नायक भी एक ही होता है। इसमें आकाशभाषित और शृंगाररस का आधिक्य रहता है।

वीथिका—(स्त्री०) [विथि+कन्—टाप्] मार्ग। चित्रशाला। कागज का तख्ता (जिस पर चित्र चित्रित किया जाता है।) भीत या दीवाल (जिस पर चित्र खींचा जाय); 'आर्यस्य चरित्रमस्यां वीथिकायामालिखितं' उत्त० १।

वीध्र—(वि०)[विशेषेण, इन्धते दीप्यते, वि √इन्ध्+क्रन्] स्वच्छ, साफ (न०) आकाश। पवन। अग्नि।

वीनाह—(पुं०) [वि√नह्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] कूप का ढकना या जँगला।

वीपा—(स्त्री०) विद्युत्, बिजली।

वीप्सा—(स्त्री०) [वि० √आप्+सन्, ईत्व+अ—टाप्] परिव्याप्ति। शब्द-द्विरुक्ति।

√वीर्—चु० आत्म० अक० पराक्रमी होना। वीरयते, वीरयिष्यते, अविवीरत।

वीर—(वि०) [अज्+रक, अजेः वी आदेशः वा√वीर्+अच्] बहादुर, शूर। बलवान्। ताकतवर। (न०) नरकुल। काली मिर्च। काँजी। खस की जड़। (पुं०) शूरवीर, भट, योद्धा। वीर-भाव। एक रस (जिसके ४ भेद हैं—धर्मवीर, दानवीर, दयावीर, और युद्धवीर)। नट। अग्नि। यज्ञीय अग्नि। पुत्र। पति। अर्जुन। वृक्ष। विष्णु का नामान्तर।—**आशंसन** (**वीराशंसन**)—(न०) रखवाली, चौकसी। युद्ध में जोखों का पद। किसी सिपाही का जीवन से हाथ धो युद्ध में आगे जाना।—**आसन** (**वीरासन**)-(न०) बैठने का एक प्रकार का आसन या मुद्रा जिसका व्यवहार तांत्रिकों के साधनों में हुआ करता है। घुटना मोड़ कर बैठना। रणभूमि। वह स्थान जहाँ पहरेदार पहरा देता है, पहरा देने का स्थान।—**ईश** (**वीरेश**),—**ईश्वर** (**वीरेश्वर**) -(पुं०) शिवजी। बड़ा बहादुर।—**उज्झ** (**वीरोज्झ**)-(पुं०) वह ब्राह्मण जो अग्निहोत्र नहीं करता।—**कीट**-(पुं०) तुच्छ योद्धा।—**कुक्षि**-(स्त्री०) वीरपुत्र प्रसव करने वाली स्त्री। पुत्र पैदा करने वाली स्त्री।—**जयन्तिका**-(स्त्री०) रण-नृत्य। युद्ध।—**तरु**—(पुं०) अर्जुन वृक्ष।—**धन्वन्**-(पुं०) कामदेव।—**पान**, —**पाण**-(न०) वह पेय पदार्थ जो वीर लोग युद्ध का श्रम मिटाने के लिये पान करते हैं।—**प्रजायिनी**,—**प्रजावती**, —**प्रसवा**,—**प्रसविनी**,—**प्रसू**—(स्त्री०) वीर उत्पन्न करने वाली स्त्री, वीर-माता।—**भद्र**-(पुं०) शिवजी के एक प्रसिद्ध गण का नाम, जिसकी उत्पत्ति शिवजी की जटा से हुई थी। प्रसिद्ध भट। अश्वमेध यज्ञ के योग्य घोड़ा। एक प्रसिद्ध भट। अश्वमेध यज्ञ के योग्य घोड़ा। एक सुगन्धित घास। —**मुद्रिका**-(स्त्री०) पैर की बिजली।—उँगली में पहनी जाने वाली छल्ली।—**रजस्**-(न०) सिंदूर।—**रस**-(पुं०) नाटकों में वर्णित नव रसों में से एक। सामरिक भाव।—**रेणु**-(पुं०) भीमसेन का नाम।—**वृक्ष**—(पुं०) अर्जुनवृक्ष। भिलावें का पेड़।—**सू**—दे० 'वीरप्रजायिनी'।—**सैन्य**-(न०) लहसुन।

स्कन्ध—(पुं०) भैंसा।—हन्(पुं०) वह ब्राह्मण जिसने यज्ञ करना त्याग दिया हो। विष्णु का नाम।

वीरण—(न०) [वि√ईर्+ल्यु] उशीर, खस। (पुं०) एक प्रजापति।

वीरणी—(स्त्री०) [वि√ईर्+ल्युट्, वीरण—ङीष्] कटाक्ष, तिरछी चितवन। गहरी जगह।

वीरतर—(पुं०) [वीर+तरप्] बड़ा शूर। तीर। (न०) उशीर, खस।

वीरन्धर— (पुं०) [वीर√धृ+खच्, मुम् मयूर, मोर। पशुओं के साथ होने वाली लड़ाई। चमड़े की नीमस्तीन या जाकेट।

वीरवत्—(वि०) [वीर+मतुप्, मस्य वः] शूरों से परिपूर्ण।

वीरवती—(स्त्री०) [वीरवत्+ङीप्] वह स्त्री जिसका पति और पुत्र जीवित हों।

वीरा—स्त्री०) [वीर+टाप्] वीरपत्नी। पत्नी। माता। मुरा, मुरामासी। शराव। एलुवा। केला।

वीरुध्, वीरुधा—(स्त्री) [विशेषेण रुणद्धि अन्यान् वृक्षान्, वि√रुध्+क्विप्, पक्षे टाप्, उपसर्गस्य दीर्घः] फैलने वाली लता या बेल; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं मधुगन्धातिशयेन वीरुधां' र० ३६। अङ्कुर। डाली। एक पौधा जो जितना काटो उतना ही बढ़ता है या काटने पर ही बढ़ता है। झाड़ी।

वीर्य—(न०) [वीरे साधु, वीर+यत् अथवा वीर्यते अनेन, √वीर्+यत्] वीरता, पराक्रम, विक्रम। शक्ति, सामर्थ्य; 'स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः' र० २.४। पुंस्त्व,जननशक्ति। स्फूर्ति, साहस। (किसी दवा का लाभकारी) गुण। धातु, बीज। चमक, आभा। महिमा। मर्यादा।—ज- (पुं०) पुत्र।—**प्रपात**-(पुं०) वीर्य का क्षरण।

वीर्यवत्—(वि०) [वीर्य+मतुप्, मस्य वः] बलवान्, शक्तिशाली। पुष्ट। गुणकारी।

वीवध—(पुं०) [वि√वध्+घञ्, वृद्ध्यभाव, दीर्घ] वहँगी। बोझ। अनाज का ढेर। मार्ग, सड़क।

वीवधिक—(पुं०) [वीवध+ठन्] वहँगी वाला, भार-वाहक।

वीहार—(पुं०) [वि√हृ+घञ्, दीर्घ] दे० 'विहार'।

√वुङ्ग्—भ्वा० पर० सक० त्यागना। वुङ्गति, वुङ्गिष्यति, अवुङ्गीत्।

√वुण्ट्—चु० उभ० सक० वध करना। वुण्टयति-ते।

वुवूर्षु—(वि०) [√वृ+सन्+उ] चुनने का अभिलाषी।

वूर्ण—(वि०) [√वृ+क्त] चुना हुआ, छाँटा हुआ।

√वृ—भ्वा० पर० सक० छिपाना। वरति, वरिष्यति, अवार्षीत्। स्वा० उभ० सक० चुनना, छाँटना। विवाह करने के लिये छाँट कर पसंद करना। याचना करना, माँगना। वृणोति—वृणुते, वरि(री) ष्यति-ते, अवारीत्—अवरि(री)ष्ट—अवृत। क्र्या० आत्म० सक० विभक्त करना। वृणीते, वरि (री) ष्यते, अवरि (री) ष्ट—अवृत। चु० उभ० सक० ढकना, छिपाना। लपेटना। घेरना। रोकना, बचाना। अड़चन डालना। विरोध करना। वारयति—ते—वरति—ते, वारयिष्यति—ते, अववारत्—ते, पक्षे स्वादिवत्।

√वृक्—भ्वा० आत्म० सक० ग्रहण करना, लेना, पकड़ना। वर्कते, वर्किष्यते, अवर्किष्ट।

वृक—(पुं०) [√वृ+कक् वा √वृक्+क] भेड़िया। साही। गीदड़, शृगाल। काक, कौवा। उल्लू। डाकू। क्षत्रिय। तारपीन। सुगन्ध पदार्थों का संमिश्रण। एक राक्षस का नाम। बकवृक्ष। उदरस्य अग्नि-विशेष।—**अराति** (वृकाराति), —**अरि** (वृकारि)-

(पुं०) कुत्ता ।—उदर (**वृकोदर**)—(पुं०) ब्रह्मा का नाम । भीम का नाम; 'उपपत्तिमदूर्जिताश्रयं नृपमूचे वचनं वृकोदरः' कि० २.१ ।—**दंश**— (पुं०) कुत्ता ।—**धूप**—(पुं०) तारपीन । कई खुशबूदार द्रव्यों से बना हुआ सुगन्ध पदार्थ विशेष । —**धूर्त**— (पुं०) शृगाल ।—**प्रेक्षिन्**—(वि०) भेड़िये की तरह किसी चीज की ओर देखने वाला ।

वृक्क—(पुं०), **वृक्का** –(स्त्री०) हृदय । गुरदा ।

वृक्ण—(वि०) [√व्रश्च् + क्त] कटा आ । फटा हुआ । टूटा हुआ ।

वृक्त—(वि०) [√वृज्+क्त] ऐंठा हुआ । फैलाया हुआ । साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ ।

√**वृक्ष्**—भ्वा० आत्म० सक० पसंद करना, चुन लेना । ढांकना । वृक्षते, वृक्षिष्यते, अवृक्षीत् ।

वृक्ष—(पुं०) [√व्रश्च् + स, कित्त्व] पेड़, रूख, पादप, विटप ।—**अदन** (**वृक्षादन**)– (पुं०) बढ़ई की छैनी । कुल्हाड़ी । वसूला । अश्वत्थ का पेड़ । पियाल वृक्ष ।—**अम्ल** (**वृक्षाम्ल**)–(पुं०) आमड़ा ।—**आलय** (**वृक्षालय**)–(पुं०) पक्षी ।—**आवास** (**वृक्षावास**)–(पुं०) पक्षी । साधु ।—**आश्रयिन्** (**वृक्षाश्रयिन्**)–(पुं०) छोटी जाति का उल्लू ।—**कुक्कुट**—(पुं०) जंगली मुर्गा ।—**खण्ड** –(न०) कुञ्जवन ।— **चर**– (पुं०) वानर ।—**धूप** –(पुं०) तारपीन ।—**नाथ**—(पुं०) वट का वृक्ष ।— **निर्यास**–(पुं०) गोंद ।—**पाक** –(पुं०) वटवृक्ष ।—**भिद्**–(पुं०) कुल्हाड़ी ।—**मर्कटिका** –(स्त्री०) गिलहरी ।— **वाटिका**,—**वाटी** –(स्त्री०) बाग, बगिया ।—**श** –(पुं०) छिपकली । —**शायिका**–(स्त्री०) गिलहरी । —**सङ्कट**–(न०) घने पेड़ों के बीच की पगडंडी ।

वृक्षक—(पुं०) [वृक्ष+कन्] छोटा वृक्ष । कुटज वृक्ष ।

√**वृज्**—अ० आत्म०, रु० पर०, चु० पर० सक० त्याग देना । पसंद करना, चुनना । प्रायश्चित्त करना । टाल देना । अ० वृक्ते, रु० वृणक्ति, वर्जिष्यति, अवर्जीत् । चु० वर्जयति—वर्जति ।

वृजन—(पुं०) [√वृज्+क्यु] केश । घुंघराले बाल । (न०) पाप । विपत्ति । आकाश । वाड़ा । घिरा हुआ भूखण्ड जो काश्तकारी या चरागाह के काम के लिये हो ।

वृजिन—(पुं०) [√वृज् + इनच्, कित्त्व] मुड़ा हुआ, टेढ़ा, दुष्ट, पापी । (न०) पाप; 'सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि' भग० ४.३६ । पीड़ा, कष्ट (इस अर्थ में पुं० भी)। (पुं०) केश । घुंघराले केश । दुष्ट जन ।

√**वृड्**—तु० पर० सक० छिपाना । वृडति, वृडिष्यति, अवृडीत् ।

√**वृण्**—तु० पर० सक० प्रसन्न करना । वृणति, वर्णिष्यति, अवर्णीत् ।

√**वृत्**—भ्वा० आत्म० अक० विद्यमान होना । वर्तते, वर्तिष्यते—वर्त्स्यति, अवर्तिष्ट –अवृतत् । दि० आत्म० सक० वरण करना, चुनना । वृत्यते (पक्षे वावृत्यते), वर्तिष्यते, अवर्तिष्ट ।

वृत—(वि०) [√वृ+क्त] चुना हुआ, छाँटा हुआ । पर्दा पड़ा हुआ, ढका हुआ । घिरा हुआ । रजामंद । भाड़े पर उठाया हुआ । भ्रष्ट किया हुआ । सेवित ।

वृति—(स्त्री०) [√वृ + क्तिन्] चुनाव, छाँट । छिपाव, दुराव । याचना । विनय, प्रार्थना । घेरा । नियुक्ति ।

वृतिङ्कर—(वि०) [वृत्ति √कृ + ट, मुम्] घेरने वाला । (पुं०) विकङ्कत नामक वृक्ष ।

वृत्त—(वि०) [√वृत् + क्त] जीवित, वर्तमान। हुआ, घटित हुआ। पूर्णता को प्राप्त। कृत, किया हुआ। बीता हुआ, गुजरा हुआ। वर्तुल, गोल। मृत, मरा हुआ। दृढ़, मजबूत। अधीत, पढ़ा हुआ। (किसी से) निकला हुआ। प्रसिद्ध। (पुं०) कछुवा। (न०) घटना। इतिहास। वृत्तान्त। संवाद, खबर। पेशा, धंधा। चरित्र, चाल-चलन। सच्चरित्र, अच्छा चाल-चलन। शास्त्रानुमोदित विधान, चलन, पद्धति। वह क्षेत्र जिसका घेरा या परिधि गोल हो, मंडल। वह गोल रेखा जिसका प्रत्येक विन्दु उसके भीतर के मध्य-विन्दु से समान अन्तर पर हो। छन्द।—**अन्त** (वृत्तान्त)-(पुं०) अवसर, मौका। संवाद, समाचार, खबर। किसी बीती हुई घटना का विवरण, इतिहास, इतिवृत्त। कथा, कहानी। विषय, प्रसङ्ग। जाति, किस्म। तरीका, ढंग। दशा, हालत। सम्पूर्णता। विश्राम। भाव।—**इर्वारु** (वृत्तेर्वारु)-(पुं०), —**कर्कटी**-(स्त्री०) खरबूजा।—**गन्धि**-(न०) वह गद्य जिसमें अनुप्रासों और समासों की अधिकता हो, वह गद्य जिसे पढ़ने से पद्य पढ़ने जैसा आनन्द प्राप्त हो।—**चूड**, —**चौल**-(वि०) वह जिसका मुण्डन संस्कार हो चुका हो।—**पुष्प**-(पुं०) जलवेंत। सिरिस का पेड़। कदंब का पेड़। भुँइकदंब। सदागुलाब, सेवती। मोतिया। मल्लिका।—**फल**-(पुं०) कैथा का पेड़। अनार का पेड़।—**शस्त्र**-(वि०) शस्त्र-चालन कला में पारदर्शी या पटु।

वृत्ति—(स्त्री०) [√वृत्+क्तिन्] अस्तित्व। परिस्थिति। दशा, हालत। क्रिया कर्म। तौर, तरीका। चाल-चलन, आचरण। धंधा। पेशा। जीविका, रोजी। मजदूरी, उजरत। सम्मानपूर्ण व्यवहार; 'कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने' श० ४.१८। व्याख्या, टीका। चक्कर, घुमाव। वृत्त या पहिये का व्यास या घेरा। सूत्रार्थ-विवरण, सूत्र के अर्थ का विशद रूप से व्यक्तीकरण। शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा वह किसी अर्थ को बतलाता या प्रकट करता है। (यह अर्थ-तीन प्रकार के माने गये हैं। यथा—अभिधात्मक, लक्षणात्मक, और व्यञ्जनात्मक)। वाक्य-रचना की शैली (शैली चार प्रकार-की मानी गयी है। यथा—कैशिकी, भारती, सात्त्वती और आरभटी। इनमें से शृङ्गार रस वर्णन के लिये कैशिकी-वृत्ति, वीर रस के लिये सात्त्वतीवृत्ति, रौद्र और बीभत्स रसों का वर्णन करने के लिये आरभटी वृत्ति तथा अवशेष रसों का वर्णन करने के लिये भारतीवृत्ति से काम लिया जाता है।) —**अनुप्रास** (वृत्त्यनुप्रास)-(पुं०) पांच प्रकार के अनुप्रासों में से एक प्रकार का अनुप्रास जो काव्य में एक शब्दालङ्कार माना गया है। इसमें एक अथवा अनेक व्यञ्जन वर्ण एक ही या भिन्न-भिन्न रूपों में बराबर व्यवहृत किये जाते हैं।—**उपाय** (वृत्त्युपाय)-(पुं०) जीविका का जरिया या साधन।—**कर्षित**-(वि०) जीविका के अभाव से दुःखी।—**चक्र**-(न०) राजचक्र।—**च्छेद**-(पुं०) किसी की जीविका का अपहरण।—**भङ्ग**-(पुं०), —**वैकल्य**-(न०) जीविका का अभाव।—**स्थ**-(वि०) वह जो अपनी वृत्ति पर स्थित हो। सदाचारी, अच्छे चाल-चलन का। (पुं०) गिरगिट। छिपकली।

वृत्र—(पुं०) [√वृत् + रक्] पुराणानुसार त्वष्टा के पुत्र एक दानव का नाम, जो इन्द्र के हाथ से मारा गया था। बादल। अन्धकार। शत्रु। शब्द, ध्वनि। पर्वत विशेष। —**अरि** (वृत्रारि), —**द्विष्**,—**शत्रु**,—**हन्**-(पुं०) इन्द्र की उपाधियां; 'क्रुद्धेऽपि पक्षच्छिदि वृत्रशत्रौ' कु० १.२०।

वृथा—(अव्य०) [√वृ+थाल्] व्यर्थ, बेफायदा, निरर्थक । अनावश्यकता से । मूर्खता से । गलती से । अनुचित रीति से । —**मति**– (वि०) वह जिसकी बुद्धि में मूर्खता भरी हो, मूर्ख ।—**लिङ्ग**–(वि०) –(वि०) जिसका कोई वास्तविक कारण न हो ।—**वादिन्**–(वि०) मिथ्याभाषी, झूठ बोलने वाला ।

वृद्ध—(वि०) [√वृध् + क्त] वृद्धि को प्राप्त, बढ़ा हुआ । पूर्ण रूप से वृद्धि को प्राप्त । बूढ़ा, बड़ी उम्र का । बड़ा । एकत्रित, ढेर किया हुआ । बुद्धिमान्, चतुर । (न०) शैलज नामक गन्ध-द्रव्य । (पुं०) बूढ़ा आदमी; 'हैयङ्गवी नमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्' र० १.४५ । सम्माननीय पुरुष । ऋषि । वंशधर, सन्तान । —**अङ्गुलि** (**वृद्धाङ्गुलि**)–(स्त्री०) पैर की बड़ी उँगली ।—**अरण्य** (**वृद्धारण्य**)–(पुं०) वह स्थान जहाँ पुराणों की कथा सुनाई जाती है ।—**अवस्था** (**वृद्धावस्था**)–(स्त्री०) बुढ़ापा ।—**आचार** (**वृद्धाचार**)–(पुं०) पुरानी रीति-रस्म ।—**उक्ष** (**वृद्धोक्ष**)–(पुं०) बूढ़ा बैल ।—**काक**–(पुं०) द्रोणकाक, पहाड़ी कौआ ।—**नाभि**–(वि०) तोंदिल ।—**भाव**–(पुं०) बुढ़ापा । —**मत**–(न०) प्राचीन ऋषियों की आज्ञा । —**वाहन**–(पुं०) आम का पेड़ ।—**श्रवस्**– (पुं०) इन्द्र की उपाधि ।—**सङ्घ**– (पुं०) वृद्धजनों की सभा ।—**सूत्रक**– (न०) कपास । इंद्रतूल, बुढ़िया का सूत ।

वृद्धा—(स्त्री०) [वृद्ध+टाप्] बुढ़िया स्त्री । अँगूठा । महाश्रावणिका ।

वृद्धि—(स्त्री०) [√वृध् + क्तिन्] बढ़ती । उन्नति । चन्द्रकलाओं की वृद्धि । सफलता । सौभाग्य । धन-दौलत, समृद्धि । ढेर । समुदाय । सूद । सूदखोरी । लाभ, मुनाफा । अण्डकोष की वृद्धि । शक्ति की वृद्धि । राजस्व की वृद्धि । वह अशौच या सूतक जो घर में सन्तान उत्पन्न होने पर लगता है, जननाशौच ।—**आजीव** (**वृद्ध्याजीव**)—**आजीविन्** (**वृद्ध्याजीविन्**)–(पुं०) महाजन जो सूदखोरी का रोजगार करता है । —**जीवन** –(न०), —**जीविका**–(स्त्री०) सूदखोरी का धंधा या पेशा ।—**द**–(वि०) समृद्धिकारक ।—**पत्र**–(न०) चीरने का एक औजार ।—**श्राद्ध** –(न०) नान्दीमुख श्राद्ध, आभ्युदयिक श्राद्ध ।

√वृध्—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना, बड़ा हो जाना । फलना-फूलना । जारी रहना, चालू रहना । निकलना, चढ़ना (जैसे सूर्य इतना चढ़ आया) । बधाई देने का हेतु होना । वर्धते, वर्धिष्यते—वर्त्स्यति, अवृधत्—अवर्धिष्ट ।

वृधसान—(वि०) [√वृध् + असानच्, कित्त्व] वर्धनशील । (पुं०) मनुष्य, मानव ।

वृधसानु—(पुं०) [√वृध् + असानुच्, कित्त्व] मानव, मनुष्य । पत्ता, पत्र । क्रिया, कर्म ।

वृन्त—(न०) [√वृ + क्त, नि० मुम्] फल या पत्र का डंठल; 'वृन्ताच्छ्लथं हरति पुष्पमनोकहानाम्' र० १२.१०२ । पल्हेडी, घड़ा रखने की तिपाई। कुच की बौंड़ी या अग्रभाग ।

वृन्ताक—(पुं०), **वृन्ताकी**– (स्त्री०) [वृन्त √अक् + अण्] [वृन्ताक+ ङीप्] भंटा या बैंगन का पौधा ।

वृन्तिका—(स्त्री०) [वृन्त + कन्—टाप्, इत्व] छोटा डंठल ।

वृन्द—(न०) [√वृ + दन्, नुम् गुणाभाव (नि०) समुदाय, समूह । ढेर, समुच्चय । सौ करोड़ की संख्या ।

वृन्दा—(स्त्री०) [वृन्द+टाप्] तुलसी । राधा ।—अरण्य (वृन्दारण्य),—वन-(न०) मथुरा के सन्निकट एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम ।—वनी-(स्त्री०) तुलसी ।

वृन्दार—(वि०) [वृन्द √ ऋ +अण्] अधिक । उत्तम, उत्कृष्ट । मनोहर, सुन्दर ।

वृन्दारक—(वि०) [स्त्री०—वृन्दारका, वृन्दारिका] [वृन्द+आरकन्] अत्यधिक, बहुत ज्यादा । उत्कृष्ट । सुन्दर । मान्य, प्रतिष्ठित । (पुं०) देवता । किसी वस्तु का मुख्य अंश ।

वृन्दिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन वृन्दारकः, वृन्दारक+इष्ठन्, वृन्दादेश] सबसे अधिक बड़ा या लंबा । सबसे अधिक सुन्दर ।

वृन्दीयस्—(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन वृन्दारकः, वृन्दारक+ईयसुन्, वृन्दादेश] दो में से अपेक्षाकृत बड़ा । दो में से अपेक्षाकृत सुन्दर ।

√वृश्—दि० पर० सक० वरण करना, चुनना । वृश्यति, वर्शिष्यति, अवृशत् ।

वृश—(न०) [√वृश् + क] अड़ूसा । अदरक । (पुं०) चूहा ।

वृशा—(स्त्री०) [वृश+टाप्] एक प्रकार की ओषधि ।

वृश्चिक—(पुं०) [√व्रश्च् + किकन्] बिच्छू । वृश्चिक राशि । कनखजूरा, गोजर । केंकड़ा । एक कीड़ा जिसके शरीर पर बाल होते हैं । गोबर का कीड़ा । अगहन का महीना । मदन वृक्ष ।

√वृष्—भ्वा० पर० सक० बरसना । देना । नम करना । वर्षति, वर्षिष्यति, अवर्षीत् । चु० आत्म० अक० उत्पन्न करने की शक्ति का होना । सक० शक्ति को रोकना । वर्षयते, वर्षयिष्यते, अववर्षत ।

वृष—(पुं०) [√ वृष् + क] साँड़, बैल; 'असम्पदस्तस्य वृषेण गच्छतः कु० ५.८० । वृष राशि । सर्वश्रेष्ठ (किसी समुदाय में) । कामदेव । बलिष्ठ आदमी । कामुक । शत्रु । मूसा । शिव का नंदी । न्याय । सत्कर्म । कर्ण का नाम । विष्णु का नाम । एक ओषधि । (न०) मोर का पंख ।—अङ्क (वृषाङ्क)-(पुं०) शिव जी । पुण्यात्मा जन । भिलावें का पेड़ । हिजड़ा ।—अञ्चन (वृषाञ्चन)-(पुं०) शिव ।—अन्तक (वृषान्तक)-(पुं०) विष्णु ।—आहार (वृषाहार)-(पुं०) बिल्ली ।—उत्सर्ग (वृषोत्सर्ग)-(पुं०) किसी की मृत्यु होने पर बछड़े को दाग कर और उसे साँड़ बना छोड़ने की क्रिया ।—दंश,—दंशक-(पुं०) बिल्ली ।—ध्वज-(पुं०) शिव । गणेश । पुण्यात्मा जन ।—पति -(पुं०) शिव ।—पर्वा-(पुं०) एक दैत्य का नाम जिसकी बेटी शर्मिष्ठा को राजा ययाति ने ब्याहा था । बर्र ।—भासा-(स्त्री०) इन्द्र और देवताओं का आवासस्थान अर्थात् अमरावती पुरी ।—लोचन-(पुं०) बिल्ली ।—वाहन -(पुं०) शिवजी का नाम ।—सृक्की-(स्त्री०) भिड़, बर्र ।

वृषण—(पुं०) [√ वृष्+क्यु] अण्डकोष ।

वृषणश्व—(पुं०) इन्द्र के एक घोड़े का नाम । एक गंधर्व । एक वैदिक राजा ।

वृषन्—(पुं०) [√ वृष् + कनिन्] साँड़ । वृषभ राशि । किसी श्रेणी या जाति का मुखिया । घोड़ा । कष्ट । पीड़ा का ज्ञान न होना । इन्द्र; 'वृषेव सीतां तदवग्रहक्षताम्' कु० ५.६१ । कर्ण । अग्नि । सोम ।

वृषभ—(पुं०) [√वृष् + अभच्] साँड़ । वृषभ राशि । किसी श्रेणी या जाति का मुखिया । कोई भी नर जानवर । एक प्रकार की ओषधि । हाथी का कान । कान का छेद ।—गति,—ध्वज-(पुं०) शिव जी ।

वृषभी—(स्त्री०) [वृषभ+ङीप्] विधवा । गौ ।

वृषल—(पुं०) [√वृष् + कलच्] शूद्र। घोड़ा। गाजर। वह जिसे धर्म आदि का कुछ भी ध्यान न हो, दुष्टात्मा। पतित व्यक्ति। चन्द्रगुप्त का नाम जो चाणक्य ने रख छोड़ा था।

वृषलक—(पुं०) [√वृषल + कन्] तिरस्करणीय शूद्र।

वृषली—(स्त्री०) [वृषल+ङीष्] वह कन्या जो रजस्वला हो गयी हो, पर जिसका विवाह न हुआ हो।—'पितुर्गेहे च या नारी रजः पश्यत्यसंस्कृता। भ्रूणहत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वृषली स्मृता॥' रजस्वला स्त्री या वह स्त्री जो मासिक धर्म से हो। बाँझ स्त्री। मरी हुई सन्तान उत्पन्न करने वाली स्त्री। शूद्र जाति की स्त्री। —**पति**–(पुं०) शूद्रा स्त्री का पति। —**सेवन**–(न०) शूद्रा स्त्री से संसर्ग।

वृषस्यन्ती—(स्त्री०) [वृष√क्यच्, सुक् +शतृ, नुम्—ङीप्] वह स्त्री जिसे पुरुषसमागम की लालसा हो। छिनाल औरत। उठी हुई या मस्त गाय।

वृषाकपायी—(स्त्री०) [वृषाकपेः पत्नी, वृषाकपि—ङीप्, ऐ आदेश] लक्ष्मी। गौरी। शची। अग्निपत्नी स्वाहा। सूर्यपत्नी। शतावर। जीवंती।

वृषाकपि—(पुं०) [वृषः कपिः अस्य, ब० स०, पूर्वपददीर्घ, वा वृषं धर्म न कम्पयति, √कम्प् + इन्, नलोप] सूर्य। विष्णु। शिव। इन्द्र। अग्नि।

वृषायण—(पुं०) शिव। गौरैया।

वृषिन्—(पुं०) मयूर, मोर।

वृषी—(स्त्री०) दे० 'वृषी'।

वृष्ट—(वि०) [√वृष्+क्त] बरसा हुआ। वर्षा के रूप में गिरा हुआ।

वृष्टि—(स्त्री०) [√ वृष् + क्तिन्] वर्षा, मेघों से जल टपकना; 'आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः, मनु० ३.७६। वर्षा की तरह किसी चीज का बड़ी संख्या या परिमाण में गिरना। बौछार।—**काल**–(पुं०) वर्षा ऋतु।—**जीवन**—(पुं०) चातक, पपीहा। —**भू**—(पुं०) मेढक।—**संपात**—(पुं०) वर्षा का मूसलधार बरसना।

वृष्टिमत्—(वि०) [वृष्टि + मतुप्] बरसने वाला, वर्षणशील। (पुं०) बादल।

वृष्णि—(वि०) [√वृष् + नि] पाखण्डी। क्रोधी। (पुं०) बादल। मेढा। किरण। श्रीकृष्ण के एक पूर्वज का नाम। श्रीकृष्ण। इन्द्र। अग्नि।—**गर्भ**–(पुं०) श्रीकृष्ण की उपाधि।

वृष्य—(वि०) [√वृष् + क्यप्] बरसने वाला। वीर्य और बल को बढ़ाने वाला। कामोद्दीपक। (पुं०) उड़द की दाल। ऊख। ऋषभ नामक ओषधि। आँवला।

√वृह्, वृहत्, वृहतिका—दे० '√बृह्,' 'बृहत्', बृहतिका'।

वृहती—(स्त्री०) [√वृह् + अति—ङीष्] नारद की वीणा। छत्तीस की संख्या। चोगा, लबादा। वाणी। भटकटैया। कुण्ड(जैसे जल का)। छन्द विशेष।—**पति**–(पुं०) वृहस्पति की उपाधि।

वृहस्पति—दे० 'बृहस्पति'।

√वॄ—क्र्या० उभ० सक० चुनना, छाँटना। वृणाति—वृणीते, वरि (री) ष्यति—ते, अवारीत्—अवरि (री) ष्ट—अवूर्ष्ट। पर० सक० चुनना। भरण करना। वृणाति, वरि (री) ष्यति, अवारीत्।

√वे—भ्वा० उभ० सक० बुनना। लगाना, जमाना। सीना। बनाना। जड़ना। ओतप्रोत करना। वयति-ते, वास्यति-ते, अवासीत्।

वेकट—(पुं०) मस्खरा, विदूषक। जौहरी युवा पुरुष। माकुर मछली।

वेग—(पुं०) [√विज् + घञ्] उत्तेजना । गति, रफ्तार । उद्योग, उद्यम । प्रवाह, बहाव । किसी काम को करने की दृढ़ प्रतिज्ञा । बल, शक्ति । फैलाव (जैसे विष-का रक्त के साथ मिल कर सारे शरीर में फैल जाना । उतावली, जल्दबाजी । धनुष-बाण की लड़ाई । प्रेम, अनुराग । किसी आन्तरिक भाव का बाहर प्रकट होना । आनन्द, आह्लाद । शरीर में से मल-मूत्रादि के निकलने की प्रवृत्ति । वीर्य-पात । —**नाशन** –(पुं०) श्लेष्मा, कफ । —**वाहिन्**–(वि०) तेज, फुर्तीला ।—**सर**–(पुं०) खच्चर, अश्वतर ।

वेगिन्—(वि०) [स्त्री०—**वेगिनी**] [वेगः अस्ति अस्य, वेग+इनि] वेगयुक्त, तेज । उग्र । (पुं०) हरकारा । बाज पक्षी ।

वेगिनी—(स्त्री०) [वेगिन्+ङीप्] नदी ।

वेङ्कट—(पुं०) दक्षिण भारत का एक पर्वत वेंकटाचल ।

वेचा—(स्त्री०) [√विच् + अच्—टाप्] मजदूरी, पारिश्रमिक ।

वेड—(न०) [√विड्+अच्]चन्दन विशेष ।

वेडा—(स्त्री०) [वेड+टाप्] नाव, नौका ।

√वेण्, √वेन्—भ्वा० उभ० सक० जाना । जानना, पहचानना । सोचना, विचारना । लेना, ग्रहण करना । बाजा बजाना । वेण (न) ति-ते, वेणि (नि) ष्यति-ते, अवेणी (नी) त्—अवेणि(नि)ष्ट ।

वेण—(पुं०) [√वेण् + अच्] मनु के अनुसार एक प्राचीन वर्णसङ्कर जाति, जिसकी उत्पत्ति वैदेहक माता और अंबष्ठ पिता से मानी गयी है, गवैया जाति । सूर्यवंशी राजा पृथु के पिता का नाम ।

वेणा—(स्त्री०) [वेण+टाप्] कृष्णा नदी में गिरने वाली एक नदी का नाम ।

वेणि, वेणी—(स्त्री०) [√वेण् + इन् वा √वी+नि, पृषो० णत्व] [वेणि+ङीष्] केशों की चोटी, गुथी हुई चोटी । जल का प्रवाह, पानी का बहाव; 'जलवेणिरम्यां रेवां यदि प्रेक्षितुमस्ति कामः' र० ६.४३ । दो या अधिक नदियों का संगम । गङ्गा, यमुना और सरस्वती नदी का संगम । एक नदी का नाम ।— **बन्ध**–(पुं०) गुथी हुई चोटी ।—**वेधनी** – (स्त्री०) जोंक, जलौका ।—**वेधिनी**– (स्त्री०) कंघी । —**संहार** – (पुं०) चोटी बनाकर केशों को बांधने की क्रिया । नारायण भट्ट का बनाया संस्कृत का एक नाटक ।

वेणु—(पुं०) बांस । नरकुल, सरपत । बंसी, नफीरी ।—**ज**–(पुं०) बाँस का बीज ।—**ध्म**–(वि०)नफीरी या बंसी बजाने वाला । —**निस्रुति**– (पुं०) गन्ना, ऊख ।—**यव**–(पुं०) बाँस का बीज या चावल ।—**यष्टि**–(स्त्री०) बाँस की छड़ी ।—**वाद**, —**वादक**– (पुं०) बाँसुरी बजाने वाला व्यक्ति ।—**विदल**(न०) बाँस का फट्टा ।

वेणुक—(न०) [वेणु+कन्] वह अंकुश जिसमें बाँस की मूठ हो ।

वेणुन—(न०) [√वेण् + उनन्] काली मिर्च ।

वेतण्ड, वेतन्द—(पुं०) हाथी ।

वेतन—(न०) [√वी+तनन्] वह धन जो किसी को कोई काम करते रहने के बदले में दिया जाता है, तनखाह, आजीविका ।—**अदान** (**वेतनादान**), —**अपाकर्मन्** (**वेतनापाकर्मन्**)– (न०) **अपाक्रिया** (**वेतनापाक्रिया**)-(स्त्री०)वेतन न चुकाना । वेतन न चुकाने पर वेतन वसूल करने के लिये किया गया उद्योग विशेष ।—**जीविन्**—(वि०) वेतन पर निर्भर करने वाला ।

वेतस—(पुं०) [√ वे+असच्, तुडागम] बेंत । जंभीरी, बिजौरा नीबू । अग्नि ।

वेतसी—(स्त्री०) [वेतस+ङीष्] बेंत ।

वेतस्वत्—(वि०) [स्त्री०—**वेतस्वती**] [वेतस+ड्मतुप्, मस्य वः] वह स्थान जहां वेतों का बाहुल्य हो ।

वेताल—(पुं०) [√अज्+विच्, वी आदेश, √तल्+घञ्, कर्म० स०] एक भूतयोनि (जिसका शव पर अधिकार कहा जाता है)। शिव के गणों में से एक प्रधान गण । द्वार-पाल, दरवान ।

वेत्तृ—(वि०) [√विद् + तृच्] ज्ञाता, जानने वाला । (पुं०) ऋषि । विवाह में प्राप्त करने वाला, पति ।

वेत्र—(पुं०) [√वी+त्र] वेंत । द्वारपाल के हाथ की छड़ी; 'वामप्रकोष्ठार्पितहेमवेत्रः' कु० ३.४१ । **—आसन** (**वेत्रासन**)-(न०) वेंत का बना हुआ आसन ।**—धर**, **—धारक**-(पुं०) द्वारपाल । आसाधारी, छड़ीबरदार ।

वेत्रकीय—(वि०) [वेत्र+छ, कुक् आगम] वेंत का ।

वेत्रवती—(स्त्री०) [वेत्र + मतुप्, वत्व —ङीप्] स्त्री द्वारपाल । वेतवा नदी का नाम ।

वेत्रिन्—(पुं०) [वेत्र+इनि] द्वारपाल, दर-वान । चोबदार ।

√वेथ्—भ्वा० आत्म० सक० याचना करना, माँगना । वेथते, वेथिष्यते, अवेथिष्ट ।

√वेद्—क० पर० अक० स्वप्न देखना । धूर्तता करना । वेद्यति ।

वेद—(पुं०) [√विद्+घञ् वा अच्] ज्ञान । विशेषतः आध्यात्मिक विषय का सच्चा और वास्तविक ज्ञान । ऋक्, यजु, साम और अथर्ववेद । कुशों का मूठा । विष्णु का नामान्तर ।**—अङ्ग** (**वेदाङ्ग**)-(न०) वेदाङ्ग छः हैं यथाः— शिक्षा, छंदस्, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, कल्प ।**—अधिगम** (**वेदाधिगम**)-(पुं०) वेदों का अध्ययन । **—अध्यापक** (**वेदाध्यापक**)-(पुं०) वेदों का पढ़ाने वाला । **अन्त** (**वेदान्त**) (पुं०) उपनिषद् और आरण्यक आदि वेद के अन्तिम भाग जिनमें आत्मा, परमात्मा और जगत् आदि का विषय वर्णित है। छः दर्शनों में से प्रधान वेदान्त दर्शन जिसमें एक मात्र ब्रह्म की पारमार्थिक सत्ता स्वीकार की गई है। **वेदान्तिन्**-(पुं०) [वेदान्तः अस्ति अस्य, वेदान्त+इनि] वेदान्त दर्शन का अनुयायी या मानने वाला, ब्रह्मवादी। **—आदि** (**वेदादि**)-(न०),**—०वर्ण**-(पुं०),**—०बीज**-(न०)प्रणव, ओम् । **—उक्त** (**वेदोक्त**) -(वि०) वेद-विहित ।**—कौलेयक**-(पुं०) (पुं०) शिव जी ।**—गर्भ**-(पुं०) ब्रह्मा । वेदविद् ब्राह्मण ।**—ज्ञ**-(पुं०) ब्राह्मण जिसने वेद का अध्ययन किया हो। **—त्रय**-(न०),**—त्रयी**-(स्त्री०) ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का समुच्चय ।**—निन्दक**-(पुं०) नास्तिक ।**—निन्दा**-(स्त्री०) वेद की बुराई। **—पारग**-(पुं०) वेद-विद्या में निष्णात ब्राह्मण ।**—बाह्य**-(वि०) जिसका उल्लेख वेद में न हो, वेद-विरुद्ध ।**—मातृ**-(स्त्री०) गायत्रीमंत्र या ऋचा ।**—वचन**, **—वाक्य**-(न०)वैदिक मंत्र या ऋचा ।**—वदन**-(न०) व्याकरण ।**—वास**-(पुं०) ब्राह्मण ।**—विहित**-(वि०) वेदानुकूल ।**—व्यास**-(पुं०) कृष्ण-द्वैपायन जिन्होंने वेदों के विभाग किये ।**—संन्यास**-(पुं०) वैदिक कर्मकाण्ड का त्याग।

वेदन—(न०), **वेदना**-(स्त्री०) [√विद्+ल्युट्] [√विद्+युच्—टाप्] ज्ञान, अवगति। अनुभव । पीड़ा; 'अवेदनाज्ञं कुलिशक्षतानाम्' कु० १.२० । धन-दौलत, सम्पत्ति । विवाह । प्राप्ति । उपहार ।

वेदार—(पुं०) [वेद√ऋ+अण्] गिर-गिट ।

वेदि—(पुं०) [√विद्+इन्] पण्डित, विद्वान् । ऋषि । आचार्य । (स्त्री०) दे० 'वेदी' ।

वेदिका—(वि०) [वेदी+कन्—टाप्, ह्रस्व] वह स्थान या ऊँचा चबूतरा जो यज्ञ के लिये ठीक किया गया हो। बैठकी। चबूतरा जो आंगन के बीचोंबीच बना हो। लतामण्डप।

वेदित—(वि०) [√विद्+क्त] जो बतलाया गया हो, सूचित। देखा हुआ।

वेदितव्य—(वि०) [√विद्+तव्य] जानने योग्य।

वेदिन्—(वि०) [√विद्+णिनि] जानने वाला। विवाह करने वाला। (पुं०) ज्ञाता। शिक्षक विद्वान् ब्राह्मण की उपाधि।

वेदी—(स्त्री०) [वेदि+ङीष्] यज्ञकार्य के लिये साफ करके तैयार की हुई भूमि; 'मध्येन सा वेदिविलग्नमध्या' कु० १.३७। अँगूठी जिसमें नाम की मोहर हो। सरस्वती का नाम। भूखण्ड।—जा-(स्त्री०) द्रौपदी का नामान्तर।

वेद्य—(वि०) [√विद्+ण्यत्] ज्ञातव्य, जानने योग्य। कहने, बताने योग्य। प्राप्त करने योग्य। विवाह करने योग्य। स्तुत्य।

वेध—(पुं०) [√विध्+घञ्] बेधना, छेद करना। प्रवेश। घाव, छिद्र। खुदाई। गड्ढे की गहराई। समय का मान विशेष। ग्रहों का स्थान निश्चित करना। किसी ग्रह का दूसरे ग्रह के सामने पहुँचना। रसों का मिश्रण।

वेधक—(वि०) [√विध्+ण्वुल्] वेध या छेद करने वाला। (न०) धनिया। कपूर। चंदन। अमलवेंत। सेंधव नमक। बाल में लगा हुआ। धान। एक नरक।

वेधन—(न०) [√विध्+ल्युट्] छेदने की क्रिया। खुदाई। घाव करना। गहराई (खुदी हुई जगह की)।

वेधनिका—(स्त्री०) [वेधनी+कन्—टाप्, ह्रस्व] वह औजार जिससे मणि आदि में छेद किये जाते हैं।

वेन—(पुं०) पुराणवर्णित पृथु के पिता का नाम।

वेधनी—(स्त्री०) [वेधन+ङीप्] हाथी का कान छेदने का औजार। मणि आदि में छेद करने का औजार।

वेधस्—(पुं०) [वि√धा+असि, वेधादेश] सृष्टिकर्त्ता, ब्रह्मा। दक्ष आदि प्रजापति। शिव। विष्णु। सूर्य। अर्क, मदार। पण्डित।

वेधस—(न०) [वेधस्+अच्] हथेली का वह भाग जो अँगूठे की जड़ के पास होता है।

वेधित—(वि०) [वेध+इतच्] छेदा हुआ।

√वेप्—भ्वा० आत्म० सक० काँपना, थरथराना। वेपते, वेपिष्यते, अवेपिष्ट।

वेपथु—(पुं०) [√वेप्+अथुच्] कंपन, थरथरी।

वेपन—(न०) [√वेप्+ल्युट्] काँपना। वातरोग।

वेम, वेमन्—(पुं०), न०) [√वे+मन्] [√वे+मनिन्] करघा।

वेर—(न०) प०) [√अज्+रन् वी आदेश] शरीर। केसर। भाँटा।

वेरट—(न०) वेर का फल। (पुं०) नीच जाति का आदमी।

√वेल्—भ्वा० पर० अक० हिलना। चलना। वेलति, वेलिष्यति, अवेलीत्। चु० पर० सक० समय बताना। वेलयति।

वेल—(न०) [√वेल्+अच्] बाग, बगिया।

वेला—(स्त्री०) [√वेल्+अ—टाप्] समय। मौसम। अवसर। अवकाश। लहर। प्रवाह। समुद्रतट; 'वेलानिलाय प्रसृता भुजङ्गाः' र० १३.१२। सीमा। वाणी। रोग। सहज मृत्यु। मसूड़ा।—**कूल**-(न०) ताम्रलिप्त देश का नाम।—**मूल**-(न०) समुद्रतट।—**वन**-(न०) समुद्रतटवर्ती वन।

√वेल्ल्—भ्वा० पर० अक० काँपना। चलना। वेल्लति, वेल्लिष्यति, अवेल्लीत्।

वेल्ल—(पुं०), **वेल्लन**-(न०) [√वेल्ल्+घञ्] [√वेल्ल्+ल्युट्] हिलना, कंपन। लुढ़कन। लोटना।

वेल्लहल—(पुं०) [वेल्ल √ह्लल्+अच्, पृषो० साधुः] लंपट, दुराचारी।

वेल्लि—(स्त्री०) [√वेल्ल्+इन्] वेल, लता।

वेल्लित—(वि०) [√वेल्ल्+क्त] कंपित। टेढ़ा-मेढ़ा। लोटा हुआ। (न०) गमन। हिलना। लोटना।

√वेवी—अ० आत्म० सक० जाना। प्राप्त करना। फेंकना। खाना। इच्छा करना। अक० गर्भवती होना। ब्याह होना। वेवीते, वेविष्यते, अवेविष्ट।

वेश—(पुं०) [√विश्+घञ्] प्रवेश-द्वार। भीतर जाने का रास्ता। खेमा। घर। वेश्यालय। बाना। पोशाक, परिच्छद।—**दान**-(न०)सूरजमुखी का फूल।—**धारिन्**-(वि०) कपटरूपधारी।—**नारी**,—**वनिता**-(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**वास**-(पुं०) वेश्या का घर; 'तरुणजनसहायश्चित्यतां वेशवासः' मृ० १.३१।

वेशक—(पुं०) [वेश+कन्] घर, मकान।

वेशन—(न०) [√विश्+ल्युट्] प्रवेश-द्वार। घर।

वेशन्त—(पुं०) [√विश्+झच्] क्षुद्र सरोवर। छोटा तालाब। अग्नि।

वेशर—(पुं०) [विश√रा+क] खच्चर, अश्वतर।

वेश्मन्—(न०) [√विश्+मनिन्] घर, भवन।—**कलिङ्ग**-(पुं०) चटक पक्षी, गौरैया।—**नकुल**-(पुं०) छछूंदर।—**भू**-(स्त्री०) वह स्थान जो मकान बनाने के लिये उपयुक्त हो।

वेश्य—(न०) [वेश+यत्] रंडी-खाना।

वेश्या—(स्त्री०) [वेशम् अर्हति वा वेशेन दीव्यति आचरति वा वेशेन पण्ययोगेन जीवति, वेश+यत्—टाप्] रंडी, गणिका, पतुरिया। ब्रह्मवैवर्तपुराण के मत से पाँच-छः पुरुषों से संगम करने वाली स्त्री वेश्या कहलाती है—'पतिव्रता चैकपत्नी द्वितीये कुलटा स्मृता। तृतीये वृषली ज्ञेया चतुर्थे पुंश्चली मता॥ वेश्या तु पञ्चमे षष्ठे युङ्गी च सप्तमेऽष्टमे। तत ऊर्ध्वं महावेश्या साऽस्पृश्या सर्वजातिषु'॥ —**आचार्य** (वेश्याचार्य)-(पुं०) वह पुरुष जो वेश्याओं को रखता हो औरपर-पुरुषों से उन्हें मिलाता हो।—**आश्रय** (वेश्याश्रय)-(पुं०) रंडियों के रहने की जगह, रंडियों की आबादी।—**गमन**-(न०) रंडीबाजी।—**गृह**-(न०) चकला।—**जन**-(पुं०) रंडी।—**पण**-(पुं०) भोग के लिये रंडी को दी जाने वाली रकम।

वेश्वर—(पुं०) खच्चर, अश्वतर।

वेषण—(न०) [√विष्+ल्युट्] परिचर्या, सेवा। (पुं०) [√विष्+ल्युट्] कास-मर्द, कसौंदी नामक पौधा।

√वेष्ट्—भ्वा० आत्म० सक० घेरना। लपेटना। उमेंठना, मरोड़ना। पोशाक धारण करना। वेष्टते, वेष्टिष्यते, अवेष्टिष्ट।

वेष्ट—(पुं०) [√वेष्ट्+घञ्] घिराव। लपेटन। घेरा, हाता। पगड़ी। गोंद, राल। तारपीन।—**वंश**-(पुं०) एक प्रकार का बाँस।—**सार**-(पुं०) तारपीन।

वेष्टक—(न०) [√वेष्ट+ण्वुल्] पगड़ी। चादर। गोंद। तारपीन। (पुं०) हाता, घेरा। सफेद कुम्हड़ा। छाल। (वि०) घेरने या लपेटने वाला।

वेष्टन—(न०) [√वेष्ट्+ल्युट्] घेरना। लपेटना। उमेंठना, मरोड़ना। बंधन। पगड़ी, साफा; 'शिरसा वेष्टनशोभिना' र० ८.१२। घेरा, हाता। कमरबंद, पटका। पट्टी। गुग्गुल। कान का छेद। नृत्य का भाव-विशेष।

वेष्टनक—(पुं०) [वेष्टन√कै+क] रति-बंध की एक क्रिया।

वेष्टित—(वि०) [√वेष्ट्+क्त] चारों ओर से घिरा हुआ। लपेटा हुआ। रोका हुआ, अवरुद्ध।

वेष्प—(पुं०) [√विप्+प] जल।

वेष्य—(पुं०) जल। श्रम। कर्म। पट्टी। पगड़ी।

वेसर—(पुं०) [√वेस्+अरन्] खच्चर, अश्वतर; 'प्रणोदितं वेसरयुग्यमध्वनि' शि. १२.१९।

वेसवार, वेशवार—(पुं०) [वेस√वृ+अण्] जीरा, मिर्च, लौंग, राई, काली मिर्च, सोंठ आदि मसालों का चूर्ण।

√वेह्—भ्वा० आत्म० अक० प्रयत्न करना। वेहते, वेहिष्यते, अवेहिष्ट।

वेहत्—(स्त्री०) [विशेषेण हन्ति गर्भम्, वि √हन्+अति] गर्भ नष्ट कर देने वाली या बाँझ गौ।

वेहार—(पुं०) [=विहार, पृषो० साधुः] विहार प्रदेश का नाम।

√वै—भ्वा० पर० सक० सुखाना। अक० सूख जाना। थक जाना। वायति, वास्यति, अवासीत्।

वै—(अव्य०) [√वा+डै] अव्यय विशेष जिसका प्रयोग निश्चय या स्वीकारोक्ति के अर्थ में किया जाता है। किन्तु अधिकांश प्रयोग इसका पद पूर्ण करने के लिये ही होता है। यथा—"आपो वै नरसूनवः।" —मनुः। कभी-कभी यह सम्बोधन और अनुनय द्योतक भी होता है।

वैंशतिक—(वि०) [स्त्री०—वैंशतिकी] [विंशत्या क्रीतः, विंशति+ठक्] बीस में खरीदा हुआ।

वैकक्ष—(न०) [विशेषेण कक्षति, वि√कक्ष्+अण्] माला जो जनेऊ की तरह पहनी गयी हो। उत्तरीय वस्त्र, लवादा, चोगा।

वैकक्षक, वैकक्षिक—(न०) [वैकक्ष+कन्] [वैकक्ष+ठन्] दे० 'वैकक्ष'।

वैकटिक—(पुं०) जौहरी, रत्नपारखी।

वैकर्तन—(पुं०) [विकर्तनस्यापत्यम्, विकर्तन+अण्] सूर्य के पुत्र। कर्ण का नाम। सुग्रीव।

वैकल्प—(न०) [विकल्प+अण्] विकल्प का भाव। असमञ्जसता। अनिश्चयता।

वैकल्पिक—(वि०) [स्त्री०—वैकल्पिकी] [विकल्पेन प्राप्तः तत्र भवो वा, विकल्प+ठक्] ऐच्छिक। सन्देहात्मक, अनिश्चित।

वैकल्य—(न०) [विकल+ष्यञ्] न्यूनता, कमी, अपूर्णता। अङ्गहीनता। लँगड़ा होने का भाव। अयोग्यता। घबड़ाहट, विकलता। अभाव, अनस्तित्व।

वैकारिक—(वि०) [स्त्री०—वैकारिकी] [विकार+ठक्] विकार सम्बन्धी। बिगड़ा हुआ। परिवर्तनशील। संशोधनात्मक।

वैकाल—(पुं०) [विकाल+अण्] दोपहर के बाद का समय, अपराह्ण। सायंकाल।

वैकालिक, वैकालीन—(वि०) [स्त्री०—वैकालिकी, वैकालीनी] [विकाल+ठक्] [विकाल+ख] सायंकाल सम्बन्धी या शाम को होने वाला।

वैकुण्ठ—(पुं०) [विकुण्ठायां मायायाम् भवः, विकुण्ठा+अण्] विष्णु का एक नाम। इन्द्र का एक नाम। तुलसी। वैकुण्ठ लोक में स्थित देवगण। गरुड़। (न०) विष्णुलोक। अवरक। —**चतुर्दशी**—(स्त्री०) कार्त्तिक शुक्ला १४ शी।—**लोक**-(पुं०) विष्णुलोक।

वैकृत—(पुं०) [स्त्री—वैकृती] [विकृत+अण्] विकार-ग्रस्त। परिवर्तित। संशोधित। (न०) परिवर्तन, अदल-बदल। संशोधन। घृणा। परिस्थिति अथवा सूरत-शक्ल में अदल-बदल। अशुभ-सूचक अशकुन; 'तत्प्रतीपपवनादि वैकृतं प्रेक्ष्य' र० ११.६२। वीभत्स रस। वीभत्स रस का

आलम्बन ।—**विवर्त**-(पुं०) दुर्दशा । क्लेश ।

वैकृतिक—(वि०) [स्त्री०—**वैकृतिकी**] [विकृति+ठक्] परिवर्तित । संशोधित । विकृति सम्बन्धी ।

वैकृत्य—(न०) [विकृत+ष्यञ्] परिवर्तन । रद्दोबदल । दुर्दशा । घृणा, अरुचि । उद्वेग । बीभत्स रस ।

वैक्रान्त—(पुं०) [विक्रान्त्या दीव्यति, विक्रान्ति+अण्] एक प्रकार का रत्न, चुन्नी ।

वैक्लव, वैक्लव्य—(न०) [विक्लव+अण्] विक्लव+ष्यञ्] गड़बड़ी । विकलता, घबड़ाहट । हड़बड़ी । मानसिक अस्थिरता; 'वैक्लवं मा स्म गमः पार्थ!' भग० । संताप । पीड़ा ।

वैखरी—(स्त्री०) [विशेषेण खं राति,√रा +क+अण् (स्वार्थे)—ङीप्] वाक्शक्ति । वाग्देवी । कण्ठ से उत्पन्न होने वाला स्वर का एक विशिष्ट प्रकार, ऐसा स्वर उच्च और गंभीर होता है और स्पष्ट सुनाई पड़ता है ।

वैखानस—(वि०) [स्त्री०—**वैखानसी**] [वैखानसस्य इदम्, वैखानस+अण्] वानप्रस्थ संबंधी । (पुं०) [वि√खन्+ड √अन्+असु, कर्म० स०, विखानस्+अण् अथवा विखानसं ब्रह्माणं वेत्ति तपसा, विखानस+अण्] वानप्रस्थ वनचारी ब्रह्मचारी विशेष ।

वैगुण्य—(न०) [विगुण+ष्यञ्] गुण का अभाव, विगुणता । ऐब, अवगुण, त्रुटि । वैषम्य । विरुद्धता । नीचता । क्षुद्रता । अनिपुणता ।

वैचक्षण्य—(न०) [विचक्षण+ष्यञ्] चातुरी, निपुणता, योग्यता ।

वैचित्य—(न०) [विचित+ष्यञ्] मानसिक विकलता, शोक । अन्यमनस्कता । संज्ञाहीनता ।

वैचित्र्य—(न०) [विचित्र+ष्यञ्] विचित्रता, विलक्षणता । विभिन्नता । आश्चर्य । नैराश्य । सुंदरता ।

वैजनन—(न०) [विजायतेऽस्मिन्, वि √जन्+ल्युट्, विजनन+अण् (स्वार्थे)] गर्भ का अन्तिम मास ।

वैजयन्त—(पुं०) [वैजयन्ती+अण्] इन्द्र का राजभवन । इन्द्र का झंडा । पताका, झंडा । घर । अग्निमंथवृक्ष, अरणी ।

वैजयन्तिक—(पुं०) [वैजयन्ती+ठन् वा ठक्] झंडा उठाने वाला ।

वैजयन्तिका—(स्त्री०) [वैजयन्ती+कन् —टाप्, ह्रस्व ।] झंडा, पताका । मोतियों का हार । जयन्ती वृक्ष । अरणी ।

वैजयन्ती—(स्त्री०) [वि√जि+झच्, विजयन्त+अण्—ङीप्] झंडा, पताका । चिह्न, बिल्ला । हार । घुटनों तक लटकने वाली पांच रंगों की एक माला, भगवान् विष्णु की माला । एक शब्दकोश का नाम ।

वैजात्य—(न०) [विजाति+ष्य] विजातीयता । विजातीय होने का भाव । वर्णभेद । विलक्षणता । जाति-बहिष्कार । बदचलनी, लम्पटता ।

वैजिक—दे० 'बैजिक' ।

वैज्ञानिक—(वि०) [स्त्री०—**वैज्ञानिकी**] [विज्ञान+ठक्] विज्ञान संबंधी । विज्ञानवेत्ता । चतुर, निपुण, योग्य ।

वैडाल—दे० 'बैडाल' ।

वैण—(पुं०) [वेणु + अण्, उकारस्य लोपः] बँसोड़, बाँस की चीजें बनाने वाला ।

वैणव—(वि०) [स्त्री०—**वैणवी**— [वेणु+अण्] बाँस से उत्पन्न या बाँस का बना हुआ । (न०) बाँस का फल या बीज । (पुं०) बाँस का काम करने वाला, बँसोड़ । बाँस का वह डंडा जो यज्ञोपवीत के समय धारण किया जाता है । बाँसुरी ।

वैणविक—(पुं०) [वैणव+ठक्] वंशी बजाने वाला।

वैणविन्—(पुं०) [वैणव+इनि] शिव जी का नाम।

वैणवी—(स्त्री०) [वैणव+ङीप्] वंश-लोचन।

वैणिक—(पुं०) [वीणा+ठक्] वीणा बजाने वाला।

वैणुक—(न०) [वेणु√कै+क, वेणुक+अण्] हाथी का अंकुश। (पुं०) वंशी बजाने वाला।

वैतंसिक—(पुं०) [वितंस+ठक्] बहेलिया। मांसविक्रेता।

वैतण्डिक—(वि०) [वितण्डा+ठक्] वितंडावादी, व्यर्थ का झगड़ा या बहस करने वाला।

वैतथ्य—(न०) [वितथ+ष्यञ्] विफलता। झूठापन।

वैतनिक—(वि०) [स्त्री०—**वैतनिकी**] [वेतन+ठक्] वेतनभोगी, वेतन लेकर काम करने वाला। (पुं०) मजदूर। वेतन भोगी। कर्मचारी।

वैतरणि, वैतरणी—(स्त्री०) [वितरणेन दानेन लङ्घ्यते, वितरण+अण्—ङीप्, पक्षे पृषो० ह्रस्वः] यमद्वार या नरकद्वार पर स्थित एक नदी का नाम। कलिङ्गदेशस्थ एक नदी का नाम।

वैतस—(वि०) [स्त्री०—**वैतसी**] [वेतस अण्] वेंत सम्बन्धी। वेंत जैसा (बलवान् शत्रु के सामने नवने वाला। अतएव 'वैतसी वृत्ति')।

वैतान—(वि०) [स्त्री०—**वैतानी**] [वितान+अण्] यज्ञीय; 'वैतानास्त्वां वह्नयः पावय तु' श० ४.७। पवित्र। (न०) यज्ञीय विधान। यज्ञीय बलिदान।

वैतानिक—(वि०) [स्त्री०—**वैतानिकी**] [वितान+ठक्] दे० 'वैतान'।

वैतालिक—(पुं०) [विविधेन तालेन चरति, विताल+ठक्] वंदीजन, भाट। मदारी, ऐन्द्रजालिक। [वेताल+ठक्] वेताल का उपासक, वेताल को सिद्ध करने वाला।

वैत्रक—(वि०) [स्त्री०—**वैत्रकी**] [वेत्र+वुञ्] वेंतदार।

वैद—(पुं०) [वेद+अण्] विद्वज्जन, पंडित जन। [विद्+अण्] विद ऋषि के वंशज।

वैदग्ध—(न०), **वैदग्धी** (स्त्री०), **वैदग्ध्य** (न०)—[विदग्ध+अण्] [वैदग्ध+ङीप्] [विदग्ध+ष्यञ्] निपुणता, पटुता। हाथ की सफाई। सौन्दर्य; 'कालिन्दी-जलजनितश्रियः श्रयन्ते वैदग्धीमिह सरितः सुरापगायाः' शि० ४.२६। हाजिरजवाबी, प्रत्युत्पन्नमतित्व। धूर्तता। रसिकता।

वैदर्भ—(पुं०) [विदर्भ+अण्] विदर्भ देश का राजा। दमयंती के पिता, भीम। रुक्मिणी के पिता भीष्मक। दन्तशूल रोग जिसमें मसूड़े फूल जाते हैं और उनमें पीड़ा होती है। वाक्चातुर्य।

वैदर्भी—(स्त्री०) [वैदर्भ+ङीप्] दमयंती का नाम। रुक्मिणी का नाम। काव्य की एक शैली जिसमें माधुर्य-व्यंजक वर्णों के द्वारा मधुर रचना की जाती है। साहित्य-दर्पणकार ने इसकी परिभाषा यह दी है:—

"माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णै रचना ललितात्मिका। अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते॥"

वैदल—(वि०) [स्त्री०—**वैदली**] [विदल+अण्] बाँस के फट्टे या वेंत का बना हुआ। (पुं०) एक तरह की पीठी। दाल का अनाज, जैसे उर्द, मूँग, अरहर आदि। कोई भी शाक जिसमें छीमी हों; जैसे रोंसा, बन-छिमियां, सेंम, मटर आदि। (न०) भिक्षुकों का मिट्टी आदि का पात्र। बाँस या वेंत की बनी डलिया या आसन।

वैदिक—(वि०) [स्त्री०—**वैदिकी**] [वेद +ठक्] वेद से निकला हुआ या वेदोक्त। (पुं०) वेदज्ञ ब्राह्मण।

वैदिकपाश—(पुं०) [कुत्सितो वैदिक:; वैदिक+पाशप्] वेद का अधूरा या वहुत थोड़ा ज्ञान रखने वाला व्यक्ति।

वैदुषी—(स्त्री०), **वैदुष्य**-(न०) [विद्वस् + अण्—ङीप्] [विद्वस्+ष्यञ्] पाण्डित्य, विद्वत्ता।

वैदूर्य—(वि०) [स्त्री०—**वैदूर्या**] [विदूर +ञ्य] विदूर से लाया हुआ या उत्पन्न। (न०) लहसुनिया रत्न।

वैदेशिक—(वि०) [स्त्री०—**वैदेशिकी**] [विदेश+ठक्] अन्य देश का, विदेश का। (पुं०) दूसरे देश का व्यक्ति, विदेशी।

वैदेश्य—(न०) [विदेश+ष्यञ्] विदेशी होने का भाव, विदेशीपन। (वि०) विदेशीय।

वैदेह—(पुं०) [विदेह+अण्] विदेहराज। विदेहवासी। वणिक्, व्यापारी। वैश्य-पुत्र जो ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो।

वैदेहक—(पुं०) [वैदेह+कन्] व्यापारी, सौदागर।

वैदेहिक—(पुं०) [विदेह+ठक्] व्यापारी, सौदागर।

वैदेही—(स्त्री०) [विदेहस्य अपत्यम् स्त्री, विदेह+अण—ङीप्] सीता का नाम; 'वैदेहिबन्धोर्हृदयं विदद्रे' र० १४.३३।

वैद्य—(वि०) [स्त्री०—**वैद्यी**] [वेद+ ष्य] वेद संबंधी। आयुर्वेद संबंधी। (पुं०) [विद्यां वेत्ति, विद्या+अण्] विद्वान् व्यक्ति। चिकित्सक; 'वैद्यानामातुर: श्रेयान्' सुभा०। वैद्य जाति का आदमी) यह वर्ण-सङ्कर जाति का होता है। इसकी उत्पत्ति वैश्या माता और ब्राह्मण पिता से बतलायी जाती है)।—**क्रिया**-(स्त्री०) चिकित्सा कर्म। —**नाथ**-(पुं०) धन्वन्तरि। शिव।

वैद्यक—(न०) [वैद्यम् चिकित्सकम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थ:, वैद्य+कन्] चिकित्सा-शास्त्र। आयुर्वेद। (पुं०) [वैद्य एव इति स्वार्थे कन्] चिकित्सक।

वैद्युत—(वि०) [स्त्री०—**वैद्युती**] [विद्युत् +अण्] विजली संवंधी। विजली से उत्पन्न।—**अग्नि** (वैद्युताग्नि),—**अनल** (वैद्युतानल),—**वह्नि**-(पुं०) विजली की आग।

वैध—(वि०) [स्त्री०—**वैधी**] [विधिना बोधित:, विधि+अण्] जो विधि के अनुसार हो, कायदे या कानून के मुताविक।

वैधिक—(वि०) [स्त्री०—**वैधिकी**] [विधि+ठक्] दे० 'वैध'।

वैधर्म्य—(न०) [विरुद्धो धर्मो यस्य, तस्य भाव:, विधर्म+ष्यञ्] धर्म या गुण की भिन्नता असमानता, अंतर। नास्तिकता। अवैधता।

वैधवेय—(पुं०) [विधवा+ष्यञ्] विधवा का पुत्र।

वैधव्य—(न०) [विधवा+ष्यञ्] विधवापन।

वैधुर्य—(न०) [विधुर+ष्यञ्] विधुरता। वियोग। नैराश्य। कातरता। भ्रम। कंपित होने का भाव।

वैधेय—(वि०) [स्त्री०—**वैधेयी**] [विधि +ढक्] विधि संबंधी। नियमानुकूल। विहित। [विधिं पद्धतिमेव अनुसृत्य व्यवहरति युक्तायुक्तविवेकशून्यत्वात्, विधि+ ढक्] मूर्ख, विमूढ। (पुं०) मूर्ख आदमी। याज्ञवल्क्य का एक शिष्य। नियमानुकूल।

वैनतेय—(पुं०) [विनताया: अपत्यम्, विनता+ढक्] गरुड़ का नाम। अरुण का नाम।

वैनयिक—(वि०) [स्त्री०—**वैनयिकी**] [विनय+ठक्] विनय सम्बन्धी। शिष्टाचार का व्यवहार करवाने वाला। शास्त्राभ्यास में निरत रहने वाला। (पुं०) प्राचीन काल का एक सामरिक रथ।

वैनायक—(वि० [स्त्री०—**वैनायकी**] [विनायक+अण्] गणेश का।

वैनायिक—(पुं०) [विनायं खण्डनम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, विनाय+ठक्] बौद्ध दर्शन विशेष के सिद्धान्त। उक्त दर्शन का अनुयायी।

वैनाशिक—(वि०) [विनाश+ठक्] विनाश संबंधी। नश्वर। (पुं०) गुलाम, दास। मकड़ा। ज्योतिषी। बौद्ध सिद्धान्त। बौद्ध सिद्धान्तानुयायी।

वैनीतक—(न०) [विशेषेण नीतं, तेन कायति इति विनीत√कै+क स्वार्थे, विनीतक+अण्] एक तरह की पालकी जिसे ढोने के लिए कई कहार होते हैं और बारी-बारी से बदलते रहते हैं।

वैन्य—(पुं०) [वेन+यञ्] वेन-पुत्र, पृथु।

वैपरीत्य—(न०) [विपरीत+ष्यञ्] विपरीत होने का भाव। असंगति।

वैपुल्य—(न०) [विपुल+ष्यञ्] विस्तार, विशालता। बाहुल्य, अधिकता।

वैफल्य—(न०) [विफल+ष्यञ्] विफल होने का भाव। निरर्थकता।

वैबोधिक—(पुं०) [विबोधकर्मणि नियुक्तः, विबोध+ठक्] पहरेदार, चौकीदार। विशेष कर वह जो सोने वालों को बीता हुआ समय बतला कर जगावे। स्तुतिपाठ द्वारा राजा को जगाने वाला व्यक्ति; 'वैबोधिकध्वनिविभावितपश्चिमार्धा' कि० ९.७४।

वैभव—(न०) [विभोः भावः, विभु+अण्] ऐश्वर्य। महत्त्व, बड़प्पन। गौरवान्वित पद। सामर्थ्य, शक्ति।

वैभाषिक—(वि०) [स्त्री०—**वैभाषिकी**] [विभाषा+ठक्] ऐच्छिक, वैकल्पिक। (पुं०) बौद्धों के एक सम्प्रदाय का अनुयायी।

वैभ्र—(न०) वैकुण्ठ, विष्णुलोक।

वैभ्राज—(न०) [विभ्राज्+अण्] स्वर्गीय उपवन या बाग।

वैमत्य—(न०) [विमत+ष्यञ्] मतभेद, अनैक्य। घृणा, अरुचि।

वैमनस्य—(न०) [विमनस्+ष्यञ्] विकलता। उदासी। बीमारी। वैर।

वैमात्र, वैमात्रेय—(पुं०) [विमातृ + +अण्] [विमातृ+ढक्] सौतेली माता का पुत्र।

वैमात्रा, वैमात्री, वैमात्रेयी—(स्त्री०) [वैमात्र) +टाप्] [वैमात्र+ङीप्] [वैमात्रेय+ङीप्] सौतेली माता की लड़की।

वैमानिक—(वि०) [विमान+ठक्] देवयान में सवार हो अन्तरिक्ष में विहार करने वाला। (पुं०) आकाशचारी गुब्बारे या व्योमयान में बैठ कर उड़ने वाला मनुष्य।

वैमुख्य—(न०) [विमुख+ष्यञ्] विमुखता, मुंह फेरना। घृणा, अरुचि। पलायन, भागना।

वैमेय—(पुं०) [वि√मि+यत्, विमेय+अण्] अदल-बदल, एक वस्तु के बदले दूसरी वस्तु लेना, विनिमय।

वैयग्र, वैयग्र्य—(न०) [व्यग्र + अण्] [व्यग्र+ष्यञ्] विकलता, घबड़ाहट। किसी विषय में लीनता या एकाग्रता।

वैयर्थ्य—(न०) [व्यर्थ+ष्यञ्] व्यर्थता, विफलता।

वैयधिकरण्य—(न०) [व्यधिकरण + ष्यञ्] भिन्न-भिन्न सम्बन्धों या अवस्थितियों में होने की दशा।

वैयाकरण —(पुं०) [स्त्री०—**वैयाकरणी**] [व्याकरणम् अधीते वेत्ति वा, व्याकरण+अण्, यकारात् पूर्वम् ऐच्] व्याकरण का पण्डित। (वि०) [व्याकरणस्य इदम् इत्यर्थे अण्] व्याकरण संबंधी।

वैयाकरणपाश—(वि०) [वैयाकरण + पाशप्] जिसे व्याकरण अच्छी तरह न आता हो।

वैयाघ्र—(वि०) [स्त्री०—**वैयाघ्री**] [व्याघ्र +अण्] चीते की तरह का। (पुं०) [व्याघ्रस्य विकारः, व्याघ्र+अण्, ततः वैयाघ्रेण चर्मणा परिवृतो रथः, वैयाघ्र +अण्] चीते के चर्म से आच्छादित गाड़ी।

वैयात्य—(न०) [वियात+ष्यञ्] धृष्टता। लज्जा या विनय का अभाव। उद्दण्डता, औद्धत्य।

वैयासकि—(पुं०) [व्यासस्य अपत्यम्, व्यास+इञ्, अकङ् आदेश, यकारात् पूर्वम् ऐच्] व्यासपुत्र।

वैर—(न०) [वीरस्य कर्म भावो वा, वीर +अण्] शत्रुता, विरोध। प्रतिहिंसा, बदला। वीरता।—**आतङ्क** (**वैरातङ्क**) (पुं०) अर्जुन का पेड़।

वैरक्त, वैरक्त्य—(न०) [विरक्त+अण्] [विरक्त+ष्यञ्] विरक्ति, वैराग्य। वासना-शून्यता। अरुचि, घृणा।

वैरङ्गिक—(पुं०) [विरङ्गम् नित्यम् अर्हति, विरङ्ग+ ठञ्] जितेन्द्रिय जन। संन्यासी।

वैरल्य—(न०) [विरल+ष्यञ्] विरलता। ढीलापन। सूक्ष्मता।

वैरस्य—(न०) [विरस+ष्यञ्] विरसता। अनिच्छा।

वैराग—(न०) [विराग+अण्] दे० 'वैराग्य'।

वैराग्य—(न०) [विराग+ष्यञ्] सांसारिक पदार्थों में अनासक्ति अथवा उनसे विरक्ति। अप्रसन्नता। घृणा, अरुचि। रंज, शोक।

वैराज—(वि०) [स्त्री०—**वैराजी**] [विराज्+अण्] ब्रह्मा संबंधी। (पुं०) परमात्मा। एक मनु। २७वें कल्प का नाम। एक पितृगण।

वैराट—(वि०) [स्त्री०—**वैराटी**] [विराट +अण्] विराट (मत्स्य-नरेश) संबंधी। (पुं०) इन्द्रगोप नामक कीट, वीरबहुटी।

वैरिन्—(वि०) [वैर+इनि] विरोधात्मक। (पुं०) शत्रु; 'शौर्ये वैरिणि वज्रमाशु निपततु' भर्तृ० २.३९। योद्धा।

वैरूप्य—(न०) [विरूप+ष्यञ्] कुरूपता। रूपों की विभिन्नता।

वैरोचन, वैरोचनि—(पुं०) [विरोचनस्यापत्यम्, विरोचन+अण्] ०विरोचन+इञ्] राजा बलि। एक ध्यानी बुद्ध। एक सिद्ध गण। सूर्य के पुत्र। अग्नि के पुत्र।

वैरोचि—(पुं०) [विरोच+इञ्] बलि का पुत्र बाण।

वैलक्षण्य—(न०) [विलक्षण+ष्यञ्] विचित्रता। विरोध। विभिन्नता।

वैलक्ष्य—(न०) [विलक्ष+ष्यञ्] गड़बड़ी। अस्वाभाविकता। लज्जा। वैपरीत्य।

वैलोम्य—(न०) [विलोम+ष्यञ्] वैपरीत्य, उल्टापन।

वैवधिक—(पुं०) [विवध+ठक्] फेरीवाला, घूम-घूम कर माल बेचने वाला। बहँगी उठाने वाला।

वैवर्ण्य—(न०) [विवर्ण+ष्यञ्] रंग बदलौअल, विवर्णता। भिन्नता। जातिभ्रंशत्व।

वैवस्वत—(पुं०) [विवस्वतोऽपत्यम्, विवस्वत्+अण्] सातवें मनु का नाम; 'वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम्' र० १.११ आजकल का मन्वन्तर इन्हीं मनु का माना जाता है। यमराज। शनिग्रह। (न०) सातवां मन्वन्तर।

वैवस्वती—(स्त्री०) [**वैवस्वत**—ङीप्] दक्षिण दिशा। यमुना नदी का नाम।

वैवाहिक—(वि०) [स्त्री—**वैवाहिकी**] [विवाह+ठञ्] विवाह सम्बन्धी। (पुं०, न०) विवाह, शादी। (पुं०) वधू या वर का श्वशुर, समधी।

वैशद्य—(न०) [विशद+ष्यञ्] स्वच्छता, निर्मलता। स्पष्टता। उज्ज्वलता। स्वस्थता। शान्ति (मन की)।

वैशस—(न०) [विशस + अण्] वध; 'विधिना कृतमर्द्धवैशसं ननु मां कामवधे विमुञ्चता' कु० ४.३१। युद्ध। उत्पीड़न। कष्ट। संकट, नरक।

वैशस्त्र—(न०) [विशस्त्र + अण्] शस्त्र-हीनता। [विशसितुः धर्म्यम्, विशसितृ + अञ्, इकारस्य लोपः] अधिकार। शासन, हुकूमत।

वैशाख—(न०) [विशाख +अण्] शिकार करने के समय का एक पैंतरा। (पुं०) [वैशाखी पौर्णमासी अस्ति अस्मिन्, वैशाखी +अण्] चैत्र के बाद पड़ने वाले मास का नाम। [विशाखा प्रयोजनम् अस्य, विशाखा +अण्] मन्थन दण्ड, मथानी।

वैशाखी—(स्त्री०) [विशाखया युक्ता पौर्णमासी, विशाखा + अण्—ङीप्] वैशाख मास की पूर्णिमा।

वैशिक—(पुं०) [वेशेन जीवति, वेश+ठक्] साहित्य में तीन प्रकार के नायकों में से एक, जो वेश्याओं के साथ भोग-विलास करता हो, वेश्यागामी पुरुष।

वैशिष्ट्य—(न०) [विशिष्ट + ष्यञ्] विशेष धर्म से युक्त होना, विशेषता, अंतर। विलक्षणता, विशिष्ट-लक्षण-संपन्नता।

वैशेषिक—(न०) [विशेषं पदार्थभेदम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, विशेष + ठक्] कणाद-प्रवर्तित एक दर्शन जिसमें तत्त्वों का विवेचन किया गया है। (पुं०) [वैशेषिकम् अधीते वेत्ति वा, वैशेषिक+अण्] वह जो वैशेषिक दर्शन जानता हो, औलूक्य। (वि०) [विशेष + ठक्] (स्वार्थे] विशेषतायुक्त, असाधारण।

वैशेष्य—(न०) [विशेष+ष्यञ्] विशेषता। प्रधानता, मुख्यता।

वैश्य—(पुं०) [√विश् + क्विप्+ष्यञ्] द्विजातियों में तृतीय वर्ण का मनुष्य।—कर्मन्—(न०),—वृत्ति—(स्त्री०) वैश्य वर्ण के कर्म—कृषि, वाणिज्य आदि।

वैश्रवण—(पुं०) [विश्रवणस्यापत्यम्, विश्रवण+अण्] कुबेर का नाम। रावण का नाम।—**आलय** (**वैश्रवणालय**),—**आवास** (**वैश्रवणावास**)—(पुं०) कुबेर के रहने का स्थान। वट-वृक्ष।—**उदय** (**वैश्रवणोदय**)—(पुं०) बरगद का वृक्ष।

वैश्वदेव—(वि०) [स्त्री०—**वैश्वदेवी**] [विश्वदेव + अण्] विश्वेदेव सम्बन्धी। (न०) विश्वेदेव की बलि या नैवेद्य, भोजन करने के पूर्व सब देवताओं के उद्देश्य से अग्नि में दी हुई आहुति।

वैश्वानर—(पुं०) [विश्वानर + अण्] अग्नि की उपाधि। वह अग्नि जो अन्न पचाती है; 'अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः' भग० १५.१४। वेदान्त में चेतन-शक्ति। परमात्मा। चित्रक वृक्ष।

वैश्वासिक—(वि०) [स्त्री०—**वैश्वासिकी**] [विश्वास + ठक्] विश्वसनीय, विश्वस्त, इतमीनानी।

वैषम्य—(न०) [विषम+ष्यञ्] असमानता। औद्धत्य, उद्दण्डता। अन्याय। कठिनाई, मुसीबत। एकाकीपन।

वैषयिक—(वि०) [स्त्री०—**वैषयिकी**] [विषय+ठक्] किसी पदार्थ सम्बन्धी। (पुं०) विषयी पुरुष, लंपट आदमी।

वैष्टुत—(न०) [विष्टुत्या निर्वृत्तम्, विष्टुति+अण्] हवन का भस्म।

वैष्ट्र—(पुं०) [विश्+ष्ट्रन्, वृद्धि] आकाश। पवन। लोक।

वैष्णव—(वि०) [स्त्री०—**वैष्णवी**] [विष्णु +अण्] विष्णु सम्बन्धी। विष्णु की उपासना करने वाला। (न०) हवन का भस्म। (पुं०) वैदिक धर्म के अन्तर्गत मुख्य तीन

विभागों में से एक। अन्य दो हैं, शैव और शाक्त।—पुराण-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।

वैसारिण—(पुं०) [विशेषेण सरति विसारी मत्स्यः स एव, विसारिन्+अण्] मछली।

वैसूचन—(न०) [विशेषेण सूचयतीति विसूचनम्, तदेव स्वार्थे अण्] नाटक में पुरुष का स्त्री-वेश धारण करना।

वैहायस—(वि०) [स्त्री०—वैहायसी] [विहायस्+अण्] आकाश सम्बन्धी, आसमानी।

वैहार्य—(वि०) [विशेषेण ह्रियते, वि√हृ +ण्यत्+अण्] वह जिसके साथ मजाक किया जाय (जैसे साला या ससुराल का अन्य ऐसा ही कोई रिश्तेदार)।

वैहासिक—(पुं०) [विहासं करोति, विहास +ठक्] मसखरा, विदूषक।

वोटा—(स्त्री०) दासी। मजदूरनी। दाई।

वोड्र—(पुं०) [√वा+उड्र] गोनस सर्प। गोह। एक प्रकार की मछली।

वोड्री—(स्त्री०) [वोड्र+ङीष्] पण का चौथा भाग।

वोढु—(पुं०) [√वह्+तुन्] एक मुनि। पीहर में रहने वाली स्त्री (जिसका पति अनुपस्थित हो) का लड़का।

वोढृ—(पुं०) [√वह्+तृच्] ढोने, ले जाने वाला, वाहक। नेता। पति। सांड़। रथ।

वोण्ट—(पुं०) डंठल।

वोद—(वि०) [अवसिक्तम् उदकम् यत्र, प्रा० ब०, उदकस्य उदादेशः] नम, तर, आर्द्र।

वोदाल—(पुं०) [वोदः आर्द्रः सन् अलति, वोद√अल् + अच्] बोआरी नामक मछली।

वोरक, वोलक—(पुं०) [अवनतं लेखनकाले उरो यस्य, प्रा० ब०, कप्, अवस्य अकारलोपः, पृषो० सलोपः, पक्षे रलयोरभेदः] लेखक।

वोरट—(पुं०) [वो इति रटन्ति भृङ्गा यत्र, वो√रट्+क] कुन्द का पुष्प या पौधा।

वोल—(पुं०) [√वुल् + अच् अथवा √वा+ उलच्]एक गन्धद्रव्य, रसगन्ध। गुग्गुल।

वोल्लाह—(पुं०) पीले अयालों और पीले रंग की पूंछ वाला घोड़ा।

वौषट्—(अव्य०) [उह्यते अनेन हविः, √वह् + डौषट्] देवताओं को घृतादि वस्तु अर्पण करते समय बोला जाने वाला शब्द विशेष।

व्यंशक—(पुं०) [विशिष्टः अंशो यस्य, प्रा० ब०, कप्] पहाड़।

व्यंशुक—(वि०) [विगतम् अंशुकम् यस्य, प्रा० ब०] नंगा, वस्त्र-विवर्जित।

व्यंसक—(पुं०) [वि√अंस् + ण्वुल्] धूर्त, धोखेबाज आदमी।

व्यंसन—(न०) [वि√अंस् + ल्युट्] ठगने या धोखा देने की क्रिया।

व्यक्त—(वि०) [वि√अञ्ज्+क्त] स्पष्ट, साफ। प्रकट। दृष्ट। अनुमित। ज्ञात। विद्वान्। स्थूल। (पुं०) विष्णु। मनुष्य। सांख्य के मत से प्रकृति का स्थूल परिमाण। —गणित-(न०) अङ्कगणित।—दृष्टार्थ -(पुं०) चश्मदीद गवाह, वह साक्षी जिसने कोई घटना अपनी आंखों से देखी हो।—राशि -(पुं०) अङ्कगणित में वह राशि या अङ्क जो बतला दिया गया हो या ज्ञात अङ्क।—रूप-(पुं०) विष्णु।

व्यक्ति—(स्त्री०) [वि√अञ्ज् + क्तिन्] व्यक्त होने की क्रिया या भाव, प्रकटन; 'तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः' र० १.१०। [वि√अञ्ज् + क्तिच्] मनुष्य। जीव। द्रव्य, पदार्थ। मनुष्य या

किसी अन्य शरीरधारी का सारा शरीर, जिसकी पृथक् सत्ता मानी जाय और जो किसी समूह या समाज का अंग माना जाय, व्यष्टि।

व्यग्र—(वि०) [विरुद्धम् अगति, वि√अग् +रक्] विकल, व्याकुल, परेशान। भयभीत, डरा हुआ। किसी कार्य में लीन; 'स राजककुदव्यग्रपाणिभिः पार्श्ववर्तिभिः' र० १७.२७।

व्यङ्ग—(वि०) [विगतं विकृतं वा अङ्गं यस्य यस्मात् वा, प्रा० ब०] शरीर-हीन। अवयव-हीन, विकलाङ्ग, लुंजा। (पुं०) लुंजा। व्यक्ति। मेढक। गाल पर के काले दाग।

व्यङ्गुल—(न०) अंगुल का $\frac{1}{60}$वाँ अंश।

व्यङ्ग्य—(न०) [वि√अञ्ज् + ण्यत्] शब्द का वह अर्थ जो व्यञ्जना वृत्ति के द्वारा प्रकट हो, गूढ़ और छिपा हुआ अर्थ। वह लगती हुई बात जिसका कुछ गूढ़ अर्थ हो। ताना, बोली, चुटकी।

√व्यच्—तु० पर० सक० धोखा देना, छलना। विचति, व्यचिष्यति, अव्याचीत्—अव्यचीत्।

व्यज—(पुं०) [वि√अज् + घञ्] पंखा।

व्यजन—(न०) [वि√अज् + ल्युट्] पंखा झलना। पंखा।

व्यञ्जक—(वि०) [स्त्री०—**व्यञ्जिका**] [वि√अञ्ज् + ण्वुल्] प्रकट करने वाला, जाहिर करने वाला। (पुं०) नाटकीय हाव-भाव, आन्तरिक भावों को प्रकट करने वाला हाव-भाव। सङ्केत। व्यंजना द्वारा अर्थ प्रकट करने वाला शब्द।

व्यञ्जन—(न०) [वि√अञ्ज्+ल्युट्] प्रकट करना। स्पष्ट करना। चिह्न, निशान; 'अमात्यव्यञ्जनाः राज्ञां दूष्यास्ते शत्रुसंज्ञिताः' शि० २.५६। स्मारक। छद्मवेश। वर्णमाला का वह वर्ण जो बिना स्वर की सहायता के न बोला जा सके, संस्कृत वर्णमाला में "क से ह" तक सब वर्ण व्यञ्जन कहे जाते हैं। लिङ्गवाची चिह्न, अर्थात् स्त्री या पुरुष पहचानने का चिह्न। बिल्ला, चपरास। वयस्कता-प्राप्ति का लक्षण। दाड़ी-मूंछ। अवयव, प्रत्यङ्ग। भोजन-सामग्री— साग-भाजी, मसाला, चटनी, अचार आदि। व्यञ्जना शक्ति।

व्यञ्जना—(स्त्री०) [वि√अञ्ज् + णिच् +युच्—टाप्] शब्द की तीन प्रकार की शक्तियों में से एक प्रकार की शक्ति, जिससे किसी शब्द या वाक्य के वाच्यार्थ अथवा लक्ष्यार्थ से भिन्न किसी अन्य ही अर्थ का बोध होता है।

व्यञ्जित—(वि०) [वि√अञ्ज्+क्त] स्पष्ट किया हुआ। प्रकटित। चिह्नित। सङ्केत किया हुआ। प्रकारान्तर से कहा हुआ।

व्यडम्बक, व्यडम्बन—(पुं०) [√डम्ब् +ण्वुल्, विशेषेण न डम्बकः] एरंड वृक्ष, रेंडी का पेड़।

व्यतिकर—(पुं०) [वि—अति √ कॄ+अप्] संमिश्रण, मिलावट। सम्बन्ध, संसर्ग, लगाव। आघात। प्रत्याघात। रुकावट, अड़चन; 'मार्गाचलव्यतिकराकुलितेव सिन्धुः' कु० ५.८५। घटना। अवसर, मौका। विपत्ति। पारस्परिक सम्बन्ध। व्यसन। परिवर्तन। विनिमय। वैपरीत्य।

व्यतिकीर्ण—(वि०) [वि—अति √ कॄ+क्त] मिश्रित। संयुक्त, जुड़ा हुआ।

व्यतिक्रम—(पुं०) [वि—अति√क्रम् +घञ्] सिलसिले में होने वाला उलटफेर, क्रम में होने वाला विपर्यय। पाप, असत्कर्म। विपत्ति, सङ्कट। अतिक्रमण, उल्लंघन। अवहेला, लापरवाही। वैपरीत्य। बीतना, गुजरना।

व्यतिक्रान्त—(वि०) [वि—अति√क्रम् +क्त] अतिक्रमण किया हुआ। भङ्ग किया हुआ (नियम)। उलट-फेर किया हुआ। बीता हुआ, गुजरा हुआ (जैसे—समय)।

व्यतिरिक्त—(वि०) [वि—अति√रिच् +क्त] अतिशय, बहुत अधिक। अलगाया हुआ, अलहदा किया हुआ। रोका हुआ। वर्जित।

व्यतिरेक—(पुं०) [वि—अति √ रिच् +घञ्] भेद, अन्तर, भिन्नता। अलगाव। वर्जन, वहिष्करण। असमानता, असादृश्य। विच्छेद, क्रम-भङ्ग। एक अर्थालङ्कार जिसमें उपमान की अपेक्षा उपमेय में कुछ और भी विशेषता या अधिकता का वर्णन किया जाता है।

व्यतिरेकिन्—(वि०) [व्यतिरेक + इनि] अतिक्रमण करने वाला। अंतर या भेद दिखाने वाला। भिन्न। वर्जित, वहिष्कृत। अभाव या अनस्तित्व प्रदर्शन करने वाला।

व्यतिषक्त—(वि०) [वि—अति √ सञ्ज् +क्त] पारस्परिक सम्बन्ध युक्त या जुड़ा हुआ। ओत-प्रोत। परस्पर परिणय या विवाह सम्बन्ध में आवद्ध।

व्यतिषङ्ग—(पुं०) [वि—अति √ सञ्ज् +घञ्] पारस्परिक सम्बन्ध। मिलावट। संयोग। सङ्क्रम।

व्यतिहार, व्यतीहार—(पुं०) [वि—अति √हृ+घञ्; पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] विनिमय, बदला।

व्यतीत—(वि०) [वि—अति√इ+क्त] गया हुआ, गुजरा हुआ, बीता हुआ। मरा हुआ। त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। प्रस्थित। अवहेलना किया हुआ।

व्यतीपात—(पुं०) [वि—अति √ पत् +घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] सम्पूर्णरीत्या प्रस्थान। सम्पूर्णतः विच्छेद। बड़ा भारी उत्पात या उपद्रव (जैसे—भूकम्प, उल्कापात आदि)। तिरस्कार, अपमान। ज्योतिष शास्त्र में सत्ताइस योगों में से सत्रहवां योग। (इस योग में कोई शुभ कार्य या यात्रा निषिद्ध है। योग विशेष जो अमावास्या के दिन रविवार या श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा, अथवा मृगशिरा नक्षत्र होने पर होता है। इस योग में गङ्गास्नान का बड़ा पुण्य फल बतलाया गया है।)

व्यत्यय—(पुं०) [वि—अति √इ+अच्] व्यतिक्रम, उलटफेर। उल्लंघन। रोक, अड़चन।

व्यत्यस्त—(वि०) [वि—अति√अस्+क्त] उलटा, औंधा किया हुआ। विरुद्ध, विपरीत। असंलग्न; 'व्यत्यस्तं लपति' भा० २.८४। आड़ा, तिरछा।

व्यत्यास—(पुं०) [वि—अति √अस्+घञ्] व्यतिक्रम। वैपरीत्य, विरुद्धता। बाधा। परिवर्तन।

√व्यथ्—भ्वा० आत्म० अक० दुःखी होना। अशान्त होना। विकल होना। काँपना। भयभीत होना। सूख जाना। व्यथते, व्यथिष्यते, अव्यथिष्ट।

व्यथक—(वि०) [स्त्री०—व्यथिका] [√व्यथ्+णिच् + ण्वुल्] पीड़ा-कारक। भयभीत करने वाला।

व्यथन—(वि०) [√व्यथ् + णिच्+ल्यु] पीड़ा देने वाला। क्षुब्ध करने वाला। (न०) [√व्यथ्+ल्युट्] व्यथा, पीड़ा। कंपन। परिवर्तन (स्वर का)।

व्यथा—(स्त्री०) [√व्यथ् + अङ—टाप्] कष्ट, भय, चिन्ता। विकलता, रोग।

व्यथित—(वि०) [√व्यथ् + क्त] पीड़ित, सन्तप्त। भयभीत। विकल।

√व्यध्—दि० पर० सक० बेधना, ताड़न करना। मार डालना। छेद करना। कोंचना। विध्यति, व्यत्स्यति, अव्यात्सीत्।

व्यध—(पुं०) [√व्यध् + अप्] छेदन। भेदन। ताड़न। आहतकरण। आघात।

व्यधिकरण—(न०) [वि— अधि √ कृ +ल्युट्] भिन्न आधार पर होना। (वि०) [विभिन्नं विरुद्धं वा अधिकरणं यस्य, प्रा०

ब०] जिसका आधार भिन्न हो। दूसरे कारक से संबद्ध (यथा—'चक्रपाणिः' चक्रं पाणौ यस्य, यहां 'चक्रम्' और 'पाणौ' में भिन्न-भिन्न विभक्ति होने के कारण व्यधिकरण ब० स० होता है)।

व्यध्य—(वि०) [√व्यध् + ण्यत्] छेदन, भेदन करने योग्य। (पुं०) [व्यधाय हितः, व्यध+यत्] धनुष की डोरी, प्रत्यंचा।

व्यध्व—(पुं०) [विरुद्धः अध्वा, प्रा० स०, अच्] बुरा मार्ग, कुपथ।

व्यनुनाद—(पुं०) [विशिष्टः अनुनादः, प्रा० स०] जोर की गूंज। उच्च प्रतिध्वनि।

व्यन्तर—(वि०) [विशिष्टः अन्तरो यस्य, प्रा० ब०] व्यवहृत। (पुं०) जैनों के अनुसार एक तरह के पिशाच और यक्ष। [विगतः अन्तरः प्रा० स०] अन्तर का अभाव।

√व्यप्—चु० उभ० सक० फेंकना। कम करना। बरबाद करना। व्यपयति—ते।

व्यपकृष्ट—(वि०) [वि—अप √ कृष्+क्त] खींचा हुआ। हटाया हुआ, स्थानान्तरित किया हुआ।

व्यपगत—(वि०)[वि—अप√गम्+क्त]गया हुआ, प्रस्थित; 'मदो मे व्यपगतः' भर्तृ० २.८। गिरा हुआ। वंचित।

व्यपगम—(पुं०) [वि—अप√गम् + अप्] प्रस्थान। लोप। बीतना।

व्यपत्रप—(वि०) [विगता अपत्रपा यस्य, प्रा० ब०] निर्लज्ज, बेहया।

व्यपदिष्ट—(वि०) [वि—अप् √ दिश् +क्त] नामाङ्कित। निर्दिष्ट, बतलाया हुआ। छला हुआ।

व्यपदेश—(पुं०) [वि—अप √ दिश् +घञ्] सूचना, इत्तिला। नामकरण। नाम। उपाधि। वंश। जाति। प्रसिद्धि, प्रख्याति। चाल, बहाना। कपट, छल।

व्यपदेष्टृ—(वि०) [वि—अप √ दिश् +तृच्] निर्देश करने वाला। कपटी, छलिया।

व्यपरोपण—(न०) [वि — अप √ रुह् +णिच्+ल्युट्, हस्य पः] जड़ से उखाड़ कर फेंक देने की क्रिया। बहिष्करण, निकाल बाहर करना। कर्तन; 'चुकोप तस्मै स भृशं सुरश्रियः प्रसह्य केशव्यपरोपणादिव' र० ३.५६। तोड़ना।

व्यपाय—(पुं०) [वि—अप√ इ + घञ्] विनाश। समाप्ति।

व्यपाश्रय—(पुं०) [वि—अप — आ √श्रि +अप्] आश्रय, अवलम्ब। निर्भरता। एक के बाद एक होना, परंपराक्रम।

व्यपेक्षा—(स्त्री०) [वि—अप √ ईक्ष्+अङ —टाप्]आकांक्षा, अभिलाषा; 'अथ काश्चि-दजव्यपेक्षया गमयित्वा समदर्शनः समाः' र० ८.२४। आग्रह, अनुरोध। पारस्परिक सम्बन्ध। संलग्नता। अपेक्षा।

व्यपेत—(वि०) [वि—अप√इ+ क्त] जो अलग हो गया हो, जिसका अंत हो गया हो। विरुद्ध। गया हुआ।

व्यपोढ—(वि०) [वि√अप+वह् + क्त] निकाला हुआ, हटाया हुआ। विरुद्ध, विप-रीत। प्रकटित, प्रदर्शित।

व्यपोह—(पुं०) [वि—अप √ऊह् + घञ्] रोक रखने या भगा देने की क्रिया। नाश। अस्वीकार। बहारना।

व्यभिचार, व्यभीचार—(पुं०) [वि—अभि √चर्+घञ् पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] कदा-चार, बदचलनी। कुपथ-गमन, अनुचित मार्गानुसरण। अनुचित यौन सम्बन्ध। पाप। अतिक्रमण। अलहदगी। अपवाद (किसी नियम का)। न्याय दर्शन में हेतु का एक दोष।

व्यभिचारिणी—(स्त्री०) [व्यभिचारिन् + ङीप्] असती स्त्री, छिनाल औरत।

व्यभिचारिन्—(वि०) [व्यभिचार+इनि] मार्ग-भ्रष्ट। बदचलन, परस्त्रीगामी। अस्थायी। उल्लंघन करने वाला। नियम-विरुद्ध। जिसके कई गौण अर्थ हों।—**भाव**—(पुं०) साहित्य में वे भाव जो रस के उपयोगी होकर जलतरङ्गवत् उनमें सञ्चरण करते हैं और समय-समय पर मनुष्य-भाव का रूप भी धारण कर लेते हैं। अर्थात् चंचलतापूर्वक सब रसों में सञ्चरित होते रहते हैं, सञ्चारी भाव।

√व्यय्—भ्वा० पर० सक० जाना। व्ययति, व्ययिष्यति, अव्ययीत्। चु० पर० सक० वित्त त्याग करना, खर्च करना। व्यययति, व्यययिष्यति, अवव्ययत्।

व्यय—(वि०) [वि√इ+अच्] परिवर्तनशील। नाशवान्। (पुं०) [√व्यय्+अच्] धन का किसी काम में लगना, खर्च। क्षय, नाश। ह्रास। त्याग। (न०) लग्न से बारहवां स्थान।—**शील**—(वि०) अपव्ययी, फजूलखर्च।

व्ययन—(न०) [√व्यय् वा वि√इ+ल्युट्] खर्च करना। बरबाद करना, नष्ट कर डालना।

व्ययित—(वि०) [व्यय+इतच्] व्यय किया हुआ। बरबाद किया हुआ। घटती को प्राप्त।

व्यर्थ—(वि०) [विगतोऽर्थो यस्मात्, प्रा० ब०] निरर्थक। अर्थ-रहित, जिसका कुछ मतलब ही न हो।

व्यलीक—(वि०) [विशेषेण अलति, वि √अल्+कीकन्] झूठा, असत्य। अप्रिय, अप्रीतिकर। अकार्य, अनुचित। कष्टदायक। अपरिचित। अद्भुत। (न०) अप्रियता। कोई कारण जिससे दुःख उत्पन्न हो। अपराध। कपट, छल। असत्यता। वैपरीत्य। कष्टकारिता। (पुं०) लंपट पुरुष। विट।

व्यवकलन—(न०) [वि—अव √ कल्+ल्युट्] विच्छेद। अङ्कगणित में बाकी घटाने की क्रिया, बाकी निकालने की क्रिया।

व्यवक्रोशन—(न०) [वि—अव √ क्रुश्+ल्युट्] आपस में गाली-गलौज।

व्यवच्छिन्न—(वि०) [वि—अव √ छिद्+क्त] कटा हुआ। वियोजित, विभक्त। निर्द्धारण किया हुआ, निश्चित। चिह्नित। बाधा डाला हुआ। भिन्न।

व्यवच्छेद—(पुं०) [वि—अव √ छिद्+घञ्] पृथक्ता, पार्थक्य, अलगाव। विभाग, खण्ड, हिस्सा। विराम। निर्द्धारण। छोड़ना, चलाना (जैसे—बाण)। किसी ग्रन्थ का अध्याय या पर्व।

व्यवधा—(स्त्री०) [वि—अव √ धा+अङ—टाप्] वह जो बीच में हो, व्यवधान। पर्दा। छिपाव, दुराव।

व्यवधान—(न०) [वि—अव √ धा+ल्युट्] वह वस्तु जो बीच में पड़ पृथक् करती हो। दृष्टि को रोकने वाली वस्तु; 'दृष्टि विमानव्यवधानमुक्तां पुनः सहस्रार्चिषि संनिधत्ते' र० १३.४४। दुराव, छिपाव। परदा। गिलाफ। अवकाश। विच्छेद, अलग होना। समाप्ति।

व्यवधायक—(वि०) [स्त्री०—व्यवधायिका] [वि—अव √ धा+ण्वुल्] आड़ करने वाला, अंतर डालने वाला। परदा करने वाला। रुकावट डालने वाला। छिपाने वाला।

व्यवधि—(पुं०) [वि—अव √धा + कि] व्यवधान, परदा, ओट।

व्यवसाय—(पुं०) [वि—अव √ सो+घञ्] प्रयत्न, उद्योग; 'मन्दीचकार मरणव्यवसायबुद्धिं' कु० ४.४५। अभिप्राय। सङ्कल्प, पक्का इरादा। कार्य, क्रिया। धंधा, व्यापार। आचरण, चाल-चलन, व्यवहार। छल। कौशल। डींग। विष्णु का नामान्तर। शिव।

व्यवसायिन्—(वि०) [व्यवसाय + इनि] जो किसी प्रकार का व्यवसाय या रोजगार करता हो। उद्यमी, परिश्रमी। दृढ़संकल्प। अध्यवसायी।

व्यवसित—(वि०) [वि—अव √सो+क्त] जिसका अनुष्ठान किया गया हो। व्यवसाय किया हुआ। उद्यत। तत्पर। निश्चित। छला हुआ, प्रवञ्चित। (न०) सङ्कल्प, दृढ़ विचार।

व्यवस्था—(स्त्री०) [वि—अव √ स्था +अङ —टाप्] प्रबन्ध, इन्तजाम। तजवीज, युक्ति। निर्धारित नियम या विधान। शर्तनामा, इकरारनामा। परिस्थिति, हालत। दृढ़ आधार।

व्यवस्थान—(न०), **व्यवस्थिति** (स्त्री०)—[वि—अव √ स्था+ल्युट्] [वि—अव √स्था + क्तिन्] व्यवस्था, प्रबन्ध। नियम। निर्णय। दृढ़ता। सङ्गति। अध्यवसाय। विच्छेद।

व्यवस्थापक—(वि०) [स्त्री०—**व्यवस्थापिका**] [वि—अव √ स्था+णिच्, पुक् +ण्वुल्] प्रबन्धक, व्यवस्था करने वाला। वह जो कानूनी सलाह या शास्त्रीय व्यवस्था देता हो। यथास्थान क्रम से सजाने वाला।

व्यवस्थापन—(न०) [वि—अव √ स्था +णिच्, पुक्+ल्युट्] विधिपूर्वक रखना। विधान का निर्देशन। निर्धारण। निश्चय-करण।

व्यवस्थापित—(वि०) [वि—अव√स्था +णिच्, पुक्+क्त] व्यवस्था किया हुआ। निर्द्धारण किया हुआ।

व्यवस्थित—(वि०) [वि—अव √ स्था +क्त] क्रम से रखा हुआ। सजाया हुआ। तै किया हुआ। निर्द्धारित। निर्णीत। वियोजित। निकाला हुआ। निर्भरित, अवलम्बित।

व्यवहर्तृ—(पुं०) [वि—अव √ हृ+तृच्] किसी व्यापार का प्रबन्धक। मुकदमावाजी करने वाला, वादी। न्यायाधीश। साथी, संगी।

व्यवहार—(पुं०) [वि—अव √हृ +घञ्] आचरण, चाल-चलन। धंधा, व्यवसाय। वर्ताव। महाजनी। तिजारत, व्यापार। रीति, रस्म, रिवाज। सम्बन्ध, रिश्तेदारी। मुकदमे की जांच-पड़ताल। मुकदमा, अभियोग, नालिश।—**दर्शन**—(न०) कानूनी कार्रवाई। मुकदमे की सुनवाई। मुकदमे की पेशी।—**पद**— (न०) मुकदमे का कारण। व्यवहार का विषय जिसकी वजह से मुकदमा दायर किया जाय।—**पाद**— (पुं०) व्यवहार के पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष, क्रियापाद और निर्णय इन चारों का समूह।—**मातृका**— (स्त्री०) व्यवहारशास्त्रानुसार होने वाली क्रियाएँ। [जैसे मुकदमे का दायर होना, पेश होना, गवाहों की तलबी, उनका साक्ष्य, जिरह, वहस, फैसला आदि]।—**विधि**—(पुं०) वह शास्त्र जिसमें व्यवहार संबंधी वातों का उल्लेख किया गया हो, धर्मशास्त्र।—**पद**—(न०),—**मार्ग**— (पुं०),—**विषय**—(पुं०), —**स्थान**—(न०) व्यवहार का विषय या स्थान।

व्यवहारक—(पुं०) [वि—अव√हृ +ण्वुल्] व्यापारी, सौदागर।

व्यवहारिक—(वि०) [स्त्री०—**व्यवहारिका, व्यवहारिकी**] [व्यवहार + ठन्] व्यापार सम्बन्धी। व्यापार में संलग्न। आईनी या कानूनी। मुकदमेवाज। प्रचलित।—**जीव**— (पुं०) वेदान्त के अनुसार ज्ञानमय कोष।

व्यवहारिका—(स्त्री०) [वि—अव √ हृ +ण्वुल्—टाप्, इत्व] चलन, पद्धति, रिवाज, रस्म। झाड़। इंगुदी का वृक्ष।

व्यवहारिन्—(वि०) [व्यवहार+इनि] व्यवहार करने वाला। मुकदमेबाज । जो व्यवहार में आता हो ।

व्यवहित—(वि०) [वि—अव √ धा+क्त] अलग रखा हुआ । बीच में पड़ी किसी वस्तु से अलगाया हुआ । बाधा दिया हुआ । रोका हुआ । परदा डाला हुआ, आड़ में किया हुआ । जिसका लगातार सम्बन्ध न हो । पूरा किया हुआ, संपादित । छोटा हुआ । आगे बढ़ा हुआ । विरोधी । नीचा दिखाया हुआ ।

व्यवहृति—(स्त्री०) [वि—अव√हृ+क्तिन्] आचरण । क्रिया, कार्य । सम्पर्क । व्यापार । मुकदमा ।

व्यवाय—(न०) [वि—अव √ अय्+अच्] चमक, दीप्ति, आभा । (पुं०) [वि—अव √इ+घञ्] विच्छेद । लीनता । परदा । दुराव, छिपाव । विराम । अड़चन । स्त्री-सम्भोग । शुद्धता ।

व्यवायिन्—(पुं०) [वि—अव √इ+णिनि] कामी पुरुष, ऐयाश आदमी । कामोद्दीपक पदार्थ। (वि०) पृथक् करने वाला। व्यापक।

व्यवेत—(वि०) [वि—अव √ इ+क्त] वियोजित । भिन्न ।

व्यष्टि—(स्त्री०) [वि √ अश्+ क्तिन्] समष्टि का एक पृथक् एवं विशिष्ट अंश, समष्टि का उलटा ।

व्यसन—(न०) [वि√अस् + ल्युट्] प्रक्षेप । वियोग, विच्छेद । अतिक्रमण। भङ्गीकरण । नाश । पराजय । अधःपात । निर्बलता । आपत्ति, सङ्कट । अस्त होने की क्रिया । पापाचार । बुरी आदत, बुरी लत; 'मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग् विनोदः कुतः' श० ४.५ । लीनता । अपराध । सजा । अयोग्यता । निरर्थक । उद्योग । पवन ।—**अतिभार** (व्यसनातिभार)—(पुं०) बड़ी भारी विपत्ति ।—**अन्वित** (व्यसनान्वित) —**आर्त** (व्यसनार्त),—**पीडित**—(वि०) आपदाग्रस्त, सङ्कटापन्न, मुसीबतजदा ।

व्यसनिन्—(वि०) [व्यसन + इनि] किसी बुरी लत में फँसा हुआ, दुष्ट । अभागा, बदकिस्मत। किसी कार्य में जी-जान से लगा हुआ ।

व्यसु—(वि०) विगताः असवः प्राणाः यस्य, प्रा० ब०] निर्जीव, मृत; 'गुरुनेमिनिपीडनावदीर्णव्यसुदेहस्रुतशोणितैः' शि० २०.३ ।

व्यस्त—(वि०) [वि√अस् + क्त] प्रक्षिप्त, फेंका हुआ । विकीर्ण, बिखरा हुआ । निकाला हुआ । वियोजित, अलहदा किया हुआ । एक-एक कर विचार किया हुआ । अमिश्रित । विभिन्न । स्थानान्तरित किया हुआ । घबड़ाया हुआ, विकल । गड़बड़, अस्तव्यस्त । उलटा-पुलटा । विपरीत ।

व्यस्तार—(पुं०) हाथी की कनपटियों से मद का चूना ।

व्यह्न—(वि०) [वि+ हन् ब० स०] एक ही दिन न होकर भिन्न दिवसों में होने वाला ।

व्याकरण—(न०) [व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः येन, वि—आ√कृ+ल्युट्] वाक्-पृथक्करण-प्रक्रिया । वह शास्त्र जो वेद के छः अंगों में से एक है । यह साध्य, साधन, कर्ता, कर्म, क्रिया, समास आदि का निरूपण करता है । नाम और रूप से जगत् का प्रकाशन (वेदान्त) । भविष्यद् वाणी (बौद्ध) । निर्माण, रचना । धनुष की टंकार ।

व्याकार—(पुं०) [वि—आ √कृ + घञ्] व्याख्या । परिवर्तन, रूप का पलटना । कुरूपता ।

व्याकीर्ण—(वि०) [वि—आ √कॄ+क्त] बिखरा हुआ । अस्त-व्यस्त किया हुआ । व्याकुल ।

व्याकुल—(वि०) [आ√कुल् + क, विशेषेण आकुलः, प्रा० स०] घवड़ाया हुआ। विकल, परेशान। भयभीत, डरा हुआ। परिपूर्ण। कार्य में संलग्न या फँसा हुआ।

व्याकुलित—(वि०) [वि-आ√कुल् + क्त] विकल, घवड़ाया हुआ। भीत।

व्याकूति—(स्त्री०) [विशिष्टा आकूतिः, प्रा० स०] छल, कपट। धोखा, फरेब।

व्याकृत—(वि०) [वि—आ √ कृ+क्त] पृथक् किया हुआ। व्याख्या किया हुआ। वदशक्ल वनाया हुआ।

व्याकृति—(स्त्री०) [वि०—आ√कृ+क्तिन्] पृथक्करण। व्याख्या, टीका। रूप-परिवर्तन, शक्ल की वदलौवल। व्याकरण।

व्याकोश, व्याकोष—(वि०) [वि—आ √कुश्+अच्] [वि—आ √ कुष्+अच्] पूर्ण विकसित, प्रफुल्ल; 'व्याकोशकोकनदतां दवते नलिन्यः' शि० ४.४६। वृद्धि को प्राप्त।

व्याक्षेप—(पुं०) [वि—आ √ क्षिप्+घञ्] उछल-कूद। अड़चन, रुकावट। विलम्ब। विकलता।

व्याख्या—(स्त्री०) [वि—आ √ ख्या +अङ—टाप्] किसी कठिन पद या वाक्य आदि का अर्थ स्पष्ट करने वाला विवरण, टीका। वर्णन, निरूपण।

व्याख्यात—(वि०) [वि—आ √ ख्या +क्त] जिसकी व्याख्या, टीका की गई हो। निरूपित, वर्णित।

व्याख्यातृ—(पुं० वि०) [वि—आ √ख्या +तृच्] व्याख्या करने वाला। भाषण करने वाला।

व्याख्यान—(न०) [वि—आ √ ख्या +ल्युट्] निरूपण। भाषण। व्याख्या। टीका।

व्याघट्टन—(न०) [वि—आ √ घट्ट् +ल्युट्] मन्थन। रगड़ना, संघर्षण।

व्याघात—(पुं०) [वि—आ √ हन्+घञ्, नस्य तः] ताड़न। आघात, प्रहार। अड़चन, रुकावट। खण्डन, प्रतिवाद। अलङ्कार विशेष जिसमें एक ही उपाय के द्वारा दो विरुद्ध कार्यों के होने का वर्णन किया जाता है।

व्याघ्र—(पुं०) [व्याजिघ्रति, वि—आ √घ्रा + क] चीता, वाघ। (समासान्त-शब्दों के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है-सर्वोत्तम, मुख्य, प्रधान। यथा "नरव्याघ्र"।) लाल रेंड़। करंज।—**आस्य** (**व्याघ्रास्य**)-(पुं०) विलार।—**नख**-(न०) चीते के नाखून। वगनहा नामक प्रसिद्ध गन्धद्रव्य। खरौंच, नखक्षत। थूहर, स्नुही वृक्ष। एक प्रकार का कंद।—**नायक**-(पुं०) गीदड़, शृगाल।

व्याघ्री—(स्त्री०) [व्याघ्र+ङीष्] चीते की मादा, वाघिन। कंटकारी। नखी नामक गंधद्रव्य।

व्याज—(पुं०) [व्यजति यथार्थव्यवहारात् अपगच्छति अनेन, वि√अज् + घञ्] कपट, छल, फरेब। कौशल, चालाकी। वहाना, मिस; 'प्रदक्षिणार्चिर्व्याजेन हस्तेनेव जयं ददौ' र० ४.२५। तरकीव, युक्ति।—**उक्ति** (**व्याजोक्ति**)-(स्त्री०) कपट-भरी वात। अलङ्कार विशेष। इसमें किसी स्पष्ट वात को छिपाने के लिये कोई वहाना किया जाता है।—**निन्दा**-(स्त्री०) वह निन्दा जो छल या कपट से की जाय। एक शब्दालंकार।—**सुप्त**-(वि०) सोने का वहाना किया हुआ।—**स्तुति**-(स्त्री०) वह स्तुति या प्रशंसा जो किसी वहाने से की जाय और ऊपर से देखने में तो स्तुति जान पड़े किन्तु हो निन्दा।

व्याड—(पुं०) [वि—आ√अड्+अच्] मांसभक्षी जीव; जैसे शेर, चीता आदि। गुंडा, शठ। सर्प। इन्द्र का नामान्तर।

व्याडि—(पुं०) संस्कृत साहित्य का एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार जिसके बनाये व्याकरण और शब्द-कोश प्रसिद्ध हैं।

व्यात्त—(वि०) [वि—आ√दा+क्त] खोला या फैलाया हुआ (मुख)। विस्तृत।

व्यात्युक्षी—(स्त्री०) [वि—आ—अति √उक्ष्+णच्+अञ्—ङीप्] जलक्रीड़ा।

व्यादान—(नि०) [वि०—आ√दा+ल्युट्] खोलने, फैलाने की क्रिया।

व्यादिश—(पुं०) [विशेषेण आदिशति स्वे-स्वे कर्मणि नियोजयति, वि—आ√ दिश्+क] विष्णु की उपाधि।

व्याध—(पुं०) [विध्यति मृगादीन्, √व्यध् +ण] शिकारी, बहेलिया। दुष्ट या नीच आदमी।

व्याधाम, व्याधाव—(पुं०) [व्याध√अम् +णिच्+अच्] इन्द्र का वज्र।

व्याधि—(पुं०) [विविधा आधयोऽस्मात्, प्रा० ब०; अथवा वि—आ√धा+कि] बीमारी, रोग। पीड़ा। कोढ़।—**ग्रस्त**-(वि०) बीमार, रोगी।

व्याधित—(वि०) [व्याधिः संजातोऽस्य, व्याधि+इतच्] रोगी, बीमार।

व्याधूत—(वि०) [वि—आ√धू+क्त] कम्पित, कँपा हुआ।

व्यान—(पुं०) [व्यानिति सर्वशरीरं व्याप्नोति वि—आ√अन्+अच्] शरीरस्थ पाँच वायुओं में से एक। यह सारे शरीर में व्याप्त रहता है।

व्यानत—(वि०) [वि—आ√नम्+क्त] विशेष रूप से झुका हुआ। (न०) एक रतिबन्ध।

व्यापक—(वि०) [स्त्री०—**व्यापिका**] [विशेषेण आप्नोति, वि√आप् + ण्वुल्] चारों ओर फैला हुआ। जो ऊपर या चारों ओर से घेरे हुए हो, घेरने या ढकने वाला।

व्यापत्ति—(स्त्री०) [वि—आ√पद्+क्तिन्] बरबादी, सर्वनाश। विपत्ति। एक वस्तु के बदले दूसरी वस्तु का रखना। मृत्यु। 'तयोस्तस्मिन्नवीभूतपितृव्यापत्तिशोकयोः' र० १२.२६।

व्यापद्—(स्त्री०) [वि—आ√पद्+क्विप्] विपत्ति, सङ्कट। रोग। मृत्यु। नाश।

व्यापन—(न०) [वि√ आप्+ल्युट्] सर्वत्र फैलना या पसरना। चारों ओर से या ऊपर से घेरना या ढकना।

व्यापन्न—(वि०) [वि—आ√पद्+ क्त] संकट-ग्रस्त। गिरा हुआ (जैसे गर्भ)। चोटिल, घायल। मृत, मरा हुआ। अस्त-व्यस्त, गड़बड़। परिवर्तित, बदला हुआ।

व्यापाद—(पुं०), **व्यापादन**- (न०) [वि—आ√पद्+णिच्+घञ्] [वि—आ√पद् +णिच्+ल्युट्] हनन, मारण। नाश, बरबादी। मन में दूसरे के अपकार की भावना करना, किसी की बुराई सोचना।

व्यापार—(पुं०) [वि—आ√पृ+घञ्] कार्य, काम। क्रिया। वाणिज्य। धंधा, पेशा। उद्योग, उद्यम; 'आर्याप्यरुन्धती तत्र व्यापारं कर्तुमर्हति' कु० ६.३२। न्याय के अनुसार विषय के साथ होने वाला इन्द्रियों का संयोग।

व्यापारित—(वि०) [वि—आ√पृ+णिच्+क्त] काम में लगाया हुआ। स्थापित। जमाया हुआ।

व्यापारिन्—(वि०) [व्यापार+इनि] रोजगारी, सौदागर। कोई भी कार्य करने वाला।

व्यापिन्—(वि०) [वि√आप्+णिनि] व्याप्त होने वाला, व्यापक। आच्छादक। (पुं०) विष्णु का नाम।

व्यापृत—(वि०) [वि—आ√पृ+क्त]किसी काम में लगा हुआ। रखा हुआ। (पुं०) मंत्री। उच्च राजकर्मचारी।

व्यावृति—(स्त्री०) [वि०—आ√पृ+क्तिन्] धंधा। कार्य। क्रिया। उद्योग। पेशा। अभ्यास।

व्याप्त—(वि०) [वि√आप्+क्त] चारों ओर फैला हुआ। भरा हुआ, परिपूर्ण। घिरा हुआ। स्थापित। अधिकृत। प्राप्त। सम्मिलित। (न्यायदर्शन के अनुसार कोई पदार्थ दूसरे पदार्थ में) पूर्ण रूप से मिला हुआ या फैला हुआ। प्रसिद्ध, प्रख्यात। फैला हुआ, पसरा हुआ।

व्याप्ति—(स्त्री०) [वि√आप्+क्तिन्] व्याप्त होने की क्रिया। न्यायदर्शनानुसार किसी एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ का पूर्णरूपेण मिला या फैला हुआ होना। एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के साथ सदा पाया जाना। सर्वमान्य नियम, सार्वजनिक नियम। परिपूर्णता। प्राप्ति। —ज्ञान-(न०) न्यायदर्शनानुसार वह ज्ञान जो साध्य को देख कर साध्यवान् के अस्तित्व के सम्बन्ध में अथवा साध्यवान् को देखकर साध्य के अस्तित्व के सम्बन्ध में उपलब्ध होता है।

व्याप्य—(वि०) [वि√आप्+ण्यत् वा णिच्+ण्यत्] व्यापनीय, व्याप्त होने या करने योग्य। (न०) वह जिसके द्वारा कोई कार्य हो, हेतु, साधन। कुट नामक ओषधि।

व्याप्यत्व—(न०) [व्याप्य+त्व] नित्यता, अविकारता, अपरिवर्तनीयता।

व्याभ्युक्षी—(स्त्री०) [वि—आ—अभि √उक्ष्+णच्+अञ्—ङीप्] जल-क्रीड़ा।

व्याम—(पुं०), **व्यामन्**—(न०) [विशेषेण अम्यतेऽनेन, वि√अम्+घञ्] [वि—आ √अम्+ल्युट्] लंबाई की एक नाप, दोनों भुजाओं को दोनों ओर फैलाने पर एक हाथ की उँगलियों के सिरे से दूसरे हाथ की उँगलियों के सिरे तक की लंबाई।

व्यामिश्र—(वि०) [वि—आ√मिश्र्+अच्] मिश्रित, मिला हुआ। —**व्यूह**-(पुं०) मिला-जुला व्यूह। वह व्यूह जिसमें पैदल, रथदल आदि चारों तरह के दल मिले हों। —**सिद्धि**-(स्त्री०) शत्रु और मित्र दोनों की स्थिति का अपने अनुकूल होना।

व्यामोह—(पुं०) [वि—आ√मुह्+घञ्] मोह, अज्ञान। व्याकुलता, परेशानी।

व्यामृष्ट—(वि०) [वि—आ√मृश्+क्त] धोया हुआ।

व्यायत—(वि०) [वि—आ√यम्+क्त] लंबा; 'युवा युगव्यायतबाहुरंसल:' र० ३.३४ फैला हुआ, पसरा हुआ। नियंत्रित। कार्य में व्यग्र, मशगूल। सख्त, दृढ़। अत्यधिक सघन। ताकतवर, बलवान्। गहरा, गम्भीर।

व्यायतत्व—(न०) [व्यायत+त्व] पेशियों की वृद्धि।

व्यायाम—(पुं०) [वि—आ√यम्+घञ्] फैलाव, बढ़ाव। कसरत; 'व्यायामे वृद्धिरङ्गिनाम्' शि० २.९४। थकावट, श्रान्ति। उद्योग, उद्यम। झगड़ा, विवाद। लंबाई की माप।

व्यायामिक—(वि०) [स्त्री०—**व्यायामिकी**] [व्यायाम+ठक्] व्यायाम संबंधी। कसरती।

व्यायोग—(पुं०) [वि—आ√युज्+घञ्] साहित्य में दस प्रकार के रूपकों में से एक प्रकार का रूपक या दृश्य काव्य।

व्याल—(वि०) [विशेषेण आसमन्तात् अलति, वि—आ√अल्+अच्] दुष्ट, शठ। बुरा। उपद्रवी। नृशंस। भयानक। (पुं०) खूनी हाथी। शिकार करने वाला जन्तु, हिंस्र जन्तु। सर्प। सिंह। बाघ। लकड़बग्घा। राजा। ठग। आठ की संख्या। विष्णु का नाम। —**खड्ग**, —**नख**-(पुं०) नख या बगनहा नामक गन्ध द्रव्य। —**ग्राह**, —**ग्राहिन्**-(पुं०) सँपेरा, सर्प पकड़ने वाला। —

—मृग-(पुं०) हिंस्र जन्तु। सिंह। चीता।—रूप-(पुं०) शिव जी का नामान्तर।—सूदन-(पुं०) गरुड़।

व्यालक—(पुं०) [व्याल+कन्] दुष्ट या उपद्रवी हाथी। साँप। शिकारी जानवर।

व्यालम्ब—(पुं०) [विशेषेण आलम्बते, वि—आ√लम्ब्+अच्] लाल रेंडी का पेड़। (वि०) लम्बमान, लटकता हुआ।

व्यालीढ—(न०) [वि—आ√लिह् + क्त] सांप के काटने का एक प्रकार जिसमें दो दांत गड़े हों और रक्त भी निकला हो।

व्यालोल—(वि०) [वि—आ√लोड्+अच्, डस्य लः] कांपने वाला, थरथराने वाला। अस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ (जैसे सिर के केश; 'व्यालोलः केशपाशः' गीत० ११।

व्यावकलन—(न०) [वि—आ—अव√कल् +ल्युट्] बाकी निकालने की क्रिया।

व्यावक्रोशी, व्यावभाषी—(स्त्री०) [वि—आ—अव√ क्रुश् + णच् + अञ्—ङीप्] [वि—आ—अव√भाष्+णच्+अञ्—ङीप्] आपस में गाली-गलौज।

व्यावर्त—(पुं०) [वि—आ√वृत्+घञ् वा अच्] घिराव, घेरना। भ्रमण, चक्कर करना। आगे को निकली हुई नाभि, नाभि-कण्टक। चक्रमर्द, चकवड़।

व्यावर्तक—(वि०) [स्त्री०—**व्यावर्तिका**] [वि—आ√वृत्+णिच्+ण्वुल्] व्यावर्तन करने वाला, घेरने वाला। पृथक् करने वाला। पीछे की ओर लौटने वाला।

व्यावर्तन—(न०) [वि—आ√वृत्+णिच् +ल्युट्] घेरने या चारों ओर से छेक लेने की क्रिया। घूमने की या चक्कर खाने की क्रिया। अलग करना। सर्प-कुंडली।

व्यावल्गित—(वि०) [वि—आ√वल्ग् +क्त] आन्दोलित।

व्यावहारिक—(वि०) [स्त्री०—**व्यावहारिकी**] [व्यवहार+ठक्] काम-धंधे सम्बन्धी। वर्ताव सम्बन्धी। आईनी, कानूनी। रीति-रिवाज के मुताबिक, प्रचलित। प्राति-मासिक। (पुं०) राजा का वह अमात्य या मंत्री जिसके अधिकार में भीतरी और बाहरी समस्त प्रकार के कार्य हों। विचारपति, न्यायाधीश।

व्यावहारी—(स्त्री०) [वि—आ—अव√हृ +णच्+ अञ्—ङीप्] आदान-प्रदान। पारस्परिक व्यवहार।

व्यावहासी—(स्त्री०) [वि—आ—अव√ हस्+ णच् + अञ्—ङीप्] एक दूसरे को चिढ़ाना या पारस्परिक उपहास करना।

व्यावृत्त—(वि०) [वि—आ√वृत्+क्त] छूटा हुआ, निवृत्त; 'व्यावृत्ता यत्परस्वेभ्यः श्रुतौ तस्करता स्थिता' र०१.२७। मना किया गया, वर्जित। खण्डित, टूटा हुआ। अलहदा किया हुआ। मनोनीत। चारों ओर से घेरा हुआ। आच्छादित, ढका हुआ। प्रशंसित, सराहा हुआ। घुमाया हुआ।

व्यावृत्ति—(स्त्री०) [वि—आ√वृत् + क्तिन्] खंडन। आवृत्ति। मन से चुनने या पसंद करने का काम। चारों ओर से घेरना। प्रशंसा। निराकरण। मीमांसा। निषेध। बाधा। निवृत्ति। नियोग। आच्छादन।

व्यास—(पुं०) [वि√अस्+घञ्] बांट, वितरण, भाग-भाग करके अलगाने की क्रिया। विश्लेषण। बाहुल्य। विस्तार। अंतर, भेद। जांच। चौड़ाई। वृत्त का व्यास या वह रेखा जो किसी बिल्कुल गोल रेखा या वृत्त के किसी एक स्थान से बिल्कुल सीधी चल कर दूसरे सिरे तक पहुँची हो। उच्चारण का दोष। संग्रह-कर्त्ता। विभाग-कर्त्ता। एक प्रसिद्ध ऋषि जो पराशर के औरस और सत्य-वती के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। कथावाचक, पुराणों की कथा सुनाने वाला।—**कूट**-(पुं०) महाभारत में आये हुए दुरूह श्लोक।

व्यासक्त—(वि०) [वि—आ√सञ्ज्+क्त] जो बहुत अधिक आसक्त हुआ हो, जिसका मन बेतरह आ गया हो। वियुक्त। व्याकुल, विकल, घबड़ाया हुआ, परेशान।

व्यासङ्ग—(पुं०) [वि—आ—सञ्ज् + घञ्] बहुत अधिक आसक्ति। बहुत अधिक भक्ति या अनुराग। ध्यान। वियुक्त, विच्छेद। परिश्रम-पूर्वक अध्ययन।

व्यासिद्ध—(वि०) [वि—आ √ सिध् + क्त] वर्जित, निषिद्ध। रोका हुआ (माल)।

व्याहत—(वि०) [वि—आ√ हन्+क्त] विशेष रूप से चोट पहुँचाया हुआ। निवारित। निषिद्ध। व्यर्थ। रोका हुआ, अड़चन डाला हुआ। हताश किया हुआ। घबड़ाया हुआ। भयभीत।—**अर्थता** (**व्याहतार्थता**) -(स्त्री०) निबन्ध रचना-शैली के दोषों में से एक।

व्याहरण—(न०) [वि—आ√हृ+ल्युट्] उच्चारण। कथन। वक्तृता। वर्णन।

व्याहार—(पुं०) [वि—आ√हृ+घञ्] वक्तृता, भाषण; 'आविर्भूतज्योतिषां ब्राह्मणानां ये व्याहारास्तेषु मा संशयो भूत्' उत्त० ४.१८। शब्द-राशि। ध्वनि, नाद।

व्याहृत—(वि०) [वि—आ√हृ—क्त] कहा हुआ। उच्चारण किया हुआ।

व्याहृति—(स्त्री०) [वि—आ√हृ+क्तिन्] कथन। भाषण, वक्तृता। बयान। गायत्री के साथ जपे जाने वाले मंत्र विशेष; यथा—भूः, भुवः, स्वः। [व्याहृति की संख्या कोई तीन और कोई सात मानते हैं।]

व्युच्छित्ति—(स्त्री०), **व्युच्छेद**-(पुं०) [वि—उद्√छिद्+क्तिन्] [वि—उद् √छिद्+घञ्] उन्मूलन, विनाश, बरबादी।

व्युत्क्रम—(वि०) [वि—उद् √ क्रम् +घञ्] व्यतिक्रम, गड़बड़ी, क्रम में उलट-फेर। मार्ग-भ्रंशता। वैपरीत्य।

व्युत्क्रान्त—(वि०) [वि—उद् √ क्रम्+क्त] अतिक्रमण किया हुआ। गया हुआ। प्रस्थित। उपेक्षित।

व्युत्त—(वि०) [वि√उन्द्+क्त] भींगा हुआ, पानी से तर।

व्युत्थान—(न०), **व्युत्थिति**-(स्त्री०) [वि—उद्√ स्था+ल्युट्] [वि—उद्√स्था+क्तिन्] महान् उद्योग। किसी के विरुद्ध उठ खड़ा होना। विरोध। अवरोध। स्वतंत्र होकर काम करना, स्वेच्छानुसार काम करना। नृत्य विशेष। हाथी को उठाने की क्रिया; 'यावच्चक्रे नाञ्जनं बोधनाय व्युत्थानज्ञो हस्तिचारी मदस्य' शि० १८.२६। चित्त की क्षिप्त, मूढ़ और विक्षिप्त नामक अवस्थाएँ।

व्युत्पत्ति—(स्त्री०) [वि—उद् √ पद्+क्तिन्] किसी पदार्थ आदि की विशेष उत्पत्ति या उसका निकास। शब्दसाधन-विद्या। पूर्ण अवगति, पूरी-पूरी जानकारी। पण्डित्य, विद्वत्ता।

व्युत्पन्न—(वि०) [वि—उद्√पद्+क्त] निकाला हुआ। शब्द-साधन-विद्या द्वारा बना हुआ। संस्कृत। जो किसी शास्त्र आदि का अच्छा ज्ञाता हो।

व्युत्पादक—(वि०) [वि-उद्√पद्+णिच्+ण्वुल्—अक] व्युत्पत्ति करने वाला। उत्पन्न करने वाला।

व्युदस्त—(वि०) [वि—उद्√अस्+क्त] अस्वीकृत, खारिज किया हुआ। फेंका हुआ।

व्युदास—(पुं०) [वि—उद्√अस्+ घञ्] दूर करने या फेंकने की क्रिया। बहिष्करण। निरादर, तिरस्कार। मारण, हनन। नाशकरण।

व्युपदेश—(पुं०) [वि—उप√दिश् + घञ्] बहाना, मिस। प्रवञ्चना, ठगी।

व्युपरम—(पुं०) [वि—उप√रम्+अप्] अवसान, समाप्ति। बाधा।

व्युपशम—(पुं०) [वि—उप√शम्+अच्] विराम का न होना। अशान्ति। नितान्त अवसान।(यहां वि उपसर्ग का अर्थ नितान्तता है।)

√व्युष्—दि० पर० सक० जलाना। व्युष्यति, व्युषिष्यति, अव्युषीत्। विभक्त करना। अव्युषत्।

व्युष्ट—वि०) [वि√उष्+क्त] जला हुआ, झुलसा हुआ। सवेरे के प्रकाश से प्रकाशित। चमकीला। स्पष्ट। [वि √वस्+क्त] बसा हुआ। (न०) तड़का, भोर, प्रभातकाल; 'व्युष्टं प्रयाणं च वियोगवेदनाविदूननारीकमभूत्समं तदा' शि० १२.४। दिवस, दिन। फल।

व्युष्टि—(स्त्री०) [वि√वस्+क्तिन्] तड़का, भोर। समृद्धि। प्रशंसा। फल, परिणाम।

व्यूढ—(वि०) [वि√वह्+क्त] फैला हुआ, वृद्धि को प्राप्त। चौड़ा, ओंडा। दृढ़। संसक्त। क्रम में रखा हुआ, सिलसिलेवार रखा हुआ। अस्त-व्यस्त, गड़-बड़। विवाहित।—**कङ्कट**-(वि०) कवच-धारी, जिरह-बख्तर पहिना हुआ।

व्यूत—(वि०) [वि√वे+क्त] सिला हुआ। बुना हुआ।

व्यूति—(स्त्री०) [वि√वे+क्तिन्]सिलाई। बुनावट। बुनाई की उजरत।

व्यूह—(पुं०) [वि√ऊह्+घञ्] युद्ध करने के लिये जाने वाली अथवा युद्ध के समय की सेना की स्थापना, सेना का विन्यास। सेना। समूह। जमघट। अंश, भाग। अन्तर्गत भाग। शरीर। ठाठ। बनावट। तर्क।—**पार्ष्णि**-(स्त्री०) सेना का पिछला भाग।—**भङ्ग**,—**भेद**-(पुं०) सेना के व्यूह को तोड़ देना।

व्यूहन—(न०) [वि√ऊह्+ल्युट्] युद्ध के समय सेना के भिन्न-भिन्न स्थानों में नियुक्त करने की क्रिया। शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गों की बनावट। स्थान-परिवर्तन। विकास (गर्भ का)।

व्यृद्धि—(स्त्री०) [विगता ऋद्धिः, प्रा० स०] असमृद्धि। दुर्भाग्य, बदकिस्मती।

√व्ये—भ्वा० उभ० सक० आच्छादन करना, ऊपर से ढांकना। सीना। व्ययति —ते, व्यास्यति—ते, अव्यासीत्—अव्यास्त।

व्यो—(अव्य०) [√व्ये+डो] लोहा। बीज।

व्योकार—(पुं०) [व्यो√कृ+अण्] लुहार।

व्योमन्—(न०) [√व्ये+मनिन्, नि० साधुः (समास में न का लोप हो जाता है)] आकाश, आसमान। जल। सूर्य का मन्दिर। अबरक।—**उदक** (**व्योमोदक**)—(न०) वृष्टिजल। ओस।—**केश**,—**केशिन्**-(पुं०) शिव जी।—**गङ्गा**-(स्त्री०) आकाश-गंगा।—**चारिन्**-(पुं०) देवता। पक्षी। सन्त। ब्राह्मण। नक्षत्र।—**धूम**-(पुं०) बादल।—**नाशिका**-(स्त्री०) भारती नामक पक्षी।—**मञ्जर**,—**मण्डल**-(न०) पताका, झंडा।—**मुद्गर**-(पुं०) पवन का झोंका।—**यान**-(न०) आकाशयान, देवयान।—**सद्**-(पुं०) देवता। गन्धर्व। आत्मा।—**स्थली**-(स्त्री०) पृथिवी।—**स्पृश्**-(वि०) बहुत ऊँचा।

व्योष—(पुं०) [वि√उष्+घञ्] पीपल, काली मिर्च और सोंठ का समाहार, त्रिकटु।

√व्रज्—भ्वा० पर० सक० जाना, गमन करना। पास जाना। प्रस्थान करना। गुजर जाना। व्रजति, व्रजिष्यति, अव्राजीत्।

व्रज—(पुं०) [√व्रज्+क] समूह; 'नेत्रव्रजाः पौरजनस्य तस्मिन् विहाय सर्वान्नृपतीन्निपेतुः' र० ६.७। गोष्ठ। मथुरा और वृन्दावन के आसपास का क्षेत्र। मार्ग, सड़क।—**किशोर**,—**नाथ**,—**मोहन**,—**राज**,—**वल्लभ**-(पुं०) श्री कृष्ण।—**युवती**,—

रामा, —वधू, —वनिता, — सुन्दरी, —स्त्री-(स्त्री०) गोपिका।

व्रजन—(न०) [√व्रज्+ल्युट्] गमन। भ्रमण। यात्रा। देशत्याग।

व्रज्या—(स्त्री०) [√व्रज्+क्यप्] घूमना-फिरना, पर्यटन। आक्रमण, चढ़ाई। वर्ग। समह। रंग-भूमि, नाटच-शाला।

√व्रण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। व्रणति, व्रणिष्यति, अव्रणीत्—अव्राणीत्। चु० पर० सक० घायल करना, चोटिल करना, व्रणयति, व्रणयिष्यति, अवव्रणत्।

व्रण—(न०, पुं०) [√व्रण्+अच्] घाव, क्षत; 'आत्मनः सुमहत्कर्म व्रणैरावेद्य संस्थितः' र० १२.५५। फोड़ा।—**अरि**-(पुं०) वोल नामक गन्धद्रव्य। अगस्त्य वृक्ष।—**कृत्**-(वि०) घाव करने वाला। (पुं०) भिलावें का पेड़।—**विरोपण**-(वि०) घाव पूरने वाला। —**शोधन**-(न०) घाव की सफाई, मलहम पट्टी।—**हृ**-(पुं०) एरंड वृक्ष, रेंड़ी का पेड़।

व्रणित—(वि०) [व्रण+इतच्] जिसे व्रण हुआ हो। जिसे घाव लगा हो, आहत।

व्रत—(न०, पुं०) [√वृ+अतच्, स च कित्] किसी वात का पक्का सङ्कल्प। प्रतिज्ञा। आराधना, भक्ति। पुण्य के साधन उपवासादि नियम विशेष। व्यवस्था, विधि, निर्दिष्ट अनुष्ठान-पद्धति। यज्ञ। अनुष्ठान, कर्म। —**चर्या**-(स्त्री०) किसी प्रकार का व्रत रखने या करने का काम।—**पारण**-(न०)'**पारणा**-(स्त्री०) किसी व्रत की समाप्ति। वह पारण जो व्रत के अंत में किया जाता है। —**भङ्ग**-(पुं०) व्रत, प्रतिज्ञा का खंडित हो जाना।—**लोपन**-(न०) किसी व्रत को भंग करना।—**वैकल्य**-(न०) किसी धार्मिक व्रत की अपूर्णता।—**स्नातक**-(पुं०) तीन प्रकार के ब्रह्मचारियों में से एक, वह ब्रह्मचारी जिसने गुरु के निकट रह कर व्रत तो समाप्त कर लिया हो, किन्तु वेदाध्ययन पूरा किये विना ही घर चला आया हो।

व्रतति, व्रतती—(स्त्री०) [प्र√तन्+क्तिच्, पृषो० पस्य वः] [व्रतति+ङीप्] वेल, लता। फैलाव, वृद्धि।

व्रतिन्—(वि०) [व्रत+इनि] व्रत का अनुष्ठान करने वाला। धर्माचारी। (पुं०) ब्रह्मचारी। साधु, महात्मा। यजमान, यज्ञ करने वाला।

√व्रश्च्—तु० पर० सक० काटना। घायल करना। वृश्चति, व्रश्चिष्यति—व्रक्ष्यति, अव्रश्चीत्—अव्राक्षीत्।

व्रश्चन—(न०) [√व्रश्च्+ल्युट्] छेदने या काटने की क्रिया। (पुं०) [√व्रश्च्+ल्यु] सोना, चांदी आदि काटने की छेनी। कुल्हाड़ी। वह बुरादा जो लकड़ी आदि चीरने पर गिरता है।

व्राजि—(स्त्री०) [√व्रज्+इञ्] तूफान, आंधी।

व्रात—(न०) [√वृ+अतच्, पृषो० साधुः] शारीरिक श्रम, मजदूरी। वह परिश्रम या मजदूरी जो जीविका के लिये की जाय। नैमित्तिक धंधा। (पुं०) समूह; 'परस्पर-शरव्राताः पुष्पवृष्टिं न सेहिरे' र० १२.९४। मनुष्य। व्याध आदि नीच जातियां।—**जीवन**-(वि०) मजदूरी से जीविका चलाने वाला।

व्रातीन—(वि०) [व्रातेन जीवति, व्रात+ख] श्रमजीवी, मजदूरी से जीविका चलाने वाला।

व्रात्य—(पुं०) [व्रातो व्याधादिः स इव, व्रात+यत्] वह द्विज जो समय पर संस्कार, विशेषकर, यज्ञोपवीत संस्कार के न होने से पतित हो गया हो, जिसे वैदिक कृत्यादि करने का अधिकार न रह गया हो। नीच आदमी, कमीना पुरुष। वर्णसङ्कर विशेष, जिसकी उत्पत्ति शूद्र पिता और क्षत्रियाणी माता से

हुई हो।—ध्रुव-(पुं०) अपने को व्रात्य बतलाने वाला व्यक्ति।—स्तोम-(पुं०) प्राचीनकालीन एक यज्ञ जिसे व्रात्य लोग अपना व्रात्यपन दूर करने के लिये किया करते थे।

√व्री—दि० आत्म० सक० छांटना, चुनना, पसंद करना। व्रीयते, व्रेष्यते, अव्रेष्ट। क्र्या० पर० सक० वरण करना। व्रिणाति, व्रेष्यति, अव्रैषीत्।

√व्रीड्—दि० पर० अक० लज्जित होना। सक० फेंकना। पटकना। व्रीड्यति, व्रीडिष्यति, अव्रीडीत्।

व्रीड—(पुं०), व्रीडा-(स्त्री०) [√व्रीड्+घञ्] [√व्रीड्+अ—टाप्] लज्जा; 'व्रीडादिवाभ्याशगतैर्विलिल्ये' शि० ३.४० विनम्रता। संकोच।

व्रीडित—(वि०) [√व्रीड्+क्त] लज्जित। विनीत।

व्रीहि—(पुं०) [√वृह्+इन्, पृषो० साधुः] धान्यमात्र, कोई अन्न। चावल। चावल का कण।—आगार (व्रीह्यागार)-(न०) अनाज रखने का गोदाम, अन्नागार।—काञ्चन-(न०) मसूर की दाल।—राजिक (न०) चेना धान।

व्रीहिल—(वि०) [व्रीहि+इलच्] धान वाला।

√व्रुड्—भ्वा० पर० सक० आच्छादन करना। ढेर करना, जमा करना। अक० डूबना। व्रुडति, व्रुडिष्यति, अव्रुडीत्।

व्रैहेय—(वि०) [स्त्री०—व्रैहेयी] [व्रीहि+ढक्] धान के योग्य। धान के साथ बोया हुआ। (न०) धान का खेत, वह खेत जिसमें धान उग सके।

√व्ली—क्र्या० पर० सक० गमन करना, जाना। समर्थन करना। सहारा देना। चुनना, छांटना। व्लिनाति, व्लेष्यति, अव्लैषीत्।

√व्लेक्ष्—चु० उभ० सक० देखना। व्लेक्षयति—ते।

श

श—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला में तीसवां व्यञ्जन वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान प्रधानतया तालु है। अतः इसे तालव्य "श" कहते हैं। यह महाप्राण है और इसके उच्चारण में एक प्रकार का घर्षण होने के कारण इसे ऊष्म भी कहते हैं। यह आभ्यन्तर प्रयत्न के विचार से ईषत् स्पृष्ट है और इसमें बाह्य प्रयत्न श्वास और घोष होता है। —(न०) [√शी+ड] आनन्द, हर्ष।—(पुं०) हथियार। शिवजी का नाम।

शंयु—(वि०) [शं शुभम् अस्ति अस्य, शम्+युस्] शुभ-युक्त। समृद्धिमान् (पुं०) बृहस्पति के अपत्य एक ऋषि का नाम। एक प्रकार का सांप।

शंव—(वि०) [शम्+व] शुभान्वित। (पुं०) हल-चालन। इन्द्र का वज्र। खल्ल के दस्ते का लोहे वाला अग्रभाग।

शंवर—(न०) [शम्√वृ+अच्] जल।

√शंस्—(आ उपसर्गपूर्वक) भ्वा० आत्म० सक० इच्छा करना। आशंसते, आशंसिष्यते, आशंसिष्ट। भ्वा० पर० सक० प्रशंसा करना। कहना। वर्णन करना। प्रकट करना। पाठ करना। दुहराना। अनिष्ट करना। गाली देना। शंसति, शंसिष्यति, अशंसीत्।

शंसन—(न०) [√शंस्+ल्युट्] प्रशंसाकरण। कथन करना। वर्णन करना। पाठ करना।

शंसा—(स्त्री०) [√शंस्+अ—टाप्] प्रशंसा। अभिलाष, इच्छा। पुनरावृत्ति। वर्णन।

शंसित—(वि०) [√शंस्+क्त] प्रशंसित। कथित। घोषित। अभिलषित। निश्चित, निर्धारित। मिथ्या दोष लगाया हुआ, झूठा इलजाम लगाया हुआ।

शंसिन्—(वि०) [√शंस्+णिनि] प्रशंसा करने वाला। कहने वाला; 'प्रार्थनासिद्धिशंसिनः' र० १.४२। प्रकट करने वाला। भविष्य बताने वाला।

√शक्—दि० उभ० अक० योग्य होना, सकना। सक० सहन करना। शक्यति—ते, शक्ष्यति—ते. अशकत्—अशक्त। स्वा० पर० अक० शक्तिमान् होना। सकना। शक्नोति, शक्ष्यति, अशकत्।

शक—(पुं०) [√शक्+अच्] एक प्राचीन राजा का नाम, विशेष कर शालिवाहन का। शालिवाहन का चलाया शक (=वत्सर गणना (ईसा के सन् के ७८ वर्ष पीछे शक संवत्सर का आरम्भ होता है)। एक देश का नाम। एक जाति का नाम।—**अन्तक** (**शकान्तक**),—**अरि** (**शकारि**) (पुं०) विक्रमादित्य की उपाधि, जिसने शक जाति का उन्मूलन किया था।—**अब्द** (**शकाब्द**)-(पुं०) शालिवाहन का चलाया हुआ सवंत्सर।—**कर्तृ**,—**कृत्**-(पुं०) संवत्सर विशेष का चलाने वाला।

शकट—(न०, पुं०) [√शक्+अटन्] गाड़ी, छकड़ा। सैन्य-व्यूह विशेष। तौल विशेष जो छकड़ा भर या २००० पलों भर की होती थी। एक दैत्य का नाम जिसका वध श्री कृष्ण ने किया था। तिनिश वृक्ष।—**अरि**(**शकटारि**),—**हन्**-(पुं०) श्री कृष्ण की उपाधि।—**आह्वा** (**शकटाह्वा**)—(स्त्री०) रोहिणी नक्षत्र।—**बिल**-(पुं०) जल-कुक्कुट जातीय पक्षी विशेष।

शकटिका—(स्त्री०) [शकट+ङीष्+कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटी गाड़ी। गाड़ी का खिलौना।

शकट्या—(स्त्री०) [शकटानां समूहः, शकट+यत्—टाप्] शकटों का समूह।

शकन्—(न०) विष्ठा, मल विशेष कर पशुओं का।

शकल—(पुं०) [√शक्+कल] भाग, अंश, हिस्सा, टुकड़ा; 'उपलशकलमेतद्भेदकं गोमयानाम्' मु० ३.१५। चमड़ा। छाल। मछली का कांटा।

शकलित—(वि०) [√शकल+इतच्] टुकड़े-टुकड़े किया हुआ, खण्ड-खण्ड किया हुआ।

शकलिन्—(पुं०) [शकल+इनि] सकुची मछली।

शकार—(पुं०) राजा की रखैल या विनब्याही स्त्री का भाई। साहित्यदर्पणकार ने "अनूढाभ्राता" की परिभाषा इस प्रकार दी है:—मदमूर्खताभिमानी दुष्कुलतैश्वर्यसंयुक्तः। सोऽयमनूढाभ्राता राज्ञः श्यालः शकार इत्युक्तः॥ नाटक की भाषा में शकार मूर्ख, चंचल, अभिमानी, नीच तथा कठोर हृदय का दिखलाया जाता है।

शकुन—(न०) [शक्नोति शुभाशुभं विज्ञातुम् अनेन, √शक्+उनन्] सगुन, शुभ-सूचक चिह्न या लक्षण, किसी कार्य के समय दिखलाई देने वाले लक्षण जो उस काम के सम्बन्ध में शुभ या अशुभ की सूचना देते हैं। (पुं०) पक्षी; 'अन्तः कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः' उत्त० २.२५। चील। गिद्ध।—**ज्ञ**-(वि०) शकुनों को जानने वाला।—**शास्त्र**-(न०) वह शास्त्र जिसमें शकुनों पर विचार किया गया है।

शकुनि—(पुं०) [शक्नोति उन्नेतुम् आत्मानम्, √शक्+उनि] पक्षी। गीध। चील। मुर्गा। गान्धारराज सुबल के एक पुत्र का नाम जो धृतराष्ट्र की पत्नी गान्धारी का भाई और दुर्योधन का मामा था।—**ईश्वर**-(**शकुनीश्वर**)-(पुं०) गरुड़ का नाम।—**प्रपा**-(स्त्री०) कूंड़ा जिसमें पक्षियों के पीने के लिये जल भरा जाय।—**वाद**-(पुं०) चिड़ियों की बोली। मुर्गे की बांग।

शकुनी—(न०) [शकुन+ङीष्] श्यामा पक्षी। गौरैया पक्षी। पुराणानुसार एक पूतना

का नाम जो बड़ी क्रूर और भयंकर कही गयी है। सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बाल-ग्रह।

शकुन्त—(पुं०) [शक्नोति उत्पतितुम्, √शक्+उन्त] पक्षी, चिड़िया। नीलकण्ठ पक्षी। भास पक्षी।

शकुन्तक—(पुं०) [शकुन्त+कन्] पक्षी।

शकुन्तला—(स्त्री०) [शकुन्तैः पक्षिभिः लाल्यते पाल्यते, शकुन्त√ ला+क—टाप्] राजा दुष्यन्त की स्त्री जिसके गर्भ से राजा भरत का जन्म हुआ था (इन्हीं राजा भरत के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा है) शकुन्तला, मेनका अप्सरा की बेटी थी।

शकुन्ति—(स्त्री०) [शक्नोति उत्पतितुम्, √शक्+उन्ति] पक्षी।

शकुन्तिका—[शकुन्ति+कन्—टाप्] छोटी चिड़िया। टिड्डी।

शकुल—(पुं०), **शकुली**-(स्त्री०) [शक्नोति गन्तुम् वेगेन, √शक्+उरच्, रस्य लः] [शकुल+ङीष्] सौरा मछली ।—**अदनी** (**शकुलादनी**)—(स्त्री०)कुटकी या कटुकी। जटामांसी। गजपीपल। कायफल। गांडर दूब। केंचुआ।—**अर्भक**(**शकुलार्भक**)—(पुं०) गडुई मछली।

शकृत्—(न०)[√शक्+ऋतिन्] विष्ठा। गोबर। —**करि**-(पुं०) [शकृत्√कृ+इन्] बछवा, वत्स ।—**करी**-(स्त्री०) [शकृत्करि+ङीष्] बछिया ।—**द्वार** [**शकृद्द्वार**)- (न०) मल-द्वार, गुदा।

शक्कर, **शक्करि**—(पुं०) [√शक्+क्विप्, √कृ+अच्, कर्म० स०] बैल, वृष ।

शक्करी—स्त्री०) [शक्कर+ङीष्] नदी। मेखला। नीच जाति की औरत।

शक्त—(वि०) [√शक्+क्त] शक्ति-सम्पन्न, समर्थ, ताकतवर। योग्य, लायक। धनी, धनवान्। द्योतक, व्यञ्जक। चतुर। मिष्ट-भाषी, प्रियवादी।

शक्ति-(स्त्री०) [√शक्+क्तिन्]बल, सामर्थ्य। क्षमता, योग्यता। कवित्वशक्ति। किसी देवता का पराक्रम या बल जो किसी विशिष्ट कार्य का साधन माना जाता है। राज-शक्ति (प्रभु, मंत्र, उत्साह)। दुर्गा, लक्ष्मी, गौरी आदि देवियां। भाला। शून्य। तीर। न्यायदर्शनानुसार वह सम्बन्ध जो किसी पदार्थ और उसका बोध कराने वाले शब्द में होता है। शब्द की अर्थ-द्योतक शक्ति जो तीन मानी गयी है —अभिधा, लक्षणा और व्यञ्जना। शब्द की लक्षणा और व्यञ्जना शक्ति की उल्टी शक्ति। भग (तंत्र)। ईश्वर की वह कल्पित माया, जो उसकी आज्ञा से सब काम करने वाली और सृष्टि की रचना करने वाली मानी जाती है, प्रकृति।—**अर्घ** (**शक्त्यर्घ**)-(पुं०) शक्ति का अर्घ परिमाण (जब श्रम करने पर शरीर से पसीना निकले और दम फूले तब समझना चाहिये कि शक्ति का आधा प्रयोग हुआ है)।—**ग्रह**-(वि०) शक्ति ग्रहण करने वाला। भाला-धारी। (पुं०) शिव। कार्त्तिकेय। शब्द-शक्ति-ज्ञान, शब्द की अर्थबोधक वृत्ति की जानकारी।—**ग्राहक**-(पुं०) कार्त्तिकेय।—**धर**-(वि०) ताकतवर, बलवान्। (पुं०) भालाधारी व्यक्ति। कार्त्तिकेय।—**पाणि**,—**भृत्**-(पुं०) भालाधारी पुरुष। कार्त्तिकेय।—**पूजा**-(स्त्री०) शक्ति का शाक्त द्वारा होने वाला पूजन।—**वैकल्य**-(न०) शक्ति का नाश, कमजोरी; 'शक्तिवैकल्य-नम्रस्य'। निर्बलता।—**शाला**—(स्त्री०) यज्ञ के लिए तैयार की गई भूमि।—**हीन**—(वि०) निर्बल, कमजोर। नपुंसक।—**हेतिक**-(पुं०) भालाधारी पुरुष।

शक्तितस्—(अव्य०) [शक्ति+तस्] शक्ति भर, ताकत भर। यथाशक्ति।

शक्न, **शक्ल**—(वि०) [√शक्+न] [√शक्+क्ल] मिष्ठ-भाषी, मधुर-भाषी, प्रिय-वादी।

शक्य—(वि०) [√शक्+यत्] सम्भव, होने योग्य। करने योग्य। सहज में करने लायक; 'शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक्' भर्तृ० २.११। शब्द का वाच्य।

शक्र—(पुं०) [शक्नोति दैत्यान् नाशयितुम्, √शक्+रक्] इन्द्र का नाम। अर्जुन वृक्ष। कुटज वृक्ष। उल्लू। ज्येष्ठा। नक्षत्र। चौदह की संख्या।—**अशन** (**शक्राशन**)-(पुं०) कुटज वृक्ष।—**आख्य** (**शक्राख्य**)-(पुं०) उल्लू।—**आत्मज** (**शक्रात्मज**)-(पुं०) इन्द्रपुत्र जयन्त। अर्जुन।—**उत्थान** (**शक्रोत्थान**)-(न०),—**उत्सव** (**शक्रोत्सव**)-(पुं०) भाद्रशुक्ला १२ को किया जाने वाला इन्द्रोत्सव विशेष।—**गोप**-(पुं०) वीरवहूटी नामक कीड़ा।—**ज**, —**जात**-(पुं०) काक, कौवा।—**जित्**,—**भिद्**-(पुं०) रावणपुत्र मेघनाद की उपाधि।—**द्रुम**-(पुं०) देवदारु वृक्ष।—**धनुस्**,— **शरासन**-(न०) इन्द्र-धनुष।—**ध्वज**-(पुं०) वह पताका जो इन्द्र के उपलक्ष में खड़ी की जाय।—**पर्याय**-(पुं०) कुटज वृक्ष।—**पादप**-(पुं०) कुटज वृक्ष। देवदारु वृक्ष।—**भवन**,—**भुवन**-(न०),—**वास**-(पुं०) स्वर्ग।—**मूर्धन्**-(पुं०),—**शिरस्**-(न०) वल्मीक, वांबी।—**लोक**-(पुं०) इन्द्र-लोक, स्वर्ग।—**वाहन** (न०) वादल।—**शाखिन्**-(पुं०) कुटज वृक्ष।—**सारथि**- (पुं०) इन्द्र का रथवान, मातलि का नामान्तर।—**सुत**-(पुं०) जयन्त। अर्जुन। वालि।

शक्राणी—(स्त्री०) [शक्र + ङीष्, आनुक्] इन्द्र-पत्नी शची देवी।

शक्ति—(पुं०) [√शक्+क्तिन्] वादल। इन्द्र का वज्र। पहाड़। हाथी, गज।

शक्वर—(पुं०) [√शक्+वन्, र] वृष, वैल।

√शङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० सन्देह करना। डरना, भय मानना। अविश्वास करना। समझना। सोचना। कल्पना करना। आपत्ति या आशङ्का करना। शङ्कते, शङ्किष्यते, अशङ्किष्ट।

शङ्क—(पुं०) [√शङ्क् + घञ्] भय। आशंका। [√शङ्क्+अच्]वह वैल जो जोता जाय या छकड़ा खींचे।

शङ्कर—(वि०) [स्त्री०—**शङ्करी** या **शङ्करा**] [शम् √ कृ+अच्] शुभदायी, मङ्गलकारी। (पुं०) महादेव जी। हिन्दू-धर्म के एक आचार्य, शङ्कराचार्य।

शङ्करी—(स्त्री०) [शङ्कर+ ङीष्]पार्वती का नाम। मजीठ, मञ्जिष्ठा। शमी का पेड़।

शङ्का—(स्त्री०) [√शङ्क् + अ—टाप्] सन्देह, शक, अनिश्चयता। हिचकिचाहट, पसोपेश। अविश्वास। भय; 'जातशङ्कै-र्देवैर्मेनका नामाप्सरा प्रेषिता' श० १। डर। एक संचारी भाव।

शङ्कित—[शङ्का+इतच्] सन्देहयुक्त, संशय-ग्रस्त। भयभीत। अविश्वासपूर्ण।—**चित्त**, —**मनस्**-(वि०) डरपोक, भीरु। संशय-ग्रस्त। अविश्वासपूर्ण।

शङ्किन्—(वि०) [शङ्का+इनि] सन्देह करने वाला, संशयात्मा।

शङ्कु—(पुं०) [शङ्कतेऽस्मात्, √शङ्क्+कु] तीर, वाण। भाला, वरछा। कोई नुकीली वस्तु। मेख, कील; 'अयःशङ्कु-चितां रक्षः शतघ्नीमथ शत्रवे' र० १२.९५। खूँटी। खंभा, खूँटा। वाण की पैनी नोक। कटे हुए वृक्ष का तना। घड़ी की सुई। वारह अंगुल का माप। नापने का गज। दस लक्ष कोटि की संख्या, शङ्ख। पत्तों की नसें। वांबी। लिङ्ग, जननेन्द्रिय। एक प्रकार की मछली। दैत्य। विष, जहर। पाप। हंस। शिव। नखी नामक गंधद्रव्य। दांव। साल वृक्ष।—**कर्ण**-(वि०) वह जिसके कान शङ्कु के समान लंबे और नुकीले हों।— **कर्ण**-(पुं०) गधा।—**तरु**, —**वृक्ष** —(पुं०) साल के पेड़।

शङ्कुर—(वि०) [√शङ्क् + उरच् बा०] भयानक ।

शङ्कुला—(स्त्री०) [शङ्कु √ला + क—टाप्] सुपारी काटने का सरौता । एक प्रकार का नश्तर या छुरी ।—**खण्ड**—(पुं०) सरौता से काटा हुआ टुकड़ा ।

शङ्ख—(न०, पुं०) [√शम् + ख] एक प्रकार का बड़ा घोंघा, जिससे उसमें रहने वाले जन्तु को निकाल कर लोग बजाने के काम में लाते हैं । माथे की हड्डी । कनपटी की हड्डी । हाथी का गण्ड-स्थल । दस खर्व की संख्या, एक लाख करोड़ । मारूबाजा या ढोल । नखी नामक सुगन्ध द्रव्य । कुबेर की नवनिधियों में से एक । एक दैत्य का नाम जिसे भगवान् विष्णु ने मारा था । लिखित के भाई शङ्ख जिनकी लिखी स्मृति प्रसिद्ध है । चरण-चिह्न । राजा विराट का पुत्र ।—**उदक** (**शङ्खोदक**)—(न०) शंख में डाला हुआ जल ।—**कार**,—**कारक** (पुं०) पुराणानुसार एक वर्ण-सङ्कर जाति, जिसकी उत्पत्ति शूद्र माता और विश्वकर्मा पिता से मानी जाती है । इस जाति के लोगों का काम शंख की चीजें बनाना है ।—**चरी**, —**चर्चो**—(स्त्री०) चंदन का टीका ।—**द्राव**,—**द्रावक**—(पुं०) एक प्रकार का अर्क जिसमें शङ्ख भी गल जाता है ।—**ध्म**, —**ध्मा**—(पुं०) शङ्ख बजाने वाला ।—**ध्वनि**—(पुं०) शङ्ख की आवाज ।—**नख**— (पुं०),— **नखा**—(स्त्री०) छोटा शंख । नखी, नामक गंध-द्रव्य ।—**प्रस्थ**—(पुं०) चन्द्र-कलङ्क ।—**भृत्**—(पुं०) विष्णु ।—**मुख**—(पुं०) मगर, घड़ियाल ।—**स्वन**—(पुं०) शङ्ख की आवाज ।

शङ्खक—(न०, पुं०) [शङ्ख + कन्] शंख । कनपटी की हड्डियां । (पुं०) शंख का बना कड़ा; 'प्रचलत्कलापिकलशङ्खकस्वना' शि० १३.४२ ।

शङ्खिन्—(पुं०) [शंख + इनि] समुद्र । विष्णु । शंख बजाने या बनाने वाला, शाङ्खिक ।

शङ्खिनी—(स्त्री०) [शङ्खिन् + ङीप्] स्त्रियों के पद्मिनी आदि चार भेदों में से एक [चार भेद—शङ्खिनी, पद्मिनी, चित्रिणी, हस्तिनी]। एक प्रकार की अप्सरा । गुदा द्वार की नस । मुँहकी की नाड़ी । एक देवी का नाम । बौद्धों की पूजने की शक्ति । एक तीर्थ-स्थान । एक वनौषधि ।

√शच्—भ्वा० आत्म० सक० बोलना, कहना । शचते, शचिष्यते, अशचिष्ट ।

शचि, शची—(स्त्री०) [शच्+इन्] [शचि+ङीष्] इन्द्र की स्त्री का नाम ।—**पति**,—**भर्तृ**—(पुं०) इन्द्र ।

√शट्—भ्वा० पर० अक० बीमार होना । दुःखी होना । सक० जाना । पृथक् करना । शटति, शटिष्यति, अशटीत्—अशाटीत् ।

शट—(वि०) [√शट् + अच्] खट्टा ।

शटा—(स्त्री०) [शट + टाप्] जटा । सिंह का अयाल, बाल, सटा ।

शटि—(स्त्री०) [√शट् + इन्] कचूर । गन्धपलाशी, कपूरकचरी । अमिया हल्दी, आम्रहरिद्रा । नेत्रबाला, सुगन्धवाला ।

√शठ्—भ्वा० पर० सक० छलना, ठगना । मार डालना । पीड़ित करना । शठति, शठिष्यति, अशठीत्—अशाठीत् । चु० पर० अक० आलस्य करना । सक० भर्त्सना करना । समाप्त करना । असम्पूर्ण या अधूरा छोड़ देना । जाना । धोखा देना । शाठयति —शठयति ।

शठ—(वि०) [√शठ् + अच्] छलिया, कपटी, दगाबाज, धूर्त । लम्पट । मूढ़ । आलसी । जड़ । दुष्ट । (न०) लोहा । केसर । कुङ्कुम । (पुं०) साहित्य में पांच प्रकार के नायकों में से एक । यह नायक किसी दूसरी स्त्री के साथ प्रेम करते हुए भी अपनी स्त्री से प्रेम प्रदर्शित करने का

कपट रचता है; 'ध्रुवमस्मि शठः शुचिस्मिते! विदितः कैतववत्सलस्तव' र० ८.४९। वह जो झगड़ने वाले दो आदमियों के बीच में पड़ कर उनका झगड़ा निपटाता है, पंच, मध्यस्थ। धतूरे का पौधा।

√शण्—भ्वा० पर० सक० दान करना। जाना। शणति, शणिष्यति, अशणीत्—अशाणीत्।

शण—(न०) [√शण् + अच्] सन, पटसन।—सूत्र—(न०) सन की डोरी, सुतली। सन का बटा हुआ जाल। पाल की रस्सी।

√शण्ड्—भ्वा० आत्म० अक० बीमार होना। एकत्रित होना। शण्डते, शण्डिष्यते, अशण्डिष्ट।

शण्ड—(न०) [शण्ड् + अच्] समूह। (पुं०) नपुंसक, हिजड़ा। वृष, बैल। सांड़ जो छोड़ दिया जाता है।

शण्ढ—(पुं०) [शाम्यति ग्राम्यधर्मात् √शम् + ढ] नपुंसक, हिजड़ा। खोजा जो रनवास में काम करते हैं। पागल आदमी।

शत—(न०) [दश दशतः परिमाणम् अस्य, दशन्+त, श आदेश नि० साधुः] सौ की संख्या। (वि०) सौ। असंख्य। (शतवाचक शब्द—धार्तराष्ट्र, शतभिषा-तारा, पुरुषायुष, रावणांगुलि, पद्म-दल, इन्द्र-यज्ञ, अब्धि-योजन।—**अक्षी** (**शताक्षी**) —(स्त्री०) रात, दुर्गा देवी। —**अङ्ग** (**शताङ्ग**)— (पुं०) युद्ध का रथ।—**अनीक** (**शतानीक**)— (पुं०) बूढ़ा मनुष्य। श्वशुर। जनमेजय के पुत्र और सहस्रानीक के पिता। राजा सुदास के पुत्र। नकुल के पुत्र। व्यास के एक शिष्य।—**अर**, —**आर** (**शतार**)— (न०) इंद्र का वज्र।—**आनक** (**शतानक**)—(न०) श्मशान, कबरगाह।—**आनन** (**शतानन**)—(पुं०) बिल्व, बेल।—**आनन्द** (**शतानन्द**)—(पुं०) ब्राह्मण का नाम। विष्णु या कृष्ण। विष्णु के रथ का नाम। गौतम के पुत्र का नाम जो राजा जनक के पुरोहित थे।—**आयुस्** (**शतायुस्**)—(वि०) सौ वर्ष तक रहने वाला या जीने वाला। —**आवर्त** (**शतावर्त**)—**आवर्तिन्** (**शतावर्तिन्**) —(पुं०) विष्णु।—**ईश** (**शतेश**)—(पुं०) सौ पर शासन करने वाला। सौ गांव का ठाकुर।—**कुम्भ**—(पुं०) पर्वत विशेष जहां सुवर्ण पाया जाता है। (न०) सुवर्ण, सोना। —**कोटि**— (वि०) सौ धार का। (पुं०) इन्द्र का वज्र। (स्त्री०) सौ करोड़।—**क्रतु**— (पुं०) इन्द्र।—**खण्ड**—(न०) सुवर्ण।—**गु**— (वि०) सौ गौ रखने वाला। —**गुण**, —**गुणित**—(वि०) सौगुना। सौगुना अधिक।—**ग्रन्थि**—(स्त्री०) दूर्वा, दूब।—**घ्नी** — (स्त्री०) प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र जो किसी बड़े पत्थर या लकड़ी के कुंदे में बहुत से कील कांटें ठोंक कर बनाया जाता था और युद्ध में शत्रुओं पर वार करने के काम में आता था। बिच्छू की मादा। कण्ठरोग।—**जिह्व**— (पुं०) शिव जी।—**तारका**—**भिषज्**, —**भिषा**—(स्त्री०) २४वें नक्षत्र का नाम।—**दला**—(स्त्री०) सफेद गुलाब। —**द्रु**—(स्त्री०) सतलज नदी का नाम।—**धामन्**—(पुं०) विष्णु।—**धार**—(वि०) सौ धारों वाला। (न०) वज्र।—**धृति**—(पुं०) इन्द्र। ब्राह्मण। स्वर्ग।—**पत्र**—(पुं०) मोर। सारस। कठफोड़वा नामक पक्षी। तोता। मैना। (न०) कमल।—**योनि**— (पुं०) ब्रह्मा। —**पत्रक**—(पुं०) कठफोड़वा पक्षी।—**पत्रा**— (स्त्री०) स्त्री। दूब।—**पथिक**— (वि०) कई रास्तों पर चलने वाला। कई मतों का मानने वाला।—**पाद**— (वि०) सौ पैरों वाला।—**पादी**—(स्त्री०) कनखजरा, गोजर।—**पद्म**—

(न०) सफेद कमल ।—**पर्वन्**–(पुं०) वांस ।—**पर्वा**– (स्त्री०) आश्विन मास की पूर्णिमा । सफेद दूव । कटुकी का पौधा । **भीरु**– (स्त्री०) मल्लिका, चमेली ।—**मख**, —**मन्यु**–(पुं०) इन्द्र; 'प्रसहेत रणे तवानुजान्द्विषतां कः शतमन्युतेजसः' कि० २.२३ । उल्लू ।— **मुख**–(वि०) सौ द्वार या निकास वाला ।—**मुखी**–(स्त्री०) दुर्गा । झाड़ू ।—**मूला** –(स्त्री०) दूर्वा, दूव । वच । वड़ी शतावरी । —**यज्वन्**–(पुं०) इन्द्र का नाम ।—**यष्टिक**–(पुं०) सौ लड़ियों का हार ।—**रूपा**– (स्त्री०) ब्रह्मा की पुत्री का नाम ।—**वर्ष**–(न०) शताब्दी, सदी ।—**वेधिन्**–(पुं०) चूक या चुक्रिका नामक साग ।—**सहस्र**–(न०) सौ हजार । हजारों ।—**साहस्र**–(वि०) जिसमें कितने ही हजार हों । एक लक्ष मूल्य देकर खरीदा हुआ ।—**ह्रदा**–(स्त्री०) विजली; 'वलाकिनी नीलपयोदराजिर्दूरं पुरः क्षिप्तशतह्रदेव' कु० ७.३९ । इन्द्र का वज्र ।

शतक—(वि०) [शत+कन्] सौ । सौ वाला । (न०) शताव्दी । सौ का समूह । एक ही तरह की सौ चीजों का संग्रह ।

शतकृत्वः—(अव्य०) [शत+कृत्वसुच्] सौ वार ।

शततम—(वि०) [स्त्री०—**शततमी**] [शत+तमप्] सौवां ।

शतधा—(अव्य०) [शत + धाच्] सौ प्रकार से । सौ हिस्सों या टुकड़ों में ।

शतशस्—(अव्य०) [शत+शस्]सौ वार । सैकड़ों प्रकार से ।

शतिक—(वि०) [शत+ठन्] जो सौ से खरीदा गया हो । सौ का ।

शत्य—(वि०) [शत + यत्] सौ देकर खरीदा हुआ । सौ वाला या सौ से बना हुआ । सौ सम्वन्धी । सौ के हिसाव से कर या व्याज देने वाला । सौ वतलाने वाला, सौ का व्यञ्जक ।

शत्रि—(पुं०) [√शद्+त्रिप्] हाथी । एक राजर्षि । वल ।

शत्रु—(पुं०) [√शद्+त्रुन्] वह जिसके साथ भारी विरोध या वैमनस्य हो, दुश्मन । एक असुर । नागदमन नामक वनस्पति ।—**उपजाप** (**शत्रूपजाप**)–(पुं०) शत्रु की गुप-चुप कानाफूसी । शत्रु का विश्वासघात ।— **कर्षण**, —**दमन**,—**निवर्हण**–(न०) शत्रु का दवाना या नाश करना ।—**घ्न**–(पुं०) [शत्रु√हन् + क] शत्रु का नाश करने वाला व्यक्ति । दशरथ महाराज के चतुर्थ पुत्र का नाम ।—**पक्ष**–(पुं०) शत्रु का पक्ष, विरोधी दल । —**विनाशन**–(पुं०) शिव जी का नाम ।—**हन्**–(वि०) शत्रु । शत्रु को मारने वाला ।

शत्रुञ्जय—(वि०) [शत्रु√ जि+ खच्, मुम्] शत्रु को जीतने वाला ।(पुं०) हाथी । एक पर्वत का नाम ।

शत्रुन्तप—(वि०) [शत्रु√तप् + खच्, मुम्] शत्रु का नाश करने वाला या शत्रु को जीतने वाला ।

शत्वरी—(स्त्री०) रात ।

√शद्—भ्वा० पर० अक० पतन होना । नाश होना । सड़ना । कुम्हलाना । सक० जाना । काटना । नाश करना । गिराना । शीयते, शत्स्यति, अशदत् ।

शद—(पुं०) [√शद्+अच्] शाक, मूल आदि खाद्य-वस्तु ।

शद्रि—(पुं०) [√शद् + क्रिन्] हाथी । वादल । अर्जुन का नाम ।(स्त्री०) विजली । टुकड़ा ।

शद्रु—(वि०) [शद्+रु] गिरने वाला । नष्ट होने वाला । चलने वाला ।

शनकैस्—(अव्य०) [शनैः+अकच्] धीरे-धीरे ।

शनि—(पुं०)[√शो+अनि] शनि नामक ग्रह । शनिवार । शिव जी का नाम ।—**ज**–

(न०) काली मिर्च ।—प्रदोष–(पुं०) जब शुक्ला १३ शनिवार को पड़े, तब प्रदोष कहलाता है और उस दिन शिव जी के पूजन का विशेष माहात्म्य है ।—प्रिय–(न०) नीलम मणि ।—वार, —वासर—(पुं०) शनिवार ।

शनैस्—(अव्य०) [√शद्+डैस्, पृषो० नुक्] धीमे । चुपचाप । क्रमशः। थोड़ा-थोड़ा । सिलसिलेवार । कोमलता से ।—**चर** (**शनैश्चर**)–(पुं०) शनिवार, ग्रह । (वि०) धीरे-धीरे चलने वाला; 'शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा' भर्तृ० १.१७ ।

शन्तनु—(वि०) [शं मङ्गलात्मिका तनुः यस्य, ब० स०] शुभ या सुंदर शरीर वाला । (पुं०) एक चन्द्रवंशीय राजा, भीष्म के पिता ।

√शप्—भ्वा०, दि० उभ० सक० शाप देना । शपथ खाना । डांटना, धिक्कारना । शपति—ते, (दि०) शप्यते—ते, शप्स्यति—ते, अशाप्सीत्—अशप्त ।

शप—(पुं०) [√शप्+अच्] शाप, अकोसा । शपथ, कसम ।

शपथ—(पुं०) [√शप्+अथ] अकोसा, बददुआ । अभिशप्त वस्तु, अभिशाप का पात्र । कसम, किरिया । किरिया में बांधने की क्रिया ।

शपन—(न०) [√शप् + ल्युट्] शाप देना । शपथ करना । गाली ।

शप्त—(वि०) [√शप्+क्त] शाप दिया हुआ । शपथ खाया हुआ । गरियाया हुआ ।

शफ—(न०, पुं०) [√शम् + अच्, पृषो० मस्य फः] खुर । पेड़ की जड़ । नखी नामक गंध-द्रव्य ।

शफर—(पुं०) [स्त्री०—**शफरी**] [शफ √रा+क] एक छोटी मछली जिसके शरीर में चमक होती है, पोठी मछली; 'मोघीकर्तुं चटुलशफरोद्वर्तनप्रेक्षितानि' मे० ४० ।—**अधिप** (**शफराधिप**)–(पुं०) इलिशा या हिलसा मछली ।

शबर, शवर—(पुं०) [√शव् + अरन्] भारतवासी एक पहाड़ी और असभ्य जाति । जंगली मनुष्य । शिव जी । हाथ । जल । मीमांसा शास्त्र के एक प्रसिद्ध भाष्यकार । —**लोध्र**–(पुं०) जंगली लोध्रवृक्ष ।

शबरी, शवरी—(स्त्री०) [शब (व) र +ङीष्] शबर जातीय स्त्री । शबर जाति की एक स्त्री, जिसका श्रीरामचन्द्र जी ने उद्धार किया था ।

शबल, शवल—(वि०) [√शप् + कल, पस्य बः] [√शब् + कलन्] चितकबरा, रंग-बिरंगा । कई भागों में विभक्त । (न०) जल । (पुं०) चितकबरा रंग ।

शबला, शवला, शबली, शवली—(स्त्री०) [शब (व) ल+टाप्] [शब (व) ल +ङीष्] चितकबरी या रंगबिरंगी गौ । काम धेनु ।

√शब्द्—चु० उभ० अक० सक० शब्द करना, शोर करना, बोलना । बुलाना । पुकारना । नाम लेना, नाम लेकर पुकारना । शब्दयति—ते, शब्दयिष्यति—ते, अशशब्दत्—त ।

शब्द—(पुं०) [√शब्द् + घञ्] आवाज, ध्वनि । शब्द के चार विषय-विभाग हैं—जाति-शब्द=जातिवाचक संज्ञायें; जैसे गौ । गुण-शब्द=गुणवाचक, जैसे शुक्ल, पीत; क्रिया-शब्द = क्रियावाचक, जैसे पाचक; यदृच्छा-शब्द=अर्थशून्य, संकेत मात्र, व्यक्तिवाचक, जैसे डित्थ, कपित्थ । सब शब्द इन चार विभागों में आ जाते हैं। संज्ञा। उपाधि, पदवी । नाम । मौखिक प्रमाण ।—**अधिष्ठान** (**शब्दाधिष्ठान**)–(न०) कान । —**अनुशासन** (**शब्दानुशासन**)–(न०) व्याकरण । —**अलङ्कार** (**शब्दालङ्कार**)–

(पुं०) वह अलङ्कार जिसमें केवल शब्दों या वर्णों के विन्यास से भाषा में लालित्य उत्पन्न होता है। —**आख्येय (शब्दाख्येय)**—(वि०) जोर से या चिल्ला कर कहा जाने वाला।—(न०) जबानी संदेशा या पैगाम।—**आडम्बर (शब्दाडम्बर)**—(पुं०) बड़े-बड़े शब्दों का ऐसा प्रयोग जिसमें भाव की न्यूनता हो।—**कोश**—(पुं०) वह ग्रन्थ जिसमें अक्षर-क्रम से या समूह-क्रम से शब्दों के अर्थ या पर्यायवाची शब्दों का संग्रह किया गया हो, अभिधान, लुगत।—**ग्रह**— (पुं०) कान।—**चातुर्य**—(न०) शब्द-प्रयोग सम्बन्धी चतुरता, वाग्मिता। —**चित्र**—(न०) अनुप्रास नामक अलङ्कार। साहित्य-रचना का एक नवीन प्रकार जिसमें शब्दों द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति आदि का रूप खड़ा कर दिया जाता है (स्केच)।—**पति**— (पुं०) नाममात्र का स्वामी या मालिक; 'ननु शब्दपतिः क्षितेरहं त्वयि मे भाव-निबन्धना रतिः' र० ८.४२।— **पातिन्**—(वि०) शब्द-वेधी (निशाना) लगाने वाला।—**प्रमाण**—(न०) वह प्रमाण या साक्षी जो किसी के कथन पर निर्भर हो।—**ब्रह्मन्**—(न०) वेद। ब्रह्म-जीव का ज्ञान, आध्यात्मिक ज्ञान।—**भेदिन्**—(वि०) शब्द को सुन कर निशाना बेधने वाला।—(पुं०) अर्जुन। दशरथ। बाण विशेष।—**योनि**— (स्त्री०) शब्द का उत्पत्ति-स्थान। धातु।— **विद्या**—(स्त्री०), —**शासन**, —**शास्त्र** – (न०) व्याकरण शास्त्र; 'अनन्तपारं किल शब्दशास्त्रम्' पं० १।—**विरोध**—(पुं०) वाचिक विरोध।—**वेधिन्**—(वि०) दे० 'शब्दभेदिन्'। —**शक्ति**—(स्त्री०) शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा उस शब्द से कोई विशेष भाव प्रदर्शित होता है।—**शुद्धि**—(स्त्री०) शब्द का शुद्ध प्रयोग।—**श्लेष**—(पुं०) वह शब्द जो दो या अधिक अर्थों में व्यवहृत किया जाय।—**संग्रह**—(पुं०) शब्द-कोष।—**सौकर्य**—(न०) शब्द-व्यवहार की सरलता।—**सौष्ठव**—(न०) किसी लेख या शैली आदि में प्रयुक्त किये हुए शब्दों की सुन्दरता या कोमलता।

शब्दन—(वि०) [शब्दं कर्तुं शीलम् अस्य, √शब्द्+युच्] शब्द करने वाला, बजने वाला। (न०) [√शब्द्+ल्युट्] शब्द-मात्र। ध्वनि। कोलाहल। पुकारना, बुलाहट। नाम लेकर पुकारने की क्रिया।

शब्दित—(वि०) [√शब्द्+क्त] शब्द किया हुआ। कथित। उच्चारित। पुकारा हुआ। नामाङ्कित किया हुआ।

√शम्—दि० पर० अक० चुप होना, शान्त होना। सक० बंद करना। समाप्त करना। बुझाना। नाश करना। मार डालना। शाम्यति, शमिष्यति, अशमत्। चु० आत्म० सक० देखना। शामयते।

शम्—(अव्य०) [√शम् + क्विप्] कुशलता, प्रसन्नता, समृद्धि, स्वस्थता आदि का सूचक अव्यय।

शम—(पुं०) [√शम् + घञ्] शान्ति; 'शमरतेऽमरतेजसि पार्थिवे' र० ९.४। मोक्ष। हाथ। उपचार। इन्द्रिय-निग्रह। सर्वकर्म-निवृत्ति। निवृत्ति। क्षमा। तिरस्कार। शान्त रस का स्थायी भाव।

शमथ—(पुं०) [√शम् + अथ] शान्ति, निस्तब्धता। मन की शान्ति। मन्त्री।

शमन—(वि०) [स्त्री०—**शमनी**] [√शम्+ल्यु] शान्तकारी, शमनकारी। यम। एक मृग। (न०) [√शम्+ल्युट्] शान्त करना। शान्ति, निस्तब्धता। अवसान, समाप्ति। नाश। अनिष्ट। बलि के लिये पशु-हनन। चबाना।—**स्वसृ**—(स्त्री०) यम की बहिन, यमुना नदी का नामान्तर।

शमनी—(स्त्री०) [शमन+ङीप्] रात । —**षद्**-(पुं०) निशाचर, राक्षस ।

शमल—(न०) [√शम्+कल]विष्ठा, मल । छानन, तलछट । पाप, नैतिक अपवित्रता ।

शमि—(स्त्री०) [√शम् + इन्] शिम्बि-धान्य —मूँग, मटर, उड़द, चना, अरहर आदि । शमी वृक्ष, सफेद कीकर । (पुं०) यज्ञ या यज्ञ रूप कर्म ।

शमित—(वि०) [√शम् + णिच्+क्त] शान्त किया हुआ, खामोश किया हुआ । स्वस्थ किया हुआ, निरोग किया हुआ । ढीला किया हुआ । नरम किया हुआ ।

शमिन्—(वि०) [शम + इनि] शान्त, निस्तब्ध । संयमी, जितेन्द्रिय ।

शमी—(स्त्री०) [शमि+ङीष्] छेंकुर का पेड़, सफेद कीकर; 'शमीमिवाभ्यन्तर-लीनपावकां' र० ३.९ । शिम्बि धान्य—मूँग, मसूर, मोठ, उड़द, चना, अरहर, मटर, कुलथी, लोबिया आदि ।—**गर्भ**-(पुं०) अग्नि । अग्निहोत्री ब्राह्मण । —**धान्य**- (न०) वह अनाज जो छीमियों से निकले ।

शम्पा—(स्त्री०) [शम्√पा+क—टाप्] बिजली ।

√शम्ब्—चु० पर० सक० जमा करना, संग्रह करना । शम्बयति, शम्बयिष्यति, अशशम्बत् ।

शम्ब—(वि०) [√शम् + वन्, वा शम् +व] प्रसन्न । भाग्यवान् । निर्धन । अभागा । (पुं०) इन्द्र का वज्र । मूसल के सिरे पर लगी लोहे की गड़ारी के ढंग की वस्तु जिससे अन्न आदि कूटने में सुविधा होती है । लोहे की जंजीर जो कमर के चारों ओर पहनी जाय । नियमित रूप से हल चलाने की क्रिया । जुते हुए खेत को पुनः जोतने की क्रिया ।

शम्बर—(न०) [शम्√ वृ+अच्] जल । मेघ । धन-दौलत । धर्मानुष्ठान, धर्मकृत्य । (पुं०) एक दैत्य का नाम जिसे प्रद्युम्न ने मारा था । एक पर्वत । साबर मृग । चित्रक वृक्ष । लोध्र वृक्ष। अर्जुन वृक्ष । एक राक्षस । मत्स्य विशेष । संग्राम, युद्ध ।—**अरि** (**शम्बरारि**), —**सूदन** -(पुं०) प्रद्युम्न की उपाधियाँ ।

शम्बरी—(स्त्री०) [शम्बर+ङीष्] इन्द्र-जाल, जादूगरी । स्त्री ऐन्द्रजालिक, जादूगरनी । आखुपर्णी लता ।

शम्बल—(पुं०, न०)[√शम्ब् + कलच्] समुद्रतट । पाथेय। रास्ते में खाने का भोजन । डाह, ईर्ष्या ।

शम्बली—(स्त्री०) [शम्बल + ङीष्] कुटनी ।

शम्बु, शम्बुक, शम्बुक्क—(पुं०) [√शम्ब् +उण् वा कु] [शम्बु+कन् वा√शम् +उक, वुगागम] घोंघा ।

शम्बूक—(पुं०) [√शम्ब् + ऊन् +कन्] घोंघा । शङ्ख । हाथी की सूँड़ का अगला भाग । एक शूद्र तपस्वी का नाम जिसके अन-धिकार कर्म करने पर श्रीरामचन्द्र जी ने उसे जान से मार डाला था ।

शम्भ- (पुं०) [शम् अस्ति अस्य, शम् +भ] प्रसन्न पुरुष । इन्द्र का वज्र ।

शम्भली—(स्त्री०) [शम्भल +ङीष्] कुटनी ।

शम्भु—(वि०) [शम् मङ्गलं भवति अस्मात्, शम्√भू + डु] आह्लादकारी, आनन्द-दायी । (पुं०) शिव । ब्रह्मा । ऋषि । सिद्ध-पुरुष ।—**तनय**, —**नन्दन**, —**सुत**-(पुं०) कार्त्तिकेय । गणेश ।—**प्रिया** -(स्त्री०) पार्वती । आमलकी ।—**वल्लभ**- (न०) सफेद कमल ।

शम्या—(स्त्री०) [√शम्+यत्—टाप्] काठ की छड़ी या खंभा । डंडा । जुआ की खूँटी । करताल । यज्ञीय पात्र विशेष ।

शय—(वि०) [स्त्री०—**शया, शयी**] [√शी+अच् वा घ] सोने वाला; 'रात्रिजागरपरो दिवाशयः' र० १९.३४ । (पुं०) निद्रा, नींद । सेज, शय्या । हाथ । अजगर । शाप । दाँव ।

शयण्ड—(वि०) [√शी + अण्डन्] निद्रालु, जिसे नींद आई हो ।

शयथ—(वि०) [√शी + अथ] निद्रालु । (पुं०) मृत्यु । अजगर सर्प । शूकर । मछली । गाढ़ निद्रा । यम ।

शयन—(न०) [√शी + ल्युट्] निद्रा, शय्या । स्त्री-प्रसंग, मैथुन ।—**आगार** (**शयनागार**)–(पुं०, न०),—**गृह**–(न०) सोने का घर, शयनगृह ।—**एकादशी** (**शयनैकादशी**)– (स्त्री०) आषाढ़-शुक्ला एकादशी, जब भगवान् विष्णु शयन करना आरम्भ करते हैं ।—**सखी**–(स्त्री०) एक सेज पर साथ सोने वाली सहेली ।—**स्थान**– (न०) शयन-गृह ।

शयनीय—(न०) [√शी + अनीयर्] सेज, शय्या; 'परिशून्यं शयनीयमद्य मे' र० ८.६६ । (वि०) शयन करने योग्य ।

शयानक—(पुं०) [√शी + शानच्+कन्] गिरगिट । अजगर सर्प ।

शयालु—(वि०) [√ शी + आलच्] निद्रालु । आलसी । (पुं०) अजगर सर्प । कुत्ता । गीदड़, शृगाल ।

शयित—(वि०) [√ शी+क्त] सोया हुआ, सुप्त । लेटा हुआ ।

शयु—(पुं०) [√शी + उ] बड़ा सर्प, अजगर ।

शय्या—(स्त्री०) [√शी + क्यप्—टाप्] सेज । बिछौना, बिस्तर । खाट, पलँग आदि ।—**अध्यक्ष** (**शय्याध्यक्ष**),—**पाल**–(पुं०) राजा के शयनागार का प्रबन्धक ।—**उत्सङ्ग** (**शय्योत्सङ्ग**)–(पुं०) सेज की बगल या मध्य-स्थान ।—**गत**–(वि०) सेज पर लेटा हुआ । बीमार ।—**गृह**–(न०) शयनागार ।

शर—(न०) [शृ + अप्] जल । (पुं०) वाण, तीर । एक प्रकार का नरकुल या सरपत । खस । हिंसा । चिता । मलाई । पाँच की संख्या ।—**अग्र्य** (**शराग्र्य**)–(पुं०) उत्तम वाण ।—**अभ्यास** (**शराभ्यास**)–(पुं०) तीरंदाजी ।—**असन** (**शरासन**),—**आस्य** (**शरास्य**)– (न०) धनुष, कमान ।—**आक्षेप** (**शराक्षेप**)–(पुं०) वाण चलाना । तीर की वर्षा ।—**आरोप** (**शरारोप**),—**आवाप** (**शरावाप**)-(पुं०) धनुष, कमान ।—**आश्रय** (**शराश्रय**)–(पुं०) तूणीर, तरकस ।—**ईषिका** (**शरेषिका**)—(स्त्री०) तीर, वाण ।—**इष्ट** (**शरेष्ट**)-(पुं०) आम का पेड़ । **ओघ** (**शरौघ**)-(पुं०) वाणों का समूह । वाण-वर्षा ।—**काण्ड**-(पुं०) नरकुल । वाण की लकड़ी ।—**घात**-(पुं०) तीरंदाजी ।—**ज**-(न०) ताजा या टटका मक्खन ।—**जन्मन्**-(पुं०) कार्त्तिकेय ।—**धि**-(पुं०) तूणीर, तरकस ।—**पुङ्ख**–(पुं०),—**पुङ्खा** (स्त्री०) तीर का वह भाग जहां पर लगे होते हैं । **फल**-(न०) तीर की पैनी नोक जहाँ नुकीला लोहा लगा होता है ।—**भङ्ग** (पुं०) एक ऋषि, जो दण्डक वन में श्री रामचन्द्र जी से मिले थे । —**भू**-(पुं०) कार्त्तिकेय ।—**मल्ल**-(पुं०) धनुर्धर ।—**वन** (**वण**)-(न०) सरपत का वन ।—**वाणि**-(पुं०) तीर का सिरा । धनुर्धर, तीरंदाज । तीर बनाने वाला । पैदल सिपाही ।—**वृष्टि**-(स्त्री०) तीरों की वर्षा ।—**व्रात**- (पुं०) वाण-समूह ।—**सन्धान**-(न०) तीर का निशाना बाँधना ।—**सम्बाध** -(वि०) तीरों से ढका हुआ ।—**स्तम्ब**-(पुं०) सरपत का गट्ठर ।

शरट—(पुं०) [√शॄ+अटन्] गिरगिट । कुसुंभ नामक साग ।

शरण—(न०) [शृणाति दुःखम् अनेन, √शॄ+ल्युट्] रक्षा, आड़, आश्रय, पनाह। आश्रय-स्थल, वचाव की जगह; 'सन्तप्तानां त्वमसि शरणं' मे० ७। घर। रक्षक। विश्राम-स्थल, आराम करने की जगह। हिंसन, वध।—**अर्थिन्** (**शरणार्थिन्**),—**एषिन्** (**शरणैषिन्**)-(वि०) रक्षा चाहने वाला, आसरा ताकने वाला।—**आगत** (**शरणागत**),—**आपन्न** (**शरणापन्न**)-(वि०) रक्षा करवाने को आया हुआ, शरण में आया हुआ।—**उन्मुख** (**शरणोन्मुख**)-(वि०) रक्षा करवाने को इच्छुक।

शरण्ड—(पुं०) पक्षी। गिरगिट। ठग। लंपट। आभूषण विशेष।

शरण्य—(वि०) [शरण+य] शरण देने योग्य। दीन, असहाय। शरण में आये हुए की रक्षाकरने वाला। (न०) आश्रय-स्थल। रक्षा, वचाव। (पुं०) शिवजी की उपाधि।

शरण्यु—(पुं०) [√शॄ+अन्यु] रक्षक। वादल। पवन।

शरद्—(स्त्री०) [√शॄ+अदि] एक ऋतु जो आश्विन और कार्त्तिक मास में मानी जाती है। वर्ष, साल।—**अन्त** (**शरदन्त**) (पुं०) जाड़े का मौसम।—**अम्बुधर** (**शरदम्बुधर**)-(पुं०) शरत्कालीन वादल।—**उदाशय** (**शरदुदाशय**)-(पुं०) शरत्कालीन झील।—**कामिन्** (**शरत्कामिन्**)-(पुं०) कुत्ता।—**काल** (**शरत्काल**)-(पुं०) शरत् ऋतु।—**घन**,—**मेघ** (**शरन्मेघ**)-(पुं०) शरत्कालीन मेघ।—**चन्द्र** (**शरच्चन्द्र**)-(पुं०) शरत् ऋतु का चन्द्रमा।—**पद्म** (**शरत्पद्म**)-(पुं०, न०) सफेद कमल।—**पर्वन्** (**शरत्पर्वन्**)-(न०) क्वार महीने की पूर्णिमा। कोजागर-उत्सव।—**मुख** (**शरन्मुख**)-(न०) शरत्ऋतु का आरम्भ।

शरदा—(स्त्री०) [शरद्+टाप्] शरत् ऋतु। वर्ष।

शरदिज—(वि०) [शरदि जायते,√जन्+ड, सप्तम्या अलुक्] जो शरत् ऋतु में उत्पन्न हो, शरत्कालीन।

शरभ—(पुं०) [√शॄ+अभच्] हाथी का बच्चा। आठ पैरों वाला एक जन्तु जिसका वर्णन पुराणों में पाया जाता है, किन्तु वह देखने में नहीं आता है। शरभ को शेर से कहीं बढ़कर बलवान् और मजबूत बतलाया गया है। ऊँट। टिड्डी। कीट विशेष।

शरयु, शरयू—(स्त्री०) [शॄ+अयु, पक्षे ऊङ्] सरजू नदी।

शरल—(वि०) [√शॄ+अलच्] सरल।

शरलक—(न०) [शरल+कन्] जल।

शरव्य—(न०) [शरु+यत् वा शर√व्ये+ड] वह जिस पर तीर का सन्धान किया जाय, तीर का लक्ष्य; 'तौ शरव्यमकरोत्स नेतरान्' र० ११.२७।

शराटि, शराति—(पुं०) [शर √अट्+इन्] [शर√अत्+इन्] टिटिहरी, टिट्टिभ पक्षी।

शरारु—(वि०) [√शॄ+आरु] हिंसक। अनिष्टकर।

शराव—(न०, पुं०) [शर√अव्+अण्] मिट्टी का एक प्रकार का वरतन, ढकना, सरवा। वैद्यों की एक तौल जो ६४ तोले की होती है।

शरावती—(स्त्री०) [शर+मतुप्, दीर्घ] एक नगरी जो श्रीरामचन्द्र के पुत्र लव की राजधानी थी।

शरिमन्—(पुं०) [शृणाति यौवनम्, √शॄ+इमन्] प्रसव। उत्पादन।

शरीर—(न०) [√शॄ+ईरन्] प्राणियों के सब अंगों का समूह, देह, तन, काया। (स्थूल और सूक्ष्म भेद से शरीर दो प्रकार का है। स्थूल शरीर मातापितृज

है और सूक्ष्म शरीर बुद्धि, अहंकार, मन, पञ्च ज्ञानेन्द्रिय, पञ्च कर्मेन्द्रिय और पञ्च तन्मात्र—इन १८ अवयवों का समूह है)।—**अन्तर (शरीरान्तर)**-(न०) शरीर के भीतर का भाग। —**आवरण (शरीरावरण)**-(न०) चमड़ा, चाम, खाल, चर्म।—**कर्तृ**-(पुं०) पिता। —**कर्षण**-(न०) शरीर का दुबलापन।—**ज**-(पुं०) बीमारी। कामुकता, विषय-वासना। कामदेव। पुत्र।—**तुल्य**-(वि०) शरीर के समान प्रिय।—**दण्ड**-(पुं०) देह सम्बन्धी दण्ड। शारीरिक तप।—**धृक्**-(वि०) शरीरधारी, शरीर वाला।—**पतन**—(न०),—**पात**-(पुं०) मृत्यु, मौत।—**पाक**-(पुं०) शरीर का दुबलापन।—**बद्ध**-(वि०) शरीरान्वित, शरीर-सम्पन्न।—**बन्धक**-(पुं०) प्रतिभू, जामिन।—**भाज्**-(वि०) शरीरधारी, मूर्तिमान्। (पुं०) शरीर-धारी जीव।—**भेद**-(पुं०) मृत्यु।—**यष्टि**-(स्त्री०) लटा-दुबला शरीर।—**यात्रा**-(स्त्री०) आजीविका, रोजी।—**विमोक्षण**-(न०) मुक्ति, आवागमन से छुटकारा।—**वृत्ति**-(स्त्री०) शरीर का पालन-पोषण, जीविका। —**वैकल्य**-(न०) रोग, बीमारी।—**संस्कार**-(पुं०) शरीर की शोभा तथा मार्जन। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक के वेद-विहित सोलह संस्कार।—**सम्पत्ति**- (स्त्री०) शारीरिक स्वस्थता।—**साद**-(पुं०) शरीर का दुबलापन; 'शरीरसादादसमग्रभूषणामुखेन सालक्ष्यत लोध्रपाण्डुना' र० ३.२।—**स्थिति**-(स्त्री०) शरीर का पालन-पोषण। भोजन।

शरीरक—(न०) [शरीर+कन्] देह, शरीर। छोटा शरीर। (पुं०) जीवात्मा।

शरीरिन्—(वि०) [स्त्री०—**शरीरिणी**] [शरीर+इनि] शरीर-धारी, मूर्तिमान्। जीवित। (पुं०) शरीर-धारी कोई भी वस्तु चाहे वह स्थावर हो चाहे जंगम। सचेतन शरीर, संवित्-सम्पन्न शरीर। आत्मा, जीव।

शरु—(पुं०) [√शृ+उ] कामुकता। क्रोध। वज्र। वाण। अस्त्र।

शर्कर—(पुं०) [√शृ+करन्] शक्कर। कंकड़। वालुका-कण। पुराणानुसार एक देश।—**जा**-(स्त्री०) चीनी। मिसरी।

शर्करा—(स्त्री०) [शर्कर+टाप्] शक्कर, रवादार चीनी। कंकड़। वालू का कण। रेतीली या कंकड़ही जमीन। खण्ड, टुकड़ा। कमण्डलु। ओला। पथरी का रोग।—**उदक (शर्करोदक)**—(न०) शरबत।—**सप्तमी**—(स्त्री०) वैशाख-शुक्ला सप्तमी।

शर्करिक—(वि०) [स्त्री०—**शर्करिकी**] [शर्करा+ठक्] दे० 'शर्करिल'।

शर्करिल—(वि०) [शर्करा+इलच्] शर्करायुक्त। पथरीला, कँकरीला।

शर्करी—(स्त्री०) नदी। मेखला। लेखनी।

शर्ध—(पुं०) [√शृध्+घञ्] अपान-वायु का त्याग। दल, समूह। बल, ताकत।

शर्धञ्जह—(वि०) [शर्ध√हा+खश्, मुम्] अफरा उत्पन्न करने वाला, पेट को फुलाने वाला। (पुं०) उर्द, माष।

शर्धन—(न०) [√शृध्+ल्युट्] अपान वायु त्यागने की क्रिया।

√शर्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना। शर्बति, शर्बिष्यति, अशर्बीत्।

शर्मन्—(पुं०) [√शृ+मनिन्] उपाधि विशेष जो ब्राह्मणों के नाम के पीछे लगायी जाती है। (न०) हर्ष, आनन्द; 'त्यजन्त्यसून् शर्म च मानिनो वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितं व्रतं' नै० १.५०। आशीर्वाद। घर। आधार।—**द**-(वि०) हर्षदायी। (पुं०) (पुं०) विष्णु।

शर्मर—(पुं०) [शर्मन्√रा+क] वस्त्र-विशेष। (वि०) आनन्द-दायक।

शर्या—(स्त्री०) [√शॄ+यत्—टाप्] रात। उँगली।

√शर्व्—भ्वा० पर० सक० अनिष्ट करना। वध करना। शर्वति, शर्विष्यति, अशर्वीत्।

शर्व—(पुं०) [√शॄ+व] शिव जी का नाम। विष्णु भगवान् का नाम।

शर्वर—(न०) [√शर्व्+अरन्] अन्धकार, अँधियारी। (पुं०) कामदेव।

शर्वरी—(स्त्री०) [√शॄ+वनिप्—ङीप्, र आदेश] रात; 'शशिनं पुनरेति शर्वरी' र० ८.५६। हल्दी। स्त्री। संध्या। एक संवत्सर।—**ईश (शर्वरीश)**-(पुं०) चन्द्रमा।

शर्वाणी—(स्त्री०) [शर्व+ङीष्, आनुक्] पार्वती या दुर्गा का नाम।

शर्शरीक—(वि०) [√शॄ+ईकन्, द्वित्वादि] हिंस्र। दुष्ट। (पुं०) अग्नि। घोड़ा। मंगलाभरण।

√शल्—भ्वा० आत्म० सक० छिपाना। अक० चलना। हिलाना। शलते, शलिष्यते अशलिष्ट। पर० सक० जाना। शलति, शलिष्यति, अशालीत्—अशलीत्।

शल—(न०, पुं०) [√शल्+अच्] साही का कांटा। (पुं०) वर्च्छी, भाला। शिव के भृङ्गी नामक गण का नाम। ब्रह्मा।

शलक—(पुं०) [शल+कन्] मकड़ी।

शलङ्ग—(पुं०) [√शल्+अङ्गच्] महाराज। लवण विशेष।

शलभ—(पुं०) [√शल्+अभच्] टिड्डी। पतंगा, फतिंगा; 'कौरव्यवंशदावेऽस्मिन् क एष शलभायते' वे० १.१९।

शलल—(न०) [√शल्+कल] साही का कांटा।

शलली—(स्त्री०) [शलल+ङीप्] साही का कांटा। छोटी साही।

शलाका—(स्त्री०) [√शल्+आक—टाप्] लोहे या लकड़ी की सलाई, सीखचा। सुर्मा लगाने की सीसे की सलाई। तीर, वाण। वर्छी। वह सलाई जिससे घाव की गहराई नापी जाती है। छाते की तीली। नली की हड्डी। अँखुआ। चितेरे की कूँची। दांत साफ करने की कूँची। साही। जुआ खेलने का पासा।—**धूर्त**-(पुं०) जुए का धूर्त, बेईमान खेलाड़ी। वहेलिया।—**परि**-(अव्य०) [शलाकया विपरीतं वृत्तम्, अव्य० स०] द्यूत-क्रीड़ा में पराजय।

शलाटु—(वि०) [√शल्+आटु] अनपका। (पुं०) कंद-विशेष। वेल।

शलातुर—(पुं०) पाणिनि मुनि की निवासभूमि।

शलाभोलि—(पुं०) ऊँट।

शल्क, शल्कल—(न०) [√शल्+कन्] [√शल्+कलच्] मछली का छिलका। छाल। हिस्सा, टुकड़ा।

शल्कलिन्, शल्किन्—(पुं०) [शल्कल+इनि] [शल्क+इनि] मछली।

√शल्भ्—भ्वा० आत्म० सक० पशंसा करना। शल्भते, शल्भिष्यते, अशल्भिष्ट।

शल्मलि, शल्मली—(स्त्री०) [√शल्+मलच्+इन्, पक्षे ङीष्] शाल्मली वृक्ष, सेमल का पेड़।

शल्य—(न०) [√शल्+यत्] भाला, वर्छी, साँग। तीर, वाण। काँटा। कील, खूँटी। शरीर में चुभा हुआ कांटा जो बड़ा पीड़ा-कारक होता है। (आलं०) कोई भी कारण जो हृदय दहलाने वाला, दुःख-प्रद हो। हड्डी। सङ्कट, विपत्ति। पाप। अपराध। विष। (पुं०) साही। कँटीली झाड़ी। अस्त्रचिकित्सा का औजार जिसके द्वारा शरीर में गड़ा कांटा या अन्य कोई वस्तु निकाली जाय। सीमा। शिलिंद मछली। मद्रदेश के राजा का नाम जो माद्री का भाई और नकुल तथा सहदेव का मामा था। मदन वृक्ष। विल्व वृक्ष। लोध्र वृक्ष। खैर।—**अरि (शल्यारि)**-(पुं०) युधिष्ठिर।—**आहरण** (शल्या-

हरण),—उद्धरण (शल्योद्धरण)-(न०) —उद्धार (शल्योद्धार)-(पुं०),—क्रिया -(स्त्री०),—शास्त्र-(न०) अस्त्र-चिकित्सा द्वारा कांटा या अन्य कोई नुकीली चीज जो शरीर में घुस गयी हो, निकालने की क्रिया।—कण्ठ-(पुं०) साही।—लोमन्-(न०) साही का कांटा।—हर्तृ-(पुं०) कांटे बीनने वाला या बीन-बीन कर निकालने वाला।

√शल्ल्—भ्वा० पर० सक० जाना। शल्लति। शल्लिष्यति, अशल्लीत्।

शल्ल—(न०) [√शल्ल्+अच्] वृक्ष की छाल। त्वचा। (पुं०) मेढक।

शल्लक—(न०) [शल्ल+कन्] दे० 'सल्ल'। (पुं०) शोण वृक्ष, सलई।

शल्लकी—(स्त्री०) [शल्लक+ङीष्] साही। सलई नामक वृक्ष जो हाथियों को बड़ा प्रिय है।—द्रव-(पुं०) शिला-रस, सिह्लक।

शल्व-(पुं०)[√शल्+वन्]शाल्व नामक देश।

√शव्—भ्वा० पर० सक० जाना। परिवर्तन करना। रूप बदल डालना। शवति, शविष्यति, अशवीत्—अशावीत्।

शव—(न०) [शवति गच्छति, √शव्+अच्] जल। (पुं०,न०) [शवति दर्शनेन चित्तं विकरोति, √शव्+अच्] मृत शरीर, मुर्दा, लाश।—आच्छादन (शवाच्छादन) -(न०) कफन।—आश (शवाश)-(वि०) मुर्दा खाने वाला।—कास्य-(पुं०) कुत्ता।—यान-(न०) —रथ-(पुं०) श्मशान तक शव ले जाने की अरथी, टिकठी।

शवर, शवल—दे० 'शबर, शबल'।

शवसान—(पुं०) [√शव्+सानच्] यात्री, पथिक। मार्ग, रास्ता। (न०) श्मशान, कबरगाह।

√शश्—भ्वा० पर० सक० उछल कर जाना। शशति, शशिष्यति, अशशीत्—अशाशीत्।

शश—(पुं०) [√शश्+अच्] खरगोश। चन्द्र-कलङ्क। काम-शास्त्र के अनुसार मनुष्य के चार भेदों में से एक भेद। ऐसे मनुष्य के लक्षण ये हैं:—'मृदुवचनसुशीलः कोमलाङ्गः सुकेशः, सकलगुणनिधानं सत्यवादी शशोऽयम्।' लोध्र वृक्ष। गन्धरस।—अङ्क (शशाङ्क) (पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—आद (शशाद) (पुं०) बाज, श्येन पक्षी। इक्ष्वाकु के एक पुत्र का नाम।—अदन (शशादन)-(पुं०) बाज, श्येन पक्षी।—धर-(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—प्लुतक—(न०) नख का घाव।—भृत्—(पुं०) चन्द्रमा।—लक्षण (पुं०) चन्द्रमा।—लाञ्छन-(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—विन्दु,—बिन्दु-(पुं०) चन्द्रमा। विष्णु भगवान्।—विषाण,—शृङ्ग-(न०) खरहे के सींग, कोई अलीक या असंभव बात; 'कदाचिदपि पर्यटन् शशविषाणमासादयेत्' भर्तृ० २.५।—स्थली (स्त्री०) गङ्गा और यमुना के मध्य का क्षेत्र, दोआब।

शशक—(पुं०) [शश+कन्] खरगोश, खरहा।

शशिन्—(पुं०) [शश+इनि (समास में न का लोप हो जाता है।)] चन्द्रमा। कपूर।—ईश (शशीश)-(पुं०) शिवजी।—कला-(स्त्री०) चन्द्रमा की कला।—कान्त -(पुं०) चन्द्रकान्त मणि। (न०) कुमुद।—कोटि-(पुं०) चन्द्रशृङ्ग।—ग्रह-(पुं०) चन्द्र-ग्रहण।—ज—(पुं०) बुधग्रह।—प्रभ-(वि०) चन्द्रमा जैसी प्रभावाला; 'अदेयमासीत् त्रयमेव भूपतेः शशिप्रभं छत्रमुभे च चामरे' र० ३.१६। (न०) कुमुद। मुक्ता, मोती।—प्रभा-(स्त्री०) चांदनी। ज्योत्स्ना।—भूषण, —भृत्— मौलि, —शेखर-(पुं०) शिवजी।—लेखा-(स्त्री०) चन्द्रकला। गुडुची।

शश्वत्—(अव्य०) [√शश्+वत् (बा०)] सदैव। लगातार, बारंबार।

√शष्—भ्वा० पर० सक० वध करना। शषति, शषिष्यति, अशषीत्—अशाषीत्।

शष्कुली, शस्कुली—(स्त्री०) [√शष् (स्) +कुलच्, ङीष्] कान का छेद। पूरी, पक्वान्न आदि। कांजी। कान का रोग विशेष।

शष्प, शस्प—(न०) [√शष् (स्)+पक्]नई घास, वाल तृण ; 'गङ्गाप्रपातान्तविरूढ-शष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश' र० २.२६। (पुं०) प्रतिमा-क्षय।

√शस्—भ्वा० पर० सक० मार डालना। शसति, शसिष्यति, अशसीत्—अशासीत्।

शसन—(न०) [√शस्+ल्युट्]वध करना। वलि के लिये पशु का हनन।

शस्त—(वि०) √शंस् वा √शस्+क्त] प्रशंसित, सराहा हुआ। मुदकारी, मंगल-कारी। सही, समीचीन। घायल, चोटिल। हनन किया हुआ। (न०) प्रसन्नता। कुशल-मङ्गल। उत्तमता। शरीर। अङ्गुलित्राण, दस्ताना।

शस्ति—(स्त्री०) [√शंस्+क्तिन्] प्रशंसा। स्तव।

शस्त्र—(न०) [√शस्+ष्ट्रन्] हथियार, औजार। लोहा। इस्पात लोहा।—अभ्यास (शस्त्राभ्यास)—(पुं०) हथियार चलाने का अभ्यास, सैनिक कसरत।—अस्त्र (शस्त्रास्त्र) -(न०) हथियार जो फेंक कर चलाये जायँ और यंत्रविशेष द्वारा छोड़े जायँ।—आजीव (शस्त्राजीव),—उपजीविन् (शस्त्रोपजीविन्)-(पुं०) पेशेवर सिपाही।—आयस (शस्त्रायस)—(न०)इस्पात लोहा। लोहा। —उद्यम (शस्त्रोद्यम)-(पुं०)प्रहार करने को हथियार उठाना।—उपकरण (शस्त्रोपकरण)-(न०) लड़ाई का हथियार आदि सामान।— —कार-(पुं०) शस्त्र-निर्माता।—कोष-(पुं०) म्यान, परतला।—ग्राहिन्-(वि०) हथियार धारण करने वाला।—जीविन्, —वृत्ति-(पुं०) शस्त्र द्वारा जीविका चलाने वाला सैनिक।—देवता-(स्त्री०) युद्ध का अधिष्ठाता देवता।—धर-(पुं०) सैनिक। (वि०) शस्त्र धारण करने वाला।—पाणि -(वि०) जिसके हाथ में शस्त्र हो, शस्त्र-धर। —पूत-(वि०) शस्त्र से पवित्र किया हुआ। अर्थात् युद्धक्षेत्र में शस्त्र से मारे जाने के कारण पापों से छूटा हुआ।— प्रहार-(पुं०)हथियार का आघात।—भृत् -(पुं०) दे० 'शस्त्रधर'।—मार्ज-(पुं०) हथियार साफ करने वाला, सिगलीगर।—विद्या-(स्त्री०),—शास्त्र-(न०) वह विद्या या शास्त्र जो हथियार चलाने आदि की बातें बतलावें।—संहति-(स्त्री०) हथियारों का संग्रह। हथियारों का भण्डार-गृह।—हत-(वि०) हथियार से मारा हुआ।—हस्त-दे० 'शस्त्रपाणि'।

शस्त्रक—(न०) [शस्त्र+कन्] इस्पात लोहा। लोहा।

शस्त्रिका—(स्त्री०) [शस्त्रक—टाप्, इत्व] चाकू।

शस्त्रिन्—(वि०) [शस्त्र+इनि] शस्त्र से सुसज्जित, हथियारबंद।

शस्त्री—(स्त्री०) [शस्त्र+ङीप्] छुरी।

शस्य—(न०) [√शस्+यत्] धान्य, अनाज 'दुदोह गां स यज्ञाय शस्याय मघवा दिवं' र० १.२६। नई घास। किसी वृक्ष का फल या उसकी पैदावार। (वि०) [√शंस्+क्यप्] प्रशंसनीय। (न०) सद्गुण। —क्षेत्र-(न०) अनाज का खेत।—भक्षक-(वि०) अन्नभक्षी, अनाज खाने वाला।—मञ्जरी-(स्त्री०) अनाज की वाल।—शालिन्,—सम्पन्न-(वि०)जिसमें वहुत अनाज हो।—सम्पद्-(स्त्री०) अनाज का वाहुल्य। —संवर-(पुं०)साखू का पेड़, साल वृक्ष।

शाक—(न०, पुं०) [शक्यते भोक्तुम्, √शक्+घञ्]साग, तरकारी; पत्ती, फूल,

फल आदि जो पका कर खाये जायँ। (पुं०) बल, पराक्रम। सागौन का पेड़। सिरिस का पेड़। [शक+अण्] मानव जाति विशेष। शालिवाहन द्वारा प्रवर्तित संवत्। एक राजा। एक द्वीप।—**अङ्ग** (शाकाङ्ग)-(न०) काली-मिर्च।—**अम्ल** (शाकाम्ल)-(न०) महादा, वृक्षाम्ल । इमली ।—**आख्य** (**शाकाख्य**)-(पुं०) सागौन का पेड़ । (न०) शाक, भाजी।—**चुक्रिका**-(स्त्री०) इमली । —**तरु**- (पुं०) सागौन का पेड़।—**पण**- (पुं०) मान-विशेष जो एक हाथभर का होता है। मुट्ठी भर साग।—**पार्थिव**-(पुं०) वह राजा जो अपना शाका या सन् चलाने का शौकीन हो।—**योग्य**-(पुं०) धनिया, धन्याक ।—**वृक्ष**-(पुं०) सागौन का पेड़। **श्रेष्ठा**-(स्त्री०) लघु जीवन्ती। बैंगन। कूष्माण्ड। तरबूज। पेठा।

शाकट—(वि०) [स्त्री०—**शाकटी**] [शकट+अण्] छकड़ा सम्बन्धी । छकड़े में जाने वाला। (पुं०) बैल जो गाड़ी या हल में चला हुआ हो, गाड़ी का बैल। धौ का पेड़। लिसोड़ा, श्लेष्मान्तक। (न०) खेत, क्षेत्र।

शाकटायन—(पुं०) [शकटस्यापत्यम्, शकट +फक्] एक बहुत प्राचीन वैयाकरण, जिसका उल्लेख पाणिनि और यास्क ने किया है।

शाकटिक—(वि०) [स्त्री०—**शाकटिकी**] [शकट+ठक्] छकड़ा सम्बन्धी । छकड़े में बैठ कर जाने वाला।

शाकटीन—(पुं०) [शकट +खञ्] गाड़ी का बोझ। प्राचीन-कालीन एक तौल जो बीस तुला या २ हजार पल की होती थी।

शाकल—(वि०) [स्त्री०—**शाकली**] [शकल+अण्] शकल नामक द्रव्य सम्बन्धी। एक खण्ड या टुकड़ा सम्बन्धी । (पुं०) ऋग्वेद की एक शाखा । उस शाखा के अनुयायी। हवन-सामग्री। मद्रदेश का एक नगर । वाहीक देश (पंजाब) का एक ग्राम ।—**प्रातिशाख्य**-(न०) ऋग्वेद-प्राति-शाख्य का नाम ।— **शाखा**-(स्त्री०) ऋग्वेद का वह पाठ या संशोधित संस्करण जो शाकलों में परम्परागत चला आता है।

शाकल्य—(पुं०) [शकलस्यापत्यम्, शकल +यञ्] एक प्राचीन-कालीन वैयाकरण जिसका उल्लेख पाणिनि ने किया है।

शाकशाकट, शाकशाकिन—(न०) [शाकानां भवनं क्षेत्रम्, शाक + शाकट] [शाक +शाकिन] साग-भाजी का खेत।

शाकारी—(स्त्री०) शकों अथवा शकारों की भाषा जो प्राकृत का एक भेद है।

शाकिन—(न०) [शाक + इनच्] खेत, क्षेत्र।

शाकिनी—(स्त्री०) [शाक + इनि—ङीप्] शाक या भाजी का खेत। दुर्गा देवी की एक सहचरी।

शाकुन—(वि०) [स्त्री०—**शाकुनी**] [शकुन+अण्] पक्षी सम्बन्धी । शकुन सम्बन्धी। शुभ।

शाकुनिक—(न०) [शकुन + ठक्] शकुनों का फल। (पुं०) चिड़ीमार, बहेलिया।

शाकुनेय—(पुं०) [शकुनि + ढक्] एक प्रकार का छोटा उल्लू। बकासुर। एक मुनि।

शाकुन्तल—(न०) [शकुन्तलाम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, शकुन्तला+अण्] कालिदास-रचित अभिज्ञानशाकुंतल नाटक। (पुं०) [शकुन्तलायाः अपत्यम् इत्यर्थे अण्] शकु-न्तला का पुत्र राजा भरत।

शाकुलिक—(पुं०) [शकुलान् हन्ति, शकुल +ठक्] मछुआ, मछली मारने वाला।

शाक्कर—(पुं०) [शक्कर+अण्] बैल ।

शाक्त—(पुं०) [शक्तिः देवता अस्य, शक्ति +अण्] शक्ति-पूजक, शक्ति-उपासक, तंत्र-पद्धति से शक्ति की पूजा करने वाला । [तंत्र-पद्धति दो प्रकार की है—एक दक्षिणाचार, दूसरी वामाचार । वामाचार या वाममार्गियों की पद्धति में मद्य, मांस, मैथुन आदि का व्यवहार किया जाता है, किन्तु दक्षिणाचार में इन सब अपवित्र वस्तुओं का व्यवहार नहीं किया जाता ।] (वि०) [स्त्री०—**शाक्ती**] बल या शक्ति सम्बन्धी । शक्तिरूपिणी मूर्तिमती देवी सम्बन्धी ।

शाक्तिक—(पुं०) [शक्ति + ठक्] शक्ति का उपासक । भालाधारी योद्धा ।

शाक्तीक—(पुं०) [शक्ति + ईकक्] भाला-धारी सैनिक, भालाबरदार ।

शाक्तेय—(पुं०) [शक्ति + ढक्] शक्ति-पूजक ।

शाक्य—(पुं०) [शकोऽभिधानम् अस्य, शक +ञ्य] एक प्राचीन क्षत्रिय जाति, जो नेपाल की तराई में रहती थी और जिस में गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था ।—**भिक्षुक**-(पुं०) बौद्ध भिक्षुक ।—**मुनि**, —**सिंह**—(पुं०) बुद्ध देव के नामान्तर ।

शाक्री—(स्त्री०) [शक्र + अण्—ङीप्] शची । दुर्गा ।

शाक्वर—(पुं०) [शक्वर + अण्] बैल । आकाशोद्भूत वायु । इन्द्र । इन्द्र का वज्र । प्राचीन काल की एक रीति या संस्कार ।

√शाख्—भ्वा० पर० सक० व्याप्त करना । शाखति, शाखिष्यति, अशाखीत् ।

शाखा—(स्त्री०) [शाखति गगनं व्याप्नोति √शाख् + अच्—टाप्] डाली, शाख; 'आवर्ज्य शाखाः सदयं च यासां पुष्पाण्युपात्तानि विलासिनीभिः' र० १६.१९ । बाँह । अवयव । विभाग । किसी शास्त्र या विद्या के अन्तर्गत उसका कोई भेद । संप्रदाय, पंथ । वेद की संहिताओं के पाठ तथा क्रम-भेद जो कई ऋषियों ने अपने गोत्र या शिष्य-परंपरा में चलाये ।—**पित्त**—(पुं०) एक रोग जिसमें हाथ और पैर में जलन और सूजन हो जाती है ।—**मृग**— (पुं०) वानर, बंदर । गिलहरी । —**रण्ड**—(पुं०) वेद-विहित कर्मों को अपनी शाखा के अनुसार न करने वाला; अपनी शाखा को छोड़ अन्य शाखा के अनुसार कार्य करने वाला व्यक्ति । —**रथ्या**— (स्त्री०) पगडंडी ।—**शिफा**—(स्त्री०) वृक्ष की डाल से निकल कर जमीन की ओर बढ़ने वाली जटा ।

शाखाल—(पुं०) [शाखा √ ला+क] वानीर, जलबेंत ।

शाखिन्—(वि०) [शाखा + इनि] डालियों वाला, शाखाओं से युक्त । (पुं०) वृक्ष । वेद । किसी वैदिक शाखा का अनुयायी ।

शाखोट शाखोटक—(पुं०) [√शाख् +ओटन्] [शाखोट+कन्] सिहोर का पेड़, पीतवृक्ष ।

शाङ्कर—(पुं०) [शङ्कर + अण्] बैल । शंकराचार्य का अनुयायी । (न०) आर्द्रा नक्षत्र जिसके देवता शंकर हैं । (वि०) शंकर-संबन्धी । शंकराचार्य का ।

शाङ्करि—(पुं०) [शङ्कर + इञ्] कार्त्तिकेय का नाम । गणेश जी का नाम । अग्नि । शमी वृक्ष ।

शाङ्खिक—(पुं०) [शङ्ख + ठक्] शङ्ख को काट कर शङ्ख की चीजें बनाने वाला । एक वर्णसङ्कर जाति । शङ्ख बजाने वाला ।

शाट—(पुं०) [√शट् + घञ्] वह वस्त्र जो कमर में लपेट कर पहना जाय । कपड़े का टुकड़ा । एक प्रकार की कुर्त्ती । ढीला पहनावा ।

शाटक—(न०, पुं०) [शाट +कन्] वस्त्र । नाटक का एक भेद ।

शाठ्य—(न०) [शठ + ष्यञ्] शठता, दुष्टता; 'शठे शाठ्यं समाचरेत्'। कपट, छल ।

√शाड्—भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना । शाडते, शाडिष्यते, अशाडिष्ट ।

शाण—(वि०) [स्त्री०—**शाणी**] [√शण् +अण्] सन का, पटसन का । (न०) सन का वस्त्र, सनिया ।(पुं०) [√शण् + घञ्] कसौटी का पत्थर । सान रखने वाला पत्थर । आरा । चार माशे की तौल । —**आजीव** (**शाणाजीव**)-(पुं०) हथियारों में सान देने का काम करने वाला व्यक्ति ।

शाणि—(पुं०) [√शण्+इण्] सन जिसके रेशों से वस्त्र बनाया जाता है, पटुआ ।

शाणित—(वि०) [शाण+इतच्] सान रखा हुआ, पैनाया हुआ, तीक्ष्ण किया हुआ ।

शाणी—(स्त्री०) [शाण+ङीप्] कसौटी । सान का पत्थर । आरा । पटसन का बना वस्त्र । यज्ञोपवीत के समय ब्रह्मचारी को पहनने के लिये दिया जाने वाला सन का बना वस्त्र । फटा कपड़ा । छोटी कनात या तंबू । हाथ और आँख का इशारा ।

शाणीर—(न०) [√शण् + ईरण्] सोन नदी का तट । सोन नदी के बीच में स्थित भू-भाग ।

शाण्डिल्य—(पुं०) [शण्डिल + यञ्] भक्ति-शास्त्र को बनाने वाले एक मुनि । गोत्र-प्रवर्तक एक ऋषि । विल्व-वृक्ष । अग्नि का रूप विशेष ।

शात—(वि०) [√शो+क्त] शान पर चढ़ा हुआ, पैना । पतला, दुबला । निर्बल, कमजोर । सुन्दर, मनोहर । प्रसन्न । (न०) धतूरा । (पुं०) आनन्द, हर्ष, आह्लाद ।—**उदरी** (**शातोदरी**)-(स्त्री०) पतली कमर वाली; 'शातोदरी युवदृशां क्षण-मुत्सवोऽभूत्' शि० ५.२३ ।—**शिख**-(वि०) पैनी नोंक वाला ।

शातकुम्भ—(न०) [शतकुम्भे पर्वते भवम्, शतकुम्भ+अण्] सोना । (पुं०) धतूरा । करवीर । कचनार ।

शातकौम्भ—(न०) [शतकुम्भ + अण्] सुवर्ण, सोना ।(वि०) सोने का बना ।

शातन—(न०) [√ शो + णिच्, तङ् +ल्युट्] छोटा करना । तेज करना । विनाशन ।

शातपत्रक—(पुं०), **शातपत्रकी**-(स्त्री०) [शतपत्र+अण्, शातपत्र + कन्] [शात-पत्रक+ङीष्] चन्द्रिका, चाँदनी ।

शातभीरु—(पुं०) [शाताः दुर्बलाः पान्थाः भीरवो यस्याः, ब० स०] मल्लिका विशेष ।

शातमान—(वि०) [स्त्री०—**शातमानी**] [शतमानेन क्रीतम्, शतमान+अण्] एक सौ के मूल्य का ।

शात्रव—(वि०) [स्त्री०—**शात्रवी**] [शत्रु+अण्] शत्रु सम्बन्धी । वैरी, विरोधी । (न०) शत्रुओं का समुदाय । शत्रुता । (पुं०) शत्रु ।

शाद—(पुं०) [√शो+द] दूब, छोटी घास । कीचड़ ।—**हरित**-(पुं०, न०) दूब का मैदान ।

शाद्वल—(वि०) [शाद + ड्वलच्] वह स्थान जहां घास हो । वह स्थान जहां छोटी और हरी घास बहुतायत से हो; 'ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन्' र० २.१७ । सब्ज, हरा-भरा (पुं०, न०) चरागाह, गोचर-भूमि ।

√शान्—भ्वा० उभ० सक० तीक्ष्ण करना, पैनाना, तेज करना । शीशांसति—ते, शीशांसिष्यति—ते, अशीशांसीत् — अशीशांसिष्ट ।

शान—(पुं०) [√शान्+अच्] कसौटी । शान रखने का पत्थर ।—**पाद**-(पुं०) वह पत्थर जिस पर चन्दन रगड़ा जाय । पारियात्र पर्वत ।

शान्त—(वि०) [√शम्+क्त] शमयुक्त, शान्ति वाला। सन्तुष्ट, अघाया हुआ। वन्द। मिटा हुआ। घटा हुआ। दवा हुआ। वुझा हुआ। मरा हुआ। सौम्य। गम्भीर। पालतू, मौन, चुप, खामोश। शिथिल, ढीला। श्रान्त, थका हुआ। रागादि-शून्य, जितेन्द्रिय। विघ्न-वाघा-रहित। स्थिर। स्वस्थ-चित्त। अप्रभावित। शुभ, मङ्गल-कारी। [**शान्तं पापम्** संस्कृत का यह एक मुहावरा है जिसका अर्थ है, "ईश्वर न करे ऐसा हो" अथवा "नहीं नहीं", "ऐसा नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है?"]—**आत्मन्**, —**चेतस्**—(वि०) शान्त स्वभाव वाला। स्वस्थचित्त। —**रस**—(पुं०) काव्य के नौ रसों में से एक। इसका स्थायी भाव "निर्वेद" (अर्थात् काम-क्रोधादि वेगों का शमन) है।

शान्तनव—(पुं०) [शन्तनु+अण्] शान्तनु-पुत्र भीष्म का नाम।

शान्ता—(स्त्री०) [शान्त+टाप्] महा-राज दशरथ की पुत्री का नाम जो ऋष्य-शृङ्ग को व्याही गयी थी।

शान्ति—(स्त्री०) [√शम्+क्तिन्] वेग, क्षोभ या क्रिया का अभाव, स्थिरता। सन्नाटा, नीरवता। स्वस्थता, चैन, सन्तोष। युद्ध की वंदी। अवसान, समाप्ति। रागादि का अभाव, विरक्ति। पारस्परिक मतभेद दूर होकर मेल-मिलाप होना। भोजन करके भूख को शान्त करना। प्रायश्चित्त अथवा वह कर्म जिससे किसी ग्रह का बुरा फल दूर हो जाय, अमङ्गल दूर करने का उपचार। सौभाग्य। मङ्गल। कलङ्क का दूर होना। वचाव।

शान्तिक—(न०) [शान्ति+कन्] पालन, रक्षण। उपद्रवों को शान्त करने वाली होम आदि क्रिया।

शाप—(पुं०) [√शप् + घञ्] अहित-कामनासूचक वचन, वददुआ, अकोसा; 'शापे-नास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येन भर्तुः' मे० १। शपथ। गाली, भर्त्सना।—**अस्त्र** (**शापास्त्र**)—(पुं०) वह व्यक्ति जिसके पास अस्त्रों की जगह शाप देने की शक्ति हो, मुनि, ऋषि।—**उत्सर्ग** (**शापोत्सर्ग**)—(पुं०) शापोच्चारण, शाप देना।—**उद्धार** (**शापोद्धार**)—(पुं०),—**मुक्ति**—(स्त्री०), —**मोक्ष**—(पुं०) शाप या उसके प्रभाव से छुटकारा, शाप-मुक्ति।—**ग्रस्त**—(वि०) शापित।—**मुक्त**—(वि०) शाप से छूटा हुआ।—**यन्त्रित**—(वि०) शाप द्वारा नियंत्रित किया हुआ।

शापटिक—(पुं०) मोर।

शापित—(वि०) [शाप+इतच्] जिसे शाप दिया गया हो, शापग्रस्त। शपथ खाया हुआ।

शाफरिक—(पुं०) [शफरान् हन्ति, शफर +ठक्] मछुआ, धीवर।

शाबर, शावर—(वि०) [स्त्री०—**शाबरी**, **शावरी**] [शब (व) र+अञ्] शवर संवन्धी। जङ्गली, वर्वर। नीच, कमीना। (पुं०) लोध्रवृक्ष। पाप। अपराध। दुष्टता। ताँवा। एक प्रकार का चंदन। दुःख।—**भेदाख्य**—(न०) ताँवा।

शाबरी, शावरी—(स्त्री०) [शाव (व) र+ ङीप्] शवरों की भाषा, एक प्रकार की प्राकृत भाषा।

शाब्द—(वि०) [स्त्री०—**शाब्दी**] [शब्द +अण्] शब्द सम्वन्धी। शब्द से उत्पन्न। ध्वनि पर निर्भर। ध्वनि सम्वन्धी। मौखिक, जवानी। ध्वनि-कारक।—**बोध**—(पुं०) वाक्य में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ का ज्ञान।—**व्यञ्जना**—(स्त्री०) वह व्यञ्जना जो शब्द-विशेष के प्रयोग पर ही निर्भर होती है, अर्थात् यदि उसका पर्यायवाची शब्द

व्यवहृत किया जाय तो वह न रह जाय।

शाब्दिक—(वि०) [स्त्री०—**शाब्दिकी**] [शब्द+ठक्] मौखिक, जबानी। ध्वनि-कारक। (पुं०) वैयाकरण।

शामन—(पुं०) [शमन + अण्] यमराज का नाम। (न०) वध, हत्या। शान्ति, नीरवता।

शामनी—(स्त्री०) [शामन + ङीप्] दक्षिण दिशा।

शामित्र—(न०) [√शम् + णिच्+इत्रच्] यज्ञ। यज्ञ के लिये पशु-वध। बलिदान के लिये पशु को बांधने की क्रिया। यज्ञीय पात्र-विशेष।

शामील—(न०) [शमी + प्लञ्] भस्म, राख।

शामीली—(स्त्री०) [शामील+ङीष्] स्रुवा। माला।

शाम्बरी—(स्त्री०) [शम्बर + अण्—ङीप्] माया। इन्द्रजाल, जादूगरी। जादूगरनी।

शाम्बविक—(पुं०) [शम्ब + ठक्]शंख का व्यवसायी।

शाम्भव—(वि०) [स्त्री०—**शाम्भवी**] [शम्भु + अण्] शिव सम्बन्धी; 'अत्तुं वाञ्छति शाम्भवो गणपतेराखुं क्षुधार्तः फणी' पं० १.१५९। (न०) देवदारु का पेड़। (पुं०) शिव का भक्त या पूजक। शिव-पुत्र। कपूर। विष विशेष।

शाम्भवी—(स्त्री०) [शाम्भव+ङीप्] पार्वती। नील दूर्वा।

शायक, सायक—(पुं०) [√शो + ण्वुल्] [√ सो+ण्वुल्] तीर। खड्ग, तलवार।

शार्—चु० उभ० सक० निर्बल करना। अक० निर्बल होना। शारयति—ते, शारयिष्यति—ते, अशशारत्—त।

शार—(वि०) [√ शार् + अच् वा √शॄ +घञ्] रंग-बिरंगा, चितकबरा, चित्तियों से युक्त। (पुं०)—रंग-बिरंगा रंग। हरा रंग। पवन। शतरंज का मोहरा। अनिष्ट।

शारङ्ग—(पुं०) [शारम् अङ्गं यस्य, ब० स०, शक० पररूप] चातक पक्षी। मयूर। मधुमक्षिका। हिरन, मृग। हाथी।

शारङ्गी—(स्त्री०) [शारङ्ग+ङीष्] एक बाजा जो गज से बजाया जाता है, सारंगी।

शारद—(वि०) [शरद् + अण्] शरद् ऋतु का; 'दिवसं शारदमिव प्रारम्भ-सुखदर्शनम्' र० १०.९। वार्षिक। नया, हाल का। ताजा, टटका। शर्मीला, लज्जालु। जो साहसी न हो। (न०) अनाज। सफेद कमल। (पुं०) वर्ष। शारदी रोग, शरत् ऋतु में उत्पन्न होने वाला रोग। हरी मूँग। शरद् ऋतु की धूप। वकुल वृक्ष, मौलसिरी।

शारदा—(स्त्री०) [शारद+टाप्] वीणा विशेष। दुर्गा का नाम। सरस्वती का नाम।

शारदिक—(न०) [शरद् + ठञ्] वार्षिक श्राद्ध या शरद् ऋतु में किया जाने वाला श्राद्ध कर्म। (पुं०) शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाला रोग। शरद् ऋतु का सूर्यातप या धूप।

शारदी—(स्त्री०) [शारद+ङीप्] कार्त्तिक मास की पूर्णमासी।

शारदीय—(वि०) [शरद् + छण्] शरत्कालीन।

शारि—(पुं०) [√ शॄ + इञ्] शतरंज का मोहरा या गोटी। छोटी गेंद। एक प्रकार का पासा। (स्त्री०) सारिका, मैना पक्षी। कपट, छल। हाथी का पलान या झूल।—**फल,—फलक**-(न०, पुं०)शतरंज या चौसर की बिसात।

शारिका—(स्त्री०) [शारि + कन्—टाप्] मैना पक्षी। सारंगी, बेहला आदि बाजों के बजाने का गज। शतरंज खेलने की क्रिया। शतरंज का मोहरा या उसकी गोटी।

शारी—(स्त्री०) [शारि + ङीष्] कुशा। मैना।

शारीर—(वि०) [स्त्री०—**शारीरी**] [शरीर +अण्] शरीर सम्बन्धी, दैहिक, कायिक। शरीर-धारी, मूर्तिमान्। (पुं०) जीवात्मा। साँड़। एक प्रकार का अर्थ।

शारीरक—(वि०) [स्त्री०—**शारीरकी**] [शरीर+कन्+अण्] शरीर सम्बन्धी। (पुं०) शरीरधारी जीवात्मा। (न०) जीव के स्वरूप ज्ञान की खोज या जिज्ञासा।—**सूत्र**-(न०) वेदव्यासजी के बनाये हुए वेदान्त सूत्र।

शारीरिक—(वि०) [स्त्री०—**शारीरिकी**] [शरीर+ठक्] शरीर सम्बन्धी, दैहिक।

शारुक—(वि०) [स्त्री०—**शारुकी**] [√शॄ+उकञ्] हिंस्र। अनिष्टकर, हानिकारक।

शार्क—(पुं०) खांड़ चीनी। मिसरी।

शार्कक—(पुं०) [शर्क+अण्+कन्] शर्करा-पिण्ड, मिसरी। दूध का फेन।

शार्कर—(वि०) [स्त्री०—**शार्करी**] [शर्करा+अण्] खाँड़, शक्कर या चीनी का बना हुआ। पथरीला, कँकरीला।—(पुं०) कँकरीली जगह। दूध का फेन। मलाई।

शार्ङ्ग—(वि०) [शृङ्ग + अण्] सींग का बना हुआ, सींगदार। धनुषधारी, धनुर्धर। (पुं०, न०) धनुष। विष्णु भगवान् के धनुष का नाम।—**धन्वन्**, —**धर**,—**पाणि**,—**भृत्**- (पुं०) विष्णु भगवान् के नामान्तर।

शार्ङ्गिन्—(पुं०) [शार्ङ्ग+इनि] धनुर्धारी व्यक्ति। विष्णु; 'धर्मसंरक्षणार्थैव प्रवृत्तिर्भुवि शार्ङ्गिणः' र० १५.४।

शार्दूल—(पुं०) [√शॄ + ऊलच्, दुक् आगम] व्याघ्र, चीता। लकड़बग्घा। राक्षस। पक्षी विशेष। समासान्त शब्दों में पीछे आने पर इसका अर्थ होता है:—सर्वश्रेष्ठ। उत्तम। प्रसिद्ध पुरुष।—**चर्मन्**-(न०) चीते की खाल।—**विक्रीडित**-(न०) चीते की क्रीड़ा; 'कन्दर्पोऽपि यमायते विरचयन् शार्दूलविक्रीडितम्' गीत० ४। उन्नीस अक्षरों के पादवाला एक छन्द।

शार्वर—(वि०) [स्त्री०—**शार्वरी**] [शर्वरी +अण्] नैश, रात्रिकालीन। उत्पाती, उपद्रवी। (न०) अँधियारा, अन्धकार।

शार्वरी—(स्त्री०) [शार्वर+ङीप्] रात्रि, रात।

√शाल्—भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना। चापलूसी करना। अक० चमकना। सम्पन्न होना। शालते, शालिष्यते, अशालिष्ट।

शाल—(पुं०) [√शल् + घञ्] साल, साखू या सखुआ का पेड़। कोई भी वृक्ष। हाता, घेरा। मछली विशेष। शालिवाहन राजा का नाम।—**ग्राम**-(पुं०) विष्णु भगवान् की एक प्रकार की मूर्त्ति जो गंडकी नदी में पायी जाती है।—**निर्यास**- (पुं०) शालवृक्ष का गोंद।—**भञ्जिका**- (स्त्री०) गुड़िया, पुतली। रंडी, वेश्या।—**भञ्जी**-(स्त्री०) गुड़िया, पुतली।—**वेष्ट**- (पुं०) सालवृक्ष का गोंद।—**सार**-(पुं०) उत्कृष्टतर वृक्ष। हींग।

शालङ्कायन—(पुं०) [शलङ्क + फक्—आयन] विश्वामित्र के एक पुत्र। नन्दी।

शालव—(पुं०) [शालः तन्निर्यास इव वलति बहिर्गच्छति, शाल √वल् + ड] लोध्र वृक्ष।

शाला—(स्त्री०) [√शो + कालन्—टाप् वा √शाल् + अच्—टाप्] कमरा। घर। वृक्ष की ऊपर की डाली। वृक्ष का तना या धड़।—**मृग**-(पुं०) सियार, शृगाल।—**वृक**- (पुं०) भेड़िया। कुत्ता। हिरन। बिल्ली। शृगाल, गीदड़। बंदर।

शालाक—(पुं०) पाणिनि का नाम।

शालाकिन्—(पुं०) भालाधारी। नापित, नाई। शल्य-चिकित्सक।

शालातुरीय—(पुं०) [शलातुर + अण्] पाणिनि का नाम। ["शलातुर" या "शालोत्तर" पाणिनि के जन्मस्थान का नाम है]।

शालार—(न०) [शाला √ऋ + अण्] हाथी का नाखून। सोपान, जीना, सीढ़ी। पक्षी का पिंजड़ा।

शालि—(पुं०) [√शृ + इञ्, रस्य लत्वम्] चावल। जड़हन चावल; 'यवाः प्रकीर्णाः न भवन्ति शालयः' मृ० ४.१६। गंधबिलाव। **—ओदन** (**शाल्योदन**)–(पुं०, न०) भात। **—गोप**– (पुं०) वह जो धान के खेत की रखवाली के लिये नियुक्त किया गया हो। **—पिष्ट**—(न०) बिल्लौर पत्थर, स्फटिक। **—वाहन**–(पुं०) शक जाति का एक प्रसिद्ध राजा। इसका संवत्सर भी चलता है और ईसा के जन्म के ७८ वर्ष पीछे से इसके वर्ष की गणना आरम्भ होती है। **—होत्र**– (पुं०) एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार का ना जिसने अश्वचिकित्सा पर एक प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा। घोड़ा। (न०) अश्व-शास्त्र। **—होत्रिन्**–(पुं०) घोड़ा।

शालिक—(पुं०) [शालि √कै + क] जुलाहा। धान्य रूप में दिया जाने वाला कर।

शालिन्—(वि०) [स्त्री०—**शालिनी**] [√शाल् + इनि वा शाला + इनि] सम्पन्न। चमकदार। घरेलू।

शालिनी—(स्त्री०) [शालिन् + ङीप्] गृहिणी, गृह-स्वामिनी। ग्यारह अक्षरों का एक वृत्त। बिस, भसींड़, पद्मकन्द। मेथी।

शालीन—(वि०) [शालाप्रवेशनम् अर्हति, शाला + खञ्] विनीत, नम्र। सलज्ज। धनी। सदृश, समान। (पुं०) गृहस्थ

शालु—(न०) [√शृ + ञुण्, रस्य लत्वम्] भसींड़, पद्मकन्द। जातीफल। (पुं०) मेंढक। चोरक ओषधि। कषाय द्रव्य।

शालुक, शालूक—(न०) [शालु + कन्] [शल् + ऊकण्] पद्मकंद, भसींड़। जायफल, जातीफल। (पुं०) मेंढक।

शालूर—(पुं०) [√शाल् + ऊर] मेंढक।

शालेय—(न०) [शालि + ढक्] धान का खेत। सौंफ। मूली।

शालोत्तरीय—(पुं०) [शालोत्तरे ग्रामे भवः, शालोत्तर + छ] पाणिनि का नामान्तर।

शाल्मल—(पुं०) [√शाल् + मलच्] सेमल का पेड़। भूमण्डल के पुराणोक्त सप्त विभागों में से एक द्वीप विशेष का नाम।

शाल्मलि—(पुं०) [√शाल् + मलिच्] नरक विशेष। सेमल वृक्ष। **—स्थ**–(पुं०) गरुड़ जी।

शाल्मली—(स्त्री०) [शाल्मलि + ङीष्] सेमल का वृक्ष। पाताल की एक नदी का नाम। नरक विशेष। **—वेष्ट**, **—वेष्टक**– (पुं०) सेमल की गोंद।

शाल्व—(पुं०) [√शाल् + व] एक देश का नाम। शाल्व देश का राजा।

शाव—(वि०) [स्त्री०—**शावी**] [शव + अण्] शव सम्बन्धी; 'दशाहं शावमाशौचं सपिण्डेषु विधीयते' मनु० ५.५९। (पुं०) [√शव् + घञ्] बच्चा, विशेष कर पशु-पक्षियों का। भूरा रंग।

शावक—(पुं०) [शाव + कन्] पशु-पक्षी का बच्चा, छौना।

शाश्वत—(वि०) [स्त्री०—**शाश्वती**] [शश्वत् + अण्] जो सदा स्थायी रहे, नित्य। (पुं०) वेदव्यास। शिव। स्वर्ग। सूर्य।

शाश्वती—(वि०) [शाश्वत + ङीप्] पृथिवी।

शाष्कुल—(वि०) [स्त्री०—**शाष्कुली**] शष्कुलमिव मांसं भक्ष्यम् अस्य, शष्कुल + अण्] मांस-भक्षी, मांसाहारी।

शाष्कुलिक—(न०) [शष्कुली + ठक्] रोटियों या पूरियों का ढेर ।

√शास्—अ० प०० सक० शिक्षा देना । शासन करना । आज्ञा देना । निर्देश करना । सूचना देना । सलाह देना । दण्ड देना । वशवर्ती करना । पालतू बनाना । शास्ति, शासिष्यति, अशिषत् ।

शासन—(न०) [√शास् + ल्युट्] आज्ञा, आदेश । वशवर्ती करना । लिखित प्रतिज्ञा, पट्टा । राज्य के कार्यों का प्रबन्ध और संचालन, हुकूमत । दंड, शास्ति । शास्त्र । राजा की दान की हुई भूमि । वह परवाना या रमान जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को कोई अधिकार दिया गया हो । इन्द्रिय-निग्रह । —**पत्र**–(न०) वह ताम्रपत्र या शिला, जिस पर कोई राजाज्ञा खोदी गयी हो । —**हर**,— **हारिन्**– (पुं०) राजदूत । सन्देश-वाहक; 'तमभ्यनन्दत्प्रथमं प्रबोधितः प्रजेश्वरः शासनहारिणा हरेः' र० ३.६८ ।

शासित—(वि०) [√शास् + क्त] शासन किया हुआ । दण्डित ।

शासितृ—(पुं०) [√शास् + तृच्] शासनकर्त्ता । दण्ड-दाता ।

शास्ति—(स्त्री०) [√शास्+क्तिन् वा ति] शासन । आज्ञा । दंड । दंड के रूप में लिया जाने वाला धन या कार्य ।

शास्तृ—(पुं०) [√शास् +तृन्, सच अनिट्] शिक्षक । शासन-कर्ता । राजा । पिता । बुद्ध या जिन । बौद्धों या जैनों का गुरु ।

शास्त्र—(न०) [शिष्यतेऽनेन, √ शास् + ष्ट्रन्] जन-साधारण के हित के लिये विधान बतलाने वाले धार्मिक ग्रन्थ । आज्ञा, आदेश । धर्माज्ञा, धर्मशास्त्र की आज्ञा । किसी विशिष्ट विषय का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से संग्रह करके रखा गया हो । —**अतिक्रम** (**शास्त्रातिक्रम**)–(पुं०) शास्त्र की आज्ञा का उल्लंघन ।—**अनुष्ठान** (**शास्त्रानुष्ठान**)–(न०) शास्त्रीय आज्ञा का पालन ।—**अभिज्ञ** (**शास्त्राभिज्ञ**) –(वि०) शास्त्र जानने वाला ।—**अर्थ** (**शास्त्रार्थ**)–(पुं०) शास्त्र का अर्थ । धर्मशास्त्र की आज्ञा ।—**आचरण** (**शास्त्राचरण**)–(न०) शास्त्रीय आज्ञाओं का पालन ।—**उक्त** (**शास्त्रोक्त**)– (वि०) शास्त्रकथित, शास्त्रीय, शास्त्रानुमोदित ।—**कार**, —**कृत्**– (पुं०) शास्त्र बनाने वाला ।—**कोविद** –(वि०) शास्त्रनिष्णात, शास्त्रों को भली-भाँति जानने वाला ।—**गण्ड**–(पुं०) शास्त्रों का अधूरा ज्ञान रखने वाला, पल्लवग्राही पण्डित ।—**चक्षुस्**– (न०) शास्त्र का नेत्र अर्थात् व्याकरण । —**दर्शिन्**– (वि०) जिसे शास्त्रों का अच्छा ज्ञान हो, शास्त्रज्ञ ।—**दृष्टि**–(स्त्री०) शास्त्र का मत, विचार । —**योनि**–(पुं०) शास्त्रों का उद्गम-स्थल ।—**विधान**– (न०), —**विधि**–(पुं०) आचार, व्यवहार सम्बन्धी शास्त्रोक्त आदेश, अनुशासन । —**विप्रतिषेध**, —**विरोध**–(पुं०) धर्मशास्त्र की आज्ञाओं में परस्पर विरोध । कोई कार्य जो धर्मशास्त्र के विरुद्ध हो ।—**विमुख**–(वि०) धर्मशास्त्र के अध्ययन से पराङ्मुख ।—**विरुद्ध**–(वि०) धर्मशास्त्र की आज्ञाओं के विरुद्ध या खिलाफ ।—**व्युत्पत्ति**–(स्त्री०) शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान, शास्त्र-निपुणता ।—**शिल्पिन्**– (पुं०) काश्मीर देश ।—**सिद्ध**–(वि०) धर्मशास्त्र के मतानुसार, धर्मशास्त्र में प्रतिपादित ।

शास्त्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**शास्त्रिणी**] [शास्त्र+इनि] शास्त्र जानने वाला, शास्त्रज्ञ ।

शास्त्रीय—(वि०) [शास्त्र + छ] शास्त्र संबंधी । शास्त्रानुमोदित । वैज्ञानिक, विज्ञान सम्बन्धी ।

शास्य--(वि०) [√शास् + ण्यत्] शासन करने के योग्य । सिखलाने या समझाने योग्य । दण्डनीय ।

√शि--स्वा० उभ० सक० पैना करना, धार रखना । पतला करना । भड़काना, उत्तेजित करना । ध्यान देना । शिनोति--शिनुते, शेष्यति--ते, अशैषीत्-- अशेष्ट ।

शि--(पुं०) [√शि + क्विप्] मंगल । समृद्धि । स्वस्थता । शान्ति । शिव ।

शिंशपा--(स्त्री०) [शिवं पाति, शिव√पा +क, पृषो० साधुः] शीशम का पेड़ । अशोक वृक्ष ।

शिक्कु--(वि०) [√सिच्+कु, पृषो० शत्व] सुस्त, काहिल, अकर्मण्य ।

शिक्थ--(न०) [√ सिच् + थक्, पृषो० शत्व] मोम ।

शिक्य--(न०), **शिक्या**- (स्त्री०) [स्रंस् +यत्, कुगागम, शि आदेश] [शिक्य +टाप्] छींका, सिकहर । वहँगी के दोनों ओर बँधा हुआ रस्सी का जाल, जिस पर बोझ रखते हैं । तराजू की डोरी ।

शिक्यित--(वि०) [शिक्य + णिच्+क्त] छींके या सींके में लटकाया हुआ । वहँगी में रखा हुआ ।

√ शिक्ष्--भ्वा० आत्म० सक० सीखना । पढ़ना । शिक्षते, शिक्षिष्यते, अशिक्षिष्ट ।

शिक्षक--(पुं०) [स्त्री०--**शिक्षका**, **शिक्षिका**] [√शिक्ष् + णिच्+ण्वुल्] सिखलाने वाला । गुरु ।

शिक्षण--(न०) [√शिक्ष्+ल्युट् वा णिच् +ल्युट्] शिक्षा, तालीम, पढ़ाने का काम ।

शिक्षा--(स्त्री०) [√शिक्ष् + अ--टाप्] किसी विद्या को सीखने या सिखाने की क्रिया, तालीम । गुरु के निकट विद्याभ्यास, विद्या का ग्रहण । दक्षता । उपदेश; 'अभूच्च नम्रः प्रणिपातशिक्षया' र० ३.२५। सलाह । छह वेदाङ्गों में से एक जिसमें वेदों के वर्ण, स्वर, मात्रा आदि का निरूपण है । विनय, विनम्रता ।--**कर**- (पुं०) अध्यापक, शिक्षक । वेदव्यास ।--**नर**- (पुं०) इन्द्र । --**परिषद्**- (स्त्री०) वैदिक काल की शिक्षा-संस्था या विद्यालय जो एक ऋषि या आचार्य के अधीन रहता था और उसी के नाम से प्रसिद्ध होता था। शिक्षा या पढ़ाई का प्रवन्ध करने वाली सभा या समिति ।--**शक्ति**-(स्त्री०) ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति ।

शिक्षित--(वि०) [√शिक्ष्+क्त वा णिच् +क्त] पढ़ा-लिखा, अधीत । सिखाया-पढ़ाया हुआ । नियंत्रित । पालतू । निपुण, चतुर । विनम्र, लज्जालु ।--**अक्षर** (**शिक्षिताक्षर**)-(पुं०) छात्र । (वि०) शिक्षित ।--**आयुध** (**शिक्षितायुध**)-(वि०) हथियार चलाने में निपुण ।

शिखण्ड--(पुं०) [शिखा√अम् + ड, शक० पररूप] चोटी, शिखा । काकपक्ष, काकुल, जुल्फ । मयूर-पुच्छ ।

शिखण्डक--(पुं०) [शिखण्ड + कन्] चूड़ाकरण संस्कार के समय सिर पर रखी गयी चोटी या चुटिया । काकपक्ष, काकुल; 'तौ पितुर्नयनजेन वारिणा किञ्चिदुक्षित-शिखण्डकावुभौ र० ११.५ । मयूर-पुच्छ । कलँगी ।

शिखण्डिक--(पुं०) [शिखण्डिन् √ कै +क] मुर्गा, कुक्कुट ।

शिखण्डिका--(स्त्री०) [शिखण्ड + कन् --टाप्, इत्व] शिखा, चोटी । काकपक्ष, काकुल । मयूर-पुच्छ ।

शिखण्डिन्--(वि० [शिखण्ड + इनि] शिखावाला, कलँगीदार । (पुं०) मयूर; 'आसेव्यते भिन्नशिखण्डिबर्हः (वायुः)' कु० १.१५ । मुर्गा । तीर । मयूर-पुच्छ । पीली जूही । घुँघची । विष्णु का नामान्तर। शिव । कृष्ण । द्रुपदराज के एक पुत्र का नाम ।

शिखण्डिनी—(स्त्री०) [शिखण्डिन् – ङीप्] मयूरी । मुर्गी । घुंघची । पीली जूही । राजा द्रुपद की एक कन्या का नाम ।

शिखर—(न०, पुं०) [शिखा अस्ति अस्य, शिखा+र] चोटी या सबसे ऊँचा भाग, (पर्वत का) शृङ्ग । वृक्ष की फुनगी । चुटिया । शिखा । तलवार की धार या बाढ़ । बगल । रोमाञ्च । कुन्द की कली । चुन्नी की तरह का एक रत्न । सिरा, अग्रभाग ।—**वासिनी**– (स्त्री०) दुर्गा देवी का नाम ।

शिखरिणी—(स्त्री०) [शिखर + इनि –ङीप्] उत्तम स्त्री । रसाला, सिखरन । रोमावली । सत्रह अक्षरों का एक वर्ण वृत्त जिसके छठे और ग्यारहवें वर्ण पर यति होती है ।

शिखरिन्—(वि०) [शिखर + इनि] चोटीवाला । शिखावाला । नुकीली । शृङ्गवाला । (पुं०) पहाड़, पर्वत । दुर्ग । वृक्ष । शिखरी नामक पक्षी । अपामार्ग, चिचड़ा ।

शिखा—(स्त्री०) [√शी + ख, ह्रस्व –टाप्] (सिर पर) चोटी, चुटिया कलँगी । वेणी । केशों या परों का गुच्छा । धार, बाढ़ । वस्त्र की किनारी, दामन या गोट या अंचल । अँगारा । शिखर । शृङ्ग । लौ । किरण । मोर की कलँगी । कलियारी मूर्वा, मरोड़फली । जटामासी, बालछड़ । वच । शिफा । तुलसी । डाली, टहनी । मुख्य, प्रधान । कामज्वर ।—**तरु**–(पुं०) दीपवृक्ष, दीवट, पतीलसोत ।—**धर**–(पुं०) मयूर ।—**मणि**– (पुं०) वह मणि जो सिर पर पहना जाय ।—**मूल**–(न०) वह कंद जिसके ऊपर पत्तियों का गुच्छा हो । गाजर । शलजम ।—**वृक्ष**–(पुं०) दीवट ।—**वृद्धि**–(स्त्री०) सूद-दर-सूद, वह ब्याज जो प्रति दिन बढ़े ।

शिखालु—(पुं०) [शिखा + आलुच्] मयूर । की कलँगी ।

शिखावत्—(वि०) [शिखा + मतुप्, मस्य वः] चोटीदार । लौदार । (पुं०) दीपक । अग्नि । चित्रकवृक्ष । केतुग्रह ।

शिखावल—(पुं०) [शिखा+वलच्] मयूर । कटहल का पेड़ ।

शिखिन्—(वि०) [शिखा + इनि] नोकदार । चोटीदार । शिखावाला । अभिमानी । (पुं०) मयूर, मोर । अग्नि । मुर्गा । तीर । वृक्ष । दीपक । साँड़ । घोड़ा । पहाड़ । ब्राह्मण । संन्यासी । साधु । केतु उपग्रह । तीन की संख्या । चित्रक वृक्ष ।—**कण्ठ**, —**ग्रीव**– (न०) तूतिया ।—**ध्वज**–(पुं०) कार्त्तिकेय । धूम, धुआँ ।—**पिच्छ**,—**पुच्छ**–(न०) मयूर की पूँछ ।—**यूप**–(पुं०) बारहसिंगा ।—**वर्धक**–(पुं०) कुम्हड़ा । तरबूज ।—**वाहन**– (पुं०) कार्त्तिकेय ।—**शिखा** –(स्त्री०) अँगारा, शोला । मयूर की कलँगी या शिखा ।

शिग्रु—(पुं०) [√शी + रु, ह्रस्व, गुगागम] सहिजन का पेड़, शोभाञ्जन । शाक, साग ।

√शिङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । शिङ्खति, शिङ्खिष्यति, अशिङ्खीत् ।

√शिङ्घ्—भ्वा० पर० सक० सूंघना । शिङ्घति, शिङ्घिष्यति, अशिङ्घीत् ।

शिङ्घाण—(न०) [√शिङ्घ् + आणक, पृषो० कलोप] नाक से निकलने वाला मैल । (पुं०) फेन । कफ । लोहे का मैल । काँच का बरतन ।

शिङ्घाणक—(न०, पुं०) [√शिङ्घ्+आणक] नाक का मैल । (पुं०) कफ, श्लेष्मा ।

शिच्—(स्त्री०) बहँगी ।

√शिञ्ज्—अ० आत्म० अक० बजना, खड़खड़ाना, रुनझुनाना (विशेषतः आभूषणों का) । शिङ्क्ते, शिञ्जिष्यते, अशिञ्जिष्ट ।

शिञ्ज—(पुं०) [√शिञ्ज् + घञ्] भूषण का शब्द ।

शिञ्जञ्जिका—(स्त्री०) कमर में बांधने की जंजीर।

शिञ्जा—(स्त्री०) [√शिञ्ज् + अ—टाप्] रुनझुन। धनुष की डोरी, चिल्ला, प्रत्यंचा।

शिञ्जित—(वि०) [√शिञ्ज् + क्त] रुनझुन का शब्द करते हुए, खनखनाते हुए। (न०) आभूषण, विशेष कर पायजेब या बिछियों का शब्द।

शिञ्जिनी—(स्त्री०) [√शिञ्ज् + णिनि—ङीप्] धनुष का रोदा, डोरी या चिल्ला। नूपुर, पायजेब, पैर का आभूषण विशेष।

√शिट्—भ्वा० पर० सक० तुच्छ समझना, तिरस्कार करना। शेटति, शेटिष्यति, अशेटीत्।

शित—(वि०) [√शो+क्त] पैनाया हुआ, सान रखा हुआ। पतला, लटा हुआ। जीर्ण। निर्बल, कमजोर।—**अग्र** (शिताग्र)–(पुं०) कांटा।—**धार**–(वि०) पैनी धार वाला।—**शूक**–(पुं०) जौ। गेहूँ।

शितद्रु—(स्त्री०) सतलज नदी।

शिति—(वि०) [√ शत् (सौत्र)+इन्, इत्व वा √शि+क्तिच्] नीला। काला। (पुं०) भोजपत्र का वृक्ष।—**कण्ठ**–(पुं०) शिव जी का नामान्तर; 'तस्यात्मा शितिकण्ठस्य सैनापत्यमुपेत्य वः' २.६१। मयूर। वटेर जाति का एक पक्षी।—**च्छद**, —**पक्ष**–(पुं०) हंस। —**रत्न**–(न०) नीलमणि, नीलम।—**वासस्**– (पुं०) बलराम।—**सार**,—**सारक**–(पुं०) तेंदू का पेड़।

शिथिल—(वि०) [√ श्लथ् + किलच्, पृषो० साधुः] ढीला। जो बँधा न हो। (वृक्ष से) गिरा हुआ, वृक्ष के तने से पृथक् हुआ। निर्बल, कमजोर। नरम, कोमल। घुला हुआ। सड़ा हुआ। व्यर्थ, विफल। असावधान। भली-भांति न किया हुआ। त्यक्त, त्यागा हुआ। (न०) ढीलापन। सुस्ती।

शिथिलित—(वि०) [शिथिल+णिच्+क्त] ढीला। ढीला किया हुआ। घुला हुआ।

शिनि—(पुं०) [√शि+निक्] यादवों के पक्ष का एक योधा। सात्यकि का नाम।

शिपि—(पुं०) [√शी + क्विप्, शी√पा +क, पृषो० ह्रस्व, इत्व] किरण। (स्त्री०) चर्म, चमड़ा। (न०) जल।—**विष्ट** (वि०) किरण से व्याप्त। गंजा। कोढ़ी। (पुं०) विष्णु। शिव। साहसी आदमी। वह मनुष्य जिसका लिङ्गाग्रभाग आवरक चर्म से विहीन हो। कोढ़ी।

शिप्र—(पुं०) [√शि+रक्, पुक्] हिमालय पर्वत की एक झील का नाम।

शिप्रा—(स्त्री०) [शिप्र+टाप्] शिप्र झील से निकलने वाली एक नदी जिसके तट पर उज्जयिनी नगरी है; 'शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः' मे० ३१।

शिफा—(स्त्री०) भसींड़, पद्मकंद। जड़। एक वृक्ष की रेशेदार जड़ जिससे प्राचीन काल में कोड़े बनाये जाते थे। कशाघात, कोड़े की मार। माता। नदी।—**धर**–(पुं०) डाली, शाखा।—**रुह**– (पुं०) वट वृक्ष, बरगद का पेड़।

शिफाक—(पुं०) [शिफा+कन्] भसींड़।

शिबि, शिवि—(पुं०) [√शि+वि] शिकारी जानवर। भोजपत्र का पेड़। एक देश का नाम। राजा उशीनर के पुत्र तथा ययाति के दौहित्र एक प्रसिद्ध धर्मात्मा राजा का नाम।

शिबिका, शिविका—(स्त्री०) [शिवं करोति, शिव+णिच्+ण्वुल्] पालकी, डोली। खाद्य पदार्थ विशेष।

शिबिर, शिविर—[शेरते राजबलानि अत्र, √शी+किरच्, वुक् आगम, ह्रस्व] डेरा, खेमा, निवेश। शाही खेमा, राजकीय

निवेश। पड़ाव, छावनी। किला। धान्य विशेष।

शिबिरथ, शिविरथ—(स्त्री०) [शिवेः भूर्ज-वृक्षस्य ईः शोभा यत्र तादृशो रथः] पालकी, पीनस, म्याना।

शिम्बा—(स्त्री०) [√शम् + डम्बच्, पृषो० साधुः] छीमी। सेम।

शिम्बिका—(स्त्री०) [शिम्बा + कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] छीमी। सेम। पौधा विशेष।

शिर—(न०) [√शॄ+क] सीस। पिपरा-मूल। (पुं०) शय्या। अजगर।—**ज**—(न०) केश, बाल।

शिरस्—(न०) [√श्रि+असुन्, स च कित्, धातोः शिरादेशः] सिर, सीस। खोपड़ी। चोटी; 'हिमगौरैरचलाधिपः शिरोभिः' कि० ५.१७। वृक्ष की फुनगी। किसी भी वस्तु का अग्रभाग। सर्वोच्च-स्थान। मुख्य, प्रधान।—**अर्ति** (**शिरोऽर्ति**)—(स्त्री०) शिर का दर्द।—**अस्थि** (**शिरोऽस्थि**)—(न०) खोपड़ी।—**कपालिन्** (**शिरः-कपालिन्**) —(पुं०) कापालिक संन्यासी, अघोरपंथी।—**ग्रह** (**शिरोग्रह**)—(पुं०) सिर का दर्द।—**तापिन्**— (पुं०) हाथी।—**त्र**, —**त्राण**— (न०) युद्ध के समय सिर के बचाव के लिए पहनी जाने वाली लोहे की टोपी, कूँड़, खोद। पगड़ी, साफा। टोपी।—**धरा** (**शिरोधरा**)—(स्त्री०), —**धि** (**शिरोधि**) —(पुं०) गरदन।—**पीड़ा** (**शिरःपीडा**)—(स्त्री०) सिर का दर्द।—**फल** (**शिरःफल**) —(पुं०) नारियल का वृक्ष।—**भूषण** (**शिरोभूषण**)— (न०) गहना जो सिर पर पहना जाय।—**मणि** (**शिरोमणि**)—(पुं०) रत्न जो सीस पर धारण किया जाय। प्रतिष्ठा-सूचक उपाधि जो श्रेष्ठ व्यक्ति को दी जाती है।—**मर्मन्** (**शिरोमर्मन्**)—(पुं०) शूकर, सूअर।—**मालिन्** (**शिरोमालिन्**)— (पुं०) शिव जी का नाम।—**रत्न** (**शिरोरत्न**)—(न०) शिरोमणि।—**रुजा** (**शिरोरुजा**)—(स्त्री०) सिर की पीड़ा।—**रुह्** (**शिरोरुह्**),—**रुह** (**शिरोरुह**)— (पुं०) सिर के केश।—**वर्तिन्** (**शिरोवर्तिन्**)—(पुं०) प्रधान। अध्यक्ष।—**वृत्त** (**शिरोवृत्त**)— (न०) काली मिर्च।—**वेष्ट** (**शिरोवेष्ट**)—(पुं०), —**वेष्टन** (**शिरोवेष्टन**)—(न०) पगड़ी, साफा।—**हारिन्** (**शिरोहारिन्**) (पुं०) शिव जी।

शिरसिज, शिरसिरुह—(पुं०) [शिरसि √जन्+ड, सप्तम्या अलुक्] [शिरसि √रुह् + क, सप्तम्या अलुक्] सिर के बाल।

शिरस्क—(न०) [शिरस् + कन्] दे० 'शिरस्त्राण'।

शिरस्का—(स्त्री [शिरस्क + टाप्] पालकी।

शिरस्तस्—(अव्य०) [शिरस् + तस्] सिर से।

शिरस्य—(वि०) [शिरस् + यत्] सिर सम्बन्धी। (पुं०) सुलझे हुए साफ केश।

शिरा—(स्त्री०) [√शॄ + क—टाप्] रक्त की छोटी नाड़ी, खून की छोटी नली, नस, रग।—**पत्र**—(पुं०) कैथ। हिंताल वृक्ष।—**वृत्त**—(न०) सीसा।

शिराल—(वि०) [शिरा+लच्] नसों या नाड़ियों वाला।

शिरि—(पुं०) [√शॄ+इ, स च कित्] तलवार। हत्यारा। तीर। टिड्डी।

शिरीष—(पुं०) [श्रृणाति झटिति म्लायति, √शॄ+ईषन्, स च कित्] अति कोमल फूलों वाला एक वृक्ष, सिरिस; 'शिरीष-पुष्पाधिकसौकुमार्यौ बाहू तदीयाविति मे वितर्कः' कु० १.४१।

√शिल्—तु० पर० सक० लुनने के पीछे जो दाने खेत में पड़े रहते हैं, उन्हें बीनना। शिलति, शेलिष्यति, अशेलीत्।

शिल—(पुं०, न०) [√शिल् + क] खेत कट जाने के पश्चात् उसमें बिखरे हुए शेष दाने या अनाज की बालें ऐसे अनाज को बीनने की क्रिया।—**उञ्छ (शिलोञ्छ)**—(पुं०) फसल कट जाने पर खेत में गिरे दाने चुनने की क्रिया। अनियमित वृत्ति, आकाश-वृत्ति।

शिला—(स्त्री०) [शिल+टाप्] पत्थर। चट्टान। चक्की। चौखट की नीचे की लकड़ी। खेमे का अग्रभाग। शिरा, नाड़ी। मैनसिल। कपूर।—**आटक (शिलाटक)**—(पुं०) सूराख, रन्ध्र। अहाता, घेरा। अटारी।—**आत्मज (शिलात्मज)**—(न०) लोहा।—**आत्मिका (शिलात्मिका)**—(स्त्री०) सोना या चांदी गलाने की घरिया।—**आसन (शिलासन)**—(न०) बैठने के लिये पत्थर की सिल्ली। शैलेय नामक गन्धद्रव्य। शिलाजीत।—**आह्व (शिलाह्व)**—(न०) शिलाजीत।—**उच्चय (शिलोच्चय)**—(पुं०) पहाड़; 'न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलाच्चये मूर्च्छति मारुतस्य' र० २.३४। बड़ी चट्टान।—**उत्थ (शिलोत्थ)**—(न०) छरीला या शैलेय नामक गन्ध द्रव्य। शिलाजीत।—**उद्भव (शिलोद्भव)**—(न०) शैलेय, छरीला। पीला चन्दन।—**ओकस् (शिलौकस्)**—(पुं०) गरुड़ जी।—**कुट्टक**—(पुं०) संगतराश की छैनी।—**कुसुम,—पुष्प**—(न०) शिलाजीत।—**ज**—(वि०) खनिज। (न०) शैलेय, छरीला। लोहा। शिलाजीत।—**जतु**—(न०) शिलाजीत। गेरू।—**जित्, —दद्रु**—(पुं०) शिलाजीत।—**धातु**—(पुं०) खरिया मिट्टी। गेरू। खनिज पदार्थ।—**पट्ट**—(पुं०) पत्थर की शिला की बैठकी।—**पुत्र, —पुत्रक**—(पुं०) मसाले पीसने की सिल।—**प्रतिकृति**—(स्त्री०) पत्थर की मूर्ति।—**फलक**—(न०) पत्थर की पटिया। पत्थर का चौड़ा टुकड़ा।—**भव**—(न०) शिलाजीत। छरीला।—**रम्भा**—(स्त्री०) कठकेला, काष्ठकदली।—**वल्कल**—(न०),—**वल्का**—(स्त्री०) एक प्रकार की ओषधि जिसे शिलजा और श्वेता भी कहते हैं।—**वृष्टि**—(स्त्री०) ओलों की वर्षा, पत्थरों की वर्षा।—**वेश्मन्**—(न०) कंदरा, गुफा।—**व्याधि**—(पुं०) शिलाजीत।—**सार**—(न०) लोहा।—**स्वेद**—(पुं०) शिलाजीत।

शिलि—(पुं०) [√शिल् + कि] भोजपत्र का पेड़। (स्त्री०) चौखट के नीचे की लकड़ी।

शिलिन्द—(पुं०) [शिलि√दा + क, पृषो० मुम्] मछली विशेष।

शिली—(स्त्री०) [शिलि + ङीष्] दरवाजे के नीचे की लकड़ी। केंचुआ। भाला। बाण। मेढ़की।—**मुख**—(पुं०) भ्रमर; 'कटेषु करिणां पेतुः पुंनागेभ्यः शिलीमुखाः' र० ४.५७। तीर। मूर्ख। युद्ध।

शिलीन्ध्र—(न०) [शिली√धृ + क, पृषो० मुम्] कुकुरमुत्ता। केले का फूल। ओला। (पुं०) शिलिंद नामक मछली। कठकेला।

शिलीन्ध्रक—(न०) [शिलीन्ध्र + कन्] कुकुरमुत्ता।

शिलीन्ध्री—(स्त्री०) [शिलीन्ध्र + ङीष्] मिट्टी। केंचुआ। एक मादा पक्षी।

शिल्प—(न०) [√शील् + प, ह्रस्व] मूर्ति-कला आदि कर्म (वात्स्यायन के मत से नृत्य, गीत आदि ६४ बाह्य क्रियाएँ और आलिंगन, चुंबन आदि ६४ आभ्यंतर क्रियाएँ शिल्प कहलाती हैं), कारीगरी, हुनर। स्रुवा।—**कर्मन्**—(न०),—**क्रिया**—(स्त्री०) कारीगरी।—**कार, —कारक, —कारिन्**—(पुं०) शिल्पी, कारीगर।—**शाल**—

(न०), शाला– (स्त्री०) शिल्प संबंधी काम करने का स्थान या घर, कारखाना। —शास्त्र– (न०) वह शास्त्र जिसमें शिल्प संबंधी निर्माण का ज्ञान, विवेचन हो, शिल्प-विद्या।

शिल्पिन्—(पुं०) [शिल्प + इनि] शिल्पकार, कारीगर। राज, थवई। चित्रकार, चितेरा। कलाकार। नखी नामक गंधद्रव्य।

शिव—(वि०) [√ शो + वन्, पृषो० ह्रस्व] शुभ, कल्याणकारी; 'शिवानि वस्तीर्थजलानि कच्चित्' र० ५.८। अच्छे स्वास्थ्य वाला। (न०) समृद्धि। कुशल। कल्याण। आनन्द। मोक्ष। जल। समुद्री नमक। सेंधा नमक। शुद्ध सोहागा। (पुं०) महादेव। लिङ्ग, जननेन्द्रिय। शुभ योग विशेष। वेद। मोक्ष। खूँटा। देवता। पारा। शिलाजीत। काला धतूरा।—**आत्मक** (**शिवात्मक**)–(न०) सेंधा नमक।—**आदेशक** (**शिवादेशक**)– (पुं०) शुभ संवाद देने वाला व्यक्ति। ज्योतिषी।—**आलय** (**शिवालय**)–(पुं०) शिव जी का मन्दिर। लाल तुलसी। (न०) श्मशान। —**इतर** (**शिवेतर**)–(वि०) अशुभ, अमङ्गलकारी।—**कर** (**शिवङ्कर**)–(वि०) शुभकारी। आनन्ददायी।—**कीर्तन**–(पुं०) विष्णु। भृङ्गी का नाम।—**गति**–(वि०) समृद्ध। हर्षित।—**घर्मज**–(पुं) मङ्गलग्रह।—**दत्त** (न०) विष्णु भगवान् का चक्र।—**दारु**–(न०) देवदारु का पेड़।—**द्रुम**–(पुं०) विल्व वृक्ष।—**द्विष्टा**–(स्त्री०) केतकी वृक्ष।—**धातु**–(पुं०) पारा।—**पुर**– (न०)—**पुरी**– (स्त्री०) काशी, वाराणसी।—**पुराण**– (न०) अष्टादश पुराणों में से एक। —**प्रिय**–(पुं०) स्फटिक। वक-वृक्ष। धतूरा। रुद्राक्ष।— **मल्लक**–(पुं०) अर्जुन वृक्ष।—**रस**– (पुं०) उबले चावल का पानी।—**राजधानी**– (स्त्री०) काशी।—**रात्रि**–(स्त्री०) फाल्गुन-कृष्णा १४शी। —**लिङ्ग**– (न०) महादेव की पिंडी।—**लोक**– (पुं०) शिव का लोक, कैलास।—**वल्लभ**– (पुं०) आम का पेड़।—**वल्लभा**–(स्त्री०) पार्वती। शतपत्री, सेवती। सफेद गुलाव।—**वाहन**– (पुं०) बैल। —**वीर्य**– (न०) पारा।—**शेखर**–(पुं०) चन्द्रमा। धतूरा।—**सुन्दरी**–(स्त्री०) दुर्गा।

शिवक—(पुं०) [शिव + कन्] गौ आदि बाँधने का खूँटा। पशुओं के खुजलाने के लिये बनाया हुआ खंभा।

शिवताति—(वि०) [शिव + तातिल्] कल्याण करने वाला। (स्त्री०) शिवत्व, मंगल।

शिवा—(स्त्री०) [शिव+टाप्] पार्वती। गीदड़ी, शृगाली, सियारिन; 'जहासि निद्रामशिवैः शिवारुतैः' कि० १.३८। मोक्ष। शमी वृक्ष। हल्दी। दूर्वा। गोरोचन।—**अराति** (**शिवाराति**)–(पुं०) कुत्ता।—**प्रिय**– (पुं०) वकरा।—**फला**–(स्त्री०) शमी वृक्ष।— **रुत**–(न०) गीदड़ का हूहा शब्द।

शिवानी—(स्त्री०) [शिवम् आनयति, शिव —आ √नी+ड—ङीष्] पार्वती। जयन्ती वृक्ष।

शिवालु—(पुं०) [शिव √ अल्+उन्] गीदड़, सियार।

शिशयिषा—(स्त्री०) [√शी + सन्, द्वित्वादि, +अ—टाप्] सोने की इच्छा।

शिशिर—(वि०) [√शिश् + किरच्] ठंडा, शीतल। (पुं०, न०) छः ऋतुओं में से एक जो माघ और फागुन में पड़ती है। ओस। (पुं०) विष्णु। सूर्य। लाल चंदन। एक अस्त्र।—**अंशु** (**शिशिरांशु**),—**किरण**, —**दीधिति**, —**रश्मि**– (पुं०)

चन्द्रमा ।—अत्यय (शिशिरात्यय),—अपगम (शिशिरापगम)–(पुं०) जाड़े का अन्त ।—काल, —समय–(पुं०) जाड़े का मौसम ।—घ्न–(पुं०) अग्नि ।

शिशु—(पुं०) [√शि + कु, सन्वद्‌भाव, द्वित्वादि] बच्चा, बालक । किसी जानवर का बच्चा । बालक जो ८ वर्ष की अवस्था के बीच हो ।—**क्रन्द**–(पुं०), —**क्रन्दन**–(न०) बच्चे का रोना ।—**गन्धा**–(स्त्री०) मल्लिका का भेद ।—**पाल**–(पुं०) चेदि देश का एक राजा, जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था ।–०**वध** (न०, पुं०) महाकवि माघ कृत एक प्राचीन काव्य जिसमें श्रीकृष्ण द्वारा शिशुपाल के मारे जाने की कथा वर्णित है ।—**मार**– (पुं०) सूँस नामक जलजन्तु । —०**चक्र**– (पुं०) सौर मंडल ।—**वाहक**, —**वाह्यक**– (पुं०) जंगली बकरा ।

शिशुक—(पुं०) [शिशु+कन्] बच्चा । किसी जानवर का बच्चा । सूँस । एक वृक्ष । जलसर्प जो विषहीन होता है ।

शिश्न—(न०) [√शश्+नक्, इत्व] लिङ्ग, जननेन्द्रिय ।

शिश्विदान—(वि०) [√श्वित् + सन् +आनच्, सनो लुक्, तकारस्य दकारः] सदाचारी, पुण्यात्मा । दुष्टात्मा, पापी ।

√**शिष्**—भ्वा० पर० सक० घायल करना । मार डालना । शेषति, शेक्ष्यति, अशिक्षत् । रु० पर० सक० विशेष करना । शिनष्टि, शेक्ष्यति, अशिषत् । चु० पर० सक० अवशेष करना । शेषयति–शेषति ।

शिष्ट—(वि०) [√शिष् वा √शास्+क्त] बचा हुआ, बचा-खुचा । आदेश किया हुआ । सिखाया हुआ । नियमाधीन किया हुआ । शालीन । आज्ञाकारी । बुद्धिमान् । पुण्यात्मा । प्रतिष्ठित । शान्त । धीर । मुख्य, प्रधान । उत्तम । प्रसिद्ध, प्रख्यात । वेद के वचनों पर विश्वास रखने वाला । अच्छी समझ वाला । अच्छे स्वभाव और आचरण वाला । आचार-व्यवहार में निपुण । सुशील । सभ्य । सज्जन । (पुं०) प्रसिद्ध या प्रख्यात पुरुष । बुद्धिमान् जन; 'समौ हि शिष्टैराम्नातौ वत्स्यन्तावामयः स च' शि० २.१० । मंत्री । सलाहकार ।—**आचार** (**शिष्टाचार**)– (पुं०) बुद्धिमानों का आचरण । अच्छा आचरण ।—**सभा**–(स्त्री०) शिष्टों की सभा, राज्य-परिषद् ।

शिष्टता—(स्त्री०) [शिष्ट + तल्–टाप्] विनय । नम्रता । अधीनता ।

शिष्टि—(स्त्री०) [√शास् + क्तिन्] अनुशासन, शासन । आदेश, आज्ञा । दण्ड, सजा ।

शिष्य—(पुं०) [शिष्यतेऽसौ, √ शास् +क्यप्] अन्तेवासी, विद्यार्थी । शागिर्द, चेला । —**परम्परा**–(स्त्री०) किसी गुरु-संप्रदाय की शिष्य-परंपरा, शिष्यानुक्रम । —**शिष्टि**– (स्त्री०) शिष्य का सुधार ।

शिह्‌ल, शिह्‌लक—(पुं०) [√सिह् + लक्, नि० सस्य शः] [सिह्‌ल+कन्] शिलारस नामक गन्ध द्रव्य ।

√**शी**—अ० आत्म० अक० लेटना, पड़ना । सोना । शेते, शयिष्यते, अशयिष्ट ।

शी—(स्त्री०) [√शी + क्विप्] निद्रा । आराम । शान्ति ।

√**शीक्**—भ्वा० आत्म० सक० जल से तर करना, (पानी) छिड़कना । धीरे-धीरे गमन करना । शीकते, शीकिष्यते, अशीकिष्ट ।

शीकर—(पुं०) [√शीक् + अर (बा०)] जलकण, पानी की बूंद; 'भागीरथी निर्झरशीकराणां वोढा मुहुः कम्पितदेवदारुः' कु० १.१५ । वायु द्वारा उत्क्षिप्त जल-विन्दु, वर्षा की फुहार । तुषार, ओस, शबनम । (न०) सरल वृक्ष । गंधाविरोजा ।

शीघ्र—(न०) [√शिङ्घ् + रक्, नि० साधुः] अविलम्ब, चटपट, तुरन्त । (पुं०) वह अन्तर जो पृथिवी के दो भिन्न-भिन्न

स्थानों से ग्रहों के देखने में होता है। वायु। (वि०) शीघ्रता वाला, त्वरान्वित, जल्द। —कारिन्– (वि०) शीघ्र काम करने वाला। शीघ्र प्रभाव उत्पन्न करने वाला। तीव्र। (पुं०) सन्निपात ज्वर का भेद।—कोपिन्– (वि०) जल्दी क्रुद्ध होने वाला, चिड़चिड़ा।—चेतन– (पुं०) कुत्ता। —बुद्धि– (वि०) तीक्ष्णबुद्धि वाला।—लङ्घन– (वि०)तेज जाने वाला, तेज चलने वाला।—वेधिन्– (पुं०) निशाने पर तुरन्त तीर चलाने वाला, कुशल बाणवेधी।

शीघ्रिन्—(वि०) [शीघ्र+ इनि] शीघ्रकारी। फुर्तीला, तेज।

शीघ्रिय—(वि०) [शीघ्र + घ] शीघ्रता संबन्धी। तेज। (पुं०) विष्णु। शिव। बिल्लियों की लड़ाई।

शीघ्र्य—(न०) [शीघ्र+यत्] जल्दी, तेजी। (वि०) शीघ्र उत्पन्न होने वाला।

शीत्—(अव्य०) सहसा आनन्दोद्रेक या भयोद्रेकव्यञ्जक अव्यय विशेष। मैथुन के समय की सिसकारी।—**कार**–(पुं०) सिसकारी।

शीत—(वि०) [√श्यै + क्त] ठंडा, सर्द, शीतल, सुस्त, काहिल। मन्दबुद्धि। (न०) सर्दी, जाड़ा। जल। त्वचा। ओस। दालचीनी। (पुं०) शीतकाल, सर्दी का मौसम। नीम का पेड़। कपूर। बेंत। अशनपर्णी। बहुवारक वृक्ष। पित्तपापड़ा।—**अंशु** (**शीतांशु**)–(पुं०) चन्द्रमा; 'उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं' शि० ११.६४। कपूर।— **अद्रि** (**शीताद्रि**)– (पुं०) हिमालय पहाड़। —**अश्मन्** (**शीताश्मन्**) –(पुं०) चन्द्रकान्त मणि।—**आद** (**शीताद**)–(पुं०)दांतों के मसूड़ों का एक रोग।—**आर्त** (**शीतार्त**) –(वि०) शीत से पीड़ित। जाड़े से थरथराता हुआ।—**उत्तम** (**शीतोत्तम**)–(न०) जल।—**कटिबन्ध**–(पुं०) भूमंडल के उत्तरी तथा दक्षिणी अंशों के दो कल्पित विभाग जो भूमध्य रेखा के ६६½ अंश उत्तर तथा इतने ही अंश दक्षिण से शुरू होकर ध्रुव प्रदेशों तक फैले हैं।—**काल**–(पुं०) शीत ऋतु, जाड़े का मौसम।—**कृच्छ्र**–(पुं०, न०) मिताक्षरा के अनुसार एक प्रकार का व्रत जिसमें तीन दिन ठंडा जल, तीन दिन ठंडा दूध, और ३ दिन ठंडा घी पीकर तथा ३ दिन बिना कुछ खाये रहना पड़ता है।—**गन्ध**– (न०) सफेद चन्दन।—**गु**–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—**चम्पक**–(पुं०) दीपक। आईना, दर्पण।—**दीधिति**–(पुं०) चन्द्रमा। —**पुष्प**–(पुं०)सिरिस वृक्ष।—**पुष्पक**– (न०) शैलेय, छरीला।—**प्रभ**– (पुं०) कपूर।—**भानु**– (पुं०) चन्द्रमा।—**भीरु**– (स्त्री०) मल्लिका, मोतिया।—**मयूख**, —**मरीचि**, —**रश्मि**– (पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—**रम्य** –(पुं०) दीपक। —**रुच्**– (पुं०) चन्द्रमा।—**वल्क**–(पुं०) उदुम्बर या गूलर का पेड़।—**वीर्यक**– (पुं०) पाकर का पेड़।—**शिव**–(पुं०) शमी वृक्ष। (न०) सेंधा नमक। सोहागा। —**शूक**– (पुं०) जौ, यव।—**स्पर्श**– (वि०) ठंडा, शीतल।

शीतक—(वि०) [शीत + कन्] शीतल, ठंडा। (पुं०) कोई भी शीतल वस्तु। जाड़ा, जाड़े का मौसम। सुस्त या आलसी जन। प्रसन्न, वह मनुष्य जिसे किसी प्रकार की चिन्ता न हो। बिच्छू, बीछी।

शीतल—(वि०) [शीत+लच्] ठंडा, सर्द। (न०) ठंडक, शीतलता। जाड़े का मौसम। शैलेय, शिलारस। सफेद चन्दन। मोती। तूतिया। कमल। बीरण। (पुं०) चन्द्रमा। कपूर। तारपीन। चम्पा का पेड़। जैनियों का व्रत विशेष।—**च्छद** (पुं०) चम्पा का पेड़।—**जल**–(न०) ठंडा पानी। कमल।—**प्रद**–(पुं०, न०)

चन्दन ।—**षष्ठी**– (स्त्री०) माघ-शुक्ला छठ ।

शीतलक—(न०) [शीतल + कन्] सफेद कमल । (पुं०) मरुवक, मरुवा ।

शीतला—(स्त्री०) [शीतल+टाप्]विस्फोटक रोग, चेचक । इस नाम की देवी जिनका वाहन खर है । कुटुम्बिनी वृक्ष । आराम-शीतला । नीली दूब। शीतली वृक्ष।

शीतली—(स्त्री०) [शीतल + ङीष्] चेचक, माता, वसन्त रोग । जल में होने वाला एक पौधा, शीतली जटा ।

शीता—दे०, 'सीता' ।

शीतालु—(वि०) [शीतं न सहते, शीत +आलुच्] शीतार्त, जाड़े का मारा हुआ । जाड़े से कांपता हुआ ।

शीधु—(पुं०, न०)[√ शी+धुक्] ईख के पके रस से बनी हुई मदिरा, शराब । अंगूरी शराब, द्राक्षासव ।—**गन्ध**– (पुं०) वकुल वृक्ष।—**प**– (पुं०) शराबी, मदिरा-पान करने वाला ।

शीन—(वि०) [√श्यै+क्त, सम्प्रसारण, न आदेश] गाढ़ा, जमा हुआ । (पुं०) मूर्ख, जड़बुद्धि वाला । अजगर सर्प ।

√शीभ्—भ्वा० आत्म० सक० डींग मारना । कहना । शीभते, शीभिष्यते, अशीभिष्ट ।

शीभ्य—(पुं०)[√शीभ्+ण्यत्]बैल। शिव ।

शीर—(पुं०) [√शी+रक्] बड़ा सर्प ।

शीर्ण—(वि०) [√शॄ + क्त] कुम्हलाया हुआ, मुर्झाया हुआ । सड़ा हुआ, गला हुआ । शुष्क, सूखा । टूटा-फूटा । लटा, दुबला । (न०) एक गन्ध द्रव्य ।—**अङ्घ्रि** (शीर्णाङ्घ्रि),—**पाद**–(पुं०) यमराज । शनिग्रह ।—**पर्ण**– (न०) कुम्हलाया हुआ पत्ता । (पुं०) नीम का पेड़ ।—**वृन्त**– (न०) तरबूज, कलींदा ।

शीर्वि—(वि०) [√शॄ + क्विन्] नाशक । अनिष्टकारी, हानिकारी । जंगली ।

शीर्ष—(न०) [शिरस् शब्दस्य पृषो० शीर्षादेशः]सिर, ललाट । सिर, चोटी । एक पर्वत । काला अगर ।—**आमय** (शीर्षामय) –(पुं०)सिर का भी कोई रोग ।—(**च्छेद**) (पुं०) सिर काट डालना ।—(**च्छेद्य**)- (वि०) सिर काट डालने योग्य; 'शीर्षच्छेद्यः सते राम तं हत्वा जीवय द्विजम्' उत्त० २.८ ।—**रक्षक**–(न०) शिरस्त्राण ।

शीर्षक—(न०) [शीर्ष+कन् वा शीर्ष √कै +क] सिर । खोपड़ी । शिरस्त्राण । टोपी । साफा, पगड़ी । सिरा । व्यवहार या अभियोग का निर्णय, फैसला । वह शब्द या वाक्य जो विषय का परिचय कराने के लिये किसी लेख या प्रबन्ध के ऊपर लिखा जाय । (पुं०) राहु ।

शीर्षण्य—(पुं०) [शिरस् + यत्, शीर्षन् आदेश] साफ और सुलझे केश ।(न०)शिरस्त्राण । टोपी । टोप । पगड़ी ।(वि०)श्रेष्ठ।

शीर्षन्—(न०) [शिरस् शब्दस्य पृषो० शीर्षन् आदेशः] सिर ।

√शील्—भ्वा० पर० सक० ध्यान करना । पूजन करना, अर्चन करना । शीलति, शीलिष्यति, अशीलीत् । चु० पर० सक० अभ्यास करना । अर्चन करना । शीलयति, शीलयिष्यति, अशीशिलत् ।

शील—(न०) [√शील् + अच् वा√शी +लक्] स्वभाव । आचरण, चाल-चलन । अच्छा स्वभाव । सदाचरण, सदाचार; 'तथा हि ते शीलमुदारदर्शने, तपस्विनामप्युपदेशतां गतम्' कु० ५.३६ । सौन्दर्य । (पुं०) अजगर ।—**खण्डन**– (न०) सदाचार का नाश करना ।—**धारिन्**– (पुं०) शिव जी ।—**वञ्चना** –(स्त्री०) सदाचार का नाश करना ।—**वृत्त**—(वि०) धार्मिक नीति का मानने वाला ।

शीलन—(न०) [√शील् + ल्युट्] अभ्यास धारण करना । विवेचना ।

शीलित—(वि०) [√शील्+क्त] अभ्यास किया हुआ। धारण किया हुआ। निपुण। पटु। सम्पन्न, युक्त।

शीवन्–(पुं०) [√शी+क्वनिप्] अजगर सर्प।

√शुक्—भ्वा० पर० सक० जाना। शोकति, शोकिष्यति, अशोकीत्।

शुक—(न०) [शुक्+क] वस्त्र। शिरस्त्राण। पगड़ी, साफा। कपड़े का दामन, अंचल। (पुं०) तोता। सिरिस का पेड़। गठिवन, ग्रंथिपर्ण। सोनापाठा। व्यास-पुत्र शुकदेव का नाम।—**अदन** (**शुकादन**)—(पुं०) अनार। —**तरु**,—**द्रुम**—(पुं०) सिरिस का पेड़। —**नासिका**– (वि०) तोते की चोंच जैसी नाक।—**पुच्छ**– (पुं०) गन्धक।—**पुष्प**, —**प्रिय**–(पुं०) सिरिस का पेड़। —**पुष्पा**– (स्त्री०) थुनेर। अगस्त का पेड़।—**वल्लभ** –(पुं०) अनार।—**वाह**– (पुं०) कामदेव।

शुक्त—(वि०) [√शुच् + क्त] चमकीला। पवित्र, स्वच्छ। खट्टा, अम्ल। कड़ा, कठोर। संयुक्त, मिला हुआ। निर्जन, सुनसान। (न०) मांस। काँजी। वह (मधुर) वस्तु जो कुछ दिन रखी रहने के कारण खट्टी हो गई हो। सिरका। खटाई।

शुक्ति—(स्त्री०) [√शुच् + क्तिन्] सीप। शंख। घोंघा। खोपड़ी का भाग विशेष। घोड़े की गरदन या छाती की भौंरी। गन्ध द्रव्य विशेष। दो कर्ष या चार तोले की एक तौल। —**उद्भव** (**शुक्त्युद्भव**), —**ज**– (न०) मोती, मुक्ता।—**पुट**–(न०),—**पेशी**– (स्त्री०) सीप का खोल, सुतुही। —**वधू**–(स्त्री०) सीपी।—**वीज**– (न०) मोती।

शुक्तिका—(स्त्री०) [शुक्ति + कन्—टाप्] सीप। चूक का साग।

शुक्र—(पुं०) [√शुच्+रन्] शुक्र ग्रह। दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य। ज्येष्ठ मास का नाम। अग्नि देव का नाम। (न०) पुरुष का वीर्य या धातु। किसी भी वस्तु का सार या निष्कर्ष। —**अङ्ग** (**शुक्राङ्ग**)– (पुं०) मोर।—**कर**– (वि०) वीर्य-कारक। (पुं०) मज्जा।—**वार**, —**वासर**–(पुं०) भृगुवार, शुक्रवार।—**शिष्य**–(पुं०) दैत्य, दानव।

शुक्रल, शुक्रिय—(वि०) [शुक्र√ला + क] [शुक्र+घ] वीर्य सम्बन्धी। शुक्र या वीर्य को बढ़ाने वाला।

शुक्ल—(वि०) [√शुच्+रन्, रस्य लः] सफेद, स्वच्छ, चमकीला। (पुं०) सफेद रंग। शुक्ल पक्ष। शिव का नाम। (न०) चाँदी। एक नेत्र रोग जो आँखों के सफेद तल या डेले पर होता है। ताजा मक्खन। खट्टी काँजी या माँड़ी।—**अङ्ग** (**शुक्लाङ्ग**), —**अपाङ्ग** (**शुक्लापाङ्ग**)–(पुं०) मोर; 'शुक्लापाङ्गैः सजलनयनैः स्वागतीकृत्य केकाः' मे० ३२।—**उपला**, (**शुक्लोपला**)– –(स्त्री०) रवादार चीनी।—**कण्टक**– (पुं०) दात्यूह पक्षी। पनडुब्बी, जलकाक। —**कर्मन्**– (वि०) पुण्यात्मा, धर्मात्मा। —**कुष्ठ**– (न०) सफेद कोढ़।—**धातु**– (पुं०) चाक, खड़िया मिट्टी।—**पक्ष**–(पुं०) उजियाला पाख।—**वायस**–(पुं०) सारस।

शुक्लक—(वि०) [शुक्ल+कन्] सफेद। (पुं०) सफेद रङ्ग। शुक्लपक्ष, उजियाला पाख।

शुक्लल—(वि०) [शुक्ल√ला + क] सफेदी लाने वाला।

शुक्ला—(स्त्री०) [शुक्ल + अच्—टाप्] सरस्वती। शर्करा। गोरे वर्ण की स्त्री। काकोली पौधा।

शुक्लिमन्—(पुं०) [शुक्ल + इमनिच्] सफेदी।

शुक्षि—(पुं०) [√शुष्+क्सि] पवन। चमक, दीप्ति। आग।

शुङ्ग—(पुं०) [√शुम्+ग नि० साधुः] वटवृक्ष, बरगद का पेड़। आँवला। अनाज की बाल, भुट्टा, पाकड़ का पेड़। एक ऐतिहासिक राजवंश।

शुङ्गा—(स्त्री०) [शुङ्ग + टाप्] कली का कोप। अनाज की बाल।

शुङ्गिन्—(पुं०) [शुङ्गा+इनि] वटवृक्ष।

√शुच्—भ्वा० पर० अक० शोक करना, दुःखी होना। पछताना, खेद करना। शोचति, शोचिष्यति, अशोचीत्।

शुच्, शुचा—(स्त्री०) [√शुच् + क्विप्, पक्षे टाप्] खेद, दुःख। सन्ताप, पीड़ा।

शुचि—(वि०) [√शुच् + इन्] साफ, विशुद्ध, स्वच्छ; 'प्रभवति शुचिर्विम्बग्राहे मणिर्न मृदादयः' उत्त० २.४। सफेद। चमकीला। पुण्यात्मा, धर्मात्मा। पवित्र। ईमानदार। निष्कपट। ठीक, सही। (पुं०) सफेद रङ्ग। विशुद्धता, सफाई। निर्दोषता। पुण्य। ईमानदारी। सहीपन। ब्रह्मचर्य। पवित्र जन। ब्राह्मण। ग्रीष्मऋतु, ज्येष्ठ और आषाढ़ का महीना। ईमानदार और सच्चा मित्र। सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। शृङ्गार रस। शुक्र ग्रह। चित्रक वृक्ष।—**द्रुम**—(पुं०) वट-वृक्ष।—**मणि**—(पुं०) स्फटिक, बिल्लौर पत्थर।—**मल्लिका**—(स्त्री०) नेवारी, नवमल्लिका।—**रोचिस्**—(पुं०) चन्द्रमा।—**व्रत**—(वि०) पवित्र संकल्प करने वाला।—**स्मित**—(वि०) मधुर मुसकान वाला।

शुचिस्—(न०) [√शुच् + इसुन्] चमक, प्रकाश, दीप्ति, आभा।

√शुच्य—भ्वा० पर० अक० स्नान करना। मार्जन करना। सक० निचोड़ना। (अर्क-का) खींचना। मथना। शुच्यति, शुच्यिष्यति, अशुच्यीत्।

शुटीर—(पुं०) [=शौटीर, पृषो० साधुः] वीर। नायक।

√शुठ्—भ्वा० पर० सक० रोकना। बचाव करना। शोठति, शोठिष्यति, अशोठीत्। चु० पर० अक० आलस्य करना। शोठयति, शोठयिष्यति, अशूशुठत्।

√शुण्ठ्—भ्वा० पर० सक० साफ करना। सोखना। शुण्ठति, शुण्ठिष्यति, अशुण्ठीत्। चु० शुण्ठयति— शुण्ठति, शुण्ठयिष्यति —शुण्ठिष्यति, अशुशुण्ठत् — अशुण्ठीत्।

शुण्ठि, शुण्ठी—(स्त्री०), **शुण्ठ्य**—(न०) [√शुण्ठ् + इन्] [शुण्ठि + ङीष्] [√शुण्ठ्+यत्] सोंठ।

शुण्ड—(पुं०) [√शुन्+ड] मदमाते हाथी का मद जो उसकी कनपटी से चूता है। हाथी की सूँड़।

शुण्डक—(पुं०) [शुण्ड + कन्] कलाल, शराब खींचने वाला।

शुण्डिन्—(पुं०) [शुण्ड + इनि] कलाल, शराब बनाने वाला। हाथी।—**मूषिका**—(स्त्री०) छछूंदर।

शुतुद्रि, शुतुद्रु—(स्त्री०) सतलज नदी।

शुद्ध—(वि०) [√शुध्+क्त] पवित्र, स्वच्छ, विशुद्ध। निर्दोष। सफेद। चमकीला। भोलाभाला, आडम्बररहित। ईमानदार, सच्चा। सही, ठीक। निर्दोष समझ कर बरी किया हुआ। केवल। अमिश्रित, बिना मिलावट का। असमान। अधिकार-प्राप्त। पैनाया हुआ। (न०) कोई भी वस्तु जो विशुद्ध हो। सेंधा नमक। काली मिर्च। (पुं०) शिव जी।—**अन्त** (**शुद्धान्त**)—(पुं०) रनिवास, अन्तःपुर।—**चैतन्य**—(न०) विशुद्ध बुद्धि।—**जङ्घ**—(पुं०) गधा।—**धी,**—**भाव,**—**मति**—(वि०) विशुद्ध विचारों का, ईमानदार।

शुद्धि—(स्त्री०) [√शुध् + क्तिन्] विशुद्धता, सफाई। चमक, आभा। पवित्रता। प्रायश्चित्त। भुगतान। बदला। रिहाई, छुटकारा। संशोधन। संस्कार। बाकी

निकालने की क्रिया। दुर्गादेवी का नाम। —पत्र—(न०) ग्रन्थ के अंत का वह पत्र जिसमें यह वताया जाता है कि इसमें क्या-क्या अशुद्धियां हैं और उनका शुद्ध रूप क्या-क्या है। प्रायश्चित्त द्वारा पापनिर्मुक्त होने का प्रमाण-पत्र।

शुद्धोदन—(पुं०) बुद्धदेव के पिता का नाम।

√शुध्—दि० पर० अक० शुद्ध हो जाना, पवित्र होना। अनुकूल होना। सक० संशयों को निवृत्त करना। शुध्यति, शोत्स्यति, अशुधत्।

√शुन्—तु पर० सक० जाना। शुनति, शोनिष्यति, अशोनीत्।

शुनःशेप, शुनःशेफ—(पुं०) [शुन इव शेपः (फः) अस्य, अलुक् स०] अजीगर्तपुत्र एक ब्राह्मण का नाम, इसका नाम ऐतरेय ब्राह्मण में आया है।

शुनक—(पुं०) [√शुन् + क, शुन+कन्] भृगुवंशीय एक ऋषि का नाम। कुत्ता।

शुनाशीर, शुनासीर—(पुं०) [सुष्ठु नाशी (सी) रं यस्य, पृषो० साधुः वा शुनाशीरौ वायुसूर्यं अस्य स्तः इति अच्] दो वैदिक देवता—वायु और आदित्य या इंद्र और वायु या इंद्र और सूर्य (इनसे अन्न की उत्पत्ति और रक्षा होती है)। इन्द्र। उल्लू।

शुनि—(पुं०) [√शुन् + इन्] कुत्ता।

शुनी—(स्त्री०) [श्वन् + ङीष्] कुतिया।

शुनीर—(पुं०) [शुनी + र] कुतियों का झुंड।

शुन्ध्√—भ्वा० उभ० अक० पवित्र होना, स्वच्छ होना। सक० साफ करना, पवित्र करना। शुन्धति—ते, शुन्धिष्यति — ते, अशुन्धीत्—अशुन्धिष्ट।

शुन्ध्यु—(पुं०) [√शुन्ध् + युच्, तस्य न अनादेशः] पवन।

√शुभ्—भ्वा० पर० सक० वोलना। मारना। अक० चमकना। शोभति, शोभिष्यति, अशोभीत्। आत्म० अक० चमकना। सुंदर लगना। शोभते, शोभिष्यते, अशुभत्—अशोभिष्ट। तु० पर० अक० सुंदर लगना। लाभदायक प्रतीत होना। उपयुक्त होना। शुभति, शोभिष्यति, अशोभीत्।

शुभ—(वि०) [√शुभ् + क] चमकीला। सुन्दर। कल्याणप्रद। अच्छा। धर्मात्मा। (न०) कल्याण, मङ्गल। सौभाग्य। समृद्धि। आभूषण। जल। गन्धकाष्ठ विशेष। —**अक्ष** (**शुभाक्ष**)— (पुं०) महादेव। —**अङ्ग** (**शुभाङ्ग**)— (वि०) सुन्दर। —**अङ्गी** (**शुभाङ्गी**)—(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री। कामदेवपत्नी रति। —**अपाङ्गा** (**शुभापाङ्गा**)—(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री। —**अशुभ** (**शुभाशुभ**)—(न०) सुख-दुःख। भला-वुरा। —**आचार** (**शुभाचार**)—(वि०) पवित्र आचरण वाला। पुण्यात्मा। —**आनना** (**शुभानना**)—(स्त्री०) सुन्दर मुखवाली फलतः सुन्दरी स्त्री। —**इतर** (**शुभेतर**)—(वि०) वुरा, खराव। अशुभ। —**उदर्क** (**शुभोदर्क**)—(वि०) वह जिसका अन्त शुभ या आनन्दमय हो। —**कर**—(वि०) मङ्गलकारी। —**कर्मन्**—(न०) पुण्यकार्य। वोल नामक गन्धद्रव्य। —**ग्रह**—(पुं०) अच्छा फल देने वाला ग्रह। —**द**—(पुं०) पीपल का वृक्ष। —**दन्ती**—(स्त्री०) वह स्त्री जिसके सुन्दर दांत हों। —**लग्न**—(पुं०, न०) अच्छा मुहूर्त। —**वार्ता**— (स्त्री०) शुभ संवाद, खुशखवरी। —**वासन**—(पुं०) मुंह को खुशवूदार करने वाला गन्धद्रव्य। —**शंसिन्**—(वि०) शुभ या मङ्गलद्योतक। —**स्थली**— (स्त्री०) वह मण्डप जहां यज्ञ होता हो, यज्ञ-भूमि। मङ्गल भूमि, पवित्र स्थान।

शुभंयु—(वि०) [शुभम् + युस्] शुभ । आनन्दवर्द्धक ।

शुभङ्कर—(वि०) [शुभ √कृ+खच्, मुम्] कल्याणकारी । आनन्दवर्द्धक ।

शुभम्—(अव्य०) [√शुभ् + कमु] मंगल ।

शुभम्भावुक—(वि०) [शुभम् √भू +णिच्+उकञ्] शुभ-चिंतक ।

शुभा—(स्त्री०) [शुभ + टप्] कान्ति । सौन्दर्य । कामना । गोरोचन । शमी वृक्ष । देवताओं की सभा । दूर्वा, दूब । प्रियंगुलता ।

शुभ्र–(वि०) [√शुभ +रक्] कान्तिमान्, सुन्दर । सफेद, उज्ज्वल । (न०) चांदी । अबरक । सेंधा नमक । तूतिया । (पुं०) सफेद रंग । चन्दन ।—**अंशु** (**शुभ्रांशु**), —**कर** –(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**रश्मि**– (पुं०) चन्द्रमा ।

शुभ्रा—(स्त्री०) [शुभ्र+टाप्] गंगा । स्फटिक । वंशलोचन ।

शुभ्रि—(पुं०) [√शुभ+क्रि] ब्रह्मा ।

√शुम्भ्—भ्वा० पर० अक० चमकना । सक० बोलना । अनिष्ट करना । मारना । शुम्भति, शुम्भिष्यति, अशुम्भीत् ।

शुम्भ—(पुं०) [√शुम्भ् + अच्] एक दैत्य जिसका वध दुर्गा देवी ने किया था ।–**घातिनी**, —**मर्दिनी**– (स्त्री०) दुर्गा का नाम ।

√शुल्क्—चु० उभ० सक० पाना । देना, अदा करना । उत्पन्न करना । कहना । वर्णन करना । त्यागना, छोड़ देना । शुल्कयति — ते, शुल्कयिष्यति—ते, अशुशुल्कत् —त ।

शुल्क—(न, पुं०) [√शुल्क् + घञ्] वह कर या महसूल जो घाट आदि पर लिया जाता है । राज्य द्वारा लिया जाने वाला कर । वह मूल्य जो कन्या को खरीदने के लिये उसके पिता को दिया जाय । विवाह में कन्या को दिया जाने वाला दहेज । कोई काम करने के बदले में लिया जाने वाला धन । किराया, भाड़ा ।—**ग्राहक**, —**ग्राहिन्**–(वि०) कर उगाहने वाला ।—**द**–(पुं०) विवाह के लिये शुल्क देने वाला व्यक्ति ।—**स्थान**– (न०) वह स्थान जिसका किराया देना पड़े । शुल्कगृह ।

शुल्ल—(न०) [√शुल्व् + अच्, पृषो० साधुः] रस्सी । तांबा ।

√शुल्व्—चु० उभ० सक० देना, दान करना । भेजना, पठाना । विदा करना । नापना । शुल्वयति, शुल्वयिष्यति, अशुशुल्वत् ।

शुल्व—(न०) [√शुल्व् + अच्] डोरी । तांवा । यज्ञीय कर्म । जल का सामीप्य या वह स्थान जो जल के समीप हो । नियम । आचार ।

शुश्रू—(स्त्री०) [√श्रु + यङ—लुक्, द्वित्वादि+क्विप्] (बच्चे की सेवा करने वाली) माता ।

शुश्रूषक—(वि०) [√श्रु+सन्, द्वित्वादि, +ण्वुल्] सेवा करने वाला । आज्ञा-पालक । (पुं०) नौकर, सेवक ।

शुश्रूषण—(न०),—**शुश्रूषणा**–(स्त्री०) [√श्रु+सन्, द्वित्वादि + ल्युट्] [√श्रु +सन्, द्वित्वादि, + युच्—टाप्] सुनने की इच्छा । सेवा, परिचर्या । कर्त्तव्य-परायणता । आज्ञापालन करने की क्रिया ।

शुश्रूषा—(स्त्री०) [√श्रु+ सन्, द्वित्वादि, +अ—टाप्] श्रवण करने की अभिलाषा । सेवा, चाकरी । आज्ञापालन । कर्त्तव्यपरायणता । सम्मान, प्रतिष्ठा । कथन ।

शुश्रूषु—(वि०) [√श्रु + सन्, द्वित्वादि, +उ] सुनने का अभिलाषी । सेवा करने की कामना रखने वाला । आज्ञाकारी ।

√शुष्—दि० पर० अक० सूख जाना । कुम्हला जाना, मुरझा जाना । शुष्यति, शोक्ष्यति, अशुषत् ।

शुष्—(पुं०) [√शुष् + क] सूखने की क्रिया। भूमि-रन्ध्र, बिल।

शुषि—(स्त्री०) [√शुष्+कि] सूखने की क्रिया। छेद। सर्प के विषदन्त का खोखला भाग।

शुषिर—(वि०) [√शुष्+किरच्] सूराखों से पूर्ण, छिद्रदार। (न०) सूराख। अन्तरिक्ष। वह बाजा जो फूंक से या हवा देकर बजाया जाय। (पुं०) अग्नि। चूहा।

शुषिरा—(स्त्री०) [शुषिर+ टाप्] नदी। नली नामक गन्धद्रव्य। लौंग।

शुषिल—(पुं०) [√शुष् + इलच्, स च किन्] पवन।

शुष्क—(वि०) [√शुष्+क्त, तस्य कः] सूखा। भुना हुआ। कृश, दुबला। बनावटी, झूठा। व्यर्थ, निकम्मा। अकारण, कारण-रहित। आधार-शून्य। कटु, बुरा लगने वाला।—**अङ्गी** (**शुष्काङ्गी**)–(स्त्री०) छिपकली, बिस्तुइया।—**कलह**–(पुं०) निरर्थक झगड़ा।—**वैर**–(न०) अकारण शत्रुता।—**व्रण**–(न०) वह घाव जो सूख गया हो। फोड़े का निशान। स्त्रियों का योनिकंद नामक रोग।

शुष्कल—(न०, पुं०) [शुष्क√ला + क] सूखा मांस। [√शुष् + कलच्] मांस।

शुष्म—(न०) [√शुष् + मन्] पराक्रम। दीप्ति। (पुं०) सूर्य। आग। पवन। पक्षी।

शुष्मन्—(पं०) [√शुष्+कमनिप्] अग्नि। चित्रक वृक्ष। (न०) पराक्रम। दीप्ति।

शूक—(न०, पुं०) [√श्वि + कक्, सम्प्रसारण] जौ आदि की बाल का नुकीला हिस्सा, टूंड़। तीक्ष्ण अग्रभाग। दाढ़ी। शिखा। दया। सूअर का बाल। जलमल में उत्पन्न होने वाला एक प्रकार का विषैला कीड़ा।—**कीट**, —**कीटक**–(पुं०) एक जाति का रोएँदार कीड़ा।—**धान्य**–(न०) वह अन्न जिसके दाने बालों या सींकों में लगते हैं, जैसे गेहूँ, जवा आदि।—**पिण्डि**, —**पिण्डी**–(स्त्री०), —**शिम्बा**, —**शिम्बिका**, —**शिम्बी**– (स्त्री०) केवाँच, कपिकच्छु।

शूकक—(पुं०) [शूक√कै + क] वर्षाकाल। रस। अनाज विशेष। [शूक +कन्] दया।

शूकर—(पुं०) [शू इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, शू√कृ+अच् वा शूक+र] सूअर।—**इष्ट** (**शूकरेष्ट**)–(पुं०) मोथा, मुस्ता। कसेरू।

शूकल—(पुं०) [शूकवत् क्लेशं लाति ददाति, शूक√ला+क] चमकने या भड़कने वाला घोड़ा।

शूद्र—(पुं०) [√शुच्+रक्, पृषो० चस्य दः, दीर्घः] स्मृत्यनुसार अथवा हिन्दू धर्मशास्त्रानुसार चार वर्णों में से चौथा और अन्तिम वर्ण।—**कृत्य**–(न०) शूद्र का शास्त्रविहित कर्तव्य (द्विजसेवा आदि)।—**प्रिय**–(पुं०) पलाण्डु, प्याज।—**प्रेष्य**–(पुं०) वह ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य जो किसी शूद्र की नौकरी या सेवा करता हो।—**याजक**– (पुं०) वह ब्राह्मण जो शूद्र को यज्ञ कराता हो या उसके लिये यज्ञ करता हो।—**वर्ग**– (पुं०) शूद्र जाति।—**सेवन**–(न०) शूद्र की सेवा।

शूद्रक—(पुं०) विदिशा नगरी का एक राजा और मृच्छकटिक का रचयिता महाकवि।

शूद्रा—(स्त्री०) [शूद्र+टाप्] शूद्र जाति की स्त्री।—**भार्य**–(पुं०) वह पुरुष जिसकी स्त्री शूद्र जाति की हो।—**वेदन**–(न०) शूद्रा स्त्री के साथ विवाह करना।—**सुत**–(पुं०) शूद्र स्त्री का वह पुत्र जिसका पिता किसी भी जाति का हो।

शूद्राणी, शूद्री—(स्त्री०) [शूद्र + ङीप्, आनुक्] [शूद्र+ ङीष्] शूद्र की पत्नी।

शून—(वि०) [√शिव+क्त, सम्प्रसारण, तस्य नः, दीर्घः] सूजा हुआ। बढ़ा हुआ।

शूना—(स्त्री०) [शून+टाप्] तालु के ऊपर की छोटी जीभ। बूचड़खाना, कसाई-खाना। गृहस्थ के घर के वे स्थान जहाँ नित्य अनजाने अनेक जीवों की हत्या होती हो; जैसे चूल्हा, चक्की, पानी का पात्र आदि या गृहस्थी के वे उपस्कर जिनसे जीवहिंसा होती हो। वे ये पाँच वतलाये गये हैं—यथा चूल्हा, चक्की, झाड़ू, उखली और जलपात्र।

शून्य—(वि०) [शूनायै प्राणिववाय हितम् रहस्यस्थानत्वात्, शूना+यत्] रीता, खाली। निर्जन, एकान्त। उदास, रंजीदा। रहित, अभावयुक्त। अनासक्त, विरक्त। सरल, सीधा सादा। ऊटपटाँग, अर्थशून्य। नंगा, परिच्छद-रहित। (न०) खाली स्थान। आकाश। बिंदी। अभाव, अनस्तित्व। ब्रह्म। **—मध्य**–(पुं०) पोला नरकुल। **—वाद**–(पुं०) वौद्धों का एक सिद्धान्त जिसमें ईश्वर या जीव किसी को कुछ भी नहीं मानते। **—वादिन्**–(पुं०) नास्तिक। वौद्ध।

शून्या–(स्त्री०) [शून्य + अच्–टाप्] पोला नरकुल। बाँझ स्त्री। सेहुँड़।

√शूर्—दि० आत्म० सक० मारना। रोकना। शूर्यते, शूरिष्यते, अशूरिष्ट। चु० उभ० सक० बहादुरी दिखाना, वीरता प्रदर्शित करना। जी खोलकर उद्योग करना। शूरयति-ते, शूरयिष्यति-ते, अशुशूरत्—ते।

शूर–(वि०) [√शूर्+अच्] बहादुर, वीर। (पुं०) वीर व्यक्ति। शेर। शूकर। सूर्य। साल वृक्ष। मदार का पेड़। बड़हर। चीते का पेड़। श्रीकृष्ण के पितामह का नाम। **—कीट**–(पुं०) तुच्छ योद्धा। **—लोक**–(पुं०) वीरगाथा, वीरों के वीरतापूर्ण कृत्यों की कहानी। **—सेन**–(पुं०) (बहुवचन) मथुरा-मण्डल या उसके अधिवासी। कृष्ण के पितामह का नाम।

शूरण—(पुं०) [√शूर्+ल्यु] ओल, सूरन। श्योनाकवृक्ष।

शूरम्मन्य—(वि०) [आत्मानं शूरं मन्यते, शूर√मन्+खश्, मुम्] वह पुरुष जो अपने को शूर लगाता हो।

√शूर्प्—चु० उभ० सक० मापना, तौलना। शूर्पयति-ते, शूर्पयिष्यति-ते, अशुशूर्पत्—त।

शूर्प– (न०, पुं०) [√शूर्प्+घञ्] सूप। (पुं०) दो द्रोण की एक तौल। **—कर्ण**–(पुं०) हाथी। **—नखा (णखा), —नखी (णखी)** –(स्त्री०) वह जिसके नाखून सूप जैसे हों, रावण की बहिन का नाम। **—वात**– (पुं०) सूप से निकली हुई हवा। **—श्रुति**–(पुं०) हाथी।

शूर्पी—(स्त्री०) [शूर्प+ ङीष्] छोटा सूप। शूर्पणखा का नामान्तर।

शूर्म, शूर्मि—(पुं०) [स्त्री०—शूर्मिका, शूर्मी] [सुष्ठु उर्मिः अस्ति अस्याः, पक्षे अच्] लोहे की वनी मूर्ति। निहाई।

√शूल्—भ्वा० पर० अक० बीमार होना। बहुत शोर करना। गड़बड़ी करना। शूलति, शूलिष्यति, अशूलीत्।

शूल—(न०, पुं०) [√शूल्+क] प्राचीन कालीन एक अस्त्र, जो प्रायः बरछे के आकार का होता था। त्रिशूल। सूली जिससे प्राचीन काल में लोगों को प्राणदण्ड दिया जाता था। लोहे की सींक जिस पर लपेट कर कबाब भूना जाता है। कोई भी उग्र पीड़ा या दर्द। वायु गोले का दर्द। गठिया, वतास। मृत्यु। झंडा, पताका। विष्कंभ आदि २७ योगों में से ९वाँ योग। विक्रय। **—धन्वन्, —धर, —धारिन्, —धृक्, —पाणि, —भृत्**– (पुं०) शिव जी का नामान्तर। **—शत्रु**– (पुं०) रेंड़ का पेड़। **—स्थ**– (वि०) सूली दिया हुआ। **—हन्त्री**–(स्त्री०)

अजवाइन ।—हस्त-(वि०) शूल धारण करने वाला ।

शूलक—(पुं०) [शूल +कन्] भड़कने वाला घोड़ा ।

शूलाकृत—(न०) [शूल+डाच् √कृ+क्त] लोहे की सलाख पर भूना गया मांस ।

शूलिक—(वि०) [शूल+ठन्] शूलधारी । वायुगोले से पीड़ित । (पुं०) खरगोश । शिव जी का नामान्तर ।

शूलिन—(पुं०) [शूल + इनन्] भाण्डीर वृक्ष । गूलर का पेड़, उदुम्बर ।

शूल्य—(वि०) [शूल+यत्] सींक पर भुना हुआ मांस । सूली पाने का अधिकारी । (न०) दे० 'शूलाकृत' ।

√शूष्—भ्वा० पर० सक० उत्पन्न करना । शूषति, शूषिष्यति, अशूषीत् ।

शृकाल—दे० 'शृगाल' ।

शृगाल—(पुं०) [असृजं लाति, √ला+क, पृषो० साधुः] गीदड़, सियार । छलिया, कपटी । भीरु । कटुभाषी । कृष्ण का नामान्तर ।—**कोलि**-(पुं०) एक प्रकार का बेर । —**घण्टी**-(स्त्री०) तालमखाना ।—**रूप**-(पुं०) शिव जी का रूपान्तर ।

शृगालिका, शृगाली—(स्त्री०) [शृगाल +ङीष्, पक्षे कन्–टाप्, इत्व] गीदड़ी, सियारिन । लोमड़ी । भगड़, पलायन ।

शृङ्खल—(पुं०), **शृङ्खला**—(स्त्री०) [शृङ्गात् प्राधान्यात् स्खलयतेऽनेन पृषो० साधुः] लोहे की जंजीर, बेड़ी । हाथी के पैर में बाँधने की जंजीर । कमरपेटी । जरीब नापने की जंजीर । परम्परा, क्रम, सिलसिला ।—**यमक**- (न०) एक प्रकार का अलंकार, जिसमें कथित पदार्थों का वर्णन शृङ्खला के रूप में सिलसिलेवार किया जाता है ।

शृङ्खलक—(पुं०) [शृङ्खल √कै+क] ऊँट । [शृङ्खल+कन्] जंजीर ।

शृङ्खलित—(वि०) [शृङ्खला + इतच्] जंजीर में बँधा हुआ ।

शृङ्ग—(न०) [√शृ+गन्, पृषो० मुम्, ह्रस्व] सींग । पहाड़ की चोटी । भवन का सब से ऊँचा भाग । ऊँचाई । प्रभुत्व, अधिकार । बालचन्द्र का शृङ्गाकार अग्रभाग । चोटी या आगे निकला हुआ भाग । सींग (भैंस आदि का) जो बजाया जाता है । पिचकारी । अनुराग का उद्रेक । स्तन । चिह्न । कमल । (पुं०) कूर्चशीर्षक वृक्ष । शृंगी ऋषि ।—**उच्चय** (**शृङ्गोच्चय**)-(पुं०) बड़ी ऊँची चोटी । —**ज**-(पुं०) तीर । (न०) अगर ।—**प्रहारिन्**-(वि०) सींग मारने वाला ।—**प्रिय**-(पुं०) शिव का नामान्तर ।—**मोहिन्**-(पुं०) चंपा का वृक्ष ।—**वेर**-(न०) गंगातट पर के एक प्राचीन नगर का नाम जो निषादराज गुह की राजधानी था । अदरक ।

शृङ्गक—(न०) [शृङ्ग+कन्] सींग । बालचन्द्र का शृङ्गाकार अग्रभाग । कोई नोकदार चीज । पिचकारी । (पुं०) [शृङ्ग √कै+क] जीवक वृक्ष ।

शृङ्गवत्—(वि०) [शृङ्ग + मतुप्, मस्य वः] चोटीदार, शिखरदार । (पुं०) पहाड़ ।

शृङ्गाट, शृङ्गाटक—(पुं०) [शृङ्गं प्राधान्यम् अटति, शृङ्ग√अट्+अण्] [शृङ्गाट + कन्] वह जगह जहाँ चार सड़कें मिलती हैं, चौराहा, चतुष्पथ । सिंघाड़े का पौधा । कामाख्या में स्थित एक पर्वत । (न०) सिंघाड़ा ।

शृङ्गार—(पुं०) [शृङ्गं कामोद्रेकम् ऋच्छति अनेन, शृङ्ग√ऋ + अण्] साहित्य के अनुसार नौ रसों में से एक रस जो सबसे अधिक प्रसिद्ध है । (इसमें नायक-नायिका के मिलन या संयोग से उत्पन्न सुख और उनके वियोग के कारण होने वाले कष्टों का वर्णन होता

है। इसीलिए इसे क्रमशः संयोग-शृंगार और वियोग-शृङ्गार कहते हैं। नायक और नायिका इसके आलम्बन तथा उनकी वेशभूषा, चेष्टाएँ, चाँदनी रात, वर्षा ऋतु आदि इसके उद्दीपन हैं)। प्रेम, रसिकता। सजावट। मैथुन। चिह्न। हाथी के शरीर पर बनाये गये सिंदूर के निशान। (न०) लौंग। सिंदूर। अदरक। सुगन्धपूर्ण द्रव्य जो शरीर में मला जाय या खुशबू के लिए वस्त्र पर लगाया जाय। काला अगर। —**भूषण**–(न०) सिंदूर। —**योनि**–(पुं०) कामदेव। —**सहाय**–(पुं०) नर्मसचिव, प्रेमक्रीड़ा में सहायक व्यक्ति।

शृङ्गारक—(न०) [शृङ्गार+कन्] सिंदूर। (पुं०) प्रेम, प्रीति।

शृङ्गारित—(वि०) [शृङ्गार + इतच्] सजाया हुआ, सँवारा हुआ। प्रेमासक्त।

शृङ्गारिन्—(वि०) [शृङ्गार + इनि] शृङ्गार की वृत्ति से युक्त। (पुं०) उत्तेजित प्रेमी। चुन्नी, लाल। हाथी। परिच्छद, पोशाक। सुपारी का वृक्ष। पान का बीड़ा।

शृङ्गि—(पुं०) [=शृङ्गी, पृषो० ह्रस्व] आभूषण बनाने का सोना। सिंगी मछली।

शृङ्गिक—(न०) [शृङ्ग+ठन्] एक प्रकार का विष, सिंघिया।

शृङ्गिका—(स्त्री०) [शृङ्गिक + टाप्] अतीस, अतिविषा।

शृङ्गिण—(पुं०) [शृङ्ग+इनन्] भेड़ा, मेष।

शृङ्गिणी—(स्त्री०) [शृङ्गिन्+ङीप्] गौ। मल्लिका, मोतिया। ज्योतिष्मती लता।

शृङ्गिन्—(वि०) [स्त्री०—**शृङ्गिणी**] [शृङ्ग + इनि] सींगवाला। चोटीदार, शिखर वाला। (पुं०) पर्वत। हाथी। वृक्ष। शिव का नामान्तर। शिव जी के एक गण का नाम।

शृङ्गी—(स्त्री०) [शृङ्ग+अच् — ङीष्] सिंगी मछली। वह सुवर्ण जो आभूषणों के बनाने के काम में आता है। अतिविषा, अतीस। ऋषभ नामक ओषधि। काकड़ासींगी। पाकर। बरगद। विष। —**कनक**–(न०) सुवर्ण जिसके आभूषण बनाये जायँ।

शृणि—(स्त्री०) [√ शॄ+क्तिन्, पृषो० तस्य नः] अंकुश।

शृत—(वि०) [√शृ+क्त] पकाया हुआ। राँधा हुआ। उबाला हुआ।

√शृध्—भ्वा० आत्म० अक० पादना, अपान वायु छोड़ना। शर्धते, शर्धिष्यते—शर्त्स्यति, अशृधत्— अशर्धिष्ट। उभ० सक० काटना। शर्धति—ते, शर्धिष्यति—ते, अशर्धीत् — अशर्धिष्ट। चु० पर० सक० ग्रहण करना। शर्धयति, शर्धयिष्यति, अशशर्धत्।

शृधु—(पुं०) [शृध् √ कु] बुद्धि। गुदा, मलद्वार।

√शॄ—क्र्या० पर० सक० टुकड़े-टुकड़े करना। चोटिल करना। वध करना। नाश करना। शृणाति, शरि (री) ष्यति, अशारीत्।

शेखर—(पुं०) [√ शिङ्ख् +अरन्, पृषो० साधुः] सिर का आभूषण। मुकुट। सिर पर धारण की जाने वाली पुष्पमाला। चोटी, शृङ्ग। श्रेष्ठतावाचक शब्द। संगीत में ध्रुव या स्थायी पद का एक भेद। (न०) लौंग।

शेप—(पुं०), **शेपस्**–(न०), **शेफ**—(पुं०, न०), **शेफस्**–(न०) [√शी +पन्] [√शी +असुन्, पुट् आगम] [√शी +फन्] [√शी + असुन्, फुक् आगम] लिंग, जननेन्द्रिय। अण्डकोश। पूँछ, दुम। (वि०) सोने वाला।

शेफालि, शेफालिका, शेफाली—(स्त्री०) [शेफाः शयनशालिनः अलयो यत्र, ब० स०] [शेफा अलयो यत्र, ब० स० कप्—टाप्] [शेफालि+ङीष्] नील सिन्धुवार का पौधा। निर्गुण्डी, नीलिका।

शेमुषी—(स्त्री०) [√शी+विच्, शेः मोहः तं मुष्णाति, शे √मुष्+क—ङीष्] समझदारी, बुद्धि।

√**शेल्**—भ्वा० पर० सक० जाना। कुचलना। शेलति, शेलिष्यति, अशेलीत्।

शेव—(न०) [√शी + वन्] लिङ्ग, जननेन्द्रिय। हर्ष, प्रसन्नता। (पुं०) सर्प। जननेन्द्रिय। ऊँचाई। अग्नि। सम्पत्ति।—**धि**—(पुं०) मूल्यवान् खजाना। कुबेर की नवनिधियों में से एक।

शेवल—(न०) [√शी + विच्, तथाभूतः सन् वलते, शे√वल्+अच्] सेवार घास जो पानी में उगती है, शैवाल।

शेवलिनी—(स्त्री०) [शेवल + इनि—ङीप्] नदी।

शेवाल—(पुं०) [√शी + विच्, शे√वल् +घञ्] सेवार।

शेष—(वि०) [√शिष्+अच्] बचा हुआ, अवशिष्ट। छोड़ा हुआ। उच्छिष्ट। समाप्त। (पुं०) वध। नाश। बलदेव। अनंत नामक सर्पराज। हाथी। नाग। वह वस्तु जो स्वीकृत न हुई हो। बड़ी संख्या में से छोटी संख्या घटाने के पश्चात् बची संख्या, बाकी। समाप्ति। परिणाम। स्मारक वस्तु। लक्ष्मण। एक प्रजापति। एक दिग्गज। भगवान् की द्वितीय मूर्ति।—**अन्न** (**शेषान्न**)—(न०) उच्छिष्ट अन्न।—**अवस्था** (**शेषावस्था**) —(स्त्री०) बुढ़ापा।—**भाग**—(पुं०) बचा हुआ अंश।—**रात्रि**—(पुं०) रात का अंतिम प्रहर।—**शयन**, —**शायिन्**—(पुं०) विष्णु के नामान्तर।

शैक्ष—(पुं०) [शिक्षा+अण्] वह विद्यार्थी जिसने वेद के एक अंग शिक्षा का अध्ययन किया हो या जिसने वेद पढ़ना आरम्भ ही किया हो, नौसिखिया।

शैक्षिक—(वि०) [शिक्षा + ठक्] शिक्षा शास्त्र का जानकार। शिक्षा में पटु।

शैघ्र्य—(न०) [शीघ्र + ष्यञ्] शीघ्रता, तेज़ी।

शैत्य—(न०) [शीत + ष्यञ्] ठंडक, शीतलता। इतनी ठंडक जिससे (जल आदि तरल पदार्थ) जम जायँ।

शैथिल्य—(न०) [शिथिल +ष्यञ्] शिथिल होने का भाव, शिथिलता, ढिलाई। तत्परता का अभाव, सुस्ती। दीर्घसूत्रिता। निर्बलता। भीरुता।

शैनेय—(पुं०) [शिनि+ढक्] सात्यकि का नाम।

शैन्य—(पुं०) [शिनि+यञ्] शिनि के वंश वाले जो क्षत्रिय से ब्राह्मण हो गये थे।

शैल—(न०) [शिला + अण्] शिलारस, शैलेय। सोहागा। रसौत। शिलाजीत। (पुं०) पहाड़। बड़ा भारी पत्थर।—**अग्र** (**शैलाग्र**) —(न०) पर्वत-शिखर।—**अट** (**शैलाट**)— (पुं०) पहाड़ी, पर्वत-निवासी। पुजारी। शेर। स्फटिक पत्थर। —**अधिप** (**शैलाधिप**), —**अधिराज** (**शैलाधिराज**),—**इन्द्र** (**शैलेन्द्र**),—**पति**, —**राज**— (पुं०) हिमालय पर्वत के नामान्तर।—**आख्य** (**शैलाख्य**)— (न०) शैलरस। शिलाजीत।—**गन्ध**—(न०) चन्दन।—**ज**—(न०) शिलाजीत। राल। —**जा**, —**तनया**, —**पुत्री**, —**सुता**— (स्त्री०) पार्वती का नामान्तर।—**धन्वन्**— (पुं०) शिव जी का नाम।—**धर**—(पुं०) कृष्ण जी का नामान्तर।—**निर्यास**—(पुं०) शिलाजीत।—**पत्र**—(पुं०) बिल्व या बेल का वृक्ष।—**भित्ति**—(स्त्री०) पत्थर काटने की छैनी।—**रन्ध्र**— (न०) गुफा, पहाड़ी कंदरा।—**शिविर**—(न०) समुद्र।

शैलक—(न०) [शैल+कन्] शिलाजीत। राल।

शैलादि—(पुं०) [शिलादस्यापत्यम्, शिलाद +इञ्] शिवजी का गण नन्दी।

शैलालिन्—(पुं०) [शिलालिना मुनिना प्रोक्तम् नटसूत्रम् अधीते, शिलालि+णिनि] नट, नर्तक।

शैलिक्य—(पुं०) [गर्हितं शीलम् अस्ति अस्य, शील+ठन्, शीलिक+ष्यञ्] दंभी, पाखंडी। दगाबाज, कपटी।

शैली—(स्त्री०) [शील+ष्यञ् — ङीप्, यलोप] लिखने का ढंग, वाक्य रचना का प्रकार। चाल, ढव, ढंग। परिपाटी, तर्ज, तरीका। रीति, रस्म, प्रथा। आचरण, चाल-चलन।

शैलूष—(पुं०) [शिलूषस्य अपत्यम्, शिलूष +अण्] नट, नर्तक, नचैया। अभिनय करने वाला, नाटक खेलने वाला। गंधर्वों का स्वामी। बेल का पेड़। धूर्त।

शैलूषिक—(पुं०) [शैलूषं तद्वृत्तिम् अन्वेष्टा, शैलूष+ठक्] वह जो अभिनय करने का पेशा करता हो।

शैलेय—(वि०) [स्त्री०—**शैलेयी**] [शिला +ढक्] पहाड़ी चट्टान से उत्पन्न या निकला हुआ। सख्त, कड़ा। पथरीला। (न०) शिलाजीत। गूगुल। सेंधा नमक। (पुं०) सिंह। भ्रमर।

शैल्य—(वि०) [शिला + ष्यञ्] शिला सम्बन्धी। पथरीला। कड़ा, कठोर।

शैव—(वि०) [स्त्री०—**शैवी**] [शिव +अण्] शिव सम्बन्धी। (न०) अष्टादश पुराणों में से एक। (पुं०) शैव सम्प्रदाय। शैव सम्प्रदाय का अनुयायी। धतूरा। वसुक पौधा।

शैवल—(न०) [√शी + वलञ्] पद्म-काष्ठ, पदुमाख। (पुं०) सेवार।

शैवलिनी—(स्त्री०) [शैवल + इनि—ङीप्] नदी।

शैवाल—(न०) [√शी +वालञ्] सेवार।

शैव्य—(पुं०) [शिवि+ञ्य] कृष्ण के चार घोड़ों में से एक का नाम। पाण्डव दल के एक योद्धा राजा का नाम। घोड़ा।

शैशव—(न०) [शिशोर्भावः, शिशु+अण्] बचपन (सोलह वर्ष से नीचे)।

शैशिर—(वि०) [स्त्री०—**शैशिरी**] [शिशिर+अण्] जाड़े की ऋतु सम्बन्धी। (पुं०) काले रङ्ग का चातक पक्षी। काली गौरैया।

शैष्योपाध्यायिका—(स्त्री०) [शिष्योपाध्याय+वुञ्] शिष्य को पढ़ाना।

√शो—दि० पर० सक० पैनाना, पैना करना। पतला करना। श्यति, शास्यति, अशात् —अशासीत्।

शोक—(पुं०) [√ शुच् + घञ्] प्रिय व्यक्ति या वस्तु के वियोग या नाश के कारण मन में होने वाला परम कष्ट, सोग।—**अग्नि** (**शोकाग्नि**), —**अनल** (**शोकानल**)– (पुं०) दुःख की आग।—**अपनोद** (**शोकापनोद**)–(पुं०)दुःख का दूर होना। —**अभिभूत** (**शोकाभिभूत**),—**आकुल** (**शोकाकुल**),– **आविष्ट** (**शोकाविष्ट**), —**उपहत** (**शोकोपहत**), —**विह्वल**- (वि०) शोक से पीड़ित।—**नाश**–(पुं०) अशोकवृक्ष।

शोचन—(न०) [√शुच्+ल्युट्] शोक, रंज, अफसोस। चिंता।

शोचनीय—(वि०) [√शुच्+अनीयर्] शोक करने योग्य। जिसकी दशा देख कर दुःख हो, दुष्ट।

शोचिस्—(न०) [√शुच् + इसि] प्रकाश, दीप्ति, आभा, चमक। शोला।—**केश** (**शोचिष्केश**)– (पुं०) अग्नि। सूर्य। चित्रक वृक्ष।

शोटीर्य—(न०) [शुटीर+यत् (शौटीर्य इति पाठः साधुः)] विक्रम, पराक्रम।

शोठ—(वि०) [√ शुठ् + अच्] मूर्ख। नीच, ओछा। दुष्ट। सुस्त, काहिल। (पुं०) मूर्ख व्यक्ति। दीर्घसूत्री व्यक्ति। नीच या कमीना आदमी। धूर्त जन।

√शोण्—भ्वा० पर० सक० जाना। अक० लाल हो जाना। शोणति, शोणिष्यति, अशोणीत्।

शोण—(वि०) [स्त्री०—**शोणा, शोणी**] [√शोण् + अच्] लाल, लाल रँगा हुआ। (न०) रक्त, खून। सिन्दूर। (पुं०) लाल रंग। आग। लाल गन्ना। लाल घोड़ा। एक नद का नाम जो अमरकण्टक से निकल कर पटना के पास गंगा में गिरता है। मंगल-ग्रह।—**अम्बु** (**शोणाम्बु**)-(पुं०) प्रलय-कालीन मेघों में से एक।—**अश्मन्** (**शोणाश्मन्**), —**उपल** (**शोणोपल**)-(पुं०) लाल पत्थर। माणिक्य।— **पद्म**-(पुं०) लाल कमल।—**रत्न**- (न०)लाल, मानिक।

शोणित—(वि०) [शोण+इतच् वा √शोण् +क्त] रक्त वर्ण वाला, लाल। (न०) लहू, खून। केसर।—**आह्वय** (**शोणिताह्वय**)-(न०) केसर।—**उक्षित** (**शोणितोक्षित**)-(वि०) रक्तरञ्जित।—**उपल** (**शोणितोपल**)-(पुं०) मानिक, चुन्नी।—**चन्दन**- (न०) लालचन्दन।—**प**-(वि०) खून पीने या चूसने वाला।—**पुर**-(न०) वाणासुर की नगरी का नाम।

शोणिमन्—(पुं०) [शोण + इमनिच्] लाली, लालिमा।

शोथ—(पुं०) [√शु+थन्] सूजन। वात-पित्तादि के प्रकोप से शरीर के किसी अंग के सूजने का रोग।—**घ्नी**- (स्त्री०) गदहपूरना, पुनर्नवा। शालपर्णी।—**जित्** -(पुं०) भिलावाँ।—**जिह्व**-(पुं०) पुनर्नवा।—**रोग** -(पुं०) जलंधर का रोग। —**हृत्**- (वि०) सूजन दूर करने वाला। (पुं०) भिलावाँ।

शोध—(पुं०) [√ शुध् + घञ्] शुद्धि-संस्कार। ठीक किया जाना, दुरुस्ती। अदायगी, ऋणशोध। वदला। अनुसंधान।

शोधक—(वि०) [स्त्री०—**शोधका, शोधिका**] [√शुध् + णिच्+ण्वुल्] शुद्धिसंस्कारकर्ता। रेचन। शुद्ध करने वाला। (न०) एक प्रकार की मिट्टी।

शोधन—(वि०) [स्त्री०—**शोधनी**] [√शुध्+णिच्+ल्यु] साफ करने वाला। शुद्ध करने वाला। (न०) [√शुध्+णिच् +ल्युट्] साफ करना। दुरुस्त करना, ठीक करना, सुधारना। छान-वीन, जाँच। अनुसन्धान। ऋणशोध। प्रायश्चित्त। धातुओं को साफ करने की क्रिया। चाल सुधारने के लिये दण्ड। घटाना, निकालना। तूतिया। मल, विष्ठा।

शोधनक—(पुं०) [शोधन + कन्] दंड-न्यायालय का अधिकारी, फौजदारी अदालत का हाकिम।

शोधनी—(स्त्री०) [शोधन—ङीप्]झाड़ू। नीली। ताम्रवल्ली।

शोधित—(वि०) [√शुध् + णिच्+क्त] साफ किया हुआ। संशोधित, सही किया हुआ। अदा किया हुआ। वदला लिया हुआ।

शोध्य—(वि०) [√शुध् + णिच्+यत्] शोधन के योग्य। (पुं०) वह अपराधी जिसे अपने अपराध की सफाई देनी हो।

शोफ—(पुं०) [√ शु+फन्] दे० 'शोथ'। —**जित्**, —**हृत्**-(पुं०) भिलावाँ।

शोभन—(वि०)[स्त्री०—**शोभनी**] [√शुभ् +ल्यु] चमकीला। सुन्दर। शुभ, कल्याण-कारी। अच्छी तरह सुसज्जित। पुण्यात्मा। (न०) [√शुभ् + ल्युट्] सौन्दर्य। आभा, चमक। कमल। (पुं०) [√शुभ्+ल्यु] शिव। ग्रह। विष्कम्भ आदि २७ योगों में से पांचवाँ।

शोभना—(स्त्री०) [√शुभ् + णिच्+ल्यु] हल्दी। गोरोचन। सुन्दरी या पतिव्रता स्त्री।

शोभा—(स्त्री०) [√शुभ + अ—टाप्] आभा, दीप्ति, चमक। सौन्दर्य, मनोहरता। छवि, छटा। हल्दी। गोरोचन।

शोभाञ्जन—(पुं०) [शोभायै अज्यते, शोभा √अञ्ज्+ल्यु] सहिजन का पेड़।

शोभित—(वि०) [शोभा + इतच्] शोभा-युक्त । सुन्दर ।

शोष—(पुं०) [√शुष् + घञ्] सूखने का भाव, खुश्क होना, रस या गीलापन दूर होने का भाव ।—**सम्भव**- (न०) पिपरा-मूल ।

शोषण—(वि०) [स्त्री०—**शोषणी**] [√शुष् + णिच् + ल्यु] सोखने वाला। कुम्हला देने वाला । (न०) [√शुष् + णिच् +ल्युट्] सोखना । चूसना । निघटाना । कुम्हलाना, मुरझाना । सोंठ ।

शोषित—(वि०) [√शुष् + णिच्+क्त] सोखा हुआ । सुखाया हुआ । क्षीण किया हुआ ।

शोषिन्—(वि०) [स्त्री०—**शोषिणी**] [√शुष् + णिच्+णिनि] सुखाने वाला । शोषण करने वाला ।

शौक—(न०) [शुक+अण्]तोतों का झुंड ।

शौक्त—(वि०) [स्त्री०—**शौक्ती**] [शुक्त +अण्] खट्टा, अम्ल ।

शौक्तिक—(वि०) [स्त्री०—**शौक्तिकी**] [शुक्ति+ठक्] मोती सम्बन्धी । [शुक्त + ठक्] खट्टा । तेज, तीक्ष्ण ।

शौक्तिकेय, शौक्तेय—(न०) [शुक्तिका +ढक्] [शुक्ति+ढक्] मोती, मुक्ता ।

शौक्लिकेय—(पुं०) [शुक्लिका + ढक्] एक प्रकार का जहर ।

शौक्ल्य—(न०) [शुक्ल + ष्यञ्] सफेदी । स्वच्छता ।

शौच—(न०) [शुचि + अण्] शुद्धता । मृतक सूतक से शुद्धि । सफाई, संस्कार । मलत्याग। धर्म के १० लक्षणों में से पाँचवाँ । —**आचार** (**शौचाचार**)- (पुं०),—**कर्मन्**-(न०),—**कल्प**-(पुं०) शुद्धि की क्रिया । प्रायश्चित्तात्मक कर्म ।—**कूप**-(पुं०), —**गृह**-(न०) पाखाना, टट्टी, संडास ।

शौचेय—(पुं०) [शौचेन वस्त्रादिशुचित्वेन व्यवहरति, शौच+ढक्] धोबी ।

√शौट्—भ्वा० पर० अक० अभिमान करना, अकड़ना । शौटति, शौटिष्यति, अशौटीत् ।

शौटीर—(वि०) [√शौट्+ईरन्] अभि-मानी, घमंडी । (पुं०) शूरवीर । अभिमानी पुरुष । साधु ।

शौटीर्य, शौण्डीर्य—(न०) [शौटीर +ष्यञ्] [शौण्डीर + ष्यञ्] अभिमान, घमंड ।

√शौड्—भ्वा० पर० अक० गर्व करना । शौडति, शौडिष्यति, अशौडीत् ।

शौण्ड—(वि०)[(स्त्री०) **शौण्डी**] [शुण्डायां सुरायाम् अभिरतः, शुण्डा+अण्] शराबी, मद्यप । नशे में चूर । निपुण, पटु ।

शौण्डिक, शौण्डिन्—(पुं०) [शुण्डा सुरा पण्यम् अस्य, शुण्डा+ठक्] [शुण्डा अण् (स्वार्थे), शौण्ड+इनि] मद्य-विक्रेता, शराब बेचने वाला ।

शौण्डिकेय—(पुं०) [शुण्डिका + ढक्] शुण्डिका नामक राक्षसी का पुत्र ।

शौण्डी—(स्त्री०) [शुण्डा करिकरः तदा-कारः अस्ति अस्याः, शुण्डा + अण्—ङीप्] बड़ी पीपल ।

शौण्डीर—(वि०) [शुण्डा गर्वोऽस्ति अस्य, शुण्डा+ईरन् +अण् (स्वार्थे)] अभिमानी । उद्दंड ।

शौद्धोदनि—(पुं०) [शुद्धोदन+ इञ्] बुद्ध अर्थात् शुद्धोदन का पुत्र ।

शौद्र—(वि०) [स्त्री०—**शौद्री**] [शूद्र +अण्] शूद्र सम्बन्धी । (पुं०) [शूद्रा +अण्] शूद्रा का पुत्र जो शूद्र-भिन्न किसी जाति के पुरुष से पैदा हुआ हो ।

शौन—(न०) [शूना+अण्] कसाईखाने में रखा हुआ मांस ।

शौनक—(पुं०) [शुनक + अण्] एक प्राचीन वैदिक आचार्य और ऋषि जो शुनक

ऋषि के पुत्र थे। इनके नाम से कई ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं।

शौनिक—(पुं०) [शूना प्राणिवधस्थानं प्रयोजनम् अस्य, शूना+ठक्] कसाई। बहेलिया। शिकार, आखेट।

शौभ—(न०) [शोभायै हितम्, शोभा अण्] हरिश्चन्द्रपुर, व्योमचारी नगर। (पुं०) [शुभाय हितः, शुभ + अण्] देवता। सुपारी।

शौभाञ्जन—(पुं०) [शोभाञ्जन + अण्] सहिजन का पेड़।

शौभिक—(पुं०) [शौभं व्योमपुरं शिल्पम् अस्य, शौभ+ठक्] मदारी, ऐन्द्रजालिक, जादूगर।

शौरसेनी—(स्त्री०) [शूरसेन + अण् —ङीप्] प्राचीन काल की एक प्रसिद्ध प्राकृत भाषा जो शौरसेन प्रदेश में बोली जाती थी।

शौरि—(पुं०) [शूर + इञ्] श्रीकृष्ण या विष्णु। बलराम। शनिग्रह।

शौर्य—(न०) [शूर+ष्यञ्]शूरता, वीरता। पराक्रम। बल, ताकत। आरभटी नामक नाट्यवृत्ति।

शौल्क, शौल्किक—(पुं०) [शुल्क+अण्] [शुल्क+ठक्] शुल्काध्यक्ष, शुल्क या चुंगी विभाग का दरोगा।

शौल्विक—(पुं०) [शुल्व+ठक्] ताँबे के बरतन आदि बनाने वाला, कसेरा।

शौव—(वि०) [स्त्री०—**शौवी**] [श्वन् +अण्, टिलोप (सम्बन्धिनि अर्थे शौवन इत्येव साधुः]) कुत्ता सम्बन्धी। (न०) कुत्तों का दल। कुत्ते जैसी प्रकृति।

शौवन—(वि०) [स्त्री०—**शौवनी**] [श्वन्+ अण्] कुत्ता सम्बन्धी। कुत्तों जैसे गुणों वाला। (न०) कुत्ते की प्रकृति। कुत्ते की औलाद।

शौवस्तिक—(वि०) [स्त्री०—**शौवस्तिकी**] [श्वस्+ठक्, तुट् आगम] आने वाले कल का या कल तक रहने वाला।

शौष्कल—(न०) [शुष्कल + अण्] सूखे मांस का मूल्य। (पुं०) मांस बेचने वाला। मांसभक्षी।

√श्चुत्—भ्वा० पर० अक० टपकना, बहना। श्चोतति, श्चोतिष्यति, अश्चुतत्—अश्चोतीत्।

श्चोत, श्च्योत—(पुं०), —**श्चोतन, श्च्योतन**—(न०) [√श्चुत्, √श्च्युत् + घञ्] [√श्चुत्, √श्च्युत् + ल्युट्] टपकना, चूना, बहाव।

√श्च्युत्—भ्वा० पर० अक० टपकना, बहना। गिरना। श्च्योतति, श्च्योतिष्यति, अश्च्युतत्—अश्च्योतीत्।

श्मशान—(न०) [श्मानः शवाः शेरतेऽत्र, श्मन् √शी+आनच्, डित् वा श्मन् शब्देन शवः प्रोक्तः (तस्य) शानं शयनमुच्यते] शव-दाह-स्थान, मसान, मरघट। —**अग्नि** (श्मशानाग्नि)–(पुं०) मसान की आग। —**आलय** (श्मशानालय)–(पुं०) मरघट, श्मशान घाट। —**गोचर**– (वि०) श्मशान पर रहने वाला। —**निवासिन्**,—**वर्तिन्**– (पुं०) भूत। प्रेत। —**भाज्**, —**वासिन्**– (पुं०) शिव। —**वेश्मन्**–(पुं०)। भूत। प्रेत। —**वैराग्य**– (न०) क्षणिक वैराग्य (जो श्मशान देखने से उत्पन्न होता है)। —**शल**–(न०, पुं०) श्मशान घाट पर लगी हुई सूली। —**साधन**–(न०) भूत-प्रेत को वश में करने के लिये श्मशान जगाना।

श्मश्रु—(न०) [श्म पुंमुखं श्रूयते लभ्यते, ऽनेन, श्मन् √श्रु+डु] दाढ़ी-मूँछ। —**प्रवृद्धि**– (पुं०) डाढ़ी-मूँछ की बाढ़। —**मुखी**– (स्त्री०) वह स्त्री जिसके दाढ़ी-मूँछ हो। —**वर्धक**– (पुं०) नाई।

श्मश्रुल— (वि०) [श्मश्रु + लच्] दाढ़ी-मूँछ वाला ।

√श्मील्—भ्वा० पर० अक० आँख मटकाना, आँख मारना । श्मीलति, श्मीलिष्यति, अश्मीलीत् ।

श्मीलन—(न०) [√श्मील् + ल्युट्] आँख झपकाना ।

श्यान—(वि०) [√श्यै + क्त] गया हुआ । जमा हुआ । सिकुड़ा हुआ । सूखा । (न०) धूम ।

श्याम—(वि०) [√श्यै + मक्] कृष्ण, काला । काला और नीला मिश्रित । गाढ़ा हरा । (न०) समुद्री नमक । काली मिर्च । (पुं०) काला रंग । बादल । कोयल । प्रयाग का अक्षयवट ।—**अङ्ग** (**श्यामाङ्ग**)—(वि०) काले शरीर वाला । (पुं०) बुधग्रह (इनका वर्ण दूर्वाश्याम माना गया है) ।—**कण्ठ**–(पुं०) महादेव जी । मयूर । —**पत्र**–(पुं०) तमाल वृक्ष ।—**सुन्दर**–(पुं०) श्रीकृष्ण का नामान्तर ।

श्यामल—(वि०) [श्याम+लच् वा श्याम √ला+क] साँवला, कलौंहाँ । (पुं०) काला रंग । काली मिर्च । भौंरा । पीपल, अश्वत्थ वृक्ष ।

श्यामलिका—(स्त्री०) [श्यामल + ठन्] नीली ओषधि ।

श्यामलिमन्—(पुं०) [श्यामल + इमनिच्] कालापन, कृष्णत्व ।

श्यामा—(स्त्री०) [श्याम+टाप्] रात, (विशेषतः) कृष्ण पक्ष की रात । छाईं । काले रंग की स्त्री । सोलह वर्ष की तरुणी स्त्री । वह स्त्री जिसके सन्तान न हुई हो । गौ । हल्दी । मादा कोयल । प्रियंगु लता । नील का पौधा । श्यामा तुलसी । पद्मबीज । बकुची । गुग्गुल । सोमलता । भद्रमोथा । गुड़ूच । पिप्पली । शीशम । हरीतकी । मेढासिंगी । हरी दूब । कस्तूरी । गोरोचन । यमुना नदी । राधा । काली ।

श्यामाक—(पुं०) [श्याम√अक्+अण् वा श्यामा √कै+क] सावाँ नाम का अनाज ।

श्यामिका—(स्त्री०) [श्याम+ठन् (भावे)] कालापन, कृष्णत्व । अपवित्रता । मलिनता । मैल ।

श्यामित—(वि०) [श्याम + इतच्] काला, कलूटा ।

श्याल—(पुं०) [√ श्यै +कालन्] साला, पत्नी का भाई ।

श्यालक—(पुं०) [श्याल+कन्] साला ।

श्यालकी, श्यालिका, श्याली —(स्त्री०) [श्यालक + ङीष्] [श्यालक + टाप्, इत्व] [श्याल+ङीष्] पत्नी की बहिन, साली ।

श्याव—(वि०) [स्त्री०—**श्यावा**, या **श्यावी**] [√श्यै+वन्] धुमैला, धूम्र । भूरा । (पुं०) भूरा रंग ।—**तैल**–(पुं०) आम का पेड़ ।

श्येत—(वि०) [स्त्री०—**श्येता, श्येनी**] [√श्यै+इतच्] सफेद, उज्ज्वल । (पुं०) सफेद रंग ।

श्येन—(पुं०) [√श्यै + इनन्] सफेद रंग । सफेदी । बाज पक्षी । प्रचण्डता, उग्रता । —**करण**– (न०), —**करणिका**–(स्त्री०) दूसरी चिता पर भस्म करने की क्रिया । किसी काम को उतनी ही तेजी या फुर्ती से करना जितनी तेजी या फुर्ती से बाज पक्षी अपने शिकार पर झपटता है ।

√श्यै—भ्वा० आत्म० सक० जाना । अक० सूखना । कुम्हलाना । श्यायते, श्यास्यते, अश्यास्त ।

श्यैनम्पाता—(स्त्री०) [श्येनस्य पातो यत्र, ञ, मुम्] शिकार ।

श्योणाक, श्योनाक—(पुं०) [√श्यै +ओणा (ना) क] एक वृक्ष का नाम, सोना पाढ़ा ।

√श्रङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । श्रङ्कते, श्रङ्किष्यते, अश्रङ्किष्ट ।

√श्रङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । श्रङ्गति, श्रङ्गिष्यति, अश्रङ्गिष्ट ।

√श्रण्—भ्वा० पर० सक० देना । श्रणति, श्रणिष्यति, अश्रणीत् — अश्राणीत् । (घटादौ श्रणयति)। चु० उभ० सक० देना । श्राणयति —ते, श्राणयिष्यति—ते, अशिश्रणत्—त ।

श्रत्—(अव्य०) [√श्री + डति] सत्य । श्रद्धा । विश्वास । एक उपसर्ग जो "धा" धातु के साथ व्यवहृत किया जाता है ।

√श्रथ्—चु० उभ० सक० आनन्दित करना । अक० यत्न करना । श्राथयति—ते, अशिश्रथत्—त । दुर्बल होना । श्रथयति—ते, अशश्रथत्—त । भ्वा० पर० सक० वध करना । श्रथति, श्रथिष्यति, अश्रथीत्—अश्राथीत् । चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० बाँधना । खोलना । मारना । श्राथयति —ते — श्रथति, अशिश्रथत्—त—अश्रथीत् —अश्राथीत् ।

श्रथन—(न०) [√श्रथ् + ल्युट्] हिंसन, हत्या । खोलना, मुक्त करना । उद्योग, प्रयत्न । बाँधना ।

श्रद्धा—(स्त्री०) [श्रत् √ धा+अङ—टाप्] एक प्रकार की मनोवृत्ति, जिसमें किसी बड़े या पूज्य व्यक्ति के प्रति भक्तिपूर्वक विश्वास के साथ उच्च और पूज्य भाव उत्पन्न होता है । विश्वास । वेदादि शास्त्रों और आप्त-वाक्यों में विश्वास । शुद्धि । चित्त की प्रसन्नता । घनिष्ठता, घनिष्ठ परिचय । सम्मान, प्रतिष्ठा । उग्र कामना । गर्भवती स्त्री की अभिलाषाएँ । प्रजापति की पुत्री का नाम । सूर्य की कन्या का नाम । धर्म की पत्नी का नाम । काम की माता का नाम । वैवस्वत मनु की पत्नी का नाम ।

श्रद्धालु—(वि०) [श्रद्धा + आलुच्] श्रद्धा रखने वाला, श्रद्धावान् । अभिलाषी, इच्छावान् । (स्त्री०) दोहदवती, वह स्त्री जिसके मन में गर्भावस्था के कारण, तरह-तरह की अभिलाषाएँ उत्पन्न हों ।

√श्रन्थ्—चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० गाँठ देना । वध करना । श्रन्थयति—ते —श्रन्थति, अशश्रन्थत्—त — अश्रन्थीत् । क्र्या० पर० सक० खोलना । ढीला करना । अक० प्रसन्न होना । श्रथ्नाति, श्रन्थिष्यति, अश्रन्थीत् ।

श्रन्थ—(पुं०) [√श्रन्थ् + घञ्] छुटकारा, मुक्ति । ढीलापन । [√श्रन्थ्+अच्] विष्णु का नाम ।

श्रन्थन—(न०) [√श्रन्थ् + ल्युट्] छुटकारा, मुक्ति । वध । नाश । बंधन ।

श्रपित—(वि०) [√श्रा + णिच्, पुक्, ह्रस्व+क्त] उबाला हुआ या उबलाया हुआ ।

श्रपिता—(स्त्री०) [श्रपित+टाप्] माँड़ । काँजी ।

√श्रम्—दि० पर० अक० स्वयं प्रयत्न करना, कष्ट उठाना, परिश्रम करना । तप करना । शरीर को तप द्वारा तपाना । थकना । पीड़ित होना । श्राम्यति, श्रमिष्यति, अश्रमत् ।

श्रम—(पुं०) [√श्रम्+घञ्] मेहनत, परिश्रम । प्रयत्न । थकावट, श्रान्ति । सन्ताप, कष्ट । तपस्या, तप । कसरत, व्यायाम । शस्त्राभ्यास ।—**अम्बु** (**श्रमाम्बु**), —**जल** –(न०) पसीना ।—**कर्षित**–(वि०) थका हुआ, थकामाँदा ।—**साध्य**–(वि०) कष्टसाध्य, परिश्रम द्वारा पूर्ण होने वाला ।

श्रमण—(वि०) [स्त्री०—**श्रमणा, श्रमणी**] [√श्रम्+युच्] परिश्रम करने वाला, मेहनती । नीच, कमीना । (पुं०) बौद्ध भिक्षु । साधारण यति ।

श्रमणा, श्रमणी—(स्त्री०) [श्रमण+टाप्] [श्रमण+ङीष्] संन्यासिनी। सुन्दरी स्त्री। नीच जाति की स्त्री। बालछड़, जटामासी। मुंडी। सुदर्शन नामक ओषधि।

√श्रम्भ्—भ्वा० आत्म० अक० असावधान होना। गलती करना। श्रम्भते, श्रम्भिष्यते, अश्रम्भिष्ट।

श्रय—(पुं०), **श्रयण**—(न०) [√श्रि+अच्] [√श्रि+ल्युट्] आश्रय, पनाह, रक्षा।

श्रव—(पुं०) [√श्रु+अप्] सुनना, श्रवण। कान। ख्याति। शब्द।

श्रवण—(न०) [√श्रु + ल्युट्] सुनना। कान। सुनने से उत्पन्न ज्ञान। श्रवणा नक्षत्र (इस अर्थ में पुं० भी है)।—**इन्द्रिय (श्रवणेन्द्रिय)**—(न०) सुनने की शक्ति। कान। —**उदर (श्रवणोदर)**—(न०) कान का बाहरी भाग।—**गोचर**—(वि०) जो सुनाई पड़ने की सीमा में हो, श्रवणप्रत्यक्ष।—**द्वादशी**—(स्त्री०) भाद्रपद-शुक्ल-द्वादशी, वामनद्वादशी।—**पथ**—(पुं०) कान।—**पालि,— पाली**—(स्त्री०) कान की नोक। —**विषय**— (पुं०) श्रवणेन्द्रिय की सीमा में आने वाला विषय।—**सुभग**—(वि०) कर्णसुखद।

श्रवणा—(स्त्री०) [√श्रु + युच्—टाप्] बाईसवाँ नक्षत्र।

श्रवस्—(न०) [√श्रु + असि] कान। कीर्त्ति। अन्न। धन। शब्द।

श्रवाय्य—(पुं०) [√श्रु+आय्य] वह पशु जो बलिदान के योग्य हो।

श्रविष्ठा—(स्त्री०) [श्रवः ख्यातिः अस्ति अस्याः, श्रव+मतुप्, श्रववती + इष्ठन्, मतुपो लुक्] धनिष्ठा नक्षत्र। श्रवण नक्षत्र। —**ज**—(पुं०) बुधग्रह।

√श्रा—अ० पर० सक० राँधना, पकाना। तर करना, नम करना। श्राति, श्रास्यति, अश्रासीत्।

श्राणा—(स्त्री०) [√श्रा+क्त—टाप्] यवागू। काँजी।

श्राद्ध—(न०) [श्रद्धा हेतुत्वेन अस्ति अस्य, श्रद्धा+अण्] शास्त्र तथा लोक विधि के अनुसार पितरों के निमित्त किया जाने वाला कर्म। पितरों के उद्देश्य से श्रद्धापूर्वक, अन्न आदि का दान] (वि०) श्रद्धायुक्त। श्राद्ध के सिलसिले में होने वाले काम।—**कर्मन्**—(न०),—**क्रिया**—(स्त्री०) अन्त्येष्टि क्रिया। —**कृत्**—(पुं०) अन्त्येष्टि क्रिया करने वाला। —**द**—(पुं०) श्राद्ध करने वाला।—**दिन**— (न०) वह दिन जिस दिन किसी मरे हुए के उद्देश्य से श्राद्ध कर्म किया जाय।—**देव**—(पुं०),—**देवता**— (स्त्री०) श्राद्ध का अधिष्ठाता देवता। यमराज। वैवस्वत मनु।—**भुज्**, —**भोक्तृ**—(पुं०) श्राद्ध में भोजन करने वाला ब्राह्मण। पितृपुरुष।

श्राद्धिक—(वि०) [स्त्री०—**श्राद्धिकी**] [श्राद्ध+ठक्] श्राद्ध सम्बन्धी। (न०) श्राद्ध में दी हुई भेंट। (पुं०) वह जो श्राद्ध के अवसर पर पितरों के उद्देश्य से भोजन करता हो।

श्राद्धीय—(वि०) [श्राद्ध+छ] श्राद्ध संबन्धी।

श्रान्त—(वि०) [√श्रम्+क्त] थका हुआ। शान्त। जितेन्द्रिय। (पुं०) साधु। संन्यासी।

श्रान्ति—(स्त्री०) [√श्रम्—क्तिन्] थकावट। श्रम। खेद।

√श्राम्—चु० पर० सक० सलाह देना। श्रामयति, श्रामयिष्यति, अशश्रामत्।

श्राम—(पुं०) [√श्राम् + अच्] मास। समय। मण्डप।

श्राय—(पुं०) [√श्रि+घञ्] संरक्षण, आश्रय।

श्राव—(पुं०) [√श्रु+घञ्] सुनना, श्रवण।

श्रावक—(वि०) [√श्रु + ण्वुल्] सुनने वाला। (पुं०) शिष्य। बौद्ध भिक्षुक। बौद्ध भक्त। कौआ।

श्रावण—(वि०) [स्त्री०—**श्रावणी**] [श्रवण +अण्] कान सम्बन्धी । श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न । (पुं०) [श्रवणेन युक्ता पौर्णमासी श्रावणी सा अस्मिन् मासे, श्रावणी + अण्] आषाढ़ के बाद और भादों के पहले का महीना, सावन । पाषंड । एक वैश्य तपस्वी, जो महाराज दशरथ के राज्य-काल में था ।

श्रावणिक—(वि०) [श्रावण + ठक्] श्रावण मास सम्बन्धी । (पुं०) [श्रावणी पूर्णिमा अस्ति अस्मिन् मासे, श्रावणी +ठक्] श्रावण मास ।

श्रावणी—(स्त्री०) [श्रवणेन नक्षत्रेण युक्ता पौर्णमाणी, श्रवण + अण्—ङीप्] श्रावण मास की पूर्णिमा, जिस दिन ब्राह्मणों का प्रसिद्ध त्योहार रक्षाबंधन होता है । इस दिन लोग यज्ञोपवीत का पूजन करते और नवीन यज्ञोपवीत भी धारण करते हैं ।

श्रावस्ति, श्रावस्ती—(स्त्री०) उत्तर कोशल में गंगा के तट पर बसी हुई एक बहुत प्राचीन नगरी ।

श्रावित—(वि०) [√श्रु+णिच् + क्त] सुनाया हुआ । कथित ।

श्राव्य—(वि०) [√श्रु + णिच्+यत्] सुनाने योग्य ।

√श्रि—भ्वा० उभ० सक० जाना । प्राप्त करना । आश्रय लेना । परिचर्या करना । व्यवहार करना । अक० अनुरक्त होना । बसना । श्रयति—ते, श्रयिष्यति—ते, अशिश्रयत्—त ।

श्रित—(वि०) [√श्रि +क्त] गया हुआ । रक्षा के लिये समीप आया हुआ । संयुक्त । रक्षित । परिचर्या किया हुआ । छाया हुआ । सम्पन्न । एकत्रित । अधिकृत ।

श्रिति—(स्त्री०)[√श्रि+क्तिन्]आश्रय, सहारा ।

√श्रिष्—भ्वा० पर० सक० जलाना । श्रेषति, श्रेषिष्यति, अश्रेषीत् ।

√श्री—क्र्या० उभ० सक० राँधना, पकाना । श्रीणाति—श्रीणीते, श्रेष्यति—ते, अश्रैषीत् —अश्रेष्ट ।

श्री—(स्त्री०) [√श्री + क्विप्] धन, सम्पत्ति । राजसी सम्पत्ति । गौरव, उच्चपद । सौन्दर्य । प्रभा । रंग । धन की अधिष्ठात्री देवी, लक्ष्मी । कोई गण या सत्कर्म । सजावट, शृंगार । बुद्धि । वृद्धि । सिद्धि । अलौकिक शक्ति । धर्म, अर्थ और काम । सरल वृक्ष । बेल का पेड़ । लवङ्ग, लौंग । कमल । —**आह्व** (**श्र्याह्व**)–(न०) कमल ।—**ईश** (**श्रीश**)–(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**कण्ठ**–(पुं०) शिव । भवभूति कवि ।—**कर**–(पुं०) विष्णु । (न०) लाल कमल ।—**करण**—(न०) कमल । —**कान्त**– (पुं०) विष्णु ।—**कारिन्**–(पुं०) एक प्रकार का मृग ।—**गदित**–(न०)उपरूपक के अठारह भेदों में से एक । इसका दूसरा नाम श्रीरासिका भी है ।—**गर्भ**– (पुं०) विष्णु का नामान्तर । तलवार ।—**ग्रह**– (पुं०) कुण्ड या कठौता, जिसमें पक्षियों के लिये जल भरा जाय ।—**घन**–(न०) खट्टा दही । (पुं०) बौद्ध भिक्षुक ।—**चक्र**–(न०) भूगोल । इन्द्र के रथ का एक पहिया ।—**ज**–(पुं०) कामदेव का नामान्तर ।—**द**–(पुं०) कुबेर का नामान्तर ।—**दयित**,—**धर**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर । —**नन्दन**–(पुं०) कामदेव । लक्ष्मी का पुत्र ।—**निकेतन**,—**निवास**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**पति**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर । राजा ।—**पथ**–(पुं०) राजमार्ग ।—**पर्ण**–(न०) कमल । अग्निमंथ वृक्ष ।—**पर्णी**– (स्त्री०) गंभारी वृक्ष । कट्फल वृक्ष । शाल्मली वृक्ष । अग्निमंथ वृक्ष ।—**पर्वत**–(पुं०) एक पहाड़ का नाम ।—**पिष्ट**–(पुं०) तारपीन ।—**पुत्र**– (पुं०)

कामदेव । इन्द्र का घोड़ा, उच्चैःश्रवा । चन्द्रमा ।—**पुष्प**– (न०) लवंग ।—**फल**–(पुं०) बेल का पेड़ । (न०) बेल का फल ।—**फला**, —**फली**–(स्त्री०) नील का पौधा । आँवला ।—**भ्रातृ**– (पुं०) चन्द्रमा । घोड़ा ।—**मस्तक**–(पुं०) लहसुन । लाल आलू ।—**मुद्रा**– (स्त्री०) मस्तक पर लगाया जाने वाला वैष्णवों का तिलक विशेष ।—**मूर्ति**– (स्त्री०) श्रीलक्ष्मी जी की मूर्ति । किसी की भी मूर्ति ।—**युक्त**, —**युत**– (वि०) भाग्यवान् । आह्लादित । धनवान् । सौन्दर्यपूर्ण ।—**रङ्ग**–(पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर ।—**रस**– (पुं०) तारपीन । राल ।—**वत्स**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर । विष्णु के वक्षःस्थल का चिह्न विशेष । यह अंगुष्ठ प्रमाण श्वेत बालों का दक्षिणावर्त भौंरी का सा चिह्न है । इसे भृगु के चरण-प्रहार का चिह्न बतलाते हैं ।—**वत्सकिन्**–(पुं०) वह घोड़ा जिसकी छाती पर भौंरी हो ।—**वर**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**वल्लभ**– (पुं०) विष्णु । सौभाग्यशाली पुरुष ।—**वास**– (पुं०) विष्णु का नामान्तर । शिव । कमल । तारपीन ।—**वासस्**– (पुं०) तारपीन ।—**वृक्ष** – (पुं०) बेल का वृक्ष । अश्वत्थ वृक्ष । घोड़े के माथे और छाती की भौंरी ।—**वेष्ट**– (पुं०) तारपीन । राल ।—**संज्ञ**– (न०) लवंग ।—**सहोदर**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**सूक्त**–(न०) एक वैदिक सूक्त ।—**हरि**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**हस्तिनी**– (स्त्री०) सूर्यमुखी का फूल ।

श्रीमत्—(वि०) [श्री + मतुप्] शोभायुक्त । धनवान्, धनी । सुन्दर । प्रसिद्ध । (पुं०) विष्णु का नामान्तर । कुबेर । शिव । तिलक वृक्ष । अश्वत्थ वृक्ष ।

श्रील—(वि०) [श्रीः अस्ति अस्य, श्री +लच्] धनी । भाग्यवान् । सुन्दर । विख्यात ।

√श्रु—भ्वा० पर० सक० जाना । श्रवति, श्रोष्यति, अश्रौषीत् । सुनना । सीखना । ध्यान देना । शृणोति, श्रोष्यति, अश्रौषीत् ।

श्रुत—(वि०) [√श्रु + क्त] सुना हुआ । जाना हुआ । सीखा हुआ । प्रसिद्ध, प्रख्यात । नामक । (न०) सुनने की वस्तु । वेद । विद्या ।—**अध्ययन** (**श्रुताध्ययन**)–(न०) वेदों का अध्ययन ।—**अन्वित** (**श्रुतान्वित**) –(वि०) वेदों का जानकार ।—**अर्थ** (**श्रुतार्थ**)–(पुं०) कोई बात जिसकी सूचना मौखिक दी गयी है ।—**कीर्ति**–(वि०) प्रसिद्ध । (पुं०) उदार पुरुष । ब्रह्मर्षि । (स्त्री०) शत्रुघ्न की स्त्री का नाम ।—**देवी**– (स्त्री०) सरस्वती का नाम ।—**धर**–(वि०) जो पढ़ा हो उसे याद रखने वाला ।

श्रुतवत्—(वि०) [श्रुत + मतुप्] वेदज्ञ ।

श्रुति—(स्त्री०) [√श्रु+क्तिन्] सुनने की क्रिया । कान । किंवदंती, अफवाह । ध्वनि, आवाज । वेद । वेद-संहिता । श्रवण नक्षत्र । संगीत में किसी सप्तक के बाईस भागों में से एक अथवा किसी स्वर का एक अंश । स्वर का आरम्भ और अन्त इसी से होता है ।—**उक्त**(**श्रुत्युक्त**),—**उदित** (**श्रुत्युदित**)–(वि०) वेद-विहित, वेदों द्वारा आज्ञप्त ।—**कट**–(पुं०) सर्प । तप । प्रायश्चित्त ।—**कटु** –(वि०)सुनने में कठोर । (पुं०) काव्य-रचना का एक दोष, कठोर एवं कर्कश वर्णों का व्यवहार, दुःश्रवणत्व ।—**चोदन**–(न०),—**चोदना**–(स्त्री०)वेद की आज्ञा ।—**जीविका** –(स्त्री०)स्मृतिशास्त्र ।—**द्वैध**–(न०) वेद वाक्यों का परस्पर विरोध या अनैक्य ।—**निदर्शन**– (न०) वेद का प्रमाण ।—

प्रसादन—(वि०)कर्ण-मधुर ।—**प्रामाण्य**—(न०) वेद का प्रमाण ।—**मण्डल** (न०) कान का वाहरी घेरा ।—**मूल**—(न०) कान के नीचे का भाग । वेद-संहिता ।—**मूलक**—(वि०) वेद से प्रमाणित ।—**विषय**— (पुं०) शब्द । वेद सम्बन्धी विषय । कोई भी वैदिक आज्ञा ।—**स्मृति**—(स्त्री०) वेद और धर्मशास्त्र ।

श्रुव—(पुं०) [√श्रु+क] यज्ञ । स्रुवा ।

श्रुवा—(स्त्री०) [श्रुव+टाप्] स्रुवा, चम्मचनुमा लकड़ी का पात्र जिसमें भर कर शाकल्य की आहुति अग्नि में छोड़ी जाती है ।—**वृक्ष**— (पुं०) विकंकत वृक्ष ।

श्रेढी—(स्त्री०) [श्रेण्यै राशीकरणाय ढौकते, श्रेणी √ढौक् + ड, पृषो० साधुः] भिन्न जातीय द्रव्यों को मिलाने के लिये अंकशास्त्रोक्त गणना का एक भेद । एक प्रकार का पहाड़ा ।

श्रेणि—(स्त्री०, पुं०), **श्रेणी**—(स्त्री०) [√ श्रि+णि] [श्रेणि+ङीष्] रेखा, पंक्ति, अवली । समूह; समुदाय; 'न षट्पदश्रेणिभिरेव पङ्कजं सशैवलासङ्गमपि प्रकाशते' कु० ५.९ । व्यवसायियों का संघ । कारीगरों का संघ । बालटी, डोल ।—**धर्म**—(पुं०) व्यवसायियों की मंडली या पंचायत की रीति या नियम ।

श्रेणिका—(स्त्री०) [श्रेणी + कन्—टाप्, ह्रस्व] खेमा, तंबू ।

श्रेयस्—(वि०) [अयमनयोः अतिशयेन प्रशस्यः प्रशस्य + ईयसुन्, श्र आदेश] बेहतर, उत्कृष्टतर । उत्कृष्टतम, सर्वोत्तम । उपयुक्त । मंगलमय । (न०) धर्म । मोक्ष । शुभ, मंगल । सुख । पुण्य । यश ।—**अर्थिन्** (**श्रेयोऽर्थिन्**)—(वि०) सुख-प्राप्ति का अभिलाषी । मङ्गलाभिलाषी ।—**कर**—(वि०) कल्याणकारी, शुभदायक ।—**परिश्रम** (**श्रेयःपरिश्रम**)—(पुं०) मोक्ष के लिये प्रयत्न ।

श्रेयसी—(स्त्री०) [श्रेयस्+ङीप्] हर्र । पाठा । गजपिप्पली । रास्ना ।

श्रेष्ठ—(वि०) [अयमेषाम् अतिशयेन प्रशस्यः, प्रशस्य +इष्ठन्, श्र आदेश] सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट । अत्यन्त प्रसन्न । अत्यन्त समृद्धिशाली । सब से अधिक बूढ़ा । (न०)गौ का दूध ।(पुं०) ब्राह्मण। राजा । कुबेर । विष्णु ।—**आश्रम** (श्रेष्ठाश्रम)—(पुं०)गृहस्थ-आश्रम । गृहस्थ ।—**वाच्**—(वि०) वाग्मी, अच्छा वक्ता ।

श्रेष्ठिन्—(पुं०) [श्रेष्ठं धनादिकम् अस्ति अस्य, श्रेष्ठ+इनि] व्यापारियों की पंचायत का मुखिया । सेठ । अत्यंत धनी व्यक्ति ।

√श्रै—भ्वा० पर० अक० पसीना निकलना । पसीजना । सक० राँधना, पकाना । श्रायति, श्रास्यति, अश्रासीत् ।

√श्रोण्—भ्वा० पर० अक० जमा होना । सक० जमा करना, ढेर लगाना । श्रोणति, श्रोणिष्यति, अश्रोणीत् ।

श्रोण—(वि०) [√श्रोण् + अच्] लँगड़ा । (पुं०) रोग विशेष ।

श्रोणा—(स्त्री०) [श्रोण+टाप्] काँजी । भात का माँड़ । श्रवणनक्षत्र ।

श्रोणि, श्रोणी—(स्त्री०) [√ श्रोण् +इन्, पक्षे—ङीष्] कटि, कमर । चूतड़, नितंब; 'श्रोणीभारादलसगमना' मे० ८२ । मार्ग, सड़क ।—**फलक**—(न०) चौड़ा कटिप्रदेश या नितंब ।—**बिम्ब**— (न०) गोल नितंब । कमरबंद, पटुका ।—**सूत्र**—(न०) करधनी, मेखला ।

श्रोतस्—(न०) [√ श्रु + असुन्, तुट् आगम] कर्ण, कान । हाथी की सूँड़ । इन्द्रिय । नदी का वेग, स्रोत ।

श्रोतृ—(पुं०) [√श्रु+तृच्] सुनने वाला । शिष्य ।

श्रोत्र—(न०) [√श्रु+ष्ट्रन्] कान । वेद-ज्ञान । वेद ।

श्रोत्रिय—(वि०) [छन्दो वेदम् अधीते वेत्ति वा, छन्दस्+घ, श्रोत्रादेश] वेद-वेदाङ्ग में पारङ्गत । (पुं०) विद्वान् ब्राह्मण, वेद या धर्मशास्त्रों में निष्णात विप्र ।—**स्व**—(न०) विद्वान् ब्राह्मण की सम्पत्ति ।

श्रौत—(वि०) [स्त्री०—**श्रौती**] [श्रुति+अण्] कान सम्बन्धी । वेदसम्बन्धी । वेदोक्त । (न०) वेदोक्त कर्म या क्रिया-कलाप । वैदिक विधान । तीनों प्रकार की विधान । तीनों प्रकार की (अर्थात् गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिण] अग्नि ।—**सूत्र**—(न०) यज्ञादि के विधान वाले सूत्र, कल्प-ग्रन्थ का वह अंश जिसमें पौर्णमास्येष्टि से लेकर अश्वमेध पर्यन्त यज्ञों के विधान का निरूपण किया गया है ।

श्रौत्र—(न०) [श्रोत्र+अण् (स्वार्थे)] कान । [श्रोत्रिय+अण्, यलोप] श्रोत्रिय का कर्म या भाव, श्रोत्रियत्व ।

श्रौषट्—(अव्य०) [√श्रु+डौषट्]वषट् या वौषट् का पर्यायवाची शब्द । यज्ञ में हविर्दान के समय इसका उच्चारण किया जाता है ।

श्लक्ष्ण—(वि०) [श्लिष् + क्स्न, उपधाया अकारः] कोमल, मुलायम, सुकुमार । चमकदार । चिकना । सूक्ष्म । पतला । मनोहर । ईमानदार ।

[illegible]—(न०) [श्लक्ष्ण + कन्] सुपारी, पुंगीफल ।

√श्लङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । श्लङ्कते, श्लङ्किष्यते, अश्लङ्किष्ट ।

√श्लङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । श्लङ्गति, श्लङ्गिष्यति, अश्लङ्गीत् ।

√श्लथ्—चु० उभ० अक० ढीला होना, शिथिल होना । कमजोर होना, निर्बल होना । सक० ढीला करना, शिथिल करना । चोटिल करना । वध करना । श्लथयति—ते, श्लथयिष्यति—ते, अशश्लथत्—त ।

श्लथ—(वि०) [√श्लथ् + अच्] बंधन-रहित । ढीला, खसका हुआ; 'वृन्ताच्छ्लथं पुष्पमनोकहानाम्' र० ५.३७ । बिखरे हुए (जैसे बाल) ।

√श्लाख्—भ्वा० पर० सक० व्याप्त करना । श्लाखति, श्लाखिष्यति, अश्लाखीत् ।

√श्लाघ्—भ्वा० आत्म० सक० अपने गुणों को प्रकट करना, अपनी प्रशंसा करना । सराहना, प्रशंसा करना । चापलूसी करना । श्लाघते, श्लाघिष्यते, अश्लाघिष्ट ।

श्लाघन—(न०) [√श्लाघ् + ल्युट्] अपनी प्रशंसा करना । चापलूसी करना ।

श्लाघा—(स्त्री०) [√श्लाघ् + अ—टाप्] प्रशंसा, तारीफ । आत्म-प्रशंसा, अभिमान । चापलूसी । सेवा, परिचर्या । कामना ।—**विपर्यय**—(पुं०) अभिमान का अभाव; 'त्यागे श्लाघाविपर्ययः' र० १.२२ ।

श्लाघित—(वि०) [√श्लाघ् + क्त] प्रशंसित, तारीफ किया हुआ ।

श्लाघ्य—(वि०) [√श्लाघ् + ण्यत्] प्रशंसनीय । सम्माननीय ।

श्लिकु—(पुं०) [√श्लिष्+कु, पृषो० साधुः] लंपट, कामुक । गुलाम, चाकर । (न०) ज्योतिर्विद्या के अन्तर्गत गणित ज्योतिष और फलित ज्योतिष ।

श्लिक्यु—(पुं०) [√श्लिष् + क्यु, पृषो० साधुः] लंपट, कामुक । चाकर ।

√श्लिष्—भ्वा० पर० सक० जलाना । श्लेषति, श्लेषिष्यति, अश्लेषीत् । दि० पर० सक० आलिंगन करना । मिलाना, जोड़ना । पकड़ना, ग्रहण करना । समझना । श्लिष्यति, श्लेक्ष्यति, अश्लिषत् (आलिंगने तु) अश्लिक्षत् ।

श्लिषा—(स्त्री०) [√श्लिष् + अ—टाप्] आलिंगन ।

श्लिष्ट—(वि०) [√श्लिष् + क्त] आलिङ्गन किया हुआ। मिला हुआ, सटा हुआ। (साहित्य में) श्लेषयुक्त अर्थात् जिसके दुहरे अर्थ हों।

श्लिष्टि—(स्त्री०) [√ श्लिष् + क्तिन्] आलिङ्गन। लगाव, सटाव।

श्लीपद—(न०) [श्रीयुक्तं वृत्तियुक्तं पदम् अस्मात्, पृषो० साधुः] टाँग फूलने का रोग, फील पाँव।—**प्रभव**-(पुं०) आम का वृक्ष।

श्लील—(वि०) [श्रीः अस्ति अस्य, श्री+लच्, पृषो० रस्य लः]शोभायुक्त। मङ्गलकारी, शुभ। उत्तम।

श्लेष—(पुं०) [√श्लिष् + घञ्] आलिंगन, परिरम्भण; 'निरन्तरश्लेषघनाः' का०। जोड़, मिलान। एक में सटने या लगने का भाव। साहित्य में एक अलङ्कार जिसमें एक शब्द के दो या अधिक अर्थ लिये जाते हैं, दो अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग।

श्लेष्मक—(पुं०) [श्लेष्मन् + कन्] कफ, बलगम।

श्लेष्मण—(वि०) [श्लेष्मन् + न] बलगमी, कफ वाला या कफ की प्रकृति वाला।

श्लेष्मन्—(पुं०) [√श्लिष्+मनिन्] कफ, बलगम।—**अतीसार (श्लेष्मातीसार)**-(पुं०) कफ के प्रकोप से उत्पन्न हुआ अतीसार अर्थात् दस्तों का रोग।—**ओजस् (श्लेष्मौजस्)**- (न०) कफ की प्रकृति।—**घ्ना, —घ्नी**- (स्त्री०) मल्लिका, मोतिया का एक भेद। केतकी, केवड़ा। महाज्योतिष्मती लता। त्रिकुट। पुनर्नवा।

श्लेष्मल—(वि०) [श्लेष्मन् + लच्] कफ वाला, बलगमी।

श्लेष्मात, श्लेष्मान्तक—(पुं०) [श्लेष्मन् √अत्+अच्] [श्लेष्मण अन्तक इव, ष० त०] लिसोड़ा, बहुवार वृक्ष।

√श्लोक्—भ्वा० आत्म० सक० श्लोक बनाना, पद्य रचना। प्राप्त करना। त्याग देना, छोड़ देना। प्रशंसा करना। अक० इकट्ठा होना। श्लोकते, श्लोकिष्यते, अश्लोकिष्ट।

श्लोक—(पुं०) [√श्लोक् + अच्] स्तुति, प्रशंसा। कीर्ति, यश; 'पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः' सुभा०। पद्य। ऐसा छन्द या गीत जो प्रशंसा करने के लिए बनाया गया हो। प्रशंसा करने की वस्तु। लोकोक्ति, कहावत। संस्कृत का कोई पद्य जो अनुष्टप् छन्द में हो।

√श्लोण्—भ्वा० पर० सक० ढेर करना, एकत्र करना। श्लोणति, श्लोणिष्यति, अश्लोणीत्।

श्लोण—(पुं०) [√श्लोण् + अच्] लँगड़ा।

√श्वङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। श्वङ्कते, श्वङ्किष्यते, श्वङ्किष्ट।

√श्वच्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। अक० फटना। श्वचते, श्वचिष्यति, अश्वचिष्ट।

√श्वञ्च्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। श्वञ्चते, श्वञ्चिष्यते, अश्वञ्चिष्ट।

√श्वठ्—भ्वा० उभ० सक० जाना। सजाना। समाप्त करना। श्वठयति—ते, श्वठयिष्यति—ते, अशिश्वठत्—त।

√श्वण्ठ्—दे० '√श्वठ्'। श्वण्ठयति—ते।

श्वन्—(पुं०) [√श्वि+कनिन् (समास में न का लोप हो जाता है)]। कुत्ता।—**क्रीडिन्**-(वि०) कुत्ते के साथ क्रीड़ा करने वाला। कुत्तों को पालने वाला।—**गण**-(पुं०) कुत्तों का झुण्ड।—**गणिक**- (पुं०) शिकारी। कुत्तों को खिलाने वाला।—**धूर्त**- (पुं०) शृगाल।—**नर**-(पुं०) कठोर बातें कहने वाला मनुष्य।—**निश**-(न०), —**निशा**- (स्त्री०) वह रात जब कुत्ते भूँकें।—**पच्**, — **पच**-(पुं०) चाण्डाल, पतित जाति का आदमी। कुत्ते

का मांस खाने वाला व्यक्ति। —पाक—(पुं०) चाण्डाल।—फल— (न०) नीबू या जंभीरी।—फल्क—(पुं०) अक्रूर के पिता का नाम।—भीरु—(पुं०) स्यार, शृगाल। —यूथ—(न०) कुत्तों का झुण्ड। —वृत्ति— (स्त्री०) पराधीन वृत्ति, सेवा, नौकरी।— व्याघ्र—(पुं०) शिकारी जानवर। चीता।—हन्—(पुं०) शिकारी।

√श्वभ्र्—चु० उभ० सक० जाना। छेद करना। अक० दरिद्रता में रहना। श्वभ्रयति—ते, श्वभ्रयिष्यति — ते, अशश्वभ्रत्—त।

श्वभ्र—(न०) [√श्वभ्र+अच्] छिद्र, सूराख।

श्वय—(पुं०) [√श्वि + अच्] सूजन, शोथ। वृद्धि, स्फीति।

श्वयथु—(पुं०) [√श्वि+अथुच्] सूजन।

श्वयीची—(स्त्री०) [√श्वि+ईचि+ङीप्] पीड़ा। बीमारी, रोग।

√श्वल्—भ्वा० पर० अक० दौड़ना। श्वलति, श्वलिष्यति, अश्वालीत्।

√श्वल्क्—चु० उभ० सक० कहना। वर्णन करना। श्वल्कयति—ते, श्वल्कयिष्यति—ते, अशश्वल्कत्—त।

√श्वल्ल्—भ्वा० पर० अक० दौड़ना। श्वल्लति, श्वल्लिष्यति, अश्वल्लीत्।

श्वशुर—(पुं०) [शु आशु अश्नुते, शु√अश्+उरच्] ससुर, पत्नी या पति का पिता।

श्वशुरक—(पुं०) [श्वशुर+कन्] ससुर।

श्वशुर्य—(पुं०) [श्वशुरस्यापत्यम्, श्वशुर+यत्] साला, पत्नी का भाई। देवर, पति का छोटा भाई।

श्वश्रू—(स्त्री०) [श्वशुर+ ऊङ्, उकार-अकारलोप] पति या पत्नी की माता, सास।

√श्वस्—अ० पर० अक० जीना। साँस लेना। श्वसिति, श्वसिष्यति, अश्वसीत्। सोना (वैदिक)। श्वस्ति, श्वसिष्यति, अश्वसीत्।

श्वस्—(अव्य०) [आगामि अहः पृषो० साधुः] कल (जो आने वाला है)।—श्रेयस(श्वःश्रेयस)—(न०) [श्वः परदिने भाविकाले श्रेयो यस्मात्, अच् समा०] मंगल। सुख। ब्रह्म। (वि०) कल्याण-युक्त।

श्वसन—(न०) [√श्वस् + ल्युट्] जीना। सांस लेना। हाँफना। आह भरना। निःश्वास। (पुं०) [श्वस्+ल्यु] पवन; 'श्वसनचलितपल्लवाधरोष्ठे' कि० १०.३४। एक दैत्य जिसका वध इन्द्र ने किया था। मदन वृक्ष। —अशन (श्वसनाशन)—(पुं०) साँप।—ईश्वर (श्वसनेश्वर)—(पुं०) अर्जुन वृक्ष।—उत्सुक (श्वसनोत्सुक)— (पुं०) साँप। —ऊर्मि (श्वसनोर्मि)—(स्त्री०) हवा का झोंका।

श्वसित—(वि०) [√श्वस् + क्त] श्वास-युक्त, जीवित। आह भरने वाला। श्वास निकालने, ग्रहण करने वाला। (न०) श्वास। आह।

श्वस्तन, श्वस्त्य—(वि०) [स्त्री०—श्वस्तनी] [श्वस्+ट्युल्, तुट्] [श्वस्+त्यप्] आने वाले कल से सम्बन्ध युक्त।

श्वाकर्ण—(पुं०) [शुनः कर्णः, ष० त०, अन्येषामपीति दीर्घः] कुत्ते के कान।

श्वागणिक—(पुं०) [श्वगणेन चरति, श्वगण+ठञ्] वह जो कुत्ते पालकर जीविका निर्वाह करे।

श्वादन्त—(वि०) [शुनो दन्त इव दन्तो यस्य, ब०, स०, नि० दीर्घ] कुत्ते के समान दाँत वाला।

श्वान—(पुं०) [श्वन्+अण् (स्वार्थे)] कुत्ता। —निद्रा—(स्त्री०) ऐसी नींद जो जरा सा खटका होते ही उचट जाय, झपकी।

श्वापद—(वि०) [स्त्री०—श्वापदी] [शुन इव आपद् अस्मात्, अच् समा०] हिंसक। बर्बर। भयंकर। (पुं०) हिंसक पशु, व्याघ्रादि। चीता।

श्वापुच्छ—(न०) [शुन: पुच्छम्, ष० त०, नि० दीर्घ] कुत्ते की पूँछ।

श्वाविध्—(पुं०) [शुना आविध्यते, श्वन्—आ √ व्यध्+क्विप्] साही, शल्य।

श्वास—(पुं०) [√श्वस् + घञ्] साँस। आह; 'अद्यापि स्तनवेपथुं जनयति श्वास: प्रमाणाधिक:' श० १.२९। पवन। दमा की बीमारी।—**कास**- (पुं०) दमे का रोग। —**रोध**- (पुं०) साँस की रुकावट।—**हिक्का**-(स्त्री०)एक प्रकार की हिचकी। —**हेति**-(स्त्री०) निद्रा, नींद।

श्वासिन्—(वि०) [श्वास+इनि] सांस लेने वाला। (पुं०) [√श्वस् + णिच्+णिनि] पवन।

√श्वि—भ्वा० पर० अक० उगना। बढ़ना। सूजना। फलना-फूलना। सक० समीप जाना। श्वयति, श्वयिष्यति, अशिश्वियत्—अश्वत्—अश्वयीत्।

√श्वित्—भ्वा० आत्म० अक० सफेद होना। श्वेतते, श्वेतिष्यते, अश्वितत्—अश्वेतिष्ट।

श्वित्र—(न०) [√श्वित् + रक्] सफेद कोढ़। कोढ़ का दाग; 'स्याद् वपु: सुन्दरमपि श्वित्रेणैकेन दुर्भगं' काव्य० १.७।—**घ्नी**—(स्त्री०) पीतपर्णी, बिछाली का पौधा।

श्वित्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**श्वित्रिणी**] [श्वित्र+इनि] कोढ़ी, कोढ़-वाला। (पुं०) कोढ़ का रोगी।

√श्विन्द्—भ्वा० आत्म० अक० सफेद हो जाना। श्विन्दते, श्विन्दिष्यते, अश्विन्दिष्ट।

श्वेत—(वि०) [स्त्री०—**श्वेता या श्वेती**] [√श्वित्+अच् वा घञ्] सफेद, उजला; 'तत: श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ' भग० १.१४। (न०) चाँदी। (पुं०) सफेद रङ्ग। शंख। कौड़ी। शुक्रग्रह का अधिष्ठातृ देवता। सफेद बादल। सफेद जीरा। एक पर्वत-माला का नाम। ब्रह्माण्ड का एक भाग।—**अम्बर** (**श्वेताम्बर**—) (पुं०) जैन साधुओं का एक भेद, जैनियों के दो प्रधान सम्प्रदायों में से एक।—**इक्षु** (**श्वेतेक्षु**)– (पुं०) एक प्रकार का गन्ना। —**उदर** (**श्वेतोदर**)–(पुं०) कुबेर का नामान्तर।—**कमल**, —**पद्म**– (न०) सफेद कमल।—**कुञ्जर**– (पुं०) ऐरावत हाथी।—**कुष्ठ**– (न०) सफेद कोढ़।—**केतु**–(पुं०) महर्षि उद्दालक के पुत्र का नाम। बोधिसत्त्व की अवस्था में गौतम बुद्ध का नाम।—**कोल**–(पुं०) शफरी मछली।—**गज**, —**द्विप**–(पुं०) सफेद हाथी। इन्द्र का हाथी।—**गरुत्**– (पुं०) हंस।—**च्छद**– (पुं०) हंस। तुलसी।—**द्वीप**– (पुं०) महाद्वीप के अष्टादश विभागों में से एक।—**धातु**–(पुं०) सफेद खनिज पदार्थ। खड़िया मिट्टी।—**धामन्**– (पुं०) चन्द्रमा। कपूर। समुद्रफेन।—**नील**– (पुं०) बादल।—**पत्र**–(पुं०) हंस।—**पाटला**– (स्त्री०) श्वेतपुष्प पारुल वृक्ष। —**पिङ्ग**–(पुं०) सिंह। शिव का नामान्तर।—**पुष्प**– (पुं०) सिंधुवार वृक्ष। (न०) सफेद फूल।—**पुष्पा** –(स्त्री०) घोपातकी। मृगेर्वारु। नागदंती।—**मरिच**– (न०) सफेद मिर्च।—**माल**–(पुं०)बादल। धुआँ।—**रक्त**–(पुं०) गुलाबी रङ्ग।—**रञ्जन**–(न०) सीसा।—**रथ**–(पुं०) शुक्रग्रह।—**रोचिस्**– (पुं०) चन्द्रमा।—**रोहित** –(पुं०) गरुड़ का नामान्तर।—**वल्कल**– (पुं०) गूलर का पेड़।—**वाजिन्**–(पुं०)चन्द्रमा। अर्जुन।—**वाह**– (पुं०) इन्द्र का नाम। अर्जुन का नाम। चन्द्र का नाम।—**वाहन**–(पुं०) अर्जुन। इन्द्र। चन्द्रमा। मकर, घड़ियाल।—**वाहिन्**– (पुं०) अर्जुन। —**शुङ्ग**,—**शृङ्ग**–(पुं०) जौ, यव।—**हय**– (पुं०) इन्द्र का घोड़ा। अर्जुन।—**हस्तिन्** –(पुं०) इन्द्र का हाथी, ऐरावत।

श्वेतक—(पुं०) [श्वेत + कन्] कौड़ी । (न०) चाँदी ।

श्वेता—(स्त्री०) [√श्वित् + अच्—टाप्] कौड़ी । पुनर्नवा । सफेद दूर्वा । स्फटिक । मिस्री । वंशलोचन । अतिविषा, अतीस । श्वेत अपराजिता । श्वेत कंटकारी । श्वेत वृहती । काष्ठपाटला । शंखिनी । स्फटी, फिटकिरी । अग्नि की एक जिह्वा ।

श्वेतौही—(स्त्री०) [श्वेतवाह + ङीष्] इन्द्र-पत्नी शची का नाम ।

श्वेत्र—(न०) सफेद कोढ़ ।

श्वैत्य—(न०) [श्वेत + ष्यञ्] सफेदी । सफेद कोढ़ ।

श्वैत्र, श्वैत्र्य—(न०) [श्वित्र+अण्] [श्वित्र+ष्यञ्] सफेद कोढ़ ।

श्वोवसीयस—(न०) [अतिशयेन वसुः, वसु+ईयसुन्, श्वः वसीयस्, मयू० स०, अच्] कल्याण, मंगल । मोक्ष । (वि०) कल्याण-युक्त । भावीशुभ-सम्पन्न ।

ष

ष—संस्कृत या हिन्दी वर्णमाला के व्यञ्जन वर्णों में ३१वाँ वर्ण या अक्षर। इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। इसीलिए यह मूर्द्धन्य ष कहलाता है । इसका उच्चारण कुछ लोग "श" के समान और कुछ लोग "ख" के समान करते हैं ।[विशेष—अनेक धातुएँ जो "स" अक्षर से आरम्भ होती हैं धातु-पाठ में "ष" से लिखी गयी हैं, क्योंकि स्थान-विशेषों में स के स्थान पर ष हो जाता है । ऐसी धातुएँ "स" अक्षर-शब्दावली में यथास्थान पायी जायँगी] (वि०) [√सो+क,पृषो०षत्व]सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट। (पुं०) नाश । अवसान । शेष, बाकी । मुक्ति, मोक्ष ।

षट्क—(वि०) [षड्भिः क्रीतम्, षष्+कन्] छः गुने से खरीदा हुआ । (न०) [स्वार्थ कन्] छः वस्तुओं का समुदाय ।

षड्धा—(पुं०) [षष् + धाच्] छः प्रकार से ।

षण्ड—(पुं०) [√सन् + ड, पृषो० षत्व] बैल । नपुंसक । समूह । ढेर । पद्मसमूह । चिह्न । शिव । धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

षण्डक—(पुं०) [षण्ड + कन्] हिजड़ा, खोजा, नपुंसक ।

षण्डाली—(स्त्री०) [षण्ड√ अल् + अच् –ङीष्] ताल, तलैया । व्यभिचारिणी, दुश्चरित्रा स्त्री । एक छटाँक तेल नापने का पात्र ।

षण्ढ—(पुं०) [√ सन्+ढ, पृषो० षत्व] हिजड़ा, नपुंसक । नपुंसकलिङ्ग । शिव । धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

षष्—(वि०) [√सो+क्विप्, पृषो० साधुः] छः, पांच और एक (इसका प्रयोग वहुवचन में होता है । प्रथमा एवं समास में इसका रूप षट् होता है) ।—**अक्षीण** (**षडक्षीण**) –(पुं०) मछली ।—**अग्नि** (**षडग्नि**)–(पुं०) कर्मकांड संवंधी छः प्रकार की अग्नि—गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि, सभ्याग्नि, आवसथ्य और औपसनाग्नि । —**अङ्ग** (**षडङ्ग**)– (न०) शरीर के ६ अवयवों का समुदाय [वे छः अवयव ये हैं ।— 'जंघे वाहू शिरो मध्यं षडङ्गमिदमुच्यते ।'—अर्थात् दो जाँघें, दो वाहें, सिर और धड़ । वेद के छः अङ्ग [यथा —शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष] । गौ से प्राप्त छः शुभ पदार्थ [यथा—गोमूत्र, गोवर, दूध, घी, दही और गोरोचन] ।—०**धूप** (**षडङ्गधूप**)– (पुं० चीनी, गोघृत, मधु, गुग्गुल, अगरु काष्ठ और श्वेत चंदन के मिश्रण से बत्ती के समान बना कर सुखाया हुआ धूप । —**अङ्घ्रि** (**षडङ्घ्रि**)–(पुं०) भ्रमर, भौंरा ।— **अधिक** (**षडधिक**)–(वि०) जिसमें छः अधिक हों ।—**अभिज्ञ** (**षड-

भिन्न)–(पुं०) वुद्ध । नीचे की ६ बातों का धारण करने वाला —१–दिव्य चक्षु और श्रोत्र । २– दूसरे के चित्त का ज्ञान । ३–पूर्व जन्म का स्मरण । ४–आत्म-ज्ञान । ५–आकाश में गति । ६– दूसरे के शरीर में प्रवेश ।— अशीत (षडशीत)– (वि०) छियासीवां ।—अशीति (षडशीति)– (स्त्री०) छियासी । —अह (षडह)–(पुं०) छः दिन की अवधि या समय ।—आनन (षडानन), —वक्त्र (षड्वक्त्र),— वदन (षड्वदन)– (पुं०) कार्त्तिकेय; 'षडाननापीतपयोधरासु नेता चमूनामिव कृत्तिकासु' र० १४.२२ ।— आम्नाय (षडाम्नाय)–(पुं०) छः प्रकार के तन्त्र ।—कर्ण (षट्कर्ण)– (वि०) छः कानों वाला । छः कानों द्वारा सुना गया (यथा—कोई बात जिसे कहने-सुनने वाले के अतिरिक्त तीसरे ने भी सुना हो ।) (न०) एक प्रकार की वीणा ।—कर्मन् (षट्कर्मन्)–(न०) ब्राह्मण के छः कर्म [यथा—पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ कराना, यज्ञ करना, दान लेना और दान देना]। वे छः कार्य जो ब्राह्मण को जीविका के लिए विहित वतलाये गये हैं (यथा—उञ्छं प्रतिग्रहो भिक्षा वाणिज्यं पशुपालनम् । कृषिकर्म तथा चेति षट् कर्माण्यग्रजन्मनः ।।) । तन्त्र द्वारा किये जाने वाले छः कर्म [यथा—शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेष, उच्चाटन और मारण] । छः कर्म जो योगियों को करने पड़ते हैं (यथा—धौतिर्वस्तिस्तथा नेतिनालिकी त्राटकस्तथा । कपालभातिश्चैतानि षट् कर्माणि समाचरेत् ।।) । (पुं०) ब्राह्मण ।—कोण (षट्कोण)– (न०) छः कोने की शक्ल । इन्द्र का वज्र ।—गव (षड्गव)– (न०) ऐसा जुआ जिसमें छः बैल जोते जायें या छः बैलों का समुदाय ।—गुण (षड्गुण)–(वि०)छः गुना । छः गुणों वाला । छः गुणों का समुदाय । राजनीति के छः अङ्ग [यथा—सन्धि, विग्रह, यान (चढ़ाई), आसन (विश्राम), द्वैधीभाव और संश्रय] । —ग्रन्थि (षड्ग्रन्थि)–(पुं०) पिपरामूल । —ग्रन्थिका (षड्ग्रन्थिका) –(स्त्री०) शटी ।—चक्र (षट्चक्र)– (न०) हठ योग में माने हुए कुण्डलिनी के ऊपर पड़ने वाले छः चक्र (मूलाधार, अधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा) । षड्यंत्र । —(चत्वारिंश)–षट्चत्वारिंश (वि०) छियालिसवाँ । —चत्वारिंशत् (षट्चत्वारिंशत्)– छियालीस ।—चरण (षट्चरण) –(पुं०) भौंरा, भ्रमर । टिड्डी । जूँ ।—ज (षड्ज) –(पुं०) सरगम का प्रथम स्वर । (यह मयूर के शब्द से मिलता है और इसका संकेत 'सा' है); 'षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डिभिः' र० १.३९ । ब्रह्मा का १६वां कल्प । —त्रिंश (षट्त्रिंश)–(वि०) छत्तीसवां । —त्रिंशत् (षट्त्रिंशत्)–(स्त्री०) छत्तीस । —दर्शन (षड्दर्शन)–(न०) हिन्दूशास्त्र के छः दर्शन या छः दार्शनिक सिद्धान्त [यथा—सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त] । —दुर्ग (षड्दुर्ग)– (न०) छः प्रकार के दुर्गों का समुदाय [यथा—धन्वदुर्गं, महीदुर्गं, गिरिदुर्गं तथैव च । मनुष्यदुर्गं, मृद्दुर्गं, वनदुर्गमिति क्रमात् ।।] । —नवति (षण्णवति) –(स्त्री०) छियानवे ।—पञ्चाशत् (षट्पञ्चाशत्) ।–(स्त्री०) छप्पन ।—पद (षट्पद)–(पुं०) भौंरा, भ्रमर । जूँ ।—०ज्य–(पुं०) कामदेव ।— ०प्रिय–(पुं०) नागकेशर । कमल ।—पदी (षट्पदी)–(स्त्री०) एक छंद जिसमें छः पद या चरण

होते हैं। भौंरी, भ्रमरी। किलनी।—प्रश्न (षट्प्रश्न)-(पुं०) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, लोकार्थ और तत्त्वार्थ का ज्ञाता। कामुक। —बिन्दु (षड्बिन्दु)- (पुं०) विष्णु। —भुजा (षड्भुजा)-(स्त्री०) दुर्गा देवी। खरबूजा।—मुख (षण्मुख)-(पुं०) कार्त्तिकेय।— मुखा (षण्मखा) -(स्त्री०) खरबूजा।—रस (षड्रस)-(न०) छः प्रकार के रसों का समुदाय (यथा—मधुरो लवणस्तिक्तः कषायोऽम्लः कटुस्तथा)।— वर्ग (षड्वर्ग) -(पुं०) छः वस्तुओं का समुदाय। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर का समूह; 'कृतारिषड्वर्गजयेन' कि० १.९।—विंशति (षड्विंशति)-(स्त्री०) छब्बीस।— विंश (षड्विंश)-(वि०) छब्बीसवाँ। —विध (षड्विध)-(वि०) छः प्रकार का।—षष्टि (षट्षष्टि)- (स्त्री०) छियासठ।—सप्तति (षट्सप्तति)-(स्त्री०) छिहत्तर।

षष्टि—(स्त्री०) [षड्गुणिता दशतिः नि० साधुः] साठ की संख्या (वि०) साठ।—भाग- (पुं०) शिव जी।—मत्त-(पुं०) वह हाथी जो ६० वर्ष का होने पर भी मदमत्त हो। —योजनी-(स्त्री०) साठ योजन की दूरी या यात्रा।—लता-(स्त्री०) भ्रमरमारी नामक लता।— संवत्सर- (पुं०) ज्योतिष में प्रसिद्ध प्रभव आदि साठ वर्ष का काल।—हायन-(पुं०) ६० वर्ष की उम्र का हाथी। साठी धान।

षष्टिक—(वि०) [षष्ट्या क्रीतः, षष्टि +कन्] साठ (रुपये आदि) में खरीदा हुआ। (पुं०) [षष्ट्या अहोभिः पच्यते, षष्टि+कन्] साठी धान।

षष्टिक्य—(न०) [षष्टिकधान्यस्य भवनं क्षेत्रम्, षष्टिक+यत्] साठी धान बोने योग्य खेत।

षष्ठ—(वि०) [स्त्री०—षष्ठी] [षण्णां पूरणः, षष्+डट्, थुक्] छठा।—अंश (षष्ठांश) -(पुं०) छठा भाग, विशेषकर पैदावार का छठा भाग जो राजा अपनी प्रजा से ले।

षष्ठी—(स्त्री०) [षष्ठ + ङीप्] तिथि छठ। सम्बन्ध कारक। कात्यायनी देवी।— तत्पुरुष-(पुं०) तत्पुरुष समास का एक भेद जिसमें पूर्वपद सम्बन्धकारक का रहता है (जैसे—राज्ञः पुरुषः राजपुरुषः)। —पूजन-(न०), —पूजा- (स्त्री०) बालक उत्पन्न होने से छठे दिन होने वाली षष्ठी देवी की पूजा।

षहसानु—(पुं०) [√सह् +आनु, असुक् पृषो० पत्व] मयूर। यज्ञ।

षाट्—(अव्य०) [√ सह् +णि, पृषो० षत्व, टत्व] सम्बोधनात्मक अव्यय।

षाट्कौशिक—(वि०) [स्त्री०—षाट्कौशिकी] [षट्कोश+ठक्] छः पर्तों में लपेटा हुआ या छः म्यानों वाला।

षाडव—(पुं०) [षष् √अव् +अच्, ततः स्वार्थे अण्] मनोविकार, मनोराग। संगीत राग की एक जाति जिसमें केवल छः स्वर (स, रे, ग, म, और ध) लगते हैं और निषाद वर्जित हैं।

षाड्गुण्य—(न०) [षड्गुण + ष्यञ्] छः उत्तम गुणों का समूह। राजनीति के छः अङ्ग; 'षाड्गुण्यमुपयुञ्जीत शक्त्यपेक्षो रसायनम्' शि० २.९३। किसी वस्तु को छः से गुणा करने से प्राप्त गुणनफल।—प्रयोग- (पुं०) राजनीति के छः अङ्गों का प्रयोग।

षाण्मातुर—(पुं०) [षण्णां मातॄणाम् अपत्यम्, षण्मातृ + अण्, उत्व, रपर] वह जिसकी छः माताएँ हैं, कार्त्तिकेय।

षाण्मासिक—(वि०) [षाण्मासिकी] [षण्मास+ठञ्] छमाही। छः मास में या छः मास का पुराना।

षाण्ठ—(वि०) [स्त्री०—**षाण्ठी**] [षण्ठ +अण् (स्वार्थे)] छठा ।

षिङ्ग–(पुं०) [√सिट्+गन्, पृषो० षत्व] कामुक पुरुष, व्यभिचारी पुरुष; 'षिङ्गैरगद्यत ससंभ्रममेव काचित्' शि० ५.३४ । विट । वेश्या रखने वाला व्यक्ति ।

षु—(पुं०) [√सु+डु, पृषो० षत्व] प्रसव, जनन ।

षोडत्—(पुं०) [षट् दन्ता यस्य, दन्तस्य दतृ, षष उत्वम्, दस्य टुत्वम्] छः दांतों वाला बैल (आदि) ।

षोडश—(वि०) [स्त्री०—**षोडशी**] [षोडशानां पूरणः, षोडशन्+डट्] सोलहवाँ ।

षोडशन्—(वि०) [षट् अधिका दश, षष उत्वम्, दस्य टुत्वम् (समास में न का लोप हो जाता है)] सोलह ।—**अंशु** (षोडशांशु)– (पुं०) शुक्रग्रह ।—**अङ्ग** (षोडशाङ्ग)–(पुं०) १६ प्रकार के गंधद्रव्यों से तैयार किया हुआ धूप ।—**अङ्गुलक** (**षोडशाङ्गुलक**)– (वि०) सोलह अंगुल चौड़ा । —**अङ्घ्रि** (**षोडशाङ्घ्रि**)– (पुं०) केकड़ा ।—**अर्चिस्** (षोडशार्चिस्)– (पुं०) शुक्रग्रह ।—**आवर्त** (षोडशावर्त)–(पुं०) शङ्ख ।—**उपचार** (**षोडशोपचार**)–(पुं०) पूजन के पूर्ण अंग जो सोलह माने गये हैं [आवाहन, आसन, अर्घ्यपाद्य, आचमन, मधुपर्क, स्नान, वस्त्राभरण, यज्ञोपवीत, गन्ध (चन्दन), पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, परिक्रमा और वंदना ।—'आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् । मधुपर्काचमस्नानं वसनाभरणानि च । गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं वन्दनं तथा ।।]।—**कला**–(स्त्री०) चन्द्रमा की सोलह कलाएँ । [चन्द्रमा की सोलह कलाएँ ये हैं —अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टी रतिर्धृतिः । शशिनी चन्द्रिका कान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरेव च । अङ्गदा च तथा पूर्णामृता षोडश वै कलाः] ।—**भुजा**–(स्त्री०) दुर्गा का एक रूप ।—**मातृका**–(स्त्री०)एक प्रकार की देवियाँ जो सोलह हैं । [उनके नाम ये हैं —गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, शान्ति, पुष्टि, धृति, तुष्टि, माता और आत्मदेवता] ।—**शृङ्गार**–(पुं०) साज-सज्जा के १६ अंग, संपूर्ण शृंगार (जैसे—उवटन लगाना, मंजन करना, मिस्सी लगाना, नहाना, अच्छे कपड़े पहनना, बाल सँवारना, काजल लगाना, मांग में सिंदूर डालना, पैर में महावर लगाना, बिंदी लगाना, ठोड़ी पर तिल बनाना, हाथ में मेंहदी लगाना, शरीर में गंधद्रव्य लगाना, गहने पहनना, फूलों की माला पहनना और पान खाना) ।

षोडशधा—(अव्य०) [षोडशन् + धाच्] १६ प्रकार से ।

षोडशिक—(वि०) [स्त्री०—**षोडशिकी**] [षोडशन्+ठक्] १६ भागों का ।

षोडशिन्—(पुं०) [षोडश कला विद्यन्ते अस्य, षोडशन् +इनि] चंद्रमा । सोमरसपूर्ण यज्ञपात्र-विशेष ।

षोढा—(अव्य०) [षष्+धाच्, षष उत्वम्, धस्य टुत्वम्] छः प्रकार से ।—**मुख**–(पुं०) कार्त्तिकेय ।

√ष्ठिव्—भ्वा० पर० अक० थूकना । ष्ठीवति, ष्ठेविष्यति, अष्ठेवीत् ।

√ष्ठीव्—भ्वा० पर० अक० थूकना । ष्ठीवति, ष्ठीविष्यति, अष्ठीवीत् ।

ष्ठीवन, ष्ठेवन—(न०) [√ष्ठीव्+ल्युट्] [√ष्ठिव्+ल्युट्] थूकने की क्रिया । थूक, खखार ।

ष्ठ्यूत—(वि०) [√ष्ठिव् + क्त, ऊठ्] थूका हुआ ।

√ष्वक्क्, √ष्वष्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । ष्वक्कते-ष्वष्कते, ष्वक्किष्यते—ष्वष्किष्यते, अष्वक्किष्ट — अष्वष्किष्ट ।

स

स—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का बत्तीसवाँ व्यञ्जन। इसका उच्चारण-स्थान दन्त है। अतएव यह दन्त्य स कहा जाता है। (अव्य०) यह संज्ञात्मक शब्दों के पहले सम्, सम, तुल्य, सदृश, सह के अर्थ में लगाया जाता है (जैसे—सपुत्र, सभार्या, सतृष्ण)। (पुं०) [√सो+ड] सर्प। पवन। पक्षी। शिव। विष्णु। षड्ज स्वर का सूचक अक्षर। चंद्रमा। जीवात्मा। चिंतन। ज्ञान। दीप्ति। घेरा, हाता। सगण का संक्षिप्त रूप।

संय—(पुं०) [सम् √ यम् + ड] कंकाल, पंजर।

संयत्—(स्त्री०) [सम् √यम्+क्विप्] युद्ध, संग्राम; 'यः संयति प्राप्तपिनाकिलीलः' र० ६.७२।—वर(संयद्वर)-(पुं०)राजा।

संयत—(वि०) [सम् √यम् + क्त] बद्ध, बँधा हुआ, जकड़ा हुआ। पकड़ में रखा हुआ, दबाव में रखा हुआ। काबू में लाया हुआ, वशीभूत। बंद किया हुआ, कैद किया हुआ। व्यवस्थित, नियम-बद्ध। उद्यत, तैयार। इन्द्रियजित्, निग्रही। उचित सीमा के भीतर रोका हुआ।—**अञ्जलि** (**संयताञ्जलि**)-(वि०) हाथ जोड़े हुए।—**आत्मन्** (**संयतात्मन्**)-(वि०) जिसकी चित्त-वृत्ति नियंत्रित हो, आत्म-निग्रही।—**आहार** (**संयताहार**)-(वि०) जो आहार करने में संयम रखे।—**उपस्कर** (**संयतोपस्कर**)-(वि०) वह जिसका घर सुव्यवस्थित हो।—**चेतस्**, —**मनस्**-(वि०) मन को संयम में रखने वाला।—**प्राण**-(वि०) वह जिसकी साँस नियंत्रित हो, प्राणायाम करने वाला।—**वाच्**-(वि०) जिसने अपनी वाणी को वश में कर रखा हो।

संयत्त—(वि०) [सम्√यत् + क्त] तैयार, सन्नद्ध। सावधान, सतर्क।

संयम—(पुं०) [सम्√यम् + अप्] निग्रह, रोक; 'श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति' भग० ४.२६। मन की एकाग्रता। धार्मिक व्रत। तपोनिष्ठा। दयालुता।

संयमन—(न०) [सम् √यम्+ल्युट्] रोक, निग्रह। खिचाव, तनाव। बंधन। बंदी करने की क्रिया। आत्मसंयम। धार्मिक व्रत। चार घरों का चौकोर चौगान। (पुं०) [सम् √यम्+ल्यु] शासक।

संयमनी—(स्त्री०) [संयमन+ङीप्] यम-राज की नगरी का नाम।

संयमित—(वि०) [संयम + इतच्] निग्रह किया हुआ। बाँधा हुआ। बेड़ी डाला हुआ। रोका हुआ।

संयमिन्—(वि०) [सम् √यम् + णिनि] निग्रह, निरोध करने वाला। जितेन्द्रिय। बँधा हुआ। (पुं०) तपस्वी। ऋषि। यति। शासक।

संयात्रा—(स्त्री०) साथ-साथ यात्रा करना। समुद्र-यात्रा।

संयान—(न०) [सम्√या + ल्युट्] सह-गमन, साथ जाना। यात्रा। मुरदे को ले चलना। साँचा। गाड़ी।

संयाम—(पुं०) [सम्√यम्+घञ्] दे० 'संयम'।

संयाव—(पुं०) [सम्√यु + घञ्] दूध, घी और आटे का बना हुआ पकवान विशेष, गोझिया। हलवा।

संयुक्त—(वि०) [सम् √ युज्+क्त] जुड़ा हुआ, लगा हुआ, मिला हुआ। मिश्रित। साथ आया हुआ। सम्पन्न, समन्वित, लिये हुए।

संयुग—(पुं०) [सम्√युज् + क, जस्य गः] संयोग, समागम। युद्ध, भिड़न्त;

'संयुगे सांयुगीनं तमुद्यतं प्रसहेत कः' कु० २.५७।—गोष्पद –(न०) तुच्छ झगड़ा।

संयुज्—(वि०) [सम्√युज् + क्विन्] संयुक्त। गुणी।

संयुत—(वि०) [सम्√यू + क्त] जुड़ा हुआ, संयुक्त। सम्पन्न, समन्वित।

संयोग—(पुं०) [सम् √ युज्+घञ्] मेल, मिलान। वैशेषिक दर्शन के २४ गुणों में से एक। जोड़ लेना, मिला लेना, अन्तर्भुक्त कर लेना। जोड़। दो राजाओं के बीच किसी समान उद्देश्य की सिद्धि के लिये होने वाली सन्धि। व्याकरण में दो या अधिक व्यञ्जनों का मेल। दो ग्रहों या नक्षत्रों का समागम। शिव जी का नामान्तर। —पृथक्त्व–(न०) (न्याय में) ऐसा अलगाव जो नित्य न हो।—विरुद्ध–(न०) वे खाद्य पदार्थ जो मिला कर खाये जाने पर अवगुण करें, अर्थात् रोगों की उत्पत्ति करें।

संयोगिन्—(वि०) [संयोग + इनि] संयोग विशिष्ट, मेल का। संयोग करने वाला, मिलाने वाला। विवाहित। जो अपनी प्रिया के साथ हो।

संयोजन—(न०) [सम्√युज्+ल्युट्] मैथुन। जोड़ने या मिलाने की क्रिया। आयोजन, प्रबन्ध। भव-बन्धन का कारण।

संरक्त—(वि०) [सम् √रञ्ज्+क्त] रंगीन, लाल। अनुरागवान्, आसक्त। क्रोधान्वित, कुपित। मुग्ध। सुन्दर।

संरक्ष—(पुं०) [सम् √ रक्ष्+घञ्] रक्षण, हिफाजत, देख-रेख, निगरानी।

संरक्षण—(न०) [सम्√रक्ष्+ल्युट्] हिफाजत, निगरानी, रक्षा, देख-रेख। अधिकार, कब्जा।

संरब्ध—(वि०) [सम्√रम्भ् + क्त] उत्तेजित, जोश में भरा हुआ। क्षुब्ध, उद्विग्न। क्रोध में भरा हुआ, क्रुद्ध। फूला हुआ, सूजा हुआ। बढ़ा हुआ, वृद्धि को प्राप्त। अभिभूत। आकुलित।

संरम्भ—(पुं०) [सम् √ रभ्+घञ्, मुम्] आरम्भ। उत्पात, उपद्रव। आन्दोलन। उत्तेजना, क्षोभ। उत्सुकता, उत्कण्ठा। उत्साह। क्रोध; 'प्रणिपातप्रतीकारः संरम्भो हि महात्मनाम्' र० ४.६४। अभिमान, घमंड। गर्मी और सूजन से फूल उठना। —परुष– (वि०) क्रोध के कारण रूक्ष या रूखा।—रस– (वि०) अत्यन्त क्रुद्ध। —वेग– (पुं०) क्रोध की प्रचण्डता।

संरम्भिन्—(वि०) [स्त्री०—संरम्भिणी] [संरम्भ+इनि] उत्तेजित, उद्विग्न। क्रोधयुक्त, क्रोधाविष्ट। अभिमानी, अहंकारी।

संराग—(पुं०) [सम्√रञ्ज् + घञ्] रंगत। अनुराग। स्नेह। क्रोध।

संराधन—(न०) [सम्√राध्+ल्युट्] आराधना करके प्रसन्न करने की क्रिया। सम्पादन। गम्भीर-ध्यान-मग्नता। गम्भीर विचार।

संराव—(पुं०) [सम्√रु + घञ्] कोलाहल, शोर, होहल्ला।

संरुग्ण—(वि०) [सम्√रुज् + क्त] खंडित, चूर-चूर।

संरुद्ध—(वि०) [सम्√रुध् + क्त] अवरुद्ध, रोका हुआ। भरा हुआ, परिपूर्ण। घेरा हुआ। ढका हुआ। अस्वीकृत। वर्जित, मना किया हुआ।

संरूढ—(वि०) [सम् √रुह् + क्त] साथ-साथ उगा हुआ। पुरा हुआ, भरा हुआ। अंकुरित, कलियाया हुआ। अच्छी तरह जमा या जड़ पकड़ा हुआ; 'हर्म्याग्रसंरूढतृणाङ्कुरेषु' र० ६.४७। धृष्ट, प्रगल्भ। प्रौढ़।

संरोध—(पुं०) [सम्√रुध् + घञ्] रुकावट, अड़चन। घेरा। बन्धन। प्रक्षेप। क्षति। दमन। नाश।

संरोधन—(न०) [सम् √रुध् + ल्युट्] रोकना । बाधा डालना । दमन करना । कैद करना ।

संलक्षण—(न०) [सम्√लक्ष् + ल्युट्] निशान लगाने की क्रिया । लखना, पहचानना, ताड़ना ।

संलग्न—(वि०) [सम्√लग् + क्त] सटा हुआ, संयुक्त, मिला हुआ । भिड़ा हुआ, लड़ाई में गुथा हुआ । लीन ।

संलय—(पुं०) [सम्√ली +अच्] लेटना । निद्रा । घुलना, घुलाव । लीनता । प्रलय । पक्षियों का नीचे उतरना या बैठना ।

संलयन—(न०) [सम्√ली + ल्युट्] चिपकना, सटना । लीन होना । चिड़ियों का नीचे उतरना । लेटना । सोना ।

संलालित—(वि०) [सम्√लल् + णिच् +क्त] दुलारा हुआ, प्यार किया हुआ ।

संलाप—(पुं०) [सम्√लप् + घञ्] परस्पर वार्तालाप, आपस की बातचीत । विशेष कर गुप्त या गोपनीय वार्तालाप, रहस्य वार्ता । नाटक में एक प्रकार का संवाद जिसमें क्षोभ या आवेग तो नहीं होता, बल्कि धैर्य होता है ।

संलापक—(पुं०) [संलाप+कन्] नाटक में एक प्रकार का संवाद, संलाप । एक प्रकार का उपरूपक ।

संलीढ—(वि०) [सम्√लिह् +क्त] चाटा हुआ । उपभोग किया हुआ ।

संलीन—(वि०) [सम् √ ली+क्त] अच्छी तरह लगा हुआ । सटा हुआ । छिपा हुआ । ढका हुआ । सिकुड़ा हुआ, सङ्कुचित ।—**मानस**–(वि०) उदास मन ।

संलोडन—(न०) [सम्√ लोड् + ल्युट्] खूब हिलाना-डुलाना, झकझोरना । मथना ।

संवत्—(अव्य०) [सम् √ वय्+क्विप्, यलोप, तुक्] साल, वर्ष । वर्ष-विशेष जो किसी संख्या द्वारा सूचित किया जाता है, चली आती हुई वर्ष-गणना का कोई वर्ष, सन् । विक्रम-संवत्सर । वर्ष ।

संवत्सर—(पुं०) [संवसन्ति ऋतवोऽत्र, सम् √वस्+सरन्] वर्ष, साल । विक्रमादित्य के काल से प्रचलित वर्ष-गणना । पाँच-पाँच वर्ष के युगों का प्रथम वर्ष ।—**कर**–(पुं०) शिव ।—**मुखी**– (स्त्री०) ज्येष्ठ-शुक्ला-दशमी । —**रथ**–(पुं०) एक वर्ष का मार्ग या वह मार्ग जो एक वर्ष में पूरा हो ।

संवदन—(न०) [सम्√वद् + ल्युट्] परस्पर वार्तालाप । खबर देना । परीक्षा । मंत्र द्वारा वशवर्ती करना । यंत्र, तावीज ।

संवर—(न०) [सम्√वृ + अप् वा अच्] जल । (पुं०) दुराव, छिपाव । सहनशीलता । आत्म-संयम । बौद्धों का एक प्रकार का व्रत । ढक्कन । बोध । चुनना । सिकुड़ना, सङ्कोच । बाँध । पुल । मृग-विशेष । एक दैत्य का नाम । मत्स्य विशेष ।

संवरण—(न०) [सम्√वृ+ल्युट्] रोकना । चुनना । आच्छादन, ढकना । छिपाव, दुराव । बहाना, मिस ।

संवर्जन—(न०) [सम् √वृज् + ल्युट्] छीनना, आत्मसात् करना । भक्षण कर जाना, खा जाना ।

संवर्त—(पुं०) [सम् √वृत् + घञ् वा सम् √वृत्+णिच् + अच्] फेरा, घुमाव । लीनता । नाश । कल्पान्त, प्रलय । बहुत जल वाला बादल । प्रलयकालीन सप्त मेघों में से एक का नाम । वर्ष विशेष । राशि । समूह ।

संवर्तक—(पुं०) [सम् √ वृत् + णिच् +ण्वुल्] प्रलयकारी बादलों का एक वर्ग; 'इतोऽपि वडवानलः सह समस्तसंवर्तकैः' भर्तृ० २.७६ । प्रलयाग्नि । वड़वानल बलराम का नाम । बलराम का हल । बहेड़ा । एक पर्वत । एक मुनि ।

संवर्तकिन्—(पुं०) [संवर्तक +इनि] वलराम का नाम ।
संवर्तिका—(स्त्री०) [सम्√ वृत् + ण्वुल् —टाप्, इत्व] कमल का बँधा पत्ता । कोई बँधा हुआ पत्ता । दीपक की वत्ती ।
संवर्धक—(वि०) [स्त्री०—**संवर्धिका**] [सम् √वृध् + णिच्+ण्वल्] बढ़ाने वाला । (अतिथि की) आव-भगत करने वाला ।
संवर्धित—(वि०) [सम्√वृध् + णिच् +क्त] बढ़ाया हुआ । पाला-पोसा हुआ ।
संवलित—(वि०) [सम् √ वल् + क्त] मिला हुआ, मिश्रित । छिड़का हुआ । सम्वन्ध-युक्त । टूटा हुआ ।
संवल्गित—(वि०) [सम् √वल्ग् + क्त] आक्रमण किया हुआ । उच्छिन्न किया हुआ । पददलित किया हुआ । (न०) स्वर, आवाज ।
संवसथ—(पुं०) [सम् √वस् + अथच्] आवादी, गाँव या वह स्थान जहां लोग आस-पास रहते हों ।
संवह—(पुं०) [सम् √वह् + अच्] वायु के सात पथों में से एक का नाम ।
संवाटिका—(स्त्री०) सिंघाड़ा ।
संवाद—(पुं०) [सम्√वद् + घञ्] वार्तालाप, बातचीत । बहस, वादविवाद । स्वीकृति । सहमति । संदेश, खवर ।
संवादिन्—(वि०) [सम्√वद् + णिनि] वात करने वाला । सहमत होने वाला ।
संवार—(पुं०) [सम् √वृ+घञ्] आच्छादन । छिपाना । उच्चारण में कंठ का आकुञ्चन या दवाव । उच्चारण के वाह्य प्रयत्नों में से एक, जिसमें कण्ठ का आकुञ्चन होता है, विवार का उलटा । रक्षण, हिफाजत । सुव्यवस्था । ह्रास ।
संवास—(पुं०) [सम् √ वस् + घञ्] साथ-साथ वसना । सहवास, मैथुन । घरेलू व्यवहार । घर, आवास-स्थान । सभा के लिये या आमोद-प्रमोद के लिये खुला हुआ मैदान ।
संवाह—(पुं०) [सम्√वह् + घञ्] ले जाना, ढोना । मिला कर दबाना । पगचप्पी, पैर दबाना । [सम्√वह् + णिच् +अच्] वह नौकर, जो पैर दवाने और वदन में मालिश करने को रखा गया हो ।
संवाहक—(वि०) [सम् √वह् + ण्वुल्] ले जाने वाला । (पुं०) [सम् √ वह् +णिच्+ण्वुल्] पैर दवाने वाला ।
संवाहन—(न०), **संवाहना**—(स्त्री०) [सम् √वह्+णिच् + ल्युट्] [सम्√वह् + णिच्+युच्] बोझ ले जाना या ढोना । पैर दबाना । मालिश करना ।
संविक्त—(न०) [सम् √विच् + क्त] छांट कर अलग किया हुआ ।
संविग्न—(वि०) [सम् √विज्+क्त] क्षुब्ध, उद्विग्न, घवराया हुआ । भीत, डरा हुआ ।
संविज्ञात—(वि०) [सम्— वि√ज्ञा + क्त] सब का जाना हुआ ।
संवित्ति—(स्त्री०) [सम् √विद् +क्तिन्] प्रतिपत्ति, चेतना, संज्ञा । ऐकमत्य । अनुभव; 'श्वस्त्वया सुखसंवित्तिः स्मरणीयाधुनातनी' कि० ११.३४ । वुद्धि ।
संविद्—(स्त्री०) [सम् √विद् + क्विप्] चेतना, ज्ञान, वोध । प्रतीति । इकरार, प्रतिज्ञा । रजामंदी, स्वीकृति । प्रचलन, पद्धति, रीति-रस्म । युद्ध, लड़ाई । युद्ध की ललकार । वह शव्द या वाक्य जिससे रात को संतरी मित्र या शत्रु को पहचान सके । नाम, संज्ञा । सङ्केत, इशारा । तोषण, तुष्टि । सहानुभूति । ध्यान । वार्तालाप । भांग, विजया । —**व्यतिक्रम** –(पुं०) वादे को तोड़ना, प्रतिज्ञा-भङ्ग करना ।
संविदा—(स्त्री०) [संविद्+ टाप्] इकरार, प्रतिज्ञा । कुछ निश्चित शर्तों पर दो या

दो से अधिक पक्षों के बीच होने वाला समझौता (कंट्रैक्ट)।

संविदित—(वि०) [सम् √ विद् + क्त] जाना हुआ, समझा हुआ। पहचाना हुआ। माना हुआ। प्रसिद्ध, प्रख्यात। खोजा हुआ, ढूँढ़ा हुआ। सब की राय से निश्चित किया हुआ। उपदिष्ट। समझाया-बुझाया हुआ। (न०) इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र।

संविधा—(स्त्री०) [सम्—वि √ धा+अङ—टाप्] व्यवस्था, आयोजन, प्रबन्ध; 'उद्भासितम्मङ्गलसंविधाभिः सम्बन्धिनः सद्म समाससाद' र० ७.१६। जीवन-यापन का ढंग। विधान। अभिनय। किसी नाटक की घटनाओं को क्रमबद्ध करना।

संविधान—(न०) [सम्—वि √ धा +ल्युट्] व्यवस्था, प्रबंध। संपादन, रचना। योजना। तरीका। कथा-वस्तु में घटनाओं की व्यवस्था करना।

संविधानक—(न०) [संविधान + कन्] जीवन-यापन का विशेष ढंग। नाटक की कथा-वस्तु। कथा-वस्तु की घटनाओं का विधान। कोई विचित्र कार्य। असाधारण घटना।

संविभागिन्—(पुं०) [सम्—वि √ भज् + णिनि] साझीदार। पट्टीदार, भागीदार।

संविष्ट—(वि०) [सम् √विश् + क्त] सोया हुआ; 'संविष्टः कुशशयने निशां निनाय' र० १.९५। लेटा हुआ। साथ-साथ घुसा हुआ। साथ-साथ बैठा हुआ। पोशाक पहना हुआ।

संवीक्षण—(न०) [सम्—वि √ईक्ष् +ल्युट्] चारों ओर ताकना। खोजना।

संवीत—(वि०) [सम् √व्ये+क्त] पोशाक पहिना हुआ, कपड़े पहिना हुआ। ढका हुआ, आच्छादित। सजा हुआ। घिरा हुआ। अभिभूत। मग्न।

संवृक्त—(वि०) [सम् √ वृज् + क्त] खाया हुआ। नष्ट किया हुआ। छीना हुआ।

संवृत—(वि०) [सम्√वृ + क्त] ढका हुआ। छिपा हुआ। गुप्त। बंद। सुरक्षित। अवकाश-प्राप्त, जो अलग हो गया हो। दवाया हुआ। सङ्कुचित। अपहृत। परिपूर्ण, भरा हुआ। समन्वित, सहित।—**आकार** (संवृताकार)-(वि०) वह जो अपने मन का भेद किसी प्रकार प्रकट न होने दे।—**मन्त्र**- (वि०) वह जो अपने विचार गुप्त रखे। (न०) गुप्त स्थान। उच्चारण का ढंग विशेष।

संवृति—(स्त्री०) [सम् √ वृ + क्तिन्] ढकने या छिपाने की क्रिया। छिपाव, दुराव। गुप्त अभिप्राय, अभिसंधि।

संवृत्त—(वि०) [सम्√वृत् + क्त] जो हुआ हो, घटित। परिपूर्ण, निष्पन्न। एकत्रित। व्यतीत। आच्छादित। अन्वित। (पुं०) वरुण का नाम।

संवृत्ति—(स्त्री०) [सम् √ वृत् +क्तिन्] होना, घटित होना। सिद्धि, निष्पत्ति। आच्छादन।

संवृद्ध—(वि०) [सम्√वृध् + क्त] पूरा बढ़ा हुआ। जो बढ़ कर लंबा, ऊँचा हो गया हो। फला-फला हुआ। उन्नत।

संवेग—(पुं०) [सम्√विज् + घञ्] उत्तेजना, क्षोभ। पूर्ण वेग या तेजी, प्रचण्डता। उतावली, आवेग। चरपराहट। कड़ुआपन।

संवेद—(पुं०) [सम् √विद् + घञ्] अनुभव। बोध।

संवेदन—(न०), **संवेदना**- (स्त्री०) [सम् √विद्+ल्युट्] [सम् √ विद् + युच्] प्रतीति, बोध। अनुभव करना; 'दुःखसंवेदनायैव रामे चैतन्यमर्पितम्' उत्त० १.४७। जताना। प्रकट करना।

संवेश—(पुं०) [सम् √ विश् + घञ्] निकट आना। प्रवेश। निद्रा। विश्राम। स्वप्न। बैठकी। मैथुन, सम्भोग। एक रति-बन्ध। अग्निदेवता जो रति के अधिष्ठाता माने गये हैं।

संवेशन—(न०) [सम्√विश् + ल्युट्] बैठना। लेटना। सोना। आसन। प्रवेश करना। रतिक्रिया, रमण।

संव्यान—(न०) [सम् √व्ये + ल्युट्] उत्तरीय वस्त्र, चादर, दुपट्टा। वस्त्र। आच्छादन।

संव्यूढ—(वि०) मिला हुआ।

संशप्तक—(पुं०) [सम्यक् शप्तम् अङ्गीकारो यस्य, ब० स०, कप्] वह योद्धा जिसने शत्रु को मारे बिना रणक्षेत्र से न हटने की शपथ खायी हो। चुना हुआ योद्धा। सहयोगी योद्धा। षड्यंत्रकारी जिसने किसी की हत्या करने का बीड़ा उठाया हो।

संशय—(पुं०) [सम्√शी + अच्] सोने या आराम करने के लिये लेटना। शक, सन्देह, दुबिधा। अनिश्चयात्मक ज्ञान। खतरा, जोखों, संकट। सम्भावना।—आत्मन् (संशयात्मन्)- (वि०) सन्देह-पूर्ण, सन्दिग्ध।—आपन्न (संशयापन्न),—उपेत (संशयोपेत),–स्थ–(वि०) सन्देह-युक्त, सन्दिग्ध, अनिश्चयात्मक।—गत–(वि०) खतरे में पड़ा हुआ।—च्छेद–(पुं०) संशय का निरसन या निवारण।

संशयान, संशयालु—(वि०) [सम्√शी +शानच्] [संशय + आलुच्] सन्देह-शील।

संशरण—(न०) [शम् √ शृ + ल्युट्] युद्ध का उपक्रम। आक्रमण। भंग करना। चूर करना।

संशित—(वि०) [सम् √ शो + क्त] शान पर चढ़ाया हुआ, तेज किया हुआ। पूर्णरीत्या पूरा किया हुआ। निश्चय किया हुआ, निर्णय किया हुआ।—व्रत–(पुं०) वह जिसने अपना व्रत पूरा कर डाला हो।

संशुद्ध—(वि०) [सम्√शुध् + क्त] विशुद्ध, यथेष्ट शुद्ध। पालिश किया हुआ, साफ किया हुआ। प्रायश्चित्त से निष्पाप किया हुआ।

संशुद्धि—(स्त्री०) [सम् √शुध् + क्तिन्] पूर्ण रूप से शुद्धि। सफाई, शुद्धि। सही करने की क्रिया, भूल को सुधारने की क्रिया। ऋण शोध। निकासी।

संशोधन—(न०) [सम् √शुध् + ल्युट्] शुद्ध करना। शुद्ध करने का साधन। अदा-यगी। सुधारना। संस्कार करना।

संश्चुत्—(न०) [सम्√श्चु +डति] हाथ की सफाई, जादूगरी, इन्द्रजाल। (पुं०) जादूगर।

संश्यान—(वि०) [सम् √ श्यै + क्त] सङ्कुचित, सिकुड़ा हुआ। ठिठुरा हुआ। जमा हुआ। लपटा हुआ। सहसा विनष्ट हुआ।

संश्रय—(पुं०) [सम्√श्रि + अच्] संयोग, मेल। सम्पर्क, सम्बन्ध। आश्रय, शरण, पनाह; 'अनपायिनि संश्रयद्रुमे गजभग्ने पतनाय वल्लरी' कु० ४.३१। विश्राम-स्थान। निवासस्थान, डेरा। परस्पर सहायता के लिये की जाने वाली संधि। आसक्ति। अवयव। उद्देश्य।

संश्रव—(पुं०) [सम्√श्रु+अप्] सुनना। प्रतिज्ञा, इकरार।

संश्रवण—(न०) [सम् √श्रु + ल्युट्] श्रवण, सुनना। कान। प्रतिज्ञा करना।

संश्रित—(वि०) [सम्√श्रि + क्त] आश्रय ग्रहण या रक्षा कराने के लिये गया हुआ। आश्रय दिया हुआ। संयुक्त। चिपका हुआ।

संश्रुत—(वि०) [सम्√श्रु + क्त] अंगी-कृत। प्रतिज्ञात। भली-भांति सुना हुआ।

संश्लिष्ट—(वि०) [सम्√श्लिष् + क्त] खूब मिला हुआ । आलिङ्गित । सम्बन्ध-युक्त । पड़ोस का, समीप का । अन्वित । अस्पष्ट ।

संश्लेष—(पुं०) [सम् √श्लिष् + घञ्] आलिङ्गन । मिलन । संबन्ध । संयोग । संधि ।

संश्लेषण—(न०), **संश्लेषणा**—(स्त्री०) [सम्√श्लिष् + णिच्+ल्युट्] [सम् √श्लिष् + णिच्+युच्] मिलाना । लगाना । संबद्ध करना । दो को एक साथ मिलाने का साधन ।

संसक्त—(वि०) [सम् √सञ्ज् + क्त] लगा हुआ, सटा हुआ । जड़ा हुआ । समीप-वर्ती । संमिश्रित । लवलीन । सम्पन्न । बँधा हुआ । —**मनस्**–(वि०) जिसका मन किसी विषय पर जमा हुआ हो ।—**युग**– (वि०) जूए में लगा हुआ ।

संसक्ति—(स्त्री०) [सम् √सञ्ज् + क्तिन्] घनिष्ठ सम्बन्ध; 'संस तौ किमसुलभम्म-होदयानाम्' कि० ७.२७ । सामीप्य । अत्यंन्त परिचय । बन्धन । भक्ति ।

संसद्—(स्त्री०) [सम्√सद् + क्विप्] सभा; 'संसत्सु जाते पुरुषाधिकारे न पूरणी तं समुपैति संख्या' कि० ३.५१ । न्यायालय ।

संसरण—(न०) [सम्√सृ+ल्युट्] गमन । संसार । सांसारिक जीवन । जन्म और पुनर्जन्म । सेना का अबाधित प्रस्थान । राज-मार्ग, आम सड़क । युद्धारम्भ । नगरद्वार के समीप की धर्मशाला ।

संसर्ग—(पुं०) [सम्√सृज् + घञ्] संगम, मेल-मिलाप । वह विन्दु जहाँ एक रेखा दूसरी को काटती हो । वात, पित्त आदि में से दो का एक साथ प्रकोप । सामीप्य । अवधि । संस्पर्श । मैथुन, सम्भोग । घनिष्ठ सम्बन्ध ।—**अभाव** (**संसर्गाभाव**); (पुं०) संसर्ग का अभाव, सम्बन्ध का न होना । न्याय में अभाव का एक भेद, किसी वस्तु के सम्बन्ध में दूसरी वस्तु का अभाव ।—**दोष**–(पुं०) वह बुराई जो बुरी संगत के कारण उत्पन्न हो, संगत का दोष ।

संसर्गिन्—(वि०) [संसर्ग+इनि वा सम् √सृज्+घिनुण्] संसर्ग या लगाव रखने वाला । (पुं०) साथी, संगी ।

संसर्जन—(न०) [सम् √सृज् + ल्युट्] संयोग, मिलान । त्याग । वैराग्य । वर्जन, राहित्य । राजी या अपनी ओर करना ।

संसर्प—(पुं०) [सम्√सृप्+घञ्] रेंगना, सरकना । वह अधिक मास जो क्षय मास वाले वर्ष में होता है ।

संसर्पण—(न०) [सम्√सृप्+ल्युट्] रेंगना, सरकना । सहसा आक्रमण, अचानक हमला ।

संसर्पिन्—(वि०) [सम्√सृप् + णिनि] रेंगने वाला, सरकने वाला ।

संसाद—(पुं०) [सम्√सद् + घञ्] जमा-वड़ा, गोष्ठी, सभा, समाज ।

संसार—(पुं०) [सम्√ सृ+घञ्] दुनिया, जगत् । मार्ग, रास्ता । सांसारिक जीवन । पुनर्जन्म, वार-वार जन्म लेने की परंपरा, भवचक्र । माया-जाल ।—**गमन**–(न०) जन्म-मरण, आवागमन ।—**गुरु**– (पुं०) कामदेव । —**मार्ग**–(पुं०) सांसारिक जीवन का मार्ग । स्त्री की जननेन्द्रिय, भग । —**मोक्ष**– (पुं०), —**मोक्षण**–(न०) मुक्ति, मोक्ष, आवागमन से छुटकारा ।

संसारिन्—(वि०) [स्त्री०—**संसारिणी**] [सम्√सृ+णिनि] आवागमन करने वाला । लौकिक । दुनियादार । (पुं०) जीवधारी । जीवात्मा ।

संसिद्ध—(वि०) [सम्√सिध् + क्त] पूर्ण-तया सम्पन्न । जिसका योग सिद्ध हो गया हो, मुक्त ।

संसिद्धि—(स्त्री०) [सम् √सिध् + क्तिन्] सम्यक् पूर्ति, किसी कार्य का अच्छी तरह

पूरा होना। मोक्ष, मुक्ति। प्रकृति, स्वभाव। मदमस्त स्त्री, मदोग्रा।

संसूचन—(न०) [सम् √ सूच् + णिच् +ल्युट्] जाहिर करना, जताना, प्रकट करना। सङ्केत करना, इशारा देना। भर्त्सना करना। भेद खोलना।

संसृति—(स्त्री०) [सम् √सृ+क्तिन्] धारा, प्रवाह। नैसर्गिक जीवन। आवागमन, भवचक्र।

संसृष्ट—(वि०) [सम्√सृज्+क्त] मिश्रित, मिला हुआ। साझीदार की तरह शामिल। रचित। संयोजित। पुनर्मिलित। शुद्ध किया हुआ।

संसृष्टता—(स्त्री०), **संसृष्टत्व**-(न०) [संसृष्ट+तल्—टाप्] [संसृष्ट + त्व] संसृष्ट होने का भाव। जायदाद का बँटवारा हो जाने के पीछे फिर एक में होना या रहना।

संसृष्टि—(स्त्री०) [सम् √सृज् + क्तिन्] एक में मेल या मिलावट, मिश्रण। परस्पर सम्बन्ध, लगाव। हेल-मेल, घनिष्ठता। एक ही परिवार में रहने की क्रिया, शिरकत खान्दान। संग्रह। समुदाय। दो या अधिक काव्यालंकारों का एक ऐसा मेल जिसमें सब परस्पर निरपेक्ष हों, अर्थात् एक दूसरे के आश्रित, अन्तर्भूत आदि न हों।

संसेक—(पुं०) [सम्यक् सेकः, प्रा० स०] अच्छी तरह पानी आदि का छिड़काव।

संस्कर्तृ—(पुं०) [सम् √कृ + तृच्, सुट्] वह जो राँधता है, तैयार करता है, रसोइया। संस्कार करने वाला, संस्कार-कारक।

संस्कार—(पुं०) [सम् √कृ + घञ्, सुट्] ठीक करना, सुधारना। शुद्धि। सजावट। परिष्कार। शरीर की सफाई, शौच। मनोवृत्ति या स्वभाव का शोधन। मानसिक शिक्षा। शिक्षा, उपदेश। पूर्वजन्म की वासना। पवित्र करना। वे कृत्य जो जन्म से लेकर मरणकाल तक द्विजातियों के संबन्ध में आवश्यक हैं। यथा—गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्न-प्राशन, चूडाकर्म, जनेऊ, केशान्त, समावर्तन, विवाह।

संस्कृत—(वि०) [सम्√कृ +क्त, सुट्] साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ। परिमार्जित, परिष्कृत। पकाया हुआ। सुधारा हुआ, ठीक किया हुआ। अच्छे रूप में लाया हुआ, सजाया हुआ। विवाहित। (न०) संस्कृत भाषा। (पुं०) वह शब्द, जो संस्कृत भाषा के व्याकरणानुसार बना हो। वह पुरुष जिसके उपनयनादि संस्कार हुए हों। विद्वज्जन।

संस्क्रिया—(स्त्री०) [सम् √ कृ + श, इयङ—टाप्] प्रायश्चित्त कर्म। संस्कार। अन्त्येष्टि क्रिया।

संस्तम्भ—(पुं०) [सम् √स्तम्भ् + घञ्] सहारा। दृढ़ता। धीरता। रोक। मान। लकवा। स्तम्भन।

संस्तर—(पुं०) [सम् √ स्तॄ + अप्] बिखेरना, फैलाना। आच्छादन। खाट, चारपाई। शय्या, बिस्तर; 'नवपल्लवसंस्तरे यथा रचयिष्यामि तनुं विभावसौ' कु० ४.३४। तह, पहल। यज्ञ।

संस्तव—(पुं०) [सम्√स्तु + घञ्] प्रशंसा, स्तुति। परिचय, जान-पहचान; 'गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः' कि० ४.२५।

संस्तार—(पुं०) [सम् √स्तॄ + घञ्] फैलाना। पलँग। विस्तर। तह। यज्ञ।—पङ्क्ति- (स्त्री०) एक वैदिक छंद।

संस्ताव—(पुं०) [सम्√स्तु + घञ्] प्रशंसा, स्तुति। एक स्वर से मिल कर गाना, सामवेत गान। यज्ञ में स्तुति करने वाले ब्राह्मणों की अवस्थानभूमि।

संस्तुत—(वि०) [सम्√स्तु +क्त] जिसकी खूब स्तुति या प्रशंसा की गयी हो। घनिष्ठ।

परिचित । सदृश । सामंजस्ययुक्त । परिगणित । अभीष्ट ।

संस्याय--(पुं०) [सम्√स्त्यै + घञ्] ढेर । समुदाय । सामीप्य । विस्तार, फैलाव । घर, आवास-स्थल । परिचय । घनिष्ठ व्यक्तियों की बात-चीत ।

संस्थ--(वि०) [सम्√स्था + क] ठहराऊ । पालतू । अचल, स्थिर । समाप्त । मरा हुआ । (पुं०) अधिवासी । पड़ोसी । स्वदेशवासी । भेदिया, जासूस ।

संस्था--(स्त्री०) [सम्√स्था+अङ--टाप्] सभा, मजलिस । किसी धार्मिक, सामाजिक या लोकोपकारी विशेष कार्य या उद्देश्य के लिये संगठित समाज या मण्डल (इन्स्टिट्यूशन) । समूह । स्थिति, दशा, हालत । रूप, आकार । पेशा, धंधा । ठीक-ठीक आचरण । समाप्ति, पूर्णता । रोक-थाम । सहारा । हानि, नाश । संसार का नाश, प्रलय । समानता, सादृश्य । राजाज्ञा, राज-शासन । सोमयज्ञ का विधान विशेष ।

संस्थान--(न०) [सम्√स्था + ल्युट्] ठहरना, रहना, स्थिति । सत्ता, अस्तित्व । समूह । ढेर । रूप, आकृति । निर्माण, रचना । सामीप्य । परिस्थिति, हालत । ठहरने का स्थान । चौराहा । चिह्न, निशान । मृत्यु । ढाँचा । साहित्य, विज्ञान, कला आदि की उन्नति के लिये स्थापित शाला (इन्स्टिट्यूट) ।

संस्थापन--(न०) [सम् √स्था + णिच्, पुक्+ल्युट्] अच्छी तरह जमा कर बैठाना, लगाना या खड़ा करना । मंडली, संस्था आदि बनाना । कोई नई बात चलाना । एकत्र करना । निश्चित करना । नियंत्रित करना । नियम, विधान । निश्चय, निर्णय । स्थित करना । रोकना । थामना ।

संस्थापना--(स्त्री०) [सम् √स्था +णिच्, पुक्+युच्--टाप्] रोकना, नियंत्रित करना । शान्त करने का साधन ।

संस्थित--(वि०) [सम्√स्था + क्त] खड़ा । ठहरा हुआ, टिका हुआ । बैठा हुआ, जमा हुआ, दृढ़ता से अड़ा हुआ । पड़ोस का, पास का । मिलता-जुलता हुआ, समान । एकत्रित किया हुआ, ढेर लगाया हुआ । स्थिर, अचल । मृत, मरा हुआ ।

संस्थिति--(स्त्री०) [सम् √स्था + क्तिन्] साथ-साथ होना, साथ ठहरना । सामीप्य, नैकट्य । आवास-स्थान, रहने का स्थान । विश्राम-स्थान । ढेर । सातत्य । परिस्थिति, हालत । रोक-थाम । मृत्यु ।

संस्पर्श--(पुं०) [सम्√स्पृश् + घञ्] छूना या छू जाना । संसर्ग । संयोग । इन्द्रियों का विषय-ग्रहण ।

संस्पर्शा--(स्त्री०) [सम् √ स्पृश् + अच् --ङीष्] एक प्रकार का सुगन्ध युक्त पौधा, जनी ।

संस्फाल--(पुं०) [सम्यक् स्फालः स्फुरणं यस्य, प्रा० ब] भेड़ा, मेष । बादल, मेघ ।

संस्फेट, संस्फोट--(पुं०) [सम् √ स्फिट् +घञ्] [सम्√स्फुट् + घञ्] लड़ाई, युद्ध ।

संस्मरण--(न०) [सम्यक् स्मरणम्, प्रा० स०] पूर्ण स्मरण, खूब याद । संस्कार से उत्पन्न ज्ञान । स्मृति के आधार पर किसी विषय या व्यक्ति के संबंध में लिखित लेख या ग्रन्थ ।

संस्मृति--(स्त्री०) [सम्यक् स्मृतिः, प्रा० स०] पूर्ण या सम्यक् स्मरण ; 'रागिणापि विहिता तव भक्त्या संस्मृतिर्भव भवत्यभवाय' कि० १८.२७ ।

संस्रव, संस्राव--(पुं०) [सम्√स्रु + अप्] [सम्√स्रु +घञ्] बहाव । प्रवाह, धारा । देवता या पितर के उद्देश्य से दिये हुए जल आदि का अवशिष्ट भाग । एक प्रकार का नैवेद्य या भेंट ।

संहत—(वि०) [सम्√हन्+क्त] भिड़ा हुआ, आपस में टकराया हुआ। घायल। बंद, मुँदा हुआ। भली-भाँति बुना हुआ। दृढ़तापूर्वक मिला हुआ। दृढ़। ठोस। युक्त, संयुक्त। एकमत; 'जालमादाय गच्छन्ति संहताः पक्षिणोऽप्यमी' पं० २.९। एकत्रित।—**जानु,-ज्ञु**-(वि०) जिसके घुटने आपस में टकराते हों, लग्नजानुक।—**भ्रू**-(वि०) जिसकी भौंहें सिकुड़ी हों।—**स्तनी**-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके दोनों कुच आपस में सटे हों।

संहतता—(स्त्री०), **संहतत्व**-(न०) [संहत+तल् – टाप्] [संहत+त्व] संयोग। संहति। संक्षेप। आनुकूल्य। मेल। ऐक्य, एका।

संहति—(स्त्री०) [सम् √हन् + क्तिन्] मिलाप, मेल। जुटाव, इकट्ठा होने का भाव। निविड संयोग। ठोसपन, घनत्व। सन्धि, जोड़। परमाणुओं का परस्पर मेल। राशि, ढेर। समूह, झुंड। ताकत, शक्ति। शरीर, बदन।

संहनन—(न०) [सम्√हन् +ल्युट्] संबद्ध करना, जोड़ना। ठोस करना। वध करना। दृढ़ता। शक्ति। मेल। सामंजस्य। शरीर; 'अमृताध्मातजीमूतस्निग्धसंहननस्य ते' उत्त० ६.२१। कवच। मालिश।

संहरण—(न०) [सम् √हृ + ल्युट्] बटोरना, एकत्र करना, संग्रह करना। एक साथ बांधना। (मंत्र से बाण आदि) लौटा लेना। ग्रहण करना। पकड़ना। सङ्कोचन। निग्रह। नाश। प्रलय।

संहर्तृ—(पुं०) [सम्√हृ+तृच्] संग्रह करने वाला, संग्रही। नाश करने वाला, नाशक।

संहर्ष—(पुं०) [सम्यक् हर्षः, प्रा० स० वा सम्√हृष् + घञ्] रोमाञ्च, पुलक, उमङ्ग से रोओं का खड़ा होना। हर्ष, आनन्द। स्पर्द्धा, प्रतिद्वन्द्विता। पवन। रगड़, मसलन।

संहात—(पुं०) [सम्√हन् + घञ् वा० कुत्वाभाव] समूह। २१ नरकों में से एक। शिव का एक गण।

संहार—(पुं०) [सम्√हृ +घञ्] समेटना। इकट्ठा करना, बटोरना; 'अनुभवतु वेणीसंहारमहोत्सवम्' वे० ६। सङ्कोच, सिकुड़न। खुलासा, सार, संक्षेप कथन। छोड़े हुए बाण को वापिस लेना। रोक लेना। अलग। अन्त, समाप्ति। जमावड़ा, समुदाय। उच्चारण का एक दोष। निवारण, परिहार। निपुणता। अभ्यास। नरक विशेष।—**भैरव**- (पुं०) भैरव के रूपों में से एक, कालभैरव।—**मुद्रा**-(स्त्री०) तांत्रिक पूजन में अङ्गों की एक प्रकार की स्थिति। इसे विसर्जन मुद्रा भी कहते हैं।

संहित—(वि०) [सम्√धा+क्त, हि आदेश] एक साथ किया हुआ, एकत्र किया हुआ, बटोरा हुआ। सम्मिलित, मिलाया हुआ। जुड़ा हुआ, लगा हुआ, संबद्ध। सहित, अन्वित। मेल में आया हुआ, हेल-मेल वाला।

संहिता—(स्त्री०) [संहित+टाप् वा सम्यक् हितं प्रतिपाद्यं यस्याः ब० स०] संयोग, मेल। संग्रह। वह ग्रन्थ जिसमें पद-पाठ आदि का क्रम नियमानुसार चला आता हो। धर्मशास्त्र। स्मृति। वेदों का मन्त्रभाग। जगत् को संघटित रखने वाली शक्ति।

संहूति—(स्त्री०) [सम् √ह्वे + क्तिन्] होहल्ला, कोलाहल, शोर।

संहृत—(वि०) [सम्√हृ+क्त] एकत्र किया हुआ। संक्षिप्त। हरण किया हुआ। निवारित। पकड़ा हुआ। नष्ट किया हुआ।

संहृति—(स्त्री०) [सम्√हृ + क्तिन्] सिकुड़न। नाश। ग्रहण। निवारण। संग्रह।

संहृष्ट—(वि०) [सम्√हृष्+क्त] रोमाञ्च युक्त, पुलकित। प्रसन्न, आह्लादित।

अत्यन्त उत्साही । उमंग से खड़ा (रोम) ।

संह्लाद—(पुं०) [सम्√ह्लद् + घञ्] ऊँचा शोर, कोलाहल ।

संह्लीण—(वि०) [सम्√ह्ली+क्त] लज्जित, शर्मिन्दा । नम्र ।

सकट—(पुं०) [कटेन अशुचिना शवादिना सह वर्तमानः] शाखोट वृक्ष । (वि०) बुरा, कुत्सित । पापी ।

संकण्ट—(वि०) [कण्टेन सह, ब० स० सहस्य स आदेशः] कँटीला, कांटेदार । कष्ट-दायक । भयानक ।

सकण्टक—(वि०) [कण्टेन सह, ब० स०, कप्] कांटेदार । (पुं०) करंज वृक्ष । सिवार ।

सकम्प, सकम्पन—(वि०) [कम्पेन सह, ब० स०] [कम्पनेन सह, ब० स०] कँपकंपा, थरथराने वाला ।

सकरुण—(वि०) [करुणया सह, ब० स०] दयालु ।

सकर्ण—(वि०) [स्त्री०—**सकर्णा, सकर्णी**] [कर्णेन श्रवणेन तद्व्यापारेण वा सह, ब० स०] कानों वाला । सुनने वाला ।

सकर्मक—(वि०) [कर्मणा सह, ब० स०, कप्] जो कर्म करता हो या जिसने कोई कर्म किया हो । व्याकरण में वह क्रिया जिसका कार्य उसके कर्म पर समाप्त हो ।

सकल—(वि०) [कलया वा कलेन सह, ब० स०] अवयवों या भागों सहित । सब, सर्व, समस्त, कुल । धीमे और कोमल स्वरों वाला । —**वर्ण**–(वि०) वह जिसमें क और ल अक्षर हों ।

सकल्प—(पुं०) [कल्पेन सह, ब० स०] शिव जी का नाम ।

सकाकोल—(पुं०) [काकोलेन सह, ब० स०] २१ नरकों में से एक का नाम ।

सकाम—(वि०) [कामेन सह, ब० स०] वह जिसे कोई कामना या इच्छा हो । वह जिसकी कामना पूर्ण हुई हो, लब्धकाम; 'काम इदानीं सकामो भवतु' श० ४ । कामवासना-युक्त, मैथुन की इच्छा रखने वाला । (अव्य०) सहर्ष । सन्तोष-सहित । दरहकीकत ।

सकाल—(वि०) [कालेन सह, ब० स०] समयोचित, सामयिक । (अव्य०) समय से । बड़े तड़के ।

सकाश—(वि०) [काशेन सह, ब० स०] जो दिखलाई पड़े, निकटवर्ती । (पुं०) पड़ोस । सामीप्य । उपस्थिति ।

सकुक्षि—(वि०) [सह समानः कुक्षिः यस्य, ब० स०] सहोदर, एक पेट से उत्पन्न ।

सकुल—(वि०) [कुलेन सह, ब० स०] उच्च-कुल का । वह जो परिवार वाला हो । परिवार सहित । [समानं कुलम् अस्य, ब० स०] एक ही कुल या परिवार का । (पुं०) सौरी मछली ।

सकुल्य—(वि०) [समाने कुले भवः, सकुल +यत्] सगोत्र, एक ही कुल का । (पुं०) अपने से सात पीढ़ी ऊपर तक के ज्ञाति का नाम सपिण्ड ज्ञाति और उसके ऊपर अर्थात् ८वीं पीढ़ी से १०वीं पीढ़ी तक के ज्ञाति का नाम सकुल्य है । दूर का सबन्धी ।

सकृत्—(अव्य०) [एक + सुच्, सकृत् आदेश, सुचो लोपः] एक बार । एक अव-सर पर । एकदम, फौरन्, तुरन्त । साथ-साथ । (पुं०, स्त्री०) मल, विष्ठा ।—**गर्भ** (**सकृद्गर्भ**)–(पुं०) अश्वतर, खच्चर । —**गर्भा** (**सकृद्गर्भा**)–(स्त्री०) एक ही बार गर्भवती होने वाली स्त्री ।—**प्रज**–(पुं०) सिंह, कौआ ।—**प्रसूता,** —**प्रसू-तिका**– (स्त्री०) वह स्त्री जिसके एक ही सन्तान हुई हो । वह गाय जो केवल एक बार ब्याई हो ।—**फला**–(स्त्री०) केले का वृक्ष ।

सकैतव—(वि०) [कैतवेन सह, ब० स०] धूर्त, दगाबाज । (पुं०) ठग आदमी, धूर्त आदमी ।

सकोप—(वि०) [कोपेन सह, ब० स०] क्रुद्ध, क्रोध में भरा ।

सक्त—(वि०) [√ सञ्ज्+क्त] मिला हुआ, सटा हुआ, संलग्न । जड़ा हुआ, गड़ा हुआ । सम्बन्ध-युक्त ।—**वैर**-(वि०) जो सदैव वैर रखता हो ।

सक्ति—(स्त्री०) [√सञ्ज् + क्तिन्] संग । आसक्ति । संयोग; 'सक्ति जवादपनयत्यनिले लतानाम्' कि० ५.४६ । अभिनिवेश ।

सक्तु—(पुं०) [√ सञ्ज् + तुन्] भुने हुए अन्न का पिसान, सत्तू । इस नाम का विष । —**फला**, —**फली**-(स्त्री०) शमी वृक्ष ।

सक्थि—(पुं०) [√ सञ्ज् +क्थिन्] जांघ, जंघा । हड्डी । गाड़ी या छकड़े का लट्ठा ।

सक्रिय—(वि०) [क्रियया सह, ब० स०] क्रियायुक्त । फुर्तीला । जंगम ।

सक्षण—(वि०) [क्षणेन सह, ब० स०] वह जिसको अवकाश हो ।

सखि—(पुं०) [सखा, सखायौ, सखायः] [सह समानं ख्यायते, √ ख्या + डिन्] मित्र । साथी । नायक का सहचर । (अत्यागसहनो बन्धुः सदैवानुमतः सुहृत् । एकक्रियं भवेन्मित्रं समप्राणः सखा मतः ।।)

सखी—(स्त्री०) [सखि + ङीप्] सहेली ।

सख्य—(न०) [सख्युर्भावः, सखि + यत्] सखापन । मित्रता, दोस्ती । समानता ।

सगण—(वि०) [गणेन सह, ब० स०] दल सहित, समुदाय सहित । (पुं०) शिव जी का नाम ।

सगर—(वि०) [गरेण सह, ब० स०] विषयुक्त, जहरीला, विषैला । (पुं०) एक चन्द्रवंशी राजा का नाम ।

सगर्भ, सगर्भ्य—(पुं०) [सह समानो गर्भोऽस्य, ब० स०] [समाने गर्भे भवः, यत् प्रत्ययः, सहस्य स आदेशः] सहोदर भाई ।

सगुण—(वि०) [गुणेन सह, ब० स०] गुणसहित, गुणों वाला । सांसारिक । ज्यायुक्त । (पुं०) सत्त्व, रज और तम से युक्त साकार ब्रह्म ।

सगोत्र—(वि०) [सह समानं गोत्रम् अस्य, ब० स०] एक ही गोत्र का । (पुं०) एक कुल के लोग । आपसदारी या रिश्तेदारी के लोग । उस वंश के जिसके साथ श्राद्ध और तर्पण का सम्बन्ध हो । दूर का नातेदार । कुल, खानदान ।

सग्धि—(स्त्री०) [√अद्+क्तिन् नि० ग्धिः सहस्य सः] साथ-साथ खाना ।

सङ्कट—(वि०) [सम्+कटच् वा सम्√कट् +अच्] सिकुड़ा हुआ, सङ्कीर्ण । अगम्य । परिपूर्ण, सम्पन्न । घिरा हुआ । (न०) सङ्कीर्ण रास्ता । दर्रा, पर्वतों के बीच का रास्ता । आफत, विपत्ति । जोखों, खतरा ।

सङ्कथा—(स्त्री०) [सम् √कथ् + अ —टाप्] वर्णन । वार्तालाप, बात-चीत ।

सङ्कर—(पुं०) [सम् √कॄ+अप्] मिलावट; 'चित्रेषु वर्णसङ्करः' काद० । संयोग । दो जातियों का मिश्रण । अन्तर्जातीय संबंध से उत्पन्न संतान । एक ही वाक्य में दो या अधिक अलंकारों का मिश्रण । गोबर । कूड़ा । आग के जलने का शब्द, अग्नि-चटत्कार । न्याय में परस्पर अत्यन्ताभाव और समानाधिकरण का ऐकाधिकरण्य ।

सङ्करी—(पुं०) [सम्√कृ + घ—ङीप्] नवदूषित कन्या ।

सङ्कर्षण—(न०) [सम्√कृष् + ल्युट्] खींचने की क्रिया । आकर्षण । हल से जोतने की क्रिया, जुताई । (पुं०) [संकृष्यते गर्भात् गर्भान्तरं नीयतेऽसौ, सम्√कृष् + युच्] श्रीकृष्ण के भाई बलराम का नाम ।

सङ्कल—(पुं०) [सम्√कल्+अच् (भावे)] संग्रह । जोड़, योग ।

सङ्कलन—(न०), **सङ्कलना**— (स्त्री०) [सम् √कल्+ल्युट्] [सम् √कल् + णिच् +युच्] बहुत सी वस्तुओं को एक स्थान पर एकत्र करने की क्रिया । संभोग । टक्कर । मरोड़, ऐंठना । जोड़ ।

सङ्कलित—(वि०) [सम् √कल् + क्त] ढेर लगाया हुआ, एकत्र किया हुआ । मिश्रित । पकड़ा हुआ । योजित, जोड़ा हुआ, जोड़ लगाया हुआ ।

सङ्कल्प—(पुं०) [सम्√कृप् + घञ्, गुणः, रस्य लः] कार्य करने की इच्छा जो मन में उत्पन्न हो । विचार । कल्पना । उद्देश्य । मन । कोई देवकार्य आरम्भ करने के पूर्व एक निश्चित मन्त्र का उच्चारण करते हुए अपना दृढ़ निश्चय या विचार प्रकट करना । —**ज**, —**जन्मन्**, —**योनि**–(पुं०) कामदेव की उपाधि; 'सङ्कल्पयोनेरभिमानभूतमात्मानमाधाय मधुर्जजृम्भे' कु० ३.२४ । —**रूप**–(वि०)जो इच्छा के अनुरूप हो ।

सङ्कल्पा—(स्त्री०) दक्ष की एक कन्या, धर्म की पत्नी ।

सङ्कसुक—(वि०) [सम् √कस् + ऊकन्] अदृढ़, चंचल । अनिश्चित, सन्दिग्ध । बुरा, दुष्ट । कमजोर, निर्बल ।

सङ्कार—(पुं०) [सम् √कृ+घञ्] कूड़ा-करकट या धूल जो झाड़ू देने से उड़े । आग के जलने का शब्द ।

सङ्कारी—(स्त्री०) [सङ्कार+ ङीष्] वह लड़की जिसका कौमार्य हाल ही में हरण किया गया हो ।

सङ्काश—(वि०) [सम् √काश् + अच्] समान, सदृश । समीपवर्ती । (पुं०) मौजूदगी, विद्यमानता । सामीप्य, नैकटय ।

सङ्किल—(पुं०) [सम्√किल्+क] लुआठ, अधजली लकड़ी, जलती हुई मशाल ।

संकीर्ण—(वि०) [सम्√कॄ + क्त] मिश्रित, मिला हुआ । गड़बड़ । बिखरा हुआ, फैला हुआ । अस्पष्ट । मदमस्त, नशे में चूर । दोगला, अकुलीन । अविशुद्ध, मिलावटी । तंग, सँकरा, सङ्कुचित । (पुं०) वर्णसङ्कर जाति का आदमी । वह राग या रागिनी जो अन्य दो रागों या रागिनियों को मिला कर बने । मस्त हाथी, नशे में चूर हाथी । (न०) कठिनाई । विपत्ति ।—**जाति**, —**योनि**– (वि०) दोगली नस्ल का ।—**युद्ध**– (न०) गड़बड़ लड़ाई । विभिन्न प्रकार के अस्त्रों से लड़ा जाने वाला युद्ध ।

सङ्कीर्तन—(न०), **सङ्कीर्तना**– (स्त्री०) [सम् √कृत् + णिच्, ईत्व + ल्युट्] प्रशंसा । स्तुति । किसी देवता की महिमा का वर्णन या स्तवन । किसी देवता के नाम का बार-बार उच्चारण ।

सङ्कुचित—(वि०) [सम्√कुच् + क्त] सिकुड़ा हुआ, सिमटा हुआ । सिकुड़नदार, झुर्रियां पड़ा हुआ । बंद, मुंदा हुआ । ढका हुआ ।

सङ्कुल—(वि०) [सम्√कुल् +क] घना । प्रचंड । बाधित । संकीर्ण । जटिल । परिपूर्ण; 'नक्षत्रताराग्रहसङ्कुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः' र० ६.२२ । अस्त-व्यस्त । असंगत । (न०) भीड़-भाड़, जन-समुदाय । (न०) गिरोह, झुंड । तुमुल युद्ध । असंगत या परस्पर-विरोधी कथन । यथा —"यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी च मे पिता । माता तु मम वन्ध्यैव पुत्रहीनः पितामहः ।"

सङ्केत—(पुं०) [सम् √ कित् + घञ्] अभिप्राय-सूचक अंगचेष्टा, इशारा । स्वल्पाक्षर उल्लेख या निर्देश । चिह्न । नियमपत्र । कामशास्त्र संबन्धी इङ्गित, शृङ्गार-चेष्टा । प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का वादा । प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का स्थान;

'कान्तार्थिनी तु या याति सङ्केतं साभिसारिका'। ठहराव, शर्त। (व्याकरण का) सूत्र।—**गृह,—निकेतन,—स्थान**–(न०) प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का स्थान।

सङ्केतक—(पुं०) [सङ्केत+कन्] ठहराव। प्रेमी-प्रेमिका के मिलने का स्थान। प्रेमी या प्रेयसी जो मिलने के लिये समय का सङ्केत करे।

सङ्केतित—(वि०) [सङ्केत+इतच्] संकेत किया हुआ। नियमानुसार निर्धारित। आमंत्रित, बुलाया हुआ।

सङ्कोच—(पुं०) [सम् √ कुच् + घञ्] सिकुड़ना। रोक। बंद होना, मुँदना। सूखना। संक्षेप। भय। लज्जा। कमी। केसर। हिचक। एक अलंकार। बंधन। एक प्रकार की मछली।

सङ्क्रन्दन—(पुं०) [सम्√क्रन्द् + णिच् +ल्यु] श्रीकृष्ण भगवान् का नाम।

सङ्क्रम—(पुं०) [सम् √ क्रम् + घञ्] सहगमन। परिवर्तन। विषयान्तर-प्रसङ्ग। किसी ग्रह का एक राशि से निकल कर दूसरी राशि में जाना। गमन, यात्रा। दुरधिगम्य मार्ग। सँकरा रास्ता। पुल, सेतु। किसी वस्तु की प्राप्ति का साधन।

सङ्क्रमण—(न०) [सम् √क्रम् + ल्युट्] ऐकमत्य। एक विन्दु से दूसरे विन्दु पर गमन। सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर गमन। वह विशेष दिन जिस दिन सूर्य उत्तरायण होते हैं। भ्रमण। मिलन। प्रवेश। आरंभ।

सङ्क्रान्त—(वि०) [सम् √क्रम् + क्त] गया हुआ। प्रविष्ट, घुसा हुआ। परिवर्तित, बदला हुआ। पकड़ा हुआ। विचारा हुआ, सोचा हुआ। वर्णित। प्रतिबिंबित।

सङ्क्रान्ति—(स्त्री०) [सम् √क्रम्+क्तिन्] सहगमन। ऐक्य, मेल। हस्तान्तरण। किसी ग्रह का एक राशि से दूसरी राशि पर गमन। परिवर्तन। प्रदान-शक्ति। प्रतिमूर्ति। वर्णन।

सङ्क्रा—दे० 'सङ्क्रम'।

सङ्क्रीडन—(न०) [सम्√क्रीड् + ल्युट्] साथ-साथ खेलना। परिहास करना।

सङ्क्लेद—(पुं०) [सम् √क्लिद् + घञ्] नमी, तरी। गर्भाधान के बाद स्रवित होने वाला एक प्रकार का पनीला पदार्थ जिससे भ्रूण का निर्माण प्रारंभ होता है। एक प्रकार का पनीला पदार्थ जो प्रथम मास में गर्भ के रूप में रहता है।

संक्षय—(पुं०) [सम् √क्षि +अच्] नाश। पूर्ण विनाश। हानि। अन्त, अवसान। प्रलय।

सङ्क्षिप्ति—(स्त्री०) [सम्√क्षिप्+क्तिन्] साथ-साथ प्रक्षेपण। संक्षेप-करण। घात। प्रेषण। भाव का एकाएक परिवर्तन (ना०)।

सङ्क्षेप—(पुं०) [सम् √क्षिप् + घञ्] फेंकना। भेजना। हरण। नष्ट करना। घटाना। सार। ले जाना। किसी अन्य के कार्य में साहाय्य-प्रदान।

सङ्क्षेपण—(न०) [सम् √क्षिप्+ल्युट्] ढेर करना। संक्षेप-करण। प्रेषण। ले जाना।

सङ्क्षोभ—(पुं०) [सम् √ क्षुभ् + घञ्] कँपकँपी, थरथराहट। घबड़ाहट। उत्तेजना। अस्त-व्यस्तता, उलट-पलट। अभिमान, अहङ्कार।

सङ्ख्य—(न०) [सम् √ख्या+क] युद्ध, लड़ाई; 'रक्ताम्भोभिस्तत्क्षणादेव तस्मिन्सङ्ख्येऽसङ्ख्याः प्रावहन् द्वीपवत्यः' शि० १८.७० संग्राम।

सङ्ख्या—(स्त्री०) [सम् √ख्या +अङ—टाप्] गणना, गिनती। अङ्क। जोड़। हेतु, युक्ति। समझ, वुद्धि। विचार। तरीका। —**अतिग** (सङ्ख्यातिग),— **अतीत** (सङ्ख्यातीत)–(वि०) संख्या से परे,

वह जिसकी गिनती न हो सके।—**वाचक**–(वि०) संख्या का सूचक।

सङ्ख्यात—(वि०) [सम् √ख्या + क्त] समझा हुआ। गिना हुआ। (न०) संख्या, अङ्क। राशि।

सङ्ख्याता—(स्त्री०) [सङ्ख्यात + टाप्] संख्या के सहारे बनी हुई एक प्रकार की पहेली।

सङ्ख्यान—(न०) [सम् √ख्या + ल्युट्—अन] गणना, शुमार। राशि। संख्या। माप। देखा जाना, नजर आना।

सङ्ख्यावत्—(वि०) [सङ्ख्या + मतुप्, मस्य वः] संख्या वाला। प्रज्ञा वाला। (पुं०) पण्डित जन।

सङ्ग—(पुं०) [√सञ्ज् + घञ्] संयोग। मेल, ऐक्य। संसर्ग, संस्पर्श। मैत्री। अनुराग। सांसारिक वस्तुओं में आसक्ति। लड़ाई।

सङ्गणिका—(स्त्री०) [सम्√गण् + ण्वुच्] उत्तम संवाद, अनुपम संवाद।

सङ्गत—(वि०) [सम्√गम् + क्त] जुड़ा हुआ, मिला हुआ। गया हुआ। एकत्रित। विवाहित। मैथुन द्वारा मिला हुआ। उपयुक्त, मुनासिब। संकुचित। (न०) ऐक्य, मेल, सन्धि। साथ, संगति। मैत्री। मैथुन। संगत कथन, युक्तियुक्त भाषण।

सङ्गति—(स्त्री०) [सम् √ गम् + क्तिन्] ऐक्य, मेल। संग, साथ; 'मनो हि जन्मान्तरसङ्गतिज्ञं' र० ७.१५। मैथुन। उपयुक्तता। संयोग। ज्ञान। ज्ञान प्राप्त करने के लिये बार-बार प्रश्न करने की क्रिया।

सङ्गम—(पुं०) [सम्√गम् + अप्] ऐक्य, मिलाप। साथ, सुहबत। संसर्ग, संस्पर्श। मैथुन, स्त्री-प्रसंग। (नदियों का) मिलन। मुठभेड़, लड़ाई। उपयुक्तता। ग्रहों का समागम।

सङ्गमन–(न०) [सम्√गम्+ल्यु] मेल, ऐक्य।

सङ्गर—(पुं०) [सम् √गॄ+अप्] प्रतिज्ञा, वादा, इकरार। स्वीकार, अङ्गीकार। सौदा। युद्ध। ज्ञान। भक्षण। विपत्ति। विष।

सङ्गव—(पुं०) [सङ्गता गावो दोहनाय अत्र, नि० साधुः] तड़का होने से ३ मुहूर्त्त बाद का काल, वह समय जब चरवाहा बछड़ों को दूध पिला कर और गौवों को दुह कर चराने को ले जाता है।

सङ्गाद—(पुं०) [सम्√ गद्+घञ्] संवाद। वार्तालाप।

सङ्गिन्—(वि०) [√सञ्ज् + घिनुण्] संयुक्त, मिला हुआ। संपर्क में आने वाला। आसक्त। कामुक। (पुं०) साथी।

सङ्गीत—(वि०) [सम् √गै + क्त] मिल कर गाया हुआ। (न०) वह गाना जो कई लोगों द्वारा मिल कर गाया जाय; 'जगुः सुकण्ठ्यो गन्धर्व्यः सङ्गीतं सहभर्तृकाः' भाग०। वह गान जो वाद्य-यंत्रों के साथ, लय-ताल के साथ, गाया जाय। गाने-बजाने की कला। —**शास्त्र**– (न०) वह शास्त्र जिसमें सङ्गीत कला का निरूपण हो।

सङ्गीतक—(न०) [सङ्गीत + कन्] गाना-बजाना। एक प्रकार का सार्वजनिक संगीत या अभिनय जिसमें गाना-बजाना हो।

सङ्गीर्ण—(वि०) [सम्√गॄ + क्त] स्वीकृत, मंजूर किया हुआ। प्रतिज्ञात।

सङ्गुप्त—(वि०) [सम् √गुप् + क्त] भली-भाँति छिपाया हुआ। सुरक्षित। (पुं०) एक बुद्ध।

सङ्गूढ—(वि०) [सम् √गुह् + क्त] सुरक्षित। छिपाया हुआ। संक्षिप्त। संयुक्त। राशीकृत, ढेर किया हुआ।

सङ्गृहीत—(वि०) [सम् √ग्रह् + क्त] संग्रह किया हुआ, एकत्र किया हुआ। जकड़ा हुआ। संयत किया हुआ। शासित। प्राप्त। संक्षिप्त किया हुआ।

सङ्ग्रह—(पुं०) [सम् √ग्रह् + अप्] ग्रहण, पकड़ना। पहुँचा पकड़ना। स्वागत। संरक्षण। अनुग्रह करना। समर्थन करना। एकत्रकरण, ढेर लगाना। शासन करना। राशि। समागम। एक प्रकार का संयोग। सम्मिलित करना। संकलन। योग, जोड़। तालिका, सूची। भाण्डार-गृह। मंत्र-बल से प्रक्षिप्त अस्त्र लौटा लेना। कोष्ठ-बद्धता। विवाह। सभा। उद्योग। उल्लेख। बड़प्पन, ऊँचापन। वेग। शिवजी का नामान्तर।

सङ्ग्रहण—(न०) [सम्√ग्रह् + ल्युट्] पकड़, ग्रहण। समर्थन। उत्साह प्रदान करना। संग्रहकरण। मेल। जड़ना। संकलन करना। नियंत्रण करना। उल्लेख। स्त्री के वर्जित अंगों का स्पर्श। नारी का अपहरण। मैथुन। व्यभिचार। आशा करना। स्वीकार करना। प्राप्त करना।

सङ्ग्रहणी—(पुं०) [सङ्ग्रहण+ङीप्] दस्तों का रोग विशेष जिसमें खाना बिना पचे ही मल के रूप में निकल जाता है।

सङ्ग्रहीतृ—(वि०) [सम्√ग्रह् + तृच्] संग्रह करने वाला। (पुं०) सारथि।

√सङ्ग्राम्—चु० उभ० सक० युद्ध करना। सङ्ग्रामयति—ते, सङ्ग्रामयिष्यति—ते, अससङ्ग्रामत्—त।

सङ्ग्राम—(पुं०) [√सङ्ग्राम+अच्] लड़ाई, युद्ध।—**पटह**–(पुं०) युद्ध में वजाया जाने वाला एक वड़ा भारी ढोल।

सङ्ग्राह—(पुं०) [सम्√ ग्रह् + घञ्] ग्रहण करना। छीन लेना, वरजोरी ले लेना। कलाई पकड़ना। ढाल का बेंट। मुक्का।

सङ्घ—(पुं०) [सम् √हन् + अप्, टिलोप, घत्व] समूह, झुंड। विशेष उद्देश्य से एक साथ रहने वाले व्यक्तियों का समूह। घनिष्ठ संपर्क। मठ।—**चारिन्**– (पुं०) मछली।—**जीविन्**– (पुं०) मजदूर।—**पुष्पी**– (स्त्री०) धातकी, धौ का पेड़।—**वृत्ति**– (स्त्री०) दल में रहने या काम करने का भाव।

सङ्घटना—(स्त्री०) [सम् √घट् + णिच् + युच्—टाप्] मिलाना। स्वरों या शब्दों का संयोग।

सङ्घट्ट—(पुं०) [सम्√घट्ट्+अच्] रगड़। टक्कर। मुठभेड़। मेल, योग। भिड़न्त या स्पर्द्धा (दो पत्नियों की)। आलिङ्गन।

सङ्घट्टन—(न०),**सङ्घट्टना**–(स्त्री०) [सम् √घट्ट्+ल्युट्] [सम् √घट्ट् + णिच् +युच्] रगड़ना। टक्कर। संसर्ग, लगाव। संयोग, मेल। पहलवानों की भिड़न्त।

सङ्घर्ष—(पुं०) [सम् √घृष् + घञ्] दो चीजों का आपस में रगड़ खाना। पसीना। टक्कर, भिड़ंत। स्पर्द्धा, होड़। द्वेष। धीरे-धीरे चलना। कामोत्तेजना।

सङ्घाटिका—(स्त्री०) [सम् √घट् + णिच् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] जोड़ा, जोड़ी। कुटनी। गन्ध। स्त्रियों की एक पुरानी पोशाक। सिंघाड़ा।

सङ्घाणक—(पुं०, न०) [=शिङ्घाण, पृषो० साधुः] नाक का मैल।

सङ्घात—(पुं०) [सम् √हन् + घञ्] ऐक्य, संयोग। जनसमुदाय, समूह; 'उपायसङ्घात इव प्रवृद्धः' र० १४.११। हत्या, हिंसन। कफ। समासान्त शब्दों की वनावट। नरक विशेष। अस्थि। शरीर। घनता। प्रचंडता। एक ही वृत्त में रचित काव्य।

√सच्—भ्वा० पर० सक० जोड़ना। अच्छी तरह बाँधना। सचति, सचिष्यति, असचीत् —असाचीत्।

सचि—(पुं०) [√सच् + इन्] मित्र। मित्रता, दोस्ती। (स्त्री०) इन्द्र की पत्नी, इन्द्राणी।

सचिल्लक—(वि०) [सह क्लिन्नेन, सहस्य सः, कप्, नि० साधुः] क्लिन्नचक्षु। मेंड़ा, ऐंचाताना।

सचिव—(पुं०) [सचि√वा + क] मित्र, साथी। मंत्री, वजीर; 'तेन धूर्जगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे' र० १.३४। काला धतूरा।

सची—(स्त्री०) [सचि+ ङीष्] इन्द्राणी।

सचेतन—(वि०) [सह चेतनया, ब० स०, सहस्य स:] चेतनायुक्त, सज्ञान। जीवित, जानदार।

सचेतस्—(वि०) [सह चेतसा, ब० स०] बुद्धिमान्। वह जो समवेदनापूर्ण या दयालु हो।

सचेल—(वि०) [सह चेलेन, ब० स०] वस्त्र सहित।

सचेष्ट—(पुं०) [√सच् + अच् तथाभूत: सन् इष्ट:] आम का वृक्ष। (वि०) [सह चेष्टया, ब० स०] चेष्टाशील।

सजन—(वि०) [सह जनेन, ब० स०] मनुष्यों या जीवधारियों वाला। (पुं०) जाति-बिरादरी का आदमी।

सजल—(वि०) [सह जलेन, ब० स०] जलयुक्त। पनीला, गीला, तर।

सजाति, सजातीय—(वि०) [समाना जाति: अस्य, ब० स०, समानस्य स:] [समानां जातिम् अर्हति, समानजाति+छ, समानस्य स:]एक ही जाति का। एक ही किस्म का। समान, सदृश। (पुं०) एक ही जाति के माता और पिता से उत्पन्न पुत्र।

सजुष्—(वि०) [सह जुषते, √जुष्+क्विप्, सहस्य स:] प्यारा। साथ रहने वाला। (पुं०) [कर्त्ता—**सजू:, सजुषौ, सजुष:**] मित्र, दोस्त। सखा। (अव्य०) सहित, साथ।

सज्ज—(वि०) [√ सस्ज्+अच्] तैयार, तैयार किया या कराया हुआ। सँवारा हुआ, ठीक किया हुआ। शस्त्र आदि से युक्त। किलाबंदी किया हुआ।

सज्जन—(न०) [√सस्ज् + णिच्+ल्युट्] बाँधना। कसना। पोशाक धारण करना। सजाना। तैयार करना। हथियार धारण करना। चौकीदार, संतरी। घाट। (पुं०) [सन् जन:, कर्म० स०] भला मनुष्य।

सज्जना—(स्त्री०) [√ सस्ज् + णिच् +युच्—टाप्] सजावट। वस्त्राभूषण से सुसज्जित करने की क्रिया।

सज्जा—(स्त्री०) [√सस्ज् + अ—टाप्] परिच्छद, सजावट। साज, सामान। सैनिक सामान, कवच आदि।

सज्जित—(वि०) [सज्जा+ इतच् वा√सस्ज् +णिच् +क्त] सजाया हुआ। शृङ्गार किया हुआ। तैयार किया हुआ। साज-सामान से लैस। शस्त्रधारण किया हुआ।

सज्य—(वि०) [सह ज्यया, ब० स०, सहस्य स:] डोरी या रोदा लगा हुआ; 'न तेन सज्यं क्वचिदुद्यतं धनु:' कि० १.२१।

सज्योत्स्ना—(स्त्री०) [सह ज्योत्स्नया, ब० स०] चांदनी रात।

सञ्च—(न०) [सञ्चीयते अत्र, सम्√चि +ड] ऐसे पत्तों का ढेर जिन पर लिखा जाता है।

सञ्चत्—(पुं०) [सम्√चत् + क्विप्] धूर्त। ठग।

सञ्चय—(पुं०) [सम् √चि + अच्] ढेर करना, जमा करना। ढेर, राशि।

सञ्चयन—(न०) [सम् √ चि + ल्युट्] एकत्र या संग्रह करने की क्रिया। शव भस्म होने के पीछे अस्थि बीनने की क्रिया।

सञ्चर—(पुं०) [सम्√चर् +क] गमन, चलन। एक राशि से दूसरी राशि में गमन। मार्ग, पथ; 'यत्रौषधिप्रकाशेन नक्तं दर्शित-सञ्चरा:' कु० ६.४३। सङ्कीर्ण पथ। प्रवेशद्वार। शरीर। हनन, हिंसन। वुद्धि।

सञ्चरण—(न०) [सम्√चर् + ल्युट्] गमन, चलन। भ्रमण।

सञ्चल—(वि०) [सम् √चल् + अच्] काँपता हुआ, थरथराता हुआ।

सञ्चलन—(न०) [सम्√चल् + ल्युट्] हिलना-डोलना, काँपना। थरथराना।

सञ्चाय्य—(पुं०) [सम् √ चि + ण्यत् नि०] यज्ञ विशेष जिसमें सोम एकत्र किया जाता है।

सञ्चार—(पुं०) [सम्√चर्+घञ् वा णिच् +घञ्] चलना-फिरना। गुजरना। मार्ग, रास्ता। कठिन मार्ग। कठिन यात्रा। कठिनाई, कष्ट। चलाने की क्रिया। भड़काने की क्रिया। मार्ग-प्रदर्शन, रास्ता दिखलाने की क्रिया। स्पर्श द्वारा संक्रमण। साँप के फन में मिली हुई मणि।

सञ्चारक—(वि०) [सम्√चर्,+ण्वुल्, वा,+णिच्+ण्वुल्] संचार करने वाला। फैलाने वाला। चलाने वाला। (पुं०) दलपति, नायक, नेता। साजिश करने वाला, षड्यंत्रकारी।

सञ्चारण—(न०) [सम्√चर्+णिच् +ल्युट्] प्रणोदित करने की क्रिया, उत्तेजित करने की क्रिया। पहुँचाने की क्रिया। मार्ग-प्रदर्शन की क्रिया।

सञ्चारिका—(स्त्री०) [सम्√चर् + णिच् +ण्वुल – टाप्, इत्व] दूती। कुटनी। जोड़ी। नाक।

सञ्चारिन्—(वि०) [स्त्री०—**सञ्चारिणी**] [सम्√चर् + णिनि] गमनशील; 'पर्याप्तिपुष्पस्तवकावनम्रा सञ्चारिणी पल्लविनी लतेव' कु० ३.५४। घूमने-फिरने वाला। परिवर्तन-शील। दुर्गम। प्रवेश करने वाला। साथ आने, मिलने वाला। क्षणस्थायी। वंशपरम्परागत, पुश्तैनी। छुआछूत वाला। (पुं०) पवन। धूप, गंधद्रव्य। एक प्रकार के भाव जो ३३ होते हैं और स्थायी भाव को पुष्ट कर विलीन हो जाते हैं, व्यभिचारी भाव। ३३ भाव ये हैं,—१ निर्वेद, २ आवेग, ३ दैन्य, ४ श्रम, ५ मद, ६ जड़ता, ७ उग्रता, ८ मोह, ९ विबोध, १० स्वप्न, ११ अपस्मार, १२ गर्व, १३ मरण, १४ आलस्य, १५ अमर्ष, १६ निद्रा, १७ अवहित्था, १८ औत्सुक्य, १९ उन्माद, २० शंका, २१ स्मृति, २२ मति, २३ व्याधि, २४ त्रास, २५ व्रीड़ा, २६ हर्ष, २७ असूया, २८ विषाद, २९ धृति, ३० चपलता, ३१ ग्लानि, ३२ चिन्ता, ३३ वितर्क। गीत के चार चरणों में से तीसरा।

सञ्चाली—(स्त्री०) [सम्√ चल् + ण —ङीप्] घुंघची का पौधा।

सञ्चित—(वि०) [सम्√चि + क्त] जमा किया हुआ, एकत्र किया हुआ। गणना किया हुआ, गिना हुआ। परिपूर्ण, भरा हुआ। बाधा डाला हुआ। घना, घनीभूत।

सञ्चिति—(स्त्री०) [सम् √चि + क्तिन्] एकत्र करने, जमा करने की क्रिया। तह लगाना। शतपथ ब्राह्मण का नवाँ खंड।

सञ्चिन्तन—(न०) [सम् √चिन्त् +ल्युट्] सोचना, विचारना।

सञ्चूर्णन—(न०) [सम्√चूर्ण् + ल्युट्] टुकड़े-टुकड़े कर डालने की क्रिया।

सञ्छन्न—(वि०) [सम्√छद् + क्त] पूर्णतः ढका हुआ। छिपा हुआ। अज्ञात।

सञ्छादन—(न०) [सम् √ छद् + णिच् + ल्युट्] अच्छी तरह ढकना। छिपाना।

√सञ्ज्—भ्वा० पर० सक० चिपटाना। चिपकाना। बाँधना। सजति, सङ्क्ष्यति, असङ्क्षीत्।

सञ्ज—(पुं०) [सम्√जन्+ड] ब्रह्मा का नाम। शिव का नाम।

सञ्जय—(पुं०) [सम्√जि + अच्] धृतराष्ट्र के सारथि का नाम।

सञ्जल्प—(पुं०) [सम्√जल्प् + घञ्] वार्तालाप। शोरगुल। गर्जन, दहाड़।

सञ्जवन—(न०) [सम्√जु+युच्] आमने-सामने स्थित चार मकान, चतुःशाल।

सञ्जा—(स्त्री०) [सञ्ज+टाप्] बकरी, छागी, छेरी ।

सञ्जीवन—(पुं०) [सम् √जीव् + ल्युट्] साथ-साथ रहने की क्रिया । अच्छी तरह प्राण धारण करने की क्रिया । [सम् √जीव्+णिच्+ल्युट्] जीवित करने की क्रिया, पुनर्जीवितकरण । इक्कीस नरकों में से एक । दे० 'सञ्जवन' ।

संज्ञ—(वि०) [सम्√ज्ञा +क] अच्छी तरह जानने वाला । [संज्ञा अस्ति अस्य, संज्ञा +अच्] नाम वाला, नामक । (न०) एक प्रकार का पीला सुगंधित काष्ठ ।

संज्ञपन—(न०) [सम् √ज्ञा + णिच्, पुक्, ह्रस्व+ल्युट्] हिंसन, वधकरण, मार डालना ।

संज्ञा—(स्त्री०) [सम्√ज्ञा + अङ—टाप्] चेतना, होश । बुद्धि, अक्ल । ज्ञान । संकेत, इशारा । बोधक शब्द, नाम; 'द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैः' भग० १५.५ । व्याकरण में वह विकारी शब्द जिससे किसी यथार्थ या कल्पित वस्तु का बोध हो । गायत्री मंत्र । सूर्यपत्नी जो विश्वकर्मा की कन्या थी । (मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यम और यमुना का जन्म इसी के गर्भ से हुआ है) ।—**विषय**- (पुं०) उपाधि । विशेषण ।—**सुत**-(पुं०) शनि का एक नाम ।

संज्ञान—(न०) [सम् √ज्ञा + ल्युट्] सम्यक् अनुभूति । ज्ञान ।

संज्ञापन—(न०) [सम् √ज्ञा + णिच्, पुक्, न ह्रस्वः + ल्युट्] सूचित करना । सिखलाना ।

संज्ञावत्—(वि०) [संज्ञा +मतुप्, मस्य वः] सचेत । वह जिसका कोई नाम हो ।

संज्ञित—(वि०) [संज्ञा+इतच्] नामवाला, नामक ।

संज्ञिन्—(वि०) [संज्ञा + इनि] चेतन, संज्ञान । नामक, नाम वाला ।

संज्ञु—(वि०) [संहते जानुनी यस्य, ब० स०, जानुस्थाने ज्ञुः] जिसके घुटने चलते समय टकराते हों ।

सज्वर—(पुं०) [सम् √ज्वर् + अप्] तीव्र ज्वर । अग्नि का ताप । क्रोध आदि का बहुत अधिक आवेग ।

√सट्—भ्वा० पर० सक० विभाजन करना । सटति, सटिष्यति, असटीत्—असाटीत् ।

सट—(न०), **सटा**- (स्त्री०) [√सठ् +अच्, पृषो० ठस्य टः] [सट+टाप्] साधु की जटा । सिंह की गरदन के बाल, अयाल । शूकर के बाल; 'विघ्यन्तमुद्धृतसटाः प्रतिहन्तुमीषुः' र० ९.६० । कलँगी, चोटी ।

√सट्ट्—चु० उभ० सक० हनन करना । देना । लेना । अक० बसना, रहना । मजबूत होना । सट्टयति—ते, सट्टयिष्यति—ते, अससट्टत्—त ।

सट्टक—(न०) प्राकृत भाषा में रचा हुआ छोटा रूपक । जीरा मिला हुआ मट्ठा ।

सट्वा—(स्त्री०) [√सठ् + वा, पृषो० साधुः] पक्षी विशेष । बाजा विशेष ।

√सठ्—चु० उभ० सक० समाप्त करना, पूर्ण करना । अधूरा छोड़ देना । जाना । सजाना । साठयति—ते, साठयिष्यति—ते, असीसठत्—त ।

सणसूत्र—(न०) [=शणसूत्र, पृषो० साधुः] सन की डोरी या रस्सी ।

सण्ड—दे० 'षण्ड' ।

सण्डिश—(पुं०) [=सन्दश, पृषो० साधुः] चिमटा, सँड़सी ।

सण्डीन—(न०) [सम्√डी + क्त] पक्षियों की एक प्रकार की उड़ान ।

सत्—(वि०) [स्त्री०—**सती**] [√अस् +शतृ, अकारलोप] विद्यमान । असली, सत्य । नेक, धर्मात्मा । कुलीन, भद्र । ठीक, उचित । उत्तम, श्रेष्ठ । प्रतिष्ठित, सम्मान-

नीय। बुद्धिमान्। मनोहर, सुन्दर। मजबूत, दृढ़। (पुं०) नेक या धर्मात्मा आदमी। (न०) यथार्थ सत्य। ब्रह्म।—**आचार (सदाचार)**—(पुं०) अच्छा आचरण, सद्वृत्ति, शिष्टाचार।—**आत्मन् (सदात्मन्)**—(वि०) पुण्यात्मा, नेक।—**उत्तर (सदुत्तर)**—(न०) उचित या अच्छा उत्तर।—**कर्मन्**—(न०) पुण्यकर्म, धर्मकार्य। धर्म, पुण्य। आतिथ्य, अतिथि-सत्कार।—**काण्ड**—(पुं०) चील। बाज पक्षी।—**कार**—(पुं०) आतिथ्य-सत्कार, आवभगत। सम्मान, प्रतिष्ठा। खबरदारी, मनोयोग। भोज। पर्व। उत्सव।—**कुल**—(न०) अच्छा वंश, अच्छा खानदान।—**कृत**—(वि०) भली-भाँति किया हुआ। सत्कार किया हुआ। सम्मान किया हुआ। स्वागत किया हुआ। (न०) आदर-सत्कार। आतिथ्य। पुण्य। (पुं०) शिव जी का नाम।—**क्रिया**—(स्त्री०) सत्कर्म, पुण्य, धर्म का काम; 'शकुन्तला मूर्तिमती च सत्क्रिया' श० ५.१५। सत्कार, आदर, खातिरदारी। आयोजन, तैयारी। नमस्कार, प्रणाम। प्रायश्चित्त का कोई कर्म। अन्त्येष्टि कर्म, और्ध्वदेहिक कर्म।—**गति (सद्गति)**—(स्त्री०) अच्छी गति। मोक्ष, मुक्ति।—**गुण (सद्गुण)**—(पुं०) अच्छा गुण। विशिष्टता।—**चरित (सच्चरित)**,—**चरित्र (सच्चरित्र)**—(वि०) अच्छे चाल-चलन का, सदाचारी। (न०) अच्छा चाल-चलन। अच्छे लोगों का इतिहास या जीवनी।—**चारा (सच्चारा)**—(स्त्री०) हल्दी।—**चिद् (सच्चिद्)**—(न०) परब्रह्म।—**जन (सज्जन)**—(पुं०) नेक या धर्मात्मा आदमी।—**पत्र**—(न०) कुमुद आदि का ताजा पत्ता।—**पथ**—(पुं०) अच्छा मार्ग। कर्त्तव्य-पालन का ठीक मार्ग। उत्तम सम्प्रदाय या सिद्धान्त।—**परिग्रह**—(पुं०) उपयुक्त पात्र से (दान) ग्रहण।—**पशु**—(पुं०) बलि योग्य अच्छा पशु।—**पात्र**—(न०) दान आदि देने योग्य उत्तम व्यक्ति।—**पुत्र**—(पुं०) सुपात्र बेटा, सपूत।—**प्रतिपक्ष**—(पुं०) (न्याय-दर्शन में) वह पक्ष जिसका उचित खण्डन हो सके अथवा जिसके विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सके, पाँच प्रकार के हेत्वाभासों में से एक।—**प्रमुदिता**—(स्त्री०) आठ सिद्धियों में से एक।—**फल**—(पुं०) अनार का पेड़।—**भाव (सद्भाव)**—(पुं०) विद्यमानता। साधुभाव, अच्छा भाव।—**मात्र (सन्मात्र)**—(पुं०) जीव, आत्मा।—**मान (सन्मान)**—(पुं०) भले लोगों की प्रतिष्ठा, इज्जत।—**वंश (सद्वंश)**—(वि०) उच्च कुल का।—**वचस् (सद्वचस्)**—(न०) प्रसन्नकारक भाषण।—**वस्तु (सद्वस्तु)**—(न०) अच्छा पदार्थ। अच्छी कहानी।—**विद्य (सद्विद्य)**—(वि०) भली-भाँति शिक्षित।—**वृत्त (सद्वृत्त)**—(वि०) भले आचरण का, अच्छे चाल-चलन का। बिल्कुल गोल। (न०) अच्छा चाल-चलन। अच्छा स्वभाव।—**संसर्ग**,—**सङ्ग**—(पुं०),—**सङ्गति**—(स्त्री०)—**सन्निधान**—(न०),—**समागम**—(पुं०) अच्छे लोगों की सुहबत या साथ।—**सहाय**—(वि०) अच्छे मित्रों वाला। (पुं०) अच्छा साथी या संगी।—**सार**—(पुं०) वृक्ष विशेष। कवि। चित्रकार।

सतत—(वि०) [सम्√तन् + क्त, समः अन्त्यलोपः] अविच्छिन्न, निरन्तर क्रिया-युक्त। (अव्य०) सदैव, हमेशा।—**ग**,—**गति**—(पुं०) पवन, हवा; 'ववुरयुक्छदगुच्छसुगन्धयः सततगास्ततगानगिरोऽलिभिः' शि० ६.५०।—**यायिन्**। (वि०) सदैव चलते रहने वाला। सदैव नाशोन्मुख।

सतर्क––(वि०) [सह तर्केण, ब० स०] तर्क करने में पटु । न्यायशास्त्र निष्णात । सावधान ।

सति––(स्त्री०) [√सन् + क्तिच्, नलोप] भेंट । पुरस्कार । नाश । अवसान ।

सती––(स्त्री०) [सत्+ङीप्] पतिव्रता स्त्री । वह स्त्री जो अपने पति के शव के साथ चिता में जले । तपस्विनी । दुर्गा का का नाम । दक्षकन्या, भवानी ।

सतीत्व––(न०) [सती+त्व] सती होने का भाव, पातिव्रत्य ।

सतीन––(पुं०) [सती√नी+ड] एक प्रकार का मटर । बाँस । जल । अपराजिता ।

सतीर्थ, सतीर्थ्य––(पुं०) [समानः तीर्थः गुरुः यस्य, ब० स०, समानस्य सादेशः] [समाने तीर्थे गुरौ वसति इत्यर्थे यत् प्रत्ययः, समानस्य सः] सहपाठी, साथ पढ़ने वाला ।

सतील––(पुं०) [सती √लक्ष् + ड] बांस । पवन । मटर ।

सतेर––(पुं०) [√सन् +एर, तान्तादेश] भूसी, चोकर ।

सत्ता––(स्त्री०) [सतो भावः, सत्+तल् – टाप्] विद्यमानता, होने का भाव, अस्तित्व, हस्ती । वास्तविक अस्तित्व । उत्तमता, श्रेष्ठता ।

सत्त्र––(न०) [√सद् +ष्ट्र] सोमयज्ञ का काल जो १३ से १०० दिवसों के भीतर पूरा होता है । यज्ञ । भेंट, नैवेद्य । उदारता । धर्म । घर । पर्दा । चादर । सम्पत्ति । वन । ताल, तलैया । धोखा । धूर्तता । आश्रय-स्थान, शरण पाने की जगह ।––**अयन** (**सत्त्रायण**)–(न०) यज्ञों का लगातार चलने वाला क्रम ।––**शाला**– (स्त्री०) वह स्थान जहां गरीबों को भोजन दिया जाता है, लंगर । यज्ञ-भवन । आश्रय-स्थान ।

सत्त्रा––(अव्य०) [√सद्+त्रा] साथ, सहित ।

सत्त्राजित्––(पुं०) [सत्त्रेणाजयति लोकान्, सत्त्र–आ √जि +क्विप्] सत्यभामा के पिता और श्रीकृष्ण के श्वशुर का नाम ।

सत्त्रि––(वि०) [√सद् + त्रि] जयशील । (पुं०) बादल, मेघ । हाथी, गज ।

सत्त्रिन्––(पुं०) [सत्त्र+इनि] वह जो सदैव यज्ञ किया करता हो; 'अत्यशेरत परस्परं धियः सत्त्रिणां नरपतेश्च सम्पदः' शि० १४.३२ । उदार गृहस्थ ।

सत्त्व––(न०) [सतो भावः, सत् + त्व] होने का भाव, अस्तित्व । स्वाभाविक आचरण । पैदायशी गुण । प्रकृति । जिन्दगी, जीवन । जीवनी शक्ति, चैतन्य । धन । पदार्थ । गर्भ । सार । तत्त्व––जल, वायु, आकाशादि । प्राणी । भूत, प्रेत । राक्षस । अच्छाई, उत्तमता । यथार्थता । बल । साहस; 'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे' सुभा० । स्फूर्ति । बुद्धिमानी । सद्भाव । सात्त्विक भाव । विशिष्टता । प्रकृति के तीन गुणों में से एक जो सर्वोच्च है (सांख्य) । संज्ञा । संज्ञावाची (शब्द) ।––**अनुरूप** (**सत्त्वानुरूप**)–(वि०) औत्पत्तिक विशेषता या स्वभाव आदि के अनुसार । अपने वित्त के अनुसार ।––**उद्रेक** (**सत्त्वोद्रेक**)–(पुं०) सत्त्व गुण का आधिक्य । बल या साहस की प्रधानता ।––**भारत**–(पुं०) व्यास ।––**लक्षण**–(न०) गर्भवती होने के चिह्न ।––**विप्लव**– (पुं०) चेतना या विवेक की हानि ।––**विहित**–(वि०) प्रकृति द्वारा किया हुआ । सत्त्वगुणी ।––**संप्लव**– (पुं०) प्रलय । वीर्य या पराक्रम की हानि ।––**संशुद्धि**– (स्त्री०) स्वभाव की विशुद्धता, खरापन ।––**सार**– (पुं०) बल का सार या निचोड़ । बलिष्ठ आदमी ।––**स्थ**–(वि०) अपनी प्रकृति में स्थित । अविचलित, धीर । सशक्त । प्राणयुक्त ।

सत्त्वमेजय—(वि०) [सत्त्व√एज् + णिच् +खश्, मुम्] प्राण-धारियों को कंपित करने वाला।

सत्य—(वि०) [सते हितम्, सत् +यत्] यथार्थ, ठीक, वास्तविक, असल। ईमानदार, सच्चा। पुण्यात्मा। (न०) सचाई। यथार्थता। पारमार्थिक सत्ता। नेकी, भलाई। पुण्य। शपथ। वादा। कृतयुग, चार युगों में से पहला। जल। (पुं०) ऊपर के सात लोकों में से सब से ऊँचा लोक जहाँ ब्रह्मा रहते हैं। अश्वत्थ वृक्ष। श्रीराम। विष्णु। नान्दीमुखश्राद्ध का अधिष्ठातृ देवता।—**अनृत (सत्यानृत)**–(वि०) सच्चा और झूठा। देखने में सत्य किन्तु वास्तव में असत्य। (न०) सत्यता और झुठाई। व्यापार, व्यवसाय।—**अभिसन्ध (सत्याभिसन्ध)**— (वि०) अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने वाला।—**उत्कर्ष (सत्योत्कर्ष)**–(पुं०) सत्य बोलने में प्रधानता। वास्तविक उत्कृष्टता।—**उद्य (सत्योद्य)** –(वि०) सत्य बोलने वाला।—**उपयाचन (सत्योपयाचन)**–(वि०) प्रार्थना या याचना को पूरा करने वाला।—**काम**–(पुं०) सत्य-प्रेमी।—**तपस्**– (पुं०) एक ऋषि का नाम।—**दर्शिन्**– (वि०) (पहले ही से) सत्य देखने या जान लेने वाला। **धन**–(वि०) सत्य का धनी, अत्यन्त सत्य बोलने वाला।—**धृति**– (वि०) नितान्त सत्यवादी।—**पुर**– (न०) विष्णुलोक। —**पूत**–(वि०) सत्य से पवित्र किया हुआ। यथा :—'सत्यपूतां वदेद्वाणीम्'।—मनु।—**प्रतिज्ञ**– (वि०) प्रतिज्ञा को सत्य करने वाला, बात का धनी।—**भामा**–(स्त्री०) सत्राजित् की पुत्री और श्रीकृष्ण की एक पटरानी का नाम।—**युग**–(न०) चार युगों में से प्रथम युग, कृत युग।—०**आद्या**– (**सत्ययुगाद्या**)– (स्त्री०) वैशाख शुक्ला तृतीया का (जिस दिन कृतयुग आरंभ माना जाता है। **वचस्**–(वि०) सत्यवादी। (पुं०) ऋषि। (न०) सत्य भाषण, सच कहना।—**वद्य**–(वि०) सत्य बोलने वाला। (न०) सच्ची बात।—**वाच्**– (वि०) सत्य-वादी। (पुं०) ऋषि। काक। चाक्षुष मनु का एक पुत्र। मनु सावर्णि का एक पुत्र।—**वाक्य**– (न०) सत्यकथन। —**वादिन्**–(वि०) सत्य बोलने वाला। सच्चा, स्पष्टवक्ता।—**व्रत**, —**सङ्गर**, —**सन्ध**– (वि०) सत्यप्रतिज्ञ, वचन को पूरा करने वाला। ईमानदार, सच्चा।—**श्रावण**–(न०) शपथ खाना।—**सङ्काश**– (वि०) जो सत्य भासित हो। आपाततः अनुमोदनीय या सन्तोष-जनक।

सत्यङ्कार—(पुं०) [सत्य√कृ + घञ्, मुम्] सत्य करना। वादा करना। किसी काम को पूरा करने के लिए जमानत के रूप में पेशगी दी जाने वाली रकम।

सत्यवत्—(वि०) [सत्य + मतुप्, मस्य वः] सत्ययुक्त, सच्चा। (पुं०) सावित्री के पति का नाम।

सत्यवती—(स्त्री०) [सत्यवत् + ङीप्] एक मछुवे की लड़की जो पीछे वेदव्यास की माता हुई थी।—**सुत**—(पुं०) वेदव्यास।

सत्या—(पुं०) [सत्यम् अस्ति अस्याः, सत्य +अच्, —टाप्] सीता का नामान्तर। दुर्गा देवी। सत्यभामा। द्रौपदी। सत्यवती, जो वेदव्यास की जननी थी।

सत्यापन—(न०) [सत्य + णिच्, पुक् + ल्युट्] सत्य का पालन, सत्य भाषण। ठेके या किसी लेन-देन का इकरार।

√सत्र्—आत्म० अक० सम्बन्ध होना। सन्तान होना। सत्रयते, सत्रयिष्यते, अससत्रत।

सत्र—(न०) [√सत्र् + अच्] दे० 'सत्त्र'।

सत्रप—(वि०) [सह त्रपया, ब० स०] लज्जाशील । विनम्र ।

सत्राजित्—दे० 'सत्राजित्' ।

सत्वर—(वि०) [सह त्वरया, ब० स०] तेज, फुर्तीला । (अव्य०) शीघ्र, तुरन्त ।

सथूत्कार—(वि०) [सह थूत्कारेण] जिसके मुँह से बोलते समय थूक निकले । (पुं०) बात के साथ थूक निकलना । वह भाषण जिसमें शीघ्रता से कहे गये अस्पष्ट वचन हों ।

√सद्—भ्वा०, तु० पर० अक० बैठना । लेटना । डूब जाना । रहना, बसना । उदास होना । सड़ना । नष्ट होना । कष्ट में पड़ना । पीड़ित होना । रोका जाना । थक जाना । सीदति, सत्स्यति, असदत् ।

सद—(पुं०) [√सद् + अच्] वृक्ष का फल ।

सदंशक—(पुं०) [सह दंशेन, ब० स०, कप्] केकड़ा ।

सदंशवदन—(पुं०) [सह दंशेन, ब० स०, सदंशं वदनं यस्य, ब० स०] कंक पक्षी ।

सदन—(न०) [√सद् + ल्युट्] घर, भवन । शैथिल्य, थकावट । जल । यज्ञ-मंडप । विराम, स्थिरता । यमराज का आवास-स्थान ।

सदय—(वि०) [सह दयया, ब० स०] दयालु, रहमदिल ।

सदस्—(न०) [√सद्+असि] आवास-स्थान, रहने की जगह । सभा, मजलिस; 'पङ्कैर्विना सरो भाति सदः खलजनैर्विना' भा० १.११६ ।—**गत** (**सदोगत**)—(वि०) सभा या मजलिस में बैठा हुआ ।

सदस्य—(पुं०) [सदस्+यत्] किसी सभा में सम्मिलित व्यक्ति, सभासद । पञ्च । याजक । विधि-दर्शी ।

सदा—(अव्य०) [सर्वस्मिन् काले, सर्व +दाच्, सादेशः] नित्य, हमेशा, सर्वदा । निरन्तर, लगातार ।—**आनन्द** (**सदानन्द**)—(वि०) सदैव प्रसन्न । (पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**गति**—(पुं०) पवन । सूर्य । मोक्ष ।—**तोया**, —**नीरा**—(स्त्री०) करतोया नदी का नामान्तर । वह नदी या सोता जिसमें सदैव जल बहा करे ।—**दान**—(वि०) सदैव दान करने वाला । (वह हाथी) जिसके सदा मद बहता हो । (पुं०) इन्द्र का ऐरावत हाथी । मद बहाने वाला हाथी । गणेश जी ।—**नर्त**—(पुं०) खंजन पक्षी ।—**फल**— (पुं०) विल्व वृक्ष । कटहल का पेड़ । सघन वट वृक्ष । नारियल का पेड़ ।—**योगिन्**— (पुं०) कृष्ण का नामान्तर ।—**शिव**—(पुं०) शिव जी का नाम ।

सदृक्ष, सदृश्, सदृश—(वि०) [स्त्री०—**सदृक्षी, सदृशी**] [समानं दर्शनम् अस्य, समान √ दृश् + क्स, समानस्य सादेशः] [समान√दृश्+क्विन्] [समान√दृश्+कञ्] समान, अनुरूप, तुल्य, बराबर । उपयुक्त । योग्य ।

सदेश—(वि०) [सह देशेन, ब० स०, सहस्य सः] देश रखने वाला । [समानो देशो यस्य, ब० स० समानस्य सादेशः] एक ही स्थान या देश का । समीपी । पड़ोसी ।

सद्मन्—(न०) [√सद् + मनिन्] घर, मकान । स्थान, टिकने की जगह । मन्दिर । वेदी । जल ।

सद्यस्—(अव्य०) [समेऽह्नि नि० साधुः] आज ही । तुरन्त ही, अभी; 'चकितनतनताङ्गी सद्म सद्यो विवेश' भा० २.३२ । हाल ही में, कुछ ही समय पीछे ।—**काल** (**सद्यःकाल**) —(पुं०) वर्तमान काल ।—**कालीन** (**सद्यःकालीन**)—(वि०) [सद्यःकाल + ख—ईन] हाल ही का ।—**जात** (**सद्योजात**)— (वि०) हाल का उत्पन्न । (पुं०) हाल का उत्पन्न बछड़ा । शिव जी का नामान्तर ।—**पातिन्** (**सद्यः-**

पातिन्)–(वि०) शीघ्र नष्ट होने वाला, नश्वर ।—प्राणकर (सद्यःप्राणकर) –(वि०) तुरन्त शक्ति बढ़ाने वाला; यथा —'सद्यो मांसं नवान्नं च बाला स्त्री क्षीर-भोजनम् । घृतमुष्णोदकञ्चैव सद्यःप्राण-कराणि षट् ॥' —प्राणहर (सद्यःप्राणहर) –(वि०) तुरन्त शक्ति का नाश करने वाला; यथा— शुष्कं मांसं स्त्रियो वृद्धा बालार्कस्तरुणं दधि । प्रभाते मैथुनं निद्रा सद्यःप्राणहराणि षट् ॥' —शुद्धि (सद्यःशुद्धि)–(स्त्री०),—शौच (सद्यः-शौच)–(न०) तुरन्त की हुई शुद्धि ।

सद्यस्क—(वि०) [सद्यस् + कन्] नया, टटका । तुरन्त का ।

सद्रु—(वि०) [√सद् + रु] गमनकारी । टिकने वाला ।

सद्वन्द्व—(वि०) [सह द्वन्द्वेन, ब० स० सहस्य सः] झगड़ालू, कलह-प्रिय, लड़ाकू ।

सधर्मन्—(वि०) [समानो धर्मोऽस्य, ब० स०, अनिच् समानस्य सः] एक ही गुणों वाला, समान गुणों वाला । समान कर्त्तव्यों वाला । एक ही जाति या सम्प्रदाय वाला । सदृश, अनुरूप ।—**चारिणी**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके साथ शास्त्ररीत्या विवाह हुआ हो ।

सधर्मिणी—(स्त्री०) [सधर्मिन् + ङीप्] दे० 'सधर्मचारिणी' ।

सधर्मिन्—(वि०) [स्त्री०—**सधर्मिणी**] [सह धर्मोऽस्ति अस्य, ब० स०,+ इनि, सहस्य सः] दे० 'सधर्मन्' ।

सधिस्—(पुं०) [√सह्+इसिन्, हस्य धः] बैल, वृषभ ।

सध्रीची—(स्त्री०) [सध्र्यच्+ङीप्, अलोप, दीर्घ] भार्या, पत्नी । सखी, सहेली ।

सध्रीचीन—(वि०) [सध्र्यच् + ख, अलोप, दीर्घ] सहगमन-कारी, साथ चलने वाला ।

सध्र्यच्—(पुं०) [सह अञ्चति, सह √अञ्च्+क्विन्, सध्रि आदेश] पति । साथी ।

√सन्—भ्वा० पर० सक० प्यार करना । पसंद करना । पूजन करना । प्राप्त करना । सम्मान या गौरव के साथ प्राप्त करना । सनति, सनिष्यति, असनीत्—असानीत् । त० उभ० सक० देना । सनोति—सनुते, सनिष्यति—ते, असानीत् —असनीत्—असात—असनिष्ट ।

सन—(पुं०) [√सन् + अच्] घण्टापा-रुलि वृक्ष, मोरवा नामक पेड़ । हाथी के कानों की फड़फड़ाहट ।

सनक—(पुं०) [√सन् + वुन्] ब्रह्मा के चार मानस पुत्रों में से एक ।

सनत्—(पुं०) [√सन् + अति] ब्रह्मा का नामान्तर । (अव्य०) सदैव, निरन्तर ।—**कुमार**–(वि०) ब्रह्मा के चार मानस पुत्रों में से एक का नाम ।

सनसूत्र—दे० 'सणसूत्र' ।

सना—(अव्य०) [=सदा नि० दस्य नः] सदैव, निरन्तर ।

सनात्—(अव्य०) [सना√अत् + क्विप्] सदैव । (पुं०) विष्णु ।

सनातन—(वि०) [स्त्री०—**सनातनी**] [सदा+ट्युल्, तुट् नि० दस्य नः] नित्य, अनादि । स्थायी । प्राचीन । (पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर । शिव । ब्रह्मा । पितरों का अतिथि ।

सनातनी—(स्त्री०) [सनातन+ ङीप्] लक्ष्मी । दुर्गा या पार्वती । सरस्वती ।

सनाथ—(वि०) [सह नाथेन, ब० स०, सहस्य सः] जिसकी रक्षा करने वाला कोई स्वामी हो; 'त्वया नाथेन वैदेही सनाथा ह्यद्य वर्तते' वा० । जिसका कोई रक्षक या पति हो । अधिकार में किया हुआ । अन्वित, सम्पन्न ।

सनाभि—(वि०) [समाना नाभिर्यस्य, ब० स०, समानस्य सः]एक ही गर्भ का, सहोदर। सजातीय । अनुरूप, सदृश; 'गङ्गावर्त-सनाभिर्नाभिः' दश०। स्नेहान्वित । (पुं०) सहोदर भाई । सात पीढ़ी के भीतर का नातेदार ।

सनाभ्य—(पुं०) [सनाभि + यत्] सात पीढ़ियों के भीतर एक ही वंश का मनुष्य, सपिण्ड ।

सनि—(पुं०) [√सन्+इन्] अर्चा, पूजन । नैवेद्य, भेंट । प्रार्थना ।

सनिष्ठीव, सनिष्ठेव—(न०) [सह निष्ठी (ष्ठे) वेन, ब० स०, सहस्य सः]ऐसी बोली जिसके बोलने में थूक उड़े ।

सनी—(स्त्री०) [सनि + ङीष्] दिशा । प्रार्थना । हाथी के कान की फड़फड़ाहट । गौरी । कान्ति ।

सनीड, सनील—(वि०) [समानं नीडम् अस्ति अस्य, ब० स०, पक्षे डस्य लः] साथ रहने वाला । एक ही घोंसले में रहने वाला । समीपी ।

सन्त—(पुं०) [√सन्+त] संहततल, अंजलि ।

सन्तक्षण—(न०) [सम्√तक्ष् + ल्युट्] कटाक्ष-पूर्ण वचन, व्यङ्गय वचन ।

सन्तत—(वि०) [सम्√तन् + क्त] बढ़ाया हुआ, फैलाया हुआ । अविच्छिन्न, सतत, लगातार । अनादि । बहुत । अधिक । (अव्य०) सदैव, हमेशा । लगातार ।

सन्तति—(स्त्री०) [सम् √तन् + क्तिन्] फैलाव, प्रसार । पंक्ति । अविच्छिन्नता । वंश, कुल । औलाद, सन्तान । ढेर, राशि ।

सन्तपन—(न०) [सम्√ तप्+ल्युट्] बहुत तपना । उत्पीड़न ।

सन्तप्त—(वि०) [सम्√तप् + क्त] बहुत तपा हुआ । पिघला हुआ । पीड़ित । परि-श्रान्त ।—**अयस्** (**सन्तप्तायस्**)–(न०) गर्म लोहा ।—**वक्षस्**– (न०) जिसके सीने में या साँस लेने में कष्ट हो ।

सन्तमस, सन्तमस—(न०) [सन्ततं तमः प्रा० स०] [सन्तमस्+अच्] सर्वव्यापी अन्धकार, घोर अन्धकार; 'अवधार्य कार्यगुरुतामभवन्न भयाय सान्द्रतमसन्तमसम्' शि० ९.२२ । महामोह ।

सन्तरण—(न०) [सम्√तॄ + ल्युट्—अन] पार होना ।

सन्तर्जन—(न०) [सम् √तर्ज् + ल्युट्] डाँटना, डपटना, भर्त्सना करना ।

सन्तर्पण—(न०) [सम्√तृप् + ल्युट्] खूब तृप्त करना । एक प्रकार का चूर्ण जिसमें दाख, अनार, खजूर, केला, लाजा-चूर्ण, मधु और घृत पड़ता है । (वि०) [सम् √तृप् + णिच्+ल्यु] तृप्ति कारक, सन्तुष्ट करने वाला ।

सन्तान—(पुं०) [सम्√तन् +घञ्] प्रसार, व्याप्ति, फैलाव । कुल, वंश । सन्तान, औलाद । स्वर्ग के पाँच वृक्षों में से एक ।

सन्तानक—(पुं०) [सन्तान + कन्] स्वर्ग के पांच वृक्षों में से एक वृक्ष और उसके फूल; 'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रियामतनु-तरतयेव सन्तानकः' शि० ६.६७ ।

सन्तानिका—(स्त्री०) [सम् √तन्+ण्वुल् —टाप्, इत्व] फेन, झाग । मलाई, साढ़ी । मर्कटजाल नामक घास । छुरी या तलवार की धार ।

सन्ताप—(पुं०) [सम्√तप् + घञ्] तेज गर्मी, जलन । व्यथा । पश्चात्ताप । तप की थकावट । क्रोध।

सन्तापन—(वि०) [स्त्री०—**सन्तापनी**] [सम् √तप्+णिच् +ल्यु] संताप-कारक । (पुं०) कामदेव के पांच शरों में से एक । (न०) [सम् √ तप्+ णिच् +ल्युट्] तप्त करना, जलाना । पीड़ा, दुःख देना ।

सन्तापित—(वि०) [सम्√ तप् + णिच् +क्त] तपाया हुआ। उत्पीड़ित।

सन्ति—(स्त्री०) [√सन् +क्तिन्] दान। अवसान, अन्त।

सन्तुष्टि—(स्त्री०) [सम् √तुष् + क्तिन्] नितान्त सन्तोष।

सन्तोष—(पुं०) [सम्√तुष् + घञ्] मन की वह वृत्ति या अवस्था जिसमें मनुष्य अपनी वर्तमान दशा में ही पूर्ण सुख अनुभव करता है। तृप्ति। शान्ति। प्रसन्नता, आनन्द। अंगुष्ठ या तर्जनी उँगली।

सन्तोषण—(न०) [सम्√तुष् + णिच् √ल्युट्] संतुष्ट, प्रसन्न करने की क्रिया।

सन्त्यजन—(न०) [सम्√त्यज् + ल्युट्] परित्याग करना।

सन्त्रास—(पुं०) [सम् √त्रस् + घञ्] आतंक, भय।

सन्दंश—(पुं०) [सम् √ दंश् + अच्] चिमटा। सँडसी। जर्राही का एक औजार, कंकमुख। एक नरक का नाम। पकड़ने के काम में आने वाले अंग (अँगूठा आदि)। पुस्तक का खंड या अध्याय।

सन्दंशक—(पुं०) [सन्दंश +कन्] चिमटा। सँड़सी।

सन्दर्प—(पुं०) [सम्√दृप् + घञ्] गर्व, घमंड।

सन्दर्भ—(पुं०) [सम् √दृभ्+घञ्] गूँथना। बुनना। संमिश्रण। साहित्यिक रचना, निबंध आदि। संबंध-निर्वाह। अर्थ-प्रकाशक ग्रंथ। संग्रह। विस्तार।

सन्दर्शन—(न०) [सम्√दृश् + ल्युट्] अवलोकन, चितवन। घूरना। भेंट, परस्पर दर्शन। दृश्य। विचार, पर्यवेक्षण।

सन्दान—(न०) [सम् √ दो + ल्युट्] काटना। बाँधना। हाथी के मस्तक का वह भाग जहाँ से दान झरता है। रस्सी। बेड़ी। [प्रा० स०] सम्यक् दान।

सन्दानित—(वि०) [संदान + इतच्] बँधा हुआ। बेड़ी पड़ा हुआ, जंजीर में जकड़ा हुआ।

सन्दानिनी—(स्त्री०) [सन्दानं बन्धनं गवाम् अत्र, सन्दान+इनि—ङीप्] गोष्ठ, गोशाला।

सन्दाव—(पुं०) [सम् √दु+घञ्] पलायन, भगगड़।

सन्दाह—(पुं०) [सम्√ दह्+घञ्] मुख, ओष्ठ आदि की जलन। सम्यक् दाह।

सन्दिग्ध—(वि०) [सम्√दिह् + क्त] लेप किया हुआ। ढका हुआ। अनिश्चित, सन्देह-युक्त। गड़बड़, अस्पष्ट। भय-युक्त। विषाक्त। संदेह। लेप। एक प्रकार का व्यंग्य जिसमें यह नहीं प्रकट होता है कि वाचक या व्यञ्जक में व्यंग्य है।

सन्दिष्ट—(वि०) [सम् √ दिश् + क्त] बताया हुआ। निर्दिष्ट किया हुआ। कहा हुआ। स्वीकृत। (न०) इत्तिला, सूचना। समाचार. । संवाद। (पुं०) वार्तावह, हल्कारा, कासिद।

सन्दित—(वि०) [सम्√दो + क्त] बंधन-युक्त। जंजीर में जकड़ा हुआ, कसा हुआ।

सन्दी—(स्त्री०) [सम्√दो + ड—ङीष्] छोटी खाट या खटोला।

सन्दीपन—(वि०) [स्त्री०—**सन्दीपनी**] [सम्√दीप्+णिच् + ल्यु] जलाने वाला। उत्तेजित करने वाला। (पुं०) कामदेव के पाँच बाणों में से एक। (न०) [सम्√दीप् +णिच्+ल्युट्] उद्दीपन करने की क्रिया उत्तेजना देने की क्रिया।

सन्दीप्त—(वि०) [सम् √ दीप्+क्त] उद्दीप्त। प्रज्वलित। उत्तेजित।

सन्दुष्ट—(वि०) [सम्√दुष् +क्त] भ्रष्ट, बिगड़ा हुआ। दुष्ट, कमीना।

सन्दूषण—(न०) [सम् √दूष् + णिच् +ल्युट्] भ्रष्टता-करण, भ्रष्ट करने की क्रिया।

सन्देश—(पुं०) [सम्√दिश् + घञ्] संवाद, खवर; 'सन्देशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य' मे० ७। आदेश।—**अर्थ** (**सन्देशार्थ**)-(पुं०) संदेश का विषय।—**वाच्**- (पुं०) संवाद।—**हर**- (पुं०) दूत, कासिद, वार्तावह।

सन्देह—(पुं०) [सम्√दिह् +घञ्] सन्देह, संशय, अनिश्चय। खतरा, भय। एक अर्थालंकार।—**दोला**- (स्त्री०) द्विविधा।

सन्दोह—(पुं०) [सम्√दुह् + घञ्] दुहना, दोहन। समूह। राशि।

सन्द्राव—(पुं०) [सम्√द्रु + घञ्] पलायन, भगगड़।

सन्धा—(स्त्री०) [सम्√धा +अङ—टाप्] संयोग। घनिष्ठ सम्बन्ध। हालत, दशा। प्रतिज्ञा, शर्त; 'ततार सन्धामिव सत्यसन्धः' र० १४.५२। सीमा। दृढ़ता। सायंकाल का धुंधला प्रकाश। भभके से खींचने की क्रिया।

सन्धान—(न०) [सम्√धा + ल्युट्] मिलाना, जोड़ना। संयोग। संमिश्रण। सन्धि। जोड़, गाँठ। मनोयोग, एकाग्रता। दिशा, ओर। समर्थन। शराब खींचने की क्रिया। मदिरा या शराब की तरह कोई मादक वस्तु कोई भी सुस्वादु जिसके खाने पर प्यास बढ़े। मुरब्बे और अचार की प्रक्रिया। औषधोपचार से चमड़े को सिकोड़ने की क्रिया। खट्टी काँजी।

सन्धानित—(वि०) [सन्धान + इतच्] जोड़ा हुआ, मिलाया हुआ। बँधा हुआ, कसा हुआ।

सन्धानिनी—(स्त्री०) [सन्धान + इनि—ङीप्] गाय बाँधने का घर, गोष्ठ।

सन्धानी—(स्त्री०) [सन्धान+ङीप्] वह स्थान जहाँ मदिरा खींची जाती है। वह स्थान जहाँ पीतल आदि की ढलाई की जाती है।

सन्धि—(पुं०) [सम्√धा +कि] दो वस्तुओं का एक में मिलना, मेल, संयोग। कौल-करार, इकरार। सुलह, मैत्री। शरीर का जोड़ या गाँठ। (कपड़े की) तह या टूटन। सुरंग, सेंध। पृथक्करण, विभाजन। व्याकरण में वह विकार जो दो अक्षरों के पास-पास आने के कारण उनके मेल से हुआ करता है। अवकाश, दो वस्तुओं के बीच की खाली जगह। अवकाश, विश्राम। सुअवसर। एक युग की समाप्ति और दूसरे युग के आरम्भ के बीच का समय, युग-सन्धि। नाटक में किसी प्रधान प्रयोजन के साधक कथांशों का किसी एक मध्यवर्ती प्रयोजन के साथ होने वाला सम्बन्ध। [ऐसी सन्धियाँ ५ प्रकार की होती हैं, यथा—मुखसन्धि, प्रतिमुख-सन्धि, गर्भ-सन्धि, अवमर्श या विमर्श सन्धि और निर्वहण-सन्धि]। स्त्री की जननेन्द्रिय, भग।— **अक्षर** (**सन्ध्यक्षर**)-(न०) दो स्वरों का योग, संयुक्त स्वरस्वर्णद्वय (जिनका उच्चारण सम्मिलित किया जाता है)।—**चोर**-(पुं०) सेंध लगाने वाला चोर।—**ज**-(न०) शराब।—**जीवक**-(पुं०) दलाल, कुटना।—**दूषण**-(न०) सन्धि को भङ्ग करने की क्रिया; 'अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशाः विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि' कि० १.४५।—**बन्धन**- (न०) नस।—**भङ्ग**-(पुं०),—**मुक्ति**- (स्त्री०) वैद्यक के मतानुसार हाथ या पैर आदि के किसी जोड़ का टूटना या स्थानच्युत होना।—**विग्रह**-(पुं०) शान्ति और युद्ध।—**विचक्षण**-(पुं०) सन्धि करने के कार्य में निपुण।—**वेला**- (स्त्री०) सन्ध्याकाल, शाम।—**हारक**-(पुं०) घर में सेंध या नक़ब लगाने वाला व्यक्ति।

सन्धिक—(पुं०) [सन्धि+कन्] जोड़। सन्निपातज्वर का एक भेद।

सन्धिका—(स्त्री०) [सन्धिक+टाप्] शराव खींचने की क्रिया ।

सन्धित—(वि०) [सन्धा+इतच्] संयुक्त, जुड़ा हुआ । बँधा हुआ, कसा हुआ । मेल-मिलाप किया हुआ, मैत्री स्थापित किया हुआ । जड़ा हुआ, बैठाया हुआ । मिश्रित किया हुआ । अचार डाला हुआ ।(न०) अचार। मदिरा ।

सन्धिनी—(स्त्री०) [सन्धा + इनि—ङीप्] अचार । मुरब्बा । शराब, मदिरा । उठी हुई गाय, गाभिन होने के लिये विकल गाय । वेसमय, दूसरे दिन दूध देने वाली गौ ।

सन्धिला—(स्त्री०) [सन्धि √ ला +क —टाप्] नदी । [सन्धि + लच्—टाप्] दीवाल में किया हुआ छेद । शराव ।

सन्धुक्षण—(न०) [सम्√धुक्ष् + ल्युट्] जलाना, वालना । उद्दीपन करने की क्रिया ।

सन्धुक्षित—(वि०) [सम् √ धुक्ष् + क्त] जलाया हुआ, दहकाया हुआ । भड़काया हुआ, उत्तेजित किया हुआ ।

सन्धेय—(वि०) [सम्√धा +यत्] मिलाने योग्य, जोड़ने योग्य । मिलाने या मना लेने के योग्य । सन्धि करने योग्य, जिसके साथ सन्धि की जा सके । निशाना लगाने योग्य ।

सन्ध्या—(स्त्री०) [सन्धि + यत्—टाप् वा सम्√ध्यै + अङ—टाप्] योग, मेल । प्रातः, मध्याह्न या सायं का वह समय जब दिन के भागों का मेल होता है । संधान । प्रातः या सन्ध्या का समय । युग-सन्धि । प्रातः, मध्याह्न और सायं सन्ध्योपासन कृत्य । कौल-करार, इकरार । सीमा । ध्यान, विचार । पुष्प विशेष । एक नदी का नाम । ब्रह्मा की पत्नी ।—**अभ्र** (**सन्ध्याभ्र**) —(न०) सन्ध्याकालीन मेघ जिनमें सुनहली आभा होती है । गेरू, लाल खड़िया । —**काल**— (पुं०) शाम ।—**नाटिन्**—(पुं०) शिवजी ।—**पुष्पी**— (स्त्री०) कुन्द की जाति का फूल । जायफल ।—**बल**—(पुं०) राक्षस ।—**राग**—(पुं०) सिंदूर ।—**राम** —(पुं०) ब्रह्मा जी ।—**वन्दन**—(न०) आर्यों की प्रातः-सायं की विशिष्ट उपासना, संध्योपासन ।

सन्न—(वि०) [√सद् + क्त] उपविष्ट, बैठा हुआ । उदास । ढीला । मन्द । विनष्ट । गतिहीन, स्थिर । घुसा हुआ । समीपस्थ । प्रस्थित । (न०) अल्प परिमाण । नाश, हानि । (पुं०) पियाल वृक्ष, चिरौंजी का पेड़ । —**कण्ठ**—(वि०) जिसका गला रुँध गया हो ।—**जिह्व**— (वि०) मौन ।

सन्नक—(वि०) [सन्न+कन्] ह्रस्व, बौना, खर्वाकार ।—**द्रु**—(पुं०) पियाल वृक्ष ।

सन्नतर—(वि०) [सन्न + तरप्] निम्न-स्तरीय । अत्यधिक उदासीन ।

सन्नत—(वि०) [सम्√नम् + क्त] प्रणत, झुका हुआ । ध्वनियुक्त । नीचे गया हुआ ।

सन्नति—(स्त्री०) [सम्√नम् + क्तिन्] सम्मानपूर्वक प्रणाम । विनम्रता । यज्ञ विशेष । शोरगुल ।

सन्नद्ध—(वि०) [सम्√नह् + क्त] एक साथ मिलाकर बांधा हुआ । कवच धारण किया हुआ । युद्ध के लिये प्रस्तुत । तैयार । व्याप्त; 'कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्' श० १.२१ । किसी भी वस्तु से पूर्ण रीत्या सम्पन्न । हिंसक, घातक । नजदीकी, समीप का । संलग्न । विकासोन्मुख ।

सन्नय—(पुं०) [सम्√नी + अच्] समूह । राशि । पिछाड़ी । सेना की पिछाड़ी का रक्षक दल ।

सन्नहन—(न०) [सम्√नह्+ल्युट्] तैयार होना, सन्नद्ध होना । युद्ध के लिये प्रस्तुत होना । तैयारी । सजावट । मजबूत बंधन । उद्योग ।

सन्नाह—(पुं०) [सम्√नह्+घञ्] कवच और अस्त्र-शस्त्र से सज्जित होने की

क्रिया। युद्ध करने जाने जैसी सजावट। कवच।

सन्नाह्य—(पुं०) [सम्√नह् +ण्यत्] लड़ाई का हाथी।

सन्निकर्ष—(पुं०) [सम्—नि √ कृष्+घञ्] समीप खींचना या लाना। सामीप्य; 'तथैव वातायनसन्निकर्ष ययौ शलाकामपरा वहन्ती' र० ७.८। उपस्थिति। सम्बन्ध, रिश्ता। न्याय में इन्द्रिय और विषय का सम्बन्ध जो कई प्रकार का माना गया है।

सन्निकर्षण—(न०) [सम्—नि √ कृष् +ल्युट्] समीप लाना। समीप जाना। सामीप्य।

सन्निकृष्ट—(वि०) [सम्— नि √कृष् +क्त] पास लाया हुआ। निकटस्थ। (न०) सामीप्य।

सन्निचय—(पुं०) [सम्—नि√चि +अच्] सम्यक् रूप से संचय करना। ढेर लगाना। भंडार।

सन्निधातृ—(पुं०) [सम्—नि√ धा+तृच्] समीप लाने वाला। जमा करने वाला। चोरी का माल लेने वाला। (पुं०) अदालत का पेशकार।

सन्निधान—(न०), **सन्निधि**—(पुं०) [सम् —नि√धा + ल्युट्] [सम्—नि√धा +कि] आमने-सामने की स्थिति। निकटता, समीपता। प्रत्यक्षगोचरत्व। आधार। रखना, धरना। जोड़, औसत।

सन्निपात—(पुं०) [सम्—नि √पत् +घञ्] एक साथ गिरना या पड़ना। नीचे आना, उतरना। मिलना, एकत्र होना। टक्कर, संघर्ष। संगम, संयोग। समूह, समुदाय; 'धूमज्योतिःसलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः' मे० ५। आगमन। कफ, वात और पित्त तीनों का एक साथ बिगड़ना, त्रिदोष। संगीत में समय का एक प्रकार का परिमाण। —**ज्वर**— (पुं०) त्रिदोषज ज्वर।

सन्निबन्ध—(पुं०) [सम्—नि√बन्ध् +घञ्] मजबूती से बांधना, जकड़ना। सम्बन्ध, लगाव। प्रभाव, तासीर।

सन्निभ—(वि०) [सम्—नि √भा +क] सदृश, समान।

सन्नियोग—(पुं०) [सम्—नि √युज् +घञ्] मेल, लगाव। नियुक्ति।

सन्निरोध—(पुं०) [सम्—नि√रुध् + घञ्] अड़चन, रुकावट, बाधा।

सन्निवृत्ति—(स्त्री०) [सम्—नि √वृत् +क्तिन्] फिरना (मन का)। विरक्ति। निग्रह। सहिष्णुता।

सन्निवेश—(पुं०) [सम्—नि √ विश्+घञ्] लवलीनता, संलग्नता। समूह, समाज। जुटाव, मेल। स्थान, जगह। सामीप्य। बनावट, शक्ल। झोपड़ी। यथास्थान बिठाना। बैठाना, जड़ना। चौगान, खेलने की जगह या मैदान।

सन्निहित—(वि०) [सम्—नि √धा +क्त] समीप रखा हुआ, एक साथ या पास रखा हुआ। निकटस्थ, समीपस्थ। स्थापित, जमा किया हुआ। उद्यत, तत्पर। ठहराया हुआ, टिकाया हुआ।

सन्न्यसन—(न०) [सम्— नि√अस्+ल्युट्] वैराग्य, विराग। सांसारिक वस्तुओं से पूर्ण रूप से विरक्ति। सौंपना, सुपुर्द करना।

सन्न्यस्त—(वि०) [सम्—नि√अस्+क्त] बैठाया हुआ, जमाया हुआ। जमा किया हुआ। सौंपा हुआ। फेंका हुआ। छोड़ा हुआ। अलग किया हुआ।

सन्न्यास—(पुं०) [सम्—नि √अस् +घञ्] वैराग्य। त्याग। सांसारिक प्रपञ्चों के त्याग की वृत्ति। धरोहर, थाती। पण, दाँव। शरीर-त्याग, मृत्यु। जटामाँसी। चतुर्थ आश्रम। ठहराव, शर्त। एक प्रकार का मूर्च्छा-रोग।

सन्न्यासिन्—(पुं०) [सम् — नि √अस् +णिनि] धरोहर रखने वाला व्यक्ति। वह पुरुष जिसने संन्यास धारण किया हो, चतुर्थ आश्रमी; 'ज्ञेयः स नित्यसन्न्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति' भग० ५.३। (वि०) त्याग करने वाला। भोजन-त्यागी।

√सप्—भ्वा० पर० सक० सम्मान करना, पूजन करना। मिलाना, जोड़ना। सपति, सपिष्यति, असपीत्—असापीत्।

सपक्ष—(वि०) [सह पक्षेण, ब० स०, सहस्य सः] पंखों वाला। दलबंदी वाला। [समानः पक्षेण, ब० स०, समानस्य सः] अपने पक्ष या दल का। सजातीय, सदृश। (पुं०) सजातीय व्यक्ति। [सह पक्षेण] न्याय में वह बात या दृष्टान्त जिसमें साध्य अवश्य हो।

सपत्न—(पुं०) [सह एकार्थे पतति, √पत् +न, सहस्य सः] शत्रु, वैरी, प्रतिद्वन्द्वी।

सपत्नी—(स्त्री०) [समानः पतिर्यस्याः, ब० स०, समानस्य सः, ङीप्, न आदेश] सौत।

सपत्नीक—(वि०) [सह पत्न्या, ब० स०, कप्] पत्नी सहित।

सपत्राकरण—(न०) [सह पत्रेण पक्षेण सपत्रः तथा क्रियते सपत्र+डाच् √कृ +ल्युट्] शरीर में बाण इतनी जोर से मारना कि बाण का वह भाग जिसमें पर लगे होते हैं, शरीर के भीतर घुस जाय। अत्यन्त पीड़ा उत्पन्न करना।

सपत्राकृति—(स्त्री०) [सपत्र + डाच्√कृ +क्तिन्] दे० 'सपत्राकरण'।

सपदि—(अव्य०) [सह √पद् + इन्, सहस्य सः] तत्काल, तुरन्त, फौरन।

√सपर्—क० पर० सक० पूजा करना। सपर्यति, सपर्यिष्यति, असपर्यीत्।

सपर्या—(स्त्री०) [√सपर् + यक् +अ —टाप्] पूजन, अर्चन; 'सोऽहं सपर्याविधिभाजनेन मत्वा भवन्तम् प्रभुशब्दशेषम्' र० ५.२२। सेवा, परिचर्या।

सपाद—(वि०) [सह पादेन, ब० स०, सहस्य सः] पैरों वाला। सवाया।

सपिण्ड—(पुं०) [समानः पिण्डो मूलपुरुषो निवापो वा यस्य, ब० स०] एक ही कुल का पुरुष जो एक ही पितरों को पिण्ड दान करता हो, एक ही खानदान का।

सपिण्डीकरण—(न०) [सपिण्ड + च्वि (अभूततद्भावे) √कृ+ल्युट्] किसी मृत नातेदार के उद्देश्य से किया जाने वाला श्राद्ध कर्म विशेष। [असल में यह कृत्य एक वर्ष बाद करना चाहिये; किन्तु आज कल लोग बारहवें दिन ही इसे कर डाला करते हैं।]

सपीति—(स्त्री०) [√पा+क्तिन्, पीतिः पानम्, सह एकत्र पीतिः] साथ-साथ पान करना। सहभोजन।

सपीतिका—(स्त्री०) [सह पीतया ब० स०, कप्, इत्वम्] (स्त्री०) कद्दू। लौकी।

सप्तक—(वि०) [स्त्री०—सप्तका, सप्तकी] [सप्त प्रमाणमस्य, सप्तानाम् अवयवम्, सप्तानां पूरणः, सप्तानां समूहः, सप्तन्+कन्] जिसमें सात हों। सात। सातवाँ। (न०) सात का समुदाय।

सप्तकी—(स्त्री०) [सप्तभिः स्वरैः इव कायति शब्दायते, सप्तन् √कै+क—ङीप्] स्त्री की करधनी या कमरबंद।

सप्तति—(स्त्री०) [सप्तगुणिता दशतिः नि० साधुः] सत्तर।

सप्तधा—(अव्य०) [सप्तन् + धाच्] सात प्रकार से।

सप्तन्—(संख्यावाची विशेषण) [√सप् +तनिन् (समास में नकार का लोप हो जाता है)] सात की संख्या से युक्त (त्रि०) सात की संख्या।—**अर्चिस्** (सप्तार्चिस्)—(वि०) सात जिह्वा या लौ वाला। अशुभ दृष्टि वाला। (पुं०) अग्नि। शनि।—

अशीति (सप्ताशीति)–(स्त्री०) सतासी। —अस्र (सप्तास्र)–(न०) सतकोना।–अश्व (सप्ताश्व)–(पुं०) सूर्य। सात घोड़े।— ०वाहन–(पुं०) सूर्य।—अह (सप्ताह)– (पुं०) सप्तदिवस अर्थात् सप्ताह, हफ्ता।— आत्मन् (सप्तात्मन्)–(पुं०) ब्रह्म की उपाधि।—ऋषि (सप्तर्षि)– (पुं०) मरीचि, अत्रि, अंगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ नामक सात ऋषियों का समुदाय। आकाश में उत्तर दिशा में स्थित सात तारों का समूह जो ध्रुव के चारों ओर घूमता दिखलाई पड़ता है।—चत्वारिंशत्– (स्त्री०) ४७, सैंतालीस।—जिह्व,— ज्वाल– (पुं०) अग्नि।—तन्तु–(पुं०) यज्ञ विशेष; 'सप्ततन्तुमधिगन्तुमिच्छतः कुर्वनुग्रहमनुज्ञया मम' शि० १४.६।— दशन्– (वि०) सत्रह, १७।—दीधिति –(पुं०) अग्नि।—द्वीपा–(स्त्री०) पृथिवी की उपाधि।—धातु–(पुं०) शरीर-स्थ सात धातुएँ या शरीर के संयोजक द्रव्य अर्थात् रक्त, पित्त, मांस, वसा, मज्जा, अस्थि और शुक्र।—नवति–(स्त्री०) ९७, सत्तानवे।—नाडीचक्र–(न०) फलित ज्योतिष में सात टेढ़ी रेखाओं का एक चक्र जिसमें सब नक्षत्रों के नाम भरे रहते हैं और जिसके द्वारा वर्षा का आगम बतलाया जाता है।— पर्ण– (पुं०) छतिवन का पेड़।—पदी– (स्त्री०) विवाह की एक रीति जिसमें वर और वधू गाँठ जोड़ कर अग्नि के चारों ओर सात परिक्रमाएँ करते हैं। —प्रकृति– (स्त्री०) राज्य के सात अंग [यथाः राजा, मंत्री, सामन्त, देश, कोश, गढ़ और सेना] —भद्र– (पुं०) सिरिस का पेड़। — भूमिक, —भौम–(वि०) सतमंजिला, सातखाना ऊँचा।—यम– (वि०) सात स्वरों वाला।— रक्त–(पुं०) शरीर के लाल रंग वाले सात अंग—हथेली, तलवा, नख, आँख का कोण, जीभ, ओठ और तालु।—ला–(स्त्री०) सातला। चमेली, नवमल्लिका। रीठा। गुंजा, घुँघची।— —विंशति–(स्त्री०) सत्ताइस।–शत–(न०) सात सौ। एक सौ सात —शती– (स्त्री०) ७०० पद्यों का संग्रह।—सप्ति –(पुं०) सूर्य की उपाधि।

सप्तम—(वि०) [स्त्री०—**सप्तमी**] [सप्तानां पूरणः,सप्तन्+डट्—मट्] सातवाँ।

सप्तमी—(स्त्री०) [सप्तम+ङीप्] सप्तम कारक, अधिकरण कारक। किसी पक्ष की सातवीं तिथि।

सप्ति—(पुं०) [√सप्+ति] जूआ। घोड़ा; 'जवो हि सप्तेः परमं विभूषणम्' सुभा०।

सप्रणय—(वि०) [सह प्रणयेन, ब० स०, सहस्य सः] प्यारा। मित्रता-युक्त।

सप्रत्यय—(वि०) [सह प्रत्ययेन, ब० स०] विश्वस्त। निश्चित।

सफर—(पुं०), **सफरी**–(स्त्री०) [√सप् +अरन्, पृषो० पस्य फः] [सफर+ङीष्] छोटी जाति की मछली जो चमकीले रंग की होती है।

सफल—(वि०) [सह फलेन, ब० स०] फल वाला। फल देने वाला। सार्थक। कृतकार्य, कामयाब।

सबन्धु—(वि०) [सह बन्धुना, ब० स०] घनिष्ठ सम्बन्ध युक्त। मित्र वाला। (पुं०) नातेदार, रिश्तेदार।

सबलि—(पुं०) [सह बलिना, ब० स०] गोधूलि-वेला, सायंकाल (जब बलि चढ़ायी जाती है)।

सबाध—(वि०) [सह बाधया, ब० स०] बाधा सहित। अनिष्टकर। जालिम, उत्पीडक।

सब्रह्मचारिन्—(पुं०) [समानं ब्रह्म वेद-ग्रहणकालीनं व्रतं चरति, √चर्+णिनि,

समानस्य सः] वे सहपाठी जो एक ही साथ पढ़ते हों और एक ही व्रत रखते हों। सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति।

सभा—(स्त्री०) [सह भान्ति अभीष्टनिश्चयार्थम् एकत्र यत्र गृहे, सह √भा+क—टाप्, सहस्य सः] परिषद्, गोष्ठी, समिति, मजलिस। सभा-भवन, सभा-मण्डप। न्यायालय। दरबार। द्यूतगृह, जुआड़खाना।—**आस्तार** (**सभास्तार**)—(पुं०) समासद, सदस्य।—**पति**—(पुं०) सभा का प्रधान नेता। जुआड़खाने का मालिक।—**सद्**,—**सद**—(पुं०) सदस्य। पंच।

√सभाज्—चु० उभ० सक० प्रणाम करना। सम्मान प्रदर्शित करना। प्रसन्न करना। सजाना। दिखलाना, प्रदर्शित करना। सभाजयति—ते, सभाजयिष्यति—ते, असससभाजत्—त।

सभाजन—(न०) [√सभाज् + ल्युट्] सम्मान करना। शिष्टता, नम्रता दिखलाना। परिचर्या करना।

सभावन—(पुं०) [सह भावनेन, ब० स०, सहस्य सः] शिवजी का नाम।

सभिक, सभीक—(पुं०) [सभा द्यूतसभा आश्रयत्वेन अस्ति अस्य, सभा+ठन्] [सभा प्रयोजनम् अस्य, सभा+ईक] जुए का अड्डा या जुआड़खाना चलाने वाला; 'अयमस्माकं पूर्वसभिको माथुर इत एवागच्छति' मृ० ३।

सभ्य—(वि०) [सभायां साधुः, सभा+यत्] सभा के योग्य। सामाजिक। सभ्यता का व्यवहार करने वाला। कुलीन। विनम्र। विश्वस्त, विश्वासपात्र। (पुं०) सभासद। पंच। कुलीन व्यक्ति। जुआड़खाना चलाने वाला। जुआड़खाने के मालिक का नौकर।

सभ्यता—(स्त्री०), **सभ्यत्व**—(न०) [सभ्य + तल्—टाप्] [सभ्य+त्व] सभ्य होने का भाव। सदस्यता। सुशिक्षित और सज्जन होने की अवस्था। भलमनसाहत, शराफत।

√सम्—चु० उभ० अक० विकल होना। समयति—ते, समयिष्यति—ते, अससमत्—त।

सम्—(अव्य०) [√सो + डमु] समान, तुल्य, बराबर। सारा। साधु, भला। युग्म, जोड़ा।

सम—(वि०) [√सम् + अच्] एकसा, समान, बराबर, तुल्य, सदृश। समतल, समभूमि, चौरस। जूस, (संख्या) जिसमें दो से भाग देने पर कुछ न बचे। पक्षपात-हीन ईमानदार, सच्चा। नेक। साधारण, मामूली। मध्य का, मध्यम। सीधा। उपयुक्त। उदासीन। सब, हर कोई। समूचा, सम्पूर्ण। (न०) चौरस मैदान। (अव्य०) साथ। बराबर-बराबर। उसी प्रकार। पूर्णतः एक ही समय; 'नवं पयो यत्र घनैर्मया च त्वद्विप्रयोगाश्रु समं विसृष्टं' र० १३.२६।—**अंश** (**समांश**)—(पुं०) बराबर का हिस्सा।—**अन्तर** (**समान्तर**)—(वि०) परस्पर समान या एक रूप।—**उदक** (**समोदक**)—(न०) दूध और जल की ऐसी मिलावट जिसमें समान भाग जल और समान भाग दूध का हो।—**उपमा** (**समोपमा**)—(स्त्री०) एक अलङ्कार।—**कन्या**—(स्त्री०) विवाह योग्य लड़की।—**काल**—(पुं०) एक ही समय या क्षण।—**कालीन**—(वि०) [समकाल + ख—ईन] एक ही समय में होने वाले।—**कोल**—(पुं०) साँप।—**गन्धक**—(पुं०) नकली धूप।—**चतुरस्र**—(वि०) जिसके चारों कोण बराबर हों।—**चतुर्भुज**—(पुं०) वह चतुर्भुज शक्ल जिसके चारों भुज समान हों।—**चित्त**—(वि०) वह जिसके मन की अवस्था सर्वत्र समान रहती हो, समचेता। विरक्त।—**च्छेद**,—**च्छेदन**

–(वि०) समान विभाजन वाला ।—जाति– (वि०) समान जाति वाला ।—ज्ञा–(स्त्री०) कीर्ति ।—त्रिभुज–(पुं०, न०) वह त्रिकोण जिसकी तीनों भुजाएँ समान या बराबर की हों ।— दर्शन,—दर्शिन्– (वि०) सब को एक निगाह से देखने वाला, अपक्षपाती ।—दुःख– (वि०) समवेदना रखने वाला ।—दुःख-सुख–(वि०) दुःख-सुख को समान समझने वाला । दुःख-सुख का साथी ।—दृश्,—दृष्टि–(वि०) दे० 'समदर्शिन्' ।—बुद्धि –(वि०) अपक्षपाती । विषय-विरागी ।—भाव–(पुं०)समानता, तुल्यता ।— रञ्जित–(वि०) जिसका रंग सर्वत्र एक-सा हो ।—रभ–(पुं०) एक रतिबन्ध ।—रेख–(वि०) जिसमें सीधी रेखा हो ।—लम्ब–(पुं०, न०) वह चतुर्भुज शक्ल जिसकी दो भुजाएँ समान्त-राल हों ।—वर्तिन्–(वि०) समचित्त । अपक्षपाती ।(पुं०)यमराज ।—वृत्त–(न०) वह छन्द, जिसके चारों चरण समान हों ।—वृत्ति–(वि०) स्थिर, प्रशान्त ।—वेध–(पुं०) मध्य या औसत गहराई ।—सन्धि–(पुं०) वह सुलह जो बराबर की शर्तों पर हुई हो ।—सुप्ति–(स्त्री०) वह निद्रा जिसमें समस्त चराचर निद्राभिभूत हों । ऐसा कल्प के अन्त में होता है ।—स्थ–(वि०) समान, एकसा । समतल ।—स्थल –(न०) चौरस जमीन ।—स्थली–(स्त्री०) गंगा-यमुना के बीच का भू-भाग, अंतर्वेद, दोआब ।

समक्ष—(अव्य०) [अक्ष्णः समीपम्, अव्य० स०, अच्] नेत्रों के सामने; 'तथा समक्षं दहता मनोभवं पिनाकिना भग्नमनोरथा सती' कु० ५.१ । (वि०) [समक्ष +अच्] जो आँखों के सम्मुख हो, दृष्टिगोचर ।

समग्र—(वि०) [समं सकलं यथा स्यात् तथा गृह्यते, सम √ग्रह् + ड] तमाम, समूचा, सम्पूर्ण ।

समङ्गा—(स्त्री०) [सम्√अञ्ज्+घ—टाप्] मजीठ । लाजवंती । वराहक्रांता । बाला ।

समज—(न०) [सम् √अज् + अप्] जंगल, वन । (पुं०) पशुओं का गिरोह । मूर्खों का जमाव ।

समज्या—(स्त्री०) [सम्√ अज् + क्यप् —टाप्] सभा, मजलिस । कीर्ति, प्रसिद्धि ।

समञ्जस—(वि०) [सम्यक् अञ्जः औचित्यं, यत्र ब० स०, अच् समा०]उचित, युक्ति-युक्त, उपयुक्त, बिल्कुल ठीक । स्पष्ट, बोधगम्य । भला, न्यायवान् । अभ्यस्त । अनुभवी । तंदुरुस्त, स्वस्थ । (न०) [प्रा० स०] औचित्य, उपयुक्तता । यथार्थता । सचाई । संगति । सच्चा साक्ष्य ।

समता—(स्त्री०), **समत्व**– (न०) [सम +तल् — टाप्] [सम + त्व] एकरूपता । सादृश्य, समानता । निष्पक्षता । मनः-स्थिरता । सम्पूर्णता । साधारणत्व ।

समतिक्रम—(पुं०) [सम्—अति √क्रम् +घञ्] उल्लंघन । उपेक्षा ।

समतीत—(वि०) [सम्—अति √इ+क्त] गुजरा हुआ, बीता हुआ; 'पुरुषस्य पदेष्व-जन्मनः समतीतं च भवच्च भावि च' र० ८.७८ ।

समद—(वि०) [सह मदेन, ब० स०, सहस्य सः] मतवाला, मदमाता ।

समधिक—(वि०) [सम्यक् अधिकः, प्रा० स०] बहुत अधिक । साधारण से बहुत ज्यादा ।

समधिगमन—(न०) [सम्—अधि √ गम् +ल्युट्] बढ़ जाना, आगे निकल जाना ।

समध्व—(वि०) [समानः अध्वा यस्य, ब० स०, समानस्य सादेशः, अच्] साथ-साथ यात्रा करने वाला ।

समनुज्ञात—(वि०) [सम्— अनु √ ज्ञा +क्त] पूर्णतः स्वीकृत । जिसे जाने की की आज्ञा दी गई हो । अविकार-प्राप्त ।

समन्त—(वि०) [सम्यक् अन्तो यत्र, प्रा० ब०] संपूर्ण, समग्र । (पुं०) [सम्यक् अन्तः, प्रा० स०] सीमा, हद ।—**दुग्धा**–(स्त्री०) थूहर, स्नुही ।—**पञ्चक**– (न०) कुरुक्षेत्र अथवा कुरुक्षेत्र के निकट का स्थान विशेष । —**भद्र**–(पुं०) बुद्धदेव ।—**भुज्**– (पुं०) अग्नि ।

समन्यु—(वि०) [सह मन्युना, ब० स०, सहस्य सः] क्रोधी । शोकान्वित ।

समन्वय—(पुं०) [सम्—अनु√इ + अच्] संयोग । मिलन, मिलाप । विरोध का अभाव । कार्य-कारण का प्रवाह या निर्वाह ।

समन्वित—(वि०) [सम्—अनु √इ +क्त] संयुक्त । मिला हुआ । जिसमें कोई रुकावट न हो । सम्पन्न, अन्वित । प्रभावान्वित या प्रभाव पड़ा हुआ ।

समभिप्लुत—(वि०) [सम्—अभि √प्लु +क्त] जलप्लावित, जल के बूड़े में बूड़ा हुआ । ग्रस्त ।

समभिव्याहार—(पुं०) [सम्—अभि — वि —आ√हृ+घञ्] एक साथ वर्णन या कथन । साहचर्य । अच्छी तरह कहना ।

समभिसरण—(न०) [सम्—अभि √ सृ +ल्युट्] समीप गमन । प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना ।

समभिहार—(पुं०) [सम्—अभि √ हृ + घञ्] एक साथ ग्रहण । दुहराव, पुनरावृत्ति । आधिक्य ।

समभ्यर्चन—(न०) [सम्—अभि √ अर्च् +ल्युट्] पूजन या सम्मान करना ।

समभ्याहार—(पुं०) [सम् — अभि—आ √हृ+घञ्] साथ लाना । साहचर्य ।

समय—(पुं०) [सम्√इ + अच्] काल, वक्त । मौका, अवसर । उचित समय, ठीक वक्त । प्रथा । मामूली रीति-रस्म । कवियों का निश्चय किया हुआ सिद्धान्त । सङ्केत-स्थान या कालनिरूपण । ठहराव, शर्त । कानून, नियम । आदेश । गुरुतर विषय । शपथ । सङ्केत, इशारा । सीमा । सिद्धान्त । समाप्ति, अन्त । साफल्य । दुःख की समाप्ति । —**अध्युषित** (**समयाध्युषित**)–(न०) वह समय जब न तो सूर्य और न तारागण दिखलाई पड़ें ।—**अनुवर्तिन्** (**समयानुवर्तिन्**)–(वि०)किसी प्रतिष्ठित पद्धति पर चलने वाला ।—**आचार** (**समयाचार**) –(पुं०) प्रचलित व्यवहार ।—**काम**– प्रतिज्ञा, ठहराव का इच्छुक । **क्रिया**– (स्त्री०) समय नियत करना । आपसी व्यवहार के लिये नियम बनाना । दिव्य परीक्षा की तैयारी । —**परिरक्षण**–(न०) सन्धि या किसी इकरारनामे की शर्तों पर चलने की क्रिया । समझौते का पालन ।—**व्यभिचार**–(पुं०) किसी इकरार या कौल-करार को तोड़ना ।—**व्यभिचारिन्**–(वि०) कौलकरार को भंग करने वाला ।

समया—(अव्य०) [सम् √ इ + आ] सामीप्य; 'समया सौधभित्ति' दश० । बीच में, भीतर । कालविज्ञापन ।

समर—(न०, पुं०) [सम् √ऋ+अप्] युद्ध, लड़ाई ।—**उद्देश** (**समरोद्देश**)–(पुं०), —**भूमि**– (स्त्री०) युद्ध-क्षेत्र ।—**शिरस्**– (न०) युद्ध का अगला मोरचा ।

समर्चन—(न०) [सम् √अर्च् + ल्युट्] सम्यक् प्रकार से अर्चन, पूजन करना । सम्मानकरण ।

समर्ण—(वि०) [सम्√अर्द् +क्त] पीड़ित । घायल । याचित, मांगा हुआ ।

समर्थ—(वि०) [सम् √अर्थ् + अच्] क्षम । बलवान् । निष्णात, योग्यता-सम्पन्न । योग्य, उचित; 'तद् धनुर्ग्रहणमेव राघवः प्रत्यपद्यत समर्थमुत्तरं' र० ११.७९ । तैयार

किया हुआ। समानार्थवाची। गूढार्थ-प्रकाशक। वहुत जोरदार। अर्थ से सम्वन्ध रखने वाला।

समर्थक—(वि०) [सम्√अर्थ्+ण्वुल्] समर्थन करने वाला। (न०) अगर की लकड़ी।

समर्थन—(न०) [सम√अर्थ् + ल्युट्] पुष्टि करना, ताईद करना। विवेचन करना। पक्ष ग्रहण करना। मत-भेद दूर करना, झगड़ा मिटाना। संभावना। उत्साह। सामर्थ्य, शक्ति।

समर्धक—(वि०) [सम्√ऋध् + ण्वुल्] अभीष्ट पूरा करने वाला, वरदाता।

समर्पण—(न०) [सम् √अर्प् + ल्युट्] प्रतिष्ठापूर्वक देना। नाटक में पात्रों की भर्त्सना।

समर्याद—(वि०) [सह मर्यादया, व० स०, सहस्य सः] सीमावद्ध। समीपी। चाल-चलन में सही, शिष्ट।

समल—(वि०) [सह मलेन, व० स०] मैला, गंदा, अपवित्र। पापी। (न०) [सम्यक् मलम्, प्रा० स०] विष्ठा।

समवकार—(पुं०) [सम—अव√कृ +घञ्] एक प्रकार का नाटक।(इसकी कथावस्तु का आधार किसी देवता या असुर के जीवन की कोई धटना होती है। इसमें वीररस प्रधान होता है। इसमें अक्सर देवासुर-संग्राम का वर्णन किया जाता है। इसमें तीन अङ्क होते हैं, और विमर्श सन्धि के अतिरिक्त शेष चारों सन्धियां रहती हैं। इस नाटक में विन्दु या प्रवेशक की आवश्यकता नहीं समझी जाती।)

समवतार—(पुं०) [सम्—अव√तॄ + घञ्] अवतरण, उतरने की क्रिया। उतरने की जगह, उतार। नदी आदि में उतरने की सीढ़ी, घाट।

समवस्था—(स्त्री०) [समा तुल्या अवस्था वा सम्—अव√स्था+अङ—टाप्] समान अवस्था। निर्द्धारित अवस्था। दशा, हालत।

समवस्थित—(वि०) [सम्—अव √स्था +क्त] अचल रहा हुआ। दृढ़। उद्यत।

समवाप्ति—(स्त्री०) [सम्—अव √आप् +क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि।

समवाय—(पुं०) [सम्—अव√इ + अच्] समुदाय, समूह। ढेर, राशि; 'वहूनामप्यसाराणां समवायो हि दुर्जयः' सुभा०। घनिष्ठ सम्वन्ध। (वैशेषिक दर्शन में) अटूट सम्वन्ध, नित्य सम्वन्ध, वह सम्वन्ध जो अवयवी के साथ अवयव का, गुणी के साथ गुण का अथवा जाति के साथ व्यक्ति का होता है। —**सम्वन्ध**—(पुं०) कभी न टूटने वाला संवंध।

समवायिन्—(वि०) [समवाय + इनि] जिसमें समवाय या नित्य सम्वन्ध हो। वहुगुणित। वहुल। राशिमय। —**कारण**—(न०) वह कारण जो स्वयं कार्य रूप में परिणत हो जाय। सामग्री जिससे कोई वस्तु तैयार हो, जैसे घड़े का समवायिकारण मिट्टी है।

समवेत—(वि०) [सम्—अव√ इ +क्त] एक में मिला हुआ। अटूट सम्वन्ध युक्त। संचित, जमा किया हुआ। एक श्रेणीयुक्त, किसी के साथ एक श्रेणी में आया हुआ।

समष्टि—(स्त्री०) [सम्√अश् + क्तिन्] सव का समूह, कुल एक साथ, व्यष्टि का उलटा। समवेत सत्ता।

समसन—(न०) [सम√अस् + ल्युट्] मेल, संयोग का योग, समासान्त शब्दों की वनावट। सङ्कोचन।

समस्त—(वि०) [सम्+अस् √ क्त] सव, कुल, समग्र। एक में मिलाया हुआ, संयुक्त। समास-युक्त। संक्षिप्त।

समस्या—(स्त्री०) [सम्√अस्+क्यप्—टाप्] संयोग, मेल। किसी श्लोक या छंद का

वह अन्तिम पद या टुकड़ा जो पूरा श्लोक या छंद बनाने के लिये दूसरों को दिया जाय और जिसके आधार पर पूरा श्लोक या छंद तैयार किया जाय। अपूर्ण की पूर्ति।

समा—(स्त्री०) [√सम्+अच्—टाप्] वर्ष; 'तयोश्चतुर्दशैकेन रामम्प्राव्राजयत्समाः' र० १२.६।

समांश—(वि०) [सम—अंश ब० स०] समान भाग वाला। (पुं०) [कर्म० स०] समान भाग, बराबर का हिस्सा।

समांसमीना—(स्त्री०) [समां समां विजायते प्रसूते, ख प्रत्ययेन नि० साधुः] वह गौ जो प्रतिवर्ष बच्चा दे, वर्षौढ गाय।

समाकर्षिन्—(वि०) [स्त्री०—**समाकर्षिणी**] [सम् — आ√कृष्+णिनि] आकर्षक, भली-भाँति खींचने वाला। दूर तक गन्ध फैलाने वाला। (पुं०) गन्ध जो दूर तक व्याप्त हो।

समाकुल—(वि०) [सम्यक् आकुलः, प्रा० स०] अत्यन्त घबड़ाया हुआ। परिपूर्ण। भीड़-भाड़ युक्त।

समाक्रान्त—(वि०) [सम्—आ √ क्रम्+क्त] जिस पर चढ़ाई की गई हो। काबू में लिया हुआ।

समाख्या—(स्त्री०) [सम्— आ √ ख्या+अङ—टाप्] कीर्ति, नामवरी, ख्याति। नाम, संज्ञा। व्याख्या।

समाख्यात—(वि०) [सम्—आ √ख्या+क्त] गिना हुआ, जोड़ा हुआ। भली भाँति वर्णित। घोषित। प्रख्यात, प्रसिद्ध।

समागत—(वि०) [सम् — आ√गम्+क्त] पहुँचा हुआ। साथ आया हुआ। संयुक्त, मिला हुआ।

समागति—(स्त्री०) [सम् — आ√ गम्+क्तिन्] सहआगमन। आगमन। एक-सी दशा या उन्नति।

समागम—(पुं०) [सम् — आ √गम्+घञ्] मेल, भेंट। मुठभेड़। समीप आगमन। संगति। समूह। मैथुन। (ग्रहों का) योग।

समाघात—(पुं०) [सम्—आ √हन्+घञ्] हिंसन, वध। युद्ध, लड़ाई।

समाचयन—(न०) [सम्—आ √ चि+ल्युट्] सञ्चय करण, जमा करने की क्रिया।

समाचरण—(न०) [सम्—आ √ चर्+ल्युट्] भली-भाँति आचरण करना।

समाचार—(पुं०) [सम्—आ √ चर्+घञ्] गमन, जाना। आचरण, चाल-चलन। उचित चाल-चलन या व्यवहार। संवाद, खबर, सूचना।

समाज—(पुं०) [सम् √ अज् + घञ्] सभा, मजलिस। गोष्ठी। संस्था। समूह। दल। हाथी।

समाज्ञा—(स्त्री०) [सम्—आ √ ज्ञा+अङ—टाप्] कीर्ति, ख्याति।

समादान—(न०) [सम् — आ√ दा+ल्युट्] पूर्ण रूप से ग्रहण करना। उपयुक्त दान पाना। जैनियों का आह्निक कृत्य विशेष।

समाधा—(स्त्री०) [सम्—आ √ धा+अङ—टाप्] दे० 'समाधान'।

समाधान—(न०) [सम्—आ √ धा+ल्युट्]मिलान करना। मन को ब्रह्म में लगाना। ध्यान। समाधि। एकाग्रता। चित्त की शान्ति। शङ्कानिरसन, पूर्वपक्ष का उत्तर। प्रतिज्ञा-करण। (नाटक में) कथा-भाग की मुख्य घटना।

समाधि—(पुं०) [सम्—आ √ धा+कि] (मन की) एकाग्रता। ध्यान विशेष; 'आत्मेश्वराणां न हि जातु विघ्नाः समाधिभेदप्रभवो भवन्ति' कु० ३.४१। तप। मिलाना, जोड़ना। समाधान करना। शान्ति,

निस्तब्धता । वचनदान । त्याग । सम्पन्न करने की क्रिया । कठिन समय में धैर्य धारण । असम्भव कार्य करने का प्रयत्न । अन्न बाँटना । दुर्भिक्ष के लिये अन्न जमा करना । शव को मिट्टी में गाड़ना, कब्र देना । गरदन का भाग या जोड़ विशेष । अलंकार विशेष जिसकी परिभाषा यह है —'समाधिः सुकरं कार्यं कारणान्तरयोगतः' —मम्मट ।

समाध्मात—(वि०) [सम्—आ √ ध्मा +क्त] फूंका हुआ । फुलाया हुआ । अत्यंत गर्वित ।

समान—(वि०) [सम्√अन् + अण्] तुल्य, सदृश, एकसा; 'समानशीलव्यसनेषु सख्यम्' सुभा० । नेक, भला । साधारण । [सह मानेन, ब० स०, सहस्य सः] सम्मानित । (पुं०) [सम्√अन् + अण्] बराबर वाला मित्र । [सम् √ अन्+णिच्+अण्] शरीरस्थ पांच पवनों में से एक । यह नाभि के पास रहता है और अन्न आदि पचाने के लिये आवश्यक माना गया है । **अधिकरण** (**समानाधिकरण**)—(न०) एक ही कारक की विभक्ति से युक्त होना । समान श्रेणी । समान आधार आदि । (वि०) समान कारक विभक्ति से युक्त । एक ही श्रेणी का। जिनका आधार एक ही पदार्थ हो (वैशेषिक) । जो समान स्थान पर हो ।—**अर्थ** (**समानार्थ**)–(वि०) एक अर्थ वाला । —**उदक** (**समानोदक**)– (पुं०) ऐसा सम्बन्धी जिसे तर्पण में दिया हुआ जल मिले । चौदहवीं पीढ़ी के बाद समानोदक सम्बन्ध समाप्त हो जाता है । —**उदर्य** (**समानोदर्य**)–(वि०) [समाने उदरे भवः, यत् प्रत्ययः, विकल्पेन न सादेशः] सगा भाई । —**उपमा** (**समानोपमा**)–(स्त्री०) उपमा का एक प्रकार जिसमें उच्चारण की दृष्टि से एक ही शब्द भिन्न प्रकार से खंड करने पर भिन्न अर्थों का द्योतक होता है ।

समानयन—(न०) [सम्—आ √ नी +ल्युट्] आदरपूर्वक ले आना । राशीकरण, एकत्री-करण ।

समाप—(पुं०) [समा आपो यस्मिन् ब० स०, अच् समा०] देवताओं को बलि या भेंट चढ़ाने का स्थान ।

समापत्ति—(स्त्री०) [सम्—आ √ पद् +क्तिन्] मिलन, भेंट । संयोग, इत्तिफ़ाक । मूल रूप ग्रहण करना । समाप्ति । वशीभूत होना ।

समापक—(वि०) [[स्त्री०—**समापिका**] [सम्√आप् + ण्वुल्] पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला ।

समापन—(न०) [सम् √आप् + ल्युट्] समाप्ति करने की क्रिया, सम्पूर्णता । उपलब्धि । हिंसन, नाशन । अध्याय । समाधि ।

समापन्न—(वि०) [सम्—आ √ पद् +क्त] पाया हुआ, उपलब्ध किया हुआ । घटित । आया हुआ । पहुँचा हुआ । समाप्त किया हुआ । विज्ञ । सम्पन्न । पीड़ित । हत, मारा हुआ ।

समापादन—(न०) [सम्—आ √ पद् +णिच् +ल्युट्] पूर्ण करने की क्रिया । मूल रूप देना ।

समाप्त—(वि०) [सम्√आप् + क्त] पूरा किया हुआ, पूर्ण किया हुआ । चतुर, चालाक ।—**पुनरात्तता**– (स्त्री०) एक काव्य-दोष; जहाँ वाक्य समाप्त करके पीछे फिर से उस वाक्य का ग्रहण किया जाता है वहां यह दोष लगता है ।

समाप्ताल—(पुं०) [समाप्ताय अलति पर्याप्नोति, समाप्त √अल् + अच्] स्वामी, पति ।

समाप्ति—(स्त्री०) [सम्√आप् + क्तिन्] अन्त, अवसान। पूर्णता। झगड़ों का निपटारा।

समाप्तिक—(वि०) [समाप्ति +ठन्] अन्तिम। ससीम, परिच्छिन्न। सम्पूर्ण कर चुकने वाला। (पुं०) समापक, पूर्ण करने वाला व्यक्ति। वेदाध्ययन पूर्ण कर चुकने वाला ब्रह्मचारी।

समाप्लुत—(वि०) [सम्—आ √ प्लु +क्त] जल की बाढ़ में डूबा हुआ। परिपूर्ण।

समाभाषण—(न०) [सम्—आ √ भाष् +ल्युट्] वार्तालाप, संभाषण; 'कश्चिद् विवृत्तत्रिकभिन्नहारः सुहृत्समाभाषणतत्परोऽभूत्' र० ६.१६।

समाम्नान—(न०) [सम्—आ √ म्ना +ल्युट्] पुनरावृत्ति। गणना। परंपरागत प्राप्त पाठ।

समाम्नाय—(पुं०) [सम्—आ √ म्ना +य] परंपरागत पाठ। परम्परागत (शब्द) संग्रह। शास्त्र। योग, जोड़। समह (यथा अक्षरसमाम्नाय)।

समाय—(पुं०) [सम्—आ√इ + अच्] आगमन। भेंट, मुलाकात।

समायत—(वि०) [सम्—आ √ यम् +क्त] बाहर खींचा हुआ। बढ़ाया हुआ, लंबा किया हुआ।

समायुक्त—(वि०) [सम्—आ √ युज् +क्त] जोड़ा हुआ, सम्बन्धयुक्त। अनुरक्त। तैयार किया हुआ। अन्वित, सम्पन्न। नियुक्त किया हुआ।

समायुत—(वि०) [सम्—आ√यु + क्त] जोड़ा हुआ, मिलाया हुआ। जमा किया हुआ। सम्पन्न किया हुआ।

समायोग—(पुं०) [सम्—आ√युज् + घञ्] संयोग। समागम। सम्बन्ध। तैयारी। धनुष पर बाण रखना। ढेर। राशि। कारण, हेतु। उद्देश्य।

समारम्भ—(पुं०) [सम्—आ√रभ् + घञ्, मुम्] आरम्भ, शुरुआत। उद्योग। साहसिक कार्य। अंगराग।

समाराधन—(न०) [सम्—आ √ राध् +ल्युट्] सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना। सन्तुष्ट करने का साधन। परिचर्या, सेवा; 'सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्' र० २.५।

समारोपण—(न०) [सम्—आ √ रुह् +णिच्, पुक् + ल्युट्] आरोप करना। स्थानान्तरण। सौंपना। रखना।

समारोपित—(वि०) [सम्—आ √ रुह् +णिच्, पुक् +क्त] ऊपर चढ़ाया हुआ। ताना हुआ (धनुष)। धरोहर रखा हुआ। स्थापित किया हुआ। हवाले किया हुआ, सौंपा हुआ।

समारोह—(पुं०) [सम्—आ√रुह् + अप्] ऊपर चढ़ना। ऊपर जाना। (घोड़े या किसी के ऊपर) सवार होना। राजी होना, मान लेना। धूम-धाम।

समालम्बन—(न०) [सम्—आ √ लम्ब् +ल्युट्] टेक या सहारा लेना।

समालम्बिन्—(वि०) [सम्—आ √ लम्ब् णिनि] सहारा लेने वाला। लटकने वाला। (न०) भू-तृण।

समालम्भ—(पुं०), **समालम्भन**—(न०) [सम्—आ√लभ् + घञ्, मुम्] [सम्—आ √लभ् +ल्युट्, मुम्] पकड़ना। बलिदान के लिये पशु को पकड़ने की क्रिया। शरीर पर लेप करना; 'मङ्गलसमालम्भनं विरचयाव:' श० ४।

समाली—(स्त्री०) गुलदस्ता।

समावर्तन—(न०) [सम्—आ√ वृत् +ल्युट्] लौटना, प्रत्यावर्तन। वेदाध्ययन समाप्त कर ब्रह्मचारी का गुरुकुल से घर लौट आना।

समावाय—(पुं०) [सम्—आ — अव√इ +अच्] सम्बन्ध, लगाव । अटूट सम्बन्ध । समूह, समुदाय । राशि, ढेर ।

समावास—(पुं०) [सम्यक् आवासः, प्रा० स०] बासा, रहने का स्थान ।

समाविष्ट—(वि०) [सम्—आ √ विश् +क्त] भली-भांति घुसा हुआ । भली तरह व्याप्त । वश में किया हुआ । घेरा हुआ । भूताविष्ट । अन्वित, युक्त । निर्धारित किया हुआ । भली-भाँति शिक्षा दिया हुआ ।

समावृत—(वि०) [सम्—आ √वृ + क्त] घिरा हुआ । पर्दा पड़ा हुआ । छिपाया हुआ । रक्षित । निकाला हुआ । रोका हुआ ।

समावृत्त, समावृत्तक—(पुं०) [सम्—आ √वृत्+क्त] [समावृत्त+कन्] वह ब्रह्मचारी जो गुरुकुल में वास कर और विद्याध्ययन पूर्ण कर घर लौट आया हो ।

समावेश—(पुं०) [सम्—आ √ विश् +घञ्] एक साथ या एक जगह रहना । एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के अन्तर्गत होना । चित्त को किसी एक ओर लगाना । एक साथ रखना । भूत का आवेश । क्रोध ।

समाश्रय—(पुं०) [सम्—आ√श्रि+अच्] रक्षा, पनाह । रक्षा-स्थान, आश्रय-स्थल । निवास-स्थान ।

समाश्लेष—(पुं०) [सम्—आ √ श्लिष् + घञ्] आलिङ्गन ।

समाश्वास—(पुं०) [सम्—आ √ श्वस् +घञ्] दम में दम आना, किसी कठिनाई से पार पाकर दम लेना । भरोसा, आसरा । विश्वास ।

समाश्वासन—(न०) [सम्—आ √ श्वस् +णिच्+ल्युट्] ढाढ़स बँधाना । उत्साहित करना, आश्वासन देना । आश्वासन ।

समास—(पुं०) [सम्√अस् + घञ्] योग, मेल । संक्षेप; 'एषा धर्मस्य वो योनिः समासेन प्रकीर्तिता' मनु० २.२५ । समर्थन । समाहार, एकत्रकरण । व्याकरण में दो अथवा अधिक पदों को एक बनाने वाला विधान विशेष ।—**अर्था** (**समासार्था**) –(स्त्री०) समस्या । जिसका अर्थ थोड़े में कहा जाय ।—**उक्ति**—(**समासोक्ति**) –(पुं०) अर्थालङ्कार विशेष ।

समासक्ति—(स्त्री०), **समासङ्ग**– (पुं०) [सम्—आ√सञ्ज् + क्तिन्] [सम्—आ √सञ्ज्+घञ्] संयोग, मेल । स्थापन । सम्बन्ध ।

समासर्जन—(न०) [सम्—आ √ सृज् +ल्युट्] पूर्ण रीत्या त्यागना । दे देना ।

समासादन—(न०) [सम्—आ √ सद् +णिच्+ल्युट्] समीपागमन । पाना । मिलना । पूर्ण करना, सम्पन्न करना ।

समाहरण—(न०) [सम्—आ√हृ +ल्युट्] मिलाना । जमा करना, ढेर करना ।

समाहर्तृ—(वि०) [सम्—आ √हृ+तृच्] एकत्र करने या जमा करने का आदी । वसूल करने वाला ।

समाहार—(पुं०) [सम्—आ √ हृ+घञ्] संग्रह । समूह । शब्दों की रचना । शब्दों या वाक्यों को एक करने की क्रिया । द्वन्द्व और द्विगु समासों का भेद विशेष । संक्षिप्तकरण, सङ्कोचन ।

समाहित—(वि०) [सम्—आ √ धा+क्त] एकत्र किया हुआ । तय किया हुआ । शान्त (चित्त) । स्वस्थ । एकाग्र । लवलीन । समाप्त किया हुआ । कौल-करार किया हुआ । सुपुर्द किया हुआ । दवाया हुआ (स्वर) ।

समाहृत—(वि०) [सम्—आ√ हृ +क्त] संग्रह किया हुआ । एक जगह किया हुआ । विपुल, बहुत । प्राप्त । संक्षिप्त किया हुआ ।

समाहृति—(स्त्री०) [सम्—आ√हृ+क्तिन्] संग्रह । संक्षेप ।

समाह्वय—(पुं०) [सम्—आ√ह्वे + अच् वा घ, वाहुलकात् नात्वम्] चुनौती, ललकार। युद्ध, संग्राम। लड़ाई जो केवल दो आदमियों में हो (समूह बाँध कर नहीं)। जानवरों की लड़ाई जो आमोद-प्रमोद के लिये हो। जानवरों की लड़ाई पर बाजी लगाना। नाम, संज्ञा।

समाह्वा—(स्त्री०) [समा आह्वा यस्याः, ब० स०] गोजिह्वा वृक्ष। [प्रा० स०] नाम, संज्ञा।

समाह्वान—(न०) [सम्—आ√ह्वे+ल्युट्] सम्यक् प्रकार से आह्वान, बुलौआ। ललकार, रणनिमंत्रण।

समिक—(न०) [सम्√इ + डि, समि +कन्] भाला, बरछा। बल्लम।

समित्—(स्त्री०) [सम्√इ+क्विप्] संग्राम, लड़ाई।

समिता—(स्त्री०) [सम्√इ + क्त—टाप्] गेहूँ का आटा।

समिति—(पुं०) [सम्√इ +क्तिन्] सभा। झुंड। लड़ाई, समर; 'समितौ रमसादुपागतं सगदः सम्प्रतिपत्तुमर्हसि' शि०१६.१३। सादृश्य, समानता। शान्ति। सन्तोष। सहनशीलता।

समितिञ्जय—(वि०) [समिति√जि +खच्, मुम्] युद्धविजयी। सभाविजयी। (पुं०) विष्णु। यम।

समिथ—(पुं०) [सम् √इ + थक्] युद्ध, लड़ाई। अग्नि। आहुति।

समिद्ध—(वि०) [सम्√इन्ध् +क्त] जलाया हुआ, प्रज्वलित। आग लगाया हुआ, फूंका हुआ। भड़काया हुआ।

समिध्—(स्त्री०) [सम्√इन्ध् + क्विप्] लकड़ी, ईंधन। हवन में जलाई जाने वाली लकड़ी; 'तत्राग्निमाधाय समित्समिद्धम्' कु० १.५७।

समिध—(पुं०) [सम्√इन्ध् +क] अग्नि। लकड़ी।

समिन्धन—(न०) [सम्√इन्ध् + ल्युट्] जलना। ईंधन, लकड़ी।

समिर—(पुं०) [=समीर,पृषो०साधुः] वायु।

समीक—(न०) [√सम् + ईकक्] युद्ध, लड़ाई।

समीकरण—(न०) [असमः समः क्रियतेऽनेन, सम+च्वि √ कृ+ल्युट्] असम को सम करना। बीजगणित में अनजानी हुई संख्याओं को जानने की एक प्रक्रिया। सांख्य दर्शन।

समीक्ष—(न०) [सम् √ ईक्ष्+घञ्] सांख्य दर्शन।

समीक्षा—(स्त्री०) [सम्√ईक्ष् + अ—टाप्] खोज, अनुसंधान। विचार। भलीभांति पर्यवेक्षण या मुआयना। समालोचना। समझ, बुद्धि। सत्यप्रकृति या नैसर्गिक सत्य। मुख्य सिद्धान्त। मीमांसा दर्शन।

समीच—(पुं०) [सम्√इ + चट्, कित्, दीर्घ] समुद्र। संयोग।

समीचक—(पुं०) [समीच + कन्] संयोग। संभोग।

समीची—(स्त्री०) [समीच +ङीप्] मृगी, हिरनी। प्रशंसा, तारीफ।

समीचीन—(वि०) [सम् √ अञ्च्+क्विन् +ख—ईन] यथार्थ, सत्य। उचित, वाजिब। न्याय-संगत।

समीद—(पुं०) मैदा, गेहूँ का अति महीन आटा।

समीन—(वि०) [समाम् अधीष्टो मृतो भूतो भावी वा, समा+ख] वार्षिक, सालाना। एक वर्ष के लिये भाड़े पर लिया हुआ। एक वर्ष का।

समीनिका—(स्त्री०) [समां प्राप्य प्रसूते, समा+ख—ईन + कन्—टाप्, इत्व] प्रतिवर्ष व्याने वाली गाय।

समीप—(वि०) [सङ्गता आपो यत्र, अच् समा०, आत ईत्वम्] निकट, पास; (न०) निकटता, सामीप्य ।

समीर—(पुं०) [सम्√ईर्+अच्] वायु । शमी वृक्ष ।

समीरण—(पुं०) [सम्√ईर् + ल्यु] वायु। शरीरस्थ वायु; 'समीरणो नोदयिता भवेति व्यादिश्यते केन हुताशनस्य' कु० ३.२१ । यात्री, पथिक । मरुवा का पौधा ।

समीहा—(स्त्री०) [सम्√ईह् + अ—टाप्] अभिलाष । उद्योग । अनुसन्धान । कामना । वाञ्छा ।

समीहित—(वि०) [सम√ईह्+ क्त] अभिलषित । चेष्टित । आरब्ध । (न०) अभिलाष । चेष्टा ।

समुक्षण—(न०) [सम्√उक्ष्+ल्युट्] अच्छी तरह सींचने की क्रिया ।

समुच्चय—(पुं०) [सम्—उद्√चि +अच्] राशि । समूह । समाहार । आपस में अनपेक्षित बहुत से शब्दों का एक क्रिया में अन्वय । अलङ्कार विशेष ।

समुच्चर—(पुं०) [सम्– उद्√चर् +अच्] ऊपर चढ़ना, आरोहण । पार करना ।

समुच्छेद—(पुं०) [सम्— उद् √ छिद् +घञ्] पूर्णरीत्या नाश । जड़ से नाश, उन्मूलन ।

समुच्छ्रय—(पुं०) [सम्—उद्√श्रि+अच्] ऊपर उठना, उत्थान । ऊँचाई । विरोध, शत्रुता । वृद्धि । उच्च पद । पर्वत ।

समुच्छ्राय—(पुं०) [सम्—उद् √ श्रि +घञ्] ऊँचाई ।

समुच्छ्वसित—(न०), **समुच्छ्वास**—(पुं०) [सम्—उद् √ श्वस्+क्त] [सम्—उद् √श्वस्+घञ्] गहरी, लंबी साँस ।

समुज्झित—(वि०) [सम्√उज्झ् + क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । मुक्त किया हुआ ।

समुत्कर्ष—(पुं०) [सम्—उद्√कृष् + घञ्] उन्नति, बढ़ती । अपनी जाति से ऊँची किसी अन्य जाति में जाना ।

समुत्क्रम—(पुं०) [सम्—उद् √ क्रम्+घञ्] ऊपर चढ़ना, उन्नति करना । सीमोल्लङ्घन, मर्यादा लाँघना ।

समुत्क्रोश—(पुं०) [सम्—उद् √ क्रुश् +घञ्] चिल्लाना । विकट कोलाहल । [सम्–उद्√क्रुश्+अच्]कुररी नामक पक्षी।

समुत्थ—(वि०) [सम्—उद्√स्था + क] उठा हुआ, उन्नत । निकला हुआ, उत्पन्न; 'अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः' र० २.७५ ।

समुत्थान—(न०) [सम्— उद् √ स्था +ल्युट्] उठान, उत्थान ।(मर कर) जी उठना । पूर्णरीत्या आरोग्य । (घाव का) पुरना । रोग का लक्षण । उद्योग-धंधे में लगाना ।

समुत्पतन—(न०) [सम्— उद् √ पत् +ल्युट्] खूब ऊपर उड़ना । उद्योग ।

समुत्पत्ति—(स्त्री०) [सम्— उद् √ पद् +क्तिन्] पैदायश, उत्पत्ति । घटना ।

समुत्पिञ्ज, समुत्पिञ्जल—(वि०) [सम् —उद्√पिञ्ज् + अच्] [सम् – उद् √पिञ्ज्+कलच्] अत्यन्त गड़बड़ाया हुआ, अस्त-व्यस्त । (पुं०) सेना जो हड़बड़ी में अस्त-व्यस्त हो गयी हो । बड़ी भारी गड़बड़ ।

समुत्सव—(पुं०) [प्रा० स०] बड़ा उत्सव ।

समुत्सर्ग—(पुं०) [सम्—उद्√सृज् +घञ्] त्याग । विराग । गिरना, गिराव । मल का त्याग ।

समुत्सारण—(न०) [सम्—उद्+सृ +णिच् + ल्युट्] हँका देना, भगा देना । पीछा करना । शिकार करना ।

समुत्सुक—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त अधीर या इच्छुक । शोकान्वित ।

समुत्सेध—(पुं०) [सम्—उद् √ सिध् +घञ्] ऊँचाई । मोटापन । गाढ़ापन ।

समुदक्त—(वि०) [सम्— उद् √ अञ्ज् +क्त] (कुएँ से जैसे) खींचा हुआ, निकाला हुआ ।

समुदय—(पुं०) [सम्—उद् √इ + अच्] उठने या उदित होने की क्रिया । विकास । संग्रह । समूह । राशि । योग, मिलावट । राजस्व । उद्योग । लड़ाई । दिवस । सेना का पिछला भाग । लग्न । पूर्णांश ।

समुदागम—(पुं०) [सम्—उद्—आ √गम् +घञ्] पूर्णज्ञान ।

समुदाचार—(पुं०) [सम् —उद् —आ √चर् +घञ्] उचित अभ्यास या व्यवहार । संबोधन करने का उपयुक्त विधान । अभिप्राय । मतलब ।

समुदाय—(पुं०) [सम्—उद्√अय् +घञ्] समूह । झुंड । युद्ध । सेना का पिछला भाग । उदय । उन्नति । शरीर के तत्त्वों का समाहार । रक्षित सेना ।

समुदाहरण—(न०) [सम्—उद् —आ √हृ+ल्युट्]कथन, उच्चारण । उदाहरण, मिसाल ।

समुदित—(वि०) [सम्—उद् √इ +क्त] ऊपर गया हुआ, ऊपर चढ़ा हुआ । ऊँचा, उन्नत । उत्पन्न; 'मद्भाग्योपचयादयं समुदितः सर्वो गुणानां गणः' सुभा० । समवेत, मिला हुआ । सम्पन्न, युक्त । [सम्√वद् +क्त] अच्छी तरह कहा हुआ ।

समुदीरण—(न०) [सन्—उद् √ ईर् +ल्युट्] अच्छी तरह कहना । दुहराना ।

समुद्ग—(वि०) [सम्—उद् √ गम् +ड] ऊपर उठने वाला । ढक्कन वाला । छीमी वाला (पुं०) ढक्कनदार पिटारा या टोकरी । यमक का एक प्रकार ।

समुद्गक—(पुं०) [समुद्ग+कन्] ढक्कनदार पेटी या टोकरी । श्लोक विशेष ।

समुद्गम—(पुं०) [सम्—उद् √ गम् +घञ्] उठना । उगना । निकलना । उत्पत्ति ।

समुद्गिरण—(न०) [सम्—उद् √गॄ+ल्युट्]वमन, उगलन । उगली हुई चीज । उठाना, ऊपर करना ।

समुद्गीत—[सम्—उद्√गै+क्त] उच्चस्वर का गीत या राग ।

समुद्गीर्ण—(वि०) [सम्—उद्√गॄ +क्त] उगला हुआ । उठाया हुआ । कहा हुआ । पाला हुआ ।

समुद्देश—(पुं०) [सम्—उद्√दिश् +घञ्] पूर्णरीत्या बतलाना । पूर्ण वर्णन । अभिप्राय ।

समुद्धत—(वि०) [सम्—उद्√हन्+ क्त] ऊपर उठा या उठाया हुआ, ऊपर किया हुआ । उत्तेजित, उभाड़ा हुआ । अभिमान में चूर, अकड़ा हुआ । बुरे तौर-तरीके का, दुष्ट व्यवहार करने वाला । अशिष्ट, उजड्ड ।

समुद्धरण—(न०) [सम्—उद्√हृ +ल्युट्] ऊपर करना । उठा लेना । ऊपर खींच लेना । उद्धार करना । मुक्ति, छुटकारा । मूलोच्छेदन । (समुद्र-तट से) निकाल लेना । भोजन जो वमन द्वारा निकल पड़ा हो ।

समुद्धर्तृ—(वि०) [सम्—उद्√हृ +तृच्] उठाने वाला । उद्धार करने वाला । उन्मूलन करने वाला ।

समुद्भव—(पुं०) [सम्—उद् √भू+अप्] उत्पत्ति । पुनरुज्जीवन । कार्य विशेष में हवन के समय अग्नि का रखा जाने वाला एक नाम ।

समुद्यम—(स्त्री०) [सम्—उद् √ यम् +घञ्] ऊपर उठाना । महान् उद्योग; 'कर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे' भग० १.२२ । उद्योगारम्भ । आक्रमण, चढ़ाई ।

समुद्योग—(पुं०) [सम्—उद्√युज्+घञ्] पूरी चेष्टा, क्रियात्मक उद्योग।

समुद्र—(वि०) [सह मुद्रया, ब० स० सहस्य सः] मोहर से बंद, मोहर वाला, मोहर लगा हुआ। (पुं०) [सम्√उन्द् + रक् वा सम्—उद्√रा+क] सागर। शिव। चार की संख्या।—**अन्त** (**समुद्रान्त**)—(न०) समुद्रतट। जायफल।—**अन्ता** (**समुद्रान्ता**)—(स्त्री०) पृथिवी। कपास। जवासा। पृक्का। दुरालभा।—**अम्बरा** (**समुद्राम्बरा**)—(स्त्री०) पृथिवी।—**आरु** (**समुद्रारु**)—(पुं०) मगर। बृहदाकार मत्स्य विशेष। श्रीराम जी का बाँधा हुआ समुद्र, सेतुबंध।—**कफ**, —**फेन**—(पुं०) समुद्र का फेन।—**ग**—(पुं०) समुद्री देशों में व्यापार करने वाला।—**गा**—(स्त्री०) नदी। —**गृह**—(न०) जल के भीतर बनाया हुआ ग्रीष्म-भवन।—**चुलुक**—(पुं०) अगस्त्य जी का नामान्तर। —**नवनीत**— (न०) चन्द्रमा। अमृत। —**मेखला**, —**रसना**— (स्त्री०) पृथिवी। —**यान** —(न०) समुद्रयात्रा। जहाज, पोत।—**यात्रा**—(स्त्री०) समुद्री सफर।—**योषित्**—(स्त्री०) नदी।—**वह्नि**—(पुं०) बड़वानल।—**सुभगा**— (स्त्री०) गङ्गा नदी।

समुद्वह—(पुं०) [सम्—उद्√वह्+अच्] ढोने वाला। उठाने वाला।

समुद्वाह—(पुं०) [सम्—उद्√वह्+घञ्] वहन, ढुलाई। विवाह, शादी; 'समुद्वाहे समुल्लासो जनमानसे विलसतितराम्' सुमा०।

समुद्वेग—(पुं०) [सम्—उद्√विज्+घञ्] बड़ा क्षोभ। त्रास।

समुन्दन—(न०) [सम्√उन्द् + ल्युट्] गीला होना, तर होना। गीलापन, आर्द्रता।

समुन्न—(वि०) [सम्√ उन्द् + क्त] गीला, नम, तर, आर्द्र।

समुन्नत—(वि०) [सम्—उद् √नम+क्त] ऊपर उठाया हुआ। ऊँचा। श्रेष्ठ। अभिमानी। आगे निकला हुआ। ईमानदार, न्यायी।

समुन्नति—(स्त्री०) [सम्—उद् √ नम् +क्तिन्] उठान। ऊँचाई। उच्चपद। प्रधानता। अभ्युदय, समृद्धि; 'प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्यसमुन्नतिं यया' कि० २.२१। अभिमान।

समुन्नद्ध—(वि०) [सम्—उद्√नह्+क्त] उठा हुआ, उन्नत। सूजा हुआ। भरा हुआ। अभिमानी। पण्डितम्मन्य। बिना बेड़ियों का, मुक्त, खुला हुआ।

समुन्नय—(पुं०) [सम्—उद्√नी + अच्] प्राप्ति, उपलब्धि। घटना। निष्कर्ष। अनुमान।

समुन्मूलन—(न०) [प्रा० स०] जड़ से उखाड़ना, नाश।

समुपगम—(पुं०) [सम्—उप √गम्+अप्] समीप जाना। लगाव, संस्पर्श।

समुपजोषम्—(अव्य०) [सम्—उप √ जुष् +अमु] अत्यन्त आनन्द।

समुपभोग—(पुं०) [प्रा० स०] मैथुन।

समुपवेशन—(न०) [सम्—उप√विश् +ल्युट्] इमारत, भवन। बस्ती। बैठना।

समुपस्था—(स्त्री०), **समुपस्थान**—(न०) [सम्—उप √ स्था + अङ—टाप्] [सम्—उप √ स्था+ल्युट्] निकट जाना। पहुँच। समीपता, नैकट्य। होना, घटना।

समुपस्थिति—(स्त्री०) [सम्—उप √स्था +क्तिन्] समीपता, नैकट्य। हाजिरी, होना, उपस्थिति।

समुपार्जन—(न०) [सम्—उप √ अर्ज् +ल्युट्] एक साथ एक समय में प्राप्ति।

समुपेत—(वि०) [सम्—उप√इ + क्त] निकट आया हुआ। अन्वित, सम्पन्न, युक्त। एकत्रीभूत।

समुपोढ—(वि०) [सम्—उप √ वह् √क्त] ऊँचा उठा हुआ। बढ़ा हुआ। समीप लाया हुआ। रोका हुआ। दिया हुआ। आरम्भ किया हुआ।

समुल्लास—(पुं०) [सम्—उद् √ लस् +घञ्] अत्यधिक चमक। महान् हर्ष। क्रीड़ा। ग्रन्थ का परिच्छेद।

समुल्लेख—(पुं०) [सम्—उद् √ लिख् +घञ्] पैर आदि से मिट्टी खोदना। उत्सादन, उन्मूलन।

समूढ—(वि०) [सम्√ऊह् वा √ वह् +क्त] एकत्र किया हुआ, जमा किया हुआ। वहन किया हुआ। लपेटा हुआ। सहित। युक्त। संगत। व्यवस्थित। शोधित। कुटिल। विवाहित। तुरन्त का उत्पन्न। शान्त किया हुआ, चुप किया हुआ। मोड़ा हुआ।

समूर, समूरु, समूरक—(पुं०) [सङ्गतौ सन्विहीनत्वात् ऊरू यस्य, प्रा० ब०, पक्षे पृषो० साधुः] एक प्रकार का मृग, साबर हिरन।

समूल—(वि०) [सह मूलेन, ब० स०] जड़ समेत, मूल-युक्त।

समूह—(पुं०) [सम्√ऊह् + घञ्] संग्रह, ढेर। गिरोह, झुंड। समुदाय।

समूहन—(न०) [सम् √ऊह् + ल्युट्] बुहारना। एकत्रीकरण। राशि, ढेर।

समूहनी—(स्त्री०) [समूहन + ङीप्] झाड़ू, बुहारी।

समूह्य—(पुं०) [सम्√ऊह् + ण्यत्] यज्ञिय अग्नि। यज्ञाग्नि का संस्कार विशेष। (वि०) अच्छी तरह ऊह या तर्क करने योग्य। बुहारने योग्य।

समृद्ध—(वि०) [सम्√ऋध् +क्त] फलता-फूलता हुआ, भरापूरा। प्रसन्न, सुखी। धनी, सम्पत्तिशाली। सफल। बहुल।

समृद्धि—(स्त्री०) [सम् √ऋध् + क्तिन्] बढ़ती, उन्नति। धन-दौलत का होना। धनदौलत; 'अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः' सुभा०। विपुलता, बाहुल्य। सामर्थ्य, शक्ति।

समेत—(वि०) [सम्—आ√इ + क्त] एकत्रित। मिला हुआ। पास आया हुआ। सहित, अन्वित, युक्त। संघर्षित, टकराया हुआ। कौल-करार किया हुआ।

सम्पत्ति—(स्त्री०) [सम्√पद्+क्तिन्] अभ्युदय, समृद्धि। ऐश्वर्य। धन-दौलत। सफलता, कामयाबी। पूर्णता, सम्पन्नता। बाहुल्य, विपुलता।

सम्पद्—(स्त्री०) [सम्√पद् + क्तिन्] धनदौलत। समृद्धि। सौभाग्य। सफलता। पूर्णता। धन का भाण्डार। लाभ। बाहुल्य। सद्गुणों की वृद्धि। गौरव। सौन्दर्य। सजावट। ठीक ढङ्ग या कायदा। मोती का हार। —**वर**-(पुं०) राजा।

सम्पन्न—(वि०) [सम्√पद् + क्त] समृद्धिमान्, भरा-पूरा। भाग्यवान्। पूर्ण किया हुआ, सम्पन्न किया हुआ। पूर्ण, निष्णात। पूरा बढ़ा हुआ। पाया हुआ, प्राप्त। सही, ठीक। युक्त, सहित। (न०) धन-दौलत। रुचिकर खाद्य, सुखाद्य पदार्थ। (पुं०) शिव।

सम्पराय—(पुं०) [सम्—परा √इ +अच्] लड़ाई, मुठभेड़। संकट, आपत्ति। भावी दशा। पुत्र। मृत्यु।

सम्परायक, सम्परायिक—(न०) [सम्पराय+कन्] [सम्पराय+ठन्] युद्ध।

सम्पर्क—(पुं०) [सम्√पृच् + घञ्] मिश्रण, मिलावट। संयोग। स्पर्श; 'पादेन नापैक्षत सुन्दरीणां सम्पर्कमासिञ्जितनूपुरेण' कु० ३.२६। योग, जोड़। मैथुन, सम्भोग।

सम्पा—(स्त्री०) [सम्यक् अर्तकितं पतति, सम्√पत् + ड—टाप्] विद्युत्, बिजली।

सम्पाक—(वि०) [सम्यक् पाको यस्य वा यस्मात्, प्रा० ब०] अच्छी बहस करने वाला। चालाक, चतुर। कामुक, लंपट। छोटा। थोड़ा। (पुं०) आरग्वध वृक्ष, अमलतास। [प्रा० स०] सम्यक् पाक, अच्छी तरह पकना।

सम्पाट—(पुं०) [सम√पट् + णिच्+घञ्] तकुआ। किसी त्रिभुज की बढ़ी हुई भुजा पर लम्ब का गिरना।

सम्पात—(पुं०) [सम्√पत् + घञ्] सह-पतन। एक साथ मिलन। मुठभेड़, संघर्ष। पतन। नीचे आगमन। तीर का प्रक्षेप। गमन, चलन। स्थानान्तर-करण, हटाना। पक्षियों की उड़ानविशेष। नैवेद्य का उच्छिष्ट। मिलने का स्थान। युद्ध का ढंग। घटित होना। तलछट।

सम्पाति—(पुं०) [सम् √पत् + णिच् +इन्] गृध्र जटायु का बड़ा भाई।

सम्पाद—(पुं०) [सम्√पद् + णिच्+घञ्] सम्यक् निष्पादन, अच्छी तरह करना। [सम्√पद्+घञ्] पूर्णता। उपलब्धि, प्राप्ति।

सम्पादक—(वि०) [सम् √पद् +णिच् +ण्वुल्] प्रस्तुत करने वाला। पूर्ण करने वाला। प्राप्त करने वाला। (पुं०) वह व्यक्ति जो किसी समाचार-पत्र या पुस्तक का क्रम आदि लगा कर उसे सब प्रकार से ठीक करके संकलित करता है (एडिटर)।

सम्पादन—(न०) [सम्√पद् + णिच् +ल्युट्] प्रस्तुत करना। पूरा करना। उपार्जन करना। पुस्तक या सामयिक पत्र आदि का क्रम, पाठ आदि ठीक करके उसे संकलित करना (एडिटिंग)।

सम्पिण्डित—(वि०) [सम्√पिण्ड् + क्त] पिण्ड बनाया हुआ। सङ्कुचित, सिकुड़ा हुआ।

सम्पिण्डित—(वि०) [सम् √पिण्ड् + क्त] समेटा हुआ, संकुचित किया हुआ।

सम्पीड—(पुं०) [सम्√पीड् + घञ्] अत्यंत पीड़ा। दबाना। निचोड़ना।

सम्पीडन—(न०) [सम्√पीड् + ल्युट्] निचोड़ना। दबाना। प्रेषण। दण्ड, सजा। घँघोलना। कष्ट देना। एक उच्चारण-दोष।

सम्पीति—(स्त्री०) [सम् √ पा + क्तिन्] साथ-साथ पीना।

सम्पुट—(पुं०) [सम्√पुट् + क] कटोरे जैसी कोई वस्तु, दोना। अंजलि। रसादि फूंकने का मिट्टी का बना हुआ पात्र। ढक्कनदार पिटारी या डिबिया, डिब्बा। हिसाब में बाकी या उधार। एक जातीय पदार्थ से भिन्न जातीय पदार्थ को दोनों तरफ से व्याप्त करना। कुरुवक वृक्ष। एक रतिबन्ध; इसका लक्षण— "सम्प्रसार्योभयौ पादौ शय्यागतकपोलकः। भगलिङ्गस्य संयोगात् रमते सम्पुटो हि सः॥"—(रतिम०)।

सम्पुटक—(पुं०), **सम्पुटिका**—(स्त्री०) [सम् √पुट्+अच् + कन्] [सम्पुटक+ टाप्, इत्व] रत्नपेटी, गहना रखने का डिब्बा।

सम्पूर्ण—(वि०) [सम्√पुर् +क्त] परि-पूर्ण, पूरे तौर से भरा हुआ। सारा, सब, समूचा। (न०) आकाश तत्त्व। (पुं०) राग की वह जाति जिसमें सातों स्वर लगते हैं।

सम्पृक्त—(वि०) [सम् √ पृच् + क्त] मिश्रित। सम्बन्धयुक्त; 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' र० १.१। संपर्क में आया हुआ। संयुक्त। पूर्ण। खचित।

सम्प्रक्षालन—(न०) [सम्—प्र √ क्षल् +णिच्+ल्युट्] जल द्वारा भली-भाँति शुद्धि। स्नान। जल का बूड़ा।

सम्प्रणेतृ—(पुं०) [सम्—प्र√ णी+तृच्] शासक। न्यायाधीश।

सम्प्रति—(अव्य०) [सम्—प्रति, द्व० स०] अभी। हाल में। इस समय। सामने। ठीक ढंग से। ठीक समय पर।

सम्प्रतिपत्ति—(स्त्री०) [सम्—प्रति√पद्+क्तिन्] समीप आगमन। विद्यमानता, मौजूदगी। प्राप्ति, उपलब्धि। इकरारनामा। स्वीकृति। (आईन में) विशेष प्रकार का उत्तर। आक्रमण, चढ़ाई। घटना। सहयोग। क्रम।

सम्प्रतिरोधक—(पुं०) [सम्—प्रति√रुध्+घञ्+कन्] पूर्णरीत्या रोक या बाधा। जेल या बन्दीगृह।

सम्प्रतीत—(वि०) [सम्—प्रति√इ+क्त] लौटा हुआ। भली-भाँति विश्वास किया हुआ। ज्ञात। प्रसिद्ध। माननीय।

सम्प्रतीति—(स्त्री०) [सम् —प्रति √इ+क्तिन्] भली-भाँति प्रतीति या विश्वास। ख्याति, कीर्ति। पूर्ण ज्ञान।

सम्प्रत्यय—(पुं०) [सम्—प्रति√इ+अच्] दृढ़ विश्वास। इकरार, कौल करार। यथार्थ बोध।

सम्प्रदान—(न०) [सम्—प्र√दा+ल्युट्] भली-भाँति दे डालना या सौंप देना अर्थात् दी हुई वस्तु में देने वाले का कुछ भी स्वत्व न रखना। दीक्षा। दान। भेंट। चंदा। विवाह। चतुर्थ कारक।

सम्प्रदानीय—(न०) [सम् —प्र √दा+अनीयर्] भेंट। दान। पुरस्कार। चंदा।

सम्प्रदाय—(पुं०) [सम्—प्र√दा+घञ्] गुरुपरम्परागत उपदेश, गुरुमंत्र। गुरुपरम्परागत सदुपदिष्ट व्यक्तियों का समूह। परम्परागत प्रचलित रीति-रवाज या पद्धति।

सम्प्रधान—(न०) [सम्—प्र√धा+ल्युट्] निश्चयकरण।

सम्प्रधारण—(न०), **सम्प्रधारणा**—(स्त्री०) [सम्—प्र√धृ + णिच् + ल्युट्] [सम्—प्र√धृ + णिच् +युच्—टाप्] विचार। किसी वस्तु के औचित्य-अनौचित्य के विषय में निश्चय करने की क्रिया।

सम्प्रपद—(पुं०) [सम्—प्र√पद् + क] भ्रमण, पर्यटन।

सम्प्रभिन्न—(वि०) [सम्—प्र √भिद्+क्त] चिरा हुआ, फटा हुआ। मद में मत्त।

सम्प्रमोद—(पुं०) [सम—प्र√मुद्+घञ्] अतिहर्ष।

सम्प्रमोष—(पुं०) [सम्—प्र √मुष्+घञ्] हानि। नाश।

सम्प्रयाण—(न०) [सम्—प्र √या √ल्युट्] प्रस्थान, रवानगी।

सम्प्रयोग—(पुं०) [सम्—प्र √युज्+घञ्] जोड़ने की क्रिया। संयोग; 'उष्णत्वमग्न्यातपसम्प्रयोगाच्छैत्यं हि यत्सा प्रकृतिर्जलस्य' र० ५.५४। मेल। मिलाने वाली शृङ्खला। पारस्परिक सम्बन्ध। क्रमबद्ध व्यवस्था या सिलसिला। मैथुन। संलग्नता। इन्द्रजाल, जादू।

सम्प्रयोगिन्—(वि०) [सम्—प्र √युज्+घिनुण्] मिलाने वाला, जोड़ने वाला। (पुं०) ऐन्द्रजालिक, मदारी। लम्पट पुरुष।

सम्प्रवृष्ट—(न०) [सम्—प्र √वृष्+क्त] अच्छी वर्षा।

सम्प्रश्न—(पुं०) [प्रा० स०] भली-भाँति या शिष्टतापूर्ण प्रश्न।

सम्प्रसाद—(पुं०) [सम्—प्र √सद्+घञ्] सन्तोषण, समाराधन। अनुग्रह, कृपा। मन का धैर्य, सुस्थिरता। विश्वास, भरोसा। जीव, आत्मा।

सम्प्रसारण—(न०) [सम्—प्र√सृ+णिच्+ल्युट्] क्रमशः य्, व्, र् और ल् का इ, उ, ऋ और ऌ में परिवर्तन —"इग्यणः सम्प्रसारणम्"—पा०।

सम्प्रहार—(पुं०) [सम्—प्र √हृ + घञ्] हनन, मारना। युद्ध। गमन।

सम्प्राप्ति—(स्त्री०) [सम्—प्र √ आप् +क्तिन्] सम्यक् प्राप्ति । पहुँच । रोग का सन्निकृष्ट कारण ।

सम्प्रीति—(स्त्री०) [सम्√प्री+क्तिन्] सम्यक् प्रणय । पूर्ण तुष्टि । मैत्री ।

सम्प्रेक्षण—(न०) [सम्—प्र √ईक्ष् +ल्युट्] अच्छी तरह देखना । निरीक्षण । अनुसन्धान ।

सम्प्रैष—(पुं०) [सम्—प्र √इष् + घञ्] आह्वान, आमन्त्रण । यज्ञ में ऋत्विज को दिया जाने वाला आदेश । भेजना ।

सम्प्रोक्षण—(न०) [सम्—प्र √उक्ष् +ल्युट्] मार्जन, जल को मंत्र पढ़ कर छिड़कना । खूब पानी छिड़क कर मन्दिर आदि साफ करना ।

सम्प्लव—(पुं०) [सम्√प्लु +अप्] जल में डूबना या जल की बाढ़ में मग्न होना । लहर, तरंग । जल की बाढ़ । बरबादी । घनी राशि । हो-हल्ला ।

सम्फाल—(पं०) [सम्यक् फालो गमनं यस्य, प्रा० ब०] मेढ़ा, मेष ।

सम्फेट—(पुं०) दो क्रुद्ध जनों की लड़ाई ।

√सम्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना । सम्बति, सम्बिष्यति, असम्बीत् । चु० उभ० सक० एकत्र करना । सम्बयति—ते, सम्बयिष्यति —ते, अससम्बत्—त ।

सम्ब—(न०) [√सम्ब् +अच्] जल । दो वार जोतना । उलटा जोतना ।

सम्बद्ध—(वि०) [सम्√बन्ध् + क्त] बँधा हुआ । अटका हुआ । सम्बन्ध-युक्त । युक्त, अन्वित ।

सम्बन्ध—(पुं०) [सम्√बन्ध्+घञ्] योग, मेल, संगति । रिश्ता, रिश्तेदारी । षष्ठ कारक । विवाह । औचित्य, उपयुक्तता । मैत्री; 'सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुः' र० २. ५८ । समृद्धि । साफल्य । एक प्रकार की ईति या उपद्रव । सिद्धान्त का हवाला ।

सम्बन्धक—(वि०) [सम् √बन्ध्+ण्वुल्] सम्बन्ध करने वाला । योग्य, उपयुक्त । (पुं०) मित्र, दोस्त । विवाह से या जन्म से सम्बन्धी या नातेदार । विवाह के द्वारा होने वाली सन्धि ।

सम्बन्धिन्—(वि०) [सम्बन्ध+इनि] सम्बन्ध रखने वाला, सम्बन्धयुक्त । जुड़ा हुआ । सद्गुणों वाला । वैवाहिक नातेदार । नतैत, नातेदार ।

सम्बर—(न०) [√सम्ब् + अरन्] रोक, निग्रह । जल । (पुं०) बाँध, पुल । मृग विशेष । एक दैत्य का नाम जिसे प्रद्युम्न ने मारा था । एक पर्वत का नाम ।—**अरि** (**सम्बरारि**),—**रिपु**–(पुं०) कामदेव ।

सम्बल—(न०, पुं०) [√सम्ब्+कलच्] पाथेय, रास्ते के लिये भोजन । (न०) जल ।

सम्बाध—(वि०) [सम्यक् बाधा यत्र, प्रा० ब०] भीड़-भाड़ से बंद, अवरुद्ध । सङ्कीर्ण । (पुं०) [सम्√बाध्+घञ्] आपस की रगड़, ठेलम-ठेला। रुकावट, अड़चन । भय । [प्रा० ब०] नरक का मार्ग । योनि, भग ।

सम्बुद्धि—(स्त्री०) [सम्√बुध् + क्तिन्] पूर्ण ज्ञान या प्रतीति । पूर्ण विवेक । सम्बोधन । सम्बोधन कारक ।

सम्बोध—(पुं०) [सम्√बुध्+घञ्] पूर्ण ज्ञान, सम्यक् बोध । प्रक्षेप । नाश । [सम् √बुध्+णिच् + घञ्] खोल कर बताना, समझाना ।

सम्बोधन—(न०) [सम् √बुध्+णिच् +ल्युट्] भली-भाँति समझाना, बताना । जगाना । पुकारना । एक कारक जिसमें किसी को पुकारने या बुलाने के लिये शब्द का प्रयोग किया जाता है ।

सम्भक्ति—(स्त्री०) [सम् √भज् + क्तिन्] हिस्सा लगाना । बांटना । उपभोग करना । भक्ति करना ।

सम्भग्न—(वि०) [सम्√भज्+क्त] छिन्न-भिन्न, तितर-वितर। परामूत। असफल। (पुं०) शिव।

सम्भली—(स्त्री०) [सम् √भल् + अच्—ङीष्] कुटनी, दूती।

सम्भव—(पुं०) [सम्√भू + अप्] उत्पत्ति, पैदायश; 'मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः' श० १.२६। अस्तित्व। कारण, हेतु। संमिश्रण, मेल, मिलावट। सम्भावना। सुसङ्गति। उपयुक्तता। मैथुन। क्षमता। संकेत। उपाय। धारणा-शक्ति। प्रमाण-विशेष। परिचय। वरवादी, नाश।

सम्भार—(पुं०) [सम्√भृ + घञ्] संग्रह, इकट्ठा करना। साज-सामान, उपकरण। समूह। ढेर, राशि। पूर्णता। धन-दौलत, सम्पत्ति। पालन-पोषण। आधिक्य।

सम्भावन—(न०), **सम्भावना**-(स्त्री०) [सम्√भू + णिच्+ल्युट्] [सम् √भू +णिच् +युच्] विचार। मनन। कल्पना। सम्मान। मुमकिन होना। उपयुक्तता। योग्यता। सन्देह। प्रेम। प्रसिद्धि।

सम्भावित—(वि०) [सम्√भू + णिच् +क्त] विचारा हुआ। कल्पना किया हुआ। सम्मानित; 'सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते' भग०। उपयुक्त। मुमकिन। उत्पादित।

सम्भाष—(पुं०) [सम्√भाष्+घञ्] बात-चीत। वादा, करार। प्रहरी का संकेत-शब्द। अभिवादन। यौन-सम्बन्ध।

सम्भाषण—(न०) [सम्√भाष् + ल्युट्—अन] दे० 'सम्भाष'।

सम्भाषा—(स्त्री०) [सम्√भाष् +अ—टाप्] वार्तालाप, सम्भाषण। बधाई। आईन विरुद्ध सम्बन्ध, ऐसा सम्बन्ध जो जुर्म समझा जाय। इकरारनामा, कौल-करार। पहरेदार का सङ्केत-शब्द या वाक्य।

सम्भूति—(स्त्री०) [सम् √ भू + क्तिन्] उत्पत्ति, पैदायश। वृद्धि। मिलावट। उपयुक्तता। योग्यता। शक्ति। दक्ष की एक पुत्री।

सम्भृत—(वि०) [सम् √भृ+क्त] एकत्र किया हुआ, जमा किया हुआ। तैयार किया हुआ। सुसम्पन्न। धरा हुआ। पूर्ण, पूरा। पाया हुआ। ढोया हुआ। पालन-पोषण किया हुआ। उत्पन्न किया हुआ।

सम्भृति—(स्त्री०) [सम् √भृ +क्तिन्] संग्रह। राशि, उपस्कर, सामग्री। तैयारी। आधिक्य। पूर्णता। परवरिश, पालन-पोषण।

सम्भेद—(पुं०) [सम्√भिद्+घञ्] तोड़ना। चीरना। शत्रुओं में परस्पर विरोध उत्पन्न करना, फूट डालना। किस्म, प्रकार। एक-रूपता। संसर्ग। (नजर का) मिलना। (नदियों का) संगम।

सम्भोग—(पुं०) [सम्√भुज् + घञ्] किसी वस्तु का भली-भाँति उपयोग या उपभोग। रति-क्रीड़ा, सुरत, मैथुन। शृंगार रस का क भेद, संयोग शृंगार। केलि-नागर, लंपट।

सम्भ्रम—(पुं०) [सम्√भ्रम्+घञ्] घूमना, चक्कर खाना। हड़बड़ी, जल्दबाजी। गड़बड़ी, गोलमाल। भय, डर। गलती, भूल। उत्साह। मान, सम्मान; 'गृहमुपगते सम्भ्रमविधिः' भर्तृ० २.६३। श्री, शोभा।

सम्भ्रान्त—(वि०) [सम् √भ्रम् + क्त] घूमा हुआ। घबड़ाया हुआ, परेशान। स्फूर्ति-युक्त।

सम्मत—(वि०) [सम् √मन् +क्त] सहमत, राजी, रजामंद। प्यारा, प्रेमपात्र। सदृश, समान। सोचा हुआ, विचारा हुआ। अत्यन्त सम्मानित। (न०) सम्मति। स्वीकृति। धारणा।

सम्मति—(स्त्री०) [सम्√मन् + क्तिन्] सहमति। राय, मत। स्वीकृति। अभिलाष। आत्मज्ञान। मान। प्रेम। सद्भाव।

सम्मद—(पुं०) [सम्√मद्+ अप्] बड़ी प्रसन्नता, आह्लाद; 'रणसम्मदोदयविकासिबलकलकलाकुलीकृते' शि० १५.७७। एक प्रकार की मछली।

सम्मर्द—(पुं०) [सम्√मृद् + घञ्] रगड़, संघर्ष। भीड़भाड़। कुचलना, पैरों से रूँधना। युद्ध।

सम्मातुर—(पुं०) [समीच्याः सत्याः मातुः अपत्यम्, सम्मातृ+अण्, उत्व, रपर, बा० वृद्ध्यभाव] साध्वी माता का पुत्र।

सम्माद—(पुं०) [सम्√मद्+घञ्] उन्माद, पागलपन। मद, नशा।

सम्मान—(पुं०) [सम्√मन् + घञ्] आदर, इज्जत। (न०) [सम्√मा+ल्युट्] मापना। तुलना करना।

सम्मार्जक—(पुं०) [सम् √मृज् + ण्वुल्] मेहतर, भंगी। (वि०) झाड़ने वाला। साफ करने वाला।

सम्मार्जन—(न०) [सम् √मृज् + ल्युट्] झाड़ना, बुहारना। सफाई।

सम्मार्जनी—(स्त्री०) [सम्मार्जन+ङीप्] झाड़ू।

सम्मित—(वि०) [सम् √मा + क्त] नपा हुआ। समान माप का। समान, बराबर। युक्त।

सम्मिश्र, सम्मिश्रित—(वि०) [सम्√मिश्र् +अच्][सम्√मिश्र्+क्त] मिलाजुला।

सम्मिश्ल—(पुं०) [=सम्मिश्र, पृषो० रस्य लः] इन्द्र।

सम्मीलन—(न०) [सम् √मील् +ल्युट्] (फूल का) मुंदना। ढकना। पूर्ण ग्रहण, खग्रास।

सम्मुख, सम्मुखीन—(वि०) [स्त्री०—**सम्मुखा, सम्मुखी**] [सङ्गतं मुखं येन, प्रा० व०] [सर्वस्य मुखस्य दर्शनः, सममुख +ख — ईन, समशब्दस्य अन्त्यलोपः नि०] जो सामने हो, सामने का। अनुकूल।

सम्मुखिन्—(पुं०) [सम्मुखम् अस्य अस्ति, सम्मुख+इनि] शीशा, दर्पण, आईना।

सम्मूर्च्छन—(न०) [सम्√मूर्च्छ्+ल्युट्] बेहोशी, मूर्च्छा। जमावट, गाढ़ा होना। वृद्धि। ऊँचाई। सर्वव्याप्ति।

सम्मृष्ट—(वि०) [सम्√मृज्+क्त] अच्छी तरह झाड़ा-बटोरा हुआ। अच्छी तरह छाना हुआ।

सम्मेलन—(न०) [सम्√मिल्+ल्युट्] आपस में मिलना, एकत्र होना। मेल। सम्मिश्रण।

सम्मोह—(पुं०) [सम् √मुह् + घञ्] घबड़ाहट, परेशानी। बेहोशी, मूर्छा। मूर्खता, अज्ञता। मोहन, वशीकरण।

सम्मोहन—(न०) [सम्√मुह् + णिच् +ल्युट्] वशीकरण, मोहन की क्रिया। (पुं०) [सम्√मुह् + णिच्+ल्यु] कामदेव के पाँच शरों में से एक।

सम्यच्, सम्यञ्च्—(वि०) [स्त्री०—**समीची**] [सम्√ अञ्च् + क्विन्, समि आदेश, पक्षे नलोपः] ठीक, उपयुक्त, उचित। सही, शुद्ध। अनुकूल। आनन्दप्रद। एकसा। सब, समस्त। (अव्य०) साथ, सहित। ठीक-ठीक। सही-सही, शुद्धता से। प्रतिष्ठापूर्वक। सम्पूर्ण रीत्या। स्पष्टतया।

सम्राज्—(पुं०) [सम्यक् राजते, सम्√राज् +क्विप्] शाहंशाह, राजाधिराज [वह राजाधिराज कहलाता है जिसने राजसूययज्ञ किया हो]।

√सय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। सयते, सयिष्यते, असयिष्ट।

सयूथ्य—(वि०) [सयूथ+यत्] एक ही वर्ग या श्रेणी का।

सयोनि—(वि०) [समाना योनिः यस्य, ब० स०, समानस्य सादेशः]एक ही गर्भ का। (पुं०) सहोदर भाई । [योनिभिः सह वर्तमानः ब० स०] इन्द्र ।

सर—(वि०) [√सृ + अच्] गमनशील, गतिशील । रेचक । (न०) जल । सरोवर । झील । (पुं०) गमन, गति । तीर । भलाई । नमक, लवण । हार; 'अयं तावद्बाष्पस्त्रुटित इव मुक्तामणिसरः' उत्त० १.२९ । जलप्रपात ।

सरक—(न०, पुं०) [√सृ+वुन्] पथिकों की अविरल पंक्ति । शराब, मदिरा । पानपात्र, शराब पीने का पात्र । शराब का वितरण । (न०) गमन। स्वर्ग । [सर +कन्] सरोवर ।

सरघा—(स्त्री०) [सरं मधुविशेषं हन्ति, सर √हन्+ड, नि० साधुः] मधुमक्षिका; 'तस्तार सरघाव्याप्तैः स क्षौद्रपटलैरिव' र० ४.६ ।

सरङ्ग—(पुं०) [√सृ+ अङ्गच्] चौपाया। पक्षी ।

सरजस्, सरजस्का—(स्त्री०) [पक्षे **सरजसा, सरजस्की**] [सह रजसा, ब० स०, सहस्य सः, पक्षे कप्—टाप्] रजस्वला स्त्री ।

सरट्—(पुं०) [√सृ +अटि] वायु । बादल । छिपकली । मधुमक्षिका ।

सरट—(पुं०) [स्त्री०—**सरटी**] [√सृ +अटन्] गिरगिट । वायु ।

सरटि—(पुं०) [√ सृ + अटिन्] पवन । छिपकली, बिसतुइया । बादल ।

सरटु—(पुं०) [√सृ + अटु] गिरगिट ।

सरण—(वि०) [√सृ+युच्] गमनशील । गतिशील । बहनेवाला । (न०) [√सृ +ल्युट्] आगे गमन करना। बहाव। लोहे की जंग । माधवी-मद्य ।

सरणि, सरणी—(स्त्री०) [√सृ + अनि] [सरणि+ ङीष्] मार्ग, रास्ता । ढंग, तौर-तरीका । सरल या सीधी रेखा । गले का रोग विशेष । प्रसारणी लता ।

सरण्ड—(पुं०) [√ सृ+ अण्डच्] पक्षी । लंपट जन । छिपकली । बदमाश आदमी । आभूषण विशेष ।

सरण्यु—(पुं०) [√ सृ+अन्यु] पवन । मेघ । जल । वसन्त ऋतु । अग्नि । यमराज ।

सरत्नि—(पुं०, स्त्री०)[सह रत्निना, ब० स०, सहस्य सः] एक हाथ की माप ।

सरथ—(वि०) [समानो रथो यस्य, ब० स०] एक ही रथ पर सवार । (पुं०) [सह रथेन, ब० स०] रथ पर सवार योद्धा ।

सरभस—(वि०) [सह रभसेन, ब० स०] तेज, फुर्तीला । प्रचण्ड, उग्र । क्रोधी । हर्षित ।

सरमा—(स्त्री०) [सह रमया शोभया, ब० स०] देवताओं की कुतिया । दक्ष की एक कन्या का नाम । विभीषण की पत्नी का नाम ।

सरयु—(पुं०) [√सृ+अयु] वायु । (स्त्री०) दे० 'सरयू' ।

सरयू—(स्त्री०) [सरयु+ ऊङ] एक नदी का नाम जिसके तट पर अयोध्या बसी हुई है ।

सरल—(वि०) [√सृ + अलच्] सीधा, टेढ़ा नहीं । ईमानदार, सच्चा । सीधे स्वभाव का । यथार्थ, असली । आसान, सुकर । (पुं०) पीतदारु वृक्ष । अग्नि ।

सरव्य—(न०) दे० 'शरव्य' ।

सरस्—(न०) [√सृ + असुन्] सरोवर, झील । जल ।—**ज** (सरोज),—**जन्मन्** (सरोजन्मन्),—**रुह**(सरोरुह)–(न०) कमल ।—**जिनी** (सरोजिनी) [सरोज +इनि—ङीप्], —**रुहिणी** (सरोरुहिणी) [सरोरुह+इनि—ङीप्]–(स्त्री०)

सर्वधुरावह।—**नामन्**–(न०) संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होने वाला शब्द।—**पारशव**–(वि०) बिल्कुल लोहे का बना हुआ।—**मङ्गला**–(स्त्री०) पार्वती। लक्ष्मी।—**रस**– (पुं०) राल।— **लिङ्गिन्**–(पुं०) ढोंगी, पाषण्डी।—**वल्लभा**– (स्त्री०) वेश्या।—**विद्**–(वि०) सर्वज्ञ। (पुं०) ईश्वर।— **वीर**– (वि०) बहुत से पुत्रों वाला।—**वेदस्**–(पुं०) यज्ञमें सर्वस्व दक्षिणा देने वाला यज्ञकर्त्ता।—**सहा** (**सर्वंसहा** भी)– (स्त्री०) पृथिवी।—**स्व**– (न०) सकल धन, सारा धन। किसी वस्तु का सार।

सर्वङ्कष—(वि०) [सर्व√कष् + खच्, मुम्] सब का अतिक्रमण करने वाला। सर्वनाशक; 'सर्वङ्कषा भगवती भवितव्यतैव' माल० १.२३। (पुं०) दुष्ट व्यक्ति।

सर्वतस्—(अव्य०) [सर्व + तसिल्] सब ओर से। सब तरह से। सर्वत्र। सम्पूर्णतः। —**गामिन्** (**सर्वतोगामिन्**)–(वि०) सर्वत्र या सब ओर जा सकने वाला।—**भद्र** (**सर्वतोभद्र**)– (पुं०) विष्णु का रथ। बाँस। निम्ब वृक्ष। व्यूहविशेष। ध्वंस। एक तरह का चित्रकाव्य। वेदी ढँकने के वस्त्र पर बनाया जाने वाला चिह्न-विशेष। योग का एक आसन। एक पर्वत। एक गंध द्रव्य।(पुं०, न०)भवन या देवालय जिसमें चारों ओर चार द्वार हों।—**चक्र**–(न०) एक वर्गाकार चक्र जो शुभाशुभ फल जानने के लिये बनाया जाता है।—**भद्रा** (**सर्वतोभद्रा**)–(स्त्री०)नटी। नर्तकी। गंभारी। —**मुख** (**सर्वतोमुख**)–(वि०) जिसका मुँह चारों ओर हो। पूर्ण, व्यापक। (पुं०) शिव जी। ब्रह्मा जी। परब्रह्म। ब्राह्मण। आत्मा। अग्नि। स्वर्ग। (न०) जल। आकाश।

सर्वत्र—(अव्य) [सर्व + त्रल्] सब जगह। सब समय।

सर्वथा—(अव्य०) [सर्व+थाल्] हर प्रकार से, सब तरह से। बिलकुल। सम्पूर्णतः। अत्यंत। प्रतिज्ञा। हेतु।

सर्वदा—(अव्य०) [सर्व + दाच्] सदैव, हमेशा।

सर्वशस्—(अव्य०)[सर्व +शस्] पूर्ण रूप से। सर्वत्र। सब ओर से।

सर्वाणी—(स्त्री०) [सर्वेभ्य आनयति मोक्षम्, सर्व—आ √नी + ड—ङीप्, णत्व] दे० 'शर्वाणी'।

सर्षप—(पुं०) [√सृ + अप, सुक्] सरसों; 'खलः सर्षपमात्राणि परच्छिद्राणि पश्यति' सुभा०। सरसों के बराबर की एक छोटी तौल। विष विशेष।

√सल्—भ्वा० पर० सक० जाना। सलति, सलिष्यति, असालीत्—असलीत्।

सल—(न०) [√सल् + अच्] जल।

सलिल—(न०) [√सल् +इलच्] जल। —**अर्थिन्** (**सलिलार्थिन्**)–(वि०) प्यासा। —**आशय** (**सलिलाशय**)–(पुं०) तालाब। जलाशय।—**इन्धन** (**सलिलेन्धन**)– (पुं०) वड़वानल।—**उपप्लव** (**सलिलोपप्लव**)– (पुं०) जल का बूड़ा। जल-प्रलय।—**क्रिया** –(स्त्री०) मुर्दे को जल से स्नान कराने की क्रिया। तर्पण।—**ज**– (न०) कमल।—**निधि**– (पुं०) समुद्र।

सलज्ज—(वि०) [सह लज्जया, ब० स०, सहस्य सः] लज्जालु, लजीला, हयादार।

सलील—(वि०) [सह लीलया, ब० स०] खिलाड़ी। रसिक, लंपट।

सलोकता—(स्त्री०) [समानः लोको यस्य, ब० स०, सलोक+तल् — टाप्] चार प्रकार के मोक्षों में से एक, अपने आराध्य देव के लोक में वास।

सल्लकी—(स्त्री०) [√शल्+वुन्, लुक्, पृषो० शस्य सः] सलई का पेड़ ।

सव—(न०) [√सु+अच्] जल । फूलों का शहद । (पुं०) सोमरस निकालने की क्रिया । भेंट, नैवेद्य । यज्ञ । सूर्य । चन्द्रमा । सन्तति, औलाद ।

सवन—(न०) [√सु वा√सू + ल्युट्] सोमरस निकालना या पीना । यज्ञ-स्नान । प्रसव । सोनापाठा ।

सवयस्—(वि०) [समानं वयो यस्य, ब० स०, समानस्य सः] एक उम्र का, समवयस्क । साथी, सहयोगी । (स्त्री०)सहेली, सखी ।

सवर—(पुं०) शिव जी । जल ।

सवर्ण—(वि०) [समानो वर्णो यस्य, ब० स०, समानस्य सः] समान रंग का; 'दुर्वर्णभित्तिरिह सान्द्रसुधासवर्णा' शि० ४. २८ । समान रूप-रंग का । एक ही जाति का । एक ही प्रकार का । एक ही उच्चारण-स्थान से उच्चारण किये जाने वाले वर्ण ।

सविकल्प, सविकल्पक— (वि०) [सह विकल्पेन, ब० स०, पक्षे कप्] ऐच्छिक, पसंद का । सन्दिग्ध । निर्विकल्प का उलटा ।

सविग्रह—(वि०) [सह विग्रहेण, ब० स० सहस्य सः] शरीरधारी । अर्थवाला, जिसका कुछ अर्थ या मानी हो । झगड़ालू, झगड़ने वाला ।

सवितर्क, सविमर्श—(वि०) [सह वितर्केण] [सह विमर्शेन] विचारवान्, विवेकी ।

सवितृ—(वि०) [स्त्री०—**सवित्री**] [√सू + तृच्] उत्पादक, पैदा करने वाला । (पुं०) सूर्य । शिव । इन्द्रदेव । अर्क वृक्ष, मदार का पौधा ।

सवित्री—(स्त्री०) [सवितृ + ङीप्] माता; 'तया दुहित्रा सुतरां सवित्री स्फुरत्प्रभामण्डलया चकाशे' कु० १.२४ । गौ ।

सविध—(वि०) [सह विधया, ब० स०, सहस्य सः] एक ही तरह या प्रकार का । [सह √विध् + क, सहस्य सः] समीपवर्ती, आसन्न । (न०) सामीप्य, निकटता ।

सविनय—(वि०) [सह विनयेन, ब० स०, सहस्य सः] विनय-युक्त, विनम्र ।

सविभ्रम—(वि०) [सह विभ्रमेण, ब० स०] क्रीड़ा-युक्त । रँगीला, रसिक ।

सविशेष—(वि०) [सह विशेषेण] विशिष्ट गुणों वाला । विशेष लक्षणाक्रान्त । विलक्षण, असाधारण । मुख्य, प्रधान । प्रभेदात्मक, विभेदक ।

सविस्तर—(वि०) [सह विस्तरेण] विस्तार के साथ या सहित । विस्तारपूर्वक ।

सविस्मय—(वि०) [सह विस्मयेन] आश्चर्य-चकित, विस्मित ।

सवृद्धिक—(वि०) [सह वृद्ध्या, ब० स०, कप्] सूद के साथ, जिसका सूद मिले ।

सवेश—(वि०) [सह वेशेन] सजा हुआ, भूषित । समीप का ।

सव्य—(वि०) [√सू + यत्] बायाँ । दाहिना । प्रतिकूल । (पुं०) विष्णु । अंगिरा के एक पुत्र का नाम । (न०) यज्ञोपवीत । ग्रहण के १० प्रकार के ग्रासों में से एक । —**इतर** (**सव्येतर**)–(वि०) दाहिना । —**साचिन्**–(पुं०) अर्जुन की उपाधि । (कारण यह है:–'उभौ मे दक्षिणौ पाणी गाण्डीवस्य विकर्षणे । तेन देवमनुष्येषु सव्यसाचीति मां विदुः ।')

सव्यपेक्ष—(वि०) [सह व्यपेक्षया, ब० स०, सहस्य सः] सम्बन्ध-युक्त । अवलम्बित ।

सव्यभिचार—(पुं०) [सह व्यभिचारेण] न्यायदर्शन में पाँच प्रकार के हेत्वाभासों में से एक ।

सव्याज—(वि०) [सह व्याजेन] कपटी, छलिया । धूर्त ।

—नयन, —नेत्रं, —लोचन–(पुं०) इन्द्र। विष्णु।— धार– (पं०) विष्णु भगवान् का चक्र। पति—(पुं०) हजार गाँवों का शासक या स्वामी।—पत्र– (न०) कमल। —बाहु– (पुं०) कार्तवीर्य, बाणासुर। शिव। विष्णु।— भुज, —मूर्धन्,—मौलि– (पुं०) विष्णु।—रोमन् –(न०) कंवल। —वीर्या– (स्त्री०) हींग।—शिखर– (पुं०) विन्ध्याचल।

सहस्रधा—(अव्य०) [सहस्र + धाच्] सहस्र भागों में। सहस्र गुना।

सहस्रशस्—(अव्य०)[सहस्र + शस्] हजारों से।

सहस्रिन्—(वि०) [सहस्र + इनि] हजार वाला। हजार तक का (जैसे अर्थ दण्ड)। (पुं०) हजार आदमियों की टोली। हजार सैनिकों का नायक।

सहस्वत्—(वि०) [सहस्+मतुप्, वत्व] बलवान्, शक्तिशाली।

सहा—(स्त्री०) [√सह् +अच् – टाप्] पृथिवी। घृतकुमारी। वनमूँग। दण्डोत्पल। सफेद कटसरैया। ककही या कंघी नाम का वृक्ष। सर्पिणी। रास्ना। सत्यानाशी। सेवती। मेंहदी। अगहन मास। हेमन्त ऋतु।

सहाय—(पुं०) [सह√इ + अच्] सहचर, साथी। मित्र। अनुयायी। सन्धि की शर्तों के अनुसार वनाया गया मित्र (राजा)। संरक्षक। चक्रवाक। गन्ध पदार्थ विशेष। शिवजी।

सहायता–(स्त्री०),**सहायत्व**–(न०) [सहाय +तल्–टाप्] [सहाय + त्व] मित्र-मंडली। मैत्री। मदद।

सहायवत्—(वि०) [सहाय + मतुप्, वत्व] जिसके साथी या मित्र हों।

सहार—(पुं०) [सह√ऋ +अच् वा√सह् +आरन्] आम का वृक्ष। प्रलय।

सहित—(वि०) [√सह् +क्त वा सह +इतच्] सहा हुआ। युक्त, समेत। [सह हितेन, ब० स०, सहस्य सः] हित वाला, हित-युक्त।

सहितृ—(वि०) [√सह् + तृच्] सहन करने वाला।

सहिष्णु—(वि०) [√सह् + इष्णुच्] सह लेने वाला, सहनशील; 'सुकरस्तरुवत्सहिष्णुना रिपुरुन्मूलयितुं महानपि' कि० २.५०।

सहिष्णुता– (स्त्री०), **सहिष्णुत्व**—(न०) [सहिष्णु+तल् – टाप्] [सहिष्णु+त्व] सहन करने की शक्ति। क्षमा।

सहुरि—(पुं०) [√सह् + उरि] सूर्य। (स्त्री०) पृथिवी।

सहृदय—(वि०) [सह हृदयेन, ब० स०, सहस्य सः] अच्छे हृदय वाला। दयालु। सच्चा। (पुं०) विद्वज्जन। गुणग्राही व्यक्ति। रसिक पुरुष। सज्जन।

सहृल्लेख—(न०) [हृदयस्य लेखः कालुष्यकरणम्, सह हृल्लेखेन, ब० स०] दूषित भोज्य पदार्थ।

सहेल—(वि०) [सह हेलया] क्रीड़ासक्त। लापरवाह।

सहोर—(वि०) [√सह् + ओर] श्रेष्ठ, उत्तम। (पुं०) ऋषि, मुनि।

सह्य—(वि०) [√सह् +यत्] सहन करने योग्य; 'कथं तूष्णीं सह्यो निरवधिरिदानीं तु विरहः' उत्त० ३.४४। सहन करने में समर्थ। मुकाबला करने में समर्थ। शक्तिशाली। प्रिय। (न०) [सह+यत्] आरोग्य। सहायता। उपयुक्तता। (पुं०) [√सह् + यत्] सह्याद्रि नामक पर्वत जो पश्चिमी घाट का एक भाग है और समुद्रतट से कुछ हट कर है।

सा—(स्त्री०) [√सो + ड–टाप्] लक्ष्मी। पार्वती।

सांयात्रिक—(पुं०) [सम्यक् यात्रायै द्वीपान्तर-गमनाय अलम्, संयात्रा+ठञ्] पोतवणिक्, समुद्र मार्ग से व्यापार करने वाला व्यापारी ।

सांयुगीन—(वि०) [संयुगे युद्धे साधुः, संयुग खञ्] युद्धविद्या में निपुण । (पुं०) रणकुशल योद्धा, योद्धा जो युद्धविद्या में निपुण हो ।

सांराविण—(न०) [सम् √रु + णिनि +अण्] कोलाहल, शोरगुल ।

सांवत्सर, सांवत्सरिक—(वि०) [स्त्री०—**सांवत्सरी, सांवत्सरिकी**] [संवत्सर+अण्] [संवत्सर+ठञ्] सालाना, वार्षिक । (पुं०) ज्योतिषी, दैवज्ञ ।

सांवादिक—(वि०) [स्त्री०—**सांवादिकी**] [संवाद+ठञ्] बोल-चाल का । विवादात्मक । (पुं०) संवाद-दाता । नैयायिक ।

सांवृत्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सांवृत्तिकी**] [संवृत्ति + ठक्] भ्रमात्मक, मायामय, मिथ्या ।

सांसिद्धिक—(वि०) [संसिद्धि + ठञ्] स्वाभाविक, प्रकृतिगत । स्वेच्छा-प्रसूत, स्वतः-प्रवृत्त, स्वयंसिद्ध । अनियंत्रित, स्वतंत्र ।

सांस्थानिक—(पुं०) [संस्थान +ठक्] एक ही देश के निवासी । (वि०) संस्थानयुक्त ।

सांस्राविण—(न०) [सम्√स्रु+णिनि + अण्] प्रवाह ।

सांहननिक—(वि०) [स्त्री०—**सांहननिकी**] [संहनन+ठक्] शारीरिक, देह सम्बन्धी ।

साकम्—(अव्य०) [सह अकति, सह √अक्+अमु, सादेश] सह, सहित, संग में ।

साकल्य—(न०) [सकल + ष्यञ्] सम्पूर्णता, समूचापन ।

साकूत—(वि०) [सह आकूतेन, ब० स०, सहस्य सः] वह जिसका कुछ अर्थ हो, सार्थक । अभिप्राय-युक्त । रसिक ।—**स्मित**—(न०)विलासपूर्ण मुसकराहट ।

साकेत—(न०) [आकित्यते आकेतः, सह आकेतन, ब० स०, सहस्य सः] अयोध्या; 'साकेतनार्योऽञ्जलिभिः प्रणेमुः' र० १४·१३ । (पुं०) [साकेत+अण्] साकेतनिवासी ।

साकेतक—(पुं०) [साकेत + कन्] अयोध्यावासी ।

साक्तुक—(न०) [सक्तूनां समाहारः, सक्तु +ठञ्—क] सत्तू की राशि या समूह । (पुं०) [सक्तवे हितः, सक्तु + ठञ्] जौ, यव ।

साक्षात्—(अव्य०) [सह √अक्ष् + आति, सादेश] साफ-साफ आंखों के सामने, प्रत्यक्ष । स्वयं । तुल्य, सदृश ।—**कार**—(पुं०) प्रतीति, ज्ञान, पदार्थों का इन्द्रियों द्वारा होने वाला ज्ञान । मिलन ।

साक्षिन्—(वि०) [स्त्री०—**साक्षिणी**] [सह अक्षि अस्य, सह अक्षि+इनि, सहस्य सादेशः] साक्षात् देखनेवाला, चश्मदीद । (पुं०) चश्मदीद गवाह, ऐसा गवाह जिसने घटना अपनी आँखों से देखी हो । गवाह । परमेश्वर ।

साक्ष्य—(न०) [साक्षिन् + ष्यञ्] गवाही, शहादत; 'तमेव चाधाय विवाहसाक्ष्ये' र० ७.२० ।

साक्षेप—(वि०) [सह आक्षेपेण, ब० स०, सहस्य सः] आक्षेप-युक्त ।

साखेय—(वि०) [स्त्री०—**साखेयी**] [सखि+ढञ्] सखा या मित्र सम्बन्धी ।

साख्य—(न०) [सखि + ष्यञ्] सखित्व, मैत्री, दोस्ती ।

सागर—(पुं०) [सगर+अण्] समुद्र । चार की संख्या । सात की संख्या । मृग विशेष ।

सगर राजा के पुत्र ।—**अनुकूल** (**सागरानुकूल**)– (वि०) समुद्रतट पर बसा हुआ । —**अन्त** (**सागरान्त**)– (वि०) समुद्र तक का । (पुं०) समुद्र-तट ।—**अम्बरा** **सागराम्बरा**),—**नेमि**,—**मेखला**–(स्त्री०) धरती, पृथिवी ।—**आलय** (**सागरालय**) –(पुं०) वरुण ।—**उत्थ** (**सागरोत्थ**)– (न०) समुद्री लवण ।—**गा**– (स्त्री०) गंगा ।—**गामिनी**– (स्त्री०) नदी । छोटी इलायची ।

साग्नि—(वि०) [सह अग्निना, ब० स०, सहस्य सः] अग्नि सहित । यज्ञ की अग्नि को सुरक्षित रखने वाला ।

साग्निक—(वि०) [सह अग्निना, ब० स०, कप्] अग्निहोत्र के लिये अग्नि घर में ज्वलित रखने वाला । अग्नि सहित । (पुं०) गृहस्थ, जिसके पास यज्ञ या हवन की आग रहती हो, वह जो नियमित रूप से अग्निहोत्रादि करता हो ।

साग्र—(वि०) [सह अग्रेण] अग्र सहित । समूचा, समस्त, कुल, सब । जिसके पास अधिक हो ।

साङ्कर्य—(न०) [सङ्कर + ष्यञ्] मिलावट, मिश्रण ।

साङ्कल—(वि०) [स्त्री०—**साङ्कली**] [सङ्कल+अञ्] योग या जोड़ से उत्पन्न ।

साङ्काश्य–(न०), **साङ्काश्या**–(स्त्री०) जनक के भाई कुशध्वज की राजधानी का नाम । इसका वर्तमान नाम संकिश है ।

साङ्केतिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्केतिकी**] [सङ्केत+ठक्] सङ्केत सम्बन्धी, इशारे का । व्यवहार-सिद्ध ।

साङ्क्षेपिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्क्षेपिकी**] [सङ्क्षेप + ठक्] संक्षिप्त । संक्षेप-कारक ।

साङ्ख्य—(वि०) [सङ्ख्या + अण्] संख्या सम्बन्धी । गणनात्मक । प्रभेदात्मक । (न०, पुं०) [सङ्ख्या=सम्यक् ज्ञानम् अस्ति अत्र इत्यर्थे अण्] आस्तिक छः दर्शनों में से एक । (इसमें सृष्टि की उत्पत्ति का क्रम वर्णित है । इसमें प्रकृति ही जगत् का मूल मानी गयी है । इसमें कहा है सत्त्व, रज और तम इन तीनों गुणों के योग से सृष्टि का तथा उसके अन्य समस्त पदार्थों का विकास होता है । इसमें ईश्वर की सत्ता नहीं मानी गयी है और आत्मा ही पुरुष माना गया है । सांख्यमतानुसार आत्मा अकर्त्ता, साक्षी और प्रकृति से भिन्न है ।) (पुं०) सांख्यमतानुयायी ।—**प्रसाद**,—**मुख्य**–(पुं०) शिव जी ।

साङ्ग—(वि०) [सह अङ्गैः, ब० स०, सहस्य सः] अंगों या अवयवों वाला । सब प्रकार से परिपूर्ण । अंगों सहित ।

साङ्गतिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्गतिकी**] [सङ्गति+ठक्] संगति सम्बन्धी । समाज या सभा सम्बन्धी । संग करने वाला । (पुं०) अतिथि । सहाध्यायी । विचित्रपरिहासादिकथाजीवी ।

साङ्गम—(पुं०) [सङ्गम + अण्] मेल, संगम ।

साङ्ग्रामिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्ग्रामिकी**] [सङ्ग्राम√ठञ्] समर सम्बन्धी; 'एष साङ्ग्रामिको न्याय एष धर्मः सनातनः' उत्त० ५.२२ । (पुं०) सेनाध्यक्ष ।

साचि—(अव्य०) [√ सच्+इण्] टेढ़ेपन से, तिरछेपन से ।—**विलोकित**– (न०) कटाक्ष ।

साचिव्य—(न०) [सचिव+ष्यञ्] मंत्रित्व । मंत्री का पद । मैत्री । सहायता ।

साजात्य—(न०) [सजाति+ष्यञ्] जाति या वर्ग की समानता, समजातिकत्व ।

साञ्जन—(वि०) [सह अञ्जनेन, ब० स०, सहस्य सः] अंजन सहित । शरीरेन्द्रिय संबंधी । (पुं०) गिरगिट ।

√साद्—चु० उभ० सक० प्रकाशित करना। साटयति—ते, साटयिष्यति—ते, असमाटत्—त।

साटोप—(वि०) [सह आटोपेन] अभिमान में चूर। गरजता हुआ।

√सात्—चु० पर० अक० सुखी होना। सातयति—ते, सातयिष्यति—ते, अससातत्—त।

सात—(न०) [√सात्+अच्] सुख।

सातत्य—(न०) [सतत+ष्यञ्] नैरन्तर्य, अविच्छिन्नता।

साति—(स्त्री०) [√सन् + क्तिन्] भेंट। दान। प्राप्ति। सहायता। नाश। अन्त। तीव्र वेदना।

सातीन, सातीनक—(पुं०) [सतीन+अण्] [सातीन+कन्] क्षुद्र मटर।

सात्त्वत—(पुं०) [सत्त्वमेव सात्त्वम् तत् तनोति, सात्त्व √ तन्+ड] विष्णु। यदुवंशी अंशु का पुत्र। बलराम। श्रीकृष्ण। यादवमात्र। विष्णु-भक्त विशेष। एक वर्णसंकर जाति।

सात्त्वती—[सात्त्वत+ङीष्] चार नाटकीय वृत्तियों में से एक। सुभद्रा। शिशुपाल की माता का नाम।

सात्त्विक—(वि०) [स्त्री०—**सात्त्विकी**] [सत्त्व+ठञ्] असली, यथार्थ। सच्चा, सत्य। ईमानदार। साहसी। सत्त्वगुण-सम्पन्न। सत्त्वगुण-सम्भूत। आन्तरिक भावोत्पन्न। (पुं०) साहित्य-शास्त्र का भाव-विशेष जिससे हृदय की बात बाहरी भाव से प्रकट होती है। इसके आठ भेद हैं—१ स्तम्भ, २ स्वेद, ३ रोमाञ्च, ४ स्वरभंग, ५ वेपथु, ६ वैवर्ण्य, ७ अश्रु, ८ प्रलय। ब्रह्मा। ब्राह्मण।

सात्यकि—(पुं०) [सत्यक + इञ्] यादव-वंशीय योद्धा जो श्रीकृष्ण का सारथि था।

सात्यवत, सात्यवतेय—(पुं०) [सत्यवती +अण्] कृष्णद्वैपायन व्यास का नामान्तर।

सात्वत्—(पुं०) [सातयति सुखयति, √सात् +क्विप्, सात् परमेश्वरः स उपास्यत्वेन अस्ति अस्य, सात्+मतुप्, मस्य वः] विष्णु का उपासक। श्रीकृष्ण का पूजक।

साद—(पुं०) [√सद्+घञ्] बैठना। थकावट, श्रान्ति। दुबलापन, पतलापन; 'शरीरसादादसमग्रभूषणा' र० ३.२। नाश। पीड़ा। सफाई, स्वच्छता।

सादन—(न०) [√सद् + णिच्+ल्युट्] थकावट, श्रान्ति। नाश। आवास-स्थान, घर।

सादि—(पुं०) [√सद् + इण्] सारथि। योद्धा। वायु। (वि०) विषाद-युक्त।

सादिन्—(वि०) [√सद्+णिनि वा णिच् +णिनि] बैठा हुआ। नाश करने वाला। (पुं०) घुड़सवार। हाथी पर या रथ पर सवार मनुष्य।

सादृश्य—(न०) [सदृश+ष्यञ्] समानता, एकरूपता। प्रतिमूर्ति। तुलना।

साद्यन्त—(वि०) [सह आद्यन्ताभ्याम्, ब० स०, सहस्य सः] आदि-अंत-सहित। समूचा, सम्पूर्ण।

साद्यस्क—(वि०) [स्त्री०—**साद्यस्की**] शीघ्र होने वाला या किया जाने वाला।

√साध्—स्वा० पर० सक० समाप्त करना, पूरा करना। जीत लेना। साध्नोति, सात्स्यति, असात्सीत्।

साधक—(वि०) [स्त्री०—**साधका, साधिका**] [√साध् + ण्वुल्] पूरा करने वाला, सम्पूर्ण करने वाला। फलोत्पादक। निपुण, पटु। ऐन्द्रजालिक। सहायक।

साधन—(वि०) [स्त्री०— **साधनी**] [√सिध् + णिच्, साधादेश, + ल्यु] साधन करने वाला, पूरा करने वाला; 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्' कुमा०।

(न०) [√सिध् + णिच्, साधादेश, +ल्युट्] किसी कार्य को सिद्ध करने की क्रिया। सिद्धि। सामग्री, सामान। उपाय। उपासना, साधना। सहायता। शोधन। कारण, हेतु। अनुसरण। प्रमाण। वशवर्ती-करण, दमन करना। तंत्र-मंत्र से कोई कार्य पूरा करना। आरोग्य करना। पूरना, भरना (घाव का)। वध करना, मार डालना। राजी करना। प्रस्थान, रवानगी। तपस्या। मोक्षप्राप्ति। अर्थ-दण्ड करना। आईन के बल से देना चुकवाना या किसी वस्तु को दिलवा देना। कर्मेन्द्रियां। लिंग, जननेन्द्रिय। गर्भाशय। सम्पत्ति। मैत्री। लाभ। मृतक का अग्नि संस्कार।

साधनता—(स्त्री०), **साधनत्व**— (न०) [साधन+तल् — टाप्] [साधन + त्व] किसी कार्य को पूरा करने की क्रिया या युक्ति; 'प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफल-त्वमेति बहुसाधनता' शि० ९.६। सिद्धि की अवस्था।

साधना—(स्त्री०) [√सिध् + णिच्, साधादेश, + युच्—टाप्] सिद्धि। आराधना, उपासना। तुष्टिकरण।

साधन्त—(पुं०) [√साध्+झच्—अन्तादेश] भिक्षुक, भिखारी।

साधर्म्य—(न०) [सधर्म + ष्यञ्] समान-धर्मी होने का भाव, समान-धर्मता, एक-धर्मता।

साधारण—(वि०) [स्त्री०—**साधारणा, साधारणी**] [सह धारणया, ब० स०, सहस्य सः, सधारण + अण् (स्वार्थे)] मामूली, सामान्य। सार्वजनिक, आम। समान, सदृश, तुल्य। मिश्रित। (पुं०) न्याय में एक प्रकार का हेत्वाभास, वह हेतु जो सपक्ष और विपक्ष दोनों में एक सा रहे। (न०) सार्वजनिक नियम, मामूली नियम। —**धन**— (न०) मिली-जुली सम्पत्ति, वह सम्पत्ति जिस पर किसी परिवार के सब पातीदारों का स्वत्व हो। —**धर्म**— (पुं०) सार्वजनिक धर्म या कर्तव्य, यथा —अहिंसा, सत्य, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, दम, क्षमा, आर्जव (सिधाई), दान और घर्म। —**स्त्री०**—(स्त्री०) वेश्या।

साधारणता—(स्त्री०), **साधारणत्व**—(न०) [साधारण+तल् — टाप्] [साधारण +त्व] सामान्य या सार्वजनिक होने का भाव, सार्वजनिकता। समान स्वार्थ या स्वत्व।

साधारण्य—(न०) [साधारण+ष्यञ्] साधारणता।

साधिका—(स्त्री०) [√सिध्+णिच् साधा-देश+ण्वुल्—टाप्, इत्व] निपुणा स्त्री। [√साध्+ण्वुल्] गहरी निद्रा।

साधित—(वि०) [√सिध्+णिच्, साधा-देश+क्त] सिद्ध किया हुआ। साबित किया हुआ। प्राप्त। छोड़ा हुआ। दमन किया हुआ। फिर से पाया हुआ। जुर्माना किया हुआ। दिलवाया हुआ। शोधित (ऋणादि)।

साधिमन्—(पुं०) [साधु+इमनिच्] नेकी, उत्तमता।

साधिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन साधुः, साधु +इष्ठन्, साधादेश] अत्यंत दृढ़, बहुत मजबूत। अत्यंत साधु, बहुत अच्छा। अत्यंत सुंदर। अत्यंत आर्य। न्याय्य।

साधीयस्—(वि०) [साधु +ईयसुन्, उकार-लोप] अपेक्षाकृत अच्छा, उत्कृष्टतर। अपेक्षाकृत कड़ा या मजबूत। न्याय्य।

साधु—(वि०) [स्त्री०—**साधु, साध्वी**] [√साध् + उन्] नेक, उत्तम। योग्य, उचित, ठीक; 'यद्यत्साधु न चित्रे स्यात्क्रि-यते तत्तदन्यथा' श० ६.१३। पुण्यात्मा। दयालु। विशुद्ध। मनोहर। कुलीन। (पुं०) पुण्यात्मा जन। ऋषि। महात्मा। व्यापारी। जैन भिक्षुक। महाजन, सूदखोर। —**धी**—

(वि०) अच्छे स्वभाव का ।—वाद-(पुं०) शावाशी ।— वृत्त-(त्रि०) अच्छे आचरण वाला । पुण्यात्मा । ईमानदार । (पुं०) साधु आचरण करने वाला पुरुष । (न०) सदाचरण । ईमानदारी ।

साधृत—(न०) [सहाधृतेन, ब० स०, सहस्य सः] दूकान । छतरी । मयूरों का झुंड ।

साध्य—(वि०) [√सिध्+णिच्, साधादेश+यत्] साधनीय । सम्भव, होने योग्य । सिद्ध करने योग्य । स्थापित करने योग्य। प्रतीकार करने योग्य। जानने योग्य । जीतने के योग्य । दमन करने के योग्य । आराम होने योग्य । मार डालने योग्य । (न०) पूर्णता । वह वस्तु जिसे सिद्ध करना हो । न्याय में वह पदार्थ जिसका अनुमान किया जाय। (पुं०) बारह गण-देवता—मन, मन्ता, प्राण, नर, अपान, वीर्यवान्, विनिर्भय, नय, दंस, नारायण, वृष, प्रमुञ्च। देवता । एक मंत्र का नाम ।—सिद्धि- (स्त्री०) निष्पत्ति, काम का पूरा होना ।

साध्यता—(स्त्री०) [साध्य + तल्—टाप्] शक्यता, सम्भावना । आरोग्य होने की सम्भावना ।—**अवच्छेदक** (**साध्यतावच्छेदक**) (न०) जिस रूप से जिसकी साध्यता निश्चित हो वह धर्म । जैसे 'पर्वतो वह्निमान् धूमात्' इस वाक्य में वह्नि साध्य है और वह्निमत्त्व साध्यतावच्छेदक है ।

साध्वस—(न०) [साधु√अस् +अच्] भय, डर । गति-शक्ति-हीनता, जड़ता । घबड़ाहट, परेशानी ।

साध्वी—(स्त्री०) [साधु+ङीप्] सती स्त्री, पतिव्रता स्त्री । शुद्ध चरित्रवाली स्त्री । मेदा नामक अष्टवर्गीय ओषधि ।

सानन्द—(वि०) [सह आनन्देन, ब० स०, सहस्य सः] आनन्द-युक्त, प्रसन्न ।

सानसि—(पुं०) [√ सन्+इण्, असुक्] सुवर्ण, सोना ।

सानिका, सानेयिका, सानेयी—(स्त्री०) [√सन्+ण्वुल् — टाप्, इत्व] [सानेयी +कन्—टाप्, ह्रस्व] [सह आनयेन स्वरेण, ब० स० सहस्य सः, सानेय+ङीष्] वंशी ।

सानु—(पुं०, न०) [√सन्+ञुण्] चोटी, शिखा; 'सानूनि गन्धः सुरभीकरोति' कु० १.९ । पर्वत-शिखर की समतल भूमि । अङ्कुर, अँखुआ । वन । सड़क । छोर । ढालुवा जमीन । पवन का झोंका । पण्डित-जन । सूर्य ।

सानुमत्—(पुं०) [सानु + मतुप्] पर्वत ।

सानुमती—(स्त्री०) [सानुमत्—ङीप्] एक अप्सरा का नाम ।

सानुक्रोश—(वि०) [सह अनुक्रोशेन, ब० स०, सहस्य सः] दयालु, दयार्द्र चित्त वाला ।

सानुनय—(वि०) [सह अनुनयेन, ब० स०, सहस्य सः] विनय-युक्त, शिष्ट ।

सानुबन्ध—(वि०) [सह अनुबन्धेन] जिसका संबन्ध या क्रम न टूटा हो ।

सान्तपन—(न०) [सम्√तप्+ल्युट् +अण्] दो दिन में पूरा होने वाला एक व्रत ।

सान्तर—(वि०) [सह अन्तरेण, ब० स०, सहस्य सः] बीच के अवकाश वाला। झीना ।

सान्तानिक—(वि०) [सन्तान + ठक्] फैला हुआ (वृक्ष) सन्तान सम्बन्धी । सन्तान वृक्ष सम्बन्धी । (न०) सन्तान का साधन विशेष । (पुं०) वह ब्राह्मण जो सन्तानोत्पत्ति के लिये विवाह करे ।

√सान्त्व्—चु० पर० सक० शमन करना, शान्त करना । (शोक) दूर करना । सान्त्वयति, सान्त्वयिष्यति, अससान्त्वत् ।

सान्त्व--(पुं०), **सान्त्वन**,--(न०), **सान्त्वना**-(स्त्री०) [√सान्त्व् + घञ्] [√सान्त्व्+ल्युट्] [सान्त्व् + णिच् +युच् --टाप्] ढाढ़स बँधाना, किसी दु:खी आदमी को उसका दु:ख हल्का करने के लिये समझा-बुझा कर शान्त करने का काम । आश्वासन, तसल्ली । तुष्ट करने वाले शब्द । अभिवादन तथा कुशल-वार्ता ।

सान्दीपनि--(पुं०) [सन्दीपन+इञ्] श्रीकृष्ण के विद्या-गुरु का नाम ।

सान्दृष्टिक--(वि०) [स्त्री०--**सान्दृष्टिकी**] [सन्दृष्टि+ठक्]एक ही दृष्टि में होने वाला, तात्कालिक, देखते-देखते ही होने वाला ।

सान्द्र--(वि०) [√अन्द्+रक्, सह अन्द्रेण, ब० स०, सहस्य स:] घना; 'सान्द्रानन्दक्षुभितहृदयप्रस्रवेणेव सिक्त:' उत्त० ६.२२ । मजबूत । विपुल, अधिक । उग्र, प्रचण्ड । स्निग्ध, चिकना । मृदु, कोमल । सुन्दर । (पुं०) गुच्छा, स्तवक । राशि, ढेर ।

सान्धिक--(पुं०) [सन्धां सुराच्यावनं शिल्पं वेत्ति, सन्धा+ठक्] शौंडिक, कलाल, वह जो शराब बनाता हो । [सन्धि +ठक्] वह जो सन्धि करता हो ।

सान्धिविग्रहिक--(पुं०) [सन्धिविग्रह+ठक्] परराष्ट्र-सचिव, वह अमात्य जिसके अधिकार में, अन्य राज्यों से सन्धि, विग्रह (सुलह, जंग) करना हो ।

सान्ध्य--(वि०) [स्त्री०--**सान्ध्यी**] [सन्ध्या+अण्] सन्ध्या सम्बन्धी ।

सान्नहनिक--(वि०) [**सान्नहनिकी**] [सन्नहन+ठक्] कवचधारी ।

सान्नाय्य--[सम् √नी + ण्यत् नि० साधु:] अभिमंत्रित घी आदि हवन-सामग्री ।

सान्निध्य--(न०) [सन्निधि +ष्यञ्] नैकट्य, सामीप्य । उपस्थिति, विद्यमानता ।

सान्निपातिक--(वि०) [स्त्री०--**सान्निपातिकी**] [सन्निपात+ठक्] मिलने वाला । उलझन डालनें वाला । (पुं०) वह रोगी जिसके कफ, वायु और पित्त गड़बड़ा गये हों ।

सान्न्यासिक--(पुं०) [सन्न्यास + ठक्] वह ब्राह्मण जो चतुर्थ आश्रम अर्थात् संन्यासाश्रम में हो, यति ।

सान्वय--(वि०) [सह अन्वयेन, ब० स० सहस्य स:] अन्वय-सहित । वंश-विशिष्ट ।

सापत्न--(वि०) [स्त्री०--**सापत्नी**] [सपत्नी+अण्] सौत की कोख से उत्पन्न या सौत-सम्बन्धी ।

सापत्न्य--(न०) [सपत्नी+ष्यञ्] सौत की दशा, सौतियाभाव । [सपत्न+ष्यञ्] शत्रुता । (पुं०) [सपत्नी + यञ्] सौत का पुत्र । [सपत्न+ष्यञ् (स्वार्थे)] शत्रु ।

सापराध--(वि०) [सह अपराधेण, ब० स०, सहस्य स:] अपराधी, जुर्म करने वाला ।

सापिण्ड्य--(न०) [सपिण्ड + ष्यञ्] सपिंड होने का भाव या धर्म ।

सापेक्ष--(वि०) [सह अपेक्षया, ब० स०, सहस्य स:] अपेक्षा सहित, जिसमें किसी की अपेक्षा हो ।

साप्तपद--(न०) [सप्तपद+अण्] सात पग चलने से अथवा सात वाक्य आपस में कहने-सुनने से उत्पन्न हुई मैत्री या सम्बन्ध ।

साप्तपदीन--(न०) [सप्तपद + खञ्] दे० 'साप्तपद'; 'यत: सतां सन्नतगात्रि ! संगतं मनीषिभि: साप्तपदीनमुच्यते' कु० ५.३९ ।

साप्तपौरुष--(वि०) [स्त्री०--**साप्तपौरुषी**] [सप्तपुरुष+अण्] सात पीढ़ियों तक या सात पीढ़ियों का ।

साफल्य—(न०) [सफल + ष्यञ्] सफलता, कृतकार्यता । उपयोगिता । लाभ ।

साब्दी—(स्त्री०) द्राख ।

साभ्यसूय—(वि०) [सह अभ्यसूयया, व० स०, सहस्य सः] डाही, ईर्ष्यालु ।

√साम्—चु० पर सक० शमन करना, शान्त करना । सामयति, सामयिष्यति, असासामत् ।

सामक—(न०) [समक+अण्] वह मूल धन जो ऋण स्वरूप लिया या दिया गया हो । (पुं०) [√साम्+ण्वुल्] सान चढ़ाने का पत्थर ।

सामग्री—(स्त्री०) [समग्र+ष्यञ् – ङीष्, यलोप] सामान, वे पदार्थ जिनका किसी कार्य-विशेष में उपयोग होता है ।

सामग्र्य—(न०) [समग्र + ष्यञ्] समूचापन, पूर्णता । अनुचरवर्ग । माल-असवाव । भंडार, कोष ।

सामञ्जस्य— (न०) [समञ्जस+ष्यञ्] संगति, मेल, मिलान । विरोध न होना । औचित्य ।

सामन्—(न०) [√सो + मनिन्] शान्तिकरण, तुष्टि-साधन । राजाओं के लिये शत्रु को वश में करने का उपाय विशेष; 'सामदण्डौ प्रशंसन्ति नित्यं राष्ट्राभिवृद्धये' मनु० ७.१०९ । कोमलता, मृदुता (वाक्य-सम्बन्धी) । प्रशंसात्मक छंद या गान । सामवेद का मंत्र । सामवेद ।—**उद्भव** (**सामोद्भव**)–(पुं०) हाथी ।—**उपचार** (**सामोपचार**),—**उपाय** (**सामोपाय**)– (पुं०) शमन करने के साधन ।—**ग**–(पुं०) सामवेदी ब्राह्मण या वह ब्राह्मण जो सामवेद का गान कर सके ।—**ज**,—**जात**–(वि०) सामवेद से उत्पन्न । शान्त साधनों से पैदा हुआ । (पुं०) हाथी ।—**योनि**–(पुं०) ब्राह्मण । हाथी ।—**वाद**–(पुं०) मृदुशब्द, मधुर शब्द ।—**वेद**–(पुं०) चार वेदों में तीसरा वेद ।

सामन्त—(वि०) [समन्त + अण्] सीमावर्ती । पड़ोस का । सार्वजनिक । (पुं०) पड़ोसी । पड़ोसी राजा । करद राजा; 'सामन्तमौलिमणिरञ्जितपादपीठं' वे० ३.१९ । बड़ा जमींदार । योद्धा । नायक । सामीप्य ।

सामन्य—(पुं०) [सामन् + यत्] सामवेद का ज्ञाता, ब्राह्मण ।

सामयिक—(वि०) [स्त्री०—**सामयिकी**] [समय+ठक्] ठीक समय का । समयानुसार, समय की दृष्टि से उपयुक्त । समय सम्बन्धी । जो ठहराव के मुताबिक हो । थोड़े समय के लिये होने वाला, अस्थायी ।

सामर्थ्य—(न०) [समर्थ+ष्यञ्] शक्ति, ताकत । क्षमता । उद्देश्य की समानता । अर्थ या अभिप्राय की समानता या एकता । उपयुक्तता । शब्द की अर्थ-शक्ति । लाभ । सम्पत्ति ।

सामवायिक—(वि०) [स्त्री०—**सामवायिकी**] [समवाय+ठञ्] समाज या समूह से सम्बन्ध-युक्त । अभेद्य सम्बन्ध रखने वाला । (पुं०) मंत्री । दल का प्रधान ।

सामाजिक—(वि०) [स्त्री०—**सामाजिकी**] [समाज + ठक्] समाज-सम्बन्धी । (पुं०) किसी समाज का सदस्य ।

सामानाधिकरण्य—(न०) [समानाधिकरण+ष्यञ्] एक ही पद पर दोनों का होना, समान या बराबर अधिकार, समानता का सम्बन्ध ।

सामान्य—(वि०) [समान+ष्यञ्] साधारण, जिसमें कोई विशेषता न हो, मामूली । समान, बराबर का । समानांश का । तुच्छ, नाचीज । समूचा, समस्त । (न०) सार्वजनिकता । सामान्य लक्षण । समूचापन । किस्म, प्रकार । समता, एकस्वरूपत्व । निर्विकार अवस्था । सार्वजनिक प्रस्तावित विषय । साहित्य में एक अलंकार । यह तब

माना जाता है जब एक ही आकार की दो या अधिक ऐसी वस्तुओं का वर्णन होता है जिनमें देखने में कुछ भी अन्तर नहीं जान पड़ता ।—**पक्ष**– (पुं०) मध्यम स्थिति । –**लक्षणा**–(स्त्री०) वह गुण जिसके अनुसार किसी एक सामान्य को देख कर उसी के अनुसार उस जाति के अन्य सब पदार्थों का ज्ञान प्राप्त होता है, किसी पदार्थ को देख उस जाति के अन्य पदार्थों का बोध करा देने वाली शक्ति ।—**वनिता**–(स्त्री०) वेश्या ।—**शास्त्र**–(न०) साधारण नियम या विधान ।

सामासिक—(वि०) [स्त्री०—**सामासिकी**] [समास+ठक्] समास-सम्बन्धी । सामूहिक । मिश्रित । संक्षिप्त । (न०) सब प्रकार के समासों का संग्रह ।

सामि—(अव्य०) [√साम् + इन्] आधा; 'वल्लभाभिरुपसृत्य चक्रिरे सामिभुक्तविषयाः समागमाः' र० १९.१६ । निन्दा ।

सामिधेनी—(स्त्री०) [सम् √इन्ध्+ल्युट् नि० साधुः] एक प्रकार का ऋक्मंत्र जिसका पाठ होम की अग्नि प्रज्वलित करते समय अथवा हवन की अग्नि में समिधाएँ छोड़ते समय किया जाता है । समिधा, ईंधन ।

सामीची—(स्त्री०) प्रशंसा । स्तुति ।

सामीप्य—(न०) [समीप + ष्यञ्] समीप होने का भाव, निकटता । एक प्रकार की मुक्ति जिसमें मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है ।

सामुद्र—(वि०) [स्त्री०—**सामुद्री**] [समुद्र+अण्] समुद्र में उत्पन्न । समुद्र-सम्बन्धी । (न०) समुद्री नमक । समुद्र-फेन । नारियल । शरीर का चिह्न । (पुं०) समुद्र-यात्री ।

सामुद्रक—(न०) [सामुद्र + कन्] समुद्री लवण । [समुद्रेण ऋषिणा प्रोक्तम्, समुद्र वुण्] शरीर के चिह्नों या लक्षणों आदि के फलों का विवेचन करने वाला ग्रन्थ ।

सामुद्रिक—(वि०) [स्त्री०—**सामुद्रिकी**] [समुद्र + ठञ्] समुद्र में उत्पन्न, समुद्र-सम्भूत । शरीर के शुभाशुभ चिह्नों सम्बन्धी । (न०) हस्तरेखाओं से शुभाशुभ कहने की विद्या । (पुं०) वह व्यक्ति जो मनुष्य के शरीर के चिह्नों या लक्षणों को देख कर शुभाशुभ फलों का विवेचन करे ।

साम्पराय—(वि०) [स्त्री०—**साम्परायी**] [सम्पराय+अण्] युद्ध सम्बन्धी, सामरिक । परलोक-सम्बन्धी । (न०, पुं०) लड़ाई । परलोक । परलोक-प्राप्ति के साधन । परवर्ती जीवन-सम्बन्धिनी जिज्ञासा । अनिश्चय ।

साम्परायिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्परायिकी**] [सम्पराय+ठक्] युद्ध में काम आने वाला । विपत्ति-कारक । परलोक-सम्बन्धी । (न०) युद्ध । (पुं०) लड़ाई का रथ । —**कल्प**–(पुं०) सैन्य-व्यूह विशेष ।

साम्प्रतम्—(अव्य०) [सम्–प्र √ तन् +डमु] अब । अभी । उपयुक्त रूप में ।

साम्प्रतिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्प्रतिकी**] [सम्प्रति+ठक्] वर्तमान समय सम्बन्धी । उचित, ठीक ।

साम्प्रदायिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्प्रदायिकी**] [सम्प्रदाय + ठक्] परंपरागत सिद्धान्त सम्बन्धी । किसी संप्रदाय से संबंध रखने वाला ।

साम्ब—(पुं०) [सह अम्बया, ब० स०, सहस्य सः] शिव का नामान्तर ।

साम्बन्धिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्बन्धिकी**] [सम्बन्ध+ठक्] सम्बन्ध से उत्पन्न । (न०) नातेदारी, रिश्तेदारी । सन्धि द्वारा स्थापित मैत्री ।

साम्बरी—(स्त्री०) [सम्बर + अण्–ङीप्] माया, जादूगरी । जादूगरनी ।

साम्भवी—(स्त्री०) [सम्भव+अण्—ङीप्] लाल लोध्र वृक्ष ।

साम्य—(न०) [सम + ष्यञ्] समानता, सादृश्य । ऐकमत्य । अपक्षपातित्व ।

साम्राज्य—(न०) [सम्राज् +ष्यञ्] वह राज्य जिसके अधीन बहुत से देश हों और जिसमें किसी एक सम्राट् का शासन हो, सार्वभौमराज्य । आधिपत्य, पूर्ण अधिकार ।

साय—(पुं०) [√सो +घञ्] समाप्ति, अन्त । दिन का अन्त, सन्ध्याकाल । वीर । —**अहन्** (**सायाह्न**)- (पुं०) सायंकाल ।

सायक—(पुं०) [√सो + ण्वुल्] तीर; 'सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव' र० २.३१ । तलवार ।—**पुङ्ख**-(पुं०) तीर का वह भाग जिसमें पंख लगे होते हैं ।

सायन्तन—(वि०) [स्त्री०—**सायन्तनी**] सायम्+ट्युल्, तुट्] सायंकाल सम्बन्धी ।

सायम्—(अव्य०)[√सो + अमु] संध्या, शाम ।— **काल**-(पुं०) सन्ध्याकाल ।—**मण्डन**-(न०) सूर्य्यास्त । सूर्य ।—**सन्ध्या**-(स्त्री०) सन्ध्या काल की लाली । सन्ध्या काल की भगवदुपासना ।

सायिन्—(पुं०) घुड़सवार ।

सायुज्य—(न०) [सह√युज्+क्विप्, सादेश, सयुज्+ष्यञ्] एक में इस प्रकार मिल जाना कि भेद न रहे । पाँच प्रकार की मुक्तियों में से एक प्रकार का मोक्ष, इसमें जीवात्मा का परमात्मा में लीन हो जाना माना गया है । समानता, सादृश्य ।

सार—(वि०) [√सृ+घञ्, सार + अच्] सर्वोत्तम, अत्युत्तम; 'असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयं' सुभा० । असली, यथार्थ । मजबूत । विक्रमी । भली-भाँति सिद्ध किया हुआ ।(पुं०, न०) [√सृ+घञ्] किसी पदार्थ का मूल, मुख्य या काम का अथवा असली अंश, तत्त्व । मींगी । गूदा । वृक्ष का रस । किसी ग्रन्थ का सार, निचोड़ । शक्ति, ताकत । शूरता । दृढ़ता , मजबूती । धन, सम्पत्ति । अमृत । ताजा मक्खन । पवन । मलाई । रोग । पीप, मवाद । उत्तमता । शतरंज का मोहरा । एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें उत्तरोत्तर वस्तुओं का उत्कर्ष या अपकर्ष वर्णित होता है । (न०) [सर + अण्] जल । उपयुक्तता । वन । इस्पात लोहा ।—**असार** (**सारासार**)-(वि०) मूल्यवान् और निकम्मा । मजबूत और कमजोर । (न०) सारता और निस्सारता । पोढ़ापन और खुखलापन । ताकत और कमजोरी ।—**गन्ध** -(पुं०) चन्दन की लकड़ी ।—**ग्रीव**- (पुं०) शिव ।—**ज**-(न०) ताजा नवनीत ।—**तरु**-(पुं०)केले का वृक्ष ।—**दा**-(स्त्री०) सरस्वती देवी । दुर्गा देवी ।—**द्रुम**-(पुं०) खदिर वृक्ष ।—**भङ्ग**- (पुं०) शक्ति का नाश ।— **भाण्ड**-(पुं०) व्यापार की बहुमूल्य वस्तु । सौदागरी माल की गाँठ । कस्तूरी । खजाना ।—**भुज्**- (पुं०)अग्नि । —**मिति**- (पुं०) वेद ।—**लोह**-(न०) इस्पात लोहा ।

सारघ—(न०) [सरघाभिः निर्वृत्तम्, सरघा +अण्] शहद ।

सारङ्ग—(वि०) [स्त्री०—**सारङ्गी**] [√सृ + अङ्गच्+अण्] चितकबरा, रंग-बिरंगा । (पुं०) रंग-बिरंगा रंग । चित्तल हिरन । हिरन, मृग; 'सारङ्गास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गं' मे० २० । शेर । हाथी । भ्रमर । कोकिल । बड़ा सारस । मेढक । मयूर । छाता । बादल । वस्त्र । बाल । शंख । शिवजी । कामदेव । पुष्प । कमल । कपूर । धनुष । चन्दन । वाद्य-यंत्र-विशेष, सारंगी, चिकारा । सुवर्ण । पृथिवी । रात्रि । प्रकाश । रत्न । अश्व । सरोवर । समुद्र । कुच । हाथ । कपोल । अंजन । विद्युत् । सर्प । सूर्य । चन्द्रमा । नक्षत्र ।

हल। कौआ। खंजन। लवा पक्षी। राजहंस। चातक। महीन वस्त्र। दीपक। विष्णु का धनुष। बाण। तलवार। कबूतर। मोती। आकाश। श्रीकृष्ण का एक नाम।

सारङ्गिक—(पुं०) [सारङ्गं हन्ति, सारङ्ग +ठक्] चिड़ीमार, बहेलिया।

सारङ्गी—(स्त्री०) [सारङ्ग + ङीप्] एक प्रसिद्ध वाद्ययंत्र। चित्तल हिरनी। एक रागिनी।

सारण—(वि०) [स्त्री०—**सारणी**] [√सृ + णिच्+ल्यु] बहाने वाला। भेजने वाला। (न०) एक गंधद्रव्य। (पुं०) दस्तों की बीमारी, अतीसार। अमड़ा, आँवला। भद्रबला। गंध-प्रसारिणी लता। मक्खन। रावण का एक मंत्री।

सारणा—(स्त्री०) [√सृ + णिच्+युच् —टाप्] पारद आदि रसों का एक प्रकार का संस्कार।

सारणि, सारणी—(स्त्री०) [√सृ+णिच् +अनि, पक्षे ङीष्] छोटी नदी। नहर। नाली।

सारण्ड—(पुं०) [√सृ+णिच् + अण्ड] सर्प का अंडा।

सारतस्—(अव्य०) [सार + तस्] धन के अनुसार, वित्तानुसार। विक्रमपूर्वक।

सारथि—(पुं०) [√सृ + अथिण्, वा सह रथेन सरथः घोटकः तत्र नियुक्तः, सरथ +इञ्] रथवान, रथ हाँकने वाला। साथी, सहायक। समुद्र।

सारथ्य—(न०) [सारथि + ष्यञ्] रथवानी, कोचवानी।

सारमेय—(पुं०) [सरमाया कश्यपपत्न्याः अपत्यम्, सरमा+ढक्] कुत्ता।

सारमेयी—(स्त्री०) [सारमेय+ ङीप्] कुतिया।

सारल्य—(न०) [सरल +ष्यञ्] सरलता, सीधापन, ईमानदारी, सच्चाई।

सारवत्—(वि०) [सार+मतुप्, मस्य वः] सार-युक्त। ठोस। मजबूत। मूल्यवान्। रसदार। उपजाऊ।

सारस—(वि०) [स्त्री०—**सारसी**] [सरस् +अण्] सरोवर सम्बन्धी। (न०) कमल। एक प्रकार का जल। [सह रसेन शब्देन, सरस+अण्] करधनी, कमरबंद। (पुं०) [सरस्+अण्] हंस की जाति का एक लंबी टांगों वाला पक्षी। हंस। गरुड़ का एक पुत्र। [सरस+अण्] चंद्रमा।

सारसन—(न०) [सार √सन् + अच्] करधनी, कमरपेटी, कमरबंद; 'सारसनम्महानहि:' कि० १८.३२। सामरिक कमरबंद विशेष।

सारस्वत—(वि०) [स्त्री०—**सारस्वती**] [सरस्वती+अण्] सरस्वती देवी सम्बन्धी। सरस्वती नदी सम्बन्धी। वाक्पटु। (न०) [सारस्वत + अण्] वाक्-पटुता। वाणी। (पुं०) [सरस्वती+अण्] सरस्वती नदी के तटवर्ती एक देश का नाम। बेल की लकड़ी का दण्ड। (पुं०) [सारस्वत +अण्] सारस्वत देश वासी। पंच गौड़ ब्राह्मणों में से एक—'सारस्वताः कान्यकुब्जा उत्कला मैथिलाश्च ये। गौडाश्च पञ्चधा चैव दश विप्राः प्रकीर्तिताः।' (सह्या० २।१।३)।

साराल—(पुं०) [सार—आ √ला+क] तिल का पौधा।

सारि—(पुं०, स्त्री०) [√सृ+इण्] जुआ खेलने का पासा। गोटी। मैना।—**फलक** —(पुं०) बिसात।

सारिका—(स्त्री०) [√सृ + ण्वुल्—टाप्, इत्व] मैना जाति का चिड़िया।

सारिन्—(वि०) [स्त्री०—**सारिणी**] [√सृ +णिनि] जाने वाला। पीछा करने वाला। [सार+इनि] सारवान्।

सारी—(स्त्री०) [सारि + ङीष्] मैना। सप्तला, सातला। पासा।

सारूप्य—(न०) [सरूप + ष्यञ्] समान रूप होने का भाव, एकरूपता। पांच प्रकार की मुक्तियों में से एक प्रकार की मुक्ति। इसमें उपासक अपने उपास्य देव के रूप में रहता है और अन्त में उसी उपास्य देवता का रूप प्राप्त करता है। नाटक में शक्ल मिलती-जुलती होने के कारण धोखे में किया जाने वाला बर्ताव (क्रोधादि)।

सारोष्ट्रिक—(पुं०) [सारः श्रेष्ठः उष्ट्रो यत्र, सारोष्ट्रः देशभेदः तत्र भवः, सारोष्ट्र +ठक्] विष विशेष।

सार्गल—(वि०) [सह अर्गलेन, ब० स०, सहस्य सः] रोक सहित, रोका हुआ। अड़चन डाला हुआ।

सार्थ—(वि०) [सह अर्थेन, ब० स०, सहस्य सः] अर्थ-सहित। वह जिसका कोई उद्देश्य हो। उपयोगी, काम लायक। धनी, धनवान्। [समानः अर्थो यस्य, ब० स०, समानस्य सः] एक ही अर्थ वाला, समानार्थक। (पुं०) [सह अर्थेन] धनी आदमी। [√ सृ+थन्+अण्]सौदागरों की टोली (काफिला); 'सार्थाः स्वैरं स्वकीयेषु चेरुर्वेश्मस्विवाद्रिषु' र० १७.६४। टोली, दल। (एक जाति के पशुओं का) हेड़। समुदाय, समूह। तीर्थयात्रियों की टोली। —ज-(वि०) वह जो टोली या काफिले में पाला पोसा हुआ हो।—वाह- (पुं०) दल का नेता या नायक। सौदागर।

सार्थक—(वि०) [सह अर्थेन, ब० स०, कप्] अर्थवाला, अर्थ सहित। उपयोगी, काम का।

सार्थवत्—(वि०) [सार्थ+मतुप्, मस्य वः] बड़े समुदाय या समूह वाला।

सार्थिक—(पुं०) [सार्थ+ठक्] व्यापारी, सौदागर।

सार्द्र—(त्रि०) [सह आर्द्रेण, ब० स०, सहस्य सः] भींगा, तर, सील वाला, तरी वाला, नम।

सार्ध—(वि०) [सह अर्धेन, ब० स०, सहस्य सः] आधा सहित, आधे के साथ पूर्ण।

सार्धम्—(अव्य०) [सह √ऋध्+अमु] सहित, साथ, समेत; 'वनं मया सार्धमसि प्रपन्नः' र० १४.६३।

सार्प, सार्प्य—(पुं०) [सर्पो देवता अस्य, सर्प+अण्] [सर्प + ष्यञ्] *अश्लेषा नक्षत्र।*

सार्पिष, सार्पिष्क—(वि०) [स्त्री०—**सार्पिषी, सार्पिष्की**] [सर्पिषा संस्कृतम्, सर्पिस्+अण्] [सर्पिस्+ ठक्—क] घी में राँधा या तला हुआ। घी-मिश्रित।

सार्वकामिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वकामिकी**] [सर्वकाम+ठक्—इक] समस्त कामनाओं को पूरा करने वाला।

सार्वजनिक, सार्वजनीन—(वि०) [स्त्री०—**सार्वजनिकी, सार्वजनीनी**] [सर्वजन +ठक्— इक] [सर्वजन + खञ्—ईन] सर्वसाधारण सम्बन्धी, आम।

सार्वज्ञ—(न०) [सर्वज्ञ + अण्] सर्वज्ञता।

सार्वत्रिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वत्रिकी**] [सर्वत्र+ठक् — इक] हर स्थान का, सर्वत्र से सम्बन्ध रखने वाला।

सार्वधातुक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वधातुकी**] [सर्वधातु+ठक्—क] सब धातुओं में व्यवहृत होने वाला। (न०) व्याकरण में सर्वधातु-प्राकृतिक लट्, लोट्, लङ् और लिङ् —इन चार लकारों की संज्ञा।

सार्वभौतिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वभौतिकी**]सर्वभूत+ठक् — इक] हरेक तत्त्व

या प्राणी से सम्बन्ध रखने वाला। जिसमें समस्त प्राणधारी सम्मिलित हों।

सार्वभौम—(वि०) [स्त्री०—**सार्वभौमी**] [सर्वभूमि+अण्] समस्त भूमि सम्बन्धी। सम्पूर्ण भूमि की। (पुं०) सम्राट्, चक्रवर्ती राजा, शाहंशाह; 'नाज्ञाभङ्गं सहन्ते नृवर! नृपतयस्त्वादृशाः सार्वभौमाः' मु० ३.२२। उत्तर दिशा का दिग्गज।

सार्वलौकिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वलौकिकी**] [सर्वलोक + ठञ्—इक] सर्वसंसार में व्याप्त।

सार्ववर्णिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्ववर्णिकी**] [सर्ववर्ण +ठक्—इक] हर प्रकार का। हर जाति का, हर वर्ण का।

सार्वविभक्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वविभक्तिकी**] [सर्वविभक्ति+ठञ्—इक] सब विभक्तियों में लगने वाला। सब विभक्ति सम्बन्धी।

सार्ववेदस—(पुं०) [सर्ववेदस् + अण्] अपना समस्त द्रव्य यज्ञ की दक्षिणा अथवा अन्य किसी वैसे ही धर्मानुष्ठान में दे डालने वाला।

सार्ववेद्य—(पुं०) [सर्ववेद + ष्यञ्] वह ब्राह्मण जो सब वेदों का जानने वाला हो।

सार्षप—(वि०) [स्त्री०—**सार्षपी**] [सर्षप +अण्] सरसों का बना हुआ। (न०) सरसों का तेल, कड़ुआ तेल।

सार्ष्टि—(वि०) समान पद या अधिकार वाला।

सार्ष्टिता—(स्त्री०) [सार्ष्टि + तल्—टाप्] पद या अधिकार में समानता या तुल्यता। पाँच प्रकार की मुक्तियों में से एक प्रकार की मुक्ति।

सार्ष्ट्य—(न०) [सार्ष्टि + ष्यञ्] चौथे दर्जे की मुक्ति।

साल—(पुं०) [√सल्+घञ्] साल नाम का वृक्ष, साखू। उसकी राल। वृक्ष। किसी भवन के चारों ओर परकोटे की दीवालें या छालदीवारी। दीवाल। मछली विशेष।

सालन—(पुं०) [सालः कारणत्वेन अस्ति अस्य, साल+न] साल वृक्ष की राल।

साला—(स्त्री०) [सालः प्राकारोऽस्ति अस्याः, साल+अच् — टाप्] घर।—**वृक**—(पुं०) कुत्ता। सियार। दीवाल।—**करी**—(स्त्री०) वह स्त्री कारीगर जो अपने घर ही में काम करे। स्त्री कैदी (विशेषकर युद्ध-क्षेत्र में पकड़ी हुई)।

सालार—(न०) [साला√ऋ+अण्] दीवाल में जड़ी हुई और बाहर निकली हुई खूँटी।

सालूर—(पुं०) [√सल् + उरच्, णित्व, वृद्धि] मेढक।

सालेय—(न०) [साला + ढक्—एय] सौंफ, मधूरिका।

सालोक्य—(न०) [समानो लोकोऽस्य, ब० स०, समानस्य सः, सलोक+ष्यञ्] दूसरे के साथ एक ही लोक या स्थान में निवास। पांच प्रकार की मुक्तियों में से एक। इसमें मुक्त जीव भगवान् के साथ अथवा अपने अन्य आराध्य देव के साथ एक ही लोक में वास करता है, सलोकता।

साल्व—(पुं०) [साल्व + अण्] साल्व देश का राजा। वहां का निवासी। देव विशेष। एक दैत्य जिसे विष्णु भगवान् ने मारा था।—**हन्**—(पुं०) विष्णु भगवान्।

साल्विक—(पुं०) [साल्व + ठक्] सारिका (मैना) नामक पक्षी।

साव—(पुं०) [√सु+घञ्] देवता या पितर के उद्देश्य से जल या सोमरस का तर्पण।

सावक—(वि०) [स्त्री०—**साविका**] [√सु+ण्वुल्] उत्पादक। (पुं०) [=शावक, पृषो० साधुः] दे० 'शावक'।

सावकाश—(वि०) [सह अवकाशेन, ब० स०, सहस्य सः] वह जिसको अवकाश हो। खाली।

सावग्रह—(वि०) [सह अवग्रहेण] अवग्रह चिह्न वाला ।

सावज्ञ—(वि०) [सह अवज्ञया] घृणा या तिरस्कार-युक्त ।

सावद्य—(न०) [सह अवद्येन] तीन प्रकार की योग-शक्तियों में से एक । यह योगियों को प्राप्त होती है । अन्य दो शक्तियों के नाम "निरवद्य" और "सूक्ष्म" हैं ।

सावधान—(वि०) [सह अवधानेन] सचेत, सतर्क, होशियार, सजग, चौकस ।

सावधि—(वि०) [सह अवधिना] सीमा-सहित, सीमावद्ध, मर्यादित; 'सावधिस्तोय-राशिस्ते यशोराशेस्तु नावधिः' सुभा० ।

सावन—(वि०) [स्त्री०—**सावनी**] [सवन +अण्] तीन सवनों वाला, तीन सवनों से सम्बन्ध रखने वाला । (पुं०) यजमान, यज्ञकर्त्ता, यज्ञ कराने के लिये ऋत्विक्, होता आदि नियत करने वाला । वह कर्म विशेष जिसके द्वारा यज्ञ समाप्त किया जाता है । वरुण । तीस दिवस का सौरमास । सूर्योदय से सूर्यास्त तक का मामूली दिन या दिनमान । ६० दण्ड का समय । वर्ष विशेष ।

सावयव—(वि०) [सह अवयवेन] अवयवों या अंगों या भागों से वना हुआ या युक्त ।

सावर—(पुं०) [सवरेण निर्वृत्तः, सवर +अण्] अपराध, जुर्म । पाप, गुनाह । लोध्र का पेड़ ।

सावरण—(वि०) [सह आवरणेन, व० स०, सहस्य सः] आवरण-सहित । छिपा हुआ । ढका हुआ ।

सावर्ण—(वि०) [स्त्री०—**सावर्णी**] [सवर्ण+अण्] एक ही रंग, नस्ल या जाति का, एक ही रंग, नस्ल या जाति से सम्बन्ध रखने वाला । (पुं०) [सवर्णायां भवः, सवर्णा+अण्] आठवें मनु जो सूर्य के पुत्र थे ।—**लक्ष्य**- (न०) चर्म, खाल ।

सावर्णि—(पुं०) [सवर्णा+इञ्] दे० 'सावर्ण' ।

सावर्ण्य—(न०) [सवर्ण + ष्यञ्] रंग की समानता । श्रेणी या जाति की एक-रूपता ।[सावर्णि+ष्यञ्] सावर्णि मनु का मन्वन्तर ।

सावलेप—(वि०) [सह अवलेपेन, व० स०, सहस्य सः] अभिमानी, अकड़वाज, घमंडी ।

सावशेष—(वि०) [सह अवशेषेण] वह जिसमें कुछ शेष हो । अपूर्ण, अधूरा ।

सावष्टम्भ—(वि०) [सह अवष्टम्भेन] दृढ़ । साहसी । घमंडी । स्वावलंवी ।(पुं०) वह मकान जिसके उत्तर-दक्षिण सड़कें हों ।

सावहेल—(वि०) [सह अवहेलया] उपेक्षा या घृणा से युक्त ।

साविका—(स्त्री०)[सू+णिच्+ण्वुल्, इत्व, टाप्] दाई, प्रसव कराने वाली ।

सावित्र—(वि०) [स्त्री०— **सावित्री**] सवितृ +अण्] सूर्य-सम्बन्धी । सूर्यवंशी; 'यत्सावित्रैर्दीपितं भूमिपालैर्लोकश्रेष्ठैः साधुचित्रं चरित्रं' उत्त० १.४२ ।(पुं०) सूर्य । गर्भ । ब्राह्मण । शिव । कर्ण ।(न०) यज्ञोपवीत ।

सावित्री—(स्त्री०) [सावित्र+ङीप्] किरण । ऋग्वेद का स्वनामख्यात मंत्र विशेष, गायत्री मंत्र । यज्ञोपवीत संस्कार । ब्राह्मणी । पार्वती । कश्यप की एक पत्नी का नाम । साल्व देशाधिपति सत्यवान् की पत्नी का नाम ।—**पतित**,—**परिभ्रष्ट**- (पुं०) ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ण का वह पुरुष, जिसका उपनयन-संस्कार निर्दिष्ट समय पर न हुआ हो, व्रात्य ।—**व्रत**- (न०) व्रत विशेष । यह व्रत वे स्त्रियाँ रखती हैं, जो अपने पति की दीर्घायु की कामना रखने वाली होती हैं । यह व्रत ज्येष्ठ कृष्ण १४ को रखा जाता है ।

इस व्रत की रखने वाली स्त्रियां विधवा नहीं होतीं।

साविष्कार--(वि०) [सह आविष्कारेण, ब० स०, सहस्य सः] प्रकट। अपने गुण, शक्ति आदि का प्रदर्शन करने वाला, घमंडी।

साशंस--(वि०) [सह आशंसया] आशावान्। कामना से पूर्ण।

साशङ्क--(वि०) [सह आशङ्कया] आशंकायुक्त। भयभीत, डरा हुआ।

साशयन्दक--(पुं०) छिपकली, बिसतुइया।

साशूक--(पुं०) गलकंबल, सास्ना।

साश्चर्य--(वि०) [सह आश्चर्येण, ब० स०, सहस्य सः] आश्चर्य-युक्त। अद्भुत, विलक्षण। आश्चर्य-चकित।

साश्र, सास्र--(वि०) [सह अश्रेण] [सह अस्रेण] कोण वाला, जिसमें कोण हों। रोता हुआ, आँखों से आँसू भरे हुए।

साश्रुधी-- (स्त्री०) [साश्रु ध्यायति, साश्रु √ध्यै + क्विप्, संप्रसारण] सास, पत्नी अथवा पति की माता।

साष्टाङ्ग--(वि०) [सह अष्टाङ्गैः, ब० स०, सहस्य सः] आठों अंग सहित। (न०) अष्टाङ्ग प्रणाम। [अष्टाङ्ग ये हैं:— मस्तक, हाथ, पैर, छाती, आँख, जाँघ, वचन और मन। इन सहित भूमि पर लेट कर प्रणाम करना]।

सास--(वि०) [सह आसेन] धनुर्धारी।

सासूय--(वि०) [सह असूयया] डाही, ईर्ष्यालु।

सास्ना--(स्त्री०) [√सस् + न, णित्, वृद्धि] गौ का गलकंबल।

साहचर्य--(न०) [सहचर + ष्यञ्] सहगमन; सहचारिता। सहवर्तित्व। सामानाधिकरण्य।

साहन--(न०) [√सह् + णिच्+ल्युट्] सहन करने में प्रवृत्त करना।

साहस--(न०) [सहसा बलेन निर्वृत्तम्, सहस्+अण्] मन की वह दृढ़ता जो कोई असाधारण काम करने में प्रवृत्त करती है, हिम्मत; 'साहसे लक्ष्मीर्वसति' मृ०। कोई बुरा काम जैसे लूटपाट, बलात्कार आदि। बेरहमी, नृशंसता। बे-समझे-बूझे काम कर बैठना। सजा, दण्ड।—**अङ्क** (**साहसाङ्क**) -(पुं०) विक्रमादित्य का नामान्तर।—**अध्यवसायिन्** (**साहसाध्यवसायिन्**)-(वि०) बेसमझे बूझे सहसा हड़बड़ी में काम कर बैठने वाला।—**एकरसिक** (**साहसैकरसिक**)-(वि०) अत्याचारी, खूंखार।—**कारिन्**-(वि०) साहस करने वाला। बिना सोचे-समझे काम करने वाला, अविवेकी।

साहसिक--(वि०) [स्त्री०—**साहसिकी**] [साहस+ठक्] हिम्मतवर, पराक्रमी। उद्धत; अविवेकी। अत्याचारी। कठोर वचन बोलने वाला। मिथ्यावादी। निर्भीक। दंडात्मक। भयानक। (पुं०) हिम्मती या पराक्रमी पुरुष। प्रचण्ड या उन्मत्त व्यक्ति। चोर। डाकू, लुटेरा। परस्त्रीगामी व्यक्ति।

साहसिन्--(वि०) [साहस +इनि] प्रचण्ड। भयानक। नृशंस। पराक्रमी।

साहस्र--(वि०) [स्त्री०—**साहस्री**] [सहस्र +अण्] हजार सम्बन्धी। जिसमें एक हजार हो। एक हजार में खरीदा हुआ। प्रति सहस्र के हिसाब से दिया हुआ (सूद)। सहस्र गुना। (न०) एक हजार का जोड़। (पुं०) सैनिक टोली जिसमें एक सहस्र सैनिक हों।

साहायक--(न०) [सहाय + वुञ्] सहायता, मदद; 'स कुलोचितमिन्द्रस्य साहायकमुपेयिवान्' र० १७.५। सहचरत्व, मैत्री।

साहाय्य--(न०) [सहाय +ष्यञ्] सहायता, मदद। मैत्री, दोस्ती।

साहित्य—(न०) [सहित + ष्यञ्] सहित का भाव, एक साथ होना, रहना या वाक्य में परस्पर सापेक्ष पदों का एक क्रिया में अन्वित होना। गद्य और पद्य सब प्रकार के उन ग्रन्थों का समूह, जिनमें सार्वजनीन हित सम्बन्धी स्थायी विचार रक्षित रहते हैं। वे सभी लेख, ग्रन्थ आदि जिनका सौन्दर्य, गुण, रूप या भावुकता-पूर्ण प्रभावों के कारण समाज में आदर होता है।

साह्य—(न०) [सह + ष्यञ्] संगम, मेल, मिलाप। सहायता।—**कृत्**–(पुं०) साथी, संगी।

साह्वय—(पुं०) [सह आह्वयेन, ब० स०, सहस्य सः] जानवरों की लड़ाई का जुआ या द्यूत। (वि०) नाम-युक्त।

√सि—स्वा०, क्र्या० उभ० सक० बाँधना। जाल में फँसाना। सिनोति—सिनुते, क्र्या० सिनाति—सिनीते, सेष्यति —ते, असैषीत् — असेष्ट।

सिंह—(पुं०) [√हिंस् + अच्, पृषो० साधुः] मृगराज, शेर; 'नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः' सुभा०। सिंह-राशि। सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट। (यथा—पुरुषसिंह)।—**अवलोकन** (**सिंहाव-लोकन**)–(न०) शेर की चितवन। शेर की तरह पीछे देखते हुए आगे बढ़ना। आगे वर्णन करने के पूर्व पिछली बातों का संक्षेप में वर्णन। (पुं०) पद्य-रचना का एक प्रकार जिसमें दूसरा चरण पहले चरण के अंतिम शब्दों से आरंभ होता है।—**आसन** (**सिंहासन**)–(न०) राजाओं का श्रेष्ठ आसन। चतुरंग-क्रीड़ा में जयविशेष। योगासन विशेष। एक रतिबंध। ज्योतिष का एक योग।—**आस्य** (**सिंहास्य**)–(पुं०)हाथों की एक मुद्रा। वासक, अड़ूसा। कोविदार, कचनार। एक प्रकार की बड़ी मछली। (वि०) जिसका मुंह सिंह का-सा हो।—**ग**–(पुं०) शिव जी का नाम। —**तल**–(न०) हाथों की मिली और खुली हुई दोनों हथेली।—**तुण्ड**–(पुं०) एक प्रकार की मछली। सेहुँड़, स्नुही, थूहर।—**दंष्ट्र**–(पुं०) शिव जी का नामान्तर।—**दर्प**–(वि०) सिंह जैसा अभिमानी।—**द्वार**–(न०) प्रासाद आदि का प्रधान द्वार, सदर दरवाजा।—**ध्वनि**, —**नाद**–(पुं०) सिंह की दहाड़ या गर्जन। युद्ध की ललकार।—**वाहन**–(पुं०) शिवजी की उपाधि।—**वाहना**,—**वाहिनी**–(स्त्री०) दुर्गा।—**विक्रान्त**–(पुं०) घोड़ा।(वि०) शेर के समान बली। **संहनन**–(वि०) सिंह जैसा मजबूत और सुन्दर, सर्वांग-सुन्दर। (न०) सिंह का वध।

सिंहल—(पुं०) [सिंहः अस्ति अत्र, सिंह +लच्] भारत के दक्षिण-स्थित एक द्वीप जिसे लोग प्राचीन लंका मानते हैं।(न०) टीन। पीतल। छाल।

सिंहलक—(न०) [सिंहल +कन्] पीतल। राँगा। दारचीनी। (पुं०) सिंहलद्वीप।

सिंहाण, सिंहान—(न०) [√ सिङ्घ् + आनच्, पृषो० साधुः] लोहे का मुरचा। नाक का मल या रहट।

सिंहिका—(स्त्री०) [सिंह+कन् — टाप् ह्रस्व] राहु की माता।—**तनय**, —**पुत्र**, —**सुत**, —**सूनु**–(पुं०) राहु का नामान्तर।

सिंही—(स्त्री०) [सिंह—ङीष्] शेरनी। अड़ूसा। थूहर। कंटकारी। भंटा। मुद्गपर्णी। राहु की माता का नाम।

√सिक्—सौत्र० पर० सक० सींचना। सेकति, सेकिष्यति, असेकीत्।

सिकता—(स्त्री०) [√सिक्+अतच्, कित् —टाप्] रेत, बालू। [सिकताः सन्ति अत्र, सिकता + अण्—लुप्] रेतीली भूमि। प्रमेह का एक भेद।

सिकतिल—(वि०) [सिकता+इलच्] रेतीला, बालुकामय ।

सिक्त—(वि०) [√सिच् + क्त] सींचा हुआ । गीला ।

सिक्थ—(न०) [√सिच् + थक्] मधुमक्षिका का मोम । (पुं०) भात । भात का पिंड; 'ग्रासोद्गलितसिक्थेन का हानिः करिणो भवेत्' सुभा० । मोतियों का गुच्छा जो तौल में एक धरण (३२ रत्ती) हो ।

सिक्ष्य—(पुं०) स्फटिक । शीशा ।

सिङ्घाण—(न०) [√शिङ्घ्+आनच्, पृषो० साधुः] नाक का मैल । लोहे का मुरचा ।

सिङ्घिनि—(स्त्री०) नाक ।

सिङ्घाणी—(स्त्री०) [सिङ्घाण+ङीप्] नाक, घ्राणेन्द्रिय ।

√सिच्—तु० उभ० सक० सींचना । सिञ्चति—ते, सेक्ष्यति — ते, असिचत् —असिक्त ।

सिञ्चय—(पुं०) [√ सिच्+अयच्, कित्] वस्त्र । जीर्ण ।

सिञ्चिता—(स्त्री०) [√सिच् + इतच्, पृषो० साधुः] पिपरामूल ।

सिञ्जा—(स्त्री०) [=शिञ्जा, पृषो० साधुः] आभूषणों की झनकार ।

सिञ्जित —(न०) [=शिञ्जित, पृषो० साधुः] दे० 'शिञ्जा' ।

√सिट्—भ्वा० पर० सक० तिरस्कार करना । सेटति, सेटिष्यति, असेटीत् ।

सित—(वि०) [√सो वा √सि+क्त] श्वेत, सफेद । चमकीला, निर्मल । ज्ञात । समाप्त । बँधा हुआ । घिरा हुआ । (न०) चांदी । चंदन । मूली । (पुं०) सफेद रंग । शुक्लपक्ष । शुक्र ग्रह । तीर ।—**अग्र (सिताग्र)** —(पुं०) काँटा । —**अपाङ्ग (सितापाङ्ग)** —(पुं०) मयूर ।—**अभ्र (सिताभ्र)**—(पुं०, न०) कपूर ।—**अम्बर (सिताम्बर)**—(पुं०) श्वेताम्बरी साधु, जैन साधु ।—**अर्जक (सितार्जक)**—(पुं०) सफेद तुलसी । —**अश्व (सिताश्व)**—(पुं०) अर्जुन । —**असित (सितासित)**—(पुं०) बलराम । —**आलिका (सितालिका)**—(स्त्री०) सीपी, सितुही ।—**इतर (सितेतर)**—(वि०) कृष्ण, काला । —**उद्भव (सितोद्भव)**—(न०) सफेद चन्दन ।—**उपल (सितोपल)**— (पुं०) बिल्लौर, स्फटिक ।— **उपला (सितोपला)**—(स्त्री०) चीनी । मिस्री ।—**कर**— (पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**धातु**— (पुं०) खड़िया मिट्टी ।— **रश्मि**— (पुं०) चन्द्रमा ।—**वाजिन्**— (पुं०) अर्जुन ।— **शर्करा**—(स्त्री०) मिस्री ।—**शिम्बिक**—(पुं०) गेहूँ । **शिव**— (न०) सेंधा निमक ।—**शूक**—(पुं०) यव, जौ ।

सिता—(स्त्री०) [सित + टाप्] मिस्री । चीनी; 'पित्तेन दूने रसने सितापि तिक्तायते हंसकुलावतंस !' नै० १.९४ । चंद्रिका । सुन्दरी स्त्री । मदिरा । सफेद दूब । मल्लिका, मोतिया । श्वेत कंटकारी । बकुची । विदारी । कुटुंबिनी । पिंगा । त्रायमाणा । अपराजिता । अर्कपुष्पी । सिंहली पीपल । गोरोचन । आम्रातक । वृद्धि लता । पुनर्नवा । मुरा । चाँदी । गंगा ।

सिति—(वि०) [√सो + क्तिच्] सफेद । काला । (पुं०) सफेद या काला रङ्ग ।

सिद्ध—(वि०) [√सिध् + क्त] जिसका साधन हो चुका हो, जो पूरा हो गया हो, सम्पन्न । प्राप्त, उपलब्ध । सफल । स्थापित । दृढ़ । सत्य माना हुआ । फैसला किया हुआ, निर्णीत । अदा किया हुआ, चुकता हुआ । राँधा हुआ । पक्का । तैयार । दमन किया हुआ । वशीभूत किया हुआ । निपुण, पटु । प्रायश्चित्त द्वारा पवित्र किया हुआ । अधीनता से मुक्त किया हुआ । अलौकिक शक्ति

से सम्पन्न । पवित्र । अविनाशी । प्रसिद्ध, प्रख्यात । चमकीला, प्रकाशमान । (न०) समुद्री नमक । (पुं०) देवयोनि विशेष । मुनि या योगी जिसे सिद्धि प्राप्त हो गई हो; 'उद्वेजिताः वृष्टिभिराश्रयन्ते शृङ्गाणि यस्यातपवन्ति सिद्धाः' कु० १.५ । ऋषि । जादूगर । मुकदमा । काला धतूरा । गुड़ । सफेद सरसों । अर्हत, जिन ।— **अन्त** (**सिद्धान्त**)-(पुं०) भली भांति सोच-विचार कर स्थिर किया हुआ मत, उसूल । वह बात जो विद्वानों द्वारा सत्य मानी जाती हो, मत । निर्णीत अर्थ या विषय, तत्त्व की बात ।— **अन्न** (**सिद्धान्न**)-(न०) राँधा हुआ अन्न ।—**अर्थ** (**सिद्धार्थ**)-(वि०) वह जिसका अभीष्ट सिद्ध हो चुका हो । (पुं०) सफेद सरसों । शिव जी का नामान्तर । बुद्ध देव ।—**आसन** (**सिद्धासन**)-(न०) हठयोग के ८४ आसनों में से एक; मलेन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय के बीच में बायें पैर का तलुवा तथा शिश्न के ऊपर दाहिना पैर और छाती के ऊपर ठुड्डी रख कर दोनों भौंहों के मध्य भाग को देखना सिद्धासन कहलाता है ।— **गङ्गा**,—**नदी**-(स्त्री०) —**सिन्धु**- (पुं०) आकाशगङ्गा । —**ग्रह**-(पुं०) उन्माद उत्पन्न करने वाला एक ग्रह । उन्माद विशेष ।— **जल**-(न०) औटा हुआ जल । काँजी । —**धातु**-(पुं०) पारा ।—**पक्ष**-(पुं०) किसी प्रतिज्ञा या बात का वह अंश जो प्रमाणित हो चुका हो । साबित बात । —**प्रयोजन**- (पुं०) सफेद सरसों ।—**योगिन्**- (पुं०) शिव । —**रस**- (पुं०) पारा । सिद्ध रसायनी । — **सङ्कल्प**-(वि०) जिसका संकल्प पूरा हो चुका हो ।—**साधन**- (पुं०) सफेद सरसों । (न०) जादू के खेल ।—**सेन**-(पुं०) कार्त्तिकेय का नाम ।—**स्थाली**-(स्त्री०) सिद्ध योगियों की बटलोई जिससे इच्छानुसार भोजन प्राप्त किया जा सकता है ।

सिद्धता—(स्त्री०), **सिद्धत्व**-(न०) [सिद्ध +तल्—टाप्] [सिद्ध + त्व] सिद्ध होने की अवस्था । प्रामाणिकता । पूर्णता ।

सिद्धि—(स्त्री०) [√सिध् + क्तिन्] काम का पूरा होना; 'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे' सुभा० । सफलता । संस्थापन, प्रतिष्ठा । प्रमाण । विवाद-रहित परिणाम । किसी नियम या विधान का वैवत्त्व । निर्णय, फैसला । सत्यता । शुद्धता । परिशोध, बेबाकी, चुकता होना । पकना, सीझना । किसी प्रश्न का हल होना । तत्परता । नितान्त विशुद्धता । अलौकिक सिद्धियाँ जो गणना में आठ हैं [यथा:— अणिमा लघिमा प्राप्तिः प्राकाम्यं महिमा तथा । ईशित्वं च वशित्वं च तथा कामावसायिता ॥] ऐन्द्रजालिक विद्या द्वारा अलौकिक शक्तियों की प्राप्ति । विलक्षण नैपुण्य । अच्छा प्रभाव या फल । मोक्ष, मुक्ति । समझदारी, बुद्धि । छिपाव, दुराव, अपने आपको अन्तर्धान करने की क्रिया । जादू की खड़ाऊँ या जूती । एक प्रकार का योग । दुर्गा का नाम ।—**द**-(वि०) सिद्धि देने वाला । (पुं०) शिव जी का नाम ।—**दात्री**-(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—**योग**-(पुं०) ज्योतिष विद्या के अनुसार शुभ काल विशेष ।

√सिध्—दि० पर० अक० सिद्ध होना । सिध्यति, सेत्स्यति, असैत्सीत् । भ्वा० पर० सक० जाना । सेधति, सेधिष्यति, असेधीत् । भ्वा० पर० सक० शासन करना । अक० मंगल या शुभ होना । सेधति, सेधिष्यति —सेत्स्यति, असेधीत्—असैत्सीत् ।

सिध्म, **सिध्मन्**—(न०) [√सिध् +मन्] [√सिध् +मनिन्] सेंहुँआ, सिहली, कुष्ठ के १८ भेदों में से एक, क्षुद्र कुष्ठ, किलास ।

सिध्मल—(वि०) [सिध्म + लच्] सेंहुए वाला, किलासी। कोढ़ी।

सिध्मा—(स्त्री०) [सिध्म+टाप्] दे० 'सिध्म'।

सिध्य—(पुं०) [√सिध् + णिच् +यत् नि०] पुष्य नक्षत्र।

सिध्र—(पुं०) [√ सिध् + रक्] साधु पुरुष। वृक्ष।

सिध्रक—(पुं०) [सिध्र + क] एक प्रकार का वृक्ष।

सिध्रकावण—(न०) [सिध्रकप्रधानं वनम्, णत्व, दीर्घ] स्वर्ग के बागों में से एक बाग का नाम।

सिन—(पुं०) [√सि + क्त, तस्य नः वा√सि +नक्] ग्रास, कौर। परिधान, पहनावा। कुंभी का पेड़। (न०) शरीर। अन्न। (वि०) काना। श्वेत।

सिनी—(स्त्री०) [सिन +ङीष्] गौरवर्ण की स्त्री।

सिनीवाली—(स्त्री०) [सिनीं श्वेतां चन्द्र-कलां वलति धारयति, सिनी, √वल्+अण् —ङीप्] शुक्लपक्ष की प्रतिपदा। दुर्गा। एक नदी। अंगिरा की एक कन्या।

सिन्दुक, सिन्दुवार—(पुं०) [√स्यन्द् +उ, संप्रसारण, सिन्दु+क] [सिन्दु √वृ +अण्] सँभालू वृक्ष, निर्गुण्डी का पेड़।

सिन्दूर—(न०) [√ स्यन्द् + ऊरन्, संप्रसारण] एक प्रसिद्ध लाल चूर्ण जिसे हिन्दू सुहागिनें माँग में भरती हैं। (पुं०) बलूत की जाति का एक पहाड़ी वृक्ष।

सिन्धु—(पुं०) [√स्यन्द् + उ, संप्रसारण, दस्य धः] समुद्र, सागर। एक प्रसिद्ध नद जो पंजाब के पश्चिमी भाग में है। सिन्धु-नदी के आस-पास का देश। हाथी की सूँड़ से निकला हुआ पानी। हाथी का मद। हाथी। वरुण। साफ सोहागा। सिंदुवार वृक्ष। विष्णु। चार की संख्या। सात की संख्या। सिन्धु देशवासी। (स्त्री०) मालवा की एक नदी का नाम। नदी; 'पिबत्यसौ पाययते च सिन्धूः' र० १३.९। —**फफ**– (पुं०) समुद्र फेन। —**ज** (वि०) नदी से उत्पन्न। समुद्र से उत्पन्न। सिन्धु देश में उत्पन्न। (पं०) चन्द्रमा। (न०) सेंधा नमक। —**नाथ**–(पुं०) समुद्र।

सिन्धुक, सिन्धुवार— (पुं०) [सिन्धु+क] [=सिन्दुवार, पृषो० दस्य धः] सँभालू वृक्ष, निर्गुण्डी का पेड़।

सिन्धुर—(पुं०) [सिन्धु + र] हाथी; 'स जयति सिन्धुरवदनो देवो यत्पादपंकज-स्मरणम्......'।

सिप्र—(पुं०) [√सप् +रक्, पृषो० साधुः] पसीना। चन्द्रमा। एक झील।

सिप्रा—(स्त्री०) [सिप्र + टाप्] स्त्री की करधनी, कमरपेटी। भैंस। उज्जैन के नीचे बहने वाली एक नदी।

सिम—(वि०) [√सि+मन्] हरेक। सब। समूचा।

सिर—(पुं०) [√सि + रक्] पिपरामूल की जड़।

सिरा—(स्त्री०) [सिर+टाप्] रक्त नाड़ी। डोलची, बाल्टी।

√सिल्—तु० पर० सक० फसल काटने के बाद खेत में गिरे हुए दाने बीनना। सिलति, सेलिष्यति, असेलीत्।

√सिव्—दि० पर० सक० सीना। जोड़ना। सीव्यति, सेविष्यति, असेवीत्।

सिवर—(पुं०) [√सि +क्वरप] हाथी।

सिसाधयिषा—(स्त्री०) [साधयितुम् इच्छा √साध्+सन् + अ—टाप्] किसी काम को पूरा करने की इच्छा। किसी बात को सिद्ध करने या स्थापित करने की अभि-लाषा।

सिसृक्षा—(स्त्री०) [स्रष्टुम् इच्छा, √सृज् + सन् + अ—टाप्] सृष्टि करने की अभिलाषा ।

सिहुण्ड—(पुं०) [√सो+कि सि: छेदः तं हुण्डते, सि √हुण्ड्+अण्] सेहुँड़, थूहर ।

सिह्‌ल, सिह्‌लक—(पुं०) [√स्निह् + लक्, पृषो० साधुः] [सिह्‌ल+कन्] सिलारस नामक गंधद्रव्य ।

सिह्‌लकी, सिह्‌ली—(स्त्री०) [सिह्‌लक —ङीष्] [सिह्‌ल —ङीष्] वह वृक्ष जिससे सिलारस निकलता है ।

√सीक्—भ्वा० आत्म० सक० सींचना । सीकते, सीकिष्यते, असीकिष्ट । चु० पर० सक० छूना । सीकयति—सीकति । सीकयिष्यति—सीकिष्यति, असीसिकत् —असीकीत् ।

सीकर—(पुं०) [√सीक्+अरन्] पानी का छींटा, जल-कण । पसीने की बूंद ।

सीता—(स्त्री०) [√सि +त, पृषो० दीर्घ] वह रेखा जो जमीन जोतते समय हल की फाल के धँसने से जमीन पर बन जाती है, कूंड़ । जोती हुई जमीन; 'तपः कृशामभ्युपपत्स्यते सखीं वृषेव सीतां तदवग्रहक्षतां' कु० ५.६१ । किसानी, खेती । जनक की पुत्री और श्रीरामचन्द्र जी की भार्या । एक देवी जो इन्द्र की पत्नी है । उमा का नाम । लक्ष्मी का नाम । आकाश-गंगा की उन चार धाराओं में से एक, जो मेरु पर्वत पर गिरने के उपरान्त हो जाती है । मदिरा । —**पति**– (पुं०) श्रीराम चन्द्र ।

सीतानक—(पुं०) मटर ।

सीत्कार—(पुं०), **सीत्कृति**– (स्त्री०) [सीत् इत्यव्यक्तस्य कारः, सीत्√कृ +घञ्] [सीत् √कृ + क्तिन्] सिसकारी, सी-सी शब्द; 'मया दष्टाधरं तस्याः ससीत्कारमिवाननं' विक्र० ४.२१ ।

सीत्य—(वि०) [सीता + यत्] हल से जोतने योग्य । (न०) धान्य ।

सीद्य—(न०) आलस्य, काहिली, सुस्ती ।

सीधु—(पुं०) [√सिध् + उ, पृषो० साधुः] मद्य । गुड़ या ईख के रस से बनायी हुई शराब ।—**गन्ध**– (पुं०) मौलसिरी, वकुल वृक्ष ।—**पुष्प**– (पुं०) कदंब का पेड़ ।—**रस**– (पुं०) आम का पेड़ ।—**संज्ञ** (पुं०) वकुल वृक्ष, मौलसिरी ।

सीध्र—(न०) गुदा, मलद्वार ।

सीप—(पुं०) नावनुमा यज्ञीय पात्र विशेष ।

सीमन्—(स्त्री०) [√सि + मनिन्, नि० दीर्घ] दे० 'सीमा' ।

सीमन्त—(पुं०) [सीम्नोऽन्तः, शक० पररूप] सीमा का चिह्न या रेखा । सिर के केशों की माँग । एक वैदिक संस्कार जो प्रथम गर्भस्थिति के चौथे, छठे या अष्टम मास में किया जाता है ।—**उन्नयन** (**सीमन्तोन्नयन**)–(न०) दे० 'सीमन्त' का तीसरा अर्थ ।

सीमन्तक—(पुं०) [सीमन्त + कन् वा सीमन्त √कै+क] दे० 'सीमन्त' । जैनियों के मत में सात नरकों में से एक नरक का अधिपति । नरकावास । (न०) सिंदूर ।

सीमन्तित—(वि०) [सीमन्त+णिच्+क्त] माँग की तरह अलहदा किया हुआ । रेखा से पृथक् या चिह्नित किया हुआ ।

सीमन्तिनी—(स्त्री०) [सीमन्त+इनि —ङीप्] नारी, स्त्री ।

सीमा—(स्त्री०) [सीमन्+ डाप्] हद, सरहद, मर्यादा । सीमा-चिह्न, सीमा-स्तूप । तट । समुद्र-तट । अन्तरिक्ष । जोड़ (जैसा कि खोपड़ी का) सदाचार या शिष्टाचार की मर्यादा । सर्वोच्च या दूरातिदूर की हद । खेत, क्षेत्र । गर्दन का पिछला भाग । अण्डकोष ।— **अधिप** (**सीमाधिप**)–(पुं०) सीमा से मिले हुए राज्य का राजा,

पड़ोसी राजा ।—**अन्त (सीमान्त)**–(पुं०) सीमा की समाप्ति, सिवान ।—**उल्लङ्घन (सीमोल्लङ्घन)**– (न०) सीमा लांघना। मर्यादा तोड़ना ।—**लिङ्ग**–(न०) सीमा का निशान ।—**वाद**– (पुं०) सीमा निश्चय सम्बन्धी झगड़ा ।—**विनिर्णय**– (पुं०) विवाद-ग्रस्त सीमा का निर्णय ।— **वृक्ष**– (पुं०) सीमा पर का पेड़ जो सीमा का चिह्न मान लिया गया हो ।—**सन्धि**–(पुं०) दो सीमाओं का मिलान या मेल ।

सीमिक—(पुं०) [√स्यम्+किकन्, सम्प्रसारण, दीर्घ] वृक्ष विशेष । दीमक । दीमकों का लगाया हुआ मिट्टी का ढेर ।

सीर—(पुं०) [√सि+रक्, + पृषो० दीर्घ] हल; 'सद्यःसीरोत्कषणसुरभि क्षेत्रमारुह्य मालं' मे० १.६ सूर्य । मदार का पौधा । —**ध्वज**– (पुं०) राजा जनक की उपाधि । —**पाणि**, —**भृत्**– (पुं०) बलराम ।—**योग**– (पुं०) पशु को हल में जोतना ।

सीरक—(पुं०) [सीर + कन्] दे० 'सीर'।

सीरिन्—(पुं०) [सीर+इनि] बलरामजी का नामान्तर ।

सीलन्द, सीलन्ध—(पुं०) एक प्रकार की मछली ।

सीवन—(न०) [√सिव् + ल्युट्, नि० दीर्घ] सूची-कर्म, सीने का काम, सिलाई । जोड़ (जैसे खोपड़ी का) ।

सीवनी—(स्त्री०) [सीवन +ङीप्] सूई, सूची । वह रेखा जो लिंग के नीचे से गुदा तक जाती है ।

सीस, सीसक—(न०) [√सि+क्विप्, पृषो० दीर्घ, √सो+क, सी—स, कर्म० स०] [सीस+क] सीसा नामक धातु ।—**पत्रक**–(न०) सीसा ।

सीहुण्ड—(पुं०) [=सिहुण्ड, पृषो० दीर्घ] सेंहुड़, थूहर, स्नुही ।

√सु—भ्वा० उभ० सक० जाना । सवति—ते, सोष्यति—ते, असौषीत्—असोष्ट । भ्वा० पर० सक० प्रसव करना । अक० विभूतिमान् होना । सवति, सोष्यति, असावीत्— असौषीत् । स्वा० उभ० सक० दबा कर रस निकालना । अर्क खींचना । छिड़कना । यज्ञ करना, विशेष कर सोम यज्ञ । अक० स्नान करना । सुनोति—सुनुते, सोष्यति—ते, असावीत्—असोष्ट ।

सु—(अव्य०) [√सु+डु] यह एक अव्यय है जो संज्ञावाची शब्दों के साथ कर्मधारय और बहुव्रीहि समासों में तथा विशेषण-वाची, एवं क्रियाविशेषण-वाची शब्दों के साथ व्यवहृत किया जाता है। सु के निम्न-लिखित अर्थ होते हैं:— १ अच्छा, भला, उत्तम । यथा– सुगन्धित । २ सुन्दर, सुरूप, मनोहर । यथा—सुकेशी । ३ भली-भांति, पूरे तौर पर । यथा—सुजीर्ण । ४ सहज, अनायास । यथा—सुकर या सुलभ । ५ अधिक, अतिशय । यथा—सुदारुण ।— —**अक्ष (स्वक्ष)**– (वि०) अच्छी आंखों वाला ।—**अङ्ग (स्वङ्ग)**–(वि०) अच्छे अङ्गों वाला ।—**आकार (स्वाकार)**, —**आकृति (स्वाकृति)**–(वि०) सुन्दर स्वरूप वाला ।—**आभास (स्वाभास)**–(वि०) बड़ा चमकीला ।—**इष्ट (स्विष्ट)**– (वि०) उपयुक्त रीत्या यज्ञ किया हुआ । —**उक्त (सूक्त)**– (वि०) भली-भांति कथित; 'अथवा सूक्तम् खलु केनापि' वे० ३ । (न०) बुद्धिमानी की कहलूत या कहावत । वेदमंत्रों या ऋचाओं का समूह, वैदिक स्तुति या प्रार्थना ।—**उक्ति (सूक्ति)** –(स्त्री०) मैत्री के कारण कहा हुआ वचन । चातुर्यपूर्ण कथन । शुद्ध वाक्य । —**उत्तर (सूत्तर)**– (वि०) बहुत बढ़ा हुआ । (न०) सुन्दर उत्तर ।— **उत्थान**

(सूत्थान)-(वि०) अच्छा उद्योग करने वाला। पराक्रमी। (न०) जोरदार उद्योग या प्रयत्न।—उन्मद (सून्मद),—उन्माद (सून्माद)-(वि०) नितान्त पागल या सनकी।—उपसदन (सूपसदन)-(वि०) सहज में पास जाने योग्य।—उपस्कर (सूपस्कर)-(वि०) वह जिसके पास अच्छे साधन हों।—कण्डु-(पुं०) खुजली, खाज। —कन्द- (पुं०) कसेरू। रतालू।—कन्दक —(पुं०) प्याज। वाराहीकंद। मिर्वोली कन्द, गेंठी।—कर- (वि०) [स्त्री०—सुकरा, सुकरी]जो सहज में हो सके, जो आसानी से हो सके। जो सहज में सुव्यवस्थित किया जा सके या जिसका इन्तजाम आसानी से हो सके। (न०) दान। परोपकार।—करा- (स्त्री०) अच्छी और सीधी गौ।—कर्मन् (वि०) पुण्यात्मा, धर्मात्मा। परिश्रमी। (पुं०) विश्वकर्मा का नाम।—कल- (वि०) ऐसा पुरुष जिसने उदारतापूर्वक अपना धन देने और उसका सद्व्यय करने के लिये प्रसिद्धि प्राप्त की हो।—काण्डिन्- (वि०) सुन्दर डाली वाला। सुन्दर रीति से जुड़ा हुआ। (पुं०) भौंरा।—कालुका-(स्त्री०) भटकटैया। —काष्ठ-(न०) देवदारु। अच्छी लकड़ी। —कुन्दन-(पुं०) बबुई तुलसी।— कुमार-(वि०) अत्यन्त नाजुक या कोमल। अत्यन्त चिकना। (पुं०) सुंदर, कोमलांग बालक या किशोर। ईख का एक भेद। वनचम्पा। साँवा। कँगनी। एक दैत्य। एक नाग।—वन-(न०) एक वन जो भागवत के अनुसार सुमेरु पर्वत के नीचे माना जाता है।—कुमारक- (पुं०) सुंदर बालक। साँवा धान्य। (न०) तमाल-पत्र। तेजपत्ता। —कृत्-(वि०) दानशील। पर-हितैषी। पुण्यात्मा। बुद्धिमान्। विद्वान्। भाग्यवान्, खुशकिस्मत। यज्ञ करने वाला। (पुं०) निपुण कारीगर। त्वष्टा।—कृत-(वि०) भली-भाँति किया हुआ। भली-भाँति बनाया हुआ। सद्व्यवहार किया हुआ। धर्मात्मा, धर्मशील। भाग्यवान्। (न०) पुण्य, सत्कार्य; 'नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः' भग० ५.१५। दान। सौभाग्य। दया।—कृति-(स्त्री०) पुण्य कार्य। तपस्या।—कृतिन्- (वि०) भली-भाँति कार्य करने वाला। पुण्यात्मा; 'सन्तः सन्तु निरापदः सुकृतिनां कीर्तिश्चिरं वर्धताम्' हि० ४.१३। बुद्धिमान्। पर-हितैषी। भाग्यवान्। —केशर, —केसर-(पुं०) नीबू का वृक्ष।—क्रतु- (पुं०) अग्नि। शिव। इन्द्र। मित्र और वरुण। सूर्य।—ग- (वि०) भली चाल से चलने वाला। अच्छा गाने वाला। सुगम, सुलभ। बोधगम्य, सहज में समझने लायक।—(न०) मल, विष्ठा। प्रसन्नता, हर्ष।—गत- (वि०) भले प्रकार गुजरा या बीता हुआ। सुंदर गति या चाल वाला। (पुं०) बुद्धदेव का नाम।—गन्ध-(पुं०) अच्छी गंध। सुवास, खुशबू। गन्धक। लाल सहिजन। चना। भूतृण। भूपलाश। बासमती चावल। कसेरू। मरुवक। शिलारस। व्यापारी। (न०) चन्दन। जीरा। नील कमल। गन्धतृण, गंधेज घास।—०त्रिफला—(स्त्री०) जायफल, लौंग और इलायची।— ०षट्क-(न०) जायफल, शीतलचीनी, लौंग, इलायची, कपूर और सुपारी—इन छः सुगंधित द्रव्यों का समूह। —गन्धक- (पुं०) गन्धक। लाल तुलसी। नारंगी। साठी धान। धरणीकन्द। कर्कोटक।— गन्धा- (स्त्री०) रास्ना। रुद्रजटा, पीली जूही। तुलसी। सौंफ। स्याह जीरा। वकुची। नवमल्लिका, माधवी, सेवती। —गन्धि- (वि०) सुंदर गंध

वाला । धर्मात्मा । (पुं०) परब्रह्म । मधुर सुगन्ध-युक्त आम ।— (न०) पिपरामूल । एक प्रकार की सुगन्ध-युक्त घास । धनिया । मोथा ।—**कुसुम** – (पुं०) पीत करवीर । (न०) खुशबूदार फूल ।—**मूल**– (न०) उशीर, खश ।—**गन्धिक**– (पुं०) धूप । गन्धक । बासमती चावल । (न०) सफेद कमल । उशीर, खश । पुष्करमूल । एलवालुक । गौरसुवर्ण । मोथा । —**गम**– (वि०) सहज में जानने योग्य । बोधगम्य । —**गहना**– (स्त्री०) वह हाता जो यज्ञ-मण्डप के चारों ओर भ्रष्ट ,एवं पतित लोगों को रोकने के लिये बनाया जाता है । —**ग्रास**– (पुं०) सुस्वादु कवर या निवाला । —**ग्रीव** (वि०) सुंदर गरदन वाला । (पुं०) बहादुर । हंस । हथियार विशेष । वानर-राज बालि के छोटे भाई का नाम । शिव । इन्द्र ।—**ग्ल**– (वि०) बहुत थका हुआ ।—**घटन**–(न०) सुयोग । —**चक्षुस्**–(वि०)अच्छे नेत्रों वाला ।(पुं०) पण्डित जन । सघन वट-वृक्ष ।—**चरित**, —**चरित्र**– (वि०) भली-भाँति व्यवहार करने वाला, अच्छे चाल-चलन का । (न०) अच्छा चाल-चलन । पुण्य-कार्य । —**चरिता**,—**चरित्रा**–(स्त्री०) अच्छे चाल-चलन की स्त्री, पतिव्रता स्त्री । धनिया ।—**चित्रक**–(पुं०) मुर्गाबी, मत्स्यरंग पक्षी । चितला साँप, चित्र सर्प ।—**चिर**–(वि०) बहुत दिनों तक रहने वाला, दीर्घकाल-स्थायी । प्राचीन । (अव्य०) अतिदीर्घ काल ।— ०**आयुस्** (**सुचिरायुस्**)– (पुं०) देवता । —**जन**–(पुं०) पर-हितैषी जन । भद्र पुरुष । —**जनता**— (स्त्री०) [सुजन + तल्—टाप्] भद्रता, भलमनसी । परहितैषिता; 'ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता' भर्तृ० २.४२ ।—**जन्मन्** –(वि०) सत्कुल में उत्पन्न, कुलीन । विवाहित स्त्री-पुरुष से उत्पन्न, विहितजन्मा ।—**जल्प**–(पुं०) सुभाषित, स्पष्टता, गांभीर्य, उत्कंठा आदि से युक्त वाक्य ।—**जात**– –(वि०) कुलीन, अच्छे कुल का । सुन्दर । —**तनु**– (वि०) अच्छे शरीर वाला । अत्यन्त सुकुमार या दुबला-पतला । (स्त्री०) दे० 'सुतनू' । —**तनू**–(स्त्री०) सुन्दर शरीर । सुंदर या कोमलांगी स्त्री ।—**तपस्**– (वि०) महती तपस्या करने वाला । वह जिसमें अत्यधिक गर्मी हो । (पुं०) मुनि । सूर्य । (न०) बड़ी तपस्या ।—**तराम्**–(अव्य०) [सु+तरप्—आमु] और अधिक । अतिशय; 'तया दुहित्रा सुतरां सवित्री स्फुरत्प्रभामण्डलया चकाशे' कु० १.२४ । अतः, इसलिए । किंबहुना ।—**तर्दन**– (पुं०) कोकिल ।—**तल**–(न०) सप्त अधोलोकों में से एक । विशाल भवन की नींव ।—**तिक्तक**– (पुं०) चिरायता । पित्तपापड़ा । पारिभद्र ।—**तीक्ष्ण**–(वि०) बड़ा तीव्र । बड़ा चरपरा । अत्यन्त पीड़ा-कारक । (पुं०) सहिजन का पेड़ । एक ऋषि का नाम जो श्रीरामचन्द्र जी के समय में थे । —**तीर्थ**– (पुं०) अच्छा गुरु । शिव जी ।— **तुङ्ग**–(वि०) बहुत ऊँचा । (पुं०) नारियल का पेड़ ।—**दक्षिण**–(वि०) बहुत कुशल । बहुत सच्चा, बड़ा ईमानदार । यज्ञ की दक्षिणा देने में बड़ा उदार ।–**दक्षिणा**– (स्त्री०) दिलीप की पत्नी ।— **दण्ड**–(पुं०) बेंत ।—**दन्त**– (वि०) अच्छे दाँतों वाला । (पुं०) अच्छा दाँत । नट । नर्तक ।—**दन्ती**– (स्त्री०) उत्तर-पश्चिम दिशा के दिग्गज की हथिनी ।—**दर्शन**–(वि०) सुंदर । जो सहज में देखा जा सके । (पुं०) विष्णु भगवान् का चक्र । शिव जी का नाम । गीध । (न०) जम्बु-द्वीप ।—**दर्शना**—(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री । स्त्री । आज्ञा । सोमवल्ली लता । चांदनी

रात । एक तरह की मदिरा । जामुन का पेड़ । अमरावती । पद्म-सरोवर ।—**दामन्**– (वि०) [सु√दा+मनिन्] उदारता पूर्वक देने वाला । (पुं०) बादल । पहाड़ । समुद्र । इन्द्र का हाथी । श्री कृष्ण के सखा एक धन-हीन ब्राह्मण का नाम ।—**दाय**– (पुं०) शुभ दान, वह दान जो किसी पर्व विशेष पर दिया जाय । उपनयन काल में ब्रह्मचारी को दी जाने वाली भिक्षा । विवाह के अवसर पर कन्या या जामाता को दिया जाने वाला दान, दहेज । —**दिन**–(न०) अच्छा दिन, प्रशस्त दिन । सुख के दिन ।—**दीर्घ**– (वि०) बहुत लंबा । —**दीर्घा**–(स्त्री०) चीना ककड़ी ।—**दुर्लभ**– (वि०) जिसे प्राप्त करना बहुत कठिन हो, अति दुर्लभ ।—**दुस्तर**– (वि०) जिसके पार जाना कठिन हो ।—**दूर**– (वि०) बहुत दूर या फासले पर का ।—**दृश्**– (वि०) अच्छे नेत्रों वाला ।—**धन्वन्**– (वि०) अच्छे धनुष वाला । (पुं०)अच्छा तीरन्दाज । विश्वकर्मा का नामान्तर ।—**धर्मन्**– (स्त्री०) देवताओं की सभा ।—**धर्मा, —धर्मी**–(स्त्री०) देवसभा ।—**धी**– (वि०) अच्छी बुद्धि वाला । (पुं०) पण्डित जन । (स्त्री०) सुबुद्धि ।— **नन्दा**–(स्त्री०) नारी । उमा । कृष्ण की एक पत्नी । दुष्यन्त-पुत्र भरत की पत्नी । सार्वभौम की पत्नी । प्रतीप की पत्नी । एक नदी का नाम । श्वेत गौ । गोरोचना ।—**नय**– (पुं०) अच्छा चाल-चलन । सुनीति, अच्छी नीति ।—**नयन**– (पुं०) हिरन, मृग ।—**नयना**–(स्त्री०) अच्छे नेत्रों वाली स्त्री । नारी । राजा जनक की पत्नी ।—**नाभ**– (वि०) अच्छी नाभि वाला । (पुं०) पर्वत । मैनाक पर्वत । वरुण का एक मन्त्री । गरुड़ का एक पुत्र । (न०) सुदर्शन चक्र ।—**निभृत**–(वि०) नितान्त निर्जन ।—**निश्चल**–(पुं०) शिव । —**नीत**– (वि०) सद्व्यवहार-युक्त, शिष्ट । (न०) सद्व्यवहार । सुनीति ।—**नीति**–(पुं०) अच्छा चाल-चलन । अच्छी नीति । ध्रुव की माता का नाम ।—**नीथ**– (वि०) धर्मात्मा । (पुं०) ब्राह्मण । शिशुपाल का नाम । कृष्णका एक पुत्र ।—**नीथा**– (स्त्री०) मृत्यु की पुत्री और अंग की पत्नी । —**नील**–(पुं०) अनार का पेड़ ।—**नीला**– (स्त्री०) चणिका तृण । नीले रंग की अपराजिता । तीसी, अलसी ।—**पक्व**– (वि०) भली-भांति रांधा हुआ । भली-भांति पका हुआ । (पुं०) एक प्रकार का खुशबूदार आम ।—**पत्नी**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसका पति नेक हो ।—**पथ**– (पं०) अच्छा मार्ग । अच्छा चाल-चलन ।—**पथिन्**– (पुं०) अच्छी सड़क । —**पर्ण**– (वि०) अच्छे पंखों वाला । अच्छे पत्तों वाला । (पुं०) सूर्य की किरण । देव-गंधर्व । अश्व । कोई भी अलौकिक पक्षी । गरुड़ का नाम । मुर्गा ।—**पर्णा, —पर्णी**– (स्त्री०) कमलिनी । गरुड़ की माता का नाम ।—**पर्वन्**– (वि०) सुंदर गांठों या पोरों वाला । (पुं०) बांस, बेंत । धुआं । देवता । (न०) सुन्दर पर्व । शुभकाल ।—**पात्र**–(न०) अच्छा बरतन । (दान आदि के लिये) उपयुक्त या योग्य व्यक्ति ।—**पाद**–(वि०) सुंदर पैरों वाला ।—**पार्श्व**–(पुं०)पाकर का पेड़ । जैनियों के सातवें तीर्थंकर ।—**पीत**– (न०) गाजर । (पुं०) पांचवां मुहूर्त्त । —**पुष्प**– (पुं०) ब्रह्मदारु । सिरिस । हरिद्रु । मुचुकुन्द वृक्ष । बड़ी सेवती । सफेद आक । परास पीपल । पारिभद्र । देवदारु । (न०) लौंग । प्रपौण्डरीक । शहतूत । स्त्रियों का रज । (वि०) सुन्दर पुष्पों वाला ।— **प्रतिभा**– (स्त्री०) अच्छी प्रतिभा । शराब ।—**प्रतिष्ठ**– (वि०)

भली-भांति स्थित रहने वाला । जिनकी बड़ी प्रतिष्ठा हो । बहुत प्रसिद्ध । **—प्रतिष्ठा** –(स्त्री०) अच्छी प्रतिष्ठा । उत्तम स्थिति । मंदिर या प्रतिमा आदि की स्थापना । अभिषेक। स्कन्द की एक मातृका का नाम । **—प्रतिष्ठित** – (वि०) भली-भांति स्थापित । प्रसिद्ध । (पुं०) उदुम्बर, गूलर का पेड़ ।**—प्रतिष्णात**– (वि०) भली-भांति स्नान किया हुआ । किसी विषय में पारंगत । सुनिश्चित । सुपरिचित ।**—प्रतीक**– (वि०) सुन्दर, मनोहर । (पुं०) कामदेव का नाम । शिव । ईशान कोण का दिग्गज ।**— प्रपाण**–(न०)अच्छा तालाब । **—प्रभ**– (वि०) बहुत तड़कीला-मड़कीला ।**—प्रभा**– (स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक ।**—प्रभात**– (न०) शुभ प्रभात, मङ्गलमय प्रातःकाल; 'दिष्ट्या सुप्रभातमद्य यदयं देवो दृष्टः' उत्त० ६ । प्रातःकालीन स्तोत्र ।**—प्रयोग**– (पुं०) अच्छे ढंग से काम में लाना । सुव्यवस्था, अच्छा प्रबन्ध । निपुणता ।**—प्रसाद**– (वि०) अत्यन्त शुभ । सुप्रसन्न । (पुं०) विष्णु । शिव । सुप्रसन्नता । **— प्रिय**– (वि०) अत्यन्त प्रिय । बहुत पसंद ।**—प्रिया**– (स्त्री०) मनोहारिणी स्त्री । प्रेयसी ।**—फल**– (वि०) बहुत फलने वाला । बहुत उपजाऊ । (पुं०) अनार का पेड़ । बेरी का पेड़ । मूंग ।**—फला**– (स्त्री०) कुम्हड़ा । केले का पेड़ । कपिला द्राक्षा, मुनक्का ।**—बन्ध**– (वि०) अच्छी तरह बँधा हुआ । (पुं०) तिल । **—बल**– (पुं०) शिवजी ।**— बोध**– (पुं०) अच्छा बोध । (वि०) जो सहज में समझ में आये, आसान ।**—ब्रह्मण्य** –(पुं०) कार्त्तिकेय । शिव । विष्णु । उद्गाता पुरोहित या उसके तीन साथियों में से एक । **—भग**– (वि०) बड़ा भाग्यवान् या समृद्धिशाली । सुन्दर, मनोहर । प्रिय; 'सुमुखि ! सुभगः पश्यन् स त्वामुपैतु कृतार्थताम्' गीत० ५ । कोमल । प्रसिद्ध । (पुं०) सुहागा । अशोक वृक्ष । चम्पक वृक्ष । लाल कटसरैया । (न०) सौभाग्य, खुशकिस्मती ।**—भगा**– (स्त्री०) वह स्त्री जिसको उसका पति प्यार करता हो । पांच वर्ष की कुमारी । स्कन्द की एक मातृका का नाम। कस्तूरी । नीली दूब । प्रियंगु । चमेली । हल्दी । तुलसी ।**—भङ्ग**–(पुं०) नारियल का पेड़ ।**—भद्र**–(वि०) अत्यन्त प्रसन्न या भाग्यवान् । (पुं०) विष्णु का नाम । **—भद्रा**–(स्त्री०) बलराम तथा श्रीकृष्ण की बहिन ।**—भाषित**–(न०) उत्तम वाणी, अच्छी बोली ।**—भूम**- (पुं०) कार्तवीर्य ।**— भ्रू**–(स्त्री०) सुंदर भौं वाली स्त्री । सुन्दर स्त्री ।**—मति**– (वि०) बहुत बुद्धिमान् । (स्त्री०) अच्छी बुद्धि या स्वभाव । पर-हितैषिता । मैत्री । देवता का अनुग्रह । आशीर्वाद । प्रार्थना । अभिलाष । सगर की भार्या का नाम ।**—मदन**– (पुं०) आम का पेड़ ।**—मध्य, —मध्यम**– (वि०) पतली कमर वाला । **—मध्यमा, —मध्या**–(स्त्री०) सुंदर या पतली कमर वाली स्त्री ।**—मन**– (वि०) सुन्दर । (पुं०) गेहूँ । धतूरा ।**—सुमनस्**– –(वि०) अच्छे मन का । प्रसन्न । (पुं०) देवता । पण्डित जन । वेद-पाठी ब्रह्मचारी । गेहूँ । नीम का पेड़ । (न०) पुष्प । 'रमणीय एष वः सुमनसां संनिवेशः' माल०१। **—मित्रा**– (स्त्री०) लक्ष्मण की जननी और महाराज दशरथ की एक रानी का नाम ।**— मुख**–(वि०) सुंदर मुख वाला । मनोहर, सुन्दर । आह्लादकर । उत्सुक । (पुं०) पण्डित जन । गरुड़ । गणेश । शिव । (न०) नख का खरोंटा या खरौंच ।**—मुखा, —मुखी**– (स्त्री०) सुंदर मुख

वाली स्त्री। सुन्दरी स्त्री। आईना।—**मूलक**– (न०) गाजर।—**मेधस्**– (वि०) उत्तम बुद्धि वाला। (पुं०) पितरों का एक गण। चाक्षुष मन्वन्तर के एक ऋषि। पांचवें मन्वन्तर का एक देववर्ग।—**मेरु**– (पुं०) पुराणों के अनुसार इलावृत वर्ष में अवस्थित एक पर्वत जो सोने का बना हुआ है, स्वर्णगिरि। शिवजी का जन्म।—**यवस**– (न०) सुन्दर घास। अच्छा चरागाह।—**योधन**– (पुं०) दुर्योधन का नामान्तर।—**रक्तक**– (पुं०) सोन गेरू। आम्रवृक्ष की तरह का एक पेड़।—**रङ्ग**– (पुं०) अच्छा रंग। (न०) शिंगरफ। नारंगी।—**रञ्जन**– (पुं०) सुपारी का पेड़।—**रत**– (वि०) बड़ा खिलाड़ी। अत्यधिक अनुरक्त। (न०) अत्यन्त हर्ष या आनन्द। काम-क्रीड़ा; 'सुरतमृदिता वालवनिता' भर्तृ० २.४४। पुष्प-गुच्छ जो सिर पर धारण किया जाय।—**रति**– (स्त्री०) काम-क्रीड़ा, भोग-विलास।—**रस**– (वि०) रसीला। मधुर। सुन्दर। (न०) दारचीनी। तेजपत्र। सुगंधतृण। तुलसी। (पुं०) सिन्धुवार। शाल्मली वृक्ष का निर्यास। पीतशाल।—**रसा**– (स्त्री०) तुलसी। रास्ना। सौंफ। ब्राह्मी। महाशतावरी। जूही। पुनर्नवा। सर्पगंधा। भटकटैया। सिन्धुवार नामक पौधा। दुर्गा का नाम।—**रूप**– (वि०) सुन्दर, मनोहर, रूपवान्। विद्वान्। (पुं०) शिवजी का नामान्तर।—**रेभ**– (वि०) सुस्वर, सुरीला। (न०) टीन।—**लक्षण**– (वि०) शुभ लक्षणों से युक्त, अच्छे लक्षणों वाला। भाग्यवान्। (न०) शुभ लक्षण। शुभ चिह्न।—**लभ**– (वि०) सहज में मिलने योग्य। योग्य, उपयुक्त।—**लोचन**– (वि०) अच्छे नेत्रों वाला। (पुं०) मृग, हिरन।—**लोचना**– (स्त्री०) सुन्दर आंखों वाली स्त्री। सुन्दरी स्त्री।—**लोहक**– (न०) पीपल।—**लोहित**– (वि०) बहुत लाल।—**लोहिता**– (स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।—**वक्त्र**– (न०) अच्छा चेहरा। शुद्ध उच्चारण।—**वचन**,—**वचस्**– (न०) सुंदर वाणी। वाक्पटुता।—**वर्चिक**– (पुं०) —**वर्चिका**– (स्त्री०) सज्जी, सर्जिकाक्षार।—**वह**– (वि०) सहज में वहन करने या उठाने योग्य। धैर्यवान्, धीर।—**वासिनी**– (स्त्री०) विवाहिता अथवा अविवाहिता वह स्त्री जो अपने पिता के घर में रहे। विवाहित स्त्री जिसका पति जीवित हो।—**विक्रान्त**– (वि०) बड़ा पराक्रमी, बड़ा बहादुर। (न०) वीरता, बहादुरी।—**विद्**– (पुं०) विद्वज्जन। (स्त्री०) चतुर स्त्री।—**विद**– (पुं०) अंतःपुर या जनानखाने का अनुचर।—**विदत्**— (पुं०) राजा।—**विदल्ल**– (पुं०) अंतःपुर का रक्षक। (न०) जनानखाना, अंतःपुर।—**विदल्ला**– (स्त्री०) विवाहिता स्त्री।—**विध**– (वि०) अच्छी जाति का। शीलवान्।—**विनीत**– (वि०) विनम्र, सुशिक्षित।—**विनीता**– (स्त्री०) सीधी गौ।—**विहित**– (वि०) भलीभांति किया हुआ। अच्छी तरह रखा हुआ। भली-भांति व्यवस्थित।—**बीज**– (वि०) अच्छे बीज वाला। (पुं०) शिवजी। पोस्ता का दाना। (न०) अच्छा बीज।—**वीराम्ल**– (न०) कांजी।—**वीर्य**– (वि०) बड़े पराक्रम वाला। (न०) बहादुरी। बहादुरों का बाहुल्य।—**वीर्या**– (स्त्री०) वन कपास। बड़ी सतावर। कलपत्ती हींग।—**वृत्त**– (वि०) सच्चरित्र। गुणवान्। अच्छे छन्द में रचित।—**वेल**– (वि०) शान्त, निस्तब्ध। विनीत। (पुं०) त्रिकूट पर्वत का नाम।—**व्रत**– (वि०) दृढ़ता से व्रत पालन करने वाला।

धर्मनिष्ठ । नम्र । (पुं०) रौच्य मनु के एक पुत्र का नाम । प्रियव्रत के एक पुत्र का नाम। ब्रह्मचारी । ११वें अर्हत् का नाम। **—व्रता**– (स्त्री०) पतिव्रता स्त्री । सीधी गौ, वह गौ जो सहज में दुह ली जाय ।—**शंस**–(वि०) प्रसिद्ध । प्रशंसित ।—**शक**– (वि०) सहज होने योग्य, आसान ।—**शल्य**– (पुं०) खदिर का पेड़ ।—**शाक**– (न०) अदरक, आदी ।— **शासित**– (वि०) भली-भांति काबू में किया हुआ । **—शिक्षित**– (वि०) उत्तम तरह शिक्षा पाया हुआ ।—**शिख**–(पुं०) अग्नि । (वि०) सुंदर शिखा वाला । —**शिखा**– (स्त्री०) मोर की कलँगी । मुर्गे की कलँगी । **—शीत**– (न०) सुगंधित पीला चंदन । (वि०) बड़ा ठंढा । **शील**– (वि०) उत्तम शील वाला । सच्चरित्र । विनीत, नम्र । सरल, सीधा ।—**शीला**– (स्त्री०) यमराज की पत्नी का नामान्तर । श्रीकृष्ण की आठ मुख्य रानियों में से एक का नाम । **—श्रुत**– (वि०) अच्छी तरह सुना हुआ । वेद-विद्या में निपुण । (पुं०) आयुर्वेदीय चिकित्सा-शास्त्र के एक प्रसिद्ध आद्याचार्य । इनका बनाया ग्रन्थ विशेष । श्राद्ध के अन्त में ब्राह्मण से यह प्रश्न कि आप तृप्त हो गये न ?—**श्लिष्ट** –(वि०) भली-भांति मिला या जुड़ा हुआ।—(पुं०) भली-भांति आलिङ्गन करने की क्रिया ।—**सन्दृश्**–(वि०) अनुग्रह-दृष्टि से सब को देखने वाला ।—**सन्नत**– (वि०) [सु —सम् √नम्+क्त] अतिशय नत, बहुत झुका हुआ ।—**सह**–(वि०) सहज में सहने योग्य । सहनशील । (पुं०) शिवजी । **—सार** (वि०) अतिशय सारविशिष्ट । (पुं०) नीलम । लाल फल का खदिर वृक्ष । **—स्थ**– (वि०) नीरोग, भला-चंगा । समृद्धिशाली; 'सुस्थे को वा न पण्डितः' हि० ३.२१ । प्रसन्न । सुखी ।—**स्थता**, **—स्थिति**– (स्त्री०) अच्छी दशा । आरोग्य । कुशल-क्षेम । प्रसन्नता ।—**स्मित**–(वि०) आनन्द से मुसक्याता हुआ । **—स्मिता**–(स्त्री०) हंस-मुख या प्रसन्न-वदना स्त्री ।—**स्वर**–(वि०)सुरीला, अच्छे कंठ वाला । ऊँचे स्वर का ।—**हित** –(वि०) अत्यन्त उपयुक्त । लाभकारी, गुणकारी । स्नेही । सन्तुष्ट ।—**हिता**– (स्त्री०) अग्नि की सप्त जिह्वाओं में से एक ।—**हृद्**– (वि०) अच्छे हृदय वाला । (पुं०) मित्र; 'मन्दायन्ते न सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः' मे० ३८ । शिव । ज्योतिष के अनुसार लग्न से चौथा स्थान, जिससे यह जाना जाता है कि मित्र आदि कैसे होंगे ।—**हृदय**–(वि०) अच्छे हृदय वाला । स्नेही ।

√सुख्—चु० पर० सक० सुख देना । सुखयति, सुखयिष्यति, असुसुखत् ।

सुख—(न०) [√सुख्+अच्] मन की वह उत्तम तथा प्रिय अनुभूति जिसके द्वारा अनुभव-कर्त्ता का विशेष समाधान और सन्तोष होता है और जिसके बराबर बने रहने की उसे सदा अभिलाषा बनी रहती है । आनन्द, हर्ष । समृद्धि । नीरोगता, आरोग्य । सरलता, आसानी । स्वर्ग । जल । (वि०) [सुख+अच्] प्रसन्न । प्रिय । धार्मिक । सरल । उपयुक्त ।—**आधार** (सुखाधार)– (पुं०) स्वर्ग ।—**आप्लव** (सुखाप्लव)– (वि०) नहाने के लिये उपयुक्त ।—**आयत** (**सुखायत**),—**आयन** (**सुखायन**)–(पुं०) सुशिक्षित घोड़ा ।—**आरोह** (**सुखारोह**)– (पुं०) सहज में सवारी लायक ।—**आलोक** (**सुखालोक**)– (वि०) देखने में सुन्दर । **—आवह** (**सुखावह**) –(वि०) सुख देने वाला । —**आश** (**सुखाश**)–(वि०) वरुण का नाम । **आशक** (**सुखाशक**)–

(पुं०) तरबूज।—आस्वाद (सुखास्वाद)—(वि०) अच्छे जायके का। आनन्द-दायी। (पुं०) अच्छा जायका, अच्छा स्वाद। (आनन्द का) उपभोग।—उत्सव (सुखोत्सव)–(पुं०) आनन्दावसर। पति।—उदक (सुखोदक)–(न०) गर्म पानी।—उदय (सुखोदय)—(पुं०) आनन्द की प्राप्ति या अनुभव।—उदर्क (सुखोदर्क)–(वि०) परिणाम में सुखदायी।—उद्य (सुखोद्य)– (वि०) सुख से उच्चारण करने योग्य।—उपविष्ट (सुखोपविष्ट)–(वि०) सुख से बैठा हुआ। —एषिन् (सुखैषिन्)–(वि०) सुख चाहने वाला।—कर,—कार, —दायक–(वि०) आनन्ददायी, हर्षप्रद।—द–(वि०) आनन्ददायी। (न०) विष्णु का आसन। —दा– (स्त्री०) इन्द्र के स्वर्ग की अप्सरा।—प्रणाद–(वि०) मधुर शब्द करने वाला।—प्रत्यर्थिन्–(वि०) सुख का विरोधी।— बोध–(पुं०) आनन्द का अनुभव। सरल ज्ञान।—भञ्ज–(पुं०) सफेद मिर्च।—भागिन्, भाज्–(पुं०) सुख भोगने वाला, सुखी। —वासन–(पुं०) मुँह के लिए सुगंध।—श्रव, —श्रुति–(वि०) कर्णमधुर, सुरीला। —सङ्गिन्—(वि०) सुख का साथी। —साध्य– (वि०) सहज में होने वाला। —स्पर्श–(वि०) छूने से सुख देने वाला।

सुत—(वि०) [√सु+क्त] उड़ेला हुआ। निचोड़ कर निकाला हुआ। पैदा किया हुआ। (पुं०) पुत्र। राजा। जन्म-लग्न से पांचवा स्थान। दशम मनु का एक पुत्र। —आत्मज (सुतात्मज)–(पुं०) पौत्र, पुत्र का पुत्र।—आत्मजा (सुतात्मजा)–(स्त्री०) पौत्री, पुत्र की पुत्री।—उत्पत्ति (सुतोत्पत्ति)– (स्त्री०) पुत्र का जन्म। —पादिका, —पादुका–(स्त्री०) हंसपदी लता।—पेय– (न०) सोमपान, यज्ञ में सोम पीने की क्रिया। —वस्करा–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके ७ पुत्र हों।—स्थान–(न०) जन्म-लग्न से पांचवां स्थान।

सुतवत्—(वि०) [सुत + मतुप्, मस्य वः] वह जिसके सुत हों, पुत्रवान्। (पुं०) पिता।

सुता—(स्त्री०) [सुत + टाप्] लड़की, पुत्री; 'तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हसि' कु० ६.७९। दुरालभा।

सुति—(स्त्री०) [√सु + क्तिन्] सोमरस निकालना।

सुतिन्—(वि०) [स्त्री०—सुतिनी] [सुत+इनि] पुत्र या पुत्रों वाला। (पुं०) पिता।

सुतिनी—(स्त्री०) [सुतिन्+ ङीप्] माता; 'तेनाम्बा यदि सुतिनी वद वन्ध्या कीदृशी भवति' सुभा०।

सुत्या—(स्त्री०) [√सु+क्यप्, तुक्—टाप्] सोमरस निकालने या तैयार करने की क्रिया। यज्ञीय नैवेद्य। सन्तानप्रसव, गर्भ-मोचन।

सुत्रामन्—(पुं०) [सुष्ठु त्रायते, सु√त्रै +मनिन्, पृषो० साधुः] इन्द्र का नामान्तर।

सुत्वन्—(पुं०) [√सु +क्वनिप्] सोमरस पीने या चढ़ाने वाला व्यक्ति। वह ब्रह्मचारी जिसने यज्ञीय कर्म करने के पूर्व अपना मार्जन या अभिषेक किया हो।

सुदि—(अव्य०) [सुष्ठु दीव्यति, सु√दिव् +डि] शुक्ल पक्ष।

सुधन्वाचार्य—(पुं०) पतित वैश्य का पुत्र जो वैश्या माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो।

सुधा—(स्त्री०) [सुष्ठु धीयते पीयते अर्प्यते वा, सु√धे वा√धा + क+टाप्] अमृत। पुष्पों का रस। रस। जल। गंगा जी का नाम। सफेदी। ईंट। बिजली। सेंहुड़।

थूहर। मूर्वा। गिलोय। सरिवन। आमला। विष। पृथ्वी। चूना; 'कैलासगिरिणेव सुधासितेन प्राकारेण परिगता' का०। वधू। पुत्री।—**अंशु (सुधांशु)**– (पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—०रत्न (सुधांशुरत्न)–(पुं०) मोती। —**अङ्ग (सुधाङ्ग)**,—**आकार (सुधाकार)**,—**आधार (सुधाधार)**–(पुं०) चन्द्रमा।—**जीविन्**– (पुं०) मैमार, राज, थवई।—**द्रव**– (पुं०) अमृत जैसा तरल पदार्थ। एक प्रकार की चटनी। —**धवलित**– (वि०) कलई या सफेदी किया हुआ, चूना से पुता हुआ। —**निधि**– (पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—**भवन**– (न०) अस्तरकारी किया हुआ मकान। पंचम मुहूर्त।—**भित्ति**– (स्त्री०) अस्तरकारी की हुई दीवाल। ईंट की दीवाल। दोपहर के बाद पांचवां मुहूर्त्त या घंटा।—**भुज्**– (पुं०) देवता।—**भृति**–(पुं०) चन्द्रमा। यज्ञ।—**मय**– (न०) चूना या पत्थर का भवन या घर।—राजमहल। —**वर्ष**– (पुं०) अमृत-वृष्टि।—**वर्षिन्**–(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि।—**वास**–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर। —**वासा**–(स्त्री०) खीरा, त्रपुषी।—**सित**– (वि०) चूने की तरह सफेद। अमृत की तरह चमकीला। चूना किया हुआ, सफेदी से पुता हुआ। —**सूति**– (पुं०) चन्द्रमा। यज्ञ। कमल। —**स्यन्दिन्**–(वि०) अमृत बहाने वाला। —**हर**–(पुं०) गरुड़ की उपाधि।

सुधिति—(पुं०, स्त्री०) [सु√धा + क्तिच्] कुल्हाड़ी।

सुनार—(पुं०) [सुष्ठु नालमस्य, प्रा० ब०, लस्य रः] कुतिया का दूध। सांप का अंडा। चटक पक्षी, गौरैया।

सुनासीर, सुनाशीर—(पुं०) [सुष्ठु नासी (शी) रः अग्रसैन्यं यस्य, प्रा० ब०] इन्द्र का नामान्तर।

सुन्द—(पुं०) निशुंभ का पुत्र और उपसुंद का भाई एक दैत्य।

सुन्दर—(वि०) [स्त्री०—**सुन्दरी**] [सु √उन्द् +अरन्, शक० पररूप] जो आंखों को अच्छा लगे, खूबसूरत, मनोहर। ठीक, सही। (पुं०) कामदेव का नाम।

सुन्दरी—(स्त्री०) [सुन्दर+ङीष्] खूबसूरत औरत, सुस्वरूपा नारी; 'एका भार्या सुन्दरी वा दरी वा' भर्तृ० २.११५। त्रिपुरसुंदरी देवी। श्वफल्क की एक कन्या। वैश्वानर की एक कन्या। माल्यवान् की पत्नी। हल्दी।

सुप्त—(वि०) [√स्वप् + क्त, सम्प्रसारण] सोया हुआ। लकवा मारा हुआ। बेहोश, बदहवास। मुंदा हुआ। बेकार। अविकसित। सुस्त। (न०) प्रगाढ़ निद्रा, गाढ़ी नींद। —**जन**–(पुं०) सोया हुआ व्यक्ति। अर्द्ध रात्रि।—**ज्ञान**–(न०) स्वप्न।— **त्वच्**– (वि०) सुन्न।

सुप्ति—(स्त्री०) [√स्वप् + क्तिन्, सम्प्रसारण] निद्रा। सुस्ती। औंघाई। सुन्न हो जाना, चैतन्य-राहित्य। विश्वास। सपना।

सुम—(न०) [सुष्ठु मीयतेऽदः, सु√मा +क] पुष्प, फूल। (पुं०) [√सु+मक्] चन्द्रमा। कपूर। आकाश।

सुर—(पुं०) [सुष्ठु राति ददाति अभीष्टम् सु√रा+क] देवता। तेंतीस की संख्या। सूर्य। महात्मा। ऋषि। विद्वज्जन।—**अङ्गना (सुराङ्गना)**–(स्त्री०) देववधू। अप्सरा।— **अधिप (सुराधिप)**—(पुं०) इन्द्र।— **अरि (सुरारि)**– (पुं०) देव-शत्रु, दैत्य।—**अर्ह (सुरार्ह)**–(न०) सुवर्ण। केसर।—**आचार्य (सुराचार्य)**–(पुं०) बृहस्पति।— **आपगा (सुरापगा)**– (स्त्री०) आकाशगंगा।—**आलय (सुरालय)**– (पुं०) मेरुपर्वत।

स्वर्ग।—इज्य (सुरेज्य)– (पुं०) बृहस्पति का नाम ।—इज्या (सुरेज्या)–(स्त्री०) तुलसी ।—इन्द्र (सुरेन्द्र),—ईश (सुरेश), —ईश्वर (सुरेश्वर)–(पुं०) इन्द्र का नाम ।—उत्तम (सुरोत्तम)– (पुं०) सूर्य। इन्द्र ।—उत्तर (सुरोत्तर)–(पुं०) चन्दन का वृक्ष ।—ऋषि (सुरर्षि)– (पुं०) देवर्षि । —कारु–(पुं०) विश्वकर्मा की उपाधि ।— कार्मुक–(न०) इन्द्रधनुष ।—गुरु–(पुं०) बृहस्पति का नामान्तर ।—ग्रामणी– (पुं०) इन्द्र का नामान्तर ।—ज्येष्ठ– (पुं०) ब्रह्मा । —तरु–(पुं०) कल्पवृक्ष ।—तोषक–(पुं०) कौस्तुभमणि ।—दारु– (न०) देवदारु वृक्ष । —दीर्घिका– (स्त्री०) श्रीगंगा जी ।— दुन्दुभी– (स्त्री०) तुलसी ।— द्विप– (पुं०) देवताओं का हाथी । ऐरावत हाथी का नामान्तर ।—द्विष्–(पुं०) दैत्य । —धनुस्– (न०) इन्द्रधनुष ।—धुनी (स्त्री०) गंगा।—धूप–(पुं०) तारपीन, राल ।—निम्नगा–(स्त्री०) श्रीगङ्गा जी । —पति– (पुं०) इन्द्र ।—पथ– (न०) आकाश । —पर्वत– (पुं०) मेरुपर्वत । —पादप– (पुं०) स्वर्ग का एक वृक्ष, कल्पतरु ।—प्रिय– (पुं०) इन्द्र का नाम । बृहस्पति । अगस्त्य वृक्ष । एक पर्वत । —प्रिया– (स्त्री०) जाती । चमेली । स्वर्णकदली । अप्सरा ।—भिषज् –(पुं०) अश्विनीकुमार । —भूय–(न०) पुरस्कार में देवत्वग्रहण ।—भूरुह– (पुं०) देवदारु वृक्ष । —युवति– (स्त्री०) अप्सरा ।— लासिका– (स्त्री०) बाँसुरी ।—लोक– (पुं०) स्वर्ग ।— वर्त्मन्—(न०) आकाश ।—वल्ली– (स्त्री०) तुलसी । —विद्विष्, —वैरिन्, —शत्रु– (पुं०) असुर, दानव ।—सद्मन्– (न०) स्वर्ग । —सरित्, —सिन्धु– (स्त्री०) श्रीगङ्गा; 'सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्' र० २.७५ । —सुन्दरी, —स्त्री– (स्त्री०) । अप्सरा ।—स्वामिन्—(पुं०) इन्द्र । विष्णु । शिव ।

सुरभि—(वि०) [सु √रम् +इन्] सुगन्धित, सुवासित । प्रिय । मनोहर । प्रसिद्ध । बुद्धिमान् । पुण्यात्मा । (पुं०) महक, सुगन्धि । जातीफल, जायफल । चंपक वृक्ष । एक प्रकार की सुगन्धयुक्त घास । वसन्त ऋतु । (स्त्री०) एलुवा, एलुवालक । जटामासी । मोतिया, बेला । मुरामाँसी । तुलसी । शराव, मदिरा । पृथिवी । गौ; सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः' र० १.८१ । एक पौराणिक गाय जो गो जाति की माता मानी जाती है । मातृकाओं में से एक । (न०) सुगन्धि । गन्धक । सुवर्ण ।—घृत– (न०) खुशबूदार घी । —त्रिफला– (स्त्री०) जायफल, लवँग और सुपारी ।—बाण– (पुं०) कामदेव ।—मास–(पुं०) वसन्तऋतु ।—मुख– (न०) वसन्त ऋतु का आरम्भ ।

सुरभिका—(स्त्री०) [सुरभि +कन्—टाप्] एक प्रकार का केला ।

सुरभिमत्—(वि०) [सुरभि+मतुप्] सुगंधियुक्त । (पुं०) अग्नि का नाम ।

सुरा—(स्त्री०) [√सु + क्रन्—टाप् वा सु √रा+अङ – टाप्] मद्य, शराब । जल । पान-पात्र ।— आकर (सुराकर)– (पुं०) शराब की भट्ठी । नारियल का पेड़ । —आजीव (सुराजीव), —आजीविन् (सुराजीविन्)– (पुं०) कलाल ।— आलय (सुरालय)–(पुं०) शराब की दूकान ।— उद (सुरोद)–(पुं०) शराब का समुद्र ।— ग्रह–(पुं०) शराब रखने का पात्र ।—ध्वज– (पुं०) वह पताका या अन्य कोई चिह्नानी जो शराब की दूकान

पर पहचान के लिये लगायी जाती है।—प– (वि०) शराबी, शराब पीने वाला। चतुर। सुन्दर।—**पाण,—पान**– (न०) शराब पीना। मद्य-पान के समय खायी जाने वाली चाट, गजक। (पुं०) पूर्वीय देश का निवासी।—**पात्र,—भाण्ड**– (न०) मदिरा पीने या रखने का पात्र। —**भाग**– (पुं०) शराब का फेन, खमीर। —**मण्ड**– (पुं०) शराब का माँड़।—**सन्धान**– (न०) शराब चुआने की क्रिया।

सुवर्ण—(वि०) [सुष्ठु वर्णोऽस्य, प्रा० ब०] सुन्दर रंग का। चमकदार रंग का। सुनहला, पीला। अच्छी जाति का। प्रसिद्ध। (न०) सोना। सोने का सिक्का। सोने की एक तौल जो १६ माशे या लगभग १७५ रत्ती की होती है (यह पुं० भी है)। धन-दौलत। पीला चंदन। एक तरह का गेरू। (पुं०) अच्छा रंग। अच्छी जाति। एक यज्ञ। शिव। धतूरा।—**अभिषेक (सुवर्णाभिषेक)**– (पुं०) वर-वधू का उस जल से मार्जन जिसमें सोने का एक टुकड़ा पड़ा हो।—**कदली**– (स्त्री०) केले की एक जाति, चंपा केला। —**कर्त्तृ,—कार,—कृत्**–(पुं०) सुनार। —**गणित**– (न०) गणित में विशेष प्रकार की गणनक्रिया, बीजगणित का वह अंग जिसके अनुसार सोने की तौल आदि मानी जाती है और उसका हिसाब लगाया जाता है।—**पुष्पित**–(वि०) सोने से भरा-पूरा; 'सुवर्णपुष्पितां पृथ्वीं विचिन्वन्ति त्रयो जनाः' पं० १.४५।—**पृष्ठ**– (वि०) जिस पर सोने का पत्तर चढ़ाया गया हो, सुनहला मुलम्मा किया हुआ।—**माक्षिक**–(न०) सोनामक्खी, खनिज पदार्थविशेष। —**यूथी**– (स्त्री०) पीली जूही, पीत-यूथिका।—**रूप्यक**–(वि०) सोने और चांदी की विपुलता से युक्त। (न०) सुवर्ण द्वीप या सुमात्रा का एक प्राचीन नाम।—**रेतस्**– (पुं०) शिवजी।—**वर्णा**–(स्त्री०) हल्दी।—**सिद्ध**– (पुं०) वह जो इन्द्र-जाल या जादू के बल सोना बना या प्राप्त कर सकता हो।—**स्तेय**–(न०) सोने की चोरी।

सुवर्णक—(न०) [सुवर्ण√कै + क] पीतल। सीसा नामक धातु। स्वर्णक्षीरी। आरग्वध।

सुषम—(वि०) [सुष्ठु समं सर्वं यस्मात्, प्रा० ब०, षत्व] अत्यन्त मनोहर या खूबसूरत।

सुषमा—(स्त्री०) [सुन्दरः समः, प्रा० स०, षत्व, सुषम+टाप्] परम-शोभा, अत्यन्त सुन्दरता; 'सुषमाविषये परीक्षणे निखिलं पद्ममभाजि तन्मुखात्' नै० २.२७।

सुषवी—(स्त्री०) [सु√सु + अच्—ङीष्] करेला, कारवेल्ल। करेली। जीरा।

सुषाढ—(पुं०) शिवजी का एक नाम।

सुषि—(स्त्री०) [√शुष् + इन्, पृषो० शस्य सः] सूराख।

सुषिम, सुषीम—(वि०) [सु √श्यै+मक्, सम्प्रसारण, पृषो० साधुः] ठंडा, शीतल। मनोरम, सुन्दर। (पुं०) शीतलता। सर्प-विशेष। चन्द्रकान्त मणि।

सुषिर—(वि०) [√शुष् + किरच्, पृषो० शस्य सः] छेदों से परिपूर्ण, पोला, छेदोंदार। विलंबित (उच्चारण)। (न०) छेद, सूराख। कोई भी बाजा जो हवा के संयोग से बजाया जाय। बांस। बेंत। लकड़ी। लौंग। वायुमंडल। (पुं०) अग्नि। चूहा।

सुषुप्ति—(स्त्री०) [सु√स्वप् + क्तिन्] गहरी नींद, प्रगाढ़ निद्रा। सत्त्वप्रधान अज्ञान। पातंजल दर्शन में सुषुप्ति, चित्त की उस वृत्ति या अनुभूति को माना है, जिसमें जीव नित्य ब्रह्म की प्राप्ति करता है। किन्तु जीव को इस बात का ज्ञान नहीं

रहता कि उसने ब्रह्म की प्राप्ति की है।

सुषुम्ण—(पुं०) [सुषु √म्ना + क] सूर्य की मुख्य किरणों में से एक का नाम।

सुषुम्णा—(स्त्री०) [सुषुम्ण + टाप्] शरीरस्थ तीन प्रधान नाड़ियों में से एक जो इड़ा और पिंगला के बीच में है।

सुषेण—(पुं०) [सु√सेन् + अच्] विष्णु का एक नाम। एक गन्धर्व। एक यक्ष। दूसरे मनु का एक पुत्र। श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम। एक वानर जो सुग्रीव का चिकित्सक था। करौंदा। वेंत।

सुष्ठु—(अव्य०) [सु √स्था+कु] उत्तमता से। बहुत अधिक, अत्यधिक। सचाई से, ठीक-ठीक।

सुष्म—(न०) [√सु +मक्, सुक् आगम] रस्सी, डोरी।

सुह्म—(पुं०) एक प्राचीन जनपद, राढ़देश। वहां का निवासी। एक यवनजाति।

√सू—भ्र० आत्म० सक० प्रसव करना। सूते, सविष्यते—सोष्यते, असविष्ट—असोष्ट। दि० आत्म० सक० प्रसव करना। सूयते, शेष भ्र० की तरह। तु० पर० सक० फेंकना। प्रेरित करना। सुवति, सविष्यति, असावीत्।

सू—(वि०) [√सू + क्विप्] उत्पन्न करने वाला, पैदा करने वाला। (स्त्री०) प्रसव। माता।

सूक—(पुं०) [सू + कन्] तीर। पवन। कमल।

सूकर—(पुं०) [सू इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, सू√कृ+अच्] शूकर, सुअर। मृग विशेष। कुम्हार।

सूकरी—(स्त्री०) [सूकर+ङीष्] सूअरी। वाराही कंद। वाराही देवी। एक चिड़िया।

सूक्ष्म—(वि०) [√सूच् +मन्, सुक्] बहुत छोटा। बहुत बारीक या महीन। अल्प; 'वश्याः गुणाः खल्वपि लोककान्ताः प्रारम्भ-सूक्ष्माः प्रथिमानमापुः' र० १८.४९। पतला। उत्तम। तीक्ष्ण। धूर्त। ठीक। तुच्छ। (न०) परब्रह्म। सूक्ष्मता। योग द्वारा प्राप्त की जाने वाली योगियों की तीन शक्तियों में से एक। शिल्प-कौशल। धूर्तता। महीन डोरा। एक काव्यालंकार जिसमें चित्त-वृत्ति को सूक्ष्म चेष्टा से लक्षित कराने का वर्णन किया जाता है। (पुं०) अणु, परमाणु। केतक वृक्ष। रीठा। सुपारी। शिव का नाम।—**एला** (**सूक्ष्मैला**)–(स्त्री०)छोटी इलायची।—**तण्डुल**–(पुं०)पोस्ता।—**तण्डुला**–(स्त्री०) पीपल, पिप्पली। घूना। —**दर्शिता**–(स्त्री०) सूक्ष्मदर्शी होने का भाव, सूक्ष्म बात सोचने-समझने का गुण; बुद्धिमानी। —**दर्शिन्**, —**दृष्टि**–(वि०) वह दृष्टि जिससे बहुत ही सूक्ष्म बातें भी दिखाई दें या समझ में आ जायँ।—**दारु**– (न०) काठ की पतली पटरी या तख्ता।—**देह**–(पुं०), —**शरीर**– (न०) लिंगशरीर, पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच सूक्ष्म भूत, मन और बुद्धि इन सत्रह तत्त्वों का समूह। (हाथ, पैर, मुँह आदि अंगों से युक्त शरीर स्थूल-शरीर कहलाता है। इसके नष्ट हो जाने पर सूक्ष्म-शरीर बच रहता है। जब तक मोक्ष नहीं मिलता तब तक स्थूल-शरीर का आवागमन बराबर बना रहता है। स्वर्ग और नरक का भोग भी सूक्ष्म-शरीर को ही करना पड़ता है।)**पत्र**–(पुं०) धनिया, धन्याक। वनजीरक। लाल ऊख। बबूल। देव-सर्षप।— **पर्णी**– (स्त्री०) रामतुलसी, रामदूती।—**पिप्पली**– (स्त्री०) जंगली पीपल, वनपिप्पली।—**बुद्धि**–(वि०) तेज बुद्धि वाला।—**मक्षिक**–

(न०), —मक्षिका– (स्त्री०) मच्छड़, मशक ।— मान–(न०) ठीक-ठीक नाप । —शर्करा– (स्त्री०) बालू, बालुका ।— शालि– (पुं०) सोरों जाति का चावल ।— षट्चरण– (पुं०) एक प्रकार का सूक्ष्म कीड़ा जो पलकों की जड़ में रहता है ।

√सूच्—चु० पर० सक० छेदना । बतलाना । (किसी छिपी बात या वस्तु को) प्रकट कर डालना । हाव-भाव प्रदर्शित करना । जासूसी करना, खोज निकालना । सूचयति, सूचयिष्यति, असुसूचत् ।

सूच—(पुं०) [√सूच्+अच्] कुशा की पैनी या नुकीली नोक ।

सूचक—(वि०) [स्त्री०—**सूचिका**] [√सूच्+ण्वुल्] सूचना देने वाला, बतलाने वाला । (पुं०) दरजी । सूई । चुगलखोर । जासूस, भेदिया । शिक्षक । किसी नाटक मण्डली का व्यवस्थापक या मुख्य नट । बुद्धदेव । सिद्ध । दुष्ट । दैत्य । पिशाच । कुत्ता । कौआ । बिल्ली । एक प्रकार का महीन चावल ।—**वाक्य**–(न०) भेदिये की बताई हुई बात ।

सूचन—(न०), **सूचना**– (स्त्री०) [√सूच् +ल्युट्] [√ सूच् +णिच् (स्वार्थे) +युच्—टाप्] बताने, जताने की क्रिया । छेदने या सूराख करने की क्रिया । भेद खोल देना, किसी गोप्य बात को प्रकट कर देना । हावभाव । संकेत । इत्तिला । शिक्षण । वर्णन । जासूसी करना । दुष्टता । अभिनय । दृष्टि । हिंसा ।

सूचा—(स्त्री०) [√सूच् + अ—टाप्] भेदन । हाव-भाव । अवलोकन । भेद लेना ।

सूचि, सूची—(स्त्री०) [√सूच्+इन्, पक्षे ङीप्] छेदन, भेदन । सूई । नुकीली नोक; 'अभिनवकुशसूच्या परिक्षतं मे चरणं' श० १ । किसी वस्तु की नोक । कील की नोक । सैन्य-व्यूह विशेष जिसमें कुछ कुशल सैनिक आगे रखे जाते हैं और शेष पीछे । एक तरह का रतिबन्ध । दृष्टि । हाव-भाव द्वारा कोई बात प्रदर्शित करना, इशारेबाजी । नृत्य विशेष । नाटकीय हाव-भाव । तालिका, फेहरिस्त । विषयानुक्रमणिका, किसी ग्रन्थ के विषयों की तालिका ।— **अग्र** (**सूच्यग्र**)–(वि०) सूई की तरह पैनी नोक का । (न०) सूई की नोक ।— **आस्य** (**सूच्यास्य**)–(पुं०) चूहा । मच्छर ।—**पत्र**– (न०) वह पत्र या पुस्तक जिसमें पुस्तकों या और किसी चीज की नामावली विषय, दाम आदि बताते हुए दी गयी हो । एक प्रकार की ऊख । सितावर शाक ।— **पत्रक**–(न०) दे० 'सूचीपत्र' ।—**पुष्प**– (पुं०) केवड़े का वृक्ष ।—**मुख**– (वि०) वह जिसका मुख सूई जैसा हो । नुकीली चोंच वाला । नुकीला । (पुं०) चिड़िया । सफेद कुश । हस्तमुद्रा-विशेष । (न०) हीरा । एक नरक । सूई की नोक ।—**रोमन्**– (पुं०) शूकर ।— **वक्त्रा**–(स्त्री०) बहुत संकीर्ण योनि जो मैथुन के अयोग्य हो ।—**वदन** –(वि०) सूई जैसा चेहरे वाला । नुकीली चोंच वाला । (पुं०) मच्छर । नेवला ।—**शालि**– (पुं०) महीन जाति का चावल विशेष ।

सूचिक—(पुं०) [सूचि+ठन्—इक] दर्जी ।

सूचिका—(स्त्री०) [सूचि+क—टाप्] सूई । हाथी की सूँड़ ।—**धर**–(पुं०) हाथी ।—**मुख**–(न०) शंख ।

सूचित—(वि०) [√सूच्+क्त] छेदा हुआ, छेद किया हुआ । बतलाया हुआ । इशारे या संकेत से बतलाया हुआ । कथित ।

सूचिन्—(वि०) [स्त्री०—**सूचिनी**] [√ सूच्+णिनि] छेद करने वाला । बतलाने वाला । मुखबिरी करने वाला । भेद लेने वाला, जासूसी करने वाला । (पुं०) जासूस, भेदिया ।

सूचिनी—(स्त्री०) [सूचिन् + ङीप्] सूई। रात।

सूची—दे० 'सूचि'।

सूच्य—(वि०) [√सूच् + ण्यत्] सूचना देने योग्य, बतलाने लायक।

सूत्—(अव्य०) [√सू + क्त] खर्राटे का शब्द जो सोने के समय प्रायः लोग किया करते हैं।

सूत—(वि०) [√सू+क्त] उत्पन्न। प्रेरित। (पुं०) सारथि, रथ हांकने वाला। क्षत्रिय का पुत्र जो ब्राह्मणी माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो। वंदीजन, भाट। बढ़ई। सूर्य। व्यास के एक शिष्य का नाम। (पुं०, न०) पारा, पारद।—**तनय**–(पुं०) कर्ण का नाम।— **राज्**–(पुं०) पारा।

सूतक—(न०) [सूत+कन्] उत्पत्ति। जनन-अशौच। अशौच। (न०, पुं०) पारा।

सूतका—(स्त्री०) [सूत+कन्—टाप्] जच्चा स्त्री, वह स्त्री जिसने हाल ही में बच्चा जना हो।

सूता—(स्त्री०) [सूत+टाप्] जच्चा औरत, सूतका।

सूति—(स्त्री०) [√सू + क्तिन्] उत्पत्ति, प्रसव। सन्तान, औलाद। निर्गम-स्थान 'तपसां सूतिरसूतिरापदाम्' कि० २.५६। वह स्थान जहाँ सोमरस निकाला जाय।—**अशौच** (**सूत्यशौच**)–(न०) जनन-अशौच।— **गृह**–(न०) वह घर जिसमें लड़का जना गया हो, सौरी।—**मास**–(पुं०) वह मास जिसमें बच्चा जना गया हो।

सूतिका—(स्त्री०) [सूत+कन्—टाप्, इत्व] स्त्री जिसने हाल ही में सन्तान जनी हो।— **अगार** (**सूतिकागार**),—**गृह**, —**गेह**, —**भवन**– (न०) जच्चाखाना, सौरी।—**रोग**–(पुं०) प्रसूता स्त्री को होने वाला एक रोग।—**षष्ठी**–(स्त्री०) देवी विशेष, जिसका पूजन प्रसव के दिन से छठे दिन किया जाता है।

सूत्पर—(न०) [सु—उद्√पॄ+अप्] शराब चुआने की क्रिया।

सूत्या—(स्त्री०) [√सू+क्यप्—टाप्] दे० 'सुत्या'।

√सूत्र्—चु० पर० सक० बांधना। सूत्र के रूप में लिखना या बनाना। क्रमबद्ध करना। खोलना। सूत्रयति, सूत्रयिष्यति, असुसूत्रत्।

सूत्र—(न०) [√सूत्र्+अच्] सूत। तागा; 'पुष्पमालानुषङ्गेण सूत्रं शिरसि धार्यते' सुभा०। सूत का ढेर। द्विजों के पहिनने का जनेऊ। कठपुतली का तार या डोरी या वह तार या डोरी जिसे थाम कर कठपुतली नचाई जाती है। संक्षिप्त रूप में बनाया हुआ नियम या सिद्धान्त। थोड़े अक्षरों में कहा हुआ ऐसा पद या वचन जो बहुत अर्थ प्रकट करता हो, संक्षिप्त, सारगर्भित पद या वचन। —**आत्मन्** (**सूत्रात्मन्**)–(पुं०) जीवात्मा। —**आली** (**सूत्राली**)–(स्त्री०) माला। हार।—**कण्ठ**– (पुं०) ब्राह्मण। कबूतर। पेंडुकी। खंजन।—**कर्मन्**– (न०) बढ़ई-गीरी। जुलाहे का काम।—**कार**,—**कृत्**–(पुं०) सूत्र बनाने वाला। बढ़ई। जुलाहा। —**कोण**, —**कोणक**– (पुं०) डमरू।—**गण्डिका**– (स्त्री०) जुलाहे का एक औजार जो लकड़ी का होता है और कपड़ा बुनने में काम देता है।—**धर**, —**धार**–(पुं०) नाट्यशाला का व्यवस्थापक या प्रधान नट जो भारतीय नाट्य-शास्त्र के अनुसार नान्दी पाठ के अनन्तर खेले जाने वाले नाटक की प्रस्तावना सुनाता है। बढ़ई। इन्द्र।—**पिटक**– (पुं०) बौद्धों के मत के प्रसिद्ध तीन संग्रह-ग्रन्थों में से एक।—**पुष्प**–(पुं०) कपास का वृक्ष।—**भिद्**–(पुं०)

दर्जी ।—भृत्– (पुं०) सूत्रधार ।—यन्त्र– (न०) करघा । ढरकी ।—वीणा–(स्त्री०) प्राचीन काल की एक वीणा जिसमें तार की जगह सूत लगाये जाते थे ।—वेष्टन–(न०) करघा । ढरकी । बुनने की क्रिया ।

सूत्रण—(न०) [√सूत्र् + ल्युट्] सूत्र रूप में रचना । गूँथने की क्रिया । क्रमबद्ध करना ।

सूत्रला—(स्त्री०) [सूत्र √ला + क—टाप्] तकला, टेकुवा ।

सूत्रिका—(स्त्री०) [√सूत्र् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] सेंवई । हार ।

सूत्रित—(वि०) [√सूत्र् + क्त] सूत्र में दिया हुआ । क्रम-बद्ध किया हुआ ।

सूत्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**सूत्रिणी**] [सूत्र + इनि] सूत्र वाला । (पुं०) काक । सूत्रधार ।

√सूद्—भ्वा० आत्म० सक० निवारण करना । सूदते, सूदिष्यते, असूदिष्ट । भ्वा० पर० सक० मार डालना । सूदति, सूदिष्यति, असूदीत् । चु० उभ० अक० बहना । सक० उत्तेजित करना । ताड़ना करना । वध करना । उड़ेलना । स्वीकार करना । प्रतिज्ञा करना । रांधना । फेंक देना । सूदयति-ते, सूदयिष्यति-ते, असुषूदत्-त ।

सूद—(पुं०) [√सूद् + घञ् वा अच्] वध, मारण । कूप । सोता । रसोइया । चटनी । कढ़ी । पकवान । दली हुई मटर । कीचड़ । पाप । दोष । लोध्र वृक्ष ।—कर्मन्– (न०) रसोइये का काम ।—शाला– (स्त्री०) रसोईघर ।

सूदन—(वि०) [स्त्री०—**सूदनी**] [√सूद् +ल्यु] नाशक, वध-कारक । प्यारा । (न०) [√सूद् + ल्युट्] वध, कत्ल । प्रतिज्ञा । फेंकना ।

सून—(वि०) [√सू+क्त, तस्य नः] उत्पन्न । खिला हुआ । खाली, रीता । (न०) प्रसव । कली । फूल । फल ।(पुं०) पुत्र ।

सूना—(स्त्री०) [सून+टाप्] कसाईखाना; 'भवानपि सूनापरिचर इव गृध्रः आमिष-लोलुपो भीरुकश्च' माल० २ । मांस की बिक्री । चोटिल करना । वध करना । छोटी जिह्वा, कौआ । पटुआ, कमरपेटी । गर्दन की गांठों की सूजन । किरण । नदी । पुत्री ।(स्त्री०, बहु०)गृहस्थ के घर में चूल्हा, चक्की, ओखली, घड़ा और झाड़ू में से कोई भी वस्तु, जिससे जीव-हिंसा होने की सम्भावना रहती है ।

सूनिन्—(पुं०) [सूना+इनि] कसाई । मांस बेचने वाला । बहेलिया ।

सूनु—(पुं०) [√सू+नुक्] पुत्र; 'पितुरहमेवैको सूनुरभवम्' का० । बच्चा । दौहित्र, बेटी का बेटा । छोटा भाई । सूर्य । मदार का पौधा ।

सूनू—(स्त्री०) [सूनु+ऊङ्] पुत्री ।

सूनृत—(वि०) [सु√नृत् + क (घञर्थे), उपसर्गस्य दीर्घः(वि० में सूनृत+अच्)] सच्चा और आनन्द-दायी । कृपालु और सहृदय । शिष्ट, भद्र । शुभ । प्रिय । (न०) सत्य और प्रिय वाणी । अच्छा और अनुकूल संवाद । शिष्ट भाषण । कल्याण ।

सूप—(पुं०) [सु √पा + क पृषो० साधुः] पकी हुई दाल । रसा, जूस । कढ़ी । चटनी । मसाला । [सु √वप् + क, सम्प्रसारण] रसोइया । बरतन । [√सूद्+क, पृषो० साधुः] बाण । बरतन ।—अङ्ग (सूपाङ्ग)– (न०) हींग ।—कार– (पुं०) रसोइया । —धूपक, —धूपन,– (न०) हींग ।

सूम— (पुं०)[√सू+मक्] आकाश । दूध जल ।

√सूर्—दि० आत्म० सक० मारना, वध करना । रोकना । सूर्यते, सूरिष्यते, असूरिष्ट

सूर—(वि०) [√सू+क्रन्] सूर्य । मदार का पौधा । सोमवल्ली । पण्डितजन ।—

सुत– (पुं०) शनिग्रह ।—सूत– (पुं०) सूर्य के सारथि अरुण देव ।

सूरण—(पुं०) [√सूर् + ल्यु] जमीकंद, सूरन ।

सूरल—(वि०) [सु√रम् + क्त, पृषो० दीर्घ] सहृदय । कृपालु । शान्त ।

सूरि—(पुं०) [√सू + क्रिन्] सूर्य । विद्वज्जन, पण्डितजन; 'अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः' र० १.४ । ऋत्विक् । पुजारी, अर्चक । जैनियों की एक सम्मान-सूचक उपाधि । श्रीकृष्ण का नामान्तर । बृहस्पति ।

सूरिन्—(वि०) [स्त्री०—**सूरिणी**] [√सूर् + णिनि] विद्वान् । (पुं०) विद्वान् व्यक्ति ।

सूरी—(स्त्री०) [सूरि + ङीष्] सूर्य की पत्नी का नाम । कुन्ती का नाम ।

√सूर्क्ष् (क्ष्य्)—भ्वा० पर० सक० अनादर करना । सूर्क्ष (क्ष्य) ति, सूर्क्षि (र्क्ष्यि) ष्यति, असूर्क्षी (क्ष्यी) त् ।

सूर्क्षण, सूर्क्ष्यण—(न०) [√ सूर्क्ष् (क्ष्य्) + ल्युट्] असम्मान, वेइज्जती ।

सूर्क्ष्य—(पुं०) [√सूर्क्ष्य् + घञ्] माष, उड़द ।

सूर्ण—(वि०) [√सूर् + क्त] हत ।

सूर्प—[=शूर्प, पृषो० शस्य सः] दे० 'शूर्प' ।

सूर्मि, सूर्मी—(स्त्री०) [=शूर्मि, पृषो० शस्य सः, पक्षे ङीष्] लोहे या अन्य किसी धातु की बनी मूर्ति, धातु-विग्रह । घर का खंभा । चमक, आभा, दीप्ति । शोला, अंगारा ।

सूर्य—(पुं०) [√सृ+क्यप् नि० साधुः] सौर जगत् का वह सब से बड़ा और जाज्वल्यमान पिण्ड जिससे सब ग्रहों को गरमी और प्रकाश मिलता है, रवि, दिनकर । आक का पौधा । बारह की संख्या ।—**अपाय** (सूर्यापाय)– (पुं०) सूर्यास्त ।—**अर्घ्य** (सूर्यार्घ्य) – (न०) सूर्य के उद्देश्य से दिया जाने वाला अर्घ्य ।—**अश्मन्** (सूर्याश्मन्)– (पुं०) सूर्यकान्तमणि ।—**अश्व** (सूर्याश्व)– (पुं०) सूर्य का घोड़ा, वाताट, हरित् ।—**अस्त** (सूर्यास्त)– (न०) सूर्य का डूबना । सायंकाल ।—**आतप** (सूर्यातप)– (पुं०) सूर्य की गरमी, धूप ।—**आलोक** (सूर्यालोक)–(पुं०) सूर्य की रोशनी । धूप ।—**आवर्त** (सूर्यावर्त)– (पुं०) हुलहुल का पौधा । सुवर्चला । गजपिप्पली । आधासीसी ।—**आह्व** (सूर्याह्व)– (वि०) सूर्य के नाम वाला । (न०) तांबा । (पुं०) अकवन । महेन्द्रवारुणी ।—**उत्थान** (सूर्योत्थान) (न०), —**उदय** (सूर्योदय)– (पुं०) सूर्य का उगना या निकलना ।—**ऊढ** (सूर्योढ)– (पुं०) वह अतिथि जो शाम को आया हो । सूर्यास्तकाल ।—**कान्त**– एक तरह का स्फटिक जिससे सूर्य के सामने करने से आंच निकलती है, आतशी शीशा ।—**काल**–(पुं०) दिवस, दिन । —**ग्रह**–(पुं०) सूर्य । सूर्य का ग्रहण । राहु और केतु के नामान्तर । जलघट की तली ।—**ग्रहण**– (न०) राहु या केतु द्वारा सूर्य का ग्रास । (मतान्तर में) चन्द्रमा की छाया पड़ने से सूर्य-बिम्ब का छिप जाना । —**चन्द्र** [=सूर्याचन्द्रमसौ]–(पुं०) (द्विवचन) सूर्य और चन्द्रमा ।—**ज**,—**तनय**, —**पुत्र**–(पुं०) सुग्रीव का नामान्तर । कर्ण । शनिग्रह । यम ।—**जा**,—**तनया**– (स्त्री०) यमुना नदी ।—**तेजस्** –(न०) सूर्य का आतप या चमक ।—**नक्षत्र**– –(न०) २७ नक्षत्रों में से वह जिस पर सूर्य हो ।—**पर्वन्**– (न०) संक्रमण और सूर्यग्रहण आदि ।—**प्रभव**– (वि०) सूर्य से उत्पन्न या निकला हुआ; 'क्व सूर्यप्रभवो

वंशः' र० १.२ ।—**भक्त**– (वि०) सूर्योपासक । (पुं०) बन्धूक नामक वृक्ष या उसके फूल ।—**मणि**– (पुं०) सूर्यकान्त मणि ।—**मण्डल**– (न०) सूर्य की परिधि या घेरा ।—**यन्त्र**– (न०) सूर्य के मंत्र और बीज से अङ्कित ताम्रपत्र जिसका सूर्य के उद्देश्य से पूजन किया जाता है । यंत्र विशेष या दूरबीन जिससे सूर्य की गति आदि का हाल जाना जाय ।—**रश्मि**– (पुं०) सूर्य की किरण ।— **लोक**–(पुं०) सूर्य के रहने का लोक विशेष । —**वंश**– (पुं०) वैवस्वत मनु के पुत्र इक्ष्वाकु से प्रचलित वंश, इक्ष्वाकु-वंश ।—**वर्चस्**– (वि०)सूर्य की तरह चमकीला ।—**विलोकन**–(न०) चार मास का होने पर शिशु को बाहर निकाल कर सूर्य का दर्शन कराने की विधि । —**सङ्क्रम**– (पुं०),—**सङ्क्रान्ति**–(स्त्री०) सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना ।—**संज्ञ**–(न०) केसर ।—**सारथि**– (पुं०) अरुण का नामान्तर ।—**स्तुति**– (स्त्री०), —**स्तोत्र** –(न०) वह स्तुति जो सूर्य के प्रति हो । —**हृदय**– (न०) सूर्य का स्तव विशेष ।

सूर्या—(स्त्री०) [सूर्य —टाप्] सूर्य-पत्नी, संज्ञा । इंद्रवारुणी । नवोढा । वाणी ।

√सूष्—भ्वा० पर० सक० प्रसव करना । सूषति, सूषिष्यति, असूषीत् ।

सूषणा–(स्त्री०)[√सूष्+ल्यु]जननी, माता।

√सृ—भ्वा० पर० सक० गमन करना । समीप जाना । आक्रमण करना । अक० दौड़ना, भागना । बहना, चलना (जैसे हवा का)। बहना (पानी का) । सरति, सरिष्यति, असरत् — असार्षीत् । चु० उभ० सक० जाना । अक० ठहरना । सारयति-ते । जु० पर० सक० जाना । ससर्ति ।

सृक—(पुं०) [√सृ + कक्] पवन । तीर । वज्र । कमल ।

सृकण्डु—(पुं०) [√सृ+क्विप्, पृषो० न तुक्, सृ—कण्डु, कर्म० स०] खाज, खुजली ।

सृका—(स्त्री०) [सृक+टाप्] मणि-निर्मित माला ।

सृकाल—(पुं०) [√सृ + कालन्] शृगाल, गीदड़ ।

सृक्क, सृक्कन्, सृक्वन्—(न०) [सृज् +कन्] [√सृज् + कनिन्] [√सृज् +क्वनिप्] ओष्ठ का प्रान्त भाग, मुख के दोनों ओर के कोने ।

सृग—(पुं०) [√ सृ + गक्] भिन्दिपाल, एक प्रकार की गदा या ढलवाँस ।

सृगाल—(पुं०) [√सृ +गालन्] सियार, गीदड़ ।

सृगालिका—(स्त्री०) [सृगाल+ङीष् +कन्—टाप्, ह्रस्व] सियारिन, गीदड़ी । लोमड़ी । पिठवन । भूमिकूष्मांड । विदारी कंद । भगदड़, पलायन । दंगा ।

सृगाली—(स्त्री०) [सृगाल + ङीष्]सियारिन । लोमड़ी । विदारीकंद । तालमखाना । भगदड़ । दंगा ।

√सृज्—दि० आत्म० सक० सृष्टि करना । बनाना । रखना । छोड़ देना, मुक्त करना । उड़ेलना । उच्चारण करना । फेंकना । त्यागना । सृज्यते, स्रक्ष्यते, असृष्ट । तु० पर० सक० दे० दि० के अर्थ, सृजति, स्रक्ष्यति, अस्राक्षीत् ।

सृञ्जय—(पुं०) एक जनपद । मनु के एक पुत्र का नाम ।

सृणि—(स्त्री०) [√सृ + निक्] अंकुश; 'मदान्धकरिणां दर्पोपशान्त्यै सृणिः' हि० ३.१६५ । (पुं०) शत्रु । चन्द्रमा ।

सृणिका, सृणीका—(स्त्री०) [सृणि+कन् —टाप्][सृणि+ईकन्—टाप्]लाला, लार ।

सृति—(स्त्री०) [√सृ +क्तिन्] मार्ग । 'नैते सृती पार्थ जानन् योगी मुह्यति कश्चन'

भग० ८.२७। जाना अनिष्टकरण। जन्म। निर्माण।

सृत्वर—(वि०) [स्त्री०—**सृत्वरी**] [√सृ +क्वरप्] गमन करने वाला, जाने वाला।

सृत्वरी—(स्त्री०) [सृत्वर + ङीप्] नदी। माता।

सृदर—(पुं०) [√सृ +अरक्, दुक् आगम] साँप।

सृदाक—(पुं०) [√सृ +काकु, दुक्] पवन। अग्नि। मृग। इन्द्र का वज्र। सूर्य का मंडल। (स्त्री०) नदी।

√सृप्—भ्वा० पर० सक० रेंगना, सरकना। जाना, चलना। सर्पति, सर्पिष्यति, असृपत्।

सृपाट—(पुं०) [√सृप् + काटन्] माप विशेष। रक्त-धारा।

सृपाटिका—(स्त्री०) [सृपाट +ङीष्+कन् —टाप्, ह्रस्व] पक्षी की चोंच।

सृपाटी—(स्त्री०) [सृपाट + ङीष्] दे० 'सृपाट'।

प्र—(पुं०) [√सृप्+क्रन्] चन्द्रमा।

√सृभ्, √सृम्भ्—भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना सर्भति, सर्भिष्यति, असर्भीत्। सृम्भति, सृम्भिष्यति, असृम्भीत्।

सृमर—(वि०) [स्त्री०—**सृमरी**] [√सृ +क्मरच्] गमन करने वाला, जाने वाला। (पुं०) बाल मृग। एक असुर।

सृष्ट—(वि०) [√ सृज्+क्त] पैदा किया हुआ, सिरजा हुआ। उड़ेला हुआ। त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। विदा किया हुआ। विसर्जन किया हुआ। बरखास्त किया हुआ, निकाला हुआ। निश्चित किया हुआ। मिलाया हुआ। अधिक, विपुल। भूषित।

सृष्टि—(स्त्री०) [√सृज् + क्तिन्] रचना। संसार की रचना। प्रकृति। छुटकारा। दान। पदार्थ का भावाभाव। एक प्रकार की ईंट जो यज्ञ की वेदी बनाने के काम में आती थी। गंभारी।—**कर्तृ**–(पुं०) ब्रह्मा। ईश्वर।

√सॄ—क्र्या० पर० सक० वध करना। सृणाति, सरि (री) ष्यति, असारीत्।

√सेक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। सेकते, सेकिष्यते, असेकिष्ट।

सेक—(पुं०) [√सिच् +घञ्] सींचने की क्रिया। छिड़काव। अभिषेक। तर्पण। फुहारा। वीर्यपात। नैवेद्य।—**पात्र**–(न०) वह बरतन जिससे छिड़काव किया जाय। बाल्टी, डोल।

सेकिम—(न०) [सेक + डिम] मूली। सलगम।

सेक्तृ—(वि०) [स्त्री०—**सेक्त्री**] [√सिच् +तृच्] छिड़कने वाला। (पुं०) छिड़काव करने वाला व्यक्ति। पति।

सेक्त्र—(न०) [√सिच्+ष्ट्रन्] डोलची, पानी छिड़कने का पात्र।

सेचक—(वि०) [स्त्री० —**सेचिका**] [√सिच्+ण्वुल्] सिंचन करने वाला, जल छिड़कने वाला। (पुं०) बादल।

सेचन—(न०) [√सिच्+ल्युट्] पानी का छिड़काव, सींचना। अभिषेक। स्राव। नहाने का फुहारा। डोलची, बाल्टी।—**घट**–(पुं०) सींचने का घड़ा या पात्र।

सेचनी—(स्त्री०) [सेचन + ङीप्] बाल्टी, डोलची।

सेटु—(पुं०) [√सिट् +उन्] तरबूज। ककड़ी।

सेतिका—(स्त्री०) अयोध्या का नाम।

सेतु—(पुं०) [√सि+तुन्] मेंड़। बाँध। पुल; 'वैदेहि! पश्यामलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिं' र० १३.२। भू-सीमा। घाटी। सङ्कीर्ण मार्ग। सीमा, हद। प्रतिबन्धक, किसी भी प्रकार की रोक या रुकावट। निर्दिष्ट या निर्द्धारित नियम या विधि। प्रणव, ओङ्कार [यथा कालिका-

पुराणे—मन्त्राणां प्रणवः सेतुस्तत्सेतुः प्रणवः स्मृतः। स्रवत्यनोङ्कृतं पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यते॥) टीका। वरुण वृक्ष। द्रुह्यु का एक पुत्र।—**बन्ध**— (पुं०) बाँध, पुल आदि का निर्माण। श्रीरामचन्द्र जी का बनवाया हुआ इतिहास-प्रसिद्ध पुल।—**भेदिन्**—(वि०) सीमा तोड़ने वाला। रुकावट दूर करने वाला। (पुं०) दन्ती नामक वृक्ष।

सेतुक—(पुं०) [सेतु + क] बाँध। पुल। वरुण वृक्ष।

सेत्र—(न०) [√सि+ष्ट्रन्] बन्धन। बेड़ी।

सेदिवस्—(वि०) [स्त्री०—**सेदुषी**] [√सद्+लिट् — क्वसु] बैठा हुआ।

सेन—(वि०) [सह इनेन, ब० स०, सहस्य सः] वह जिसका कोई प्रभु हो। (न०) देह।

सेना—(स्त्री०) [√सि+न—टाप्, वा सेन—टाप्] युद्ध-शिक्षा प्राप्त सशस्त्र व्यक्तियों का दल, फौज, वाहिनी। शक्ति, भाला। इन्द्राणी। इन्द्र का वज्र। तीसरे अर्हत् शंभव की माता का नाम। वेश्याओं की प्राचीन उपाधि।—**अग्र (सेनाग्र)**—(न०) सेना का वह दल जो आगे चलता है।—**चर**—(पुं०) सिपाही। अनुचरवर्ग।—**निवेश**—(पुं०) सेना की छावनी, सैन्यशिविर। शिविर।—**नी**—(पुं०) सेनानायक; 'सेनानीनामहं स्कन्दः' भग० १०.२४। कार्त्तिकेय का नाम।—**पति**—(पुं०) सेना का नायक। कार्त्तिकेय। धृतराष्ट्र का एक पुत्र।—**परिच्छद**—(वि०) सेना से घिरा हुआ।—**पृष्ठ**—(न०) सेना का पिछला भाग।—**भङ्ग**—(पुं०) सेना का तितर-बितर हो जाना।—**मुख**—(न०) सेना का अग्र-भाग। सेना का वह दल, जिसमें ३ हाथी, ३ रथ, ९ घोड़े, और पन्द्रह पैदल सिपाही होते हैं। नगर-द्वार के सामने का मिट्टी का टीला या धुस्स।—**योग**—(पुं०) सेना की सजावट।—**रक्ष**—(पुं०) पहरेदार, पहरुआ।

सेफ—(पुं०) [√सि + फ] लिङ्ग, पुरुष की जननेन्द्रिय।

सेमन्ती—(स्त्री०) [√सिम्+झि—अन्त, ङीष्] सफेद गुलाब, सेवती।

सेर—(पुं०) १६ छटाँक का एक सेर।

सेराह—(पुं०) दूध के समान सफेद रङ्ग का घोड़ा।

सेरु—(वि०) [√सि + रु] बाँधने वाला।

√सेल्—भ्वा० पर० सक० जाना। सेलति, सेलिष्यति, असेलीत्।

√सेव्—भ्वा० उभ० सक० परिचर्या करना। सेवा करना। पीछा करना, अनुगमन करना। इस्तेमाल करना, उपयोग करना। मैथुन करना। सम्पादन करना। रखवाली करना। क्षमा करना। अक० बसना। सेवति—ते, सेविष्यति—ते, असेवीत्—असेविष्ट।

सेव—(पुं०)[√सेव्+क(घञर्थे)]दे० 'सेवन'। सेब फल।

सेवक—(वि०) [√सेव्+ण्वुल्]सेवा करने वाला। अर्चा करने वाला। अनुगमन करने वाला। परतन्त्र, पराधीन। (पुं०) नौकर चाकर। भक्त। [√सिव् + ण्वुल्] दर्जी सीने वाला व्यक्ति।

सेवधि—(पुं०) दे० 'शेवधि'।

सेवन—(न०) [√सेव्+ल्युट्] सेवा करने की क्रिया। इस्तेमाल करने की क्रिया, काम में लाने की क्रिया। मैथुन करने की क्रिया [√सिव्+ल्युट्] सीना, सीने का काम बोरा।

सेवा—(स्त्री०) [√सेव्+अङ—टाप्]परिचर्या, खिदमत, सेवकाई। पूजन, अर्चा अनुराग। उपयोग। आसरा। चापलूसी ठकुरसुहाती।—**धर्म**—(पुं०) सेवकाई करने का कर्त्तव्य।

सेवि—(न०) [√सेव्+इन्] बेर या बेरी का फल। सेव।

सेवित—(वि०) [√सेव्+क्त] सेवन किया हुआ, सेवकाई किया हुआ। अभ्यास किया हुआ। आसरा लिया हुआ। उपभोग किया हुआ, काम में लाया हुआ। (न०) दे० 'सेवि'।

सेवितृ—(पुं०) [√सेव्+तृच्] सेवक, नौकर। (वि०) सेवा करने वाला।

सेविन्—(वि०) [√सेव्+णिनि] सेवा करने वाला। पूजा करने वाला। अभ्यास करने वाला। काम में लाने वाला। बसने वाला। (पुं०) नौकर, अनुचर।

सेव्य—(वि०) [√सेव्+ण्यत्] सेवा करने योग्य। आराधना करने योग्य। उपभोग करने लायक। रखवाली करने लायक। (न०) वीरणमूल, खस। लामज्जक तृण। (पुं०) अश्वत्थ वृक्ष। हिज्जल वृक्ष। गौरैया पक्षी। सुगंधवाला। समुद्री नमक। दही का खूब जमा हुआ बीच का हिस्सा। जल। लाल चंदन। एक प्रकार का मद्य। स्वामी। —**सेवक**–(पुं०) मालिक और नौकर।

√सै—भ्वा० पर० अक० नष्ट होना। सायति, सास्यति, असासीत्।

सैंह—(वि०) [स्त्री०—**सैंही**] [सिंह+अण्] सिंह-सम्बन्धी।

सैंहल—(वि०) [सिंहल + अण्] सिंहल द्वीप सम्बन्धी। लंका में उत्पन्न।

सैंहिक, सैंहिकेय—(पुं०) [सिंहिका+ठक्] [सिंहिका+ढक्] राहु का नामान्तर।

सैकत—(वि०) [स्त्री०—**सैकती**] [सिकता+अण्] रेतीला। रेतीली जमीन वाला। (न०) रेतीला तट; 'सुरगज इव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः' र० ५.७५। वह द्वीप जिसके तट पर रेत या बालू हो। —**इष्ट** (**सैकतेष्ट**) – (न०) अदरक, आदी।

सैकतिक—(वि०) [स्त्री०—**सैकतिकी**] [सैकत+ठक्] सिकतामय तट सम्बन्धी। [सह एकतया सैकतम् तत् अस्य अस्ति, सैकत +ठन्] सन्देहजीवी। (पुं०) संन्यासी। (न०) मातृयात्रा। मंगलसूत्र।

सैद्धान्तिक—(वि०) [सिद्धान्त + ठक्] सिद्धान्त सम्बन्धी। (पुं०) सिद्धान्त या यथार्थ सत्य जानने वाला व्यक्ति।

सैनापत्य—(न०) [सेनापति+ष्यञ्] सेनानायकत्व, सेनापतित्व।

सैनिक—(वि०) [स्त्री०—**सैनिकी**] [सेना +ठक्] सेना सम्बन्धी, फौजी। (पुं०) सिपाही, योद्धा। सन्तरी। सेना जो युद्ध के लिये सजा कर खड़ी की गई हो।

सैन्धव—(वि०) [स्त्री०—**सैन्धवी**] [सिन्धु +अण्] सिन्धु देश में उत्पन्न। सिन्धु नदी सम्बन्धी। नदी में उत्पन्न। सामुद्रिक, समुद्र सम्बन्धी। (पुं०) घोड़ा, विशेष कर सिन्धु देश का। एक ऋषि का नाम। सिन्धु देश के निवासी। (पुं०, न०) सेंधा नमक। —**घन**– (पुं०) सेंधा नमक का ढेला। —**पति**–(पुं०) सिन्धु-वासियों का राजा जयद्रथ।

सैन्धवक—(वि०) [स्त्री०—**सैन्धवकी**] [सैन्धव+वुञ्] सैन्धव सम्बन्धी। (पुं०) [सिन्धु+वुञ्] सिन्धु देश का कोई विपत्तिग्रस्त आदमी।

सैन्धी—(स्त्री०) ताड़ी।

सैन्य—(पुं०) [सेना+ञ्य] सैनिक, योद्धा। संतरी, पहरेदार। (न०) सेना, फौज; 'स प्रतस्थेऽरिनाशाय हरिसैन्यैरनुद्रुतः' र० १२.६७।

सैमन्तिक—(न०) [सीमन्त+ठक्] सिंदूर।

सैरन्ध्र, सैरिन्ध्र—(पुं०) [सीरं हलं धरति, सीर√धृ+क, मुम्, सीरन्ध्रः कृषकः तस्य इदं शिल्पकर्म, सीरन्ध्र+अण् तत् अस्य अस्ति सैरन्ध्र+अच्, पक्षे पृषो० इत्व] एक

तरह का निम्न श्रेणी का टहलू, नौकर। दस्यु और अयोगवी से उत्पन्न एक संकर जाति।

सैरन्ध्री, सैरिन्ध्री—(स्त्री०) [सैरन्ध्र+ङीष्] [सैरिन्ध्र+ङीष्] अन्तःपुर में काम करने वाली दासी जिसकी उत्पत्ति दस्यु और अयोगवी से हुई हो। दूसरे के घर में रहने वाली स्वाधीन शिल्पकारिणी स्त्री। द्रौपदी का वह नाम जो उसने अज्ञातवास के समय रखा था।

सैरिक—(वि०) [स्त्री०—**सैरिकी**] [सीर+ठक्] हल सम्बन्धी। सीर वाला। (पुं०) हल का बैल। हलवाहा।

सैरिन्ध्र—(पुं०) कारीगर। नौकर।

सैरिभ—(पुं०) [सीरे हले तद्वहने इभ इव शूरत्वात्, शक० पररूप, ततः स्वार्थे अण्] भैंसा। स्वर्ग।

सैवाल—(पुं०) [सेवायै मीनादीनाम् उपभोगाय अलति पर्याप्नोति, सेवा √ अल्+अच्, सेवाल+अण्] दे० 'शैवाल'।

सैसक—(वि०) [स्त्री०—**सैसकी**] [सीसक+अण्] सीसा संबंधी। सीसे का बना।

√सो—दि० पर० सक० वध करना, नष्ट करना। समाप्त करना, पूर्ण करना। स्यति, सास्यति, असात्—असासीत्।

सो—(स्त्री०) पार्वती।

सोढ—(वि०) [√सह्+क्त] सहन किया हुआ। सहनशील।

सोढृ—(वि०) [स्त्री०—**सोढ्री**] [√सह्+तृच्] सहिष्णु। शक्तिमान्।

सोत्क, सोत्कण्ठ—(वि०) [सह उत्केन, ब० स०, सहस्य सः] [सह उत्कण्ठया] अत्यन्त उत्सुक। शोकान्वित।

सोत्प्रास—(वि०) [सह उत्प्रासेन] अत्यधिक। बहुत बढ़ा कर कहा हुआ, अतिशयोक्त। व्यङ्ग्यपूर्ण। (पुं०) अट्टहास। (पुं०, न०) व्यङ्ग्यपूर्ण अतिशयोक्ति। व्याजस्तुति।

सोत्सव—(वि०) [सह उत्सवेन] उत्सवयुक्त। आनन्दित।

सोत्साह—(वि०) [सह उत्साहेन] उत्साह सहित।

सोत्सेध—(वि०) [सह उत्सेधेन] उन्नत, ऊँचा; 'सोत्सेधैः स्कन्धदेशैः' मु० ४.७।

सोदय—(वि०) [सह उदयेन] उदय-सहित। सूद-सहित।

सोदर—(वि०) [समानम् उदरं यस्य, ब० स०, समानस्य सः] एक उदर से उत्पन्न। (पुं०) सहोदर भाई।

सोदरा—(स्त्री०) [सोदर+टाप्] सगी बहिन।

सोदर्य—(पुं०) [सोदर+यत्] सहोदर भ्राता।

सोद्योग—(वि०) [सह उद्योगेन] उद्योगशील, अध्यवसायी।

सोद्वेग—(वि०) [सह उद्वेगेन] घबड़ाया हुआ। शङ्कित। शोकान्वित।

सोनह—(पुं०) [√सु+विच्, सो √ नह्+क] लहसुन।

सोन्माद—(वि०) [सह उन्मादेन] पागल, सिड़ी, सनकी।

सोपकरण—(वि०) [सह उपकरणेन] वह जिसके पास अपेक्षित समस्त साधन या सामान हो।

सोपद्रव—(वि०) [सह उपद्रवेण] उपद्रवयुक्त।

सोपध—(वि०) [सह उपधया] धूर्त्त, कपटी, धोखेबाज।

सोपधि—(वि०) [सह उपधिना] कपटी, धूर्त्त। (अव्य० स०) सकपट; 'अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विदधति सोपधिसन्धिदूषणानि' कि० १.४५।

सोपप्लव—(वि०) [सह उपप्लवेन] किसी बड़े सङ्कट में पड़ा हुआ। शत्रुओं से

आक्रान्त। ग्रस्त, जैसे चन्द्र और सूय ग्रस्त होते हैं।

सोपरोध—(वि०) [सह उपरोधेन] अवरुद्ध। अनुगृहीत।

सोपसर्ग—(वि०) [सह उपसर्गेण] किसी वड़ी मुसीवत या सङ्कट में पड़ा हुआ। किसी भूत-प्रेत द्वारा आवेशित। व्याकरण में उपसर्ग सहित।

सोपहास—(वि०) [सह उपहासेन] उपहास युक्त। घृणा-व्यञ्जक हास्य-युक्त।

सोपाक—(पुं०) [=श्वपाक, पृषो० साधुः] चंडाल पुरुष से पुक्कसी के गर्भ में उत्पन्न संतान, श्वपाक। वन्यओषधि-विक्रेता।

सोपाधि, सोपाधिक—(वि०) [स्त्री०—**सोपाधिकी**] [सह उपाधिना, व० स० सहस्य सः, पक्षे कप्] उपाधि सहित। विशेषता-युक्त।

सोपान—(न०) [उप√अन् + घञ्, सह विद्यमानः उपानः उपरिगतिः अनेन] सिड्ढी, सीढ़ी, जीना; 'आरोहणार्थं नवयौवनेन कामस्य सोपानमिव प्रयुक्तम्' कु० १.३९। —**पङ्क्ति**– (स्त्री०), —**पथ**– (पुं०), —**पद्धति**,—**परम्परा**– (स्त्री०), —**मार्ग**–(पुं०) जीना, नसैनी, सीढ़ी।

सोम—(पुं०) [√सु+मन्] एक लता जिसका रस यज्ञ के काम में आता है। सोमवल्ली का रस। अमृत। चन्द्रमा। किरण। कपूर। जल। वायु। कुवेर का नाम। मन। [किसी समासान्त शब्द के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है—मुख्य, प्रधान, सर्वोत्तम। यथा **नृसोम**]। (न०) काँजी। आकाश। (पुं०) [सह उमया] शिव।—**अभिषव** (**सोमाभिषव**)–(पुं०) सोम का रस निचोड़ना।—**अह** (**सोमाह**)–(पुं०) सोमवार।—**आख्य** (**सोमाख्य**)–(न०) लाल कमल।—**ईश्वर** (**सोमेश्वर**)– (पुं०) दे० 'सोमनाथ'।—**उद्भवा** (**सोमोद्भवा**)– (स्त्री०) प्रसिद्ध नदी नर्मदा का नाम; 'तथेत्युपस्पृश्य पयः पवित्रं सोमोद्भवायाः सरितो नृसोमः' र० ५.५९। —**कान्त**– (पुं०) चन्द्रकान्तमणि।—**क्षय**– (पुं०) चन्द्र की कला का ह्रास। —**ग्रह**– (पुं०) वह पात्र जिसमें सोमरस एकत्रित किया जाय। —**ज**–(वि०) चन्द्रमा से उत्पन्न। (पुं०) बुधग्रह। (न०) दूध।—**धारा**– (स्त्री०) स्वर्ग। आकाश। —**नाथ**– (पुं०) शिवजी के द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से एक। काठियावाड़ का एक प्राचीन नगर।—**प**, —**पा**– (वि०) सोमरस पीने वाला। सोमयाग करने वाला। पितृगण विशेष।— **पति**– (पुं०) इन्द्र का नामान्तर।—**पायिन्**,—**पीथिन्**–(वि०) सोम रस पीने वाला।—**पुत्र**,—**भू**, —**सुत**– (पुं०) वुध का नाम। —**प्रवाक**–(पुं०) श्रोत्रिय को सोम-याग के लिए नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त मनुष्य। —**बन्धु** (पुं०) कुमुद। सूर्य। बुध।—**याग**–(पुं०) एक यज्ञ जिसमें सोम लता के रस का दान किया जाता है।—**योनि**– (पुं०) देवता। ब्राह्मण। पीत सुगन्ध वाला चन्दन।—**राजी**– (स्त्री०) वाकुची। चन्द्रशृंग। एक वृत्त।—**रोग**– (पुं०) प्रमेह जैसा स्त्रियों का रोग विशेष।—**लता**, —**वल्लरी**– (स्त्री०) सोम-वल्ली। गोदावरी नदी का नाम।—**वंश**– (पुं०) सोमवंशी क्षत्रिय राजाओं की वह शाखा जो वुध से चली।—**वल्ली**– (स्त्री०) गुड़ूची। सोमलता। सोमराजी। पातालगरुड़ी। ब्राह्मी। सुदर्शन। लताकरंज। गजपिप्पली। वन-कपास।—**वार**,—**वासर**– (पुं०) सोमवार। —**विक्रयिन्**– (पुं०) सोम-वल्ली का विक्रेता। —**वृक्ष**, —**सार**– (पुं०) सफेद खदिर का पेड़। —**शकला**– (स्त्री०) ककड़ी विशेष।

—संज्ञ– (न०) कपूर।—सद्– (पुं०) पितृगण विशेष।—सिद्धान्त– (पुं०) एक सिद्धान्त जिसकी दृष्टि में आपस में भेदयुक्त जगत् भी ईश्वर से अभिन्न है, जैसे अंगूठी और कंकण में भेद होने पर भी दोनों सुवर्ण से अभिन्न हैं।— सिन्धु– (पुं०) विष्णु।— सुत–(पुं०) सोमरस चुआने वाला।—सुता– (स्त्री०) नर्मदा नदी। —सूत्र– (न०) शिवलिङ्ग के अभिषेक का जल निकालने की नाली।

सोमन—(पुं०) [√सु+मनिन्] चन्द्रमा।

सोमावती—(स्त्री०) [सोम+मतुप्, वत्व, ङीप्, दीर्घ] चंद्रमा की माता का नाम।

सोमिन्—(वि०) [स्त्री०—**सोमिनी**] [सोम+इनि] सोम-युक्त। सोम की आहुति देने वाला। सोम-याग करने वाला।

सोम्य—(वि०) [सोम + यत्] सोम के योग्य। सोम चढ़ाने वाला। सोम की शक्ल का। मुलायम, कोमल।

सोल्लुण्ठ— (पुं०), **सोल्लुण्ठन**– (न०) [सह उल्लुण्ठेन, सादेशः] [सह उल्लुण्ठनेन, सादेशः] श्लेषवाक्य, व्यङ्ग्योक्ति, ताना, चुटकी।

सोष्मन्—(वि०) [सह उष्मणा, सादेशः] उष्ण। ध्वनि-पूर्वक स्पष्ट उच्चारित। (पुं०) स्पष्ट उच्चारण।

सौकर—(वि०) [स्त्री०—**सौकरी**] [सूकर+अण्]शूकर संबंधी; 'दनुजं दधानमथ सौकरं वपुः' कि० १२.५३।

सौकर्य—(न०) [सूकर + ष्यञ्] शूकरपन। [सुकर+ष्यञ्] सहजता, सरलत्व। साध्यता। निपुणता। किसी भोज्य पदार्थ या दवाई की सहज बनाने की तरकीब।

सौकुमार्य—(न०) [सुकुमार + ष्यञ्] कोमलता, सुकुमारता। जवानी।

सौक्ष्म्य—(न०) [सूक्ष्म + ष्यञ्] सूक्ष्मता, महीनपन।

सौखशायनिक—(पुं०) [सुखशयन+ठक्] वह पुरुष जो किसी अन्य पुरुष से सुखपूर्वक सोने का प्रश्न करे।

सौखसुप्तिक—(पुं०) [सुखसुप्ति+ठञ्] वह पुरुष जो किसी अन्य पुरुष से सुख-पूर्वक सोने का प्रश्न करे। वंदीजन जो राजा या अन्य किसी महान् पुरुष को गान गाकर और वाजे वजाकर जगावे।

सौखिक, सौखीय—(वि०) [स्त्री०—**सौखिकी, सौखीयी**] [सुख+ठक्] [सुख+छण्] सुख चाहने वाला। सुख संवन्धी।

सौख्य—(न०) [सुख+ष्यञ् (स्वार्थे] सुख, आनंद।

सौगत—(पुं०) [सुगत + अण्] सुगत या बुद्ध देश का अनुयायी। (पुं०) बौद्ध।

सौगतिक—(पुं०) [सुगत + ठक्] बौद्ध। बौद्ध भिक्षुक। नास्तिक, पाखण्डी। (न०) नास्तिकता, अनीश्वरवाद।

सौगन्ध—(वि०) [स्त्री०—**सौगन्धिक**] [सुगन्ध+अण्] मधुर सुगन्ध-युक्त। (न०)मधुर खुशबूपन, सुगन्धि। सुगन्धयुक्त घास विशेष, कत्तृण।

सौगन्धिक—(वि०) [स्त्री०—**सौगन्धिका, सौगन्धिकी**] [सुगन्ध + ठन् — इक +अण् (स्वार्थे) वा सुगन्ध+ठक्] मधुर सुगन्धि वाला, खूशबूदार। (न०) सफेद कमल। नील कमल। कत्तृण नामक खुशबूदार तृण विशेष। चुन्नी, लाल। (पुं०) गन्धी, इत्रफरोश। गन्धक।

सौगन्ध्य—(न०) [सुगन्ध + ष्यञ्] महक या सुगन्धि की मधुरता। खुशबू, सुवास।

सौचि, सौचिक—(पुं०) [सूचि+इञ्] [सूचि+ठञ्] दर्जी।

सौजन्य—(न०) [सुजन + ष्यञ्] नेकी, भलाई, भद्रता। उदारता। कृपालुता। मैत्री।

सौण्डी—(स्त्री०) [शुण्डा तदाकारोऽस्ति अस्याः, शुण्डा + अण्—ङीप्, पृषो० शस्य सः] गजपीपल ।

सौति—(पुं०) [सूत + इञ्]कर्ण का नामान्तर ।

सौत्य—(न०) [सूत + ष्यञ्] सारथी-पन ।

सौत्र—(वि०) [स्त्री०—**सौत्री**] [सूत्र +अण्] सूत-सम्बन्धी । सूत्र संबंधी । (पुं०) ब्राह्मण । भ्वादि आदि दशगण में होने वालों से भिन्न केवल सूत्र में वर्णित धातु ।

सौत्रान्तिक—(पुं०) सौगत नाम की बौद्ध धर्म की एक शाखा ।

सौत्रामणी—(स्त्री०) [सुत्रामा इन्द्रो देवता अस्याः सुत्रामन् +अण्—ङीप्] एक इष्टि या यज्ञ जो इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए किया जाता था । पूर्वदिशा ।

सौदर्य—(न०) [सोदर+ष्यञ्] भ्रातृत्व, भाईपना ।

सौदामनी, सौदामिनी, सौदाम्नी—(स्त्री०) [सुदामा पर्वतभेदः तेन एका दिक्, सुदामन् +अण्—ङीप्, पक्षे पृषो० साधुः] बिजली, विद्युत्; 'सौदामिनीव जलदोदरसन्धिलीना' मृ० १.३५। मालाकार विद्युत्। ऐरावत गज की स्त्री । एक अप्सरा । एक रागिणी । कश्यप और विनता की एक पुत्री ।

सौदायिक—(न०) [सुदाय + ठञ्] वह सम्पत्ति जो किसी स्त्री को विवाह के समय दी जाय और जो उसी की हो जाय । (वि०) दाय या दहेज संबंधी ।

सौध—(वि०) [स्त्री०—**सौधी**] [सुधा +अण्] अमृत सम्बन्धी । अमृत रखने वाला । अस्तरकारी किया हुआ । (न०) सफेदी से पुता हुआ भवन । विशाल भवन । राजप्रासाद; 'सौधवासमुटजेन विस्मृतः संचिकाय फलनिस्पृहस्पः' र० १९.२ । चाँदी । दूधिया पत्थर ।—**कार**–(पुं०) मेमार, राज, थवई, अस्तरकारी करने वाला ।— **वास**–(पुं०) राजसी भवन । महल जैसा मकान ।

सौधार—(पुं०) नाटक का एक भाग ।

सौधाल—(न०) शिवजी का मन्दिर ।

सौन—(वि०) [स्त्री०—**सौनी**] [सूना +अण्] कसाईपन या कसाईखाने से सम्बन्ध रखने वाला । (न०) कसाई के घर का मांस ।—**धर्म्य**–(न०)घोर शत्रुता ।

सौनन्द—(न०) [सुनन्द + अण्] बलराम का मूसल ।

सौनिक—(पुं०) [सूना + ठण्] कसाई ।

सौनन्दिन्—(पुं०) [सौनन्द + इनि] बल-राम का नामान्तर ।

सौन्दर्य—(न०) [सुन्दर+ष्यञ्] सुन्दरता, मनोहरता । उदाराशयता ।

सौपर्ण—(न०) [सुपर्ण + अण्] सोंठ । पन्ना । गरुड़पुराण । गारुत्मत मंत्र । (पुं०) ऋग्वेद का एक सूक्त। (वि०) गरुड़ संबंधी ।

सौपर्णेय—(पुं०) [सुपर्ण्याः विनतायाः अपत्यम्, सुपर्णी+ढक्] गरुड़ ।

सौप्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सौप्तिकी**] [सुप्ति+ठञ्] निद्रा सम्बन्धी । (न०) रात्रि के समय का आक्रमण, वह आक्रमण जो रात के समय सोते लोगों पर किया जाय ।— **पर्वन्**–(न०) महाभारत का दसवाँ पर्व । —**वध**– (पुं०) पाण्डवों के शिविर में सोते हुए लोगों की अश्वत्थामा द्वारा हत्या । 'मार्गो ह्येष नरेन्द्र सौप्तिक-वधे पूर्वं कृतो द्रोणिना' मृ० ३.११ ।

सौबल—(पुं०) [सुबल+अण्] शकुनि का नामान्तर ।

सौबली, सौबलेयी—(स्त्री०) [सौबल —ङीप्] [सुबला + ढक्—ङीप्] गान्धारी, दुर्योधन की माता का नाम ।

सौभ—(न०) [सुष्ठु सर्वत्र लोके भाति, सु√भा + क+अण् (स्वार्थे)] हरिश्चन्द्र की नगरी का नाम, जिसके विषय में कहा जाता है कि वह अन्तरिक्ष में लटक रही है।

सौभग—(न०) [सुभग +अण्] सौभाग्य। समृद्धि, धन-दौलत। सौन्दर्य। आनन्द।

सौभद्र, सौभद्रेय—(पुं०) [सुभद्रा+अण्] [सुभद्रा+ढक्] सुभद्रा के पुत्र अभिमन्यु का नामान्तर। विभीतक वृक्ष।

सौभागिनेय—(पुं०) [सुभगा+ढक्, इनङ्, द्विपदवृद्धि] किसी भाग्यवती का पुत्र।

सौभाग्य—(न०) [सुभगा+ष्यञ्, द्विपद-वृद्धि] अच्छा भाग्य, अच्छी किस्मत। सुगमता। शुभत्व, कल्याणत्व। सौन्दर्य। गरिमा, महत्त्व। सुहाग, अहिवात। बधाई, मुबारकबाद। सिंदूर। सुहागा।—**चिह्न**—(न०) सौभाग्य या हर्ष का लक्षण जैसे रोरी का माथे पर तिलक। सौभाग्यवती होने के चिह्न यथा—हाथों की चूड़ियाँ, माँग का सिंदूर, पैरों के बिछुए।—**तन्तु**—(पुं०) वह डोरा जो वर के गले में विवाह के दिनों में डाला जाता है, मंगलसूत्र।—**तृतीया**—(स्त्री०) भाद्र-शुक्ल-तृतीया।

सौभाग्यवत्—(वि०) [सौभाग्य+मतुप्, वत्व] भाग्यशाली। कल्याण-विशिष्ट। शुभ।

सौभाग्यवती—(स्त्री०) [सौभाग्यवत्—ङीप्] विवाहित स्त्री जिसका पति जीवित है, सुहागिन।

सौभिक—(पुं०) [सौभं कामचारिपुरं तन्निर्माणं शिल्पमस्य, सौभ+ठक्] ऐन्द्रजालिक, मदारी।

सौभ्रात्र—(न०) [सुभ्रातृ + अण्] अच्छा भ्रातृभाव; 'सौभ्रात्रमेषां हि कुलानुसारि' र० १६.१।

सौमनस—(वि०) [स्त्री०—**सौमनसा** या **सौमनसी**] [सुमनस्+अण्] मनोऽनुकूल। फूल सम्बन्धी। (न०) कृपालुता। परहितैषिता। आनन्द। सन्तोष। कर्ममास या सावन की आठवीं तिथि। जायफल।

सौमनसा—(स्त्री०) [सौमनस + टाप्] जावित्री, जातीपत्री। एक नदी।

सौमनस्य—(न०) [सुमनस् + ष्यञ्] मन का सन्तोष, आनन्द, हर्ष। श्राद्ध के समय ब्राह्मण को दी गई पुष्पों की भेंट।

सौमनस्यायनी—(स्त्री०) [सौमनस्य√अय् +ल्युट्—ङीप्] मालती। उसकी कली।

सौमायन—(न०) [सोम + फक्—आयन] सोम का पुत्र बुध।

सौमिक—(वि०) [स्त्री०—**सौमिकी**] [सोम+ठक्] सोमरस से (यज्ञ) किया हुआ। सोमरस सम्बन्धी। चन्द्रमा सम्बन्धी।

सौमित्र, सौमित्रि—(पुं०) [सुमित्रा +अण्] [सुमित्रा + इञ्] लक्ष्मण का नामान्तर; 'सौमित्रेरपि पत्रिणामविषये तत्र प्रिये! क्वासि मे' उत्त० ३.४५।

सौमिल्ल—(पुं०) एक नाटक-कार जो कालिदास के पूर्व हुए थे।

सौमेधिक—(पुं०) [सुमेधा + ठक्] ऋषि, मुनि (वि०) अलौकिक बुद्धि-सम्पन्न।

सौमेरुक—(वि०) [स्त्री०—**सौमेरुकी**] [सुमेरु+कञ्] सुमेरु-सम्बन्धी। सुमेरु से निकला हुआ। (न०) सुवर्ण, सोना।

सौम्य—(वि०) [स्त्री०—**सौम्या** या **सौम्यी**] [सोम + ट्यण् वा सोम+य +अण्] चन्द्रमा सम्बन्धी। सोम सम्बन्धी। सुन्दर। कोमल। स्निग्ध। शान्त। प्रसन्न। शुभ। (पुं०) बुध ग्रह का नाम। ब्राह्मण को सम्बोधित करने के लिये उपयुक्त सम्बोधनात्मक शब्द। ब्राह्मण। गूलर का वृक्ष। रक्त की वह दशा जो लाल होने के के पूर्व रहती है। अन्न का वह रस जो उसके

जीर्ण होने पर उदर में बनता है। भूगोल के नवखंडों में से एक का नाम। पितृगण विशेष। तारागण विशेष। सोमयज्ञ। उपासक। बायां हाथ। मार्गशीर्ष मास। मृगशिरा नक्षत्र। बायीं आँख। पाँचवाँ मुहूर्त।—**उपचार** (**सौम्योपचार**)-(पुं०) शान्त उपचार।—**ग्रह**-(पुं०) ज्योतिष में चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्ररूप शुभ ग्रह।—**धातु**- (पुं०) श्लेष्मा, कफ।—**वार**, —**वासर**-(पुं०) बुधवार।

सौर—(वि०) [स्त्री०—**सौरी**] [सूर +अण्] सूर्य सम्बन्धी, सौर्य। सूर्य को अर्पित। स्वर्गीय। शराब या मदिरा सम्बन्धी। (न०) सूर्य-सूक्त अर्थात् ऋग्वेद के उन मंत्रों का संग्रह जो सूर्य सम्बन्धी है। (पुं०) सूर्योपासक। शनिग्रह। सौर्यमास, वह मास जिसकी गणना संक्रान्ति से हो। सौर्य दिवस। तुम्बुरु नामक पौधा।—**नक्त**-(न०) रविवार को किया जाने वाला एक व्रत। —**लोक**- (पुं०) सूर्यलोक।

सौरथ—(पुं०) [सुरथ + अण्] योद्धा, वीर, भट।

सौरभ—(वि०) [स्त्री०—**सौरभी**] [सुरभि+अण्] खुशबूदार, सुगन्धियुक्त। (न०) खुशबू, सुगन्धि। केसर।

सौरभेय—(पुं०) [सुरभेः अपत्यम्, सुरभि +ढक्] बैल, वृषभ।

सौरभी, सौरभेयी—(स्त्री०) [सुरभि + अण्—ङीप्] [सौरभेय + ङीप्] गाय। एक अप्सरा।

सौरभ्य—(न०) [सुरभि + ष्यञ्] सुवास, खुशबू। लावण्य, सौन्दर्य। अच्छा चाल-चलन। सुकीर्ति।

सौरसेय—(पुं०) [सुरसा + ढक्] कार्त्तिकेय।

सौरसैन्धव—(वि०) [स्त्री०—**सौरसैन्धवी**] [सुरसिन्धु +अण्] आकाश गंगा-सम्बन्धी। (पुं०) [सौरश्चासौ सैन्धवः कर्म० स०] सूर्य का घोड़ा।

सौराज्य—(न०) [सुराज्य + ष्यञ्] अच्छा राज्य, सुशासन; 'एको ययौ चैत्ररथप्रदेशान् सौराज्यरम्यानपरो विदर्भान्' र० ५.६०।

सौराष्ट्र—(वि०) [स्त्री०—**सौराष्ट्री** या **सौराष्ट्र**] [सुराष्ट्र+अण्] सुराष्ट्र (अर्थात् सूरत) सम्बन्धी या वहाँ से आया हुआ। (पुं०) सुराष्ट्र देश, गुजरात तथा काठियावाड़ का प्राचीन नाम। सौराष्ट्र देश के अधिवासी। (पुं०) काँसा। कुन्दुरु नामक गंधद्रव्य।

सौराष्ट्रिक—(न०) [सुराष्ट्र + ठक्] एक प्रकार का विषैला कन्द। (पुं०) काँसा।

सौराष्ट्री—(स्त्री०) [सौराष्ट्र+ङीप्] गोपीचंदन।

सौरि—(पुं०) [सूर + इञ्] शनिग्रह। असन नामक वृक्ष।—**रत्न**- (न०) नीलम।

सौरिक—(वि०) [स्त्री०—**सौरिकी**] [सुर वा सुरा वा सूर+ठक्] देवता संबंधी। मदिरा संबंधी। सूर्य संबंधी। (पुं०) शनिग्रह। स्वर्ग। शराब बेंचने वाला, कलाल।

सौरी—(स्त्री०) [सौर + ङीष्] सूर्य की पत्नी।

सौरीय—(वि०) [स्त्री०—**सौरीयी**] [सूर+छण्] सूर्य के लिये उपयुक्त या सूर्य के योग्य।

सौरेय—(पुं०) [सुरायै हितः, सुरा+ढक्] श्वेत झिंटी।

सौर्य—(वि०) [स्त्री०—**सौर्यी**] [सूर्य +अण्] सूर्य सम्बन्धी।

सौलभ्य—(न०) [सुलभ + ष्यञ्] सुलभ होने का भाव, सुलभता।

सौल्विक—(पुं०) [सुल्व + ठक्] ताँबे का काम करने वाला व्यक्ति, ठठेरा ।

सौव—(वि०) [स्त्री०—**सौवी**] [स्व वा स्वर्+अण्] अपना । सम्पत्ति सम्बन्धी । स्वर्गीय या स्वर्ग का । (न०) आदेश, अनुशासन-पत्र ।

सौवग्रामिक— (वि०) [स्त्री०—**सौवग्रामिकी**] [स्वग्राम—ठक्] अपने ग्राम का ।

सौवर—(वि०) [स्त्री०—**सौवरी**] [स्वर +अण्] ध्वनि या किसी राग सम्बन्धी ।

सौवर्चल—(वि०) [स्त्री०—**सौवर्चली**] [सुवर्चल+अण्] सुवर्चल नामक देश का या उस देश से निकला हुआ । (न०) सज्जीखार । सोंचर नमक ।

सौवर्ण—(वि०) [स्त्री०—**सौवर्णी**] [सुवर्ण + अण्] सोने का । (पुं०) एक कर्ष भर सोना । सोने की बाली । (न०) सोना ।

सौवस्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सौवस्तिकी**] [स्वस्तिक + ठक्] आशीर्वादात्मक । (पुं०) कुलपुरोहित ।

सौवाध्यायिक—(वि०) [स्त्री०—**सौवाध्यायिकी**] [स्वाध्याय+ठक्] स्वाध्याय का, स्वाध्याय से सम्बन्ध रखने वाला।

सौवास्तव—(वि०) [स्त्री०—**सौवास्तवी**] [सुवास्तु+अण्] अच्छी वास्तु या वासभूमि का ।

सौविद, सौविदल्ल—(पुं०) [सु√ विद् +क+अण् (स्वार्थे)] [सुष्ठु विदन् नृपः तं लाति, √ला+क + अण् (स्वार्थे)] अंतःपुर की रखवाली करने वाला व्यक्ति, जनानखाने का अनुचर या चाकर; 'नरापनयनाकुलसौविदल्लाः' शि० ५.१७ ।

सौवीर—(न०) [सुष्ठु वीरो यत्र सुवीरो देशभेदः तत्र भवम्, सुवीर+अण्] बदरीफल । सुर्मा । खट्टी काँजी । (पुं०) सिंधु नदी के पास का एक प्रदेश और वहाँ के अधिवासी ।— **अञ्जन** (सौवीराञ्जन)-(न०) सुर्मा या काजल ।

सौवीरक—(न०) [सौवीर + कन्] जवा के आटे की खट्टी काँजी । (पुं०) बदरी का फल । सुवीर का वासी । जयद्रथ का जन्म ।

सौवीर्य—(न०) [सुवीर+ष्यञ्] बड़ी शूरवीरता या पराक्रम ।

सौशील्य—(न०) [सुशील + ष्यञ्] सुशीलता, विनम्रता ।

सौश्रवस—(न०) [सुश्रवस्+अण्] प्रसिद्धि, प्रख्याति ।

सौष्ठव—(न०) [सुष्ठु + अण्] उत्तमता, नेकी, भलमनसाहत । सौन्दर्य । उत्कृष्टतर सौन्दर्य । पटुता, चातुर्य । आधिक्य । हल्कापन । शरीर की एक मुद्रा ।

सौस्नातिक—(पुं०) [सुस्नात + ठक्] वह जो किसी अन्य से पूछे कि उसका स्नान भली-भाँति हुआ है या नहीं; 'सौस्नातिको यस्य भवत्यगस्त्यः' र० ६.६१ ।

सौहार्द—(न०) [सुहृद् +अण्] सद्भाव । मैत्री । (पुं०) मित्र का पुत्र ।

सौहार्द्य, सौहृद, सौहृदय— (न०) [सुहृद् +ष्यञ्] [सुहृद् +अण्][सुहृदय+अण्] मैत्री, बन्धुता ।

सौहित्य—(न०) [सुहित+ष्यञ्] सन्तोष, परिपूर्णता, मनोरमता ।

√**स्कन्द्**—भ्वा० आत्म० अक० कूदना, फलाँगना । उछलना, ऊपर को उठना । गिरना । फूट जाना । नष्ट होना । चूना । बहना । स्कन्दते, स्कन्दिष्यते, अस्कन्दिष्ट । भ्वा० पर० सक० जाना । सोखना । स्कन्दति, स्कन्त्स्यति, अस्कदत् — अस्कान्त्सीत् ।

स्कन्द—(पुं०) [√स्कन्द् + घञ् वा अच्] उछाल, कुलाँच । पारा । कार्त्तिकेय; 'सेनानीनामहं स्कन्दः' भग० १०.२४ । शिव । शरीर । राजा । नदीतट । चालाक आदमी । —**पुराण**-(न०)

अष्टादश पुराणों में से एक ।—**षष्ठी**—(स्त्री०) चैत्र मास की शुक्ला षष्ठी ।

स्कन्दक—(पुं०) [√स्कन्द् + ण्वुल्] कूदने वाला व्यक्ति । सिपाही ।

स्कन्दन—(न०) [√स्कन्द् + ल्युट्] क्षरण, बहाव । रेचन । गमन । शोषण । शीतलोपचार से खून का बहना बंद करने की क्रिया ।

स्कन्ध—(पुं०) [स्कन्द्यते आरुह्यतेऽसौ मुखेन शाखया वा, √स्कन्द्+घञ्, पृषो० साधुः] कंधा । शरीर । पेड़ का तना या धड़ । मोटी डाल । विज्ञान का कोई विभाग या शाखा । ग्रंथ का विभाग जिसमें कोई पूरा प्रसंग हो, खंड । फौज का एक दस्ता या टोली । टोली, दल, समूह । पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के विषय । बौद्ध मत में जीवन के पाँच तत्त्व—रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान । राज्याभिषेक के लिए उपयुक्त सामग्री । युद्ध । राजा । इकरार, कौल करार । मार्ग । आचार्य । मुनि । कंक पक्षी, सफेद चील । आर्या छंद का एक भेद ।—**आवार** (**स्कन्धावार**)—(पुं०) सेना या सेना का एक विभाग । राजधानी । शिविर, पड़ाव ।—**उपानेय** (**स्कन्धोपानेय**)—(वि०) वह जो कंधों पर रख कर ले जाया जाय । (पुं०) एक प्रकार की सन्धि जिसमें शत्रु का वशित्व स्वीकार करने का चिह्नस्वरूप शत्रु के सामने फल, अन्न आदि की भेंट रखनी पड़ती है ।—**चाप**—(पुं०) बहँगी का बाँस ।—**तरु**—(पुं०) नारियल का पेड़ ।—**देश**—(पुं०) कंधे का भाग । हाथी के कंधे का वह भाग जहाँ महावत बैठता है । पेड़ का तना ।—**फल**—(पुं०) नारियल का पेड़ । बिल्व का वृक्ष । गूलर का पेड़ ।—**बन्धन**—(पुं०) सौंफ ।—**मल्लक**—(पुं०) सफेद चील ।—**रुह**—(पुं०) वट वृक्ष ।—**वाह**,—**वाहक**—(पुं०) बोझ ढोने वाला बैल आदि ।—**शाखा**—(स्त्री०) मुख्य डाली ।—**शृङ्ग**—(पुं०) भैंसा ।

स्कन्धस्—(न०) [√स्कन्द् + असुन्, पृषो० साधुः] कंधा । वृक्ष का तना ।

स्कन्धिक—(पुं०) [स्कन्ध+ठन्] बोझ ढोने वाला बैल आदि ।

स्कन्धिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्कन्धिनी**] [स्कन्ध+इनि] कंधों वाला । डालियों वाला । (पुं०) वृक्ष ।

स्कन्न—(वि०) [√स्कन्द् +क्त] नीचे गिरा हुआ । चुआ हुआ, टपका हुआ । छिड़का हुआ । गया हुआ । सूखा हुआ ।

√स्कम्भ्—भ्वा० आत्म० सक० रोकना । स्कम्भते, स्कम्भिष्यते, अस्कम्भिष्ट । क्र्या० पर० सक० रोकना । स्कभ्नाति, स्कम्भिष्यति, अस्कम्भीत् ।

स्कम्भ—(पुं०) [√ स्कम्भ्+घञ्] सहारा । कील जिसके ऊपर कोई वस्तु घूमे । परब्रह्म ।

स्कम्भन—(न०) [√स्कम्भ्+ल्युट्] सहारा लगाने की क्रिया ।

स्कान्द—(वि०) [स्त्री०—**स्कान्दी**] [स्कन्द +अण्] स्कन्द सम्बन्धी । (न०) स्कन्द पुराण ।

√स्कु—क्र्या० उभ० अक० कूद-कूद कर चलना, उछलना । सक० उठाना, ऊपर करना । ढाँकना । समीप जाना । स्कुनोति—स्कुनुते — स्कुनाति—स्कुनीते, स्कोष्यति— ते, अस्कौषीत् —अस्कोष्ट ।

√स्कुन्द्—भ्वा० आत्म० अक० कूदना । सक० उठाना, ऊपर उठाना । स्कुन्दते, स्कुन्दिष्यते, अस्कुन्दिष्ट ।

स्कोटिका—(स्त्री०) पक्षी विशेष ।

√स्खद्—दि० आत्म० सक० काटना, टुकड़े-टुकड़े कर डालना । चोटिल करना । वध करना । भगा देना । थका डालना । दृढ़ करना । स्खद्यते, स्खदिष्यते, अस्खदिष्ट ।

स्खदन—(न०) [√स्खद् + ल्युट्] काट-छाँट। टुकड़े-टुकड़े करने की क्रिया। घायल करना। वध। तंग करने की क्रिया।

√स्खल्—भ्वा० पर० अक० ठोकर खाना। लड़खड़ाना। आज्ञा का भंग किया जाना। सत्पथ से भ्रष्ट होना। उत्तेजित होना। गलती करना। हकलाना। असफल होना। बूँद-बूँद कर गिरना, चूना। अदृश्य होना। सक० एकत्र करना। जाना। स्खलति, स्खलिष्यति, अस्खालीत्।

स्खलन—(न०) [√स्खल् + ल्युट्] पतन। लड़खड़ाने की क्रिया। सत्पथ से भ्रष्ट होना। भूल। असफलता। हलकापन। टपकना। परस्पर ताड़न।

स्खलित—(वि०) [√स्खल् +क्त] ठोकर खाया हुआ। गिरा हुआ। काँपता हुआ, थरथराता हुआ। नशे में चूर। हकलाता हुआ। उत्तेजित। घबड़ाया हुआ। भूल किया हुआ। टपका हुआ। बाधा डाला हुआ, रोका हुआ। परेशान। प्रस्थित। (न०) पतन। सत्पथ से भ्रष्ट होना। भूल, गलती। अपराध। पाप। धोखा। चाल-बाजी।

√स्खुड्—भ्वा० पर० सक० ढकना। स्खुडति, स्खुडिष्यति, अस्खुडीत्।

√स्तक्—भ्वा० पर० सक० रोकना, बचाना। ढकेलना। स्तकति, स्तकिष्यति, अस्ताकीत्।

√स्तग्—भ्वा० पर० सक० ढकना, छिपाना। स्तगति, स्तगिष्यति, अस्तगीत्।

√स्तन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना, बजाना। कराहना। जोर-जोर से साँस लेना। गरजना, दहाड़ना। स्तनति, स्तनिष्यति, अस्तानीत्। चु० पर० अक० बादल का गरजना। स्तनयति, स्तनयिष्यति, अतस्तनत्।

स्तन—(पुं०) [√स्तन् + अच्] स्त्रियों या मादा पशुओं का वह अंग जिसमें दूध रहता है, कुच, चूची; 'स्तनौ मांसग्रन्थी कनककलशावित्युपमितौ' भर्तृ० ३.२०। **—अंशुक** (**स्तनांशुक**)-(न०) स्तन बाँधने, ढकने का कपड़ा। **—अग्र** (**स्तनाग्र**)-(पुं०) चूची की घुंडी, ढेपनी, चूचुक। **—अन्तर** (**स्तनान्तर**)- (न०) हृदय। दोनों स्तनों के बीच का स्थान; 'मृणालसूत्रं रचितं स्तनान्तरे' श० ६.१७। स्तन पर का एक चिह्न जो भावी वैधव्य का द्योतक समझा जाता है। **—आभोग** (**स्तनाभोग**)-(न०) स्तनों की वृद्धि या बढ़ाव। चूचियों की गोलाई। वह पुरुष जिसके स्त्री जैसे स्तन हों। **—प,—पा, —पायक,—पायिन्**- (वि०) स्तन-पान करने वाला। (पुं०) दुधमुँहा बच्चा। **—भर** -(पुं०) स्थूल स्तन। स्त्री जैसे स्तनों वाला पुरुष। **—भव**- (पुं०) रतिबन्ध विशेष। **—मुख,—वृन्त**- (न०)**—शिखा**-(स्त्री०) चूची की घुंडी, ढेपनी।

स्तनन—(न०) [√स्तन्+ल्युट्] आवाज, शोर गुल। गर्जन। कराहने का शब्द। जोर-जोर से और जल्दी-जल्दी साँस लेना।

स्तनन्धय—(वि०) [स्तन √धे + खश्, मुम्] स्तन से दूध पीने वाला। (पुं०) बच्चा जो स्तन से दूध पीता हो।

स्तनयित्नु—(पुं०) [√स्तन् + णिच् + इत्नुच्] बादलों की कड़क। बादल; 'स्तनयित्नोर्मयूरीव चकितोत्कण्ठितं स्थिता' उत्त० ३.७। बिजली। रोग। मृत्यु। मोथा।

स्तनित—(वि०) [√स्तन्+क्त] गर्जन किया हुआ। ध्वनित, निनादित। (न०) मेघ की गड़गड़ाहट। कोलाहल। ताली बजाने का शब्द।

स्तन्य—(न०) [स्तन +यत्] स्तन का दूध।

स्तब्ध—(वि०) [√स्तम्भ्+क्त] रोका हुआ। सुन्न, लकवा का मारा हुआ। गति-हीन,

अचल । दृढ़, सख्त । हठी, जिद्दी । मोटा । भद्दा ।—**कर्ण**– (वि०) बहरा ।—**दृष्टि**, —**नयन**, —**लोचन**– (वि०) जिसकी पलकें न गिर रही हों, टकटकी बँध गयी हो ।— **रोमन्**—(पुं०) शूकर ।

स्तब्धत्व–(न०),**स्तब्धता**–(स्त्री०)[स्तब्ध +त्व] [स्तब्ध + तल्–टाप्] कड़ाई, कठोरता । दृढ़ता, अचलता । निश्चेष्टता । हठीलापन । अहंकार ।

स्तभ—(पुं०) बकरा । मेढ़ा ।

√स्तम्—भ्वा० पर० अक० घवड़ा जाना, परेशान हो जाना । स्तमति, अस्तमीत् ।

स्तम्ब—(पुं०) [√स्था + अम्बच्, पृषो० साधु:] घास का गट्ठा । अनाज की बाल या भुट्टा । गुच्छा । झाड़ी । झुरमुट । झाड़ी या पौधा जिसका तना या घड़ न देख पड़े । हाथी बाँधने का खूँटा । खंभा । स्तब्धता, सुन्नपन । पहाड़ ।—**करि**– (पुं०) धान्य, अनाज ।—**करिता**– (स्त्री०) बाल या भुट्टा पैदा करना । अच्छी उपज ।—**घन**– (पुं०) घास खोदने की खुर्पी । अनाज काटने का हँसिया । अन्न रखने की टोकरी । —**घ्न**– (पुं०) दे० 'स्तम्बघन' ।

स्तम्बेरम—(पुं०) [स्तम्बे वृक्षादीनां काण्डे गुच्छे गुल्मे वा रमते, √रम्+अच्, अलुक्, स०] हाथी, गज; 'स्तम्बेरमा मुखरश्रृङ्खलकर्षिणस्ते' र० ५.८२ ।

√स्तम्भ्—भ्वा० आत्म० सक०, क्र्या० पर० सक० रोकना । पकड़ना, गिरफ्तार करना । दृढ़ करना, अचल करना । सुन्न करना, स्तब्ध करना । सहारा देना । अक० कड़ा होना । अकड़ जाना, अभिमान दिखलाना । यथा— स्तम्भते पुरुष: प्रायो यौवनेन धनेन च । न स्तम्नाति क्षितीशोऽपि न स्तम्नोति युवाप्यसौ ।। भ्वा० स्तम्भते, स्तम्भिष्यते, अस्तम्भिष्ट । क्र्या० स्तम्नाति–स्तम्नोति, स्तम्भिष्यति, अस्तम्भीत् ।

स्तम्भ—(पुं०) [√स्तम्भ् +घञ् वा अच्] दृढ़ता । कठोरता । गति-हीनता । संज्ञाहीनता । रोक-थाम, बाधा, अड़चन । दबाना । सहारा, अवलंब । खंभा । पेड़ का तना, घड़ । मूढ़ता । उत्तेजना के भावों का अभाव । अलौकिक या मंत्र-शक्ति से किसी वेग या भाव को दबाने की क्रिया ।—**उत्कीर्ण** (**स्तम्भोत्कीर्ण**)–(वि०) खंभे में खोदी हुई (मूर्ति) ।—**कर**–(वि०) स्तब्ध करने वाला । रोक-थाम करने वाला । बाधा डालने वाला ।—**पूजा**–(स्त्री०) यज्ञ-स्तम्भ का पूजन ।

स्तम्भकिन्—(पुं०) चमड़े से मढ़ा हुआ प्राचीन बाजा विशेष ।

स्तम्भन—(न०) [√स्तम्भ् +ल्युट्] रोक-थाम, पकड़-धकड़ । सुन्न करना, स्तब्ध करना । चुप या शान्त करना । सख्त या कड़ा करना । सहारा देना । रक्त, वीर्य आदि का स्राव आदि रोकना । मंत्रादि के द्वारा किसी की शक्ति कुण्ठित करना । (पुं०) [√स्तम्भ् + णिच्+ल्यु] कामदेव के पाँच बाणों में से एक ।

स्तर—(पुं०) [√स्तृ+अप् वा अच्] परत, तह । शय्या, बिस्तर, बिछौना ।

स्तरण—(न०) [√स्तृ+ल्युट्] बिछाने या बिखेरने की क्रिया । पलस्तर करना । बिस्तर, बिछौना ।

स्तरिमन्, स्तरीमन्—(पुं०) [√स्तृ+इ (ई) मनिच्] सेज, शय्या, तल्प ।

स्तरी—(स्त्री०) [√स्तृ+ई] धूम । भाप । बछिया । बाँझ गौ ।

स्तव—(पुं०) [√स्तु+अप्] प्रशंसा । स्तुति । स्तोत्र ।

स्तवक—(पुं०) [√स्तु + वुन् वा√स्था अवक, पृषो० साधु:] पुष्प-गुच्छ, गुलदस्ता । ग्रन्थ का परिच्छेद । समूह, समुदाय ।

स्तवन—(न०) [√स्तु + ल्युट्] स्तुति करना। स्तोत्र, स्तव।

स्तवेय्य—(पुं०) [√स्तु + एय्य] इन्द्र।

स्ताव—(पुं०) [√स्तु + घञ्] प्रशंसा। स्तुति।

स्तावक—(वि०) [√स्तु+ण्वुल्] स्तुति या प्रशंसा करने वाला। (पुं०) भाट, बंदी जन।

√स्तिघ्—स्वा० आत्म० सक० चढ़ाई करना, आक्रमण करना। स्तिघ्नुते, स्तेघिष्यते, अस्तेघिष्ट।

√स्तिप्—भ्वा० आत्म० अक० चूना, टपकना, रिसना। स्तेपते, स्तेपिष्यति, अस्तेपिष्ट।

स्तिभि—(पुं०) [√स्तम्भ् + इन्, इत्व] रोक, अड़चन। समुद्र। गुच्छा, स्तवक।

√स्तिम्, √स्तीम्—दि० पर० अक० गीला होना, भींग जाना। अटल होना। स्तिम्यति स्तीम्यति, स्तेमिष्यति स्तीमिष्यति, अस्तेमीत् अस्तीमीत्।

स्तिमित—(वि०) [√स्तिम् + क्त] गीला, नम, तर। स्तब्ध, निश्चल, शान्त; 'संयमस्तिमितं मनः' कु० २.५९। अटल, गतिहीन। लकवा मारा हुआ, सुन्न। कोमल, मुलायम। सन्तुष्ट, प्रसन्न।—**वायु**—(पुं०) शान्तवायु।—**नेत्र**—(वि०) जिसे टकटकी लग गयी हो।—**समाधि**— (न०) दृढ़ ध्यान, ध्यान-मग्नता।

स्तिम्भि—(स्त्री०) [√स्तिम् +इन्, भुक्] समुद्र। वायु।

स्तीवि—(पुं०) [√स्तॄ+क्विन्] वह ऋत्विक् जो किसी नियत ऋत्विक् की जगह काम करे। घास। आकाश। शत्रु। जल। रक्त। शरीर। इन्द्र का नाम।

√स्तु—अ० उभ० सक० प्रशंसा करना। स्तुति करना। किसी की प्रशंसा में गीत गाना। स्तवन द्वारा पूजन या सम्मान करना। स्तौति —स्तवीति—स्तुते—स्तुवीते, स्तोष्यति—ते, अस्तावीत्—अस्तोष्ट।

स्तुक—(पुं०) केशों की चोटी। संतान।

स्तुका—(स्त्री०) केशों की चोटी। भैंसा के सींगों के बीच के छल्लेदार बाल। जघन।

√स्तुच्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। अनुकूल होना, प्रसन्न होना। स्तोचते, स्तोचिष्यते, अस्तोचिष्ट।

स्तुत—(वि०) [√स्तु + क्त] जिसकी स्तुति की गयी हो। प्रशंसित।

स्तुति—(स्त्री०) [√स्तु + क्तिन्] प्रशंसा। स्तव। विरुदावली। चापलूसी, ठकुरसुहाती, झूठी प्रशंसा। दुर्गा देवी का नाम।—**गीत**—(न०) विरुदावली के गीत।—**पद**—(न०) प्रशंसा की वस्तु।—**पाठक**—(पुं०) बंदीजन, भाट।—**वाद**— (पुं०) प्रशंसात्मक, वचन, गुण-कीर्तन।—**व्रत**— (पुं०) भाट।

स्तुत्य—(वि०) [√स्तु + क्यप्] श्लाघ्य, सराहनीय, प्रशंसनीय; 'स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती' र० ४.६।

स्तुनक—(पुं०) [√स्तु +नकक्] बकरा।

√स्तुभ्—भ्वा० आत्म० अक० रुकना। सक० रोकना। स्तोभते, स्तोभिष्यते, अस्तोभिष्ट।

स्तुभ—(पुं०) [√स्तुम्भ् + क] बकरा।

√स्तुम्भ्—क्र्या० पर० सक० रोकना। स्तुभ्नोति- स्तुभ्नाति, स्तुम्भिष्यति, अस्तुम्भीत्।

√स्तूप्—चु० उभ० सक० जमा करना, ढेर करना। उठाना, खड़ा करना। स्तूपयति—ते, स्तूपयिष्यति—ते, अतुस्तूपत्—त।

स्तूप—(पुं०) [√स्तूप्+अच् वा √स्तु + पक्, दीर्घ] ढेर, राशि, टीला। बौद्धों के ढूह या स्तम्भ जो विशेष आकार के होते

होते हैं और स्मरण-चिह्न स्वरूप समझे जाते हैं। चिता।

√स्तृ—स्वा० उभ० सक० ढकना, तोप लेना। फैलाना। बिखेरना। लपेटना। स्तृणोति—स्तृणुते, स्तरिष्यति—ते, अस्तार्षीत्—अस्तरिष्ट—अस्तृत।

√स्तृक्ष्—भ्वा० पर० सक० जाना। स्तृक्षति, स्तृक्षिष्यति, अस्तृक्षीत्।

स्तृति—(स्त्री०) [√स्तृ+क्तिन्] विस्तार, फैलाव। चादर।

√स्तृह्—तु० पर० सक० वध करना। स्तृहति, स्तर्हिष्यति— स्तर्क्ष्यति, अस्तर्हीत्—अस्तृक्षत्।

√स्तॄ—क्र्या० उभ० सक० ढकना, आच्छादित करना। स्तृणाति— स्तृणीते, स्तरि (री)- ष्यति, अस्तारीत् — अस्तरि (री) ष्ट— अस्तीर्ष्ट।

√स्तेन्—चु० उभ० सक० चुराना। स्तेनयति—ते, स्तेनयिष्यति—ते, अतिस्तेनत्—त।

स्तेन—(न०) [√स्तेन्+अच्] चोरी, चुराने का कार्य। (पुं०) चोर। लुटेरा।—**निग्रह**—(पुं०) चोरों का दमन। चोरी की वारदातों को रोकना।

√स्तेप्—भ्वा० आत्म० अक० वहना, क्षरित होना। स्तेपते, स्तेपिष्यते, अस्तेपिष्ट। चु० पर० सक० फेंकना। स्तेपयति, स्तेपयिष्यति, अतिस्तिपत्।

स्तेम—(पुं०) [√स्तिम्+घञ्] सील, नमी, तरी।

स्तेय—(न०) [स्तेनस्य भावः, स्तेन+यत्, नलोप] चोरी। कोई वस्तु जो चुराई गई हो या जिसके चोरी जाने की सम्भावना हो। कोई निजी या गोप्य वस्तु।

स्तेयिन्—(पुं०) [स्तेय+इनि] चोर। सुनार। चूहा।

√स्तै—भ्वा० पर० सक० वेष्टित करना। स्तायति, स्तास्यति, अस्तासीत्।

स्तैन—(न०) [स्तेन+अण्] चोरी। डकैती।

स्तैन्य—(न०) [स्तेन + ष्यञ्] चोरी। डकैती। (पुं०) [स्तेन+ण्य] चोर।

स्तैमित्य—(न०) [स्तिमित +ष्यञ्] अटलता, अचलता। जड़ता।

स्तोक—(पुं०) [√स्तुच्+घञ्] अल्प परिमाण। बूंद। [स्तोक+अच्] चातक पक्षी। (वि०) छोटा, लघु। ईषत्, थोड़ा। नीच।—**काय**—(वि०) खर्वाकार, बौना।—**नम्र**— (वि०) कुछ-कुछ झुका हुआ; 'श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्याम्' मे० ८२।

स्तोकक—(पुं०) [स्तोकाय जलविन्दवे कायति शब्दायते, स्तोक √कै+क] चातक पक्षी।

स्तोतव्य—(वि०) [√स्तु+तव्यत्] स्तुति करने योग, प्रशंसा के योग्य; 'स्तोतव्यगुणसम्पन्नः केषां न स्यात् प्रियो जनः' सुभा०।

स्तोकशस्—(अव्य०) [स्तोक+शस्] थोड़ा-थोड़ा करके।

स्तोतृ—(वि०) [√स्तु+ तृच्] स्तुति करने वाला। (पुं०) बंदीजन, भाट।

स्तोत्र—(न०) [√स्तु + ष्ट्रन्] प्रशंसा। स्तुति। विरुदावली, प्रशंसात्मक गीत या कविता। स्तुत्यात्मक श्लोक।

स्तोत्रिया—(स्त्री०) [स्तोत्र+घ — इय —टाप्] स्तोत्र-सावनीभूत ऋचा।

स्तोभ—(पुं०) [√स्तुभ् + घञ्] रुकावट, अड़चन। रोक, ठहराव। अप्रतिष्ठा, असम्मान। प्रशंसात्मक कविता। सामवेद का भाग विशेष। कोई वस्तु जो ऊपर से किसी वस्तु में घुसेड़ दी गई हो।

√स्तोम्—चु० पर० अक० अपना गुण बखानना। स्तोमयति, स्तोमयिष्यति, अतुस्तोमत्।

स्तोम—(न०) [√स्तु+मन् वा √ स्तोम्+अच्] शिर । धन । लोहे की नोक वाला डंडा । (पुं०) समूह । राशि । यज्ञ । एक विशेष प्रकार का यज्ञ । स्तुति । यज्ञकर्ता । ४० हाथ की एक माप, दस धन्वन्तर । एक प्रकार की ईंट । (वि०) टेढ़ा ।

स्तोम्य—(वि०) [स्तोम+यत्] श्लाघ्य, प्रशंसनीय ।

स्त्यान—(वि०) [√स्त्यै+क्त, तस्य नः] ढेर किया हुआ । गाढ़ा; 'स्त्यानावनद्धघनशोणितशोणिपाणिरुत्तंसयिष्यति कचांस्तव देवि ! भीमः' वे० १.२१ । कोमल, मुलायम । ध्वनि-कारक । स्निग्ध । (न०) घनत्व । स्निग्धता, चिकनाई । अमृत । काहिली, सुस्ती । प्रतिध्वनि ।

स्त्यायन—(न०) [√स्त्यै+ल्युट्] एकत्र होना । भीड़-भाड़ ।

स्त्येन—(पुं०) [√स्त्यै + इनच्] अमृत । चोर ।

√स्त्यै—भ्वा० पर० अक० एकत्रित होना । ध्वनि करना । स्त्यायति, स्त्यास्यति, अस्त्यासीत् ।

स्त्री—(स्त्री०) [स्त्यायतः शुक्रशोणिते अस्याम्, √स्त्यै+ड्रट्—ङीप्] नारी, औरत । जानवर की मादा [यथा—**हरिणस्त्री, गजस्त्री**] । भार्या, पत्नी । प्रियंगुलता । सफेद चींटी ।—**आगार** (**स्त्र्यागार**)—(न०) जनानखाना, अन्तःपुर ।— **अध्यक्ष** (**स्त्र्यध्यक्ष**)—(पुं०) जनानखाने या रनिवास का अध्यक्ष ।—**अभिगमन** (**स्त्र्यभिगमन**)—(न०) स्त्री के साथ मैथुन ।—**आजीव** (**स्त्र्याजीव**)—(पुं०) वह जो अपनी स्त्री के सहारे रहता हो । वह जो वेश्याकर्म के लिये स्त्रियाँ रखता हो ।—**काम**—(पुं०) स्त्री का अभिलाषी जन । भार्याप्राप्ति की कामना ।—**कार्य**—(न०) स्त्री का काम । स्त्री की टहल । अन्तःपुर की चाकरी ।—**कुसुम**—(न०) स्त्री का रजोधर्म ।—**क्षीर**—(न०) औरत का दूध । माता का दूध ।—**ग**—(वि०) स्त्री के साथ मैथुन करने वाला ।—**गवी**—(स्त्री०) दुधार गौ ।—**गुरु**—(पुं०) पुरोहितानी ।—**घोष**—(पुं०) प्रभात, सवेरा ।—**घ्न**—(पुं०) स्त्री की हत्या करने वाला ।— **चरित**,—**चरित्र**—(न०) स्त्री के कर्म ।—**चिह्न**—(न०) स्त्री जाति का कोई भी चिह्न या लक्षण । भग, योनि ।—**चौर**—(पुं०) स्त्री को चुराने वाला । स्त्री को बहकाने वाला ।—**जननी**—(स्त्री०) वह स्त्री जो लड़की ही जने ।—**जाति**—(स्त्री०) स्त्रीवर्ग । स्त्रीलिङ्ग ।—**जित**—(पुं०) भार्या-निर्जित स्वामी । स्त्रैण पुरुष; 'स्त्रीजितस्पर्शमात्रेण सर्वं पुण्यं विनश्यति' सुभा० ।—**धन**—(न०) स्त्री की निज सम्पत्ति ।—**धर्म**—(पुं०) स्त्री या भार्या का कर्त्तव्य । स्त्री-सम्बन्धी विधान । रजस्वला धर्म ।—**धर्मिणी**-(स्त्री०) रजस्वला स्त्री ।—**ध्वज**—(पुं०) किसी भी जानवर की मादा ।—**नाथ**—(वि०) वह जिसकी रक्षा कोई स्त्री करती हो ।—**निबन्धन**—(न०) गृहिणी का कार्य । गार्हस्थ्य धर्म ।—**पर**—(पुं०) स्त्री-प्रेमी, लंपट, कामुक ।—**पिशाची**—(स्त्री०) राक्षसी जैसी पत्नी ।— **पुंस**—(पुं०) पत्नी और पति । मर्दाना और जनाना ।—**०लक्षणा**—(स्त्री०) मर्दानी औरत ।—**प्रत्यय**—(पुं०) व्याकरण में स्त्री-वाचक प्रत्यय ।—**प्रसङ्ग**—(पुं०) संभोग ।—**प्रसू**—(स्त्री०) वह स्त्री जो केवल लड़कियाँ ही जने ।—**प्रिय**—(पुं०) आम का वृक्ष । अशोक वृक्ष ।—**बन्ध**—(पुं०) संभोग ।—**बाध्य**—(पुं०) वह पुरुष जो अपने आप को स्त्री द्वारा उत्पीड़ित करावे ।—**बुद्धि**—(स्त्री०) औरत की अक्ल या समझ ।

स्त्री की सलाह या परामर्श।—**भोग**-(पुं०) मैथुन।—**मन्त्र**-(पुं०) स्त्री की सलाह।—**मुखप**- (पुं०) मौलसिरी। अशोक।—**यन्त्र**- (न०) स्त्री के आकार की कल।—**रञ्जन**- (न०) ताम्बूल, पान।—**रत्न**- (न०) अत्युत्तम स्त्री। —**राज्य**-(न०) स्त्री का राज्य। महाभारत के अनुसार स्त्रियों द्वारा शासित एक प्रदेश। —**लिङ्ग**-(न०) व्याकरण में स्त्री-बोधक लिङ्ग। योनि, भग।—**वश**-(वि०) स्त्री द्वारा शासित। (पुं०) स्त्री की अधीनता।—**विधेय**-(वि०) वह जिस पर स्त्री हुकूमत करे। —**व्यञ्जन**-(न०) स्त्री होने के चिह्न—स्तन आदि।—**सङ्ग्रहण**- (न०) स्त्री को (अनुचित रूप से) चिपटाने की क्रिया। व्यभिचार।—**सभ**-(न०) स्त्रियों का समाज।—**सम्बन्ध**-(पुं०) स्त्री के साथ वैवाहिक सम्बन्ध। विवाह द्वारा सम्बन्ध स्थापन।—**स्वभाव**- (पुं०) स्त्री की प्रकृति। हिजड़ा, मेहरा। स्त्रियों का नौकर।—**हरण**-(न०) स्त्री भगा ले जाना।

स्त्रीता, स्त्रीत्व—(स्त्री०) [स्त्री + तल् —टाप्] [स्त्री + त्व] स्त्री होने का भाव। पत्नीत्व, भार्यापन।

स्त्रैण—(वि०) [स्त्री०—**स्त्रैणी**] [स्त्री + नञ्] स्त्री संबन्धी। स्त्रियों के कहने के अनुसार चलने वाला, स्त्री-वशीभूत। स्त्रियों के योग्य। (न०) स्त्रीत्व; 'तस्य तृणमिव लघुवृत्तिस्त्रैणमाकलयतः' का०। स्त्री-स्वभाव। स्त्री-जाति। स्त्रियों का समूह।

स्थ—(वि०) [√स्था + क] (प्रायः समास में ही इसका व्यवहार होता है। जैसे—पदस्थ, मार्गस्थ आदि)। ठहरा हुआ, वर्तमान।

स्थकर—(न०) [=स्थगर, पृषो० साधुः] सुपाड़ी।

√**स्थग्**—भ्वा० पर० सक० ढकना, छिपाना। भरना, पूर्ण करना। स्थगति, स्थगिष्यति, अस्थगीत्।

स्थग—(वि०) [√स्थग् + अच्] धूर्त, कपटी। बेईमान। लापरवाह। ढीठ। (पुं०) गुंडा या ठग आदमी।

स्थगन—(न०) [√स्थग् + ल्युट्] छिपाव, दुराव।

स्थगर—(न०) [√स्थग् + अरन्] सुपाड़ी।

स्थगिका—(स्त्री०) [स्थग् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] वेश्या। अँगूठे आदि के सिरे पर बाँधने की एक तरह की पट्टी। पनडब्बा, पानदान।

स्थगित—(वि०) [√स्थग् + क्त] ढका हुआ। छिपा हुआ। रुद्ध।

स्थगी—(स्त्री०) [√स्थग् + क—ङीप्] पनडब्बा।

स्थगु—(पुं०) [√स्थग् + उन्] कूबड़, कुब्ब।

स्थण्डिल—(न०) [√स्थल् + इलच्, नुक्, लस्य डः] यज्ञ के लिये चौरस की हुई चौकोर भूमि, चत्वर। यज्ञार्थ परिष्कृत भूमि; 'निषेदुषी स्थण्डिल एव केवले' कु० ५·१२। ऊसर खेत। ढेलों का ढेर। सीमा। सीमा-चिह्न।—**शायिन्**-(पुं०) व्रत के लिये चत्वर या चबूतरे पर सोने वाला व्यक्ति।—**सितक**-(न०) वेदी, अग्नि-वेदी।

स्थपति—(पुं०) [√स्था + क, तस्य पतिः] राजा। कारीगर। होशियार बढ़ई। सारथि। बृहस्पति देव को बलि चढ़ाने वाला व्यक्ति। जनानखाने का नौकर। बृहस्पति। कुबेर का नाम। (वि०) प्रधान, मुख्य। उत्तम, श्रेष्ठ।

स्थपुट—(वि०) [स्था+क, स्थं पुटं यत्र] सङ्कटापन्न। ऊबड़-खाबड़, ऊँचा-नीचा। कूबड़ वाला। पीड़ा के कारण झुका हुआ।

√स्थल्—भ्वा० पर० अक० स्थिर होना। स्थलति, स्थलिष्यति, अस्थालीत्।

स्थल—(न०) [√स्थल्+अच्] दृढ़ और सूखी भूमि। समुद्र या नदी का तट। जमीन, धरती। स्थान, जगह। खेत, भूभाग। टीला। विवाद-ग्रस्त विषय। भाग [जैसे ग्रन्थ का]। खीमा, तंबू।—**अन्तर** (**स्थलान्तर**)-(न०) दूसरी जगह।—**आरूढ** (**स्थलारूढ**)-(वि०) पृथिवी पर उतरा हुआ।—**अरविन्द** (**स्थलारविन्द**), **कमल**, —**कमलिनी**-(स्त्री०) कमल की आकृति का एक पुष्प जो स्थल पर उत्पन्न होता है।—**चर**-(वि०) जमीन पर रहने वाला (जलचर का उल्टा)।—**च्युत**-(वि०) स्थान-भ्रष्ट।—**विग्रह**- (पुं०) वह संग्राम जो सम भूमि पर हो।

स्थला—(स्त्री०) [स्थल+टाप्] बनावटी सूखी जमीन जो ऊँची करके बनायी गयी हो। शुष्क भूभाग।

स्थली—(स्त्री०) [स्थल+ङीष्] सूखी भूमि। ऊँची सम भूमि। स्थान।

स्थलेशय—(वि०) [स्थले शेते, √ शी +अच्, अलुक् स०] जमीन पर सोने वाला। (पुं०) वराह, मृग आदि पशु।

स्थवि—(पुं०) [√स्था + क्वि] जुलाहा। स्वर्ग। जंगम पदार्थ। थैला। अग्नि। कोढ़ी या उसका शरीर।

स्थविर—(वि०) [√स्था +किरच्, स्थवादेश] दृढ़, मजबूत। अचल। पुराना, प्राचीन। (पुं०) बूढ़ा आदमी। भिक्षुक। ब्रह्मा का नामान्तर। (न०) शैलेय गंध-द्रव्य।

स्थविरा—(स्त्री०) [स्थविर + टाप्] बुढ़िया; 'स्थविरे! का त्वम् अयमर्भकः कस्य नयनानन्दकरः' दश०। महाश्रावणी।

स्थविष्ठ—(वि०) [अतिशयेन स्थूलः, स्थूल +इष्ठन्, लस्य लोपः गुणश्च] बहुत स्थूल। अत्यन्त वृद्ध। अत्यन्त दृढ़ या मजबूत।

स्थवीयस्—(वि०) [स्थल+ईयसुन्, स्थूलशब्दस्य स्थवादेशः] दे० 'स्थविष्ठ'।

√स्था—भ्वा० पर० अक० खड़ा होना। रहना। बच जाना। विलंब करना। सक० रोकना। बंद करना। तिष्ठति, स्थास्यति, अस्थात्।

स्थाणु—(वि०) [√स्था+नु, पृषो० णत्व] दृढ़, मजबूत। अचल, गतिहीन। (पुं०) शिव का नाम; 'स स्थाणुः स्थिरभक्तियोगसुलभो निःश्रेयसायास्तु वः' विक्र० १.१। खंभा। खूंटी, कील। धूपघड़ी का काँटा। बर्छा। दीमक का छत्ता। जीवक नामक सुगन्ध द्रव्य। (पुं०, न०) पेड़ का ठूँठ।—**च्छेद**- (पुं०) वृक्षों को काटने वाला व्यक्ति।

स्थाण्डिल—(पुं०) [स्थण्डिल + अण्] यज्ञमण्डप में सोने वाला तपस्वी, वह तपस्वी जो जमीन पर सोवे। भिक्षुक।

स्थान—(न०) [√स्था+ल्युट्] स्थित होने, ठहरने, रहने की क्रिया। अचलता, अटलता। दशा, हालत। जगह। सम्बन्ध, रिश्ता (यथा पितृस्थाने)। आवास-स्थान, रहने की जगह। गांव। कस्बा। जिला। पद, ओहदा। पदार्थ, वस्तु। कारण, हेतु। उपयुक्त जगह। उपयुक्त या उचित पदार्थ। किसी अक्षर के उच्चारण की जगह। तीर्थ। वेदी। किसी नगर का कोई स्थल विशेष। वह लोक या पद जो किसी मरे हुए आदमी के जीव को उसके शुभाशुभ कर्मानुसार प्राप्त हो। युद्ध के लिये डट कर खड़ी हुई सेना। टिकाव, पड़ाव। तटस्थता, उदासीनता। राज्य के मुख्य अंग; यथा—सेना, धन, कोष, राजधानी आदि। सादृश्य, समानता। अध्याय। परिच्छेद। अभिनय।

अवकाश काल।—अध्यक्ष (स्थानाध्यक्ष) –(पुं०) स्थानीय शासक।—आसेध (स्थानासेध)–(पुं०) कैद, गिरफ्तारी। —चिन्तक– (पुं०) सेना के लिये छावनी की व्यवस्था करने वाला अधिकारी।—च्युत– (वि०) जो अपने स्थान से गिर गया हो, स्थान-भ्रष्ट। जो अपने पद से हटा दिया गया हो, पद-च्युत।—पाल– (पुं०) चौकीदार।—भ्रष्ट– (वि०) स्थान-च्युत।—माहात्म्य– (न०) किसी स्थान या जगह का गौरव या महिमा।—स्थ– (वि०) अपनी जगह पर ठहरा हुआ।

स्थानक—(न०) [स्थान+क] पद, ओहदा। अभिनय के समय का हाव-भाव विशेष। नगर। वरतन। मदिरा का झाग या फेन। पाठ करने का एक ढंग। [स्थाने कं जलम् अत्र] आल-वाल, थाला।

स्थानतस्—(अव्य०) [स्थान + तस्] निज स्थान या पद के अनुसार। अपने उपयुक्त स्थान से। जिह्वा या उच्चारण करने की इन्द्रिय के अनुरूप।

स्थानिक—(वि०) [स्त्री०—स्थानिकी] [स्थान+ठक्] स्थानीय, किसी स्थान विशेष का। वह जो किसी के वदले प्रयुक्त हो। (पुं०) किसी स्थान का शासक। देवालय का व्यवस्थापक। राजस्व-संग्राहक।

स्थानिन्—(वि०) [स्थान+इनि] स्थान वाला। स्थायी। वह जिसका कोई वदली-दार या एवजदार हो।

स्थानीय—(वि०) [स्थान+छ] किसी स्थान का। किसी स्थान के लिये उपयुक्त। (न०) [√स्था+अनीयर्] नगर, शहर। कसवा।

स्थाने—(अव्य०) [√स्था+ने] उचित; 'स्थाने वृता भूपतिभिः परोक्षैः स्वयंवरं साधुममंस्त भोज्या' र० ७.१३। जगह में क्योंकि, ववजह। वैसे ही, उसी प्रकार।

स्थापक—(वि०) [√ स्था +णिच्, पुक् +ण्वुल्] स्थापित करने वाला। (पुं०) रंगमञ्च का व्यवस्थापक या प्रवन्ध-कर्त्ता। किसी मूर्ति की स्थापना करने वाला व्यक्ति।

स्थापत्य—(न०) [स्थपति + ष्यञ्] भवन-निर्माण-कला, इमारती काम। (पुं०) जनानखाने का पहरेदार या रक्षक।

स्थापन—(न०) [√ स्था+णिच्, पुक् +ल्युट्] स्थापित करने की क्रिया। मन की एकाग्रता। आवादी, वस्ती। पुंसवन संस्कार।

स्थापना—(स्त्री०) [√स्था + णिच्, पुक् +युच् – टाप्] रखना, जमाना, स्थापित करना। एकत्र करना। प्रतिपादन। रंगमञ्च का प्रवन्ध।

स्थापित—(वि०) [√स्था+ णिच्, पुक् +क्त] जिसकी स्थापना की गयी हो, प्रतिष्ठित किया हुआ। जमा किया हुआ। खड़ा किया हुआ। निर्दिष्ट किया हुआ। निश्चित किया हुआ। नियुक्त किया हुआ। विवाहित। दृढ़, अटल।

स्थाप्य—(वि०) [√स्था + णिच्, पुक् +ण्यत्] स्थापित करने योग्य। रखे जाने योग्य। नियुक्त किये जाने योग्य। जमा करने योग्य। (न०) धरोहर, अमानत।—अपहरण (स्थाप्यापहरण)–(न०) धरोहर का गवन, अमानत की खयानत।

स्थामन्—(न०) [√स्था +मनिन्] शक्ति। स्तम्भन-शक्ति। अचलता। घोड़े की हिन-हिनाहट। स्थान।

स्थायिन्—(वि०) [स्था + णिनि, युक्] स्थिति-युक्त, वना रहने वाला। टिकने वाला। वहुत दिन चलने वाला, टिकाऊ; 'शरीरं क्षणविध्वंसि कल्पान्तस्थायिनो गुणाः' सुभा०। विश्वास करने योग्य। (पुं०) एक प्रकार का भाव जो मन में वना रहता है और परिपाक होने पर

रसावस्था में परिणत होता है। इसकी संख्या नौ है—रति, हास्य, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, निन्दा, विस्मय और निर्वेद।—**भाव**—(पुं०) दे० 'स्थायिन्' का पुं० वाला अर्थ।

स्थायुक—(वि०) [स्त्री०—**स्थायुका, स्थायुकी**] [√स्था+उकञ्, युक्] ठहरने वाला, स्थितिशील। (पुं०) गाँव का मुखिया।

स्थाल—(न०) [√स्थल् + घञ्] थाल, परात। दाँत का खोंड़रा। बरतन। बटलोई।

स्थाली—(स्त्री०) [स्थाल + ङीष्] थाली। मिट्टी की हँड़िया। बटलोई। सोम रस तैयार करने का पात्र विशेष। पाटलावृक्ष।—**पाक**—(पुं०) होम के लिये गाय के दूध में पकाया हुआ जौ या चावल। भाजन-पक्व अन्नादि।—**पुरीष**—(न०) बटलोई का मैल।—**पुलाक**—(पुं०) स्थाली में पकाया हुआ चावल (यह एक न्याय है, जैसे स्थाली के एक चावल की परीक्षा से सारे चावल के सिद्ध या असिद्ध होने का पता चल जाता है उसी तरह अंश के आधार पर अंशी के संबंध में अनुमान किया जाता है।)

स्थावर—(वि०) [√स्था +वरच्] अटल, अचल। अक्रियाशील। (न०) कोई निर्जीव वस्तु। रोदा, कमान की डोरी। अचल सम्पत्ति। माल-असबाब जो बपौती में मिले। (पुं०) पहाड़।—**अस्थावर** (**स्थावरास्थावर**),—**जङ्गम**—(न०) चल-अचल सम्पत्ति। जानदार-बेजान चीजें।

स्थाविर—(वि०) [स्त्री०—**स्थाविरा, स्थाविरी**] [स्थविर+अण्] मोटा। दृढ़। (न०) बुढ़ापा (७० से ९० वर्ष तक की अवस्था)।

स्थासक—(पुं०) [√स्था+स+क] खुशबूदार उबटन लगा कर शरीर को सुवासित करना। जल या किसी तरह के पदार्थ का बबूला। बुलबुले के आकार का एक गहना जो घोड़े के साज में लगाया जाता है।

स्थासु—(न०) [√स्था+सु] शारीरिक बल।

स्थास्नु—(वि०) [√स्था+स्नु] दृढ़, अचल; 'अभिमानधनस्य गत्वरैरसुभिः स्थास्नु यशश्चिचीषतः' कि० २.१९। स्थायी, टिकाऊ। सहनशील।

स्थित—(वि०) [√स्था +क्त] खड़ा हुआ। ठहरा हुआ। घटित। वर्तमान। रोका हुआ। दृढ़, मजबूत। दृढ़ सङ्कल्प किया हुआ। सिद्ध किया हुआ। दृढ़चित्त। धर्मात्मा। अपने वचन का धनी। इकरार किया हुआ, कौल-करार किया हुआ। तैयार।—**धी**—(वि०) शान्तचित्त, दृढ़चित्त।—**प्रज्ञ**—(वि०) स्थिर बुद्धि वाला।—**प्रेमन्**—(पुं०) पक्का या सच्चा मित्र।

स्थिति—(स्त्री०) [√स्था+क्तिन्] रहना। ठहरना। मर्यादा। अवस्थान, निवास। सीमा। कर्तव्य-परायणता। अनुशासन का पालन। पद, ओहदा। निर्वाह। अवस्था, दशा। विराम। कल्याण। सामंजस्य। निर्णय। जीवन का बना रहना। ग्रहण की अवधि। निश्चलता। अवसर। ठहरने का स्थान।

स्थिर—(वि०) [√स्था+किरच्] दृढ़। अचल, गति-हीन। स्थायी, सदैव रहने वाला। शान्त। काम, क्रोधादि से रहित या मुक्त। एकरस; 'अहो! स्थिरः कोऽपि तवेप्सितो युवा' कु० ५.४७। दृढ़-प्रतिज्ञ। निश्चित। सख्त, ठोस। मजबूत। निष्ठुर-हृदय। (पुं०) देवता। वृक्ष। पर्वत। बैल। शिव। कार्त्तिकेय। मोक्ष। पर्वत। बैल। शिव।। कार्त्तिकेय। मोक्ष। शनिग्रह।—**अनुराग** (**स्थिरानुराग**)—(वि०) वह जिसका प्रेम एक सा बना रहे।—**आत्मन्** (**स्थिरात्मन्**),—**चित्त**,—**चेतस्**,—

धी, —बुद्धि, —मति-(वि०) दृढ़ मन वाला । शान्त ।—आयुस् (स्थिरायुस्), —जीविन्- (वि०) दीर्घायु वाला, चिरजीवी ।—आरम्भ-(वि०) किसी कार्य का आरम्भ कर अन्त तक एक-सा उद्योग करने वाला, दृढ़ अध्यवसायी ।—गन्ध- (पुं०) चम्पा का फूल ।—च्छद-(पुं०) भूर्जपत्र का वृक्ष ।—च्छाय- (पुं०) वह वृक्ष जिसकी छाया में बटोही ठहरें । वृक्ष, पेड़ ।—जिह्व- (पुं०) मछली ।—जीविता-(स्त्री०)सेमर का पेड़ ।—दंष्ट्र- (पुं०) साँप ।—पुष्प- (पुं०) चम्पा का पेड़ । बकुल वृक्ष ।—प्रतिज्ञ- (वि०) बात का पक्का ।—प्रतिबन्ध- (वि०) सामना करने में दृढ़ ।—फला- (स्त्री०) कुम्हड़े की लता ।—योनि- (पुं०) बड़ा वृक्ष जिसकी छाया में लोग ठहरें ।—यौवन-(वि०) सदा युवा रहने वाला । (पुं०) विद्याधर ।—श्री-(स्त्री०) अनन्त काल तक रहने वाली समृद्धि ।—सङ्गर- (वि०) सत्यप्रतिज्ञ, अपने वचन को निबाहने वाला ।—सौहृद- (वि०) मैत्री में दृढ़ ।— स्थायिन्-(वि०) दृढ़ या अटल रहने वाला ।

स्थिरता—(स्त्री०),**स्थिरत्व**-(न०) [स्थिर +तल् – टाप्] [स्थिर+त्व] दृढ़ता । अटलता, अचलता । पराक्रम-यूक्त उद्योग । मन की दृढ़ता । एकाग्रता ।

स्थिरा—(स्त्री०) [स्थिर + टाप्] पृथ्वी । सरिवन । काकोली । सेमल । वनमूँग । माषपर्णी । मूसाकानी । दृढ़ चित्त वाली स्त्री । पृथिवी ।

√स्थुड्—तु० पर० सक० छिपाना । स्थुडति, स्थुडिष्यति, अस्थुडीत् ।

स्थुल—(न०) [√स्थुड् + अच्, पृषो० डस्य लः] एक प्रकार का लंबा खीमा ।

स्थूणा—(स्त्री०) [√स्था + नक्, पृषो० साधुः] खंभा, थुनकिया । लोहे की प्रतिमा या पुतला । लुहार की निहाई ।

स्थूम—(पुं०) प्रकाश । चन्द्रमा ।

स्थूर—(पुं०) [√स्था + ऊरन्] साँड़ । नर, मनुष्य ।

√स्थूल्—चु० उभ० अक० बढ़ना । स्थूलयति – ते, स्थूलयिष्यति—ते, अतुस्थूलत् —त ।

स्थूल—(वि०) [√स्थूल् + अच्] बड़ा, बड़े आकार का । मोटा । मजबूत, दृढ़ । गाढ़ा । मूर्ख, मूढ । सुस्त । जो ठीक न हो । (न०) ढेर, राशि । खीमा, तंबू । पर्वत की चोटी । (पुं०) कटहल का पेड़ । विष्णु । प्रियंगु । तूत का वृक्ष । ईख । अन्नमय कोश । गोचर पदार्थ ।—अन्त्र (स्थूलान्त्र)-(न०) बड़ी आँत जो गुदा के पास रहती है ।—आस्य (स्थूलास्य)-(पुं०) सर्प ।—उच्चय (स्थूलोच्चय)-(पुं०) पर्वत से टूटी हुई शिला या चट्टान जो एक टीला सा बन जाय । अधूरापन, अपूर्णता । हाथी की मध्यम चाल । मुँह पर मुहाँसों का निकलना । हाथी की सूँड़ के नीचे का गढ़ा या पोला-सा स्थान । —कन्द- (पुं०) जिमीकन्द ।— काय-(वि०) मोटे शरीर का ।—क्षेड, —क्ष्वेड- (पुं०) तीर ।—चाप- (पुं०) धुनिया की धुनकी जिससे रुई धुनी जाती है ।—ताल-(पुं०) हिन्ताल ।—धी, —मति- (वि०) मूर्ख, मन्दबुद्धि ।—नाल- (पुं०) लंबी जाति का सरकंडा ।—नास, —नासिक-(वि०) मोटी नाक वाला । (पुं०) शूकर, सुअर ।—पट-(पुं०, न०) मोटा कपड़ा ।—पट्ट- (पुं०) रुई ।—पाद- (वि०) वह जिसका पैर फूल उठा या सूज गया हो । (पुं०) हाथी । पीलपाँव के रोग से पीड़ित आदमी । —फल- (पुं०) सेमर का पेड़ ।—

मान–(न०) मोटा अन्दाज ।— मूल–(न०) मूली । शलगम ।—लक्ष, —लक्ष्य–(वि०) उदार । मनस्वी । वह जिसे हानि-लाभ का स्मरण रहे ।—शङ्ग–(स्त्री०) बड़ी भगवाली स्त्री ।—शरीर– (न०) पाञ्चभौतिक नाशवान् शरीर (सूक्ष्म या लिङ्ग शरीर का उल्टा) ।—शाटक,—शाटि– (पुं०) मोटा कपड़ा ।—शीर्षिका–(स्त्री०) एक जाति की चींटी जिसका सिर शरीर की अपेक्षा बड़ा होता है ।—षट्पद–(पुं०) वर्रे ।—स्कन्ध– (पुं०) बड़हल का पेड़ ।—हस्त– (न०) हाथी की सूंड़ ।

स्थूलक––(वि०) [स्थूल + कन्] बड़ा । विशाल । मोटा । (पुं०) एक प्रकार की घास या नरकुल ।

स्थूलता––(स्त्री०), **स्थूलत्व**–(न०) [स्थूल +तल्–टाप्] [स्थूल + त्व] बड़ापन । मोटापन । मूढ़ता ।

स्थूलिन्–– [स्थूल+इनि] ऊँट ।

स्थेमन्––(पुं०) [स्थिर+इमनिच्] दृढ़ता । स्थिरता; 'द्राघीयांसः संहता स्थेमभाजः' शि० १८.३३ ।

स्थेय––(वि०) [√स्था + यत्] स्थापित करने योग्य । तै करने योग्य, निश्चित करने योग्य । (पुं०) पंच, निर्णायक । पाधा, पुरोहित ।

स्थेयस्––(वि०) [स्त्री०––**स्थेयसी**] [अतिशयेन स्थिरः, स्थिर + ईयसुन्, स्थादेश] अतिशय स्थिर । शाश्वत ।

स्थेष्ठ––(वि०) [अतिशयेन स्थिरः, स्थिर +इष्ठन्, स्थादेश] दे० 'स्थेयस्' ।

स्थैर्य––(न०) [स्थिरस्य भावः, स्थिर +ष्यञ्] स्थिरता । सातत्य । मन की दृढ़ता । धैर्य । कठोरता ।

स्थौणेय, स्थौणेयक––(पुं०) [स्थूणा+ढक्] [स्थूणा+ढकञ्] ग्रन्थिपर्ण नामक गन्धद्रव्य ।

स्थौर––(न०) दृढ़ता । शक्ति, बल । गधे या घोड़े के ढोने योग्य बोझ ।

स्थौरिन्––(वि०) [स्थौर + इनि] लद्दू घोड़ा । मजबूत वा ताकतवर घोड़ा ।

स्थौल्य––(न०) [स्थूल +ष्यञ्] स्थूलता, मुटाई, मोटापन ।

स्थ्यूम––(पुं०) चन्द्रमा । रोशनी, प्रभा ।

स्नपन––(न०) [√ स्ना + णिच्, पुक् +ल्युट्] नहलाना; 'रेजे जनैः स्नपनसान्द्रतरार्द्रमूर्तिः' शि० ५.५७ ।

स्नव––(पुं०) [√ स्नु + अप्] चुआव, रिसाव, टपकाव ।

√स्नस्––दि० पर० अक० आबाद होना, बसना । सक० उगलना । अस्वीकार करना । स्नस्यति, स्नसिष्यति, अस्नसत् ।

√स्ना––अ० पर० अक० स्नान करना, नहाना । वेद पढ़ने के अनन्तर गृहस्थाश्रम में लौटते समय स्नान करने की विधि को पूरा करना । स्नाति, स्नास्यति, अस्नासीत् ।

स्नातक––(पुं०) [√स्ना+क्त+क] वह ब्राह्मण जिसने ब्रह्मचर्याश्रम के कर्म को पूरा करके स्नान विशेष किया हो, वेदाध्ययन के अनन्तर गृहस्थाश्रम में लौटने के लिये अङ्गभूत स्नान करने वाला ब्राह्मण । वह ब्राह्मण जिसने किसी धार्मिक अनुष्ठान करने के लिये भिक्षावृत्ति ग्रहण की हो ।

स्नान––(न०) [√स्ना + ल्युट्] नहाना, अवगाहन । देवप्रतिमा को विधिपूर्वक नहलाने की क्रिया । कोई वस्तु जो नहाने में काम आती हो ।—**आगार (स्नानागार)**–(न०) नहाने का कमरा, गुसलखाना ।—**द्रोणी**– (स्त्री०) नहाने का पात्र या स्नान-कुम्भ ।— **यात्रा**–(स्त्री०) ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन श्रीविष्णु का महास्नान रूप उत्सव ।— **विधि**–(पुं०) स्नान करने का विधान या नियम ।

स्नानीय--(वि०) [√स्ना + अनीयर्] नहाने योग्य। (न०) स्नान के काम में आने वाली कोई भी वस्तु यथा जल, उबटन, तैल आदि।

स्नापक--(पुं०) [√स्ना+णिच्, पुक् +ण्वुल्] स्नान कराने वाला नौकर या वह नौकर जो अपने मालिक के नहाने के लिये जल लावे।

स्नापन--(न०) [√स्ना + णिच्, पुक् +ल्युट्] नहलाना।

स्नायु--(पुं०) [√स्ना+उण्, युक्] शिरा, नस। पेशी। धनुष का रोदा या डोरी।--**अर्मन्** (**स्नाय्वर्मन्**)-(न०) एक नेत्र-रोग जिसमें सफेद भाग पर अर्वुद निकल आता है।

स्नायुक--(पुं०) [स्नायु+क] दे० 'स्नायु'।

स्नाव, स्नावन्--(पुं०) [√स्ना + वन्] [√स्ना+वनिप्] नस, रग। पेशी।

स्निग्ध--(वि०) [√स्निह् + क्त] प्रिय, प्यारा। चिकना। चिपचिपा। चमकीला। कोमल। तर, नम, भींगा। शीतल। दयालु। मनोहर। गाढ़ा। सघन; 'स्निग्धच्छाया-तरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु' मे० १। एकाग्र। (न०) तेल। मोम। चमक, दीप्ति। मोटापन। (पुं०) मित्र। लाल रेंड़ का वृक्ष। सरल वृक्ष।--**तण्डुल**-(पुं०) एक प्रकार का चावल जो जल्द उगता है।--**मज्जक**- (पुं०) वादाम।

स्निग्धता-- (स्त्री०), **स्निग्धत्व**- (न०) [स्निग्ध+तल् - टाप्] [स्निग्ध +त्व] चिकनापन, चिकनाहट। कोमलता। प्रियता, प्रेम।

स्निग्धा--(स्त्री०) [स्निग्ध+टाप्] मज्जा। विकंकत वृक्ष।

√स्निह्--दि० पर० सक० प्यार करना, प्रेम करना, स्नेह करना। अक० सहज में अनुरक्त होना। प्रसन्न होना। चिपचिपा होना। चिकना होना। स्निह्यति, स्नेहिष्यति--स्नेक्ष्यति, अस्निहत्।

√स्नु--अ० पर० अक० टपकना, चूना। वहना, प्रवाहित होना। स्नौति, स्नविष्यति, अस्नावीत्।

स्नु--(पुं०, न०) [√स्ना+कु] पर्वत का समतल भूभाग, सानु। (स्त्री०) स्नायु, नस, रग।

स्नुत--(वि०) [√स्नु+क्त] रिसा हुआ, टपका हुआ। वहा हुआ।

स्नुषा--(स्त्री०) [√स्नु+सक् - टाप्] बहू, पुत्र-वधू। थूहड़ का पेड़।

√स्नुह्--दि० पर० सक० उगलना। कै करना। स्नुह्यति, स्नोहिष्यति --स्नोक्ष्यति, अस्नुहत्।

स्नेह--(वि०) [√स्निह्+घञ्] वह प्रेम जो बड़ों का छोटों के प्रति होता है। चिकनाहट, चिकनापन। नमी, तरी। चरबी। तेल। शरीर से निकलने वाली कोई भी तरल धातु, जैसे वीर्य।--**अक्त** (**स्नेहाक्त**)-(वि०) तेल दिया हुआ, तेल से चिकनाया हुआ।-- **अनुवृत्ति** (**स्नेहानुवृत्ति**)-(स्त्री०) मैत्री भाव।--**आश** (**स्नेहाश**)-(पुं०) दीपक। --**च्छेद**, --**भङ्ग**-(पुं०) मित्रता का टूटना।-- **प्रवृत्ति**-(स्त्री०) प्रेम-प्रवाह।--**प्रिय**- (वि०) जिसको तेल प्रिय हो। (पुं०) दीपक। --**भू**-(पुं०) कफ, श्लेष्मा।--**रङ्ग**-(पुं०) तिल्ली, तिल।--**वस्ति**- (पुं०) गुदामार्ग से पिचकारी की नली से तेल डालना।-- **विमर्दित**-(वि०) तेल की मालिश किए हुए। --**व्यक्ति**-(स्त्री०) स्नेह या मित्रता प्रदर्शन।

स्नेहन्--(पुं०) [√स्निह् + कनिन्, नि० साधुः] मित्र। चन्द्रमा। रोगविशेष।

स्नेहन--(न०) [√स्निह् + णिच्+ल्युट्] तेल की मालिश। उबटन।

स्नेहित––(वि०) [√स्निह् + णिच् +क्त] प्यार किया हुआ । कृपालु । चिकनाया हुआ । (पुं०) मित्र । प्रेम-पात्र, माशूक ।

स्नेहिन्––(वि०) [स्त्री०––**स्नेहिनी**] [√ स्निह् + णिनि] प्यारा, प्रिय । चिकना । (पुं०) मित्र । तेल मलने वाला । उबटन लगाने वाला । चितेरा ।

स्नेहु––(पुं०) [√स्निह् + उन्] चन्द्रमा । रोगविशेष ।

√स्नै––भ्वा० पर० सक० वस्त्र धारण कपड़ा लपेटना । स्नायति, स्नास्यति, अस्नासीत् ।

स्नैग्ध्य––(न०) [स्निग्ध+ष्यञ्] स्निग्धता, चिकनापन । कोमलता । अनुरक्तता ।

√स्पन्द्––भ्वा० आत्म० अक० थोड़ा-थोड़ा चलना या काँपना । स्पन्दते, स्पन्दिष्यते, अस्पन्दिष्ट ।

स्पन्द––(पुं०) [√स्पन्द्+घञ्] किसी चीज का धीरे-धीरे हिलना या काँपना । प्रस्फुरण, अंगों आदि का फड़कना ।

स्पन्दन––(न०) [√स्पन्द् + ल्युट्] दे० 'स्पन्द' । गर्भ में बच्चे का फड़कना ।

स्पन्दित––(वि०) [√स्पन्द्+क्त] कँपा हुआ । फड़का हुआ । गया हुआ (न०) धड़कन । फड़कन ।

√स्पर्ध्––भ्वा० आत्म० अक० स्पर्धा करना, बराबरी करना, प्रतिद्वन्द्विता करना । सक० चुनौती देना, ललकारना । स्पर्धते, स्पर्धिष्यते, अस्पर्धिष्ट ।

स्पर्धा––(स्त्री०) [√ स्पर्ध् + अ––टाप्] एक दूसरे को दबाने की इच्छा, होड़, प्रतियोगिता । ईर्ष्या, डाह । युद्धार्थ आह्वान । समानता, बराबरी ।

स्पर्धिन्––(वि०) [स्त्री०––**स्पर्धिनी**] [स्पर्धा+इनि] स्पर्धा करने वाला, प्रतियोगिता करने वाला, प्रतिद्वन्द्वी; 'तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु' र० १३.१३ ईर्ष्यालु । अभिमानी ।

√स्पर्श्––चु० आत्म० सक० लेना, ग्रहण करना । स्पर्श करना । जोड़ना, मिलाना । छाती से लगाना, आलिंगन करना । स्पर्शयते, स्पर्शयिष्यते, अपस्पर्शत ।

स्पर्श––(पुं०) [√स्पर्श् वा √स्पृश्+अच् वा घञ्] लगाव, छुआव; 'तदिदं स्पर्शक्षमं रत्नम्' श० १.२८ । (ज्योतिष में ग्रहों का) समागम । भिड़ंत, मुठभेड़ । सम्पर्कज्ञान । त्वचा का विषय । रोग । पांच वर्गों में से ('क' से 'म' तक) कोई भी व्यञ्जन । भेंट । दान । पवन । आकाश । मैथुन ।––**अज्ञ** (**स्पर्शाज्ञ**)–(वि०) निःसंज्ञ, बेहोश, मूर्च्छित ।––**उदय** (**स्पर्शोदय**)–(वि०) जिसके पीछे व्यञ्जन वर्ण हो ।–– **उपल** (**स्पर्शोपल**),––**मणि**–(पुं०) पारस पत्थर ।––**लज्जा**– (स्त्री०) छुईमुई ।–– **वेद्य** – (वि०) जो छूने से जाना जाय ।––**सञ्चारिन्**– (वि०) छुआछूत का, संक्रामक ।–– **स्नान**–(न०) उस समय का स्नान जिस समय चन्द्रमा या सूर्य का ग्रहण लगना आरम्भ होता है ।––**स्पन्द**, ––**स्यन्द**– (पुं०) मेढक ।

स्पर्शन––(वि०) [स्त्री०––**स्पर्शनी**] [√ स्पर्श् + णिच् + ल्यु] छूने वाला । प्रभाव डालने वाला । (पुं०) पवन । (न०) [√स्पर्श् वा √स्पृश्+ल्युट्] छुआव, लगाव, संसर्ग । दान । भेंट ।

स्पर्शनक––(न०) [स्पर्शन+कन्] सांख्य दर्शन में चर्म के लिये पर्यायवाची शब्द ।

स्पर्शवत्––(वि०) [स्पर्श + मतुप्, मस्य वः] स्पर्श द्वारा अनुभव करने योग्य, स्पर्श योग्य । कोमल । छूने से आनन्द देने वाला ।

√स्पर्ष्––भ्वा० आत्म० अक० नम होना, भींगना । स्पर्षते, स्पर्षिष्यते, अस्पर्षिष्ट ।

स्पष्टृ—(पुं०) [√स्पृश् + तृच्] शरीर की गड़बड़ी, रोग ।

√स्पश्—भ्वा० उभ० सक० रुकावट डालना । कोई काम करना । सीना । छूना । देखना । स्पशति—ते, स्पशिष्यति — ते, अस्पशीत् —अस्पाशीत् ।

स्पश—(पुं०) [√स्पश् + अच्] जासूस; 'स्पशे शनैर्गतवति तत्र विद्विषां' शि० १७.२० । युद्ध । जंगली जानवरों से लड़ने वाला (पुरस्कार पाने की कामना से) ।

स्पष्ट—(वि०) [√स्पश् + क्त] साफ, प्रकट । असली, सच्चा । पूरा लिखा हुआ । साफ-साफ दीखने वाला ।—**गर्भा**–(स्त्री०) स्त्री जिसके शरीर में गर्भ-धारण के लक्षण साफ-साफ दिखलाई पड़ते हों ।—**प्रतिपत्ति**–(स्त्री०) स्पष्ट ज्ञान ।—**भाषिन्**, —**वक्तृ**–(वि०) साफ-साफ कहने वाला ।

√स्पृ—स्वा० पर० सक० खींचकर निकालना । दान करना । बचाना, रक्षा करना । अक० प्रसन्न होना । रहना । स्पृणोति, स्पर्ष्यति, अस्पार्षीत् ।

स्पृक्का—(स्त्री०) [√स्पृश् + कक्, पृषो० शस्य कः] एक शाक, असवर्ग ।

√स्पृश्—तु० पर० सक० छूना । धीरे-धीरे थपथपाना । पानी से छिड़कना या धोना । प्राप्त करना । प्रभाव डालना । प्रमाणित करना । अक० लगाव होना, सम्पर्क होना । स्पृशति, स्प्रक्ष्यति, अस्प्राक्षीत् ।

स्पृश्—(वि०) [√स्पृश् + क्विप्] छूने वाला । असर डालने वाला । वेधने वाला (यथा मर्मस्पृश्) ।

स्पृष्ट—(वि०) [√स्पृश् + क्त] छुआ हुआ; 'दयालुमनघस्पृष्टम्पुराणमजरं विदुः' र० १०.१९ प्रभावित । पहुँचने वाला । छूकर भ्रष्ट किया हुआ । जिह्वा के स्पर्श से बना हुआ या उच्चारित ('क' से 'म' तक के वर्ण) ।

स्पृष्टि, स्पृष्टिका—(स्त्री०) [√स्पृश् +क्तिन्] [स्पृष्टि + कन्—टाप्] स्पर्श, छुआव । संसर्ग, लगाव ।

√स्पृह्—चु० उभ० सक० इच्छा करना, अभिलाष करना । स्पृहयति–ते, स्पृहयिष्यति–ते, अपस्पृहत्–त ।

स्पृहण—(न०) [√ स्पृह् +ल्युट्] इच्छा करने की क्रिया ।

स्पृहणीय—(वि०) [√ स्पृह् + अनीयर्] इच्छा करने योग्य, वाञ्छनीय । ईर्ष्या करने योग्य । रमणीय ।

स्पृहयालु— (वि०) [√ स्पृह् + णिच् +आलुच्] स्पृहा करने वाला, इच्छा करने वाला । ईर्ष्या करने वाला ।

स्पृहा—(स्त्री०) [√स्पृह् +अ —टाप्] अभिलाष । ईर्ष्या । न्याय में धर्मानुकूल पदार्थ की प्राप्ति की कामना ।

स्पृह्य—(वि०) [√स्पृह् + णिच् +यत्] वाञ्छनीय । ईर्ष्या करने योग्य । (पुं०) जंगली बिजौरे का पेड़ ।

√स्फट्—भ्वा० पर० अक० फट जाना । स्फटति, स्फटिष्यति, अस्फटीत्—अस्फाटीत् ।

स्फट—(पुं०) [√स्फट् + अच्] साँप का फैला हुआ फन ।

स्फटा—(स्त्री०) [स्फट+टाप्] साँप का फैला हुआ फन । फिटकिरी ।

स्फटि, स्फटी—(स्त्री०) [√स्फट् + इन्, पक्षे ङीष्] फिटकिरी ।

स्फटिक—(पुं०) [स्फटि √कै + क] बिल्लौर, फटिक । सूर्यकान्त मणि । कपूर । शीशा । फिटकिरी ।— **अचल** (**स्फटिकाचल**),— **अद्रि** (**स्फटिकाद्रि**)–(पुं०) कैलास पर्वत ।—**अश्मन्** (**स्फटिकाश्मन्**), —**आत्मन्** (**स्फटिकात्मन्**), —**मणि**–

(पुं०)— **शिला**–(स्त्री०) स्फटिक या बिल्लौर पत्थर ।

स्फटिकारि, स्फटिकारिका, स्फटिकी—(स्त्री०) फिटकिरी ।

√स्फण्ड्—चु० उभ० सक० परिहास करना । स्फण्डयति-ते, स्फण्डयिष्यति- ते, अपस्फण्डत्—त ।

√स्फर्—तु० पर० अक० फड़कना । चलना । स्फरति, स्फरिष्यति, अस्फारीत् ।

स्फरण—(न०) [√स्फर्+ल्युट्] फड़कना । काँपना । धड़कना ।

√स्फल्—तु० पर० अक० फड़कना । चलना । स्फलति, स्फलिष्यति, अस्फालीत् ।

स्फाटक—(पुं०) बिल्लौर । जल की बूँद ।

स्फाटिक—(वि०) [स्त्री०—**स्फाटिकी**] [स्फटिक+अण्] फटिक पत्थर का । (न०) बिल्लौर पत्थर ।

स्फाति—(स्त्री०) [√ स्फाय् + क्तिन्, यलोप] वृद्धि, बढ़ती । सूजन ।

√स्फाय्—भ्वा० आत्म० अक० मोटा हो जाना । बढ़ जाना । सूज जाना । स्फायते, स्फायिष्यते, अस्फायिष्ट ।

स्फार—(वि०) [√स्फाय् +रक्] बड़ा । बढ़ा हुआ । फैला हुआ । विकट । घना । बहुत, विपुल । उच्चस्वरित । (न०) विपुलता, आधिक्य ।(पुं०) सूजन । वृद्धि । (सुवर्ण में का) बुदबुद, बुलबुला । गुमड़ा, गुमड़ी । स्पन्दन । धड़कन । मरोड़, ऐंठन ।

स्फारण—(न०) [√स्फुर् +णिच्, स्फारादेश,+ल्युट्] स्फुरण । कंपन । थरथराहट ।

स्फाल—(पुं०) [√स्फल् + घञ्] स्फुरण । धड़कन । कंपन, थरथराहट ।

स्फालन—(न०) [√स्फल् + णिच्+ल्युट्] हिलाना, कँपाना । फटफटाना । रगड़ना । सहलाना ।

स्फिच्—(स्त्री०) [√स्फाय् + डिच्] चूतड़, नितम्ब ।

√स्फिट्—चु० उभ० सक० अपमान करना । घायल करना । वध करना । स्फेटयति-ते, स्फेटयिष्यति-ते, अपिस्फिटत्—त ।

स्फिर—(वि०) [√स्फाय् + किरच्] अधिक, बहुत, विपुल । अनेक, असंख्य । विशाल ।

स्फीत—(वि०) [√स्फाय् +क्त, स्फी आदेश] सूजा हुआ । बढ़ा हुआ । मोटा-ताज़ा । बहुत, अधिक । सफलकाम । प्रसन्न । पैतृक या पुश्तैनी रोग से सताया हुआ । शुद्ध ।

स्फीति—(स्त्री०) [√स्फाय् + क्तिन्, स्फी आदेश] वृद्धि, बाढ़ । विपुलता, आधिक्य; 'धनधान्यस्य च स्फीतिः सदा मे वर्ततां गृहे' सुभा० । समृद्धि ।

√स्फुट्—भ्वा० आत्म०, तु० पर० अक० खिलना । तितर-बितर होना । दृष्टिगोचर होना, प्रत्यक्ष होना । भ्वा० स्फोटते, स्फोटिष्यते, अस्फोटिष्ट । तु० स्फुटति, स्फुटिष्यति, अस्फुटीत् । भ्वा० पर० अक० फूट जाना । फट जाना । स्फोटति, स्फोटिष्यति, अस्फुटत्—अस्फोटीत् ।

स्फुट—(वि०) [√स्फुट् +क] फटा हुआ । टूटा हुआ । पूरा खिला हुआ, फला हुआ; 'स्फुटपरागपरागतपङ्कजं' शि० ६.२ । सफेद, चमकीला । विशुद्ध । प्रसिद्ध, प्रख्यात । छाया हुआ, व्याप्त । उच्चस्वरित । स्पष्ट । सत्य ।—**अर्थ** (**स्फुटार्थ**)–(वि०) जिसका अर्थ या अभिप्राय स्पष्ट हो ।—**तार**–(वि०) जिसमें तारे स्पष्ट दिखाई देते हों ।

स्फुटन—(न०) [√स्फुट् + ल्युट्] फूट जाना । फट जाना । विकसित होना ।

स्फुटि, स्फुटी—(स्त्री०)[√स्फुट् + इन्, पक्षे ङीष्] पैर की बिवाई या सूजन । फूट नामक फल ।

स्फुटिका—(स्त्री०) [स्फुटि+कन्—टाप्] छोटा टुकड़ा ।

स्फुटित—(वि०) [√स्फुट्+क्त] फटा हुआ। टूटा हुआ, फूटा हुआ। फूला हुआ, खिला हुआ। स्पष्ट किया हुआ। नष्ट किया हुआ। उपहास किया हुआ।—**चरण**—(वि०) फैले हुए पैरों वाला।

√स्फुट्ट्—चु० उभ० सक० तिरस्कार करना, अपमान करना। स्फुट्टयति-ते, स्फुट्टयिष्यति-ते, अपुस्फुट्टत्—त।

√स्फुड्—तु० पर० सक० ढकना। स्फुडति, स्फुडिष्यति, अस्फुडीत्।

√स्फुण्ट्—चु० उभ० सक० परिहास करना। स्फुण्टयति, स्फुण्टयिष्यति, अपुस्फुण्टत्।

√स्फुण्ड्—भ्वा० आत्म० अक० विकसित होना। स्फुण्डते, स्फुण्डिष्यते, अस्फुण्डिष्ट। चु० उभ० सक० परिहास करना। स्फुण्डयति-ते, स्फुण्डयिष्यति-ते, अपुस्फुण्डत्-त।

स्फुत्कर—(पुं०) [स्फुत्√कृ+अच्] अग्नि।

√स्फुर्—तु० पर० अक० फड़कना। काँपना। स्फुरति, स्फुरिष्यति, अस्फुरीत्।

स्फुर—(पुं०) [√स्फुर्+क] फड़कना। धड़कना। कँपकँपी। सूजन। ढाल।

स्फुरण—(न०) [√स्फुर् + ल्युट्] कँपकँपी, थरथराहट। (अङ्ग विशेषों का) फड़कना जो होने वाले शुभाशुभ का द्योतक होता है। दृष्टि पड़ना, नजर आना। चमक। स्मरण हो आना।

स्फुरत्—(वि०) [√स्फुर्+शतृ] थरथराता हुआ। चमकीला।

स्फुरित—(वि०) [√स्फुर् + क्त] कंपित; निवार्यतामालि ! किमप्ययं वटुः पुर्नविवक्षुः स्फुरितोत्तराधर.' कु० ५.८३। चमका हुआ। अदृढ़, चञ्चल। सूजा हुआ। व्यक्त। (न०) थरथरी, कँपकँपी। मन का उद्रेक या उद्वेग।

√स्फुर्च्छ्—भ्वा० पर० अक० फैलना। सक० भूलना, विस्मरण होना। स्फूर्च्छति, स्फूर्च्छिष्यति, अस्फूर्च्छीत्।

√स्फुर्ज्—भ्वा० पर० अक० बादल की तरह गरजना। चमकना। फूट जाना। स्फूर्जति, स्फूर्जिष्यति, अस्फूर्जीत्।

√स्फुल्—तु० पर० अक० काँपना। धड़कना। प्रकट होना। सक० जमा करना। वध करना। स्फुलति, स्फुलिष्यति, अस्फुलीत्।

स्फुल—(न०) [√स्फुल्+क] खेमा, तंबू।

स्फुलन—(न०) [√स्फुल् +ल्युट्] स्फुरण। कंपन।

स्फुलिङ्ग—(पुं०, न०), **स्फुलिङ्गा**—(स्त्री०) [√स्फुल् + इङ्गच्] [स्फुलिङ्ग+टाप्] अँगारा, शोला। चिनगारी; 'उद्भूतकोपदहनोग्रविषस्फुलिङ्गः' वे० ६.९।

स्फूर्ज—(पुं०) [√स्फुर्ज् + घञ्] बिजली गिरने की कड़कड़ाहट। इन्द्र का वज्र। सहसा होने वाला स्फोट। दो प्रेमियों का प्रथम समागम जिसमें आरम्भ में हर्ष और अन्त में भय की आशंका हो।

स्फूर्जथु—(पुं०) [√स्फुर्ज्+अथु] गड़गड़ाहट।

स्फूर्ति—(पुं०) [√स्फुर् वा √ स्फुर्च्छ् +क्तिन्] धड़कन। थरथराहट। खिलना। प्रकटन, प्राकट्य। स्मरण होना। काव्य सम्बन्धी स्फूर्ति।

स्फूर्तिमत्—(वि०) [स्फूर्ति+मतुप्] प्रतिभायुक्त। विकाश-शील। कँपकँपा, थरथराने वाला। कोमल हृदय वाला। (पुं०) शैव भेद।

स्फेयस्—[अयम् अनयोः अतिशयेन स्फिरः, स्फिर + ईयसुन्, स्फादेश] दो में बहुत अधिक।

स्फेष्ठ—(वि०) [स्फिर + इष्ठन्, स्फादेश] अत्यंत अधिक।

स्फोट—(पुं०) [स्फुटति अर्थो अनेन, √स्फुट् +घञ्] 'व्याकरण में अखंड या नित्य शब्द। फूट कर निकलना। (किसी बात का) प्रकट हो जाना। गुमड़ा। सूजन। गुमड़ी।

वलतोड़। मन का वह भाव जो किसी शब्द के सुनने से मन में उदय होता है। [√स्फुट् +अच्] फोड़ा।—**बीजक,—हेतुक**—(पुं०) भिलावाँ।—**वाद**—(पुं०) नित्य शब्द को संसार का कारण मानने का सिद्धान्त।

स्फोटन—(न०) [√स्फुट् +ल्युट्] सहसा तड़कना, फटना। अनाज फटकना। [√स्फुट् +णिच्+ल्युट्] फाड़ना, विदारण करना। व्यक्त करना। उँगली फोड़ना या चटकाना। (पुं०) संयुक्त व्यञ्जन वर्णों का पृथक्-पृथक् उच्चारण करना।

स्फोटनी—(स्त्री०) [स्फोटन + ङीप्] छेद करने का औजार, बरमा।

स्फोटा—(स्त्री०) [स्फोट + टाप्] सांप का फैला हुआ फन। सफेद अनंत मूल।

स्फोटिका—(स्त्री०) [√ स्फुट् + ण्वुल् —टाप्, इत्व] हापुत्रिका नामक पक्षी। छोटा फोड़ा, फुंसी।

स्फोरण—(न०) दे० 'स्फुरण'।

स्फ्य—(न०) [√स्फाय् + यत्, नि० साधु:] यज्ञीय पात्र विशेष जो तलवार के आकार का होता है।

स्म—(अव्य०) [√स्मि+ड] यह जब किसी वर्तमानकालिक क्रियावाची शब्द में लगाया जाता है तब वह शब्द भूतकालिक क्रिया का अर्थ देता है; 'क्रीणन्ति स्म प्राणमूल्यैर्यशांसि' शि० १७.१५। निषेध और पादपूर्ति के लिये भी इसका प्रयोग होता है।

स्मय—(पुं०) [√स्मि + अच्] आश्चर्य, ताज्जुब। अहंकार; 'तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय' र० ५.१९।

स्मर—(पुं०) [√स्मृ + अप् (भावे)] स्मृति, स्मरण, याद। [स्मरति प्रियम् अनेन, करणे अप्] कामदेव।—**अङ्कुश** (**स्मराङ्कुश**)—(पुं०) उँगली के नख। प्रमी। आशिक।—**आगार** (**स्मरागार**)—(न०), —**कूपक**—(पुं०), —**गृह**, —**मन्दिर**—(न०) योनि, स्त्री की जननेन्द्रिय।—**अन्ध** (**स्मरान्ध**)—(वि०) काम से अन्धा।—**आतुर** (**स्मरातुर**), —**आर्त** (**स्मरार्त**),—**उत्सुक** (**स्मरोत्सुक**)–(वि०) प्रेम-विह्वल।—**आसव** (**स्मरासव**)–(पुं०)अधर-रस।—**कर्मन्**—(न०) कोई भी रसिक कर्म।—**गुरु**—(पुं०) विष्णु।—**दशा**—(स्त्री०) काम के कारण उत्पन्न हुई शरीर की दशा (असौष्ठव, ताप, पाण्डुता, कृशता, अरुचि, अधैर्य, अनालम्बन, तन्मयता, उन्माद और मरण)।—**ध्वज**—(पुं०) पुरुषेन्द्रिय। मत्स्य विशेष। वाद्य-यंत्र विशेष। (न०) स्त्री की जननेन्द्रिय, भग।—**ध्वजा**—(स्त्री०) चांदनी रात।—**प्रिया**—(स्त्री०) कामदेव की स्त्री रति।—**भासित**—(वि०) काम से उद्दीप्त या विह्वल।—**मोह**—(पुं०) काम से मति का मारा जाना।—**लेखनी**—(स्त्री०) मैना पक्षी।—**वल्लभ**—(पुं०) वसन्त ऋतु। अनिरुद्ध का नाम।—**वीथिका**—(स्त्री०) वेश्या।—**शासन**—(पुं०) शिव जी।—**सख**—(पुं०) चन्द्रमा।—**स्तम्भ**—(पुं०) लिङ्ग, पुरुष की जननेन्द्रिय। **स्मर्य**—(पुं०) गधा।—**हर**—(पुं०) शिवजी।

स्मरण—(न०) [√स्मृ+ल्युट्] स्मृति, याद। किसी के विषय में चिन्तन। परंपरागत अनुशासन। किसी देवता का मानसिक बारवार नाम कीर्तन करना। सखेद स्मृति। साहित्य में अलंकार विशेष; यथा —'यथानुभवमर्थस्य दृष्टे तत्सदृशे स्तुति: स्मरणम्।' —**अनुग्रह** (**स्मरणानुग्रह**)—(पुं०) कृपापूर्वक स्मरण। स्मरण करने का अनुग्रह।—**अपत्यतर्पक** (**स्मरणापत्यतर्पक**)–(पुं०) कछुवा।—**अयौगपद्य** (**स्मरणायौगपद्य**)—(न०) स्मरणों की

असमसामयिकता ।—**पदवी**–(स्त्री०) मृत्यु ।

स्मर्य—(वि०) [√स्मृ+यत्] स्मरण करने योग्य ।

स्मार—(वि०) [स्मर+अण्] कामदेव संबन्धी; 'स्मारं पुष्पमयञ्चापम्' सुभा० । (पुं०) [√स्मृ + घञ्] स्मरण, याद-दाश्त ।

स्मारक—(वि०) [स्त्री०—**स्मारिका**] [√ स्मृ +णिच् + ण्वुल्] स्मरण कराने वाला, याद दिलाने वाला । (न०) कोई वस्तु जो किसी को स्मरण कराने के लिए हो ।

स्मारण—(न०) [√स्मृ + णिच्+ल्युट्] स्मरण कराना, याद दिलवाना ।

स्मार्त—(वि०) [स्मृति+अण्] स्मरण शक्ति संबन्धी । स्मृति में लिखा हुआ । स्मृति के मतों का अनुसरण करने वाला । गार्ह-पत्य (यथा अग्नि) । (पुं०) स्मृति शास्त्रों में दक्ष ब्राह्मण । स्मृतियों के अनु-सार चलने वाला एक सम्प्रदाय ।

√स्मि—भ्वा० आत्म० अक० मुसकराना । स्मयते, स्मेष्यते, अस्मेष्ट । चु० आत्म० अक० आश्चर्यित होना । सक० अनादर करना । स्माययते, स्माययिष्यते, असिस्मयत ।

√स्मिट्—चु० उभ० सक० तिरस्कार करना । प्रेम करना । जाना । स्मेटयति—ते, स्मेट-यिष्यति—ते, असिस्मिटत्—त ।

स्मित—(वि०) [√स्मि+क्त] मुसकाया हुआ । खिला हुआ । (न०) मुसक्यान ।—**दृश्**–(वि०) मुसक्यान के साथ देखने वाला । (स्त्री०) हँस-मुख या सुन्दरी स्त्री ।

√स्मील्—भ्वा० पर० अक० आंख मारना, आंख झपकाना । स्मीलति, स्मीलिष्यति, अस्मीलीत् ।

√स्मृ—भ्वा० पर० सक० स्मरण करना । स्मरति, स्मरिष्यति, अस्मार्षीत् ।

स्मृति—(स्त्री०) [√स्मृ + क्तिन्] स्मरण, याद । मन्वादिमुनि-प्रणीत धर्मशास्त्र जो १८ हैं—१ मनु, २ अत्रि, ३ विष्णु, ४ हारीत, ५ याज्ञवल्क्य, ६ उशना, ७ अंगिरा, ८ यम, ९ आपस्तम्ब, १० संवर्त, ११ कात्या-यन, १२ बृहस्पति, १३ पाराशर, १४ शंख, १५ लिखित, १६ दक्ष, १७ गौतम, १८ शातातप । एक सञ्चारी भाव । अभिलाषा । —**अपेत** (**स्मृत्यपेत**)–(वि०) भूला हुआ । स्मृतिशास्त्र-विरुद्ध । न्याय-वर्जित ।—**उक्त** (**स्मृत्युक्त**)– (वि०) स्मृतियों में वर्णित । —**प्रत्यवमर्ष**– (पुं०) स्मरण शक्ति ।—**प्रबन्ध**– (पुं०) स्मृति संबन्धी ग्रन्थ ।—**भ्रंश**– (पुं०) स्मरण-शक्ति का नाश । —**रोध**– (पुं०) स्मरण-शक्ति का नाश । —**विभ्रम**– (पुं०) स्मरण-शक्ति की गड़-बड़ी ।—**विरुद्ध**– (वि०) स्मृतिशास्त्र के विरुद्ध ।—**विरोध**– (पुं०) दो स्मृति-वाक्यों में पारस्परिक विरोध ।—**शास्त्र**– (न०) स्मृति ग्रन्थ, धर्मशास्त्र ।—**शेष**– (वि०) मृत, मरा हुआ ।—**शैथिल्य**– (न०) स्मरण-शक्ति की शिथिलता ।—**साध्य**–(वि०) जो स्मृति से सिद्ध किया जा सके ।—**हेतु**–(पुं०) स्मरण होने का कारण ।

स्मेर—(वि०) [√ स्मि+रन्] मंदहास-युक्त, मुसकाने वाला; 'विलोक्य वृद्धोक्षम-धिष्ठितं त्वया महाजनो स्मेरमुखो भवि-ष्यति' कु० ५.७० । खिला हुआ, प्रफुल्लित । अभिमानी । प्रत्यक्ष, स्पष्ट ।—**विष्किर**– (पुं०) मयूर ।

स्यद—(पुं०) [√स्यन्द्+क] वेग ।

√स्यन्द्—भ्वा० आत्म० अक० चूना, रिसना । पकना । बहना । दौड़ना । स्यन्दते, स्यन्दिष्यते — स्यन्स्यते, अस्यदत्—अस्य-न्दिष्ट—अस्यन्त ।

स्यन्द—(पुं०) [√ स्यन्द् + घञ्] चूना, रिसना । प्रवाहित होना । पसीना निकलना । तेजी से गमन । रथ ।

स्रोतस्—(न०) [√स्रु + तसि] धार, जल-प्रवाह। तेज प्रवाह वाली नदी। नदी। लहर। जल। इन्द्रिय। हाथी की सूँड़। शरीर के रन्ध्र (जो पुरुषों में ९ और स्त्रियों में ११ माने गये हैं)। वंश-परम्परा, कुल-धारा। —**अञ्जन** (**स्रोतोऽञ्जन**)- सुर्मा।—**ईश** (**स्रोतईश**)-(पुं०) समुद्र। —**रन्ध्र** (**स्रोतोरन्ध्र**)-(पुं०) हाथी की सूँड़ का छेद।—**वहा** (**स्रोतोवहा**)-(स्त्री०) नदी।

स्रोतस्य—(पुं०) [स्रोतस् + यत्] शिव। चोर।

स्रोतस्वती, स्रोतस्विनी—(स्त्री०) [स्रोतस् +मतुप्, वत्व—ङीप्] [स्रोतस् + विनि —ङीप्] नदी।

स्व—(सर्वनाम वि०) [√स्वन्+ड] निजी, अपना। स्वाभाविक, प्रकृतिगत। अपनी जाति का, अपनी जाति सम्बन्धी। (पुं०) नातेदार, रिश्तेदार। जीवात्मा। (न०, पुं०) धन-दौलत, सम्पत्ति।—**अक्षपाद** (**स्वाक्षपाद**)-(पुं०) न्याय दर्शन का मानने वाला या अनुयायी।—**अक्षर** (**स्वाक्षर**)-(न०) अपने हाथ की लिखावट।— **अधिकार** (**स्वाधिकार**)- (पुं०) अपना कर्त्तव्य या शासन। —**अधिष्ठान** (**स्वाधिष्ठान**)-(न०) शरीर-स्थित षट्चक्रों में से एक।—**अधीन** (**स्वाधीन**)—(वि०) स्वतंत्र, खुदमुख्तार। आत्मनिर्भर। निजी शक्ति या सामर्थ्य के भीतर।—**अध्याय** (**स्वाध्याय**)-(पुं०) वेदाध्ययन।—**अनुभूति** (**स्वानुभूति**)-(स्त्री०) निजी अनुभव। आत्मज्ञान; 'स्वानुभूत्येकसाराय नमः शान्ताय तेजसे' भर्तृ० २.१।—**अन्त** (**स्वान्त**) -(न०) मन। गुफा, खोह।—**अर्थ** (**स्वार्थ**)-(पुं०) अपना मतलब, निजी प्रयोजन। निजी अर्थ। —**आयत्त** (**स्वायत्त**)- (वि०) आत्मनिर्भर।—**इच्छा** (**स्वेच्छा**) -(स्त्री०) अपनी इच्छा। —**उदय** (**स्वोदय**)—(वि०) किसी ग्रह का उदय जो किसी स्थल विशेष पर हो। —**उपधि** (**स्वोपधि**)-(पुं०) वह तारा जो अपने स्थान पर अचल रहे।—**कम्पन**- (पुं०) वायु।—**कर्मिन्**- (वि०) स्वार्थी, खुदगरज।—**च्छन्द**- (वि०) स्वेच्छाचारी, मनमौजी। वहशी। (पुं०) अपनी इच्छा या मर्जी।—**ज**- (वि०) जो अपने से उत्पन्न हुआ हो। (पुं०) पुत्र। पसीना। (न०) रक्त।—**जन**-(पुं०) बिरादरी, जाति वाला। —**तन्त्र**- (वि०) स्वाधीन, आजाद। स्वेच्छाचारी। वयस्क, बालिग। —**देश**- (पुं०) अपना देश।—**धर्म**- (पुं०) अपना धर्म। अपना कर्त्तव्य। अपनी विशेषता।—**पक्ष**- (पुं०) अपना दल। —**परमण्डल**- (न०) अपना और शत्रु का देश।— **प्रकाश**- (वि०) स्वयंसिद्ध, स्वयं प्रकाशमान।— **भट**-(पुं०) वह जो स्वयं अपनी रक्षा करता हो।—**भाव**- (पुं०) अपनी अवस्था। सहज प्रकृति। —**भू**- ब्रह्मा की उपाधि। शिव का नामान्तर। विष्णु का नामान्तर।—**योनि**- (वि०) मातृ सम्बन्धी। (पुं०, स्त्री०) अपनी उत्पत्ति का स्थान। (स्त्री०) भगिनी या अन्य कोई समीपी नातेदार स्त्री।—**रस**- (पुं०) किसी का अपना (अमिश्रित) रस। स्वाभाविक स्वाद। पत्र आदि का पीसकर निकाला हुआ रस। तैलीय पदार्थ सिल पर पीसने पर लगी हुई तरौंछ। अपना तात्पर्य या अभिप्राय। अपने लोगों के प्रति होने वाली भावना।—**रसा**- (स्त्री०) कपित्थपत्रक। लाख।—**राज्** -(पुं०) परब्रह्म।—**रूप**- (वि०) समान सदृश। मनोहर, सुन्दर। विद्वान्, पण्डित। (न०) अपनी आकृति। अपनी विशेषता।

प्रकृति । विलक्षण उद्देश्य । प्रकार, तरह, किस्म ।—**वश** – (वि०) आत्म-संयमी । स्वाधीन ।—**वासिनी**–(स्त्री०) विवाहिता अथवा अविवाहिता वह स्त्री जो युवती होने पर भी अपने पिता के घर में रहे ।—**वृत्ति**– (वि०) अपने उद्योग पर निर्भर ।—**संवृत्त**– (वि०) अपनी रक्षा आप करने वाला ।—**संस्था**–(वि०) आत्मलीन होना । मन का प्रशान्त भाव ।—**स्थ**–(वि०) अपने में स्थित । जो अपनी स्वाभाविक अवस्था में हो । नीरोग, तंदुरुस्त । स्वाधीन । सन्तुष्ट । सुखी ।—**स्थान**–(न०) अपना निजी घर; 'नक्रः स्वस्थानमासाद्य गजेन्द्रमपि कर्षति' पं० ३.४६ ।—**हस्त**–(न०) अपना हाथ या अपने हाथ का लेख ।—**हस्तिका**–(स्त्री०) कुल्हाड़ी । —**हित**–(वि०) अपने लिये हितकर । (न०) अपनी भलाई, अपना हित ।

स्वक—(वि०) [स्व + अकच्] अपना, निजी । अपने खानदान या कुटुम्ब का ।

स्वकीय—(वि०) [स्वस्य इदम्, स्व+छ, कुक् आगम] अपना, निजी । अपने कुटुम्ब-परिवार का ।

√स्वङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । स्वङ्गति, स्वङ्गिष्यति, अस्वङ्गीत् ।

स्वङ्ग—(पुं०) [√स्वङ्ग् + घञ्] आलिङ्गन ।

स्वच्छ—(वि०) [सुष्ठु अच्छः, प्रा० स०] साफ, निर्मल । चमकीला । विशुद्ध । सफेद । सुन्दर । तंदुरुस्त, स्वस्थ । (न०) मोती । सोने और चांदी का मिश्रण । रूपामाखी । सोनामाखी । (पुं०) बिल्लौर । बेर का पेड़ । —**पत्र**– (न०) अबरक ।—**वालुक**–(न०) विशुद्ध खड़िया मिट्टी ।—**मणि**–(पुं०) फटिक पत्थर, बिल्लौरी पत्थर ।

√स्वञ्ज्—भ्वा० आत्म० सक० आलिङ्गन करना, छाती लगाना । घेर लेना, घेरे में कर लेना । उमेठना, मरोड़ना । स्वजते, स्वङ्क्ष्यते, अस्वङ्क्त ।

√स्वठ्—चु० उभ० सक० जाना । संस्कार करना और न करना । स्वठयति-ते, स्वठयिष्यति-ते, असिस्वठत्-त ।

स्वतस्—(अव्य०) [स्व+तसिल्] अपने से, आपही ।

स्वता—(स्त्री०) [स्वस्य स्वकीयस्य भावः, स्व + तल्—टाप्] स्वकीयत्व, अपना होने का भाव । यथा 'कामः स्वतां पश्यति' शकुन्तला ।

स्वत्व—(न०) [स्व+त्व] आत्म-अस्तित्व। अधिकार, स्वामित्व ।— **बोधन**—(न०) स्वामित्व का प्रमाण ।

√स्वद्—भ्वा० आत्म० अक० स्वादिष्ठ लगना, जायकेदार मालूम होना । सक० स्वाद लेना, चखना । स्वदते, स्वदिष्यते, अस्वदिष्ट ।

स्वदन—(न०) [√स्वद् + ल्युट्] चखना ।

स्वदित—(वि०) [√स्वद्+क्त] चखा हुआ । (न०) वाक्य विशेष जिसका प्रयोग श्राद्ध कर्म में किया जाता है और जिसका अभिप्राय है कि यह पदार्थ आपको स्वादिष्ट लगे ।

स्वधा—(स्त्री०) [√स्वद्+आ, पृषो० दस्य धः वा स्व√धे+क — टाप्] स्वतः प्रवृत्ति । स्वाभाविक चाञ्चल्य । निजी संकल्प या दृढ़ विचार । मृत पुरुषों के उद्देश्य से हवि आदि का देना । पितरों को भोजनादि निवेदन करना । भोज्य पदार्थ या नैवेद्य । माया या सांसारिक प्रपञ्च । (अव्य०) पितरों का सम्बोधन विशेष जो नैवेद्य निवेदन करते समय उच्चारित किया जाता है । यथा—पितृभ्यः स्वधा ।—**कार**– (पुं०) स्वधा शब्द का उच्चारण ।—**प्रिय**–(पुं०)

अग्नि।—भुज् (पुं०) मरे हुए पूर्वपुरुष। देवता।

स्वधिति—(पुं०, स्त्री०),**स्वधिती**—(स्त्री०) [स्व√धा + क्तिच्] [स्वधिति+ङीष्] कुल्हाड़ी।

√स्वन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। स्वनति, स्वनिष्यति, अस्वनीत्—अस्वानीत्। चु० स्वनयति, स्वनयिष्यति, असस्वनत्।

स्वन—(पुं०) [√ स्वन् + अप्] ध्वनि, आवाज; 'शिवाघोरस्वनां पश्चात् बुबुधे विकृतेति ताम्' र० १२.३९।—**उत्साह** (**स्वनोत्साह**)—(पुं०) गेंड़ा।

स्वनि—(पुं०)[√स्वन्+इन्]ध्वनि, शब्द। अग्नि।

स्वनिक—(वि०) [स्वन +ठन्] शब्द करने वाला।

स्वनित—(वि०) [√स्वन् + क्त] शब्दित, ध्वनित। (न०)शब्द, आवाज। बादलों की गड़गड़ाहट। गर्जन।

√स्वप्—अ० पर० अक० सोना। लेटना, आराम करना। ध्यान-मग्न होना। स्वपिति, स्वप्स्यति, अस्वाप्सीत्।

स्वप्न—(पुं०) [√ स्वप्+नन्] निद्रा, नींद। सपना, ख्वाब; 'स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु' श० ६.९। काहिली, सुस्ती। औंघाई। —**अवस्था** (**स्वप्नावस्था**)—(स्त्री०) सपना देखने की हालत।—**उपम** (**स्वप्नोपम**)—(वि०) सपने के सदृश। सपने की तरह मिथ्या।—**कर**, —**कृत्**—(वि०) नींद लाने वाला, निद्राजनक।—**गृह**, —**निकेतन**— (न०) सोने का कमरा, शयन-गृह।—**दोष**— (पुं०) सोते में इच्छा न रहते भी वीर्यपात होना। —**धीगम्य**— (वि०) सोने जैसी दशा मन की होने पर जानने योग्य।—**प्रपञ्च**— (पुं०) स्वप्न सदृश मिथ्या संसार।—**विचार**— (पुं०) स्वप्न के शुभाशुभ फल पर विचार। —**शील**—(वि०) निद्रालु, औंघासा।

स्वप्नज—(वि०) [√स्वप् + नजिङ्] शयनशील, निद्रालु।

स्वयम्—(अव्य०) [सु√ अय् +अमु] खुद, आप। अपने आप। अपनी इच्छा से।—**अर्जित** (**स्वयमर्जित**)— (वि०) खुद पैदा किया हुआ।—**उक्ति**(**स्वयमुक्ति**)—(स्त्री०) अपने आप दिया हुआ बयान।—**ग्रह** (**स्वयङ्ग्रह**)—(पुं०) बिना अनुमति के ले लेना।—**ग्राह** (**स्वयङ्ग्राह**)—(वि०) अपने आप पसंद किया हुआ।—**जात** (**स्वयञ्जात**) —(वि०) अपने आप उत्पन्न।—**दत्त** (**स्वयन्दत्त**)—(वि०) अपने आप दिया हुआ। (पुं०) वह बालक जो दत्तक होने के लिये अपने आप दूसरे को दे दिया गया हो।— **भु**—(पुं०) ब्रह्मा का नामान्तर। —**भुव**— (पुं०) प्रथम मनु। ब्रह्मा। शिव। —**भू**— (वि०) अपने आप उत्पन्न। (पुं०) ब्रह्मा। विष्णु। शिव। काल जो मूर्तिमान् हो। कामदेव।— **वर** (**स्वयंवर**)—(पुं०) स्वेच्छानुसार चुनाव, अपने आप (अपने लिये पति को) चुनना। —**वरा** (**स्वयंवरा**)-- (स्त्री०) वह कन्या जो अपने पति को अपने आप चुने।—**हारिका** (**स्वयंहारिका**)—(स्त्री०) ब्रह्मा के मानस पुत्र दुःसह की एक कन्या जो तिल का तेल, केसर का रंग आदि हरण कर लेती थी।

√स्वर्—चु० उभ० सक० दोष निकालना, ऐबजोई करना। भर्त्सना करना, फटकारना। स्वरयति-ते, स्वरयिष्यति-ते, असस्वरत्—त।

स्वर्—(अव्य०) [√स्वृ + विच्] स्वर्ग। इन्द्र-लोक जहाँ पुण्यात्मा जन अपना पुण्य-फल भोगने को अस्थायी रूप से रहते हैं। आकाश। शोभा। सूर्य और ध्रुव के बीच का स्थान। तीन व्याहृतियों में से तीसरी व्याहृति। —**आपगा** (**स्वरापगा**),—**गङ्गा**—

(स्त्री०) आकाश-गंगा ।—**गति**–(स्त्री०), —**गमन**– स्वर्ग-गमन । मृत्यु ।—**तरु** (**स्वस्तरु**)–(पुं०) स्वर्ग का वृक्ष, कल्पवृक्ष । —**दृश्**– (पुं०) इन्द्र । अग्नि । सोम । —**नदी** (**स्वर्णदी**)– (स्त्री०) मन्दाकिनी । वृश्चिकाली ।—**भानव**– (पुं०) गोमेदमणि । —**भानु**– (पुं०) राहु का नामान्तर; 'तुल्येऽपरावे स्वर्भानुर्भानुमन्तं चिरेण यत्, हिमांशुमाशु ग्रसते तन्म्रदिम्नः स्फुटं फलं' शि० २.४९ ।—**मध्य**– (न०) आकाश का मध्य विन्दु ।—**लोक**– (पुं०) स्वर्ग ।—**वधू**– (स्त्री०) अप्सरा । —**वापी**– (स्त्री०) गंगा । —**वेश्या**– (स्त्री०) अप्सरा ।—**वैद्य**– (पुं०) अश्विनीकुमार ।

स्वर—(पुं०) [√स्वर् + अच् वा√स्वृ +अप्] ध्वनि, आवाज । सरगम । सात की संख्या । उच्चारण में स्पन्दन की मात्रा । उदात्त, अनुदात्त और स्वरित । श्वास । खर्राटा ।—**ग्राम**– (पुं०) संगीत के सातों स्वरों का क्रम, स्वरसप्तक, सरगम ।—**मण्डलिका**–(स्त्री०) वीणा ।—**लासिका**– (स्त्री०) वांसुरी ।—**शून्य**–(वि०) वेसुरा । —**संयोग**–(पुं०) स्वरवर्णों का मेल ।—**सङ्क्रम**–(पुं०) सुरों के उतार-चढ़ाव का क्रम ।—**सामन्**— (पुं०) गवामयन यज्ञ के छठे मास का एक दिन ।

स्वरवत्—(वि०) [स्वर + मतुप्, वत्व] स्वर या आवाज वाला । स्वर-युक्त ।

स्वरित—(वि०) [√स्वर् + क्त] स्वर-युक्त । ध्वनित । उच्चरित । (पुं०) [स्वर +इतच्] उदात्त और अनुदात्त के वीच का, मध्यम स्वर ।

स्वरु—(पुं०) [√स्वृ + उन्] धूप । यज्ञ-स्तम्भ का भाग विशेष । यज्ञ । वज्र । तीर । सूर्य-किरण । एक तरह का विच्छू ।

स्वरुस्—(पुं०) [√स्वृ + उसि] वज्र ।

स्वर्ग–(पुं०) [स्वरिति गीयते, √गै + क वा सु √ऋज् + घञ्] ऊपर के सात लोकों में से तीसरा जिसमें सत्कर्म करने वालों की आत्मायें जाकर निवास करती हैं, देवलोक ।—**आपगा** (**स्वर्गापगा**)– (स्त्री०) मन्दाकिनी, स्वर्गङ्गा । —**ओकस्** (**स्वर्गौकस्**)–(पुं०) देवता । —**गिरि**– (पुं०) सुमेरु पर्वत ।—**द**, —**प्रद**–(वि०) स्वर्ग-प्राप्ति कराने वाला ।—**द्वार**– (न०) स्वर्ग का फाटक; 'स्वर्गद्वारकपाटपाटनपटुर्धर्मोऽपि नोपार्जितः' भर्तृ० ३.१० । शिव ।—**धेनु**– (स्त्री०) कामधेनु ।—**पति**, —**भर्तृ**– (पुं०) इन्द्र ।—**लोक**– (पुं०) देवलोक ।— **वधू**,— **स्त्री**– (स्त्री०) अप्सरा । —**साधन**– (न०) स्वर्ग-प्राप्ति का उपाय ।

स्वर्गिन्—(वि०) [स्वर्ग+इनि] देवलोक को जाने वाला । स्वर्ग में वास करने वाला । (पुं०) देवता ।

स्वर्गीय—(वि०) [स्वर्ग+छ] स्वर्ग का, स्वर्ग सम्वन्धी । स्वर्गगत, जिसका स्वर्गवास हो गया हो ।

स्वर्ग्य—(वि०) [स्वर्ग+यत्] स्वर्ग दिलाने वाला । स्वर्ग के योग्य ।

स्वर्ण—(न०) [सुष्ठु अर्णो वर्णो यस्य, प्रा० व०] सोना, सुवर्ण । धतूरा । नागकेशर । गौरसुवर्ण नामक साग ।—**अरि** (**स्वर्णारि**) (पुं०) गंधक । सीसा ।—**कण**–(पुं०) सोने का कण । कणगुग्गुल ।—**काय**– (वि०) सुनहले शरीरवाला । (पुं०) गरुड़ ।—**कार** (पुं०) सुनार ।—**गैरिक**–(न०) एक तरह का पीला गेरू ।—**चूड**–(पुं०) नीलकंठ । मुर्गा ।—**ज**– (न०) राँगा ।—**दीधिति**– (पुं०) अग्नि ।—**पक्ष**– (पुं०) गरुड़ का नाम । —**पाठक**– (पुं०) सोहागा ।—**पुष्प**– (पुं०) चंपक वृक्ष । आरग्वध । कीकर । कपित्थ । पेठा ।—**बन्ध**,—**बन्धक**–

(पुं०) सोने की गिरवी ।—**भूमिका**—(स्त्री०) अदरक ।—**भूषण**— (पुं०) पीला गेरू । आरग्वध ।—**भृङ्गार**—(पुं०) पीला भँगरा । स्वर्ण-कलश ।—**माक्षिक**—(न०) सोनामक्खी ।—**रेखा**, —**लेखा**—(स्त्री०) सोने की लकीर ।—**वणिज्**—(पुं) सोने का व्यापारी । सर्राफ ।—**वर्णा**— (स्त्री०) हल्दी ।—**विद्या**— (स्त्री०) सोना बनाने की विद्या, कीमियागरी ।.

√स्वर्द्—भ्वा० आत्म० सक० प्रसन्न करना । स्वाद लेना । अक० संतुष्ट होना । स्वर्दते, स्वर्दिष्यते, अस्वर्दिष्ट ।

स्वल्प—(वि०) [सुष्ठु अल्पः, प्रा० स०] बहुत कम या थोड़ा । अत्यन्त ह्रस्व, बहुत छोटा । तुच्छ ।—**आहार** (**स्वल्पाहार**)—(वि०) बहुत कम खाने वाला ।—**कङ्क**—(पुं०) चील पक्षी का एक भेद ।—**बल**—(वि०) बहुत कमजोर । —**विषय**—(पुं०) तुच्छ विषय । छोटा भाग ।—**व्यय**—(पुं०) बहुत थोड़ा खर्च ।—**व्रीड**—(वि०) निर्लज्ज, बेहया ।—**शरीर**—(वि०) बौना, ठिंगना ।

स्वल्पक—(वि०) [स्वल्प + कन्] दे० 'स्वल्प' ।

स्वल्पीयस्—(वि०) [स्वल्प + ईयसुन्] अपेक्षाकृत कम । अपेक्षाकृत छोटा ।

स्वल्पिष्ठ—(वि०) [स्वल्प+इष्ठन्] सब से छोटा । सब से कम ।

स्वसृ—(स्त्री०) [सु√ अस्+ ऋन्] बहिन । —'स्वसारमादाय विदर्भनाथः पुरप्रवेशाभिमुखो बभूव ।' —रघुवंश ।

√स्वस्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । स्वस्कते, स्वस्किष्यते, अस्वस्किष्ट ।

स्वस्ति—(अव्य०) [सु√अस् + क्तिच् वा अस्तीति विभक्तिप्रतिरूपकम् अव्ययम्, प्रा० स०] क्षेम, कल्याण, आशीर्वाद और पुण्य आदि स्वीकार-सूचक अव्यय ।—**अयन** (**स्वस्त्ययन**)—(न०) समृद्धि प्राप्ति का साधन । मंत्र-द्वारा अनिष्ट दूर करना । भेंट पाने के बाद ब्राह्मण का दिया हुआ आशीर्वाद । "प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य —रघुवंश ।—**द**,— **भाव**—(पुं०) शिवजी का नामान्तर ।—**मुख**—(पुं०) पत्र आदि (जो स्वस्ति से आरंभ हो) । ब्राह्मण । बन्दीजन, भाट ।—**वाचन**, —**वाचनक**, —**वाचनिक**— (न०) यज्ञ करने के पूर्व की जाने वाली एक विधि या क्रिया । पुष्पोंद्वारा आशीर्वाद देने का कर्मविशेष ।—**वाच्य**— (न०) बधाई । आशीर्वाद ।

स्वस्तिक—(पुं०) [स्वस्ति + ठन्] एक मांगलिक चिह्न ( ); 'स्तनविनिहितहस्तस्वस्तिकाभिर्वधूभिः' माल० ४.१० । शरीर के विशिष्ट अंगों में होने वाला इसी प्रकार का चिह्न । इस चिह्न की शकल की पट्टी । नष्ट शल्य निकालने का एक प्राचीन यंत्र । कोई भी शुभ पदार्थ । चौराहा, चतुष्पथ । चावल के आटे से बना हुआ त्रिकोण के आकार का रूप विशेष । एक प्रकार का पकवान । लंपट । लहसुन । सितावर शाक । मुर्गा । सांप के फन पर की रेखा । (पुं०, न०) वह घर जिसमें पश्चिम एक और पूरब दो दालान हों । एक योगासान ।

स्वस्त्रीय, स्वस्त्रेय—(पुं०) [स्वसृ + छ] [स्वसृ+ढ] भांजा, बहिन का बेटा ।

स्वस्त्रीया, स्वस्त्रेयी—(स्त्री०) [स्वस्त्रीय +टाप्] [स्वस्त्रेय+ङीप्] भांजी, बहिन की बेटी ।

स्वागत—(न०) [सु—आ √ गम्+क्त] सुख-पूर्वक आना । [स्वागत + अच्] किसी के आगमन पर कुशल-प्रश्न आदि से उसका अभिनंदन करना, अगवानी ।

स्वाङ्किक—(पुं०) [स्वाङ्क+ठक्] मृदंग । मृदंग बजाने वाला ।

स्वाच्छन्द्य—(न०) [स्वच्छन्द + ष्यञ्] स्वतंत्रता, स्वाधीनता। स्वास्थ्य।

स्वातन्त्र्य—(न०) [स्वतन्त्र + ष्यञ्] स्वाधीनता, आजादी।

स्वाति, स्वाती—(स्त्री०) [स्व√अत्+इन्, पक्षे ङीष्] सूर्य की एक पत्नी का नाम। तलवार। २७ नक्षत्रों में से १५वां शुभ नक्षत्र; 'स्वात्यां सागरशुक्तिकुक्षिपतितं तन्मौक्तिकं जायते' भर्तृ० २.६७।

√स्वाद्—भ्वा० आत्म० सक० प्रसन्न करना। स्वाद लेना या चखना। अक० प्रसन्न होना। स्वादते, स्वादिष्यते, अस्वादिष्ट।

स्वाद—(पुं०) [√स्वद् वा √स्वाद्+घञ्] कुछ खाने-पीने से जीभ को होने वाला रसानुभव, जायका। रसानुभूति, आनन्द। इच्छा, चाह। मीठा रस।

स्वादन—(न०) [√स्वाद्+ल्युट्] स्वाद लेना, चखना। रस या आनन्द लेना।

स्वादिमन्—(पुं०) [स्वाद + इमनिच्] मधुरिमा, मिठास।

स्वादिष्ठ—(वि०) [स्वादु + इष्ठन्, डित्] अतिशय स्वाद वाला, बहुत ही जायकेदार।

स्वादीयस् —(वि०) [स्वादु + ईयसुन्] स्वादुतर, अपेक्षाकृत अधिक जायकेदार।

स्वादु—(वि०) [स्त्री०—**स्वादु या स्वाद्वी**] [√स्वद् +उण्] स्वाद- युक्त, जायकेदार। मीठा, मधुर। मनोज्ञ, मनोहर। प्रिय। (पुं०) मधुर रस। गुड़। जीवक ओषधि। बेर। अगर। महुआ। चिरौंजी। अनार। (न०) दूध। सेंधा नमक। (स्त्री०) द्राक्षा, दाख। —**अन्न** (**स्वाद्वन्न**)–(न०) मिठाई। पकवान। —**अम्ल** (**स्वाद्वम्ल**)–(पुं०) अनार का वृक्ष। —**खण्ड**– (पुं०) मिठाई का टकड़ा। गुड़ का भेला। —**फल**– (न०) बेर का फल। —**मूल**–(न०) गाजर। — **रसा**– (स्त्री०) आमड़ा, अम्रातक। सतावरी। काकोली। मदिरा। अंगूर। —**शुद्ध**– (न०) सेंधा नमक। समुद्री नमक।

स्वाद्वी—(स्त्री०) [स्वादु + ङीप्] दाख। मुनक्का। फूट। खजूर।

स्वान—(पुं०) [√स्वन् + घञ्] शब्द, आवाज। कोलाहल।

स्वाप—(पुं०) [√स्वप् + घञ्] निद्रा, नींद। स्वप्न, सपना। औंघाई, निंदास। किसी अंग के दब जाने से कुछ देर के लिये उसका सुन्न पड़ जाना या सो जाना।

स्वापतेय—(न०) [स्वपति + ढञ्] धन, सम्पत्ति; 'स्वापतेयकृते मर्त्याः किं किं नाम न कुर्वते' पं० २.१५६।

स्वाभाविक—(वि०) [स्त्री०—**स्वाभाविकी**] [स्वभाव+ठञ्] स्वभाव-सम्बन्धी। (पुं०) बौद्धों का सम्प्रदाय विशेष।

स्वामिता—(स्त्री०), **स्वामित्व**–(न०) [स्वामिन्+तल्–टाप्] [स्वामिन्+त्व] मालकाना, स्वत्वाधिकार। प्रभुत्व, अधिराजत्व।

स्वामिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्वामिनी**] [स्व+मिनि (अस्त्यर्थे), दीर्घ। (समास में न का लोप हो जाता है)] स्वत्वाधिकारी, मालकाने के हक रखने वाला। (पुं०) मालिक। प्रभु। राजा। पति, भर्ता। गुरु। पण्डित ब्राह्मण। सर्वोच्च श्रेणी का तपस्वी या साधु। कार्त्तिकेय। विष्णु। शिव। वात्स्यायन ऋषि। गरुड़। —**उपकारक** (**स्वाम्युपकारक**)– (पुं०) घोड़ा। —**कार्य**–(न०) राजा या मालिक का कार्य। —**पाल**– (पुं०) (पशु का) मालिक और पालने वाला। —**भट्टारक**– (पुं०) उत्तम स्वामी। —**सद्भाव**– (पुं०) किसी मालिक या स्वामी की विद्यमानता। स्वामी या प्रभु की नेकी। —**सेवा**–(स्त्री०) स्वामी या मालिक की सेवा। पति का सम्मान।

स्वाम्य—(न०) [स्वामिन् + ष्यञ्] स्वामित्व, मालिकपन। सम्पत्ति का स्वत्वाधिकार। शासन।

स्वायम्भुव—(वि०) [स्त्री०—**स्वायम्भुवी**] [स्वयम्भू +अण्] ब्रह्मा-सम्बन्धी। ब्रह्मा से उत्पन्न। (पुं०) ब्रह्मा के पुत्र प्रथम मनु का नाम।

स्वारसिक—(वि०) [स्त्री०—**स्वारसिकी**। [स्वरस+ठक्]स्वाभाविक मिठास वाला। प्राकृतिक।

स्वारस्य—(न०) [स्वरस् +ष्यञ्] स्वाभाविक उत्तमता या श्रेष्ठता। सौन्दर्य। स्वाभाविकता।

स्वाराज्—(पुं०) [स्वर्√राज्+ क्विप्] इन्द्र का नामान्तर।

स्वाराज्य—(न०) [स्वराज् + ष्यञ्] ब्रह्मत्व। [स्वाराज्+ष्यञ्] इन्द्रत्व।

स्वारोचिष—(पुं०) [स्वरोचिषः अपत्यम्, स्वरोचिस्+अण्] दूसरे मनु का नाम।

स्वालक्षण्य—(न०) [स्वलक्षण + ष्यञ्] स्वाभाविक पहचान के चिह्न या लक्षण। विशेषता।

स्वाल्प—(वि०) [स्त्री०—**स्वाल्पी**] [स्वल्प +अण्] बहुत थोड़ा। बहुत छोटा। (न०) बहुत कमी। बहुत छोटापन।

स्वास्थ्य—(न०) [स्वस्थ+ष्यञ्] स्वाधीनता। विक्रम। तंदुरुस्ती। सुख-चैन। सन्तोष।

स्वाहा—(अव्य०) [सु— आ √ह्वे +डा] देवता के उद्देश्य से हवि छोड़ते समय इस शब्द का उच्चारण किया जाता है। (स्त्री०) अग्नि की पत्नी का नाम। एक मातृका। दुर्गा देवी की एक शक्ति।—**कार**— (पुं०) स्वाहा शब्द का उच्चारण; 'स्वाहास्वधाकारविवर्जितानि श्मशानतुल्यानि गृहाणि तानि' सुभा०।—**पति**, —**प्रिय**—(पुं०) अग्नि।—**भुज्**—(पुं०) देवता।

√**स्विद्**—दि० पर० अक० पसीना निकलना। स्विद्यति, स्वेत्स्यति, अस्विदत्।

स्विद्—(अव्य०) [√ स्विद् + क्विप्] प्रश्नवाची शब्द। यह सन्देह और आश्चर्य-द्योतक भी है। यह कभी-कभी या, एवं, अथवा के अर्थ में भी व्यवहृत होता है।

स्वीकरण—(न०), **स्वीकार**—(पुं०), **स्वीकृति**—(स्त्री०) [अस्वस्य स्वस्य करणम्, स्व+च्वि √ कृ+ल्युट्] [स्व+च्वि√कृ +घञ्] [स्व+च्वि√कृ + क्तिन्] ग्रहण करना, अंगीकार करना। मानना। प्रतिज्ञा, इकरार। विवाह।

स्वीय—(वि०) [स्व+छ (अत्र अपाणिनीयैः न कुक् इति मन्यते)] निजी, अपना।

√**स्वृ**—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। (सक०) पीड़ित करना। प्रशंसा करना। पढ़ना। स्वरति, स्वरिष्यति, अस्वारीत् —अस्वार्षीत्।

√**स्वॄ**—क्र्या० पर० सक० वध करना। स्वृणाति, स्वरि (री) ष्यति, अस्वारीत्।

√**स्वेक्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। स्वेकते, स्वेकिष्यते, अस्वेकिष्ट।

स्वेद—(पुं०) [√ स्विद् + घञ्] पसीना। भाप। गरमी। [√स्विद् + णिच्+अच्] पसीना लाने का साधन।—**उद** (**स्वेदोद**), —**उदक** (**स्वेदोदक**),—**जल**— (न०) पसीना।—**ज**— (वि०) पसीने से उत्पन्न।

स्वेदनिका—(स्त्री०) [√स्विद् + ल्युट्—अन, ङीप् +कन्—टाप्, ह्रस्व] तवा। देगची। भभका। पाकशाला।

स्वैर- (न०) [स्वस्य ईरम्, स्व√ईर् +अच्, वृद्धि] मनमानी, स्वेच्छाचारिता। (वि०) [स्वैर+अच्] मनमाना काम करने वाला, स्वेच्छाचारी; 'अव्याहतैः स्वैरगतैश्च तस्याः' र० २.५। मंद, धीमा। सुस्त, काहिल। ऐच्छिक, यथेच्छ।

स्वैरता—(स्त्री०), **स्वैरत्व**–(न०) [स्वैर +तल्—टाप्] [स्वैर+त्व] स्वेच्छाचरिता, मनमानी। स्वतन्त्रता।

स्वैरिणी—(स्त्री०) [स्वैरिन् +ङीप्] व्यभिचारिणी स्त्री। (चतुःपुरुषगामिनी स्त्री को स्वैरिणी कहते हैं।)

स्वैरिन्—(वि०) [स्वेन ईरितुम् शीलम् अस्य, स्व√ईर् +णिनि] स्वेच्छाचारी, स्वतंत्र।

स्वैरिन्ध्री—दे० 'सैरन्ध्री'।

स्वोरस—(पुं०) [?] चिकने पदार्थों का वह तलछट जो पत्थर से पिसा हुआ हो।

स्वोवशीय—(न०) [?, दे० 'श्वोवसीयस'] आनन्द, सुख। समृद्धि (विशेष कर भविष्य जीवन सम्बन्धी)।

ह

ह—संस्कृत वर्णमाला का अन्तिम वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान कंठ है और यह ऊष्म वर्ण कहलाता है। (अव्य०) [√हा +ड] अपने से पूर्वगत शब्द पर जोर देने वाला अव्यय विशेष। सचमुच, निश्चय, दरहकीकत शब्दों के अर्थ को भी यह सूचित करता है। वैदिक साहित्य में यह पूरक का भी काम देता है और उस दशा में इसका अर्थ कुछ भी नहीं होता। यथा— 'तस्य ह शतं जाया बभूवुः' 'तस्य ह पर्वतनारदौ गृहम् ऊषतुः।'—यह कभी-कभी सम्बोधन के लिये और कदाचित् घृणा और उपहास के लिये भी प्रयुक्त किया जाता है। (पुं०) जल। आकाश। रक्त। शिवजी का एक रूप। शून्य। स्वर्ग। ध्यान। धारण। शुभ। भय। ज्ञान। गर्व। वैद्य। कारण। चन्द्रमा। विष्णु। अश्व। युद्ध। हास। पापहरण। सकोपवारण। सूखना। निंदा। प्रसिद्धि। नियोग। आह्वान। अस्त्र। वीणा का स्वर। आनन्द। ब्रह्म।

हंस—(पुं०) [√हस् + अच्, पृषो० वर्णागमात् साधुः] बत्तख की तरह का एक प्रसिद्ध जल-पक्षी। [इस पक्षी का जो वर्णन संस्कृत साहित्य में दिया हुआ है वह वास्तविक कम काव्यमय अधिक है। कवियों ने इसे ब्रह्मा जी का वाहन और वर्षा ऋतु के आरम्भ में इसका मानसरोवर को चला जाना लिखा है। अधिकांश कवियों के मतानुसार हंस में शक्ति है कि वह दूध में मिले हुए जल को दूध से अलग कर दे। यथाः— 'सारं ततो ग्राह्यमपास्य फल्गु, हंसो यथा क्षीरमिवांबुमध्यात्।' 'नीरक्षीरविवेके हंसालस्यं त्वमेव तनुषे चेत्। विश्वस्मिन्नधुनान्यः कुलव्रतं पालयिष्यति कः।'—परब्रह्म, परमात्मा। जीवात्मा। शरीरगत पवन विशेष। सूर्य। शिव। विष्णु। कामदेव। सन्तुष्ट राजा। संन्यासियों का एक भेद। अलौकिक गुणों से युक्त मनुष्य। अश्व। उत्तम। भार-वाहक बैल या भैंसा। चांदी। ईर्ष्या। विशेष आकृति का मन्दिर। दीक्षा-गुरु। कल्मष-रहित पुरुष। पर्वत।—**अङ्घ्रि** (**हंसाङ्घ्रि**)–(पुं०) ईंगुर, शिगरफ। हंस का चरण।—**अधिरूढा** (**हंसाधिरूढा**)–(स्त्री०) सरस्वती।—**अभिख्य** (**हंसाभिख्य**)–(न०) चाँदी।—**कान्ता**– (स्त्री०) हंसी।—**कीलक**–(पुं०) एक रतिबन्ध; 'नारीपादद्वयं कृत्वा कान्तस्योरुयुगोपरि। कटीमान्दोलयेत् यत्नात् बन्धोऽयं हंसकीलकः।'—**गति**–(स्त्री०) हंस जैसी चाल। ब्रह्म-प्राप्ति।—**गद्गदा**– (वि०) मधुरभाषिणी स्त्री।—**गामिनी**– (स्त्री०) हंस जैसी चाल चलने वाली स्त्री। ब्रह्माणी।—**तूल**–(पुं०, न०) हंस के कोमल पर।—**दाहन**–(न०) अगर।—**नाद**–(पुं०) हंस की बोली।—**नादिनी**–(स्त्री०) विशेष प्रकार की स्त्री जिसकी परिभाषा यह है: —'गजेन्द्रगमना तन्वी कोकिलालापसंयुता। नितम्बे गुर्विणी या स्यात् सा स्मृता हंसनादिनी।'—**माला**–(स्त्री०) हंसों की

पंक्ति। एक तरह की बत्तख।—**युवन्**–(पुं०) हंस का बच्चा।—**रथ,** —**वाहन**–(पुं०) ब्रह्मा के नामान्तर।—**राज**–(पुं०) हंसों का राजा, बड़ा हंस। एक बूटी।—**रुत**– (न०) हंस का शब्द। एक छंद।—**लोमश**– (न०) कासीस।—**लोहक**–(न०) पीतल।

हंसक—(पुं०) [हंस + कन्] हंस। [हंस √कै+क] नूपुर; 'सरित इव सविभ्रमप्रपातृप्रणदितहंसकभूषणा विरेजुः' शि० ७.२३।

हंसिका, हंसी—(स्त्री०) [हंस + कन्–टाप्, इत्व] [हंस+ङीष्] मादा हंस।

हंहो—(अव्य०) [हम् इत्यव्यक्तं जहाति, हम्√हा+डो] सम्बोधनात्मक अव्यय जो हो 'हल्लो' के समान है। तिरस्कार, अहंकारसूचक अव्यय। प्रश्नवाची अव्यय।

हक्क—(पुं०) [हक् इत्यव्यक्तं कायति, हक् √कै+क] हाथियों का आह्वान।

हक्कार—(पुं०) बुलाना।

हञ्जा, हञ्जे—(अव्य०) [हम् इत्यव्यक्तं जप्यतेऽत्र, हम् √ जप् +डा] [हम्√जप् +डे] चाकरानी या दासी को बुलाने के लिए काम में लाया जाने वाला अव्यय।

हञ्जि—(पुं०) [हम्√जि + डि] छींक।

√हट्—भ्वा० पर० अक० चमकना, चमकीला होना। हटति, हटिष्यति, अहटीत्–अहाटीत्।

हट्ट—(पुं०) [√हट्+ट] हाट, बाजार।—**चौरक**—(पुं०) वह चोर जो हाट या बाजार से चोरी करे, गँठकटा।—**वाहिनी**–(स्त्री०) बाजार में बनी हुई पानी निकलने की नाली।—**विलासिनी**– (स्त्री०) वेश्या, रंडी। एक प्रकार का गन्धद्रव्य। हल्दी।

√हठ्—भ्वा० पर० सक० कील ठोंकना। बलात्कार करना। उछलना। हठति, हठिष्यति, अहाठीत्–अहठीत्।

हठ—(पुं०) [√ हठ् + अच्] बलात्कार, जबरदस्ती। अत्याचार, जुल्म। किसी बात पर अड़े रहने की प्रवृत्ति, दुराग्रह, जिद। शत्रु के पृष्ठ भाग में पहुँच जाना।—**योग**–(पुं०) योग के दो भेदों (राजयोग और हठयोग) में से एक जिसमें नेती, धोती आसन आदि क्रियाओं द्वारा परमात्मतत्त्व की प्राप्ति की जाती है।—**पर्णी**–(स्त्री०) पानी में पैदा होने वाला एक पौधा, कुंभी।

हठालु—(पुं०) [हठः प्लवमानः आलुरिव उपमित स०] पानी का एक पौधा, कुंभी।

हडि—(पुं०) [√ हठ् +इन्, पृषो० साधुः] प्राचीन काल की काठ की बेड़ी जो पैर में डाली जाती थी।

हडिक, हड्डक, हड्डि, हड्डिक—(पुं०) [√हठ् +इकक्, पृषो० साधुः] [हड्ड + कन्] [√हठ्+इन्, पृषो० साधुः] [हड्डि + कन्] भंगी आदि नीच जाति।

हड्ड—(न०) [√ हठ्+ड, पृषो० डस्य नेत्त्वम्] हड्डी।—**ज**—(न०) गूदा, मज्जा।

हण्डा—(स्त्री०) [√हन्+डा] निम्न श्रेणी की स्त्री के प्रति तथा निम्न श्रेणी की स्त्रियों का परस्पर सम्बोधन करने का अव्यय।—'हण्डे हञ्जे हलाह्वाने नीचां चेटीं सखीं प्रति।'

हण्डिका—(स्त्री०) [हण्डा + कन्, ह्रस्व, टाप्, इत्व] मिट्टी का बड़ा बरतन, हाँड़ी।

हण्डी—(स्त्री०) [हण्डा + ङीष्] हाड़ी।

हण्डे—(अव्य०) [√ हन् + डे] दे० हण्डा।

हत—(वि०) [√हन् + क्त] वध किया हुआ। ताड़ित। चोटिल किया हुआ। नष्ट किया हुआ। खोया हुआ। तंग किया हुआ। वंचित किया हुआ। स्पर्श किया हुआ। ग्रस्त। निकृष्ट। निराश। गुणित।—**अंहस्** (**हतांहस्**)–(वि०) पाप से दूर।—

अर्थ (हतार्थ)– (वि०) निराश ।—आश (हताश)–(वि०) आशा-रहित । निर्बल, शक्ति-हीन । निष्ठुर । वांझ । नष्ट । दुष्ट । —कण्टक–(वि०) शत्रु या कांटों से रहित या मुक्त ।—चित्त–(वि०) घबड़ाया हुआ, परेशान ।—त्विष्– (वि०) धुँधला; 'निशीथदीपाः सहसा हतत्विषः बभूवुरा-लेख्यसमर्पिता इव' र० ३.१५ ।—दैव— (वि०) अभागा, वह जिसके ग्रह अनु-कूल न हों ।—प्रभाव, —वीर्य–(वि०) शक्ति या विक्रम से हीन ।—बुद्धि– (वि०) बुद्धि-हीन । —भाग, —भाग्य– (वि०) बदकिस्मत, अभागा । —मूर्ख– (पुं०) बड़ा मूर्ख ।—लक्षण– (वि०) अभागा । —शेष– (वि०) जो जीवित बच गया हो ।— श्री, —सम्पद्– (वि०) श्री-भ्रष्ट, धन-हीन । —साध्वस्– (वि०) भय से मुक्त ।—स्त्रीक– (वि०) जिसने किसी स्त्री का वध किया हो ।—स्मर– (पुं०) शिव ।

हतक—(वि०) [हत+कन्] नष्टप्राय । दीन-दुःखी । नीच; 'न खलु विदितास्ते तत्र निवसन्तश्चाणक्यहतकेन' मु० २ । (पुं०) नीच व्यक्ति । डरपोक या कायर आदमी ।

हति—(स्त्री०) [√ हन् + क्तिन्] नाश । वध । ताड़न । आघात । हानि । असफलता ।

हत्नु—(पुं०) [√हन् + क्त्नु] हथियार । रोग ।

हत्या—(स्त्री०) [√हन् + क्यप्—टाप्] वध, कत्ल ।

हथ—(पुं०) [√हन् + क्थ] व्याकुल मनुष्य ।

√हद्—भ्वा० आत्म० अक० हगना, पाखाना फिरना । हदते, हत्स्यते, अहत्त ।

हदन—(न०) [√ हद् + ल्युट्] मल त्यागना, टट्टी करना ।

√हन्—अ० पर० सक० वध करना । मार डालना । ताड़ना करना, पीटना । घायल करना, चोटिल करना । तंग करना, सताना । त्यागना । दबाना । स्थानान्तरित करना, हटाना । नाश करना । जीतना, हराना । बाधा देना, रोकना । भ्रष्ट करना, खराब करना । उठाना । ऊँचा करना । यथाः— 'तुरगखुरहतस्तथा हि रेणुः ।'—शकुन्तला । गुणा करना, जरब देना । जाना (इस अर्थ में बहुत ही विरल प्रयोग होता है) । हन्ति, हनिष्यति, अवधीत् ।

हन—(वि०) [√हन् +अच्] हनन करने वाला, वध करने वाला । नाश करने वाला ।

हनन—(न०) [√हन्+ल्युट्] वध करना, जान से मार डालना । पीटना । ठोंकना । चोटिल करना । गुणा ।

हनु, हनू—(पुं०, स्त्री०) [√हन् + उन्, स्त्रीत्वपक्षे ऊङ्] ठुड्ढी । ऊपरी जबड़ा । (स्त्री०) जीवन के लिये अनिष्ट करने वाली चीज । हथियार । रोग । मृत्यु । ओषधि विशेष । वेश्या ।—ग्रह–(पुं०) एक वातरोग जिसमें जबड़ा बैठ जाता है । —मूल– (न०) जबड़े की जड़ ।

हनुमत्, हनूमत्—(पुं०) [हनु(नू)+मतुप्] सुग्रीव-सचिव एवं श्रीराम-दूत हनुमान् जी ।

हनूष—(पुं०) [√ हन् + ऊषन्] भूत । दैत्य ।

हन्त—(अव्य०) [√हन्+त] हर्ष; 'हन्त भो ! लब्धम्मया स्वास्थ्यम्' श० ४ । आश्चर्य । व्यस्तता । दयालुता । दुःख । शोक । सौभाग्य । आशीर्वाद । वाक्या-रम्भ ।—कार– (पुं०) हन्त का चीत्कार । अतिथि को भेंट में दिया जाने वाला नैवेद्य ।

हन्तु—(पुं०) [√हन्+तुन्] मृत्यु । बैल ।

हन्तृ—(वि०) [स्त्री०—हन्त्री] [√हन् +तृच्] मारने वाला, वध करने वाला ।

हटाने वाला। नाश करने वाला। (पुं०) वध करने वाला व्यक्ति, हत्यारा। डाकू।

हम्—(अव्य०) [√हा+डमु] सक्रोध कथन। शिष्टता या सम्मान सूचक अव्यय।

हम्बा, हम्भा—(स्त्री०) [हम् √मा+अङ—टाप्, पक्षे पृषो० साधुः] गाय, बैल आदि के बोलने का शब्द, राँभना।—**रव**—(पुं०) राँभने का शब्द।

√हम्म्—भ्वा० पर० सक० जाना। हम्मति, हम्मिष्यति, अहम्मीत्।

√हय्—भ्वा० पर० सक० जाना। पूजा करना। अक० ध्वनि करना। थक जाना। हयति, हयिष्यति, अहयीत्।

हय—(पुं०) [√ हय् वा √हि + अच्] घोड़ा। एक विशेष जाति का मनुष्य। सात की संख्या। इन्द्र का नामान्तर। धनु राशि।—**अध्यक्ष** (**हयाध्यक्ष**)–(पुं०) घुड़सार का निरीक्षक।—**आयुर्वेद** (**हयायुर्वेद**)–(पुं०) अश्व-चिकित्सा सम्बन्धी शास्त्र, शालिहोत्र विद्या।—**आरूढ** (**हयारूढ**)–(पुं०) घुड़सवार, अश्वारोही।—**आरोह** (**हयारोह**)– (पुं०) घुड़सवार। घोड़े पर सवार होने की क्रिया।—**इष्ट** (**हयेष्ट**)-(पुं०) जवा, यव।—**उत्तम** (**हयोत्तम**)–(पुं०) उत्तम घोड़ा।—**कोविद**–(वि०) घोड़ों को पालने, उनको सिखलाने आदि की विद्या में निपुण।—**ग्रीव**–(पुं०) विष्णु का एक अवतार (इसने मधु-कैटभ से वेदों का उद्धार किया था)। एक असुर।—**द्विषत्**– (पुं०) भैंसा।—**प्रिय**–(पुं०) यव, जौ।—**प्रिया**– (स्त्री०) खजूर। अश्वगंधा।—**मारण**–(पुं०) कनेर। पीपल।—**मेध**– (पुं०) अश्वमेध यज्ञ।—**वाहन**–(पुं०) कुबेर का नामान्तर।—**शाला** –(स्त्री०) घोड़े का अस्तवल।—**शास्त्र**– (न०) घोड़ों को शिक्षा देने की विद्या।—**शीर्ष**, —**शीर्षन्**– (पुं०) विष्णु।

हयङ्कष—(पुं०) [हय√कष्+ खच्, मुम्] इन्द्र का सारथि, मातलि। सारथि।

हयी—(स्त्री०) [हय+ङीष्] घोड़ी।

हर—(वि०) [स्त्री०—**हरा, हरी**] [√हृ +अच्] हरने वाला, दूर करने वाला। लाने वाला। ले जाने वाला। ग्रहण करने वाला। आकर्षक, मोहक। (पाने-का) अधिकारी। घेरने या रोकने वाला। विभाजक। (पुं०) शिव। अग्नि का नाम। गधा। भिन्न का भाजक। [√हृ + अप्] हरण। विभाजन।—**गौरी**–(स्त्री०) अर्धनारी-नटेश्वर शिव।—**चूड़ामणि**–(पुं०) शिव जी की कँलगी का रत्न, चन्द्रमा।—**तेजस्**– (न०) पारा, पारद।—**नेत्र**– (न०) शिव का नेत्र। तीन की संख्या।—**बीज**– (न०) शिव का बीज, पारा।—**शेखरा**– (स्त्री०) गंगा।—**सूनु**– (पुं०) स्कन्द।—**हूरा**–(स्त्री०) अंगूर।

हरक—(पुं०) [हर+कन्] चोर। दुष्ट, गुंडा। भाजक।

हरण—(न०) [√हृ+ल्युट्] पकड़ना। ले जाना। चुराना। हटाना। वंचित करना। नाश करना। विभाजन। विद्यार्थी के लिये दान। बाहु। वीर्य। सुवर्ण।

हरि—(वि०) [√हृ+इन्] हरा। भूरा या बादामी। पीला। (पुं०) विष्णु। इन्द्र; 'तमभ्यनन्दत् प्रथमं प्रबोधितः प्रजेश्वरः शासनहारिणा हरेः' र० ३.६८। ब्रह्मा। यम। सूर्य। चन्द्रमा। कृष्ण। मानव। किरण। शिव। अग्नि। वायु। सिंह। घोड़ा। इन्द्र का घोड़ा। वानर; 'मुमूर्च्छ सख्यं रामस्य समानव्यसने हरौ' र० १२.५७। कोयल। मेढक। तोता। हंस। सर्प। भूरा या पीला रंग। मयूर। भर्तृहरि का नामान्तर। साठ संवत्सरों में से एक।

सिंहराशि। शृगाल, गीदड़। गरुड़ का एक पुत्र। बांस। मूंग। —**अक्ष** (**हर्यक्ष**)–(पुं०) सिंह। बंदर। कुबेर। शिव।—**अश्व** (**हर्यश्व**)–(पुं०) इन्द्र। शिव।—**कान्त**– (वि०) इन्द्र का प्यारा। सिंह की तरह मनोहर।—**केलीय**– (पुं०) वंग देश, बंगाल।—**केश**–(पुं०) विष्णु।—**चन्दन**– (न०) पीत चंदन। चंदन विशेष। स्वर्ग के पांच वृक्षों में से एक।—'पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः। सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम्॥' चांदनी। केसर। कमल का पराग।—**ताल**–(पुं०) पीले रंग का कबूतर। (न०) हरताल। —**तालिका**– (स्त्री०) भाद्रशुक्ला तृतीया (यद्यपि 'वाचस्पत्य' आदि कोशों में भाद्र-शुक्ला चतुर्थी का उल्लेख है किन्तु हमारे यहां भाद्र-शुक्ला तृतीया को ही हरितालिकाव्रत या तीज पर्व मानने की परम्परा है)।—**ताली**– (स्त्री०) दूर्वा घास। आकाश-रेखा। तलवार का फल। माल-कँगनी। वायु-मण्डल।—**तुरङ्गम**—(पुं०) इन्द्र का नाम। —**दास**–(पुं०) विष्णु-भक्त।—**दिन**– (न०) विष्णु उपासना का दिवस विशेष। एकादशी। —**देव**– (पुं०) श्रवण नक्षत्र।—**द्रव**– (पुं०) नागकेसर-चूर्ण। हरा रस।—**द्वार**–(न०) उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थ।—**नेत्र**– (न०) विष्णु की आंख। सफेद कमल। (पुं०) उल्लू।—**पद**–(न०) वैकुण्ठ। वसन्त कालीन वह दिन जब दिन और रात बराबर होती है (२१ मार्च)।—**प्रिय**– (पुं०) शिव। (न०) रक्त या कृष्ण चंदन। — **प्रिया**– (स्त्री०) लक्ष्मी। तुलसी। पृथिवी। द्वादशी तिथि।—**भुज्**– (पुं०) सांप।— **मन्थ**–(पुं०) गनियारी का पेड़, अग्निमन्थ। चणक, चना। मटर।—**मन्थक**– (पुं०) चना। गनियारी।—**लोचन**– (पुं०) केकड़ा। उल्लू।—**वंश**– (पुं०) हरि या कृष्ण का वंश। एक प्रसिद्ध ग्रंथ जो महाभारत का परिशिष्ट है।—**वल्लभा**– (स्त्री०) लक्ष्मी। तुलसी। जया। अधिक मास की एकादशी।—**वास**–(पुं०) अश्वत्थ, पीपल।—**वासर**–(पुं०) एकादशी।—**वाहन**– (पुं०) गरुड़। इन्द्र। सूर्य।—**शर**– (पुं०) शिव जी का नामान्तर।—**सख**–(पुं०) गन्धर्व।—**सङ्कीर्तन**– (न०) विष्णु का नाम कीर्तन। —**सुत**, —**सूनु**– (पुं०) अर्जुन का नाम। —**हय**–(पुं०) इन्द्र। सूर्य। कार्त्तिकेय। गणेश।— **हर** –(पुं०) विष्णु और शिवा-त्मक देव।— **हेति**–(स्त्री०) इन्द्रधनुष। विष्णु का चक्र।

हरिक—(पुं०) [हरि+कन्] पीले या भूरे रंग का घोड़ा।

हरिण—(वि०) [स्त्री०—**हरिणी**] [√हृ+इनन्] भूरे या बादामी रंग का। हरा। (पुं०) हिरन। [ये पांच तरह के कहे गये हैं। यथाः– 'हरिणश्चापि विज्ञेयः पञ्चभेदोऽत्र भैरव। ऋष्यः खड्गी रुरुश्चैव पृषतश्च मृगस्तथा।]पीलापन लिये सफेद रंग। हंस। सूर्य। विष्णु। शिव।–**अक्ष** (**हरिणाक्ष**)– (वि०) हिरन जैसी आंखों वाला।—**अक्षी** (**हरिणाक्षी**)–(स्त्री०) हरिण जैसी आंखों वाली स्त्री। —**अङ्क** (**हरिणाङ्क**)–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—**कलङ्क**, —**धामन्**– (पुं०) चन्द्रमा।—**नयन**, —**नेत्र**, —**लोचन**– (वि०) हिरन जैसे नेत्रों वाला।—**हृदय**– (वि०) डरपोक, भीरु।

हरिणक—(पुं०) [हरिण + कन्] छोटा हिरन; 'क्व बत हरिणकानां जीवितं चाति-लोलं' श० १.१०।

हरिणी—(स्त्री०) [हरिण+ ङीप्] हिरनी, मृगी। स्त्रियों के चार भेदों में से एक जिसे

चित्रिणी कहते हैं। सुंदरी स्त्री। तरुणी। स्वर्ण-प्रतिमा। दूब। मजीठ। सोनजुही। विजया।

हरित्—(वि०) [√हृ + इति] हरा मिश्रित पीला। हरा; 'सत्यमतीत्य हरितो हरींश्च वर्तंते वाजिनः' श० १। पीला। भूरा। (पुं०) हरा रंग। पीला रंग। भूरा रंग। सूर्य का एक घोड़ा। तेज घोड़ा। सिंह। सूर्य। विष्णु। मूंग। मरकत, पन्ना। (न०) घास। (स्त्री०) दिशा। हल्दी। —**अश्व** (**हरिदश्व**)–(पुं०) सूर्य। अर्क या मदार का पौधा। —**गर्भ** (**हरिद्गर्भ**)–(पुं०) हरे रंग का कुश जिसकी पत्ती चौड़ी होती है।—**पर्ण**– (न०) मूली।—**मणि** (**हरिन्मणि**)–(पुं०) पन्ना, हरे रंग की मणि।

हरित—(वि०) [स्त्री०—**हरिता** या **हरिणी**] [√हृ+इतच्] हरा, हरे रंग का, सब्ज; 'रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभिः' श० ४.१०। भूरे रंग का। (पुं०) हरा रंग। भूरा रंग। सिंह। कश्यप का एक पुत्र। यदु का एक पुत्र। द्वादश मन्वन्तर का एक देवगण। सब्जी, हरियाली। सब्जी, शाक, भाजी। स्थौणेयक नामक एक सुगंधित पौधा।— **अश्मन्** (**हरिताश्मन्**)–(पुं०) पन्ना। तूतिया।

हरितक—(न०) [हरित√कै + क] शाक। हरी घास।

हरिता—(स्त्री०) [हरित+टाप्] दूब। जयन्ती। हलदी। कपिलद्राक्षा। पात्री। ब्राह्मी शाक।

हरिद्रा—(स्त्री०) [हरि √द्रु+ड—टाप्] हलदी। हलदी का चूर्ण।—**आभ** (**हरिद्राभ**) (वि०) पीले रंग का।—**गणपति**, —**गणेश**– (पुं०) गणेश का एक भेद जिसका वर्ण पीत कहा गया है।—**राग**, —**रागक**– (वि०) हल्दी के रंग का। प्रेम में अदृढ़। हलायुध के मतानुसार— 'क्षणमात्रानुरागश्च हरिद्राराग उच्यते।'

हरिय—(पुं०) [हरि√ या +क] पीले रंग का घोड़ा।

हरिश्चन्द्र—(पुं०) [हरिः चन्द्र इव, सुट् आगम (ऋषौ एव) [सूर्यवंश के एक प्रसिद्ध राजा जो त्रिशंकु के पुत्र थे।

हरिव—(पुं०) हर्ष, प्रसन्नता।

हरीतकी—(स्त्री०) [हरिं पीतवर्णं फलद्वारा इता प्राप्ता, हरि√इ +क्त+कन् —ङीष्] हर्रं का पेड़। हर्रा; 'कदाचित् कुपिता माता नोदरस्था हरीतकी।'

हरेणु—(स्त्री०) [√हृ + एनु] दवा। सुगंध। संभ्रान्त महिला। मटर। ग्राम की हद बांधने वाली लता। तांबे के रंग की हरिणी। लंका द्वीप का एक नाम।

हर्तृ—(वि०) [स्त्री०—**हर्त्री**] [√हृ +तृच्] हरने वाला। जबरदस्ती छीनने वाला। (पुं०) चोर। डाकू। सूर्य।

हर्मन्—(न०) [√हृ + मनिन्] जँभाई। अँगड़ाई।

हर्मित—(वि०) [हर्मन् + इतच्] जँभाई लिये हुए, जृम्भित। फेंका हुआ। जला हुआ।

हर्मुट—(पुं०) सूर्य। कछुआ।

हर्म्य—(न०) [√हृ +यत्, मुट्] राजभवन, राजप्रासाद; 'बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्याः' मे० ७। कोई भी विशाल भवन। अग्नि-कुण्ड। नरक।

√हर्य्—भ्वा० पर० अक० थकना। सक० जाना। हर्यति, हर्यिष्यति, अहर्यीत्।

हर्ष—(पुं०) [√हृष्+घञ्] प्रसन्नता, आह्लाद, खुशी। रोमाञ्च होना।—**अन्वित** (**हर्षान्वित**)–(वि०) हर्ष-पूरित, हर्षाविष्ट। —**उत्कर्ष** (**हर्षोत्कर्ष**)–(पुं०) हर्ष का आधिक्य।—**कर**– (वि०) प्रसन्न-कारक। —**जड**–(वि०) हर्ष से

विह्वल ।— **विवर्धन**–(वि०) हर्ष बढ़ाने वाला ।— **स्वन**–(पुं०) आनंदातिरेक से की जाने वाली आवाज ।

हर्षक—(वि०) [स्त्री०—**हर्षका**,—**हर्षिका**] [√हृष्+णिच्+ण्वुल्] प्रसन्न-कारक ।

हर्षण—(वि०) [**हर्षणा** या **हर्षणी**] [√हृष् +णिच्+ल्यु] आनंद-दायक, हर्षोत्पादक । (पुं०) कामदेव के पाँच बाणों में से एक । नेत्ररोग विशेष । श्राद्ध कर्म का अधिष्ठाता देवता । श्राद्धविशेष । [√हृष् +ल्युट्] प्रसन्न होना । रोमांच होना । आनंद ।

हर्षयित्नु—(वि०) [√हृष्+णिचु+इत्नु] प्रसन्न-कारक । (न०) सुवर्ण । (पुं०) पुत्र ।

हर्षुल—(वि०) [√हृष् + णिच्+उलच्] प्रसन्न करने वाला । (पुं०) हिरन । प्रेमी ।

√हल्—भ्वा० पर० सक० जोतना, हल चलाना । हलति, हलिष्यति, अहालीत् ।

हल—(न०) [√हल्+क] खेत जोतने का एक प्रसिद्ध उपकरण, सीर । लांगल । एक अस्त्र । जमीन नापने का लट्ठा । पैर की एक रेखा या चिह्न ।—**आयुध** (हलायुध)– (पुं०) वलराम की उपाधि ।—**धर**,—**भृत्**–(पुं०)हलवाहा । बलराम का नामान्तर; 'अंसन्यस्ते सति हलभृतो मेचके वाससीव' मे० ५९ ।—**भूति**,—**भृति**–(स्त्री०)किसानी, कृषि ।—**हति**–(स्त्री०) हल चलाना, जुताई ।

हला—(स्त्री०) [ह इति लीयते, ह√ला +क—टाप्] सखी । पृथिवी । जल । शराव । (अव्य०) स्त्रियों को सम्बोधन करने का अव्यय; 'हला शकुन्तले अत्रैव तावन्मुहूर्तं तिष्ठ' ।

हलाहल—(पुं०) [हलेनेव आहलति विलिखति, हल–आ √हल् +अच्] एक प्रचंड विष जो समुद्र-मंथन के समय निकला था । महाविष । एक जहरीला पौधा । ब्रह्मसर्प । एक तरह की छिपकली, अंजना ।

हलि—(पुं०) [√हल्+इन्] वड़ा हल । कूँड़, हलाई । कृषि ।

हलिन्—(पुं०) [हल+इनि] हलवाहा । किसान । वलराम का नाम ।—**प्रिय**–(पुं०) कदंब वृक्ष ।—**प्रिया**–(स्त्री०) शराव ।

हलिनी—(स्त्री०) [हलिन् + ङीप्] हलों का समूह । लाँगली वृक्ष ।

हलीन—(पुं०) [हलाय हितः, हल+ख—ईन] सागौन ।

हलीषा—(स्त्री०) [हलस्य ईषा, ष० त०, शक० पररूप] हरिस, लांगल-दण्ड ।

हल्य—(वि०) [हल+यत्] जोतने योग्य, हल चलाने लायक । वदशक्ल, कुरूप ।

हल्या—(स्त्री०) [हल्य+टाप्] हलों का समुदाय ।

√हल्ल्—भ्वा० पर० अक० विकसित होना । हल्लति, हल्लिष्यति, अहल्लीत् ।

हल्लक—(न०) [√हल्ल् + ण्वुल्] लाल कमल ।

हल्लन—(न०)[√हल्ल्+ ल्युट्] विकसित होना । करवटें वदलना ।

हल्लीश, हल्लीष—(न०) [√हल् +क्विप्, √लश् (ष्) +अच्, पृषो० ईत्व, कर्म० स०] अठारह उपरूपकों में से एक । एक प्रकार का गोलाकार नृत्य ।

हल्लीषक—(पुं०) [हल्लीष+कन्] गोलाकार नृत्य ।

हव—(पुं०) [√हु + अप्] यज्ञ । होम । [√ह्वे +अप्, पृषो० सम्प्रसारण] आह्वान, ललकार । आज्ञा ।

हवन—(न०) [√हु +ल्युट्] किसी देवता के उद्देश से अग्नि में आहुति देना, होम । होम करना । स्रुवा । होम-कुण्ड ।—**आयुस्** (हवनायुस्)–(पुं०) अग्नि ।

हवनीय—(वि०) [√हु+अनीयर्] आहुति के रूप में दिये जाने या हवन करने योग्य। (न०) होमीय वस्तु । घी ।

हवा—(अव्य०) [ह च वा च द्व० स०] निश्चयपूर्वक ।

हवित्री—(स्त्री०) [√हु +इत्रन् —ङीप्] हवन-कुण्ड ।

हविष्मत्—(वि०) [हविस् + मतुप्] हवि वाला । (पुं०) छठे मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक । पितरों का एक गण । अंगिरा का एक पुत्र ।

हविष्य—(न०) [हविषे हितम्, हविस् +यत्] हवन करने योग्य पदार्थ । घी । **—अन्न** (**हविष्यान्न**)—(न०) वे भोज्य पदार्थ जो व्रत आदि में खाये जा सकें ।—**आशिन्** (**हविष्याशिन्**),—**भुज्**—(पुं०) अग्नि ।

हविस्—(न०) [√हु+इसुन्] होम की वस्तु, हवनीय द्रव्य । घी । जल । होम । **—अशन** (**हविरशन**)—(न०) घी का भोजन । (पुं०) अग्नि । चित्रक वृक्ष ।—**गन्धा** (**हविर्गन्धा**)—(स्त्री०) शमी का पेड़ ।—**गेह** (**हविर्गेह**)—(न०) वह स्थान या घर जिसमें होम किया जाय ।—**भुज्** (**हविर्भुज्**)—(पुं०) अग्नि; 'अन्वासितमरुन्धत्या स्वाहयेव हविर्भुजम्:' र० १.५५ । **—यज्ञ** (**हविर्यज्ञ**)—(पुं०) एक साधारण यज्ञ जिसमें केवल घी की आहुति दी जाती है ।—**याजिन्** (**हविर्याजिन्**)—(पुं०) ऋत्विक् ।

हव्य—(वि०) [√हु +यत्] होम करने योग्य । (न०) घी । देवताओं के योग्य अन्न । होम । किसी देवता के लिये दी जाने वाली आहुति ।— **आश** (**हव्याश**)—(पुं०) अग्नि । **—कव्य**— (न०) क्रमशः देवताओं और पितरों का चढ़ावा ।—**पाक**—(पुं०) देवताओं के लिए बनाया गया हव्य । हव्य बनाने का पात्र ।—**वाह** —**वाहन**—(पुं०) अग्नि ।

√हस्—भ्वा० पर० अक० हँसना । खिलना । चमकना । सक० हँसी उड़ाना, उपहास करना । हसति, हसिष्यति, अहसीत् ।

हस—(पुं०) [√हस्+अप्] हँसी, हास्य । ठठोली । प्रसन्नता । हर्ष ।

हसन—(न०) [√हस् +ल्युट्] हँसने की क्रिया ।

हसन्ती—(स्त्री०) [√हस् + झ—ङीप्] अँगीठी । मल्लिका विशेष ।

हसिका—(स्त्री०) [√हस् + ण्वुच्—टाप्, इत्व] हँसी, ठट्ठा ।

हसित—(वि०) [√हस् +क्त] हँसा हुआ । खिला हुआ । (न०) हँसी । ठठोली । कामदेव का धनुष ।

हस्त—(पुं०) [√हस्+तन्] हाथ । सूँड़; 'नागेन्द्रहस्तास्त्वचि कर्कशत्वात्' कु० १.३६ । तेरहवां नक्षत्र । एक हाथ—२४ अंगुल— की एक माप । हस्ताक्षर । गुच्छ, समूह । (न०) धौंकनी ।—**अक्षर** (**हस्ताक्षर**)—(न०) लेख आदि के नीचे अपने हाथ से लिखा हुआ अपना नाम जो उस लेख या उसके उत्तरदायित्व की स्वीकृति का सूचक होता है, दस्तखत, सही ।—**अङ्गुलि** (**हस्ताङ्गुलि**)—(स्त्री०) हाथ की उँगली । —**अवलम्ब** (**हस्तावलम्ब**)—(पुं०), —**आलम्बन** (**हस्तावलम्बन**)—(न०) हाथ का सहारा । —**आमलक** (**हस्तामलक**)—(न०) हाथ में का आंवला [यह एक मुहावरा है जिसका प्रयोग उस समय किया जाता है, जिस समय किसी ऐसी वस्तु का निर्देश करना आवश्यक होता है जो बिलकुल स्पष्ट या प्रत्यक्ष हो ।] —**आवाप** (**हस्तावाप**)—(पुं०) हस्तत्राण । —**कमल**—(न०) कमल जो हाथ

में हो । कमल जैसा हाथ ।—**कौशल**–(न०) हाथ की सफाई] —**क्रिया**–(स्त्री०) दस्तकारी ।—**गत**–(वि०) हाथ में आया हुआ, प्राप्त । —**गामिन्**–(वि०) जो किसी के हाथ या अधिकार में जाने वाला हो ।—**ग्राह**–(पुं०) हाथ से पकड़ना । विवाह ।—**चापल्य**– (न०) हस्त-कौशल ।—**तल**– (न०) हथेली । हाथी की सूंड़ की नोंक ।—**ताल**–(पुं०) ताली बजाना ।—**दोष**– (पुं०) हाथ से होने वाली भूल या अपराध ।—**धारण**–(न०) हाथ से प्रहार रोकना । —**पाद**– (न०) हाथ और पैर ।—**पुच्छ** (न०) कलाई के नीचे का हाथ ।—**पृष्ठ**–(न०) हाथ की पीठ, हथेली का पृष्ठ-भाग । —**प्राप्त** –(वि०) दे० 'हस्तगत' । —**प्राप्य** (वि०) सरलता से हाथ में आने वाला ।—**बिम्ब**– (न०) शरीर में सुगन्ध द्रव्य लगाना ।—**मणि**–(पुं०) कलाई में पहनी जाने वाली मणि ।—**लाघव**– (न०) हाथ की सफाई ।—**वारण**–(न०) हमला रोकना ।—**संवाहन**–(न०) हाथ से मलना या सहलाना ।—**सिद्धि**– (स्त्री०) हाथ से किया जाने वाला काम । हाथ का श्रम । पारिश्रमिक, मजदूरी । —**सूत्र**– (न०) कलाई पर बांधा जाने वाला डोरा ।

हस्तक—(पुं०) [हस्त + कन्] हाथ ।

हस्तवत्—(वि०) [हस्त + मतुप्, वत्व] निपुण, दक्ष ।

हस्ताहस्ति—(अव्य०) [हस्तैश्च हस्तैश्च प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्, ब० स०, दीर्घ, इत्व, अव्ययत्व] हाथापाई; 'हस्ताहस्ति जन्यमजनि' दश० ।

हस्तिक—(न०) [हस्तिनां समूहः, हस्तिन् +कन्] हाथियों का समुदाय ।

हस्तिन्—(वि०) [स्त्री०—**हस्तिनी**] [हस्तः अस्ति अस्य, हस्त +इनि (समास में 'न्' का लोप हो जाता है)] हाथ वाला, वह जिसके हाथ हो । सूंड़वाला । (पुं०) हाथी [भद्र, मन्द्र, मृग और मिश्र नामक चार जातियों के हाथी होते हैं] ।—**अध्यक्ष** (हस्त्यध्यक्ष)–(पुं०) हाथियों का निरीक्षक । —**आयुर्वेद** (**हस्त्यायुर्वेद**)–(पुं०) एक शास्त्र जिसमें हाथियों के रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया गया है ।—**आरोह** (**हस्त्यारोह**)–(पुं०) हाथी का सवार या महावत । —**कक्ष्य**–(पुं०) सिंह । चीता ।— **कर्ण**– (पुं०) रेंड़ी का पेड़ ।—**घ्न**– (पुं०) हाथी का हत्यारा । मनुष्य ।—**चारिन्**–(पुं०) हाथी हांकने वाला, महावत ।—**दन्त**– (पुं०) हाथी का दांत । दीवार में गड़ी हुई खूंटी । (न०) मूली ।—**दन्तक**–(न०) मूली ।—**नख**–(न०) नगरद्वार के पास की अथवा दुर्ग की छोटी बुर्जी ।—**प**, —**पक**–(पुं०) महावत ।—**मद**– (पुं०) हाथी का मद । —**मल्ल**– (पुं०) ऐरावत हाथी का नाम । गणेश जी । राख या भस्म का ढेर । धूल की वर्षा । कुहरा ।—**यूथ**–(न०) हाथियों का गिरोह या झुंड ।—**वाह**– (पुं०) महावत । अङ्कुश । —**षड्व**– (न०) हाथियों का समुदाय ।—**स्नान**–(न०) हाथी का स्नान [यह एक मुहावरा है, कोई कार्य करने पर जब उसकी निष्फलता निश्चित होती है, तब इसका प्रयोग किया जाता है]; 'अवशेन्द्रियचित्तानां हस्तिस्नानमिव क्रिया' हि० १.१८ ।

हस्तिनापुर—(न०) [हस्तिना तदाख्यनृपेण चिह्नितं तत्कृतत्वात् पुरम्, अलुक् स०] दिल्ली से लगभग ५० मील उत्तर-पूर्व के कोने में अवस्थित प्राचीन कालीन एक नगर, जिसे राजा हस्तिन् ने बसाया था ।

हस्तिनापुर के ही नाम गजाह्वय, नागसाह्वय, नागाह्व और हास्तिन भी हैं ।

हस्तिनी—(स्त्री०) [हस्तिन्+ङीप्] हथिनी । हट्टविलासिनी नामक गंधद्रव्य । चार प्रकार की स्त्रियों में से एक । [इसका लक्षण इस प्रकार है :—'स्थूलाधरा स्थूलनितम्बबिम्बा, स्थूलाङ्गुलिः स्थूलकुचा सुशीला । कामोत्सुका गाढरतिप्रिया च, नितान्तभोक्त्री खलु हस्तिनी स्यात् ।']

हस्त्य—(वि०) [हस्त+यत्]हाथ सम्बन्धी । हाथ से किया हुआ । हाथ से दिया हुआ ।

ह्स्र—(वि०) [√हस् + र] मूर्ख । अज्ञानी ।

हहल—(न०) [ह √ हल् + अच्] दे० 'हालाहल' ।

हहा—(पुं०) [ह √ हा + क्विप्] गन्धर्व विशेष ।

√हा—जु० पर० सक० त्यागना । जहाति, हास्यति, अहासीत् । जु० आत्म० सक० जाना । जिहीते, हास्यते, अहास्त ।

हा—(अव्य०) [√हा +का] दुःख, उदासी, पीड़ा-द्योतक अव्यय विशेष । आश्चर्य । क्रोध । भर्त्सना ।

हाङ्गर—(पुं०)[हा विषादाय पीडायै वा अङ्गं राति, हा—अङ्ग√रा+क] मत्स्य विशेष ।

हाटक—(वि०) [स्त्री०—**हाटकी**] [हाटक +अण्] सोने का बना हुआ । (न०) [√हट् +ण्वुल्] देश । (वहां उत्पन्न होने से) सोना । धतूरा ।—**गिरि**–(पुं०) सुमेरु-पर्वत ।

हात्र—(न०) [√ हा + त्रल्] वेतन, मजदूरी ।

हान—(न०) [√ हा +क्त] त्याग । हानि । असफलता । बचाव । शक्ति । अभाव ।

हानि—(स्त्री०) [√ हा + क्तिन्] त्याग । असफलता । अविद्यमानता, अनस्तित्व । नुकसान । ह्रास, कमी । भङ्गकरण ।

हानुक—(वि०) कुचेष्टाप्रिय । हिंसक । अपकारशील ।

हापुत्रिका, हापुत्री— (स्त्री०) [हा इति रवः पुत्राय यस्याः, ब० स०, ङीप्, पक्षे कन्— टाप्, ह्रस्व] खंजन पक्षी का एक भेद ।

हाफिका—(स्त्री०) जमुहाई, जृंभा ।

हायन—(पुं०, न०) [√हा+ल्यु] वर्ष । (पुं०) चावल विशेष । शोला, अंगारा ।

हार—(पुं०) [√हृ +घञ्] हर ले जाना । हटाना, अलग करना । ढोना । संग्राम । युद्ध । क्षय । हानि । माला; 'पाण्ड्योऽयमंसार्पितलम्बहारः' र० ६.६० । मुक्तामाला । [√ हृ+ण] (गणित में) भिन्न का भाजक ।— **आवलि** (**हारावलि**), —**आवली** (**हारावली**)–(स्त्री०) मोतियों की लड़ ।— **गुटिका**,—**गुलिका**–(स्त्री०) हार का गुरिया या दाना ।—**यष्टि**– (स्त्री०) हार या माला की लड़ी । —**हारा**– (स्त्री०) अंगूर विशेष, कपिल द्राक्षा ।

हारक—(पुं०) [√हृ+ण्वुल्] हरण करने वाला । आकृष्ट करने वाला । (पुं०) चोर । लुटेरा । धूर्त । कपटी । मोती का हार । भाजक । गद्यनिबन्ध विशेष ।

हारि, हारी—(स्त्री०) [√हृ + णिच् +इन्] [हारि+ङीष्] हार, पराजय । जुए की हार । पथिकों का दल । मुक्ता ।

हारिणिक—(पुं०) [हरिण+ठक्] हरिण को मारने वाला, बहेलिया ।

हारित—(वि०) [√हृ+णिच्+क्त] हरण कराया हुआ । पकड़ाया हुआ । भेंट किया हुआ, नजर किया हुआ । आकर्षण किया हुआ । (पुं०) [हरित्+अण्] हरा रंग । एक प्रकार का कबूतर ।

हारिन्—(वि०) [स्त्री०—**हारिणी**] [√ हृ +णिनि] ले जाने वाला । ढोने

वाला। लूटने वाला। पकड़ने वाला। प्राप्त करने वाला। आकर्षक, मोहक; 'तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसभं हृत:' श० १.५। आगे निकल जाने वाला। अस्त-व्यस्त करने वाला, गड़बड़ करने वाला। [हार +इनि] हार धारण करने वाला।—कण्ठ—(पुं०) कोयल।

हारिद्र—(पुं०) [हरिद्रा + अण्] पीला रंग। कदंब वृक्ष।

हारीत—(पुं०) [√हृ +णिच्+ईतच्] कबूतर विशेष। धूर्त। चोर। कपटी। एक स्मृतिकार का नाम।

हार्द—(न०) [हृदय+अण्, हृदादेश] प्रेम। स्नेह; 'अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादर:' कि० १.३३। कृपालुता। कोमलता। दृढ़ सङ्कल्प। इरादा, अभिप्राय।

हार्य—(वि०) [√हृ+ण्यत्] ले जाने या ढोने लायक। छीन लेने योग्य। हटा देने योग्य। हिल जाने योग्य। आकर्षण करने योग्य। जीत लेने योग्य। लूट लेने योग्य। (पुं०) सांप। बहेड़े का पेड़। विभाज्य राशि।

हाल—(पुं०) [हल + अण्] हल। बलराम का नाम। शालिवाहन का नाम।—भृत्—(पुं०) बलराम का नामान्तर।

हालक—(पुं०) [हाल +कन्] बादामी या भूरे रंग का घोड़ा।

हालहल, हालाहल—(न०) [=हलाहल, पृषो० साधु:] एक भयङ्कर विष। यह विष समुद्र-मंथन के समय निकला था। इसकी झरप से जब समस्त लोक भस्म होने लगे तब देवताओं द्वारा प्रार्थना किये जाने पर भगवान् रुद्र ने इसे अपने कण्ठ में रख लिया।

हाला—(स्त्री०) [√हल् +घञ्—टाप् ?] शराब, मदिरा, मद्य; 'हित्वा हालामभिमतरसां रेवतीलोचनाङ्काम्' मे० ४९।

हालिक—(पुं०) [हल + ठक् वा ठञ्] हलवाहा। खेतिहर। हल खींचने वाला (बैल)। वह जो हल से लड़े।

हालिनी—(स्त्री०) [√हल्+णिनि—ङीप्] बड़ी छिपकली।

हाली—(स्त्री०) [√हल् + इण्—ङीष्] छोटी साली।

हालु—(स्त्री०) [√हल् + उण्] दांत।

हाव—(पुं०) [√ह्वे + घञ्, नि० सम्प्रसारण] बुलावा, पुकार। [√हु+घञ्] स्त्रियों की शृंगार-भाव जन्य स्वाभाविक चेष्टायें जो पुरुषों को आकृष्ट करती हैं। (हाव ११ माने गए हैं— १ लीला, २ विलास, ३ विच्छित्ति, ४ भ्रम, ५ किलकिञ्चित, ६ मोहायित, ७ विब्बोक, ८ विहृत, ९ कुट्टमित, १० ललित, ११ हेला।) —भाव— (पुं०) नाज-नखरा।

हास—(पुं०) [√हस् +घञ्] हँसी। हर्ष, आनन्द। हास्य रस। ठठोली, मजाक। खिलना, प्रस्फुटन। घमंड। श्वेतता, सफेदी।

हासिका—(स्त्री०) [√हस्+ ण्वुल् (भावे)] हास, हँसी। उल्लास, हर्ष।

हास्तिक—(पुं०) [हस्तिन् +ठक्] महावत। हाथीसवार। (न०) [हस्तिन्+वुण्] हाथियों का झुंड।

हास्तिन—(न०) [हस्तिना नृपेण निर्वृत्तम् नगरम्, हस्तिन्+अण्] हस्तिनापुर।

हास्य—(वि०) [√हस् + ण्यत्] हँसने योग्य। (न०) हँसी। हर्ष, उल्लास। मजाक, दिल्लगी। (पुं०) एक रस।—**आस्पद** (**हास्यास्पद**)—(न०) हास्य का स्थान या विषय, वह जिसे देख कर हँसी उत्पन्न हो। उपहास का विषय।—**पदवी**, —**मार्ग**— (पुं०) ठठोली, मजाक। —**रस**— (पुं०) एक काव्यरस जो कौतुक द्वारा उद्भूत होता है।

हाहा––(पुं०) [हा इति शब्दं जहाति, हा √हा + क्विप्] एक गन्धर्व का नाम । (अव्य०) पीड़ा, दुःख अथवा आश्चर्यसूचक अव्यय ।––**कार**– (पुं०) शोक-ध्वनि, विलाप । युद्ध का चीत्कार ।––**रव**– (पुं०) हाहाकार ।

√हि––स्वा० पर० सक० रेलना, ठेलना, ढकेलना । फेंकना । उत्तेजित करना, भड़काना । आगे बढ़ाना । चढ़ाना । प्रसन्न करना । अक० आगे बढ़ना । हिनोति, हेष्यति, अहैषीत् ।

हि––(अव्य०) [√हा वा √हि + डि] हेतु, कारण । अवधारण, निश्चय । विशेष । प्रश्न । संभ्रम । कारणनिर्देश । असूया । शोक । पादपूरण (श्लोक के पाद-पूरण-स्थल में च वै तु हि इन चार शब्दों का प्रयोग होता है) ।

√हिंस्––रु०, चु० पर० सक० ताड़ना करना, आघात करना । चोटिल करना, घायल करना । हानि करना । पीड़ित करना । वध करना । रु० हिनस्ति, हिंसिष्यति, अहिंसीत् । चु० हिंसयति–हिंसति, हिंसयिष्यति –हिंसिष्यति, अजिहिंसत् – अहिंसीत् ।

हिंसक––(वि०) [√हिंस् + ण्वुल्] हिंसा करने वाला । घातक । हानिकारी, अनिष्टकर । (पुं०) जंगली या वहशी जानवर । शत्रु । अथर्ववेदज्ञ ब्राह्मण ।

हिंसन––(न०), **हिंसना**– (स्त्री०) [√हिंस् +ल्युट्] [√हिंस् +णिच् +युच्] वध करना । पीड़ा पहुँचाना । अनिष्ट करना ।

हिंसा––(स्त्री०) [√हिंस् + अ–टाप्] हत्या, वध; 'गान्धर्वमादत्स्व यतः प्रयोक्तुर्न चारिहिंसा विजयश्च हस्ते' र० ५.५७ । हानि पहुँचाना, अनिष्ट करना । चोरी आदि करना । द्वेष । ईर्ष्या ।––**आत्मक** (**हिंसात्मक**)–(वि०) हिंसा से युक्त । अनिष्टकारी । विनाशक ।––**कर्मन्**–(न०) कोई भी अनिष्टकारी कार्य । अभिचार, तांत्रिक मारण आदि प्रयोग ।––**प्राणिन्**–(पुं०) अनिष्टकर पशु ।––**रत**–(वि०) सदा बुराई करने में लगा रहने वाला ।––**रुचि**– (वि०) उपद्रव करने में प्रसन्न रहने वाला या उपद्रव करने को तुला हुआ ।–– **समुद्भव**– (वि०) अनिष्ट से उत्पन्न ।

हिंसारु––(पुं०) [हिंसा + आरु] चीता । कोई भी अनिष्टकारी जानवर ।

हिंसालु––(वि०) [√ हिंस् + आलु] अनिष्टकारी । उपद्रवी । चोट करने वाला । वध करने वाला । (पुं०) उपद्रवी या वहशी कुत्ता ।

हिंसीर––(पुं०) [√हिंस् + ईरन्] चीता । पक्षी । उपद्रवी जन ।

हिंस्य––(वि०) [√हिंस् + ण्यत्] हिंसा के योग्य । घायल किये जाने या वध किये जाने की सम्भावना से युक्त ।

हिंस्र––(वि०) [√हिंस् + र] अनिष्टकर । उपद्रवी । भयानक । निष्ठुर, वहशी । (पुं०) हिंसालु पशु, हिंसक जानवर; 'सा दुष्प्रधर्षा मनसापि हिंस्रैः' र० ३.२७ । नाशक व्यक्ति । शिव । भीम का नाम ।––**पशु**– (पुं०) हिंसालु पशु, खूँखार जानवर ।––**यन्त्र**– (न०) जाल, जानवर फँसाने का फंदा । विद्वेषकारी कार्यों की सिद्धि के लिये बनाया हुआ तांत्रिक यंत्र विशेष ।

√हिक्क्––भ्वा० उभ० अक० ऐसा शब्द करना जो बोधगम्य न हो । हिचकी लेना । हिक्कति– ते, हिक्किष्यति –ते, अहिक्कीत्– अहिक्किष्ट । चु० आत्म० सक० हिंसा करना । हिक्कयते, हिक्कयिष्यते, अजिहिक्कत ।

हिक्का––(स्त्री०) [√हिक्क्+अ–टाप्] अव्यक्त शब्द । हिचकी ।

हिङ्कार—(पुं०) [हिम् इत्यस्य कारः, यस्य वा] 'हिम्' ध्वनि करने की क्रिया । बाघ का शब्द । बाघ ।

हिङ्गु—(पुं०, न०) [हिमं गच्छति, हिम √गम् +डु नि० साधुः] हींग । हींग का पौधा । वंशपत्र ।—**निर्यास**– (पुं०) हींग के पौधे का गोंद । नीम का पेड़ ।—**पत्र**–(पुं०), इंगुदी का पेड़ ।

हिङ्गुल—(पुं०, न०), **हिङ्गुलि**–(पुं०), **हिङ्गुलु**–(पुं०, न०)[हिङ्गु√ला + क] [हिङ्गु√ला+कि] [हिङ्गु√ला+डु] इँगुर ।

हिञ्जीर—(पुं०) हाथी के पैर की बेड़ी या रस्सी ।

हिडिम्ब—(पुं०) एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था ।

हिडिम्बा—(स्त्री०) हिडिम्ब की भगिनी । इसने भीम के साथ अपना विवाह किया था । —**जित्**, —**निषूदन**, —**भिद्**, —**रिपु**– (पुं०) भीमसेन के नामान्तर ।

√हिण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । अक० चक्कर लगाना । हिण्डते, हिण्डिष्यते, अहिण्डिष्ट ।

हिण्डन—(न०) [√हिण्ड् +ल्युट्] भ्रमण, घूमना-फिरना । संभोग । लेखन ।

हिण्डिक—(पुं०) [√हिण्ड्+इन्, हिण्डि √कै+क] ज्योतिषी, दैवज्ञ ।

हिण्डिर, हिण्डीर—(पुं०) [√हिण्ड् +इ (ई) रन्] समुद्रफेन । पुरुष । बैंगन । रुचक ।

हिण्डी—(स्त्री०) [√हिण्ड्+इन्—ङीप्] दुर्गा का नाम । —**प्रियतम**– (पुं०) शिव ।

हित—(वि०) [√धा+क्त वा √ हि+क्त] रखा हुआ, स्थापित । जड़ा हुआ । लिया हुआ, ग्रहण किया हुआ । उपयुक्त, उचित, ठीक । उपयोगी, लाभकारी; 'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः' कि० १.४। कृपालु । स्नेही । (न०) लाभ, फायदा । कोई भी उचित या उपयुक्त वस्तु । क्षेम, कुशल । (पुं०) मित्र । संबंधी । भलाई चाहने वाला व्यक्ति ।—**अनुबन्धिन्** (**हितानुबन्धिन्**)–(वि०) कल्याणकारी ।—**अन्वेषिन्** (**हितान्वेषिन्**), —**अर्थिन्** (**हितार्थिन्**)– (वि०) कल्याण चाहने वाला ।—**इच्छा** (**हितेच्छा**)– (स्त्री०) भलाई की इच्छा, हित-कामना ।—**उक्ति** (**हितोक्ति**)– (स्त्री०) हितकर सलह । —**उपदेश** (**हितोपदेश**)–(पुं०) कल्याणप्रद परामर्श । विष्णुशर्मा का बनाया हुआ एक प्रसिद्ध नीति-ग्रन्थ ।—**एषिन्**– (**हितैषिन्**)– (वि०) दूसरों का हित चाहने वाला, उपकारी ।—**कर**– (वि०) अनुकूल, हित करने वाला ।—**काम**– (वि०) उपकार करने की इच्छा रखने वाला ।—**काम्या**– (स्त्री०) परहित साधन की कामना ।— **कारिन्**, —**कृत्** –(पुं०) उपकारी, हितैषी । —**प्रणी**–(पुं०) जासूस, भेदिया ।—**बुद्धि**– (पुं०) मित्र । हितैषी व्यक्ति ।—**वाक्य**– (न०) हित-पूर्ण सलाह । —**वादिन्**– (पुं०) हित की सलाह देने वाला ।

हितक—(पुं०) [हित+क] बच्चा । जानवर का बच्चा ।

हिन्ताल—(पुं०) [हीनस्तालो यस्मात् पृषो० साधुः] एक प्रकार का जंगली खजूर ।

हिन्दु—(पुं०) [हीनं दूषयति, √दुष्+डु, पृषो० साधुः] भारतीय आर्यजाति । 'हिन्दुधर्म-प्रलोप्तारो जायन्ते चक्रवर्तिनः । हीनञ्च दूषयत्येव हिन्दुरित्युच्यते प्रिये ॥' मेरुतन्त्र ।

हिन्दोल—(पुं०) [√ हिल्लोल् + घञ्, पृषो० साधुः] हिंडोला, झूला । श्रावण-

शुक्ल-एकादशी से पूर्णिमा तक होने वाला भगवान् का दोलोत्सव । एक राग ।

हिन्दोलक— (पुं०), **हिन्दोला**— (स्त्री०) [हिन्दोल+कन्] [हिन्दोल—टाप्] झूला। पालना ।

हिम—(वि०) [√ हि + मक्] ठंडा, शीतल । (न०) कोहरा । बर्फ । ठंड, ठंडक । कमल । ताजा या टटका मक्खन । मोती । रात । चन्दन का काष्ठ । (पुं०) शीतकाल, जाड़ा । चन्द्रमा । हिमालय पर्वत । चन्दन का वृक्ष । कपूर ।—**अंशु** (**हिमांशु**) —(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**अचल** (**हिमाचल**), —**अद्रि** (**हिमाद्रि**)—(पुं०) हिमालय पर्वत ।—०**जा** (**हिमाद्रिजा**),— ०**तनया** (**हिमाद्रितनया**)—(स्त्री०) पार्वती । गंगा । —**अम्बु** (**हिमाम्बु**),— **अम्भस्** (**हिमाम्भस्**)—(न०) शीतल जल । ओस; 'निर्धौतहारगुलिकाविशदं हिमाम्भः' र० ५.७० । —**अनिल** (**हिमानिल**)—(पुं०) शीतल पवन ।—**अब्ज** (**हिमाब्ज**)— (न०) कमल ।—**अराति** (**हिमाराति**)—(पुं०) अग्नि । सूर्य ।— **आगम** (**हिमागम**)—(पुं०) शीतकाल, जड़काला ।—**आर्त** (**हिमार्त**)— (वि०) जड़ाया हुआ ।—**आलय** (**हिमालय**)— (पुं०) भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित एक संसार-प्रसिद्ध पर्वत । श्वेत खदिर वृक्ष ।—०**सुता** (**हिमालयसुता**)—(स्त्री०) पार्वती का नामान्तर। श्रीगङ्गा जी का नामान्तर ।—**आह्व** (**हिमाह्व**),—**आह्वय** (**हिमाह्वय**)— (पुं०) कपूर ।—**उस्र** (**हिमोस्र**)—(पुं०) चन्द्रमा ।—**कर**— (पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**कूट**—(पुं०) शीतकाल । हिमालय पर्वत ।—**गिरि**— (पुं०) हिमालय ।—**गु**— (पुं०) चन्द्रमा । —**ज**— (पुं०) मैनाक पर्वत ।—**जा**— (स्त्री०) पार्वती । आवाँ हल्दी का पौधा । खिरनी का पेड़ ।—**झटि**, **झण्टि**—(स्त्री०) ओस । कुहरा ।— **तैल**—(न०) कपूर के योग से बना हुआ तेल ।—**दीधिति**— (पुं०) चन्द्रमा ।—**दुर्दिन**— (न०) ऐसा दिन जिसमें ठंड हो, बादल आदि के कारण बुरा मौसिम हो ।—**द्युति**—(पुं०) चन्द्रमा । —**द्रुह्**—(पुं०) सूर्य ।—**ध्वस्त**— (वि०) पाले का मारा हुआ, कुतरा हुआ । —**प्रस्थ**— (पुं०) हिमालय पर्वत । —**बालुका**— (स्त्री०) कपूर । —**भास्** —(पुं०) हिमालय पहाड़ । चन्द्रमा । —**रश्मि**— (पुं०) चन्द्रमा ।—**शीतल**— (वि०) बर्फ की तरह शीतल ।—**शैल**— (पुं०) हिमालय पर्वत ।—**संहति**—(स्त्री०) बर्फ का ढेर । —**सरस्**— (न०) बर्फीली झील । शीतल जल ।—**हानकृत्**— (पुं०) अग्नि ।—**हासक**— (पुं०) हिन्तालवृक्ष ।

हिमवत्—(वि०) [हिम + मतुप्, वत्व] बर्फीला । (पुं०) हिमालय पर्वत ।— **कुक्षि**—(पुं०) हिमालय पर्वत की घाटी ।— **पुर**—(न०) हिमालय की राजधानी ओपधि-प्रस्थ ।—**सुत**—(पुं०) मैनाक पर्वत । —**सुता** — (स्त्री०) पार्वती । गंगा ।

हिमानी—(स्त्री०) [हिम + ङीप्, आनुक्] बर्फ का ढेर, वायु-चालित बर्फ का स्तूप; 'नगमुपरि हिमानीगौरमासाद्य जिष्णुः' कि० ४.३८ ।

हिमिक—(स्त्री०) घास पर पड़ी हुई ओस ।

हिमिलु—(वि०) जमा हुआ । जाड़े से जमा हुआ ।

हिम्य—(वि०) [हिम+ यत्] बरफ का ।

हिरण—(न०) [√हृ +ल्युट्, नि० साधुः] सुवर्ण । वीर्य । कौड़ी ।

हिरण्मय—(वि०) [स्त्री०—**हिरण्मयी**] [हिरण+मयट्, नि० साधुः] सुवर्ण का बना । सुनहला । (पुं०) ब्रह्मा जी का

नामान्तर । (न०) जम्बुद्वीप के नौ वर्षों में से एक ।

हिरण्य—(न०) [हिरण + यत्] सोना । सुवर्ण-पात्र । चाँदी । कोई भी मूल्यवान् धातु । सम्पत्ति, जायदाद । वीर्य, धातु । कौड़ी । माप विशेष । वस्तु, द्रव्य । धतूरा । **—कक्ष**– (वि०) सोने की करधनी पहिनने वाला । **—कशिपु**– (पुं०) एक दैत्य जो प्रह्लाद का पिता था । **—कोश,—गर्भ**– (पुं०) ब्रह्मा जिनका जन्म सुवर्ण-अण्ड से हुआ था । विष्णु । सूक्ष्म शरीर ।**—द**– (वि०) सुवर्ण देने वाला । (पुं०) समुद्र । **—दा**–(स्त्री०) पृथिवी ।**—नाभ**–(पुं०) मैनाक पर्वत । एक सिद्ध मुनि । वह मकान जिसमें पूर्व, पश्चिम और उत्तर बड़े-बड़े कमरे हों ।**— बाहु**– (पुं०) शिव का नाम । सोन नद ।**—रेतस्**– (पुं०) अग्नि; 'द्विषामसह्यः सुतरां तरूणां हिरण्यरेता इव सानिलोऽभूत्' र० १८.२५ सूर्य । शिव का नाम । चित्रक या अर्क का पौधा ।**—वर्णा**– (स्त्री०) नदी ।**—वाह**– (पुं०) सोन नद ।

हिरण्यय—(वि०) [स्त्री०—**हिरण्मयी**] [हिरण्य +मयट्, नि० मलोप] सोने का । सुनहला ।

हिरुक्—(अव्य०) [√हि + उकिक्, रुट्] बिना, छोड़कर । बीच में । समीप । अधम ।

√हिल्—तु० पर० अक० स्वेच्छानुसार क्रीड़ा करना । हिलति, हेलिष्यति, अहेलीत् ।

हिल्ल—(पुं०) [√ हिल् + लक्] शरारि पक्षी ।

√हिल्लोल्—चु० पर० सक० हिलाना । झुलाना । हिल्लोलयति, हिल्लोलयिष्यति, अजिहिल्लोलत् ।

हिल्लोल—(पुं०) [√हिल्लोल् + अच्] रंगत, लहर । हिंडोल राग । वहम । रति-बन्ध विशेष ('हृदि कृत्वा स्त्रियः पादौ कराभ्यां धारयेत् करौ । यथेष्टं ताडयेद् योनिं बन्धो हिल्लोल-संज्ञकः ।।')

हिल्वला–(स्त्री०) [=इल्वला, पृषो० साधुः] मृगशिरा नक्षत्र के शिरोभाग में अवस्थित पाँच छोटे तारे ।

हिहि—(अव्य०) विस्मय । दुःख । विषाद । शोक का हेतु ।

ही—(अव्य०) [√हि + डी] आश्चर्य । थकावट । शोक । तर्कसूचक अव्यय विशेष ।

हीन—(वि०) [√हा + क्त, तस्य नः, ईत्वम्] त्यक्त, त्यागा हुआ । वर्जित, रहित; 'गुणैर्हीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः' सुभा० । नष्ट । त्रुटि-पूर्ण । घटाया हुआ । अल्पतर, निम्नतर । नीच, कमीना । (पुं०) दोष-युक्त गवाह । दोष-युक्त प्रतिवादी । [नारद ने ऐसे पाँच प्रकार के प्रतिवादियों का उल्लेख किया है । यथाः— 'अन्यवादी क्रियाद्वेषी नोपस्थायी निरुत्तरः । आहूतप्रपलायी च हीनः पंचविधः स्मृतः ।।'] **—अङ्ग** (हीनाङ्ग)– (वि०) अंग-हीन । **—कुल, —ज**– (वि०) कमीना, अकुलीन । **—क्रतु**–(वि०) यज्ञ-हीन ।**—जाति** –(वि०)नीच जाति का । जाति-बहिष्कृत, पतित ।**—योनि**–(पुं०) नीच जाति का ।**—वादिन्**–(वि०) दोष-युक्त बयान देने वाला । बयान बदलने वाला । गूँगा । **—सख्य**– (न०) नीच लोगों के साथ रहने वाला ।**— सेवा**–(स्त्री०) नीच की सेवा या चाकरी ।

हीन्ताल—(पुं०) [हीनस्तालो यस्मात्, पृषो० साधुः] दलदल में उत्पन्न छुहारे या खजूर का पेड़ ।

हीर—(पुं०) [√हृ+क, नि० साधुः] सर्प । हार । शेर । नैषधचरितकार श्रीहर्ष के पिता का नाम ।(पुं०, न०) वज्र । हीरा । **—अङ्ग** (हीराङ्ग) –(पुं०) इन्द्र का वज्र ।

हीरक—(पुं०) [हीर + कन्] हीरा ।

हीरा—(स्त्री०) [हीर+टाप्] लक्ष्मी जी की उपाधि । चींटी ।

हील—(न०) [ही विस्मयं लाति, ही√ला +क] वीर्य ।

हीही—(अव्य०) [ही — द्वित्व] आश्चर्य या हास्य-सूचक अव्यय विशेष ।

√हु—जु० पर० सक० होम करना । खाना । प्रसन्न करना । जुहोति, होष्यति, अहौषीत् ।

√हुड्—तु० पर० सक० जमा करना, ढेर करना । अक० नहाना या डूबना । एकत्रित होना । हुडति, हुडिष्यति, अहुडीत् । भ्वा० आत्म० सक० जाना । होडते, होडिष्यते, अहोडिष्ट ।

हुड—(पुं०) [√हुड्+क] मेढ़ा, मेष । लोहे का खंभा या मेख जो चोरों से बचने के काम में आता है । एक प्रकार का हाता । लोहे का डंडा या गदा । मूर्ख । ग्राम-शूकर । दैत्य । रथ पर बना हुआ मल-मूत्र-त्याग का स्थान ।

हुडु—(पुं०) [√हुड्+कु] मेढा ।

हुडुक्क—(पुं०) [√हुड्+उक्क] ढोल जो विशेष आकार का होता है । दात्यूह पक्षी । किवाड़ों में लगी चटखनी । नशे में चूर आदमी ।

हुडुत्—(न०) [√हुड्+उति] बैल का राँभना । धमकी का शब्द ।

हुत—(वि०) [√हु + क्त] हवन किया हुआ, होम किया हुआ । वह जिसको नैवेद्य अर्पण किया गया हो । (न०) नैवेद्य, चढ़ावा । हवन-सामग्री । (पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**अग्नि (हुताग्नि)**—(वि०) हवन करने वाला, होम करने वाला ।—**अशन (हुताशन)**—(पुं०) अग्नि । शिव । —**०सहाय (हुताशनसहाय)**—(पुं०) पवन । शिव जी की उपाधि ।—**अशनी (हुताशनी)**—(स्त्री०) होली, फाल्गुनी पूर्णिमा ।—**आश (हुताश)**—(पुं०) अग्नि; 'प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताशं' र० २.७१ । —**जातवेदस्**—(वि०) हवनकर्त्ता, होमकर्त्ता ।—**भुज्**—(पुं०) अग्नि ।—**०प्रिया (हुतभुकप्रिया)**—(स्त्री०) स्वाहा, जो अग्नि की पत्नी है ।—**वह**—(पुं०) अग्नि ।—**होम**—(पुं०) हवन करने वाला ब्राह्मण । (न०) जला हुआ शाकल्य ।

हुम्—(अव्य०) [√हु+डुमि] स्मृति । सन्देह । स्वीकृति । क्रोध । अरुचि, घृणा । भर्त्सना । प्रश्नद्योतक अव्यय विशेष । तांत्रिक साहित्य में "हुं" का प्रयोग प्रायः किया जाता है [यथा ओं कवचाय हुं] ।—**कार (हुङ्कार)**— (पुं०), —**कृति (हुङ्कृति)**—(स्त्री०) हुं का उच्चारण करना; 'पृष्टा पुनः पुनः कान्ता हुङ्कारैरेव भाषते' सुभा० । तिरस्कार-सूचक आवाज । गर्जन । सुअर की घुर-घुर आवाज । टंकार ।

√हुर्च्छ्—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना । हूर्च्छति, हूर्च्छिष्यति, अहूर्च्छीत् ।

√हुल्—भ्वा० पर० सक० जाना । ढकना, छिपाना । होलति, होलिष्यति, अहोलीत् ।

हुलहुली—(स्त्री०) [√ हुल् + क, द्वित्व, ङीष्] यह एक अव्यक्त शब्द है जो आनन्दावसर पर स्त्रियों द्वारा बोला जाता था ।

हुहु, हुहू—(पुं०) [√ह्वे+डु, नि० साधुः] गन्धर्व विशेष ।

√हूड्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । हूडते, हूडिष्यते, अहूडिष्ट ।

हूण, हून—(पुं०) [√ह्वे +नक्, सम्प्रसारण, पक्षे पृषो० णत्व] एक म्लेच्छ जाति; 'तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम्' र० ४.६८ । उसका देश जो बृहत्संहिता के अनुसार उत्तर २४, २५ और २६ नक्षत्र में अवस्थित है । सोने का सिक्का विशेष (सम्भवतः यह हूणों के देश में प्रचलित था) ।

हूत—(वि०) [√ह्वे+ क्त, सम्प्रसारण] आमंत्रित, बुलाया हुआ ।

हूति—(स्त्री०) [√ह्वे + क्तिन्] आमंत्रण । बुलावा । ललकार । नाम ।

हूम्—(पुं०)[√हु+डूमि] प्रश्न । वितर्क । क्रोध । भय । निन्दा । सम्मति ।

हूरव—(पुं०) [हूइति रवो यस्य] गीदड़, शृगाल ।

हूच्छंन—(न०) [√हुर्च्छ् + ल्युट्—अन] कुटिलता । चालाकी । फरेब ।

हूहू—(स्त्री०) [=हुहु, पृषो० साधुः] गन्धर्व विशेष ।

√हृ—भ्वा० उभ० सक० ले जाना, ढोना । हर ले जाना, दूर ले जाना । लूट लेना । वञ्चित कर देना, छीन लेना । नष्ट कर डालना । आकर्षण करना, मोह लेना । प्राप्त करना । अविकार में करना । ग्रसना । विवाह करना । विभाजन करना । हरति-ते, हरिष्यति-ते, अहार्षीत्—अहृत ।

√हृणी—क० आत्म० अक० लजाना । हृणीयते, हृणीयिष्यते, अहृणीयिष्ट ।

हृणीया—(पुं०) [√हृणी + यक् + अ —टाप्] लज्जा । दया । निन्दा ।

हृत्—(वि०) [√हृ+क्विप्, तुक्] हरण करने वाला । ग्रहण करने वाला । ले जाने वाला । आकर्षक, मोहक ।

हृत—(वि०) [√हृ+क्त] छीना हुआ । पकड़ा हुआ । मोहित । स्वीकृत । विभाजित । **—अधिकार** (**हृताधिकार**)–(वि०) बरखास्त, निकाला हुआ । न्यायानुमोदित अधिकारों से वञ्चित किया हुआ ।**—उत्तरीय** (**हृतोत्तरीय**)–(वि०) वह जिसका उत्तरीय वस्त्र (दुपट्टा) छीन लिया गया हो ।**— द्रव्य, —धन**–(वि०) वह जिसका धन नष्ट हो गया हो ।**—सर्वस्व**– (वि०) सम्पूर्णतः बरबाद किया हुआ ।

हृति—(स्त्री०) [√हृ+ क्तिन्] हरण करने की क्रिया । पकड़ । लूट-पाट । विनाश ।

हृद्—(न०) [हृत्, पृषो० तस्य दः, वा हृदयस्य हृदादेशः] दे० 'हृदय' ।**—आवर्त** (**हृदावर्त**)–(पुं०) घोड़े की छाती की भौंरी । **—कम्प** (**हृत्कम्प**)– (पुं०) हृदय की धड़कन ।**—गत**– (वि०) मनोगत । प्यार की आँखों से देखा हुआ । (न०) उद्देश्य, अभिप्राय ।**—देश**– (पुं०) हृदय का स्थान ।**—पिण्ड** (**हृत्पिण्ड**)–(पुं०, न०) हृदय । **—रोग**–(पुं०) हृदय का रोग, हृदय की जलन । शोक । प्रेम । कुम्भ-राशि ।**—लास** (**हृल्लास**)–(पुं०) हिचकी । शोक ।**—लेख** (**हृल्लेख**)–(पुं०) ज्ञान । हृदय की पीड़ा । **—वण्टक**–(पुं०) पेट, मेदा ।**—शोक** (**हृच्छोक**) –(पुं०) हृदय की जलन ।

हृदय—(न०) [√हृ+कयन्, दुक् आगम] दिल । मन, अन्तःकरण । छाती, वक्षःस्थल । किसी वस्तु का सार या मर्म । गुप्त विज्ञान । [हृद्√ इ+अच्] परब्रह्म । आत्मा । बहुत ही प्रिय व्यक्ति ।**—आत्मन्** (**हृदयात्मन्**)–(पुं०) कंक पक्षी ।**—आविध्** (**हृदयाविध्** –(वि०) हृदय को वेधने वाला । **—ईश** (**हृदयेश**), **—ईश्वर** (**हृदयेश्वर**)– (पुं०) पति । परम प्रिय व्यक्ति । **—ईशा** (**हृदयेशा**), **—ईश्वरी** (**हृदयेश्वरी**)–(स्त्री०) पत्नी । प्रेयसी ।**—कम्प**– (पुं०) हृदय की धड़कन ।**—ग्राहिन्**– (वि०) हृदय को वश में करने वाला ।**—चौर**– (पुं०) हृदय को चुराने वाला ।**—वेधिन्**– (वि०) हृदय को छेदने वाला ।**—स्थान**–(न०)छाती, वक्षःस्थल ।

हृदयङ्गम—(वि०) [हृदय √गम्+खच्, मुम्] हृदयगत होने वाला या मन में बैठने वाला । हृदय को दहलाने वाला । प्रिय । मनोहर । आकर्षक; 'वल्लकी च हृदयङ्गमस्वना' र० १९.१३ । उपयुक्त । (न०) युक्ति-युक्त वाक्य ।

हृदयालु, हृदयिक, हृदयिन्—(वि०) [हृदय+आलुच्] [हृदय+ठन्] [हृदय+इनि] सहृदय, भावुक। सुशील।

हृदिक, हृदीक—(पुं०) एक यादव राजकुमार का नाम।

हृदिस्पृश्—(वि०) [हृदि √स्पृश्+क्विन्, अलुक् स०] हृदय को छूने वाला। परम प्रिय।

हृद्य—(वि०) [√हृद्+यत्] हृदय का, भीतरी। हृदय को रुचने वाला। सुन्दर। (न०) दालचीनी। जीरा। वशकारी वेद-मंत्र। कपित्थ। दही। महुए की शराब। वृद्धि नामक ओषधि।—**गन्ध**–(स्त्री०) बेल का पेड़।—**गन्धा**–(स्त्री०) बेला या मोतिया का पौधा।

√हृष्—भ्वा०, दि० पर० अक० प्रसन्न होना, खुश होना। (बालों या रोंगटों का) खड़ा होना। (लिङ्ग का) तनना या खड़ा होना। भ्वा० हर्षति, हर्षिष्यति, अहर्षीत्। दि० हृष्यति, हर्षिष्यति, अहृषत्—अहर्षीत्।

हृषित—(वि०) [√हृष्+क्त] प्रसन्न, आनन्दित। रोमाञ्चित; 'हृषितास्तनूरुहाः' दश०। आश्चर्यान्वित। झुका हुआ, नवा हुआ। हताश। ताजा, टटका।

हृषीक—(न०) [√हृष्+ईकक्] ज्ञानेन्द्रिय।—**ईश** (**हृषीकेश**)–(पुं०) विष्णु या कृष्ण का नाम।

हृष्ट—(वि०) [√हृष्+क्त] हृषित, आनन्दित। रोमाञ्चित। विस्मित। प्रतिहत।—**चित्त**, —**मानस**–(वि०) मन में प्रसन्न।—**रोमन्**–(वि०) रोमाञ्चित।—**वदन**–(वि०) प्रसन्न-मुख।—**सङ्कल्प**–(वि०) सन्तुष्ट।—**हृदय**–(वि०) प्रसन्न-चित्त।

हृष्टि—(स्त्री०) [√हृष्+क्तिन्] प्रसन्नता, हर्ष, खुशी, आनन्द। रोमाञ्च। घमण्ड, दर्प।

हे—(अव्य०) [√हा+डे] सम्बोधनात्मक अव्यय, हो, अरे। दर्प, ईर्ष्या, द्वेष या शत्रुता-द्योतक अव्यय।

हेक्का—(स्त्री०) [=हिक्का, पृषो० साधुः] हिचकी।

√हेठ्—भ्वा० पर० सक० विघात या नुकसान करना। हेठति, हेठिष्यति, अहेठीत्। तु० पर० अक० होना। उत्पन्न होना। सक० पवित्र करना। हेठति, हेठिष्यति, अहेठीत्। भ्वा० आत्म० सक० बाधित करना। हेठते, हेठिष्यते, अहेठिष्ट।

हेठ—(पुं०) [√हेठ्+घञ्] बाधा, रुकावट, अड़चन। विरोध। अनिष्ट।

√हेड्—भ्वा० आत्म० सक० तिरस्कार करना। हेडते, हेडिष्यते, अहेडिष्ट। पर० सक० घेरना। पोशाक धारण करना। हेडति, हेडिष्यति, अहेडीत्।

हेड—(पुं०) [√हेड्+घञ्] अपमान। उपेक्षा।—**ज**–(पुं०) क्रोध। अप्रसन्नता, नाखुशी।

हेडाबुक्क—(पुं०) घोड़े का व्यापारी।

हेति—(स्त्री०) [√हन्+क्तिन्, नि० साधुः] हथियार, अस्त्र; 'पुरोधसारोपितहेतिसंहतिः' कि० ३.५६। आघात, चोट। किरण। प्रकाश, चमक। शोला, अंगारा। साधन। भाला। धनुष की टंकार। यंत्र। अंकुर।

हेतु—(पुं०) [√हि+तुन्] कारण, सबब। उद्देश्य। उद्भव-स्थल। जरिया, साधन। तर्क। तर्कशास्त्र। व्यापक ज्ञापक कारण जो अव्याप्ति आदि दोषों से दूषित न हो। अलङ्कार विशेष जिसकी परिभाषा यह है:—"हेतोर्हेतुमता सार्धमभेदो हेतुरुच्यते।"—**आभास** (**हेत्वाभास**)–(पुं०) हेतु-दोष, वह हेतु जो यथार्थतः हेतु न हो किन्तु हेतु की तरह प्रतीत हो।

हेतुक—(पुं०) [हेतु+क] कारण।

हेतुता—(स्त्री०), **हेतुत्व**—(न०) [हेतु +तल्—टाप्] [हेतु +त्व] हेतु की विद्यमानता, कारण का होना।

हेतुमत्—(वि०) [हेतु +मतुप्] सकारण। तर्क-युक्त। (पुं०) कार्य।

हेतौ—(अव्य०) कारण से।

हेम—(न०) [√हि +मन्] सोना, सुवर्ण। धतूरा। नागकेशर। (पुं०) काले या भूरे रंग का घोड़ा। माषकपरिमाण, एक माशे की तौल। बुध ग्रह।

हेमन्—(न०) [√हि+मनिन्] (समास में 'न्' का लोप हो जाता है)] सुवर्ण, सोना। जल। वर्फ, हिम। धतूरा। नागकेशर।—**अङ्ग** (हेमाङ्ग)–(वि०) सुनहला। (पुं०) गरुड़। सिंह। सुमेरु पर्वत। ब्रह्मा। विष्णु। चंपक वृक्ष।—**अङ्गद** (**हेमाङ्गद**)—(न०) सोने का बाजूबंद।—**अद्रि** (**हेमाद्रि**)–(पुं०) सुमेरु पर्वत।—**अम्भोज** (**हेमाम्भोज**)–(न०) सोने का कमल। [यथा—"हेमाम्भोजप्रसविसलिलं मानसस्याददानः। —मेघदूत।] —**आह्व** (**हेमाह्व**)–(पुं०) जंगली चंपा का पेड़। धतूरा।—**कन्दल**– (पुं०) मूंगा।—**कर**, —**कर्तृ**, —**कार**, —**कारक**– (पुं०) सुनार; 'हे हेमकार! परदुःखविचारमूढ़!' सुभा०—**किञ्जल्क**– (न०) नागकेशर का फूल।—**कुम्भ**– (पुं०) सोने का घड़ा।—**कूट**–(पुं०) हिमालय के उत्तर स्थित एक पर्वत का नाम।—**केतकी**–(स्त्री०) स्वर्णकेतकी नामक पौधा।—**केलि**– (पुं०) अग्नि।—**केश**– (पुं०) शिव।—**गन्धिनी**–(स्त्री०) रेणुका नामक गंधद्रव्य।—**गिरि**– (पुं०) सुमेरु पर्वत।—**गौर**–(पुं०) अशोक वृक्ष।—**च्छन्न**–(वि०) सुवर्ण से आच्छादित, सोने से मढ़ा हुआ। (न०) सोने का ढकना।—**ज्वाल**–(पुं०) अग्नि।—**तार**–(न०) तूतिया।—**दुग्ध**, —**दुग्धक**– (पुं०) सघन गूलर का पेड़।—**पर्वत**– (पुं०) सुमेरु पर्वत।—**पुष्प**, —**पुष्पक**– (पुं०) अशोक वृक्ष। लोध्रवृक्ष। चंपकवृक्ष। (न०) अशोक का फूल। गुलाब विशेष का फूल।—**बल**, —**वल**–(न०) मोती।—**भ**– (वि०) सुवर्ण की तरह।—**माला** (स्त्री०) यम की भार्या। सुवर्ण की माला।—**मालिन्**–(पुं०) सूर्य।—**यूथिका**–(स्त्री०) सोनजही।—**रागिणी**–(स्त्री०) हल्दी।—**शङ्ख**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर।—**शृङ्ग**–(न०) सुनहला सींग। सुनहली चोटी या शिखर।—**सार**– (न०) तूतिया।—**सूत्र**, —**सूत्रक**–(न०) गोप नामक कण्ठाभरण विशेष।—**हस्तिरथ**– (पुं०) एक महादान जिसमें सोने का हाथी और रथ बना कर दान करना होता है।

हेमन्त—(पुं०, न०) [√हि + झ, मुट् आगम] छह ऋतुओं में से एक, मार्गशीर्ष और पौष अर्थात् अगहन और पूस मास। 'नवप्रवालोद्गमसस्यरम्यः प्रफुल्ललोध्रः परिपक्वशालिः। विलीनपद्मः प्रपतत्तुषारो हेमन्त-कालः समुपागतः प्रिये॥'—ऋतुसंहार।

हेमल—(पुं०) [हेम √ला +क] सुनार। कसौटी। गिरगिट।

हेय—(वि०) [√हा +यत्] त्यागने योग्य, छोड़ देने योग्य। जाने योग्य।

हेर—(न०) [√हि +रन्] मुकुट विशेष। हल्दी।

हेरम्ब—(पुं०) [हे √रम्ब् + अच्, अलुक् स०] गणेश। भैंसा। शेखीबाज वीर।—**जननी**–(स्त्री०) श्री पार्वतीजी।

हेरिक—(पुं०) [√हि+ इक, रुट् आगम] गुप्तचर, जासूस, भेदिया।

हेरुक—(पुं०) [√हि+उक, रुट्] शिव का गण। बुद्ध विशेष।

हेलन--(न०), हेलना- (स्त्री०) [√हिल् +ल्युट्] [√ हिल् + णिच्+ल्युट्—टाप्] अवमानना, उपेक्षा। केलि करना। अवनमन।

हेला--(स्त्री०) [√हेड् + अ—टाप्, डस्य लः] तिरस्कार, अपमान। आमोद-प्रमोदमयी क्रीड़ा। उत्कट मैथुनेच्छा। आसानी, सौलभ्य। चाँदनी, जुन्हाई।

हेलावुक्क--दे० 'हेडावुक्क'।

हेलि--(पुं०) [√हिल् +इन्] सूर्य। अर्क-वृक्ष। (स्त्री०) अवज्ञा। आलिंगन। केलि।

हेवाक--(पुं०) उत्सुकता।

हेवाकस--(वि०) अत्यन्त। प्रचण्ड।

हेवाकिन्--(वि०) अतिशय उत्सुक या इच्छुक। 'जायन्ते महतामहोनिरुपमप्रस्थानहेवाकिनाम्। निःसामान्यमहत्त्वयोगपिशुना वार्ता विपत्तावपि ॥' --कल्हण।

√हेष्--भ्वा० आत्म० अक० हिनहिनाना। हेषते, हेषिष्यते, अहेषिष्ट।

हेष--(पुं०), **हेषा** -(स्त्री०), **हेषित**-(न०) [√ हेष् + घञ्] [√हेष्+अ—टाप्] [√हेष्+क्त] हिनहिनाहट।

हेषिन्--(पुं०) [√हेष् + णिनि] घोड़ा।

हेहै--(अव्य०) [हे च है च, द्व० स०] किसी को पुकारने के काम में आने वाला अव्यय विशेष।

है--(अव्य०) [√हा + कै] सम्बोधनात्मक अव्यय।

हैतुक--(वि०) [स्त्री०—**हैतुकी**] [हेतु +ठण्] जो युक्तियुक्त वाक्य का प्रयोग करता हो। कारणात्मक। कारण-सम्बन्धी। तर्कात्मक। तर्क-संबंधी। (पुं०) तार्किक। मीमांसा दर्शन का अनुयायी। हेतु द्वारा सत्कर्म में सन्देह करने वाला, नास्तिक।

हैम--[स्त्री०—**हैमी**] [हिम + अण्] शीतल। ठंडा। कोहरे के कारण हुआ। [हेम + अण्] सुनहला। सोने का बना हुआ; 'पादेन हैमं विलिलेख पीठं' र० ६.१५। (न०) ओस। पाला। (पुं०) शिव जी का नामान्तर। चिरायता।—**मुद्रा**, —**मुद्रिका**- (स्त्री०) सोने का सिक्का।

हैमन--(वि०) [स्त्री०—**हैमनी**] [हेमन्त +अण्, तलोप] शीतल, ठंडा। जड़काला सम्बन्धी। शीतकाल में या ठंड में उत्पन्न होने वाला। [हेमन् + अण्] सुनहला। सोने का। (पुं०) [हेमन्त + अण्] मार्गशीर्षमास, अगहन का महीना। हेमन्तऋतु, जड़काला।

हैमन्तिक--(वि०) [हेमन्त+ठञ्] शीतल, ठंडा। जड़काले में उत्पन्न होने वाला। (न०) हेमन्त ऋतु में होने वाला धान्य।

हैमल--(पुं०) [हिमल+ अण्]हेमन्त ऋतु।

हैमवत--(वि०) [स्त्री०—**हैमवती**] [हिमवत् +अण्] बर्फीला। हिमालय पर्वत में उत्पन्न या पालापोसा हुआ। हिमालय पर्वत सम्बन्धी। हिमालय पर्वत में स्थित। (न०) भारतवर्ष।

हैमवती--(स्त्री०) [हैमवत+ङीप्] श्री पार्वती देवी। श्री गङ्गा। हर्र। स्वर्णक्षीरी। सफेद फूल की बच। रेणुका नामक गंधद्रव्य। कपिलद्राक्षा। अलसी। हल्दी। सेहुँड़। खिरनी।

हैयङ्गवीन--(न०) [ह्योगोदोहाद् भवम्, ह्य—स्गो+ख, नि०साधुः]ताजा घी। टटका मक्खन 'हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्' र० १.४५।

हैरिक--(पुं०) [√ हि+र, हिर + ठक्] चोर।

हैहय--(पुं०) एक पश्चिमी देश। [हैहय +अण्] वहां का अधिवासी। एक पर्वत। सहस्रार्जुन का नाम। 'धेनुवत्सहरणाच्च हैहयः त्वं च कीर्तिमपहर्तुमुद्यतः ॥'

हो--(अव्य०) [√ ह्वे +डो नि०] हो। अरे। हे।

√होड्—भ्वा० आत्म० सक० तिरस्कार करना। जाना। होडते, होडिष्यते, अहोडिष्ट।

होड—(पुं०) [√होड् + अच्] बेड़ा, नाव।

होतृ—(वि०) [स्त्री०—होत्री] [√हु +तृच्] हवन करने वाला, होम करने वाला। (पुं०) ऋत्विक्। यज्ञकर्त्ता। शिव। अग्नि।

होत्र—(न०) [√हु+ष्ट्रन्] होम। हवन-सामग्री, घृतादि।

होत्रा—(स्त्री०) [होत्र+टाप्] यज्ञ। स्तुति।

होत्रीय—(न०) [होतृ + छ] यज्ञ-मण्डप, यज्ञ-शाला। (वि०) होतृ सम्बन्धी।

होम—(पुं०) [√हु + मन्] देवताओं के उद्देश से अग्नि में घृत आदि डालना, हवन। पंच महायज्ञों में से एक, देवयज्ञ। एक प्रकार का दान जो श्राद्ध के समय मन्त्र-पूर्वक किया जाता है।—अग्नि (होमाग्नि)-(पुं०) होम की आग।—कुण्ड-(न०) हवन-कुण्ड।—तुरङ्ग- (पुं०) यज्ञ में बलि दिया जाने वाला घोड़ा; 'नियुज्य तं होम-तुरङ्गरक्षणे' र० ३.३८।—धान्य- (न०) तिल।— धूम-(पुं०) यज्ञीय अग्नि या होम की आग से निकला हुआ धूम।—भस्मन्- (न०) हवन की राख।—वेला- (स्त्री०) हवन करने का समय।—शाला -(स्त्री०) वह घर जिसमें हवन करने के लिए होम-कुण्डादि हो।

होमि—(पुं०) [√ हु +इन्, मुट् आगम] घी। जल। अग्नि। चित्रक वृक्ष।

होमिन्—(पुं०) [होम+इनि] होम करने वाला।

होमीय, होम्य—(वि०) [होम + छ] [होम+यत्] हवन सम्बन्धी। (न०) घी।

होरा—(स्त्री०) [√हु + रन्—टाप्] राशि का उदय। राशि का आधा भाग। एक घंटा। चिह्न। रेखा। जन्मपत्री।

होलक—(पुं०) [√हु + विच्, √ लक् +अच्, कर्म० स०] मटर, चने आदि की आग पर भूनी हुई अधपकी फलियाँ, होरहा।

होलिका—(स्त्री०) [√हु+विच्, तं लाति, √ला+क+कन्—टाप्, इत्व] होली का त्योहार। फाल्गुनी पूर्णिमा।

हौ—(अव्य०) [√ह्वे +डौ नि०] सम्बोधनात्मक अव्यय—अरे। ए। हो।

हौत्र—(न०) [होतृ+अण्] होता का कर्म। (वि०) होतृ सम्बन्धी।

√ह्नु—अ० आत्म० सक० छीन लेना, लूट लेना। किसी से कोई चीज छिपाना। ह्नुते, ह्नोष्यते, अह्नोष्ट।

√ह्मल्—भ्वा० पर० अक० चलना। ह्मलति, ह्मलिष्यति, अह्मालीत्।

ह्यस्—(अव्य०) [गतेऽह्नि नि० साधुः] बीता हुआ कल।—भव (ह्योभव)- (वि०) वह जो कल (बीता हुआ) हुआ हो।

ह्यस्तन—(वि०) [स्त्री०—ह्यस्तनी] [ह्यस् +ट्युल्, तुट् आगम] बीते हुए कल सम्बन्धी। —दिन-(न०) बीता हुआ कल।

ह्यस्त्य—(वि०) [ह्यस्+त्यप्] दे० 'ह्यस्तन'।

√ह्लग्—भ्वा० पर० सक० छिपाना। ह्लगति, ह्लगिष्यति, अह्लगीत्।

ह्लद—(पुं०) [√ह्लाद् +अच् नि० साधुः] गहरी झील। बड़ा और गहरा सरोवर। गहरी गुफा। किरण। ध्वनि।—ग्रह-(पुं०) घड़ियाल।

ह्लदिनी—(स्त्री०) [ह्लद + इनि—ङीप्] नदी। विद्युत्, बिजली।

√ह्लप्—चु० उभ० सक० बोलना, कहना। ह्लापयति—ते, ह्लापयिष्यति—ते, अजिह्लपत्—त।

√ह्लस्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। छोटा हो जाना। ह्लसति, ह्लसिष्यति, अह्लसीत्—अह्लासीत्।

ह्लसिमन्—(पुं०) [ह्लस्व +इमनिच्, ह्लसादेश] छोटापन, ह्लस्वता ।

ह्लस्व—(वि०) [√ह्लस् + वन्] छोटा । थोड़ा, कम । खर्वाकार, ठिंगना । तुच्छ । (पुं०) बौना । लघु वर्ण । मेष, वृष, कुम्भ और मीन राशियां । (न०) गौरसुवर्ण शाक । हीराकसीस ।—**अङ्ग** (ह्लस्वाङ्ग) –(वि०) ठिंगने कद का । (पुं०) बौना, वामन । जीवन ओषधि ।—**गर्भ**–(पुं०) कुश ।— **दर्भ**– (पुं०) छोटा सफेद कुश । —**बाहुक**– (वि०) छोटी बांह वाला । —**मूर्ति**– (वि०) ठिंगने कद का ।

√ह्लाद्—भ्वा० आत्म०अक० शब्द करना । गरजना । ह्लादते, ह्लादिष्यते, अह्लादिष्ट ।

ह्लाद—(पुं०) [√ ह्लाद् + घञ्] शब्द; 'ह्लादं निगृह्णन्ति न दुन्दुभीनाम्' कि० १६.८ । मेघ-गर्जन । (वि०) [√ह्लाद् +अच्] शब्द करने वाला । (पुं०) हिरण्यकशिपु का एक पुत्र ।

ह्लादिन्—(वि०) [√ह्लाद् + णिनि] शब्द करने वाला । गरजने वाला ।

ह्लादिनी—(स्त्री०) [ह्लादिन् + ङीप्] वज्र । बिजली । नदी । शल्लकी नामक वृक्ष ।

ह्लास—(पुं०) [√ह्लस्+घञ्] शब्द । क्षय । कमी । छोटी संख्या ।

√ह्लिणी—क० आत्म० अक० लज्जित होना । ह्लिणीयते, ह्लिणीयिष्यते, अह्लिणीयिष्ट ।

ह्लिणीया—(स्त्री०) [√ह्लिणी + यक् +अ—टाप्] दे० 'हृणीया' ।

√ह्ली—जु० पर० अक० लजाना, शर्माना । जिह्लेति, ह्लेष्यति, अह्लैषीत् ।

ह्ली—(स्त्री०) [√ह्ली+क्विप्] लाज, शर्म; 'रतेरपि ह्लीपदमादधाना' कु० ३. ५७ । दक्ष प्रजापति की कन्या जो धर्म की पत्नी मानी जाती है ।—**जित**–(वि०) लज्जा के वशीभूत, फलतः लज्जाशील । —**निरास**– (पुं०) लज्जा का परित्याग । निर्लज्जता ।— **निषेव**– (वि०) विनयी, नम्र । —**पद**– (न०) लज्जा का कारण । **बल** (वि०) अतिनम्र, संकोची ।—**मूढ़**– (वि०) लाज से घबड़ाया हुआ ।— **यन्त्रणा** (स्त्री०) लज्जा के कारण उत्पन्न पीड़ा ।

ह्लीका—(स्त्री०) [√ह्ली+ कक्—टाप्] लज्जा । त्रास ।

ह्लीकु—(वि०) [√ह्ली +उन्, कुक् आगम] लजीला, हयादार । भीरु, डरपोक । (पुं०) रांगा । लाख, लाह ।

ह्लीण, ह्लीत—[√ ह्ली +क्त, पक्षे तस्य नः] लज्जित, शर्माया हुआ ।

ह्लीवेर, ह्लीवेल—(न०) [ह्लिये लज्जायै वेरम् अङ्गम् अस्य क्षुद्रत्वात्, पृषो० वा रस्य लः] एक प्रकार का सुगन्ध द्रव्य ।

√ह्लुड्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । ह्लोडते, ह्लोडिष्यते, अह्लोडिष्ट ।

√ह्लेप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । ह्लेपते, ह्लेपिष्यते, अह्लेपिष्ट ।

√ह्लेष्—भ्वा० आत्म० अक० हिनहिनाना । रेंगना । ह्लेषते, ह्लेषिष्यते, अह्लेषिष्ट ।

ह्लेषा—(स्त्री०) [√ह्लेष् + अ—टाप्] हिनहिनाहट ।

√ह्लग्—भ्वा० पर० सक० छिपाना । ह्लगति, ह्लगिष्यति, अह्लगीत् ।

ह्लन्न—(वि०) [√ह्लाद्+क्त, ह्लस्वता, तस्य नः] प्रसन्न, आनन्दित ।

√ह्लाद्—भ्वा० आत्म० अक० प्रसन्न होना । सक० प्रसन्न करना । ह्लादते, ह्लादिष्यते, अह्लादिष्ट ।

ह्लाद—(पुं०) [√ ह्लाद् + घञ्] हर्ष, आनन्द ।

ह्लादक—(वि०) [√ह्लाद्+ण्वुल्] प्रसन्न करने वाला । प्रसन्न होने वाला ।

ह्लादन—(न०) [√ह्लाद्+ल्युट्] प्रसन्न होने की क्रिया । प्रसन्न करने की क्रिया ।

ह्लादिन्—(वि०) [√ ह्लाद् + णिनि] प्रसन्न होने वाला । प्रसन्नकारक, हर्षप्रद ।

ह्लादिनी—(स्त्री०) [ह्लादिन् +ङीप्] ईश्वर की एक शक्ति। दे० 'ह्लादिनी' ।

√ह्वल्—भ्वा० पर० अक० चलना । ह्वलति, ह्वलिष्यति, अह्वालीत् ।

ह्वान—(न०) [√ह्वे + ल्युट्] बुलाना, आमंत्रण । आवाज ।

√ह्वृ—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना । आचरण में कुटिलता या टेढ़ापन करना । सक० टेढ़ा करना । ह्वरति, ह्वरिष्यति, अह्वार्षीत् ।

√ह्वे—भ्वा० उभ० सक० बुलाना, आह्वान करना । नाम लेना, नाम लेकर पुकारना । चुनौती देना, ललकारना । स्पर्द्धा करना । प्रार्थना करना, याचना करना । ह्वयति—ते, ह्वास्यति—ते, अह्वत् —अह्वत —अह्वास्त । [रत्नान्यर्थमयानि यानि निहितान्यत्रौ हि वाचां पुरा, धातुप्रत्ययदुर्गमे पथि 'सरस्वत्याः'—सुतस्तान्यहो । अन्विष्यन्नुदघाटयं कृततपोऽहं 'तारिणीश' स्तथा, मोदाय प्रभवेद्धि कौस्तुभसमः कोशो गिराचक्षुषाम्]।।शिवम्।।

समाप्त

परिशिष्ट १

शास्त्रीय न्याय-उक्तियाँ

अजाकृपाणीयन्यायः—किसी स्थान पर एक तलवार लटक रही थी। दैवयोग से उसके नीचे एक बकरा जा पहुँचा और तलवार उसकी गर्दन पर गिर पड़ी और उसकी गर्दन कट गयी। जहाँ दैवयोग से कोई आपत्ति आ जाती है वहां इसका प्रयोग किया जाता है।

अजातपुत्रनामोत्कीर्त्तनन्यायः—अर्थात् पुत्र तो है नहीं, पर उसका नाम रख देना। जहां कोई बात न हो और कोरी आशा के भरोसे कोई आयोजन करने लगे, वहां इसका प्रयोग किया जाता है।

अध्यारोपन्यायः—जो वस्तु जैसी हो उसके विपरीत उसका निरूपण होने पर लोग इसका प्रयोग करते हैं। जैसे 'रस्सी को सांप' बतलाना। वेदान्त-दर्शन में इस न्याय का उल्लेख प्रायः पाया जाता है।

अन्धकूपपतनन्यायः—जब किसी अपात्र को कोई उपदेश दिया जाय और वह तदनुसार चल अपनी भूल-चूक के कारण, अपनी हानि कर बैठता है तब इसका व्यवहार किया जाता है।

अन्धगजन्यायः—कहा जाता है, कई जन्मान्धों ने यह जानने के लिये कि हाथी कैसा होता है, हाथी के शरीर को हाथों से टटोला। जिसने हाथी का जो अंग टटोला, उसने हाथी का वह रूप समझ लिया। हाथी की पूँछ टटोलने वाले ने उसे रस्से के आकार का, पैर टटोलने वाले ने उसे खंभे के आकार का समझा। किसी विषय का साङ्गोपाङ्ग ज्ञान न होने पर, जब कोई उस विषय को अपनी समझ के अनुसार ऊट-पटांग वर्णन करता है, तब यह उक्ति प्रयुक्त की जाती है।

अन्धगोलाङ्गूलन्यायः—कोई अंधा अपने घर का मार्ग भूल गया था। किसी मसखरे ने उसे एक गाय की पूँछ थमा कर कहा कि यह तुम्हारे घर पहुँचा देगी। इसका परिणाम यह हुआ कि, अंधा घर न पहुँच कर इधर-उधर मारा-मारा फिरा। तब से जब कभी कोई मनुष्य किसी दुष्ट के उपदेशानुसार चल कर कष्ट उठाता है, तब इसका प्रयोग किया जाता है।

अन्धचटकन्यायः—अंधे के हाथ बटेर लगना। अर्थात् बिना प्रयास किये कोई वस्तु हाथ लग जाना।

अन्धपरम्परान्यायः—हिन्दी में "भेड़ चाल" इसी का पर्याय है। जब कोई आदमी किसी को कोई काम करते देख, वही काम स्वयं भी करने लगता है, तब वहां इसका प्रयोग किया जाता है।

अन्धपङ्गुन्यायः—एक ही ठिकाने पर जाने वाले जब एक अंधा और एक लँगड़ा मिल जाते हैं, तब पारस्परिक साहाय्य से दोनों अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाते हैं। सांख्यदर्शन में जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष के संयोग से सृष्टि-रचना के उदाहरणस्वरूप इस उक्ति का उल्लेख किया गया है।

अपवादन्यायः—जब किसी वस्तु का यथार्थ ज्ञान होने पर उसके सम्बन्ध में फिर किसी प्रकार का भ्रम नहीं रह जाता तब ऐसे स्थान पर इसका प्रयोग किया जाता है।

अपराह्णच्छायान्यायः—जिस प्रकार दोपहर की छाया बढ़ती है, उसी प्रकार जब किसी

सज्जन की प्रीति की वृद्धि को व्यक्त करना होता है तब इसका प्रयोग किया जाता है ।

अपसारिताग्निभूतलन्यायः—जिस प्रकार भूमि पर से आग हटा लेने पर भी, कुछ देर तक वहां की जमीन में गरमाहट बनी रहती है, उसी प्रकार किसी धनी के पास धन न रहने पर भी कुछ दिनों तक उसमें धनाभिमान बना रहता है ।

अरण्यरोदनन्यायः—अर्थात् जंगल में रोना, जहां कोई सुनने वाला या समवेदना प्रदर्शित करने वाला न हो । जहां कहने पर भी कोई ध्यान देने वाला न हो, वहां इसका प्रयोग किया जाता है ।

अरुन्धतीदर्शनन्यायः—जिस प्रकार अरुन्धती के अतिसूक्ष्म तारे को दिखलाने के लिये उसके समीपस्थ बड़े तारे को दिखला कर अरुन्धती का तारा बतलाया जाता है, उसी प्रकार किसी सूक्ष्म वस्तु को बतलाने के लिये जब किसी महान् वस्तु का निर्देश कर उस सूक्ष्म वस्तु का निर्देश करते हैं, तब इस उक्ति को व्यवहार में लाते हैं ।

अर्कमधुन्यायः—अगर मदार के दूध से काम चलता हो तो शहद-प्राप्ति के लिये विशेष प्रयास करना अनावश्यक है । जो कार्य सहज में हो उसके लिये इधर-उधर बड़ा परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं है । यह प्रदर्शित करने के लिये, इसका प्रयोग किया जाता है । इसी न्याय का रूपान्तर है—'अर्के चेन्मधु विन्देत किमर्थं पर्वतं व्रजेत् ।'

अर्द्धजरतीयन्यायः—एक पुस्तक के घुन पण्डित थे । धनाभाव से दुःखी हुए, तब वह अपना एक-मात्र धन गौ को बेचने के लिये निकले । । उन्होंने समझा कि जिस प्रकार मनुष्य के बूढ़ा होने से उसका गौरव बढ़ जाता है, उसी प्रकार गौ की उम्र अधिक होने से उसका भी मूल्य अधिक होगा; अतः वे पूछने पर अपनी गौ की उम्र खूब बढ़ाकर कहते थे । बूढ़ी गौ को भला कौन लेता । बेचारे को इसके लिये हताश होते देख एक ने कहा, तुम अपनी गौ को बूढ़ी मत कहा करो । वे विद्वान् तो थे अतः उन्होंने मन ही मन कहा आत्मा तो कभी बूढ़ा होता नहीं, अतएव मैं अब अपनी गौ आधी बूढ़ी और आधी जवान बतलाऊँगा । तब से जब कोई बात उभय पक्ष के लिये लागू होती है, तब यह उक्ति प्रयुक्त की जाती है ।

अशोकवनिकान्यायः—छाया, सौरभ, आदि से युक्त अशोक वन में जाने के समान जब किसी एक ही स्थान पर सब कुछ (अर्थात् छाया, सौरभ आदि) प्राप्त हो जाय और अन्यत्र जाने की आवश्यकता न रहे, तब इसका प्रयोग होता है ।

अश्मलोष्ट्रन्यायः—इसका प्रयोग विषमता बतलाने के लिये किया जाता है । अश्म और लोष्ट्र, अश्म से लोष्ट्र की विषमता ही इस न्याय का उद्देश्य है । जहां दो वस्तुओं में सापेक्षिकत्व प्रदर्शित करना होता है वहां पाषाणेष्टिक न्याय कहा जाता है ।

अस्नेहदीपन्यायः—बिना तेल के दीपक जैसी बात । थोड़ी देर प्रचलित रहने वाली किसी चर्चा के सम्बन्ध में इसका प्रयोग किया जाता है ।

अहिकुण्डलन्यायः—सर्प के कुण्डली मार कर बैठने के समान, जब कोई स्वाभाविक बात कहनी होती है, तब इसका प्रयोग होता है ।

अहिनकुलन्यायः—सांप-नेवले के समान । यह स्वाभाविक विरोध सूचित करने के लिये व्यवहृत किया जाता है ।

आकाशापरिच्छिन्नत्वन्यायः—आकाश के समान अपरिच्छिन्नत्व या असीमता प्रदर्शित करने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है ।

आभाणकन्यायः—लोक-प्रवाद के समान जब किसी की उपमा देनी होती है, तब इससे

काम लिया जाता है। लोक-प्रसिद्ध कथन को आभाणक कहते हैं। यथा—इस ग्राम के अमुक वट वृक्ष पर भूत रहता है, ऐसा लोक-प्रवाद है।

आम्रवणन्यायः—किसी वन में आम के वृक्षों की अधिक संख्या होने पर जैसे उस वन को आम्रवन ही कहते हैं—हालाँकि उस वन में अन्य वृक्ष भी होते हैं, वैसे ही जहां औरों को छोड़, प्रधान वस्तु ही का उल्लेख किया जाता है, वहां लोग इसका प्रयोग करते हैं।

उत्पाटितदन्तनागन्यायः—अर्थात् विष का दांत तोड़े हुए सांप के समान। जब कोई दुष्टप्रकृति मनुष्य कुछ करने-धरने या हानि पहुँचाने में असमर्थ कर दिया जाता है, तब उसके लिये इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

उदकनिमज्जनन्यायः—किसी व्यक्ति के दोषी अथवा निर्दोषी होने की एक दिव्य परीक्षा, जो प्राचीन काल में हुआ करती थी। वह इस प्रकार कि परीक्षार्थी व्यक्ति को पानी में खड़ा करके किसी भी ओर बाण छोड़ा जाता था। साथ ही परीक्षार्थी अभियुक्त को तब तक जल में डूबे रहने के लिये कहते थे, जब तक वह छोड़ा हुआ बाण, वहां से छोड़ा जा कर प्रथम छोड़े हुए स्थान पर लौट न आवे। यदि इतने काल के भीतर अभियुक्त का कोई अंग बाहर न दिखाई पड़ा, तो वह निर्दोष समझा जाता था। अतः जब कभी सत्यासत्य के निर्णय का प्रसङ्ग आता है, तब इस न्याय का उल्लेख किया जाता है।

उभयतःपाशरज्जुन्यायः—जब दोनों ओर विपत्ति हो अर्थात् दो कर्त्तव्य पक्षों में से प्रत्येक में दुःख देख पड़े, तब इसका उल्लेख करना उचित समझा जाता है।

उष्ट्रकण्टकभक्षणन्यायः—थोड़ी सी देर के जिह्वा-सुख के लिये जैसे ऊँट काँटे चुभने का कष्ट उठाता है, वैसे ही जब थोड़े से सुख के लिये विशेष कष्ट उठाना पड़ता है तब वहां यह कहावत कही जाती है।

ऊषरवृष्टिन्यायः—कही हुई किसी बात का जहां प्रभाव नहीं पड़ता, वहां इसका प्रयोग किया जाता है।

कण्ठचामीकरन्यायः—गले में पड़े सुवर्ण-हार को ढूंढ़ना। सच्चिदानंद ब्रह्म अपने में विद्यमान रहते भी, जब कोई अज्ञानी जन, सुख-प्राप्ति के लिये अनेक प्रकार के दुःख भोगता है; तब वेदान्ती इसका प्रयोग करते हैं।

कदम्बगोलकन्यायः—जैसे कदंब के गोले में सब फूल एक साथ रहते हैं, वैसे ही जिस जगह कई बातें एक साथ हो जाती हैं, उस जगह, इसका प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी नैयायिक लोग शब्दोत्पत्ति के प्रसङ्ग में कई वर्णों के उच्चारण को एक साथ मान कर उसके दृष्टान्त में भी इसका प्रयोग करते हैं।

कदलीफलन्यायः—जैसे केला काटने ही पर फलता है, वैसे ही नीच भी सीधे प्रकार फल-दायी अर्थात् काम का नहीं होता।

कफोणिगुडन्यायः—केहुनी में गुड़ नहीं रहने पर भी गुड़ है ऐसा समझ कर उसे चाटने के तुल्य न्याय। जहां पर वस्तु नहीं है अथच उस वस्तु की प्रत्याशा में काम ठान दिया जाता है वहां पर यह न्याय लगता है। इसका समानार्थवाची है—'सूत न कपास कोरी से लठालठी' अथवा 'सूत न कपास जुलाहे से मटकौवल।'

करकङ्कणन्यायः—कङ्कण कहने ही से हाथ के गहने का बोध हो जाता है। 'कर' कहने की आवश्यकता नहीं रहती। जहां इस प्रकार का अभिप्राय व्यक्त करना होता है, वहां इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

काकतालीयन्यायः—एक वृक्ष के नीचे एक बटोही पड़ा था। उसी वृक्ष के ऊपर एक काक भी बैठा था। काक वृक्ष छोड़ ज्यों ही

उड़ा त्यों ही ताड़ का एक पका हुआ फल नीचे गिरा। यद्यपि फल पक कर आपसे आप गिरा था, पर पथिक दोनों बातों को साथ होते देख, यही समझ गया कि कौवे के उड़ने ही से तालफल गिरा। अतः जहां दो बातें संयोग से इस प्रकार एक साथ हो जाती हैं वहां, उनमें, परस्पर कोई संबंध न होते हुए भी, लोग जब, सम्बन्ध लगा बैठते हैं, तब यह कहावत कही जाती है।

काकदध्युपघातकन्यायः—अर्थात् 'कौवे से दही बचाना'। इसके कहने से, जिस प्रकार कुत्ते बिल्ली आदि सब जन्तुओं से बचाना समझ लिया जाता है उसी प्रकार का जहां किसी वाक्य का अभिप्राय होता है वहां यह कहावत कही जाती है।

काकदन्तगवेषणान्यायः—जिस प्रकार काक का दांत ढूंढ़ना निष्फल है, उसी प्रकार किसी निष्फल प्रयत्न के सम्बन्ध में यह उक्ति व्यवहृत की जाती है।

काकाक्षिगोलकन्यायः—कहावत है कि कौवे के एक ही पुतली होती है जो प्रयोजन के अनुसार कभी इस आंख में कभी उस आंख में जाती है। अतएव जहां एक ही वस्तु दो स्थानों में कार्य करे वहां के लिये यह न्याय प्रयुक्त किया जाता है।

कारणगुणप्रक्रमन्यायः—कारण का गुण कार्य में भी पाया जाता है। जिस प्रकार सूत का रूप आदि उसके बने कपड़े में।

कुशकाशावलम्बनन्यायः—जिस प्रकार डूबता हुआ आदमी कुश या कास जो कुछ हाथ में पड़ता है, उसीको सहारे के लिये पकड़ता है उसी प्रकार जहां कोई दृढ़ आधार न मिलने पर लोग इधर-उधर की बातों का सहारा लेते हैं, वहां के लिये यह कहावत है। हिन्दी में भी 'डूबते को तिनके का सहारा' प्रसिद्ध है।

कूपखानकन्यायः—जिस प्रकार कुआं खोदने वाले के शरीर में लगा हुआ कीचड़ उस कुएँ के ही जल से साफ हो जाता है, उसी प्रकार श्रीराम श्रीकृष्ण आदि को भिन्न-भिन्न रूपों में समझने से जो दोष लगता है वह उन्हीं की उपासना करने से मिट भी जाता है।

कूपमण्डूकन्यायः—एक आख्यायिका है कि एक बार, समुद्र में रहने वाला एक मण्डूक (मेढक) किसी कूप में जा पड़ा। उस कुएँ के मेढक ने समुद्र के मेढक से पूछा—'तुम्हारा समुद्र कितना बड़ा है?' उत्तर मिला—बहुत बड़ा। इस पर कुएँ के मेढक ने पूछा—'इस कुएँ जितना बड़ा'। समुद्र के मेढक ने उत्तर दिया—'कहां कुआं, कहां समुद्र — समुद्र से बड़ी कोई वस्तु इस धरा-धाम पर है ही नहीं।' समुद्री मण्डूक की उक्ति पर कूप-मण्डूक, जिसने कूप को छोड़ अपने जीवन में कोई वस्तु कभी देखी ही न थी, बहुत ही नाराज हुआ और बोला—'तुम झूठे हो, कुएँ से बड़ी कोई वस्तु हो नहीं सकती।' अतएव जहां परिमित ज्ञान के कारण, कोई अपनी जानकारी के ऊपर कोई दूसरी बात मानता ही नहीं, वहां यह न्याय काम में लाया जाता है।

कूर्माङ्गन्यायः—कछुआ अपनी इच्छा के अनुसार अपना समस्त अंग समेट और फैला सकता है। ईश्वर की जब इच्छा होती है; तब वह अपनी रची सृष्टि को अपने में लय कर लेता है और जब उसकी इच्छा होती है तब फिर रच डालता है। अतः जब ईश्वर की इस शक्ति का उदाहरण देना आवश्यक होता है, तब इस न्याय से काम लिया जाता है।

कैमुतिकन्यायः—जब यह बात दृष्टान्त द्वारा समझाने की जरूरत होती है कि, जिसने बड़े-बड़े काम कर डाले उसके लिये छोटा काम कोई चीज ही क्या है तब इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

कौण्डिन्यन्यायः—'यह ठीक है, किन्तु यदि ऐसा होता तो और भी अच्छा था' यह बतलाने

को इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

गजभुक्तकपित्थन्यायः—हाथी के खाए हुए कैथ के समान ऊपर से देखने में ज्यों का त्यों किन्तु भीतर खोखला। किसी अन्तःसार-शून्य वस्तु के लिये इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

गड्डलिका-प्रवाहन्यायः—'भेड़िया धसान' से इसका अभिप्राय स्पष्ट होता है।

गणपतिन्यायः—एक बार देवताओं में सर्व-श्रेष्ठत्व होने का परस्पर झगड़ा हुआ। ब्रह्मा जी के सुझाने पर निश्चित हुआ कि जो देवता पृथिवी की प्रदक्षिणा कर सब के आगे लौट आवे वही देवता सर्वश्रेष्ठ और पूज्य माना जाय। समस्त देवताओं ने पृथिवी की प्रदक्षिणा करने के लिए अपने-अपने वाहनों पर सवार हो प्रस्थान किया। गणेश जी अपने वाहन चूहे पर सवार होने के कारण सब के पीछे रहे। इतने में नारद जी से उनकी भेंट हो गयी। उन्होंने गणेश जी को यह युक्ति बतलाई कि सर्वमय श्रीराम जी का नाम लिख और उसकी प्रदक्षिणा कर के ब्रह्मा जी के निकट लौट जाओ। गणेश जी ने तदनुसार ही किया। फल यह हुआ कि गणेश जी देवताओं में सर्वप्रथम पूज्य हो गये। अतएव जहाँ जरा सी युक्ति से बड़ा काम हो जाय, वहीं इसका प्रयोग किया जाता है।

गतानुगतिकन्यायः—एक घाट पर कुछ ब्राह्मण तर्पण किया करते थे। वे अपने-अपने कुश एक ही जगह पर रख दिया करते थे। इसका फल यह होता था कि, एक का कुश दूसरे के हाथ प्रायः लग जाया करता था। एक दिन पहचान के लिये उनमें से एक ब्राह्मण ने अपना कुश एक ईंट के नीचे दबा दिया। उसकी देखा-देखी दूसरे दिन सब ने अपने-अपने कुश ईंटों के नीचे दबा दिये। अतः जहाँ देखा-देखी लोग कोई काम करने लगते हैं, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

गुडजिह्विकान्यायः—जैसे कड़वी दवा पिलाने के पूर्व बालक को गुड़ देकर फुसला लिया जाता है वैसे ही किसी अरुचिकर या कठिन काम को कराने के लिये प्रथम कुछ प्रलोभन देना आवश्यक होता है, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

गोबलीवर्दन्यायः—बलीवर्द का अर्थ है—बैल। अथच गोशब्दपूर्वक बलीवर्द शब्द के प्रयोग से और भी शीघ्र बैल का बोध हो जाता है। ऐसे शब्द जहाँ एक साथ होते हैं, वहाँ इस उक्ति से काम लिया जाता है।

घटप्रदीपन्यायः—घड़े के भीतर रखे हुए दीपक के प्रकाश को घड़ा अपने बाहर नहीं निकलने देता। जहाँ कोई केवल अपनी भलाई चाहता है और दूसरे की भलाई करना नहीं चाहता, वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

घट्टकुटीप्रभातन्यायः—एक लोभी बनिया घाट की उतराई का महसूल न देने के अभि-प्राय से ऊबड़-खाबड़ जगहों में सारी रात भटक कर, प्रातःकाल होते ही फिर उसी घाट पर पहुँचा, जहाँ उतराई का महसूल देना पड़ता था। अतएव जहां एक कठिनता को बचाने के लिये अनेक उपाय निष्फल हों और अन्त में उसी कठिनता का सामना करना पड़े, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

घुणाक्षरन्यायः—घुनों के काटने से लकड़ी में अक्षरों के आकार जैसे रूप बन जाते हैं, हालाँ कि घुन इस उद्देश्य से लकड़ी को नहीं घुनते। अतः जहाँ किसी एक काम के होने पर दूसरा काम अनायास हो जाता है, वहाँ घुणाक्षरन्याय का प्रयोग किया जाता है।

चम्पकपटवासन्यायः—जिस वस्त्र में चंपे के फूल लपेट कर रख दिये गये हों उसमें से फूल निकाल लेने पर भी, बहुत देर तक चंपे

के फूलों की खुशबू बनी रहती है। इसी प्रकार विषय-भोग-जन्य संस्कार भी बहुत काल पर्यन्त बना रहता है। इसको चम्पकपटवासन्याय कहते हैं।

जलतरङ्गन्याय:—नाम पृथक् होने पर भी जल की तरंग अथवा लहर जल से भिन्न गुण की नहीं होती। अतः जब इस प्रकार का अभेद सूचित करने की आवश्यकता होती है, तब इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

जलतुम्बिकान्याय:—(क) पानी में तूँबी कभी नहीं डूबती; बल्कि डुबाने पर भी ऊपर आ जाती है। अतः जब कोई बात छिपाने पर भी नहीं छिपती या छिपाने से छिपने वाली नहीं होती, वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

(ख) तूँबी में यदि कीचड़-मिट्टी थोप कर उसे डुबो दें तो वह डूब जाती है किन्तु यदि बिना मिट्टी-कीचड़ के उसे डुबोना चाहें तो वह नहीं डूबती। इसी तरह यह जीव शरीरादि रूपी मलों के रहते संसार-सागर में डूब जाता है, और मल छूटने पर संसार-सागर के पार हो जाता है।

जलानयनन्याय:—"पानी ले आओ" कहने से पानी जिस बरतन में लाया जाता है, उस बरतन का भी बोध हो जाता है, क्योंकि बरतन के बिना पानी आयेगा किसमें। अतः जब एक वस्तु कह कर उसके साथ की अनिवार्य किसी अन्य वस्तु का ज्ञान कराना होता है, तब वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

तिलतण्डुलन्याय:—इसका प्रयोग उन वस्तुओं के सम्बन्ध में किया जाता है, जो चावलों और तिलों की तरह मिली रहने पर भी अलग-अलग दिखाई पड़ती हैं।

तृणजलौकान्याय:—इस न्याय का प्रयोग नैयायिक लोग तब करते हैं, जब उन्हें आत्मा के एक शरीर छोड़ कर दूसरे शरीर में जाने का दृष्टान्त देने की आवश्यकता होती है। जैसे जलौका (जोंक) जब तक एक तृण का आश्रय नहीं ले लेती है तब तक पूर्वाश्रित तृण का त्याग नहीं करती है, उसी प्रकार आत्मा सूक्ष्म शरीर के साथ एक देह का अवलम्बन किये बिना पूर्व शरीर को नहीं छोड़ता है।

दण्डचक्रन्याय:—जिस तरह घड़ा बनने में दण्ड, चक्र आदि कई कारण हैं, उसी तरह जहाँ कोई बात अनेक कारणों से होती है, वहाँ यह उक्ति व्यवहृत की जाती है।

दण्डापूपन्याय:—एक बार एक मनुष्य डंडे में बँधे हुए मालपुए छोड़ कर कहीं गया। आने पर उसने देखा कि मालपुओं के साथ चूहों ने डंडे को भी खा डाला है। यह देख उसने विचारा कि, जब चूहों ने डंडा तक खा डाला तब उन्होंने मालपुए क्योंकर छोड़े होंगे। अतः जब कोई दुष्कर और कष्टसाध्य कार्य हो जाता है तब उसके साथ ही लगा हुआ सुखद और सुकर कार्य अवश्य ही हुआ होगा—यह बतलाने के लिये यह कहावत कही जाती है।

दशमन्याय:—एक बार दस आदमी एक साथ तैरकर नदी पार गए। पार पहुँच कर वे यह देखने के लिये सबको गिनने लगे कि कोई बीच में डूब तो नहीं गया। किन्तु जो गिनता वह अपने को छोड़ जाता था। इसलिये दस की जगह नौ ही निकलते। अन्त में वे अपने साथियों में से एक के डूब जाने के लिये रोने लगे। उनको रोते देख एक पथिक ने उनसे अपने सामने गिनने को कहा। जब उनमें से एक ने उठकर फिर गिनना शुरू किया और नौ पर आकर रुक गया तब पथिक ने कहा—"दसवें तुम"। इस पर वे सब प्रसन्न हो गये। वेदान्ती इस न्याय का व्यवहार उस समय करते हैं, जिस समय उनको यह दिखलाना होता है कि गुरु के 'तत्त्वमसि'

(तुम सच्चिदानन्द रूप ब्रह्म हो) आदि उपदेश सुनने पर ही अज्ञान और तज्जनित दुःख दूर होता है।

देहलीदीपकन्यायः—जिस जगह एक ही आयोजन से दो काम सधें या एक शब्द या बात दोनों ओर लगे, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ है देहरी का दीपक, जो भीतर और वाहर दोनों जगहों पर उजेला करता है।

नष्टाश्वदग्धरथन्यायः—एक वार एक आदमी रथ पर सवार हो वन में होकर जा रहा था कि, वन में आग लगी और उसका घोड़ा जल कर मर गया। इतने में वह आदमी विकल हो वन में घूम रहा था कि, उसे एक दूसरा आदमी मिला जिसका रथ तो नष्ट हो गया था, किन्तु घोड़ा जीवित था। अतः दोनों ने समझौता कर उस अश्वहीन रथ और रथहीन घोड़े से काम चलाया था। इससे जब दो आदमी मिल कर एक दूसरे की त्रुटियों की पूर्ति कर अपना काम चला लेते हैं तब इस न्याय का व्यवहार किया जाता है।

नारिकेलफलाम्बुन्यायः—जिस प्रकार नारियल के फल में जल का आना नहीं जान पड़ता, उसी प्रकार लक्ष्मी का आना नहीं जान पड़ता। जब कभी ऐसा प्रयोजन व्यक्त करना पड़ता है तब इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

निम्नगाप्रवाहन्यायः—नदी के प्रवाह का यह स्वभाव होता है कि जिधर वह जाता है उधर रुकता नहीं। इसी प्रकार के अनिवार्य क्रम का दृष्टान्त देने में इस न्याय से काम लिया जाता है।

नृपनापितपुत्रन्यायः—किसी राजा के एक नाई नौकर था। राजा ने एक दिन उससे कहा कि कहीं से सबसे सुन्दर एक वालक लाकर मुझको दिखलाओ। नाई को अपने पुत्र से वढ़ कर और कोई सुन्दर वालक ही न देख पड़ा। अतः वह अपने ही पुत्र को लेकर राजा के पास पहुँचा। राजा उस काले कलूटे वालक को देख प्रथम तो वहुत क्रुद्ध हुआ, किन्तु पीछे उसने सोचा कि स्नेह के वश इसे अपने लड़के-सा सुन्दर वालक कोई दिखाई ही न पड़ा। अतः रागवश जहाँ मनुष्य अन्धा हो जाता है और उसको अच्छे-वुरे का विवेक नहीं रहता वहाँ इस न्याय का व्यवहार किया जाता है।

पङ्कप्रक्षालनन्यायः—कीचड़ लगने पर उसे धो डालने की अपेक्षा कीचड़ न लगने देना ही उत्तम है।

पञ्जरचालनन्यायः—यदि दस पक्षी किसी पिंजड़े में वन्द कर दिये जायँ और वे सव एक साथ यत्न करें, तो उस पिंजड़े को चलायमान कर सकते हैं। ५ ज्ञानेन्द्रियाँ और ५ कर्मेन्द्रियाँ प्राणरूपी क्रिया को उत्पन्न कर देह को चलाती हैं। सांख्यवाले इस बात को दर्शाने के लिए उक्त न्याय का दृष्टान्त दिया करते हैं।

पाषाणेष्टकन्यायः—ईंट भारी अवश्य होती है; पर ईंट से भी कहीं अधिक पत्थर भारी होता है। इस प्रकार जहाँ एक से वढ़ कर एक है वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

पिष्टपेषणन्यायः—पिसे को पीसना जिस प्रकार व्यर्थ है, उसी प्रकार किये हुए काम को जव कोई दुवारा करता है तव यह उक्ति कही जाती है।

प्रदीपन्यायः—जिस तरह तेल, वत्ती और अग्नि इन भिन्न वस्तुओं के मेल से दीपक जलता है उसी तरह सत्त्व, रज और तम इन परस्पर भिन्नगुणों के सहयोग से देह-धारण का व्यापार होता है।

प्रपाणकन्यायः—जिस तरह घी, चीनी आदि कई वस्तुओं को एकत्र करने से वढ़िया मिठाई प्रस्तुत होती है, उसी तरह अनेक उपादानों के योग से सुन्दर वस्तु तैयार होने के दृष्टान्त

में यह युक्ति प्रयुक्त की जाती है। साहित्य वाले विभाव, अनुभाव आदि द्वारा रस का परिपाक सूचित करने के लिएं भी इसका प्रयोग किया करते हैं।

।सादवासिन्याय:—जिस तरह महल में रहनेवाला यद्यपि काम-काज के लिये नीचे उतर कर बाहर भी जाता है तथापि वह प्रासाद-वासी ही कहलाता है उसी तरह जहाँ जिस विषय का प्राधान्य होता है वहाँ उसी का उल्लेख किया जाता है।

फलवत्सहकारन्याय:—जिस प्रकार आम के वृक्ष के तले बटोही छाया के लिये जाता है पर उसे आम के फल भी मिलते हैं, उसी प्रकार जहाँ एक लाभ होने से दूसरा लाभ भी हो वहाँ इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

बहुवृकाकृष्टन्याय:—जिस प्रकार एक हिरन के पीछे अनेक भेड़ियों के लगने से, उसके अङ्ग एक स्थान पर नहीं रह सकते, उसी प्रकार जिस वस्तु के लिये अनेक जन खींचा-तानी करते हैं, वह वस्तु यथास्थान पर समूची नहीं रह सकती।

बिलवर्तिगोधान्याय:—जिस प्रकार बिल-स्थित गोह का विभाग आदि नहीं हो सकता उसी प्रकार जो वस्तु अज्ञात है उसके विषय में भी अच्छा-बुरा कहना सम्भव नहीं।

ब्राह्मणग्रामन्याय:—जिस गाँव में ब्राह्मणों की बस्ती अधिक होती है, वह ब्राह्मणों का गाँव कहलाता है, हालाँकि उसमें अन्य जाति के लोग भी बसते हैं। इसी प्रकार औरों को छोड़ प्रधान वस्तु ही का नाम लिया जाता है। यही सूचित करने के लिये यह उक्ति व्यवहृत की जाती है।

मज्जनोन्मज्जनन्याय:—तैरना न जाने वाला जिस प्रकार जल में गिरने से डूबता-उतराता है उसी प्रकार मूर्ख या दुष्ट वादी प्रमाण आदि ठीक न दे सकने के कारण क्षुब्ध और व्याकुल होता है।

रज्जुसर्पन्याय:—जिस प्रकार जब तक दृष्टि ठीक नहीं पड़ती तब तक मनुष्य रस्सी को साँप समझता है, उसी प्रकार जब तक ब्रह्म-ज्ञान नहीं होता तब तक मनुष्य दृश्य जगत् को सत्य समझता है, पीछे ब्रह्म-ज्ञान होने पर उसका भ्रम दूर होता है और वह समझता है कि ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह वेदान्त की एक शाखा का सिद्धान्त है।

राजपुत्रव्याधन्याय:—एक राजपुत्र बचपन में एक व्याध के हाथ पड़ा और उसी के घर पाला-पोसा गया। अत: वह अपने को व्याध-पुत्र ही समझने लगा। पीछे जब लोगों से उसे अपना कुल अवगत हुआ तब उसे अपना वास्तविक-स्वरूप ज्ञात हुआ। इसी प्रकार अद्वैत वेदान्तियों का मत है कि जीव को जब तक ब्रह्म-ज्ञान नहीं होता, तब तक वह अपने को न जाने क्या समझा करता है। जब जीव को ब्रह्म-ज्ञान होता है तब वह समझता है कि "मैं ब्रह्म हूँ।"

राजपुरप्रवेशन्याय:—राज-द्वार पर जिस प्रकार बहुत से लोगों की भीड़-भाड़ होने पर भी वहां किसी प्रकार का होहल्ला नहीं होता, प्रत्युत सब लोग चुप-चाप यथानियम खड़े रहते हैं। इसी प्रकार जहाँ सुव्यवस्था होती है वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

रात्रिंदिवसन्याय:—अर्थात् रात-दिन का अन्तर। कौड़ी-मोहर का अन्तर। जमीन आसमान का अन्तर।

लूतातन्तुन्याय:—जैसे मकड़ी अपने शरीर ही से सूत निकाल कर जाला बनाती है और फिर स्वयं उसका संहार करती है वैसे ही ब्रह्म अपने ही से सृष्टि करता और अपने में उसे लय करता है।

लोष्ट्रलगुडन्याय:—जैसे ढेला तोड़ने के लिए डंडा होता है वैसे ही जहाँ एक का दमन करने वाला दूसरा होता है वहाँ इस कहावत से काम लिया जाता है।

लौहचुम्बकन्यायः—लोहा गतिहीन और निष्क्रिय होने पर भी चुम्बक के आकर्षण से उसके पास जाता है, उसी प्रकार पुरुष निष्क्रिय होने पर भी प्रकृति के साहचर्य से क्रिया में तत्पर होता है। (यह सांख्य के मतानुसार है।)

वरगोष्ठीन्यायः—जिस प्रकार वर-पक्ष और कन्या-पक्ष के लोग मिलकर विवाह रूप एक ऐसे कार्य का साधन करते हैं जिससे दोनों का अभीष्ट सिद्ध होता है, उसी प्रकार जहाँ-कहीं लोग मिलकर कोई ऐसा काम करते हैं जो सर्वहितकर होता है वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

वह्निधूमन्यायः—धूमरूपी कार्य देखकर, जिस प्रकार कारण रूप अग्नि का ज्ञान होता है, उसी प्रकार कार्य द्वारा कारण के अनुमान के सम्बन्ध में यह उक्ति है। (यह नैयायिकों का मत है)

विल्वखल्वाटन्यायः—सूर्यातप से विकल एक गंजा छाया के लिए एक बेल के नीचे गया। वहाँ उसके सिर पर एक वेल टूट कर गिरा। जहाँ इष्ट-साधन के प्रयत्न में अनिष्ट होता है वहां इस उक्ति से काम लिया जाता है।

विषवृक्षन्यायः—यदि कोई विष का पेड़ भी लगाता है, तो उसे अपने ही हाथ से नहीं काटता है। अपनी पाली-पोसी वस्तु का कोई अपने हाथ से नाश नहीं करता।

वीचितरङ्गन्यायः—एक के उपरान्त दूसरी, इस क्रम से बराबर आनेवाली तरङ्गों के समान ही ककारादिवर्णों की उत्पत्ति नैयायिक लोग वीचितरङ्ग न्याय से मानते हैं।

बीजाङ्कुरन्याय—अंकुर से वीज है या बीज से अंकुर—यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। क्योंकि न वीज के विना अंकुर हो सकता है, न अंकुर के विना बीज। वीज और अंकुर का प्रवाह अनादि काल से चला आता है। दो सम्बन्ध-युक्त वस्तुओं के नित्य प्रवाह के दृष्टान्त में वेदान्ती लोग इस न्याय का प्रयोग किया करते हैं।

वृक्षप्रकम्पनन्यायः—एक मनुष्य वृक्ष पर चढ़ा। वृक्ष के नीचे खड़े लोगों में से एक ने उससे कहा—यह डाल हिलाओ, दूसरे ने कहा वह डाल हिलाओ। इसका परिणाम यह हुआ कि वृक्ष पर चढ़ा हुआ आदमी यह स्थिर न कर सका कि किस डाल को हिलाऊँ। इतने में एक आदमी ने पेड़ का तना ही पकड़ कर हिला डाला जिससे सब डालें हिल गयीं। जहाँ कोई एक बात सबके अनुकूल हो जाती है वहाँ इसका प्रयोग होता है।

वृद्धकुमारिकान्यायः या **वृद्धकुमारीवाक्यन्यायः**—एक कुमारी तप करते-करते बूढ़ी हो गयी। इन्द्र ने उससे कोई एक वर माँगने को कहा। उसने वर माँगा कि मेरे बहुत से पुत्र सोने के बरतनों में खूब घी, दूध और अन्न खायँ। इस प्रकार उसने एक ही वाक्य में पति, पुत्र, गो, धन-धान्य सब कुछ मांग लिया है। जहाँ एक की प्राप्ति से सब कुछ प्राप्त हो वहाँ यह कहावत कही जाती है।

शालिसम्पत्तौ कोद्रवाशनन्यायः—शालि उत्तम धान्य है और कोद्रव (कोदो) अधम धान्य। उत्तम धान्य के रहते अधम धान्य खाने के सदृश न्याय। जहाँ उत्तम वस्तु के रहते अधम वस्तु का सेवन किया जाता है वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

शतपत्रभेदन्यायः—सौ पत्ते एक साथ रख कर छेदने से जान पड़ता है कि सब एक साथ एक काल ही में छिद गये, पर वास्तव में एक पत्ता भिन्न-भिन्न समय में छिदा। कालान्तर की सूक्ष्मता के कारण इसका ज्ञान नहीं हुआ। इस प्रकार जहाँ बहुत से कार्य भिन्न-भिन्न समयों में होते हुए भी एक ही समय में हुए जान पड़ते हैं, वहाँ यह दृष्टान्त वाक्य कहा जाता है। (सांख्य के मतानुसार)

शुकनलिकान्यायः—लोभवश फँसने की रीति। पक्षी फँसाने की लासा लगी नलिनी, नलिका

लगा कर उसके पास चारा रख देते हैं। तोता (या पक्षी) चारे के लोभ से नलिनी पर बैठता है और उसके पंजे लासे में फँस जाते हैं। लोभ-वश फँसने की इसी क्रिया के आधार पर यह न्याय बना।

शृङ्गग्राहितान्यायः—मरकहे साँड़ का एक सींग पकड़ लेने पर दूसरा सींग भी आसानी से पकड़ा जा सकता है, इसी तथ्य के आधार पर यह न्याय बना है। इसका तात्पर्य यह है कि किसी दुष्कर कार्य का कुछ हिस्सा हो जाने पर उसका शेष भाग भी सम्पन्न हो जाता है।

श्यामरक्तन्यायः—जैसे कच्चा काला घड़ा पकने पर अपना श्यामगुण छोड़ कर रक्तगुण धारण करता है उसी प्रकार पूर्व गुण का नाश और अपरगुण का धारण सूचित करने के लिये इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

श्यालकशुनकन्यायः—एक ने कुत्ता पाला था और उसका वही नाम रखा जो उसके साले का नाम था। जब वह कुत्ते का नाम लेकर गालियाँ देता, तब उसकी पत्नी अपने भाई का अपमान समझ कर नाक-भौं सिकोड़ती थी। उस समय से जिस उद्देश्य से कोई बात नहीं कही जाती और वह यदि उससे हो जाती है, तो इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

संदंशपतितन्यायः—सँड़सी अपने बीच में आई हुई वस्तु को जैसे पकड़ती है वैसे ही जहाँ पूर्व और उत्तर पदार्थ द्वारा मध्यस्थित पदार्थ का ग्रहण होता है वहाँ इस न्याय का व्यवहार किया जाता है।

समुद्रवृष्टिन्यायः—जैसे समुद्र में पानी बरसने से कोई लाभ नहीं, वैसे ही जहाँ जिस वस्तु की कोई आवश्यकता नहीं होती वहाँ यदि वह की जाती है, तो इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

सर्वापेक्षान्यायः—जिस स्थान पर बहुत से लोगों को न्योता होता है, वहाँ यदि कोई सब के पूर्व पहुँच जाय तो उसे सब की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। इसी तरह जहाँ किसी काम के लिए सब का आसरा देखना पड़े वहाँ यह न्याय चरितार्थ समझा जाता है।

सिंहावलोकनन्यायः—सिंह शिकार मार कर जब आगे बढ़ता है तब पीछे फिर-फिर कर देखा करता है। इसी प्रकार जहाँ अगली और पिछली सब बातों की एक साथ आलोचना की जाती है, वहाँ इस उक्ति का व्यवहार किया जाता है।

सुन्दोपसुन्दन्यायः—सुन्द और उपसुन्द नाम के दो दैत्य भाई बड़े बली थे। वे दोनों एक ही स्त्री पर मोहित हुए। उस स्त्री ने दोनों से कहा "तुममें से जो अधिक बलवान् होगा— मैं उसी के साथ विवाह करूँगी।" इसका फल यह हुआ कि दोनों आपस में लड़ मरे। आपस की अनबन से बलवान् से बलवान् मनुष्य नष्ट हो जाते हैं। यह प्रकट करने के लिए ही यह कहावत कही जाती है।

सूचीकटाहन्यायः—किसी लुहार से एक आदमी ने जाकर कड़ाह (बड़ी कड़ाही) बनाने को कहा। थोड़ी देर बाद एक दूसरा मनुष्य आया और उसने उसी लुहार से सुई बनाने को कहा। लुहार ने पहले सुई बनाई, पीछे कड़ाह। जब सहज काम पहले और कठिन काम पीछे किया जाता है तब यह उक्ति चरितार्थ की जाती है।

सोपानारोहणन्यायः—जिस प्रकार महल पर जाने के लिये एक-एक सीढ़ी क्रम से चढ़ना होता है, उसी प्रकार किसी बड़े काम के करने में क्रम-क्रम से आगे बढ़ना पड़ता है।

सोपानावरोहणन्यायः—जिस क्रम से सीढ़ियों पर चढ़ा जाता है, उसी के उलटे क्रम से उतरते हैं। इसी प्रकार जहाँ किसी क्रम से चल कर फिर उसी के विपरीत क्रम से चलना होता है वहाँ यह न्याय व्यवहृत किया जाता है।

स्थविरलगुडन्यायः—बुड्ढे के हाथ से फेंकी हुई लाठी जिस प्रकार ठीक निशाने पर नहीं

पहुँचती उसी प्रकार किसी बात के लक्ष्य तक न पहुँचने पर यह उक्ति व्यवहार में लाई जाती है ।

स्थालीपुलाकन्यायः—बटलोई भर चावल का पकना न पकना एक कना देखकर जान लिया जाता है। इसी प्रकार थोड़े से बहुत को जानने के लिए इस न्याय का प्रयोग किया जाता है ।

स्थूणानिखननन्यायः—जिस प्रकार घर की थूनी को दृढ़ करने के लिये उसे मिट्टी आदि डालकर दृढ़ करना होता है, उसी प्रकार उदाहरण एवं युक्ति द्वारा अपना पक्ष दृढ़ करना पड़ता है ।

स्थूलारुन्धतीन्यायः—विवाह में वर और वधू को अरुन्धती का तारा दिखलाने की चाल है। यह अरुन्धती तारा पृथ्वी से बहुत दूर होने के कारण बहुत सूक्ष्म रूप का देख पड़ता है, और इसी से वह जल्दी देख भी नहीं पड़ता। अतएव अरुन्धती तारे को दिखलाने के लिये जैसे पहले सप्तर्षि दिखाते हैं और उनके पास ही अरुन्धती को बतलाते हैं, इसी प्रकार किसी सूक्ष्मतत्त्व का परिज्ञान कराने के लिये पहले स्थूल दृष्टांत देकर क्रमशः उस सूक्ष्मतत्त्व तक ले जाते हैं। जब ऐसा कोई अभिप्राय समझाना होता है, तब यह न्याय व्यवहार में लाया जाता है ।

स्वामिभृत्यन्यायः—दूसरे का काम हो जाने से अपना भी काम या प्रसन्नता हो जाय, वहाँ इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है। यह स्वामिभृत्यन्याय—इसलिये कहलाता है कि मालिक का काम करने से नौकर स्वामी की प्रसन्नता प्राप्त करता है और उस प्रसन्नता से अपने को कृतकार्य समझता है ।

परिशिष्ट २

संस्कृत वाङ्मय के प्रमुख ग्रन्थकार

अनन्त भट्ट—ये 'भारतचम्पू' के रचयिता हैं, जिसमें इन्होंने महाभारत की सम्पूर्ण कथा को १२ स्तवकों में ललित गद्य-पद्यों में समाप्त किया है। इनका यह ग्रन्थ चम्पू-काव्यों में उच्चस्तर का माना जाता है। इसकी सात टीकाएँ हुई हैं। अनन्तभट्ट का समय ११वीं से १५वीं शताब्दी के बीच अनुमान किया जाता है।

अप्पय दीक्षित—ये द्रविड जातीय काशीवासी ब्राह्मण थे। इनका समय सत्रहवीं सदी ई० है। ये कई विषयों के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके द्वारा १०४ ग्रन्थ लिखे जाने की ख्याति है, जिनमें ४४ प्राप्त होते हैं। इनमें 'कुवलयानन्द' तथा 'अर्थचित्रमीमांसा' दो अलङ्कार-शास्त्र के ग्रन्थ हैं, जिनका विद्वानों में बड़ा आदर है।

अभिनवगुप्त—ये अलङ्कारशास्त्र के उद्भट विद्वान् थे। आनन्दवर्धन के 'ध्वन्यालोक' पर लिखी हुई इनकी 'लोचन' टीका इतनी मौलिक है कि उसे स्वतन्त्र ग्रन्थ माना जाता है। भरत के 'नाट्यशास्त्र' पर भी इन्होंने 'अभिनव भारती' नाम की टीका लिखी है। यह कश्मीर के रहने वाले और शैवदर्शन के मतावलम्बी थे। इनका समय ग्यारहवीं शताब्दी होना चाहिए। क्योंकि इन्होंने अपनी 'लोचन' टीका में 'काव्यकौतुक' के रचयिता तौत नाम के अपने जिन गुरु का उल्लेख किया है उनका समय ९९३ से १०१५ ई० के बीच माना गया है। इनके पिता का नाम नरसिंह गुप्त था। इनके बनाये प्रमुख ग्रन्थ ये हैं— (१) भैरव-स्तोत्र, (२) प्रत्यभिज्ञा-विमर्शिनी, (३) बृहती वृत्ति, (४) तंत्रालोक, (५) बोधपंचाशिका, (६) लोचन, (७) अभिनवभारती।

अमरसिंह—ये 'नामलिङ्गानुशासन' नामक कोश के रचयिता हैं। इसी कोश का दूसरा नाम 'अमरकोश' है। एक श्लोक में इनका नाम अमरु कवि भी पाया जाता है। कदाचित् सम्राट् विक्रमादित्य के नवरत्न वाले अमरसिंह भी यही रहे हों।

अमरुककवि—इनका बनाया 'अमरुकशतक' शृङ्गारस का प्रसिद्ध मुक्तक काव्य है। इनके श्लोकों के विषय में ध्वन्यालोककार ने मुक्तक-काव्यों का प्रसंग आने पर लिखा है—'यथा ह्यमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः शृङ्गाररसस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव।' अर्थात् 'जैसे अमरुक कवि के शृङ्गार रस-प्रवाहित करने वाले प्रबन्ध काव्य के समान भाव-विभाव से पूर्ण मुक्तक प्रसिद्ध ही हैं।' ध्वन्यालोककार का समय नवीं शताब्दी है। अतः इनका समय इससे पहले समझना चाहिए। अलंकार शास्त्र के ग्रन्थों में उदाहरण-स्वरूप इनके श्लोक बहुत मिलते हैं। काव्यप्रकाश और कुवलयानन्द में अमरुकशतक के श्लोक स्थान-स्थान पर उद्धृत किये गये हैं।

अमरुकशतक का एक श्लोक उदाहरण रूप में यहाँ दिया जा रहा है—

एकस्मिन् शयने पराङ्मुखतया
वीतोत्तरं ताम्यतो—
रन्योन्यस्य हृदि स्थितेऽप्यनुनये
संरक्षतोर्गौरवम्।
दंपत्योः शनकैरपाङ्गवलनामिश्रीभवच्चक्षुषो—
र्भग्नो मानकलिः सहासरभसो
व्यावृत्तकण्ठग्रहम्॥

अम्बिकादत्त व्यास—विक्रम की वीसवीं शताब्दी में होकर भी व्यास जी संस्कृत के उच्च-कोटि के कवि और साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होंने बाणभट्ट के 'हर्षचरित' की परम्परा में छत्रपति शिवाजी का इतिहास लेकर 'शिवराजविजय' नाम से बहुत ही रोचक, वीररसपूर्ण कथा प्रबन्ध (गद्य काव्य) लिखा है जिसका विद्वज्जनों और साहित्य-रसिकों में बहुत प्रचार तथा समादर है।

अश्वघोष—ये बौद्ध धर्म के अन्यतम आचार्य थे। जन्म से साकेत के ब्राह्मण थे, बाद में पूर्णयश से दीक्षा लेकर बौद्ध हो गये। इनका समय पहली शती ई० का उत्तरार्ध है, कुशान राजा कनिष्क के समय आयोजित बौद्ध-संगति (सभा) के ये अध्यक्ष बने थे। ये उच्चकोटि के कवि और दार्शनिक थे। इनके दो महाकाव्य प्राप्त हैं—बुद्धचरित, सौन्दरनन्द। बुद्धचरित का अनुवाद चीन और तिब्बत की भाषाओं में भी हुआ है। अश्वघोष का वस्तुवर्णन और करुणरस का चित्रण बहुत उत्कृष्ट है। बुद्धचरित में कुल २८ सर्ग हैं परन्तु उसका संस्कृत पाठ केवल १४ सर्गों का ही प्राप्त है। मध्य एशिया की खुदाई में उनका एक नाटक 'शारिपुत्र-प्रकरण' भी मिला है, जो अधूरा है।

आनन्दवर्द्धन—ये अलङ्कार शास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक' के रचयिता हैं। व्याकरण शास्त्र के प्रणेताओं में जो स्थान पतंजलि और उनके महाभाष्य का है वही स्थान अलङ्कार शास्त्र में आनन्दवर्द्धन और उनके ध्वन्यालोक का है। ध्वन्यालोक को ही काव्यालोक और सहृदयालोक भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त इन्होंने इन ग्रन्थों की भी रचना की थी—

(१) देवीशतक, (२) अर्जुनचरित महाकाव्य, (३) विषमबाणलीला, (४) तत्त्वालोक, (५) विनिश्चयटीका विवृति।

कल्हण ने अपनी राजतरङ्गिणी में जहां मुक्ताकण और शिवस्वामी को अवन्तिवर्मा के राज्य में विद्यमान बतलाया है, वहीं पर आनन्दवर्द्धन का भी नामोल्लेख किया है—मुक्ताकणः शिवस्वामी कविरानंदवर्द्धनः। प्रथां रत्नाकरश्चागात्साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः॥ अवन्तिवर्मा का राज्यकाल सन् ८५५ से ८८४ ई० तक रहा। अतएव यही समय आनन्दवर्द्धन का भी मानना पड़ता है। इन्हीं के समकालीन कल्लट और रुद्रट भी थे।

आर्यक्षेमीश्वर—चण्डकौशिक नाम का नाटक इन्हीं प्रसिद्ध कवि का बतलाया जाता है; इस नाटक का उल्लेख साहित्यदर्पण को छोड़ अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। अतएव इनका समय चौदहवीं शताब्दी का पूर्व भाग मानना पड़ता है। इन्होंने अपने नाटक में लिखा है कि राजा महीपाल देव के आज्ञानुसार इस नाटक का अभिनय किया गया। साथ ही इसी नाटक के अन्त में अपने को कार्त्तिकेय राजा का समासद् होना लिखा है। बंगाल के पालवंशीय राजाओं में से एक राजा का नाम महीपाल भी था। इसके पिता का नाम (द्वितीय) विग्रहपाल और इसके पुत्र का नाम नयपाल था। महीपाल देव का समय सन् १०२६ से १०४० ई० तक माना गया है। अतएव आर्यक्षेमीश्वर का समय इसी के कुछ आगे-पीछे होना चाहिये।

आर्यभट्ट—ये एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् थे। आर्यसिद्धान्त नाम का ज्योतिष ग्रन्थ इन्हीं का बनाया हुआ है। ये सन् ४७६ ई० में कुसुमपुर नामक स्थान में उत्पन्न हुए थे। इनका बनाया बीजगणित का भी एक ग्रन्थ है। इन्होंने सौर केन्द्रिक मत को पुष्ट किया है।

ईशदत्त पाण्डेय 'श्रीश'—'श्रीशजी' वीसवीं शती में संस्कृत के प्रतिभासम्पन्न कवि और वक्ता थे। इनका 'प्रतापविजय' काव्य संस्कृत

भाषा में आधुनिक शैली की सुन्दर रचना है। शोक है कि ये अल्पायु में ही दिवंगत हो गये।

उदयनाचार्य—ये एक प्रसिद्ध नैयायिक पण्डित थे। इनका निवासस्थान मिथिला था। एक बार इनका शास्त्रार्थ नैषध-चरित के रचयिता श्रीहर्ष के पिता के साथ हुआ था। श्रीहर्ष का समय सन् ११६३ से ११७७ ई० के लगभग माना गया है। अतएव उदयन का समय इससे कुछ पहले मानना अनुचित न होगा। उदयनाचार्य के रचित ग्रन्थों के नाम ये हैं:—

(१) किरणावली, (२) न्यायकुसुमाञ्जलि, (३) आत्मतत्त्वविवेक, (४) न्यायपरिशिष्ट, (५) न्यायवार्तिकतात्पर्यपरिशुद्धि।

उद्भट—काव्य में अलङ्कार को प्रधानता देने वाले ये अलङ्कारवादी आचार्य हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ 'काव्यालङ्कारसारसंग्रह' में अलङ्कार तथा तत्सम्बन्धी सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। कश्मीर-नरेश जयापीड के दरबार में ये सभा-पण्डित थे, जहां इनका खूब सम्मान था। जयापीड का समय ७७९-८१३ ई० माना जाता है। अतः आठवीं शताब्दी का उत्तरार्ध और नवीं शताब्दी का पूर्वार्ध इनका भी समय होना चाहिए।

उमापतिधर—इनका कोई स्वतंत्र ग्रन्थ न तो देखने में आया और न कहीं उल्लिखित ही मिला। केवल इनके रचित और शिला पर खुदे ३६ श्लोक एशियाटिक सोसाइटी में रखे हुए हैं। ये प्रमाणतः बंगाल के राजा लक्ष्मण सेन के समकालीन सिद्ध होते हैं। लक्ष्मण सेन १११६ ई० में विद्यमान थे।

उवट या उव्वट—ये कश्मीर-निवासी थे। इन्होंने चारों वेदों पर भाष्य लिखा है। पातञ्जल महाभाष्य के टीकाकार कैयट और औयट या उव्वट काव्यप्रकाशकार मम्मट के कनिष्ठ भ्राता थे। उव्वट ने वाजसनेयी संहिता के भाष्य में लिखा है:—

ऋष्यादींश्च पुरस्कृत्य
अवन्त्यामुव्वटो वसन्।
मन्त्रभाष्यमिदं चक्रे
भोजे राष्ट्रे प्रशासति॥

इस श्लोक को देख कर अनुमान करना पड़ता है कि उव्वट अवन्ती में राजा भोज के राज्य-काल में मौजूद थे। किन्तु ये अपने पिता का नाम वज्रट बतलाते हैं और मम्मट के पिता का नाम जैयट था। यह भी सन्देह होता है कि जब मम्मट ने भोजरचित सरस्वती-कण्ठाभरण के श्लोकों को काव्यप्रकाश में उद्धृत किया है, तब मम्मट का भोज के पीछे होना सिद्ध होता है। अतएव उनके छोटे भाई उव्वट, भोज के समकालीन क्योंकर हो सकते हैं? हो सकता है, मम्मट और भोज दोनों समकालीन रहे हों और यह मम्मट, उव्वट के सगे भाई न रहे हों और वज्रट के योग्य पुत्र हों। राजा भोज का समय सन् ९९६ से ११५३ ई० तक माना जाता है। अतएव उव्वट सन् ईस्वी की बारहवीं शताब्दी में रहे होंगे।

कल्हण—ये कश्मीरी थे और राजा जयसिंह के समय में मौजूद थे। इन्होंने 'राजतरङ्गिणी' नाम से कश्मीर राज्य का इतिहास लिखा है। इस दृष्टि से इनका यह ग्रन्थ बहुत महत्त्व का है। इसमें कल्हण ने एक स्थान पर लिखा है—

लौकिकेऽब्दे चतुर्विंशे
शककालस्य साम्प्रतम्।
सप्तत्यधिकं यातं
सहस्रं परिवत्सराः॥

इससे स्पष्ट विदित होता है कि, ये सन् ११४८ ई० में विद्यमान थे। अनेक लोगों का मत है कि भारतवर्ष में शृंखला-बद्ध प्राचीन इतिहास यदि कोई विश्वास योग्य है, तो वह कल्हण-रचित 'राज-तरङ्गिणी' है।

में रहे होंगे। उस समय देश शकों के आक्रमणों के साथ ही बौद्ध और जैन धर्म से भी अभिभूत हो रहा था, कालिदास की कृतियों में इसके प्रतिक्रियास्वरूप वैदिक परम्परा और शैवधर्म के आदर्शों की बड़ी ऊँची घोषणा मिलती है, जिससे कवि का विक्रम की प्रथम शताब्दी में होना और भी पुष्ट होता है।

कालिदास ने चार काव्य और तीन नाटक लिखे हैं। उनकी कृतियों के नाम इस प्रकार हैं—(१) कुमारसम्भव, (२) रघुवंश, (३) मेघदूत, (४) ऋतुसंहार काव्य और (१) अभिज्ञान- शाकुन्तल, (२) विक्रमोर्वशीय, (३) मालविकाग्निमित्र नाटक। कालिदास की भाषा प्रसाद-गुणयुक्त है। उसमें व्यर्थ के आडम्बर नहीं हैं।इनकी सभी कृतियाँ राष्ट्रीयता, मानवता, त्याग, तपस्या, अध्यात्म तथा जीवन के सच्चे आनन्द एवं उमंगों से ओतप्रोत हैं।

संस्कृत साहित्य में इनके अतिरिक्त कालिदास नाम के और भी कवि हुए हैं, जिनमें से दो सम्भवतः भवभूति और भोज के समय रहे होंगे, जैसी कि किंवदन्ती है और 'भोज-प्रबन्ध' में उल्लेख पाया जाता है।

कुन्तक—काव्यशास्त्र के अन्यतम आचार्यों में कुन्तक की गणना है। इन्होंने वक्रोक्ति से काव्य की प्रतिष्ठा स्वीकार कर उसकी प्रतिष्ठापना के लिए 'वक्रोक्तिजीवित' अलङ्कार ग्रन्थ लिखा। ११वीं शती ई० का पूर्वार्ध इनका समय है। अलङ्कार शास्त्र के ग्रन्थों में 'वक्रोक्तिजीवित' अत्यन्त मौलिक एवं तर्क-सम्मत उद्भावनाओं से संवलित ग्रन्थ है।

कुमारिलभट्ट—यह एक प्रसिद्ध मीमांसक थे। इनका जन्म दक्षिण प्रान्त में हुआ था। इन्होंने शास्त्रार्थ में बौद्धों को परास्त कर देश में वैदिक मत की प्रतिष्ठा की थी। ये भगवान् शङ्कराचार्य के समकालीन थे और इनका समय आठवीं शताब्दी में पड़ता है। इन्होंने बौद्धधर्म का रहस्य समझने के लिए किसी बौद्ध विद्वान् को ही गुरु मान कर शिक्षा ली थी। उसके बाद उन्हीं युक्तियों से बौद्धों को परास्त किया था, इसलिए अपना कार्य पूरा कर लेने पर इन्होंने इस गुरु-द्रोह के फलस्वरूप प्रयाग में आकर तुष (भूसी) के ढेर में आग लगा कर और उसमें बैठ धीरे-धीरे जलकर अपना प्राण त्यागा था। जिस समय ये उस प्रायश्चित्त में बैठे थे, भगवान् शङ्कराचार्य दिग्विजय करते हुए इनके पास आये थे और कुमारिल ने इनकी विजय स्वीकार की थी। इनका रचा 'तंत्रवार्तिक' एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

कुल्लूकभट्ट—यह एक विख्यात स्मृतिशास्त्र-वेत्ता थे। मनुस्मृति की टीका के प्रारम्भ में इन्होंने अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—

गौड़े नन्दनवासिनाम्नि सुजनैर्वन्द्ये वरेन्द्र्यां कुले
श्रीमद्भट्टदिवाकरस्य तनयः कुल्लूकभट्टोऽभवत्॥
काश्यामुत्तरवाहिजह्नुतनयातीरे समं पण्डितैः
तेनेयं क्रियते हिताय विदुषामन्वर्थमुक्तावली॥१।

अर्थात् गौड़ देश में सज्जनों द्वारा मान्य नन्दनवासी नामक जो वारेन्द्र श्रेणी के ब्राह्मणों का कुल है, उसमें श्रीमान् भट्ट दिवाकर उत्पन्न हुए। इन भट्ट दिवाकर के पुत्र का नाम कुल्लूक भट्ट है, जिसने पण्डितों के साथ काशी में, जहाँ कि गंगा नदी उत्तरवाहिनी हैं, निवास कर विद्वज्जनों के उपयोग के लिये यह 'अन्वर्थमुक्तावली' बनायी।

इनका समय १४वीं शताब्दी माना जाता है।

कृष्णमिश्र—ये 'प्रबोधचन्द्रोदय' नामक नाटक के रचयिता हैं। इस नाटक से विदित होता है कि चन्देल राजा कीर्तिवर्मा ने चेदि के कर्णदेव को युद्ध में हराया था।वाराणसी में इस राजा कर्ण के नाम के लेख ताम्रपत्र पर खुदे मिलते हैं। राजा कर्ण का समय सन्

१०४२ ई० है। इनको पराजित करने वाले राजा कीर्तिवर्मदेव सन् १०५० ई० से ११११६ ई० तक विद्यमान थे और उन्हीं के समासद होने के कारण कृष्णमिश्र का भी समय ११वीं सदी का अन्तिम भाग माना जा सकता है। विद्वानों के कथनानुसार ये मैथिल ब्राह्मण थे।

क्षपणक—महाराज विक्रमादित्य की सभा में जो नवरत्न थे उनमें यह द्वितीय थे। नाम से विदित होता है कि यह भी अमरसिंह की तरह बौद्ध या जैन रहे होंगे। इनके नाम से 'नानार्थध्वनिमञ्जरी' नाम की एक छोटी सी कोष-पुस्तिका उपलब्ध होती है और संस्कृत साहित्य में 'क्षपणक' के नाम से एक मात्र निम्नलिखित सूक्ति मिलती है—

नीतिर्भूमिभुजां नतिर्गुणवतां
ह्रीरङ्गनानां रतिः
दम्पत्योः शिशवो गृहस्य कविता
बुद्धेः प्रसादो गिराम्।
लावण्यं वपुषः श्रुतिः सुमनसां
शान्तिर्द्विजस्य क्षमा
शक्तस्य द्रविणं गृहाश्रमवतां
शीलं सतां मण्डनम्॥

श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की सम्मति में जैन आगम के ख्यातनामा ग्रन्थकार आचार्य सिद्धसेन दिवाकर का ही नाम क्षपणक है जिन्होंने कई पुस्तकें जैनमत संबन्धी लिखी हैं।

क्षीरस्वामी—यह कश्मीर-नरेश महाराज जयापीड़ के शासनकाल में विद्यमान थे। जयापीड़ का शासनकाल ७०० शाके, सन् ७७९ ई० से ८१३ ई० तक है। यह भी लिखा है कि क्षीरस्वामी राजा जयापीड़ के गुरु थे। क्षीरस्वामी ने अमरकोश पर टीका लिखी है और धातुपाठ तथा पाणिनि-व्याकरण से संबन्ध रखने वाले कई एक ग्रन्थ भी रचे हैं। 'कुट्टिनीमतम्' के रचयिता दामोदर गुप्त और अलङ्कारशास्त्र के बनाने वाले भट्टोद्भट इनके समकालीन थे।

क्षेमेन्द्र—यह एक प्रसिद्ध कश्मीरी कवि हैं। इनका समय ११वीं सदी है। काशी में भी रह कर इन्होंने विद्याध्ययन किया था। इन्होंने प्रायः शत ग्रन्थों की रचना संस्कृत में की है। जिनमें—(१) औचित्य- विचार-चर्चा, (२) कला-विलास, (३) दर्पदलन, (४) कविकण्ठाभरण, (५) चतुर्वर्गसंग्रह, (६) चारुचर्या, (७) बृहत्कथामंजरी, (८) भारतमञ्जरी, (९) रामायण-मञ्जरी, (१०) समयमातृका, (११) सुवृत्त-तिलक, (१२) कविकर्णिका बहुत प्रसिद्ध हैं।

इनके ग्रन्थों के पढ़ने से मालूम होता है कि ये विलक्षण कवि और व्यवहार में बड़े कुशल थे। इनके ग्रन्थों में कायस्थों और मुसलमानों की खूब निन्दा है। 'समयमातृका' ग्रन्थ का विषय दामोदर गुप्त के 'कुट्टिनीमतम्' सरीखा है। कदाचित् उसीके परतों पर लिखा गया है। इनका एक ग्रन्थ 'अवदानकल्पलता' है। इसमें बौद्ध महापुरुषों का विषय वर्णित है। इस ग्रन्थ की भाषा बड़ी स्वच्छ, प्रसादगुणविशिष्ट एवं उपदेशात्मक है। यह ग्रन्थ पाली अक्षरों में तिब्बत में था। कलकत्ते की एशियाटिक सोसाइटी ने इसे पाली और संस्कृत दोनों अक्षरों में छपवाया है। क्षेमेन्द्र का विशेष महत्त्व उनके 'औचित्य-विचारचर्चा' के कारण है। इस ग्रन्थ में प्रतिपादित काव्य को 'औचित्य-सिद्धान्त' रस का जीवन कहा गया है। यद्यपि औचित्य के विषय में इनके पूर्ववर्ती आचार्यों ने भी संकेत किया है किन्तु इस विषय का विस्तार से विवेचन करने के कारण 'औचित्य-सिद्धान्त' का व्याख्याता इन्हीं को माना जाता है और इस प्रकार क्षेमेन्द्र अलङ्कार सम्प्रदाय में एक सिद्धान्त-प्रवर्तक आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

गङ्गादास—ये 'छन्दोमञ्जरी' के रचयिता हैं। इस ग्रन्थ में इन्होंने अपना जो परिचय दिया है, उसके अनुसार इनके पिता का नाम गोपालदास था। इन्होंने सोलह सर्ग के अच्युतचरित काव्य, कृष्णशतक और सूर्यशतक की रचना भी की थी। यद्यपि इन्हें महाकवि कहलाने का सौभाग्य न मिला तथापि इनका 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थ सम्पूर्ण भारत में प्रचलित है।

'छन्दोमञ्जरी' का एक श्लोक मुरारिमिश्र कृत 'अनर्घराघव' नाटक में मिला है। अतएव गंगादास मुरारि से पहिले के जान पड़ते हैं। यदि मुरारि कवि का समय १२वीं शताब्दी है तो गंगादास उसके पूर्व के होंगे।

गङ्गाधर—इस कवि के रचित श्लोक गोविन्दपुर के एक शिला-लेख में मिले हैं। उस शिला-लेख में मिति शाके १०५९ अर्थात् सन् ११३७ ई० दी है। अतएव अनुमान होता है कि उसी समय में यह कवि विद्यमान था। लेख में इन्होंने जो अपनी वंशावली दी है उसके अनुसार इनके प्रपितामह का नाम दामोदर, पितामह का नाम चक्रपाणि, पिता का नाम मनोरथ, चाचा का नाम दशरथ और भाइयों का नाम महीधर तथा पुरुषोत्तम हैं।

विल्हण के विक्रमाङ्कदेव-चरित में भी एक गङ्गाधर कवि का उल्लेख है। काव्यसंग्रह में गंगाधर कवि का लिखा हुआ एक 'मणिकर्णिकाष्टक' भी छपा है।

गुणाढ्य—पैशाची भाषा में एक हजार श्लोकों की 'बृहत्कथा' लिखने वाले गुणाढ्य का नाम भारतीय साहित्य में वाल्मीकि और व्यास के बाद लिया जाता है। रामायण और महाभारत की भाँति ही इनकी बृहत्कथा भी संस्कृत-साहित्य के अनेक रूपक, काव्य तथा कथानुबन्धों की उपजीव्य रही है। पैशाची भाषा में लिखा हुआ इनका मूलग्रन्थ आज नहीं मिलता। दशम शतक के बाद पैशाची भाषा का प्रचार समाप्त होने पर संस्कृत में इसके दो अनुवाद हुए। एक तो आचार्य क्षेमेन्द्र ने 'बृहत्कथामञ्जरी' नाम से १०३७ ई० में किया। यह अनुवाद सरल और ललित पद्यों में है, जिसमें कुल ७५०० श्लोक हैं। किन्तु यह अनुवाद संक्षिप्त था अतः कश्मीर-निवासी सोमदेव भट्ट ने इस कमी को दूर करने के लिए 'कथासरित्सागर' नाम से बृहत्कथा का बहुत ही प्रामाणिक तथा रुचिर अनुवाद संस्कृत श्लोकों में प्रस्तुत किया। इसमें २० सहस्र श्लोक हैं। तामिल भाषा में भी इसके दो अनुवाद मिलते हैं। इधर अंग्रेजी में भी इसका अनुवाद टानी नाम की विदुषी ने किया है।

गुणाढ्य की जन्म-भूमि विदर्भ देश में थी; जहाँ ये प्रतिष्ठानपुर (आजकल 'पैठन' नाम से प्रसिद्ध) नगर के राजा सातवाहन के यहाँ कुछ समय सभा-पण्डित रहे। पर प्रतिज्ञावश इन्हें राजसभा और संस्कृत भाषा दोनों का त्याग करना पड़ा और जंगल में चले गये। वहाँ पैशाची भाषा सीखी और उसी भाषा में अपना यह विशालकाय कथाकाव्य लिखा। सातवाहन नरेश का समय ई० प्रथम शतक है। अतः वही समय महाकवि गुणाढ्य का होना चाहिये। उनकी बृहत्कथा में ईसवीयपूर्व पाँच शतकों के भारतीय समाज के विविध रूपों, व्यवहारों और प्रथाओं का दर्शन हमें होता है। इन्होंने अपना यह ग्रन्थ सातवाहन नरेश को समर्पित किया था और इनके दो शिष्य गुणदेव तथा नन्दिदेव ने उस ग्रन्थ का प्रचार किया था।

गोवर्द्धनाचार्य—ये कवि गीतगोविन्दकार जयदेव तथा उमापतिधर आदि के समकालीन हैं। गीतगोविन्द में जयदेव ने इनका उल्लेख किया है। इनका बनाया 'आर्यासप्तशती' नामक एक ग्रन्थ है। यद्यपि इस ग्रन्थ के

नाम से तो यही जान पड़ता है कि इसमें ७००आर्या छन्द के श्लोक होंगें, किन्तु काव्यसंग्रह में जो ग्रन्थ छपा है उसमें ७३१ श्लोक हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ में पिता का नाम नीलाम्वर लिखा है। उमापतिधर के समसामयिक होने से इनका समय १२वीं शताब्दी का आरम्भ और मध्यभाग सिद्ध होता है। गोवर्द्धनाचार्य ने अपने शिष्यों में से एक का नाम उदयन लिखा है। ये प्रसिद्ध नैयायिक उदयनाचार्य ही हैं अथवा अन्य कोई, यह स्पष्ट नहीं कहा जा सकता।

गोविन्द ठक्कुर—चन्द्रदत्त मैथिल कृत संस्कृत-भाषान्तर वाली 'भक्तमाला' में गोविन्द ठक्कुर को 'काव्य-प्रदीप' का रचयिता वतलाया गया है। काव्यप्रकाश के टीकाकार कमलाकर भट्ट (जिन्होंने सन् १६१२ ई० में शूद्रकमलाकर नामक ग्रन्थ रचा था) अपने ग्रन्थ में काव्यप्रदीप का नाम लिखते हैं। इसलिये गोविन्द ठक्कुर उनके पूर्व ही किसी समय में रहे होंगे, ऐसा निश्चय होता है। गोविन्द ठक्कुर की लिखी हुई 'काव्य-प्रकाश' की 'काव्यप्रदीप' टीका साहित्य जगत् में मौलिक ग्रन्थ के समान आदृत है। इसमें इन्होंने स्थान-स्थान पर काव्यप्रकाश-कार आचार्य मम्मट के सिद्धान्तों की वड़ी पाण्डित्यपूर्ण आलोचना की है।

गोविन्दराज—इनकी वनायी श्रीमद्वाल्मीकि रामायण की भूषण टीका प्रसिद्ध है। यह दक्षिण भारत के रहने वाले और श्रीरामानुज सम्प्रदायी थे।

गौड़पादाचार्य—ये भगवान् शङ्कराचार्य के गुरु हैं। इन्होंने अद्वैतसिद्धान्त-प्रतिपादक एक ग्रन्थ लिखा है। माण्डूक्योपनिषत्कारिका उस ग्रन्थ का नाम है। इनकी कारिकायें आर्या वृत्त में हैं और वे वड़ी मनोहर हैं।

घटखर्पर—महाराज विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से एक घटखर्पर भी थे। इनका वनाया २२ श्लोकात्मक एक काव्य है, जो घटखर्पर काव्य नाम से प्रसिद्ध है। इसमें अनुप्रास और यमक का चमत्कार तथा संयोग-शृङ्गार-रस का परिपाक है। 'नीति-सार' नाम का एक ग्रन्थ भी, जिसमें २१ नीति के श्लोक हैं, इनके नाम से प्रसिद्ध है। वस्तुतः इनका नाम तो कुछ और था किन्तु इनकी प्रतिज्ञा थी कि जो इनको यमक अलंकार की रचना में परास्त कर देगा उसके यहाँ ये घटखर्पर (फूटे घड़े) से पानी भरा करेंगे। इनकी उस शपथ ने इन्हें घटखर्पर नाम से प्रसिद्ध कर दिया।

चटक—कल्हण की राजतरङ्गिणी के अनुसार ये कश्मीर नरेश जयापीड की राजसभा के कवि थे। इनका कोई ग्रन्थ देखने में नहीं आया।

चाणक्य—अर्थशास्त्र के प्रणेता तथा महानन्द वंश का विनाश कर चन्द्रगुप्त मौर्य को सम्राट् वनाने वाले आचार्य चाणक्य से संस्कृत वाङ्मय और भारतीय राजनीति दोनों समान रूप से परिचित हैं। अर्थशास्त्र का मूल ग्रन्थ पूर्ण रूप से नहीं प्राप्त होता किन्तु जो कुछ है उससे इनके आचार्यत्व का भली-भाँति पता चलता है।

चोर कवि—कश्मीरी कवि विल्हण का ही दूसरा नाम चोर कवि है। 'विक्रमाङ्कदेव-चरित' इनका प्रसिद्ध काव्य है। उसके अतिरिक्त (१) चौरपञ्चाशिका और (२) कर्णसुन्दरी नाटिका ग्रन्थ भी इनके मिलते हैं।

'राजतरंगिणी' से ज्ञात होता है कि कश्मीर के राजा कलश ने सन् १०६४ ई० से लेकर सन् १०८८ ई० तक राज्य किया था। इसी राजा के समय विल्हण कश्मीर छोड़कर देशाटन के लिये वाहर निकले थे। 'विक्रमाङ्कदेव-चरित' से यह भी जान पड़ता है कि, विल्हण ने मथुरा, कन्नौज, वाराणसी, प्रयाग, अयोध्या,

धार, गुजरात प्रान्त आदि अनेक नगरों और प्रान्तों में घूमते-फिरते सेतुबन्ध रामेश्वर तक भ्रमण किया था। (विक्रमाङ्कदेव-चरित' में विल्हण ने अपनी जन्म-भूमि और वंश का भी परिचय दिया है। उसके अनुसार कश्मीर में खोनमुख गाँव इनके पूर्वजों का निवास-स्थान था। इनके पिता कौशिक गोत्रीय ज्येष्ठकलश और माता नागादेवी थीं।

विल्हण का चोर नाम एक राज-कन्या के साथ, जिसे ये पढ़ाते थे, गुप्त रूप से प्रेमवश गन्धर्व विवाह कर उसे अपहरण करने के कारण पड़ गया। ये बाद में पकड़े भी गये, किन्तु इनका अनन्य प्रेम देखकर राजा ने इन्हें मुक्त कर दिया।

जगदीश तर्कालङ्कार—नवद्वीपनिवासी एक प्रसिद्ध नैयायिक थे। इनका जन्म १७वीं सदी के प्रारम्भ में हुआ था। इनके पिता का नाम यादवचन्द्र तर्कवागीश था और वे भी एक प्रसिद्ध नैयायिक थे। जगदीश तर्कालंकार ने 'न्यायदीधिति' की टीका लिखी है। इसके अतिरिक्त इनके ये ग्रन्थ पाये जाते हैं—(१) गंगेशोपाध्याय-प्रणीत अनुमानमयूख का भाष्य, (२) पक्षता, (३) केवलान्वयी, (४) केवलव्यतिरेकी, (५) अन्वयव्यतिरेकी, (६) अवयव, (७) चतुष्टयतर्क, (८) सिद्धान्त-लक्षण, (९) व्याप्तिपञ्चक, (१०) उपाधिवाद, (११) पूर्वपक्ष, (१२) अनुमानदीधिति का तर्क, (१३) सिंहव्याघ्री, (१४) अवच्छेदकनिरुक्ति।

जगद्धर—इन्होंने भवभूतिकृत 'मालतीमाधव' नाटक की टीका लिखी है। नाटक के प्रत्येक अङ्क की टीका के अन्त में टीकाकार ने अपने माता-पिता का नाम दिया है और ग्रन्थ की समाप्ति में भी अपने वंश का संक्षिप्त परिचय दिया है। उसके अनुसार इनके पिता का नाम रत्नधर और माता का नाम दमयन्तिका था। इनके रचित 'मालतीमाधव' नाटक की टीका संस्कृतज्ञों में बहुत समादृत है। इन्होंने 'वेणीसंहार' और 'वासवदत्ता' पर भी टीकाएँ लिखी हैं। इनका समय पण्डितवर रामकृष्ण भाण्डारकर के निर्णयानुसार ई० चौदहवीं शताब्दी से पूर्व नहीं हो सकता।

जगन्नाथ पण्डितराज—ये तैलङ्ग ब्राह्मण थे पर इनके पिता काशी में आकर रहने लगे थे। पिता का नाम पेरुभट्ट और माता का नाम लक्ष्मी था। इनके पिता सर्वविद्याविशारद अद्वितीय विद्वान् थे। अपने पिता से ही इन्होंने सभी विषयों का अध्ययन किया था। पुनः ये दिल्ली सम्राट् शाहजहाँ (१६२८ ई० से १६५८ ई०) के दरबार में रहे, जहां इनका बहुत आदर रहा। इन्होंने स्वयं लिखा है— 'दिल्लीवल्लभ-पाणिपल्लवतले नीतं नवीनं वयः'। वहीं इन्होंने एक यवनी से विवाह कर लिया, जिसके कारण ब्राह्मण-समाज इन्हें उपेक्षित किये रहा।

पण्डितराज संस्कृत साहित्य के पिछले खेवे के अन्तिम उद्भट विद्वान्, कवि तथा आचार्य थे। इनकी प्रतिभा बहुत मौलिक थी। कविता के क्षेत्र में ये अपने समान मधुर और रस पेशल वाणी का आचार्य किसी को नहीं मानते थे। अलङ्कार शास्त्र के अपने ग्रन्थ 'रसगङ्गाधर' में इन्होंने उदाहरण में अपने ही श्लोक दिये हैं और दोषों के प्रसंगों में दूसरों के श्लोक। 'रसगङ्गाधर' में पण्डितराज की मौलिक प्रतिभा का पूर्ण दर्शन होता है, जहाँ वे दूसरे आचार्यों के सिद्धान्त का बड़ा ही तर्कपूर्ण खण्डन करते हैं। पर शोक है कि इनका यह ग्रन्थ अधूरा ही रह गया है। जैसे ये अगाध विद्वान् थे वैसे ही इनमें स्वाभिमान भी कूट-कूट कर भरा था। साहित्य के अतिरिक्त न्याय और व्या-

करण पर भी इनका पूर्ण अधिकार रहा। 'कुवलयानन्द' के रचयिता अप्पयदीक्षित के सिद्धान्तों का (जो इनके समकालिक प्रतीत होते हैं) इन्होंने बड़े आमोद के साथ खण्डन किया है। इनकी कविताएँ इनके स्वाभिमान के अनुसार ही बहुत मधुर हैं इनकी यह गर्वोक्ति विद्वानों को खटकती नहीं—

आमूलाद्रत्नसानोर्मलयवलयितादा च कूलात् पयोधेः
यावन्तः सन्ति काव्यप्रणयनपटवस्ते विशङ्कं वदन्तु।
मृद्वीकामध्यनिर्यन्मसृणरसझरीमाधुरी-भाग्यभाजां
वाचामाचार्यतायाः पदमनुभवितुं कोऽस्ति धन्यो मदन्यः॥

पण्डितराज के रचित ग्रन्थों के नाम ये हैं— (१) अमृतलहरी, (२) आसफविलास, (३) करुणालहरी, (४) चित्रमीमांसा-खण्डन, (५) जगदाभरण, (६) पीयूष-लहरी या गङ्गालहरी, (७) प्राणाभरण, (८) भामिनीविलास, (९) मनोरमा की कुचमर्दिनी टीका, (१०) यमुना-वर्णन (११) लक्ष्मीलहरी, (१२) रस-गङ्गाधर।

जनार्दन भट्ट—बंबई से प्रकाशित 'काव्य-माला' के एकादश गुच्छक में इनका बनाया शृङ्गारशतक नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है; किन्तु उसमें इनके निवास-स्थान या समय का पता नहीं है। काव्य की रचना देखने से यह बहुत ही अर्वाचीन कवि जान पड़ते हैं।

जयदेव—(१) ये गीतगोविन्द काव्य के रचयिता हैं जो काव्यभाषा और छन्द के लालित्य तथा माधुर्य में अब तक बेजोड़ है। इनकी माता का नाम वामादेवी और पिता का नाम भोजदेव था। बंगाल में वीरभूमि नाम के स्थान से कुछ हटकर भागीरथी में गिरनेवाला अजय नाम का एक नद है। इस नद के तीर पर केंदुली नाम का एक गाँव है। इसीको लोग जयदेव की जन्मभूमि बतलाते हैं। ये बंगाल के राजा लक्ष्मण सेन की सभा में रहे हैं जो ११९६ ई० में वर्तमान थे। अतः जयदेव का समय भी बारहवीं शताब्दी के प्रथम चरण के पहले ही होगा।

जयदेवरचित 'गीतगोविन्द' की कई एक टीकाएँ देखने में आती हैं। इनमें सबसे प्राचीन टीका भगवती-भवेश के पुत्र मैथिल कृष्णदत्त की बनायी जान पड़ती है। संस्कृत भाषा के कृष्णभक्त ग्रन्थकारों में जयदेव की अच्छी ख्याति है। लोगों का कथन तो यहाँ तक है कि स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र भी गीत-गोविन्द के गान से रीझ जाते हैं। गीत-गोविन्द के श्लोकों की भाषा-माधुरी भी ऐसी ही है। एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है।—

सञ्चरदधरसुधामधुरध्वनिमुखरितमोहनवंशम्।
चलितदृगञ्चलचञ्चल-मौलिकपोलविलोलवतंसम्।
रासे हरमिह विहितविलासं
स्मरति मनो मम कृतपरिहासम्॥ध्रु०॥

जयदेव—(२) यह प्रसिद्ध नैयायिक तथा "प्रसन्नराघव" नाटक के रचयिता हैं। प्रसन्न-राघव की प्रस्तावना में इस बात की शङ्का उठायी है कि जो कवि है वह उत्तमनैयायिक कैसे हो सकता है? उसका समाधान इन्होंने उक्तिवैचित्र्य से किया है—

येषां कोमलकाव्यकौशलकलालीलावती भारती,
तेषां कर्कशतर्कवक्रवचनोद्गारेऽपि किं हीयते।
यैः कान्ताकुचमण्डले कररुहाः सानन्दमारोपिता-
स्तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भशिखरे नारोपणीयाः शराः॥

अर्थात् जिन मनुष्यों की वाणी कोमल काव्य-रचना की निपुणता व चातुर्य की कला से भरी चमत्कार उपजाने वाली है क्या उनकी वाणी न्यायशास्त्र के रूखे और कुटिल वचनों के उच्चारण नहीं कर सकते? भला देखो तो, जिन विलासियों ने आनन्दपूर्वक अपनी ललनाओं के गोल स्तनों पर नखों के चिह्न किये हों वे क्या मतवाले हाथी के ऊँचे गण्डस्थलों पर अपने बाणों का घाव नहीं करते?

इन्होंने अपने को कुण्डिनपुर का निवासी बताया है। कुण्डिनपुर मध्य और दक्षिण भारत के बीच में एक प्राचीन नगर था। इनका समय सातवीं शताब्दी के इधर जान पड़ता है।

जयदेव पीयूषवर्ष—ये अलङ्कार सम्प्रदाय के आचार्य 'चन्द्रालोक' नामक ग्रन्थ के रचयिता हैं। इनका 'चन्द्रालोक' इस क्षेत्र में बहुत समादृत है। पीछे से इसी ग्रन्थ के व्याख्यान रूप में अप्पय दीक्षित ने 'कुवलयानन्द' लिखा। इनका समय बारहवीं-तेरहवीं शती के बीच का है।

जोनराज—कवि कल्हण ने सन् ११४८ ई० में जो 'राजतरङ्गिणी' लिखी थी, उसे वे समाप्त नहीं कर पाये; वह अधूरी ही रही। इस अधूरी पुस्तक को जोनराज ने पूरा किया। राजतरङ्गिणी के पिछले भाग में इनके समय का परिचय इस प्रकार दिया गया है :—

श्रीजोनराजविबुधः कुर्वन् राजतरङ्गिणीम्।
सायकाग्निमिते वर्षे शिवसायुज्यमावसत्॥

अर्थात् पण्डित जोनराज संवत् २५ में राजतरङ्गिणी रचकर शिवसायुज्य को प्राप्त हुए। यह संवत् स्थानीय अथवा कश्मीरी समझना चाहिये। अतएव यह निर्धारित होता है कि इन्होंने सन् १४१२ ई० में प्राण-त्याग किया, अतः इनका समय अनुमान से १४वीं शताब्दी का पिछला भाग और पन्द्रहवीं सदी के आरम्भ के १२ वर्ष हैं। जोनराज की बनायी राजतरङ्गिणी का नाम लोगों ने दूसरी राजतरङ्गिणी रखा है। इन्होंने भारवि-रचित किरातार्जुनीय की टीका भी बनायी है। इनके शिष्य का नाम श्रीवर पण्डित था, जिसने शाके १४७७, सन् १५५५ ई० में तीसरी तरङ्गिणी रची थी।

त्रिविक्रम भट्ट—यह कवि, प्रसिद्ध विद्वान् देवादित्य शर्मा के पुत्र थे। लड़कपन में इनकी विशेष अभिरुचि पढ़ने-लिखने में न थी; पर प्रयोजनवश सरस्वती देवी की आराधना कर सात दिन में 'नलचम्पू' नाम का उत्कृष्ट चम्पूकाव्य लिखा। इनका समय अनुमानतः दसवीं शताब्दी है, जो चम्पूकाव्यों का अभ्युदय-काल है।

दण्डी—अलङ्कारशास्त्र में रीति सम्प्रदाय के आचार्य और गद्यकाव्य के प्रणेता हो कर महाकवि दण्डी संस्कृत-साहित्य में अपना एक ही महत्त्व रखते हैं। सूक्तियों में वाल्मीकि और व्यास के बाद कविरूप में इनकी गणना की गयी है। इनकी जन्म-भूमि मध्यभारत में प्रतीत होती है और समय सातवीं से आठवीं शताब्दी के बीच। 'काव्यादर्श' इनका अलंकार शास्त्र का ग्रन्थ है और 'दशकुमारचरित' गद्यकाव्य। पर इनके तीन प्रबन्धों की ख्याति चली आ रही है और वह तीसरा प्रबन्ध 'छन्दोविचिति' अथवा 'अवन्तिसुन्दरीकथा' कहा जाता है। 'दशकुमारचरित' सामाजिक प्रबन्ध है तथा उसकी शैली बहुत सरल एवं सुबोध है। 'काव्यादर्श' अलङ्कार शास्त्र की दृष्टि से बहुत लोकप्रिय ग्रन्थ है तथा उसका अनुवाद कन्नड़, सिंहली और तिब्बती भाषाओं में भी मिलता है।

दामोदर गुप्त—यह कश्मीरी कवि हैं। इनका बनाया ग्रन्थ "कुट्टनीमतम्" है। राजतरङ्गिणी में लिखा है कि—

स दामोदरगुप्ताख्यं कुट्टनीमतकारिणम्।
कविं कविं बलिरिव धुर्यंधी सचिवं व्यधात्॥

इससे ज्ञात होता है कि ये महाराज जयापीड़ के मन्त्री थे। अतः इनका समय आठवीं शती होना चाहिए। "कुट्टनीमत" ग्रन्थ क्षेमेन्द्र कवि के "समयमातृका" ही सा है। इनके ग्रन्थ लिखने का मुख्य उद्देश्य युवा पुरुषों को वेश्याओं के फंदे से बचाना है। इस ग्रन्थ के पढ़ने वाले यदि चतुर हों तो संसार में बहुत सँभल के अपना जीवन बिता सकते हैं। ग्रन्थ का विषय अश्लील होने के कारण लोग दामोदर गुप्त के कवित्व की कुछ विशेष प्रशंसा नहीं करते, किन्तु कवि यह अपने ढंग का एक ही था। आचार्य मम्मट ने इनके दो श्लोक उदाहरण स्वरूप अपने 'काव्यप्रकाश' में दिये हैं।

दामोदर मिश्र—हनुमान् जी द्वारा रामचरित को लेकर नाटक लिखने, उसे शिलाओं पर उत्कीर्ण करने तथा पुनः वाल्मीकि की प्रसन्नता के लिये समुद्र में फेंक देने की किवदन्ती प्रसिद्ध है। वाद में यह कहा जाता है कि महाराज भोज ने समुद्र से उन शिलाओं का उद्धार कर हनुमान् जी के लिखे नाटक को व्यवस्थित करवाया। उस 'हनुमन्नाटक' के दो संस्करण उपलब्ध होते हैं। एक ९ अंकों का, दूसरा १४ अंकों का। जो हनुमन्नाटक १४ अंकों में है उसके संग्रहकर्त्ता यही दामोदर मिश्र हैं। आचार्य मम्मट के 'काव्यप्रकाश' सप्तम उल्लास में हनुमन्नाटक का एक श्लोक उदाहरण में उद्धृत है। मम्मट का समय एकादश शतक है। अतः इनका समय दशम शतक के आसपास होना चाहिए। 'हनुमन्नाटक' वस्तुतः नाटक न होकर गद्य-पद्यमय उत्कृष्ट काव्य ही है। उसमें नाटक-तत्त्वों का सर्वथा अभाव है किन्तु काव्यत्व उच्चकोटि का है। इसमें दूसरे ग्रन्थों के पद्य भी मिलते हैं।

दिङ्नाग—ये बौद्धमत के आचार्य और काञ्चीपुरी के रहने वाले थे। मल्लिनाथ ने मेघदूत के पूर्वार्द्ध के १४वें श्लोक (दिङ्नागानां पथि परिहरन् स्थलहस्तावलेपान् ॥) की टीका में दिङ्नाग को कालिदास का समकालीन बतलाया है। मल्लिनाथ के अनुसार मेघदूत के इस श्लोक से कालिदास की दिङ्नाग पर अश्रद्धा प्रकट होती है, जैसा कि होना भी चाहिए; क्योंकि कालिदास श्रुति-स्मृति-धर्म को मानने वाले थे।

दिवाकर—(१) राजशेखर ने जो अपने पूर्व कवियों की सूची दी है, उसमें इनका नाम दण्डी, बाण, मयूर आदि के साथ आया है। इस आशय का एक और श्लोक भी मिलता है—

अहो प्रभावो वाग्देव्या यन्मातङ्गदिवाकरः।
श्रीहर्षस्याभवत्सभ्यः समं बाणमयूरयोः ॥

यह श्रीहर्ष कन्नौज के महाराज हर्षवर्द्धन हैं, जिनके दरबार में बाण भट्ट ने रह कर 'हर्षचरित' और 'कादम्बरीकथा' काव्य लिखे थे। अतः इनका समय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध होना चाहिए।

दिवाकर—(२) यह प्रसिद्ध ज्योतिषी भरद्वाज गोत्री एक ब्राह्मण थे। इनके पिता नृसिंह और विद्यागुरु इनके चाचा शिवदैवज्ञ हैं। पं० सुधाकर द्विवेदी के मतानुसार इनका जन्म शाके १५२८, सन् १६०६ ई० में हुआ। जन्मभूमि गोदावरी नदी के तट पर गोल नामक ग्राम था। इन्होंने १६२५ ई० में 'जातक-पद्धति' नामक ग्रन्थ लिखा।

दिनकर मिश्र—ये रघुवंश के टीकाकार एक प्रसिद्ध पण्डित थे। इन्होंने सन् १३८५ ई० में यह टीका बनायी थी। ये बौद्ध थे अतः इनकी बनायी रघुवंश की टीका मल्लिनाथ को नहीं रुची और उन्होंने अपनी टीका के आरम्भ में इनकी टीका के सम्बन्ध में लिखा है—"दुर्व्याख्याविषमूर्छिता।" शङ्कराचार्य तथा उदयनाचार्य द्वारा परास्त किये जाने पर यद्यपि बौद्धधर्म का प्राधान्य हिन्दुस्थान में न

रहा, तथापि बौद्धसिद्धान्तवादी दिनकर मिश्र सरीखे दो चार जन शेष रह ही गये थे। सम्भव है, ऐसे ही लोगों के पास बचे-खुचे बौद्धग्रन्थ देखकर माधवाचार्य जी ने सर्वदर्शन संग्रह में बौद्धदर्शन को भी स्थान दिया। माधव का समय १४वीं शताब्दी है।

धनञ्जय—भोजराज के पितृव्य धारानरेश मुञ्ज के सभा-रत्नों में से यह भी एक थे। इन्होंने 'दशरूपक' नाम से नाट्यशास्त्र का ग्रन्थ लिखा है। ग्रन्थ की समाप्ति में धनञ्जय लिखते हैं:—

विष्णोः सुतेनापि धनञ्जयेन,
विद्वन्मनोरागनिबद्धहेतुः।
आविष्कृतं मुञ्जमहीशगोष्ठी-
वैदग्ध्यभाजा दशरूपमेतत्॥

इससे विदित होता है कि इनके पिता का नाम विष्णु था और यह मुञ्ज के सभासद थे। मुञ्ज का एक शिलालेख ९७४ ई० का प्राप्त हुआ है। अतः उनका समय १०वीं शताब्दी का अन्तिम भाग होगा तथा वही समय धनंजय कवि का भी होगा। धनञ्जय के समकालीन अन्य कवियों के नाम पद्मगुप्त, धनिक, हलायुध आदि हैं। इनमें से पद्मगुप्त 'नवसाहसाङ्कचरित' महाकाव्य के रचयिता हैं। धनिक धनञ्जय के भाई हैं। इन्होंने भी अपने पिता का नाम विष्णु लिखा है। हलायुध एक प्रसिद्ध कोषकार हैं, जिनका उद्धरण टीकाकारों ने दिया है। परन्तु यह हलायुध वे ही हैं या नहीं, इसमें सन्देह है।

धनिक—यह विष्णु के पुत्र और धनञ्जय के भाई हैं। धनञ्जय रचित 'दशरूपक' पर दशरूपकावलोक नाम की टीका इन्होंने ही लिखी है। इन्होंने निजरचित ग्रन्थ में विद्धशालभञ्जिका के श्लोक उदाहरण में दिये हैं, जिससे सिद्ध होता है कि राजशेखर इनसे पहले हुए थे। धनिक धारानरेश मुञ्ज के भाई सिन्धुराज की सभा में रहते थे, जिनका राज्यकाल ९९४ ई० से प्रारम्भ होता है।

धन्वन्तरि—उज्जैन-सम्राट् विक्रम की सभा के नवरत्नों में इनका नाम प्रथम ही प्राप्त होता है। यह प्रसिद्धि है कि समुद्र-मन्थन के समय धन्वन्तरि का अवतरण हुआ था और वे आयुर्वेदशास्त्र के विधायक तथा भगवान् के अवतार माने जाते हैं। किन्तु ये धन्वन्तरि पौराणिक काल के ही हो सकते हैं, विक्रम की सभा के नहीं। वस्तुतः आयुर्वेदशास्त्र के मर्मज्ञों को राजसभाओं में 'धन्वन्तरि' नाम से ही अभिहित किया जाता था और यह नाम उपाधि रूप में था। विक्रम की सभा के 'धन्वन्तरि' भी ऐसे ही रहे होंगे। साथ ही वह कवि भी थे। इनके नाम से एक 'धन्वन्तरिनिघण्टु' ग्रन्थ मिलता है।

एक धन्वन्तरि पुराणों तथा हरिवंश में काशिराज नाम से प्रसिद्ध है। आज तक काशी में एक कूप उनका स्मारक बना हुआ है। यह कूप मुहल्ला दारानगर में मृत्युञ्जय महादेव के मन्दिर के निकट है। लोगों का यह भी कथन है कि धन्वन्तरि वैद्य परलोक सिधारते समय अपनी गुणकारी ओषधिओं को वृद्धकाल के कुएँ में छोड़ गये, जिसके प्रभाव से उस कूप का पानी आरोग्यवर्द्धक है। अतएव धन्वन्तरि वैद्य काशी के निवासी और एक अति प्राचीन व्यक्ति सिद्ध होते हैं।

धर्मदास—इनका लिखा हुआ विदग्धमुखमण्डन नामक ग्रन्थ मिलता है। इसके मङ्गलाचरण में ग्रन्थकार ने बुद्धदेव की स्तुति की है:—

सिद्धौपधानि भयदुःखमहापदानां,
पुण्यात्मनां परमकर्णरसायनानि
प्रक्षालनैकसलिलानि मनोमलानां,
शौद्धोदनेः प्रवचनानि चिरञ्जयन्ति॥

इससे अनुमान होता है कि, ये बौद्ध रहे होंगे। 'विदग्धमुखमण्डन' एक प्राचीन ग्रन्थ जान

पड़ता है। सम्भव है कि, वह कवि उस समय के होंगे, जिस समय भारत में बौद्धधर्म का प्रावल्य रहा होगा। अतः भगवान् शङ्कराचार्य के पहले सातवीं-आठवीं शती में इनको होना चाहिए।

धावक—किंवदन्ती है कि धावक नामक किसी कवि ने रत्नावली और नागानन्द नामक नाटक वनाये। सम्राट् श्रीहर्ष ने धन देकर धावक को सन्तुष्ट किया तथा इन नाटकों को अपने नाम से प्रचलित करवाया। आचार्य मम्मट ने अपने 'काव्यप्रकाश' में कविता की सफलताओं का उल्लेख करते हुए "श्रीहर्षादेर्धावकादीनामिव धनम्" की वात लिखी है। अतः इनका समय सातवीं से ग्यारहवीं शती के वीच का हो सकता है।

धोयी—जयदेव ने गीतगोविन्द में "धोयी कविक्ष्मापतिः" लिख कर धोयी की प्रशंसा की है। इसमें सन्देह नहीं कि धोयी एक अच्छे कवि थे। इनका वनाया पवनदूत नामक एक ग्रन्थ है। इसकी रचना-शैली कालिदास के मेघदूत से विल्कुल मिलती-जुलती है। इसमें कुवलयवती नामक नायिका ने पवन द्वारा अपने प्राणप्रिय राजा लक्ष्मण के पास अपने विरह का संदेशा भेजा है। निस्सन्देह यह राजा लक्ष्मण वंगाल के सेनवंशीय राजा लक्ष्मणसेन हैं; जिनके सभासद जयदेव, धोयी, गोवर्द्धन, शरण, उमापतिवर आदि प्रसिद्ध कविवर थे। अतः उन समस्त कवियों की तरह धोयी वंगालनिवासी ही होंगे। लक्ष्मण सेन १११६ ई० में वर्तमान थे। अतः १२वीं शती का पूर्वभाग धोयी का समय होगा। इस कवि का यह श्लोक वहुत प्रसिद्ध है:—

इक्षुदण्डं कलानाथं, भारतं चापि वर्णय।
इति धोयी कविर्ब्रूते, प्रतिपर्व रसायनम्॥

नागेशभट्ट या नागोजी भट्ट—महावैयाकरण नागेशभट्ट कई विषयों के मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। शायद पतञ्जलि के वाद पाणिनि-व्याकरण का इतना मर्मज्ञ विद्वान् दूसरा नहीं हुआ। इनका समय सत्रहवीं शताव्दी है।

नागेशभट्ट के पिता का नाम शिवभट्ट और माता का नाम सती देवी था। ये महाराष्ट्र ब्राह्मण थे। प्रसिद्ध वैयाकरण 'सिद्धान्तकौमुदी' के प्रणेता श्रीमट्टोजीदीक्षित के पौत्र हरिदीक्षित इनके व्याकरण विषयक विद्यागुरु थे। न्याय-शास्त्र इन्हें "राम" नामक तात्कालिक विद्वान् ने पढ़ाया था। इसी प्रकार विभिन्न शास्त्रों के विद्वान् आचार्य्यों से इन्होंने विद्याभ्यास किया था। अधिकतर ये काशी में रहते थे। श्रृंगवेरपुर के गुणज्ञ महाराजा "राम" ने इन्हें सम्मान-पूर्वक जीविका दी थी। श्रृंगवेरपुर के राजा "राम" जैसे दानवीर थे, वैसे ही युद्धवीर भी थे। इनका पूरा नाम "रामदत्त" था, परन्तु नागेशभट्ट प्रायः "राम" ही लिखते थे।

नागेशभट्ट सव शास्त्रों में निष्णात थे, पर व्याकरण और साहित्य के विषयों पर इन्होंने अधिक रचनायें की हैं। इनके स्वतन्त्र ग्रन्थ ये हैं—(१) वृहन्मञ्जूषा, (२) लघुमञ्जूषा, (३) लघुशव्देन्दुशेखर, (४) परिभाषेन्दुशेखर, (५) लघुशव्दरत्न, (६) प्रायश्चित्तेन्दुशेखर, (७) आचारेन्दुशेखर, (८) तीर्थेन्दुशेखर, (९) श्राद्धेन्दुशेखर आदि।

साहित्य विषय में इन्होंने जो कुछ लिखा है वह टीका रूप में, पर ये टीकायें स्वतन्त्र ग्रन्थ का-सा अस्तित्व रखती हैं। 'काव्य-प्रकाश' की 'काव्यप्रदीप' नामक टीका जो प्रसिद्ध नैयायिक श्रीगोविन्द ठक्कुर ने की है, उस पर इन्होंने 'प्रदीपोद्योत' विवरण लिखा है। इस 'प्रदीपोद्योत' में न केवल 'प्रदीप' का ही, किन्तु 'काव्यप्रकाश' का भी वह मर्म प्रकाशित किया गया है, जो 'ठक्कुर' महो-

दय से रह गया था। पंडितराज जगन्नाथ के 'रसगङ्गाधर' की भी इन्होंने 'मर्म-प्रकाश' नामक टीका लिखी है। वास्तव में पंडितराज के अनुपम ग्रन्थ 'रस-गंगाधर' के भट्ट जी योग्य टीकाकार हैं। नागेशभट्ट ने व्याकरण और साहित्य के अतिरिक्त, वेदान्त, न्याय, वैशेषिक, योग, सांख्य, धर्मशास्त्र और पुराण आदि सभी विषयों पर बीसों ग्रन्थ बनाये हैं, परन्तु टीकायें या विवृति ही। 'दुर्गासप्तशती' पर भी इन्होंने टीका लिखी है। पर इन टीका ग्रन्थों में भी इन्होंने मौलिक सिद्धान्तों की वर्षा की है।

कहा जाता है कि '**प्रौढ मनोरमा**' की टीका '**शब्दरत्न**', जिसके प्रणेता हरिदीक्षित प्रसिद्ध हैं, नागेशभट्ट ही की कृति है। हरिदीक्षित भट्टजी के गुरु थे और इन्होंने यह रचना अपने गुरु के नाम से की थी। इसी प्रकार अध्यात्म-रामायण और वाल्मीकीय रामायण की रामाभिरामी टीकाएँ इन्होंने अपने आश्रयदाता श्रृंगवेरपुर के महाराज रामदत्त के नाम से की हैं।

नारायण—ये 'मुहूर्तमार्त्तण्ड' नामक ज्योतिष ग्रन्थ के रचयिता हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ पर 'मार्त्तण्डवल्लभा' नामक टीका भी की है। पं० सुधाकर द्विवेदी के मत से इन ग्रन्थों का निर्माणकाल शाके १४९३ (सन् १५७१ ई०) से शाके १४९४ (सन् १५७२ ई०) है। यही समय नारायण ने भी अपने ग्रन्थ में लिखा है। इनके पिता का नाम अनन्त और निवास-स्थान दक्षिण में देवगिरि से कुछ हट कर टापर नामक एक गाँव था।

निम्बादित्य—चार वैष्णव सम्प्रदायों में निम्बादित्य जी विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के प्रवर्तकों में से हैं। निम्बादित्य के रचित ग्रन्थ का नाम 'धर्माब्धिबोध' है। मथुरा के निकट 'ध्रुवतीर्थ' नाम का एक स्थान है। वहीं पर निम्बादित्य की गद्दी है। लोगों का कहना है कि उनकी गद्दी पर उनके शिष्य हरिव्यास की सन्तान आज तक विराजमान है। इनका समय १६ वीं सदी का पिछला या १७वीं सदी का प्रारम्भ का भाग होना चाहिये। इनके प्रसिद्ध शिष्यों के नाम केशव और हरिव्यास हैं।

नीलकण्ठ—ये 'ताजिक नीलकण्ठी' के रचयिता प्रसिद्ध ज्योतिषी हैं। इनकी पुस्तक का भारतवर्ष के ज्योतिषियों में बड़ा आदर है। इनके पिता का नाम अनन्त और पितामह का चिन्तामणि था। प्रसिद्ध रामदैवज्ञ, जिन्होंने 'मुहूर्तचिन्तामणि' ग्रन्थ बनाया, इन्हीं के छोटे भाई थे। नीलकण्ठ के पुत्र एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इन्होंने मुहूर्तचिन्तामणि की 'पीयूषधारा' नाम की टीका लिखी है। ग्रन्थारम्भ में इन्होंने अपने पिता का वर्णन किया है :—

सीमा मीमांसकानां कृतसुकृतचयः कर्कशस्तर्कशास्त्रे,
ज्योतिःशास्त्रे च गर्गः फणिपति-भणितव्याकृतौ शेषनागः।
पृथ्वीशाकब्बरस्य स्फुरदतुलसभामण्डनं पण्डितेन्द्रः,
साक्षात् श्रीनीलकण्ठः समजनि जगतीमण्डले नीलकण्ठः॥

इससे स्पष्ट है कि ये मीमांसक, नैयायिक, ज्योतिषी और वैयाकरण थे तथा अकबर बादशाह के सभासद भी थे। इनका निवासस्थान विदर्भ देश था। अकबर बादशाह के समकालीन होने के कारण इनका समय ख्रीष्टीय १६वीं शताब्दी का पिछला भाग अनुमित होता है।

नीलकण्ठ चतुर्धर—महाभारत पर इनकी नीलकण्ठी टीका सर्वप्रसिद्ध है। यह कट्टर शैव थे, और अपनी टीका में अपना साम्प्रदायिक आग्रह प्रदर्शित करने में इन्होंने

सङ्कोच नहीं किया है। इनके विद्वान् होने में सन्देह नहीं किया जा सकता। यह कब हुए और इनके माता-पिता का क्या नाम था तथा कहाँ के रहने वाले थे, इन बातों का ठीक पता नहीं।

पक्षधर मिश्र—यह एक उद्भट नैयायिक तथा असामान्य बुद्धिमान् थे। इनके विषय में अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। बहुत लोगों का कहना है कि पक्षधर मिश्र और प्रसन्न-राघव के बनाने वाले जयदेव एक ही हैं। यह मिथिला के रहने वाले थे।

पक्षिल स्वामी—एक अति प्राचीन नैयायिक विद्वान् हैं। गौतमविरचित न्यायसूत्रों पर भाष्य करने वालों में यह सब से प्राचीन हैं। इनका बनाया भाष्य अन्य भाष्यों की अपेक्षा उत्तम समझा जाता है। ईसा के पूर्व चौथी सदी में इनके विद्यमान होने का पता पाया गया है। हेमचन्द्र ने अपने अभिधान में पक्षिल स्वामी और चाणक्य को एक व्यक्ति माना है। इनका नामान्तर वात्स्यायन था। यह चन्द्रगुप्त की सभा में विद्यमान थे।

पञ्चशिख—यह सांख्यदर्शन के सम्प्रदाय में एक प्रसिद्ध दार्शनिक हो गये हैं। इनके गुरु विख्यात दार्शनिक महात्मा आसुरि थे। आसुरि के गुरु सांख्यदर्शनप्रणेता महर्षि कपिल थे। पञ्चशिख ही ने सांख्य दर्शन के सिद्धान्तों का प्रचार किया था। आसुरि की स्त्री का नाम कपिला था। पञ्चशिख पुत्र-रूप से अपनी गुरु-पत्नी कपिला का स्तन्य-पान करते थे। इसीसे वे कपिलापुत्र के नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

पतञ्जलि—इनको शेषनाग का अवतार कहा जाता है। इन्होंने पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' पर महाभाष्य लिखकर उसे सर्वसुलभ और सरल कर दिया है। इनकी गणना पाणिनि व्याकरण के त्रिमुनियों (पाणिनि, कात्यायन, पतञ्जलि) में की जाती है। महाभाष्य की भाषा बहुत ही सुबोध है और शैली ऐसी है, जैसे कोई आचार्य अपने शिष्य को पढ़ा रहा हो। व्याकरण विषय पर इतना व्यापक और सुबोध विवेचन किसी दूसरे ने नहीं किया है। इनकी प्रतिष्ठा भगवान् पतञ्जलि के रूप में की जाती है।

इनका समय मौर्यों के बाद शुंग काल में आता है, जैसा कि महाभाष्य में दिये हुए उद्धरणों से प्रतीत होता है—

"मौर्यैर्हिरण्यार्थिभिरर्चाः प्रकल्पिताः।"

अर्थात् मौर्यवंशीय राजाओं ने सुवर्ण की कामना से पूजा का व्यवहार चलाया—

"अरुणद्यवनः साकेतम्"

अर्थात् यवन राजा ने अयोध्यापुरी को घेरा, और—

"अरुणद्यवनो माध्यमिकान्"

अर्थात् यवन राजा ने माध्यमिकों को घेरा। माध्यमिक नागार्जुन के शिष्यों का एक सम्प्र-दाय है जो कि शून्यवादी बौद्धों के नाम से विशेष परिचित है। पुष्यमित्र के समय ही मध्य एशिया की जातियों ने भारत के उत्तरी भाग में आक्रमण किया था। मौर्य साम्राज्य उस समय पतन की ओर था। पुष्यमित्र शुंग ने, जो उनका सेनापति था, उस आक्रमण का सामना किया और वीरता के साथ उनका दमन किया। महाभाष्य में अयोध्या तथा माध्यमिकों के घेरों का वर्णन उसी आक्रमण की ओर संकेत करता है। कदाचित् तब सम्राट् पुष्यमित्र ने अपनी विजय के बाद जो यज्ञ किया, पतञ्जलि उस यज्ञ के आचार्य भी रहे। अतः इनका समय ई० पू० द्वितीय-तृतीय शतक के बीच होना चाहिये।

पतंजलि वैयाकरण होने के अतिरिक्त एक अति प्रसिद्ध दार्शनिक एवं वैद्य भी थे। इनका रचित पातंजल योगसूत्र योगदर्शन का ग्रन्थ है।

पद्मगुप्त—ये राजा मुञ्ज के भाई सिन्धुराज के सभाकवि थे। 'दशरूपकावलोक' में इनका और रुद्र कवि का भी नाम देखने में आता है। सिन्धुराज का दूसरा नाम नवसाहसाङ्क भी था। उन्हीं के चरित को लेकर इन्होंने "नवसाहसाङ्कचरित" महाकाव्य की रचना की है। सिन्धुराज ने सन् ९९४ ई० से १०१० ई० तक राज्य किया। इस कवि का नामान्तर परिमल भी था।

पाणिनि—संस्कृत भाषा जानने वालों में ऐसा कोई भी न होगा जो पाणिनि का नाम न जानता हो। संस्कृत भाषा के आधुनिक यावत् व्याकरणों के मूल यही पाणिनि हैं। पाणिनि ने संस्कृत-व्याकरण का जो संस्कार किया वह बहुत ही अभूतपूर्व था। उनकी 'अष्टाध्यायी' की सफलता के सामने पहले के सभी व्याकरण-सम्प्रदाय लुप्त हो गये। पाणिनि महर्षि कोटि के व्यक्ति थे। इन्होंने बड़ी छान-वीन के साथ 'अष्टाध्यायी' के सूत्रों का निर्माण किया था। अष्टाध्यायी जैसा संक्षिप्त व्याकरण और किसी भाषा का नहीं किन्तु इतने पर भी संस्कृत भाषा का कोई शब्द पाणिनि के नियमों से अछूता नहीं रह गया है। पीछे से कात्यायन ने वार्तिक लखकर और पतञ्जलि ने महाभाष्य लिख कर पाणिनि-व्याकरण की परम्परा को प्रतिष्ठित किया। फिर तो महर्षि के इन सूत्रों को लेकर कितने ही ग्रन्थ रचे गये। केवल रामायण, महाभारत एवं पुराणों को छोड़ अन्य संस्कृत ग्रन्थों में आर्षप्रयोग अर्थात् पाणिनिरचित व्याकरण द्वारा असिद्ध प्रयोग नहीं मिलता।

पाणिनि के समय के विषय में कोई निश्चित मत नहीं कहा जा सकता। किन्तु इतना तो पूर्ण निश्चय है कि ये ई० पू० ५०० वर्ष से इधर के नहीं हो सकते। कुछ लोगों के अनुसार इनका समय ई० पू० ८०० वर्ष है। पाणिनि का निवासस्थान शलातुर नामक ग्राम था और उनकी माता का नाम दाक्षी था। पतञ्जलि लिखते हैं :—

"सर्वे सर्वपदादेशा दाक्षीपुत्रस्य पाणिनेः"।

यह शलातुर ग्राम सीमाप्रान्त में तक्षशिला के आस-पास कहीं रहा होगा। इनकी शिक्षा तक्षशिला में हुई थी।

पाणिनि की अष्टाध्यायी में तात्कालिक सामाजिक, राजनीतिक तथा व्यावहारिक ज्ञान के बहुत से संकेत सूत्रों में प्राप्त होते हैं। पाणिनि द्वारा 'पाताल-विजय' महाकाव्य लिखे जाने की भी प्रसिद्धि है। उसके छन्द काव्य की दृष्टि से बहुत सुन्दर हैं। 'पाताल-विजय' लिखने वाले पाणिनि वैयाकरण ही हैं अथवा दूसरे, कहा नहीं जा सकता।

प्रवरसेन—'सेतुबन्ध' प्राकृत-महाकाव्य के रचयिता प्रवरसेन एक विवादास्पद ग्रन्थकार हैं। वाकाटक-सम्राट् प्रवरसेन द्वितीय (चौथी शती ई० उत्तरार्ध) को प्रायः 'सेतुबन्ध' का रचयिता कहा जाता है, पर यह एक संभावित पक्ष है। 'सेतुबन्ध' की पुष्पिका के अनुसार इस महाकाव्य को कदाचित् कालिदास ने प्रवरसेन के निमित्त लिखा था। 'सेतुबन्ध' की कविता उच्चकोटि की है जो अपने समय में बहुत ही लोकप्रिय रही होगी। इसकी कथा का आरम्भ राम द्वारा समुद्र में सेतु-निर्माण से होता है और अन्त रावण-वध से। इसमें कुल १५ आश्वास हैं।

बाण—बाणभट्ट थानेश्वर सम्राट हर्ष के समकालिक और उनके समासद थे। हर्ष ने ६०६ ई० से ६४६ ई० तक राज्य किया। अतः सातवीं शती का पूर्वार्ध बाण भट्ट का भी समय है। इनकी जन्मभूमि सोन नदी नामक के किनारे प्रीतिकूट ग्राम में हुई थी। ये वात्स्यायन ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे। इनके पिता का नाम चित्र-

भानु था। इन्होंने लिखा है कि इनके पूर्वज कुबेर एक कुलपति थे और उनके यहाँ शुक-सारिका भी वेद-पाठ किया करती थी।

वाणभट्ट की दो प्रसिद्ध रचनायें हैं—'कादम्बरी' और 'हर्ष-चरित'। इनके अतिरिक्त तीन और रचनायें वाणभट्ट के नाम से प्रसिद्ध हैं—(१) 'चण्डीशतक', (२) 'पार्वती-परिणय' तथा (३) 'मुकुट-ताड़ितक'। 'कादम्बरी' वाणभट्ट की सर्वश्रेष्ठ रचना है। एक तरह से वह गद्य साहित्य का सर्वस्व है। 'हर्षचरित' आख्यायिका है और उसका ऐतिहासिक मूल्य है। इसमें सम्राट् हर्ष का जीवन भी वर्णित है।

वाण भट्ट की जैसी विषयानुकूल भाषा तथा शैली का सामञ्जस्य रखने वाला दूसरा कवि नहीं हुआ। इनकी भाषा कोमल कान्त पदावली तथा भाव एवं वर्णन के अनुरूप संघटित भाषा है। कहीं लम्बे-लम्बे समास हैं तो कहीं वाक्य केवल दो पदों में समाप्त हो जाता है। विषय के अनुकूल पदों का चयन करने में वाण वहुत पटु हैं। इन्हें तात्कालिक सामाजिक, व्यावहारिक, राजनीतिक, ग्रामीण वातावरण तथा विद्वद्गोष्ठियों आदि का वहुत सूक्ष्म ज्ञान था।

कादम्बरी का पूर्वार्ध ही ये लिख पाये थे तभी दिवंगत हो गये। तव इनके पुत्र पुलिन्द-भट्ट ने कादम्बरी का उत्तरार्ध पूरा किया था।

बालकृष्ण मिश्र—इनका जन्म संवत् १९४४ में दरभंगा जिले के नवटोल ग्राम में हुआ। ये न्याय, वेदान्त, साहित्य तथा मीमांसा के प्रकाण्ड विद्वान् थे। काशी हिन्दूविश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय के प्रधानाध्यापक पद पर रह कर ये जीवन के अन्तिम दिनों तक देववाणी की सेवा करते रहे। इनके लिखे ग्रन्थ कई एक हैं जिनमें से मुख्य ये हैं—

(१) लक्ष्मीश्वरीचरितम् (काव्य), (२) उभयाभावादिवारक परिष्कारप्रकाश, (३) न्यायसूत्रवृत्तिः, (४) अनुमानखण्डस्य कोडपत्रम्।

भट्ट कल्लट—यह कश्मीरी थे। इनके गुरु का नाम वसुगुप्त था। वसुगुप्त के रचित ग्रन्थ का नाम 'स्पन्दकारिका' है और स्पन्दकारिका पर स्पंदसर्वस्व नामक टीका भट्ट कल्लट की ही लिखी हुई है। यह कश्मीर के राजा अवन्तिवर्मा के समकालीन हैं। अवन्तिवर्मा का समय राजतरंगिणी के निर्देशानुसार सन् ८५५–८८४ ई० है। निदान भट्ट कल्लट नवीं सदी के पिछले भाग में वर्तमान माने जा सकते हैं।

भट्ट नारायण—भट्ट नारायण उन पाँच ब्राह्मणों में से हैं, जिन्हें वङ्गाल के राजा आदिशूर ने कान्यकुब्जदेश से वुला कर वङ्गाल में वसाया। भट्ट नारायण ने आदिशूर को अपना परिचय इस प्रकार दिया था—

वेणीसंहारनामा परमरसयुतो
ग्रन्थ एकः प्रसिद्धो—
भो राजन्मत्कृतोऽसौ रसिकगुणवता
यत्नतो गृह्यते सः।
नाम्नाहं भट्टनारायण इति विदित-
श्चारुशाण्डिल्यगोत्री,
वेदे शास्त्रे पुराणे धनुषि च निपुणः
स्वस्ति ते स्यात्किमन्यत्॥

इससे सिद्ध है कि वङ्गाल में आने के पूर्व भट्ट नारायण 'वेणीसंहार' नाटक की रचना कर चुके थे और वह ग्रन्थ प्रसिद्ध भी हो चुका था। आदिशूर ७१५ ई० में गौडदेश के राजा वने थे। दूसरी ओर 'काव्यालङ्कार-सूत्र' के रचयिता वामन ने अपने ग्रन्थ में 'वेणीसंहार' के 'पतितं वेत्स्यति क्षितौ' पद को विवेचन के लिए उद्धृत किया है जिसके कारण भी भट्टनारायण ८०० ई० के पूर्व

सिद्ध होते हैं। अतः इनका समय आठवीं शती का पूर्वार्ध होना चाहिए।

'वेणीसंहार' का विद्वत्समाज में बहुत आदर है और इसी एक कृति के कारण कवि का यश अचल है। आचार्य मम्मट, धनिक, विश्वनाथ आदि ने अपने लक्षण-ग्रन्थों में 'वेणीसंहार' के पद्य आदर के साथ उद्धृत किये हैं।

भट्ट लोल्लट—काव्य-प्रकाश के रसनिरूपण प्रकरण में इनका उल्लेख आचार्य मम्मट ने किया है। ये नाम से कश्मीरनिवासी जान पड़ते हैं। रस-निष्पत्ति के विषय में ये 'आरोपवाद' सिद्धान्त को मानने वाले हैं, जिसका उल्लेख मम्मट और उनके सभी परवर्ती आचार्यों ने किया है। अतः इनका समय मम्मट के पूर्व दशवीं शती होना चाहिए। इनका कोई ग्रन्थ नहीं उपलब्ध होता।

भट्टोजी दीक्षित—दीक्षित जी प्रकाण्ड वैयाकरण थे। इनकी वंश-परम्परा तथा शिष्य-परम्परा में कौण्डभट्ट एवं नागोजीभट्ट जैसे भाषा शास्त्र और व्याकरण के धुरन्धर आचार्य हुए हैं। दीक्षित जी का समय सत्रहवीं शती ई० है। इनकी इस परम्परा ने अमूल्य ग्रन्थों की रचना की है।

दीक्षित जी ने सम्भवतः १६३० ई० में पाणिनि की अष्टाध्यायी को लेकर 'सिद्धान्तकौमुदी' नामक परम प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की। सम्पूर्ण भारत में इसका इतना प्रचार हुआ कि व्याकरण का अध्ययन-अध्यापन करने वाले अष्टाध्यायी को लेकर लिखे हुए दूसरे ग्रन्थों को भूल गये। 'सिद्धान्तकौमुदी' में संस्कृत व्याकरण का पूर्ण विवेचन उपलब्ध है। दीक्षित जी ने इस ग्रन्थ की टीका के रूप में 'प्रौढ मनोरमा' नाम का स्वतंत्र ग्रन्थ भी लिखा है। इनके अतिरिक्त (१) शब्द-कौस्तुभ (अष्टाध्यायी की टीका), (२) लिंगानुशासन वृत्ति तथा (३) व्याकरण-मतोन्मज्जन दीक्षित जी के दूसरे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।

भट्टोत्पल—यह एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इन्होंने वराहमिहिर के लगभग समस्त ग्रन्थों की टीकाएँ लिखी हैं किन्तु वराहकृत पञ्चसिद्धान्तिका की टीका इनकी रचित नहीं मिलती। सम्भव है, उसकी टीका बनायी ही न हो। प्राचीन ज्योतिषियों ने इन्हें भट्टोत्पल लिखा है; किन्तु यह अपने ग्रन्थों में अपने को केवल उत्पल लिखते हैं। बृहज्जातक की टीका में, इन्होंने अपना समय शाके ८८८ अर्थात् ९६६ ई० लिखा है।

भर्तृमेण्ठ—ये 'हयग्रीववध' महाकाव्य के रचयिता एक प्रतिभाशाली कवि थे। क्योंकि राजशेखर ने अपने को भर्तृमेण्ठ का अवतार होने में बड़े गर्व का अनुभव किया है—

ततः प्रपेदे भुवि भर्तृमेण्ठताम्।
स वर्तते सम्प्रति राजशेखरः।

ये कश्मीर-नरेश मातृगुप्त की सभा में रहे हैं और इनका समय ९०० ई० के पहले होना चाहिए।

भर्तृहरि (१)—भर्तृहरि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ ठीक-ठीक पता नहीं चलता। कुछ लोग इन्हें उज्जयिनी-सम्राट् विक्रमादित्य का बड़ा भाई कहते हैं। जो कुछ हो, इन्होंने नीतिशतक, शृंगार-शतक तथा वैराग्य-शतक नाम से ३०० छन्द लिखे हैं। वे संस्कृत साहित्य की अमर निधि हैं। अपनी कविताओं से ये अद्वैतवादी तथा निःस्पृह महान् आत्मा प्रतीत होते हैं। इन्होंने संसार और जीवन के सूक्ष्म निरीक्षण की मार्मिक व्यञ्जना अपने शतकों में की है।

भर्तृहरि (२)—ये महावैयाकरण भर्तृहरि हैं। इन्होंने 'वाक्यपदीय' ग्रन्थ की रचना की है। व्याकरण-विज्ञान का यह अद्वितीय ग्रन्थ है। 'वाक्यपदीय' पर हेलाराज और पुञ्जराज ने टीकाएँ लिखी हैं। हेलाराज

कल्हण से प्राचीन हैं और भर्तृहरि का समय और पीछे अनुमित होता है।

भवभूति—'राजतरङ्गिणी' के अनुसार भवभूति कान्यकुब्ज नरेश यशोवर्मा के सभा-पण्डित थे—

'कविर्वाक्पतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवितः।
जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणस्तुतिवन्दिताम्॥'

यशोवर्मा को कश्मीर-नरेश मुक्तापीड़ ललितादित्य ने ७३६ ई० में परास्त किया था, बाद में संधि हो गई। संधि के समय ललितादित्य भवभूति से बहुत प्रभावित हुए थे। अतः इनका समय आठवीं शती का पूर्वार्ध अनुमित होता है।

भवभूति बरार प्रान्त में पद्मपुर के निवासी थे। ये कश्यप गोत्र के और कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा को मानने वाले ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम नीलकण्ठ और माता का नाम जतुकर्णी था। स्वयं इनका नाम श्रीकण्ठ था तथा उपाधि उदुम्बर थी। भवभूति नाम इनका पीछे पड़ा होगा।

कालिदास के बाद नाटककारों में भवभूति का ही नाम लिया जाता है और 'उत्तररामचरित' में तो भवभूति को कालिदास से भी श्रेष्ठ कहा गया है—

'उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।'

इनके लिखे तीन नाटक हैं—(१) मालतीमाधव, (२) महावीरचरित और (३) उत्तररामचरित। नाट्यदृष्टि से इनके नाटक बड़े कमनीय हैं और उनमें बहुत ऊँचा कवित्व पाया जाता है। करुणरस लिखने में भवभूति की बराबरी अन्य कवि नहीं कर सकता। इनके उत्तररामचरित में करुणरस मूर्तिमान् हो उठा है, जिसे देखकर पत्थर भी रो रहे हैं तथा वज्र द्रवीभूत हो उठा है—

अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।

मालूम पड़ता है कि भवभूति का सम्मान अपने जीवन के प्रारम्भ में नहीं हुआ, तभी इन्होंने 'मालतीमाधव' में क्षोभ, संतोष और साहस भरी अपनी यह उक्ति प्रकट की थी—

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान्प्रति नैष यत्नः।
उत्पत्स्यते हि मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी॥

भवभूति की साहित्य मर्मज्ञों ने बड़ी प्रतिष्ठा की है और लाक्षणिक ग्रन्थों में इनके छन्द प्रायः उदाहरण-रूप में आये हैं।

भामह—ये कश्मीर के निवासी थे, इनका 'काव्यालंकार' काव्यशास्त्र का विवेचन ग्रन्थ है। इसमें कुल ६ परिच्छेद हैं। इस ग्रन्थ से भामह की मौलिकता और विद्वत्ता प्रकट होती है। कुछ विद्वान् इनको संस्कृत काव्य-शास्त्र का पहला लक्षण-ग्रन्थकार मानते हैं, अन्य इनको दण्डी के समकाल का और दूसरे दण्डी के परवर्ती ग्रन्थकार की मान्यता देते हैं। प्रोफेसर देवेन्द्रनाथ शर्मा ने इनका समय छठी शती ई० का पूर्वार्ध माना है।

भारवि—महाकवि भारवि दक्षिण भारत के रहने वाले थे। आचार्य दण्डी के पूर्वज दामोदरभट्ट के साथ इनकी घनिष्ठता थी अथवा यह नाम स्वयं इन्हीं का था। ये चालुक्य नरेश विष्णुवर्द्धन की सभा में रहते थे। चालुक्य नरेश पुलकेशिन् द्वितीय का एक शिलालेख शकसंवत् ५५६ का 'अइहोड़' ग्राम के जैनमन्दिर में मिला है जिसमें कालिदास के साथ भारवि का नाम अंकित है—

येनायोजि नवेश्म स्थिरमर्थविधौ
विवेकिना जिनवेश्म।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित—
भारवि-कालिदास-कीर्तिः॥

इसका अर्थ है कि सप्तम शती के प्रारम्भ में कालिदास-भारवि की समान ख्याति हो गई थी और इनका 'किरातार्जुनीय' काव्य लोक-

प्रिय हो चुका था। विष्णुवर्धन अपने भाई चालुक्य नरेश पुलकेशिन् द्वितीय की आज्ञा से ही महाराष्ट्र प्रान्त में ६१५ ई० के आस-पास राज्य करता था, अतः विष्णुवर्धन का सभासद होने के नाते इनका समय ६०० ई० के आसपास है।

भारवि की एक मात्र कृति 'किरातार्जुनीय' महाकाव्य है, जिसकी गणना संस्कृत महाकाव्यों की बृहत्त्रयी में की जाती है। भारवि की कविता अर्थ-गौरव के लिए प्रसिद्ध है। 'कि तार्जुनीय' के सर्गों में छन्दसंख्या अधिक नहीं है, अर्थ की गम्भीरता और सौष्ठव है।

भास—कालिदास के पूर्ववर्ती नाटककारों में भास अन्यतम हैं। कालिदास ने इनका नामोल्लेख किया है अतः इनका समय कालिदास से पहले का है। सबसे प्रथम सन् १९१२ ई० में महामहोपाध्याय गणपति शास्त्री ने भास के तेरह नाटकों के प्राप्त होने की सूचना दी थी। इन नाटकों के रचयिता भास हैं, विद्वान् इस विषय पर एक मत नहीं है। १३ नाटकों के नाम ये हैं—१ प्रतिमा नाटक २. अभिषेक नाटक ३. पञ्चरात्र, ४. मध्यम व्यायोग ५. दूतघटोत्कच ६. कर्णभार ७. दूतवाक्य ८. ऊरुभङ्ग ९. बालचरित १०. चारुदत्त ११. अविमारक १२. प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण १३. स्वप्नवासवदत्त।

भास्कराचार्य—ये भारत के विख्यात ज्योतिर्वेत्ता पण्डित और गणितज्ञ हो चुके हैं। इनके पिता का नाम महेश आचार्य था। इनका वास-स्थान सह्य पर्वत के समीप विजविड नामक गाँव में था। १११४ ई० में इनका जन्म हुआ। इन्होंने ३६ वर्ष की अवस्था में सन् ११५० ई० में अपने प्रसिद्ध सिद्धान्तशिरोमणि नामक ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ चार खंडों में विभक्त हैं। १ पाटीगणित, २ बीजगणित, ३ ग्रहगणित, ४ गोलाध्याय। इनके लक्ष्मीधर नामक पुत्र और लीलावती नाम की कन्या थी। इन्होंने 'लीलावती' नाम से अपनी पुत्री की शिक्षा के लिये गणित की पुस्तक लिखी है।

भोजराज—ये इतिहास-प्रसिद्ध धारानगरी के राजा तथा साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। ये सिन्धुराज के पुत्र तथा मुञ्ज के भतीजे थे। राजा भोज का नाम संस्कृत साहित्य में बहुत प्रसिद्ध है। वे स्वयं विद्वान्, कवि होकर विद्वानों और कवियों के परम आश्रयदाता थे। इनके समय में कवियों को बड़े बड़े पुरस्कार दिये जाते थे। कहा जाता है राजा भोज के समय लकड़िहारों तक में कविता बनाने का चाव पैदा हो गया था। राजा भोज का समय ग्यारहवीं शताब्दी है। भोजराज-रचित ग्रन्थों में पातंजलदर्शन की वृत्ति, जो भोज-वृत्ति के नाम से प्रसिद्ध है, विशेष महत्त्वपूर्ण रचना है। इसके अतिरिक्त, भोज के लिखे ग्रन्थ ये हैं—(१) अपरटीका, (२) चम्पू-रामायण, (३) चारुचर्या, (४) सरस्वती-कण्ठाभरण, (५) राजवार्तिक।

इधर राजा भोज का 'समरांगण-सूत्रधार' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण और उत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें बहुत से वैज्ञानिक विषयों का वर्णन है। आधुनिक 'लिफ्ट' जैसे यंत्र तथा आकाश में चलने वाले विमान का भी वर्णन इसमें पाया जाता है।

मङ्खक—ये काश्मीर-नरेश जयसिंह (११२९-५० ई०) के सभा-पण्डित थे। प्रसिद्ध आलंकारिक रुय्यक इनके गुरु थे। इन्होंने भगवान् शङ्कर और त्रिपुर के युद्ध को लेकर 'श्रीकण्ठचरित' नाम का २५ सर्गों का महाकाव्य लिखा है।

मण्डन मिश्र—ये भारत के एक प्राचीन विद्वान् हैं। ये मिथिला की प्रसिद्ध नगरी

माहिष्मती पुरी (आधुनिक महिसी ग्राम) के निवासी थे। प्रसिद्ध कुमारिलभट्ट के यह प्रिय शिष्य थे। इनका नाम तो विश्वरूप था, परन्तु शास्त्रार्थ में अजेय होने के कारण लोग इन्हें मण्डनमिश्र कहने लगे थे।

शङ्करदिग्विजय में लिखा है कि इनका और शङ्कराचार्य का शास्त्रार्थ हुआ था। शङ्कराचार्य से परास्त होने पर यह संन्यासी हो गये थे और शङ्कराचार्य ही से मण्डन ने संन्यास ग्रहण किया था। मण्डनमिश्र का संन्यासाश्रम का नाम सुरेश्वराचार्य हुआ। शङ्कराचार्य के साथ ये भी उनकी शिक्षा का प्रचार करने लगे। इन्होंने व्याससूत्र पर भाष्य भी बनाया था, परन्तु इनके जीवनकाल ही में दुष्टों ने उसे नष्ट कर डाला था। बृहदारण्यक उपनिषद् पर इनका लिखा वार्तिक है जो तात्पर्य वार्तिक के नाम से प्रसिद्ध है। पीछे से यह शृङ्गेरीमठ के अधिपति बनाये गये थे।

मधुसूदन ओझा—ये २०वीं शती के अद्वितीय विद्वान् एवं व्याख्याता थे। इन्होंने जितने ग्रन्थ लिखे हैं, आज तक उतने ग्रन्थ संस्कृत में किसी ने भी नहीं लिखे। ये मैथिल ब्राह्मण थे।

मम्मट—आचार्य मम्मट काश्मीर के रहने वाले थे। अलङ्कारशास्त्र में ध्वनि के समर्थक आचार्यों में इनका प्रमुख स्थान है। ये महाभाष्य के व्याख्याता कैयट तथा वेद के भाष्यकार उव्वट के भाई कहे जाते हैं। इनका समय ११वीं शती का उत्तरार्ध है।

इनका 'काव्य-प्रकाश' साहित्यशास्त्र का अति गम्भीर पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थ है। अपने ग्रन्थ से ये महावैयाकरण प्रतीत होते हैं। इन्होंने अपना ग्रन्थ सूत्रात्मक शैली में लिखा है अतः उसको अच्छी तरह समझ लेना सुगम नहीं है। लगभग ६० टीकाएँ इस ग्रन्थ पर हो चुकी हैं और टीकाकारों ने आचार्य मम्मट को 'वाग्देवतावतार' लिखकर उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित किया है।

काव्यप्रकाश में दस उल्लास हैं। दशम उल्लास के परिकरालङ्कार तक ही मम्मट लिख पाये थे, शेष अंश अल्लटसूरि द्वारा लिखा गया था। काव्यप्रकाश के 'निदर्शन'-टीकाकार ने लिखा है—

कृतः श्रीमम्मटाचार्यवर्यैः परिकरावधि।
प्रबन्धः पूरितः शेषो विधायाल्लटसूरिणा ॥

महादेव शास्त्री—बीसवीं शती में साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् और भाषा पर अधिकार रखने वाले सिद्धहस्त कवि हैं। इनका 'भारतशतकम्' नाम का मुक्तक काव्य प्रकाशित हुआ है, जिसमें आधुनिक दृष्टिकोणसे भारत के ग्रामीण जीवन के हृदयग्राही संश्लिष्ट वर्णन शब्द-चित्र के रूप में अंकित हुए हैं।

महिमभट्ट—ये मम्मट के पूर्ववर्ती और ध्वन्यालोककार के परवर्ती आचार्य हैं। ये भी कश्मीरी ही हैं। इन्होंने 'व्यक्तिविवेक' लिख कर आनन्दवर्धन के ध्वनिसिद्धान्त का खण्डन किया है और व्यक्ति (ध्वनि) को अनुमान का व्यापार बतलाया है। बाद में आचार्य मम्मट ने इनके सिद्धान्तों का भली भाँति खण्डन करके अनौचित्य विषयक इनकी समस्त मान्यताओं को अपने दोष-प्रकरण में सम्मिलित कर दिया।

माघ—संस्कृत साहित्य के मूर्धन्य महाकवियों में माघ की गणना की जाती है। ये एक धनाढ्य और प्रतिष्ठित ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे। इनकी जन्मभूमि सौराष्ट्र (गुजरात) प्रान्त में थी। इनके पिता का नाम दत्तक था। इनके पितामह सुप्रभदेव गुजरात के शासक वर्मलात के यहाँ मन्त्री पद पर नियुक्त थे। इनका समय सातवीं शती का उत्तरार्ध है।

माघ बहुत उदार और दानी थे। अपने जीवन के अन्तिम भाग में इन्हें इसी उदारता-वश बहुत कष्ट उठाना पड़ा।

इनका 'शिशुपाल-वध' ग्रन्थ बीस सर्गों का महाकाव्य है। इसकी रचना युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ और कृष्ण द्वारा शिशुपाल के वध

की कथा को लेकर की गयी है। माघ ने भारवि के अर्थ-गौरव को छोड़कर शेष बहुत कुछ अनुकरण उनकी शैली का किया है। 'शिशुपाल-वध' उच्चकोटि का महाकाव्य है। उसमें कवि-प्रतिभा का अच्छा निदर्शन हुआ है। इसकी गणना भी बृहत्त्रयी में की जाती है। माघ ने कवि-प्रतिभा के साथ-साथ अपनी अगाध विद्वत्ता का भी परिचय इस महाकाव्य में दिया है।

माधव विद्यारण्य—ये वेद के विख्यात भाष्यकार सायणाचार्य के बड़े भाई थे। ई० १४वीं सदी में दक्षिण की तुङ्गभद्रा नदी के तीर-स्थित पम्पा नगरी में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम मायण और माता का नाम श्रीमती था। विजयानगरम् के राजा बुक्कराय के ये कुलगुरु तथा प्रधान मन्त्री थे। भारती तीर्थ के पास इन्होंने संन्यास की दीक्षा ली थी। सन् १३३१ ई० में ये शृङ्गेरीमठ के शङ्कराचार्य के पद पर अभिषिक्त हुए। ९० वर्ष की अवस्था में इनका प लोकवास हुआ। इन्होंने पराशरसंहिता का एक भाष्य बनाया है जो पराशरमाधव के नाम से प्रसिद्ध है।

मुरारि—ये 'अनर्घराघव' नाटक के रचयिता हैं। इनका नामोल्लेख कविरत्न रत्नाकर ने, जो नवम शतक में हुए हैं, अपने 'हरविजय' महाकाव्य में किया है। अतएव इनका समय नवें शतक के पूर्व समझना चाहिये।

मेधातिथि—मनुसंहिता के विख्यात टीकाकार थे। इनके पिता का नाम वीरस्वामिभट्ट था।

यवनाचार्य—यह एक ज्योतिष के प्रसिद्ध विद्वान् थे। इनके बनाये हुए ग्रन्थ का नाम 'यवनसिद्धांत' है। बलभद्र नामक एक ज्योतिर्वेत्ता ने 'सिद्धायनरत्न' नामक एक ग्रन्थ बनाया है। उस ग्रन्थ में ग्रन्थकार ने यवनाचार्य का परिचय दिया है कि यवनाचार्य ने जातकस्कन्ध विषयक 'ताजिक' नामक एक ग्रन्थ बनाया है। यह ग्रन्थ फारसी भाषा में था। मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह ने इस ग्रन्थ का अनुवाद संस्कृत भाषा में करवाया था।

रघुनन्दन भट्टाचार्य—प्रसिद्ध बङ्गीय स्मार्त्त पण्डित। १५वीं शताब्दी में नवद्वीप में उत्पन्न हुए थे। इस समय का बङ्गीय हिन्दू समाज इन्हीं के बनाये धर्मशास्त्र के अनुसार परिचालित होता है। जिस समय ये उत्पन्न हुए थे उस समय हिन्दू समाज की बड़ी शोच्य दशा थी। मुसलमानों के हाथ से हिन्दुओं का आचार-व्यवहार नष्ट हो रहा था। इन्हीं बातों को देखकर, रघुनन्दन भट्टाचार्य ने हिन्दू समाज का संस्कार करने की इच्छा से अष्टविंशतितत्त्व नामक एक स्मृतिग्रंथ प्रणयन किया। उस समय प्रचलित हिन्दू धर्म के साथ रघुनन्दन की स्मृति का विरोध होने के कारण अनेक स्थानों में पण्डितगण रघुनन्दन से शास्त्रार्थ करने आये। शास्त्रार्थ में रघुनन्दन ने जय पायी। तभी से दूर-दूर के विद्यार्थी उनके यहाँ आने लगे और वहाँ शिक्षा पा कर इनके स्मृतिशास्त्र का प्रचार करने लगे। थोड़े ही दिनों में समूचे बङ्गाल में रघुनन्दन की स्मृति का आदर होने लगा और उसी के अनुसार हिन्दू समाज परिचालित होने लगा।

रघुनाथ शिरोमणि—ये नवद्वीप के विख्यात नैयायिक थे। ई० १५वीं शताब्दी के शेष-भाग में नवद्वीप में इनका जन्म हुआ था और सोलहवीं शती के मध्यभाग में देहावसान। ये न्यायशास्त्र के प्रगाढ़ विद्वान् थे। इन्होंने सब मिलाकर ३२ ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें ये प्रसिद्ध हैं:— (१) व्युत्पत्तिवाद, (२) लीलावती की टीका, (३) क्षणभंगुरवाद, (४) तत्त्वचिन्तामणिदीधिति, (५) पदार्थमण्डल, (६) प्रामाण्यवाद, (७) ब्रह्मसूत्रवृत्ति, (८) अद्वैतेश्वरवाद, (९)

अवयवग्रन्थ, (१०) आकाङ्क्षावाद, (११) केवलव्यतिरेकी, (१२) पक्षता, (१३) आख्यातवाद, (१४) न्यायकुसुमाञ्जलि की टीका ।

रत्नाकर—कश्मीरी महाकवियों में रत्नाकर मूर्धन्य है । इनका 'हरविजय' महाकाव्य विस्तार और गुण की दृष्टि से श्रेष्ठ माना जाता है । उसमें कविता का लालित्य है । राजतरङ्गिणी के अनुसार ये कश्मीर नरेश अवन्तिवर्मा (८५५-८८४ ई०) के राज्यकाल में हुए —

मुक्ताकण: शिवस्वामी
कविरानन्दवर्धनः ।
प्रथां रत्नाकरश्चागात्
साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः ।।

राजशेखर—ये मध्यभारत के निवासी थे और कान्यकुब्ज नरेश महेन्द्रपाल के यहाँ आचार्य रूप में रहते थे । बाद में ये महेन्द्रपाल के पुत्र महीपाल के भी सभासद रहे । इस प्रकार इनका समय ९वीं शताब्दी के बीच ठहरता है । ये यायावरवंश के थे, जो वंश प्राय: कवियों के लिए प्रसिद्ध है । इन्होंने अवन्तिसुन्दरी नाम की चौहानवंशी विदुषी क्षत्रियललना से विवाह किया था । इन्होंने अपने को वाल्मीकि, भर्तृमेण्ठ और भवभूति के समकक्ष माना है—

बभूव वल्मीकभव: कवि: पुरा
तत: प्रपेदे भुवि भर्तृमेण्ठताम् ।
स्थित: पुनर्यो भवभूतिरेखया
स वर्तते सम्प्रति राजशेखरः ।

इनके बनाये ग्रन्थों के नाम हैं—(१) काव्यमीमांसा, (२) भुवनकोष, (३) बालरामायण, (४) बालभारत या प्रचण्डपाण्डव, (५) विद्धशालभञ्जिका और (६) कर्पूरमञ्जरी । राजशेखर अपने को कविराज कहते थे । इन्हें भूगोल का अच्छा ज्ञान था । 'काव्यमीमांसा' तथा 'बालरामायण' का दशम अंक भौगोलिक वर्णनों से ओत-प्रोत है । 'भुवनकोष' कदाचित् भूगोल विषय का ही ग्रन्थ था जो अब अप्राप्य है । 'काव्यमीमांसा' प्राय: कवियों की शिक्षा का ग्रन्थ है । अन्तिम चार ग्रन्थ नाटक हैं । उनमें कर्पूरमञ्जरी प्राकृत भाषा में लिखा गया है । राजशेखर शब्द के प्रयोग में बहुत कुशल हैं और लोकोक्तियों तथा मुहावरों का व्यवहार इनके काव्यों में पाया जाता है ।

रुद्रट—ये अलङ्कारशास्त्र के आचार्य हैं । इनका समय ९वीं शती ई० है । इनकी रचना 'काव्यालङ्कार' है जिसमें अलङ्कारों के साथ नाट्यशास्त्र के रस का भी विवेचन पहली बार काव्यलक्षण की व्याख्या में किया गया ।

श्रीरामानुजाचार्य—विशिष्टाद्वैतसिद्धान्त के यह आदि आचार्य हैं । इन्होंने भारतवर्ष में जैनियों और माया-वादियों का प्रभाव हटाने में प्राण-पण से प्रयत्न किया था और अपने प्रयत्न में सफल भी हुए थे । इनका प्राकट्य शकाब्द ९३८ अर्थात् सन् १०१७ ई० में हुआ था । इनके बनाये मुख्य ग्रन्थ ये हैं:—(१) वेदान्तसूत्र पर श्रीभाष्य, (२) वेदान्तप्रदीप, (३) वेदान्तसार, (४) वेदान्तसंग्रह, (५) गीताभाष्य, (६) गद्यत्रय ।

लल्लाचार्य—एक प्राचीन ज्योतिषी । इनका सिद्धान्त आर्यज्योतिष में बड़े आदर से देखा जाता है ।

लोष्टक भट्ट—इनकी जन्मभूमि कश्मीर है । अन्तिम अवस्था में ये संन्यस्त होकर काशीवासी हो गये थे । इनका काल १०८० ई० के आस-पास सिद्ध होता है । लोष्टक छह भाषाओं के अधिकारी विद्वान् और संस्कृत के सिद्धहस्त कवि थे । इस समय इनकी एक मात्र रचना 'दीनाक्रन्दनस्तोत्र' प्राप्त होती है, जिसमें

कवि ने शिवस्तुति के व्याज से अपनी दुःख-दर्दभरी कहानी गायी है।

वराहमिहिर—यह एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इनकी बनायी 'वृहत्संहिता' एक उपादेय ग्रन्थ है। इनका शरीरान्त सन् ५८७ ई० में हुआ था।

वल्लभाचार्य—पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक आचार्य। इस मार्ग का नामान्तर रुद्रसम्प्रदाय या वल्लभ सम्प्रदाय भी है। इनके पिता का नाम लक्ष्मणभट्ट था। यह तैलङ्ग ब्राह्मण थे। ई० सोलहवीं सदी में इनका जन्म हुआ। दक्षिण भारत को छोड़ इनके सम्प्रदाय के अनुयायी समस्त भारतवर्ष में पाये जाते हैं। श्रीवल्लभाचार्य ने श्रीमद्भागवत पर सुबोधिनी टीका, व्याससूत्र पर भाष्य, सिद्धान्तरहस्य, भागवत लीलारहस्य, एकान्तरहस्य आदि ग्रन्थ रचे थे। यह जीव और ब्रह्म का अभेद मानने वाले हैं।

वाक्पतिराज—ये कान्यकुब्ज नरेश यशोधर्मा के सभा-कवि थे और भवभूति के समकालीन थे। इनका 'गउड़वहो' प्राकृत भाषा का महाकाव्य है जिसमें १०२८ गाथाएँ हैं। यशोधर्मा ने गौड़ देश के किसी राजा पर चढ़ाई की थी। उसीका वर्णन इस काव्य में है। इनकी दूसरी रचना 'मधुमय विजय' थी जो अप्राप्त है। इनका समय ८वीं शती ई० का पूर्वार्ध है।

वामन—ये कश्मीर-निवासी तथा कश्मीर-नरेश जयापीड के मंत्री थे। अतः इनका समय आठवीं शती का उत्तरार्ध है। ये आलङ्कारिकों के सम्प्रदाय में रीति को काव्य की आत्मा मानने वाले आचार्य हैं। इन्होंने इस सिद्धान्त का विवेचन अपने ग्रन्थ 'काव्यालंकारसूत्र' में किया है।

विज्जका—'कौमुदी महोत्सव' नाटक की रचयित्री विज्जका को कहा जाता है। डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल के अनुसार 'कौमुदी महोत्सव' में पाटलिपुत्र के सत्ता-च्युत राजकुमार कल्याणवर्मा के पुनः राज्याभिषिक्त होने की कथा को नाटक का विषय बनाया गया है, कुछ वर्षों के अनन्तर ही गुप्त-सम्राट् समुद्रगुप्त ने कल्याणवर्मा को जीतकर अपने साम्राज्य की स्थापना की। विज्जका की रचना 'सूक्ति संग्रहों' में भी पाई जाती है। इस प्रकार इसका समय ४थी शती ई० का मध्य होगा।

विशाखदत्त—इनका बनाया 'मुद्राराक्षस' नाटक संस्कृत साहित्य में एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें राजनीतिक दाव-पेंच का अच्छा गूढ़ निदर्शन हुआ है। नाटक की प्रस्तावना के अनुसार विशाखदत्त के पूर्वज सामन्त और महाराज थे। विशाखदत्त ज्योतिष, न्याय और राजनीति के पूर्ण पण्डित थे। इनका समय छठीं शताब्दी का उत्तरार्ध माना जाता है। 'देवीचन्द्रगुप्त' नाम का इनका दूसरा नाटक भी है किन्तु वह पूर्णतः प्राप्त नहीं है।

विश्वनाथ—ये उत्कल नरेश के यहाँ सान्धिविग्रहिक पद पर थे। इनका समय १४वीं शती ई० है। ये आलङ्कारिक और कवि दोनों थे। इनके पिता और पितृव्य दोनों अच्छे कवि थे। विश्वनाथ का लिखा हुआ 'साहित्यदर्पण' अलङ्कारशास्त्र का बहुत लोकप्रिय ग्रन्थ है। इसमें सुबोध शैली में काव्य तथा नाटक दोनों विषयों का अच्छा विवेचन दश परिच्छेदों में किया गया है।

विश्वेश्वर पाण्डेय—इनके पूर्वज अलमोड़ा जिले के पाटिया गाँव के रहने वाले थे। बाद में इनके पिता काशी के नागरिक हो गये और वहीं इनका जन्म हुआ। यह समय अठारहवीं शती का प्रारम्भ था। ये केवल ३४ वर्ष की अल्पायु में ही दिवंगत हो गये और इस अवस्था में ही इन्होंने विभिन्न विषयों पर २० पुस्तकें लिखीं, जो अपने-अपने विषय की प्रौढ़ रचनायें हैं। खेद है कि इनकी

कृतियों का समुचित प्रचार न हो सका । इन ग्रन्थों के देखने से एक ओर ये साहित्यशास्त्र के आचार्य रूप में और दूसरी ओर महाकवि के रूप में दिखायी पड़ते हैं । 'अलङ्कार-कौस्तुभ' इनकी सबसे प्रौढ़ रचना है जिसमें सभी अलङ्कारों का गम्भीर विवेचन किया गया है । इनकी रचनाओं के नाम ये हैं–(१) अलङ्कारकौस्तुभ (२) अलङ्कार-मुक्तावली (३) अलङ्कारप्रदीप (४) क़वीन्द्रकर्णाभरणम् (५) रसचन्द्रिका (६) वैयाकरणसिद्धान्तसुधानिधि (७) मन्दारमञ्जरी (८) आर्यासप्तशती (९) काव्यतिलकम् (१०) काव्यरत्नम् (११) तर्ककुतूहलम् (१२) दीधितिप्रवेश (१३) नवमल्लिका नाटिका (१४) शृङ्गार-मञ्जरी शतकम् (१५) रोमावलीशतकम् (१६) वक्षोजशतकम् (१७) होलिका-शतकम् (१८) लक्ष्मीविलास (१९) रसमञ्जरीटीका (२०) नैषधचरित-टीका (२१) षड्ऋतुवर्णनम् ।

वेङ्कटाध्वरि—यह एक दाक्षिणात्य कवि हैं । ये काँची के पास अर्शनफल नामक अग्रहार में रहते थे । इन्होंने विश्वगुणादर्श, हस्तिगिरि चम्पू और लक्ष्मीसहस्र नामक काव्यों की रचना की है। यह भी दाक्षिणात्य कवियों की तरह शब्दालंकार की ओर अधिक झुके हुए हैं । प्रलयकावेरी नामक किसी राजा की सभा के ये प्रधान पण्डित थे ।

वेदान्तदेशिक—इनका जन्म कांजीवरम् के निकट एक ग्राम में सन् १२६८ ई० के सितंबर मास अथवा तमिल संवत् विभव में हुआ था । ये एक साहित्य-मर्मज्ञ और दार्शनिक विद्वान् हो गये हैं । इन्होंने दर्शन विशेषत: न्याय पर कई एक ग्रन्थ लिखे हैं और श्री श्रीहर्ष के 'खण्डनखण्डखाद्य' के उत्तर में 'शतदूषणी' ग्रन्थ की रचना की थी। कालिदास के 'मेघदूत' के ढंग पर इन्होंने 'हंससन्देश' लिखा है । 'यादवाभ्युदय' इनका महाकाव्य है । अप्पय दीक्षित ने इसकी टीका की है । तत्त्वमुक्ताकलाप, सर्वार्थसिद्धि, अधिकरणसारावली, न्याय-परिशुद्धि, न्यायसिद्धाञ्जन आदि इनके दूसरे ग्रन्थ हैं ।

शङ्कराचार्य—आचार्य शंकर भारत के सामाजिक और धार्मिक जीवन के जन-मन में, भगवान् शङ्कराचार्य के रूप में, आज एक सहस्र वर्ष से अधिक हुए प्रतिष्ठित चले आ रहे हैं । यद्यपि सामान्य जनता उनके नाम से अब परिचित नहीं रह गई है तथापि उनके अद्वैतवाद और सब में भगवान् की भावना की विचारधारा जनता के मानस में उनका प्रतिनिधित्व करती है । इनका जन्म आठवीं शती ई० में दक्षिण भारत में हुआ और इन्होंने केवल ३२ वर्ष की अवस्था में समाधि ले ली थी ।

ये परम योगी और अगाध विद्वान् महान् आत्मा थे । थोड़ी अवस्था में ही इन्होंने सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया और विरुद्ध मतवालों को पराजित कर अपनी सनातन परम्परा की देश भर में पुन: प्रतिष्ठा की । परमार्थ रूप में ये अद्वैत तत्त्व या ब्रह्म मात्र को मानने वाले थे किन्तु व्यवहारजगत् में अन्य देवी-देवताओं की उपासना भी इन्हें अभीष्ट थी । इन्हीं देवी-देवताओं को लेकर इन्होंने बहुत बड़ा स्तोत्र-साहित्य लिखा है, जिसमें काव्य-कला और अन्त:करण की दृढ़ प्रेरणा का समन्वय मिलता है । इन्होंने प्राय: सभी उपनिषदों पर भाष्य लिखे हैं । पर इनका सबसे महत्त्वपूर्ण भाष्य 'वेदान्त सूत्र' पर लिखा हुआ शांकर भाष्य है जिसमें इन्होंने अपने सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की है ।

श्रीहर्ष—श्रीहर्ष मूर्धन्य महाकवि तथा उच्च-कोटि के प्रकाण्ड पण्डित थे । गहरवारवंशी कान्यकुब्ज नरेश विजयचन्द्र की सभा के

ये सभारत्न थे। विजयचन्द्र का समय १२वीं शती ई० का उत्तरार्ध है। वही समय श्रीहर्ष का भी समझना चाहिए। श्रीहर्ष की यह विशेषता है कि जहां उन्होंने एक ओर शृंगार रस का अद्वितीय महाकाव्य 'हर्ष-चरित' लिखा, वहाँ दूसरी ओर अद्वैत दर्शन के पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थ 'खण्डनखण्डखाद्य' की रचना की। वस्तुतः ये विद्वान् होने के साथ योगी भी थे। इन्होंने स्वयं लिखा है कि वे समाधि में ब्रह्मानन्द का साक्षात्कार किया करते हैं—

ताम्बूलद्वयमासनं च लभते यः कान्यकुब्जे-श्वरात्, यः साक्षात्कुरुते समाधिषु परं ब्रह्म प्रमोदार्णवम्। यत्काव्यं मधुवर्षि धर्षितपरा-स्तर्केषु यस्योक्तयः, श्री श्रीहर्षकवेः कृतिः कृतिमुदे तस्याभ्युदीयादियम्॥

इनकी यह उक्ति इनके ग्रन्थों को पढ़ने से अत्युक्ति नहीं मालूम पड़ती।

श्रीहर्ष ने लिखा है कि उन्होंने अपना यह महाकाव्य चिन्तामणि मन्त्र के जप के प्रभाव से सरस्वती की सिद्धि प्राप्त करके लिखा है। 'नैषधीयचरित' के प्रत्येक सर्ग के अन्त में नाम अथवा कोई न कोई दूसरा परिचय इन्होंने अवश्य दिया है। इनके पिता का नाम हीर तथा माता का नाम मामल्ल देवी था। इनके लिखे ग्रन्थों की उल्लेखक्रम से सूची इस प्रकार है—(१) स्थैर्यविचारणप्रकरण (२) विजयप्रशस्ति (३) खण्डनखण्ड-खाद्य (४) गौडोर्वीशकुलप्रशस्ति (५) अर्णववर्णन (६) छिन्दप्रशस्ति (७) शिवशक्तिसिद्धि (८) नवसाहसाङ्कचरित चम्पू तथा (९) नैषधीयचरित।

नैषधीयचरित २२ लम्बे-लम्बे सर्गों का महा-काव्य है जिसमें २८३० श्लोक हैं। श्रीहर्ष का संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार है। शब्दों का विन्यास बहुत ललित तथा कल्पना की उड़ान बहुत ऊँची एवं हृदयावर्जक है। कवि ने जो स्वयं अपने महाकाव्य को 'शृंगारामृत-शीतगुः'—शृंगाररूपी अमृत के लिए चन्द्रमा कहा है, वह बहुत समीचीन है। इस महा-काव्य का विद्वज्जगत् में बहुत समादर है।

सुबन्धु—इनको बाण ने 'वासवदत्ता' का रचयिता बताया है और इनकी कृति की बहुत प्रशंसा की है। गद्यकाव्य लेखकों में सुबन्धु का ही नाम सर्वप्रथम आता है। 'वासवदत्ता' एक कथा काव्य है और वासवदत्ता की प्रेम कहानी ही है। परन्तु कवि ने उसमें अपनी मौलिक बुद्धि से बहुत उलट-फेर किया है। गद्य-काव्य श्लेष से भरा हुआ है अतः दुर्बोध है। इनका समय बाणभट्ट के पहले होना चाहिए।

हलायुध—ब्राह्मणसर्वस्व, कविरहस्य आदि ग्रन्थों के प्रणेता एक विद्वान् जो गीतगोविन्द-प्रणेता जयदेव कवि के समकालीन और गौड़े-श्वर लक्ष्मण सेन के सभापण्डित थे।

हेमचन्द्र—इन्होंने 'शब्दानुशासन' नामक प्रसिद्ध व्याकरण-ग्रन्थ लिखा है जिसके अन्त के आठ अध्यायों में प्राकृत व्याकरण है 'काव्यानुशासन' इनका अलङ्कार ग्रन्थ जो बहुत मौलिक नहीं है। इनका समय १२वीं शताब्दी ई० है।